

चौखम्बा

संस्कृतप्रतिस्पर्धाप्रकाश

एन.टी.ए./यू.जी.सी.–नेट/जे.आर.एफ. (संस्कृत कोड-25)

(नवीन पाठ्यक्रमानुसार विषयों की सरल व्याख्या
एवं विषयानुसार वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का संकलन)

विभिन्न राज्यों के लोक सेवा आयोग (UPPSC, RPSC, UKPSC, HPPSC, MPPSC, BPSC) एवं अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित असिस्टेंट प्रोफेसर एवं प्रवक्ता परीक्षा तथा धर्मगुरु, B.ED., TGT, PGT, DSSSB इत्यादि से संबद्ध संस्कृत की समस्त प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए अत्यन्त उपयोगी

संशोधित एवं परिवर्धित द्वितीय संस्करण

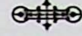


दीपक कुमार  संजय दत्त भट्ट

।। श्रीः ।।

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

678



चौखम्बा

संस्कृतप्रतिस्पर्धाप्रकाश

एन.टी.ए./यू.जी.सी.–नेट/जे.आर.एफ. (संस्कृत कोड-25)

(नवीन पाठ्यक्रमानुसार विषयों की सरल व्याख्या एवं विषयानुसार वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का संकलन)

विभिन्न राज्यों के लोक सेवा आयोग (UPPSC, RPSC, UKPSC, HPPSC, MPPSC, BPSC) एवं अन्य संस्थाओं द्वारा आयोजित असिस्टेंट प्रोफेसर एवं प्रवक्ता परीक्षा तथा धर्मगुरु, B.ED., TGT, PGT, DSSSB इत्यादि से संबद्ध संस्कृत की समस्त प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए अत्यन्त उपयोगी



संशोधित एवं परिवर्धित द्वितीय संस्करण

लेखकद्वय

दीपक कुमार
एम.ए. (संस्कृत)-जवाहरलालनेहरू विश्वविद्यालय
पीएच.डी. (अध्ययनरत)-बी.एच.यू.-वाराणसी
(UGC-NET/JRF)

संजय दत्त भट्ट
एम.ए. (संस्कृत)-जवाहरलालनेहरू विश्वविद्यालय
पीएच.डी. (अध्ययनरत)-दिल्ली विश्वविद्यालय
(UGC-NET/JRF)



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वाराणसी

चौखम्बा संस्कृतप्रतिस्पर्धाप्रकाश–दीपक कुमार एवं संजय दत्त भट्ट

ISBN : 978-93-89665-59-8

प्रकाशक :

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के 37/117 गोपाल मन्दिर लेन, पोस्ट बॉक्स न. 1129

वाराणसी 221001

दूरभाष : +91 542 2335263, 2335264

e-mail : chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com

website : www.chaukhamba.co.in

@chaukhambabooks

@chaukhambabooks

प्रथम संस्करण : 2021

संशोधित एवं परिवर्धित द्वितीय संस्करण : 2022

वितरक :

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस

4697/2 ग्राउण्ड फ्लोर, गली न. 21-ए

अंसारी रोड़, दरियागंज

नई दिल्ली 110002

दूरभाष : +91 11 23286537, 41530947 (मो.) +91 9811104365

e-mail : chaukhambapublishinghouse@gmail.com

*

अन्य प्राप्तिस्थान :

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

4360/4, अंसारी रोड दरियागंज

नई दिल्ली 110002

*

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)

पोस्ट बॉक्स न. 1069

वाराणसी 221001

मुद्रक : ए.के. लिथोग्राफर, दिल्ली,

प्राक्कथन

प्रिय पाठक बन्धुओं,

जैसा कि आप जानते ही हैं वर्ष 2018 यू.जी.सी. नेट परीक्षा के पैटर्न में एक बड़ा बदलाव किया गया है, जिसके अंतर्गत अब अभ्यर्थियों को तीन प्रश्नपत्र की जगह केवल दो प्रश्नपत्रों की ही परीक्षाएँ देनी होंगी । मित्रों सम्प्रति हम भी अध्ययनरत हैं और हम यह भली-भांति जानते है कि हम सभी पाठकों को प्रामाणिक एवं गुणवत्तापूर्ण अध्ययन सामग्रियों के अभाव में ढ़ेर सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिन समस्याओं का सामना स्वयं हम दोनों के द्वारा भी किया गया, अतः इन समस्याओं के निवारण के लिये बहुत परिश्रम के पश्चात् इस पुस्तक का लेखन कार्य सम्पन्न हो पाया है और यह ही इस पुस्तक का अन्तिम कार्य नहीं है, इस पुस्तक में आप सभी पाठकों की प्रतिपुष्टियों के अनुरुप पुस्तक की गरिमा तथा पाठकप्रियता को बनाये रखने हेतु समयानुसार हम इस पुस्तक में प्रामाणिक तथ्यों के द्वारा परिवर्तन करते रहेगें । अतः उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे द्वारा **(UGC-NET/JRF)** परीक्षा तथा **(HPPSC), (UPPSC), (MPPSC), (BPSC), (UKPSC), (RPSC)** इत्यादि द्वारा आयोजित प्रवक्ता एवं असिस्टेंट प्रोफ़ेसर आदि अन्यान्य विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं को दृष्टि में रखकर नवीनतम पाठ्यक्रमानुसार इस पुस्तक को लिखा गया है ।

प्रस्तुत ग्रन्थ में हमनें नवीनतम पाठ्यक्रमानुसार सभी विषयों का समावेश किया है, तथा इन विषयों को सरल, सहज एवं रुचिपूर्ण बनाने के लिये सरल भाषा और यथासंभव उदाहरण, चार्ट तथा टेबल इत्यादियों का प्रयोग भी किया है । हमने महसूस किया कि कई अभ्यर्थी अच्छी तैयारी होने के बावजूद परीक्षा भवन में प्रश्नों को हल करते समय गलतियाँ कर बैठते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक यूनिट के अंत में यू.जी.सी. नेट एवं विभिन्न राज्यों की संस्कृत से सम्बन्धित परीक्षाओं में पूछे गए प्रश्नों का संग्रह भी दिया गया है, ताकि अभ्यर्थी उनका समुचित अभ्यास कर परीक्षा में स्वयं को सजग रख सकें। इस पुस्तक में अशुद्धियों की संभावना न्यूनतम रहे, इस बात का ध्यान रखते हुए इसका कई चरणों में गहन निरीक्षण किया गया है। अभ्यर्थियों का बहुमूल्य समय व्यर्थ न हो इसलिये अनावश्यक और गैर-परीक्षोपयोगी सामग्रियों को इस पुस्तक में शामिल नहीं किया गया है। पुस्तक लेखन में विषय-वस्तु को क्रमबद्ध तथा रोचक तरीके से प्रस्तुत किया गया है एवं भाषा के स्तर पर विशेष अवधान दिया गया है एवं इसमें क्लिष्टता न आए और बोधगम्यता तथा गुणवत्ता बनी रहे इस दृष्टि से पूरी सतर्कता बरती गई है। हमें पूर्ण विश्वास है कि हमारी यह नई पहल पाठकों की सफलता में वरदान साबित होगी। निवेदन है कि आप पुस्तक को पाठक के साथ-साथ आलोचक की नजर से भी पढ़ें एवं अपने बहुमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराएं जिससे आगामी संस्करणों में पुस्तक को और प्रामाणिक बनाया जा सके।

इस ग्रंथ को पूर्ण करने में निर्विवाद रूप से प्रातः स्मरणीय एवं सदैव स्तुत्य हमारे आदरणीय माता-पिता, गुरुजन और विश्वनाथ की अगाध कृपा के साथ ही भारतीय संस्कृत-क्षेत्र के मूर्धन्य विद्वान् जिनके ग्रंथों का आश्रय लेकर इस कार्य को पूर्ण किया गया है वे स्तुत्य हैं, हम उनके चरणों में प्रणाम करते हैं। यदा-कदा अथवा सर्वदा हमें **दिल्ली विश्वविद्यालयस्थ** (संस्कृत-विभागीय) **'प्रो.भारतेन्दु पाण्डेय'** जी, **'प्रो.मीरा द्विवेदी'** जी, **'प्रो.रञ्जन कुमार त्रिपाठी** जी एवं **जवाहरलालनेहरू विश्वविद्यालयस्थ** संस्कृत (संकायप्रमुख) **'प्रो.संतोष कुमार शुक्ल,** जी एवं (संस्कृत-विभागीय) तथा UGC-HRDC, JNU के निदेशक **प्रो.ब्रजेश कुमार पाण्डेय** जी तथा **काशी हिन्दू विश्वविद्यालयस्थ** (ज्योतिष विभागाध्यक्ष) **प्रो.विनय कुमार पाण्डेय,** जी और **उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालयस्थ** (शिक्षा-विभागीय) **'डा.प्रकाश पन्त'** जी एवं **बुद्ध स्नात्कोत्तर महाविद्यालय के** (संस्कृत-विभागीय) **'डा.सौरभ द्विवेदी'** जी गुरूजनों से सहायता मिलती रही है, एतदर्थ हम उनके प्रति हृदय से आभारी हैं तथा हम **'चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी'** के मुख्य व्यवस्थापक **'श्री नवीन गुप्ता'** जी के भी हार्दिक आभारी हैं जिन्होंने इस ग्रंथ के प्रकाशन का उत्तरदायित्व ग्रहण कर हमें कृतार्थ किया है।

मकर सङ्क्रान्ति, दिनाँक- 14/01/2021

नई दिल्ली

साभार

दीपक कुमार, संजय दत्त भट्ट



प्रो. भारतेन्दु पाण्डेय
Prof. Bhartendu Pandey

संस्कृतविभाग
DEPARTMENT OF SANSKRIT
दिल्लीविश्वविद्यालय
UNIVERSITY OF DELHI
दिल्ली-110007
DELHI-110007



Mob.- 9999468058
Website: sanskrit.du.ac.in
Email: bpdu14@gmail.com

शुभाशंसा

संस्कृत भारतवर्ष की भास्वर आत्मशक्ति का दूसरा पर्याय है। यही कारण है कि पाठशालाओं तथा गुरुकुलों सदृश परम्परागत शिक्षण-संस्थाओं में ही नहीं अपितु आधुनिक विश्वविद्यालयों एवं तत्सम्बद्ध महाविद्यालयों में भी संस्कृत के पठन-पाठन की अनवरत व्यवस्था दृष्टिगत होती है। इन विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों में संस्कृत-अध्ययन में अन्तर्भुक्त विविध विषयों-उपविषयों का विद्यार्थियों को अवगाहन कराने का प्रयत्न किया जाता है। विद्यार्थियों द्वारा विधीयमान इस अवगाहन के मापन हेतु वहाँ विभिन्न स्तरों पर परीक्षाओं का नियमित आयोजन किया जाता है। इन परीक्षाओं के उत्तरण के अनन्तर तद्-तद् विश्वविद्यालयों द्वारा उन्हें यथोचित उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं। पूर्व में विश्वविद्यालयों द्वारा प्रदत्त ये उपाधियाँ ही उनको सेवायोजन अथवा उस निमित्त से आयोजित साक्षात्कार का एकमात्र आधार हुआ करती थीं। पर कालान्तर में अनेक कारणों से यह आवश्यकता अनुभव की जाने लगी कि विभिन्न सेवायोजक संस्थाएं अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप इन लब्धोपाधि-अभ्यर्थियों को अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुरूप पुनः परीक्षित करें।

स्पष्ट है कि विश्वविद्यालयों की परम्परागत परीक्षाओं तथा सेवायोजक संस्थाओं की इन परीक्षाओं में प्रकृति और प्रवृत्ति की दृष्टि से अनेक भेद अन्तर्निहित हैं। यही कारण है कि परम्परागत परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने वाला अभ्यर्थी आवश्यकरूप से इन विशिष्ट-प्रकृतिक परीक्षाओं में भी सफल हो जाए यह आवश्यक नहीं। इसके विपरीत अनेकशः यह भी देखा गया है कि सामान्य विश्वविद्यालयीय शिक्षा तथा परीक्षा में अग्रणी स्थानों पर अधिष्ठित छात्र-छात्राएं भी सेवायोजक परीक्षाओं में अनेक समस्याएं अनुभव करती हैं। उन समस्याओं के समाधान-हेतु छात्र-जन अनेक उपायों का अवलम्बन करते परिलक्षित होते हैं। इन उपायों में यद्यपि विभिन्न प्रकार के कोचिंग इन्स्टीट्यूट आदि सम्मिलित हैं, पर एक तो वे अधिकांशतः महानगरों में ही केन्द्रित हैं तथा दूसरे उनसे सम्बद्ध वित्तीय भार भी सामान्य विद्यार्थी के लिये सरलतया वोढ्व्य नहीं होता। अतः एक सीमित छात्रवर्ग ही उससे लाभान्वित होने की बात सोच पाता है। प्रशिक्षण-संस्थाएं हों अथवा न हों छात्र का सर्वत्र और सर्वदा सुलभ मित्र तो एकमात्र पुस्तक ही हुआ करती है। वह जीवन की प्रत्येक परीक्षा में उसका हाथ थामें रहती है। ऐसे में इन विशिष्ट परीक्षाओं के सन्दर्भ में पुस्तक अपने इस मित्र-धर्म का परित्याग भला कैसे कर देती। अतः विद्वान् छात्र-हितैषी बन्धुओं ने तद्-तद् विशिष्ट परीक्षाओं के लिये बड़े मनो-योग से पुस्तकों की रचना की। ये पुस्तकें प्रयोजन-विशेष से परिचालित होकर ही प्रणीत और प्रकाशित की गई थीं। अतः ये उन विशिष्ट परीक्षाओं में सफलता-कामी विद्यार्थियों का यथोचित मार्गदर्शन करने में सक्षम हो सकीं।

संस्कृत विषय को लेकर इन विशिष्ट प्रतिस्पर्धात्मक परीक्षाओं में सम्मिलित होने वाले अभ्यर्थियों के उचित दिग्दर्शन हेतु विद्वज्जनों द्वारा समय-समय पर यथेष्ट पुस्तकों का सर्जन होता रहा है। परिणामस्वरूप इस समय भी उनके सामने अनेक विकल्प उपलब्ध हैं। पर स्वयं अभ्यर्थियों ने पूर्वोपलब्ध पुस्तकों की कतिपय सीमाओं को चिन्हित किया है, जो उन प्रतिस्पर्धाओं में उनके सफलतावाप्ति के पथ को यथेष्ट रूप में प्रकाशित किंवा प्रशस्त नहीं होने देती।

संस्कृत-विद्या के सहृदय गवेषक श्री संजय दत्त भट्ट तथा श्री दीपक कुमार उपलब्ध पुस्तकों की उक्त सीमाओं का वर्षों से अभिज्ञान कर रहे थे। सम्प्रति उनके मन में उक्त सीमाओं के समाधान की कल्याण कामना ने इस नवीन पुस्तक का रूप धारण कर लिया है। सुरभारती सपर्या हेतु सदा समर्पित चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी के स्वामी श्री नवीन जी गुप्ता के सत्प्रयत्नों से यह 'संस्कृतप्रतिस्पर्धाप्रकाश' के विग्रह में अवतीर्ण हो रही है। इस हेतु लेखक-द्वितयी तथा प्रकाशक दोनों ही मेरे साधुवाद के पात्र हैं। छात्र-लोक इसके प्रकाश में लक्ष्य का सम्यक् सन्धान कर सकेगा, ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।

मकर संक्रान्ति

14-01-2021

प्रो. भारतेन्दु पाण्डेय



JAWAHARLAL NEHRU UNIVERSITY
NEW DELHI, 110067
INDIA



PROF. BRAJESH KUMAR PANDEY
PROFESSOR
SCHOOL OF SANSKRIT AND INDIC STUDIES
DIRECTOR
UGC-HRDC, JNU

OFF. PHONE: 011-26704128
MOBILE- +919456605925

EMAIL: brajeshkumar@mail.jnu.ac.in
brajeshvka@gmai.com

शुभाशंसा

प्रतिस्पर्धा के माध्यम से योग्यतानुसार श्रेष्ठ वृत्ति प्राप्त करना प्रत्येक अभ्यर्थी का लक्ष्य है। प्रतियोगी परीक्षाओं में संलग्न संस्कृत छात्रों हेतु मानक पाठ्यसामग्री का अभाव दृष्टिगोचर होता है। इस अभाव की पूर्ति की दिशा में हमारे दो अध्यवसायी प्रबुद्ध शोधार्थियों श्री संजय दत्त भट्ट एवं श्री दीपक कुमार ने परिश्रमपूर्वक 'संस्कृतप्रतिस्पर्धाप्रकाश' को सुधी पाठकों के समक्ष उपस्थापित किया है। स्थालीपुलाकन्यायेन मैंने इसकी पाठ्यसामग्री का अवलोकन किया। ग्रन्थ में एकत्र विषयों का सुस्पष्ट, तथ्यात्मक एवं सरल निरूपण है। शास्त्र-संपुष्ट विवेचन द्वारा सभी ग्रन्थ-भागों एवं पारिभाषिक शब्दों को समझाया गया है। शोध दृष्टि एवं विषयावगाहन लेखन शैली में द्रष्टव्य है। एतद्विषयक अन्य ग्रन्थों में या तो दुरूह सामग्री संकलित है अथवा अस्पष्ट या न्यून विवेचन है। इस ग्रन्थ में इन सबका निराकरण करने का सफल प्रयास किया गया है, जिसका मैं अभिनन्दन करता हूँ।

यह ग्रन्थ सभी जिज्ञासु जनों की मनस्तुष्टि का माध्यम बनेगा तथा उनके ज्ञानवर्धन के साथ परीक्षानुरूप आवश्यकताओं की सम्पूर्ति करेगा। मैं लेखकद्वय को उनकी निर्बाध लेखन-यात्रा हेतु शुभेच्छाएँ संप्रेषित करता हूँ।

मकर संक्रान्ति
14-01-2021

PROF. BRAJESH KUMAR PANDEY

विषयानुक्रमणिका

दर्शन साहित्य के अभ्यास प्रश्न :- (170-185)

इकाई-V (186-205)

व्याकरण एवं भाषाविज्ञान-

(क) परिचयः निम्नलिखित आचार्यों का परिचय -

- पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि, भर्तृहरि, वामनजयादित्य, भट्टोजिदीक्षित, नागेशभट्ट, जैनेन्द्र, कैय्यट, शाकटायन, हेमचन्द्रसूरि, सारस्वतव्याकरणकरण।
- पाणिनीय शिक्षा
- भाषाविज्ञान :
  भाषा की परिभाषा, भाषा का वर्गीकरण (आकृतिमूलक एवं पारिवारिक), ध्वनियों का वर्गीकरण : स्पर्श, संघर्षी, अर्धस्वर, स्वर (संस्कृत ध्वनियों के विशेष संदर्भ में), मानवीय ध्वनियंत्र, ध्वनि परिवर्तन के कारण, ध्वनि नियम (ग्रिम,ग्रासमान वर्नर) अर्थ परिवर्तन की दिशाएँ एवं कारण, वाक्य का लक्षण व भेद, भारोपीय परिवार का सामान्य परिचय,वैदिक संस्कृत एवं लौकिक संस्कृत में अन्तर, भाषा तथा वाक् में अन्तर, भाषा तथा बोली में अन्तर।

इकाई-VI (206-328)

(ख) व्याकरण का विशिष्ट अध्ययन :

- परिभाषाएँ - संहिता, संयोग, गुण, वृद्धि प्रातिपदिक, नदी, घि, उपधा, अपृक्त, गति, पद, विभाषा, सवर्ण, टि, प्रगृह्य, सर्वनामस्थान, भ, सर्वनाम, निष्ठा।
- सन्धि- अच् सन्धि, हल् सन्धि, विसर्ग सन्धि (लघुसिद्धान्तकौमुदी के अनुसार)
  सुबन्त - अजन्त - राम, सर्व (तीनों लिंगों में), विश्वपा, हरि, त्रि (तीनों लिंगों में), सखि, सुधी, गुरु, पितृ, गौ, रमा, मति, नदी, धेनु, मातृ, ज्ञान, वारि, मधु।
- **हलन्त** - लिह्, विश्ववाह, चतुर् (तीनों लिंगों में), इदम्(तीनों लिंगों में), किम्(तीनों लिंगों में), तत्(तीनों लिंगों में), राजन्, मघवन्, पथिन्, विद्वस्,अस्मद्, युष्मद्।
- **समास**- अव्ययीभाव, तत्पुरुष, बहुव्रीहि, द्वन्द्व,
  (लघुसिद्धान्तकौमुदी के अनुसार)
- **तद्धित** - अपत्यार्थक एवं मत्वर्थीय (सिद्धान्तकौमुदी के अनुसार)
- **तिङन्त** - भू, एध्, अद, अस्, हु, दिव्, षुञ्, तुद्, तन्, कृ, रुध्, क्रीञ्, चुर ।
- **प्रत्ययान्त** - णिजन्त, सन्नन्त, यङन्त, यङ्लुगन्त, नामधातु।
- **कृदन्त** - तव्य / तव्यत्, अनीयर्, यत्, ण्यत्, क्यप्, शतृ, शानच्, क्त्वा,
  क्त, क्तवतु, तुमुन् णमुल्।
- **स्त्रीप्रत्यय** - लघुसिद्धान्तकौमुदी के अनुसार
- **कारक प्रकरण** - सिद्धान्तकौमुदी के अनुसार
- **परस्मैपद एवं आत्मनेपद विधान** - सिद्धान्तकौमुदी के अनुसार
- **महाभाष्य (पस्पशाह्निक)-**
  शब्दपरिभाषा, शब्द एवं अर्थ संबंध, व्याकरण अध्ययन के उद्देश्य, व्याकरण की परिभाषा, साधु शब्द के प्रयोग का परिणाम, व्याकरण पद्धति।
- **वाक्यपदीयम् (ब्रह्मकाण्ड) -**
  स्फोट का स्वरूप, शब्द-ब्रह्म का स्वरूप, शब्द-ब्रह्म की शक्तियाँ, स्फोट एवं ध्वनि का संबंध, शब्द-अर्थ संबंध, ध्वनि के प्रकार, भाषा के स्तर।

व्याकरण एवं भाषाविज्ञान के अभ्यास प्रश्नः- (329-341)

इकाई-VII (342-355)

संस्कृत-साहित्य, काव्यशास्त्र एवं छन्दपरिचय :

(क) निम्नलिखित का सामान्य परिचय :

- भास, अश्वघोष, कालिदास, शूद्रक, विशाखदत्त, भारवि, माघ, हर्ष, बाणभट्ट, दण्डी, भवभूति, भट्टनारायण, बिल्हण, श्रीहर्ष, अम्बिकादत्तव्यास, पंडिता क्षमाराव, वी. राघवन्, श्रीधरभास्कर वर्णेकर ।
- काव्यशास्त्र : रससम्प्रदाय, अलंकारसम्प्रदाय, रीतिसम्प्रदाय, ध्वनिसम्प्रदाय, वक्रोक्तिसम्प्रदाय, औचित्यसम्प्रदाय।
- पाश्चात्य काव्यशास्त्र : अरस्तू, लॉञ्जाइनस, क्रोचे ।

इकाई-VIII (356-460)

(ख) निम्नलिखित का विशिष्ट अध्ययन :

- **पद्य** : बुद्धचरितम् (प्रथम) रघुवंशम् (प्रथमसर्ग), किरातार्जुनीयम् (प्रथमसर्ग), शिशुपालवधम्, (प्रथमसर्ग), नैषधीयचरितम् (प्रथमसर्ग)
- **नाट्य** : स्वप्नवासवदत्तम्, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, वेणीसंहारम्, मुद्राराक्षसम्, उत्तररामचरितम्, रत्नावली, मृच्छकटिकम्।
- **गद्य** : दशकुमारचरितम् (अष्टम-उच्छ्वास), हर्षचरितम् (पञ्चम-उच्छ्वास), कादम्बरी (शुकनासोपदेश)
- **चम्पूकाव्य** : नलचम्पूः (प्रथम-उच्छ्वास)
- **साहित्यदर्पण** :

इकाई-1

॥वैदिक साहित्य॥

(क) वैदिक-साहित्य का सामान्य परिचय-

भारतीय संस्कृति में वेदों का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं सर्वोच्च है। भारतीय संस्कृति की मुख्य आधारशिला 'वेद' ही हैं। हिन्दुओं के रहन-सहन, आचार-विचार एवं धर्म-कर्म तथा संस्कृति को समझने के लिये वेदों का ज्ञान आवश्यक है। भारतीय संस्कृति में वेद सनातन वर्णाश्रम धर्म के मूल ग्रन्थ हैं। अपने दिव्य चक्षु के माध्यम से साक्षात्कृतधर्मा ऋषियों के द्वारा अनूभूत अध्यात्मशास्त्र के तत्वों की विशाल विमल राशि का नाम वेद है। मनु के अनुसार वेद पितरों, देवों का वह सनातन चक्षु है जिसके माध्यम से कालातीत और देशातीत का भी दर्शन सम्भव है। **"पितृदेवमनुष्याणां वेदचक्षुः सनातनम्"- मनुस्मृति** । वेदों में वर्णित विषयों का स्मृति,पुराणों तथा धर्मशास्त्रों में विस्तारपूर्वक वर्णन प्राप्त होता है। वेदों की व्याख्या उपनिषद्,दर्शन तथा धर्मशास्त्रों में विभिन्न प्रकार से उपलब्ध होती है, जिसमें उपनिषद् तथा दर्शन वेदों की 'आध्यात्मिक' व्याख्या को प्रस्तुत करते हैं। दर्शनों में पूर्व मीमांसा दर्शन मुख्य रूप से वेदों में प्रतिपादित कर्मकाण्ड के विषयों पर ही आधारित है। वेद विश्व के सभी प्राचीन साहित्य ग्रन्थों में सर्वप्राचीन ग्रन्थ हैं। ऋषियों ने **'पश्यन्ती'** तथा **'मध्यमा'** वाणी का आश्रय लेकर अपने हृदय में वेदों का ज्ञान प्राप्त किया था। तथा **'वैखरी'** वाणी का आश्रय लेकर अपने शिष्यों और प्रशिष्यों को यह वेदज्ञान दिया।

वेद शब्द की व्युत्पत्ति एवं अर्थ-

वेद शब्द की व्युत्पत्ति ज्ञानार्थक 'विद ज्ञाने' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने पर सिद्ध होती है। इसका अर्थ है – 'ज्ञान' । अत: वेद शब्द का अर्थ होता है – 'ज्ञान की राशि या संग्रह' । **सर्वज्ञानमयो हि सः- मनुसमृति** । पाणिनिव्याकरण की दृष्टि के अनुसार वेद शब्द की व्युत्पत्ति चार धातुओं से विभिन्न अर्थों में होती है ।

1. विद् सत्तायाम् +श्यन् (होना, दिवादि)।
2 विद् ज्ञाने + शप् लुक् (जानना, अदादि)।
3. विद् विचारणे + श्नम् (विचारना, रुधादि)।
4. विद्लृ लाभे + श (प्राप्त करना, तुदादि) ।

इसके लिए कारिका है-

"सत्तायां विद्यते ज्ञाने, वेत्ति विन्ते विचारणे ।
विन्दति विन्दते प्राप्तौ, श्यन्लुक्श्नम्शेष्विदं क्रमात्"।।

ऋक्प्रातिशाख्य की व्याख्या में **'विष्णुमित्र'** ने वेद का अर्थ किया है ।**"विद्यन्ते ज्ञायन्ते लभ्यन्ते एभिर्धर्मादिपुरुषार्था इति वेदाः"- विष्णुमित्र।** अर्थात् जिन ग्रन्थों के द्वारा धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी पुरुषार्थ-चतुष्टय के अस्तित्व का बोध होता है, तथा जिनसे पुरुषार्थ-चतुष्टय की प्राप्ति होती है । आचार्य **'सायण'** वेद शब्द की व्याख्या करते हैं- **"इष्टप्राप्त्यनिष्ट-परिहारयोरलौकिकम् उपायं यो ग्रन्थो वेदयति, स वेदः"- (तैत्तिरीय संहिता)** अर्थात् जो ग्रन्थ इष्ट-प्राप्ति और अनिष्ट-निवारण का अलौकिक उपाय बताता है, उसे वेद कहते हैं।

वेदों के अर्थ में प्रयुक्त मुख्य शब्द-

वेदों के अर्थ में **श्रुति, निगम, आगम, त्रयी, छन्दस् आम्नाय, स्वाध्याय** इन शब्दों का भी प्रयोग होता है ।

1. **श्रुति-** वेदों को गुरु शिष्य-परंपरा से श्रवण के द्वारा सुरक्षित रखे जाने पर श्रुति कहा गया है ।
2. **निगम-** निगम का अर्थ सार्थक या अर्थबोधक है । वेदों को साभिप्राय, सुसंगत और गंभीर अर्थ बताने के लिये 'निगम' कहा जाता है।
3. **आगम-** आगम शब्द का प्रयोग वेद और शास्त्र दोनों के लिए होता है।
4. **त्रयी-** त्रयी शब्द का प्रयोग वेदों के लिए होता है । त्रयी का अर्थ है - तीन वेद, ऋक् , यजु और साम वेद। इसके अन्तर्गत चारों वेदों को रखा गया है।
5. **छन्दस्-** छन्दस् शब्द **'छदि संवरणे'** चुरादिगणी धातु से बनता है। इसका अर्थ है – 'ढकना या आच्छादित करना' । चारों वेदों के लिए 'छन्दस्' शब्द का प्रयोग होता है । पाणिनि ने **"बहुलं छन्दसि"**(अष्टा.2.4.39, 73,76) सूत्रों के द्वारा वेदों को छन्दस् कहा है। यास्क ने छन्दस शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए निरुक्त में **'छन्दांसि छादनात्'** कहा है।
6. **आम्नाय-** आम्नाय शब्द 'म्ना अभ्यासे' भ्वादिगणी धातु से बनता है। यह वेदों के प्रतिदिन अभ्यास या स्वाध्याय पर बल देता है । दण्डी ने 'दशकुमारचरित में वेदों के लिए आम्नाय का प्रयोग करते हुए कहा है- **अधीती चतुर्षु आम्नायेषु'- (दण्डी)**। अर्थात् चारों वेदों का ज्ञाता ।
7. **स्वाध्याय-** स्वाध्याय शब्द 'स्व' अर्थात् 'आत्मा' के विषय में मनन चिन्तन तथा प्रतिदिन अभ्यास पर बल देता है । शतपथ ब्राह्मण में वेदों के लिए स्वाध्याय शब्द का प्रयोग हुआ है । **"स्वाध्यायोऽध्येतव्यः"** अर्थात् वेदों का अध्ययन करना चाहिए । उपनिषदों में भी वेदों के अर्थ में स्वाध्याय शब्द का प्रयोग है- **'स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न**

प्रमदितव्यम्' (तैत्ति. उप. 1.11.1)अर्थात् वेदों के अध्ययन और प्रचार में प्रमाद न करे ।

वेदों का रचनाकाल-

वेदों का रचनाकाल निर्धारण वैदिक साहित्येतिहास की एक जटिल-समस्या है। विभिन्न विद्वानों ने भाषा, रचनाशैली, धर्म एवं दर्शन, भूगर्भशास्त्र, ज्योतिष, उत्खनन में प्राप्त सामग्री, अभिलेख आदि के आधार पर वेदों का रचनाकाल निर्धारित करने का प्रयास किया है, किन्तु इनसे अभी तक कोई सर्वमान्य रचनाकाल निर्धारित नहीं हो पाया है। इसका कारण यही है कि सबका किसी न किसी मान्यता के साथ पूर्वाग्रह है। 18वीं शती के अन्त तक भारतीय विद्वानों की यह धारणा थी कि वेद अपौरुषेय है, अर्थात किसी मनुष्य की रचना नहीं है। संहिताओं, ब्राह्मणों, दार्शनिक ग्रन्थों, पुराणों तथा अन्य परवर्ती साहित्य में अनेक उद्धरण मिलते हैं जिनमें वेद के अपौरुषेयत्व का कथन मिलता है। वेद भाष्यकारों की भी परम्परा वेद को-अपौरुषेय ही मानती रही। इस प्रकार वेद के अपौरुषेयत्व की विद्वानों के द्वारा वेदाध्ययन का महत्त्वपूर्ण प्रयास किया गया, यह धारणा प्रतिष्ठित होने लगी कि वेद अपौरुषेय नहीं, मानव ऋषियों की रचना है, अतएव उनके कालनिर्धारण की सम्भावना को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। फलस्वरूप, अनेक पाश्चात्य विद्वानों के द्वारा इस दिशा में प्रयास किया गया। वैदिक आर्य-संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है, इस तथ्य को चूँकि पाश्चात्य मानसिकता अंगीकार न कर सकी, इसलिये वेदों का रचनाकाल ईसा से पूर्व मानना उनके लिये सम्भव नहीं था, क्योंकि विश्व की अन्य संस्कृतियों की सत्ता इतने सुदूरकाल तक प्रमाणित नहीं हो सकती थी, यद्यपि उन्होंने इतना अवश्य स्वीकार किया कि वेद विश्व का प्रचीनतम साहित्य है। इस प्रकार वेद विश्व का प्राचीनतम वाङ्मय है इस विषय में भारतीय तथा पाश्चात्य सभी विद्वान् एकमत हैं, वैमत्य केवल इस बात में है कि इसकी प्राचीनता कालावधि में कहाँ रखी जाय। वेद के रचनाकाल-निर्धारण की दिशा में अब तक विद्वानों ने जो कार्य किये हैं तथा एतद्विषयक अपने मत स्थापित किये है उनका यहाँ संक्षेप में उल्लेख किया गया है-

मैक्समूलर-

वैदिक वाङ्मय के निश्चित-कालनिर्धारण की दिशा में मैक्समूलर ने सर्वप्रथम प्रयास किया था, इसलिये सभी विद्वानों का ध्यान उनकी ओर आकृष्ट हो गया । प्रारम्भ में अधिकांश विद्वानों ने उसके इस मत को प्रामाणिक माना। बाद में कुछ ही ऐसे विद्वान थे जो मैक्समूलर के समर्थक बने रहे। अधिकांश ने अपनी धारणा बदल ली और उसके मत की काफ़ी आलोचना की।

मैक्समूलर ने गौतम बुद्ध के आविर्भाव को अपना आधार माना है । बुद्ध ने वैदिकी हिंसा का खंडन किया है, अतः वैदिक काल बुद्ध के जन्म से पूर्व होना चाहिए। इस आधार पर उन्होंने वैदिक काल को चार भागों में विभक्त किया है-

(क) 1200 ई.पू. से 1000 ई.पू. । यह **छन्द-काल** है । इसमें निविद् आदि स्फुट वैदिक मन्त्रों की रचनाएँ हुईं ।

(ख) 1000 ई.पू. से 800 ई.पू. । यह **मन्त्र-काल** है । इसमें वैदिक संहिताओं की रचना हुई और उनका संकलन हुआ।

(ग) 800 ई.पू. से 600 ई.पू. । यह **ब्राह्मणकाल** है । इसमें ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना हुई ।

(घ) 600 ई.पू. से 400 ई.पू. । यह **सूत्रकाल** है । इसमें श्रौतसूत्रों, गृह्यसूत्रों आदि की रचना हुई ।

कुछ समय तक यह मत अत्यन्त प्रचलित रहा, किन्तु बाद में स्वयं मैक्समूलर ने इस मत को अमान्य कर दिया। 1400 ई.पू. के बोगाज़कोई के शिलालेख की प्राप्ति के बाद यह मत सर्वथा निरस्त हो गया ।

ए. बेबर-

ए. बेवर जर्मन के विद्वान हैं इनका कथन है - "वेदों का समय निश्चित नहीं किया जा सकता । वे उस तिथि के बने हुए हैं जहाँ तक पहुँचने के लिए हमारे पास उपयुक्त साधन नहीं है । वर्तमान प्रमाण हम लोगों को उस समय के उन्नत शिखर तक पहुँचाने में असमर्थ हैं"। प्रो. वेबर कहते हैं कि "वेदों के समय को कम से कम 1200 ई.पू. या 1500 ई.पू. के बाद का कथमपि स्वीकार नहीं किया जा सकता" । प्रो. वेबर ने अपनी पुस्तक **"History of indian literature"** में यहाँ तक लिख दिया है कि वेदों का काल निर्धारण के लिए प्रयत्न करना सर्वथा बेकार है -- **"Any such of attempt of defining the relic antiquity is absolutely fruitless"**

जैकोबी-

प्रसिद्ध जर्मन वैदिक विद्वान् श्री याकोबी ने भी ज्योतिष को आधार माना है। उन्होंने ध्रुव तारा को अपना लक्ष्य बनाया है विवाह-संस्कार में **'ध्रुवं पश्य'** विधि है । ध्रुव तारा भी अपने स्थान से पीछे हटता है । उस आधार पर विचार करके उन्होंने ऋग्वेद का समय (4500-2500 ई.पू.) माना है ।

बालगंगाधर तिलक-

श्री तिलक ने 'ज्योतिष-गणना' के आधार पर ऋग्वेद का रचनाकाल (6 हजार ई.पूर्व से 4 हजार ई.पू.) माना है । उन्होंने विभिन्न नक्षत्रों

में 'वसन्त-संपात' (Vernal Equinox, वर्नल इक्विनोक्स) के आधार पर यह तिथि निर्धारित की है । उन्होंने वैदिक काल को चार भागों में विभक्त किया है और विभिन्न स्तरों में वैदिक साहित्य के अंगों का उल्लेख किया है ।

अदिति काल - 6000-4000- निविद् मंत्र (गद्य-पद्यात्मक)

मृगशिरा काल - 4000-2500- ऋग्वेद के अधिकांश सूक्त।

कृत्तिका काल -2500- 1400 चारों वेदों का संकलन।

सूत्र काल -1400-500- सूत्र ग्रन्थ दर्शन ग्रन्थ।

इनके अनुसार वेदों की रचना 6000 ई.पू. तथा संहिता रूप 2500 ई.पू. से 1400 ई.पू. के मध्य हुई है ।

एम.विण्टरनित्स-

अपने इतिहास में विन्टरनित्स ने सभी मतों की विस्तृत आलोचना के वाद अपना समन्वयात्मक मत दिया है कि वैदिक काल 2500 ई.पू. से 500 ई.पू. तक माना जा सकता है । इस प्रकार ऋग्वेद का समय 2500 ई.पू. है ।

भारतीय परम्परागत विचार-

(1) श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती - आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने वेदों आदि के सन्दर्भों के द्वारा प्रतिपादित किया है कि वेदों का उद्भव परमात्मा से सृष्टि के प्रारम्भ में हुआ। उसने अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद और सूर्य से सामवेद को प्रकट किया। उससे ही अथर्ववेद भी प्रकट हुआ।

(2) श्री अविनाशचन्द्र दास - श्री दास ने ऋग्वेद में प्राप्त भूगोल एवं भूगर्भ- संबन्धी साक्ष्य के आधार पर ऋग्वेद का रचनाकाल 25 हजार वर्ष ई. पूर्व माना है । ऋग्वेद के एक मन्त्र में वर्णन है कि सरस्वती नदी पर्वत (हिमालय) से निकलकर समुद्र में मिलती है। पुरातत्त्व की गणना के अनुसार यह समुद्र राजस्थान में था। अब उस सरस्वती नदी और राजस्थान के समुद्र का लोप हो गया है । यह घटना 25 हजार वर्ष ई.पू. की है। उस समय दोनों की सत्ता थी । अतः ऋग्वेद इससे पूर्व वन चुका था ।

(3) श्री शंकर वालकृष्ण दीक्षित - श्री दीक्षित ने उर्युक्त रूप से 'शतपथ ब्राह्मण' का समय 2500 ई.पू. मानकर चारों वेदों की रचना के लिए 1000 वर्ष का समय मानकर ऋग्वेद का रचनाकाल 3500 ई.पू. माना है ।

प्रमुख विद्वानों के अनुसार वेदों का काल-

मत प्रतिपादक	आधार	रचनाकाल-
दयानन्द सरस्वती	वेद-मंत्र	सृष्टि का प्रारम्भ
दीनानाथशास्त्रीचुलेट	ज्योतिष	3 लाख वर्ष पूर्व
अविनाशचन्द्र दास	भूगर्भ,भूगोल,सरस्वती नदी	25000 ई.पू.
नारायणभवनरावपावगी	भूगर्भ ज्योतिष	7000 ई.पू.
वालगंगाधर तिलक	ज्योतिष,(वसन्तसम्पात)	6000 ई.पू.4000 ई.पू.
डॉ.आर.जी भंडारकर	वेदमंत्र	6000 ई.पू.
शंकरबालकृष्ण दीक्षित	ज्योतिष	3500 ई.पू.
एच.याकोबी	ज्योतिष ध्रुव तारा	4500-2500 ई.पू.
विन्टरनित्स	मितानीशिलालेख	2500-500 ई.पू.
वेवर	गौतमबुद्ध अविर्भाव	1500-1200 ई.पू.
मैक्समूलर	बौद्धसाहित्य	छन्दकाल-1200,मन्त्रकाल-1000,ब्राह्मणकाल-800, सूत्रकाल-600 ई.पू.

निष्कर्ष -4000-1000 ई.पू. वेदों का रचना काल माना गया है।

वैदिक साहित्य का विभाजन-

वैदिक साहित्य को सुविधा की दृष्टि से चार भागों में बाँटा गया है-

(1) वैदिक संहिताएँ, (2) ब्राह्मण ग्रन्थ,

(3) आरण्यक ग्रन्थ, (4) उपनिषद्,

वैदिक संहिताएँ-

वेदों की चार संहिताएँ हैं-

1. ऋग्वेद संहिता, 2. यजुर्वेद संहिता,

3. सामवेद संहिता 4. अथर्ववेद संहिता ।

व्याकरण के अनुसार संहिता का अर्थ है – **"परः संनिकर्षः संहिता"(अष्टा.1.4.109)** पदों का संधि आदि के द्वारा समन्वित रूप संहिता कहा जाता है । इस दृष्टि से मंत्रभाग को संहिता कहते हैं ।

संहिताओं के ऋत्विक्-

यज्ञ के चार ऋत्विज-

1. होता, 2. अध्वर्यु

3. उद्गाता 4. ब्रह्मा ।

1. होता - यह यज्ञ में ऋग्वेद की ऋचाओं का पाठ करता है,अतएव ऋग्वेद को 'होतृवेद' भी कहा जाता हैं । ऐसी देवस्तुति वाली ऋचाओं

का परिभाषिक नाम -**"शस्त्र"** है। लक्षण- **"अप्रगीत-मन्त्र-साध्या स्तुतिः शस्त्रम्"** अर्थात् गानरहित स्तुतिपरक मन्त्र।

2. अध्वर्यु - यजुर्वेद के मंत्रों का पाठ करता है। यही यज्ञ भी करता है और यज्ञ में घृत आदि की आहुति देता है।

3. उद्गाता- यह सामवेद के मन्त्रों का पाठ करता है, तथा देवस्तुति में मन्त्रों का गान करता है।

4. ब्रह्मा- ब्रह्मा यज्ञ का संचालन करता है, वही यज्ञ का अधिष्ठाता और निर्देशक होता है यह चतुर्वेदवित् होता है। त्रुटियों के संशोधन के कारण इसको यज्ञ का भिषज, वैद्य कहा जाता है। ।

ऋग्वेद के एक मंत्र में चारों ऋत्विजों के कर्म्मों का निर्देश है-

"ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान्, गायत्रं त्वो गायति शक्करीषु । ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां विमिमीत उ त्वः"। (ऋग्. 10.71.11)

ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
होता	अध्वर्यु	उद्गाता	ब्रह्मा
मैत्रावरुण	प्रतिप्रस्थाता	प्रस्तोता	ब्राह्मणाच्छसी
अच्छावाक्	नेष्टा	प्रतिहर्ता	आग्नीध्र
ग्रावस्तुत	उन्नेता	सुब्रह्मण्य	पोता

वैदिक वाङ्मय का द्विविध विभाजन –

वेदों में वर्णित विषय की दृष्टि से समस्त वैदिक वाङ्मय को दो भागों में बाँटा गया है-

1. **कर्मकाण्ड-** वेद,ब्राह्मण।
2. **ज्ञानकांड-** आरण्यक, उपनिषद।

1. कर्मकाण्ड- 'वेदों' और **'ब्राह्मण ग्रन्थों'** को "कर्मकाण्ड" के अन्तर्गत रखा जाता है, क्योंकि इनमें विविध यज्ञों के कर्मकाण्ड की पूरी प्रक्रिया दी गयी है। वेदों में यज्ञीय कर्मकाण्ड से संबद्ध मंत्र हैं और ब्राह्मण ग्रन्थों में उनकी विस्तृत व्याख्या है।

2. ज्ञानकांड- "ज्ञानकांड" के अन्तर्गत **'आरण्यक ग्रन्थ'** और **'उपनिषद'** हैं। आरण्यक ग्रन्थों में यज्ञिय क्रियाकलाप की आध्यात्मिक एवं दार्शनिक तत्त्वों की समीक्षा की गयी है। इनमें ब्रह्म, ईश्वर, जीव, प्रकृति, मोक्ष आदि का वर्णन है। अतएव आरण्यक और उपनिषदों को ज्ञानकांड कहा जाता है।

वेदाङ्ग-

वेदों के ज्ञान के लिए सहायक ग्रन्थों को वेदाङ्ग कहा गया है। ये वेदों के व्याकरण, यज्ञों के कालनिर्धारण, शब्दों के निर्वचन, मंत्रों की पद्यात्मक रचना, यज्ञीय क्रियाकलाप का सांगोपांग विवेचन एवं मंत्रों के उच्चारण आदि विषयों से संबद्ध हैं। वेदांग 6 हैं-

1. शिक्षा 2. व्याकरण
3. छन्द 4. निरुक्त
5. ज्योतिष 6. कल्प

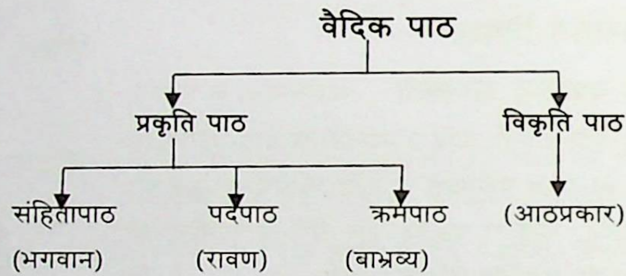
**"शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्योतिषं तथा ।
कल्पश्चेति षडङ्गानि वेदस्याहुर्मनीषिणः"** ।।

ये वेदांग सामान्यतया सूत्रशैली में लिखे गए है।

वैदिक पाठ-

वेदपाठ दो प्रकार के होते हैं।

1. प्रकृति पाठ 2. विकृति पाठ



प्रकृति पाठ-

1. **संहिता पाठ-** इसमें मंत्र अपने मूल रूप में रहता है। **'त्रिर्भुज'** संहितापाठ **"आर्षपाठ"** कहलाता है।
2. **पदपाठ-** इसमें मंत्र के प्रत्येक पद को पृथक् करके पढ़ा जाता है। यदि कोई संधि है तो उस संधि को तोड़ दिया जाता है।

पदपाठकर्ता ऋषि-

- 'ऋग्वेद' 'शाकल' शाखा -**शाकल्य ऋषि, और रावण।**
- यजुर्वेदीय तैत्तिरीय शाखा -**आत्रेय।**
- सामवेदीय कौथुम शाखा -**गार्ग्यः।**

3. **क्रमपाठ-** इसमें पदों का यह क्रम रहता है- कख, खग, गघ ।

विकृति पाठ/अष्ट विकृतियां-

वेद के मंत्रों के उच्चारण तथा उनकी सुरक्षा लिए अनेक उपाय अपनाए गए थे। इन उपायों को विकृतियाँ कहते थे। इनमें मंत्रों के पदों को घुमा-फिरा कर अनेक प्रकार से उच्चारण किया जाता था। ये विकृतियाँ आठ हैं-

1. जटा-पाठ 2. माला
3. शिखा 4. रेखा
5. ध्वज 6. दण्ड
7. रथ 8. घन

**"जटा माला शिखा रेखा ध्वजो दण्डो रथो घनः ।
अष्टौ विकृतयः प्रोक्ताः क्रमपूर्वा महर्षिभिः" ।**

इनमें घनपाठ सबसे बड़ा और कठिन होता है। 'घनपाठ' में प्रथम पद की आवृत्ति (5) बार होती है।

वैदिक छन्दों के भेद- 1. पादाक्षर, 2.अक्षर।

वंशमण्डल-

द्वितीय मण्डल से सप्तम मण्डल तक **'वंशमण्डल'** कहते है। इसका दूसरा नाम **'परिवार मण्डल'** है। , ये इस प्रकार से हैं-
गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भारद्वाज, वशिष्ठ ।

वेदों की विभिन्न व्याख्या पद्धतियां-

(1) यास्क- यास्क के अनुसार मंत्रों के तीन प्रकार के अर्थ होते हैं-

1. **आधिभौतिक** (प्राकृतिक),
2. **आधिदैविक** (देवविशेष से संबद्ध),
3. **आध्यात्मिक** (परमात्मा या जीवात्मा से संबद्ध) ।

मुख्य रूप से मंत्रों का प्रतिपाद्य एक परमात्मा ही है । विभिन्न गुणों और कर्मों के आधार पर उसके ही अन्य देवतावाचक नाम हैं। वेदों के परंपरागत अर्थ का ज्ञान आवश्यक है। परंपरागत अर्थ जानने वाले को 'पारोवर्यवित्' कहते थे। -**"परोवर्यवित्सु तु खलु वेदितृषु भूयोविद्यः प्रशस्यो भवति"**- (नि.1.16) यास्क की व्याख्या पद्धति 'वैज्ञानिक' है ।

(2) आचार्य सायण- वेदों की व्याख्या करने वाले आचार्यों में आचार्यसायण का स्थान अग्रगण्य है। वे अकेले ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने सभी वेदों तथा ब्राह्मण-ग्रन्थों आदि की भी व्याख्या की है। उन्होंने परम्परागत शैली को अपनाया है। तथा यज्ञ-प्रक्रिया को सर्वत्र प्रधानता दी है। वे वेदों में इतिहास मानते हैं। पाश्चात्त्य विद्वान **"प्रो. रुडोल्फ रोठ"** ने सायण की बहुत आलोचना की है। लौकिक इतिहास मानने के कारण स्वामी दयानन्द जी और कई लोगों ने दोष निकाले हैं ।परन्तु मैक्समूलर, विल्सन, गेल्डनर आदि विद्वान् सायण के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं और मानते हैं कि सायण के भाष्य के आधार पर ही वैदिक वाङ्मय में उनकी गति हो सकी है। वस्तुतः पाश्चात्त्य जगत् को वेदों का ज्ञान देने वाले आचार्य सायण ही हैं।

(3) स्वामी दयानन्द सरस्वती- महर्षि दयानन्द आर्यसमाज के संस्थापक हैं। ये आधुनिक युग में वेदों के पुनरुद्धारक माने जाते हैं। उन्होंने नैरुक्त-प्रक्रिया का आश्रय लेकर वेदों की नई व्याख्या प्रस्तुत की है । उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद की संपूर्ण संस्कृत और हिन्दी में व्याख्या की है तथा ऋग्वेद की व्याख्या मंडल 7 के 80 सूक्त तक ही कर सके।

वेदों का महत्त्व-

अनेक दृष्टियों से वेदों को महत्त्वपूर्ण माना गया है ।' संकेतरूप में कुछ तथ्य दिए जा रहे हैं-

धार्मिक महत्त्व-

वेद आर्यधर्म की आधारशिला हैं । धर्म के मूलतत्त्वों को जानने के एकमात्र साधन वेद हैं। **वेदोऽखिलो धर्ममूलम् । मनु.2.6** मनु ने वेदों को सारे ज्ञानों का आधार मानकर उन्हें 'सर्वज्ञानमय' कहा है, अर्थात् वेदों में सभी प्रकार के ज्ञान और विज्ञान के सूत्र विद्यमान हैं ।

**"यः कश्चित् कस्यचिद् धर्मो , मनुना परिकीर्तितः ।
स सर्वोऽभिहितो वेदे, सर्वज्ञानमयो हि सः" ।। (मनु. 2.7)**

महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य के प्रारम्भ में ब्राह्मण का अनिवार्य कर्तव्य बताया है। कि वह निःस्वार्थभाव से वेदांङ्गों के सहित वेदों का अध्ययन करे ।**"ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च" । (महा.आह्निक 1.)** मनु ने वेदाध्ययन पर इतना अधिक बल दिया है कि ब्राह्मण के लिए वेदाध्ययन ही परम तप है । जो वेदाध्ययन न करके अन्य शास्त्रों में रुचि रखता है वह इस जन्म में ही सपरिवार शूद्र की कोटि में है -

**वेदमेव सदाऽभ्यस्येत् तपस्तप्यन् द्विजोत्तमः ।
वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ।। (मनु. 2.166)
योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ।। (मनु. 2.168)**

सांस्कृतिक महत्त्व- वेद भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत हैं । भारतीय संस्कृति का यथार्थ ज्ञान वेदों और वैदिक वाङ्मय से ही प्राप्त होता है । प्राचीन समय में वस्तुओं के नाम आदि तथा मानव के कर्तव्यों का निर्धारण वेदों से ही किया गया था ।

**सर्वेषां तु स नामानि, कर्माणि च पृथक् पृथक् ।
वेदशब्देभ्य एवादौ, पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ।। (मनु. 1.21)**

वेदों के प्रमुख विषय-

वेद	ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
उपवेद	आयुर्वेद	धनुर्वेद	गान्धर्ववेद	स्थापत्यवेद
देवता	अग्नि	वायु	आदित्य	अङ्गिरा
ऋत्विज	होता	अध्वर्यु	उद्गाता	ब्रह्मा
मुख्याचार्य	पैल	वैशम्पायन	जैमिनि	सुमन्तु
वर्ण्य विषय	शस्त्र	यज्ञ	स्तुतिस्तोम	प्रायश्चित्त
वेदप्रतीक	शरीर	मन	बुद्धि	आत्मा
तत्व	वाक्तत्व	मनस्तत्व	प्राणतत्व	
लोक	भूलोक	अन्तरिक्ष	द्युलोक	

॥संहिता साहित्य॥

॥ऋग्वेद-संहिता॥

'ऋक्' का अर्थ स्तुतिपरक मन्त्र हैं-**"ऋच्यते स्तूयतेऽनया इति ऋक्"**। जिन मन्त्रों के द्वारा देवों की स्तुति की जाती है, उन्हें (ऋक्, ऋच, ऋचा) कहते हैं। ऋग्वेद में विभिन्न देवों की स्तुति वाले मंत्र हैं, अतः इसे ऋग्वेद कहते हैं। ऋग्वेद में ब्रह्मप्राप्ति, वाक्तत्व या शब्द ब्रह्म की प्राप्ति, प्राण या तेजस्विता की प्राप्ति अमरत्व के साधन तथा ब्रह्मचर्य के द्वारा ओजस्विता आदि का वर्णन है। ऋचा तीन प्रकार की होती है -

(1) परोक्षकृत, (2) प्रत्यक्षकृत, (3) आध्यात्मिक।

ऋग्वेद की शाखाएँ-

महाभाष्य में ऋग्वेद की (21) शाखाएं वर्णित है। **'एकविंशतिधा बाह्वृच्यम्'** - (महर्षि पतंजलि150 ई.पू.)

प्रमुख रूप से पाँच शाखाएं हैं-

(1) **शाकल** - वर्ण्य-विषय, मंत्रसंख्या इत्यादि। (1017) सूक्त।

(2) **वाष्कल-** यह शाखा उपलब्ध नहीं है। (1025) सूक्त 8 अधिक शाकल में। बाष्कल शाखा के रचयिता-**'सुयज्ञ'** ।

(3) **आश्वलायन-** यह संहिता और इसका ब्राह्मण सम्प्रति उपलब्ध नहीं है। इस शाखा के श्रौतसूत्र और गृह्यसूत्र ही उपलब्ध हैं।

(4) **शांखायन-** यह उपलब्ध नहीं है। इसके ब्राह्मण, आरण्यक, और श्रौतसूत्र प्राप्त हैं।

(5) **माण्डूकायनी-** यह शाखा संप्रति अप्राप्य है।

- चरणव्यूह के रचयिता- **शौनक** हैं।

ऋग्वेद विभाजन के दो प्रकार-

(1) अष्टक, अध्याय, वर्ग, मंत्र

(2) मंडल, अनुवाक, सूक्त, मंत्र।

1. अष्टक क्रम-

पूरे वेद में आठ भाग हैं जिन्हें (अष्टक) कहा जाता है । प्रत्येक अष्टक में आठ अध्याय हैं। इस प्रकार ऋग्वेद में सम्पूर्ण (64) अध्याय हैं । प्रत्येक अध्याय में वर्गो की संख्या भिन्न है।

(अष्टक = 8, अध्याय =64, वर्ग = 2024, मंत्र =10580,)

ऋग्वेद में वालखित्य सूक्तों सहित= 1028 सूक्त हैं।

2. मण्डलक्रम-

मण्डल= 10, **बालखिल्य सूक्त=**11 सूक्त+80 मंत्र,

अनुवाक=85, **सूक्त=**1017+11=1028, **मंत्र=**10580,

ऋग्वेद मण्डलों की संज्ञा,ऋषि,सूक्त तथा मन्त्र-

मण्डल	संज्ञा	ऋषि	सूक्त सं.	मन्त्र
प्रथम	देवता	मधुच्छन्दा	191	2006
द्वितीय	कथा	गृत्समद	43	429
तृतीय	संवाद	विश्वामित्र	62	617
चतुर्थ	ध्रुवपद	वामदेव	58	589
पञ्चम	तत्त्वज्ञान	अत्रि	87	727
षष्ठ	दानस्तुति	भारद्वाज	75	765
सप्तम	याज्ञिक	वशिष्ठ	104	841
अष्टम	संस्कार	कण्व (प्रगाथा मण्डल)	103	1716
नवम	लौकिक	पवमान सोम	114	1108
दशम	आप्तसूक्त	इन्द्राणी, शची, उर्वशी	191	1754

ऋग्वेद के प्रमुख सन्दर्भ-

- ऋग्वेद का प्रारम्भिक सूक्त =**अग्नि,**
- ऋग्वेद का अन्तिम सूक्त -**संज्ञान,**
- ऋग्वेद का पाठप्रणयनकर्ता- **वाभ्रव्य,**
- ऋग्वेद का पदपाठकर्ता -**शाकल्य,**
- ऋग्वेद पर सम्पूर्ण भाष्य -**सायण,**
- ऋग्वेद पर सबसे प्राचीन भाष्य -**स्कन्दस्वामी।**
- याज्ञवल्क्य **'जनक'** की सभा में थे।
- ऋग्वेद में **'अघ्न्य'** शब्द का सम्बन्ध **'गाय'** से है।
- "गीतिषु सामाख्या पुरुषार्थानां वेदयिता वेद उच्यते" - **(भट्टभास्कर)**
- "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्"- **(आपस्तम्ब-जैमिनि)**

- "आरण्यकश्च वेदेभ्यः औषधिभ्योऽमृतं यथा" - **(कृष्णद्वैपायन)।**
- "ब्राह्मणं नाम कर्मणः तन्मन्त्राणां व्याख्यानग्रन्थः" - **(विष्णुमित्रः)।**
- देवताओं के स्तुतिपरक मन्त्र - **ऋक्।**
- ऋग्वेद का मुख्यकर्म- **उपासना।**
- विभिन्न ऋचाओं का संग्रह- **ऋग्वेद-संहिता।**
- **संहिता**- संकलन/संग्रह का बोधक है।
- ऋग्वेद में **`स्वरित'** स्वर-ऊपर की ओर होता है, तथा **'उदात्तस्वर'** अचिह्नित होता है।
- **दशतयी** - ऋग्वेद,
- 'आद्युदात्तवेदशब्द'- **ग्रन्थवाचकः,**
- 'अन्त्योदात्तवेदशब्द'-**कुशमुष्टिवाचक।**
- (1) ऋक्- भूलोक (अग्नि देवता प्रधान)
- (2) यजु- अन्तरिक्ष (वायु)
- (3) साम- द्युलोक (सूर्य),
- **यजुर्वेद में प्राप्त दूसरी व्याख्या-**

  (1) **ऋग्वेद-** वाक्तत्व (ज्ञानतत्व या विचारतत्व का संकलन)।

  (2) **यजुर्वेद-** मनस्तत्व (चिन्तन, कर्मपक्ष, कर्मकांड, संकल्प का संग्रह)।

  (3) **सामवेद-** प्राणतत्व (आन्तरिक ऊर्जा, संगीत, समन्वय का संग्रह)।
- इन तीनों तत्वों के समन्वय से ब्रह्म की प्राप्ति होती है।
- 'कितव' सूक्त- ऋग्वेद में है।
- 'ऋक्लक्षण' शौनक का ग्रन्थ है।

❖ मंत्रद्रष्टा ऋषिकाएं=

ऋग्वेद ऋषिकाएँ =24 (224 मंत्र)

अथर्ववेद ऋषिकाएँ = 5 (198 मंत्र)

24+5=(29), 224+198=422 सम्पूर्ण ऋ.म.सं.।

ऋग्वेद में प्रमुख (20) छन्द हैं जिनमें (7) छन्दों का मुख्य रूप से उपयोग हुआ है।

(1) गायत्री (24) (2) उष्णिक (28)

(3) अनुष्टुप (32) (4) बृहती (36)

(5) पङ्क्ति (40) (6) त्रिष्टुप (44)

(7) जगती (48)

ऋग्वेद के महत्वपूर्ण सूक्त-

(1) पुरुषसूक्त (10/90) - यह चारो वेदों में है। इसमें परमात्मा के विराट रूप का वर्णन तथा समस्त सृष्टि का वर्णन है। यह सूक्त अपनी उदात्त भावना, दार्शनिकता, भाव गांभीर्य और अन्तर्दृष्टि के लिये विख्यात है।

- पुरुष एवेद सर्वम्- (ऋ. 10-10-2)
- ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद- (ऋ. 10.10-12)

(2) नासदीयसूक्त (10/129) - यह सूक्त वैदिक ऋषियों के प्रतिभा ज्ञान और अलौकिक दार्शनिक चिन्तन का परिचायक है। सृष्टि से पूर्व केवल संकल्प काम उत्पन्न हुआ।

(3) हिरण्यगर्भ सूक्त- (10/121) प्रजापति ऋषि।

यह (10) मंत्रों में विभक्त है । प्रजापति-सृष्टिआरम्भ में हिरण्यगर्भ सुवर्ण पिण्ड के रूप में प्रकट हुआ वही सृष्टि का नियामक भी है।

- हिरण्यगर्भ समवर्तवाग्रे- (ऋ.10-121-1)
- य आत्मदा बलदा..... (ऋ.10-121-21)
- कस्मै देवाय हविषाविधेम।

(4) अस्य वामीय सूक्त- (10/164) (52 मंत्र)

इसमें दर्शन, अध्यात्म मनोविज्ञान, भाषाविज्ञान, ज्योतिष भौतिक विज्ञान सम्बन्धी तथ्य वर्णित हैं। भारतीय तथा पाश्चात्य विद्वानों द्वारा इस सूक्त को अत्यन्त क्लिष्ट और दुर्बोध माना गया है।

- इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहु.......(मं. 46),
- द्वा सुपर्णा सयुजा ......(मं. 20),
- अयं यज्ञो भुवनस्य नाभि..... (मं. 35),

(5) श्रद्धा सूक्त (10/151)

मंत्र श्रद्धा की परिभाषा- श्रद्धा काम (संकल्प) की पुत्री है उसे कामायनी कहते हैं।

- श्रद्धां हृदय्ययाकूव्या श्रद्धया विन्दते वसु (मं-4),
- श्रद्धे श्रद्धामयेह नः। (मं-5),
- ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया। (ऋ.9-113,2),
- ऋतं वदन्, सत्यं वदन, श्रद्धां वदन्। (ऋ.113,4)
- श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि।
- श्रद्धया सत्यमाप्यते।

(6) वाक्सूक्त (10/125)

8 मंत्रों में वाक्तत्व, शब्दब्रह्म, शब्दतत्व, वाग्देवी का ब्रह्म के रूप में वर्णन है। वाक्तत्व सर्वत्र व्याप्त है। यह इन्द्र, अग्नि, सोम, मित्र, वरुण आदि की ऊर्जा का स्रोत है। यह राष्ट्रनिर्मात्री शक्ति है। पूरा सूक्त उत्तम पुरुष में (वाक् आम्भृणी) ऋषि द्वारा आत्मविवेचन के रूप में प्रस्तुत है।

- अहं राष्ट्री संगमनी वसूनाम- (मंत्र-3),

- अहमेव स्वयमिदं वदामि-जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः (मंत्र-5)
- अहमेव वात इव प्रवामि-आरभमाणा भुवनानि विश्वा (मंत्र-8)।

(7) संज्ञान सूक्त (10/191)

4 मंत्रों में सामाजिक सौहार्द, सामंजस्य यह अस्तित्व, ऐकमत्य और संगठन का उपदेश है। यह सामाजिक, राष्ट्रीय और आर्थिक चिन्तन में समन्वय की भावना का प्रतिपादक है।

- सं गच्छध्वं सं वदध्वं, सं वो मनांसि जानताम्। (मं-2),
- समानो मन्त्रः समितिः संमानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम्।
- समानी व आकूतिः समाना हृदयानी वः।

(8) दानस्तुति सूक्त (10/107)

इसमें दान की प्रक्रिया महिमा का गुणगान है, दानी अमर हो जाता है।

- न भोजा ममुर्न न्यर्थमीयुः।,
- उच्चा दिवि दक्षिणावन्तो अस्थुः।
- न स सखा यो व ददाति सख्ये।
- मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः।
- केवलाघो भवति केवलादी।

(9) अक्षसूक्त (10/34)

14 मंत्रों में अक्ष (द्यूत, जुआ खेलना) की कई शब्दों में निन्दा की गयी है।

- अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषश्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः।

(10) विवाह सूक्त (10/85)

सूर्या (सूर्य की पुत्री उषा) का सोम (चन्द्रमा) से विवाह का वर्णन है।

- अघोरचक्षुरपतिघ्नी एधि।
- शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे।।
- सम्राज्ञी श्वशुरे भव ।

आख्यानसूक्त -

"दृष्टचरितमाख्यानं" जिसे आंखों से देखा गया हो उसे आख्यान कहते हैं।

- **विष्णु के तीन पैर (त्रिविक्रम) (10.95)** - तीन पैर से द्युलोक, भूलोक और अन्तरिक्ष को नापने का वर्णन। अतः विष्णु को त्रिविक्रम कहते हैं।
- **सोम-सूर्या-विवाह- (10/85)** सोम और सूर्या के विवाह का वर्णन है।
- **श्यावाश्व सूक्त-** (5.61) इस सूक्त में श्यावाश्व और राजा रथवीथि की कन्या का वर्णन किया गया है।
- **मण्डूक सूक्त** (7/103) इसमें वर्षा ऋतु में बोलते मेंढकों की वेदपाठी ब्राह्मणों से तुलना की गई है।
- **इन्द्र-वृत्र-युद्ध- (1/80) (इन्द्र-सूर्य, वृत्र-मेघ)**, वर्षाकाल में इन दोनों का युद्ध चलता रहता है ।

संवाद सूक्त-

(1) पुरुरवा उर्वशी संवाद सूक्त (10/95)

इसमें राजा पुरूरवा (पुरुरवस्) और उर्वशी का संवाद वर्णित है। पुरुरवा का उर्वशी नामक अप्सरा के प्रणय सम्बन्ध का वर्णन वर्णित है, इसका रूप विक्रमोर्वशीय भी में मिलता है।

- पुरुरवो मा मृथा मा प्र पप्तो-(मं.15)

(2) विश्वामित्र नदी सूक्त (3/33) (ऋषि देवता) पणि, सरमा।

(3) यम यमी संवाद सूक्त (10/10)

यमी यम से सृष्टि के लिये प्रणय याचना करती है।

- पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात्। (ऋ.10-10)

(4) सरमा पणि संवाद सूक्त 10/108

कृपण व्यापारी द्वारा इन्द्र की गाय चुरा लेना वर्णित है।

- वृहस्पतिर्या अविन्दन निगूढाः, सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः। (ऋ.10-10-8,11)

वैदिक खिल सूक्त-

- खिल का अभिप्राय-परिशिष्ट प्रक्षिप्त।
- समस्त खिल सूक्त- (5) अध्याय, (86) खिल सूक्त।
- सर्वप्रथम खिल सूक्तों का संकलन **(प्रो.जी.व्यूलर)** ने एक प्राचीन काश्मीरी पाण्डुलिपि से किया था।
- **प्रमुख विद्वानों के अनुसार खिल सूक्तों की संख्या-**
  मैक्समूलर- 32, **आउफ्रेख्त** -25, **सातवलेकर**- 36,

विशिष्ट खिल सूक्त-

सौपर्ण सूक्त, श्री सूक्त, (वालखिल्यसूक्त संख्या=11 ऋग्वेद अष्टम मण्डल),पवमानी सूक्त,ब्रह्मसूक्त,रात्रिसूक्त,कृत्यासूक्त, शिवसंकल्पसूक्त, संज्ञान सूक्त,महानाम्न्र सूक्त,निविद अध्याय,प्रैष अध्याय, कुन्ताप सूक्त।

॥यजुर्वेद-संहिता॥

शुक्ल यजुर्वेद को ही 'वाजसनेयि-संहिता' और 'माध्यन्दिन संहिता' भी कहते हैं। इसके ऋषि **'याज्ञवल्क्य'** हैं। वे मिथिला के निवासी थे पिता का नाम 'वाजसनि' होने से याज्ञवल्क्य को वाजसनेय कहते थे । वाजसनेय से संबद्ध संहिता- वाजसनेयि-संहिता कहलाई । याज्ञवल्क्य ने मध्याहन के सूर्य से इस वेद को प्राप्त किया था, अत: इसे माध्यन्दिन संहिता भी कहते हैं । शुक्ल और कृष्ण भेदों का आधार यह है कि शुक्ल यजुर्वेद में यज्ञों से संवद्ध विशुद्ध मंत्रात्मक भाग है । इसमें व्याख्या, विवरण और विनियोगात्मक भाग नहीं है । ये मंत्र इसी रूप में यज्ञों में पढे जाते हैं । विशुद्ध और परिष्कृत होने के कारण इसे शुक्ल (स्वच्छ, अमिश्रित) यजुर्वेद कहा जाता है । कृष्ण यजुर्वेद का संवन्ध ब्रह्म संप्रदाय से है । इसमें मंत्रों के साथ ही व्याख्या और विनियोग वाला अंश भी मिश्रित है, अत: इसे कृष्ण (अस्वच्छ, मिश्रित) कहते हैं। इसी आधार पर शुक्ल यजुर्वेद के पारायणकर्ता ब्राह्मणों को 'शुक्ल' और कृष्ण यजुर्वेद के पारायणकर्ता ब्राह्मणों को 'मिश्र' नाम दिया गया है। महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य में यजुर्वेद की 100 शाखाओं का वर्णन किया है। 'एकशतमध्वर्युशाखा:' (आह्निक 1) । षड्गुरुशिष्य की सर्वानुक्रमणी की वृत्ति में तथा कूर्मपुराण में भी यजुर्वेद की 100 शाखाओं का उल्लेख मिलता है।परन्तु 'चरणव्यूह' में यजुर्वेद की 86 शाखाओं का ही उल्लेख मिलता है ।

- यजुष (यजुस्,यजुः) का अर्थ=
  (1) यजुर्यजते - यज्ञ से सम्बद्ध मंत्र।
  (2) इज्यतेऽनेनेति यजुः- जिन मंत्रों से यज्ञ किया जाता है- यजुष्।

यजुर्वेद की शाखाएँ-दो विभाग-

(1) शुक्ल यजुर्वेद- आदित्य सम्प्रदाय।

(2) कृष्ण यजुर्वेद- ब्रह्म सम्प्रदाय॥

(1) शुक्ल यजुर्वेद

शुक्ल यजुर्वेद में दो शाखाएँ हैं-

1. माध्यन्दिन संहिता -

- माध्यन्दिन संहिता/वाजसनेयि संहिता,
- वाज= अन्न, **सनि** = दानम् ।
- **अध्याय**- 40, मंत्र- 1975
- यजुर्वेद में अक्षरों की संख्या= 2,88,000 (शतपथ ब्रा.)
- **सौत्रामणि स्तोत्र** वाजसनेयी संहिता में है ।
- इस शाखा पर उपलब्ध भाष्य का नाम है- **मातृमोद**।

2. काण्व संहिता-

- **अध्याय**- 40, **मंत्र**- 2086,
- इसमें वाजसनेयि संहिता से 111 मंत्र अधिक हैं।
- **विभाजन- अध्याय**- 40, **अनुवाक्**- 328, **मंत्र**- 2086,
- **विषय**- विभिन्न यज्ञों की विधियाँ और उनमें पाठ्य मंत्रों का संकलन।

यजुर्वेद माध्यन्दिन संहिता में प्रमुख अध्यायों के वर्णित विषय-

अध्याय	विषय
अध्याय- 1-2	दर्श, पौर्णमास
अध्याय- 3-	अग्निहोत्र, चातुर्मास्य।
अध्याय- 4-8	सोमयाग, अग्निष्टोम
अध्याय- 11	अग्निचयन
अध्याय- 15	अग्न्याधान
अध्याय- 16	रुद्राध्याय(शतरुद्रीय),
अध्याय- 20	अश्विनी कुमार
अध्याय- 22	अश्वमेध
अध्याय- 23	प्रजापति सूक्त
अध्याय- 30	पुरुषमेघ
अध्याय- 31	पुरुषसूक्त- विष्णुसूक्त
अध्याय- 33	सर्वमेध
अध्याय- 34	शिवसङ्कल्पसूक्त
अध्याय- 35	पितृमेघ
अध्याय- 40	ईशावास्योपनिषद्

(2) कृष्णयजुर्वेद

- इसमें मन्त्र और ब्राह्मण का सम्मिश्रण है।
- चरणव्यूह के अनुसार (86) शाखाएं,
- शुक्ल यजुर्वेद- 17 कृष्ण यजुर्वेद - 69 = (86)
- कृष्ण यजुर्वेद में तैत्तरीय शाखा के दो भेद- **औख्य, खांडिकेय**।
- मुख्य शाखा- **(1) तैत्तिरीय (2) मैत्रायणी (3) काठक/कठ (4)कपिष्ठल**।
- **(1) तैत्तिरीय** = (1) औख्य, (2) खांडिकेय।
- खांडिकेय के पाँच भेद हैं = **आपस्तब, बौधायन, सत्याषाढ, हैरण्यकेश, काट्यायन**।
- **(2) मैत्रायणी**= (7) भेद।

- (3) काठक/कठ = (12) भेद। (44) उपग्रन्थ।

(क) तैत्तिरीय संहिता -

- कांड = 6, प्रपाठक= 44, अनुवाक= 631,
- (अनुवाक का उपभेद खंड है।)
- यही एक संहिता है, जिसके ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, शुल्बसूत्र और धर्मसूत्र प्राप्य है, अतः यही संहिता सर्वांगपूर्ण है।

तैत्तिरीय संहिता के प्रमुख कांडों के वर्णित विषय-

कांड 1- दर्शपूर्णमास, अग्निष्टोम, राजसूय।,
कांड 2- पशुविधान, इष्टि विधान, कारीरी इष्टि।
कांड 3- पवमान ग्रह आदि, वैकृत विधि, इष्टिहोम।
कांड 4- अग्निचिति देवयजनग्रह, चितिवर्णन, वसोर्धारा संस्कार।
कांड 5- उख्य अग्नि, चितिनिरूपण, इष्टकायत्र, वायव्य पशु आदि।
कांड 6- सोममंत्रब्राह्मण।
कांड 7- अश्वमेघ, षड्रात्र आदि, सत्रकर्म आदि।

(ख) मैत्रायणी संहिता-

- मैत्रायणी उपनिषद् अध्याय = (7) यह चरक/ कठ की 12 शाखाओं में से एक है। (चरणव्यूह)
- **(1) मानव, (2) दुन्दुभ, (3) ऐकेय, (4) वाराह, (5) हारिद्रवेय, (6) श्याम (7) श्यामायनीय,**
- **काण्ड= 4, प्रपाठक= 56, मंत्र = 3144,**
- इनमें (1701) मन्त्र ऋग्वेद से उद्धृत है।

मैत्रायणी संहिता के प्रमुख कांडों के वर्णित विषय-

कांड 1- दर्शपूर्णमास, अध्वर अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय याग।
कांड 2- काम्य इष्टियाँ, राजसूय और अग्निचिति।
कांड 3- अग्निचिति अध्वर आदि विधि, सौत्रामणी, अश्वमेध याग।
कांड 4- यह खिल नाम से विख्यात है, राजसूय, अध्वर, प्रवर्ग्य, याज्यानुवाक्।

(ग) काठक/कठ संहिता-

कठ शाखा की संहिता। खंड = (5)

(1) इठिमिका (2) मध्यमिका (3) ओरिमिका (4) याज्यानुवाक्या (5) अश्वमेधादि अनुवचन।

इसके उपखंडों को **'स्थानक'** और **'अनुवचन'** नाम दिए हैं। इसमें 19 यागों का वर्णन है।

खंड = 5, स्थानक = 40, उपखण्ड = 53,
अनुवाक = 843, मंत्र = 3028,
इसमें मंत्र और ब्राह्मणों की संख्या (18000) है ।

(घ) कपिष्ठल-कठ संहिता-

यह चरकों की 12 शाखाओं में एक है । इसके प्रवर्त्तक ऋषि 'कपिष्ठल' ऋषि हैं ।
प्राचीन शाखाएं - **कठ, प्राच्य/ कपिष्ठल कठ।**
पाणिनि- **'कपिष्ठलो गोत्रो'** । (8,3,91)
अष्टक = 6, **अध्याय** = 48, (विवादित अध्याय)

यजुर्वेद के प्रमुख सन्दर्भ-

- **विनियोगामिश्रितत्वम्-** शुक्लत्वम्,
- **विनियोगमिश्रितत्वम्-** कृष्णत्वम्,
- **आदित्यसम्प्रदाय-** शुक्लः, **ब्रह्मसम्प्रदाय** – कृष्णः,
- **ऋत्विज=अध्वर्यु। "अध्वर्युनामक एक ऋत्विग् यज्ञस्य स्वरूपं निष्पादयति"** । अध्वरं यूनक्ति, अध्वरस्य नेता ।
- यजुर्वेद का यज्ञ के कर्मकाण्ड से साक्षात् सम्बन्ध है, अतः इसे **'अध्वर्युवेद'** कहा जाता है ।
- 'षड्गुरुशिष्य' की सर्वानुक्रमणि 'चरणव्यूह' के अनुसार यजुर्वेद में शाखाएं = (86)
- परमावटिक शाखीय वेद- शुक्ल यजुर्वेद।
- अनियताक्षरावसानो यजुः- जिन मन्त्रों में पद्य तुल्य अक्षर सीमित न हो।
- **'शेषे यजुः'-** जैमिनि। (आचार्य = वैशम्पायन)
- शुक्ल यजुर्वेद पर स्वामी करपात्री का भाष्य है।)
- यजुर्वेद में **'अश्वमेध'** शब्द राष्ट्रीय उन्नति तथा प्रगति के लिये प्रयुक्त हुआ है ।
- **'पितृमेध/पितृयज्ञ'** माता पिता की सेवा-शुश्रूषा के लिये प्रयुक्त हुआ है ।
- **'पुरुषमेध/नरमेध'** मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति के लिये प्रयुक्त हुआ है । पुरुषमेध में 184 वृत्तियों और वृत्ति-जीवियों का उल्लेख है। इसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी है।
- **'सर्वमेध'** प्रजामात्र की सर्वतोमुखी उन्नति के लिये प्रयुक्त हुआ है ।
- **'गोमेध'** गोवंश की रक्षा और पशु-समृद्धि के लिये प्रयुक्त हुआ है ।

॥सामवेद-संहिता॥

'सामन्' या साम का अर्थ - गीतियुक्त मंत्र है। ऋग्वेद के मंत्र (ऋक् या ऋचा) जब विशिष्ट गान-पद्धति से गाये जाते हैं तब उनको सामन् (साम) कहते हैं। अतएव पूर्वमीमांसा में गीति या गान को साम कहा गया है। **'गीतिषु सामाख्या' (पूर्व.मी.2.1.36)** । ऋग्वेद में स्तोत्ररूप या गीतिरूप मंत्र को **'अंगूष्यं साम' (ऋग. 1,62,2)** कहा है । ऋग्वेद

और सामवेद का अन्योन्याश्रित संबन्ध है (ऋचा + गान) सामन् है । गीतियुक्त ऋचा साम हो जाती है। इसे छान्दोग्य और बृहदारण्यक उपनिषदों में अनेक रूप से प्रकट किया गया है–

- **या ऋक् तत् साम** । (छान्दो.उप.1.3.4)
- **ऋचि अध्यूढं साम** । (छा.उप. 1.6.1)
- **सा च अमश्चेति तत् साम्नः सामत्वम्** । (बृहदा.उप.1.3.22)
- **सामन्** (साम)= गीतियुक्त मंत्र। सा + अम = **साम**।
- **स/सा-** ऋग्वेद, **अम-** संगीत, = **सामवेद**।
- **सा-** (ऋचा/पत्नी), **अम-** (गान/पुरुष) = **सामन**। अर्थात् ऋग्वेद और सामवेद का संबन्ध पति-पत्नी के तुल्य है।
- सामवेद = **प्राणतत्त्व ('साम प्राणं प्रपद्ये')**।

सामवेद की 3 प्रमुख शिक्षाएं –

(1) समत्व की भावना जागृत करना।

(2) समन्वय की भावना।

(3) प्राणशक्ति या आत्मशक्ति को उद्बुद्ध करना।

महत्व-

- इसमें सौर ऊर्जा वर्णित है।
- यह जागरूकता का प्रतीक है।
- इसकी उत्पत्ति सूर्य से मानी जाती है अर्थात् यह वेद 'सूर्यपुत्र' कहलाता है।
- सामवेद का सार द्युलोक है।
- ऋग्वेद के गायन को सामग कहते हैं।

सामवेद स्वरूप -

सामवेद के दो भाग हैं-

(1) पूर्वार्चिक (2) उत्तरार्चिक।

आर्चिक = ऋचाओं का समूह या संकलन।

❖ **(1) पूर्वार्चिक** - काण्ड = (5)

1. आग्नेय - अग्नि देवता,

2. ऐन्द्र - इन्द्र,

3. पवमान- सोम,

4. आरण्य - इन्द्र, अग्नि, सोम,

5. माहानाम्नी आर्चिक – इन्द्र,

- **विभाजन-** कांड = 5, अध्याय, खंड, मन्त्र- 650,
- अध्याय 1 से 5 की ऋचाओं को **'ग्राम-गान'** कहते हैं।
- अध्याय-6 = 'आरण्य कांड',
- **'दशति'** अर्थात् (10) ऋचाएँ
- पूर्वार्चिक के मंत्रों को **'सामयोनिमंत्र, 'सामयोनि'** या केवल **'योनि'** **'छन्दसंहिता'** भी कहते हैं।

(2) उत्तरार्चिक-

अध्याय = 21, प्रपाठक = 8,

सूक्त =287, मंत्र = 1225,

❖ **सामवेद की मंत्र संख्या-**

पूर्वार्चिक = 650, **उत्तरार्चिक** =1225 =(1875)सम्पूर्ण मन्त्रसंख्या। सामवेद में ऋग्वेदीय मंत्र = 1504 + 267 (पुनरूक्त मन्त्र)= 1771, सामवेद में नवीन मंत्र = 99 + 5 (पुनरूक्त मन्त्र) = 104, 1771 + 104 = **(1875)** सम्पूर्ण मन्त्रसंख्या।

❖ **सामवेद की शाखाएं- (1000),**

"सहस्रवर्त्मा सामवेदः" (महा.प.)

'गाये सहस्रवर्तनि । गायत्रं त्रैष्टुभं जगत्'- सामवेद।

वर्तनि=प्रकार, मार्ग या भेद।

सामवेद शाखा-

सामवेद की प्रमुख 13 शाखाओं का वर्णन प्राप्त होता है-

1. राणायन(राणायनि) , 2. शाट्यमुग्रय (सात्यमुग्रि),
3. व्यास, 4. भागुरि,
5. औलुण्डी 6. गौल्गुलवि,
7. भानुमान औपमन्यव, 8. कारालि (दाराल),
9. मशक गार्ग्य (गार्ग्यसावर्णि) 10. वार्षगव्य वार्षगण्य,
11. कुथुम (कुथुमि, कौथुमि), 12. शालिहोत्र,
13. जैमिनि,

इन 13 शाखाओं में से केवल 3 प्राप्त हैं-

(1) कौथुमीय शाखा,

(2) राणायनीय शाखा,

(3) जैमिनीय शाखा।

(क) कौथुमीय शाखा-

यह सामवेद की सर्वप्रसिद्ध शाखा है इसमें (1875) मंत्र हैं ।

विभाजन = अध्याय, खण्ड, मंत्र।

कौथुम का प्राचीन रूप – **'कौसुम'** (रूपान्तर कौथुम)

कौथुम शाखा से सम्बद्ध है - **पुष्पसूत्र** ।

इस शाखा के उच्चारण की दो पद्धतियां हैं। **(1) नागर (2) भद्र।**

(ख) राणायनीय शाखा-
इसका विभाजन कौथुमीय के सदृश है तथा पाठभेद और उच्चारणभेद है।

(ग) जैमिनीय शाखा-
इसकी संहिता **'डॉ.-रघुवीर'** ने लाहौर से प्रकाशित की थी।
मंत्र संख्या = 1687, कौथुम से 188 मंत्र कम।
गान संख्या = 3681, 959 गान अधिक।
जैमिनि के शिष्य- तलवकार।

सामवेद के प्रतिपाद्य विषय-
यह मुख्य रूप से उपासना का वेद है । मुख्य रूप से अग्नि, इन्द्र, सोम इन देवों की स्तुति-उपासना से सम्बद्ध मंत्र प्राप्त होते हैं। इसमें सोमयाग और पवमान सोम से संबद्ध मंत्रों की संख्या अधिक है।

सामवेदीय संगीत-
- **स्वर-** स्वर संख्या निर्देश प्रकार- उदात्त-1, अनुदात्त-3, स्वरित-2 ।
- **स्वर-7, ग्राम-3** (मन्द्र, मध्य, तीव्र), **मूर्च्छनाएं-21, तान-49।**
- **मूल स्वर लौकिक स्वर-**
  (1) उदात्त - निषाद (नि) गान्धार (ग)।
  (2) अनुदात्त - ऋषभ (रे) धैवत (ध)।
  (3) स्वरित - षड्ज (स) मध्यम (म) पंचम (प)।
- नारदीय शिक्षा के अनुसार तीन स्वर-
  1. आर्चिक- एकस्वर, ऋचाओं पर आश्रित ।
  2. गाथिक – दो स्वर, गाथाओं पर आश्रित ।
  3. सामिक – तीन स्वर, सामवेदीय मन्त्र ।

आर्चिकं गाथिकं चैव सामिकं च स्वरान्तरम्
कृतान्ते सर्वशास्त्राणां प्रयोक्तव्यं विशेषतः ॥
एकान्तरः स्वरो ह्यृक्षु गाथासु द्व्यन्तरः स्वरः।
सामसु त्र्यन्तरं विद्याद् एतावत् स्वरतोऽन्तरम् ॥

सामविकार-
किसी भी ऋचा (मंत्र) को गान का रूप देने के लिए कुछ परिवर्तन किए जाते हैं, इन्हें सामवेद की पारिभाषिक शब्दावली में 'विकार' कहा जाता है ये छः प्रकार के हैं-
(1) स्तोभ, (2) विकार, (3) विश्लेषण,
(4) विकर्षण, (5) अभ्यास, (6) विराम

सामविकार- संगीत के अनुकूल शाब्दिक परिवर्तन को सामविकार कहते हैं।

सामगान-
सामगान के लिये पर्क, बर्हिष आदि नामों का प्रयोग होता है।
1. पूर्वगान- 'प्रकृतिगान'- सामवेद के पूर्वार्चिक खण्ड में पठित मंत्र। इसके दो भेद हैं - (1) ग्रामगेयगान (2) अरण्यगेयगान
2. उत्तरगान- उत्तरार्चिक के मंत्रों पर आश्रित गान।

सामगान के चार भेद-
1. ग्रामगेयगान- 'प्रकृतिगान/वेयगान' । यह ग्राम या सार्वजनिक स्थानों पर गाया जाता है ।
2. आरण्यगान या आरण्यक- गेयगान - वन पवित्र स्थान पर गाया जाता है । अतः इसे **'रहस्य गान'** भी कहते थे । अरण्यकाण्ड के सामयोनिमंत्रों को **'छांदसी'** कहते थे और उसके गान को छांदस कहा जाता था।
3. ऊहगान- ऊह का अर्थ है- विचारपूर्वक विन्यास। यह सोमयाग एवं विशेष धार्मिक अवसरों पर गाया जाता था । ऊह की प्रकृति या आधार वेयगान या प्रकृतिगान हैं ।
4. उह्यगान/रहस्यगान- उह्यगान रहस्यगान है रहस्यात्मक होने के कारण सर्वसाधारण के सामने इसका गान निषिद्ध माना गया है । यह **'विकृतिगान'** कहलाता है ।

सामवेद में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द–
शस्त्र, स्तोत्र, स्तोम और विष्टुति।
(1) शस्त्र = 'अप्रगीत-मंत्रसाध्या स्तुतिः शस्त्रम्'।
गानरहित मंत्र द्वारा स्तुति। ,
(2) स्तोत्र = 'प्रगीत- मंत्रसाध्या स्तुतिः स्तोत्रम्'।
गानयुक्त मंत्रों द्वारा स्तुति।
(3) स्तोम = 'तृच' (तीन ऋचा वाले सूक्त) रूपी स्तोत्रों का आवृत्ति पूर्वक गान। **'आवृत्तियुक्तं तत्साम स्तोम इत्यभिधीयते'।**
(4) विष्टुति = विशेष प्रकार की स्तुति । विष्टुति स्तोत्र रूपी तृचों के द्वारा सम्पादित होती है ।

स्तोमों के 9 भेद हैं-

1. त्रिवृत्	2. पंचदश	3. सप्तदश
4. एकविंश	5. चतुर्विंश	6. त्रिणव
7. त्रयस्त्रिंश	8. चतुश्चत्वारिंश	9. अष्टचत्वारिंश ।

सामगान विभाग-
सामगान में पाँच विभक्तियां (विभाग) होते हैं-
(1) प्रस्ताव, (2) उद्गीथ, (3) प्रतिहार, (4) उपद्रव, (5) निधन।

॥अथर्ववेद॥

'निरुक्त' के अनुसार **'थर्व'** धातु का अर्थ है गति या चेष्टा थर्व धातु- गति/चेष्टा **अथर्वन्-** गतिहीन स्थिर। अतः अथर्वन् का अर्थ है - गतिहीन या स्थिर । **'अथर्वाणोऽथर्वणवन्तः । थर्वतिश्चरतिकर्मा, तत्प्रतिषेधः** । (निरुक्त-11.18) अर्थात् जिस वेद में स्थिरता या चित्तवृत्तियों के निरोधरूपी योग का उपदेश है, वह अथर्वन् वेद है । अथर्वन् - गतिहीन या स्थिरता से युक्त योग । 'गोपथ ब्राह्मण' में अथर्वन् (अथर्वा) शब्द 'अथार्वाक्' का संक्षिप्त रूप माना गया है । अथ + अवाक् = अथर्वा । गोपथ ने इसका अभिप्राय यह दिया है – 'समीपस्थ आत्मा को अपने अन्दर देखना या वह वेद जिसमें आत्मा को अपने अन्दर देखने की विद्या का उपदेश है' । अथर्ववेद योग-साधना, चित्तवृत्तिनिरोध, ब्रह्म की प्राप्ति आदि विषयों से संवद्ध वेद माना जाता है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि प्राण अथर्वा है- **"प्राणोऽथर्वा"** । (शत-6.4.2.2)' इसका अभिप्राय प्राणशक्ति को प्रवुद्ध करना और प्राणायाम के द्वारा ब्रह्म की प्राप्ति करना है ।

अथर्ववेद के विविध नाम –

(1) **अथर्ववेद-** अथर्वा ऋषि के नाम पर। मंत्र संख्या 1772।
(2) **अंगिरस वेद-** अंगिरस (अंगिरा) ऋषि। मंत्र सं- 420।
(3) **अथर्वाङ्गिरस वेद-** अथर्वा और अङ्गिरा दोनों का समन्वित नाम।
(4) **ब्रह्मवेद-** प्राचीन वेद। मंत्र-863।
(5) **भृग्वंगिरावेद** - भृग्वंगिरा वंशज दृष्ट मं.सं. 548।
(6) **क्षात्रवेद** - राजा कौर क्षत्रियों के कर्त्तव्य वर्णन।
(7) **भैषज्य वेद-** चिकित्सा, औषधि वर्णन।
(8) **छन्दोवेद-** छन्द प्रधान।
(9) **महीवेद** - ब्रह्मविद्या वर्णन मही (पृथ्वी) का विशेष गुणगान है।

अथर्ववेद की शाखाएँ-

'नवधाऽऽथर्वणो वेदः' नौ शाखाएं-

(1) पैप्पलाद	(2) तौद
(3) मौद	(4) शौनकीय
(5) जाजल	(6) जलद
(7) ब्रह्मवेद	(8) देवदर्श
(9) चारणवेद्य।	

अथर्ववेद की मुख्य दो शाखाएं हैं- **शौनकीय, पैप्पलाद।** इनमें सर्वप्रसिद्ध प्रचलित **शौनकीय** शाखा है । अथर्ववेद के प्रारम्भिक (13) काण्डों का विषय मारणोच्चाटनादि है।

(1) शौनकीय शाखा-

काण्ड = 20, **सूक्त** = 730, **मंत्र** = 5987,

(2) पैप्पलाद शाखा-

इस शाखा की संहिता पैप्पलाद है । **"प्रो.ब्रूमपील्ड"** ने 1901 ई. में इसे अंग्रेजी अनुवाद में प्रकाशित किया था । **"डॉ.रघुवीर"** ने भी इसका संस्करण प्रस्तुत किया है। यह संहिता अपूर्ण ही प्राप्त है ।

अथर्ववेद के (5) उपवेद -

अथर्ववेद के पांच उपवेदों का 'गोपथ ब्राह्मण' में उल्लेख है।

1. **सर्पवेद-** सर्पविष चिकित्सा,
2. **पिशाचवेद-** पिशाचों राक्षसों का वर्णन,
3. **असुरवेद** – अथर्ववेद में असुरों को यातुधान कहा गया है । इसमें **'यातु'** (जादू-टोना) आदि का वर्णन है ।
4. **इतिहासवेद-** प्राचीन आख्यान तथा राजवंशों का परिचय ।
5. **पुराणवेद-** इसमें - रोग निवारण, कृत्या-प्रयोग, अभिचार कर्म, सुख-शान्ति, शत्रुनाशक इत्यादि मंत्र है।

अथर्ववेद के महत्त्वपूर्ण सूक्त-

अथर्ववेद में ऐसे अनेक सूक्त हैं, जिनमें आत्मविद्या,आत्मा,ज्येष्ठ ब्रह्म, ब्रह्मविद्या,उच्छिष्ट ब्रह्म, महद् ब्रह्म और ब्रह्मविद्या का विस्तृत वर्णन है

1. पृथिवी सूक्त (12/1)

(63) मंत्रों में पृथ्वी का माता के रूप में वर्णन है । पृथ्वी के आधारभूत तत्त्व- सत्य, ऋत, दीक्षा (अनुशासन) तप (तपोमय जीवन) ब्रह्म व यज्ञ।

प्रमुख मंत्र-

- माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः,
- वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।
- जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।
- सत्यं बृहद् ऋतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।

2. ब्रह्मचर्य सूक्त (11/5) मंत्र- (26)
3. काल सूक्त (11/53) मंत्र- (15)
4. विवाह सूक्त (14) मंत्र-(139)
5. व्रात्य सूक्त (15) मंत्र-(230)
6. मधुविद्या सूक्त (9/1) मंत्र-(24)

॥संवाद सूक्त॥

"सम्पूर्णं ऋषिवाक्यं तु सूक्तमित्यभिधीयते"।

ऋषियों के द्वारा कहे गये सम्पूर्ण वाक्य सूक्त कहलाते हैं ।

॥पुरुरवा-उर्वशी संवाद॥

मंत्र - 18, **ऋग्वेद**- 10/95, **ऋषि**- पुरुरवा/उर्वशी, **स्वर**- धैवत, देवता- उर्वशी और पुरुरवा ऐळ, **छन्द**- त्रिष्टुप्, पुरुरवा-उर्वशी, **ऋग्वेद के दशम मण्डल** का **95 वाँ** सूक्त है जिसमें कुल **18 मन्त्र** हैं। इसमें **पुरुरवा** और **उर्वशी** की प्रेम कथा वर्णित है। पुरुरवा एक मनुष्य है और उर्वशी एक **अप्सरा**। दोनों **चार वर्ष** तक एक साथ रहते हैं। उनके **आयुष** नामक एक पुत्र भी होता है किन्तु उसके पश्चात् शाप के प्रभाव से उर्वशी के मिलन की यह अवधि समाप्त हो जाती है और वह एकाएक लुप्त हो जाती है। शोक विह्वल और उसे खोजने में प्रयत्नशील पुरुरवा, सरोवर के तट पर सखियों के साथ उर्वशी को देखता है। वह उसे साथ चलने के लिए कहता है किन्तु पुरुरवा से शाप की बात बतलाकर उर्वशी अपनी असमर्थता प्रकट करती है और लुप्त हो जाती है। यह संवाद **शतपथ ब्राह्मण**, **विष्णुपुराण** और **महाभारत** में भी प्राप्त होता है। इसी संवाद को कालिदास ने अपने नाटक **'विक्रमोर्वशीय'** का कथानक बनाया। पुरुरवा-उर्वशी संवाद सूक्त के मन्त्र निम्नलिखित हैं। उल्लेखनीय है कि **श्लोक 147 से 152 तक,** जो कि ऋग्वेद में उल्लिखित नहीं हैं लेकिन कथा के क्रमभङ्ग को बनाए रखने के लिए, **बृहद्देवता** 7/147-152 **(पुरुरवा-उर्वशी वृत्त)** के आधार पर दिया गया है। ऋग्वेदस्थ मूल संवाद-सूक्त **1-18** तक हैं ।

हये जाये मनसा तिष्ठ घोरे वचांसि मिश्राकृणवावहै नु।
न नौ मन्त्रा अनुदितास एते मयस्करन् परतरे चनाहन् ।।1।।

पुरुरवा ने उर्वशी से कहा-हे निर्दयी नारी! तुम अपने मन को अनुरागी बनाओ। हम शीघ्र ही परस्पर वार्तालाप करें। यदि हम इस समय मौन रहेंगे तो आने वाले दिनों में सुखी नहीं होंगें ।

किमेता वाचा कृणवातवाहं प्राक्रमिषमुषसामग्रियेव।
पुरुरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वातइवाहमस्मि ।।2।।

उर्वशी ने उत्तर दिया हे पुरुरवा! वार्तालाप से कोई लाभ नहीं। मैं वायु के समान ही दुष्प्राप्य नारी हूँ। उषा के समान तुम्हारे पास आई हूँ। तुम अपने गृह को लौट जाओ।

इषुर्न श्रिय इषुधेरसना गोषाः शतसा न रंहिः।
अवीरे क्रतौ वि दविद्युतन्नोरा न मायुं चितयन्त धुनयः।।3।।

पुरुरवा ने कहा-हे उर्वशी! मैं तुम्हारे वियोग में इतना सन्तप्त हूँ कि अपने तूणीर से बाण निकालने में भी असमर्थ हो रहा हूँ। इस कारण मैं युद्ध जीतकर असीमित गायों को नहीं ला सकता। मैं राजकार्यों से विमुख हो गया हूँ। अतः मेरे सैनिक भी कार्यहीन हो गए हैं।

सा वसु दधती श्वसुराय वय उषो यदि वष्ट्यन्तिगृहात्।
अस्तं ननक्षे यस्मिञ्चाकन्दिवा नक्तं श्नथिता वैतसेन ॥4॥

हे उषा ! उर्वशी यदि श्वसुर को भोजन कराना चाहती तो निकटस्थ घर से पति के पास जाती।

त्रिः स्म माह्नः श्नथयो वैतसनोत स्म मेऽव्यत्यै पृणासि।
पुरुरवोऽनु ते केतमायं राजा मे वीर तन्वस्तदासीः॥15॥

उर्वशी ने कहा-हे पुरुरवा! मुझे किसी सपत्नी से प्रतिस्पर्धा नहीं थी क्योंकि मैं तुमसे हर प्रकार से सन्तुष्ट थी। जब से मैं तुम्हारे घर से आई, तभी से तुमने सुखों का विधान किया।

या सुजूर्णिः श्रेणिः सुम्नआपिर्ह्रदेचक्षुर्न ग्रन्थिनी चरण्युः।
ता अञ्जयोऽरुणयो न सनुः श्रिये गावो न धेनवोऽनवन्त ॥6॥

सुजूर्णि, श्रेणि, सुम्न आदि अप्सराएँ मलिन वेश में यहाँ आती थीं। गोष्ठ में जाती हुई गायें जैसे शब्द करती हैं, वैसे ही शब्द करने वाली वे महिलाएँ मेरे घर में नहीं आती थीं।

समस्मिञ्जायमान आसत ग्ना उतेमवर्धन्नद्यः स्वगूर्ताः।
महे यत्त्वा पुरुरवो रणायावर्धयन् दस्युहत्याय देवाः ॥7॥

जब पुरुरवा उत्पन्न हुआ, तब सभी देवाङ्गनाएँ उसे देखने आई। नदियों ने भी उसकी प्रशंसा की। तब हे पुरुरवा! देवताओं ने घोर संग्राम में जाने तथा दस्यु के विनाश हेतु तुम्हारी स्तुति की।

सचा यदासु जहतीष्वत्कममानुषीषु मानुषो निषेवे।
अप स्म मत्तरसन्ती न भुज्युस्ता अत्रसन्रथस्पृशो नाश्वाः।।8।।

जब पुरुरवा मनुष्य होकर अप्सराओं की ओर गए, तब अप्सराएँ अन्तर्धान हो गईं। वे उसी प्रकार वहाँ से चली गईं, जैसे-भयभीत हरिणी भागती है या रथ में योजित अश्व द्रुतगति से चले जाते हैं।

यदासु मर्तो अमृतासु निस्पृक्सं क्षोणीभिः क्रतुभिर्न पृंक्ते।
ता आतयो न तन्वः शुम्भत स्वा अश्वासो न क्रीडयो दन्दशानाः।।9।।

मनुष्य योनि को प्राप्त हुए पुरुरवा जब दिव्यलोकवासिनी अप्सराओं की ओर बढ़े तो वे अप्सराएँ वैसे ही भाग गईं, जैसे क्रीडाकारी अश्व भाग जाता है।

विद्युन्न या पतन्ती दविद्योद्भरन्ती मे अप्या काम्यानि।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुः ॥10॥

जो उर्वशी अन्तरिक्ष की विद्युत् के समान आभामयी है, उसने मेरी सभी अभिलाषाओं को पूर्ण किया था। वह उर्वशी अपने द्वारा उत्पन्न मेरे पुत्र को दीर्घजीवी करे।

जज्ञिष इत्था गोपीथ्याय हि दधाथ तत्पुरुरवो म ओजः।
आशासं त्वा विदुषी सस्मिन्नहन्न म आश्रृणोः किमभुग्वदासि।।11।।

उर्वशी ने कहा-हे पुरुरवा ! तुमने पृथ्वी की रक्षा के लिए पुत्र उत्पन्न किया है। मैं तुमसे अनेक बार कह चुकी हूँ कि, मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगी। तुम इस समय प्रजा-पालन के कार्य से विमुख होकर व्यर्थ-वार्तालाप क्यों करते हो ?

कदा सूनुः पितरं जात इच्छाचक्रन्नाश्रु वर्तयद्विजानन्।

को दम्पती समनसा वि यूयोदध यदग्निः श्वशुरेषु दीदयत।।12।।

पुरुरवा ने कहा- हे उर्वशी! तुम्हारा पुत्र मेरे पास किस प्रकार रहेगा? वह मेरे पास आकर रोएगा। पारस्परिक प्रेम के बन्धन को कौन सद्गृहस्थ तोड़ना स्वीकार करेगा? तुम्हारे श्वसुर के घर में श्रेष्ठ आलोक जगमगा उठा है।

प्रति ब्रवाणि वर्तयते अश्रु चक्रन्न क्रन्ददाध्ये शिवाये।

प्र तत्ते हिनवा यत्ते अस्मे परेह्यास्तं नहि मूर मापः।। 13।।

उर्वशी ने कहा-हे पुरुरवा! मेरा उत्तर सुनो। मेरा पुत्र तुम्हारे पास आकर नहीं रोएगा। मैं सदैव उसकी मंगल कामना करूंगी। तुम अब मुझे नहीं पा सकोगे। अतः अपने घर को लौट जाओ। मैं तुम्हारे पुत्र को तुम्हारे पास भेज दूंगी।

सुदेवो अद्य प्रपतेदनावृत्परावतं परमां गन्तवा उ।

अधा शयीत निर्ऋतेरुपस्थेऽधैनं वृका रभसासो अद्युः।। 14।।

पुरुरवा ने कहा-हे उर्वशी। मैं तुम्हारा पति आज पृथ्वी पर गिर पड़ा हूँ। वह (मैं) फिर कभी न उठ सके। वह दुर्गति के बन्धन मे फँसकर मृत्यु को प्राप्त हो, और वृक (भेड़िया) आदि उसके शरीर का भक्षण करे।

पुरुरवो मा मृथा मा प्र पप्तो मा त्वा वृकासो अशिवास उ क्षन्।

नवै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता।।15।।

उर्वशी ने कहा-हे पुरुरवा! तुम गिरो मत। तुम अपनी मृत्यु की इच्छा मत करो। तुम्हारे शरीर को वृक आदि भक्षण न करें। स्त्रियों का और वृकों का हृदय एकसमान होता है, उनकी मित्रता कभी अटूट (स्थायी) नहीं रहती।

यद्विरूपाचरं मर्त्येष्ववसं रात्रीः शरदश्चतस्रः।

घृतस्य स्तोकं सकृदहन् आश्न तादेवेदं तातृपाणा चरामि।।16।।

उर्वशी ने कहा-मैंने विविधरूप धारण करके मनुष्यों में विचरण किया। चार वर्षों तक मैं मनुष्यों में ही वास करती रही। नित्यप्रति एक बार घृतपान करती हुई घूमती रही।

अन्तरिक्षप्रां रजसो विमानीमुप शिक्षाम्युर्वशीं वसिष्ठः।

उप त्वा रातिः सुकृतस्य तिष्ठान्नि वर्तस्व हृदयं तप्यते मे।।17।।

पुरुरवा ने कहा-उर्वशी जल को प्रकट करने वाली तथा अन्तरिक्ष को पूर्ण करने वाली है। वशिष्ठ ही उसे अपने वश में कर सके हैं। तुम्हारे पास उत्तमकर्मा पुरुरवा रहे (मैं रहूँ)। हे उर्वशी! मेरा हृदय जल रहा है, अत: लौट आओ।

इति त्वा देवा इम आहुरैळ यथेमेतद्भवसि मृत्युबन्धुः।

प्रजा ते देवान् हविषा यजाति स्वर्ग उत्वमपि मादयासे।। 18॥

उर्वशी ने कहा-हे पुरुरवा! सभी देवताओं का कथन है कि, तुम मृत्यु को जीतने वाले होओगे और हव्य द्वारा देवयज्ञ करोगे, फिर स्वर्ग में सानन्द रहोगे।

॥यम-यमी संवाद॥

मंत्र- 14, **ऋग्वेद**- 10/10, **ऋषि**- यमी वैवस्वती यमवैवस्वत, **स्वर**-धैवत, **देवता**- यम वैवस्वत, यमी वैवस्वती, **छन्द**-त्रिष्टुप,

यम-यमी ऋग्वेद के **दशम मण्डल का दसवाँ सूक्त** है जिसमे कुल **14 मन्त्र** हैं। यह एक विलक्षण संवाद सूक्त है। यम-यमी एक जुड़वाँ **भाई-बहन** हैं। यमी अपने भाई यम को अनेक प्रलोभन देकर उसके सामने उससे विवाह करने का प्रस्ताव रखती है लेकिन यम अपनी बहन के इस प्रस्ताव की निन्दा करता है क्योकि यह **सगोत्र सम्बन्ध अनैसर्गिक** और महर्षियों के विधानों के विरुद्ध है। वह इसे अनुचित बताकर अस्वीकार कर देता है। यमी अपने भाई के कथन का यह कहकर तिरस्कार कर देती है कि देवता चाहते हैं कि मनुष्य जाति की अभिवृद्धि के लिए यम अपनी बहन के साथ सम्बन्ध स्थापित करे। लेकिन यम पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। सम्भवतः इसी कारण से न केवल हिन्दुओं में अपितु संसार के किसी भी कोने में सगोत्र भाई-बहन का विवाह अनुचित समझा जाता है। इस सूक्त की प्रतिपादन शैली रमणीय है। यम-यमी संवाद सूक्त के मन्त्र निम्नलिखित हैं-

ओ चित् सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरू विदर्णवं जगन्वान्।

पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधि क्षमि प्रतरं दीध्यानः ॥1॥

यमी अपने सहोदर भाई यम से कहती है-विस्तृत समुद्र के मध्य द्वीप में आकर, इस निर्जन प्रदेश में मैं तुम्हारा सहवास (मिलन) चाहती हूँ, क्योंकि माता की गर्भावस्था से ही तुम मेरे साथी हो। विधाता ने मन ही मन समझा है कि तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भ से जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह हमारे पिता का एक श्रेष्ठ नाती होगा।

न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत् सलक्ष्मा यद्विपुरुषा भवाति।

महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तार उर्विया परिख्यन्।।2।।

यम ने कहा-यमी, तुम्हारा साथी यम, तुम्हारे साथ ऐसा सम्पर्क नहीं चाहता; क्योंकि तुम सहोदरा भगिनी हो, अतः अगन्तव्या हो। यह निर्जनप्रदेश नहीं है, क्योंकि धुलोक को धारण करने वाले महान् बलशाली प्रजापति के पुत्रगण (देवताओं के चर) सब कुछ देखते हैं।

उशन्ति घा ते अमृतास एतदेकस्य चित् त्यजसं मर्त्यस्य।

नि ते मनो मनसि धाय्यस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः।।3।।

यमी ने कहा-यद्यपि मनुष्य के लिए ऐसा संसर्ग निषिद्ध है, तो भी देवता लोग इच्छापूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। अतः मेरी इच्छानुकूल तुम भी करो। पुत्र-जन्मदाता पति के समान मेरे शरीर में पैठो (मेरा सम्भोग करो ।



न यत्पुरा चकृमा कद्ध नूनमृता वदन्तो अनृतं रपेम।
गन्धर्वो अप्स्वप्या च योषा सा नो नाभिः परमं जामि तन्नौ।। 4।।

यम ने उत्तर दिया-हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया। हम सत्यवक्ता हैं। कभी मिथ्या कथन नहीं किया है। अन्तरिक्ष में स्थित गन्धर्व या जल के धारक आदित्य तथा अन्तरिक्ष में रहने वाली योषा (सूर्यस्त्री-सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं। अतः हम सहोदर बन्धु हैं। ऐसा सम्बन्ध उचित नहीं है।

गर्भे नु नौ जनिता दम्पती कर्देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः।
नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथ्वी उत द्यौः।।5।।

यमी ने कहा-रूपकर्ता, शुभाशुभ प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापति ने तो हमें गर्भावस्था में ही दम्पति बना दिया है। प्रजापति का कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस सम्बन्ध को द्यावा-पृथ्वी भी जानते हैं।

को अस्य वेद प्रथमस्याह्नः क ईं ददर्श क इह प्रवोचत्।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आह्नो वीच्या नॄन्।।6।।

यमी ने पुनः कहा-प्रथम दिन (संगमन) की बात कौन जानता है? किसने उसे देखा है? किसने उसका प्रकाश किया है? मित्र और वरुण का यह जो महान् धाम (अहोरात्र) है, उसके बारे में हे मोक्ष, बन्धनकर्ता यम! तुम क्या जानते हो ?

यमस्य मा यम्यं काम आगन्त्समाने योनौ सहशेय्याय।
जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद्वहेव रथ्येव चक्रा।।7।।

यमी ने कहा-जैसे एक शैया पर पत्नी, पति के साथ अपनी देह का उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास में अपने शरीर को प्रकाशित कर देती हूँ, तुम मेरी अभिलाषा करो, आओ हम दोनों एक स्थान पर शयन करें। रथ के दोनों चक्रों के समान एक कार्य में प्रवृत्त हों।

न तिष्ठन्ति न नि मिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति ।
अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा।। 8।।

यम ने उत्तर दिया-देवों में जो गुप्तचर हैं, वे रात दिन विचरण करते हैं। उनकी आँखे कभी बन्द नहीं होती। दुःखदायिनी यमी ! शीघ्र दूसरे के पास जाओ, और रथ के चक्रों के समान उसके साथ एक कार्य करो।

रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्यचक्षुर्मुहुरुन्मिमीयात्।
दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य बिभृयादजामि।। 9।।

यम ने पुनः कहा-दिन-रात में यम के लिए जो कल्पित भाग हैं, उसे यजमान दें। सूर्य का तेज यम के लिए उदित हो। परस्पर सम्बद्ध दिन, धुलोक और भूलोक यम के बन्धु हैं। यमी, यम भ्राता के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष को धारण करे।

आ घा ता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्नजामि।
उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत्।। 10।।

यम ने पुनः कहा- भविष्य में ऐसा युग आएगा, जिसमें भगिनियाँ अपने बन्धुत्व विहीन भ्राता को पति बनाएंगी। सुन्दरी! मेरे अतिरिक्त किसी दूसरे को पति बनाओ। वह वीर्य सिंचन करेगा, उस समय उसे बाहुओं में आलिङ्गन करना।

किं भ्रातासद्यदनाथं भवाति किमु स्वसा यन्निर्ऋतिर्निगच्छात्
काममूता बह्वेतद्रपामि तन्वा मे तन्वं सं पिपृग्धि।।11।।

यमी ने कहा-वह कैसा भ्राता है, जिसके रहते भगिनी अनाथा हो जाए, और भगिनी ही क्या है, जिसके रहते भ्राता का दुःख दूर न हो ? मैं काममूर्च्छिता होकर नाना प्रकार से बोल रही हूँ; यह विचार करके भली-भाँति मेरा सम्भोग करो।

न वा उ ते तन्वा तन्वं सं पपृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात्।
अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत्।।12।।

यम ने उत्तर दिया-हे यमी! मैं तुम्हारे शरीर से अपना शरीर मिलाना नहीं चाहता। जो भ्राता, भगिनी का सम्भोग करता है, उसे लोग पापी कहते हैं। सुन्दरी! मुझे छोड़कर अन्य के साथ आमोद-प्रमोद करो। तुम्हारा भ्राता तुम्हारे साथ मैथुन करना नहीं चाहता।

बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदाम।
अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम्।।13।।

यमी ने कहा-हाय यम; तुम दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदय को मैं कुछ नहीं समझ सकती; जैसे-रस्सी घोड़े को बाँधती है, तथा लता जैसे वृक्ष इन का आलिङ्गन करती है; वैसे ही अन्य स्त्री तुम्हे अनायास ही आलिङ्गन करती है; परन्तु तुम मुझे नहीं चाहते हो।

अन्यमू षु त्वं यम्यन्य उ त्वां परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम्।
तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवाऽधा कृणुष्व संविदं सुभद्राम्।।14।।

यम ने यमी से कहा-तुम भी अन्य पुरुष का ही भली-भाँति आलिङ्गन करो; जैसे-लता. वृक्ष का आलिङ्गन करती है, वैसे ही अन्य पुरुष तुम्हें आलिङ्गित करे। तुम उसी का मन हरण करो। अपने सहवास का प्रबन्ध उसी के साथ करो। इसी में मङ्गल होगा।

॥सरमा-पणि संवाद॥

मंत्र- 11, **ऋग्वेद**- 10/108, **ऋषि**- पणि सरमा,
स्वर- धैवत, **देवता**- सरमा, पणि, **छन्द**- त्रिष्टुप्,

सरमा पणि, ऋग्वेद के **दशम मण्डल** का **108वाँ सूक्त** है, जिसमें कुल **11 मन्त्र** हैं। सरमा पणि संवाद में **सरमा** नामक एक **शुनी** और **पणि**

नामक असुर का संवाद मिलता है। पणि लोगों ने आर्यों की गायों को चुराकर कहीं अन्धेरी गुफा में डाल दिया। इन्द्र ने अपनी शुनी (सरमा) को उन्हें खोजने के लिए और पणियों को समझाने के लिए दूती बनाकर भेजा। सरमा इन्द्र के अतुलित पराक्रम के विषय में बतलाती है किन्तु वे उसकी बात नहीं माने।

किमिच्छन्ती सरमा प्रेदमानड्, दूरे ह्यध्वा जगुरिः पराचैः।

कास्मेहितिः का परितक्म्यासीत्कथं रसाया अतरः पयांसि।।1।।

सरमा क्या इच्छा करती हुई इस स्थान पर पहुंची है; क्योंकि मार्ग बहुत दूर उभरा हुआ तथा गमनागमन से रहित है। हममें तुम्हारा कौन-सा अभिप्रेत अर्थ निहित है? तुम्हारी यात्रा कैसी थी ? रसा (नदी) के जल को तुमने कैसे पार किया?

इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि, मह इच्छन्ती पणयो निधीन्वः।

अतिष्कदो भियसा तन्न आवत्तथा रसाया अतरं पयांसि।।2।।

हे पणियों! इन्द्र के द्वारा भेजी गई, मैं उसकी दूती हूँ। तुम लोगों के प्रभूत धन की इच्छा करती हुई घूम रही हूँ। मेरे कूदने के भय से उस रसा के जल ने मेरी सहायता की। इस प्रकार रसा के जल को मैंने पार किया।

कीदृङिन्द्रः सरमे का दृशीका, यस्येदं दूतीरसरः पराकात्।

आ च गच्छान्मित्रमेना दधामाथा गवां गोपतिर्नो भवाति।।3।।

हे सरमा! इन्द्र कैसा है? उसकी दृष्टि कैसी है? जिसकी दूती (तुम) दूर से यहाँ आई हो। अगर वह आए, तो हम उसे मित्र बनाएँगे। तब वह हमारी गायों का संरक्षक (गोपति) होगा।

नाहं तं वेद दभ्यं दभत्स, **यस्येदं दूतीरसरं पराकात्।**

न तं गूहन्ति स्रवतो गभीरा, **हता इन्द्रेण पणयः शयध्वे।। 4।।**

सरमा ने कहा-मैं उसको कष्ट पहुँचाया जाने वाला नहीं समझती हूँ; अपितु वह (शत्रुओं को) कष्ट देता है। जिसकी मैं दूती बनकर बहुत दूर से यहाँ आई हूँ। बहती हुई गहरे जल वाली नदियाँ उसको छिपा नहीं सकतीं। हे पणियों! इन्द्र द्वारा मारे जाकर तुम लोग (पृथिवी पर) पड़ जाओगे।

इमा गावः सरमे या ऐच्छः परिदिवो अन्तान्त्सुभगे पतन्ती।

कस्त एना अव सृजादयुध्व्युतास्माकमायुधा सन्ति तिग्मा।। 5।।

पणियों ने कहा-हे सरमा ! आकाश की छोर तक चारों तरफ घूमती हुई इन गायों को, जिनकी तुमने इच्छा की है। हे सौभाग्यवती! तुममें से कौन मुक्त कर सकता है? और हमारे शस्त्र भी अत्यन्त तीक्ष्ण हैं।

असेन्या वः पणयो वास्यनिषव्यास्तनवः सन्तु पापीः।

अधृष्टो व एतवा अस्तु पन्था, बृहस्पतिर्व उभया न मृळात्।। 6।।

सरमा ने कहा-हे पापियों ! तुम्हारे वचन शस्त्र के आघात से सुरक्षित हैं; तथा पापी शरीर बाणों के निशाने से बचने वाले हो सकते हैं। तुम्हारे पास पहुँचने के लिए मार्ग भी अगम्य हो सकता है; किन्तु किसी भी प्रकार से बृहस्पति दया नहीं करेंगे।

अयं निधिः सरमे अद्रिबुध्नो, गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्न्यृष्टः।

रक्षन्ति तं पणयो ये सुगोपा, रेकु पदमलकमा जगन्थ ॥7॥

पणियों ने कहा-हे सरमा ! गायों, अश्वों तथा रत्नों से भरा हुआ यह खजाना पर्वतों से ढका हुआ है। कुशल रक्षक पणि, इसकी रक्षा करते हैं। तुम व्यर्थ में इस खाली स्थान पर आई हो।

एह गमन्नृषयः सोमशिता, अयास्यो अङ्गिरसो नवग्वाः।

त एतमूर्वं वि भजन्त गोनामथैतद्वचः पणयो वमन्नित्।। 8।।

सरमा ने कहा-सोमपान से उत्तेजित, अयास्य, अङ्गिरस, नवग्वा आदि ऋषि यहाँ पर आएंगे। वे गायों के इस विशाल समूह को बाँट लेंगे। तब पणियों को अपने इस वचन को उगलना पड़ेगा।

एवा च त्वं सरम आजगन्थ, प्रबाधिता सहसा दैव्येन।

स्वसारं त्वा कृणवै मा पुनर्गा, अप ते गवां सुभगे भजाम।। 9।।

पणियों ने कहा-हे सरमा! इस प्रकार यदि तुम देवताओं की शक्ति से पीड़ित की गई हो; तो हम तुम्हे बहन बनाते हैं। फिर मत जाओ। हे सौभाग्यवती! हम तुम्हें गायों का अलग हिस्सा देंगे ।

नाहं वेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुराङ्गिरसश्च घोराः।

गोकामा मे अच्छदयन्यदायमपात इत पणयो वरीयः।। 10।।

सरमा ने कहा-मैं न तो भ्रातृत्व को जानती हूँ न स्वसृत्व को; इन्द्र तथा भयानक अङ्गिरस इसको जानते हैं। जब मैं आई (तब) वे गायों की इच्छा करने वाले मालूम पड़े। अतः हे पणियों! (इसकी अपेक्षा) किसी विस्तृत स्थान पर चले जाओ।

दूरमित पणयो वरीय उद्, गावो यन्तु मिनतीर्ऋतेन।

बृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूळ्हाः,सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः।।11।।

सरमा ने कहा-हे पणियो! किसी विस्तृत स्थान पर चले जाओ। छिपी हुई गायें, चट्टानों के आवरण को तोड़ती हुई सत्य नियम के अनुकूल बाहर निकले; जिनको बृहस्पति ने ढूंढ निकाला है तथा जिनका, सोम ने, पत्थरों ने तथा बुद्धिमान ऋषियों ने पता लगाया है।

॥विश्वामित्र-नदी संवाद॥

मंत्र- 13, **ऋग्वेद-** 3/33 **ऋषि-** विश्वामित्र, **स्वर-** पञ्चम, धैवत, ऋषभ, देवता- नदियां (विपाट् शुतुद्री) **छन्द-** पङ्क्तित्रिष्टुप, उष्णिक,

ऋग्वेद के **तीसरे मण्डल** का **33वाँ सूक्त** है, जिसमें कुल **13 मन्त्र** हैं। **भरतवंशी विश्वामित्र** सुदास से पौरोहित्य कर्म का धन लेकर अपने गन्तव्य मार्ग के लिए जाने लगा तो अन्य लोग भी उसका अनुकरण करने लग जाते हैं। रास्ते में नदियों में बाढ़ आ जाने के कारण उन्हें

पार करना मुश्किल था। 13 मन्त्रों में विश्वामित्र द्वारा शुतुद्री और विपाट् नदियों से मार्ग देने के लिए प्रार्थना की गई है।

प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वे इव विषिते हासमाने।

गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे, विपाट्छुतुद्री पयसा जवेते।। 1।।

पर्वतों की गोद से निकलकर समुद्र की ओर जाने की इच्छा करती हुई (परस्पर) स्पर्धा से दौड़ती हुई, खुले बाग वाली दो घोड़ियों की तरह (बछड़े) को चाटती हुई दो सफेद माता गायों की तरह विपाट और शुतुद्री (अपने) प्रवाह से तेजी से बह रही हैं।

इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे, अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः।

समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने, अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे।। 2।।

इन्द्र द्वारा भेजी गई, बहने के लिए प्रार्थना करती हुई, दो रथियों की तरह समुद्र की ओर जा रही हो। हे शुभ्रे! एक साथ जाती हुई, लहरों से उमड़ती हुई; तुममें से प्रत्येक एक-दूसरे की ओर जा रही हो।

अच्छा सिन्धु मातृतमामयासं, विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म।

वत्समिव मातरा संरिहाणे, समानं योनिमनु सञ्चरन्ती।। 3।।

श्रेष्ठ नदी माता (शुतुद्री) के पास आया हूँ। चौड़ी तथा सुन्दर विपाट के पास आया हूँ। बछड़े को चाटती हुई दो माताओं की तरह, एक ही स्थान (समुद्र) को लक्ष्य करके बहती हुई (शुतुद्री और विपाशा) के पास आया हूँ।

एना वयं पयसा पिन्वमाना, अनुयोनिं देवकृतं चरन्तीः।

न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः, किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति।। 4॥

ऐसी हम लोग अपनी धारा से उमड़ रही है, तथा देव (इन्द्र) द्वारा निर्मित स्थान पर चल रही हैं। स्वाभाविक रूप से प्रवाहित हम लोगों की गति रुकने के लिए नहीं है। किस इच्छा से ऋषि (विश्वामित्र) नदियों की बार-बार स्तुति कर रहा है।

रमध्वं मे वचसे सोम्याय, ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः।

प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषा-वस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः ॥5॥

हे पवित्र जलवाली (नदियों)! सोमाप्लावित मेरे वचनों के प्रति अपनी यात्रा से क्षणभर के लिए रुक जाओ। अपनी सहायता का इच्छुक, कुशिकपुत्र मैंने ऊँची स्थिति से नदी (शुतुद्री) का आह्वान किया है।

इन्द्रो अस्माँ अरदद्वज्रबाहुर-पाहन्वृत्रं परिधिं नदीनाम्।

देवोऽनयत्सविता सुपाणिस्तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः।। 6।।

वज्रधारी इन्द्र ने हमें खोदकर बाहर किया। उसने नदियों को घेरने वाले वृत्र को मारा। सुन्दर हाथों वाले सवितृ देव हम लोगों को लाए। हम जितनी चौड़ी हैं, उसकी आज्ञा में निरन्तर बहती हैं।

प्रवाच्यं शश्वधा वीर्यं तद्, इन्द्रस्य कर्म यदहिं विवृश्चत्।

वि वज्रेण परिषदो जघाना-यन्नापोऽयनमिच्छमानाः।।7।।

इन्द्र का वह पराक्रमयुक्त कार्य, जो उसने अहि को मारा, अवश्य कहने योग्य है। उसने वज्र से (जल के) प्रतिबन्धकों को काट डाला। जल अपना मार्ग खोजता हुआ प्रवाहित हुआ।

एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा, आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि।

उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व, मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते।।8।।

हे स्तुतिगायक! इस वचन को कभी भी मत भूलो, ताकि भावियुगों के लोग तुम्हारे इस वचन को सुन सकें। हे कवि! अपनी स्तुतियों में हमारा आदर रखो। हम लोगों को मनुष्यकोटि में नीचे मत लाओ। (हमारा) तुम्हें नमस्कार है।

ओ षु स्वसारः कारवे श्रृणोत, ययौ वो दूरादनसा रथेन।

निषू नमध्वं भवता सुपारा, अधो अक्षाः सिन्धवः स्रोत्याभिः।। 9।।

हे सुन्दर बहनों! (मुझ) कवि की बात सुनो; (क्योंकि मैं) तुम्हारे पास बहुत दूर से गाड़ी तथा रथ से आया हूँ। अच्छी तरह झुक जाओ। हे नदियों! अपनी जलधारा से अक्ष के नीचे होकर (बहती हुई) आसानी से पार करने योग्य हो जाओ।

आ ते कारो श्रृणवामा वचांसि, ययाथ दूरादनसा रथेन।

नि ते नंसै पीप्यानेव योषा, मर्यायेव कन्या शश्वचै ते।।10।।

हे कवि! हम तुम्हारी बातें सुनती हैं, (क्योंकि तुम) बहुत दूर से गाड़ी तथा रथ के साथ आए हो। तुम्हारे लिए मैं नीचे झुकती हूँ, जैसे दूध से भरे स्तन वाली औरत (अपने पुत्र के लिए) तथा जैसे युवती अपने प्रेमी का आलिङ्गन करने के लिए (झुकती है)।

यदङ्ग त्वा भरताः संतरेयुर्गव्यन्ग्राम इषित इन्द्रजूतः।

अर्षादह प्रसवः सर्गतक्त, आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम्।।11।।

हे नदियो चूँकि (तुम्हारी अनुमति मिल गई है, इसलिए) भरतवंशी (हम लोग) तुम्हें पार करें, पार जाने की इच्छा वाला (तुम्हारे द्वारा) अनुज्ञात एवं इन्द्र द्वारा भेजा गया (भरतवंशियो का) झुंड (पार करे) (तुम्हारा) प्रवाह अपनी स्वाभाविक गति में प्रवाहित होता हुआ बहे। मैं पवित्र नदियों का समर्थन चाहता हूँ।

अतारिषुर्भरता गव्यवः समभक्त विप्रः सुमति नदीनाम्।

प्रपिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा, आ वक्षणाः पृणध्वं यात् शीभम्।। 12।।

पार जाने की इच्छा वाले भरतवंशियों ने पार कर लिया। ब्राह्मण ने नदियों का समर्थन प्राप्त कर लिया। सुन्दर धनवाली (तुम लोग) धन लाती हुई अपनी जगह पर प्रवाहित होओ; भर जाओ; शीघ्रता से बहो।

उद्व ऊर्मिः शम्या हन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत।

मादुष्कृतौ व्येनसाघ्न्यौ शूनमारताम्।।13।।

तुम्हारी धारा जुवा की कील के नीचे से बहे। जल रस्सी को छोड़ दे। दृष्कृतों से रहित, पापरहित तथा तिरस्कार न करने योग्य (ये नदियाँ) वृद्धि न प्राप्त करें।

॥ब्राह्मण साहित्य॥

ब्राह्मण शब्द की व्युत्पत्ति - ब्राह्मण ग्रन्थों के अर्थ में 'ब्राह्मण' शब्द विभिन्न तीन अर्थों में बनता है। 'ब्रह्मन्' शब्द से 'अण्' प्रत्यय करके 'ब्राह्मण' श्ब्द बना है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार ब्रह्मन् शब्द के तीन अर्थ हैं-

1. 'मंत्र' - **ब्रह्म वै मन्त्रः । (शत. 7. 1.1.5)**
2. 'यज्ञ' - **ब्रह्म यज्ञः । (शत. 3. 1.4.15)**
3. पवित्र ज्ञान या रहस्यात्मक विद्या ।

अर्थात् जिन ग्रन्थों में वैदिक रहस्यों का उद्घाटन किया गया है, उन्हें 'ब्राह्मण' कहते हैं । ब्राह्मण ग्रन्थों में यज्ञों के तीन प्रकार के आध्यात्मिक, आधिदैविक और वैज्ञानिक स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है । **"श्री सत्यव्रत सामश्रमी"** ने 'ब्राह्मण' शब्द की 'प्रोक्त (कथित, वर्णित) अर्थ में अण् प्रत्यय करके 'ब्राह्मण' शब्द की सिद्धि की है । अत: वेदमंत्रों की व्याख्या और विनियोग प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थ को 'ब्राह्मण' कहते हैं ।

ब्राह्मण का अर्थ- "ग्रन्थ" अर्थ में ब्राह्मण शब्द नपुंसकलिंग है। मीमांसा-दर्शन के अनुसार मंत्रभाग या संहिताग्रन्थों के अतिरिक्त वेद-भाग को 'ब्राह्मण कहते हैं । 'भट्टभास्कर' के अनुसार कर्मकाण्ड और मंत्रों के व्याख्यान ग्रंथों को ब्राह्मण कहते हैं- **"ब्राह्मणं नाम कर्मणस्तन्मन्त्राणां व्याख्यानग्रन्थः" । (भट्टभास्कर,तैत्तिरीय सं.1.5.1** भाष्य) वाचस्पति मिश्र के अनुसार 'ब्राह्मण' उन ग्रन्थों को कहते हैं जिनमें निर्वचन (निरुक्ति) मंत्रों का विविध यज्ञों में विनियोग, प्रयोजन, प्रतिष्ठान (अर्थवाद) और विधि का वर्णन होता है । वाचस्पति मिश्र ने ब्राह्मण के चार प्रयोजनों का वर्णन किया है-

1. निर्वचन 2. विनियोग 3. प्रतिष्ठान 4. विधि ।

"नैरुक्त्यं यत्र मन्त्रस्य विनियोगः प्रयोजनम् ।
प्रतिष्ठानं विधिश्चैव ब्राह्मणं तदिहोच्यते" ।।(वाचस्पति मिश्र)

1. निर्वचन - शब्दों की निरुक्ति बताना । किसी वस्तु के नाम का आधार क्या है, तथा किस धातु से वह नाम बना है ।

2. विनियोग - किस यज्ञ की किस विधि में किस कार्य के लिए कौन सा मंत्र निर्दिष्ट है, इसका विशद वर्णन ।

3. प्रतिष्ठान - प्रतिष्ठान का अभिप्राय **"अर्थवाद"** है ।अर्थात् यज्ञ की प्रत्येक विधि का क्या महत्त्व है, उसके करने से क्या लाभ हैं, एवं उसके न करने से क्या हानियाँ हैं ।

4. विधि - यज्ञ और उससे सम्बद्ध कार्यकलाप का विस्तृत विवरण बताना। मीमांसादर्शन के भाष्य में 'शबरस्वामी' ने इन्हीं विषयों को कुछ और विस्तृत करते हुए ब्राह्मण ग्रन्थों के प्रतिपाद्य विषयों की संख्या दस बताई है ।

1. हेतु	2. निर्वचन
3. निन्दा	4. प्रशंसा
5. संशय	6. विधि
7. परक्रिया	8. पुराकल्प
9. व्यवधारण-कल्पना	10. उपमान

**"हेतुर्निर्वचनं निन्दा प्रशंसा संशयो विधिः ।
परक्रिया पुराकल्पो व्यवधारण-कल्पना ।
उपमानंदशैतेतु विधयो ब्राह्मणस्यवै"।।**

(मीमांसासूत्र, शाबर भाष्य 2.18)

1. **हेतु-** यज्ञ में कोई कार्य क्यों किया जाता है, इसका कारण बताना।
2. **निर्वचन-** शब्दों की निरुक्ति बताना। जैसे- नद् धातु से नदी शब्द।
3. **निन्दा-** यज्ञ में निषिद्ध कर्मों की निन्दा । जैसे - यज्ञ में असत्य-भाषण निषेध।
4. **प्रशंसा-** यज्ञ में विहित कार्यों की प्रशंसा करना। जैसे - **'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'** अर्थात् यज्ञ सर्वश्रेष्ठ कर्म है, अतः अवश्य करना चाहिए।
5. **संशय-** किसी यज्ञीय कर्म के विषय में कोई सन्देह उपस्थित हो तो उसका निवारण करना।
6. **विधि-** विधि का अभिप्राय यज्ञिय क्रियाकलाप की पूरी विधि का विशद निरूपण करना है।
7. **परक्रिया-** परक्रिया का भाव परार्थक क्रिया, परहित या परोपकार वाले कर्तव्यों का वर्णन करना है।
8. **पुराकल्प-** यज्ञ की विभिन्न विधियों के समर्थन में किसी प्राचीन आख्यान या ऐतिहासिक घटना का वर्णन करना। जैसे- हरिश्चन्द्रोपाख्यान में प्रसिद्ध **'चरैवेति, चरैवेति'** आदि निर्देश।
9. **व्यवधारण-कल्पना-** परिस्थिति के अनुसार कार्य की व्यवस्था करना।
10. **उपमान-** कोई उपमा या उदाहरण देकर वर्ण्य विषय की पुष्टि करना । जैसे- ऐतरेय ब्राह्मण में 'चरैवेति' की पुष्टि में सूर्य का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है।

ब्राह्मणग्रन्थों का वर्गीकरण-

(क) ऋग्वेद – ऐतरेय, शांखायन (कौषीतकि)
(ख) शुक्ल यजुर्वेद- शतपथ,
(ग) कृष्ण यजुर्वेद- तैत्तिरीय,
(घ) सामवेद- पंचविंश (ताण्ड्य महाब्राह्मण या प्रौढ़), षड्विंश/अद्भुत, सामविधान, आर्षेय, जैमिनीय (तलवकार), जैमिनीय आर्षेय, जैमिनीय उपनिषद् (छान्दोग्य), संहितोपनिषद, देवताध्याय, मंत्र (उपनिषद्), वंश।
(ङ) अथर्ववेद- गोपथ,

- अनुपलब्ध ब्राह्मण ग्रन्थ = 16,
- **'डॉ.भट्टकृष्ण घोष'** ने 16 अनुपलब्ध ब्राह्मणों के उद्धरण एकत्र किए हैं, जिनमें शाट्यायन ब्राह्मण महत्वपूर्ण है।

1. ऋग्वेदीय ब्राह्मण

(क) ऐतरेय ब्राह्मण-

रचयिता- (महिदास ऐतरेय),

पिता- याज्ञवल्क, **माता-** इतरां (याज्ञवल्क की द्वितीय पत्नी)।

"महिदासैतरेयर्षिसंदृष्टं ब्राह्मणं तु यत् ।आसीद विप्रो यज्ञवल्को द्विभार्यस्तस्य द्वितीयामितरेति चाहुः" । (ऐत.ब्रा.सुखप्रदा वृत्ति) ।

अध्याय- 40, **पंचिकाएं-** 8, **खंड/'कण्डिका'** =285,

पाँच अध्यायों की एक पंचिका होती है । ऋग्वेद में होतृ (होता) नामक ऋत्विज् यज्ञ के कार्यकलापों का वर्णन करता है, अतः इस ब्राह्मण में होता-विषयक पक्ष की विशेष मीमांसा की गयी है ।

होता मण्डल के 7 ऋत्विज -

(1) होता	(2) मैत्रावरुण
(3) ब्राह्मणांच्छसी	(4) नेष्टा
(5) पोता	(6) अच्छावाक
(7) आग्नीध्र	

ये सभी सोमयागों के तीनों सवनों प्रातः, मध्याह्न और सायंकालीन यज्ञ में ऋग्वेद के मंत्रों का पाठ करते थे ।

मुख्य आख्यान एवं विषय-

(1) शुनःशेप आख्यान, (2) नामनेदिष्टोपाख्यान, (3) चरैवेतिगान,

ऐतरेय ब्राह्मण महत्व-

- यज्ञ का महत्त्व (ब्रह्म वै यज्ञः)
- विष्णु का देवों में महत्
- आचार शिक्षा
- दश प्रकार की शासनप्रणाली
- वैज्ञानिक तथ्य
- राजा के द्वारा देश भक्ति की शपथ लेना
- यज्ञों का विभाजन
- अतिथि-सत्कार
- दीक्षित क्षत्रिय और वैश्य का भी ब्राह्मण बनाना।
- चरैवेति की शिक्षा
- भौगोलिक सन्दर्भ
- चक्रवर्ती महाराज

(ख) शांखायन/कौषीतकि-

अध्याय=30, **खण्ड** = 4-17, **सम्पूर्ण खण्ड**= 266,

शांखायन ने गुरु का नाम अमर रखने के लिए इसका नाम (कौपितकी ब्राह्मण) रखा। शांखायन 'कौपितकि' के शिष्य थे।

2. यजुर्वेदीय ब्राह्मण

(1) शुक्लयजुर्वेद-

(क) शतपथ ब्राह्मण-

"शतं पन्थानों मार्गा नामाध्याया यस्य तत् शतपथम्" जिसमें सौ अध्याय-रूपी मार्ग हैं, उसे शतपथ कहते हैं।

रचयिता- याज्ञवल्क्य वाजसनि के पुत्र होने से- वाजसनेय।

याज्ञवल्य के पिता वाजसनि के विषय में सायण ने लिखा है कि वे अन्न-दाता के रूप में विख्यात थे,अतःउनका नाम वाजसनि पड़ा ।

वाज- अन्न, **सनि-** दाता।

अध्याय= माध्यन्दिन में = 100, काण्व में = 104

(1) माध्यन्दिन-

काण्ड = 14, **अध्याय**=100, **ब्राह्मण**=438, **कंण्डिकाएं** =7624,

(2) काण्व-

काण्ड = 17, **अध्याय** = 104, **ब्राह्मण**=435, **कंण्डिकाएं** = 6806,

सम्पूर्ण ग्रन्थ 14 भागों में विभक्त है।

- **मुख्य आख्यान एवं विषय -**
  (1) पुरुरवा उर्वशी,
  (2) दुष्यन्त शकुन्तला,
  (3) जलप्लावन,
  (4) मन और वाणी का विवाद।
- **विशिष्ट सन्दर्भ-**
  (1) याज्ञवल्क्य और शांडिल्य,
  (2) यज्ञ का महत्व,
  (3) यज्ञ का आध्यात्मिक रूप,
  (4) सांस्कृतिक और ऐतिहासिक तत्व,
  (5) महत्वपूर्ण आख्यान,
  (6) स्वाध्याय प्रशंसा,

(2) कृष्ण यजुर्वेद-

(क) तैत्तिरीय ब्राह्मण-

रचयिता- वैशम्पायन के शिष्य- **तित्तिर।**

(कांड- 3, **अध्याय-** 28, **उपखण्ड/अनुवाक-** 353)

महाभारत के शान्तिपर्व के अनुसार वैशम्पायन को याज्ञवल्क्य का मामा बताया है।

विशिष्ट सन्दर्भ-
यज्ञमीमांसा, अग्निहोत्र, बारह सत्र, उपहोम, ऋतु, सत्र, एकाह, अहीन, नाचिकेतस, (अग्नि) आख्यायिकाएँ, नारी-गौरव, आचारशिक्षा, पुरुषमेध, नक्षत्रेष्टियां, गवामयन, वर्णव्यवस्था क्षत्रियों के दो भेद, वर्ण उत्पत्ति, सृष्टि प्रक्रिया, वराह।

3. सामवेदीय ब्राह्मण

(क) तांडय ब्राह्मण-
इसी को 'पंचविंश' ब्राह्मण एवं 'प्रौढ' ब्राह्मण भी कहा जाता है।
महाब्राह्मणी रचयिता- **'तांडि' तदु होवाच ताण्डयः**-(जैमिनीय ब्राह्मण)।
अध्याय = 25, **पंचिका** = 5 अध्यायों की। इसमें 178 सोमयागों का वर्णन है।

- **तांडय ब्राह्मण की विशेषताएं-**
    (1) रचना वैशिष्ट्य,
    (2) सोमयाग,
    (3) सामगान की प्रक्रिया,
    (4) व्रात्ययज्ञ,
    (5) सांस्कृतिक और ऐतिहासिक सामग्री
    (6) यज्ञ का महत्व,

(ख) षड्विंश ब्राह्मण-
अध्याय = 26,
सायण ने अपने भाष्य में इसे **'ताण्ड्यैकशेष ब्राह्मण'** अर्थात् ताण्ड्य का परिशिष्ट कहा है। इसके प्रथम अध्याय में **'सुब्रह्मण्या'** ऋचा का विशेष वर्णन मिलता है । इसके अन्तिम षष्ठ अध्याय को **'अद्भुत ब्राह्मण'** कहते हैं ।

(ग) सामविधान-
प्रपाठक- 3, **अनुवाक**- 25,
विशिष्ट सन्दर्भ -
(1) श्रौत और तान्त्रिक विधियों का समन्वय।
(2) काव्य प्रयोग, प्रायश्चित्तों का विधान।
(3) विविध व्रतों का प्रारम्भिक रूप।

(घ) आर्षेय-
प्रपाठक- 3, **खण्ड**- 82,
(ङ) देवताध्याय- खंड- 4,
(च) उपनिषद ब्राह्मण- प्रपाठक =10,
(छ) संहितोपनिषद्- रहस्य को बताने वाला ब्राह्मण ग्रन्थ। खंड-5
(ज) जैमिनीय ब्राह्मण- तीन ब्राह्मण (1) जैमिनीय ब्राह्मण (2) जैमिनीय आर्षेय ब्राह्मण (3) जैमिनीय उपनिषद्।

4. अथर्ववेदीय ब्राह्मण

गोपथ ब्राह्मण-
अथर्ववेद का एकमात्र गोपथ ब्राह्मण है और यह ब्राह्मण पैप्पलाद शाखा से सम्बन्धित है, गोपथ ब्राह्मण में दो विभाग हैं-
1. पूर्वभाग= (5) प्रपाठक, **2. उत्तरभाग**- (6) प्रपाठक = (11) प्रपाठक।
पूर्वभाग कण्डिकाएं – (135), **उत्तरभाग कण्डिकाएं** (123),

गोपथ ब्राह्मण के मुख्य सन्दर्भ-
- ओम् का महत्व- **'आपेरोंकारः सर्वमाप्रोति'। (ओम इत्येतद् अक्षरं सर्वव्यापि ब्रह्म)**
- ओम् के जप का महत्व - **(एतदक्षरं ओंकारं) सहस्रकृत्व आवर्तयेत्, सिध्यन्त्यस्यार्थाः सर्वकर्माणि च।**
- सावित्री (गायत्री) का महत्व - **'सोऽपहतपाप्माऽनन्ता श्रियम् अश्नुते' । य वेदानां मातरं सावित्रीम् उपास्ते।**
- (4) याग मीमांसा,
- ब्रह्मा चारों वेदों के ज्ञाता - (एष ह वैविद्वान् सर्वविद् ब्रह्मा।)
- ब्रह्म विघ्ननाशक- 'ब्रह्मा यज्ञस्य विरिष्टं शमयति।
- मंत्र के आरम्भ में ओम् उच्चारण- ओंकारः पूर्व उच्यते।
- ज्योतिष विषयक उल्लेख
- मन का महत्त्व - मन एव सर्वम्।
- ब्रह्म की श्रेष्ठता- ब्रह्मैव सर्वम्।
- ब्रह्मचारी के कर्त्तव्य।
- देवासः = यह प्रथमा विभक्ति एक वचन हैं।

॥आरण्यक साहित्य॥

वानप्रस्थ और संन्यासियों के लिए आत्मतत्त्व और ब्रह्मविद्या के ज्ञान के लिए अध्यात्मपरक आरण्यक ग्रन्थों की सृष्टि हुई ।
आरण्यक का अर्थ- आरण्यक शब्द का अर्थ है-**"अरण्ये भवम् आरण्यकम्"** अर्थात् अरण्य में होने वाला । अरण्य में होने वाले अध्ययन-अध्यापन, मनन, चिन्तन, शास्त्रीय चर्चा और आध्यात्मिक-विवेचन इन विषयों के संकलनात्मक ग्रन्थों को आरण्यक कहते हैं । आचार्य सायण ने तैत्तिरीय आरण्यक के भाष्य लिखा है-

"अरण्याध्ययनादेतद् आरण्यकमितीर्यते।
अरण्ये तदधीयीतेत्येवं वाक्यं प्रवक्ष्यते"।।
(तैत्ति.आर. भाष्य श्लोक 6)

अर्थात् अरण्य में इनका पठन-पाठन होने से इन्हें आरण्यक कहते हैं।

इसमें आत्मविद्या, तत्त्वचिन्तन और रहस्यात्मक विषयों का वर्णन है, अत: आरण्यकों को **'रहस्य'** भी कहा गया है । गोपथ ब्राह्मण में **'सरहस्याः'** के द्वारा रहस्य शब्द से आरण्यकों का निर्देश है ।

"सर्वे वेदाः....सरहस्याः सब्राह्मणाः सोपनिषत्काः" । **(गोपथ 1.2.)**

निरुक्त (1.4) की टीका में **दुर्गाचार्य** ने ऐतरेय आरण्यक को **'ऐतरेयके रहस्यब्राह्मणे'** कहकर इसे **'रहस्य-ब्राह्मण'** नाम से संबोधित किया है । आरण्यकों में यज्ञ का गूढ रहस्य और ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन है, अत: इन्हें **'रहस्य'** कहा गया है।

आरण्यक ग्रन्थों की प्रमुख विशेषताएं-

आरण्यकों में पवित्र ब्रह्मविद्या का वर्णन है, अत: इसके पढ़ने और सुनने का अधिकार भी संयमी, व्रती और सात्त्विक प्रवृत्ति के व्यक्ति को ही है । आरण्यक ग्रन्थ ब्राह्मणग्रन्थों और उपनिषदों को जोड़ने वाली कड़ी है । आरण्यक ग्रन्थों की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

1. सकाम से निष्काम की ओर प्रवृत्ति,
3. स्थूल से सूक्ष्म की ओर,
4. दार्शनिक चिन्तन,
5. वेदों का नवनीत,

महाभारत का कथन है कि आरण्यक ग्रन्थ वेदों के ही ग्रन्थ हैं, वेदों से आरण्यक प्राप्त हुए हैं ।

"नवनीतं यथा दध्नो मलयाच्चन्दनं यथा ।
आरण्यकं च वेदेभ्य ओषधिभ्योऽमृतं यथा ।। (महा.1.331.3)

का प्रतिपाद्य विषय-

आरण्यक ग्रन्थ उपनिषदों के पूर्वरूप हैं। उपनिषदों में आत्मा, परमात्मा, सृष्टि उत्पत्ति, ज्ञान, कर्म, उपासना और तत्त्वज्ञान का प्रतिपादन है । उसी तत्त्वज्ञान का प्रारम्भिक रूप आरण्यकों में देखने को मिलता है ।

यज्ञ का दार्शनिक रूप-

आरण्यकों में वैदिक यागों के आध्यात्मिक और दार्शनिक पक्ष का विवेचन प्राप्त होता है । यज्ञ की दार्शनिक व्याख्या ब्रह्म के स्वरूप का ही विवेचन है ।

प्राणविद्या-

आरण्यकों में प्राणविद्या के महत्त्व पर विशेष प्रकाश डाला गया है। ऐतरेय आरण्यक में प्राणविद्या का विशेष वर्णन है । ऋग्वेद में प्राणविद्या के सूत्र है-**'आयुर्न प्राणः 'पुनः प्राणमिह नो धेहि'** ।'अथर्ववेद में एक पूरा सूक्त (11.4.1-26) प्राणविद्या के महत्त्व का वर्णन करता है । इसमें प्राण को संसार का स्वामी और नियन्ता कहा गया है । प्राण ही संसार का आधार हैं । ऐतरेय आरण्यक में इसी प्राणविद्या का विशदीकरण है । प्राण संसार का धारक है ।

आरण्यक ग्रन्थ-

(क) ऋग्वेद – ऐतरेय आरण्यक, शांखायन आरण्यक,
(ख) शुक्लयजुर्वेद- बृहदारण्यक्,
(ग) कृष्ण यजुर्वेद- तैत्तिरीय, काठक शाखा - तैत्तिरीय आरण्यक, मैत्रायणी शाखा- मैत्रायणी आरण्यक, इसे ही मैत्रायणी उपनिषद् कहते हैं।
(ध) सामवेद- तवलकार आरण्यक/'जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण',
(ङ) अथर्ववेद- -

1. ऐतरेय आरण्यक-

यह ऐतरेय ब्राह्मण का ही परिशिष्ट भाग है इसमें पाँच भाग हैं । इसमें ऋग्वेद के मंत्रों को बहुधा उद्धृत किया गया है । इसके लिए - **'तदुक्तम् ऋषिणा'** संकेत दिया गया है ।

ऐतरेय आरण्यक के विशिष्ट सन्दर्भ-

1. प्राणविद्या,
2. प्रज्ञा का महत्त्व,
3. आत्मस्वरूप का वर्णन,
4. वैदिक अनुष्ठान ,
5. स्त्रियों का महत्त्व,
6. आचारसंहिता,

2. शांखायन आरण्यक-

अध्याय- 15, अध्याय 3 से 6 तक को 'कौषीतकि उपनिषद्' कहते हैं । अध्याय 7 से 8 को 'संहितोपनिषद्' कहते हैं । इसको कौषीतकि आरण्यक भी कहा जाता है ।

3. बृहदारण्यक-

यह शुक्ल यजुर्वेदीय आरण्यक है। यह शतपथ ब्राह्मण के अन्तिम 14वें कांड के अन्त में दिया गया है । इसको आरण्यक की अपेक्षा उपनिषद्

के रूप में अधिक मान्यता प्राप्त हैं।इसमें आत्मतत्त्व की विशद व्याख्या है।

4. तैत्तिरीय आरण्यक-

यह कृष्ण यजुर्वेदीय तैत्तिरीय शाखा का आरण्यक है । **प्रपाठक/अरण/परिच्छेद** = 10, प्रपाठकों के उप विभाग अनुवाक हैं। प्रपाठकों का नामकरण उनके प्रथम पद के आधार पर किया गया है।

॥वेदाङ्ग॥

वेदाङ्ग का अर्थ-

वेदाङ्ग का अर्थ **(वेदस्य अंगानि)** वेद के अंग - है । अंग का अर्थ है। वे उपकारक तत्त्व जिनसे वस्तु के स्वरूप का बोध होता है । **"अंग्यन्ते ज्ञायन्ते एभिरिति अंगानि"।**

वेदांगों के नाम और उनकी संख्या-

वेदांग 6 हैं । इनके नाम हैं –

1. शिक्षा, 2. व्याकरण, 3. छन्द, 4. निरुक्त, 5. ज्योतिष, 6.कल्प।

"शिक्षा व्याकरणं छन्दो निरुक्तं ज्योतिषं तथा ।
कल्पश्चेति षडङ्गानि वेदस्याहुर्मनीषिणः" ।।

ये वेदांग सामान्यतया सूत्रशैली में लिखे गए हैं । पाणिनीय-शिक्षा में इन 6 वेदांगों का वेद-पुरुष के 6 अंगों के रूप में वर्णन है । जैसे - छन्द वेदपुरुष के पैर हैं, कल्प हाथ हैं, ज्योतिष नेत्र हैं, निरुक्त कान हैं, शिक्षा नाक है और व्याकरण मुख है ।

**"छन्दः पादौ तु वेदस्य, हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते ।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य, मुखं व्याकरणं स्मृतम् ।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते"॥
(पाणिनीय शिक्षा 41-42)**

वेदांगों का सर्वप्रथम उल्लेख **मुण्डक उपनिषद् में (अपरा विद्या)** के अन्तर्गत चार वेदों के नाम के बाद हुआ है।' **तत्रापरा ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदः शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दो ज्योतिषम् इति'। (मुण्डक उप,1.1.5)**

1. शिक्षा

शिक्षा का उद्देश्य है - वर्णोच्चारण की शिक्षा देना, किस वर्ण का किस स्थान से उच्चारण किया जाता है, कितने स्थान और प्रयत्न हैं, शरीर-वायु किस प्रकार वर्ण के रूप में परिवर्तित होती है, कितने स्वर हैं, इत्यादि । **तैत्तिरीय उपनिषद्** में शिक्षा के 6 अंगों का उल्लेख है- वर्ण, स्वर, मात्रा, बल, साम और संतान । **'वर्णः, स्वरः, मात्रा, बलम् , साम, सन्तानः, इत्युक्तः शिक्षाध्यायः'** । **(तैत्ति. उ. 1.2)**

1. वर्ण- वेदों में 52 वर्ण (ध्वनियाँ) प्राप्त होते हैं। **स्वर** – (13), **स्पर्श** (क से म तथा ळ् और ळ्ह) – (27), य र ल व, श ष स ह - 8 , **विसर्ग, अनुस्वार, जिह्वामूलीय** और **उपध्मानीय** (क प से पहले आधे विसर्ग के चिह्न) - 4= (52) **"त्रिषष्टिश्चतुःषष्टिर्वा वर्णाः शंभुमते मताः"** ।। **(पाणिनीय शिक्षा 3)**

2. स्वर- स्वर तीन हैं : उदात्त, अनुदात्त और स्वरित ।

3. मात्रा- स्वरों के उच्चारण में लगने वाले समय को मात्रा कहते हैं ये तीन है- ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत । ह्रस्व की 1 मात्रा, दीर्घ की 2 मात्रा और प्लुत की 3 मात्रा होती है।

4. बल- वर्णों के उच्चारण में होने वाले प्रयत्न और उनके उच्चारण स्थान को बल कहते हैं । प्रयत्न 2 हैं - **आभ्यन्तर** और **बाह्य** ।

5. साम- समविधि से सुस्पष्ट एवं सुस्वर उच्चारण।

6. संतान- संहिता अर्थात् पदपाठ में प्रयुक्त शब्दों में संधि -नियमों को लगाना ।

वेदों के शिक्षा ग्रन्थ-

उपलब्ध शिक्षाग्रन्थ 35 हैं । इनमें मंत्रों के उच्चारण आदि का विस्तृत वर्णन है । 32 शिक्षा-ग्रन्थों का एक संकलन **'शिक्षा-संग्रह'** नाम से प्रकाशित हुआ है। पाणिनीय शिक्षा के 11 खण्ड बताए जाते हैं।

वेदों के प्रमुख शिक्षाग्रन्थ-

ऋग्वेद	शुक्लयजुर्वेद	कृष्ण यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
1. शिशिरीय शिक्षा	1. याज्ञवल्क्य शिक्षा	1. चारायणीय शिक्षा	1. नारदीय शिक्षा	1. माण्डूकीय शिक्षा
2. शौनक शिक्षा	2. वर्णरत्न प्रदीपिका	2. भारद्वाज शिक्षा	2. लोमशीय शिक्षा	2. वर्णपटल शिक्षा
3. पाणिनीय शिक्षा	3. प्रातिशाख्य प्रदीप	3. व्यास शिक्षा	3. गौतमीय शिक्षा	3. दन्त्योष्ट विधि शिक्षा
4. स्वराङ्ग शिक्षा	4. सम्प्रदाय प्रबोधिनी	4. सर्वसम्मत शिक्षा		
5. स्वरव्यञ्जन शिक्षा	5. माण्डव्य	5. पारिशिक्षा		
	6. अवसाननिर्णय	6. कौण्डिन्य शिक्षा		

2. कल्प

कल्प का अर्थ- जिन ग्रन्थों में यज्ञ-संबन्धी विधियों का समर्थन या प्रतिपादन किया जाता है, उन्हें 'कल्प' कहते हैं । ऋग्वेद प्रातिशाख्य की टीका में **विष्णुमित्र** ने कहा है कि जिन ग्रन्थों में वैदिक कर्मों (यज्ञ आदि) का सांगोपांग विवेचन किया जाता है, उन्हें 'कल्प' कहते है । **'कल्प्यते समर्थ्यते यागप्रयोगोऽत्र इति व्युत्पत्तेः'- (सायण)**

कल्पसूत्रों के भेद-

कल्पसूत्रों के प्रमुख चार भेद है-

1. श्रौतसूत्र- श्रौत का अर्थ है - श्रुति-प्रतिपादित या वेदों में वर्णित । श्रुति से श्रौत शब्द बना है। श्रौतसूत्रों में वेदों में वर्णित बड़े यज्ञ-याग-इष्टियों का विस्तृत विवेचन विवरण दिया गया है । इन विशिष्ट यागों में मुख्य हैं - **दर्शपौर्णमास, सोमयाग, वाजपेय, राजसूय, अश्वमेध, सौत्रामणी** आदि ।

2. गृह्यसूत्र - इनमें गृहस्थ से सम्बद्ध 16 संस्कारों, 5 महायज्ञ, 7 पाकयज्ञ, गृहनिर्माण गृह-प्रवेश पशुपालन और कृषिकर्म आदि से सम्बद्ध यज्ञों की विधियाँ दी गई हैं ।

3. धर्मसूत्र - ये आचारसंहिता से सम्बद्ध ग्रंथ हैं । ये स्मृतियों के पूर्वरूप हैं । इनमें वर्णाश्रम के कर्तव्यों, आचार-विचार, मान्यताओं और सामाजिक जीवन के कर्तव्य अकर्तव्यों का विशद वर्णन है

4. शुल्वसूत्र - ये शुद्ध रूप से गणितशास्त्रीय वैज्ञानिक ग्रन्थ हैं । इनमें गणितशास्त्र के अंग ज्यामितिशास्त्र (Geometry) से सम्बद्ध अनेक प्रमेय दिये गये है । इनमें छोटी-बड़ी सभी प्रकार की वेदियों के निर्माण की पूरी विधि दी गई है । सभी पाश्चात्त्य विद्वान् इन ग्रन्थों में वर्णित ज्यामिति से सम्बद्ध प्रमेयों आदि के वर्णन पर मंत्र- मुग्ध हैं । पैथागोरस आदि के प्रमेयों का इनमें स्पष्ट उल्लेख है ।

3. व्याकरण

व्याकरण का अर्थ-

'व्याक्रियन्ते विविच्यन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्'अर्थात् जिस शास्त्र के द्वारा शब्दों के प्रकृति-प्रत्यय का विवेचन किया जाता है उसे व्याकरण कहते हैं । इसमें यह विवेचन किया जाता है कि शब्द कैसे बनता है। इसमें क्या प्रकृति है और क्या प्रत्यय लगा है । तदनुसार शब्द का अर्थ निश्चित किया जाता है । पाणिनीय शिक्षा में व्याकरण को वेदपुरुष का मुख बताया गया है। **"मुखं व्याकरणं स्मृतम्"**।

व्याकरण के प्रयोजन-

पतंजलि ने महाभाष्य आह्निक- 1 (में व्याकरण के 5 प्रयोजन बताए हैं **रक्षोहागमलघ्वसन्देहाः प्रयोजनम्** । (महा.आ.1)।

4. निरुक्त

निरुक्त का अर्थ : निरुक्त का अर्थ है - निर्वचन, व्युत्पत्ति । शब्द के मूलरूप का ज्ञान कराना, शब्द में प्रकृति-प्रत्यय का स्पष्टीकरण, धात्वर्थ और प्रत्ययार्थ का विशदीकरण, समानार्थक और नानार्थक शब्दों का विवेचन आदि कार्य निरुक्त का है ।

यास्क का निरुक्त-

यास्क का 'निरुक्त' ग्रन्थ ही संप्रति उपलब्ध है । इसमें 12 अध्याय हैं। अन्त में परिशिष्ट के रुप में दो अध्याय हैं । इस प्रकार यह 14 अध्यायों में विभक्त है ।

5. छन्द

छन्द का अर्थ- छन्दस् (छन्द) शब्द छद् (ढकना) धातु से बना है। यास्क ने निरुक्त (7.12) में छन्दस् का निर्वचन दिया है । - **'छन्दांसि**

छादनात्' अर्थात् छन्द भावों को आच्छादित करके उसे समष्टिरूप प्रदान करता है। इसके कारण छन्द गेय और-सुपाठ्य हो जाता है। कात्यायन ने सर्वानुक्रमणी (12.6) में छन्द का लक्षण दिया है **'यदक्षरपरिमाणं तच्छन्दः'** जिसमें वर्णों या अक्षरों की संख्या निर्धारित होती है, उसे छन्द कहते है । अक्षरों की संख्या के आधार पर ही छन्दों के नाम रखे गए हैं ।

वैदिक छंद-

- **गायत्री** - सबसे प्रसिद्ध छंद, आठ वर्णों (मात्राओं) के तीन पाद। गीता में भी इसको सर्वोत्तम बताया गया है (ग्यारहवें अध्याय में)। इसी में प्रसिद्ध गायत्री मंत्र ढला है।
- **त्रिष्टुप** - 11 वर्णों के चार पाद - कुल 44 वर्ण।
- **अनुष्टुप** - 8 वर्णों के चार पाद, कुल 32 वर्ण। वाल्मीकि रामायण तथा गीता जैसे ग्रंथों में इसका प्रयोग हुआ है। इसी को श्लोक भी कहते हैं।
- **जगती** - 8 वर्णों के 6 पाद, कुल 48 वर्ण।
- **बृहती**- कुल 36 वर्ण
- **पंक्ति**- 4 या 5 पाद कुल 40 अक्षर 2 पाद के बाद विराम होता है पादों में अक्षरों की संख्याभेद से इसके कई भेद हैं
- **उष्णिक**- इसमें कुल 28 वर्ण होते हैं तथा कुल 3 पाद होते हैं 2 में आठ आठ वर्ण तथा तीसरे में 12 वर्ण होते हैं दो पद के बाद विराम होता है बढे हुए अक्षरों के कारण इसके कई भेद होते हैं

छन्द में अक्षर कम या अधिक होना-

एक अक्षर कम-**निचृत्**, एक अक्षर अधिक-**भुरिक्**,
दो अक्षर कम-**विराट्**, दो अक्षर अधिक-**स्वराट्**,

उदाहरण-

'गायत्री छन्द' = 24 अक्षर
22 अक्षर विराट् गायत्री
23 अक्षर निचृत गायत्री
24 अक्षर गायत्री
25 अक्षर भुरिक् गायत्री
26 अक्षर स्वराट् गायत्री

प्रमुख वैदिक छन्द-

छन्द	अक्षर	छन्द	अक्षर
गायत्री	24	अत्यष्टि	68
उष्णिक	28	धृति	72
अनुष्टुप्	32	अतिधृति	76
बृहती	36	कृति	80
पंक्ति	40	प्रकृति	84
त्रिष्टुप	44	आकृति	88
जगती	48	विकृति	92
अतिजगती	52	संस्कृति	96
शक्वरी	56	अभिकृति	100
अति शक्वरी	60	उत्कृति	104
अष्टि	64		

6. ज्योतिष-

ज्योतिष का अर्थ है – 'ज्योतिर्विज्ञान' । सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र आदि आकाशीय पदार्थों की गणना ज्योतिर्मय पदार्थों में है । इनसे संबद्ध विज्ञान को ज्योतिष या ज्योतिर्विज्ञान (Astronomy) कहते हैं। **'लगध'** ने इसको **'ज्योतिषाम अयनम्'** (श्लोक 3) अर्थात् नक्षत्रों आदि की गति का विवेचन करने वाला शास्त्र कहा है । लगध ने ज्योतिष के लिए एक दूसरा शब्द दिया है – **'कालज्ञानशास्त्र /कालविज्ञान-शास्त्र' (कालज्ञानं प्रवक्ष्यामि,** श्लोक 2) । इसमें कालचक्र, संवत्सरचक्र तथा कालसंबन्धी तथ्यों का विवेचन किया जाता हैं। इस प्रकार ज्योतिष में कालविज्ञान और ज्योतिर्विज्ञान दोनों का समन्वय है ।

ज्योतिष का महत्त्व –

वेदों में यज्ञ का सर्वाधिक महत्त्व है । यज्ञों के लिए समय निर्धारित हैं। वेदाङ्ग ज्योतिष में कहा गया है कि जिस प्रकार मोर की शिखा और सर्पों की मणि सिर के सर्वोपरि स्थान में हैं, उसी प्रकार गणित (गणितज्योतिष) सारे वेदांगों में मूर्धन्य है ।

"यथा शिखा मयूराणां, नागानां मणयो यथा ।
तद्वद् वेदांगशास्त्राणां, गणितं मूर्धनिस्थितम्।।
(वेदांग याजुष ज्योतिष)

पाणिनि ने इसे विराट् पुरुष के नेत्र का स्थान दिया हैं, क्योंकि यह यज्ञादि के लिए मार्गदर्शन करता है ।
'ज्योतिषामयनं चक्षुः' । (पा. शिक्षा 41)

वेदों से सम्बन्धित अनुक्रमणियां -

अनुक्रमणियां=वेदों की रक्षा के लिये प्रमुख उपाय।

❖ **शौनककृत (5) अनुक्रमणियां हैं-**

(1) आर्षानुक्रमणी (2) छन्दोऽनुक्रमणी
(3) देवतानुक्रमणी (4) अनुवाक अनुक्रमणी
(5) सूक्तानुक्रमणी (ऋग्वेद)।

शौनक की अन्य कृतियां -

(1) ऋग्विधान (ऋक्लक्षण), (2) बृहद्देवता (8 अध्याय), (3) चरणव्यूह।

चरणव्यूहग्रन्थ का विषय है- **वेदशाखापर्यालोचन।**

- **कात्यायन कृत अनुक्रमणियां-** सर्वानुक्रमणी (5 अध्याय-ऋग्वेद), शुक्ल यजुः सर्वानुक्रमसूत्र (माध्यन्दिनी शाखा)
- **माधवभट्ट कृत अनुक्रमणियां** - ऋग्वेदानुक्रमणी (ऋग्वेद)
- **सामवेद की अनुक्रमणियां-** सामवेद में श्रौतयाग से सम्बद्ध अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं, जो सामवेद की अनुक्रमणी का कार्य सिद्ध करते हैं । कल्पानुपदसूत्र उपग्रन्थसूत्र, अनुपदसूत्र निदानसूत्र, उपनिदानसूत्र, पंचविधानसूत्र, लघु ऋक्तंत्रसंग्रह, सामसप्त लक्षण।
- **अथर्ववेद की अनुक्रमणी-** वृहत्सर्वानुक्रमणी।
- **अथर्ववेद के ग्रन्थ-** (1) पञ्चपटलिका (2) दन्त्योष्टविधि। अथर्ववेदीय महत्वपूर्ण ग्रन्थ- कौशिक सूत्र, वैतानसूत्र, नक्षत्रकल्प चरणव्यूह सूत्र, शौनक आंगिरस कल्प, शान्तिकल्प।
- **नीतिमंजरी-** द्याद्विवेद, इसमें ऋग्वेद के आख्यानों का संकलन है ।

वेद, ब्राह्मण,आरण्यक,उपनिषद् एवं सूत्र ग्रन्थों का संक्षिप्त विवरण-

1. ऋग्वेद संहिता

(क) शाखा = 1. शाकल 2. वाष्कल,
(ख) ब्राह्मण = 1. ऐतरेय, 2. शांखायन (कौषीतकि)।
(ग) आरण्यक= 1. ऐतरेय 2. शांखायन,
(घ) उपनिषद = 1. ऐतरेय, 2. कौषीतकि 3. बाष्कल मंत्रोपनिषद।
(ङ) कल्पसूत्र=
(1) श्रौतसूत्र- 1. आश्वलायन, 2. शांखायन,
(2) गृह्यसूत्र- 1. आश्वलायन 2. शांखायन 3. कौषीतकि (शाम्बव्य)।
अमुद्रित- शौनक, भारवीय, शाकल्य, पैंगी, पराशर, वहृच, ऐतरेय गृह्यसूत्र,)
(3) धर्मसूत्र- वशिष्ठ।

2. (क) शुक्ल यजुर्वेद-संहिता

(क) शाखा = माध्यन्दिन (वाजसनेयि), काण्व।
(ख) ब्राह्मण= शतपथ (याज्ञवल्क्य)
(ग) आरण्यक= बृहदारण्यक
(घ) उपनिषद्= ईशोपनिषद, बृहदारण्यक उपनिषद्।
(ङ) कल्पसूत्र-
(1) श्रौतसूत्र= कात्यायन। (36अध्याय)
(2) गृह्यसूत्र= पारस्कर।
(3) शुल्वसूत्र= बौधायन, मानव, आपस्तम्ब, कात्यायन, मैत्रायणीय, हिरण्यकेशि (सत्याषाढ़), वाराह। (शुल्व=रस्सी)
(4) धर्मसूत्र= हारीत, शंखधर्म, विष्णुधर्म,

(ख) कृष्ण यजुर्वेद-संहिता

(क) शाखा= तैत्तिरीय, मैत्रायणीय, कठ (काठक), कपिष्ठल-कठ।
(ख) ब्राह्मण= तैत्तिरीय
(ग) आरण्यक= तैत्तिरीय, मैत्रायणीय।
(घ) उपनिषद्= तैत्तिरीय, कठ, श्वेताश्वतर, मैत्रायणी (मैत्री), महानारायण।
(ङ) कल्पसूत्र=
(1) श्रौतसूत्र- बौधायन, वाधूल, मानव, भारद्वाज, आपस्तम्ब, काठक, सत्याषाढ़ वाराह, वैखानस।
(2) गृह्यसूत्र- बौधायन, मानव, भारद्वाज, आपस्तब, काठक, अग्निवेश्य, हिरण्यकेशि, वाराह, वैखानस, चारायणीय, वैजवाप।
(3) शुल्व सूत्र- बौधायन, मानव, आपस्तम्ब, कात्यायन, मैत्रायणीय, हिरण्यकेशि (सत्याषाढ़), वाराह।
(4) धर्मसूत्र- बौधायन, आपस्तम्ब, हिरण्यकेशि।

3. सामवेद संहिता

(क) शाखा= कौथुम, राणायनीय, जैमिनीय।
(ख) ब्राह्मण = कौथुमीय = तांडय, (महाब्राह्मण) (पंचविंश/प्रौढ़) षड्विंश, सामविधान, आर्षेय, मंत्र, (या उपनिषद), देवताध्याय, वंश, संहितोपनिषद्, **जैमिनीय**= जैमिनीय (आर्षेय), जैमिनीय (तलवकार) जैमिनीय उपनिषद्,
(ग) आरण्यक= तलवकार, (जैमिनीय शाखा)
(घ) उपनिषद्= छान्दोग्य, केन।
(ङ) कल्पसूत्र=
(1) श्रौतसूत्र - आर्षेय या मशक, क्षुद्र, जैमिनीय, लाट्यायन, द्राह्यायण, निदान, उपनिदान।

(2) **गृह्यसूत्र-** गोभिल, कौथुम, खादिर, द्राह्यायण, जैमिनीय।
अप्रकाशित- गौतम, छान्दोग्य, छन्दोग-गृह्यसूत्र।
(3) **धर्मसूत्र-** गौतम। (सबसे प्राचीन)

4. अथर्ववेद संहिता

(क) **शाखा=** शौनक, पैप्पलाद,
(ख) **ब्राह्मण =** गोपथ,
(ग) **आरण्यक =** -
(घ) **उपनिषद् =** प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य,
(ङ) **कल्पसूत्र =**
(1) **श्रौतसूत्र =** वैतान,
(2) **गृह्यसूत्र =** कौशिक,
(3) **धर्मसूत्र =** -

'आंकतिल दु पेरों' ने अपने ग्रन्थ में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के ये विकृत नाम दिए हैं –
ऋग्वेद - rak beid, **यजुर्वेद** - djedir beids,
सामवेद - sam beid. **अथर्ववेद** - athrban beid

॥पदकार/पदपाठकार॥

वेदों के परम्परागत अर्थ को जानने वाले को **"पारोवर्यवित्"** कहते थे। 'वेद' कठ, कुथुम, तितिर इन ऋषियों से पूर्व में विद्यमान थे।

आचार्य		वेद
1. शाकल्य	-	ऋग्वेद
2. रावण	-	ऋग्वेद
3. आत्रेय	-	तैत्तिरीय संहिता
4. गार्ग्य	-	सामवेद

वेदों के प्राचीन भाष्यकार-

ऋग्वेद

1. स्कन्दस्वामी, 2. नारायण, 3. उद्गीथ,
4. माधवभट्ट, 5. वेंकट-माधव, 6. धानुष्क यज्वा,
7. आनन्दतीर्थ (मध्व), 8. आत्मानन्द, 9. सायण।

त्रिवेदी भाष्यकार- धानुष्क यज्वा,
ऋग्वेद के सबसे प्राचीन भाष्यकार- **स्कन्दस्वामी।**

शुक्ल यजुर्वेद

(1) **माध्यन्दिन-संहिता-** 1. उव्वट/उवट 2. महीधर,
(2) **काण्व-संहिता-** 1. हलायुध, (ब्राह्मणसर्वस्व) 2. सायण, 3. अनन्ताचार्य, 4. आनन्दबोध भट्टोपाध्याय।

'माधवभट्ट' ने ऋग्वेद के विषय में (11) अनुक्रमणियां लिखी थी।

कृष्ण-यजुर्वेद

तैत्तिरीय-संहिता भाष्य- 1. कुण्डिन 2. भवस्वामी 3. गुहदेव 4. क्षुर 5. भट्टभास्कर 6. सायण।
तैत्तिरीय संहिता पर- **"ज्ञानयज्ञ भाष्य"** भट्टभास्कर ने लिखा है

सामवेद – 1. माधव 2. गुणविष्णु 3. भरतस्वामी।
अथर्ववेद – 1.सायण ।

ब्राह्मण ग्रन्थों के भाष्य-

ऐतरेय- गोविन्द स्वामी, (बौधायनीय धर्म विवरण) षड्गुरुशिष्य, सायण।
शतपथ- नीलकण्ठ, हरितस्वामी।
तैत्तिरीय - भवस्वामी, भट्टभास्कर, सायण ।
ताण्ड्य- जयस्वामी
मंत्र- गुणविष्णु
आर्षेय- भास्कर मिश्र
सामविधान- भरतस्वामी
संहितोपनिषद्- द्विजराज भट्ट।

आचार्य सायण के भाष्य-

- **संहिताएं(5)** - तैत्तिरीय, ऋग्वेद, सामवेद, काण्व, अथर्ववेद,
- **ब्राह्मण(।।)-** तैत्तिरीय, ऐतरेय, ताण्ड्य, षड्विंश, सामविधान, आर्षेय, देवताध्याय ऋग्वेदभाष्यभूमिकासंग्रह,
- **आरण्यक-** तैत्तिरीय, ऐतरेय।
- सायण 'याज्ञिक' भाष्यकार है।
- इनके भाष्य का नाम - **वेदार्थ प्रकाश।**
- सायण के भाई माधव थे, इन्होनें उनके नाम पर **"माधवीय वेदार्थ प्रकाश"** भाष्यलिखा था ।
- सायण ने प्रथम भाष्य **'तैत्तिरीय संहिता'** पर ही लिखा था।
- सायण के गुरु- **विद्यातीर्थ**, माता= **श्रीमती।**
- सायण का भ्राता कहा जाता है= **भोगनाथ**

॥पाश्चात्य विद्वान॥

भारतीय वाङ्मय की ओर पाश्चात्य विद्वानों का ध्यान आकृष्ट करने का मुख्य श्रेय **'सर विलियम जोन्स'**(1746-1794) को है । इन्होंने **"रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल"** की स्थापना (1784) में की है।

(क) ऋग्वेद

- **ऋग्वेद संहिता संपादन-** फ्रीडिश रोजेन, मैक्समूलर, थियोडोर आउप्रेख्त।
- सर्वप्रथम वेदों का अंग्रेजी भाषा में तथा रोमन लिपि में अनुवाद किया- **'विल्सन'** ने ।
- चारों वेदों पर पद्यात्मक अनुवाद- **(ग्रिफिथ)**।

ऋग्वेद के अनुवाद-

(1) विल्सन- अंग्रेजी में चारों वेदों पर,
(2) ग्रासमान- जर्मन,
(3) लुड्विंग- जर्मन,
(4) प्रो.ग्रिफिथ- अंग्रेजी,
(5) प्रो.ओल्डेनबर्ग- जर्मन,
(6) लांग्लियस- फ्रेंच,

ऋग्वेदीय संकलन- मैक्समूलर ओल्डेनबर्ग, मैकडॉलन, थॉमस, पीटर्सन,

ऋग्वेदीय ब्राह्मण-

प्रो.हाउग- (ऐतरेय ब्राह्मण-अंग्रेजी में अनुवाद),
आउफ्रेख्त- (ऐतरेय ब्राह्मण-रोमन अक्षर में),
प्रो.लिन्डर- (कौषितकि ब्राह्मण का सम्पादन),
डॉ.कीथ- (ऐतरेय,कौषितकि इन दोनों का अंग्रेजी में अनुवाद) ।

(ख) यजुर्वेद

(1) शुक्ल यजुर्वेद संहिता-

बेबर - शुक्ल यजुर्वेद संहिता के महीधरभाष्य सहित एवं काण्व संहिता का देवनागरी लिपि में संस्करण प्रकाशित किया ।
प्रो. ग्रिफिथ- माध्यन्दिन, वाजसनेयि शाखा का अंग्रेजी में पद्यानुवाद।

शुक्ल यजुर्वेद ब्राह्मण-

बेबर- शतपथ ब्राह्मण का आलोचनात्मक संस्करण ।
कैलेंड- शतपथ ब्राह्मण काण्वशाखा का अंग्रेजी में प्रकाशन ।
जे. ईग्लिंग- शतपथ ब्राह्मण का अंग्रेजी अनुवाद बृहद् भूमिका-सहित **'सेक्रेड बुक्स आफ़ द ईस्ट सीरीज'** में 5 भागों में प्रकाशित किया ।

शुक्ल यजुर्वेद सूत्रग्रन्थ-

बेबर- कात्यायन श्रौतसूत्र का प्रकाशन ।
स्टेन्सलर- पारस्कर गृह्यसूत्र का संपादन ।

(2) कृष्ण यजुर्वेद संहिता -

वेबर- तैत्तिरीय-संहिता का रोमन अक्षरों में संपादन,
श्रेडर- मैत्रायणी तथा काठक संहिता का प्रकाशन,
डॉ.कीथ- तैत्तिरीय संहिता का **'हार्वर्ड ओरियण्टल सीरीज़'** से अंग्रेजी में प्रकाशन किया ।

कृष्ण यजुर्वेद सूत्रग्रन्थ-

कैलेन्ड- बौधायन श्रौतसूत्र का प्रकाशन,
विन्टरनित्स- आपस्तम्ब गृह्यसूत्र का संस्करण
गार्बे- आपस्तम्ब श्रौतसूत्र,
क्राउएर- मानव श्रौतसूत्र,

(ग) सामवेद

सामवेद संहिता-

स्टेवेन्सन- राणायनीय का संस्करण (अंग्रेजी अनुवाद),
बेन्फे- कौथुम (जर्मन)
कैलेन्ड- जैमिनीय (रोमन)
ग्रिफिथ- सामवेद (अंग्रेजी)

सामवेदीय ब्राह्मण-

वेबर- अद्भुत ब्राह्मण, वंशब्राह्मण (जर्मन मेंअनुवाद)।
बर्नेल- सामविधान, देवताध्याय, वंश, संहितोपनिषद्, आर्षेय का संपादन,
एर्टल- जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण का (अंग्रेजी में संपादन),
कैलेन्ड- जैमिनीय ब्राह्मण का जर्मन में अनुवाद,
प्रो.स्टेन कोनो- सामविधान (अनुवाद)
ग्रास्ट्रा- जैमिनीय गृह्यसूत्र का 'डच' भाषा में अनुवाद।

(घ) अथर्ववेद

रीठ और ह्विटनी- शौनकीय शाखा संपादन,
ब्लूमफील्ड, गार्बे – पैप्पलाद,
कैलेन्ड- अथर्ववेद संहिता संस्करण,
ग्रिफिथ- अथर्ववेद का अंग्रेजी में अनुवाद,
ह्विटनी, लानमान- अथर्ववेद का अंग्रेजी में अनुवाद
ब्लूमफील्ड- पैप्पलाद संहिता का अंग्रेजी में अनुवाद

अथर्ववेदीय ब्राह्मण-

1. **गास्ट्रा-** गोपथ ब्राह्मण का संस्करण,
2. **ब्लूमफील्ड-** कौशिक गृह्यसूत्र का प्रकाशन,

प्रमुख भाष्यकार एवं ग्रन्थ -

भाष्यकार		ग्रन्थ
सायणाचार्य	-	वेदार्थ प्रकाश
स्कन्दस्वामी	-	ऋगर्थदीपिका
महीधर	-	वेददीप (माध्यन्दिन सं.)
माधव	-	विवरण भाष्य (सामवेद)
गुणविष्णु	-	छान्दोग्यमन्त्रभाष्य (कौथुम शा.) अन्य- ब्राह्मण भाष्य,पारस्कर गृ.सू. भाष्य
हलायुध	-	ब्राह्मणसर्वस्व (काण्व संहिता) मीमांसासर्वस्व,वैष्णवसर्वस्व,शैवसर्वस्व, पण्डित-सर्वस्व
भट्टभास्कर	-	ज्ञानयज्ञ (तैत्तिरीय संहिता)

- कात्यायन श्रौतसूत्र के भाष्यकार- **कर्काचार्य,**
- आश्वलायन श्रौतसूत्र के भाष्यकार- **नारायण,**
- आपस्तव के भाष्यकार- **धूर्तस्वामी,**
- कात्यायन के सर्वानुक्रमणिका की व्याख्या- **"वेदार्थदीपिका।**
- श्री सातलवेकर ने चारों वेदों पर **(सुबोध)** भाष्य लिखा।
- **'अति नूलं, नहि नहि अतिप्रयलं रहस्यम्'** यह वेदों के विषय में कहा है- **'पं.मधुसूदन ओझा'** ने
- **आर्यसमाज** - दयानन्द सरस्वती
- ब्रह्मसमाज- राजा राममोहन राय ।

वेदों पर विदेशी विद्वानों की व्याख्याएं एवं ग्रन्थ-

मैक्समूलर – Vedic Hymns, History of the Ancient Sanskrit Literature.

ओल्डेनबर्ग,थॉमस- Vedic Hymns

पीटर्सन- Hymns from the Rigveda.

ब्रूमफील्ड- द अथर्ववेदा एण्ड गोपथ ब्राह्मण,

पीटर पीटर्सन - ऋग्वेद के स्तोत्र,

रॉथ और बाटलिंग – 'संस्कृत और जर्मन महाकोष'

ग्रासमान – 'ऋग्वैदिक कोष'

हिले ब्रान्ट - 'वैदिक डिक्शनरी'

ह्विटनी - संस्कृत ग्रामर,

मैकडॉनल/कीथ - (Vedic Index) वैदिक कोषों को दो भागों में विभक्त किया।

मैकडानल - 'वैदिक ग्रामर', 'वैदिक ग्रामर फॉर स्टूडेन्टस' संस्कृत ग्रामर फॉर स्टूडेन्टस, A Vedic reader for students

मैकडानल - (वैदिक मैथोलॉजी/वैदिक देवशास्त्र)

ब्रूमफील्ड - (Vedic Concrodonace) वैदिक मन्त्र महासूची (वैदिक वाक्यकोश)।

कीथ- 'रिलेजन एण्ड फिलॉस्फी ऑफ दा वेदाज एण्ड उपनिषदा'

मैक्समूलर- 'हिस्ट्री ऑफ द एनसियेन्ट संस्कृत लिटरेचर'

मैक्समूलर- 'व्हट कैन इट टीच अस'

वेबर- 'हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन लिट्रेचर'।

विनटरनित्स- A History of Indian Literature.

रूडाल्फ रॉथ - (Vedic Literature And History)

॥भारतीय विद्वान॥

कात्यायन	-	ऋक्सर्वानुक्रमणिका
दयानन्द	-	ऋग्वेदभाष्यभूमिका
मधुसूदन ओझा	-	वैदिक विज्ञान,
गिरधरशर्माचतुर्वेदी	-	भारतीय संस्कृति
द्याद्विवेद	-	नीतिमञ्जरी
गोविन्द स्वामी	-	बौद्धायनीय धर्म विवरण (ऐतरेय ब्रा.)
वेद रहस्य	-	अरविन्द
यज्ञतत्वप्रकाश	-	चिन्नस्वामी,
शतपथब्राह्मण	-	याज्ञवल्क्य
डॉ.आनन्द कुमार शास्त्री	-	'A New Approach to the Vedas'

बालगंगाधर तिलक- Arctic home in the vedas, Orion.

डॉ.वासुदेवशरण अग्रवाल – Vision in Long Darkness Thousand syllabled speech, Vedic Lectures.

गुरुदत्त विद्यार्थी- The Terminology of the vedas, Hymns to the Mystic Fire.

योगी अरविन्द घोष – The Secret of the vedas,

डॉ.सत्यप्रकाश – Founders of Sciences in the Ancient India.

डॉ.आनन्द कुमार स्वामी- A New Approach of the Vedas.

डॉ. विष्णुकुमार वर्मा- वैदिक सृष्टि-उत्पत्तिरहस्य (Big Bang Theory) महाविस्फोट

डॉ.पी.एल.भार्गव- Rigvaidic Geography of india, India in the vedic age

N.N.Law- Age of the Rigveda.

आर.सी.मजूमदार- Vedic Age.

डॉ.रामगोपाल- Indian of the vedic kalpsootras.

भारतीय कृष्णतीर्थ जगद्गुरु- Vedic Mathmatic.

डॉ.दांडेकर- Vedic Bibiliography

डॉ.मङ्गलदेवशास्त्री- ''ऐतरेयारण्यक-पर्यालोचनम्।

लुई रेनु- (आधुनिक वैदिक व्याकरण)

सत्यव्रत सामश्रमी- (सामवेदीय विद्वान), निरुक्तालोचनम्, ऐतरेयालोचनम्।

इकाई-2

वैदिक साहित्य का विशिष्ट अध्ययन-

वैदिक देवों का स्वरूप -

"देवो दानाद् वा, दीपनाद् वा, द्योतनाद् वा, द्युस्थानो भवतीति वा। (निरुक्त)

(1) पृथ्वि स्थानीय देवता- अग्नि, सोम, बृहस्पति, प्रजापति, विश्वकर्मा अदिति-दिति, देवियां, नदियां।

(2) अन्तरिक्ष स्थानीय देवता- इन्द्र, रूद्र, मरुत, पर्जन्य, वात, मातरिश्वा, आप, अपानपात्, त्रित आप्त्य, अहिर्बुध्न्य, वायु।

(3) द्युस्थानीय देवता- आदित्य, (ऋताधिपति) सविता, सूर्य, पूषा, पूषन, मित्र, वरुण, उषस, अर्यमा, अश्विनौ, द्यौ, विष्णु विवस्वत्,

निम्नलिखित सूक्तों का अध्ययन-

ऋग्वेदः-

1. अग्नि सूक्त (1.1)

ऋषि- मधुच्छन्दा, **सूक्त-** 200

ॐ अ॒ग्निमी॑ळे पु॒रोहि॑तं य॒ज्ञस्य॑ दे॒वमृ॒त्विज॑म् ।होता॑रं रत्न॒धात॑मम् ॥1॥
अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत । स देवाँ एह वक्षति ॥2॥
अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवेदिवे । यशसं वीरवत्तमम् ॥3॥
अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि । स इद्देवेषु गच्छति ॥4॥
अग्निर्होता कविक्रतुः सत्यश्चित्रश्रवस्तमः । देवो देवेभिरा गमत् ॥5॥
यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि । तवेत् तत् सत्यमङ्गिरः ॥6॥
उप त्वाग्ने दिवेदिवे दोषावस्तर्धिया वयम् । नमो भरन्त एमसि ॥7॥
राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम् । वर्धमानं स्वे दमे ॥8॥
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥9॥

शब्दार्थ-

ईळे- स्तुति करना, (मैकडानल - महत्व गान करना, **यास्क-** प्रार्थना करना), **होता-** आह्वाहन करने वाला (मैक्डालन) **रयि-** धन, **दिवेदिवे-** प्रतिदिन, **अध्वरम्-** हिंसा से रहित यज्ञ, **कविक्रतुः-** अतीत अनादि कर्मों को जानने वाला। (मैक्डॉलन के अनुसार- बुद्धि से युक्त बुद्धिमान।) **गोपाम-** रक्षक, **चित्रश्रवस्तमः-** विविध प्रकार की कीर्ति से युक्त, **गोपाम्-** रक्षक, **ऋतस्य** - प्राकृतिक विधान, **सूपायन-** सरल/सुगम, **सचस्वा-** लगना, मिलना, **दाशुष-** हवि प्रदान करने वाला, **अङ्गिर-** अङ्गार रूपी, अङ्गिरा मुनि को जन्म देने वाले पदार्थ, **दोषावस्तः-** रातदिन, **नमोभरन्तः-** नमस्कार करते हुए, **दीदिवम्-**पुनः-पुनः प्रकाशित करने वाले, **दमे (वर्धमानं स्वे दमे)-** घर, यज्ञशाला में।

प्रमुख सन्दर्भ-

- **"कर्मण्यपसो मनीषिणः"**। इसमें 'अपसः' का अर्थ है- कर्मनिष्ठ।
- **''मधुवाता ऋतायते"**। (ऋत=यज्ञः)
- वेदों में तीन अग्नि = **गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिणाग्नि।**
- **अग्नि =** वृत्रहा, धृतपृष्ठ, घृतमुख, घृतकेश, हरितकेश, घृतप्रतीक, ज्वाललोम।
- अग्नि के लिए धूमकेतु विशेषण प्रयुक्त हुआ है, तथा असुर उपाधि का प्रयोग हुआ है । इसे प्रत्येक गृह में वास होने के कारण = **गृहपति,** विश्वपति (दमूनस) कहा जाता है।
- अग्नि के पिता = **द्यौस्, त्वष्टा, द्यावा।**
- अग्नि को- वृषभ, अश्व, वत्स, दिव्य, (पक्षि) आदि रूप में भी प्रस्तुत किया गया है।
- अग्नि का नेत्र = **घृत (घृतं मे चक्षुः)** तीक्ष्णदंष्ट्र।

विशेषण- ऋत्विक्, होता, पुरोहितः, रत्नधातमं, कविक्रतु, चित्रश्रवस्तम, कवि, हव्यवाह, धूमकेतु, अंगिरस, दूत, विश्वेदेवा, त्रिमूर्द्धा, सप्तरश्मि, घृतपृष्ठ, घृतलोम, घृतप्रतीक, शोचिषकेश, मन्द्रजिह्व, ऊर्जोनपात्, अपानपात, असुर, विश्वपति, सहस्त्रपुत्र, यविष्ठयः, मध्यः नाराशंस, हरितकेश, ब्राह्मणदेवता, सहस्त्राक्ष।

2. वरुण सूक्त (1.25)

ऋषि- शुनः शेप, **सूक्त** -12

यच्चिद्धि ते विशो यथा प्र देव वरुण व्रतम् । मिनीमसि द्यविद्यवि ॥1॥
मा नो वधाय हत्नवे जिहीळानस्य रीरधः । मा हृणानस्य मन्यवे ॥2॥
वि मृळीकाय ते मनो रथीरश्वं न संदितम् । गीर्भिर्वरुण सीमहि ॥3॥
परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्यइष्टये । वयो न वसतीरुप ॥4॥
कदा क्षत्रश्रियं नरमा वरुणं करामहे । मृळीकायोरुचक्षसम् ॥5॥
तदित्समानमाशाते वेनन्ता न प्र युच्छतः । धृतव्रताय दाशुषे ॥6॥
वेदा यो वीनां पदमन्तरिक्षेण पतताम् । वेद नावः समुद्रियः ॥7॥
वेद मासो धृतव्रतो द्वादश प्रजावतः । वेदा य उपजायते ॥8॥
वेद वातस्य वर्तनिमुरोर्ऋष्वस्य बृहतः । वेदा ये अध्यासते ॥9॥
नि षसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा । साम्राज्याय सुक्रतुः ॥10॥
अतो विश्वान्यद्भुता चिकित्वाँ अभि पश्यति । कृतानि या च कर्त्वा ॥11॥
स नो विश्वाहा सुक्रतुरादित्यः सुपथा करत्।प्रण आयूंषि तारिषत् ॥12॥
बिभ्रद्द्रापिं हिरण्ययं वरुणो वस्त निर्णिजम्।परि स्पशो नि षेदिरे ॥13॥

न यं दिप्सन्ति दिप्सवो न द्रुह्वाणो जनानाम्। न देवमभिमातयः ॥14॥
उत यो मानुषेष्वा यशश्चक्रे असाम्या । अस्माकमुदरेष्वा ॥15॥
परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यूतीरनु । इच्छन्तीरुरुचक्षसम् ॥16॥
सं नु वोचावहै पुनर्यतो मे मध्वाभृतम् । होतेव क्षदसे प्रियम् ॥17॥
दर्शं नु विश्वदर्शतं दर्शं रथमधि क्षमि । एता जुषत मे गिरः ॥18॥
इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युरा चके ॥19॥
त्वं विश्वस्य मेधिर दिवश्च ग्मश्च राजसि । स यामनि प्रति श्रुधि ॥20॥
उदुत्तमं मुमुग्धि नो वि पाशं मध्यमं चृत । अवाधमानि जीवसे ॥21॥

शब्दार्थ-

विशः- प्रजाजन, **द्यविद्यवि-** प्रतिदिन, **मिनिमसि-** प्रमाद से उल्लंघन करना, **जिहीळ-** अनादर, **हृणान-**क्रोध, **मन्यवे-** क्रोध का पात्र, **रीरध-** वध का विषय, **मृळीकाय-** सुख प्राप्त करने के लिये, **गीर्भिः-** स्तुतियों द्वारा, **विसीमहि-** प्रसन्न करना, **वस्यः-** धन से युक्त जीवन, **विमन्यवः-** क्रोधरहित बुद्धियां, **वयः-** पक्षी, **क्षत्रश्रियं-** शासकीय शक्ति से शोभायमान, **उरुचक्षुसम्-** त्रिकालदर्शी, **वीनम्-** पक्षी, **ऋष्वस्य-**दर्शनीय, **पस्त्या-** प्रजा, **सुक्रतुः-** श्रेष्ठ कर्मों को करने वाला, **चिकित्वान्-** ज्ञानी मनुष्य, **द्रापिम्-** कवच को, **वस्त-** ढकना, **स्पशः-** चमत्कार किरणें, **अभिमातयः-** पापी लोग, **यशः-** अन्न, (**यशश्चक्रे असाम्या**) **ग्मः-** पृथ्वी लोक, **यामनि-** मार्ग में, **राजसि-** प्रकाशित होना।

प्रमुख सन्दर्भ-

- यह न्याय का देवता है। यह 'धर्मपति' 'नैतिकाध्यक्ष' क्षत्रिय वर्ण का देवता है।
- यह (पस्त्या) जल में बैठकर अपने साम्राज्य का संचालन करता है।
- जलोदर व्याधि का कारण- **वरुण।**

विशेषण- असुर, क्षत्रिय, धृतव्रत, ऋतगोपा, अमृतस्यगोपा, उरुचक्षः, दूतदक्षः, उरुशंस, सहस्र नेत्र, स्वराट, मायावी ।

3. सूर्य सूक्त (1.125)

ऋषि- कुत्स,

चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः ।
आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥1॥
सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात् ।
यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम् ॥2॥
भद्रा अश्वा हरितः सूर्यस्य चित्रा एतग्वा अनुमाद्यासः ।
नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमस्थुः परि द्यावापृथिवी यन्ति सद्यः ॥3॥
तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्या कर्तोर्विततं सं जभार ।
यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥4॥
तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षे सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे ।
अनन्तमन्यद्रुशदस्य पाजः कृष्णमन्यद्धरितः सं भरन्ति ॥5॥
अद्या देवा उदिता सूर्यस्य निरंहसः पिपृता निरवद्यात् ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥6॥

शब्दार्थ-

देव- किरण/देवता, **उदगात्** -उदय होना, **अनीकम्-** समूह, **चक्षुः-** प्रकाशक, **मर्यः-** युवक/मनुष्य, **योषाम्-**सुन्दर युवती के, **रोचमानाम्-** दीप्तिमती, **अनुमाद्यासः-** स्तुति करने योग्य, **संजभार-** समेटना, **रुशत्-** चमकदार, **पाजः-** बल।

4. इन्द्रसूक्त (2.12)

ऋषि- गृत्समद, **सूक्त** -250

अन्य देवों के साथ =(50) सूक्त।

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्देवो देवान्क्रतुना पर्यभूषत् ।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः ॥1॥
यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात् ।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः ॥2॥
यो हत्वाहिमरिणात्सप्त सिन्धून्यो गा उदाजदपधा बलस्य ।
यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्रः ॥3॥
येनेमा विश्वा च्यवना कृतानि यो दासं वर्णमधरं गुहाकः ।
श्वघ्नीव यो जिगीवाँल्लक्षमाददर्यः पुष्टानि स जनास इन्द्रः ॥4॥
यं स्मा पृच्छन्ति कुह सेति घोरमुतेमाहुर्नैषो अस्तीत्येनम् ।
सो अर्यः पुष्टीर्विज इवा मिनाति श्रदस्मै धत्त स जनास इन्द्रः ॥5॥
यो रध्रस्य चोदिता यः कृशस्य यो ब्रह्मणो नाधमानस्य कीरेः ।
युक्तग्राव्णो योऽविता सुशिप्रः सुतसोमस्य स जनास इन्द्रः ॥6॥
यस्याश्वासः प्रदिशि यस्य गावो यस्य ग्रामा यस्य विश्वे रथासः ।
यः सूर्यं य उषसं जजान यो अपां नेता स जनास इन्द्रः ॥7॥
यं क्रन्दसी संयती विह्वयेते परेऽवर उभया अमित्राः ।
समानं चिद्रथमातस्थिवांसा नाना हवेते स जनास इन्द्रः ॥8॥
यस्मान्न ऋते विजयन्ते जनासो यं युध्यमाना अवसे हवन्ते ।
यो विश्वस्य प्रतिमानं बभूव यो अच्युतच्युत्स जनास इन्द्रः ॥9॥
यः शश्वतो मह्येनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वा जघान ।
यः शर्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्रः ॥10॥
यः शम्बरं पर्वतेषु क्षियन्तं चत्वारिंश्यां शरद्यन्वविन्दत् ।
ओजायमानं यो अहिं जघान दानुं शयानं स जनास इन्द्रः ॥11॥
यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्त सिन्धून् ।
यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं स जनास इन्द्रः ॥12॥
द्यावा चिदस्मै पृथिवी नमेते शुष्माचिदस्य पर्वता भयन्ते ।
यः सोमपा निचितो वज्रबाहुर्यो वज्रहस्तः स जनास इन्द्रः ॥13॥

यः सुन्वन्तमवति यः पचन्तं यः शंसन्तं यः शशमानमूती ।
यस्य ब्रह्म वर्धनं यस्य सोमो यस्येदं राधः स जनास इन्द्रः ॥14॥
यः सुन्वते पचते दुध्र आ चिद्वाजं दर्दर्षि स किलासिसृत्यः ।
वयं त इन्द्र विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥15॥

शब्दार्थ-

वृत्र- मेघ (यास्क), **रोदसी-** द्युलोक और पृथिवी लोक, **द्याम-** द्युलोक, **वरीयः-** विस्तृत **संवृक्-** विनाश किया, **समत्सु-** युद्धों में, **च्यवना-** नश्वर, **दासं वर्णम-** हिंसा करने वाली जाति, सायण के अनुसार- शूद्र, **श्वघ्नी-** शिकारी, पीटर्सन तथा मैकडालन के अनुसार- जुआरी, **कीरेः-** स्तुति करने वाले, **अविता-** रक्षा करने वाला, **सुशिप्रः-** सुन्दर ठोड़ी वाला, (मैकडॉलन ने शिप्र का अर्थ- होठ तथा पीटर्सन ने मुख किया है) **परे-** उत्तम, **अवरे-**अधम,**आतस्थिवांसा-** बैठे हुये, **अवसे-** रक्षा के लिये, **अच्युतच्युत-** क्षय रहित पर्वतों का विनाश करने वाला, **एनः-** पाप, **शर्व-** वज्र, (**अहि** का अर्थ 'सायण' ने- हन्ता, 'मैक्डॉलन' ने सांप तथा 'पीटर्सन' ने दैत्य किया है।) **तुविष्मान-** शक्तिशाली, बुद्धिमान, **शुष्मात्-** बल से, **राधः-** पुरोऽडाश ।

प्रमुख सन्दर्भ-

- इन्द्र युद्ध, वर्षा तथा मन का देवता है।
- **क्रंदसी-** द्युलोक, पृथिवी लोक।
- यास्क के अनुसार इन्द्र की 3 प्रमुख विशेषताएं-
  (1) रसानुप्रदान (2) वृत्रवध (3) बलानुकृति
- इन्द्र प्रकाश का दाता, वृत्रादि राक्षसों का हन्ता, वृष्टिकर्ता, योद्धा, शासक, यज्ञ का अधिष्ठाता है ।
- **पत्सुतः शी** = वृत्र।
- **'यस्य ब्रह्म वर्धनं यस्य सोमो'। ब्रह्म-** ब्रह्मा नामक स्तोत्र,
- **वाजं दर्दर्षि स किलासिसृत्यः। (वाजं-** बल, अन्न) । मैक्डालन के अनुसार (लूटा हुआ धन) रौहिण असुर को मारा था।
- ऋग्वेद में इन्द्र युद्ध, वर्षा, मन का देवता है। प्रकाश का दाता, वृत्रादि राक्षसों का हन्ता, वृष्टिकर्ता, योद्धा, शासक, यज्ञ का अधिष्ठाता, सोमरस प्रेमी, धार्मिक जनों का उद्धर्ता है।
- सैंकड़ों पुरुषार्थ के कार्य करता है अतः- **शतक्रतु,**
- वह जनहित कर्त्ता है अतः - **नर्य,**
- वह सोमप्रेमी है अतः- **सोमपातमः**
- प्रमुख सहायक- **'मरुत् देवगण'**
- मरुत का मित्र होने से - **मरुत्सखा, मरुत्वान्** इत्यादि नाम।
- होठों के सुन्दर होने के कारण- **सुशिप्र।**
- प्रधान शस्त्र वज्र होने से - **वज्रिन्, वज्रबाहु** कहलाता है ।
- इसमें लङ् लकार का सर्वाधिक प्रयोग किया गया है।

विशेषण- वृत्रहा, सुशिप्र, सोमपा, शक्र, पुरन्दर, वज्री वज्रहस्त, हरिकेश, हरिश्मश्रु, हिरण्यबाहु, चित्रभानु, पुरुहूत, सप्तरश्मि, अपांनेता, वृषा, शचीपति, मरुत्वान्, गोत्रमिद, सोमी, आखण्डल, नर्य, सोमपातमः, धनञ्जय, मनस्वान्, संवृक्समत्सु, अच्युतच्युत ।

5. उषस् सूक्त (3.61)

ऋषि- वशिष्ठ, **सूक्त-** 20,

उषो वाजेन वाजिनि प्रचेता स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि ।
पुराणी देवि युवतिः पुरंधिरनु व्रतं चरसि विश्ववारे ॥1॥
उषो देव्यमर्त्या वि भाहि चन्द्ररथा सूनृता ईरयन्ती ।
आ त्वा वहन्तु सुयमासो अश्वा हिरण्यवर्णां पृथुपाजसो ये ॥2॥
उषः प्रतीची भुवनानि विश्वोर्ध्वा तिष्ठस्यमृतस्य केतुः ।
समानमर्थं चरणीयमाना चक्रमिव नव्यस्या ववृत्स्व ॥3॥
अव स्यूमेव चिन्वती मघोन्युषा याति स्वसरस्य पत्नी ।
स्वर्जनन्ती सुभगा सुदंसा आन्ताद्दिवः पप्रथ आ पृथिव्याः ॥4॥
अच्छा वो देवीमुषसं विभातीं प्र वो भरध्वं नमसा सुवृक्तिम् ।
ऊर्ध्वं मधुधा दिवि पाजो अश्रेत्प्ररोचना रुरुचे रण्वसंदृक् ॥5॥
ऋतावरी दिवो अर्कैरबोध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात् ।
आयतीमग्न उषसं विभातीं वाममेषि द्रविणं भिक्षमाणः ॥6॥
ऋतस्य बुध्न उषसामिषण्यन्वृषा मही रोदसी आ विवेश ।
मही मित्रस्य वरुणस्य माया चन्द्रेव भानुं वि दधे पुरुत्रा ॥7॥

शब्दार्थ-

वाजः- अन्न, **प्रचेताः-** प्रकृष्ट ज्ञान वाली, **स्तोमम्-** स्तोत्र, **जुषस्व-** ग्रहण करना, **गृणतः-** स्तुति करने वाला, **पुराणी-** पुरातनी, **पुरंधिः-** बुद्धिशालिनी, **चन्द्ररथा-** सुवर्णमय रथ पर आरुढ़, **सूनृता-** प्रिय सत्य वाणी, **ईरयन्ती-** उच्चारण करती हुई, **पृथुपाजस-** अधिक बलशाली, **मघोनी-** धन सम्पत्ति-शालिनी, **पाजः-** तेज/बल, **मधुधा-** स्तुति, **रेवती-** धन से युक्त, **अर्क-** तेजःपुञ्ज। **(अव स्यूमेव चिन्वती) स्यूम-**वस्त्र,

प्रमुख सन्दर्भ-

- **('उच्छतीति उषस्'-** यास्क) ।
- उषा अमरत्व का प्रतीक है- **'अमृतस्य केतुः'।**

विशेषण- ऋतावरी, अश्ववती, गवांमाता, हिरण्यवर्णा, चित्रामघा, मघोनी, प्रचेताः, विश्ववारा, सुभगा, सुजाता, अन्तिवामा, रेवती, गोमती, अह्नानेत्री, पुराणी युवतिः, दिवः दुहिता, सुदृशीकसंदृक्, अमृत्यकेतुः,

भास्वती, अमृता, अर्जुनी, अरुषा, सप्रतीका, भद्रा, सूनरी, सुनृतावती, ऋतपा, चन्द्रस्था, नवयौवन नर्तकी, प्रचेता ।

6. पर्जन्य सूक्त (5.83)

ऋषि- अत्रि,

अच्छा वद तवसं गीर्भिराभि स्तुहि पर्जन्यं नमसा विवास ।
कनिक्रदद्वृषभो जीरदानू रेतो दधात्योषधीषु गर्भम् ॥1॥
वि वृक्षान्हन्त्युत हन्ति रक्षसो विश्वं बिभाय भुवनं महावधात् ।
उतानागा ईषते वृष्ण्यावतो यत्पर्जन्य स्तनयन्हन्ति दुष्कृतः ॥2॥
रथीव कशयाश्वाँ अभिक्षिपन्नाविर्दूतान्कृणुते वर्ष्याँ अह ।
दूरात्सिंहस्य स्तनथा उदीरते यत्पर्जन्यः कृणुते वर्ष्यं नभः ॥3॥
प्र वाता वान्ति पतयन्ति विद्युत उदोषधीर्जिहते पिन्वते स्वः ।
इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवीं रेतसावति ॥4॥
यस्य व्रते पृथिवी नन्नमीति यस्य व्रते शफवज्जर्भुरीति ।
यस्य व्रत ओषधीर्विश्वरूपाः स नः पर्जन्य महि शर्म यच्छ ॥5॥
दिवो नो वृष्टिं मरुतो ररीध्वं प्र पिन्वत वृष्णो अश्वस्य धाराः ।
अर्वाङेतेन स्तनयिलुनेह्यपो निषिञ्चन्नसुरः पिता नः ॥6॥
अभि क्रन्द स्तनय गर्भमा धा उदन्वता परि दीया रथेन ।
दृतिं सु कर्ष विषितं न्यञ्चं समा भवन्तूद्वतो निपादाः ॥7॥
महान्तं कोशमुदचा निषिञ्च स्यन्दन्तां कुल्या विषिताः पुरस्तात् ।
घृतेन द्यावापृथिवी व्युन्धि सुप्रपाणं भवत्वघ्न्याभ्यः ॥8॥
यत्पर्जन्य कनिक्रदत्स्तनयन्हंसि दुष्कृतः ।
प्रतीदं विश्वं मोदते यत्किं च पृथिव्यामधि ॥9॥
अवर्षीर्वर्षमुदु षू गृभायाकर्धन्वान्यत्येतवा उ ।
अजीजन ओषधीर्भोजनाय कमुत प्रजाभ्योऽविदो मनीषाम् ॥10॥

शब्दार्थ-

जीरदानुः- शीघ्र दान देने वाला, **रेतः/रेतस**- जल, **वृषभ**- बरसाने वाला, **स्तनयन**- गरजता हुआ, **कशया**- चाबुक से, **वाताः**- हवाएं, **इरा**- भूमि, **शर्म**- सुख(**पर्जन्य महि शर्म सुख यच्छ**।), **असुरः**- जलों को देने वाला, **कोशम्**-जलरूप भण्डार, **कुल्या**- नदियां **अघ्न्याभ्यः**- गौओं के लिये, **उतानागा** - निरपराध ।
पर्जन्य पिता के रूप में प्रतिपादित है- 'पृथ्वीसूक्त' में।

7. अक्षसूक्त (10.34)

ऋषि- कवषऐलूष

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः ।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान् ॥1॥
न मा मिमेथ न जिहीळ एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत् ।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतोरनुव्रतामप जायामरोधम् ॥2॥
द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम् ।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विन्दामि कितवस्य भोगम् ॥3॥
अन्ये जायां परि मृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्यक्षः ।
पिता माता भ्रातर एनमाहुर्न जानीमो नयता बद्धमेतम् ॥4॥
यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः ।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रतँ एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव ॥5॥
सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा शूशुजानः ।
अक्षासो अस्य वि तिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि ॥6॥
अक्षास इदङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः ।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणो मध्वा सम्पृक्ताः कितवस्य बर्हणा ॥7॥
त्रिपञ्चाशः क्रीळति व्रात एषां देव इव सविता सत्यधर्मा ।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत्कृणोति ॥8॥
नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्त्यहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते ।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताः शीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति ॥9॥
जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क्व स्वित् ।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति ॥10॥
स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापान्येषां जायां सुकृतं च योनिम् ।
पूर्वाह्णे अश्वान्युयुजे हि बभ्रून्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद ॥11॥
यो वः सेनानीर्महतो गणस्य राजा व्रातस्य प्रथमो बभूव ।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मि दशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि ॥12॥
अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित्कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः ।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे वि चष्टे सवितायमर्यः ॥13॥
मित्रं कृणुध्वं खलु मृळता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु ।
नि वो नु मन्युर्विशतामरातिरन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु ॥14॥

शब्दार्थ-

प्रावेपाः- कम्पनशीलः, **इरिण**-अक्षपट्ट, **विभीतकः**- विभीतक का पासा, **मिमेथ**- क्रोध करना, **जिहीळे**-लज्जित करना, **मर्डितारः**- सुख देने वाला, **वेदने**- धन पर, **अक्ष**- जुए का पासा, **अवहीय**- छिपना, **कितव**- जुआरी, **शूशुजानः**- चमकता हुआ, **कृत**- दाव, **नितोदिनः**- चाबुक से युक्त पासों का (53) संख्या का समूह अक्षपट्ट पर खेलता है। **मन्यवः**- क्रोधी, **योनि**- घर, **वृषलः**- नीच आचरण करने वाला, **दश**- दस अङ्गुलियां, **सविता**- संसार का प्रेरक, **मन्यु**- क्रोध।

8. ज्ञान सूक्त (10.71)

ऋषि- बृहस्पति अङ्गिरस

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत्प्रैरत नामधेयं दधानाः ।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत्प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः ॥1॥
सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत ।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि ॥2॥
यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम् ।

तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते ॥3॥
उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः श्रृण्वन्न श्रृणोत्येनाम् ।
उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥4॥
उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु ।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम् ॥5॥
यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति ।
यदीं श्रृणोत्यलकं श्रृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् ॥6॥
अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः ।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदा इव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे ॥7॥
ह्रदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद्ब्राह्मणाः संयजन्ते सखायः ।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभिरोहब्रह्माणो वि चरन्त्यु त्वे ॥8॥
इमे ये नार्वाङ्‌ न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः ।
त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः ॥9॥
सर्वे नन्दन्ति यशसागतेन सभासाहेन सख्या सखायः ।
किल्बिषस्पृत्पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय ॥10॥
ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान्गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु ।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः ॥11॥

9. पुरुष सूक्त (10.90)

ऋषि- नारायण।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥1॥
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥2॥
एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥3॥
त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ।
ततो विष्वङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥4॥
तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥5॥
यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥6॥
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥7॥
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशून् ताँश्चक्रे वायव्यानारण्यान्ग्राम्याश्च ये ॥8॥
तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥9॥
तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥10॥
यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्येते ॥11॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥12॥
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥13॥
नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥14॥
सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥15॥
यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥16॥

शब्दार्थ- **पुरः**- शरीर, **इध्मः**-ईंधन, **पृषदाज्यम्**- दही से युक्त घी, **नाकम्**- दिव्य स्वर्ग।

10. हिरण्यगर्भ सूक्त (10.121)

ऋषि- हिरण्यगर्भ,

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥1॥
य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥2॥
यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥3॥
यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः ।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥4॥
येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥5॥
यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने ।
यत्राधि सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥6॥
आपो ह यद्बृहतीर्विश्वमायन्गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम् ।
ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥7॥
यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद्दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम् ।
यो देवेष्वधि देव एक आसीत्कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥8॥
मा नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान ।
यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥9॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥10॥

शब्दार्थ- **नाकः**- सूर्य, **रजसः**- जलों का, **क्रन्दसी**- द्युलोक पृथ्वी लोक, **रेजमान**- प्रकाशमान, **असुः**- प्राणभूत वायु, **चन्द्राः**- आनन्द प्राप्त करने

वाले,' **यस्य समुद्रं रसया सहाहुः'**। (रसया- नदियां), **सह** नदियों- के साथ।

11. वाक् सूक्त (10.125)

ऋषि- वाक् आम्भृणी।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥1॥
अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥2॥
अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥3॥
मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥4॥
अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥5॥
अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आ विवेश ॥6॥
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि ॥7॥
अहमेव वात इव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव ॥8॥

शब्दार्थ- **संगमनी**- प्राप्त करने वाली, **चिकितुषी**- ज्ञान से सम्पन्न/ब्रह्म को जानने वाली, **श्रुत**-विद्वान, **जुष्टम्**- सेवित, **सुमेधाम्**- उत्तम बुद्धि वाला, **शरवः**- हिंसक असुर, **समदम्**- युद्ध।

12. नासदीय सूक्त (10.129)

ऋषि- परमेष्ठी प्रजापति,

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम् ॥1॥
न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत्प्रकेतः ।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किं चनास ॥2॥
तम आसीत्तमसा गूळ्हमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिनाजायतैकम् ॥3॥
कामस्तदग्रे समवर्तताधि मनसो रेतः प्रथमं यदासीत् ।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन्हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥4॥
तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासीदुपरि स्विदासीत् ।
रेतोधा आसन्महिमान आसन्स्वधा अवस्तात्प्रयतिः परस्तात् ॥5॥
को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः ।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव ॥6॥
इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न ।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद ॥7॥

शब्दार्थ- **प्रकेतः**- ज्ञान, **आनीत**- प्राण से युक्त, **अवातम्**- क्रिया से शून्य, **स्वधया**-माया से, **गूढहम्**-आच्छादित, **स्वधा**- भोग्य पदार्थ, **अवस्तात्**- निकृष्ट, **परस्तात्**- उत्कृष्ट, **प्रयति**- भोक्त पदार्थ, **अध्यक्षः**- स्वमी, ईश्वर **(हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा)।**

ऋग्वेद के अन्य प्रमुख देवता-

1. रुद्र

ऋषि- गृत्समद, **सूक्त**- 3,

प्रमुख सन्दर्भ-

- 'तद् यद् **रोदयन्ति, तस्माद् रुद्रा इति**- बृहदारण्यक ।
- इनके हाथ- **मृणयाकु**- (सुखदेने वाले), **जलाष**- (शीतलता प्रदान करने वाले), **भेषजः**- (आरोग्यता प्रदान करने वाले) है।
- ये मरुतों का पिता कहलाते हैं,
- ये देवताओं के कुशल वैद्य भी है।

विशेषण- बभ्रु, सुशिप्र, रक्तवर्णी, असुर (प्राणशक्ति सम्पन्न), सिकृवृण, कृपाण, विद्युत, शस्त्र, पिनाक, त्र्यम्बक, कृत्तिवास, नीललोहित, भव, शर्व, मरुत्पिता, शितिकण्ठ असुर, मरुत्वान्, मीढ्वान, तव्यान, वङ्कु, भिषक्तम्, जलाषभेषज, रक्तवर्णी, मृणयाकुः वनपति, वृक्षपति, सेनानी, गणपति, शिव, शंकर, शंभु ।

- **अथर्ववेद में पर्यायवाची**- भव, शर्व, यम, मृत्यु, बभ्रु, नीलकंठ,
- **यजुर्वेद में पर्यायवाची** – गिरीश, नीलग्रीव, सहस्राक्ष, पशुपति, जगत्पति, क्षेत्रपति, पशुपति।

2. बृहस्पति-

ऋषि- वामदेव, **सूक्त**- 11

प्रमुख सन्दर्भ-

- अपर नाम- **ब्रह्मणस्पति** (ब्रह्मा)
- मन्त्र या प्रार्थना का अधिपति ।
- अग्नि के प्रतीक- बृहस्पति।
- ये शक्तिपुत्र एवं अंगिरस आवासों के अधिपति- सदस्पति कहलाते हैं।

- इन्हें- तीक्ष्ण, सींगोवाला (तीक्ष्णशृंग), तथा शतपंखों वाला कहा है।

विशेषण- मध्यस्थ, वज्रिन्, गोपाः, सगोपाः, सुनीतभिः गणपति, ब्रह्मणस्पति, पथिकृत, मन्द्रजिह्व, तीक्ष्णशृंग, सप्तमुख, सप्तरश्मि, सप्तजिह्व, नीलपृष्ठ ।

3. अश्विनौ

ऋषि- कक्षीवान्

प्रमुख सन्दर्भ-

- 5 से अधिक सूक्तों में स्तुति की गई है ।
- यास्क के अनुसार इनका काल अर्धरात्रि से सूर्य पर्यन्त है।
- द्युस्थानीय अश्विन् युगल देवता है।
- सूर्या का पति- **अश्विनौ**।
- मुख्य किये गये कार्य- **'भिज्यु'** का समुद्रतल से उद्धार, **'तदेर्गु'** को अश्वप्रदान। **'अत्रि'** की गुफा से मुक्ति। **'च्यवन'** ऋषि को युवावस्था।

विशेषण- नासत्या, दस्रा, हिरण्यवर्त्तनि, दिवो नपाताः, माध्वी नराः, मधुमुखा, सुदानू मघवाना, तोविष्मा, अध्रिगू, दिव्यभिषक्।

4. विष्णु

ऋषि- दीर्घतमा (तीन पद स्वरूप)

प्रमुख सन्दर्भ-

- **'वेवेष्टि व्याप्नोति इति विष्णुः'** ।
- **उरुगाय**- महान पुरुषों से स्तुतिवान, **उत्तरम्**- उत्कृष्ट, **भीम**- भयानक, **उरुषु**- विस्तीर्ण, **शूषम्**- बल।

विशेषण- उरुक्रम, उरुगाय, कुचर, गिरिष्ठा, वृष्णः, गिरिक्षित, विक्रम, त्रिविक्रम, भीम, त्रिषधस्थ, भीम, उपेन्द्र, गर्वरक्षक ।

5. सोम

ऋषि- कण्व

प्रमुख सन्दर्भ-

- ऋग्वेद का नवम मण्डल - **पवमान सोम**।
- सोम ओषधियों का राजा कहलाता है।
- सोम का अर्थ परमात्मा भी लिया गया है।

विशेषण- मोञ्जवत्, वनस्पति, वाचस्पति, विश्वचर्षणि, रक्षोहा, वृत्रहन्तम्, महिष्ठ, अमर्त्य, सहस्रधार, इन्द्रपीत, पवमान, मधुमान, अमृत, शुद्ध, शुक्र, शुचि, दिवःशिशुः, उत्तमं हविः, औषधिपति, वृत्रहन्ता।

6. सवितृ (गार्त्समद)

प्रमुख सन्दर्भ-

- सवितृ देव के नाम का उल्लेख हुआ है- 170 बार।
- **सविता**- संसार को जन्म देने वाला और प्रेरणा और स्फूर्ति देने वाला।
- सविता स्वर्णिम देवता है।
- याज्ञवल्क्य ने यजुष प्राप्त करने दीर्घायुष्य के लिए इसकी उपासना की थी। (ऋताधिपति)
- इसे लौह-जवड़ों वाला भी कहा गया है।
- गायत्री मंत्र के उपास्य देव – **सविता**।
- ये जङ्गम तथा स्थावर सभी के शासक हैं।
- यह 'प्रदोष' और 'प्रत्यूष' से सम्बद्ध है ।
- सविता के लिये प्रयुक्त क्रियायें- **प्रासवीत, आसुवत्, सवे, साविषत** आदि।

विशेषण- आदित्य, सविता, महेन्द्र, वायु, अर्यमा, वरुण, रुद्र, अग्नि, महायम, असुर, हिरण्यपाणि, सुवर्ण, सुनीथ, हिरण्यादा, हिरण्यस्तूप, विचर्षणि, सुमृळीक, दमूना, स्वर्णनेत्र, स्वर्णहस्त, स्वर्णपाद, स्वर्णजिह्व।

शुक्ल यजुर्वेद सूक्त-

1. शिवसङ्कल्प सूक्त

ऋषि- याज्ञवल्क्य, **मन्त्र**- 1-6, **अध्याय- 34,**

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं, तदु सुप्तस्य तथैवेति।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ 1॥
येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥2॥
यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च, यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते, तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥3॥
येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्, परिगृहीतममृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता,तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥4॥
यस्मिन्नृचः साम यजूँषि यस्मिन्,प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः।
यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां,तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥5॥
सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्,नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव।

हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं,तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥6॥

2. प्रजापति सूक्त

अध्याय- 23, **मन्त्र** =1-5

तदेवाग्निस्तदादित्य,स्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्र तद् ब्रह्म, ता आपः स प्रजापतिः ॥1॥
सर्वे निमेषा जज्ञिरे, विद्युतः पुरुषादधि।
नैनमूर्ध्वं न तिर्यञ्चं, न मध्ये परि जग्रभत् ॥2॥
न तस्य प्रतिमा अस्ति, यस्य नाम महद्यशः।
हिरण्यगर्भ इत्येष मा मा हिं सी,दित्येषा यस्मान्न जात इत्येषः॥3॥
एषो ह देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः, पूर्वो ह जातः स उ गर्भ अन्तः।
स एव जातः स जनिष्यमाणः, प्रत्यङ्नास्तिष्ठति सर्वतोमुखः ॥4॥
यस्माज्ञातं न पुरा किं च नैव,य आबभूव भुवनानि विश्वा।
प्रजापतिः प्रजया संरराण,- स्त्रीणिज्योतींषि सचते स षोडशी ॥5॥

अथर्ववेद सूक्त -

1. राष्ट्राभिवर्धनम् (1-29)

ऋषि- वसिष्ठ, **मन्त्र-** 6

अभीवर्तेन मणिना येनेन्द्रो अभिवावृधे ।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभि राष्ट्राय वर्धय ॥1॥
अभिवृत्य सपत्नान् अभि या नो अरातयः ।
अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो नो दुरस्यति ॥2॥
अभि त्वा देवः सविताभि सोमो अवीवृधत्।
अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि ॥3॥
अभीवर्तो अभिभवः सपत्नक्षयणो मणिः ।
राष्ट्राय मह्यं बध्यतां सपत्नेभ्यः पराभुवे ॥4॥
उदसौ सूर्यो अगादुदिदं मामकं वचः ।
यथाहं शत्रुहोऽसान्यसपत्नः सपत्नहा ॥5॥
सपत्नक्षयणो वृषाभिराष्ट्रो विषासहिः ।
यथाहमेषां वीराणां विराजानि जनस्य च ॥6॥

2. काल-(10-53)

ऋषि- भृगु, **मन्त्र-** 10

कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः,सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चित-स्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ॥ 1॥
सप्तचक्रान् वहति काल एष,सप्तास्य नाभीरमृतं न्वक्षः।
स इमा विश्वा भुवनान्यञ्जत्,कालः स ईयते प्रथमो नु देवः॥2॥
पूर्णः कुम्भोऽधि काल आहितस्तं,वै पश्यामो बहुधा नु सन्तः।
स इमा विश्वा भुवनानि प्रत्यङ्,कालं तमाहुः परमे व्योमन्॥3॥
स एवं सं भुवनान्याभरत,स एव सं भुवनानि पर्यैत्।
पिता सन्नभवत् पुत्र एषां,तस्माद् वै नान्यत् परमस्ति तेजः ॥4॥
कालोऽमूं दिवमजनयत्, काल इमाः पृथिवीरुत।
कालो ह भूतं भव्यं,चेषितं ह वि तिष्ठते॥5॥
कालो भूतिमसृजत,काले तपति सूर्यः ।
काले ह विश्वा भूतानि,काले चक्षुर्विपश्यति ॥6॥
काले मनः काले प्राणः,काले नाम समाहितम्।
कालेन सर्वा नन्द-,न्त्यागतेन प्रजा इमाः ॥7॥
काले तपः काले ज्येष्ठं,काले ब्रह्म समाहितम्।
कालो ह सर्वस्येश्वरो,यः पितासीत् प्रजापतेः ॥8 ॥
तेनेषितं तेन जातं,तदु तस्मिन् प्रतिष्ठितम्।
कालो ह ब्रह्म भूत्वा,बिभर्ति परमेष्ठिनम्॥1॥
कालः प्रजा असृजत,कालो अग्रे प्रजापतिम्।
स्वयम्भूः कश्यपः कालात,तपःकालादजायत ॥ 10 ॥

3. पृथ्वी-(12-1)

ऋषि- अथर्वा **मन्त्र-** 63

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥1॥
असंबाधं मध्यतो मानवानां यस्या उद्वतः प्रवतः समं बहु ।
नानावीर्या ओषधीर्या बिभर्ति पृथिवी नः प्रथतां राध्यतां नः ॥2॥
यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो यस्यामन्नं कृष्टयः संवभूवुः ।
यस्यामिदं जिन्वति प्राणदेजत्सा नो भूमिः पूर्वपेये दधातु ॥3॥
यस्याश्चतस्रः प्रदिशः पृथिव्या यस्यामन्नं कृष्टयः संबभूवुः ।
या बिभर्ति बहुधा प्राणदेजत्सा नो भूमिर्गोष्वप्यन्ने दधातु ॥4॥
यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे यस्यां देवा असुरान् अभ्यवर्तयन् ।
गवामश्वानां वयसश्च विष्ठा भगं वर्चः पृथिवी नो दधातु ॥5॥
विश्वंभरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्यवक्षा जगतो निवेशनी ।
वैश्वानरं बिभ्रती भूमिरग्निमिन्द्रऋषभा द्रविणे नो दधातु ॥6॥
यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानीं देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम् ।
सा नो मधु प्रियं दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥7॥
यार्णवेऽधि सलिलमग्र आसीत्यां मायाभिरन्वचरन् मनीषिणः ।
यस्या हृदयं परमे व्योमन्त्सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः ।
सा नो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे ॥8॥
यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति ।
सा नो भूमिर्भूरिधारा पयो दुहामथो उक्षतु वर्चसा ॥9॥
यामश्विनावमिमातां विष्णुर्यस्यां विचक्रमे ।
इन्द्रो यां चक्र आत्मनेऽनमित्रां शचीपतिः ।
सा नो भूमिर्वि सृजतां माता पुत्राय मे पयः ॥10॥
गिरयस्ते पर्वता हिमवन्तोऽरण्यं ते पृथिवि स्योनमस्तु ।
बभ्रुं कृष्णां रोहिणीं विश्वरूपां ध्रुवां भूमिं पृथिवीमिन्द्रगुप्ताम् ।

अजीतोऽहतो अक्षतोऽध्यष्ठां पृथिवीमहम् ॥11॥
यत्ते मध्यं पृथिवि यच्च नभ्यं यास्त ऊर्जस्तन्वः संबभूवुः ।
तासु नो धेह्यभि नः पवस्व माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः पर्जन्यः
पिता स उ नः पिपर्तु ॥12॥
यस्यां वेदिं परिगृह्णन्ति भूम्यां यस्यां यज्ञं तन्वते विश्वकर्माणः ।
यस्यां मीयन्ते स्वरवः पृथिव्यामूर्ध्वाः शुक्रा आहुत्याः पुरस्तात्।
सा नो भूमिर्वर्धयद्वर्धमाना ॥13॥
यो नो द्वेषत्पृथिवि यः पृतन्याद्योऽभिदासान्
मनसा यो वधेन । तं नो भूमे रन्धय पूर्वकृत्वरि ॥14॥
त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदस्त्वं चतुष्पदः ।
तवेमे पृथिवि पञ्च मानवा येभ्यो
ज्योतिरमृतं मर्त्येभ्य उद्यन्त्सूर्यो रश्मिभिरातनोति ॥15॥
ता नः प्रजाः सं दुह्रतां समग्रा वाचो मधु पृथिवि धेहि मह्यम् ॥16॥
विश्वस्वं मातरमोषधीनां ध्रुवां भूमिं पृथिवीं धर्मणा धृताम् ।
शिवां स्योनामनु चरेम विश्वहा ॥17॥
महत्सधस्थं महती बभूविथ महान् वेग एजथुर्वेपथुष्टे ।
महांस्त्वेन्द्रो रक्षत्यप्रमादम् ।
सा नो भूमे प्र रोचय हिरण्यस्येव संदृशि मा नो द्विक्षत कश्चन ॥18॥
अग्निर्भूम्यामोषधीष्वग्निमापो बिभ्रत्यग्निरश्मसु ।
अग्निरन्तः पुरुषेषु गोष्वश्वेष्वग्नयः ॥19॥
अग्निर्दिव आ तपत्यग्नेर्देवस्योर्वन्तरिक्षम् ।
अग्निं मर्तास इन्धते हव्यवाहं घृतप्रियम् ॥20॥
अग्निवासाः पृथिव्यसितज्ञूस्त्विषीमन्तं संशितं मा कृणोतु ॥21॥
भूम्यां देवेभ्यो ददति यज्ञं हव्यमरंकृतम् ।
भूम्यां मनुष्या जीवन्ति स्वधयान्नेन मर्त्याः ।
सा नो भूमिः प्राणमायुर्दधातु जरदष्टिं मा पृथिवी कृणोतु ॥22॥
यस्ते गन्धः पृथिवि संबभूव यं बिभ्रत्योषधयो यमापः ।
यं गन्धर्वा अप्सरसश्च भेजिरे तेन
मा सुरभिं कृणु मा नो द्विक्षत कश्चन ॥23॥
यस्ते गन्धः पुष्करमाविवेश यं संजभ्रुः सूर्याया विवाहे ।
अमर्त्याः पृथिवि गन्धमग्रे तेन मा
सुरभिं कृणु मा नो द्विक्षत कश्चन ॥24॥
यस्ते गन्धः पुरुषेषु स्त्रीषु पुंसु भगो रुचिः ।
यो अश्वेषु वीरेषु यो मृगेषूत हस्तिषु ।
कन्यायां वर्चो यद्भूमे तेनास्माँ अपि
सं सृज मा नो द्विक्षत कश्चन ॥25॥
शिला भूमिरश्मा पांसुः सा भूमिः संधृता धृता ।
तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नमः ॥26॥
यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्वहा ।
पृथिवीं विश्वधायसं धृतामच्छावदामसि ॥27॥
उदीराणा उतासीनास्तिष्ठन्तः प्रक्रामन्तः ।
पद्भ्यां दक्षिणसव्याभ्यां मा व्यथिष्महि भूम्याम् ॥28॥

विमृग्वरीं पृथिवीमा वदामि क्षमां भूमिं ब्रह्मणा वावृधानाम् ।
ऊर्जं पुष्टं बिभ्रतीमन्नभागं घृतं त्वाभि नि षीदेम भूमे ॥29॥
शुद्धा न आपस्तन्वे क्षरन्तु यो नः सेदुरप्रिये तं नि दध्मः ।
पवित्रेण पृथिवि मोत्पुनामि ॥30॥
यास्ते प्राचीः प्रदिशो या उदीचीर्यास्ते भूमे अधराद्याश्च पश्चात्।
स्योनास्ता मह्यं चरते भवन्तु मा नि पप्तं भुवने शिश्रियाणः ॥31॥
मा नः पश्चान् मा पुरस्तान् नुदिष्ठा मोत्तरादधरादुत ।
स्वस्ति भूमे नो भव मा विदन् परिपन्थिनो वरीयो यावया वधम् ॥32॥
यावत्तेऽभि विपश्यामि भूमे सूर्येण मेदिना ।
तावन् मे चक्षुर्मा मेष्टोत्तरामुत्तरां समाम् ॥33॥
यच्छयानः पर्यावर्ते दक्षिणं सख्यमभि
भूमे पार्श्वमुत्तानास्त्वा प्रतीचीं यत्पृष्टीभिरधिशेमहे ।
मा हिंसीस्तत्र नो भूमे सर्वस्य प्रतिशीवरि ॥34॥
यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु ।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम् ॥35॥
ग्रीष्मस्ते भूमे वर्षाणि शरद्धेमन्तः शिशिरो वसन्तः ।
ऋतवस्ते विहिता हायनीरहोरात्रे पृथिवि नो दुहाताम् ॥36॥
याप सर्पं विजमाना विमृग्वरी यस्यामासन्न् अग्नयो ये अप्स्वन्तः ।
परा दस्यून् ददती देवपीयून् इन्द्रं वृणाना
पृथिवी न वृत्रं शक्राय दध्रे वृषभाय वृष्णे ॥37॥
यस्यां सदोहविर्धाने यूपो यस्यां निमीयते । ब्रह्माणो यस्यामर्चन्त्यृग्भिः
साम्ना यजुर्विदः युज्यन्ते यस्यामृत्विजः सोममिन्द्राय पातवे ॥38॥
यस्यां पूर्वे भूतकृत ऋषयो गा उदानृचुः ।
सप्त सत्रेण वेधसो यज्ञेन तपसा सह ॥39॥
सा नो भूमिरा दिशतु यद्धनं कामयामहे ।
भगो अनुप्रयुङ्क्तामिन्द्र एतु पुरोगवः ॥40॥
यस्यां गायन्ति नृत्यन्ति भूम्यां मर्त्या व्यैलबाः ।
युध्यन्ते यस्यामाक्रन्दो यस्यां वदति दुन्दुभिः ।
सा नो भूमिः प्र णुदतां सपत्नान् असपत्नं मा पृथिवी कृणोतु ॥41॥
यस्यामन्नं व्रीहियवौ यस्या इमाः पञ्च कृष्टयः ।
भूम्यै पर्जन्यपत्न्यै नमोऽस्तु वर्षमेदसे ॥42॥
यस्याः पुरो देवकृताः क्षेत्रे यस्या विकुर्वते ।
प्रजापतिः पृथिवीं विश्वगर्भामाशामाशां रण्यां नः कृणोतु ॥43॥
निधिं बिभ्रती बहुधा गुहा वसु मणिं हिरण्यं पृथिवी ददातु मे ।
वसूनि नो वसुदा रासमाना देवी दधातु सुमनस्यमाना ॥44॥
जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।
सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ॥45॥
यस्ते सर्पो वृश्चिकस्तृष्टदंश्मा हेमन्तजब्धो भृमलो गुहा शये ।
क्रिमिर्जिन्वत्पृथिवि यद्यदेजति प्रावृषि तन्
नः सर्पन् मोप सृपद्यच्छिवं तेन नो मृड ॥46॥
ये ते पन्थानो बहवो जनायना रथस्य वर्त्मानसश्च यातवे ।
यैः संचरन्त्युभये भद्रपापास्तं पन्थानं जयेमानमित्रमतस्करं यच्छिवं तेन

नो मृड ॥47॥
मल्वं बिभ्रती गुरुभृद्भद्रपापस्य निधनं तितिक्षुः ।
वराहेण पृथिवी संविदाना सूकराय वि जिहीते मृगाय ॥48॥
ये त आरण्याः पशवो मृगा वने हिताः सिंहा व्याघ्राः पुरुषादश्चरन्ति ।
उलं वृकं पृथिवि दुच्छुनामित ऋक्षीकां रक्षो अप बाधयास्मत्॥49॥
ये गन्धर्वा अप्सरसो ये चारायाः किमीदिनः ।
पिशाचान्त्सर्वा रक्षांसि तान् अस्मद्भूमे यावय ॥50॥
यां द्विपादः पक्षिणः संपतन्ति हंसाः सुपर्णाः शकुना वयांसि ।
यस्यां वातो मातरिश्वेयते रजांसि कृण्वंश्च्यावयंश्च वृक्षान् ।
वातस्य प्रवामुपवामनु वात्यर्चिः ॥51॥
यस्यां कृष्णमरुणं च संहिते अहोरात्रे विहिते भूम्यामधि ।
वर्षेण भूमिः पृथिवी वृतावृता सा नो दधातु
भद्रया प्रिये धामनिधामनि ॥52॥
द्यौश्च म इदं पृथिवी चान्तरिक्षं च मे व्यचः ।
अग्निः सूर्य आपो मेधां विश्वे देवाश्च सं ददुः ॥53॥
अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम् ।
अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहिः ॥54॥
अदो यद्देवि प्रथमाना पुरस्ताद्देवैरुक्ता व्यसर्पो महित्वम् ।
आ त्वा सुभूतमविशत्तदानीमकल्पयथाः प्रदिशश्चतस्रः ॥55॥
ये ग्रामा यदरण्यं याः सभा अधि भूम्याम् ।
ये संग्रामाः समितयस्तेषु चारु वदेम ते ॥56॥
अश्व इव रजो दुधुवे वि तान् जनान् य आक्षियन् पृथिवीं यादजायत।
मन्द्राग्रेत्वरी भुवनस्य गोपा वनस्पतीनां गृभिरोषधीनाम् ॥57॥
यद्वदामि मधुमत्तद्वदामि यदीक्षे तद्वनन्ति मा ।
त्विषीमान् अस्मि जूतिमान् अवान्यान् हन्मि दोधतः ॥58॥
शन्तिवा सुरभिः स्योना कीलालोध्नी पयस्वती ।
भूमिरधि ब्रवीतु मे पृथिवी पयसा सह ॥59॥
यामन्वैच्छद्धविषा विश्वकर्मान्तरर्णवे रजसि प्रविष्टाम् ।
भुजिष्यं पात्रं निहितं गुहा यदाविर्भोगे अभवन् मातृमद्भ्यः ॥60॥
त्वमस्यावपनी जनानामदितिः कामदुघा पप्रथाना ।
यत्त ऊनं तत्त आ पूरयाति प्रजापतिः प्रथमजा ऋतस्य ॥61॥
उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम ॥62॥
भूमे मातर्नि धेहि मा भद्रया सुप्रतिष्ठितम् ।
संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्याम् ॥63॥

सूक्तों के मुख्य शब्दों में धातु एवं लकार,पुरुष एवं वचन-

शब्द	धातु	लकार	पुरुष,वचन
इळे	ईळ् स्तुतौ	लट्	उ.ए.
पुरोहितम्	पुरस्+धा+क्त	-	-
अश्नवत्	अश्	लेट्	प्र.ए.
इमसि	इण्गतौ	लट्	उ.ब.
विसीमहि	षिञ् बन्धने	लट्	उ.ब.
निषसाद	सद्	लिट्	प्र.ए.
तारिषत्	तॄ	लेट्	प्र.ए.
वोचावहै	ब्रू	लुङ्	उ.द्वि.
दर्शम्	दृश्	लुङ्	उ.ए.
श्रुधि	श्रु	लोट	म.ए.
राजसि	राज्	लट्	म.ए
मुमुग्धि	मुच्लृ	लोट	म.ए.
चृत	चृतीहिंसाग्रन्थनयोः -	लोट्	म.ए.
ददर्षि	दृ	लट्	म.ए.
भाहि	भा	लोट्	म.ए.
ववृत्स्व	वृत्	लोट्	म.ए.
भरध्वम्	भृ (आ.)	लोट्	म.ए.
अबोधि	बुध्	लुट	प्र.ए.
पिपृता	पृ पालन पूरणयोः	लोट्	म.ए.
नन्नमीति	नम् (यङ्लुक्)	लट्	प्र.ए.
जर्भुरीति	भृञ् यङ्लुक्	लट्	प्र.ए
अभिक्रन्द	क्रन्द	लोट्	म.ए.
स्तनय	स्तन्	लोट्	म.ए.
परिदीया	दा	लोट्	म.ए.
पिन्वत	पिन्व्	लोट्	म.ब.
उदच	अञ्चु गतौ	लोट्	म.ए.
अवर्षीः	वृष	लङ्	म.ए
दाधार	धृ	लङ्	प्र.ए
ईशे	ईश्	लट्	प्र.ए.
व्यदधुः	धा	लङ्	प्र.ब.
कामये	कम्	लट्	उ.ए.

सूक्तों के ऋषि,देवता,छन्द,तथा मंत्रों का संक्षिप्त विवरण-

सूक्त	ऋषि	देवता	छंद	मंत्र	वेद
(1) अग्नि 1.1	मधुच्छन्दा	अग्नि	गायत्री	9	ऋग्वेद
(2) इन्द्र 2.12	गृत्समद	इन्द्र	त्रिष्टुप	15	ऋग्वेद
(3) पुरुष 10.90	नारायण	पुरुष	त्रिष्टुप+अनुष्टुप	16	ऋग्वेद
(4) हिरण्यगर्भ10.121	हिरण्यगर्भ	प्रजापति	त्रिष्टुप	10	ऋग्वेद
(5) नासदीय 10.129	परमेष्ठी,प्रजापति	परमात्मा	त्रिष्टुप	7	ऋग्वेद
(6) वाक्10.125	वागाम्भृणी/ वाक्	परमात्मा	जगती,त्रिष्टुप	8	ऋग्वेद
(7) सूर्य 1.125	कुत्स	सूर्य	त्रिष्टुप	6	ऋग्वेद
(8) उषस् 3.61	विश्वामित्र	उषा	त्रिष्टुप	7	ऋग्वेद
(9) पर्जन्य 5.83	अत्रि	पर्जन्य	त्रिष्टुप,जगती,अनुष्टुप	10	ऋग्वेद
(10) शिवसङ्कल्प 34	याज्ञवल्क्य	मनोदेवता	त्रिष्टुप	6	यजुर्वेद
(11) प्रजापति 23/1-5	हिरण्यगर्भ	प्रजापति	त्रिष्टुप	5	यजुर्वेद
(12) काल 10.53	भृगु	काल	त्रिष्टुप,बृहती,अनुष्टुप	10	अथर्ववेद
(13) पृथ्वी 12.1	अथर्वा	भूमि	त्रिष्टुप,जगती	63	अथर्ववेद
(14) वरुण 1.25	शुनः शेप	वरुण	गायत्री	21	ऋग्वेद
(15)राष्ट्राभिवर्धनम्1.29	वसिष्ठ	ब्राह्मणस्पति	-	6	अथर्ववेद
(16) ज्ञान 10.71	बृहस्पति	ज्ञानम्	त्रिष्टुप जगती	11	ऋग्वेद
(17) अक्ष 10.34	कवषऐलूष	अक्ष	त्रिष्टुप	14	ऋग्वेद

2. ब्राह्मण साहित्य

ब्राह्मणग्रन्थों का प्रतिपाद्य विषय-

ब्राह्मणग्रन्थों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय यज्ञ एवं यज्ञप्रक्रिया का सर्वाङ्गीण विवेचन है । यज्ञ-मीमांसा के दो मुख्य भाग हैं –

1. विधि **2. अर्थवाद ।**

(1) विधि - विधि का अभिप्राय यज्ञप्रक्रिया के विधान का विस्तृत निरूपण करना है । जैसे यज्ञ कब, कहाँ कैसे किया जाय तथा यज्ञ के लिए कितने ऋत्विज् चाहिए, प्रत्येक के क्या कर्तव्य हैं यज्ञ के लिए क्या-क्या सामान चाहिए, यज्ञशाला का निर्माण आदि । अतएव आपस्तम्ब का कथन है –**"कर्मचोदना ब्राह्मणानि" (आपस्तम्ब)** अर्थात् ब्राह्मण ग्रन्थ विविध यज्ञरूप कर्मों में मनुष्यों को प्रेरित करते हैं ।

विधि के चार प्रकार-

1. उत्पत्ति विधि 2. विनियोग विधिः
3. प्रयोगविधिः 4. अधिकारविधि।

(2) अर्थवाद - स्तुति या निन्दापरक विविध विषय अर्थवाद के अन्तर्गत आते हैं । यज्ञीय कर्मकांड में विहित विधानों की अनेक प्रकार से प्रशंसा की जाती है । साथ ही निषिद्ध कर्मों की निन्दा की जाती है । **"प्राशस्त्यनिन्दान्यतरपरं वाक्यमर्थवादः॥" (अर्थसङ्ग्रहः)** इस प्रकार के विषय अर्थवाद के अन्तर्गत आते हैं ।

यज्ञ परिचय-

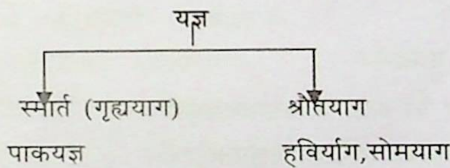
वेदों में यज्ञ की उपयोगिता पर बहुत प्रकाश डाला गया है। संक्षेप में यज्ञ की उपयोगिता के विषय में यह कहा जा सकता है कि- यज्ञ प्रकृति के संतुलन को बनाए रखने में बहुत सहायक हैं। यह प्रज्ञापराध के कारण-स्वरूप मानसिक प्रदूषण को रोकता है। यह शिवसंकल्प, विचार-शुद्धि, सद्भाव, शान्ति और नीरोगता प्रदान करके मानसिक और बौद्धिक रोगों को दूर करता है। यज्ञ में सस्वर मंत्रपाठ और सामगान ध्वनि-प्रदूषण को रोकने में कुछ अंश तक सहायक सिद्ध हो सकता है । वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हुआ है कि अग्निहोत्र से कुछ ऐसी गैसें निकलती हैं, जो वातावरण को शुद्ध करती हैं और प्रदूषण को नष्ट करती हैं। इनमें कुछ गैसें ये हैं- **Ethylene oxide,**

Propylenc. यज्ञ की सामग्री में प्रयुक्त चीनी, शक्कर आदि मिष्ट पदार्थों में वायु को शुद्ध करने की असाधारण शक्ति है। इसके धुएँ से क्षय, चेचक, हैजा आदि बीमारियों के कीटाणु नष्ट होते हैं । भेषज्य-यज्ञ ऋतु-परिवर्तन के समय होने वाले दूषित तत्त्वों को नष्ट करते हैं । गोपथ (2.1.19) और कौषीतकि ब्राह्मण (5.1) में भेषज्य-यज्ञों का विस्तृत वर्णन है। ये चातुर्मास्य यज्ञ हैं । इनमें विशेष ओषधियाँ गिलोय, गुग्गुल, अपामार्ग (चिरचिटा) आदि डाले जाते हैं।

'अथर्वा ऋषि' यज्ञ के प्रवर्तक हैं । अथर्ववेद (3.11.1) का कथन है कि यज्ञ से इन रोगों की चिकित्सा की जाती है- यक्ष्मा (तपेदिक), ज्वर, गठिया, कण्ठमाला (गंडमाला) आदि । अथर्ववेद (3.11.2) का कथन है कि यज्ञ से मरणासन्न या मृतप्राय व्यक्ति को भी बचाया जा सकता है। शतपथ ब्राह्मण का 11 वां काण्ड यज्ञ से सम्बन्धित है । वर्षचक्ररूपी यज्ञ में- **वसन्त**- घी, **ग्रीष्म** - समिधा, **शरद**- द्रव्य, होते हैं । **(वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद् हविः)** यज्ञ सृष्टिचक्र की नाभि है- **'अयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः'**। सबसे बड़ी वेदी (सोमयाग) की होती है इसे (महावेदी) या (सौमिक) वेदी कहते हैं। यह **'समद्विबाहु चतुर्भुज'** आकार की होती है। सूर्य पूर्वाहन के समय ऋग्वेद द्वारा आता है, तथा सूर्य अस्त के समय सामवेद द्वारा जाता है । ऐतरेय ब्राह्मणानुसार मुख्य (5) यज्ञ-

(1) अग्निहोत्र (2) दर्श-पूर्णमास (3) चातुर्मास्य (4) पशु (5) सोम,

याग के दो प्रकार- (1) स्मार्त (2) श्रौत।



1. स्मार्तयाग- ये 'गृह्ययाग' या 'पाकयज्ञ' कहलाते हैं ।

2. श्रौतयाग के पाँच भाग-

(1) अग्निहोत्र (2) दर्श-पूर्णमास (3) चातुर्मास्य (4) पशु (5) सोम, स्मृतियों और कल्पग्रन्थों में स्मार्त और श्रौत यागों को मिलाकर इनकी संख्या (21) मानी है।

श्रौतयाग के पुनः दो भाग-

(1) हविर्याग- इसमें दूध, घी, पुरोडाश डाला जाता है।

(2) सोमयाग- इसमें सोमलता का रस डाला जाता है।

श्रौत और स्मार्त (21) याग-

(क) पाकयज्ञ (स्मार्त याग) - ये 'गृह्ययाग' है। संख्या- 7

(1) औपासन, होम (2) वैश्वदेव (3) पार्वण

(4) अष्टका (5) मासिक श्राद्ध (6) श्रवणा

(7) शूलगव ।

(ख) हविर्याग (श्रौतयाग) - ये 'श्रौतयाग' हैं। संख्या-(7) **इनमें दूध,** घी, पुरोडाशादि से आहुति दी जाती है।

(1) अग्निहोत्र (2) दर्श-पूर्णमास (3) आग्रायण

(4) चातुर्मास्य (5) पशुबन्ध (6) सौत्रामणी

(7) पितृयज्ञ।

(ग) सोमयाग (श्रौतयाग)-ये 'श्रौतयाग' हैं। संख्या-(7) **(वसन्त ऋतु)**

(1) अग्निष्टोम (2) अत्यग्निष्टोम (3) उक्थ

(4) षोडशी (5) वाजपेय (6) अतिरात्र

(7) आप्तोर्याम।

❖ **सोमयाग के काल की दृष्टि से तीन प्रकार-**

(1) एकाह- एक दिन चलने वाला।

(2) अहीन - दो दिन से 12 दिन तक चलने वाला।

(3) सत्रयाग - 13 दिन से एक वर्ष या 1000 वर्ष तक चलने वाला इसके विभिन्न नाम हैं- द्व्यह 2 दिन, त्र्यह 3 दिन, षडह 6 दिन, दशाह 10 दिन, द्वादशाह 12 दिन पर्यन्त चलने वाला ।

- **अग्नि के दो भेद**- (1) स्मार्त अग्नि/गृह्याग्नि (2) श्रौत अग्नि।
- सम्राट बनने की इच्छा वाला यज्ञ- **वाजपेय।**
- **यज्ञ के पांच अंग**- (1) देवता (2) हविर्द्रव्य (3) मंत्र (4) ऋत्विज (5) दक्षिणा।

❖ **श्रौतयाग के ऋत्विज्-**

(1) होता (2) मैत्रावरुण (3) अच्छावाक (4) ग्रावस्तुत।

- कल्पसूत्रों मे कुलमिलाकर (42) कर्मों का प्रतिपादन है।
- **श्रौतयज्ञ-14, गृह्ययज्ञ- 7, महायज्ञ- 5, संस्कारयज्ञ- 16,=** (42)

॥अग्निहोत्र॥

अग्निहोत्र एक वैदिक यज्ञ है। इस यज्ञ का वर्णन यजुर्वेद में मिलता है। वैदिक काल में अग्निहोत्र का बड़ा नाम था। हिन्दू धार्मिक ग्रंथों आदि में इस यज्ञ का उल्लेख मिलता है। यह दो प्रकार का होता है- **1. नित्य, 2. काम्य** । अग्नि-स्थापन करके आजीवन प्रातःकाल और सायंकाल नियमपूर्वक हवन करना 'नित्य' और किसी कामना के लिए निर्दिष्ट समय तक हवन करना 'काम्य' है। यह श्रौतयाग के अन्तर्गत हविर्याग में आता है। इसमें घृत दुग्ध के साथ प्रतिदिन हवन किया जाता है । अग्निहोत्र याग के लिए वर्णों में ऋतुओं का विधान किया गया है- **ब्राह्मण**- वसन्त ऋतु, **क्षत्रिय**- ग्रीष्म ऋतु, **वैश्य**- वर्षा ऋतु ।

॥अग्निष्टोम यज्ञ॥

'यज्ञायज्ञा वो अग्नये' (ऋग्. 6.48.1 और सामवेद मंत्र 35) इस ऋचा पर सामगान 'अग्निष्टोम' कहलाता है । यह सामगान अन्त में होता है, अतः इसे **'अग्निष्टोम-संस्था'** कहते हैं। संस्था का अर्थ है- "अन्त या समापन" । मंत्र में 'अग्नये' (अग्नि) है, अतः यह अग्निष्टोम कहलाता है । स्तोम का अर्थ है- स्तुति, अत: अग्निष्टोम-अग्नि की स्तुति या अग्नि का स्तोत्र है । यह 5 दिन चलता है । यह सोमयाग का प्रकृतियाग (आधारस्वरूप याग) है, अतः सभी सोमयागों में यह अग्निष्टोम रहेगा । इसमें (12) 'मंत्रों' या 'स्तोत्रों' (शस्त्रों) का घुमा-फिराकर प्रयोग होता है । ऋचा या मंत्र का पारिभाषिक नाम **'शस्त्र'** है।

अग्निष्टोम अथवा 'ज्योतिष्टोम' एक प्रकार का वैदिक यज्ञ, जिसका वैदिक साहित्य के अतिरिक्त प्राचीन अभिलेखों में भी उल्लेख मिलता है। यजुष् और अथर्वन् की यज्ञ पद्धति में 'अग्निष्टोम' का अग्न्याधान, वाजपेय आदि की तरह ही महत्व है। इस 'यज्ञ' को **'ज्योतिष्टोम'** भी कहते हैं। यह पाँच दिनों तक मनाया जाता है। प्रायः **'राजसूय'** तथा **'अश्वमेध'** यज्ञों के कर्ता इस यज्ञ का प्रतिपादन आवश्यक समझते थे। वैदिक साहित्य के अतिरिक्त प्राचीन **'अभिलेखों'** में भी इस यज्ञ का उल्लेख मिलता है।

'वायुपुराण' के अनुसार यह स्वर्ग प्राप्त करने की इच्छा से किया जाने वाला एक प्रकार का यज्ञ हैं, जिसकी उत्पत्ति ब्रह्माजी के पहले मुख से हुई, जिसे प्रायः अग्निहोत्री ब्राह्मण ही कर सकते थे। इसमें ऋत्विज सोलह हैं और इसकी पूर्णाहुति पाँच दिनों में होती है। इससे पितृगण का मान बढ़ता है और वे सन्तुष्ट रहते हैं। यह यज्ञ बाली ने किया था। मत्स्य पुराण के अनुसार इस यज्ञ में पशुबलि आवश्यक है।

❖ सामान्य परिचय-

- अग्निष्टोम यज्ञ 5 दिन तक चलता है, इसमें 12 मंत्रों या स्तोत्रों (शस्त्रों) का घुमा-फिराकर प्रयोग होता है।
- अग्निष्टोम- वसन्त ऋतु में होता है।
- अग्निष्टोम याग में ऋत्विज = 16, **शस्त्र** = 12,
- श्रौतयागों में प्रधान ऋत्विक- **अध्वर्यु,**
- **प्रवर्ग्य विधि-** प्रवर्ग्य विधि सोमयाग के अंगरूप में की जाती है।

॥दर्शपौर्णमास यज्ञ॥

यह 30 दिन तक चलता है। यज्ञ 'श्रौत' और 'स्मार्त' के भेद से अनेक प्रकार के हैं। **श्रौत-** जिन यज्ञों का श्रुति अर्थात् मन्त्र ब्राह्मण में साक्षात् उल्लेख मिलता है उन्हें 'श्रौत' यज्ञ कहते हैं। **स्मार्त-** जिन यज्ञों का ऋषि लोग स्मृतियों में विधान करते हैं उन्हें स्मार्त यज्ञ कहते हैं, तथा गृहसूत्रोक्त यज्ञ भी स्मार्त यज्ञ कहे जाते हैं। दर्शपूर्णमास याग श्रौत याग कहलाता है। श्रौत तथा स्मार्त दोनों ही प्रकार के यज्ञ तीन प्रकार के होते हैं-

(1) नैत्यिक (2) काम्य (3) नैमित्तिक ।

(1) **नैत्यिक-** जिनको यथावसर अवश्य करना होता है- अग्निहोत्रादि।

(2) **काम्य-** इच्छापूर्ति के लिये-पुत्रेष्टि, वर्षेष्टि।

(3) **नैमित्तिक-** प्राकृतिक संयोग के कारण- जातेष्टि।

श्रौत कर्म आरम्भ करने से पूर्व 'तीन' अग्नियों का आधान होता है जिसे- **अग्न्याधान/आधान/अग्नयाधेय** भी कहते हैं। अग्न्याधान का अधिकारी **"कृतदार कर्म"** (विवाहित पुरुष) होता है । **अग्न्याधान का काल- ब्राह्मण**-वसन्त, **क्षत्रिय**-ग्रीष्म, **वैश्य**- शरद् । अग्न्याधान इन ऋतुओं में किसी 'अमावस्या' अथवा 'पूर्णिमा' के दिन क्रिया जाता है। क्रियमाण कर्म की दृष्टि से अग्न्याधान तीन प्रकार का होता है-

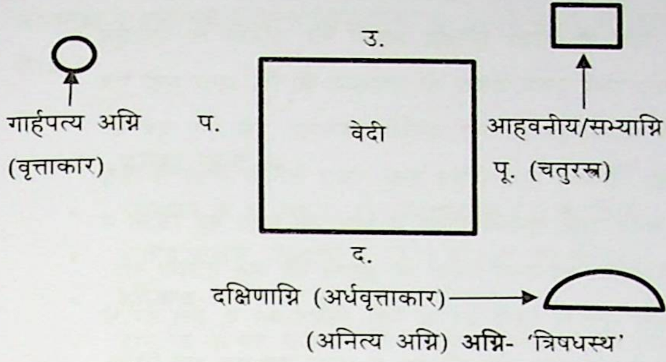
(1) होमपूर्व (2) इष्टिपूर्व (3) सोमपूर्व।

दर्शपूर्णमासादि इष्टियां करने का संकल्प करके उनसे पूर्व जो आधान किया जाता है वह **"इष्टिपूर्व आधान"** कहलाता है। अग्न्याधान यदि अमावस्या को किया जाता है तो क्रमप्राप्त अगली 'पूर्णिमा' के दिन 'पूर्णमासेष्टि' की जाती है, तत्पश्चात् 'दर्शेष्टि' की जाती है। दर्शपौर्णमास में प्रथम इष्टिका- **पौर्णमासेष्टिका** कहलाती है । यदि आधान पूर्णिमा के दिन किया है तो अगली अमावस्या के दिन दर्शेष्टि न करके उससे उत्तरवर्ती पूर्णिमा के दिन 'पूर्णमासेष्टि' की जाती है। पौर्णमासेष्टि और दर्शेष्टि मिलकर एक कर्म कहलाता है।

❖ प्रमुख सन्दर्भ-

- सोमयाग का काल = **वसन्त ऋतु।**
- वेदी के पश्चिम भाग में- **गार्हपत्य,**
- पूर्व भाग में - **आहवनीय,**
- अग्नि के दक्षिण भाग में- **दक्षिणाग्नि।**
- दर्शपौर्णमास की वेदी = **त्र्यङ्गुलखाता।**
- दर्शपौर्णमास का आधान काल- **अमावस्या,**
- दर्शपौर्णमास याग का काल- (शु.प. **प्रतिपदा),**
- **दर्शेष्टि-** शुक्लपक्षप्रतिपदि।
- **पूर्णमासेष्टि-** कृष्णपक्षप्रतिपदि।
- इसमें (4) ऋषि होते हैं।
- दोनों में (3) प्रधान याग होते हैं। कुल = (6)
- **तीन प्रकार की श्रौताग्नि-** (तै.सं.) 'त्रिषधस्थ' अग्नि कहलाती है ।

आहवनीय अग्नि- **चतुरस्त्र**
गार्हपत्य अग्नि - **वृत्ताकार**
दक्षिणाग्नि - **अर्धवृत्ताकार**



(अनित्य अग्नि) **अग्नि-** 'त्रिषधस्थ'

- वेदी की लम्बाई = 6 हाथ या न्यूनाधिक ।
- इन तीनों अग्नियों के अतिरिक्त **'सभ्य'** और **'आवसभ्य'** (औपासन अथवा गृह संज्ञ अग्नि) दो अग्नियों की भी स्थापना की जाती है।
- **सभ्याग्नि-** जहां बैठ कर गुरु शिष्य को पढ़ाता है वहां गुरु और शिष्य के मध्य (सभ्याग्नि) स्थापित की जाती है।
- **आवसभ्य अग्नि-** इस अग्नि का **'दायाद्य'** काल में आधान किया जाता है। अग्नि में गृह सूत्रोक्त संस्कार कर्म किए जाते हैं।
- **श्रौत अग्नियां** = (1) गार्हपत्य (2) आहवनीय (3) दाक्षिणाग्नि।
- **स्मार्त अग्नियां** = (1) सभ्य (2) आवसभ्य।
- दक्षिणाग्नि को 'अनित्य' अग्नि भी कहा जाता है। सभी अग्नियों के आधान के अनन्तर (तीन) पवमान इष्टियां होती है। जिन्हें ''तनुहवियां'' भी कहते हैं।
- प्रथमेष्टि का देवता- **अग्निपवमान।**
- द्वितीयेष्टि का देवता- **अग्निपावक।**
- तृतीयेष्टि का देवता- **अग्निशुचि।**
- इनका द्रव्य **'अष्टकपाल पुरोडाश'** है।
- पवमान इष्टि की प्रकृति = **''दर्शपूर्णमास''** है।
- अग्निहोत्र को ''जरामर्यसत्र'' अथवा **''नैत्यिक कर्म''** माना गया है।
- दर्शपौर्णमास को सभी यागों की प्रकृति माना गया है। इसमें 13 से 14 आहुतियां मुख्य होती हैं। दोनों में तीन-तीन प्रधान आहुतियां हैं, शेष 11 अंगरूप आहुतियां हैं।
- **दर्शेष्टि में-** 13 आहुतियां, **पौणमासेष्टि में-** 14 आहुतियां
- दर्शपौर्णमास **'नित्य'** **'काम्य'** भेद से दो प्रकार का होता है। याग में जिस देवता को आहुति दी जाती है उस देवता वाली दो ऋचाओं में पहली ऋचा को **'पुरोनुक्या'** कहते हैं और उसके पश्चात जिससे आहुति दी जाती है उसे **'याज्ञा'** कहते हैं। याज्ञा के अन्त में **'वौषड'** शब्द जोड़कर आहुति दी जाती है।
- यज्ञ में जितनी आहुति दी जाती हैं उन्हें 'होता' देता है। शेष यज्ञीय कर्म 'अध्वर्यु' पूरा करता है। 'अग्नीत' ऋत्विक 'अध्वर्यु' का सहायक होता है।
- दर्शपूर्णमास में (15) कपाल अपेक्षित होते हैं।
- पूर्णमासेष्टि में पञ्चभू संस्कार होते हैं।
- दर्शपूर्णमास के ऋत्विक की दक्षिणा-**'अन्वाहार्य'** होती है,
- दर्शपूर्णमास में (15) सामिधेनी मन्त्र होते हैं।
- **दर्शपौर्णमास कर्म में चार ऋत्विक -**

  (1) ब्रह्मा (2) अध्वर्यु (3) होता (4) आग्नीत। (आग्नीध्र)

॥प्रयाज॥

किसी भी इष्टि का जो प्रधान याग है उससे पूर्व जो याग किये जाते हैं उन्हें 'प्रयाज' कहते हैं। दर्शपूर्णमास में- (5) प्रयाज होते हैं । पाँचों के देवता- **समित्, तनूपात/नराशंस, इन्द्र, बर्हि,** तथा **स्वाहा।** दर्शपौणमास में (3) अनुयाज होते हैं। दर्शपौर्णमास 'इष्टियाग' की प्रकृति है ।

॥चातुर्मास्य॥

यह याग प्रत्येक चौथे मास में पूर्णिमा को किया जाता है । चातुर्मास्य- 4 महीने में सम्पन्न होने वाला एक-एक याग की समष्टि है ।

1. वैश्वदेव पर्व- फाल्गुन पूर्णिमा - **वसन्त ऋतु,**

2. वरुण प्रघास - आषाढ़ पूर्णिमा - **वर्षा ऋतु,**

3. साकमेध - कार्त्तिक पूर्णिमा - **हेमन्त ऋतु,**

4. शुनासीरीय - फाल्गुनशुक्ल प्रतिपदा।

चातुर्मास्य पर्व के दो भेद- **(1) स्वतन्त्र (2) राजसूय ।**

हविर्द्रव्य की दृष्टि से चातुर्मास्यों के तीन प्रकार है-

(1) ऐष्टिक (2) पाशुक (3) सौमिक।

चार पर्वों में (5) प्रधान देवता हैं तथा उनको दी जाने वाली हवियां-

अग्नि के लिये - अष्टकपाल पुरोडाश

सोम के लिये - चरु

सविता के लिये - अष्टकपाल अथवा द्वादशकपाल पुरोडाश (उपांशु)

सरस्वती के लिये - चरु

पूषा के लिये - पिष्ट चरु

चातुर्मास्य यागों में सर्वप्रथम अनुष्ठेय **''वैश्वदेव पर्व''** है।

॥पशुबन्ध॥

यह याग **वर्षा ऋतु** में होता है। इसमें 'इन्द्र' और 'अग्नि' के लिये हवन होता है।

॥पञ्चमहायज्ञ॥

ये गृह्य यज्ञों के अन्तर्गत आते हैं, ये प्रत्येक गृहस्थ के लिए अनिवार्य बताए गए हैं। इनकी संख्या पाँच हैं- ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ और अतिथि यज्ञ ।

1. ब्रह्मयज्ञ- यह प्रातः और सायं ईश्वरोपासना एवं संध्या है । स्वाध्याय भी ब्रह्मयज्ञ है ।

2. देवयज्ञ- यह दैनिक अग्निहोत्र या हवन है । इसमें पति-पत्नी दोनों को बैठना चाहिए। देवयज्ञ में 'स्वाहा' अर्थात् **स्व**-स्वार्थभावना, **आ**-पूर्णतया, **हा**-छोड़ना (स्वार्थ-भावना का पूर्णतया त्याग) करना है। **'इदं न मम'** यह मेरा नहीं है, यह स्वार्थत्याग और ममत्व का त्याग है। अथर्ववेद में मानस यज्ञ या आत्मसमर्पणरूपी यज्ञ को सर्वोत्तम माना गया है । इससे मन की दिव्य शक्तियाँ जागृत होती हैं ।

3. पितृयज्ञ-अपने माता-पिता,गुरुजनों आदि की सेवा-शुश्रूषा करना।

4. बलिवैश्वदेव यज्ञ- पकाए हुए भोजन में से कुछ अंश पशु-पक्षियों आदि के लिए निकालना और कुछ अंश अग्नि में डालना। उसके बाद ही भोजन करना ।

5. अतिथि यज्ञ- यह अतिथि-सत्कार है । अथर्ववेद में अतिथि-सत्कार का बहुत विस्तार से वर्णन है । आवश्यक कामों को छोड़कर अतिथि-सत्कार करे, अन्यथा परिवार की श्री-समृद्धि नष्ट हो जाती है।

❖ **सामान्य परिचय-**

- ब्रह्मयज्ञ का विस्तारपूर्वक वर्णन- तैत्तिरीयारण्यक में किया गया है।
- पितृयज्ञके तीन प्रकार- (1) **तर्पण**, (2) **बलिहरण**, (3) **प्रतिदिन श्राद्ध,**
- पितरों का मासिक श्राद्ध – **अन्वाहार्य।**
- सूर्य से उत्पन्न होती है- **वृष्टि-अन्न-प्रजाएं।**
- पञ्चमहायज्ञ का विधान किया जाता है- **पञ्चसूनदोष** नाश के लिये।

॥आख्यान॥

॥शुनःशेप आख्यान॥

शुनःशेप **ऐतरेय ब्राह्मण** में स्थित एक आख्यान है। इसका सारांश यह है कि जब तक मृत्यु सामने न आये तब तक रूपान्तरण नहीं होता। यह आख्यान मानवीय लोभ, बेइमानी और उससे ऊपर उठने की क्षमता की कथा है। **राजा हरिश्चंद्र** अपनी सौ रानियों के बावजूद निस्संतान था। उसने **वरुण देवता** की उपासना की कि अगर मुझे पुत्र प्राप्ति हो तो पहला पुत्र आपको समर्पित करूंगा। उसे एक पुत्र की प्राप्ति हो गई, जिसका नाम **रोहित** रखा गया। लेकिन राजा ने जैसे ही पुत्र को सदेह देखा, उसकी नीयत में खोट आ गया। वह किसी न किसी बहाने रोहित को वरुण देवता को सौंपने की बात टालता रहा। पिता कहीं उसे सचमुच वरुण देव को नहीं अर्पित कर दें, इस डर से **रोहित** जंगल में भाग गया और हरिश्चन्द्र ने अपना प्रण पूरा नहीं किया, इसलिए **वरुण** ने उसे **शाप** दे दिया और वह बीमार हो गया। भाग्यवश जंगल में इधर-उधर घूमते रोहित को एक स्त्री एक गरीब ब्राह्मण **अजीगर्त** के पास ले आयी। उससे रोहित ने अपनी कहानी कही। अजीगर्त के तीन बेटे थे - **शुनःपुच्छ, शुनःलांगूल** और **शुनःशेप।** शुनःशेप मंझला पुत्र था और बचपन से ही बहुत समझदार और विवेकवान था। अजीगर्त ने लालच में आकर रोहित से कहा कि **सौ गायों** के बदले वह अपने एक पुत्र को बेचने को तैयार है। उस पुत्र को वह अपने बदले **वरुण देवता** को सौंप कर अपनी जान बचा सकता है। दूसरी ओर **शुनःशेप** ने सोचा, छोटा भाई मां का लाड़ला है, बड़ा भाई पिता का लाड़ला है, यदि मैं चला जाऊं तो दोनों में से किसी को कोई अफसोस नहीं होगा। इसलिए वह खुद ही **रोहित** के साथ जाने को तैयार हो गया। वरुण देव भी कोई कम लोभी नहीं थे। वे यह सोच कर प्रसन्न हो गए कि मुझे अपने अनुष्ठान के लिए **क्षत्रिय बालक** के बदले **ब्राह्मण बालक** मिल रहा है जो श्रेष्ठतर है।

यज्ञ में नर बलि की तैयारी शुरू हुई, चार पुरोहितों को बुलाया गया। अब शुनःशेप को बलि स्तंभ से बांधना था। लेकिन इसके लिए उन चारों में से कोई तैयार नहीं हुआ, क्योंकि शुनःशेप ब्राह्मण था। तब **अजीगर्त** और सौ गायों के बदले खुद ही अपने बच्चे को यज्ञ स्तंभ से बांधने को तैयार हो गया। इसके बाद **शुनःशेप** को बलि देने की बारी आई। लेकिन पुरोहितों ने फिर मना कर दिया। ब्राह्मण की हत्या कौन करे? तब अजीगर्त और एक सौ गायों के बदले अपने बेटे को काटने के लिए भी तैयार हो गया। जब शुनःशेप ने देखा कि अब मुझे बचाने वाला कोई नहीं है, तो उसने **ऊषा देवता** का स्तवन शुरू किया। प्रत्येक ऋचा के साथ शुनःशेप का एक-एक बंधन टूटता गया और अंतिम ऋचा के साथ न केवल शुनःशेप मुक्त हो गया, बल्कि **राजा हरिश्चंद** भी श्राप मुक्त हो गए। इसी के साथ बालक शुनःशेप, **ऋषि शुनःशेप** बन गया, क्योंकि वह उसके लिए रूपांतरण की घड़ी थी। कुछ और विद्वानों के अनुसार शुनःशेप **कौशिकों** के कुल मे उत्पन्न महान् तपस्वी **विश्वामित्र** (विश्वरथ) व **विश्वमित्र के शत्रु शाम्बर** की पुत्री उग्र की खोई हुयी सन्तान था जिसे **भरतों (कौशिकों)** के डर से

लोपामुद्रा ने अजीगर्त के पास छिपा दिया था। भरतो ने उग्र को मार दिया।

❖ प्रमुख सन्दर्भ-

- आख्यान के दो प्रकार- **(1) स्वल्पकाय (2) दीर्घकाय**
- ऐतरेय ब्राह्मण, अध्याय = (33) वाँ शुनः शेप आख्यान,
- **हरिश्चन्द्र**- वेधस के पुत्र, **वंश** - इक्ष्वाकु।
- हरिश्चन्द्र के घर 'पर्वत' और 'नारद' नामक ऋषि रहते थे।
- नारद ने हरिश्चन्द्र के प्रश्न का (10) गाथाओं के द्वारा उत्तर दिया।
- हरिश्चन्द्र का पुत्र- **"रोहित"।**
- हरिश्चन्द्र ने पुत्र प्राप्ति हेतु उपासना की- वरुण की।
- रोहित ने जंगल में 6 वर्ष बिताए।
- रोहित 'यवस' के पुत्र **'अजीगर्त'** ऋषि से मिला- **'षष्ठ सम्वत्सर'** में।
- अजीगर्त के तीन पुत्र थे-
  (1) शुनः पृच्छ (2) शुनः शेप (3) शुनोलाङ्गूल,
  - अजीगर्त ने रोहित को अपने मध्यम पुत्र 'शुनः शेप' का दान किया। '
  - वरुण' ने 'हरिश्चन्द्र' से ''राजसूय यज्ञ" करने को कहा तथा उसमें **''अभिषेचनीय"** नामक याग में शुनः शेप को पशु के रूप में आलम्भन करने का निश्चय किया, इसके बदले उसने 100 गाएं ली ।
  - उस राजसूय याग के ऋत्विज थे-
    होता- विश्वामित्र
    अध्वर्यु - जमदग्नि
    उद्गाता- अश्वास्य
    ब्रह्मा - वसिष्ठ
- शुनः शेप स्वयं की रक्षा के लिए क्रमशः- **प्रजापति-अग्नि-सविता-वरुण-अग्नि-विश्वदेव-इन्द्र-अश्विनौ-उषस्** के पास दौड़ा।
- 'इन्द्र' ने प्रसन्न होकर शुनः शेप को **'हिरण्यरथ'** प्रदान किया।
- शुनः शेप ने राजसूय **''पशुसोमयाग"** को **''अञ्जःसव"** सोम याग के रूप में देखा।
- शुनः शेप विश्वामित्र की गोदी में आकर बैठे गये। उन्होनें उसे अपना दत्तक पुत्र बनाया।
- विश्वामित्र ने शुनः शेप का नामकरण किया- **देवरात।**
- शुनः शेप को **'अङ्गीरस'** भी कहा गया है।
- विश्वामित्र के 101 पुत्र थे- मधुच्छन्दः से 50 बड़े तथा मधुच्छन्दः से 50 छोटे।
- विश्वामित्र के 50 बड़े पुत्रों ने विश्वामित्र के आदेश को स्वीकार नहीं किया।
- विश्वामित्र के पिता- **गाथी**, पितामह- **कुशिक।**
- शुनः शेप आख्यान को (100) शाखाओं से युक्त कहा गया है। **'शतगाथं शौनः शेपम् आख्यानम्'।** यह राज्याभिषेक के समय सुनाया जाता है।

॥वाङ्मनस आख्यान॥

शतपथ ब्राह्मण में **मन** एवं **वाणी** के संवाद को अत्यन्त ललित शैली में प्रस्तुत किया गया है जिसे **वाङ्मनस-आख्यान** के रुप में जाना जाता है। यहाँ **मन** एवं **वाणी** के विषय में अपनी प्रधानता सिद्ध करने के लिए विवाद होता है।

मन उवाच-

"अहमेव त्वच्छ्रेयोऽस्मि न वै मया त्वं कि च नानभिगतं वदसि सा यन्मम त्वं कृतानुकरा नुवर्त्मास्यहमेव त्वचछ्रेयोऽस्मीत"॥ मन ने कहा कि मैं श्रेष्ठ हूँ क्योंकि तुम मेरे द्वारा न जाना हुआ कुछ भी नहीं बोलती हो। तुम मेरी अनुगामिनी हो। अतः मैं ही तुमसे श्रेष्ठ हूँ। इस पर **वाणी** ने कहा कि मै तुमसे बड़ी हूँ क्योंकि जो तुम कुछ जानते हो वह मेरे द्वारा ही व्यक्त होता है। अतः दोनों विवाद को शान्त करने लिए प्रजापति के पास गये प्रजापति ने मन के अनुकूल निर्णय लिया। उन्होंने समाधान किया कि वाणी से श्रेष्ठ मन है। वाणी **मनोऽनुगामी** है **'स प्रजापतिर्मनस एवानूवाचचमन एवं त्वचछ्रेयो मनसो वै त्वं कृतानुकरानुवर्मासि श्रेयसो वै पापीयान्कृतानुकरोऽनुवर्त्मा भवति'** । अतः विरुद्ध निर्णय को सुनकर वाणी हतोत्साहित हो जाती है उसका गर्भ गिर जाता है। उसने प्रजापति से कहा कि अच्छा तो यही होगा कि मैं आपके लिए **हवि** ले जाने वाली न होऊँ, क्योंकि आपने मेरे विरुद्ध निर्णय दिया है। यही कारण है कि यज्ञ में प्रजापति के लिए जो कुछ भी किया जाता है वह **निम्न स्वर** से **(उपांशु)** किया जाता है। वाणी प्रजापति के लिए **हवि** का वहन नहीं करती है।

॥उपनिषद्॥

उपनिषद् का अर्थ-

उपनिषद् शब्द उप और नि उपसर्गपूर्वक 'सद्' धातु से 'क्विप्' प्रत्यय करने पर बनता है । इसका अर्थ है - उप = समीप, नि=निश्चय से या निष्ठापूर्वक, सद् = बैठना, अर्थात् तत्त्वज्ञान के लिए गुरु के पास सविनय बैठना। श्री शंकराचार्य ने उपनिषद् का अर्थ ब्रह्मविद्या माना है

। उन्होंने उपनिषद् शब्द की व्याख्या 'सद्' धातु (षद्लृ विशरणगत्यवसादनेषु) से तीन अर्थों में की है -

1. **विशरण** - नाश होना, जिसमें संसार की मूलभूत अविद्या का नाश होता है ।

2. **गति** – पाना या जानना ,जिससे ब्रह्म कि प्राप्ति होती हैं या उसका ज्ञान होता हैं।

3. **अवसादन**- शिथिल होना, जिससे मनुष्य के दुःख या बन्धन शिथिल होते हैं ।

उपनिषदों की संख्या-

उपनिषदों की संख्या 108 से लेकर 200 तक मानी जाती है। मुक्तिक उपनिषद् में उपनिषदों की संख्या 108 बताई गई है। श्रीशंकराचार्य ने 10 उपनिषदों को प्रामाणिक और प्राचीन माना है तथा इनके ऊपर भाष्य लिखा है । मुक्तिक उपनिषद् ने भी **'दशोपनिषदं पठ' (1.27)** के द्वारा प्रामाणिक उपनिषद 10 मानें हैं तथा इनके ये नाम हैं-

"ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरिः ।

ऐतरेयं च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा"।(मुक्तिक.1.30)

इनके अतिरिक्त श्वेताश्वतर, कौषीतकि और मैत्रायणीय भी प्राचीन माने जाते हैं। श्री शंकराचार्य ने अपने भाष्य में श्वेताश्वतर और कौषीतकि के भी उद्धरण दिए हैं। अतःइन तीनों को लेकर प्राचीन उपनिषदों की संख्या 13 मानी जाती है । **'प्रो.ह्यूम'** ने उपनिषदों की संख्या 13 मानी है। उनमें पूर्वोक्त 10 उपनिषदों के अतिरिक्त श्वेताश्वतर, कौषीतकि और मैत्रायणीय उपनिषद हैं । **'दाराशिकोह'** ने 17 वीं शताब्दी में 50 उपनिषदों का **'फारसी'** में अनुवाद करवाया था।

उपनिषदों का रचनाकाल-

श्री 'तिलक' ने मैत्रायणीय उपनिषद् का काल (लगभग 1950 ई.पू.) माना है । तदनुसार उपनिषद् काल का प्रारम्भ 2500 ई.पू. मानना चाहिए । 'प्रो.रानाडे' के अनुसार उपनिषद् काल की दो सीमाएँ निर्धारित की जा सकती हैं । पूर्व सीमा 12वीं शती ई.पू. और अपर सीमा छठी शताब्दी ई.पू. । उपनिषदों में बुद्ध, बौद्ध धर्म और बौद्ध दर्शन का कहीं उल्लेख नहीं है, अतः बुद्ध के आविर्भाव से पूर्व इनकी अपर सीमा है ।

उपनिषदों के प्राचीन भाष्य एवं अनुवाद-

1. शांकरभाष्य- शांकर-भाष्य उपनिषदों के प्राचीन भाष्यों में श्री शंकराचार्य के भाष्य सर्वोत्तम एवं प्रामाणिक हैं । श्री शंकराचार्य ने जिन 10 उपनिषदों के भाष्य किए हैं, वे हैं-**ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य और बृहदारण्यक।**

2. प्रो.ह्यूम- प्रो.ह्यूम ने 13 उपनिषदों का अंग्रेजी में अनुवाद किया है।

3. दाराशिकोह- दाराशिकोह ने 50 उपनिषदों का फारसी में अनुवाद **'सिर्र-ए-अकबर'** (महान् रहस्य) नाम से1657 ई. में किया था । उसका कथन था कि कुरान में **'किताबिम मक्नूनिन'** (छिपी हुई किताव) का उल्लेख है और यह छिपी हुई किताव उपनिषदें ही हैं । श्री **'मुंशी महेशप्रसाद'** ने इन 50 उपनिषदों में से 45 उपनिषदों के मूल नाम खोज निकाले है । इनमें बाष्कल, छागलेय और आर्षेय आदि उपनिषदों के भी अनुवाद हैं । दाराशिकोह के फारसी अनुवाद से **'आंकतिल दु पेरों'** (anquetil du perron) नामक 'फ्रेंच' विद्वान् ने (1802) में इसका **'फ्रेंच'** और **'लैटिन'** में **'आउपनेखत'** (oupnekhat) नाम से अनुवाद किया। 'उपनिषत्' का ही विकृत रूप 'आउपनेखत' है । इसके आधार पर ही प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक **'शोपेनहावर'** (schopenhauer) उपनिषदों के प्रति बहुत आकृष्ट हुआ और उसने उपनिषदों को 'मानवीय वैदुष्य की सर्वोत्तम कृति' बताया था। शुक्लयजुर्वेद से सम्बन्धित उपनिषदों की संख्या 19 हैं ।

प्रमुख उपनिषदों का संक्षिप्त विवरण-

1. ईशावस्योपनिषद्

यह उपनिषद् सभी उपनिषदों का आधार है । ईशोपनिषद् शुक्ल यजुर्वेदीय शाखा के अन्तर्गत एक उपनिषद है। यह मूलरूप में यजुर्वेद का 40वाँ अध्याय है तथा इसमें 18 मंत्र हैं। ईशावस्योपनिषद् को **संहितोपनिषद** कहा जाता है । यह उपनिषद् अपने नन्हें कलेवर के कारण अन्य उपनिषदों के बीच बेहद महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इसमें कोई कथा-कहानी नहीं है केवल आत्म वर्णन है। इस उपनिषद् के पहले मंत्र **''ईशावास्यमिदंसर्वंयत्किंच जगत्यां-जगत...''** से लेकर अठारहवें मंत्र **''अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्...''** तक शब्द-शब्द में मानों ब्रह्म-वर्णन, उपासना, प्रार्थना आदि झंकृत है। एक ही स्वर है - ब्रह्म का, ज्ञान का, आत्म-ज्ञान का। अद्भुत कलेवर वाले इस उपनिषद् में ईश्वर के सर्वनिर्माता होने की बात है सारे ब्रह्मांड के मालिक को इंगित किया गया है, सात्विक जीवनशैली की बात कही गई है कि दूसरे के धन पर दृष्टि मत डालो। इस जगत् में रहते हुए निःसंङ्गभाव से जीवनयापन करने को बताया गया है। इसमें **'असुर्या'** नामक लोक की बात आती है असुर्या मतलब कि सूर्य से रहित लोक। वह लोक जहाँ सूर्य नहीं पहुँच पाता, घने, काले अंधकार से भरा हुआ अन्धतम लोक, अर्थात् गर्भलोक। कहा गया है कि जो लोग आत्म को, अपने 'स्व' को नहीं पहचानते हैं, आत्मा को झुठला देते हैं, नकार देते हैं और इसी अस्वीकार तले पूरा जीवन

विताते हैं उन्हें मृत्यु के पश्चात् उसी अन्धतम लोक यानि कि असुर्या नामक लोक में जाना पड़ता है अर्थात् गर्भवास करना पड़ता है, फिर से जन्म लेना पड़ता है।

इस प्रकार इस उपनिषद् में एक ओर ईश्वर को सर्वनिर्माता मानकर स्वयं को निमित्त मात्र बनकर जीवन जीने का इशारा करता है, तो दूसरी ओर आत्म को न भूलने को इंगित करता है। इसके बाद आत्म को निरुपित करने का तथ्य आता है कि 'वह' अचल है साथ ही मन से भी ज्यादा तीव्रगामी है। यह आत्म (ब्रह्म) सभी इंद्रियों से तेज भागने वाला है। इस उपनिषद् में आत्म/ब्रह्म को **'मातरिश्वा'** नाम से इंगित किया गया है, जो कि सभी कार्यकलापों को वहन करने वाला, उन्हें सम्बल देने वाला है। **'आत्म'** के ब्रह्म के गुणों को बताने के क्रम में यहाँ यह बताया गया है कि वह एक साथ, एक ही समय में भ्रमणशील है, साथ ही अभ्रमणशील भी। वह पास है और दूर भी। यहाँ उसे कई विशेषणों द्वारा इंगित किया गया है कि वह सर्वव्यापी, अशरीरी, सर्वज्ञ, स्वजन्मा और मन का शासक है। इस उपनिषद् में **विद्या** एवं **अविद्या** दोनों की बात की गई है उनके अलग-अलग किस्म के गुणों को बताया गया है साथ ही विद्या एवं अविद्या दोनों की उपासना को वर्जित किया गया है यहाँ यह साफ-साफ कहा गया है कि विद्या एवं अविद्या दोनों की या एक की उपासना करने वाले घने अंधकार में जाकर गिरते हैं साकार की प्रकृति की उपासना को भी यहाँ वर्जित माना गया है लेकिन विद्या एवं अविद्या को एक साथ जान लेने वाला, अविद्या को समझकर विद्या द्वारा अनुष्ठानित होकर मृत्यु को पार कर लेता है, वह मृत्यु को जीतकर अमृतत्व का उपभोग करता है यह स्वीकारोक्ति यहाँ है। इसमें सम्भूति एवं नाशवान् दोनों को भलीभाँति समझ कर अविनाशी तत्व प्राप्ति एवं अमृत तत्व के उपभोग की बात कही गई है। इस उपनिषद् के अंतिम श्लोकों में बड़े ही सुंदर उपमान आते हैं — ब्रह्म के मुख को सुवर्ण पात्र से टंगे होने की बात साथ ही सूर्य से पोषण करने वाले से प्रार्थना की। सुवर्णपात्र से टंगे हुए उस आत्म के मुख को अनावृत कर दिया जाए ताकि उपासक समझ सके, महसूस कर सके कि वह स्वयं ही ब्रह्मरूप है और अंतिम श्लोकों में किए गए सभी कर्मों को मन के द्वारा याद किए जाने की बात आती है और अग्नि से प्रार्थना कि पञ्चभौतिक शरीर के राख में परिवर्तित हो जाने पर वह उसे दिव्य पथ से चरम गंतव्य की ओर उन्मुख कर दे।

ईशावस्योपनिषद् की प्रमुख सूक्तियाँ-

- ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्चिज्जगत्यां जगत् ।
  तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् धनम् ।
- कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः ।
  एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।
- यस्तु सर्वाणि भूतानि - आत्मन्येवानुपश्यति ।
  सर्वभूतेषु चात्मानं ततो न विजुगुप्सते ।।
- अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् ।
- अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ।
- संभूतिं च विनाशं च यस्तद् वेदोभयं सह ।
  विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा संभूत्याऽमृतमश्नुते ।।
- यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद् विजानतः ।
  तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ।।
- पूषन्नेकर्षे यम सूर्य प्राजापत्य व्यूह-
  रश्मीन्समूह तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं
  तत्ते पश्यामि योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि॥
- क्रतो स्मर, कृतं स्मर ।
  अविद्यया- मृत्युं तीर्त्वा, **विद्यया** -अमृतमश्नुते।
  विनाशेन- मृत्युं तीर्त्वा, **सम्भूत्या**- अमृतमश्नुते।

2. कठोपनिषद्

कठोपनिषद कृष्ण **यजुर्वेदीय शाखा** के अन्तर्गत एक **उपनिषद है**। यह कृष्ण यजुर्वेद की 'कठ' शाखा से संवद्ध है । इसमें (2) अध्याय हैं और प्रत्येक अध्याय में तीन-तीन वल्लियां हैं । इसके रचियता वैदिक काल के ऋषियों को माना जाता है परन्तु मुख्यत **वेदव्यास** जी को कई उपनिषदों का लेखक माना जाता है।यह उपनिषद **आत्म-विषयक** आख्यायिका से आरम्भ होती है । प्रमुख रूप से **यम नचिकेता** के प्रश्न प्रतिप्रश्न के रुप में है । **वाजश्रवा** लौकिक कीर्ति की इच्छा से **विश्वजित** याग का अनुष्ठान करते हैं । याजक अपनी समग्र सम्पत्ति का दान कर दे यह इस यज्ञ की प्रमुख विधि है । इस विधि का अनुसरण करते हुए उसने अपनी सारी सम्पत्ति दान कर दी । वह निर्धन था इसलिए उसके पास कुछ गायें **पीतोदक** (जो जल पी चुकी हैं) **जग्धतृण** (जो घास खा चुकी हैं अर्थात जिनमें घास खाने की सामर्थ्य नहीं है) **दुग्धदोहा** (जिनका दूध दुह लिया गया है) **निरिन्द्रिय** (जिनकी प्रजनन शक्ति समाप्त हो गयी है) और दुर्बल थीं । पिता उन गायों को यदि दान करते हैं तो निश्चय ही पुण्य नहीं प्राप्त होगा , जिससे किया जा रहा यज्ञ विफल न हो वैसा मुझे करना चाहिए यह सोचकर उसका पुत्र नचिकेता अपने पिता से, **'मुझे किसे दोगे'** ऐसा दो तीन बार पूछता है । तब क्रोधित होकर पिता **'यम को दूंगा'** ऐसा बोला।

॥प्रथम अध्याय॥

प्रथम वल्ली- (मंत्र- 29,

- ❖ **सामान्य परिचय-**
- **दो मार्ग** - श्रेय (धीर), प्रेय (मन्द)

- गौतमवंशीय महर्षि 'अरुण' के पुत्र 'वाजश्रवा'/ 'उद्दालक' ने विश्वजित् यज्ञ किया था।
- 'उद्दालक' **'नवकृत्वोपदेश'** करता है,
- उद्दालक का पुत्र- **नचिकेता,**
- शिष्य और पुत्रों की तीन श्रेणियाँ- **उत्तम, मध्यम, अधम।**
- **नचिकेता के तीन वर-**

(1) पितृपरितोष (2) अग्निविद्या (3) आत्मविद्या मृत्युरहस्य।

- 'सूर्यपुत्र' **'वैवस्वतोदकम्'** प्रयोग हुआ है- यमराज के लिये।

कठोपनिषद् की प्रमुख सूक्तियाँ-

➢ सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिवाजायते पुनः- **नचिकेता।**

➢ येयं प्रेते विचिकित्सामनुष्येऽस्तीत्येके नायमस्तीतिचैके- **नचिकेता।**

➢ न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्यः- **नचिकेता ।**

द्वितीय वल्ली-

➢ अन्यच्छ्रेयोऽन्यद्रुतैवप्रेयः- **यम।**

❖ **अविद्या वालों का स्वरूप-**

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः,
स्वयं धीराः पण्डितमन्यमानाः,
दन्द्रम्यमाणाः परियन्तिमूढा,
अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः॥- **यम**

❖ **नचिकेता की बुद्धिप्रशंसा-**

नैषा तर्केण मतिरापनेया, प्रोक्तान्येनैव सुज्ञानाय श्रेष्ठ।- **यम।**

❖ **परमात्मा को जानने का फल-**

अध्यात्म योगाधिगमेन देवं,
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति-**यम।**

❖ **ब्रह्मतत्व वर्णन-**

"सर्वे वेदा यत् पदमामनन्ति,
तपांसि सर्वाणि च यद् वदन्ति।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति,
तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्"- **यम**

❖ **आत्मा स्वरूप वर्णन-**

"न जायते म्रियते वा विपश्चि,
न्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो,
न हन्यते हन्यमाने शरीरे"॥-**यम।**

➢ उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते- **यम।**

❖ **परमात्मा स्वरूप वर्णन-**

अणोरणीयान्महतो महीया-,
नात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम्।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको
धातुप्रसादान्महिमानमात्मनः-॥ **यम,**

❖ **परमात्मा की महिमा को जानने वाले पुरुष का स्वभाव-**

महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति- **यम।**

➢ मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे।

➢ नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो, न मेधया न बहुना श्रुतेन - **यम।**

➢ यस्य ब्रह्म च क्षत्रं च उभे भवत ओदनः।
मृत्युर्यस्योपसेचनं क इत्था वेद यत्र सः।।

ब्राह्मण क्षत्रिय- भोजन, **मृत्यु-** उपसेचन ।

तृतीय वल्ली-

मंत्र- (17) **पञ्चाग्नि-** गृहस्थ।

इस वल्ली में परमात्मा को प्राप्त करने के लिये उचित साधनों का वर्णन किया गया है।

➢ ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्धे।

➢ आत्मानं रथिनं विद्धिः शरीरं रथमेव तु
बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।। (**प्रग्रह-** लगान)
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।। (**हयान-** घोड़े)

❖ **इन्द्रियों को असत्- मार्ग से रोककर भगवान् की ओर लगाने का प्रकार-**

इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः
मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः।।
महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् पुरुषः परः।
पुरुषान्न परं किंचित्सा काष्ठा सा परा गतिः।

❖ **परमात्मा के स्वरूप का वर्णन तथा उसकी प्राप्ति का महत्व-**

"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति"।

➢ अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययं
तथारसं नित्यमगन्धवच्च यत्।
आनाद्यनन्तं महतः परं ध्रुवं,
निचाय्य तन्मृत्युमुखात् प्रमुच्यते॥

(**ध्रुवं-**सत्य तक, **निचाय्य-** जानकर) ।

➢ एतद्धयेवाक्षरं ब्रह्म एतद्धयेवाक्षरं परम्।

➢ एतदालम्बनं श्रेष्ठम्, एतदालम्बनं परम्।

॥द्वितीय अध्याय॥

प्रथम वल्ली-

मंत्र- (15)

- ❖ **परमेश्वर सभी आत्मा में विद्यमान है कोई विरला ही उसे देख सकता है-**

"पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयंभू-
तस्मात्पराङ्पश्यति नान्तरात्मन्।
कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्ष-
दावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्।"

- ❖ **परब्रह्म वर्णन-**

"य इमं मध्वदं वेद आत्मानं जीवमन्तिकात्।
(मध्वदं- कर्मफलदाता)

- ➢ ईशानं भूतभव्यस्य न ततो विजुगुप्सते।
- ➢ यः पूर्वं तपसो जातमद्भ्यः पूर्वमजायत।
- ➢ या प्राणेन सम्भवत्यदितिर्देवतामयी।
- ❖ **काष्ठ में छिपी अग्नि के समान ब्रह्म छिपा हुआ है-**

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भ इव सुभृतो गर्भिणीभिः।

- ➢ यतश्चोदेति सूर्योऽस्तं यत्र च गच्छति।
- ❖ **ब्रह्म सर्वत्र है-**

यदेवेहं तदमुत्र यदमुत्र तदन्विह।

- ❖ **शुद्ध मन से परमात्मा प्राप्त करने योग्य है-**

मनसैवेदमाप्तव्यं नेह नानास्ति किञ्चन।

- ➢ अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषो मध्ये आत्मनि तिष्ठति।
- ➢ यथोदकं दुर्गे वृष्टं पर्वतेषु विधावति।
एवं धर्मान् पृथक् पश्यंस्तानेवानुविधावति।।
- ➢ यथोदकं शुद्धे शुद्धमासिक्तं तादृगेव भवति।
एवं मुनेर्विजानत आत्मा भवति गौतम।।
- ➢ महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति।

द्वितीय वल्ली- मंत्र- 15

- ❖ **ब्रह्म का सरल शरीर एकादश द्वार वाला-**

पुरमेकादशद्वारमजस्यावक्रचेतसः।

- ➢ अस्य विस्रंसमानस्य शरीरस्थस्य देहिनः।
देहाद्विमुच्यमानस्य किमत्र परिशिष्यते।।
- ➢ योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः।
- ❖ **परब्रह्म की व्यापकता और निर्लेपता वर्णन-**

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो।
रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव।
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च।।

(इसी प्रकार वायु और सूर्य का भी वर्णन है।)

- ➢ एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा,
एकं रूपं बहुधा यः करोति।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा-
स्तेषां सुखं शाश्वते नेतरेषाम्।।
- ➢ नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनाना-
मिको बहूनां यो विदधाति कामान्।
- ➢ न तत्र सूर्यो भाति न भाति चन्द्रतारकं,
नेना विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः।
तमेव भान्तमनुभाति सर्वं
तस्य भासा सर्वमिदं विभाति॥

तृतीय वल्ली- (मंत्र- 18)

- ➢ ऊर्ध्वमूलोऽवाक्शाख एषोऽश्वत्थः सनातनः।
- ➢ तदेवं शुक्रं तद् ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते।
- ➢ भयादस्याग्निस्तपति भयात् तपति सूर्यः।
भयादिन्द्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पञ्चमः॥
- ➢ यथाऽऽदर्शे तथाऽऽत्मनि यथा स्वप्ने तथा पितृलोके। यथाप्सु परीव ददृशे तथा गन्धर्वलोके छायातपयोरिव ब्रह्मलोके।
- ➢ न संदृशे तिष्ठति रूपमस्य, न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।
- ❖ **योगधारणा से मन और इन्द्रियों को रोककर परमात्मा को प्राप्त करने का दूसरा साधन-**

यदापञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।
बुद्धिश्च न विचेष्टति तामाहुः परमां गतिम्।।

- ➢ नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा।
- ➢ अस्तीत्येवोपलब्धव्यस्तत्त्वभावेन चोभयोः।
- ❖ **संशयरहित दृढनिश्चय महिमा-**

यदा सर्वे प्रभिद्यन्ते हृदयस्येह ग्रन्थयः।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्येतावद्ध्यनुशासनम्।।

- ❖ **मरने के बाद जीवात्मागति-**

शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभिनिः सृतैका।
(हृदय की 101 नाडियाँ हैं, जिनमें एक सुषुम्ना परमात्मा में तथा 100 नाना योनियों में हैं।)

- ➢ अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा
सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः।
तं स्वाच्छरीरात्प्रवृहेन्मुञ्जादिवेषीकां धैर्येण
तं विद्याच्छुक्रममृतं विद्याच्छुक्रममृतमिति।।
- ➢ योगो हि प्रभवाप्ययौ।
- ➢ स्वर्गे लोके न भयं किञ्चिनास्ति।
- ➢ यदा सर्वे प्रमुच्यन्ते कामा येऽस्य हृदि स्थिताः।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते।।

3. केनोपनिषद्

केनोपनिषद **सामवेदीय शाखा** के अन्तर्गत एक उपनिषद है। इसमें 4 खंड हैं । प्रथम दो खंड पद्यात्मक हैं और शेष दो गद्यात्मक हैं। इसका संबन्ध सामवेद से है । केनोपनिषद् को **"तलवकार"** और

"ब्राह्मणोपनिषद" भी कहते हैं। तलवकार को **"जैमिनीय-उपनिषद्"** भी कहते हैं। इसके रचियता वैदिक काल के ऋषियों को माना जाता है परन्तु मुख्यतः **वेदव्यास** जी को कई उपनिषदों का लेखक माना जाता है। सामवेदीय **'तलवकार ब्राह्मण'** के **नौवें अध्याय** में इस उपनिषद का उल्लेख है। यह एक महत्त्वपूर्ण उपनिषद है। इसमें **'केन'** (किसके द्वारा) का विवेचन होने से इसे **'केनोपनिषद'** कहा गया है। **इसके चार खण्ड** हैं। **प्रथम** और **द्वितीय खण्ड** में **गुरु-शिष्य** की **संवाद-परम्परा** द्वारा उस (केन) प्रेरक सत्ता की विशेषताओं, उसकी गूढ़ अनुभूतियों आदि पर प्रकाश डाला गया है। **तीसरे** और **चौथे खण्ड** में देवताओं में अभिमान तथा उसके मान-मर्दन के लिए **'यज्ञ-रूप'** में ब्राह्मी-चेतना के प्रकट होने का उपाख्यान है। अन्त में **उमा देवी** द्वारा प्रकट होकर देवों के लिए **'ब्रह्मतत्त्व'** का उल्लेख किया गया है तथा ब्रह्म की उपासना का ढंग समझाया गया है। मनुष्य को 'श्रेय' मार्ग की ओर प्रेरित करना, इस उपनिषद का लक्ष्य हैं।

प्रथम खण्ड वह कौन है? इस खण्ड में **'ब्रह्म-चेतना'** के प्रति शिष्य अपने गुरु के सम्मुख अपनी जिज्ञासा प्रकट करता है। वह अपने मुख से प्रश्न करता है कि वह कौन है, जो हमें परमात्मा के विविध रहस्यों को जानने के लिए प्रेरित करता है? ज्ञान-विज्ञान तथा हमारी आत्मा का संचालन करने वाला वह कौन है?

'केनेषितं पतति प्रेषितं मनः केन प्राणः प्रथमं प्रैति युक्तः।
केनेषितां वाचमिमां वदन्ति चक्षुः श्रोत्रं कः उ देवो युनक्ति' ॥1॥

वह कौन है, जो हमारी वाणी में, कानों में और नेत्रों में निवास करता है और हमें बोलने, सुनने तथा देखने की शक्ति प्रदान करता है? **'तस्माद्वा एते देवा अतितरामिवान्यान्देवान्यदग्निर्वायुरिन्द्रस्तेन ह्येनन्नेदिष्ठं पस्पृशुस्ते ह्येनत्प्रथमो विदांचकार ब्रह्मेति'**॥ शिष्य के प्रश्नों का उत्तर देते हुए गुरु बताता है कि जो साधक मन, प्राण, वाणी, आंख, कान आदि में चेतना-शक्ति भरने वाले 'ब्रह्म' को जान लेता है, वह जीवन्मुक्त होकर अमर हो जाता है तथा आवागमन के चक्र से छूट जाता है। वह महान् चेतनतत्त्व (ब्रह्म) वाक् का भी वाक् है, प्राण-शक्ति का भी प्राण है, वह हमारे जीवन का आधार है, वह चक्षु का भी चक्षु है, वह सर्वशक्तिमान है और श्रवण-शक्ति का भी मूल आधार है। हमारा मन उसी की महत्ता से मनन कर पाता है। उसे ही **'ब्रह्म'** समझना चाहिए। उसे आंखों से और कानों से न तो देखा जा सकता है, न सुना जा सकता है।

❖ **सामान्य परिचय-**

- **खण्ड**= 4, **सम्पूर्ण मन्त्र** =34,
- **प्रथमखण्ड**- 8 मन्त्र, **द्वितीय**- 13, **तृतीय**- 12, **चतुर्थ**- 9
- **शान्तिपाठ**- आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणचक्षुः श्रोत्रमयो बलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि।
- इसमें **'हैमवती उमा'** उपाख्यान वर्णित है।
- यक्ष के अन्तर्धान होने पर इन्द्र 'हैमवती उमा' के पास जाते हैं।

केनोपनिषद् की प्रमुख सूक्तियाँ-

➢ केनेषितं पतितं प्रेषितं मनः।
➢ श्रोत्रस्य श्रोत्रं मनसो..।
➢ यदि मन्यसे सुवेदेति दभ्रमेवापि।
➢ यदस्य त्वं वेत्थ ब्रह्मणारूपम्।
➢ न तत्र चक्षुर्गच्छति।
➢ प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति।

❖ **ब्रह्मतत्व का आधिदैविक द्वारा संकेत-**
"तस्यैष आदेशो (यदेतद् विद्युतो व्यद्युतदा) इतीन्न्यमीमिषदा इत्यधिदैवतम्"।

❖ **ब्रह्मतत्व का आध्यात्मिक द्वारा संकेत -**
"अथाध्यात्मं(यदेतद्गच्छतीव च) मनोऽनेनचैतदुपस्मरत्यभीक्ष्णं संकल्पः।

❖ **ब्रह्म प्राप्ति के लिए प्रधान-साधन-**
"तस्यै तपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदाः सर्वाङ्गानि सत्यमायतनम्"।

➢ प्रतिवोधविदितं मतममृतत्वं हि विन्दते।
आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम्।।
➢ ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिज्ञे।
➢ सर्वाणि भूतानि संवाञ्छन्ति।

4. बृहदारण्यकोपनिषद्

बृहदारण्यक उपनिषत् **शुक्ल यजुर्वेद** से जुड़ा एक उपनिषद है। यह शतपथ ब्राह्मण के 14वें कांड का अन्तिम भाग है । इसमें 6 अध्याय हैं और उपखंडों (ब्राह्मणों) में विभक्त हैं । बृहदारण्यक उपनिषद् **अद्वैत वेदांत** और **संन्यासनिष्ठा** का प्रतिपादक है। उपनिषदों में सर्वाधिक बृहदाकार इसके **3 काण्ड (मधुकाण्ड, मुनिकाण्ड, खिलकाण्ड), 6 अध्याय, 47 ब्राह्मण** और प्रलंबित **435** पदों का शांति पाठ **'ॐ पूर्णमदः'** इत्यादि है और **ब्रह्मा** इसकी संप्रदाय परंपरा के प्रवर्तक हैं। यह अति प्राचीन है और इसमें जीव, ब्रह्माण्ड और ब्रह्म (ईश्वर) के बारे में कई बाते कहीं गई है। दार्शनिक रूप से महत्वपूर्ण इस उपनिषद पर आदि शंकराचार्य ने भी टीका लिखी थी। यह शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ का एक खंड है और इसको शतपथ ब्राह्मण के पाठ में सम्मिलित किया जाता है। **यजुर्वेद** के प्रसिद्ध **पुरुष सूक्त** के अतिरिक्त इसमें

अश्वमेध, असतो मा सद्गमय, नेति नेति जैसे विषय हैं। इसमें **ऋषि याज्ञवल्क्य** और **मैत्रेयी** का संवाद है जो अत्यन्त क्रमबद्ध और युक्तिपूर्ण है। इसके नाम का अर्थ **'बृहद ज्ञान वाला'** या 'घने जंगलों में लिखा गया' उपनिषद है। इसमें तत्त्वज्ञान और तदुपयोगी कर्म तथा उपासनाओं का बड़ा ही सुन्दर वर्णन है।

इस उपनिषद् का **ब्रह्मनिरूपणात्मक** अधिकांश उन व्याख्याओं का समुच्चय है जिनसे **अजातशत्रु** ने **गार्ग्य बालाकि** की, **जैवलि प्रवाहण** ने **श्वेतकेतु** की, **याज्ञवल्क्य** ने **मैत्रेयी** और **जनक** की तथा जनक के यज्ञ में समवेत **गार्गी** और **जारत्कारव आर्तभाग** इत्यादि आठ मनीषियों की ब्रह्मजिज्ञासा निवृत्त की थी।

सृष्टि आरंभ-

इस उपनिषद् के अनुसार सृष्टि के पहले केवल ब्रह्म था। वह **अव्याकृत** था। उसने अहंकार किया जिससे उसने व्याकृत सृष्टि उत्पन्न की; दो पैरवाले, चार पैरवाले, पुर उसने बनाए और उनमें पक्षी बनकर पैठ गया। उसने अपनी माया से बहुत रूप धारण किए और इस प्रकार नाना रूप से भासमान ब्रह्माण्ड की रचना करके उसमें नखाग्र से शिक्षा तक अनुप्रविष्ट हो गया। शरीर में जो आत्मा है वही ब्रह्मांड में व्याप्त है और हमें जो नाना प्रकार का भान होता है वह ब्रह्म रूप है। पृथ्वी, जल, और अग्नि उसी के मूर्त एवं वायु तथा आकाश अमूर्त रूप हैं। स्त्री, संतान अथवा जिस किसी से मनुष्य प्रेम करता है वह वस्तुतः अपने लिए करता है। अस्तु, यह आत्मा क्या है, इसे ढूँढना चाहिए, ज्ञानियों से इसके विषय में सुनना, इसका मनन करना और समाधि में साक्षात्कार करना ही परम पुरुषार्थ है। 'चक्षुर्वै सत्यम्' अर्थात् आँख देखी बात सत्य मानने की लोकधारणा के विचार से जगत् सत्य है, परंतु वह प्रत्यक्षतः अनित्य और परिवर्तनशील है और निश्चय ही उसके मूल में स्थित तत्व नित्य और अविकारी है। अतएव मूल तत्व को 'सत्य का सत्य' अथवा अमृत कहते हैं। नाशवान् **'सत्य'** से अमृत ढँका हुआ है। अज्ञान अर्थात् आत्मस्वरूप को न जानने के कारण मनुष्य संसार के नाना प्रकार के व्यापारों में लिपटा हुआ सांसारिक वित्त आदि नाशवान पदार्थों से अक्षय सुख की व्यर्थ आशा करता है। कामनामय होने से जिस उद्देश्य की वह कामना करता है तद्रूप हो जाता है, पुण्य कर्मों से पुण्यवान् और पाप कर्मों से पापी होता और मृत्यु काल में उसके प्राण उत्क्रमण करके कर्मानुसार **मृत्युलोक, पितृलोक** अथवा **देवलोक** प्राप्त करते हैं। जिस देवता की वह उपासना करता है मानो उसी का पशु हो जाता है। यह अज्ञान आत्मा की **'महती विनष्टि'** (सब से बड़ी क्षति) है।

अद्वैत-

आत्मा और ब्रह्म एक हैं। ब्रह्म के अतिरिक्त कुछ नहीं है। जिसे नानात्व दिखता है वह मृत्यु से मृत्यु की ओर बढ़ता है। आत्मा महान्, अनंत, अपार, अविनाशी, अनुच्छित्तिधर्मा और विज्ञानधन है। नमक की डली पानी में घुल जाने पर एकरस हो जाने से जैसे नमक और पानी का अभेद हो जाता है, **ब्रह्मात्मैक्य तद्रूप अभेदात्मक है।** जिस समय साधक को यह अपरोक्षानुभूति हो जाती है कि मैं ब्रह्म हूँ और भूतात्माएँ और मैं एक हूँ उसके द्रष्टा और दृष्टि, ज्ञाता और ज्ञेय इत्यादि भेद विलीन हो जाते हैं, और वह **'ब्रह्म भवतिय एवं वेद'**- ब्रह्मभूत हो जाता है। उसके प्राण उत्क्रमण नहीं करते, वह यहीं जीवन्मुक्त हो जाता है। वह विधि निषेध के परे है। उसे संन्यास लेकर **भैक्ष्यचर्या** करनी चाहिए। यह ज्ञान की परमावधि, आत्मा की परम गति और परमानंद है जिसका अंश प्राणियों का जीवनस्रोत है। यह शोक-मोह-रहित, विज्वर और विलक्षण आनंद की स्थिति है जिससे ब्रह्म को **'विज्ञानमानंदंब्रह्म'** कहा गया है। यह स्वरूप मन और इंद्रियों के अगोचर और केवल समाधि में प्रत्यक्षानुभूति का विषय एवं नामरूप से परे होने के कारण, ब्रह्म का **'नेति नेति'** शब्दों द्वारा अंतिम निर्देश है। आत्मसाक्षात्कार के लिए वेदानुबंधन, यज्ञ, दान और तपोपवासादि से चित्तशुद्धि करके सूर्य, चंद्र, विद्युत्, आकाश, वायु, जल इत्यादि अथवा प्राणरूप से ब्रह्म की उपासना का निर्देश करते हुए आत्मचिंतन सर्वश्रेष्ठ उपासना बतलाई गई है।

शान्ति मन्त्र- इस उपनिषद का शान्तिपाठ निम्न है: निम्नलिखित श्लोक बृहदारण्यक उपनिषद के आरम्भ और अन्त में आता है-

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

पवमान मन्त्र इस उपनिषद् का प्रसिद्ध श्लोक निम्नलिखित है

ॐ असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मामृतं गमय ॥ ॐ शान्ति शान्ति शान्तिः ॥

❖ **सामान्य परिचय-**

- **शुक्ल यजुर्वेद**''-काण्व शाखा '' भाग- 3,
  1. मधुकाण्ड-2,
  2. याज्ञवल्क्य काण्ड-2,
  3. खिल काण्ड-2,
- प्रत्येक में दो--दो अध्याय कुल छः अध्याय प्रत्येक अध्याय ब्राह्मणों में विभाजित है-

प्रथम अध्याय- 6 ब्राह्मण

द्वितीय अध्याय - 6 ब्राह्मण
तृतीय अध्याय - 9 ब्राह्मण
चतुर्थ अध्याय - 6 ब्राह्मण
पञ्चम अध्याय - 15 ब्राह्मण
षष्ठ अध्याय - 15 ब्राह्मण

मुख्य संवाद - मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य, गार्ग्य-अजातशत्रु, याज्ञवल्क्य-जनक, वाचक्नवी-याज्ञवल्क्य, याज्ञवल्क्य-गार्गी, (वचक्नुकी पुत्री=गार्गी) कात्यायनी- मैत्रेयी, चैकितानेय ब्रह्मदत्त आख्यायिका ।

इसमें जीवात्मा की छः अवस्थाओं का वर्णन हैं-
(1) जाग्रत (2) स्वप्न (3) सुषुप्ति (4) जन्म (5) मरण (6) मोक्ष।
अश्व के अवयवों में कालादि सृष्टि- "उषा वा अश्वस्य मेध्यस्य शिरः । **सूर्यश्चक्षुर्वातः प्राणो व्यात्तमग्निर्वैश्वानरः संवत्सर आत्माश्वस्य मेध्यस्य । द्यौः पृष्ठमन्तरिक्षमुदरं पृथिवी पाजस्यं दिशः पार्श्वे अवान्तरदिशः पर्शव ऋतवोऽङ्गानि मासाश्चार्धमासाश्च पर्वाण्यहोरात्राणि प्रतिष्ठा नक्षत्राण्यस्थीनि नभो मांसानि । ऊवध्यं सिकताः सिन्धवो गुदा यकृच्च क्लोमानश्च पर्वता ओषधयश्च वनस्पतयश्च लोमान्युद्यन्पूर्वार्धो निम्लोचञ्जघनार्धो यद्विजृम्भते तद्विद्योतते यद्विधूनुते तत्स्तनयति यन्मेहति तद्वर्षति वागेवास्य वाक् ॥ 1 ॥**

यज्ञ के योग्य घोड़े के अङ्ग वर्णन-

- **शिर**- उषा, **चक्षु**- सूर्य, **प्राण**- वायु, **मुख**- अग्नि वैश्वानर, **शरीर**- वर्ष, **आत्मा** -संवत्सर, **पीठ**-द्यौ, **पेट**-अन्तरिक्ष, **छाती**- पृथिवी, **अंग**- ऋतु, **पर्व**- मास,अर्धमास, **लोम**-**औषधि**-वनस्पति, **पाद**- पृथ्वी,
- प्रजापति के दो पुत्र = (1) देव (2) असुर।
- याज्ञवल्क्य की दो पत्नियां = (1) मैत्रेयी (ब्रह्मवादिनी) (2) कात्यायनी (सामान्य)।

बृहदारण्यकोपनिषद् की प्रमुख सूक्तियाँ-

- अशनाया हि मृत्युः।
- सोऽकामयत भूयसा यज्ञेन भूयो यजेयेति।
- स वा एषा देवता दूर्नाम दूरं ह्यस्या मृत्युर्दूरं ह वा अस्मान्मृत्युर्भवति स एवं वेद।

❖ **प्राण से बृहस्पति की उपपत्ति-**
एष उ एव बृहस्पतिर्वाग्वै बृहती तस्या एष पतिस्तस्मादु बृहस्पतिः।

- आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यो- **(याज्ञवल्क्य>मैत्रेयी)**
- आत्मा दृष्टे श्रुते मते विज्ञाते इदं सर्वं विदितम्।
- अमृतत्वस्य तु नाऽऽशास्ति वित्तेन। **(याज्ञवल्क्य)**
- आत्मनस्तु कामाय जाया प्रिया भवति। **(याज्ञवल्क्य)**
- दुन्दुभेर्गृहणेन.......शब्दो गृहीतः। **(याज्ञवल्क्य)**
- असतो मा सद् गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योर्माऽमृतंगमय।

❖ **ब्रह्म एक है, मन से ही दृश्य-**
मनसैवानुद्रष्टव्यं नेह नानास्ति किंचन।

❖ **कर्मफल अवश्यंभावी-**
यथाकारी यथाचारी तथा भवति। ...... पुण्यः पुण्येन कर्मणा भवति, पापः पापेन।

❖ **मन, वाणी प्राण (3) सार-**
मनो वाचं प्राणं तन्यात्मने कुरुत।

❖ **आत्मा में ब्रह्म का निवास-**
आत्मनि पुरुषः एतमेवाहं ब्रह्मोपासे।

❖ **आत्मा ब्रह्म एक-**
योऽमात्मा-इदम् अमृतम्, इदं ब्रह्म, इदं सर्वम्।

❖ **आत्मा ज्योतिर्मय-**
कतम आत्मा योऽयं विज्ञानमयः..... हृदि अन्तर्ज्योति पुरुषः।

❖ **ब्रह्म में संसार ओतप्रोत है-**
अक्षरे गार्गि आकाश ओतश्च प्रोतश्च।

❖ **प्रजापति का देव मनुष्य असुरों को द द द का उपदेश-**
देवता- दाम्यत। दम (इन्द्रिय संयम)
मनुष्य- दत्त (दान करो)
असुर- दयध्वम् (दया करो)

- विज्ञानमानन्दं ब्रह्म।
- अहं ब्रह्मास्मि।
- नेति नेति।
- ॐ खं ब्रह्म।
- पूर्णमदः पूर्णमिदं..।
- स एष मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः।
- आत्मैवेदमग्र आसीत्।
- विज्ञातसमरे केन विजानीयात्।
- आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति-(अजात->गार्ग्य)।
- विज्ञानमानन्दं ब्रह्म- (शाकल्य>याज्ञवल्क्य)।
- अमृतश्च स्थितश्च यच्च सच्च त्यच्च। उत्तब्धं वागेव गीथोच्च गीथा चेति सउद्गीथः।
- वाचं धेनुमुपासीत।
- अत्रायं पुरुषः स्वयं ज्योतिरिति।

5. तैत्तिरीयोपनिषद्

तैत्तिरीयोपनिषद् **कृष्ण यजुर्वेदीय शाखा** के अन्तर्गत एक उपनिषद है। यह अत्यंत महत्वपूर्ण प्राचीनतम दस उपनिषदों में से एक है। यह **शिक्षावल्ली, ब्रह्मानंदवल्ली** और **भृगुवल्ली** इन तीन खंडों में विभक्त है । **शिक्षा वल्ली** में **12 अनुवाक** और **25 मंत्र**, **ब्रह्मानंदवल्ली** में **9 अनुवाक** और **13 मंत्र** तथा **भृगुवल्ली** में **19 अनुवाक** और **15 मंत्र** हैं- कुल **53 मंत्र** हैं जो **40 अनुवाकों** में व्यवस्थित है। **शिक्षावल्ली** को **सांहिती उपनिषद्** एवं **ब्रह्मानंदवल्ली** और **भृगुवल्ली** को वरुण के प्रवर्तक होने से **वारुणी उपनिषद्** या **विद्या** भी कहते हैं। तैत्तरीय उपनिषद् कृष्ण यजुर्वेदीय **तैत्तरीय आरण्यक** का **7, 8, 9 वाँ प्रपाठक** है।

इस उपनिषद् के बहुत से भाष्यों, टीकाओं और वृत्तियों में **शांकरभाष्य** प्रधान है जिस पर **आनंद तीर्थ** और **रंगरामानुज** की टीकाएँ प्रसिद्ध हैं एवं **सायणाचार्य** और **आनंदतीर्थ** के पृथक् भाष्य भी सुंदर हैं। ऐसा माना जाता है कि तैत्तिरीय संहिता व तैत्तिरीय उपनिषद् की रचना वर्तमान में हरियाणा के कैथल जिले में स्थित गाँव तितरम के आसपास हुई थी। **वारुणी उपनिषद्** में विशुद्ध ब्रह्मज्ञान का निरूपण है जिसकी उपलब्धि के लिये प्रथम शिक्षावल्ली में साधनरूप में ऋत और सत्य, स्वाध्याय और प्रवचन, शम और दम, अग्निहोत्र, अतिथिसेवा श्रद्धामय दान, मातापिता और गुरुजन सेवा और प्रजोत्पादन इत्यादि कर्मानुष्ठान की शिक्षा प्रधानतया दी गई है। इस में **त्रिशंकु ऋषि** के इस मत का समावेश है कि संसाररूपी वृक्ष का प्रेरक ब्रह्म है तथा रथीतर के पुत्र सत्यवचा के सत्यप्रधान, **पौरुशिष्ट** के तपःप्रधान एवं मुद्गलपुत्र नाक के स्वाध्याय प्रवचनात्मक तप विषयक मतों का समर्थन हुआ है। **11वें** अनुवाक मे समावर्तन संस्कार के अवसर पर सत्य भाषण, गुरुजनों के सत्याचरण के अनुकरण और असदाचरण के परित्याग इत्यादि नैतिक धर्मों की शिष्य को आचार्य द्वारा दी गई शिक्षाएँ शाश्वत मूल्य रखती हैं।

ब्रह्मानंद और **भृगुवल्लियों** का आरंभ ब्रह्मविद्या के सारभूत **'ब्रह्मविदाप्नोति परम्'** मंत्र से होता है। ब्रह्म का लक्षण सत्य, ज्ञान और अनंत स्वरूप बतलाकर उसे मन और वाणी से परे अचिन्त्य कहा गया है। इस निर्गुण ब्रह्म का बोध उसके अन्न, प्राण, मन, विज्ञान और आनंद इत्यादि सगुण प्रतीकों के क्रमशः चिंतन द्वारा वरुण ने भृगु को करा दिया है। इस उपनिषद् के मत में ब्रह्म से ही नामरूपात्मक सृष्टि की उत्पत्ति हुई है और उसी के आधार से उसकी स्थिति है तथा उसी में वह अंत में विलीन हो जाती है। प्रजोत्पत्ति द्वारा बहुत होने की अपनी ईश्वरीय इच्छा से सृष्टि की रचना कर ब्रह्म उसमें जीवरूप से अनुप्रविष्ट होता है। ब्रह्मानंदवल्ली के सप्तम अनुवाक में जगत् की उत्पत्ति असत् से बतलाई गई है, किंतु **'असत्'** इस उपनिषद् का पारिभाषिक शब्द है जो अभावसूचक न होकर अव्याकृत ब्रह्म का बोधक है, एवं जगत् को सत् नाम देकर उसे ब्रह्म का व्याकृत रूप बतलाया है। ब्रह्म रस अथवा आनंद स्वरूप हैं। ब्रह्मा से लेकर समस्त सृष्टि पर्यंत जितना आनंद है उससे निरतिशय आनंद को वह श्रोत्रिय प्राप्त कर लेता है जिसकी समस्त कामनाएँ उपहत हो गई हैं और वह अभय हो जाता है।

इसमें 3 वल्लियां हैं-

(1) शिक्षा वल्ली- 12 अनुवाक,

(2) ब्रह्मानन्द वल्ली- 9 अनुवाक

(3) भृगु वल्ली - 10 अनुवाक,

1. शिक्षा वल्ली

द्वितीय अनुवाक-

शिक्षा के अंग- (6)

भाषाविज्ञान- शिक्षावल्ली में शिक्षा की व्याख्या करते हुए भाषाविज्ञान से संबद्ध 6 शब्द दिए हैं - **"वर्णः, स्वरः, मात्रा, बलम्, साम (सन्धि), सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः"**

1. **वर्ण** - वर्णमाला,
2. **स्वर** - तीन स्वर, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित ।
3. **मात्रा** - तीन मात्रा - ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत ।
4. **बल** - दो प्रकार के प्रयत्न, **बाह्य** और **आभ्यन्तर** । वर्णोंचारण में आवश्यक प्रयत्न को बल कहते हैं।
5. **साम** - **सम** सुस्पष्ट और निर्दोष उच्चारण ।
6. **संतान** - संहिता, पदों का सानिध्य।

तृतीय अनुवाक-

वर्णों की सन्धि = **"संहिता"** कहलाती है। यह जब व्यापक रूप धारण करके लोक आदि को अपना विषय बनाती है तब उसे **''महासंहिता"** कहते हैं। संहिता के पाँच प्रकार-

(1) स्वर (2) व्यञ्जन (3) स्वादि (4) विसर्ग (5) अनुस्वार।

महासंहिता/महासंधि के पांच आश्रय-

(1) लोक (2) ज्योति (3) विद्या (4) प्रजा (5) आत्मा।

1. **लोकसंहिता** - पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तररूपम्। आकाशः संधिः। वायुः संधानम्।
2. **अधिज्यौतिषम्-** अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः संधिः। वैद्युतः संधानम्।
3. **अधिविद्यम्-** आचार्यः पूर्वरूपम्। अन्तेवास्युत्तररूपम्। विद्या संधिः। प्रवचनं संधानं।
4. **अधिप्रजम्-** माता पूर्वरूपम्। पितोत्तररूपम्। प्रजा संधिः। प्रजननं संधानं।

5. अध्यात्मम्- अधरा हनुः पूर्वरूपम्। उत्तरा हनुः उत्तररूपम्। वाक् संधिः। जिह्वा संधानम्।

- सह नौ ब्रह्मवर्चसम्,
- श्रुतं मे गोपाय । (अनुवाक-4)

पञ्चम अनुवाक-

- **"भूर्भुवः स्वरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः।"**

चौथी व्याहृति- **महः** (ब्रह्म) इसको सर्वप्रथम (महाचमस) के पुत्र ने जाना था।

भूः- पृथिवी लोक, अग्नि ऋग्वेद प्राण।

भुवः- अन्तरिक्ष लोक, वायु, सामवेद, अपान।

स्वः- स्वर्ग लोक, सूर्य, यजुर्वेद, व्यान,

महः- आदित्य, चन्द्रमा, ब्रह्म, अन्नम् इस नाम से 'ह' प्रसिद्ध है।

षष्ठ अनुवाक-

षष्ठ अनुवाक में **'सुषुम्ना'** नाड़ी का वर्णन है।

- आकाशशरीरं ब्रह्म।

सप्तम अनुवाक-

पांच प्रकार की पङ्क्तियां-

लोकों की पङ्क्ति	पृथिवी	अन्तरिक्ष	द्यौः	दिशः	अवान्तर-दिशः
ज्योतिसमुदायकीपङ्क्ति	अग्नि	वायु	आदित्य	चन्द्रमा	नक्षत्राणि
स्थूल पदार्थों की पङ्क्ति	आपः	ओषधयः	वनस्पतयः	आकाशः	आत्मा
प्राणों की पङ्क्ति	प्राण	व्यान	अपान	उदान	समान
करणों की पङ्क्ति	चक्षु	श्रोत्र	मन	वाक्	त्वक्
धातुओं की पङ्क्ति	चर्म	मांस	स्नावा	अस्थि	मज्जा

अष्टम अनुवाक-

- ओमिति ब्रह्म।
- ओमितीदं सर्वम्।

नवम अनुवाक-

- सत्यमिति सत्यवचा रथीतरः। रथीतर का पुत्र-**सत्यवचा ऋषि**
- तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टिः।पौरुशिष्टि का पुत्र-**तपोनित्य ऋषि।**
- स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाको मौद्गल्यः। मुद्गल के पुत्र - **नाक मुनि।**

एकादश अनुवाक-

- सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
- मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव।
- यान्यास्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि।

द्वादश अनुवाक-

- त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
- शन्नो मित्रः शं वरुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं नो इन्द्रो बृहस्पतिः।

2. ब्रह्मानन्दवल्ली

प्रथम अनुवाक-

- सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म।
- यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्
- तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः।
- ब्रह्मविद् आप्नोति परम्।

अनुवाक-2,3,4,5,6-

❖ **अन्न को सर्वौषध कहा गया है-**

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते।

पञ्चकोश-अन्नमय- अन्न समस्त प्राणियों की उत्पत्ति आदि का कारण है, इसी पर सबकुछ निर्भर है ,अत: यही सबसे श्रेष्ठ है । इस अन्नरसमय मनुष्यशरीर से भिन्न उसके भीतर रहने वाला प्राणमय पुरुष है। उस प्राणमय पुरुष का **प्राण**- शिरः, **व्यान**- दक्षिण पक्षः, **अपान**- उत्तर पक्षः, **आकाश**- आत्मा, **पृथिवी**- पुच्छं प्रतिष्ठा।

	शिरः	दक्षिणपक्षः	उत्तरपक्षः	आत्माः	पुंच्छप्रतिष्ठा
प्राणमय	प्राणः	व्यानः	अपानः	आकाशः	पृथिवीः
मनोमय	यजुः	ऋग्	साम	आदेशः	अथर्वाङ्गिरस
विज्ञानय	श्रद्धा	ऋतं	सत्यं	योगः	महः
आनन्दमय	प्रियं	मोदः	प्रमोदः	आनन्दः	ब्रह्मः

ये पाँचों ब्रह्म के रूप है।

- तस्यैष एव शरीर आत्मा यः पूर्वस्य।

तस्य- आनन्दमय, **पूर्वस्य**- विज्ञानमय। **आनन्दमय**=आत्मा

- विज्ञानं यज्ञं तनुते।
- विज्ञानं देवाः सर्वे।
- ब्रह्म ज्येष्ठमुपासते।

सप्तम अनुवाक-

- असद्वा इदमग्र आसीत्। ततो वै सदजायत।
- रसो वै सः।
- युवा स्यात् साधुयुवा।

अष्टम् अनुवाक-

- भीषास्माद्वातः पवते । भीषोदेति सूर्यः। भीषास्माद् अग्निश्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पञ्चमः।
- ये ते शतं मानुषा आनन्दाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामृत्।
- स यश्चायं पुरुषे यश्चासावादित्ये स एकः।

3. भृगुवल्ली

प्रथम अनुवाक-

- भृगुर्वै वारुणिः। वारुणि का पुत्र - **भृगु।**
- यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति।
- यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति।

अनुवाक-2,3,4,5,6-

- "अन्नं ब्रह्मेति व्यजानात्। अन्नाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। अन्नेन जातानि जीवन्ति। तपसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति" ।

इसी प्रकार (तप, प्राण, आनन्द, मन, विज्ञान का भी वर्णन है ।

सप्तम अनुवाक-

- अन्नं न निन्द्यात्। तद्व्रतम। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमन्नादम्।
- प्राणे शरीरं प्रतिष्टितं।
- शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः।
- अन्नं न परिचक्षीत।
- अन्नं बहु कुर्वीत।

❖ **घर में आये अतिथि को प्रतिकूल उत्तर न दें-**
न कश्चन वसतौ प्रत्याचक्षीत।

- यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह।
- आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन।
- श्रुतं मे गोपाय।
- सोऽकामयत् बहु स्यां प्रजायेयेति।
- एषआदेशः एष उपदेशः एष वेदोपनिषद्।

6. श्वेताश्वतरोपनिषद्

श्वेताश्वतर उपनिषद् जो ईशादि दस प्रधान उपनिषदों के अनंतर एकादश एवं शेष उपनिषदों में अग्रणी है **कृष्ण यजुर्वेद** का अंग है। **छह अध्याय** और 113 मंत्रों के इस उपनिषद् को यह नाम इसके प्रवक्ता **श्वेताश्वतर ऋषि** के कारण प्राप्त है। मुमुक्षु संन्यासियों के कारण ब्रह्म क्या है अथवा इस सृष्टि का कारण **ब्रह्म** है अथवा अन्य कुछ हम कहाँ से आए, किस आधार पर ठहरे हैं, हमारी अंतिम स्थिति क्या होगी, हमारे सुख दुःख का हेतु क्या है, इत्यादि प्रश्नों के समाधान में ऋषि ने जीव, जगत् और ब्रह्म के स्वरूप तथा ब्रह्मप्राप्ति के साधन बतलाए हैं और यह उपनिषद् सीधे योगिक अवधारणाओं की व्याख्या करता है।
उनके मतानुसार कुछ मनीषियों का **काल, स्वभाव, नियति, यदृच्छा, पृथिवी** आदि भूत अथवा पुरुष को कारण मानना भ्रांतिमूलक है। ध्यान योग की स्वानुभूति से प्रत्यक्ष देखा गया है कि सब का कारण ब्रह्म की शक्ति है और वही इन कथित कारणों की अधिष्ठात्री है (1.3)। इस शक्ति को ही प्रकृति, प्रधान अथवा माया की अभिधा प्राप्त है। यह अज और अनादि है, परंतु परमात्मा के अधीन और उससे अस्वतंत्र है। ब्रह्म का स्वरूप केवल **निर्गुण, सगुणनिर्गुण** और **सगुण** बतलाया गया है। जहाँ सगुणनिर्गुण रूप से विरोधाभास दिखानेवाले विशेषणों से युक्त परमेश्वर के वर्णन और स्तुतियाँ मिलती हैं, दो तीन मंत्रों में हाथ में वाण लिए हुए मंगलमय शरीरधारी **रुद्र** की ब्रह्मभाव से प्रार्थना भी पाई जाती है ब्रह्म का श्रेष्ठ रूप निर्गुण, त्रिगुणातीत, अज, ध्रुव, इंद्रियातीत, निरिंद्रिय, अवर्ण और अकल है। वह न सत् है, न असत्, जहाँ न रात्रि है न दिन, वह **त्रिकालातीत** है ।

॥प्रथम अध्याय॥

मंत्र- 16 शिववर्णन, सांख्य, योग, वेदान्त आदि दर्शनों का वर्णन।

❖ **ध्यान,परमात्मा के साक्षात्कार का परम उपाय अपने गुणों से परमात्मा का साक्षात्कार-**
ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन् देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्
यः कारणानि निखिलानि तानि कालात्मयुक्तान्यधितिष्ठत्येकः।।

❖ **इस विस्तृत ब्रह्मचक्र में जीवात्मा घुमाया जाता है-**
अस्मिन् हंसो भ्राम्यते ब्रह्मचक्रे। (**हंसः**-जीवात्मा)

❖ **परमात्मा स्वरूप तथा उसे जानने का फल-**
संयुक्तमेतत् क्षरमक्षरं च व्यक्ताव्यक्तं भरते विश्वमीशः
अनीशश्चात्मा बध्यते भोक्तृभावाज्ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।।

❖ **ईश्वर, जीव, प्रकृति ये तीनों परमात्मा स्वरूप हैं-**

अनन्तश्चात्मा विश्वरूपो ह्यकर्ता, त्रयं यदा विन्दते ब्रह्मेतत्।

- वह्नेर्यथा योनिगतस्य मूर्तिर्न, दृश्यते नैव च लिङ्गनाशः।
- **परमात्मा हृदय रूपी गुफा में छिपा है-**
  तिलेषु तैलं दधनीव सर्पिरापः स्रोतः स्वरणीषु चाग्निः।
  एवमात्माऽऽत्मनि गृह्यतेऽसौ सत्येनैनं तपसा योऽनुपश्यति॥
- ज्ञाज्ञौ द्वावजौ ईशानीशावजा ह्येका भोक्तृभोगार्थयुक्तः।
- भोक्ता भोग्यं प्रेरितारं च मत्वा त्रिविधं ब्रह्ममेतत्।
- सर्वव्यापिनमात्मानं क्षीरे सर्पिरिवार्पितम्।

॥द्वितीय अध्याय॥

मंत्र- 17,

- **सही योगाभ्यास की पहचान-**
  नीहारधूमार्कनिलामलानां, खद्योतविद्युत्स्फटिकशशीनाम्।
- न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः।
- **योग की प्रथम सिद्धि-**
  गन्धः शुभो मूत्रपुरीषमल्पं, योगप्रवृत्तिं प्रथमा वदन्ति।
- अजं ध्रुवं सर्वतत्त्वैर्विशुद्धं, ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।
- **परमात्मा सभी ओर व्याप्त है-**
  स एव जातः स जनिष्यमाणः, प्रत्यङ् जनांस्तिष्ठते सर्वतोमुखः।
- **ब्रह्म सर्वत्र है-**
  यो देवो अग्नौ यो अप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश।
  य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमो नमः।।

॥तृतीय अध्याय॥

मंत्र- 21,

- एको हि रुद्रो न द्वितीय।
- विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो।
- या ते रुद्रशिवातनूरघोरा।
- यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च।
- यामिशुं गिरिशन्त हस्ते ।
- विश्वस्यैकं परिवेष्टितारमीशं तं ज्ञात्वामृता भवन्ति।
- वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं।
- यस्मात् परं नापरमस्ति किञ्चिद् वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकः।
- अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा, सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः।
- सहस्रशीर्षा पुरुषः।
- सर्वाननशिरोग्रीवः, सर्वभूतगुहाशयः।
- महान् प्रभुर्वै पुरुषः।
- सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
- सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।।
- **सभी इन्द्रियों से रहित सभी विषयों को जानने वाला-**
  सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
  नवद्वारे पुरे देही हंसो लोलायते बहिः।
- **परमात्मा का स्वरूप-**
  अणोरणीयान् महतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः।
- **परमात्मा को जानने के बाद उक्ति-**
  वेदाहमेतं अजरं पुराणं सर्वात्मानं सर्वगतं विभुत्वात्
  जन्मनिरोधं प्रवदन्ति यस्य ब्रह्मवादिनो हि प्रवदन्ति नित्यम्।।

॥चतुर्थ अध्याय॥

मंत्र- 22,

- य एकोऽवर्णो बहुधा शक्तियोगात् वर्णाननेकान् निहितार्थो दधाति।
- तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
  तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदापस्तत् प्रजापतिः।
- त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी।
- नीलः पतङ्गो हरितो लोहिताक्षः।
- अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां, वह्वीः प्रजाः सृजमानां सरुपाः।
- द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
- मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्।
- **परमात्मा सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हृदय के समीप-**
  सूक्ष्मातिसूक्ष्मं कलिलस्य मध्ये, विश्वस्य स्त्रष्टारमनेकरुपम्।
  (कलिल- हृदय)
- यस्मिन् युक्ता ब्रह्मर्षयो देवताश्च तमेवं ज्ञात्वा मृत्युपाशांश्छिनत्ति।
- एष देवो विश्वकर्मा महात्मा सदा जनानां हृदये संनिविष्टः।
- न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः।
- न संदृशी तिष्ठति रूपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चनैनम्।
- यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको यस्मिन्निदं स च वि चैति सर्वम्।

॥ पञ्चम अध्याय॥

मंत्र- 14,

- यो योनिं योनिमधितिष्ठत्येको, विश्वानि रुपाणि योनीश्च सर्वाः।
- एकैकं जालं बहुधा विकुर्वः।
- प्राणाधिपः संचरति स्वकर्मभिः। **(प्राणाधिपः-** जीवात्मा)
- **जीवात्मा का स्वरूप-**
  वालाग्रशतभागस्य शतधा कल्पितस्य च।
  भागो जीवः स विज्ञेयः च चानन्त्याय कल्पते।।
- नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः।

यद् यच्छरीरमादत्ते तेन तेन स युज्यते।।

- विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः।
- द्वे अक्षरे ब्रह्मपरे त्वनन्ते।

॥षष्ठ अध्याय॥

मंत्र- 23,

- तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम्।
- न तस्य कश्चित् पतिरस्ति लोके।
- एको देवः सर्वभूतेषु गूढः, सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
- यस्तन्तुनाभ इव तन्तुभिः प्रधानजैः स्वभावतो देव एकः स्वमावृणोत्। स नो दद्याद्ब्रह्माप्ययम्।
- नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विदधति कामान्।
- न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं।
- तमेव विदित्वाति मृत्युमेति, नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय।
- यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
- प्रधानक्षेत्रज्ञपतिर्गुणेशः संसार-मोक्ष-स्थिति-बन्धहेतुः।

7. प्रश्नोपनिषद्

छः प्रश्नों का वर्णन -

ब्रह्मविद्या प्राप्त करने के लिए छः ऋषि महर्षि पिप्पलाद के पास आते हैं, तथा अध्यात्म-विषयक 6 प्रश्न पूछते हैं।

- प्राणः प्रजानाम् उदयत्येष सूर्यः।
- प्राणे सर्वं प्रतिष्ठितम् ।
- स मिथुनम् उत्पादयते, रयिं च प्राणं च।
- तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्यया-आत्मानम् आन्विष्यात्।

8. मुण्डकोपनिषद्

मुण्डक/अध्याय = 3, **खण्ड**=6,

यह अथर्ववेदीय उपनिषद् है । यह मुण्डित अर्थात् संन्यासियों के लिए विरचित है । इसमें 3 मुण्डक (अध्याय) हैं और प्रत्येक दो खंडों में विभक्त हैं । इस उपनिषद मे ब्रह्मा ने अपने ज्येष्ठपुत्र **अथर्वा** को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया है। 'वेदान्त शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग **'वेदान्त-विज्ञान-सुनिश्चितार्थाः'** (3.2.6) इसी उपनिषद् में हैं।

- सत्यमेव जयते, नानृतम्।
- द्वा सुपर्णा सयुजासखाया,
- नामरूपविहाय,
- भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः।
- यथोर्णनाभिः सृजते गृह्णते च। **(सृष्टि उत्पत्ति)**
- प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपाः। **(ब्रह्मविद्या की अपेक्षा कर्मकाण्ड हीन)**
- प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा, ब्रह्मतल्लक्ष्यमुच्यते। **(जीवन का लक्ष्य ब्रह्म)**
- तमेव भान्तमनुभाति सर्वम्, तस्य भासा सर्वमिदं विभाति। **(ब्रह्म से सूर्यादि में प्रकाश)**
- सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा - ब्रह्मचर्येण। **(सत्य तप से ब्रह्म प्राप्ति)**
- यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति। **(ब्रह्म समुद्रवत्)**
- ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति।

9. माण्डूक्योपनिषद्

इस उपनिषद् में 12 वाक्य या खंड हैं । इसमें बताया गया है कि यह सारा संसार, वर्तमान भूत और भविष्यत् सब कुछ 'ओम्' की ही व्याख्या है । ओम् के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । ओम् के एक-एक अक्षर अ उ म् की विभिन्न अवस्थाओं के फलस्वरूप सृष्टि के विभिन्न रूप हैं । वेदान्त की मूल भावना इस उपनिषद् में प्राप्त होती है ।

- अयमात्मा ब्रह्म।

ओम् की व्याख्या-

ओम् की मात्रा अवस्था	आत्मा स्वरूप	विषय
अ - जागरित	वैश्वानर	स्थूलभुक् (स्थूल)
उ - स्वप्न	तैजस	प्रविविक्तभुक् (सूक्ष्म)
म् - सुषुप्ति	प्राज्ञ	आनन्दभुक् (आनन्द)
तुरीय	अद्वैत शिव	अवर्णनीय

10. ऐतरेयोपनिषद्

यह ऐतरेय आरण्यक का ही एक अंश है । उसके द्वितीय अध्याय के चतुर्थ खंड से लेकर षष्ठ खंड तक का नाम 'ऐतरेय उपनिषद' है । इसमें तीन अध्याय हैं ।

अध्याय = (3) **प्रथम में**- 3 खण्ड, **द्वितीय में** - 1 खण्ड, **तृतीय में** - 1 खण्ड

- प्रज्ञानं ब्रह्म ।

11. छान्दोग्योपनिषद्

- सर्वं खल्विदं ब्रह्म।
- तत्त्वमसिमहावाक्यम्।
- ऐतदात्म्यमिदं सर्वम्, स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो।
- ओमिति एतदक्षरम् उद्गीथम् उपासीत। **(उद्गीथ- उत्कृष्ट गीत)**।

- यो वै भूमा तत् सुखं नाल्पे सुखमस्ति।
- अस्मिन् ब्रह्मपुरे दहरं पुण्डरीकं वेश्म्।
- ओम् प्रति एतद् अमृतम् अभयम्। देवा अमृता अभया अभूवन।
- त्रयो धर्मस्कन्धाः। यज्ञोऽध्ययनं दानम् इति।(धर्म के तीन स्कन्ध)
- प्राणा वाव वंसवः, रुद्राः आदित्याः। (प्राण का महत्व)
- तपो दानम् आर्जवम् अहिंसा सत्यवचनम् इति ता अस्य दक्षिणाः।
- भूतानां त्रीण्येव बीजानि, अण्डजं जीवजम् उद्भिज्जम् इति।
- वाचारम्भरणं विकारो नामधेयम्। मृत्तिकेत्येव सत्यम्। (एक तत्व के अनेन रूप)
- अथातः शैव उद्गीथः।

12. कौषितकि उपनिषद्

यह 'शाखांयन' आरण्यक का अंश हैं।अध्याय 3 से 6 तक चार अध्याय कौषीतकि उपनिषद् है । इसमें 4 अध्याय हैं ।

- प्राणस्य ब्रह्मणो मनो दूतम्। (प्राण ब्रह्म है)
- उक्थं ब्रह्म। स एष त्रयीविद्याया आत्मा। (मंत्रशक्ति ब्रह्म है)
- ब्रह्म दीप्यते यन्मनसा ध्यायति। (ब्रह्म की शक्ति से सभी इन्द्रियों में शक्ति)
- यो वै प्राणः, सा प्रजा, या वा प्रज्ञा स प्राणः। (प्राण, प्रज्ञा महत्व)

13. मैत्रायणी उपनिषद्

- मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः। (मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण)
- बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं स्मृतम्।
- तथा वृविक्षयात् चित्तं स्वयोनावुपशाम्यति। (चित्तनिरोध में से शान्ति)
- इयं ब्रह्मविद्या सर्वोपनिषद्। (उपनिषद् ब्रह्मविद्या है)
- अयमात्मा सितासितैः कर्मफलैः सदसद योनिमापद्यते। (कर्मफल)
- प्राणोऽपानः समान उदानो व्यानः। (पाँच प्राण)
- य उद्गीथः स प्रणवः। यः प्राणवः स उदगीथः। (प्रणव उद्गीथ और सोम समानार्थक)

4. वैदिक व्याकरण, निरुक्त एवं वैदिक व्याख्या पद्धति-

॥प्रातिशाख्यशास्त्रम्॥

॥ऋक्प्रातिशाख्य॥

यह प्रातिशाख्य ऋग्वेद का एकमात्र उपलब्ध प्रातिशाख्य है। इसके रचियता आचार्य `शौनक' है जो कि स्वयं ऋग्वेद की `शैशिरीय' शाखा के अनुयायी थे। ऋ. प्रा. के उपोद्धात में शौनक ने प्रतिज्ञा की है कि वह शैशिरीय शाखा के उच्चारण सम्वंधी सम्पूर्ण ज्ञान के लिये इस प्रातिशाख्य शास्त्र का कथन करेंगे। इससे यह प्रतीत होता है कि वर्तमान ऋ. प्रा. शैशिरीय शाखा का है। शैशिरीय शाखा शाकल शाखा के अंतर्गत एक उपशाखा है परंतु इसकी संहिता उपलब्ध नही है। इसीलिये वर्तमान ऋ.प्रा. को शाकल शाखा का माना जाता है। अनुष्टुप्. त्रिष्टुप् और जगती छन्दों में निवद्ध यह प्रातिशाख्य अध्याय पटल वर्ग और श्लोक के क्रम में प्राप्त है। निष्कर्पतः विद्वानों के मतानुसार कहा जा सकता है कि वैदिक व्याकरण में सवसे पहले हुए ऋक् प्रातिशाख्य के समय की उच्चतम सीमा यास्क के समय 700 ई.पू. है और निम्नतम सीमा पाणिनि का समय 500 ई. पू. है। यह कहा जा सकता है कि प्रातिशाख्यों का समय यास्क के वाद तथा पाणिनि से पूर्व में है। अर्थात् प्रातिशाख्यों की रचना 700 ई. पू. तथा 500 ई. पू के मध्य में है। ऋक्प्रातिशाख्य और ऋक्प्रातिशाख्यकार के काल-निर्धारण-विषय में प्राप्त हुये विद्वानों के विभिन्न मतों के आधार पर ऋक्प्रातिशाख्य का समय 600 ई. पू के आसपास माना जा सकता है। परंतु वैदिक वांङ्मय में प्रातिशाख्यों के महत्व को देखकर इनका काल निश्चित कर देना कोई सरल कार्य नही है अर्थात इस विषय पर अभी और अधिक शोध की आवश्यकता है किंतु तव तक विद्वानों के प्रमाण युक्त मतों का ही आश्रय लेकर ऋक्प्रातिशाख्य को 700 ई. पू. और 500 ई. पू के मध्य में ही माना गया है।

❖ **सामान्य परिचय-**

- रचयिता = **शौनक**, पटल (अध्याय)- (18) क्रमानुसार प्रथम कुछ अध्यायों के नाम- 1. संज्ञा, 2. संहिता 3. स्वर 4. सन्धि 5. नति....।
- यह 'ऋग्वेद' की '**शाकल**' शाखा का प्रातिशाख्य है। इसे '**पार्षद**' या 'पारिषद' सूत्र भी कहते हैं।

❖ भाष्य-

(1) उव्वट का भाष्य।

(2) विष्णुमित्र कृत (वृत्ति)।

मुख्य परिभाषाएं-

(1) समानाक्षर –

'अष्टौ समानाक्षराण्यादितः' -(8) अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ

(2) सन्ध्यक्षर –

'ततश्चत्वारि सन्ध्यक्षराणि' - (4) ए, ऐ, ओ, औ

(3) अघोष –

''जिह्वामूलीय उपध्मानीय अघोषसंज्ञका सन्ति।''

'अन्त्याः सप्त तेषामघोषाः' -(7) श, ष, स, , उपध्मानीय क, जिह्वामूलीय फ,

पुनश्च वर्गे प्रथमो अघोषौ, अर्थात् - क-ख, च-छ, ट-ठ, त-थ, प-फ, उपस्थापयनं आह – **"अघोषे रेफ्यरेफी च"।**

(4) सोष्म–

''युग्मौ सोष्माणौ'' - वर्गे च द्वितीयचतुर्थो वर्णो सोष्माणो। अर्थात्- ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, फ, भ।

प्रयोजनम् आह – **"सोष्मातु पूर्वेण सहोच्यते"** ।

(5) स्वरभक्ति -उव्वट भाष्यानुसार – **"स्वर भक्तिस्तु रेफेन लकारेण वा सम्वद्धा भवति"** -**''स्वर भक्तिः पूर्वभागमक्षराणाम्।''** सा स्वरभक्तिः पूर्व रेफं लकारं वा भजतो। **सा द्विविधा –**

1. दीर्घस्वरभक्तिः- अर्धमात्रा, (1/2)
2. ह्रस्वस्वरभक्तिः-अर्धोनमात्र उच्चारणकालः (1/4)

(6) यम – ''स्पर्शा यमानुनासिकाः स्वान्परेषु" (कुँ खुँ, गुँ, घुँ)

1. अघोषाल्पप्राणाः - कँ चँ टँ तँ पँ।
2. अघोषमहाप्राणाः - खँ छँ ठँ थँ फँ।
3. सघोषाल्पप्राणाः - गँ जँ डँ दँ वँ।
4. सघोषमहाप्राणाः - घँ झँ ढँ धँ भँ।

(7) रक्त-

''स्पर्शसंज्ञोऽनुनासिकः" (ङ,ञ,ण,न,म)

(8) संयोग –

द्वयोः व्यञ्जनवर्णयोः सन्निपातः। यथा- (प्र) प्रवश्लिष्टुभामिषम्। **(संयोगस्तु व्यञ्जनसन्निपातः) ।**

(9) प्रगृह्य –

"सम्बोधनात्मकस्य पदस्य अन्ते विद्यमानस्य ओकारस्य आमन्त्रित ओकार प्रगृह्य संज्ञा"।

(10) रेफित -स्वर वर्ण के पूर्व में पञ्चम ऊष्म वर्ण (विसर्ग) हो तो वह रेफ़ित संज्ञक होता है। **"उष्मोरेफी पञ्चमो नामिपूर्वः"**। यथा - (अग्निरश्मिना जन्मना)

(2) शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य-

(वाजसनेयि-प्रातिशाख्य), **रचयिता-** कात्यायन, **अध्याय-** 8, इसमें (10) प्राचीन आचार्यों के मतों का उल्लेख है। काण्व, काश्यप, गार्ग्य, माध्यन्दिन, शाकटायन, शाकल्य, शौनक इत्यादि।

भाष्य-

(1) **'उव्वटकृत-'**मातृवेदनामक' भाष्य

(2) **'अनन्तभट्ट' कृत-** 'पदार्थप्रकाशक' नामक भाष्य।

संवंधित ग्रन्थ- (1) प्रतिज्ञासूत्र। (2) भाषिकसूत्र

3. तैत्तिरीय प्रातिशाख्य (कृष्ण यजुर्वेदीय)

खण्ड- 2 दोनों में 12, 12 अध्याय, सम्पूर्ण अध्याय= (24)

भाष्य-

(1) **माहिषेय-** पदक्रमसदन भाष्य,

(2) **सोमयार्य-** त्रिभाष्यरत्न भाष्य,

(3) **गोपालयज्वा-** वेदिकाभरण भाष्य।

3. सामवेदीय प्रातिशाख्य-

(1) **पुष्पसूत्र-** प्रणेता 'पुष्प' ऋषि (10) प्रपाठक अध्याय+सामगान से सम्वन्धित इसमें 'ग्रामगेयगान' और 'अरण्य गेयगान' में प्रयुक्त सामों की विविध विधियों का विशदीकरण है। पुष्पसूत्र पर **'अजातशत्रु'** की एक व्याख्या उपलब्ध है।

(2) **ऋक्तन्त्र-** यह 'सामवेद' की 'कोथुम' शाखा का प्रातिशाख्य है। इसे (**ऋक्तन्त्र व्याकरण**) भी कहते हैं। (5) प्रपाठक अध्याय 280 सूत्र,

4. अथर्ववेद प्रातिशाख्य-

(1) शौनकीय चतुरध्यायिका-

लेखक- शौनक इसका इंग्लिश अनुवाद के सहित संस्करण **"डॉ. ह्विटनी"** ने प्रकाशित किया था। अध्याय- 4,

(2) अथर्ववेद प्रातिशाख्य-

डॉ.सूर्यकान्त' ने इसका संस्करण 1940 में लाहौर से प्रकाशित किया था ।

॥निरुक्त॥

निरुक्त में "पर्यायवाची शब्दों की सूची" - इस भाग को निघण्टु कहते हैं। इसके अन्य अध्यायों में अनेकार्थी शब्द, शब्द उद्गम और शब्दमूलों का समास आदि लिखा है निरुक्त वैदिक साहित्य के शब्द-व्युत्पत्ति (etymology) का विवेचन है। यह हिन्दू धर्म के छः वेदांगों में से एक है । इसमें मुख्यतः वेदों में आये हुए शब्दों की पुरानी व्युत्पत्ति का विवेचन है। निरुक्त में शब्दों के अर्थ निकालने के लिये छोटे-छोटे सूत्र

दिये हुए हैं। इसके साथ ही इसमें कठिन एवं कम प्रयुक्त वैदिक शब्दों का संकलन (glossary) भी है। परम्परागत रूप से संस्कृत के प्राचीन वैयाकरण (grammarian) यास्क को इसका जनक माना जाता है।

वैदिक शब्दों के दुरूह अर्थ को स्पष्ट करना ही निरुक्त का प्रयोजन है। ऋग्वेदभाष्य भूमिका में सायण ने कहा है- **"अर्थावबोधे निरपेक्षतया पदजातं यत्रोक्तं तन्निरुक्तम्"** अर्थात् अर्थ की जानकारी की दृष्टि से स्वतंत्ररूप से जहाँ पदों का संग्रह किया जाता है वही निरुक्त है। शिक्षा प्रभृति छह वेदांगों में निरुक्त की गणना है। पाणिनीय शिक्षा में **"निरुक्तं श्रोत्रमुचयते"** इस वाक्य से निरुक्त को वेद का कान बतलाया है। यद्यपि इस शिक्षा में निरुक्त का क्रमप्राप्त चतुर्थ स्थान है तथापि उपयोग की दृष्टि से एवं आभ्यंतर तथा बाह्य विशेषताओं के कारण वेदों में यह प्रथम स्थान रखता है। निरुक्त की जानकारी के बिना वेद के दुर्गम अर्थ का ज्ञान संभव नहीं है।

काशिकावृत्ति के अनुसार निरूक्त पाँच प्रकार का होता है— वर्णागम (अक्षर बढ़ाना) वर्णविपर्यय (अक्षरों को आगे पीछे करना), वर्णविकार (अक्षरों को वदलना), नाश (अक्षरों को छोड़ना) और धातु के किसी एक अर्थ को सिद्व करना। इस ग्रंथ में यास्क ने शाकटायन, गार्ग्य, शाकपूणि मुनियों के शब्द-व्युत्पत्ति के मतों-विचारों का उल्लेख किया है तथा उसपर अपने विचार दिए हैं।

निरुक्त की टीकाएँ-

वर्तमान उपलब्ध निरुक्त, निघंटु की व्याख्या (commentary) है और वह यास्क रचित है। यास्क का योगदान इतना महान है कि उन्हें निरुक्तकार या निरुक्तकृत ("Maker of Nirukta") एवं निरुक्तवत ("Author of Nirukta") भी कहा जाता है। यास्क ने अपने निरुक्त में पूर्ववर्ती निरुक्तकार के रूप में औपमन्यव, औदुंबरायण, वार्ष्यायणि; गार्ग्य, आग्रायण, शाकपूणि, और्णनाभ, गालव, स्थौलाष्ठीवि, कौष्टुकि और कात्थक्य के नाम उद्धृत किए हैं उनके ग्रंथ अब प्राप्त नहीं है। इससे सिद्ध है कि 12 निरुक्तकारों को यास्क जानते थे। 13वें निरुक्तकार स्वयं यास्क हैं। 14वाँ निरुक्तकार अथर्वपरिशिष्टों में से 48वें परिशिष्ट का रचयिता है। यह परिशिष्ट निरुक्त निघंटु स्वरूप है।

इसकी विशेषताओं से आकृष्ट होकर अनेक विद्वानों ने इस पर टीका लिखी है। इस समय उपलब्ध टीकाओं में स्कंदस्वामी की टीका सवसे प्राचीन है। शुक्लयजुर्वेदीय शतपथ ब्राह्मण के भाष्य में हरिस्वामी ने स्कंदस्वामी को अपना गुरु कहा है। देवराज यज्वा द्वारा रचित एक व्याख्या का प्रकाशन गुरुमंडल ग्रंथमाला, कलकत्ता से 1952 में हुआ है। ग्रंथ के प्रारंभ में इन्होंने एक विस्तृत भूमिका लिखी है। निरुक्त पर व्याख्या रूप एक वृत्ति दुर्गाचार्य रचित उपलब्ध है। इन्होंने अपनी वृत्ति में निरुक्त के प्राय: सभी शब्दों का विवेचन किया है। इसका प्रकाशन आनंदाश्रम संस्कृत ग्रंथमाला, पूना से 1926 में और खेमराज श्रीकृष्णदास, वंबई से 1982 में हुआ है।

सत्यव्रत सामश्रमी ने इस विषय पर लेखनकार्य किया है। इसका प्रकाशन बिब्लओथिका, कलकत्ता से 1911 में हुआ है। प्रो॰ राजवाड़े का इस विषय पर महत्वपूर्ण कार्य निरुक्त का मराठी अनुवाद है जो 1935 में प्रकाशित है। डॉ॰ सिद्धेश्वर वर्मा का यास्क निर्वचन नामक ग्रंथ विश्वेश्वरानंद वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर से 1953 में प्रकाशित है। इसपर कुकुंद झा बख्शी की संस्कृत टीका निर्णयसागर प्रेस, वंबई से 1930 में प्रकाशित है। इसपर मिहिरचंद्र पुष्करणा ने एक टीका लिखी है जो पुरुपार्थ पुस्तकमाला कार्यालय, अमृतसर से 1945 में प्रकाशित है।

निरुक्त की संरचना-

इस ग्रंथ के समस्त अध्यायों की संख्या 12 है जो तीन कांडों में विभक्त हैं। 1. **नैघंटुक कांड,** 2. **नैगम कांड,** 3.**दैवत कांड**

इसके सिवाय परिशिष्ट के रूप में अंतिम दो अध्याय और भी साथ में संलग्न हैं। इस प्रकार कुल 14 अध्याय हैं। इन अध्यायों में प्रारंभ से द्वितीय अध्याय के प्रथम पाद पर्यंत उपोद्घात वर्णित है। इसमें निघंटु का लक्षण, पद का प्रकार, भाव का विकार, शब्दों का धातुज सिद्धांत, निरुक्त का प्रयोजन और एतत्संबंधी अन्य आवश्यक नियमों के आधार पर विस्तार के साथ विवेचन किया गया है। इस समस्त भाग को नैघंटुक कांड कहते हैं। इसी का 'पूर्वषट्क' नामांतर है। चौथे अध्याय में एकपदी आख्यान का सुंदर विवेचन किया गया है। इसे नैगमकांड कहते हैं। अंतिम छह अध्यायों में देवताओं का वर्णन किया गया है। इसे दैवत कांड बतलाया है। इसके अनंतर देवस्तुति के आधार पर आत्मतत्वों का उपदेश किया गया है। निरुक्त के वारह अध्याय है। प्रथम में व्याकरण और शब्दशास्त्र पर सूक्ष्म विचार हैं। इतने प्राचीन काल में शब्दशास्त्र पर ऐसा गूढ़ विचार और कहीं नहीं देखा जाता। शब्दशास्त्र पर अनेक मत प्रचलित थे इसका पता यास्क के निरुक्त से लगता है। कुछ लोगों का मत था कि सभी शब्द धातुमूलक हैं और धातु क्रियापद मात्र हैं जिनमें प्रत्यय आदि लगाकर भिन्न शब्द बनते हैं। इस मत के विरोधियों का कहना था कि कुछ शब्द धातुरुप क्रियापदों से बनते है पर सब नहीं, क्योंकि यदि 'अश' से अश्व माना जाय तो प्रत्येक चलने या आगे बढ़नेवाला पदार्थ अश्व कहलाएगा। यास्क ने इसी विरोधी मत का खंडन किया है। यास्क मुनि ने इसके उत्तर में कहा है कि जब एक क्रिया से एक पदार्थ का नाम पड़ जाता है तब वही क्रिया करनेवाले और पदार्थ को वह नाम नहीं दिया जाता। दूसरे पक्ष का एक और विरोध यह था कि यदि नाम इसी प्रकार दिए गए है तो किसी पदार्थ में जितने-जितने गुण हों उतने ही उसका नाम भी होने चाहिए। यास्क इसपर कहते है कि एक पदार्थ किसी एक गुण या कर्म से एक नाम को धारण करता है। इसी प्रकार और भी समझिए। दूसरे और तीसरे अध्याय में तीन निधंटुओं के शब्दों के अर्थ

प्रायः व्यख्या सहित है। चौथे से छठें अध्याय तक चौथे निघंटु की व्याख्या है। सातवें से बारहवें तक पाँचवें निघंटु के वैदिक देवताओं की व्याख्या है।

॥प्रथमोऽध्यायः॥

॥प्रथम पाद॥

निघण्टु की व्याख्या- **निरुक्त**, निघण्टु=(5) अध्याय, (3) काण्ड

1-3. नैघण्टुक काण्ड- पर्याय शब्द,

4. ऐकपदिक/ नैगम काण्ड- कठिन शब्द,

5. दैवत काण्ड- देवतावाची,

निघण्टु में पांच अध्याय तथा निरुक्त में (14) अध्याय हैं जिनमें (12) अध्याय मुख्य हैं, दो अध्याय परिशिष्ट हैं ।

यास्क ने देवताओं के तीन भाग किए हैं-

(1) पृथ्वीस्थानीय (2) द्युस्थानीय (3) अन्तरिक्षस्थानीय।

यास्क की व्याख्यानविधि के तीन भेद-

समाम्नायः समाम्नातः । सः व्याख्यातव्यः । तमिमं समाम्नायं निघण्टव इत्याचक्षते । निघण्टवः कस्मात् ? निगमाः इमे भवन्ति - छन्दोभ्यः समाहृत्य समाहृत्य समाम्नाताः । 'ते निगन्तवः एव सन्तः निगमनात् निघण्टव उच्यन्ते इति औपमन्यवः' । 'अपि वा आहननाद् एव स्युः । समाहता भवन्ति' । 'यद्वा समाहृता भवन्ति' ।

शब्दों का समाम्नाय संकलित हुआ जिसकी व्याख्या करनी चाहिए इस संग्रह को कुछ लोग निघण्टु कहते हैं, यह निघण्टु कैसे कहलाया ये अर्थ बतलाने वाले हैं – वेदों से चुन चुनकर ये संकलित किये गये हैं, ये अर्थ बतलाने वाले निगन्तु ही बनकर व्युत्पत्ति (निगमन) से निघण्टु कहलाए यह औपमन्यव का विचार है । अथवा आहनन (विभाजित करना) के द्वारा यह निघण्टु शब्द बना है क्योंकि सभी शब्द समाहत (विभाजित) किए हुये हैं । अथवा जमा किये जाने के कारण इन्हे निघण्टु कहते हैं ।

1. निगमन से निघण्टु- निगम= नि+ग=निगन्तृ-**निगन्तु**=निघण्टु अर्थ बतलाने वाला **(प्रत्यक्ष)**
2. समाहनन से निघण्टु- सम्+आ+हन्=समाहन्तृ-**समाहन्तु**=निघण्टु जमा किया हुआ, **(परोक्ष)**
3. समाहरण से निघण्टु-सम्+आ+हृ=समाहर्तृ-समाहर्तु=निघण्टु चुना हुआ **(अतिपरोक्ष)**

चत्वारि पदजातानि-

(1) नाम (2) आख्यात (3) उपसर्ग (4) निपात

आख्यात- भावप्रधानमाख्यातम् । भाव, काल, कारक, संख्या। **नाम -** सत्वप्रधानानि नामानि। **यदत्र उभे भावप्रधाने भवतः।** जहाँ पर नाम आख्यात दोनों ही हो उस अवस्था में भाव (क्रिया) की प्रधानता होती है।

भाव की अवस्थाएं-

(1) साध्यावस्था- इसमें भाव की प्रधानता होने पर - **आख्यात** क्रियावाचक होता है ।

(2) सिद्धावस्था- इसमें सत्व की प्रधानता होने पर – नाम क्रियावाचक होता है । आख्यात में क्रिया सदैव रहती है- अमूर्त। नाम में क्रिया होती है- मूर्त।

पूर्वापरीभूतं भावमाख्यातेनाचष्टे- व्रजति पचतीत्युपक्रमप्रभृत्यपवर्ग पर्यन्तम् । पूर्वापर के क्रम से होने वाले भाव को आख्यात नाम से पुकारते हैं जैसे- चलता है, पकाता है अर्थात् जिसमें आरम्भ से लेकर अन्त तक का कथन हो । (**उपक्रम**-आरम्भ, **अपवर्ग**-अन्त) ।

"क्रियासु बह्वीष्वभिसंश्रितो यः पूर्वापरीभूत इवैक एव क्रियाभिनिर्वृत्तिवशेन सिद्ध आख्यातशब्देन तमर्थमाहुः"।।

सत्त्वोपदेशनिरूपण-

मूर्तं सत्त्वभूतं सत्त्वानामभिर्व्रज्या पक्तिरिति। अदः इति सत्वानामुपदेशः। गौरश्वः पुरुषो हस्तीति। (सत्व- द्रव्य)

ठोस अर्थात् सिद्ध क्रिया के रूप में परिणत भाव को सत्व नाम से पुकारते हैं जैसे- गमन और पाक । अद (वह) से वस्तुओं का सामान्य उपदेश होता है । परन्तु विशेषतः सत्वोपदेश गो, अश्व, पुरुष, हाथी इनसे होता है ।

भावोपदेशनिरूपण-

भवतीति भावस्य। आस्ते, शेते, व्रजति, तिष्ठतीति । भवति (होता है) से भाव (आख्यात) का सामान्योपदेश होता है, परन्तु विशेषोपदेश आस्ते, शेते, व्रजति, तिष्ठति इनसे होता है ।

शब्दनित्यत्व विमर्श-

औदुम्बरायण मत- 'इन्द्रियनित्यं वचनमौदुम्बरायणः'। औदुम्बरायण के मत में शब्द की सत्ता इन्द्रियों तक ही है इसलिए इन्द्रिय के अनित्य होने से शब्द भी अनित्य है इनका मानना इस प्रकार है । इसमें इन्होंने निम्न तर्क दिए हैं-

1. **तत्र चतुष्ट्वं नोपपद्यते** । शब्द को अनित्य मानने पर नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात ये चारों पद बेकार हो जाएंगे ।
2. **अयुगपत् उत्पन्नानां वा शब्दानां इतर-इतरोपदेशः** । शब्द अनित्य में शब्दों का मेल नहीं हो सकता क्योंकि वे भिन्न-भिन्न समयों में

उत्पन्न होते हैं तथा नष्ट हो जाते हैं ।

3. **शास्त्रकृतो योगश्च** । प्रकृति और प्रत्यय भी अनित्य हैं इसलिए इनका व्याकरण शास्त्र में लिखा हुआ संयोग भी नहीं हो सकता।

यास्क मत- 'व्याप्तिमत्वात् तु शब्दस्य' । यास्क मत में व्याप्तिमान् होने से शब्द का नित्यत्व सिद्ध होता है ।

॥षड् भावविकार॥

षड् भावविकाराः भवन्तीति वार्ष्यायणिः -जायते, अस्ति, विपरिणमते वर्द्धते, अपक्षीयते, विनश्यतीति।

जायते -जायत इति पूर्वभावस्यादिमाचष्टे नापरभावमाचष्टे, न प्रतिषेधति । (जन्म लेना)

अस्ति -अस्तीत्युत्पन्नस्य सत्त्वस्यावधारणम्। (होना)

विपरिणमते -विपरिणमत इत्यप्रच्यवमानस्य तत्त्वाद्विकारम्। (बदलना)

वर्द्धते- वर्द्धत इति स्वाङ्गाभ्युच्चयं सांयोगिकानां वार्थानाम्- वर्द्धते विजयेनेति वा, वर्द्धते शरीरेणेति वा। (वृद्धि होना, वृद्धि दो प्रकार की) शारीरिक, धन-धान्य ।

अपक्षीयते- अपक्षीयते इत्यतेनैव व्याख्यातः प्रतिलोमम्। (घटना दो प्रकार से) शारीरिक, धन-धान्य ।

विनश्यतीति- विनश्यतीत्यपरभावस्यादिमाचष्टे, न पूर्वभावमाचष्टे न प्रतिषेधति। (नष्ट होना)

उपसर्गनिरूपणम्-

शाकटायन मत- 'न निर्बद्धा उपसर्गा अर्थान्निराहुरिति शाकटायनः'। नामाख्यातयोस्तु कर्मोपसंयोगद्योतका भवन्ति।

शाकटायन के मत में नाम, आख्यात से अलग होने पर उपसर्ग का अर्थ निश्चय नहीं कर सकते । लेकिन नाम और आख्यात का अन्य अर्थ से संयोग होता है ।

गार्ग्य मत- उच्चावचाः पदार्था भवन्तीति गार्ग्यः। आ इत्यर्वागर्थे प्रपरेत्यस्य प्रतिलोम्यम् ।

गार्ग्य के मत में उपसर्ग के बहुत तरह के अर्थ होते हैं । **जैसे-** उपसर्गों के स्वतन्त्र अर्थ-

1. **आङ्-** इत्यर्वागर्थे। (इधर अर्थ
2. **प्र, परा-** प्रपरेत्येतस्य प्रातिलोम्यम्। (आङ् से उल्टा अर्थ)
3. **अभि** - इत्याभिमुख्यम् (संमुखता)
4. **प्रति-** प्रतित्येतस्य प्रातिलोक्यम् (अभि से विपरीत)
5. **अति सु-** अति सु इत्यभिपूजितार्थे। (पूजार्थ)
7. **निर्, दुर** - निर्दुरित्येतयोः प्रातिलोम्यम्। (अति सु के विपरीत निर्धनः, दुर्ब्राह्मणः)
8. **नि,अव** - न्यवेति विनिग्रहार्थीयौ। (नियन्त्रण दबाने में) निगृह्णाति, अवगृह्णाति
9. **उद्** - उदित्येतयोः प्रातिलोम्यम्। (उपर वाले नि अव के विपरीत अर्थ को कहता है) उद्गृह्णाति, उत्थापयति।
10. **सम्** - समित्येकीभावम्। (एकत्र करने को, संगृह्णाति)
11. **वि,अप-** व्यापेत्येतस्य प्रातिलोम्यम्- (जुदा करना सम का उल्टा) विगृह्णाति, अपगृह्णाति।
12. **अनु** - सादृश्यापरभावम्। (समानता और अनुगम) अनुरूपमिदम्, अनुगच्छामि।
13. **अपि-** अपीति संसर्गम्।(संसर्ग)मधुनोऽपि स्यात्, देवदत्तमपि आनय
14. **उप्** - उपेत्युपजनम्। (आधिक्य) उपजायते, उप परार्द्धे हरेर्गुणाः,
15. **परि** - सर्वतोभावम्। (सब तरफ) परिधावति,
16. **अधि** - उपरिभावम्/ ऐश्वर्यं वा। (उपर/ईश्वर) अधितिष्ठति लोकम्, अधिपतिः,

इस प्रकार अनेकविध अर्थ में उपसर्ग होते हैं ।

॥द्वितीय पाद॥

निपात- अथ निपाताः। उच्चावचेषु-अर्थेषु निपतन्ति।
निपात अनेक प्रकार के अर्थों को प्रकट करता है।

निपात के तीन प्रकार –

1. **उपमार्थक-** इव, न, चित्, नु
2. **कर्मोपसंग्रहः/अर्थोपसङ्ग्रह-**
3. **पादपूरणार्थक-** कम्, इम्, इत्, उ (कमीमिदु)

(1) उपमार्थक-

1. इव- इवेति भाषायाम् अन्वाध्याये (वेदे) च ।
इव यह निपात भाषा (लोक) में और वेद में भी होता है । तथा यह वेद और लोक दोनों जगह उपमार्थ में होता है ।
उदाहरण- लोक- अग्निरिव, **वेद-** इन्द्र इव।

2. न - नेति प्रतिषेधार्थीयो भाषायाम्। उभयमन्वध्यायम् । न यह निपात लोक में निषेधार्थक होता है परन्तु वेद में निषेध और उपमा दोनों अर्थ में होता है । (अन्वाध्यायम्-वेद)
वेद के उदाहरण- निषेधार्थक- नेन्द्रं देवममंसत, **उपमार्थक-** दुर्मदासो न सुरायाम्।

3. चित्- चिदित्येषोऽनेककर्मा (अनेकार्थ) । **उदाहरण-** पूजार्थ, उपमार्थक, अवकुत्सित् । **यथा- पूजार्थ-** आचार्यश्चिद् इदं ब्रूयात् । **उपमार्थक-** दधिचित्, **अवकुत्सित्** - कुल्माषांश्चिदाहर ।

4. नु- नु इत्येषोऽनेककर्मा (अनेकार्थ) ।
(1) हेत्वर्थ (2) अनुप्रश्नार्थ (अनुपृष्ट) (3) उपमार्थ
यथा- हेत्वर्थ- ''इदं नु करिष्यति"। **अनुप्रश्नार्थ-** कथं नु करिष्यति।
उपमार्थ- वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वयाः।

(2) कर्मोपसंग्रहाः निपाताः-

कर्मोपसंग्रह (अर्थसंयोजक) उसे कहते हैं जिसके आगमन से वस्तुओं का अलग-अलग होना निश्चित रहता है, किन्तु यह पार्थक्य सामान्य गणना के समान स्पष्ट नहीं रहता बल्कि समास के पदों को अलग-अलग करने पर ही पृथक मालूम पड़ता है ।

कर्मोपसंग्रह के उदाहरण-

1. च - इति समुच्चयार्थः, (एक जगह करना, अहं च त्वं च वृत्रहन्)
2. आ - इति समुच्चयार्थः, (देवेभ्यश्च पितृभ्यश्च आ)
3. वा- विचारणार्थः, (हन्ताहं पृथिवीमिमां विदधानीह वेह वा)
4. अह, ह – विनिग्रहार्थीयौ, (अलग होने के अर्थ में)
5. उ – विनिग्रहार्थीय, पादपूरक भी (मृषा इमे वदन्ति, सत्यमु ते वदन्ति।)
6. हि - अनेककर्मा-3, (1) हेतुकथनं (2) अनुपृष्ट (3) ईर्ष्या
7. किल – विद्याप्रकर्षे,
8. मा - प्रतिषेधे,
9. खलु- प्रतिषेधे, खलु कृत्वा, खलु कृतम्,(**पादपूरक**-एवं खलु तत् बभूव)
10. शश्वत्- विचिकित्सार्थीयो भाषायाम् (संदेहार्थक)
11. नूनम् - विचिकित्सार्थीयो (पादपूरक भी)
12. सीम - परिग्रहार्थीयो वा (पादपूरण)
13. त्व - विनिग्रहार्थीय सर्वनामानुदात्तम्
14. त्वत् - समुच्चयार्थे (पादपूरक)

(3) पादपूरणार्थक निपाताः-

इत् न के साथ मिलकर परिभय अर्थ में प्रयुक्त होता है- **'न चेत् सुरां पिबन्ति।'** पादपूरणार्थक निपात के उदाहरण-
नूनम् (2) सीम (3) सीमतः (4) कम् (5) ईम् (6) इत् (7) उ (8) त्व (9) त्वत् । **"कमीमिदु"**= कम्, ईम्, इत्, उ ।

॥चतुर्थ पाद॥

शाकटायन मत- तत्र नामानि- आख्यातजानि इति शाकटायनो नैरुक्तसमयश्च"। सभी शब्द धातुओं से उत्पन्न हुए हैं ।

गार्ग्य/वैयाकरण मत- न सर्वाणीति गार्ग्यो वैयाकरणानां चैके । इनके अनुसार सभी प्रातिपादिक धातुओं से उत्पन्न नहीं होते हैं ।

॥पञ्चम पाद॥

निरुक्त अध्ययन प्रयोजन-

अनर्थका हि मन्त्राः- कौत्स - (7)

1. **नियतवाचोयुक्तयो नियतानुपूर्व्या भवन्ति।**
2. **अथापि ब्राह्मणेन रूपसम्पन्ना विधीयन्ते-** 'उरु प्रथस्वेति प्रथयति।' 'प्रोहाणीति प्रोहति।'
3. **अथाप्यनुपपन्नार्था भवन्ति।** 'ओषधे त्रायस्वैनम्।' 'स्वधिते मैनं हिंसीः' इत्याह हिंसन्
4. **अथापि विप्रतिषिद्धार्था भवन्ति-** 'एक एव रुद्रोऽवतस्थे न द्वितीयः।' 'असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम्।' 'अशत्रुरिन्द्रः! जज्ञिषे।' 'शतं सेना अजयत् साकमिन्द्रः।' इति।
5. **अथापि जानन्तं सम्प्रेष्यति-** अग्नये समिध्यमानाय- अनुब्रूहीति।
6. **अथाप्यह- 'अदितिः सर्वम् इति।**''अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षम्।' ' ।
7. **अथापि- अविस्पष्टार्था भवन्ति-** अम्यग्, यादृश्मिन्, जारयायि, काणुका इति।

यास्क मत-

अर्थवन्तः शब्दसामान्यात्। एतद्वै यज्ञस्य समृद्धं यद्रूपसमृद्धं यत्कर्म क्रियमाणमृग्यजुर्वाभिवदिति च ब्राह्मणम्। क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिः इति।

"इहैव स्तं मा वियौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम्।
क्रीडन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वेगृहे।।' ' (ऋ-सं-8,3,28,2)

इस मंत्र का विवाह के लिये विनियोग किया गया है।

1. **यथो एतन्नियतवाचोयुक्तयो नियतानुपूर्व्या भवन्तीति।** लौकिकेष्वप्येतद्। **यथा-** इन्द्राग्नी, पितापुत्रविति।
2. **यथो एतद् ब्राह्मणेन रूपसम्पन्ना विधीयत इति,** उदितानुवादः स भवति ।
3. **यथो एतदनुपपन्नार्था भवन्तीत्याम्नायवचनादहिंसा प्रतीयेत्।**
4. **यथो एतद् विप्रतिषिद्धार्था भवन्तीति, लौकिकेष्वप्येतद्।**

यथा- असपत्नोऽयं ब्राह्मणोऽनमित्रो राजेति।

5. **यथो एतद् जानन्तं सम्प्रेष्यतीति।** 'जानन्तमभिवादयते' , 'जानते मधुपर्कं प्राहेति।'
6. **यथो एतददितिः सर्वमिति।** लौकिकेष्वप्येतद्। **यथा-** एतददितिः सर्वमिति। लौकिकेष्वप्येतद्।' **यथा-** सर्वरसा अनुप्राताः पानीयमिति।
7. **यथो एतदविस्पष्टार्था भवन्तीति। नैष स्थाणोरपराधो यदेनमन्धो न** पश्यति पुरुषापराधः स भवति । **यथा-** जानदीपु विधातः पुरुषविशेषो भवति। पारोवर्यवित्सु तु खलु वेदितृषु भूयोविधः प्रशस्यो भवति।

- **फर्फरीफा-** शत्रूणां विदारयितारौ। **अम्यक्-** प्राप्नोति, **यादृश्मिन्-** यादृशे **जारयायि-** स्तूयते, **काणुका**-कान्तानि, **जर्भरी**-भर्तारौ, **तुर्फ़री-** हन्तारौ।

॥षष्ठ पाद॥

निरुक्त अध्ययन के प्रयोजन-

1. अथापीदमन्तरेण मन्त्रेष्वर्थप्रत्ययो न विद्यते।अर्थमप्रतियतो नात्यन्तं स्वरसंस्कारोद्देशः।तदिदं विद्यास्थानं व्याकरणस्य कार्त्स्न्यं स्वार्थसाधकं च।
2. अथापीदमन्तरेण पद-विभागो न विद्यते।
3. अथापि याज्ञे दैवतेन बहवः प्रदेशा भवन्ति, तदनेनोपेक्षितव्यम् ।
4. अथापि ज्ञान-प्रशंसा भवति ।

"साक्षात्कृतधर्माणः ऋषयो बभूवुः" । ऋषियों ने धर्म का साक्षात्कार किया था । (यह यास्क का कथन है।)

॥द्वितीय अध्याय॥

॥प्रथम पाद॥

निर्वचन के सिद्धान्त-

जिन शब्दों में स्वर और बनावट अर्थ से युक्त होकर अपने अधीनस्थ अर्थ सम्बन्धी प्रादेशिक विकार से सम्बद्ध हो उनका निर्वचन उसके अनुसार ही करें । **निर्वचनम्-** निष्कृष्य-विगृह्य वचनं-निर्वचनम्।

"वर्गागमो वर्ण- विपर्ययश्च द्वौ चापरौ वर्ण-विकार-नाशौ धातोस्तदर्थातिशयेन योगस्तदुच्यते पञ्चविधं निरुक्तम्" ।।

1. वर्णागम- आस्थत्, द्वारः, भरुजा।

2. वर्णविपर्यय-

आदि विपर्ययः- ज्योतिः, घनः, बिन्दुः, बाट्यः।

आद्यन्त विपर्ययः- स्तोका रज्जुः सिकतास्तर्क्विति। (तर्कु)

अन्तविपर्ययः- ओघो, मेघो, नाघो, गाघो, वधूर्मध्विति।

3. वर्णविकार-

उपधाविकारः- राजा, दण्डी।

4. वर्णनाश-

आदिशेषः- प्रत्तम्, अवत्तम्।

आदिलोपः- स्तः सन्ति।

अन्तलोपः- गत्वा, गतम्।

उपधालोपः- जग्मतुः, जग्मुः।

वर्णलोपः- तत्त्वा यामीति। (तं त्वा याचामि) द्वारः।

द्विवर्णलोपः- तृचः। (तिस्रः ऋचः)

5. धात्वर्थातिशय-

यज् धातु सम्प्रसारण - **इष्टम्, इष्टवा।**

यज् धातु असम्प्रसारण - **यष्टुम्, यष्टव्यम्।**

दम् उपशमने - दाम्यति, दमयति दान्तः, दमूना ।

कुछ धातुएं सम्प्रसारण रूप में कम प्रयोग वाली होती हैं- **अतिः, मृदुः, पृथुः, पृषतः, कुणारू।**

(लौकिक) से वैदिक कृदन्त शब्द - **दमूनाः, क्षेत्रसाधा** ।

वैदिक से लौकिक कृदन्त शब्द - **उष्णम् घृतम्।**

निम्नलिखित शब्दों की व्युत्पत्तियां-

1. **आचार्यः-** आचार्यः आचारं ग्राहयति, आचिनोत्यर्थान्, अचिनोति बुद्धिमिति वा ।
2. **वीरः-** वीरयति अमित्रम्। वेत्तेर्वा स्याद्गतिकर्मणः, वीरयतेर्वा ।
3. **ह्रदः** - ह्रदो ह्रादते शब्दकर्मणः। ह्रदतेर्वा स्यात्, शीतिभावकर्मणः।
4. **गौ** - गौरिति पृथिव्या नामधेयम्। यद् दूरङ्गता भवति। यच्चास्यां भूतानि गच्छन्ति। गातेर्वा ओकारो नामकरणः।
5. **समुद्रः** - समुद्रवन्त्यस्मादापः। समभिद्रवन्त्येनमापः। सम्मोदन्ते अस्मिन् भूतानि। समुदको भवति। समुनत्तीति वा।
6. **वृत्रः** - वृत्रो वृणोतेर्वा, वर्ततेर्वा यद् वृणोत् तद्वृत्रस्य वृत्रत्वम्। यदवर्धत तद् वृत्रस्य वृत्रत्वम्।
7. **आदित्यः** - आदत्ते रसान्, आदत्ते भासं ज्योतिषाम्, आदीप्तो भासेति वा, अदितेः पुत्र इति वा।
8. **उषस्** - उच्छतीति सत्या रात्रेरपरः कालः ।
9. **मेघः** - मेहतीति सिंचत्यसौ मेघः।
10. **नदी** - नदना इमा भवन्ति शब्दवत्यः।
11. **उदक्** - उन्नत्तीति उदक् । तद्धि यत्र गच्छति, तत्र उनति क्लेदयति।
12. **वाक्** - वक्तीति वाक्। वचेः उच्यतेऽनया इति वाक्।
13. **अश्वः** - अश्नुतेऽध्वानम्। महाशनो भवतीति वा।
14. **अग्निः** - अग्रणीर्भवति। अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते। अङ्गं नयति सङ्गमानः। **अक्नोपनो भवति-"स्थौलाष्ठीवि"**। न क्नोपयति न स्नेहयति।
15. **जातवेदस-** जातानि वेद, जातानि वा एनं विदुः। जाते विधत इति वा।
16. **वैश्वानर** -विश्वान् नरान् नयति। विश्वः एवं नरा नयन्तीति वा अपि वा वैश्वानरः एव स्यात्।
17. **निघण्टु** - ते निगन्तव एव सन्तो निगमनाद् निघण्टवः उच्यन्ते इति औपमन्यवः। अपि वाऽऽहननादेव स्युः, समाहता भवन्ति। यद्वा समाहृता भवन्ति।

॥सप्तमोऽध्यायः॥

॥प्रथमः पादः॥

अथ दैवतकाण्डम्-

दैवतलक्षण- तद्यानि नामानि प्राधान्यस्तुतीनां देवतानां तद् दैवतमित्याचक्षते। सा एषा देवतोपपरीक्षा । यत्कामऋषिः यस्यां देवतायम् आर्थपत्यम् इच्छन् स्तुतिं प्रयुङ्क्ते तद्दैवतः स मन्त्रो भवति । जिन नामों में मुख्य रूप से देवताओं का वर्णन है उनका सङ्ग्रह दैवत कहलाता है, इस काण्ड में देवताओं की पूरी परीक्षा का वर्णन है किसी मन्त्र में कोई काम न लेकर कोई ऋषि जिस देवता का प्रधान अर्थ चाहता है, स्तुति करता है उसी देवता का वह मन्त्र होता है ।

तास्त्रिविद्या ऋचः- परोक्षकृताः। प्रत्यक्षकृताः। आध्यात्मिक्याश्च।

1. परोक्षकृताः- प्रथमपुरुष ।

''तत्र परोक्ष- कृताः सर्वाभिर्नामविभक्तिभिर्युज्यन्ते प्रथमपुरुषैश्च आख्यातस्य"।

उदाहरण-

प्रथमा विभक्ति- इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्याः।

द्वितीया विभक्ति - इन्द्रमिद् गाथिनो बृहत्।

तृतीया विभक्ति - इन्द्रेणैते तत्सवो वेविषाणाः।

चतुर्थी विभक्ति - इन्द्राय साम गायत।

पंचमी विभक्ति - नेन्द्राद्दते पवते धाम किञ्चन।

षष्ठी विभक्ति - इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्।

सप्तमी विभक्ति - इन्द्रे कामा अवंसत।

2. प्रत्यक्षकृताः- मध्यमपुरुष ।

''अथ प्रत्यक्षकृता मध्यमपुरुषयोगाः। त्वमिते चैतेन सर्वनाम्ना"।

प्रत्यक्षतः कही गई ऋचाएं मध्यम पुरुष में होती हैं और तुम (त्वम्) सर्वनाम से संयुक्त रहती हैं । उदाहरण- त्वमिन्द्र बलादधि। वि न इन्द्र मृधो जहि।

- **प्रत्यक्षकृताः स्तोतारो भवन्ति । परोक्षकृतानि-स्तोतव्यानि ।** कहीं-कहीं पर स्तुति करने वाले प्रत्यक्षतः कहे जाते हैं और स्तोतव्य वस्तुएं परोक्षतः कही जाती हैं । **उदाहरण-** मा चिदन्यद्विशंसत। कण्वा अभि प्रगायत। उप प्रेत कुशिकाश्चेतयध्वम्।

3. आध्यात्मिक्य- उत्तमपुरुष ।

अथाध्यात्मिक्यः उत्तमपुरुषयोगाः। अहमिति चैतेन सर्वनाम्ना। स्वयं की कही गई ऋचाएं उत्तम पुरुष में होती हैं और मैं (अहम्) इस सर्वनाम से संयुक्त रहती हैं । **उदाहरण-** इन्द्रो वैकुण्ठः। लवसूक्तम्। वागाम्भृणीयम् (वाक् सूक्त) ।

- परोक्षकृताः प्रत्यक्षकृताश्च मन्त्रा भूयिष्ठाः। अल्पशः आध्यात्मिकाः।

॥द्वितीयः पादः॥

तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः।

(1) पृथ्वि स्थानीय देवता- अग्नि, सोम, बृहस्पति, प्रजापति, विश्वकर्मा अदिति-दिति, देवियां, नदियां।

(2) अन्तरिक्ष स्थानीय देवता- इन्द्र, रुद्र, मरुत्, पर्जन्य, वात, मातरिश्वा, आप, अपानपात्, त्रित आस्य, अहिर्बुध्न्य, वायु।

(3) द्युस्थानीय देवता- आदित्य, (ऋताधिपति) सविता, सूर्य, पूषा, पूषन, मित्र, वरुण, उषस्, अर्यमा, अश्विनौ, द्यौ, विष्णु विवस्वत्

"देवो दानाद् वा, दीपनाद् वा, द्योतनाद् वा, द्युस्थानो भवतीति वा"।

॥तृतीयः पादः॥

1. अग्नि भक्तीनि (साहचर्य) - पृथिवी लोकः। प्रातः सवनम्। वसन्तः (शरद)। गायत्री (अनुष्टुप)। त्रिवृत्स्तोमः। रथन्तरं साम।

अस्य संस्तविका देवाः- इन्द्रः, सोमः, वरुणः, पर्जन्यः, ऋतवः।

अस्य कर्म- वहनं च हविषामावाहनं च देवतानाम् ।

2. इन्द्र भक्तीनि- अन्तरिक्षलोकः। माध्यन्दिनं सवनं। ग्रीष्मः (हेमन्त) त्रिष्टुप् (पंक्ति) पञ्चदशस्तोमः । (त्रिणव) बृहत्साम (शाक्कर)।

अस्य कर्म- रसानुप्रदानं वृत्रवधः। या च का च बलकृतिः इन्द्रकर्मैव तत्।

अस्य संस्तविका देवाः- अग्निः, सोमः, वरुणः, पूषा, बृहस्पतिः, ब्रह्मणस्पतिः, पर्वतः, कुत्सः, विष्णुः, वायुः, मित्र, वरुण। (शिशिर, अतिच्छन्द, त्रयस्त्रिंशदस्तोम, रैवत, साम)

3. आदित्य भक्तीनि- (द्युलोक)। तृतीयसवनम् । शिशिर वर्षा । जगती । सप्तदशस्तोमः। वैरुप साम ।

अस्य कर्म- रसादानं रश्मिभिश्च रसधारणम्।

निरुक्त में चार प्रकार के देवतावाद-

(1) पौरुषविध्यम् (2) अपौरुषविध्यम्

(3) कर्मार्थात्मोभयविध्यम् (4) नित्यमौभयविध्यम्

- **शाकपूणिः सङ्कल्पयाञ्चक्रे सर्वा देवता जानामीति।**
- **अयमेवाग्निर्वैश्वानर इति शाकपूणिराचार्यो मन्यते।। (शाकपूणि)**

निरुक्त के टीकाकार-

स्कन्दस्वामी- 500 ई.,
देवराजयज्वा -1300 ई.,
दुर्गाचार्य - 1300 ई- (1. निरुक्तश्लोकवार्तिक 2. ऋज्वर्थवृत्ति)
महेश्वर-

निरुक्त का महत्व-

निरुक्त की उपादेयता को देखकर अनेक पाश्चात्य विद्वान् इस पर मुग्ध हुए हैं। उन्होंने भी इसपर लेखनकार्य किया है। सर्वप्रथम **रॉथ** ने **'जर्मन भाषा'** में निरुक्त की भूमिका का अनुवाद प्रकाशित किया है। जर्मन भाषा में लिखित इस अनुवाद का **प्रो॰ मैकीशान** ने आंग्ल अनुवाद किया है। यह बंबई विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित है। स्कोल्ड ने जर्मन देश में रहकर इस विषय पर अध्ययन किया है और इसी विषय पर प्रबंध लिखकर प्रकाशित किया है। स्वामी दयानंद सरस्वती ने अपने वैदिक भाष्यों और सत्यार्थ प्रकाश में वैदिक मंत्रों के अर्थ करने के लिए इस ग्रंथ का बहुत सहारा लिया है। महर्षि औरोबिन्दो ने भी वेदों को समझने में निरूक्त की महत्वपूर्ण भूमिका का ज़िक्र किया है।

निरुक्त और व्याकरण में अन्तर-

वैदिक संस्कृत की भाषा समझने के लिए व्याकरण का भी पाठन होता है और अष्टाध्यायी को इसका महत्तम ग्रंथ माना जाता है। निरुक्त में शब्दों के मूल का वर्णन है, यानि किस भावना के कारण घोड़े को अश्व कहा जाता है (आशु यानि तेज गति से जाने के कारण) इसका वर्णन है। जबकि व्याकरण में अश्वारूढ़ (अश्व पर आरोहित, घोड़े पर सवार) के मूल शब्दों से उत्पन्न भावना का वर्णन है। निरुक्त में चूँकि मूलों का वर्णन है, अतः जिन शब्दों का वर्णन है वह छोटे (2-3 वर्ण) हैं, जवकि व्याकरण में लम्बे शब्दों और वाक्यों का भी वर्णन है, क्योंकि व्याकरण सन्धि-समास-अलंकार आदि का विवेचन करता है।

॥वैदिक स्वर॥

उदात्त,अनुदात्त तथा स्वरित

वेद की संहिताओं में मंत्राक्षरों में खड़ी तथा आड़ी रेखायें लगाकर उनके उच्च, मध्यम, या मन्द संगीतमय स्वर उच्चारण करने के संकेत किये गये हैं। इनको उदात्त, अनुदात्त और स्वरित के नाम से अभिहित किया गया है। ये स्वर बहुत प्राचीन समय से प्रचलित हैं और महामुनि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में इनके मुख्य मुख्य नियमों का समावेश किया है।

स्वरों को अधिक या न्यून रूप से बोले जाने के कारण इनके भी दो-दो भेद हो जाते हैं। **जैसे- उदात्त-उदात्ततर, अनुदात्त-अनुदात्ततर, स्वरित-स्वरितोदात्त** । इनके अलावा एक और स्वर माना गया है - **श्रुति** - इसमें तीनों स्वरों का मिलन हो जाता है। इस प्रकार कुल स्वरों की संख्या 7 हो जाती है। इन सात स्वरों में भी आपस में मिलने से स्वरों में भेद हो जाता है जिसके लिए स्वर चिह्नों में कुछ परिवर्तन हो जाता है। यद्यपि इन स्वरों के अंकन और टंकण में कई विधियाँ प्रयोग की जाती हैं और प्रकाशक-भाष्यकारों में कोई एक विधा सामान्य नहीं है, अधिकांश स्थानों पर अनुदात्त के लिए अक्षर के नीचे एक आड़ी लकीर तथा स्वरित के लिए अक्षर के ऊपर एक खड़ी रेखा बनाने का नियम है। इससे अंकन में समस्या आने से कई लेखक-प्रकाशक स्वर चिह्नों का प्रयोग ही नहीं करते। वैदिक वाङ्मय में उदात्त आदि स्वरों के अनेक भेद उल्लिखित है, कहीं सात, कहीं पाँच , कहीं चार, कहीं तीन ,कहीं दो और कहीं एक ही स्वर का उल्लेख मिलता है। महाभाष्य में सात स्वर गिनाये गए है। नाटक शिक्षा में 5स्वर वर्णित है-

उदात्ताश्चानुदात्तश्चस्वरितप्रचितोत,
निपातश्चेति विधेय स्वरभेदस्तु पंचमः।

साधारणतया निपात शब्द अनुदात्त अर्थ में प्रसिद्ध है, शाकल, माध्यन्दिन , काण्व, कौथुम, आदि संहिताओं में उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इन तीन स्वरों का ही उच्चारण होता है। प्रचय स्वर का भी उल्लेख है। स्वर शास्त्र के अनुसार उदात्त आदि समस्त स्वर उच्चारण वर्ण स्वर अर्थात् अच् संज्ञक वर्णो के धर्म है, व्यंजनों के नही। अच् ही ऐसे वर्ण है जिनका उच्चारण विना अन्य वर्ण की सहायता के होता है, **"स्वयं राजन्त इति स्वराः"। (महाभाष्य ।1।2।30)** उदात्त अनुदात्त और स्वरित स्वरों के लक्षण और उनके उच्चारण की विधि का उल्लेख अनेक ग्रंथों में मिलता है। पाणिनीय मत- **उच्चैः उदात्तः, नीचैः अनुदात्तः, समाहारः स्वरितः ।**

1. उदात्त- उच्चैरुदात्तः।

उदात्त का अपना कोई चिह्न नहीं है। **"अपूर्वो अनुदात्तपूर्वो वा अतद्धितः उदात्तः"**। जिससे पूर्व कोई स्वर न हो, अथवा अनुदात्त पूर्व में हो, (स्वरित उत्तर में हो) एसा चिह्न रहित अक्षर उदात्त होता है । जिस स्वर के उच्चारण में आयाम हो, उसे उदात्त कहते है, आयाम का अर्थ है, मात्राओं का स्वर की तरफ खींचा जाना ।

2. अनुदात्त- नीचैरनुदात्तः

जिस स्वर के उच्चारण में विलंब हो, उसे अनुदात्त कहते है। **"अणोरेखयाअनुदात्तः"** । अक्षर के नीचे पड़ी रेखा से अनुदात्त स्वर का निर्देश किया जाता है। मात्रों की शिथिलता या उनका अधोगमन विश्राम कहलाता है ।

3. स्वरित- समाहारः स्वरितः।

"उर्ध्व रेखया स्वरितः" । अक्षर के ऊपर खड़ी रेखा से स्वरित का निर्देश किया जाता है । जिस स्वर के उच्चारण में आक्षेप हो, उसे स्वरित कहते है, आक्षेप का अर्थ है- मात्राओं का निचैरगमन। इस प्रकार के निर्देशन के आधार पर ही शुद्ध उच्चारण कर पाना कठिन ही है। इन स्वरों का सूक्ष्म उच्चारण प्रकार चिरकाल से लुप्तप्राय है, महाराष्ट्र में कुछ वृहद् ऋग्वेदीय ब्राह्मण स्वरों के सूक्ष्म उच्चारण में कदाचित् समर्थ होते, परन्तु अधिकतर श्रोत्रिय हस्त आदि अंगचालन के द्वारा ही उदात्त आदि स्वरों का द्योतन करते है । **'उदात्तानुदात्तस्य स्वरितः'**। उदात्त के बाद यदि अनुदात्त स्वर आए तो उसे स्वरित हो जाता है । यदि उदात्त के पश्चात के अनुदात्त के पश्चात पुनः उदात्त आवे तो वह अनुदात्त ही रहता है। उदात्त और अनुदात्त शुद्ध और स्वतंत्र स्वर है। इन्हीं दोनों के मेल से स्वरित की उत्पत्ति होती है।

स्वरित के भेद= (8)

"जात्योऽभिनिहितः क्षेप्रः प्रश्लिष्टश्च तथाऽपरः,
तैरोव्यञ्जनसंज्ञश्च तथा तैरोविरामकः।
पादवृत्तो भवेत्तद्वत् ताथाभाव्य इति स्वराः।।"

प्रातिशाख्य आदि ग्रन्थों में नव प्रकार के स्वरितों का उल्लेख मिलता है। इनमें से मुख्यतया पाँच महत्वपूर्ण है।

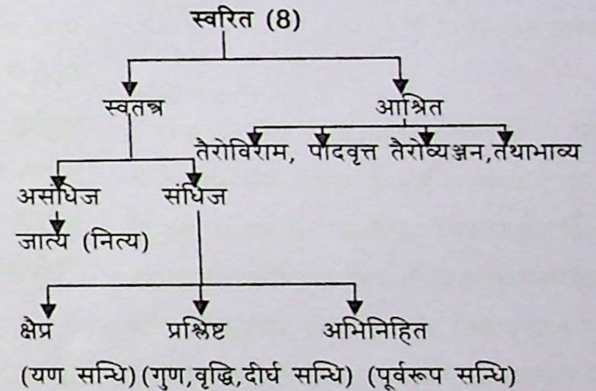
1. संहितज अथवा सामान्य स्वरित- एक पद में अथवा अनेक पदों की संहिता में उदात्त से परे अनुदात्त को जो स्वरित होता है, उसे सामान्य स्वरित कहते है,

2. जात्य- जो स्वरित अपनी जाति (जात्य, स्वभाव) से स्वरित होता है, अर्थात जो किसी उदात्त वर्ण के संयोग से अनुदात्त स्वरित भाव को प्राप्त नही होता , उसे जात्य स्वरित कहते है। तैत्तरीय प्रातिशाख्य में इसे नित्य स्वरित कहा है, यह स्वरित पदपाठ में भी स्वरित ही बना रहता है । अभिनिहित, क्षेप्र , तथा प्रश्लिष्ट संधियों के फलस्वरूप उत्पन्न होने वाले स्वरित तत् तत् संधियों के नाम पर अभिनिहित, क्षेप्र तथा प्रश्लिष्ट स्वरित कहलाते है।

3. अभिनिहित- एकार तथा ओकार से परे जहाँ ह्रस्व अकार का बोध अथवा पूर्वरुप होता है, उस संधि को प्रातिशाख्यों में अभिनिहित संधि कहते है। इस संधि के कारण उदात्त एकार अथवा उदात्त ओकार (चाहे वह स्वतंत्र रुप से हो अथवा संधि से बना हो) से परे अनुदात्त अकार का बोध अथवा पूर्व रुप होने पर जो स्वरित होता है, उसे अभिनिहित संधि के कारण अभिनिहित स्वरित कहते है।

4. क्षेप्र- इ उ ऋ लृ के स्थान में अच् परे रहने पर जो य् र् व् ल् (यण्) आदेश तथा संधि होती है, उसे प्रातिशाख्यों में क्षेप्र संधि कहते है। इसी क्षेप्र संधि के अनुसार यहाँ उदात्त इकार उकार के स्थान में यण् आदेश होने पर उनमें अनुदात्त स्वर को स्वरित हो जाता है, उसे क्षेप्र स्वरित कहते हैं ।

5. प्रश्लिष्ट- दो अर्थो के मिलने से जो संधि होती है, उसे प्रश्लिष्ट संधि कहते है। और इस कारण होने वाला स्वरित प्रश्लिष्ट स्वरित कहलाता है। वैसे प्रातिशाख्यों के अनुसार प्रश्लिष्ट संधि पाँच प्रकार की होती है, परन्तु स्वरित में केवल दो प्रकारों की (उदात्तह्रस्व+ अनुदात्तह्रस्व) दीर्घ रुप संधि में देखा जाता है।
उदात्त और अनुदात्त स्वरों की प्रश्लिष्ट संधि दो प्रकार की होती है। एक वह जिसमें पूर्ववर्ण अनुदात्त हो, और उत्तरवर्ण उदात्त । एसी सभी प्रश्लिष्ट संधियों में दोनों स्वरों के स्थान में उदात्तरूप एकादेश होता है। दूसरी प्रश्लिष्ट संधि वह है जिसमें पूर्ववर्ण उदात्त हो और उत्तर वर्ण अनुदात्त । इन दोनों स्वरों के स्थान पर जो एकादेश होता है , वह शाखा भेद से भी उदात्त और कहीं स्वरित देखा जाता है , ऋग्वेद की शाकल शाखा में यह स्वरित ही होता है और इसे प्रश्लिष्ट स्वरित कहते है।



प्रचय- "स्वरितात् परो अतद्धित एकयुति"।
स्वरित से परे जिस या जिन अक्षरों पर कोई चिह्न न हो , उन्हें एकयुति अथवा प्रचय कहते है।
इन्द्रशत्रुः **आद्युदात्त** बहुव्रीहिः – समास।
इन्द्रशत्रुः **अन्तोदात्त** तत्पुरुष - समास ।
अवग्रह सम्बन्धी नियम - भ्याम्, भ्यस्, भिस् सु त्व आदि से पूर्व तथा द्वन्द्व समास और नञ् समास को छोड़कर समास युक्त पदों के बीच में अवग्रह लगता है। **यथा-** "विश्वऽवेदसे प्रगृह्य"

॥वैदिक व्याख्या पद्धति॥

वेदों के गूढ़ अर्थों को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न आचार्यों ने विभिन्न पद्धतियाँ अपनाई हैं । इनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

॥प्राचीन व्याख्या-पद्धति॥

(1) आचार्य यास्क : आचार्य यास्क प्रथम आचार्य हैं, जिन्होंने वेदों की व्याख्या के लिए आवश्यक नियमों का निर्देश किया है । प्रायः सभी परवर्ती आचार्यों ने यास्क के निर्देशों का पालन किया है । वेदों की व्याख्या करते समय इन नियमों का पालन करना चाहिए :

(क) न तु पृथक्त्वेन मन्त्रा निर्वक्तव्याः । प्रकरणश एव तु निर्वक्तव्याः- निरुक्त 13.12 । मंत्रों की व्याख्या प्रकरण के अनुसार ही करनी चाहिए, पृथक् से नहीं ।

(ख) अयं मन्त्रार्थचिन्ताऽभ्यूहोऽभ्यूढः । अपि श्रुतितोऽपि तर्कतः- नि. 13.12 । मंत्रों की व्याख्या परम्परागत पद्धति के ज्ञान से करनी चाहिए । अर्थात् वेदार्थ में परंपरागत अर्थ का ज्ञान आवश्यक है । वह युक्तिसंगत होना चाहिए।'

(ग) न ह्येषु प्रत्यक्षमस्ति, अनृषेरतपसो वा- निरुक्त 13.12। वेदों में कुछ गूढ अर्थ छिपे हुए हैं, उन्हें आर्षदृष्टि (सूक्ष्म दृष्टि) से या कठिन परिश्रम से जाना जा सकता है ।

(2) आचार्य सायण : वेदों की व्याख्या करने वाले आचार्यों में आचार्य सायण का स्थान अग्रगण्य है । वे अकेले ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने सभी वेदों तथा ब्राह्मण-ग्रन्थों आदि की भी व्याख्या की है। उन्होंने **परम्परागत शैली** को अपनाया है। तथा यज्ञ-प्रक्रिया को सर्वत्र प्रधानता दी है। उन्होंने ब्राह्मण-ग्रन्थों और सूत्रग्रन्थों आदि को आधार बनाया है। **निरुक्त** की व्याख्या को भी अपनाया है। स्थान-स्थान पर **आध्यात्मिक** और **दार्शनिक** व्याख्या भी की है । वे वेदों में **इतिहास** मानते हैं । वेदों को **अपौरुषेय** और **नित्य** मानते हैं। लौकिक इतिहास मानने के कारण स्वामी दयानन्द जी ने इनकी कटु आलोचना की है। पाश्चात्य विद्वानों का आक्षेप है कि परवर्ती शंकराचार्य आदि द्वारा प्रतिपादित अद्वैत-सिद्धान्त आदि का वेदों की व्याख्या में उल्लेख **विपर्यस्तता दोष** (Anachronism) है । **प्रो. रुडोल्फ** रोथ ने सायण की बहुत आलोचना की है और कई दोष निकाले हैं, परन्तु **मैक्समूलर, विल्सन, गेल्डनर** आदि विद्वान् सायण के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं और मानते हैं कि सायण के भाष्य के आधार पर ही वैदिक वाङ्मय में उनकी काल-गति हो सकी है। वस्तुतः पाश्चात्त्य जगत् को वेदों का ज्ञान देने वाले आचार्य सायण ही हैं ।

॥अर्वाचीन व्याख्या- पद्धति॥

(1) स्वामी दयानन्द सरस्वती : आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती आधुनिक युग में वेदों के पुनरुद्धारक माने जाते हैं। उन्होंने **नैरुक्त-प्रक्रिया** का आश्रय लेकर वेदों की नई व्याख्या प्रस्तुत की है । उन्होंने शुक्ल यजुर्वेद संपूर्ण की संस्कृत और हिन्दी में व्याख्या की है । ऋग्वेद की व्याख्या मंडल 7 के 80 सूक्त तक ही कर सके। असामयिक निधन से ऋग्वेद - भाष्य पूरा नहीं हो सका । महर्षि दयानन्द के मन्तव्य एवं भाष्य की मुख्य विशेषताएँ ये हैं : 1. वेद ईश्वरीय ज्ञान है । उसमें सभी विद्याओं के सूत्र विद्यमान हैं । (2) वेद अपौरुषेय हैं किसी ऋषि आदि की कृति नहीं हैं। (3) वेदों में नित्य इतिहास है, लौकिक इतिहास नहीं ।

(2) पं. मधुसूदन ओझा : महामहोपाध्याय पं. मधुसूदन ओझा वेदों क वैज्ञानिक व्याख्या करने वालों में अग्रगण्य हैं । उनका लन्दन में संस्कृत में दिया गया एक व्याख्यान बहुत प्रसिद्ध है - "**अति नूलं, नहि नहि अतिप्रलं रहस्यम्'** अर्थात् अति नवीन रहस्य, नहीं, अपितु यह अति प्राचीन रहस्य है । यद्यपि उन्होंने किसी वेद या ब्राह्मण ग्रन्थ पर भाष्य नहीं लिखा है , परन्तु इन्होंने संस्कृत में 100 से अधिक ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी शिष्य-परंपरा में विशेष उल्लेखनीय हैं **पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी** और **मोतीलाल शर्मा** । पं0 गिरिधर शर्मा जी ने ओझा जी के विचारों का सुन्दर प्रतिपादन अपने ग्रन्थ **'वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति'** में किया है श्री मोतीलाल शर्मा ने एक उच्चकोटि का ग्रन्थ **'दिग्देशकालमीमांसा'** लिखा है ।

(3) डा. वासुदेवशरण अग्रवाल : महामनीषी डा. अग्रवाल श्री ओझा जी की व्याख्या-पद्धति के अनुयायी हैं । आपने **वेदविद्या, वेदरश्मि, उरुज्योति** आदि ग्रन्थ हिन्दी में लिखे हैं और इंग्लिश में "Vision in Long Darkness", Thousand syllabled speech, Vedic Lectures आदि ग्रन्थों के द्वारा वेदों की आध्यात्मिक और वैज्ञानिक व्याख्या की है ।

(4) योगी अरविन्द : श्री अरविन्द घोष क्रान्तिकारी जीवन बिताने के बाद अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी में योगसाधना में प्रवृत्त हुए । इन्होंने The secret of the Veda, Hymns to the mystic Fire, On the Veda " आदि ग्रन्थ वेदों पर लिखे हैं । इन्होंने स्वामी दयानन्द के इन विचारों की पुष्टि की है कि **'सर्वज्ञानमयो हि सः'** (मनु.

2.7) अर्थात् वेदों में सभी ज्ञान-विज्ञान के सूत्र विद्यमान हैं । इनकी दृष्टि रहस्यवादी है । ये वेदों में अध्यात्मविद्या के गूढ रहस्यों की उपस्थिति मानते हैं। वेद आध्यात्मिक अनुभूतियों के कोश हैं । उन्होंने कुछ शब्दों की व्याख्या इस प्रकार की है 1. **इन्द्र प्रबुद्ध मन का देवता है, वृत्र अज्ञान** या अविद्या का प्रतीक है । 2. ऋत आध्यात्मिक सत्य है । 3. घृत घी ही नहीं, अपितु ज्ञान के प्रकाश का द्योतक है । इस प्रकार श्री अरविन्द ने वेदों की आध्यात्मिक एवं रहस्यवादी व्याख्या की है ।

(5) श्री सातवलेकर : वेदमूर्ति श्री पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर आधुनिक युग के **सायण** हैं । उन्होंने चारों वेदों, तैत्तिरीय संहिता, मैत्रायणी संहिता, काठक संहिता,दैवत संहिता आदि के विशुद्ध संस्करण निकाले हैं और **चारों वेदों** का हिन्दी में **'सुबोध भाष्य'** प्रकाशित किया है ।

(6) डा. आनन्द कुमार स्वामी : डा. स्वामी आधुनिक कलाविद थे। उन्होंने **'A New approach to the Vedas'** ग्रन्थ लिखा है। इसमें उन्होंने वेदों को सिद्धों की वाणी कहा है ।

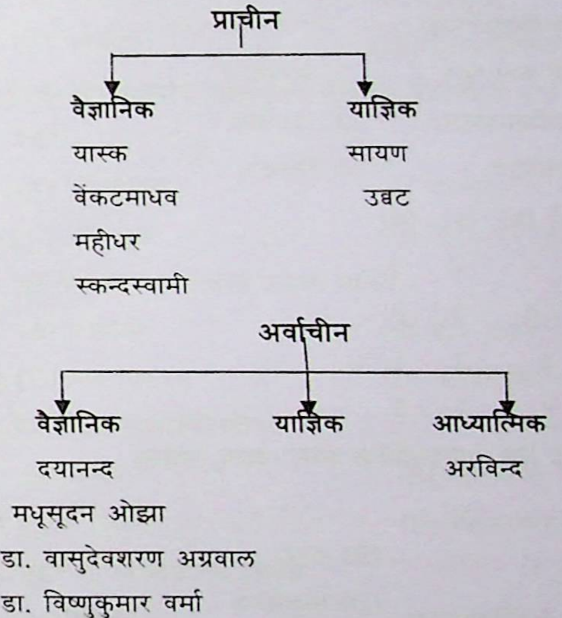
(7) डा. विष्णुकुमार वर्मा : डा. वर्मा ने **'वैदिक सृष्टि-उत्पत्तिरहस्य'** नामक ग्रन्थ दो भागों में लिखा है। उन्होंने वैदिक विचारधारा का आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है। डा. वर्मा ने वैदिक शब्दावली की विज्ञानपरक व्याख्या प्रस्तुत की है ।

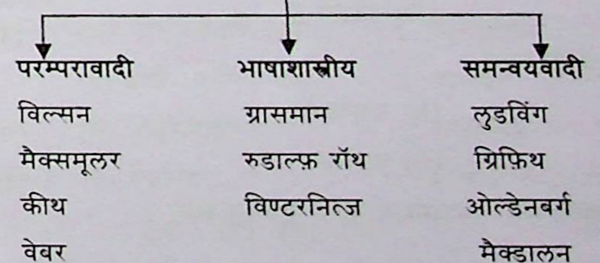
॥पाश्चात्य पद्धति॥

पाश्चात्त्य विद्वानों ने वेदार्थ के अनुशीलन के लिए तुलनात्मक भाषाशास्त्र और इतिहास की आवश्यकता पर बल दिया है । इस पद्धति को **ऐतिहासिक पद्धति (Historical Method)** कहते हैं । इसके मूल में यह भावना निहित है कि **भारोपीय भाषा-परिवार** एक है। **संस्कृत, लेटिन, ग्रीक्, जर्मन्, इंग्लिश्** आदि एक ही भारोपीय भाषा से निकले हैं । समस्त भारोपीय आर्य-परिवार के व्यक्ति प्रारम्भ में एक ही स्थान पर रहते थे। मूल भारोपीय भाषा एक ही थी। धीरे-धीरे आर्य-परिवार के संगठन विभिन्न स्थानों पर गए। वे अपने साथ मूल धार्मिक भावनाओं को भी लेते गए। अतः उनके कर्मकांड, धार्मिक मान्यताओं एवं संस्कृतियों में मूलरूप से एकता है। इस एकत्व को आधार मानकर देवशास्त्र, कर्मकाण्ड आदि की तुलनात्मक व्याख्या की जा सकती है। इस मान्यता को अपनाकर **प्रो. रुडोल्फ रोठ** आदि विद्वानों ने वेदों की व्याख्या करने का प्रयत्न किया है। यह पद्धति सैद्धान्तिक रूप से सर्वथा ग्राह्य है। भाषाविज्ञान के आधार पर अनेक वैदिक देवों का इतिहास ज्ञात होता है। कुछ ऐतिहासिक तथ्य भी ज्ञात होते हैं। परन्तु इतने मात्र से वेदार्थ स्पष्ट होना संभव नहीं है। इस पद्धति के कुछ प्रमुख दोष ये हैं : (1) इस पद्धति से केवल देववाचक आदि कुछ शब्दों का स्पष्टीकरण होता है, अन्य का नहीं। ऐसे शब्द 10 प्रतिशत से अधिक नहीं है । शेष के लिए मार्ग अवरुद्ध है। (2) इसमें वेदार्थ की गहराई में जाने का प्रयत्न नहीं किया गया है। (3) वेदमंत्रों के आध्यात्मिक और दार्शनिक अर्थ की उपेक्षा की गयी है। (4) इस पद्धति के द्वारा मंत्रों के अर्थ का अनर्थ किया गया है और मनगढ़न्त अर्थ दिए गए हैं। अतः वेदार्थ के लिए यह पद्धति स्वीकार्य नहीं है ।

वेद व्याख्या पद्धति के दो भाग-

(1) भारतीय





॥वैदिक अभ्यास प्रश्न॥

1. आर्षेयब्राह्मणं केन वेदेन सम्बद्धोऽस्ति

(A) सामवेदेन (B) अथर्ववेदेन
(C) ऋग्वेदेन (D) यजुर्वेदेन

2. 'कठोपनिषद्' केन वेदेन सम्बद्धा ?

(A) ऋग्वेदेन (B) अथर्ववेदेन
(C) कृष्णयजुर्वेदेन (D) शुक्लयजुर्वेदेन

3. शिक्षावेदाङ्गस्य को विषयः ?

(A) यज्ञः (B) उपासना
(C) मोक्षः (D) उच्चारणम्

4. "व्याकरणस्य कात्स्र्यम्" किमस्ति -

(A) छन्दशास्त्रम् (B) निरुक्तम्
(C) ज्योतिषम् (D) कल्पशास्त्रम्

5. अधोऽङ्कितानां समीचीनमुत्तरं चिनुत -

(a) पुरुषविद्याऽनित्यत्वात् कर्मसम्पत्तिर्मन्त्रो वेदे — 1. ईशोपनिषद
(b) ओऽम् क्रतो स्मर — 2. ऋग्वेदः
(c) कौषीतकिब्राह्मणम् — 3. अथर्ववेदः
(d) शौनकसंहिता — 4. निरुक्तम्

	(a)	(b)	(c)	(d)
(A)	4.	1.	2.	3.
(B)	1.	4.	3.	2.
(C)	3.	4.	2.	1.
(D)	1.	2.	4.	3.

6. "उप त्वाग्ने दिवे दिवे दोषावस्तर्धिया वयम्" अस्य, मन्त्रस्य ऋषिर्वर्तते -

(A) अग्निः (B) कण्वः
(C) दीर्घतमा (D) मधुच्छन्दाः

7. 'दस्योर्हन्ता' को देवः ?

(A) इन्द्रः (B) विष्णुः
(C) वरुणः (D) कोऽपि न

8. 'काण्वशाखा' कस्य वेदस्य ?

(A) सामवेदस्य (B) यजुर्वेदस्य
(C) अथर्ववेदस्य (D) ऋग्वेदस्य

9. "तस्य वयं प्रसवे याम उर्वीः" मन्त्रांशोऽयं कस्य सूक्तस्य वर्तते ?

(A) रुद्रसूक्तस्य
(B) विश्वामित्रनदीसूक्तस्य
(C) सरमापणिसूक्तस्य
(D) यमयमीसूक्तस्य

10. "श्रिये गावो न धेनवोऽनवन्त" मन्त्रांशोऽयं कुत्र वर्तते

(A) विश्वामित्रनदीसूकते
(B) सरमापणिसूक्तस्य
(C) पुरूरवा-उर्वशीसूक्ते
(D) रुद्रसूक्तस्य

11. "वेदा अपौरुषेयाः सन्ति" -इति कस्य मतमस्ति

(A) मैक्समूलरस्य (B) महर्षिदयानन्दस्य
(C) विन्टरनित्सस्य (D) सर्वेषामेव

12. चातुर्मास्ययागे वर्तते -

(A) अग्निहोत्रम् (B) आग्रयणम्
(C) सौत्रामणी (D) साकमेधीयम्

13. 'नारदीयशिक्षा' सम्बद्धा वर्तते -

(A) सामवेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) कृष्णयजुर्वेदेन (D) शुक्लयजुर्वेदेन

14. समानाक्षराणि कति -

(A) 9 (B) 12
(C) 8 (D) 10

15. अन्तरिक्षस्थाना देवता अस्ति -

(A) अश्विनौ (B) सोमः
(C) सूर्यः (D) वायुः

16. यास्कीयनिरुक्तानुसारं कस्य पदत्वेन स्वीकारः नास्ति-

(A) नाम्नः (B) उपसर्गस्य
(C) आख्यातस्य (D) प्रत्ययस्य

17. 'वाजसनेयि' इत्यत्र वाज शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) वायु (B) पक्षी
(C) अन्न (D) दान

18. कस्य किं मतम् ?

(अ) अनर्थकाः हि मन्त्राः — 1. नैरुक्तसमयः
(ब) सर्वाणि नामानि-आख्यातजानि — 2. वार्ष्यायणिः
(स) षड्भावविकाराः — 3. कौत्सः
(द) सर्वाणि नामानि-आख्यातजानि न — 4. गार्ग्यः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	1	2	4
(B)	1	2	4	3

(C) 3 2 1 4

(D) 4 1 2 3

19. 'अन्नाद् भूतानि जायन्ते जातान्यन्नेन वर्धन्ते' – इयम् उक्तिः कुत्र अस्ति ?

(A) कठोपनिषदि (B) बृहदारण्यकोपनिषदि

(C) केनोपनिषदि (D) तैत्तिरीयोपनिषदि

20. 'अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽन्तरात्मा' – इयम् कुत्रास्ति ?

(A) ईशोपनिषदि (B) तैत्तिरीयोपनिषदि

(C) कठोपनिषदि (D) केनोपनिषदि

21. "न वा अरे जायायै कामाय जाया प्रिया भवति, आत्मनस्तु कामाय जाया प्रिया भवति" कस्य इयं उक्ति -

(A) कात्यायनस्य (B) मैत्रेय्याः

(C) याज्ञवल्क्यस्य (D) गार्ग्यस्य

22. 'वाचं धेनुमुपासीत्' - इति कुत्र उपदिश्यते ?

(A) श्रीमद्भागवते (B) बृहदारण्यकोपनिषदि

(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) ईशोपनिषदि

23. अधस्तनानां समीचीनमुत्तरं चिनुत -

(a) सामवेदः 1. कठोपनिषद्

(b) कृष्णयजुर्वेदः 2. बृहदारण्यकोपनिषद्

(c) शुक्लयजुर्वेदः 3. तैत्तिरीयोपनिषद्

(d) एष आदेशः, एष उपदेशः, एषा वेदोपनिषद् 4. केनोपनिषद्

	(a)	(b)	(c)	(d)
(A)	4	1	2	3
(B)	4	2	1	3
(C)	1	2	3	4
(D)	3	2	1	4

24. बृहती-छन्दसि' कियन्तो वर्णाः भवन्ति ?

(A) 44 (B) 40

(C) 36 (D) 38

25. आध्यात्मिकव्याख्यापद्धतौ वेदे प्रयुक्तस्य 'अग्नि' शब्दस्य कः अर्थः -

(A) श्रौताग्निः (B) विद्युत्

(C) परमात्मा (D) स्मार्त्ताग्निः

26. 'वाजसनेयि' इत्यत्र 'सनेयि' शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) वायु (B) पक्षी

(C) दान (D) अन्न

27. 'तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः' कुत्रोपदेशः ?

(A) ईशोपनिषदि (B) तैत्तिरीयोपनिषदि ।

(C) श्रीमद्भागवते (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

28. 'यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम्' कुत्र इयम् उक्तिः ?

(A) ईशोपनिषदि (B) केनोपनिषदि

(C) कठोपनिषदि (D) भगवद्गीतायाम्

29. सृष्ट्युत्पत्तिविषयकं विवेचनं कुत्र वर्तते -

(A) पुरुषसूक्ते (B) अग्निसूक्ते

(C) इन्द्रसूक्ते (D) पृथिवीसूक्ते

30. "ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः". अस्य मन्त्रस्य ऋषिः कः अस्ति -

(A) मधुच्छन्दाः (B) अजीगर्तः

(C) कण्वः (D) नारायणः

31. 'वाक्-सूक्तस्य' (ऋग्वेदे 10.125) का देवता ?

(A) वाक् (B) आत्मा

(C) भार्गवः (D) अम्भृण

32. "यज्ञस्य देवम् ऋत्विजम्" इति मन्त्रांशः कस्मिन् सूक्ते प्राप्यते-

(A) पृथिवीसूक्ते (B) वाक्सूक्ते

(C) अग्निसूक्ते (D) हिरण्यगर्भसूक्ते

33. "अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्" मन्त्रांशोऽयं कुत्र वर्तते -

(A) पृथिवीसूक्ते (B) वाक्सूक्ते

(C) पुरुषसूक्ते (D) हिरण्यगर्भसूक्ते

34. 'शुनःशेप-आख्याने' कस्य उल्लेखो नास्ति -

(A) वरुणस्य (B) वाक्सूक्तस्य

(C) बादरायणस्य (D) अजीगर्तस्य

35. वेदभगवतः मुखत्वेनोपमीयते -

(A) शिक्षा (B) कल्पः

(C) निरुक्तम् (D) व्याकरणम्

36. अङ्गुलीषु स्वरसञ्चालनं क्रियते-

(A) ऋग्वेदे (B) यजुर्वेदे

(C) सामवेदे (D) अथर्ववेदे

37. अधोऽङ्कितानां समीचीनमुत्तरं चिनुत -

(अ) कालगणनायोपयुज्यते 1. सामवेदीयम

(ब) ईशावास्यमिदं सर्वम् 2. ऋग्वेदः

(स) षड्विंशत्राह्मणम् 3. ज्योतिषम्

(द) दशतयी 4. यत्किञ्च जगत्यां जगत्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	3	4	2
(B)	2	4	3	1
(C)	3	4	1	2

(D) 4 3 2 1

38. कति भावविकाराः -

(A) सप्त (B) षट्

(C) अष्ट (D) दश

39. राणायनीयशाखा कस्य वेदस्य ?

(A) ऋग्वेदस्य (B) यजुर्वेदस्य

(C) सामवेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

40. 'रत्नधातममिति' कस्य विशेषणम् ?

(A) बृहस्पतेः (B) अग्नेः

(C) रुद्रस्य (D) वायोः

41. अपां नेता कः ?

(A) सोमः (B) रुद्रः

(C) वरुणः (D) इन्द्रः

42. 'पैप्पलाद-संहिता' केन वेदेन सम्बद्धा ?

(A) यजुर्वेदेन (B) अथर्ववेदेन

(C) सामवेदेन (D) ऋग्वेदेन

43. ग्रन्थवाचक-ब्राह्मण-लक्षणं कतिधा प्रतिपाद्यते ?

(A) नवधा (B) दशधा

(C) पञ्चदशधा (D) षोडशधा

44. वेदारम्भो विधीयते -

(A) संहितातः (B) पदपाठतः

(C) जटापाठतः (D) घनपाठतः

45. 'नारदीय-शिक्षा' केन वेदेन सम्बद्धा ?

(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

46. एषु प्राचीनव्याख्याकारो वर्तते -

(A) जैकोबी (B) मैक्समूलर

(C) ए. वेबर (D) सायणः

47. निरुक्तानुसारं चतुर्थो भावविकारः कः अस्ति ?

(A) अस्ति (B) वर्धते

(C) अपक्षीयते (D) विनश्यति

48. 'उच्छतीति' निरुक्त्या उच्यते -

(A) वाक् (B) उदकम्

(C) उषस् (D) आदित्यः

49.' वा' इति निपातो कस्मिन् अर्थे वर्तते -

(A) निषेधार्थे (B) विचारणार्थे

(C) उपमार्थे (D) प्रयोगार्थे

50. "अमृतश्च स्थितश्च यच्च सच्च त्यच्च" - कुत्रेयमुक्तिः ?

(A) केनोपनिषदि (B) तैत्तिरीयोपनिषदि

(C) छान्दोग्योपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

51. आनन्दमयस्य शिरः किमुच्यते ?

(A) आनन्दः (B) मोदः

(C) प्रियम् (D) प्रमोदः

52. "मृत्यवे त्वा ददामि" इति केनोक्तम् ?

(A) यमेन (B) नचिकेतसा

(C) उद्दालकेन (D) कुमारेण

53. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारं सोष्मवर्णः कः ?

(A) च (B) छ

(C) ज (D) ट

54. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारम् अघोषवर्णः कः ?

(A) श (B) ड

(C) ढ (D) ण

55. ऋक्प्रातिशाख्यम् अनुसृत्य बह्वृचानां यमसंख्या वर्तते -

(A) 5 (B) 10

(C) 20 (D) 25

56. कौशिकगृह्यसूत्रं केन सम्बद्धम् ?

(A) ऋग्वेदेन (B) कृष्णयजुर्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

57. "उष्णिक्" - छन्दसि कियन्तो वर्गाः भवन्ति -

(A) 20 (B) 24

(C) 28 (D) 32

58. आह्वनीयस्य स्वरूपम् -

(A) वृत्तम् (B) चतुरस्रम्

(C) वर्तुलम् (D) षट्कोणम्

59. नासदीयसूक्ते कतिमन्त्राः सन्ति ?

(A) सप्त (B) दश

(C) सप्तदश (D) विंशतिः

60. तैत्तिरीयोपनिषद् केन वेदेन सम्बद्धा ?

(A) शुक्लयजुर्वेदेन (B) कृष्णयजुर्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

61. कठोपनिषदनुसारं प्राणेन सम्भवति -

(A) अदितिः (B) आत्मा

(C) बुद्धिः (D) मनः

62. ईशावास्यदिशा कथं मृत्युं तरति

(A) ज्ञानेन (B) विनाशेन

(C) सम्भूत्या (B) विनाशेन

63. 'आत्मना विन्दते वीर्यम्' - अयं विचारः कुत्रोपदिश्यते ?

(A) केनोपनिषदि (B) कठोपनिषदि

(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) बृहदारण्यके

64. 'मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे" कुत्र इयम् उक्तिः?

(A) तैत्तिरीयोपनिषदि (B) बृहदारण्यके

(C) कठोपनिषद (D) केनोपनिषदि

65. ऋग्वेदस्य द्वितीयमण्डलान्तर्गतस्य इन्द्रसूक्तस्य ऋषिः कः अस्ति ?

(A) गृत्समदः (B) हिरण्यगर्भः

(C) विश्वामित्रः (D) अत्रिः

66. विधेयाः के ?

(A) मन्त्राः (B) ब्राह्मणाः

(C) अर्थवादाः (D) प्रक्षिप्ताः

67. दर्शेष्टौ कति ऋत्विजो भवन्ति ?

(A) चत्वारः (B) षोडश

(C) अष्टौ (D) दश

68. पञ्चमहायज्ञाः केषां कृते विहिताः ?

(A) संन्यासिनां कृते (B) गृहस्थानां कृते

(C) ब्रह्मचारिणां कृते (D) बालानां कृते

69. माध्यन्दिनसंहितायाम् अनुदात्तस्वरचिह्नं कुत्र दीयते ?

(A) उपरिष्टात् (B) तिर्यक्

(C) अधः (D) सर्वतः

70. सायणस्य व्याख्यापद्धतिरस्ति -

(A) वैज्ञानिकी (B) याज्ञिकी

(C) तान्त्रिकी (D) ऐतिहासिकी

71. नक्षत्रसम्पातादिना वेदकालं कः प्रतिपादयति -

(A) बालगङ्गाधरतिलकः (B) महर्षिदयानन्दः

(C) सायणः (D) मैक्समूलरः

72. 'गोपथब्राह्मणं' केन वेदेन सम्बद्धम् अस्ति -

(A) ऋग्वेदेन (B) सामवेदेन

(C) अथर्ववेदेन (D) यजुर्वेदेन

73. 'ईशोपनिषद्' केन वेदेन सम्बद्धा अस्ति -

(A) ऋग्वेदेन (B) अथर्ववेदेन

(C) कृष्णयजुर्वेदेन (D) शुक्लयजुर्वेदेन

74. 'माण्डूकी-शिक्षा' कस्य वेदस्य अस्ति -

(A) अथर्ववेदस्य (B) सामवेदस्य

(C) यजुर्वेदस्य (D) ऋग्वेदस्य

75. वेदाङ्गेषु 'श्रोत्रत्वेन' कः उपमीयते

(A) ज्योतिषम् (B) छन्दशास्त्रम्

(C) निरुक्तम् (D) शिक्षा

76. अधोङ्कितानां समीचीनम् उत्तरं चिनुत -

(अ) प्रश्नोपनिषद् 1. निरुक्तम्

(ब) पञ्चविंशब्राह्मणम् 2. अथर्ववेदः

(स) अथेदं भस्मान्तं शरीरम् 3. सामवेदः

(द) व्याप्तिमत्त्वात् शब्दस्य 4. ईशोपनिषद्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	1	2	3
(B)	1	3	4	2
(C)	2	2	4	1
(D)	3	4	1	2

77."स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव"अस्य मन्त्रस्य ऋषिः वर्तते

(A) वसिष्ठः (B) मधुच्छन्दः

(C) कण्वः (D) अङ्गिराः

78. 'वज्रहस्तः' इति विशेषणं कस्य देवस्य अस्ति -

(A) उषसः (B) विष्णोः

(C) अग्नेः (D) इन्द्रस्य

79. 'माध्यन्दिनशाखा' कस्य वेदस्य अस्ति ?

(A) यजुर्वेदस्य (B) ऋग्वेदस्य

(C) अथर्ववेदस्य (D) कस्यापि न

80. 'आ वो वृणे सुमतिं यज्ञियानाम्' मन्त्रांशः अयं कस्य सूक्तस्य वर्तते -

(A) पुरूरवा-उर्वशी-

(B) यमयमी-सूक्तस्य

(C) सरमा-पणि-सूक्तस्य

(D) विश्वामित्र-नदी-सूक्तस्य

81. 'कदा सूनुः पितरं जात इच्छात् " अयं मन्त्रांशः कुत्र वर्तते -

(A) विश्वामित्र-नदी-सूक्ते

(B) यम-यमी-सूक्ते

(C) पुरूरवा-उर्वशी-सूक्ते

(D) सरमा-पणि-सूक्ते

82. हस्तः' इत्यत्र कः धातुः स्वीकृतः यास्केन ?

(A) हन् (B) हा

(C) हस् (D) अस्

83. 'चातुर्मास्ययागे' वर्तते -

(A) शुनासीरीयम् (B) अग्निहोत्रम्

(D) सौत्रामणी (C) आग्रयणम्

84. याज्ञवल्क्यशिक्षा' केन सम्बद्धा वर्तते -

(A) ऋग्वेदेन (B) सामवेदेन

(C) अथर्ववेदेन (D) शुक्लयजुर्वेदेन

85. ऋग्वेदीयप्रातिशाख्यानुसारेण रक्तसंज्ञः कः ?

(A) स्पर्शः (B) अनुनासिकः

(C) संयोगः (D) विसर्गः

86.'अन्तरिक्षस्थाना' देवता अस्ति -

(A) अश्विनौ (B) अग्निः

(C) इन्द्रः (D) सूर्यः

87. समुचितं सम्बन्धं प्रस्थापयत -

(अ) सत्त्वप्रधानानि 1. निघण्टवः

(ब) निगमा इमे भवन्ति 2. तद्यथा-पाचकः पंक्तिः

(स) संविज्ञातानि तानि 3. नामानि

(द) तद्यत्र उभे 4. भावप्रधाने भवतः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	2	4	3
(B)	2	1	3	4
(C)	3	1	2	4
(D)	4	3	2	1

88. 'आचार्यश्चिद् इदं ब्रूयात्' - इत्यत्र चित् निपातस्य अर्थः कः ?

(A) पादपूरणः (B) उपमा

(C) पूजा (D) धनम्

89. 'यतो वाचो निवर्तन्ते अप्राप्य मनसा सह" कुत्र इयम् उक्तिः ?

(A) कठोपनिषदि (B) केनोपनिषदि

(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

90. अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणः' - इयम् उक्तिः कुत्रास्ति ?

(A) बृहदारण्यकोपनिषदि (B) ईशोपनिषदि

(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) कठोपनिषदि

91. 'येनाहं नामृता स्याम किमहं तेन कुर्याम्'-कया इदम् उच्यते ?

(A) मैत्रेय्या (B) कात्यायन्या

(C) गायत्र्या (D) उमया

92. 'आत्मैवेदमग्र आसीत् पुरुषविधः' - इति कुत्र उक्तम् ?

(A) कठोपनिषदि (B) तैत्तिरीयोपनिषदि

(C) बृहदारण्यकोपनिषदि (D) केनोपनिषदि

93. अधस्तनानां समीचीनम् उत्तरं चिनुत -

(अ) काण्वसंहिता 1. बृहदारण्यकोपनिषद्

(ब) शतपथब्राह्मणम् 2. मैत्रेयी

(स) वाजश्रवाः 3. ईशोपनिषद्

(द) याज्ञवल्क्यः 4. नचिकेता

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	4	2	3
(B)	3	4	2	1
(C)	3	1	4	2
(D)	2	1	3	4

94. 'उष्णिक्' छन्दसि कियन्तो वर्णाः भवन्ति ?

(A) 27 (B) 28

(C) 32 (D) 29

95. वेदमन्त्राणां त्रिविधा प्राचीनतमा व्याख्या भवति -

(A) याज्ञिक - वैज्ञानिक - आधिदैविकरूपेण

(B) आध्यात्मिक - आधिभौतिक - आधिदैविकरूपेण

(C) याज्ञिक - ऐतिहासिक - आधिदैविकरूपेण

(D) आध्यात्मिक - याज्ञिक भाषावैज्ञानिकरूपेण

96. 'योऽसावसौ पुरुषः सोऽहमस्मि' इत्यस्य कुत्रोपदेशः ?

(A) ईशोपनिषदि (B) तैत्तिरीयोपनिषदि

(C) केनोपनिषदि (D) श्रीमद्भागवते

97. 'अतिमुच्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति' कुत्र इयम् उक्तिः?

(A) ईशोपनिषदि (B) केनोपनिषदि

(C) भगवद्गीतायाम् (D) कठोपनिषदि

98. सृष्ट्युत्पत्तिविषयकं विवेचनं वर्तते -

(A) अग्निसूक्ते (B) इन्द्रसूकते

(C) नासदीयसूक्ते (D) पृथिवीसूकते

99. 'सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ..अस्य मन्त्रस्य ऋषिः अस्ति -

(A) नारायणः (B) कण्वः

(C) मेधातिथिः (D) अङ्गिराः

100. हिरण्यगर्भसूक्तस्य किं छन्दः ?

(A) आर्षी निचृद् (B) आसुरी गायत्री

(C) त्रिष्टुप् (D) पंक्तिः

101. सोमयागे ऋत्विजाः भवन्ति-

(A) चत्वारः (B) षट्

(C) षोडश (D) द्वादश

102. 'संविदाना दिवा कवे श्रियां मा धेहि भूत्याम्" मन्त्रांशोऽयं वर्तते-

(A) वाक्सूकते (B) हिरण्यगर्भसूक्ते

(C) पृथिवीसूकते (D) पुरुषसूक्ते

103. दर्शपूर्णमासयज्ञे 'दर्श' - शब्दस्य अर्थोऽस्ति -

(A) पयस्या (B) दर्वः

(C) शूर्पम् (D) अमावस्या

104. हस्तेन त्रैस्वर्यं प्रदर्श्यते -

(A) पैप्पलादसंहितायाम् (B) अथर्ववेदे

(C) कृष्णयजुर्वेदे (D)माध्यन्दिनसंहितायाम्

105. "किं भ्रातासद्यनाथमिति" कस्मिन् सूक्ते पठ्यते ?

(A) नासदीयसूक्ते
(B) विश्वामित्रनदीसंवादसूक्ते
(C) यम-यमीसंवादसूक्ते
(D) पृथिवीसूक्ते

106. अधोङ्कितानां समीचीनम् उत्तरं चिनुत -

(अ) नचिकेतोपाख्यानम्	1. पुत्रोऽहं पृथिव्याः
(ब) सत्यं वद धर्मं चर	2. कठोपनिषद्
(स) माता भूमिः	3. तैत्तिरीयोपनिषद्
(द) शुल्वसूत्रम्	4. कल्पान्तर्गतम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	3	4	2
(B)	4	2	3	1
(C)	3	1	4	2
(D)	2	3	1	4

107. 'निघण्टुशब्देन' उच्यते -
(A) वैदिकशब्दकोशः (B) निरुक्तम्
(C) निधानम् (D) कारकम्

108. 'आपस्तम्बश्रौतसूत्रं' केन वेदेन सह सम्बद्धम् ?
(A) शुक्लयजुर्वेदेन (B) कृष्णयजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

109. भूस्थानीय देवता का: ?
(A) सूर्यः (B) इन्द्रः
(C) उषस् (D) अग्निः

110. कस्य वेदस्य आरण्यकं नोपलभ्यते ?
(A) ऋग्वेदस्य (B) यजुर्वेदस्य
(C) सामवेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

111. काण्वसंहितासम्बद्धब्राह्मणम् अस्ति -
(A) कठब्राह्मणम् (B) कपिष्ठलब्राह्मणम्
(C) शतपथब्राह्मणम् (D) ताण्ड्यब्राह्मणम्

112. 'तैत्तिरीयशाखा' केन वेदेन सम्बद्धा ?
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

113. 'जगतीछन्दसि' प्रतिपादं कति अक्षराणि भवन्ति ?
(A) दश (B) द्वादश
(C) षोडश (D) अष्ट

114. भावप्रधानं भवति -
(A) व्याख्यानम् (B) आख्यातम्
(C) कारकम् (D) क्रियापदम्

115. निरुक्ते एकस्य पदस्य बह्वर्थमादाय किं काण्डं प्रवर्तते ?
(A) नैघण्टुकम् (B) दैवतम्
(C) नैगमम् (D) उत्तरषट्कम्

116. 'अग्रणीर्भवतीति' निरुक्त्या कः उच्यते ?
(A) वीरः (B) आदित्यः
(C) अश्वः (D) अग्निः

117. 'वा' इति निपातो वर्तते -
(A) उपमार्थे (B) शब्दार्थे
(C) निषेधार्थे (D) समुच्चयार्थे

118. विज्ञानमयस्य शिरः किमुच्यते ?
(A) श्रद्धा (B) सत्यम्
(C) ऋतम् (D) महः

119. 'सस्यमिव मर्त्यः पच्यते सस्यमिवाजायते पुनः- इति केन उक्तम् -
(A) नचिकेतसा (B) वाजश्रवसा
(C) यमेन (D) अग्निना

120. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारं सोष्मवर्णः कः ?
(A) थ (B) द
(C) प (D) व

121. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारम् अघोषवर्णः कः ?
(A) त (B) द
(C) ध (D) ब

122. आमन्त्रितज ओकारो भवति-
(A) रक्तः (B) प्रगृह्यः
(C) रिफितः (D) यमः

123. आश्वलायनगृह्यसूत्रं केन सम्बद्धम् -
(A) अथर्ववेदेन (B) सामवेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) ऋग्वेदेन

124. 'प्रकृतिछन्दसि' कियन्तो वर्णाः भवन्ति ?
(A) 28 (B) 36
(C) 84 (D) 44

123. निरुक्तानुसारं तृतीयो भावविकारः कः ?
(A) विपरिणमते (B) अस्ति
(C) अपक्षीयते (D) विनश्यति

124. शुक्लयजुर्वेदीये शिवसङ्कल्पसूक्ते कति मन्त्राः सन्ति -
(A) षट् (B) सप्त
(C) अष्ट (D) दश

125. केनोपनिषद् केन वेदेन सम्बद्धा ?
(A) कृष्णयजुर्वेदेन (B) सामवेदेन
(C) ऋग्वेदेन (D) अथर्ववेदेन

126. कठोपनिषदनुसारं महतः परं किमस्ति ?
(A) मनः (B) अव्यक्तम्
(C) पुरुषः (D) आत्मा

127. ईशावास्यदिशा कथम् अमृतम् अश्नुते -
(A) एकत्वेन (B) सम्भवात्
(C) सम्भूत्या (D) सत्येन

128. "तपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा" अयं विचारः कुत्र उपदिश्यते-
(A) केनोपनिषदि (B) कठोपनिषदि
(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) बृहदारण्यके

129. 'योगो हि प्रभवाप्ययौ' - कुत्र इयम् उक्तिः ?
(A) बृहदारण्यके (B) केनोपनिषदि
(C) भगवद्गीतायाम् (D) कठोपनिषदि

130. उत्तब्धं वागेव गीथोत्त्वगीथा चेति उद्गीथः 'कुत्र इयम् उक्तिः ?
(A) केनोपनिषदि (C) कठोपनिषदि
(B) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

131. ऋग्वेदीयपुरुषसूक्ते कति मन्त्राः सन्ति ?
(A) सप्तदश (B) षोडश
(C) द्वाविंशतिः (D) अष्टादश

132. सामवेदस्यारण्यकम् अस्ति -
(A) तवल्कारः (B) जैमिनीयम्
(C) नारदीयम् (D) गोपथम्

133. कत्यङ्गुलखातावेदिः भवति ?
(A) षडङ्गुला (B) सप्ताङ्गुला
(C) द्वादशाङ्गुला (D) त्रयङ्गुला

134. ऋग्वेदे स्वरितस्वरः प्रदर्श्यते -
(A) अधः (B) उपरिष्यत्
(C) तिर्यक् (D) परितः

135. 'देवासः ' इति प्रयोगः -
(A) लौकिकः (B) कार्मिकः
(C) वैदिकः (D) याद्दच्छिकः

136. दर्शपूर्णमासयागस्य का दक्षिणा ?
(A) पूर्णपात्रम् (B) गौः
(C) अन्वाहार्यम् (D) सुवर्णम्

137. कालसूक्तं युज्यते -
(A) मूलवेदे (B) यजुर्वेदे
(C) अथर्ववेदे (D) कुत्रापि न हि

138. 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' इति कुत्र विद्यते ?
(A) ऋग्वेदे (B) बृहदारण्यकोपनिषदि
(C) अथर्ववेदे (D) ऐतरेयोपनिषदि

139. वरुणस्य विशेषणम् अस्ति -
(A) उरूचक्षा (B) वज्रहस्तेः
(C) गोपाः (D) बलदाः

140. 'ज्योतिषम्' इति वैदिककालनिर्धारणस्य आधारः केन प्रतिपादितः ?
(A) मोक्षमूलरेण (B) कीथमहोदयेन
(C) बालगङ्गाधरतिलकेन (D) विण्टरनित्समहोदयेन

141. याज्ञवल्क्यीयशिक्षा केन वेदेन सम्बद्धा ?
(A) ऋग्वेदेन (B) अथर्ववेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

142. भाव-काल-कारक-संख्याश्च इति चत्वारः अर्थाः भवन्ति -
(A) नाम्नः (B) निपातस्य
(C) उपसर्गस्य (D) आख्यातस्य

143. वैदिकशब्दानां सविस्तरं विवेचनं कुत्र उपलभ्यते ?
(A) व्याकरणे (B) कल्पे
(C) निरुक्ते (D) शिक्षायाम्

144. अर्थाववोधे निरपेक्षतया पदजातं यत्रोक्तं तत् -
(A) निरुक्तम् (B) व्याकरणम्
(C) छन्दस् (D) ज्योतिषम्

145. 'गौतमधर्मसूत्रम्' केन सम्बद्धम् ?
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

146. 'उनत्तीति' निरुक्त्या अभिधीयते -
(A) उदक् (B) उषा
(C) आदित्यः (D) अग्निः

147. कति भावविकाराः ?
(A) पञ्च (B) षड्
(C) सप्त (D) नव

148. वर्णलोपस्य उदाहरणम् अस्ति -
(A) आस्थत् (B) ज्योतिः
(C) गतम् (D) द्वारः

149. "उच्चैरुदात्तः, नीचैरनुदात्तः, समाहारः स्वरितः " इति सूत्राणां सूत्रकारः कः ?
(A) पतञ्जलिः (B) पाणिनिः
(C) सायणः (D) यास्कः

150. कः पाठः अष्टविधः ?
(A) क्रमपाठः (B) पदपाठः
(C) विकृतिपाठः (D) संहितापाठः

151. पाणिनीयशिक्षानुसारं वेदस्य श्रोत्रम् अस्ति -

(A) छन्दः (B) निरुक्तम्
(C) शिक्षा (D) व्याकरणम्

152. "कल्पसूत्रम्" इति पारिभाषिकी संज्ञा अस्ति
(A) श्रौतसूत्राणाम्
(B) गृह्यसूत्राणाम्
(C) धर्मसूत्राणाम्
(D) श्रौत-गृह्य-धर्मसूत्राणाम्

153. "छन्दः" इति वेदाङ्गस्य प्रतिनिधिग्रन्थः 'छन्दःसूत्रम्' केन रचितः ?
(A) पाणिनिना (B) पतञ्जलिना
(C) व्याडिमुनिना (D) पिङ्गलेन

154. "निघण्टु" इति वैदिककोशस्य भाष्यरूपेण अस्ति -
(A) छन्दःसूत्रम् (B) महाभाष्यम्
(C) निरुक्तम् (D) शिक्षासूत्राणि

155. समीचीनम् उत्तरं चिनुत -
(अ) रक्तसंज्ञः 1. व्यञ्जनसन्निपातः
(ब) ईदूदेद्विवचनम् 2. समानाक्षराण्यादितः
(स) संयोगः 3. अनुनासिकः
(द) अष्टौ. 4. प्रगृह्यम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	2	3	1
(B)	3	4	1	2
(C)	1	2	3	4
(D)	3	2	4	1

156. 'कठोपनिषद्' केन वेदेन सम्बद्धा ?
(A) ऋग्वेदेन (B) अथर्ववेदेन
(C) शुक्लयजुर्वेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

157. कृष्णयजुर्वेदस्य आरण्यकम् अस्ति -
(A) छान्दोग्यारण्यकम् (B) ऐतरेयारण्यकम्
(C) शांखायनारण्यकम् (D) तैत्तिरीयारण्यकम्

158. कः वेदानां भाष्यकारः न अस्ति ?
(A) माधवाचार्यः (B) सायणाचार्यः
(C) मल्लिनाथः (D) यास्काचार्यः

159. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारेण स्वराणां ...सन्ति।
(A) त्रिविधभेदाः (B) चतुर्विधभेदाः
(C) पञ्चविधभेदाः (D) नवविधभेदाः

160. आत्मना विन्दते वीर्यं विद्यया विन्दतेऽमृतम् ' इति उक्ति अस्ति–
(A) ईशावास्योपनिषदि (B) केनोपनिषदि
(C) कठोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

161. नैरुक्त्यं यत्र मन्त्रस्य विनियोगः प्रयोजनम् |
प्रतिष्ठानं विधिश्चैव--तदिहोच्यते ॥' इति पूरयत
(A) आरण्यकम् (B) पुराणम्
(C) ब्राह्मणम् (D) सूक्तम्

162. आरण्यकानि सम्बद्धानि सन्ति-
(A) ब्रह्मचर्याश्रमेण (B) गृहस्थाश्रमेण
(C) वानप्रस्थाश्रमेण (D) संन्यासाश्रमेण

163. ऋक्सामच्छन्दोयजूंषि कस्मात् समुत्पन्नानि ?
(A) पुरुषविशेषात् (B) यज्ञ-विशेषात्
(C) वाचः (D) पृथिव्याः

164. ऋग्वैदिकसूक्तविशेषे 'दोषावस्तर्' इति पदस्य कोऽर्थः ?
(A) प्रतिदिनम् (B) रात्रिन्दिवा ।
(C) अन्धकारः (D) अन्धकारनाशकः

165. पापाचारिणो दस्योर्नाशकः वैदिकदेवः ?
(A) इन्द्रः (B) अग्निः
(C) पूषन् (D) वरुणः

166. ऋग्वैदिकहिरण्यगर्भसूक्तस्य का देवता ?
(A) अग्निः (B) इन्द्रः
(C) प्रजापतिः (D) वरुणः

167. छान्दोग्यब्राह्मणं केन सम्बद्धम्?
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

168. 'सृष्टि-स्थिति-प्रलय' विषयकं विवेचनम् उपलभ्यते -
(A) नासदीयसूकते (B) इन्द्रसूक्ते
(C) पृथिवीसूक्ते (D) कालसूक्ते

169. 'प्रधानञ्च षड्ङ्गेषु' किम् ?
(A) कल्पः (B) छन्दः
(C) शिक्षा (D) व्याकरणम्

170. 'सर्वलघुः' इति को गणः ?
(A) जगणः (B) मगणः
(D) सगणः (C) नगणः

171. 'व्' वर्णः अस्ति-
(A) ओष्ठ्यः (B) उष्मः
C) अन्तःस्थः (D) दन्त्यः

172. 'शुल्वसूत्राणि' केन वेदाङ्गेन सम्बद्धानि ?
(A) व्याकरणेन (B) कल्पेन
(C) छन्दसा (D) निरुक्तेन

173. 'सत्त्वप्रधानम्' इति मन्यते -
(A) उपसर्गः (B) नाम
(C) आख्यातम् (D) निपातः

174. 'पदपाठ' इत्यस्य परमं प्रयोजनम् अस्ति –
(A) पदनिर्माणम् (B) शब्दनिर्माणम्
(C) वेदपाठरक्षणम् (D) मन्त्रगानम्

175. श्वेताश्वतरोपनिषद् केन वेदेन सम्बद्धा ?
(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

176. 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत' इति कुत्र उपदिष्टम्?
(A) ईशावास्योपनिषदि (B) कठोपनिषदि
(C) आपस्तम्बधर्मसूत्रे (D) माण्डूक्योपनिषद

177. 'मण्डलक्रमः' केन वेदेन सम्बद्धः?
(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

178. अथर्ववेदीयं ब्राह्मणं किम् ?
(A) शतपथब्राह्मणम् (B) गोपथब्राह्मणम्
(C) तैत्तिरीयब्राह्मणम् (D) ऐतरेयब्राह्मणम्

179. "स्वसारं त्वा कृणवै मा पुनर्गा, अप ते गवां सुभगे भजाम।" इति मन्त्रांशः कुतः उद्धृतः?
(A) पुरुरवा-उर्वशी-संवादात्
(B) यम-यमी-संवादात्
(C) सरमा-पणि-संवादात्
(D) विश्वामित्र-नदी-संवादात्

180. अन्तरिक्षस्थानीया देवता का?
(A) रुद्रः (B) सोमः
(C) अग्निः (D) वृहस्पतिः

181. यक्षरूपधारिणः परब्रह्मणः आख्यायिका उपलभ्यते-
(A) ईशावास्योपनिषदि (B) केनोपनिषदि
(C) कठोपनिषदि (D) तैत्तिरीयोपनिषदि

182. "मन एव त्वच्छ्रेयो मनसो वै त्वं....... " इति उक्तम्-
(A) मनसा (B) वाचा
(C) नचिकेतसा (D) प्रजापतिना

183. 'यद् दूरङ्गता भवति' इति निरुक्त्या किम् उपलक्ष्यते ?
(A) गौः (B) समुद्रः:
(C) नदी (D) मेघः ।

184. "अथ शीक्षां व्याख्यास्यामः" इत्युक्तिः कुतः उद्धृता-
(A) कठोपनिषदः (B) तैत्तिरीयोपनिषदः
(C) पाणिनीयशिक्षातः (D) याज्ञवल्क्यशिक्षातः

185. 'त्रयः स्वराः' इत्यन्तर्गते न गण्यते-
(A) उदात्तः (B) आगमः
(C) स्वरितः (D) अनुदात्तः

186. प्रायः वेदेषु एव लभ्यते-
(A) लट्लकारः (B) लृट्लकारः
(C) लिट्लकारः (D) लेट्लकारः

187. अस्ति वाह्यप्रयत्नः-
(A) नादः (B) ईषत्स्पृष्टम्
(C) स्पृष्टम् (D) विवृतम्

188. द्वात्रिंशत् अक्षराणि भवन्ति-
(A) वृहतीच्छन्दसि (B) पङ्क्तिच्छन्दसि ।
(C) जगतीच्छन्दसि (D) अनुष्टुप्

189. पादपूरणार्थकः निपातः अस्ति-
(A) इत् (B) च
(C) ननु (D) इव

190. 'व्यञ्जनसन्निपातः' इति कथ्यते-
(A) प्रगृह्यः (B) अघोषः
(C) संयोगः (D) यमः

191. 'यस्यामापः परिचराः समानीरहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति। मन्त्रांशोऽयं केन सूक्तेन सम्बद्धः?
(A) अग्निसूक्तेन (B) नासदीयसूक्तेन
(C) पृथिवीसूक्तेन (D) हिरण्यगर्भसूक्तेन

192. पुरुषसूक्तेन सम्बद्धा उक्तिः अस्ति -
(A) 'राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्'
(B) 'यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात्'
(C) 'सः भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्'
(D) 'न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि

193. कः अग्निसूक्तस्य ऋषिः?
(A) मधुच्छन्दाः (B) प्रजापतिः
(C) हिरण्यगर्भः (D) विश्वामित्रः

194. ब्राह्मणग्रन्थानां प्रतिपाद्यविषयस्य कति प्रकाराः -
(A) द्वादश (B) षोडश
(C) चत्वारः (D) दश

195. "आरण्यकश्च वेदेभ्यः औषधिभ्योऽमृतं यथा" इति उक्तम्-
(A) सायणेन (B) कृष्णद्वैपायनेन
(C) यास्केन (D) मनुना

196. माध्यन्दिनीयसंहितायां 'शतरुद्रीय-होममन्त्राः ' कस्मिन अध्याये समुक्ताः ?
(A) अष्टादशे (B) सप्तदशे

(C) पञ्चदशे (D) षोडशे

197. "शतपथब्राह्मणस्य" आङ्ग्लानुवादः कृतो वर्तते -

(A) जी. थीबोमहोदयेन

(B) जे. एग्लिंगमहोदयेन

(C) एम. विलियम्समहोदयेन

(D) डब्लू. कैलेण्डमहोदयेन

198. विलुप्ता 'मौद' शाखा कस्य वेदस्य वर्तते ?

(A) सामवेदस्य (B) ऋग्वेदस्य

(C) अथर्ववेदस्य (D) शुक्लयजुर्वेदस्य

199. निर्वचनसिद्धान्त-प्रतिपादकं वेदाङ्गं विद्यते -

(A) कल्पशास्त्रम् (B) छन्दःशास्त्रम्

(C) शिक्षा (D) निरुक्तम्

200. द्युस्थानदेवता विद्यते -

(A) इन्द्रः (B) सूर्यः

(C) विष्णु (D) वायुः

201. त्रिष्टुप्'-छन्दसि कियन्तो वर्णाः भवन्ति ?

(A) 28 (B) 36

(C) 44 (D) 48

202. आश्वलायनगृह्यसूत्रं केन वेदेन सम्बद्धं विद्यते ?

(A) अथर्ववेदेन (B) यजुर्वेदेन

(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदेन

203. वाधूलश्रौतसूत्रं कस्य वेदस्य वर्तते ?

(A) सामवेदस्य (B) कृष्णयजुर्वेदस्य

(C) ऋग्वेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

204. श्रोत्रस्थानीयं वेदाङ्गं निरूपितमस्ति-

(A) निरुक्तम् (B) शिक्षा

(C) कल्पः (D) छन्दः

205. कठोपनिषदि नचिकेतसः पिता कं यागमनुष्ठितवान् ?

(A) अश्वमेधयागम् (B) सर्वमेधयागम्

(C) सर्वजिद्यागम्। (D) पितृमेधयागम्

206. रोदसी' - पदस्य कोऽर्थः ?

(A) अन्तरिक्षम् (B) अहोरात्रे

(C) द्यावापृथिवी (D) रुद्रः

207. अधस्ताद्दत्तेषु कः वंशमण्डलेन सम्बद्धः नास्ति ?

(A) अत्रिः (B) गौतमः

(C) वामदेवः (D) विश्वामित्रः

208. पातञ्जलमहाभाष्यानुसारम् अथर्ववेदस्य शाखाः सन्ति -

(A) 5 (B) 100

(C) 21 (D) 9

209. योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम् '- इति वाक्यं कुत्र वर्तते ?

(A) ऋग्वेदे (B) अथर्ववेदे

(C) यजुर्वेद (D) सामवेदे

210. सायणाचार्यः सर्वप्रथमं कं वेदं व्याख्यातवान् ?

(A) यजुर्वेदम् (B) ऋग्वेदम्

(C) सामवेदम् (D) अथर्ववेदम्

211. पाणिनीयशिक्षायां कति श्लोकाः सन्ति ?

(A) चतुःषष्ठिः (B) त्रिषष्ठिः

(C) षष्ठिः (D) सप्ततिः

212. मघवा' देवः कः ?

(A) इन्द्रः (B) विष्णुः

(C) वरुणः (D) हिरण्यगर्भः

213. 'यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्रकुपितौं अरम्णात्' अस्य मन्त्रस्य द्रष्टा ऋषिः कः ?

(A) विश्वामित्रः (B) मधुच्छन्दा

(C) गृत्समदः (D) इन्द्रः

214. ऋग्वेदस्य शाकलसंहितायां कति सन्ध्यक्षराणि स्वीकृतानि ?

(A) एकम् (B) द्वे

(C) चत्वारि (D) त्रीणि

215. 'इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थो वेदयति स वेदः' - इति लक्षणं कस्य ?

(A) महीधरस्य (B) लौगाक्षिभास्करस्य

(C) सायणस्य (D) पारस्करस्य

216. 'वाधूलशुल्वसूत्रम् ' केन वेदेन सम्बद्धमस्ति ?

(A) अथर्ववेदेन (B) सामवेदेन

(C) ऋग्वेदेन (D) यजुर्वेदेन

217. 'विलोहितः' इति कस्याः देवतायाः विशेषणम् अस्ति ?

(A) विष्णोः (B) वायोः

(C) रुद्रस्य (D) इन्द्रस्य

218. "छन्दःसूत्रम्" इति वेदाङ्गग्रन्थस्य प्रणेता विद्यते -

(A) हलायुधः (B) पिङ्गलः

(C) लगधः (D) भरतः

219. ऋक्संहितायाः समुपलब्धेषु भाष्येषु प्रथमो भाष्यकारः वर्तते -

(A) आनन्दतीर्थः (B) सायणः

(C) स्कन्दस्वामी (D) वेङ्कटमाधवः

220. वैदिकस्वरप्रक्रियायाः वृत्तिकारः कः ?

(A) भट्टोजिदीक्षितः (B) पाणिनिः

(C) पतञ्जलिः (D) कात्यायनः

221. ब्राह्मणसर्वस्व' - नामकं वेदभाष्यं केन विरचितम् ?

(A) हरिस्वामिना (B) हलायुधेन
(C) गुणविष्णुना (D) उवटेन

222. 'वाक्सूक्तम्' ऋग्वेदस्य कस्मिन् मण्डले विद्यते ?
(A) दशमे (B) पञ्चमे
(C) अष्टमे (D) सप्तमे

223. ऋग्वेदसंहिताया आंग्लपद्यानुवादकः वैदेशिकः विद्वान् वर्तते
(A) एच. विल्सनः (B) ए.ए. मैक्डानलः
(C) आर.टी.एच. ग्रीफिथः (D) विलियम-कैलेण्डः

224. सामविकाराः परिगणिताः सन्ति -
(A) सप्त (B) चत्वारः
(C) त्रयः (D) षट्

225. 'पदक्रमसदन' - नामकं भाष्यं कस्य प्रातिशाख्यस्य विद्यते ?
(A) वाजसनेयप्रातिशाख्यस्य
(B) ऋक्प्रातिशाख्यस्य
(C) अथर्वप्रातिशाख्यस्य
(D) तैत्तिरीयप्रातिशाख्यस्य

226. दानस्तुतिसूक्तानि संहितायां सन्ति -
(A) काण्वसंहितायाम्
(B) तैत्तिरीयसंहितायाम्
(C) ऋग्वेदसंहितायाम्
(D) माध्यन्दिनसंहितायाम्

227. ऋग्वेदीयषष्ठमण्डलस्य ऋषिः वर्तते -
(A) भरद्वाजः (B) वामदेवः
(C) वसिष्ठः (D) विश्वामित्रः

228. "बृहदारण्यकम्" कस्य वेदस्य वर्तते ?
(A) सामवेदस्य (B) यजुर्वेदस्य
(C) ऋग्वेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

229. "आग्नीध्र" - नामा ऋत्विक् कस्य गणस्य वर्तते ?
(A) ब्रह्मगणस्य (B) अध्वर्युगणस्य
(C) होतृगणस्य (D) उद्गातृगणस्य

230. 'सुमन्तु' - ऋषये व्यासः कं वेदं प्रोक्तवान् ?
(A) यजुर्वेदम् (B) ऋग्वेदम्
(C) अथर्ववेदम् (D) सामवेदम्

231. दर्शपौर्णमासेष्टियागे प्रयाजानां संख्या विद्यते -
(A) एकादश (B) पञ्च
(C) त्रयः (D) नव

232. दर्शपौर्णमासयागे अनुयाजाः भवन्ति-
(A) चतस्रः (B) पञ्च
(C) तिस्रः (D) षट

233. 'विश्वामित्र - नदी' सूक्तस्य कः ऋषिरस्ति?
(A) वसिष्ठः (B) विश्वामित्रः.
(C) मधुच्छन्दाः (D) दीर्घतमाः

234. 'पुरूरवा-उर्वशी' सूक्ते कति मन्त्राः सन्ति?
(A) 17 (B) 18
(C) 19 (D) 20

235. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(क) यम-यमी-संवादसूक्तम् (i) यजुर्वेदः
(ख) कठोपनिषद् (ii) सामवेदः
(ग) लाट्यायनश्रौतसूत्रम् (iii) ऋग्वेदः
(घ) माण्डूक्योपनिषद् (iv) अथर्ववेदः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(ii)	(iv)	(ii)	(i)
(B)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(C)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(D)	(iii)	(i)	(ii)	(iv)

236. अधस्तनेषु को ग्रन्थः कल्पवेदाङ्गान्तर्गतोऽस्ति ?
(A) पारस्करगृह्यसूत्रम्
(B) काशकृत्स्नव्याकरणम्
(C) ऋग्वेदप्रातिशाख्यम्
(D) पाणिनीयशिक्षा

237. शौनकानुसारेण ऋग्वेदस्य प्रमुख शाखाः सन्ति-
(A) चतस्रः (B) तिस्रः
(C) पञ्च (D) षट

238. अधोऽङ्कितेषु वेदाङ्गमस्ति-
(A) ईशोपनिषद् (B) ऐतरेयारण्यकम् ।
(C) मानवशुल्वसूत्रम् (D) शतपथब्राह्मणम्

239. वाजसनेयिमाध्यन्दिनसंहिता सम्बन्धिता अस्ति -
(A) कृष्णयजुर्वेदेन (B) शुक्लयजुर्वेदेन्
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

240. वेदा अपौरुषेयाः सन्तीति मतमस्ति-
(A) महर्षिदयानन्दस्य (B) ए. वेबरस्य ।
(C) मैक्समूलरस्य (D) विन्टरनिट्जस्य

241. वैतानश्रौतसूत्रं केन वेदेन सह सम्बद्धमस्ति?
(A) सामवेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) अथर्ववेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

242. 'स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ॥'
अस्य मन्त्रस्य का देवता अस्ति?
(A) रुद्रः (B) अग्निः

(C) सोमः (D) सविता

243. मुण्डकोपनिषत् केन वेदेन सह सम्बद्धा अस्ति?
(A) यजुर्वेदेन (B) अथर्ववेदेन
(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदेन

244. 'षड्विंशब्राह्मणम्' इति ग्रन्थः केन वेदेन सह सम्बद्धोऽस्ति?
(A) यजुर्वेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) अथर्ववेदेन (D) सामवेदेन

245. 'तलवकार-आरण्यकम्' केन वेदेन सह सम्बद्धमस्ति ?
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) अथर्ववेदेन (D) सामवेदेन

246. षड्वेदाङ्गेषु किं न गण्यते?
(A) निरुक्तम् (B) छन्दस्
(C) मीमांसा (D) कल्पः

247. यास्कमते पदानां प्रकाराः कति भवन्ति?
(A) चत्वारः (B) पञ्च
(C) द्वौ (D) षड्

248. षड्भावविकारेषु कतमो नास्ति ?
(A) जायते (B) नश्यति
(C) वर्धते (D) स्मरति

249. याज्ञवल्क्यशिक्षा केन वेदेन सम्बद्धा अस्ति-
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

250. 'नैगमकाण्डम्' कस्मिन् ग्रन्थे वर्तते?
(A) आपस्तम्बगृह्यसूत्र (B) निरुक्ते
(C) गौतमधर्मसूत्रे (D) बौधायनधर्मसूत्रे

॥उत्तरमाला॥

1. (A) 2. (C) 3. (D) 4. (B) 5. (A)
6. (D) 7. (A) 8. (B) 9. (B) 10. (C)
11. (B) 12. (D) 13. (A) 14. (C) 15. (C)
16. (D) 17. (C) 18. (A) 19. (D) 20. (C)
21. (C) 22. (B) 23. (A) 24. (C) 25. (C)
26. (C) 27. (A) 28. (B) 29. (A) 30. (D)
31. (A) 32. (C) 33. (B) 34. (C) 35. (D)
36. (C) 37. (C) 38. (B) 39. (C) 40. (B)
41. (C) 42. (B) 43. (B) 44. (A) 45. (C)
46. (D) 47. (C) 48. (C) 49. (C) 50. (D)
51. (C) 52. (C) 53. (B) 54. (A) 55. (C)
56. (D) 57. (C) 58. (B) 59. (A) 60. (B)
61. (A) 62. (B) 63. (A) 64. (C) 65. (A)
66. (A) 67. (A) 68. (B) 69. (C) 70. (B)
71. (A) 72. (C) 73. (D) 74. (A) 75. (C)
76. (C) 77. (B) 78. (D) 79. (A) 80. (D)
81. (C) 82. (A) 83. (A) 84. (D) 85. (B)
86. (C) 87. (C) 88. (C) 89. (C) 90. (D)
91. (A) 92. (C) 93. (C) 94. (B) 95. (D)
96. (A) 97. (B) 98. (C) 99. (A) 100. (C)
101. (C) 102. (C) 103. (D) 104. (D) 105. (C)
106. (D) 107. (A) 108. (B) 109 . (D) 110. (D)
111. (C) 112. (B) 113. (B) 114. (B) 115. (A)
116. (D) 117. (A) 118. (A) 119. (A) 120. (A)
121. (A) 122. (B) 123. (A) 124. (A) 125. (B)
126. (B) 127. (C) 128. (A) 129. (D) 130. (D)
131. (B) 132. (A) 133. (D) 134. (B) 135. (C)
136. (C) 137. (C) 138. (B) 139. (A) 140. (C)
141. (C) 142. (D) 143. (C) 144. (A) 145. (C)
146. (A) 147. (B) 148. (C) 149. (B) 150. (C)
151. (B) 152. (D) 153. (D) 154. (C) 155. (B)
156. (D) 157. (D) 158. (C) 159. (A) 160. (B)
161. (C) 162. (C) 163. (B) 164. (B) 165. (A)
166. (C) 167. (C) 168. (A) 169. (D) 170. (C)
171. (A) 172. (B) 173. (B) 174. (C) 175. (C)
176. (B) 177. (B) 178. (B) 179. (C) 180. (A)
181. (B) 182. (D) 183. (A) 184. (B) 185. (B)
186. (D) 187. (A) 188. (D) 189. (A) 190. (C)
191. (C) 192. (C) 193. (A) 194. (D) 195. (B)
196. (D) 197. (B) 198. (C) 199. (D) 200. (B)
201. (C) 202. (C) 203. (B) 204. (A) 205. (B)
206. (C) 207. (B) 208. (D) 209. (C) 210. (A)
211. (C) 212. (A) 213. (C) 214. (C) 215. (C)
216. (D) 217. (C) 218. (B) 219. (C) 220. (B)
221. (B) 222. (A) 223. (C) 224. (B) 225. (D)
226. (C) 227. (C) 228. (B) 229. (B) 230. (C)
231. (B) 232. (C) 233. (B) 234. (B) 235. (D)
236. (A) 237. (C) 238. (C) 239. (B) 240. (A)
241. (C) 242. (B) 243. (B) 244. (D) 245. (D)
246. (C) 247. (A) 248. (D) 249. (B) 250. (B)

इकाई-3

॥दर्शन साहित्य॥

प्रमुख भारतीय दर्शनों का सामान्य परिचय-

वैदिक काल के ऋषियों ने हिन्दुओं के सबसे प्राचीन दर्शन की नींव रखी। **आरुणि और याज्ञवल्क्य** (8वीं शताब्दी ईसापूर्व) आदि प्राचीनतम हिन्दू दार्शनिक हैं। भारत में 'दर्शन' उस विद्या को कहा जाता है जिसके द्वारा तत्त्व का ज्ञान हो सके। 'तत्त्व दर्शन' या 'दर्शन' का अर्थ है -तत्त्व का ज्ञान। मानव के दुःखों की निवृत्ति के लिए तथा तत्त्व ज्ञान कराने के लिए ही भारत में दर्शन का जन्म हुआ है। हृदय की गाँठ तभी खुलती है और शोक तथा संशय तभी दूर होते हैं जब एक सत्य का दर्शन होता है। मनु का कथन है कि सम्यक् दर्शन प्राप्त होने पर कर्म मनुष्य को बन्धन में नहीं डाल सकता तथा जिनको सम्यक् दृष्टि नहीं है वे ही संसार के महामोह और जाल में फंस जाते हैं। भारतीय ऋषिओं ने जगत् के रहस्य को अनेक कोणों से समझने की कोशिश की है। दर्शन ग्रन्थों को दर्शनशास्त्र भी कहते हैं। यह शास्त्र शब्द **'शासु अनुशिष्टौ'** धातु से निष्पन्न है। भारतीय दर्शन किस प्रकार और किन परिस्थितियों में अस्तित्व में आया, कुछ भी प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता। किन्तु इतना स्पष्ट है कि उपनिषद् काल में दर्शन एक पृथक् शास्त्र के रूप में विकसित होने लगा था। तत्त्वों के अन्वेषण की प्रवृत्ति भारतवर्ष में उस सुदूर काल से है, जिसे हम **'वैदिक युग'** के नाम से पुकारते हैं। ऋग्वेद के अत्यन्त प्राचीन युग से ही भारतीय विचारों में द्विविध प्रवृत्ति और द्विविध लक्ष्य के दर्शन हमें होते हैं। प्रथम प्रवृत्ति प्रतिभा या प्रज्ञामूलक है तथा द्वितीय प्रवृत्ति तर्कमूलक है। प्रज्ञा के बल से ही पहली प्रवृत्ति तत्त्वों के विवेचन में कृतकार्य होती है और दूसरी प्रवृत्ति तर्क के सहारे तत्त्वों के समीक्षण में समर्थ होती है।

लक्ष्य भी आरम्भ से ही दो प्रकार के थे-धन का उपार्जन तथा ब्रह्म का साक्षात्कार। प्रज्ञामूलक और तर्क-मूलक प्रवृत्तियों के परस्पर सम्मिलन से आत्मा के औपनिषदिष्ट तत्त्वज्ञान का स्फुट आविर्भाव हुआ। उपनिषदों के ज्ञान का पर्यवसान आत्मा और परमात्मा के एकीकरण को सिद्ध करने वाले प्रतिभामूलक वेदान्त में हुआ। भारतीय मनीषियों के उर्वर मस्तिष्क से जिस कर्म, ज्ञान और भक्तिमय त्रिपथगा का प्रवाह उद्भूत हुआ, उसने दूर-दूर के मानवों के आध्यात्मिक कल्मष को धोकर उन्हें पवित्र, नित्य-शुद्ध-बुद्ध और सदा स्वच्छ बनाकर मानवता के विकास में योगदान दिया है। इसी पतितपावनी धारा को लोग दर्शन के नाम से पुकारते हैं। अन्वेषकों का विचार है कि इस शब्द का वर्तमान अर्थ में सबसे पहला प्रयोग वैशेषिक दर्शन में हुआ।

दर्शन शब्द की व्युत्पत्ति-

पाणिनीय व्याकरण के अनुसार 'दर्शन' शब्द, **'दृशिर् प्रेक्षणे'** धातु से करण अर्थ में ल्युट् प्रत्यय करने से निष्पन्न होता है। अतएव दर्शन शब्द का अर्थ दृष्टि या देखना, 'जिसके द्वारा देखा जाय' या 'जिसमें देखा जाय' होगा। दर्शन शब्द का शब्दार्थ केवल देखना या सामान्य देखना ही नहीं है। इसीलिए पाणिनि ने धात्वर्थ में **'प्रेक्षण'** शब्द का प्रयोग किया है। प्रकृष्ट ईक्षण, जिसमें अन्तश्चक्षुओं द्वारा देखना या मनन करके सोपपत्तिक निष्कर्ष निकालना ही दर्शन का अभिधेय है। इस प्रकार के प्रकृष्ट ईक्षण के साधन और फल दोनों का नाम दर्शन है। जहाँ पर इन सिद्धान्तों का संकलन हो, उन ग्रन्थों का भी नाम दर्शन ही होगा, जैसे-न्याय दर्शन, वैशेषिक दर्शन, मीमांसा दर्शन आदि-आदि।

'दर्शन' शब्द का अर्थ-

'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्।' अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाए । देखने की प्रक्रिया दो प्रकार से होती है –

1. **द्रष्टा** - द्रष्टा की क्रिया (नित्यदृष्टि)
2. **अन्तःकरण** - इन्द्रिय से सम्बन्ध अन्तःकरण को ही दर्शन कहा जा सकता है। जो कि दर्शन का लौकिक अर्थ है। **'एकमेव दर्शनं ख्यातिरेव दर्शनम्'** यह दर्शन का रुढ़ अर्थ है। क्योंकि व्युत्पत्ति के अर्थ की अपेक्षा रूढ़ अर्थ प्रधान होता है। अतः दर्शन शब्द दर्शनशास्त्र के अर्थ में ही प्रचलित है। दर्शन के क्षेत्र में मुख्य रूप से तत्त्व के स्वरूप, ज्ञान, ज्ञान के साधन, ज्ञान की प्रामाणिकता आदि तथा आचार के विभिन्न विन्दुओं यथा कर्म, कर्मफल, कर्मस्वातन्त्र्य आदि का विशेष अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार दर्शन वह विधा है जिसके द्वारा तत्त्व, ज्ञान एवं आचार सम्बन्धी विषयों का अध्ययन कर संसार का वास्तविक ज्ञान प्राप्त किया जाता है।

भारतीय दर्शन का प्रतिपाद्य विषय-

दर्शनों का उपदेश वैयक्तिक जीवन के सम्मार्जन और परिष्करण के लिए ही अधिक उपयोगी है। विना दर्शनों के आध्यात्मिक पवित्रता एवं उन्नयन होना दुर्लभ है। दर्शन-शास्त्र ही हमें प्रमाण और तर्क के सहारे अन्धकार में दीपज्योति प्रदान करके हमारा मार्ग-दर्शन करने में समर्थ होता है। गीता के अनुसार **"किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः"** (संसार में करणीय क्या है और अकरणीय क्या है, इस विषय में विद्वान् भी अच्छी तरह नहीं जान पाते।) परम लक्ष्य एवं पुरुषार्थ की प्राप्ति दार्शनिक ज्ञान से ही संभव है, अन्यथा नहीं। दर्शन द्वारा विषयों को हम संक्षेप में दो

वर्गों में रख सकते हैं। लौकिक और अलौकिक अथवा मानवी(सापेक्ष) और आध्यात्मिक(निरपेक्ष)। दर्शन या तो विस्तृत सृष्टि प्रपंच के विषय में सिद्धान्त या आत्मा के विषय में हमसे चर्चा करता है। इस प्रकार दर्शन के विषय जड़ और चेतन दोनों ही हैं। प्राचीन ऋग्वैदिक काल से ही दर्शनों के मूल तत्त्वों के विषय में कुछ न कुछ संकेत हमारे आर्ष साहित्य में मिलते हैं।

प्रमुख दर्शनशास्त्रों के प्रथम सूत्र-

पूर्वमीमांसा- 'अथातो धर्मजिज्ञासा'।

वेदान्तसूत्र – 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा'।

वैशेषिकसूत्र – 'अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः'।

योगसूत्र – 'अथ योगानुशासनम्'।

सांख्यसूत्र – 'अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः'।

न्यायसूत्र- 'प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्क निर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानाम्तत्त्वज्ञानान्निः श्रेयसाधिगमः'।

भारतीय दर्शन का विकास-

वेदों में जो आधार तत्त्व बीज रूप में बिखरे दिखाई पड़ते थे, वे ब्राह्मणों में आकर कुछ उभरे; परन्तु वहाँ कर्मकाण्ड की लताओं के प्रतानों में फँसकर बहुत अधिक नहीं बढ़ पाये। आरण्यकों में ये अंकुरित होकर उपनिषदों में खूब पल्लवित हुए। दर्शनों का विकास जो हमें उपनिषदों में दृष्टिगोचर होता है, आलोचकों ने उसका श्रीगणेश लगभग दो सौ वर्ष ईसा पूर्व स्थिर किया है। महात्मा बुद्ध से यह प्राचीन हैं। इतना ही नहीं विद्वानों ने सांख्य, योग और मीमांसा को भी बुद्ध से प्राचीन माना है। संभव है कि ये दर्शन वर्तमान रूप में उस समय न हों, तथापि वे किसी रूप में अवश्य विद्यमान थे। वैशेषिकदर्शन भी शायद बुद्ध से प्राचीन ही है; क्योंकि जैसा आज के युग में न्याय और वैशेषिक समान तन्त्र समझे जाते हैं, उसी प्रकार पहले पूर्व मीमांसा और वैशेषिक समझे जाते थे। बौद्धदर्शन पद्धति का आविर्भाव ईसा से पूर्व दो सौ वर्ष माना जाता है, परन्तु जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन से भी प्राचीन ठहरता है। इसकी पुष्टि में यह प्रमाण दिया जाता है कि प्राचीन जैन दर्शनों में न तो बुद्ध दर्शन और न किसी हिन्दू दर्शन का ही खण्डन उपलब्ध होता है। महावीर स्वामी, जो जैन सम्प्रदाय के प्रवर्तक माने जाते हैं, वे भी बुद्ध से प्राचीन थे। अतएव जैन दर्शन का बुद्ध दर्शन से प्राचीन होना युक्तियुक्त अनुमान है। भारतीय दर्शनों का ऐतिहासिक क्रम निश्चित करना कठिन है। इन सब भिन्न-भिन्न दर्शनों का लगभग साथ ही साथ समान रूप से प्रादुर्भाव एवं विकास हुआ है। इधर-उधर तथा बीच में भी कई कड़ियाँ छिन्न-भिन्न हो गई हैं। अतः जो कुछ शेष है, उसी का आधार लेकर चलना है। इस क्रम में शुद्ध ऐतिहासिकता न होने पर भी क्रमिक विकास की श्रृंखला आदि से अन्त तक चलती रही है। इसलिए प्रायः विद्वानों ने इसी क्रम का अनुसरण किया है। वैदिक दर्शनों में **षड्दर्शन** (छः दर्शन) अधिक प्रसिद्ध और प्राचीन हैं। ये छः दर्शन ये हैं- न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदान्त। गीता का कर्मवाद भी इनके समकालीन है। षडदर्शनों को **'आस्तिक दर्शन'** कहा जाता है। वे वेद की सत्ता को मानते हैं। हिन्दू दार्शनिक परम्परा में विभिन्न प्रकार के आस्तिक दर्शनों के अलावा **अनीश्वरवादी** और **भौतिकवादी** दार्शनिक परम्पराएँ भी विद्यमान रहीं हैं।

भारतीय दर्शनों के सन्दर्भ में प्रमाणमीमांसा,तत्त्वमीमांसा एवं आचारमीमांसा-

॥प्रमाणमीमांसा॥

'प्रमेय' अर्थात् विषय का यथार्थ ज्ञान अर्थात् प्रमा के लिये प्रमाण की आवश्यकता होती है। चार्वाक लोग केवल प्रत्यक्ष प्रमाण मानते हैं। विषय तथा इन्द्रिय के सन्निकर्ष से उत्पन्न ज्ञान प्रत्यक्ष ज्ञान कहलाता है। हमारी इन्द्रियों के द्वारा प्रत्यक्ष दिखलायी पड़ने वाला संसार ही प्रमेय है। इसके अतिरिक्त अन्य पदार्थ असत् है। आँख, कान, नाक, जिह्वा और त्वचा के द्वारा रूप, शब्द, गन्ध, रस एवं स्पर्श का प्रत्यक्ष हम सबको होता है। जो वस्तु अनुभवगम्य नहीं होती उसके लिये किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता भी नहीं होती। **बौद्ध, जैन** नामक **अवैदिक दर्शन** तथा **न्यायवैशेषिक** आदि **अर्द्धवैदिक** दर्शन अनुमान को भी प्रमाण मानते हैं। उनका कहना है कि समस्त प्रमेय पदार्थों की सत्ता केवल प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध नहीं की जा सकती। परन्तु चार्वाक का कथन है कि अनुमान से केवल सम्भावना पैदा की जा सकती है। निश्चयात्मक ज्ञान प्रत्यक्ष से ही होता हैं। दूरस्थ हरे भरे वृक्षों को देखकर वहाँ पक्षियों का कोलाहल सुनकर, उधर से आने वाली हवा के ठण्डे झोके से हम वहाँ पानी की सम्भावना मानते हैं। जल की उपलब्धि वहाँ जाकर प्रत्यक्ष देखने से ही निश्चित होती है। अत: सम्भावना उत्पन्न करने तथा लोकव्यवहार चलाने के लिये अनुमान आवश्यक होता है किन्तु वह प्रमाण नहीं हो सकता। जिस व्याप्ति के आधार पर अनुमान प्रमाण की सत्ता मानी जाती है वह व्याप्ति के अतिरिक्त कुछ नहीं है। धूम के साथ अग्नि का, पुष्प के साथ गन्ध का होना स्वभाव है। सुख और धर्म का दु:ख और अधर्म का कार्यकारण भाव स्वाभाविक है। जैसे कोकिल के शब्द में मधुरता तथा कौवे के शब्द में कर्कशता स्वाभाविक है उसी प्रकार सर्वत्र समझना चाहिये। जहाँ तक शब्द प्रमाण की बात है तो वह तो एक प्रकार से प्रत्यक्ष प्रमाण ही है। आप्त पुरुष के वचन हमको प्रत्यक्ष सुनायी देते हैं। उनको सुनने से अर्थ ज्ञान होता है। यह प्रत्यक्ष ही है। जहाँ तक वेदों का प्रश्न है उनके वाक्य अदृष्ट और अश्रुतपूर्ण विषयों का वर्णन करते हैं अत: उनकी विश्वसनीयता सन्दिग्ध है। साथ ही अधर्म आदि में अश्वलिंगग्रहण सदृश लज्जास्पद एवं मांसभक्षण सदृश घृणास्पद कार्य करने से तथा **जर्भरी,**

तुर्फरी आदि अर्थहीन शब्दों का प्रयोग करने से वेद अपनी अप्रामाणिकता स्वयं सिद्ध करते हैं।

विभिन्न भारतीय दर्शनों के द्वारा स्वीकृत प्रमाण-

दर्शन	प्रमाण संख्या
चार्वाक	1. प्रत्यक्ष
जैन	2. प्रत्यक्ष, अनुमान
बौद्ध	2. प्रत्यक्ष, अनुमान
न्याय	4. प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द
वैशेषिक	2. प्रत्यक्ष, अनुमान
सांख्य	3. प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द
योग	3. प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम (शब्द)
मीमांसा-प्रभाकर	5.प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति
मीमांसा-भाट्ट	6. प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति अभाव
वेदान्त	6. प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति, अभाव
पौराणिक	8.प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति, अभाव, सम्भव, ऐतिह्य

॥तत्त्व मीमांसा॥

	दर्शन		तत्त्व
1.	न्याय	-	16 पदार्थ
2.	वैशेषिक	-	7 पदार्थ
3.	सांख्य	-	25 तत्त्व
4.	योग	-	26 तत्त्व
5.	वेदान्त	-	2(जीव, ब्रह्म)तत्त्व
6.	मीमांसा (भाट्ट)	-	5 पदार्थ-द्रव्य,गुण,कर्म,सामान्य, शक्ति
	मीमांसा (प्रभाकर)-		8 पदार्थ - द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, समवाय, शक्ति, संख्या सादृश्य
7.	चार्वाक	-	4 पृथ्वी, जल, तेज, वायु
8.	जैन	-	2 पदार्थ -जीव-अजीव (तत्त्व)
9.	बौद्ध	-	2 पदार्थ- स्वलक्षण, सामान्य लक्षण

॥आचार मीमांसा॥

चार्वाक लोग इस प्रत्यक्ष दृश्यमान देह और जगत् के अतिरिक्त किसी अन्य पदार्थ को स्वीकार नहीं करते। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक पुरुषार्थचतुष्टय को वे लोग पुरुष अर्थात् मनुष्य देह के लिये उपयोगी मानते हैं। उनकी दृष्टि में **अर्थ** और **काम** ही परम पुरुषार्थ है। धर्म नाम की वस्तु को मानना मूर्खता है क्योंकि जब इस संसार के अतिरिक्त कोई अन्य स्वर्ग आदि है ही नहीं तो धर्म के फल को स्वर्ग में भोगने की बात अनर्गल है। पाखण्डी धूर्तों के द्वारा कपोलकल्पित स्वर्ग का सुख भोगने के लिये यहाँ यज्ञ आदि करना धर्म नहीं है बल्कि उसमें की जाने वाली पशु हिंसा आदि के कारण वह अधर्म ही है तथा हवन आदि करना तत्तद वस्तुओं का दुरुपयोग तथा व्यर्थ शरीर को कष्ट देना है इसलिये जो कार्य शरीर को सुख पहुँचाये उसी को करना चाहिये। जिनसे इन्द्रियों की तृप्ति हो मन आनन्दित हो उन्हीं विषयों का सेवन करना चाहिये। शरीर इन्द्रिय मन के आनन्दावाप्ति में जो तत्त्व बाधक होते हैं उनको दूर करना, न करना, मार देना धर्म है। शारीरिक मानसिक कष्ट सहना, विषयानन्द से मन और शरीर को बलात् विरत करना अधर्म है। तात्पर्य यह है कि आस्तिक वैदिक एवं यहाँ तक कि अर्धवैदिक दर्शनों में, पुराणों स्मृतियों में वर्णित आचार का पालन यदि शरीर सुख का साधक है तो उनका अनुसरण करना चाहिये और यदि वे उसके बाधक होते हैं तो उनका सर्वथा सर्वदा त्याग कर देना चाहिये।

दर्शन के प्रमुख वाद-

1. आरम्भवाद - नैयायिक
2. असत्ख्यातिवाद - माध्यमिक बौद्ध
3. आत्मख्यातिवाद - विज्ञानवादी बौद्ध
4. अख्यातिवाद - प्रभाकर
5. विपरीताख्यातिवाद - कुमारिल
6. अनिर्वचनीयख्यातिवाद- शंकराचार्य
7. अन्यथाख्यातिवाद- नैयायिक (गौतम)
8. विवेकख्याति- सांख्य
9. अनात्मवाद - शून्यवादी
10. शून्यवाद - बौद्ध
11. उत्पत्तिवाद/कृतिवाद - भट्टलोल्लट (मीमांसक)
12. भुक्तिवाद - भट्टनायक (सांख्य)
13. अनुमितिवाद/ज्ञप्तिवाद - शंकुक (न्याय)
14. अभिव्यक्तिवाद - अभिनवगुप्त (वेदान्त)
15. व्यक्तिवाद - आनन्दवर्धन
16. ज्ञाततावाद - कुमारिल
17. त्रिपुटीप्रत्यक्षवाद - प्रभाकर
18. परिणामवाद - सांख्य, योग, वेदान्त एवं विज्ञानवादी
19. प्रतिविम्बवाद - प्रत्यभिज्ञा आभासवाद
20. दृष्टि सृष्टिवाद - शंकराचार्य
21. विवर्तवाद - वेदान्त

॥इकाई-4॥

(ख) दर्शन साहित्य का विशिष्ट अध्ययन-

साङ्ख्य दर्शन-

सांख्यकारिका सांख्य दर्शन का सबसे पुराना उपलब्ध ग्रन्थ है। इसके रचयिता ईश्वरकृष्ण हैं। संस्कृत के एक विशेष प्रकार के श्लोकों को "कारिका" कहते हैं। सांख्यकारिकाओं का समय बहुमत से ई. तृतीय शताब्दी के मध्य माना जाता है। वस्तुत: इनका समय इससे पर्याप्त पूर्व का प्रतीत होता है। इसमें ईश्वरकृष्ण ने कहा है कि इसकी शिक्षा कपिल से आसुरी को, आसुरी से पंचशिख को और पंचशिख से उनको प्राप्त हुई। इसमें उन्होने सांख्य दर्शन की 'षष्ठितंत्र' नामक कृति का भी उल्लेख किया है। सांख्यकारिका में 72 श्लोक हैं जो आर्या छन्द में लिखे हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि अन्तिम 3 श्लोक बाद में जोड़े गये (प्रक्षिप्त) हैं। सांख्यकारिका पर विभिन्न विद्वानों द्वारा अनेक टीकाएँ की गयीं जिनमें **युक्तिदीपिका, गौडपादभाष्यम्, जयमंगला, तत्वकौमुदी, नारायणकृत-सांख्यचन्द्रिका** आदि प्रमुख हैं। सांख्यकारिका पर सबसे प्राचीन भाष्य गोड़पाद द्वारा रचित है। दूसरा महत्वपूर्ण भाष्य 'वाचस्पति' मिश्र द्वारा रचित **'सांख्यतत्वकौमुदी'** है।

सांख्यकारिका का चीनी भाषा में अनुवाद 6ठी शती में हुआ। सन् 1832 में **'क्रिश्चियन लासेन'** ने इसका **'लैटिन'** में अनुवाद किया। **'एच टी कोलब्रुक'** ने इसको सर्वप्रथम **'अंग्रेजी'** में रूपान्तरित किया।

सांख्यकारिका 68+4=72 कारिका, **लेखक**- ईश्वरकृष्ण
सांख्यकारिका का अपरनाम-सुवर्णसप्तति/कनकसप्तति/हिरण्यसप्तति,

॥साङ्ख्यकारिका॥

दु:खत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ ।
दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकान्तात्यन्तोऽभावात् ॥ 1 ॥
दृष्टवदानुश्रविक: स ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्तः ।
तद्विपरीत: श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात् ॥ 2 ॥
मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्या: प्रकृतिविकृतय: सप्त ।
षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृति: पुरुष: ॥ 3 ॥
दृष्टमनुमानमाप्तवचनं च सर्वप्रमाणसिद्धत्वात् ।
त्रिविधं प्रमाणमिष्टं प्रमेयसिद्धि: प्रमाणाद्धि ॥ 4 ॥
प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टं त्रिविधमनुमानमाख्यातम् ।
तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकमाप्तश्रुतिराप्तवचनं तु ॥। 5 ॥
सामान्यतस्तु दृष्टादतीन्द्रियाणां प्रतीतिरनुमानात् ।
तस्मादपि चासिद्धं परोक्षमाप्तागमात्सिद्धम् ॥ 6 ॥
अतिदूरात् सामीप्यादिन्द्रियघातान्मनोऽनवस्थानात् ।
सौक्ष्म्याद्व्यवधानादभिभवात् समानाभिहाराच्च ॥ 7 ॥
सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिर्नाभावात् कार्यतस्तदुपलब्धे: ।
महदादि तच्च कार्यं प्रकृतिसरूपं विरूपं च ॥ 8 ॥
असदकरणादुपादानग्रहणात् सर्वसम्भवाभावात् ।
शक्तस्यशक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम्॥9॥
हेतुमदनित्यमव्यापि सक्रियमनेकमाश्रितं लिङ्गम् ।
सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं विपरीतमव्यक्तम् ॥ 10 ॥
त्रिगुणमविवेकि विषय: सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि ।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तथा च पुमान् ॥ 11 ॥
प्रीत्यप्रीतिविषादात्मका: प्रकाशप्रवृत्तिनियमार्था: ।
अन्योन्याभिभवाश्रयजननमिथुनवृत्तयश्च गुणा: ॥ 12 ॥
सत्त्वं लघु प्रकाशकमिष्टमुपष्टम्भकं चलं च रज: ।
गुरु वरणकमेव तम: प्रदीपवच्चार्थतो वृत्ति: ॥ 13 ॥
अविवेक्यादे: सिद्धिस्त्रैगुण्यात् तद्विपर्ययाभावात् ।
कारणगुणात्मकत्वात् कार्यस्याव्यक्तमपि सिद्धम् ॥ 14 ॥
भेदानां परिमाणात् समन्वयात् शक्तित: प्रवृत्तेश्च ।
कारणकार्यविभागादविभागाद् वैश्वरूप्यस्य ॥ 15 ॥
कारणमस्त्यव्यक्तं प्रवर्तते त्रिगुणत: समुदयाच्च ।
परिणामत: सलिलवत् प्रतिप्रतिगुणाश्रयविशेषात् ॥ 16 ॥
संघातपरार्थत्वात् त्रिगुणादिविपर्यादधिष्ठानात् ।
पुरुषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थं प्रवृत्तेश्च ॥ 17 ॥
जननमरणकरणानां प्रतिनियमादयुगपत्प्रवृत्तेश्च ।
पुरुषबहुत्वं सिद्धं त्रैगुण्यविपर्ययाच्चैव ॥ 18 ॥
तस्माच्च विपर्यासात् सिद्धं साक्षित्वमस्य पुरुषस्य ।
कैवल्यं माध्यस्थ्यं द्रष्टृत्वमकर्तृभावश्च ॥ 19 ॥
तस्मात्तत्संयोगादचेतनं चेतनावदिव लिङ्गम् ।
गुणकर्तृत्वेऽपि तथा कर्तेव भवत्युदासीन: ॥ 20 ॥
पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।
पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृत: सर्ग: ॥ 21 ॥
प्रकृतेर्महांस्ततोऽहंकारस्तस्माद् गणश्च षोडशक: ।
तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्य: पञ्चभूतानि ॥ 22 ॥
अध्यवसायो बुद्धिर्धर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम् ।
सात्त्विकमेतद्रूपं तामसमस्माद्विपर्यस्तम् ॥ 23 ॥
अभिमानोऽहंकार: तस्माद्विविध: प्रवर्तते सर्ग: ।
एकादशकश्च गणस्तन्मात्रपञ्चकश्चैव ॥ 24 ॥
सात्त्विक एकादशक: प्रवर्तते वैकृतादहंकारात् ।
भूतादेस्तन्मात्र: स तामसस्तैजसादुभयम् ॥ 25 ॥

बुद्धीन्द्रियाणि चक्षुःश्रोत्रघ्राणरसनत्वगाख्यानि ।
वाक्पाणिपादपायूपस्थानि कर्मेन्द्रियाण्याहुः ॥ 26 ॥
उभयात्मकमत्र मनः सङ्कल्पमिन्द्रियं च साधर्म्यात् ।
गुणपरिणामविशेषान्नानात्वं बाह्यभेदाश्च ॥ 27 ॥
रूपादिषु पञ्चानामालोचनमात्रमिष्यते वृत्तिः ।
वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दाश्च पञ्चानाम् ॥ 28 ॥
स्वालक्षण्यं वृत्तिस्त्रयस्य सैषा भवत्यसामान्या ।
सामान्यकरणवृत्तिः प्राणाद्या वायवः पञ्च ॥ 29 ॥
युगपच्चतुष्टयस्य तु वृत्तिः क्रमशश्च तस्य निर्दिष्टा ।
दृष्टे तथाप्यदृष्टे त्रयस्य तत्पूर्विका वृत्तिः ॥ 30 ॥
स्वां स्वां प्रतिपद्यन्ते परस्पराकूतहेतुकां वृत्तिम् ।
पुरुषार्थ एव हेतुर्न केनचित् कार्यते करणम् ॥ 31 ॥
करणं त्रयोदशविधं तदाहरणधारणप्रकाशकरम् ।
कार्यं च तस्य दशधाऽऽहार्यं धार्यं प्रकाश्यं च ॥ 32 ॥
अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा वाह्यं त्रयस्य विषयाख्यम् ।
साम्प्रत्कालं बाह्यं त्रिकालमाभ्यन्तरं करणम् ॥ 33 ॥
बुद्धीन्द्रियाणि तेषां पञ्च विशेषाविशेषविषयाणि ।
वाग्भवति शब्दविषया शेषाणि तु पञ्चविषयाणि ॥ 34 ॥
सान्तःकरणा बुद्धिः सर्वं विषयमवगाहते यस्मात् ।
तस्मात् त्रिविधं करणं द्वारि द्वाराणि शेषाणि ॥ 35 ॥
एते प्रदीपकल्पाः परस्परविलक्षणा गुणविशेषाः ।
कृत्स्नं पुरुषस्यार्थं प्रकाश्य बुद्धौ प्रयच्छन्ति ॥ 36 ॥
सर्वं प्रत्युपभोगं यस्मात् पुरुषस्य साधयति बुद्धिः ।
सैव च विशिनष्टि पुनः प्रधानपुरुषान्तरं सूक्ष्मम् ॥ 37 ॥
तन्मात्राण्यविशेषास्तेभ्यो भूतानि पञ्च पञ्चभ्यः ।
एते स्मृता विशेषाः शान्ता घोराश्च मूढाश्च ॥ 38 ॥
सूक्ष्मा मातापितृजाः सह प्रभूतैस्त्रिधा विशेषाः स्युः ।
सूक्ष्मास्तेषां नियता मातापितृजा निवर्तन्ते ॥ 39 ॥
पूर्वोत्पन्नमसक्तं नियतं महदादिसूक्ष्मपर्यन्तम् ।
संसरति निरुपभोगं भावैरधिवासितं लिङ्गम् ॥ 40 ॥
चित्रं यथाऽऽश्रयमृते स्थाण्वादिभ्यो विना यथाच्छाया ।
तद्वद्विना विशेषैर्न तिष्ठति निराश्रयं लिङ्गम् ॥ 41 ॥
पुरुषार्थहेतुकमिदं निमित्तनैमित्तिकप्रसङ्गेन ।
प्रकृतेर्विभुत्वयोगान्नटवद् व्यवतिष्ठते लिङ्गम् ॥ 42 ॥
सांसिद्धिकाश्च भावाः प्राकृतिका वैकृताश्च धर्माद्याः ।
दृष्टाः करणाश्रयिणः कार्याश्रयिणश्च कललाद्याः ॥ 43 ॥
धर्मेण गमनमूर्ध्वं गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ।
ज्ञानेन चापवर्गो विपर्ययादिष्यते बन्धः ॥ 44 ॥
वैराग्यात् प्रकृतिलयः संसारो भवति राजसाद् रागात् ।
ऐश्वर्यादविघातो विपर्ययात्तद्विपर्यासः ॥ 45 ॥
एष प्रत्ययसर्गो विपर्ययाशक्तितुष्टिसिद्ध्याख्यः ।
गुणवैषम्यविमर्दात् तस्य च भेदास्तु पञ्चाशत् ॥ 46 ॥
पञ्च विपर्ययभेदा भवन्त्यशक्तिश्च करणवैकल्यात् ।
अष्टाविंशतिभेदा तुष्टिर्नवधाऽष्टधा सिद्धिः ॥ 47 ॥
भेदस्तमसोऽष्टविधो मोहस्य च दशविधो महामोहः ।
तामिस्रोऽष्टादशधा तथा भवत्यन्धतामिस्रः ॥ 48 ॥
एकादशेन्द्रियवधाः सह बुद्धिवधैरशक्तिरुद्दिष्टा ।
सप्तदश वधा बुद्धेर्विपर्ययात् तुष्टिसिद्धीनाम् ॥ 49 ॥
आध्यात्मिक्यश्चतस्रः प्रकृत्युपादानकालभाग्याख्याः ।
वाह्या विषयोपरमात् पञ्च च नव तुष्टयोऽभिमताः ॥ 50 ॥
उहः शब्दोऽध्ययनं दुःखविघातास्त्रयः सुहृत्प्राप्तिः ।
दानं च सिद्धयोऽष्टौ सिद्धेः पूर्वोऽङ्कुशस्त्रिविधः ॥ 51 ॥
न विना भावैर्लिङ्गं न विना लिङ्गेन भावनिर्वृत्तिः ।
लिङ्गाख्यो भावाख्यस्तस्माद् द्विविधः प्रवर्तते सर्गः ॥ 52 ॥
अष्टविकल्पो दैवस्तैर्यग्योनश्च पञ्चधा भवति ।
मानुष्यश्चैकविधः समासतो भौतिकः सर्गः ॥ 53 ॥
ऊर्ध्वं सत्त्वविशालस्तमोविशालश्च मूलतः सर्गः ।
मध्ये रजोविशालो ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तः ॥ 54 ॥
तत्र जरामरणकृतं दुःखं प्राप्नोति चेतनः पुरुषः ।
लिङ्गस्याविनिवृत्तेस्तस्माद् दुःखं स्वभावेन ॥ 55 ॥
इत्येष प्रकृतिकृतो महदादिविशेषभूतपर्यन्तः ।
प्रतिपुरुषविमोक्षार्थं स्वार्थ इव परार्थ आरम्भः ॥ 56 ॥
वत्सविवृद्धिनिमित्तं क्षीरस्य यथा प्रवृत्तिरज्ञस्य ।
पुरुषविमोक्षनिमित्तं तथा प्रवृत्तिः प्रधानस्य ॥ 57 ॥
औत्सुक्यविनिवृत्यर्थं यथा क्रियासु प्रवर्तते लोकः ।
पुरुषस्य विमोक्षार्थं प्रवर्तते तद्वदव्यक्तम् ॥ 58 ॥
रङ्गस्य दर्शयित्वा निवर्तते नर्तकी यथा नृत्यात् ।
पुरुषस्य तथाऽत्मानं प्रकाश्य विनिवर्तते प्रकृतिः ॥ 59 ॥
नानाविधैरुपायैरुपकारिण्यनुपकारिणः पुंसः ।
गुणवत्यगुणस्य सतः तस्यार्थमपार्थकं चरति ॥ 60 ॥
प्रकृतेः सुकुमारतरं न किञ्चिदस्तीति मे मतिर्भवति ।
या दृष्टाऽस्मीति पुनर्न दर्शनमुपैति पुरुषस्य ॥ 61 ॥
तस्मान्न बध्यतेऽद्धा न मुच्यते नापि संसरति कश्चित् ।
संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिः ॥ 62 ॥
रूपैः सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना प्रकृतिः ।
सैव च पुरुषार्थं प्रति विमोचयत्येकरूपेण ॥ 63 ॥
एवं तत्त्वाभ्यास्यान्नास्मि न मे नाहमित्यपरिशेषम् ।
अविपर्ययाद्विशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम् ॥ 64 ॥
तेन निवृत्तप्रसवामर्थवशात् सप्तरूपविनिवृत्ताम् ।
प्रकृतिं पश्यति पुरुषः प्रेक्षकवदवस्थितः स्वस्थः ॥ 65 ॥
रङ्गस्थ इत्युपेक्षक एको दृष्टाहमित्युपरमत्यन्या ।
सति संयोगेऽपि तयोः प्रयोजनं नास्ति सर्गस्य ॥ 66 ॥

सम्यग्ज्ञानाधिगमाद् धर्मादीनामकारणप्राप्तौ ।
तिष्ठति संस्कारवशाच् चक्रभ्रमिवद् धृतशरीरः ॥ 67 ॥
प्राप्ते शरीरभेदे चरितार्थत्वात् प्रधानविनिवृत्तौ ।
ऐकान्तिकमात्यन्तिकमुभयं कैवल्यमाप्नोति ॥ 68 ॥
पुरुषार्थज्ञानमिदं गुह्यं परमर्षिणा समाख्यातम् ।
स्थित्युत्पत्तिप्रलयाश्चिन्त्यन्ते यत्र भूतानाम् ॥ 69 ॥
एतत्पवित्रमग्र्यं मुनिरासुरयेऽनुकम्पया प्रददौ ।
आसुरिरपि पञ्चशिखाय तेन च बहुधा कृतं तन्त्रम् ॥ 70 ॥
शिष्यपरम्परयाऽऽगतमीश्वरकृष्णेन चैतदार्याभिः ।
संक्षिप्तमार्यमतिना सम्यग्विज्ञाय सिद्धान्तम् ॥ 71 ॥
सप्तत्यां किल येऽर्थास्तेऽर्थाः कृत्स्नस्य षष्टितन्त्रस्य ।
आख्यायिकाविरहिताः परवादविवर्जिताश्चापि ॥ 72 ॥

सांख्यकारिका की प्रमुख कारिकाएं-

सांख्यदर्शन के अन्दर पच्चीस तत्त्वों को अंगीकार किया जाता है और उनकी मीमांसा भी बड़े ही अच्छे ढंग से इस दर्शन के अन्दर की गई है। इन्हीं पञ्चविंशति पदार्थों के ज्ञान से जीव आध्यात्मिक, आधिभौतिक या आधिदैविक, इन तीन प्रकार के दुःखों से सर्वथा छुटकारा प्राप्त कर लेता है। सांख्य ने इन तीनों दुःखों के विनाश का कारण इसी विवेकज्ञान को अन्त में स्वीकार किया है। जैसे कि ईश्वरकृष्ण ने सांख्यकारिका में कहा है।

दुःखत्रयाभिघाताज्जिज्ञासा तदपघातके हेतौ ।
दृष्टे साऽपार्था चेन्नैकान्तात्यन्तोऽभावात् ॥1॥

(अर्थात् संसार के अन्दर आकर प्राणिमात्र जब **आध्यात्मिक,** आधिभौतिक तथा आधिदैविक इन तीन प्रकार के दुःखों का अनुभव करता है तब उस समय उन तीनों प्रकार के दुःखों के विनाश के कारण में जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि उनकी निवृत्ति का कारण कौन है? और यदि वह जिज्ञासा दुःख की निवृत्ति के कारणीभूत औषध सेवन अथवा कामिनी के उपभोग रूप दृष्ट उपाय से ही शान्त हो जाती है तो शास्त्र के आधार पर होने वाले दुरधिगम तत्त्वज्ञान की क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर दिया कि पूर्वोक्त तीनों प्रकार के दुःखों की निवृत्ति दृष्ट उपाय से ऐकान्तिक (आवश्यक) रूप से तथा आत्यन्तिक (फिर कभी भी दुःख उत्पन्न न हो) रूप से नहीं होती है। अतः उसकी निवृत्ति के लिए शास्त्र में होने वाला तत्त्वज्ञान ही श्रेयस्कर है।

त्रिविध दुःख-

1. आध्यात्मिक- शारीरिक और मानसिक दुःख ही आध्यात्मिक है । इसे ही दैहिक दुःख भी कहा जाता है। देहजन्य अनेक रोग या बीमारी, बुभुक्षा, तितिक्षा, क्रोध, सन्ताप, अनुताप प्रभृति दैहिक या आध्यात्मिक दुःख हैं।

2. आधिभौतिक- इसी तरह आधिभौतिक दुःख को बाहरी कारणों से उत्पन्न कहा गया है। आधिभौतिक दुःख असम्भावित है। यथा-सर्पदंश, अकारण वैर, विरोध, युद्ध, प्राकृतिक प्रकोप, भूकम्प या फसलों का नष्ट हो जाना, अकाल या महामारी जैसे दुःख इसके भीतर परिगणित होते हैं।

3. आधिदैविक- भूत, प्रेत, अतिवृष्टि या अनावृष्टि, यक्ष, राक्षस या क्रूर ग्रहादि के प्रकोप से उत्पन्न दुःख को आधिदैविक दुःख कहा जाता है। इनके शमन के लिये अनेक शास्त्रीय और लौकिक उपाय भी बतलाये गये हैं; फिर भी दुःख तो दुःख ही है। इन्हीं दुःखों से प्राणी संसार में सन्तप्त रहता है।

इसमें तो केवल दुःखत्रय के विनाशकारिणी मूल वस्तु में जिज्ञासा का प्रदर्शन किया है । वह दुःखत्रय से विनाश का कारण कौन है, इसका स्पष्टीकरण ईश्वरकृष्ण ने आगे की कारिका में किया है

"दृष्टवदानुश्रविकः स ह्यविशुद्धिक्षयातिशययुक्तः।
तद्विपरीतः श्रेयान् व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात्" ॥2॥

दृष्ट (लौकिक) उपाय की तरह आनुश्रविक (वैदिक) उपाय भी है और वह वैदिक उपाय भी अविशुद्ध, क्षय तथा अतिशय इन तीन दोषों से युक्त है इसलिए उनके विपरीत व्यक्त (महदादि 23 पदार्थ) हैं, अव्यक्त (प्रकृति) और ज्ञ (पुरुष) के विशिष्ट ज्ञान से ही तीन प्रकार के दुःखों की निवृत्ति होती है ।

॥प्रमाण॥

दृष्टमनुमानमाप्तवचनं च सर्वप्रमाणसिद्धत्वात् ।
त्रिविधं प्रमाणमिष्टं प्रमेयसिद्धिः प्रमाणाद्धि ॥ 4 ॥
प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टं त्रिविधमनुमानमाख्यातम् ।
तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकमाप्तश्रुतिराप्तवचनं तु ॥। 5 ॥

सांख्य के अनुसार प्रमाणों की संख्या तीन है-प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द अन्य लोगों मे स्वीकृत और सब प्रमाण इन्हीं तीन प्रमाणों में सिद्ध हैं । प्रमाणों को स्वीकार करने की आवश्यकता इसलिए होती है कि घट-पट आदि प्रमेय पदार्थों की सिद्धि प्रमाण के आधार पर ही होती है।

1. प्रत्यक्ष-

प्रतिविषयाध्यवसायो दृष्टम्- अर्थात् वस्तु या विषय और इन्द्रियों के संयोग से प्राप्त ज्ञान ही प्रत्यक्ष है। वाचस्पति मिश्र के अनुसार, प्रत्यक्ष की तीन विशेषताएँ हैं।

(i) प्रत्यक्ष के लिए यथार्थ वस्तु का रहना आवश्यक है। यह वस्तु बाह्य या आन्तरिक, कुछ भी हो सकती है। पृथ्वी, पानी, अग्नि आदि बाह्य वस्तुएँ तथा सुख, दुःख आन्तरिक विषय हैं।

(ii) प्रत्यक्ष के लिए इन्द्रिय-वस्तु सन्निकर्ष आवश्यक है।

(iii) प्रत्यक्ष के लिए बुद्धि की सक्रियता भी आवश्यक है।

केवल वस्तु और इन्द्रिय के संयोग से ही ज्ञान नहीं उत्पन्न हो जाता। इसके लिए बुद्धि की क्रिया अनिवार्य है। बुद्धि में सत्त्वगुण रहने के कारण यह पुरुष के चैतन्य को प्रतिबिम्बित करती है और ज्ञानोदय होता है। संश्लेषण और विश्लेषण का कार्य करके बुद्धि हमें प्रत्यक्ष ज्ञान देती है। सांख्यदर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष के दो प्रकार हैं-

1. निर्विकल्पक प्रत्यक्ष   2. सविकल्पक प्रत्यक्ष।

1. निर्विकल्पक प्रत्यक्ष- निर्विकल्पक प्रत्यक्ष में वस्तु का केवल आभास मिलता है। इसमें वस्तु के विषय में पूर्ण ज्ञान नहीं होता। इस प्रत्यक्ष ज्ञान की अभिव्यक्ति शब्दों के माध्यम से सम्भव नहीं है। यह ज्ञान शिशु एवं गूँगे के ज्ञान से मिलता-जुलता है। शिशु और गूँगे अपने अनुभव को अभिव्यक्ति देने में असमर्थ होते हैं।
2. सविकल्पक प्रत्यक्ष- सविकल्पक प्रत्यक्ष में केवल वस्तु के अस्तित्व का ही आभास नहीं होता बल्कि उसकी पूर्ण जानकारी भी हो जाती है। जैसे-यदि कोई व्यक्ति हमारे सामने से गुजरे और उसके विषय में हमें पूर्ण जानकारी हो जाए तो यह प्रत्यक्ष ज्ञान है। निर्विकल्पक प्रत्यक्ष ही विकसित होकर सविकल्पक प्रत्यक्ष हो जाता है।

2. अनुमान-

सांख्यमत में अनुमान के स्वरूप का **त्रिविधमनुमानमाख्यातम् तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम्** कहकर शाब्दिक भेद अवश्य कर दिया है परन्तु आर्थिक स्वरूप अनुमान का वही है जो कि नैयायिकों ने माना है कि व्याप्तिविशिष्टपक्षधर्मताज्ञान और इसी अर्थ में वाचस्पति मिश्र ने लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम् का पर्यवसान भी किया है और यह अनुमान तीन प्रकार का है –

1. पूर्ववत्   2. शेषवत्   3. सामान्यतोदृष्ट,

1. पूर्ववत् - पूर्ववत् अनुमान दो वस्तुओं के मध्य व्याप्ति-सम्बन्ध पर आश्रित है। **उदाहरण-** धुएँ और आग में व्याप्ति सम्बन्ध रहने से धुएँ की उपस्थिति से आग की उपस्थिति का अनुमान किया जाता है या जैसे बादलों से आच्छादित आकाश को देखकर तथा बिजली की कड़कड़ाहट को सुनकर भाविकालीन वृष्टिरूप (वर्षा) कार्य का अनुमान होता है।
2. शेषवत् अनुमान उसे कहते हैं जहाँ कार्य से कारण का अनुमान होता हैं क्योंकि अन्तिम कार्य को शेष शब्द से कहा है और उस कार्यरूप लिंग से होने वाले अनुमान को शेषवत् अनुमान कहा है। उदाहरणस्वरूप प्रातःकाल चारों ओर पानी जमा देखकर रात में वर्षा के हो चुकने का अनुमान करना।
3. सामान्यतोदृष्ट- यदि दो वस्तुओं को साथ-साथ देखें तब एक को देखकर दूसरे का अनुमान करना सामान्यतोदृष्ट है । हम लोगों ने बगुले को उजला पाया है। ज्यों ही हम सुनते हैं कि अमुक पक्षी बगुला है, त्यों ही हम अनुमान करते हैं कि वह उजला होगा।

3. शब्द-

आप्तश्रुतिराप्तवचनम्- अर्थात् आप्तपुरुष के द्वारा उच्चरित यथार्थवाक्य से उत्पन्न वाक्यार्थज्ञान को ही शब्दप्रमाण कहा वेदश्रुति-स्मृति-इतिहास-पुराण-धर्मशास्त्र एवं सामान्यशास्त्र आदि के वाक्यों से उत्पन्न हुए ज्ञानों का भी शब्दप्रमाण में ही अन्तर्भाव हो जाता है।

सत्कार्यवाद

सांख्यदर्शन सत्कार्यवाद का समर्थक है। सत्कार्यवाद का अर्थ है कि कार्य में सत् होता है अर्थात् कार्य न तो कोई नवीन वस्तु है, न ही कोई नया कारण आरम्भ, बल्कि वह कारण की ही बदली हुई अवस्था है। इस परिवर्तन को नया आरम्भ कहने के स्थान पर कारण की व्यक्त अवस्था कहना उचित है अर्थात् कारण में कार्य पहले अव्यक्त था और अब व्यक्त हो गया है। सांख्यकारिका में सत्कार्यवाद की स्थापना इस कारिका द्वारा की गई है-

"असदकरणादुपादानग्रहणात्सर्वसंभवाभावात् ।
शक्तस्य शक्यकरणात् कारणभावाच्च सत्कार्यम् ॥9॥

असद् अकरणात्- जिसका अस्तित्व ही नहीं है, उसकी कभी उत्पत्ति नहीं हो सकती। **जैसे-** बालू में घी का अभाव है, इसलिए किसी भी प्रकार से बालू से घी नहीं निकाला जा सकता।

उपादान ग्रहणात्- किसी कार्य की उत्पत्ति के लिए उपयुक्त कारण की खोज की जाती है। **जैसे-** दही उत्पन्न करने के लिए दूध की खोज की जाती है और तेल उत्पन्न करने के लिए तिलहन की खोज होती है। इससे पता चलता है कि कार्य अपने खास कारण में ही पहले से स्थित है।

सर्वसम्भवाभावात्- हर वस्तु से हर वस्तु नहीं उत्पन्न हो सकती **जैसे-** बालू से घी नहीं निकलता और न रूई से टेबल बनता है। यदि कार्य अपने खास कारण में नहीं रहता, तो फिर किसी से किसी भी वस्तु की उत्पत्ति हो जाती।

शक्तस्य शक्यकरणात्- कारण अपनी योग्यता के अनुकूल ही कार्य उत्पन्न करता है। **जैसे-** दूध से दही, मलाई या अन्य कोई खाद्य-पदार्थ बना सकता है। इससे खाद नहीं बना सकता। इसी प्रकार, तिलहन केवल तेल या खली उत्पन्न कर सकता है, चना नहीं। इससे सिद्ध होता है कि कारण उसी कार्य को उत्पन्न कर सकता है, जिसके लिए वह योग्य

हो। ऐसा इसलिए होता है कि, क्योंकि कार्य पहले से ही अपने कारण में निहित है।

कारणाभावाच्च सत्कार्यम्- कार्य और कारण अभिन्न हैं। इन्हें एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। कारण कार्य का छिपा हुआ रूप है और कार्य कारण का खुला हुआ रूप। इससे पता चलता कि कार्य कारण में उत्पत्ति के पूर्व विद्यमान रहता है।

॥पुरुषस्वरूप॥

सांख्य के द्वैतवाद में प्रकृति के अतिरिक्त दूसरी सत्ता पुरुष की ही कही गई है। सांख्य में पुरुष की धारणा लगभग वही है जिसे अन्य दर्शनों में आत्मा कहा गया है। सांख्य दर्शन पुरुष के सम्बन्ध में तीन मूल प्रश्नों पर विचार करता है।

1. पुरुष का स्वरूप क्या है।
2. पुरुष के अस्तित्व की सिद्धि हेतु तर्क।
3. पुरुषों की अनेकता या बहुत्व सिद्ध करने के तर्क।

पुरुष का स्वरूप-

सांख्य दर्शन के अनुसार पुरुष का स्वरूप अन्य भारतीय दर्शनों की आत्मा से पर्याप्त साम्य रखता है। इसका स्वरूप स्पष्ट करते हुए मूलतः इसे प्रकृति के सर्वथा विपरीत कहा गया है । यह शुद्ध चैतन्यस्वरूप है और सभी अवस्थाओं में चेतन्ययुक्त रहता है जबकि प्रकृति जड़ है। यह प्रकृति के समान त्रिगुणात्मक नहीं, निस्त्रिगुण है। यह ज्ञाता और विषयी है जबकि प्रकृति ज्ञेय और विषय है तथा प्रकृति परिणामी अर्थात् क्रियाशील है जबकि पुरुष नित्य तथा अपरिणामी। पुरुष की सत्ता स्वतः सिद्ध है और इसका निषेध करना असम्भव है क्योंकि इसका निषेध करने वाला निषेधकर्ता स्वयं पुरुष का ही स्वरूप है। यह सत् और चेतन तो है किन्तु आनन्दस्वरूप नहीं है क्योंकि आनन्द की उत्पत्ति सत्त्व गुण से होती है जबकि यह निस्त्रिगुण या निर्गुण है। पुनः यह कर्ता नहीं भोक्ता मात्र है क्योंकि यह चेतन किन्तु निष्क्रिय है। यह प्रकृति और उसके विकारों का उसी प्रकार भोग करता है; जैसे राजा स्वयं अन्नोत्पादन नही करते हुए भी अन्न का भोग करता है। सांख्य का पुरुष अन्य दर्शनों के आत्म-विचार के समान होते भी कुछ दृष्टियों से उनसे भिन्न है। चार्वाकीय देहात्मवाद के विरुद्ध यह पुरुष या आत्मा की भिन्न व नित्य सत्ता स्वीकार करता है। बौद्ध दर्शन मानता है कि आत्मा स्थायी नहीं है बल्कि चेतना का प्रवाह मात्र है, जबकि सांख्य ने पुरुष को नित्य माना है। न्याय-वैशेषिक चेतना को आत्मा का आगन्तुक गुण मानते हैं जबकि सांख्यानुसार चेतना पुरुष का स्वभाव है। शंकर ने आत्मा को सच्चिदानन्द व एक माना है जबकि सांख्य का पुरुष संख्या में अनेक है और सत्त्व गुण से उत्पन्न होने वाले आनन्द से भी रहित अर्थात् सत् चित् है।

पुरुष के अस्तित्व की सिद्धि हेतु तर्क-

ईश्वरकृष्ण की सांख्यकारिका में पुरुष की सत्ता सिद्ध करने हेतु पाँच तर्क दिए गए हैं जो निम्नलिखित कारिका में संकलित हैं।

संघातपरार्थत्वात् त्रिगुणादिविपर्ययादधिष्ठानात् ।
पुरुषोऽस्ति भोक्तृभावात् कैवल्यार्थं प्रवृत्तेश्च ॥17॥

संघातपरार्थत्वात्- यह जगत् प्रकृति के तीनों गुणों से निर्मित है और जड़ होने के कारण साधन है। प्रश्न है कि इसका साध्य कौन है? यदि जड़ पदार्थ को ही इसका साध्य मानें तो अनावस्था दोष पैदा होता है। इसका साध्य वही हो सकता है जो चेतन हो तथा भोक्ता हो। यह पुरुष ही है। यह **'प्रयोजनमूलक'** प्रमाण है।

त्रिगुणादिविपर्ययात्- प्रकृति अपने स्वरूप में त्रिगुणात्मक है तथा परिणामी है । तार्किक दृष्टि से त्रिगुण निर्गुण की ओर संकेत करता है और परिणामी अपरिणामी की ओर। यह निस्त्रिगुण तथा अपरिणामी तत्त्व ही पुरुष है। यह पुरुष की सत्ता सिद्धि का **'तर्कशास्त्रीय'** तर्क है।

अधिष्ठानात्- कोई भी क्रिया किसी आधार की अपेक्षा रखती है। प्रश्न है कि चिन्तन तथा अनुभव व ज्ञान इत्यादि का अधिष्ठान कौन है? यह प्रकृति नहीं हो सकती क्योंकि प्रकृति ज्ञेय, विषय तथा जड़ है जबकि यह अधिष्ठान ज्ञाता, विषयी तथा चेतन होना चाहिए। यह अधिष्ठान पुरुष ही है। इस तर्क को **'तत्त्वमीमांसीय'** तर्क कहते हैं।

भोक्तृभावात्- प्रकृति और उसके विचार जड़ होने के कारण भोग्य हैं. अतः भोक्ता की अपेक्षा रखते हैं। इसका भोक्ता वही हो सकता है जो जड़ न हो अर्थात् चेतन हो ।यह चेतन भोक्ता पुरुष ही है । इसे **'नीतिपरक प्रमाण'** कहते हैं।

कैवल्यार्थं प्रवृत्तेश्च- बहुत से व्यक्ति कैवल्य की प्रवृत्ति से युक्त होते हैं और उसके लिए अत्यधिक प्रयास भी करते हैं। प्रश्न है कि कैवल्य की प्रवृत्ति व प्राप्ति किसे होती है? यह सत्ता पुरुष की ही है। इस तर्क को **'धार्मिक'** तथा **'आध्यात्मिक'** तर्क कहते हैं।

पुरुष की अनेकता सिद्धि के तर्क-

सांख्य-दर्शन जैन, न्याय-वैशेषिक तथा मीमांसा दर्शन के समान आत्मा अनेकता में विश्वास रखता है। पुरुष या आत्मा की अनेकता सिद्ध करने के लिए ही वह तीन तर्क प्रस्तुत करता है जो निम्नलिखित कारिका में संकलित है-

"जननमरणकरणानां प्रतिनियमात् अयुगपत्प्रवृत्तेश्च।
पुरुष बहुत्वं सिद्धं त्रैगुण्यविपर्ययात् चैव"॥18॥

जननमरणकरणानां प्रतिनियमात्- यदि पुरुष को अनेक न माना जाए तो विभिन्न व्यक्तियों के जन्म, मृत्यु तथा अनुभव अलग-अलग नहीं माने जा सकते हैं जबकि अनुभव से हम जानते हैं कि व्यक्ति के जन्म और मृत्यु आदि भिन्न-भिन्न होते हैं। यदि पुरुष एक ही होता तो एक व्यक्ति

के जन्म से सभी जीवित हो जाते और एक ही की मृत्यु से सभी मर जाते।

अयुगपत्प्रवृत्तेश्च- इस तर्क के अनुसार सभी व्यक्तियों की प्रवृत्ति के परस्पर भिन्न होने का यही कारण है कि सभी में भिन्न-भिन्न पुरुष हैं। प्रवृत्ति का अर्थ है मानसिक तथा शारीरिक कर्म। प्रत्येक व्यक्ति के मानसिक तथा शारीरिक कर्म इसलिए परस्पर भिन्न हैं क्योंकि सभी के अन्तःकरण व इन्द्रिय इत्यादि भिन्न-भिन्न हैं। यदि ऐसा न होता तो एक के हँसने से सभी हँसते और एक के गिरने से सभी गिर जाते।

त्रैगुण्यविपर्ययात्- इस तर्क के अनुसार तीन गुणों की आनुपातिक विभिन्नता पुरुषों की अनेकता सिद्ध करती है। तीनों गुणों की आनुपातिक भिन्नता सर्वप्रथम देवता,मनुष्य व राक्षस योनियों में द्रष्टव्य है क्योंकि देवता सत्त्वप्रधान, मनुष्य रजोगुण प्रधान तथा राक्षस तमोगुण प्रधान होते हैं। पुनः विभिन्न मनुष्यों में भी तीनों गुणों का आनुपातिक वैविध्य दिखाई पड़ता है जिसके आधार पर हम मनुष्यों में विभेद करते हैं। इस विभेद से सिद्ध होता है कि पुरुष अनेक हैं।

तस्माच्च विपर्यासात् सिद्धं साक्षित्वमस्य पुरुषस्य ।
कैवल्यं माध्यस्थ्यं द्रष्टृत्वमकर्तृभावश्च ॥19॥

और उसके (त्रिगुणादि) के विपरीत स्वभाव वाला होने से इस पुरुष के साक्षी भाव, मध्यस्थ भाव, द्रष्टा भाव और कर्तृत्व का अभाव सिद्ध होता है ।

तस्मात्तत्संयोगादचेतनं चेतनावदिव लिङ्गम् ।
गुणकर्तृत्वेऽपि तथा कर्तेव भवत्युदासीनः ॥20॥

इसलिए यह अचेतन (महदादि) लिङ्गतत्त्व उस चेतन पुरुष के संयोग से चेतन जैसा हो जाता है । गुणों के कर्ता होने पर उदासीन पुरुष भी कर्ता की तरह हो जाता है ।

॥प्रकृतिस्वरूप॥

सांख्य दर्शन के द्वैतवाद में एक तत्त्व प्रकृति है जबकि दूसरा तत्त्व पुरुष। सांख्य-दर्शन प्रकृति के सम्बन्ध में जिन बातों का विश्लेषण करता है, वे हैं-प्रकृति का ज्ञान कैसे होता है, प्रकृति का स्वरूप, प्रकृति की अवस्थाएँ तथा प्रकृति के अस्तित्व के प्रमाण। प्रकृति का ज्ञान कैसे होता है? सांख्य के अनुसार प्रकृति का ज्ञान अनुमान के माध्यम से होता है, जब हम विश्व के मूल कारण की खोज करते हैं। विश्व में दो प्रकार की वस्तुएँ हैं-

(1) स्थूल पदार्थ= जैसे-मिट्टी, पानी, पवन इत्यादि।

(2) सूक्ष्मातिसूक्ष्म पदार्थ= जैसे- इन्द्रिय, मन, अहंकार आदि।

विश्व का मूल कारण वही हो सकता है जो इन दोनों प्रकार के पदार्थों को आधार दे सके। यह कारण महाभूत नहीं हो सकते क्योंकि महाभूतों से मन और बुद्धि जैसे सूक्ष्म पदार्थ उत्पन्न नहीं हो सकते। विश्व का कारण पुरुष भी नहीं हो सकता क्योंकि पुरुष शुद्ध चैतन्यस्वरूप है,जबकि विश्व में मिट्टी और जल जैसे स्थूल व जड़ पदार्थ भी हैं। सांख्य के अनुसार प्रकृति ही वह कारण है जो स्थूल तथा सूक्ष्म दोनों प्रकार के पदार्थों का आधार बनने में सक्षम है। अतः जगत् के कारण की खोज की प्रक्रिया में अनुमान के माध्यम से प्रकृति के स्वरूप का ज्ञान होता है।

प्रकृति का स्वरूप-

सांख्य के अनुसार प्रकृति में अनेक विशेषताएँ हैं। यह नित्य तथा शाश्वत है क्योंकि उत्पत्ति और विनाश से परे है। यह स्वतन्त्र है अर्थात् किसी भी तरह आत्मा या पुरुष पर निर्भर नहीं है। यह अचेतन है और इसी कारण विषय अथवा ज्ञेय है, विषयी या ज्ञाता नहीं। इसकी वास्तविक सत्ता है और यह सतत् क्रियाशील है। पुनः प्रकृति सामान्य है न कि विशेष। इन विशेषताओं के कारण प्रकृति को कई नामों से व्यक्त किया गया है **जैसे- 'अव्यक्त'** अर्थात् विश्वरूपी कार्य की अव्यक्त अवस्था, **'प्रधान'** अर्थात् विश्व का मूल कारण, **'अजा'** अर्थात् नित्य व शाश्वत, **'अनुमान'** अर्थात् अनुमानगम्य और **'प्रसवधर्मिणी'** अर्थात् परिणामी या जगत् को जन्म देने वाली।

प्रकृति के अस्तित्व के तर्क-

सांख्य दर्शन ने प्रकृति के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिए पाँच तर्क प्रस्तुत किए हैं जो ईश्वरकृष्ण कृत सांख्यकारिका की निम्नलिखित कारिका में संकलित किए गए हैं।

"भेदानां परिमाणात् समन्वयात् शक्तितः प्रवृत्तेश्च।
कारणकार्यविभागात् अविभागात् वैश्वरूपस्य"॥15॥

भेदानां परिमाणात्- जगत् के सम्पूर्ण पदार्थ परिमित अर्थात् सीमित हैं। परिमित पदार्थ का है। आधार परिमित को नहीं माना जा सकता क्योंकि इससे अनवस्था दोष उपस्थित होता है। परिमित वस्तु अपरिमित आधार की अपेक्षा रखती है और भेद अभेद की। यह परिमित आधार प्रकृति ही है।

समन्वयात्- जगत् के सभी पदार्थ सुख-दुःख मोहात्मक हैं क्योंकि वे सत्व, रजस् और तमस् नामक गुणों से निर्मित हैं। प्रश्न है कि इन तीनों गुणों को मूल रूप से कौन धारण करता है? पुरुष ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि वह निर्गुण है। अतः तीनों गुणों का समन्वय करने वाली सत्ता प्रकृति ही है।

शक्तितः प्रवृत्तेश्च- कोई भी कार्य तभी उत्पन्न होता है जब उसके लिए समर्थ कारण विद्यमान हो। जगत् में दो प्रकार के पदार्थ हैं-स्थूल पदार्थ तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म पदार्थ। इस जगत् का समर्थ कारण वही हो सकता है जो दोनों को धारण करें। यह कारण महाभूत नहीं हो सकते क्योंकि

वे सूक्ष्म पदार्थों को धारण नहीं कर सकते। यह कारण पुरुष भी नहीं हो सकता, क्योंकि शुद्ध चैतन्यस्वरूप होने के कारण वह जड़ पदार्थों को धारण नहीं कर सकता। अतः जगत् का समर्थ कारण प्रकृति ही है।

कार्यकारणविभागात्- सत्कार्यवाद के अनुसार कारण की व्यक्त अवस्था को ही कार्य कहते हैं। अर्थात् व्यक्त कार्य अव्यक्त अवस्था में कारण में ही विद्यमान होते हैं। यह जगत् एक कार्य है। अतः इसके लिए एक कारण चाहिए जिससे यह व्यक्त हुआ है। यह कारण प्रकृति ही है।

अविभागात् वैश्वरूपस्य- जैसे सोने की अँगूठी गलकर पुनः सोना बन जाती है। प्रश्न है कि प्रलयावस्था में विश्व किसमें लीन होता है? यह कारण प्रकृति ही है। अनुसार कार्य तिरोभूत होकर पुनः कारण में ही लीन हो जाते हैं ।

कारणमस्त्यव्यक्तं प्रवर्तते त्रिगुणतः समुदयाच्च ।
परिणामतः सलिलवत् प्रतिप्रतिगुणाश्रयविशेषात् ॥16॥

उपरोक्त भेदादि हेतुओं के कारण अव्यक्त तत्त्व कारणात्मक है, त्रिगुणात्मक होने से तथा एकरूप होने से (व्यक्त तत्त्व) प्रवृत्त होता है और प्रत्येक गुण के आश्रय विशेष के कारण जल की तरह परिणाम में भेद प्रतीत होता है ।

प्रकृति की अनुपलब्धि के आठ कारण-

अतिदूरात् सामीप्यादिन्द्रियघातान्मनोऽनवस्थानात् ।
सौक्ष्म्याद्व्यवधानादभिभवात् समानाभिहाराच्च ॥7॥

अत्यन्त दूर होने से, अत्यन्त समीप होने से, इन्द्रियों के सामर्थ्य नष्ट होने से, मन के एक जगह पर न टिकने से, अतिसूक्ष्म होने से, व्यवधान होने से, किसी अन्य से अभिभूत हो जाने से, और अपने सदृश का व्यवहार हो जाने से प्रकृति की सत्ता उपलब्ध होने पर भी अनुपलब्ध है ।

प्रकृति की उपलब्धि-

सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिर्नाभावात् कार्यतस्तदुपलब्धेः ।
महदादि तच्च कार्यं प्रकृतिसरूपं विरूपं च ॥8॥

अतिसूक्ष्म होने के कारण ही प्रकृति की प्रतीति नहीं होती है न कि अभाव के कारण । उस प्रकृति के उपलब्धि उसके कार्य तत्त्वों से हो जाती है और ये कार्य महदादि पञ्चभूतान्त तत्त्व ही हैं, और ये महदादि तत्त्व प्रकृति के विसदृश तथा सदृश रूप वाले हैं ।

व्यक्त और अव्यक्त में असमानता-

हेतुमदनित्यमव्यापि सक्रियमनेकमाश्रितं लिङ्गम् ।
सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं विपरीतमव्यक्तम् ॥10॥

महदादि पञ्चभूतान्त हेतु से युक्त, अनित्य (उत्पन्न विनाशशील), अव्यापि, सक्रिय, अनेक, आश्रित, लिङ्ग, सावयव और परतन्त्र है और इसके विपरीत स्वभाव वाला अव्यक्त (प्रकृतितत्त्व) है ।

व्यक्त और अव्यक्त में समानता-

त्रिगुणमविवेकि विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि ।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तथा च पुमान् ॥11॥

व्यक्त तत्त्व (महदादि भूतान्त) तथा अव्यक्ततत्त्व (प्रकृति) त्रिगुण, अविवेकि, विषय, सामान्य, अचेतन, प्रसवधर्मी, से युक्त है, और पुरुष तत्त्व इसके विपरीत स्वभाव वाला है ।

अव्यक्त तत्त्व की सिद्धि-

अविवेक्यादेः सिद्धिस्त्रैगुण्यात् तद्विपर्ययाभावात् ।
कारणगुणात्मकत्वात् कार्यस्याव्यक्तमपि सिद्धम् ॥14॥

उपयुक्त अविवेकी आदि स्वरूप महदादि में सिद्ध होते हैं, त्रिगुणात्मक होने से तथा उनके (अव्यक्त) विपर्यय का अभाव हो जाने से और कार्य का कारणगुणात्मक होने से अव्यक्त तत्त्व भी सिद्ध हो जाता है ।

प्रकृति की दो अवस्थाएँ-

सांख्य के अनुसार प्रकृति की दो अवस्थाएँ हैं-

1. साम्यावस्था 2. वैषम्यावस्था।

साम्यावस्था में प्रकृति में सरूपपरिणाम सतत् रूप से चलता रहता है। प्रकृति इस समय भी निरन्तर सक्रिय होती है किन्तु इस समय सत्व, रजस् और तमस् गुण अपने-अपने भीतर ही क्रियाशील रहते हैं। यह अवस्था तब बदलती है जब पुरुष की सन्निधि के कारण गुणक्षोभ होता है। इससे सर्वप्रथम रजस् गुण गतिशील होता है और तदुपरान्त तीनों गुण एक-दूसरे के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं। यही विरूपपरिणाम है जो सृष्टि के लिए उत्तरदायी है। इसी के कारण विश्व की सभी वस्तुओं का निर्माण होता है और उनकी प्रवृत्ति भी उनमें विद्यमान गुणों के अनुपात से निर्धारित होती है।

प्रकृति के तीन गुण-

"प्रीत्यप्रीतिविषादात्मकाः प्रकाशप्रवृत्तिनियमार्थाः।
अन्योन्याभिभवाश्रयजननमिथुनवृत्तयश्च गुणाः" ॥12॥

सांख्य दर्शन प्रकृति की व्याख्या उसके तीन गुणों के माध्यम से करता है जो न केवल प्रकृति में, बल्कि प्रकृति से उत्पन्न प्रत्येक वस्तु में भी उपस्थित होते हैं। ये सूक्ष्म तथा अतीन्द्रिय हैं, इसीलिये अनुमान के विषय है- **1. सत्त्व-** प्रीति, **2. रजस्-** अप्रीति, **3. तमस्-** विषाद ।

गुणों की वृत्तियां-

गुणों की चार प्रकार की वृत्तियां होती हैं-

(1) अन्योन्याभिभववृत्ति

(2) अन्योन्याश्रयवृत्ति

(3) अन्योन्यजननवृत्ति

(4) अन्योन्यमिथुनवृत्ति।

गुणों के स्वभाव-

"सत्वं लघु प्रकाशकमिष्टमुपष्टम्भकं चलश्च रजः।

गुरु वरणकमेव तम, प्रदीपवच्चार्थतो वृत्तिः" ॥13॥

1. सत्त्व- सत्त्व गुण शुद्धता का प्रतीक है जिससे आनन्द और ज्ञान की उत्पत्ति होती है। सूर्य, अग्नि, मन तथा बुद्धि में प्रकाशित होने या ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता इसी से आती है। यह गुण हल्का होता है इसलिए ऊर्ध्वगमन इसकी प्रवृत्ति है। इसका वर्ण श्वेत माना गया है।

2. रजस्- रजस् गुण अशुद्धि का प्रतीक है। क्रोध, द्वेष, विषाद जैसी दुःखात्मक प्रवृत्तियाँ यही उत्पन्न करता है । इसका वर्ण,लाल माना गया है।

3. तमस्- तमस् गुण अन्धकार तथा अज्ञान का प्रतीक है और यह मोह पैदा करता है । प्रमाद, आलस्य आदि इसी के कारण होते हैं। भारी होने के कारण यह अधोगामी है और इसका रंग काला माना गया है।

उल्लेखनीय है कि ये तीनों गुण सदा संयुक्त तथा अवियोज्य रहते हैं। परस्पर विरोधी होने के बाद भी यह कार्य की उत्पत्ति वैसे ही मिलकर करते हैं जैसे दीपक में तेल, बत्ती और ज्वाला परस्पर भिन्न होकर भी प्रकाशोत्पन्न करते हैं। हर वस्तु में इन तीनों की उपस्थिति के कारण ही एक ही वस्तु किसी को सुख, किसी को दुःख तो किसी में आलस्य पैदा करती है।

सत्व- लघु, प्रकाश । **रज-** उपष्टम्भक, चल । **तम-** गुरू, वरणक ।

॥सृष्टिक्रम॥

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।

पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः ॥21॥

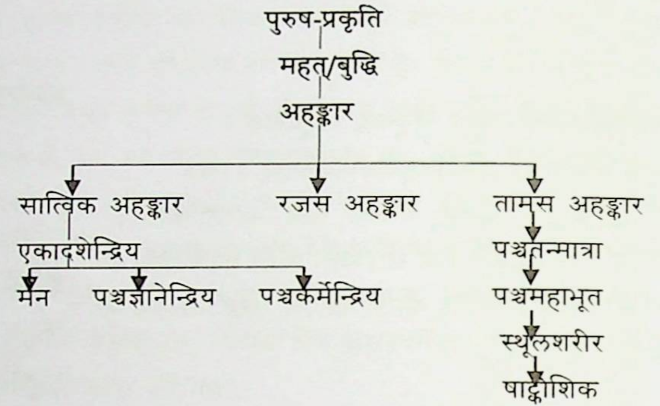
पुरुष का (प्रकृति के साथ) दर्शन के लिए तथा प्रकृति का कैवल्य के लिए पुरुष के साथ संयोग होता है । इस प्रकृति और पुरुष उभय का संयोग पङ्गु और अन्ध के समान होता है और उसी संयोग से सृष्टि होती है ।

"प्रकृतेर्महांस्ततोऽहङ्कारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः।

तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्यः पञ्च भूतानि" ॥22॥

प्रकृति से महत् तत्त्व, महत्तत्व से अहंकार और उस अहंकार से सोलह का समूह (पञ्चतन्मात्राएं+एकादश इन्द्रियाँ) और उस सोलह में भी पाँच तन्मात्राओं से पाँच महाभूत उत्पन्न होते हैं ।

सांख्य के अनुसार जगत् का विकास प्रकृति से होता है जो कि सांख्य के द्वैतवाद में पुरुष के अतिरिक्त अन्य सत्ता है। प्रकृति सतत् परिणामी है किन्तु इसकी साम्यावस्था में सरूप-परिणाम होता है अर्थात् सत्व गुण की क्रिया-प्रतिक्रिया सत्वगुण से, रजस् की रजस् से और तमस् की तमस् से होती है। यह साम्यावस्था तब भंग होती है जब पुरुष के संयोग या सन्निधि के कारण प्रकृति में गुणक्षोभ पैदा होता है और विरूप-परिणाम आरम्भ होता है। यह वैषम्यावस्था है जिसमें तीनों गुण एक दूसरे से क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं और गुणों के विभिन्न संयोजनों के माध्यम से ही जगत् का विकास होता है।



पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ- श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण ।

पाँच कर्मेन्द्रियाँ- वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ ।

पाँच तन्मात्रा- शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ।

पाँच महाभूत- आकाश, वायु, जल, तेज, पृथिवी ।

बुद्धि के गुण- (8)

सात्विक- धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य ।

तामसिक- अधर्म, अज्ञान, राग, अनैश्वर्य ।

अभिमानोऽहंकारः तस्मात्तद्विविधः प्रवर्तते सर्गः ।

एकादशकश्च गणस्तन्मात्रपञ्चकश्चैव ॥24॥

अभिमत करना अहंकार का धर्म है उस अहंकार से दो प्रकार की सृष्टि होती है एकादश इन्द्रियों का समूह और पाँच तन्मात्राओं का समूह ।

सात्त्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृतादहंकारात् ।

भूतादेस्तन्मात्रः स तामसस्तैजसादुभयम् ॥25॥

वैकृत संज्ञक अहंकार से सात्विक एकादश इन्द्रियों का समूह उत्पन्न होता है । तथा भूतादि संज्ञक अहंकार से तन्मात्राएं प्रवृत्त होती हैं यह तामस संज्ञक अहंकार कहलाता है । तैजस संज्ञक अहंकार से दोनों प्रकार के सर्ग उत्पन्न होते हैं ।

बुद्धीन्द्रियाणि चक्षुःश्रोत्रघ्राणरसनत्वगाख्यानि ।

वाक्पाणिपादपायूपस्थानि कर्मेन्द्रियाण्याहुः ॥26॥

श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं ।

उभयात्मकमत्र मनः सङ्कल्पमिन्द्रियं च साधर्म्यात् ।
गुणपरिणामविशेषान्नानात्वं बाह्यभेदाश्च ॥27॥

इन इन्द्रियों के मध्य मन उभय स्वरूप वाला है और समान धर्म होने के कारण इन्द्रिय भी है, गुणों के परिणाम में विशिष्टता हो जाने से इन्द्रियों में अनेकता और बाह्य अर्थों में भी भेद होता है ।

रूपादिषु पञ्चानामालोचनमात्रमिष्यते वृत्तिः ।
वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दाश्च पञ्चानाम् ॥28॥

रूपादि पाँच ज्ञानेन्द्रियों की वृत्ति आलोचन मात्र कही जाती है, पाँच कर्मेन्द्रियों के व्यापार बोलना, लेना, विहार करना, उत्सर्ग और आनन्द है ।

स्वालक्षण्यं वृत्तिस्त्रयस्य सैषा भवत्यसामान्या ।
सामान्यकरणवृत्तिः प्राणाद्या वायवः पञ्च ॥29॥

तीनों अन्तःकरणों का व्यापार उन (करणों/इन्द्रियों) के अपने लक्षण ही हैं, यह वृत्ति असाधारण है प्राणादि पाँच वायु करणों की सामान्य वृत्ति है ।

करणं त्रयोदशविधं तदाहरणधारणप्रकाशकरम् ।
कार्यं च तस्य दशधाऽऽहार्यं धार्यं प्रकाश्यं च ॥32॥

करण तेरह प्रकार के हैं वे आहरण, धारण और प्रकाश करने वाले हैं, और उनके दश प्रकार के कार्य हैं जैसे- आहरण के योग्य, धारण के योग्य और प्रकाश के योग्य ।

अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा बाह्यं त्रयस्य विषयाख्यम् ।
साम्प्रत्कालं बाह्यं त्रिकालमाभ्यन्तरं करणम् ॥33॥

अन्तः करण तीन प्रकार के हैं बुद्धि, मन और अहंकार तथा बाह्य करण दश प्रकार के हैं । बाह्य करण वर्तमान कालिक होते हैं आभ्यन्तर करण त्रैकालिक होते हैं ।

॥प्रत्ययसर्ग॥

"एष प्रत्ययसर्गो विपर्ययाऽशक्तितुष्टिसिद्ध्याख्यः।
गुणवैषम्यविमर्दात् तस्य भेदास्तु पञ्चाशत्" ॥46॥

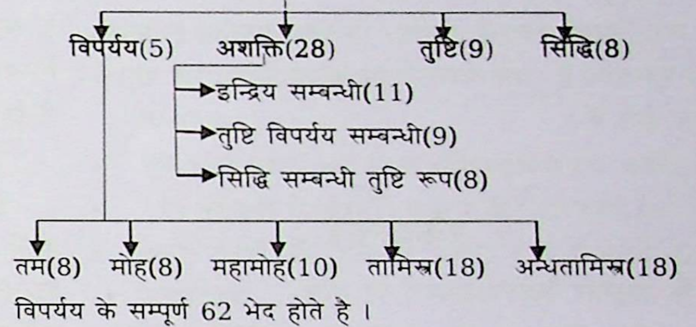
यह प्रत्यय/बुद्धि का सर्ग (प्रत्ययो बुद्धिः तस्य सर्गः-प्रत्ययसर्गः) विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि और सिद्धि के भेद से चार प्रकार का है गुणों की विषमता में वैचित्र्य होने के कारण इसके भेद पचास प्रकार के होते हैं ।

पञ्च विपर्ययभेदा भवन्त्यशक्तिश्च करणवैकल्यात् ।
अष्टाविंशतिभेदा तुष्टिर्नवधाऽष्टधा सिद्धिः ॥47॥

विपर्यय के पाँच भेद होते हैं । करणों की विकलता के कारण अशक्ति अट्ठाईस प्रकार की होती है और तुष्टि नौ प्रकार की तथा सिद्धि आठ प्रकार की होती है ।

भेदस्तमसोऽष्टविधो मोहस्य च दशविधो महामोहः ।
तामिस्रोऽष्टादशधा तथा भवत्यन्धतामिस्रः ॥48॥

तमस के भेद आठ प्रकार के हैं और मोह के भी आठ भेद होते हैं । महामोह दश प्रकार का होता है, तामिस्र तथा अन्धतामिस्र के अठारह भेद होते हैं ।



विपर्यय के सम्पूर्ण 62 भेद होते है ।

नव तुष्टि- प्रकृति, उपादान, काल, भाग्य, अदिव्य शब्द, अदिव्य स्पर्श, अदिव्य रूप, अदिव्य रस, अदिव्य गन्ध ।

आठ सिद्धि- ऊह, शब्द, अध्ययन, आध्यात्मिक दुःख का नाश, आधिदैविक दुःख का नाश , आधिभौतिक दुःख का नाश, सुहृत्प्राप्ति, दान ।

॥भावसर्ग॥

अध्यवसायो बुद्धिर्धर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम् ।
सात्त्विकमेतद्रूपं तामसमस्माद्विपर्यस्तम् ॥23॥

बुद्धि का धर्म अध्यवसाय है धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य ये बुद्धि के सात्विक रूप हैं इसके विपरीत अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्य आदि बुद्धि के तामस रूप हैं ।

सांसिद्धिकाश्च भावाः प्राकृतिका वैकृतिकाश्च धर्माद्याः ।
दृष्टाः करणाश्रयिणः कार्याश्रयिणश्च कललाद्याः ॥43॥

धर्मादि भाव सांसिद्धिक, प्राकृतिक और वैकृतिक नाम वाले कहे जाते हैं ये कारण में रहने वाले और कललादि कार्य में रहने वाले देखे गये हैं ।

धर्मेण गमनमूर्ध्वं गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ।
ज्ञानेन चापवर्गो विपर्ययादिष्यते बन्धः ॥44॥

(1) अन्योन्याभिभववृत्ति

(2) अन्योन्याश्रयवृत्ति

(3) अन्योन्यजननवृत्ति

(4) अन्योन्यमिथुनवृत्ति।

गुणों के स्वभाव-

"सत्वं लघु प्रकाशकमिष्टमुपष्टम्भकं चलश्च रजः।
गुरु वरणकमेव तम, प्रदीपवच्चार्थतो वृत्तिः"॥13॥

1. सत्त्व- सत्त्व गुण शुद्धता का प्रतीक है जिससे आनन्द और ज्ञान की उत्पत्ति होती है। सूर्य, अग्नि, मन तथा बुद्धि में प्रकाशित होने या ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता इसी से आती है। यह गुण हल्का होता है इसलिए ऊर्ध्वगमन इसकी प्रवृत्ति है। इसका वर्ण श्वेत माना गया है।

2. रजस्- रजस् गुण अशुद्धि का प्रतीक है। क्रोध, द्वेष, विषाद जैसी दुःखात्मक प्रवृत्तियाँ यही उत्पन्न करता है । इसका वर्ण,लाल माना गया है।

3. तमस्- तमस् गुण अन्धकार तथा अज्ञान का प्रतीक है और यह मोह पैदा करता है । प्रमाद, आलस्य आदि इसी के कारण होते हैं। भारी होने के कारण यह अधोगामी है और इसका रंग काला माना गया है।

उल्लेखनीय है कि ये तीनों गुण सदा संयुक्त तथा अवियोज्य रहते हैं। परस्पर विरोधी होने के बाद भी यह कार्य की उत्पत्ति वैसे ही मिलकर करते हैं जैसे दीपक में तेल, बत्ती और ज्वाला परस्पर भिन्न होकर भी प्रकाशोत्पन्न करते हैं। हर वस्तु में इन तीनों की उपस्थिति के कारण ही एक ही वस्तु किसी को सुख, किसी को दुःख तो किसी में आलस्य पैदा करती है।

सत्व- लघु, प्रकाश । **रज-** उपष्टम्भक, चल । **तम-** गुरू, वरणक ।

॥सृष्टिक्रम॥

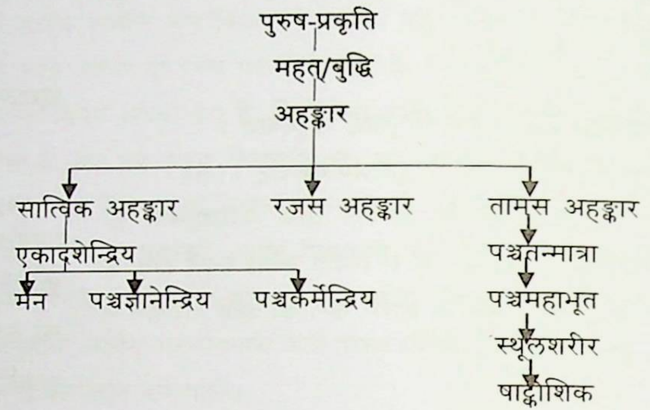
पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य ।
पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः ॥21॥

पुरुष का (प्रकृति के साथ) दर्शन के लिए तथा प्रकृति का कैवल्य के लिए पुरुप के साथ संयोग होता है । इस प्रकृति और पुरुप उभय का संयोग पङ्गु और अन्ध के समान होता है और उसी संयोग से सृष्टि होती है ।

"प्रकृतेर्महांस्ततोऽहङ्कारस्तस्माद् गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्यः पञ्च भूतानि"॥22॥

प्रकृति से महत् तत्त्व, महत्तत्व से अहंकार और उस अहंकार से सोलह का समूह (पञ्चतन्मात्राएं+एकादश इन्द्रियाँ) और उस सोलह में भी पाँच तन्मात्राओं से पाँच महाभूत उत्पन्न होते हैं ।

सांख्य के अनुसार जगत् का विकास प्रकृति से होता है जो कि सांख्य के द्वैतवाद में पुरुष के अतिरिक्त अन्य सत्ता है। प्रकृति सतत् परिणामी है किन्तु इसकी साम्यावस्था में सरूप-परिणाम होता है अर्थात् सत्व गुण की क्रिया-प्रतिक्रिया सत्वगुण से, रजस् की रजस् से और तमस् की तमस् से होती है। यह साम्यावस्था तब भंग होती है जब पुरुष के संयोग या सन्निधि के कारण प्रकृति में गुणक्षोभ पैदा होता है और विरूप-परिणाम आरम्भ होता है। यह वैषम्यावस्था है जिसमें तीनों गुण एक दूसरे से क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं और गुणों के विभिन्न संयोजनों के माध्यम से ही जगत् का विकास होता है।



पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ- श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण ।

पाँच कर्मेन्द्रियाँ- वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ ।

पाँच तन्मात्रा- शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ।

पाँच महाभूत- आकाश, वायु, जल, तेज, पृथिवी ।

बुद्धि के गुण- (8)

सात्विक- धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य ।

तामसिक- अधर्म, अज्ञान, राग, अनैश्वर्य ।

अभिमानोऽहंकारः तस्मात्तद्विविधः प्रवर्तते सर्गः ।
एकादशकश्च गणस्तन्मात्रपञ्चकश्चैव ॥24॥

अभिमत करना अहंकार का धर्म है उस अहंकार से दो प्रकार की सृष्टि होती है एकादश इन्द्रियों का समूह और पाँच तन्मात्राओं का समूह ।

सात्त्विक एकादशकः प्रवर्तते वैकृतादहंकारात् ।
भूतादेस्तन्मात्रः स तामसस्तैजसादुभयम् ॥25॥

वैकृत संज्ञक अहंकार से सात्विक एकादश इन्द्रियों का समूह उत्पन्न होता है । तथा भूतादि संज्ञक अहंकार से तन्मात्राएं प्रवृत्त होती हैं यह तामस संज्ञक अहंकार कहलाता है । तैजस संज्ञक अहंकार से दोनों प्रकार के सर्ग उत्पन्न होते हैं ।

बुद्धीन्द्रियाणि चक्षुःश्रोत्रघ्राणरसनत्वगाख्यानि ।
वाक्पाणिपादपायूपस्थानि कर्मेन्द्रियाण्याहुः ॥26॥

श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं ।

उभयात्मकमत्र मनः सङ्कल्पमिन्द्रियं च साधर्म्यात् ।
गुणपरिणामविशेषान्नानात्वं बाह्यभेदाश्च ॥27॥

इन इन्द्रियों के मध्य मन उभय स्वरूप वाला है और समान धर्म होने के कारण इन्द्रिय भी है, गुणों के परिणाम में विशिष्टता हो जाने से इन्द्रियों में अनेकता और वाह्य अर्थों में भी भेद होता है ।

रूपादिषु पञ्चानामालोचनमात्रमिष्यते वृत्तिः ।
वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दाश्च पञ्चानाम् ॥28॥

रूपादि पाँच ज्ञानेन्द्रियों की वृत्ति आलोचन मात्र कही जाती है, पाँच कर्मेन्द्रियों के व्यापार बोलना, लेना, विहार करना, उत्सर्ग और आनन्द है ।

स्वालक्षण्यं वृत्तिस्त्रयस्य सैषा भवत्यसामान्या ।
सामान्यकरणवृत्तिः प्राणाद्या वायवः पञ्च ॥29॥

तीनों अन्तःकरणों का व्यापार उन (करणों/इन्द्रियों) के अपने लक्षण ही हैं, यह वृत्ति असाधारण है प्राणादि पाँच वायु करणों की सामान्य वृत्ति है ।

करणं त्रयोदशविधं तदाहरणधारणप्रकाशकरम् ।
कार्यं च तस्य दशधाऽऽहार्यं धार्यं प्रकाश्यं च ॥32॥

करण तेरह प्रकार के हैं वे आहरण, धारण और प्रकाश करने वाले हैं, और उनके दश प्रकार के कार्य हैं जैसे- आहरण के योग्य, धारण के योग्य और प्रकाश के योग्य ।

अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा बाह्यं त्रयस्य विषयाख्यम् ।
साम्प्रत्कालं बाह्यं त्रिकालमाभ्यन्तरं करणम् ॥33॥

अन्तः करण तीन प्रकार के हैं बुद्धि, मन और अहंकार तथा बाह्य करण दश प्रकार के हैं । बाह्य करण वर्तमान कालिक होते हैं आभ्यन्तर करण त्रैकालिक होते हैं ।

॥प्रत्ययसर्ग॥

"एष प्रत्ययसर्गो विपर्ययाऽशक्तितुष्टिसिद्ध्याख्यः।
गुणवैषम्यविमर्दात् तस्य भेदास्तु पञ्चाशत्" ॥46॥

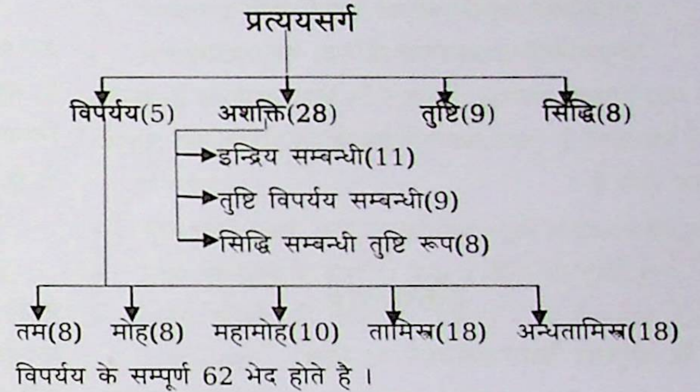
यह प्रत्यय/बुद्धि का सर्ग (प्रत्ययो बुद्धिः तस्य सर्गः-प्रत्ययसर्गः) विपर्यय, अशक्ति, तुष्टि और सिद्धि के भेद से चार प्रकार का है गुणों की विषमता में वैचित्र्य होने के कारण इसके भेद पचास प्रकार के होते हैं ।

पञ्च विपर्ययभेदा भवन्त्यशक्तिश्च करणवैकल्यात् ।
अष्टाविंशतिभेदा तुष्टिर्नवधाऽष्टधा सिद्धिः ॥47॥

विपर्यय के पाँच भेद होते हैं । करणों की विकलता के कारण अशक्ति अट्ठाईस प्रकार की होती है और तुष्टि नौ प्रकार की तथा सिद्धि आठ प्रकार की होती है ।

भेदस्तमसोऽष्टविधो मोहस्य च दशविधो महामोहः ।
तामिस्रोऽष्टादशधा तथा भवत्यन्धतामिस्रः ॥48॥

तमस के भेद आठ प्रकार के हैं और मोह के भी आठ भेद होते हैं । महामोह दश प्रकार का होता है, तामिस्र तथा अन्धतामिस्र के अठारह भेद होते हैं ।



विपर्यय के सम्पूर्ण 62 भेद होते है ।

नव तुष्टि- प्रकृति, उपादान, काल, भाग्य, अदिव्य शब्द, अदिव्य स्पर्श, अदिव्य रूप, अदिव्य रस, अदिव्य गन्ध ।

आठ सिद्धि- ऊह, शब्द, अध्ययन, आध्यात्मिक दुःख का नाश, आधिदैविक दुःख का नाश , आधिभौतिक दुःख का नाश, सुहृत्प्राप्ति, दान ।

॥भावसर्ग॥

अध्यवसायो बुद्धिर्धर्मो ज्ञानं विराग ऐश्वर्यम् ।
सात्त्विकमेतद्रूपं तामसमस्माद्विपर्यस्तम् ॥23॥

बुद्धि का धर्म अध्यवसाय है धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य ये बुद्धि के सात्विक रूप हैं इसके विपरीत अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्य आदि बुद्धि के तामस रूप हैं ।

सांसिद्धिकाश्च भावाः प्राकृतिका वैकृतिकाश्च धर्माद्याः ।
दृष्टाः करणाश्रयिणः कार्याश्रयिणश्च कललाद्याः ॥43॥

धर्मादि भाव सांसिद्धिक, प्राकृतिक और वैकृतिक नाम वाले कहे जाते हैं ये कारण में रहने वाले और कललादि कार्य में रहने वाले देखे गये हैं ।

धर्मेण गमनमूर्ध्वं गमनमधस्ताद् भवत्यधर्मेण ।
ज्ञानेन चापवर्गो विपर्ययादिष्यते बन्धः ॥44॥

धर्म से ऊर्ध्वगमन तथा अधर्म से अधोगमन होता है । ज्ञान से अपवर्ग अज्ञान से बन्ध होता है ।

वैराग्यात् प्रकृतिलयः संसारो भवति राजसाद् रागात् ।
ऐश्वर्यादविघातो विपर्ययात्तद्विपर्यासः ॥45॥

वैराग्य से साधक प्रकृति में लीन हो जाता है राजसिक राग से संसार होता है ऐश्वर्य से साधक अप्रतिहत वाला हो जाता है और अनैश्वर्य से वह प्रतिहत वाला हो जाता है ।

॥भौतिक सर्ग॥

अष्टविकल्पो दैवस्तैर्यग्योनश्च पञ्चधा भवति ।
मानुष्यश्चैकविधः समासतो भौतिकः सर्गः ॥53॥

देवसर्ग आठ विकल्प वाला है, तिर्यग् योनि पाँच प्रकार की है, मनुष्य सर्ग एक प्रकार का है । इस प्रकार संक्षेप से यह भौतिक सर्ग चतुर्दश प्रकार का होता है ।

॥कैवल्य॥

सांख्य के अनुसार कैवल्य/अपवर्ग या मोक्ष-

सांसारिक जीवन के आध्यात्मिक,आधिभौतिक,आधिदैविक त्रिविध दुःखों की आत्यन्तिक निवृत्ति ही मोक्ष, अपवर्ग, कैवल्य है। 'मोक्ष में पुरुष अपने नित्य शुद्ध चैतन्य स्वरूप में प्रकाशित रहता है। पुरुष त्रिगुणातीत, बन्धन रहित और परिणामातीत है बन्धन इस जीव का होता है शुद्ध पुरुष का नहीं । पुरुष को अपने स्वरूप का ज्ञान स्वयं को अचेतन प्रकृति से भिन्न मान लेने पर होता है यह 'विवेकज्ञान' ही सांख्यदर्शन में मोक्ष/अपवर्ग या कैवल्य है। पुरुष को जब इस प्रकार का ज्ञान होता है कि मै यह नहीं हूँ मैं अचेतन विषय या ज्ञेय नहीं हूँ, मैं जड़ प्रकृति नहीं हूँ यह मेरा नहीं है यह सब मेरा नहीं है, मेरा कुछ नहीं है, मै अहंकार भी नही हूँ और जब यह ज्ञान तत्वाभ्यास से सुदृढ़ हो जाता है और जानने के लिए कुछ शेष नही रहता है तब इसे ही विशुद्ध ज्ञान कहते है।

प्रकृतेः सुकुमारतरं न किञ्चिदस्तीति मे मतिर्भवति ।
या दृष्टाऽस्मीति पुनर्न दर्शनमुपैति पुरुषस्य ॥61॥

प्रकृति से कोमलतर कुछ नहीं है, जब इस प्रकार मेरी (पुरुष) की बुद्धि होती है । जो मैं देख ली गई हूं इस प्रकार विचार कर फ़िर पुरुष के दर्शन पथ को नहीं आती है ।

तस्मान्न बध्यतेऽद्धा न मुच्यते नापि संसरति कश्चित् ।
संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिः ॥62॥

इसलिए पुरुष न बंधता है, न मुक्त होता है, न ही संसरण करता है । अनेक उपाधि का आश्रय करने वाली प्रकृति बंधती है, मुक्त होती है, और संसरण करती है ।

रूपैः सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना प्रकृतिः ।
सैव च पुरुषार्थं प्रति विमोचयत्येकरूपेण ॥63॥

प्रकृति ही सात रूपों (धर्माधर्मादि सात भावों) से अपने से अपने आप को बांधती है और वही प्रकृति एकरूप (ज्ञान भाव) से पुरुष के प्रयोजन सिद्धि हेतु मुक्त करती है ।

एवं तत्वाभ्यास्यान्नास्मि न मे नाहमित्यपरिशेषम् ।
अविपर्ययाद्विशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम् ॥64॥

इस प्रकार सांख्योक्त पच्चीस तत्त्वों के अभ्यास के कारण मैं कर्ता नहीं हूं, यह मेरा शरीर नहीं है, मैं भोक्ता नहीं हूं इस प्रकार की अपरिशेष मिथ्याज्ञान से रहित होने से विशुद्ध केवल ज्ञान उत्पन्न होता है और इसी से ही कैवल्य की प्राप्ति होती है ।

"रंगस्य दर्शयित्वा निवर्तते नर्तकी यथा नृत्यात् ।
पुरुषस्य तथात्मानं प्रकाश्य विनिवर्तते प्रकृतिः" ॥59॥

प्रकृति को एक 'नर्तकी' के समान प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि वह पुरुष के समक्ष रंगमंच पर अपना प्रदर्शन करके नर्तकी के समान चली जाती है जब पुरुष प्रकृति के स्वरूप को देख लेता है तब 'विवेकज्ञान' द्वारा मुक्त हो जाता है। प्रकृति भी पुरुष को भोग तथा अपवर्ग(मोक्ष) रूपी प्रयोजन सिद्ध करके निवृत्त हो जाती है ।

सांख्यदर्शन में मोक्ष या मुक्ति के प्रकार-

सांख्य दर्शन ने मोक्ष मुक्ति के दो प्रकार माने है-

1. जीवनमुक्ति 2. विदेहमुक्ति

जीवन मुक्ति- इस प्रकार की मुक्ति सम्यक् ज्ञान प्राप्त होने पर होती है इसमें जीव देह से मुक्त नही होता है लेकिन देह के रहने पर भी देह से संबंध नहीं रहता है कर्मो का कोई बंधन नहीं होता, जीव अपने प्रारब्ध कर्मों का भोग केवल शरीर से करता है लेकिन उसमें लिप्त नहीं होता है ।

विदेह मुक्ति- जब जीव अपने प्रारब्ध कर्मों का भोग पूर्ण कर लेता है तो शरीर भी नष्ट हो जाता है यही मुक्ति 'विदेहमुक्ति' कहलाती है। सांख्य दर्शन में जीवन मुक्ति और विदेह मुक्ति को एक सुन्दर उदाहरण द्वारा समझाया गया है । जैसे- कुम्हार का चाक , कुम्हार के हाथ हटा लेने पर भी पूर्व वेगके कारण थोड़ी देर घूमता रहता है और फिर वेग समाप्त हो जाने पर स्वत ही बंद हो जाता है।उसी प्रकार जीवन मुक्त का शरीर अपने प्रारब्ध कर्म के अनुसार चलता रहता है और उनके समाप्त होने पर उसका शरीर भी नष्ट हो जाता है।

साङ्ख्यकारिका के मुख्य बिन्दु-

- सांख्यकारिका का अपरनाम- **सुवर्णसप्तति, कनकसप्तति, हिरण्यसप्तति,**
- सांख्य परम्परा के आचार्य-**कपिल-आसुरि-पंचशिख-ईश्वर कृष्ण।**
- परिणामवाद या भुक्तिवाद- **सांख्यदर्शन,**
- सांख्यकारिका की प्राचीन टीका- **माठर वृत्ति,**
- वाचस्पतिमिश्र टीका- **सांख्यतत्त्व कौमुदी,**
- शंकराचार्य टीका – जयमंगला,
- बुद्धि से दो प्रकार की सृष्टि- **(1) लिङ्ग (2) भाव,**
- सर्ग दो प्रकार- **(1) बुद्धिसर्ग (भाव)**
  (2) सृष्टिसर्ग (प्रत्यय) (लिङ्ग)
- दुःखनिवृत्ति का कारण - **व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञान।**
- सांख्य के तत्त्व - (25) **पुरुष**- 1, **मूल प्रकृति**- 1,
- **प्रकृतिविकृति**- महत्+अहंकार+पंचतन्मात्रा=7,
- **विकृति**
  -पंचज्ञानेन्द्रिय+पंचकर्मेन्द्रिय+पंचमहाभूत+मन=16,
  (1+1+7+16=25)
- सूक्ष्मशरीर तत्त्व- (18),
- **अविशेष** - सूक्ष्म, **विशेष**- स्थूल,
- **अयुगपत्प्रवृत्ति**- पुरुष, **युगपत्प्रवृत्ति**- बुद्धि,अहङ्कार, मन, इन्द्रिय।
- भौतिक सृष्टि/सर्ग- (14) प्रकार,
- देवताओं की सृष्टि- 8 प्रकार,
- तिर्यक् योनि - 5 प्रकार,
- मानव- 1 प्रकार, (8+5+1=14)
- **गुण**- सत्वगुण- ऊर्ध्व, रजोगुण- मध्य, **तमोगुण**- मूल,
  "उर्ध्वं सत्त्वविशालस्तमोविशालश्च मूलतः सर्गः ।
  मध्ये रजोविशालो ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्तः" ॥
- **गुणों की वृत्ति के चार प्रकार-**
  (1) अन्योन्याभिभववृत्ति
  (2) अन्योन्याश्रयवृत्ति
  (3) अन्योन्यजननवृत्ति
  (4) अन्योन्यमिथुनवृत्ति।
- **गुणों के परिणाम-**
  (1) सदृश (प्रलय) (2) विषम (सृष्टि) **(परिणामतः सलिलवद्…)**
- पुरुषसिद्धि- (5) हेतु **(सङ्घातपरार्थत्वाद्..)**
  सत्कार्यवाद - (5) **(असत्करणात्..)।**
- प्रकृति पुरुष को मोक्षप्रदान करने के लिये सृष्टिकार्य में प्रवृत्त होती है-
  "संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रया प्रकृतिः" ।
- केवल्य प्राप्तकर्ता- **पुरुष।**
- तीन प्रकार के शरीर -
  (1) सूक्ष्म (मोक्ष पर्यन्त 18 तत्त्व)
  (2) माता पितृज (स्थूल शरीर, षाट्कौशिक कोष)
  (3) प्रभूत (महाभूतों के विकार घट,पटादि।) **(पुरुषार्थ एव हेतु..)**
- प्रत्यक्ष के अविघटक- (8) **(अतिदूरात्...)**
- **अनुमान**- 1. पूर्ववत्, 2. शेषवत्, 3. सामान्यतोदृष्ट,
- **व्यक्ताव्यक्त वैधर्म**- (9) प्रकार (**हेतुमदनित्य**....)
- **व्यक्ताव्यक्त साधर्म्य**- (6) प्रकार (**त्रिगुणमविवेकि**...)
- **अव्यक्तकारणहेतु**- (5) कारण **(भेदानां परिमाणा..)**
- पुरुष साक्षित्व साधनम्- **(तस्माच्च विपर्यासात्सिद्धं....)**
- 1. साक्षित्व, 2. कैवल्य, 3. माध्यस्थ, 4. द्रष्टत्व, 5. अकर्तृभाव।
- **गुण**- कर्ता, **पुरुष**- कर्ता सदृश, **(गुणकर्तृत्वे च तथा कर्तेव...)**
- पुरुष को बुद्धि के द्वारा ही कैवल्य की प्राप्ति होती है।
- अन्तः करणों की वृत्ति दो प्रकार- **(1) साधारण (2) असाधारण।**
- **असाधारण**- स्वलक्षणवृत्ति, **साधारण**- प्राणादिपञ्चवायु,
- **सात्विक**- वैकृत अहंकार,
- **राजस**- तैजस अहंकार,
- **तामस**- महाभूत
- भूतानि 10 प्रकार, (करणं त्रयोदशविधं....)
- **अन्तःकरण**- मन, बुद्धि, अहङ्कार (द्वारि),
- **बाह्य करण**- पञ्च ज्ञानेन्द्रियाँ, पञ्च कर्मेन्द्रियाँ (द्वाराणि) ।
- **मन**- उभयात्मक
- कैवल्य 2- (1) ऐकान्तिक (2) आत्यन्तिक।
- बुद्धि के दो भेद- (1) सात्विक (2) तामसिक।
- दो प्रकार का मोक्ष- (1) जीवनमुक्ति (2) विदेहमुक्ति।
- अज्ञान से होने वाला बन्धन- (3) प्रकार-
  (1) प्राकृतिक (2) वैकृतिक (3) दाक्षिणक।
- **"पुरुषार्थहेतुकमिदं निमित्तनैमित्तिकप्रसङ्गेन**
  प्रकृतेर्विभुत्वयोगान्नटवद् व्यवतिष्ठते लिङ्गम्" ।।
  निमित्त- बुद्धि के आठ भाव, **नैमित्तिक**- स्थूल शरीर।
- प्रत्ययसर्ग/बुद्धिसर्ग= (5)
- गुणों की विषमता से 50 भेद, **(गुण वैषम्य विमर्दात् ...)**
- (विपर्यय=5+अशक्ति=28+तुष्टि=9+सिद्धि+8=50)
- विपर्यय= 5, विपर्यय के अवान्तर भेद=62
  (तम=8+मोह=8+महामोह=10+तामिस्र=18+अन्धता मिस्र=18=62)

- बुद्धिवध- (7)

सांख्यकारिका के भाष्य एवं टीकाएं-

सांख्यकारिका	-	ईश्वरकृष्ण
भाष्य-		
सांख्यकारिकाभाष्य या गौड़पादभाष्य	-	गौड़पाद
टीकाएं-		
माठरवृत्ति	-	माठराचार्य
जयमङ्गला	-	शङ्कराचार्य
सांख्यतत्त्वकौमुदी	-	वाचस्पतिमिश्र

॥वेदान्त दर्शन॥

आदि शंकराचार्य ने **अद्वैत वेदान्त दर्शन** को ठोस आधार प्रदान किया। वेदान्त का अर्थ है वेदों का अन्तिम सिद्धान्त। **महर्षि व्यास** द्वारा रचित **ब्रह्मसूत्र** इस दर्शन का मूल ग्रन्थ है। इस दर्शन को **उत्तर मीमांसा** भी कहते हैं। इस दर्शन के अनुसार ब्रह्म जगत् का कर्ता-धर्ता व संहारकर्ता होने से जगत् का निमित्त कारण है। उपादान अथवा अभिन्न कारण नहीं। ब्रह्म सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, आनंदमय, नित्य, अनादि, अनंतादि गुण विशिष्ट शाश्वत सत्ता है। साथ ही जन्म मरण आदि क्लेशों से रहित और निराकार भी है। इस दर्शन के प्रथम सूत्र **"अथातो ब्रह्म जिज्ञासा"** से ही स्पष्ट होता है कि जिसे जानने की इच्छा है, वह ब्रह्म से भिन्न है, अन्यथा स्वयं को ही जानने की इच्छा कैसे हो सकती है। और यह सर्वविदित है कि जीवात्मा हमेशा से ही अपने दुखों से मुक्ति का उपाय करती रही है। परंतु ब्रह्म का गुण इससे भिन्न है। आगे चलकर वेदान्त के अनेकानेक सम्प्रदाय (**अद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत** आदि) बने। वेदान्त ज्ञानयोग का एक स्रोत है जो व्यक्ति को ज्ञान प्राप्ति की दिशा में उत्प्रेरित करता है। इसका मुख्य स्रोत उपनिषद है जो वेद ग्रंथो और वैदिक साहित्य का सार समझे जाते हैं। उपनिषद् वैदिक साहित्य का अंतिम भाग है, इसीलिए इसको वेदान्त कहते हैं। **कर्मकांड और उपासना** का मुख्यतः वर्णन मंत्र और ब्राह्मणों में है, ज्ञान का विवेचन उपनिषदों में। **'वेदान्त'** का शाब्दिक अर्थ है - **'वेदों का अंत'** (अथवा सार)।

'वेदान्त' का अर्थ-

'वेदान्त' का शाब्दिक अर्थ है 'वेदों का अन्त'। आरम्भ में उपनिषदों के लिए 'वेदान्त' शब्द का प्रयोग हुआ किन्तु बाद में उपनिषदों के सिद्धान्तों को आधार मानकर जिन विचारों का विकास हुआ, उनके लिए भी 'वेदान्त' शब्द का प्रयोग होने लगा। उपनिषदों के लिए 'वेदान्त' शब्द के प्रयोग के प्रायः तीन कारण दिये जाते हैं :-

(1) उपनिषद् 'वेद' के अन्त में आते हैं। 'वेद' के अन्दर प्रथमतः वैदिक संहिताएँ- **ऋक्, यजुः, साम** तथा **अथर्व** आती हैं और इनके उपरान्त **ब्राह्मण, आरण्यक** तथा **उपनिषद्** आते हैं। इस साहित्य के अन्त में होने के कारण उपनिषद् वेदान्त कहे जाते हैं।

(2) वैदिक अध्ययन की दृष्टि से भी **उपनिषदों** के अध्ययन की बारी अन्त में आती थी। सबसे पहले **संहिताओं** का अध्ययन होता था। तदुपरान्त गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर यज्ञादि गृहस्थोचित कर्म करने के लिए **ब्राह्मण-ग्रन्थों** की आवश्यकता पड़ती थी। वानप्रस्थ या संन्यास आश्रम में प्रवेश करने पर **आरण्यकों** की आवश्यकता होती थी, वन में रहते हुए लोग जीवन तथा जगत् की पहेली को सुलझाने का प्रयत्न करते थे। यही **उपनिषद्** के अध्ययन तथा मनन की अवस्था थी।

(3) उपनिषदों में वेदों का 'अन्त' अर्थात् वेदों के विचारों का परिपक्व रूप है। यह माना जाता था कि वेद-वेदांग आदि सभी शास्त्रों का अध्ययन कर लेने पर भी बिना उपनिषदों की शिक्षा प्राप्त किये हुए मनुष्य का ज्ञान पूर्ण नहीं होता था।

'वेदान्त' पद का तात्पर्य-

वेदादि में विधिपूर्वक अध्ययन, मनन तथा उपासना आदि के अन्त में जो तत्त्व जाना जाये उस तत्त्व का विशेष रूप से यहाँ निरूपण किया गया हो, उस शास्त्र को 'वेदान्त' कहा जाता है।

वेदान्त के प्रमुख सम्प्रदाय -

वेदान्त में प्रमुख (11) भाष्य उपलब्ध हैं, तथा (11) सम्प्रदाय एवं उनके आचार्य भी हैं-

क्र.सं.	सम्प्रदाय	आचार्य	भाष्य
1.	अद्वैत	शङ्कर	शारीरकभाष्य
2.	द्वैत	मध्व	पूर्णप्रज्ञनभाष्य
3.	द्वैताद्वैत	निम्बार्क	वेदान्तपारिजात
4.	शैवविशिष्टाद्वैत	श्रीकण्ठ	शैवभाष्य
5.	भेदाभेद	भास्कर	भास्करभाष्य
6.	विशिष्टाद्वैत	रामानुज	श्रीभाष्य
7.	शुद्धाद्वैत	वल्लभाचार्य	अणुभाष्य
8.	स्वरूपाद्वैत	श्रीपञ्चाननतर्करत्नभट्टाचार्य	शक्तिभाष्य
9.	अविभागाद्वैत	विज्ञानभिक्षु	विज्ञानामृतभाष्य
10.	अचिन्त्यभेदाभेद	बलदेवविद्याभूषण	गोविन्दभाष्य
11.	वीरशैवविशिष्टाद्वैत	श्रीपति	श्रीकरभाष्य

वेदान्त की तीन शाखाएँ जो सबसे ज्यादा जानी जाती हैं वे हैं-

1. अद्वैत 2. विशिष्टाद्वैत 3. द्वैत,

आदि शंकराचार्य, रामानुज और श्री मध्वाचार्य जिनको क्रमशः इन तीनो सम्प्रदायों का प्रवर्तक माना जाता है, इनके अलावा भी ज्ञानयोग की अन्य शाखाएँ हैं। ये सम्प्रदाय अपने प्रवर्तकों के नाम से जाने जाते हैं

जिनमें भास्कर, वल्लभ, चैतन्य, निम्बार्क, वाचस्पति मिश्र, सुरेश्वर और विज्ञान भिक्षु। आधुनिक काल में जो प्रमुख वेदान्ती हुये हैं उनमें रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, अरविंद घोष, शिवानंद स्वामी करपात्री और रमण महर्षि उल्लेखनीय हैं। ये आधुनिक विचारक अद्वैत वेदान्त शाखा का प्रतिनिधित्व करते हैं। दूसरे वेदान्तो के प्रवर्तकों ने भी अपने विचारों को भारत में भलीभाँति प्रचारित किया है परन्तु भारत के बाहर उन्हें बहुत कम जाना जाता है। संत मे भी ज्ञानेश्वर महाराज, तुकाराम महाराज आदि. संत पुरुषो ने वेदांत के ऊपर बहुत ग्रंथ लिखे है आज भी लोग संतो के उपदेशों का अनुकरण करते हैं।

आचार्य शङ्कर द्वार स्थापित प्रमुख मठ-

1. **गोवर्धन मठ** - जगन्नाथ पुरी, (पुरुषोत्तम क्षेत्र) ऋग्वेद, "प्रज्ञानं ब्रह्म", शिष्य - **पद्मपाद।**
2. **श्रृंगेरी पीठ** - कर्नाटक, (रामेश्वरम् क्षेत्र) यजुर्वेद, "अहं ब्रह्माऽस्मि", शिष्य- **सुरेश्वराचार्य**
3. **शारदा पीठ**- द्वारका, सामवेद, "तत्त्वमसि"। शिष्य- **हस्तामलक** (हस्तामलकस्तोत्र)
4. **ज्योतिष् पीठ**- बद्रीनाथ, अथर्ववेद, "अयमात्मा ब्रह्म", शिष्य- तोटकाचार्य/श्रुतिधर (श्रुतिसारसमुद्धरण, तोटकस्तोत्र)

अद्वैत वेदान्त-

गौडपाद (300 ई.) तथा उनके अनुवर्ती आदि **शंकराचार्य** (700 ई.) ब्रह्म को प्रधान मानकर जीव और जगत् को उससे अभिन्न मानते हैं। उनके अनुसार तत्त्व को उत्पत्ति और विनाश से रहित होना चाहिए। नाशवान् जगत् तत्त्वशून्य है, जीव भी जैसा दिखाई देता है वैसा तत्त्वत: नहीं है। जाग्रत् और स्वप्नावस्थाओं में जीव जगत् में रहता है परंतु सुषुप्ति में जीव प्रपंच ज्ञानशून्य चेतनावस्था में रहता है। इससे सिद्ध होता है कि जीव का शुद्ध रूप सुषुप्ति जैसा होना चाहिए। **सुषुप्ति अवस्था अनित्य** है अत: इससे परे **तुरीयावस्था** को जीव का शुद्ध रूप माना जाता है। इस अवस्था में नश्वर जगत् से कोई संबंध नहीं होता और जीव को पुन: नश्वर जगत् में प्रवेश भी नहीं करना पड़ता। यह तुरीयावस्था अभ्यास से प्राप्त होती है। ब्रह्म-जीव-जगत् में अभेद का ज्ञान उत्पन्न होने पर जगत् जीव में तथा जीव ब्रह्म में लीन हो जाता है। तीनों में वास्तविक अभेद होने पर भी अज्ञान के कारण जीव जगत् को अपने से पृथक् समझता है। परंतु स्वप्नसंसार की तरह जाग्रत् संसार भी जीव की कल्पना है। भेद इतना ही है कि स्वप्न व्यक्तिगत कल्पना का परिणाम है जबकि जाग्रत् अनुभव-समष्टि-गत महाकल्पना का। स्वप्नजगत् का ज्ञान होने पर दोनों में मिथ्यात्व सिद्ध है। परंतु बौद्धों की तरह वेदान्त में जीव को जगत् का अंग होने के कारण मिथ्या नहीं माना जाता। मिथ्यात्व का अनुभव करनेवाला जीव परम सत्य है, उसे मिथ्या मानने पर सभी ज्ञान को मिथ्या मानना होगा। परंतु जिस रूप में जीव संसार में व्यवहार करता है उसका वह रूप अवश्य मिथ्या है। जीव की तुरीयावस्था भेदज्ञान शून्य शुद्धावस्था है। **ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान** का संबंध मिथ्या संबंध है। इनसे परे होकर जीव अपनी शुद्ध चेतनावस्था को प्राप्त होता है। इस अवस्था में भेद का लेश भी नहीं है क्योंकि भेद द्वैत में होता है। इसी अद्वैत अवस्था को ब्रह्म कहते हैं। तत्त्व असीम होता है, यदि दूसरा तत्त्व भी हो तो पहले तत्त्व की सीमा हो जाएगी और सीमित हो जाने से वह तत्त्व बुद्धिगम्य होगा जिसमें ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान का भेद प्रतिभासित होने लगेगा। अनुभव साक्षी है कि सभी ज्ञेय वस्तुएँ नश्वर हैं। अत: यदि हम तत्त्व को अनश्वर मानते हैं तो हमें उसे अद्वय, अज्ञेय, शुद्ध चैतन्य मानना ही होगा। ऐसे तत्त्व को मानकर जगत् की अनुभूयमान स्थिति का हमें **विवर्तवाद** के सहारे व्याख्यान करना होगा। रस्सी में प्रतिभासित होनेवाले सर्प की तरह यह जगत् न तो सत् है, न असत् है। सत् होता तो इसका कभी नाश न होता, असत् होता तो सुख, दु:ख का अनुभव न होता। अत: सत् असत् से विलक्षण अनिर्वचनीय अवस्था ही वास्तविक अवस्था हो सकती है। उपनिषदों में नेति कहकर इसी अज्ञातावस्था का प्रतिपादन किया गया है। अज्ञान भाव रूप है क्योंकि इससे वस्तु के अस्तित्व की उपलब्धि होती है, यह अभाव रूप है, क्योंकि इसका वास्तविक रूप कुछ भी नहीं है। इसी अज्ञान को जगत् का कारण माना जाता है। अज्ञान का ब्रह्म के साथ क्या संबंध है, इसका सही उत्तर कठिन है परंतु ब्रह्म अपने शुद्ध निर्गुण रूप में अज्ञान विरहित है, किसी तरह वह भावाभाव विलक्षण अज्ञान से आवृत्त होकर सगुण ईश्वर कहलाने लगता है और इस तरह सृष्टिक्रम चालू हो जाता है। ईश्वर को अपने शुद्ध रूप का ज्ञान होता है परंतु जीव को अपने ब्रह्मरूप का ज्ञान प्राप्त करने के लिए साधना के द्वारा ब्रह्मीभूत होना पड़ता है। गुरु के मुख से **'तत्त्वमसि'** का उपदेश सुनकर जीव **'अहं ब्रह्मास्मि'** का अनुभव करता है। उस अवस्था में संपूर्ण जगत् को आत्ममय तथा अपने में सम्पूर्ण जगत् को देखता है क्योंकि उस समय उसके **(ब्रह्म)** के अतिरिक्त कोई तत्त्व नहीं होता। इसी अवस्था को **तुरीयावस्था** या **मोक्ष** कहते हैं।

वेदान्तसार-

वेदान्तसार वेदान्त की परम्परा का अन्तिम ग्रन्थ है जिसके रचयिता **सदानन्द योगी** हैं। इसकी रचना **16वीं शताब्दी** में हुई थी। वेदान्तसार, वेदान्त के सिद्धान्तों में सरलता से प्रवेश करने का मार्ग प्रशस्त करता है। इस दृष्टि से यह सर्वाधिक लोकप्रिय रचना है।

रचनाकाल- वेदान्तसार के लेखक सदानन्द योगीन्द्र सरस्वती हैं। इनके शिष्य 'कृष्णानन्द सरस्वती' थे जिनके शिष्य **'नृसिंह सरस्वती'** ने वेदान्तसार के ऊपर **'सुबोधिनी'** नामक टीका लिखी थी। सुबोधिनी के लिखे जाने का समय शक सम्वत् 1510 अर्थात् 1588 ई. है। अत:

सदानन्द अवश्य ही इस तिथि के पूर्व हुए होंगे। सदानन्द 1386 ई. के बाद तथा 1588 ई. के पूर्व हुए। सदानन्द के मंगलाचरण से प्रकट होता है कि उनके गुरु **अद्वयानन्द सरस्वती** थे। सदानन्द स्वयं भी **'सरस्वती'** उपाधि से विभूषित थे। यह उपाधि शांकर-वेदान्त के संन्यासियों की दस उपाधियों में से एक सम्मानित उपाधि है। इस उपाधि से विभूषित संन्यासियों में अद्वैतसिद्धि के लेखक 'मधुसूदनसरस्वती' तथा ब्रह्मानन्दीयम् के लेखक 'ब्रह्मानन्दसरस्वती' जैसे विद्वान् हुए थे। सदानन्द स्वयं भी अत्यन्त विद्वान् थे। उनके वेदान्तसार द्वारा हमें अद्वैत-वेदान्त के प्रसिद्ध आचार्यों, उदाहरणतः गौडपाद, शंकर, पद्मपाद, हस्तामलक, सुरेश्वराचार्य, वाचस्पतिमिश्र, श्रीहर्ष तथा विद्यारण्य के सिद्धान्तों में प्रवेश प्राप्त होता है। इन सभी के सन्दर्भ हमें वेदान्तसार में प्राप्त होते हैं। अतः यह निश्चित है कि सदानन्द ने इन सभी आचार्यों की कृतियों का अध्ययन किया होगा। इससे अधिक कुछ वेदान्तसार के रचयिता के विषय में ज्ञात नहीं होता।

वेदान्तसार के मूल स्रोत-

वेदान्तसार के रचयिता ने अपने ग्रन्थ के लेखन में प्रायः सभी पूर्ववर्ती प्रमुख अद्वैत वेदान्त के ग्रन्थों का आश्रय लिया है। इनके आश्रित ग्रन्थों में सर्वप्रमुख हैं, शंकराचार्य का **शारीरकभाष्य** जिनके सिद्धान्तों के आधार पर इसका मूल ढांचा खड़ा है। उपनिषदों को भी आश्रय बनाया गया है विशेष रूप में, 'माण्डूक्योपनिषद्' को जहाँ से श्रुति-प्रमाण के अनेक उद्धरण दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त अन्य वेदान्त मनीषियों के उद्धरण भी बहुलता से दिये हैं।

॥वेदान्तसार॥

अखण्डं सच्चिदानन्दमवाङ्मनसगोचरम् ।
आत्मानमखिलाधारमाश्रयेऽभीष्टसिद्धये ॥1॥
अर्थतोऽप्यद्वयानन्दानतीतद्वैतभानतः ।
गुरूनाराध्य वेदान्तसारं वक्ष्ये यथामति ॥2॥

वेदान्तो नामोपनिषत्प्रमाणं तदुपकारीणि शारीरकसूत्रादीनि च । अस्य वेदान्तप्रकरणत्वात् तदीयैः एव अनुबन्धैः तद्वत्तासिद्धेः न ते पृथगालोचनीयाः । तत्र **अनुबन्धो** नाम अधिकारिविषयसम्बन्धप्रयोजनानि । **अधिकारी** तु विधिवदधीतवेदवेदाङ्गत्वेनापाततोऽधिगताखिल-वेदार्थोऽस्मिन् जन्मनि जन्मान्तरे वा काम्यनिषिद्धवर्जनपुरःसरं नित्यनैमित्तिकप्रायश्चित्तोपासनानुष्ठानेन निर्गतनिखिलकल्मषतया नितान्तनिर्मलस्वान्तः साधनचतुष्टयसम्पन्नः प्रमाता ।

काम्यानि - स्वर्गादीष्टसाधनानि ज्योतिष्टोमादीनि ।

निषिद्धानि - नरकाद्यनिष्टसाधनानि ब्राह्मणहननादीनि ।

नित्यानि - अकरणे प्रत्यवायसाधनानि सन्ध्यावन्दनादीनि ।

नैमित्तिकानि - पुत्रजन्माद्यनुबन्धीनि जातेष्ट्यादीनि ।

प्रायश्चित्तानि - पापक्षयसाधनानि चान्द्रायणादीनि ।

उपासनानि – सगुणब्रह्मविषयमानसव्यापाररूपाणि शाण्डिल्यविद्यादीनि । एतेषां नित्यादीनां बुद्धिशुद्धिः परं प्रयोजनमुपासनानां तु चित्तैकाग्र्यं "तमेतमात्मानं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति यज्ञेन" (बृ. उ. 4.4.22) इत्यादि श्रुतेः "तपसा कल्मषं हन्ति" (मनु. 12–104) इत्यादि स्मृतेश्च । नित्यनैमित्तिकयोः उपासनानां त्ववान्तरफलं पितृलोकसत्यलोकप्राप्तिः "कर्मणा पितृलोकः विद्यया देवलोकः" (बृ. उ. 1-5-16) इत्यादिश्रुतेः।

साधनानि-नित्यानित्यवस्तुविवेकेहामुत्रार्थफलभोगविरागशमादिषट्क-सम्पत्तिमुमुक्षुत्वानि ।**नित्यानित्यवस्तुविवेकस्तावद्** ब्रह्मैव नित्यं वस्तु ततोऽन्यदखिलमनित्यमिति विवेचनम् । ऐहिकानां स्रक्चन्दनवनितादिविषयभोगानांकर्मजन्यतयानित्यत्ववदामुष्मिकाणामप्यमृतादिविषयभोगानामनित्यतया तेभ्यो नितरां विरतिः **इहामुत्रार्थफलभोगविरागः** ।

शमादयस्तु - शमदमोपरतितितिक्षासमाधानश्रद्धाख्याः ।

शमस्तावत् - श्रवणादिव्यतिरिक्तविषयेभ्यो मनसो निग्रहः ।

दमः - बाह्येन्द्रियाणां तद्व्यतिरिक्तविषयेभ्यो निवर्तनम् । निवर्तितानामेतेषां तद्व्यतिरिक्तविषयेभ्य उपरमणमुपरतिरथवाविहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः ।**तितिक्षा** - शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता । निगृहीतस्य मनसः श्रवणादौ तदनुगुणविषये च समाधिः- **समाधानम्** ।गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः - **श्रद्धा** । **मुमुक्षुत्वम्** - मोक्षेच्छा । एवम्भूतः प्रमाताधिकारी "शान्तो दान्तः" (बृ उ 4.4.23) इत्यादिश्रुतेः । उक्तञ्च -

"प्रशान्तचित्ताय जितेन्द्रियाय च
प्रहीणदोषाय यथोक्तकारिणे ।
गुणान्वितायानुगताय सर्वदा
प्रदेयमेतत् सततं मुमुक्षवे ॥
(उपदेशसाहस्री 324.16.72)

विषयः - जीवब्रह्मैक्यं शुद्धचैतन्यं प्रमेयं तत्र एव वेदान्तानां तात्पर्यात् । **सम्बन्धस्तु** - तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोपनिषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावः । **प्रयोजनं** तु – तदैक्यप्रमेयगताज्ञाननिवृत्तिः स्वस्वरूपानन्दावाप्तिश्च "तरति शोकम् आत्मवित् (छां. उ. 7.1.3) इत्यादिश्रुतेः" ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति" (मुण्ड. उ. 3.2.9) इत्यादिश्रुतेश्च । अयमधिकारी जननमरणादिसंसारानलसन्तप्तो दीप्तशिरा जलराशिमिवोपहारपाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं गुरुमुपसृत्य तमनुसरति "तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्" (मुण्ड. उ. 1.2.12) इत्यादिश्रुतेः । स गुरुः परमकृपया-ध्यारोपापवादन्यायेनैनमुपदिशति-

"तस्मै स विद्वानुपसन्नया सम्यक्
प्रशान्तचित्ताय शमान्विताय ।
येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं

प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम् ।"

(मुण्ड उ 1.2.13) इत्यादिश्रुतेः ।

असर्पभूतायां रज्जौ सर्पारोपवत् वस्तुनि अवस्त्वारोपः – **अध्यारोपः।**

वस्तु - सच्चिदानन्दमद्वयं ब्रह्म अज्ञानादिसकलजडसमूहोऽवस्तु ।

अज्ञानं तु - सदसद्भ्यामनिर्वचनीयं त्रिगुणात्मकं ज्ञानविरोधि भावरूपं यत्किञ्चिदिति वदन्त्यहमज्ञ इत्याद्यनुभवात् "देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम्" (श्वेत. उ. 1.3) इत्यादिश्रुतेश्च । इदमज्ञानं समष्टिव्यष्टिभिप्रायेणैकमनेकमिति च व्यवह्रियते । तथाहि यथा वृक्षाणां समष्ट्यभिप्रायेण वनमित्येकत्वव्यपदेशो यथा वा जलानां समष्ट्यभिप्रायेण जलाशय इति तथा नानात्वेन प्रतिभासमानानां जीवगताज्ञानानां समष्ट्यभिप्रायेण तदेकत्वव्यपदेशः "अजामेकां" (श्वे.उ.4.5) इत्यादिश्रुतेः। इयं समष्टिरुत्कृष्टोपाधितया विशुद्धसत्त्वप्रधाना । एतदुपहितं चैतन्यंसर्वज्ञत्वसर्वेश्वरत्वसर्वनियन्तृत्वादिगुणकमव्यक्तमन्तर्यामीजगत्कारणमीश्वर इति च व्यपदिश्यते सकलाज्ञानावभासकत्वात् । "यः सर्वज्ञः सर्ववित्" (मुण्ड.उ.1.1.9)इति श्रुतेः। ईश्वरस्येयं समष्टिरखिलकारणत्वात्कारणशरीरमानन्दप्रचुरत्वात्कोशवदाच्छादकत्वाच्चानन्दमयकोशः सर्वोपरमत्वात्सुषुप्तिरत एव स्थूलसूक्ष्मप्रपञ्चलयस्थानमिति च उच्यते ।यथा वनस्य व्यष्ट्यभिप्रायेण वृक्षा इत्यनेकत्वव्यपदेशो यथा वा जलाशयस्य व्यष्ट्यभिप्रायेण जलानीति तथाज्ञानस्य व्यष्ट्यभिप्रायेण

तदनेकत्वव्यपदेशः "इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते" (ऋग्वेद 6.47.18) इत्यादिश्रुतेः । अत्र व्यस्तसमस्तव्यापित्वेन व्यष्टिसमष्टिताव्यपदेशः । इयं व्यष्टिर्निकृष्टोपाधितया मलिनसत्त्वप्रधाना ।एतदुपहितं चैतन्यमल्पज्ञत्वानीश्वरत्वादिगुणकं **प्राज्ञ** इत्युच्यत एकाज्ञानावभासकत्वात् । अस्य प्राज्ञत्वमस्पष्टोपाधितया-नतिप्रकाशकत्वात् । अस्यापीयमहङ्कारादिकारणत्वात्कारणशरीरमानन्दप्रचुरत्वात्कोशवदाच्छादकत्वाच्चानन्दमयकोशः सर्वोपरमत्वात्सुषुप्तिरत एव स्थूलसूक्ष्मशरीरप्रपञ्चलयस्थानमिति च उच्यते । तदानीमेतावीश्वरप्राज्ञौचैतन्यप्रदीप्ताभिरतिसूक्ष्माभिरज्ञानवृत्तिभिरानन्दमनुभवतः "आनन्दभुक् चेतोमुखः प्राज्ञः" (माण्डू. उ. 5) इति श्रुतेः सुखमहमवाप्सम् न किञ्चिदवेदिषमित्युत्थितस्यपरामर्शोपपत्तेश्च । अनयोः समष्टिव्यष्ट्योर्वनवृक्षयोरिव जलाशय-जलयोरिव वाभेदः । एतदुपहितयोरीश्वरप्राज्ञयोरपि वनवृक्षावच्छिन्नाकाशयोरिव जलाशयजलगतप्रतिबिम्बाकाशयोरिव वाभेदः "एष **सर्वेश्वर** (एष सर्वज्ञ एषोऽन्तर्याम्येष योनिः सर्वस्य प्रभवाप्ययौ हि भूतानाम्)" (माण्डू. उ. 6) इत्यादि श्रुतेः ।

वनवृक्षतदवच्छिन्नाकाशयो-र्जलाशयजलतद्गतप्रतिबिम्बाकाशयोर्वाधारभूतानुपहिताकाशवदनयोरज्ञानतदुपहितचैतन्ययो राधारभूतं यदनुपहितं चैतन्यं **तत्तुरीयमित्युच्यते** "शान्तं शिवमद्वैतं चतुर्थं मन्यन्ते (स आत्मा स विज्ञेयः)" (माण्डू. उ. 7) इत्यादिश्रुतेः । इदमेव तुरीयं शुद्धचैतन्यमज्ञानादितदुपहित-चैतन्याभ्यां तप्तायः पिण्डवदविविक्तं सन्महावाक्यस्य वाच्यं विविक्तं सल्लक्ष्यमिति चोच्यते । अस्याज्ञानस्यावरणविक्षेपनामकमस्ति शक्तिद्वयम् । **आवरणशक्तिस्तावदल्पोऽपि** मेघोऽनेकयोजनायतमादित्य-मण्डलमवलोकयितृनयनपथपिधायकतया यथाच्छादयतीव तथाज्ञानं परिच्छिन्नमप्यात्मानमपरिच्छिन्नमसंसारिणमवलोकयितृबुद्धिपिधायकतया च्छादयतीव तादृशं सामर्थ्यम् । तदुक्तं –

"घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं यथा
मन्यते निष्प्रभं चातिमूढः ।
तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ।"

इति (हस्तामलकम् 10) ।

अनयाआवृतस्यात्मनःकर्तृत्वभोक्तृत्वसुखित्वदुःखित्वादिसंसारसम्भावनापि भवति यथा स्वाज्ञानेनावृतायां रज्ज्वां सर्पत्वसम्भावना । **विक्षेपशक्तिस्तु** यथा रज्ज्वज्ञानं स्वावृत रज्जौ स्वशक्त्या सर्पादिकमुद्भावयत्येवमज्ञानमपि स्वावृतात्मनि स्वशक्त्याऽऽकाशादि-प्रपञ्चमुद्भावयति तादृशं सामर्थ्यम् । तदुक्तम् - **"विक्षेपशक्तिर्लिङ्गादि ब्रह्माण्डान्तं जगत् सृजेत्" इति । (वाक्यसुधा 13)** ।शक्तिद्वयवदज्ञानोपहितं चैतन्यं स्वप्रधानतया **निमित्तं** स्वोपाधिप्रधानत**योपादानं** च भवति ।यथा लूता तन्तुकार्यं प्रति स्वप्रधानतया निमित्तं स्वशरीरप्रधानतयोपादानश्च भवति । **तमःप्रधानविक्षेपशक्तिमदज्ञानोपहितचैतन्या**दाकाशाकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापोऽद्भ्यः पृथिवी चोत्पद्यते "एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः" (तै. उ. 2.1.1) इत्यादिश्रुतेः ।तेषु जाड्याधिक्यदर्शनात्तमःप्राधान्यं तत्कारणस्य । तदानीं सत्त्वरजस्तमांसि कारणगुणप्रक्रमेण तेष्वाकाशादिषूत्पद्यन्ते । एतान्येव **सूक्ष्मभूतानि** तन्मात्राण्यपञ्चीकृतानि चोच्यन्ते ।एतेभ्यः सूक्ष्मशरीराणि स्थूलभूतानि चोत्पद्यन्ते । **सूक्ष्मशरीराणि** सप्तदशावयवानि लिङ्गशरीराणि । अवयवास्तु ज्ञानेन्द्रियपञ्चकं बुद्धिमनसी कर्मेन्द्रियपञ्चकं वायुपञ्चकं चेति । **ज्ञानेन्द्रियाणि-** श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणाख्यानि । एतान्याकाशादीनां सात्त्विकांशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक्, पृथक् क्रमेणोत्पद्यन्ते । **बुद्धिर्नाम** निश्चयात्मिकान्तःकरणवृत्तिः । **मनो** नाम सङ्कल्पविकल्पात्मिकान्तः-करणवृत्तिः । अनयोरेव चित्ताहङ्कारयोरन्तर्भावः । अनुसन्धानात्मिकान्तः-करणवृत्तिः चित्तम् । अभिमानात्मिकान्तःकरणवृत्तिः अहङ्कारः । एते पुनराकाशादिगतसात्त्विकांशेभ्यो मिलितेभ्य उत्पद्यन्ते । एतेषां प्रकाशात्मकत्वात्सात्त्विकांशकार्यत्वम् । इयं बुद्धिर्ज्ञानेन्द्रियैः सहिता विज्ञानमयकोशो भवति । अयं कर्तृत्वभोक्तृत्वसुखित्वदुः-खित्वाद्यभिमानत्वेनेहलोकपरलोकगामी व्यवहारिको जीव इत्युच्यते । मनस्तु ज्ञानेन्द्रियैः सहितं **सन्मनोमयकोशो** भवति । **कर्मेन्द्रियाणि** वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यानि । एतानि पुनराकाशादीनां रजोंशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक्क्रमेणोत्पद्यन्ते । **वायवः** प्राणापानव्यानोदानसमानाः ।

प्राणो नाम प्राग्गमनवान्नासाग्रस्थानवर्ती ।

अपानो नामावाग्गमनवान्पाय्वादिस्थानवर्ती ।

व्यानो नाम विष्वग्गमनवानखिलशरीरवर्ती ।

उदानो नाम कण्ठस्थानीय ऊर्ध्वगमनवानुत्क्रमणवायुः ।

समानो नाम शरीरमध्यगताशितपीतान्नादिसमीकरणकरः ।

समीकरणन्तु परिपाककरणं रसरुधिरशुक्रपुरीषादिकरणमिति यावत् । केचित्तु नागकूर्मकृकलदेवदत्तधनञ्जयाख्याः पञ्चान्येवायवः सन्तीति वदन्ति । तत्र **नाग** उद्गिरणकरः । **कूर्म** उन्मीलनकरः । **कृकलः** क्षुत्करः । **देवदत्तो** जृम्भणकरः । **धनञ्जयः** पोषणकरः ।एतेषां प्राणादिष्वन्तर्भावात्प्राणादयः पञ्चैवेति केचित् । एतत्प्राणादिपञ्चकमाकाशादिगतरजोंशेभ्योमिलितेभ्य उत्पद्यते । इदं प्राणादिपञ्चकं कर्मेन्द्रियैः सहितं सत्प्राणमयकोशो भवति । अस्य क्रियात्मकत्वेन रजोंशकार्यत्वम् । एतेषु कोशेषु मध्ये **विज्ञानमयो** ज्ञानशक्तिमान् कर्तृरूपः । **मनोमय** इच्छाशक्तिमान् करणरूपः । **प्राणमयः** क्रियाशक्तिमान् कार्यरूपः । योग्यत्वादेवमेतेषां विभाग इति वर्णयन्ति । एतत्कोशत्रयं मिलितं सत्सूक्ष्मशरीरमित्युच्यते । अत्राप्यखिलसूक्ष्मशरीरमेकबुद्धिविषयतयावनवज्जलाशयवद्वासमष्टिरनेकबुद्धिविषयतया वृक्षवज्जलवद्वा व्यष्टिरपि भवति । एतत्समष्ट्युपहितं चैतन्यं **सूत्रात्मा हिरण्यगर्भः प्राणश्चेत्युच्यते** सर्वत्रानुस्यूतत्वाज्ज्ञानेच्छा-क्रियाशक्तिमदुपहितत्वाच्च । अस्यैषा समष्टिः स्थूलप्रपञ्चापेक्षया सूक्ष्मत्वात्सूक्ष्मशरीरं विज्ञानमयादिकोशत्रयं जाग्रद्वासनामयत्वात्स्वप्नो-ऽतएवस्थूलप्रपञ्चलयस्थानमिति चोच्यते । एतद्व्यष्ट्युपहितं चैतन्यं **तैजसो** भवति तेजोमयान्तःकरणोपहितत्वात् । अस्यापीयं व्यष्टिः स्थूलशरीरापेक्षया सूक्ष्मत्वादिति हेतोरेवसूक्ष्मशरीरं विज्ञानमयादिकोशत्रयंजाग्रद्वासनामयत्वात्स्वप्नोऽतएवस्थूलशरीरलयस्थानमिति चोच्यते । एतौ सूत्रात्मतै.जसौ तदानीं मनोवृत्तिभिः सूक्ष्मविषयाननुभवतः "प्रविविक्तभुक्तैजसः" (माण्डू. उ. 3) इत्यदिश्रुतेः । अत्रापिसमष्टिव्यष्ट्योस्तदुपहितसूत्रात्मतै.जसयोर्वनवृक्षवत्तदवच्छिन्नाकाशवच्चजलाशयजलवत्तद्गतप्रतिबिम्बाकाशवच्चाभेदः । एवं सूक्ष्मशरीरोत्पत्तिः । स्थूलभूतानि तु पञ्चीकृतानि । **पञ्चीकरणं-** त्वाकाशादिपञ्चस्वेकैकं द्विधा समं विभज्य तेषु दशसु भागेषु प्राथमिकान्पञ्चभागान्प्रत्येकं चतुर्धा समं विभज्य तेषां चतुर्णां भागानां स्वस्वद्वितीयार्धभागपरित्यागेन भागान्तरेषु योजनम् । तदुक्तम् -

"द्विधा विधाय चैकैकं चतुर्धा प्रथमं पुनः ।
स्वस्वेतरद्वितीयांशैर्योजनात्पञ्च पञ्चते ।"

अस्याप्रामाण्यं नाशङ्कनीयं त्रिवृत्करणश्रुतेः पञ्चीकरणस्याप्युपलक्षणत्वात् । पञ्चानां पञ्चात्मकत्वे समानेऽपि तेषु च "वैशेष्यात्तु तद्वादस्तद्वादः" (ब्र.सू 2.4.22) इति न्यायेनाकाशादिव्यपदेशः सम्भवति । तदानीमाकाशे शब्दोऽभिव्यज्यते वायौ शब्दस्पर्शावग्नौ शब्दस्पर्शरूपाण्यप्सु शब्दस्पर्शरूपरसाः पृथिव्यां शब्दस्पर्शरूपरस-गन्धाश्च । एतेभ्यः पञ्चीकृतेभ्यो भूतेभ्यो भूर्भुवः स्वर्महर्जनस्तपः सत्यमित्येतन्नामकानामुपर्युपरिविद्यमानानामतलवितलसुतलरसातलतलातलमहातलपातालनामकानामधोऽधोविद्यमानानां लोकानां ब्रह्माण्डस्य तदन्तर्गतचतुर्विधस्थूलशरीराणां तदुचितानामन्नपानादीनां चोत्पत्तिर्भवति । **चतुर्विधशरीराणि-**तु जरायुजाण्डजस्वेदजोद्भिज्जाख्यानि । जरायुजानि जरायुभ्यो जातानि मनुष्यपश्वादीनि । अण्डजान्यण्डेभ्यो जातानि पक्षिपन्नगादीनि ।स्वेदजानि स्वेदेभ्यो जातानि यूकमशकादीनि । उद्भिज्जानि भूमिमुद्भिद्य जातानि लतावृक्षादीनि । अत्रापि चतुर्विधसकलस्थूलशरीरमेकानेकबुद्धिविषयतया वनवज्जलाशयवद्वा समष्टिर्वृक्षवज्जलवद्वा व्यष्टिरपि भवति । एतत्समष्ट्युपहितं चैतन्यं वैश्वानरो विराडित्युच्यते सर्वनराभिमानित्वाद्विविधं राजमानत्वाच्च । अस्यैषा समष्टिः स्थूलशरीरमन्नविकारत्वादन्नमयकोशः स्थूलभोगायतनत्वाच्च स्थूलशरीरं जाग्रदिति च व्यपदिश्यते । एतद्व्यष्ट्युपहितं चैतन्यं विश्व इत्युच्यते सूक्ष्मशरीराभिमानमपरित्यज्य स्थूलशरीरादिप्रविष्टत्वात् । अस्याप्येषा व्यष्टिः स्थूलशरीरमन्नविकारत्वादेव हेतोरन्नमयकोशो जाग्रदिति चोच्यते । तदानीमेतौ विश्ववैश्वानरौ दिग्वातार्कवरुणाश्विभिः क्रमान्नियन्त्रितेन श्रोत्रादीन्द्रियपञ्चकेनक्रमाच्छब्दस्पर्शरूपरसगन्धानग्नीन्द्रोपेन्द्रयमप्रजापतिभिः क्रमान्नियन्त्रितेन वागादीन्द्रियपञ्चकेन क्रमाद्वचनादानगमन-विसर्गानन्दांश्चन्द्रचतुर्मुखशङ्कराच्युतैः क्रमान्नियन्त्रितेन मनोबुद्ध्यहङ्कार-चित्ताख्येनान्तरेन्द्रियचतुष्केण क्रमात्सङ्कल्पनिश्चयाहङ्कार्यचैत्तांश्च सर्वानेतान्स्थूलविषयाननुभवतः "जागरितस्थानो बहिःप्रज्ञः" (माण्डू उ. 3) इत्यादिश्रुतेः । अत्राप्यनयोः स्थूलव्यष्टिसमष्ट्योस्तदु-पहितविश्ववैश्वानरयोश्चवनवृक्षवत्तदवच्छिन्नाकाशवच्चजलाशयजलवत्तद्गतप्रतिबिम्बाकाशवच्च पूर्ववदभेदः । एवं पञ्चीकृतपञ्चभूतेभ्यः स्थूलप्रपञ्चोत्पत्तिः । एतेषां स्थूलसूक्ष्मकारणप्रपञ्चानामपि समष्टिरेको महान्प्रपञ्चो भवति यथावान्तरवनानां समष्टिरेकं महद्वनं भवति यथा वावान्तरजलाशयानां समष्टिरेको महान् जलाशयः । एतदुपहितं वैश्वानरादीश्वरपर्यन्तं चैतन्यमप्यवान्तरवनावच्छिन्नाकाशवदवान्तरजलाशयगतप्रतिबिम्बाकाशवच्चैकमेव । आभ्यां महाप्रपञ्चतदुपहितचैतन्याभ्यां तप्तायपिण्डवदविविक्तं सदनुपहितं चैतन्यं "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" (छान्द. उ. 3.14.1) इति (महा) वाक्यस्य वाच्यं भवति विविक्तं सल्लक्ष्यमपि भवति । एवं वस्तुन्यवस्त्वारोपोऽध्यारोपः सामान्येन प्रदर्शितः । इदानीं प्रत्यगात्मनीदमिदमयमयमारोपयतीति विशेषत उच्यते । अतिप्राकृतस्तु "आत्मा वै जायते पुत्रः" इत्यादिश्रुतेः स्वस्मिन्निव पुत्रेऽपि प्रेमदर्शनात्पुत्रे पुष्टे नष्टे चाहमेव पुष्टो नष्टश्चेत्याद्यनुभवाच्च पुत्र आत्मेति वदति । चार्वाकस्तु "स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः" (तै. उ. 2.1.1) इत्यादिश्रुतेः प्रदीप्तगृहात्स्वपुत्रं परित्यज्यापि स्वस्य निर्गमदर्शनात्स्थूलोऽहं कृशोऽहमित्याद्यनुभवाच्च स्थूलशरीरमात्मेति वदति । अपरश्चार्वाकः "ते ह प्राणाः प्रजापतिं पितरमेत्योचुः" (छा. उ. 5.1.7) इत्यादिश्रुतेरिन्द्रियाणामभावे शरीरचलना-भावात्काणोऽहं बधिरोऽहमित्याद्यनुभवाचेन्द्रियाण्यात्मेति वदति । अपरश्चार्वाकः "अन्योऽन्तर आत्मा प्राणमयः" (तै. उ. 2.2.1)

इत्यादिश्रुतेः प्राणाभाव इन्द्रियादिचलनायोगादहमशनायावानहं पिपासावानित्यादि अनुभवाच्च प्राण आत्मेति वदति । अन्यस्तु चार्वाकः "अन्योऽन्तर आत्मा मनोमयः" (तै. उ. 2.3.1) इत्यादिश्रुतेर्मनसि सुप्ते प्राणादेरभावादहं सङ्कल्पवानहं विकल्पवानित्याद्यनुभवाच्च मन आत्मेति वदति । बौद्धस्तु "अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः" (तै. उ. 2.4.1) इत्यादिश्रुतेः कर्तुरभावे करणस्य शक्त्यभावादहं कर्ताहं भोक्तेत्याद्यनुभवाच्च बुद्धिरात्मेति वदति । प्राभाकरतार्किकौ तु "अन्योऽन्तर आत्मानन्दमयः" (तै. उ. 5.1) इत्यादिश्रुतेर्बुद्ध्यादीनामज्ञानेलय दर्शनादहमज्ञोऽहमज्ञानीत्याद्यनुभवाचाज्ञानमात्मेति वदतः । भाट्टस्तु "प्रज्ञानघन एवानन्दमयः" (माण्डू. उ. 5) इत्यादिश्रुतेः सुषुप्तौ प्रकाशाप्रकाशसद्भावान्मामहं न जानामीत्याद्यनुभवाचाज्ञानोपहितंचैतन्यमात्मेति वदति । अपरो बौद्धः "असदेवेदमग्र आसीत्" (छा. उ. 6.2.1) इत्यादिश्रुतेः सुषुप्तौ सर्वाभावादहं सुषुप्तौ नासमित्युत्थितस्य स्वाभावपरामर्शविषयानुभवाच्च शून्यमात्मेति वदति । तेषां पुत्रादीनाभनात्मत्वमुच्यते । एतैरतिप्राकृतादिवादिभिरुक्तेषुश्रुतियुक्त्यनुभवाभासेषुपूर्वपूर्वोक्तश्रुतियुक्त्यनुभवाभासानामुत्तरोत्तरश्रुतियुक्त्यनुभवाभासैरात्मत्वबाधदर्शनात्पुत्रादीनाम नात्मत्वं स्पष्टमेव । किञ्च प्रत्यगस्थूलोऽचक्षुरप्राणोऽमना अकर्ता चैतन्यं चिन्मात्रं सदित्यादिप्रवलश्रुतिविरोधादस्य पुत्रादिशून्यपर्यन्तस्य जडस्य चैतन्यभास्यत्वेन घटादिवदनित्यत्वादहं ब्रह्मेति विद्वदनुभवप्रावल्याच्च तत्तच्छ्रुतियुक्त्यनुभवभासानां बाधितत्वादपि पुत्रादिशून्यपर्यन्त मखिलमनात्मैव । अतस्तत्तद्भासकं नित्यशुद्धबुद्धमुक्तसत्यस्वभावं प्रत्यक्चैतन्यमेवात्मवस्त्विति वेदान्तविद्वदनुभवः । एवमध्यारोपः । अपवादो नाम रज्जुविवर्तस्य सर्पस्य रज्जुमात्रत्ववद्वस्तु-विवर्तस्यावस्तुनोऽज्ञानादेः प्रपञ्चस्य वस्तुमात्रत्वम् । तदुक्तम् -

**"सतत्त्वतोऽन्यथाप्रथा विकार इत्युदीरितः ।
तत्त्वतोऽन्यथाप्रथा विवर्त इत्युदीरितः ।"** इति ।तथाहि एतद्भोगायतनं चतुर्विधसकलस्थूलशरीरजातंभोग्यरूपान्नपानादिकमेतदायतनभूतभूरादि चतुर्दशभुवनान्येतदायतनभूतं ब्रह्माण्डं चैतत्सर्वमेतेषां कारणरूपं पञ्चीकृतभूतमात्रं भवति ।एतानि शब्दादिविषयसहितानि पञ्चीकृतानि भूतानि सूक्ष्मशरीरजातं चैतत्सर्वमेतेषां कारणरूपापञ्चीकृतभूतमात्रं भवति । एतानि सत्त्वादिगुणसहितान्यपञ्चीकृतान्युत्पत्ति व्युत्क्रमेणैतत्कारणभूताज्ञानोपहितचैतन्यमात्रं भवति ।एतदज्ञानमज्ञानो-पहितं चैतन्यं चेश्वरादिकमेतदाधारभूतानुपहितचैतन्यरूपं तुरीयं ब्रह्ममात्रं भवति । आभ्यामध्यारोपापवादाभ्यां तत्त्वम्पदार्थशोधनमपि सिद्धं भवति ।तथाहि - अज्ञानादिसमष्टिरेतदुपहितं सर्वज्ञत्वादिविशिष्टं चैतन्यमेतदनुपहितं चैतत्रयं तप्तायःपिण्डवदेकत्वेनावभासमानं तत्पदवाच्यार्थो भवति । एतदुपाध्युपहिताधारभूतमनुपहितं चैतन्यं तत्पदलक्ष्यार्थो भवति । अज्ञानादिव्यष्टिरेतदुपहितात्पज्ञत्वा-दिविशिष्टचैतन्यमेतदनुपहितं चैतत्रयं तप्तायःपिण्डवदेकत्वेनावभासमानं त्वम्पदवाच्यार्थो भवति । एतदुपाध्युपहिताधारभूतमनुपहितं प्रत्यगानन्दं तुरीयं चैतन्यं त्वम्पदलक्ष्यार्थो भवति । अथ महावाक्यार्थो वर्ण्यते । इदं तत्त्वमसिवाक्यं सम्बन्धत्रयेणाखण्डार्थबोधकं भवति । सम्बन्धत्रयं नाम पदयोः सामानाधिकरण्यं पदार्थयोर्विशेषणविशेष्यभावः प्रत्यगात्म-लक्षणयोर्लक्ष्यलक्षणभावश्चेति । तदुक्तम् -

**"सामानाधिकरण्यं च विशेषणविशेष्यता ।
लक्ष्यलक्षणसम्बन्धः पदार्थप्रत्यगात्मनाम् ।"**

सामानाधिकरण्यसम्बन्धस्तावद्यथा सोऽयं देवदत्त इत्यस्मिन्वाक्ये तत्कालविशिष्टदेवदत्तवाचकसशब्दस्यैतत्कालविशिष्टदेवदत्तवाचकायंश ब्दस्य चैकस्मिन्पिण्डे तात्पर्यसम्बन्धः । तथा च तत्त्वमसीति वाक्येऽपि परोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यवाचकतत्पदस्यापरोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यवाचक त्वम्पदस्य चैकस्मिंश्चैतन्ये तात्पर्यसम्बन्धः । विशेषणविशेष्यभावसम्बन्धस्तु यथा तत्रैव वाक्ये सशब्दार्थतत्कालविशिष्टदेवदत्तस्यायंशब्दार्थैतत्काल विशिष्टदेवदत्तस्य चान्योन्यभेदव्यावर्तकतया विशेषणविशेष्यभावः । तथात्रापि वाक्येतत्पदार्थपरोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यस्यत्वम्पदार्थापरोक्षत्वादि विशिष्टचैतन्यस्य चान्योन्यभेदव्यावर्तकतया विशेषणविशेष्यभावः ।लक्ष्यलक्षणसम्बन्धस्तु यथा तत्रैव सशब्दायंशब्दयोस्तदर्थयोर्वा विरुद्धतत्कालैतत्कालविशिष्टत्वपरित्यागेनाविरुद्धदेवदत्तेन सह लक्ष्यलक्षणभावः । तथात्रापि वाक्ये तत्त्वम्पदयोस्तदर्थयोर्वा विरुद्धपरोक्षत्वापरोक्षत्वादिविशिष्टत्वपरित्यागेनाविरुद्धचैतन्येन सह लक्ष्यलक्षणभावः । इयमेव भागलक्षणेत्युच्यते । अस्मिन्वाक्ये नीलमुत्पलमिति वाक्यवद्वाक्यार्थो न सङ्गच्छते । तत्र तु नीलपदार्थनीलगुणस्योत्पलपदार्थोत्पलद्रव्यस्य च शौक्ल्यपटादिभेद-व्यावर्तकतयान्योन्यविशेषणविशेष्यरूपसंसर्गस्यान्यतरवि शिष्टस्यान्यतरस्य तदैक्यस्य वा वाक्यार्थत्वाङ्गीकारे प्रमाणान्तरविरोधाभावात्तद्वाक्यार्थः सङ्गच्छते । अत्र तु तत्पदार्थपरोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यस्य-त्वम्पदार्थापरोक्षत्वादिविशिष्टचैत न्यस्यचान्योन्यभेदव्यावर्तकतयाविशेषणविशेष्यभावसंसर्गस्यान्यतरविशि ष्टस्यान्यतरस्य तदैक्यस्य वा वाक्यार्थत्वाङ्गीकारे प्रत्यक्षादिप्रमाणविरोधाद्वाक्यार्थो न सङ्गच्छते । तदुक्तम् -

**"संसर्गो वा विशिष्टो वा वाक्यार्थो नात्र सम्मतः ।
अखण्डैकरसत्वेन वाक्यार्थो विदुषां मतः ।" इति (पञ्चदशी 7.75)**

अत्र गङ्गायां घोषः प्रतिवसतीतिवाक्यवज्जहल्लक्षणापि न सङ्गच्छते । तत्र तु गङ्गाघोषयोराधाराधेयभावलक्षणस्य वाक्यार्थस्याशेषतो विरुद्धत्वाद्वाक्यार्थमशेषतः परित्यज्य तत्सम्बन्धितीरलक्षणाया युक्तत्वाज्जहल्लक्षणा सङ्गच्छते । अत्र तु परोक्षापरोक्षचैतन्यैकत्वलक्षणस्य वाक्यार्थस्य भागमात्रे विरोधाद्भागान्तरमपि परित्यज्यान्यलक्षणाया अयुक्तत्वाज्जहल्लक्षणा न सङ्गच्छते । न च गङ्गापदं स्वार्थपरित्यागेन तीरपदार्थं यथा लक्षयति तथा तत्पदं त्वम्पदं वा स्वार्थपरित्यागेन त्वम्पदार्थं तत्पदार्थं वा लक्षयत्वतः कुतो जहल्लक्षणा न सङ्गच्छत इति वाच्यम् । तत्र

तीरपदाश्रवणेन तदर्थाप्रतीतौ लक्षणयातत्प्रतीत्यपेक्षायामपि तत्त्वम्पदयोः श्रूयमाणत्वेन तदर्थप्रतीतौ लक्षणया पुनरन्यतरपदेनान्यतर-पदार्थप्रतीत्यपेक्षाभावात् । अत्र शोणो धावतीतिवाक्यवदजहल्लक्षणापि न सम्भवति । तत्र शोणगुणगमनलक्षणस्य वाक्यार्थस्य विरुद्धत्वात्तदपरित्यागेन तदाश्रयाश्वादिलक्षणया तद्विरोधपरिहारसम्भवाद-जहल्लक्षणा सम्भवति । अत्र तु परोक्षत्वापरोक्षत्वादिविशिष्टचैतन्यैकत्वस्य वाक्यार्थस्य विरुद्धत्वात्तदपरित्यागेन तत्सम्बन्धिनो यस्य कस्यचिदर्थस्य लक्षितत्वेऽपि तद्विरोधपरिहारासम्भवादजहल्लक्षणा न सम्भवत्येव । न च तत्पदं त्वम्पदं वा स्वार्थविरुद्धांशपरित्यागेनां शान्तरसहितं त्वम्पदार्थं तत्पदार्थं वा लक्षयत्वतः कथं प्रकारान्तरेण भागलक्षणाङ्गीकरणमिति वाच्यम् । एकेन पदेन स्वार्थांशपदार्थान्तरोभयलक्षणाया असम्भवात्पदान्तरेण तदर्थप्रतीतौ लक्षणया पुनस्तत्प्रतीत्यपेक्षाभावाच्च । तस्माद्यथा सोऽयं देवदत्त इति वाक्यं तदर्थो वा तत्कालैतत्कालविशिष्टदेवदत्तलक्षणस्य वाक्यार्थस्यांशे विरोधाद्विरुद्ध-तत्कालैतत्कालविशिष्टांशं परित्यज्याविरुद्धं देवदत्तांशमात्रं लक्षयति तथा तत्त्वमसीतिवाक्यं तदर्थो वा परोक्षत्वापरोक्षत्वादि-विशिष्टचैतन्यैकत्वलक्षणस्य वाक्यार्थस्यांशे विरोधाद्विरुद्धपरोक्षत्वा-परोक्षत्वविशिष्टांशंपरित्यज्याविरुद्धमखण्डचैतन्यमात्रं लक्षयतीति । अथाधुनाहं ब्रह्मास्मि (बृ. उ. 1.4.10) इत्यनुभववाक्यार्थो वर्ण्यते । एवमाचार्येणाध्यारोपापवादपुरःसरं तत्त्वम्पदार्थौ शोधयित्वा वाक्येनाखण्डार्थेऽवबोधितेऽधिकारिणोऽहंनित्यशुद्धबुद्धमुक्तसत्यस्वभावपरमानन्दानन्ताद्वयंब्रह्मास्मीत्यखण्डाकाराकारिता चित्तवृत्तिरुदेति । सा तु चित्प्रतिबिम्बसहिता सती प्रत्यगभिन्नमज्ञातं परम्ब्रह्म विषयीकृत्य तद्गताज्ञानमेव बाधते तदा पटकारणतन्तुदाहे पटदाहवदखिलकारणेऽज्ञाने बाधिते सति तत्कार्यस्याखिलस्य बाधितत्वात्तदन्तर्भूताखण्डाकाराकारिता चित्तवृत्तिरपि बाधिता भवति । तत्र प्रतिबिम्बितं चैतन्यमपि यथा दीपप्रभादित्यप्रभावभासनासमर्थासती तयाभिभूता भवति तथा स्वयम्प्रकाशमानप्रत्यगभिन्नपरब्रह्मावभासनानर्हतया तेनाभिभूतं सत् स्वोपाधिभूताखण्डवृत्तेर्बाधितत्वाद्दर्पणाभावे मुखप्रतिबिम्बस्य मुखमात्रत्ववत्प्रत्यगभिन्नपरब्रह्ममात्रं भवति । एवं च सति "मनसैवानुद्रष्टव्यम्" (बृ. उ. 4.4.19) "यन्मनसा न मनुते" (के. उ. 1.5) इत्यनयोःश्रुत्योरविरोधो वृत्तिव्याप्यत्वाङ्गीकारेणफलव्याप्यत्वप्रतिषेध प्रतिपादनात् । तदुक्तम् –

"फलव्याप्यत्वमेवास्य शास्त्रकृद्भिर्निवारितम् ।

ब्रह्मण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्षिता ।" (पञ्चदशी 6.90)

"स्वयम्प्रकाशमानत्वान्नाभास उपयुज्यते ।" (पञ्चदशी 6.92)

जडपदार्थाकाराकारितचित्तवृत्तेर्विशेषोऽस्ति । तथाहि । अयं घट इति घटाकाराकारितचित्तवृत्तिरज्ञातं घटं विषयीकृत्य तद्गताज्ञाननिरसनपुरः सरं स्वगतचिदाभासेन जडं घटमपि भासयति । तदुक्तं –

"बुद्धितत्स्थचिदाभासौ द्वावपि व्याप्नुतो घटम् ।

तत्राज्ञानं धिया नश्येदाभासेन घटः स्फुरेत् ।"

(पञ्चदशी 7.91) ।

यथा दीपप्रभामण्डलमन्दकारगतं घटपटादिकं विषयीकृत्य तद्गतान्धकारनिरसनपुरःसरं स्वप्रभया तदपि भासयतीति । एवं भूतस्वस्वरूपचैतन्यसाक्षात्कारपर्यन्तं **श्रवणमनन निदिध्यासन-समाध्यनुष्ठान**स्यापेक्षितत्वात्तेऽपि प्रदर्श्यन्ते । **श्रवणं** नाम षड्विधलिङ्गैरशेषवेदान्तानामद्वितीयवस्तुनि तात्पर्यावधारणम् ।**लिङ्गानि** तूपक्रमोपसंहाराभ्यासापूर्वताफलार्थवादोपपत्त्याख्यानि । तदुक्तम् -

"उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वताफलम् ।

अर्थवादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये ।"

प्रकरणप्रतिपाद्यस्यार्थस्य तदाद्यन्तयोरुपपादन**मुपक्रमोपसंहारौ** । यथा छान्दोग्ये षष्ठाध्याये प्रकरणप्रतिपाद्यस्याद्वितीयवस्तुन "एकमेवाद्वितीयम्" (6.2.1) इत्यादौ "ऐतदात्म्यमिदं सर्वम्" (6.8.7) इत्यन्ते च प्रतिपादनम् ।प्रकरणप्रतिपाद्यस्य वस्तुनस्तन्मध्ये पौनःपुन्येन प्रतिपादन**मभ्यासः** । यथा तत्रैवाद्वितीयवस्तुनि मध्ये तत्त्वमसीति नवकृत्वः प्रतिपादनम् । प्रकरणप्रतिपाद्यस्याद्वितीयवस्तुनः प्रमाणान्तरा-विषयीकरण**मपूर्वता** । यथा तत्रैवाद्वितीयवस्तुनो मानान्तराविषयीकरणम् ।**फलं** तु प्रकरणप्रतिपाद्यस्यात्मज्ञानस्य तदनुष्ठानस्य वा तत्र तत्र श्रूयमाणं प्रयोजनम् । यथा तत्र "आचार्यवान्पुरुषो वेद तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येथ सम्पत्स्ये" (6.14.2) इत्यद्वितीयवस्तुज्ञानस्य तत्प्राप्तिः प्रयोजनं श्रूयते ।प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्र तत्र प्रशंसन**मर्थवादः** । यथा तत्रैव "उत तमादेशमप्राक्ष्यो येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातम्" (6.1.3) इत्यद्वितीयवस्तुप्रशंसनम् ।प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसाधने तत्र तत्र श्रूयमाणा युक्ति**रुपपत्तिः** । यथा तत्र "यथा सौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्" (6.1.4) इत्यादावद्वितीयवस्तुसाधने विकारस्य वाचारम्भणमात्रत्वे युक्तिः श्रूयते ।**मननं** तु श्रुतस्याद्वितीयवस्तुनो वेदान्तानुगुणयुक्तिभिरनवरतमनुचिन्तनम् । विजातीयदेहादिप्रत्ययरहिताद्वितीयवस्तुसजातीयप्रत्ययप्रवाहो **निदिध्यासनम्** । समाधिर्द्विविधः सविकल्पको निर्विकल्पश्चेति ।तत्र **सविकल्पको** नाम ज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयानपेक्षयाद्वितीयवस्तुनि तदाकाराकारितायाश्चित्तवृत्तेरवस्थानम् । तदा मृण्मयगजादिभानेऽपि मृद्भानवद्द्वैतभानेऽप्यद्वैतं वस्तु भासते । तदुक्तम् -

"दृशिस्वरूपं गगनोपमं परम्

सकृद्विभातं त्वजमेकमक्षरम् ।

अलेपकं सर्वगतं यदद्वयम्

तदेव चाहं सततं विमुक्तमोम् ।" इति

(उपदेशसाहस्री 73.10.1)

निर्विकल्पकस्तु ज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयापेक्षयाद्वितीयवस्तुनि तदाकाराकारितायाश्चित्तवृत्तेरतितरामेकीभावेनावस्थानम् । तदा तु जलाकाराकारितलवणानवभासेनजलमात्रावभासवदद्वितीयवस्त्वाकारा-

कारितचित्तवृत्त्यनवभासेनाद्वितीयवस्तुमात्रमवभासते । ततश्चास्य सुषुप्तेश्चाभेदशङ्का न भवति । उभयत्र वृत्त्यभाने समानेऽपि तत्सद्भावासद्भावमात्रेणानयोर्भेदोपपत्तेः । अस्याङ्गानि यमनियमासन-प्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयः । तत्रम् "अहिंसासत्या-स्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा **यमाः"** । "शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि **नियमाः"** । करचरणादिसंस्थानविशेषलक्षणानि पद्मस्वस्तिका-दीन्यासनानि । रेचकपूरककुम्भकलक्षणाः प्राणनिग्रहोपायाः **प्राणायामाः** । इन्द्रियाणां स्वस्वविषयेभ्यः प्रत्याहरणं **प्रत्याहारः** । अद्वितीयवस्तुन्यन्तरिन्द्रियधारणं **धारणा** । तत्राद्वितीयवस्तुनि विच्छिद्य विच्छिद्यान्तरिन्द्रियवृत्तिप्रवाहो **ध्यानम्** । समाधिस्तूक्तः सविकल्पक एव ।एवमस्याङ्गिनो निर्विकल्पकस्य **लयविक्षेपकषाय-रसास्वाद**लक्षणाश्चत्वारो विघ्नाः सम्भवन्ति । **लय**स्तावदखण्ड-वस्तनवलम्बनेन चित्तवृत्तेर्निद्रा । अखण्डवस्त्वनवलम्बनेन चित्तवृत्तेरन्यावलम्बनं **विक्षेपः** । लयविक्षेपाभावेऽपि चित्तवृत्तेर्रागादिवासनया स्तब्धीभावादखण्डवस्त्वनवलम्बनं **कषायः** । अखण्डवस्त्वनवलम्बनेनापि चित्तवृत्तेः सविकल्पकानन्दास्वादनं **रसास्वादः** । समाध्यारम्भसमये सविकल्पकानन्दास्वादनं वा । अनेन विघ्नचतुष्टयेन विरहितं चित्तं निर्वातदीपवदचलं सदखण्डचैतन्यमात्रमवतिष्ठते यदा तदा निर्विकल्पकः समाधिरित्युच्यते । यदुक्तम् -

"लये सम्बोधयेच्चितं विक्षिप्तं शमयेत्पुनः ।
सकषायं विजानीयात्समप्राप्तं न चालयेत् ।
नास्वादयेद्रसं तत्र निःसङ्गः प्रज्ञया भवेत्" ।

(गौडपादकारिका 3.44-45)

"यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता" इति च। (गीता 6 - 19)

अथ **जीवन्मुक्तलक्षण**मुच्यते । जीवन्मुक्तो नाम स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मज्ञानेन तदज्ञानबाधनद्वारा स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मणि साक्षात्कृतेऽज्ञानतत्कार्य-सञ्चितकर्मसंशयविपर्ययादीनामपि बाधितत्वादखिलबन्धरहितो ब्रह्मनिष्ठः

"भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ।"

इत्यादिश्रुतेः (मुण्ड. उ. 2.2.8)

अयं तु व्युत्थानसमये मांसशोणितमूत्रपुरीषादिभाजनेन शरीरेणान्ध्यमान्द्यापटुत्वादिभाजनेनेन्द्रियग्रामेणाशनापिपासाशोकमोहादि भाजनेनान्तःकरणेन च पूर्वपूर्ववासनया क्रियमाणानि कर्माणि भुज्यमानानि ज्ञानाविरुद्धारब्धफलानि च पश्यन्नपि बाधितत्वात्परमार्थतो न पश्यते । यथेन्द्रजालमिति ज्ञानवांस्तदिन्द्रजालं पश्यन्नपि परमार्थमिदमिति न पश्यति । "सचक्षुरचक्षुरिव सकर्णोऽकर्ण इव" इत्यादिश्रुतेः । उक्तश्च -

"सुषुप्तवज्जाग्रति यो न पश्यति
द्वयं च पश्यन्नपि चाद्वयत्वतः ।
तथा च कुर्वन्नपि निष्क्रियश्च यः
स आत्मविन्नान्य इतीह निश्चयः ।"

(उपदेशसाहस्री 5)

अथ ज्ञानात्पूर्वं विद्यमानानामेवाहारविहारादीनामनुवृत्तिव च्छुभवासनानामेवानुवृत्तिर्भवति शुभाशुभयोरौदासीन्यं वा । तदुक्तम् । -

"बुद्धाद्वैतसतत्त्वस्य यथेष्टाचराणं यदि ।
शुनां तत्त्वदृशाश्चैव को भेदोऽशुचिभक्षणे ।(नैष्कर्म्यसिद्धिः 4.62)

"ब्रह्मवित्तं तथा मुक्त्वा स आत्मज्ञो न चेतरः ।(उपदेशसाहस्री 115)

तदानीममानित्वादीनिज्ञानसाधनान्यद्वेष्टृत्वादयःसद्गुणाश्चालङ्कारवदनुवर्तन्ते । तदुक्तम् -

"उत्पन्नात्मावबोधस्य ह्यद्वेष्टृत्वादयो गुणाः ।
अयत्नतो भवन्त्यस्य न तु साधनरूपिणः ।"

(नैष्कर्म्यसिद्धिः 4.69) ।

किं बहुनायं देहयात्रामात्रार्थमिच्छानिच्छापरेच्छाप्रापितानि सुखदुःखलक्षणान्यारब्धफलान्यनुभवन्नन्तःकरणाभासादीनामवभासकः संस्तदवसाने प्रत्यगानन्दपरब्रह्मणि प्राणे लीने सत्यज्ञानतत्कार्यसंस्काराणामपि विनाशात्परमकैवल्य-मानन्दैकरसम-खिलभेदप्रतिभासरहितमखण्डब्रह्मावतिष्ठते । "न तस्य प्राणा उत्क्रामन्ति" (बृ. उ. 4.4.6) "अत्रैव समवनीयन्ते" (बृ. उ. 3.2.11) "विमुक्तश्च विमुच्यते" (कठ. उ. 5.1) इत्यादिश्रुतेः ।

वेदान्तसार : एक प्रकरण ग्रन्थ-

वेदान्तसार को लेखक ने स्वयं एक प्रकरण-ग्रन्थ बतलाया है-

'अस्य वेदान्तप्रकरणत्वात् तदीयैरेवानुबन्धैस्तद्वत्तासिद्धेर्न ते पृथगालोचनीयाः।'

प्रकरण की परिभाषा-

"शास्त्रैकदेशसम्बद्धं शास्त्रकार्यान्तरे स्थितम्।
आहुः प्रकरणं नाम ग्रन्थभेदं विपश्चितः"॥

अर्थात् 'शास्त्र के अंश से सम्बद्ध तथा शास्त्र के (विशिष्ट) विषय के अन्दर स्थित (ग्रन्थ) को विद्वान् लोग प्रकरण नामक ग्रन्थ का भेद कहते हैं।'

वेदांतसार के प्रमुख विवेचनीय विषय-

1. अनुबंध-चतुष्टय	2. आत्मा विवेचन
3. अज्ञान विवेचन	4. ईश्वर
5. जीव विवेचन	6. जीवन और ईश्वर का सम्बन्ध
7. अध्यारोप तथा सृष्टि प्रक्रिया	8. महावाक्य विवेचन
9. समाधि विवेचन	10. बन्धन तथा मोक्ष

॥वेदान्तसार॥

॥मङ्गलाचरण॥

"अखण्डंसच्चिदानन्दमवाङ्मनसगोचरम्।
आत्मानमखिलाधारमाश्रयेऽभीष्टसिद्धये"।।

अभीष्ट की सिद्धि के लिए मैं अखण्ड, सच्चिदानन्द, वाणी एवं मन का विषय न बनने वाले तथा समस्त जगत् के अधिष्ठान रूप आत्मा का आश्रय अर्थात् उसकी शरण लेता हूँ ।

वेदान्तसार के रचयिता- **सदानन्द**, सदानन्द के गुरु - **अद्वयानन्द** ।
वेदान्तसार- प्रकरण ग्रन्थ। शास्त्र के छोटे रूप को प्रकरण ग्रन्थ में प्रस्तुत किया जाता है। **अद्वैत**- जहां एक को अनेक रूप में अभिव्यक्त होने में किसी और की आवश्यकता न हो। अद्वैतमत में ब्रह्म की सत्ता **पारमार्थिक** है ।

वेदान्त-

वेदान्तो नामोपनिषत्प्रमाणं तदुपकारीणि शारीरकसूत्रादीनि च। अस्य वेदान्तप्रकरणत्वात् तदीयैः एव अनुबन्धैः तद्वत्तासिद्धेः न ते पृथगालोचनीयाः ॥

वेदान्त नाम उन उपनिषदों का है जो ब्रह्म ज्ञान रूप प्रमा का मुख्य साधन है, इन्ही उपनिषदों के उपकारक शारीरक सूत्र आदि भी गौण या अप्रधान रूप से वेदान्त हैं । वेदान्त शास्त्र का प्रकरण ग्रन्थ होने के कारण जो वेदान्त के अनुबन्ध हैं वही अनुबन्ध वेदान्तसार के भी हैं ।

अनुबन्ध चतुष्टय –

तत्र **अनुबन्धो** नाम अधिकारिविषयसम्बन्धप्रयोजनानि ।
वेदान्त में अधिकारी, विषय, सम्बन्ध और प्रयोजन ये चार प्रयोजन है।

॥अधिकारी॥

अधिकारी तु विधिवदधीतवेदवेदाङ्गत्वेनापाततोऽधिगताखिलवेदार्थोऽस्मिन् जन्मनि जन्मान्तरे वा काम्यनिषिद्धवर्जनपुरःसरंनित्यनैमित्तिक प्रायश्चित्त उपासनानुष्ठानेन निर्गतनिखिलकल्मषतया नितान्तनिर्मलस्वान्तः साधनचतुष्टयसम्पन्नः प्रमाता ॥

जिसने इस जन्म में अथवा इससे पूर्व के किसी जन्म में वेदों एवं वेदाङ्गों का विधिपूर्वक अध्ययन करके समस्त वेदार्थ को सामान्य रूप से जान – समझ लिया है तथा काम्य और निषिद्ध कर्मों का परित्याग करके, नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित्त, उपासना, कर्मों के अनुष्ठान से समस्त पापों के दूर हो जाने के कारण जिसका अन्त: करण अत्यन्त निर्मल हो गया है, और जो साधन चतुष्टय से सम्पन्न है, ऐसा प्रमाता इस ग्रन्थ का अधिकारी है ।

कर्म के छः प्रकार-

1. **काम्यानि** - स्वर्गादीष्टसाधनानि, ज्योतिष्टोमादीनि।
2. **निषिद्धानि**- नरकाद्यनिष्टसाधनानि ब्राह्मणहननादीनि।
3. **नित्यानि**- प्रत्यवायसाधनानि सन्ध्यावन्दनादीनि।
4. **नैमित्तिकानि**- पुत्रजन्माद्यनुबन्धीनि जातेष्टयादीनि।
5. **प्रायश्चित्तानि**- पापक्षयसाधनानि चान्द्रायणादीनि।
6. उपासनानि-सगुणब्रह्मविषयमानसव्यापाररूपाणिशाण्डिल्य-विद्यादीनि।

- नित्य, नैमित्तिक, एवं प्रायश्चित कर्मों का परमप्रयोजन -**"बुद्धिशुद्धि" (चित्तशुद्धि)।**
- **नित्य, नैमित्तिक, प्रायश्चित** एवं **उपासन** कर्मों का अवान्तरफल - **"पितृलोक"** एवं **"सत्यलोक"** प्राप्ति।
- उपासनाओं का परम प्रयोजन – **"चित्त की एकाग्रता"**।
- कर्मणा = **"पितृलोकः"**, विद्यया = **"देवलोकः"**।

साधनचतुष्टय-

(1)नित्यानित्यवस्तुविवेक – नित्य और अनित्य वस्तु का ज्ञान करना।
नित्य- 'ब्रह्मैव नित्यं वस्तु', **अनित्य**- 'ततोऽन्यदखिलमनित्यमिति'।

(2) इहामुत्रार्थफलभोगविराग- इस लोक में तथा परलोक में प्राप्त सुखों को अनित्य मानना।

(3) शमादिषट्कसम्पत्ति - शमादि षट्कसम्पत्ति का निग्रह ।

1. शम 2. दम 3. उपरति 4. तितिक्षा 5. समाधान 6.श्रद्धा

1. शम - "श्रवणादिव्यतिरिक्तविषयेभ्यो मनसो निग्रहः"। (श्रवण, मनन और निदिध्यासन को छोड़कर मन को अन्य विषयों से मोड़ना शम है।)

2. दम- "बाह्येन्द्रियाणां तद्व्यतिरिक्तविषयेभ्यो निवर्तनम्" (श्रवणादि बाहरी इन्द्रियों को श्रवणादि के अतिरिक्त विषयों से हटाना दम है।)

3. उपरति – "निवर्तितानामेतेषां तद्व्यतिरिक्तविषयेभ्यः उपरणमुपरतिः , अथवा विहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः"।। (विषयों को हटा लिये गये इन बाह्य इन्द्रियों का उन श्रवणादि बाह्य इन्द्रियों के अतिरिक्त विषयों से उपरत होना अर्थात् विषयों की ओर उन्मुख हो जाने के उत्साह से रहित होना ।)

4. तितिक्षा- "शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता"। (सर्दी, गर्मी, मान -अपमान,जय-पराजय, लाभ- हानि,सुख- दु:खादि द्वन्दों को सहन करना तितिक्षा है।)

5. समाधान- "निगृहीतस्य मनसः श्रवणादौ तदनुगुणविषये च समाधिः समाधानम्"। (नियन्त्रित अथवा वशीभूत मन का श्रवण आदि एवं उसके अनुकूल विषयों में स्थिर हो जाना समाधान "एकाग्रता" है ।)

6. **श्रद्धा** – **"गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः"**। (गुरु के वचनों तथा वेदान्त वाक्यों में विश्वास अर्थात् सत्य बुद्धि का नाम श्रद्धा है।)

(4) मुमुक्षत्व - मोक्ष की इच्छा होना।

"प्रशान्तचित्ताय जितेन्द्रियाय च
प्रहीणदोषाय यथोक्तकारिणे ।
गुणान्वितायानुगताय सर्वदा
प्रदेयमेतत् सततं मुमुक्षवे ॥" (उपदेशसाहस्री-शंकराचार्य)

॥विषय॥

विषय- "जीवब्रह्मैक्यं शुद्धचैतन्यं प्रमेयम् तत्रैव वेदान्तानां तात्पर्यात्"। वेदान्त का विषय जीवब्रह्मैक्य शुद्धचैतन्य प्रमेय है ।

॥सम्बन्ध॥

सम्बन्ध- 'तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोपनिषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावः' ॥

जीवब्रह्मैक्य रुप प्रमेय का और उसके प्रतिपादक उपनिषत्प्रमाण का बोध्य-बोधक भावरूप सम्बन्ध है ।

॥प्रयोजन॥

प्रयोजन- "तदैक्यप्रमेयगताज्ञाननिवृत्तिः, **स्वस्वरूपानन्दावाप्तिश्च"।**
''तरति शोकमात्मविद्'' ''ब्रह्मविद ब्रह्मैव भवति।''

तदैक्य (जीवब्रह्मैक्य) प्रमेयगत अज्ञान की निवृत्ति और ब्रह्मानन्दस्वरूपप्राप्ति ।

॥अज्ञान॥

"अज्ञानं तु सदसद्भ्यामनिर्वचनीयं त्रिगुणात्मकं, ज्ञानविरोधि भावरूपं यत्किञ्चित् इति वदन्ति अहमज्ञ इत्यादि अनुभवात्, देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढाम् । "अजामेकां.." । अज्ञान तो 'सत्' या 'असत्' रूप से अनिर्वचनीय, त्रिगुणात्मक, ज्ञान का विरोधी, भावरूप अर्थात् अभाव से भिन्न है, ऐसा बताया जाता है । 'मैं अज्ञानी हूं' इत्यादि स्वानुभव एवं 'ध्यानयोगस्थ ब्रह्मवेत्ताओं ने' ब्रह्म की शक्ति 'माया' का अपने सत्वादि तीनों गुणों से साक्षात्कार किया । इत्यादि श्रुति इसमें प्रमाण है ।

अज्ञान की समष्टि तथा व्यष्टि अवस्था-

समष्टि ईश्वर

"इयं समष्टिरुत्कृष्टोपाधितया विशुद्धसत्त्वप्रधाना"।

यह अज्ञान समष्टि तथा व्यष्टि के अभिप्राय से एक तथा अनेक कहा जाता है। अज्ञान की यह समष्टि व्यष्टि की उपाधि की अपेक्षा उत्कृष्ट उपाधि होने के कारण अथवा जीव की अपेक्षा उत्कृष्ट ईश्वर की उपाधि होने के कारण विशुद्ध सत्वगुण की प्रधानता से युक्त होती है।

इससे उपहित चैतन्य **सर्वज्ञत्व, सर्वेश्वरत्व, सर्वनियन्तृत्व,** आदि गुणों को प्राप्त करके सकल अज्ञान का अवभासक होने से अव्यक्त, अन्तर्यामी जगत् का कारण **"ईश्वर"** कहलाता है । वही समस्त स्थूल एवं सूक्ष्म के विलय का आधार है । यह **सम्पूर्ण विश्व** का कारण होने से, **"कारण शरीर"** तथा आनन्द की अधिकता से **"आनन्दमय कोश"** कहलाता है। अज्ञान की समष्टि से उपहित चैतन्य – **ईश्वर** है ।

व्यष्टि प्राज्ञ

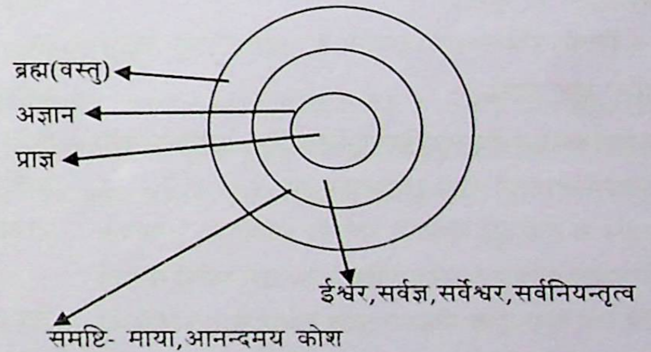
"इयं व्यष्टिर्निकृष्टोपाधितया मलिनसत्त्वप्रधाना"।

अज्ञान की यह व्यष्टि निकृष्ट उपाधि से उपहित होने के कारण मलिन सत्व गुण प्रधान होती है और व्यष्टि से उपहित चैतन्य **अल्पज्ञत्व, अनीश्वरत्व, एकज्ञानावभासकत्व** आदि गुणों को प्राप्त करके **"प्राज्ञ"** कहलाता है।

यह **अहङ्कारादि** का कारण होने से **"कारण शरीर"** तथा आनन्द की अधिकता होने से **"आनन्दमयकोश"** कहलाता है।

ईश्वर, प्राज्ञ, स्थूल एवं सूक्ष्म प्रपञ्च के विलय का आधार होने के कारण- **"सुषुप्ति"** कहाते हैं। अज्ञान की व्यष्टि से उपहित चैतन्य – **प्राज्ञ** ।

समष्टि - माया, **व्यष्टि** – अविद्या । **"अज्ञान"** के वाचक - "माया, प्रकृति, अविद्या, अजा"।



जीव की अवस्था-

जीव	
सुषुप्तिकाल	प्राज्ञ
स्वप्नकाल	तैजस
जागरण	विश्व

ईश्वर और प्राज्ञ का अभेद = **"सर्वेश्वर"**

प्रलयवस्था में **ईश्वर, प्राज्ञ** "अज्ञान की सूक्ष्म वृत्तियों" से आनन्द का अनुभव करते हैं।

अज्ञान की **समष्टि, व्यष्टि** से उपहित चैतन्य - **ईश्वर, प्राज्ञ।**

ईश्वर और प्राज्ञ का आधारभूत जो **अनुपहित** है- **तुरीय** ।

वेदान्ती लोग इसे **शिव, अद्वैत** या **तुरीय (चतुर्थ)** भी कहते हैं।

ईश्वर और प्राज्ञ का अभेद – **सर्वेश्वर** ।

अज्ञान की शक्ति – (2)

1. **आवरण** - रज्जु में सर्प की सम्भावना ।
2. **विक्षेप** - रज्जु में सर्प को मानना।

1.आवरण- आवरणशक्तिस्तावदल्पोऽपि मेघोऽनेकयोजनायतमादित्य-मण्डलमवलोकयितृनयनपथपिधायकतया यथाच्छादयतीव तथाज्ञानं परिच्छिन्नमप्यात्मानमपरिच्छिन्नमसंसारिण- मवलोकयितृबुद्धि-पिधायकतयाच्छादयतीव तादृशं सामर्थ्यम् । तदुक्तं –

जिस प्रकार छोटा बादल भी देखने वाले व्यक्ति के दृष्टि पथ को ढक लेने के कारण अनेक योजनों तक विस्तीर्य सूर्यमण्डल को ढक सा लेता है उसी प्रकार अज्ञान परिमित होते हुए भी प्रमाता की बुद्धि को ढक लेने के कारण अपरिमित (सर्वव्यापी) एवं असंसारी आत्मा को ढक सा लेता है, आपाततः ही वस्तुतः नहीं, अज्ञान की आवरण शक्ति ऐसी शक्ति है जैसे कहा भी गया है -

"घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं
यथा मन्यते निष्प्रभं चातिमूढः ।
तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः
स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥" (हस्तामलक स्तोत्र)

आवरण शक्ति का कार्य-

अनयाऽऽवृतस्यात्मनःकर्तृत्वभोक्तृत्वसुखित्वदुःखित्वादिसंसारसम्भावनापि भवति यथा स्वाज्ञानेनावृतायां रज्वां सर्पत्वसम्भावना ॥

जैसे अपने अज्ञान से ढकी हुई रस्सी में सर्प की प्रतीति की सम्भावना होती है वैसे ही अज्ञान की इस आवरण शक्ति से आच्छन्न आत्मा में कर्त्ता होने, भोक्ता होने तथा सुख-दुःख मोहरूप तुच्छ संसार से युक्त होने की भावना भी संभव हो जाती है ।

2. विक्षेप-

विक्षेपशक्तिस्तु यथा रज्ज्वज्ञानं स्वावृत रज्जौ स्वशक्त्या सर्पादिकमुद्भावयत्येवमज्ञानमपि स्वावृतात्मनि स्वशक्त्याऽऽकाशा-दिप्रपञ्चमुद्भावयति तादृशं सामर्थ्यम् । तदुक्तम् –

विक्षेप शक्ति इस प्रकार है जैसे रज्जु के विषय में होने वाला व्यक्ति का अज्ञान अपने द्वारा ढकी हुई रज्जु में अपनी शक्ति से सर्पादि की उद्भावना कर देता है उसी प्रकार अपने द्वारा ढके हुए आत्मा में अपनी विक्षेप शक्ति से आकाशादि कार्य की उद्भावना कर देता है जैसा कि वाक्यसुधा में भी कहा गया है- **"विक्षेपशक्तिर्लिङ्गादि ब्रह्माण्डान्तं जगत् सृजेत्" इति। (वाक्यसुधा 13)** ॥ ''ब्रह्मा से लेकर स्थावर पर्यन्त समग्र जगत् को सृष्टि करने के कारण अज्ञान की शक्ति विक्षेप शक्ति कहलाती है।''

ईश्वर जगत् का निमित्त तथा उपादान कारण-

शक्तिद्वयवदज्ञानोपहितं चैतन्यं स्वप्रधानतया निमित्तं स्वोपाधि प्रधानतयोपादानं च भवति ॥

आवरण एवं विक्षेप नामक दोनों शक्तियों से युक्त अज्ञान से उपहित चैतन्य अर्थात् ईश्वर अपनी अर्थात् चैतन्य की प्रधानता से जगत् का निमित्त कारण एवं अपनी उपाधि अर्थात् अज्ञान की प्रधानता से उपादान कारण होता है ।

यथा- लूता तन्तुकार्यं प्रति स्वप्रधानतया निमित्तं स्वशरीरप्रधानतयोपादानश्च भवति ॥

जैसे मकडी अपने जाले के प्रति अपनी अर्थात् चैतन्य की प्रधानता से निमित्त कारण तथा अपने शरीर की प्रधानता से उपादानकारण होती है।

निमित्त- "स्वप्रधानतयानिमित्तम्"।

उपादान- "स्वोपाधिप्रधानतया उपादानम्"। **यथा-** लूता(मकड़ी) तन्तुकार्य के प्रति ।

ईश्वर से जगत् की उत्पत्ति-

"तमःप्रधानविक्षेपशक्तिमदज्ञानोपहितचैतन्यादाकाशः"।आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापोऽद्भ्यः पृथिवी चोत्पद्यते "तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः"

(तै उ 2.1.1) इत्यादिश्रुतेः॥

तमोगुण की प्रधानता से युक्त तथा विक्षेप शक्ति वाले अज्ञान से उपहित चैतन्य से आकाश की उत्पत्ति होती है आकाश से क्रमशः वायु, अग्नि, जल, तथा पृथ्वी की उत्पत्ति होती है।

आकाश ⟶ वायु ⟶ अग्नि ⟶ जल ⟶ पृथ्वी।

'तेषु जाड्याधिक्यदर्शनात्तमःप्राधान्यं तत्कारणस्य' ।

इन आकाशादि में जड़ता की अधिकता होने से उनके कारण में **तम** की प्रधानता मानी जाती है। ये आकाशादि ही सूक्ष्म भूत, तन्मात्राएं और **"अपञ्चीकृत महाभूत"** कहे जाते हैं। इनमें **सूक्ष्म शरीर** तथा **स्थूलभूत पञ्चीकृत** आकाशादि महाभूत उत्पन्न होते हैं।

अध्यारोप-अपवाद-

अध्यारोप- **"असर्पभूतायां रज्जौ सर्पारोपवद्वस्तुन्यवस्त्वारोपोऽध्यारोपः"।**

कभी भी सर्प भाव को प्राप्त न होने वाली रस्सी पर सर्प के आरोप के समान वस्तु पर अवस्तु का आरोप ही 'अध्यारोप' है ।

वस्तु - "सच्चिदानन्दानन्ताद्वयं ब्रह्म"। वस्तु त्रिकालातीत सच्चिदानन्द अद्वितीय 'ब्रह्म' है। **(सत्, चित्, आनन्द, अननन्त, अद्वय)**

अवस्तु- "अज्ञानादिसकलजड़समूहः"। अज्ञानमूलक समस्त जड़ पदार्थों का समूह 'अवस्तु' है।

अपवाद-"अपवादो नाम **रज्जुविवर्तस्य सर्पस्य रज्जुमात्रत्ववद्वस्तुविवर्तस्यावस्तुनोऽज्ञानादेः प्रपञ्चस्य वस्तुमात्रत्वम्"।** रस्सी का विवर्त (अर्थात् भ्रान्ति से रस्सी के स्थान में प्रतीत होने वाला) सर्प केवल रस्सी ही होता है, उससे भिन्न कुछ नहीं है, वैसे ही ब्रह्मरूप वस्तु के विवर्त अर्थात् (अज्ञान और उसके कारण ब्रह्म में प्रतीत होने वाले) अवस्तुभूत समस्त प्रपञ्च का केवल वस्तु में रह जाना ही 'अपवाद' है।

लिङ्गशरीरोत्पत्ति-

सूक्ष्मशरीराणि सप्तदशावयवानि लिङ्गशरीराणि ॥

अवयवास्तु ज्ञानेन्द्रियपञ्चकं बुद्धिमनसी कर्मेन्द्रियपञ्चकं वायुपञ्चकं चेति ॥

सूक्ष्मशरीर को लिङ्गशरीर भी कहते हैं यह **सत्रह** अवयवों से युक्त होता है। **पञ्च ज्ञानेन्द्रियां + पञ्चकर्मेन्द्रियां + पञ्चवायु + बुद्धि + मन=** (17)"सूक्ष्म शरीर"।

पञ्च ज्ञानेन्द्रियां-

ज्ञानेन्द्रियाणि- श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणाख्यानि ॥ **एतान्याकाशादीनां सात्त्विकांशेभ्यो व्यस्तेभ्यः** पृथक् पृथक् **क्रमेणोत्पद्यन्ते ॥**

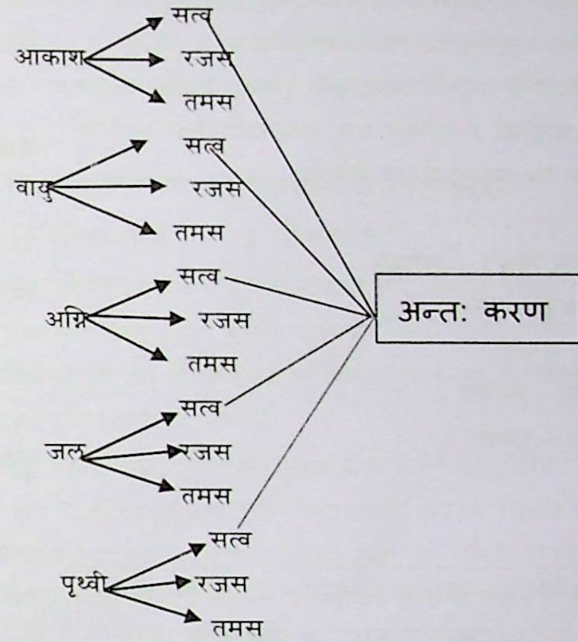
- आकाशादि के सात्विक अंश से पृथक्-पृथक् रुप से उत्पन्न = **"पञ्च ज्ञानेन्द्रियां"**।

श्रोत्र	शब्द
त्वक्	स्पर्श
चक्षु	रूप
जिह्वा	रस
घ्राण	गन्ध

अन्तः करण-

'एते पुनराकाशादिगतसात्त्विकांशेभ्यो मिलितेभ्य उत्पद्यन्ते' ।

- **अन्तः करण (बुद्धि, मन)** आकाशादि के सात्विक अंश से मिलकर उत्पन्न होते हैं।
- **बुद्धि- बुद्धिर्नाम** निश्चयात्मिकान्तःकरणवृत्तिः ।
- **मन- मनो** नाम सङ्कल्पविकल्पात्मिकान्तःकरणवृत्तिः ।
- **अनयोरेव चित्ताहङ्कारयोरन्तर्भावः-** मन और बुद्धि में ही चित्त और अहंकार का अन्तर्भाव होता है। **"बुद्धौ चित्तस्य अहंकारस्य मनसि च अन्तर्भावः"।**
- **चित्त-** अनुसन्धानात्मिकान्तःकरणवृत्तिः **चित्तम्** ।
- **अहङ्कारः-** अभिमानात्मिकान्तःकरणवृत्तिः **अहङ्कारः** ।
- **चित्त** – अन्तः करण, **चित्** – ब्रह्म ।
- स्मरणात्मिका एवं अनुसन्धानात्मक अन्तःकरण वृत्ति – **चित्।**



पञ्च कर्मेन्द्रियां –

कर्मेन्द्रियाणि वाक्पाणिपादपायूपस्थाख्यानि ॥ एतानि पुनराकाशादीनां रजोंशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक् क्रमेणोत्पद्यन्ते ॥ आकाशादि के रजोगुण से पृथक्-पृथक् रुप से **पञ्च कर्मेन्द्रियां** उत्पन्न होती हैं।

आकाश	वाक्
वायु	पाणि
अग्नि	पाद
जल	उपायु
पृथ्वी	उपस्थ

पञ्चवायु-

'एतत्प्राणादिपञ्चकमाकाशादिगतरजोंशेभ्योमिलितेभ्य उत्पद्यते'॥

इसी प्रकार आकाशादि के रजोगुण के सम्मिलित अंश से पञ्चवायु (प्राण) उत्पन्न होती है। सभी पञ्चमहाभूतों का "रजस" मिलकर = पञ्चवायु (प्राण) (यह रजोगुण का परिणाम है।)

'वायवः प्राणापानव्यानोदानसमानाः'॥

1. प्राण, 2. अपान, 3. व्यान, 4. समान, 5. उदान।

प्राणो नाम प्राग्गमनवान्नासाग्रस्थानवर्ती ॥

अपानो नामावाग्गमनवान्पाय्वादिस्थानवर्ती ॥

व्यानो नाम विष्वग्गमनवानखिलशरीरवर्ती ॥

उदानो नाम कण्ठस्थानीय ऊर्ध्वगमनवानुत्क्रमणवायुः ॥

समानो नाम शरीरमध्यगताशितपीतान्नादिसमीकरणकरः ॥

कुछ सांख्यमतानुयायी के अनुसार- **नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनञ्जय** नामक और पांच वायु है। ये प्राणादि वायु आकाशादि सूक्ष्म भूतों के सम्मिलित रजोगुण के अंश से उत्पन्न होते हैं।

सांख्यानुसार-

1. उद्गिरणकरः वायु विशेषः - **नागवायु,**
2. उन्मीलनकर वायुः - **कूर्मः**
3. क्षुत्कर वायुः - **कृकलः**
4. जृम्भणकर वायुः - **देवदत्तः**
5. पोषणकर वायुः – **धनञ्जय**

कोश-

1. बुद्धि + पञ्च ज्ञानेन्द्रिय="विज्ञानमय कोश"= **ज्ञानशक्ति** (कर्ता)
2. मन + पञ्च ज्ञानेन्द्रिय="मनोमय कोश" = **इच्छाशक्ति** (करण)
3. पञ्च वायु+ पञ्च कर्मेन्द्रिय = "प्राणमय कोश" = **क्रियाशक्ति** (कार्य)

विज्ञानमय,मनोमय,प्राणमय इन तीनों कोशों से उपहित चैतन्य **हिरण्यगर्भ सूत्रात्मा, प्राण** कहलाता है।

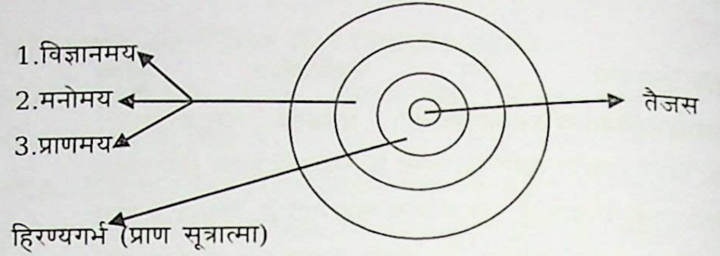
इन तीनों कोशों से मिलकर "सूक्ष्म शरीर" की उत्पत्ति होती है।

हिरण्यगर्भ-

- सूक्ष्म शरीरों की **समष्टि** से उपहित चैतन्य – **हिरण्यगर्भ।**
- **"सर्वत्रानुस्यूतत्वाज्ज्ञानेच्छाक्रियाशक्तिमदुपहितत्वाच्च"**
- **(जाग्रतवासनामयत्वाद)** (स्थूल प्रपञ्च का लयस्थान।
- हिरण्यगर्भ का दूसरा नाम = **सूत्रात्मा, प्राण**

तैजस-

- सूक्ष्म शरीर की व्यष्टि से (अर्थात् एक सूक्ष्म शरीर से) उपहित चैतन्य –**"तैजस"**।
- सूक्ष्म शरीर की **व्यष्टि** से, (17) तत्त्वों से उपहित) चैतन्य = **तैजस। "सर्वप्राणिनिकायेषु अहमित्यभिमानवत्त्वात्"**।
- **(तेजोमयान्तः करणोपहितत्वात्)** (तेजयुक्त अन्तःकरण की उपाधि से युक्त)।
- **"सूत्रात्मा"** और **"तैजस"** स्वप्नावस्था में **"मनोवृत्तियों"** के द्वारा सूक्ष्म विषयों का वासना स्वरूप से अनुभव करते हैं।



पञ्चीकरण-

"द्विधा विधाय चैकैकं चतुर्धा प्रथमं पुनः।
स्वस्वेतरद्वितीयांशैर्योजनात्पञ्च पञ्च ते"॥

आकाश - तमस् – 1/2 + 1/8 + 1/8 + 1/8 + 1/8

वायु - तमस - 1/2 + 1/8 +1/8 + 1/8 + 1/8

अग्नि - तमस् - 1/2 + 1/8 + 1/8 + 1/8 + 1/8

जल - तमस् - 1/2 + 1/8 + 1/8 + 1/8 + 1/8

पृथिवी - तमस् - 1/2 + 1/8 + 1/8 + 1/8 + 1/8

पांचों से मिला हुआ – **पञ्चीकृत ।**

पञ्चीकृत भूतों से भूः आदि सात **ऊर्ध्वलोक, पातालादि सात, अधोलोक,** इस प्रकार कुल चौदह भुवन निर्मित हुए-

ऊर्ध्वलोक	अधोलोक
1. भूः	1. अतल
2. भुवः	2. वितल
3. स्वः	3. सुतल
4. महः	4. रसातल
5. जनः	5. तलातल
6. तपः	6. महातल
7. सत्यम्	7. पाताल

चतुर्विध शरीर–

1. **जरायुज-** "मनुष्यपश्वादीनि"।
2. **अण्डज-** "पक्षिपन्नगादीनि"।
3. **उद्भिज-** "लतावृक्षादीनि"।
4. **स्वेदज-** यूकामशकादीनि"।

त्रिवृत्तकरण- अग्नि, जल, पृथ्वी।

छान्दोग्योपनिषद् में अग्नि, जल, पृथ्वी को **"त्रिवृत्तकरण"** कहा गया है।

त्रिवृत्तकरण को पञ्चीकरण के रूप में लाया - **शंकराचार्य** ने।

स्थूलसृष्टि-

वैश्वानर-

- चतुर्विध् स्थूल शरीर **(जरायुज, अण्डज, उद्भिज्ञ, स्वेदज)** की **समष्टि** से उपहित चैतन्य- **वैश्वानर, विराड्** ।
- समष्ट्यात्मक स्थूल जगत् से उपहित चैतन्य- **वैश्वानर** (विराड्)।
- **अन्नविकारत्वात् अन्नमयकोशः, सर्वनराभिमानित्वाद् , स्थूलभोगायतनत्वाच्च स्थूलशरीरं जाग्रत्** ।

विश्व-

- स्थूल शरीर की **व्यष्टि** से उपहित चैतन्य - **विश्व** ।
- व्यष्ट्यात्मक स्थूल जगत् से उपहित चैतन्य - **विश्व** ।
- **अन्नविकारत्वात् अन्नमयकोशः, सर्वनराभिमानित्वाद् , स्थूलभोगायतनत्वाच्च स्थूलशरीरं जाग्रत्** ।
- **"अद्यते अनेन इति अन्नम्"**। (अर्थात् जिसके कारण भोजन किया जाए।) **"अस्ति इति अन्नम्"**।
- स्थूलप्रपञ्च का लयस्थान- **हिरण्यगर्भ**, तैजस की समष्टि, व्यष्टि में ।

देवता	दिक्	वात	अर्क	वरुण	अश्विनीकुमार
ज्ञानेन्द्रिय	श्रोत्र	त्वक्	चक्षु	रसना	घ्राण
तन्मात्रा	शब्द	स्पर्श	रूप	रस	गन्ध्
	अग्नि	इन्द्र	उपेन्द्र	यम	प्रजापति
कर्मेन्द्रिय	वाणि	हाथ	पाद	पायु	उपस्थ
कर्मेन्द्रियकर्म	वचन	आदान	गमन	विसर्ग	भोगसुख
देवता	चन्द्र	चतुर्मुख	शङ्कर	अच्युत	
अन्तःकरण	मन	बुद्धि	अहङ्कार	चित्त	
अन्तःकरणकर्म	सङ्कल्प	विकल्प	निश्चय	अहंकार	

आत्मा के विषय में अन्य दर्शनों के मत -

1. प्रथममत **(अतिप्राकृत)**-"आत्मा वै जायते पुत्रः"।
   आत्मा= **पुत्र**।
2. द्वितीय मत **(चार्वाक 1)**-"स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः"।
   आत्मा =**स्थूल शरीर**।
3. तृतीय मत **(चार्वाक 2)**- "ते ह प्राणाः प्रजापतिं पितरमेत्य ब्रूयुः (काणोऽहं बधिरोहं)। आत्मा = **इन्द्रिय**।
4. चतुर्थ मत **(चार्वाक 3)**- "अन्योऽन्तर आत्मा प्राणमयः"।
   आत्मा = **प्राणमय**।
5. पञ्चम मत **(चार्वाक 4)**- "अन्योऽन्तर आत्मा मनोमयः"।
   आत्मा =**मनोमय**।
6. षष्ठ मत **(बौद्ध)**- "अन्योऽन्तर आत्मा मनोमयः"।
   आत्मा = **विज्ञानमय**।
7. सप्तम मत **(प्रभाकर/नैयायिक)**="अन्योऽन्तर आत्माऽऽनन्दमयः"।
   आत्मा = **अज्ञान**।
8. अष्टम मत **(कुमारिल)**- "प्रज्ञानघन एवानन्दमयः"
   आत्मा = **अज्ञानोपहितचैतन्य**।
9. नवम मत- **(बौद्ध)** = "असदेवेदमग्र आसीत्"। आत्मा = **शून्य**।

मिथ्याप्रतीतिरूप अन्यथाभाव के दो प्रकार-

1. परिणामवाद 2. विवर्तवाद

1. परिणामवाद - ''सतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विकार इत्युदीरितः।''
जब कोई वस्तु अपना स्वरूप त्यागकर किसी अन्यरूप को धारण कर लेती है तो उसे **परिणामवाद** या **विकारवाद** कहते हैं। **उदाहरण-** "दूध का दधि में परिणत होना"।

2. विवर्तवाद- ''अतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विवर्त इत्युदीरितः।''
जब किसी वस्तु में अयथार्थ- मिथ्या प्रतीति के कारण दूसरी वस्तु मालूम पड़ती है तो वह विवर्त कहलाती है। **उदाहरण-** ''रस्सी अपने स्वरूप को त्यागे बिना ही सर्प के रूप में भासित होती है यही विवर्त है ।''

महावाक्यार्थ निरूपणम् –

उपदेशवाक्य - ''तत्त्वमसि'' (छान्दोग्योपनिषद, सामवेद, उपदेश वाक्य) "इदं तत्त्वमसीति वाक्यम् **सम्बन्धत्रयेणाखण्डार्थ** बोधकं भवति"। यह वाक्य तीन सम्बन्धों के द्वारा अखण्डार्थ का बोध कराता है-

"सामानाधिकरण्यं च विशेषणविशेष्यता ।
लक्ष्यलक्षणसम्बन्धः पदार्थप्रत्यगात्मनाम् ॥"

1. **पदयोः सामानाधिकरण्यम्** । (तत् त्वम् पदं का सामानाधिकरण।)
2. **पदार्थयोर्विशेषणविशेष्य भावः**। (दोनों पदों के वाच्यार्थों में विशेषणविशेष्यभाव ।)
3. **प्रत्यगात्मलक्षणयोर्लक्ष्यलक्षणभावश्चेति**। (दोनों के वाच्यार्थ में लक्ष्यलक्षणभाव ।)

लक्षणा-

1. **जहल्लक्षणा** - ''गंगायां घोषः'' (प्रयोजनवती लक्षणा)
2. **अजहल्लक्षणा** -''शोणो धवति'' (उपादान लक्षणा)
3. **जहदजहल्लक्षणा**-"भागलक्षणा"(लक्ष्यलक्षणभावसम्बन्ध) **"तत्त्वमसि"**

अनुभववाक्य- ''अहं ब्रह्मास्मि'' (बृहदारण्यकोपनिषद, शु.यजु.)
उपदेशवाक्य -''तत्त्वमसि'' (छान्दोग्योपनिषद, सामवेद,)

किसी विषय के ज्ञान के क्रम में दो अवस्थाएं -

1. वृत्तिव्याप्ति 2. फलव्याप्ति,

''ब्रह्मण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्षिता ।
बुद्धितस्थो चिदाभासौ द्वावेव व्याप्नुतो घटम्।
तत्राज्ञानं धिया नश्येदाभासेन घटः स्फुरेत्"।।

चैतन्य के साक्षात्कार के उपाय-

1. श्रवण 2. मनन 3. निदिध्यासन 4. समाधि

(1) श्रवण- "श्रवणं नाम षड्विधलिङ्गैरशेषवेदान्तानामद्वितीय-वस्तुनि तात्पर्यावधारणम्"॥

छः प्रकार के लिङ्गों से निश्चय करना 'श्रवण' कहलाता है ।

षड्लिङ्ग-

"लिङ्गानि तूपक्रमोपसंहाराभ्यासापूर्वताफलार्थवादोपपत्त्याख्यानि"॥

"उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वताफलम् ।
अर्थवादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये ॥"

1. उपक्रम,उपसंहार	2. अभ्यास	3. अपूर्वता
4. फ़ल	5. अर्थवाद	6. उपपत्ति।

1. उपक्रम,उपसंहार –"प्रकरणप्रतिपाद्यस्यार्थस्यतदाद्यन्तयो-रुपपादनमुपक्रमोपसंहारौ"

किसी प्रकरण के प्रतिपाद्य अर्थ का उसके आरम्भ और अन्त में उपपादन करना । **जैसे-** छान्दोग्योपनिषद् के छठें अध्याय में प्रकरण के प्रतिपाद्य अद्वितीय ब्रह्मरूप वस्तु का **"एकमेवाद्वितीयम्"** अर्थात् 'एकमात्र अद्वितीय सत् ही था' इन शब्दों के द्वारा प्रारम्भ में और **"ऐतदात्म्यमिदंसर्वम्"** अर्थात् यह सारा जगत् प्रपञ्च सत् संज्ञक आत्मा स्वरूप वाला है ।

2. अभ्यास- "प्रकरणप्रतिपाद्यस्यावस्तुनस्तन्मध्ये पौनःपुन्येन प्रतिपादनमभ्यासः" । प्रकरण प्रतिपाद्य वस्तु का उसके मध्य में पुनःपुनः प्रतिपादन करना अभ्यास है । **जैसे-** 'छान्दोग्योपनिषद' में ही प्रकरण प्रतिपाद्य अद्वितीय ब्रह्म वस्तु का उस प्रकरण के मध्य में **'तत्त्वमसि'** इस प्रकार से 'नौ' बार प्रतिपादन किया गया है ।

3.अपूर्वता-"प्रकरणप्रतिपाद्यस्याद्वितीयवस्तुनः-प्रमाणान्तराविषयीकरणमपूर्वता"।

प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तु का (श्रुति के अतिरिक्त) किसी अन्य प्रमाण द्वारा विषय न बनाया जाना (अर्थात् किसी अन्य प्रमाण से बोध या ज्ञान न होना) 'अपूर्वता' है। **जैसे-** उसी प्रकरण में अद्वितीय वस्तु का किसी अन्य प्रमाण से अगम्य होना **"आचार्यवान् पुरुषो वेद"** इत्यादि कथन से सूचित होता है।

4. फ़ल- "फलं तु प्रकरणप्रतिपाद्यस्यात्मज्ञानस्य तदनुष्ठानस्य वा तत्र तत्र श्रूयमाणं प्रयोजनम्"। किसी प्रकरण के द्वारा प्रतिपाद्य आत्मज्ञान का अथवा आत्मज्ञान के लिए किये जाने वाले साधनानुष्ठान का जो प्रयोजन उस-उस प्रकरण में प्रतिपादित होता है, वही 'फल' कहलाता है। **जैसे-** वहीं **"तस्य तावदेवचिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ सम्पत्स्ये"** अर्थात् आचार्यवान् पुरुष ही आत्मा को जानता है। उसके लिए तभी तक देर है जब तक वह शरीर के बन्धन से मुक्त नहीं होता, तदनन्तर तो वह सत्सम्पन्न अर्थात् ब्रह्माभाव को प्राप्त हो जाता है', इत्यादि के द्वारा अद्वितीय वस्तु के ज्ञान का प्रयोजन उसकी प्राप्ति बताया गया है।

5. अर्थवाद- "प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्र तत्र प्रशंसनमर्थवादः" । प्रकरण के प्रतिपाद्य विषय की उसमें स्थान-स्थान पर प्रशंसा 'अर्थवाद' है। **जैसे- "उत तमादेशमप्राक्ष्यो येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातम्" (6।1।3)** अर्थात् क्या तुमने आचार्य से उस आदेश के विषय में पूछा है जिससे न सुना हुआ सुना, न विचारा गया विचारा गया तथा न जाना हुआ जाना हुआ हो जाता है । इन शब्दों के द्वारा अद्वितीय ब्रह्म रूप वस्तु की प्रशंसा की गई है ।

6. उपपत्ति-"प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसाधने तत्र तत्र श्रूयमाणा युक्तिरुपपत्तिः" । प्रकरण के द्वारा प्रतिपाद्य अर्थ को सिद्ध या प्रमाणित करने के लिए स्थान-स्थान पर वर्णित युक्ति ही 'उपपत्ति' है। **जैसे-** वहीं **"यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद् वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्" (6। 1। 4)** अर्थात् हे सौम्य.! जिस प्रकार मृत्तिका के एक पिण्ड को जान लेने भर से उसके विकार या कार्यभूत सारे पदार्थों का ज्ञान हो जाता है, विकार (कार्य) तो वाणी से आरब्ध (उत्पन्न) होने वाला नाम- मात्र है, सत्य तो केवल (कारणभूत) मृत्तिका ही है, इत्यादि शब्दों के द्वारा अद्वितीय वस्तु को सत्य सिद्ध या प्रमाणित करने के लिए समस्त विकारों या कार्यों के केवल वाणी का विकार (तदाश्रित) होने में युक्ति प्रस्तुत की गई है।

(2) मनन- "मननं तु श्रुतस्याद्वितीयवस्तुनः वेदान्तानुगुणयुक्तिभि-रनवरतं अनुचिन्तनम्"। जिसका श्रवण किया गया, उस अद्वितीय वस्तु ब्रह्म का वेदान्त के अनूकूल तर्कों के द्वारा निरन्तर चिन्तन करना ही मनन है ।

(3) निदिध्यासनम्- **"विजातीय देहादि प्रत्ययरहिताद्वितीय वस्तुसजातीयप्रत्ययप्रवाहोनिदिध्यासनम्"** ॥ विजातीय शरीरादि -विषयक विचारों से रहित, अद्वितीय वस्तु (एकमात्र ब्रह्म) के सजातीय विचारों को मन में प्रवाहित करना ही 'निदिध्यासन' है ।

(4). समाधि-

1. सविकल्पक 2. निर्विकल्पक

सविकल्पक –

"तत्रसविकल्पकोनामज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयानपेक्षयाद्वितीयवस्तुनितदाकाराकारितायाश्चित्तवृत्तेरवस्थानम्" ॥ (ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय में भेद की प्रतीति होते हुए भी ब्रह्म की प्रतीति ।)

स्थिति- "तदा मृण्मयगजादिभानेऽपि मृद्भानवद्वैतभानेऽप्यद्वैतं वस्तु भासते"। उस समय जिस प्रकार मिट्टी के बने हुए हाथी आदि खिलौनों की प्रतीति होने पर भी वस्तुत: मिट्टी की ही प्रतीति होती है कि यह हाथी वस्तुत: मिट्टी ही है, उसी प्रकार 'द्वैत' की प्रतीति होने पर भी वस्तुत: 'अद्वैत' वस्तु की ही प्रतीति होती रहती है ।

"दृशिस्वरूपं गगनोपमं परम्
सकृद्विभातं त्वजमेकमक्षरम् ।
अलेपकं सर्वगतं यदद्वयम्
तदेव चाहं सततं विमुक्तमोम् ॥"

(उपदेशसाहस्री 73.10.1) ॥

निर्विकल्पक-

"निर्विकल्पकस्तुज्ञातृज्ञानादिविकल्पलयापेक्षयाद्वितीयवस्तुनि तदाकाराकारितायाश्चित्तवृत्तेरतितरामेकीभावेनावस्थानम्" ॥ (ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय के भेद की प्रतीति का पूर्ण अज्ञान।)

स्थिति-"तदातुजलाकाराकारितलवणानवभासेनजलमात्रावभासवदद्वितीय -वस्त्वाकाराकारितचित्तवृत्त्यनवभासेनाद्वितीयवस्तुमात्रमवभासते"। जैसे जल में घुलने पर जल का आकार या रूप धारण करने वाले नमक का भान नहीं होता, जल मात्र का ही भान होता है । इसी से सुषुप्ति और इस निर्विकल्पक समाधि में अभेद होने की शंका नहीं रहती है ।

निर्विकल्पक समाधि के (8) अंग =

"अस्याङ्गानि यम,नियम,आसन,प्राणायाम,प्रत्याहार,धारणा,ध्यान, समाधिः"॥

1. **यम - "तत्र अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः"**। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह ये यम हैं ।

2. **नियम – "शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः"**। शौच, संतोष, तप, स्वायाय, ईश्वरप्रणिधान ये नियम हैं।

3. **आसन-"करचरणादिसंस्थानविशेषलक्षणानिपद्मस्वस्तिकादीन्यासनानि"**। हाथ पैर आदि को किसी स्थिति विशेष में रखना ही जिनका लक्षण है, वे पद्म, स्वस्तिक आदि आसन हैं।

4. **प्राणायाम-"रेचकपूरककुम्भकलक्षणाःप्राणनिग्रहोपायाः प्राणायामाः"**। रेचक, पूरक और कुम्भक एवं प्राणवायु को निगृहीत नियन्त्रित करने के उपाय प्राणायाम कहलाते हैं ।

5. **प्रत्याहारः- "इन्द्रियाणां स्वस्वविषयेभ्यः प्रत्याहरणं प्रत्याहारः"**। इन्द्रियों को अपने-अपने विषयों से हटा लेना प्रत्याहार है ।

6. **धारणा- "अद्वितीयवस्तुन्यन्तरिन्द्रियधारणं धारणा"**। अन्तःकरण को अद्वैत वस्तु में लगा देना धारणा है ।

7. **ध्यान- "तत्राद्वितीयवस्तुनि विच्छिद्य-विच्छिद्यान्तरिन्द्रियवृत्तिप्रवाहो ध्यानम्"**।

8. **समाधि-** 1. सविकल्पक 2. निर्विकल्पक

निर्विकल्पक समाधि के (चार) विघ्न -

1. लय - **"चित्तवृत्तेर्निद्रा"** (निद्रा)
2. विक्षेप - **"अन्यावलम्बनम्"** (अन्य वस्तु का आश्रय लेना)
3. कषाय - **"रागादिवासनया स्तब्धीभाव:"** (रागादिवासना)
4. रसास्वाद - **"सविकल्पकानन्दास्वादनम्"** (सविकल्पक आनन्द)

जीवनमुक्ति-

जीवन्मुक्तो नाम स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मज्ञानेन तदज्ञानबाधनद्वारा स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मणिसाक्षात्कृतेऽज्ञानतत्कार्यसञ्चितकर्मसंशयविपर्ययादीनामपिबाधितत्वादखिलबन्धरहितो ब्रह्मनिष्ठः ।

"भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे"॥ (मुण्डको.2/2/8)

जीवन्मुक्त वह है जो अपने स्वरूपभूत अखण्ड ब्रह्म के ज्ञान से तद्विषयक अज्ञान के बाध द्वारा अपने स्वरूपभूत अखण्ड ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाने पर अज्ञान और उनके कार्य, सञ्चितकर्म, संशय, विपर्यय आदि के भी वाधित हो जाने पर सम्पूर्ण बन्धनों से रहित ब्रह्मनिष्ठ (ब्रह्मवेत्ता) है। "उस परापर, अर्थात् कारणकार्यात्मक (सर्वात्मक) ब्रह्म का आत्मभाव से दर्शन कर लेने पर इस (जीवन्मुक्त) के हृदय की गाँठें खुल जाती हैं, सभी प्रकार के संशय नष्ट हो जाते हैं, एवं (प्रारब्ध को छोड़कर) सभी कर्म क्षीण हो जाते हैं।"

वेदान्तसार के मुख्य बिन्दु-

❖ **प्रस्थानत्रयी-**

1. **ब्रह्मसूत्र-** उपनिषद् वाक्यों की तार्किक रूप से व्याख्या।

2. **स्मृति- "श्रुति स्मृति विरोधस्तु स्मृतिरेव गरीयसी"।**

3. **गीता-** उपनिषद को जो गाया गया-गीता(स्त्रीलिङ्ग) उपनिषद का विशेषण है, इसलिये यह स्त्रीलिङ्ग है।

- **कर्म के भेद-** 1. क्रियमाण 2. सञ्चित 3. प्रारब्ध।
- **तीन प्रकार के भेद -**
  1. **सजातीय** - पेड़-पेड़ से भिन्न है।
  2. **विजातीय** - मनुष्य का पशु से।
  3. **स्वगत** - हाथ पैर से भिन्न।
- **अखण्ड** - शंकराचार्य भेद को नहीं मानते हैं इनसे जो रहित है वह अखण्ड है ।
- **सखण्ड** - परिवर्तनशील संसार-सखण्ड कहलाता है ।
- **सत्व - "यद्रूपेण यत् निश्चितं तद् न व्यभिचरति तद् सत्वं"।** जो कभी न बदले।
- **मोक्ष** - सीमितता का त्याग।
- **"भट्टोजिदीक्षित"** अद्वैत वेदान्ती थे ।

❖ **परम्परा-**

1. **संन्यास-** सनक, सनन्दन, सनत्कुमार।

2. **गृहस्थ-** प्रजापति से शुरू।

सन्याय की परम्परा को **"दशनामी"** में "शंकराचार्य" को निर्धारित किया गया।

- **चित्-** ज्ञानस्वरूप, शुद्धचैतन्य।
- **चित्त-** अन्तःकरण चेतनतत्त्व।
- **उपनिषद् – "उपनिषद् नाम आत्मविद्या।''**
- **ज्ञान** - जो इन्द्रियों को शान्त करे।
- **अनुबन्ध** - जो ग्रन्थ को बांध लें।
- **वेदान्त-** उपनिषद् प्रमाण का अनुभवरूप।
- **ईश्वर-** माया से उपहित चैतन्य।
- **अज्ञान - सत्, चित्, आनन्द, अनन्त, अद्वैत** इन पांचों में जो विपरीत स्थिति लाए वह अज्ञान है । व्यक्तिगत अज्ञान केवल अभेद में भेद लाता है।
- **माया** - वैश्विक अज्ञान।

- **उपाधि - ''क्रियान्वयी उपाधि''** वेदान्त की कुञ्जी, उपाधि वह है जो प्रतीत कराती है परन्तु वस्तुतः वह नहीं होती है।
- **विशेष्य-** उपहित उपाधि से युक्त । विशेषण से युक्त - विशेष्य,
- **सर्ववित्** – "सर्वं विशेषेन जानाति"।
- **सर्वज्ञ** – "सर्वं जानाति सः सर्वज्ञः ।
- **"स्वस्वरूपानुसन्धानं भक्तिरित्यभिधीयते"।**

उपनिषद	श्रुतिप्रस्थान।
ब्रह्मसूत्र	न्यायप्रस्थान
गीता	स्मृतिप्रस्थान

❖ **लक्षण के दो प्रकार -**

1. **स्वरूप-** जो ब्रह्म के समय तक रहे।

2. **तटस्थ- "यावल्लक्षकालमनवस्थितत्वे सति व्यावर्तकं तदेव तटस्थ लक्षणं"।** जो लक्ष्य काल तक नहीं रहे।

स्थूल- जाग्रत् अवस्था,

(ब्रह्म)	
मायोपहित	**ईश्वर**
अज्ञानोपहित	**प्राज्ञ**
अनुपहित	**तुरीय**

- **प्राज्ञ- "प्रकृष्टेन अज्ञः प्राज्ञः"** –
- **प्रज्ञा** - ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा ।
- वेदान्त में पञ्चतन्मात्राओं से अहङ्कार की उत्पत्ति होती है।
- **सूक्ष्म-** सुषुप्तावस्था,
- **निकृष्टोपाधि** - रज, तमोगुण,

❖ **वृत्ति -**

'अज्ञान' की 'सूक्ष्म वृत्ति' के द्वारा 'ईश्वर' और 'प्राज्ञ' सुषुप्तावस्था में आनन्द का अनुभव प्राप्त करते हैं।

वृत्ति	
अज्ञान	सुषुप्त, सूक्ष्म
अन्तःकरण	स्थूल सूक्ष्म,

- 'प्राज्ञ' को **सुषुप्तावस्था** में आनन्द अनुभव होता है।
- **अन्तःकरण** - मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार । ये स्वप्नावस्था में कार्य करते हैं। अन्तःकरण अज्ञान का कारण है।
- **माया + ज्ञान** = कारण शरीर।

❖ जीव शरीर एवं अवस्था-

जीव शरीर	अवस्था
कारण शरीर	सुषुप्ति अवस्था
सूक्ष्म शरीर	स्वप्नावस्था
स्थूल शरीर	जाग्रतावस्था

❖ उपनिषदों में पांच महावाक्य -

1. उत्पत्तिवाक्य, 2. स्थितिवाक्य, 3. लयवाक्य, 4. प्रवेशवाक्य, 5. नियमन वाक्य,

इन्हीं पांचों वाक्यों पर ही भारतीय सिद्धान्त टिका हुआ है।
अद्वैतवेदान्त की परम्परा ''**अभिहितान्वयवाद**'' पर आश्रित है।

❖ **ब्रह्म साक्षात्कार का अर्थ -** सम्पूर्ण सत्ता का एकसाथ ज्ञान, यह ज्ञान मन के द्वारा नहीं हो सकता है, वह ज्ञान केवल उस चैतन्य के द्वारा ही प्राप्त होता है।

- अज्ञान की आवरण शक्ति एकत्व का बोध होने नहीं देती है।
- वेदान्त में **ब्रह्म** को ही अज्ञान का ''**निमित्त**'' और "**उपादान**" कारण माना है।

  उपादान - शक्ति की दृष्टि से। (उपाधि) **स्वोपाधिप्रधानतया,**
  निमित्त - चैतन्य की दृष्टि से। (अपनी) **स्वप्रधानतया,**
- इस दृष्टि से ब्रह्म "**अद्वैत**'' है उसे किसी ''**परमाणु**'' इत्यादि की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
- वेद (4) पुरुषार्थों के लिये हैं। प्रथम तीन पुरुषार्थ ''कर्म'' पर आधरित है, चतुर्थ ''ज्ञान'' पर आधरित है।
- वेदान्त में तन्मात्रा से - **अहंकारोत्पत्ति।**
- सांख्य में अहंकार से - **तन्मात्रोत्पत्ति।**
- लिङ्ग – ''**लिङ्गनात् ज्ञापनात् ज्ञापयति इति लिङ्गम्।**''
- सूक्ष्म शरीर- "माण्डूक्य उपनिषद" में 19 तत्त्व "वेदान्त" में - 17 तत्त्व का माना जाता है।
- बुद्धि का चित्त में तथा अहङ्कार का मन में अन्तर्भाव हो जाता है।
- शक्ति से युक्त चैतन्य से सृष्टि होती है, जिसका नाम **ईश्वर** है।
- आकाश में वायु उत्पन्न होती है आकाश से नहीं।

वेदान्त की प्रमुख सत्ताएं-

ईश्वर

"इयं समष्टिरुत्कृष्टोपाधितया विशुद्धसत्वप्रधाना"।
अज्ञान की **समष्टि** से उपहित चैतन्य।
सम्पूर्ण विश्व का कारण होने से- **कारण शरीर।**
आनन्द की अधिकता होने से - **आनन्दमय कोश।**
यह **सर्वज्ञत्व, सर्वेश्वरत्व, सर्वनियन्तृत्व, अव्यक्त, अन्तर्यामी** सकलज्ञान का अवभासक होने से जगत् का कारण कहलाता है।
स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर के विलय का आधर होने से – **सुषुप्ति अवस्था।**

प्राज्ञ

"इयं समष्टिर्निकृष्टोपाधितया मलिनसत्त्वप्रधाना"।
अज्ञान की **व्यष्टि** से उपहित चैतन्य।
अहङ्कारादि का कारण होने से - **कारण शरीर।**
आनन्द की अधिकता होने से - **आनन्दमय कोश।**
यह **अल्पज्ञत्व, अनीश्वरत्व, "एकज्ञानावभासकत्वात्'**- प्राज्ञ कहलाता है।

ईश्वर और प्राज्ञ में समानता

स्थूल एवं सूक्ष्म प्रपञ्च के विलय का आधार होने से ईश्वर और प्राज्ञ-**सुषुप्ति** कहलाते हैं।
प्रलयावस्था में ईश्वर और प्राज्ञ (अज्ञान की सूक्ष्म वृत्तियों) से आनन्द का अनुभव करते हैं।
ईश्वर और प्राज्ञ का भेद- **सर्वेश्वर,**
ईश्वर और प्राज्ञ का आधारभूत जो अनुपहित है- **तुरीय**

हिरण्यगर्भ (सूत्रात्मा प्राण)

सूक्ष्म शरीर की **समष्टि** से उपहित चैतन्य।
"सर्वत्रानुस्यूतत्वात्ज्ञानइच्छाक्रियाशक्तिमदुपहितत्वाच्च",
"जाग्रदवासनामयत्वाद",
स्थूल प्रपञ्च का लय स्थान।

तैजस

सूक्ष्म शरीर की **व्यष्टि** से उपहित चैतन्य।
तेजोमयान्तःकरणोपहितत्वाद्, जाग्रदवासनामयत्वाद्
स्थूल प्रपञ्च का लयस्थान।

हिरण्यगर्भ और तैजस में समानता

हिरण्यगर्भ और तैजस स्वप्नावस्था में (मनोवृत्तियों के द्वारा) सूक्ष्म विषयों का (वासना रूप से) अनुभव करते हैं।

वैश्वानर (विराड्)

'स्थूल जगत् की समष्टि' से उपहित चैतन्य।
"अन्नविकारत्वात् अन्नमयकोश" जाग्रत, **सर्वाभिमानत्वाद्** ।
"स्थूलभोगायतनत्वाच्च स्थूलशरीर"।

विश्व

'स्थूल जगत् की व्यष्टि' से उपहित चैतन्य।

"अन्न विकारत्वात् अन्नमयकोश, जाग्रत, सर्वाभिमानत्वाद्। स्थूलभोगायतनत्वाच्च स्थूलशरीर जाग्रत"।

वेदान्त परम्परा के कुछ महत्वपूर्ण ग्रन्थकार एवं ग्रन्थ-

शंकर	-	माण्डूक्यकारिका/"माण्डूक्य उपनिषद"
श्रीहर्ष	-	खण्डनखण्डनखाद्य, अनिर्वचनीयतासर्वस्व,
वाचस्पति मिश्र	-	शाङ्करभाष्य - भामती टीका
पञ्चपादिका	-	पद्मपाद,
चित्सुखाचार्य	-	चित्सुखी
विमुक्तात्मन	-	इष्टसिद्धि
माध्वाचार्य	-	सर्वदर्शनसङ्ग्रह, विवरणप्रमेयसङ्ग्रह
मधुसूदनसरस्वती	-	अद्वैतसिद्धि
उदयनाचार्य	-	आत्मतत्त्वविवेक, न्यायकुसुमांजलि
सदानन्द योगी	-	वेदान्तसार
धर्मराजाध्वरिन्द्र	-	वेदान्तपरिभाषा
गौड़पादाचार्य	-	गौड़पादकारिका,
रामाद्वय	-	वेदान्तकौमुदी
आनन्दबोधभट्टारक	-	न्यायमकरन्द
प्रकाशानन्द	-	वेदान्तसिद्धान्तमुक्तावली,वेदान्तनयभूषण
नानादीक्षित	-	सिद्धान्तदीपिका टीका,
जनार्दन	-	तत्वालोक,
शंकरानन्द	-	दीपिका,

- शंकरानन्द ने कई उपनिषदों, ब्रह्मसूत्र तथा गीता पर दीपिका नामक टीका लिखी।
- अद्वयाश्रम के शिष्य- **रामाद्वय**
- विजयनगर के राजावुक्क के राजगुरु - **माध्वाचार्य** (द्वैतवाद)

विद्यारण्यस्वामी-

1. विवरणप्रमेयसंग्रह
2. जीवनमुक्तिविवेक
3. पञ्चदशी
4. वाक्यसुधा
5. बृहदारण्यकवार्तिकसार
6. अनुभूतिप्रकाश
7. वैयासिकन्यायमाला
8. शंकर दिग्विजय
9. दृग्दृश्यविवेक

आनन्दगिरि - इन्होने **शांकरभाष्य, उपनिषद, ब्रह्मसूत्र,** तथा गीता पर टीकाएं लिखी, साथ ही आचार्य शङ्कर की **पञ्चकिरणी, उपदेशसाहस्त्री** इत्यादि ग्रन्थों पर टीकाएं लिखी। इनके द्वारा रचित ग्रन्थ-
1. तर्कसङ्ग्रह, 2. तत्वालोक।

1. सदानन्द योगीन्द्र-

वेदान्तसार की टीकाएं

सुबोधिनि	विद्वन्मनोरञ्जनी	बालबोधिनि
(नृसिंहसरस्वती)	(रामतीर्थ)	(आपदेव)

2. सदानन्द यति (काश्मीरक) – अद्वैतब्रह्मसिद्धि।

3. सदानन्द व्यास – अद्वैत परक ग्रन्थ -

1. प्रत्यकृतत्त्वचिन्तामणि
2. अद्वैतसिद्धिसिद्धान्तसार
3. गीताभावप्रकाश
4. स्वरूपनिर्णय
5. सटीकदशोपनिषद्वार
6. शंकरदिग्विजयसार

अप्पयदीक्षित-

सिद्धान्तलेशसङ्ग्रह, न्यायरक्षामणि, वेदान्तकल्पतरुपरिमल

भट्टोजिदीक्षित –

वेदान्तकौस्तुभ (माध्व द्वैत) भट्टोजिदीक्षित के गुरु अप्पयदीक्षित थे ।

नृसिंहाश्रम –

1. वेदान्ततत्त्वविवेक पर (दीपन टीका)
2. अद्वैतदीपिका
3. भेदधिक्कार
4. अद्वैतब्रह्मानुसन्धान

मधुसूदन सरस्वती -

1. सिद्धान्तविन्दु
2. वेदान्तकल्पलतिका
3. अद्वैतसिद्धि
4. प्रस्थानभेद
5. भगवद् व्याख्या

धर्मराज ध्वरीन्द्र –

वेदान्तपरिभाषा
↓
वेदान्तशिखामणि **(रामकृष्ण ध्वरीन्द्र)**
↓
मणिप्रभा **(अमरदास)**

॥वैशेषिक दर्शन॥

वैशेषिक भारतीय दर्शनों में से एक दर्शन है। इसके मूल प्रवर्तक ऋषि कणाद हैं (ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी)। यह दर्शन न्याय दर्शन से बहुत साम्य रखता है किन्तु वास्तव में यह एक स्वतंत्र भौतिक विज्ञानवादी दर्शन है। इस प्रकार के आत्मदर्शन के विचारों का सबसे पहले महर्षि कणाद ने सूत्र रूप में लिखा। कणाद एक ऋषि थे। ये **"उच्छवृत्ति"** थे और धान्य के कणों का संग्रह कर उसी को खाकर तपस्या करते थे। इसीलिए इन्हें **"कणाद"** या **"कणभुक्"** कहते थे। किसी का कहना है कि कण अर्थात् परमाणु तत्त्व का सूक्ष्म विचार इन्होंने किया है, इसलिए इन्हें **"कणाद"** कहते हैं। किसी का मत है कि दिन भर ये समाधि में रहते थे और रात्रि को कणों का संग्रह करते थे। यह वृत्ति **"उल्लू"** पक्षी की है। किसी का कहना है कि इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ईश्वर ने **उलूक पक्षी** के रूप में इन्हें शास्त्र का उपदेश दिया। इन्हीं कारणों से यह दर्शन **"औलूक्य"**, "काणाद", "वैशेषिक" या "पाशुपत" दर्शन के नामों से प्रसिद्ध है।

॥तर्कसंग्रह॥

तर्कसंग्रह न्याय एवं वैशेषिक दोनों दर्शनों को समाहित करने वाला ग्रंथ है। इसके रचयिता **अन्नंभट्ट** हैं। इसके अध्ययन से न्याय एवं वैशेषिक के सभी मूल सिद्धान्तों का ज्ञान मिल जाता है। इस ग्रन्थ में 'पदार्थों' के विषय में जो कुछ है वह पूर्णत: वैशेषिक के अनुसार है जबकि 'प्रमाण' के विषय में जो कुछ है वह पूर्णतः न्याय के अनुसार है। अर्थात् पदार्थों के लिये 'वैशेषिक मत' को स्वीकार किया गया है तथा प्रमाण के लिये 'न्याय मत' को। इस प्रकार इस ग्रन्थ के माध्यम से न्याय और वैशेषिक मत को एक में मिलाया गया है।

अन्नंभट्ट ने बालकों को सुखपूर्वक न्यायपदार्थों का ज्ञान कराने के उद्देश्य से तर्कसंग्रह नामक अन्वर्थ लघुग्रंथ की रचना की तथा इसके अतिसंक्षिप्त अर्थ को स्पष्ट करने के अभिप्राय से स्वयं **दीपिका** नामक व्याख्या ग्रंथ की भी रचना की। इस ग्रन्थ का आरम्भ ही इसी बात पर वल देते हुए हुआ है कि इसमें विषय को बहुत सरल तरीके से प्रस्तुत किया गया है-

"निधाय हृदि विश्वेशं विधाय गुरुवन्दनम्।
बालानां सुखबोधाय क्रियते तर्कसंग्रहः" ॥

हृदय में विश्वनाथ को रखकर गुरुवन्दना करके, बालकों को सुखपूर्वक बोध के लिये (आसानी से द्रव्यादि सात पदार्थों का ज्ञान कराने हेतु) तर्कसंग्रह लिख रहा हूँ।)

तर्कसंग्रह का अर्थ-

तर्कसंग्रह न्याय-वैशेषिक परम्परा का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। यहाँ **'तर्क'** शब्द का अर्थ है 'द्रव्यादि सप्त पदार्थ' **(तर्क्यन्ते प्रतिपाद्यन्त इति तर्काः द्रव्यादिसप्तपदार्थाः।)** न्याय में तर्क शब्द के अनेक अर्थ दिये हैं। इस शब्द का उक्त अर्थ जो यहां दिया गया है वह असाधारण है। **'संग्रह'** शब्द संक्षेप के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। वाक्य-विवृत्ति के अनुसार संग्रह के अन्तर्गत उद्देश, लक्षण और परीक्षा आते हैं। उद्देश का अर्थ है परिगणन। किसी पदार्थ के असाधारण धर्म का कथन उसका लक्षण कहलाता है तथा लक्षित पदार्थ में लक्षण ठीक ठीक बैठता है अथवा नहीं इस प्रकार का विचार करना परीक्षा कहलाती है। इस प्रकार तर्क संग्रह का अर्थ है द्रव्यादि सप्त पदार्थों के परिगणन के साथ उनके लक्षण तथा उन लक्षणों की परीक्षा का संक्षिप्त रूप से प्रतिपादन करने वाला ग्रन्थ। यह ग्रन्थ **न्याय वैशेषिक** का **प्रकरण** ग्रन्थ है। प्रकरण की परिभाषा इस प्रकार की गई है :-

"शास्त्रैकदेशसम्बद्धं शास्त्रकार्यान्तरे स्थितम्।
आहुः प्रकरणं नाम ग्रन्थभेदं विपश्चितः"॥

(अर्थात् 'शास्त्र के अंश से सम्बद्ध तथा शास्त्र के (विशिष्ट) विषय के अन्दर स्थित (ग्रन्थ) को विद्वान् लोग **प्रकरण** नामक ग्रन्थ का भेद कहते हैं।' इस परिभाषा के अनुसार 'प्रकरण' सम्पूर्ण शास्त्र के विषय से सम्बद्ध न होकर उसके किसी विशिष्ट विषय से सम्बद्ध होना चाहिए। 'प्रकरण' शब्द जब ग्रन्थ के अंग के अर्थ में आता है तब तो सदैव ऐसा ही होता है किन्तु जब यह स्वतन्त्र ग्रन्थ के अर्थ में प्रयुक्त होता है तो हम सदैव उसमें शास्त्र के एक ही विषय का विवेचन प्राप्त नहीं करते। कुछ प्रकरण तो अवश्य ऐसे पाये जाते हैं जहाँ शास्त्र के एक ही विषय का निरूपण है, जैसे शंकराचार्यकृत-**'पंचीकरणप्रक्रिया'**, किन्तु अधिकांश प्रकरण-गन्थ ऐसे हैं जिनमें शास्त्र के सम्पूर्ण विषयों का संक्षेप में विवेचन है। न्याय-वैशेषिक के सप्तपदार्थी, तर्कभाषा, तर्कसंग्रह आदि ग्रन्थ ऐसे ही हैं।

॥तर्कसंग्रह॥

॥मङ्गलाचरण॥

"निधाय हृदि विश्वेशं विधाय गुरुवन्दनम् ।
बालानां सुखबोधाय क्रियते तर्कसंग्रहः"॥

अर्थ- मैं अन्नंभट्ट अपने हृदय में विश्वेश को धारण करके तथा गुरु की वन्दना करके बालकों को सुखपूर्वक न्यायशास्त्र का बोध कराने के लिये तर्कसंग्रह नामक ग्रन्थ की रचना करता हूं ।

पदार्थाः-

"द्रव्य-गुण-कर्म-सामान्य-विशेष-समवायाऽभावाः सप्तपदार्थाः"।

अर्थ- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव ये सात ही पदार्थ है ।

द्रव्याणि-

"पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशकालदिगात्ममनांसि नवैव"।

अर्थ- उन पदार्थों में द्रव्यों की संख्या नौ है- पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मन ।

गुणाः-

रूप-रस-गन्ध-स्पर्श-संख्या-परिमाण-पृथक्त्व-संयोग-विभाग-परत्वापरत्व-गुरुत्व-द्रवत्व-स्नेह-शब्द-बुद्धि-सुख-दुःख-इच्छा-द्वेष प्रयत्न-धर्माधर्म-संस्काराः चतुर्विंशतिर्गुणाः ॥

कर्माणि-

"चलनात्मकं कर्म" । उत्क्षेपणापक्षेपणाकुञ्चनप्रसारणगमनानि पञ्च कर्माणि।

अर्थ- उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन ये पांच कर्म है ।

1. **उत्क्षेपणम्-** ऊर्ध्वदेशसंयोगहेतुरुत्क्षेपणम् ।
2. **अपक्षेपणम्-** अधोदेशसंयोगहेतुरपक्षेपणम् ।
3. **आकुञ्चनम्-** शरीरसंनिकृष्टसंयोगहेतुराकुञ्चनम् ।
4. **प्रसारणम्-** विप्रकृष्टसंयोगहेतुः प्रसारणम् ।
5. **गमनम् -** अन्यत्सर्वं गमनम् पृथिव्यादिचतुष्टयमनोमात्रवृत्तिः ।

1.उत्क्षेपण- उपर को फ़ेकना
2.अपक्षेपण- नीचे को फ़ेकना
3.आकुञ्चन- बटोरना (सिकोड़ना)
4.प्रसारण- फ़ैलाना
5.गमनम्- चलना ।

सामान्यम्-

"परमपरं चेति द्विविधं सामान्यम्"।

अर्थ- पर (सामान्य) अपर (सामान्य) यह दो प्रकार का सामान्य (जाति) है ।

"नित्यमेकमनेकानुगतं सामान्यं द्रव्यगुणकर्मवृत्ति । तद्विविधं पराऽपरभेदात् । परं- सत्ता । अपरं- जाति द्रव्यत्वादिः"।

अर्थ- नित्य एक में रहते हुए जो अनेकों में स्थित हो उसे सामान्य कहते है । परं और अपरं के भेद से सामान्य दो प्रकार का होता है । परम्- सत्ता है और यह अधिक देश में रहता है और अपरम्- जाति अर्थात् द्रव्यादि को कहते है तथा यह न्यून देश में रहता है।

विशेषाः- "नित्यद्रव्यवृत्तयो विशेषास्त्वनन्ता एव" ।

अर्थ- जो नित्य द्रव्यों में रहता है उसे विशेष कहते है, और वह अनन्त होता है ।

समवायः-

"समवायस्त्वेक एव । नित्यसम्बन्धः समवायः । अयुतसिद्धवृत्तिः । ययोर्द्वयोर्मध्ये एकमविनश्यद्-अपराऽश्रितमेवावतिष्ठते तावयुतसिद्धौ" ।

अर्थ- नित्य सम्बन्ध को समवाय कहते है और यह एक ही प्रकार का होता है अर्थात् यह अयुतसिद्धवृत्तिः है ।

अयुतसिद्धवृत्तिः- जिन दो के मध्य में एक विनाश की अवस्था तक दूसरे पर आश्रित रहता है उसे अयुतसिद्धवृत्ति कहते है ।

यथा- 1. अवयवाऽवयविनौ 2. क्रियाक्रियावन्तौ 3. जातिव्यक्ति 4. विशेषनित्यद्रव्ये च इनका सम्बन्ध नित्य होता है ।

अभावः-

अभावश्चतुर्विधः ।

अर्थ- प्रागभावः, प्रध्वंसाभावः, अत्यन्ताभावः, अन्योन्याभाव भेद से चार प्रकार का होता है ।

1. प्रागभावः- 'अनादिः सान्तः प्रागभावः । उत्पत्तेः पूर्वं कार्यस्य' ।

अर्थ- जो अनादि हो अर्थात् जो उत्पत्ति से रहित परन्तु नाशवाला हो उसे प्रागभाव कहते है । उत्पत्ति से पूर्व कार्य का प्रागभाव रहता है ।

2. प्रध्वंसाभावः- 'सादिरनन्तः प्रध्वंसः । उत्पत्यनन्तरं कार्यस्य' ।

अर्थ- जो उत्पत्ति वाला हो परन्तु नाशवाला न हो उसे प्रध्वंसाभाव कहते है ।

3. अत्यन्ताभावः- 'त्रैकालिकसंसर्गावच्छिन्नप्रतियोगिताको अत्यन्ताभावः' ।

अर्थ- त्रैकालिकसंसर्गावच्छिन्न है प्रतियोगिता जिस अभाव की उसका नाम अत्यन्ताभाव है ।

यथा- भूतले घटो नास्तीति । (भूतल में घट नहीं है किन्तु घट का अभाव है और जिसका जहां पर अभाव रहता है वह उस अभाव का प्रतियोगि होता है) ।

4. अन्योन्याभावः-

'तादात्म्यसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकोऽअन्योन्याभावः'।

अर्थ- तादात्म्यसम्बन्धावच्छिन्न है प्रतियोगिता जिस अभाव की उसे अन्योन्याभावः ।

यथा- घटः पटो नेति । (घट जो है वह पट नहीं है) अर्थात् तादात्म्य सम्बन्ध से घट में पट का अभाव और पट में घट का अभाव ।

॥द्रव्याणि॥

पृथिवी-

तत्र गन्धवती पृथिवी । सा द्विविधानित्याऽनित्या च । **नित्या** परमाणुरूपा । **अनित्या** कार्यरूपा । **पुनस्त्रिविधा-** शरीर-इन्द्रिय-विषयभेदात् । **शरीरम्-** अस्मदादीनाम् । **इन्द्रियम्-** गन्धग्राहकं घ्राणम् । तच्च नासाग्रवर्ति । **विषयो-** मृत्पाषाणादिः ॥

अर्थ- नौ द्रव्यों में जो गन्धवाला द्रव्य है उसी का नाम पृथ्वी है । क्योंकि पृथ्वी को छोडकर अन्यत्र गन्ध नहीं है । वह पृथ्वी नित्य और अनित्य के भेद से दो प्रकार की है । नित्या- परमाणुरुपा अर्थात् जो परमाणुरुप पृथ्वी है वह नित्य है परन्तु कार्यरुप पृथ्वी अर्थात् जो स्थूल पृथ्वी है वह अनित्य है । पुनः पृथ्वी शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से तीन प्रकार की है ।

आपः-

'शीतस्पर्शवत्यः आपः' । ता द्विविधाः नित्या अनित्याश्च । **नित्याः** परमाणुरूपाः । अनित्याः कार्यरूपाः । **पुनस्त्रिविधा** शरीर-इन्द्रिय-विषयभेदात् । **शरीरम्-** वरुणलोके । **इन्द्रियम्-**रसग्राहकं रसनं जिह्वाग्रवर्ति । विषयः- सरित्समुद्रादिः ॥

अर्थ- नौ द्रव्यों से जो शीतस्पर्श वाला द्रव्य है उसी का नाम आप अर्थात् जल है । क्योंकि जल को छोडकर अन्यत्र शीतत्त्व नहीं है । वह जल नित्य और अनित्य के भेद से दो प्रकार की है । नित्या- परमाणुरुपा अर्थात् जो परमाणुरुप जल है वह नित्य है परन्तु कार्यरुप जल अर्थात् जो स्थूल जल है वह अनित्य है । पुनः जल शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से तीन प्रकार की है ।

तेजः-

'उष्णस्पर्शवत्तेजः' । तच्च द्विविधं नित्यमनित्यं च । **नित्यं** परमाणुरूपं । **अनित्यं** कार्यरूपं । **पुनस्त्रिविधम्-** शरीर-इन्द्रिय-विषयभेदात् । **शरीरम्-** आदित्यलोके प्रसिद्धम् । **इन्द्रियम्-** रूपग्राहकं चक्षुः कृष्णताराग्रवर्ति । **विषयश्चतुर्विधः** 1. भौम 2. दिव्यम् 3. औदर्यम् 4.आकरज भेदात् । **भौमं** वह्न्यादिकम् ।अविन्धनं दिव्यं विद्युदादि । भुक्तस्य परिणामहेतुरौदर्यम् । **आकरजं** सुवर्णादि ।

अर्थ- नौ द्रव्यों से जो उष्णस्पर्श वाला द्रव्य है उसी का नाम तेज है । क्योंकि तेज को छोडकर अन्यत्र उष्ण(गरम) नहीं है । वह तेज नित्य और अनित्य के भेद से दो प्रकार की है । नित्यम्- परमाणुरुप अर्थात् जो परमाणुरुप तेज है वह नित्य है परन्तु कार्यरुप तेज अर्थात् जो स्थूल तेज है वह अनित्य है । पुनः अनित्य तेज शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से तीन प्रकार का है । शरीररुप तेज सूर्यलोक में रहता है । तैजस इन्द्रिय वह है जो रुप को ग्रहण करता है और नेत्र के काले तारे (पुतली) के अग्रभाग में रहता है । तैजस विषय भौम, दिव्यम्, ऊदर्य और आकरज के भेद से चार प्रकार का है। भौमतेज अग्नि आदि में रहता है। अविन्धन तेज विद्युत आदि में होता है । खाये गये पदार्थ को पचाने में जो कारण है उसे ऊदर्यतेज कहते है और खान आदि से उत्पन्न सुवर्ण आदि को आकरज तेज कहते है ।

वायुः-

'रूपरहितः स्पर्शवान्वायुः' । स द्विविधः नित्योऽनित्यश्च । नित्यः परमाणुरूपः । अनित्यः कार्यरूपः । **पुनस्त्रिविधः-**शरीर-इन्द्रिय-विषयभेदात् । **शरीरम्-** वायुलोके । **इन्द्रियम्-** स्पर्शग्राहकं त्वक्सर्वशरीरवर्ति । **विषयो-** वृक्षादिकम्पनहेतुः शरीरान्तःसंचारी वायुः प्राणः । स च एकोऽप्युपाधिभेदात्प्राणापानादिसंज्ञां लभते ॥

अर्थ- जिस द्रव्य में रुप नहीं है और स्पर्श है उस द्रव्य को वायु कहते है । क्योंकि वायु को छोडकर अन्यत्र स्पर्श नहीं है । वह वायु नित्य और अनित्य के भेद से दो प्रकार की है । नित्य- परमाणुरुप अर्थात् जो परमाणुरुप वायु है वह नित्य है परन्तु कार्यरुप वायु अनित्य है । पुनः वायु शरीर, इन्द्रिय और विषय के भेद से तीन प्रकार की है । वायु का शरीर वायु लोक में है । वायवीय इन्द्रिय वह है जो स्पर्श का बोध कराता है । वायु का विषय वृक्षादि के कम्पन का हेतु है । शरीर के भीतर रहने वाले वायु को प्राण कहते है वह एक ही है तथापि उपाधि के भेद से वह प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान आदि नामों से जाना जाता है ।

आकाशम्-

'शब्दगुणकमाकाशम्' । तच्चैकं विभुर्नित्यश्च ।

अर्थ- शब्द नामक गुण जिस द्रव्य का है उसे आकाश कहते है । वह केवल एक ही है विभु है और नित्य भी है ।

कालः-

'अतीतादिव्यवहारहेतुः कालः' । स चैको विभुर्नित्यश्च ।

अर्थ- भूत, वर्तमान और भविष्यत् आदि व्यवहार का जो कारण है उसे काल कहते है। वह केवल एक ही है विभु है और नित्य भी है ।

दिक्- प्राच्यादिव्यवहारहेतुर्दिक् । सा चैका विभ्वी नित्या च ।

अर्थ- प्राची- पूर्व आदि का जो कारण है उसे दिक् कहते है । वह केवल एक ही है विभु है और नित्य भी है ।

आत्मा-

'ज्ञानाधिकरणमात्मा' । स द्विविधः परमात्मा जीवात्मा च । तत्रेश्वरः सर्वज्ञः परमात्मैक एव । जीवात्मा प्रतिशरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च ।

अर्थ- ज्ञान के आश्रय को आत्मा कहते है । वह आत्मा जीवात्मा, परमात्मा के भेद से दो प्रकार का है । उसमें परमात्मा ईश्वरः सर्वसमर्थ और सर्वज्ञः एवं वह एकमात्र है । जीवात्मा तो प्रत्येक शरीर में रहने वाला भिन्न-भिन्न है, विभु तथा नित्य भी है ॥

मनः-

'सुखाद्युपलब्धिसाधनमिन्द्रियं मनः' । तच्च प्रत्यात्मनियतत्वादनन्तं परमाणुरूपं नित्यं च ।

अर्थ- सुख, दुःख आदि की प्राप्ति के साधन इन्द्रिय को मन कहते है । वह प्रत्येक आत्मा में निश्चित् रुप से विद्यमान होने के कारण अनन्त है परमाणु रुप में है और नित्य भी है ।

॥गुणाः॥

रुपम्-

'चक्षुर्मात्रग्राह्यो गुणो रूपम्' ।

तच्च शुक्लनीलपीतरक्तहरितकपिशचित्रभेदात्सप्तविधम् । पृथिवीजलतेजोवृत्ति । तत्र पृथिव्यां सप्तविधम् । अभास्वरशुक्लं जले । भास्वरशुक्लं तेजसि ।

अर्थ- केवल चक्षु-इन्द्रिय से ग्रहण किये जाने वाले गुण को रुप कहते है । वह शुक्ल (सफ़ेद), नील (काला और नीला), पीत (पीला), रक्त (लाल), हरित (हरा), कपिश (भूरा), चित्र (अनेक रुपों का मिलन) के भेद से सात प्रकार का है । रुप पृथिवी, जल, तेज इन तीनों मे ही रहता है। उनमें पृथ्वी में सात प्रकार का रुप रहता है । अभास्वर शुक्ल जल में और भास्वरशुक्ल तेज में रहता है ।

रसः-

'रसनग्राह्यो गुणो रसः' । स च मधुराम्ललवणकटुकषायतिक्तभेदात् षड्विधः । पृथिवीजलवृत्तिः । तत्र पृथिव्यां षड्विधः। जले मधुर एव ।

अर्थ- रसनेन्द्रिय से ग्रहण किये जाने वाले गुण को रस कहते है। वह रस मधु (मीठा), अम्ल (खट्टा), लवण (नमकीन), कटु (कडुवा), कषाय (कसैला), तिक्त (तीखा) के भेद से छह प्रकार का होता है । वह रस केवल पृथ्वी और जल में ही रहता है उसमें भी पृथ्वी में छहों प्रकार के रस रहते है । जल में तो केवल मधुर रस ही रहता है ।

गन्धः-

'घ्राणग्राह्यो गुणो गन्धः' । स द्विविधः सुरभिरसुरभिश्च । पृथिवीमात्रवृत्तिः।

स्पर्शः-

'त्वगिन्द्रियमात्रग्राह्यो गुणः स्पर्शः' । स च त्रिविधः शीतोष्णानुष्णाशीतभेदात् । पृथिव्यप्तेजोवायुवृत्तिः । तत्र शीतो जले । उष्णस्तेजसि । अनुष्णाशीतः पृथिवीवाय्वोः । रूपादिचतुष्टयं पृथिव्यां पाकजमनित्यं च । अन्यत्र अपाकजं नित्यमनित्यं च । नित्यगतं नित्यम् । अनित्यगतमनित्यम् ।

संख्या-

'एकत्वादिव्यवहारहेतुः संख्या' । सा नवद्रव्यवृत्तिः एकत्वादिपरार्धपर्यन्ता । एकत्वं नित्यमनित्यं च । नित्यगतं नित्यम् । अनित्यगतमनित्यम् । द्वित्वादिकं तु सर्वत्राऽनित्यमेव ॥

परिमाणम्-

'मानव्यवहारासाधारणकारणं परिमाणम्' । नवद्रव्यवृत्तिः । तच्चतुर्विधम् । अणु महद्दीर्घं ह्रस्वं चेति ।

पृथक्त्वम्-

'पृथग्व्यवहारासाधारणकारणं पृथक्त्वम्' । सर्वद्रव्यवृत्तिः ।

संयोगः-

'संयुक्तव्यवहारहेतुः संयोगः' । सर्वद्रव्यवृत्तिः ।

विभागः-

'संयोगनाशको गुणो विभागः' । सर्वद्रव्यवृत्तिः ।

परत्वापरत्वम्-

'परापरव्यवहारासाधारणकारणे परत्वापरत्वे' । पृथिव्यादिचतुष्टय मनोवृत्तिनी । ते द्विविधे दिक्कृते कालकृते च । दूरस्ते दिक्कृतं परत्वम् । समीपस्थे दिक्कृतमपरत्वम् । ज्येष्ठे कालकृतं परत्वम् । कनिष्ठे कालकृतमपरत्वम् ॥

गुरुत्वम्-

'आद्यपतनासमवायिकारणं गुरुत्वम्' । पृथिवीजलवृत्ति ॥

अर्थ- आद्य (प्रथम) पतन के असमवायिकारण गुण को गुरुत्व कहते है । वह पृथ्वी और जल में रहता है ।

द्रवत्वम्-

'आद्यस्यन्दनासमवायिकारणं द्रवत्वम्' । पृथिव्यप्तेजोवृत्ति । तद्द्विविधं सांसिद्धिकं नैमित्तिकं च । सांसिद्धिकं जले । नैमित्तिकं पृथिवीतेजसोः । पृथिव्यां घृतादावग्नि संयोगजं द्रवत्वम् । तेजसि सुवर्णादौ ॥

अर्थ- आद्य (प्रथम) स्यन्दन (वहने,चूने) के असमवायिकारण गुण को द्रवत्व कहते है । वह पृथ्वी जल और तेज में रहता है। वह द्रवत्व सांसिद्धिक (स्वाभाविक) और नैमित्तिक (कारणजन्य) के भेद से दो प्रकार का है। सांसिद्धिक द्रवत्व केवल जल में रहता है और नैमित्तिक द्रवत्व पृथिवी और तेज में रहता है। पार्थिव घृत् आदि में अग्निसंयोग उत्पन्न द्रवत्व है और तेज में होने वाले द्रवत्व सुवर्ण आदि में देखा जा सकता है।

स्नेहः-

'चूर्णादिपिण्डीभावहेतुर्गुणः स्नेहः' । जलमात्रवृत्तिः ॥

अर्थ- चूर्ण आदि के पिण्ड बनने में जो कारण गुण है उसे स्नेह कहते है वह केवल जल में ही रहता है ।

शब्दः-

'श्रोत्रग्राह्यो गुणः शब्दः' । आकाशमात्रवृत्तिः । स द्विविधः ध्वन्यात्मकः वर्णात्मकश्च । तत्र ध्वन्यात्मकः भेर्यादौ । वर्णात्मकः संस्कृतभाषादिरूपः॥

अर्थ- (कान के छिद्र में विद्यमान) श्रोत्र इन्द्रिय से ग्रहण किये जाने वाले गुण को शब्द कहते है। वह केवल आकाश में ही रहता है। वह ध्वन्यात्मक (ध्वनिरुप) और वर्णात्मक (वर्णरुप) के भेद से दो प्रकार का होता है। ध्वन्यात्मक शब्द भेरी आदि के बजाने से उत्पन्न होता है तो वर्णात्मक शब्द संस्कृतभाषा आदि रूप वाला है।

बुद्धिः-

'सर्वव्यवहारहेतुर्गुणो बुद्धिर्ज्ञानम्' । सा द्विविधा स्मृतिरनुभवश्च ।

अर्थ- सम्पूर्ण व्यवहारों का जो कारण गुण है उसे ज्ञान अथवा बुद्धि कहते है। वह स्मृति और अनुभव के भेद से दो प्रकार की होती है।

स्मृतिः-

'संस्कारमात्रजन्यं ज्ञानं स्मृतिः' । तद्भिन्नं ज्ञानमनुभवः । स द्विविधः यथार्थोऽयथार्थश्च ।

अर्थ- केवल संस्कारमात्र से उत्पन्न ज्ञान को स्मृति कहते है । स्मृति से भिन्न ज्ञान को अनुभव कहते है और वह यथार्थ अनुभव एवं अयथार्थ अनुभव के भेद से दो प्रकार का होता है ।

यथार्थानुभवः-

'तद्वति तत्प्रकारकोऽनुभवो यथार्थः' ।

अर्थ- जिसमें जो है वहां उसी प्रकार का अनुभव होता है तो उसे यथार्थानुभव कहते हे ।

यथा- 'रजते इदं रजतमिति ज्ञानम्' । सैव प्रमेत्युच्यते ।

जैसे- रजते अर्थात् चांदी में यह चांदी है इस प्रकार का जो अनुभव होता है उसे यथार्थानुभव कहते है और इसी ज्ञान को प्रमा कहते है।

अयथार्थः-

'तदभाववति तत्प्रकारकोऽनुभवोऽयथार्थः'। यथा- शुक्ताविदं रजतमिति ज्ञानम् । सैव अप्रमेत्युच्यते ॥

अर्थ- जिसमें जो नहीं है वहां उसके होने का जो अनुभव है उसे अयथार्थानुभव कहते है। **जैसे-** शुक्ती में यह रजत है यह ज्ञान और इसी को अप्रमा भी कहते है।

यथार्थानुभवश्चतुर्विधः- प्रत्यक्षानुमित्युपमितिशाब्दभेदात् ।

अर्थ- यथार्थ अनुभव प्रत्यक्ष-अनुमिति-उपमिति और शाब्द के भेद से चार प्रकार का होता है ।

तत्करणमपि चतुर्विधं- प्रत्यक्षानुमानोपमानशाब्दभेदात् ॥

अर्थ- यथार्थ अनुभव के करण भी प्रत्यक्ष-अनुमान-उपमान और शब्द के भेद से चार प्रकार के होते है ।

करणम्-

'असाधारणं कारणं करणम्'।

अर्थ- असाधारण कारण को करण कहते है ।

कारणम्-

'कार्यनियतपूर्ववृत्ति कारणम्' ।

अर्थ- कार्य (उत्पन्न होने वाले पदार्थ) से जो निश्चित रुप से पूर्वकाल में विद्यमान हो उसे कारण कहते है।

कार्यम्-

'कार्यं प्रागभावप्रतियोगि' ।

अर्थ- प्रागभाव के प्रतियोगी को कार्य कहते है। कार्य की उत्पत्ति से पहले रहने वाले अभाव को प्रागभाव कहते है और प्रागभाव के प्रतियोगी को कार्य कहां जायेगा ।

कारणं त्रिविधं- समवाय्यसमवायिनिमित्तभेदात् ।

अर्थ- कारण समवायिकारण- असमवायिकारण- निमित्तकारण के भेद से तीन प्रकार का होता है।

1. समवायिकारणम्-

'यत्समवेतं कार्यमुत्पद्यते तत्समवायिकारणम्'। यथा- तन्तवः पटस्य पटश्च स्वगतरूपादेः ।

अर्थ- जिसमें समवाय सम्बन्ध से रहकर कार्य उत्पन्न होता है उसे समवायिकारण कहते है। **जैसे-** तन्तु (धागे) पट (वस्त्र) के प्रति समवायिकारण है। इसी तरह पट जो है वह पट के रुप के प्रति समवायिकारण है ।

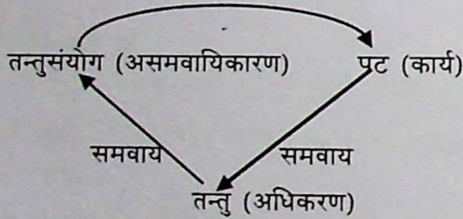
तन्तु (समवायिकारण) ⟶ पट(समवायिकारण) ⟶ पटरूप

2. असमवायिकारणम्-

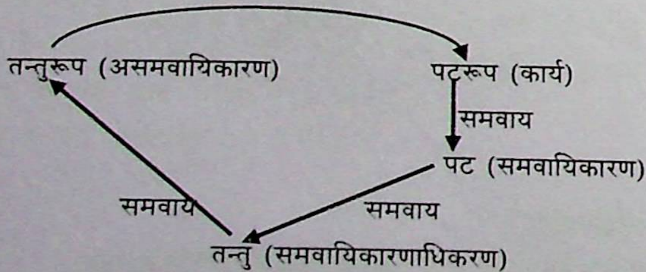
'कार्येण कारणेन वा सहैकस्मिन्नर्थे समवेतत्वे सति यत्कारणं तदसमवायिकारणम्' । यथा- 'तन्तुसंयोगः पटस्य, तन्तुरूपं पटरूपस्य'।

अर्थ- 'कार्य' अथवा 'कारण' के साथ एक पदार्थ में समवाय सम्बन्ध से वर्तमान रहता हुआ जो कारण है वह असमवायिकारण है। **जैसे-** 'तन्तुओं का संयोग पट का असमवायिकारण है और तन्तुरुप पटरुप का असमवायिकारण है' ।

1. कार्य के अधिकरण में समवाय सम्बन्ध से रहता हुआ कार्य प्रति असमवायिकारण-



2. कार्य के समवायिकारण के अधिकरण में समवाय सम्बन्ध से रहता हुआ कार्य के प्रति असमवायिकारण-



3. निमित्तकारणम्-

'तदुभयभिन्नं कारणं निमित्तकारणम्' । यथा- तुरीवेमादिकं पटस्य ।

अर्थ- समवायिकारण और असमवायिकारण इन दोनों से जो भिन्न कारण है उसे निमित्त कारण कहते है । **जैसे-** कपडे बनाने में सहायक यन्त्र तुरी, वेमा आदि।

वेमा (निमित्तकारण) ⟶ पट(कार्य)

करणम्-

'तदेतत्त्रिविधकारणमध्ये यदसाधारणं कारणं तदेव करणम्' ॥

अर्थ- समवायिकारण- असमवायिकारण और निमित्तकारण इन तीनों कारणों में जो 'असाधारणकारण' है उसे 'करण' कहते है।

॥प्रत्यक्षखण्ड॥

प्रत्यक्षम्-

'तत्र प्रत्यक्षज्ञानकरणं प्रत्यक्षम्' । 'इन्द्रियार्थसंनिकर्षजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षम्'। तद्विविधं निर्विकल्पकं सविकल्पकं चेति । अर्थ- प्रत्यक्ष ज्ञान का जो असाधारण कारण है उसे प्रत्यक्ष (करण) कहते है । इन्द्रिय और पदार्थ के सन्निकर्ष (सम्वन्ध) से उत्पन्न ज्ञान को प्रत्यक्ष (प्रमा) कहते है। वह प्रत्यक्ष ज्ञान निर्विकल्पक और सविकल्पक के भेद से दो प्रकार का होता है ।

1. निर्विकल्पकम्-

'तत्र निष्प्रकारकं ज्ञानं निर्विकल्पकम्' । यथा- 'इदं किञ्चित्' ।

अर्थ- उसमें प्रकारता अर्थात् विशेषण से शून्य ज्ञान को निर्विकल्पक ज्ञान कहते है। **जैसे-** यह कुछ है यह सामान्य ज्ञान होता है ।

2. सविकल्पकम्-

'सप्रकारकं ज्ञानं सविकल्पकम्' । यथा- 'डित्थोऽयं ब्राह्मणोऽयं श्यामोऽयं पाचकोऽयमिति' ।

अर्थ- नाम और जाति आदि विशेषण और विशेष्य के सम्वन्ध से युक्त (प्रकारता से युक्त) ज्ञान को सविकल्पक कहते है। **जैसे-** यह डित्थ है, यह ब्राह्मण है, यह पाचक है ।

इन्द्रियार्थसन्निकर्ष-

'प्रत्यक्षज्ञानहेतुरिन्द्रियार्थसंनिकर्षः षड्विधः' ।

अर्थ- प्रत्यक्ष ज्ञान के हेतु इन्द्रिय और पदार्थ के संनिकर्ष (सम्वन्ध) निम्नोक्त छह प्रकार के है।

1. संयोगः 2. संयुक्तसमवायः 3. संयुक्तसमवेतसमवायः
4. समवायः 5. समवेतसमवायः 6. विशेषणविशेष्यभावश्चेति

1. संयोगः-

'चक्षुषा घटप्रत्यक्षजनने संयोगः संनिकर्षः' ।

अर्थ- चक्षु-इन्द्रिय से घट आदि द्रव्य के प्रत्यक्ष ज्ञान में संयोग नामक सन्निकर्ष (सम्बन्ध) होता है ।

2. संयुक्तसमवायः-

'घटरूपप्रत्यक्षजनने संयुक्तसमवायः संनिकर्षः' । चक्षुः संयुक्ते घटे रूपस्य समवायात् ।

अर्थ- चक्षु-इन्द्रिय से घट शुक्ल, नील आदि रुप का प्रत्यक्ष होने में **संयुक्तसमवायः** नामक सन्निकर्ष (सम्बन्ध) होता है। क्योंकि चक्षु-इन्द्रिय से संयुक्त घटद्रव्य में रुप नामक गुण समवायसम्बन्ध से रहता है ।

3. संयुक्तसमवेतसमवायः-

'रूपत्वसामान्यप्रत्यक्षे संयुक्तसमवेतसमवायः संनिकर्षः' । चक्षुः संयुक्ते घटे रूपं समवेतं तत्र रूपत्वस्य समवायात् ।

अर्थ- चक्षु से रुपत्व जाति के प्रत्यक्ष में संयुक्तसमवेतसमवाय नामक संनिकर्ष माना जाता है । चक्षु-इन्द्रिय से संयुक्त (संयोगसम्बन्ध से वर्तमान) घटद्रव्य में रुप (गुण) समवेत (समवाय सम्बन्ध से वर्तमान) है, उस रुप में रुपत्व जाति समवायसम्बन्ध से रहती है ।

4. समवायः-

'श्रोत्रेण शब्दसाक्षात्कारे समवायः संनिकर्षः' । कर्णविवरवर्त्याकाशस्य श्रोत्रत्वात् शब्दस्याकाशगुणत्वाद्गुणगुणिनोश्च समवायात् ।

अर्थ- श्रोत्रेन्द्रिय से शब्द नामक गुण का प्रत्यक्ष होने पर समवाय नामक संनिकर्ष होता है । कर्णविवर में रहने वाला आकाश श्रोत्र है और आकाश का गुण केवल शब्द है और गुणी में गुण समवाय सम्बन्ध से रहता है ।

5. समवेतसमवायः-

'शब्दत्वसाक्षात्कारे समवेतसमवायः संनिकर्षः' । श्रोत्रसमवेते शब्दे शब्दत्वस्य समवायात् ।

अर्थ- श्रोत्रेन्द्रिय से शब्दत्व जाति के प्रत्यक्ष में समवेतसमवाय नामक संनिकर्ष होता है । श्रोत्रेन्द्रिय से समवेत (समवाय सम्बन्ध से वर्तमान) शब्द में शब्दत्व जाति समवायसम्बन्ध से रहती है ।

6. विशेषणविशेष्यभावः-

'अभावप्रत्यक्षे विशेषणविशेष्यभावः संनिकर्षः' । घटाभाववद्भूतलमित्यत्र चक्षुः संयुक्ते भूतले घटाभावस्य विशेषणत्वात् ।

अर्थ- अभाव के प्रत्यक्ष ज्ञान विशेषणविशेष्यभाव संनिकर्ष होता है। घटाभाव वाला भूतल है इस ज्ञान मे चक्षु इन्द्रिय से संयुक्त भूतल (विशेष्य) और घटाभाव (विशेषण) है।

एवं संनिकर्षषट्कजन्यं ज्ञानं प्रत्यक्षं तत्करणमिन्द्रियं तस्मातिन्द्रियं प्रत्यक्षप्रमाणमिति सिद्धम् ॥

अर्थ- इस प्रकार पहले कहे गये संयोग आदि छह सन्निकर्षों से उत्पन्न ज्ञान को प्रत्यक्ष कहते है। इस ज्ञान के करण अर्थात् **'असाधारणकरण'** को **'इन्द्रिय'** कहते हैं। अत एव इन्द्रिय ही प्रत्यक्ष प्रमाण है यह सिद्ध होता है ।

॥अनुमानप्रकरणम्॥

अनुमानम्-

'अनुमितिकरणमनुमानम्'।

अर्थ- अनुमिति के करण (असाधारण कारण) को अनुमान कहते है।

अनुमितिः-

'परामर्शजन्यं ज्ञानमनुमितिः'।

अर्थ- परामर्श से जन्य (उत्पन्न) ज्ञान को अनुमिति कहते है ।

परामर्शः-

'व्याप्तिविशिष्टपक्षधर्मताज्ञानं परामर्शः'। यथा- वह्निव्याप्यधूमवानयं पर्वत इति ज्ञानं परामर्शः । तज्जन्यं पर्वतो वह्निमानिति ज्ञानमनुमितिः ।

अर्थ- व्याप्ति से विशिष्ट पक्षधर्मता ज्ञान को परामर्श कहते है । **जैसे-** वह्नि का व्याप्य धूम वाला पर्वत है ऐसे ज्ञान को परामर्श कहा जाता है । उस परामर्श उत्पन्न पर्वत अग्नि वाला है इस प्रकार का ज्ञान अनुमिति है।

व्याप्तिः-

'यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्राग्निरिति साहचर्यनियमो व्याप्तिः'।

अर्थ- जहां-जहां धूम है वहां-वहां अग्नि है इस प्रकार हेतुभूत धूम आदि और साध्यभूत अग्नि आदि के साहचर्य को व्याप्ति कहते है ।

साध्य- जिसका अनुमान के द्वारा निर्णय किया जाता है उसे साध्य कहते है।

हेतु- जिसके ज्ञान से साध्य का निश्चय होता है उसे हेतु कहते है।

पक्षधर्मता-

'व्याप्यस्य पर्वतादिवृत्तित्वं पक्षधर्मता' ॥

अर्थ- अग्नि आदि की व्याप्ति से युक्त व्याप्य अर्थात् धूम आदि के पक्षभूत पर्वत आदि में रहने को पक्षधर्मता कहते है।

अनुमानं द्विविधं- स्वार्थं परार्थं च ।

अर्थ- अनुमान दो प्रकार का होता है- 1. स्वार्थानुमान और 2. परार्थानुमान ।

1. स्वार्थानुमानम्

'तत्र स्वार्थं स्वानुमितिहेतुः'। तथाहि स्वयमेव भूयोदर्शनेन यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्राग्निरिति महानसादौ व्याप्तिं गृहीत्वा पर्वतसमीपं गतः तद्गते चाग्नौ सन्दिहानः पर्वते धूमं पश्यन्व्याप्तिं स्मरति यत्र यत्र धूमस्तत्र तत्राग्निरिति । तदनन्तरं वह्निव्याप्यधूमवानयं पर्वत इति ज्ञानमुत्पद्यते अयमेव लिंगपरामर्श इत्युच्यते । तस्मात्पर्वतो वह्निमानिति ज्ञानमनुमितिः उत्पद्यते । तदेतत्स्वार्थानुमानम् ।

अर्थ- उन दो अनुमानों के बीच में अपने अनुमितिज्ञान के हेतु को स्वर्थानुमान कहते है। जैसे स्वयं ही वार-वार धूम और अग्नि का साहचर्य देखने से जहां-जहां धूम है वहां-वहां अग्नि अवश्य है इस रसोईघर आदि में व्याप्ति को जानकर कोई व्यक्ति कदाचित् पर्वत के समीप गया। वहां पर स्थित अग्नि की आशंका करता हुआ- पर्वत में धुँआ देखकर व्याप्ति का स्मरण करता है कि जहां-जहां धूम है वहां-वहां अग्नि अवश्य है। उसके बाद अग्नि की व्याप्ति का आश्रय धूम वाला यह पर्वत है ऐसा उसे ज्ञान उत्पन्न होता है। इसी को लिंगपरामर्श कहते हैं। उस परामर्श से पर्वत अग्नि वाला है ऐसा अनुमिति ज्ञान उस व्यक्ति को हो जाता है। इस प्रकार की अनुमितिज्ञान को स्वार्थानुमान कहते है।

2. परार्थानुमानम्

'यत्तु स्वयं धूमादग्निमनुमाय परंप्रतिबोधयितुं पञ्चावयव वाक्यं प्रयुज्यते तत्परार्थानुमानम्' । यथा- 1. पर्वतो वह्निमान् 2. धूमवत्वाद् 3. यो यो धूमवान् स स वह्निमान् यथा महानसम् 4. तथा चायं 5. तस्मात्तथेति । अनेन प्रतिपादिताल्लिङ्गात्परोऽप्यग्निं प्रतिपद्यते ॥

अर्थ- जो स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके दूसरे को समझाने के लिये उसके द्वारा पांच अवयवों वाले वाक्य का प्रयोग किया जाता है, उसे परार्थानुमान कहते है । **जैसे-** 1. पर्वत अग्नि वाला है, 2. धूम वाला होने से, 3. जो-जो धूम वाला होता है वह अग्नि वाला होता है जैसे कि रसोईघर, 4. वैसे ही यह पर्वत है (धूम वाला है), 5. अतः यह पर्वत अग्नि वाला है। इन पांच अवयवों से युक्त वाक्यों से पतिपादित लिंग (हेतुरुप धूम) से अन्य व्यक्ति भी धूम से अग्नि को जान पाता है।

पञ्चावयवाः-

'प्रतिज्ञाहेतूदाहरणोपनयनिगमनानि पञ्चावयवाः' ।

'पर्वतो वह्निमानिति **प्रतिज्ञा**' । धूमवत्वादिति **हेतुः** । यो यो धूमवान्स स वह्निमान्यथा महानसम् । तथा चायमित्यु**पनयः** । तस्मात्तथेति **निगमनम्**॥

अर्थ- प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय, निगमन, ये पञ्चावयव वाक्य हैं।

1. **पर्वतो वह्निमानिति प्रतिज्ञा-** पर्वत अग्नि वाला है यह **प्रतिज्ञा** वाक्यहै।
2. **धूमवत्वादिति हेतुः-** धूमवाला होने के कारण यह हेतु वाक्य है।
3. **यो यो धूमवान्स स वह्निमान्यथा महानसम्-** जो-जो धूम वाला होता है वह अग्नि से युक्त होता है जैसे रसोईघर यह उदाहरण वाक्य है।
4. **तथा चायमित्युपनयः-** उसी तरह यह पर्वत भी वह्निव्याप्य धूम वाला है। यह उपनय वाक्य है।
5. **तस्मात्तथेति निगमनम्-** अतः पर्वत भी अग्नि वाला है यह निगमन वाक्य है।

स्वार्थानुमितिपरार्थानुमित्योः लिंगपरामर्श एव करणम् ।तस्मात् लिंगपरामर्शोऽनुमानम् ॥

अर्थ- स्वार्थानुमिति और परार्थानुमिति इन दोनों का 'लिंगपरामर्श' ही करण होता है । इसलिये लिंगपरामर्श ही अनुमान है ।

लिङ्गं त्रिविधम् –

1.अन्वयव्यतिरेकि 2. केवलान्वयि 3. केवलव्यतिरेकि चेति ।

1.अन्वयव्यतिरेकि- 'अन्वयेन व्यतिरेकेण च व्याप्तिमद् अन्वयव्यतिरेकि'। यथा- 'वह्नौ साध्ये धूमवत्त्वम्'।

अर्थ- अन्वय और व्यतिरेक से जहां व्याप्ति रहती है उस लिंग को अन्वयव्यतिरेकि कहते है। **जैसे-** कि अग्नि के साध्य में धूम का रहना।

अन्वयव्याप्ति- 'यत्र धूमस्तत्राग्निर्यथा महानसं इत्यन्वयव्याप्तिः'।

अर्थ- जहां पर धूम है वहां पर अग्नि रहती है यह अन्वयव्याप्ति है।

व्यतिरेकव्याप्तिः- 'यत्र वह्निर्नास्ति तत्र धूमोऽपि नास्ति यथा महाह्रद इति व्यतिरेकव्याप्तिः' ।

अर्थ- जहां पर अग्नि नहीं है वहां पर धूम भी नही है यह व्यतिरेकव्याप्ति है । इस तरह यहां पर अन्वयव्याप्ति भी घटती है और व्यतिरेकव्याप्ति भी अतः इसे अन्वयव्यतिरेकि लिंग माना जाता है।

2. केवलान्वयि- 'अन्वयमात्रव्याप्तिकं केवलान्वयि' । यथा- 'घटोऽभिधेयः प्रमेयत्वात्पटवत्' । अत्र प्रमेयत्वाभिधेयत्वयोः व्यतिरेकव्याप्तिर्नास्ति सर्वस्यापि प्रमेयत्वादभिधेयत्वाच्च ।

अर्थ- जहां पर केवल अन्वयव्याप्ति रहती है उस लिंग को केवलान्वयि कहते है । **जैसे- 'घटोऽभिधेयः प्रमेयत्वात्पटवत्'** ।

पक्ष- घट, **साध्य-** अभिधेयत्व, **साधन-** प्रमेयत्व, **उदाहरण-** पट ।

'घट अभिधेय (वाच्य) है प्रमेय (यथार्थज्ञान का विषय) होने के कारण पट की तरह' । यहां पर प्रमेयत्व और अभिधेयत्व केवल अन्वयव्याप्ति है अर्थात् इसकी व्यतिरेक व्याप्ति नहीं बनती क्योंकि संसार के सकल पदार्थों में प्रमेयत्व और अभिधेयत्व रहता ही है।

3. केवलव्यतिरेकि- 'व्यतिरेकमात्रव्याप्तिकं केवलव्यतिरेकि'। यथा- 'पृथिवीतरेभ्यो भिद्यते गन्धवत्त्वात्' । यदितरेभ्यो न भिद्यते न तद्गन्धवद्यथा जलम् । न चेयं तथा । तस्मान्न तथेति । अत्र यद्गन्धवत्तदितरभिन्नमित्यन्वयदृष्टान्तो नास्ति पृथिवीमात्रस्य पक्षत्वात् ॥

अर्थ- केवल व्यतिरेकिव्याप्ति वाले हेतु को केवलव्यतिरेकि कहते है। **जैसे- 'पृथिवीतरेभ्यो भिद्यते गन्धवत्त्वात्' ।**

पक्ष- पृथिवी, **साध्य-** इतरभेदत्त्व, **साधन-** गन्धवत्त्व,

'पृथिवी अपने से इतर से भिन्न है, गन्धवती होने के कारण' । जो इतर से भिन्न नही है वह गन्ध वाला नहीं है, जैसे- जल। यह पृथिवी जल के समान गन्ध रहित नही है । अतः पृथिवी वैसी (इतर पदार्थ के समान) गन्धहीन नहीं है, अपितु गन्ध वाली है। यहां पर जो गन्ध वाली है वह इतर भिन्न है। ऐसा अन्वय का दृष्टान्त नहीं बन पाता है। यहां पर पृथिवी मात्र पक्ष है।

पक्षः- 'सन्दिग्धसाध्यवान्पक्षः' । यथा- धूमवत्त्वे हेतौ पर्वतः ।

अर्थ- जहां पर साध्य (अग्नि आदि का) सन्देह हो, उसे पक्ष कहते है। **जैसे-** धूमवत्व हेतु में 'पर्वत' पक्ष है।

सपक्षः- 'निश्चितसाध्यवान्सपक्षः' । **यथा-** तत्रैव महानसम् ।

अर्थ- जहां पर साध्य (अग्नि आदि का) निश्चय हो उसे सपक्ष कहते है। जैसे- धूमवत्त्व हेतु में महानस सपक्ष है।

विपक्षः- 'निश्चितसाध्याऽभाववान्विपक्षः' । **यथा-** तत्रैव महाह्रदः ।

अर्थ- जहां पर साध्य (अग्नि आदि का) अभाव निश्चय हो उसे विपक्ष कहते है। **जैसे-** धूमवत्त्व हेतु में महाह्रद विपक्ष है।

॥हेत्वाभासाः॥

'सव्यभिचारविरुद्धसत्प्रतिपक्षासिद्धबाधिताः पञ्च हेत्वाभासाः' ।

पांच हेत्वाभास माने जाते है-

1. सव्यभिचार, 2. विरुद्ध, 3. सत्प्रतिपक्ष, 4. असिद्ध 5. बाधित

(1) सव्यभिचार

"सव्यभिचारोऽनैकान्तिकः"। स त्रिविधः-

1. साधारणम् 2. असाधारणम् 3. अनुपसंहारिभेदात् ।

अर्थ- 'अनैकान्तिक' को 'सव्यभिचार' कहते है। वह साधारण, असाधारण और अनुपसंहारि के भेद से तीन प्रकार का है ।

1. साधारणः-

'तत्र साध्याभाववद्वृत्तिः साधारणोऽनैकान्तिकः' ।

यथा- 'पर्वतो वह्निमान्प्रमेयत्वादिति' । प्रमेयत्वस्य वह्न्यभाववति ह्रदे विद्यमानत्वात्।

अर्थ- जो हेतु साध्य के अभाव वाली जगह पर भी रहता है उसे 'साधारण अनैकान्तिक' कहते है। **जैसे- 'पर्वतो वह्निमान्प्रमेयत्वात्'** ।

पक्ष- पर्वत, **साध्य-** वह्नित्व, **साधन-** प्रमेयत्व ।

'पर्वत अग्नि वाला है, प्रमेय होने से' । यहां पर प्रमेयत्व हेतु अग्नि के अभाव वाले पदार्थ ह्रद में भी रहता है।अतः यहां पर प्रमेयत्व हेतु व्यभिचारि होने से 'साधारण' नामक हेत्वाभास बन गया ।

2. असाधारणः-

'सर्वसपक्षविपक्षव्यावृत्तः पक्षमात्रवृत्तिः असाधारणः' । यथा- 'शब्दो नित्यः शब्दत्वादिति' । शब्दत्वं हि सर्वेभ्यो नित्येभ्योऽनित्येभ्यश्च व्यावृत्तं शब्दमात्रवृत्तिः ।

अर्थ- जो हेतु समस्त सपक्ष और विपक्ष में न रहकर केवल पक्ष मात्र में रहता है असाधारण हेत्वाभास कहते है । **जैसे- 'शब्दो नित्यः शब्दत्वादिति'** ।

पक्ष- शब्द, **साध्य-** नित्यत्व, **साधन-** शब्दत्व ।

शब्द नित्य है शब्दत्व के कारण यहां पर पक्ष शब्द में नित्यत्व की सिद्धि के लिये जो शब्दत्व हेतु दिया गया है, वह सपक्ष नित्य (आकाश आदि) में और विपक्ष अनित्य (घट आदि) में न रहकर केवल पक्ष शब्द मात्र में ही रहता है। इसलिये यहां पर जो शब्दत्व हेतु है, वह 'असाधारण' नामक हेत्वाभास बनता है।

3. अनुपसंहारी-

'अन्वयव्यतिरेकदृष्टान्तरहितोऽनुपसंहारी । यथा- 'सर्वमनित्यं प्रमेयत्वादिति' । अत्र सर्वस्यापि पक्षत्वाद्दृष्टान्तो नास्ति ।

अर्थ- अन्वय और व्यतिरेक दृष्टान्त से रहित हेतु को अनुपसंहारी कहते है । **जैसे- 'सर्वमनित्यं प्रमेयत्वादिति'।**

पक्ष- सर्व, **साध्य-** अनित्यत्व, **साधन-** प्रमेयत्व ।

सबकुछ अनित्य है प्रमेय होने के कारण। यहां पक्ष सर्व में अनित्यत्व रुप साध्य की सिद्धि के लिये प्रमेयत्व हेतु है और पक्ष सभी पदार्थ हैं, उसके अतिरिक्त कुछ भी पदार्थ नहीं हैं । अतः दृष्टान्त के न होने से यह अनुपसंहारी नामक हेत्वाभास बन जाता है ।

(2) विरुद्धः

"साध्याभावव्याप्तो हेतुर्विरुद्धः" । **यथा-** 'शब्दो नित्यः कृतकत्वादिति' । कृतकत्वं हि नित्यत्वाभावेनाऽनित्यत्वेन व्याप्तम् ।

अर्थ- साध्य के अभाव में व्याप्त हेतु को विरुद्ध नामक हेत्वाभास कहते है । **जैसे- 'शब्दो नित्यः कृतकत्वात्'** ।

पक्ष- शब्द, **साध्य-** नित्यत्व, **साधन-** कृतकत्व ।

'शब्द नित्य है, कृतक (किसी के द्वारा निर्मित अथवा कार्य) होने के कारण' । यहां पर पक्ष शब्द में नित्यत्वरुप साध्य की सिद्धि के लिये कृतकत्व जो हेतु है, वह अनित्यत्वरुप साध्याभाव में व्याप्त है ।

(3) सत्प्रतिपक्षः

"यस्य साध्याभावसाधकं हेत्वन्तरं विद्यते स सत्प्रतिपक्षः"। यथा- 'शब्दो नित्यः श्रावणत्वाच्छब्दत्ववत्' । 'शब्दोऽनित्यः कार्यत्वाद्घटवत्' ।

अर्थ- जिसके साध्याभाव का साधक दूसरा हेतु विद्यमान रहता है उस हेतु को सत्प्रतिपक्ष कहते है । **जैसे- 'शब्दो नित्यः श्रावणत्वाच्छब्दत्ववत्'।**

पक्ष- शब्द, **साध्य-** नित्यत्व, **साधन-** श्रावणत्व ।

'शब्द नित्य है श्रवणेन्द्रिय के द्वारा गृहीत होने के कारण शब्दत्व की तरह'

'शब्दोऽनित्यः कार्यत्वाद् घटवत्' ।

पक्ष- शब्द, **साध्य-** अनित्यत्व **साधन-** कार्यत्व ।

'शब्द अनित्य है कार्य(जन्य) होने के कारण घट की तरह' ।

(4) असिद्ध

असिद्धस्त्रिविधः- 'आश्रयासिद्धः स्वरूपासिद्धो व्याप्यत्वासिद्धश्चेति' ।

अर्थ- असिद्ध हेत्वाभास तीन प्रकार का है-

1. आश्रयासिद्ध 2. स्वरूपासिद्ध 3. व्याप्यत्वासिद्ध ।

1. आश्रयासिद्ध-

यथा- 'गगनारविन्दं सुरभि अरविन्दत्वात्सरोजारविन्दवत्' । अत्र गगनारविन्दमाश्रयः स च नास्त्येव ।

पक्ष- गगनारविन्द, **साध्य-** सुरभित्व, **साधन-** अरविन्दत्व ।

जैसे- 'गगनारविन्द (आकाश कमल) सुगन्धित होता है, कमल होने के कारण, तालाब में उत्पन्न कमल की तरह' । यहां पर गगनारविन्द में कमल का आश्रय आकाश होता ही नहीं तो उसमे सुगन्ध कैसे रह सकता है? इस तरह अरविन्दत्वात् यह हेतु आश्रयासिद्ध हेत्वाभास वन जाता है।

2. स्वरूपासिद्ध-

'स्वरूपासिद्धो यथा शब्दो गुणश्चाक्षुषत्वात्' । अत्र चाक्षुषत्वं शब्दं नास्ति शब्दस्य श्रावणत्वात् ।

पक्ष- शब्द, **साध्य-** गुणत्व, **साधन-** चाक्षुषत्व ।

अर्थ- शब्द गुण है चक्षु इन्द्रिय से ग्राह्य होने के कारण । यहां पर शब्द में चाक्षुषत्व है ही नहीं वह तो श्रवणेन्द्रिय से ग्राह्य होता है । अतः यह स्वरुपतः असिद्ध है। फ़लतः उक्त हेतु स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास से ग्रस्त है ।

3. व्याप्यत्वासिद्ध-

सोपाधिको हेतुः व्याप्यत्वासिद्धः । साध्यव्यापकत्वे सतिसाधनाव्यापकत्वम् उपाधिः । साध्यसमानाधिकरणात्यन्ताभावाप्रतियोगित्वं साध्यव्यापकत्वम् । साधनवन्निष्ठात्यन्ताभावप्रतियोगित्वं साधनाव्यापक- त्वम् । पर्वतो धूमवान्वह्निमत्वादित्यत्रार्द्रेन्धनसंयोग उपाधिः । तथाहि । यत्र धूमस्तत्रार्द्रेन्धनसंयोग इति साध्यव्यापकता । यत्र वह्निस्तत्रार्द्रेन्धनसंयोगो नास्त्ययोगोलके आर्द्रेन्धनसंयोगाभावादिति साधनाव्यापकता । एवं साध्यव्यापकत्वे अस्ति साधनाव्यापकत्वा- र्द्रेन्धनसंयोग उपाधिः । सोपाधिकत्वाद्वह्निमत्त्वं व्याप्यत्वासिद्धम् ।

अर्थ- उपाधि से युक्त हेतु को 'व्याप्यत्वासिद्ध' कहा जाता है। पहले उपाधि का लक्षण बताते हैं- 'जो साध्य का व्यापक होकर साधन का अव्यापक होता है, उसे उपाधि कहते हैं'। साध्य के अधिकरण में रहने वाला जो अत्यन्ताभाव का प्रतियोगी नहीं है, उसे साध्यव्यापक कहते हैं। साधनवान् (हेतु के अधिकरण) में रहने वाले अत्यन्ताभाव का जो प्रतियोगी है, उसे साधनाव्यापक कहते हैं। 'पर्वत धूम वाला है, अग्नि वाला होने के कारण' इसमें गीली लकड़ी से अग्नि का संयोगरूप उपाधि है। जैसे कि जहाँ धूम है, वहाँ पर **आर्द्र-इन्धन** का संयोग होता है और जहाँ पर अग्नि है, वहाँ पर जरूरी नहीं है कि **आर्द्रेन्धन संयोग** हो ही। जैसे कि लोहे के तप्त गोलक में आर्द्रेन्धनसंयोग नहीं होता। अतः यह साधनाव्यापकता है । साध्यव्यापक होते हुये साधनाव्यापक होने से आर्द्रेन्धनसंयोग उपाधि हो गयी। उपाधि से युक्त होने के कारण वह्निमत्त्व हेतु व्याप्यत्वासिद्ध वन जाता है।

(5) बाधित

'यस्य साध्याभावः प्रमाणान्तरेण निश्चितः स बाधितः' । **यथा-** 'वह्निरनुष्णो द्रव्यत्वाज्जलवत्' । अत्रानुष्णत्वं साध्यं तदभाव उष्णत्वं स्पार्शनप्रत्यक्षेण गृह्यते इति बाधितत्त्वम् ॥

अर्थ- जिस हेतु का साध्याभाव अन्य प्रमाण से पक्ष में निश्चित है, उसे बाधित कहते है । **जैसे- 'वह्निरनुष्णो द्रव्यत्वाज्जलवत्'** ।

पक्ष- वह्नि, **साध्य-** अनुष्णत्व, **साधन-** द्रव्यत्व ।

अग्नि उष्ण नहीं है (शीतल है) द्रव्य होने के कारण । यहां पर अनुष्णत्व साध्य है उसका अभाव उष्णत्व स्पार्शन प्रत्यक्ष से जाना ही जाता है ।अतः उक्त हेतु बाधित हेत्वाभास से ग्रस्त है ।

॥उपमानखण्ड॥

"उपमितिकरणमुपमानम्" ।

अर्थ- उपमिति के करण (असाधारण कारण) को उपमान कहते है ।

उपमितिः-

'संज्ञासंज्ञिसम्बन्धज्ञानमुपमितिः' । तत्करणं सादृश्यज्ञानम् । अतिदेशवाक्यार्थस्मरणमवान्तर व्यापारः । तथा हि कश्चिद्गवयशब्दार्थं

अजानन्कुतश्चिदारण्यकपुरुषाद् गोसदृशो गवय इति श्रुत्वा वनं गतो वाक्यार्थं स्मरन्गोसदृशं पिण्डं पश्यति । तदनन्तरमसौ गवयशब्दवाच्य इत्युपमितिरुत्पद्यते ॥

अर्थ- संज्ञा (पद) संज्ञि (पदार्थ) के सम्बन्ध ज्ञान को उपमिति कहते है । उपमिति का करण सादृश्यज्ञान होता है। अतिदेश वाक्यस्मरण अवान्तर व्यापार है । **जैसे-** 'कि गवय- शब्द से जिस वस्तु का ज्ञान होता है, उसे न जानने वाला व्यक्ति कभी किसी व्यक्ति के मुख से 'गवय गौ के सदृश होता है' यह वाक्य सुनकर कभी वन को जाता है और गौ के सदृश किसी प्राणी को देखता हुआ उक्त वाक्यार्थ का स्मरण करता है और उसके वाद उसे यह वाक्यार्थ स्मरण हो जाता है कि यह गवय शब्द से कहा जाने वाला प्राणी है ।

॥शब्द॥

'आप्तवाक्यं शब्दः' । आप्तस्तु यथार्थवक्ता । **'वाक्यं पदसमूहः'** । यथा- गामानयेति । **'शक्तं पदम्'** । **'अस्मात्पदादयमर्थो बोद्धव्य इतीश्वरसंकेतः शक्तिः'** ।

अर्थ- आप्तों के वाक्य को शब्द प्रमाण कहते हैं। जो यथार्थ (सत्य) बोलता है उसे आप्त कहते हैं। पदों के समूह को वाक्य कहते हैं। जैसे- **'गाम् आनय'** । शक्ति से युक्त शब्द को पद कहते हैं । इस पद से यह अर्थ समझना चाहिये इस प्रकार के ईश्वरीय संकेत को शक्ति कहते है।

आकांक्षा-योग्यता-संनिधिश्च वाक्यार्थज्ञानहेतुः ।

अर्थ- आकांक्षा- योग्यता और संनिधि यह वाक्यार्थज्ञान में कारण हैं ।

आकांक्षा- 'पदस्य पदान्तरव्यतिरेकप्रयुक्तान्वय अननुभावकत्वं आकांक्षा' । आकांक्षादिरहितं वाक्यमप्रमाणम् ।यथा- गौरश्वः पुरुषो हस्तीति न प्रमाणमाकांक्षाविरहात् ।

अर्थ- पद का दूसरे पद के अभाव से जहां पर शाब्दबोध की जनकता नही होतीं हैं उसे आकांक्षा कहते है । आकांक्षा आदि से रहित वाक्य को प्रमाण नहीं माना जाता है। **जैसे-** गौ, घोडा, पुरूष, हाथी ये पदसमूह तो हैं किन्तु इनमें परस्पर आकांक्षा नहीं हैं। अतः ये प्रमाण नहीं है।

योग्यता- 'अर्थाबाधो योग्यता' । **यथा-** अग्निना सिञ्चति इति न प्रमाणं योग्यताविरहात् ।

अर्थ- अर्थ के बाध के अभाव को योग्यता कहते है । **जैसे-** आग से सींचता है इस वाक्य में योग्यता न होने के कारण प्रमाण नहीं माना जाता हैं।

संन्निधिः- 'पदानामविलम्बेनोच्चाररणं संनिधिः'। यथा- प्रहरे प्रहरेऽसहोच्चारितानि गामानयेत्यादिपदान्यप्रमाणं सान्निध्याभावात् ॥

अर्थ- पदों के विलम्ब के बिना ही उच्चारण को सन्निधि कहते है। **जैसे-** अलग-अलग समय एक साथ उच्चारण न किये जाने वाले पद भी प्रमाण नहीं होते क्योंकि उनमें सानिध्य नहीं होता है । जैसे- एक प्रहर गाम् दूसरे प्रहर आनय का उच्चारण होने पर वह शब्द प्रमाण नहीं माना जाता है ।

वाक्य-

वाक्यं द्विविधम् । **'वैदिकं' 'लौकिकं'** च । वैदिकमीश्वरोक्तत्वात्सर्वमेव प्रमाणम् । लौकिकं त्वाप्तोक्तं प्रमाणम् । अन्यदप्रमाणम् ॥ वाक्यार्थज्ञानं शब्दज्ञानम् । तत्करणं शब्दः ।

अर्थ- वाक्य दो प्रकार का होता है वैदिक वाक्य और लौकिक वाक्य वैदिक वाक्य ईश्वरोक्त होने के कारण सम्पूर्ण प्रमाण है। लौकिक वाक्य भी यदि आप्त के द्वारा उक्त हो तो उसे भी शब्दप्रमाण माना जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य को शब्दप्रमाण नहीं माना जाता हैं । वाक्यार्थ का ज्ञान ही शाब्दज्ञान है और उसका करण (असाधारण करण) है शब्द ।

॥अयथार्थानुभव॥

'अयथार्थानुभवस्त्रिविधः- संशयविपर्ययतर्कभेदात्' ।

अयथार्थ अनुभव तीन प्रकार का होता है-

1. संशय, 2. विपर्यय 3. तर्क

1. संशयः- 'एकस्मिन्धर्मिणि विरुद्धनानाधर्मवैशिष्ठ्यावगाहि ज्ञानं संशयः'। यथा- 'स्थाणुर्वा पुरुषो वेति' ।

अर्थ- एक धर्मी में परस्पर विरुद्ध अनेक धर्मों के वैशिष्ठ्य का अवगाहन करने वाले ज्ञान को संशय कहते है । **जैसे-** 'यह स्थाणु है या पुरुष' ?

2. विपर्ययः- 'मिथ्याज्ञानं विपर्ययः' । **यथा-** शुक्तौ इदं रजतमिति ।

अर्थ- मिथ्याज्ञान को विपर्यय कहते है । **जैसे-** शुक्ति में रजत का ज्ञान ।

3. तर्कः- 'व्याप्यारोपेण व्यापकारोपस्तर्कः'। यथा- 'यदि वह्निर्न स्यात्तर्हि धूमोऽपि न स्यादिति' ।

अर्थ- व्याप्य के आरोप से व्यापक का आरोप को तर्क कहां जाता है । **जैसे-** 'यदि अग्नि नही होती तो धूम भी नहीं होता' ।

स्मृति-

स्मृतिरपि द्विविधा- 1. यथार्था 2. अयथार्था च । **यथार्था-** प्रमाजन्या यथार्था । **अयथार्था-** अप्रमाजन्याऽयथार्था ॥

अर्थ- यथार्थस्मृति और अयथार्थस्मृति के भेद से स्मृति दो प्रकार की होती है । प्रमा से जन्या यथार्थस्मृति होती है । अप्रमा से जन्या अयथार्थस्मृति होती है ।

सुखम्-

'सर्वेषामनुकूलतया वेदनीयं सुखम्' ॥

अर्थ- जो सभी के अनुकूल ज्ञान का विषय है, उसे सुख कहते है।

दुःखम्-

'सर्वेषां प्रतिकूलतया वेदनीयं दुःखम्' ।

अर्थ- जो सभी के प्रतिकूल ज्ञान का विषय है, उसे दुःख कहते है।

इच्छा-

इच्छा कामः ।

अर्थ- कामना को इच्छा कहते हैं।

क्रोध-

क्रोधो द्वेषः ।

अर्थ- क्रोध को द्वेष कहते हैं।

कृतिः-

कृतिः प्रयत्नः ।

अर्थ- कृति को प्रयत्न कहते हैं ।

धर्मः-

'विहितकर्मजन्यो धर्मः'।

अर्थ- वेदविहित कर्म से उत्पन्न गुणविशेष को 'धर्म' कहते हैं।

अधर्मः-

'निषिद्धकर्मजन्यस्त्वधर्मः'।

अर्थ- वेद से निषिद्ध कर्म से उत्पन्न गुणविशेष को 'अधर्म' कहते हैं।

बुद्ध्यादयोऽष्टावात्ममात्रविशेषगुणाः । बुद्धीच्छा प्रयत्ना द्विविधाः । नित्या अनित्याश्च । नित्या ईश्वरस्यानित्या जीवस्य ॥

अर्थ- बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म ये आठ केवल आत्मा में रहने वाले विशेष गुण हैं। उनमें बुद्धि, इच्छा और प्रयत्न ये तीन नित्य और अनित्य होते हैं। ये ईश्वर में नित्य होते हैं और जीव में अनित्य हैं ।

संस्कार-

संस्कारस्त्रिविधः- वेगो, भावना, स्थितिस्थापकश्चेति ।

अर्थ- संस्कार वेग, भावना, स्थितिस्थापक के भेद से तीन प्रकार का होता हैं।

1. **वेगः-** 'वेगः पृथिव्यादिचतुष्टयमनोवृत्तिः' ।

अर्थ- वेग पृथिवी, जल, तेज, वायु और मन में रहता है।

2. **भावना-** 'अनुभवजन्या स्मृतिहेतुर्भावना' । आत्ममात्रवृत्तिः ।

अर्थ- अनुभव से जन्य स्मृति का हेतु भावना है। वह केवल आत्मा में ही रहती है।

3. **स्थितिस्थापकः-** 'अन्यथाकृतस्य पुनस्तदवस्थापादः स्थितिस्थापकः कटादिपृथिवीवृत्तिः' ॥

अर्थ- अन्य अवस्था में प्राप्त पदार्थ को पुनः उसी (पहले की) अवस्था में प्राप्त कराने वाले गुणविशेष को स्थितिस्थापक कहते हैं । यह गुण चटाई आदि पृथिवी में रहता है।

"कणादन्यायमतयोर्बालव्युत्पत्तिसिद्धये ।
अन्नंभट्टेन विदुषा रचितस्तर्कसंग्रहः" ॥

वैशेषिक धारा के प्रमुख आचार्य-

कणाद प्रशस्तपाद भाष्य पर तीन टीका -

1. उदयनाचार्य - किरणावली
2. व्योमशिवाचार्य - व्योमवती
3. श्रीधराचार्य - न्यायकन्दली

शिवादित्य - सप्तपदार्थी 'अभाव' को शिवादित्य ने कहा है। (इन्होनें चार प्रमाण माने हैं।) इन्ही आचार्य ने न्याय वैशेषिक को जोड़ा है।

वैशेषिक दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ-

वैशेषिकसूत्र	-	कणाद
पदार्थधर्मसंग्रह	-	प्रशस्तपाद
सप्तपदार्थी	-	शिवादित्य ,
दशपदार्थशास्त्र	-	चन्द्र
व्योमवती	-	व्योमशिव
न्यायकन्दली	-	श्रीधर
किरणावली	-	उदयन,
लीलावती	-	श्रीवत्स

रावणभाष्य/भारद्वाजवृत्ति- (वैशेषिकसूत्र की दो टीकाएं हैं जो कि अनुपलब्ध हैं)

न्याय दर्शन-

न्याय दर्शन भारत के छः वैदिक दर्शनों में एक दर्शन है। इसके प्रवर्तक ऋषि **अक्षपाद गौतम** हैं जिनका न्यायसूत्र इस दर्शन का सबसे प्राचीन

एवं प्रसिद्ध ग्रन्थ है। जिन साधनों से हमें ज्ञेय तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, उन्हीं साधनों को 'न्याय' की संज्ञा दी गई है। देवराज ने 'न्याय' को परिभाषित करते हुए कहा है- **"नीयते अनेन इति न्यायः विवक्षितार्थः"** । (जिस साधन के द्वारा हम अपने विवक्षित (ज्ञेय) तत्त्व के पास पहुँच जाते हैं, उसे जान पाते हैं, वही साधन न्याय है।) दूसरे शब्दों में, जिसकी सहायता से किसी सिद्धान्त पर पहुँचा जा सके, उसे न्याय कहते हैं। प्रमाणों के आधार पर किसी निर्णय पर पहुँचना ही न्याय है। यह मुख्य रूप से तर्कशास्त्र और ज्ञानमीमांसा है । इसे तर्कशास्त्र, प्रमाणशास्त्र, हेतुविद्या, वादविद्या तथा अन्वीक्षिकी भी कहा जाता है वात्स्यायन ने **'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः'** (प्रमाणों द्वारा अर्थ (सिद्धान्त) का परीक्षण ही न्याय है।) इस दृष्टि से जब कोई मनुष्य किसी विषय में कोई सिद्धान्त स्थिर करता है तो वहाँ न्याय की सहायता अपेक्षित होती है। इसलिये न्याय-दर्शन विचारशील मानव समाज की मौलिक आवश्यकता और उद्भावना है। उसके बिना न मनुष्य अपने विचारों एवं सिद्धान्तों को परिष्कृत एवं सुस्थिर कर सकता है न प्रतिपक्षी के सैद्धान्तिक आघातों से अपने सिद्धान्त की रक्षा ही कर सकता है। न्यायशास्त्र उच्चकोटि के संस्कृत साहित्य (और विशेषकर भारतीय दर्शन) का प्रवेशद्वार है। उसके प्रारम्भिक परिज्ञान के बिना किसी ऊँचे संस्कृत साहित्य को समझ पाना कठिन है, चाहे वह व्याकरण, काव्य, अलंकार, आयुर्वेद, धर्मग्रन्थ हो या दर्शनग्रन्थ। दर्शन साहित्य में तो उसके बिना एक पग भी चलना असम्भव है। न्यायशास्त्र वस्तुतः बुद्धि को सुपरिष्कृत, तीव्र और विशद बनाने वाला शास्त्र है। परन्तु न्यायशास्त्र जितना आवश्यक और उपयोगी है उतना ही कठिन भी, विशेषतः नव्यन्याय तो मानो दुर्बोधता को एकत्र करके ही बना है।

न्याय शब्द की व्युत्पत्ति-

नि + इण्गतौ +घञ्= न्याय।

निरुक्ति - "नितरां नीयते गम्यते अनेन"।

"यथानुपूर्वीकपञ्चावयववाक्यसमुदायः न्यायः"।

प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः। (न्यायभाष्य)

"नानुपलब्धे ननिर्णीतेऽर्थे न्यायः प्रवर्तते किन्तु सन्दिग्धे"।

न्यायविषये श्लोकः-

"प्रदीपः सर्वविद्यानां उपायः सर्वकर्मणाम्।
आश्रयः सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षिकी मता"।।

आन्वीक्षिकी – "प्रत्यक्षागमाभ्यां ईक्षितस्य पुनः ईक्षणं अन्वीक्षा, अन्वीक्षया प्रवर्तते इति आन्वीक्षिकी"।

अनुबन्ध चतुष्टय-

अधिकारी - "अनधीतन्यायशास्त्रः अधीतव्याकरणकाव्यकोशः"।

विषय - न्याय नय (प्रवेश) संक्षिप्त युक्तियों से युक्त ।

सम्बन्ध - प्रतिपाद्य प्रतिपादक ग्रन्थ भाव।

प्रयोजन - पदार्थ ज्ञान ।

॥तर्कभाषा॥

तर्कभाषा व्युत्पत्ति - "तर्क्यन्ते-प्रतिपाद्यन्ते इति तर्काः (प्रमाणादयः षोडश पदार्थाः) ते भाष्यन्ते अनया इति तर्कभाषा"।

॥मङ्गलाचरण॥ (वस्तुनिर्देशात्मक)

"बालोऽपि यो न्यायनये प्रवेशम्, अल्पेन वाञ्छत्यलसः श्रुतेन।
संक्षिप्तयुक्त्यन्विततर्कभाषा, प्रकाश्यते तस्य कृते मयैषा"॥

जो आलसी बालक स्वल्प अध्ययन से ही न्याय शास्त्र के सिद्धान्तों में प्रवेश चाहता है, उसके लिए मेरे द्वारा यह संक्षिप्त युक्तियों से युक्त तर्कभाषा नामक प्रकरण ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है ।

पदार्थ-

वैशेषिक दर्शन की ही भांति न्यायदर्शन में भी पदार्थों के तत्त्व ज्ञान से निःश्रेयस् की सिद्धि बतायी गयी है। न्यायदर्शन में (16) पदार्थ माने गये हैं।

"प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्तसिद्धान्तावयवतर्कनिर्णयवादजल्पवितण्डाहेत्वाभासच्छलजातिनिग्रहस्थानानाम्तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः"।

16 पदार्थ-

(1) प्रमाण	(2) प्रमेय	(3) संशय	(4) प्रयोजन
(5) दृष्टान्त	(6) सिद्धान्त	(7) अवयव	(8) तर्क
(9) निर्णय	(10) वाद	(11) जल्प	(12)वितण्डा
(13) हेत्वाभास	(14) छल	(15) जाति	(16) निग्रह

इन (16) पदार्थों के तत्त्वज्ञान से नि:श्रेयस(मोक्ष) की प्राप्ति होती है।

त्रिविध शास्त्रप्रवृत्ति-

न्याय शास्त्र की प्रवृत्ति तीन प्रकार से होती है-

1. उद्देश 2. लक्षण 3. परीक्षा

1. उद्देश- "नाममात्रेण वस्तुसङ्कीर्तनम्" (नाम मात्र से वस्तु का सङ्कीर्तन यानी कथन) उदा.- प्रामाणप्रमेय.....यह प्रथम सूत्र।

2. लक्षण- "लक्षणन्त्वसाधारणधर्मवचनम्"। (असाधरण धर्म के कथन को लक्षण कहते हैं। उदा.- गोः सास्नादिमत्त्वम्।

3. परीक्षा- "लक्षितस्य लक्षणमुपपद्यते न वेति विचारः परीक्षा"। (जिसका लक्षण किया जाता है उस लक्षित वस्तु का वह लक्षण ठीक है या नहीं इसका विचार परीक्षा

कहलाती है।)

1. प्रमाण

लक्षण- "प्रमाकरणं प्रमाणं"।

लक्ष्य- प्रमाण **लक्षण-** प्रमाकरण ।

करण और फ़ल का नित्य सम्बन्ध होता है- **"यद् यत् करणं, तत् तत् फ़लवत्,"**

प्रमा

लक्षण- "यथार्थानुभवः प्रमा"।

यथार्थ अनुभव का नाम प्रमा है। यहां पर यथार्थ पद से **'संशय, विपर्यय, तर्क'** का निराकरण किया गया है। अनुभव पद से **'स्मृति'** का निराकरण किया गया है।

स्मृति- ज्ञातविषयज्ञानं, **अनुभव-** स्मृतिव्यतिरिक्तं ज्ञानं।

करण

लक्षण- "साधकतमं करणम्"।

जिस कार्य का जो अतिशयेन साधक हो उसे 'साधकतमम्' कहते है, अर्थात् सर्वोत्कृष्ट कारण ही करण कहलाता है।

कार्य

कार्य लक्षण- "अनन्यथासिद्धनियतपश्चाद्भावित्वं कार्यत्वं"।

जिसकी सत्ता घटादिकार्योत्पत्ति से पश्चात् निश्चित हो, और जो अन्यथासिद्ध (अनावश्यक) न हो उसे कारण कहते है।

कारण

लक्षण- "यस्य कार्यात् पूर्वभावो नियतोऽनन्यथासिद्धश्च तत्कारणम्"

जिसकी सत्ता घटादिकार्योत्पत्ति से पूर्व निश्चित हो, और जो अन्यथासिद्ध (अनावश्यक) न हो उसे कारण कहते है। **उदाहरण-** 'तन्तु' और 'वेमा' पट के कारण है। पट की उत्पति में रासभ (गधा) कारण नही होता है क्योंकि उसकी वहां पर नियत उपस्थिति नहीं रहती है। **'पटरूप'** कार्य की उत्पत्ति में **'तन्तुरूप'** को कारण मानने पर **'कल्पनागौरव'** नाम का दोष होता है। किसी ने कारण का लक्षण इस प्रकार किया है- **"कार्यानुकृतान्वयव्यतिरेकि कारणम्"** अर्थात् कार्य द्वारा जिसके 'अन्वय' और 'व्यतिरेक' का अनुकरण किया जाये वह कारण है । किन्तु इस प्रकार के लक्षण करने पर नित्य, विभु (आकाशादि) में **'अव्याप्ति'** दोष चला जयेगा ।

कारण तीन प्रकार के हैं-

1. समवायिकारण 2. असमवायिकारण 3. निमित्तकारण

1. समवायिकारण-

लक्षण- "यत्समवेतं कार्यमुत्पद्यते तत्समवायिकारणम्।"

जिसमें समवाय सम्बन्ध से कार्य उत्पन्न होता है उसे समवायिकारण कहते हैं । **जैसे-** 'तन्तु' 'पट' के प्रति समवायिकारण हैं । तन्तुओं में ही पट **'समवाय'** सम्बन्ध से उत्पन्न होता है तुरी आदि में नहीं । तुरी और पट में 'संयोग' सम्बन्ध होता है । 'पट' अपने में रहने वाले 'रूप' आदि गुणों का समवायिकारण होता है। उसी प्रकार मिट्टी घट के प्रति समवायिकारण होती है। और घट भी अपने में रहने वाले गुणों का समवायिकारण होता है ।

सम्बन्ध-

(क) समवाय **(ख) संयोग**

(क) समवाय - अयुतसिद्ध सम्बन्ध समवाय कहलाता है।

अयुतसिद्ध-

"ययोर्द्वयोर्मध्ये एकमविनश्यदपराश्रितमेवावतिष्ठते तावयुतसिद्धौ"

जिन दो पदार्थों में से एक अविनश्यदवस्था में दूसरे पदार्थ के आश्रित ही रहता है, वे दोनों ही परस्पर अयुतसिद्ध कहलाते हैं।

"तावयुतसिद्धौ द्वौ विज्ञातव्यौ ययोर्द्वयोः।
अनश्यदेकमपराश्रितमेवावतिष्ठते"॥

जैसे- 1. अवयव-अवयवी 2. गुण-गुणी
3. क्रिया-क्रियावान् 4. जाति-व्यक्ति
5. नित्यद्रव्य- विशेष।

अवयवी आदि पदार्थ यथाक्रम से **अवयव** आदि पदार्थों के आश्रित ही रहते हैं। **यथा-** पत्तों में वृक्ष। विनश्यदवस्था में अवयवी आदि पदार्थ निराश्रित ही रहते हैं। **जैसे- तन्तु** (अवयव) के नष्ट होने पर **पट** (अवयवी) का भी नाश हो जाता है। 'विनश्यदवस्था' विनाशकारणसामग्री का सान्निध्य अर्थात् समस्त विनाशकारणों का एकत्र हो जाना है।

(ख) संयोग- दो अन्य पदार्थों का सम्बन्ध संयोग कहलाता है। **जैसे-** घट का भूतल से संयोग सम्बन्ध होता है ।

प्रथम क्षण में द्रव्य की निर्गुणता-

गुण और गुणी का जन्म समानकालीन नहीं होता है, प्रथम क्षण में निर्गुण घट ही उत्पन्न होता है ।दोनों की समान काल में उत्पत्ति मानने पर उनकी कारणसामग्री समान हो जाने से दोनों में भेद नहीं हो पायेगा । क्योंकि **"कारणभेदनियतत्वात्कार्यभेदस्य"** अर्थात् कार्य का भेद कारण के भेद से नियत (व्याप्त) रहता है ।

एवं प्रथम क्षण में घट की निर्गुण उत्पत्ति मानने पर दो दोष उपस्थित होते है- **प्रथम दोष-** घट का चाक्षुष प्रत्यक्ष नहीं हो पायेगा । **द्वितीय दोष-**

"गुणाश्रयो द्रव्यम्" इस लक्षण के अनुसार निर्गुण घट को द्रव्य नहीं कहा जा सकता ।

प्रथम दोष का समाधान यह है कि प्रथम क्षण में निर्गुण घट का चाक्षुष प्रत्यक्ष ग्रहण न होने पर कोई भी हानि नहीं है, सगुणोत्पत्तिपक्ष के अनुसार भी पलक झपकाने के समय (निमेष के अवसर पर) घट का चाक्षुप प्रत्यक्ष नहीं हुआ करता । द्वितीय दोष का समाधान यह है कि **"गुणाश्रयो द्रव्यम्"** यह द्रव्य का लक्षण नहीं है । अपितु **"समवायिकारणं द्रव्यमिति द्रव्यलक्षणयोगात्"** जो समवायिकारण होता है, वह द्रव्य है । **"योग्यतया गुणाश्रयत्वाच्च"** अर्थात् जिसमें गुणों के आश्रित होने की योग्यता हो वह द्रव्य है । यहां केवल **"गुणाश्रयो द्रव्यम्"** कहने से द्रव्यलक्षण की उत्पत्तिक्षणकालीन 'घटादि' जन्य द्रव्यों में **'अव्याप्ति'** होने लगेगी अतः यहां पर **'योग्यत्व'** अंश को जोडा गया है । **योग्यता- "योग्यता च गुणानामत्यन्ताभावाभावः"**। गुणों के अत्यन्ताभाव के अभाव को योग्यता कहते हैं ।

2. असमवायिकारण-

लक्षण-

"यत्समवायिकारणप्रत्यासन्नमवधृतसामर्थ्यं तदसमवायिकारणम्"। अर्थात् जो समवायिकारण में रहता हो और कार्योत्पादन करने में जिसका सामर्थ्य निश्चित हो उस कारण को 'असमवायिकारण' कहते हैं।

असमवायिकारण के दो प्रकार -

(1) कार्यैकार्थप्रत्यासत्ति- पट के प्रति तन्तुसंयोग ।

जैसे- 'तन्तुसंयोग' 'पटात्मक' कार्य का असमवायिकारण है। क्योंकि 'तन्तुसंयोग' एक गुणपदार्थ है, और वह 'तन्तुसंयोग' **'पट'** कार्य के आश्रय 'समवायिकारण' 'तन्तु' में 'समवाय' सम्बन्ध से रहता है । इसलिये पट के समवायिकारण तन्तुओं में वह प्रत्यासन्न अर्थात् रहता है । और वह तन्तुसंयोग कारण पटात्मक कार्य के प्रति **'अनन्यथासिद्धनियतपूर्वभावित्व'** इस कारण लक्षण से भी समन्वित है।

(2) कारणैकार्थप्रत्यासत्ति- पटरूप के प्रति तन्तुरूप ।

'पटरूप' कार्य के समवायिकारण **'पट'** तथा उस कारण के आश्रयभूत समवायिकारण **'तन्तु'** में प्रत्यासन्न **'तन्तुरूप'** की भी समवायिकारण में **'परम्परया'** प्रत्यासत्ति होती है । 'पट' का समवायिकारण 'तन्तु' है, उन तन्तुओं में ही 'तन्तुरूप' रहता है । अतः यहां पर 'पटरूप' का असमवायिकारण जो 'तन्तुरूप' है, वह 'पटरूप' के समवायिकारण (पट) के समवायिकारण (तन्तु) में रहता है । इस प्रकार यहां पर **'परम्परया'** प्रत्यासत्ति है । इस परम्परया प्रत्यासत्ति को ही **"कारणैकार्थप्रत्यासत्ति"** कहते हैं ।

3. निमित्तकारण-

लक्षण- "यन्न समवायिकारणं, नाप्यसमवायिकारणम्, अथ च कारणं तन्निमित्तकारणम्।" जो न समवायिकारण है और न ही असमवायिकारण है, फ़िर भी जो कार्य के प्रति कारण होता है वह निनित्तकारण कहलाता है । **जैसे-** तुरी, वेमा आदि पट के निमित्तकारण हैं ।

ये तीन प्रकार के कारण भावपदार्थों के ही होते हैं। 'अभाव' का केवल 'निमित्तकारण' ही होता है । क्योंकि अभाव का कहीं भी कभी भी किसी पदार्थ के साथ 'समवाय' सम्बन्ध नहीं होता है । समवाय तो केवल दो 'भाव' पदार्थों का ही धर्म हुआ करता है । इन तीनों कारणों में जो कारण किसी प्रकार से भी दूसरे कारणों की अपेक्षा अधिक उत्कृष्ट रहता है, उसे ही **'करण'** कहते हैं ।

अभाव=निमित्तकारण। **(समवायसम्बन्धाभावात्)**

तन्तु (समवायिकारण) — **पट** (समवायिकारण)——**पटरूप**
तन्तुसंयोग (असमवायिकारण)— **पट**
तन्तुरूप (अन्यथासिद्ध) — **पट** ———— पटरूप
कल्पनागौरवात् → परम्परया (असमवायिकारण) →
तुरी,वेमा (निमित्तकारण) — **पट**

क्रिया से लेकर संयोग तक चार कार्य-

(1) क्रिया

(2) क्रिया से विभाग

(3) विभाग से पहले संयोग का नाश।

(4) उत्तर देश में संयोगोत्पत्ति।

'प्रमाता' और **'प्रमेय'** के होने पर भी 'इन्द्रियार्थसन्निकर्ष' सम्बन्ध के बिना 'प्रमा' की उत्पत्ति नहीं होती है, किन्तु 'इन्द्रियादि संयोग' आदि के होने पर शीघ्र ही 'प्रमा' की उत्पत्ति होती है । इसलिये **"इन्द्रियादि संयोग"** ही प्रमा का कारण है ।

प्रमायाः करणं - "इन्द्रियसंयोगादिरेव करणम्"।

प्रमाण चार प्रकार के हैं-

"प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि"। (न्यायसूत्र 1.1.3)

॥प्रत्यक्ष प्रमाण॥

लक्षण- "साक्षात्कारिप्रमाकरणं प्रत्यक्षम्"।

वस्तु का साक्षात्कार करने वाली प्रमा के करण को 'प्रत्यक्षप्रमाण' कहते हैं । साक्षात्कारिणी प्रमा वह है जो 'इन्द्रिय' से उत्पन्न होती है।

प्रत्यक्ष प्रमा-

(1) सविकल्पक (2) निर्विकल्पक।

प्रत्यक्ष प्रमा के 3 करण -

(1) इन्द्रिय (2) इन्द्रियार्थ सन्निकर्ष (3) निर्विकल्पक ज्ञान।

करण	अवान्तरव्यापार	फल
(1) इन्द्रिय	इन्द्रियार्थसन्निकर्ष	निर्विकल्पकज्ञान
(2) इन्द्रियार्थसन्निकर्ष	निर्विकल्पकज्ञान	सविकल्पकज्ञान
(3) निर्विकल्पकज्ञान	सविकल्पकज्ञान	हानोपादानोपेक्षाबुद्धि

व्यापार लक्षण- "तज्जन्यस्तज्जन्यजनकोऽवान्तरव्यापारः"।
जो स्वयं **'तत्'** अर्थात् उस करण से जन्य (उत्पन्न) हो और **'तज्जन्य'** अर्थात् उस करण से जन्य होने वाले कार्य (फ़ल) का जनक (उत्पादक) हो उसे **'अवान्तरव्यापार'** कहते हैं। **जैसे-** कुठार (करण) से जन्य जो कुठार-दारू संयोग है, वह कुठार से उत्पन्न होने वाली छेदन (फ़लरूपी) क्रिया का जनक है। 'अवान्तरव्यापार' सर्वत्र करण तथा फ़ल के मध्य में ही रहता है।

इन्द्रियार्थसन्निकर्ष-

साक्षात्कारि प्रमा का हेतु 'इन्द्रियार्थसन्निकर्ष' छः प्रकार का है।

1. संयोग **2. संयुक्तसमवाय** **3. संयुक्तसमवेतसमवाय**
4. समवाय **5. समवेतसमवाय** **6. विशेषण-विशेष्यभाव**

1. संयोग-

चक्षुरिन्द्रिय से **'घट'** (अर्थ) का प्रत्यक्ष होने से 'संयोग' सन्निकर्ष होता है। क्योंकि ये दोनों 'अयुतसिद्ध' नहीं हैं। इसी प्रकार अन्तरिन्द्रिय **'मन'** से जब **आत्मविषयक ज्ञान** होता है तो 'मन' इन्द्रिय और आत्मा' अर्थ है। इन दोनों का सम्बन्ध 'संयोग' सन्निकर्ष ही कहा जाता है।

2. संयुक्तसमवाय -

चक्षुरिन्द्रिय से **'घटरूप'** का प्रत्यक्ष ग्रहण होने पर 'संयुक्तसमवाय' सन्निकर्ष होता है। उसी प्रकार मन से आत्मा में समवेत (समवाय सम्बन्ध से रहने वाले) सुख, दुःखादि का ग्रहण होने पर भी 'संयुक्तसमवाय' सन्निकर्ष होता है।

घट के परिणाम, संख्या आदि गुणों को ग्रहण करने में चतुष्टयसन्निकर्ष को अतिरिक्त कारण माना जाता है- **(संयुक्तसमवाय) चतुष्टयसन्निकर्ष-**

इन्द्रियावयवैः अर्थावयविनाम्	- इन्द्रिय अवयव अर्थावयवी
इन्द्रियावयविनामर्थावयवानाम्	- इन्द्रिय अवयवी अर्थावयव
इन्द्रियावयवैरर्थावयवानाम्	- इन्द्रिय अवयव अर्थावयव
अर्थावयविनामिन्द्रियावयविनाम्	- इन्द्रिय अवयवी अर्थावयवी

3. संयुक्तसमवेतसमवाय-

जब चक्षुरिन्द्रिय से 'घटरूप' में समवेत **'रूपत्व'** आदि जाति का ग्रहण होता है, तो इनका सन्निकर्ष 'संयुक्तसमवेतसमवाय' कहलाता है। उसी प्रकार मन से आत्मा में समवेत (समवाय सम्बन्ध से रहने वाले) सुख, दुःखादि की जाति का ग्रहण होने पर 'संयुक्तसमवेतसमवाय' सन्निकर्ष कहलाता है।

4. समवाय-

जब 'श्रोत्रेन्द्रिय' से **'शब्द'** का ग्रहण होता है तब 'श्रोत्र' इन्द्रिय है और 'शब्द' अर्थ है। और उन दोनों का सन्निकर्ष सम्बन्ध 'समवाय' ही होता है। **श्रोत्र- "कर्णशष्कुल्यवच्छिन्नं नभः श्रोत्रम्"**। कर्णविवर से अवच्छिन्न (घिरा हुआ) 'आकाश' ही श्रोत्र है। और 'शब्द' आकाश का 'गुण' है, और 'गुण' तथा 'गुणी' का 'समवाय' सम्बन्ध होता है।

5. समवेतसमवाय-

शब्द में समवेत **'शब्दत्व'** जाति का प्रत्यक्ष होने पर 'समवेतसमवाय' सन्निकर्ष होता है।

6. विशेषण-विशेष्यभाव-

चक्षु से संयुक्त भूतल में **'घटाभाव'** का ग्रहण होने पर 'विशेषण-विशेष्यभाव' सन्निकर्ष होता है। उस समय 'चक्षु' से संयुक्त हुए भूतल का **विशेषण** 'घटाभाव' है, और **विशेष्य** 'भूतल' है। इसी प्रकार 'मन' से संयुक्त हुए 'आत्मा' में 'सुखादि' गुणों का अभाव अर्थात् 'मैं सुखरहित हूं' इस रूप में ज्ञात होता है, तब मन से संयुक्त हुए आत्मा में 'सुखाभाव' 'समवाय' सम्बन्ध से 'विशेषण' होता है। अतः आत्मा में सुखाभाव का प्रत्यक्ष 'विशेषण-विशेष्यभाव' सन्निकर्ष के द्वारा होता है। 'श्रोत्र' में 'समवाय' सम्बन्ध से रहने वाले **'गकार'** में **'घत्व'** आदि जाति का अभाव ग्रहीत होने पर घत्वाभाव **'समवेतसमवाय'** सम्बन्ध से विशेषण होता है। उन दोनों का ग्रहण 'विशेषण-विशेष्यभाव' सन्निकर्ष के द्वारा होता है।

घटाभाव - संयुक्तविशेष्यविशेषणभाव सन्निकर्ष।
घटरूपाभाव- संयुक्तसमवेतविशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष।
घटरूपत्वाभाव- संयुक्तसमवेतसमवेतविशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष।
क में खत्वाभाव- श्रोत्रसमवेतविशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष।
कत्व में खत्वाभाव-श्रोत्रसमवेतसमवेतविशेषणविशेष्यभाव सन्निकर्ष।

'अभाव' तथा **'समवायसम्बन्ध'** दोनों का इन्द्रिय से **"विशेषणविशेष्यभाव"** सन्निकर्ष द्वारा प्रत्यक्ष किया जाता है। **संयोग,संयुक्तसमवाय,संयुक्तसमवेतसमवाय,समवाय,समवेतसमवाय** इन पञ्चविध सम्बन्धों में से किसी एक से सम्बन्धित **'विशेषणविशेष्यभाव-'**

के द्वारा ही **'अभाव'** का प्रत्यक्ष इन्द्रिय के द्वारा ही होता है। केवल 'विशेषण-विशेष्यभाव' सन्निकर्ष से ही कभी भी अभाव का ग्रहण नहीं होता है ।

'समवाय' का ग्रहण केवल -**"संयोग, संयुक्तसमवाय, समवाय"** इन तीनों में से किसी एक सम्बन्ध से सम्बन्धित **'विशेषणविशेष्यभाव'** सन्निकर्ष के द्वारा होता है। समवाय सम्बन्ध रहता है -**द्रव्य,गुण,कर्म** में।**'द्रव्य'** हमेशा **'समवायिकारण'** होता है।

वाह्येन्द्रिय में केवल **चक्षु', त्वक्'** से ही पटादि द्रव्यों का प्रत्यक्ष होता है। अन्तरिन्द्रिय में **'मन'** के द्वारा **'आत्मा'** का प्रत्यक्ष होता है।

चक्षु', 'त्वक् ''मन' ये तीन इन्द्रियां ही **'संयोगसन्निकर्ष'** के द्वारा अर्थ ' का प्रकाश करती हैं।

षड्विधसन्निकर्षों का संक्षेप में वर्णन-

"अक्षजा प्रमितिर्द्वेधा सविकल्पाविकल्पिका।
करणं त्रिविधं तस्याः सन्निकर्षश्च षड्विधः॥
घट-तन्नील-नीलत्व-शब्द-शब्दत्वजातयः।
अभावसमवायौ च ग्राह्याः सम्बन्धषद्वतः"॥

॥अनुमान प्रमाण॥

लक्षण- "लिङ्गपरामर्शोऽनुमानम्"

'लिङ्गपरामर्श' को ही अनुमान कहते है । क्योंकि जिससे **'अनुमिति'** (अनु=पश्चात्, **मितिः**=प्रमितिः) की जाती है, उसे 'अनुमान' कहते हैं । 'लिङ्गपरामर्श' से अनुमिति की जाती है, इसलिये 'लिङ्गपरामर्श' को "अनुमान" कहते हैं । और वह 'लिङ्गपरामर्श' 'धूमादि' का ज्ञान ही है । क्योंकि वह अनुमिति के प्रति कारण है । उससे अनुमिति की जाती है । 'अग्नि' आदि का ज्ञान 'अनुमिति' है । और 'धूम' आदि का ज्ञान, उस 'अग्निज्ञानरूप अनुमिति' का करण है ।

लिङ्ग-

लक्षण- "व्याप्तिबलेनार्थगमकं लिङ्गम्"।

'व्याप्ति' के आधार पर अर्थ का जो बोधक होता है, उसे **'लिङ्ग'** कहते हैं । **जैसे**- 'धूम', 'अग्नि' का लिङ्ग है । जहाँ 'धूम' होता है, वहाँ अग्नि होती है । इस **'साहचर्यनियम'** को **'व्याप्ति'** कहते हैं। उस 'व्याप्ति' का निश्चयात्मकज्ञान होने पर ही धूम, अग्नि का ज्ञान करा पाता है । अतः 'व्याप्ति' के वल पर 'अग्नि' का अनुमापक होने से 'धूम' को अग्नि का लिङ्ग कहते हैं ।

परामर्श-

"लिङ्गस्य तृतीय ज्ञानं परामर्शः"।

'धूम' रूप लिङ्ग का 'तृतीय' ज्ञान 'परामर्श' शब्द से कहा जाता है ।

जैसे- प्रथमतः महानस (पाकशाला) में बार-बार 'धूम' को देखता हुआ 'वह्नि' को देखता है । अर्थात् 'धूम' और 'वह्नि' का अनेक बार सहचारदर्शन होता है । बार-बार सहचारदर्शन से 'धूम' और 'वह्नि' के स्वाभाविक सम्बन्ध **(व्याप्ति)** का निश्चय करता है। अर्थात् जहाँ-जहाँ धूम होता है, वहाँ-वहाँ अग्नि होता है ऐसा समझता है ।

उपाधि-

'मैत्रीतनयत्व' के साथ 'श्यामत्व' के सम्बन्ध में 'औपाधिक' सम्बन्ध है। **'शाकादिअन्नपरिणाम'** इस उपाधि के कारण ही उन (मैत्रीतनयत्व और श्यामत्व) दोनों में सम्बन्ध दिखाई दे रहा है । **'प्रयोजक'** को ही **'उपाधि'** कहा जाता है ।

उपाधि के दो प्रकार-

(1) योग्य (प्रत्यक्षयोग्य) (2) अयोग्य (प्रत्यक्ष अयोग्य) 'हिंसात्व' के साथ 'अधर्मसाधनत्व' के सम्बन्ध में उपाधि-**'निषिद्धत्व'**

'उपाधि' के 'अभाव' का निश्चय **'तर्कसहकृत'** और **'अनुपलब्धि'** युक्त प्रत्यक्ष से ही हो जाता है।

धूमरूप लिङ्ग के तीन ज्ञान-

1. पाकशाला में अग्नि-धूम दर्शन। **(वह्निव्याप्यो धूमः)**
2. पर्वत पर धूम देखना (व्याप्तिस्मरण) (धूमो वह्निव्याप्तिः)
3. पर्वत वह्नि से युक्त है (लिङ्गपरामर्श ज्ञान) **(वह्निव्याप्यधूमवानयं पर्वतः)**

'लिङ्गपरामर्शरूप' तृतीय ज्ञान के दो अंश हैं- (1) व्याप्ति (2) पक्षधर्मता, इन दो अंशों के कारण ही यह ज्ञान 'अनुमिति' का जनक होता है ।

1. व्याप्ति-

लक्षण- "यत्र-यत्र धूमस्तत्रतत्राग्निरितिसाहचर्यनियमो व्याप्तिः"।

जहां जहां धूम है, वहां-वहां अग्नि है, इस प्रकार धूम और अग्नि का साहचर्य सम्बन्ध व्याप्ति कहलाता है । धूम और अग्नि का सम्बन्ध=**स्वभाविक, "स्वभाविकश्च सम्बन्धो व्याप्तिः"।**

2. पक्षधर्मता-

लक्षण- "व्याप्यस्य पर्वतादिवृत्तित्वं पक्षधर्मता"।

व्याप्य (धूम) हेतु का पर्वत (पक्ष) पर रहना ही पक्षधर्मता होती है ।

अनुमान के दो प्रकार-

1. स्वार्थानुमान 2. परार्थानुमान ।

1. स्वार्थानुमान-

स्वयं के ज्ञान का हेतुभूत जो अनुमान होता है, उसे "स्वार्थानुमान' कहते हैं । **जैसे-** कोई आदमी 'महानस' (पाकशाला) आदि अनेक जगह जाकर 'धूम' और 'अग्नि' के सहचार को देखता है, और उससे धूम में अग्नि की व्याप्ति का निश्चय करता है, उसके बाद जब कभी पर्वत के समीप पहुँचता है, तब उसे पर्वत पर अग्नि है या नहीं इस प्रकार का सन्देह होता है, किन्तु जब वहाँ मूलस्था से आकाश तक अविच्छिन्नरूप में फैले हुए धूम को देखता है, तब उस धूम में पूर्व ग्रहण की हुई अग्नि की व्याप्ति के संस्कार उदबुद्ध हो उठते हैं। उन संस्कारों के उद्बुद्ध हो जाने से **"यत्र धूमः तत्र अग्नि"**- जहाँ धूम होता है वहाँ अग्नि होती है। इस आकार में 'धूम में अग्नि की व्याप्ति का उसे स्मरण होता है, तदनन्तर पर्वत पर 'अग्निव्याप्य' के रूप में धूम दिखाई देता है। अर्थात् **'अग्निव्याप्यधूमवानयं पर्वत'** यह ज्ञान होता है, तब **"पर्वतो वह्निमान्"** इस प्रकार की 'पर्वत' पर अग्नि की अनुमिति होती है। इस प्रकार से, 'अग्निरूप साध्य' की अनुमिति उसी को हो पाती है, जिसे पर्वतरूप पक्ष में हेतु का 'साध्यव्याप्य' रूप से अर्थात् **'वह्निव्याप्यो धूमः'** इस आकार में हेतु (धूम) का निश्चय हुआ रहता है। यही स्वार्थानुमान का स्वरूप है ।

2. परार्थानुमान-

जब कोई व्यक्ति स्वयं धूम से अग्नि का अनुमान करके, उस अनुमित अग्नि का ज्ञान किसी अन्य मनुष्य को कराने के लिये **'पञ्चावयव वाक्य'** का प्रयोग करता है, तब उसे 'परार्थानुमान' कहते हैं । **जैसे-**

1. **'प्रतिज्ञा'- "पर्वतोवह्निमान्"**- पर्वत वह्निमान् है ।
2. **'हेतु'- "धूमवत्वात्"** - क्योंकि वह धूमवान् है ।
3. **'उदाहरण'- "यथा महानसम्"**जो-जो धूमवान् होता है, वह-वह वह्निमान् होता है, **जैसे-** महानस (रसोई-घर)
4. **'उपनय'- "तथा चायम्"** यह (पर्वत) भी उसी प्रकार का (धूमवान्) है । इस उपनय को **"वह्निव्याप्य-धूमवांश्चायम्"** के आकार में कहा जाता है। इसी को संक्षेप में 'तथा चायम के आकार में कह दिया है। इस उपनय में 'व्याप्ति' और 'पक्षधर्मता' दोनों की प्रतीति होती है । इसलिये इसे **'व्याप्ति-विशिष्ट-पक्षधर्मताज्ञान'** अथवा **'लिङ्गपरामर्श'** या **'अनुमान'** भी "कहते हैं ।
5. **'निगमन'- "तस्मात्तथा"** इसलिये यह अग्निमान् है ।

व्याप्तिः-

1. अन्वव्यतिरेक व्याप्ति-

"पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्" इस परार्थानुमान में 'पर्वत' पर **'साध्य'** वह्निमत्त्व' को **'सिद्ध'** किया जाता है । यहां **'हेतु'** 'धूमवत्त्व' है, और यह 'अन्वय-व्यतिरेकी' हेतु है । क्योंकि 'अन्वय' तथा 'व्यतिरेक' दोनों व्याप्तियों से वह हेतु युक्त है । अर्थात् उक्त हेतु में दोनों प्रकार की व्याप्तियाँ 'अन्वयव्याप्ति' और 'व्यतिरेकव्याप्ति' घटित हुई उपलब्ध होती हैं । और घटित हुई व्याप्ति के उदाहरण भीं मिलते हैं। **जैसे - "यत्र यत्र धूमवत्त्वं तत्र तत्राग्निमत्त्वं यथा महानसे"** अर्थात् जहाँ-जहाँ 'धूमवत्त्व' रहता है, वहाँ-वहाँ 'अग्निमत्त्व' रहता है, जैसे- 'महानस' में । यह 'अन्वय-व्याप्ति' है । क्योंकि महानस में धूम और अग्नि दोनों विद्यमान रहते हैं । इसी प्रकार **"यत्राग्निर्नास्ति तत्र घूमोऽपि नास्ति यथा महाह्रदः"**। जहाँ अग्नि नहीं होती, वहाँ धूम भी नहीं होता, जैसे- महाह्रद यानी जलाशय में यह 'व्यतिरेकव्याप्ति' है । क्योंकि महाह्रद में धूम और अग्नि का 'अभाव' (व्यतिरेक) रहता है । यहां 'महानस' का उदाहरण देकर 'अन्वयव्याप्ति' बतायी गयी है, और महाह्रद का उदाहरण देकर 'व्यतिरेक-व्याप्ति' बतायी गयी है। इसीलिये **'धूमवत्त्व'** हेतु को **'अन्वय-व्यतिरेकी'** कहा गया है ।

उदाहरण- "पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्"।

अन्वयव्याप्ति -"तत्सत्त्वे तत्सत्त्वं"

"यत्र यत्र धूमवत्त्वं तत्र तत्राग्निमत्त्वं यथा महानसे"

साधन (धूम)=व्याप्य, साध्य (वह्नि)=व्यापक ।

व्यतिरेकव्याप्ति -"तदभावे तदभावः"

"यत्राग्निर्नास्ति तत्र घूमोऽपि नास्ति यथा महाह्रदः"

साध्याभाव (वह्न्याभाव)=व्याप्य, साधनाभाव (धूमाभाव)=व्यापक ।

"व्याप्यव्यापकभावो हि भावयोर्यादृगिष्यते ।
तयोरभावयोस्तस्माद् विपरीतः प्रतीयते ॥
अन्वये साधनं व्याप्यं साध्यं व्यापकमिष्यते ।
तदभावोऽन्यथा व्याप्यो व्यापकः साधनात्ययः ॥
व्याप्यस्य वचनं पूर्वं व्यापकस्य ततः परम ।
एवं परीक्षिता व्याप्तिः स्फुटी भवति तत्त्वतः"॥

इसी प्रकार 'अनित्यत्वादि' साध्यों के अनुमापक 'कृतकत्वादि' अन्य हेतु भी 'अन्वयव्यतिरेकि' होते हैं ।

उदाहरण- "शब्दोऽनित्यः कृतकत्वात्, घटवत्"

अन्व्य व्याप्ति- "यत् कृतकं तदनित्यम्"

व्यतिरेकव्याप्ति- "यत्र-यत्र अनित्यत्वाऽभावः तत्र-तत्र कृतकत्वाऽभावः"

2. केवलव्यतिरेकी -

जिसमें केवल 'व्यतिरेकव्याप्ति' ही होती है, 'अन्वयव्याप्ति' नहीं होती वह 'केवलव्यतिरेकी' कहलाता है ।

उदाहरण- "जीवच्छरीरं सात्मकं प्राणादिमत्वात्"।

साध्य- सात्मकत्वं, **साधन-** प्राणादिमत्वं, **पक्ष-** जीवच्छशरीरत्व।

जीवित शरीर सात्मक (आत्मा से युक्त) है, प्राणादिमान होने से ।

व्यतिरेकव्याप्ति- "यत् सात्मकं न भवति, तत् प्राणादिमत् न भवति, यथा घटः"। **"यत् प्राणादिमत् तत् सात्मकं"** यहां पर इस प्रकार की 'अन्वयव्याप्ति' का अभाव होने से यहां केवल 'व्यतिरेकव्याप्ति' है ।

जब कोई लक्षण हेतु के रूप में प्रयोग किया जाता है तब वह भी 'केवलव्यतिरेकी' हेतु कहलाता है ।

उदाहरण- "पृथिवीलक्षणं गन्धवत्वम्"। (गन्धवत्व पृथ्वी का लक्षण है।)

व्यतिरेकव्याप्ति- "यत्र पृथिवीति व्यवह्रियते तत्र गन्धवत् यथापः"।

प्रमाण का लक्षण भी 'केवलव्यतिरेकी' हेतु होता है ।

"प्रत्यक्षादिकं प्रमाणमिति व्यवहर्तव्यं प्रमाकरणत्वात्"।

साध्य – व्यवहार, **साधन-** प्रमाकरणत्व, **पक्ष-** प्रत्यक्षादित्व।

प्रत्यक्ष, अनुमान आदि का प्रमाण शब्द से व्यवहार करना चाहिये, क्योंकि वे सब प्रमा के करण हैं ।

व्यतिरेकव्याप्ति- "यत्प्रमाणमिति न व्यवह्रियते तत्र प्रमाकरणं यथा प्रत्यक्षाभासादि"।

यहां 'प्रमाणत्व' को 'साध्य' मानने पर **'साध्याभेद'** नामक दोष होगा।

3. केवलान्वयी -

"कश्चिदन्यो हेतुः केवलान्वयी"। 'अन्वव्यतिरेकि' और 'केवलव्यतिरेकि' हेतुओं के अतिरिक्त कोई हेतु 'केवलान्वयी' कहलाता है ।

उदाहरण- "शब्दोऽभिधेयः प्रमेयत्वात्"। शब्द अभिधेय है, प्रमेय होने से।

साध्य- अभिधेयत्व, साधन- प्रमेयत्व, **पक्ष-** शब्द,

'यत् प्रमेयं तद् अभिधेयं यथा घटः'। जो प्रमेय होता है वह अभिधेय होता है जैसे- घट। 'तथा चाऽयं तस्मात् तथेति' यह शब्द भी उसी प्रकार का प्रमेय है, इसलिये वह वैसा अभिधेय है । **"यदभिधेयं भवति तत्प्रमेयमपि न भवति"**। यहां पर इस प्रकार की 'व्यतिरेक' व्याप्ति का अभाव है, क्योंकि इस संसार के सारे पदार्थों में 'ज्ञेयत्व' और 'अभिधेयत्व' विद्यमान होता है ।

अनुमान के दो अङ्ग-

1. व्याप्ति 2. पक्षधर्मता ।

अन्वयव्यतिरेकी हेतु की पञ्चरूपोपपन्नता-

1. **पक्षसत्व-(धूमवत्वे हेतौ पर्वतः)** (हेतु का पक्ष में रहना)
2. **सपक्षसत्व-** (पक्ष में साध्य का निश्चय हो जाना) **(तत्रैव महानसम)**
3. **विपक्षव्यावृत्ति-** (हेतु की विपक्ष से व्यावृत्ति) **(तत्रैव महाह्रदः)**
4. **अबाधितविषयत्व-**(साध्य बाधित न हो)
5. **असत्प्रतिपक्षत्व-**(हेतु का प्रतिपक्ष न होना)

'अन्वयव्यतिरेकी' हेतु धूमवत्त्व के समान पांच रूपों से युक्त होने पर सद्धेतु कहलाता है । 'केवलान्वयी' हेतु के चार रूप होते हैं । उसमें **'विपक्षव्यावृत्ति'** नहीं रहती, वहां पर उसका कोई विपक्ष नहीं रहता। 'केवलव्यतिरेकी' में भी चार रूप होते हैं। वह **'सपक्ष'** में विद्यमान नहीं रहता क्योंकि वहां सपक्ष है ही नहीं । सारे लक्षण भी 'केवलव्यतिरेकी' ही होते हैं।**"लक्षणान्यपि सर्वाणि केवलव्यतिरेकि एव"।**

पक्ष- "सन्दिग्धसाध्यधर्मा धर्मी पक्षः"। जिस धर्मी में 'साध्य' रूप धर्म सन्दिग्ध होता है, उस धर्मी को पक्ष कहते हैं । **जैसे-** धूम से अग्नि का अनुमान करने पर **'पर्वत'** पक्ष होता है ।

सपक्ष- "सपक्षस्तु निश्चितसाध्यधर्माधर्मी"। जिस धर्मी में 'साध्य' रूप धर्म निश्चित होता है, उसे सपक्ष कहते हैं । **जैसे-** धूमहेतुक अग्नि के अनुमान में **'महानस'** सपक्ष है, क्योंकि अनुमान करने के पूर्व भी साध्य अग्नि का निश्चय रहता है ।

विपक्ष- "विपक्षस्तु निश्चितसाध्याभाववान् धर्मी"। जिस धर्मी में साध्य का अभाव निश्चित रहता है, उसे विपक्ष कहते हैं। **जैसे-** उसी धूमहेतुक अग्नि के अनुमान में 'महाह्रद' विपक्ष है, क्योंकि अनुमान करने के पूर्व में भी साध्य अग्नि की अविद्यमानता निश्चित रहती है ।

॥हेत्वाभास॥

"हेतुवद् आभासन्ते इति हेत्वाभासाः" जो वास्तव में हेतु न होते हुए भी हेतु के समान भासित होता है, उसे हेत्वाभास कहते हैं । अर्थात् दोषयुक्त दुष्टहेतु ही हेत्वाभास है । दोषयुक्त होने के कारण वह हेतु नहीं कहा जाता है अतः वह 'हेत्वाभास' कहलाता है । हेत्वाभास पांच प्रकार के होते हैं-

1. असिद्ध 2. विरुद्ध 3. अनैकान्तिक

4. प्रकरणसम 5. कालात्ययापदिष्ट

1. असिद्ध

लक्षण- "लिङ्गत्वेनाऽनिश्चितो हेतुरसिद्धः"।

जिस हेतु में लिङ्गत्व निश्चित न हो, अर्थात् **'व्याप्ति'** और **'पक्षधर्मता'** दोनों अथवा दोनों में से कोई एक सिद्ध न हो, वह **'असिद्ध'** नाम का हेत्वाभास कहलाता है । असिद्ध तीन प्रकार का है-

(1) आश्रयासिद्ध-

जिस हेतु का आश्रय (पक्ष) सिद्ध न हो, उसे आश्रयासिद्ध कहते हैं ।

उदाहरण- "गगनारविन्दं सुरभि, अरविन्दत्वात्, सरोजारविन्दवत्" ।

साध्य- सुरभित्व, **साधन-** अरविन्दत्व, **पक्ष-** गगनारविन्द,

आकाश कमल सुगन्ध से युक्त है, क्योंकि वह भी कमल है, तालाब के कमल के समान। आकाश पर कभी भी कोई पुष्प नहीं खिलता है, अतः यहां पर **'अरविन्दत्वात्'** (हेतु) का आश्रय **'गगनारविन्द'** (पक्ष) को बनाया गया है । आकाश में पुष्प न दिखाई देने के कारण यह 'पक्ष' आश्रय से ही असिद्ध है । अतः यह आश्रयासिद्ध हेत्वाभास का उदाहरण है ।

(2) स्वरूपासिद्ध-

जिस हेतु का अपने आश्रय (पक्ष) में अस्तित्व ही न हो उसे स्वरूपासिद्ध कहते हैं ।

उदाहरण- "शब्दोऽनित्यः चाक्षुषत्वात्, घटवत्"।

साध्य- अनित्यत्व, **साधन-** चाक्षुषत्व, **पक्ष-** शब्दः,

शब्द अनित्य है क्योंकि वह चक्षु से ग्रहण करने योग्य है, घट के समान। यहां पर **'चाक्षुषत्व'** (हेतु) **'शब्द'** (पक्ष) में नहीं है, क्योंकि शब्द आकाश का गुण है और उसका ग्रहण केवल 'श्रोत्रेन्द्रिय' से ही होता है । यहां पर 'चाक्षुषत्व' यह हेतु स्वरूपतः ही असिद्ध है ।

(3) व्याप्यत्वासिद्ध-

जिस हेतु में 'व्याप्ति' सिद्ध न हो उस हेतु को 'व्याप्यत्वासिद्ध' कहते हैं। व्याप्यत्वासिद्ध दो प्रकार का होता है ।

1. व्याप्तिग्राहक प्रमाणाभावात्-

यह व्याप्तिग्राहक प्रमाण का अभाव होने से होता है ।

उदाहरण- "शब्दः क्षणिकः सत्वात्, यत् सत् तत् क्षणिकं, यथा जलधरपटलं"

साध्य- क्षणिकत्व, **साधन-** सत्व, **पक्ष-** शब्दः,

अर्थात् शब्द क्षणिक है, क्योंकि वह सत्व है, जैसे- मेघसमुदाय । यहां पर शब्द की सत्ता (साधन) होने से क्षणिकत्व (साध्य) की सिद्धि न होने पर उचित व्याप्ति का ग्रहण न होने से यहां व्याप्यत्वासिद्ध हेत्वाभास है।

2. उपाधिसद्भावात्-

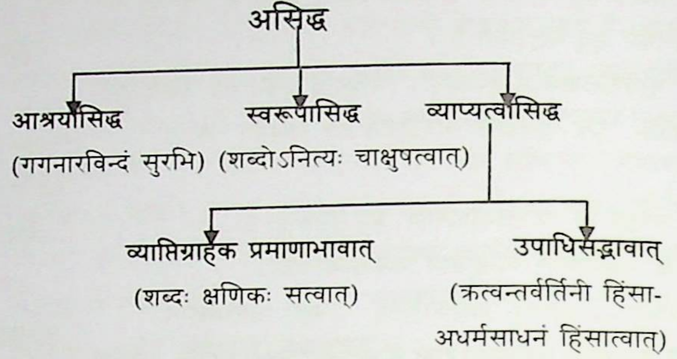
इसमें उपाधि के रहने से 'व्याप्ति' की सिद्धि नहीं हो पाती ।

उदाहरण- "क्रत्वन्तवर्तिनी हिंसा अधर्मसाधनं, हिंसात्वात्, क्रतुबाह्यहिंसावत्"।

साध्य- अधर्मसाधनत्व, **साधन-** हिंसात्व, **पक्ष-** क्रत्वन्तवर्तिनी हिंसा,

अर्थात् यज्ञ में होने वाली हिंसा 'अधर्म' का साधन है, हिंसा होने से, यज्ञ के बाहर की जाने वाली हिंसा के समान । यहां पर **'अधर्मसाधनत्व'** रूप 'साध्य' की सिद्धि करने में **'हिंसात्व'** हेतु कारण नहीं है, अपितु यहां पर **'शास्त्रनिषिद्धत्व'** उपाधि ही उसमें कारण (प्रयोजक) है । अतः यहां पर उपाधि का सद्भाव होने से व्याप्ति की सिद्धि नहीं हो पा रही है। इसलिये यह व्याप्यत्वासिद्ध हेत्वाभास का द्वितीय उदाहरण है ।

उपाधि- "साध्यव्यापकत्वे सति साधनाव्यापकः उपाधिः" 'साध्य' का **'व्यापक'** होने पर भी जो **'साधन'** का **'अव्यापक'** धर्म हो, वह उपाधि कहलाता है ।



2. विरुद्ध

लक्षण- "साध्यविपर्ययव्याप्तो हेतुर्विरुद्धः"

साध्य के विपर्यय अर्थात् विपरीत (अभाव) से व्याप्त हुए हेतु को 'विरुद्ध' हेत्वाभास कहते हैं ।

उदाहरण- **"शब्दो नित्यः कृतकत्वादात्मवत्"।**

साध्य- नित्यत्व, **साधन-** कृतकत्व, **पक्ष-** शब्दः ।

शब्द नित्य है क्योंकि वह कृतक (जन्य) है, जैसे- आत्मा । इस अनुमान में **'कृतकत्व'** (हेतु) **'नित्यत्व'** रूप (साध्य) के विपरीत (अभावरूप) **'अनित्यत्व'** से व्याप्त है, अतः यहां विरुद्ध हेत्वाभास है ।

3. सव्यभिचार (अनैकान्तिक)

लक्षण- "सव्यभिचारोऽनैकान्तिकः"

'सव्यभिचार' हेतु अनैकान्तिक हेत्वाभास है । जहां 'साध्य' का 'हेतु' 'साध्य' के साथ नियमतः नहीं रहता, अपितु 'साध्याभाव' के साथ भी रहता है, उस हेतु को 'अनैकान्तिक' कहते हैं । सव्यभिचार हेत्वाभास दो प्रकार का है-

1. साधारण- "पक्षसपक्षविपक्षवृत्तिः साधारणः"। जो पक्ष, सपक्ष, विपक्ष, इन तीनों में रहता है उसे साधारण अनैकान्तिक हेतु कहते हैं।

उदाहरण- **"शब्दो नित्यः प्रमेयत्वात् व्योमवत्"**

साध्य- नित्यत्व, **साधन-** प्रमेयत्व, **पक्ष-** शब्द ।

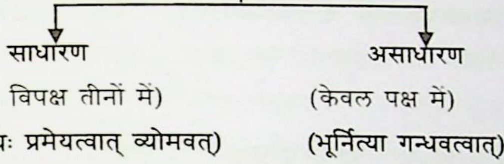
शब्द नित्य है, क्योंकि वह प्रमेय है, जैसे- आकाश । इस अनुमान में **'प्रमेयत्व'** हेतु साधारण अनैकान्तिक है, क्योंकि वह **'नित्य'** पक्ष या सपक्ष (आकाशादि) और **'अनित्य'** विपक्ष (घटपटादि) तीनों में रहता है । इसलिये यह साधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास कहलाता है ।

2. असाधारण- "सपक्षाद् विपक्षाद् व्यावृत्तो यः पक्ष एव वर्तते सोऽसाधारणानैकान्तिकः"। जो सपक्ष और विपक्ष दोनों में न रहकर केवल पक्ष में ही रहता हो उसे असाधारण अनैकान्तिक हेतु कहते हैं।

उदाहरण- "भूर्नित्या गन्धवत्वात्"

साध्य- नित्यत्व, **साधन-** गन्धवत्व, **पक्ष-** भूः ।

भूमि नित्य है क्योंकि उसमें गन्ध है । इस अनुमानप्रयोग में **'गन्धवत्व'** (हेतु) **'सपक्ष'** (आकाशादि नित्यपदार्थ) तथा **'विपक्ष'** (जलादि अनित्य पदार्थ) दोनों से व्यावृत्त होकर केवल 'पक्ष' में रहता है । आकाशादि नित्य पदार्थों की **'गन्धवत्व'** इस हेतु से सिद्धि न होने से यह सद्धेतु नहीं है । अतः यह असाधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास कहलाता है ।



4. प्रकरणसम (सत्प्रतिपक्ष)

लक्षण- "यस्य हेतोः साध्यविपरीतसाधकं हेत्वन्तरं विद्यते"

जिस हेतु के साध्य के विपरीत अर्थ का साधक दूसरा हेतु विद्यमान रहता है, उसी को प्रकरणसम कहते हैं, इसी का दूसरा नाम सत्प्रतिपक्ष है।

उदाहरण- "शब्दोऽनित्यः नित्यधर्म रहितत्वाद"।

साध्य- अनित्यत्व, **साधन-** नित्यधर्म रहितत्त्व, **पक्ष-** शब्दः ।

शब्द अनित्य है, क्योंकि वह नित्य के धर्म से रहित है ।

"शब्दो नित्यः अनित्यधर्मरहितत्वात्"।

साध्य- नित्यत्व, **साधन-** अनित्यधर्म रहितत्त्व, **पक्ष-** शब्दः ।

शब्द नित्य है, क्योंकि वह अनित्य के धर्म से रहित है ।

इस प्रकार साध्य के विपरीत अर्थ का साधक दूसरा हेतु विद्यमान होने पर यहां प्रकरणसम हेत्वाभास है ।

5. बाधित -(कालात्ययापदिष्ट)

लक्षण- "पक्षे प्रमाणान्तरावधृतसाध्याभावो हेतुर्बाधितविषयः"।

जिस हेतु के पक्ष में किसी अन्य प्रबल प्रमाण से साध्याभाव निश्चित कर दिया जाता है, उस हेतु को 'बाधित विषय' या 'कालात्ययापदिष्ट' कहते हैं ।

उदाहरण- "अग्निः अनुष्णः कृतकत्वात् जलवत्"।

साध्य- अनुष्णत्व, **साधन-** कृतकत्व, **पक्ष-** अग्निः ।

अग्नि शीतल है, जन्य होने से, जल के समान । यहां पर **'कृतकत्व'** हेतु का साध्य **'अनुष्णत्व'** है, उसका अभाव अर्थात् उष्णत्व की उपलब्धि 'अग्नि' रूप 'पक्ष' में प्रत्यक्ष प्रमाण से निश्चित हो चुकी है । क्योंकि स्पार्शन प्रत्यक्ष से ही अग्नि में उष्णत्व का ज्ञान हो जाता है । इस प्रकार यह बाधित हेत्वाभास कहलाता है ।

॥उपमान प्रमाण॥

लक्षण-

"अतिदेशवाक्यार्थस्मरणसहकृतं गोसादृश्यविशिष्टपिण्डज्ञानमुपमानम्"

अतिदेश वाक्य के अर्थ का स्मरण करने के साथ **'गोसादृश्यविशिष्ट पिण्ड'** (गाय की समानता से युक्त शरीर) अर्थात् **'गवय'** का जो ज्ञान होता है, वही 'उपमान' प्रमाण कहलाता है । **जैसे-** गवय (नीलगाय) को ना जानने वाला व्यक्ति किसी आदमी से **'यथा गौस्तथा गवयः'** (जैसी गाय होती है वैसा ही गवय होता है) यह वाक्य सुनकर जब कभी वह वन में जाता है और **'यथा गौस्तथा गवयः'** इस वाक्य के स्मरण के साथ **'गोसादृश्यविशिष्ट पिण्ड'** गाय की समानता से युक्त आकृति को देखकर उस अतिदेश वाक्य के अर्थ का जब उसको स्मरण हो जाता है, तब उस वाक्यार्थ के स्मरणसहित जो उसे **'गोसादृश्यविशिष्ट पिण्ड'** का ज्ञान होता है, तब वही 'ज्ञान', **'उपमिति'** (संज्ञा-संज्ञिसम्बन्ध बोधरूप फ़ल) का **'करण'** कहलाता है । उसी ज्ञान को 'उपमान' प्रमाण कहते हैं । **'गोसादृश्यविशिष्ट पिण्ड'** का ज्ञान होने के बाद **'अयमसौ गवयशब्दवाच्यः'** यह आकृति ही **'गवय'** शब्द का वाच्यार्थ है । इस प्रकार से **'संज्ञा-संज्ञि-सम्बन्ध'** की जो प्रतीति होती है, वह प्रतीति ही उपमान प्रमाण का फ़ल है ।

उपमान के तीन प्रकार-

(1)सादृश्यविशिष्टपिण्डज्ञान (2) असाधारणविशिष्ट (3) वैधर्म्यविशिष्ट।

॥शब्द प्रमाण॥

लक्षण- "आप्तवाक्यं शब्दः"

आप्तपुरुष के वाक्य को 'शब्द' प्रमाण कहते हैं । जो पदार्थ जैसा है उस पदार्थ का वैसा ही उपदेश करने वाला पुरुष **'आप्त'** कहलाता है । और उसके वाक्य को **'शब्द'** प्रमाण कहा जाता है ।

वाक्य का लक्षण- "वाक्यं त्वाकाङ्क्षायोग्यतासन्निधिमतां पदानां समूहः"

आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति से युक्त पदसमूह को वाक्य कहते हैं।

आकाङ्क्षा- "गौरश्वः पुरुषो हस्ती" गाय, घोड़ा, मनुष्य, हाथी- ये पद वाक्य नहीं कहलाते, क्योंकि इन पदों में परस्पर आकांक्षा नहीं है ।

योग्यता- "वह्निना सिञ्चेत" अग्नि से सिंचन करे,- इस पदसमूह को भी वाक्य नहीं कह सकते क्योंकि अग्नि और सेचन में परस्पर अन्वित होने की योग्यता नहीं है ।

सन्निधि- इसी प्रकार एक-एक प्रहर के बाद एक साथ उच्चारण न किये गये **"गाम् आनय"** गाय को ले आओ इत्यादि पदसमूह में 'सन्निधि' के अभाव के कारण वाक्य नहीं कहा जा सकता है ।

पद का लक्षण- "पदं च वर्णसमूहः" वर्णसमुदाय को पद कहते हैं । यहां पर समूह का अर्थ है – एक ज्ञान का विषय होना

॥अर्थापत्ति प्रमाण॥

मीमांसक अथवा वेदान्तियों के अनुसार **'अर्थापत्ति'** भी एक पृथक् प्रमाण है । जिसका लक्षण इस प्रकार है - **"अनुपपद्यमानार्थदर्शनात् तदुपपादकीभूतार्थान्तरकल्पनम् अर्थापत्तिः"** अनुपपद्यमान अर्थ को देखकर उसके उपपादक अर्थ की कल्पना करना 'अर्थापत्ति' कहलाती है। जैसे- 'देवदत्त दिन में नहीं खाता है, परन्तु मोटा है' । यह देखने पर या सुनने पर उसके रात्रिभोजन की कल्पना कर ली जाती है क्योंकि दिन में न खाने वाले का मोटा होना, रात्रिभोजन किये बिना उपपन्न नहीं हो सकता । अतः अन्यथा (रात्रिभोजन के बिना) पीनत्व की अनुपपत्ति ही उसके रात्रिभोजन में प्रमाण है ।

इस प्रकार मीमांसक या वेदान्ती के कहने पर नैयायिक **'रात्रिभोजन'** को अनुमान का विषय मानता है । क्योंकि 'रात्रिभोजन' तो अनुमान का विषय है। अर्थात् अनुमान से ही उसके रात्रिभोजन करने का ज्ञान हो जाता है। इसलिये 'अर्थापत्ति' को अलग से स्वतंत्र प्रमाण मानने की आवश्यकता नहीं है । देवदत्त के रात्रिभोजन का अनुभान यह होगा- **"अयं देवदत्तः रात्रौ भुङ्क्ते दिवा अभुञ्जानत्वे सति पीनत्वात्"** यह देवदत्त रात में भोजन करता है **(प्रतिज्ञा)** । दिन में भोजन न करने पर भी पुष्ट रहने से **(हेतु)** । **"यस्तु रात्रौ न भुङ्क्ते, नाऽसौ दिवाभुञ्जानत्वे सति पीनः, यथा- दिवारात्रौ च अभुञ्जानः अपीनः, न चायं तथा, तस्मान्न तथेति"** जो रात में भोजन नहीं करता है और दिन में भी भोजन नहीं करता है वह पुष्ट नहीं हो पाता है । **जैसे-** न दिन और रात में भी भोजन न करने वाला दुबला होता है । यह **"व्यतिरेकव्याप्ति"** और उसका **(उदाहरण)** है। यह देवदत्त वैसा दुबला नहीं है **(उपनय)** । इसलिये वैसा यानी दिन और रात में भोजन न करने वाला नहीं है **(निगमन)** । अर्थात् रात्रि में भोजन करता है । इस प्रकार **"केवलव्यतिरेकी"** अनुमान द्वारा ही रात्रिभोजन की प्रतीति हो जाती है ।

॥अभाव॥

'भाट्ट मीमांसक' तथा 'वेदान्ती' 'अभाव' **(अनुपलब्धि)** प्रमाण को पृथक् मानते हैं । क्योंकि 'अभाव पदार्थ' (प्रमेय) के ज्ञान के लिये अभाव प्रमाण को अवश्य स्वीकार करना चाहिए । क्योंकि घटादि पदार्थ की अनुपलब्धि से घटादि पदार्थ के अभाव का ग्रहण होता है । परन्तु नैयायिकों के अनुसार यह बात नहीं है । 'यदि यहां पर घट होता तो भूतल की तरह दिखाई देता' । इस प्रकार तर्क के साथ अनुपलब्धि से युक्त **'प्रत्यक्षप्रमाण'** से ही 'अभाव' पदार्थ का ग्रहण हो जाता है । अतः नैयायिकों के अनुसार अभाव पदार्थ के ज्ञान के लिये अलग से 'अभावप्रमाण' मानने की कोई आवश्यकता नहीं है ।

प्रामाण्यवाद (अनुभवत्वम्)

'प्रमा' के **'करण'** को 'प्रमाण' कहते हैं- **'प्रमाकरणंप्रमाणम्'** 'प्रमा' का अर्थ है 'यथार्थ अनुभव' जैसे प्रमा' के **'करण'** अर्थ में 'प्रमाण' शब्द का प्रयोग होता है, वैसे ही 'प्रमा' के अर्थ में भी 'प्रमाण' शब्द का प्रयोग किया जाता है । 'प्रामाण्यवाद' में **'प्रामाण्य'** का अर्थ है **'प्रामाण का भाव'** अर्थात् **'ज्ञान की यथार्थकता'** । अतएव तर्कभाषाकार ने कहा है- **"ज्ञानस्य याथार्थ्यलक्षणम्प्रामाण्यम्"** 'ज्ञान की यथार्थकता' ही ज्ञान का 'प्रामाण्य' है। **"प्रामाण्यसम्बन्धी वादः-प्रामाण्यवादः"** अर्थात् 'ज्ञान' के 'प्रामाण्य' का विचार ।

विभिन्न दर्शनों के अनुसार प्रामाण्य तथा अप्रामाण्य-

सांख्य -	स्वतः प्रामाण्य,	स्वतः अप्रामाण्य
न्याय-वैशेषिक-	परतः प्रामाण्य,	परतः अप्रामाण्य
मीमांसा -	प्रामाण्य स्वतः,	अप्रामाण्य परतः
वेदान्त -	प्रामाण्य स्वतः	अप्रामाण्य परतः
बौद्ध -	प्रामाण्य परतः,	अप्रामाण्य स्वतः
जैन -	प्रामाण्य एवं अप्रामाण्य दोनों कहीं स्वतः कहीं परतः	

2. प्रमेय

लक्षण-

"आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनःप्रवृत्तिदोषप्रेत्यभावफ़लदुःखापर्गास्तु प्रमेयम्" (न्यायसूत्र 1.1.9)

प्रमेय- (12)

(1) आत्मा	(2) शरीर
(3) इन्द्रिय	(4) अर्थ
(5) बुद्धि	(6) मन
(7) प्रवृत्ति	(8) दोष
(9) प्रेत्यभाव	(10) फल
(11) दुःख	(12) अपवर्ग

(1) आत्मा

लक्षण- "आत्मत्वसामान्यवानात्मा"। 'आत्मत्व' जाति से जो युक्त हो उसे 'आत्मा' कहते हैं । वह देह, इन्द्रिय आदि से पृथक है । वह प्रत्येक

शरीर में पृथक्-पृथक् **'नित्य'** और **'विभु'** (व्यापक) है, अर्थात् **'महत्'** परिमाण वाला है। उसका ज्ञान **'मानस प्रत्यक्ष'** के द्वारा होता है । उसके प्रत्यक्ष होने के मतभेद में उसे बुद्धि आदि गुणलिङ्गक बताते हुए **'अनुमान'** प्रमाण से आत्मा की सिद्धि की जाती है । बुद्धि आदि छः अनित्य गुण हैं, तथापि वे केवल एक इन्द्रिय से ही ग्राह्य होने के कारण गुण हैं । 'गुण' 'गुणी' के आश्रित ही रहता है । **बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न** ये गुण पृथिव्यादि आठ द्रव्यों से भिन्न नवम द्रव्य **'आत्मा'** में ही रहते हैं। आत्मा विभु होने से आकाश के समान **'नित्य'** है। और प्रत्येक व्यक्ति के सुखादि भोग भिन्न-भिन्न होने से प्रत्येक शरीर में 'आत्मा' भिन्न-भिन्न है ।

(2) शरीर

लक्षण- "भोगायतनमन्त्यावयवि शरीरम्"। आत्मा के भोग का आश्रय अन्त्य अवयवी 'शरीर' है । **भोग- "सुखदुःखान्यतरसाक्षात्कारो भोगः"** सुख दुःख में से किसी एक का प्रत्यक्ष अनुभव भोग कहलाता है । चेष्टा का आश्रय भी शरीर कहलाता है । **चेष्टा- "चेष्टा तु हिताहितप्राप्तिपरिहारार्था क्रिया"** हित की प्राप्ति तथा अहित के परिहार के लिये की जाने वाली क्रिया 'चेष्टा' कहलाती है । केवल **'स्पन्दन'** (गतिमात्र) 'चेष्टा' नहीं कहलाती ।

(3) इन्द्रिय

लक्षण- "शरीरसंयुक्तं ज्ञानकरणमतीन्द्रियं इन्द्रियम्"। शरीर से अतीन्द्रिय ज्ञान के करण को 'इन्द्रिय' कहते हैं । इन्द्रियों की संख्या छः है-

इन्द्रिय	गुण
1. घ्राण	(गन्ध)
2. रसना	(रस)
3. चक्षु	(रूप)
4. त्वक्	(स्पर्श)
5. श्रोत्र	(शब्द)
6. मन	(सुख दुःखादि विशेष गुण)

(4) अर्थ

अर्थ शब्द से छः पदार्थ विवक्षित हैं ।

विधिमुखप्रमाणगम्यपदार्थ=(छः भावपदार्थ)

(1) **द्रव्य**	(2) **गुण**	(3) **कर्म**
(4) **सामान्य**	(5) **विशेष**	(6) **समवाय**

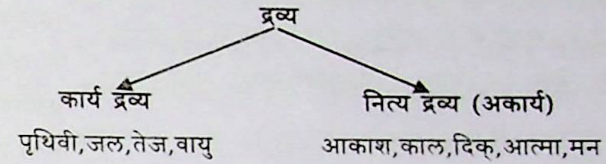
।**निषेधमुखप्रमाणगम्यपदार्थ-** (1) अभाव ।

1. द्रव्य

लक्षण- "समवायिकारणं द्रव्यम्"। गुणाश्रयो वा । जो किसी कार्य का 'समवायिकारण' बनता हो उसे 'द्रव्य' कहते हैं । अथवा जो गुण का आश्रय हो उसे द्रव्य कहते हैं । द्रव्य नौ हैं-

1. **पृथिवी**	2. **जल**	3. **तेज**
4. **वायु**	5. **आकाश**	6. **काल**
7. **दिक्**	8. **आत्मा**	9. **मन**

इन द्रव्यों के दो विभाग किये गये हैं-



पृथिवी,जल,तेज,वायु — आकाश,काल,दिक्,आत्मा,मन

कार्य द्रव्य-

1. पृथिवी-

लक्षण- "पृथिवीत्वसामान्यवती पृथिवी" पृथिवीत्व जाति से विशिष्ट जो द्रव्य हो उसे पृथिवी कहते हैं । वह कठोर तथा कोमल आदि अवयव संयोग विशेष से युक्त होती है । वह घ्राण (इन्द्रिय), शरीर, मिट्टी का पिण्ड, पाषाण, वृक्ष आदि के रूप में होती है ।

पृथिवी के गुण=(14)-

1. रूप	2. रस	3. गन्ध	4. स्पर्श
5. संख्या	6. परिमाण	7. पृथक्त्व	8. संयोग
9. विभाग	10. परत्व	11. अपरत्व	12. गुरुत्व
13. द्रवत्व	14. संस्कार (वेग,स्थितिस्थापक)		

पृथिवी दो प्रकार की है- **नित्य, अनित्य** । नित्य पृथिवी **'परमाणुरूपा'** है, अनित्य पृथिवी **'कार्यरूपा'** है। इन दोनों प्रकार की पृथिवी से सम्बद्ध **'रूप, रस, गन्ध, स्पर्श'** ये चारों गुण **'अनित्य'** और **'पाकज'** होते हैं। 'तेज के विलक्षण संयोग' को **'पाक'** कहते हैं। इस तेज संयोग रूप पाक से पार्थिव घटादिरूप पृथिवी में पूर्व रहने वाले रूप, रस, गन्ध और स्पर्श का नाश होकर उनके स्थान पर नवीन रूप, रस, गन्ध, स्पर्श उत्पन्न हो जाते हैं।

2. जल-

लक्षण- "अप्त्वसामान्ययुक्ता आपः" जो अप्त्व जाति से युक्त हो वह जल है । उसके अनेक रूप हैं। **जैसे**- रसनेन्द्रिय, जलीय शरीर, नदी, समुद्र, बर्फ, ओला (करक) आदि । इसमें गन्ध को छोडकर पृथिवी के सभी गुण रहते हैं, तथा जल में स्नेह गुण रहता है

जल के गुण=(14)-

1. रूप	2. रस	3. स्नेह	4. स्पर्श

5. संख्या	6. परिमाण	7. पृथक्त्व	8. संयोग
9. विभाग	10. परत्व	11. अपरत्व	12. गुरुत्व
13. द्रवत्व	14. संस्कार ।		

यह जल **नित्य** और **अनित्य** भेद से दो प्रकार का है । नित्यजल- **'परमाणुरूप'** होता है, तथा अनित्यजल- **'कार्यरूप'** होता है । नित्य (परमाणुरूप) जल के रूपादि गुण नित्य ही होते हैं, और अनित्य (कार्यरूप) जल के रूपादि गुण अनित्य होते हैं ।

3. तेज-

लक्षण- "तेजस्त्वसामान्यवान् तेजः"। तेजत्व जाति से युक्त तेजस् कहलाता है । यह तेजस् भी शरीर, इन्द्रिय, और विषय के भेद से तीन प्रकार का होता है । **जैसे-** चक्षु इन्द्रिय, तैजस् शरीर, सुवर्ण, अग्नि, विद्युत् आदि विषय ।

तेज के गुण=(11)-

1. रूप	2. स्पर्श	3. संख्या	4. परिमाण
5. पृथक्त्व	6. संयोग	7. विभाग	8. परत्व
9. अपरत्व	10. द्रवत्व	11. संस्कार ।	

वह तेज चार प्रकार का है-

1. उद्भूतरूपस्पर्शम्- सूर्य आदि का तेज तथा अग्नि आदि । तेज के विषयों में एक सुवर्ण भी है और उसका स्वरूप **'उद्भूताभिभूतस्पर्श'** है।

2. अनुद्भूतरूपस्पर्शम्- चक्षुरिन्द्रिय ।

3. अनुद्भूतरूपमुद्भूतस्पर्शम्- गर्मजल

4. उद्भूतरूपमनुद्भूतस्पर्श- प्रदीप की प्रभा ।

4. वायु-

लक्षण- "वायुत्वसम्बन्धवान् वायुः"। जो वायुत्व जाति से अभिसम्बन्ध हो उसे वायु कहते हैं । उसके त्वगिन्द्रिय, प्राण तथा वात आदि अनेक भेद हैं ।

वायु के गुण=(9)-

1. स्पर्श	2. संख्या	3. परिमाण	4. पृथक्त्व
5. संयोग	6. विभाग	7. परत्व	8. अपरत्व
9. वेग			

वह वायु **नित्य** और **अनित्य** रूप से दो प्रकार की होती है । **'परमाणुरूप'** वायु नित्य है और **'कार्यरूप'** वायु अनित्य है ।

कार्य द्रव्यों की उत्पत्ति का क्रम-

ईश्वरसंकल्प और जीवों के अदृष्ट के कारण दो परमाणुओं में होने वाली क्रिया के द्वारा संयोग होने पर अर्थात् दो परमाणु परस्पर मिलकर एक् **'द्व्यणुक'** उत्पन्न होता है । दोनों परमाणु उस द्व्यणुक के **'समवायिकारण'** हैं । उन दोनों परमाणुओं का **'संयोग'** **'असमवायिकारण'** और 'जीवों के अदृष्ट' आदि **'निमित्तकारण'** हैं । उसके अनन्तर 'तीन द्व्यणुकों' में ईश्वरेच्छा और जीवों के अदृष्ट से होने वाली क्रिया से संयोग होने पर अर्थात् **'तीन द्व्यणुक'** के मिलने से एक **'त्र्यणुक'** उत्पन्न होता है । 'तीनों द्व्यणुक' उस 'त्र्यणुक' के **'समवायिकारण'** हैं । उन तीनों द्व्यणुकों का **'संयोग'** 'त्र्यणुक' का **'असमवायिकारण'** है, और 'जीवों के अदृष्ट' आदि **'निमित्तकारण'** हैं । इसी प्रकार **'चार त्र्यणुकों'** से **'चतुरणुक'** उत्पन्न होता है । चतुरणुकों से दूसरा **'स्थूलतर द्रव्य'** तथा उन स्थूलतर द्रव्यों से अन्य **'स्थूलतम द्रव्य'** उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार क्रम से महास्थूल पृथिवी, महत्स्थूल जल, महत्स्थूल तेज, और महत्स्थूल वायु उत्पन्न होते हैं । पृथिव्यादि कार्य में रहने वाले 'रूप' आदि गुण अपने आश्रय (द्व्यणुकादि) के 'समवायिकारण' (परमाणु आदि) में रहने वाले रूपादि से गुणों से उत्पन्न होते हैं । क्योंकि यह नियम है- **"कारणगुणा हि कार्यगुणानारभन्ते"** अर्थात् कारण के गुण ही कार्य के गुणों को उत्पन्न करते हैं ।

नित्य द्रव्य-

5. आकाश-

लक्षण- "शब्दगुणकमाकाशम्" । शब्दगुण वाला आकाश होता है ।

आकाश के गुण=(6)-

1. शब्द	2. संख्या	3. परिमाण
4. पृथक्त्व	5. संयोग	6. विभाग ।

वह एक, नित्य और विभु है । और उसकी सिद्धि **'शब्द'** रूप 'लिङ्ग' (अनुमान से) होती है । अर्थात् आकाश का अनुमापक शब्द है ।

6. काल-

लक्षण- "दिक्विपरीतपरत्वापरत्वानुमेयः"। दिशा के 'परत्व-अपरत्व' से भिन्न 'परत्व-अपरत्व' से काल का अनुमान किया जाता है ।

काल के गुण=(5)-

1. संख्या	2. परिमाण	3. पृथक्त्व
4. संयोग	5. विभाग ।	

वह काल एक, नित्य तथा विभु है ।

7. दिक्-

लक्षण- "कालविपरीतपरत्वापरत्वानुमेया दिक्"। कालविपरीत परत्व-अपरत्व से जो अनुमेय होती है, उसे दिक् कहते हैं ।

दिक् के गुण=(5)-

1. संख्या	2. परिमाण	3. पृथक्त्व
4. संयोग	5. विभाग ।	

वह पूर्व पश्चिम आदि की प्रतीति से भी अनुमेय होती है ।

8. आत्मा-

लक्षण- "आत्मत्वाभसम्बन्धवान् आत्मा"। 'आत्मत्व' का सम्बन्ध जिसमें हो उसे 'आत्मा' कहते हैं । आत्मा एक स्वतन्त्र द्रव्य है, उसमें 'आत्मत्व' जाति है । सुख दुःखादि की विचित्रता के कारण वह आत्मा प्रत्येक आत्मा में भिन्न-भिन्न है । यह आत्मा **नित्य** और **विभु** है ।

आत्मा के गुण=(14)-

सामान्य गुण-	1. संख्या	2. परिमाण	3. पृथक्त्व
	4. संयोग	5. विभाग ।	
विशेष गुण-	1. बुद्धि	2. सुख	3. दुःख
	4. इच्छा	5. द्वेष	6. प्रयत्न
	7. धर्म	8. अधर्म	9. संस्कार ।

9. मन-

लक्षण- "मनस्त्वाभिसम्बन्धवान्मनः"। 'मनस्त्व' जाति से सम्बन्ध मन होता है । मन एक 'स्वातन्त्र्य' द्रव्य है । मन का परिमाण **'अणु'** माना गया है । यह मन **'आत्मा'** से संयुक्त रहता है और **'अन्तरिन्द्रिय'** है ।आत्मा के गुण सुखादि के प्रत्यक्ष का कारण मन होता है ।

मन के गुण=(8)-

1. संख्या	2. परिमाण	3. पृथक्त्व
4. संयोग	5. विभाग	6. परत्व
7. अपरत्व (दैशिक)	8. वेग	

2. गुण

लक्षण- "सामान्यवान् असमवायिकारणमस्पन्दात्मा गुणः"। जो सामान्यवान् होता हुआ सवायिकारण से भिन्न तथा कर्म से भिन्न **"असमवयिकारण"** हो उसे गुण कहते हैं । और वह गुण हमेशा 'द्रव्य' के आश्रित ही रहते हैं । गुणों की संख्या (24) है ।

1. रूप	2. रस	3. गन्ध	4. स्पर्श
5. संख्या	6. परिमाण	7. पृथक्त्व	8. संयोग
9. विभाग	10. परत्व	11. अपरत्व	12. गुरुत्व
13. द्रवत्व	14. स्नेह	15. शब्द	16. बुद्धि
17. सुख	18. दुःख	19. इच्छा	20. द्वेष
21. प्रयत्न	22. धर्म	23. अधर्म	24. संस्कार

3. कर्म

लक्षण- "चलनात्मकं कर्म" चलनात्मक क्रियावान् कर्म होता है । वह क्रिया गुण के समान द्रव्य में ही रहती है । वह कर्म **(पांच)** प्रकार का होता है-

1. उत्क्षेपण	- ऊर्ध्वगति
2. अपक्षेपण	- अधोगमन
3. आकुञ्चन	- सिकुडना
4. प्रसारण	- फ़ैलाना
5. गमन	- भ्रमण, रेचन, स्यन्दन आदि

4. सामान्य

लक्षण- "अनुवृत्तिप्रत्ययहेतुः सामान्यम्"। अनुवृत्ति अर्थात् प्रतीति/अनुगत प्रतीति के कारण को सामान्य (जाति) कहते हैं । वह जाति **द्रव्य, गुण, कर्म** में रहती है । वह दो प्रकार की है-

1. परसामान्य- परसामान्य को सत्ता कहा जाता है, क्योंकि उसका क्षेत्र (विषय) अधिक रहता है अर्थात् वह **'व्यापक'** कहलाता है । **द्रव्य, गुण, कर्म** तीनों में रहने वाला (वृत्ति) **'परसामान्य'** है, उसी को **'परसत्ता'** या **'सत्ता'** भी कहते हैं ।

2. अपरसामान्य- अपरसामान्य **द्रव्यत्व, गुणत्व, कर्मत्व** आदि हैं । क्योंकि इसका क्षेत्र (विषय) अल्प है । और वह **'अपरसामान्य'** 'व्यावृत्ति' (भेद) का हेतु होने से 'सामान्य' होते हुए भी **'विशेष'** रहता है । अर्थात् उसे **"सामान्य विशेष"** कहते हैं ।

5. विशेष

लक्षण- "विशेषो नित्यो नित्यद्रव्यवृत्तिः"। विशेष पदार्थ नित्य है और **नित्यद्रव्यों** (परमाणु आदि) में रहता है । वह केवल **'व्यावृत्तिबुद्धि'** (भेदप्रतीति) का हेतु है । आकाशादि पांच नित्यद्रव्य हैं । तथा पृथिवी, जल, वायु, तेज ये चार परमाणुरूप से ही नित्य होते हैं, और कार्यरूप से अनित्य होते हैं ।

6. समवाय

लक्षण- "अयुतसिद्धयोः सम्बन्धः समवायः" अयुतसिद्ध पदार्थों का समवाय सम्बन्ध होता है । अयुतसिद्ध पदार्थ (5) हैं-

1. अवयव-अवयवी	**2. गुण-गुणी**	**3. क्रिया-क्रियावान्**
4. जाति-व्यक्ति	**5. विशेष-नित्यद्रव्य**	

निषेधमुखप्रमाणगम्यपदार्थ-

7. अभाव

लक्षण- "निषेधमुखप्रीतिविषयः अभावः"। अर्थात् जो पदार्थ 'निषेधमुखप्रतीति' का विषय हो उसे अभाव कहते हैं । अभाव संक्षेप रूप से दो प्रकार का है- **1. संसर्गाभाव** **2. अन्योन्याभाव**

इनमें से 'संसर्गाभाव' तीन प्रकार का होता है । **1. प्रागभाव, 2. प्रध्वंसाभाव, 3. अत्यन्ताभाव ।**

1. प्रागभाव- 'कार्य' की उत्पत्ति से पूर्व उसका अपने 'कारण' में जो अभाव रहता है, उस अभाव को 'प्रागभाव' कहते हैं । **जैसे- 'पट'** रूप (कार्य) की उत्पत्ति होने से पूर्व अपने (कारण) **'तन्तुओं'** में रहने वाला **'पट'** रूप कार्य का अभाव । वह प्रागभाव अनादि होता है, क्योंकि उसकी उत्पत्ति नहीं होती ।

2. प्रध्वंसाभाव- उत्पन्न हुए **'कार्य'** का जो उसके **'कारण'** में अभाव होता है, उसे प्रध्वंसाभाव कहते हैं । **जैसे-** घडे के टूट जाने पर उसके कपालों में रहने वाला घटाभाव । **प्रध्वंस**=विनाश ।

3. अत्यन्ताभाव- तीनों कालों में रहनेवाला जो 'अभाव' है, उसे **'अत्यन्ताभाव'** कहते हैं । **जैसे-** वायु में रूप का अभाव है ।

4. अन्योन्याभाव- "तादात्म्यप्रतियोगिताकोऽभावः"। 'तादात्म्य' का जो विरोधी अभाव होता है, उसे 'अन्योन्याभाव' कहते हैं । तादात्म्य का अर्थ है- तद्रूपता, एकरूपता अर्थात् अभेद । दो वस्तुओं के तादात्म्य का अभाव ही 'अन्योन्याभाव' है । **जैसे- "घटः पटो न भवति"** ।

(5) बुद्धि

लक्षण- "बुद्धिरुपलब्धिर्ज्ञानं प्रत्यय इत्यादिभिः पर्यायशब्दैर्याऽभिधीयते सा बुद्धिः" बुद्धि, उपलब्धि, ज्ञान, प्रत्यय, आदि पर्याय शब्दों से आत्मा के जिस गुण को बताया जाता है, उसे बुद्धि कहते हैं । **"अर्थप्रकाशो वा बुद्धिः"** अथवा अर्थ के ज्ञान को बुद्धि कहते हैं । वह संक्षेप में दो प्रकार की है - **1. अनुभव 2. स्मरण** ।

इनमें अनुभव भी दो प्रकार का होता है- **1. यथार्थ 2. अयथार्थ**

1. यथार्थ- "यथार्थोऽविसंवादी" यथार्थ अनुभव अर्थ के अनुकूल रहने वाला होता है । और वह **प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द** प्रमाण से उत्पन्न होता है ।

2. अयथार्थ- "अयथार्थस्तु अर्थव्यभिचारी, अप्रमाणजः"। अयथार्थ अनुभव 'अर्थ' का व्यभिचारी होता है और 'अप्रमाण' से उत्पन्न होता है । वह तीन प्रकार का होता है- **1. संशय 2. तर्क 3. विपर्यय** । **"अतस्मितद्ग्रहः विपर्ययः"** 'अतत्' में **'तत्'** की ही प्रतीति होना **'विपर्यय'** अर्थात् **'भ्रम'** है । **जैसे-** शुक्ति में रजत का आरोप।

स्मरण भी दो प्रकार का होता है- **1. यथार्थ 2. अयथार्थ** । **'जागरित'** अवस्था में दोनों प्रकार का 'स्मरण' होता है । **'स्वप्न'** में सम्पूर्ण **'ज्ञान'** स्मरणात्मक **'अयथार्थ'** ही होता है

(6) मन

लक्षण- "अन्तरिन्द्रियं मनः" अन्तरिन्द्रिय को मन कहते हैं ।इसी को अन्तःकरण भी कहते हैं ।

(7) प्रवृत्ति

लक्षण- "प्रवृत्तिः धर्माधर्ममयी यागादिक्रिया"। धर्म-अधर्म को उत्पन्न करने वाले 'याग' आदि कर्म ही प्रवृत्ति कहलाती है ।

(8) दोष

"दोष राग-द्वेष-मोहाः"। राग, द्वेष, और मोह ये तीनों दोष हैं । **'राग'** का अर्थ **'इच्छा'** है । **'द्वेष'** का अर्थ 'मन्यु' अर्थात् क्रोध है । **'मोह'** का अर्थ **'मिथ्याज्ञान'** अर्थात् विपर्यय है ।

(9) प्रेत्यभाव

लक्षण- "पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः"। पुनः उत्पन्न होना अर्थात् पनर्जन्म होना ही प्रेत्यभाव है । आत्मा के पूर्व शरीर की समाप्ति और नवीन शरीर आदि समूह की प्राप्ति होना ही 'प्रेत्यभाव' है । इसी को पुनर्जन्म कहते हैं ।

(10) फ़ल

लक्षण- "फ़लं पुनर्भोगः सुखदुःखान्यतरसाक्षात्कारः"। सुख अथवा दुःख में से किसी के अनुभवरूप भोग को 'फ़ल' कहते हैं ।

(11) दुःख

लक्षण- "पीडा दुःखम्"। पीडा को दुःख कहते हैं ।

(12) अपवर्ग

लक्षण- "मोक्षोऽपवर्गः"। मोक्ष को अपवर्ग कहते हैं । मोक्ष का अर्थ है इक्कीस प्रकार के दुःखों की निवृत्ति । दुःख के इक्कीस भेद-
शरीर+षट् इन्द्रियां+षट् विषय+षट् बुद्धि+सुख+दुःख=(21)

3. संशय

लक्षण- "एकस्मिन् धर्मिणि विरुद्धनानार्थावमर्शः संशयः"।
एक ही धर्मी में परस्पर विरुद्ध अनेक धर्मो (अर्थों) का जो अवमर्श (बोध) होता है उसे संशय कहते हैं । संशय तीन प्रकार का होता है-
1. समानधर्मदर्शनज 2. विप्रतिपत्तिज 3. असाधारणधर्मज

न्यायदर्शन के मुख्य सन्दर्भ-

- अलौकिक सन्निकर्ष **-त्रिविधः** लौकिक सन्निकर्ष **-षड्विध।**
- व्याप्ति **-द्विविधा** -शब्दप्रमाण - **द्विविधम्।**
- न्यायशास्त्र में दुःख हैं – 21
- न्यायमत में परसत्ता मानी जाती है- **द्रव्य, गुण कर्म।**

- प्रामाण्य होता है -**अनुभवत्वम्।**
- न्यायनये ज्ञानस्य स्वरूपम् -**सामान्य।**
- उद्भूत रूप कारण होता है -**चाक्षुषप्रत्यक्ष।**
- **अतिदेशवाक्यार्थज्ञान त्रिविधः-**
  (1) सादृश्य (2) असाधारणधर्मविशिष्टपिण्डज्ञान (3) वैधर्म्य।
- साध्यधर्मविशिष्ट धर्मप्रतिपादकवचनं -**प्रतिज्ञा।**
- नैयायिकों के मत में शक्ति का अन्तर्भाव होता है -**अभाव में।**
- न्याय मत में सुवर्ण का तेजसत्व है -**उद्भूताभिभूतरूपस्पर्शम्।**
- तर्कभाषासम्मत अपवर्ग है -**दुःखस्यान्तिकी निवृत्तिः।**
- **सिद्धान्त चार प्रकार के है-** सर्वतन्त्र सिद्धान्त, प्रतितन्त्र सिद्धान्त, अधिकरण सिद्धान्त और अभ्युपगम सिद्धान्त।

॥मीमांसा दर्शन॥

भारतीय दार्शनिक चिन्तन वैदिक काल से प्रारंभ होकर अद्यावधि निरन्तर प्रवाहमान है। भारतीय दर्शन में वेद की प्रमाणता को न मानने वाले दर्शनों को **'नास्तिक'** कहा गया। इसके विपरीत वेद में आस्था रखने वाले दर्शन **'आस्तिक दर्शन'** कहलाये, जिनकी संख्या 6 है। इन दर्शनों में 'मीमांसा दर्शन' का स्थान अन्यतम है। आज भी वेद, ब्राह्मणादि को समझने के अतिरिक्त अन्य शास्त्रों के ज्ञान हेतु 'मीमांसा' का आश्रय लिया जाता है। जेमिनिप्रणीत 'मीमांसा दर्शन' के पश्चात् अन्य मीमांसा ग्रंथ भी लिखे गये जिनमें लौगाक्षिभास्कर कृत **'अर्थसंग्रह'** का विशिष्ट स्थान है। अर्थसंग्रह में जैमिनि प्रणीत मीमांसा-दर्शन के मुख्य प्रतिपाद्यविषयों का निरूपण अत्यंत सारगर्भित शैली में प्रस्तुत किया गया है।

मीमांसासूत्र इस दर्शन का मूल ग्रन्थ है जिसके रचयिता **महर्षि जैमिनि** हैं। इस दर्शन में वैदिक यज्ञों में मंत्रों का विनियोग तथा यज्ञों की प्रक्रियाओं का वर्णन किया गया है। धर्म के लिए महर्षि जैमिनि ने वेद को भी परम प्रमाण माना है। उनके अनुसार यज्ञों में मंत्रों के विनियोग, श्रुति, वाक्य, प्रकरण, स्थान एवं समाख्या को मौलिक आधार माना **मीमांसा दर्शन** छः दर्शनों में से एक है। इस शास्त्र को **'पूर्वमीमांसा'** और वेदान्त को **'उत्तरमीमांसा'** भी कहा जाता है। पूर्ममीमांसा में **धर्म** का विचार है और उत्तरमीमांसा में **ब्रह्म** का। अतः पूर्वमीमांसा को **धर्ममीमांसा** और उत्तर मीमांसा को **ब्रह्ममीमांसा** भी कहा जाता है। जैमिनि मुनि द्वारा रचित सूत्र होने से मीमांसा को **'जैमिनीय धर्ममीमांसा'** कहा जाता है। पक्ष-प्रतिपक्ष को लेकर वेदवाक्यों के निर्णीत अर्थ के विचार का नाम मीमांसा है।

मीमांसा दर्शन में भारतवर्ष के मुख्य प्राणधन धर्म का वर्णाश्रम व्यवस्था, आधानादि, अश्वमेधांत आदि विचारों का विवेचन किया गया है। प्रायः विश्व में ज्ञानी और विरक्त पुरुष सर्वत्र होते आए हैं, किंतु धर्माचरण के साक्षात् फलवेत्ता और कर्मकांड के प्रकांड विद्वान् भारतवर्ष में ही हुए हैं। इनमें कात्यायन, आश्वलायन, आपस्तम्ब, बोधायन, गौतम आदि महर्षियों के ग्रन्थ आज भी उपलब्ध हैं। (कर्मकांड के विद्वानों के लिए उपनिषदों में महाशाला, श्रोत्रियाः, यह विशेषण प्राप्त होता है)। भारतीय कर्मकांड सिद्धांत का प्रतिदान और समर्थन इसी दर्शन में प्राप्त होता है। **डॉ॰ कुंनन्** राजा ने **"बृहती"** के द्वितीय संस्करण की भूमिका में इसका समुचित रूप से निरूपण किया है। यद्यपि कणाद मुनि कृत **वैशेषिक दर्शन** में धर्म का नामतः उल्लेख प्राप्त होता है तथापि उसके विषय में आगे विचार नहीं किया गया है।

मीमांसा = विचार ''मन धातु'', मीमांसा = वाक्यार्थ विचार। जिज्ञासा मीमांसा दोनों समानार्थी है। **पदवाक्य प्रमाणज्ञ** - व्याकरण, मीमांसा, न्याय ।

॥अर्थसङ्ग्रहः॥

'अर्थसंग्रह' मीमांसा का एक लघुकाय प्रकरण ग्रन्थ है, जिसमें **शाबरभाष्य** में प्रतिपादित बहुत से विषयों का अतिसंक्षेप में निरूपण है। संक्षेप में अधिकतम विषयों को प्रस्तुत करने के कारण इस ग्रन्थ का प्रचार जिज्ञासु-सामान्य में अत्यधिक हुआ और उपयोगी होने पर भी अनेक प्रकरण ग्रन्थ इतने प्रचलित हो सके। इसके रचनाकार **लौगाक्षिभास्कर** हैं। इस ग्रन्थ में निम्नलिखित विषयों का मुख्यतः विवेचन हुआ है-

1. धर्म तथा उसका लक्षण।
2. भावना का लक्षण तथा उसके दो भेद।
3. वेद का लक्षण तथा उसके विभाग।
4. विधि का लक्षण तथा उसके प्रकार।

पूर्व मीमांसा दर्शन= प्रवर्तक- जैमिनी, **विषय-** कर्मकाण्ड, **अर्थसंग्रहः-** लौगाक्षिभास्कर, लौगाक्षिभास्कर के पिता – **मुद्गल।**

॥मङ्गलाचरणम्॥

"वासुदेवं रमाकान्तं नत्त्वा लौगाक्षिभास्करः ।
कुरुते जैमिनिनये प्रवेशायार्थसङ्ग्रहम्" ॥

लौगाक्षिभास्कर लक्ष्मीप्रिय विष्णु को प्रणाम करके वेद वेदाङ्ग का अध्ययन करके धर्म में जिज्ञासा करने वालों के जैमिनिप्रणीत मीमांसा दर्शन में प्रवेश हेतु 'अर्थसङ्ग्रह' नामक ग्रन्थ की रचना करते हैं ।

धर्मजिज्ञासा सूत्र-

"अथातो धर्मजिज्ञासा"

अथ- 'वेदाध्ययनानन्तर्यवचनः'। (यहाँ पर अथ शब्द वेदाध्ययन के आनन्तर्य का वाचक है।)

अतः- 'वेदाध्ययनस्य दृष्टार्थत्वं' । (अतः शब्द वेदार्थज्ञानरूप दृष्ट

प्रयोजन को बताता है ।

धर्मजिज्ञासा- धर्मस्य जिज्ञासा (षष्ठी तत्पुरुष समास) अत्र जिज्ञासा पदस्य विचारे लक्षणा- यहाँ पर 'जिज्ञासा' पद के विचार में लक्षणा की गई है ।

धर्म लक्षण-

"यागादिरेव धर्मः। वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः"

यागादि ही धर्म हैं । जो वेद द्वारा प्रतिपादित हो, प्रयोजन वाला हो और अर्थ हो उसी को धर्म कहते हैं ।

धर्म के तीन रूप-

1. वेदप्रतिपाद्यः 2. प्रयोजनवद् 3. अर्थः।

पदकृत्य-

'प्रयोजनवत्'-"प्रयोजनेऽतिव्याप्तिवारणाय"। इस लक्षण में **'प्रयोजनवत्'** शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है कि इस पद को न देने से 'स्वर्गादिरूप प्रयोजन' (अर्थ) में **'अतिव्याप्ति'** होने लगेगी ।

'वेदप्रतिपाद्यः'- "भोजनादावतिव्याप्तिवारणाय" । 'भोजनादि' में 'अतिव्याप्ति' के निवारणार्थ **'वेदप्रतिपाद्य'** शब्द दिया गया है ।

'अर्थः'- "अनर्थफलकत्वादनर्थभूते श्येनादावतिव्याप्तिवारणाय" । **'अर्थ'** पद नहीं देने से अनर्थभूत 'श्येनादि याग' में 'अतिव्याप्ति' होगी।

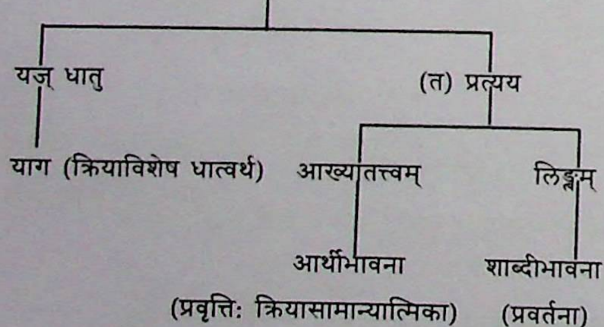
महर्षि जैमिनि ने अपने सूत्र में धर्म का लक्षण किया है-

"चोदनालक्षणोऽर्थोधर्मः"

जैमिनि सूत्र में 'चोदना' पद सम्पूर्ण वेद के वाचक रूप में प्रयुक्त है। चोदना प्रकरण पठित समस्त वेदों के धर्म में तात्पर्य होने से समस्त वेद धर्मप्रतिपादक ही है ।

विधिवाक्य विधायकत्व प्रकार-

"यजेत स्वर्गकामः"।



'आख्यात लिङ्गेन भावना उत्पद्यते'।

आख्यातत्त्व और लिङ्ग इन दोनों अंशों से भावना का ही बोध होता है।

भावना

लक्षण- "भावना नाम भवितुर्भवनानुकूलो भावयितुर्व्यापार विशेषः"। **'भवितुः'** उत्पन्न होने वाले का भवनानुकूल, उत्पत्तिजनक जो **'भावयितुः'** (प्रयोजक) का व्यापार विशेष है, वही 'भावना' है । भावना के दो भेद होते हैं- **1. शाब्दीभावना** **2. आर्थीभावना,**

1. शाब्दीभावना-

"पुरुषप्रवृत्यनुकूलो भावयितुर्व्यापार विशेषः शाब्दीभावना" । पुरुष की प्रवृत्ति के अनुकूल प्रयोजक, वेद या आचार्य (भावयितु) के व्यापारविशेष को 'शाब्दीभावना' कहते हैं । यह शाब्दीभावना **'लिङ्'** का (वाच्य) अर्थ है । क्योंकि लिङ् अंश के श्रवण होने पर (प्रयोज्य) पुरुष को यह बोध होता है कि यह (प्रयोजक) पुरुष मुझे कार्य में प्रवृत्त कराना चाहता है अर्थात् यह प्रयोजक पुरुष **'मत्प्रवृत्तिजनक व्यापार'** वाला है । यही व्यपार 'लिङ्वाच्य' 'शाब्दीभावना' है क्योंकि जो जिस शब्द से नियमतः प्रतीत होता है वह उस शब्द का (वाच्य) अर्थ है । **जैसे- 'गामानय'** गाय लाओ इस 'वाक्य' में गो शब्द का अर्थ **'गोत्व'** है ।

वह व्यापारविशेष शाब्दीभावना **'लौकिक'** वाक्य में प्रवर्तक **'पुरुषनिष्ठ'** अभिप्राय विशेष से रहती है । **'वैदिक'** वाक्य में प्रवर्तक पुरुष के अभाव के कारण **'लिङ्गादि'** शब्दनिष्ठ होती है । इसी कारण से इसे 'शाब्दीभावना' कहा जाता है ।

शाब्दीभावना के अंशत्रय-

साध्य	किं भावयेत् ?	-	आर्थीभावना
साधन	केन भावयेत् ?	-	लिङ्गादिज्ञान
इतिकर्तव्यता	कथं भावयेत् ?	-	प्राशस्त्यादि वचन

2. आर्थीभावना-

"प्रयोजनेच्छाजनित क्रियाविषयव्यापार आर्थीभावना"।

स्वर्गादि प्रयोजन को लक्ष्य करके यागादि कर्म को सम्पादित करने का पुरुष में जो मानसिक व्यापार उत्पन्न होता है, उसे आर्थीभावना कहते हैं । यह आर्थी भावना 'आख्यात' अंश अर्थात् 'तिङ्' का अर्थ है क्योंकि व्यापार या क्रिया का वाचक आख्यात सामान्य ही होता है ।

आर्थीभावना के अंशत्रय-

साध्य	किं भावयेत् ?	-	स्वर्गादिफ़ल
साधन	केन भावयेत् ?	-	यागादि

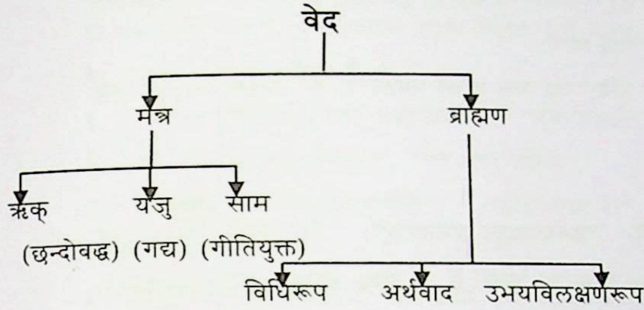
इतिकर्तव्यता कथं भावयेत् ? - प्रयाजादि अङ्ग

वेदलक्षणविचार

वेद- "अपौरुषेयं वाक्यं वेदः" । अपौरुषेय वाक्य को वेद कहते हैं । **"तत्र धर्मब्रह्मप्रतिपादकमपौरुषेयं प्रमाणवाक्यं वेदः"**। धर्म और ब्रह्म के प्रतिपादिक अपौरुषेय प्रमाणित वाक्य को 'वेद' कहते हैं ।

वेद के पांच प्रकार-

1. विधि 2. मन्त्र 3. नामधेय 4. निषेध 5. अर्थवाद।



(1) विधिः

"तत्राज्ञातार्थज्ञापको वेदभागो विधिः" अज्ञात अर्थ को अवबोधित कराने वाले वेद भाग को विधि कहते हैं । वह विधि – जो अर्थ (प्रमाणान्तर) दूसरे प्रमाण से ज्ञात नहीं है उसका विधान करती है, इसलिये प्रमाणान्तर अज्ञात एवं प्रयोजन युक्त अर्थ के विधान से ही विधि की सार्थकता होती है । उदाहरण- "अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः"।

गुणविधिः

"यत्र कर्म मानान्तरेण प्राप्तं तत्र तदुद्देशेन गुणमात्रं विधत्ते"। जहाँ पर यागादि कर्म का विधान किसी अन्य प्रमाण से सिद्ध हो वहाँ पर उस विधि कर्म को उपदेश करके गुणमात्र (अर्थात् अङ्गभूत द्रव्य या देवता) का विधान होता है । उदाहरण- "दध्ना जुहोति"।

विशिष्ट विधि

"यत्र तु उभयमपि अप्राप्तं तत्र विशिष्टं विधत्ते"। जहाँ पर गुण और कर्म दोनों प्रमाणान्तर से प्राप्त नहीं रहते हैं वहाँ विधि द्वारा दोनों **'गुणविशिष्ट'** कर्म का विधान होता है । उदाहरण- **"सोमेन यजेत"** ।

विधि के चार प्रकार-

"विधिश्चतुर्विधः- उत्पत्तिविधिः विनियोगविधिः अधिकारविधिः प्रयोगविधिश्चेति"।

1. उत्पत्ति विधि 2. विनियोग विधिः 3. प्रयोगविधिः 4. अधिकारविधि।

1. उत्पत्ति विधि-

"कर्मस्वरूपमात्रबोधको विधिरुत्पत्तिविधिः"। यागादि कर्म के स्वरूप मात्र बोधकविधि को उत्पत्तिविधि कहते हैं । उदाहरण- **"अग्निहोत्रं जुहोति"** । इस विधि में अग्निहोत्र कर्म का **'करण'** अर्थात् 'साधन' रूप से अन्वय होता है । अतः इस वाक्य से **"अग्निहोत्रहोमेनेष्टं भावयेत्"** अर्थात् अग्निहोत्र नामक होम से इष्ट का सम्पादन करे, इस अर्थ का बोध होता है ।

याग के दो रूप-

1. द्रव्य 2. देवता ।

"अग्निहोत्रं जुहोति" इस विधिवाक्य में 'तत्प्रख्यन्याय' (त- देवता, प्रख्य- वाचक) से 'उत्पत्तिविधि' मानी जाती है ।

2. विनियोग विधिः-

"अङ्गप्रधानसम्बन्धबोधकोविधिर्विनियोगविधिः"। द्रव्य देवतादि रूप अङ्गों का प्रधान होमादि के साथ सम्बन्ध बोधक विधि को विनियोग विधि कहते हैं । उदाहरण- **"दध्ना जुहोति"**। यहाँ पर **'दध्ना'** इस तृतीया श्रुति से बोधित दधिरूप अङ्ग का **"अग्निहोत्रं जुहोति"** इस वाक्य से बोधित अग्निहोत्र रूप प्रधान (अङ्गी) के साथ सम्बन्ध का विधान करता है, अतः **'दध्ना जुहोति'** यह विनियोग विधि है, और इससे **"दध्ना होमं भावयेत"** यह बोध होता है ।

विनियोग विधि में धात्वर्थ होम का 'साध्यत्व' रूप से अन्वय होगा और कहीं-कहीं धात्वर्थ का अन्वय आश्रय रूप में भी किया जाता है । **जैसे- "दध्नेन्द्रियकामस्य जुहुयात"** इस गुण विधि में धात्वर्थ का अन्वय आश्रय रूप में होता है, और **"दधिकरणत्वेन इन्द्रियं भावयेत्"** यह अर्थ होगा । अर्थात् दधिकरणत्व से इन्द्रिय रूपी फ़ल की कामना करें ।

इस विधि के छः सहायक प्रमाण हैं-

1. श्रुति 2. लिङ्ग
3. वाक्य 4. प्रकरण
5. स्थान 6. समाख्या

इनके सहयोग से यह विधि अङ्गत्व का बोध कराती है । **'अङ्गत्व'** (पारार्थ्य) का पर्याय शब्द है । अङ्गत्व का लक्षण है- **"परोद्देशप्रवृत्तकृतिसाध्यत्वम्"** परोद्देश (स्वर्गादि फ़ल) के उद्देश्य से प्रवृत्त पुरुष का जो कृतिसाध्य हो उसी को अङ्ग कहते हैं ।

1. श्रुति-

"निरपेक्षोरवः श्रुतिः"। जो प्रमाणान्तर की अपेक्षा नहीं रखता है ऐसे 'रव' (शब्द) को श्रुति कहते हैं । श्रुति के तीन भेद हैं-

1. विधात्री-विधानकर्त्री- 'लिङ्' आदि श्रुति को 'विधात्री' श्रुति कहते हैं।

2. अविधात्री-अभिधानकर्त्री- 'व्रीह्यादि' शब्द को 'अभिधात्री' श्रुति कहते हैं।

3. विनियोक्त्री-विनियोगकर्त्री- जिस शब्द के श्रवणमात्र से अङ्गाङ्गिभाव का ज्ञान हो जाता है, उसे 'विनियोक्त्री' श्रुति कहते हैं ।

विनियोक्त्री श्रुति के तीन प्रकार हैं-

1. विभक्तिरूपा 2. समानाभिधानरूपा 3. एकपदरूपा ।

उदाहरण-

1. विभक्तिरूपा-

द्वितीया विभक्ति- 'व्रीहीन् प्रोक्षति'। 'अश्वाभिधानीम् आदत्ते'।

तृतीया विभक्ति- 'व्रीहिभिर्यजेत'। यहाँ पर तृतीया विभक्ति के सुनने पर व्रीहि याग का अङ्ग ज्ञात होता है । व्रीहि पुरोडाश की प्रकृति होने से याग का अङ्ग बनते हैं, साक्षात् नहीं ।

'अरुणया पिङ्गाक्ष्या एकहायन्या गवां सोमं क्रीणाति' । यहाँ पर **'आरुण्य'** क्रयण का अङ्ग साक्षात् रूप से नहीं है, अपितु **'गोरूप पिण्ड'** के ज्ञापक रूप में है ।

चतुर्थ विभक्ति- 'मैत्रावरुणाय दण्डं प्रयच्छति'।

पञ्चमी विभक्ति- 'अग्नेस्तृणान्यपचिनोति'।

षष्ठी विभक्ति- 'यजमानस्य याज्या'

सप्तमी विभक्ति- 'यदाहवनीये जुहोति'।

2. समानाभिधानरूपा, 3. एकपदरूपा - 'पशुना यजेत'। इस उदाहरण में **'टा'** रूप एकवाचक (एकाभिधानश्रुति) से एकत्व और पुंस्त्व दोनों (करण) रूप कारण के अङ्ग हैं । **'पशुना'** इस **'एकपदश्रुति'** से पशुरूप द्रव्य के अङ्ग होते हैं । इसी प्रकार **'यजेत'** में आख्यात **'तिङ्'** का भावना एवं **'एकत्व'** संख्या अर्थ है । अतः **'त'** रूप एकाभिधानश्रुति से एकत्वसंख्या भावना का अङ्ग होती है, एवं **'यजेत'** एकपदश्रुति से **'संख्या'** याग का अङ्ग है ।

2. लिङ्ग- "शब्दसामर्थ्यं लिङ्गं"। शब्द सामर्थ्य को ही लिङ्ग कहते हैं। **'सामर्थ्यं सर्वशब्दानां लिङ्गमित्यभिधीयते'**। अर्थात् सब शब्दों का जो सामर्थ्य है उसी को लिङ्ग कहते हैं । समाख्या से रूढ्यात्मक शब्द भिन्न होता है । **'बर्हिर्देवसदनं दामि'** यह मन्त्र कुश छेदन (कुशलवन) क्रिया का अङ्ग है ।

3. वाक्य- "समभिव्याहारो वाक्यम्"। समभिव्याहार अर्थात् सहोच्चारण को वाक्य कहते हैं ।

उदाहरण- "यस्य पर्णमयी जुहूर्भवति न स पापं श्लोकं शृणोति"

वाक्यार्थ- "पर्णतयावत्तहविर्धारणद्वाराजुह्वपूर्वं भावयेत्"

प्रकृति- "सम्पूर्णाङ्गसहितो विधिः प्रकृतिः"। जिस याग के विषय में समस्त अङ्गों का पाठ मिलता है। **यथा-** 'दर्शपौर्णमासादि' ।

विकृतिः- "विकलाङ्गसंयुतो विधिर्विकृतिः"। जिस याग के विषय में समस्त अङ्गों का पाठ नहीं मिलता है। इन दोनों से भिन्न विधि दर्विहोमादि है। **यथा- 'सौर्य याग'**।

'इन्द्राग्नी इदं हविः' यह मन्त्र वाक्य प्रमाण से दर्श नामक यज्ञ का अङ्ग होता है ।

4. प्रकरण- "उभयाकाङ्क्षा प्रकरणम्"। दो वाक्यों की परस्पर आकाङ्क्षा को 'प्रकरण' कहते हैं । **यथा- वाक्य-** 'समिधो यजति'।

वाक्यार्थ- 'समिद्यागेन भावयेत।

वाक्य- 'दर्शपूर्णमासाभ्यां स्वर्गकामो यजेत' ।

वाक्यार्थ- 'दर्शपूर्णमासाभ्यां स्वर्गं भावयेत'।

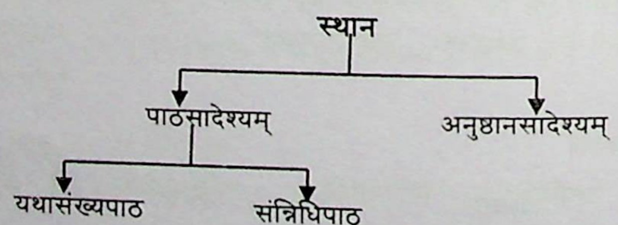
प्रकरण के दो प्रकार -

1. महाप्रकरण-'मुख्यभावनासम्बन्धिप्रकरणं महाप्रकरणम्'। महाप्रकरण प्रकृति याग में प्रवृत्त होता है ।

2. अवान्तरप्रकरण- 'अङ्गभावनासम्बन्धिप्रकरणमवान्तरप्रकरणम्'। इस प्रकार के अङ्गत्व का बोध **'सन्दंश'** के द्वारा होता है ।

सन्दंश- 'एकाङ्गानुवादेन विधीयमानयोरङ्गयोरन्तराले विहितत्वं सन्दंशः'। प्रधान याग के एक अङ्ग का अनुवाद करके विधीयमान दो अङ्गों के मध्य में किये जाने वाले विधान को 'सन्दंश' कहते हैं । **यथा- 'समानयते जुह्वाम् उपभृतस्तेजो वा'** ।

5. स्थान- "देशसामान्यं स्थानम्"। देश की समानता को स्थान कहते हैं । स्थान के दो भेद हैं-



6. समाख्या- **"समाख्या यौगिकः शब्दः"**। यौगिक शब्दों को समाख्या कहते हैं । समाख्या के दो भेद हैं-

1. वैदिकी- **'होतृचमस'** ('होता' सोमरस भक्षण का अङ्ग)**चमस-सोमरस**
2. लौकिकी- **'आध्वर्यवम्'** ('अध्वर्यु' तत्तत् क्रियाओं का अङ्ग)

कर्म-

कर्म के दो प्रकार-

1. गुणकर्म 2. अर्थकर्म

(1) गुणकर्म- **"क्रतुकर्मकारण्याश्रित्य विहितं गुणकर्म"**। यागादि कर्मों के सम्पादक पदार्थों का आश्रयण करके विहित कर्म गुणकर्म कहलाता है। गुणकर्म के छः प्रकार हैं-

1. उत्पत्ति- ''वसन्तो ब्राह्मणे अग्नीनादधीत'' ''यूयं तक्षति।''
2. प्राप्ति- ''स्वाध्यायोऽध्येतव्य'', ''गां पयो दोग्धि''
3. विकृति- ''सोममभिषुणोति'', ''व्रीहीनावहन्ति'', ''आज्यं विलापयति।''
4. संस्कृति- ''व्रीहीन् प्रोक्षति पल्यवेक्षते।'' ये चारों अङ्ग हैं अङ्गी नहीं।
5. अङ्ग- "अन्यार्थमङ्गम्"। जो दूसरे का उपकारक नहीं होता, वह अङ्ग कहलाता है।
6. प्रधान - "अनन्यार्थं प्रधानं"। जो दूसरे का उपकारक नहीं होता।

(2) अर्थकर्म- **"क्रतुकारकाण्याश्रित्य निहितमर्थकर्म च"**। यागादि कर्मों के सम्पादक द्रव्यों का आश्रयण करके विहितकर्म अर्थकर्म कहलाता है। अर्थकर्म के दो प्रकार हैं-

1. सन्निपत्योपकारक 2. आरादुपकारक

1. सन्निपत्योपकारक अङ्ग- **"प्रधानस्वरूपनिर्वाहकं"**। प्रधान याग के स्वरूप का सम्पादक।
2. आरादुपकारक अङ्ग- **"फलोपकारि द्वितीयम्"**। फल का उपकारक।

3. प्रयोगविधिः

"प्रयोगप्राशुभावबोधकोविधिः प्रयोगविधिः"

जिस विधि वाक्य से प्रयोग को शीघ्र करने का बोध होता है, उसे 'प्रयोगविधि' कहते हैं । अङ्गों के सहित प्रधान कर्म के प्रयोग की एकता का बोधक अर्थात् पूर्वोक्त तीन विधियों के सम्मेलन रूप प्रयोग विधि कहलाती है। कुछ लोग उसको श्रौत मानते हैं, तथा कुछ विज्ञान कल्प्य भी मानते हैं।

अङ्गानां क्रमबोधको विधिः प्रयोगविधिः । क्रमो नाम विततिविशेषः पौर्वापर्यस्वरूपम् ।

यथा- "दर्शपौणमासाभ्यां स्वर्गकामो यजेत्"।

इस विधि के छः सहायक प्रमाण हैं-

1. श्रुति,	2. अर्थ,
3. पाठ,	4. स्थान,
5. मुख्य,	6. प्रवृत्ति

4. अधिकारविधि

"कर्मजन्यफलस्वाम्यबोधकोविधिःअधिकारविधिः"। यागादि कर्मजन्य स्वर्गादि फल के स्वामित्व अर्थात् अधिकारी बोधक विधि को अधिकारविधि कहते हैं । **कर्मजन्यफलस्वाम्यत्वम्-** कर्मजन्यफलभोक्तृत्वम् । **यथा- 'यजेत स्वर्गकामः'।**

'यस्याहिताग्नेरग्निर्गृहान् दहेत् सोऽग्नये क्षामवतेऽष्टाकपालं निर्वपेत'।

'अहरहः सन्ध्यामुपासीत'।

(2) मन्त्र

मन्त्राः- "प्रयोगसमवेतार्थस्मारका मन्त्राः"। प्रयोग (अनुष्ठान) से समवेत (सम्बद्ध) अर्थ (द्रव्य देवतादि) का जो स्मरण कराते हैं उन्हें मन्त्र कहते हैं । **"अनुष्ठानकारकभूतद्रव्यदेवताप्रकाशकाः मन्त्राः"**।

अर्थस्मरणरूप दृष्ट फल प्रकारान्तर (ब्राह्मण वाक्यों) से भी प्राप्त है अतः मन्त्रोच्चारण व्यर्थ है । यह कहना उचित नहीं है क्योंकि **"मन्त्रैरेव स्मर्तव्यम्"**। 'मन्त्रों से ही अर्थ का स्मरण करें' इस नियमविधि का आश्रय लेने से मन्त्रोच्चारण व्यर्थ नहीं होता है ।

नियमविधि-"नानासाधनसाध्यक्रियायामेकसाधनप्राप्तावप्राप्तस्यापरसाधनस्य प्रापको विधिर्नियमविधिः"। जहाँ पर नाना साधनों से क्रिया की सिद्धि सम्भव हो उनमें एक साधन के प्राप्त रहने पर अप्राप्त दूसरे साधनों की प्राप्ति कराने वाली 'प्रापक' विधि को 'नियमविधि' कहते हैं । तन्त्रवार्तिककार 'कुमारिलभट्ट' ने कहा है-

"विधिरत्यन्तमप्राप्तौ नियमः पाक्षिके सति
तत्र चान्यत्र च प्राप्तौ परिसंख्येति गीयते"॥

'अत्यन्त अप्राप्त पदार्थ का विधान कराने वाली विधि को **'अपूर्वविधि'** पदार्थ के पाक्षिक अप्राप्ति होने पर उसका विधान कराने वाले वाक्य को **'नियमविधि'** तथा जहाँ दोनों पदार्थों की एक ही काल में प्राप्ति हो, वहाँ दोनों में से एक पदार्थ की निवृत्ति कराने वाली विधि को **'परिसंख्याविधि'** कहते हैं' ।

1. **अपूर्वविधि- 'प्रमाणान्तरेणाप्राप्तस्य प्रापको विधिरपूर्वविधिः'**। प्रमाणान्तर से अप्राप्त की प्रापक विधि को 'अपूर्वविधि' कहते हैं । **उदाहरण- 'यजेत् स्वर्गकामः'**।
2. **नियमविधि- 'पक्षेऽप्राप्तस्य प्रापको विधिः नियमविधिः'**। पक्ष में अप्राप्त पदार्थ की प्राप्ति का विधान करने वाली विधि को 'नियमविधि' कहते हैं । **उदाहरण- 'व्रीहीन् अवहन्ति'**।

3. **परिसंख्याविधि- 'उभयोश्च युगपत्प्राप्तावितरव्यावृत्तिपरो विधिः परिसंख्याविधिः'**। एक ही समय में दो की प्राप्ति रहने पर दूसरे के निवृत्तिपरक विधिवाक्य को 'परिसंख्याविधि' कहते हैं ।

उदाहरण- 'पञ्च पञ्च नखा भक्ष्याः'।

परिसंख्याविधि के दो भेद हैं-

1. श्रौती- 'अत्र हि एव आवपन्ति' । अर्थात् यहीं पर (अवाप=साम) प्रक्षेपण करते हैं । यहाँ 'एव' शब्द से (स्तोत्र विशेष का नाम) से अतिरिक्त स्तोत्रों की निवृत्ति समझी जाती है ।

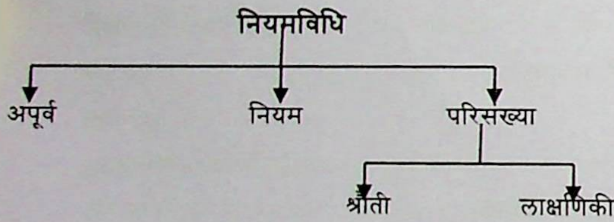
2. लाक्षणिकी- 'पञ्च पञ्च नखा भक्ष्याः'। यहाँ पर **'इतरनिवृत्तिवाचक'** पद के अभाव में (अर्थात् 'एव' की तरह निवृत्ति सूचक पद नहीं है) उसकी लक्षणा द्वारा कल्पना करनी पड़ती है ।

लाक्षणिकी परिसंख्याविधि के तीन दोष हैं-

1. श्रुतहानि 2. अश्रुतकल्पना 3. प्राप्तबाध

"श्रुतार्थस्य परित्यागादश्रुतार्थप्रकल्पनात्,
प्राप्तस्य बाधादित्येवं परिसंख्या त्रिदूषणा"।

इनमें से प्रथम दो दोष **'शब्दनिष्ठ'** (श्रावणसम्बन्ध) हैं और तीसरा दोष **'अर्थनिष्ठ'** है ।



(3) नामधेय

नामधेयः- "नामधेयानां च विधेयार्थपरिच्छेदकतयार्थत्त्वम्"। नामधेय विजातीय की निवृत्तिपूर्वक विधेयार्थ का निश्चय करता हुआ सार्थक होता है । **यथा- 'उद्भिदा यजेत पशुकामः'** ।

नामधेय के निमित्तचतुष्टय-

1. **मत्वर्थलक्षणाभयात्-** 'उद्भिदा यजेत पशुकामः'।
2. **वाक्यभेदभयात्-** 'चित्रयायजेत पशुकामः'। **चित्रया- द्रव्येन** ।
3. **तत्प्रख्यशास्त्रात्-** 'अग्निहोत्रं जुहोति/यदाहवनीये जुहोति'।
4. **तद्व्यपदेशात्-** 'श्येनेनाभिचरन् यजेत'।

(4) निषेध

निषेधः- "पुरुषस्य निवर्तकं वाक्यं निषेधः"। जो वाक्य पुरुष को किसी क्रिया को करने से निवृत्त कराता है, उसे 'निषेध' कहते हैं ।

यथा- 'कलञ्जं न भक्षयेत्'।

नञ् अर्थ के प्रत्ययार्थ अन्वय के दो बाधक हैं-

1. **तस्य व्रतमुपक्रम-** 'नेक्षेतोद्यन्तमादित्यम्'।
2. **विकल्पप्रसक्ति-** 'यजतिषु ये यजामहं करोति नानुयाजेषु'।

(5) अर्थवाद

अर्थवाद- "प्राशस्त्यनिन्दान्यतरपरंवाक्यमर्थवादः"। प्रशंसापरक अथवा निन्दापरक वाक्य को अर्थवाद कहते हैं। **(प्रत्यक्ष प्रमाण)**

अर्थवाद के दो प्रभेद-

1. **विधिशेष-** वाच्यार्थ – **'वायुर्वै क्षेपिष्ठा देवता'**।
   विधिवाक्य - "वायव्यं श्वेतमालभेत भूतिकामः"।
2. **निषेधशेष-** 'सोऽरोदीत'।

विधिवाक्य "बर्हिषि रजतं न देयम्"

दूसरे दृष्टिकोण से अर्थवाद के तीन प्रभेद-

1. गुणवाद 2. अनुवाद 3. भूतार्थवाद

"विरोधे गुणवादः स्यादनुवादोऽवधारिते।
भूतार्थवादस्तद्धानादर्थवादस्त्रिधा मतः"।।

1. गुणवाद- "प्रमाणान्तरविरुद्धार्थबोधको गुणवादः"। जिस अर्थवाद का दूसरे प्रमाण से निरोध होता है। उदा.- **(आदित्यो यूपः)**। **(लक्षणा)**

2. अनुवाद- "प्रमाणान्तरप्राप्त्यर्थबोधकोऽनुवादः"। जिसके अर्थ का ज्ञान अन्य प्रमाण से प्राप्त होता है। उदा.- **(अग्निर्हिमस्य भेषजम्)**

3. भूतार्थवाद- "प्रमाणान्तरविरोधतत्प्राप्तिरहितार्थ बोधको भूतार्थवादः"। जिसका दूसरे प्रमाण से विरोध भी न हो रहा हो और जिसके द्वारा प्रतिपादित अर्थ वा बोध अन्य प्रमाण से भी सम्भव न हो। उदा.- **(इन्द्रो वृत्राय वज्रमुदयच्छत्)**

मीमांसा दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ-

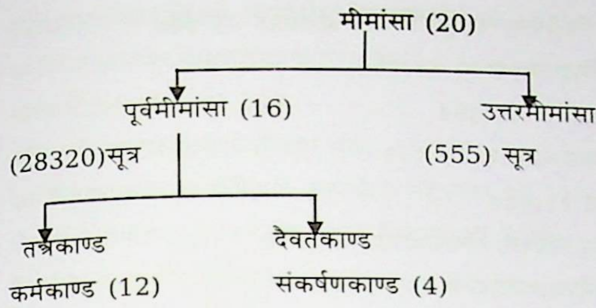
मीमांसासूत्र - महर्षि जैमिनि,
शावरभाष्य - शबर स्वामी,
तंत्रवार्तिक - कुमारिल भट्ट
श्लोकवार्तिक - कुमारिल भट्ट,

लौगाक्षिभास्कर की कृतियां-

1. तर्ककौमुदी 2. अर्थसङ्ग्रह

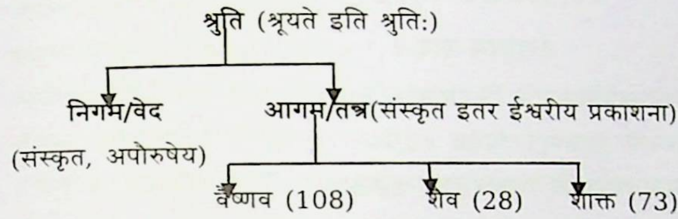
अर्थसङ्ग्रह की व्याख्यायें-

रामेश्वरशिवयोगिभिक्षु - **कौमुदी**
पट्टाभिरामशास्त्री - **अर्थालोक**



दर्शन-

1. निगम परम्परा 2. आगम परम्परा 3. श्रमण परम्परा



चतुर्दश विद्या -

''पुराणन्यायमीमांसा **धर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः।**
वेदः स्थानानि विद्यानां **धर्मस्य** च **चतुर्दश।।''**

॥योग दर्शन॥

ग्रन्थ लेखक – पतंजलि, योगसूत्र में पाद- 4

1. समाधि 2. साधन 3. विभूति 4. कैवल्य

योग दर्शन-

योगदर्शन छः आस्तिक दर्शनों (षड्दर्शन) में से एक है। इसके प्रणेता पतञ्जलि मुनि हैं। यह दर्शन सांख्य दर्शन के 'पूरक दर्शन' के नाम से प्रसिद्ध है। इस दर्शन का प्रमुख लक्ष्य मनुष्य को वह मार्ग दिखाना है जिस पर चलकर वह जीवन के परम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति कर सके। अन्य दर्शनों की भांति योगदर्शन तत्त्वमीमांसा के प्रश्नों (जगत् क्या है, जीव क्या है?, आदि) में न उलझकर मुख्यतः मोक्षप्राप्ति के उपाय बताने वाले दर्शन की प्रस्तुति करता है। किन्तु मोक्ष पर चर्चा करने वाले प्रत्येक दर्शन की कोई न कोई तात्विक पृष्टभूमि होनी आवश्यक है। अतः इस हेतु योगदर्शन, सांख्यदर्शन का सहारा लेता है और उसके द्वारा प्रतिपादित तत्त्वमीमांसा को स्वीकार कर लेता है। इसलिये प्रारम्भ से ही योगदर्शन, **सांख्यदर्शन** से जुड़ा हुआ है। योगसूत्रों की सर्वोत्तम व्याख्या **व्यास मुनि** द्वारा लिखित **व्यासभाष्य** में प्राप्त होती है। इसमें बताया गया है कि किस प्रकार मनुष्य अपने मन (चित्त) की वृत्तियों पर नियन्त्रण रखकर जीवन में सफल हो सकता है और अपने अन्तिम लक्ष्य निर्वाण को प्राप्त कर सकता है। योगदर्शन, सांख्य की तरह द्वैतवादी है। सांख्य के तत्त्वमीमांसा को पूर्ण रूप से स्वीकारते हुए उसमें केवल 'ईश्वर' को जोड़ देता है। इसलिये योगदर्शन को 'सेश्वर सांख्य' (स + ईश्वर सांख्य) कहते हैं और सांख्य को 'निरीश्वर सांख्य' कहा जाता है।

परिचय-

योगदर्शन में पुरुष तत्त्व केंद्रीय विषय के रूप में प्रस्तुत हुआ है। यद्यपि पुरुष और प्रकृति दोनों की स्वतंत्र सत्ता मानी गयी है परन्तु तात्त्विक रूप में पुरुष की सत्ता ही सर्वोच्च है। पुरुष के दो भेद कहे गये हैं । पुरुष को चैतन्य एवं अपरिणामी कहा गया है, किन्तु अविद्या के कारण पुरुष जड़ एवं परिणाम चित्त में स्वयं को आरोपित कर लेता है। पुरुष और चित्त के संयुक्त हो जाने पर विवेक जाता रहता है और पुरुष स्वयं को चित्त रूप में अनुभव करने लगता है। यह अज्ञान ही पुरुष के समस्त दुःखों, क्लेशों का कारण हैं। योग दर्शन का उद्देश्य पुरुष को इस दुःख से, अज्ञान से, मुक्त कराना है। इसी तथ्य को सैद्धान्तिक रूप से योग दर्शन में हेय, हेय-हेतु, हान और हानोपाय के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन चार क्रमों में पुरुष दुःखों से मुक्ति पाता है, इसलिये योग में इसे **'चतुर्व्यूहवाद'** कहा गया है एवं इस चतुर्व्यूह से मुक्त होना ही योग का परम उद्देश्य है। **चतुर्व्यूहवाद** की विवेचना में ही योग दर्शन में पुरूष, पुरूषार्थ और पुरुषार्थ शून्यता का दर्शन प्रकट होता है। पुरुष अविद्याग्रस्त होने पर संसार-चक्र में पड़ता है और पुरूषार्थशून्यता की अवस्था को प्राप्त करता है। पुरुष का परम लक्ष्य कैवल्य की प्राप्ति है। योग में पुरुष को आत्मा का पर्याय माना गया है। अतः आत्मा, जो कि **संख्या** में **असंख्य** है, उसकी कैवल्य प्राप्ति तभी हो सकती है जब चतुर्व्यूह का पुरूषार्थ साधन कर दुःख के त्रिविध रूपों का समाधान कर लिया जाय। दुःख के तीन रूप है - **आध्यात्मिक, आधिभौतिक** और **आधिदैविक।** पुरूषार्थ शून्यता इन त्रितापों से ऊपर की अवस्था है। पुरूषार्थ शून्यता के पश्चात् ही पुरुष की अपने स्वरूप की स्थिति होती है। योगदर्शन में इसे ही कैवल्य अथवा मोक्ष कहा गया है।

॥महर्षि पतञ्जलि प्रणीतं योगदर्शनम्॥

॥प्रथमोऽध्यायः॥

॥समाधि-पादः॥

अथ योगानुशासनम् ॥1.1॥

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ॥1.2॥

तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ॥1.3॥

वृत्तिसारूप्यमितरत्र ॥1.4॥

वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाऽक्लिष्टाः ॥1.5॥

प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः ॥1.6॥

प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि ॥1.7॥

विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् ॥1.8॥

शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः ॥1.9॥

अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा ॥1.10॥

अनुभूतविषयासंप्रमोषः स्मृतिः ॥1.11॥

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥1.12॥

तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः ॥1.13॥

स तु दीर्घकालनैरन्तर्यसत्कारासेवितो दृढभूमिः ॥1.14॥

दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम् ॥1.15॥

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम् ॥1.16॥

वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् संप्रज्ञातः ॥1.17॥

विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः ॥1.18॥

भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम् ॥1.19॥

श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् ॥1.20॥

तीव्रसंवेगानामासन्नः ॥1.21॥

मृदुमध्याधिमात्रत्वात् ततोऽपि विशेषः ॥1.22॥

ईश्वरप्रणिधानाद्वा ॥1.23॥

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः ॥1.24॥

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम् ॥1.25॥

स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥1.26॥

तस्य वाचकः प्रणवः ॥1.27॥

तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥1.28॥

ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ॥1.29॥

व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादालस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनालब्धभूमिकत्वानवस्थित
त्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः ॥1.30॥

दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासाविक्षेपसहभुवः ॥1.31॥

तत्प्रतिषेधार्थमेकतत्त्वाभ्यासः ॥1.32॥

मैत्रीकरुणामुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां
भावनातश्चित्तप्रसादनम् ॥1.33॥

प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य ॥1.34॥

विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनसः स्थितिनिबन्धिनी ॥1.35॥

विशोका वा ज्योतिष्मती ॥1.36॥

वीतरागविषयं वा चित्तम् ॥1.37॥

स्वप्ननिद्राज्ञानालम्बनं वा ॥1.38॥

यथाभिमतध्यानाद्वा ॥1.39॥

परमाणु परममहत्त्वान्तोऽस्य वशीकारः ॥1.40॥

क्षीणवृत्तेरभिजातस्येव मणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषु तत्स्थतदञ्जनता
समापत्तिः ॥1.41॥

तत्र शब्दार्थज्ञानविकल्पैः संकीर्णा सवितर्का समापत्तिः ॥1.42॥

स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा निर्वितर्का ॥1.43॥

एतयैव सविचारा निर्विचारा च सूक्ष्मविषया व्याख्याता ॥1.44॥

सूक्ष्मविषयत्वं चालिङ्गपर्यवसानम् ॥1.45॥

ता एव सबीजः समाधिः ॥1.46॥

निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः ॥1.47॥

ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा ॥1.48॥

श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया विशेषार्थत्वात् ॥1.49॥

तज्जः संस्कारोऽन्यसंस्कारप्रतिबन्धी ॥1.50॥

तस्यापि निरोधे सर्वनिरोधान्निर्बीजः समाधिः ॥1.51॥

॥इति पतञ्जलि-विरचिते योग-सूत्रे प्रथमः समाधि-पादः ॥

॥द्वितीयोऽध्यायः॥

॥साधन-पादः॥

तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः ॥2.1॥

समाधिभावनार्थः क्लेशतनूकरणार्थश्च ॥2.2॥

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः ॥2.3॥

अविद्याक्षेत्रमुत्तरेषां प्रसुप्ततनुविच्छिन्नोदाराणाम् ॥2.4॥

अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या ॥2.5॥

दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता ॥2.6॥

सुखानुशयी रागः ॥2.7॥

दुःखानुशयी द्वेषः ॥2.8॥

स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः ॥2.9॥

ते प्रतिप्रसवहेयाः सूक्ष्माः ॥2.10॥

ध्यानहेयास्तद्वृत्तयः ॥2.11॥

क्लेशमूलः कर्माशयो दृष्टादृष्टजन्मवेदनीयः ॥2.12॥

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगाः ॥2.13॥

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात् ॥2.14॥

परिणामतापसंस्कारदुःखैर्गुणवृत्तिविरोधाच्च दुःखमेव सर्वं विवेकिनः ॥2.15॥

हेयं दुःखमनागतम् ॥2.16॥

द्रष्टृदृश्ययोः संयोगो हेयहेतुः ॥2.17॥

प्रकाशक्रियास्थितिशीलं भूतेन्द्रियात्मकं भोगापवर्गार्थं दृश्यम् ॥2.18॥

विशेषाविशेषलिङ्गमात्रालिङ्गानि गुणपर्वाणि ॥2.19॥

द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः ॥2.20॥

तदर्थ एव दृश्यस्यात्मा ॥2.21॥

कृतार्थं प्रति नष्टमप्यनष्टं तदन्यसाधारणत्वात् ॥2.22॥

स्वस्वामिशक्त्योः स्वरूपोपलब्धिहेतुः संयोगः ॥2.23॥

तस्य हेतुरविद्या ॥2.24॥

तदभावात् संयोगाभावो हानं तद्दृशेः कैवल्यम् ॥2.25॥

विवेकख्यातिरविप्लवा हानोपायः ॥2.26॥

तस्य सप्तधा प्रान्तभूमिः प्रज्ञा ॥2.27॥

योगाङ्गानुष्ठानादशुद्धिक्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकख्यातेः ॥2.28॥

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यान-
समाधयोऽष्टावङ्गानि ॥2.29॥

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः ॥2.30॥

जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम् ॥2.31॥

शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः ॥2.32॥

वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम् ॥2.33॥

वितर्का हिंसादयः कृतकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका
मृदुमध्याधिमात्रा दुःखाज्ञानानन्तफला इति प्रतिपक्षभावनम् ॥2.34॥

अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः ॥2.35॥

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम् ॥2.36॥

अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ॥2.37॥

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः ॥2.38॥

अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथंतासम्बोधः ॥2.39॥

शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः ॥2.40॥

सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शन-योग्यत्वानि च ॥2.41॥

संतोषादनुत्तमसुखलाभः ॥2.42॥

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात् तपसः ॥2.43॥

स्वाध्यायाद् इष्टदेवतासंप्रयोगः ॥2.44॥

समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात् ॥2.45॥

स्थिरसुखम् आसनम् ॥2.46॥

प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम् ॥2.47॥

ततो द्वन्द्वानभिघातः ॥2.48॥

तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः ॥2.49॥

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः ॥2.50॥

बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः ॥2.51॥

ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् ॥2.52॥

धारणासु च योग्यता मनसः ॥2.53॥

स्वविषयासंप्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः ॥2.54॥

ततः परमावश्यतेन्द्रियाणाम् ॥2.55॥

॥इति पतञ्जलि-विरचिते योग-सूत्रे द्वितीयः साधन-पादः ॥

॥तृतीयोऽध्यायः॥

॥विभूति-पादः॥

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा ॥3.1॥

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ॥3.2॥

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः ॥3.3॥

त्रयमेकत्र संयमः ॥3.4॥

तज्जयात्प्रज्ञालोकः ॥3.5॥

तस्य भूमिषु विनियोगः ॥3.6॥

त्रयमन्तरङ्गं पूर्वेभ्यः ॥3.7॥

तदपि बहिरङ्गं निर्बीजस्य ॥3.8॥

व्युत्थाननिरोधसंस्कारयोरभिभवप्रादुर्भावौ
निरोधक्षणचित्तान्वयो निरोधपरिणामः ॥3.9॥

तस्य प्रशान्तवाहिता संस्कारात् ॥3.10॥

सर्वार्थतैकाग्रतयोः क्षयोदयौ चित्तस्य समाधिपरिणामः ॥3.11॥

ततः पुनः शान्तोदितौ तुल्यप्रत्ययौ चित्तस्यैकाग्रतापरिणामः ॥3.12॥

एतेन भूतेन्द्रियेषु धर्मलक्षणावस्थापरिणामा व्याख्याताः ॥3.13॥

शान्तोदिताव्यपदेश्यधर्मानुपाती धर्मी ॥3.14॥

क्रमान्यत्वं परिणामान्यत्वे हेतुः ॥3.15॥

परिणामत्रयसंयमाद् अतीतानागतज्ञानम् ॥3.16॥

शब्दार्थप्रत्ययानामितरेतराध्यासात्सङ्करस्तत्प्रविभाग-
संयमात्सर्वभूतरुतज्ञानम् ॥3.17॥

संस्कारसाक्षात्करणात्पूर्वजातिज्ञानम् ॥3.18॥

प्रत्ययस्य परचित्तज्ञानम् ॥3.19॥

न च तत्सालम्बनं तस्याविषयीभूतत्वात् ॥3.20॥

कायरूपसंयमात्तद्ग्राह्यशक्तिस्तम्भेचक्षुःप्रकाशासंप्रयोगेऽन्तर्धानम् ॥3.21॥

सोपक्रमं निरुपक्रमं च कर्म तत्संयमादपरान्तज्ञानमरिष्टेभ्यो
वा ॥3.22॥

मैत्र्यादिषु बलानि ॥3.23॥

बलेषु हस्तिबलादीनि ॥3.24॥

प्रवृत्त्यालोकन्यासात्सूक्ष्मव्यवहितविप्रकृष्टज्ञानम् ॥3.25॥

भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात् ॥3.26॥

चन्द्रे ताराव्यूहज्ञानम् ॥3.27॥

ध्रुवे तद्गतिज्ञानम् ॥3.28॥

नाभिचक्रे कायव्यूहज्ञानम् ॥3.29॥

कण्ठकूपे क्षुत्पिपासानिवृत्तिः ॥3.30॥

कूर्मनाड्यां स्थैर्यम् ॥3.31॥

मूर्धज्योतिषि सिद्धदर्शनम् ॥3.32॥

प्रातिभाद्वा सर्वम् ॥3.33॥

हृदये चित्तसंवित् ॥3.34॥

सत्त्वपुरुषयोरत्यन्तासंकीर्णयोः प्रत्ययाविशेषो भोगः
परार्थान्यस्वार्थसंयमात्पुरुषज्ञानम्॥3.35॥

ततः प्रातिभश्रावणवेदनादर्शास्वादवार्ता जायन्ते ॥3.36॥

ते समाधावुपसर्गा व्युत्थाने सिद्धयः ॥3.37॥

बन्धकारणशैथिल्यात्प्रचारसंवेदनाच्च चित्तस्य परशरीरावेशः ॥3.38॥

उदानजयाज्जलपङ्ककण्टकादिष्वसङ्ग उत्क्रान्तिश्च ॥3.39॥

समानजयाज्ज्वलनम् ॥3.40॥

श्रोत्राकाशयोः सम्बन्धसंयमाद्दिव्यं श्रोत्रम् ॥3.41॥

कायाकाशयोः सम्बन्धसंयमाल्लघुतूल-

समापत्तेश्चाकाशगमनम् ॥3.42॥

बहिरकल्पिता वृत्तिर्महाविदेहा ततः प्रकाशावरणक्षयः ॥3.43॥

स्थूलस्वरूपसूक्ष्मान्वयार्थवत्त्वसंयमाद्भूतजयः ॥3.44॥

ततोऽणिमादिप्रादुर्भावः कायसम्पत्तद्धर्मानभिघातश्च ॥3.45॥

रूपलावण्यबलवज्रसंहननत्वानि कायसम्पत् ॥3.46॥

ग्रहणस्वरूपास्मितान्वयार्थवत्त्वसंयमादिन्द्रियजयः ॥3.47॥

ततो मनोजवित्वं विकरणभावः प्रधानजयश्च ॥3.48॥

सत्त्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं

सर्वज्ञातृत्वं च ॥3.49॥

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम् ॥3.50॥

स्थान्युपनिमन्त्रणे सङ्गस्मयाकरणं पुनरनिष्टप्रसङ्गात् ॥3.51॥

क्षणतत्क्रमयोः संयमाद्विवेकजं ज्ञानम् ॥3.52॥

जातिलक्षणदेशैरन्यतानवच्छेदात् तुल्ययोस्ततः प्रतिपत्तिः ॥3.53॥

तारकं सर्वविषयं सर्वथाविषयम् अक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम् ॥3.54॥

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति ॥3.55॥

॥इति पतञ्जलि-विरचिते योग-सूत्रे तृतीयो विभूति-पादः ॥

॥चतुर्थोऽध्यायः॥

॥कैवल्य-पादः॥

जन्मौषधिमन्त्रतपःसमाधिजाः सिद्धयः ॥4.1॥

जात्यन्तरपरिणामः प्रकृत्यापूरात् ॥4.2॥

निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत् ॥4.3॥

निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात् ॥4.4॥

प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तमेकमनेकेषाम् ॥4.5॥

तत्र ध्यानजमनाशयम् ॥4.6॥

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम् ॥4.7॥

ततस्तद्विपाकानुगुणानामेवाभिव्यक्तिर्वासनानाम् ॥4.8॥

जातिदेशकालव्यवहितानामप्यानन्तर्यं

स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात् ॥4.9॥

तासामनादित्वं चाशिषो नित्यत्वात् ॥4.10॥

हेतुफलाश्रयालम्बनैः संगृहीतत्वादेषामभावे तदभावः ॥4.11॥

अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यध्वभेदाद्धर्माणाम् ॥4.12॥

ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः ॥4.13॥

परिणामैकत्वाद्वस्तुतत्त्वम् ॥4.14॥

वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयोर्विभक्तः पन्थाः ॥4.15॥

न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा किं स्यात् ॥4.16॥

तदुपरागापेक्षित्वाच्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम् ॥4.17॥

सदा ज्ञाताश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्यापरिणामित्वात् ॥4.18॥

न तत्स्वाभासं दृश्यत्वात् ॥4.19॥

एकसमये चोभयानवधारणम् ॥4.20॥

चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धेरतिप्रसङ्गः स्मृतिसङ्करश्च ॥4.21॥

चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम् ॥4.22॥

द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम् ॥4.23॥

तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि परार्थं संहत्यकारित्वात् ॥4.24॥

विशेषदर्शिन आत्मभावभावनाविनिवृत्तिः ॥4.25॥

तदा विवेकनिम्नं कैवल्यप्राग्भारं चित्तम् ॥4.26॥

तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्यः ॥4.27॥

हानमेषां क्लेशवदुक्तम् ॥4.28॥

प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः ॥4.29॥

ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः ॥4.30॥

तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम् ॥4.31॥

ततः कृतार्थानां परिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम् ॥4.32॥

क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः ॥4.33॥

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं-

स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति ॥4.34॥

॥इति पतञ्जलि-विरचिते योग-सूत्रे चतुर्थः कैवल्य-पादः ॥

योग शब्द व्युत्पत्ति एवं अर्थ-

'युज' धातु से 'घञ्' प्रत्यय करने से योग शब्द निष्पन्न होता है। युज्+घञ्=योग (युज् समाधौ)। योग दुःख की निवृत्ति कराने वाला है। गीता में भी कहा है-

"तं विद्याद् दुःख संयोगवियोगं योगसंज्ञितम्"॥ (गीता,6/23)

अर्थात् जो दुःखरूप संसार के संयोग से रहित है उसी का नाम योग है। **"योगः समाधिः स च सार्वभौमश्चित्तस्य धर्मः"**। योग समाधि है और यह समाधि चित्त की भूमियों में रहने वाला चित्त का धर्म है। **योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः**। चित्तवृत्तियों का निरोध योग है। चित्त **प्रकाशशील**, **चेष्टाशील** एवं **स्थैर्यशील** होने से 'त्रिगुणात्मक' है। **"चित्तशब्देनान्तः करणं बुद्धिमुपलक्षयति"** (तत्त्व वैशारदी)

योग-

युज् धातु तीन गणों में पायी जाती है- **युज्+घञ्=**

युज-समाधौ - दिवादिगण (आत्मनेपदी)- समाधि

युजिर्-योगे - रुधादिगण (उभयपदी)- जोड़

युज-संयमने - चुरादिगण (परस्मैपदी) - संयमन

संस्कृत-वाङ्मय में इन तीनों अर्थों वाले योग व शब्दों का प्रयोग होता रहा है। सांख्ययोगशास्त्र के योग शब्द का अभीष्ट अर्थ समाधि अर्थात् चित्तवृत्ति का निरोध ही स्वीकार किया गया है।

॥अथ योगानुशासनम् ॥

यहाँ पर **'अथ'** शब्द **'अधिकारार्थ'** है । योग का अर्थ समाधि है, और वह चित्त का सार्वभौम धर्म है । अर्थात् चित्त की सभी भूमियों में समाधि हो सकती है ।

॥चित्तभूमियां॥

क्षिप्तं, मूढं, विक्षिप्तम्, एकाग्रं, निरुद्धमिति चित्तभूमयः ।

चित्तभूमियां = (5)

1. क्षिप्त, 2.मूढ़, 3.विक्षिप्त, 4.एकाग्र, 5.निरुद्ध ।

1. **क्षिप्त**- "रजसा विषयेषु एव वृत्तिमत्"।
2. **मूढ**- "तमसा निद्रादिवृत्तिमत्" ।
3. **विक्षिप्तम्**- "क्षिप्ताद्विशिष्टं विक्षिप्तं सत्वाधिक्येन समादधदपि चित्तं रजोमात्रयाऽन्तरा विषयान्तरवृत्तिमत्"।
4. **एकाग्रम्**- "एकस्मिन्नेव विषयेऽग्रे शिखायस्य चित्तदीपस्य इति एकाग्रम्"।
5. **निरुद्ध**- "निरुद्धं च निरुद्धसकलवृत्तिकं संस्कारमात्रशेषमित्यर्थः"।

चित्त-

"चित्तशब्देनाऽत्र अन्तःकरणं बुद्धिमुपलक्षयति"।

चित्त शब्द से यहां पर 'अन्तःकरण' और **'बुद्धि'** को लक्षित किया गया है। चित्त की इन पांचों भूमियों में रहने वाला धर्म चित्त का सार्वभौम धर्म कहलाता है । इन भूमियों में से विक्षिप्त भूमि वाले चित्त की समाधि विक्षेप के कारण गौण हो जाने से योग की कोटि में नहीं आती। जो समाधि एकाग्र भूमि वाले चित्त में सम्भव होती है, तथा (आलम्बन रूप से बुद्धि में) स्थित पदार्थ को पूर्णतया प्रकाशित करती है, (अविद्यादि सभी) क्लेशों को नष्ट करती है, कर्म संस्कारों को प्रशिथिल (कार्याक्षम) करती है और **"असम्प्रज्ञात समाधि"** को सामने लाती है, वह समाधि **"सम्प्रज्ञातयोग"** कही जाती है । सम्प्रज्ञात योग 4 प्रकार का होता है-

1. वितर्कानुगत 2. विचारानुगत 3. आनन्दानुगत 4. अस्मितानुगत

॥चित्तवृत्तियां॥

"वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाऽक्लिष्टाः"॥ चित्त की क्लिष्ट और अक्लिष्ट वृत्तियाँ पाँच प्रकार की हैं ।

क्लिष्ट - बाहरी वृत्ति-संसार की ओर ।

अक्लिष्ट- विवकेख्याति ।

चित्तवृत्तियां- (5) "प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः" ॥

1. प्रमाण 2. विपर्यय 3. विकल्प 4. निद्रा 5. स्मृति।

1. प्रमाण- "प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि"। प्रत्यक्ष, अनुमान और आगम इन तीन प्रकार से साधित यथार्थ ज्ञान का नाम 'प्रमाण' है ।

2. विपर्यय- "विपर्ययो मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठितम्"। विपर्यय 'अतद्रूपप्रतिष्ठ' विषय का विपरीत 'मिथ्याज्ञान' कहलाता है ।

3. विकल्प- "शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः"। विकल्पवृत्ति शब्दज्ञान के अनुपाती और वस्तुशून्य अर्थात् अवास्तव पदार्थ (पद का अर्थमात्र) विषयक व्यवहार्य एक प्रकार का ज्ञान है ।

4. निद्रा- "अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा"। जागृत् तथा स्वप्न के अभाव के प्रत्ययस्वरूप अथवा हेतुभूत तमस् (जड़ता विशेष) को अवलम्बन करने वाली वृत्ति निद्रा कहलाती है ।

5. स्मृति- "अनुभूतविषयासंप्रमोषः स्मृतिः"। (संप्रमोषः=उपस्थिति) अनुभूत विषय का असम्प्रमोष अर्थात् तदनुरूप आकार युक्त वृत्ति स्मृति है । स्मृति दो प्रकार की है-

1. कल्पितस्मृतिविषय 2. यथार्थस्मृतिविषय ।

चित्तवृत्तीनाम् निरोधः-

"अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः"। (तत्-चित्तवृत्ति) अभ्यास और वैराग्य के द्वारा चित्तवृत्तियों का निरोध होता है ।

अभ्यास- "तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः"। स्थिति विषयक यत्न का नाम 'अभ्यास' है ।

वैराग्य - "दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम्"। दृष्ट और आनुश्रविक विषय में वितृष्णा चित्त का वशीकार संज्ञक वैराग्य होता है । ।

॥ईश्वरस्वरूप॥

"क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेषः ईश्वरः" ॥

क्लेश, कर्म, विपाक, आशय से रहित पुरुष विशेष ईश्वर है ।

(1) क्लेश पाँच हैं-

"अविद्याऽस्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः'।

1. अविद्या 2. अस्मिता 3. राग 4. द्वेष 5. अभिनिवेश।

1.अविद्या-'अनित्याऽशुचिदुःखानात्मसु,नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या'।

2. अस्मिता- 'दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मतेवास्मिता'।

3. राग - 'सुखातिशयानुरागः'।

4. द्वेष - 'दुःखानुशयी द्वेषः'।

5. अभिनिवेश - 'स्वरसंवाही विदुषोऽपि तथारूढोऽभिनिवेशः'।

(2) कर्म- "कुशलाकुशलानि कर्माणि"। पुण्य और पाप ये कर्म हैं ।

(3) विपाक- "कर्मफलं विपाकः"। कर्म का फ़ल ही विपाक है ।

(4) आशय- "तदनुगुणा वासना आशयाः"। विपाकजन्य संस्कार वासना है वही आशय है ।

तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम् ॥ (अतिशय सर्वज्ञता ईश्वर में होती है ।)
स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ॥ (काल से अनवच्छिन्न होने के कारण वह सबका गुरु है)।
तस्य वाचकः प्रणवः ॥ (ईश्वर का वाचक प्रणव है ।)
तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥ (उस प्रणव का जप करना चाहिये।)
ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च ॥ (उस समय जीवात्मा के विघ्नों का अभाव होता है ।)
"प्रच्छर्दनविधारणाभ्यां वा प्राणस्य"। प्राण के प्रच्छर्दन तथा विधारण के द्वारा भी चित्त स्थिति पाता है ।
प्रच्छर्दन-'रेचक', विधारण -'पूरक कुम्भक' का ग्रहण ।

॥योगाङ्ग॥

"यमनियमाऽऽसनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि"।
योगाङ्ग आठ हैं-

1. यम	2. नियम	3. आसन	4. प्राणायाम
5. प्रत्याहार	6. धारणा	7. ध्यान	8. समाधि ।

बाह्याङ्ग- **पाँच** । अन्तरङ्ग- **तीन** ।

(1) यम

"अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः"।
यम पाँच हैं-
1. अहिंसा 2. सत्य 3. अस्तेय 4. ब्रह्मचर्य 5. अपरिग्रह ।

1. **अहिंसा- 'अहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः'**। अहिंसा सर्वथा हमेशा सभी भूतों के प्रति अनभिद्रोह है ।
2. **सत्य- "सत्यं यथार्थे वाङ्मनसे"**। अर्थात् जिस प्रकार दृष्ट, अनुमित अथवा श्रुत हुआ है, उसी प्रकार मन में चिंतन और वाक्य में कथन सत्य कहलाता है ।
3. **अस्तेय-"स्तेयमशास्त्रपूर्वकं द्रव्याणां परतः स्वीकरणम्। तत्प्रतिषेधः पुनरस्पृहारूपमस्तेयमिति"**। अशास्त्रपूर्वक अवैधरूप से किसी दूसरे की वस्तु न लेना अस्तेय है ।
4. **ब्रह्मचर्यम्- "ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः"**। गुप्तेन्द्रियरूप उपस्थ का संयम ।
5. **अपरिग्रह-"विषयाणामर्जनरक्षणक्षयसङ्गहिंसादोषदर्शनादस्वीकरणम परिग्रहः"**। अर्जन, रक्षण, क्षय, सङ्ग और हिंसा विषयक इन पाँच प्रकार के दोषों को देखकर उनका ग्रहण न करना ही अपरिग्रह है।

"जातिकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम्"। जाति, देश, काल और समय से अनवच्छिन्न होकर सार्वभौम होने पर ये यम महाव्रत कहे जाते हैं ।

(2) नियम

"शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः"।
नियम पाँच हैं-
1. शौच 2. सन्तोष 3. तप 4. स्वाध्याय 5. ईश्वरप्रणिधान

1. **शौच- "शौचं मृज्जलादिजनितं मेध्याभ्यवहरणादि च बाह्यम्, आभ्यन्तरं-चित्तमलानामाक्षालनम्"**। मिट्टी और जल से जनित तथा मेध्य आहार इत्यादि शौच बाह्य होते हैं । आभ्यन्तर शौच चित्तमल का क्षालन है ।
2. **सन्तोष- "सन्तोषः सन्निहितसाधनादधिकस्यानुपादित्सा"**। केवल प्राणधारणयोग्य उपलब्ध साधन से अधिक साधन के ग्रहण की इच्छा न होना सन्तोष है ।
3. **तप- "तपो द्वन्द्वसहनम्"**। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी, इत्यादि व्रत समूह व्रत कहलाते हैं ।
4. **स्वाध्याय- "स्वाध्यायो मोक्षशास्त्राणामध्ययनं प्रणवजपो वा"**। मोक्षशास्त्राध्ययन अथवा प्रणवजप ही स्वाध्याय है ।
5. **ईश्वरप्रणिधान- "ईश्वरप्रणिधानं तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्"**। परम गुरु ईश्वर में सभी कर्म अर्पण करना ईश्वरप्रणिधान है ।

**"शय्यासनस्थोऽथ पथि व्रजन् वा स्वस्थः परिक्षीणवित्तर्कजालः।
संसारबीजक्षयमीक्षमाण स्यान्नित्यमुक्तोऽमृतभोगभागी"॥**

योगाङ्गों के प्रतिष्ठित हो जाने पर फल-

(1) यम-

1. **अहिंसा - "अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः"**। अहिंसा के प्रतिष्ठित हो जाने पर तत्सन्निधि में प्राणी 'निर्वैर' होते हैं ।
2. **सत्य- "सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्"**। सत्य प्रतिष्ठित हो जाने पर वाक्य 'क्रियाफ़लाश्रयत्व' गुण से युक्त होता है ।
3. **अस्तेय- "अस्तेयप्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्"**। अस्तेय की प्रतिष्ठा होने से 'सर्वरत्न' उपस्थित होते हैं ।
4. **ब्रह्मचर्य- "ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः"**। ब्रह्मचर्य की प्रतिष्ठा होने पर 'वीर्यलाभ' होता है ।
5. **अपरिग्रह- "अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्तासम्बोधः"**। अपरिग्रहस्थैर्य से 'जन्मकथन्ता' भूत, भविष्य, वर्तमान का ज्ञान होता है ।

(2) नियम-

1. **शौच- "शौचात् स्वाङ्गजुगुप्सा परैरसंसर्गः"**। शौच के प्रतिष्ठित हो

जाने से अपने शरीर में घृणा और पर के साथ संसर्ग की अनिच्छा होती है। **"सत्त्वशुद्धिसौमनस्यैकाग्र्येन्द्रियजयात्मदर्शनयोग्यत्वानि च"**। सत्त्वशुद्धि, सौमनस्य, ऐकाग्र्य, इन्द्रियजय तथा आत्मदर्शनयोग्यत्व की सिद्धि होती है।

2. **सन्तोष- "सन्तोषादनुत्तमसुखलाभः"**। सन्तोष से अनुत्तम सुख का लाभ होता है।

"यच्च कामसुखं लोके यच्च दिव्यं महत्सुखम्।
तृष्णाक्षयसुखस्यैते मार्हतः षोडशीं कलाम्"॥

3. **तप- "कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात् तपसः"**। तपाचरण से अशुद्धि का क्षय होने के कारण कायेन्द्रिय सिद्धि होती है।

4. **स्वाध्याय - "स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः"**। स्वाध्याय से इष्ट देवता के साथ मिलन होता है।

5. **ईश्वरप्रणिधान- "समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्"**। ईश्वरप्रणिधान से समाधि सिद्ध होती है।

(3) आसन

"स्थिरमुखमासनम्"। निश्चल और सुखावह उपवेशन ही आसन है। **जैसे-** पद्मासन, वीरासन, भद्रासन, स्वस्तिकासन, पंडासन, सोपाश्रय, पर्यंक, क्रौञ्चनिषदन, हस्तिनिषदन, उष्ट्रनिषदन, समसंस्थान इत्यादि स्थिरसुख अर्थात् यथासुख होने से आसन कहे जाते हैं।

आसनसिद्धि-"प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमापत्तिभ्याम्"। 'प्रयत्नशैथिल्य' और 'अनन्तसमापत्ति' के द्वारा आसन की सिद्धि होती है।

"ततो द्वन्द्वानभिघातः"। आसन सिद्धि से द्वन्द्वाभिघात नहीं होता है।

(4) प्राणायाम

"तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः"। आसन की सिद्धि होने के पश्चात् श्वासप्रश्वास का गतिविच्छेद ही प्राणायाम है।

''बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसङ्ख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः"। वह प्राणायाम 'बाह्यवृत्ति', 'आभ्यन्तरवृत्ति' और 'स्तम्भवृत्ति' होता है।

बाह्यवृत्ति/रेचक - "यत्र प्रश्वासपूर्वको गत्यभावः स बाह्यः"। जिसमें प्रश्वासपूर्वक गत्यभाव है वह बाह्यवृत्तिक प्राणायाम है।

आभ्यन्तर/पूरक- "यत्र श्वासपूर्वको गत्यभावः स आभ्यन्तरः"। जिसमें श्वासपूर्वक गत्यभाव है वह आभ्यन्तर वृत्तिक है।

स्तम्भवृत्ति/कुम्भक- "स्तम्भवृत्तिर्यत्रोभयाभावः सकृत्प्रयत्नाद्भवति"। जिसमें बाह्य और आभ्यन्तर दोनों वृत्ति का अभाव होता है, वह स्तम्भवृत्तिक प्राणायाम होता है, और वह एककालीन प्रयत्न द्वारा होता है।

केवलकुम्भक-''बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी चतुर्थः"। बाह्य तथा आभ्यन्तर विषय का आक्षेपक चतुर्थ प्राणायाम होता है।

"ततः क्षीयते प्रकाशावरणम्"। उससे प्रकाश का आवरण क्षीण होता है। **"धारणस्तु योग्यता मनसः"**। और सब धारणाओं में मन की योग्यता होती है। प्राणायाम की सिद्धि से प्रकाश पर पड़ा हुआ पर्दा क्षीण होता है।

(5) प्रत्याहार

"स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः"। स्व विषय के साथ संयुक्त होने पर इन्द्रियों का जो स्वरूपानुकार होता है, इन्द्रियों का प्रत्याहार भी उसी प्रकार का होता है। **यथा- "मधुकरराज-मक्षिका उत्पतन्तमनुत्पतन्ति निविशमानमनु निविशन्ते। तथेन्द्रियाणि चित्तनिरोधेनिरुद्धानि इत्येष प्रत्याहारः"**। जिस प्रकार उड़ती हुई रानी मक्षिका के पीछे अन्य मधुवायी मक्षिकाएं भी उड़ती हैं और उसके बैठने पर बैठ जाती है, उसी प्रकार इन्द्रियगण भी चित्तनिरोध होने पर निरुद्ध होते हैं, यही प्रत्याहार है।

"ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम्"। प्रत्याहार की सिद्धि से इन्द्रियसमूह की परमावश्यता होती है।

(6) धारणा

"देशबन्धश्चित्तस्य धारणा"। देश में बन्ध होना ही चित्त की धारणा है। यथा- **'नाभिचक्रे, हृदयपुण्डरीके......'**। नाभिचक्र, हृदयपुण्डरीक, मूर्द्धज्योति, नासिकाग्र, जिह्वाग्र, इत्यादि देश में बन्ध होना अथवा बाह्य विषय का जो वृत्तिमात्र के द्वारा बन्ध है, वही धारणा है।

(7) ध्यान

"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्"। उस धारणा में प्रत्यय (ज्ञानवृत्ति) की एकतानता ध्यान है।

(8) समाधि

"तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधि:"। ध्येयाकारनिर्भास ध्यान ही जब ध्येयस्वभावावेश से अपने ज्ञानात्मक स्वभावशून्य के समान होता है, तब उसे समाधि कहते हैं।

''त्रयमेकत्र संयमः"। (ये तीनों संयम कहे जाते हैं।)

"तज्जयात् प्रज्ञालोकः"।। (संयम को जीतने से प्रज्ञा का प्रकाश होता है।)

'वैशारद्यकाल' में **'विशिष्टप्रज्ञा'** उत्पन्न होती है जिसका नाम **'ऋतम्भरा'** है, वह **"अन्वर्थनामा"** होती है।

"आगमेनानुमानेन ध्यानाभ्यासरसेन च।
त्रिधा प्रकल्पयन्प्रज्ञां लभते योगमुत्तमम्"

समाधि के दो प्रकार-

1. **सम्प्रज्ञात** 2. **असम्प्रज्ञात**

(1) सम्प्रज्ञात-

"वितर्कविचारानन्दास्मितारूपानुगमात् संप्रज्ञातः"।

सम्प्रज्ञात समाधि के चार प्रकार-

1. **वितर्क** - "वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोगः"।
2. **विचार** - "सूक्ष्मो विचारः"।
3. **आनन्द** - "आनन्दो आह्लादः"।
4. **अस्मिता** - "एकात्मिका संविदस्मिता"।

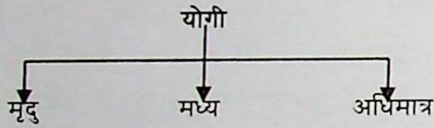
(2) असम्प्रज्ञात-

"विरामप्रत्ययाभ्यासपूर्वः संस्कारशेषोऽन्यः"। विराम (सब प्रकार की आलम्बन वृत्ति के निरोध) के कारणभूत परवैराग्य के अभ्यास द्वारा साध्य संस्कार शेष रूप समाधि असम्प्रज्ञात है ।

"भवप्रत्ययो विदेहप्रकृतिलयानाम्"। विदेह देवताओं और प्रकृति तीनों को **'भव'** नामक असम्प्रज्ञात समाधि होती है ।

"श्रद्धावीर्यस्मृतिसमाधिप्रज्ञापूर्वक इतरेषाम्"। योगियों को 'उपाय' प्रत्यय नामक असम्प्रज्ञात समाधि होती है । **श्रद्धा**- अभिरुचि, **वीर्य**- उत्साह, **स्मृति**- ध्यान, **समाधि**- समाहित, **प्रज्ञा**- विवेकज्ञान ।

"तीव्रसंवेगानामासन्नः"। **"मृदुमध्याधिमात्रत्वात् ततोऽपि विशेषः"**। योगी मृदुमात्र व अधिमात्र उपायों के भेद से नौ प्रकार के होते हैं ।



"ईश्वरप्रणिधानाद्वा"। ईश्वर प्रणिधान से भी असम्प्रज्ञात समाधि होती है।

क्रियायोग- "तपः स्वाध्यायेश्वर-प्रणिधानानि-क्रियायोगः"॥

अर्थात् क्रियायोग के तीन पक्ष है

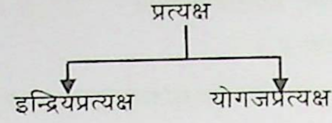
1 तप, 2 स्वाध्याय , 3 ईश्वर प्रणिधान योग ।

॥कैवल्य॥

कैवल्य- "सत्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यम्"।

वेदान्त के अनुसार पुरुष एक है। प्रकृति की कोई भी वस्तु किसी को कुछ भी नहीं दिखा सकती है। "असम्प्रज्ञात समाधि" में भी कहीं न कहीं कुछ मोह रहता है। (प्रकृति का प्रकृति तथा पुरुष का पुरुष होना ही कैवल्य है।) अर्थात् दोनों का पृथक्-पृथक् ज्ञान ही कैवल्य है। प्रकृति पुरुष के एक होने पर व्युत्थान होता है।

- **पुरुष**- निरोधावस्था = मूलरूप,
- **पुरुष**- व्युत्थानावस्था = प्रतिविम्बितरूप, प्रतिविम्बित पुरुष के सत्व, रज, तम, गुण होते हैं।
- **"पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिस्रवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति"।**
- **जीवनमुक्ति**- जीवनावस्था में कैवल्य को 'जीवनमुक्ति' कहा जाता है।
- **विदेहमुक्ति**- शरीरपात के पश्चात् गुणों का प्रतिस्रव होने से विदेहमुक्ति होती है ।



॥सबीज समाधि॥

समापत्तिः-

"क्षीणवृत्तेरभिजातस्येवमणेर्ग्रहीतृग्रहणग्राह्येषुतत्स्थतदञ्जनतासमापत्तिः"। अभिजात (सुनिर्मल) मणि के समान ग्रहीता, ग्रहण तथा ग्राह्य में क्षीणवृत्ति चित्त की तत्स्थिरता और तदञ्जनता समापत्ति होती है ।

स्थूलविषयक समापत्तियाँ- 1. सवितर्का 2. निर्वितर्का ।

1. सवितर्का- "शब्दार्थज्ञानविकल्पैः सङ्कीर्णा सवितर्का समापत्तिः"। शब्दार्थज्ञान के विकल्प से संकीर्ण या मिश्रित समापत्ति 'सवितर्का' है ।

2. निर्वितर्का-"स्मृतिपरिशुद्धौ स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा निर्वितर्का"। स्मृतिपरिशुद्धि होने से स्वरूपशून्य जैसी अर्थमात्रनिर्भासा समापत्ति 'निर्वितर्का' होती है ।

सूक्ष्मवस्तुविषयक समापत्तियाँ- 1. सविचारा 2. निर्विचारा ।

1.सविचारा-"तत्राभूतसूक्ष्मेष्वभिव्यक्तधर्मकेषुदेशकालनिमित्तानुभवावच्छिन्नेषु या समापत्तिः सा सविचारेत्युच्यते"। अभिव्यक्तधर्मवाले सूक्ष्मभूत में देश, काल तथा निमित्त के अनुभव द्वारा जो अवच्छिन्न समापत्ति होती है, वह 'सविचारा' है ।

2.निर्विचारा-"या पुनः सर्वथा सर्वतः शान्तोदिताव्यपदेश्यधर्मानवच्छिन्नेषु सर्वधर्मानुपातिषु सर्वधर्मात्मकेषु समापत्तिः सा निर्विचारित्युच्यते"। शांत, उदित तथा अव्यपदेश, इस धर्मत्रय द्वारा अनवच्छिन्न सर्वधर्मानुपाती, सर्वधर्मात्मक (सूक्ष्मभूत में) इस प्रकार की जो सब तरह से समापत्ति होती है, वह 'निर्विचारा' है ।

"निर्विचारवैशारद्येऽध्यात्मप्रसादः"। निर्विचार समापत्ति के निर्मल हो जाने पर योगी को आध्यात्मिक प्रसाद प्राप्त होता है।

"प्रज्ञाप्रसादमारूह्य अशोच्यः शोचतो जनान्
भूमिष्ठानित शैलस्थः सर्वान्प्राज्ञोऽनुपश्यति"॥

"ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा" **'वैशारद्यकाल'** में **'विशिष्टप्रज्ञा'** उत्पन्न होती है, जिसका नाम **'ऋतम्भरा'** है, वह **"अन्वर्थनामा"** होती है ।

(ये चार समापत्तियां **'सबीज'** समाधि हैं ।)

चित्त के विक्षेप उत्पन्न करने वाले विघ्न - (9)

"व्याधिस्त्यानसंशयप्रमादाऽलस्याऽविरतिभ्रान्तिदर्शनाऽलब्धभूमिकत्वाऽनवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः"॥

1. व्याधि, 2. स्त्यान,
3. संशय, 4. प्रमाद,
5. आलस्य, 6. अविरति,
7. भ्रान्तिदर्शन, 8. अलब्धभूमिकत्व,
9. अनवस्थितत्त्व।

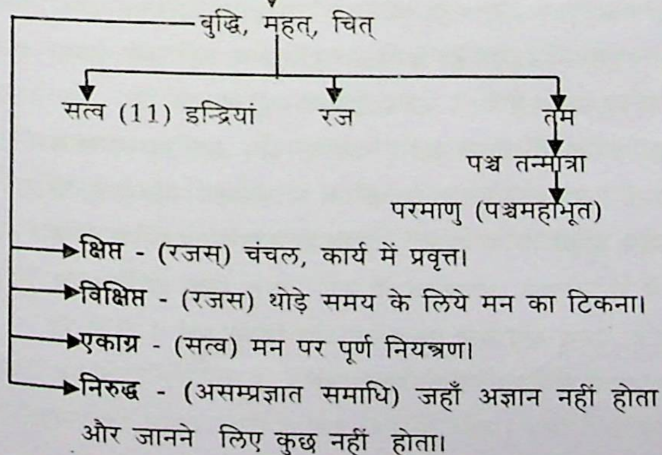
1. **व्याधि-** 'तत्र व्याधिर्धातुरसकरणवैषम्यम्' । (शारीरिकपीड़ा)
2. **स्त्यान-** 'स्त्यानमकर्मण्यता चित्तस्य'। (अकर्मण्यता)
3. **संशय-** 'संशय उभयकोटिस्पृग्विज्ञानं स्यादिदमेवंनैवं स्यादिति'।
4. **प्रमाद-** 'प्रमादः समाधिसाधनामभावनम्'। (असावधानी)
5. **आलस्य-** 'आलस्यं कायस्य चित्तस्य च गुरुत्वादप्रवृत्तिः'।
6. **अविरति-** 'अविरतिश्चित्तस्य विषयसम्प्रयोगात्मा गर्धः। (वैराग्याभाव)
7. **भ्रान्तिदर्शन-** 'भ्रान्तिदर्शनं विपर्ययज्ञानम्'। (मिथ्याज्ञान)
8. **अलब्धभूमिकत्व-** 'अलब्धभूमिकत्वं समाधिभूमेरलाभः'।
9. **अनवस्थितत्त्व-** 'अनवस्थितत्वं लब्धायां भूमौ चित्तस्याप्रतिष्ठा'।

विक्षेपों के साथी - (5)

"दुःख दौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः"।

1. दुःख, 2. दौर्मनस्य,
3. अङ्गकम्पन, 4. श्वास,
5. प्रश्वास

1. **दुःख-** 'येनाभिहताः प्राणिनस्तदुपघाताय प्रयतन्ते तद् दुःखम्।
2. **दौर्मनस्य -** 'दौर्मनस्यमिच्छाविघाताचेतसः क्षोभः'।
3. **अङ्गकम्पन-** 'यदङ्गान्योजयति कम्पयति तदङ्गमेजयत्वम्'।
4. **श्वास-** 'प्राणो यद् बाह्यं वायुमाचामति स श्वासः'।
5. **प्रश्वास-** 'यत्कोष्ठयं वायुं निःसारयति स प्रश्वासः'।



सम्प्रज्ञात समाधि -

सवितर्क - सवितर्क, "वितर्कश्चित्तस्यालम्बने स्थूल आभोगः"।

सविचार - वितर्कविकल, "सूक्ष्मो विचारः"।

सानन्द - विचारविकल, "आनन्दो ह्लादः"।

सास्मिता - विकलोऽस्मितामात्र, "एकात्मिका संविदस्मिता" अस्मिता का ज्ञान ।

योगदर्शन दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ-

योगसूत्र	-	पतंजलि
योगभाष्य	-	वेदव्यास
तत्त्ववैशारदी	-	वाचस्पति मिश्र
भोजवृत्ति	-	धारेश्वर भोज
योगवार्तिक	-	विज्ञानभिक्षु
योगमणिप्रभा	-	रामानन्द सरस्वती
नीयन्यायमालाविस्तार	-	माधवाचार्य

॥ब्रह्मसूत्र॥

परिचय-

ब्रह्मसूत्र, वेदान्त दर्शन का अधारभूत ग्रन्थ है। इसके रचयिता **बादरायण** हैं। इसे **वेदान्त सूत्र, उत्तर-मीमांसा सूत्र, शारीरक सूत्र** और **भिक्षु सूत्र** आदि के नाम से भी जाना जाता है। इस पर अनेक भाष्य भी लिखे गये हैं। अपने वर्तमान रूप में इसकी रचना अनुमानतः **400 से 450 ईसा** पश्चात हुई थी। ब्रह्मसूत्र में उपनिषदों की दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचारों को साररूप में एकीकृत किया गया है। वेदान्त के तीन मुख्य स्तम्भ माने जाते हैं - **उपनिषद्, श्रीमद्भगवद्गीता एवं ब्रह्मसूत्र**। इन तीनों को **प्रस्थानत्रयी** कहा जाता है। इसमें **उपनिषदों** को **श्रुति प्रस्थान, गीता** को **स्मृति प्रस्थान** और **ब्रह्मसूत्रों** को **न्याय प्रस्थान** कहते हैं। ब्रह्मसूत्रों को न्याय प्रस्थान कहने का अर्थ है कि ये वेदान्त को पूर्णतः तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है।

जिस प्रकार मीमांसासूत्र में वेद के कर्मकांड भाग की व्याख्या प्रस्तुत की गई है उसी तरह चार अध्यायों में विभाजित लगभग 500 वेदान्तसूत्रों में वैदिक वाङ्मय के अंतिम भाग अर्थात् उपनिषदों की व्याख्या दी गई है। उपनिषदों में प्रतिपादित सिद्धांत इतने परस्पर विरोधी तथा बिखरे हुए है कि उनसे एक प्रकार का दार्शनिक मत निकालना कठिन है। वेदान्त सूत्र **'समन्वय'** के सिद्धांत का सहारा लेकर उपनिषदों में एक

दार्शनिक दृष्टि का प्रतिपादन करता है। पर ये सूत्र स्वयं इतने संक्षिप्त है कि बिना व्याख्या के सहारे उनसे अर्थ निकालना कठिन है। इनकी संक्षिप्तता के कारण इनपर कई व्याख्याएँ लिखी गई जो परस्पर विरोधी दृष्टि से वेदांत का प्रतिपादन करती है। वेदांत के सभी प्रस्थान इन सूत्रों को अपना प्रमाण मानते हैं। ब्रह्म का प्रतिपादन करने के कारण इन सूत्रों को ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं। ब्रह्मसूत्र में **चार अध्याय** हैं जिनके नाम हैं - **समन्वय, अविरोध, साधन एवं फल।** प्रत्येक अध्याय के चार पाद हैं। कुल मिलाकर इसमें **555** सूत्र हैं।

अध्याय नाम	**सूत्र सँख्या**	**अधिकरण संख्या**
समन्वय	134	39
अविरोध	157	47
साधन	186	67
फल	78	38
कुल	555	191

ब्रह्मसूत्र पर भाष्य-

ब्रह्मसूत्र पर बहुत से भाष्य लिखे गए हैं। उनमें सबसे प्राचीन **श्री निम्बार्क भाष्य है।** श्री शंकराचार्य ने ब्रह्मसूत्र पर **ब्रह्मसूत्रशांकरभाष्य** लिखा जिसके ऊपर वाचस्पति मिश्र भास्कर तथा पद्मपाद ने भाष्य लिखा। श्री रामानुजाचार्य द्वारा ब्रह्मसूत्र का जो भाष्य लिखा गया उसका नाम **'श्रीभाष्य'** है। इसके अतिरिक्त **श्री मध्वाचार्य, श्रीजयतीर्थ, श्री व्यासतीर्थ** आदि ने भी ब्रह्मसूत्र के भाष्य लिखे हैं।

- **ब्रह्मसूत्र-** वादरायण, **शारीरक भाष्य-** शङ्कराचार्य,
- **अध्याय-** 4, **पाद-** 16,
- **अधिकरण-** 191, **सूत्र-** 555
- बादरायण से पूर्व उपनिषदों की व्याख्या करने वाले ऋषि -**"आत्रेय, आश्मरथ्य, औडुलौमि, कार्ष्णायिनि, काशकृत्स्न, जैमिनि, बादरि, पाराशर"** आदि ।
- आचार्य शंकर के गुरु - **गौड़पादाचार्य** (इन्होंने गौड़पादकारिका के अन्तर्गत **'अजातवाद'** सिद्धान्त की स्थापना की ।
- शङ्कराचार्य के परवर्ती आचार्यों ने जगत् के स्वरूप को **आभासवाद, अवच्छेदवाद** एवं **प्रतिविम्बवाद** के आधार पर स्पष्ट किया है-
- **आभासवाद** - प्रवर्तक सुरेश्वराचार्य
- **प्रतिबिम्बवाद** - प्रवर्तक प्रकाशामयति
- **अवच्छेदवाद** - प्रवर्तक वाचस्पति मिश्र

- **वेदान्त** - बादरायण (चतुर्लक्षणी)
- प्रथम अध्याय – **समन्वयाध्याय**
- द्वितीय अध्याय – **अविरोधाध्याय**
- तृतीय अध्याय – **साधनाध्याय**
- चतुर्थ अध्याय - **फलाध्याय**

॥जिज्ञासाधिकरण॥

वेदान्तमीमांसाशास्त्रस्य व्याचिख्यासितस्य इदम् आदिमं सूत्रम्।

जिस वेदान्त-मीमांसाशास्त्र की हम व्याख्या करना चाहते हैं, उसका यह प्रथम सूत्र है।

1. "अथातो ब्रह्मजिज्ञासा" ।

सूत्रार्थ- अथ-अनन्तर; अतः-हेत्वर्थक, ब्रह्मजिज्ञासा-ब्रह्मणः जिज्ञासा

1. तत्र अथ शब्दः आनंतर्यार्थः परिगृह्यते न अधिकारार्थः। ब्रह्मजिज्ञासायाः अनधिकार्यत्वात्। मंगलस्य च वाक्यार्थे समन्वयाभावात्। अर्थान्तर एव हि अथशब्दः श्रुत्या मंगल प्रयोजनो भवति ।

1. यहाँ अथ शब्द का आनन्तर्यार्थ किया जाता है आरंभ नहीं, क्योंकि ब्रह्मजिज्ञासा का आरंभ नहीं किया जा सकता। और मंगल का वाक्यार्थ में समन्वय नहीं होता इसलिये, अन्य अर्थ में प्रयुक्त हुआ ही 'अथ' शब्द श्रवणद्वारा मङ्गल का प्रयोजक होता है।

किसी भी ग्रन्थ के आरम्भ में विषय, प्रयोजन, संवन्ध और अधिकारी, इस अनुबंधचतुष्टय का निरूपण किया जाता है। यहाँ **विषय 'ब्रह्म'** है। **प्रयोजन** है **'मोक्ष'**। इसकी प्राप्ति के लिए जिज्ञासु में प्रवृत्ति पैदा करने वाला ही **'अध्यासभाष्य'** है। ब्रह्मज्ञान ही ब्रह्म और मोक्ष का संवन्ध है; और **साधनचतुष्टयसंपन्न** ही **अधिकारी** है। यह सब इस पहले सूत्र के भाष्य में निश्चित किया गया है। अथ शब्द के चार अर्थ-**आरंभ, मंगल, पूर्वप्रकृतापेक्षा** और **अनन्तर** का विचार किया गया है। यहाँ किस अर्थ को लेना है? व्याकरण शास्त्र में ' अथ शब्दानुशासनम्', कहा गया है। योगशास्त्र ने भी 'अथ योगानुशासनम्', इस प्रकार अपने पहले सूत्र में अथ शब्द का अर्थ 'आरंभ' किया है। क्या यहाँ भी 'ब्रह्म जिज्ञासा का आरंभ' ऐसा अर्थ करना है? नहीं। क्योंकि **ज्ञातुम् इच्छा-जिज्ञासा**, जानने की इच्छा का नाम जिज्ञासा है। ये या तो रहती है या नहीं रहती 'इच्छा का आरंभ करना' ऐसा कहने का कोई अर्थ नहीं है।

मंगल अर्थ करना भी उचित नहीं है क्योंकि **'अथ ब्रह्मजिज्ञासा-मंगल ब्रह्मजिज्ञासा'** ऐसा कहने पर वाक्य के अर्थ से समन्वय नहीं होगा; दो अलग-अलग वाक्य ही हो जायेंगे। 'लेकिन शिष्टाचारपालन के लिये ग्रंथारंभ में मंगलाचरण आवश्यक है न?' ऐसा पूछा तो ठीक है, आवश्यक है, परन्तु अथ शब्द का प्रयोग और किसी अर्थ में हो तो भी उसके श्रवणमात्र से ही मंगल हो जाता है।

अतः शब्दो हेत्वर्थः । यस्मात् वेद एव अग्निहोत्रादीनां श्रेयः साधनानाम् अनित्यफलतां दर्शयति "तद्यथेह कर्मजितो लोकः क्षीयत एवमेवामुत्र पुण्यजितो लोकः क्षीयते" (छां.8.1.6) इत्यादिः। तथा ब्रह्मविज्ञानादपि परं पुरुषार्थं दर्शयति "ब्रह्मविदाप्नोति परम्" (तै. 2.1) इत्यादिः। तस्मात् यथोक्तसाधनसंपत्त्यनन्तरं ब्रह्मजिज्ञासा कर्तव्या ।

'अतः' शब्द हेतुवाचक है। 'जैसे यहाँ (खेती आदि से उपार्जित) भोग्यपदार्थ क्षीण हो जाते हैं, उसी प्रकार परलोक में पुण्य से सम्पादन किये हुये लोकों का क्षय हो जाता है (छान्दोग्य8.1.6), इत्यादि श्रुतिवाक्य कल्याण के साधक अग्निहोत्र आदि के फल (स्वर्ग आदि) की अनित्यता दर्शाते हैं। इसी प्रकार 'ब्रह्म को जानने वाला मोक्ष प्राप्त करता है' (तै. 2.1) इत्यादि श्रुतियां ब्रह्मज्ञान से ही परम पुरुषार्थ की प्राप्ति बताती हैं। इसलिये, उपर्युक्त साधनसम्पत्ति प्राप्त करने के पश्चात् ब्रह्मजिज्ञासा करनी चाहिये।

कुछ स्थलों पर श्रुति में कहा गया है कि सोमपान करके मरणरहित हो गये इत्यादि इससे लगता है कि स्वर्गादि फल नित्य हैं। वेद ही बाद में कहता है कि वह अनित्य है। यहाँ नित्य कहा है कर्म के स्तुत्यर्थ में । परन्तु श्रुति ही कहती है कि ब्रह्मविज्ञान से होनेवाला मोक्ष नित्य है। इसलिये, साधन संपत्युपेत साधक ही ब्रह्माजिज्ञासा कर सकता है।

ब्रह्मणो जिज्ञासा ब्रह्मजिज्ञासा। ब्रह्म च वक्ष्यमाण लक्षणम् "जन्माद्यस्य यतः" इति। अत एव न ब्रह्मशब्दस्य जात्याद्यर्थान्तरम् आशङ्कितव्यम्।

ब्रह्म की जिज्ञासा कह्मजिज्ञासा है। आगे ' जन्माद्यस्य यतः' इस सूत्र में जिसका लक्षण कहा जायेगा, वह ब्रह्म है। इसी कारण से वह शंका नहीं करनी चाहिये कि ब्रह्म शब्द का जाति आदि कोई दूसरा अर्थ है। ब्रह्म शब्द का ब्राह्मण जाति, चतुर्मुख ब्रह्माजी, वेद, जीव आदि अर्थ भी श्रुति, स्मृति में मिलता है। यहाँ ब्रह्मशब्द का प्रयोग इन अर्थों में नहीं हुआ है। जगत् के जन्म, स्थिति और लय के कारणरूप में ही हुआ है।

ब्रह्मणः इति कर्मणि षष्ठी न शेषे, जिज्ञास्यापेक्षत्वात् जिज्ञासायाः जिज्ञास्यान्तर अनिर्देशाच्च। ननु शेषषष्ठीपरिग्रहेऽपि ब्रह्मणो जिज्ञासाकर्मत्वं न विरुध्यते, संबंध सामान्यस्य विशेषनिष्ठत्वात्? एवमपि प्रत्यक्षं ब्रह्मणः कर्मत्वम् उत्सृज्य सामान्यद्वारेण परोक्षं कर्मत्वं कल्पयतो व्यर्थः प्रयासः स्यात्। न व्यर्थः, ब्रह्माश्रित अशेषविचार- प्रतिज्ञानार्थत्वात् इति चेत्? न। प्रधानपरिग्रहे तदपेक्षितानाम् अर्थाक्षिप्तत्वात् । ब्रह्म हि ज्ञानेन आप्तुमिष्टतमत्वात् प्रधानम्। तस्मिन् प्रधाने जिज्ञासा कर्मणि परिगृहीते यैर्जिज्ञासितैर्विना ब्रह्म जिज्ञासितं न भवति तानि अर्थाक्षिप्तान्येव इति न पृथक् सूत्रयितव्यानि। यथा "राजासौ गच्छति" इत्युक्ते सपरिवारस्य राज्ञो गमनम् उक्तं भवति, तद्वत्।

'ब्रह्मणः' यह कर्मवाचक षष्ठी है, शेषवाचकषष्ठी नहीं है, क्योंकि जिज्ञासा को जिज्ञास्य की अपेक्षा रहती है और (ब्रह्म के सिवा) दूसरे जिज्ञास्य का निर्देश भी नहीं है। यदि ऐसा कहो कि शेषषष्ठी के ग्रहण करने में भी ब्रह्म के जिज्ञासा का कर्म होने में कुछ विरोध नहीं हैं, क्योंकि जो सम्बन्धसामान्य का वाचक है, वह विशेषसम्बन्ध को भी दिखलाता ही है, तो इस प्रकार भी ब्रह्म के प्रत्यक्ष कर्मत्व को छोड़ कर सामान्यसम्बन्ध द्वारा परोक्ष कर्मत्व को कल्पना करने में व्यर्थ प्रयास होगा। यदि ऐसा कहो कि वह प्रयास व्यर्थ नहीं हैं, क्योंकि ब्रह्म के आश्रित सब पदार्थों के विचार की प्रतिज्ञा करना प्रयोजन है तो ऐसा भी नहीं है, क्योंकि प्रधान का परिग्रह होने पर, उसको अपेक्षा रखनेवाले सब पदार्थों की अर्थतः स्वीकृति हो जाती है। ज्ञान से प्राप्त करने के लिए इष्टतम (अत्यन्त हष्ट) ब्रह्म है, अतः वह प्रधान है। जिज्ञासा के कर्म उस प्रधान का ग्रहण होते ही जिनकी जिज्ञासा हुए बिना ब्रह्म की जिज्ञासा नहीं होती, उन सबकी अर्थतः स्वीकृति हो ही जाती है, इसलिए सूत्र में उनको अलग कहने की आवश्यकता नहीं है। जैसे 'यह राजा जाता है' ऐसा कहने से ही परिवारसहित राजा के गमन का कथन हो जाता है ।

- **अथ** - "आनन्तर्यार्थ" (मङ्गल का प्रयोजक),
- **अतः**- हेत्वर्थः।
- **"ब्रह्मणो जिज्ञासा ब्रह्मजिज्ञासा"। 'ब्रह्मणः जिज्ञासा'**- साक्षात्कारपर्यन्तं ज्ञानस्येच्छा ब्रह्मजिज्ञासा- **ब्रह्मणः** - 'कर्मणि षष्ठी' 'न शेषे जिज्ञास्यापेक्षत्वात्'। (कर्मणि षष्ठी से षष्ठीतत्पुरुष समास) यहां पर षष्ठी शेषे से षष्ठी नहीं होती।
- **शेष अर्थ**- सम्बन्धसामान्य, प्रत्यक्षार्थ ग्रहण, परोक्षार्थ ग्रहण।
- **जिज्ञासा** - "ज्ञातुम् इच्छा जिज्ञासा"। जिज्ञासा के 'सा' में सन् (इच्छा वाचक) प्रत्यय है। इच्छा का कर्म - **ज्ञान**। इच्छा का विषय - **फल**।
- **ब्रह्म प्रसिद्धमप्रसिद्धं वा स्यात्। सामान्यर्थे प्रसिद्धम्**- "सर्वस्यात्मत्ववाच्य ब्रह्मतत्त्वप्रसिद्धिः, तद्विशेषं प्रति विप्रतिपत्तेः"। **ब्रह्मप्रसिद्धम्**- "ब्रह्म नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावं, सर्वज्ञं, सर्वशक्तिसमन्वितम्"।
- **ब्रह्म** - 'बृंहणात् ब्रह्म' (बृहि वृद्धौ) आत्मा के अस्तित्व की प्रसिद्धि से आत्मा ही ब्रह्म है।
- जन्मादिधर्म के ज्ञान का फल - अभ्युदय (अनुष्ठान की अपेक्षा)
- ब्रह्मज्ञान का फल – **मोह**
- **ब्रह्मज्ञान की इच्छा के चार साधन –**

  (1) नित्यानित्यवस्तुविवेक (2) इहामुत्रभोगविराग

  (3) शमदमादिसाधनसम्पत्ति (4) मुमुक्षत्व।
- ब्रह्म की अवगति प्रमाण से इष्ट है- **ज्ञान प्रमाण**।

"ज्ञानेन हि प्रमाणेन अवगन्तुम् इष्टं ब्रह्म"।

- **पुरुषार्थः - "ब्रह्मावगतिर्हि पुरुषार्थः"**। (ब्रह्म की अवगति ही पुरुषार्थ है।)

2. "जन्माद्यस्य यतः"।

सूत्रार्थ- अर्थात् जन्मादि = जन्म, आदि (उत्पत्ति , स्थिति और प्रलय), अस्य=इस जगत् के, यतः = जिससे होते हैं , वह ब्रह्म है । इस पद की सामान्य व्याख्या यह है की जो जड़ - चेतनात्मक जगत् सर्वसाधारण के देखने, सुनने और अनुभव में आ रहा है, जिसकी अद्भुत रचना के किसी एक अंश पर भी विचार करने से बड़े से बड़े वैज्ञानिकों को आश्चर्यचकित होना पड़ता है, इस विचित्र विश्व के जन्म आदि जिससे होते हैं अर्थात् जो सर्वशक्तिमान् परमेश्वर अपनी अलौकिक शक्ति से इस सम्पूर्ण जगत् की रचना करता है तथा इसका धारण पोषण तथा नियमित रूप से संचालन करता है एवं फिर प्रलयकाल आने पर जो इस समस्त विश्व को अपने में विलीन कर लेता है, वह परमात्मा ही ब्रह्म है । श्रीमद् भागवत में भी यही कहा गया है- **"परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च"** अर्थात् इस परमेश्वर की ज्ञान , बल और क्रियारूप स्वाभाविक दिव्य शक्ति नाना प्रकार की ही सुनी जाती है।

- **जन्म** – उत्पत्तिः,
- **आदि** - आदि से जन्म, स्थिति, नाश का ग्रहण किया जाता है ।
- **'जन्माद्यस्य यतः'** इसमें **"तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहिः"** समास है।
- **तद्गुणसंविज्ञान बहुव्रीहि-** जन्म, स्थिति प्रलय।
- **अतद्गुणसंविज्ञाने-** स्थिति, प्रलय ।
- **'यतः' इति पदेन ब्रह्मणः जगत् प्रति 'निमित्तकारणं' स्वीक्रियते।** जन्मादि का ग्रहण ''वस्तुस्थिति'' और ''श्रुतिनिर्देश'' से है।
- तीन भावविकार- **जन्म, स्थिति, लय** ।
- **जन्माद्यस्य यतः** - तटस्थ लक्षण- **"कदाचित्कत्वे सति व्यावर्तकं तटस्थ लक्षणम्"।**
- **सच्चिदानन्दं ब्रह्म, ज्ञानमनन्तं ब्रह्म- स्वरूप लक्षण ।**
- **षष्ठी** - "षष्ठी जन्मादि धर्मसम्बन्धार्था"। (षष्ठी वि.से जन्मादि धर्म से धर्मी के सम्बन्ध का द्योतन करती है।)
- **यतः** - कारण, 'यतः इति कारण निर्देशः'।
- ब्रह्मज्ञान भी वस्तु के अधीन है- **''ब्रह्मज्ञानमपि वस्तुतन्त्रम्।''**

॥शास्त्रयोनित्यधिकरण॥

3. "शास्त्रयोनित्वात्"।

सूत्रार्थ- ब्रह्मसूत्र अध्याय 1 पाद 1 का तीसरा सूत्र है 'शास्त्रयोनित्वात्' अर्थात् शास्त्र की योनि होने के कारण ब्रह्म सर्वज्ञ है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद इन वेदों के कर्म-काण्ड और ज्ञान काण्ड पुराण, न्याय, मीमांसा, धर्मशास्त्र, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द शास्त्र, ज्योतिष आदि विद्या स्थानों को पोषित करने वाले ऋग्वेद का मूल ब्रह्म है। ऋग्वेद से ब्रह्म के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है अतः ऋग्वेद ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने का प्रमाण है आधार है कारण है। ब्रह्म वेदान्त शास्त्र द्वारा ही जाना जा सकता है। ब्रह्म स्वरूप बतलाना ही वेदान्त शास्त्र का लक्ष्य है। ब्रह्म स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होने के पश्चात् भेद बुद्धि नष्ट हो जाती है। 'मैं ब्रह्म हूँ, यह जीवात्मा बद्ध है' इन श्रुति वचनों का तात्पर्य यही है कि जीव और ब्रह्म अभिन्न है। 'मैं ब्रह्म हूँ' जो ऐसा जानता है वह ब्रह्म मूल ही हो जाता है। 'ब्रह्म सब कुछ देखता रहता है उसे कोई नहीं देख सकता। वह सब कुछ जानता रहता है किन्तु उसे कोई नहीं जान सकता। जीवात्मा स्वयं ब्रह्म होते हुए भी अज्ञान के कारण संसारी बन जाता है, इस अज्ञान के नष्ट होते ही जीव ब्रह्म-स्वरूप बन जाता है। अपने यथार्थ स्वरूप को पहचान लेना यानी यह जान लेना कि जीव-ब्रह्म स्वरूप ही है मोक्ष है। श्वेताश्वतरोपनिषद् में वर्णन है कि ब्रह्म के लिए कार्य रूप शरीर नहीं है - कारण रूप इन्द्रियाँ नहीं है - न कोई उसके समान है, न उससे बढ़कर है उसकी शक्ति महान व नाना प्रकार की है। हाथ न होने पर भी वह ग्रहण करता है, पैर न होने पर भी चलता है, आँख न होने पर भी देखता है, कान न होने पर भी सुनता है। जो कुछ जानने योग्य है वह सब जानता है किन्तु उसे जानने वाला कोई नहीं है।"

- **"शास्त्रं योनि प्रमाणं यस्मिन् तस्य भावः शास्त्रयोनित्वं तस्मात् शास्त्रयोनित्वात्"।**
- **योनि** – 'कारण', 'प्रमाण'।
- योनि से यहाँ 'कारण' यह अर्थ लिया है।
- ब्रह्म प्रत्यक्षादि प्रमाणों से नहीं अपितु शब्द प्रमाण से गम्य है।

॥समन्वयाधिकरण॥

4. तत्तु समन्वयात् -

'तु' - 'तु शब्दः पूर्वपक्षव्यावृत्त्यर्थः'।

सूत्रार्थ- जगत् की उत्पत्ति आदि कार्य ब्रह्म ही करता है। अनुमान आदि प्रमाणों से इसकी पुष्टि होने से। प्रस्तुत सूत्र में सूत्रकार यह बतलाना चाहता है कि इस सुंदर सृष्टि को देखकर के यह अनुमान होता है कि जरूर इसका कोई बनाने वाला होगा क्योंकि बिना बनाये कुछ भी नहीं बनता। फिर इस सुंदर विशाल सृष्टि का निर्माण अपने आप कैसे हो सकता है यह शब्द प्रमाण वेद के साथ साथ अनुमान प्रमाण से भी प्रमाणित हो रहा है अर्थात् सिद्ध हो रहा है। जैसे एक घड़े को देखकर उसके निमित्त कारण कर्ता कुम्हार का ज्ञान होता है।

वेदान्त में आए पदों का ब्रह्मस्वरूप के स्वरूप में निश्चित समन्वय अवगत होने पर अन्य अर्थ की कल्पना करना ठीक नहीं है। ऐसा करने पर दोष उपस्थित होते हैं - **'श्रुतहानि' 'अश्रुतकल्पना'।**

"यागाद्यनुष्ठायिनाम् एव विद्यासमाधिविशेषाद् उत्तरेण पथा गमनं।

इष्टापूर्तदत्तसाधनैः धूमादिक्रमेण दक्षिणेन पथा गमनं"।

- **क्रिया**- "क्रिया हि नाम सा यत्र वस्तुस्वरूपनिरपेक्षा एव चोद्येतु पुरुषचित्तव्यापारधीना च"।
- ज्ञान- "ज्ञानं तु प्रमाणजन्यं"।
- **शङ्कराचार्य का ब्रह्म भेदत्रय शून्य है -**
  स्वगत - ब्रह्म बिना शरीर का है तो उसका कोई भेद नहीं होता।
  सजातीय - ब्रह्म का दूसरा सजातीय कोई नहीं है।
  विजातीय - ब्रह्म से अलग कोई नहीं है।
  रामानुज केवल स्वगत को मानते हैं।
- **शुद्धाद्वैत** - इनके मतानुसार जब तक माया का ज्ञान है तब तक शुद्ध ब्रह्म को नहीं जाना जा सकता। इनके आचार्य 'वल्लभाचार्य' हैं।
- **द्वैतवाद** - जीव ब्रह्म अलग-अलग हैं, इनमें नियम-नियामक भाव सम्बन्ध् है। उदाहरण- जल और वर्षा सब जल है।
- **द्वैताद्वैतवाद** - जल और बर्फ एक ही है भेद से अलग है।

॥न्यायदर्शन॥

न्याय दर्शन भारत के छः वैदिक दर्शनों में एक दर्शन है। इसके प्रवर्तक ऋषि **अक्षपाद गौतम** हैं जिनका न्यायसूत्र इस दर्शन का सबसे प्राचीन एवं प्रसिद्ध ग्रन्थ है। जिन साधनों से हमें ज्ञेय तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, उन्हीं साधनों को 'न्याय' की संज्ञा दी गई है। **देवराज** ने 'न्याय' को परिभाषित करते हुए कहा है- **नीयते विवक्षितार्थः अनेन इति न्यायः** (जिस साधन के द्वारा हम अपने विवक्षित (ज्ञेय) तत्त्व के पास पहुँच जाते हैं, उसे जान पाते हैं, वही साधन न्याय है।)

दूसरे शब्दों में, जिसकी सहायता से किसी सिद्धान्त पर पहुँचा जा सके, उसे न्याय कहते हैं। इसे तर्कशास्त्र, प्रमाणशास्त्र, हेतुविद्या, वादविद्या तथा **आन्वीक्षिकी** भी कहा जाता है। **वात्स्यायन** के अनुसार **'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः'** प्रमाणों द्वारा अर्थ (सिद्धान्त) का परीक्षण ही न्याय है। न्यायशास्त्र उच्चकोटि के संस्कृत साहित्य और विशेषकर भारतीय दर्शन का प्रवेशद्वार है। वैशेषिक दर्शन की ही भांति न्यायदर्शन में भी पदार्थों के तत्त्व ज्ञान से निःश्रेयस् की सिद्धि बतायी गयी है। न्यायदर्शन में 16 पदार्थ माने गये हैं-

1. प्रमाण – ये मुख्य चार हैं – प्रत्यक्ष , अनुमान , उपमान एवं शब्द।
2. प्रमेय – ये बारह हैं – आत्मा, शरीर, इन्द्रियाँ, अर्थ , बुद्धि, ज्ञान, उपलब्धि , मन, प्रवृत्ति , दोष, प्रेत्यभाव , फल, दुःख और अपवर्ग।
3. संशय **4. प्रयोजन** **5. दृष्टान्त**
6. सिद्धान्त – चार प्रकार के है : सर्वतन्त्र सिद्धान्त , प्रतितन्त्र सिद्धान्त, अधिकरण सिद्धान्त और अभ्युपगम सिद्धान्त।
7. अवयव **8. तर्क** **9. निर्णय**
10 वाद **11 जल्प** **12 वितण्डता**
13. हेत्वाभास – ये पांच प्रकार के होते हैं : सव्यभिचार, विरुद्ध, प्रकरणसम, साध्यसम और कालातीत।
14. छल – वाक् छल , सामान्य छल और उपचार छल।
15. जाति **16. निग्रहस्थान ।**

न्यायदर्शन का इतिहास-

गौतम के **'न्यायसूत्र'** से ही न्यायशास्त्र का इतिहास स्पष्ट रूप से प्रारम्भ होता है। प्राचीन ग्रन्थों में इस न्यायशास्त्र के कतिपय सिद्धान्तों की चर्चा तो आज भी विशद रूप से उपलब्ध है; परन्तु उस प्राचीन तर्कशास्त्र का सम्यक् एवं सर्वांगपूर्ण स्वरूप क्या और कैसा था, इसका सही ज्ञान किसी को नहीं है। **'बौद्ध दर्शन'** के प्रकरणों में यह उल्लेख मिलता है कि बौद्ध मत वाले अपने मत का प्रतिपादन आस्तिक सिद्धान्तों के विरुद्ध किया करते थे। इसी का प्रतिषेध करने हेतु न्यायदर्शन की संरचना हुई। बुद्ध का समय **छठी शताब्दी** ईसा पूर्व माना जाता है। यही वह समय था जब गौतम ने न्यायशास्त्र की रचना की। न्यायदर्शन का एक नाम **तर्कशास्त्र** भी है। प्राचीन ग्रन्थ शास्त्रों में किन्हीं-किन्हीं स्थानों में गौतम तथा कहीं-कहीं **अक्षपाद** को न्यायदर्शन का रचयिता कहा गया है। **उमेश मिश्र** द्वारा रचित **'भारतीय दर्शन'** में कहा गया है कि तर्कशास्त्र बौद्धों के पहले भी था और वह बड़ा व्यापक था। इसके भिन्न-भिन्न प्राचीन नाम हैं। यथा - **आन्वीक्षिकी, हेतुशास्त्र, हेतुविद्या, तर्कशास्त्र, तर्कविद्या, वादविद्या, प्रमाणशास्त्र, वाकोवाक्य, तक्की, विमंसि** आदि।

न्यायसूत्र की संरचना कब हुई, इसका निर्णय कर पाना बहुत कठिन है। कारण कि विद्वानों ने ई.पू. छठवीं शताब्दी से लेकर ईसा पूर्व पाँचवी शताब्दी के बीच अपनी मान्यतायें प्रस्तुत की हैं, परन्तु सबके अपने-अपने पक्ष तर्कयुक्त हैं। उससे किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँचा जा सकता। न्यायशास्त्र के समग्र विचार दो धाराओं में विभक्त किए जा सकते हैं - प्रमेयप्रधान और प्रमाणप्रधान। **गौतम** से **गंगेशोपाध्याय** के पूर्व तक के विद्वानों की रचनाओं के विचार **प्रमेयप्रधान** हैं और **गंगेशोपाध्याय** की **तत्त्वचिंतामणि** तथा उसपर आधारित परवर्ती विद्वानों की रचनाओं के विचार **प्रमाणप्रधान** हैं। प्रमेयप्रधान विचार वाले ग्रंथसमूह को **'प्राचीन न्याय'** तथा प्रमाणप्रधान विचारवाले ग्रंथसमूह को **'नव्य न्याय'** कहा जाता है। प्राचीन न्याय की भाषा सरल और पदार्थविवेचन स्थूल है तथा नव्य न्याय की भाषा जटिल और पदार्थविवेचन सूक्ष्म है।

भाष्य ग्रन्थ-

न्यायसूत्र के पश्चात् का जो साहित्य उपलब्ध है, उन सबमें **वात्स्यायनकृत 'न्यायभाष्य'** का प्रथम स्थान माना जाता है। न्यायभाष्य पर **'न्यायवार्तिक'** नाम की एक टीका **'उद्योतकर'** ने लिखी है, जिसमें न्यायशास्त्र के प्रमेयों के सही स्वरूप को जानने की सर्वाधिक उपादेयता विद्यमान है। इनका काल भी ईसा की पाँचवीं-छठीं शताब्दी के आसपास ही है। उद्योतकर द्वारा रचित **'न्यायवार्तिक'** नामक टीका प्रकाशित होने के पश्चात् भी न्यायशास्त्र पर बौद्धों का आघात बन्द नहीं हुआ, जिसके कारण ख्यातिप्राप्त टीकाकार **वाचस्पति मिश्र** को न्यायवार्तिक के ऊपर भी एक टीका लिखनी पड़ी, जो **'न्यायवार्तिकतात्पर्यटीका'** के नाम से प्रसिद्ध अत्यधिक महत्त्वपूर्ण टीका है। विद्वानों ने वाचस्पति मिश्र का समय **ईसा की नवीं शताब्दी** मानी है। इन्होंने ही इस न्यायशास्त्र को शुद्ध एवं लिपिबद्ध किया। इसी शुद्धता के कारण ही आज यह लेखा-जोखा उपलब्ध है कि न्यायदर्शन में **5 अध्याय** तथा **10 आह्निक** हैं, **84 प्रकरण** एवं **528 सूत्र** हैं, **196 पद** एवं **8385 अक्षर** हैं।

॥न्यायसिद्धान्तमुक्तावली॥

॥अथानुमानखण्डः॥

॥अनुमिति॥

"व्यापारस्तु परामर्शः करणं व्याप्तिधीर्भवेत्,॥66॥
अनुमायां ज्ञायमानं लिङ्गं तु करणं न हि ।
अनागतादिलिङ्गेन न स्यादनुमितिस्तदा" ॥67॥

'अनुमिति' रूप ज्ञान के लिये **'व्याप्ति'** का ज्ञान **'करण'** है और **'परामर्श'** रूप ज्ञान **'व्यापार'** है । प्राचीन नैयायिकों के अनुसार जो ज्ञायमान (अर्थात् वर्तमान काल में ज्ञान का विषयभूत) धूमादि (लिङ्ग) अनुमिति का करण है । उनका यह कथन ठीक नहीं है क्योंकि यदि ऐसा मान लिया जाए तो **'अनागतादिलिङ्ग'** (भूतकालिक और भविष्यत्-कालिक) हेतु के द्वारा अनुमिति नहीं हो पायेगी ।

परामर्श

"व्याप्यस्य पक्षवृत्तित्वधीः परामर्श उच्यते" ॥

'व्याप्ति' से युक्त **'व्याप्य'** (धूम आदि) का **'पक्ष'** (पर्वत) आदि में रहने की जो स्थिति है, ऐसे ज्ञान को **'परामर्श'** कहते हैं ।

व्याप्ति

"व्याप्तिः साध्यवदन्यस्मिन्नसम्बन्ध उदाहृतः॥68॥
अथवा हेतुमन्निष्ठविरहाप्रतियोगिना ।
साध्येन हेतोरैकाधिकरण्यं व्याप्तिरुच्यते" ॥69॥

'साध्य' (जो धूमादि हेतु के द्वारा अनुमेय वह्नि आदि) से युक्त भिन्न स्थान पर **'हेतु'** (धूमादि) का सम्बन्ध न होना ही व्याप्ति कहलाता है । अर्थात् जहां पर **'साध्य'** और **'साधन'** का सम्बन्ध निश्चित हो वहीं पर व्याप्ति होती है । अथवा **'हेतु'** के अधिकरण में रहने वाले अभाव के **'अप्रतियोगी'** (अविरोधी) **'साध्य'** के साथ **'हेतु'** का एक ही अधिकरण में रहना 'व्याप्ति' है ।

पक्ष

"सिषाधयिषया शून्या सिद्धिर्यत्र न तिष्ठति।
स पक्षस्तत्र वृत्तित्वज्ञानादनुमितिर्भवेत्" ॥70॥

'साध्य' सिद्ध (अनुमान) करने की इच्छा से शून्य सिद्धि जहां नहीं है, वह 'पक्ष' कहलाता है । अर्थात् जहां पर **'साधन'** के द्वारा **'साध्य'** की सिद्धि की जाए उसे **'पक्ष'** कहते हैं । उस पक्ष में **'वृत्तित्व'** (आश्रय) के ज्ञान से अनुमिति होती है ।

॥हेत्वाभास॥

"अनैकान्तो विरुद्धश्चाऽप्यसिद्धः प्रतिपक्षितः।
कालात्ययापदिष्टश्च हेत्वाभासास्तु पञ्चधा" ॥71॥

"हेतुवत् आभासन्त इति हेत्वाभासा:"। जिनमें यथार्थतः हेतु न होते हुए भी सामान्यतः देखने पर हेतु का आभास होता हो, उन्हें हेत्वाभास कहते हैं । हेत्वाभास पाँच प्रकार का होता है -

(1) अनैकान्त (2) विरुद्ध (3) असिद्ध
(4) सत्प्रतिपक्ष (5) कालात्ययापदिष्ट

(1) अनैकान्त (सव्यभिचार) हेत्वाभास-

"आद्यः साधारणस्तु स्यादसाधारणकोऽपरः।
तथैवाऽनुपसंहारी त्रिधाऽनैकान्तिको भवेत्" ॥72॥

अनैकान्तिक हेत्वाभास के तीन भेद हैं-

1. साधारण 2. असाधारण 3. अनुपसंहारी ।

1. साधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास-

"यः सपक्षे विपक्षे च भवेत्साधारणस्तु सः"।

जो हेतु **'सपक्ष'** और **'विपक्ष'** दोनों में रहता है, वह 'हेतु' 'साधारण' अनैकान्तिक हेत्वाभास कहलाता है । **उदाहरण- "पर्वतो वह्निमान् सत्त्वात्"** । 'पर्वत अग्नि वाला है, सत्त्व होने के कारण' ।

2. असाधारण अनैकान्तिक हेत्वाभास-

"यस्तूभयस्माद्व्यावृत्तः सत्त्वसाधारणो मतः" ॥73॥

जो **'सपक्ष'** और **'विपक्ष'** दोनों में नहीं रहता, अर्थात् जो केवल **'पक्ष'** में रहता है, वह 'हेतु' 'असाधारण' अनैकान्तिक हेत्वाभास कहलाता है। उदाहरण- **"पृथिवी नित्या गन्धवत्वात्"**। 'पृथ्वी नित्य है, गन्धवती होने के कारण'। इस उदाहरण में गन्धवत्त्व हेतु 'असाधारण' अनैकान्तिक हेत्वाभास है, क्योंकि गन्धवत्त्व हेतु 'सपक्ष' और 'विपक्ष' दोनों में न रहकर केवल पक्षमात्र में ही रहता है।

3. अनुपसंहारी अनैकान्तिक हेत्वाभास-

"तथैवाऽनुपसंहारी केवलान्वयिपक्षकः"।

केवल अन्वयि पक्ष वाला 'हेतु' अनुपसंहारी अनैकान्तिक हेत्वाभास कहलाता है। उदाहरण- **"सर्वं तुच्छं प्रमेयत्वात्"**। 'सब कुच्छ तुच्छ है प्रमेय होने के कारण'। इसमें केवल अन्वय पक्ष होने से अनुपसंहारी अनैकान्तिक हेत्वाभास है।

(2) विरुद्ध हेत्वाभास-

"यः साध्यवति नैवाऽस्ति स विरुद्ध उदाहृतः"॥74॥

जो हेतु साध्य के अधिकरण में नहीं रहता है, उसे विरुद्ध हेत्वाभास कहते हैं। उदाहरण- **"गोत्व आदि के साध्य होने पर अश्वत्व आदि को हेतु मानना"**।

(3) असिद्ध हेत्वाभास-

आश्रयासिद्धिराद्या स्यात्, स्वरूपासिद्धिरप्यथ।
व्याप्यत्वासिद्धिरपरा स्यादसिद्धिरतस्त्रिधा ॥75॥

असिद्धि दोष से युक्त असिद्ध नामक हेत्वाभास तीन प्रकार का होता है। 1. आश्रयासिद्ध 2. स्वरूपासिद्ध 3. व्याप्यत्वासिद्ध।

1. आश्रयासिद्ध-

"पक्षासिद्धिर्यत्र पक्षो भवेन्मणिमयो गिरिः"।

जहां पर **'पक्ष'** की असिद्धि होती है, वह आश्रयासिद्ध हेत्वाभास कहलाता है। उदाहरण- **"मणिमयो गिरिः धूमत्वात्"**। 'मणिमय पर्वत अग्नि वाला है, धूम होने के कारण'। इस उदाहरण में 'पक्ष' पर्वत मणिमय कभी भी नहीं हो सकता।

2. स्वरूपासिद्ध-

"ह्रदो द्रव्यं धूमवत्त्वादत्राऽसिद्धिरथाऽपरा" ॥76॥

जिस **'पक्ष'** में हेतु का स्वरूप नहीं रहता वह स्वरूपासिद्ध हेत्वाभास है। उदाहरण- **"ह्रदो द्रव्यं धूमवत्वात्"** 'तालाब द्रव्य है, धूम होने के कारण'। इस उदाहरण में 'धूम' रूप हेतु पक्षभूत 'तालाव' में हो ही नहीं सकता।

3. व्याप्यत्वासिद्ध-

"व्याप्यत्वासिद्धिरपरा नीलधूमादिके भवेत्"।

'व्याप्यत्वासिद्धि' दोषयुक्त हेत्वाभास को व्याप्यत्वासिद्ध हेत्वाभास कहते हैं। उदाहरण- **"पर्वतो वह्निमान्, नीलधूमात्"**। 'पर्वत अग्नि वाला है नील धूम होने के कारण'। यहां नील शब्द के बिना भी धूम हेतु होता है। अतः यहां नील पद व्यर्थ है।

(4) सत्प्रतिपक्ष (प्रकरणसम)-

"विरुद्धयोः परामर्शे हेत्वोः सत्प्रतिपक्षता" ॥ 77॥

पस्पर दो विरुद्ध साध्यों की सिद्धि के लिए प्रयुक्त दो हेतुओं के परामर्श में **सत्प्रतिपक्षता** होती है। **'सत्'** का अर्थ है 'विद्यमान' और **'प्रतिपक्ष'** का अर्थ है 'विरोधी'। अर्थात् विरोधी हेतु की विद्यमानता होना सत्प्रतिपक्ष नामक हेत्वाभास होता है। **उदाहरण-** "शब्द नित्य है, श्रवणेन्द्रिय द्वारा ग्राह्य होने के कारण, शब्दत्व की तरह, इसी तरह शब्द अनित्य है, कार्य अर्थात् उत्पन्न होने के कारण, घट की तरह"।

(5) कालात्ययापदिष्ट (बाध)-

"साध्यशून्यो यत्र पक्षस्त्वसौ बाध उदाहृतः।
उत्पत्तिकालीनघटे गन्धादिर्यत्र साध्यते" ॥78॥

जहाँ पक्ष साध्य से शून्य होता है, वह बाध नामक हेत्वाभास कहलाता है। जहाँ उत्पत्तिकालीन घट में गन्ध आदि साधित किया जाता है। **उदाहरण- "उत्पत्तिकालीन घट गन्धयुक्त है, पृथिवीत्व होने के कारण"**। यहाँ पर उत्पत्तिकालीन घट पक्ष है, उसके साध्य में गन्ध नहीं रहता। क्योंकि न्याय के अनुसार उत्पत्तिकालीन पदार्थ एक क्षण तक निर्गुण और निष्क्रिय ही रहता है।

प्रमुख सन्दर्भ-

- **न्यायदर्शन के अनुसार प्रत्यक्ष ज्ञान -**
  न्याय में बुद्धि को ही ज्ञान कहा है।
  आत्मा + मन + इन्द्रिय + विषय = ज्ञान (बुद्धि)
- **पञ्चावयव वाक्य -**
  प्रतिज्ञा - "पर्वतो वह्निमान्" (शब्द)
  हेतु - "धूमात्" (अनुमान)
  उदाहरण - "यत्र यत्र धूमः तत्र तत्र वह्नि यथा महानसम" (प्रत्यक्ष)
  उपनयन - "तथा चायम्" (उपमान)
  निगमन - "तस्मात्तथेति"
- न्यायसूत्र में अध्याय - (5)
- **बौद्ध** 2 वाद मानते हैं - **प्रतिज्ञा, हेतु।**
- **मीमांसक**- 3 वाद मानते हैं- **प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण।**

- **न्याय**- 5 वाद मानते हैं- **प्रतिज्ञा हेतु, उदाहरण, उपनयन, निगमन।**
- **मीमांसा**- उदाहरणादि या उदाहरणान्त।
- **21 प्रकार के दुःख**- 7 इन्द्रियां, 7 विषय, 7 ज्ञान, सुख, दुःख, शरीर =(21)
- **उलूक** - कणाद, **औलुक्य दर्शन** - वैशेषिक,
- **अक्षपाद** – गौतम, न्यायदर्शन,
- **गौण प्रमा** - 'व्यावसायात्मक ज्ञान' **न्याय** - 'अयं घटः'- (सविकल्पक ज्ञान)
- **मुख्य प्रमा**- 'अनुव्यवसायात्मक ज्ञान'
- **न्याय** - 'अहं घटं जानामि'।
- **न्याय**- 'जातिविशिष्ट व्यक्ति',
- **'मीमांसा'**- 'घटत्व',
- **साङ्ख्ययोग**- 'सामान्य घटत्व' और विशेष आकृति से युक्त जिसकी सत्ता है- 'धट'। **"प्रक्रियाभेदात् फलभेदः"**।
- **ज्ञान** -**"ज्ञानं तु यथार्थभूतविषयकं"**।

  विषय के आकार को धारण करना ही 'ज्ञान' है। यथार्थ ज्ञान वास्तविकता पर आधरित होता है। चेतना प्रकृति में प्रतिबिम्बित होती है, तदनन्तर वह त्रिगुणों के प्रभाव से विषय तक पहुँचती है, तत्पश्चात् ज्ञान होता है और वह ज्ञान भी 'यथार्थ' और 'अयथार्थ' होता है।

न्यायधारा के प्रमुख आचार्य एवं उनकी रचना-

1. **मेधातिथि गौतम** (550 ई.पू.)		
2. **गौतम**	-	न्यायसूत्र (पांच अध्याय)
3. **वात्स्यायन**	-	न्यायभाष्य
4. **उद्योतकर**	-	न्यायवार्तिक
5. **वाचस्पतिमिश्र**	-	तात्पर्यटीका
6. **जयन्तभट्ट**	–	न्यायमञ्जरी (गौतमसूत्रविवृत्ति)
7. **भाससर्वज्ञ**	-	न्यायसार, न्यायभूषणसार
8. **उदयन**	-	परिशुद्धि, लक्षणावली, लक्षणमाला, किरणावली, न्यायकुसुमाञ्जलि, बौद्धधिक्कार, न्यायपरिशिष्ट आत्मविवेक
9. **रघुनाथचिन्तामणि**	-	दीधिति टीका (तत्त्वचिन्तामणि पर)
10. **केशव मिश्र**	-	तर्कभाषा
11. **अन्नंभट्ट**	-	तर्कसंग्रह दीपिका

॥जैन दर्शन॥

जैन दर्शन एक प्राचीन भारतीय दर्शन है। इसमें अहिंसा को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। जैन धर्म की मान्यता अनुसार 24 तीर्थंकर समय-समय पर संसार चक्र में फंसे जीवों के कल्याण के लिए उपदेश देने इस धरती पर आते है। लगभग छठी शताब्दी ई॰ पू॰ में अंतिम तीर्थंकर, भगवान महावीर के द्वारा जैन दर्शन का पुनरावरण हुआ । इसमें वेद की प्रामाणिकता को कर्मकाण्ड की अधिकता और जड़ता के कारण मिथ्या वताया गया। जैन दर्शन के अनुसार जीव और कर्मो का यह सम्वन्ध अनादि काल से है। जव जीव इन कर्मो को अपनी आत्मा से सम्पूर्ण रूप से मुक्त कर देता हे तो वह स्वयं भगवान् वन जाता है। लेकिन इसके लिए उसे सम्यक् पुरुषार्थ करना पड़ता है। यह जैन धर्म की मौलिक मान्यता है।

सत्य का अनुसंधान करने वाले 'जैन' शब्द की व्युत्पत्ति **'जिन'** से मानी गई है, जिसका अर्थ होता है- **विजेता** अर्थात् वह व्यक्ति जिसने इच्छाओं (कामनाओं) एवं मन पर विजय प्राप्त करके हमेशा के लिए संसार के आवागमन से मुक्ति प्राप्त कर ली है। इन्हीं जिनो के उपदेशों को मानने वाले जैन तथा उनके साम्प्रदायिक सिद्धान्त जैन दर्शन के रूप में प्रख्यात हुए। जैन दर्शन **'अर्हत् दर्शन'** के नाम से भी जाना जाता है। जैन धर्म में चौबीस तीर्थंकर (महापुरूष, जैनों के ईश्वर) हुए जिनमें प्रथम **ऋषभदेव** तथा अन्तिम **महावीर** (वर्धमान) हुए। इनके कुछ तीर्थकरों के नाम ऋग्वेद में भी मिलते हैं, जिससे इनकी प्राचीनता प्रमाणित होती है।

जैन दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ **प्राकृत** (मागधी) भाषा में लिखे गये हैं। वाद में कुछ जैन विद्वानों ने **संस्कृत** में भी ग्रन्थ लिखे। उनमें 100 ई॰ के आसपास **आचार्य उमास्वामी** द्वारा रचित **तत्त्वार्थ** सूत्र बड़ा महत्वपूर्ण है। वह पहला ग्रन्थ है जिसमें संस्कृत भाषा के माध्यम से जैन सिद्धान्तों के सभी अंगों का पूर्ण रूप से वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् अनेक जैन विद्वानों ने संस्कृत में व्याकरण, दर्शन, काव्य, नाटक आदि की रचना की ।

जैन ग्रंथों में सात तत्त्वों का वर्णन मिलता हैं। यह हैं-**जीव- अजीव -आस्रव -बन्ध- संवर निर्जरा- मोक्ष** जीव का **पुद्गल** से मुक्त हो जाना ही 'मोक्ष' है। यह मोक्ष दो प्रकार का है- **भावमोक्ष** और **द्रव्यमोक्ष**। भावमोक्ष ही **जीवमुक्ति** है। यह वास्तविक मोक्ष से पहले की अवस्था है। इसमें चारों घातीय कर्मो का नाश हो जाता है। इसके बाद ही अघातीय कर्मों का नाश होने पर द्रव्य-मोक्ष भी प्राप्त हो जाता है। जैनियों के अनुसार मोक्ष प्राप्त करने के लिए बारह अनुप्रेक्षाओं से युक्त रहना आवश्यक है, जो इस प्रकार हैं- अनित्य, अषरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभत्व तथा धर्मानुप्रेक्षा। जैनों की ज्ञानमीमांसा तत्त्वमीमांसा के समान ही स्वतन्त्र सत्ता रखती है। ज्ञानमीमांसा के प्रामाणिक स्रोत प्रमाणों की संख्या जैन दर्शन में दो है-

प्रत्यक्ष, अनुमान । जैन दार्शनिक **'स्याद्वाद'** अर्थात् **'सप्तभंगीनय'** का प्रतिपादन करते हैं

महावीर स्वामी के उपदेशों से लेकर जैन धर्म की परंपरा आज तक चल रही है। महावीर स्वामी के उपदेश 41 सूत्रों में संकलित हैं, जो जैनागमों में मिलते हैं। उमास्वाति का **"तत्वार्थाधिगम सूत्र"** (300 ई.) जैन दर्शन का प्राचीन और प्रामाणिक शास्त्र है। सिद्धसेन दिवाकर (500 ई.), हरिभद्र (900 ई.), मेरुतुंग (14वीं शताब्दी), आदि जैन दर्शन के प्रसिद्ध आचार्य हैं। सिद्धांत की दृष्टि से जैन दर्शन एक ओर अध्यात्मवादी तथा दूसरी ओर भौतिकवादी है। वह आत्मा और पुद्गल (भौतिक तत्त्व) दोनों को मानता है। जैन मत में आत्मा प्रकाश के समान व्यापक और विस्तारशील है। पुनर्जन्म में नवीन शरीर के अनुसार आत्मा का संकोच और विस्तार होता है। स्वरूप से वह चैतन्य स्वरूप और आनंदमय है। वह मन और इंद्रियों के माध्यम के बिना परोक्ष विषयों के ज्ञान में समर्थ है। इस अलौकिक ज्ञान के तीन रूप हैं - **अवधिज्ञान, मनःपर्याय** और **केवलज्ञान**। पूर्ण ज्ञान को केवलज्ञान कहते हैं। यह निर्वाण की अवस्था में प्राप्त होता है। यह सब प्रकार से वस्तुओं के समस्त धर्मों का ज्ञान है। यही ज्ञान "प्रमाण" है। किसी अपेक्षा से वस्तु के एक धर्म का ज्ञान **"नय"** कहलाता है। **"नय"** कई प्रकार के होते हैं। ज्ञान की सापेक्षता जैन दर्शन का सिद्धांत है। यह सापेक्षता मानवीय विचारों में उदारता और सहिष्णुता को संभव बनाती है। सभी विचार और विश्वास आशिक सत्य के अधिकारी बन जाते हैं। पूर्ण सत्य का आग्रह अनुचित है। वह निर्वाण में ही प्राप्त हो सकता है। निर्वाण आत्मा का कैवल्य है। कर्म के प्रभाव से पुद्गल की गति आत्मा के प्रकाश को आच्छादित करती है। यह **"आस्रव"** कहलाता है। यही आत्मा का बंधन है। तप, त्याग और सदाचार से इस गति का अवरोध "संवर" तथा संचित कर्मपुद्गल का क्षय "निर्जरा" कहलाता है। इसका अंत "निर्वाण" में होता है। निर्वाण में आत्मा का अनंत ज्ञान और अनंत आनंद प्रकाशित होता है। निश्चय नय की अपेक्षा स्वभाव से प्रत्येक जीव परमात्मा,कर्म मल रहित है। जिस प्रकार जल को कितना ही तपा दो वह एक ना एक दिन शीतल अवश्य होगा क्योंकि शीतलता उसका स्वभाव है ठीक उसी प्रकार कर्म मल से तपा जीवात्मा का स्वभाव निरंजन है,निर्द्वंद है वह कभी न कभी उसे प्राप्त करेगा ही। जैन दर्शन परमात्मा को कर्ता धर्ता नहीं मानता वह मानता है जैसे शुभाशुभ कर्म किए हैं उसका फल अवश्य ही मिलेगा।

संक्षिप्त परिचय-

आर्हत - **परमेश्वर**

प्रमाण - **प्रत्यक्ष, अनुमान**

दो भेद- 1. **श्वेताम्बर**, 2. **दिगम्बर**

1.श्वेताम्बर- उमास्वामी (**श्वेतवस्त्र**) 1. देशवासी 2. स्थानवासी।

2. दिगम्बर - **निर्वस्त्र** 1. तारणपंथ 2. तेरापंथ 3. बीसपंथ।

मोक्षमार्गसाधनानि त्रिरत्नानि -

1. सम्यक् दर्शन 2. सम्यग्ज्ञान 3. सम्यक् चरित्र-

(1) सम्यग्दर्शन-

जैन तीर्थंकरों, सिद्धान्तों व तत्त्वों के प्रति आस्था रखना।

''तत्त्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्।''

(2) सम्यग्ज्ञान -

जैन सिद्धान्तों तथा आगमों का गहरा ज्ञान प्राप्त करना।

''यथावस्थिततत्त्वानां संक्षेपाद्विस्तरेण वा।
योऽवबोधस्तमत्राहुः सम्यग्ज्ञानं मनीषिणः।।''

ज्ञान दो प्रकार - **1. प्रमाण 2. नय।**

सम्यग्ज्ञान के पांच भेद-

1. मति 2. श्रुत 3. अवधि 4. मनः पर्याय 5. केवल।

''तज्ज्ञानं पञ्चविधं मतिश्रुतावधिमनः पर्यायकेवलभेदेन।''

1. मति- मन और इन्द्रिय से सम्बन्धित ज्ञान। (4) भेद -

1. अवग्रह 2. ईश 3. अपाय 4. धारणा।

2. श्रुत- श्रुतज्ञान दो भेद हैं - इसको **"निर्विकल्पक ज्ञान"** भी कहते हैं।

1. **अंगबाह्य** - उत्तरवर्ती जैनाचार्य संख्या (12)।

2. **अंगप्रविष्ट** –(12) श्रुतांगों का समावेश।

मति से श्रेष्ठ ज्ञान श्रुतज्ञान भूत, भविष्य, वर्तमान से सम्बन्धित है।

3. अवधि- इसको **"सविकल्पकज्ञान"** भी कहते हैं। इसके तीन भेद हैं- 1. देशावधि 2. परमावधि 3. सर्वावधि

4. मनः पर्याय

5. केवलज्ञान- यह सर्वश्रेष्ठ और तत्त्वज्ञान कहलाता है।

(3) सम्यक् चरित्र-

जैन सिद्धान्तों को अपने आचरण में ले लेना।

पञ्च महाव्रत -ये मुनियों के सन्दर्भ में – **"महाव्रत"** कहलाते हैं। गृहस्थों के सन्दर्भ में – **"अणुव्रत"** कहलाते हैं

1. अहिंसा, 2. सत्य/सूनृत, 3. अस्तेय 4 ब्रह्मचर्य, 5 अपरिग्रहः ।

सत् (5) - जीव, पुद्गल, आकाश, काल, धर्म ।

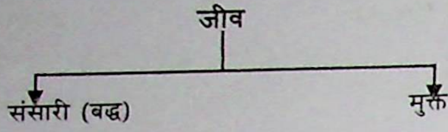
"अत्र संक्षेपस्तावज्जीवाजीव नामाख्ये द्वे तत्त्वे स्तः" ।

दो तत्त्व - 1 जीव 2 अजीव

1. जीव - बोधात्मको जीवः

2. अजीव - अबोधात्मको अजीवः।

जीव = वास्तविक, अनादि, अनन्त, अगोचर



संसारी -

1.समनस्क - 'संज्ञिनः समनस्काः' "शिक्षाक्रियाकलापग्रहणरूपा संज्ञा"।

2. अमनस्क - "तद्विधुरस्त्वमनस्काः"।

अमनस्क - (बद्ध)

1. स्थावर (5) = एकेन्द्रियाः (गतिहीन) तथा पृथ्वीकाय, जलकाय, अग्निकाय, वायुकाय।

2. त्रस (4) = 1. द्वीन्द्रिय (गतिशील) 2. त्रीन्द्रिय 3. चतुरिन्द्रिय 4. पंचेन्द्रिय। एते द्वीन्द्रियाः यथा - कृमि, शङ्ख जलौक इत्यादयः।

''तत्र द्वीन्द्रियादयः शङ्खगण्डोलकप्रभृतयः चतुर्विधस्त्रसाः।''

अजीव द्रव्य=(5)

1. पुद्गलः, 2. धर्मः, 3. अधर्मः, 4. आकाशः 5. कालः पञ्चविधः।

पुद्गल - अचेतन किन्तु रूपवान् (जड़ तत्त्व) पुद्-पूरण द्योतक,

अस्तिकाय द्रव्य (4)-

1. पुद्गलः, 2. धर्मः, 3. अधर्मः, 4. आकाशः

नास्तिकाय द्रव्य (1)- काल, (गल-गलन क्रिया वाला)।

पुद्गल के चार गुण - स्पर्श, रस, गंध, रूप।

पुद्गल दो प्रकार - **'अणवः स्कन्धश्च'**।

अणु- 'भोक्तुमशक्या अणवः'।

स्कन्ध- 'द्वयणुकादयः स्कन्धः'।

पारमार्थिक द्रव्य - नित्य,अनन्त ।

व्यावहारिक द्रव्य - सादि, सांत।

''तत्र द्वयणुकादिस्कन्धभेदात् अण्वादिरुत्पद्यते।''

धर्मः - "धर्मास्तिकायः प्रवृत्यनुमेयः"। गति के लिये सहायक।

अधर्म - "अधर्मास्तिकायः स्थित्यनुमेय"। स्थिति के लिये सहायक।

आकाशः- 1. लोकाकाश (जीव-अजीव), 2. अलोकाकाश (मुक्त जीव)।

''अन्यवस्तुप्रदेशमध्येऽन्यस्यवस्तुनः प्रवेशोऽवगाहः तदाकाशकृत्यम्"।

कालः- (2) प्रकार- 1 द्रव्य 2 व्यवहार।

''कालस्यावेक प्रदेशत्वाभावेन अस्तिकायत्वाभावेऽपि द्रव्यत्वमस्ति"।

सप्तपदार्थाः – (तत्वाश्च)- 1. जीव 2. अजीव 3. आस्रव 4. बन्ध 5. संवर 6. निर्जरा 7. मोक्ष।

॥सप्त तत्त्व॥

''जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरमोक्षास्तत्त्वानि।''

(1) जीव (2) अजीव- पूर्व वर्णित।

(3) आस्रव - "आस्रवयति पुरुषं विषयेष्विन्द्रियप्रवृत्तिरास्रवः"।

''औदारिकादिकायादिचलनद्वारेणआत्मश्चलनंयोगपदवेदनीयमास्रवः"।

दो प्रकार-

1. भावास्रव- (5) जीव में कर्म को पैदा करने वाले भावों का उदय होना,(अर्थात् शरीर का तेल से लिप्त होना)।

"मिथ्यातत्त्वाविरतिप्रमादादयः पञ्च हेतवः"।

1. मिथ्या तत्त्व 2. अविरति 3. प्रमाद, 4. योग, 5. कषाय

2. द्रव्यास्रव- जीव में कर्म पुद्गलों का वास्तविक प्रवेश । (अर्थात् उस तेल पर धूल कणों का चिपक जाना)।

(4) बन्ध- 4 प्रकार =1. प्रकृति 2. स्थिति 3. अनुभव 4. प्रदेश।

"सकषायत्वाञ्जीवः कर्मभावयोग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः"।

''प्रकृतिस्थित्यनुभवप्रदेशाः इति चतुर्विधः बन्धः।''

(5) संवरः - मोक्षप्राप्ति के लिये प्रथम प्रयास।

"आस्रवनिरोधः संवरः"। "येनात्मनि प्रविशत्कर्म प्रतिषिध्यते स गुप्तिमित्यादिः संवरः"।

गुप्ति के तीन प्रकार-

1. कायगुप्ति, 2. वाक्गुप्ति, 3. मनोगुप्ति।

संवर के दो प्रकार–

1. भाव-संवर 2. द्रव्य-संवर ।

1. भाव-संवर - वे नैतिक आचरण व योग क्रियाएं जिनसे कर्म प्रवाह को रोका जा सकता है।

2. द्रव्य-संवर - कर्म पुद्गलों के प्रवाह का वास्तविक निषेध।

(6) निर्जरा - ज़ीव में विद्यमान कर्ममल को नष्ट करना।

"निर्जरा द्विविधः कालौपक्रमिक भेदात्"।

1. काल 2. उपक्रमिक

1. भाव निर्जर - कर्मों का नाश करने की मानसिकता का उदय।

2. द्रव्य निर्जर- पूर्व किये कर्म पुद्गलों का विनाश।

(7) मोक्ष- ''मिथ्यादर्शनादीनांबन्धहेतूनां निरोधेऽभिनवकर्माभावान्निर्जरा हेतु सन्निधनेनार्जितस्यकर्मणोनिरसनादात्यन्तिक कर्म मोक्षणं मोक्षः।''

सप्तभङ्गीनय-

1. स्यादस्ति ।
2. स्यान्नास्ति ।
3. स्यादस्ति नास्ति च ।

4. स्यादव्यक्तम् ।
5. स्यादस्ति अव्यक्तम् च ।
6 स्यात् नास्ति अव्यक्तम् च।
7 स्यात् अस्ति नास्ति अव्यक्तम् च।

पश्च महाव्रत/सम्यक चरित्र-

1. अहिंसा 2. सत्य/सूनृत 3. अस्तेय 4 ब्रह्मचर्य 5. अपरिग्रह ।

ब्रह्मचर्य = (18) प्रकार

पांच भावनाएं-

1. हास्य 2. लोभ 3. भय 4. क्रोध 5. प्रत्याख्यान।

जैनदर्शन में छः द्रव्य-

1. जीव 2. पुद्गल 3. धर्म 4. अधर्म 5 आकाश 6 काल ये नित्य और शाश्वत हैं।

चार कषाय	चार गति-5
1. क्रोध	1. देवगति
2. मान	2. मनुष्यगति
3. लोभ	3. तिर्यक् गति
4. माया	4. नर्कगति

(मोक्ष को पश्चम गति माना है।)

जैन दर्शन के प्रमुख सिद्धान्त-

"स्याद्वाद, अनेकान्तवाद, द्वैतवाद, बहुवाद, **देहात्मपरिणामवाद**" ।

जैन दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ-

ग्रन्थ		ग्रन्थकार
जैनागम	-	महावीर स्वामी
तत्वार्थसूत्र	-	उमास्वाति
तत्वार्थाधिगम सूत्र	-	उमास्वाति
आत्ममीमांसा	-	समन्तभद्र
न्यायावतार	-	सिद्धसेन दिवाकर
प्रमाणमीमांसा	-	हेमचन्द्र
प्रमाणनयतत्वालोकालंकार-		देवसूरी
प्रमेयकमलमार्तण्ड	-	प्रभाचन्द्रसूरी
तर्कभाषा	-	यशोविजयमणी

जैन दर्शन के प्रमुख सन्दर्भ-

- जैन दर्शन है- **नास्तिक।**
- जैन दर्शन के आदि तीर्थंकर थे – **ऋषभदेव ।**
- जैन दर्शन के अन्तिम तीर्थंकर थे- **महावीर ।**
- जैन दर्शन कितने पदार्थ मानता है?- 7
- जैन दर्शन कितने प्रमाण मानता है?- दो

  1. प्रत्यक्ष 2. अनुमान
- जैन दर्शन में मोक्ष के साधन हैं- **तीन**

  1. सम्यक् दर्शन 2. सम्यक् ज्ञान 3. सम्यक् चरित्र
- तीनों साधनों को जैन दर्शन में कहा गया है- **रत्नत्रय ।**
- **अनेकान्तवाद** सिद्धान्त है- जैनदर्शन का
- जैनदर्शन है- अनीश्वरवादी दर्शन
- मोक्ष को मानता है- जैनदर्शन
- जैनदर्शन के कितने सम्प्रदाय हैं?- दो

  1. श्वेताम्बर 2. दिगम्बर
- **स्याद्वाद** और **सप्तभङ्गीनयवाद** सिद्धान्त है- जैनदर्शन का ।

॥बौद्ध दर्शन॥

बौद्ध दर्शन से अभिप्राय उस दर्शन से है जो भगवान बुद्ध के **निर्वाण** के बाद बौद्ध धर्म के विभिन्न सम्प्रदायों द्वारा विकसित किया गया और बाद में पूरे एशिया में उसका प्रसार हुआ। **'दुःख से मुक्ति'** बौद्ध धर्म का सदा से मुख्य ध्येय रहा है। कर्म, ध्यान एवं प्रज्ञा इसके साधन रहे हैं। बुद्ध के उपदेश **तीन पिटकों** में संकलित हैं। ये **सुत्त पिटक, विनय पिटक** और **अभिधम्म पिटक** कहलाते हैं। ये पिटक बौद्ध धर्म के आगम हैं। क्रियाशील सत्य की धारणा बौद्ध मत की मौलिक विशेषता है। उपनिषदों का ब्रह्म अचल और अपरिवर्तनशील है। बुद्ध के अनुसार परिवर्तन ही सत्य है। पश्चिमी दर्शन में **हैराक्लाइटस** और **बर्गसाँ** ने भी परिवर्तन को सत्य माना। इस परिवर्तन का कोई अपरिवर्तनीय आधार भी नहीं है। वाह्य और आंतरिक जगत् में कोई ध्रुव सत्य नहीं है। वाह्य पदार्थ **"स्वलक्षणों"** का संघात हैं। आत्मा भी मनोभावों और विज्ञानों की धारा है। इस प्रकार बौद्धमत में उपनिषदों के आत्मवाद का खंडन करके **"अनात्मवाद"** की स्थापना की गई है। फिर भी बौद्धमत में कर्म और पुनर्जन्म मान्य हैं। आत्मा का न मानने पर भी बौद्धधर्म करुणा से ओतप्रोत हैं। दुःख से प्रवित होकर ही बुद्ध ने सन्यास लिया और दुःख के निरोध का उपाय खोजा। अविद्या, तृष्णा आदि में दुःख का कारण खोजकर उन्होंने इनके उच्छेद को **निर्वाण** का मार्ग बताया। अनात्मवादी होने के कारण बौद्ध धर्म का वेदांत से विरोध हुआ। इस विरोध का फल यह हुआ कि बौद्ध धर्म को भारत से निर्वासित होना पड़ा। किन्तु एशिया के पूर्वी देशों में उसका प्रचार हुआ। बुद्ध के अनुयायियों में मतभेद के कारण कई संप्रदाय बन गए। सिद्धांतभेद के अनुसार बौद्ध परंपरा में चार दर्शन प्रसिद्ध हैं। इनमें **वैभाषिक** और **सौत्रांतिक** मत **हीनयान** परंपरा में हैं। यह दक्षिणी बौद्धमत हैं। **योगाचार** और **माध्यमिक** मत **महायान परंपरा** में हैं। यह उत्तरी बौद्धमत है। इन चारों दर्शनों का उदय ईसा की आरंभिक शताब्दियों में हुआ। इसी समय वैदिक परंपरा में षड्दर्शनों का उदय हुआ।

इस प्रकार भारतीय परंपरा में दर्शन संप्रदायों का आविर्भाव लगभग एक ही साथ हुआ है तथा उनका विकास परस्पर विरोध के द्वारा हुआ है। पश्चिमी दर्शनों की भाँति ये दर्शन पूर्वापर क्रम में उदित नहीं हुए हैं। **वसुबंधु** (400 ई.), **कुमारलात** (200 ई.) **मैत्रेय** (300 ई.) और **नागार्जुन** (200 ई.) इन दर्शनों के प्रमुख आचार्य थे। वैभाषिक मत बाह्य वस्तुओं की सत्ता तथा स्वलक्षणों के रूप में उनका प्रत्यक्ष मानता है। अतः उसे बाह्य प्रत्यक्षवाद अथवा **"सर्वास्तित्ववाद"** कहते हैं। सौत्रांतिक मत के अनुसार पदार्थों का प्रत्यक्ष नहीं, अनुमान होता है। अतः उसे **बाह्यानुमेयवाद** कहते हैं। योगाचार मत के अनुसार बाह्य पदार्थों की सत्ता नहीं। हमे जो कुछ दिखाई देता है वह विज्ञान मात्र है। योगाचार मत **विज्ञानवाद** कहलाता है। माध्यमिक मत के अनुसार विज्ञान भी सत्य नहीं है। सब कुछ शून्य है। शून्य का अर्थ निरस्वभाव, निःस्वरूप अथवा अनिर्वचनीय है। **शून्यवाद** का यह शून्य वेदांत के ब्रह्म के बहुत निकट आ जाता है।

संक्षिप्त परिचय-

बौद्ध दर्शन अपने प्रारम्भिक काल में जैन दर्शन की ही भाँति आचारशास्त्र के रूप में ही था। बाद में बुद्ध के उपदेशों के आधार पर विभिन्न विद्वानों ने इसे आध्यात्मिक रूप देकर एक सशक्त दार्शनिकशास्त्र बनाया।बौद्ध दर्शन में पहले दो शाखाएं थी फिर पुनः चार हो गयी –

1. हीनयान- वैभाषिक, सौत्रान्तिक,

2. महायान- योगाचार, माध्यमिक

बौद्धाश्चतुर्विधया भावनया परमपुरुषार्थं कथयन्ति -

बौद्ध दर्शन का प्रारम्भिक श्रेणी विभाग, सत्ता के महत्त्वपूर्ण प्रश्न को लेकर किया गया, जो कि चार प्रस्थान के रूप में इस प्रकार जाना जाता है-

"मुख्यो माध्यमिको विवर्तमखिलं शून्यस्य मेने जगत्
योगाचारमते तु सन्ति मतयस्तासां विवर्तोऽखिलः।
अर्थोऽस्ति क्षणिकस्त्वसावनुमितो बुद्ध्येति सौत्रान्तिकः
प्रत्यक्षं क्षणभंगुरं च सकलं वैभाषिको भाषते"॥

(बौद्धदर्शनमीमांसा-बलदेव उपाध्याय)

बौद्धदर्शन के चार भेद = भावनाचतुष्टय-

वैभाषिक- सर्वास्तिवाद, बाह्यार्थप्रत्यक्षवाद -**''सर्वं क्षणिकं क्षणिकम्''**
योगाचार- विज्ञानवाद, बाह्यार्थशून्यवाद - **''सर्वं स्वलक्षणं स्वलक्षणं''**
सौत्रान्तिक- बाह्यार्थानुमेयवाद - **''सर्वं दुःखं दुःखम्''**
माध्यमिक - शून्यवाद नागार्जुन - **''सर्वं शून्यं सर्वं शून्यम्''**

''यत् सत् तत् क्षणिकम् तस्मात् सर्वं दुःखं दुखमिति भावनीयम्। ततः स्वलक्षणम् स्वलक्षणमिति भावनीयम्।''

1. वैभाषिक - क्षणिक बाह्यार्थ, इनके अनुसार समस्त बाह्य पदार्थ क्षणिक हैं।

क्षणिकवाद- बौद्धों के अनुसार वस्तु का निरन्तर परिवर्तन होता रहता है और कोई भी पदार्थ एक क्षण से अधिक स्थायी नहीं रहता है। कोई भी मनुष्य किसी भी दो क्षणों में एक सा नहीं रह सकता, इसिलिये आत्मा भी क्षणिक है और यह सिद्धान्त क्षणिकवाद कहलाता है । इसके लिए बौद्ध मतानुयायी प्रायः दीपशिखा की उपमा देते हैं। जब तक दीपक जलता है, तब तक उसकी लौ एक ही शिखा प्रतीत होती है, जबकि यह शिखा अनेकों शिखाओं की एक श्रृंखला है। एक बूँद से उत्पन्न शिखा दूसरी बूंद से उत्पन्न शिखा से भिन्न है; किन्तु शिखाओं के निरन्तर प्रवाह से एकता का भान होता है। इसी प्रकार सांसारिक पदार्थ क्षणिक है, किन्तु उनमें एकता की प्रतीति होती है। इस प्रकार यह सिद्धान्त 'नित्यवाद' और 'अभाववाद' के बीच का मध्यम मार्ग है।

प्रमुख आचार्य- कात्यायनीपुत्र (प्रवर्तक), वसुबन्धु, संघभद्र।

2. योगाचार- इनके अनुसार बुद्धि ही आकार के साथ है अर्थात् बुद्धि में ही बाह्यार्थ चले आते हैं। चित्त अर्थात् आलयविज्ञान में अनन्त विज्ञानों का उदय होता रहता है। क्षणभंगिनी चित्त सन्तति की सत्ता से सभी वस्तुओं का ज्ञान होता है। वस्तुतः ये बाह्य सत्ता का सर्वथा निराकरण करते हैं। इनके यहाँ माध्यमिक मत के समान सत्ता दो प्रकार की मानी गई है-

1. पारमार्थिक 2. व्यावहारिक।

व्यावहारिक में पुनश्च परिकल्पित और परतन्त्र दो रूप ग्राह्य हैं। यहाँ चित्त की ही प्रवृत्ति तथा निवृत्ति (निरोध, मुक्ति) होती है। सभी वस्तुऐं चित्त का ही विकल्प है। इसे ही **आलयविज्ञान** कहते हैं। यह आलयविज्ञान क्षणिक विज्ञानों की सन्तति मात्र है। इनके अनुसार विज्ञान की ही सत्ता है। बुद्धि, चित्त, मन, विज्ञान ही सत्य पदार्थ हैं। इनके मत में चित्त- ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय के रूप में है। **''बाह्य ग्राह्यं नोपपद्यत एवम्।''**

प्रमुख आचार्य- मैत्रेयनाथ (प्रवर्तक), दिङ्नाग, धर्मकीर्ति, धर्मपाल, स्थिरमति, शंकरस्वामी।

3. सौत्रान्तिक - ये बाह्यार्थ को अनुमेय मानते हैं। यद्यपि बाह्यजगत् की सत्ता दोनों स्वीकार करते हैं, किन्तु दृष्टि के भेद से एक के लिए चित्त निरपेक्ष तथा दूसरे के लिए चित्त सापेक्ष अर्थात् अनुमेय सत्ता है। सौत्रान्तिक मत में सत्ता की स्थिति बाह्य से अन्तर्मुखी है।

बाह्य पदार्थों का अस्तित्व प्रत्यक्ष नहीं अपितु अनुमेय है। बुद्धि का बोध- 'अहम्' पद से। बाह्य पदार्थों का- 'इदम्' पद से होता है ।

प्रमुख आचार्य- कुमारलात (प्रवर्तक), यशोमित्र, श्रीनाथ, धर्मयात।

4. माध्यमिक - न तो बाह्य पदार्थ है न ही आन्तरिक विज्ञान । "शून्यवाद अभाववाद नहीं है बल्कि शून्य से अनिर्वचनीय तत्त्व का बोध होता है"।

''एवं शून्यं शून्यमित्यपि भावनीयम्।
अज्ञस्तत्त्वं सदसदुभयानुभयात्मकचतुष्कोटिविनिर्मुक्तं शून्यमेव।''

यहाँ बाह्य एवम् अन्तः दोनों सत्ताओं का शून्य में विलयन हुआ है, जो कि अनिर्वचनीय है। ये केवल ज्ञान को ही अपने में स्थित मानते हैं और दो प्रकार का सत्य स्वीकार करते हैं-

1. **सांवृत्तिक सत्य - अविद्याजनित व्यावहारिक सत्ता।**
2. **पारमार्थिक सत्य - प्रज्ञाजनित सत्य।**

प्रमुख आचार्य- नागार्जुन (प्रवर्तक), शान्तिरक्षित, बुद्धिपालित, शान्तिदेव, चन्द्रकीर्ति।

ज्ञान के चार करण–

1. आलम्वन 2. समनन्तर 3. सहकार्य 4. अधिपति।

चित्त और उसके विकार पाँच स्कन्ध –

1. रूप (भौतिक)	2. विज्ञान
3. वेदना	4. संज्ञा

5. संस्कार, मानस।

साकार चित्त ही ज्ञान है।

रूप - पृथ्वी, जल, तेज, वायु। (भौतिक)

रूपस्कन्ध – विषयप्रपञ्च,

विज्ञानस्कन्ध - आलयविज्ञानसन्तानः,

वेदनास्कन्ध – ज्ञानप्रपञ्च,

संज्ञास्कन्ध – नामप्रपञ्च,

संस्कार - वासना प्रपञ्च ।

हीनयान के मुख्य सिद्धान्त-

क्षणभङ्गवाद, संघातवाद, संतानवाद

त्रिपिटक-

1. **विनयपिटक** - आचार सम्बन्धी,
2. **सुत्तपिटक** - बुद्धउपदेश,
3. **अभिधम्मपिटक** - दार्शनिक (विभाषा- अश्वघोष)

बुद्ध के उपदेश इन तीन पिटकों में संकलित हैं। ये पिटक बौद्ध धर्म के आगम हैं।

चार आर्य सत्य-

'दुःखसमुदायनिरोधमार्गाश्चत्वार आर्यबुद्धस्याभिमतानि तत्त्वानि।'

1. **दुःख** - समस्त संसार दुःख रूप है।
2. **दुःखसमुदय** - दुःख का कारण है।
3. **दुःखनिरोध** - दुःख को रोका जा सकता है।
4. **दुःखनिरोधमार्ग** - दुःख को रोकने का मार्ग है।

बुद्धाभिमत इन चारों तत्त्वों में से दुःखसमुदाय के अन्तर्गत द्वादशनिदान (जरामरण, जाति, भव, उपादान, तृष्णा, वेदना, स्पर्श, षडायतन, नामरूप, विज्ञान, संस्कार तथा अविद्या) तथा दुःखनिरोध के उपायों में अष्टांगमार्ग (सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्म, सम्यक् आजीव, सम्यक् प्रयत्न, सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि) का विशेष महत्व है। इसके अतिरिक्त पंचशील (अहिंसा, अस्तेय, सत्यभाषण, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह) तथा द्वादश आयतन (पंच ज्ञानेन्द्रियाँ, पंच कर्मेन्द्रियाँ, मन और बुद्धि), जिनसे सम्यक् कर्म करना चाहिए- भी आचार की दृष्टि से महनीय हैं। वस्तुतः चार आर्य सत्यों का विशद विवेचन ही बौद्ध दर्शन है। बुद्ध के अनुसार दुःख का कारण **''प्रतीत्यसमुत्पाद''** है।

प्रतीत्यसमुत्पाद- 'प्रतीत्यसमुत्पाद' से तात्पर्य एक वस्तु के प्राप्त होने पर दूसरी वस्तु की उत्पत्ति अथवा एक कारण के आधार पर एक कार्य की उत्पत्ति से है। प्रतीत्यसमुत्पाद सापेक्ष भी है और निरपेक्ष भी। सापेक्ष दृष्टि से वह संसार है और निरपेक्ष दृष्टि से निर्वाण। यह क्षणिकवाद की भाँति शाश्वतवाद और उच्छेदवाद के मध्य का मार्ग है। इसीलिए इसे मध्यममार्ग कहा जाता है और इसको मानने वाले माध्यमिक।

अष्टांग मार्ग

1. शुभविचार 2. शुभ उद्देश्य 3. शुभवचन 4. शुभकर्म 5. शुभजीविका 6. शुभ प्रयत्न 7. शुभ ध्यान 8. शुभ समाधि।

द्वादश दुःखकारणानि (निकाय/भवचक्र)-

1. अविद्या	2. संस्कार
3. विज्ञान	4. नामरूप
5. षडायतन	6. स्पर्श
7. वेदना	8. तृष्णा
9. उपादान	10. भव
11. जाति	12. जरामरण।

द्वादश आयतनम् -

"ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चैव तथा कर्मेन्द्रियाणि च।
मनोबुद्धिरिति प्रोक्तं द्वादशायतनं बुधैः"।।

पञ्च ज्ञानेन्द्रियाणि + पञ्च कर्मेन्द्रियाणि + मन + बुद्धि।

त्रिवृत्तकरणानि - अग्नि, जल, पृथ्वी।

बौद्धों के मत में दो पदार्थ होते हैं –

1. स्वलक्षण- "सर्वतो व्यावृत्तं लक्षणं वस्तुरुपम् यस्य तत्"।

2. सामान्यलक्षणम्-

बौद्ध दर्शन के प्रमुख सिद्धान्त-

"असत्कार्यवाद, प्रतीत्यसमुत्पादवाद, क्षणिकत्ववाद, अनात्मवाद अनीश्वरवाद, शून्यतावाद, यथार्थवाद, बोधिसत्व, अनुभववाद, प्रीतिवाद, ऐहिकवाद"।

बौद्ध दर्शन के प्रमुख ग्रन्थ-

ज्ञानप्रस्थानशास्त्र	-	कात्यायनीपुत्र
अभिसमयकारिका	-	मैत्रेयनाथ
कल्पनामण्डितिका	-	कुमारलात
माध्यमिककारिका	-	नागार्जुन
प्रमाणसमुच्चयवाद	-	दिङ्नाग
प्रमाणवार्तिक	-	धर्मकीर्ति
तर्कसङ्ग्रहः	-	शान्तरक्षित
अपोहवाद	-	रत्नाकर
अभिधर्मकोश	-	वसुबन्धु
अभिधर्मसार	-	धर्मश्री
अभिधर्मावृत्त	-	आचार्यघोषक

बौद्ध दर्शन के प्रमुख सन्दर्भ-

- बौद्ध दर्शन है- **नास्तिक,**
- बौद्ध दर्शन के संस्थापक हैं - **गौतम बुद्ध,**
- बौद्ध धर्म के मुख्य पिटक हैं- तीन=
  1. सुत्तपिटक, 2. विनयपिटक, 3. अभिधम्मपिटक
- बुद्ध के उपदेश हैं- **सुत्तपिटक** में।
- आचार सम्बन्धी ग्रन्थ हैं- **विनयपिटक ।**
- दार्शनिक विषयों का विवेचनात्मक ग्रन्थ है- **अभिधम्मपिटक।**
- द्वादश निकाय को कहा जाता है- **भवचक्र ।**
- द्वादश निकायों (निदानों) का अन्य नाम है- **प्रतीत्यसमुत्पाद।**
- बुद्ध का मौलिक सिद्धान्त माना जाता है – **प्रतीत्यसमुत्पाद ।**
- विज्ञान दो प्रकार- **1. आलयविज्ञान 2. प्रवृत्तिविज्ञान।**
- वैभाषिक **'द्विप्रकारक'** सिद्धान्त मानता है।
- सौत्रान्तिक **'त्रिप्रकारक'** सिद्धान्त मानता है।
- बौद्ध दर्शन के साधन हैं- तीन
  1. शील 2. समाधि 3. प्रज्ञा
- बौद्ध दर्शन के आर्यसत्य हैं-चार
  1. दुःख 2. दुःख समुदय 3. दुःख निरोध 4. दुःखनिरोध मार्ग ।
- बौद्ध दर्शन का एकमात्र पदार्थ है- विज्ञान ।
- चतुर्थ आर्यसत्य को कहा जाता है- अष्टांगिक मार्ग ।
- अनीश्वरवादी तथा अनात्मवाद- बौद्ध।
- गृहत्याग- "महाभिनिष्क्रमण"
- ''प्रमाणवत्त्वादायतः प्रवाह केन वार्यते-'' बौद्ध।
- "यत् सत् तत् क्षणिकं यथा जलधरः सन्तश्चभावा अमी"- बौद्ध
- सत्- अर्थक्रियाकारिता (वस्तु के द्वारा उचित कार्य का किया जाना)।
- **प्रमुख सूत्र- "अस्ति, नास्ति, अस्ति च नास्ति च, नास्ति च नास्ति च"।**
- बौद्ध दो प्रकार के सम्बन्ध मानते हैं -
  1. तादात्म्य-स्वभाव - आम्र तथा वृक्ष।
  2. तदुत्पत्ति – 'कार्यकारणभाव' – धूम-अग्नि।
- इनके मतानुसार अविनाभाव (व्याप्ति) का निश्चय 'तदुत्पत्ति' तथा 'तादात्म्य' सम्बन्ध से ही होता है।
- **असत्ख्यातिवाद'** है- माध्यमिक का ।
- **आत्मख्यातिवाद'** है- योगाचार का ।
- **विज्ञानवाद, प्रतीत्यसमुत्पाद** और **अनात्मवाद** सिद्धान्त है- बौद्धदर्शन ।

॥चार्वाक दर्शन॥

चार्वाक दर्शन एक **भौतिकवादी** नास्तिक दर्शन है। यह मात्र प्रत्यक्ष प्रमाण को मानता है तथा पारलौकिक सत्ताओं को यह सिद्धांत स्वीकार नहीं करता है। यह दर्शन वेदविरोधी भी कहा जाता है। वेदविरोधी दर्शन छः हैं- चार्वाक, माध्यमिक, योगाचार, सौत्रान्तिक, वैभाषिक, और आर्हत(जैन)। इन सभी में वेद से असम्मत सिद्धान्तों का प्रतिपादन है। **अजित केशकंबली** को चार्वाक के अग्रदूत के रूप में श्रेय दिया जाता है, जबकि बृहस्पति को आमतौर पर चार्वाक या लोकायत दर्शन के संस्थापक के रूप में जाना जाता है। चार्वाक , बृहस्पति सूत्र (600 ईसा पूर्व) के अधिकांश प्राथमिक साहित्य गायब या खो गए हैं। चार्वाक प्राचीन भारत के एक अनीश्वरवादी और नास्तिक तार्किक थे।ये नास्तिक मत के प्रवर्तक बृहस्पति के शिष्य माने जाते हैं। बृहस्पति और चार्वाक कब हुए इसका कुछ भी पता नहीं है। बृहस्पति को चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र ग्रन्थ में अर्थशास्त्र का एक प्रधान आचार्य माना है।

परिचय-

चार्वाक का नाम सुनते ही **"यावत् जीवेत् सुखं जीवेत, ऋणं कृत्वा, घृतं पिबेत्"** (जब तक जीओ सुख से जीओ, उधार लो और घी पीयो।) की

याद आएगी। प्रचलित धारणा यही है कि चार्वाक शब्द की उत्पत्ति 'चारु'+'वाक्' (मीठी बोली बोलने वाले) से हुई है। चार्वाक सिद्धांतों के लिए बौद्ध पिटकों में 'लोकायत' शब्द का प्रयोग किया जाता है जिसका मतलब 'दर्शन की वह प्रणाली है जो इस लोक में विश्वास करती है और स्वर्ग, नरक अथवा मुक्ति की अवधारणा में विश्वास नहीं रखती'। चार्वाक या लोकायत दर्शन का ज़िक्र तो महाभारत में भी मिलता है लेकिन इसका कोई भी मूल ग्रन्थ उपलब्ध नहीं।

आत्मा-

चार्वाकों के अनुसार चार महाभूतों से अतिरिक्त आत्मा नामक कोई अन्य पदार्थ नहीं है। चैतन्य आत्मा का गुण है। चूँकि आत्मा नामक कोई वस्तु है ही नहीं अतः चैतन्य शरीर का ही गुण या धर्म सिद्ध होता है। अर्थात् यह शरीर ही आत्मा है। इसकी सिद्धि के तीन प्रकार है- तर्क, अनुभव और आयुर्वेद शास्त्र। तर्क से आत्मा की सिद्धि के लिये चार्वाक लोग कहते हैं कि शरीर के रहने पर चैतन्य रहता है और शरीर के न रहने पर चैतन्य नहीं रहता। इस अन्वय व्यतिरेक से शरीर ही चैतन्य का आधार अर्थात् आत्मा सिद्ध होता है। अनुभव 'मैं स्थूल हूँ', 'मैं दुर्बल हूँ', 'मैं गोरा हूँ', 'मैं निष्क्रिय हूँ' इत्यादि अनुभव हमें पग-पग पर होता है। स्थूलता दुर्बलता इत्यादि शरीर के धर्म हैं और 'मैं' भी वही हूँ। अतः शरीर ही आत्मा है।

चार्वाक दर्शन के मुख्य सन्दर्भ-

- चार्वाक दर्शन के आचार्य माने जाते हैं- **बृहस्पति ।**
- चार्वाक दर्शन को कहा जाता है - **लोकायत दर्शन।**
- एकमात्र प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता है- चार्वाक दर्शन ।
- नास्तिक दर्शन है- चार्वाक दर्शन,
- वेदों को प्रमाण नहीं मानता है- चार्वाक दर्शन,
  चार्वाक दर्शन कितने पदार्थ मानता है?- चार,
  1. पृथ्वी 2. जल 3. तेज 4. वायु
- 'मरण ही अपवर्ग' है, ऐसा मानता है- चार्वाक दर्शन **(मरणमेवापवर्गः)**

- नास्तिक, अनीश्वरवादी दर्शन कहा जाता है- चार्वाक दर्शन,
- **"चैतन्यविशिष्ट देह एव आत्मा"**- चार्वाक दर्शन,
- प्रत्यक्षवादी, सुखवादी और भौतिकवादी दर्शन कहा जाता है- चार्वाक दर्शन।
- **"यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।**
  भस्मीभूतस्य जीवस्य पुनरागमनं कुतः"
  यह सम्बद्ध है – **चार्वाक से।**
- **भौतिकवादी** या **जड़वादी** दर्शन कहा जाता है- चार्वाक दर्शन।
- **देहात्मवाद, इन्द्रियात्मवाद** एवं **मनसात्मवाद** सिद्धान्त है- चार्वाक दर्शन का ।

॥अभ्यासप्रश्न॥

सांख्यकारिका

1. सांख्यमते प्रमाणमिष्टम् -
   (A) चतुर्विधम् (B) पञ्चविधम्
   (C) त्रिविधम् (D) षड्विधम्
2. सांख्यकारिकायाः' कर्ता वर्तते -
   (A) सदानन्दः (B) ईश्वरकृष्णः
   (C) कपिलमुनिः (D) गौतमः
3. महत् किमस्ति?
   (A) प्रकृतिः
   (B) विकृतिः
   (C) प्रकृतिविकृती
   (D) न प्रकृतिः न विकृतिः
4. 'तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम्' लक्षणमिदं कस्य विद्यते ?
   (A) शब्दप्रमाणस्य (B) अनुमानप्रमाणस्य
   (C) प्रत्यक्षप्रमाणस्य (D) उपमानप्रमाणस्य
5. व्यक्तं कीदृग् न भवति?
   (A) हेतुमत् (B) अव्यापि
   (C) अनाश्रितम् (D) सावयवम्
6. सांख्यदर्शनानुसारेण पुरुषस्वरूपेण सम्बद्धा उक्तिः अस्ति-
   (A) रूपैः सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना
   (B) पुरुषस्य दर्शनार्थं, कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य
   (C) तद्विपरीतस्तथा च पुमान्
   (D) संसरति बध्यते मुच्यते च
7. अहङ्कारस्य उत्पत्तिः कुतः भवति ?
   (A) महतः (B) प्रकृतेः
   (C) पञ्चभूतेभ्यः (D) इन्द्रियेभ्यः
8. सांख्यदर्शनानुसारं प्रमाणानां संख्या अस्ति
   (A) द्वौ (B) त्रयः
   (C) चत्वारः (D) षड्
9. सांख्यमते 'सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था' भवति
   (A) पुरुषस्य (B) सृष्टेः
   (C) प्रकृतेः (D) बुद्धेः
10. साङ्ख्यमतानुसारं सत्त्वगुणः भवति -
    (A) सुखात्मकः (B) दुःखात्मकः
    (C) अभावात्मकः (D) मोहात्मकः
11. साङ्ख्यमते पङ्गुवद् वर्तते-
    (A) प्रधानम् (B) पुरुषः
    (C) गुणत्रयम् (D) अन्तःकरणम्
12. त्रैगुण्यविपर्ययात् किं सिद्धम्?
    (A) प्रधानम् (B) पुरुषैकत्वम्
    (C) पुरुषबहुत्वम् (C) गुणत्रयम्
13. साङ्ख्यकारिकायां सर्गस्य कारणम्-
    (A) पुरुषः (B) ईश्वरः
    (C) प्रधानम् (D) पुरुष-प्रकृति-संयोगः
14. सांख्यानुसारं सृष्टिकारणं किम् ?
    (A) पुरुषः (B) प्रकृतिः
    (C) ब्रह्म (D) प्रकृति-पुरुषसंयोगः
15. सांख्ये कति तत्त्वानि स्वीकृतानि ?
    (A) त्रयोदश (B) पञ्चदश
    (C) चतुर्विंशतिः (D) पञ्चविंशतिः
16. पुरुषप्रकृत्योः संसर्गो वर्णितः
    (A) जडाजडवत् (B) पङ्ग्वन्धवत्
    (C) मूकबधिरवत् (D) अन्धमालावत्
17. अधोनिर्दिष्टेषु किम् असत्यम् अस्ति ?
    (A) जीवन्मुक्तिरेव विदेहमुक्तिः
    (B) इच्छाशक्तिमान् करणरूपः मनोमयकोशः
    (C) सांख्यमते दशेन्द्रियाणि भवन्ति
    (D) वस्तुनि अवस्तुन आरोपः अध्यारोपः
18. सतः सत् जायते इति कस्य मतम् ?
    (A) सांख्यस्य (B) बौद्धस्य
    (C) वेदान्तिनः (D) नैयायिकस्य
19. कतिविधः बुद्धिसर्गः ?
    (A) त्रिविधः (B) चतुर्विधः
    (C) पञ्चविधः (D) सप्तविधः
20. सांख्यैः स्वीकृतानि तत्त्वानि कति सन्ति ?
    (A) त्रयोदश (B) पञ्चदश
    (C) विंशतिः (D) पञ्चविंशतिः
21. सांख्यकारिकायां कीदृशाः गुणाः?
    (A) इष्टानिष्टोभयात्मकाः
    (B) प्रकाशप्रवृत्तिनियमार्थाः
    (C) सुखदुःखरागात्मकाः
    (D) विषादात्मकाः
22. सांख्यकारिकायां कीदृशं कैवल्यम् ?
    (A) आत्यन्तिकदुःखनिवृत्तिः
    (B) ऐकान्तिकदुःखनिवृत्तिः
    (C) सुखाभिव्यक्तिः
    (D) ऐकान्तिकात्यन्तिकदुःखनिवृत्तिः

23. सांख्यकारिकायां ज्ञानं कस्य वर्तते ?

(A) अहङ्कारस्य (B) प्रकृतेः

(C) पुरुषस्य (D) बुद्धे

24. सांख्यमते 'एकादशेन्द्रियाणि' कस्मात् समुद्भूतानि ?

(A) अहङ्कारात् (B) आकाशात्

(C) पुरुषात् (D) पञ्चमहाभूतात्

25. 'व्यक्ताव्यक्तज्ञविज्ञानात्' इत्यत्र 'ज्ञ' शब्देन कः बोद्धव्यः ?

(A) प्रकृतिः (B) सूक्ष्मशरीरम्

(C) अहङ्कारः (D) पुरुषः

26. सांख्याभिमतं प्रमाणत्रयं वर्तते-

(A) प्रत्यक्षम्, अनुमानम्, उपमानम् ।

(B) प्रत्यक्षम्, उपमानम्, अर्थापत्तिः ।

(C) प्रत्यक्षम्, शब्दः, अनुपलब्धिः ।

(D) दृष्टम् (प्रत्यक्षम्), अनुमानम्, आप्तवचनम्।

27. सांख्ये सत्कार्यवादस्वरूपम् एवम् अस्ति -

(A) सतो विज्ञानादसञ्जायते इति

(B) सतो विवर्तभूतं कार्यजातं मिथ्यात्मकं जायते इति

(C) पूर्वमसत् कार्यं सदेव कारणात् सदात्मकं जायते इति ।

(D) पूर्वं सदेव कार्यं कारणात्मना पश्चाज्जायते इति ।

28. सांख्यमते सत्त्वगुणस्य स्वभावो विद्यते-

(A) सुखात्मकः (B) मोहात्मकः

(C) दुःखात्मकः (D) अभावात्मकः

29. सांख्ये पंग्वन्धन्याये पंगुवद् वर्तते-

(A) प्रधानम् (B) पुरुषः

(C) गुणत्रयम् (D) प्रलयः

30. सांख्यानुसारं नर्तकी वर्तते-

(A) प्रकृतिः (B) माया

(C) सर्गः (D) मनः

31. ' षष्टितन्त्रं' किम् ?

(A) न्यायग्रन्थः (B) वैशेषिकग्रन्थः

(C) सांख्यग्रन्थः (D) वेदान्तग्रन्थः

32. सांख्यमते लघु प्रकाशकञ्च वर्तते-

(A) तमः (B) सत्त्वम्

(C) रजः (D) रूपम्

33. सांख्यानामनुमानं कतिविधम् ?

(A) चतुर्विधम (B) त्रिविधम्

(C) पञ्चविधम् (D) षड्विधम्

34. सांख्यमते पुरुषो वर्तते -

(A) अचेतनः (B) चेतनः

(C) प्रकृतिः (D) विकृतिः

35. सांख्ये केवलविकृतिरूपात्मकानि तत्त्वानि कति -

(A) षोडश (B) नव

(C) पञ्च (D) पञ्चविंशतिः

36. अव्यक्तं कीदृशं तत्त्वं निरूपितम् -

(A) चेतनम् (B) उदासीनम्

(C) जडम् (D) अभावरूपम्

37. प्रत्ययसर्गः कतिविधः -

(A) पञ्चाशद्विधः (B) नवविधः

(C) शतविधः (D) सप्तविधः

38. सांख्यमते मूलप्रकृतिर्वर्तते -

(A) विकृतिः (B) अविकृतिः

(C) प्रकृतिविकृतिः (D)न प्रकृतिः न विकृतिः

39. 'सांख्यैः' स्वीकृतानि तत्त्वानि सन्ति

(A) षोडश (B) सप्तदश

(C) पञ्चविंशतिः (D) दश

40. सांख्यानां कार्यकारणवादः कीदृशः?

(A) आरम्भवादः (B) सत्कार्यवादः

(C) संघातवादः (D) विवर्तवादः

41. सत्कार्यवादे उत्पत्तेः पूर्वं कार्यं कीदृशम्-

(A) व्यक्तरूपेण सत् (B)अव्यक्तरूपेण सत्

(C) उभयरूपेण असत् (D) सदसद्

42. उपादानग्रहणात् इत्येतेन कः पुष्यते-

(A) सत्कार्यवादः (B) पुरुषसिद्धिः

(C) प्रकृतिसिद्धिः (D) सृष्टिप्रक्रिया

43. सांख्ये सत्कार्यवादस्वरूपमेवम् अस्ति-

(A) सतो विज्ञानादसञ्जायते इति।

(B) सतो विवर्तभूतं कार्यजातं मिथ्यात्मकं जायते इति।

(C) पूर्वमसत् कार्यं सदेव कारणात् सदात्मकं जायते इति।

(D) पूर्वं सदेव कार्यं कारणात्मना पश्चाज्जायते इति।

44. 'कार्यं सत्' इति सिद्धान्तः कस्मिन् दर्शने स्वीकृतः-

(A) मीमांसा (B) न्याय

(C) वैशेषिक (D) सांख्य

45. "नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः" गीता का यह सिद्धान्त किस दर्शन से सम्बद्ध रखता है-

(A) बौद्धदर्शन (B) जैनदर्शन

(C) सांख्यदर्शन (D) वेदान्तदर्शन

46. कस्मात् कारणात् सत्कार्यं भवति -

(A)प्रकृतिस्वरूपज्ञान (B) सामीप्य

(C) समानाभिहार (D) सर्वसम्भवाभाव

47. सत्कार्यवादस्य कारणं नास्ति-

(A) असदकरणात् (B)शक्तस्य शक्यकरणात्

(C) कारणभावाच्च (D) हेतुमत्

48. महत्त्वेन कस्य उत्पत्तिः?

(A) प्रकृतिः (B) पुरुषः
(C) अहङ्कारः (D) त्रयमपि

49. पञ्चभूतानि साक्षात्कुतः जायन्ते-

(A) प्रकृतिः (B) महत्त्वात्
(C) अहङ्कारात् (D) पञ्चतन्मात्रेभ्यः

50. सांख्यमते एकादशेन्द्रियाणि जायन्ते-

(A) अहङ्कारात् (B) महतः
(C) प्रकृतेः (D) पञ्चतन्मात्रेभ्यः

वेदान्तसार

1. वेदान्तसारग्रन्थस्य कर्ता वर्तते

(A) ईश्वरकृष्णः (B) सदानन्दः
(C) सुरेश्वरः (D) शङ्कराचार्यः

2. "अनुबन्धाः" कति सन्ति

(A)द्वौ (B) चत्वारः
(C) त्रयः (D) पञ्च

3. "जीवन्मुक्तिः" कस्मिन् 'दर्शने' स्वीक्रियते ?

(A) जैनदर्शने (B) बौद्धदर्शने
(C) चार्वाकदर्शन (D) वेदान्तदर्शने

4. समष्टिव्यष्ट्यभिप्रायेणैकमनेकमिति' उक्तिरियं वेदान्तसारे कस्य सन्दर्भेऽस्ति?

(A) विद्यायाः (B) अज्ञानस्य
(C) अध्यारोपस्य (D) समाधेः

5. अज्ञानोपहितं चैतन्यं कीदृशं कारणं भवति?

(A) निमित्तकारणम्
(B) उपादानकारणम्।
(C) निमित्तकारणम् उपादानकारणं च
(D) कीदृशमपि कारणं न

6. वेदान्तसारानुसारं सूक्ष्मशरीराणि कति अवयवानि भवन्ति?

(A) षोडशावयवानि
(B) सप्तदशावयवानि
(D) त्रयोदशावयवानि
(C) पञ्चदशावयवानि

7. 'तज्ज्ञानं पञ्चविधं मतिश्रुतावधिमनः पर्यायकेवलभेदेन' उक्तिरियं केन दर्शनेन सम्बद्धा अस्ति?

(A) आर्हतदर्शनेन (B) बौद्धदर्शनेन
(C) रामानुजदर्शनेन (D) न्यायदर्शनेन

8. वेदान्तसारानुसारं निर्विकल्पकस्य समाधेः कति विघ्नाः भवन्ति?

(A) त्रयः (B) पञ्च
(C) चत्वारः (D) षट्

9. अनुबन्धचतुष्टये न गण्यते -

(A) सम्बन्धः (B) विषयः
(C) चैतन्यम् (D) प्रयोजनम्

10. वेदान्तसारानुसारम् 'अग्नेः' किम् उत्पद्यते ?

(A) आपः (B) पृथिवी
(C) वायुः (D) आकाशः

11. 'गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः' किं कथ्यते ?

(A) मुमुक्षुत्वम् (B) उपरतिः
(C) श्रद्धा (D) शमः

12. ' अज्ञानादिसकलजडसमूहः' इति उच्यते

(A) वस्तु (B) अवस्तु
(C) अध्यारोपः (D) समष्टिः

13. अधोलिखितेषु नित्यकर्म भवति-

(A) ज्योतिष्टोमादि (B) सन्ध्यावन्दनादि
(C) चान्द्रायणादि (D) जातेष्ट्यादि

14. अजहल्लक्षणाया उदाहरणं भवति-

(A) शोणो धावति (B) तत्त्वमसि
(C) गङ्गायां घोषः (D) सोऽयं देवदत्तः

15. अधोलिखितेषु साक्षात्कारोपयोगि भवति-

(B) अपूर्वता (A) उपक्रमः
(C) निदिध्यासनम् (D) फलम्

16. अधस्तनेषु साधनचतुष्टये अन्तर्भवति-

(A) शमदमादिषट्कसम्पत्तिः (B) चन्दनम्
(C) उपक्रमः (D) उपसंहारः

17. अधोलिखितेषु अनिर्वचनीयं भवति--

(A) जीवस्वरूपम् (B) अज्ञानम्
(C) जगत्स्वरूपम् (D) ईश्वरस्वरूपम्

18. वेदान्तसारे अज्ञानस्य शक्तिः-

(A) द्विविधा (B) त्रिविधा
(C) चतुर्विधा (D) पञ्चविधा

19. वेदान्तसारे लिङ्गशरीराणि-

(A) षोडशावयवानि (B) पञ्चदशावयवानि
(C) सप्तदशावयवानि (D) एकादशावयवानि

20. साङ्ख्यमतानुसारं सत्वगुणः-

(A) सुखात्मकः (B) दुःखात्मकः
(C) अभावात्मकः (D) मोहात्मकः

21. वेदान्तशास्त्रे प्रमेयं किं भवति ?

(A) ईश्वरः (B) जीवः
(C) विराट् (D) तुरीयचैतन्य

22. तत्त्वसाक्षात्कारोपायेष्वन्यतमः ?

(A) उपक्रमः (B) उपसंहारः

(C) अभ्यासः (D) निदिध्यासनम्

23. प्रकृतिः कतिभिः रूपैरात्मानं बध्नाति ?

(A) सप्तभिः (B) अष्टभिः

(C) पञ्चभिः (D) चतुर्भिः

24. वेदान्तसारानुसारम् अधिकारी भवति -

(A) ब्रह्मचारी (B) गृहस्थः

(C) साधनचतुष्टयसम्पन्नः प्रमाता (D) अज्ञः

25. वेदान्तसारानुसारं कर्माणि -

(A) त्रिविधानि (B) पञ्चविधानि

(C) षड्विधानि (D) चतुर्विधानि

26. वेदान्तसारानुसारं शरीराणि कतिविधानि -

(A) चतुर्विधानि (B) पञ्चविधानि

(C) त्रिविधानि (D) षड्विधानि

27. वेदान्तसारे लिङ्गशरीराणि वर्णितानि -

(A) षोडशावयवानि (B) सप्तदशावयवानि

(C) एकादशावयवानि (D) द्वादशावयवानि

28. 'अद्वैतमते' जगतः अस्ति

(A) नित्यत्वम् (B) मिथ्यात्वम्

(C) पारमार्थिकत्वम् (D)ब्रह्मपरिणामात्मकत्वम्

29. भौतिकः सर्गः कतिविधो भवति ?

(A) चतुर्दशविधः (B) पञ्चविधः

(C) अष्टविधः (D) एकविधः

30. ('स्थूलप्रपञ्चोत्पत्तिः') केभ्यः सम्भवति ?

(A) अपञ्चीकृतपञ्चभूतेभ्यः (B) ईश्वरादिभ्यः

(C) मानवशरीरेभ्यः (D) पञ्चीकृतपञ्चभूतेभ्यः

31. वेदान्तसारे प्रयोजनं निरूपितम् -

(A) दुःखनिवृत्तिः

(B) अभ्युदयलाभः

(C) अज्ञाननिवृत्तिः स्वस्वरूपानन्दावाप्तिश्च

(D) पाण्डित्यसम्पादनम्

32. अद्वैतमते 'ब्रह्मणो' वर्तते

(A) व्यावहारिकत्वम् (B) प्रतिभासिकत्वम्

(C) पारमार्थिकत्वम् (D) मिथ्यात्वम्

33. 'ब्रह्मसूत्रस्यापरं' नाम किम् अस्ति ?

(A) शारीरकसूत्रम् (B) मीमांसासूत्रम्

(C) धर्मसूत्रम् (D) सांख्यसूत्रम्

34. ब्रह्मसूत्राणां भगवत्पादशङ्कराचार्यस्य व्याख्यायाः केन नाम्ना व्यवहारः ?

(A) श्रीभाष्यम् (B) जयः

(C) शारीरकमीमांसाभाष्यम् (D) द्वादशलक्षणी

35. 'तत्त्वमसि' इति वाक्यसमन्वये वेदान्ताभिमतलक्षणा वर्तते -

(A) जहल्लक्षणा (B)जहदजहल्लक्षणा

(C) अजहल्लक्षणा

(D)उपादानलक्षणा

36. 'षड्विधलिङ्गैः' समुपेतं किम् ?

(A) श्रवणम् (B) मननम्

(C) निदिध्यासनम् (D) अभ्यासः

37. "दमः" उच्यते -

(A) अन्तरिन्द्रियनिग्रहः

(B) विहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः

(C) बाह्येन्द्रियनिग्रहः

(D) वेदान्तवाक्येषु विश्वासः

38. 'वेदान्तसारे' लिङ्गशरीराणि वर्णितानि-

(A) षोडशावयवानि

(B) पञ्चदशावयवानि

(C) एकादशावयवानि

(D) सप्तदशावयवानि

39. विज्ञानमयकोशे भवति -

(A) ज्ञानशक्तिमान् कर्तृरूपः

(B) इच्छाशक्तिमान् कर्तृरूपः

(C) क्रियाशक्तिमान् कार्यरूपः

(D) क्रियात्मकत्वेन कार्यरूपः

40. वेदान्तमते निर्विकल्पकविषये कति विघ्नाः सम्भवन्ति -

(A) त्रयः (B) चत्वारः

(C) द्वौ (D) पञ्च

41. "तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोपनिषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावः" वेदान्तसारानुसारं लक्षणमिदं कस्यास्ति?

(A) अधिकारिणः (B) विषयस्य

(C) सम्बन्धस्य (D) प्रयोजनस्य

42. वेदान्तसारानुसारं तितिक्षायाः किं लक्षणम् अस्ति

(A) विहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः

(B) मोक्षेच्छा

(C) शीतोष्णादिद्वन्द्वसहिष्णुता

(D) जन्ममरणबन्धनात् मुक्तिः

43. अध्यारोपः किं भवति -

(A) मिथ्याज्ञानम् (B) अस्पष्टंज्ञानम्

(C) यथार्थज्ञानम् (D)वस्तुनि अवस्त्वारोपः

44. आवरणम् कस्य शक्तिरस्ति?

(A) रजोगुणस्य (B) अज्ञानस्य ।

(C) जीवस्य (D) चैतन्यस्य

45. वेदान्तसारानुसारं लिङ्गशरीरे कस्य गणना न भवति?

(A) बुद्धेः (B) मनसः

(C) प्राणस्य (D) आकाशस्य

46. प्रायश्चित्तकर्माणि भवन्ति-

(A) हननादीनि (B) सन्ध्यावन्दनादीनि

(C) ज्योतिष्टोमादीनि (D) चान्द्रायणादीनि

47. 'शाण्डिल्यविद्याविषयः' कुत्र निर्दिष्टः अस्ति -

(A) माण्डूक्योपनिषदि

(B) छान्दोग्योपनिषदि

(C) बृहदारण्यके

(D) कठोपनिषदि

48. काम्यकर्माणि कीदृशानि

(A) अकरणे पापसाधनानि

(B) निमित्तवशात् कृतानि

(C) पापविनाशसाधनानि

(D) फलोद्देश्येन विधीयमानानि

49. वेदान्तसारानुसारम् 'अज्ञानं' किं रूपं भवति -

(A) भावरूपम् (B) अभावरूपम्

(C) शून्यरूपम् (D) निष्क्रियरूपम्

50. 'निर्वातदीपवदचलं' भवति -

(A) सविकल्पकसमाधिः

(B) सगुणब्रह्मस्वरूपम्

(C) समष्टिजीवस्वरूपम्

(D) निर्विकल्पकसमाधिः

<u>तर्कसङ्ग्रह</u>

1. ' तर्कसङ्ग्रहानुसारं' कति पदार्थाः सन्ति -

(A)षोडश (B) सप्त

(C) षट् (D) दश

2. तर्कसङ्ग्रहानुसारं' विशेषाः सन्ति -

(A) नित्यद्रव्यवृत्तयः (B) अनित्यद्रव्यवृत्तयः

(C) द्रव्यवृत्तयः (D) गुणवृत्तयः

3. तर्कसङ्ग्रहानुसारं' कति गुणाः सन्ति -

(A) सप्तदश (B) अष्टचत्वारिंशत्

(C) चतुर्विंशतिः (D) दश

4. उत्क्षेपणं' कस्य प्रकारः -

(A) गमनस्य (B) भ्रमणस्य

(C) कर्मणः (D) करणस्य

5. गन्धवत्त्वं कस्य लक्षणम् -

(A) पृथिव्याः (B) दिशः

(C) जलस्य (D) वायोः

6. उपमितिकरणं किम् ?

(A) इन्द्रियम् (B) पदज्ञानम्

(C) व्याप्तिज्ञानम् (D) सादृश्यज्ञानम्

7. तर्कसंग्रहानुसारं शीतस्पर्शवत्वं कस्य लक्षणम् ?

(A) पृथिव्याः (B) जलस्य

(C) वायोः (D) परदुःखस्य

8. तर्कसंग्रहानुसारं तैजसविषयः कतिविधः ?

(A) त्रिविधः (B) द्विविधः

(C) चतुर्विधः (D) पश्चविधः

9. तर्कसङ्ग्रहानुसारं पृथिव्यां रूपम् -

(A) चतुर्विधम् (B) त्रिविधम्

(C) पश्चविधम् (D) सप्तविधम्

10. शुक्तौ इदं रजतम्' इति ज्ञानम् अस्ति

(A) प्रमा (B) उपमितिः

(C) यथार्थानुभवः (D) अप्रमा

11. पश्चावयवप्रयोग एव-

(A) स्वार्थानुमानम् (B) निगमनम्

(C) उदाहरणम् (D) परार्थानुमानम्

12. अधोलिखितयुग्मानां समीचीनतालिकां चिनुत

(अ) अर्थावाधो — 1.अप्रमाणम्

(ब) गौरश्वः पुरुष इति — 2.योग्यता

(स) प्रहरे प्रहरे उच्चरितपदानि — 3.योग्यताभाववत्

(द) अग्निना सिश्चति — 4.सन्निधिं अभाववन्ति

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	2	1	4	3
(B)	1	3	2	4
(C)	3	2	4	1
(D)	2	3	4	1

13. नित्यद्रव्यवृत्तिः विशेषास्तु........ एव।

(A) अनन्ताः (B) पश्च

(C) षट् (D) चत्वारः

14. उपमितिः नाम –

(A) संज्ञा-संज्ञि-सम्बन्धज्ञानम् (B) संज्ञा-ज्ञानम्

(C) संज्ञिज्ञानम् (D) सादृश्यज्ञानम्

15. शाब्दज्ञानं नाम -

(A) अक्षरज्ञानम् (B) शब्दज्ञानम्

(C) शक्तिज्ञानम् (D) वाक्यार्थज्ञानम्

16. इन्द्रियार्थसन्निकर्षः कतिविधः ?

(A) पश्चविधः (B) चतुर्विधः

(C) षड्विधः (D) त्रिविधः

17. 'द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायाभावाः ' इति -

(A) गुणाः (B) अपवादाः

(C) पदार्थाः (D) स्पर्शाः

18. तर्कसङ्ग्रहानुसारं प्रमाणानि सन्ति -

(A) त्रीणि (B) चत्वारि

(C) पञ्च (D) षट्

19. 'प्रमा' इत्युच्यमाने अधोलिखितेषु कस्य निरसनं भवति ?

(A) प्रमितिः (B) अनुमितिः

(C) स्मृतिः (D) उपमितिः

20. प्रमायाः करणं किम् ?

(A) प्रमाता (B) प्रमेयः

(C) प्रमाणं (D) इन्द्रियार्थसन्निकर्षः

21. तर्कसङ्ग्रहानुसारं कति द्रव्याणि ?

(A) पञ्च (B) चत्वारि

(C) नव (D) सप्त

22. वाक्यार्थज्ञाने हेतुः अस्ति -

(A) निगमनम् (B) प्रतिज्ञा

(C) हेतुः (D) सन्निधिः

23. तर्कसङ्ग्रहानुसारं पृथिव्यां रूपम्-

(A) षड्विधम् (B) सप्तविधम्

(C) अष्टविधम् (D) नवविधम्

24. 'न्यूनदेशवृत्ति' इति लक्षणम्-

(A) अभावस्य (B) परसामान्यस्य

(C) अपरसामान्यस्य (D) विशेषस्य

25. तर्कसङ्ग्रहानुसारं अनुमानं नाम-

(A) लिङ्गज्ञानम् (B) व्याप्तिः

(C) उदाहरणम् (D) विशेषस्य

26. समीचीनतालिकां चिनुत-

(अ) घटः पटः न	(i) प्रागभावः
(ब) इह घटो भविष्यति	(ii) अन्योन्याभावः
(स) भूतले घटः न	(iii) प्रध्वंसाभावः
(द) घटो ध्वस्तः	(iv) अत्यन्ताभाविः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)
(B)	(iv)	(iii)	(ii)	(i)
(C)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(i)	(iv)	(iii)

27. अभावस्य प्रत्यक्षं भवति-

(A) संयोगसम्बन्धेन

(B) समवायसम्बन्धेन

(C) संयुक्त-समवाय-सन्निकर्षेण

(D) विशेषण-विशेष्य-भावसन्निकर्षेण

28. 'आप्तवाक्यं शब्दः' इति लक्षणम्-

(A) पदस्य (B) वाक्यस्य

(C) शब्दप्रमाणस्य (D) महावाक्यस्य

29. 'एकस्मिन् धर्मिणि विरुद्ध नानाधर्मावगाहि ज्ञानम्' इति लक्षणं भवति-

(A) अज्ञानस्य (B) समूहालम्बनज्ञानस्य

(C संशयस्य (D) शाब्दज्ञानस्य

30. सुखाद्युपलब्धिसाधनमिन्द्रियं' किम् ?

(A) रसना (B) घ्राणम्

(C) मनः (D) चक्षुः

31. न्यायदर्शनानुसारं किं प्रमाणरूपेण न स्वीक्रियते ?

(A) अनुमानम् (B) अर्थापत्तिः

(C) उपमानम् (D) शब्दः

32. 'व्याप्यस्य पक्षधर्मत्वधीः' इति किम् ?

(A) परामर्शः (B) अनुमितिः

(C) पक्षता (D) प्रतिज्ञा

33. "सर्वं शून्यम्" इति केन बौद्धसम्प्रदायेन स्वीकृतम्

(A) माध्यमिकेन (B) सौत्रान्तिकेन

(C) योगाचारेण (D) वैभाषिकेन

34. तर्कसंग्रहानुसारं 'संस्कारमात्रजनकं ज्ञानम्' अस्ति -

(A) अनुभवः (B) यथार्थः

(C) स्मृतिः (D) प्रमाणम्

35. तर्कसंग्रहानुसारं शब्दसाक्षात्कारे कः सन्निकर्षः ?

(A) समवायः (B) संयोगः

(C) समवेतसमवायः (D) विशेषण-विशेष्यभावः

36. अभावप्रत्यक्षे अन्नम्भट्टानुसारं कः सन्निकर्षोऽङ्गीकृतः?

(A) विशेषण-विशेष्यभावः (B) समवायः

(C) संयुक्तसमवेत-समवायः (D) संयोगः

37. गन्धवत्त्वं कस्य लक्षणम् ?

(A) अपः (B) पृथिव्याः

(C) वायोः (D) अग्नेः

38. गौतमसूत्रोक्तषोडशपदार्थेषु कस्य पदार्थस्य निम्नाङ्कितेषु ग्रहणं नास्ति?

(A) 'संशय' पदार्थस्य (B) 'विशेष' पदार्थस्य.

(C) 'अवयव' पदार्थस्य (D) 'निर्णय' पदार्थस्य

39. 'मृत्पिण्डः घटस्य कीदृशं कारणमुच्यते?

(A) निमित्तकारणम्

(B) समवायिकारणम्

(C) असमवायिकारणम्

(D)समवाय्यसमवायिकारणम्

40. यदा चक्षुरादिना घटगतरूपादिकं गृह्यते तदाऽनयोरिन्द्रियार्थसन्निकर्षः कः?

(A) संयोगः (B) समवायः

(C) संयुक्तसमवायः (D) समवेतसमवायः

41. साध्याभावसाधकं हेत्वन्तरं यस्य विद्यते सः' हेत्वाभासोऽन्नम्भट्टेन केन नाम्ना प्रोक्तः?

(A) 'सत्प्रतिपक्ष' नाम्ना (B) 'असिद्ध' नाम्ना

(C) 'सव्यभिचार' नाम्ना (D) 'विरुद्ध' नाम्ना

42. तर्कसंग्रहे तर्कलक्षणं किमुक्तम् ?

(A) मिथ्याज्ञानम्

(B) व्याप्यारोपेण व्यापकारोपः

(C) सन्निकृष्टसंयोगहेतुः

(D) एकस्मिन् धर्मिणि विरुद्ध-नानाधर्मवैशिष्ट्यावगाहि ज्ञानम्

43. तर्कसङ्ग्रहदीपिकानुसारं 'परमाणुष्वेव पाको, न द्वयणुकादावपी' ति केषाम्मते?

(A) नैयायिकानाम् (B) वैशेषिकानाम्

(C) साङ्ख्यानाम् (D) वेदान्तिनाम्

44. तर्कसङ्ग्रहानुसारम् आत्ममात्रविशेष-गुणेषु कस्य परिगणनं नास्ति?

(A) बुद्धेः (B) इच्छायाः

(C) स्थिति-स्थापकसंस्कारस्य (D) धर्मस्य

45. "प्रमाकरणं प्रमाणम्" - इति कस्य लक्षणम् ?

(A) प्रमायाः (B) प्रत्यक्षस्य

(C) प्रमाणस्य (D) लक्षणस्य

46. "गौरश्वः पुरुषो हस्तीति" कस्माद् हेतोर्न वाक्यम्?

(A) पदत्वात् (B) सन्निधेरभावात्

(C) परस्पराकांक्षाविरहात् (D) योग्यताविरहात्

47. "पर्वतो वह्निमान् प्रमेयत्वात्" इत्यत्र दोषः वर्तते -

(A) साध्याभाववद्वृत्तिः (B) दृष्टान्तरहितत्वम्

(C) साध्याभावव्याप्तिः (D) आश्रयासिद्धित्वम्

48. तर्कसंग्रहानुसारं परिमाणं कतिविधम् ?

(A) द्विविधम् (B) पञ्चविधम्

(C) चतुर्विधम् (D) षड्विधम्

49. पटं प्रति तुरीवेमादिकं कीदृशं कारणं भवति ?

(A) समवायिकारणम् (B) असमवायिकारण्

(C) स्वरूपकारणम् (D) निमित्तकारणम्

50. "पृथिवी इतरेभ्यो भिद्यते गन्धवत्त्वात्" अत्र साध्यः कः ?

(A) पृथिवी (B) गन्धवत्त्वम्।

(C) इतरभेदः (D) गन्धत्वम्

तर्कभाषा

1. प्रमाणैरर्थपरीक्षणं भवति -

(A) मीमांसा (B) न्यायः

(C) वृत्तिः (D) कारिका

2. तर्कभाषा कस्य शास्त्रस्य प्रकरणग्रन्थः -

(A) वैशेषिकस्य (B) सांख्यस्य

(C) न्यायस्य (D) अन्यस्य

3. न्यायदर्शने गौतमेन कति पदार्थाः निरूपिताः?

(A) 25 (B) 16

(C) 9 (D) 7

4. न्यायदर्शने पदार्थाः सन्ति-

(A) षोडश (B) सप्तदश

(C) विंशतिः (D) एकविंशतिः

5. तर्कभाषायां कति प्रमाणानि?

(A) त्रिविधानि (B) चतुर्विधानि

(C) द्विविधानि (D) पञ्चविधानि

6. परार्थानुमाने कति अवयवाः सन्ति?

(A) त्रयः (B) पञ्च

(C) सप्त (D) नव

7. असिद्धः कतिविधः?

(A) द्विविधः (B) त्रिविधः

(C) चतुर्विधः (D) पञ्चविधः

8. द्रवत्वम् कतिविधम् -

(A) एकविधम् (B) द्विविधम्

(C) त्रिविधम् (D) चतुर्विधम्

9. अलौकिकसन्निकर्षः कतिविधः -

(A) एकविधः (B) द्विविधः

(C) त्रिविधः (D) चतुर्विधम्

10. न्यायसूत्रोक्तषोडशपदार्थेषु द्वितीयः पदार्थः कः –

(A)प्रमाणम् (B) प्रमेयम्

(C) प्रयोजनम् (D) सिद्धान्तः

11. तर्कभाषानुसारं प्रमायाः करणं किम्भवति-

(A) प्रमाता (B) प्रमेयम्

(C) तर्कः (D) इन्द्रियसंयोगादिः

12. न्यायमते परसत्ता भवति -

(A) विशेषवृत्ति (B) समवायवृत्ति

(C) द्रव्य-गुण-वृत्ति (D) सामान्यवृत्ति

13. "एकस्मिन् धर्मिणि नानाधर्मावगाहि ज्ञानम्" इति लक्षणं भवति -

(A) अज्ञानस्य

(B)समूहालम्बनज्ञानस्य

(C) संशयस्य

(D) शाब्दज्ञानस्य

14. साध्याभावव्याप्यवान् कः?

(A) सत्प्रतिपक्षः (B) विरोधः
(C) असाधारणः (D) आश्रयासिद्धः

15. प्रमाणस्य लक्षणं वर्तते -
(A) यथार्थज्ञानम् (B) प्रमाकरणम्
(C) उपमितिकरणम् (D) परामर्शज्ञानम्

16. न्यायदर्शने प्रथमनिर्दिष्टः पदार्थः कः ?
(A) प्रमेयम् (B) प्रयोजनम्
(C) संशयः (D) प्रमाणम्

17. तदभाववति तत्प्रकारकं ज्ञानं कीदृशम्?
(A) प्रमा (B) अप्रमा
(C) स्मृतिः (D) विपर्ययः

18. न्यायसूत्राणां प्रणेतुः गोतमस्य अपरं नाम किम् -
(A) कणादः (B) वररुचिः
(C) अक्षपादः (D) गदाधरः

19. तर्कभाषायाः प्रणेता विद्यते?
(A) अक्षपादगौतम (B) वात्स्यायन
(C) वाचस्पति (D) केशव मिश्र

20. लक्षितस्य लक्षणमुपपद्यते न वेति विचारः उच्यते-
(A) परीक्षा (B) लक्षणम्
(C) उद्देश्यः (D) विमर्शः

21. कस्य कृते तर्कभाषा विरचिता-
(A) पण्डितस्य (B) विपश्चितः
(C) मेधाविनः (D) बालस्य

22. नयायदर्शनस्य कर्ता कः ?
(A) कपिल (B)गौतम
(C) शङ्कर (D) पतञ्जलि

23. ज्ञातविषयंज्ञानं.........
(A) प्रत्यक्षम् (B) स्मृतिः
(C) अनुवृत्तिः (D) विधिः

24. कस्मिन् ग्रन्थे प्राधान्येन षोडशपदार्थाः प्रतिपाद्यन्ते?
(A) सांख्यकारिकायाम् (B) तर्कभाषायाम्
(C) वेदान्तसारे (D) तर्कसंग्रहे

25. स्मृतिव्यतिरिक्तं ज्ञानं किम् -
(A) स्मृतिः (B) अनुभवः
(C) ज्ञानम् (D) अज्ञानम्

26. नव्यन्यायप्रवर्तकः कः -
(A) गङ्गेशः (B) रघुनाथः
(C) गदाधरः (D) जगदीशः

27. कारणं कतिविधम्-
(A) एकविधम् (B) द्विविधम्
(C) त्रिविधम् (D) चतुर्विधम्

28. न्यायानुसारं प्रमेयाः सन्ति -
(A) दश (B) एकादश
(C) द्वादश (D) त्रयोदश

29. हेत्वाभासानां संख्या भवति -
(A) चतुर्विधः (B) पञ्चविधः
(C) द्विविधः (D)त्रिविधः

30. यथार्थानुभवः कतिविधः
(A) चतुर्विधः (B) पञ्चविधः
(C) सप्तविधः (D) नवविधः

31. अनुमापकस्य हेतवः कति सन्ति -
(A) त्रयः (B) पञ्च
(C) अष्ट (D) एकादश

32. न्यायशास्त्रेऽनुमानं ...... वर्तते -
(A) द्विप्रकारकम (B) चतुर्प्रकारकम्
(C) त्रिप्रकारकम् (D)पञ्चप्रकारकम्

33. असाधारणधर्मः कस्य लक्षणम्?
(A) लक्षणस्य (B) उद्देशस्य
(C) परीक्षायाः (D) आत्मनः

34. रसः कतिविधः -
(A) पञ्चविधः (B) षड्विधः
(C) चतुर्विधः (D) सप्तविधः

35. ज्ञानलक्षणः सामान्यलक्षणः योगजश्चेति कस्य भेदाः?
(A) अलौकिकसन्निकर्षस्य (B) अनुमितेः
(C) उपमितेः (D) अर्थापत्तेः

36. सव्यभिचारः कतिविधः -
(A) एकविधः (B) द्विविधः
(C) त्रिविधः (D) चतुर्विधः

37. अन्यथासिद्धस्य कति भेदाः -
(A) चत्वारः (B) पञ्च
(C) षट् (D) सप्त

38. 'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः' प्रमाणानीति मन्यन्ते -
(A) वैशेषिकाः (B) नैयायिकाः
(C) प्रमाणम् (D) सांख्याः

39. कतिविधं शब्दप्रमाणम् -
(B) त्रिविधम् (B) त्रिविधम्
(C) एकविधम् (D) अनेकविधम्

40. न्यायशास्त्रे कतिविधं दुःखम् -
(A) एकोनविंशतिविधम् (B) त्रिविधम्
(C) एकविंशतिविधम् (D) अनेकविधम्

41. साक्षात्कारिप्रमाहेतुः सन्निकर्षः?
(A) पाँच (B) छः

(C) सात (D) सोलह

42. 'अयुतसिद्ध'-युग्मानि कति -

(A) चत्वारि (B) षट्

(C) पञ्च (D) सप्त

43. गौतमसूत्रोक्तषोडशपदार्थेषु कस्य पदार्थस्य ग्रहणं नास्ति-

(A) 'संशय'-पदार्थस्य (B) 'विशेष'-पदार्थस्य

(C) 'अवयव'-पदार्थस्य (D) 'निर्णय'-पदार्थस्य

44. न्यायसूत्रोक्तषोडशपदार्थेषु तृतीय पदार्थः कः –

(A) प्रमाणम् (B) प्रमेयम्

(C) प्रयोजनम् (D) संशयः

45. तर्कभाषानुसारं प्रमायाः करणं किम्भवति-

(A) प्रमाता (B) प्रमेयम्

(C) तर्कः (D) इन्द्रियसंयोगादिः

46. सन्निधे लक्षणं किम्?

(A) पदानां विलम्बेन उच्चारणम्

(B) पदानाम् अविलम्बेन उच्चारणम्

(C) पदानाम् अनुच्चारणम्

(D) पदानां वारं वारम् उच्चारणम्

47. साध्याभावव्याप्यवान् कः?

(A) सत्प्रतिपक्षः (B) विरोधः

(C) असाधारणः (D) आश्रयासिद्धः

48. प्रमायाः करणं किम् -

(A) प्रमाता (B) प्रमेयः

(C) प्रमाणम् (D) इन्द्रियार्थसन्निकर्षः

49. 'प्रमाकरणं प्रमाणम्' इत्यत्र लक्ष्यं किम् -

(A) प्रमा (B) प्रत्यक्ष

(C) लक्षण (D) प्रमाण

50. प्रामाण्य होता है-

(A) तद्वावति तत्प्रकारकत्वे सति ज्ञानम्

(B) तद्वतितत्प्रकारकत्वे सति ज्ञानत्वम्

(C) अनुभवत्वम्

(D) शाब्दबोधत्वम्

मीमांसा दर्शन

1. वेदस्य अपौरुषेयतायाः परिपोषकः कः?

(A) न्यायः (B) वैशेषिकः

(C) सांख्यः (D) मीमांसा

2. सूत्रकारः कः?

(A) स्कन्दस्वामी (B) शङ्कराचार्यः

(C) लौगाक्षिभास्करः (D) जैमिनिः

3. अर्थसंग्रहस्य कः प्रणेता ?

(A) लौगाक्षिभास्करः (B) कुमारिलभट्टः

(C) शम्भुभट्टः (D) आपदेवः

4. अधस्तनेषु सत्यासत्यपर्यायेषु समीचीनं विचिनुत –

कर्मजन्यफलस्वाम्यं नाम-

(i) कर्माजन्यफलभोक्तृत्वम्

(ii) कर्मजन्याफलभोक्तृत्वम्

(iii) कर्मजन्यफलभोक्तृत्वम्

(iv) कर्मजन्यफलाभोक्तृत्वम्

(A) असत्यम्, असत्यम्, असत्यम्, सत्यम्

(B) सत्यम्, असत्यम्, असत्यम्, असत्यम्

(C)असत्यम्, असत्यम्, सत्यम्, असत्यम्

(D) सत्यम्, सत्यम्, असत्यम्, असत्यम्

5. कर्मजन्यफलस्वाम्यबोधकः विधिः कः?

(A) अधिकारविधिः (B) प्रयोगविधिः

(C) नियमविधि (D) विनियोगविधिः

6. पूर्वमीमांसामते धर्मः कः?

(A) सदाचारः (B) यागादिः

(C) अपवर्गः (D) अभ्युदयप्राप्तिः

7. कीदृशो भवति प्रयोगविधिः?

(A) अङ्गप्रधाननिबन्धबोधकः

(B) कर्मस्वरूपमात्रबोधकः

(C) प्रयोगप्रशुभावबोधकः

(D) कर्मजन्यफलस्वाम्यबोधकः

8. "प्रयोगप्राशुभावबोधको विधिः" -

(A) उत्पत्तिविधिः (B) विशिष्टविधिः

(C) गुणविधि (D) प्रयोगविधिः

9. अङ्गानां क्रमबोधको विधिः वर्तते-

(A) विनियोगविधिः (B) नियमविधिः

(C) परिसंख्याविधिः (D) प्रयोगविधिः

10. अर्थसंग्रहमनुसृत्य यागो नाम -

(A) देवतोद्देशेन द्रव्यत्यागः

(B) देवतोद्देशेन द्रव्यस्य प्रक्षेपः

(C) स्वस्वत्वनिवृत्तिपूर्वकं परस्वत्वापादनम्

(D) मन्त्रपठनम्

11. "यागादिरेव धर्मः" यस्मिन् ग्रन्थे उल्लिखितमस्ति -

(A) मनुस्मृति (B) अर्थसंग्रह

(C) गौतमधर्मसूत्र (D) पराशरस्मृति

12. "वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः " यह धर्मलक्षण है -

(A) कृष्णयज्वनः (B) आपदेवस्य

(C) शबरस्य (D) लौगाक्षिभास्करस्य

13. . 'आदित्यो यूपः' इत्यत्र किंविधोऽर्थवादः?

(A) भूतार्थवादः (B) अनुवादः
(C) निषेधशेषः (D) गुणवादः

14. "पुरुषप्रवृत्त्यनुकूलभावकव्यापारविशेषरूपा" अस्ति -
(A) आर्थीभावना (B) लिङ्गान्तरभावना
(C) शाब्दीभावना (D) विभावना

15. अर्थसंग्रहे प्रोक्तं धर्मलक्षणमस्ति -
(A) चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः
(B) यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः
(C) धारणाद्धर्मः इत्याहुः
(D) वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

16. 'चोदनालक्षणोऽर्थः" कस्य लक्षणम् ?
(A) ब्रह्मणः (B) जगतः
(C) चैतन्यस्य (D) धर्मस्य

17. अर्थवादस्य स्वरूपम् -
(A) प्रशंसनम् (B) अवधारणम्
(C) मननम् (D) अनुचिन्तनम्

18. अर्थसंग्रहानुसारं शाब्दीभावना अपेक्षते ?
(A) अंशत्रयम् (B) अंशद्वयम्
(C) अंशचतुष्टयम् (D) अंशपञ्चकम्

19. अर्थसंग्रहानुसारं वैदिकवाक्ये व्यापारविशेषः किंनिष्ठः?
(A) पुरुपनिष्ठः (B) स्मृतिनिष्ठः
(C) लिङ्गादिशब्दनिष्ठः (D) आख्यातनिष्ठः

20. अर्थसंग्रहे 'वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः ' इति धर्मलक्षणे अर्थ पदोपार्थनं किमर्थम् ?
(A) प्रयोजनेऽतिव्याप्तिवारणार्थम्
(B) भोजनादावतिव्याप्तिवारणार्थम्
(C) अनर्थफलकत्वात् श्येनादावतिव्याप्तिवारणार्थम्
(D) अनृतव्यावृत्यर्थम्

21. 'चित्रया यजेत पशुकाम' इत्यत्र चित्रत्वं कुत्र गृह्यते -
(A) काले (B) अग्नौ
(C) द्रव्ये (D) ब्राह्मणम्

22. मीमांसानुसारं किं नाम स्थानम् ?
(A) क्षेत्रम् (B) उपस्थितिः
(C) अनुपस्थितिः (D) प्राङ्गणम्

23. समाख्या कतिविधा भवति -
(A) एकविधा (B) द्विविधा
(C) त्रिविधा (D) चतुर्विधा

24. अज्ञातार्थज्ञापको वेदभागः कोऽस्ति?
(A) विधिः (B) संहिता
(C) अर्थवादः (D) उपनिषद्

25. अर्थसंग्रहानुसारं विधिः कतिविधः?
(A) दशविधः (B) द्वादशविधः
(C) सप्तविधः (D) चतुर्विधः

26. पूर्वमीमांसादर्शने कति अध्यायाः सन्ति -
(A) 5 (B) 12
(C) 20 (D) 16

27. 'अथातो धर्मजिज्ञासा' इति जैमिनीयसूत्रे वेदाध्ययनस्य दृष्टार्थत्वं को ब्रूते ?
(A) 'अथ' शब्दः (B) 'अतः' शब्दः
(C) 'धर्म' शब्दः (D) 'जिज्ञासा' शब्दः

28. अर्थसंग्रहमते वेदभागः कतिविधः -
(A) द्विविधः (B) त्रिविधः
(C) चतुर्विधः (D) पञ्चविधः

29. पुरुषस्य निवर्तकं वाक्यम् उच्यते -
(A) विधिः (B) मन्त्रः
(C) निषेधः (D) अर्थवादः

30. अधस्तनेषु युग्मपर्यायेषु योग्यं विचिनुत-
(क) व्रीहीनवहन्ति 1. परिसंख्याविधिः
(ख) पञ्चपञ्चनखा भक्ष्याः 2. नियमविधिः
(ग) अग्निर्हिमस्य भेषजम् 3.विशिष्टविधिः
(घ) सोमेन यजेत 4. अनुवादः

	क	ख	ग	घ
(A)	4	3	1	2
(B)	2	1	4	3
(C)	3	4	1	2
(D)	1	2	3	4

31. विनियोगविधेः सहकारिभूतानि प्रमाणानि कति ?
(A) पञ्च (B) षट्
(C) दश (D) एकादश

32. पूर्वमीमांसामते धर्मः कः ?
(A) सदाचारः (B) यागादिः
(C) अपवर्गः (D) अभ्युदयप्राप्तिः

33. अर्थसंग्रहमते 'वेदभागः' कतिविधः ?
(A) द्विविधः (B) त्रिविधः
(C) चतुर्विधः (D) पञ्चविधः

34. परिसंख्याविधेरुदाहरणं किम् ?
(A) यजेत स्वर्गकामः (B) दध्ना जुहोति
(C) व्रीहीन् अवहन्ति (D) पञ्च पञ्चनखा भक्ष्या

35. अर्थसंग्रहानुसारं भावना कतिधा ?
(A) द्विविधा (B) त्रिविधा
(C) चतुर्विधा (D) पञ्चविधा

36. गुणविधेः उदाहरणं किम् अस्ति ?

(A) अग्निहोत्रं जुहोति (B) समिधो यजति
(C) दध्ना जुहोति (D) सोमेन यजेत

37. प्रयोगप्राशुभावबोधकः भवति -
(A) उत्पत्तिविधिः (B) विशिष्टविधिः
(C) गुणविधिः (D) प्रयोगविधिः

38. 'तत्प्रख्यन्यायः' कुत्र उपयुज्यते ?
(A) निषेधनिर्णये (B) नियमविधिनिर्णये
(C) नामधेयनिर्णये (D) अर्थवादनिर्णये

39. "शाब्दीभावना" निरूपिता भवति
(A) आख्याततत्वांशेन (B) लिङ्गत्वांशेन
(C) ज्ञापकांशेन (D) सामान्यांशेन

40. परिसंख्याविधेः दोषाः के ?
(A) श्रुतहानिः, अश्रुतप्रकल्पनम्, प्राप्तबाधः
(B) श्रुतहानिः, प्राप्तबाधः, वाक्यभेदः
(C) अप्रामाण्यस्वीकारः, प्रामाण्यपरित्यागः
(D) वचनबलाद् विकल्पः, एकार्थत्वाद् विकल्पः

41. अर्थवादस्य लक्षणं किम् ?
(A) स्तुति-निन्दान्यतरपरं वाक्यम्
(B) समभिव्यवहारो वाक्यम्
(C) अपौरुषेयं वाक्यम्
(D) अङ्ग-प्रधान-सम्बन्धबोधकं वाक्यम्

42. अर्थसंग्रहे विशिष्टविधेः उदाहरणमस्ति -
(A) दध्ना जुहोति
(B) अग्निहोत्रं जुहुयात्स्वर्गकामः
(C) सोमेन यजेत
(D) राजा राजसूयेन स्वराज्यकामो यजेत

43. अर्थसंग्रहानुसारम् आख्यातेन किमुच्यते
(A) कर्ता (B) भावना
(C) कर्म (D) करणम्

44. 'तत्र चान्यत्र च प्राप्तौ' इति कस्य लक्षणं भवति?
(A) अपूर्वविधेः (B) नियमविधेः
(C) अधिकारविधेः (D) परिसङ्ख्यायाः

45. "विरोधे गुणवादः स्यात्" इति लक्षणम्-
(A) नामधेयस्य (B) गुणविधेः
(C) अर्थवादस्य (D) मन्त्रस्य

46. सा च त्रिविधा-विधात्री, अभिधात्री विनियोक्त्री च" इत्यत्र 'सा' का ?
(A) वैदिकी समाख्या (B) श्रुतिः
(C) लौकिकी समाख्या (D) शब्दशक्तिः

47. अर्थसंग्रहानुसारं 'शाब्दीभावना' इत्यनेन कः अभिप्रायः ?
(A) अपौरुषेयवाक्यम्
(B) समभिव्यवहारः
(C) पुरुषप्रवृत्त्यनुकूलो भावयितुर्व्यापारविशेषः
(D) प्रयोजनेच्छाजनितक्रियाविषयव्यापारः

48. अर्थसंग्रहानुसारं विधिश्चतुर्विधः - उत्पत्तिविधिः, विनियोगविधिः अधिकारविधिः ....च ।
(A) नियमविधिः (B) प्रयोगविधिः
(C) यज्ञविधिः (D) परिसङ्ख्याविधिः

49. अर्थसङ्ग्रहे 'वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः' इति धर्मलक्षणे 'वेदप्रतिपाद्यः' इति पदं किमर्थं गृहीतम्?
(A) द्यूतक्रीडादावतिव्याप्तिवारणाय
(B) स्वर्गादिप्रयोजनेऽतिव्याप्तिवारणाय
(C) श्येनयागादावतिव्याप्तिवारणाय
(D) भोजनादावतिव्याप्तिवारणाय

50. शाब्दीभावनायाः साध्यं किम्भवति?
(A) लिङ्गादिज्ञानम्
(B) अर्थवादज्ञाप्यप्राशस्त्यम्
(C) स्वर्गादिफलम्
(D) आर्थीभावना

योगदर्शन

1. योगदर्शनस्य प्रवर्तकोऽस्ति-
(A) पाणिनि (B) पतञ्जलि
(C) कपिल (D) कणाद

2. योगसूत्रस्य कर्ता अस्ति-
(A) कपिल (B) गौतम
(C) पतञ्जलि (D) जैमिनि

3. 'व्यासभाष्य:' कस्मिन् दर्शने समुपलभ्यते -
(A) न्याय (B) सांख्य
(C) जैन (D) योग

4. योगभाष्यटीकाकारेषु प्राचीनतमोऽस्ति-
(A) शङ्करः (B) विज्ञानभिक्षुः
(C) वाचस्पतिः (D) हरिहरानन्दारण्यः

5. योगदर्शनस्य भाष्यकारः ?
(A) शङ्कर (B) वेदव्यास
(C) रामानुज (D) पतञ्जलि

6. व्यासः कस्य भाष्यकारः वर्तते -
(A) सांख्यसूत्र (B) ब्रह्मसूत्र
(C) जैन (D) योगसूत्र

7. समाधिपाद अस्ति -
(A) योगसूत्रग्रन्थे (B) न्यायसूत्रग्रन्थे
(C) भक्तिसूत्रग्रन्थे (D) ब्रह्मसूत्रग्रन्थे

8. पातञ्जलयोगसूत्रे आद्यं सूत्रं किम् ?

(A) अथ योगशासनम् (B) योगानुशासनम्

(C) अथ योगानुशासनम् (D) अथ योगः

9. अथ योगानुशासनमित्यत्र 'अथ' शब्दस्य कति अर्थाः भवन्ति?

(A) पञ्च (B) षट्

(C) चत्वारः (D) त्रयः

10. योगसूत्रव्याख्याभाष्यं वर्तते -

(A) व्यासभाष्यम् (B) महाभाष्यम्

(C) शाङ्करभाष्यम् (D) नारदसंहिता

11. सेश्वरं दर्शनमस्ति -

(A) योगः (B) सांख्यः

(C) चार्वाकः (D) बौद्धः

12. योगमतानुसारं योगस्य लक्षणम् अस्ति -

(A) कर्मसु कौशलम् (B) युतसिद्धयोः सम्बन्धः

(C) चित्तवृत्तिनिरोधः (D) सन्निकर्षविशेषः

13. योगशब्दस्य अर्थः अस्ति -

(A) अभ्यासः (B) विनयानुशीलम्

(C) आनन्दानुगमः (D) चित्तवृत्तिनिरोधः

14. पातञ्जलयोगसूत्रे 'चित्तवृत्तिनिरोधः ' इत्यनेन कस्य परिचयः उक्तः ?

(A) धर्मस्य (B) योगस्य

(C) मोक्षस्य (D) कर्मणः

15. द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानं कदा भवति ?

(A) विकल्पविरोधे (B)चित्तवृत्तिनिरोधे

(C) चित्तवृत्तिविरोधे (D)विकल्पसत्त्वे

16. 'अथ योगानुशासनम्' अत्राथशब्देन किमुच्यते ?

(A) मङ्गलम् (B) आनन्तर्यम्

(C) अधिकारः (D) प्रश्नः

17. योगसूत्रानुसारेण कति वृत्तयो भवन्ति-

(A) दश (B) षट्

(C) पञ्च (D) अनन्ताः

18. व्यासभाष्ये स्मृतिः कतिविधा प्रोक्ता?

(A) एकविधा (B) द्विविधा

(C) त्रिविधा (D) चतुर्विधा

19. योगसूत्रे चित्तविक्षेपाः कति प्रतिपादिताः?

(A) अष्ट (B) नव

(C) दश (D) चतुर्विधा

20. योगसूत्रे क्लेशाः कति प्रतिपादिताः?

(A) चत्वारः (B) पञ्च

(C) द्वौ (D) त्रयः

21. योगसूत्रे क्रियायोग इत्यनेन कति प्रतिपादितानि ?

(A) त्रयः (B) चत्वारः

(C) पञ्च (D) षट्

22. व्यासभाष्यानुसारं चित्तभूमयः कति सन्ति?

(A) पञ्च (B) चतस्रः

(C) षट् (D) सप्त

23. अणिमादीनि ऐश्वर्याणि कति?

(A)अष्टौ (B) नव

(C) दश (D) सप्त

24. योगदर्शने कति पादाः सन्ति ?

(A) एकः (B) द्वौ

(C) त्रयः (D) चत्वारः

25. योगसूत्रे ईश्वरः कथं वर्णितः?

(A) जगत्कर्ता (B) पुरुषविशेष

(C) प्रकृतिपरिणाम (D) ब्रह्मस्वरूप

26. एतेषु क्रियायोगः नास्ति-

(A) प्राणायाम (B) तपः

(C) स्वाध्याय (D) ईश्वरप्रणिधानम्

27. योगदर्शने कति प्रमाणानि सन्ति-

(A) एकम् (B) द्वे

(C) त्रीणि (D) चत्वारि

28. योगमते समाधिः कतिविधः भवति-

(A) एकम् (B) द्वे

(C) त्रीणि (D) चत्वारि

29. सम्प्रज्ञात समाधिः भवति -

(A) एकम् (B) द्वे

(C) त्रीणि (D) चत्वारि

30. पातञ्जलयोगसूत्राभिमते कः न सम्प्रज्ञातसमाधिः ?

(A) सवितर्कः (B) सानन्दः

(C) भवप्रत्ययः (D) सविचारः

31. योगदर्शनानुसारेण कति यमाः ?

(A) अष्टौ (B) पञ्च

(C) दश (D) सप्त

32. योगाङ्गेषु कति नियमाः कथिताः?

(A) पंच (B) नव

(C) दश (D) सप्त

33. योगस्य अङ्गानि कति सन्ति-

(A) दश (B) नव

(C) अष्टौ (D) सप्त

34. योगदर्शने 'विकल्पवृत्तिः' अस्ति-

(A) प्रत्यक्षानुमानप्रमाणता

(B) स्मृतिः

(C) शब्दज्ञानानुपातिवस्तुशून्यता

(D) वैराग्यभावात्मिका

35. 'पञ्चतय्यः क्लिष्टाक्लिष्टाः' इति सूत्रे काः प्रतिपादिताः?

(A) स्मृतयः (B) प्रकृतयः

(C) वृत्तयः (D) विकृतयः

36. शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यः कः भवति ?

(A) विकल्पः (B) प्रमाणम्

(C) निद्रा (D) विपर्ययः

37. योगानुसारं मिथ्याज्ञानम् अतद्रूपप्रतिष्ठम्-

(A) विकल्पः (B) स्मृतिः

(C) निद्रा (D) विपर्ययः

38. योगानुसारं कः पूर्वेषामपि गुरुः?

(A) पतञ्जलिः (B) भाष्यकारो व्यासः

(C) ईश्वरः (D) मनुः

39. योगसूत्रव्यासभाष्ये विधारणम् इत्यनेन किमुक्तम् -

(A) प्राणायामः (B) प्राणत्यागः

(C) देहत्यागः (D) बुद्धित्यागः

40. योगसूत्रानुसारं ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां भवति -

(A) वीर्यनाशः (B) वीर्यलाभः

(C) निद्राजयः (D) वैराग्यलाभः

41. यमादि.........अङ्गानि भवन्ति -

(A) अपवर्गस्य (B) तत्त्वज्ञानस्य

(C) चित्तवृत्तिनिरोधस्य (D) ध्यानस्य

42. अहिंसाप्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ -

(A) लोभत्यागः (B) कामत्यागः

(C) क्रोधत्यागः (D) वैरत्यागः

43. सत्यप्रतिष्ठायां सिद्धिः -

(A) आसनस्य (B) वाचः

(C) प्राणायामस्य (D) कल्पनायाः

44. अस्तेयप्रतिष्ठायाम् उपस्थानम् -

(A) सर्वरत्नानाम् (B) सर्वसिद्धीनाम्

(C) सर्वबुद्धीनाम् (D) सर्वसुखानाम्

45. कस्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः -

(A) सत्यस्य (B) अस्तेयस्य

(C) ब्रह्मचर्यस्य (D) अपरिग्रहस्य

46. अनुत्तमसुखलाभः -

(A) ब्रह्मचर्यात् (B) सन्तोषात्

(C) शौचात् (D) तपसः

47. ततः क्षीयते प्रकाशावरणम् -

(A) अनन्तसमापत्तेः (B) प्राणायामात्

(C) देवतासम्प्रयोगात् (D) प्रत्याहारात्

48. तस्य वाचकः कः ?

(A) प्रणवः (B) समाधिः

(C) सम्प्रज्ञातः (D) असम्प्रज्ञातः

49. चित्तस्य देशबन्धः –

(A) धारणा (B) समाधिः

(C) ध्यानम् (D) प्रत्याहारः

50. प्राणायामः कीदृशो भवति -

(A) पद्मासनस्थितस्य ओङ्कारध्यानम्

(B) अत्यन्तं प्राणत्यागः

(C) श्वासप्रश्वासयोः विधानम्

(D) श्वासप्रश्वासयोः गतिविच्छेदः

जैन, बौद्ध, चार्वाक

1. आस्तिकदर्शनानां संख्या वर्तते -

(A) षट् (B) पञ्च

(C) सप्त (D) चत्वारि

2. आस्तिक भारतीयदर्शनानां लक्ष्यं अस्ति -

(A) भुक्ति (B) मुक्ति

(C) व्यवहृति (D) संसृति

3. आस्तिक दर्शनमस्ति -

(A) चार्वाक दर्शन (B) जैन दर्शन

(C) बौद्ध दर्शन (D) वेदान्त दर्शन

4. 'ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्' इति कस्य सिद्धान्तोऽस्ति-

(A) जैन (B) बौद्ध

(C) वेदान्त (D) चार्वाक

5. भूतचैतन्यवादस्य पुरस्कर्ता सन्ति -

(A) मीमांसकाः (B) जैनाः

(C) नैयायिकाः (D) चार्वाकाः

6. पृथिवी, आपः, तेजः वायुश्चेतीमानि चत्वारि एव तत्त्वानि स्वीकरोति-

(A) लोकायतमतम्

(B) आर्हतमतम्

(C) वैभाषिकबौद्धमतम्

(D) काणादमतम्

7. 'त्रयो वेदस्य कर्त्तारो भाण्डधूर्तनिशाचराः'इयमुक्तिर्भवति-

(A) नैयायिकानाम् (B) मीमांसकानाम्

(C) चार्वाकाणाम् (D) वैशेषिकाणाम्

8. न्यायदर्शनस्य मूलम्-

(A)गौतमप्रणीतं न्यायसूत्रम्

(B)न्यायकुसुमाञ्जलिः

(C) न्यायलीलावती

(D) न्यायभाष्यम्

9. वैशेषिकदर्शनस्य नामान्तरं किम्?

(A) श्रमणदर्शनम् (B) शाङ्करदर्शनम् ।

(C) सौन्दर्यदर्शनम् (D) औलूक्यदर्शनम्

10. चार्वाकाणां दर्शनमस्ति -

(A) आस्तिकम् (B) नास्तिकम्

(C) आत्मवादी (D) शून्यवादी

11. देहात्मवाद कः स्वीकरोति -

(A) बौद्ध (B) जैन

(C) चार्वाक (D) नैयायिक

12. अनुमानप्रमाणं नास्तीतिवादिनः सन्ति?

(A) बौद्ध (B) चार्वाक

(C) जैन (D) शङ्कर

13. नास्तिकशिरोमणिः कः-

(A) बौद्धः (B) जैनः

(D)गाणपत्यः (C) चार्वाकः

14. 'राजा भवतीश्वरः' इदं मतमस्ति -

(A) चार्वाकस्य (B) पुराणस्य

(C) जैनस्य (D) अर्थशास्त्रस्य

15. "भूतेभ्यः चैतन्यमुपजायते" एवं कथयन्ति -

(A) जैनाः (B) बौद्धाः

(C) चार्वाकाः (D) सांख्याः

16. चार्वाकमते प्रमाणम् -

(A) त्रिविधम् (B) द्विविधम्

(C) चतुर्विधम् (D) एकविधम्

17. 'मरणमेव मोक्षः' इति वदन्ति -

(A) बौद्धाः (B) चार्वाकाः

(C) जैनाः (D) वैयाकरणाः

18. पृथिव्यादि चत्वारः भूतानि मन्यन्ते –

(A) चार्वाकाः (B) वैशेषिकाः

(C) बौद्धाः (D) पौराणिकाः

19. बाह्यार्थानुमेयवादं स्वीकरोति-

(A) वैभाषिक (B) माध्यमिक

(C) योगाचार (D) सौत्रान्तिक

20. अपोहसिद्धिवादिनः सन्ति?

(A) मीमांसक (B) बौद्ध

(C) नैयायिक (D) वेदान्ती

21. बौद्धमते चित्तचैत्तात्मकः स्कन्धः कतिविधः?

(A) त्रिविधः (B) चतुर्विधः

(C) पञ्चविधः (D) द्विविधः

22. बौद्धदर्शनस्य मान्यसिद्धान्तोऽस्ति -

(A) स्याद्वादः (B) प्रतीत्यसमुत्पादवादः

(C) मायावादः (D) आत्मवादः

23. 'हीनयान' कस्मात् सम्बद्धोस्ति -

(A) बौद्धदर्शन (B) वेदान्त

(C) बौद्धमत (D) चार्वाक

24. दिङ्नाग कस्य दर्शनस्य प्रतिष्ठापका सन्ति -

(A) वैशेषिक (B) बौद्धन्याय

(C) अद्वैत (D) सांख्य

25. 'त्रिपिटक' कस्य दर्शनात् सम्बद्धोस्ति -

(A) जैनदर्शन (B) बौद्धदर्शन

(C) चार्वाकदर्शन (D) योगदर्शन

26. योगाचारः सिद्धान्तोऽयं वर्तते?

(A) जैन (B) चार्वाक

(C) बौद्ध (D)न्याय

27. शून्यवादसिद्धान्तः कुत्र वर्तते?

(A) सांख्य (B) बौद्ध

(C) जैन (D) नैयायिक

28. 'सर्वं शून्यम्' इति केन बौद्धसम्प्रदायेन स्वीकृतम्?

(A) माध्यमिकेन (B) सौत्रान्तिकेन

(C) योगाचारेण (D) वैभाषिकेन

29. क्षणभङ्गवादस्य सिद्धान्तः अस्ति -

(A) जैनदर्शन (B) बौद्धदर्शन

(C) न्यायदर्शन (D) वैशेषिकदर्शन

30. बुद्धितत्त्वस्य विमर्शः अस्ति -

(A) जैन दर्शन (B) बौद्ध दर्शन

(C) चार्वाक दर्शन (D) आगम

31. नागार्जुनः कस्य प्रवर्तकोऽस्ति -

(A) शून्यवाद (B) स्याद्वाद

(C) अद्वैतवाद (D) द्वैतवाद

32. अधोलिखितेषु बौद्धदर्शनाभिमतमार्यसत्यं नास्ति-

(A) दुःखम् (B) स्वीकरणम्

(C) समुदयः (D) मार्गः

33. 'आत्मदीपो भव' केन उक्तम् -

(A) बुद्ध (B) कपिल

(C) विवेकानन्द (D) सर्वे

34. अवैदिक दर्शनों में से एक है-

(A) क्षणिकवादः (B) विवर्तवादः

(C) परिणामवादः (D) सत्कार्यवादः

35. सर्वं शून्यं सर्वं शून्यं इति मतमस्ति-

(A) वैभाषिक (B) सौत्रान्तिक

(C) योगाचार (D) माध्यमिक

36. 'विज्ञान सन्तान आत्मा' इदं मतमस्ति -
(A) मीमांसकानाम् (B) अद्वैतवेदान्तिनाम् -
(C) नैयायिकानाम् (D) बौद्धानाम्

37 "द्वादशायतनानि" अस्य निरूपणं केन कृतम् -
(A) सांख्यैः (B) जैमिनीयैः
(C) पाशुपतैः (D) बौद्धैः

38. बौद्धदर्शने सम्प्रदायाः सन्ति -
(A) षट् (B) त्रयः
(C) चत्वारः (D) पञ्च

39. घटादिकं सर्वं विज्ञानरूपमिति स्वीकुर्वन्ति -
(A) जैनाः (B) वैशेषिकाः
(C) वेदान्तिनाः (D) बौद्धाः

40. सर्वास्तिवादी वर्तते-
(A) शून्यवादी (B) विज्ञानवादी
(C) वैभाषिक (D) सौत्रान्तिक

41. अधोलिखितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः उचितां तालिका चिनुत
क- सर्व शून्यम् 1. योगाचारबौद्धाः
ख- बाह्यार्थशून्यत्वम् 2. वैभाषिकबौद्धाः
ग- बाह्यार्थानुमेयत्वम् 3. माध्यमिकबौद्धाः
घ- बाह्यार्थप्रत्यक्षम् 4. सौत्रान्तिकबौद्धाः

	क	ख	ग	घ
(A)	3	1	4	2
(B)	2	1	3	4
(C)	1	3	4	2
(D)	4	1	2	3

42. वैभाषिक सन्ति -
(A) बौद्धाः (B) सांख्याः
(C) मीमांसकाः (D) जैनाः

43. शून्यवादिनः इन्द्रियप्रत्यक्षं जगत् मन्यन्ते -
(A) सत्यमिति (B) नसत्यमिति
(C) सत्यासत्योभयमिति (D)अनिर्वचनीयमिति

44. बाह्यार्थशून्यवादी अस्ति-
(A) योगाचार (B) माध्यमिक
(C) वैभाषिक (D) सौत्रान्तिक

45. सुत्तपिटकस्य विषयः अस्ति-
(A) आचारोपदेशः (B) दार्शनिक
(C) आध्यात्मिक (D) बुद्धोपदेशः

46. बौद्धदर्शन में आयतनानि सन्ति -
(A) 12 (B) 13
(C) 15 (D) 18

47. अधस्तनेषु विरूपं विचिनुत-
(A) रत्नत्रयम् (B)स्याद्वादः
(C) चेतनालक्षणो जीवः (D)भावनाचतुष्टयम्

48. नागार्जुनः कस्य दर्शनस्य आचार्यः ?
(A) जैनदर्शनस्य (B)बौद्धदर्शनस्य
(C) वैष्णवदर्शनस्य (D)वेदान्तदर्शनस्य

49. एषु किं दर्शनं प्राकृतभाषायां लिखितम् -
(A) बौद्धम् (B) चार्वाक
(C) जैनम् (D) शैवम्

50. अधस्तनेषु पर्यायेषु समीचीनं विचिनुत-बाह्यायार्थशून्यत्वं के प्रतिपादयन्ति?
(A) योगाचाराः (B) चार्वाक
(C) सौत्रान्तिकाः (D) शैवम्

॥उत्तरमाला॥

॥सांख्यकारिका॥

1. (C) 2. (B) 3. (C) 4. (B) 5. (C)
6. (C) 7. (A) 8. (B) 9. (C) 10. (A)
11. (B) 12. (C) 13. (D) 14. (D) 15. (D)
16. (B) 17. (C) 18. (A) 19. (B) 20. (D)
21. (B) 22. (D) 23. (C) 24. (A) 25. (D)
26. (D) 27. (D) 28. (A) 29. (B) 30. (A)
31. (C) 32. (B) 33. (B) 34. (B) 35. (A)
36. (C) 37. (A) 38. (B) 39. (C) 40. (B)
41. (B) 42. (A) 43. (D) 44. (D) 45. (C)
46. (D) 47. (D) 48. (C) 49. (D) 50. (A)

॥वेदान्तसार॥

1. (B) 2. (B) 3. (D) 4. (B) 5. (C)
6. (B) 7. (A) 8. (C) 9. (C) 10. (A)
11. (C) 12. (B) 13. (B) 14. (A) 15. (C)
16. (A) 17. (B) 18. (A) 19. (C) 20. (A)
21. (D) 22. (D) 23. (A) 24. (C) 25. (C)
26. (A) 27. (B) 28. (B) 29. (A) 30. (D)
31. (C) 32. (C) 33. (A) 34. (C) 35. (B)
36. (A) 37. (C) 38. (B) 39. (A) 40. (B)
41. (C) 42. (C) 43. (D) 44. (B) 45. (D)
46. (D) 47. (B) 48. (D) 49. (A) 50. (D)

॥तर्कसङ्ग्रह॥

1. (B) 2. (A) 3. (C) 4. (C) 5. (A)
6. (D) 7. (B) 8. (C) 9. (D) 10. (D)
11. (D) 12. (A) 13. (A) 14. (A) 15. (D)
16. (C) 17. (C) 18. (B) 19. (C) 20. (C)
21. (C) 22. (D) 23. (B) 24. (C) 25. (A)
26. (D) 27. (D) 28. (C) 29. (C) 30. (C)
31. (B) 32. (A) 33. (A) 34. (C) 35. (A)
36. (A) 37. (B) 38. (B) 39. (B) 40. (C)
41. (A) 42. (B) 43. (B) 44. (C) 45. (C)
46. (C) 47. (A) 48. (C) 49. (D) 50. (C)

॥तर्कभाषा॥

1. (A) 2. (C) 3. (B) 4. (A) 5. (B)
6. (B) 7. (B) 8. (B) 9. (C) 10. (B)
11. (D) 12. (C) 13. (C) 14. (B) 15. (B)
16. (D) 17. (B) 18. (C) 19. (D) 20. (A)
21. (D) 22. (B) 23. (B) 24. (B) 25. (B)
26. (A) 27. (C) 28. (C) 29. (B) 30. (A)
31. (B) 32. (A) 33. (A) 34. (B) 35. (A)
36. (C) 37. (B) 38. (B) 39. (C) 40. (A)
41. (B) 42. (C) 43. (B) 44. (D) 45. (D)
46. (B) 47. (B) 48. (D) 49. (D) 50. (B)

॥अर्थसङ्ग्रह॥

1. (D) 2. (D) 3. (A) 4. (C) 5. (A)
6. (B) 7. (C) 8. (D) 9. (D) 10. (A)
11. (B) 12. (D) 13. (D) 14. (C) 15. (A)
16. (D) 17. (A) 18. (A) 19. (C) 20. (C)
21. (C) 22. (B) 23. (B) 24. (A) 25. (D)
26. (B) 27. (B) 28. (D) 29. (C) 30. (B)
31. (B) 32. (B) 33. (D) 34. (D) 35. (A)
36. (C) 37. (D) 38. (C) 39. (B) 40. (A)
41. (A) 42. (C) 43. (B) 44. (D) 45. (C)
46. (B) 47. (C) 48. (B) 49. (D) 50. (D)

॥योगदर्शन॥

1. (B) 2. (C) 3. (D) 4. (B) 5. (B)
6. (D) 7. (A) 8. (C) 9. (A) 10. (A)
11. (A) 12. (C) 13. (D) 14. (B) 15. (B)
16. (C) 17. (C) 18. (B) 19. (B) 20. (B)
21. (A) 22. (A) 23. (A) 24. (D) 25. (B)
26. (A) 27. (C) 28. (B) 29. (D) 30. (C)
31. (B) 32. (A) 33. (C) 34. (C) 35. (C)
36. (A) 37. (D) 38. (C) 39. (A) 40. (B)
41. (C) 42. (D) 43. (A) 44. (A) 45. (C)
46. (B) 47. (D) 48. (A) 49. (A) 50. (D)

॥जैन,बौद्ध,चार्वाक॥

1. (A) 2. (B) 3. (D) 4. (D) 5. (D)
6. (A) 7. (C) 8. (A) 9. (D) 10. (B)
11. (C) 12. (B) 13. (C) 14. (A) 15. (C)
16. (D) 17. (B) 18. (A) 19. (D) 20. (B)
21. (C) 22. (B) 23. (A) 24. (B) 25. (B)
26. (C) 27. (B) 28. (A) 29. (B) 30. (B)
31. (A) 32. (B) 33. (A) 34. (A) 35. (D)
36. (D) 37. (D) 38. (C) 39. (D) 40. (C)
41. (A) 42. (A) 43. (B) 44. (D) 45. (D)
46. (A) 47. (D) 48. (B) 49. (C) 50. (A)

ईकाई-5

॥व्याकरण एवं भाषाविज्ञान॥

(क) सामान्य परिचय-

प्रमुख आचार्यों का परिचय-

1. पाणिनि (500 ई. पू.)

पाणिनि संस्कृत भाषा के सबसे बड़े वैयाकरण हुए हैं। इनका जन्म तत्कालीन उत्तर पश्चिम भारत के **गांधार** में हुआ था। पाणिनि के **गुरु** का नाम **उपवर्ष, पिता** का नाम **पणिन** और **माता** का नाम **दाक्षी** था। इनके व्याकरण का नाम **'अष्टाध्यायी'** है जिसमें 'आठ अध्याय' और लगभग 'चार सहस्र' सूत्र हैं। संस्कृत भाषा को व्याकरण सम्मत रूप देने में पाणिनि का योगदान अतुलनीय माना जाता है। अष्टाध्यायी मात्र व्याकरण ग्रंथ नहीं है इसमें प्रकारांतर से तत्कालीन भारतीय समाज का पूरा चित्र मिलता है। उस समय के भूगोल, सामाजिक, आर्थिक, शिक्षा और राजनीतिक जीवन, दार्शनिक चिंतन, ख़ान-पान, रहन-सहन आदि के प्रसंग स्थान-स्थान पर अंकित हैं।

जीवनी एवं कार्य-

पाणिनि का जन्म **'शालातुर'** नामक ग्राम में हुआ था। जहाँ काबुल नदी सिंधु में मिली है उस संगम से कुछ मील दूर यह गाँव था। उसे अब 'लाहौर' कहते हैं। अपने जन्मस्थान के अनुसार पाणिनि **'शालातुरीय'** भी कहे गए हैं। और अष्टाध्यायी में स्वयं उन्होंने इस नाम का उल्लेख किया है। पाणिनि ने निरुक्त और व्याकरण की जो सामग्री पहले से थी उसका उन्होंने संग्रह और सूक्ष्म अध्ययन किया। इसका प्रमाण भी अष्टाध्यायी में है, जैसा शाकटायन, शाकल्य, भारद्वाज, गार्ग्य, शौनक, आपिशलि, गालव और स्फोटायन आदि आचार्यों के मतों के उल्लेख से ज्ञात होता है। शाकटायन निश्चित रूप से पाणिनि से पूर्व के वैयाकरण थे, जैसा निरुक्तकार यास्क ने लिखा है। शाकटायन का मत था कि सब संज्ञा शब्द धातुओं से बनते हैं। पाणिनि की शिक्षा तक्षशिला विश्वविद्यालय से हुई है । कहा जाता है, जब वे अपनी सामग्री का संग्रह कर चुके तो उन्होंने कुछ समय तक एकांतवास किया और अष्टाध्यायी की रचना की।

समयकाल- इनका समयकाल अनिश्चित तथा विवादित है। इतना तय है कि छठी सदी ईसा पूर्व के बाद और चौथी सदी ईसापूर्व से पहले की अवधि में इनका अस्तित्व रहा होगा। ऐसा माना जाता है कि इनका जन्म पंजाब (पाकिस्तान) के शालातुर में हुआ था जो आधुनिक पेशावर (पाकिस्तान) के करीब है। इनका जीवनकाल 520-460 ईसा पूर्व माना जाता है।

आचार्य पाणिनि की रचनाऐं-

आचार्य पाणिनि ने संस्कृत के रक्षण के लिए व्याकरण के पाँच ग्रंथो की रचना की एवं एक काव्य लिखा-

1. **सूत्रपाठ-** 'अष्टाध्यायी' - इसमे सूत्र हैं जो 8 अध्याय एवं प्रत्येक अध्याय 4-4 पाद यानि कुल 32 पाद में विभक्त हैं और कुल लगभग 4000 सूत्र हैं।
2. **धातुपाठ-** यह 10 गणों में विभक्त एवं लगभग 2000 धातुएं हैं ।
3. **गणपाठ-** सूत्रपठित गणों का पाठ ।
4. **उणादिपाठ-** यह भी सूत्र ही हैं ।
5. **लिंगानुशासन-** लिंङ्ग निर्धारण विषय है ।

पाणिनि का काव्य- **'जाम्बवतीयकाव्यम्'** है । युधिष्ठिर मीमांसक के कथनानुसार इनका **"द्विरूपकोष"** नामक एक ग्रन्थ **"इन्डिया आफ़िस पुस्तकालय (लंडन)"** में सुरक्षित है ।

पाणिनि का संक्षिप्त परिचय-

- **जन्म-** (520-460 ई. पू.) शालातुरग्राम,
- **मृत्यु-** त्रयोदशी तिथि,
- **माता-** दाक्षी, पणिनः,
- **पिता-** शालङ्किः
- **व्यवसाय-** वैयाकरणः,कविः।
- **राष्ट्रीयता-** भारतीय',
- **विधा-** संस्कृतव्याकरण के सूत्र रचयिता,
- **कृतियाँ-**अष्टाध्यायी,धातुपाठ,गणपाठ,उणादिपाठ,लिङ्गानुशासनम्, **काव्य-** जाम्बवतीवजियम्,

2. कात्यायन (300 ई. पू.)

'वररुचि' कात्यायन पाणिनीय सूत्रों के प्रसिद्ध **वार्तिककार** हैं। वररुचि कात्यायन के वार्तिक पाणिनीय व्याकरण के लिए अति महत्त्वशाली सिद्ध हुए हैं। वार्तिकों के आधार पर ही पीछे से **पतंजलि** ने **महाभाष्य** की रचना की। **पुरुषोत्तमदेव** ने अपने **त्रिकांडशेष अभिधानकोश** में कात्यायन के ये नाम लिखे हैं - **कात्य, पुनर्वसु, मेधाजित्** और **वररुचि**। "कात्य" नाम गोत्रप्रत्यांत है, महाभाष्य में उसका उल्लेख है। पुनर्वसु नाम नक्षत्र संबंधी

है, **"भाषावृत्ति"** में पुनर्वसु को वररुचि का पर्याय कहा गया है। मेधाजित् का कहीं अन्यत्र उल्लेख नहीं मिलता। इसके अतिरिक्त, कथासरित्सागर और वृहत्कथामंजरी में कात्यायन वररुचि का एक नाम **'श्रुतधर'** भी आया है। हेमचंद्र एवं **"मेदिनी"** कोशों में भी कात्यायन के "वररुचि" नाम का उल्लेख है।

संभवतः इसी **वररुचि कात्यायन** ने **वेदसर्वानुक्रमणी** और **प्रातिशाख्य** की भी रचना की है। कात्यायन के बनाए कुछ **भ्राजसंज्ञक** श्लोकों की चर्चा भी महाभाष्य में की गई है। कैयट और नागेश के अनुसार भ्राजसंज्ञक श्लोक वार्तिककार के ही बनाए हुए हैं। कात्यायन (300 ई. पू.) दाक्षिणात्य वार्तिककार थे, **'प्रियतद्धिताः हि दाक्षिणात्याः'**- पतंजलि । इनके काव्य के विषय में पतंजलि ने महाभाष्य में संकेत किया है- **'वाररुचं काव्यम्'** । कात्यायन पाणिनि और पतंजलि के मध्य श्रृंखला जोड़ने वाले माने जाते है ।

कात्यायन की रचनाऐं-

1. कात्यायनस्मृति, 2. स्वर्गारोहणकाव्य,
3. उभयसारिकाभाग, 4. भ्राजश्लोक।

3. पतञ्जलि (185 ई.पू.)

पतञ्जलि **गोनर्द** (गोंडा ज़िला उत्तर प्रदेश) के निवासी थे, बाद में वे काशी में बस गए , ये व्याकरणाचार्य **पाणिनी** के शिष्य थे। पतंजलि को **शेषनाग** का अवतार माना जाता है । इनकी **माता** का नाम **गोणिका** था । पतंजलि **योगसूत्र** के रचनाकार है । भारतीय साहित्य में पतंजलि के लिखे हुए तीन मुख्य ग्रन्थ मिलते है । योगसूत्र, अष्टाध्यायी पर भाष्य और **आयुर्वेद** पर ग्रन्थ। कुछ विद्वानों का मत है कि ये तीनों ग्रन्थ एक ही व्यक्ति ने लिखे, अन्य की धारणा है कि ये विभिन्न व्यक्तियों की कृतियाँ हैं। पतंजलि ने पाणिनि के अष्टाध्यायी पर अपनी टीका लिखी जिसे **महाभाष्य** का नाम दिया **(महा+भाष्य (समीक्षा, टिप्पणी, विवेचना, आलोचना)।**

जीवन- पतञ्जलि **'शुंग वंश'** के शासनकाल में थे । **डॉ. भंडारकर** ने पतंजलि का समय 185 ई. पू. **बोथलिक** ने पतंजलि का समय 200 ईसा पूर्व एवं **कीथ** ने उनका समय 140 से 150 ईसा पूर्व माना है। पतंजलि पुष्यमित्र शुंग (195-142 ई.पू.) के शासनकाल में थे । उन्होंने **'पुष्यमित्र शुंग'** का **अश्वमेघ यज्ञ** भी संपन्न कराया था। पतंजलि महान चिकित्सक थे और इन्हें ही 'चरक संहिता' का प्रणेता माना जाता है। राजा भोज ने इन्हें तन के साथ मन का भी चिकित्सक कहा है ।

"योगेन चित्तस्य पदेन वाचां मलं शरीरस्य च वैद्यकेन। योऽपाकरोत्तं प्रवरं मुनीनां पतंजलिं प्रांजलिरानतोऽस्मि"॥ (भोज)

अर्थात् चित्त-शुद्धि के लिए योग (योगसूत्र), वाणी-शुद्धि के लिए व्याकरण (महाभाष्य) और शरीर-शुद्धि के लिए वैद्यकशास्त्र (चरकसंहिता) देनेवाले मुनिश्रेष्ठ पतंजलि को प्रणाम।

पतंजलि की रचनाऐं-

1. महाभाष्य, 2. योगसूत्र, 3. महानन्दकाव्य ।

4. भर्तृहरि (छठी शताब्दी ई.)

भर्तृहरि एक महान संस्कृत कवि थे। संस्कृत साहित्य के इतिहास में भर्तृहरि एक **नीतिकार** के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके **शतकत्रय (नीतिशतक, श्रृंगारशतक, वैराग्यशतक)** की उपदेशात्मक कहानियाँ भारतीय जनमानस को विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। प्रत्येक शतक में सौ-सौ श्लोक हैं। बाद में इन्होंने **गुरु गोरखनाथ** के शिष्य बनकर वैराग्य धारण कर लिया था इसलिये इनका एक लोकप्रचलित नाम **बाबा भरथरी** भी है।

जनश्रुति और परम्परा के अनुसार भर्तृहरि विक्रमसंवत् के प्रवर्तक सम्राट **चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य** के अग्रज माने जाते हैं। विक्रमसंवत् ईसवी सन् से **56 वर्ष पूर्व** प्रारम्भ होता है, जो विक्रमादित्य के प्रौढ़ावस्था का समय रहा होगा। भर्तृहरि विक्रमादित्य के अग्रज थे, अतः इनका समय कुछ और पूर्व रहा होगा। विक्रमसंवत् के प्रारम्भ के विषय में भी विद्वानों में मतभेद हैं। कुछ लोग ईसवी **सन् 78** और कुछ लोग ईसवी सन् **544में** इसका प्रारम्भ मानते हैं। ये दोनों मत भी अग्राह्य प्रतीत होते हैं। फारसी ग्रंथ **कलितो दिमनः** में पंचतंत्र का एक पद्य शशिदिवाकर का भाव उद्धृत है। पंचतंत्र में अनेक ग्रंथों के पद्यों का संकलन है। संभवतः पंचतंत्र में इसे नीतिशतक से ग्रहण किया गया होगा। फारसी ग्रंथ 571 ईसवी से 581 ई. के एक फारसी शासक के निमित्त निर्मित हुआ था। इसलिए राजा भर्तृहरि अनुमानतः **550 ई0** से पूर्व हम लोगों के बीच आए थे। भर्तृहरि **उज्जयिनी** के राजा थे। ये विक्रमादित्य उपाधि धारण करने वाले चन्द्रगुप्त द्वितीय के बड़े भाई थे। इनके पिता का नाम **चन्द्रसेन** था। पत्नी का नाम **पिंगला** था जिसे वे अत्यन्त प्रेम करते थे। इन्होंने सुन्दर और रसपूर्ण भाषा में नीति, वैराग्य तथा श्रृंगार जैसे गूढ़ विषयों पर शतक-काव्य लिखे हैं। इस शतकत्रय के अतिरिक्त, **वाक्यपदीय** नामक एक उच्च श्रेणी का व्याकरण ग्रन्थ भी इनके नाम पर प्रसिद्ध है। कुछ लोग भट्टिकाव्य के रचयिता भट्टि से भी उनका ऐक्य मानते हैं। ऐसा कहा जाता है कि नाथपंथ के वैराग्य नामक उपपंथ के यह ही प्रवर्तक थे। चीनी यात्री इत्सिंग और ह्वेनसांग के अनुसार इन्होंने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था।

भर्तृहरि की रचनाऐं-

वाक्यपदीय, नीतिशतक, श्रृंगारशतक, वैराग्यशतक, दीपिका टीका।

5. वामनजयादित्य (सातवीं शताब्दी)

जयादित्य संस्कृत के वैयाकरण थे। **काशिकावृत्ति** जयादित्य और वामन की सम्मिलित रचना है। **हेमचंद्र** ने अपने **'शब्दानुशासन'** में व्याख्याकार जयादित्य को बहुत ही रुचिपूर्ण ढंग से स्मरण किया है।

चीनी यात्री **इत्सिंग** ने अपनी भारत यात्रा के प्रसंग में जयादित्य का प्रभावपूर्ण ढंग से वर्णन किया है। जयादित्य के जनम मरण आदि वृत्तांत के बारे में कोई भी परिमार्जित एवं पुष्कल ऐतिहासिक सामग्री नहीं मिलती। इत्सिंग की भारतयात्रा एवं विवरण से कुछ जानकारी मिलती है। तदनुसार जयादित्य का देहावसान **सं. 718 वि.** के आस पास हुआ होगा। जयादित्य ने भारविकृत पद्यांश उद्धृत किया है। इस आनुमानिक तथ्य के आधार पर जयादित्य का **सं. 650 से 700 वि.** तक के मध्य अवस्थित होना माना जा सकता है। पाणिनि मुनि ने अष्टाध्यायी के आठ अध्यायों में व्याकरण सूत्रों को लिखा है। अष्टाध्यायी को सभी संप्रदाय के लोगों ने समान रूप से अपनाया है। **जयादित्य** ने **'काशिका'** नाम से अष्टाध्यायी पर व्याख्या की है। काशी में इसकी सृष्टि हुई होगी क्योंकि काशिका का प्रधान अर्थ यही है **(काश्यां भव: काशिका)**। कुशकाशावलंबन न्याय से हम को जयादित्य के बारे में सोचने का अवसर मिलता है। संभव है जयादित्य **काशीवासी** हों। काशी आज भी संस्कृत व्याकरण के पठन-पाठन और व्याकरण ग्रंथों की सृष्टि का प्रधान केंद्र है।

राजतरंगिणी में **जयापीड** नामक राजा का नाम आया है, जो 667 शताब्दी में कश्मीर के सिंहासन पर बैठा था और जिसके एक मंत्री का नाम **'वामन'** था। कुछ लोग इसी जयापीड को **काशिका** का कर्ता मानते हैं। पर **मैक्समूलर** का मत है कि काशिकार जयादित्य कश्मीर के जयापीड से पहले हुआ है, क्योंकि चीनी यात्री इत्सिंग ने 612 शताब्दी में अपनी पुस्तक में जयादित्य के **वृत्तिसूत्र** का उल्लेख किया है। इस विषय में इतना समझ रखना चाहिए के कल्हण के दिए हुए संवत् बिल्कुल ठीक नहीं हैं। काशिका के प्रकाशक बालशास्त्री का मत है कि काशिका का कर्ता बौद्ध था, क्योंकि उसने मंगलाचरण नहीं लिखा है और पाणिनि के सूत्रों में फेरफार किया।

बहुत से वैयाकरण प्राय: काशिका को संपूर्ण रूप से जयादित्य का बनाया हुआ नहीं मानते। **पुरुषोत्तमदेव, हरिदत्त** आदि विद्वानों ने **भाषावृत्ति, पदमंजरी, अमरटीका सर्वस्व, अष्टांगहृदय** (सर्वांग सुंदरी टीका) में इसका उल्लेख किया है। कुछ विद्वान् जयादित्य और वामन को काशिका का निर्माता मानते हैं। काशिका के समान **भर्त्रीश्वर, जयंत, मैत्रेयरक्षित,** आदि की अष्टाध्ययायी व्याख्याएं थीं। उनमें से कम वृत्तियाँ पाई जाती हैं। काशिका के प्रभाव में नवीन प्राचीन सभी वृत्तियाँ विलीन हो गईं और व्यवहार रूप में आज भी काशिका ही रह गई है। काशिका पर **जिनेंद्रबुद्धि कृत** 'काशिका विवरण पंजिका' (न्यास) और हरदत्त मिश्र ने **'पदमंजरी'** ग्रंथ लिखा है। जिनेंद्र कृत ग्रंथ 'न्यास' नाम से ही प्रसिद्ध है। यह बहुत विशालकाय कई भागों वाला ग्रंथ है। न्यास ने सर्वथा काशिका के समर्थन में प्रयास किया है परंतु पदमंजरी में कैयट (महाभाष्य के टीकाकार) का अनुसरण है और अनावश्यक सामग्री को विडंबित किया गया है।

6. भट्टोजिदीक्षित (सोलहवीं शताब्दी)

भट्टोजी दीक्षित १६वीं शताब्दी में उत्पन्न संस्कृत वैयाकरण थे जिन्होंने **सिद्धान्तकौमुदी** की रचना की। इनका निवास स्थान **काशी** था। इन्होंने **शेषकृष्ण** से व्याकरण और धर्मशास्त्र का अध्ययन किया । वेदान्त का **नृसिंहाश्रम** , मीमांसा का **अपय्यदीक्षित** से अध्ययन किया । इनके शिष्य **वरदराज** भी व्याकरण के महान पण्डित हुए।

पाणिनीय व्याकरण के अध्ययन की प्राचीन परिपाटी में पाणिनीय सूत्रपाठ के क्रम को आधार माना जाता था। यह क्रम प्रयोगसिद्धि की दृष्टि से कठिन था क्योंकि एक ही प्रयोग का साधन करने के लिए विभिन्न अध्यायों के सूत्र लगाने पड़ते थे। इस कठिनाई को देखकर ऐसी पद्धति के आविष्कार की आवश्यकता पड़ी जिसमें प्रयोगविशेष की सिद्धि के लिए आवश्यक सभी सूत्र एक जगह उपलब्ध हों। भट्टोजिदीक्षित ने **प्रक्रिया कौमुदी** के आधार पर **सिद्धान्तकौमुदी** की रचना की। इस ग्रंथ पर उन्होंने स्वयं **प्रौढमनोरमा** टीका लिखी। पाणिनीय सूत्रों पर अष्टाध्यायी क्रम से एक अपूर्ण व्याख्या, **शब्दकौतुभ** तथा **वैयाकरणभूषण कारिका** भी इनके ग्रंथ हैं। इनकी सिद्धान्त कौमुदी लोकप्रिय है।

भट्टोजिदीक्षित का संक्षिप्त परिचय-

- **पिता-** लक्ष्मीधर भट्ट,
- **भ्राता-** रंगोजीभट्ट,
- **गुरू-** शेषकृष्ण,
- **पुत्र-** भानुदीक्षित (रामाश्रय),
- **भ्रातृपुत्र-** कौण्डभट्ट,
- **पौत्र-** हरिदीक्षित ।

भट्टोजिदीक्षित की रचनाऐं-

1. सिद्धान्त कौमुदी,	2. प्रौढमनोरमा,
3. शब्दकौस्तुभ,	4. वैयाकरणभूषणकारिका,
5. तत्वकौस्तुभ (वेदान्त),	6. त्रिस्थलीसेतु (धर्मशास्त्र),
7.तिथिनिर्णय(धर्मशास्त्र),	8. प्रवरनिर्णय (धर्मशास्त्र),
9. चतुर्विंशतिमतव्याख्या (धर्मशास्त्र) ।	

सिद्धान्तकौमुदी की प्रसिद्ध टीकाएँ-

तत्वबोधिनी	-	ज्ञानेन्द्र सरस्वती
बालमनोरमा	-	वासुदेव दीक्षित
प्रौढमनोरमा	-	भट्टोजिदीक्षित
लघुशब्देन्दुशेखर	-	नागेश भट्ट

7. नागेशभट्ट (सत्रहवीं शताब्दी)

नागेश भट्ट (1673 - 1743) अठारवीं सदी के पूर्वार्द्ध । इनकें **पिता का नाम**- शिवभट्ट तथा **माता**- सती देवी और **गुरू का नाम**- हरिदीक्षित था । नागेश **महाराष्ट्रीय ब्राह्मण** थे । प्रयाग के समीपस्थ श्रृंगवेरपुर के राजा **रामसिंह** से ये सम्मानित हुए । नागेश व्याकरण के अतिरिक्त साहित्य शास्त्र, योगशास्त्र, धर्मशास्त्र आदि के भी विद्वान थे । इन्होंने व्याकरण ग्रन्थों पर कई टीकाएं लिखी जिनमें- **लघुशब्देन्दुशेखर**(सिद्धान्तकौमुदी की टीका), **वैयाकरणसिद्धान्तमंजूषा, परिभाशेन्दुशेखर,** बहुत प्रसिद्ध है । इनके उपर तात्विक दृष्टि से तन्त्रसार का अधिक प्रभाव पडा है । व्याकरण को नव्यन्याय और तार्किकता के साथ समन्वित करने का आरम्भ नागेश भट्ट ने किया । अपने गुरू **हरिदीक्षित** से इन्होंने 18 बार व्याकरण का अध्ययन किया।

नागेशभट्ट की रचनाऐं-

1. लघुशब्देन्दुशेखर	2. वैयाकरणसिद्धन्तमञ्जूषा
3. परिभाशेन्दुशेखर	4. उद्योत टीका
5. लघुमञ्जूषा	6. परमलघुमञ्जूषा
7. स्फोटवाद	8. महाभाष्य-प्रत्याख्यान-सङ्ग्रह
9. बृहच्छब्देन्दुशेखर	10. रसमञ्जरी टीका

8. जैनेन्द्रव्याकरण (छठी शताब्दी)

जैनेन्द्र व्याकरण, दिगम्बर सम्प्रदाय जैन **आचार्य देवनन्दी** की रचना है। इस पर **अभयनन्दी** की वृत्ति प्रसिद्ध है। उदाहरण में जैन संप्रदाय के शब्द मिलते हैं। जैनेन्द्र व्याकरण परम्परा के उपलब्ध समस्त व्याकरणों में सबसे प्राचीन है । देवनन्दी पूज्यपाद का जैनेन्द्र व्याकरण है । इस व्याकरण का आधार पाणिनि व्याकरण, और चान्द्रव्याकरण है । **'जिनेन्द्रेण प्रोक्तं जैनेन्द्रम्'** । इसमें सबसे प्राचीन आचार्यों का उल्लेख है । **चन्द्रय्य कवि** ने कन्नड़ भाषा में पूज्यपाद का जीवनचरित लिखा । **पिता**- माधवभट्ट, **माता**- श्रीदेवी **ग्राम**- कोले कर्नाटक । **गणरत्नमहोदधि** के कर्ता **वर्धमान** ने इन्हें **दिग्वस्त्र** के नाम से स्मरण किया है । इन्होंने एकशेषप्रकरणरहित व्याकरण की रचना सर्वप्रथम की थी – **'देवोपग्यमेकशेषव्याकरणम्'** ।

- जैनेन्द्रव्याकरण को **पञ्चाध्यायी** कहा जाता है ।
- पूज्यपाद का शिष्य- **दुर्विनीत** ।

9. कैय्यट (12 वीं शताब्दी)

कैयट पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य की **'प्रदीप'** नामक टीका के रचयिता। **देवीशतक** के व्याख्याकार कैयट इनसे भिन्न है । उनके पिता का नाम **जैयटोपाध्याय** था । अनुमान है कि वे **कश्मीर** निवासी थे। पीटर्सन ने कश्मीर की रिपोर्ट में कैयट (और उव्वट) को काव्यप्रकाशकार **मम्मट** का भाई और **जैयट** का पुत्र कहा है। यजुर्वेदभाष्य पुष्पिका में **औवट** (या उव्वट) के पिता का नाम **वज्रट** कहा गया है। काश्मीरी ब्राह्मणपंडितों के बीच प्रचलित अनुश्रुति के अनुसार कैयट **पामपुर (या येच)** गाँव के निवासी थे। महाभाष्यांत पाणिनि व्याकरण को वे कंठस्थ ही पढ़ाया करते थे। आर्थिक स्थिति दयनीय होने के कारण उदरपोषण के लिये उन्हें कृषि आदि शरीरश्रम करना पड़ता था। एक बार दक्षिण देश से कश्मीर आए हुए पंडित कृष्ण भट्ट ने कश्मीरराज से मिलकर तथा अन्य प्रयत्नों द्वारा कैयट के लिए एक गाँव का शासन और धनधान्य संग्रह किया और उसे लेकर जब वे उसे समर्पित करने उनके यहाँ पहुँचे तो उन्होंने भिक्षा दान ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। वे कश्मीर से पैदल काशी आए और शास्त्रार्थ मे अनेक पंडितों को हराया। वहीं **प्रदीप** की रचना हुई। इस टीकाग्रंथ के संबंध में उन्होने लिखा है कि उसका आधार भर्तृहरि (वाक्यपदीयकार) की भाष्यटीका है जो अब पूर्णरूप से अप्राप्य है)। प्रदीप में स्थान स्थान पर पतंजलि और भर्तृहरि के स्फोटवाद का अच्छा दार्शनिक विवेचन हुआ है।

कैय्यट की रचनाऐं- प्रदीप

10. शाकटायन (8 वीं शताब्दी ईसापूर्व)

शाकटायन नाम के दो व्यक्ति हुए हैं, एक वैदिक काल के अन्तिम चरण के वेयाकरण, तथा दूसरे 9वीं शताब्दी के **अमोघवर्ष नृपतुंग** के शासनकाल के वैयाकरण। वैदिक काल के अन्तिम चरण (8वीं ईसापूर्व) के शाकटायन, संस्कृत व्याकरण के रचयिता हैं। उनकी कृतियाँ अब उपलब्ध नहीं हैं किन्तु यास्क, पाणिनि एवं अन्य संस्कृत वैयाकरणों ने उनके विचारों का सन्दर्भ दिया है। इस बात के प्रमाण हैं कि प्राचीन जैन व्याकरण पाणिनी की अष्टाध्यायी से पहले अस्तित्व में है। इस पुस्तक में पाणिनि ने कई प्रसिद्ध व्याकरणों का उल्लेख किया है जो अतीत में अस्तित्व में था। ऐसा ही एक लेखक था शाकटायन आचार्य जिनकी पुस्तक प्रार्थना से शुरू होती है, जो स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि वह जैन आदेश के थे।

शाकटायन ने **तीर्थंकर महावीर** को श्रद्धांजलि देकर अपना काम शुरू किया था । शाकटायन का विचार था कि सभी संज्ञा शब्द अन्ततः किसी न किसी धातु से व्युत्पन्न हैं। संस्कृत व्याकरण में यह प्रक्रिया कृत-प्रत्यय के रूप में उपस्थित है। पाणिनि ने इस मत को स्वीकार किया किंतु इस विषय में कोई आग्रह नहीं रखा और यह भी कहा कि बहुत से शब्द ऐसे भी हैं जो लोक की बोलचाल में आ गए हैं और उनसे धातु प्रत्यय की पकड़ नहीं की जा सकती। शाकटायन द्वारा रचित व्याकरण शास्त्र **'लक्षण शास्त्र'** हो सकता है, जिसमें उन्होंने भी चेतन और अचेतन निर्माण में व्याकरण लिंग निर्धारण की प्रक्रिया का वर्णन किया था।

11. हेमचन्द्रसूरि (12वीं शताब्दी)

आचार्य हेमचन्द्र **(1145-1229)** वि. सं. 12वीं सदी का अन्तिम दशक के समय के थे । ये महान गुरु, समाज-सुधारक, धर्माचार्य, गणितज्ञ एवं अद्भुत प्रतिभाशाली मनीषी थे। संस्कृत एवं प्राकृत पर उनका समान अधिकार था। संस्कृत के मध्यकालीन कोशकारों में हेमचन्द्र का नाम विशेष महत्व रखता है। वे महापण्डित थे और **'कलिकालसर्वज्ञ'** कहे जाते थे। इनके द्वारा रचित व्याकरण **सिद्धहेमशब्दानुशासन** हैं । वे कवि थे, व्याकरण के विद्वान थे, काव्यशास्त्र के आचार्य थे, योगशास्त्रमर्मज्ञ थे, जैनधर्म और दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् थे,टीकाकार थे और महान कोशकार भी थे। इनके व्याकरण में **3566** सूत्र हैं । जिनकी केवल लौकिक शब्द सिद्धि है । प्रारम्भिक 7 अध्यायों के 28 पादों में संस्कृतव्याकरण हैं।

जीवनवृत्त- आचार्य हेमचंद्र का जन्म **गुजरात** में **अहमदाबाद** से 100 किलोमीटर दूर दक्षिण-पश्चिम स्थित **धंधुका नगर** में विक्रम संवत 1145 के कार्तिकी पूर्णिमा की रात्रि में हुआ था। मातापिता शिवपार्वती उपासक **मोढ वंशीय वैश्य** थे। पिता का नाम **चाचिंग** माता का नाम **पाहिणी** देवी था । इनके बाल्यकाल का नाम **चांगदेव** था । इनके गुरु का नाम **चन्द्रदेवसूरी** (श्वेताम्बर सम्प्रदायान्तर्गत व्रजशाखा के आचार्य) था ।

हेमचन्द्रसूरि की रचनाऐं-

व्याकरण ग्रन्थ-

1. सिद्धहेमशब्दानुशासन, 2. सिद्धहेमलिङ्गानुशासन
3. धातुपारायण, 4. 'शब्दानुशासन'

कोशग्रन्थ- आचार्य हेम ने संस्कृत में अनेक कोशों की रचना के साथ साथ प्राकृत-अपभ्रंश-कोश **(देशीनाममाला)** भी उन्होंने सम्पादित किया। उन्होने चार कोशों की रचना की-

1. अभिधानचिन्तामणीमाला, 2. अनेकार्थसङ्ग्रह,
3. निघण्टुशेष, 4. देशीनाममाला।

इनके द्वारा रचित **'काव्यानुशासन'** प्रायः संग्रह ग्रंथ है।

12. सारस्वतव्याकरण (17 वीं शताब्दी)

इसको 17 वीं शताब्दी का माना जाता हैं। **रचयिता- अनुभूतिस्वरुपाचार्य,** इसमें **मूल सूत्र-** 700 हैं। इसके अनेक रुपान्तर है जिनमें रामाश्रम प्रणीत **सिद्धान्तचन्द्रिका** प्रमुख है । सिद्धान्तचन्द्रिका पर **लोकेश्वर तत्वदीपिका** टीका लिखी थी। **सदानन्द** ने इस पर **सुबोधिनि** टीका लिखी । 'पुंक्षु' प्रयोग का साधुत्व दिखाने की प्रतिज्ञा से विवश होकर आचार्य ने देवी की आराधना की और उनसे व्याकरण सूत्र प्राप्त किये । इस व्याकरण पर जैनाचार्यों ने पचीस टीकाऐं लिखी। जिनमें से कुछ का संक्षिप्त परिचय निम्नोक्त है-

सुबोधिनि	-	आचार्य चन्द्रकीर्ति सूरी ।
क्रिया चन्द्रिका	-	खरतरगच्छीय गुणरत्न ।
दीपिका	-	मेघरत्न ।
धातुतरंगिणी	-	हर्षकीर्ति सूरि ।
रुपरत्नमाला	-	नयसुन्दर ।
विद्वत्चिन्तामणि	-	विनयसागर सूरि ।
सारस्वतमण्डनम्	-	श्री मालज्ञातीयमन्त्री मण्डन ।
सिद्धान्तरत्नम्	-	जिनरत्न ।
सारस्वतवृत्तिः	-	तपागच्छीय उपाध्याय भानुचन्द्र ।

॥पाणिनीयशिक्षा॥

परिचय-

शिक्षा को वेद के छह अङ्गों में से सर्वप्रथम प्रमुख अङ्ग माना गया है जिसे वेद की नासिका कहा जाता है "शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य" । हमारे शास्त्रों में विविध प्रकार के शिक्षा ग्रन्थों का वर्णन है उनमें से पाणिनीय शिक्षा सरल और स्पष्ट भाषा में लिखा गया एक महत्वपूर्ण एवं प्रामाणिक ग्रन्थ है जिसके रचयिता आचार्य पाणिनि है । यह पद्यात्मक शैली में लिखा गया ग्रन्थ है जिसमें तिरसठ या चौसठ श्लोक हैं ।

"अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि पाणिनीयं मतं यथा।
शास्त्रानुपूर्वं तद्विद्याद् यथोक्तं लोकवेदयोः"॥1॥

हिन्दी अर्थ- पाणिनी मत के अनुसार शिक्षा नामक वेदाङ्ग को कहूँगा । उसे लोक तथा वेद में कहे हुए अनुसार तथा शास्त्रों के प्रवर्तक गुरुओं की परम्परा से प्राप्त समझे ।

वर्णसंख्या-

त्रिषष्टिश्चतुः षष्टिर्वा वर्णाः शम्भुमते मताः।
प्राकृते संस्कृते चापि स्वयं प्रोक्ताः स्वयंभुवा ॥3॥

प्रकृति के अनुकूल संस्कृत भाषा में शम्भु के मत में तिरसठ या चौंसठ वर्ण होते हैं, व्रह्मा जी ने इसे स्वयं कहा है ।

वर्णगणना-

स्वरा विंशतिरेकश्च स्पर्शानां पश्चविंशतिः।
यादयश्च स्मृता ह्यष्टौ चत्वारश्च यमाः स्मृताः ॥4॥
अनुस्वारो विसर्गश्च क पौ चापि पराश्रितौ ।
दुःस्पृष्टश्चेति विज्ञेयो ऋकारः प्लुत एव च ॥5॥

स्वर - 21, **स्पर्श** - 25, **यकारादि** (अन्तस्थ और उष्म) = 8,
यम - 4, **अनुस्वार** - 1, **विसर्ग** - 1,
जिह्वामूलीय उपध्मानीय - 2, **प्लुत ऌकार** - 1 = 63
अनुस्वार के हृस्व, दीर्घ या रङ्ग रूप में दो संख्या लेने पर (64)

वर्णोत्पत्तिप्रक्रिया-

आत्मा बुध्या समेत्यर्थान्मनो युङ्क्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम् ॥6॥
मारुतस्तूरसि चरन्मन्द्रं जनयति स्वरम्।
प्रातः सवनयोगं तं छन्दो गायत्रमाश्रितम् ॥7॥

प्रातः **सवन** में प्रयोज्य और **"गायत्री छन्द"** से विशेषतया सम्बद्ध **"मन्द्र"** (गम्भीर) स्वर को उत्पन्न करता है- **हृदय में। माध्यन्दिन सवन** में कण्ठ देश में प्रयोज्य **"त्रिष्टुप्"** छन्द से **"मध्यम"** स्वर को उत्पन्न करता है- **कण्ठ में । सांय सवन** में प्रयोज्य तथा **"जगती"** छन्द से **तार स्वर** को उत्पन्न करता है- **शिर में।**

वर्णभेद-

(1) स्वर (2) काल (3) स्थान
(4) आभ्यन्तर प्रयत्न (5) बाह्य प्रयत्न

स्वरकृतवर्णभेद, कालकृतवर्ण भेद -

तीन स्वर- उदात्त, अनुदात्त, स्वरित ।
तीन कालकृत नियम्- ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत ।
स्वर- "उदात्ते निषादगान्धारावनुदात्तः ऋषभ धैवतौ।
स्वरितप्रभवा ह्येते षड्ज-मध्यम पञ्चमाः"॥12॥
उदात्त स्वर = निषाद गान्धार ।
अनुदात्त स्वर = ऋषभ,धैवत
स्वरित मूलक स्वर = षड्ज, मध्यम, पञ्चम

वर्णस्थानगणना-

वर्णों के आठ उच्चारण के स्थान हैं -

"अष्टौ स्थानानि वर्णानामुरः कण्ठः शिरस्तथा
जिह्वामूलं च दन्ताश्च नासिकोष्ठौ च तालु च"।।13॥

1. उरः 2. कण्ठ 3. शिर 4. जिह्वामूल
5. दन्त 6. नासिका 7. ओष्ठ 8. तालु

"चारायणीय शिक्षा" में (19) दिये गए हैं।

उष्मगति भेदा/विसर्गभेद = (8)

विसर्ग की आठ गति होती है -

**"ओभावश्च विवृत्तिश्च शषसा रेफ एव च
जिह्वामूलमुपध्मा च गतिरष्टविधोष्मणः"॥14॥**

(1) ओकार होना, (2) विवृत्ति होना (3) शकार होना
(4) षकार होना (5) सकार होना (6) रेफ
(7) जिह्वामूलीय (8) उपध्मानीय

वर्णविशेषस्थाननिरूपण–

हकारं पञ्चमैर्युक्तमन्तःस्थाभिश्च संयुतम्।
उरस्यं तं विजानीयात्कण्ठ्यमाहुरसंयुतम् ॥16॥

परवर्ती वर्ग के पञ्चम वर्ण ङ, ण, न, म, घ, ञ से और अन्तस्थसंज्ञक (य व र ल) वर्णों से संयुक्त हकार- **"उरः स्थानक"** होता है। और इनसे असंयुक्त हकार -**"कण्ठस्थानक"** होता है।

वर्णोच्चारणस्थान-

कण्ठ्यावहाविचुयशास्तालव्या ओष्ठजावुपू।
स्युर्मूर्धन्या ऋटुरषा दन्त्या लृतुलसाः स्मृताः ॥17॥

कण्ठ- अ, ह, **तालु-** इ, य, श, चवर्ग,
ओष्ठ- उ, पवर्ग, **मूर्धा-** ऋ र,ष, टवर्ग
दन्त- लृ, ल, स, तवर्ग

**जिह्वामूले तु कुः प्रोक्तो दन्त्योष्ठ्यो वः स्मृतो बुधैः।
एऐ तु कण्ठतालव्या ओऔ कण्ठोष्ठजौ स्मृतौ ॥18॥**

जिह्वामूल- कवर्ग, **दन्तोष्ठ-** व,
कण्ठतालु- ए, ऐ, **कण्ठोष्ठ-** ओ, औ

ए, ओ, ऐ, औ वर्णविचारः-

**"अर्धमात्रा तु कठ्यस्य एकाररैकारयोर्भवेत्
ओकारौकारयोर्मात्रा तयोर्विवृतसंवृतम्।।19॥**

'एकार' और 'ऐकार' में कण्ठ्य स्वर की अर्धमात्रा **'विवृत'** कहलाती है। 'ओकार' और 'औकार' के पूर्वभाग में कण्ठय स्वर की एक मात्रा **'संवृत'** कहलाती है।

**"अर्धमात्रा तु कण्ठ्यस्य ऐकारौकारयोर्भवेत्,
एकारौकारयोर्मात्रा तयोर्विवृतसंवृतम्।।"19॥**

'ऐकार' और 'औकार' में कण्ठस्थानक अवर्ण की आद्य अर्धमात्रा **'विवृत'** कहलाती है। 'एकार' और 'ओकार' में आद्य कण्ठस्थानक अवर्ण की अर्धमात्रा **'संवृत'** कहलाती है।

**संवृतं मात्रिकं ज्ञेयं विवृतं तु द्विमात्रिकम् ।
घोषा वा संवृताः सर्वे अघोषा विवृताः स्मृता ॥20॥**

संवृत, = एकमात्रिक,
विवृत = द्विमात्रिक,
ह्रस्व अवर्ण = **संवृत ,**
दीर्घ अवर्ण = **विवृत,**
सभी घोषवान वर्ण = **संवृत,**
सभी अघोषवान = **विवृत ।**

स्वराणामूष्मणां चैव विवृतं करणं स्मृतम् ।
तेभ्योऽपि विवृतावेङौ ताभ्यामैचौ तथैव च ॥21॥

स्वर, उष्म वर्ण = विवृत, एङ् = विवृततर, ऐच् = विवृततम् ।

अनुस्वार-अयोगवाहस्थानविशेषाः-यम-

अनुस्वार और यमसंज्ञक वर्णों का स्थान -नासिका, । अयोगवाह वर्ण अपने आश्रयभूत स्वपूर्ववर्ति स्वर के स्थान को लेने वाले होते हैं।

वर्णोच्चारणविधि-

व्याघ्री यथा हरेत्पुत्रान्दंष्ट्राभ्यां न च पीडयेत् ।
भीता पतनभेदाभ्यां तद्वद्वर्णान्प्रयोजयेत् ॥25॥

जिस प्रकार बाघिन गिरने के तथा छेद हो जाने के भय से भयभीत हो दाँतों से बच्चों को ले जाती है, पीड़ा नहीं देती है, उसी प्रकार वर्णों के उच्चारण में भी अधिक शिथिल न हो या न अतीव आघात हो ।

अयोगवाह वर्ण– (6),

1. अनुस्वार 2. विसर्ग 3. जिह्वामूलीय
4. उपध्मानीय 5. यम 6. नासिका।

अनुस्वार स्वरूपम्-

स्वर के पीछे आने वाले अनुस्वार को =ह्कार,
रेफ और श ष स होने पर सदा =दन्तमूलकस्थान, और इसका उच्चारण लौकी की वीणा के ध्वनि के तुल्य ध्वनि वाला बना कर उच्चारित करना चाहिए।

रङ्ग मात्रा-

रङ्ग का उच्चारण तक्रँ के उच्चारण काल के समान करना चाहिए । रङ्ग की दो मात्रा होती है।

हृदये चैकमात्रस्त्वर्धमात्रस्तु मूर्धनि।
नासिकायां तथार्धं च रङ्गस्यैवं द्विमात्रता ॥28॥

रङ्ग की हृदय में =1 मात्रा, शिर में =1/2 मात्रा,
नासिका में =1/2 मात्रा, इस प्रकार रङ्ग की द्विमात्रिकता होती है।
द्विमात्रिक उदा.- ''वृत्तं जघन्वाँ।''

कम्पस्वरोच्चारण वैशिष्ट्य-

मध्ये तु कम्पयेत्कम्पमुभौ पार्श्वौ समौ भवेत्।
सरङ्गं कम्पयेत्कम्पं रथीवेति निदर्शनम् ॥30॥

कम्पस्वर को उच्चारण काल में 'स्वरमध्यभाग' में कम्पित कर के उच्चारित करना चाहिए। मध्य भाग में पूर्व तथा उत्तर के भागों को उदात्त रूप में अथवा अनुदात्त रूप में तुल्य बनाकर उच्चारित करना चाहिए। कम्प स्वर में रङ्ग भी हो तो रङ्गसहित स्वर को कम्पित करके उच्चारित करना चाहिए। उदाहरण- (रथीव) ।

अधम पाठक लक्षण-

"गीती शीघ्री शिरः कम्पी तथा लिखितपाठकः।,
अनर्थज्ञोऽल्पकण्ठश्च षडेते पाठकाधमाः।।32॥

गाते हुए पढ़ने वाला, शीघ्र पढ़ने वाला, शिर हिलाते हुए पढ़ने वाला, स्वलिखित स्तोत्र को पढ़ने वाला, अर्थ को बिना जाने पढ़ने वाला, अल्प पाठ का कण्ठस्थ करने वाला ये छह पाठक अधम हैं ।

पाठक गुण-

"माधुर्यमक्षरव्यक्तिः पदच्छेदस्तु सुस्वरः
धैर्यं लयसमर्थं च षडेते पाठका गुणाः।।33॥

मधुरत्व, स्पष्ट अक्षरों का उच्चारण, पदों का विभाग, सुस्वर, सुन्दर, लययुक्त, ये छह पाठक के गुण हैं ।

सोमयागेषु वाचः स्थानानां प्रयोगस्य नियमाः-

- 'प्रातः सवन' में नित्य **'बाघ'** के गर्जन के समान 'उरः' स्थित **'गम्भीर'** वर्ण से शास्त्रादि वाक्य पढ़ें।
- माध्यन्दिन (बीच के सवन में) **'चकवे'** की ध्वनि सदृश **'कण्ठ'** स्थित स्वर से शास्त्रादि वाक्य पढ़ें।
- 'तृतीय सवन' में 'तार' स्वर को **'मयूरकोकिल-हंस'** सदृश **'शिरः'** स्थित **'नाद'** के समान स्वर से शास्त्रादि वाक्य पढ़ें।

आभ्यन्तर प्रयत्न-

"अचोऽस्पृष्टा यणस्त्वीषन्नेमस्पृष्टाः शलः स्मृताः।
शेषाः स्पृष्टा हलः प्रोक्ता निबोधनुप्रदानतः।।38॥

अच्- अस्पृष्ट=विवृत यण् - ईषत्स्पृष्ट, ईषद्विवृत
शल्- अर्धस्पृष्ट=ईषद्विवृत, हल् - स्पृष्ट

बाह्यप्रयत्न-

ञमोनुनासिका नह्रौ नादिनो हझषः स्मृताः।
ईषन्नादा यणो जश्च श्वासिनस्तु खफादयः ॥39॥

ञम्- अनुनासिक, ह, र - अनुनासिक रहित, ह, झष - नाद
यण्, जश्- ईषन्नाद, खफ़ादि- श्वास प्रयत्न ।

वेदाङ्ग-

"छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते ॥41॥
शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते" ॥42॥

छन्द- पैर, कल्प- हाथ, ज्योतिष- आँख,
निरुक्त- कान, शिक्षा- नाक, व्याकरण- मुख ।

हस्त में स्वरनिर्देश प्रकार-

उदात्तं प्रदेशिनीं विद्यात्प्रचयं मध्यतोऽङ्गुलिम् ।
निहतं तु कनिष्ठिक्यां स्वरितोपकनिष्ठिकाम् ॥44॥

उदात्त स्वर - अगूँठा तर्जनी के मूल में अग्रभाग जुड़ने पर।
अनुदात्त स्वर - कनिष्ठिका के अग्रभाग जुड़ने पर।
स्वरित स्वर - अनामिक के अग्रभाग जुड़ने पर ।
प्रचय स्वर - मध्यमा के अग्रभाग जुड़ने पर ।

उदात्त =तर्जनी अनुदात्त =कनिष्ठिका
स्वरित =अनामिका प्रचय =मध्यमा

पदशय्या:- (9) प्रकार

अन्तोदात्तमाद्युदात्तमुदात्तमनुदात्तं नीचस्वरितम् ।
मध्योदात्तं स्वरितं द्व्युदात्तं त्र्युदात्तमिति नवपदशय्या ॥ 45॥

स्वरों के अवस्थितिविशेष से पद 9 प्रकार के होते हैं।

1. अन्तोदात्त	2. आद्युदात्त	3. उदात्त
4. अनुदात्त	5. अनुदात्तस्वरित	6. मध्योदात्त
7. स्वरित	8. द्व्युदात्त	9. त्र्युदात्त।

पदशय्याः उदा.-

1. **अग्निः** - अन्तोदात्त,	2. **सोमः**- आद्युदात्त,
3. प्र- उदात्त,	4. वः- अनुदात्त,
5. वीर्यम्- अनुदात्तस्वरित (नीचस्वरित),	6. **हविषाम्**- मध्योदात्त,
7. स्वः- स्वरित,	8. **बृहस्पतिः**- द्व्युदात्त,
9. इन्द्राबृहस्पतिः- त्र्युदात्त।	

हस्तकार्य स्वरनिर्देश प्रकार -

"अनुदात्तो हृदि ज्ञेयो मूर्धन्युदात्त उदाहृतः
स्वरितः कर्णमूलीयः सर्वास्ये प्रचयः **स्मृतः** ॥48॥

उदात्त -शिरः प्रदेश , अनुदात्त - हृदय देश में हाथ रखकर ,
स्वरित - कर्णमूल प्रदेश , प्रचय - मुखप्रदेश,

मात्राविशेषनिदर्शनानि-

"चाषस्तु वदते मात्रां द्विमात्रं चैव वायसः।
शिखी रौति त्रिमात्रं तु नकुलस्त्वर्धमात्रकम्" ॥49॥

नीलकण्ठपक्षी -1 मात्रिक, **कौआ** -2 मात्रिक
मयूर -3 मात्रिक, **नेवला** - अर्धमात्रिक

वेद उच्चारण-

''अनक्षरमनायुष्यं विस्वरं व्याधिपीडितम्।
अक्षता शस्त्ररूपेण वज्रं पतति मस्तके ॥53॥

अक्षरविकल - आयुहीन
स्वरविकल - रोगपीडित

अक्षर-स्वर-विकल होने पर 'अकुण्ठित शस्त्ररूप' उच्चारयिता के शिर पर गिरता है।

॥भाषा विज्ञान॥

परिचय-

'भाषा-विज्ञान' नाम में दो पदों का प्रयोग हुआ है। **'भाषा'** तथा **'विज्ञान'**। भाषा-विज्ञान को समझने से पूर्व इन दोनों शब्दों से परिचित होना आवश्यक प्रतीत होता है। **'भाषा'** शब्द संस्कृत की **''भाष् व्यक्तायां वाचि"** धातु से निष्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ है- व्यक्त वाक् । **"विज्ञान"** शब्द में **"वि"** उपसर्ग तथा **"ज्ञा"** धातु से **"ल्युट्"** (अन्) प्रत्यय लगाने पर बनता है। सामान्य रूप से **"भाषा"** का अर्थ है "बोलचाल की भाषा या बोली" तथा **"विज्ञान"** का अर्थ है **"विशेष ज्ञान"** । मानव के सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान का प्रकाशन करने के लिए, सभ्यता और संस्कृति के इतिहास को जानने के लिए भाषा एक महत्त्वपूर्ण साधन का कार्य करती है।

भाषाविज्ञान भाषा के अध्ययन की वह शाखा है जिसमें भाषा की उत्पत्ति, स्वरूप, विकास आदि का वैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया जाता है। भाषाविज्ञान, भाषा के स्वरूप, अर्थ और सन्दर्भ का विश्लेषण करता है। भाषा के दस्तावेजीकरण और विवेचन का सबसे प्राचीन कार्य 6ठी शताब्दी के महान भारतीय वैयाकरण पाणिनि ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ अष्टाध्यायी में किया है।

भाषा विज्ञान के अध्येता **'भाषाविज्ञानी'** कहलाते हैं। भाषाविज्ञान, व्याकरण से भिन्न है। व्याकरण में किसी भाषा का कार्यात्मक अध्ययन (functional description) किया जाता है जबकि भाषाविज्ञानी इसके आगे जाकर भाषा का अत्यन्त व्यापक अध्ययन करता है।

भाषा विज्ञान के अनेक नाम -

भाषा-सम्बन्धी इस अध्ययन को यूरोप में आज तक अनेक नामों और संज्ञाओं से अभिहित किया जाता रहा है। सर्वप्रथम इस अध्ययन को **फिलोलॉजी (Philology)** शब्द के आगे विशेषण के रूप में एक शब्द जोड़ा गया- **(Comparative)** तब इसे **''कम्पैरेटिव फिलोलॉजी''** **(Comparative Philology)** कह कर पुकारा गया। उन्नीसवीं शताब्दी तक व्याकरण तथा भाषा-विषयक अध्ययन को प्रायः एक ही समझा जाता था। अतः इसे विद्वानों ने **'कम्पैरेटिव ग्रामर'** नाम भी दिया। फ्रांस में इसको **लैंगिस्तीक् (Linguistique)** नाम दिया गया। फ्रांस में भाषा सम्बन्धी कार्य अधिक होने के कारण उन्नीसवीं सदी में सम्पूर्ण यूरोप में ही **"Linguistique" अथवा "Linguistics"** नाम ही प्रचलित रहा है। इसके अतिरिक्त **'साइंस ऑफ लैंग्वेज', 'ग्लौटोलेजी'** **(Glottology)** आदि अन्य नाम भी इस विषय को प्रकट करने के लिए

काम में आये। आज इन सभी नामों में से ''लिंग्विस्टिक्स'' ''फिलोलॉजी'' (Philology) मात्र ही प्रयोग में लाए जाते हैं। भारतवर्ष में इन सभी यूरोपीय नामों के अतिरिक्त हिन्दी भाषा में जो नाम प्रयोग में लाए जाते हैं वे इस प्रकार हैं- **''भाषा-शास्त्र'' ''भाषा-तत्त्व'' ''भाषा-विज्ञान''** तथा **''तुलनात्मक भाषा-विज्ञान''** आदि। इन सभी नामों में से सर्व प्रचलित नाम **''भाषा-विज्ञान''** है। इन नाम में प्राचीन और नवीन सभी नामों का समाहार-सा हुआ जान पड़ता है। अतः यही नाम इस शास्त्र के लिए सर्वथा उपयुक्त प्रतीत होता है।

भाषाविज्ञान का इतिहास-

अपने वर्तमान स्वरूप में भाषा विज्ञान पश्चिमी विद्वानों के मस्तिष्क की देन कहा जाता है। अति प्राचीन काल से ही भाषा-सम्बन्धी अध्ययन की प्रवृत्ति संस्कृत साहित्य में पाई जाती है। **"शिक्षा"** नामक वेदांग में भाषा सम्बन्धी सूक्ष्म चर्चा उपलब्ध होती है। ध्वनियों के उच्चारण, अवयव, स्थान, प्रयत्न आदि का इन ग्रन्थों में विस्तृत वर्णन उपलब्ध है। **'प्रातिशाख्य'** एवं **निरूक्त** में शब्दों की व्युत्पत्ति, धातु, उपसर्ग-प्रत्यय आदि विषयों पर वैज्ञानिक विश्लेषण भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन कहा जा सकता है। भर्तृहरि के ग्रन्थ **'वाक्यपदीय'** के अन्तर्गत **'शब्द'** के स्वरूप का सूक्ष्म, गहन एवं व्यापक चिन्तन उपलब्ध होता है। वहाँ शब्द को 'ब्रह्म' के रूप में परिकल्पित किया गया है और उसकी 'अक्षर' संज्ञा बताई गई है। प्रकारान्तर से यह एक भाषा-अध्ययन संबन्धी ग्रन्थ ही है।

आधुनिक विषय के रूप में **भाषा-विज्ञान** का सूत्रपात यूरोप में सन **1786 ई0** में **सर विलियम जोन्स** नामक विद्वान द्वारा किया गया माना जाता है। संस्कृत भाषा के अध्ययन के प्रसंग में **सर विलियम जोन्स** ने ही सर्वप्रथम **संस्कृत, ग्रीक** और **लैटिन** भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए इस संभावना को व्यक्त किया था कि संभवतः इन तीनों भाषाओं के मूल में कोई एक भाषा रूप ही आधार बना हुआ है। अतः इन तीनों भाषाओं (संस्कृत, ग्रीक और लैटिन) के बीच एक सूक्ष्म संबंध सूत्र अवश्य विद्यमान है। भाषाओं का इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन ही आधुनकि भाषा-विज्ञान के क्षेत्र का पहला कदम बना।

॥भाषाओं का वर्गीकरण॥

विश्व में कितनी भाषाऐं बोली जाती हैं यह प्रायः अनुमान का विषय है । कुछ विद्वानों ने गणना करके इनकी संख्या 1796 बताई है । इस संख्या को आनुमानित रुप से 3000 माना जा सकता है । इसमें विश्व की सभी भाषाओं और बोलियों का संग्रह है । विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण दो प्रकार से किया गया है- आकृतिमूलक तथा पारिवारिक। आकृतिमूलक वर्गीकरण- शब्द- प्रधान और रचनातत्व पर आधारित है अर्थात् आकृतिमूलक वर्गीकरण में प्रकृति, प्रत्यय, उपसर्ग, शब्दप्रधान, रचनातत्व आदि मुख्य हैं । एवं पारिवारिक वर्गीकरण- अर्थ-प्रधान, रचना तत्व एवं अर्थतत्त्व पर आधारित है। सर्वप्रथम **"प्रो.श्लेगल"** ने भाषाओं को दो भागों में बाँटा था। **"प्रो.बोप"** ने तीन वर्ग किए, **"ग्रिम"** और **"श्लायर"** ने भी तीन वर्गों को प्रकारान्तर से माना। **"पॉट"** ने इनके 4 वर्ग बनाएं वास्तविक रूप में भाषाओं के 2 वर्ग हैं- 1. अयोगात्मक 2. योगात्मक । योगात्मक के 3 भेद होने से सम्पूर्ण 4 वर्ग होते हैं।

॥आकृतिमूलक वर्गीकरण॥

आकृतिमूल वर्गीकरण को मुख्यतः दो वर्गों में बाँटा जाता है –
1. अयोगात्मक 2. योगात्मक ।

(1) अयोगात्मक-

जिनमें प्रकृति और प्रत्यय या अर्थतत्व और सम्वन्धतत्व का संयोग नहीं होता।, इनमें प्रत्येक शब्द स्वतन्त्र होता है।

अयोगात्मक वर्ग की भाषाएं-

इस वर्ग की मुख्य प्रतिनिधि भाषा **चीनी** है। इसके अतिरिक्त **स्यामी, तिब्बती, बर्मी, अनामी, सूडानी** आदि भाषाएं इस वर्ग में हैं।

(2) योगात्मक-

जिनमें प्रकृति प्रत्यय या अर्थतत्व और सम्वन्धतत्व का संयोग रहता है, इसके मुख्यतः 3 वर्ग हैं-

1. **अश्लिष्ट** = "प्रत्ययप्रधान" भाषाएं,
2. **श्लिष्ट** = "विभक्ति-प्रधान" भाषाएं,
3. **प्रश्लिष्ट** = "समास-प्रधान" भाषाएं,

मृदुता- मृदु, **मनुष्यत्व**- मनुष्य, **सर्वत्र**- सर्व, **ने**- हो, **गा**- ऊगा।

1. अश्लिष्ट योगात्मक (प्रत्यय प्रधान)-

'तुर्की' भाषा इस वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। इसमें प्रकृति और प्रत्यय इस प्रकार जुड़ा हुआ होता है कि दोनों को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है, इस प्रकार के जोड़ को **'तिल-तण्डुल-न्याय'** कह सकते हैं। इसके चार भाग हैं-

1. **पूर्वयोगात्मक**- जहाँ प्रत्यय या सम्वन्धतत्व प्रकृति से पहले लगता है। उदाहरण - **(जुलु, काफिर)**
2. **मध्ययोगात्मक**- जहाँ प्रत्यय प्रकृति के बीच में लगता है। उदाहरण - **(संथाली)**
3. **अन्तयोगात्मक**- जहाँ प्रत्यय प्रकृति के अन्त में जोड़ा जाता है। उदाहरण - **तुर्की, तमिल, तेलगु, कन्नड,मलयालम्)।**
4. **पूर्वान्तयोगात्मक** - जहां प्रत्यय प्रकृति के पहले और अन्त में जुड़ता है । उदाहरण - **(मफोर)**

2. श्लिष्ट योगात्मक (विभक्ति-प्रधान) –

इसमें प्रकृति और प्रत्यय घनिष्ठता से मिले हुए होते हैं। यह संयोग **'नीर-क्षीर-न्याय'** कहलाता है। इस वर्ग में भारोपीय भाषाएं, सेमेटिक (सामी) हैमेटिक (हामी) आती हैं। इस वर्ग की भाषाएं संसार में सबसे

अधिक उन्नत हैं। **संस्कृत, ग्रीक, लैटिन, रूसी, अवेस्ता, अंग्रेजी, हिन्दी,** आदि इसी वर्ग में आती हैं।

उदाहरण- कृ+अन करण कृ + तव्य=कर्तव्य,

इसके दो भेद हैं-

1. अर्न्तमुखी 2. बहिर्मुखी।

इनके भी दो भेद होते हैं-

1. संयोगात्मक 2. वियोगात्मक।

(क) अर्न्तमुखी श्लिष्ट-

"अरबी" इस वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। सेमेटिक और हैमेटिक परिवार की भाषाएं इस वर्ग में आती हैं। इस वर्ग की भाषाओं में अर्थतत्व के बीच में सम्बन्धतत्व जुड़ते हैं। इनसे विभिन्न अर्थों का बोध होता है। अरबी भाषा में धातुएं प्रायः तीन व्यंजनों वाली होती है। इसमें दो भेद हैं-

1. **संयोगात्मक-** इसका उदाहरण **'अरबी'** भाषा है। इसमें बहुवचन लगाने की अवश्यकता नहीं होती।
2. **वियोगात्मक-** इसका उदाहरण **'हिब्रू'** भाषा है।

(ख) बहिर्मुखी श्लिष्ट-

"संस्कृत" इस वर्ग की प्रतिनिधि भाषा है। इस वर्ग की भाषाओं में प्रत्यय प्रकृति के बाद में जुड़ते हैं। प्रत्यय जुड़ने पर प्रकृति में गुण, वृद्धि दीर्घ, सम्प्रसारणादि परिवर्तन होते हैं। भारोपीय परिवार की **संस्कृत,** ग्रीक, लैटिन, **अवेस्ता, अंग्रेजी, हिन्दी** आदि भाषाएं इस वर्ग में आती हैं। इसके दो भेद हैं-

1. **संयोगात्मक-** इसमें प्रत्यय प्रकृति के बाद में लगते हैं। और प्रकृति+प्रत्यय = शब्दरूप धातुरूप बनते हैं। सब प्रत्यय प्रकृति के साथ घुलमिल जाता है। सम्बन्धतत्व (प्रत्यय) के रूप में उपसर्ग निपातादि (सम्, प्र, अविस्, तिरस्, अन्तर आदि) प्रकृति के पूर्व में आते हैं। इनकी प्रतिनिधि भाषा संस्कृत है। ग्रीक, **लैटिन, अवेस्ता** भी संयोगात्मक है।

उदाहरण-

1. गम से गच्छति- (गच्छ+अ+ति)
2. बालकम्- बालक+अम्,
3. अनुभवति- अनु+भू+अति। करोति, चकार, कुरु, अकार्षीत, चिकीर्षति, चरीकर्ति कारयति।

2. वियोगात्मक- वियोगात्मक में प्रत्यय अलग से लगाया जाता है। - **हिन्दी, अंग्रेजी** आदि वियोगात्मक हो गयी हैं। संस्कृत में कारकचिह्न (सुप) और कालचिह्न (तिङ्) शब्द या धातु से जुड़े हुए होते थे। हिन्दी में कारकचिन्ह (को, ने, से, रा) आदि और कालचिह्न (ता, है, था, थे) इत्यादि अलग रहते हैं। (बालकम्, पठति, पठिष्यति।) हिन्दी में इन स्थानों पर कारकों के लिये उपसर्ग और कालों के लिए सहायक क्रियाएं प्रयुक्त होती हैं । हिन्दी के तुल्य **बंगला, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी, फ्रेश्च** भी वियोगात्मक हो गयी हैं।

3. प्रश्लिष्ट योगात्मक (समास-प्रधान)-

जिनमें प्रकृति और प्रत्यय अर्थतत्व और (सम्बन्धतत्व) इस प्रकार जुड़े हुए होते हैं कि उनको अलग करना संभव नहीं होता। **उदाहरण-**

1. आर्जव (सरलता)- ऋजु+अ आर्जव।
2. सौवर (स्वर सम्बन्धी) स्वर+अ = सौवर।
3. चिकीर्षति (वह करना चाहता है)। कृ+स+ति = चिकीर्षति ।
4. दित्सति (वह देना चाहता है) – दा+स+ति = दित्सति।

इसके दो भाग हैं- **(क) पूर्ण प्रश्लिष्ट (ख) आंशिक प्रश्लिष्ट।**

(क) पूर्ण प्रश्लिष्ट-

इसमें पूरा वाक्य एक शब्द के रूप में प्रयुक्त होता है। इसको "पूर्ण समासात्मक" भी कह सकते हैं। दक्षिण अमेरिका की 'चेरोफी' भाषा में ऐसे उदाहरण मिलते है। **उदाहरण -**

नाधोलिनिन - (लाओ नाव हमारे लिए, हमारे पास नाव लाओ)

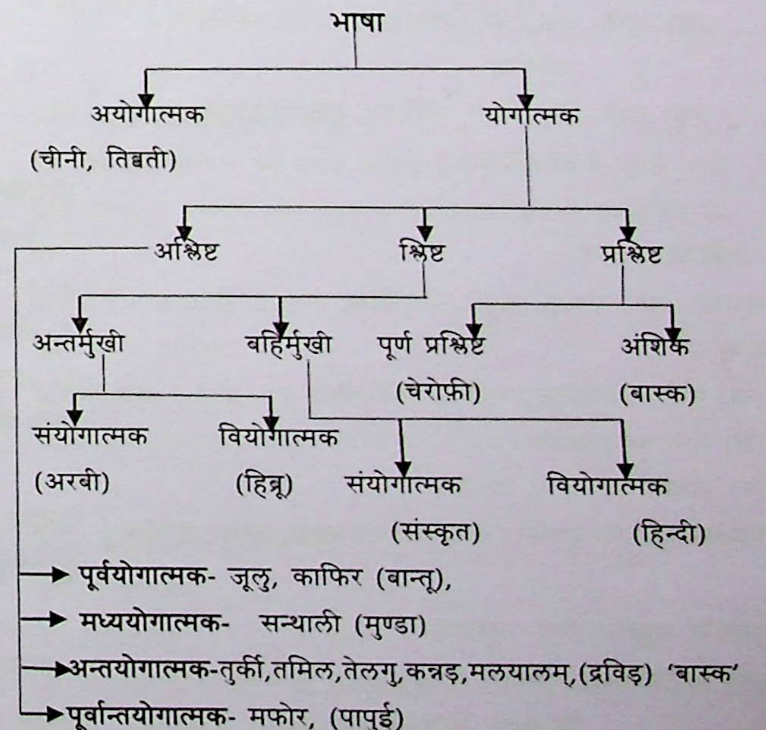
नातेन = क्रिया (लाओ,अमोखोल = संज्ञा (नाव) निन = सर्वनाम (हमारे लिए)

(ख) आंशिक प्रश्लिष्ट-

इसमें सर्वनाम और क्रियाओं का पूर्ण मिश्रण होता है। इसको "अंशतः समासात्मक" कहते हैं। 'पेरोनीज' पर्वत के पश्चिमी भाग में बोले जाने वाली – 'बास्क' भाषा में इसके उदाहरण मिलते है- उदाहरण -

1. हकार्त - मैं तुझे ले जाता हूँ।
2. नकार्सु - तू मुझे ले जाता है।
3. दकार्किओत - मैं इसे उस तक ले जाता हूँ।

आकृतिमूलक वर्गीकरण



॥ पारिवारिक वर्गीकरण ॥

विश्व की भाषाओं में पारिवारिक वर्गीकरण के (18) भेद माने गए हैं। जर्मनि के विद्वान् **''विल्हेन फाम् हुम्बोल्ट''** के अनुसार- (13) **"फ्रीड्रिश म्यूलर"** - (100) **"भारतीय विद्वान्"**- (10-18) तथा **"देवेन्द्रनाथ शर्मा"** -के अनुसार (18) भेद हैं। पारिवारिक वर्गीकरण अर्थतत्त्व एवं सम्बन्ध तत्त्व दोनों पर है एवं पारिवारिक वर्गीकरण को वंशानुक्रम पर भी आधरित होने से Generalogical (वंशानुक्रमिक) (Genera =वंश) और भूगोल एवं इतिहास पर निर्भर होने से Historical (ऐतिहासिक) कहते हैं।

(क) यूरेशिया (यूरोप-एशिया) भूखण्ड-

1. **भारोपीय(भारत-यूरोपीय)**- हिन्दी, मराठी,गुजराती,केन्टुम्,शतम् वर्ग।
2. **द्रविड़** - तमिल, तेलगु, कन्नड़, मलयालम्।
3. **बुरुशस्की**- अण्डमानी।
4. **काकेशी- (क) उत्तरी वर्ग**- कबर्डिन,सर्कासियन,चेचिनिश,लेगियन,
   (ख) दक्षिणी वर्ग- लासिश,जर्जियन,मिंग्रेलियन,स्वानियन।
5. **यूराल-अल्ताई-**
   (क) यूराल वर्ग- फिनो-उग्री, समोयद।
   (ख) अल्ताई वर्ग- तुर्की, मंगोली, मुंचई ।
6. **चीनी**- चीनी, तिब्बती, वर्मा (वर्मी), स्यामी, अनामी ।
7. **जापानी-कोरियाई**- जापानी, कोरियाई ।
8. **अत्युत्तरी (हाइपरबोरी)** - युकगिर, कमचटका, चुकची, अइनू ।
9. **बास्क** – इसमें आठ बोलियाँ आती हैं ।
10. **सामी-हामी-**
    (क) सामी- अक्कदियन, अरमाइक, अरबी, एबीसीनियन, कनानित ।
    (ख) हामी- हिब्रू, मिश्री, लीवियन, एथियोपिक (कुशीत), मेरोइटिक ।

(ख) अफ्रीका भूखण्ड-

11. **सूडानी** - बुले, मन-फू, कनूरी, नीलोटिक, वन्तूइड, होसा ।
12. **बान्तू –**
    (क) पूर्वी वर्ग- जुलू, काफिर, स्वाहिली ।
    (ख) मध्य वर्ग- सेसतो ।
    (ग) पश्चिमी वर्ग- हेरेरो, कांगो ।
13. **होतेन्तोत- बुशमैनी**- बुशमैन (सान), होतेन्तो(नामा), दमारा, सन्दवे।

(ग) प्रशान्त महासागरीय भूखण्ड-

14. **मलय पोलिनेशियाई परिवार**- मलय, जावी, सुन्दियन, दयक, फ़िजीयन, मिक्रोनेशियन, मओरी, हवाइयन, तगल, टोंगन, समोअन ।
15. **पापुई**- मफोर।
16. **आस्ट्रेलियन** - मेक्कारी, कामिलरोई।
17. **दक्षिण पूर्व-एशियाई परिवार**- मुण्डकोल, मोन, ख्मेर, अनामी, निकोवार

(घ) अमेरिका भूखण्ड-

18. **अमेरिकी परिवार**- इसमें मय, कुईचुआ, अथपस्कन, करीब, अखक, तुपी गुअर्नी, अल्गोनकिन, अजतेक, चेरोफी, बास्क आदि लगभग (1000) भाषाएं हैं ।

परिवारिक वर्गीकरण के आधार-

स्थान-सामीप्य = (स्थान या क्षेत्र की समीपता)
शब्द-साम्य = (शब्दावली की समानता, शब्द अर्थ की समानता)
व्याकरण-साम्य = (पद रचना वाक्य रचना में समानता)
ध्वनि-साम्य = (प्रयुक्त ध्वनियों में समानता)

भारोपीय परिवार की शाखाएं–

इसकी मुख्यतः 10 शाखाएं है-

1. भारत-ईरानी,	2. वाल्टो-स्लाविक,
3. आर्मीनी	4. अल्वानी (इलीरी)
5. ग्रीक (हेलेनिक)	6. केल्टिक
7. जर्मानिक (ट्यूटानिक)	8. इटालिक
9. हिटाइट (हित्ती)	10. तोखारी

**"भारोपीय-परीवारे ईरानी-भारती द्वयी,
बाल्टो-स्लाविकी चैव, आर्मीनी ग्रीक केल्टिकी॥
जर्मानिकी च तोखारी, हित्ती अल्बानिकी तथा,
इटालिकी च दशमी, शाखाश्चैताः प्रकीर्तिताः"॥**

भारोपीय परिवार के विभिन्न नाम-

1. इण्डो-जर्मनिक
2. आर्य-परिवार
3. भारोपीय-परिवार
4. भारत-हित्ती परिवार

रचना की दृष्टि से यह परिवार **"श्लिष्टयोगात्मक-"** है।

केन्टुम् और शतम् (सतम्) वर्ग -

इसका विभाजन **"प्रो.अस्कोली"** ने किया है।

शतम् वर्ग	**केन्टुम् वर्ग**
संस्कृत = शतम्,	**लैटिन** = केन्टुम्,

अवेस्ता = सतम्,	ग्रीक = हेक्टोन,
फारसी = सद,	केल्टिक (आयरिश)= केत,
हिन्दी = सौ,	तोखारी = कन्ध,
रूसी = स्तो,	गाथिक = हुण्ड,
लिथुआनियस = स्झिमतास,	जर्मन = हुन्डर्ट,
	फ्रेश्च = सेंट,
	इटालियन = केन्तो

शतम् वर्ग	केन्टुम् वर्ग
1. भारत-ईरानी (आर्य)	5. ग्रीक
2. बाल्टो-स्लाविक	6. केल्टिक
3. आर्मीनी	7. जर्मानिक (ट्यूटानिक)
4. अल्वानी (इलीरी)	8. इटालिक
	9. हिटाइट
	10. तोखारी

"ईरानी-भारती चैव बाल्टी-सुस्लाविकी तथा
आर्मीनी अल्बनी चैताः, शतम्-वर्गे समाश्रिताः।।
इटालिकी च ग्रीकी च, जर्मानिक् केल्टिकी तथा।
हित्ती तोखारिकी चैताः केन्टुम् - वर्गे प्रकीर्तिताः।।"

भारोपीय-परिवार की विशेषताएं-

"भारोपीय-परिवार-वैशिष्टयं दशकं मतम्।
श्लिष्टयोगात्मकत्वं तु प्रकृति-प्रत्ययात्मता।
एकाक्षरत्वं धातूनां, सुप् तिङो कृच तद्धिता।
स्वातन्त्र्यमुपसर्गाणां पदमूला च वाक्यता।।
प्रत्ययार्थानभिव्यक्तिः समासाभिरुचिस्तथा।
अपश्रुतेः प्रयोगश्च, प्रत्ययाधिक्यमेव च"॥

1. ईरानी-भारती-

भारोपीय परिवार की भाषाओं की तुलना से यह स्पष्ट होता है कि यह परिवार प्रारम्भ से ही दो भागों में विभक्त होता है- केन्टुम् और शतम् (सतम्) वर्ग। केन्टुम् वर्ग में अधिकांश यूरोपीय भाषाएँ आती हैं और शतम् या सतम् वर्ग में मुख्य रूप से संस्कृत और अवेस्ता भाषाएँ । संस्कृत और अवेस्ता में इतनी अधिक समानता है कि इनको एक पृथक् शाखा माना गया है। इसको भारत-ईरानी या **'हिन्द-ईरानी'** शाखा कहते हैं। ईरान शब्द 'आर्याणाम्' का अपभ्रंश रूप है, जैसे- ब्राह्मणानाम् का 'बंभनान', आभीराणाम् का 'हरियाणा'। भारत और ईरान के कारण इसे 'भारत-ईरानी' और आर्य- परिवार के कारण 'आर्य शाखा' कहा जाता है।

2. बाल्टो-स्लाविक (लेट्टो- स्लाविक)

इसे लेट्टो-स्लाविक भी कहते हैं, इस उपपरिवार की दो शाखाएं हैं-

(क) बाल्टिक - पर्शियन, लिथुआनियन, लेट्टिक।

(ख) स्लाविक-

1. महारूसी, श्वेतरूसी, लघुरुसी (रुथेवी)- **पूर्वी**
2. जेक, पोलिश, स्लोवाकी, - **पश्चिमी**
3. बल्गेरी, सर्बो - क्रोटी-**दक्षिणी**

(3) आर्मीनी (आर्मीनियम्) -

यह आमीनिया की भाषा है। इसके दो रूप है।

1. स्तम्बूल - यह यूरोप में बोली जाती है।

2. अरारट - यह एशिया क्षेत्र में बोली जाती है।

(4) अल्बानी (इलीरी)-

यह भाषा प्राचीन इलीरी भाषा का ही वर्तमान अवशिष्ट रूप है।

(5) ग्रीक (हेलेनिक)-

इसमें प्राचीन काल में **'एट्टिक'** और **'डोरिक'** मुख्य बोलियां थी। इनमें सबसे पुराने ग्रन्थ **"होमर"** के दो महाकाव्य हैं **-1. इलियड 2. ओडिसी।** ग्रीस में सामान्य रूप से प्रचलित जनभाषा को **'कोइने'** कहते थे।

(6) केल्टिक-

यह यूरोप के बहुत बड़े भूभाग की भाषा थी। इसके 2 मुख्य वर्ग हैं- 1. क-वर्ग, 2. प-वर्ग। मूल भारोपीय 'प-ध्वनि' 'प' रहती है, और कुछ में 'क' हो जाती है। जैसे – पेंक्व) 'वेल्श' में 'पम्प' और 'आयरिश' में - 'कोइक' हो जाता है।

क-वर्ग (गेलिक) में - आयरिश मुख्य है।

प-वर्ग (ब्रिटानिक) में - वेल्श और ब्रिटन मुख्य है।

(7) जर्मानिक(ट्यूटॉनिक)-

यह भारोपीय परिवार की सबसे अधिक विस्तृत भूभाग में बोली जाने वाली भाषा है। 'जर्मन' और 'डच्' भाषा का साहित्य भी उच्च कोटि का है।

क्षेत्रीय विभाजन-

पूर्वी क्षेत्र - गाथिक,

पश्चिमी क्षेत्र- अंग्रेज़ी, उच्च जर्मन, निम्न जर्मन, डच्, फ्लेमिश।

उत्तरी क्षेत्र- आइसलेण्डिक, नार्वेजियन, डेनिश, स्वीडिश।

(8) इटालिक (रोमान्स)-

क्षेत्रीय विभाजन-

1. इटालियन	2. फ्रेंच
3. स्पेनिश	4. रुमानियग

5. पुर्तगाली

रोमान्स वर्ग की भाषाओं का विकास 'लैटिन' से हुआ है।

(9) हिटाइट/हित्ती-

"प्रोस्टुर्टवेंट." ने इसे भारोपीय परिवार की पुत्री न मानकर बहन माना है। भारोपीय परिवार को 'भारत-हित्ती' परिवार कहना अत्यधिक उपयुक्त माना है। हिटाइटों में संज्ञाओं, विशेषणों और सर्वनामों के केवल दो ही लिंग हैं -1. पुल्लिंग 2. नपुंसकलिंग।

इसमें स्त्रीलिंग नहीं है। हिटाइट में (6) कारक है। अधिकरण (सप्तमी) नहीं है सर्वनाम भारतीय सर्वनामों से बहुत मिलते हैं, विशेषतः लैटिन से।

उदाहरण-

हिटाइट	**लैटिन**	**संस्कृत**	**अर्थ**
उक् (उग)	एगो	अहम्	मैं
क्विस, क्विद्	क्विस्,क्विद्	चिद्	कौन
क्विस् क्वि	क्विस् क्वम्	कश्चिद्	कोई
क्विसा	क्विस्क	कस्कः	कोई भी

इसमें दो काल हैं -**1. वर्तमान 2. भूत।**

दो वृत्तियां हैं - **1. निश्चयार्थ 2. आज्ञार्थ।**

दो प्रक्रियाएं हैं- **1. णिच् 2. यङ्।**

(10) तोखारी–

इसे बोलने वाले 'तोखर' लोग थे, महाभारत में इन्हें **"तुषाराः"** कहा है। इसे ग्रीक में तोखराई कहा गया। इसे हूणों ने नष्ट किया था।

मुख्य विशेषताएं-

इसमें कारक 9 हैं। प्रधान कारक 3 हैं -**1. कर्ता, 2. कर्म, 3. सम्बन्ध** । 'तोखारी' में द्विवचन होता है परन्तु 'हिटाइड' में नहीं होता । इसमें 'सौ' के लिये **"कन्ध"** शब्द है, यह केन्टुम् वर्ग में आती है ।

ध्वनियों का वर्गीकरण-

1. वैदिक ध्वनियां -(52),

मूलाक्षर - (11) अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ए, ओ,

2. संस्कृत ध्वनियां -(48),

संयुक्त स्वर -(2) ऐ,औ

अन्तःस्थ - य, र, ल, व

अघोष संघर्षी - श, ष, स

घोष ऊष्म – ह

अघोष ऊष्म - : विसर्ग

शुद्ध अनुनासिक - अनुस्वार

2. हिन्दी ध्वनियां- (54)

स्वर

संवृत - ई, ऊ, ई, उ

अर्धसंवृत - ए (ऍ), ओ (अॅ, ऑ)

अर्धविवृत - अ

विवृत – ऑ,आ

वर्त्स्य – न, न्ह, ल, ल्ह, र, ई,

शिथिल स्वर – अ, इ, उ

दृढ़ स्वर – आ, ई, ऊ

पश्च स्वर – उ, ऊ, आ

अग्र स्वर – इ, ई, ए

मध्य स्वर – अ

वर्तुल स्वर- अ, ओ, औ,

व्यंजन

संघर्षी - ह, ख, ग, स, ष, श, ज, फ, व,

स्पर्श संघर्षी – च, छ, ज, झ

अनुनासिक –ङ,(ञ), ण, न ,न्ह, म, म्ह,

पार्श्विक – ल, (ल्ह)

लुठित – र, (ई)

उत्क्षिप्त - ड़, ढ़

अन्तस्थ/अर्धस्वर - य, व,

प्रयत्न के आधार पर वर्गीकरण -

(1) स्पर्श –

जिनके उच्चारण में वाग्यन्त्र के दो अवयवों का परस्पर स्पर्श होता है। शब्द के अन्त में आने वाले अल्पप्राण स्पर्श अपूर्ण होते हैं -**वाक्, क्षुत्, भूभृत, खट्** आदि। स्पर्श के दो भेद हैं-

1. **अभिनिधान** - अपूर्ण या अस्फोटित।
2. **अभिनिहित** - पूर्ण या स्फोटित।

स्पर्श व्यंजन –

1. **कवर्ग** - क् ख् ग् घ्
2. **टवर्ग** -ट् ठ् ड ढ्
3. **तवर्ग** - त् थ् द् ध्
4. **पवर्ग** - प् फ् ब् भ्

(2) स्पर्श-संघर्षी-

जिनका आरम्भ स्पर्श से होता है, परन्तु इनका स्फोट या उन्मोचन झटके से न होकर धीरे-धीरे होता है।

चवर्ग - च् छ ज् झ्

(3) संघर्षी-

जिनके उच्चारण में आन्तरिक वायु का न तो स्पर्श ध्वनियों के तुल्य पूर्णतया अवरोध होता है और न स्वरों के तुल्य अबाध रूप से मुख से बाहर निकलती है।

उदाहरण - (हः (विसर्ग) ह्, ख्, ग्, श् स्, ज्, फ्, व्,)

(4) अर्धस्वर-

इनके उच्चारण में मुख्य द्वार व्यञ्जनों के तुल्य न पूर्णतया बन्द होता है, और न स्वरों के तुल्य पूर्णतया खुला रहता है। **उदाहरण**- य,व्।

मानवीय ध्वनियन्त्र-

विज्ञान में ध्वनि का सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाता है। ध्वनि का एकमात्र साधन वाग्यन्त्र है। वाग्यन्त्र का सूक्ष्मता से ज्ञान ध्वनि-विज्ञान की शिक्षा के लिए अनिवार्य है। ध्वनि कैसे उत्पन्न होती है? किन स्थानों से होकर जाती है, कहाँ रुकती है, कहाँ संघर्ष करती है, कहाँ और कैसे घोष और अघोष का रूप धारण करती है, आदि के स्पष्ट ज्ञान के लिए वागिन्द्रिय या वाग्यन्त्र के प्रत्येक अवयव का ज्ञान अनिवार्य है। इसके आधार पर ही ध्वनिशिक्षा पूर्ण हो सकती है। जिन अवयवों या अंगों की सहायता से भाषा-ध्वनियों का उच्चारण किया जाता है, उन्हें वाग्यन्त्र, ध्वनियन्त्र या उच्चारण- अवयव कहा जाता है । मानवीय वाग्यन्त्र की तुलना वीणा या बांसुरी आदि से की जा सकती है। वीणा आदि में एक ओर से वायु आती है, उसे कभी पूर्ण रूप से रोका जाता है, कभी अपूर्ण रूप से रोका जाता है और कभी पृथक्-पृथक् स्थानों से निर्गत करके स र ग म की विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न की जाती हैं। इसी प्रकार फेफड़ों से आने वाली निःश्वास वायु स्वरतन्त्रियों, कोमल तालु, कठोर तालु, दन्त, ओष्ठ आदि से नियन्त्रित करते हुए सभी प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न की जाती हैं।

ध्वनि परिवर्तन के कारण-

परिवर्तन सृष्टि का नियम है। विश्व की प्रत्येक वस्तु में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है हो रहा है और होता रहेगा। इसको ही वैदिक ऋषि ने **'यत् किं च जगत्यां जगत्' (यजु. 40-1)** कहा है। संसार की प्रत्येक वस्तु संसरणशील, परिवर्तनशील है । प्रत्येक भाषा की ध्वनियों में भी निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। इसी परिवर्तन के कारण एक-एक शब्द के अनेक अपभ्रंश हो जाते हैं। जैसे-मनुष्य, मानुष, मानस, मनुस आदि। अतएवं महाभाष्यकार पतंजलि ने कहा है- **"एकैकस्य हि शब्दस्यबहवोऽपभ्रंशाः"। (महाभाष्य, प्रथम आह्निक)** भाषा का प्रमुख तत्त्व ध्वनि है। वक्ता इसका उच्चारण करता है और श्रोता इसे सुनता है। वक्ता की ध्वनि पर दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है- **1. आभ्यन्तर, 2. बाह्य।** वक्ता और श्रोता से संबद्ध कारणों को आभ्यन्तर कारण कहते हैं। **जैसे**- प्रयत्नलाघव, मुखसुख, अज्ञान, शीघ्रभाषण आदि। इसके अतिरिक्त अन्य कारणों को बाह्य कारण कहते हैं। ये कारण बाहर से ध्वनि को प्रभावित करते हैं। **जैसे**- सामाजिक, राजनीतिक, भौगोलिक आदि कारण । इस प्रकार ध्वनि-परिवर्तन के कारणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है- **(क) आभ्यन्तर कारण, (ख) बाह्य कारण।**

ध्वनि

आभ्यन्तर (10)	**बाह्य (6)**
1. प्रयत्नलाघव या मुखसुख	1. भौगोलिक प्रभाव
2. लघूकरण की प्रवृत्ति	2. सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ
3. अनुकरण की अपूर्वता	3. काल प्रभाव या स्वभाविक विकास
4. अशिक्षा	4. लिपि दोष
5. शीघ्र भाषण	5. अन्य भाषाओं का प्रभाव
6. भावावेश	6. सादृश्य
7. काव्यात्मकता	
8. बलाघात	
9. कृत्रिमता	
10. भ्रामक व्युत्पत्ति	

ध्वनिपरिवर्तन का सर्वप्रमुख कारण है- **प्रयत्नलाघव या मुखसुख**

ध्वनि परिवर्तन

अकारण | सकारण/सहेतुक

उदाहरण-

(क) संस्कृत एवं अवेस्ता में **ग, गी** और लैटिन **(e,ए)**

संस्कृत	**लैटिन**	**संस्कृत**	**लैटिन**
भरामि	fero	अहम्	ego

संस्कृत एवं अवेस्ता में **(आ)** ग्रीक और लैटिन में **(o)**

संस्कृत	**लैटिन**	**संस्कृत**	**लैटिन**
ददाति	duman	द्वा	duo

॥ध्वनि नियम॥

परिभाषा - किसी भाषा विशेष में किसी कालविशेष में कुछ विशेष - परिवर्तनों को -परिस्थितियों के अन्तर्गत हुए विशेष प्रकार के ध्वनि ध्वनि-नियम कहते हैं।

विशिष्ट ध्वनि नियम-

1. ग्रिम नियम
2. ग्रासमान-नियम
3. वर्नर नियम
4. तालव्य नियम
5. मूर्धन्य-नियम

1. ग्रिम, ग्रासमान और वर्नर नियम मूल भारोपीय भाषा से संबद्ध है। इन नियमों में मूल भारोपीय भाषा की ध्वनियों में परिवर्तन का वर्णन है।

1. ग्रिम-नियम- इस नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा की निम्नलिखित ध्वनियों को अंग्रेजी और जर्मन भाषा में ये ध्वनियाँ हो जाती हैं-(प्रथम को द्वितीय, 1 को 2) क्रमशः क् त् प् को ह (ख्), थ्, फ्। (चतुर्थ को तृतीय, 4 को 3) क्रमशः घ् ध् भ् को ग् द् ब्। (तृतीय को प्रथम, 3 को 1) क्रमशः ग् द् ब् को क् त् प्।

2. ग्रासमान नियम- इस नियम के अनुसार मूल भारोपीय दो अक्षर वाली धातुओं में दो महाप्राण (ह) ध्वनियाँ थीं। सामान्यतया प्रथम महाप्राण (ह) ध्वनि हट जाती है। द्वितीय वर्ण में महाप्राण (ह) ध्वनि हटने पर प्रथम वर्ण में महाप्राण ध्वनि रहती है।

3. वर्नर नियम- यह ग्रिम नियम का संशोधन है। यदि मूलभाषा में क् त् प् आदि से पूर्व उदात्त स्वर होगा तो ग्रिम नियमानुसार प्रथम वर्ण परिवर्तन नियम लगेगा। यदि उदात्त स्वर के त् प् के बाद होगा तो क् त् प् को ग् द् ब् होगा, अर्थात् आगे दिये त्रिकोण के अनुसार दो पग आगे का कार्य होगा।

॥ग्रिम-नियम॥

ग्रिम-नियम का संक्षिप्त इतिहास-

यह ध्वनि-नियम प्रो० **याकोब ग्रिम** (Jacob Grimm, 1785-1863) के नाम से प्रसिद्ध है। इस नियम को **'ध्वनि-परिवर्तन'** (जर्मन में Laut-verschiebung, लाउत-ध्वनि, फेर्शीबुंग-परिवर्तन, अंग्रेजी में Sound-shifting-साउन्ड-ध्वनि, शिफ्टिंग-परिवर्तन) नाम दिया गया था। **प्रो० मैक्समूलर (Max-Muller)** ने इसे Grimm's Law (ग्रिम-नियम) नाम दिया है। **प्रो० ओटो येस्पर्सन** (Oto-Jespersen) का कथन है कि इस नियम को **Rask's Law** रास्क-नियम नाम दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह नियम डैनिश विद्वान् रास्क ने ही सर्वप्रथम प्रामाणिक रूप में अपनी पुस्तक (Undersogelse) में प्रकाशित किया था।' प्रो० ग्रिम ने इसके आधार पर ही इस नियम का विस्तृत वर्णन किया है। **प्रो० ग्रिम** ने 1822 ई० में अपने जर्मन व्याकरण (Deustche Grammatik, दायत्श-जर्मन, ग्रामातिक-व्याकरण) का द्वितीय संस्करण निकाला था। उसमें इस नियम का विस्तार से वर्णन किया है। इस नियम की ओर पहले संकेत करने के विषय में प्रो० रास्क के अतिरिक्त **प्रो० ईरे (Ihre)** का भी नाम लिया जाता है।

ग्रिम-नियम दो भागों में विभक्त है।

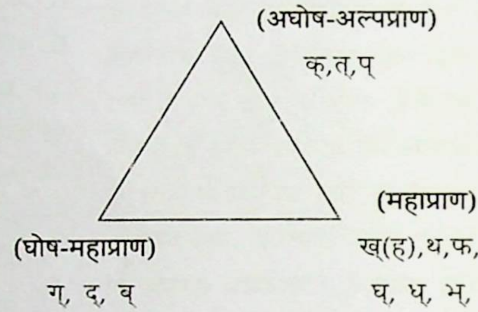
प्रथम वर्ण-परिवर्तन (First sound shifting)- यह वर्ण-परिवर्तन ईसा के जन्म से पूर्व हो चुका था। इसका प्रभाव समान रूप से गाथिक, निम्न जर्मन और अंग्रेजी, डच आदि भाषाओं पर पड़ा है। भारोपीय मूलभाषा की व्यंजन ध्वनियाँ संस्कृत, लैटिन, ग्रीक आदि में सुरक्षित हैं। अंग्रेजी का उद्भव निम्न जर्मन से है, अतः इसके द्वारा संस्कृत और अंग्रेजी की तुलना से यह परिवर्तन स्पष्ट हो जाता है। इस वर्ण-परिवर्तन में एक ओर संस्कृत, लेटिन, ग्रीक, स्लावोनिक भाषाएँ हैं, इनमें मूल ध्वनि सुरक्षित है। दूसरी ओर गाथिक, निम्न जर्मन, अंग्रेजी, डच आदि भाषाएँ हैं, इनमें यह परिवर्तन हुआ है।

वर्ण परिवर्तन क्रम

१ को २

४ को ३

३ को १



ग्रिम नियम के अनुसार -(प्रथम को द्वितीय वर्ण होता है।1 को 2) क्रमशः-

क् त् प् = ह(ख),थ् फ,(1 को 2)

घ् ध् भ् = ग, द, व् (4 को 3)

ग् द् ब् = क् त् प् (3 को 1)

द्वितीय वर्ण-परिवर्तन (Second sound shifting)- द्वितीय वर्ण-परिवर्तन 7वीं और 8वीं शती ई० में हुआ है। यह वर्ण-परिवर्तन केवल जर्मन भाषा के ही दो रूपों-उच्च और निम्नमें हुआ है। निम्न जर्मन की प्रतिनिधिभाषा अंग्रेजी है। यह परिवर्तन निम्न जर्मन और अंग्रेजी से उच्च जर्मन में हुआ है। निम्न जर्मन की कुछ ध्वनियाँ उच्च जर्मन में भिन्न हो गई हैं। ऊपर दिए गए त्रिकोण के अनुसार प्रथमवर्ण परिवर्तन में एक पग 'आगे चलते हैं। द्वितीयवर्ण परिवर्तन में एक पग और आगे चलते हैं।

निम्न जर्मन (Low German) और उच्च जर्मन (High German) के विषय में यह स्मरण रखना चाहिए कि यह अन्तर उच्च वर्ग और निम्न वर्ग से, अर्थात् व्यक्तियों से, नहीं है। जर्मनी का उत्तरी भाग समतल और नीचा है, अतः वहाँ बोली जाने वाली भाषा 'निम्न जर्मन' कही जाती है। निम्न जर्मन और अंग्रेजी में प्रथम वर्ण-परिवर्तन वाली ध्वनियाँ समान हैं।

निम्न जर्मन की शाखाएँ हैं- आदि। जर्मनी में दक्षिणी पहाड़ी भाग में बोली जाने वाली भाषा को 'उच्च जर्मन' कहते हैं, क्योंकि यह ऊँचे पर्वतीय भाग में बोली जाती है। अंग्रेजी, डच, डैनिश, नार्वेई, स्वीडिश

वर्ण-परिवर्तन को इस प्रकार रखा जा सकता है-मूल भारोपीय भाषा (मू०आ०) > संस्कृत (सं०), ग्रीक (ग्री०), लैटिन (लै०) > निम्न जर्मन (नि. ज.), अंग्रेजी (अं) > उच्च जर्मन (उ. ज.)। संस्कृत के वर्ग के चतुर्थ घ् ध् भ् ग्रीक और लैटिन में द्वितीय वर्ण अर्थात् ख् थ् फ् हो जाते हैं। अतः उपर्युक्त त्रिकोण में चतुर्थ और द्वितीय वर्णों को एक स्थान पर रखा गया है।

संस्कृत	अंग्रेजी	उच्च जर्मन
1. प्रथमवर्ण >	2. द्वितीयवर्ण >	3.तृतीयवर्ण
2. द्वितीय०>	3. तृतीय० >	1. प्रथम०
3. तृतीय० >	1. प्रथम० >	2. द्वितीय०
4. चतुर्थ० >	3. तृतीय० >	1. प्रथम०

इस प्रकार प्रथमवर्ण-परिवर्तन में संस्कृत के प्रथम वर्ण को अंग्रेजी में द्वितीय वर्ण, 2 और 4 को 3 तथा 3 को 1 होता है। प्रथम ध्वनि-परिवर्तन के लिए ग्रीक और लैटिन को छोड़कर मूल भारोपीय भाषा का प्रतिनिधि संस्कृत को लेने पर तथा निम्न जर्मन की प्रतिनिधि अंग्रेजी को लेने पर यह नियम स्पष्ट होता है और इसकी उपयोगिता ज्ञात होती है।

॥ग्रासमान नियम॥

ग्रासमान नियम (Grassmann's Law) हेर्मान ग्रासमान (Hermann Grassmann, 1809-1877) भी जर्मन विद्वान् हैं। इन्होंने ग्रिम-नियम को संशोधित किया है और उसकी त्रुटियों का निराकरण किया है। निम्नलिखित उदाहरणों में ग्रिम-नियम के अनुसार व् को प् और द् > त् होना चाहिए था, परन्तु गाथिक में भी व् और द् ही मिलते हैं।

संस्कृत	गाथिक
बोधति	Biudan, बिउदान
दभ्	Daubs, दाउब्स

प्रो० ग्रासमान ने संस्कृत और ग्रीक भाषाओं की परीक्षा करने पर यह पता लगाया कि- संस्कृत और ग्रीक भाषाओं में दो अव्यवहित सोष्म ध्वनियों में से सामान्यतया प्रथम ऊष्म ध्वनि (ह ध्वनि) निकल जाती है। जहाँ पर द्वितीय वर्ण से ऊष्म ध्वनि निकलती है, वहाँ पर प्रथम वर्ण में ऊष्म ध्वनि आ जाती है।

इस आधार पर यह कल्पना की गई कि मूल भारोपीय भाषा में दो अक्षरों वाली ऐसी धातुओं में दो महाप्राण ध्वनियाँ थीं उनमें से साधारणतया प्रथम ऊष्म ध्वनि (ह ध्वनि) निकल जाती थी और द्वितीय वर्ण से ऊष्म ध्वनि निकलने पर वह प्रथम वर्ण में पुनः आ जाती थी।

इस कल्पना का आधार प्रायः इस प्रकार था-

1. धा > धधामि > दधामि, पहले ध् को द्, ह ध्वनि हटी।
2. भृ > भभार > बभार, पहले भ् को ब्, ह ध्वनि हटी।
3. बुध् > भुत्, बुधौ, भुत्सु । बुधौ में पहले वर्ण से ऊष्म ध्वनि हटी है।

भुत्, भुत्सु में द्वितीय वर्ण से ऊष्म ध्वनि हटी है, अतः ब् > भ् हो गया अतः मूल धातु 'भुध्' (Bhudh) है।

4. दुह (मूल धातु, दुध्) >धुक्, दुहो, धुग्भ्याम्, धुक्षु।

इस प्रकार **बुध् > भुध्** और दभ् > धभ् धातु हैं । मूल **'भुध्' और 'धभ्'** धातु मानने पर **'भुध्'** से संस्कृत में बुध् धातु हुई और ग्रिम नियमानुसार भ् > ब् होने से Biudan बना। इसी प्रकार मूल धातु ' धभ्' > दभ् और गाथिक में ध् >द् होने से Daubs बना। ग्रीक भाषा में भी प्रायः ऐसे उदाहरण मिलते हैं।

॥वर्नर नियम॥

कार्ल वर्नर (Karl Verner, 1846-1896) भी जर्मन भाषाशास्त्री हैं। इन्होंने भी ग्रिम-नियम का संशोधन किया है। ग्रिम-नियम के जो अपवाद रह गए थे, उनके विषय में वर्नर ने ज्ञात किया कि ग्रिम-नियम का आधार Accent (उदात्त स्वर) था। वर्नर नियम का स्वरूप-मूल भारोपीय भाषा के शब्दों के क्, त्, प् (k, t,p) को जर्मानिक भाषाओं में ह, थ, फ (h, th, f) तभी होता है, जब मूल भाषा में अव्यवहित पूर्व कोई उदात्त स्वर (Accent) होता है। यदि उदात्त स्वर क्, त्, प् के बाद होगा तो इनके स्थान पर क्रमशः ग्, द, ब् होते हैं।

१ को २ उदात्त पूर्व होने पर ।

१ को ३ उदात्त पर होने पर ।

उदात्त का चिह्न तिरछी लकीर (') द्वारा दिया गया है

संस्कृत	लैटिन	गाथिक	अंग्रेजी	ध्वनिपरिवर्तन-
युवक्'स्	Juvencus	Juggs	Young	क्>ग्
शत'म्	Centum	Hund	Hundered	त्>द्
सप्त'न्	Septem	Sibun	Seven	प्>ब्

इनमें क, त्, प् के बाद उदात्त स्वर है, अतः इन्हें ह्, थ्, फ् न होकर ग्, द्, व् हुए हैं। भ्रा' तर् में त् से पहले उदात्त है, अतः गाथिक और अंग्रेजी में Brother में (t> th) त् को थ् मिलता है। ब्रॉथर को ही ब्रदर बोला जाता है। मिथ्या सादृश्य-वर्नर नियम के भी कुछ अपवाद मिलते हैं। इनका समाधान मिथ्या-सादृश्य (Analogy) के द्वारा किया जाता है। भ्रा'तर > Brother होता है। इसके सादृश्य पर ही अंग्रेजी में पित'र् > Father और मात' र् > Mother बनते हैं। इनमे वर्नर

के नियमानुसार त् > द् (t> d) होना चाहिए था, पर हुआ है त् > च् (t>Ch)। इसका कारण मिथ्या सादृश्य ही समझना चाहिए।

॥तालव्य नियम॥

(विल्हेम थामसन)

नियम-

इन तीनों ध्वनियों के स्थान पर 'अ' ध्वनि मिलती है।

ध्वनि	संस्कृत	लैटिन	ग्रीक
a>अ	अनिति	Animus	Anemas
e>अ	अहम्	Ego	Ego
e>अ	भरामि	Fero	Fero
e>अ	ददर्श	-	Dedorka
o>अ	अष्टौ	Octo	Octo
o>अ	अस्थि	Os	Osteon

तालव्य नियम के अनुसार मूल भारोपीय भाषा में कवर्ग की 3 श्रेणियां मानी जाती हैं-

1. शुद्ध कण्ठ्य - क् ख् ग् घ्,

2. कण्ठोष्ठ्य - क्व् ख्व् ग्व् घ्व्,

3. कण्ठतालव्य - क्य् ख्य् ग्य् घ्य्,

मूल भारोपीय भाषा के शुद्ध कण्ठ्य और कण्ठोष्ठ्य ध्वनियों के बाद यदि कोई तालव्य स्वर (इ, ई, e,i) आता है तो कण्ठ्य ध्वनि के तालव्य ध्वनि (क्>च्), (ग्>ज्) हो जाती है।

(1>2 वर्ग) (क्>च्, (ग्>ज्)द्

॥मूर्धन्य नियम॥

संस्कृत में मूर्धन्य नियम का संकेत पाणिनी की अष्टाध्यायी में मिलता है। र् और ष् के बाद न् को ण् होता है। इ, ए, ओ आदि स्वर तथा क् आदि व्यञ्जनों के बाद स् को ष् होता है।

उदाहरण-

उत्तीर्ण, विष्णु, रामेषु, वाक्षु।

न्>ण् और **स्>ष** होना मूर्धन्यीकरण है।

मूर्धन्य नियम -

यदि मूल भाषा में र् या ल् के बाद तवर्ग होगा तो उसे टवर्ग हो जाता है। यदि मूल भाषा ऋ है और यदि वह हटता है या परिवर्तित होकर अ आदि होता है, तो परवर्ती तवर्ग को टवर्ग हो जाता है-

उदाहरण-

मूल रूप	संस्कृत रूप	मूल रूप	संस्कृत रूप
कृत	कट (चटाई)	अवर्(वैदिक)	अवट (गड्ढा)
विकृत	विकट	गच्छ्(बढ़ना)	आढ्य(धनी)
संकृत	संकट	पृथति (वै-बताना)	पठति

भारतीय आर्यभाषाएं-

(क) प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएं- 2500 ई.पू. से 500 ई.पू.तक।

(ख) मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएं-500ई.पू.से1000ई.पू. तक।

(ग) आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएं - 1000 ई.पू. से वर्तमान तक

(क) प्राचीन भारतीय आर्यभाषाएं-

1. वैदिक संस्कृत 2. लौकिक संस्कृत ।

(ख) मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाएं -

1. प्राचीन प्राकृत या पालि - शिलालेखी प्राकृत।
2. मध्यकालीन प्राकृत- शौरसेनी,महाराष्ट्री,मागधी, अर्धमागधी,पैशाची।
3. परकालीन प्राकृत या अपभ्रंश।

(ग) आधुनिक -इनका विकास मध्यकालीन अपभ्रंश भाषाओं से हुआ है। **अपभ्रंश** - शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी, अर्धमागधी, पैशाची, ब्राचड, खस, ।

अर्थपरिवर्तन अर्थविकास की दिशाएं एवं कारण-

संसार की सभी वस्तुएँ परिवर्तनशील हैं। भाषा भी परिवर्तनशील है। जिस प्रकार ध्वनियों में परिवर्तन होता है, उसी प्रकार प्रत्येक भाषा के शब्दों के अर्थों में भी परिवर्तन होता रहता है। इस अर्थ-परिवर्तन को विकास-सिद्धान्त की दृष्टि से 'अर्थविकास' भी कहा जाता है। यह अर्थ-परिवर्तन तीन प्रकार का होता है-1. कहीं पर अर्थ का विस्तार होता है, 2. कहीं पर अर्थ में संकोच होता है, 3. कहीं पर पुराने अर्थ के स्थान पर नया अर्थ आ जाता है। इन्हें ये नाम दिए गए हैं-

(1) **अर्थविस्तार** (Expansion of Meaning)

(2) **अर्थसंकोच** (Contraction of Meaning)

(3) **अर्थादेश** (Transference of Meaning)

इन तीनों के जो उदाहरण मिलते हैं, उन पर विचार करने से ज्ञात होता है कि कुछ स्थानों पर अर्थ अपने मूल अर्थ से उत्कृष्ट हो गया है और कहीं पर वह अपने मूल अर्थ से निकृष्ट, अपकृष्ट या घटिया हो गया है। इस दृष्टि से भी इनको दो भागों में रखा जाता है। ये उपर्युक्त तीनों भेदों में आते हैं; परन्तु सुविधा के लिए इन पर अलग भी विचार किया जाता है। ये भेद हैं-

(क) अर्थोत्कर्ष (Elevation of Meaning)

(ख) अर्थापकर्ष (Deterioration of Meaning)

'ब्रिल' के अनुसार यह अर्थ परिवर्तन तीन प्रकार से होता है -

1. अर्थविस्तार 2. अर्थ संकोच 3. अर्थादेश

1. अर्थविस्तार-

कुछ शब्द मूल रूप में किसी विशेष या संकुचित अर्थ में प्रयुक्त होते थे , बाद में उनके अर्थ में विस्तार हो गया । **उदाहरण** - कुशल, प्रवीण, तैल, गोशाला (गोष्ठ), महाराज, , गवेषणा ।

2. अर्थसंकोच-

अर्थविस्तार के विपरीत कुछ शब्दों के अर्थों में संकोच हुआ है ।

उदाहरण - गौ, अश्व, पृथ्वी, मनुष्य, जगत, संसार, अम्बुज, सरसिज, सरोज, पंकज, नीरज, जलद, तोयद, अम्बुद, वारिवाह, वारिधि, नीरधि, अम्बुधि, तोयदि, पर्वत, तटस्थ, मध्यस्थ, मन्दिर, मृग, सभ्य, श्राद्ध, वेदना, घृणा, अनुकूल, प्रतिकूल, समास, उपसर्ग, प्रत्यय, विशेषण, नामकरण, पारिभाषिकता, तर्पण, सर्व।

3. अर्थादेश-

अर्थादेश का अर्थ है, अर्थ के स्थान पर दूसरे अर्थ का आ जाना। अर्थादेश में शब्द का प्राचीन अर्थ लुप्त हो जाता है और नया आ जाता है । उदाहरण - असुर, वर, सह, मौनः, देवानां प्रियः, (मूर्ख), बौद्ध-बुद्धु, पाषण्ड, आकाशवाणी, साहस, खाद्य-खाद, भद्र-भद्दा, मुग्ध-मूर्ख, कर्पट-कपड़ा, वाटिका-वाड़ी।

4. अर्थोत्कर्ष-

मुग्ध, साहस-साहसी, कर्पट-कपड़ा, फिरंगी, गोष्ठ-गोष्ठी, गवेषणा, सभ्य।

5. अर्थापकर्ष-

असुर, जुगुप्सा, शौच, देवानां प्रियः, घृणा, महाराज, भद्र-भद्रा, चतुर्वेदी चौबे, हरिजन- शिल्पकार, लिंग, उद्धार-उधार, मधुर, वज्रवटुक, आबदस्त कामशास्त्र, सहवास।

वाक्य का लक्षण व भेद-

वाक्य की परिभाषा- पतंजलि ने महाभाष्य में वाक्य के 5 लक्षण दिए हैं-

1. एक क्रिया-पद वाक्य है ।
2. अव्यय, कारक और विशेषण से युक्त क्रिया-पद वाक्य है ।
3. क्रिया-विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
4. विशेषण-युक्त क्रिया-पद वाक्य है।
5. क्रियापद-रहित संज्ञा-पद भी वाक्य होता है । जैसे- तर्पणम् (तर्पण करो), पिण्डीम् (ग्रास खाओ)। मीमांसकों, नैयायिकों और साहित्यशास्त्रियों ने साकांक्ष पद-समूह को 'वाक्य' माना है। आचार्य विश्वनाथ ने 'आकांक्षा, योग्यता और आसक्ति से युक्त पद-समूह को वाक्य माना है। आचार्य 'भर्तृहरि' ने अपने पूर्ववर्ती वैयाकरणों और दार्शनिकों के मतों का संग्रह 'वाक्यपदीय' में करते हुए वाक्य की निम्नलिखित परिभाषाएँ दी हैं :-

(1) क्रिया-पद को वाक्य कहते हैं।
(2) क्रिया-युक्त कारकादि के समूह को वाक्य कहते है।
(3) क्रिया एवं कारकादि-समूह में रहनेवाली 'जाति' वाक्य है।
(4) क्रियादि-समूह-गत एक अखण्ड शब्द (स्फोट) वाक्य है।
(5) क्रियादि-पदों के क्रम-विशेष को वाक्य कहते हैं।
(6) क्रियादि के बुद्धिगत समन्वय को वाक्य कहते हैं।
(7) साकांक्ष प्रथम पद को वाक्य कहते हैं।
(8) साकांक्ष पृथक्-पृथक् सभी पदों को वाक्य कहते हैं।

वाक्यों के प्रकार-

विभिन्न दृष्टिकोण से विचार करने पर भाषा में प्रयुक्त वाक्यों के अनेक प्रकार दृष्टिगोचर होते हैं। इनको संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है-

1. आकृति-मूलक भेद
2. रचना-मूलक भेद
3. अर्थ-मूलक भेद
4. क्रिया-मूलक भेद
5. शैली मूलक भेद

भारोपीय भाषा परिवार का सामान्य परिचय-

भारोपीय भाषा परिवार विश्व में बोली जाने वाली भाषाओं में सर्वप्रमुख भाषा परिवार है। इसके बोलने वालों की संख्या विश्व में सबसे ज़्यादा है। इस भाषा परिवार की प्रमुख भाषाएँ संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, बंगाली, फ़ारसी, ग्रीक, लेटिन, अंग्रेज़ी, रूसी, जर्मन, पुर्तग़ाली और इतालवी इत्यादि हैं।

भारत में 4 भाषा–परिवार

भाषा-परिवार	भारत में बोलने वालों का %
भारोपीय	73%
द्रविड़	25%
आस्ट्रिक	1.3%
चीनी–तिब्बती	0.7%

विस्तृत क्षेत्र-

भारत में आदिवासियों द्वारा भारोपीय भाषा परिवार की भाषाएँ हिन्दी भाषी प्रदेशों में विशेष रूप से बोली जाती हैं। हिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्रों के अतिरिक्त अन्य भारोपीय भाषाओं के क्षेत्र गुजरात, महाराष्ट्र और राजस्थान हैं। यहाँ पर पाये जाने वाले आदिवासी भी भारोपीय परिवार की ही भाषाएँ बोलते हैं। आदिवासी भाषाओं में भारोपीय भाषा परिवार

की सबसे अधिक व्यवहृत भाषा 'भीली' है, जो मुख्य रूप से भीलों और उसके उपवर्गों द्वारा तो व्यवहार में लाई ही जाती है, पर भील क्षेत्र के गैर आदिवासी भी इसका प्रयोग करते हैं। 'भीली' बोलने वालों की संख्या सन 1961 में 24,39,611 आँकी गई थी। भील, मीणा और मिलाला जहाँ भीली भाषा का प्रयोग करते हैं, वहीं भुंइयाँ, भुमिया, कुमार, धोबा और हल्बा छत्तीसगढ़ी बोलते हैं। अगरिया, बिंझवार और कोल भी हिन्दी भाषा का प्रयोग करते हैं। चकमा बाङ्गला भाषा का प्रयोग करते हैं तथा ब्रह्मपुत्र की घाटी की कुछ जनजातियाँ असमिया भाषा का प्रयोग करते हैं। भारोपीय भाषाओं को व्यवहृत करने वाले अधिकतर आदिवासी कोल समूह के हैं। इनके बाद द्रविड़ और मंगोल जाति के आदिवासियों का क्षेत्र आता है।

विशेषताएँ-

भारोपीय भाषा परिवार की कुछ विशेषताएँ निम्नलिखित हैं-

1. यह विश्व के बड़े भाग में बोला जाता है।
2. अन्य परिवारों की तुलना में इसमें भाषाओं और बोलियों की संख्या बहुत अधिक है।
3. साहित्य रचना के क्षेत्र में भी इस परिवार की भाषाएँ अग्रणी हैं।
4. इस परिवार की भाषाओं तथा बोलियों का विश्लेषण विश्व में सर्वाधिक हुआ है।
5. भाषा-विज्ञान के विकास में इस परिवार के विद्वानों, जैसे- **पाणिनी, भर्तृहरि, ब्लूमफ़ील्ड, चॉम्स्की** आदि ने ही सर्वाधिक कार्य किया है।

वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत में अन्तर-

संस्कृतभाषा सर्वासां भाषाणां जननी अस्ति। भारतीय उपमहाद्वीप में विचार-विनिमय हेतु उपयोग में लायी गयी ज्ञात भाषाओं में सबसे प्राचीन संस्कृत भाषा है। जिसके सामान्यतः दो रूप हैं, वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत। वैदिक संस्कृत या प्राचीन संस्कृत का उपयोग वेद (ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद), पुराण, उपनिषद में देखने को मिलता है। **पाणिनि** ऋषि से पूर्व की लगभग सभी रचना वैदिक संस्कृत में मिलती हैं। यह **भारोपीय (इंडो-यूरोपीय)** भाषा इरानियों के पवित्र ग्रन्थ **अवेस्ता** की भाषा के निकटवर्ती प्रतीत होती है। पाणिनि की रचना अष्टाध्यायी से लौकिक संस्कृत का रूप उभरकर आया। संस्कृत भाषा में व्याकरणिक सुधार के साथ सामान्य संस्कृत भाषा की शब्दावली का उपयोग किया गया है। लौकिक संस्कृत का प्राचीन उपयोग 500 ईसा पूर्व रामायण और महाभारत में मिलता है। लौकिक संस्कृत को वैदिक संस्कृत का विकसित रूप कहा जा सकता है। प्रथम शताब्दी में भारतीय-आर्य परिवार की यह भाषा पूर्वी और मध्य एशिया में अत्यंत प्रसिद्ध हो गयी थी। दोनों में धातु रूपगत अंतर हैं। वैदिक काल में एक शब्द के कई तरह के अर्थ थे। धीरे धीरे विकास के साथ पर्याप्त शब्द संस्कृत मे शामिल होते गये। वेदों में **गो** के कई अर्थ हैं **जैसे किरणें, धरती, गाय** आदि। पहले **मृग** शब्द का प्रयोग **सिंह हाथी हिरण** सबके लिए होता था। फिर **मृग हस्तिन** शब्द हुआ हाथी के लिए। मतलब हाथ वाला या सूंढ वाला मृग। फिर केवल हस्ती रह गया।

वैदिक संस्कृत में **ऋ और ऌ** के दीर्घ रूप क्रमशः **ॠ और ॡ** समन्वित शब्द सम्मिलित थे, जो आधुनिक संस्कृत में नहीं दिखाई देते। संयुक्ताक्षरों में **ह और ळ** का संयोग तथा चन्द्र विन्दु और स्वर का संयोग मिलता है, **उदाहरण- "समूह्ळमस्य पांसुरे, मधुमाँ अस्तु"** जो आधुनिक संस्कृत में नहीं मिलता। कतिपय आर्ष रूप, कालों की छटाएं जैसे **लुङ् लेट् उदाहरण- अवादीत् अगात्** आदि रूप भी आधुनिक संस्कृत में नही मिलते। आज की संस्कृत वैदिक संस्कृत से ही निकली है जबकि उस समय की लौकिक संस्कृत से प्राकृत आदि भाषाएं निकलीं।

भाषा तथा वाक् में अन्तर-

भाषा और वाक्-

भाषा शब्द का प्रयोग सामान्य रूप से अपने व्यापक अर्थ में किया जाता है। इसमें उच्चारण, ग्रहण और बोध सभी का समावेश रहता है। बोलने वाला भी भाषा बोलता है, सुनने वाला भी भाषा सुनता है और बोध भी भाषा रूप में होता है। परन्तु गम्भीरता से विचार करने पर भाषा के दो रूप प्रकट होते हैं- **(1) स्थायी एवं सूक्ष्म रूप, (2) अस्थायी एवं स्थूल रूप।** स्थायी एवं सूक्ष्म रूप को 'भाषा' (Language) और अस्थायी एवं स्थूल रूप को 'वाक्' (Speech) कहेंगे। इस 'वाक्' को भाषण भी कह सकते हैं। भाषा और वाक्' का अन्तर भाषा और भाषण' के अन्तर से भी समझा जा सकता है।

भाषा और वाक् में अन्तर- भाषा सूक्ष्म एवं भावात्मक वस्तु है, वाक् स्थूल और भौतिक वस्तु है। भाषा स्थायी है, वाक् अस्थायी है। जो कुछ हम बोलते और सुनते हैं, वह वाक् है। श्रवण के द्वारा जो हमें ज्ञान होता है, वह भाषा है। वागिन्द्रिय द्वारा उच्चरित और श्रवणेन्द्रिय द्वारा गृहीत भाषा का रूप 'वाक्' की कोटि में आता है। भाषा के आदान और प्रदान-बोलने और सुनने को की गणना 'वाक्' में होती है। इसके द्वारा जो बोध या ज्ञान होता है, जह भाषा का वास्तविक रूप है। भाषा कूटस्थ है, भावात्मक है, सूक्ष्म है, और अनिर्वचनीय है। 'वाक्' भाषा के प्रकाशन का माध्यम है। यह स्थूल एवं नश्वर है। इसका निर्वचन या विश्लेषण हो सकता है। इसी आधार पर ध्वनि-विज्ञान अंग की सत्ता है। वाक्यपदीय के शब्दों में भाषा को 'स्फोट' और वाक् को 'नाद' कह सकते हैं। भाषा

साध्य है, वाक् साधन। हम शब्दों या वाक्यों को सुनकर जो कुछ सीखते हैं, वह भाषा है। भाषा को सीखकर जो हम बोलते हैं, वह वाक् है। इस प्रकार भाषा के बोधपक्ष को भाषा' कहते हैं और उच्चारण एवं श्रवण-पक्ष को वाक्। ज्ञान भाषा है और उसका प्रकाशन वाक्। भाषा अनुभूति, भाव और विचार के रूप में स्थायी है और वाक् उच्चारण के साथ नष्ट होती रहती है। एक वाक्य को बीस बार बोलने पर 'वाक्' की 20 इकाइयाँ होंगी, परन्तु भाषा की वह एक इकाई मानी जायगी। 'भाषा' ज्ञान की समष्टि है और 'वाक्' उसकी अभिव्यक्ति। वाक्य और व्याकरण 'भाषा' के अंग हैं, परन्तु उच्चारण और ग्रहण 'वाक्' के अवयव हैं।

भाषा और बोली में अंतर-

भाषा-

यदि भाषा की बात की जाये तो ये एक प्रकार का साधन होता है जो आपके अंदर की भावनाओं और विचार को व्यक्त करने के लिए उपयोग किया जाता है । इसमें हम वाचिक ध्वनि का प्रयोग करते हैं । भाषा मुँह से बोले गए शब्दों और वाक्यों का समूह होता है जिनके द्वारा हम अपनी बात दूसरे को समझा पाते हैं । जब कुछ शाब्दिक ध्वनियों का प्रयोग करके कुछ वाक्यों के समूह को मिलाके जब पूरा एक पैराग्राफ बनता है उसे भाषा कहा जा सकता है ।

बोली-

किसी भी प्रकार की भाषा क्यों न हो उसका जन्म बोली से ही होता है जब बोली के व्याकरण का मानकीकरण किया जाता है और उस बोली के बोलने या उसे लिखने से कोई अर्थपूर्ण वाक्य बनता है जिसे हम आराम से समझ सकते हैं और बोली जब भावों को समझा पाती है और उसे लिखने से साहित्य का रूप बनता है तो उसे भाषा कहा जाता है। कोई भी बोली हमारे लिए तब अधिक महत्व रखती है जब उसका स्थान साहित्य में, शिक्षा में या सामाजिक व्यवहार में कारगर हो कई सारी बोलियां मिल के ही एक भाषा को उत्पन्न करती हैं ।

भाषा और बोली में अंतर

1. शब्दों और वाक्यों के समूहों को भाषा कहते हैं, इन्हे हम बोल के या लिख के समझ या समझा सकते हैं लेकिन कुछ ऐसी मौखिक ध्वनि जिनके साथ शब्द और वाक्य प्रस्तुत होते हैं बोली कहलाती है ।
2. भाषा को हम लिखित रूप से व्यक्त कर सकते हैं लेकिन कुछ भाषा ऐसी होती हैं जिन्हे हम लिखित रूप में नहीं पाते हैं बोली कहलाती हैं जैसे – भोजपुरी ।
3. भाषा दो प्रकार की होती हैं मौखिक और लिखित, जबकि बोली को हम केवल मौखिक रूप से पाते हैं ।
4. भाषा की अपनी लिपि होती है जैसे की हिंदी की देवनागरी, अंग्रेजी की रोमन, पंजाबी की गुरुमुखी, आदि और यदि बोली की बात की जाए तो वो क्षेत्र विशेष में बोली जाती है और इसमें जो लिपि का उपयोग कर के लिखा जाता है वो उस भाषा की बोली कहलाती है ।
5. भाषा विस्तृत होती है जबकि बोली स्थानीय होती है ।
6. भाषा का प्रयोग शिक्षा, सामाजिक व्यवहार, साहित्य आदि में होता है जबकि बोली को कभी बोलने में उपयोग कर सकते हैं अर्थात बात करने में ।
7. भाषा में शुद्धता और अशुद्धता का ध्यान रखना होता है जबकि बोली को बोलने के कोई नियम नहीं होते हैं ।
8. भाषा का व्याकरण होता है जबकि बोली का नहीं।

भाषाविज्ञान के मुख्य सन्दर्भ-

- अर्थपरिवर्तन का मुख्य कारण -**सादृश्यता।**
- आकृतिमूलक वाक्य -4 प्रकार,
- वाक्यरचनानुसार रचनामूलक वाक्य -3 प्रकार,
- अर्थभेद, भावभेद और अर्थमूलक वाक्य - 8,
- **भाषा** - सूक्ष्म, भावात्मक (साध्य),
- **वाक्** - स्थूल, भौतिक (साधन)
- 'भरसि' अवेस्ता में परिवर्तन होता है -**'बरहि'**।
- 'अश्व' अवेस्ता में परिवर्तन होता है -**'अस्प।'**
- मानस्वर चतुर्भुजस्य कल्पना कृता – **"प्रो. डेनियर-जॉन्स-महोदयेन"।**
- भाषिक ध्वनि वर्गीकरण के आधार हैं- **1. स्थान 2. प्रयत्न 3. करण।**
- सिन्धु भाषा का विकास हुआ है -**पैशाची प्राकृत।**
- अर्थावबोध के प्रमुख साधन हैं - 8,
- भारतीय आर्य भाषा की अवस्था है -3,
- बलाघात के भेद हैं - 4,
- सिन्धि भाषा का विकास हुआ है -**पैशाची प्राकृत** से।
- भाषा विज्ञान को साइंस ऑफ लैंग्वेज कहा है –**"डॉ .डी.पी. गुणे"**
- **" तुलनात्मक भाषाविज्ञान"** - पाण्डुरंग दामोदर गुणे ।

इकाई-6

(ख) व्याकरण का विशिष्ट अध्ययन-

परिभाषाएं-

संहिता संज्ञा

सूत्रम्- परः सन्निकर्षः संहिता । 1/1/109

वृत्तिः- वर्णानामतिशयितः सन्निधिः संहिता संज्ञा स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- वर्णों की अत्यन्त समीपता को संहिता संज्ञा कहते है ।

संयोग संज्ञा

सूत्रम्- हलोऽनन्तराः संयोगः । 1/1/7

वृत्तिः- अज्भिरव्यवहिता हलः संयोगसंज्ञाः स्युः॥

हिन्दी अर्थ- हल् अर्थात् व्यंजन वर्णों के बीच में किसी स्वर के न रहने पर, उन सभी हलों के समुदाय की संयोग संज्ञा होती है ।

गुण संज्ञा

सूत्रम्- अदेङ् गुणः । 1/1/2

वृत्तिः- अत् एङ् च गुणसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- ह्रस्व अकार और एङ् प्रत्याहार की गुण संज्ञा होती है ।

वृद्धि संज्ञा

सूत्रम्- वृद्धिरादैच् । 1/1/1

वृत्तिः- आदैच्च वृद्धिसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- दीर्घ आकार और ऐच् (ऐ,औ) की वृद्धि संज्ञा होती है ।

प्रादिपदिक संज्ञा

सूत्रम्- अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् । 1/2/45

वृत्तिः- - धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वा अर्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- अर्थात् धातु, प्रत्यय और प्रत्ययान्त से भिन्न कोई सार्थक शब्द को प्रातिपदिक कहते हैं।

सूत्रम्- कृत्तद्धितसमासाश्च । 1/2/46

वृत्तिः- कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च तथा स्युः॥

हिन्दी अर्थ- कृदन्त, तद्धितान्त और समास की प्रातिपदिक संज्ञा होती है ।

नदी संज्ञा

सूत्रम्- यू स्त्र्याख्यौ नदी । 1/4/3

ईदूदन्तौ नित्यस्त्रीलिङ्गौ नदीसंज्ञौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- नित्य स्त्रीलिङ्ग ईकारान्त और ऊकारान्त की नदी संज्ञा होती है ।

घि संज्ञा

सूत्रम्- शेषो घ्यसखि । 1/4/7

वृत्तिः- ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्जं घिसंज्ञम्॥

हिन्दी अर्थ- सखि शब्द को छोड़कर ह्रस्व इकारान्त और उकारान्त की घि संज्ञा होती है ।

उपधा संज्ञा

सूत्रम्- अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा । 1/1/65

वृत्तिः- अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः॥

हिन्दी अर्थ- अंतिम वर्ण से पूर्व वर्ण की उपधा संज्ञा होती है ।

अपृक्त संज्ञा

सूत्रम्- अपृक्त एकाल् प्रत्ययः । 1/2/41

वृत्तिः- एकाल् प्रत्ययो यः सोऽपृक्तसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- एक अल् प्रत्यय की अपृक्त संज्ञा होती है ।

गति संज्ञा

सूत्रम्- गतिश्च । 1/4/60

वृत्तिः- प्रादयः क्रियायोगे गतिसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- प्रादियों की क्रिया के योग में गतिसंज्ञा होती है ।

पद संज्ञा

सूत्रम्- सुप्तिङन्तं पदम् । 1/4/14

वृत्तिः- सुबन्तं तिङन्तं च पदसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- सुबन्त और तिङन्त की पद संज्ञा होती है ।

विभाषा संज्ञा

सूत्रम्- न वेति विभाषा । 1/1/43

हिन्दी अर्थ- जहाँ विकल्प से होने और न होने, दोनों की स्थिति बनी रहती है वहाँ विभाषा संज्ञा होती है ।

सवर्ण संज्ञा

सूत्रम्- तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् । 1/1/8

वृत्तिः- ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चेत्येतद्द्वयं यस्य येन तुल्यं तन्मिथः सवर्णसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिन दो या दो से अधिक वर्णों के उच्चारण स्थान तथा आभ्यन्तर प्रयत्न दोनों समान हो उनकी परस्पर सवर्ण संज्ञा होती है ।

टि संज्ञा

सूत्रम्- अचोऽन्त्यादि टि । 1/1/64

वृत्तिः- अचां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तट् टिसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अचों में जो अन्य अच् है वह आदि में है जिसके उस शब्द समुदाय की टि होती है।

प्रगृह्य संज्ञा

सूत्रम्- ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम् । 1/1/11

वृत्तिः- ईदूदेदन्तं द्विवचनं प्रगृह्यं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- द्विवचनान्त ईकारान्त, ऊकारान्त और एकारान्त की प्रगृह्य संज्ञा होती है ।

सर्वनामस्थान संज्ञा

सूत्रम्- सुडनपुंसकस्य । 1/1/43

वृत्तिः- स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरक्लीवस्य॥

हिन्दी अर्थ- नपुंसक लिङ्ग को छोड़कर सु आदि पाँच प्रत्ययों की सर्वनामस्थान संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- शि सर्वनामस्थानम् । 1/1/42

वृत्तिः- शि इत्येतदुक्तसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- शि सर्वनामस्थान संज्ञक होता है ।

'ज्ञान+इ' यहाँ 'शि' की सर्वनामस्थान संज्ञा हुई।

भ संज्ञा

सूत्रम्- यचि भम् । 1/4/18

वृत्तिः- यादिष्वजादिषु च कप्प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्वं भसंज्ञं स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- सर्वनामस्थानसंज्ञक प्रत्ययों को छोडकर सु से लेकर कप प्रत्यय पर्यन्त यकारादि और अकारादि प्रत्ययों के परे होने पर पूर्वशब्दस्वरूप भसंज्ञक होता है ।

सर्वनाम संज्ञा

सूत्रम्- सर्वादीनि सर्वनामानि । 1/1/27

हिन्दी अर्थ- सर्व, विश्व, उभ, उभयादि सर्वादिगण पठित शब्दों की सर्वनाम संज्ञा होती है ।

निष्ठा संज्ञा

सूत्रम्- क्तक्तवतू निष्ठा । 1/1/26

वृत्तिः- एतौ निष्ठासंज्ञौ स्तः॥

हिन्दी अर्थ- क्त और क्तवतू इन प्रत्ययों की निष्ठा संज्ञा होती है ।

॥लघुसिद्धान्तकौमुदी॥

॥संज्ञाप्रकरणम्॥

"नत्वा सरस्वतीं देवीं शुद्धां गुण्यां करोम्यहम्।
पाणिनीय प्रवेशाय लघुसिद्धान्तकौमुदीम्"॥

अन्वयः- अहम् वरदराज शुद्धां गुण्या सरस्वतीं देवीं नत्वा पाणिनीय-प्रवेशाय लघुसिदान्तकौमुदीं करोमि।

हिन्दी अर्थ- मैं (वरदराज) शुद्ध तथा गुणो से युक्त सरस्वती देवी को नमस्कार करके, पाणिनि के बनाये व्याकरण शास्त्र में बालकों के प्रवेश के लिये 'लघुसिद्धान्तकौमुदी' की रचना करता हूँ ।

चतुर्दश माहेश्वर सूत्र-

1. अइउण्	2. ऋलृक्	3. एओङ्	4. ऐऔच्
5. हयवरट्	6. लण्	7. ञमङणनम्	8. झभञ्
9. घढधष्	10. जबगडदश्	11. खफछठथचटतव्	12. कपय्
13. शषसर्	14. हल् ।		

इति माहेश्वराणि सूत्राण्यणादिसञ्ज्ञार्थानि । एषामन्त्या इतः । हकारादिष्वकारः उच्चारणार्थः । लणमध्येत्वित्सञ्ज्ञकः ।

हिन्दी अर्थ- ये चौदह सूत्र माहेश्वर अर्थात् महादेव से आये हुए हैं । इनका प्रयोजन अण् आदि संज्ञा करना है । इन के अन्तिम वर्ण इत् संज्ञक होते हैं । हकार आदियों में अकार उच्चारण के लिये हैं । परन्तु 'लण्' सूत्र में वह इत् संज्ञक हैं ।

सूत्रम्- हलन्त्यम् । 1/3/3

वृत्तिः- उपदेशेऽन्त्यं हलित्स्यात्। उपदेश आद्योच्चारणम्। सूत्रेष्वदृष्टं पदं सूत्रान्तरादनुवर्तनीयं सर्वत्र॥

हिन्दी अर्थ- उपदेश के अन्त्य हल् इत् संज्ञक होते हैं । आद्यों के उच्चारण को अथवा धातु आदि के आद्य उच्चारण को उपदेश कहते है । सूत्रो में जो पद न हो (पर वृत्ति में दिखाई दे) वह पद सर्वत्र पिछले (या कही-कही अगले) सूत्रों से ले लेना चाहिये।

सूत्रम्- अदर्शनं लोपः। 1/1/60

वृत्तिः- प्रसक्तस्यादर्शनं लोपसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- विद्यमान का अदर्शन लोप संज्ञक होता है ।

सूत्रम्- तस्य लोपः। 1/3/9

वृत्तिः- तस्येतो लोपः स्यात्। णादयोऽणाद्यर्थाः।
हिन्दी अर्थ- उस इत संज्ञक का लोप होता हैं । ण् आदि 'अण्' आदियों के लिये हैं ।

सूत्रम्- आदिरन्त्येन संहेता। 1/1/71
वृत्तिः- अन्त्येनेता सहति आदिर्मध्यगानां स्वस्य च संज्ञा स्यात् यथाणिति अ इ उ वर्णानां संज्ञा। एवमच् हल् अलित्यादयः ।
हिन्दी अर्थ- अन्त्य इत् से युक्त आदि वर्ण, मध्यगत वर्णों की तथा अपनी संज्ञा हो । **जैसे- 'अण्'** यह 'अइउ' वर्णों की संज्ञा है । इसी प्रकार अक्, अच्, हल्, अल् आदि भी जान लेने चाहिये।

सूत्रम्- ऊकालोऽज्झस्वदीर्घप्लुतः। 1/2/27
वृत्ति- उश्च ऊश्च ऊश्च वः वां काल इव कालो यस्य सोऽच् क्रमाद् ह्रस्वदीर्घप्लुतसंज्ञः स्यात्। स प्रत्येकमुदात्तादि भेदेन त्रिधा।
हिन्दी अर्थ- एकमात्रिक, द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक उकार के उच्चारण काल के सदृश जिस अच् का उचारण काल हो, वह अच् क्रमशः ह्रस्व-दीर्घ-प्लुत संज्ञक होता है।

सूत्रम्- उच्चैरुदात्तः। 1/2/29
हिन्दी अर्थ- भागों वाले तालु आदि स्थानों में जो अच् उपर वाले भाग से बोला जाय वह उदात्त होता है ।

सूत्रम्- नीचैरनुदात्त। 1/2/30
हिन्दी अर्थ- भागों वाले तालु आदि स्थानों में जो अच् नीचे वाले भाग से बोला जाय वह अनुदात्त संज्ञक होता है ।

सूत्रम्- समाहारः स्वरितः। 1/2/31
हिन्दी अर्थ- उदात्त और अनुदात्त वर्णों के धर्म जो और उदात्तत्व अनुदात्तत्व दोनों जिस अच् में विद्यमान हो वह अच् 'स्वरित' होता है।

स नवविधोऽपि प्रत्येकमनुनासिकत्वाननुनासिकत्वाभ्यां द्विधा।
हिन्दी अर्थ- वह नौ प्रकार का होते हुए पुनः प्रत्येक अनुनासिक और अननुनासिक भेद से दो प्रकार का होता है ।

सूत्रम्- मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः। 1/2/8
वृत्तिः- मुखसहतिनासिकयोच्चार्यमाणो वर्णोऽनुनासिकसंज्ञः स्यात्। तदित्थम् - अ इ उ ऋ एषां वर्णानां प्रत्येकमष्टादश भेदाः। लृवर्णस्य द्वादश, तस्य दीर्घाभावात्। एचामपि द्वादश, तेषां ह्रस्वाभावात् ।
हिन्दी अर्थ- मुख सहित नासिका से बोला जाने वाला वर्ण 'अनुनासिक' संज्ञक होता हैं । इस प्रकार-'अ, इ, उ, ऋ' इन वर्णों में प्रत्येक के अठारह भेद हो जाते हैं । 'लृ' वर्ण के दीर्घ न होने से बारह भेद हो जाते है। एचों (ए, ओ , ऐ, औ) के भी ह्रस्व न होने से बारह-बारह भेद होतें हैं ।

सूत्रम्- तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् । 1/1/8
वृत्तिः- ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चेत्येतद्द्वयं यस्य येन तुल्यं तन्मिथः सवर्णसंज्ञं स्यात्।
हिन्दी अर्थ- तालु आदि स्थान तथा आभ्यन्तर-प्रयत्न ये दोनों जिस वर्ण के जिस वर्ण से तुल्य हो वह वर्णजाल (अक्षर-समुदाय) परस्पर सवर्ण सञ्ज्ञक होता है।

वार्तिक- ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम् ।
हिन्दी अर्थ- ऋकार और लृकार मिलकर सवर्ण के बोधक हैं ।

अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः	अवर्ण, कवर्ग, हकार तथा विसर्ग का कण्ठ स्थान होता है।
इचुयशानां तालुः	इकार, चवर्ग, यकार और शकार का स्थान तालु हैं।
ऋटुरषाणां मूर्धा	लृकार, तवर्ग, लकार और सकार का दन्त स्थान हैं।
उपूपध्मानीयानामोष्ठौ	उकार पवर्ग और उपध्मानीय का ओष्ठ स्थान हैं।
ञमङणनानां नासिका च	ञ,म,ङ,ण,न् का नासिका और स्व-स्व वर्गीय स्थान हैं।
एदैतोः कण्ठ तालु	ए और ऐ का स्थान कण्ठ तालु।
ओदौतोः कण्ठोष्टम्	ओ और औ का स्थान कण्ठ एवं ओष्ठ हैं।
वकारस्य दन्तोष्ठम्	वकार का स्थान दन्त और ओष्ठ हैं।
जिह्वामूलीयस्य जिह्वामूलम्	जिह्वामूलीय का जिह्वामूलम् स्थान है।
नासिकानुस्वारस्य-	नासिका का अनुस्वार स्थान हैं।

यत्नो द्विधा- आभ्यन्तरो बाह्यश्च । आद्यः पञ्चधा-स्पृष्टेषत्स्पृष्टेषद्विवृतविवृतसंवृत भेदात् । तत्र स्पृष्टं प्रयतनं स्पर्शानाम् । ईषत्स्पृष्टमन्तःस्थानाम् । ईषद्विवृतमूष्मणाम् । विवृतं स्वराणाम् । ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम्। प्रक्रियादशायां तु विवृतमेव ।
हिन्दी अर्थ- यत्न दो प्रकार का होता है, एक **'आभ्यन्तर'** और दूसरा **'बाह्य'** ।

१. आभ्यन्तर-प्रयत्न पांच प्रकार का होता है- **स्पृष्ट, ईषस्स्पृष्ट, ईषद्विवृत, विवृत, संवृत** ।

१.	स्पृष्ट	स्पृष्ट-प्रयत्न स्पर्श वर्णों का होता हैं।
२.	ईषस्स्पृष्ट	ईषत्स्पृष्ट-प्रयत्न अन्तस्थ वर्णों का होता है।
३.	ईषद्विवृत	ईषद्विवृत्-प्रयत्न ऊष्म वर्णों का होता हैं।
४.	विवृत	स्वरों का विवृत प्रयत्न होता हैं।
५.	संवृत	ह्रस्व अवर्ण का उच्चारण-काल में संवृत-प्रयत्न और प्रयोग-सिद्धि के समय विवृत-प्रयत्न होता है।

२. **बाह्यप्रयत्नस्त्वेकादशधा** - विवारः संवारः श्वासो नादो घोषोऽघोषोऽल्पप्राणोऽमहाप्राण उदात्तो ऽनुदात्तः स्वरितश्चेति।

१.	खरो विवाराः श्वासा अघोषाश्च।
२.	हशः संवारा नादा घोषाश्च।
३.	वर्गाणां प्रथमतृतीयपञ्चमा यणश्चाल्पप्राणाः।
४.	वर्गाणां द्वितीयचतुर्थौ शलश्च महाप्राणाः।
५.	कादयो मावसानाः स्पर्शाः।

यणोऽन्तःस्थाः	शल ऊष्माणः	अचः स्वराः
क-ख इति कखाभ्यां प्रगर्धविसर्गसदृशो जिह्वामूलीयः।		
प-फ इति पफाभ्यां प्रागर्धविसर्गसदृश उपध्मानीयः।		
अं अः इत्यचः परावनुस्वारविसर्गौ॥		

हिन्दी अर्थ- बाह्यप्रयत्न ग्यारह प्रकार का होता है-

विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष,
अल्पप्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित ।।

'खर्' प्रत्यहार	विवार, श्वास तथा अघोष प्रयत्न वाले होते हैं।
'हश्' प्रत्याहार	संवार, नाद तथा घोष प्रयत्न वाले होते हैं।
अल्पप्राण	वर्गों के प्रथम, तृतीय, पञ्चम और यण् अल्पप्राण प्रयत्न वाले होते हैं।
महाप्राण	वर्गों के द्वितीय, चतुर्थ और शल् महाप्राण प्रयत्न वाले होते हैं।

सूत्रम्- अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः। 1/1/69

वृत्तिः- प्रतीयते विधीयत इति प्रत्ययः। अविधीयमानोऽणुदिच्च सवर्णस्य संज्ञा स्यात्। अत्रैवाण् परेण णकारेण। कु चु टु तु पु एते उदितः। तदेवम् -अ इत्यष्टादशानां संज्ञा। तथेकारोकारौ। ऋकारस्त्रिंशतः। एवं ऌकारोऽपि। एचो द्वादशानाम्। अनुनासिकाननुनासिकभेदेन यवला द्विधा तेनाननुनासिकास्ते द्वयोर्द्वयोस्संज्ञा।

हिन्दी अर्थ- जिसका विधान किया जाय उसे 'प्रत्यय' कहते हैं। अविधीयमान अण् और उदिद् वर्णों की सवर्ण संज्ञा होती हैं। केवल इसी सूत्र में **अण्** प्रत्याहार का ग्रहण पर वाले अर्थात् **लण्** इस सूत्र के णकार से होता है अन्य जगहों पर पूर्व णकार अर्थात् **अइउण्** के णकार से गृहीत होता है। **'कु, चु, टु, तु, पु'** इनको उदित् कहते हैं ।अतः इस प्रकार **अकार** यह अठारह प्रकार का हो जाता है। इसी प्रकार **'इ'** और **'उ'** भी। **ऋकार** तीस प्रकार का होता है। इसी प्रकार **ऌकार** भी। एच् प्रत्याहार में प्रत्येक की बारह-बारह प्रकार की संज्ञा है। अनुनासिक और अननुनासिक के भेद से **य, व और ल** ये दों दों प्रकार के होते है।

सूत्रम्- परः संनिकर्षः संहिता। 1/1/109

वृत्तिः- वर्णानामतिशयितः संनिधिः संहितासंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- वर्णों की अत्यन्त संन्निधि अर्थात् अत्यन्त निकटता होने पर संहिता संञ्ज्ञा होती है ।

सूत्रम्- हलोऽनन्तराः संयोगः। 1/1/7

वृत्तिः- अज्भिरव्यवहिता हलः संयोगसंज्ञाः स्युः॥

हिन्दी अर्थ- अर्चो के व्यवधान से रहित हलों की 'संयोग' संज्ञा होती हैं।

सूत्रम्- सुप्तिङन्तं पदम् । 1/4/14

वृत्तिः- सुबन्तं तिङन्तं च पदसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- सुबन्त और तिङन्त शब्द-स्वरूप पद-संज्ञक होते हैं।

॥इति संज्ञाप्रकरणम्॥

॥अथ-अच्सन्धिः॥

सूत्रम्- इको यणचि । 6/1/77

वृत्तिः- इकः स्थाने यण् स्यादचि संहितायां विषये। सुधी उपास्य इति स्थिते॥

हिन्दी अर्थ- संहिता के विषय में अच् के विद्यमान होने पर इक् के स्थान पर यण् हो जाता है।'सुधी+उपास्य' ऐसी स्थिति होने पर अग्रिम् सूत्रप्रवृत्त होता है।

सूत्रम्- तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य । 1/1/66

वृत्तिः- सप्तमीनिर्देशेन विधीयमानं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य पूर्वस्य बोध्यम्॥

हिन्दी अर्थ- सप्तम्यन्त के निर्देश से क्रियमाण कार्य अन्य वर्णों के व्यवधान से रहित पूर्व के स्थान पर जानना चाहिए।

सूत्रम्- स्थानेऽन्तरतमः । 1/1/50

वृत्तिः- प्रसङ्गे सति सदृशतम आदेशः स्यात्। सुध् य्+उपास्य इति जाते॥

हिन्दी अर्थ- प्रसङ्ग अर्थात् प्रसक्ति (प्राप्ति) होने पर अत्यन्त सदृश आदेश होता है। **'सुध्य्+उपास्य'** इस प्रकार हो जाने पर अग्रिम-सूत्र प्रवृत्त होता है।

सूत्रम्- अनचि च । 8/4/47

वृत्तिः- अचः परस्य यरो द्वे वा स्तो न त्वचि। इति धकारस्य द्वित्वेन सुध्ध्य् उपास्य इति जाते॥

हिन्दी अर्थ- अच् से परे यर् को विकल्प करके द्वित्व हो जाता है परन्तु अच् परे होने पर नहीं होता। इस सूत्रसे धकार को द्वित्व हो जाता है।

सूत्रम्- झलां जश् झशि। 8/4/53

वृत्तिः- स्पष्टम्। इति पूर्वधकारस्य दकारः॥

हिन्दी अर्थ- झश् प्रत्याहार परे होने पर झलों के स्थान पर जश् हो जाते हैं। इस सूत्र से पूर्व धकार के स्थान पर दकार हो जाता हैं।

सूत्रम्- संयोगान्तस्य लोपः। 8/2/23

वृत्तिः- संयोगान्तं यत्पदं तदन्तस्य लोपः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- जिस पद के अन्त में संयोग हो उसका लोप हो जाता है।

सूत्रम्- अलोऽन्त्यस्य । 1/1/52

वृत्तिः- षष्ठीनिर्दिष्टाऽन्त्यस्याल आदेशः स्यात्। इति यलोपे प्राप्ते

हिन्दी अर्थ- आदेश षष्ठी निर्दिष्ट के अन्त्य अल् स्थान पर होता है। इस सूत्र से (दोनों पक्षों में) यकार के लोप के प्राप्त होने पर (अग्रिम वार्तिक द्वारा निषेध हो जाता है।)

वार्तिक- (यणः प्रतिषेधो वाच्यः)।

हिन्दी अर्थ- संयोग के अन्त में यण् के लोप का निषेध कहना चाहिये। **उदाहरण यथा- सुद्ध्युपास्यः। मद्ध्वरिः। धात्त्रंशः। लाकृतिः ।**

सुद्ध्युपास्यः- (अच्छी उपासना) 'सुधी + उपास्य' **इको यणचि** इस सूत्र ने **तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य** और **स्थानेऽन्तरतमः** इन दो सूत्रों की सहायता से सुधी के ईकार के स्थान में यकार आदेश किया तब 'सु ध् य्+उपास्य' ऐसी स्थिति हुई तब **अनचि च** से धकार को द्वित्व हुआ 'सु ध् ध् य् +उपास्य' ऐसी स्थिति **झलां जश् झशि** इस सूत्र से पूर्व धकार के स्थान पर दकार हो जाता हैं। 'सु द् ध् य्+उपास्य' इस स्थिति में **संयोगान्तस्य लोपः** इससे सम्पूर्ण संयोगान्त पद 'सु द् ध् य्' का लोप प्राप्त था तब **अलोऽन्त्यस्य** इस सूत्रने अन्तिम यकार का लोप प्राप्त हुआ परन्तु **यणः प्रतिषेधो वाच्यः** इस वार्तिक ने यकार के लोप का भी निषेध कर दिया इस प्रकार सु द् ध् य् + उपास्य = **सुद्ध्युपास्यः** यह सिद्ध हुआ ।

मध्वरिः - (विष्णु का शत्रु)- मधु+अरिः **'म ध् उ+अरिः'** इको यणचि से इक् उकार के स्थान में यण् वकार होता है । 'म ध् व्+अरिः'= मध्वरिः । इसी प्रकार धात्रंशः और लाकृतिः भी बनते है।

धात्रंशः- (ब्रह्मा का अंश) धातृ + अंश (ऋ को र्)= धात्रंशः।
लाकृतिः- लृ + आकृतिः (लृ को ल्)= लाकृतिः ।

सूत्रम्- एचोऽयवायावः। 6/1/78

वृत्तिः- एचः क्रमादय्, अव्, आय्, आव् एते स्युरचि॥

हिन्दी अर्थ- अच् परे होने पर एच् के स्थान पर क्रमश अय्, अव्, आय् , आव् आदेश हो जाते हैं। **उदाहरण यथा-** हरये, विष्णवे, नायकः, पावकः।

सूत्रम्- यथासंख्यमनुदेशः समानाम्। 1/3/10

वृत्तिः- समसंबन्धी विधिर्यथासंख्यं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- (सङ्ख्या की दृष्टि से) समान सम्बन्ध वाली विधि सङ्ख्या के अनुसार हो। **उदाहरण यथा-** हरये। विष्णवे। नायकः। पावकः।

हरये (विष्णु के लिये)- हरे + ए- ह् अ र् ए + ए यहां पर **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** की सहायता से **एचोऽयवायावः** से एकार के स्थान में अय् आदेश होकर हरये बनता है । इसी प्रकार विष्णवे, नायकः, पावकः भी बनते है ।

विष्णवे- विष्णो + ए (ओ+ए=अव्)= विष्णवे ।
नायकः- नै + अकः (नै+अ=आय्)= नायकः ।
पावकः- पौ + अकः (औ+अ=आव्)= पावकः ।

सूत्रम्- वान्तो यि प्रत्यये। 6/1/79

वृत्तिः- यकारादौ प्रत्यये परे ओदौतोरव् आव् एतौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- वकारादि प्रत्यय परे होने पर ओ और औ को क्रमशः अव् और आव् आदेश हो जाते है। **यथा-** गव्यम्। नाव्यम्।

गव्यम्- गो यम् यहां पर +**वान्तो यि प्रत्यये** सूत्र से ओ को अव् आदेश होकर रुप बनता है ।

नाव्यम्- नौ + यम् यहां पर **वान्तो यि प्रत्यये** सूत्र से ओ को आव् आदेश होकर रुप बनता है ।

वार्तिक- (अध्वपरमाणे च)।

हिन्दी अर्थ- गो शब्द से 'यूति शब्द परे होने पर ओकार औकार को अव् आव् आदेश हो जाता है, यदि समुदाय से मार्ग का परिमाण (माप) ज्ञात हो तो।

यथा- **गव्यूतिः= गो + यूतिः** यहां पर **अध्वपरमाणे च** वार्तिक से ओ को अव् आदेश होकर रुप बनता है ।

सूत्रम्- अदेङ् गुणः। 1/1/2

वृत्तिः- अत् एङ् च गुणसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- अ, ए, ओ, इन तीन वर्णों की 'गुण' संज्ञा होती है।

सूत्रम्- तपरस्तत्कालस्य। 1/1/70

वृत्तिः- तः परो यस्मात्स च तात्परश्चोच्चार्यमाणसमकालस्यैव संज्ञा स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- 'त्' जिससे परे है और 'त' से जो परे है जो अच् वह अपने समकाल वालों का ही बोध कराता है।

सूत्रम्- आद्गुणः । 1/6/87

वृत्तिः- अवर्णादचि परे पूर्वपरयोरेको गुण आदेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अवर्ण से अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर एक गुण आदेश हो जाता है। उदाहरण यथा- उपेन्द्रः। गङ्गोदकम्।

उपेन्द्रः(इन्द्र के समीप)- उप + इन्द्रः यहां आदगुणः से पूर्व अकार और पर इकार दोनों के स्थान में- उ प् (अ + इ) द्रः एकार एकादेश हुआ ।उ प् (ए) + द्रः= उपेन्द्रः ।
गङ्गोदकम्(गंगा का जल)- गंगा + उदकम् यहां आदगुणः से पूर्व आकार और पर उकार दोनों के स्थान- गं अ ग् (आ + उ) दकम् में ओकार एकादेश होता है । गं ग् (ओ) + दकम्= गङ्गोदकम् ।

सूत्रम्- उपदेशेऽजनुनासिक इत। 1/3/2

वृत्तिः- उपदेशेऽनुनासिकोऽजित्संज्ञः स्यात्। प्रतिज्ञानुनासिक्याः पाणिनीयाः। लण्सूत्रस्थावर्णेन सहोच्चार्यमाणो रेफो रलयोः संज्ञा॥

हिन्दी अर्थ- जो अच् उपदेश अवस्था में अनुनासिक हो, उसकी इत् संज्ञा होती है।

सूत्रम्- उरण रपरः। 1/1/51

वृत्तिः- ऋ इति त्रिंशतः संज्ञेत्युक्तम्। तत्स्थाने योऽण् स रपरः सन्नेव प्रवर्तते।

हिन्दी अर्थ- 'ऋ' यह तीस की संज्ञा है यह हम पीछे कह चुके हैं। इस तीस प्रकार वाले 'ऋ' के स्थान पर यदि अण् करना हो तो वह रपर वाला ही प्रवृत्त होता है। **उदाहरण यथा-** कृष्णर्द्धिः। तवल्कारः।

कृष्णर्द्धि- कृष्ण + ऋद्धि यहां पर आदगुणः इस सूत्र से उरण रपरः सूत्र की सहायता से अ + ऋ= के स्थान पर अर् गुण हुआ ।
तवल्कारः- तव + लृकारः यहां पर आदगुणः इस सूत्र से उरण रपरः सूत्र की सहायता से अ + लृ= के स्थान पर अल् गुण हुआ ।

सूत्रम्- लोपः शाकल्यस्य। 8/3/19

वृत्तिः- अवर्णपूर्वयोः पदान्तयोर्यवयोर्लोपो वाशि परे॥

हिन्दी अर्थ- अश् प्रत्याहार परे होने पर अवर्ण पूर्व वाले पदान्त यकार वकार का विकल्प करके लोप हो जाता है।

सूत्रम्- पूर्वत्रासिद्धम् । 8/2/1

वृत्तिः- सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यसिद्धा, त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परं शास्त्रमसिद्धम्। हर इह, हरयिह। विष्ण इह, विष्णविह॥

हिन्दी अर्थ- सवासात अध्यायों के प्रति त्रिपादी-सूत्र असिद्ध होते हैं और त्रिपादी सूत्रों में भी पूर्व शास्त्र के प्रति पर शास्त्र असिद्ध होता है।

सूत्रम्- वृद्धिरादेच । 1/1/1

वृत्तिः- आदैच्च वृद्धिसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- आ, ऐ, औ' वृद्धि संज्ञक होते हैं।

सूत्रम्- वृद्धिरेचि। 6/1/88

वृत्तिः- आदेचि परे वृद्धिरेकादेशः स्यात्। गुणापवादः।

हिन्दी अर्थ- अवर्ण से एच् परे होने पर पूर्व पर के स्थान पर एक वृद्धि आदेश हो जाता है। **उदाहरण यथा-** कृष्णैकत्वम्। गङ्गौघः। देवैश्वर्यम्। कृष्णौत्कण्ठ्यम्॥

कृष्णैकत्वम्- कृष्ण + एकत्वम् यहां वृद्धिरेचि सूत्र से अकार और एकार को ऐकार एकादेश होता है । कृष् ण (अ + ए) कत्वम् कृष् ण (ऐ) + कत्वम्= कृष्णैकत्वम् ।
गङ्गौघः- गंगा + ओघः यहां पर वृद्धिरेचि इस सूत्र से (आ+ओ= को औ) आदेश होता है ।
देवैश्वर्यम्- देव + ऐश्वर्यम् यहां पर वृद्धिरेचि इस सूत्र से (अ+ऐ= को ऐ) आदेश होता है ।

कृष्णौत्कण्ठ्यम्- कृष्ण + औत्कण्ठ्यम् यहां पर वृद्धिरेचि इस सूत्र से (अ+औ= को औ) आदेश होता है ।

सूत्रम्- एत्येधत्यूठ्सु। 6/1/89

वृत्तिः- अवर्णादेजाद्योरेत्येधत्योरूठि च परे वृद्धिरेकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अवर्ण से पर यदि एच् प्रत्याहार आदि वाली 'इण् तथा 'एध्' धातु हो अथवा ऊठ् धातु हो तो पूर्वः पर के स्थान पर एकवृद्धि आदेश हो जाता है। यह सूत्र **एङि पररूपम्** तथा **'आद्गुणः'** का अपवाद है।

उदाहरण यथा- उपैति। उपैधते। प्रष्ठौहः। एजाद्योः किम् ? उपेतः। मा भवान्प्रेदिधत्।

उपैति- उप + एति यहां पर अ+ ए के स्थान में **एत्येधत्यूठ्सु** सूत्र से ऐ आदेश होता है ।
उपैधते- उप + एधते यहां पर अ+ ए के स्थान में **एत्येधत्यूठ्सु** सूत्र से ऐ आदेश होता है ।
प्रष्ठौहः- प्रष्ठ + ऊहः यहां पर अ+ ऊ के स्थान में **एत्येधत्यूठ्सु** सूत्र से औ आदेश होता है ।
उपेतः- उप + इतः यहां पर अ+ इ के स्थान में अवर्ण से परे एजादि धातु का अभाव होने से आदगुण से गुण होकर उपेतः बनता है।
मा भवान् प्रेदिधत्- प्र + इदिधत् =यहां पर भी अ + इ के स्थान में अवर्ण से परे एजादि धातु का अभाव होने से आदगुण से गुण होकर प्रेदिधत् बनता है।

वार्तिक- अक्षादूहन्यामुपिसंख्यानम् ।

हिन्दी अर्थ- शब्द के अन्त्य अवर्ण से 'ऊहिनी' शब्द का आदि उकार परे होने पर पूर्व पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश हो जाता है। उदाहरण यथा- अक्षौहणी सेना।

अक्षौहणी सेना- अक्ष + ऊहिणी यहां पर अक्ष शब्द के अन्त्य अवर्ण से ऊहिनी' शब्द का आदि उकार परे होने पर पूर्व पर के स्थान पर **अक्षादूहन्यामुपिसंख्यानम्** इस वार्तिक से वृद्धि एकादेश हो जाता है।

वार्तिक- प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु ।

हिन्दी अर्थ- प्र शब्द के अन्त्य अवर्ण से ऊह ऊढ, ऊढि, एष तथा पुष्य शब्दों का आदि अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश हो जाता है। **उदाहरण यथा-** **प्रौहः। प्रौढः। प्रौढिः। प्रैषः। प्रैष्यः।**

प्रौहः- प्र + ऊहः यहां पर अवर्ण से परे ऊह शब्द का आदि अच् परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर **प्रादूहोढोढ्येषैष्येषु** इस वार्तिक से वृद्धि एकादेश हो जाता है। इसी प्रकार अन्य **प्रौढः। प्रौढिः। प्रैषः। प्रैष्यः** रूप भी समझने चाहिये ।

वार्तिक- ऋते च तृतीयासमासे ।

हिन्दी अर्थ- तृतीया समास में अवर्ण से ऋत् शब्द का आदि ऋवर्ण परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश हो जाता है।

यथा- सुखेन ऋतः सुखार्तः। तृतीयेति किम् ? परमर्तः।

सुखार्तः- सुख + ऋतः यहां पर तृतीया समास में अवर्ण से ऋत् शब्द का आदि ऋवर्ण परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर **ऋते च तृतीयासमासे** इस वार्तिक से आर् वृद्धि एकादेश हो जाती है।

वार्तिक- प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे ।

हिन्दी अर्थ- प्र, वत्सतर, कम्बल, वसन, ऋण तथा दश इन शब्दों के अन्त्य अवर्ण से परे शब्द का आदि ऋवर्ण होने पर पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश हो जाता है। **यथा-** प्रार्णम्, वत्सतरार्णम्, इत्यादि ।

प्रार्णम्- प्र + ऋणम् यहां पर प्र शब्द के अन्त्य अवर्ण से परे ऋवर्ण होने पर पूर्व और पर के स्थान पर **आर् वृद्धि** एकादेश होकर प्रार्णम् बनता है।

सूत्रम्- उपसर्गाः क्रियायोगे। 1/4/59

वृत्तिः- प्रादयः क्रियायोगे उपसर्गसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- क्रिया के योग में प्र आदि 'उपसर्ग' संज्ञक होते हैं। प्र, परा, अप, सम्, अनु, अव्, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि, उप - एते प्रादयः ।

सूत्रम्- भूवादयो धातवः । 1/3/1

वृत्तिः- क्रियावाचिनो भ्वादयो धातुसंज्ञाः स्युः॥

हिन्दी अर्थ- क्रिया के वाचक भ्वादियों की धातु संज्ञा होती हैं।

सूत्रम्- उपसर्गादृति धातौ। 6/1/91

वृत्तिः- अवर्णान्तादुपसर्गादृकारादौ धातौ परे वृद्धिरेकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अवर्णान्त उपसर्ग से ऋकारादि धातु परे हो तो पूर्व और पर के स्थान पर वृद्धि एकादेश होता हैं । **यथा-** प्रार्च्छति॥

प्रार्च्छति- प्र+ ऋच्छति अवर्णान्त उपसर्ग से ऋकारादि धातु परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर (आर्) वृद्धि एकादेश होकर प्रार्च्छति बनता हैं।

सूत्रम्- एङि पररूपम्। 6/1/94

वृत्तिः- आदुपसर्गादेङादौ धातौ पररूपमेकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अवर्णान्त उपसर्ग से एङादि धातु परे होतो पूर्व और पर के स्थान पर पररूप एकादेश हो जाता हैं। **यथा-** प्रेजते। उपोषति।

प्रेजते -प्र + एजते इस स्थिति में अवर्णान्त उपसर्ग से एगादि धातु परे होने पर पूर्व और पर के- प्र् (अ+ ए) जते स्थान पर एङि पररूपम् इस सूत्रसे पररूप एकादेश हो जाता हैं। प्र् (ए) जते= प्रेजते।
उपोषति- उप + ओषति इस स्थिति में अवर्णान्त उपसर्ग से एगादि धातु परे होने पर पूर्व और पर के- उप् (अ+ओ) षति स्थान पर एङि पररूपम् इस सूत्रसे पररूप एकादेश हो जाता हैं। उप् +(ओ)+ षति= उपोषति

सूत्रम्- अचोऽन्त्यादि टि । 1/1/64

वृत्तिः- अचां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तट् टिसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अचों में जो अन्य अच् है वह आदि में है जिसके उस शब्द समुदाय की टि होती है।

वार्तिक- शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम् । तच्च टेः ।

हिन्दी अर्थ- शकन्धु आदि शब्दों को पररूप होता हैं और उनकी टि संज्ञा होती हैं । **यथा-** शकन्धुः। कर्कन्धुः मनीषा। आकृतिगणो ऽयम्। मार्त्तण्डः ।

शकन्धुः- शक + अन्धुः यहां पर अचोऽन्त्यादि टि इस सूत्रसे शक में ककारोत्तरवर्ति अकार की टि टिसंज्ञं हुई और फ़िर ककारोत्तरवर्ति अकार को **शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्** इस वार्तिक से पररूप होकर शकन्धुः रुप बना ।

सूत्रम्- ओमाङोश्च। 6/1/95

वृत्तिः- ओमि आङि चात्परे पररूपमेकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ओम् और आङ् से अत् परे होने पररूप एकादेश होता है। **यथा-** शिवायों नमः। शिव एहि।

शिवायों नमः- शिवाय + ओम् नमः यहां पर शिवाय शब्द से ओम् परे होने पर शिवाय के यकारोत्तरवर्ति अकार को **ओमाङोश्च** सूत्र से पररुप होता है ।

सूत्रम्- अन्तादिवच् । 6/1/85

वृत्तिः- योऽयमेकादेशः स पूर्वस्यान्तवत्परस्यादिवत्।

हिन्दी अर्थ- जो यह एकादेश किया जाता है वह पूर्व के अन्त के समान तथा पर के आदि के समान होता है। **उदाहरण यथा-** शिवेहि॥

शिवेहि- शिव + आङ + इहि यहां पर शिव शब्द से आङ परे होने पर शिव के वकारोत्तरवर्ति अकार को **ओमाङोश्च** सूत्रसे पररुप होता है ।

सूत्रम्- अकः सवर्णे दीर्घः । 6/1/101

वृत्तिः- अकः सवर्णेऽचि परे पूर्वपरयोर्दीर्घ एकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अक् से परे यदि सवर्णी अच् हो तो पूर्व और पर के स्थान में दीर्घ एकादेश हो जाता है । **उदाहरण यथा-** दैत्यारिः। श्रीशः। विष्णूदयः। होतॄकारः॥

दैत्यारिः- दैत्य + अरिः यहां पर अक् से अर्थात् दैत्य के अकार से सवर्णी अच् परे है अतः पूर्व- दैत्य् (अ + अ) रिः और पर के स्थान में **अकः सवर्णे दीर्घः** से दीर्घ आ एकादेश हो जाता है । दैत्य् + (आ) + रिः ।
श्रीशः- श्री + ईशः (ई+ई=ई) = श्रीशः ।
विष्णूदयः- विष्णु + उदयः (उ+उ=ऊ) विष्णूदयः ।
होतॄकारः- होतृ + ऋकारः (ऋ+ऋ=ॠ) होतॄकारः ।

सूत्रम्- एङः पदान्तादति । 6/1/109

वृत्तिः- पदान्तादेङोऽति परे पूर्वरूपमेकादेशः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- पदान्त एङ् से ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर पूर्वरूप एकादेश हो जाता है। **उदाहरण यथा-** हरेऽव। विष्णोऽव।

हरेऽव- हरे + अव यहां पर पदान्त एङ् से ह्रस्व अकार परे होने पर पूर्व और पर के स्थान पर **एङः पदान्तादति** इस सूत्रसे पूर्वरूप एकादेश हो जाता है। हर् (ए+अ) व- हरेऽव।
विष्णोऽव- विष्णो +अव (ओ+अ=ओ) विष्णोऽव ।

सूत्रम्- सर्वत्र विभाषाः गोः । 6/1/122

वृत्तिः- लोके वेदे चैङन्तस्य गोरति वा प्रकृतिभावः पदान्ते।

हिन्दी अर्थ- लोक और वेद में एगन्त 'गो' शब्द को पदान्त में विकल्प से प्रकृति भाव हो जाता है। **उदाहरण यथा-** गोअग्रम् गो ऽग्रम्। एङन्तस्य किम् ? चित्रग्वग्रम्। पदान्ते किम्? गोः॥

सूत्रम्- अनेकाल् शित्सर्वस्य । 1/1/55

इति प्राप्ते॥

हिन्दी अर्थ- जिस आदेश में अनेक अल् (वर्ण) हों तथा जिसका शकार इत् हो वह सम्पूर्ण स्थानी के स्थान पर होता है ।

सूत्रम्- ङिच्च । 1/1/53

वृत्तिः- ङिदनेकालप्यन्त्यस्यैव स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- ङित् आदेश चाहे अनेक भी क्यों ना हो अन्तिम अल् के स्थान पर होगा ।

सूत्रम्- अवङ् स्फोटायनस्य । 6/1/133

वृत्तिः- पदान्ते एङन्तस्य गोरवङ् वाचि।

हिन्दी अर्थ- पदान्त में जो एङन्त गो शब्द को अच् परे होने पर विकल्प से अवङ् आदेश होता है। **यथा-** गवाग्रम्, गो ऽग्रम्। पदान्ते किम् ? गवि॥

गवाग्रम्, गोऽग्रम्- गो + अग्रम् यहां पर **अवङ् स्फोटायनस्य** सूत्र से पदान्त में जो एङन्त गो शब्द है उसको अच् परे होने पर विकल्प से अवङ् आदेश होता है और फ़िर **अकः सवर्णे दीर्घः** इस सूत्र से दीर्घ होता है । दूसरे पक्ष में गो+ग्रम् यहां **एङः पदान्तादति** पूर्वरुप होता है ।

सूत्रम्- इन्द्रे च । 6/1/124

वृत्तिः- गोरवङ् स्यादिन्द्रे।

हिन्दी अर्थ- गो शब्द को अवङ् होता है इन्द्र शब्द परे हो तो । उदाहरण **यथा-** गवेन्द्रः ।

गवेन्द्र- गो + इन्द्र, यहां गो शब्द को इन्द्रे च इससे अवङ् तथा फ़िर ग् अव(अ+इ)न्द्र, ग् अव् (ए) न्द्र= गवेन्द्र । **आदगुण** से गुण होकर गवेन्द्र बना।

सूत्रम्- दूराद्धूते च । 8/2/84

वृत्तिः- दूरात्सम्बोधने वाक्यस्य टेः प्लुतो वा॥

हिन्दी अर्थ- दूर से सम्बोधन कराने में प्रयुक्त जो वाक्य है उसकी टि को विकल्प प्लुत हो जाता है।

सूत्रम्- प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम् । 6/1/125

वृत्तिः- एतेऽचि प्रकृत्या स्युः।

हिन्दी अर्थ- प्लुत और प्रगृह्य संज्ञक को अच् परे होने पर प्रकृतिभाव होता हैं। **यथा-** आगच्छ कृष्ण ३ अत्र गौश्चरति॥

सूत्रम्- ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम् । 1/1/11

वृत्तिः- ईदूदेदन्तं द्विवचनं प्रगृह्यं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ईदन्त-ऊदन्त तथा एदन्त द्विवचन प्रगृह्य संज्ञक होते है ।

यथा- हरी एतौ। विष्णू इमौ। गङ्गे अमू॥

गङ्गे अमू- यहां पर **ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्** इस सूत्रसे प्रगृह्यसंज्ञा और फ़िर **प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्** इससे प्रकृतिभाव होता है । प्रकृतिभाव होने पर सन्धि कार्य नहीं होता है ।

सूत्रम्- अदसो मात्। 1/1/12

वृत्तिः- अस्मात्परावीदूतौ प्रगृह्यौ स्तः।

यथा- अमी ईशाः। रामकृष्णावमू आसाते। मात्किम् ? अमुकेऽत्र ।

अमी ईशाः, रामकृष्णावमू आसाते- यहां पर अदसो मात् इस सूत्र से प्रगृह्यसंज्ञा और फ़िर **प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्** इससे प्रकृतिभाव होता है।

सूत्रम्- चादयोऽसत्वे । 1/4/57

वृत्तिः- अद्रव्यार्थाश्चादयो निपाताः स्युः॥

हिन्दी अर्थ- यदि चादियों का द्रव्य अर्थ न हो तो उनकी निपात संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- प्रादयः । 1/4/58

वृत्तिः- एतेऽपि तथा॥

हिन्दी अर्थ- अद्रव्यार्थक प्रादि भी निपात-संज्ञक होते हैं।

सूत्रम्- निपात एकाजनाङ् 1/1/14

वृत्तिः- एकोऽज् निपात आङ्वर्जः प्रगृह्यः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- आङ् को छोडकर एक अच् निपात की प्रगृह्य संज्ञा होती है। **यथा-** इ इन्द्रः। उ उमेशः।**वाक्यस्मरणयोरङित्** आ एवं नु मन्यसे। आ एवं किल तत्। अन्यत्र ङित् आ ईषदुष्णम् ओष्णम्॥

इ इन्द्रः, उ उमेशः- यहां पर निपात एकाजनाङ् इस सूत्र से प्रगृह्य संज्ञा और फ़िर प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम् इससे प्रकृतिभाव होता है। प्रकृतिभाव होने पर सन्धि कार्य नहीं होता है ।

सूत्रम्- ओत् । 1/1/15

वृत्तिः- ओदन्तो निपातः प्रगृह्यः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ओदन्त निपात की प्रगृह्य संज्ञा होती है । **यथा-** अहो ईशाः।

अहो ईशाः- यहां पर ओत् इस सूत्रसे प्रगृह्य संज्ञा और फ़िर प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम् इससे प्रकृतिभाव होता है । प्रकृतिभाव होने पर सन्धि कार्य नहीं होता है ।

सूत्रम्- सम्बुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे । 1/1/16

वृत्तिः- सम्बुद्धिनिमित्तक ओकारो वा प्रगृह्योऽवैदिके इतौ परे।

हिन्दी अर्थ- सम्बुदि निमित्तक ओकार-अवैदिक अर्थात् वेद में न पाए जाने वाले की इति शब्द के परे होने पर विकल्प से प्रगृह्य संज्ञा होती है। **उदाहरण यथा-** विष्णो इति,विष्ण इति , विष्णविति ।

विष्णो इति- इस स्थिति में **सम्बुद्धौ शाकल्यस्येतावनार्षे** इस सूत्र से विकल्प से प्रगृह्य संज्ञा होती है और प्रगृह्य संज्ञा होने पर **प्लुतप्रगृह्या अचि नित्यम्** इससे प्रकृतिभाव होता है । प्रकृतिभाव होने पर सन्धि कार्य नहीं होता है ।
विष्णविति- विष्णो+इति यहां पर प्रगृह्य संज्ञा के अभाव में **एचोऽयवायावः** इस सूत्र से विष्ण् ओ + इति ओ को अव् आदेश हो जाता है अर्थात् अयादि सन्धिकार्य हो जाता है । विष्ण् अव् + इति= विष्णविति ।

सूत्रम्- मय उञो वो वा। 8/3/33

वृत्तिः- मयः परस्य उञो वो वाचि।

हिन्दी अर्थ- मय से परे उञ् को विकल्प से वकार होता है अच् परे होने पर । **यथा-** किम्वुक्तम्, किमु उक्तम्॥

किम्वुक्तम्- किम् + उक्तम् इस स्थिति में इस सूत्र से वकार आदेश होता है । किम् व् + उक्तम्= किम्वुक्तम् ।
किमु उक्तम्- जहां पर वकार आदेश नहीं होता वहां पर किमु उक्तम् यह रुप बनता है ।

सूत्रम्- इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च । 6/1/127

वृत्तिः- पदान्ता इको ह्रस्वा वा स्युरसवर्णेऽचि। ह्रस्वविधिसामर्थ्यान्न स्वरसन्धिः।

हिन्दी अर्थ- असवर्ण अच् परे होने पर पदान्त इक् को विकल्प से ह्रस्व हो जाता है। **ह्रस्वविधीति-** ह्रस्व विधान करने के सामर्थ्य से स्वर सन्धि नहीं होती। **यथा-** चक्रि अत्र, चक्रय्त्र। पदान्ता ? इति किम् गौर्यौ ।

चक्रि अत्र- चक्री + अत्र इस स्थिति में **'इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च'** इस सूत्रसे चक्री को विकल्प से ह्रस्व हुआ तो चक्रि अत्र यह स्थिति हुई ह्रस्व करने का फ़ल सन्धि कार्य न होना है परन्तु जहां ह्रस्व नही होता वहां **'इको यणचि'** से यण् होकर चक्र्यत्र यह रुप बनता है ।

सूत्रम्- अचो रहाभ्यां द्वे । 8/4/46

वृत्तिः- अचः पराभ्यां रेफहकाराभ्यां परस्य यरो द्वे वा स्तः।

हिन्दी अर्थ- अच् से परे जो रेफ या हकार उससे परे यर् को विकल्प से द्वित्व होता हैं । **यथा-** गौर्य्यौ।

वार्तिक- न समासे- समास में अच् परे होने पर पदान्त इक् को ह्रस्व नहीं होता हैं । **यथा-** वाप्यश्वः ।

वाप्यश्वः- वापी + अश्वः यहां पर **इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च** से ह्रस्व प्राप्त था परन्तु **(न समासे)** इस वार्तिक ने ह्रस्व का निषेध कर दिया तब इको यणचि से यण् होकर वाप्यश्वः रुप बना ।

सूत्रम्- ऋत्यकः । 6/1/128

वृत्तिः- ऋति परे पदान्ता अकः प्राग्वद्वा।

हिन्दी अर्थ- ऋत् अर्थात् ह्रस्व ऋकार परे होने पर पदान्त अक् को विकल्प से ह्रस्व हो जाता है। **उदाहरण यथा-** ब्रह्म ऋषिः, ब्रह्मर्षिः। पदान्ताः किम् ? आर्छत्॥

ब्रह्म ऋषिः - ब्रह्मा + ऋषिः यहां ऋत्यकः इस सूत्रसे ब्रह्मा के आकार को अकार हुआ और फ़िर- ह्रस्वविधीति- ह्रस्व विधान करने के सामर्थ्य से स्वर सन्धि नहीं होती।
ब्रह्मर्षिः- ब्रह्मा + ऋषिः यहां पर आदगुणः से अर् गुण होकर ब्रह्मर्षिः यह रुप बनता है ।

॥इत्यच्सन्धिः॥

॥अथ हल् सन्धिः॥

सूत्रम्- स्तोः श्चुना श्चुः। 8/4/40

वृत्तिः- सकारतवर्गयोः शकारचवर्गाभ्यां योगे शकारचवर्गौ स्तः। रामश्शेते। रामश्चिनोति सच्चित्। शार्ङ्गिञ्जयः ।

हिन्दी अर्थ- सकार और तवर्ग का शकार और चवर्ग के साथ योग हो तो सकार को शकार और तवर्ग का चवर्ग आदेश हो जाता है। **यथासख्यमनुदेशः समानाम्** सूत्रसे त् को च्, थ को छ, द को ज, ध् को झ तथा न् को ञ् आदेश होता है ।

रामश्शेते- रामस्+शेते = रामश्शेते ।
रामश्चिनोति- रामस् + चिनोति = रामश्चिनोति ।
सच्चित्- सत् + चित् = सच्चित् ।
शार्ङ्गिञ्जय- शार्ङ्गिन् + जय= शार्ङ्गिञ्जय ।

सूत्रम्- शात् । 8/4/44

वृत्तिः- शात् परस्य तवर्गस्य श्चुत्वं न स्यात्। विश्नः प्रश्नः ।

हिन्दी अर्थ- शकार से परे तवर्ग के स्थान में श्चुत्व नहीं होता है।

विश्नः- विश्+नः यहाँ शकार और तवर्ग न् का योग है. इसलिए **स्तोः श्चुना श्चुः** से न् को प्राप्त था परन्तु शात् सूत्र से उसका बाध हो गया। इसलिए विश्नः रूप ही रहा। इसी प्रकार प्रश् + नः = प्रश्नः ।

सूत्रम्- ष्टुना ष्टुः । 8/4/41

वृत्तिः- स्तोः ष्टुना यागे ष्टुः स्याद्। रामष्षष्ठः। रामष्टीकते। पेष्टा। तट्टीका। चक्रिण्ढौकसे।

हिन्दी अर्थ- सकार और तवर्ग का यदि षकार और टवर्ग के साथ योग हो तो सकार को षकार और तवर्ग को टवर्ग आदेश हो जाता है।

रामषष्ठः- रामस् + षष्ठः = रामषष्ठः (छठा राम) ।
कते- रामस् + टीकते = रामष्टीकते (राम जाता है)।
पेष् + ता= पेष्टा (पीसने वाला)।
ा- तत् + टीका = तट्टीका (उसकी टीका)।

चक्रिण्ढौकसे- चक्रिन् + ढौकसे = (हे चक्रधारी तुम जाते हो)। इन उदाहरणों में पकार अथवा टवर्ग के योग में सकार को षकार अथवा टवर्ग के योग में सकार को षकार और तवर्ग को टवर्ग आदेश हुआ है। **यथासंख्यमनुदेशः समानाम्** से त् को ट्, थ् को ठ्, द् को ड, ध को ढ् तथा न् को ण् आदेश होता है। सकार और तवर्ग का षकार और टवर्ग से योग होना कहा गया है चाहे वह पूर्व हो या पर हो।

सूत्रम्- न पदान्ताट्टोरनाम् । 8/4/42

वृत्तिः- पदान्ताट्टवर्गात्परस्यानामः स्तो ष्टुर्न स्यात्। षट् सन्तः। षट् ते । पदान्तात् किम् - ईट्टे।

हिन्दी अर्थ- पदान्त टवर्ग से परे सकार और तवर्ग को टवर्ग आदेश नहीं होता है। यह **ष्टुना ष्टुः** सूत्र का अपवाद है।

षट् सन्तः- (छह सन्त)। यहाँ षट् में ट् पद के अन्त में है इसलिए स को ष् आदेश नहीं हुआ है ।

षट् ते- (वे छह) में भी पदान्त ट् से परे त् को ट् आदेश नहीं हुआ है।

पदान्तात् किम् - यदि टवर्ग पदान्त में न हो तो सकार और त वर्ग को षकार और टवर्ग ओदश हो जाता है।

ईट्टे- ईड् +ते यहाँ ईड् धातु के ड् को त परे होने पर **खरि च** सूत्र से ट् आदेश हुआ है। ते प्रत्यय आत्मने पद का लट् लकार प्रथम पुरूष एकवचन का प्रत्यय है। यहाँ ट् पदान्त नहीं है, अपितु पद के मध्य में है, इसलिए त् को ट् आदेश हो जाएगा और रूप बनेगा ईट्टे सूत्र में पदान्त ट वर्ग कहा गया है वनाम परे होने पर इस सूत्र की प्रवत्ति नहीं होती।

वार्तिक- अनाम्नवतिनगरीणामिति वाच्यम्। षण्णाम्। षण्णवतिः। षण्णगर्यः।

हिन्दी अर्थ- नाम, नवति और नगरी को छोड़कर पदान्त टवर्ग से परे त वर्ग को ट वर्ग आदेश नहीं होता है ऐसा कहना चाहिए।

न पदान्ताट्टो.. सूत्र में नाम पद को छोड़कर कहा गया है वार्तिककार ने नवति और नगरी शब्द को नाम के साथ सम्मिलित किया है।

वार्तिक- प्रत्यये भाषायां नित्यम् ।

यथा- षण्णाम्- षड्+ नाम् यहाँ **प्रत्यये भाषायां नित्यम्** इस वार्तिक से ड् को ण् आदेश हुआ और स्थिति हुई षण् + नाम। यद्यपि ण् पदान्त टवर्ग है तो भी नाम के न को ण् प्राप्त हो जाता है क्योंकि सूत्र की प्रवृति नाम शब्द को छोड़कर बताई गई है अत: रूप बना षण्णाम्।

षण्णवतिः = षड् +नवतिः = षण्णवतिः ।

षण्णगर्यः = षड् + नगर्यः यहाँ षड् के ड् को **"यरोऽनुनासिके नुनासिको वा"** से विकल्प से ण् हुआ है ण् से परे नवतिः और नगरी के न को टवर्ग ण् आदेश हुआ है ड् को ण् जब नहीं होगा तो रूप बनेगा षड्नवति, षड्नगर्यः ।

सूत्रम्- तो षि: । 8/4/43

वृत्तिः- न ष्टुत्वम्। सन् षष्ठः।

हिन्दी अर्थ- खकार परे रहते तवर्ग को टवर्ग आदेश नहीं होता है यह ष्टुना ष्टुः का अपवाद है।

उदाहरण यथा- सन् + षष्ठः = सन्षष्ठः ष्टुना ष्टुः से न् को ण् प्राप्त था परन्तु प्रकृत सूत्र से उसका निषेध हो गया।

सूत्रम्- झलां जशोन्ते । 8/2/39

वृत्तिः- पदान्ते झला जशः स्युः। वागीशः।

हिन्दी अर्थ- पद के अन्त में झलों को जश् आदेश हो जाता है ।

उदाहरणं यथा- **वागीशः-** वाक् + ईशः । यहाँ वाक् में क् झल् है और पदान्त में भी है इसलिए इसको जशत्व होकर ग् बना और वागीश रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा । 8/4/45

वृत्तिः- यरः पदान्तस्यानुनासिके परे अनुनासिको वा स्यात् । एतन्मुरारिः, एतद्मुरारिः।

हिन्दी अर्थ- पदान्त यर् से परे यदि अनुनासिक हो तो यर् को विकल्प से अनुनासिक हो जाता है।

उदाहरणं यथा- **एतन्मुरारिः-** एतद् + मुरारिः यहाँ द् यर् प्रत्याहार का वर्ण है और पदान्त में है । उससे परे अनुनासिक म् है। इसलिए द् को **स्थानेन्तरतमः** की सहायता से प्रकृत सूत्र द्वारा उसी वर्ण का अनुनासिक न् आदेश हुआ है विकल्प पक्ष में **एतद्मुरारिः** रूप बनेगा।

वार्तिक- प्रत्यये भाषायां नित्यम्। तन्मात्रम्, चिन्मयम्

हिन्दी अर्थ- यदि अनुनासिक प्रत्यय के आदि में हो तो लौकिक भाषा में यर् को नित्य अनुनासिक होता है । **उदाहरण यथा-**

तन्मात्रम्- तद् + मात्रम् यहाँ मात्र प्रत्यय परे होने पर द् को नित्यन् होगा और रूप बनेगा तन्मात्रम्। मात्रच् प्रत्यय **तदस्य परिमाणम्** अर्थमें हुआ है।
चिन्मयम्- चित्+मयम् यहाँ मयट् प्रत्यय है। अतः त् को नित्य अनुनासिक न् होकर चिन्मयम् रूप बनेगा । यहाँ **तत्प्रकृतवचने मयट्** से मयट् प्रत्यय हुआ है।

सूत्रम्- तोर्लि । 8/4/60

वृत्तिः- तोः लकारे परे परसवर्णः। तल्लयः। विद्वाँल्लिखति । नस्यानुनासिको लः।

हिन्दी अर्थ- लकार परे होने पर तवर्ग को परसवर्ण हो जाता है।

उदाहरण यथा- **तल्लयः-** तद्+लयः यहाँ द् को लकार परे होने पर परसवर्ण ल् आदेश हुआ है। **विद्वाँल्लिखति-** विद्वान् + लिखति यहां पर **तोर्लि** सूत्र से नकार को अनुनासिक ल् आदेश होता है।

सूत्रम्- उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य । 8/4/41

वृत्तिः- उदः परयोः स्थास्तम्भोः पूर्वसवर्णः।

हिन्दी अर्थ- उद् उपसर्ग से परे यदि स्था और स्तम्भ धातु हों तो स्था और स्तम्भ धातुओं के स्थान पर पूर्वसवर्ण आदेश हो जाता है।

सूत्रम्- तस्मादित्युत्तरस्य । 1/1/67

वृत्तिः- पंचमीनिर्देशेन क्रियमाणं कार्य वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य परस्य ज्ञेयम्।

हिन्दी अर्थ- जब पंचमी विभक्ति द्वारा कोई कार्य निर्दिष्ट हो तो वह कार्य पंचम्यन्त पद द्वारा बोधित शब्द से बाद वाले वर्ण को होता है।

सूत्रम्- आदेः परस्य । 1/1/54

वृत्तिः- परस्य यद् विहितं तत् तस्यादेर्बोध्यम्। इति सस्य थः ।

हिन्दी अर्थ- जो कार्य बाद वाले शब्द को बताया गया है वह कार्य उस शब्द के आदि वर्ण पर होता है ।

सूत्रम्- झरो झरि सवर्णे । 8/4/65

वृत्तिः- हलः परस्य झरो वा लोपः सवर्णे झरि।

हिन्दी अर्थ- हल् से परे झर् हो और उससे परे सवर्ण झर् हो तो पूर्व झर् का विकल्प से लोप हो जाता है।

सूत्रम्- खरि च । 8/4/55

वृत्तिः- खरि झलां चरः स्युः। **उत्थानम्** और **उत्तम्भनम्** ।

हिन्दी अर्थ- खर् परे होने पर झलों को चर् आदेश हो जाता है।

सूत्रम्- झयो होन्यतरस्याम् । 8/4/62

वृत्तिः- झयः परस्य हस्य वा पूर्वसवर्णः। नादस्य घोषस्य संवारस्य महाप्राणस्य हस्य तादृशो वर्गचतुर्थो- वाग्धरिः, वाग्हरिः।

हिन्दी अर्थ- झय् से परे हकार को विकल्प से पूर्वसवर्ण आदेश हो जाता है। **यथा- वाग्धरिः, वाग्हरिः ।**

सूत्रम्- शश्छोटि । 8/4/63

वृत्तिः- झयः परस्य शस्य छो वाटि।

हिन्दी अर्थ- झय् से परे शकार हो और उससे परे अट् हो तो शकार को विकल्प से छकार आदेश हो जाता है ।

यथा- तच्छिवः- तद् + शिवः । यहाँ द् को **स्तोः श्चुनाश्चुः** से चवर्ग ज्‌आदेश हुआ और ज् को **खरि च** सूत्र से च्। च् झय् प्रत्याहार का वर्णहै उससे परे शकार है और शकार से परे इ अट् है। इसलिए प्रकृत सूत्रसे श् को छ् आदेश हुआ और रूप बना **तच्छिवः** । छकार के अभावपक्ष में **तच्शिवः** रूप ही बनेगा।

सूत्रम्- मोनुस्वारः । 8/3/23

वृत्तिः- मान्तस्य पदस्यानुस्वारो हलि। हरिं वन्दे ।

हिन्दी अर्थ- जो पद मकारान्त है उसको हल् पर होने पर अनुस्वार आदेश हो। **अलोन्त्यस्य** परिभाषा के अनुसार म् को अनुस्वार होगा न कि सम्पूर्ण पद को ।

यथा- हरिं वन्दे- हरिम् + वन्दे। यहाँ म् हरिम् पद के अन्त में है इसलिए इसे अनुस्वार आदेश हुआ और रूप बना हरिं वन्दे।

सूत्रम्- नश्चापदान्तस्य झलि । 8/3/24

वृत्तिः- नस्य मस्य चापदान्तस्य झल्यनुस्वारः। यशांसि, आक्रंस्यते । **झलि किम् ?** मन्यते।

हिन्दी अर्थ- अपदान्त नकार और मकार को अनुस्वार आदेश हो जाता है जब उससे परे झल् हो पूर्व सूत्र में पदान्त म् को अनुस्वार आदेश बताया गया है ।

यथा- यशांसि- यशान्+सि यहाँ न पद के मध्य में है और परे सकार झल् हैं, इसलिए अनुस्वार आदेश हुआ है।

सूत्रम्- अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः । 8/4/58

वृत्तिः- स्पष्टम् । शान्तः।

हिन्दी अर्थ- यय् परे होने पर अनुस्वार को परसवर्ण आदेश हो जाता है।

यथा- शान्तः- शाम्+तः यहाँ में म् को पहले **नश्चापदान्तस्य झलि** सूत्र से अनुस्वार आदेश हुआ और स्थिति हुई शां + तः । अनुस्वार से परे त है जो यय् प्रत्याहार का वर्ण है । इसलिए प्रकृत सूत्र से अनुस्वार को परसवर्ण ओदश प्राप्त हुआ। अर्थात् तवर्ग आदेश हुआ **स्थानेन्तरतमः** से न् आदेश प्राप्त हुआ। इसलिए रूप बना शान्तः।

सूत्रम्- वा पदान्तस्य । 8/4/59

वृत्तिः- त्वङ्‌ करोषि, त्वं करोषि।

हिन्दी अर्थ- पद के अन्त में अनुस्वार को यय् परे होने पर विकल्प से परसवर्ण आदेश होता है।

त्वङ्‌ करोषि, त्वं करोषि - त्वम् + करोपि यहाँ म् को अनुस्वार हुआ और स्थिति हुई त्वं + करोषि। अनुस्वार पद के अन्त में है इसलिए विकल्प से परसवर्ण हुआ। इसलिए रूप बना **त्वङ्‌ करोषि** विकल्प पक्ष में अनुस्वार ही रहेगा और स्थिति होगी **त्वं करोषि** ।

सूत्रम्- मो राजि समः क्वौ । 8/3/25

वृत्तिः- क्विबन्ते राजतौ परे समो मस्य म एव स्यात् । सम्राट्।

हिन्दी अर्थ- क्विप् प्रत्ययान्त राज् धातु परे होने पर सम् के म् को म् ही रहता है।

यथा- सम्राट्- सम्+राज्+क्विप्, क्विप् का सर्वापहारी लोप होता है। सम+राज्। राज् के ज् को **व्रश्चभ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः** सूत्र से ष हुआ और ष को **झलां जशोन्ते** सूत्र से ड् हुआ और **वाऽवसाने** से चर्त्व होकर ट् बना इस प्रकार स्थिति वनी सम् + राट् इस सूत्र से म् को अनुस्वार न होकर म् ही रहा और रूप बना सम्राट्।

सूत्रम्- हे मपरे वा । 8/3/26

वृत्तिः- मपरे हकारे परे मस्य मो वा। किम्ह्मलयति, किं ह्मलयति।

हिन्दी अर्थ- म् से परे ह् हो और ह् से पर म् हो तो ह् से पूर्व म् को विकल्प से म् ही रहता है । **यथा- किम् ह्मलयति, किं ह्मलयति** ।

वार्तिक- यवलपरे यवला वा ।

हिन्दी अर्थ- म् से परे ह् हो और उससे परे य्, व्, ल् हों तो म् को विकल्प से क्रम से मकार, वकार और लकार हो जाते हैं। **यथा**- किंय्ह्यः, किं ह्यः। किं व्ह्वलयति, किं ह्वलयति। किंल् ह्लादयति, किं ह्लादयति ।

सूत्रम्- नपरे नः । 8/3/27

वृत्तिः- नपरे हकारे मस्य नो वा। किन् ह्नुते, किं ह्नुते।

हिन्दी अर्थ- नकार परक हकार परे होने पर म् को विकल्प से न् आदेश होता है । **उदाहरण यथा**- किन् ह्नुते, किं ह्नुते।

सूत्रम्- आद्यन्तौ टकितौ । 1/1/46

वृत्तिः- टित्कितौ यस्योक्तौ, तस्य, क्रमादाद्यन्तावयवौ स्तः ।

हिन्दी अर्थ- जिस शब्द को टित् आगम बताया गया हो वह आगम उस शब्द के आदि में होता है और कित् आगम उस शब्द के अन्त में होता है।

सूत्रम्- ङ्णोः कुक् टुक् शरि । 8/3/28

वृत्तिः- वा स्तः

हिन्दी अर्थ- ङकार और णकार से परे यदि शर् हो तो ङकार को कुक् का और णकार को टुक् का आगम होता है। कुक् और टुक् के अन्तिम क् की **हलन्त्यम्** से इत् संज्ञा होती है और उकार की **उपदेशेऽजनुनासिक इत्** से इत्संज्ञा होती है। केवल क् और ट् शेष बचते हैं कुक् और टुक् कित् हैं अतः ये आगम शब्द के अन्त में होंगे।

वार्तिक- द्वितीयाः शरि पौष्करसादेरिति वाच्यम् ।

प्राङ्ख् षष्ठः, प्राङ्ख्षष्ठः, प्राङ्षष्ठः । सुगण्ठ् षष्ठः, सुगण्ट् षष्ठः, सुगण्षष्ठः ।

हिन्दी अर्थ- पौष्करसादि आचार्य के मत में चय् (अर्थात् वर्ग के प्रथम वर्ण) को द्वितीय वर्ण आदेश हो जाता है शर् परे होने पर। **यथा- प्राङ्ख् षष्ठः आदि ।**

सूत्रम्- ड्ः सि धुट् । 8/3/29

वृत्तिः- डात्परस्य सस्य धुड् वा। षट् त् सन्तः, षट् सन्तः।

हिन्दी अर्थ- ड से परे स् को धुट् का आगम विकल्प से होता है। **यथा-** षट् त् सन्तः, षट् सन्तः ।

सूत्रम्- नश्च । 8/3/30

वृत्तिः- नान्तात् परस्य सस्य धुड्वा। सन् त् सः। सन्सः ।

हिन्दी अर्थ- नकारान्त पद से परे यदि स् हो तो स् को धुट् का आगम विकल्प से होता है।

सूत्रम्- शि तुक् । 8/3/31

वृत्तिः- पदान्तस्य नस्य शे परे तुग् वा। ।

हिन्दी अर्थ- पदान्त नकार से श् परे होने पर नकार को विकल्प से तुक् का आगम होता है।

सूत्रम्- ङमो ह्रस्वादचि ङमुण् नित्यम् । 8/3/32

वृत्तिः- ह्रस्वात्परो यो ङम्, तदन्तं यत्पदं, तस्मात् परस्याचो ङमुट्। प्रत्यङ्ङात्मा सुगण्णीशः । सन्नच्युतः।

हिन्दी अर्थ- ह्रस्व से परे ङम् हो, उस ङमन्त पद से परे अच् को ङमुट् आगम हो जाता है ।

सूत्रम्- समः सुटि- समे रुः सुटि । 8/3/5

हिन्दी अर्थ- सम् के म् को रु आदेश हो, सुट् परे होने पर रु के उकार की इत्संज्ञा होती है केवल र् शेष रहता है। सुट् आगम है जिसके उट् की इत्संज्ञा होती है।

सूत्रम्- अत्रानुनासिकः पूर्वस्य तु वा । 8/3/2

वृत्तिः- अत्र रुप्रकरणे रोः पूर्वस्यानुनासिको वा ।

हिन्दी अर्थ- इस रु के प्रकरण में रु से पूर्व वर्ण को विकल्प से अनुनासिक होता है ।

सूत्रम्- अनुनासिकात्परोनुस्वारः । 8/3/4

वृत्तिः- अनुनासिकं विहाय रोः पूर्वस्मात्परोनुस्वारागमः ।

हिन्दी अर्थ- जब अनुनासिक न हो तो रु से पूर्व वाले वर्ण को अनुस्वारागम होता है।

सूत्रम्- खरवसानयोर्विसर्जनीयः । 8/3/15

वृत्तिः- खरि अवसाने च पदान्तस्य रेफस्य विसर्गः।

हिन्दी अर्थ- खर् परे होने पर और अवसान में पदान्त रेफ को विसर्ग आदेश हो।

वार्तिक- संपुंकानां सो वक्तव्यः- सँस्स्कर्ता, संस्स्कर्ता ।

हिन्दी अर्थ- सम्, पुम् और कान् शब्दों के विसर्ग को स् कहना चाहिए। इस वार्तिक के अनुसार सम् के विसर्ग को स् होने पर रूप बनेंगे। **उदाहरण यथा- सँस्स्कर्ता, संस्स्कर्ता ।**

सूत्रम्- पुमः खय्यम्परे । 8/3/6

वृत्तिः- अम्परे खयि पुमो रुः। पुँस्कोकिलः, पुंस्कोकिलः।

हिन्दी अर्थ- पुम् से परे यदि खय् हो और उससे परे अम् हो तो पुम् के म को रु आदेश हो । **यथा- पुँस्कोकिलः, पुंस्कोकिलः ।**

सूत्रम्- नश्छव्यप्रशान् । 8/3/7

वृत्तिः- अम्परे छवि नान्तस्य पदस्य रुः ।

हिन्दी अर्थ- नकारान्त पद से अम् परक छव् परे हो तो नकारान्त पद के न् को रु आदेश होता है, प्रशान् शब्द को छोड़कर । **यथा- चक्रिंस्त्रायस्व।**

सूत्रम्- विसर्जनीयस्य सः । 8/3/34

वृत्तिः- खरि। चक्रिंस्त्रायस्व। अप्रशान् किमं प्रशान्तनोति। पदस्येस्येति किम्? हन्ति।

हिन्दी अर्थ- खर् परे होने पर विसर्ग के स्थान पर स् आदेश हो जाता है।

चक्रिंस्त्रायस्व- चक्रिः+त्रायस्व त्रा में त् खर् है अतः खर् परे होने पर विसर्ग के स्थान पर स् आदेश हो जाता है। **अप्रशान् किम् प्रशान्तनोति-** प्रशान् शब्द को रु आदेश नहीं होता, अतः रूप बनेगा- **प्रशान्तनोति।** **पदस्येस्येति किम्?-** यदि न् पदान्त न हो तो भी न् को रु आदेश नहीं होगा। **हन्ति-** हन् + ति-हन्ति । यहाँ न् पदान्त नहीं है।

सूत्रम्- नॄन् पे । 8/3/10

वृत्तिः- नॄन् इत्यस्य रुवा पे।

हिन्दी अर्थ- नॄन् पद के न् को विकल्प से रु आदेश होता है जब पकार परे हो तो । **उदाहरण यथा- नॄन् पाहि ।**

सूत्रम्- कुप्वोः : क : पौ च । 8/3/37

वृत्तिः- कवर्गे पवर्गे च विसर्गस्य : क : पौ स्तः। चाद्विसर्गः।

हिन्दी अर्थ- कवर्ग और पवर्ग होने पर विसर्गों को क्रमशः जिह्वामूलीय और उपध्मानीय हो जाते हैं तथा विकल्प से विसर्ग भी रहते हैं।

सूत्रम्- तस्य परमाम्रेडितम् । 8/3/12

वृत्तिः- द्विरुक्तस्य परमाम्रेडितं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जब किसी शब्द को दो बार कहा जाए तो बाद वाले शब्द की आम्रेडितसंज्ञा होती है जैसे कान् कान्। यहाँ बाद वाले कान् की आम्रेडितसंज्ञा है।

सूत्रम्- कानाम्रेडिते । 8/3/12

वृत्तिः- कान्नकारस्य रुः स्यादाम्रेडिते। काँस्कान् , कांस्कान्।

हिन्दी अर्थ- कान् शब्द के नकार को रु आदेश होता है आम्रेडित के परे होने पर । **यथा- काँस्कान् , कांस्कान् ।**

सूत्रम्- छे च । 6/1/73

वृत्तिः- ह्रस्वस्य छे तुक्। शिवच्छाया ।

हिन्दी अर्थ- छकार परे होने पर ह्रस्व को तुक् का आगम होता है ।

यथा- शिवच्छाया- शिव + छाया = शिव + त् + छाया त् को **स्तोः श्चुनाश्चुः** से चवर्ग च् होकर रूप बना शिवच्छाया।

सूत्रम्- पदान्ताद्वा । 6/1/79

वृत्तिः- दीर्घात्पदान्ताच्छे तुग्वा। लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया।

हिन्दी अर्थ- छकार परे होने पर पदान्त दीर्घ को विकल्प से तुक् का आगम होता है । **यथा- लक्ष्मीच्छाया, लक्ष्मीछाया**

॥अथ विसर्गसन्धिः॥

सूत्रम्- विसर्जनीयस्य सः। 8/3/34

वृत्तिः- खरि।

हिन्दी अर्थ- खर् परे होने पर विसर्जनीय के स्थान पर सकार आदेश होता है ।

यथा- **"विष्णुस्त्राता"-** विष्णुः + त्राता यहां पर **विसर्जनीयस्य सः** से विसर्ग को सकार होकर उक्त रुप बनता है। विष्णु स् + त्राता= विष्णुस्त्राता ।

सूत्रम्- वा शरि । 8/3/36

वृत्तिः- शरि विसर्गस्य विसर्गो वा।

हिन्दी अर्थ- शर् परे होने पर विसर्ग के स्थान पर विकल्प से विसर्ग आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** हरिः शेते, हरिश्शेते ।

सूत्रम्- ससजुषो रुः। 8/2/66

वृत्तिः- पदान्तस्य सस्य सजुषश्च रुः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- पदान्त सकार और सजुष् शब्द के षकार को रु आदेश होता है।

सूत्रम्- अतो रोरप्लुतादप्लुतादप्लुतः । 6/1/113

वृत्तिः- अप्लुतादतः परस्य रोरुः स्यादप्लुतेऽति।

हिन्दी अर्थ- अप्लुत अत् से परे रु को उ आदेश होता है अप्लुत अत् परे हो तो । **यथा- शिवोऽर्च्यः ।**

शिवोऽर्च्यः- शिवोऽर्च्यः- शिवस् + अर्च्यः यहां पर शिवस् के स् को **ससजुषो रुः** से रू हुआ फ़िर- शिव रु + अर्च्यः **अतो रोरप्लुतादप्लुतादप्लुते** इसने रु को उ आदेश किया- **शिव् (अ उ)+अर्च्यः, अ+उ को आदगुणः** से ओ गुण एकादेश हुआ- शिव् (ओ)+अर्च्यः फ़िर **एङः पदान्तादति** से पूर्वरुप होकर उक्त रुप बनता है । शिवो+र्च्यः=शिवोऽर्च्यः

सूत्रम्- हशि च । 6/1/114

वृत्तिः- तथा।

हिन्दी अर्थ- अप्लुत् अत् से परे रु को उ आदेश होता है हश् परे होने पर । **यथा-** शिवो वन्द्यः। यह भी शिवोऽर्च्यः के समान ही बनता है ।

सूत्रम्- भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि । 8/3/17

वृत्तिः- एतत्पूर्वस्य रोर्यादेशोऽशि।

हिन्दी अर्थ- अश् परे होने पर भो, भगो, अघो तथा अवर्ण पूर्व वाले के स्थान पर यकार आदेश होता है।

यथा- देवायिह, देवा इह- यहां पर अश् परे होने पर **भो भगो अघो अपूर्वस्य योऽशि** इस सूत्र से यकार आदेश होता है ।

सूत्रम्- हलि सर्वेषाम् । 8/3/22

वृत्तिः- भोभगोअघोअपूर्वस्य यस्य लोपः स्याद्धलि।

हिन्दी अर्थ- हल् परे होने पर भो, भगो,अघो अपूर्व यकार का लोप हो जाता है। **यथा-** भो देवाः। भगो नमस्ते। अघो याहि॥

सूत्रम्- रोऽसुपि । 8/2/69

वृत्तिः- अह्नो रेफादेशो न तु सुपि।

हिन्दी अर्थ- अहन् शब्द के अन्तिम नकार के स्थान पर रेफ़ादेश होता है परन्तु सुप् परे होतो नहीं होता । **यथा-** अहरहः। अहर्गणः।

सूत्रम्- रो रि । 8/3/14

वृत्तिः- रेफस्य रेफे परे लोपः॥

हिन्दी अर्थ- रकार से परे रकार का लोप होता है।

सूत्रम्- ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः । 6/3/111

वृत्तिः- ढरेफयोर्लोपनिमित्तयोः पूर्वस्याणो दीर्घः।

हिन्दी अर्थ- ढकार और रेफ के लोप में निमित्तभूत जो ढकार और रेफ़ उनके परे होने पर पूर्व अण् के स्थान पर दीर्घ हो जाता है।

यथा- पुना रमते। हरी रम्यः। शम्भू राजते। **अणः किम् ?** तृढः।वृढः। मनस् रथ इत्यत्र रुत्वे कृते हशि चेत्युत्वे रोरीति लोपे च प्राप्ते ।

सूत्रम्- विप्रतिषेधे परं कार्यम् । 1/4/2

वृत्तिः- तुल्यबलविरोधे परं कार्यं स्यात्। इति लोपे प्राप्ते। पूर्वत्रासिद्धमिति रोरीत्यस्यासिद्धत्वादुत्वमेव।

हिन्दी अर्थ- तुल्य बल वालों का विरोध होने पर परकार्य होता है। **यथा-** मनोरथः ।

सूत्रम्- एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि । 6/1/132

वृत्तिः- अककारयोरेतत्तदोर्यः सुस्तस्य लोपो हलि न तु नञ्समासे।

हिन्दी अर्थ- ककार रहित एतद् और तद् शब्द के सु का हल् परे होने पर लोप हो जाता है, परन्तु नञ् समास में नहीं होता ।

यथा- एष विष्णुः। स शम्भुः। **अकोः किम् ?** एषको रुद्रः। **अनञ्समासे किम् ?** असः शिवः। **हलि किम् ?** एषोऽत्र ।

सूत्रम्- सोऽचि लोपे चेत्पादपूरणम् । 6/1/134

वृत्तिः- स इत्यस्य सोर्लोपः स्यादचि पादश्चेल्लोपे सत्येव पूर्य्येत।

हिन्दी अर्थ- यदि केवल लोप होने से ही पाद पद पुरा होता हो तो अच् परे होने पर तद् शब्द के सु का लोप हो जाता है। **यथा-** सेमामविड्ढि प्रभृतिम् । **सैष दाशरथी रामः ।**

॥इति विसर्गसन्धिः॥

॥अथ षड्लिङ्गेषु अजन्तपुंलिङ्गाः॥

सूत्रम्- अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् । 1/2/45

वृत्तिः- धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वा अर्थवच्छब्दस्वरूपं प्रातिपदिकसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- धातु, प्रत्यय और प्रत्ययान्त को छोडकर अर्थवत्शब्दस्वरूप की प्रातिपदिक संज्ञा होती हे ।

सूत्रम्- कृत्तद्धितसमासाश्च । 1/2/46

वृत्तिः- कृत्तद्धितान्तौ समासाश्च तथा स्युः।

हिन्दी अर्थ- कृदन्त तद्धितान्त और समास की प्रातिपदिक संज्ञा होती है।

सूत्रम्-स्वौजसमौट्छष्टाभ्याम्भिस्ङेभ्याम्भ्यस्ङसिभ्याम्भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप्। 4/1/2

प्रथमा विभक्ति	सु	औ	जस्
द्वितीया विभक्ति	अम्	औट्	शस्
तृतीया विभक्ति	टा	भ्याम्	भिस्
चतुर्थी विभक्ति	ङे	भ्याम्	भ्यस्
पंचमी विभक्ति	ङसि	भ्याम्	भ्यस्
षष्ठी विभक्ति	ङस्	ओस्	आम्
सप्तमी विभक्ति	ङि	ओस्	सुप्

सूत्रम्- ङ्याप्प्रातिपदिकात् । 4/1/1

सूत्रम्- प्रत्ययः । 3/1/1

सूत्रम्- परश्च । 3/1/2

वृत्तिः- इत्यधिकृत्य। ङ्यन्तादाबन्तात्प्रातिपदिकाच्च परे स्वादयः प्रत्ययाः स्युः॥

हिन्दी अर्थ- ङ्यन्त, आबन्त, और प्रातिपदिक से परे स्वादि प्रत्यय होते हैं ।

सूत्रम्- सुपः । 1/4/103

वृत्तिः- सुपस्त्रीणि त्रीणि वचनान्येकश एकवचनद्विवचनबहुवचनसंज्ञानि स्युः॥

हिन्दी अर्थ- सुप का प्रत्येक त्रिक एकवचन द्विवचन बहुवचन संज्ञक हो।

सूत्रम्- द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने। 1/4/22

वृत्तिः- द्वित्वैकत्वयोरेते स्तः ।

हिन्दी अर्थ- द्वित्व और एकत्व की विविक्षा में क्रमशः द्विवचनप्रत्यय और एकवचनप्रत्यय होते हैं।

सूत्रम्- विरामोऽवसानम् । 1/4/110

वृत्तिः- वर्णानामभावोऽवसानसंज्ञः स्यात्। रुत्वविसर्गौ।

हिन्दी अर्थ- वर्णों के अभाव की अवसान संज्ञ होती है । **यथा-** रामः।

सूत्रम्- सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ । 1/2/64

वृत्तिः- एकविभक्तौ यानि सरूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते॥

हिन्दी अर्थ- एकविभक्ति अर्थात् समानविभक्ति के परे जितने शब्द समान रुप वालें दिखे उनमें से एक ही शेष रहता हैं अन्य का लोप हो जाता हैं ।

सूत्रम्- प्रथमयोः पूर्वसवर्णः । 6/1/102

वृत्तिः- अकः प्रथमाद्वितीययोरचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः स्यात्। इति प्राप्ते॥

हिन्दी अर्थ- अक् से प्रथमा और द्वितीया का अच् परे होने पर पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेश होता है ।

सूत्रम्- नादिचि । 6/1/104

वृत्तिः- आदिचि न पूर्वसवर्णदीर्घः। वृद्धिरेचि।

हिन्दी अर्थ- अवर्ण से इच् प्रत्याहार परे होने पर पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेश नही होता । **यथा-** रामौ ।

सूत्रम्- बहुषु बहुवचनम् । 1/4/21

वृत्तिः- बहुत्वविवक्षायां बहुवचनं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- बहुत्व अर्थात् दो संख्या से अधिक की विवक्षा होने पर बहुवचन होता है ।

सूत्रम्- चुटू । 1/3/7

वृत्तिः- प्रत्ययाद्यौ चुटू इतौ स्तः॥

हिन्दी अर्थ- प्रत्यय के आदि में चवर्ग और टवर्ग की इत् संज्ञा होती है।

सूत्रम्- विभक्तिश्च । 1/4/104

वृत्तिः- सुप्तिङौ विभक्तिसंज्ञौ स्तः॥

हिन्दी अर्थ- सुप् और तिङ की विभक्ति संज्ञा होती है।

सूत्रम्- न विभक्तौ तुस्माः । 1/3/4

वृत्तिः- विभक्तिस्थास्तवर्गसमा नेतः। इति सस्य नेत्त्वम्।

हिन्दी अर्थ- विभक्ति में स्थित तवर्ग सकार और मकार की इत् संज्ञा नही होती । **यथा-** रामाः ।

सूत्रम्- एकवचनं सम्बुद्धिः। 1/2/49

वृत्तिः- सम्बोधने प्रथमाया एकवचनं सम्बुद्धिसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- सम्बोधन में प्रथमा का एकवचन सम्बुद्धि संज्ञक होता है।

सूत्रम्- यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादि प्रत्ययेऽङ्गं । 1/4/13

वृत्तिः- यः प्रत्ययो यस्मात् क्रियते तदादिशब्दस्वरूपं तस्मिन्नङ्गं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- जिस प्रत्यय का जिस शब्द से विधान किया जाता है वह है आदि मे जिसके ऐसा शब्दस्वरूप उस शब्द के परे रहते अङ्ग संज्ञक होता है ।

सूत्रम्- एङ्ह्रस्वात्सम्बुद्धेः। 6/1/69

वृत्तिः- एङन्ताद्ध्रस्वान्ताच्चाङ्गाद्धल्लुप्यते सम्बुद्धेश्चेत्।

हिन्दी अर्थ- एङन्त अङ्ग, ह्रस्वान्त अङ्ग से परे सम्बुद्धि के हल् का लोप होता है । **यथा-** हे राम। हे रामौ। हे रामाः।

सूत्रम्- अमि पूर्वः । 6/1/107

वृत्तिः- अकोऽम्यचि पूर्वरूपमेकादेशः।

हिन्दी अर्थ- यदि अक् से अम् सम्बन्धि अच् परे हो तो पूर्व और पर के स्थान में पूर्वरूप एकादेश हो जाता है । **यथा-** रामम्। रामौ॥

सूत्रम्- लशक्वतद्धिते । 1/3/8

वृत्तिः- तद्धितवर्जप्रत्ययाद्या लशकवर्गा इतः स्युः ।

हिन्दी अर्थ- तद्धित को छोडकर प्रत्यय के आदि में लकार, शकार और कवर्ग की इत् संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- तस्माच्छसो नः पुंसि । 6/1/103

वृत्तिः- पूर्वसवर्णदीर्घात्परो यः शसः सस्तस्य नः स्यात्पुंसि॥

हिन्दी अर्थ- पूर्वसवर्णदीर्घ से परे जो शस् का स् है उसको पुंलिंग मे नकार हो जाता है ।

सूत्रम्- अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि । 8/4/2

वृत्तिः- अट् कवर्गः पवर्गः आङ् नुम् एतैर्व्यस्तैर्यथासंभवं मिलितैश्च व्यवधाने ऽपि रषाभ्यां परस्य नस्य णः समानपदे। इति प्राप्ते॥

हिन्दी अर्थ- अट् प्रत्याहार कवर्ग पवर्ग आङ् और नुम् इनका अलग

अलग या यथासंभव दो तीन या चारों का एक साथ-व्यवधान होने पर भी समानपद मे रकार और षकार से परे नकार को णकार होता है ।

सूत्रम्- पदान्तस्य । 8/4/37

वृत्तिः- नस्य णो न।

हिन्दी अर्थ- पदान्त नकार को णकार नही होता है। **यथा-** रामान्।

सूत्रम्- टाङसिङसामिनात्स्याः। 7/1/12

वृत्तिः- अदन्ताट्टादीनामिनादयः स्युः। णत्वम्।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अंग से परे टा को इन्, ङसि को आत् और ङस् को स्य आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** रामेण ।

सूत्रम्- सुपि च । 7/3/102

वृत्तिः- यञादौ सुपि अतोऽङ्गस्य दीर्घः।

हिन्दी अर्थ- यञादि सुप् परे होने पर अदन्त अङ्ग को दीर्घ होता है। **यथा-** रामाभ्याम्॥

सूत्रम्- अतो भिस ऐस् । 7/1/9

वृत्तिः- अकारान्तादङ्गाद्भिस ऐस् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अंग से परे भिस को ऐस् हो जाता है । **यथा-** रामैः।

सूत्रम्- ङेर्यः । 7/1/13

वृत्तिः- अतोऽङ्गात्परस्य ङेर्यादेशः॥

हिन्दी अर्थ- अदन्त अंग से परे ङे को य आदेश हो जाता है ।

सूत्रम्- स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ । 1/1/56

वृत्तिः- आदेशः स्थानिवत्स्यान्न तु स्थान्यलाश्रयविधौ। इति स्थानिवत्त्वात् सुपि चेति दीर्घः।

हिन्दी अर्थ- आदेश स्थानी के समान होता है परन्तु स्थानी अल् के आश्रित् यदि कार्य करना हो तो नहीं होता है । **यथा-** रामाय। रामाभ्याम्।

सूत्रम्- बहुवचने झल्येत् । 7/3/103

वृत्तिः- झलादौ बहुवचने सुप्यतोऽङ्गस्यैकारः। रामेभ्यः। सुपि किम् ? पचध्वम्।

हिन्दी अर्थ- झलादि बहुवचन सुप् परे होने पर अदन्त अंग को एकार आदेश होता है ।

सूत्रम्- वाऽवसाने । 8/4/56

वृत्तिः- अवसाने झलां चरो वा।

हिन्दी अर्थ- अवसान में झलों के स्थान में विकल्प से चर आदेश होता है । **यथा-** रामात्,रामाद्। रामाभ्याम्। रामेभ्यः। रामस्य।

सूत्रम्- ओसि च । 7/3/104

वृत्तिः- अतोऽङ्गस्यैकारः।

हिन्दी अर्थ- ओस् परे होने पर अदन्त अंग को एकार आदेश होता है। **यथा-** रामयोः ।

सूत्रम्- ह्रस्वनद्यापो नुट् । 7/1/54

वृत्तिः- ह्रस्वान्तान्नद्यन्तादाबन्ताच्चाङ्गात्परस्यामो नुडागमः॥

हिन्दी अर्थ- ह्रस्वान्त, नद्यन्त और आबन्त अंग से परे आम् को नुटागम होता है ।

सूत्रम्- नामि । 6/4/3

वृत्तिः- अजन्ताङ्गस्य दीर्घः।

हिन्दी अर्थ- नाम् परे होने अजन्त अंग को दीर्घ हो जाता है ।

यथा- रामाणाम्। रामे। रामयोः। सुपि - एत्त्वे कृते॥

सूत्रम्- आदेशप्रत्यययोः । 8/3/59

वृत्तिः- इण्कुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशस्य प्रत्ययावयवस्य यः सस्तस्य मूर्धन्यादेशः। ईषद्विवृतस्य सस्य तादृश एव षः।

हिन्दी अर्थ- इण् और कवर्ग से परे अपदान्त जो आदेशरुप सकार अथवा प्रत्यय के अवयव जो सकार उसके स्थान पर मूर्धन्यादेश होता है । **यथा-** रामेषु। एवं कृष्णादयोऽप्यदन्ताः ।

(अकारान्त पुंल्लिङ्ग राम शब्द)

राम शब्द की सिद्धिप्रक्रिया-

रामः- राम शब्द की **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्** अथवा **कृत्तद्धितसमासाश्च** से प्रातिपदिक संज्ञा होगी । जब राम शब्द किसी के नाम आदि के लिए रूढ अर्थ में प्रयुक्त हो तो **अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदकिम्** से प्रातिपदिक संज्ञा होगी। जब राम शब्द रमु क्रीडायाम् धातु मे कृत् प्रत्यय लगाकर बनेगा तो इसकी **कृत्तद्धितसमासाश्च** सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होगी ।

राम + सु	(ड्याप्प्रातिपदिकात्,प्रत्ययः, परश्च इन तीन अधिकार सूत्रों से सु आदि की उत्पत्ति होगी। तब **द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने** सूत्र से एक की विवक्षा में प्रथमा एक वचन का प्रत्यय सु लगा)
राम + स्	**उपदेशेऽजनुनासिक इत्** से उकार की इत्संज्ञा हुई और **तस्य लोपः** से उसका लोप हुआ)
राम + र्	**ससजुषो रुः** से स् को रुत्व हुआ और उकार की इत्संज्ञा और लोप हुआ ।
रामः	**विरामोवसानम्** से र् की अवसान संज्ञा हुई और **खरवसानयोर्विसर्जनीयः** से र् को विसर्ग हुआ ।

सूत्रम्- नादिचि

वृत्तिः- आदिचि न पूर्वसवर्णदीर्घः। वृद्धिरेचि रामौ।

व्याख्याः अवर्ण से परे यदि इच् हो तो पूर्वसवर्णदीर्घ नहीं होता हैं । राम + औ में अवर्ण से परे औ प्रत्यय है जो इच् प्रत्याहार का वर्ण है। अतः पूर्वसूत्र से प्राप्त पूर्वसवर्णदीर्घ का निषेध होगा पूर्वसवर्णदीर्घ का निषेध होने पर पुनः **वृद्धिरेचि** सूत्र की प्रवक्ति होगी और रामौ रूप बनेगा। रामौ शब्द की सिद्धि प्रक्रिया इस प्रकार होगी-

राम + राम + औ	**(अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपादिकम्** अथवा व्युत्पत्तिपरक अर्थ में **कृतद्धितसमासाश्च** सूत्र से राम की प्रातिपदिक संज्ञा हुई। **ङ्यापप्रातिपदिकात्, प्रत्ययः, परश्च** इन तीन सूत्रों के अधिकार में सु आदि प्रत्ययों की प्राप्ति हुई। **द्व्येकयोर्द्विवचनैकवचने** सूत्र से दो की विवक्षा में प्रथमा द्विवचन का प्रत्यय औ प्राप्त हुआ)
राम + औ राम'	**(सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ** सूत्र से एक शेष रहा।) यहाँ वृद्धिरेचि सूत्रसे वृद्धि प्राप्त हुई परन्तु उसको बाधकर **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश प्राप्त हुआ। परन्तु नादिचि सूत्र से इसका बाध हो गया)
रामौ	(पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेश का बाध होने पर पुनः वृद्धिरेचि सूत्र की प्रवत्ति हुई और यह रूप सिद्ध हुआ)।

इसी प्रकार कुछ विशेष सूत्रों के माध्यम से राम के अन्य रुपों की भी सिद्धि होती है जो सूत्र ऊपर बता दिये गये है ।

(अकारान्त पुंल्लिङ्ग सर्व शब्द)

सूत्रम्- सर्वादीनि सर्वनामानि । 1/1/27

वृत्तिः- सर्व, विश्व, उभ, उभय, डतर, डतम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम, सिम। त्यद, तद, यद, एतद, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद, अस्मद, भवतु, किम्।

हिन्दी अर्थ- सर्व, विश्व, उभ, उभयादि सर्वादिगण पठित शब्दों की सर्वनाम संज्ञा होती है ।

सर्वः- सर्वः में कुछ विशेष कार्य नही होता इसकी सिद्धि रामः के समान ही होती है ।

सूत्रम्- जसः शी । 7/1/17

वृत्तिः- अदन्तात्सर्वनाम्नो जसः शी स्यात्। अनेकाल्त्वात्सर्वादेशः।

हिन्दी अर्थ- अदन्त सर्वनाम से परे जस के स्थान पर शी आदेश होता है । **यथा-** सर्वे । शी आदेश अनेकाल् है. अतः सम्पूर्ण जस् के स्थान पर होगा अन्तिम के स्थान पर नहीं । इसलिए सर्व + शी शकार की इत्संज्ञा तथा तस्य लोपः से उसका लोप होने पर सर्व + ई यह स्थिति रही । आदगुणः से गुण होकर सर्वे रूप बना।

सर्वे की सिद्धि-

सर्व + जस्	(अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदकिम् से प्रातिपदिक संज्ञा । ङ्याप्रातिपदिकात्, प्रत्ययः, परश्च इन सूत्रोंके अधिकार में सु आदि प्रत्ययों की उत्पत्ति।वहुषु बहुवचनम् से प्रथमा एकवचन का प्रत्यय जस् आया) ।
सर्व + शी	(**सर्वादीनि सर्वनामानि** से सर्व की सर्वनामसंज्ञा। **जसः शी** से जस् के स्थान पर शी आदेश अनेकाल् शित् सर्वस् से सर्वादेश)
सर्व + ई	(लशक्वतद्धिते से शकार की इत्संज्ञा और तस्य लोपः से उसका लोप)
सर्वे	(आदगुणः से गुण एकादेश)

इस प्रकार सर्वे रूप सिद्ध हुआ । द्वितीया और तृतीया के रूप राम के समान होंगे ।

सूत्रम्- सर्वनाम्नः स्मै । 7/1/14

वृत्तिः- अतः सर्वनाम्नो ङेः स्मै।

हिन्दी अर्थ- अदन्त सर्वनाम से परे चतुर्थी एकवचन के प्रत्यय ङे के स्थान पर स्मै आदेश हो। जैसे- सर्व + ङे **सर्व + स्मै सर्वस्मै।** चतुर्थी के द्विवचन और बहुवचन में राम के समान ही रूप होंगे ।

सूत्रम्- ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ । 7/1/15

वृत्तिः- अतः सर्वनाम्न एतयोरेतौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- अदन्त सर्वनाम से परे ङसि और ङि के स्थान पर क्रमशः स्मात् और स्मिन् आदेश हो जाते हैं ।

सर्वस्मात्- पंचमी का एकवचन का रूप **सर्वस्मात्** होगा। पंचमी के द्विवचन और बहुवचन में राम के समान सर्वाभ्याम् और सर्वेभ्यः रूप बनेंगे । षष्ठी के एकवचन और द्विवचन में राम के समान सर्वस्य और सर्वयोः रूप बनेंगे । षष्ठी के बहुवचन में रूप में अन्तर होगा।

सूत्रम्- आमि सर्वनाम्नः सुट् । 7/1/52

वृत्तिः- अवर्णान्तात्परस्य सर्वनाम्नो विहितस्यामः सुडागमः। एत्वषत्वे।
हिन्दी अर्थ- अवर्णान्त सर्वनाम संज्ञक से परे आम् प्रत्यय को सुट् का आगम हो जाता है । अवर्णान्त चाहे मूल सर्वनाम शब्द हो अथवा किसी विकार द्वारा उसे अवर्णान्त बनाया गया हो, सभी से परे आम् को सुट का आगम होता है सुट् का उट् इत्संज्ञक है। केवल स् शेष बचता है।
उदाहरणं यथा- सर्वेषाम्। सर्वस्मिन्। शेषं रामवत्। एवं विश्वादयो ऽप्यदन्ताः॥

सर्वेषाम्- सर्व + आम् में प्रकृत सूत्रसे सुट् का आगम होने पर स्थिति बनती है। **सर्व + साम्।** बहुवचने झल्येत् से सर्व के अकार को एकार आदेश होगा इस प्रकार स्थिति होगी **सर्वे + साम् । आदेश प्रत्यययोः** से स को ष आदेश होकर रूप बनेगा सर्वेषाम्।
सर्वस्मिन्- सप्तमी के एक वचन में **ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ** से ङि के स्थान पर स्मिन् आदेश होकर रूप बनेगा सर्वस्मिन्।
सर्वयोः,सर्वेषु- सप्तमी के द्विवचन और बहुवचन में राम के समान सर्वयोः और सर्वेषु रूप बनेंगे।

(आकारान्त पुंलिङ्ग विश्वपा शब्द)

विश्वपाः- विश्वपा में कुछ विशेष कार्य नही होता इसमें सु प्रत्यय को विसर्ग होकर रुप की सिद्धि होती है ।

सूत्रम्- दीर्घाज्जसि च । 6/1/105
वृत्तिः- दीर्घाज्जसि इचि च परे पूर्वसवर्णदीर्घो न स्यात्।
हिन्दी अर्थ- दीर्घ से जस् और इच् प्रत्याहार परे होने पर पूर्वसवर्णदीर्घ नही होता है । यथा- विश्वपौ। विश्वपाः। हे विश्वपाः। विश्वपाम्। विश्वपौ।

सूत्रम्- सुडनपुंसकस्य । 1/1/43
वृत्तिः- स्वादिपञ्चवचनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरक्लीबस्य॥
हिन्दी अर्थ- नपुंसक लिंग को छोडकर सु आदि पांच प्रत्ययों की सर्वनामस्थानसंज्ञा होती है ।

सूत्रम्- स्वादिष्वसर्वनामस्थाने । 1/4/17
वृत्तिः- कप्प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्वं पदं स्यात्॥
हिन्दी अर्थ- सर्वनामस्थान संज्ञक प्रत्ययों को छोड़कर सु से लेकर कप् प्रत्यय तक परे रहने पर पूर्व की पद संज्ञा होती है ।
जैसे- **विश्वपा + शस्** में शस् परे होने पर विश्वपा की पद संज्ञा प्राप्त होती है।

सूत्रम्- यचि भम् । 1/4/18
वृत्तिः- यादिष्वजादिषु च कप्प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्वं भसंज्ञं स्यात् ।
हिन्दी अर्थ- सर्वनामस्थानसंज्ञक प्रत्ययों को छोडकर सु से लेकर कप प्रत्यय पर्यन्त यकारादि और अकारादि प्रत्ययों के परे होने पर पूर्वशब्दस्वरूप भसंज्ञक होता है ।

सूत्रम्- आकडारादेका संज्ञा । 1/4/1
वृत्तिः- इत ऊर्ध्वं कडाराः कर्मधारय इत्यतः प्रागेकस्यैकैव संज्ञा ज्ञेया। या परानवकाशा च॥
हिन्दी अर्थ- इस सूत्रसे लेकर कडारा कर्मधारये (2-2-38) तक जो संज्ञाएँ गिनाई गई हैं वो एक शब्द की एक ही संज्ञा होती है।

सूत्रम्- आतो धातोः । 6/4/140
वृत्तिः- आकारान्तो यो धातुस्तदन्तस्य भस्याङ्गस्य लोपः। अलो ऽन्त्यस्य।
हिन्दी अर्थ- आकारान्त धातु जिसके अन्त में हो ऐसे भसंज्ञक अङ्ग का लोप होता है । **उदाहरणं यथा-** विश्वपः। विश्वपा। विश्वपाभ्यामित्यादि। एवं शङ्खध्मादयः। धातोः किम् ? हाहान् । हरिः। हरी ।

विश्वपः- विश्वपा + अस् में विश्वपा भसंज्ञक है और इसके अन्त मेंआकारन्त धातु पा है, अतः पा के आकार का लोप होगा । इस प्रकार स्थिति बनेगी विश्वप् + अस् और रूप बनेगा विश्वपः ।
अन्यअजादि प्रत्यय परे रहते इसी प्रकार आकार का लोप होकर रूप बनेंगे।**जैसे-** विश्वपा + टा = विश्वपा + आ विश्वप् + आ = **विश्वपा।** इसीप्रकार चतुर्थी एकचचन का रूप बनेगा **विश्वपे** । हलादि विभक्ति परे रहने पर विश्वपा की भसंज्ञा नहीं होगी अपितु पद संज्ञा होगी । अतः आ का का लोप नहीं होगा जैसे- **विश्वपा + भ्याम्= विश्वपाभ्याम् ।**

इकारान्त पुंलिङ्ग हरि शब्द)

हरि शब्द (विष्णु)
प्रथमा एकवचन मे हरी शब्द को सु प्रत्यय होगा-

हरिः- हरि + सु। यहाँ उकार की इत्संज्ञा और स को रुत्व विसर्ग होकर हरिः रूप बनेगा।
हरी- प्रथमा द्विवचन में हरि + औ। इस स्थिति में प्रथमयोः पूर्वसवर्णः से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश होकर हरी रूप बनेगा।
हरयः- प्रथमा का बहुवचन जस् परे होने पर हरि + जस्।

सूत्रम्- जसि च । 7/3/109
वृत्तिः- ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः।
हिन्दी अर्थ- जस् परे होने पर ह्रस्वान्त अंग को गुण होता है ।

यथा- हरयः- हरि + अस् यहाँ ज् की इत्संज्ञा होकर अस् शेष रहा। जस् परे रहते हरि के इकार को गुण एकादेश हुआ और स्थिति हुई हरे + अस्। एचोयवायावः से ए को अय् आदेश होकर हरयः रूप बना ।

सूत्रम्- ह्रस्वस्य गुणः । 7/3/108

सम्बुद्धौ।

हिन्दी अर्थ- सम्बुद्धि परे होने पर ह्रस्वान्त अंग को गुण होता है ।

यथा- हे हरे। हरिम्। हरी। हरीन्॥

हे हरे- सम्बोधन के एक वचन में हरि शब्द से हे हरे रूप बनेगा- हरि + सु। **ह्रस्वस्य गुणः** से हरे + सु । **एङ् ह्रस्वात् सम्बुद्धे** से स् का लोप होकर हरे रूप बनेगा।
हरिम्- द्वितीया के एकवचन में हरि + अम् यह स्थिति होगी। अमि पूर्वः से पूर्वरूप एकादेश होकर हरिम् रूप बनेगा।
हरी- द्वितीया के द्विवचन में पूर्ववत् हरी रूप बनेगा।
हरीन्- द्वितीया के बहुवचन में हरि + शस् यह स्थिति होगी। **लशक्वतद्धिते** से शकार की इत्संज्ञा। हरि + अस्। **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** से पूर्वसवर्ण दीर्घ एकादेश हरीस्। **तस्माच्छसो नः पुंसि** से स् को न् और हरीन् रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- शेषो घ्यसखि । 1/4/7

वृत्तिः- शेष इति स्पष्टार्थम्। ह्रस्वौ याविदुतौ तदन्तं सखिवर्जं घिसंज्ञम्॥

हिन्दी अर्थ- जिसकी नदी न हो ऐसे ह्रस्व इकार और उकार तदन्त शब्दों की सखि शब्द को छोडकर घि संज्ञा होती है।

सूत्रम्- आङो नाऽस्त्रियाम् । 7/3/120

वृत्तिः- घेः परस्याङो ना स्यादस्त्रियाम्। आङिति टासंज्ञा।

हिन्दी अर्थ- घि संज्ञक से परे आङ् को ना आदेश होता स्त्रिलिंग को छोडकर। **यथा-** हरिणा। हरिभ्याम्। हरिभिः॥

हरिणा- हरि + टा इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से टा के स्थान पर ना ओदश हुआ और स्थिति हरि + ना। **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि** से न् को ण् होकर हरिणा रूप बना।
हरिभ्याम्, हरिभिः- इसी प्रकार तृतीया द्विवचन में **हरिभ्याम्**, और तृतीया बहुवचन में **हरिभिः** रूप बनेंगे।

सूत्रम्- घेर्ङिति । 7/3/111

वृत्तिः- घिसंज्ञस्य ङिति सुपि गुणः।

हिन्दी अर्थ- ङित् प्रत्यय परे होने पर घिसंज्ञक को गुण आदेश हो जाता है। **अलोन्त्यस्य** से अन्तिम को गुण होगा। ङित् प्रत्यय चार है- ङे, ङसि, ङस् तथा ङि। **यथा-** हरये। हरिभ्याम्। हरिभ्यः । प्रत्यय परे होने पर घिसंज्ञक अ को गुण आदेश हो जाता है। **अलोन्त्यस्य** से अन्तिम को गुण होगा।

हरये- चतुर्थी एकवचन में हरि + ङे यह स्थिति हुई। **लशक्वतद्धिते** से ङ् की इत्संज्ञा और **तस्य लोपः** से उसका लोप। हरि+ ए । यहाँ घिसंज्ञक से परे ङित् प्रत्यय है। इसलिए हरि के इ को प्रकृत सूत्र से गुण होगा और स्थिति होगी हरे + ए । **एचोयवायवः** से अय् आदेश होकर हरये रूप बनेगा।
चतुर्थी के द्विवचन में **हरिभ्याम्** और बहुवचन में **हरिभ्यः** रूप बनेंगे।

सूत्रम्- ङसिङसोश्च । 6/1/110

वृत्तिः- एङो ङसिङसोरति पूर्वरूपमेकादेशः।

हिन्दी अर्थ- एङ् (ए,ओ) से ङसि और ङस् का सकार परे होने पर पूर्वरूप एकादेश होता है । **यथा-** हरेः । हर्योः । हरीणाम् ।

हरेः- पंचमी एकवचन में हरि + ङसि यह स्थिति हुई । ङसि का अस् शेष रहा और स्थिति हुई हरि + अस्। **घेर्ङिति** से हरि के इकार को गुण होने पर स्थिति हुई हरे + अस् । अब यहाँ प्रकृत सूत्रसे पूर्वरूप एकादेश होगा और हरेस् यह स्थिति होगी स् को रुत्व विसर्ग होकर हरेः रूप बनेगा । षष्ठी के एकवचन में भी यही रूप बनेगा।
हर्योः- षष्ठी के द्विवचन में हरि + ओस् यह स्थिति हुई। **इको यणचि** से इ का य् ओदश होकर हर्योस् यह स्थिति हुई। सु को रुत्व विसर्ग होकर हर्योः रूप बना।
हरीणाम्- षष्ठी के बहुवचन में हरि + आम् स्थिति हुई। **ह्रस्वनद्यापोनुट्** से आम् को नुट् का आगम और स्थिति हुई हरि + नाम् । नामि से हरि के इकार को दीर्घ हुआ। हरी + नाम् यह स्थिति हुई। **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि** से न् को ण् हुआ और हरीणाम् रूप बना।

सूत्रम्- अच्च घेः । 7/3/119

वृत्तिः- इदुद्भ्यामुत्तरस्य ङेरौत्घेरच्च। ,

हिन्दी अर्थ- ह्रस्व इकार और उकार से परे ङि को औत् और घि को अत् आदेश होता है । हरौ। हरिषु। एवं कव्यादयः ।

हरौ- सप्तमी एकवचन में हरि + ङि = हरि + इ यह स्थिति हुई। प्रकृत सूत्रसे ङि के इ को औ आदेश होगा और घिसंज्ञक हरि के इकार को अकार आदेश होगा इस प्रकार हर + औ यह स्थिति हुई। वृद्धिरेचि से वृद्धि होकर हरौ रूप बनेगा।
हरिषु- सप्तमी के द्विवचन में हरयोः और बहुवचन में हरिषु रूप बनेंगे।

(इकारान्त पुंलिङ्ग सखि शब्द)

सूत्रम्- अनङ् सौ । 7/1/93

वृत्तिः- सख्युरङ्गस्यानङादेशोऽसम्बुद्धौ सौ॥

हिन्दी अर्थ- सम्बुद्धिभिन्न सु परे होने पर सखि के अङ्ग को अनङ् आदेश हो जाता है। **सखा-** सखि + सु । इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से अनङ् आदेश हुआ और स्थिति हुई सखन् + सु = सखन् + स् ।

सूत्रम्- अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा । 1/1/65

वृत्तिः- अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः॥

हिन्दी अर्थ- अन्त्य अल् से पूर्व वर्ण की उपधासंज्ञा होती है।

सूत्रम्- सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ । 6/4/8

वृत्तिः- नान्तस्योपधाया दीर्घोऽसम्बुद्धौ सर्वनामस्थाने॥

हिन्दी अर्थ- सम्बुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान परे होने पर नान्त की उपधा को दीर्घ होता है । सखन् + स् । यहाँ सखन् स् नकारान्त है और उससे परे सम्बुद्धि भिन्न सु परे है। अतः सखन् की उपधा अ को दीर्घ होगा और स्थिति होगी सखान् + स् ।

सूत्रम्- अपृक्त एकाल् प्रत्ययः । 1/2/41

वृत्तिः- एकाल् प्रत्ययो यः सोऽपृक्तसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- जो प्रत्यय केवल एक अल् के रूप का हो उसकी अपृक्त संज्ञा होती है । सखान् + स् में स् प्रत्यय एक अल् रूप है। अतः स् की अपृक्त संज्ञा है।

सूत्रम्- हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् । 6/1/68

वृत्तिः- हलन्तात्परं दीर्घौ यौ ङ्यापौ तदन्ताच्च परं सुतिसीत्येतदपृक्तं हल् लुप्यते ।

हिन्दी अर्थ- हलन्त से अथवा दीर्घ ङी या आप जिसके अन्त में हो उससे परे सु, ति, सि अपृक्त प्रत्ययों के हल् का लोप होता है ।

सूत्रम्- नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य । 8/2/7

वृत्तिः- प्रातिपदिकसंज्ञकं यत्पदं तदन्तस्य नस्य लोपः।

हिन्दी अर्थ- प्रातिपदिकसंज्ञक जो पद उसके अन्त्य नकार का लोप होता है। अतः प्रकृत सूत्र से नकार का लोप हो जाएगा और सखा रूप सिद्ध होगा। **यथा-** सखा। प्रथमा के द्विवचन में **सखा + औ** यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- सख्युरसंबुद्धौ । 7/1/92

वृत्तिः- सख्युरङ्गात्परं संबुद्धिवर्जं सर्वनामस्थानं णिद्वत्स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- अंग संज्ञक सखि शब्द से परे संबुद्धिभिन्न सर्वनामस्थान प्रत्यय णिद्वत् होता है ।

सूत्रम्- अचो ञ्णिति । 7/2/115

वृत्तिः- अजन्ताङ्गस्य वृद्धिर्ञिति णिति च परे।

हिन्दी अर्थ- ञित् और णित् प्रत्यय परे होने पर अजन्त अंग को वृद्धि होती है । **यथा-** सखायौ। सखायः। हे सखे। सखायम्। सखायौ। सखीन्। सख्या। सख्ये।

सखायौ- सखि + औ । यहां औ सम्बुद्धि भिन्न सर्वनामस्थान संज्ञक प्रत्यय है। अतः **सख्युरसम्बुद्धौ** सूत्र से णिद्वद् हुआ णिद्वद् प्रत्यय परे होने पर प्रकृत सूत्र से सखि के इकार को वृद्धि होगी। अतः स्थिति होगी- सखै + औ। एचोऽयवायावः से ऐ को आय् आदेश होकर सखायौ रूप बनेगा।
सखायः= प्रथमा बहुवचन में सखि + जस् यह स्थिति होगी। जस् के जकार की इत्संज्ञा और लोप होकर स्थिति होगी सखि + जस् । जस् के जकार की इत्संज्ञा और लोप होकर स्थिति होगी सखि + अस्। जस् प्रत्यय सर्वनामास्थान है अतः णिदवद् होगा। **अचो ञ्णिति** से सखि के इकार को ऐ वृद्धि होकर एचोऽयवायावः से आय् होगा स् को रुत्व विसर्ग होकर सखायः रूप बनेगा।
हे सखे- सम्बोधन एकवचन में **ह्रस्वस्य गुणः** से गुण होकर सखे+स् यह स्थिति होगी। **एङ् ह्रस्वात्सम्बुद्धेः** से स् का लोप होकर हे सखे रूप बनेगा।
सखायम्- द्वितीया के एक वचन में स्थिति होगी सखि + अम् । अम् सर्वनामस्थान है। अतः **सख्युरसम्बुद्धौ** से णित्वद् होगा। **अचो ञ्णिति** से सखि के इकार को वृद्धि होकर सखै+अम् यह स्थिति होगी। **एचोऽयवायावः** से आय् होकर सखायम् रूप बनेगा। इसी प्रकार द्वितीया के द्विवचन में **सखायौ** रूप बनेगा।

सखीन्- द्वितीया के बहुवचन में हरीन् के समान सखीन् रूप बनेगा क्योंकि शस् सर्वनामस्थान संज्ञक नहीं है अतः णिद्वद् नहीं होगा ।
सख्या- तृतीया के एक वचन में स्थिति होगी सखि + टा = सखि + आ **इको यणचि** से सखि के इकार को य् आदेश होकर सख्या रूप बनेगा। ध्यान रहे सखि की घि संज्ञा का निषेध है इसलिए यहाँ **आङो नास्त्रियाम्** सूत्र नहीं लगेगा और टा को ना आदेश नहीं होगा जेसा हरिणा में हुआ था।
सखिभ्याम्, सखिभिः- तृतीया के द्विवचन और बहुवचन में हरि के रूपों के समान सखिभ्याम् और सखिभिः रूप बनेंगे।
सख्ये- चतुर्थी के एक वचन में सखि+ङे सखि + ए यह स्थिति होगी। इको यणचि से इ को य् होकर सख्ये रूप बनेगा। द्विवचन और बहुवचन में सखिभ्याम् और सखिभ्यः रूप बनेंगे।
सख्युः- पंचमी के एक वचन में स्थिति होगी- सखि + ङसि = सखि+ अस् । **इको यणचि** से इ को य् आदेश होकर स्थिति होगी सख्य् + अस् । इस स्थिति में अग्रिम सूत्र लगेगा।

सूत्रम्- ख्यत्यात्परस्य । 6/1/112

वृत्तिः- खितिशब्दाभ्यां खीतीशब्दाभ्यां कृतयणादेशाभ्यां परस्य ङसिङसोरत उः।

हिन्दी अर्थ- जिसके स्थान पर यण् किया गया हो ऐसे खिशब्द, तिशब्द अथवा खीशब्द, तीशब्द से परे ङसि और ङस् के अकार को उकार होता है ।

सख्युः- सख्यु + अस् इस स्थिति में खि के इकार का यण् आदेश किया गया है । इससे परे ङसि का अस् परे है। इसलिए अस् के अकार को उकार आदेश हो जाएगा और स्थिति बनेगी- सख्य् + उस् सकार को रुत्व विसर्ग होकर रूप बनेगा सख्युः।
सख्योः- षष्ठी के द्विवचन में सखि + ओस् इस स्थिति में यण् आदेश कर के सख्योः रूप बनेगा । **सखीनाम्-** षष्ठी के बहुवचन में सखि + आम्, इस स्थिति में **ह्रस्वनद्यापो नुट्** से आम् को नुट् आगम और **नामि** से सखि के इकार का दीर्घ करके सखीनाम् रूप बनेगा।

सूत्रम्- औत् । 7/3/118

वृत्तिः- इतः परस्य ङेरौत्।

हिन्दी अर्थ- ह्रस्व इकार और ह्रस्व उकार से परे ङि को औत् हो जाता है । **यथा-** सख्यौ। शेषं हरिवत् ।

सख्यौ- सप्तमी के एकवचन में सखि + ङि, यह स्थिति होने पर प्रकृत सूत्र से ङि को औ आदेश होकर स्थिति हुई। सखि + औ । यण् आदेश होकर सख्यौ रूप बना । सप्तमी के द्विवचन में **सख्योः** और बहुवचन में **सखिषु** रूप बनेंगे।

(इकारान्त पुंल्लिङ्ग त्रि शब्द)

त्रिशब्दो नित्यं बहुवचनान्तः। यथा- त्रयः। त्रीन्। त्रिभिः। त्रिभ्यः।

सूत्रम्- त्रेस्त्रयः । 7/1/53

वृत्तिः- त्रिशब्दस्य त्रयादेशः स्यादामि।

हिन्दी अर्थ- त्रि शब्द को आम् परे होने पर त्रयादेश होता है ।

यथा- त्रयाणाम्। त्रिषु।

(इकारान्त पुंल्लिङ्ग सुधी शब्द)

सूत्रम्- गतिश्च । 1/4/60

वृत्तिः- प्रादयः क्रियायोगे गतिसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- प्रादियों की क्रिया के योग में गतिसंज्ञा होती है ।

वार्तिक- गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेष्यते ।

हिन्दी अर्थ- जिस शब्द का पूर्वपद गतिसंज्ञक या कारक से भिन्न हो उसके स्थान पर **एरनेकाचो....** इस सूत्रसे यण् नहीं होता । **यथा-** शुद्धधियौ ।

सूत्रम्- न भूसुधियोः । 6/4/85

वृत्तिः- एतयोरचि सुपि यण्न।

हिन्दी अर्थ- अजादि शब्द परे रहते भू और सुधी शब्द को यण् नही होता है। **यथा-** सुधियौ। सुधियः इत्यादि ।

(ओकारान्त पुंल्लिङ्ग गोशब्द)

गौः- प्रथमा के एकवचन में गो + स् यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- गोतो णित् । 7/1/90

वृत्तिः ओकाराद्विहितं सर्वनामस्थानं णिद्वत्।

हिन्दी अर्थ- ओकारान्त शब्द से विधान किया हुआ सर्वनामस्थान प्रत्यय णिद्वत् होता है । **यथा- गौः**। गावौ। गावः॥

गौः- गो+स् में स् सर्वनाम स्थान संज्ञक है अतः इसका णिद्वद्भाव हुआ णिद्वत् होने के कारण **अचो ञ्णिति** से गो के ओकार को वृद्धि औकार होगी। अतः गौ+स् यह स्थिति हुई । स् को रूत्व विसर्ग होकर गौः रूप बना।
गावौ- प्रथमा के द्विवचन में गो + औ यह स्थिति हुई। औ को **गोतो णित्** से णिद्वद्भाव हुआ अचो ञ्णिति से गो के ओकार को वृद्धि होकर स्थिति हुई- गौ + औ । **एचोऽयवायावः** से औ को आव् आदेश हुआ और गावौ रूप बना।
गावः- गो + जस् = गो + अस = गौ + अस = गाव् + अस्= गावस् = गावः ।

सूत्रम्- औतोऽम्शसोः । 6/1/93

वृत्तिः- ओतोऽम्शसोरचि आकार एकादेशः।

हिन्दी अर्थ- ओकार से अम् और शस् का अच् परे हो तो पूर्व और पर के स्थान पर आकार आदेश होता है । **यथा-** गाम्। गावौ। गाः। गवा। गवे। गोः। इत्यादि।

गाम्- गो + अम् इस स्थिति में ओतोम्शसोः सूत्र से आकार एकादेश होकर गाम् रूप बना।
गाः- द्वितीया के बहुवचन में गो + शस् = गो + अस् यह स्थिति हुई। **ओतोम्शसोः** सूत्र से आकार एकादेश होकर गास् यह स्थिति हुई। स् को रुत्व विसर्ग होकर गाः रूप बना।
गवा- तृतीया के एकवचन में गो + टा = गो + आ यह स्थिति हुई। **एचोऽयवायावः** सूत्र से ओ को अव् आदेश होकर गवा रूप बना। इसी प्रकार चतुर्थी एकवचन में गवे रूप बनेगा।
गोः- पचमी और षष्ठी के एकवचन में गो+अस् इस स्थिति में

ङसिङसोश्च सूत्र से अकार का पूर्वरूप होकर गोस् यह स्थिति होगी। सु को रुत्व विसर्ग होकर गोः रूप बनेगा।

गवोः- षष्ठी के द्विवचन में अव् आदेश होकर गवोः रूप बनेगा।

गवाम्- षष्ठी के बहुवचन में गो + आम् यह स्थिति होने पर ओ को अव् होकर गवाम् रूप बनेगा ह्रस्व न होने के कारण नुट् का आगम नहीं होगा।

गोषु- हलादि विभक्ति परे होने पर कोई विशेष कार्य नहीं होते सप्तमी के बहुवचन में आदेशप्रत्यययोः से होकर गोषु रूप बनेगा।

सूत्रम्- रायो हलि । 7/2/85

वृत्तिः अस्याकारादेशो हलि विभक्तौ।

हिन्दी अर्थ- हलादि विभक्ति परे होने पर रै शब्द के एकार को आकार आदेश होता है । **यथा**- राः। रायौ। रायः। **ग्लौः**। ग्लावौ। ग्लावः।

॥अथाजन्तस्त्रीलिङ्गाः॥

(आकारान्त स्त्रीलिङ्ग रमा शब्द)

रमा- रमा शब्द का अर्थ लक्ष्मी है। यह टाप् (आप्) प्रत्ययान्त है अतः ङ्याप्रातिपदिकात् से सु आदि प्रत्यय की उत्पत्ति होगी । प्रथमा के एक वचन में रमा + सु = रमा + स्। यह स्थिति हुई। **हल्ड्याभ्यो** दीर्घात्- सुतिस्यपृक्तं हल् से स् का लोप होकर रमा रूप बना।

सूत्रम्- औङ आपः । 7/1/18

वृत्तिः आबन्तादङ्गात्परस्यौङः शी स्यात्। औङित्यौकारविभक्तेः संज्ञा।

हिन्दी अर्थ- आबन्त अंग से परे औङः को शी आदेश होता है । उदाहरणं यथा- रमे। रमाः।

रमे- रमाशब्द से प्रथमा के द्विवचन में 'रमा + औ' इस दशा में आबन्त अङ्ग रमा से पर औङ् 'औ' को 'शि' आदेश हुआ शकार की **'लशक्वतद्धिते'** से इत्संज्ञा और **'तस्य लोपः** से 'शी' में स्थानिवद्भाव से प्रत्ययत्त्व लाकर प्रत्यय के आदि शकार का लोप हुआ। 'रमा+ ई' यहाँ अवर्ण 'आकार' से अच् 'ई' परे होने पर पूर्व और पर दोनों के स्थान में **'आद् गुणः** से गुण 'एकार' एकादेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

रमाः- बहुवचन में 'रमा + अस्' इस दशा में **'अकः सवर्णे दीर्घः'** से दीर्घ होकर सकार को रु और रेफ को विसर्ग हुआ। यद्यपि यहाँ पूर्वसवर्णदीर्घ भी प्राप्त हैं तथापि **'दीर्घाज्जसि च'** से उसका निषेध हो जाता है।

सूत्रम्- सम्बुद्धौ च । 7/3/106

वृत्तिः- आप एकारः स्यात्सम्बुद्धौ। एङ्ह्रस्वादिति संबुद्धिलोपः।

हिन्दी अर्थ- सम्बुद्धि परे होने पर आप को एकार आदेश होता है । **उदाहरणं यथा**- हे रमे। हे रमे। हे रमाः। रमाम्। रमे। रमाः ।

हे रमे- संबोधन एकवचन में 'हे रमा+स्' इस दशा में प्रकृत सूत्र से आबन्त अङ्ग रमा से सम्बुद्धि परे होने के कारण अलोन्त्यपरिभाषा के बल से अन्त्य आकार को एकार हो गया तब 'हे रमें+ स्' इस स्थिति में **एङ्ह्रस्वात्संबुद्धेः** इस सूत्र से सम्बुद्धि के सकार का लोप होने से 'हे रमे' रूप सिद्ध हुआ।

हे रमे, हे रमाः- ये संबोधन के द्विवचन और बहुवचन के रूप हैं प्रथमा के समान ही सिद्ध होंगे।

रमाम्- द्वितीया के एकवचन में 'रमा + अम्' इस अवस्था में **'अमि पूर्वः'** से अम् के अकार का पूर्वरूप होने से रूप बना। द्विवचन और बहुवचन में 'रमे और रमाः रूप प्रथमा के समान ही हैं ।

रमाः- 'रमा + शस्' इस दशा में शकार की इत्संज्ञा और लोप होने पर **'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः'** सूत्र से पूर्व आकार और पर अकार दोनों के स्थान में पूर्व आकार का सवर्ण दीर्घ आकार एकादेश हुआ तब सकार के स्थान में रु और उसके रकार के स्थान में विसर्ग होने पर रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- आङि चापः । 7/3/105

वृत्तिः आङि ओसि चाप एकारः।

हिन्दी अर्थ- आङ और ओस् परे होने आप् को एकार आदेश होता है । **यथा**- रमया। रमाभ्याम्। रमाभिः।

रमया- तृतीया के एकवचन में 'रमा + आ' इस दशा में आङ 'टा' परे रहने से आबन्त अङ्ग 'रमा' के अन्त्य आकार को एकार हुआ। तब **एचोऽयवायावः** सूत्र से एकार को 'अय्' आदेश होकर 'रमया' रूप बना।

रमाभ्याम्- द्विवचन का रूप है कोई विशेष कार्य नहीं होता ।

रमाभिः- बहुवचन। यहाँ अदन्त अङ्ग न होने के कारण 'भिस्' को 'ऐस्' नहीं हुआ।

सूत्रम्- याडापः । 7/3/113

वृत्तिः आपो ङितो याट्। वृद्धिः।

हिन्दी अर्थ- आबन्त से परे ङित वचनों को याट् आगम् होता है । **यथा**- रमायै। रमाभ्याम्। रमाभ्यः। रमायाः। रमयोः। रमाणाम्। रमायाम्। रमासु। एवं दुर्गाम्बिकादयः।

रमायै- चतुर्थी के एकवचन में 'रमा+ए' इस अवस्था में आबन्त अङ्ग 'रमा' से परे ङित् प्रत्यय ङे' को 'याट्' आगम हुआ। तब 'रमा+या+ए' इस दशा में '**वृद्धिरेचि**' से वृद्धि हुई। इस प्रकार रूप बना 'रमायै। द्विवचन- रमाभ्याम्। बहुवचन-रमाभ्यः ।
रमायाः- पचमी और षष्ठी के एकवचन में 'रमा+अस्' इस अवस्था में प्रकृत सूत्र से याट् आगम और सवर्णदीर्घ होकर रूप बना। **द्विवचन-** रमाभ्याम्। **बहुवचन-** रमाभ्यः।
रमयोः- षष्ठी और सप्तमी के द्विवचन में 'रमा+ओस्' इस दशा में **आङि चापः** सूत्र से आकार को एकार और एकार को अय् आदेश तथा सकार को रु और रेफ को विसर्ग होकर उक्त रूप सिद्ध हुआ।
रमाणाम्- षष्ठी के बहुवचन में 'रमा + आम्' इस दशा में आबन्त होने से **ह्रस्वनद्यापो नुट्'** से नुट् आगम तथा **अट्कुप्वाङ्नुम्...'** से नकार को णकार हुआ ।
रमायाम्- सप्तमी के एकवचन में 'रमा + ङि' इस दशा में **ङेराम्नद्याम्नीभ्यः** सूत्र से ङि को आम् आदेश हुआ और उसमें स्थानिवद्भाव से ङित्व लाकर **याडापः** से 'याट्' आगम हुआ और अन्त में सवर्ण दीर्घ हुआ। **बहुवचन-** रमासु।

(आकारान्त स्त्रीलिङ्ग सर्व शब्द)

सूत्रम्- सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च । 7/3/114

वृत्तिः- आबन्तात्सर्वनाम्नो ङितः स्याट् स्यादापश्च ह्रस्वः।

हिन्दी अर्थ- आबन्त सर्वनाम से परे ङित प्रत्ययों को स्याट् का आगम होता है साथ ही आबन्त अंग के आप् को ह्रस्व भी होता है ।

यथा- सर्वस्यै। सर्वस्याः। सर्वासाम्। सर्वस्याम्। शेषं रमावत् एवं विश्वादय आबन्ताः।

सर्वस्यै- 'सर्वा + ङे' इस अवस्था में पूर्व सूत्र से याट् प्राप्त है, उसको बाधकर सर्वनाम होने के कारण इस सूत्र से स्याट् आगम और आकार को ह्रस्व हो गया 'सर्वस्या + ए' इस दशा में वृद्धि होकर 'सर्वस्यै' रूप सिद्ध हुआ।
सर्वस्याः- पंचमी और षष्ठी के एकवचन में सर्वा + अस् यहाँ स्याट् आगम और आकार को ह्रस्व तथा सवर्णदीर्घ, रुत्व विसर्ग हुआ।
सर्वासाम्- षष्ठी के एकवचन में '**आमि सर्वनाम्नः सुट्**' से सुट् आगम होकर रूप सिद्ध हुआ।
सर्वस्याम्- ङि में सर्वा + ङि इस दशा में **ङेराम् नद्याम्नीभ्यः** से ङि को आम् आदेश और प्रकृत सूत्र से स्याट् आगम और आकार को ह्रस्व होकर रूप बना। इस प्रकार अन्य आकारान्त स्त्रीलिङ्ग सर्वनाम शब्दों के रूप बनेंगे। **जैसे-** विश्वा से विश्वस्यै, विश्वस्याः । विश्वस्याम्।

(इकारान्त स्त्रीलिङ्ग मति शब्द)

मतीः। मत्या ।

सूत्रम्- ङिति ह्रस्वश्च । 1/4/6

वृत्तिः- इयङुवङ्स्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीदूतौ, ह्रस्वौ चेवर्णोवर्णौ, स स्त्रियां वा नदीसंज्ञौ स्तो ङिति। मत्यै, मतये, मत्याः, मतेः ।

हिन्दी अर्थ- जो शब्द नित्य स्त्रीलिङ्ग हों, ह्रस्व या दीर्घ इवर्णान्त या उवर्णान्त हों तथा उनमें इयङ् की प्राप्ति हो, उनकी ङित् प्रत्यय परे होने पर विकल्प से नदी संज्ञा होती है परन्तु स्त्री शब्द की नदी संज्ञा नहीं होती। **यथा-**

मत्यै- चतुर्थी के एकवचन में 'मति + ए' इस दशा में ह्रस्व इकारान्त स्त्रीलिङ्ग मति शब्द से परे ङित् प्रत्यय ङे होने से वैकल्पिक नदीसंज्ञा हुई। नदी संज्ञा होने पर **आण्नद्याः** सूत्र से ङित् प्रत्यय ए को आट् आगम और **'आटश्च'** से वृद्धि तथा इकार को यण् होने से रूप सिद्ध हुआ।
मतये- नदी संज्ञा के अभाव पक्ष में घिसंज्ञा होगी और तब **'घेर्ङिति** सूत्र से घिसंज्ञानिमित्तक गुण होने पर एकार को 'अय्' आदेश हुआ।
मत्याः- पंचमी और षष्ठी के एकवचन में 'मति + अस् इस अवस्था में नदी संज्ञा, आट् आगम् वृद्धि, यण्, रुत्व और विसर्ग कार्य होकर उक्त रूप सिद्ध हुआ।
मतेः- नदीसंज्ञा के अभावपक्ष में घिसंज्ञा, गुण और **'ङसिङसोश्च'** से अकार को पूर्वरूप तथा सकार को रुत्व विसर्ग होकर रूप बना।

सूत्रम्- इदुद्भ्याम् । 7/3/117

वृत्तिः- इदुद्भ्यां नदीसंज्ञकाभ्यां परस्य ङेराम्।

हिन्दी अर्थ- नदीसंज्ञक ह्रस्व इकार और उकार से परे ङि को आम् होता है। **यथा-** मत्याम्, मतौ। शेषं हरिवत् ।

मत्याम्- 'मति + ङि' इस दशा में प्रकृत सूत्र से 'ङि' को 'आम्' आदेश होने पर इकार को यण् होकर रूप सिद्ध हुआ।
मतौः- नदी संज्ञा के अभाव में 'घि' संज्ञा होने से 'अच्च घेः' सूत्र से ङि को 'औ' और इकार को अकार आदेश हुआ। तब 'मत+औ' इस दशा में वृद्धि होकर रूप बना। शेष रूप हरि के समान होंगे। द्वितीया के बहुवचन में **मतीः** रूप बनेगा क्योंकि यहाँ शस् के स् को न आदेश नहीं होगा।

(इकारान्त स्त्रीलिङ्ग त्रि शब्द)

सूत्रम्- त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ । 7/2/99

वृत्तिः- स्त्रीलिङ्गयोरेतौ स्तो विभक्तौ॥

हिन्दी अर्थ- विभक्ति परे होने पर स्त्रीलिंग त्रि शब्द को तिसृ और चतुर् शब्द को चतसृ आदेश होता है ।

सूत्रम्- अचि र ऋतः । 7/2/100

वृत्तिः-तिसृ चतसृ एतयोर्ऋकारस्य रेफादेशः स्यादचि। गुणदीर्घोत्वानामपवादः।

हिन्दी अर्थ- अच् परे होने तिसृ और चतसृ शब्दों के ऋकार को रेफ़ आदेश होता है । **यथा-** तिस्रः। तिसृभ्यः। तिसृभ्यः।

सूत्रम्- न तिसृचतसृ । 6/4/4

वृत्तिः एतयोर्नामि दीर्घो न।

हिन्दी अर्थ- नाम परे होने तिसृ और चतसृ शब्दों को दीर्घ नही होता है।

उदाहरणं यथा- तिसृणाम्। तिसृषु ।

॥इत्यजन्तस्त्रीलिङ्गाः॥

॥अथाजन्तनपुंसकलिङ्गाः॥

(अदन्त ज्ञानशब्द)

सूत्रम्- अतोऽम् । 7/1/24

वृत्तिः- अतोऽङ्गात् क्लीबात्स्वमोरम्। अमि पूर्वः।

हिन्दी अर्थ- अदन्त नपुंसक लिंग से परे सु और अम् को अम् आदेश होता है । **यथा- ज्ञानम्** । **एङ्ह्रस्वादिति हल्लोपः**- हे ज्ञान ।

ज्ञानम्- अदन्त ज्ञान शब्द के प्रथमा के एक वचन में 'सु' को 'अम्' आदेश हुआ। तब **'अमि पूर्वः'** से पूर्वरूप होने पर रूप सिद्ध हो गया।
हे ज्ञान- सम्बुद्धि में अम् आदेश और पूर्वरूप होने पर हे ज्ञानम् बन जाने पर एङ्ह्रस्वात् सम्बुद्धि से सम्बुद्धि के हल् मकार का लोप हुआ।

सूत्रम्- नपुंसकाच्च । 7/1/19

वृत्तिः- क्लीबादौङः शी स्यात्। भसंज्ञायाम्॥

हिन्दी अर्थ- नपुंसक अङ्ग से पर औङ् को 'शी' आदेश हो। 'शी' में स्थानिवद्भाव से प्रत्यत्व लाने पर प्रत्यय के आदि शकार का **'लशक्वतद्धिते'** से इत्संज्ञा होकर लोप गया तब 'ज्ञान+ई' यह स्थिति बनी तथा भसंज्ञा संज्ञा होने पर ।

सूत्रम्- यस्येति च । 6/4/148

वृत्तिः- ईकारे तद्धिते च परे भस्येवर्णावर्णयोर्लोपः। इत्यल्लोपे प्राप्ते ।

हिन्दी अर्थ- ईकार या तद्धित के परे होने पर भसंज्ञक इवर्ण और अवर्ण का लोप होता है ।

वार्तिक- औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः। यथा- ज्ञाने।

ज्ञाने- ज्ञान+ई' इस दशा में **औङः श्यां प्रतिषेधो वाच्यः** इस वार्तिक से अकार लोप का निषेध होने पर गुण एकादेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- जश्शसोः शिः । 7/1/20

वृत्तिः- क्लीबादनयोः शिः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- नपुंसकलिंग से परे जश् और शस् को शि आदेश होता है।

सूत्रम्- शि सर्वनामस्थानम् । 1/1/42

वृत्तिः- शि इत्येतदुक्तसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- शि सर्वनामस्थान संज्ञक होता है । 'ज्ञान+इ' यहाँ 'शि' की सर्वनामस्थान संज्ञा हुई।

सूत्रम्- नपुंसकस्य झलचः । 7/1/72

वृत्तिः- झलन्तस्याजन्तस्य च क्लीबस्य नुम् स्यात् सर्वनामस्थाने॥

हिन्दी अर्थ- झलन्त और अजन्त नपुंसकलिङ्ग अङ्ग को 'नुम्' आगम हो सर्वनामस्थान परे रहते ।

सूत्रम्- मिदचोऽन्त्यात्परः। 1/1/47

वृत्तिः- अचां मध्ये योऽन्त्यस्तस्मात्परस्तस्यैवान्तावयवो मित्स्यात्। उपधादीर्घः।

हिन्दी अर्थ- समुदाय के अचों में जो अन्त्य अच् है उससे परे मित् का आगम होता है । परन्तु वह आगम उस समुदाय का अन्त्यावयव माना जाता है । **यथा-** ज्ञानानि। पुनस्तद्वत्। शेषं पुंवत् ।

'ज्ञानानि- नपुंसकलिङ्ग अङ्ग ज्ञान से पर 'जस्' और 'शस्' को 'शि' आदेश हुआ, शि का शकार इत्संज्ञक है तब 'ज्ञान+ई यह स्थिति बनी।

(इकारान्त वारिशब्द)

सूत्रम्- स्वमोर्नपुंसकात्। 7/1/23

वृत्तिः- लुक् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- नपुंसकलिंग से परे सु और अम् का लुक् होता है । **उदाहरणं यथा-** वारि ।

वारि- वारि (जल) शब्द से पर 'सु' और 'अम्' का लोप हो जाने से वारि यही रूप सिद्ध होगा।

सूत्रम्- इकोऽचि विभक्तौ। 7/1/73

वृत्तिः- इगन्तस्य क्लीबस्य नुमचि विभक्तौ।

हिन्दी अर्थ- अजादि विभक्ति परे होने पर इगन्त नपुंसक को नुम् का आगम होता है ।

उदाहरणं यथा- वारिणी। वारीणि। न लुमतेत्यस्यानित्यत्वात्पक्षे संबुद्धिनिमित्तो गुणः। हे वारे, हे वारि।

वारिणी- वारि शब्द के प्रथमा और द्वितीया के द्विवचन में वारि+औ यह स्थिति हुई। इस दशा में औ को शी आदेश हुआ तव अजादि विभक्ति 'ई' परे रहते अङ्ग वारि को नुम् आगम हुआ। यह अन्त्य अच् इकार के आगे हुआ वारिन+ई ऐसी स्थिति हो जाने पर **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेपि** सूत्र से णत्व वारिणी रूप सिद्ध हो गया।
वारीणि- प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन में जस् और शस् को **जश्शसो शि'** सूत्र से शि हुआ और उसकी **शिसर्वनामस्थानम्** से सर्वनामस्थान संज्ञा होने पर अङ्ग को नुम् आगम हुआ। वारिन्+इ इस दशा में सर्वनामस्थान परे होने से **'सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ'** सूत्र से नान्त उपधादीर्घ और **अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेपि** सूत्र से णत्व होकर रूप सिद्ध हुआ।
हे वारे, हे वारि- संबोधन **न लुमताङ्गस्य** सूत्र के अनित्य होने से सम्बुद्धिनिमित गुण होगा। इसलिये हे वारे, हे वारि ये दो रूप में वनेंगे।
वारिणा- वारि+टा **आङो नास्त्रियाम्** से 'टा' को ना आदेश और **'अट्कुप्वाङ्नुम्व्यवायेपि** सूत्र से नकार को णकार होने से वारिणा रूप सिद्ध हुआ।

घेर्ङिति इति- चतुर्थी के एकवचन में वारि+ए इस अवस्था में **घेर्ङिति** से गुण प्राप्त होने पर अग्रिम की प्रवृत्ति होती है।

वार्तिक- वृद्धयौत्त्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन ।

हिन्दी अर्थ- वृद्धि, औत्व, तृज्वद्भाव और गुण इनके साथ विप्रतिपेध होने पर पूर्व भी नुम् प्रवृत्त हो जाता है । **यथा-** वारिणे। वारिणः। वारिणोः। **नुमचिरेति नुट्।** वारीणाम्। वारिणि। हलादौ हरिवत्॥

॥इत्यजन्तनपुंसकलिङ्गाः॥

॥अथ हलन्तपुल्लिङ्गप्रकरणम्॥

(हकारान्त लह्-शब्द)

सूत्रम्- हो ढः । 8/2/31

वृत्तिः- हस्य ढः स्याद् झलि पदान्ते च। लिट्, लिड्। लिहौ। लिहः लिड्भ्याम् **लिटत्सु, लिड्सु ।**

हिन्दी अर्थ- हकार को ढकार होता है झल परे रहते और पदान्त में। लिह (चाटनेवाला)

लिट्, लिड्- प्रथमा के एकवचन में लिह्+स् इस अवस्था में **हल्ङ्याभ्यो दीर्घात्...-** से सुप् के सकार का लोप होता है। तदनन्तर पदान्त होने से हकार को प्रकृत सूत्र से ढकार हुआ। ढकार **झलां जशोऽन्ते** से डकार और अवसान डकार को **वाऽवसाने** से टकार विकल्प से हुआ अतः लिट्, लिड् दो रूप बने।
लिहौ- प्रथमा और द्वितीया के द्विवचन का रूप है हकार औ से मिल जाता है। विशेष कोई कार्य नहीं करता।
लिहः- प्रथमा के बहुवचन में लिह्+अस् इस दशा में केवल इतना कार्य होता है कि सकार को रु और रेफ को विसर्ग। शस्, ङसि और ङस् में भी यही रूप बनता है।
लिड्भ्याम्- यह रूप तृतीया, चतुर्थी, और पंचमी के द्विवचन में भ्याम् में सिद्ध होता हैं लिह्+भ्याम् इस दशा में झल् मकार परे होने से **"हो ढः"** से हकार को ढकार और **झलां जशोऽन्ते** सूत्र से ढ को डकार हुआ।

लिटत्सु, लिड्सु- सप्तमी के बहुवचन में लिह् सु इस दशा में हकार को ढकार और ढ़कार को डकार होने पर लिड्+सु इस दशा में **डः सि धुट्** से घुट् आगम और **खरि च** सूत्र से धकार को चर् तकार और उसके परे रहते पूर्व डकार को टकार हुआ। तब **लिटत्सु** रूप बना। घुट् के अभाव पक्ष में डकार के स्थान में चर् टकार **खरि च** सूत्र से होकर लिड्सु रूप बना।

(हकारान्त विश्ववाह्-शब्द)

विश्ववाट्, विश्ववाड् । विश्वहौ। विश्ववाहः। विश्ववाहम्। विश्ववाहौ।

विश्ववाट्,ड् - "विश्वं वहति इति विश्ववाह्"- (संसार को चलानेवाला ईश्वर)- विश्ववाह् शब्द से प्रथमा के एक वचन में विश्ववाह्+स् इस स्थिति में **हो ढः** से हकार के स्थान में ढकार आदेश होने पर **झलां जशोन्ते** से ढकार के स्थान गें डकार आदेश हुआ। तब **वाऽवसाने** से डकार को विकल्प से टकार चर् आदेश होकर दो रूप सिद्ध हुए।
विश्ववाहौ- आदि रूपों में कोई विशेष कार्य नहीं होता ।

सूत्रम्- इग्यणः संप्रसारणम् । 1/1/45

वृत्तिः- यणः स्थाने प्रयुज्मानो य इक् स संप्रसारणसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- यण के स्थान में प्रयुज्मान जो इक् वह संप्रसारणसंज्ञक हो। **जैसे- वाह ऊठ्** सूत्र से विश्ववाह् में वाह् के यण् वकार के स्थान में ऊकार इक् प्रयुक्त होता है, उसकी संप्रसारण संज्ञा होती है।

सूत्रम्- वाह ऊठ् 6/4/132

वृत्तिः- भस्य वाहः संप्रसारणम् ऊठ्।

हिन्दी अर्थ- वाह शब्दान्त भसंज्ञक अङ्ग के अवयव वाह शब्द की संप्रसारण-संज्ञक ऊठ् आदेश हो।

सूत्रम्- संप्रसारणाच्च । 6/1/108

वृत्तिः- संप्रासारणादचि पूर्वरूपमेकादेशः। वृद्धिः- विश्वौहः- इत्यादि।

हिन्दी अर्थ- संप्रसारण से अच् परे रहते पूर्वरूप एकादेश हो।

विश्वौहः- विश्व+ऊ+आह्+अस् यहां संप्रसारण ऊ से अच् आकार परे है पूर्व ऊकार को पूर्वरूप एकादेश होता है। तब विश्व+ऊ+ह्+अस् ऐसी स्थिति बनी। यहां **एत्येधत्यूठ्सु** सूत्र से ऊठ् परे होने के कारण अकार और ऊकार की वृद्धि औकार हुई। तब विश्वौहस् बना अन्त में सकार को रु और रकार को विसर्ग होने से विश्वौहः रूप बना।

आगे अजादि विभक्तियों में भ संज्ञा होने से **विश्वौहः** के समान संप्रसारण आदि कार्य होकर रूप बनेंगे। हलादि विभक्तियों में हकार को ढकार और ढकार को जश्त्व डकार होकर रूप बनेंगे। सप्तमी के बहुवचन सुप् में ड्ः सि धुट् से वैकल्पिक धुट् आगम भी होगा।

तृतीया-	विश्वौहा,	विश्ववाड्भ्याम्,	विश्वाड्भिः ।
चतुर्थी-	विश्वौहे,	विश्ववाड्भ्याम्,	विश्ववाड्भ्यः ।
षष्ठी-	विश्वौहे,	विश्ववाड्भ्याम्,	विश्ववाड्भ्यः ।
सप्तमी-	विश्वौहि,	विश्ववाड्भ्याम्,	विश्ववाड्सु, विश्वाड्सु

(रकारान्त चतुर् शब्द)

(चार) शब्द नित्य बहुवचनान्त है इसलिये इसके रूप केवल बहुवचन में ही बनेंगे। **चत्वारः । चतुरः। चतुर्भिः । चतुर्भ्यः।**

सूत्रम्- चतुरनडुहो राम उदात्तः। 7/1/98

वृत्तिः- अनयोराम् स्यात् सर्वनामस्थाने परे।

हिन्दी अर्थ- चतुर् और अनडुह् शब्द को आम् आगम हो सर्वनामस्थान परे रहते। आम् का मकार इत्संज्ञक है। अतएव मित होने से आम् **मिदचोऽन्त्यात्परः** परिभाषा से अन्त्य अच् के आगे होगा और उसी समुदाय का अवयव बनेगा।

चत्वारः- जस् में चतुर्+अस् इस स्थिति में सर्वनामस्थान में जस् परे होने से चतुर् शब्द को **चतुरनडुहोरामुदात्तः** अन्त्य अच् तकारोत्तरवर्ती उकार के आगे आम् आगम हुआ तब **"चतु आ र् अस्"** ऐसी स्थिति बन जाने पर उकार को यण वकार करने से और सकार को रुत्व विसर्ग होने से रूप सिद्ध हुआ।

चतुरः- यह शस् का रूप है। इस में सकार को रुत्व और विसर्ग के अतिरिक्त कुछ विशेष कार्य नहीं होता तथा औट् तक ही सर्वनामस्थान संज्ञा होने से शस् के सर्वनामस्थान संज्ञा के अभाव के कारण यहां उ आगम नहीं हुआ।

चतुर्भिः- भिस् का रूप है। इसमें भी सकार को रुत्व विसर्ग के अतिरिक्त कुछ कार्य विशेष नहीं होता।

चतुर्भ्यः- चतुर्थी और पंचमी के बहुवचन का रूप है ।

सूत्रम्- षटचतुर्भ्यश्च । 7/1/55

वृत्तिः- एभ्य आमोनुडागमः।

हिन्दी अर्थ- षट् संज्ञक और चतुर् शब्द से परे आम् को नुट् आगम हो।

सूत्रम्- रषाभ्यां नो णः समानपदे । 8/4/1

वृत्तिः- अचोरहाभ्यां द्वे- चतुर्ण्णाम्, चतुर्णाम्।

हिन्दी अर्थ- रेफ और षकार से परे नकार को णकार हो एक पद में।

चतुर्ण्णाम्-चतुर्णाम्- चतुर् शब्द के षष्ठी के बहुवचन में चतुर् + आम् इस दशा में नुट् आगम हुआ। तब चतुर्+नाम् ऐसी स्थिति बनी। चतुर् नाम् यहां एक पद में होने के कारण रकार से परे नकार को णकार हुआ तो **चतुर्+ णाम्** बना। तकारोत्तरवर्ती उकार से पर रेफ है, उससे पर यर् जकार को द्वित्व विकल्प से हुआ द्वित्व पक्ष में **चतुर्ण्णाम्** और अभाव पक्ष में **चतुर्णाम्** रूप बने।

सूत्रम्- रोः सुपि । 8/3/16

वृत्तिः- रोरेव विसर्गः सुपि। षत्वम्। षस्य द्वित्वे प्राप्ते।

हिन्दी अर्थ- सप्तमी के बहुवचन सुप् परे रहते रु के ही रेफ के विसर्ग होते हैं, अन्य रेफ के नहीं। **षत्वमिति-** तब इण् रकार से सकार को, **आदेश प्रत्यययोः** सूत्र से मूर्धन्य षकार हुआ।

षस्येति- इसके अनन्तर चतुर्षु ऐसी स्थिति बन जाने पर **अचो रहाभ्यां द्वे** सूत्र से षकार को द्वित्व प्राप्त हुआ।

सूत्रम्- शरोऽचि । 8/4/49

वृत्तिः- अचि परे शरो न द्वे स्तः। चतुर्षु। इति रकारान्ताः।

हिन्दी अर्थ- अच् परे रहते शर् को द्वित्व न हो।

चतुर्षु- चतुर्षु में शर् षकार से परे अच् उकार है अतः प्राप्त द्वित्व का निषेध हो गया रूप चतुर्षु ही सिद्ध हुआ।

(मकारान्त किम् शब्द)

सूत्रम्- किमः कः 7/2/103

वृत्तिः- किमः कः स्याद् विभक्तौ। कः, कौ, के इत्यादि। शेषं सर्ववत्।

हिन्दी अर्थ- किम् शब्द को क आदेश दो विभक्ति परे रहते।

प्रथमा-	कः	कौ	के
द्वितीया-	कम्	कौ	कान्
तृतीया-	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी-	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पंचमी-	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी-	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी-	कस्मिन्	कयोः	केषु

सूत्रम्- अतो गुणे । 6/1/97

वृत्तिः- अपदान्तादतो गुणे पररूपमेकादेशः।

हिन्दी अर्थ- पदान्तभिन्न ह्स्व अकार से गुण (अ, ए, ओ) परे रहते पररूप एकादेश हो ।

सूत्रम्- दश्च । 7/2/109

वृत्तिः- इदमो दस्य मः स्याद् विभक्तौ। इमौ, इमे। त्यदादेः सम्बोधनं नास्तीत्युत्सर्गः ।

हिन्दी अर्थ- इदम् शब्द के दकार को मकार हो विभक्ति परे रहते।

इमौ- इद्+औ इस स्थित में विभक्ति औ परे होने से दकार को मकार हुआ। तब इम्+औ इस स्थिति के बन जाने पर **वृद्धिरेचि** सूत्र से प्राप्त वृद्धि का **प्रथमयोः पूर्वसवर्णः** द्वारा बाध और **नादिचि** सूत्र से पूर्वसवर्ण दीर्घ का निषेध होने पर पुनः **वृद्धिरेचि** सूत्र से वृद्धि होकर इमौ रूप बना।
इमे- इदम्+अस् यहां **त्यदादीनामः** सूत्र से मकार को अकार आदेश, **अतो गुणे** सूत्र से दकारोत्तरवर्ती अकार और अम् के अकार के स्थान में पररूप एकादेश, **दश्च** सूत्र से दकार को मकार आदेश होने से इम्+अस् ऐसी स्थिति हो जाने पर अकारान्त बन जाने से अदन्त सर्वनाम इम से परे जस् को **जसः शी** सूत्र से **शी** आदेश शकार की इत्संज्ञा लोप अकार और ईकार के स्थान में एकार गुण एकादेश हो जाने से इमे रूप सिद्ध हुआ ।

(मकारान्त इदम् शब्द)

सूत्रम्- इदमो मः । 7/2/108

वृत्तिः- सौ । त्यदाद्यत्यापचादः।

हिन्दी अर्थ- इदम् शब्द के मकार को मकार ही होता है सु परे रहते।

सूत्रम्- इदोय पुंसि । 7/2/111

वृत्तिः- इदम् इदोऽय सौ पुंसि। अयम् त्यादद्यत्वे-

हिन्दी अर्थ- इदम् शब्द के इद् भाग को अय् आदेश हो सु परे रहते पुंलिङ्ग में।

अयम्- इदम् + सु यहां इद् भाग को अय् होने से अय् अम् सु यह स्थिति बनी। इसमें **हलड्याब्यः-** सूत्र से अपृक्त सकार का लोप होने से अयम् रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- अनाप्यकः । 7/2/112

वृत्तिः- अककारस्येदम इदोऽनापि विभक्तौ । आविति प्रत्याहारः। अनेन।

हिन्दी अर्थ- ककार रहित इदम् के इद् भाग को अन् आदेश हो आप् (टा से लेकर सुप) विभक्ति परे रहते । **आविति-** आप् यह प्रत्याहार है।

अनेन- इदम्+टा इस दशा में सबसे पहले **त्यदादीनामः** से मकार को अकार हुआ। तब **अतो गुणे** से पररूप। इद्+टा ऐसी स्थिति बन जाने पर **दश्च** सूत्र से दकार को मकार प्राप्त हुआ। परन्तु प्रकृत सूत्र से आप् विभक्ति टा परे होने से इद् भाग को अन् आदेश हुआ। फिर अन्+टा इस स्थिति में अकारान्त होने से उसके आगे टा को इन् आदेश हुआ जब अन् इन् इस स्थिति में गुण हो कर अनेन रूप सिद्ध हुआ ।

सूत्रम्- हलि लोपः । 7/2/113

वृत्तिः- आककारस्येदम इदो लोप आपि हलादौ।

हिन्दी अर्थ- ककाररहित इदम् शब्द के इद् भाग का लोप हो हलादि आप् विभक्ति परे रहते।

सूत्रम्- आद्यन्तवद् एकस्मिन् । 1/1/21

वृत्तिः- एकस्मिन् क्रियमाणं कार्यमादाविवान्त इव स्यात् सुपि च दीर्घः- आभ्याम्।

हिन्दी अर्थ- एक वर्ण पर जब कार्य करना हो तो उस वर्ण को आदि भी माना जाता है और अन्तिम भी ।

सूत्रम्- नेदमदसोरकोः । 7/1/11

वृत्तिः- अककारयोरिदमदसोः भिस ऐस् न। एभिः। अस्मै। एभ्यः । अस्मात्। अस्य। अनयोः। एषाम्। अस्मिन्। एषु।

हिन्दी अर्थ- ककाररहित इदम् और अदस् से परे भिस् को ऐस् न हो।

एभिः- इदम्+भिस् इस दशा में त्यदाद्यत्व और पररूप होने पर हलादि विभक्ति भिस् परे होने से **हलि लोपः** सूत्र से इद् भाग का लोप होकर अ+ भिस् यह स्थिति बनी। वहां पूर्ववद् व्यपदेशिवद्भाव से अकार को अदन्त अङ्ग मान लेने पर **अतो भिस ऐस्** से भिस् के स्थान में ऐस् आदेश प्राप्त हुआ। उसका प्रकृत सूत्र से निषेध होने के अनन्तर झलादि बहुवचन भिस् परे होने से व्यपदेशिवद्भावेन अदन्त अङ्ग अकारके अन्त्य अकार को **बहुवचने झल्येत्** से एकार तथा सकार को रुत्व विसर्ग कर देने से एभिः रूप बना ।

अस्मै- इदम्+ङे इस दशा में त्यदाद्यत्व और पररूप करने पर अदन्त अङ्ग बन जाने से **सर्वनाम्नः स्मै** से ङे को स्मै आदेश हुआ। स्मै में ङे का विभक्ति धर्म स्थनिवद्भाव से लाकर **हलि लोपः** सूत्र से इद् भाग का लोप हो जाने पर रूप सिद्ध हुआ।

एभ्यः- इदम्+भ्यस् इस दशा में त्यदद्यत्व और पररूप होने पर इद् भाग का लोप हुआ। तब व्यपदेशिवद्भाव से अदन्त अङ्ग के अकार को **बहुवचने झल्येत्** सूत्र से एकार तथा सकार के स्थान में रु और विसर्ग करने पर रूप सिद्ध हुआ।

अस्मात्- त्यदाद्यत्व, पररूप और ङसि के स्थान में स्मात् आदेश होने पर इद् भाग का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

अस्य- त्यदाद्यत्व और पररूप होने पर अदन्त अङ्ग से पर ङस् को स्य आदेश हुआ तब इद् भाग का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

अनयोः- ओस् मे त्यदाद्यत्व और पररूप होने पर **अनाप्यकः** से अजादि विभक्ति ओस् परे होने से इद् भाग को अन् आदेश होकर अन् औस् इस स्थिति में **ओसि च** से अकार को एकार और उसको अय् आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

एषाम्- आम् में त्यदाद्यत्व और पररूप करने पर अदन्त अङ्ग हो जाने से आम् को **आमि सर्वनाम्नः सुट्** से सुट् आगम हो गया, तब हलादि विभक्ति पर होने से इद् भाग का **हलि लोपः** सूत्र से लोप और झलादि बहुवचन **साम्** परे होने से **बहुवचने झल्येत्** सूत्र से अकार को एकार आदेश हुआ तब ए साम् इस दशा में **आदेशप्रत्यययोः** से सकार को मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

अस्मिन्- सप्तमी के एकवचन में और एषु बहुवचन में पूर्वोक्त प्रकार से सिद्ध होंगे। ध्यान रहे कि इदम् शब्द में ङे, ङसि, ङस्, ङि और आम् को स्मै, स्मात्, स्य, स्मिन् आदेश और सुट् आगम के अनन्तर हलादि बन जाते हैं। इसलिये इनमें **हलि लोपः** सूत्र से इद् भाग का लोप हो जाता है, केवल अकार बचा रहता है। **अनाप्यकः** सूत्र केवल टा और ओस् इन दो स्थानों पर लागू होता है। इन्हीं में अन् आदेश होता है।

सूत्रम्- द्वितीयाटौस्स्वेनः 2/4/34

वृत्तिः- इदमेतदोरन्वादेशे। किंचित् कार्यं विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपादानम्-अन्वादेशः। **यथा**-अनेन व्याकरणमधीतम्, एनं छन्दोऽध्यापय। अनयोः पवित्रं कुलम्, एनयोः प्रभूतं स्वामिति। एनम्, एनौ, एनन्। एनयोः। एनान् । एनेन। एनयोः। एनयोः इति मकारान्ताः। राजा।

हिन्दी अर्थ- इदम् ओर एतद् शब्द को अन्वादेश के विषय में एन् आदेश हो द्वितीया, टा और ओस् परे रहते । **अनेन व्याकरणमधीतम्, एनं छन्दोऽध्यापय-** अर्थात् इसने व्याकरण पढ़ लिया है, इसे वेद पढ़ाइये।

(नकारान्त राजन् शब्द)

राजा- राजन् सु इस दशा में **हल्ङ्याभ्यो दीर्घाद्..** से सकार का लोप नान्त उपधा को **सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ** से दीर्घ तथा नकार का **न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य** से लोप होने पर यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- न ङि सम्बुद्धयोः । 8/2/8

वृत्तिः- नस्य लोपो न ङौ सम्बुद्धौ च। हे राजन् ।

हिन्दी अर्थ- नकार का लोप न हो ङि और सम्बुद्धि परे रहते। न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य से प्राप्त नकारलोप का यह निषेध है ।

हे राजन्- यहां सम्बुद्धि होने के कारण प्रकृत सूत्र से नकार लोप का निषेध हुआ।

(वा) डावुत्तरपदे प्रतिषेधो वक्तव्यः। ब्रह्मनिष्ठः । राजानौ, राजानः। राज्ञः।
हिन्दी अर्थ- उत्तर पद है परे जिसके उस ङि के परे रहते नकारलोप का निषेध नहीं होता अर्थात् नकारलोप हो ही जाता है।

राजानौ- राजन् औ यहां नान्त की उपधा को **सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ** सूत्र से दीर्घ होकर रूप सिद्ध हुआ।

राजानः- यह जस् का रूप है, नान्तोपधा को दीर्घ हुआ।

राज्ञः- राजन्+शस् (अस्) इस दशा में **अल्लोपोनः** अन् के अकार का लोप और चवर्ग जकार के आगे होने से तवर्ग नकार को श्चुत्व होकर रूप सिद्ध हुआ ।

सूत्रम्- नलोपः सुप्-स्वर-संज्ञा-तुग्विधिषु कृति । 8/2/2
सुब्विधौ स्वरविधौ संज्ञाविधौ कृति तुग्विधौ च नलोपोसिद्धः, नात्यत्र-राजाश्व इत्यादौ। इत्यसिद्धत्वाद्-आत्वम्, एत्वम्, ऐस्त्वं च न। राजभ्याम्, राजभिः। राजभ्यः । राज्ञि-राजनि। राजसु।
हिन्दी अर्थ- सुब्विधि, स्वरविधि, संज्ञाविधि और कृत् प्रत्यय परे रहते तुग्विधि के विषय में ही नकार का लोप असिद्ध होता है अन्यत्र नहीं।

राज्ञि, राजनि- में **विभाषा ङिश्योः** सूत्र से विकल्प से अन् के अकार का लोप हुआ लोप पक्ष में-राज्ञि, अभाव पक्ष में-राजनि ।

(नकारान्त मघवन् शब्द)

सूत्रम्- मघवा बहुलम् । 6/4/128
वृत्तिः- मघवन् शब्दस्य वा त इत्यन्तादेशः।
हिन्दी अर्थ- मघवन् शब्द को त अन्तादेश विकल्प से हो।
मघवन् शब्द के अन्त्य नकार को त आदेश हो गया। तब मघवत् शब्द वना और पक्ष में मघवन् ही रहा। दोनों के अलग-अलग रूप बनेंगे।

सूत्रम्- उगिदचां सर्वनामस्थाने धातोः । 7/1/70
वृत्तिः- अधातोरुगितो नलोपिनोऽश्वतेश्च नुम् स्यात सर्वनामस्थाने परे। मघवान्, मघवन्तौ, मघवन्तः । हे मघवन्। मघवद्भ्याम् तत्वाभावे। मघवा। सुटि राजवत्।
हिन्दी अर्थ- धातुभिन्न उगित् (उक् इ, उ, ऋ, ऌ जिसका इत् हो) और नकारलोपी (जिसके नकार का लोप हुआ हो) अच् धातु को नुम् आगम हो सर्वनामस्थान परे रहते।

मघवान्- यह प्रथमा के एकवचन का रूप है। यहां मघवत् शब्द ऋकार-उक् के इत् होने से उगित् है। प्रथमा के एकवचन सु सर्वनामस्थान परे रहते वकारोत्तरवर्ती अन्त्य अच् अकार के आगे नुम् आगम हुआ। उम् अनुवन्ध का लोप हुआ। तव मघवन् त् स् इस अवस्था में पहले अपृक्त सकार का **हल्ङ्याभ्यो दीर्घाद्..** और फिर संयोगान्त पद के अन्त्य तकार का लोप होने पर **सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ** सूत्र से उपधा अकार को दीर्घ और **नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य** से अन्त्य नकार का लोप होने से मघवान् रूप बना।

मघवन्तौ- मघवन्+औ इस दशा में प्रथम त् अन्तादेश, तव **उगिदचा सर्वनामस्थाने धातोः** सूत्र से नुम् आगम होने से रूप सिद्ध हुआ।

हे मघवन्- सम्बुद्धि में सकार का लोप होने पर तकार का संयोगान्त लोप होता है । नकार लोप का **न ङि संबुद्धोः** सूत्र से निषेध हो जाता है।

मघवा- मघवन् शब्द को त् अन्तादेश जव न हुआ तव प्रथमा के एकवचन में मघवन्+सु इस दशा में **सर्वनामस्थाने..** सूत्र से उपधादीर्घ, अपृक्त सकार का **हल्ङ्याभ्यो दीर्घाद्..** से लोप होने पर **नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य** सूत्र से अन्त्य नकार का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ । सुटीति इस पक्ष में नकारान्त शब्द होने से नकारान्त राजन् शब्द के समान सुट् में (सु से औट् तक) रूप बनते हैं।

सूत्रम्- श्व-युव-मघोनामतद्धिते । 6/4/133
वृत्तिः- अन्नन्तानां भानामेषामतद्धिते संप्रसारणम्। मघोनः। मघवभ्याम।
हिन्दी अर्थ- श्वन् (कुत्ता), युवन् (युव, जवान) और मघवन् (इन्द्र)-इन अन्नन्त भसंज्ञक अङ्गों को संप्रसारण हो तद्धितभिन्न प्रत्यय परे रहते।

मघोनः- मघवन् शब्द से शस् में मघवन्+अस् इस दशा में प्रकृत सूत्र से वकार यण् के स्थान में उकार संप्रसारण हुआ **सम्प्रसारणाच्च** सूत्र से अग्रिम अकार का पूर्वरूप एकादेश होने पर मघ्+उन्+अस् ऐसी स्थिति बनी । यहां अकार और उकार को ओकार गुण स् को रुत्व विसर्ग होकर मघोनः रूप सिद्ध हुआ ।

(नकारान्त पथिन् शब्द)

सूत्रम्- पथिमथ्यृभुक्षामात् । 7/1/85
वृत्तिः- एषामाकारोन्तादेशः स्यात् सौ परे ।

हिन्दी अर्थ- पथिन् (मार्ग), मथिन् (मथनी, रई), ऋभुक्षिन् (इन्द्र) इन शब्दों को आकार अन्तादेश हो सु परे रहते।

पथिन् शब्द से सु परे रहते पथिन्+सु इस दशा में नकार को आकार हो गया पथि+आ+सु ऐसी स्थिति बन गई।

सूत्रम्- इतोऽत् सर्वनामस्थाने । 7/1/86

वृत्तिः- पथ्यादेरिकारस्याकारः सर्वनामस्थाने परे।

हिन्दी अर्थ- पथिन् आदि के इकार को अकार हो सर्वनामस्थान परे रहते। पथि+आ+स् इस स्थिति में पथिन् के इकार को अकार हुआ तब पथ+आ+स् यह अवस्था हुई।

सूत्रम्- थो न्थः । 7/1/87

वृत्तिः- पथिमथोरथस्य न्थादेशः सर्वनामस्थाने । पन्थाः, पन्थानौ, पन्थानः।

हिन्दी अर्थ- पथिन् और मथिन् शब्दों के थकार को न्थ आदेश हो सर्वनामस्थान परे रहते।

पन्थाः- प्रथमा के एकवचन में पूर्वोक्त प्रकार से पथ+आ+स् ऐसी स्थिति बन जाने पर इस सूत्र से थ को न्थ आदेश हुआ। तब "पन्थ आ स्" यह दशा हुई। इस दशा में सवर्ण दीर्घ और सकार को रुत्व तथा विसर्ग होकर पन्थाः रूप सिद्ध हुआ।
पन्थानौ और पन्थानः- ये औ और जस् के रूप इसी प्रकार सिद्ध होगे द्वितीया के एकवचन में-पन्थानम्, द्विवचन में- पन्थानौ।

सूत्रम्- भस्य टेलोपः । 7/1/88

वृत्तिः- भस्य पथ्यादेष्टेस्लोपः। पथः। पथा। पथिभ्याम्। एवम्-मथिन्। ऋभुक्षिन्।

हिन्दी अर्थ- अजादि विभक्तियों में भ संज्ञा होती है, उनके परे रहते पथिन् आदि की टि (इन) का लोप हो जाता है।

पथः- पथिन्+शस् इस स्थिति में भसंज्ञक अङ्ग होने से पथिन् की टि इन् का लोप हो गया। तब पथ्+अस् ऐसी स्थिति बन जाने पर सकार को रुत्व विसर्ग करने से रूप सिद्ध हुआ।
पथा- पथिन्+टा इस दशा में सारे कार्य पथः के समान होकर रूप सिद्ध होता है ।
पथिभ्याम्- पथिन्+भ्याम् इस स्थिति में नकार का लोप **न लोपः प्रातिपदिका....** सूत्र से होने पर रूप सिद्ध होता है।

(सकारान्त विद्वस् शब्द)

विद्वान्- प्रथमा के एकवचन में नुम्, और संयोगान्त लोप होने पर विद्वन् स् इस स्थिति में संयोगान्त लोप के असिद्ध होने के कारण **सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ** सूत्र से दीर्घ की प्राप्ति न होने से सकारान्त संयोग होने से **सान्तमहतः...-** सूत्र से दीर्घ होकर विद्वान् रूप बना।
हे विद्वन्- सम्बुद्धि में दीर्घ के निषेध होने से हे विद्वन् रूप सिद्ध होता है।

सूत्रम्- वसोः संप्रसारणम् । 6/4/131

वृत्तिः- वस्वन्तस्य भस्य संप्रसारणं स्यात्। विदुषः । **वसुस्तंसु.....** इति दः- विद्वद्भ्याम् ।

हिन्दी अर्थ- वसुप्रत्ययान्त भसंज्ञक अङ्ग को संप्रसारण हो।

विदुषः- शस् में **विद्वस्+अस्** इस दशा में संप्रसारण हुआ **संप्रसारणाच्च** सूत्र से अकार का पूर्वरूप होने पर तथा सकार को रुत्व विसर्ग और उकार इण् से पर प्रत्यय वस् के अवयव सकार को **आदेश प्रत्यययोः** सूत्र से मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ। सभी अजादि विभक्तियों में इसी प्रकार रूप सिद्धि होती है ।

विद्वद्भ्याम्- भ्याम् में **वसुसंसुध्वंस्वनडुहां दः** सूत्र से सकार को दकार होकर विद्वद्भ्याम् रूप सिद्ध हुआ।

(दकारान्त तत् शब्द)

त्यद् (वह) तद् (वह) यद् (जो) एतद् (यह) शब्द।

सूत्रम्- तदोः सः सावनन्त्ययोः । 7/2/106

वृत्तिः- त्यदादीनां तकारदकारयोरनन्त्ययोः सः स्यात् सौ।

हिन्दी अर्थ- त्यद् आदियों के तकार और दकार, जो अन्तिम नहीं है. को सकार हो, सु परे रहते।

सः, तौ, ते। यः, यौ, ये। एषः , एतौ, एते, एतम् । अन्वादेशे- एनम्, एनौ. एनान्, एनेन, एनयोः ।

(दकारान्त युष्मद् और अस्मद् शब्द)

सूत्रम्- ङे-प्रथमयोरम् । 7/1/28

वृत्तिः- युष्मदस्मद्भ्यां परस्य ङे इत्येतस्य् प्रथमाद्वितीययोश्चामादेशः।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् से परे ङे और प्रथमा तथा द्वितीया को अम् आदेश हो ।

युष्मद् और अस्मद् से प्रथमा के एकवचन में युष्मद्+सु और अस्मद्+सु इस अवस्था में सु को अम् आदेश हुआ। तब युष्मद्+अम् और अस्मद्+अम् यह स्थिति बनी।

सूत्रम्- त्वाहौ सौ । 7/2/94

वृत्तिः- अनयोर्मपर्यन्तस्य त्वाहौ आदेशौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् शब्दों के मपर्यन्त-युष्म् और अस्म्- भाग को क्रम से त्व और अह आदेश हो सु परे रहते।

युष्मद्+अम् और अस्मद्+अम् इस स्थिति में मपर्यन्त भाग को त्व और अह आदेश हुए । तब त्व अद्+अम् और अह अद्+अम् स्थिति हुई। इसमें **अतो गुणे** सूत्र से पररूप होकर त्वद्+अम् और अहद्+अम् बना।

सूत्रम्- शेषे लोपः । 7/2/90

वृत्तिः- एतयोष्टिलोपः। त्वम्। अहम्।

हिन्दी अर्थ- (आत्व और यत्व की निमित्त विभक्ति से भिन्न विभक्ति परे रहते) इनकी टि का लोप हो।

त्वम्- त्व+अद्+अम् ऐसी स्थिति में **अतो गुणे** से पररूप हुआ और तब **शेषे लोपः** सूत्र से टि अद् का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ।

अहम्- इसकी सिद्धि भी त्वम् के समान ही होती है अन्तर केवल इतना ही है कि इसके मपर्यन्त भाग अस्म् को अह् आदेश होता है।

सूत्रम्- युवावौ द्विवचने । 7/2/82

वृत्तिः- द्वयोरुक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य युवावौ स्तो विभक्तौ।

हिन्दी अर्थ- द्वित्व संख्या विशिष्ट अर्थ के वाचक युष्मद् और अस्मद् शब्दों के मपर्यन्त (युष्म, अस्म) भाग को क्रम से युव और आव आदेश हो विभक्ति परे रहते ।

युवाम्, आवाम्- युष्मद्+औ और अस्मद्+अ इस दशा में पहले **ङे प्रथमयोः** सूत्र से औ को अम् आदेश हुआ तब मपर्यन्त युष्म् और अस्म् भाग को युव और आव आदेश हुए। फिर युव अद् अम् / आव अद् अम् इस स्थिति के बन जाने पर **अतो गुणे** से पररूप हुआ।

सूत्रम्- प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् । 7/2/88

वृत्तिः- ओड्येतयोरात्वं लोके। युवाम्। आवाम् ।

हिन्दी अर्थ- औङ् परे रहते युष्मद् और अस्मद् शब्दों को आकार अन्तादेश हो लोक में ।

सूत्रम्- यूयवयौ जसि । 7/2/93

वृत्तिः- अनयोर्मपर्यन्तस्य। यूयम्। वयम्।

हिन्दी अर्थ- इनके मपर्यन्त भाग को यूय और वय आदेश हो जस् परे रहते।

यूयम्, वयम्- जस् को पहले **ङे प्रथमयोः...** सूत्र से अम् आदेश हुआ। तब मपर्यन्त भाग को यूय और वय आदेश होने पर यूय+अद्+अम् और वय+अद्+अम् इस अवस्था में **अतो गुणे** से पररूप होने पर यूयद्+अम् और वयद्+अम् इस स्थिति में **शेषे लोपः** से टि अद् का लोप होकर यूयम् और वयम् रूप वने।

सूत्रम्- त्वमावेकवचने । 7/2/97

वृत्तिः- एकस्योक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य त्वमौ स्तो विभक्तौ।

हिन्दी अर्थ- एकवचन अर्थ के वाचक युष्मद् और अस्मद् के मपर्यन्त भाग को त्व और म आदेश हों विभक्ति परे रहते।

सूत्रम्- द्वितीयायाञ्च । 7/2/87

वृत्तिः- अनयोरात् स्यात्। त्वाम्। माम्।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् शब्द को आकार अन्तादेश हो द्वितीया विभक्ति परे रहते ।

त्वाम्, माम्- अन्त्य दकार को आकर आदेश होने पर त्व+आ+अम् और म+आ+अम् इस अवस्था में पहले पूर्व अकार और आकार को फिर अम् के अकार के साथ सवर्णदीर्घ होने से त्वाम् और माम् रूप सिद्ध हुए।

सूत्रम्- शसो न । 7/2/29

वृत्तिः- आभ्यां शसो न स्यात्। अमोपवादः। आदेः परस्य। संयोगान्तलोपः। युष्मान्, अस्मान्।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् शब्द से परे शस् को नकार आदेश हो। **अम इति-** यह नकार आदेश **ङेप्रथमयोः** सूत्र से प्राप्त अम् आदेश का अपवाद (बाधक) है। **आदे इति-** पर को विहित होने से यह नकारादेश **आदेः परस्य** सूत्र से पर के आदि को होगा।

युष्मान् अस्मान्- युष्मद्+अस् और अस्मद्+अस् इस अवस्था में पर अस् (शस्) के आदि अकार को नकार होने से युष्मद्+न्+स्, अस्मद्+न्+स् यह स्थिति हुई। यहां **द्वितीयाटौस्स्वेनः** सूत्र से दकार को आकारादेश और सवर्णदीर्घ होकर युष्मान् स् और अस्मान् स् इस दशा में संयोगान्त सकार का **संयोगान्तस्य लोपः** सूत्र से लोप होने पर युष्मान् और अस्मान् रूप सिद्ध हुए।

सूत्रम्- योचि । 7/2/89

वृत्तिः- अनयोर्यकारादेशः स्यादनादेशजादौ परतः। त्वया । मया।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् शब्दों को यकार आदेश हो **अनादेश**-जिसको कुछ आदेश न हुआ हो ऐसी अजादि विभक्ति परे रहते। अलोन्त्यपरिभाषा से यकारादेश अन्त्य के स्थान में होगा।

त्वया, मया- युष्मद् और अस्मद् शब्दों के तृतीया के एकवचन में युष्मद्+आ और अस्मद्+आ इस दशा में **त्वमावेकवचने** से मपर्यन्त आ को त्व और म आदेश, और **अतो गुणे** से पररूप होने पर त्वद्+आ और मद्+आ इस स्थिति में दकार को यकार आदेश हुआ। तब त्वया और मया ये रूप सिद्ध हुए।

सूत्रम्- युष्मदस्मदोरनादेशे । 7/2/86

वृत्तिः- अनयोरात् स्याद् अनादेशे हलादौ विभक्तौ। युवाभ्याम्। आवाभ्याम्। युष्माभिः । अस्माभिः ।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् अङ्ग को आकार हो अनादेश हलादि विभक्ति परे रहते । अलोन्त्य परिभाषा से आकार अन्त्य को ही होता है।

युवाभ्याम्, आवाभ्याम्- भ्याम् विभक्ति में **युवावौ द्विवचने** से मपर्यन्त भाग को युव और आव आदेश और **अतो गुणे** से पररूप होने पर युवद्+भ्याम् और आवद्+भ्याम् इस स्थिति में आदेश रहित हलादि विभक्ति भ्याम् परे रहते दकार को आकार आदेश हुआ। तब सवर्णदीर्घ होकर युवाभ्याम् और आवाभ्याम् रूप सिद्ध हुए।

युष्माभिः, अस्माभिः- यहां युष्मद्+भिस् और अस्मद् + भिस् इस स्थिति में दकार को आकार, सवर्णदीर्घ और रुत्व विसर्ग होते हैं।

सूत्रम्- तुभ्यमह्यौ ङयि । 7/2/95

वृत्तिः- अनयोर्मपर्यन्तस्य । टिलोपः। तुभ्यम्। मह्यम्।

हिन्दी अर्थ- इसके मपर्यन्त भाग को तुभ्य और मह्य आदेश हो ङे परे रहते।

तुभ्यम्, मह्यम्- चतुर्थी के एकवचन में युष्मद् + ङे इस दशा में पहले **प्रथमयोः..** सूत्र से ङे को अम् आदेश हुआ। तब मपर्यन्त भाग को तुभ्य ओर मह्य आदेश और **अतो गुणे** से पररूप होने पर तुभ्यद् अम् और मह्यद् अम् इस अवस्था में **शेषे लोपः** से टि अद् का लोप होने पर तुभ्यम् और मह्यम् सिद्ध हुए।

सूत्रम्- भ्यसोऽभ्यम् । 7/1/30

वृत्तिः- आभ्यां परस्य। युष्मभ्यम्। अस्मभ्यम्।

हिन्दी अर्थ- इन दोनों युष्मद् और अस्मद्भे परे भ्यस् को अभ्यम् आदेश हो।

युष्मभ्यम्, अस्मभ्यम्- चतुर्थी के बहुवचन में युष्मद्+भ्यस् और अस्मद्+भ्यस् इस अवस्था में भ्यस् को अभ्यम् आदेश हुआ। तब युष्मद्+अभ्यम् और अस्मद्+अभ्यम् इस स्थिति में **शेषे लोपः** सूत्र से टि अद् का लोप होने से और अस्मभ्यम् रूप सिद्ध हुए।
युष्मभ्यम्- यहाँ विभक्ति का होने से **न विभक्तौ तुस्माः** सूत्र से मकार के लोप का निषेध हो जाता है।

सूत्रम्- एकवचनस्य च । 7/1/32

वृत्तिः- आभ्यां ङसेरत्। त्वत्। मत् ।

हिन्दी अर्थ- इन दोनों युष्मद् और अस्मद् से परे पंचमी के एकवचन ङसि को अत् आदेश हो।

त्वत्, मत्- पंचमी के एकचचन में युष्मद्+ङसि और अस्मद्+ ङसि इस अवस्था में **त्वमावेकवचने** से मपर्यन्त भाग को त्व और म आदेश तथा **अतो गुणे** से पररूप करने के अनन्तर ङसि को प्रकृत सूत्र से अत् आदेश हुआ तब त्वद्+अत् और मद्+अत् इस स्थिति में **शेष लोपः** सूत्र से टि अद् का लोप होकर त्वत् और मत् रूप बने।

सूत्रम्- पंचम्या अत् । 7/1/31

वृत्तिः- आभ्यां पंचम्या भ्यसोऽत् स्यात्। युष्मत् । अस्मत् ।

हिन्दी अर्थ- इन दोनों युष्मद् और अस्मद् से परे पंचमी के भ्यस् को अत् आदेश हो।

युष्मत्,अस्मत्- पंचमी के बहुवचन में युष्मद्+भ्यस् अस्मद्+भ्यस् इस दशा में भ्यस् को अत् आदेश हुआ। तब **शेषे लोपः** सूत्र से टि अद् का लोप होकर युष्मत् और अस्मत् रूप सिद्ध हुए ।

सूत्रम्- तवममौ ङसि । 7/2/96

वृत्तिः- अनयोर्मपर्यन्तस्य तवममौ स्तो ङसि ।

हिन्दी अर्थ- इन दोनों युष्मद् और अस्मद् के मपर्यन्त भाग को तव और मम आदेश हो ङस् परे रहते इस सूत्र से तव और मम आदेश होने के अनन्तर **अतो गुणे** सूत्र से पररूप होकर तवद्+ ङस् और ममद्+ ङस् यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- युष्मदस्मद्भ्यां ङसोश् । 7/1/27

वृत्तिः- तव। मम। युवयोः। आवयोः।

हिन्दी अर्थ- युष्मद् और अस्मद् शब्दों से ङस् (षष्ठी के एकवचन) को अश् आदेश हो।

तव, मम- ङस् को अश् आदेश होने पर तवद् अ और ममद् अ इस स्थिति में **शेषे लोपः** सूत्र से टि अद् का लोप होकर तव और मम रूप बने।

युवयोः, आवयोः- ओस् में पहले मपर्यन्त भाग को युव और आव आदेश हुए। तब **अतो गुणे** से पररूप होने के अनन्तर युवद्+ओस् और आवद्+ओस् इस स्थिति में अनादेश अजादि विभक्ति ओ परे रहते दकार को **योचि** सूत्र से यकार आदेश हुआ रकार को रुत्व विसर्ग होकर युवयोः, आवयोः रूप सिद्ध हुए।

सूत्रम्- साम आकम् । 7/1/33

वृत्तिः- आभ्यां परस्य साम आकम् स्यात्। युष्माकम्। अस्माकम्। त्वयि। मयि। युवयोः। आवयोः। युष्मासु। अस्मासु।

हिन्दी अर्थ- इन दोनों युष्मद् और अस्मद् से परे साम को आकम् आदेश हो ।

युष्माकम्, अस्माकम्- षष्ठी के बहुवचन में युष्मद् + आम् और अस्मद् + आम् इस दशा में आम् को आकम् आदेश हुआ। तब **शेषे लोपः** सूत्र से अन्त्यलोप पक्ष में दकार का लोप होकर युष्म+आकम् और अस्म+आकम् इस स्थिति के बन जाने पर सवर्णदीर्घ होकर रूप सिद्ध हुए।

त्वयि, मयि- सप्तमी के एकवचन में युष्मद् +ङि और अस्मद्+ङि इस स्थिति में **त्वमावेकवचने** सूत्र से मपर्यन्त भाग को त्व और मम आदेश और **अतो गुणे** से पररूप होकर त्वद् इ और मद्+इ इस स्थिति में **योचि** सूत्र से दकार को यकार होने से त्वयि और मयि रूप सिद्ध हुए।

युष्मासु, अस्मासु- बहुवचन में युष्मद् +सु और अस्मद्+सु इस अवस्था में **युष्मदस्मदोरनादेशे** सूत्र से दकार को आकार होने के अनन्तर सवर्णदीर्घ होकर युष्मासु और अस्मासु रूप सिद्ध हुए।

सूत्रम्- युष्मदस्मदोः षष्ठी-चतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वांनावौ । 8/1/20

वृत्तिः- पदात्परयोरपादादौ रिथितयोः षष्ठयादिविशिष्टयोः वां नौ इत्यादेशौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- षष्ठी, चतुर्थी और द्वितीया विभक्तियों से युक्त युष्मद् और अस्मद् शब्द जब किसी पद से परे हों,परन्तु पाद (श्लोक या ऋचा के चरण) के आदि में न हो तो, इनको क्रमशः वाम् और नौ आदेश होते हैं।

सूत्रम्- बहुवचनस्य वस्नसौ । 8/1/21

वृत्तिः- उक्तविधयोरनयोः षष्ठ्यादिबहुवचनान्तयोर्वसनौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- पद से पर, पाद के आदि में न होने पर षष्ठ्यादि बहुवचनान्त युष्मद् और अस्मद् शब्दों को क्रम से वस् और नस् आदेश हों।

सूत्रम्- तेमयावेकवचनस्य । 8/1/22

वृत्तिः- उक्तविधयोरनयोः षष्ठीचतुर्थ्येकवचनान्तयोस्ते मे एतौ स्तः ।

हिन्दी अर्थ- पद से परे, पाद के आदि में न होने पर षष्ठी और चतुर्थी के एकवचन में युष्मद् और अस्मद् शब्दों को ते और मे आदेश हो।

सूत्रम्- त्वामौ द्वितीयायाः । 8/1/23

वृत्तिः- हितीयैकवचनान्तयोस्त्वा मा इत्यादेशौ स्तः।

हिन्दी अर्थ- पूर्वोक्त प्रकार से युष्मद् और अस्मद् शब्द जब द्वितीया के एकवचन में हों तब उनको क्रम से त्वा और मा आदेश हो।

॥इति हलन्तपुंल्लिङ्गाः॥

॥अथ हलन्तस्त्रीलिङ्गाः॥

सूत्रम्- नहो धः । 8/2/34

वृत्तिः- नहो हस्य धः स्याज्झलि पदान्ते च॥

हिन्दी अर्थ- नह् धातु के हकार को धकार हो जता है झल् परे होने पर या पदान्त में ।

सूत्रम्- नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ। 6/3/116

वृत्तिः क्विबन्तेषु पूर्वपदस्य दीर्घः।

हिन्दी अर्थ- क्विबन्त नह् वृत् वृष् व्यध् रुच् सह् और तन् धातु परे हो तो पूर्वपद को दीर्घ हो जाता है । **उदाहरणं यथा-** उपानत्, उपानद्। उपानहौ। उपानत्सु॥ क्विन्नन्तत्वात् कुत्वेन घः। **उष्णिक्** उष्णिग्। , उष्णिहौ। उष्णिग्भ्याम्॥ **द्यौः**। दिवौ। दिवः। द्युभ्याम्॥ **गीः**। गिरौ। गिरः॥ एवं पूः॥ **चतस्रः**। चतसृणाम्॥ **का**। के। काः। सर्वावत्॥

सूत्रम्- यः सौ। 7/2/110

वृत्तिः इदमो दस्य यः **इयम्**। त्यदाद्यत्वम्। पररूपत्वम्। टाप्। दश्चेति मः।

हिन्दी अर्थ- सुप् परेहोने पर इदम् के दकार को यकार होता है । **उदाहरणं यथा-** इमे। इमाः। इमाम्। अनया। हलि लोपः। आभ्याम्। आभिः। अस्यै। अस्याः। अनयोः। आसाम्। अस्याम्। आसु । एवं तद्, एतद् ।

॥इति हलन्तस्त्रीलिङ्गाः॥

॥अथ हलन्तनपुंसकलिङ्गाः॥

स्वमोर्लुक्। चतुरनडुहोरित्याम्। चत्वारि। किम्। के। कानि। इदम्। इमे। इमानि।

वार्तिक- अन्वादेशे नपुंसके वा एनद्वक्तव्यः।

हिन्दी अर्थ- द्वितीया टा और आस् विभक्ति परे होने पर नपुंसकलिंग में अन्वादेश में इदम् और एतत् शब्द के स्थान पर एनत् आदेश हो जाता है । **यथा-** एनत्। एने। एनानि। एनेन। एनयोः।

॥इति हलन्तनपुंसकलिङ्गाः॥

॥शब्दरूप॥

(अकारान्तपुंलिङ्गः रामशब्दः)

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमा	रामः	रामौ	रामाः
द्वितीया	रामम्	रामौ	रामान्
तृतीया	रामेण	रामाभ्याम्	रामैः
चतुर्थी	रामाय	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
पञ्चमी	रामात्	रामाभ्याम्	रामेभ्यः
षष्ठी	रामस्य	रामयोः	रामाणाम्
सप्तमी	रामे	रामयोः	रामेषु
सम्बोधन	हे राम	हे रामौ	हे रामाः

(अकारान्तपुंलिङ्गः सर्वशब्दः)

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमा	सर्वः	सर्वौ	सर्वे
द्वितीया	सर्वम्	सर्वौ	सर्वान्
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

(अकारान्तस्त्रीलिङ्गः सर्वशब्दः)

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमा	सर्वा	सर्वे	सर्वाः
द्वितीया	सर्वाम्	सर्वे	सर्वाः
तृतीया	सर्वया	सर्वाभ्याम्	सर्वाभिः
चतुर्थी	सर्वस्यै	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्याः	सर्वाभ्याम्	सर्वाभ्यः
षष्ठी	सर्वस्याः	सर्वयोः	सर्वासाम्
सप्तमी	सर्वस्याम्	सर्वयोः	सर्वासु

(अकारान्तक्लिवलिङ्गः सर्वशब्दः)

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**
प्रथमा	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
द्वितीया	सर्वम्	सर्वे	सर्वाणि
तृतीया	सर्वेण	सर्वाभ्याम्	सर्वैः
चतुर्थी	सर्वस्मै	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
पञ्चमी	सर्वस्मात्	सर्वाभ्याम्	सर्वेभ्यः
षष्ठी	सर्वस्य	सर्वयोः	सर्वेषाम्
सप्तमी	सर्वस्मिन्	सर्वयोः	सर्वेषु

(आकारान्तपुंलिङ्गः विश्वपाशब्दः)

	एकवचनम्	**द्विवचनम्**	**बहुवचनम्**

प्रथमा	विश्वपाः	विश्वपौ	विश्वपाः
द्वितीया	विश्वपाम्	विश्वपौ	विश्वपः
तृतीया	विश्वपा	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभिः
चतुर्थी	विश्वपे	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभ्यः
पञ्चमी	विश्वपः	विश्वपाभ्याम्	विश्वपाभ्यः
षष्ठी	विश्वपः	विश्वपोः	विश्वपाम्
सप्तमी	विश्वपि	विश्वपोः	विश्वपासु
सम्बोधन	हे विश्वपाः	हे विश्वपौ	हे विश्वपाः

(इकारान्तपुल्लिङ्गः हरिशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	हरिः	हरी	हरयः
द्वितीया	हरिम्	हरी	हरीन्
तृतीया	हरिणा	हरिभ्याम्	हरिभिः
चतुर्थी	हरये	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
पञ्चमी	हरेः	हरिभ्याम्	हरिभ्यः
षष्ठी	हरेः	हर्योः	हरीणाम्
सप्तमी	हरौ	हर्योः	हरिषु
सम्बोधन	हे हरे	हे हरी	हे हरयः

(इकारान्त त्रिशब्दः)

	पुल्लिङ्गः	स्त्रीलिङ्गः	क्लिवलिङ्गः
प्रथमा	त्रयः	तिस्रः	त्रीणि
द्वितीया	त्रयः	तिस्रः	त्रीणि
तृतीया	त्रिभिः	तिसृभिः	त्रिभिः
चतुर्थी	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः
पञ्चमी	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः	त्रिभ्यः
षष्ठी	त्रयाणाम्	तिसृणाम्	त्रयाणाम्
सप्तमी	त्रिषु	तिसृषु	त्रिषु
सम्बोधन	हे त्रयः	हे तिस्रः	हे त्रीणि

(इकारान्तपुल्लिङ्गः सखिशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
द्वितीया	सखायम्	सखायौ	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्याम्	सखिभिः
चतुर्थी	सख्ये	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
पञ्चमी	सख्युः	सखिभ्याम्	सखिभ्यः
षष्ठी	सख्युः	सख्योः	सखीनाम्
सप्तमी	सखौ	सख्योः	सखिषु
सम्बोधन	हे सखे	हे सखायौ	हे सखायः

(ईकारान्तपुल्लिङ्गः सुधीशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	सुधीः	सुधियौ	सुधियः
द्वितीया	सुधियम्	सुधियौ	सुधियः
तृतीया	सुधिया	सुधीभ्याम्	सुधीभिः
चतुर्थी	सुधिये	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
पञ्चमी	सुधियः	सुधीभ्याम्	सुधीभ्यः
षष्ठी	सुधियः	सुधियोः	सुधियाम्
सप्तमी	सुधियि	सुधियोः	सुधीषु
सम्बोधन	हे सुधीः	हे सुधियौ	हे सुधियः

(उकारान्तपुंल्लिङ्गः गुरुशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	गुरुः	गुरू	गुरवः
द्वितीया	गुरुम्	गुरू	गुरून्
तृतीया	गुरुणा	गुरुभ्याम्	गुरुभिः
चतुर्थी	गुरवे	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
पञ्चमी	गुरोः	गुरुभ्याम्	गुरुभ्यः
षष्ठी	गुरोः	गुर्वोः	गुरूणाम्
सप्तमी	गुरौ	गुर्वोः	गुरुषु
सम्बोधन	हे गुरो	हे गुरू	हे गुरवः

(ऋकारान्तपुल्लिङ्गः पितृशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	पिता	पितरौ	पितरः
द्वितीया	पितरम्	पितरौ	पितॄन्
तृतीया	पित्रा	पितृभ्याम्	पितृभिः
चतुर्थी	पित्रे	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
पञ्चमी	पितुः	पितृभ्याम्	पितृभ्यः
षष्ठी	पितुः	पित्रोः	पितॄणाम्
सप्तमी	पितरि	पित्रोः	पितृषु
सम्बोधन	हे पितः	हे पितरौ	हे पितरः

(ओकारान्तपुल्लिङ्गः गोशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	गौः	गावौ	गावः
द्वितीया	गाम्	गावौ	गाः
तृतीया	गवा	गोभ्याम्	गोभिः
चतुर्थी	गवे	गोभ्याम्	गोभ्यः
पञ्चमी	गोः	गोभ्याम्	गोभ्यः
षष्ठी	गोः	गवोः	गवाम्
सप्तमी	गवि	गवोः	गोषु
सम्बोधन	हे गौः	हे गावौ	हे गावः

(आकारान्तस्त्रीलिङ्गः रमाशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	रमा	रमे	रमाः
द्वितीया	रमाम्	रमे	रमाः
तृतीया	रमया	रमाभ्याम्	रमाभिः
चतुर्थी	रमायै	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
पञ्चमी	रमायाः	रमाभ्याम्	रमाभ्यः
षष्ठी	रमायाः	रमयोः	रमाणाम्
सप्तमी	रमायाम्	रमयोः	रमासु
सम्बोधन	हे रमे	हे रमे	हे रमाः

(इकारान्तस्त्रीलिङ्गः मतिशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	मतिः	मती	मतयः
द्वितीया	मतिम्	मती	मतीः
तृतीया	मत्या	मतिभ्याम्	मतिभिः
चतुर्थी	मत्यै, मतये	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
पञ्चमी	मत्याः, मतेः	मतिभ्याम्	मतिभ्यः
षष्ठी	मत्याः, मतेः	मत्योः	मतीनाम्
सप्तमी	मत्याम्, मतौ	मत्योः	मतिषु
सम्बोधन	हे मते	हे मती	हे मतयः

(ईकारान्तस्त्रीलिङ्गः नदीशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	नदी	नद्यौ	नद्यः
द्वितीया	नदीम्	नद्यौ	नदीः
तृतीया	नद्या	नदीभ्याम्	नदीभिः
चतुर्थी	नद्यै	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
पञ्चमी	नद्याः	नदीभ्याम्	नदीभ्यः
षष्ठी	नद्याः	नद्योः	नदीनाम्
सप्तमी	नद्याम्	नद्योः	नदीषु
सम्बोधन	हे नदि	हे नद्यौ	हे नद्यः

(उकारान्तस्त्रीलिङ्गः धेनुशब्दः)

	एकववनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
द्वितीया	धेनुम्	धेनू	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्याम्	धेनुभिः
चतुर्थी	धेन्वै,धेनवे	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
पञ्चमी	धेन्वाः,धेनोः	धेनुभ्याम्	धेनुभ्यः
षष्ठी	धेन्वाः,धेनोः	धेन्वोः	धेनूनाम्
सप्तमी	धेन्वाम्,धेनौ	धेन्वोः	धेनुषु
सम्बोधन	हे धेनो	हे धेनू	हे धेनवः

(ऋकारान्तस्त्रीलिङ्गः मातृशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	माता	मातरौ	मातरः
द्वितीया	मातरम्	मातरौ	मातृः
तृतीया	मात्रा	मातृभ्याम्	मातृभिः
चतुर्थी	मात्रे	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
पञ्चमी	मातुः	मातृभ्याम्	मातृभ्यः
षष्ठी	मातुः	मात्रोः	मातृणाम्
सप्तमी	मातरि	मात्रोः	मातृषु
सम्बोधन	हे मातः	हे मातरौ	हे मातरः

(अकारान्तक्लिवलिङ्गः ज्ञानशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि
द्वितीया	ज्ञानम्	ज्ञाने	ज्ञानानि
तृतीया	ज्ञानेन	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानैः
चतुर्थी	ज्ञानाय	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानेभ्यः
पञ्चमी	ज्ञानात्\द्	ज्ञानाभ्याम्	ज्ञानेभ्यः
षष्ठी	ज्ञानस्य	ज्ञानयोः	ज्ञानानाम्
सप्तमी	ज्ञाने	ज्ञानयोः	ज्ञानेषु
सम्बोधन	हे ज्ञान	हे ज्ञाने	हे ज्ञानानि

(इकारान्तक्लिवलिङ्गः वारिशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्

प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
द्वितीया	वारि	वारिणी	वारीणि
तृतीया	वारिणा	वारिभ्याम्	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
पञ्चमी	वारिणः	वारिभ्याम्	वारिभ्यः
षष्ठी	वारिणः	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	वारिणोः	वारिषु
सम्बोधन	हे वारि\वारे	हे वारिणी	हे वारीणि

(उकारान्तक्लिवलिङ्गः मधुशब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
द्वितीया	मधु	मधुनी	मधूनि
तृतीया	मधुना	मधुभ्याम्	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
पञ्चमी	मधुनः	मधुभ्याम्	मधुभ्यः
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनाम्
सप्तमी	मधुनि	मधुनोः	मधुषु
सम्बोधन	हे मधु	हे मधुनी	हे मधूनि

(हकारान्तपुंल्लिङ्गः लिह् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	लिट्\लिड्	लिहौ	लिहः
द्वितीया	लिहम्	लिहौ	लिहः
तृतीया	लिहा	लिड्भ्याम्	लिड्भिः
चतुर्थी	लिहे	लिड्भ्याम्	लिड्भ्यः
पञ्चमी	लिहः	लिड्भ्याम्	लिड्भ्यः
षष्ठी	लिहः	लिहोः	लिहाम्
सप्तमी	लिहि	लिहोः	लिट्सु,लिट्त्सु
सम्बोधन	हे लिट्\लिड्,	हे लिहौ	हे लिहः

(हकारान्तपुंल्लिङ्गः विश्ववाह् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	विश्ववाट्\ड्	विश्ववाहौ	विश्ववाहः
द्वितीया	विश्ववाहम्	विश्ववाहौ	विश्वौहः
तृतीया	विश्वौहा	विश्ववाड्भ्याम्	विश्ववाड्भिः
चतुर्थी	विश्वौहे	विश्ववाड्भ्याम्	विश्ववाड्भ्यः
पञ्चमी	विश्वौहः	विश्ववाड्भ्याम्	विश्ववाड्भ्यः
षष्ठी	विश्वौहः	विश्वौहोः	विश्वौहाम्
सप्तमी	विश्वौहि	विश्वौहोः	विश्ववाट्सु\ड्सु
सम्बोधन	हे विश्ववाट्\ड्	हे विश्ववाहौ	हे विश्ववाहः

(रकारान्त चतुर् शब्दः)

	पुंल्लिङ्गः	स्त्रीलिङ्गः	क्लिवलिङ्गः
प्रथमा	चत्वारः	चतस्रः	चत्वारि
द्वितीया	चतुरः	चतस्रः	चत्वारि
तृतीया	चतुर्भिः	चतसृभिः	चतुर्भिः
चतुर्थी	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
पञ्चमी	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः	चतुर्भ्यः
षष्ठी	चतुर्णाम्	चतसृणाम्	चतुर्णाम्
सप्तमी	चतुर्षु	चतसृषु	चतुर्षु
सम्बोधन	हे चत्वारः	हे चतस्रः	हे चत्वारि

(मकारान्तपुंल्लिङ्गः इदम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	अयम्	इमौ	इमे
द्वितीया	इमम्\एनम्	इमौ\एनौ	इमान्\एनान्
तृतीया	अनेन\एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः एनयोः	एषु

(मकारान्तस्त्रीलिङ्गः इदम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	इयम्	इमे	इमाः
द्वितीया	इमाम्\एनाम्	इमे\एने	इमाः\एनाः
तृतीया	अनया एनया	आभ्याम्	आभिः
चतुर्थी	अस्यै	आभ्याम्	आभ्यः
पञ्चमी	अस्याः	आभ्याम्	आभ्यः
षष्ठी	अस्याः	अनयोः/एनयोः	आसाम्
सप्तमी	अस्याः	अनयोः/एनयोः	आसु

(मकारान्तक्लिवलिङ्गः इदम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	इदम्	इमे	इमानि

द्वितीया	इदम्,एनत्	इमे,एने	इमानि,एनानि
तृतीया	अनेन,एनेन	आभ्याम्	एभिः
चतुर्थी	अस्मै	आभ्याम्	एभ्यः
पञ्चमी	अस्मात्	आभ्याम्	एभ्यः
षष्ठी	अस्य	अनयोः,एनयोः	एषाम्
सप्तमी	अस्मिन्	अनयोः,एनयोः	एषु

(मकारान्तपुलिङ्गः किम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	कः	कौ	के
द्वितीया	कम्	कौ	कान्
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

(मकारान्तस्त्रीलिङ्गः किम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	का	के	काः
द्वितीया	काम्	के	काः
तृतीया	कया	काभ्याम्	काभिः
चतुर्थी	कस्यै	काभ्याम्	काभ्यः
पञ्चमी	कस्याः	काभ्याम्	काभ्यः
षष्ठी	कस्याः	कयोः	कासाम्
सप्तमी	कस्य	कयोः	कासु

(मकारान्तक्लिवलिङ्गः किम् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	किम्	के	कानि
द्वितीया	किम्	के	कानि
तृतीया	केन	काभ्याम्	कैः
चतुर्थी	कस्मै	काभ्याम्	केभ्यः
पञ्चमी	कस्मात्	काभ्याम्	केभ्यः
षष्ठी	कस्य	कयोः	केषाम्
सप्तमी	कस्मिन्	कयोः	केषु

(दकारान्तपुलिङ्गः तच्छब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	सः	तौ	ते
द्वितीया	तम्	तौ	तान्
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्य	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

(दकारान्तस्त्रीलिङ्गः तद् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	सा	ते	ताः
द्वितीया	ताम्	ते	ताः
तृतीया	तया	ताभ्याम्	ताभिः
चतुर्थी	तस्यै	ताभ्याम्	ताभ्यः
पञ्चमी	तस्याः	ताभ्याम्	ताभ्यः
षष्ठी	तस्याः	तयोः	तासाम्
सप्तमी	तस्याम्	तयोः	तासु

(दकारान्तक्लिवलिङ्गः तद् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	तत्	ते	तानि
द्वितीया	तत्	ते	तानि
तृतीया	तेन	ताभ्याम्	तैः
चतुर्थी	तस्मै	ताभ्याम्	तेभ्यः
पञ्चमी	तस्मात्	ताभ्याम्	तेभ्यः
षष्ठी	तस्त	तयोः	तेषाम्
सप्तमी	तस्मिन्	तयोः	तेषु

(दकारान्तः अस्मच्छब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	अहम्	आवाम्	वयम्
द्वितीया	माम्,मा	आवाम्	अस्मान्, नः
तृतीया	मया	आवाभ्याम्	अस्माभिः
चतुर्थी	मह्यम्, मे	आवाभ्याम्	अस्मभ्यम्
पञ्चमी	मत्	आवाभ्याम्	अस्मत्
षष्ठी	मम,मे	आवयोः	अस्माकम्
सप्तमी	मयि	आवयोः	अस्मासु

(दकारान्तः युष्मद् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	त्वम्	युवाम्	यूयम्
द्वितीया	त्वाम्, त्वा	युवाम्	युष्मान्, वः
तृतीया	त्वया	युवाभ्याम्	युष्माभिः
चतुर्थी	तुभ्यम्,ते	युवाभ्याम्	युष्मभ्यम्
पञ्चमी	त्वत्	युवाभ्याम्	युष्मत्
षष्ठी	तव,ते	युवयोः	युष्माकम्
सप्तमी	त्वयि	युवयोः	युष्मासु

(नकारान्तपुलिङ्गः राजन् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
द्वितीया	राजानम्	राजानौ	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्याम्	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	राजभ्याम्	राजभ्यः
पञ्चमी	राज्ञः	राजभ्याम्	राजभ्यः
षष्ठी	राज्ञः	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि,राजनि	राज्ञोः	राजसु
सम्बोधन	हे राजन्	हे राजानौ	हे राजानः

(नकारान्तपुलिङ्गः मघवन् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	मघवान्	मघवन्तौ	मघवन्तः
द्वितीया	मघवन्तम्	मघवन्तौ	मघवतः
तृतीया	मघवता	मघवद्भ्याम्	मघवद्भिः
चतुर्थी	मघवते	मघवद्भ्याम्	मघवद्भ्यः
पञ्चमी	मघवतः	मघवद्भ्याम्	मघवद्भ्यः
षष्ठी	मघवतः	मघवतोः	मघवताम्
सप्तमी	मघवति	मघवतोः	मघवत्सु
सम्बोधन	हे मघवन्	हे मघवन्तौ	हे मघवन्तः

(नकारान्तपुलिङ्ग मघवन् शब्द का द्वितीय रुप)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	मघवा	मघवानौ	मघवानः
द्वितीया	मघवानम्	मघवानौ	मघोनः
तृतीया	मघोना	मघवभ्याम्	मघवभिः
चतुर्थी	मघोने	मघवभ्याम्	मघवभ्यः
पञ्चमी	मघोनः	मघवभ्याम्	मघवभ्यः
षष्ठी	मघोनः	मघोनोः	मघोनाम्
सप्तमी	मघोनि	मघोनोः	मघवसु
सम्बोधन	हे मघवन्	हे मघवानौ	हे मघवानः

(नकारान्तपुलिङ्गः पथिन् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
द्वितीया	पन्थानम्	पन्थानौ	पथः
तृतीया	पथा	पथिभ्याम्	पथिभिः
चतुर्थी	पथे	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
पञ्चमी	पथः	पथिभ्याम्	पथिभ्यः
षष्ठी	पथः	पथोः	पथाम्
सप्तमी	पथि	पथोः	पथिषु
सम्बोधन	हे पन्थाः	हे पन्थानौ	हे पन्थानः

(सकारान्तपुलिङ्गः विद्वस् शब्दः)

	एकवचनम्	द्विवचनम्	बहुवचनम्
प्रथमा	विद्वान्	विद्वांसौ	विद्वांसः
द्वितीया	विद्वांसम्	विद्वांसौ	विदुषः
तृतीया	विदुषा	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भिः
चतुर्थी	विदुषे	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
पञ्चमी	विदुषः	विद्वद्भ्याम्	विद्वद्भ्यः
षष्ठी	विदुषः	विदुषोः	विदुषाम्
सप्तमी	विदुषि	विदुषोः	विद्वत्सु
सम्बोधन	हे विद्वन्	हे विद्वांसौ	हे विद्वांसः

॥अथ समासाः॥

॥अथ केवलसमासः॥

वृत्तिः- तत्रादौ केवलसमासः। समासः पञ्चधा। तत्र समसनं समासः।

केवलसमासः स च विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः ।

अव्ययीभावसमासः प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानोऽव्ययीभावो ।

तत्पुरुषसमासः प्रायेणोत्तरपदार्थप्रधानस्तत्पुरुषः ।

(तत्पुरुषभेदः कर्मधारयः। कर्मधारयभेदो द्विगुः)

बहुव्रीहिसमासः प्रायेणान्यपदार्थप्रधानो बहुव्रीहिः ।

द्वन्द्वसमासः प्रायेणोभयपदार्थप्रधानो द्वन्द्वः ।

सूत्रम्- समर्थः पदविधिः । 2/1/1

वृत्तिः- पदसंबन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः॥

हिन्दी अर्थ- पदसंबन्धी अर्थात् पदों से सम्बन्ध रखने वाला कार्य समर्थ पदों के आश्रित जानना चाहिये ।

सूत्रम्- प्राक्कडारात्समासः । 2/1/3

वृत्तिः- कडाराः कर्मधारय इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते॥

हिन्दी अर्थ- कडाराः कर्मधारय सूत्र से पहले समास का अधिकार होता हैं ।

सूत्रम्- सह सुपा । 2/1/4

वृत्तिः- सुप् सुपा सह वा समस्यते॥

हिन्दी अर्थ- एक सुबन्त का दूसरे सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता हैं ।

सूत्रम्- समासत्वात्प्रातिपदिकत्वेन सुपो लुक्।

हिन्दी अर्थ- समास होने से कृत्तद्धितसमासाश्च इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने के कारण समास के अवयवों सुपों का सुपो धातुप्रातिपदिकयोः से लोप हो जाता हैं ।

परार्थाभिधानं वृत्तिः। कृत्तद्धितसमासैकशेषसनाद्यन्तधातुरूपाः पञ्च वृत्तयः। वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः। स च लौकिकोऽलौकिकश्चेति द्विधा। तत्र पूर्वं भूत इति लौकिकः इत्यलौकिकः। "पूर्व अम् भूत सु"

हिन्दी अर्थ- समास आदि पद जब अपने अर्थ अर्थात् का पूर्णतः या अंशतः परित्याग कर किसी विशिष्ट अर्थ का बोध कराते है उसे पूर्वाचार्य वृत्ति कहते हैं । और ये वृत्तियां **कृत्तद्धित्समास एकशेष और सनाद्यन्त** धातुरूप पांच प्रकार होती हैं ।

उदाहरणं यथा- भूतपूर्वः। भूतपूर्वे चरडिति निर्देशात्पूर्वनिपातः।

वार्तिक- इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च ।

हिन्दी अर्थ- सुबन्त का इव शब्द के साथ समास होता है परन्तु समासावयव विभक्ति का लोप नही होता है ।

उदाहरणं यथा- वागर्थौ इव वागर्थाविव ॥(वाणी और अर्थ के समान)

॥इति केवलसमासः॥

॥अथ अव्ययीभावः॥

सूत्रम्- अव्ययीभावः । 2/1/5

वृत्तिः- अधिकारोऽयं प्राक् तत्पुरुषात्॥

हिन्दी अर्थ- यहां से लेकर तत्पुरूष से पूर्वपूर्व तक जो समास विधान किया जायेगा उसकी अव्ययीभाव संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- अव्ययं-विभक्तिसमीपसमृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासंप्रति-शब्दप्रादुर्भा-पश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्यसम्पत्तिसाकल्यान्तवचनेषु । 2/1/6

वृत्तिः- विभक्त्यर्थादिषु वर्तमानमव्ययं सुबन्तेन सह नित्यं समस्यते सोऽव्ययीभावः। प्रायेणाविग्रहो नित्यसमासः, प्रायेणास्वपदविग्रहो वा। विभक्तौ, हरि ङि अधि इति स्थिते॥

हिन्दी अर्थ- 1 विभक्ति, 2 समीप, 3 समृद्धि(ऋद्धि का आधिक्य), 4 व्यृद्ध्यर्थ (ऋद्धि का अभाव), 5 अभाव(वस्तु का अभाव), 6 अत्यय(नष्ट होना), 7 असंप्रति , 8 शब्दप्रादुर्भाव(शब्द की प्रकाशता या प्रसिद्धि), 9 पश्चाद(बाद में), यथा(1 योग्यता 2 वीप्सा 3 पदार्थानतिवृत्ति 4 सादृश्य), 11 आनुपूर्व्य(क्रमानुसार), 12 यौगपद्य(एक साथ होना), 13 सादृश्य(सदृश), 14 सम्पत्ति(अनुरूप आत्मभाव), 15 साकल्य(सम्पूर्णता), 16 अन्त(समाप्ति) । इन सोलह अर्थो मे से किसी भी अर्थ में वर्तमान जो अव्यय है उसका समर्थ सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह अव्ययीभाव संज्ञक होता है । नित्य समास अविग्रह अर्थात् उसका लौकिक विग्रह नही होता अतः उसका अस्वपद विग्रह होता है ।

सूत्रम्- प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् । 1/2/43

वृत्तिः- समासशास्त्रे प्रथमानिर्दिष्टमुपसर्जनसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- समासविधायक सूत्र में प्रथमाविभक्ति द्वारा निर्दिष्ट जो पद तद्बोद्य उपसर्जन संज्ञक होता है ।

सूत्रम्- उपसर्जनं पूर्वम् । 2/2/30

वृत्तिः- समासे उपसर्जनं प्राक्प्रयोज्यम्। इत्यधः प्राक् प्रयोगः। सुपो लुक्। एकदेशविकृतस्यानन्यत्वात्प्रातिपदिकसंज्ञायां स्वाद्युत्पत्तिः। अव्ययीभावश्चेत्यव्ययत्वात्सुपो लुक्।

हिन्दी अर्थ- समास में उपसर्जन संज्ञक का पूर्व प्रयोग होता है ।

उदाहरणं यथा- अधिहरि॥

सूत्रम्- अव्ययीभावश्च । 2/4/18

वृत्तिः- अयं नपुंसकं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- अव्ययीभावसमास नपुंसक होता है ।

सूत्रम्- नाव्ययीभावादतोऽम्त्वपञ्चम्याः । 2/4/83

वृत्तिः- अदन्तादव्ययीभावात्सुपो न लुक्, तस्य पञ्चमीं विना अमादेशश्च स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अव्ययीभाव से परे सुप् का लुक् न हो किन्तु पंचमी को छोडकर अन्य सुपों को अम् आदेश हो । **उदाहरणं यथा-** गाः पातीति गोपास्तस्मिन्नित्यधिगोपम्॥

सूत्रम्- तृतीयासप्तम्योर्बहुलम् । 2/4/54

वृत्तिः- अदन्तादव्ययीभावात्तृतीयासप्तम्योर्बहुलमम्भावः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अव्ययीभाव से परे तृतीया और सप्तमी के स्थान पर बहुलता से अम् आदेश होता है ।

उदाहरणं यथा- अधिगोपम्, अधिगोपेन, अधिगोपे वा। कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम्। मद्राणां समृद्धिः सुमद्रम्। यवनानां व्यृद्धिर्दुर्यवनम्। मक्षिकाणामभावो निर्मक्षिकम्। हिमस्यात्ययोऽतिहिमम्। निद्रा संप्रति न युज्यत इत्यतिनिद्रम्। हरिशब्दस्य प्रकाश इतिहरि। विष्णोः पश्चादनुविष्णु। योग्यतावीप्सापदार्थानतिवृत्तिसादृश्यानि यथार्थाः। रूपस्य योग्यमनुरूपम्। अर्थमर्थं प्रति प्रत्यर्थम्। शक्तिमनतिक्रम्य यथाशक्ति ।

सूत्रम्- अव्ययीभावे चाकाले । 6/3/81

वृत्तिः- सहस्य सः स्यादव्ययीभावे न तु काले।

हिन्दी अर्थ- अव्ययीभाव में सह के स्थान में स आदेश होता परन्तु काल वाची शब्द परे हो तो नही होता।

उदाहरणं यथा- हरेः सादृश्यं सहरि। ज्येष्ठस्यानुपूर्व्येणेत्यनुज्येष्ठम्। चक्रेण युगपत् सचक्रम्। सदृशः सख्या ससखि। क्षत्राणां संपत्तिः सक्षत्रम्। तृणमप्यपरित्यज्य सतृणमत्ति। अग्निग्रन्थपर्यन्तमधीते साग्निमधीते। **(सादृश्य** सहरि।) **आनुपूर्व्य(क्रमानुसार)** नुज्येष्ठम्। **यौगपद्य(एक साथ होना)** सचक्रम्। **सादृश्य(सदृश)** ससखि। **सम्पत्ति(अनुरूप आत्मभाव)** सक्षत्रम्। **साकल्य(सम्पूर्णता)** सतृणमत्ति। 6 **अन्त(समाप्ति)** साग्निमधीते।

- **विभक्ति** = अधिहरि ।
- **समीप** = उपकृष्णम्।
- **समृद्धि** (ऋद्धि का आधिक्य)= सुमद्रम्।
- **व्यृद्धि** (ऋद्धि का अभाव) = दुर्यवनम्।
- **अर्थाभाव** (वस्तु का अभाव) = निर्मक्षिकम्।
- **अत्यय** (नष्ट होना) = अतिहिमम।
- **असंप्रति** (अब युक्त न होना) = अतिनिद्रम्।
- **शब्दप्रादुर्भाव** (शब्द की प्रकाशता या प्रसिद्धि) = इतिहरि।
- **पश्चाद्** (बाद में) = अनुविष्णु।
- **यथा-** (योग्यता,वीप्सा,पदार्थानतिवृत्ति,सादृश्य)।
- **योग्यता** = अनुरूपम्।
- **वीप्सा** = प्रत्यर्थम्।
- **पदार्थानतिवृत्ति** = यथाशक्ति।
- **सादृश्य** (तुल्य-सहरि।)
- **आनुपूर्व्य** (क्रमानुसार) नुज्येष्ठम्।
- **यौगपद्य** (एक साथ होना) सचक्रम्।
- **सादृश्य** (सदृश) ससखि।
- **सम्पत्ति** (अनुरूप आत्मभाव) सक्षत्रम्।
- **साकल्य** (सम्पूर्णता) सतृणमत्ति।
- **अन्त** (समाप्ति) साग्निमधीते।

सूत्रम्- नदीभिश्च । 2/1/20

वृत्तिः- नदीभिः सह संख्या समस्यते। (समाहारे चायमिष्यते)।

हिन्दी अर्थ- संख्यावाची सुबन्त नदीवाचक सुबन्तों के साथ अव्ययीभाव समास को प्राप्त होता है । **उदाहरणं यथा-** पञ्चगङ्गम्। द्वियमुनम्॥

सूत्रम्- तद्धिताः । 4/1/73

वृत्तिः- आपञ्चमसमाप्तेरधिकारोऽयम्॥

हिन्दी अर्थ- अष्टाध्यायी में यहां से लेकर पांचवें अध्याय की समाप्ति तक जो जो प्रत्यय हो उनकी तद्धित संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः । 5/4/107

वृत्तिः- शरदादिभ्यष्टच् स्यात्समासान्तोऽव्ययीभावे।

हिन्दी अर्थ- अव्ययीभाव समास में शरद् आदि प्रातिपदिकों से परे तद्धित संज्ञक टच् प्रत्यय हो और वह इस समास का अन्त्यावयव भी हो । **उदाहरणं यथा-** शरदः समीपमुपशरदम्। प्रतिविपाशम्।

वार्तिक- जराया जरश्च ।

हिन्दी अर्थ- अव्ययीभाव समास में जरा से टच् प्रत्यय करनें पर जरा शब्द को जरस् आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** उपजरसमित्यादि॥

सूत्रम्- अनश्च । 5/4/108

वृत्तिः- अन्नन्तादव्ययीभावाट्टच् स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- अन् जिसके अन्त में हो ऐसे अव्ययीभाव समास से परे समासान्त तद्धित संज्ञक टच् प्रत्यय हो।

सूत्रम्- नस्तद्धिते । 6/4/144

वृत्तिः- नान्तस्य भस्य टेर्लोपस्तद्धिते।

हिन्दी अर्थ- तद्धित परे होने पर नकारान्त भसंज्ञक की टी का लोप होता है । **उदाहरणं यथा-** उपराजम्। अध्यात्मम्॥

सूत्रम्- नपुंसकादन्यतरस्याम् । 5/4/109

वृत्तिः- अन्नन्तं यत् क्लीबं तदन्तादव्ययीभावाट्टज्वा स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अव्ययीभाव के अन्त यदि अनन्त नपुंसक शब्द हो तो अव्ययीभाव समास से परे समासान्त तद्धित संज्ञक टच् प्रत्यय विकल्प से हो। **उदाहरणं यथा-** उपचर्मम्। उपचर्म॥

सूत्रम्- झयः। 5/4/111

वृत्तिः- झयन्तादव्ययीभावाट्टज्वा स्यात्।

हिन्दी अर्थ- झय् प्रत्याहार जिसके अन्त में हो ऐसे अव्ययीभाव समास से परे समासान्त तद्धित संज्ञक टच् प्रत्यय विकल्प से हो। **उदाहरणं यथा-** उपसमिधम्। उपसमित्॥

॥इत्यव्ययीभावः॥

॥अथ तत्पुरुषः॥

सूत्रम्- तत्पुरुषः । 2/1/22

वृत्तिः- अधिकारोऽयं प्राग्बहुव्रीहेः॥

हिन्दी अर्थ- अष्टाध्यायी में यहां से लेकर शेषो बहुव्रीहिः सूत्र के पूर्व तक जो समास होता है उसकी तत्पुरुषसंज्ञक होती है ।

सूत्रम्- द्विगुश्च । 2/1/23

वृत्तिः- द्विगुरपि तत्पुरुषसंज्ञकः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- द्विगुसमास भी तत्पुरुषसंज्ञक होता है ।

सूत्रम्- द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नैः। 2/1/24

वृत्तिः- द्वितीयान्तं श्रितादिप्रकृतिकैः सुबन्तैः सह वा समस्यते स च तत्पुरुषः।

हिन्दी अर्थ- द्वितीयान्त सुबन्तों का श्रित आदि प्रकृति वालें सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है और वह तत्पुरुषसंज्ञक होता है। **उदाहरणं यथा-** कृष्णं श्रितः कृष्णश्रित इत्यादि॥

सूत्रम्- तृतीया तत्कृतार्थेन गुणवचनेन । 2/1/30

वृत्तिः- तृतीयान्तं तृतीयान्तार्थकृतगुणवचनेनार्थेन च सह वा प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- तृतीयान्त सुबन्त तृतीयान्त अर्थ के द्वारा कृत जो गुण तद्विशिष्ट द्रव्यवाचक सुबन्त एवं अर्थ शब्द के साथ विकल्प से समास को प्राप्त होता है और वह तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** शङ्कुलया खण्डः। धान्येनार्थो धान्यार्थः। तत्कृतेति किम् ? अक्ष्णा काणः॥

सूत्रम्- कर्तृकरणे कृता बहुलम् ।2/1/32

वृत्तिः- कर्तरि करणे च तृतीया कृदन्तेन बहुलं प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- कर्ता और करण अर्थ मे जो तृतीया तदन्त सुबन्त कृदन्तप्रातिपदिक के साथ बहुलता से समास को प्रात होता है वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । उदाहरणं यथा- हरिणा त्रातो हरित्रातः। नखैर्भिन्नः नखभिन्नः।

वार्तिक- कृद्ग्रहणे गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम् ।

हिन्दी अर्थ- कृदन्त के ग्रहण में गतिपूर्वक या कारकपूर्वक कृदन्त का भी ग्रहण होता है । **उदाहरणं यथा-** नखनिर्भिन्नः॥

सूत्रम्- चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः । 2/1/36

वृत्तिः- चतुर्थ्यन्तार्थाय यत् तद्वाचिना अर्थादिभिश्च चतुर्थ्यन्तं वा प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- चतुर्थ्यन्त सुबंत उस चतुर्थ्यन्त के अर्थ के वाच्य के लिये जो वस्तु तद्वाचक सुबन्तों के साथ एवं अर्थ,बलि,हित,मुख,रक्षित इन शब्दों के साथ विकल्प कों प्राप्त करता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** यूपाय दारु यूपदारु।

वार्तिक- तदर्थेन प्रकृतिविकृतिभाव एवेष्टः । तेनेह न –

हिन्दी अर्थ- तदर्थ से यहां प्रत्येक तदर्थ का ग्रहण अभीष्ट नही है अपितु प्रकृतिविकृतिभाव वाले तदर्थ का ही ग्रहण अभिप्रेत है । **उदाहरणं यथा-** रन्धनाय स्थाली।

वार्तिक- अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम् ।

हिन्दी अर्थ- अर्थ सुबन्त के साथ चतुर्थ्यन्त का ऊपर जो समास कहां गया उसे नित्य समास कहना चाहिये किन्तु इस समास का लिंग भी विशेष्य के अनुसार समझना चाहिये । **उदाहरणं यथा-** द्विजार्थः सूपः। द्विजार्था यवागूः। द्विजार्थं पयः। भूतबलिः। गोहितम्। गोसुखम्। गोरक्षितम्॥

सूत्रम्- पञ्चमी भयेन । 2/1/37

हिन्दी अर्थ- पंचम्यन्त सुबन्त का भयप्रकृतिक सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** चोराद्भयं चोरभयम्॥

सूत्रम्- स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन । 2/1/39

हिन्दी अर्थ- स्तोकार्थक(स्वल्पार्थक)अन्तिकार्थक(समीपार्थक)दूरार्थक और कृच्छ्रशब्द(कठिनशब्द) इन पंचम्यन्त सुबन्तों का क्तान्तप्रकृतिक सुबन्त के साथ समास होता ह और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है।

सूत्रम्- पञ्चम्याः स्तोकादिभ्यः । 6/3/2

वृत्तिः- अलुगुत्तरपदे।

हिन्दी अर्थ- स्तोक आदियों से परे पंचमी का लुक नही होता है उत्तर पद परे हो तो । **उदाहरणं यथा-** स्तोकान्मुक्तः। अन्तिकादागतः। अभ्याशादागतः। दूरादागतः। कृच्छ्रादागतः॥

सूत्रम्- षष्ठी । 2/2/8

वृत्तिः- सुबन्तेन प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- षष्ठ्यन्त सुबन्त का समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** राजपुरुषः॥

सूत्रम्- पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे । 2/2/1

वृत्तिः- अवयविना सह पूर्वादयः समस्यन्ते एकत्वसंख्याविशिष्टश्चेदवयवी। षष्ठीसमासापवादः।

हिन्दी अर्थ- यदि अवयवी एकत्वसंख्याविशिष्ट हो तो तद्वाचक सुबन्तों के साथ पूर्व,अपर,अधर और उत्तर इन चार सुबन्तों का विकल्प से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-**

पूर्वं कायस्य पूर्वकायः। अपरकायः। एकाधिकरणे किम् ? पूर्वश्छात्राणाम्॥

सूत्रम्- अर्धं नपुंसकम् । 2/2/2

वृत्तिः- समांशवाच्यर्धशब्दो नित्यं क्लीबेस प्राग्वत्। ,

हिन्दी अर्थ- सम अंश वाचक अर्थात् (ठीक आधे भाग) का वाचक अर्ध शब्द नित्यनपुंसक होता है। **उदाहरणं यथा-** अर्धं पिप्पल्याः अर्धपिप्पली।

सूत्रम्- सप्तमी शौण्डैः । 2/1/40

वृत्तिः- सप्तम्यन्तं शौण्डादिभिः प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- सप्तम्यन्त सुबन्त का शौण्ड आदि सुबन्तों के साथ विकल्प से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है। **उदाहरणं यथा-** अक्षेपु शौण्डः अक्षशौण्डः इत्यादि।

सूत्रम्- दिक्संख्ये संज्ञायाम् ।2/1/50

वृत्तिः- संज्ञायामेवेति नियमार्थं सूत्रम्।

हिन्दी अर्थ- दिशावाची सुबन्तों और संख्यावाची सुबन्तों का समानाधिकरण सुबन्त के साथ संज्ञा अर्थ गम्य होने पर विकल्प से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** पूर्वेषुकामशमी। सप्तर्षयः। तेनेह न उत्तरा वृक्षाः। पञ्च ब्राह्मणाः॥

सूत्रम्- तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च । 2/1/51

वृत्तिः- तद्धितार्थे विषये उत्तरपदे च परतः समाहारे च वाच्ये दिक्संख्ये प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- तद्धितार्थ के विषय में, उत्तरपद परे होने पर और समूह वाच्य होने पर दिशावाची सुबन्तों और संख्यावाची सुबन्तों का समानाधिकरण सुबन्त के साथ विकल्प से तत्पुष समास होता है **उदाहरणं यथा-** पूर्वस्यां शालायां भवः पूर्वा शाला इति समासे जाते

वार्तिक- सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः ।

हिन्दी अर्थ- समास आदि वृत्तिमात्र में सर्वनाम के स्थान पर पुंलिंग की तरह रूप हो जाता है ।

सूत्रम्- दिक्पूर्वपदादसंज्ञायां ञः । 4/2/107

वृत्तिः- अस्माद्भवाद्यर्थे ञः स्यादसंज्ञायाम्॥

हिन्दी अर्थ- दिशावाचक शब्द जिसकें पूर्वपद हो ऐसे प्रातिपदिक से परे भव आदि अर्थों तद्धितसंज्ञक ञ प्रत्यय हो जाता है असंज्ञा में ।

सूत्रम्- तद्धितेष्वचामादेः । 7/2/117

वृत्तिः- ञिति णिति च तद्धितेष्वचामादेरचो वृद्धिः स्यात्। यस्येति च।

हिन्दी अर्थ- जिस तद्धित प्रत्यय के ञकार और णकार की इत् संज्ञा हो उस तद्धित प्रत्यय के परे रहते अंग के आदि अच् को वृद्धि होती है। **उदाहरणं यथा-** पौर्वशालः। पञ्च गावो धनं यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहौ।

वार्तिक- द्वन्द्वतत्पुरुषयोरुत्तरपदे नित्य समासवचनम् ।

हिन्दी अर्थ- उत्तरपद के परे रहते अवान्तर द्वन्द्व या तत्पुपसमास की नित्यता कहनी चाहिये ।

सूत्रम्- गोरतद्धितलुकि । 5/4/92

वृत्तिः- गोऽन्तात्तत्पुरुषाट्टच् स्यात् समासान्तो न तु तद्धितलुकि।

हिन्दी अर्थ- तद्धित का लुक न हुआ हो तो गोशब्द जिसके अन्त में है ऐसे तत्पुरूष समास से परे समासान्त टच् प्रत्यय हो और वह तद्धितसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** पञ्चगवधनः॥

सूत्रम्- तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः । 1/2/42

हिन्दी अर्थ- समानाधिकरण तत्पुरुष समास कर्मधारयसंज्ञक होता है।

सूत्रम्- संख्यापूर्वो द्विगुः । 2/1/52

वृत्तिः- तद्धितार्थेत्यत्रोक्तस्त्रिविधः संख्यापूर्वो द्विगुसंज्ञः स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च इस सूत्र से जो त्रिविध समास कहां गया है यदि उसका पूर्वपद संख्यावाचक हो तो वह समास द्विगुसंज्ञक होता है ।

सूत्रम्- द्विगुरेकवचनम् । 2/4/1

वृत्तिः- द्विग्वर्थः समाहार एकवत्स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- द्विगु समास का अर्थ समाहार एकत्व का प्रतिपादक होता है ।

सूत्रम्- स नपुंसकम् । 2/4/17

वृत्तिः- समाहारे द्विगुर्द्वन्द्वश्च नपुंसकं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- समाहार अर्थ में द्विगु और द्वन्द्व समास नपुंसक होते है। **उदाहरणं यथा-** पञ्चानां गवां समाहारः पञ्चगवम्।

सूत्रम्- विशेषणं विशेष्येण बहुलम् । 2/1/57

वृत्तिः- भेदकं भेद्येन समानाधिकरणेन बहुलं प्राग्वत्।

हिन्दी अर्थ- भेदक **(विशेषण)** सुबन्त का समानाधिकरण भेद्य **(विशेष्य)** सुबन्त के साथ बहुलता से समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** नीलमुत्पलं नीलोत्पलम्। बहुलग्रहणात्क्वचिन्नित्यम् कृष्णसर्पः। क्वचिन्न रामो जामदग्न्यः॥

सूत्रम्- उपमानानि सामान्यवचनैः । 2/1/55

हिन्दी अर्थ- उपमानवाचक सुबन्त का समानधर्म को कह चुके हुए समानाधिकरण सुबन्तों के साथ समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है ।

उदाहरणं यथा- घन इव श्यामो = घनश्यामः।
उपमान, समानधर्म, उपमेय

वार्तिक- शाकपार्थिवादीनां सिद्धये उत्तरपदलोपस्योपसंख्यानम्

हिन्दी अर्थ- शाकपार्थिव आदि शब्दों की सिद्धि के लिये उत्तरपदलोप का उपसंख्यान करना चाहिये । **उदाहरणं यथा-** शाकप्रियः पार्थिवः शाकपार्थिवः। देवपूजको ब्राह्मणो देवब्राह्मणः।

सूत्रम्- नञ् । 2/1/6

वृत्तिः- नञ् सुपा सह समस्यते॥

हिन्दी अर्थ- नञ् इस अव्यय का समर्थ सुबन्त के साथ समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है ।

सूत्रम्- नलोपो नञः । 6/3/73

वृत्तिः- नञो नस्य लोप उत्तरपदे।

हिन्दी अर्थ- उत्तरपद परे होने पर नञ् के नकार का लोप होता है ।

उदाहरणं यथा- न ब्राह्मणः अब्राह्मणः॥

सूत्रम्- तस्मान्नुडचि । 6/3/74

वृत्तिः- लुप्तनकारान्नञ उत्तरपदस्याजादेर्नुडागमः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसके नकार का लोप हो चुका हो ऐसे नञ् से परे अजादि उत्तरपद को नुट् का आगम होता है ।

उदाहरणं यथा- अनश्वः। नैकधेत्यादौ तु नशब्देन सह सुप्सुपेति समासः॥

सूत्रम्- कुगतिप्रादयः । 2/2/18

वृत्तिः- एते समर्थेन नित्यं समस्यन्ते।

हिन्दी अर्थ- कु शब्द, गतिसंज्ञकशब्द और प्र आदि शब्द इनका समर्थ सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः॥

सूत्रम्- ऊर्यादिच्विडाचश्च । 1/4/61

ऊर्यादयश्च्व्यन्ता डाजन्ताश्च क्रियायोगे गतिसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- ऊरी आदि गण में पढे गये शब्द, च्विप्रत्ययान्त शब्द तथा डाच् प्रत्ययान्त शब्द क्रिया के योग में गतिसंज्ञक होते है ।

उदाहरणं यथा- ऊरीकृत्य। शुक्लीकृत्य। पटपटाकृत्य। सुपुरुषः॥

वार्तिक- प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया ।

हिन्दी अर्थ- गत आदि अर्थों में वर्तमान प्र आदि निपातों का प्रथमान्त सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** प्रगत आचार्यः प्राचार्यः।

वार्तिक- अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया ।

हिन्दी अर्थ- क्रान्त (पार गया हुआ, लांघ चुका हुआ) आदि अर्थों में वर्तमान अति आदि निपातों का द्वितीयान्त सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** अतिक्रान्तो मालामिति विग्रहे ।

सूत्रम्- एकविभक्ति चापूर्वनिपाते । 1/2/44

वृत्तिः- विग्रहे यन्नियतविभक्तिकं तदुपसर्जनसंज्ञं स्यान्न तु तस्य पूर्वनिपातः॥

हिन्दी अर्थ- विग्रह में जो नियत विभक्तिक हो अर्थात् जिससे निश्चित एक ही विभक्ति आती हो उस पद की उपसर्जनसंज्ञ होती है परन्तु उसका पूर्वनिपात नही होता है ।

सूत्रम्- गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य । 1/4/48

उपसर्जनं यो गोशब्दः स्त्रीप्रत्ययान्तं च तदन्तस्य प्रातिपदिकस्य ह्रस्वः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- उपसर्जनसंज्ञक गो शब्द या उपसर्जनसंज्ञक स्त्रीप्रत्ययान्त शब्द जिसके अन्त्य में हो ऐसे प्रातिपदिकसंज्ञक के अन्त्य अच् को ह्रस्व होता है । **उदाहरणं यथा-** अतिमालः।

वार्तिक- अवादयः क्रुष्टाद्यर्थे तृतीयया ।

हिन्दी अर्थ- क्रुष्ट (कूजित निन्दित) आदि अर्थों में वर्तमान अव आदि निपातों का तृतीयान्त सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** अवक्रुष्टः कोकिलया अवकोकिलः।

वार्तिक - पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या ।

हिन्दी अर्थ- ग्लान (खिन्न दुःखी) आदि अर्थों में वर्तमान परि आदि निपातों का चतुर्थ्यन्त सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः।

वार्तिक- निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या ।

हिन्दी अर्थ- कान्त (पार किया हुआ, लांघ चुका हुआ) आदि अर्थों में वर्तमान निर् आदि निपातों का पंचम्यन्त सुबन्त के साथ नित्य समास होता है और वह समास तत्पुरुषसंज्ञक होता है । **उदाहरणं यथा-** निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौशाम्बिः॥

सूत्रम्- तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् । 3/1/92

वृत्तिः- सप्तम्यन्ते पदे कर्मणीत्यादौ वाच्यत्वेन स्थितं यत्कुम्भादि तद्वाचकं पदमुपपदसंज्ञं स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- धातोः के अधिकार में कर्मण्यण आदि सूत्रों में कर्मणि आदि सपत्म्यपदों का वाच्य जो कुम्भ आदि वस्तु तद्वाचक पद उपपदसंज्ञक हो ।

सूत्रम्- उपपदमतिङ् । 2/2/19

वृत्तिः- उपपदं सुबन्तं समर्थेन नित्यं समस्यते। अतिङन्तश्चायं समासः।

हिन्दी अर्थ- उपपदसंज्ञक सुबन्त का समर्थ शब्द के साथ नित्य तत्पुरुषसमास होता है और यह अतिगन्त होता है । **उदाहरणं यथा-** कुम्भम् करोति कुम्भकारः। **अतिङ् किम् ?** मा भवान् भूत्। माङि लुङिति सप्तमीनिर्देशान्माङुपपदम्।

वार्तिक- गतिकारकोपपदानां कृद्भिः सह समासवचनं प्राक् सुबुत्पत्तेः

हिन्दी अर्थ- गति, कारक और उपपद इनका कृदन्तों के साथ यदि समास करना हो तो कृदन्तों से सुप् लाने से पूर्व ही अर्थात् असुबन्त कृदन्तों के साथ ही समास करना चाहिये । **उदाहरणं यथा-** व्याघ्री। अश्वक्रीती। कच्छपीत्यादि॥

सूत्रम्- तत्पुरुषस्याङ्गुलेः संख्याव्ययादेः । 5/4/86

वृत्तिः- संख्याव्ययादेरङ्गुल्यन्तस्य समासान्तोऽच् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- संख्यावाचक शब्द या अव्यय वाचक शब्द जिसके आदि में तथा अंगुलि शब्द जिसके अन्त में हो ऐसे तत्पुरुषसमास का अन्त्यावयव अच प्रत्यय हो । **उदाहरणं यथा-** द्वे अङ्गुली प्रमाणमस्य द्व्यङ्गुलम्। निर्गतमङ्गुलिभ्यः निरङ्गुलम् ।

सूत्रम्- अहः सर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः । 5/4/87

वृत्तिः- एभ्यो रात्रेरच् स्याच्चात्संख्याव्ययादेः।

हिन्दी अर्थ- अहन्, सर्व, एकदेशवाचक, संख्यात और पुण्य इन शब्दों से परे तथा संख्यावाचक शब्द या अव्यय वाचक शब्दों से परे जो भी रात्री शब्द तदन्त तत्पुरुषसमास से परे समासान्त अच् प्रत्यय होता है। **अहर्ग्रहणं द्वन्द्वार्थम्** यहां अहन् शब्द का ग्रहण द्वन्द्व समास के लिये है तत्पुरुषसमास के लिये नही ।

सूत्रम्- रात्राह्नाहाः पुंसि । 2/4/29

वृत्तिः- एतदन्तौ द्वन्द्वतत्पुरुषौ पुंस्येव।

हिन्दी अर्थ- रात्र, अह्न और अह ये शब्द जिसके अन्त में हो ऐसा द्वन्द्व और तत्पुरुष समास पुंलिंग में ही प्रयुक्त होता है अन्य लिंगों मे नही । **उदाहरणं यथा-** अहश्च रात्रिश्चाहोरात्रः। सर्वरात्रः। संख्यातरात्रः।

वार्तिक- संख्यापूर्वं रात्रं क्लीबम् ।

हिन्दी अर्थ- जिसके पूर्व में संख्यावाचक तथा अन्त में रात्र शब्द हो तो वह समास नपुंसक में ही प्रयुक्त होता है । **उदाहरणं यथा-** द्विरात्रम्। त्रिरात्रम् ।

सूत्रम्- राजाहः सखिभ्यष्टच् । 5/4/91

वृत्तिः- एतदन्तात्तत्पुरुषाट्टच् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- राजन् अहन् (दिन) और सखि (मित्र) ये शब्द जिसके अन्त में हो ऐसे तत्पुरुषसमास से परे समासान्त टच् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** परमराजः॥

सूत्रम्- आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः । 6/3/46

वृत्तिः- महत आकारो ऽन्तादेशः स्यात्समानाधिकरणे उत्तरपदे जातीये च परे ।

हिन्दी अर्थ- समानाधिकरण उत्तरपद परे हो या जातीयर प्रत्यय परे हो तो महत् शब्द को आकार अन्तादेश होता है । **उदाहरणं यथा-** महाराजः। प्रकारवचने जातीयर्। महाप्रकारो महाजातीयः॥

सूत्रम्- द्व्यष्टनः संख्यायामबहुव्रीह्यशीत्योः । 6/3/47

वृत्तिः- आत्स्यात्। द्वौ च दश च द्वादश।

हिन्दी अर्थ- द्वि और अष्टन् शब्दों को आकार अन्तादेश हो संख्यावाचक उत्तरपद परे हो तो परन्तु बहुव्रीहि समास में और अशीति उत्तरपद परे हो तो नही होता । **उदाहरणं यथा-** अष्टाविंशतिः॥

सूत्रम्- त्रेस्त्रयः । 6/3/48

हिन्दी अर्थ- संख्यावाचक उत्तरपद परे हो तो त्रि शब्द के स्थान पर त्रयस् आदेश होता है परन्तु बहुव्रीहि समास में और अशीति उत्तरपद परे हो तो नही होता । **उदाहरणं यथा-** त्रयोदश। त्रयोविंशतिः। त्रयस्त्रिंशत्॥

सूत्रम्- परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः । 2/4/26

वृत्तिः- एतयोः परपदस्येव लिङ्गं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- द्वन्द्व और तत्पुरुषसमास का लिंग उस समास के उत्तरपद के लिंग के समान हो । **उदाहरणं यथा-** कुक्कुटमयूर्याविमे। मयूरीकुक्कुटाविमौ।

वार्तिक- द्विगुप्राप्तापन्नालम्पूर्वगतिसमासेषु प्रतिषेधो वाच्यः

हिन्दी अर्थ- द्विगुसमास में एवं प्राप्त आपन्न और अलम् पूर्ववाले तत्पुरुषसमास में तथा गतिसमास में परवल्लिङ्गता का निषेध कहना चाहिये । **उदाहरणं यथा-** पञ्चसु कपालेषु संस्कृतः पञ्चकपालः पुरोडाशः।

सूत्रम्- प्राप्तापन्ने च द्वितीयया । 2/2/4

वृत्तिः- समस्येते। अकारश्चानयोरन्तादेशः।

हिन्दी अर्थ- प्राप्त और आपन्न सुबन्तों का द्वितीयान्त समर्थ सुबन्त के साथ विकल्प से तत्पुरुष समास होता है परन्तु इस समास में इन (प्राप्त और आपन्न) शब्दों को अ यह अन्तादेश भी होता है । **उदाहरणं यथा-** प्राप्तो जीविकां प्राप्तजीविकः। आपन्नजीविकः। अलं कुमार्यै अलंकुमारिः। अत एव ज्ञापकात्समासः। निष्कौशाम्बिः॥

सूत्रम्- अर्धर्चाः पुंसि च । 2/4/31

वृत्तिः- अर्धर्चादयः शब्दाः पुंसि क्लीबे च स्युः।

हिन्दी अर्थ- अर्धर्च आदि शब्द पुंलिंग और नपुंसकलिंग दोनों में होते है । **उदाहरणं यथा-** अर्धर्चः। अर्धर्चम्। एवं ध्वजतीर्थशरीरमण्डपयूपदेहाङ्कुशपात्रसूत्रादयः। सामान्ये नपुंसकम्। मृदु पचति। प्रातः कमनीयम्।

॥इति तत्पुरुषः॥

॥अथ बहुव्रीहिः॥

सूत्रम्- शेषो बहुव्रीहिः । 2/2/23

हिन्दी अर्थ- चार्थे द्वन्द्व इस द्वन्द्वविधान से पूर्व तक प्रथमान्त पदों का समास बहुव्रीहिसंज्ञक हो ।

सूत्रम्- अनेकमन्यपदार्थे । 2/2/24

वृत्तिः- अनेकं प्रथमान्तमन्यस्य पदस्यार्थे वर्तमानं वा समस्यते स बहुव्रीहिः॥

हिन्दी अर्थ- अन्य पद के अर्थ में वर्तमान एक से अधिक प्रथमान्त पदों का परस्पर विकल्प से समास होता है और वह बहुव्रीहिसंज्ञक हो ।

सूत्रम्- सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ । 2/2/35

वृत्तिः- सप्तम्यन्तं विशेषणं च बहुव्रीहौ पूर्वं स्यात्। अत एव ज्ञापकाद्व्यधिकरणपदो बहुव्रीहिः॥

हिन्दी अर्थ- बहुव्रीहिसमास में सप्तम्यन्त पद तथा विशेषण पद पूर्व में प्रयुक्त हो ।

सूत्रम्- हलन्तात्सप्तम्याः संज्ञायाम् । 6/3/9

वृत्तिः- हलन्तादन्ताच्च सप्तम्या अलुक्।

हिन्दी अर्थ- संज्ञागम्यमान होने पर उत्तरपद के परे रहते हलन्त और अजन्त शब्दों से परे सप्तमी विभक्ति का लुक नही होता है ।

उदाहरणं यथा- कण्ठेकालः। प्राप्तमुदकं यं स प्राप्तोदको ग्रामः। ऊढरथोऽनड्वान्। उपहृतपशू रुद्रः। उद्धृतौदना स्थाली। पीताम्बरो हरिः। वीरपुरुषको ग्रामः।

वार्तिक- प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो वा चोत्तरपदलोप।

हिन्दी अर्थ- प्र आदियों से परे जो धातुज (कृदन्त) शब्द तदन्त प्रथमान्त का अन्य प्रथमान्त के साथ विकल्प से समास होता है इस बहुव्रीहिसमास में पूर्वपद के स्थित धातुज उत्तरपद का विकल्प से लोप होता है । **उदाहरणं यथा-** प्रपतितपर्णःप्रपर्णः। ,

वार्तिक- नञोऽस्त्यर्थानां वाच्यो वा चोत्तरपदलोपः।

हिन्दी अर्थ- नञ से परे अस्त्यर्थक (विद्यमानार्थक) जो शब्द तदन्त प्रथमान्त का अन्य प्रथमान्त के साथ विकल्प से समास होता है इस बहुव्रीहिसमास के पूर्वपद में स्थित विद्यमानार्थक उत्तरपद का विकल्प से लोप होता है । **उदाहरणं यथा-** अविद्यमानपुत्रःअपुत्रः॥ ,

सूत्रम्- स्त्रियाः पुंवद्भाषितपुंस्कादनूङ्समानाधिकरणेस्त्रियाम् अपूरणीप्रियादिषु। 6/3/34

वृत्तिः- उक्तपुंस्कादनूङ् ऊङोऽभावो ऽस्यामिति बहुव्रीहिः। निपातनात्पञ्चम्या अलुक् षष्ठ्याश्च लुक्। तुल्ये प्रवृत्तिनिमित्ते यदुक्तपुंस्कं तस्मात्पर ऊङोऽभावो यत्र तथाभूतस्य स्त्रीवाचकशब्दस्य पुंवाचकस्येव रूपं स्यात् समानाधिकरणे स्त्रीलिङ्गे उत्तरपदे न तु पूरण्यां प्रियादौ च परतः। गोस्त्रियोरिति ह्रस्वः।

हिन्दी अर्थ- जिससे परे ऊङ प्रत्यय न किया गया हो ऐसे भाषितपुंस्क स्त्रीलिंगशब्द को पुंवत् हो जाता है समानाधिकरण स्त्रीलिंग उत्तरपद परे हो तो परन्तु पूरणी और प्रिया आदि के परे रहते ये पुंवद्भाव नही होता है । **उदाहरणं यथा-** चित्रगुः। रूपवद्भार्यः। अनूङ् किम् ? वामोरूभार्यः॥

सूत्रम्- अप्पूरणीप्रमाण्योः । 5/4/116

वृत्तिः- पूरणार्थप्रत्ययान्तं यत्स्त्रीलिङ्गं तदन्तात्प्रमाण्यन्ताच्च बहुव्रीहे रप्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- पूरणार्थप्रत्ययान्त जो स्त्रीलिंग शब्द तदन्त बहुव्रीहि से तथा प्रमाणीशदान्त बहुव्रीहि से समासान्त अप् प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ताः कल्याणी पञ्चमा रात्रयः। स्त्री प्रमाणी यस्य स स्त्रीप्रमाणः। अप्रियादिषु किम् ? कल्याणीप्रिय इत्यादि॥

सूत्रम्- बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्षच् । 5/4/113

वृत्तिः- स्वाङ्गवाचिसक्थ्यक्ष्यन्ताद्बहुव्रीहेः षच् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसके अन्त में स्वांगवाची सक्थि (उरू) या अक्षि (नेत्र) शब्द हो उस बहुव्रीहि से समासान्त षच् प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- दीर्घसक्थः। जलजाक्षी। स्वाङ्गात्किम् ? दीर्घसक्थि शकटम्। स्थूलाक्षा वेणुयष्टिः। अक्ष्णोऽदर्शनादिति वक्ष्यमाणोऽच्॥

सूत्रम्- द्वित्रिभ्यां षः मूर्ध्नः । 5/4/115

वृत्तिः- आभ्यां मूर्ध्नः षः स्याद्बहुव्रीहौ।

हिन्दी अर्थ- बहुव्रीहि समास में द्वि या त्रि शब्दों से परे यदि मूर्धन् शब्द हो तो उससे समासान्त ष प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- द्विमूर्धः। त्रिमूर्धः॥

सूत्रम्- अन्तर्बहिर्भ्यां च लोम्नः । 5/4/117

वृत्तिः- आभ्यां लोम्नोऽप्स्याद्बहुव्रीहौ।

हिन्दी अर्थ- बहुव्रीहि समास में अन्तर् और बहिस् अव्ययों से परे यदि लोमन् शब्द हो तो उससे समासान्त अप् प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- अन्तर्लोमः। बहिर्लोमः॥

सूत्रम्- पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः । 5/4/138

वृत्तिः- हस्त्यादिवर्जितादुपमानात्परस्य पादशब्दस्य लोपः स्याद्बहुव्रीहौ।

हिन्दी अर्थ- हस्त्यादियों से भिन्न उपमानवाचक शब्द से परे पाद शब्द का समासान्त लोप हो बहुव्रीहि समास में । **उदाहरणं यथा-** व्याघ्रस्येव पादावस्य व्याघ्रपात्। **अहस्त्यादिभ्यः किम् ?** हस्तिपादः। कुसूलपादः॥

सूत्रम्- संख्यासुपूर्वस्य । 5/4/140

वृत्तिः- पादस्य लोपः स्यात्समासान्तो बहुव्रीहौ।

हिन्दी अर्थ- संख्यावाचकशब्द अथवा सु अव्यय जिसके पूर्व में हो ऐसे पाद शब्द का समासान्त लोप हो बहुव्रीहि समास में । **उदाहरणं यथा-** द्विपात्। सुपात्॥

सूत्रम्- उद्विभ्यां काकुदस्य । 5/4/148

वृत्तिः- लोपः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- उद् अथवा वि निपातों से परे काकुद् शब्द का समासान्त लोप हो बहुव्रीहि समास में । **उदाहरणं यथा-** उत्काकुत्। विकाकुत्॥

सूत्रम्- पूर्णाद्विभाषा । 5/4/149

हिन्दी अर्थ- पूर्ण शब्द से परे काकुद् शब्द का विकल्प से समासान्त लोप हो बहुव्रीहि समास में । **उदाहरणं यथा-** पूर्णकाकुत्। पूर्णकाकुदः॥

सूत्रम्- सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः । 5/4/150

वृत्तिः- सुदुर्भ्यां हृदयस्य हृद्भावो निपात्यते।

हिन्दी अर्थ- बहुव्रीहिसमास में सु और दुर् निपातों से परे हृदय शब्द के स्थान हृद् आदेश निपातित किया जाता है क्रमशः मित्र और शत्रु अर्थो में । **उदाहरणं यथा-** सुहृन्मित्रम्। दुर्हृदमित्रः॥

सूत्रम्- उरः प्रभृतिभ्यः कप् । 5/4/151

हिन्दी अर्थ- उरस् शब्द जिसके अन्त में हो ऐसे बहुव्रीहि समास में समासान्त कप् प्रत्यय होता है ।

सूत्रम्- सोऽपदादौ । 8/3/38

वृत्तिः- पाशकल्पककाम्येषु विसर्गस्य सः॥

हिन्दी अर्थ- पाश, कल्प, क और काम्य इन चार प्रत्ययों के परे रहते विसर्ग के स्थान सकार आदेश होता है ।

सूत्रम्- कस्कादिषु च । 8/3/48

वृत्तिः- एष्विण उत्तरस्य विसर्गस्य षोऽन्यस्य तु सः। इति सः।

हिन्दी अर्थ- कस्क आदि गणपठित् शब्दों में इण् प्रत्याहार के परे विसर्ग हो तो उसे षकार आदेश होता है । परन्तु जहां इण् प्रत्याहार न हों वहां सकार ही होता है । **उदाहरणं यथा-** व्यूढोरस्कः॥

सूत्रम्- इणः षः । 8/3/39

वृत्तिः- इण उत्तरस्य विसर्गस्य षः पाशकल्पककाम्येषु परेषु।

हिन्दी अर्थ- पाश, कल्प, क और काम्य इन चार प्रत्ययों के परे रहते यदि इण् प्रत्याहार के परे विसर्ग हो तो उसे षकार आदेश होता है ।

उदाहरणं यथा- प्रियसर्पिष्कः॥

सूत्रम्- निष्ठा । 2/2/36

वृत्तिः- निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्वं स्यात्। युक्तयोगः॥

हिन्दी अर्थ- बहुव्रीहिसमास में निष्ठाप्रत्ययान्त शब्द पूर्व में प्रयुक्त हो।

सूत्रम्- शेषाद्विभाषा । 5/4/154

वृत्तिः- अनुक्तसमासान्ताद्बहुव्रीहेः कब्वा।

हिन्दी अर्थ- जिस बहुव्रीहि से कोई समासान्त न कहां गया हो तो उससे समासान्त कप् प्रत्यय विकल्प से होता है । **उदाहरणं यथा-** महायशस्कः, महायशाः ।

॥इति बहुव्रीहिः॥

॥अथ द्वन्द्वः॥

सूत्रम्- चार्थे द्वन्द्वः ।2/2/29

वृत्तिः- अनेकं सुबन्तं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते स द्वन्द्वः।

हिन्दी अर्थ- च के अर्थ में वर्तमान अनेक सुबन्तों का विकल्प से परस्पर समास होता है और वह समास द्वन्द्वसंज्ञक होता है ।

समुच्चयान्वाचयेतरेतरयोगसमाहाराश्चार्थाः।

हिन्दी अर्थ- च के चार अर्थ होते है-

समुच्चय, अन्वाचय, इतरेतर, समाहार ।

- **समुच्चय-** परस्परनिरपेक्षस्यानेक स्यैकस्मिन्नन्वयः समुच्चयः।
  हिन्दी अर्थ- जब परस्पर निराकांक्ष पदों का किसी एक द्रव्य गुण क्रिया में अन्वय हो तो वह समुच्चय होता है । **उदाहरणं यथा-** "ईश्वरं गुरुं च भजस्व" (ईश्वर को भजो और गुरु को भी) ।

- **अन्वाचय** - अन्यतरस्यानुषङ्गिकत्वेन अन्वयोऽन्वाचयः।
  हिन्दी अर्थ- जहां एक पदार्थ प्रधान बनकर और दूसरा अप्रधान बनकर भिन्नभिन्न क्रियाओं में अन्वित हो रहे हो वहां अन्वाचय होता है । **उदाहरणं यथा-** "भिक्षामट गां चानय"।

- **इतरेतर-** मिलितानामन्वय इतरेतरयोगः।
  हिन्दी अर्थ- जब परस्पर सापेक्ष पदों का समूह एकधर्मावच्छिन्नरूप से क्रिया में अन्वित किया जाता है वहां इतरेतरयोग होता है । **उदाहरणं यथा-** "धवखदिरौ छिन्धि"।

- **समाहार-** समूहः समाहारः ।
  हिन्दी अर्थ- समूह का नाम समाहार है । **उदाहरणं यथा-** "संज्ञापरिभाषम्"।

सूत्रम्- राजदन्तादिषु परम् । 2/2/31

वृत्तिः- एषु पूर्वप्रयोगार्हं परं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- राजदन्त आदि में पूर्वनिपात के योग्य पद का परनिपात हो । **उदाहरणं यथा-** दन्तानां राजानो राजदन्ताः।

धर्मादिष्वनियमः।

हिन्दी अर्थ- धर्म आदि शब्दों के द्वन्द्व समास में पूर्वनिपात का कोई नियम नही होता । **उदाहरणं यथा-** अर्थधर्मौ। धर्मार्थावित्यादि॥

सूत्रम्- द्वन्द्वे घि । 2/2/32

वृत्तिः- द्वन्द्वे घिसंज्ञं पूर्वं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- द्वन्द्वसमास में घिसंज्ञक पूर्व में प्रयुक्त हो । **उदाहरणं यथा-** हरिश्च हरश्च हरिहरौ॥

सूत्रम्- अजाद्यदन्तम् । 2/2/33

वृत्तिः- द्वन्द्वे पूर्वं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जो शब्द अजादि भी हो और अदन्त भी उसका द्वन्द्व समास में पूर्वनिपात होता है । **उदाहरणं यथा-** ईशकृष्णौ ।

सूत्रम्- अल्पाच्तरम् । 2/2/34

हिन्दी अर्थ- द्वन्द्वसमास में अल्प अच् वाला पूर्व में प्रयुक्त होता है । **उदाहरणं यथा-** शिवकेशवौ॥

सूत्रम्- पिता मात्रा । 1/2/70

वृत्तिः- मात्रा सहोक्तौ पिता वा शिष्यते।

हिन्दी अर्थ- मातृ शब्द के साथ कहे जाने पर पितृ शब्द विकल्प से शेष रहता है अर्थात् मातृशब्द लुप्त हो जाता है । **उदाहरणं यथा-** माता च पिता च पितरौ, मातापितरौ वा ।

सूत्रम्- द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गानाम् । 2/4/2

वृत्तिः- एषां द्वन्द्व एकवत्।

हिन्दी अर्थ- प्राण्यङ्गोंऔर सेनाङ्गों का द्वन्द्व एकवत् (वाद्याङ्गों) तूर्याङ्गों , अर्थात् केवल समाहार अर्थ का ही प्रतिपादक हो ।

उदाहरणं यथा-

प्राण्यङ्ग- पाणिपादम् (हाथों और पांवों का समूह) ।

तूर्याङ्ग- मार्दङ्गिकवैणविकम् (तबला वादकों और वेणुवादकों का समूह)।

सेनाङ्ग- रथिकाश्वारोहम् (रथिकों और घुडसवारों का समूह)।

सूत्रम्- द्वन्द्वाच्चुदषहान्तात्समाहारे । 5/4/106

वृत्तिः- चवर्गान्ताद्दषहान्ताच्च द्वन्द्वाट्टच् स्यात्समाहारे।

हिन्दी अर्थ- चवर्गान्त, दकारान्त, षकारान्त और हकारान्त समाहारद्वन्द्व से समासान्त टच् प्रत्यय हो । **उदाहरणं यथा-** चवर्गान्त- वाक् च त्वक् च **वाक्त्वचम्** (वाणी और त्वचा का समुदाय) । **त्वक्स्रजम्** (त्वचा और माला का समाहार) । दकारान्त- **शमीदृषदम्** (शमी वृक्ष और पत्थर का समुदाय) । षकारान्त- **वाक्त्विषम्** (वाणी और कान्ति का समुदाय) । हकारान्त- **छत्रोपानहम्** (छाते और जूते का समुदाय) । समाहारे किम् ? **प्रावृट्शरदौ ।**

॥इति द्वन्द्वः॥

॥अपत्याधिकारप्रकरणम्॥

सूत्र	प्रत्यय	उदाहरण
1. स्त्रीपुंसाभ्यांनञ्स्नञौभवनात्	नञ्स्नञौ	स्त्रैणः। पौंस्नः
2. द्विगोर्लुगनपत्ये	तद्धित लुक्	पञ्चसुकपालेपु संस्कृतः पुरोडाशः
3. गोत्रेऽलुगचि	गोत्रप्रत्ययलुक्	गर्गाणांछात्राः।
4. आपत्यस्य च तद्धितेऽनाति	यलोप	गार्गीयाः।
5. यूनिलुक्	युव लुक्	ग्लुचुकस्य गोत्रापत्यं ग्लुचुकायनिः।
6. पैलादिभ्यश्च	युव लुक्	पैलः,
7. इञःप्राचाम्	इञ	दाक्षिः पिता। दाक्षायणःपुत्रः॥
8. न तौल्वादिभ्यः	युव लुक्	तौल्वलिःपिता। तौल्वलायनःपुत्रः॥
7. फक्फिञोरन्यतरस्याम्	युव विकल्प लोप	कात्यायनस्य छात्राः- कातीयाः। कात्यायनीयाः।
8. तस्यापत्यम्	अण्	औपगवः।आश्वपतः।दैत्यः।औत्सः।स्त्रैणः।पौंस्नः॥
13. एकोगोत्रे	अण्	उपगोर्गोत्रापत्य औपगवः।गार्ग्यः।नाडायनः॥
14. अश्वादिभ्यः फञ्	फञ्	आश्वायनः।
15. शिवादिभ्योऽण्	अण्	शिवस्यापत्यं "शैवः"। गाङ्गः।
16. अवृद्धाभ्योनदीमानुषीभ्यस्तन्नामिकाभ्यः	अण्	यामुनः।नार्मदः।
17. ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च	अण्	**ऋषिभ्यः**- वासिष्ठः।वैश्वामित्रः। **अन्धकेभ्यः** -श्वाफल्कः। **वृष्णिभ्यः** - वासुदेवः।अनिरुद्धः। **कुरुभ्यः**- नाकुलः।साहदेवः।
18. मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः	उ आदेश अण् प्रत्ययश्च	द्वैमातुरः। षाण्मातुरः। सांमातुरः। भाद्रमातुरः।
19. कन्यायाःकनीन च	अण्	कानीनो- व्यासः,कर्णश्च ।
20. विकर्णशुङ्गच्छगलाद्वत्सभरद्वाजात्रिषु	अपत्ये अण्	वैकर्णो वात्स्यः, "वैकर्णिरन्यः" । शौङ्गो भारद्वाजः, "शौङ्गिरन्यः"। छागल आत्रेयः,"छागलिरन्यः" ।
21. पीलाया वा	अण् पक्षे ढक्	पीलाया अपत्यं पैलः। पैलेयः(ढक्)॥
22. ढक्चमण्डूकात्-	ढक्,पक्षे अण, इञ्	माण्डूकेयः।माण्डूकः।माण्डूकिः॥
23. स्त्रीभ्योढक्	ढक्	वैनतेयः।
24. द्व्यचः	ढक्	दात्तेयः।
25. इतश्चानिञः	ढक्	दौलेयः।नैधेयः। आत्रेयः ।
26. शुभ्रादिभ्यश्च	ढक्	शुभ्रस्यापत्यं "शौभ्रेयः"॥
27. विकर्णकुषीतकात्काश्यपे	ढक्	वैकर्णेयः।कौषीतकेयः।
28. भ्रुवोवुक्च	वुक् पक्षे ढक्	भ्रौवेयः॥
29. प्रवाहणस्य ढे	ढक्	प्रवाहणस्यापत्यंप्रावाहणेयः-"प्रवाहणेयः"॥
30. तत्प्रत्ययस्य च	ढक्	प्रवाहणेयस्यापत्यं "प्रवाहणेयिः"
31. कल्याण्यादीनामिनङ्	इनङ् आदेश ढक् च	काल्याणिनेयः।बान्धकिनेयः॥
32. कुलटाया वा	इनङ् / ढक्	कौलटिनेयः - कौलटेयः।
33. हृद्भगसिन्ध्वन्तेपूर्वपदस्य च	अचो वृद्धि	सुहृदोपत्यं "सौहार्दः"। सुभगायापत्यं "सौभागिनेयः"। सक्तुप्रधानाःसिन्धवः "सक्तुसिन्धवः"। **तेषुभवः**- "साक्तुसैन्धवः"॥
34. चटकाया ऐरक्	ऐरक्	चटकस्य चटकाया वा अपत्यं "चाटकैरः"।
35. गोधायाढ्रक्	ढ्रक्	गौधेरः। शुभ्रादित्वात्पक्षे ढक्। गौधेयः॥

36. आरगुदीचाम्	द्रक्	गोधारः। जडस्यापत्यं "जाडारः"। पण्डस्यापत्यं "पाण्डारः"॥
37. क्षुद्राभ्योवा	द्रक् पक्षे ढक्	काणेरः - काणेयः। दासेरः - दासेयः॥
38. पितृष्वसुश्छण्	छण्	पैतृष्वस्रीयः॥
39. ढकिलोपः	छण् लोपः	पैतृष्वसेयः॥
40. मातृष्वसुश्च	छण् ढक् लोपः	मातृष्वस्रीयः। मातृष्वसेयः॥
41.चतुष्पाद्भ्योढञ्	ढञ्	कामण्डलेयः।
43. गृष्ट्यादिभ्यश्च	ढञ्	गार्ष्टेयः।
51. आगस्त्यकौण्डिन्ययोरगस्तिकुण्डिनच्	अगस्ति कुण्डिनच् आदेश	अगस्तयः।कुण्डिनाः॥
52. राजश्वशुराद्यत्	यत्	
वार्तिक- राज्ञोजातावेवेतिवाच्यम्	यत्	राजन्यः।श्वशुर्यः।
53. येचाऽभावकर्मणोः	अन् प्रकृतिभाव	राजनः।
54. अन्	अन् प्रकृतिभाव	राज्यम् ।
55. संयोगादिश्च	इन् प्रकृतिभाव	चक्रिणोऽपत्यं "चाक्रिणः"॥
56. नपूर्वोऽपत्येऽवर्मणः	अन् प्रकृतिभाव	भाद्रसामः।
वार्तिक- "वाहितनाम्नइतिवाच्यम्"	-	हितनाम्नोऽपत्यं "हैतनामः" – "हैतनामनः"॥
57. ब्राह्मोऽजातौ	-	अजातौ- ब्राह्मंहविः। जातौ- ब्राह्मणोऽपत्यं "ब्राह्मणः"।
58. औक्षमनपत्ये	-	औक्षंपदम्।
59. षपूर्वहन्धृतराज्ञामणि		औक्ष्णः।ताक्ष्णः।भ्रौणघ्नः।धृतराज्ञोऽपत्यंधार्तराज्ञः।
60. क्षत्राद् घः	घ	क्षत्रियः।जातावित्येव।क्षात्रिरन्यः॥
61. कुलात्खः	ख	कुलीनः।
62. अपूर्वपदादन्यतरस्यांयड्ढकञौ	ढक्,अञ् पक्षे ख	कुल्यः - कौलेयकः - कुलीनः।
63. महाकुलादञ्खञौ	अञ्,खञ् पक्षे ख	माहाकुलः- माहाकुलीनः - महाकुलीनः॥
64. दुष्कुलाड्ढक्-	ढ पक्षे ख	दौष्कुलेयः- दुष्कुलीनः॥
65. स्वसुश्छ	छ	स्वस्रीयः॥
66. भ्रातुर्व्यच्च	व्यच, छ	भ्रातृव्यः- भ्रात्रीयः॥
67. व्यन्सपत्ने	व्यच,	भ्रातृव्यःशत्रुः।
68. रेवत्यादिभ्यष्ठक्	ठक्	
69. ठस्येकः	इक्	रैवतिकः॥
70. गोत्रास्त्रियाःकुत्सनेणच	ठक्	गार्ग्याऽपत्यं "गार्गः" - गार्गिकोवा "जाल्मः"।
71. वृद्धाट्ठक्सौवीरेषुबहुलम्	ठक्	भागवित्तेः- भागवित्तिकः। पक्षे फक्। भागवित्तायनः॥
72. फेश्छच	छ चात् ठक्	यामुन्दायनीयः- यामुन्दायनीकः।
73. फाण्टाहृतिमिमताभ्यांणफिञौ	ण, फिञ्	फाण्टाहृतः- फाण्टाहृतायनिः। मैमतः - मैमतायनिः॥
74. कुर्वादिभ्योण्यः	ण्य	कौरव्याब्राह्मणाः। वावदूक्याः॥
75. सेनान्तलक्षणकारिभ्यश्च	ण्य	हारिषेण्यः। लाक्षण्यः।
76. दीचामिञ्	इञ्	हारिषेणिः।लाक्षणिः।तान्तुवायिः।कौम्भकारिः।
वार्तिक- "तक्ष्णोऽणउपसंख्यानम्"	वा इञ् पक्षे ण्य	ताक्ष्णः।पक्षे-ताक्षण्यः॥
77. तिकादिभ्यःफिञ्	फ़िञ्	तैकायनिः॥
78. कौशल्यकार्मार्याभ्यांच	फ़िञ्	कुशलस्यापत्यं कौशल्यायनिः। कर्मारस्यापत्यं कार्मार्यायणिः।
वार्तिक- "छागवृषयोरपि"	फ़िञ्	छाग्यायनिः। वार्ष्यायणिः॥
79. अणोद्व्यचः	फ़िञ्	कार्त्रायणिः। अणःइतिकिम्? दाक्षायणः। द्व्यचःकिम्? औपगविः॥

वार्तिक- "त्यादादीनांफिञ्वावाच्यः	फिञ्	त्यादायनिः - त्यादः॥
80. उदीचांवृद्धादगोत्रात्	फिञ्	आम्रगुप्तायनिः।
81. वाकिनादीनांकुक्च	फिञ् वा	वाकिनस्यापत्यं वाकिनकायनिः , वाकिनिः॥
82. पुत्रान्तादन्यतरस्याम्	फिञ्	गार्गीपुत्रकायणिः- गार्गीपुत्रायणिः।गार्गीपुत्रिः॥
83. प्राचामवृद्धात्फिन्बहुलम्	फिञ्	ग्लुचुकायनिः॥
84. मनोर्जातावञ्यतौषुक्च	षुक्	मानुषः- मनुष्यः॥
85. जनपदशब्दात्क्षत्रियादञ्	अञ्	ऐक्ष्वाकः।ऐक्ष्वाकौ॥
वा."क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्यराजन्यपत्यवत्"	अञ्	पञ्चालानांराजा "पाञ्चालः"।
वार्तिक- "पूरोरण्वक्तव्यः"	अण्	पौरवः।
वार्तिक- "पाण्डोड्यण्"	ड्यण्	पाण्ड्यः॥
86. साल्वेयगान्धारिभ्यां च	अञ्	साल्वेयः। गान्धारः।
87. द्व्यञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण्	अण्	आङ्गः। वाङ्गः। सौह्मः। मागधः। कालिङ्गः। सौरमसः।
88. वृद्धेकोसलाजादाञ्ञ्यङ्	यङ्	वृद्धात्-आम्बष्ठ्यः।सौवीर्यः।इत् - आवन्त्यः।कौसल्यः।
89. कुरुनादिभ्योण्यः	ण्य	कौरव्यः।नैषध्यः।
90. साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिञ्	इञ्	औदुम्बरिःप्रात्यग्रथिः।कालकूटिः।आश्मकिः।राजन्यप्येवम्॥
93. कम्बोजाल्लुक्	तद्राजस्य लुक्	कम्बोजः। कम्बोजौ॥
94. स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च	तद्राजस्य लुक्	अवन्ती। कुन्ती। कुरूः॥
95. अतश्च	तद्राजस्य लुक्	शूरसेनी। मद्री।
96. नप्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः	तद्राजस्य न लुक्	पाञ्चाली।वैदर्भी।आङ्गी।वाङ्गी।मागधी।एतप्राच्याः।भार्गी।कारूशी।कैकेयी।
98. गोत्रावयवात्		पौणिक्या।भौणिक्या॥
99. क्रौड्यादिभ्यश्च		क्रौड्या।व्याड्या।
100. दैवयज्ञिशौचिवृक्षिसात्यमुग्रिकाण्डेविद्धिभ्योऽ-न्यतरस्याम्	ष्यङ् वा	दैवयज्ञ्या - दैवयज्ञी।

॥तद्धित मत्वर्थीय ॥

सूत्र	प्रत्यय	उदाहरण
1.तदस्मिन्नधिकमितिदशान्ताड्डः	डः	एकादश अधिका अस्मिन्नेकादशम्।
2. शदन्तविंशतेश्च		त्रिंशदधिका अस्मिंस्त्रिंशंशतम्। विंशम्॥
3. संख्यायागुणस्यनिमानेमयट् डट्		
4. तस्यपूरणेडट्	डट्	एकादशानां पूरण एकादशः॥
5. नान्तादसंख्यादेर्मट्	डटोमट्-आगम	पञ्चानां पूरणःपञ्चमः।
6. षट्कतिपयचतुरां थुक्	आथुक् आगम	षण्णां पूरणःषष्ठः।
8. वतोरिथुक्-	इथुक्	यांवतिथः॥
9. द्वेस्तीयः	तीय	द्वयोः पूरणो द्वितीयः॥
10. त्रेः संप्रसारणं च		तृतीयः॥
11. विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम्	तमडागमो वा	विंशतितमः। विंशः। एकविशतितमः। एकविशः॥
12. नित्यंशतादिमासार्धमाससंवत्सराच्च		शतस्यपूरणः शततमः। एकशततमः।
13. षष्ठ्यादेश्चाऽसंख्यादेः		षष्टितमः।
14. मतौछः सूक्तसाम्नोः	छ	अच्छावाकीयंसुक्तम्। वारवन्तीयंसाम॥
15. अध्यायानुवाकयोर्लुक्		गर्दभाण्डः।गर्दभाण्डीयः॥

16. विमुक्तादिभ्योऽण्	मत्वर्थे अण्	वैमुक्तः।देवासुरः॥
17. गोषदादिभ्योवुन्	मत्वर्थे वुन्	गोषदकः।इषेत्वकः॥
18. तत्रकुशलःपदः	वुन्	पथिकुशलःपथिकः॥
19. आकर्षादिभ्यःकन्	कन्	आकषोनिकषोपलः॥
20. धनहिरण्यात्कामे		धनेकामोधनको देवदत्तस्य। हिरण्यकः॥
21. स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते		केशेपुप्रसितः केशकः।
22. उदराट्टगाद्यूने	ठक्	उदरेप्रसित औदरिकः।
24. अंशंहारी	णिनि	अंशकोदायादः॥
25. तन्त्रादचिरापहृते		तन्त्रकः। पटः। प्रत्यग्रइत्यर्थः॥
27.शीतोष्णाभ्यांकारिणि		करोतीति शीतकोऽलसः। उष्णं करोतीति उष्णकः शीघ्रकारी॥
29. अनुकाभिकाभीकःकमिता		अनुकामयते अनुकः। आभि कामयते अभिकः। आभीकः॥
31. अयःशूलदण्डाजिनाभ्यांठक्ठञौ	ठक्	साहसिकः
33. स एषां ग्रामणीः		देवदत्तकाः। त्वत्काः। मत्काः॥
34. शृङ्खलमस्यबन्धनंकरभे		शृङ्खलकः करभः॥
35. उत्कउन्मनाः	कन्	उत्कः उत्कण्ठितः।
38. कुल्माषादञ्	दञ्	कुल्माषाः प्रायेणान्नमस्यां कौल्माषी ॥
39. श्रोत्रियंश्छन्दोऽधीते		श्रोत्रियः।
40. श्राद्धमनेनभुक्तमिनिठनौ	इनिठनौ	श्राद्धी।श्राद्धिकः॥
42. सपूर्वाच्च	इनि	कृतपूर्वी॥
43. इष्टादिभ्यश्च	इनि	इष्टमनेन इष्टी। अधीती॥
46. साक्षाद्द्रष्टरिसंज्ञायाम्		साक्षाद्रष्टा साक्षी॥
49. तदस्यास्त्यस्मिन्नितिमतुप्	मतुप्	गावोऽस्यास्मिन्वा सन्ति गोमान्।
50. रसादिभ्यश्च	मतुप्	रूपवान्।
51. तसौमत्वर्थे		विदुष्मान्।
वार्तिक- गुणवचनेभ्योमतुपोलुगिष्टः		शुक्लो गुणोऽस्यास्तीति शुक्लः पटः। कृष्णः॥
52. मादुपधायाश्चमतोर्वोऽयवादिभ्यः		किंवान्। ज्ञानवान्। विद्यावान। लक्ष्मीवान्। यशस्वान्। भास्वान्।
वार्तिक- यवादेस्तु		यवमान्। भूमिमान्॥
53. झयः		विद्युत्वान्॥
54. संज्ञायाम्		अहीवती। मुनीवती।
55.आसन्दीवदष्ठीवच्चक्रीवत्कक्षीवद्रुमण्वच्चर्मणवती		आसन्दीवान्ग्रामः।
56. उदन्वानुदधौच		उदन्वान्समुद्रः ऋषिश्च॥
57. राजन्वान्सौराज्ये	.	राजन्वतीभूः। राजवानन्यत्र॥
58. प्राणिस्थादातोलजन्यतरस्याम्	लज्	चूडालः। चूडवान्।
59. सिध्मादिभ्यश्च-	लज्वास्यात्।	सिध्मलः। सिध्मवान्।
वार्तिक- वातदन्तबलललाटानामूङ्॥	ऊङ् लज् च	वातूलः॥
60. वत्सांसाभ्यांकामबले	लज्वास्यात्।	वत्सलः। अंसलः॥
61. फेनादिलच्च	चाल्लच्	फेनिलः। फेनलः। फेनवान्॥
62.लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यःशनेलचः-	शः	**लोमादिभ्यःशः**- लोमशः। लोमवान्। रोमशः। रोमवान्। **पामादिभ्योनः नः**- पामनः।

		अङ्गात्कल्याणे - अङ्गना लक्ष्म्याअच - (अच्) लक्ष्मणः विष्वगित्युत्तरपदलोपश्चाकृतसन्धेः- विपुणः। पिच्छादिभ्यइलच्- (इलच्) पिच्छिलः। पिच्छवान्। उरसिलः। उरस्वान्॥
63. प्रज्ञाश्रद्धार्चाभ्योणः	अण्	प्राज्ञा। श्राद्धः। आर्चः॥
64. तपःसहस्राभ्यांविनीनी	विनीनी	तपस्वी।सहस्री।
65. अण् च		तापसः।साहस्रः।
वार्तिक- ज्योत्स्नादिभ्यउपसंख्यानम् ।	नम्	ज्योत्स्नः।तामिस्रः॥
66. सिकताशर्कराभ्यां च		शार्करः॥
68. देशेलुबिलचौच		सिकताः। सिकतिलः। सैकतः। सिकतावान्।
69. दन्तउन्नतउरच्	उरच्	दन्तुरः॥
70. ऊषसुषिमुष्कमधोरः	रः	ऊषरः। सुषिरः। मुष्कोऽण्डः, मुष्करः। मधुरः
वार्तिक-"रप्रकरणेखमुखकुञ्जेभ्य उपसंख्यानम्"	र वा स्यात्	खरः। मुखरः। कुञ्जरः।
वार्तिक- "नगपांसुपाण्डुभ्यश्च"		नगरम्। पांसुरः। पाण्डुरः।
71. द्युद्रुभ्यांमः	म	द्युमः।द्रुमः॥
72. केशाद्वोऽन्यतरस्याम्	वः पक्षे इनिठनौ	केशवः।केशी।केशिकः।केशवान्।
वार्तिक- "अर्णसोलोपश्च"		अर्णवः॥
ाण्डयजगात्संज्ञायाम्		गाण्डिवम्। गाण्डीवम्। अर्जुनस्यधनुः। अजगवं पिनाकः॥
ाण्डाण्डादीरन्नीरचौ	ईरच्	काण्डीरः। आण्डीरः॥
जःकृष्यासुतिपरिषदोवलच्	वलच्	आसुतीवलः। शौण्डिकः। परिषद्वलः।
76. दन्ताशिखात्संज्ञायाम्	वलच्पक्षे इनिठनौ	दन्तवलो हस्ती। शिखावलः केकी॥
77.ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विन्नूर्जस्वलगोमिन्मलिनमलीमसाः		ज्योत्स्ना। तमिस्रम्। शृङ्गिणः।ऊर्जस्वी।उर्जस्वलः। गोमी। मलिनः। मलीमसः॥
78. अतइनिठनौ	इनिठनौ	दण्डी।दण्डिकः॥
79. व्रीह्यादिभ्यश्च	इनिठनौ	व्रीही। व्रीहीकः।
80. तुन्दादिभ्यइलच्च	इलच् पक्षे इनिठनौ	तुन्दिलः। तुन्दी। तुन्दिकः। तुन्दवान्।
81. एकगोपूर्वाट्ठञ्नित्यम्	ठञ्	एकशतमस्यास्तीति- ऐकशतिकः।ऐकसहस्रिकः।गौशतिकः।गौसहस्रिकः॥
82. शतसहस्रान्ताच्चनिष्कात्	वा ठञ्	नैष्कशतिकः। नैष्कसहस्रिकः॥
83. रुपादाहतप्रशंसयोर्यप्	यप्	हिम्याः पर्वताः। गुण्या ब्राह्मणाः॥
84. अस्मायामेधास्रजोविनिः	विनि	यशस्वी। यशस्वान्। मायावी। मायावान् ।
85. ऊर्णायायुस्	युस्	ऊर्णायुः।
86. वाचोग्मिनिः-	ग्मिनि	वाग्ग्मी ॥
87. आलजाटचौबहुभाषिणि	आलजाटचौ	वाचालः। वाचाटः।
88. स्वामिन्नैश्वर्ये	आमिनच्	स्वामी ।
89. अर्शआदिभ्योऽच्	अच्	अर्शास्य विद्यन्ते अर्शसः।
90.द्वन्द्वोपतापगर्ह्यात्प्राणिस्थादिनिः	इनि	कटकवलयिनी। शङ्खनूपुरिणी। उपतापोरोगः। कुष्ठी। किलासी।

91. वातातीसाराभ्यांकुक्क-	कुक् पक्षे इनि	वतकी। अतीसारकी ।
92. वयसिपूरणात्	इनि	पश्चमी उष्ट्रः।
93. सुखादिभ्यश्च-	इनिर्मत्वर्थे।	सुखी।दुःखी॥ (ग) मालाक्षेपे॥माली॥
94. धर्मशीलवर्णान्ताच्च	इनिर्मत्वर्थे।	ब्राह्मणधर्मी। ब्राह्मणशीली। ब्राह्मणवर्णी॥
97. हस्ताज्जातौ	इनि	हस्ती। जातौकिम्? हस्तवान्पुरुषः॥
98. वर्णाद्ब्रह्मचारिणि	इनिर्मत्वर्थे।	वर्णी॥
99. पुष्करादिभ्योदेशे	इनिर्मत्वर्थे।	पुष्करिणी।पद्मिनी।
100. बलादिभ्योमतुबन्यतरस्याम्	वा इनिर्मत्वर्थे।	बलवान्बली। उत्साहवान्। उत्साही॥
101. संज्ञायांमन्माभ्याम्	इनिर्मत्वर्थे।	प्रथिमिनी। दामिनी। होमिनी। सोमिनी।
102. कंशंभ्यांबभयुस्तितुतयसः		कंबः।कंभः।कंयुः।कंतिः।कंतुः।कंतः।कंयः।शंबः। शंभः।शंयुः।शंतिः।शंतुः।शंतः।शंयः।अनुस्वारस्य
103. तुन्दिवलिवटेर्भः	भः	तुन्दिभः। वलिभः। वटिभः।
104. अहंशुभमोर्युस्	युस्	अहंयुः -अहङ्कारवान्।शुभंयुः -शुभान्वितः॥
॥ इतितद्धिताधिकारेमत्वर्थीयप्रकरणम् ॥		

॥भ्वादिगणः॥

धातु से **तिङ्** प्रत्यय लगाकर क्रिया रूप बनते हैं। अतः क्रिया रूपों को ही तिङन्त कहते है। रूप रचना की दृष्टि से क्रिया रूपों को दस भागों में बाँटा जाता है एक वर्ग की धातुओं को एक स्थान पर एकत्रित किया गया जिन्हें गण कहते हैं। इस प्रकरण में प्रथम गण अर्थात् भ्वादिगण की धातुओं के रूपों का विवरण दिया जाएगा।

"लट्- लिट्- लुट्- लेट्- लोट्- लङ्- लिङ् (वि.आ.)- लुङ्- लृङ्- एषु पंचमो लकारश्छन्दोमात्रगोचरः"।

व्याख्याः- लट् आदि दश लकार हैं। **एषु इति**- इनमें पाँचवां-लेट् लकार केवल वेद का विषय है अर्थात इसका प्रयोग वेद में ही होता है, लोक में नहीं। इन शब्दों में लकार होने के कारण इनको लकार कहा जाता है। इनमें पहले छः टित् हैं और अन्तिम चार ङित्। ये लकार धातुओं के आगे प्रयुक्त होते हैं। इनके द्वारा धातुवाच्य क्रिया के काल आदि का बोध होता है।

ये लकार सामान्यतः निम्नलिखित अर्थों में प्रयुक्त होते हैं-

1-लट्- वर्तमान काल।

2- लिट्- परोक्ष अनद्यतन भूतकाल।

3- लुट्- अनद्यतन भविष्यत् काल।

4- लृट्- सामान्य भविष्यत्।

5- लेट्- शर्त लगाना और शङ्का।

6- लोट्- विधि (प्रेरणा आज्ञा देना) आदि।

7- लङ्- अनद्यतन भूतकाल।

8- लिङ्- (क) विधिलिंग- विधि आदि।

(ख) आशीलिंग- आशीर्वाद।

9- लुङ्- सामान्य भूत।

10- लृङ्- हेतुहेतुमद्भाव के अर्थ में जब क्रिया की सिद्धि हो।

लकारों के अर्थ को स्पष्टतया समझने के लिये निम्नलिखित पदार्थों का ज्ञान होना आवश्यक है- '**काल**- समय को कहते हैं। क्रिया जिस समय में होती है वह क्रिया का काल कहता है' । काल तीन प्रकार का होता **है- वर्तमान, भविष्यत् और भूत।**

वर्तमान काल- जो काल चल रहा है उसे वर्तमान काल कहते हैं। जिस काल में क्रिया प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देती है उसे वर्तमान कालिक क्रिया कहते हैं। **जैसे- सः गच्छति**- वह जाता है ।

भविष्यत् काल- भविष्य में होने वाली क्रिया के काल को भविष्यत् काल कहते हैं भविष्यत् काल वह है जिसमें क्रिया का प्रारम्भ होना न पाया जाय अपि तु आगे होना पाया जाय। **जैसे- सः गमिष्यति**- वह जायगा । इस वाक्य में गम (जाना) क्रिया का आगे होना पाया जाता है।

भूत काल- प्रत्यक्ष काल से पूर्व जो क्रिया समाप्त हो चुकी है, उसके काल को भूतकाल कहते हैं। **जैसे– स अगमत्**- वह गया । इस वाक्य में गमन-जाना-क्रिया की समाप्ति पाई जाती है अतः वह भूतकाल प्रयोग है।

- **अनद्यतन**- उस काल को कहते हैं जो आज का न हो। आज बारह बजे रात के बाद दूसरी रात के बारह बजे तक अथवा प्रातःकाल से रात्रि की समाप्ति तक कहा जाता है। यदि इतने समय के अन्दर क्रिया हुई तो वह अद्यतन काल की कही जाती है और यदि इसके बाद हो तो अनद्यतन काल की। **भूत और भविष्यत्** दो काल अनद्यतन है।
- **परोक्षः**- उस काल को कहते हैं जिसमें क्रिया करनेवाले का प्रत्यक्ष में होना न पाया जाय **जैसे- युधिष्ठिरो बभूव**- युधिष्ठिर हुआ । इस वाक्य में होना क्रिया का करनेवाला युधिष्ठिर इस वाक्य के प्रयोग करनेवाले के प्रति प्रत्यक्ष नहीं वह युधिष्ठिर को देख नहीं रहा है। परोक्ष का सम्वन्ध केवल भूतकाल से होता है । वर्तमान परोक्ष नहीं होता और भविष्यत् सदा परोक्ष ही रहता है । इसलिये इसका सम्वन्ध केवल भूतकाल से ही है क्योंकि भूतकाल परोक्ष और अपरोक्ष दोनों प्रकार का होता है ।

इन पदार्थो के ज्ञान के अनन्तर स्पष्ट हो जाता है कि **वर्तमान काल** के लिये एक लट् लकार का **भविष्यकाल** के लिये लुट् और लृट् इन दो लकारों का और **भूत** के लिये लुङ्,लङ्,लिट् इन तीनों का प्रयोग होता है।

लकारार्थ-कालबोधकचक्र

काल	लकार	उदाहरण
1. वर्तमान	लट्	सः गच्छति
2. भविष्यत्		
(क) सामान्य	लृट्	सः गमिष्यति
(ख) अनद्यतन	लुट्	श्वः गन्ता-कल जायगा
3. भूत		
(क) सामान्य	लुङ्	सः अगमत्
(ख) अनद्यतन	लङ्	सः अगच्छत्
(ग) परोक्ष अनद्यतन	लिट्	सः जगाम ।

(लट् लकार)

सूत्रम्- लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः 3/4/69

वृत्तिः- लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मणि कर्तरि च स्युरकर्मकेभ्यो भावे कर्तरि च।

हिन्दी अर्थ- लकार सकर्मक धातुओं से कर्म और कर्ता तथा अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में हों। इस सूत्र के अर्थ को स्पष्ट करने के लिये-कर्ता, कर्म, भाव, सकर्मक और अकर्मक की परिभाषा लिखी जाती है । यहाँ यह जान लेना चाहिए कि प्रत्येक धातु के दो अर्थ होते हैं फल और व्यापार । व्यापार का जो आश्रय होगा वह कर्ता और फल का आश्रय कर्म कहा जाता है।

कर्ता- धातु के द्वारा वाच्य व्यापार के आश्रय तथा व्यापार में स्वतन्त्र रूप से जो विवक्षित हो उसे कर्ता कहते हैं।

कर्म- धातुवाच्य फल के आश्रय को कर्म कहते हैं।

भाव- धातुवाच्य व्यापार को कहते हैं।

सकर्मक धातु- उन धातुओं को कहते हैं जिसके फल और व्यापार के आश्रय भिन्न-भिन्न हो। **जैसे- पच् धातु ।** इसका फल गलना चावलों में और पाक व्यापार देवदत्त आदि में रहता है। अतः फल और व्यापार के भिन्न भिन्न अधिकरणों में रहने में पच् धातु सकर्मक है।
अकर्मक धातु- उन्हें कहते हैं जिनके फल और व्यापार एक ही आश्रय में रहते हो । **जैसे- शीङ् धातु ।** इसका फल आराम और व्यापार लेट जाना आदि एक ही आश्रय कर्ता में रहते हैं।

यहाँ वाच्य को समझ लेना अत्यावश्यक है-

वाच्य- क्रिया के प्रकार को कहते हैं जिनके द्वारा यह जानना होता है कि लकार किस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । यह तीन प्रकार का है-

1. **कर्तृवाच्य, 2. कर्मवाच्य, 3. भाववाच्य।**

१- कर्तृवाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध कर्त्ता से हो अर्थात् लकार का अर्थ कर्ता हो।
२- कर्मवाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध कर्म से हो अर्थात् लकार का अर्थ कर्म हो।
३- भाववाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध भाव अर्थात् क्रिया मात्र से हो अर्थात् लकार का अर्थ भाव है।

सूत्रम्- वर्तमाने लट् । 3/2/123

वृत्तिः- वर्तमान क्रियावृत्तेर्धातोर्लट् स्यात्। अटावितौ। उच्चारणसामर्थ्याद् लस्य नेत्त्वम्। भू सत्तायाम् कर्तृविक्षायां भू +ल् इति स्थिते।

हिन्दी अर्थ- वर्तमान काल की क्रिया में धातु से लट् लकार हो।

अटावितिः- लट् के अकार और टकार इत्संज्ञक है।

उच्चारणेतिः- उच्चारण सामर्थ्य से लकार की इत्संज्ञा नहीं होती, अन्यथा फिर कुछ शेष न रहने से उच्चारण ही व्यर्थ हो जायगा ।

भू इतिः- भू धातु का सत्ता (होना) अर्थ है।

कर्तृविवक्षायामिति- इसमें कर्ता की विवक्षा में कर्तवाव्य में लकार करने पर भू ल् यह स्थिति हुई।

सूत्रम्-तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-तातांझ-थासाथां ध्वम्-इड्वहिमहिङ् । 3/4/75

वृत्तिः- एतेऽष्टादश लादेशाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- तिप, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इड, वहि, महिङ् ये अठारह लकारों के स्थान में आदेश हों।

सूत्रम्- लः परमैपदम् । 1/4/99

वृत्तिः- लादेशाः परस्मैपदसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- लकारों के स्थान में जो आदेश हों, वे परस्मैपद संज्ञा वाले हों अर्थात् उनकी परस्मैपदसंज्ञा हो। पिछले सूत्र से पूर्वोक्त अठारह आदेशों का लकारों के स्थान में विधान किया गया है अतः लादेश होने से इन सब की परस्मैपद संज्ञा प्राप्त हुई।

सूत्रम्- तङानावात्मनेपदम् । 1/4/100

वृत्तिः- तङ्प्रत्याहारः शानच्कानचौ चैतत्संज्ञाः स्युः। पूर्वसंज्ञापवादः।

हिन्दी अर्थ- तङ्प्रत्याहार तथा शानच् और कानच् प्रत्ययों की आत्मनेपद संज्ञा हो।

सूत्रम्- अनुदात्तङित आत्मनेपदम् । 1/3/12

वृत्तिः- अनुदात्तेतो ङितश्च धातोरात्मनेनपदं स्यात।

हिन्दी अर्थ- अनुदात्तेत् (जिसका अनुदात्त अच इत् हो) और ङित् धातुओं से आत्मनेपद-तङ्, शानच् और कानच्-प्रत्यय हों।

॥भ्वादिगणः॥

धातु से **तिङ्** प्रत्यय लगाकर क्रिया रूप बनते हैं। अतः क्रिया रूपों को ही तिङन्त कहते है। रूप रचना की दृष्टि से क्रिया रूपों को दस भागों में बाँटा जाता है एक वर्ग की धातुओं को एक स्थान पर एकत्रित किया गया जिन्हें गण कहते हैं। इस प्रकरण में प्रथम गण अर्थात् भ्वादिगण की धातुओं के रूपों का विवरण दिया जाएगा।

"लट्- लिट्- लुट्- लेट्- लोट्- लङ्- लिङ् (वि.आ.)- लुङ्- लृङ्- एषु पंचमो लकारश्छन्दोमात्रगोचरः"।

व्याख्याः- लट् आदि दश लकार हैं। **एषु इति-** इनमें पाँचवां-लेट् लकार केवल वेद का विषय है अर्थात इसका प्रयोग वेद में ही होता है, लोक में नहीं। इन शब्दों में लकार होने के कारण इनको लकार कहा जाता है। इनमें पहले छः टित् हैं और अन्तिम चार ङित्। ये लकार धातुओं के आगे प्रयुक्त होते हैं। इनके द्वारा धातुवाच्य क्रिया के काल आदि का बोध होता है।

ये लकार सामान्यतः निम्नलिखित अर्थों में प्रयुक्त होते हैं-

1-लट्- वर्तमान काल।
2- लिट्- परोक्ष अनद्यतन भूतकाल।
3- लुट्- अनद्यतन भविष्यत् काल।
4- लृट्- सामान्य भविष्यत्।
5- लेट्- शर्त लगाना और शङ्का।
6- लोट्- विधि (प्रेरणा आज्ञा देना) आदि।
7- लङ्- अनद्यतन भूतकाल।
8- लिङ्- (क) विधिलिंग- विधि आदि।
(ख) आशीर्लिंग- आशीर्वाद।
9- लुङ्- सामान्य भूत।
10- लृङ्- हेतुहेतुमद्भाव के अर्थ में जब क्रिया की सिद्धि हो।

लकारों के अर्थ को स्पष्टतया समझने के लिये निम्नलिखित पदार्थों का ज्ञान होना आवश्यक है- 'काल- समय को कहते हैं। क्रिया जिस समय में होती है वह क्रिया का काल कहता है' । काल तीन प्रकार का होता है- **वर्तमान, भविष्यत् और भूत।**

वर्तमान काल- जो काल चल रहा है उसे वर्तमान काल कहते हैं। जिस काल में क्रिया प्रत्यक्ष रूप से दिखाई देती है उसे वर्तमान कालिक क्रिया कहते हैं। **जैसे- सः गच्छति-** वह जाता है ।

भविष्यत् काल- भविष्य में होने वाली क्रिया के काल को भविष्यत् काल कहते हैं भविष्यत् काल वह है जिसमें क्रिया का प्रारम्भ होना न पाया जाय अपि तु आगे होना पाया जाय। **जैसे- सः गमिष्यति-** वह जायगा । इस वाक्य में गम (जाना) क्रिया का आगे होना पाया जाता है।

भूत काल- प्रत्यक्ष काल से पूर्व जो क्रिया समाप्त हो चुकी है, उसके काल को भूतकाल कहते हैं। **जैसे- स अगमत्-** वह गया । इस वाक्य में गमन-जाना-क्रिया की समाप्ति पाई जाती है अतः वह भूतकाल प्रयोग है।

- **अनद्यतन-** उस काल को कहते हैं जो आज का न हो। आज बारह बजे रात के बाद दूसरी रात के बारह बजे तक अथवा प्रातःकाल से रात्रि की समाप्ति तक कहा जाता है। यदि इतने समय के अन्दर क्रिया हुई तो वह अद्यतन काल की कही जाती है और यदि इसके बाद हो तो अनद्यतन काल की। **भूत और भविष्यत्** दो काल अनद्यतन है।
- **परोक्षः-** उस काल को कहते हैं जिसमें क्रिया करनेवाले का प्रत्यक्ष में होना न पाया जाय **जैसे- युधिष्ठिरो बभूव-** युधिष्ठिर हुआ । इस वाक्य में होना क्रिया का करनेवाला युधिष्ठिर इस वाक्य के प्रयोग करनेवाले के प्रति प्रत्यक्ष नहीं वह युधिष्ठिर को देख नहीं रहा है। परोक्ष का सम्बन्ध केवल भूतकाल से होता है । वर्तमान परोक्ष नहीं होता और भविष्यत् सदा परोक्ष ही रहता है । इसलिये इसका सम्बन्ध केवल भूतकाल से ही है क्योंकि भूतकाल परोक्ष और अपरोक्ष दोनों प्रकार का होता है ।

इन पदार्थो के ज्ञान के अनन्तर स्पष्ट हो जाता है कि **वर्तमान काल** के लिये एक लट् लकार का **भविष्यकाल** के लिये लुट् और लृट् इन दो लकारों का और **भूत** के लिये लुङ्,लङ्,लिट् इन तीनों का प्रयोग होता है।

लकारार्थ-कालबोधकचक्र

काल	लकार	उदाहरण
1. वर्तमान	लट्	सः गच्छति
2. भविष्यत्		
(क) सामान्य	लृट्	सः गमिष्यति
(ख) अनद्यतन	लुट्	श्वः गन्ता-कल जायगा
3. भूत		
(क) सामान्य	लुङ्	सः अगमत्
(ख) अनद्यतन	लङ्	सः अगच्छत्
(ग) परोक्ष अनद्यतन	लिट्	सः जगाम ।

(लट् लकार)

सूत्रम्- लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः 3/4/69

वृत्तिः- लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मणि कर्तरि च स्युरकर्मकेभ्यो भावे कर्तरि च।

हिन्दी अर्थ- लकार सकर्मक धातुओं से कर्म और कर्ता तथा अकर्मक धातुओं से भाव और कर्ता में हों। इस सूत्र के अर्थ को स्पष्ट करने के लिये-कर्ता, कर्म, भाव, सकर्मक और अकर्मक की परिभाषा लिखी जाती है। यहाँ यह जान लेना चाहिए कि प्रत्येक धातु के दो अर्थ होते हैं फल और व्यापार। व्यापार का जो आश्रय होगा वह कर्ता और फल का आश्रय कर्म कहा जाता है।

कर्ता- धातु के द्वारा वाच्य व्यापार के आश्रय तथा व्यापार में स्वतन्त्र रूप से जो विवक्षित हो उसे कर्ता कहते हैं।

कर्म- धातुवाच्य फल के आश्रय को कर्म कहते हैं।

भाव- धातुवाच्य व्यापार को कहते हैं।

सकर्मक धातु- उन धातुओं को कहते हैं जिसके फल और व्यापार के आश्रय भिन्न-भिन्न हो। **जैसे- पच् धातु**। इसका फल गलना चावलों में और पाक व्यापार देवदत्त आदि में रहता है। अतः फल और व्यापार के भिन्न भिन्न अधिकरणों में रहने में पच् धातु सकर्मक है।
अकर्मक धातु- उन्हें कहते हैं जिनके फल और व्यापार एक ही आश्रय में रहते हो। **जैसे- शीङ् धातु**। इसका फल आराम और व्यापार लेट जाना आदि एक ही आश्रय कर्ता में रहते हैं।

यहाँ वाच्य को समझ लेना अत्यावश्यक है-

वाच्य- क्रिया के प्रकार को कहते हैं जिनके द्वारा यह जानना होता है कि लकार किस अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। यह तीन प्रकार का है-

1. कर्तृवाच्य, 2. कर्मवाच्य, 3. भाववाच्य।

१- कर्तृवाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध कर्त्ता से हो अर्थात् लकार का अर्थ कर्ता हो।
२- कर्मवाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध कर्म से हो अर्थात् लकार का अर्थ कर्म हो।
३- भाववाच्य- धातु के उस रूप को कहते हैं जिसमें लकार का संबंध भाव अर्थात् क्रिया मात्र से हो अर्थात् लकार का अर्थ भाव है।

सूत्रम्- वर्तमाने लट्। 3/2/123

वृत्तिः- वर्तमान क्रियावृत्तेर्धातोर्लट् स्यात्। अटावितौ। उच्चारणसामर्थ्याद् लस्य नेत्त्वम्। भू सत्तायाम् कर्तृविक्षायां भू +ल् इति स्थिते।

हिन्दी अर्थ- वर्तमान काल की क्रिया में धातु से लट् लकार हो।

अटावितिः- लट् के अकार और टकार इत्संज्ञक है।

उच्चारणेतिः- उच्चारण सामर्थ्य से लकार की इत्संज्ञा नहीं होती, अन्यथा फिर कुछ शेष न रहने से उच्चारण ही व्यर्थ हो जायगा।

भू इतिः- भू धातु का सत्ता (होना) अर्थ है।

कर्तृविवक्षायामिति- इसमें कर्ता की विवक्षा में कर्तवाव्य में लकार करने पर भू ल् यह स्थिति हुई।

सूत्रम्-तिप्-तस्-झि-सिप्-थस्-थ-मिप्-वस्-मस्-तातांझ-थासाथां ध्वम्-इड्वहिमहिङ्। 3/4/75

वृत्तिः- एतेऽष्टादश लादेशाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- तिप, तस्, झि, सिप्, थस्, थ, मिप्, वस्, मस्, त, आताम्, झ, थास्, आथाम्, ध्वम्, इड्, वहि, महिङ् ये अठारह लकारों के स्थान में आदेश हों।

सूत्रम्- लः परमैपदम्। 1/4/99

वृत्तिः- लादेशाः परस्मैपदसंज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- लकारों के स्थान में जो आदेश हों, वे परस्मैपद संज्ञा वाले हों अर्थात् उनकी परस्मैपदसंज्ञा हो। पिछले सूत्र से पूर्वोक्त अठारह आदेशों का लकारों के स्थान में विधान किया गया है अतः लादेश होने से इन सब की परस्मैपद संज्ञा प्राप्त हुई।

सूत्रम्- तङानावात्मनेपदम्। 1/4/100

वृत्तिः- तङ्प्रत्याहारः शानच्कानचौ चैतत्संज्ञाः स्युः। पूर्वसंज्ञापवादः।

हिन्दी अर्थ- तङ्ग प्रत्याहार तथा शानच् और कानच् प्रत्ययों की आत्मनेपद संज्ञा हो।

सूत्रम्- अनुदात्तङित आत्मनेपदम्। 1/3/12

वृत्तिः- अनुदात्तेतो ङितश्च धातोरात्मनेनपदं स्यात।

हिन्दी अर्थ- अनुदात्तेत् (जिसका अनुदात्त अच इत् हो) और ङित् धातुओं से आत्मनेपद-तङ्, शानच् और कानच्-प्रत्यय हों।

सूत्रम्- स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले । 1/3/72

वृत्तिः- सवरितेतो ञितश्च धातोरात्नेपदं स्यात् कर्तृगामिनि क्रियाफले।

हिन्दी अर्थ- जिसका स्वरित अच इत् हो और ञित् धातु से आमनेपद प्रत्यय हों, यदि क्रिया का फल कर्तृगामी हो ।

सूत्रम्- शेषात्कर्तरि परस्मैपदम् ।1/3/75

वृत्तिः- आत्मनेपदनिमित्तहीनाद् धातोः कर्तरि परस्मैपदं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- आत्मनेपद के निमित्त से हीन धातु से कर्ता-कर्तृवाच्य में परस्मैपद हो।

(एकवचनादिसंज्ञासूत्रम्)

सूत्रम्- तिङस्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः । 1/4/101

वृत्तिः- तिङ उभयोः पदयोस्त्रयस्त्रिकाः क्रमाद् एतत्संज्ञा स्युः।

हिन्दी अर्थ- तिङ इति-तिङ के दोनों पदों-आत्मनेपद और परस्मैपद के जो तीन तीन के समूह-हैं, उनकी क्रम से प्रथम, मध्यम, और उत्तम संज्ञा होती है। आत्मनेपद और परस्मैपद के नौ नौ प्रत्यय हैं उन नौ प्रत्ययों के तीन वर्ग बने हुए हैं।

परस्मैपद-	1. वर्ग -तिप्, तस्, झि,
	2. वर्ग- सिप्, थस् थ
	3. वर्ग- मिप्, वस्, मस्।
आत्मनेपद-	1. वर्ग- त, आताम्, झ,
	2. वर्ग- थास्, आथाम् ध्वम्,
	3. वर्ग- इट्, वहि, महिङ्।

सूत्रम्- तान्येकवचन-द्विवचन-बहुवचनान्येकशः । 1/4/102

वृत्तिः- लब्धप्रथमादिसंज्ञानि तिङ्स्त्रीणि त्रीणि प्रत्येकमेकवचनादि संज्ञानि स्युः।

हिन्दी अर्थ- तिङ के इन त्रिकों-जिनकी प्रथम आदि संज्ञा की गई है। इनके तीन प्रत्ययों की क्रमशः एकवचन, द्विवचन और बहुवचन संज्ञा हो। इन सबका निम्नलिखित चक्र से स्पष्टता के लिये निरूपण किया जाता है-

परस्मैपद				आत्मनेपद			
	एकवचन,	द्विवचन,	बहुवचन		एकवचन,	द्विवचन,	बहुवचन
म-	तिप्	तस्	झि	प्रथम-	त	आताम	झ
यम-	सिप्	थस्	थ	मध्यम-	थास्	आथाम्	ध्वम्
म-	मिप्	वस्	मस्	उत्तम-	इट्	वहि	महिङ्

सूत्रम्- युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः । 1/4/105

वृत्तिः- तिङ्वाच्यकारकवाचिनि युष्मदि प्रयुज्यमानेऽप्रयुज्यमाने च मध्यमः।

हिन्दी अर्थ- तिङ का वाच्य जो कारक-कर्ता या कर्म-उसी का वाचक यदि युष्मद् शब्द हो, उसके उपपद रहते हुए उसका चाहे प्रयोग हुआ हो न हुआ हो, लकार के स्थान में मध्यमसंज्ञक तिङ प्रत्यय हों।

सूत्रम्- अस्मद्युत्तमः ।1/4/107

वृत्तिः- तथाभूतेऽस्मदि उत्तमः।

हिन्दी अर्थ- तिङ का वाच्य यदि अस्मद् शब्द हो, उसका चाहे प्रयोग हुआ हो चाहे न हुआ हो, ऐसी दशा में लकार के स्थान में उत्तमसंज्ञक तिङ प्रत्यय हो।

सूत्रम्- शेषे प्रथमः । 1/4/108

वृत्तिः- मध्यमोत्तमयोरविषये प्रथमः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- मध्यम और उत्तम के विषय को छोड़कर अन्यत्र सर्वत्र लकार के स्थान में प्रथमसंज्ञक प्रत्यय हों।

भवति- लट् लकार प्रथम पुरुष के एकवचन में लकार के स्थान में तिप् यह परस्मैपद तिङ प्रत्यय हुआ। "प्" की **हलन्त्यम्** सूत्र से इत्संज्ञा और **तस्य लोपः** सूत्र से लोप हुआ तव भू + ति यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- तिङ-शित् सार्वधातुकम् । 3/4/113

वृत्तिः- तिङः शितश्च धात्वधिकारोक्ता एतत्संज्ञाः स्युः।

हिन्दी अर्थ- धातोः सूत्र के अधिकार में कहे गये तिप् और शित् प्रत्ययों की सार्वधातुक संज्ञा हो। भू + ति इस पूर्वोक्त स्थिति में भू ति में तिङ की सार्वधातुकसंज्ञा हुई क्योंकि यह तिङ है।

सूत्रम्- कर्तरि शप् । 3/1/68

वृत्तिः- कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- कर्ता अर्थवाले सार्वधातु के परे रहते धातु से शप् हो। भू+ति में तिङ ति सार्वधातुक है। कर्ता में लकार होने से तथा उस लकार के स्थान में आदेश होने से इसका अर्थ कर्ता है। अतः इसके परे रहते हुआ । तब भू+अ+ति यह स्थिति बनी। यहाँ **यस्मात्-** सूत्र से धातु भू यह अङ्ग संज्ञा है। और भू यह अङ्ग इगन्त है।

सूत्रम्- सार्वधातुकार्धातुकयोः । 7/3/84

वृत्तिः- अनयोः परयोगिन्ताङ्गस्य गुणः। अवादेशः- भवति। भवतः ।

हिन्दी अर्थ- सार्वधातुक तथा आर्धधातुक प्रत्यय परे रहते इगन्त अङ्ग को गुण हो । अलोन्त्य परिभाषा के बल से अङ्ग के अन्त्य इक् को गुण होगा भू+अ+ति यहाँ अङ्ग के अन्त्य ऊ को् गुण ओ हुआ। **अवादेश इति-** तब ओ को अव् आदेश होकर **भवति** रूप बना।

भवतः- भू+तस् इस स्थिति में **कर्तरि शप्** सूत्र से शप् प्रत्यय, उसके शकार पकार की इत्संज्ञा **सार्वधातुकार्धातुकयोः** से उकार के स्थान में गुण ओकार एकादेश और ओकार के स्थान में अव् आदेश तथा सकार के स्थान में रुत्व विसर्ग होने पर रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- झोन्तः । 7/1/3

वृत्तिः- प्रत्ययावयवस्य झस्यान्तादेशः । अतो गुणे-भवन्ति । भवसि, भवथः भवथ।

हिन्दी अर्थ- प्रत्यय के अवयव झ को अन्त आदेश हो।

भवन्ति- प्रथम के बहुवचन में भू+झि इस अवस्था में पूर्ववत् शप्, गुण और अवादेश हुए। प्रत्यय के अवयव झ को अन्त आदेश होकर भव+ अन्ति यह दशा हुई। इसमें **अतो गुणे** सूत्र से शप के अकार और अन्ति के अकार को पररूप एकादेश होने पर भवन्ति रूप सिद्ध हुआ । मध्यम के तीनों वचनों के रूप इसी प्रकार सिद्ध होंगे।

भवसि- भू अ सि-भो अ सि ।
भवथः- भू अ थस् = भो अ थस् ।
भवथ- भू अ थ = भो अ थ ।
भवामि, भवावः, भवामः- इनकी सिद्धि निम्नोक्त सूत्रों से होती है।जैसे-

(दीर्घविधिसूत्रम्)

सूत्रम्- अतो दीर्घो यञि । 7/3/101

वृत्तिः- अतोऽङ्गस्य दीर्घो यञादौ सार्वधातुके । भवामि भवावः, भवामः । स भवति, तौ भवतः, ते भवन्ति। त्वं भवसि, यूवां भवथः, यूयं भवथ । अहं भवामि, आवां भवावः, वयं भवामः ।

भवामि- उत्तम के एकवचन में भू मि यहाँ शप्, गुण और अवादेश होने पर भव मि इस अवस्था में या मकार आदि मिप् सार्वधातुक परे होने से अङ्ग भव के अन्त्य अकार को दीर्घ आकार होकर भवामि यह सिद्ध हुआ।
भवावः- इसी प्रकार द्विवचन में भू+अ+वस्, भो+अ+वस्=भवावः।
भवामः- बहुवचन में भू+अ+मस्, भो+अ+मस्, भव+अ+मस्= भवामः।

प्रथमः- स भवति (वह होता है)।, तौ भवतः (वे दो होते हैं),। ते भवन्तिः(वे बहुत होते हैं)।
मध्यमः- त्वं भवति-तु होता है, यूवां भवथः-तुम दो होते हो, यूयं भवथ-तुम सब होते हो।
उत्तमः- अहं भवामि-मैं होता हूँ, आवां भवावः-हम दो होते हैं, वयं भवामः- हम बहुत होते हैं।

(लिट् लकार)

सूत्रम्- परोक्षे लिट् । 3/2/115

वृत्तिः- भूतानद्यतनपरोक्षार्थवृत्तेर्धातोलिट् स्यात्। लस्य तिबादयः।

हिन्दी अर्थ- अनद्यतन भूत और परोक्ष की क्रिया अर्थ में यदि धातु हो तो उससे लिट् लकार हो।

इटो इतौ- लिट् इकार और टकार इत्संज्ञक है। केवल लकार बचता है।

लस्य तिबादयः- उसको तिप् आदि आदेश होंगे।

सूत्रम्- परस्मैपदानां णलतुसुस्-थलथुसणल्वमाः । 3/4/82

वृत्तिः- लिटस्तिबादीनां नवानां णलादयः स्यु । भू अ इति स्थितौ-

हिन्दी अर्थ- लिट् के स्थान में आदेश हुए परस्मैपद तिप् आदि नौ को क्रम से निम्नलिखित णलादि आदेश हो ।

	स्थानी	आदेश	स्थानी	आदेश	स्थानी	आदेश
प्रथम-	तिप	णल्	तस्	अतुस्	झि	उस्
मध्यम-	सिप्	थल	थस्	अथुस्	थ	अ
उत्तम-	मिप्	णल्	वस्	व	मस्	म

भू अ इति- तिप् के स्थान में णल् आदेश हुआ। णकार और लकार की इत्संज्ञा होकर लोप होने पर भू अ यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- भुवो वुग् लुङ्लिटोः । 6/4/88

वृत्तिः- भूवो वुगागमः स्यात् लुङ्लिटोरचि।

हिन्दी अर्थ- भू धातु को वुक् आगम हो, लुङ् और लिट् का अच् परे होने पर। वुक् में उक् इत्संज्ञक है। अतः कित् होने से यह भू के अन्त में होगा। यहाँ लिट् का अच् अ (णल्) परे है तब वुक् आगम होने से भूव्+अ ऐसी स्थिति बनी।

सूत्रम्- लिटि धातोरनभ्यासस्य । 6/1/8

वृत्तिः- लिटि परे अनभ्यासधात्वयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः, आदि-भूतादचः परस्य तु द्वितीयस्य। भूव् भूव् अ इति स्थिते-

हिन्दी अर्थ- लिट् परे रहते अभ्यास रहित अर्थात् जिसको द्वित्व न हुआ हो-धातु के अवयव प्रथम एकाच् को द्वित्व हो, यदि धातु अजादि हो तो आदिभूत अच् से परे यदि संभव हो तो द्वितीय एकाच् को हो।

भूव् इति- इस व्यवस्था के अनुसार भूव् अ यहाँ प्रथम एकाच भूव् को द्वित्व होकर भव् भूव् अ यह स्थिति हुई ।

सूत्रम्- पूर्वोभ्यासः । 6/1/4

वृत्तिः- अत्र ये द्वे विहिते, तयोः पूर्वोभ्याससंज्ञः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- यहाँ जिन दो रूपों का विधान किया गया है अर्थात् जो द्वित्व करके दो रूप बनाये गये हैं उनमें पूर्वरूप की अभ्यास संज्ञा हो।

भूव्+भूव्+अ यहाँ द्वित्व करके दो भूव् बने हैं उनमें प्रथम भूव् की अभ्याससंज्ञा हुई।

सूत्रम्- हलादिः शेषः । 7/4/60

वृत्तिः- अभ्यासस्यादिर्हल् शिष्यते अन्ये हलो लुप्यन्ते । इति वलोपे।

हिन्दी अर्थ- अभ्यास का आदि हल् शेष रहता है, अन्य हलों का लोप हो जाता हैं।

इति वलोपेः- भूव् भूव् अ यहाँ अभ्यास में आदि हल् भकार शेष रहा और उससे भिन्न हल् व् का लोप हुआ। तब भू+भूव्+अ यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- ह्रस्वः। 7/4/59

वृत्तिः- अभ्यासस्याचो ह्रस्व स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- अभ्यास के अच् को ह्रस्व हो।

भू+भूव्+अ यहाँ अभ्यास के अच् ऊकार को इस सूत्र से ह्रस्व हो गया।

सूत्रम्- भवतेरः । 7/4/73

वृत्तिः- भवतेरभ्यासस्योकारस्य अः स्याल्लिटि।

हिन्दी अर्थ- भू धातु के अभ्यास के उकार को अकार हो लिट् पर होने पर । इस सूत्र से उकार को अकार करने पर भ+भूव्+अ यह दशा हुई।

सूत्रम्- अभ्यासे चर्च । 8/4/54

वृत्तिः- अभ्यासे झलां चरः स्युः, जशश्च। झशां जशः, खयां चर इति विवेकः। बभूव, बभूवतुः, बभूवुः।

हिन्दी अर्थ- अभ्यास में झलों के स्थान में चर् हो और जश् भी।

झशामितिः- झशों को जश् और खयों को चर् हो यह नियम है । प्रकृत में झल् भकार चतुर्थ वर्ण को जश् तृतीय वर्ण बकार हुआ तब बभूव रूप सिद्ध हुआ।

बभूवतुः-	भू अतुस्, भूव् अतुस्, भूव् भूव् अतुस्, भू भूव् अतुस्, भु भूव् अतुस्, भ भव् अतुस्- बभूवतुः।
बभूवुः-	भू उस्, भूव् उस्, भूव् भूव् उस्, भूव् उस्, भु भूव् उस्, भ भूव् उस्- बभूवुः।

सूत्रम्- लिट् च । 3/4/115

वृत्तिः- लिडादशेस्तिङ् आर्धातुकसंज्ञः।

हिन्दी अर्थ- लिट् के स्थान में आने वाले तिङ् की आर्धातुक संज्ञा हो।

सूत्रम्- आर्धातुकस्येड् वलादेः । 7/2/35

वृत्तिः- वलोदेरार्धधातुकस्य इट् आगमः स्यात् । बभूविथ, बभूवथुः , बभूव। बभूव, बभुविव, बभूविम ।

हिन्दी अर्थ- वलादि आर्धधातु को इट् आगम हो।

बभूविथ- भू+थ इस स्थिति में थ वलादि आर्धधातुक है। अतः उस को इट् आगम हो गया-इट् का इ शेष रहता है। तब भू+इ+थ ऐसी स्थिति बनने पर लिट् सम्बन्धी अच् परे होने से **भुवो वुग्लुङ्लिटोः** सूत्र से वुक् आगम, उसके उक् की इत्संज्ञा और लोप भूव् की **लिटि धातोरनभ्यासस्य** से द्वित्व **हलादिः शेषः** से अभ्यास के वकार का लोप, ह्रस्व से अभ्यास के दीर्घ आकर को ह्रस्व **भवतेर** से उकार को अकार आदेश होने पर **अभ्यासे चर्च** से भकार को बकार होकर रूप सिद्ध हुआ ।
बभूविव - बभूव् व यहाँ वलादि आर्धातुक होने से व को इट् आगम होकर बभूविव रूप बना ।
बभूविम - बभूव् म यहाँ पूर्ववत् इट् होकर बभूविम रूप सिद्ध हुआ।

(लुट् लकार)

सूत्रम्- अनद्यतने लुट् । 3/3/15

वृत्तिः- भविष्यदनद्यतनर्थे धातोः लुट् ।

हिन्दी अर्थ- अनद्यतन भविष्यत् के अर्थ में धातु से लुट् लकार हो।

सूत्रम्- स्यतासी ऌलुटोः । 3/1/33

वृत्तिः- धातोः स्य-तासी एतौ प्रत्ययौ स्तः, ऌलुटोः परतः। शबाद्यपवादः। ऌ इति ऌद्‌ऌङ्ग्रहणम्।

हिन्दी अर्थ- धातु से ऌट् और ऌङ् परे होने पर स्य और लुट् पर होने पर तास् प्रत्यय होते हैं ।

शबादीतिः- यह विधि शप् आदि की बाधक है। **ऌ इति-** ऌ से ऌङ् और ऌट् दोनों का ग्रहण होता है । तब भू+तास् ति यह स्थिति बनी।

सूत्रम्- आर्धधातुकं शेषं । 2/4/114

वृत्तिः- तिङ्शिद्भ्योन्य धातोः इति विहितः प्रत्यय एतत्संज्ञः स्यात्। इट्।

हिन्दी अर्थ- तिङ् और शित् प्रत्ययो से भिन्न **धातोः** इस पचम्यन्त का उच्चारण कर विधान किये हुये प्रत्ययों की आर्धधातुक संज्ञा हो। तब भू+इ+तास्+ति इस दशा में **सार्वधातुकार्धधातुकयोः** से ऊ को गुण ओ और ओ को अव् आदेश होकर भवितास्+ति यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- लुटः प्रथमस्य डा-रौ-रसः । 2/4/85

वृत्तिः- लुटः प्रथमस्य डा, रौ, रस् एते क्रमात्स्युः। डित्वसामर्थ्याद् अभस्यापि टेलोपः- भविता ।

हिन्दी अर्थ- लुट् के प्रथम पुरुष के प्रत्ययों के क्रम से डा, रौ और रस् आदेश हो, अर्थात् तिप् को डा, तस् को रौ और झि को रस् हो। डा में डकार की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है। अत: यह डित् कहा जाता है।

भविता- भवितास्+ति इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से ति के स्थान में डा आदेश हुआ । डकार की इत्संज्ञा और लोप होने पर पूर्वोक्त प्रकार से डित्व के बल से टि आस् का लोप होकर रूप सिद्ध हुआ ।

सूत्रम्- तास्-अस्त्योर्लोपः । 7/4/50

वृत्तिः- तासेरस्तेश्च लोपः स्यात् सादौ प्रत्यये परे।

हिन्दी अर्थ- सकारादि प्रत्यय परे होने पर तास् और अस् धातु का लोप हो ! अलोन्त्य परिभाषा के बल से अन्त्य अल् सकार का लोप होगा।

सूत्रम्- रि च । 7/4/51

वृत्तिः- रादौ प्रत्यये तथा भवितारौ, भवितारः। भवितासि, भवितास्थः, भवितास्थ, भवितास्मि, भवितास्वः, भवितास्मः।

हिन्दी अर्थ- रकारादि प्रत्यय परे होने पर भी पूर्ववत् तास् और अस् का लोप हो ।

भवितारौः- भू धातु के लुट् के प्रथम पुरुष के द्विवचन में भू +तस् इस स्थिति में पूर्वोक्त प्रकार से तास् प्रत्यय, इट् आगम, धातु को आर्धधातुक निमित्तक गुण ओ आदेश, ओ को अव् आदेश होने पर भवितास् तस् ऐसी स्थिति बन जाने पर तस् को रौ आदेश हुआ। तब **रि च इस** प्रकृत सूत्र से तास् के सकार का लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।
भवितारः- लुट् के प्रथम पुरुष के बहुवचन में पूर्वोक्त प्रकार से भवितास्+ झि ऐसी स्थिति बन जाने पर झि को रस् आदेश हुआ और तब प्रकृत सूत्र से तास् के सकार का लोप, सकार को रुत्व विसर्ग होने पर रूप सिद्ध हुआ।
भवितासि- मध्यम के एकवचन में भवितास्+सि यहाँ सकारादि सि प्रत्यय परे होने से **तास्-अस्त्योर्लोपः** सूत्र से तास् के सकार का लोप होने पर रूप बना।
द्विवचन में- भवितास्थः । **बहुवचन में-** भवितास्थ। **उत्तम में-** भवितास्मि, भवितास्वः, भवितास्मः-ये रूप हैं।

(ऌट्-लकार)

सूत्रम्- ऌट् शेषे च । 3/3/13

वृत्तिः- भविष्यदर्थाद् धातोर्ऌट् स्यात् क्रियार्थायां क्रियायामसत्याम् सत्याम् । **स्यः इट-**

हिन्दी अर्थ- भविष्यत्काल की क्रिया को बताने के लिए ऌट् लकार का प्रयोग होता है चाहे क्रियार्थ विद्यमान हो अथवा न हो। ऌट् लकार का प्रयोग सामान्य भविष्यत् काल की क्रिया को प्रकट करने के लिये आता है।

भविष्यति- ऌट् को यथाक्रम से तिबादि आदेश होंगे तिप् करने पर सर्व प्रथम, **स्यतासी ऌलुटोः** से स्य होगा। स्य प्रत्यय **आर्धधातुकं शेषः** से **आर्धधातुकसंज्ञक** है, अतः वलादि आर्धधातुक होने से उसको **आर्धधातुकस्येड्वलादे** से इट् आगम हो जायगा। साथ ही **सार्वधातुकार्धधातुकयोः** से ऊकार को गुण ओकार और उसको अव् आदेश होकर भविष्यति ऐसी स्थिति बन जाने पर स्य के सकार के स्थान में प्रत्यय का अवयव होने से मूर्धन्य प्रकार होकर भविष्यति रूप सिद्ध होता है।

(लोट् लकार)

सूत्रम्- लोट् च । 3/3/162

वृत्तिः- विध्याद्यर्थेषु धातोलोट् ।

हिन्दी अर्थ- विधि आदि अर्थ में धातु से लोट् लकार हो।

सूत्रम्- आशिषि लिङ् लोटौ । 3/3/173

हिन्दी अर्थ- आशीर्वाद अर्थ में भी लिङ् और लोट् लकार आते हैं। भू धातु से विध्यादि अर्थों में लोट् लकार होने पर उसके स्थान में यथाक्रम से तिङ् आदि आदेश होकर भवति ऐसी स्थिति बिल्कुल लट् लकार के समान बनेगी।

सूत्रम्- एरुः । 3/4/86

वृत्तिः- लोट इकारस्य उः । भवतु ।

हिन्दी अर्थ- लोट् के इकार को उकार हो ।

भवतु- भू धातु से लोट् के प्रथम पुरुष के एक वचन में उपर्युक्त प्रकार से, भवति बन जाने पर इस सूत्र से लोट् (स्थानिक), ति में वर्तमान इकार को उकार करने से रूप सिद्ध हुआ ।

सूत्रम्- तुह्योस्तातङ् आशीष्यन्यतरस्याम् । 7/1/35

वृत्तिः- आशिषि तुह्योस्तातङ् वा। परत्वात् सर्वादेशः- भवतात्।

हिन्दी अर्थ- आशीर्वाद अर्थ में लोट् के तु और हि को विकल्प से तातङ् आदेश हो। तातङ् में तात् शेष रहता है अङ् की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है।

> **भवतात्-** भवतु में सम्पूर्ण तु के स्थान में प्रकृत सूत्र से तात् आदेश होकर भवतात् रूप सिद्ध हुआ, पक्ष में भवतु भी रहेगा।

सूत्रम्- लोटो लङ्वत् । 3/4/85

वृत्तिः- लोटस्तामादयः, सलोपश्च ।

हिन्दी अर्थ- लोट् के स्थान में लङ् के समान ताम् आदि आदेश हों और उसके सकार का लोप होता है।

सूत्रम्- तस्-थस्-थ-मिपां तां -तं-तामः । 3/4/101

वृत्तिः- ङित्चतुर्णा तामादयः क्रमात्स्युः। भवताम्। भवन्तु।

हिन्दी अर्थ- ङित्-लङ्, लिङ्, लुङ् और लङ्-लकारों के चार तस्, थस्, थ और मिप्-प्रत्ययों को क्रम से ताम्, तम्, त, और अम् आदेश हों। क्रम से कहने से तस् को ताम्, थस् को तम्, थ को त और मिप् को अम् आदेश होगा।

सूत्रम्- सेर्ह्यपिच्च । 3/4/87

वृत्तिः- लोटः सेर्हिः सोऽपिच्च ।

> **भवताम्-** भू धातु के लोट् के द्विवचन में पूर्वोक्त प्रकार से बनी भव तस् इस दशा में लङ्वत् अतिदेश के बल से प्रकृत सूत्र से तस् के स्थान में ताम् आदेश होकर भवताम् रूप सिद्ध हुआ।
>
> **भवन्तु-** झि का रूप है । लट् के झि के रूप भवन्ति के समान ही सिद्ध होता है, केवल इकार को एरु से उकार कार्य अधिक होता है।

हिन्दी अर्थ- लोट् के, सि को हि आदेश हो और वह अपित् हो।

> **भव, भवतात्-** मध्यम के एकवचन में यहाँ, सि को, हि आदेश हुआ। शेष कार्य शवादि लट् के समान होकर भव-हि यह स्थिति बनी। इसमें आशीर्वाद अर्थ में हि के स्थान में तातङ् आदेश होकर भवतात् रूप बन गया। तातङ् के अभाव पक्ष में भव हि इस दशा में-

सूत्रम्- अतो हेः । 6/4/105

वृत्तिः- अतः परस्य हेर्लुक्। भव, भवतात्। भवतम्, भवत।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अङ से परे हि का लोप हो।

> भव + हि में अदन्त अङ्ग भव से परे हि का लोप हुआ तो भव रूप बना। **तातङ् पक्ष में- भवतात्** । थस् को तम् आदेश होने से **भवतम्** और थको त आदेश होने से **भवत** रूप बनते हैं।

सूत्रम्- मेर्नि । 3/4/89

वृत्तिः- लोटो मेर्निः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- लोट् के, मिप् को नि आदेश हो।

लोट् के उत्तम के एकवचन में मिप् के मि को नि हो गया। शवादि कार्य भी पूर्ववत् होंगे।

सूत्रम्- आड् उत्तमस्य पिच्च । 3/4/92

वृत्तिः- लोडुत्तमस्याट् स्यात् पिच्च । भवानि । हिन्योरुत्वं न, इत्योच्चारणसामर्थ्यात् ।

हिन्दी अर्थ- लोट् के उत्तम पुरुष के प्रत्ययों को आट् आगम हो और वह पित् हो।

> **भवानि-** आट् होने पर भव+आ+नि यह स्थिति बनती है, यहाँ सवर्ण दीर्घ करने पर भवानि रूप सिद्ध होता है । **हिन्योरिति-** हि ओर नि के इकार को एरुः सूत्र से उकार नहीं होता क्योंकि इनमें इकार का उच्चारण व्यर्थ हो जायगा।

सूत्रम्- ते प्राग् धातोः । 1/4/80

वृत्तिः- ते गत्युपसर्गसंज्ञका धातोः प्रागेव प्रयोक्तव्याः।

हिन्दी अर्थ- गति और उपसर्ग संज्ञावाले प्र आदि शब्दों का धातु से पहले ही प्रयोग करना चाहिये।

जैसे- प्रभवति, पराभवति, अनुभवति इत्यादि । इन प्रयोगों में प्र परा और अनु उपसर्ग धातु से पहले प्रयुक्त हुए हैं।

सूत्रम्- आनि लोट् । 8/4/16

वृत्तिः- उपसर्गस्थाद् निमित्तात् परस्य लोडादेशस्य, आनीत्यस्य नस्य णः स्यात् । प्रभवाणि ।

हिन्दी अर्थ- उपसर्ग में स्थित निमित्त से परे लोट् के स्थान में हुए आदेश आनि के नकार को णकार हो।

प्रभवाणि- प्रभवानि यहाँ णत्व का निमित्त रकार, प्र उपसर्ग में है उस से परे, आनि के नकार को णकार होकर प्रभवाणि रूप बना।

वार्तिक- दुरः षत्वणत्वयोरुपसर्गत्वप्रतिषेधो वक्तव्यः। दुःस्थितिः। दुर्भवानि।

हिन्दी अर्थ- दुर् को षत्व और णत्व के विषय में उपसर्ग का निषेध कहना चाहिये अर्थात् षत्व और णत्व करना हो तो दुर् को उपसर्ग नहीं माना जाता।

वार्तिक- अन्तः शब्दस्याङ्-विधिणत्वेषूपसर्गत्वं वाच्यम । अन्तर्भवाणि।

हिन्दी अर्थ- अन्तर शब्द को अङ्, कि विधि और णत्व के विषय में, उपसर्ग कहना चाहिये अर्थात इसकी उपसर्ग संज्ञा होती है।

अन्तर्भवाणि- यहाँ अन्तर शब्द की प्रकृत वार्तिक से उपसर्ग संज्ञा होने पर उस में स्थित रकार निमित्त से परे आनि के नकार से णत्व हुआ।

सूत्रम्- नित्यं ङितः । 3/4/99

वृत्तिः- सकारान्तस्य ङिदुत्तमस्य नित्यं लोपः। अलोन्त्यस्य -इति सलोपः- भवाव, भवाम।

हिन्दी अर्थ- ङित् लकारों-लङ्, लुङ्, लिङ् और लृङ् के सकारान्त उत्तम का नित्य लोप हो । **अलोन्त्यस्य इति-** इस परिभाषा के बल से अन्त्य अल् सकार का ही लोप इस सूत्र के द्वारा होता है। यद्यपि यह सूत्र ङित् लकारों के लिये विधान करता है तथापि **लोटो लङ्वत्** के अतिदेश से लोट् में भी प्रवृत्त होता है।

भवाव- वस् में शपादि और आट् कार्य करने पर भवाव+स् इस अवस्था में **लोटो लङ्-वद्** के अतिदेश से सकार का लोप होकर भवाव रूप सिद्ध हुआ।
भवाम- इसी प्रकार बहुवचन में भी रूप सिद्ध होता है।

(लङ् लकार)

सूत्रम्- लुङ्-लङ्-लृङ्क्ष्वडुदात्तः । ६/4/७1

वृत्तिः- लुङ्-लङ्- लृङित्येतेषु परतोऽङ्गस्य अडागमः स्यात्स चोदात्तः ।

हिन्दी अर्थ- लुङ्, लङ् और लृङ् परे होने पर अङ्ग को अडागम होता है और वह उदात्त भी होता है ।

सूत्रम्- अनद्यतने लङ् । 3/2/111

वृत्तिः- अनद्यतनभूतार्थवृत्तेर्धातोर्लङ् स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- अनद्यतन भूतकाल अर्थ में धातु से लङ् लकार होता है।

सूत्रम्- इतश्च । 3/4/1००

वृत्तिः- ङितो लस्य परस्मैपदमिकारान्तं यत्तस्य लोपः स्यात् ।

(विधिर्लिङ् लकार)

सूत्रम्- विधि-निमन्त्रणामन्त्रणाधीष्ट-संप्रश्न-प्रार्थनेषु लिङ् । 3/3/161

वृत्तिः- एष्वर्थेषु धातोर्लिङ् ।

हिन्दी अर्थ- 1 विधि, 2 निमन्त्रण, 3 आमन्त्रण, 4 अधीष्ट, 5 संप्रश्न, 6 प्रार्थना इन अर्थों में धातु से लिङ् लकार होता है। विधि आदि इन छहों का अर्थ प्रेरणा है परन्तु सब प्रेरणाओं में भेद है-

विधिः- प्रेरणं विधि उस प्रेरणा को कहते हैं जिसे आज्ञा देना कहा जाता है। **जैसे- भृत्यादेर्निकृष्टस्य प्रवर्तनम्-** नौकरों और मजदूरों आदि अपने से निकृष्ट(छोटों) को कहा जाता है।
निमंत्रणम्- नियोगकरणम्, आवश्यके श्राद्धभोजनादौ दौहित्रादेः प्रवर्तनम्। निमंत्रण उस प्रेरणा को कहते हैं जिसे टाला नहीं जा सकता, इसे आग्रह कह सकते हैं।
आमन्त्रणः-आमन्त्रणं कामचारानुज्ञा अर्थात् आमन्त्रण में आमन्त्रित व्यक्ति को आना न आना उसकी इच्छा पर निर्भर है।
अधीष्टः- उस प्रेरणा को कहते हैं जिसमें सत्कार हो। **अधीष्टः सत्कारपूर्वको व्यापारः** सत्कार पूर्वक किसी को कार्य में लगाना।
संप्रश्न-: उस प्रेरणा को कहते हैं जिसमें परामर्श लेने का भाव हो **संप्रधारणम् संप्रश्नः-** निश्चय के लिये कहना।
प्रार्थनाः- उस प्रेरणा को कहते हैं जो अपने से बड़ों से की जाती है **प्रार्थनम्-याञ्चा ।**

सूत्रम्- यासुट् परस्मैपदेषुदात्तो ङिच्च । 3/4/103

वृत्तिः- लिङः परस्मैपदानां यासुड् आगमः, उदात्तो ङिच्च ।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के परस्मैपद प्रत्ययों को, यासुट् आगम हो और वह उदात्त और ङित् भी हो । इससे भव+यास्+त् यह स्थिति हुई।

सूत्रम्- लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य । 7/2/79

वृत्तिः- सार्वधातुकलिङोऽनन्त्यस्य सस्य लोपः। इति प्राप्ते-

हिन्दी अर्थ- सार्वधातुक लिङ् के अनन्त्य-जो अन्त में न हो-सकार का लोप हो। भव+यास्+त् यहाँ सार्वधातुक लिङ् यास्+त् है, इसका सकार अन्त्य नही। अतः लोप प्राप्त हुआ।

सूत्रम्- अतो येयः । 7/2/80

वृत्तिः- अतः परस्य सार्वधातुकावयवस्य यास् इत्यस्य इय्। गुणः।

हिन्दी अर्थ- अदन्त अङ्ग से परे सार्वधातुक के अवयव, यास् को, इय् आदेश हो ।

सूत्रम्- लोपो व्योर्वलि । 6/1/66

वृत्तिः- वलि वकारयकारयोर्लोपः स्यात् । भवेत्। भवेताम् ।

हिन्दी अर्थ- वल् परे रहते वकार और यकार का लोप हो।

भवेत्- भू धातु से ङित् के प्रथम के एकवचन में पूर्वोक्त प्रकार से, भवेय् त् इस स्थिति में वल् तकार परे होने से यकार का लोप हुआ।
भवेताम्- द्विवचन में- भू तस्, भू अ तस्, भू अ ताम्, भव् अ यास् ताम्, भव इय् ताम्, भवे य् ताम् इस स्थिति में वल् तकार परे होने से यकार का लोप होने पर रूप सिद्ध होता है।

सूत्रम्- झेर्जुस् । 3/4/108

वृत्तिः- लिङो झेर्जुस् स्यात् । भवेयुः। भवेः, भवेतम्, भवेत, भवेयम्, भवेव, भवेम।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के झि को जुस् आदेश हो।

भवेयुः- लिङ् के प्रथम पुरुष के बहुवचन में, झि को प्रकृत सूत्र झि को जुस् आदेश होता है सकार के विसर्ग हो जाते हैं। शेष कार्य पूर्ववत् होते हैं ।
भवेः- लिङ् के मध्यम पुरुष के एक वचन में भवेय् स् ऐसी स्थिति में लोपो व्योर्वलि से यकार का लोप हो जाता है। सिप् के इकार का ङित् लकार होने से **इतश्च** सूत्र से पहले ही लोप हो जाता है। सकार को विसर्ग होते हैं।
भवेतम्- भवेय् तम्-भवेतम् । यकार का लोप हुआ।
भवेत- भवेय् त-भवेय् व-भवेव। भवेम भवेय् मस्-भवेय् म-भवेम्। अन्तिम दो रूपों में नित्यं ङितः से सकार का और लोपो व्योर्वलिः से वकार का लोप होता है।

(आशीर्लिङ् लकार)

सूत्रम्- लिङ्-आशिषि । 3/4/116

वृत्तिः- आशिषि लिङस्तिङ आर्धधातुकसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- आशीर्वाद अर्थ में लिङ् के स्थान में आदेश हुए, तिङ् की आर्धधातुक संज्ञा हो ।

सूत्रम्- किद्-आशिषि । 3/4/104

वृत्तिः- आशिषि लिङो यासुट् कित् । स्कोः संयोगाद्योः इति संलोपः।

हिन्दी अर्थ- आशीर्वाद अर्थ के लिङ् को जो यासुट् आगम होता है वह कित् हो। **स्कोरिति-** इसमें **स्कोः संयोगाद्योरन्ते च** सूत्र से पदान्त संयोग, सुप् के आदि सकार का लोप हुआ तब भूयात् यह रूप बना।

सूत्रम्- क्ङिति च । 1/1/5

वृत्तिः- गित्-कित्-ङित्-निमित्ते इग्लक्षणे गुणवृद्धिः न स्तः।

हिन्दी अर्थ- गित्, किद् और ङित् प्रत्ययों के परे रहते इग्लक्षण गुण और वृद्धि कार्य नहीं होते।

भूयात्- भू धातु के आशीर्लिङ् के प्रथम पुरुष के एक वचन में पूर्वोक्त प्रकार से, भू यास् त् इसी स्थिति में, **स्कोः संयोगाद्योरन्ते च** सूत्र से संयोग, स्त के आदि सकार का लोप हुआ। सार्वधातुक न होने से **लिङ् सलोपोऽनन्त्यस्य** सूत्र से सकार का लोप नहीं होता। यास् आर्धधातुक परे होने से, **सार्वधातुकार्धधातुकयोः** सूत्र से ऊकार को गुण प्राप्त है। परन्तु आशीर्लिङ् का होने से, यास् कित् है अतः उसके परे रहने से यहाँ गुण नहीं होता, प्रकृत सूत्र से गुण का निषेध हो जाता है।

द्विवचन- भू यास् ताम्। तस् को ताम् आदेश हुआ ।
बहुवचन- भूयास्+उस्- भूयासुः । **झेर्जुसः** से झि को जुस् हुआ।
मध्यम एकवचन- भू यास् सिप्- भूयाः । इतश्च से इकार लोप। प्रथम सकार का संयोगादि लोप और द्वितीय सकार को विसर्ग।
द्विवचन- भूयास् तम्-भूयास्तम् । थस् को तम् आदेश हुआ।
बहुवचन- भूयास् त-भूयास्त। थ को त आदेश हुआ।
उत्तम एकवचन- भूयास् अम्-भूयासम् । मिप् को, अम् आदेश हुआ।
द्विवचन- भूयास् वस्-भूयास्व। **नित्यं ङितः** से अन्त्य स् का लोप
बहुवचन- भूयास् मस्-भूयास्म।

(लुङ् लकार)

सूत्रम्- लुङ् । 3/2/110

वृत्तिः- भूतार्थे धातोर्लुङ् स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- (सामान्य) भूतकाल में क्रिया का होना प्रकट करना हो तो धातु से, लुङ् लकार आता है।

सूत्रम्- माङि लुङ् । 3/3/17

वृत्तिः- सर्वलकारापवादः।

हिन्दी अर्थ- माङ् उपपद रहते धातु से लुङ् लकार हो।

सर्वेति- यह सब लकारों का अपवाद-बाधक है, अर्थात् माङ् के योग में सभी लकारों के विषय में, लुङ् ही होता है।

सूत्रम्- स्मोत्तरे लङ् च । 3/3/176

वृत्तिः- स्मोत्तरे माङि लङ् स्यात् चात् लुङ्।

हिन्दी अर्थ- स्म परक माङ् उपपद रहते धातु से लङ् लकार हो और लुङ् भी।

सूत्रम्- च्लि लुङि । 3/1/43

वृत्तिः- शबाद्यपवादः ।

हिन्दी अर्थ- च्लि विधि शप्, श्यन् और श आदि विकरणों का अपवाद है । अभू+त् इस अवस्था में सार्वधातुक तिङ् तिप् परे रहते शप् प्राप्त होता है। उसको बाधकर प्रकृत सूत्र से च्लि हो गया । तब अभू+च्लि+त् यह दशा बनी।

सूत्रम्- च्लेः सिच् । 3/1/44

वृत्तिः- इचावितौ ।

हिन्दी अर्थ- च्लि को, सिच् आदेश हो ।

इचाविति- सिच् में इकार और चकार इत्संज्ञक अनुबन्धहैं केवल स् शेष रहता है । यहाँ च्लि के स्थान में सिच् होने पर अ+भू+स्+त् यह स्थिति हुई ।

सूत्रम्- गाति-स्था-घु-पा-भूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु । 2/4/77

वृत्तिः- एभ्यः सिचो लुक स्यात्।

हिन्दी अर्थ- गा, स्था, घुसंज्ञक, पा और भू धातुओं से परे सिच् का लुक् हो । **गापोर्ग्रहणे इणपिबत्योर्ग्रहणम्** अर्थात् गा पा से इण् और पा पाने धातुओं का ग्रहण करना चाहिये।

सूत्रम्- भूसुवोस्तिङि । 7/3/88

वृत्तिः- भू सू एतयोः सार्वधातुके तिङि परे गुणो न। अभूत्, अभूताम्, अभूवन् अभूः, अभूतम्, अभूत। अभूवम्, अभूव, अभूम।

हिन्दी अर्थ- भू और सू धातुओं को सार्वधातुक तिङ् परे रहते गुण न हो।

अभूत्- भू धातु के लुङ् लकार के प्रथम पुरुष एकवचन में अभूस् त् इस प्रकृत स्थिति में भू धातु से परे, सिच् का लोप हो गया। तब फिर, अभूत् बना । यहाँ सार्वधातुक त् परे रहते, **सार्वधातुकार्धातुकयोः** इस सूत्र से गुण प्राप्त होता है। उसका अग्रिम सूत्र से निषेध होकर अभूत् यही रूप सिद्ध होता है।

अभूताम्- अभू स् ताम्-अभूताम्। अभूवन्- लुङ् के प्रथम पुरुष के बहुवचन में पूर्वोक्त प्रकार से अ+भू+अन्ति इस स्थिति में लुङ् सम्बन्धी अच् परे मिल जाने से **भुवो वुग् लुङ्लिटोरचि** सूत्र से धातु को वुक् आगम हुआ। तब अभूव्+अन्ति इस स्थिति में च्लि, सिच्, सिच् के इकार का लोप और तकार का संयोगान्त लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

अभूः- अभू+सि, अभू+स् = अभूः।
अभूवम्- अ भू मि-अ भू अम्-अ भू स् अम्-अभू अम्- अभूव् अम्-अभूवम्।
अभूवन्- अभूवम्-इन प्रयोगों में अजादि प्रत्यय होने से, भुवो वुक् **लुङ्लिटोरचि** सूत्र से वुक् आगम होता है शेष रूपों की सिद्धि साधारण है। परन्तु ध्यान रहे कि च्लि, च्लि के स्थान में सिच् आदेश और सिच् के लोप की चर्चा साधन प्रक्रिया में अवश्य की जानी चाहिए।

सूत्रम्- न माङ्योगे । 6/4/74

वृत्तिः- अडाटौ न स्तः। मा भवान् भूत्। मा स्म भवत् ।

हिन्दी अर्थ- माङ् के योग में अट् और आट् आगम नहीं होते।

(लृङ् लकार)

सूत्रम्- लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ । 3/3/139

वृत्तिः- हेतुहेतुमद्भावादि लिङ्निमित्तम्, तत्र भविष्यत्यर्थे लृङ् स्यात्, क्रियाया अनिष्पत्तौ गम्यमानायाम् ।

हिन्दी अर्थ- लृङ् का निमित्त हेतुहेतुमदभाव आदि है, उसमें यदि क्रिया का भविष्यत् काल में होना प्रकट करना हो तो धातु से लृङ् लकार हो।

अभविष्यत्- भू धातु से लृङ् लकार आने पर सर्वप्रथम भू अङ्ग को अट् आगम हुआ। तब लकार को यथाक्रम से तिबादि आदेश होंगे प्रथम के एकवचन में तिप् इसके इकार का **इतश्च** से इत्संज्ञा होकर लोप, **स्यतासी लृलुटोः** से शप् को बाधकर स्य प्रत्यय, बलादि आधर्धातुक होने से स्य को, **आर्धधातुकत्येड्वलादेः** से इट् आगम, **सार्वधातुकाधातुकयोः** से ऊकार को ओ गुण आदेश और ओकार को अवादेश होने के अनन्तर इट् के इकार इण से परे स्य प्रत्यय के अवयव सकार को **आदेशप्रत्यययोः** से मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

अभविष्यताम्- प्रथम पुरुष के द्विवचन में अट् तस् को ताम् आदेश, स्य, इट्, गुण, अवादेश, षत्व क्रम से उक्त कार्य होकर सिद्ध हुआ ।

अभविष्यन्- प्रथम पुरुष के बहुवचन में अट्, झि, इकार का लोप, झ, अन्त आदेश, स्य, इट्, गुण, अव्, आदेश, तकार का संयोगान्त लोप और षत्व होकर रूप सिद्ध हुआ ।

अभविष्यः- मध्यम पुरुष के एकबचन में अट्, सिप्, इकार का लोप, स्य, इट्, गुण, अव् आदेश, रुत्व और विसर्ग षत्व होकर रूप बना।

अभविष्यतम्- मध्यम पुरुष के द्विवचन में अट्, थस्, तम्, आदेश, स्य, इट्, गुण, अव् आदेश और षत्व होकर रूप सिद्ध हुआ।

अभविष्यत- मध्यम पुरुष के बहुबचन में थ को, त आदेश शेष प्रक्रिया पूर्ववत् ।

अभविष्यम्- उत्तम पुरुष के एक बचन में अट्, मिप, अम् आदेश स्य, इट्, गुण, अव आदेश और षत्व होकर रूप बना।

अभविष्याव, अभविष्याम- इन उत्तम पुरुष के द्विवचन और बहुवचन के रूपों में, **अतो दीर्घो यञि** से दीर्घ और **नित्यं ङितः** से सकार का लोप पूर्वोक्त कार्यों से विशेष होते हैं।

॥आत्मनेपदी एध् धातु॥

(लट् लकार)

एध् वृद्धौ ।

हिन्दी अर्थ- यह एध् वृद्धौ धातु वृद्धि अर्थ में आती है ।

सूत्रम्- टित आत्मनेपदानां टेरे । 3/4/79

वृत्तिः- टितो लस्यात्मनेपदानां टेरेत्वम् । एधते।

हिन्दी अर्थ- टित् लकारों के स्थान में आदेश हुए आत्मनेपद प्रत्ययों के टि के स्थान में एकार आदेश हो ।

एधते- उनमें प्रथम के एकवचन में त आदेश होने पर उसकी **तिङ्शित्सार्वधातुकम्** से सार्वधातुक संज्ञा होती है। तब **कर्तरि शप्** से शप् होकर **एधत** यह स्थिति बनती हैं यहाँ **टि** को एकार करने पर रूप सिद्ध होता है ।

सूत्रम्- आतो ङितः । 7/2/81

वृत्तिः- अतः परस्य ङितामाकारस्य इय् स्यात्।एघेते । एधन्ते।

हिन्दी अर्थ- अकार से पर ङित् प्रत्ययों के आकार को इय् आदेश हो।

एधेते- एध्+अ+आताम् यहाँ आकार से परे ङित् प्रत्यय आताम् के आदि आकार के स्थान में इय् आदेश हुआ। तव एध्+अ+इय् ताम् इस दशा में अकार और इकार को एकार गुण एकादेश वल् तकार परे होने से **लोपो व्योर्वलि** से यकार का लोप और टि आम् को एकार होने पर रूप बनता है।

एधन्ते- बहुवचन में शप् होने पर झ को अन्त आदेश टि को एकार और शप् के अकार का अन्त के अकार के साथ पररूप होकर रूप सिद्ध होता है ।

सूत्रम्- थासः सेः । 3/4/80

वृत्तिः- टितो लस्य थासः से स्यात् । एधसे । एधेथे, एधध्वे। अतो गुणे-एधे, एधावहे, एधामहे ।

हिन्दी अर्थ- टित् लकारों के थास के स्थान में से आदेश हो।

एधसे- मध्यम के एकवचन में शप् होने पर एध+अ+थास् इस दशा में टित् आत्मनेपदानां टेरे से टि को एकार प्राप्त होता है उसको बाधकर थासः से: थास् को से आदेश होने पर रूप सिद्ध होता है ।

एधेथे- मध्यम के द्विवचन आथाम् आने पर शप्, ङित् होने से प्रथम आकार को इय् आदेश, आकार और इकार को एकार गुण एकादेश, टि आम् को ए होने पर रूप सिद्ध होता है।

एधध्वे- बहुवचन ध्वम् की टि आम् को ए होकर बनता है।

एधे- उत्तम के एकचन इट् में शप् आने पर एध् अ इ इस दशा में टि इ को एकार हो जाता है। अतो गुणे से शप् के अकार का पररूप होने से रूप सिद्ध होता है।
एधावहे, एधामहे- द्विवचन में टि को एकार और **अतो दीर्घो** यञि से यदि वहि प्रत्यय परे रहते एधावहे और बहुवचन में इसी प्रकार एधामहे रूप सिद्ध होता है ।

(लिट् लकार)

सूत्रम्- इजादेश्च गुरुमतोनच्छः । 3/1/36

वृत्तिः- इजादियों धातुर्गुरुमान् ऋच्छत्यन्यः, तत आम् स्याल्लिटि।

हिन्दी अर्थ- ऋच्छ धातु से भिन्न गुरुवर्णवाले इजादि धातु से आम् हो लिट् परे रहते ।

सूत्रम्- आम्प्रत्ययवत् कृञोऽनुप्रयोगस्य । 1/3/63

वृत्तिः- आम् प्रत्ययो यस्माद् इति-अतद्गुणसंविज्ञानो बहुव्रीहिः। आम्प्रकृत्या तुल्यमनुप्रयुज्यमानात् कृञोऽप्यात्मनेपदम् ।

हिन्दी अर्थ- आम् प्रत्यय जिस धातु से होता है, आम प्रकृतिभूत उस धातु के समान अनुप्रयुज्यमान कृ धातु से भी आत्मनेपद हो।

सूत्रम्- लिटस्त-झयोरेश्-इरेच् । 3/4/81

वृत्तिः- लिडादेशयोस्तझयोः एश् इरेच् एतौ स्तः। एधाञ्चक्रे, एधाञ्चक्राते, एधाञ्चक्रिरे । एधाञ्चकृषे, एधाञ्चक्राथे-

हिन्दी अर्थ- लिट् के स्थान में आदेश हुए त और झ को एश् और इरेच् आदेश क्रम से हो ।

एधाञ्चक्रे- एधाम्+कृ+त इस अवस्था में **लिटस्त-झयोरेश्-इरेच्** इस सूत्र से त को एश् आदेश होने पर एधाम्+कृ+ए इस दशा में द्वित्व, चुत्व, यण्, म् को अनुस्वार और उसको परसवर्ण होकर यह रूप बनता है।
एधाञ्चक्राते- झ में झ को इरेच् आदेश होने से सिद्ध होता है।
एधाञ्चकृषे- थास् में उसको से आदेश होकर सकार को इण् ऋकार से पर होने के कारण मूर्धन्य षकार हो एधाञ्चकृषे रूप होता है। वलादि आर्धधातुक होने से प्राप्त इट् का निषेध हो जाता है ।
एधाञ्चक्राथे- आथाम् में पूर्ववत् सिद्धि होती है।

सूत्रम्- इणः षीध्वं-लुङ् लिटां धोऽङ्गात् । 8/3/78

वृत्तिः- इण्णन्ताद् अङ्गात् परेषां षीध्वं -लुङ्-लिटां धस्य ढः स्यात्। एधाञ्चक्रे एधाञ्चकृढ्वे। एधाम्बभूव । एधामास। एधिता, एधितारौ, एधितारः। एधितासे, एधितासाथे ।

हिन्दी अर्थ- इणन्त अङ्ग से परे षीध्वम्, लुङ् और लिट् के धकार को ढकार हो।

एधाञ्चकृढ्वे- ध्वम् में ध्वम् के अन्तिम भाग अम् टि के स्थान में एकार होने पर सिद्ध हुई स्थिति एधाञ्चकृ अन्त में ऋकार होने से इण्णन्त है और उससे पर लिट् के मध्यम के बहुवचन ध्वम् का धकार है, उसके स्थान में प्रकृत सूत्र से ढकार होकर रूप की सिद्धि होती है।
एधाञ्चक्रे- इट् में टि इकार को एकार होकर रूप सिद्ध होता है।
एधाञ्चकृवहे, एधाञ्चकृमहे- व और म में रूप बनते हैं। इनमें भी इट् का निषेध होता है ।
एधाम्बभूव, एधामास- भू के अनुप्रयोग में एधाम्बभूव आदि और अस् के अनुप्रयोग में एधामास आदि रूप बनते हैं ।

(लुट् लकार)

लुट् में प्रथम के रूप परस्मैपदी धातुओं के समान ही बनते हैं-एधिता, एधितारौ, एधितारः ।

एधितासे- मध्यम में थास् को से आदेश होने पर **तासस्त्योर्लोपः** से सकार का लोप होकर रूप सिद्ध होता है।
एधितासाथे- आथाम् में टि आम् को एकार होकर रूप बनता है।

सूत्रम्- धि च । 8/2/25

वृत्तिः- धादौ प्रत्यये परे सस्य लोपः। एधिताध्वे ।

हिन्दी अर्थ- धकारादि प्रत्यय परे होने पर सकार का लोप हो।

एधिताध्वे- एधितास् ध्वे इस दशा में इससे सकार का लोप होकर रूप सिद्ध होता है।

सूत्रम्- ह एति । 8/4/25

वृत्तिः- तासस्त्योः सस्य हः स्याद् एति परे। एधिताहे, एधितास्वहे, एधितास्महे। एधिष्यते, एधिष्येते, एधिष्यन्ते । एधिष्यसे, एधिष्येथे, एधिष्यध्वे। एधिष्ये, एधिष्यावहे, एधिष्यामहे ।

हिन्दी अर्थ- तास् और अस् धातु के सकार को हकार हो एकार परे होने पर ।

एधिताहे- एधितास् ए यहाँ एकार परे होने से तास् के सकार को हकार होकर रूप सिद्ध होता है।

एधितास्वहे, एधितास्महे- यहाँ टि को ए हुआ है।

(लृट् लकार)

लृट् में विशेष कार्य टि को एकार आदेश करना है शेष कार्य परस्मैपद के समान ही होते हैं।

(लोट् लकार)

सूत्रम्- आमेतः । 3/4/90

वृत्तिः- लोट एकारस्याम् स्यात्। एधताम् एधेताम्, एधन्ताम्।

हिन्दी अर्थ- लोट् के एकार को आम् आदेश हो।

एधताम्- लोट् के प्रथम पुरुष के एकवचन में टि को एकार करने पर एधते यह स्थिति हुई इसके बाद एधते के एकार को **आमेतः** सूत्र से आम् आदेश करने पर रूप बनता है।

एधेताम्, एधन्ताम्- द्विवचन और बहुवचन में भी लट् के समान एधेते और एधन्ते बनाने के अनन्तर एकार को आम् आदेश होकर रूप सिद्ध होते हैं। मध्यम के एकवचन में लट् के समान एधसे बनने पर **आमेतः** से एकार को आम् प्राप्त होता है।

सूत्रम्- सवाभ्यां वामौ । 3/4/91

वृत्तिः- सवाभ्यां परस्य लोडेतः क्रमाद् वामौ स्तः । एधस्व, एधेथाम्, एधध्वम्।

हिन्दी अर्थ- वकार परे लोट् के एकार को क्रम से व और अम् आदेश हो । यह सूत्र **आमेतः** का अपवाद है।

एधस्व- सकार से पर ऐकार को व होकर रूप बना।

एधध्वम्- इसी प्रकार ध्वम् लट् के समान ध्वे बनने पर प्राप्त आम् आदेश को बाधकर अम् होने से एधध्वम् रूप बनता है।

सूत्रम्- एत ऐ । 3/4/93

वृत्तिः- लोडुत्तमस्य एत ऐ स्यात्। एधै, एधावहै, एधामहै। **आटश्च**-ऐधत, ऐधेताम्, ऐधन्त ऐधथा, ऐधेथाम् ऐधध्वम् ऐधे, ऐधावहि, ऐधामहि।

हिन्दी अर्थ- लोट् के उत्तम के एकार को ऐ हो। यह भी आमेतः का अपवाद है।

एधै- प्रकृत सूत्र से एकार को ऐकार होने पर आट् के साथ वृद्धि होकर रूप बनता है।

एधावहै, एधामहै- द्विवचन और बहुचन में एध् अ आ वहि और एध् अ आ महि इस दशा में सवर्णदीर्घ और टि को ए होने पर एधावहे और एधामहे इस दशा में एकार को प्राप्त आम् को बाधकर ऐकार आदेश हुआ तब एधावहै और एधामहै रूप सिद्ध होते हैं।

(लङ् लकार)

लङ् में अजादि होने से **आडजादीनाम्** सूत्र से अङ्ग को आट् का आगम होता है तब **आटश्च** से वृद्धि एकादेश ऐकार होकर ऐधत आदि रूप बनते हैं।

ऐधे- यहाँ शप् के अकार और इट् के इकार का गुण एकार होता है।

ऐधावहि, ऐधामहि- यहाँ शप् के अकार को वहि और महि परे होने से **अतो दीर्घो यञि** से दीर्घ होता है।

(लिङ् लकार)

सूत्रम्- लिङः सीयुट । 3/4/102

वृत्तिः- लिङात्मनेपदस्य सीयुडागमः स्यात् । सलोपः- एधेत, एधेयाताम्।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के स्थान में आदेश हुए आत्मनेपद प्रत्ययो को सीयुट् आगम हो। **सलोप इति-** विधिलिङ् में सार्वधातुक होने से सीयुट् के सकार का **लिङः सलोपोननत्यस्य** से लोप होता है।

एधेत- प्रथम के एकवचन में शप् होने पर एध् अ सीयु त यह अवस्था हुई। यहाँ सार्वधातुक लकार होने से तदवयव सीयुट् के सकार का **लिङःसलोपोनन्त्यस्य** से लोप होता है तथा **लोपो व्योर्वलि** से वल् तकार परे होने से यकार का भी लोप होता है तब एध् अ ई त इस दशा में **आद गुणः** से रूप बनता है।

एधेयाताम्- आताम् में सकार का लोप और अकार तथा ईकार को गुण एकार होकर एधेयाताम् रूप सिद्ध होता है। झ में सीयुट्, उसके सकार का लोप और शबादि होने पर एधेय् झ या स्थिति होती है।

सूत्रम्- झस्य रन् । 3/4/105

वृत्तिः- लिङो झस्य रन् स्यात्। एधेरन्। एधेथाः, एधेयाथाम्, एधेध्वम् ।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के झ को रन् आदेश हो।

एधेरन्- एधेय् झ यहाँ झ को रन् आदेश होने पर **लोपो व्योर्वलि** के यकार का लोप होकर एधेरन् रूप सिद्ध होता है।

एधेथाः, एधेध्वम्- इनमें भी यकार का लोप हो जाता है।

सूत्रम्- इटोऽत् । 3/4/106

वृत्तिः- लिङादेशस्य इटोऽत् स्यात्। एधेय, एधेवहि, एधेमहि।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के स्थान में आदेश हुए इट् को अत् आदेश हो। अत् का अकार शेष रहता है।

एधेय- एधेय इ यहाँ इ को अकार करने पर एधेय रूप बनता है।	
एधेवहि, एधेमहि- यहाँ यकार का लोप हो जाता है।	

(आशीर्लिङ् लकार)

आशीर्लिङ् में आर्धधातुक होने से सीयुट् के सकार का लोप नहीं होता और वलादि आर्धधातुक होने से इट् आगम हो जाता है। तब ए+ध्+इ+सीयू+त यह स्थिति बनती है।

सूत्रम्- सुट् तिथोः । 3/4/107

वृत्तिः- लिङस्तथोः सुट्। यलोपः आर्धधातुकत्वात् सलोपो न। एधिषीष्ट, एधिषीयास्ताम्, एधिषीरन्। एधिषीष्ठाः एधिषीयास्थाम्, एधिषीध्वम्। एधीषीय, एधिषीवहि, एधिषीमहि। ऐधिष्ट, ऐधिषाताम् ।

हिन्दी अर्थ- लिङ् के तकार और थकार को सुट् आगम हो।

यलोप इति- इस सूत्र से तकार और थकार को सुट् आगम होने पर एध्+इ+सीय्+स्+त इस स्थिति में वलादि आर्धधातुक परे होने से यकार का लोप हुआ ।

आर्धधातुकत्वादिति- आर्धधातुक होने से लिङः **सलोपोऽनन्त्य** से सीयुट के सकार का लोप नहीं होता।

एधिषीष्ट- तब एध् इ सी स् त इस दशा में इण् से परे होने के कारण दोनों प्रत्यय के अवयव सकारों के मूर्धन्य षकार आदेश और ष्टुत्व से तकार को टकार हो कर एधिषीष्ट रूप सिद्ध होता है।

एधिषीयास्ताम्,एधीषीरन्- आताम् में तकार को सुट् होने से एधिषीयास्ताम् और झ में रन् आदेश होने से यकार का लोप होकर एधीषीरन् रूप बनते हैं।

एधिषीष्ठाः- थास् में थकार को सुट् आगम होकर मूर्धन्य आदेश होने पर थकार को ष्टुत्व ठकार होकर एधिषीष्ठाः यह रूप बनता है।

एधिषीय- यहाँ एध्+इ+सीय्+इ इस स्थिति में ईट् को **इटोऽत्** से अकार होने पर सीयुट् के सकार को मूर्धन्य षकार होकर रूप सिद्ध हुआ है।

(लुङ् लकार)

ऐधिष्ट- एध् (लुङ्) आट्, वृद्धि, त, च्लि उसको सिच्, इट्, षत्व और ष्टुत्व होकर रूप सिद्ध हुआ है।

ऐधिषाताम्- एध्, लुङ्, आट्, वृद्धि, आताम् आदेश, च्लि, उसको सिच्, उसको इट् और षत्व करने से उक्त रूप सिद्ध होता है।

सूत्रम्- आत्मनेपदेष्वनतः । 7/1/5

वृत्तिः- अनकारात् परस्यात्मनेदेषु झस्य अत् इत्यादेशः स्यात्। ऐधिषत। ऐधिष्ठाः ऐधिषाथाम्, ऐधिढ्वम् । ऐधिषि, ऐधिष्वहि, ऐधिष्महि। ऐधिष्यत, ऐधिष्येताम्, एधेधिष्यन्त। ऐधिष्यथाः, ऐधिष्येथाम्, ऐधिष्यध्वम्। ऐधिष्ये, ऐधिष्यावहि, ऐंधिष्यामहि।

हिन्दी अर्थ- अकारभिन्न वर्ण से पर आत्मनेद झ के स्थान में अत आदेश हो। यह **झोन्तः** का अपवाद है।

ऐधिषत- एध् धातु से पर झ को अत् आदेश होगा, क्योंकि यहाँ वह अकार से पर नहीं सिच् के सकार से परे है। इस प्रकार ऐधिषत रूप बनता है।

ऐधिष्ठाः- एध् से लुङ्, आट् वृद्धि, च्लि, सिच्, थास्, इट्, षत्व और ष्टुत्व ठकार होकर यह रूप सिद्ध होता है।

ऐधिढ्वम्- एध् से लुङ्, आट्, वृद्धि, ध्वम्, च्लि, सिच्, इट सलोप और ढत्व होकर रूप सिद्ध होता है।

(लृङ् लकार)

ऐधिष्यत- आदि रूप लृङ् लकार में बनते हैं। प्रक्रिया में कुछ अधिक विशेषता नहीं लट् के समान ही कार्य होते हैं। यहाँ ङित् लकार होने से आट् अधिक होता है और टित् लकार न होने से टि को एकार नहीं होता।

॥अथ अदादिगणः॥

अद् भक्षणे ।

खाना । राक्षस आदियों के खाने के लिये इसका प्रयोग होता है।

सूत्रम्- अदिप्रभृतिभ्यः शपः । 2/4/72

वृत्तिः- शपः लुक् स्यात्। अत्ति, अत्तः, अदन्ति। अत्सि, अत्थः, अत्थ। अद्मि अद्वः अद्मः।

हिन्दी अर्थ- अदादि गण की धातुओं से परे शप् का लोप हो।

अत्ति- अद् के लट् में तिप् आदि आदेश होने पर कर्तरि शप् से शप होता है। उसका प्रकृत सूत्र से लोप हो जाता है तब अद् ति दकार को **खरि च** से तकार होने से रूप सिद्ध होता है।
अत्तः- इसी प्रकार तस् में सिद्ध होता है।
अदन्ति- झि के झकार को अन्त आदेश हो जाने पर रूप बनता है।
अत्सि- सिप् में थस् और थ में भी दकार को चर् तकार होने से अत्थः, अत्थ रूप होते हैं।
अद्मि, अद्वः, अद्मः- मिप्, वस् और मस् में दकार ही रहता है।

सूत्रम्- लिट्यन्यतरस्याम् । 2/4/40

वृत्तिः- अदो घस्लृ वा स्यात् लिटि। जघास। उपधालोपः-

हिन्दी अर्थ- अद् धातु को घस्लृ आदेश विकल्प से हो लिट् परे रहते। घस्लृ का ल इत्संज्ञक है।

जघास- घस् आदेश होने पर द्वित्व, अभ्यासकार्य हलादिशेष तथा**कुहोश्चुः** से चवर्ग झकार और उसकी **अभ्यासे चर्च** से जश् जकार होताहै **अत उपधायाः** से णल् के परे रहते उपधा अकार को वृद्धि होती है।

सूत्रम्- शासि-वसि-घसीनां च । 8/3/60

वृत्तिः- इण-कुभ्यां परस्यैषां सस्य षः स्यात्। घस्य चत्त्वम् जक्षतुः, जक्षुः। जघसिथ, जक्षथुः, जक्ष, जघास-जघस, जक्षिव, जक्षिम। आदः, आदतुः, आदुः।

हिन्दी अर्थ- इण् और कवर्ग से पर शास् (शासन करना), वस् (रहना) और घस् (खाना) धातुओं के अवयव सकार को षकार हो ।

जक्षतुः- ज घस् अतुस् यहाँ मूर्धन्य षकार होने पर षकार को **खरि च** से चर् ककार होता है क्-ष् संयोग में क्ष होकर रूप सिद्ध होता है।
जक्षुः- इसमें भी पूर्ववत् सिद्धि होती है।

जघसिथ- में नित्य इट् होता है, क्योंकि घस् आदेश के लिट् और लुङ् में ही होने के कारण तास् में प्रयोग होता नहीं, अतः यह तास् में नित्य अनिट् नहीं । इसीलिये **अजन्तोकारवान् वा** यह नियम यहाँ नहीं लगता। क्रादि नियम से इट् हो जाता है। इसी प्रकार जक्षिव और जक्षिम में भी। घस् आदेश के अभावपक्ष में आद, आदतुः, आदुः रूप बनते हैं।

सूत्रम्- इडत्यर्तिव्ययतीनाम् । 7/2/66

वृत्तिः- अद, ऋ, व्यञ् एभ्यस्थलो नित्यमिट् स्यात् । आदिथ । अत्ता। अत्स्यति। अत्तु-अत्तात्, अत्ताम्, अदन्तु।

हिन्दी अर्थ- अद् (खाना,) ऋ (जाना) और व्ये (ढकना) धातुओं से परे थल् को नित्य इट् हो।

आदिथ- अद् धातु के थल् को धातु के उपदेश में अकारवान् होने से वैकल्पिक इट् प्राप्त था। प्रकृत सूत्र से नित्य होता है। तब आदिथ रूप सिद्ध होता है।
आदिव, आदिम- व और म में क्रादिनियम से नित्य इट् होकर रूप बनते हैं।
अत्ता- लुट् में अनिट् होने से इट् नहीं होता, दकार को चर् तकार होता है।
अत्स्यति- यह रूप भी पूर्वोतक्त प्रकार से बनता है।
अत्तु, अत्तात्, अत्ताम्- इन प्रयोगों में भी शप् के लोप होने पर दकार को तकार रूप सिद्ध होता है।

सूत्रम्- हु-झल्भ्यो हेर्धि । 6/4/101

वृत्तिः- होझलन्तेभ्यश्च हेः धिः स्यात्। अद्धि-अत्तात्, अत्तम्, अत्त। अदानि, अदाव, अदाम ।

हिन्दी अर्थ- हु (हवन करना, खाना) और झलन्त धातुओं से परे हि को धि आदेश हो।

अद्धि- अद् धातु दकारान्त होने से झलन्त है, अतः इससे परे हि को धि होता है तब रूप सिद्ध होता है।
अदानि, अदाव, अदाम- उत्तम में प्रत्ययों कों **आडुत्तमस्य पिच्च** सूत्र से आट् आगम होकर रूप बनते हैं।

सूत्रम्- अदः सर्वेषाम् । 7/3/100

वृत्तिः- अदः परस्यापृक्तसार्वधातुकस्य अट् स्यात् सर्वमतेन। आदत्, आत्ताम्, आदन् । आदः, आत्तम्, आत्त। आदम्, आद्व, आद्म। अद्यात्, अद्याताम्, अद्युः। अद्यात्, अद्यास्ताम्, अद्यासुः।

हिन्दी अर्थ- अद् धातु से परे अपृक्त सार्वधातुक को अट् आगम हो सब के मत से।

आदत्- आद त् यहाँ अद् से परे अपृक्त सार्वधातुक त् को अट् आगम हो जायेगा तब आदत् रूप बनता है।
आदः – सिप् का भी केवल सकार बचा रहता है, अतः अपृक्त होने से इसे भी अट् होकर आद् रूप बनता है।
आदन्- झि में झ को अन्त आदेश होने से आदन् रूप सिद्ध होता है ।
आदम्- मिप् को अम् आदेश होने से आदम् रूप सिद्ध होता है। शेष- ताम्, तम्, त में चर् होता है वस्, मस् में चर् नहीं होता।
अद्यात् अद्याताम्- विधिलिङ् में सार्वधातुक लकार होने से **लिङ सलोपोऽनन्त्यस्य** से यासुट् के सकार का लोप हो जाता है। शप् के लोप होने से अकार वहाँ नहीं मिलता, अतएव **अतो येयः** की प्रवृत्ति नहीं मिलती ।

सूत्रम्- लुङ्सनोर्घस्लृ । 2/4/37

वृत्तिः- अदो घस्लृ स्यात् लुङि सनि च। लृदित्वादङ्-अघसत्। आत्स्यत्

हिन्दी अर्थ- अद् धातु को घस्लृ आदेश हो लुङ् और सन् परे रहते।

अघसत्- अद् को घस्लृ आदेश होने पर अ घस् च्लि त् इस अवस्था में लृदित् होने से **पुषादि-द्युतादि-लृदितः परस्मैपदेषु** से च्लि को अङ् आदेश होता है । तब यह रूप सिद्ध होता है ।
आत्स्यत्- लृङ् में आट्, तिप्, इकार लोप, स्य प्रत्यय, दकार को चर् तकार होकर रूप सिद्ध होता है।

॥अथ जुहोत्यादिगणः॥

हु दानादनयोः ।

हु-देना और खाना।

सूत्रम्- जुहोत्यादिभ्यः श्लुः । 2/4/75

वृत्तिः- शपः श्लुः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- जुहोत्यादिगण की धातुओं से परे शप् का श्लु (लोप) हो।

सूत्रम्- श्लौ । 6/1/10

वृत्तिः- धातोर्द्वे स्तः। जुहोति, जुहुतः।

हिन्दी अर्थ- श्लु परे होने पर अर्थात् जहाँ शप् को श्लु हुआ है, वहाँ धातु को द्वित्व हो ।

जुहोति- यहाँ श्लु हुआ है अतः द्वित्व होता हैं तब हु+हु+ति इस दशा में पूर्वखण्ड अभ्यास को **कुहोश्चुः** से चवर्ग झ और **अभ्यासे चर्च** से जश् जकार तथा उत्तरखण्ड में सार्वधातुक गुण होकर जुहोति रूप सिद्ध हुआ।
जुहुतः- तस् के अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् हो जाने के कारण गुण नहीं होता। अतः जुहुतः रूप बनता है।

सूत्रम्- अदभ्यस्तात् । 7/1/4

वृत्तिः- झस्यात् स्यात्। हुश्नुवोः इति यण-जुह्वति।

हिन्दी अर्थ- अभ्यस्त से परे झ को अत् आदेश हो ।

जुह्वति- हु धातु से परे झ को प्रकृत सूत्र से अत् आदेश होता है। जुहु+अति इस दशा में उवङ् प्राप्त होता है। विशेष विहित होने से उसको बाधकर **हुश्नुवोः सार्वधातुके** से यण् होकर जुह्वति रूप बनता है ।

सूत्रम्- भी-ह्री-भृ-हुवां श्लुवच्च । 3/1/39

वृत्तिः- एभ्यो लिटि आम् वा स्यात् आमि श्लाविव कार्यं च। जुहवाञ्चकार, जुहाव। होता, होष्यति । जुहोतु-जुहुतात्, जुहुताम्, जुह्वतु, जुहुधि, जुहवानि। अजुहोत्, अजुहुताम्।

हिन्दी अर्थ- भी, ह्री, भृ और हु (हवन करना) इन धातुओं से आम् प्रत्यय हो लिट् परे होने पर विकल्प से, तथा श्लु के विषय में जो कार्य (द्वित्व) होता है वह भी हो ।

लुट् में- होता, होतारौ, होतारः इत्यादि रूप बनते हैं। यहाँ धातु के अनिट् होने से इट् आगम नहीं होता धातु के उकार को आर्धधातुक गुण हो जाता है।
लृट् में- होष्यति, होष्यतः, होष्यन्ति आदि रूप सिद्ध होते हैं ।
लोट् में- लट् के समान शप् का श्लु और द्वित्व आदि कार्य होंगे।
जुहुधि- यह सिप् का रूप है। सिप् को हि होता है और उसको **हुझल्भ्यो हेर्धिः** से धि आदेश होकर रूप बनता है।
जुहवानि- उत्तम में आट् के पित् होने से **हुश्नुवोः सार्वधातुके** के यण् को बाधकर गुण और अवादेश होकर जुहवानि, जुहवाव, जुहवाम रूप बनते हैं।
लङ् में- तिप् का **अजुहोत्** और तस् का **अजुहुताम्** रूप बनता है।

सूत्रम्- जुसि च । 7/3/83

वृत्तिः- इगन्ताङ्गस्य गुणोऽजादौ जुसि। अजुहवुः। जुहुयात् । हूयात् । अहौषीत्, अहोष्यत् ।

हिन्दी अर्थ- इगन्त अङ्ग को गुण हो अजादि जुस् परे होने पर । लिङ् में यास् और लुङ् में सिच् के कारण जुस् अजादि नहीं रहता- अतः वहाँ यण् न हो, इस के लिये यह विशेषण दिया गया है।

अजुहवुः- अजुह+उस् इस दशा में उवङ् आदेश को बाधकर प्रकृत सूत्र से गुण होने पर अव् आदेश होकर रूप सिद्ध होता है।
जुहुयात्- विधिलिङ् में जुहुयात्, जुहुयाताम्, जुहयुः आदि रूप बनते हैं।
हूयात्- आशीर्लिङ् में **अकृत्सार्वधातुकयोः दीर्घः** से दीर्घ होकर हूयात्, हूयास्ताम्, हूयासुः आदि रूप सिद्ध होते हैं।
अहौषीत्- लुङ् मे **सिचिवृद्धिपरस्मैपदेषु** से उकार को वृद्धि होती है । अनिट् धातु है अतः अहौषीत्, अहौष्टाम्, अहौषुः इत्यादि रुप बनते है।
लृङ् में- **अहोष्यत् अहोष्यताम् अहोष्यन्** आदि रुप बनते है ।

॥अथ दिवादिगणः॥

दिवु- क्रीडा-विजिगीषा- व्यवहार-द्युति-स्तुति-मोद मद-स्वप्र कान्ति गतिषु ।

हिन्दी अर्थ- दिव् (क्रीड़ा, जूआ खेलना, व्यवहार, चमकना, स्तुति करना, प्रसन्न होना, नशा करना, सोना, इच्छा करना, चलना) यह धातु सेट् है।

सूत्रम्- दिवादिभ्यः श्यन् । 3/1/69

शपोपवादः ।

हलि च ।

वृत्तिः- इति दीर्घः- दीव्यति। दिदेव। देविता। देविष्यति। दीव्यतु। अदीव्यत्। दीव्येत् । दीव्यात्। अदेवीत् । अदेविष्यत्।

हिन्दी अर्थ- दिवादिगण की धातुओं से श्यन् प्रत्यय हो । **शप् इति-** यह श्यन् शप् का अपवाद (बाधक) है।

दीव्यति- यह श्यन् शित् होने से **तिङ्शित् सार्वधातुकम्** सूत्र से सार्वधातुकहै और अपित् सार्वधातुक होने से **सार्वधातुकमपित्** सूत्र से ङिद्वद होताहै। दिव् धातु से लट् में श्यन् आने पर वकारान्त उपधा इकार को हल्यकार परे होने से **हलि च** से दीर्घ होता है।

॥अथ स्वादिगणः॥

षुञ् अभिषवे ।

हिन्दी अर्थ- अभिषव का अर्थ है स्नान करना, निचोड़ना आदि। यह धातु उपदेश में षकारादि हैं इसका अकार इत्संज्ञक है, अतः यह उभयपदी है।

सूत्रम्- स्वादिभ्यः श्नुः । 3/1/73

वृत्तिः- शपोवादः। सुनोति, सुनुतः, हुश्नुवोः इति यण्-सुन्वन्ति। सुन्वः-सुनुवः। सुनुते, सुन्वाते, सुन्वते। सुन्वहे- सुनुवहे। सुषाव, सुषुवे । सोता। सुनु, सुनवानिं, सुनवै। सुनुयात् । सूयात्।

हिन्दी अर्थ- स्वादिगण के धातुओं से श्नु प्रत्यय हो।

शप् इति- यह श्नु प्रत्यय शप् का बाधक है, अतः स्वादि गण की धातुओं से शप् न होकर श्नु होता है।

सुनोति- लट् में सु ति इस दशा में प्रकृत सूत्र से श्नु होने पर उसके उकार कों सार्वधातुक गुण होकर रूप धातु के उकार को गुण नहीं होता क्योंकि बीच में श्नु का व्यवधान है और श्नु के ङिद्वत होने से तिन्नमित्तक गुण भी नहीं होता।
सुनुतः- लट् में सु तस् इस दशा में श्नु प्रत्यय होकर रूप बना। यहाँ तस् अपित् सार्वधातुक होने से ङिद्वत् है ।
सुन्वन्ति- झि में सु नु अन्ति इस दशा में ङित् प्रत्यय परे होने से **अचि श्नुधातुभ्रुवां...-** से प्राप्त उवङ् को बाधकर **हुश्नुवोः सार्वधातुके** से यण् आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

सूत्रम्- स्तु-सु-धूञ्भ्यः परस्मैपदेषु । 7/2/72

वृत्तिः- एभ्यः सिच इट् स्यात् परस्मैपदेषु। असावीत्, असोष्ट।

हिन्दी अर्थ- स्तु, सु और धू धातुओं से पर सिच् को इट् आगम हो, परस्मैपद प्रत्ययों के परे रहते। अनिट् होने से इसके सिच् को इट् प्राप्त नहीं था।

असावीत्- लुङ्कार में अ सु स् त् इस अवस्था में प्रकृत सूत्र से सिच् को इट् आगम हुआ, अपृक्त तकार को ईट्, सिच् का लोप, इट् और इट् को सवर्ण दीर्घ, धातु के उकार को **सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु** सूत्र से वृद्धि औकार होने पर उसको आव् आदेश होकर रूप सिद्ध हुआ।

॥अथ तुदादिगणः॥

तुद व्यथने ।

हिन्दी अर्थ- तुद् (पीड़ा पहुँचाना)- यह धातु उभयपदी हैं।

सूत्रम्- तुदादिभ्यः शः । 3/1/77

वृत्तिः- शपोपवादः। तुदति, तुतोद, तुतोदिथ। तुतुदे। तोत्ता। अतौत्सीत्, अतुत्त।

हिन्दी अर्थ- तुदादि गण की धातुओं से श प्रत्यय हो ।

तुदति- लट् में तुद् ति इस स्थिति में प्रकृत सूत्र से श प्रत्यय होने पर उसके अनुबन्ध शकार का लोप होकर सिद्ध होता हैं यहाँ अपित् सार्वधातुक होने के कारण श के ङिद्वित् हो जाने से लघूपध गुण का निषेध हो जाता है।
तुतोद- लिट् के तिप् को णल् आदेश होने पर द्वित्व, अभ्यास कार्य और उत्तरखण्ड में गुण होकर रूप सिद्ध हुआ।
तुतुदे- लिट् आत्मनेपद द्वित्व और अभ्यास कार्य होने पर रूप बनता है। असंयोगाद् लिट् कित् से लिट् के कित् होने के कारण यहाँ गुण नहीं होता।
तोत्ता- लुट् में तास्, तिप् को डा आदेश, टि का लोप, लघूपध गुण और दकार को तकार होकर रूप सिद्ध होता है।
लृट्- तोत्स्यति, तोत्स्यते। **लोट्-** तुदतु, तुदताम्, **वि. लि.-** तुदेत्, तुदेत। **आ. लि.-** तुद्यात, तुत्सीष्ट।
अतौत्सीत्- लुङ् परस्मैपद में अतुद्+स+त् इस दशा में हलन्तलक्षणा वृद्धि इट् आगम अपृक्त तकार को और दकार को चर् तकार होकर रूप सिद्ध होता है।

॥अथ तनादयः॥

तनु विस्तारे ।

हिन्दी अर्थ- तनु (फैलाना)। उभयपदी,यह धातु उदित् है जिसका फल है इट् का निषेध ।

सूत्रम्- तनादिकृञ्भ्य उः । 6/1/79

वृत्तिः- शपोऽपवादः। तनोति, तनुते। ततान, तेने, तनितासि, तनितासे। तनिष्यति, तनिष्यते। तनोतु, तनुताम् । अतनोत्, अतनुत। तनुयात्, तन्वीत। तन्यात्, तनिषीष्ट। अतानीत्, अतनीत्।

हिन्दी अर्थ- तन् आदि और कृ धातु से उ प्रत्यय हो यह शप् का अपवाद है।

तनोति- लट् प्रथमपुरुष एकवचन में तन् + ति इस दशा में **तनादिकृञ्भ्य उः** इस सूत्र से उ विकरण हुआ। उसको पित् तिप् परे रहते सार्वधातुक गुण होने पर रूप सिद्ध हुआ।
तनुते- लट् आत्मनेपद प्रथम पुरुष एकवचन में त के अपित् सार्वधातुक होन से ङिद्वत् हो जाने के कारण उ प्रत्यय को गुण नहीं हुआ।
शेष रूप परस्मैद- तनोति, तनुतः तन्वन्ति तनोषि, तनुथः, तनुथ। तनोमि, तनुव, तनुमः ।
आत्मनेपद- तनुते, तन्वाते, तन्वते । तनुषे, तन्वाथे, तनुध्वे । तन्वे, तनुवहे, तनुमहे।

सूत्रम्- तनादिभ्यस्तथासोः । 2/4/79

वृत्तिः- तनादेः सिचो वा लुक् स्यात् त-थासोः। अतत, अतनिष्ट। अतथाः, अतनिष्टाः। अतनिष्यत्, अतनिष्यत।

हिन्दी अर्थ- तन् आदि से परे सिच् का विकल्प से लोप होता है त और थास् परे रहते ।

अतथा, अतनिष्ठाः- लुङ् आत्मनेपद प्रथमपुरूष एकवचन थास् में सिच् लोप होकर अनुनासिक लोप होने पर पहला रूप बना और सिच् के लोप के अभाव में दूसरा रूप।

॥अथ रुधादयः॥

रुधिर् आवरणे ।

रुधिर्- (रोकना)-अनिट् इर् इत्संज्ञक है लुङ् में च्लि को विकल्प से चङ् होना इरित् होने का फल है।

सूत्रम्- रुधादिभ्यः श्नम् । 3/1/78

हिन्दी अर्थ- रुधादि धातुओं से परे श्नम् होता है। श्नम् के शकार और मकार की इत्संज्ञा होकर लोप हो जाता है, केवल न बचा रहता है। यह श्नम्, प्रत्यय शप् का अपवाद है।

रुणद्धि- एकवचन रुध्+ति इस स्थिति में श्नम् हुआ वह रकारोत्तरवर्ती उकार के आगे मित् होने के कारण हुआ। तब **झषस्तथोर्धोऽधः** सूत्र से तकार को धकार तथा धातु के धकार को जश् दकार हुआ और नकार को णकार होकर रूप सिद्ध हुआ।

॥अथ क्र्यादयः॥

डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये ।

उभयपदी।

सूत्रम्- क्र्यादिभ्यः श्ना । 3/1/81

वृत्तिः- शपोऽपवादः।

वृत्तिः-

वृत्तिः- क्रीणाति। **ई हल्यघोः-** क्रीणीतः। **श्नाभ्यस्तयोरातः** क्रीणन्ति। क्रीणासि, क्रीणीथः, क्रीणीथ। क्रीणामि, क्रीणीवः, क्रीणीमः। क्रीणीते, क्रीणीते, क्रीणते। क्रीणीषे क्रीणार्थे, क्रीणीध्वे....।

हिन्दी अर्थ- क्री आदि धातुओं से श्ना प्रत्यय हो। श्ना शप् का अपवाद है। शकार इसका इत् है।

क्रीणाति- लट् परस्मै. प्र. पु. ए. व. में श्ना विकरण हुआ तब णत्व होकर रूप सिद्ध हुआ।
क्रीणीतः- लट् तस् में श्ना के आकार को **ई हल्यघोः** सूत्र से ईकार होकर रूप बना।
क्रीणन्ति- लट् अन्ति में श्ना के आकार को **श्नाभ्यस्तयोरातः** इस सूत्र से लोप होने पर रूप सिद्ध हुआ।

॥अथ चुरादयः॥

चुर स्तेये ।

सूत्रम्- सत्याप-पाश-रूप-वीणा-तूल-श्लोक-सेना-लोम- त्वच-वर्म-वर्ण-चूर्ण-चुरादिभ्यो णिच् । 2/1/25

वृत्तिः- एभ्यो णिच् स्यात्। चोरयति।

हिन्दी अर्थ- सत्याप, पाश, रूप, वीणा, तूल, श्लोक, सेना, लोमन्, त्वच्, वर्मन्, वर्ण और चूर्ण शब्दों से तथा चुर् आदि धातुओं से णिच् प्रत्यय स्वार्थ में होता है । अतः यह स्वार्थिक है। णिच् का णकार और चकार इत् है। प्रत्यय केवल इकार बचता है वह यथाप्राप्त गुण और वृद्धि का निमित्त बनता है ।

चोरयति- चुर् धातु से णिच् होने पर चुर् + इ इस दशा में णिच् आर्धधातुक परे रहते **पुगन्तलघूपधस्य च** सूत्र से उपधा उकार को गुण होकर चोर् इ बना। तब चोरि की पुनः **सनाद्यन्ता धातवः** से धातु संज्ञा हुई। धातु संज्ञा होने पर तिप् शप् आदि और णिच् के इकार को गुण तथा अय् आदेश होकर यह रूप लट् प्र. पु. ए. व. में सिद्ध होता है।

सूत्रम्- णिचश्च । 1/3/74

वृत्तिः- णिजन्ताद् आत्मनेपदं स्यात् कर्तृगामिनि क्रियाफले । चोरयते । चोरयामास । चोरयिता । चोर्यात्, योरयिषीष्ट । अचूचुरत्, अचूचुरत।

हिन्दी अर्थ- णिजन्त से आत्मनेपद हो क्रियाफल यदि कर्तृगामी हो। जब क्रियाफल कर्तृगामी हो तब आत्मनेपद और जब कर्तृगामी न हो तब परस्मैपद होता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि ण्यन्त धातु उभयपदी होती है।

चोरयते- क्रियाफल के कर्तृगामी होने से लिट् में आम् प्रत्यय आता है और आमन्त चुरादयः होने से क, भू, अस् का अनुप्रयोग होता है।
चोरयिता- चोरि धातु से लुट् प्र. पु. ए. व. में इट् होने पर णिच् इकार को गुण और अय् आदेश होकर रूप बन गया।

॥तिङन्तरूपाणि॥

॥भू भूसत्तायाम्॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भवति	भवतः	भवन्ति
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथः	भवथ
उत्तम पुरुष	भवामि	भवावः	भवामः

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
मध्यम पुरुष	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
उत्तम पुरुष	बभूव	बभूविव	बभूविम

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भविता	भवितारौ	भवितारः
मध्यम पुरुष	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ
उत्तम पुरुष	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भवतु,भवतात्	भवताम्	भवन्तु
मध्यम पुरुष	भव,भवतात्	भवतम्	भवत
उत्तम पुरुष	भवानि	भवाव	भवाम

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अभवत्	अभवताम्	अभवन्
मध्यम पुरुष	अभवः	अभवतम्	अभवत
उत्तम पुरुष	अभवम्	अभवाव	अभवाम

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भवेत्	भवेताम्	भवेयुः
मध्यम पुरुष	भवेः	भवेतम्	भवेत

उत्तम पुरुष	भवेयम्	भवेव	भवेम

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
मध्यम पुरुष	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
उत्तम पुरुष	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
मध्यम पुरुष	अभूः	अभूतम्	अभूत
उत्तम पुरुष	अभूवम्	अभूव	अभूम

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
मध्यम पुरुष	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
उत्तम पुरुष	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

॥एध् वृद्धौ॥

लट् (आत्मनेपदम्)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	एधते	एधेते	एधन्ते
मध्यम पुरुष	एधसे	एधेथे	एधध्वे
उत्तम पुरुष	एधे	एधावहे	एधामहे

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधाञ्चक्रे	एधाञ्चक्राते	एधाञ्चक्रिरे
मध्यम पुरुष	एधाञ्चकृषे	एधाञ्चक्राथे	एधाञ्चकृढ्वे
उत्तम पुरुष	एधाञ्चक्रे	एधाञ्चकृवहे	एधाञ्चकृमहे

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधिता	एधितारौ	एधितारः
मध्यम पुरुष	एधितासे	एधितासाथे	एधिताध्वे
उत्तम पुरुष	एधिताहे	एधितास्वहे	एधितास्महे

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधिष्यते	एधिष्येते	एधिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	एधिष्यसे	एधिष्येथे	एधिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	एधिष्ये	एधिष्यावहे	एधिष्यामहे

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधताम्	एधेताम्	एधन्ताम्
मध्यम पुरुष	एधस्व	एधेथाम्	एधध्वम्
उत्तम पुरुष	एधै	एधावहै	एधामहै

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	ऐधत	ऐधेताम्	ऐधन्त
मध्यम पुरुष	ऐधथाः	ऐधेथाम्	ऐधध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधे	ऐधावहि	ऐधामहि

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधेत	एधेयाताम्	एधेरन्
मध्यम पुरुष	एधेथाः	एधेयाथाम्	एधेध्वम्
उत्तम पुरुष	एधेय	एधेवहि	एधेमहि

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	एधिषीष्ट	एधिषीयास्ताम्	एधिषीरन्
मध्यम पुरुष	एधिषीष्ठाः	एधिषीयास्थाम्	एधिषीध्वम्/एधिषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	एधिषीय	एधिषीवहि	एधिषीमहि

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	ऐधिष्ट	ऐधिषाताम्	ऐधिषत
मध्यम पुरुष	ऐधिष्ठाः	ऐधिषाथाम्	ऐधिढ्वम्/ऐधिध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधिषि	ऐधिष्वहि	ऐधिष्महि

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	ऐधिष्यत	ऐधिष्येताम्	ऐधिष्यन्त
मध्यम पुरुष	ऐधिष्यथाः	ऐधिष्येथाम्	ऐधिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	ऐधिष्ये	ऐधिष्यावहि	ऐधिष्यामहि

॥अदादिगण, अद्भक्षणे धातु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अत्ति	अत्तः	अदन्ति
मध्यम पुरुष	अत्सि	अत्थः	अत्थ
उत्तम पुरुष	अद्मि	अद्वः	अद्मः

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	जघास	जक्षतुः	जक्षुः
मध्यम पुरुष	जघसिथ	जक्षथुः	जक्ष
उत्तम पुरुष	जघांस/जघस	जक्षिव	जक्षिम

प्रथम पुरुष	आदः	आदतुः	आदुः
मध्यम पुरुष	आदिथ	आदथुः	आद
उत्तम पुरुष	आद	आदिव	आदिम

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अत्ता	अत्तारौ	अत्तारः
मध्यम पुरुष	अत्तासि	अत्तास्थः	अत्तास्थ
उत्तम पुरुष	अत्तास्मि	अत्तास्वः	अत्तास्मः

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अत्स्यति	अत्स्यतः	अत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	अत्स्यसि	अत्स्यथः	अत्स्यथ
उत्तम पुरुष	अत्स्यामि	अत्स्यावः	अत्स्यामः

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अत्तु/अत्तात्	अत्ताम्	अदन्तु
मध्यम पुरुष	अद्धि/अत्तात्	अत्तम्	अत्त
उत्तम पुरुष	अदानि	अदाव	अदाम

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	आदत्	आत्ताम्	आदन्

मध्यम पुरुष	आदः	आत्तम्	आत्त
उत्तम पुरुष	आदम्	आद्व	आद्म

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अद्यात्	अद्याताम्	अद्युः
मध्यम पुरुष	अद्याः	अद्यातम्	अद्यात
उत्तम पुरुष	अद्याम्	अद्याव	अद्याम

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अद्यात्	अद्यास्ताम्	अद्यासुः
मध्यम पुरुष	अद्याः	अद्यास्तम्	अद्यास्त
उत्तम पुरुष	अद्यासम्	अद्यास्व	अद्यास्म

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अघसत्	अघसताम्	अघसन्
मध्यम पुरुष	अघसः	अघसतम्	अघसत
उत्तम पुरुष	अघसम्	अघसाव	अघसाम

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	आत्स्यत्	आत्स्यताम्	आत्स्यन्
मध्यम पुरुष	आत्स्यः	आत्स्यतम्	आत्स्यत
उत्तम पुरुष	आत्स्यम्	आत्स्याव	आत्स्याम

॥अस्- भुवि (होना)॥

लट् लकार

प्रथम पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम पुरुष	असि	स्थः	स्थ
उत्तम पुरुष	अस्मि	स्वः	स्मः

लिट् लकार

प्रथम पुरुष	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
मध्यम पुरुष	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
उत्तम पुरुष	बभूव	बभूविव	बभूविम

लुट् लकार

प्रथम पुरुष	भविता	भवितारौ	भवितारः
मध्यम पुरुष	भवितासि	भवितास्थः	भवितास्थ
उत्तम पुरुष	भवितास्मि	भवितास्वः	भवितास्मः

लृट् लकार

प्रथम पुरुष	भविष्यति	भविष्यतः	भविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	भविष्यसि	भविष्यथः	भविष्यथ
उत्तम पुरुष	भविष्यामि	भविष्यावः	भविष्यामः

लोट् लकार

प्रथम पुरुष	अस्तु,स्तात्	स्ताम्	सन्तु
मध्यम पुरुष	एधि,स्तात्	स्तम्	स्त
उत्तम पुरुष	असानि	असाव	असाम

लङ् लकार

प्रथम पुरुष	आसीत्	आस्ताम्	आसन्
मध्यम पुरुष	आसीः	आस्तम्	आस्त
उत्तम पुरुष	आसम्	आस्व	आस्म

विधिलिङ् लकार

प्रथम पुरुष	स्यात्	स्याताम्	स्युः
मध्यम पुरुष	स्याः	स्यातम्	स्यात
उत्तम पुरुष	स्याम्	स्याव	स्याम

आशीर्लिङ् लकार

प्रथम पुरुष	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
मध्यम पुरुष	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
उत्तम पुरुष	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

लुङ् लकार

प्रथम पुरुष	अभूत्	अभूताम्	अभूवन्
मध्यम पुरुष	अभूः	अभूतम्	अभूत
उत्तम पुरुष	अभूवम्	अभूव	अभूम

लृङ् लकार

प्रथम पुरुष	अभविष्यत्	अभविष्यताम्	अभविष्यन्
मध्यम पुरुष	अभविष्यः	अभविष्यतम्	अभविष्यत
उत्तम पुरुष	अभविष्यम्	अभविष्याव	अभविष्याम

॥जुहोत्यादिगण, हुदानादनयोः धातु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	जुहोति	जुहुतः	जुह्वति
मध्यम पुरुष	जुहोषि	जुहुथः	जुहुथ
उत्तम पुरुष	जुहोमि	जुहुवः	जुहुमः

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	जुहवाञ्चकार	जुहवाञ्चक्रतुः	जुहवाञ्चक्रुः
मध्यम पुरुष	जुहवाञ्चकर्थ	जुहवाञ्चक्रथुः	जुहवाञ्चक्र
उत्तम पुरुष	जुहवाञ्चकार	जुहवाञ्चकृव	जुहवाञ्चकृम

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	होता	होतारौ	होतारः
मध्यम पुरुष	होतासि	होतास्थः	होतास्थ
उत्तम पुरुष	होतास्मि	होतास्वः	होतास्मः

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	होष्यति	होष्यतः	होष्यन्ति
मध्यम पुरुष	होष्यसि	होष्यथः	होष्यथ
उत्तम पुरुष	होष्यामि	होष्यावः	होष्यामः

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	जुहोतु,जुहुतात्	जुहुताम्	जुह्वतु
मध्यम पुरुष	जुहुधि,जुहुतात्	जुहुतम्	जुहुत
उत्तम पुरुष	जुहवानि	जुहवाव	जुहवाम

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अजुहोत्	अजुहुताम्	अजुहवुः

मध्यम पुरुष	अजुहोः	अजुहुतम्	अजुहुत
उत्तम पुरुष	अजुहवम्	अजुहुव	अजुहुम

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	जुहुयात्	जुहुयाताम्	जुहुयुः
मध्यम पुरुष	जुहुयाः	जुहुयातम्	जुहुयात
उत्तम पुरुष	जुहुयाम्	जुहुयाव	जुहुयाम

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	हूयात्	हूयास्ताम्	हूयासुः
मध्यम पुरुष	हूयाः	हूयास्तम्	हूयास्त
उत्तम पुरुष	हूयासम्	हूयास्व	हूयास्म

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अहौषीत्	अहौष्टाम्	अहौषुः
मध्यम पुरुष	अहौषीः	अहौष्टम्	अहौष्ट
उत्तम पुरुष	अहौषम्	अहौष्व	अहौष्म

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अहोष्यत्	अहोष्यताम्	अहोष्यन्
मध्यम पुरुष	अहोष्यः	अहोष्यतम्	अहोष्यत
उत्तम पुरुष	अहोष्यम्	अहोष्याव	अहोष्याम

॥दिवादिगण, दिव्-धातु॥

॥दिव्दिवुँक्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्रकान्तिगतिषु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	दीव्यति	दीव्यतः	दीव्यन्ति
मध्यम पुरुष	दीव्यसि	दीव्यथः	दीव्यथ
उत्तम पुरुष	दीव्यामि	दीव्यावः	दीव्यामः

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	दिदेव	दिदिवतुः	दिदिवुः
मध्यम पुरुष	दिदेविथ	दिदिवथुः	दिदिव
उत्तम पुरुष	दिदेव	दिदिविव	दिदिविम

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	देविता	देवितारौ	देवितारः
मध्यम पुरुष	देवितासि	देवितास्थः	देवितास्थ
उत्तम पुरुष	देवितास्मि	देवितास्वः	देवितास्मः

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	देविष्यति	देविष्यतः	देविष्यन्ति
मध्यम पुरुष	देविष्यसि	देविष्यथः	देविष्यथ
उत्तम पुरुष	देविष्यामि	देविष्यावः	देविष्यामः

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	दीव्यतु/दीव्यतात्	दीव्यताम्	दीव्यन्तु
मध्यम पुरुष	दीव्य/दीव्यतात्	दीव्यतम्	दीव्यत
उत्तम पुरुष	दीव्यानि	दीव्याव	दीव्याम

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अदीव्यत्	अदीव्यताम्	अदीव्यन्
मध्यम पुरुष	अदीव्यः	अदीव्यतम्	अदीव्यत
उत्तम पुरुष	अदीव्यम्	अदीव्याव	अदीव्याम

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	दीव्येत्	दीव्येताम्	दीव्येयुः
मध्यम पुरुष	दीव्येः	दीव्येतम्	दीव्येत
उत्तम पुरुष	दीव्येयम्	दीव्येव	दीव्येम

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	दीव्यात्	दीव्यास्ताम्	दीव्यासुः
मध्यम पुरुष	दीव्याः	दीव्यास्तम्	दीव्यास्त
उत्तम पुरुष	दीव्यासम्	दीव्यास्व	दीव्यास्म

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अदेवीत्	अदेविष्टाम्	अदेविषुः
मध्यम पुरुष	अदेवीः	अदेविष्टम्	अदेविष्ट
उत्तम पुरुष	अदेविषम्	अदेविष्व	अदेविष्म

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अदेविष्यत्	अदेविष्यताम्	अदेविष्यन्
मध्यम पुरुष	अदेविष्यः	अदेविष्यतम्	अदेविष्यत
उत्तम पुरुष	अदेविष्यम्	अदेविष्याव	अदेविष्याम

॥स्वादिगण, षुञ्-अभिषवे उभयपदी धातु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सुनोति	सुनुतः	सुन्वन्ति
मध्यम पुरुष	सुनोषि	सुनुथः	सुनुथ
उत्तम पुरुष	सुनोमि	सुनुवः,सुन्वः	सुनुमः,सुन्मः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सुनुते	सुन्वाते	सुन्वते
मध्यम पुरुष	सुनुषे	सुन्वाथे	सुनुध्वे
उत्तम पुरुष	सुन्वे	सुनुवहे/सुन्वहे	सुनुमहे/सुन्महे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सुषाव	सुषुवतुः	सुषुवुः
मध्यम पुरुष	सुषोथ/सुषविथ	सुषुवथुः	सुषुव
उत्तम पुरुष	सुषव/सुषाव	सुषुविव	सुषुविम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सुषुवे	सुषुवाते	सुषुविरे
मध्यम पुरुष	सुषुविषे	सुषुवाथे	सुषुविढ्वे/सुषुविध्वे
उत्तम पुरुष	सुषुवे	सुषुविवहे	सुषुविमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सोता	सोतारौ	सोतारः
मध्यम पुरुष	सोतासि	सोतास्थः	सोतास्थ
उत्तम पुरुष	सोतास्मि	सोतास्वः	सोतास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सोता	सोतारौ	सोतारः
मध्यम पुरुष	सोतासे	सोतासाथे	सोताध्वे
उत्तम पुरुष	सोताहे	सोतास्वहे	सोतास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सोष्यति	सोष्यतः	सोष्यन्ति
मध्यम पुरुष	सोष्यसि	सोष्यथः	सोष्यथ
उत्तम पुरुष	सोष्यामि	सोष्यावः	सोष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सोष्यते	सोष्येते	सोष्यन्ते
मध्यम पुरुष	सोष्यसे	सोष्येथे	सोष्यध्वे
उत्तम पुरुष	सोष्ये	सोष्यावहे	सोष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सुनोतु/सुनुतात्	सुनुताम्	सुन्वन्तु
मध्यम पुरुष	सुनु/सुनुतात्	सुनुतम्	सुनुत
उत्तम पुरुष	सुनवानि	सुनवाव	सुनवाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सुनुताम्	सुन्वाताम्	सुन्वताम्
मध्यम पुरुष	सुनुष्व	सुन्वाथाम्	सुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	सुनवै	सुनवावहै	सुनवामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	असुनोत्	असुनुताम्	असुन्वन्
मध्यम पुरुष	असुनोः	असुनुतम्	असुनुत
उत्तम पुरुष	असुनवम्	असुनुव/असुन्व	असुनुम/असुन्म

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	असुनुत	असुन्वाताम्	असुन्वत
मध्यम पुरुष	असुनुथाः	असुन्वाथाम्	असुनुध्वम्
उत्तम पुरुष	असुन्वि	असुनुवहि/असुन्वहि	असुनुमहि/असुन्महि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सुनुयात्	सुनुयाताम्	सुनुयुः
मध्यम पुरुष	सुनुयाः	सुनुयातम्	सुनुयात
उत्तम पुरुष	सुनुयाम्	सुनुयाव	सुनुयाम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सुन्वीत	सुन्वीयाताम्	सुन्वीरन्
मध्यम पुरुष	सुन्वीथाः	सुन्वीयाथाम्	सुन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	सुन्वीय	सुन्वीवहि	सुन्वीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	सूयात्	सूयास्ताम्	सूयासुः
मध्यम पुरुष	सूयाः	सूयास्तम्	सूयास्त
उत्तम पुरुष	सूयासम्	सूयास्व	सूयास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	सोषीष्ट	सोषीयास्ताम्	सोषीरन्
मध्यम पुरुष	सोषीष्ठाः	सोषीयास्थाम्	सोषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	सोषीय	सोषीवहि	सोषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	असावीत	असाविष्टाम्	असाविषुः
मध्यम पुरुष	असावीः	असाविष्टम्	असाविष्ट
उत्तम पुरुष	असाविषम्	असाविष्व	असाविष्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	असोष्ट	असोषाताम्	असोषत
मध्यम पुरुष	असोष्ठाः	असोषाथाम्	असोढ्वम्,असोड्ढ्वम्
उत्तम पुरुष	असोषि	असोष्वहि	असोष्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	असोष्यत्	असोष्यताम्	असोष्यन्
मध्यम पुरुष	असोष्यः	असोष्यतम्	असोष्यत
उत्तम पुरुष	असोष्यम्	असोष्याव	असोष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	असोष्यत	असोष्येताम्	असोष्यन्त
मध्यम पुरुष	असोष्यथाः	असोष्येथाम्	असोष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	असोष्ये	असोष्यावहि	असोष्यामहि

॥तुदादिगण उभयपदी तुद्-व्यथने धातु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदति	तुदतः	तुदन्ति
मध्यम पुरुष	तुदसि	तुदथः	तुदथ
उत्तम पुरुष	तुदामि	तुदावः	तुदामः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदते	तुदेते	तुदन्ते
मध्यम पुरुष	तुदसे	तुदेथे	तुदध्वे
उत्तम पुरुष	तुदे	तुदावहे	तुदामहे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तुतोद	तुतुदतुः	तुतुदुः
मध्यम पुरुष	तुतोदिथ	तुतुदथुः	तुतुद
उत्तम पुरुष	तुतोद	तुतुदिव	तुतुदिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तुतुदे	तुतुदाते	तुतुदिरे
मध्यम पुरुष	तुतुदिषे	तुतुदाथे	तुतुदिध्वे
उत्तम पुरुष	तुतुदे	तुतुदिवहे	तुतुदिमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः
मध्यम पुरुष	तोत्तासि	तोत्तास्थः	तोत्तास्थ
उत्तम पुरुष	तोत्तास्मि	तोत्तास्वः	तोत्तास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तोत्ता	तोत्तारौ	तोत्तारः

मध्यम पुरुष	तोत्तासे	तोत्तासाथे	तोत्ताध्वे
उत्तम पुरुष	तोत्ताहे	तोत्तास्वहे	तोत्तास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तोत्स्यति	तोत्स्यतः	तोत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	तोत्स्यसि	तोत्स्यथः	तोत्स्यथ
उत्तम पुरुष	तोत्स्यामि	तोत्स्यावः	तोत्स्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तोत्स्यते	तोत्स्येते	तोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	तोत्स्यसे	तोत्स्येथे	तोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	तोत्स्ये	तोत्स्यावहे	तोत्स्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदतु/तुदतात्	तुदताम्	तुदन्तु
मध्यम पुरुष	तुद/तुदतात्	तुदतम्	तुदत
उत्तम पुरुष	तुदानि	तुदाव	तुदाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदताम्	तुदेताम्	तुदन्ताम्
मध्यम पुरुष	तुदस्व	तुदेथाम्	तुदध्वम्
उत्तम पुरुष	तुदै	तुदावहै	तुदामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतुदत्	अतुदताम्	अतुदन्
मध्यम पुरुष	अतुदः	अतुदतम्	अतुदत
उत्तम पुरुष	अतुदम्	अतुदाव	अतुदाम

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतुदत	अतुदेताम्	अतुदन्त
मध्यम पुरुष	अतुदथाः	अतुदेथाम्	अतुदध्वम्
उत्तम पुरुष	अतुदे	अतुदावहि	अतुदामहि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदेत्	तुदेताम्	तुदेयुः
मध्यम पुरुष	तुदेः	तुदेतम्	तुदेत
उत्तम पुरुष	तुदेयम्	तुदेव	तुदेम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तुदेत	तुदेयाताम्	तुदेरन्
मध्यम पुरुष	तुदेथाः	तुदेयाथाम्	तुदेध्वम्
उत्तम पुरुष	तुदेय	तुदेवहि	तुदेमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तुद्यात्	तुद्यास्ताम्	तुद्यासुः
मध्यम पुरुष	तुद्याः	तुद्यास्तम्	तुद्यास्त
उत्तम पुरुष	तुद्यासम्	तुद्यास्व	तुद्यास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तुत्सीष्ट	तुत्सीयास्ताम्	तुत्सीरन्
मध्यम पुरुष	तुत्सीष्ठाः	तुत्सीयास्थाम्	तुत्सीध्वम्
उत्तम पुरुष	तुत्सीय	तुत्सीवहि	तुत्सीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतौत्सीत्	अतौत्ताम्	अतौत्सुः
मध्यम पुरुष	अतौत्सीः	अतौत्तम्	अतौत्त
उत्तम पुरुष	अतौत्सम्	अतौत्स्व	अतौत्स्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतुत्त	अतुत्साताम्	अतुत्सत
मध्यम पुरुष	अतुत्थाः	अतुत्साथाम्	अतुद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अतुत्सि	अतुत्स्वहि	अतुत्स्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतोत्स्यत्	अतोत्स्यताम्	अतोत्स्यन्
मध्यम पुरुष	अतोत्स्यः	अतोत्स्यतम्	अतोत्स्यत
उत्तम पुरुष	अतोत्स्यम्	अतोत्स्याव	अतोत्स्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतोत्स्यत	अतोत्स्येताम्	अतोत्स्यन्त
मध्यम पुरुष	अतोत्स्यथाः	अतोत्स्येथाम्	अतोत्स्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अतोत्स्ये	अतोत्स्यावहि	अतोत्स्यामहि

॥तनादिगण उभयपदी तनु-विस्तारे धातु॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तनोति	तनुतः	तन्वन्ति
मध्यम पुरुष	तनोषि	तनुथः	तनुथ
उत्तम पुरुष	तनोमि	तनुवः/तन्वः	तनुमः/तन्मः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तनुते	तन्वाते	तन्वते
मध्यम पुरुष	तनुषे	तन्वाथे	तनुध्वे
उत्तम पुरुष	तन्वे	तनुवहे/तन्वहे	तनुमहे/तन्महे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	ततान	तेनतुः	तेनुः
मध्यम पुरुष	तेनिथ	तेनथुः	तेन
उत्तम पुरुष	ततन/ततान	तेनिव	तेनिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तेने	तेनाते	तेनिरे
मध्यम पुरुष	तेनिषे	तेनाथे	तेनिध्वे
उत्तम पुरुष	तेने	तेनिवहे	तेनिमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तनिता	तनितारौ	तनितारः
मध्यम पुरुष	तनितासि	तनितास्थः	तनितास्थ
उत्तम पुरुष	तनितास्मि	तनितास्वः	तनितास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तनिता	तनितारौ	तनितारः
मध्यम पुरुष	तनितासे	तनितासाथे	तनिताध्वे
उत्तम पुरुष	तनिताहे	तनितास्वहे	तनितास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तनिष्यति	तनिष्यतः	तनिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	तनिष्यसि	तनिष्यथः	तनिष्यथ
उत्तम पुरुष	तनिष्यामि	तनिष्यावः	तनिष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तनिष्यते	तनिष्येते	तनिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	तनिष्यसे	तनिष्येथे	तनिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	तनिष्ये	तनिष्यावहे	तनिष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तनोतु/तनुतात्	तनुताम्	तन्वन्तु
मध्यम पुरुष	तनु/तनुतात्	तनुतम्	तनुत
उत्तम पुरुष	तनवानि	तनवाव	तनवाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तनुताम्	तन्वाताम्	तन्वताम्
मध्यम पुरुष	तनुष्व	तन्वाथाम्	तनुध्वम्
उत्तम पुरुष	तनवै	तनवावहै	तनवामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतनोत्	अतनुताम्	अतन्वन्
मध्यम पुरुष	अतनोः	अतनुतम्	अतनुत
उत्तम पुरुष	अतनवम्	अतनुव/अतन्व	अतनुम/अतन्म

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतनुत	अतन्वाताम्	अतन्वत
मध्यम पुरुष	अतनुथाः	अतन्वाथाम्	अतनुध्वम्
उत्तम पुरुष	अतन्वि	अतनुवहि/अतन्वहि	अतनुमहि/अतन्महि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तनुयात्	तनुयाताम्	तनुयुः
मध्यम पुरुष	तनुयाः	तनुयातम्	तनुयात
उत्तम पुरुष	तनुयाम्	तनुयाव	तनुयाम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तन्वीत	तन्वीयाताम्	तन्वीरन्
मध्यम पुरुष	तन्वीथाः	तन्वीयाथाम्	तन्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	तन्वीय	तन्वीवहि	तन्वीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	तन्यात्	तन्यास्ताम्त	तन्यासुः
मध्यम पुरुष	तन्याः	तन्यास्तम्	तन्यास्त
उत्तम पुरुष	तन्यासम्	तन्यास्व	तन्यास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	तनिषीष्ट	तनिषीयास्ताम्	तनिषीरन्
मध्यम पुरुष	तनिषीष्ठाः	तनिषीयास्थाम्	तनिषीध्वम्
उत्तम पुरुष	तनिषीय	तनिषीवहि	तनिषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतनीत्	अतनिष्टाम्	अतनिषुः
	अतानीत्	अतानिष्टाम्	अतानिषुः
मध्यम पुरुष	अतनीः	अतनिष्टम्	अतनिष्ट
	अतानीः	अतानिष्टम्	अतानिष्ट
उत्तम पुरुष	अतनिषम्	अतनिष्व	अतनिष्म
	अतानिषम्	अतानिष्व	अतानिष्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतत/अतनिष्ट	अतनिषाताम्	अतनिषत
मध्यम पुरुष	अतथाः/अतनिष्ठाः	अतनिषाथाम्	अतनिड्ढ्म्/अतनिध्वम्
उत्तम पुरुष	अतनिषि	अतनिष्वहि	अतनिष्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अतनिष्यत्	अतनिष्यताम्	अतनिष्यन्
मध्यम पुरुष	अतनिष्यः	अतनिष्यतम्	अतनिष्यत
उत्तम पुरुष	अतनिष्यम्	अतनिष्याव	अतनिष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अतनिष्यत	अतनिष्येताम्	अतनिष्यन्त
मध्यम पुरुष	अतनिष्यथाः	अतनिष्येथाम्	अतनिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अतनिष्ये	अतनिष्यावहि	अतनिष्यामहि

॥उभयपदी सकर्मक कृञ्करणे॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यम पुरुष	करोसि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तम पुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	कुरुते	कुर्वाते	कुर्वते
मध्यम पुरुष	कुरुसे	कुर्वाथे	कुरुध्वे
उत्तम पुरुष	कुर्वे	कुर्वहे	कुर्महे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चकार	चक्रतुः	चक्रुः
मध्यम पुरुष	चकर्थ	चक्रथुः	चक्र
उत्तम पुरुष	चकार/चकर	चक्रिव	चक्रिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चक्रे	चक्राते	चक्रिरे
मध्यम पुरुष	चक्रिषे	चक्राथे	चक्रिढ्वे/चक्रिध्वे
उत्तम पुरुष	चक्रे	चकृवहे	चकृमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः
मध्यम पुरुष	कर्तासि	कर्तास्थः	कर्तास्थ
उत्तम पुरुष	कर्तास्मि	कर्तास्वः	कर्तास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	कर्ता	कर्तारौ	कर्तारः
मध्यम पुरुष	कर्तासे	कर्तासाथे	कर्ताध्वे
उत्तम पुरुष	कर्ताहे	कर्तास्वहे	कर्तास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	करिष्यति	करिष्यतः	करिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	करिष्यसि	करिष्यथः	करिष्यथ
उत्तम पुरुष	करिष्यामि	करिष्यावः	करिष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	करिष्यते	करिष्येते	करिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	करिष्यसे	करिष्येथे	करिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	करिष्ये	करिष्यावहे	करिष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	करोतु/कुरुतात्	कुरुताम्	कुर्वन्तु
मध्यम पुरुष	कुरु/कुरुतात्	कुरुतम्	कुरुत
उत्तम पुरुष	करवाणि	करवाव	करवाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	कुरुताम्	कुर्वाताम्	कुर्वताम्
मध्यम पुरुष	कुरुष्व	कुर्वाथाम्	कुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	करवै	करवावहै	करवामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अकरोत्	अकुरुताम्	अकुर्वन्
मध्यम पुरुष	अकरोः	अकुरुतम्	अकुरुत
उत्तम पुरुष	अकरवम्	अकुर्व	अकुर्म

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अकुरुत	अकुर्वाताम्	अकुर्वत
मध्यम पुरुष	अकुरुथाः	अकुर्वाथाम्	अकुरुध्वम्
उत्तम पुरुष	अकुर्वि	अकुर्वहि	अकुर्महि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	कुर्यात्	कुर्याताम्	कुर्युः
मध्यम पुरुष	कुर्याः	कुर्यातम्	कुर्यात
उत्तम पुरुष	कुर्याम्	कुर्याव	कुर्याम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	कुर्वीत	कुर्वीयाताम्	कुर्वीरन्
मध्यम पुरुष	कुर्वीथाः	कुर्वीयाथाम्	कुर्वीध्वम्
उत्तम पुरुष	कुर्वीय	कुर्वीवहि	कुर्वीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रियात्	क्रियास्ताम्	क्रियासुः
मध्यम पुरुष	क्रियाः	क्रियास्तम्	क्रियास्त
उत्तम पुरुष	क्रियासम्	क्रियास्व	क्रियास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	कृषीष्ट	कृषीयास्ताम्	कृषीरन्
मध्यम पुरुष	कृषीष्ठाः	कृषीयास्थाम्	कृषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	कृषीय	कृषीवहि	कृषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अकार्षीत्	अकार्ष्टाम्	अकार्षुः
मध्यम पुरुष	अकार्षीः	अकार्ष्टम्	अकार्ष्ट
उत्तम पुरुष	अकार्षम्	अकार्ष्व	अकार्ष्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अकृत	अकृषाताम्	अकृषत
मध्यम पुरुष	अकृथाः	अकृषाथाम्	अकृढ्वम्
उत्तम पुरुष	अकृषि	अकृष्वहि	अकृष्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अकरिष्यत्	अकरिष्यताम्	अकरिष्यन्
मध्यम पुरुष	अकरिष्यः	अकरिष्यतम्	अकरिष्यत
उत्तम पुरुष	अकरिष्यम्	अकरिष्याव	अकरिष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अकरिष्यत	अकरिष्येताम्	अकरिष्यन्त
मध्यम पुरुष	अकरिष्यथाः	अकरिष्येथाम्	अकरिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अकरिष्ये	अकरिष्यावहि	अकरिष्यामहि

॥रुधादिगण उभयपदी रुधिर् आवरणे॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुणद्धि	रुन्धः	रुन्धन्ति
मध्यम पुरुष	रुणत्सि	रुन्धः	रुन्ध
उत्तम पुरुष	रुणध्मि	रुन्ध्वः	रुन्ध्मः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्द्धे	रुन्धाते	रुन्धते
मध्यम पुरुष	रुन्त्से	रुन्धाथे	रुन्ध्वे, रुन्द्धे
उत्तम पुरुष	रुन्धे	रुन्ध्वहे	रुन्ध्महे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुरोध	रुरुधतुः	रुरुधुः
मध्यम पुरुष	रुरोधिथ	रुरुधथुः	रुरुध
उत्तम पुरुष	रुरोध	रुरुधिव	रुरुधिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुरुधे	रुरुधाते	रुरुधिरे
मध्यम पुरुष	रुरुधिषे	रुरुधाथे	रुरुधिध्वे
उत्तम पुरुष	रुरुधे	रुरुधिवहे	रुरुधिमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः
मध्यम पुरुष	रोद्धासि	रोद्धास्थः	रोद्धास्थ
उत्तम पुरुष	रोद्धास्मि	रोद्धास्वः	रोद्धास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रोद्धा	रोद्धारौ	रोद्धारः
मध्यम पुरुष	रोद्धासे	रोद्धासाथे	रोद्धाध्वे
उत्तम पुरुष	रोद्धाहे	रोद्धास्वहे	रोद्धास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रोत्स्यति	रोत्स्यतः	रोत्स्यन्ति
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसि	रोत्स्यथः	रोत्स्यथ

उत्तम पुरुष	रोत्स्यामि	रोत्स्यावः	रोत्स्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसे	रोत्स्येथे	रोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	रोत्स्ये	रोत्स्यावहे	रोत्स्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुणद्धु /रुन्धात्	रुन्धाम्	रुन्धन्तु
मध्यम पुरुष	रुन्धि/रुन्धात्	रुन्धम्	रुन्ध/रुन्द्ध
उत्तम पुरुष	रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्द्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
मध्यम पुरुष	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्द्धम्
उत्तम पुरुष	रुणधे	रुणधावहै	रुणधामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुणत्/अरुणद्	अरुन्धाम्	अरुन्धन्
मध्यम पुरुष	अरुणत्/अरुणद्	अरुन्धम्	अरुन्ध
उत्तम पुरुष	अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुन्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
मध्यम पुरुष	अरुन्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः
मध्यम पुरुष	रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात
उत्तम पुरुष	रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
मध्यम पुरुष	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुध्यात्	रुध्यास्ताम्	रुध्यासुः
मध्यम पुरुष	रुध्याः	रुध्यास्तम्	रुध्यास्त
उत्तम पुरुष	रुध्यासम्	रुध्यास्व	रुध्यास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुत्सीष्ट	रुत्सीयास्ताम्	रुत्सीरन्
मध्यम पुरुष	रुत्सीष्ठाः	रुत्सीयास्थाम्	रुत्सीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुत्सीय	रुत्सीवहि	रुत्सीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुधत्/अरौत्सीत्	अरुधताम्/अरौद्धाम्	अरुधन्/अरौत्सुः
मध्यम पुरुष	अरुधः/अरौत्सीः	अरुधतम्/अरौद्धम्	अरुधत/अरौद्ध
उत्तम पुरुष	अरुधम्/अरौत्सम्	अरुधाव/अरौत्स्व	अरुधाम/अरौत्स्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुद्ध	अरुत्साताम्	अरुत्सत
मध्यम पुरुष	अरुद्धाः	अरुत्साथाम्	अरुद्धम्, अरुद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुत्सि	अरुत्स्वहि	अरुत्स्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत्	अरोत्स्यताम्	अरोत्स्यन्
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यः	अरोत्स्यतम्	अरोत्स्यत
उत्तम पुरुष	अरोत्स्यम्	अरोत्स्याव	अरोत्स्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत	अरोत्स्येताम्	अरोत्स्यन्त
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यथाः	अरोत्स्येथाम्	अरोत्स्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अरोत्स्ये	अरोत्स्यावहि	अरोत्स्यामहि

॥क्र्यादिगण उभयपदी डुक्रीञ्द्रव्यविनिमये॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पुरुष	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पुरुष	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पुरुष	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पुरुष	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चिक्राय	चिक्रियतुः	चिक्रियुः
मध्यम पुरुष	चिक्रेथ/चिक्रयिथ	चिक्रियथुः	चिक्रिय
उत्तम पुरुष	चिक्रय/चिक्राय	चिक्रियिव	चिक्रियिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियाते	चिक्रियिरे
मध्यम पुरुष	चिक्रियिषे	चिक्रियाथे	चिक्रियिढ्वे/चिक्रियिध्वे
उत्तम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियिवहे	चिक्रियिमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासि	क्रेतास्थः	क्रेतास्थ
उत्तम पुरुष	क्रेतास्मि	क्रेतास्वः	क्रेतास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासे	क्रेतासाथे	क्रेताध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेताहे	क्रेतास्वहे	क्रेतास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसि	क्रेष्यथः	क्रेष्यथ
उत्तम पुरुष	क्रेष्यामि	क्रेष्यावः	क्रेष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते

मध्यम पुरुष	क्रेष्यसे	क्रेष्येथे	क्रेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेष्ये	क्रेष्यावहे	क्रेष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणातु/क्रीणीतात्	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पुरुष	क्रीणीहि/क्रीणीतात्	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पुरुष	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
मध्यम पुरुष	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पुरुष	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पुरुष	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
मध्यम पुरुष	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पुरुष	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पुरुष	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पुरुष	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीयात्	क्रीयास्ताम्	क्रीयासुः
मध्यम पुरुष	क्रीयाः	क्रीयास्तम्	क्रीयास्त
उत्तम पुरुष	क्रीयासम्	क्रीयास्व	क्रीयास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेषीष्ट	क्रेषीयास्ताम्	क्रेषीरन्
मध्यम पुरुष	क्रेषीष्ठाः	क्रेषीयास्थाम्	क्रेषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	क्रेषीय	क्रेषीवहि	क्रेषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रैषीत्	अक्रैष्टाम्	अक्रैषुः
मध्यम पुरुष	अक्रैषीः	अक्रैष्टम्	अक्रैष्ट
उत्तम पुरुष	अक्रैषम्	अक्रैष्व	अक्रैष्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्ट	अक्रेषाताम्	अक्रेषत
मध्यम पुरुष	अक्रेष्ठाः	अक्रेषाथाम्	अक्रेढ्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेषि	अक्रेष्वहि	अक्रेष्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत्	अक्रेष्यताम्	अक्रेष्यन्
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यः	अक्रेष्यतम्	अक्रेष्यत
उत्तम पुरुष	अक्रेष्यम्	अक्रेष्याव	अक्रेष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत	अक्रेष्येताम्	अक्रेष्यन्त
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यथाः	अक्रेष्येथाम्	अक्रेष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेष्ये	अक्रेष्यावहि	अक्रेष्यामहि

॥चुरादिगण उभयपदी चुरस्तेये॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चकार	चोरयाञ्चक्रतुः	चोरयाञ्चक्रुः
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकर्थ	चोरयाञ्चक्रथुः	चोरयाञ्चक्र
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चकर/चोरयाञ्चकार,	चोरयाञ्चकृव	चोरयाञ्चकृम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चक्राते	चोरयाञ्चक्रिरे
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकृषे	चोरयाञ्चक्राथे	चोरयाञ्चकृढ्वे
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चकृवहे	चोरयाञ्चकृमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासि	चोरयितास्थः	चोरयितास्थ
उत्तम पुरुष	चोरयितास्मि	चोरयितास्वः	चोरयितास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासे	चोरयितासाथे	चोरयिताध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिताहे	चोरयितास्वहे	चोरयितास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

उत्तम पुरुष	रोत्स्यामि	रोत्स्यावः	रोत्स्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रोत्स्यते	रोत्स्येते	रोत्स्यन्ते
मध्यम पुरुष	रोत्स्यसे	रोत्स्येथे	रोत्स्यध्वे
उत्तम पुरुष	रोत्स्ये	रोत्स्यावहे	रोत्स्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुणद्धु /रुन्धात्	रुन्धाम्	रुन्धन्तु
मध्यम पुरुष	रुन्धि/रुन्धात्	रुन्धम्	रुन्ध/रुन्द्ध
उत्तम पुरुष	रुणधानि	रुणधाव	रुणधाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्द्धाम्	रुन्धाताम्	रुन्धताम्
मध्यम पुरुष	रुन्त्स्व	रुन्धाथाम्	रुन्द्धम्
उत्तम पुरुष	रुणधे	रुणधावहै	रुणधामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुणत्/अरुणद्	अरुन्धाम्	अरुन्धन्
मध्यम पुरुष	अरुणत्/अरुणद्	अरुन्धम्	अरुन्ध
उत्तम पुरुष	अरुणधम्	अरुन्ध्व	अरुन्ध्म

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुन्ध	अरुन्धाताम्	अरुन्धत
मध्यम पुरुष	अरुन्धाः	अरुन्धाथाम्	अरुन्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुन्धि	अरुन्ध्वहि	अरुन्ध्महि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्ध्यात्	रुन्ध्याताम्	रुन्ध्युः
मध्यम पुरुष	रुन्ध्याः	रुन्ध्यातम्	रुन्ध्यात
उत्तम पुरुष	रुन्ध्याम्	रुन्ध्याव	रुन्ध्याम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुन्धीत	रुन्धीयाताम्	रुन्धीरन्
मध्यम पुरुष	रुन्धीथाः	रुन्धीयाथाम्	रुन्धीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुन्धीय	रुन्धीवहि	रुन्धीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	रुध्यात्	रुध्यास्ताम्	रुध्यासुः
मध्यम पुरुष	रुध्याः	रुध्यास्तम्	रुध्यास्त
उत्तम पुरुष	रुध्यासम्	रुध्यास्व	रुध्यास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	रुत्सीष्ट	रुत्सीयास्ताम्	रुत्सीरन्
मध्यम पुरुष	रुत्सीष्ठाः	रुत्सीयास्थाम्	रुत्सीध्वम्
उत्तम पुरुष	रुत्सीय	रुत्सीवहि	रुत्सीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुधत्/अरौत्सीत्	अरुधताम्/अरौद्धाम्	अरुधन्/अरौत्सुः
मध्यम पुरुष	अरुधः/अरौत्सीः	अरुधतम्/अरौद्धम्	अरुधत/अरौद्ध
उत्तम पुरुष	अरुधम्/अरौत्सम्	अरुधाव/अरौत्स्व	अरुधाम/अरौत्स्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरुद्ध	अरुत्साताम्	अरुत्सत
मध्यम पुरुष	अरुद्धाः	अरुत्साथाम्	अरुद्धम्, अरुद्ध्वम्
उत्तम पुरुष	अरुत्सि	अरुत्स्वहि	अरुत्स्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत्	अरोत्स्यताम्	अरोत्स्यन्
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यः	अरोत्स्यतम्	अरोत्स्यत
उत्तम पुरुष	अरोत्स्यम्	अरोत्स्याव	अरोत्स्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अरोत्स्यत	अरोत्स्येताम्	अरोत्स्यन्त
मध्यम पुरुष	अरोत्स्यथाः	अरोत्स्येथाम्	अरोत्स्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अरोत्स्ये	अरोत्स्यावहि	अरोत्स्यामहि

॥क्र्यादिगण उभयपदी डुक्रीञ्द्रव्यविनिमये॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणाति	क्रीणीतः	क्रीणन्ति
मध्यम पुरुष	क्रीणासि	क्रीणीथः	क्रीणीथ
उत्तम पुरुष	क्रीणामि	क्रीणीवः	क्रीणीमः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीते	क्रीणाते	क्रीणते
मध्यम पुरुष	क्रीणीषे	क्रीणाथे	क्रीणीध्वे
उत्तम पुरुष	क्रीणे	क्रीणीवहे	क्रीणीमहे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चिक्राय	चिक्रियतुः	चिक्रियुः
मध्यम पुरुष	चिक्रेथ/चिक्रयिथ	चिक्रियथुः	चिक्रिय
उत्तम पुरुष	चिक्रय/चिक्राय	चिक्रियिव	चिक्रियिम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियाते	चिक्रियिरे
मध्यम पुरुष	चिक्रियिषे	चिक्रियाथे	चिक्रियिढ्वे/चिक्रियिध्वे
उत्तम पुरुष	चिक्रिये	चिक्रियिवहे	चिक्रियिमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासि	क्रेतास्थः	क्रेतास्थ
उत्तम पुरुष	क्रेतास्मि	क्रेतास्वः	क्रेतास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेता	क्रेतारौ	क्रेतारः
मध्यम पुरुष	क्रेतासे	क्रेतासाथे	क्रेताध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेताहे	क्रेतास्वहे	क्रेतास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेष्यति	क्रेष्यतः	क्रेष्यन्ति
मध्यम पुरुष	क्रेष्यसि	क्रेष्यथः	क्रेष्यथ
उत्तम पुरुष	क्रेष्यामि	क्रेष्यावः	क्रेष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेष्यते	क्रेष्येते	क्रेष्यन्ते

मध्यम पुरुष	क्रेष्यसे	क्रेष्येथे	क्रेष्यध्वे
उत्तम पुरुष	क्रेष्ये	क्रेष्यावहे	क्रेष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणातु/क्रीणीतात्	क्रीणीताम्	क्रीणन्तु
मध्यम पुरुष	क्रीणीहि/क्रीणीतात्	क्रीणीतम्	क्रीणीत
उत्तम पुरुष	क्रीणानि	क्रीणाव	क्रीणाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीताम्	क्रीणाताम्	क्रीणताम्
मध्यम पुरुष	क्रीणीष्व	क्रीणाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणै	क्रीणावहै	क्रीणामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रीणात्	अक्रीणीताम्	अक्रीणन्
मध्यम पुरुष	अक्रीणाः	अक्रीणीतम्	अक्रीणीत
उत्तम पुरुष	अक्रीणाम्	अक्रीणीव	अक्रीणीम

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रीणीत	अक्रीणाताम्	अक्रीणत
मध्यम पुरुष	अक्रीणीथाः	अक्रीणाथाम्	अक्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रीणि	अक्रीणीवहि	अक्रीणीमहि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीयात्	क्रीणीयाताम्	क्रीणीयुः
मध्यम पुरुष	क्रीणीयाः	क्रीणीयातम्	क्रीणीयात
उत्तम पुरुष	क्रीणीयाम्	क्रीणीयाव	क्रीणीयाम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीणीत	क्रीणीयाताम्	क्रीणीरन्
मध्यम पुरुष	क्रीणीथाः	क्रीणीयाथाम्	क्रीणीध्वम्
उत्तम पुरुष	क्रीणीय	क्रीणीवहि	क्रीणीमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रीयात्	क्रीयास्ताम्	क्रीयासुः
मध्यम पुरुष	क्रीयाः	क्रीयास्तम्	क्रीयास्त
उत्तम पुरुष	क्रीयासम्	क्रीयास्व	क्रीयास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	क्रेषीष्ट	क्रेषीयास्ताम्	क्रेषीरन्
मध्यम पुरुष	क्रेषीष्ठाः	क्रेषीयास्थाम्	क्रेषीढ्वम्
उत्तम पुरुष	क्रेषीय	क्रेषीवहि	क्रेषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रैषीत्	अक्रैष्टाम्	अक्रैषुः
मध्यम पुरुष	अक्रैषीः	अक्रैष्टम्	अक्रैष्ट
उत्तम पुरुष	अक्रैषम्	अक्रैष्व	अक्रैष्म

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्ट	अक्रेषाताम्	अक्रेषत
मध्यम पुरुष	अक्रेष्ठाः	अक्रेषाथाम्	अक्रेढ्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेषि	अक्रेष्वहि	अक्रेष्महि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत्	अक्रेष्यताम्	अक्रेष्यन्
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यः	अक्रेष्यतम्	अक्रेष्यत
उत्तम पुरुष	अक्रेष्यम्	अक्रेष्याव	अक्रेष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अक्रेष्यत	अक्रेष्येताम्	अक्रेष्यन्त
मध्यम पुरुष	अक्रेष्यथाः	अक्रेष्येथाम्	अक्रेष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अक्रेष्ये	अक्रेष्यावहि	अक्रेष्यामहि

॥चुरादिगण उभयपदी चुरस्तेये॥

लट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयति	चोरयतः	चोरयन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयसि	चोरयथः	चोरयथ
उत्तम पुरुष	चोरयामि	चोरयावः	चोरयामः

लट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयते	चोरयेते	चोरयन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयसे	चोरयेथे	चोरयध्वे
उत्तम पुरुष	चोरये	चोरयावहे	चोरयामहे

लिट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चकार	चोरयाञ्चक्रतुः	चोरयाञ्चक्रुः
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकर्थ	चोरयाञ्चक्रथुः	चोरयाञ्चक्र
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चकर/चोरयाञ्चकार,	चोरयाञ्चकृव	चोरयाञ्चकृम

लिट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चक्राते	चोरयाञ्चक्रिरे
मध्यम पुरुष	चोरयाञ्चकृषे	चोरयाञ्चक्राथे	चोरयाञ्चकृढ्वे
उत्तम पुरुष	चोरयाञ्चक्रे	चोरयाञ्चकृवहे	चोरयाञ्चकृमहे

लुट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासि	चोरयितास्थः	चोरयितास्थ
उत्तम पुरुष	चोरयितास्मि	चोरयितास्वः	चोरयितास्मः

लुट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिता	चोरयितारौ	चोरयितारः
मध्यम पुरुष	चोरयितासे	चोरयितासाथे	चोरयिताध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिताहे	चोरयितास्वहे	चोरयितास्महे

लृट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यति	चोरयिष्यतः	चोरयिष्यन्ति
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसि	चोरयिष्यथः	चोरयिष्यथ
उत्तम पुरुष	चोरयिष्यामि	चोरयिष्यावः	चोरयिष्यामः

लृट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिष्यते	चोरयिष्येते	चोरयिष्यन्ते
मध्यम पुरुष	चोरयिष्यसे	चोरयिष्येथे	चोरयिष्यध्वे
उत्तम पुरुष	चोरयिष्ये	चोरयिष्यावहे	चोरयिष्यामहे

लोट् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयतु/चोरयतात्	चोरयताम्	चोरयन्तु
मध्यम पुरुष	चोरय/चोरयतात्	चोरयतम्	चोरयत
उत्तम पुरुष	चोरयानि	चोरयाव	चोरयाम

लोट् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयताम्	चोरयेताम्	चोरयन्ताम्
मध्यम पुरुष	चोरयस्व	चोरयेथाम्	चोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयै	चोरयावहै	चोरयामहै

लङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अचोरयत्	अचोरयताम्	अचोरयन्
मध्यम पुरुष	अचोरयः	अचोरयतम्	अचोरयत
उत्तम पुरुष	अचोरयम्	अचोरयाव	अचोरयाम

लङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अचोरयत	अचोरयेताम्	अचोरयन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयथाः	अचोरयेथाम्	अचोरयध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

विधिलिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयेत्	चोरयेताम्	चोरयेयुः
मध्यम पुरुष	चोरयेः	चोरयेतम्	चोरयेत
उत्तम पुरुष	चोरयेयम्	चोरयेव	चोरयेम

विधिलिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयेत	चोरयेयाताम्	चोरयेरन्
मध्यम पुरुष	चोरयेथाः	चोरयेयाथाम्	चोरयेध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयेय	चोरयेवहि	चोरयेमहि

आशीर्लिङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	चोर्यात्	चोर्यास्ताम्	चोर्यासुः
मध्यम पुरुष	चोर्याः	चोर्यास्तम्	चोर्यास्त
उत्तम पुरुष	चोर्यासम्	चोर्यास्व	चोर्यास्म

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	चोरयिषीष्ट	चोरयिषीयास्ताम्	चोरयिषीरन्
मध्यम पुरुष	चोरयिषीष्ठाः	चोरयिषीयास्थाम्	चोरयिषीढ्वम्/चोरयिषीध्वम्
उत्तम पुरुष	चोरयिषीय	चोरयिषीवहि	चोरयिषीमहि

लुङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अचूचुरत्	अचूचुरताम्	अचूचुरन्
मध्यम पुरुष	अचूचुरः	अचूचुरतम्	अचूचुरत
उत्तम पुरुष	अचूचुरम्	अचूचुराव	अचूचुराम

लुङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अचूचुरत	अचूचुरेताम्	अचूचुरन्त
मध्यम पुरुष	अचूचुरथाः	अचूचुरेथाम्	अचूचुरध्वम्
उत्तम पुरुष	अचूचुरे	अचूचुरावहि	अचूचुरामहि

लृङ् (परस्मैपदम्)

प्रथम पुरुष	अचोरयिष्यत्	अचोरयिष्यताम्	अचोरयिष्यन्
मध्यम पुरुष	अचोरयिष्यः	अचोरयिष्यतम्	अचोरयिष्यत
उत्तम पुरुष	अचोरयिष्यम्	अचोरयिष्याव	अचोरयिष्याम

लृङ् (आत्मनेपदम्)

प्रथम पुरुष	अचोरयिष्यत	अचोरयिष्येताम्	अचोरयिष्यन्त
मध्यम पुरुष	अचोरयिष्यथाः	अचोरयिष्येथाम्	अचोरयिष्यध्वम्
उत्तम पुरुष	अचोरये	अचोरयावहि	अचोरयामहि

॥अथ ण्यन्तप्रक्रिया॥

सूत्रम्- स्वतन्त्रः कर्ता । 1/4/54

वृत्तिः- क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्ता स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- क्रिया में स्वतन्त्र रुप से विवक्षित अर्थ रुप कारक कर्तृसंज्ञक होता है ।

सूत्रम्- तत्प्रयोजको हेतुश्च । 1/4/55

वृत्तिः- कर्तुः प्रयोजको हेतुसंज्ञः कर्तृसंज्ञश्च स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- कर्ता के प्रयोजक की हेतुसंज्ञा और कर्तृसंज्ञा होती है।

सूत्रम्- हेतुमति च । 3/1/26

वृत्तिः- प्रयोजकव्यापारे प्रेषणादौ वाच्ये धातोर्णिच् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- प्रेरक कर्ता का व्यापार (प्रेषण और प्रेरण आदि) वाच्य होने पर धातु से णिच् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** भवन्तं प्रेरयति भावयति॥

सूत्रम्- ओः पुयण्ज्यपरे । 7/4/80

वृत्तिः- सनि परे यदङ्गं तदवयवाभ्यासोकारस्य इत्स्यात् पवर्गयण्जकारेष्ववर्णपरेषु परतः ।

हिन्दी अर्थ- सन् परे होने पर जो अङ्ग, उसके अवयव अभ्यास के स्थान पर इकार आदेश होता है यदि पवर्ग, यण्, जकार में से कोई परे हो तो परन्तु इससे भी परे अकार होना आवश्यक है । **उदाहरणं यथा-** अबीभवत् ॥ **ष्ठा-** गतिनिवृत्तौ॥

सूत्रम्- अर्तिह्रीब्लीरीक्नूयीक्ष्माय्यातां पुङ् णौ । 7/3/36

हिन्दी अर्थ- ऋ, ह्री, ब्ली, री, क्नूयी, क्ष्मायी,और आकारान्त धातुओं को पुक् का आगम होता है णि के परे होने पर । **उदाहरणं यथा-** स्थापयति॥

सूत्रम्- तिष्ठतेरित् । 7/4/5

वृत्तिः- उपधाया इदादेशः स्याच्चङ्परे णौ।

हिन्दी अर्थ- चङ् परक णि परे हो तो स्था धातु की उपधा के स्थान पर इत् आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** अतिष्ठिपत्॥ **घट चेष्टायाम्॥**

सूत्रम्- मितां ह्रस्वः 6/4/92

वृत्तिः- घटादीनां ज्ञपादीनां चोपधाया ह्रस्वः स्याण्णौ।

हिन्दी अर्थ- मित् अर्थात् घटादि धातुओं और ज्ञपादि धातुओं के उपधा को ह्रस्व होता है णिच् परे होने पर । **उदाहरणं यथा-** घटयति । **ज्ञप=** ज्ञाने ज्ञापने च । ज्ञपयति। अजिज्ञपत् ।

॥इतिण्यन्तप्रक्रिया॥

॥अथ सन्नन्तप्रक्रिया॥

सूत्रम्- धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा । 3/1/7

वृत्तिः- इषिकर्मण इषिणैककर्तृकाद्धातोः सन्प्रत्ययो वा स्यादिच्छायाम्॥

हिन्दी अर्थ- जो इच्छार्थक इष् धातु का कर्म हो और इष् धातु के साथ समानकतृक भी हो उस धातु से इच्छा अर्थ में विकल्प से सन् प्रत्यय होता है । **पठ-** व्यक्तायां वाचि ।

सूत्रम्- सन्यङोः । 6/1/9

वृत्तिः- सन्नन्तस्य यङन्तस्य च धातोरनभ्यासस्य प्रथमस्यैकाचो द्वे स्तोऽजादेस्तु द्वितीयस्य । सन्यतः।

हिन्दी अर्थ- सन्नन्त और यङन्त धातुओं के प्रथम एकाच् को द्वित्व होता है, यदि धातु अनेकाच् हो तो उसके द्वितीय एकाच् को द्वित्व होता है। उदाहरणं यथा- पठितुमिच्छति पिपठिषति। **कर्मणः किम् ?** गमनेनेच्छति। समानकर्तृकात् किम् ? शिष्याः पठन्त्वितीच्छति गुरुः। वा ग्रहणाद्वाक्यमपि॥ लुङ्सनोर्घसॢ॥

सूत्रम्- सः स्यार्धधातुके । 7/4/49

वृत्तिः- सस्य तः स्यात्सादावार्धधातुके।

हिन्दी अर्थ- सकारादि आर्धधातुक परे होने सकार के स्थान पर तकार आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** अत्तुमिच्छति जिघत्सति। एकाच इति नेट्॥

सूत्रम्- अज्झनगमां सनि । 6/4/16

वृत्तिः- अजन्तानां हन्तेरजादेशगमेश्च दीर्घो झलादौ सनि॥

हिन्दी अर्थ- अजन्त धातु, हन् व अजादेश गम् धातु के अच् के स्थान पर दीर्घ होता है झलादि सन् के परे रहने पर ।

सूत्रम्- इको झल् । 1/2/9

वृत्तिः- इगन्ताज्झलादिः सन् कित् स्यात्। ॠत इद्धातोः।

हिन्दी अर्थ- इगन्त से परे झलादि सन् कित् होता है । **उदाहरणं यथा-** कर्तुमिच्छति चिकीर्षति॥

सूत्रम्- सनि ग्रहगुहोश्च । 7/2/12

वृत्तिः- ग्रहेर्गुहेरुगन्ताच्च सन इण् न स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ग्रह्, गुह्, और उगन्त धातुओं से परे सन् को इट् का आगम नही होता है । **उदाहरणं यथा-** बुभूषति॥।

॥इति सन्नन्तप्रक्रिया॥

॥अथ यङन्तप्रक्रिया॥

सूत्रम्- धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् । 3/1/22

वृत्तिः- पौनःपुन्ये भृशार्थे च द्योत्ये धातोरेकाचो हलादेर्यङ् स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- क्रिया का बार-बार होना अथवा अतिशय होना अर्थ द्योत्य होने पर एक् अच् वाली हलादि धातुओं से परे यङ् प्रत्यय होता है।

सूत्रम्- गुणो यङ्लुकोः । 7/4/82

वृत्तिः- अभ्यासस्य गुणो यङि यङ्लुकि च परतः। ङिदन्तत्वादात्मनेपदम्।

हिन्दी अर्थ- यङ् या यङ्लुक् पर में होने पर अभ्यास को गुण होता है । **उदाहरणं यथा-** पुनः पुनरतिशयेन वा भवति बोभूयते। बोभूयाञ्चक्रे। अबोभूयिष्ट॥

सूत्रम्- नित्यं कौटिल्ये गतौ । 1/3/23

वृत्तिः- गत्यर्थात्कौटिल्य एव यङ् स्यान्न तु क्रियासमभिहारे॥

हिन्दी अर्थ- गत्यर्थक धातु से कुटिलगमन अर्थ द्योतित होने पर ही धातु से यङ् होता है अर्थात् क्रियासमभिहार अर्थ में नहीं होता ।

सूत्रम्- दीर्घोऽकितः । 7/4/83

वृत्तिः- अकितोऽभ्यासस्य दीर्घो यङ्यङ्लुकोः।

हिन्दी अर्थ- अकित् अभ्यास को दीर्घ होता है, यङ् या यङ्लुक् पर में होने पर । **उदाहरणं यथा-** कुटिलं व्रजति वाव्रज्यते॥

सूत्रम्- यस्य हलः । 7/4/49

वृत्तिः- यस्येति संघातग्रहणम्। हलः परस्य यशब्दस्य लोप आर्धधातुके। आदेः परस्य। अतो लोपः।

हिन्दी अर्थ- हल् से परे य का लोप होता है आर्धधातुक परे होने पर । **उदाहरणं यथा-** वाव्रजाञ्चक्रे। वाव्रजिता॥

सूत्रम्- रीगृदुपधस्य च । 7/4/90

वृत्तिः- ऋदुपधस्य धातोरभ्यासस्य रीगागमो यङ्यङ्लुकोः।

हिन्दी अर्थ- उपधा में ह्रस्व ऋकार वाली धातु के अभ्यास को रीक् का आगम होता है यङ् या यङ्लुक् पर में होने पर । **उदाहरणं यथा-** वरीवृत्यते। वरीवृताश्चक्रे। वरीवर्तिता॥

सूत्रम्- क्षुभ्नादिषु च । 7/4/39

वृत्तिः- णत्वं न।

हिन्दी अर्थ- क्षुभ्ना आदि गण के पठित शब्दों में नकार को णत्व नहीं होता है । **उदाहरणं यथा-** नरीनृत्यते। जरीगृह्यते॥

॥इति यङन्त प्रक्रिया॥

॥अथ यङ्लुक् प्रक्रिया॥

सूत्रम्- यङोऽचि च । 7/4/74

वृत्तिः- यङोऽचि प्रत्यये लुक् स्यात्, चकारात्तं विनापि क्वचित्। अनैमित्तिकोऽयं मन्तरङ्गत्वादादौ भवति। ततः प्रत्ययलक्षणेन यङन्तत्वाद्दित्वम्। अभ्यासकार्यम्। धातुत्वाल्लडादयः। **शेषात्कर्तरीति परस्मैपदम्।** चर्करीतं चेत्यदादौ पाठाच्छपो लुक्॥

हिन्दी अर्थ- अच् प्रत्यय के परे होने परे होने पर यङ् का लुक् हो जाता है, चकारात् अच् के विना भी कहीं-कहीं इसका लुक् होता है।

सूत्रम्- यङो वा । 7/3/94

वृत्तिः- यङ्लुगन्तात्परस्य हलादेः पितः सार्वधातुकस्येड् वा स्यात्। भूसुवोरिति गुणनिषेधो यङ्लुकि भाषायां न, बोभूतु, तेतिक्ते इति छन्दसि निपातनात्।

हिन्दी अर्थ- यङ्लुगन्त से परे हलादि पित् सार्वधातुक को विकल्प से ईट् का आगम होता है ।

उदाहरणं यथा- बोभवीति, बोभोति। बोभूतः। अदभ्यस्तात्। बोभुवति। बोभवाञ्चकार, बोभवामास। बोभविता। बोभविष्यति। बोभवीतु, बोभोतु, बोभूतात्। बोभूताम्। बोभुवतु। बोभूहि। बोभवानि। अबोभवीत, अबोभोत्। अबोभूताम्। अबोभवुः। बोभूयात। बोभूयाताम्। बोभूयुः। बोभूयात्। बोभूयास्ताम्। बोभूयासुः। गातिस्थेति सिचो लुक्। यङो वेतीट्पक्षे गुणं बाधित्वा नित्यत्वाल्लुक्। अबोभूवीत, अबोभोत्। अबोभूताम्। अबोभुवुः। अबोभविष्यत्॥

॥इति यङ्लुक् प्रक्रिया॥

॥अथ नामधातवः॥

सूत्रम्- सुप आत्मनः क्यच् । 3/1/8

वृत्तिः- इषिकर्मण एषितुः संबन्धिनः सुबन्तादिच्छायामर्थे क्यच् प्रत्ययो वा स्यात्॥

हिन्दी अर्थ- इच्छार्थक इष् धातु के कर्म तथा इच्छुक से संबन्धी सुबन्त से चाहना अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है ।

सूत्रम्- सुपो धातुप्रातिपदिकयोः । 2/4/71

वृत्तिः- एतयोरवयवस्य सुपो लुक् ।

हिन्दी अर्थ- धातु और प्रातिपदिक के अवयव सुप् का लुक् होता है।

सूत्रम्- क्यचि च । 7/4/33

वृत्तिः- अवर्णस्य ईः।

हिन्दी अर्थ- क्यच् परे होने पर अवर्ण के स्थान पर ईकार आदेश होता है । **उदाहरणं यथा-** आत्मनः पुत्रमिच्छति पुत्रीयति॥

सूत्रम्- नः क्ये । 1/4/15

वृत्तिः- क्यचि क्यङि च नान्तमेव पदं नान्यत्। नलोपः।

हिन्दी अर्थ- क्यच् और क्यङ् के परे होने पर नकारान्त की ही पदसंज्ञा होती है अन्य की नहीं । **उदाहरणं यथा-** राजीयति। **नान्तमेवेति किम्?** वाच्यति। हलि च। गीर्यति। पूर्यति। धातोरित्येव। नेह - दिवमिच्छति दिव्यति॥

सूत्रम्- क्यस्य विभाषा । 6/4/50

वृत्तिः- हलः परयोः क्यच्क्यङोर्लोपो वार्धधातुके। आदेः परस्य। अतो लोपः। तस्य स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न।

हिन्दी अर्थ- हल् से परे क्यच् और क्यङ् का विकल्प से लोप होता है आर्धधातुक प्रत्यय परे होने पर । **उदाहरणं यथा-** समिधिता, समिध्यिता।

सूत्रम्- काम्यच्च । 3/1/9

वृत्तिः- उक्तविषये काम्यच् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- इच्छार्थक इष् धातु के कर्म तथा इच्छुक से संबन्धी सुबन्त से चाहना अर्थ में विकल्प से काम्यच् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** पुत्रमात्मन इच्छति पुत्रकाम्यति। पुत्रकाम्यिता॥

सूत्रम्- उपमानादाचारे । 3/1/10

वृत्तिः- उपमानात्कर्मणः सुबन्तादाचारेऽर्थे क्यच्।

हिन्दी अर्थ- उपमानरुप कर्म सुबन्त से आचार अर्थ में विकल्प से क्यच् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** पुत्रमिवाचरति पुत्रीयति छात्रम्। विष्णूयति द्विजम्॥

वार्तिक- **(सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विब्वा वक्तव्यः)। अतो गुणे।**

हिन्दी अर्थ- उपमानरुप सभी प्रातिपदिकों से आचार अर्थ में विकल्प से क्विप् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** कृष्ण इवाचरति कृष्णति। स्व इवाचरति स्वति। सस्वौ॥

सूत्रम्- अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति । 6/4/15

वृत्तिः- अनुनासिकान्तस्योपधाया दीर्घः स्यात्क्वौ झलादौ च क्ङिति।

हिन्दी अर्थ- क्वि या झलादि कित्, ङित्, के परे होने पर अनुनासिकान्त अंग की उपधा को दीर्घ होता है । **उदाहरणं यथा-** इदमिवाचरति इदामति। राजेव राजानति। पन्था इव पथीनति॥

सूत्रम्- कष्टाय क्रमणे । 3/1/14

वृत्तिः- चतुर्थ्यन्तात् कष्टशब्दादुत्साहेऽर्थे क्यङ् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- चतुर्थ्यन्त कष्ट शब्द से क्रमण अर्थात् उत्साह करने अर्थ में क्यङ् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** कष्टाय क्रमते कष्टायते। पापं कर्तुमुत्सहत इत्यर्थः॥

सूत्रम्- शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे । 3/1/17

वृत्तिः- एभ्यः कर्मभ्यः करोत्यर्थे क्यङ् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- शब्द, वैर, कलह, अभ्र, कण्व और मेघ इन प्रातिपदिक कर्मों से करना अर्थ में विकल्प से क्यङ् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** शब्दं करोति शब्दायते ।

॥इति नामधातवः॥

॥कृदन्त॥

कृत् प्रत्यय-

जिन प्रत्ययों को धातुओं में जोड़कर संज्ञा, विशेषण या अव्यय आदि पद बनाए जाते हैं उन्हें कृत् प्रत्यय कहते हैं।

1. 'अव्यय' बनाने के लिए धातुओं में **'क्त्वा'**, **'ल्यप्'**, **'तुमुन्'** प्रत्ययों का योग किया जाता है।
2. 'धातु से विशेषण' बनाने के लिए **'शतृ'**, **'शानच्'**, **'तव्यत्'**, **'अनीयर्'**, **'यत्'** आदि प्रत्ययों का योग किया जाता है।
3. 'भूतकालिक क्रिया' के प्रयोग के लिए **'क्त'**, **'क्तवतु'** एवं 'करना चाहिए- इस अर्थ के लिए क्रिया के वाचक **'तव्यत्'**, **'अनीयर'** और **'यत्'** प्रत्ययों का प्रयोग करते हैं।
4. 'धातु से संज्ञा' बनाने हेतु **'तृच्, 'क्तिन्' वुल्'**, **'ल्युट्'** आदि प्रत्ययों का योंग किया जाता है।

॥ तव्यत् तव्य तथा अनीयर् ॥

सूत्रम्- तव्यत्तव्यानीयरः । 3/9/96

वृत्तिः- धातोरेते प्रत्ययाः स्युः। एधितव्यम्, एधनीयं त्वया । **भावे औत्सर्गिकमेकवचनं क्लीबत्वं च ।** चेतव्यः चयनीयो वा धर्मस्त्वया।

अर्थ- 'चाहिए' या 'योग्य' के अर्थों में धातु से परे तव्यत्, तव्य तथा अनीयर् (अनीय) प्रत्यय होते हैं। भाव में स्वाभाविक एकवचन और नपुंसकलिङ्ग हुआ करता है ।

तव्यत् प्रत्यय-

गम् + तव्यत् = गन्तव्यम् ।
पठ् + तव्यत् = पठितव्यम् ।
हस् + तव्यत् = हसितव्यम् ।
रक्ष् + तव्यत् = रक्षितव्यम् ।
जि + तव्यत् = जेतव्यम् ।

अनीयर्- प्रत्यय-

पठ् + अनीयर् = पठनीयम् ।
हस् + अनीयर = हसनीयम् ।
रक्ष् + अनीयर = रक्षणीयम् ।
जि + अनीयर = जयनीयम् ।

॥यत्, ण्यत् और क्यप्॥

इन तीनों प्रत्ययों का 'य' ही शेष रहता है तथा तीनों एक ही अर्थ 'चाहिए' अथवा 'योग्य' के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। परन्तु इनके प्रयोग स्थल भिन्न-भिन्न होते हैं।

यत् प्रत्यय-

सूत्रम्- अचो यत् । 3/1/97

वृत्तिः- अजन्ताद् धातोर्यत् स्यात् । चेयम् ॥

अर्थः - अजन्त धातु से परे यत् प्रत्यय हो । अधिकांशतः अजन्त धातुओं के साथ 'यत्' प्रत्यय प्रयुक्त होता है और धातु के 'इकार' को 'ए' और उसको 'अय्' आदेश तथा 'उकार' को 'ओ' और उसको 'अव्' हो जाता है।

उदाहरण-

	पुंलि.	स्त्रीलिं.	नपुं.लिं.
• चि+ यत्	चेयः	चेया	चेयम् ।
• जि+ यत्	जेयः	जेया	जेयम् ।
• गै+ यत्	गेयः	गेयाः	गेयम् ।
• चि+यत्	चेयः	चेया	चेयम् ।

- श्रु+ यत् श्रव्यः श्रव्या श्रव्यम् ।
- दा+ यत् देयः देया देयम् ।

ण्यत् प्रत्यय-

सूत्रम्- ऋहलोर्ण्यत् । 3/1/124

वृत्तिः- ऋवर्णान्ताद् हलन्ताच्च धातोण्यत् । कार्यम् । हार्यम् । धार्यम् ॥

अर्थः- ऋवर्णान्त धातु से तथा हलन्त धातु से ण्यत् प्रत्यय हो । अधिकांशतः ऋकारान्त तथा हलन्त धातुओं से परे 'चाहिए' तथा 'योग्य' अर्थ को बताने के लिए **'ण्यत्'** प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है और ण्यत् से पूर्व 'ऋ' की वृद्धि हो जाती है। हलन्त धातु की उपधा में यदि 'अ' हो तो उसे वृद्धि करने पर दीर्घ 'आ' हो जाता है। यदि उपधा में इ, उ या ऋ हो तो क्रमशः ए, और ओ 'अर' हो जाते हैं इनके रूप तीनों लिङ्गों में चलते हैं।

उदाहरण-

	पुं.लिं.	स्त्री.लिं.	न.लि.
कृ+ण्यत् (य)=	कार्यः	कार्या	कार्यम् ।
हृ+ण्यत् (य)=	हार्यः	हार्याः	हार्यम् ।
धृ+ण्यत् (य)=	धार्यः	धार्या	धार्यम् ।
लिख्+ण्यत् (य)=	लेख्यः	लेख्या	लेख्यम् ।
पठ्+ण्यत् (य)=	पाठ्यः	पाठ्या	पाठ्यम् ।
त्यज्+ण्यत (य)=	त्याज्यः	त्याज्या	त्याज्यम् ।
वच्+ण्यत् (य)=	वाच्यः	वाच्या	वाच्यम् ।

क्यप् प्रत्यय-

सूत्रम्- एति-स्तु शास्-वृ-दृ-जुषः क्यप् । 3/1/109

वृत्तिः- एभ्यः क्यप् स्यात् ।

अर्थ- इण्, स्तु, शास्, वृ, दृ और जुष् धातुओं से क्यप् प्रत्यय हो । अर्थात् **इ** (जाना), **स्तु** (स्तुति करना), **शास्** (कहना), **वृ** (वरण करना), **दृ** (आदर करना) आदि कुछ धातुओं से 'क्यप्' प्रत्यय होता है।

उदाहरण-

इ+ क्यप्-	=	इत्य (जिस के पास जाना चाहिए) ।
शास् + क्यप्-	=	शिष्य (जिसे उपदेश देना/कहना चाहिए)।
स्तु + क्यप् -	=	स्तुत्य (स्तुति के योग्य) ।
वृ+ क्यप् -	=	वृत्य (वरण करने/चुनने योग्य) इत्यादि।
आ+दृ+क्यप्-	=	आदृत्य(सूर्य) ।

शतृ प्रत्यय-

सूत्रम्- लटः शतृ-शानचावप्रथमासमानाधिकरणे । 3/2/124

हिन्दी अर्थ- अप्रथमान्त अर्थात् प्रथमान्त से भिन्न से समानाधिकरण होने पर लट् के स्थान में शतृ और शानच् होते है ।

	पुं.	स्त्री.	न.लिं.
पठ् + शतृ (अत्)	पठन्	पठन्ती	पठत्
लिख् + शतृ	लिखन्	लिखन्ती	लिखत्
हस् + शतृ	हसन्	हसन्ती	हसत्

शानच् प्रत्यय-

	पुं.लिं.	स्त्री.लिं.	न.लि.
सेव् + शानच्	सेवमानः	सेवमाना	सेवमानम्
मुद् + शानच्	मोदमानः	मोदमाना	मोदमानम्
वृत् + शानच्	वर्तमानः	वर्तमाना	वर्तमानम्

क्त्वा प्रत्यय-

वाक्य में मुख्य क्रिया से पूर्व किए गए कार्य में पूर्वकालिक क्रिया को व्यक्त करने के लिए धातु में क्त्वा प्रत्यय का योग किया जाता है। **यथा- 'मयूरः मेघं दृष्ट्वा नृत्यति'** । यहाँ दृष्ट्वा में 'दृश्' धातु से 'क्त्वा' प्रत्यय का योग किया गया है। यह क्रिया नर्तन क्रिया की पूर्वकालिक क्रिया है।

उदाहरण-

कृ + क्त्वा= कृत्वा	=	(करके)	कार्यं कृत्वा गृहं गच्छ।
गम् + क्त्वा गत्वा	=	(जाकर)	आपणं गत्वा फलम् आनय।
पा + क्त्वा पीत्वा	=	(पीकर)	दुग्धं पीत्वा शयनं कुरु।

॥ भूतकालिक क्त (त) क्तवतु ॥

भूतकालिक क्रिया के अर्थ में धातु से 'क्त' एवं 'क्तवतु' प्रत्यय का योग किया जाता है। 'क्त' प्रत्यय सकर्मक धातुओं से कर्म अर्थ में, अकर्मक धातुओं से भाव अर्थ में तथा 'क्तवतु' प्रत्यय कर्ता अर्थ में होता है। गत्यर्थक तथा अकर्मक धातुओं से कर्ता अर्थ में 'क्त प्रत्यय होता है।

क्त प्रत्यय-

सूत्रम्- नपुंसके भावे क्तः 3/3/114

हिन्दी अर्थ- नपुंसक लिङ्ग में धातु से भाव अर्थ में क्तः प्रत्यय होता है । **उदाहरण- हसितम्, सहितम्, जल्पितम्, शयितम् ।**

सूत्रम्- तयोरेव कृत्यक्तखलर्था 3/4/70

हिन्दी अर्थ- कृत्यसंज्ञक, खलर्थसंज्ञक और क्तसंज्ञक प्रत्यय भाव और कर्म अर्थ में होते हैं ।

कुछ धातुओं के क्त-क्तवतु प्रत्यययुक्त पद निम्नलिखित हैं-

	पु.	स्त्री.	नपुं.
गम् + क्त	गतः	गता	गतम्

कृ + क्त	कृतः	कृता	कृतम्
श्रु + क्त	श्रुतः	श्रुता	श्रुतम्

क्तवतु प्रत्यय-

गम् + क्तवतु = गतवान् गतवती गतवत् ।
कृ + क्तवतु = कृतवान् कृतवती कृतवत् ।
पा + क्तवतु = पीतवत् पीतवान् पीतवती ।
श्रु + क्तवतु = श्रुतवान् श्रुतवती श्रुतवत् ।

तुमुन् प्रत्यय-

सूत्रम्- तुमुन्ण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् । 3/3/10

हिन्दी अर्थ- क्रियार्थ क्रिया उपपद रहते धातु से भविष्यत् अर्थ में तुमुन् और ण्वुल प्रत्यय होते है । **उदाहरण- 1. कृष्णं दर्शको याति ।**
2. कृष्णं द्रष्टुं याति ।

विशेष- तुमुन् (तुम्)- (निमित्तार्थक) के लिए' अर्थात् क्रिया को करने के लिए इस अर्थ में धातु के साथ तुमुन् प्रत्यय लगता है। जब दो क्रिया पदों का कर्ता एक होता है तथा एक क्रिया दूसरी क्रिया का प्रयोजन या निमित्त होती है तो निमित्तार्थक क्रिया पद में तुमुन् प्रत्यय होता है।
यथा- 'सुरेशः पठितुं विद्यालयं गच्छति' ।
वाक्य में 'पढ़ना' और 'जाना' दो क्रिया पद हैं, जिनमें पढना क्रिया प्रयोजन है जिसके लिए सुरेश विद्यालय जाता है । अतः पठितुं मे तुमुन् प्रत्यय है।

सूत्रम्- कालसमयवेलासु तुमुन् । 3/3/167

अर्थ- समय, वेला आदि कालवाची शब्दों के योग में भी धातुओं से तुमुन् प्रत्यय होता है । **यथा-** स्नातुं वेलाऽस्ति । पठितुं समयोऽस्ति।
तुमुन् प्रत्ययान्त शब्द भी अव्यय इनका रूप भी नहीं बदलता है।
उदाहरण- कालः समयो वेला वा भोक्तुम् ।

गम् + तुमुन्- गन्तुम् लिए,
सः गृहं गन्तुम् सिद्धः अस्ति।
हन् + तुमुन्- हन्तुम् मारने के लिए,
मृगं हन्तुं सिंहः समुद्यतः अस्ति।
पा + तुमुन्- पातुम् पीने के लिए,
जलं पातुं सः नदीं गतवान्।
स्ना + तुमुन्- स्नातुम् स्नान के लिए,
सः स्नातुं तरणतालमगच्छत्।
दा + तुमुन् दातुम् देने के लिए,

सूत्रम्- समानकर्तृकेषु तुमुन्। 3/3/158

वृत्तिः- इच्छार्थेष्वेककर्तृककेषूपपदेषु धातोः तुमुन् स्यात् ।

उदाहरणं यथा- भोक्तुम् इच्छति । वष्टि वाञ्छति वा ।
ज्ञातुमिच्छामि ।

सूत्रम्- पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु । 3/4/66

वृत्तिः- पर्याप्तिः पूर्णता । तद्वाचिषु सामर्थ्यवचनेषु उपपदेषु तुमुन् स्यात् ।
उदाहरणं यथा- पठितुं प्रवीणः । भोक्तुं प्रवीणः कुशलः पटुरित्यादि।

ण्वुल प्रत्यय-

सूत्रम्- ण्वुल्तृचौ । 3 /1/133

वृत्तिः- धातोरेतौ स्तः । कर्तरि कृद् इति कर्त्रथे ।
अर्थः- धातु से ण्वुल् और तृच् प्रत्यय हों। कर्तरि कृत् सूत्र के अनुसार ये प्रत्यय कर्ता अर्थ में होंगे।
कर्ता अर्थ में किसी भी धातु से ण्वुल' तथा 'तृच' प्रत्ययो का योग किया जाता है। 'व' का अक हो जाता है। णवुल के लगने पर धातु के अंत में स्थित स्वर की वृद्धि होती है तथा उपधा स्थित लघु वर्ण को गुण होता है ।

उदाहरण-

कृ + ण्वुल् (अक) = कारकः ।
पच् + ण्वुल् (अक) = पाचकः ।
श्रु + ण्वुल् (अक) = श्रावकः ।
पठ् + ण्वुल (अक) = पाठकः ।
नृत् + ण्वुल् (अक) = नर्तकः ।
लिख् + ण्वुल् (अक) = लेखकः ।
सिच् + ण्वुल् (अक) = सेचकः ।

॥अथ स्त्रीप्रत्ययाः॥

सूत्रम्- स्त्रियाम् । 4/1/3

वृत्तिः- अधिकारोऽयम्। समर्थानामिति यावत्॥
हिन्दी अर्थ- अष्टाध्यायी में यहां से लेकर समर्थानां प्रथमाद्वा सूत्र से पूर्व तक स्त्रियाम् इस सूत्र का अधिकार होता है।

सूत्रम्- अजाद्यतष्टाप् । 4/1/4

वृत्तिः- अजादीनामकारान्तस्य च वाच्यं यत् स्त्रीत्वं तत्र द्योत्ये टाप् स्यात्।
हिन्दी अर्थ- अजादि गण पठिक प्रातिपदिकों के अथवा अदन्त प्रातिपदिक के वाच्य स्त्रीत्व का द्योतन करना हो तो उनसे परे टाप् प्रत्यय हो । **उदाहरणं यथा-** अजा। एडका। अश्वा। चटका। मूषिका। बाला। वत्सा। होडा। मन्दा। विलाता। मेधा । गङ्गा । सर्वा ।

सूत्रम्- उगितश्च । 4/1/6

वृत्तिः- उगिदन्तात्प्रातिपदिकात्स्त्रियां ङीप्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- उगिदन्त प्रातिपदिक अर्थात् जिसका उक् (उ ऋ ऌ) वर्ण इत् हो तदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** भवती। भवन्ती। पचन्ती। दीव्यन्ती॥

सूत्रम्-टिड्ढाणञ्द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्तयप्ठक्ठञ्कञ्क्वरपः। 4/1/15

वृत्तिः- अनुपसर्दनं यट्टिदादि तदन्तं यददन्तं प्रातिपदिकं ततः स्त्रियांङीप्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अनुपसर्जन् जो टित् या ढ आदि प्रत्यय वे जिसके अन्त में हो ऐसे अदन्त प्रातिपदिक से परे स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** –

टित् प्रत्यय कुरुचरी। नदट् नदी। देवट् देवी।

ढ प्रत्यय- सौपर्णेयी।	**अण् प्रत्यय-** ऐन्द्री।
अञ् प्रत्यय- औत्सी।	**द्वयसज् प्रत्यय-** ऊरुद्वयसी।
दघ्नञ् प्रत्यय- ऊरुदघ्नी।	**मात्रच् प्रत्यय-** ऊरुमात्री।
तयप् प्रत्यय- पञ्चतयी।	**ठक् प्रत्यय-** आक्षिकी।
ठञ् प्रत्यय- लावणिकी।	**कञ् प्रत्यय-** यादृशी।
क्वरप् प्रत्यय- इत्वरी।	

वार्तिक- नञ्स्नञीकक्ख्युंस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम् ।

हिन्दी अर्थ- नञ्प्रत्ययान्त स्नञ् प्रत्ययान्त ईकक्प्रत्ययान्त ख्युन्प्रत्ययान्त और तरुण, तलुन प्रातिपदिकों से परे स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- स्त्रैणी। पौंस्नी। शाक्तीकी। याष्टीकी। आढ्यङ्करणी। तरुणी। तलुनी ।

सूत्रम्- यञश्च । 4/1/16

वृत्तिः- यञन्तात् स्त्रियां ङीप्स्यात्। अकारलोपे कृते .

हिन्दी अर्थ- यञ् प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है ।

सूत्रम्- हलस्तद्धितस्य । 6/1/150

वृत्तिः- हलः परस्य तद्धितयकारस्योपधाभूतस्य लोपः स्यात् ईति परे।

हिन्दी अर्थ- हल से परे तद्धित् के उपधाभूत यकार का लोप हो जाता है ईकार परे हो तो । **उदाहरणं यथा-** गार्गी॥

सूत्रम्- प्राचां ष्फ तद्धितः । 4/1/17

वृत्तिः- यञन्तात् ष्फो वा स्यात्स च तद्धितः॥

हिन्दी अर्थ- यञ् प्रत्ययान्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से 'ष्फ' प्रत्यय हो और वह तद्धित संज्ञक भी हो ।

सूत्रम्- षिद्गौरादिभ्यश्च । 4/1/41

वृत्तिः- षिद्भ्यो गौरादिभ्यश्च स्त्रियां ङीष् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसका षकार इत् हो ऐसे प्रातिपदिकों से तथा गौरादिगण पठित प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** गार्ग्यायणी। नर्तकी। गौरी। अनुडुही। अनड्वाही। आकृतिगणोऽयम्॥

सूत्रम्- वयसि प्रथमे । 4/1/20

वृत्तिः- प्रथमवयोवाचिनोऽदन्तात् स्त्रियां ङीप्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- प्रथम वय (आयु) वाचक अदन्त प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** कुमारी॥

सूत्रम्- द्विगोः ।4/1/41

वृत्तिः- अदन्ताद् द्विगोर्ङीप्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अदन्त द्विगु समास से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** त्रिलोकी। अजादित्वात्त्रिफला। त्र्यनीका सेना॥

सूत्रम्- वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः । 4/1/39

वृत्तिः-वर्णवाची योऽनुदात्तान्तस्तोपधस्तदन्तादनुपसर्जनात्प्रातिपदिकाद्वा ङीप् तकारस्य नकारादेशश्च।

हिन्दी अर्थ- वर्णवाची जो अनुदात्तान्त तकारोपध तदन्त अनुपसर्जन प्रातिपदिक से परे स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीप् प्रत्यय तकार को नकार आदेश ये दोनों ही कार्य विकल्प से होते है । **उदाहरणं यथा-** एनी, एता । रोहिणी, रोहिता ।

सूत्रम्- वोतो गुणवचनात् । 4/1/44

वृत्तिः- उदन्ताद् गुणवाचिनो वा ङीष् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ह्रस्व उकारान्त गुणवाची प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** मृद्वी, मृदुः ।

सूत्रम्- बह्वादिभ्यश्च । 4/1/45

वृत्तिः- एभ्यो वा ङीष् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- बहु आदि गण पठित प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** बह्वी, बहुः।

वार्तिक- कृदिकारादक्तिनः ।

वृत्तिः- कृदन्त सम्बन्धी इकार जो क्तिन् प्रत्यय का अवयव न हो तदन्त

हिन्दी अर्थ- प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** रात्री, रात्रिः।

वार्तिक- सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके ।

हिन्दी अर्थ- कई आचार्यो का मत है की क्तिन् अर्थक प्रत्ययान्तों से भिन्न किसी भी इगन्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष्

प्रत्यय होता है । उदाहरणं यथा- शकटी । शकटिः॥

सूत्रम्- पुंयोगादाख्यायाम् । 4/1/48

वृत्तिः- या पुमाख्या पुंयोगात् स्त्रियां वर्तते ततो ङीष्।

हिन्दी अर्थ- पुरुष के साथ सम्बन्ध के कारण पुंवाचक शब्द स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हो तो उस अदन्त प्रातिपदिक से परे ङीष् प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** गोपस्य स्त्री गोपी।

वार्तिक- पालकान्तात्र ।

हिन्दी अर्थ- पालक शब्द जिसके अन्त में हो प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है ।

सूत्रम्- प्रत्ययस्थात्कात्पूर्वस्यात इदाप्यसुपः । 7/3/44

वृत्तिः- प्रत्ययस्थात्कात्पूर्वस्याकारस्येकारः स्यादापि स आप्सुपः परो न चेत्।

हिन्दी अर्थ- प्रत्यय में स्थित ककार पूर्व ह्रस्व अकार के स्थान ह्रस्व इकार आदेश हो यदि आप् (टाप् डाप् चाप्) प्रत्यय परे हो तो परन्तु वह आप् सुप् से परे नही होना चाहिये ।

उदाहरणं यथा- गोपालिका। अश्वपालिका। सर्विका। कारिका। **अतः किम् ?** नौका। **प्रत्ययस्थात्किम् ?** शक्नोतीति शका। **असुपः किम् ?** बहुपरिव्राजका नगरी।

वार्तिक- सूर्याद्देवतायां चाब्वाच्यः ।

हिन्दी अर्थ- सूर्य प्रातिपदिक से पुंयोग में देवता स्त्री (पत्नी) वाच्य होने पर चाप् प्रत्यय कहना चाहिये । उदाहरणं यथा- सूर्यस्य स्त्री देवता सूर्या। देवतायां किम् ? सूर्यागस्त्ययोश्छे च ङ्यां च । यलोपः।

हिन्दी अर्थ- छ या ङी प्रत्यय परे होने पर जो अंग उसके उपधा के यकार का लोप हो जाता है यदि वह यकार सूर्य या अगस्त्य शब्दों का अवयव हो तो । **उदाहरणं यथा –** सूरी-कुन्ती; मानुषीयम्॥

सूत्रम्-इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणा-मानुक् । 4/1/49

वृत्तिः- एषामानुगागमः स्यात् ङीष् च।

हिन्दीअर्थ-इन्द्र-वरुण-भव-शर्व-रुद्र-मृड-हिम-आरण्य-यव-यवन-मातुल और आचार्य इन बारह प्रातिपदिकों से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय तथा इन बारह प्रातिपदिकों को आनुक् का आगम होता है।

उदाहरणं यथा- इन्द्रस्य स्त्री इन्द्राणी। वरुणानी। भवानी। शर्वाणी। रुद्राणी। मृडानी।

वार्तिक- हिमारण्ययोर्महत्त्वे ।

हिन्दी अर्थ- हिम और आरण्य इन प्रातिपदिकों से महत्व (अर्थात् बढ़ा होना) अर्थ में ङीष् प्रत्यय और आनुक विधान समझना चाहिये ।

उदाहरणं यथा- महद्धिमं हिमानी। महदरण्यमरण्यानी।

वार्तिक- यवाद्दोषे ।

हिन्दी अर्थ- दोष द्योत्य होने पर यव प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय और प्रकृति को आनुक विधान समझना चाहिये । **उदाहरणं यथा-** दुष्टो यवो यवानी।

वार्तिक- यवनाल्लिप्याम् ।

हिन्दी अर्थ- लिपि विशेष वाच्य होने पर यवन प्रातिपदिक से ङीष् प्रत्यय और प्रकृति को आनुक का आगम होता है । **उदाहरणं यथा-** यवनानां लिपिर्यवनानी।

वार्तिक- मातुलोपाध्याययोरानुग्वा ।

हिन्दी अर्थ- मातुल (मामा) और उपाध्याय इन दो प्रातिपदिकों से पुंयोग मे स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय तो नित्य होता हैं परन्तु आनुक् का आगम विकल्प से होता है । **उदाहरणं यथा-** मातुलानी, मातुली। उपाध्यायानी, उपाध्यायी।

वार्तिक- आचार्यादणत्वं च।

हिन्दी अर्थ- आचार्य प्रातिपदिक से परे आनुक् के नकार को णकार नहीं होता है । **उदाहरणं यथा-** आचार्यस्य स्त्री आचार्यानी।

वार्तिक- अर्यक्षत्रियाभ्यां वा स्वार्थे।

हिन्दी अर्थ- अर्य (स्वामी या वैश्य) एवं क्षत्रिय प्रातिपदिकों मे स्वार्थ में (पुंयोग में नही बल्कि जाति आदि वाच्य होने पर) स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय और आनुक का आगम विकल्प से होते है ।

उदाहरणं यथा- अर्याणी, अर्या। क्षत्रियाणी, क्षत्रिया ।

सूत्रम्- क्रीतात्करणपूर्वात् । 4/1/50

वृत्तिः- क्रीतान्ताददन्तात् करणादेः स्त्रियां ङीष्स्यात्।

हिन्दी अर्थ- क्रित शब्द जिसके अन्त में तथा करणवाचक जिसका पूर्वावयव हो उस अदन्त प्रातिपदिक स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** वस्त्रक्रीती। क्वचिन्न। धनक्रीता॥

सूत्रम्- स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात्। 4/1/54

वृत्तिः- असंयोगोपधमुपसर्जनं यत् स्वाङ्गं तदन्तादन्तान् ङीष्वा स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसकी उपधा में संयोग ना हो ऐसा जो उपसर्जन संज्ञक स्वांगवाची शब्द तदन्त अदन्त प्रातिपदिक स्त्रीत्व की विवक्षा में विकल्प से ङीष् प्रत्यय होता है ।

उदाहरणं यथा- केशानतिक्रान्ता अतिकेशी, अतिकेशा। चन्द्रमुखी, चन्द्रमुखा। **असंयोगोपधात्किम् ?** सुगुल्फा। **उपसर्जनात्किम् ?** शिखा।

सूत्रम्- न क्रोडादिबह्वचः। 4/1/56

वृत्तिः- क्रोडादेर्बह्वचश्च स्वाङ्गान्न ङीष्।

हिन्दी अर्थ- क्रोडादिगण पठित स्वांगवाचकों से तथा बह्वच् (दो से अधिक अचों वालें) स्वांगवाचक शब्दों से स्त्रीत्व की विवक्षा में से ङीष् प्रत्यय नहीं होता है । **उदाहरणं यथा-** कल्याणक्रोडा। आकृतिगणोऽयम्। सुजघना॥

सूत्रम्- नखमुखात्संज्ञायाम् । 4/1/58

वृत्तिः- न ङीष्॥

हिन्दी अर्थ- स्वांगवाची जो नख और मुख शब्द तदन्त प्रातिपदिक स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय नहीं होता यदि संज्ञा अर्थात् किसी का नाम गम्यमान हो तो ।

सूत्रम्- पूर्वपदात्संज्ञायामगः। 8/4/3

वृत्तिः- पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य नस्य णः स्यात् संज्ञायां न तु गकारव्यवधाने।

हिन्दी अर्थ- पूर्वपदस्थनिमित्त अर्थात् (ऋ र ष) से परे नकार को णकार हो जाता है संज्ञा अर्थ में परन्तु गकार का व्यवधान होने पर णत्व नही होता है । **उदाहरणं यथा-** शूर्पणखा। गौरमुखा। **संज्ञायां किम् ?** ताम्रमुखी कन्या॥

सूत्रम्- जातेरस्त्रीविषयादयोपधात् । 4/1/63

वृत्तिः- जातिवाचि यन्न च स्त्रियां नियतमयोपधं ततः स्त्रियां ङीष् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जो जातिवाचक नित्यस्त्रीलिंग ना हो तथा उसकी उपधा में यकार भी ना हो तो उससे स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** तटी। वृषली। कठी। बह्वृची। **जातेः किम् ?** मुण्डा। **अस्त्रीविषयात्किम् ?** बलाका। अयोपधात्किम् ? क्षत्रिया।

वार्तिक- योपधप्रतिषेधे हयगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिषेधः।

हिन्दी अर्थ- यकारोपध जातिवाचकों से पूर्व सूत्रद्वारा जो निषेध किया गया है वह निषेध हय गवय मुकय मनुष्य और मत्स्य इन पांचों में प्रवृत्त नही होता है । **उदाहरणं यथा-** हयी। गवयी। मुकयी। हलस्तद्धितस्येति यलोपः। मनुषी।

वार्तिक- मत्स्यस्य ङ्याम् । यलोपः।

हिन्दी अर्थ- ङी प्रत्यय परे होने पर मत्स्यशब्द के उपधाभूत यकार का लोप होता है । **उदाहरणं यथा-** मत्सी ।

सूत्रम्- इतो मनुष्यजातेः। 4/1/65

वृत्तिः- ङीष्।

हिन्दी अर्थ- मनुष्यजातिवाचक ह्रस्व इकारान्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीष् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** दाक्षी॥

सूत्रम्- ऊङुतः। 4/1/66

वृत्तिः- उदन्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामूङ् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसकी उपधा में यकार ना हो ऐसे मनुष्यजातिवाची उदन्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ऊङ प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** कुरूः। **अयोपधात्किम् ?** अध्वर्युर्ब्राह्मणी॥

सूत्रम्- पङ्गोश्च। 4/1/68

हिन्दी अर्थ- पङ्गु प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ऊङ् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** पङ्गूः।

वार्तिक- श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ।

हिन्दी अर्थ- श्वसुर (ससुर) प्रातिपदिक से स्त्रीत्व में पुंयोग में ऊङ् प्रत्यय होता है तथा इसके श्शुर श्वसुर शब्द के उकार तथा अन्त्य अकार का भी लोप हो जाता है । **उदाहरणं यथा-** श्वश्रूः॥

सूत्रम्- ऊरूत्तरपदादौपम्ये । 4/1/69

वृत्तिः- उपमानवाची पूर्वपदमूरूत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तस्मादूङ् स्यात्।

हिन्दी अर्थ- जिसका पूर्वपद उपमावाचक तथा उत्तरपद ऊरू हो तो उस समस्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ऊङ प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** करभोरूः॥

सूत्रम्- संहितशफलक्षणवामादेश्च । 4/1/70

वृत्तिः- अनौपम्यार्थं सूत्रम्।

हिन्दी अर्थ- संहित (संश्लिष्ट सटा हुआ) शफ़ (खुर) लक्षण (लक्षणवान) वाम (अतिसुन्दर) इनमें से कोई जिसका पूर्वपद तथा उत्तरपद ऊरू हो तो उस समस्त प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ऊङ प्रत्यय होता है। **उदाहरणं यथा-** संहितोरूः। शफोरूः। लक्षणोरूः। वामोरूः॥

सूत्रम्- शार्ङ्गरवाद्यञो ङीन् । 4/1/73

वृत्तिः- शार्ङ्गरवादेरञो योऽकारस्तदन्ताच्च जातिवाचिनो ङीन् स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- शार्ङ्गरव आदि गणपठित प्रातिपदिक तथा अञ् प्रत्यय का जो अकार तदन्त जातिवाचक प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीन् प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** शार्ङ्गरवी/ बैदी। ब्राह्मणी।

वार्तिक- नृनरयोर्वृद्धिश्च ।

हिन्दी अर्थ- नृ और नर जातिवाचक प्रातिपदिक से स्त्रीत्व की विवक्षा में ङीन् प्रत्यय तथा इसके साथ नृ और नर शब्दों को वृद्धि भी होती है । **उदाहरणं यथा-** नारी॥

सूत्रम्- यूनस्तिः। 4/1/77

वृत्तिः- युवञ्छब्दात् स्त्रियां तिः प्रत्ययः स्यात्।

हिन्दी अर्थ- युवन् (जवान) शब्द से स्त्रीत्व की विवक्षा में ति प्रत्यय होता है । **उदाहरणं यथा-** युवतिः॥

॥कारक॥

॥प्रथमा विभक्ति॥

सूत्रम्- प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा । 2/3/46

वृत्तिः- नियतोपस्थितिकः प्रातिपदिकार्थः। मात्रशब्दस्य प्रत्येकं योगः। प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राधिक्ये परिमाणमात्रे सङ्ख्यामात्रे च प्रथमा स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- अर्थात् जिस प्रातिपदिक के उच्चारण करने पर जिस अर्थ की नियम से उपस्थिति या प्रतीति होती है, उसे प्रातिपदिकार्थ कहते हैं। प्रातिपदिकार्थ मात्र में, लिङ्गमात्र की अधिकता में, परिमाण मात्र में और संख्यामात्र में प्रथमा विभक्ति होती है।

प्रातिपदिकार्थमात्रे यथा- उच्चैः (ऊँचा)। नीचैः (नीचा)। कृष्णः (श्रीकृष्ण)। श्रीः (लक्ष्मी)। ज्ञानम् (ज्ञान, जानना)। इन सभी में प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा हुई है। **अलिङ्गा नियतलिङ्गाश्च प्रातिपदिकार्थमात्र इत्यस्योदाहरणम् ।** अर्थात् अलिङ्ग और नियतलिङ्ग प्रातिपदिकार्थ मात्र के उदाहरण होते हैं । **अलिङ्गा-** अर्थात् जिसका कोई भी लिंग ना हो अर्थात् जो अव्यय हो। जैसे उच्चैः नीचैः । **नियतलिङ्गा-** अर्थात् जिसका कोई निश्चित् लिंग होता हैं। जैसे कृष्णः (पुलिंग), श्रीः (स्त्रीलिंग), ज्ञानम् (नपुंसक लिंग) ।

लिङ्गमात्राधिक्ये- तटः, तटी, तटम् । यहाँ प्रातिपदिकार्थ के अतिरिक्त लिङ्गमात्र की अधिकता होने पर प्रकृत सूत्र से प्रथमा विभक्ति हो जाती है। **अनियतलिङ्गास्तु लिङ्गमात्राधिक्यस्य ।** अनियत लिंग लिङ्गमात्र की अधिकता के उदाहरण होते हैं। **अनियतलिङ्गा-** अनियत लिङ्ग उन्हें कहते है जिनका कोई लिंग निश्चित् नहीं होता ऐसे शब्द के तीनों लिगों में चल सकते हैं। जैसे तटः तटी तटम् ।

परिमाणमात्रे- द्रोणो व्रीहिः । जब किसी शब्द से प्रातिपदिकार्थ के अतिरिक्त परिमाण (माप) अर्थ की प्रतीति हो तो उसमें प्रथमा विभक्ति होती है। **जैसे-** द्रोणो व्रीहिः (द्रोण परिमाण से मापा हुआ धान)। द्रोणरूपं यत्परिमाणं तत्परिच्छिन्नो व्रीहिरित्यर्थः । प्रत्ययार्थे परिमाणे प्रकृत्यर्थोऽभेदेन संसर्गेण विशेषणम् । प्रत्ययार्थस्तु परिच्छेद्यपरिच्छेदकभावेन व्रीहौ विशेषणमिति विवेकः ।

वचनमात्रे- वचनं सङ्ख्या एकः । द्वौ । बहवः । वचन का अर्थ संख्या है। अतः संख्यामात्र में प्रथमा विभक्ति होती है। **इहोक्तार्थत्वाद् विभक्तेरप्राप्तौ वचनम् ।**

सूत्रम्- संबोधने च । 2/3/47

वृत्तिः- इह प्रथमा स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- अर्थात् सम्बोधन में प्रथमा विभक्ति होती है। **हे राम** ॥ अतः प्रातिपदिकार्थ से सम्बोधन अर्थ की अधिकता होने पर प्रथमा विभक्ति होती है।

॥इति प्रथमा ॥

॥द्वितीया विभक्ति॥

सूत्रम्- कारके । 1/4/23

हिन्दी अर्थ- कारके इस पद का अधिकार करके अपादान कर्म इत्यादि संज्ञाएँ की जाती हैं ।

सूत्रम्- कर्तुरीप्सिततमं कर्म । 1/4/49

वृत्तिः- कर्तुः क्रियया आप्तुमिष्टतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- कर्ता अपनी क्रिया के द्वारा जिस इप्सितत को प्राप्त करना चाहता है उस कर्ता के इप्सिततमं की कर्म संज्ञा होती है ।

- **कर्तुः किम् ? माषेष्वश्वं बध्नाति** (माष के खेत में घोडे को बांधता है)। **कर्मण ईप्सिता माषाः न तु कर्तुः ।**
  हिन्दी अर्थ- माषेष्वश्वं बध्नाति इस वाक्य में कर्म के अर्थात् अश्व के माष ईप्सित है कर्ता के नही है । **तमब्ग्रहणं किम् ?** पयसा ओदनं भुङ्क्ते । कर्मेत्यनुवृत्तौ पुनः कर्मग्रहणं आधारनिवृत्त्यर्थम् । अन्यथा गेहं प्रविशतीत्यत्रैव स्यात् ॥

सूत्रम्- अनभिहिते। 2/3/1

वृत्तिः- इत्यधिकृत्य ।

सूत्रम्- कर्मणि द्वितीया । 2/3/2

वृत्तिः- अनुक्ते कर्मणि द्वितीया स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अनुक्त अर्थात् (अनभिहित-अकथित) कर्म में द्वितीया विभक्ति होती है । **उदाहरणं यथा-** हरिं भजति ।

- **अभिहिते तु कर्मणि प्रातिपदिकार्थमात्र इति प्रथमैव ।**
  हिन्दी अर्थ- परन्तु अभिहित कर्म में तो प्रातिपदिकार्थमात्र में प्रथमा ही होती है ।
- **अभिधानं च प्रायेण तिङ्कृत्तद्धितसमासैः ।**
  हिन्दी अर्थ- अभिधान अर्थात् (उक्त, अनुक्त की प्रक्रिया) तो प्रायः तिङ्कृत्तद्धित् तथा समास के द्वारा होती हैं । **उदाहरणं यथा- तिङ्-** हरिः सेव्यते । **कृत्-** लक्ष्म्या सेवितः । **तद्धितः-** शतेन क्रीतः शत्यः । **समासः-** प्राप्तः आनन्दो यं स प्राप्तानन्दः । क्वचिन्निपातेनाभिधानं यथा विषवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेत्तुमसाम्प्रतम् । सांप्रतमित्यस्य हि युज्यत इत्यर्थः ।

सूत्रम्- तथायुक्तं चानीप्सितम् । 1/4/50

वृत्तिः- ईप्सिततमवत्क्रियया युक्तमनीप्सितमपि कारकं कर्मसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- ईप्सिततं क्रिया के योग अनीप्सित कारक की भी कर्म संज्ञा हो जाती है । **उदाहरणं यथा-** ग्रामं गच्छन् तृणं स्पृशति । ओदनं भुञ्जानो विषं भुङ्क्ते ॥

सूत्रम्- अकथितं च । 1/4/51

वृत्तिः- अपादानादिविशेषैरविवक्षितं कारकं कर्मसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी अर्थ- अर्थात् जब कारक की अपादान इत्यादि विशेष संज्ञा न करना चाहें तब उसकी कर्म संज्ञा होती है। ये कर्म अकथित कर्म कहे जाते हैं। इन्हें ही अप्रधान या गौण कर्म भी कहते हैं। उपर्युक्त विवक्षा का विकल्प केवल (16) धातुओं एवं उनकी समानार्थक धातुओं के विषय में ही है, सभी के विषय में नहीं ।

"दुह्याच्पच्दण्ड्रुधिप्रच्छिचिब्रूशासुजिमथ्मुषाम् ।
कर्मयुक् स्यादकथितं तथा स्यान्नीहृकृष्वहाम्" ॥

दुहादीनां द्वादशानां तथा नीप्रभृतीनां चतुर्णां कर्मणा यद्युज्यते तदेवाकथितं कर्मेति परिगणनं कर्तव्यमित्यर्थः ।

गां दोग्धि पयः - (गाय से दुध निकलता हैं) यहाँ गाय अपादान है, इसकी अविवक्षा करने पर गां की कर्म संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति हुई। और पयः प्रधान कर्म है।।

बलिं याचते वसुधाम् – (बलि से पृथ्वी माँगते हैं) यहाँ बलि अपादान है, इसकी अविवक्षा करने पर कर्म संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति हुई। वसुधाम् प्रधान कर्म है।।

अविनीतं विनयं याचते – (अविनीत के लिये विनय मांगता हैं) यहाँ अविनीत सम्प्रदान है, इसकी अविवक्षा करने पर कर्म संज्ञा होकर द्वितीया विभक्ति हुई। विनयं प्रधान कर्म है।।

तण्डुलान् ओदनं पचति – (चावलों से भात पकाता है) यहाँ तण्डुल करण है। इसकी अविवक्षा होने पर कर्म संज्ञा हुई ओदनम् प्रधान कर्म है।

गर्गान् शतं दण्डयति - (गर्गों को सौ रुपये जुर्माना करता है) यहाँ गर्ग अपादान है, इसकी अविवक्षा होने पर कर्म संज्ञा हुई। शतम् प्रधान कर्म है।

माणवकं पन्थानं पृच्छति - (बालक से मार्ग पूछता है) यहाँ माणवकं गौण और पन्थानम् प्रधान कर्म है।

वृक्षम् अवचिनोति फलानि (वृक्ष से फलों को चुनता है) यहाँ वृक्ष गौण कर्म और फलानि प्रधान कर्म है।

माणवकं धर्मं ब्रूते शास्ति वा - (लड़के के लिए धर्म कहता है, उसका उपदेश करता है) यहाँ माणवक गौण कर्म और धर्म प्रधान कर्म है।

शतं जयति देवदत्तं - (देवदत्त से सौ रुपये जीतता है) यहाँ देवदत्त गौण कर्म और शत प्रधान कर्म है।

सुधां क्षीरनिधिं मध्नाति - (समुद्र को अमृत के लिए मथता है) यहाँ सुधा गौण कर्म और क्षीरनिधि प्रधान कर्म है।

देवदत्तं शतं मुष्णाति - (देवदत्त से सौ रुपये चुराता है) यहाँ देवदत्त गौण कर्म और शतं प्रधान कर्म है।

ग्रामम् अजां नयति, हरति कर्षति वहति वा - (गांव में बकरी ले जाता है, खींचता है, पहुँचाता है) यहाँ ग्राम गौण कर्म और अजाम् प्रधान कर्म है।

अर्थनिबन्धनेयं संज्ञा, बलिं भिक्षते वसुधाम् । माणवकं धर्मं भाषते अभिधत्ते वक्तीत्यादि । **कारकं किम् ?** माणवकस्य पितरं पन्थानं पृच्छति| **"अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम्" (वा.)** ॥ कुरून् स्वपिति । मासमास्ते । गोदोहमास्ते । क्रोशमास्ते ।

सूत्रम्- गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणिकर्ता स णौ । 1/4/52

वृत्तिः- गत्याद्यर्थानां शब्दकर्मणामकर्मकाणां चाणौ यः कर्ता स णौ कर्म स्यात् ॥

"शत्रूनगमयत्स्वर्गं वेदार्थं स्वानवेदयत् ।
आशयच्चामृतं देवान्वेदमध्यापयद्विधिम् ॥
आसयत्सलिले पृथ्वीं यः स मे श्रीहरिर्गतिः ॥

हिन्दी अर्थ- गत्यर्थक, बुद्धयर्थक, भक्षणार्थक, शब्दकर्मक और अकर्मक धातुओं की अण्यन्त अवस्था का कर्ता ण्यन्त अवस्था में कर्मसंज्ञक होता है ।**उदाहरणं यथा-**

गति- हरिः शत्रून् स्वर्गं अगमयत् ।

बुद्धिः- हरिः स्वान् वेदार्थं अवेदयत् ।

प्रत्यवसानार्थ- हरिः देवान् अमृतं आशयत् ।

शब्दकर्मकाणां- हरिः विधिं वेदं अध्यापयत् ।

अकर्मकाणां- हरिः सलिले पृथ्वीं आसयत् ।

गतीत्यादि किम् ? पाचयत्योदनं देवदत्तेन । **अण्यन्तानां किम् ?** गमयति देवदत्तो यज्ञदत्तं तमपरः प्रयुङ्क्ते गमयति देवदत्तेन यज्ञदत्तं विष्णुमित्रः ।

वार्तिक- नीवह्योर्न ॥

उदाहरणं यथा - **"नाययति वाहयति वा भारं भृत्येन"** ॥

वार्तिक- नियन्तृकर्तृकस्य वहेरनिषेधः ॥

उदाहरणं यथा- **"वाहयति रथं वाहान् सूतः"।**

वार्तिक- आदिखाद्योर्न ॥

उदाहरणं यथा- **"आदयति खादयति वा अन्नं बटुना"**

वार्तिक - भक्षेरहिंसार्थस्य न ।

उदाहरणं यथा- **"भक्षयत्यन्नं बटुना"** । अहिंसार्थस्य किम् ? **भक्षयति बलीवर्दान् सस्यम् ।**

वार्तिक- जल्पतिप्रभृतीनामुपसङ्ख्यानम् ।

उदाहरणं यथा- **"जल्पयति भाषयति वा धर्मं पुत्रं देवदत्तः ।**

वार्तिक- दृशेश्च ॥

उदाहरणं यथा- **"दर्शयति हरिं भक्तान्"** ।

ज्ञानसामान्यार्थानामेव ग्रहणं न तु तद्विशेषार्थनामित्यनेन ज्ञाप्यते । तेन स्मरति जिघ्रतीत्यादीनां न । **"स्मारयति घ्रापयति वा देवदत्तेन"** ॥

वार्तिक- शब्दायतेर्न ॥

उदाहरणं यथा-**"शब्दाययतिदेवदत्तेन"**।

धात्वर्थसङ्गृहीतकर्मत्वेनाकर्मकत्वात्प्राप्तिः । येषां देशकालादिभिन्नं कर्म न संभवति तेऽत्राकर्मकाः । न त्वविवक्षितकर्माणोऽपि । तेन मासमासयति देवदत्तमित्यादौ कर्मत्वं भवत्येव । देवदत्तेन पाचयतीत्यादौ तु न ॥

सूत्रम्- हृक्रोरन्यतरस्याम्। 1/4/53

वृत्तिः- हृक्रोरणौ यः कर्ता स णौ वा कर्मसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- ह और कृ धातु के अण्यन्त अवस्था का कर्ता ण्यन्त अवस्था में विकल्प से कर्मसंज्ञक होता है ।

उदाहरणं यथा- **"हारयति कारयति वा भृत्यं भृत्येन वा कटम्" ॥**

वार्तिक- "अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेति वाच्यम्" ॥

उदाहरणं यथा- अभिवादयते दर्शयते देवं भक्तं भक्तेन वा ॥

सूत्रम्- अधिशीङ्स्थासां कर्म । 1/4/46

वृत्तिः- अधिपूर्वाणामेषामाधारः कर्म स्यात् ।

हिन्दी अर्थ- शीङ्, स्था तथा आस् धातुओं के पूर्व यदि अधि उपसर्ग लगा हो तो इन क्रियाओं का आधार कर्म कहलाता है।

उदाहरणं यथा- -

शीङ्- हरिः वैकुण्ठं अधिशेते ।

स्था- हरिः वैकुण्ठं अधितिष्ठति ।

आस्- हरिः वैकुण्ठं अध्यास्ते ।

सूत्रम्- अभिनिविशश्च । 1/4/47

वृत्तिः- अभिनीत्येतत्संघातपूर्वस्य विशतेराधारः कर्म स्यात् ।

हिन्दी- अभि तथा नि उपसर्ग जब एक साथ विश् धातु के पहले आते हैं तब विश का आधार कर्म कारक होता है।

जैसे- अभिनिविशते सन्मार्गम् (वह अच्छे मार्ग का अनुसरण करता है)।

"परिक्रयणे संप्रदानम्..." इति सूत्रादिह मण्डूकप्लुत्याऽन्यतरस्यां ग्रहणमनुवर्त्य व्यवस्थितविभाषाश्रयणात्क्वचिन्न । **पापेऽभिनिवेशः ॥**

सूत्रम्- उपान्वध्याङ्वसः । 1/4/48

वृत्तिः- उपादिपूर्वस्य <u>वसतेराधारः कर्म</u> स्यात् । **उपवसति, अनुवसति, अधिवसति, आवसति वा वैकुण्ठं हरिः ।**

हिन्दी- यदि वस् धातु के पूर्व उप, अनु, अधि, आ में से कोई उपसर्ग लगा हो तो क्रिया का आधार कर्म होता है,

यथा-

उप उपसर्ग पूर्वक - **विष्णुः वैकुण्ठम् उपवसति।**

अनु उपसर्ग पूर्वक - **विष्णुः वैकुण्ठम् अनुवसति।**

अधि उपसर्ग पूर्वक - **विष्णुः वैकुण्ठम् अधिवसति।**

आस् उपसर्ग पूर्वक - **विष्णुः वैकुण्ठम् आवसति।**

वार्तिक- "अभुक्त्यर्थस्य न" ॥

जब उप और वस् धातु का अर्थ भोग न होके उपवास करना होता है तब उप और वस का आधार कर्म न होकर अधिकरण ही रहता है। **यथा- वने उपवसति।** (वन में उपवास करता है) ।

"उभसर्वतसोः कार्या धिगुपर्यादिषु त्रिषु ।
द्वितीयाम्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते"॥

हिन्दी- उभयतः, सर्वतः, धिक्,उपर्युपरि, अधोऽधः तथा अध्यधि के साथ द्वितीया विभक्ति होती है।

उभयत यथा- उभयतः कृष्णं गोपाः (कृष्ण के दोनों ओर ग्वाले हैं)।

सर्वतः यथा- सर्वतः कृष्णं गोपाः (कृष्ण के सभी ओर ग्वाले हैं)।

धिक् यथा- धिक् कृष्णाभक्तम् (कृष्ण के अभक्त को धिक्कार हैं।)

उपर्युपरि यथा- उपर्युपरि लोकं हरिः (हरि लोक के ठीक ऊपर है)।

अधोऽधः यथा- अधोऽधः लोकं पातालः (ठीक नीचे पाताल लोक है)।

अध्यधि यथा- अध्यधि लोकम् (संसार के ठीक नीचे)।

ऋते यथा - न कृष्णम् ऋते कोऽपि कंसं हन्तुं समर्थः (कृष्ण के बिना कोई कंस को नहीं मार सकता)।

वार्तिक- "अभितःपरितःसमयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि"

हिन्दी- अर्थात् अभितः (चारों ओर), परितः (सब ओर), निकषा (समीप), हा, प्रति (ओर तरफ) के साथ द्वितीया विभक्ति होती है। **यथा** - अभितः कृष्णम् । परितः कृष्णम् । ग्रामं समया । निकषा लङ्काम् । हा कृष्णाभक्तम् ।तस्य शोच्यते इत्यर्थः । बुभुक्षितं न प्रतिभाति किञ्चित् ॥

सूत्रम्- अन्तरान्तरेण युक्ते । 2/3/4

वृत्तिः- आभ्यां योगे द्वितीया ।

हिन्दी- अन्तरा (बीच में), अन्तरेण (बिना) शब्दों की जिससे सन्निकटता प्रतीत होती है उसमें द्वितीया होती है।

यथा- अन्तरा त्वां मां हरिः । अन्तरेण हरिं न सुखम्।

सूत्रम्- कर्मप्रवचनीयाः । 1/4/83

वृत्तिः- इत्यधिकृत्य ॥

सूत्रम्- अनुर्लक्षणे । 1/4/84

वृत्तिः- लक्षणे द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- लक्षण द्योतित् होने पर अनु की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है।

सूत्रम्- कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया । 2/3/8

वृत्तिः- एतेन योगे द्वितीया स्यात् ।

हिन्दी- कर्मप्रर्वचनीय के योग में द्वितीया विभक्ति होती हैं।

जैसे- वृष्टिः जपमनु प्रावर्षत् (जप करने के पश्चात् बारिश हुई) । हेतुभूतजपोपलक्षितं वर्षणमित्यर्थः । परापि हेताविति तृतीयाऽनेन बाध्यते । **"लक्षणेत्थंभूत......"**इत्यादिना सिद्धे पुनः संज्ञाविधानसामर्थ्यात् ॥

सूत्रम्- तृतीयार्थे ।

वृत्तिः- अस्मिन्द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- तृतीयार्थ द्योतित् होने पर 'अनु' की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है।

जैसे- नदीमन्ववसिता सेना । नद्या सह संबद्धेत्यर्थः। षिञ् बन्धने क्तः।

सूत्रम्- हीने । 1/4/86

वृत्तिः- हीने द्योत्येऽनुः प्राग्वत् । **अनु हरिं सुराः** । हरेर्हीना इत्यर्थः ॥

सूत्रम्- उपोऽधिके च । 1/4/87

वृत्तिः- अधिके हीने च द्योत्ये उपेत्यव्ययं प्राक्संज्ञं स्यात् । अधिके सप्तमी वक्ष्यते । **हीने- उप हरिं सुराः** ॥

हिन्दी- 'अधिक' तथा 'हीन' अर्थ का वाचक होने पर 'उप' भी कर्मप्रवचनीय कहलाता हैं। किन्तु हीन का अर्थ लक्षित होने पर द्वितीया होती है, अन्यथा सप्तमी होती हैं । **हीन अर्थ में** 'उपहरिंसुराः' अर्थात् देवता हरि से कुछ नीचे पड़ते हैं। **अधिक अर्थ में** 'उप पराधे हरेः गुणाः' ।

सूत्रम्-लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु-प्रतिपर्यनवः। 1/4/90

वृत्तिः- एष्वर्थेषु विषयभूतेषु प्रत्यादय उक्तसंज्ञाः स्युः ।

हिन्दी- जब किसी ओर संकेत करना हो, या जब 'ये इस प्रकार के हैं' ऐसा बतलाना हो या 'यह उनके हिस्से में पड़ता है' या पुनरुक्ति बतलानी हो तब प्रति, परि और अनु कर्मप्रवचनीय कहलाते हैं और इन के योग में द्वितीया विभक्ति होती है।

लक्षणे- वृक्षं प्रति, पर्यनु वा विद्योतते विद्युत् ।

इत्थंभूताख्याने- भक्तो विष्णुं प्रति, पर्यनु वा ।

भागे- लक्ष्मीर्हरिं प्रति, पर्यनु वा । हरेर्भाग इत्यर्थः।

वीप्सायां- वृक्षंवृक्षं प्रति पर्यनु वा सिञ्चति । अत्रोपसर्गत्वाभावान्न षत्वम्। **एषु किम् ?** परिषिञ्चति ॥

सूत्रम्- अभिरभागे । 1/4/91

वृत्तिः- भागवर्जे लक्षणादावभिरुक्तसञ्ज्ञः स्यात् । हरिमभि वर्तते । भक्तो हरिमभि । देवं देवमभि सिञ्चति । अभागे किम् ? यदत्र ममाभिष्यात्तद्दीयताम् ॥

सूत्रम्- अधिपरी अनर्थकौ ।1/4/93

वृत्तिः- उक्तसंज्ञौ स्तः । कुतोऽध्यागच्छति । कुतः पर्यागच्छति ।"गतिसञ्ज्ञाबाधात् गतिर्गतौ..."इति निघातो न ॥

सूत्रम्- सुः पूजायाम् । 1/4/94

सुसिक्तम् । सुस्तुतम् ।अनुपसर्गत्वान्न षः । पूजायां किम् ? सुषिक्तं किं तवाऽत्र । क्षेपोऽयम् ॥

सूत्रम्- अतिरतिक्रमणे च । 1/4/95

वृत्तिः- अतिक्रमणे पूजायां चातिः कर्मप्रवचनीयसंज्ञः स्यात् ।

अति देवान् कृष्णः ॥

सूत्रम्- अपिः पदार्थसंभावनाऽन्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु । 1/4/96

वृत्तिः- एषु द्योत्येष्वपिरुक्तसञ्ज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- अपि की पदार्थ, संभावना, अन्ववसर्ग, गर्हा और समुच्चय आदि अर्थो में कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है । **जैसे-**

- **पदार्थ-** सर्पिषोऽपि स्यात् । अनुपसर्गत्वान्न षः । संभावनायां लिङ् ।
- **संभावना-** अपि स्तुयाद् विष्णुम् ।
  संभावनम्- शक्त्युत्कर्षमाविष्कर्तुमत्युक्तिः ।
- **अन्ववसर्गः-** अपि स्तुहि ।
  अन्ववसर्गः- कामचारानुज्ञा
- **गर्हा-** धिग्देवदत्तम् अपि स्तुयाद्वृषलम् ।
- **समुच्चय-** अपि सिञ्च अपि स्तुहि ।

सूत्रम्- कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे । 2/3/5

वृत्तिः- इह द्वितीया स्यात् । **मासं कल्याणी । मासमधीते । मासं गुडधानाः । क्रोशं कुटिला नदी । क्रोशमधीते । क्रोशं गिरिः** । अत्यन्तसंयोगे किम् ? **मासस्य द्विरधीते । क्रोशस्यैकदेशे पर्वतः** ॥

॥इति द्वितीया ॥

॥तृतीया विभक्ति॥

सूत्रम्- स्वतन्त्रः कर्ता । 1/4/54

वृत्तिः- क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्ता स्यात् ॥

हिन्दी क्रिया में स्वतन्त्र रुप से विवक्षित अर्थ कर्ता कहलाता है।

सूत्रम्- साधकतमं करणम् । 1/4/42

वृत्तिः- क्रियासिद्धौ प्रकृष्टोपकारकं करणसञ्ज्ञं स्यात् ।

हिन्दी- क्रिया की सिद्धि में जो अत्यन्त साहयक होता है उसकी करण संज्ञा होती है। **तमप् ग्रहणं किम् ?** गङ्गायां घोषः ।

सूत्रम्- कर्तृकरणयोस्तृतीया । 2/3/18

वृत्तिः- अनभिहिते कर्तरि करणे च तृतीया स्यात् ।

हिन्दी- अनुक्त कर्ता और करण में तृतीया विभक्ति होती हैं।

जैसे- रामेण बाणेन हतो वाली ॥

वार्तिक- "प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्" ॥

हिन्दी- प्रकृति (स्वभाव) आदि क्रिया विशेषण शब्दों में तृतीया विभक्ति होती है।

जैसे- प्रकृत्या चारुः । प्रायेण याज्ञिकः । गोत्रेण गार्ग्यः । समेनैति । विषमेणैति । द्विद्रोणेन धान्यं क्रीणाति । सुखेन दुःखेन वा यातीत्यादि।

सूत्रम्- दिवः कर्म च । 1/4/43

वृत्तिः- दिवः साधकतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्याच्चात्करणसंज्ञम् ।

हिन्दी- दिव धातु के योग में साधकतम कारक की कर्मसंज्ञा और करण संज्ञा होती है। **जैसे- अक्षैरक्षान्वा दीव्यति** ॥

सूत्रम्- अपवर्गे तृतीया । 2/3/6

वृत्तिः- अपवर्गः फलप्राप्तिस्तस्यां द्योत्यायां कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे तृतीया स्यात् ।

हिन्दी- अपवर्ग का **अर्थ-** फलप्राप्ति है अतः अपवर्ग द्योतित् होने पर काल और अध्वन का अत्यन्त संयोग में तृतीया विभक्ति होती हैं। जैसे **अह्ना क्रोशेन** वाऽनुवाकोऽधीतः । अपवर्गे किम् ? **मासमधीतो नायातः॥**

सूत्रम्- सहयुक्तेऽप्रधाने । 2/3/19

वृत्तिः- सहार्थेन युक्ते अप्रधाने तृतीया स्यात् ।

हिन्दी- सह, साकम्, सार्धम्, समम् के साथ वाले शब्दों में तृतीया विभक्ति होती है। **यथा-**

सह- पुत्रेण सहागतः पिता ।

सार्धम्- हनुमान् वानरैः सार्धं जानकीं मार्गयामास।

साकम्- रामः सीतया साकं गच्छति।

एवं विनापि तद्योगं तृतीया । **"वृद्धो यूना......** "इत्यादिनिर्देशात् ॥

सूत्रम्- येनाङ्गविकारः । 2/3/20

वृत्तिः- येनाङ्गेन विकृतेनाङ्गिनो विकारो लक्ष्यते ततः तृतीया स्यात् ।

हिन्दी- यदि शरीर के किसी अङ्ग में विकृति दिखाई पड़े तो विकृत अङ्ग के वाचक शब्द में तृतीया विभक्ति हो जाती है।

जैसे- अक्ष्णा काणः । अक्षिसम्बन्धिकाणत्वविशिष्ट इत्यर्थः । **अङ्गविकारः किम् ?** अक्षि काणमस्य ॥

सूत्रम्- इत्थंभूतलक्षणे । 2/3/21

वृत्तिः- कंचित्प्रकारं प्राप्तस्य लक्षणे तृतीया स्यात् ।

हिन्दी- जिस लक्षण (चिह्न) से किसी व्यक्ति या वस्तु का ज्ञान होता है तो उस लक्षण बोधक शब्द में तृतीया विभक्ति होती है।

यथा- जटाभिस्तापसः (जटाओं से तपस्वी ज्ञात होता है)।

जटाज्ञाप्यतापसत्वविशिष्ट इत्यर्थः ॥

सूत्रम्- संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि । 2/3/22

वृत्तिः- संपूर्वस्य जानातेः कर्मणि तृतीया वा स्यात् ।

यथा- पित्रा पितरं वा संजानीते ॥

सूत्रम्- हेतौ । 2/3/23

वृत्तिः- हेत्वर्थे तृतीया स्यात् । **हेतु-** द्रव्यादिसाधारणं निर्व्यापारसाधारणं च हेतुत्वम् । **करण-** करणत्वं तु क्रियामात्रविषयं व्यापारनियतं च ।

हिन्दी- कारण (हेतु) बोधक शब्दों में तृतीया होती है, यथा- **दण्डेन घटः । पुण्येन दृष्टो हरिः । फलमपीह हेतुः । अध्ययनेन वसति ।** हेत्वर्थ के कारण इन अर्थों की धातुओं के साथ तृतीया होती है ।

वार्तिक- गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तौ प्रयोजिका । अलं श्रमेण। श्रमेण साध्यं नास्तीत्यर्थः । साधनक्रियां प्रति श्रमः करणम् । **शतेन शतेन वत्सान्पाययति पयः** । शतेन परिच्छिद्येत्यर्थः ॥

वार्तिक- "अशिष्टव्यवहारे दाणः प्रयोगे चतुर्थ्यर्थे तृतीया" ।

यथा- दास्या संयच्छते कामुकः । धर्मे तु भार्यायै संयच्छति

हिन्दी- अशिष्ट व्यवहार में दान का पात्र सम्प्रदान नहीं होगा, उसमें चतुर्थी का अर्थ होने पर भी तृतीया होगी **जैसे- दास्या संयच्छते कामुकः** किन्तु शिष्ट व्यवहार में '**भार्यायै संयच्छति**' ही होगा।

॥इति तृतीया॥

॥चतुर्थी विभक्ति॥

सूत्रम्- कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानम् । 1/4/32

वृत्तिः- दानस्य कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानसंज्ञः स्यात् ॥

हिन्दी- दान कर्म के द्वारा जिसको अभिप्रेत किया जाता है उसकी सम्प्रदान संज्ञा होती है ।

सूत्रम्- चतुर्थी संप्रदाने 2/3/13

हिन्दी- सम्प्रदान में चतुर्थी होती है ।

यथा- विप्राय गां ददाति । अनभिहित इत्येव । दानीयो विप्रः।

वार्तिक- "क्रियया यमभिप्रैति सोऽपि संप्रदानम्" ।

हिन्दी- न केवल दान कर्म द्वारा अपितु किसी विशेष क्रिया द्वारा जो इष्ट हो वह भी सम्प्रदान कहलाएगा। **जैसे-** पत्ये शेते ।

वार्तिक- "यजेः कर्मणः करणसंज्ञा संप्रदानस्य च कर्मसंज्ञा" ।

हिन्दी- यज् धातु के कर्म की करण संज्ञा और संप्रदान की कर्म संज्ञा होती हैं। **जैसे-** पशुना रुद्रं यजते । पशुं रुद्राय ददातीत्यर्थः॥

सूत्रम्- रुच्यर्थानां प्रीयमाणः । 1/4/33

वृत्तिः- रुच्यर्थानां धातूनां प्रयोगे प्रीयमाणोऽर्थः सम्प्रदानं स्यात् ।

हिन्दी- रुच् तथा रुच् के अर्थ वाली धातुओं के योग में प्रसन्न होने वाला सम्प्रदान कहलाता है, उसमें चतुर्थी होती है। **जैसे- हरये रोचते भक्तिः** । अन्यकर्तृकोऽभिलाषो रुचिः । **हरिनिष्ठप्रीतेर्भक्तिः कर्त्री**। प्रीयमाणः किम् ? **देवदत्ताय रोचते मोदकः पथि** ॥

सूत्रम्- श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः । 1/4/34

वृत्तिः- एषां प्रयोगे बोधयितुमिष्टः संप्रदानं स्यात् ।

जैसे- गोपी स्मरात्कृष्णाय श्लाघते ह्नुते तिष्ठते शपते वा । **ज्ञीप्स्यमानः किम्** ? देवदत्ताय श्लाघते पथि

सूत्रम्- धारेरुत्तमर्णः ।1/4/34

वृत्तिः- धारयतेः प्रयोगे उत्तमर्ण उक्तसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- णिजन्त् धृ धारि- कर्जलेना, धातु के अर्थ- में धनक (कर्ज देने वाले की) सम्प्रदान संज्ञा होती है और उससे चतुर्थी होती है।

जैसे- भक्ताय धारयति मोक्षं हरिः । उत्तमर्णः किम् ? **देवदत्ताय शतं धारयति ग्रामे** ॥

सूत्रम्- स्पृहेरीप्सितः । 1/4/36

वृत्तिः- स्पृहयतेः प्रयोगे इष्टः संप्रदानं स्यात् ।

हिन्दी- स्पृह् (चाहना) धातु के योग में जिसे चाहा जाए वह सम्प्रदान संज्ञक होता है और उसमें चतुर्थी होती है।

जैसे- **पुष्पेभ्यः स्पृहयति** । ईप्सितः किम् ? पुष्पेभ्यो वने स्पृहयति । **ईप्सितमात्रे इयं संज्ञा । प्रकर्षविवक्षायां तु परत्वात्कर्मसंज्ञा** । पुष्पाणि स्पृहयति ।

सूत्रम्- क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः । 1/4/37

वृत्तिः- क्रुधाद्यर्थानां प्रयोगे यं प्रति कोपः स उक्तसंज्ञः स्यात्।

हिन्दी- क्रुध, द्रुह, ईर्ष्य्, असूय् धातुओं के योग में तथा इन धातुओं के समान अर्थ वाले धातुओं के योग में जिसमें क्रोध किया जाता है, उसमें चतुर्थी होती है। **यथा -**

क्रुध्यति- पिता पुत्राय क्रुध्यति।

द्रुह्यति- दुष्टः सज्जनाय द्रुह्यति।

ईर्ष्यति- सीता रावणाय ईर्ष्यति।

असूयति- खलः सज्जनाय असूयति।

यं प्रति कोपः किम् ? भार्यामीर्ष्यति **मैनामन्योऽद्राक्षीदिति** ।

क्रोधोऽमर्षः । द्रोहोऽपकारः । ईर्ष्याऽक्षमा । असूया गुणेषु दोषाविष्करणम् । द्रुहादयोऽपि कोपभावना एव गृह्यन्ते । अतो विशेषणं सामान्येन 'यं प्रति कोपः' इति ।

सूत्रम्- क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म । 1/4/38

वृत्तिः- सोपसर्गयोरनयोर्योगे यं प्रति कोपस्तत्कारकं कर्मसंज्ञं स्यात्।

हिन्दी- जब क्रुध तथा द्रुह् उपसर्ग सहित हो जिसके प्रति क्रोध या द्रोह किया जाता है, वह कर्म संज्ञक होता है। **जैसे- क्रूरमभिक्रुध्यति। अभिद्रुह्यति** ।

सूत्रम्- राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः । 1/4/39

वृत्तिः- एतयोः कारकं संप्रदानं स्यात्। यदीयो विविधः प्रश्नः क्रियते ।

हिन्दी- शुभाशुभ अर्थ में राध् और ईक्ष् धातुओं के प्रयोग में जिनके विषय में प्रश्न किया जाता है, उनकी सम्प्रदान संज्ञा होती है।

जैसे- कृष्णाय राध्यति ईक्षते वा । पृष्टो गर्गः शुभाशुभं पर्यालोचयतीत्यर्थः।

सूत्रम्- प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता । 1/4/40

वृत्तिः- आभ्यां परस्य श्रृणोतेर्योगे पूर्वस्य प्रवर्तनारूपव्यापारस्य कर्ता संप्रदानं स्यात् ।

हिन्दी- प्रति और आ पूर्वक श्रु धातु के साथ प्रतिज्ञा करने वाले कर्ता में चतुर्थी होती है। **जैसे- विप्राय गां प्रतिश्रृणोति आश्रृणोति वा । विप्रेण मह्यं देहीति प्रवर्तितः तं प्रतिजानीत इत्यर्थः।**

सूत्रम्- अनुप्रतिगृणश्च । 1/4/41

वृत्तिः- आभ्यां गृणातेः कारकं पूर्वव्यापारस्य कर्तृभूतमुक्तसंज्ञं स्यात् ।

जैसे- होत्रेऽनुगृणाति, प्रतिगृणाति। होता प्रथमं शंसति तमध्वर्युः प्रोत्साहयतीत्यर्थः ॥

सूत्रम्- परिक्रयणे संप्रदानमन्यतरस्याम् । 1/4/44

वृत्तिः- नियतकालं भृत्या स्वीकरणं परिक्रयणं तस्मिन् साधकतमं कारकं संप्रदानसंज्ञं वा स्यात् ।

हिन्दी- परिक्रयण में जो करण होता है वह विकल्प से सम्प्रदान होता है। **यथा- शतेन शताय वा परिक्रीतः** ॥

वार्तिक- "तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या"॥

हिन्दी- जिस प्रयोजन के लिए कोई कार्य किया जाता है, उस प्रयोजन में चतुर्थी होती है। **यथा-** मुक्तये हरिं भजति ॥

वार्तिक- "क्लृपि सम्पद्यमाने च"॥

हिन्दी- जब कोई काम किसी दूसरे फल की प्राप्ति के लिए किया जाता है तब उस फल में चतुर्थी होती है।

यथा- भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते सम्पद्यते जायते इत्यादि।

वार्तिक- "उत्पातेन ज्ञापिते च"॥

हिन्दी- जब कोई उत्पात किसी अशुभ घटना का सूचक हो तो उसमें चतुर्थी होती है। **यथा- वाताय कपिला विद्युत्**

वार्तिक- "हितयोगे च"।

हिन्दी- हित तथा सुख के साथ भी चतुर्थी होती है। **जैसे-** ब्राह्मणाय हितम्।

सूत्रम्- क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः । 2/3/14

वृत्तिः- क्रियार्था क्रिया उपपदं यस्य तस्य स्थानिनोऽप्रयुज्यमानस्य तुमुनः कर्मणि चतुर्थी स्यात् । **जैसे- फलेभ्यो याति** । फलान्याहर्तुं यातीत्यर्थः। **नमस्कुर्मो नृसिंहाय** । नृसिंहमनुकूलयितुमित्यर्थः । **स्वयंभुवे नमस्कृत्य** ।

सूत्रम्- तुमर्थाच्च भाववचनात् । 2/3/15

वृत्तिः- "भाववचनाश्च" इति सूत्रेण यो विहितस्तदन्ताच्चतुर्थी स्यात् ।

हिन्दी- तुमुन् प्रत्यय जोड़ने से किसी धातु में जो अर्थ निकलता है, उसको प्रकट करने के लिए उसी धातु से बनी हुई भाववाचक संज्ञा का प्रयोग करने पर उसमें चतुर्थी होती है। **जैसे- यागाय याति** । यष्टुं यातीत्यर्थः।

सूत्रम्- नमः स्वस्तिस्वाहास्वधाऽलंवषड्योगाच्च । 2/3/16

वृत्तिः- एभिर्योगे चतुर्थी स्यात् ।

हिन्दी- स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम्, वषट् शब्दों के योग में चतुर्थी हो जाती है। हरये नमः । प्रजाभ्यः स्वस्ति ।**अग्नये स्वाहा** । पितृभ्यः स्वधा ।

वार्तिक- उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिर्बलीयसी।

हिन्दी- पद सम्बन्धी विभक्ति से क्रिया सम्बन्धी विभक्ति बलवती होती है। इस नियम के अनुसार 'नमस्करोति इत्यादि क्रिया पदों के योग में चतुर्थी विभक्ति न होकर द्वितीया विभक्ति होती है लक्ष्मीं नमस्करोति। **जैसे- नमस्करोति देवान्** । अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम् । तेन दैत्येभ्यो हरिरलं प्रभुः समर्थः शक्त इत्यादि । प्रभ्वादियोगे षष्ठ्यपि साधुः । **"तस्मै प्रभवति..."**"**स एषां ग्रामणीः......** इति निर्देशात् । तेन प्रभुर्बुभूषुर्भुवनत्रयस्येति सिद्धम् । **वषडिन्द्राय** । **(चकारः पुनर्विधानार्थः)** । तेनाशीर्विवक्षायां परामपि चतुर्थी चाशिषीति षष्ठीं बाधित्वा चतुर्थ्येव भवति । **स्वस्ति गोभ्यो भूयात्** ॥

सूत्रम्- मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु । 2/3/17

वृत्तिः- प्राणिवर्जे मन्यतेः कर्मणि चतुर्थी वा स्यात्तिरस्कारे ।

हिन्दी- जब अनादर दिखाया जाए तब मन्(समझना) धातु के कर्म में यदि वह प्राणी न हो तो विकल्प से चतुर्थी भी होती है।

जैसे- "न त्वां तृणं मन्ये तृणाय वा'' । श्यना निर्देशात्तानादिकयोगे न । न त्वां तृणं मन्वेऽहम् । ।।

वार्तिक-"अप्राणिष्वित्यपनीयनौकाकान्नशुकशृगालवर्ज्येष्विति वाच्यम्" ।

तेन न त्वां नावमन्नं वा मन्येः.. **इत्यत्राप्राणित्वेऽपि चतुर्थी न** । न त्वां शुने मन्ये इत्यत्र प्राणित्वेऽपि भवत्येव ॥

सूत्रम्-गत्यर्थकर्मणि-द्वितीयाचतुर्थ्यौ-चेष्टायामनध्वनि। 2/3/12

वृत्तिः- अध्वभिन्ने गत्यर्थानां कर्मणि एते स्तश्चेष्टायाम् ।

यथा- ग्रामं ग्रामाय वा गच्छति । चेष्टायां किम् ? **मनसा हरिं व्रजति।** अनध्वनीति किम् ? **पन्थानं गच्छति** । गन्त्राधिष्ठितेऽध्वन्येवायं निषेधः। यदा तूत्पथात्पन्था एवाक्रमितुमिष्यते तदा चतुर्थी भवत्येव । उत्पथेन पथे गच्छति ॥

॥इति चतुर्थी॥

॥पञ्चमी विभक्ति॥

सूत्रम्- ध्रुवमपायेऽपादानम् । 1/4/24

वृत्तिः- अपायो विश्लेषस्तस्मिन्साध्ये ध्रुवमवधिभूतं कारकमपादानं स्यात्।

सूत्रम्- अपादाने पञ्चमी । 2/3/28

हिन्दी- अपादान में पञ्चमी विभक्ति होती है।

उदाहरण यथा- ग्रामादायाति । धावतोऽश्वात्पतति । **कारकं किम् ?** वृक्षस्य पर्णं पतति ।

वार्तिक- "जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसङ्ख्यानम्''।

हिन्दी- जुगुप्सा (घृणा), विराम (हटना), प्रमाद (भूल, असावधानी) अथवा इनके समानार्थक शब्दों के साथ पञ्चमी होती है।

उदाहरण यथा- जुगुप्सा- पापाज्जुगुप्सते । **विराम-** पापात् विरमति। **प्रमाद** धर्मात्प्रमाद्यति।

सूत्रम्- भीत्रार्थानां भयहेतुः । 1/4/25

वृत्तिः- भयार्थानां त्राणार्थानां च प्रयोगे हेतुरपादानं स्यात् ।

हिन्दी- भय और रक्षा के अर्थ वाली धातुओं के साथ भय के कारण में पंचमी होती है। **उदाहरण यथा-** चोराद् बिभेति । चोरात्त्रायते। **भयहेतुः किम् ? अरण्येबिभेति त्रायते वा।**

सूत्रम्- पराजेरसोढः । 1/4/26

वृत्तिः- पराजेः प्रयोगेऽसह्योऽर्थोऽपादानं स्यात् ।

उदाहरण यथा- अध्ययनात्पराजयते । ग्लायतीत्यर्थः । **सोढः किम् ?** शत्रून्पराजयते । अभिभवतीत्यर्थः ।

हिन्दी- परा उपसर्ग पूर्वक जिस धातु के प्रयोग में जो असह्य होता है उस की अपादान संज्ञा होती है। **जैसे- अध्ययनात् पराजयते** (वह अध्ययन से भागता है)। उसके लिए अध्ययन असह्य या कष्टप्रद है। परन्तु सहनीय के **अर्थ-** में द्वितीया होती हैं। **यथा- शत्रून्पराजयते।**

सूत्रम्- वारणार्थानामीप्सितः । 1/4/27

वृत्तिः- प्रवृत्तिविघातो वारणम् । वारणार्थानां धातूनां प्रयोगे ईप्सितोऽपादानं स्यात् ।

हिन्दी- जिस वस्तु से किसी को हटाया जाए उसमें पंचमी होती है।

उदाहरण यथा- यवेभ्यो गां वारयति । **ईप्सितः किम् ?** यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे ।

सूत्रम्- अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति । 1/4/28

वृत्तिः- व्यवधाने सति यत्कर्तृकस्यात्मनो दर्शनस्य अभावमिच्छति तदपादानं स्यात् ।

हिन्दी - जब कोई अपने को छिपाता है तब जिससे छिपाता है, वह अपादान होता है। **उदाहरण यथा-** मातुर्निलीयते कृष्णः । **अन्तर्धौ किम् ?** चौरान्न दिदृक्षते । **इच्छतिग्रहणं किम् ?** अदर्शनेच्छायां सत्यां सत्यपि दर्शने यथा स्यात् ।

सूत्रम्- आख्यातोपयोगे । 1/4/29

वृत्तिः- नियमपूर्वकविद्यास्वीकारे वक्ता प्राक्संज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- जिस से विद्या नियम पूर्वक पढ़ी जाए या मालूम की जाए वह गुरु या अध्यापक आदि अपादान होता है। **उदाहरण यथा-** उपाध्यायादधीते । **उपयोगे किम् ?** नटस्य गाथां श्रृणोति ।

सूत्रम्- जनिकर्तुः प्रकृतिः । 1/4/30

वृत्तिः- जायमानस्य हेतुरपादानं स्यात् ।

हिन्दी- जन् धातु के कर्ता का मूल कारण अपादान होता है।

उदाहरण यथा- ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते (ब्रह्मा जी से समस्त प्रजा उत्पन्न होती है) ।

सूत्रम्- भुवः प्रभवः । 1/4/31

वृत्तिः- भवनं भूः । भूकर्तुः प्रभवस्तथा ।

हिन्दी- प्रभव का अर्थ है उत्पत्ति स्थान। उत्पन्न होने वाले का प्रभव अपादान होता है। **उदाहरण यथा-** हिमवतो गङ्गा प्रभवति । तत्र प्रकाशते इत्यर्थः ।

वार्तिक- "ल्यब्लोपे कर्मण्यधिकरणे च" ॥

उदाहरण यथा- प्रासादात्प्रेक्षते । आसनात्प्रेक्षते । प्रासादमारुह्य आसने उपविश्य प्रेक्षत इत्यर्थः । श्वशुराज्जिहेति । श्वशुरं वीक्ष्येत्यर्थः । **वार्तिक- गम्यमानापि क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम् ।** कस्मात्त्वं नद्याः ।

वार्तिक- "यतश्चाध्वकालनिमानं तत्र पञ्चमी" ॥

वार्तिक- "तद्युक्तादध्वनः प्रथमासप्तम्यौ" ॥

वार्तिक- "कालात्सप्तमी च वक्तव्या" ॥

उदाहरण यथा- वनाद् ग्रामो योजनं योजने वा । कार्तिक्या आग्रहायणी मासे॥।

सूत्रम्-अन्यारादितरर्ते दिक्शब्दाञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते । 2/3/29

वृत्तिः- एतैर्योगे पञ्चमी स्यात् । **अन्य-** इत्यर्थग्रहणम् । **इतरग्रहणं -प्रपञ्चार्थम् ।**

हिन्दी- अन्य, इतर, आरात्, ऋते तथा दिग्वाचक प्रत्यक्, उदीच्, प्रभृति शब्दों तथा दक्षिणा, उत्तरा आदि शब्दों तथा दक्षिणाहि, उत्तराहि प्रभृति शब्दों के योग में पञ्चमी होती है।

उदाहरण यथा- अन्यो भिन्न इतरो वा कृष्णात् । आराद्वनात् । ऋते कृष्णात् । पूर्वो ग्रामात् । दिशि दृष्टः शब्दो दिक्शब्दः । तेन सम्प्रति देशकालवृत्तिना योगेऽपि भवति । चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः ।

सूत्रम्- अपपरी वर्जने । 1/4/88

वृत्तिः- एतौ वर्जने कर्मप्रवचनीयौ स्तः ।

हिन्दी- अप और परी की वर्जनार्थ में कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है।

सूत्रम्- आङ् मर्यादावचने । 1/4/89

वृत्तिः- आङ् मर्यादायामुक्तसंज्ञः स्यात् । वचनग्रहणाद् अभिविधावपि।

हिन्दी- आङ् की मर्यादा अर्थ में और वचन के ग्रहण अभिविधि में भी कर्मप्रवचनीय संज्ञ होती है।

सूत्रम्- पञ्चम्यपाङ्परिभिः । 2/3/10

वृत्तिः- एतैः कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी स्यात् ।

हिन्दी- इस सूत्र से कर्मप्रवचनीय के योग में पञ्चमी विभक्ति होती है।

उदाहरण यथा- अप हरेः, परि हरेः संसारः । <u>परिरत्र वर्जने</u> । लक्षणादौ तु हरिं परि । आमुक्तेः संसारः । आसकलात् ब्रह्म ॥

सूत्रम्- प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः । 1/4/92

वृत्तिः- एतयोरर्थयोः प्रतिरुक्तसंज्ञः स्यात् ।

हिन्दी- प्रति की प्रतिनिधि तथा प्रतिदान अर्थ में कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है।

सूत्रम्- प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात् । 2/3/11

वृत्तिः- अत्र कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी स्यात् ।

हिन्दी- प्रतिनिधि तथा प्रतिदान (विनिमय) के अर्थ में प्रति के योग में पञ्चमी होती है। **उदाहरण यथा-** प्रद्युम्नः कृष्णात्प्रति । तिलेभ्यः प्रतियच्छति माषान् ॥

सूत्रम्- अकर्तर्यृणे पञ्चमी । 2/3/24

वृत्तिः- कर्तृवर्जितं यद्दणं हेतुभूतं ततः पञ्चमी स्यात्।

यथा- शताद्बद्धः । **अकर्तरि किम् ?** <u>शतेन बन्धितः</u> ॥

सूत्रम्- विभाषा गुणेऽस्त्रियाम् । 2/3/25

वृत्तिः- गुणे हेतावस्त्रीलिङ्गे पञ्चमी वा स्यात् ।

हिन्दी- कारण या हेतु को प्रकट करने वाले गुणवाचक अस्त्रीलिङ्ग शब्द तृतीया या पञ्चमी में रखे जाते हैं। **उदाहरण यथा-** जाड्याज्जाड्येन वा बद्धः । **गुणे किम् ?** धनेन कुलम् । **अस्त्रियां किम् ?** बुद्ध्या मुक्तः। **विभाषेति योगविभागादगुणे स्त्रियां च क्वचित् ।** धूमादग्निमान् । नास्ति घटोऽनुपलब्धेः।

सूत्रम्- पृथग्विनानानाभिस्तृतीऽयान्यतरस्याम् । 2/3/32

वृत्तिः- एभिर्योगे तृतीया स्यात्पञ्चमीद्वितीये च ।

हिन्दी- पृथग्विनानाना आदि अर्थो में **तृतीया, पञ्चमी, द्वितीया** विभक्ति होती हैं। **(अन्यतरस्यां ग्रहणं समुच्चयार्थम् ।)**

उदाहरण यथा- पृथग् रामेण रामात् रामं वा । एवं विना नाना ॥

सूत्रम्- करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्य असत्त्ववचनस्य । 2/3/33

वृत्तिः- एभ्योऽद्रव्यवचनेभ्यः करणे तृतीयापञ्चम्यौ स्तः।

उदाहरण यथा- स्तोकेन स्तोकाद्वा मुक्तः । द्रव्ये तु **स्तोकेन विषेण हतः**॥

सूत्रम्- दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च । 2/3/35

वृत्तिः- एभ्यो द्वितीया स्याच्चात्पञ्चमीतृतीये । **प्रातिपदिकार्थमात्रे विधिरयम्।**

हिन्दी- दूर अन्तिक आदि के योग में द्वितीया पञ्चमी और तृतीया विभक्ति होती हैं। उदाहरण यथा- ग्रामस्य दूरं दूरात् दूरेण वा । अन्तिकम् अन्तिकात् अन्तिकेन वा । **असत्त्ववचनस्येत्यनुवृत्तेर्नेह** । दूरः पन्थाः ।

॥इति पञ्चमी ॥

॥षष्ठी विभक्ति॥

सूत्रम्- षष्ठी शेषे । 2/3/50

वृत्तिः- कारकप्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिसम्बन्धः शेषस्तत्र षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- अर्थात् कारक और प्रातिपदिकार्थ से भिन्न स्वस्वामिभाव आदि सम्बन्ध 'शेष' है, उसमें षष्ठी आती है। सम्बन्ध का बोध कराने के लिए षष्ठी विभक्ति होती है। **उदाहरण यथा-** राज्ञः पुरुषः ।

सूत्रम्- कर्मादीनामपि सम्बन्धमात्रविवक्षायां षष्ठ्येव ।

हिन्दी- कर्म आदि कारकों की भी सम्बन्ध मात्र की विवक्षा करने में षष्ठी विभक्ति होती है। **उदाहरण यथा-**

सतां गतम् (सत्पुरुषसम्बन्धी गमन)।

सर्पिषो जानीते (घी के द्वारा प्रवृत्त होता है)।

मातुः स्मरति (माता का स्मरण करता है)

फलानां तृप्तः (फलों से तृप्त)।

भजे शम्भोश्चरणयोः (भगवान् शिव के चरणों की सेवा करता हूँ)।

एघोदकस्योपस्कुरुते (ईंधन जल में गुण का आधान करता है)।

सूत्रम्- षष्ठी हेतुप्रयोगे । 2/3/26

वृत्तिः- हेतुशब्दप्रयोगे हेतौ द्योत्ये षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- हेतु (प्रयोजन) शब्द के साथ षष्ठी होती है। **उदाहरण यथा-** अन्नस्य हेतोर्वसति ।

सूत्रम्- सर्वनाम्नस्तृतीया च । 2/3/27

वृत्तिः-सर्वनाम्नो हेतुशब्दस्य च प्रयोगे हेतौ द्योत्ये तृतीया स्यात् षष्ठी च।

हिन्दी- यदि हेतु शब्द के साथ सर्वनाम का प्रयोग हो तो सर्वनाम और हेतु शब्द दोनों में **तृतीया, पञ्चमी या षष्ठी** होती है। **उदाहरण यथा- केन हेतुना अत्र वसति, कस्मात् हेतोः अत्र वसति अथवा कस्य हेतोः अत्र वसति।**

वार्तिक- "निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम्"

हिन्दी- निमित्त अथवा उसके अर्थ वाचक शब्दों (कारण, प्रयोजन, हेतु आदि) के प्रयोग होने पर सर्वनाम एवं निमित्त वाचक शब्दों में प्रायः समस्त विभक्तियाँ होती हैं। **उदाहरण यथा-** किं निमित्तं वसति । केन निमित्तेन । कस्मै निमित्तायेत्यादि । एवं किं कारणं को हेतुः किं प्रयोजनम् इत्यादि । **प्रायग्रहणादसर्वनाम्नः प्रथमाद्वितीये न स्तः ।** ज्ञानेन निमित्तेन हरिः सेव्यः । ज्ञानाय निमित्तायेत्यादि ॥

सूत्रम्- षष्ठ्यतसर्थप्रत्ययेन । 2/3/30

वृत्तिः- एतद्योगे षष्ठी स्यात्॥

हिन्दी- अतसच् (तस्) प्रत्ययान्त शब्दों (उत्तरतः, दक्षिणतः आदि) तथा इस प्रत्यय का **अर्थ-** रखने वाले प्रत्ययान्त (उपरि, अधः, अग्रे, आदौ, पुरः आदि) की जिससे समीपता पाई जाती है, उसमें षष्ठी होती है। **उदाहरण यथा- ग्रामस्य दक्षिणतः । पुरः पुरस्तात् । उपरि उपरिष्टात् ।**

सूत्रम्- एनपा द्वितीया । 2/3/31

वृत्तिः- एनबन्तेन योगे द्वितीया स्यात् । एनपेति योगविभागात्षष्ठ्यपि।

उदाहरण यथा- दक्षिणेन ग्रामं ग्रामस्य वा । एवमुत्तरेण॥

सूत्रम्- दूरान्तिकार्थैः षष्ठ्यन्यतरस्याम् । 2/3/34

वृत्तिः- एतैर्योगे षष्ठी स्यात् पञ्चमी च ।

हिन्दी- दूर, अन्तिक (समीप) तथा इनके अर्थ वाची शब्दों का प्रयोग होने पर षष्ठी तथा पञ्चमी होती है। **उदाहरण यथा- दूरं निकटं ग्रामस्य ग्रामाद्वा ॥**

सूत्रम्- ज्ञोऽविदर्थस्य करणे । 2/3/51

वृत्तिः- जानातेरज्ञानार्थस्य करणे शेषत्वेन विवक्षिते षष्ठी स्यात् ।

उदाहरण यथा- सर्पिषो ज्ञानम् ॥

सूत्रम्- अधीगर्थदयेशां कर्मणि । 2/3/52

वृत्तिः- एषां कर्मणि शेषे षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- अधि पूर्वक इ धातु (स्मरणकरना), दय् (दया करना), ईश् (समर्थहोना) तथा इन धातुओं की अर्थ वाची धातुओं के कर्म में षष्ठी होती है। **यथा- मातुः स्मरणम् । सर्पिषो दयनम्, ईशनं वा ॥**

सूत्रम्- कृञः प्रतियत्ने । 2/3/53

वृत्तिः- कृञः कर्मणि शेषे षष्ठी स्यात् गुणाधाने ।

यथा- एधो दकस्योपस्करणम् ॥

सूत्रम्- रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः । 2/3/54

वृत्तिः- भावाकतृकाणां ज्वरिवर्जितानां रुजार्थानां कर्मणि शेषे षष्ठी स्यात्।

यथा- चौरस्य रोगस्य रुजा ।

सूत्रम्- वार्तिक- "अज्वरिसंताप्योरिति वाच्यम्" ॥

यथा- रोगस्य चौरज्वरः चौरसन्तापो वा । रोगकर्तृकं चौरसंवन्धि ज्वरादिकमित्यर्थः ॥

सूत्रम्- आशिषि नाथः । 2/3/55

वृत्तिः- आशीरर्थस्य नाथतेः शेषे कर्मणि षष्ठी स्यात् । **उदाहरण यथा- सर्पिषो नाथनम्** । आशिषीति किम् ? माणवकनाथनम् । तत्संबन्धिनी याञ्चेत्यर्थः ॥

सूत्रम्- जासिनिप्रहणनाटक्राथपिषां हिंसायाम् । 2/3/56

वृत्तिः- हिंसार्थनामेषां शेषे कर्मणि षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- हिंसार्थक जस्, नि तथा प्र उपसर्ग पूर्वक हन्, क्रथ्, नट् तथा पिष् धातुओं के कर्म में षष्ठी होती है।

यथा- चौरस्योञ्जासनम् । निप्रौ संहतौ विपर्यस्तौ व्यस्तौ वा । **चौरस्य निप्रहणनम् । प्रणिहननम् । निहननम् । प्रहणनं वा** । नट अवस्कन्दने चुरादिः । **चौरस्योन्नाटनम् । चौरस्यक्राथनम् । वृषलस्य पेषणम्** । हिंसायां किम् ? धानापेषणम् ॥

सूत्रम्- व्यवहृपणोः समर्थयोः। 2/3/57

वृत्तिः- शेषे कर्मणि षष्ठी स्यात् । द्यूते क्रयविक्रयव्यवहारे चानयोस्तुल्यार्थता ।

हिन्दी- सौदे का लेनदेन करना या जुए में लगा देना इन अर्थों की वाचक व्यवह और पण् धातुओं के योग में इनके कर्म में षष्ठी होती है। **यथा- शतस्य व्यवहरणं पणनं वा** । समर्थयोः किम् ? शलाकाव्यवहारः । गणनेत्यर्थः । ब्राह्मणपणनं स्तुतिरित्यर्थः ॥

सूत्रम्- दिवस्तदर्थस्य । 2/3/58

वृत्तिः- द्यूतार्थस्य क्रयविक्रयरूपव्यवहारार्थस्य च दिवः कर्मणि षष्ठी स्यात्।

हिन्दी- दिव् धातु का जब उपर्युक्त अर्थ में प्रयोग होता है तब उसके योग में भी कर्म में षष्ठी होती है। **यथा- शतस्य दीव्यति** । तदर्थस्य किम् ? **ब्राह्मणं दीव्यति । स्तौतीत्यर्थः ॥**

सूत्रम्- विभाषोपसर्गे। 2/3/59

पूर्वयोगापवादः। **यथा-** शतस्य शतं वा प्रतिदीव्यति ।

सूत्रम्- प्रेष्यब्रुवोर्हविषो देवतासंप्रदाने । 2/3/61

वृत्तिः- देवतासंप्रदानेऽर्थे वर्तमानयोः प्रेष्यब्रुवोः कर्मणो हविर्विशेषस्य वाचकाच्छब्दात्षष्ठी स्यात् । **यथा- अग्नये छागस्य हविषो वपाया मेदसः प्रेष्य अनुब्रूहि वा ॥**

सूत्रम्- कृत्वोर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे । 2/3/64

वृत्तिः- कृत्वोर्थानां प्रयोगे कालवाचिन्यधिकरणे शेषे षष्ठी स्यात् । उदाहरण यथा- **पञ्चकृत्वोऽह्नो भोजनम् । द्विरह्नो भोजनम्** । शेषे किम् ? द्विरहन्यध्ययनम् ॥

सूत्रम्- कर्तृकर्मणोः कृति । 2/3/65

वृत्तिः- कृद्योगे कर्तरि कर्मणि च षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- कृदन्त शब्दों के कर्ता और कर्म में षष्ठी होती है। कृदन्त शब्द अर्थात् जिनके अन्त में कृत्प्रत्यय यथा तृच् (तृ), अच् (अ), घञ् (अ), ल्युट् (अन), क्तिन (ति), ण्वुल् (अक) आदि रहते हैं। **यथा- कृष्णस्य कृतिः । जगतः कर्ता कृष्णः ।**

वार्तिक- "गुणकर्मणि वेष्यते"॥

यथा- नेताऽश्वस्य स्रुघ्नस्य स्रुघ्नं वा । कृति किम् ? तद्धिते माभूत् । कृतपूर्वी कटम् ॥

सूत्रम्- उभयप्राप्तौ कर्मणि । 2/3/66

वृत्तिः- उभयोः प्राप्तिर्यस्मिन्कृति तत्र कर्मण्येव षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- यथा- आश्चर्यो गवां दोहोऽगोपेन ।

वार्तिक- "स्त्रीप्रत्यययोरकाकारयोर्नायं नियमः"॥

यथा- भेदिका बिभित्सा वा रुद्रस्य जगतः ॥

वार्तिक- "शेषे विभाषा"॥

हिन्दी- स्त्रीप्रत्यय इत्येके ।

यथा- विचित्रा जगतः कृतिर्हरेर्हरिणा वा । केचिदविशेषेण विभाषामिच्छन्ति । **शब्दानामनुशासनमाचार्येणाचार्यस्य वा ॥**

सूत्रम्- क्तस्य च वर्तमाने । 2/3/67

वृत्तिः- वर्तमानार्थस्य क्तस्य योगे षष्ठी स्यात् ।

हिन्दी- जब क्तप्रत्ययान्त शब्द वर्तमान के अर्थ में प्रयुक्त होता है तब षष्ठी होती है। **"न लोक..."(सू.627)** इति निषेधस्यापवादः। उदाहरण यथा- **राज्ञां मतो बुद्धः पूजितो वा ॥**

सूत्रम्- अधिकरणवाचिनश्च । 2/3/68

वृत्तिः- क्तस्य योगे षष्ठी स्यात्।

यथा- इदमेषामासितं शयितं गतं भुक्तं वा ॥

सूत्रम्- न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृनाम् । 2/3/69

वृत्तिः- एषां प्रयोगे षष्ठी न स्यात्।

यथा- लादेशाः कुर्वन् कुर्वाणो वा सृष्टिं हरिः। **उः-** हरिं दिदृक्षुः। अलंकरिष्णुर्वा। **उक्-** दैत्यान् घातुको हरिः ॥

वार्तिक- "कमेरनिषेधः" ॥ लक्ष्म्याः कामुको हरिः। **अव्ययम्-** जगत् सृष्ट्वा। सुखं कर्तुम्। **निष्ठा-** विष्णुना हता दैत्याः। दैत्यान् हतवान् विष्णुः। **खलर्थः-** ईषत्करः प्रपञ्चो हरिणा। **तृन्निति** प्रत्याहारः शतृशानचाविति तृशब्दादारभ्यातृनो नकारात्। **शानन्-** सोमं पवमानः। **चानश्-** आत्मानं मण्डयमानः। **शतृ** वेदमधीयन्। **तृन्** कर्ता लोकान्।

वार्तिक- "द्विषः शतुर्वा" ॥

यथा- मुरस्य मुरं वा द्विषन्। सर्वोऽयं कारकस्य षष्ठ्याः च प्रतिषेधः। शेषे षष्ठी तु स्यादेव। **यथा- ब्राह्मणस्य कुर्वन्। नरकस्य जिष्णुः ॥**

सूत्रम्- अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः । 2/3/70

वृत्तिः- भविष्यत्यकस्य भविष्यदाधमर्ण्यार्थेनश्च योगे षष्ठी न स्यात्।

यथा- सतः पावकोऽवतरति। **व्रजं गामी। शतं दायी ॥**

कृत्यानां कर्तरि वा । 2/3/71

वृत्तिः- षष्ठी वा स्यात्।

हिन्दी- कृत्य प्रत्ययान्त शब्दों के योग में कर्ता में तृतीया या षष्ठी होती है। **यथा- मया मम वा सेव्यो हरिः।** कर्तरीति किम्? **गेयो माणवकः साम्नाम्। "भव्यगेय..."(सू.2894)** इति कर्तरि यद्विधानादनभिहितं कर्म। अत्र योगो विभज्यते ॥ **"कृत्यानाम्..."** ॥ उभयप्राप्ताविति नेति चानुवर्तते। **तेन नेतव्या व्रजं गावः कृष्णेन।** ततः ॥ कर्तरि वा ॥ उक्तोऽर्थः॥

सूत्रम्- तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां तृतीयाऽन्यतरस्याम् । 2/3/72

वृत्तिः- तुल्यार्थैर्योगे तृतीया वा स्यात्पक्षे षष्ठी।

हिन्दी- 'तुला' तथा 'उपमा' इनदो शब्दों को छोड़कर शेष सब तुल्य (समान बराबर) का अर्थ बताने वाले शब्दों के साथ विकल्प तृतीया अथवा षष्ठी होती है।

यथा- तुल्यः सदृशः समो वा कृष्णस्य कृष्णेन वा। अतुलोपमाभ्यां किम्? **तुला उपमा वा कृष्णस्य नास्ति।**

सूत्रम्-चतुर्थी-चाशिष्यायुष्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः।2/3/73

वृत्तिः- एतदर्थैर्योगे चतुर्थी वा स्यात्पक्षे षष्ठी आशिषि।

हिन्दी- आशीर्वाद देने की इच्छा होने पर आयुष्य, मद्र, भद्र, कुशल, सुख, अर्थ, हित तथा इनके पर्यायवाची शब्दों के साथ चतुर्थी या षष्ठी होती है। **यथा- आयुष्यं चिरञ्जीवितं कृष्णाय कृष्णस्य वा भूयात्।** एवं मद्रं भद्रं कुशलं निरामयं सुखं शम् अर्थः प्रयोजनं हितं पथ्यं वा भूयात्। आशिषि किम्? **देवदत्तस्य आयुष्यमस्ति।** व्याख्यानात्सर्वत्रार्थग्रहणम्। मद्रभद्रयोः पर्यायत्वादन्यतरो न पठनीयः।

॥इति षष्ठी ॥

॥सप्तमी विभक्ति॥

सूत्रम्- आधारोऽधिकरणम् । 1/4/45

वृत्तिः- कर्तृकर्मद्वारा तन्निष्ठक्रियाया आधारः कारकम् अधिकरणसंज्ञः स्यात्।

हिन्दी- कर्तृ कर्म से सम्बन्धित क्रिया के आधार की अधिकरणसंज्ञा होती है।

सूत्रम्- सप्तम्यधिकरणे च । 2/3/36

वृत्तिः- अधिकरणे सप्तमी स्यात्। चकाराद्दूरान्तिकार्थेभ्यः।

हिन्दी- अधिकरण (कारक) में सप्तमी विभक्ति होती है। सूत्र में चकार के ग्रहण से दूरान्तिकार्थों में भी सप्तमी विभक्ति होती है।

आधारस्त्रिधा- औपश्लेषिको वैषयिकोऽभिव्यापकः च।

औपश्लेषिकः- कटे आस्ते। स्थाल्यां पचति।

वैषयिकः- मोक्षे इच्छास्ति।

अभिव्यापकः- सर्वस्मिन्नात्मास्ति।

वनस्य दूरे अन्तिके वा। "दूरान्तिकार्थेभ्यः (सू.605) इति विभक्तित्रयेण सह चतस्रोऽत्र विभक्तयः फलिताः।

वार्तिक- "क्तस्येन्विषयस्य कर्मण्युपसङ्ख्यानम्"॥

हिन्दी- क्तप्रत्ययान्त शब्द में इनि प्रत्यय लगाकर बने हुए शब्द के योग में उसके कर्म में सप्तमी होती है। **यथा- अधीती व्याकरणे।** अधीतमनेनेति विग्रहे **"इष्टादिभ्यश्च"(सू.1888)** इति कर्तरीनिः ॥

वार्तिक- "साध्वसाधुप्रयोगे च" ॥

यथा- साधुः कृष्णो मातरि। असाधुर्मातुले ॥

वार्तिक- "निमित्तात्कर्मयोगे" ॥

निमित्तमिह- **फलम्। योगः-** संयोगसमवायात्मकः।

हिन्दी- जिस फल की प्राप्ति के लिए कोई क्रिया की जाती है, वह फल यदि उस क्रिया के कर्म से युक्त हो तो उसमें सप्तमी होती है।

"चर्मणि द्वीपिनं हन्ति दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम्।
केशेषु चमरीं हन्ति सीम्नि पुष्कलको हतः" ॥1 ॥

(इति भाष्यम्) । हेतौ तृतीयाऽत्र प्राप्ता तन्निवारणार्थं इदम् । **सीमाऽण्डकोशः । पुष्कलको गन्धमृगः । योगविशेषे किम् ? वेतनेन धान्यं लुनाति॥**

सूत्रम्- यस्य च भावेन भावलक्षणम् । 2/3/37

वृत्तिः- यस्य क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते ततः सप्तमी स्यात् ।

हिन्दी- जब किसी कार्य के हो जाने पर दूसरे कार्य का होना प्रतीत होता है तब जो कार्य हो चुकता है उसमें सप्तमी होती है ।

यथा- गोषु दुह्यमानासु गतः ॥ ।

वार्तिक- "अर्हाणां कर्तृत्वेऽनर्हाणामकर्तृत्वे तद्वैपरीत्ये च"॥

यथा- 1. सत्सु तरत्सु असन्त आसते ।

2. असत्सु तिष्ठत्सु सन्तस्तरन्ति ।

3. सत्सु तिष्ठत्सु असन्तस्तरन्ति ।

4. असत्सु तरत्सु सन्तस्तिष्ठन्ति ।

सूत्रम्- षष्ठी चानादरे । 2/3/38

वृत्तिः- अनादराधिक्ये भावलक्षणे षष्ठीसप्तम्यौ स्तः ।

हिन्दी- जिसका अनादर करके कोई कार्य किया जाता है उसमें षष्ठी या सप्तमी होती है । **यथा- रुदति रुदतो वा प्राव्राजीत् ।** रुदन्तं पुत्रादिकमनादृत्य संन्यस्तवानित्यर्थः ॥

सूत्रम्- स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च । 2/3/39

वृत्तिः- एतैः सप्तभिर्योगे **षष्ठीसप्तम्यौ** स्तः । षष्ठ्यामेव प्राप्तायां पाक्षिकसप्तम्यर्थं वचनम् । **यथा- गवां गोषु वा स्वामी । गवां गोषु वा प्रसूतः** । गा एवानुभवितुं जात इत्यर्थः ।

सूत्रम्- आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम् । 2/3/40

वृत्तिः- आभ्यां योगे षष्ठीसप्तम्यौ स्तस्तात्पर्येऽर्थे । आयुक्तो व्यापारितः । **यथा- आयुक्तः कुशलो वा हरिपूजने हरिपूजनस्य वा ।** आसेवायां किम् ? **आयुक्तो गौः शकटे । ईषद्युक्त इत्यर्थः ।**

यतश्च निर्धारणम् । 2/3/41

वृत्तिः- जातिगुणक्रियासंज्ञाभिः समुदायादेकदेशस्य पृथक्करणं निर्धारणं यतस्ततः **षष्ठीसप्तम्यौ** स्तः ।

हिन्दी- जब किसी वस्तु की अपने समुदाय से किसी विशेषण द्वारा कोई विशिष्टता दिखलाई जाती है तब समुदाय वाचक शब्द षष्ठी अथवा सप्तमी में रखा जाता है।

यथा-

1. **जाति** नृणां नृपु वा ब्राह्मणः श्रेष्ठः ।
2. **गुण** गवां गोषु वा कृष्णा बहुक्षीरा ।
3. **क्रिया** गच्छतां गच्छत्सु वा धावन् शीघ्रः।
4. **संज्ञा** छात्राणां छात्रेषु वा मैत्रः पटुः ॥

सूत्रम्- पञ्चमी विभक्ते । 2/3/42

वृत्तिः- विभागो विभक्तम् । निर्धार्यमाणस्य यत्र भेद एव तत्र पञ्चमी स्यात्।

यथा- माथुराः पाटलिपुत्रकेभ्य आढ्यतराः॥

सूत्रम्- साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः । 2/3/43

वृत्तिः- आभ्यां योगे सप्तमी स्यादर्चायाम् न तु प्रतेः प्रयोगे ।

हिन्दी- यथा- मातरि साधुर्निपुणो वा । अर्चायां किम् ? निपुणो राज्ञो भृत्यः । इह तत्त्वकथने तात्पर्यम् ।

वार्तिक- "अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम्" ॥

यथा- साधुर्निपुणो वा मातरं प्रति पर्यनु वा ॥

सूत्रम्- प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च । 2/3/44

वृत्तिः- आभ्यां योगे तृतीया स्याच्चात्सप्तमी ।

यथा- प्रसित उत्सुको वा हरिणा हरौ वा ॥

सूत्रम्- नक्षत्रे च लुपि । 2/3/45

वृत्तिः- नक्षत्रे प्रकृत्यर्थे यो लुप्संज्ञया लुप्यमानस्य प्रत्ययस्य अर्थः तत्र वर्तमानात्तृतीयासप्तम्यौ स्तोऽधिकरणे । **यथा- मूलेनावाहयेद्देवीं श्रवणेन विसर्जयेत्** ।मूले श्रवणे इति वा । **लुपि किम् ? पुष्ये शनिः ।**

सूत्रम्- सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये । 2/3/7

वृत्तिः- शक्तिद्वयमध्ये यौ कालाध्वनौ ताभ्यामेते स्तः ।

हिन्दी- समय और मार्ग का अन्तर बतलाने वाले शब्दों में पञ्चमी और सप्तमी होती है । **यथा- अद्य भुक्त्वाऽयं द्व्यहे द्व्यहाद्वा भोक्ता ।** कर्तृशक्त्योर्मध्येऽयं कालः । **इहस्थोऽयं क्रोशे क्रोशाद्वा लक्ष्यं विध्येत् ।** कर्तृकर्मशक्त्योर्मध्येऽयं देशः । अधिकशब्देन योगे सप्तमीपञ्चम्याविष्येते **"तदस्मिन्नधिकम्..."(सू.1846)** इति **"यस्मादधिकम्..."(सू.645)** इति च सूत्रनिर्देशात् । **उदाहरण यथा- लोके लोकाद्वा अधिको हरिः।**

सूत्रम्- अधिरीश्वरे । 1/4/97

वृत्तिः- स्वस्वामिभावसम्बन्धेऽधिः कर्मप्रवचनीयसंज्ञः स्यात् ॥

सूत्रम्- यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी । 2/3/9

वृत्तिः- अत्र कर्मप्रवचनीययुक्ते सप्तमी स्यात् ।

यथा- उप परार्धे हरेर्गुणाः । परार्धादधिका इत्यर्थः । ऐश्वर्ये तु स्वस्वामिभ्यां पर्यायेण सप्तमी । **उदाहरण यथा अधि भुवि रामः । अधि रामे भूः । "सप्तमी शौण्डैः"(सू.717)** इति समासपक्षे तु रामाधीना । **"अषडक्ष..."(सू. 2079)** इत्यादिना खः ॥

सूत्रम्- विभाषा कृञि । 1/4/98

वृत्तिः- अधिः करोतौ प्राक्संज्ञो वा स्यादीश्वरेऽर्थे । **यथा- यदत्र मामधिकरिष्यति** । विनियोक्ष्यत इत्यर्थः । इह विनियोक्तुरीश्वरत्वं गम्यते ।अगतित्वात् "तिङि चोदात्तवति...(सू.3978) इति निघातो न ॥

॥इति सप्तमी ॥

॥इति कारकप्रकरणम्॥

परस्मैपद एवं आत्मनेपद -

॥परस्मैपद॥

सूत्र	उदाहरण
1. अनुपराभ्यां कृञः	अनुकरोति । पराकरोति
2. अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः	अभिक्षिपति
3. प्राद्वहः	प्रवहति
4. परेर्मृषः	परिमृष्यति ।
5. व्याङ्परिभ्यो रमः	विरमति ॥
6. उपाच्च	उपरमति । उपरमयती
7. विभाषाऽकर्मकात्	उपरमति । उपरमते वा
8.बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः	बोधयति पद्मम् । योधयति काष्ठानि । नाशयति दुःखम् । जनयति सुखम् ।अध्यापयति वेदम् । प्रावयति । द्रावयति । स्रावयति ।
9. निगरणचलनार्थेभ्यश्च	निगारयति । आशयति । भोजयति चलयति । कम्पयति
10.अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्	शेते कृष्णस्तं गोपी शाययति।
11. न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुह रुचिनृतिवदवसः	(आ.) पाययते । दमयते । आयामयते । आयासयते । परिमोहयते । रोचयते । नर्तयते । वादयते । वासयते

॥इति तिङन्तपरस्मैपदप्रकरणम्॥

॥आत्मनेपद॥

सूत्र	उदाहरण
1. अनुदात्तङित आत्मनेपदम्	आस्ते,शेते ।
2. भावकर्मणोः	बभूवे,अनुबभूवे ।
3. कर्तरि कर्मव्यतिहारे	व्यतिलुनीते । व्यतिस्ते । व्यतिषाते । व्यतिषते ।
4. न गतिहिंसार्थेभ्यः	व्यतिगच्छन्ति । व्यतिघ्नन्ति ।
वा.-"प्रतिषेधे हसादीनामुपसंख्यानम्"।	व्यतिहसन्ति,व्यतिजल्पन्ति।
5. इतरेतरान्योऽन्योपपदाच्च	व्यतिलुनन्ति॥
6. नेर्विशः	निविशते ।
7. परिव्यवेभ्यः क्रियः	परिक्रीणीते,विक्रीणीते,अवक्रीणीते
8. विपराभ्यां जेः	विजयते । पराजयते ।
9. आङो दोऽनास्यविहरणे	विद्यामादत्ते ।
10. क्रीडोऽनुसंपरिभ्यश्च	अनुक्रीडते।संक्रीडते । परिक्रीडते । आक्रीडते ।
वा. "समोऽकूजने"	संक्रीडते ।
वा. "शिक्षेर्जिज्ञासायाम्"	धनुषि शिक्षते ।
वा. "आशिषि नाथः"	सर्पिषो नाथते ।
वा. "हरतेर्गतताच्छील्ये"	पैतृकमश्वा अनुहरन्ते ।
वा. "आङि नुप्रच्छ्योः"	आनुते । आपृच्छते ॥
वा."शप उपालम्भे"	कृष्णाय शपते ॥
12. समवप्रविभ्यः स्थः	सन्तिष्ठते,समस्थित,समस्थिषातम् ,समस्थिषत,अवतिष्ठते,प्रतिष्ठते वितिष्ठते ।
वा. "आङः प्रतिज्ञायामुपसंख्यानम्"	शब्दं नित्यमातिष्ठते ।
13. प्रकाशनस्थेयाख्ययोश्च	गोपी कृष्णाय तिष्ठते।
14. उदोऽनूर्ध्वकर्मणि	मुक्तावुत्तिष्ठते ।

15. उपान्मन्त्रकरणे	आग्नेय्याग्नीध्रमुपतिष्ठते ।
वा."वालिप्सायामिति-वक्तव्यम्"।	भिक्षुकः प्रभुमुपतिष्ठते- उपतिष्ठति वा
16. अकर्मकाच्च	भोजनकाले उपतिष्ठते ।
17- उद्विभ्यां तपः	उत्तपते । वितपते।
वा."स्वाङ्गकर्मकाच्चेतिवक्तव्यम्"	उत्तपते वितपते वा पाणिम् ।
18. आङो यमहनः	आयच्छते । आहते ।
19. आत्मनेपदेष्वन्यतरस्याम्	अवधीष्ट
20. हनः सिच्	आहत,आहसाताम्,आहसत।
21. यमो गन्धने	उदायत ।
22. समो गम्यृच्छिभ्याम्	संगच्छते ।
23. वा गमः	संगसीष्ट,समृच्छिष्यते,समगत, समगंस्त, संमृच्छते
वा.- "विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम्" -	संवित्ते । संविदाते ॥
26. निसमुपविभ्यो ह्वः	निह्वयते ।
27. स्पर्धायामाङः	कृष्णश्चाणूरमाह्वयते ।
वक्षेपणसेवनसाहसि ग्रकथनोपयोगेषुकृञः	उत्कुरुते ।
प्रसहने	शत्रुमधिकुरुते ।
30. वः शब्दकर्मणः	स्वरान्विकुरुते
31. अकर्मकाच्च	छात्रा विकुर्वते ।
32.संमाननोत्सर्जनाचार्यकरण-ज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु नियः	शास्त्रे नयते ।
33. कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि	क्रोधं विनयते ।
34. वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः	ऋचि क्रमते बुद्धिः,अध्ययनाय क्रमते । क्रमन्तेऽस्मिन् शास्त्राणि
35. उपपराभ्याम्	उपक्रमते । पराक्रमते ।
36. आङ् उद्गमने	आक्रमते सूर्यः । उदयते इत्यर्थः
37. वेः पादविहरणे	साधु विक्रमते वाजी ।
38. प्रोपाभ्यां समर्थाभ्याम्	प्रक्रमते । उपक्रमते ।
39. अनुपसर्गाद्वा क्रामति	क्रमते ।
40. अपह्नवे ज्ञः	शतमपजानीते ।
41. अकर्मकाच्च	सर्पिषो जानीते ।
42. संप्रतिभ्यामनाध्याने	शतं संजानीते ।
43. भासनोपसंभाषाज्ञानयत्न-विमत्युपमन्त्रणेषु वदः	शास्त्रे वदते ।
44. व्यक्तवाचां समुच्चारणे	संप्रवदन्ते ब्राह्मणाः ।
45. अनोरकर्मकात्	अनुवदते कठः कलापस्य ।

46. विभाषा विप्रलापे	विप्रवदन्ते विप्रवदन्ति वा वैद्याः ।
48. समः प्रतिज्ञाने	शब्दं नित्यं संगिरते ।
49. उदश्चरः सकर्मकात्	धर्ममुच्चरते ।
50. समस्तृतीयायुक्तात्	रथेन संचरते ।
51. दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे	दास्या संयच्छते ।
52. उपाद्यमः स्वकरणे	भार्यामुपयच्छते ।
53. विभाषोपयमने	रामः सीतामुपायत। उपायंस्त वा ।
54. ज्ञाश्रुस्मृदृशां सनः	जिज्ञासते । शुश्रूषते । सुस्मूर्षते। दिदृक्षते ।
55. नानोर्ज्ञः	पुत्रमनुजिज्ञासति ।
56. प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः	प्रतिशुश्रूषति । आशुश्रूषति ।
57. पूर्ववत्सनः	एदिधिषते,शिशयिषते,निविविक्षते
58. प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु	प्रयुङ्क्ते । उपयुङ्क्ते ।
वा."स्वराद्यन्तोपसर्गादिति-वक्तव्यम्"॥	उद्युङ्क्ते । नियुङ्क्ते ।
59. समः क्ष्णुवः	संक्ष्णुते शस्त्रम् ।
60. भुजोऽनवने	ओदनं भुङ्क्ते ।
61. णेरणौ यत्कर्म णौ चेत्स-कर्तानाध्याने	
62. गृधिवञ्च्योः प्रलम्भने	माणवकं गर्धयते वञ्चयते वा ।
63. मिथ्योपपदात्कृञोऽभ्यासे	पदं मिथ्या कारयते ।
64. "स्वरितञितः कर्त्रभिप्राये-क्रियाफले"	यजते । सुनुते ।
65. अपाद्वदः	न्यायमपवदते ।
66. णिचश्च	कारयते ।
67. समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रन्थे	व्रीहीन्संयच्छते । भारमुद्यच्छते । वस्त्रमायच्छते ।
68. अनुपसर्गाज्ज्ञः	गां जानीते ।
69. विभाषोपपदेन प्रतीयमाने	स्वं यज्ञं यजति यजते वा । स्वं कटं करोति कुरुते वा । स्वं पुत्रमपवदति अपवदते वा । स्वं यज्ञं कारयति कारयते वा । स्वं व्रीहिं संयच्छति संयच्छते वा। स्वां गां जानाति जानीते वा ॥

॥महाभाष्य॥

भाष्यम्- "भाष्यते शब्दशास्त्रं येन इति भाष्यम्"।

महाभाष्यम् व्युत्पत्ति- "महच्च तद् भाष्यम् महाभाष्यम् व्याकरणस्य महाभाष्यम् व्याकरणमहाभाष्यम्"।

पतंजलि ने पाणिनि के अष्टाध्यायी के कुछ चुने हुए सूत्रों पर भाष्य लिखा जिसे व्याकरण महाभाष्य का नाम दिया (महा+भाष्य - समीक्षा, टिप्पणी, विवेचना, आलोचना)। महाभाष्य में **(84)** आह्निक है। व्याकरण महाभाष्य में कात्यायन वार्तिक भी सम्मिलित हैं जो पाणिनि के अष्टाध्यायी पर कात्यायन के भाष्य हैं। कात्याथन के वार्तिक कुल लगभग 1400 हैं जो अन्यत्र नहीं मिलते बल्कि केवल व्याकरण महाभाष्य में पतञ्जलि द्वारा सन्दर्भ के रूप में ही उपलब्ध हैं। इसकी रचना लगभग ईसापूर्व दूसरी शताब्दी में हुई थी। संस्कृत के तीन महान वैयाकरणों में पतंजलि भी हैं। अन्य दो हैं पाणिनि तथा कात्यायन । महाभाष्य में **शिक्षा, व्याकरण** और **निरुक्त** तीनों की चर्चा हुई है।

रचनाकाल-

इसकी रचना ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी की मानी जाती है। महाभाष्यकार **"पतंजलि"** का समय असंदिग्ध रूप में ज्ञात है। **पुष्यमित्र शुंग** के शासनकाल में पतंजलि वर्तमान थे। महाभाष्य के निश्चित साक्ष्य के आधार पर विजयोपरांत पुष्यमित्र के श्रौत (अश्वमेध यज्ञ) में संभवतः पतंजलि पुरोहित थे। यह (इह पुष्यमित्रं याजयामः) महाभाष्य से सिद्ध है। साकेत और माध्यमिका पर यवनों के आक्रमणकाल में पतंजलि विद्यमान थे। अतः महाभाष्य और महाभाष्यकार पतंजलि दोनों का समय ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी निश्चित है। द्वितीय शताब्दी ई.पू. में मौर्यों के ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र शुंग मौर्य वंशी बृहद्रथ को मारकार गद्दी पर बैठे थे। नाना पंडितों के विचार से 200 ई.पू. से लेकार 140 ई.पू. तक महाभाष्य की रचना का मान्य काल है।

महाभाष्य का महत्व-

महाभाष्य की महत्ता के अनेक कारण हैं। प्रथम हेतु है उसकी पांडित्यपूर्ण विशिष्ट व्याख्याशैली। विवादास्पद स्थलों का पूर्वपक्ष उपस्थित करने के बाद उत्तरपक्ष उपस्थित किया है। शास्त्रार्थ प्रक्रिया में पूर्व और उत्तर पक्षों का व्यवहार चला आ रहा है। इसके अतिरिक्त आवश्यक होने पर उस पक्ष का भी उपन्यास किया है। विषय प्रतिपादन दूसरी विशेषता है। महाभाष्य की व्याख्या का क्रम तो अष्टाध्यायी और तदंतर्गत चार पादों और उनके सूत्रों का क्रम है। पर भाष्य के अपने क्रम में व्याख्या का नियोजन विभक्त है, जिसका अर्थ यह भी होता है कि एक "महाभाष्य" लिखा जाता रहा। **"पतंजलि"** ने अपने महाभाष्य में व्याकरण की दार्शनिक **शब्दनित्यत्ववाद या स्फोटवाद** अथवा **शब्दब्रह्मवाद** का प्रतिपादन किया है। इस सिद्धांत को भर्तृहरि ने विस्तार से वाक्यपदीय में पल्लवित किया है। महाभाष्य की महत्ता का यह कारण है। साहित्यिक दृष्टि से महाभाष्य का गद्य अत्यन्त अकृत्रिम, मुहावरेदार, धाराप्रावाहिक और स्पष्टार्थबोध है। भर्तृहरि ने इस पर टीका लिखी थी पर उसका अधिकांश अनुपलब्ध है। **कैय्यट** की **"प्रदीप"** नामक टीका और नागोजी भट्ट ने **'उद्योत'** नाम से **"प्रदीपटीका"** प्रकाशित है। भट्टोजि दीक्षित ने अपने **"शब्दकौस्तुभ"** की रचना महाभाष्य के आधार पर की।

संस्कृत व्याकरण में "मुनित्रय" को बहुत ही उच्च और प्रामाणिक पद दिया गया है। अष्टाध्यायीकार पाणिनि, वार्त्तिककार कात्यायन और महाभाष्यकार पतंजलि इन्हीं तीनों को "मुनित्रय" कहा गया है। व्याकरणशास्त्र के इतिहास में पाणिनीय व्याकरण की शाखा के अतिरिक्त पूर्व और परवर्ती अनेक व्याकरण शाखाएँ रही हैं। परंतु "मुनित्रय" से पोषित और समर्थित व्याकरण की पाणिनीय शाखा को जो प्रसिद्धि, मान्यता और लोकप्रियता प्राप्त हुई वह अन्य शाखाओं को नहीं मिल सकी जिसका कारण महाभाष्य ही माना गया है। अष्टाध्यायी पर "कात्यायन" ने वार्त्तिकों की रचना द्वारा व्याकरणसिद्धांतों को अधिक पूर्ण और स्पष्ट बनाया। "पतंजलि" ने मुख्यतः वार्त्तिकों की व्याख्या को महाभाष्य द्वारा आगे बढ़ाया। अनेक स्थलों पर उन्होंने कात्यायनमत का प्रत्याख्यान और पाणिनिमत की मान्यता भी सिद्ध की है। कभी-कभी उन सूत्रों की भी विवेचना की है जो कात्यायन ने छोड़ दिए थे।

इस महाभाष्य की रचनापीठिका का निर्देश करते हुए वाक्यपदीयकार **"भर्तृहरि"** ने बताया है कि जब व्याकरण के पाठक संक्षेपरुचि और अल्पविद्यापरिग्रह बन गए, **"संग्रह"** ग्रंथ जिसके कर्ता परंपरा के अनुसार व्याडि हैं अस्त हो गया तब तीर्थदर्शी गुरु पतंजलि ने महाभाष्य की रचना की, जिसमें सभी न्यायबीजों का भी निबंधन है। इससे पता चलता है कि "पतंजलि" के पूर्व **"संग्रह"** नामक ग्रंथ में व्याकरण संबद्ध विवेचन अत्यंत विस्तृत था। "संग्रह" नामक ग्रंथ में एक लाख श्लोक होने का उल्लेख महाभाष्य तथा प्रदीप की टीका **'उद्योत'** में नागेश भट्ट ने किया है।

॥पस्पशाह्निकम्॥

अह्नानिर्वृत्तम् = आह्निक, **पस्पशा**= प्रस्तावना ।

॥अथ शब्दानुशासनम्॥

अथ इति अयम् शब्दः **अधिकारार्थः** प्रयुज्यते । **शब्दानुशासनं नाम** शास्त्रम् अधिकृतम् वेदितव्यम् । **केषाम् शब्दानाम्** - लौकिकानाम् वैदिकानाम् च ।

शब्दानुशासनम् में षष्ठी **कर्तृकर्मणो कृति से** प्राप्त है । यहां 'अथ' शब्द प्रारम्भ (अधिकार) अर्थ में प्रयुक्त हुआ हैं ।क्योंकि अथ शब्द के पांच अर्थ होते है । मंगल, अनन्तर, आरम्भ, प्रश्न और कार्त्स्न्य (परिपूर्णता)। **शब्दानुशासन** (पदशास्त्र) नामक शास्त्र यहां से प्रारम्भ होता है ऐसा जानना चाहिये । किस प्रकार के शब्दों का अनुशासन करना चाहिये ? लौकिक और वैदिक दोनों प्रकार के शब्दों का अनुशासन करना चाहिये।

तत्र लौकिकाः तावत्- गौः अश्वः पुरुषः हस्ती शकुनिः (पक्षी) मृगः ब्राह्मणः इति ।

वैदिकाः खलु अपि-

1. शम् नः देवीः अभिष्टये (अ.वे.1.1.1)
2. इषे त्वो ऊर्जे त्वा (य.वे.1.1.1)
3. अग्निम् ईळे पुरोहितम् (ऋ.वे.1.1.1)
4. अग्न आयाहि वीतये इति (सा.वे.1.1.1)

अथ गौः इति अत्र कः शब्दः ।

द्रव्यम्- किम् यत् तत् सास्नालाङ्गूलककुदखुरविषाणि अर्थरूपम् सः शब्दः। न इति आह । द्रव्यम् नाम तत् ।

क्रिया- यत् तर्हि तत् इङ्गितम् चेष्टितम् निमिषितम् सः शब्दः । न इति आह । क्रिया नाम सा ।

गुणः- यत् तर्हि तत् शुक्लः नीलः कृष्णः कपिलः कपोतः इति सः शब्दः। न इति आह । गुणः नाम सः ।

आकृतिः- यत् तर्हि तत् भिन्नेषु अभिन्नम् छिन्नेषु अच्छिन्नम् सामान्यभूतम् सः शब्दः । न इति आह । आकृतिः नाम सा ।

शब्द की परिभाषा-

कः तर्हि शब्दः ? येन उच्चारितेन सास्नालाङ्गूलककुदखुरविषाणिनाम् सम्प्रत्ययः भवति सः शब्दः । अथ वा प्रतीतपदार्थकः लोके ध्वनिः शब्दः इति उच्यते । तत् यथा - शब्दम् कुरु मा शब्दम् कार्षीः शब्दकारी अयम् माणवकः इति । ध्वनिम् कुर्वन् एवम् उच्यते । तस्मात् ध्वनिः शब्दः । जो उच्चरित ध्वनियों से अभिव्यक्त होकर गलकम्बल, पूँछ, कुहान, खुर, सींग वाले गो व्यक्तियों का बोध कराता है वह शब्द है, अथवा लोक व्यवहार में जिस ध्वनि से अर्थ का बोध होता है वह शब्द कहलाता है।

व्याकरण अध्ययन के पाँच मुख्य प्रयोजन-

"रक्षोहागमलघ्वसन्देहाः प्रयोजनम्" ।।

1. रक्षा ।

रक्षार्थं वेदानामध्येयं व्याकरणम् लोपागमवर्णविकारज्ञो हि सम्यग्वेदान् **परिपालयिष्यतीति ।। उदाहरण- देवा अदुह्र।**

2. ऊह ।

ऊहः खल्वपि न सर्वैर्लिङ्गैर्न च सर्वाभिर्विभक्तिभिर्वेदे मन्त्रा निगदिताः। ते चावश्यं यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथं विपरिणमयितव्याः। तान्नावैयाकरणः शक्नोति यथायथं विपरिणमयितुम्। तस्मादध्येयं व्याकरणम् ।।

3. आगम ।

आगमैः खल्वपि ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च इति। प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्। **प्रधाने च कृतो यत्नः फलवान्भवति।**

4. लघु ।

लघ्वर्थं चाध्येयं व्याकरणम् ब्रह्मणेनावश्यं शब्दा ज्ञेया इति। न चान्तरेण व्याकरणं लघुनोपायेन शब्दाः शक्या ज्ञातुम् ।।

5. असन्देह ।

असन्देहार्थं चाध्येयं व्याकरणम्। याज्ञिकाः पठन्ति स्थूलपृषतीमाग्निवारुणीमनड्वाहीमालभेत इति। तस्यां सन्देहः स्थूला चासौ पृषती च स्थूलपृषति, स्थूलानि पृषन्ति यस्याः सेयं स्थूलपृषतीति। तां नावैयाकरणः स्वरतोऽध्यवस्यति यदि पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं ततो बहुव्रीहिः अथ समासान्तोदात्तत्वं ततस्तत्पुरुष इति ।।

- **स्थूलपृषती समास-**
  (1) पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं- **बहुव्रीहिः**
  (2) अन्तोदात्वं- **तत्पुरुषः ।**
- अथ गौरित्यत्र ध्वनिः **शब्दः।**
- **गौ शब्दस्यापभ्रंशाः-** गावी, गोणी, गोता गोपोतलिका
- चतुर्भिश्च प्रकारैर्विद्योपयुक्ता भवति- **आगमकालेन, स्वाध्यायकालेन, प्रवचनकालेन, व्यवहारकालेनेति।**

व्याकरण अध्ययन के तेरह गौण उद्देश्य-

गौण प्रयोजन- (13) (आनुषङ्गिक प्रयोजन)

1. तेऽसुरा, 2. दुष्टः शब्दः, 3 यदधीतम्,
4. यस्तु प्रयुङ्क्ते, 5. अविद्वांसः, 6.विभक्तिं कुर्वन्ति,
7. यो वा इमाम्, 8. चत्वारि, 9. उत त्वः,
10. सक्तुमिव, 11. सारस्वतीम, 12.दशम्यां पुत्रस्य
13. सुदेवोऽअसि वरुणेति

(1) तेऽसुरा-

ते असुराः हेलयः हेलयः इति कुर्वन्तः परा बभूवुः । तस्मात् ब्राह्मणेन न म्लेच्छितवै न अपभाषितवै । म्लेच्छः ह वै एषः यत् अपशब्दः । **म्लेच्छ**=अपशब्द, उदा.- हेलयो हेलय।

(2) दुष्टः शब्दः-

दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ।।

दुष्टान् शब्दान् मा प्रयुक्ष्महि इति अध्येयम् व्याकरणम् ।

(3) यदधीतम्-

यदधीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्द्यते।

अनग्नाविव शुष्कैधोनतञ्ज्वलतिकर्हिचित् ।।

तस्मात् अनर्थकम् मा अधिगीष्महि इति अध्येयम् व्याकरणम्।

(4) यस्तु प्रयुङ्क्ते-

यस्तु प्रयुङ्क्ते कुशलो विशेषे शब्दान् यथावद् व्यवहारकाले।
सोऽनन्तमाप्नोति जयं परत्र वाग्योगविद् दुष्यति चापशब्दैः
यदुदुम्बरवर्णानां घटीनां मण्डलं महत्।
पीतं न गमयेत्स्वर्गं किं तत् क्रतुगतं नयेत् ।।

(5) अविद्वांसः-

अविद्वांसः प्रत्यभिवादे नाम्नो ये न प्लुतिं विदुः।
कामं तेषु तु विप्रोष्य स्त्रीष्विवायमहं वदेत् ।।

अभिवादे स्त्रीवत् मा भूम इति अध्येयम् व्याकरणम् ।

(6) विभक्तिं कुर्वन्ति-

याज्ञिकाः पठन्ति **प्रयाजाः सविभक्तिकाः कार्याः इति** । न च अन्तरेण व्याकरणम् प्रयाजाः सविभक्तिकाः शक्याः कर्तुम् ।

(7) यो वा इमाम-

यः वै इमाम् पदशः स्वरशः अक्षरशः वाचम् विदधाति सः आर्त्विजीनः । **आर्त्विजीनाः स्याम इति अध्येयम् व्याकरणम् ।**

(8) चत्वारि -

"चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यान् आविवेश" ।।

चत्वारि शृंगाणि (1) नाम, (2) आख्यात, (3) उपसर्ग, (4) निपात
त्रयो पादाः – (1) भूत (2) भविष्य (3) वर्तमान
द्वे शीर्षे द्वौ शब्दात्मानौ (1) नित्यः (2) कार्य (अनित्य)
सप्त हस्ताः सप्त विभक्तयः।
त्रिधा बद्ध (1) उरसि (2) कण्ठ (3) शिरसि
रोरवीति- शब्दं करोति (वृषभो वर्षणात) महां देवों मर्त्या आविवेश।

"चत्वारि वाक्परिमिता पदानि तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः।
गुहा त्रीणि निहिता नेङ्गयन्ति तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति"।।

शब्द के चार स्थान- परा, पश्यन्ति, मध्यमा, वैखरी।

तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति । इनमें से चतुर्थ वैखरी वाणी को मनुष्य बोलते हैं ।

(9) उत त्वः-

"उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।
उतो त्वस्मै तन्वं विसस्रे जायेव पत्य उसती सुवासाः" ।।

वाङ्गो विवणुयादात्मानमित्यध्येये व्याकरणम्।

(10) सक्तुमिव-

"सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीः निहिताऽधि वाचि" ।।

11. सारस्वतीम्-

याज्ञिकाः पठन्ति आहिताग्निः अपशब्दम् प्रयुज्य प्रायश्चित्तीयाम् सारस्वतीम् इष्टिम् निर्वपेत् इति । **प्रायश्चित्तीयाः मा भूम इति अध्येयम् व्याकरणम् ।**

12. दशम्यां पुत्रस्य-

याज्ञिकाः पठन्ति दशम्युत्तरकालम् पुत्रस्य जातस्य नाम विदध्यात् घोषवदादि अन्तरन्तःस्थम् अवृद्धम् त्रिपुरुषानूकम् अनरिप्रतिष्ठितम् । तत् हि प्रतिष्ठिततमम् भवति । **द्व्यक्षरम् चतुरक्षरम् वा नाम कृतम् कुर्यात् न तद्धितम् इति** । न च अन्तरेण व्याकरणम् कृतः तद्धिताः वा शक्याः विज्ञातुम् ।

13. सुदेवोऽसि वरुणेति-

सुदेवः असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः **अनुक्षरन्ति काकुदम् सूर्म्यम् सुषिरामिव । काकुदं-** तालु, **काकु-** जिह्वा।

उक्तः शब्दः । स्वरूपम् अपि उक्तम् । प्रयोजनानि अपि उक्तानि । शब्दानुशासनम् इदानीम् कर्तव्यम् । तत् कथम् कर्तव्यम् ।
किम् शब्दोपदेशः कर्तव्यः आहोस्वित् अपशब्दोपदेशः आहोस्वित् उभयोपदेशः इति । अन्यतरोपदेशेन कृतम् स्यात् ।

तत् यथा भक्ष्यनियमेन अभक्ष्यप्रतिषेधो गम्यते । पञ्च पञ्चनखाः भक्ष्याः इति उक्ते गम्यते एतत् अतः अन्ये अभक्ष्याः इति । अभक्ष्यप्रतिषेधेन वा भक्ष्यनियमः । **तत् यथा अभक्ष्यः ग्राम्यकुक्कुटः** अभक्ष्यः ग्राम्यशूकरः इति उक्ते गम्यते एतत् आरण्यः भक्ष्यः इति । एवम् इह अपि यदि तावत् शब्दोपदेशः क्रियते गौः इति एतस्मिन् उपदिष्टे गम्यते एतत् गाव्यादयः अपशब्दाः इति । अथ अपशब्दोपदेशः क्रियते गाव्यादिषु उपदिष्टेषु गम्यते एतत् गौः इति एषः शब्दः इति । किम् पुनः अत्र ज्यायः । **लघुत्वात् शब्दोपदेशः** । लघीयान् शब्दोपदेशः गरीयान् अपशब्दोपदेशः । एकैकस्य शब्दस्य बहवः अपभ्रंशाः । **तत् यथा-** गौः इति अस्य शब्दस्य **गावीगोणीगोतागोपोतलिकादयः अपभ्रंशाः** । इष्टान्वाख्यानम् खलु अपि भवति ।

अथ एतस्मिन् शब्दोपदेशे सति किम् शब्दानाम् प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः कर्तव्यः गौः अश्वः पुरुषः हस्ती शकुनिः मृगः ब्राह्मणः इति एवमादयः शब्दाः पठितव्याः । न इति आह । **अनभ्युपायः एषः शब्दानाम् प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः ।**

एवम् हि श्रूयते बृहस्पतिः इन्द्राय दिव्यम् वर्षसहस्रम् प्रतिपदोक्तानाम् शब्दानाम् शब्दपारायणम् प्रोवाच न अन्तम् जगाम । बृहस्पतिः च प्रवक्ता इन्द्रः च अध्येता दिव्यम् वर्षसहस्रम् अध्ययनकालः न च अन्तम् जगाम ।किम् पुनः अद्यत्वे । यः सर्वथा चिरम् जीवति सः वर्षशतम् जीवति ।

चतुर्भिः च प्रकारैः विद्या उपयुक्ता भवति-

1-आगमकालेन 2-स्वाध्यायकालेन 3- प्रवचनकालेन 4-व्यवहारकालेन इति ।

तत्र च आगमकालेन एव आयुः पर्युपयुक्तम् स्यात् । तस्मात् अनभ्युपायः शब्दानाम् प्रतिपत्तौ प्रतिपदपाठः ।

कथम् तर्हि इमे शब्दाः प्रतिपत्तव्याः ।

किम् चित् सामन्यविशेषवत् लक्षणम् प्रवर्त्यम् येन अल्पेन यत्नेन महतः महतः शब्दौघान् प्रतिपद्येरन् । किम् पुनः तत् । **उत्सर्गापवादौ** । कः चित् उत्सर्गः कर्तव्यः कः चित् अपवादः । **कथञ्जातीयकः पुनः उत्सर्गः कर्तव्यः कथञ्जातीयकः अपवादः ।**

1-सामन्येन उत्सर्गः कर्तव्यः-यथा कर्मण्यण्।

2- विशेषेण अपवादः-यथा-आतः अनुपसर्गे कः ।

किम् पुनः आकृतिः पदार्थः आहोस्वित् द्रव्यम् ?

उभयम् इति आह । कथम् ज्ञायते । **उभयथा हि आचार्येण सूत्राणि पठितानि ।**

आकृतिम् पदार्थम् मत्वा- जात्याख्यायाम् एकस्मिन् बहुवचनम् अन्यतरस्याम् इति उच्यते **द्रव्यम् पदार्थम्** मत्वा-सरूपाणाम् एकशेषः एकविभक्तौ इति एकशेषः आरभ्यते ।

शब्द और अर्थ का संबंध-

किम् पुनः नित्यः शब्दः आहोस्वित् कार्यः ? सङ्ग्रहे एतत् प्राधान्येन परीक्षितम् नित्यः वा स्यात् कार्यः वा इति । तत्र उक्ताः दोषाः प्रयोजनानि अपि उक्तानि । तत्र तु एषः निर्णयः यदि एव नित्यः अथ अपि कार्यः **उभयथा अपि लक्षणम् प्रवर्त्यम् इति** । कथम् पुनः इदम् भगवतः पाणिनेः आचार्यस्य लक्षणम् प्रवृत्तम् ।

॥सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धे॥

सिद्धे शब्दे अर्थे सम्बन्धे च इति । **अथ सिद्धशब्दस्य कः पदार्थः**-नित्यपर्यायवाची सिद्धशब्दः । **कथम् ज्ञायते-** यत् कूटस्थेषु अविचालिषु भावेषु वर्तते । **तद्यथा-** सिद्धा द्यौः , सिद्धा पृथिवी सिद्धम् आकाशम् इति । **ननु च भोः कार्येषु अपि वर्तते -तत् यथा**-सिद्धः ओदनः , सिद्धः सूपः सिद्धा यवागूः इति ।

यह कात्यायन का प्रथम वार्त्तिक है। सिद्ध शब्द नित्यपर्यायवाची है । **सिद्ध शब्द का नित्य अर्थ-** सिद्धाः द्यौः, सिद्धा पृथिवी, सिद्धमाकामम्। **सिद्ध शब्द का कार्य अर्थ -** सिद्धः: ओदनः, सिद्धः सूपः, सिद्धा यवागू । सिद्धे इस पद में पूर्वपदलोप है- **अत्यन्तसिद्धः- सिद्ध । यथा-** देवदत्तो-दत्तः, सत्यभामा- भामा। सिद्ध शब्द के स्थान पर नित्य शब्द का प्रयोग **मङ्गलार्थ** के उद्देश्य से नहीं किया है । नित्य शब्द का प्रयोग आभीक्ष्ण्य अर्थ में किया जाता है । **यथा-** नित्य प्रहसितो, (अधिक हंसने वाला) नित्यप्रजल्पित । व्याकरण में **आकृति** (जाति) और **द्रव्य** दोनों नित्य होते हैं ।

नित्यलक्षणम्-ध्रुवंकूटस्थमविचाल्यनपायोपजनविकार्यनुत्पत्त्यवृद्धपाव्यय योगि यत्तन्नित्यम् ।

प्रश्न- अथ कम् पुनः पदार्थम् मत्वा एषः विग्रहः क्रियते सिद्धे शब्दे अर्थे सम्बन्धे च इति ?

उत्तर- यत् नित्यम् तम् पदार्थम् मत्वा एषः विग्रहः क्रियते सिद्धे शब्दे अर्थे सम्बन्धे च इति ।

प्रश्न- कथम् पुनः ज्ञायते सिद्धः शब्दः अर्थः सम्बन्धः च इति ?

उत्तर- लोकतः- यत् लोके अर्थम् उपादाय शब्दान् प्रयुञ्जते ।

प्रश्न- यदि तर्हि लोकः एषु प्रमाणम् किम् शास्त्रेण क्रियते ?

उत्तर- "लोकतोऽर्थप्रयुक्ते शब्दप्रयोगे शास्त्रेण धर्मनियमः" ।

किम् इदम् धर्मनियमः इति- 1. धर्माय नियमः धर्मनियमः 2. धर्मार्थः वा नियमः धर्मनियमः 3. धर्मप्रयोजनः वा नियमः धर्मनियमः। **"प्रियतद्धिता दाक्षिणात्याः"। यथा-** दक्षिण में 'लोके वेदे च' इस स्थान पर वे लौकिकवैदिकेषु अथवा **लौकिकेषु कृतान्तेषु** उच्चारण करते हैं। **भक्ष्य लक्षण- "भक्ष्यं नाम क्षुत्प्रतीघातार्थमुपादीयते"**। शक्यम् च अनेन श्वमांसादिभिः अपि क्षुत् प्रतिहन्तुम् । **तत्र नियमः क्रियते-** इदम् भक्ष्यम् । इदम् अभक्ष्यम् इति ।

वेद में नियम-

ब्राह्मण- पयोव्रतो ब्राह्मणो।

क्षत्रिय- यवागूव्रतो राजन्यः।

वैश्य- आमिक्षाव्रतो वैश्यः। (आमिक्षा- छेना)

व्रत- व्रतं च नामाभ्यवहारार्थमुपादीयते। (भोजन अर्थ में)

यूप- यूपश्च नाम पश्वनुबन्धनार्थमुपादीयते।

॥अस्त्यप्रयुक्तः॥

अप्रयुक्त शब्द उष, तेर, चक्र, पेच आदि। "लोके अप्रयुक्ताः"।

॥अप्रयोग प्रयोगान्यायत्वात्॥

उष शब्दस्याऽर्थः- क्व यूयमुषिता।

तेर शब्दस्यार्थः- क्व यूयं तीर्णाः।

चक्र शब्दस्यार्थः- क्व यूयं कृतवन्तः।

पेच शब्दस्यार्थः- क्व यूयं पक्वान्ता।

॥अप्रयुक्ते दीर्घसत्रवत्॥

उपतेरादि शब्द अप्रयुक्त हैं फिर भी इन्हें दीर्घसत्र के समान अवश्य ही लक्षण के द्वारा समझना चाहिये।

॥सर्वे देशान्तरे॥

उष्, तेर आदि शब्दों का प्रयोग दूसरे देशों में होता है। **"सप्तद्वीपा वसुमती त्रयो लोकाश्चत्वारो वेदाः साङ्गा सरस्या बहुधा विभिन्नाः"** । **"एकशतमध्वर्युशाखा, सहस्रवर्त्मासामवेदः, एकविंशतिधा बाह्वृच्यं, नवधाथर्वणो वेदः"**। वाकोवाक्यमितिहासः पुराणं वैद्यकमित्येतावाञ्शब्दस्य प्रयोगविषयः। **वाकोवाक्य-** (उक्ति प्रत्युक्ति रूप ग्रन्थ)

उष, तेर,चक्र आदि अप्रयुक्त शब्दों का वेदों में प्रयोग-

1 सप्तास्ये रेवतीरेवदूष।

2 यद्वो रेवती रेवत्य तमूष।

3 यन्मे नरः श्रुत्यं ब्रह्म चक्र।

4 यत्र नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।

साधु शब्दों के प्रयोग का परिणाम-

प्रश्न- किम् पुनः शब्दस्य ज्ञाने धर्मः आहोस्वित् प्रयोगे ?

ज्ञाने धर्मः इति चेत् तथा अधर्मः । ज्ञाने धर्मः इति चेत् तथा अधर्मः प्राप्नोति । यः हि शब्दान् जानाति अपशब्दान् अपि असौ जानाति । भूयांसः अपशब्दाः अल्पीयांसः शब्दाः । एकैकस्य शब्दस्य बहवः अपभ्रंशाः । तत् यथा- गौः इति अस्य-गावी गोणी गोता गोपोतलिका इति एवमादयः अपभ्रंशाः ।

आचारे नियमः- आचारे पुनः ऋषिः नियमम् वेदयते । ते असुराः हेलयः हेलयः इति कुर्वन्तः पराबभूवुः इति ।

अस्तु तर्हि प्रयोगे । प्रयोगे सर्वलोकस्य- यदि प्रयोगे धर्मः सर्वः लोकः अभ्युदयेन युज्येत । कः च इदानीम् भवतः मत्सरः यदि सर्वः लोकः अभ्युदयेन युज्येत । न खलु कः चित् मत्सरः । प्रयत्नानर्थक्यम् तु भवति । **फलवता च नाम प्रयत्नेन भवितव्यम् न च प्रयत्नः फलात् व्यतिरेच्यः ।**

प्रश्न- एवम् तर्हि न अपि ज्ञाने एव धर्मः न अपि प्रयोगे एव । किम् तर्हि ?

उत्तर - शास्त्रपूर्वके प्रयोगेऽभ्युदयस्तत् तुल्यं वेदशब्देन । व्याकरण वेद के समान है। अपशब्द ज्ञान में कोई अधर्म नहीं है ।**यथा-** हिक्कितहसितकण्डूयितानि न एव दोषाय भवन्ति न अपि अभ्युदयाय । अथ वा अभ्युपायः एव अपशब्दज्ञानम् शब्दज्ञाने । यः अपशब्दान् जानाति शब्दान् अपि असौ जानाति । तत् एवम् ज्ञाने धर्मः इति ब्रुवतः अर्थात् आपन्नम् भवति **अपशब्दज्ञानपूर्वके शब्दज्ञाने धर्मः इति । अथ वा कूपखानकवत् एतत् भवति ।**

व्याकरण की परिभाषा-

प्रश्न- अथ व्याकरणमित्यस्य शब्दस्य कः पदार्थः?

उत्तर - सूत्रम् ।

व्याकरण का अर्थ सूत्र मानने में दो दोष उपस्थित होते हैं-

(1) ॥सूत्रे व्याकरणेषष्ठ्यर्थोऽनुपपन्नः॥

व्याकरण का अर्थ सूत्र मानने पर षष्ठी तत्पुरुष समास नहीं होगा ।

(2) ॥शब्दाप्रतिपत्तिः॥

व्याकरण का अर्थ सूत्र मानने पर शब्दों का बोध भी नहीं होगा, हम व्याकरण से शब्दों को जानते है ऐसा व्यवहार भी न बन सकेगा सूत्र मात्र से तो शब्दों को जानते नहीं हैं अपितु उन्हें केवल व्याख्यान से जानते हैं । सूत्रों से शब्दों का ज्ञान नहीं होता है बल्कि व्याख्यान सहित सूत्र से शब्द ज्ञान होता है। वह सूत्र ही खुलकर व्याख्यान बनता है । **व्याख्यान लक्षण- उदाहरणं प्रत्युदाहरणं वाक्याध्याहारं इत्येतत्समुदितं व्याख्यानं भवति।**

एवम् तर्हि शब्दः । यदि व्याकरण शब्द का अर्थ शब्द माना जाये तो तीन दोष उपस्थित होते हैं-

1. ॥शब्दे ल्युडर्थः॥

यदि व्याकरण शब्द का अर्थ शब्द माना जाये तो ल्युडर्थ संगत नहीं होगा। यदि व्याकरण शब्द का अर्थ शब्द माना जाता है तो व्याकरण शब्द में ल्युट प्रत्यय संगत नहीं होगा क्योंकि **"व्याक्रियन्ते शब्दा अनेनेति व्याकरणम्"**। शब्द की व्युत्पत्ति "सूत्र" से नही की जाती है।

2. ॥भवे च तद्धितः॥

शब्द को व्याकरण का अर्थ मानने पर भव अर्थ में तद्धित प्रत्यय नहीं होगा। **"व्याकरणे भवो योगो वैयाकरणः"** यह प्रयोग नहीं बनेगा यह योग केवल व्याकरण (सूत्र) में होता है।

3. ॥प्रोक्तादयश्च तद्धिताः॥

प्रोक्त आदि अर्थ में विद्यमान तद्धित आदि प्रत्ययों का विधान नहीं होगा। **यथा- पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम्,** आपिशलं, काशकृत्स्नमिति। ल्युट प्रत्यय केवल करण और अधिकरण में ही नहीं होता है 'कृत्यल्युटो बहुलम्' इस सूत्र से ल्युट् प्रत्यय का विधान कर **प्रस्कन्दनम् प्रपतनम्** आदि प्रयोग निष्पन्न होते हैं।

प्रश्न- अथ व्याकरणमित्यस्य शब्दस्य कः पदार्थः?

॥लक्ष्यलक्षणे व्याकरणम्॥

शब्द और सूत्र इन दोनों का समुदित रूप ही व्याकरण है।

लक्ष्य- शब्द, **लक्षण-** सूत्र, **समुदायेषु शब्दाः प्रवृत्ता अवयवेष्वपि वर्तन्ते। यथा-** पूर्वे पाञ्चालाः, उत्तरे पाञ्चालाः, तैलं भुक्तं, घृतं भुक्तं, शुक्लो, नीलः, कपिलः, कृष्णः। **सूत्रत एव हि शब्दान् प्रतिपद्यन्ते ।**
शब्दों का बोध सूत्रों से ही होता है ।

॥वर्णानामुपदेशः॥

किमर्थो वर्णानामुपदेशः-

(1) वृत्तिसमवायार्थ (2) अनुबन्धकरणार्थश्च । (3) इष्टबुद्ध्यर्थश्च वर्णानामुपदेशः ।

1. वृत्तिसमवायार्थ उपदेशः

1. वृत्तिसमवायार्थः उपदेशः- वृत्तिसमवायार्थः वर्णानाम् उपदेशः कर्तव्यः। वृत्तिसमवाय के लिये वर्णों का उपदेश किया जाता है । **किम् इदम् वृत्तिसमवयार्थः इति ।**

1. वृत्तये समवायः वृत्तिसमवायः ।
2. वृत्त्यर्थः वा समवायः वृत्तिसमवायः ।
3. वृत्तिप्रयोजनः वा वृत्तिसमवयः ।

का पुनः वृत्तिः- शास्त्रप्रवृत्तिः । **अथ कः समवायः-** वर्णानाम् आनुपूर्व्येण सन्निवेशः (वर्णों का क्रम से रखना) । **अथ कः उपदेशः-** उच्चारणम् ।

2. अनुबन्धकरणार्थश्च वर्णानामुपदेशः।

अनुबन्ध लगाने के लिये भी वर्णों का उपदेश किया जाता है। इन दोनों का प्रयोजन प्रत्याहार की सिद्धि है। **सः एषः वर्णानाम् उपदेशः वृत्तिसमवायार्थः च अनुबन्धकरणार्थः च । वृत्तिसमवायः च अनुबन्धकरणार्थः च प्रत्याहारार्थम् । प्रत्याहारः वृत्त्यर्थः ।** यह वर्णों का उपदेश वृत्तिसमवाय और अनुबन्ध लगाने के लिये है । वृत्तिसमवाय और अनुबन्ध लगाना प्रत्याहार के लिये आवश्यक है, और प्रत्याहार शास्त्रप्रवृत्ति के लिये आवश्यक है ।

3. इष्टबुद्ध्यर्थश्च

इष्ट वर्णों के बोधन के लिए भी वर्णों का उपदेश करना चाहिए ।

वा. - उदात्तानुदात्तस्वरितानुनासिक्दीर्घप्लुतानाम् अपि उपदेशः ॥ इष्टबुद्ध्यर्थः च इति चेत् उदात्तानुदात्तस्वरितानुनासिक्दीर्घप्लुतानाम् अपि उपदेशः कर्तव्यः । इष्ट वर्णों के उपदेश के लिए वर्णों का उपदेश मानते हो तो उपरोक्त उदात्तादि का भी उपदेश करना चाहिए ।

॥आकृत्युपदेशात् सिद्धम्॥

उदात्त, अनुदात्त, स्वरित का उपदेश जाति के उपदेश से सिद्ध है।
आकृति=जाति ।

वा. - आकृत्युपदेशात् सिद्धमिति चेत्संवृतादीनां प्रतिषेधः। आकृति उपदेश से यदि इष्टसिद्धि मानते हो तो संवृतादि दोषों का प्रतिषेध करना चाहिए ।

संवृतादि दोष – (12)

(1) संवृत	(2) कल	(3) ध्मात	(4) एणीकृत
(5) अम्बूकृत	(6) अर्धक	(7) ग्रस्त	(8) निरस्त
(9) प्रगीत	(10) उपगीत	(11)क्ष्विण्णो	(12) रोमश।

स्वरदोष=12,

"ग्रस्तं निरस्तमविलम्बितं निर्हतम्मबूकृतं ध्मातमथो विकम्पितम्।
सन्दष्टमेणीकृतमर्द्धकं द्रुतं विकीर्णमेताः स्वरदोषभावना"।।

वा. - गर्गादिबिदादिपाठात् संवृतादीनां निवृत्तिर्भविष्यति । गर्गादिगण तथा विदादिगण के पाठ से संवृतादि की निवृत्ति हो जाएगी ।
गर्गादिविदादि गणपाठ का अन्य प्रयोजन गर्गादि समुदायों का साधुत्व बतलाना है ।

॥लिङ्गार्था तु प्रत्यापत्ति॥

यदनुबन्धै क्रियते, तत्कलादिभिः करिष्यते। जिन कार्यों का विधान अनुबन्ध के द्वारा होता है उन समस्त कार्यों का समाधान कल आदि के द्वारा हो जाएगा ।
द्विगताऽपि हेतवो भवन्ति- **आम्रा सिक्ताः, पितरश्च प्रीणिताः।**
द्व्यर्थक वाक्य- **श्वेतो धावति, अलम्बुसानां माता।**
आचार्य ने प्रत्यय, आदेश व धातु इनका उच्चारण शुद्ध किया है इसलिये इनमें कलत्व आदि दोष की प्राप्ति नहीं होगी। गर्गादिगण से समुदाय की सिद्धि एवं कलत्व आदि दोषों का निवारण हो जाता है।
क्वेमे संवृतादयः श्रूयेरन्-
आगमेषु- आगमाः शुद्धाः पठ्यन्ते।
विकारेषु तर्हि- विकाराः अपि शुद्धाः पठ्यन्ते।
प्रत्ययेषु तर्हि- प्रत्ययाः अपि शुद्धाः पठ्यन्ते।
धातुषु तर्हि- धातवोऽपि शुद्धाः पठ्यन्ते।
प्रतिपादिकेषु तर्हि- प्रातिपदिकान्यपि शुद्धाः पठ्यन्ते।
यानि तर्ह्यग्रहणानि प्रातिपादिकानि? एतेषामपि स्वरवर्णानुपूर्वीज्ञानार्थं उपदेशः कर्त्तव्यः। **'शशः' 'षषः'** इति मा भूत् । **'पलाशः' 'पलाषः'** इति मा भूत् । **'मञ्चकः' 'मञ्जकः'** इति मा भूत् । आगमाः च विकाराः च प्रत्ययाः सह धातुभिः उच्चार्यन्ते ततः तेषु न इमे प्राप्ताः कलादयः ।

महाभाष्य के मुख्य सन्दर्भ-

- द्वितीय आह्निक- **व्यवहाराह्निक।**
- **अथैकत्वादेकं वाक्य साकाक्षं वेद-** पतञ्जलि।
- **पदसमूहो वाक्यम् अर्थसमापत्तौ-** वात्स्यायन।
- महाभाष्य पर **"प्रदीप"** टीका **कैय्यट** ने लिखी जिसकी अनेक विद्वानों ने व्याख्या की ।

- **प्रदीपोद्योत** नागेश भट्ट के द्वारा प्रदीप पर (उद्योत टीका) लिखी गई।
- प्रदीपोद्योत पर **छाया** नामक व्याख्या **वैद्यनाथ पायगुण्ड** ने लिखी।
- **व्याडिमुनि** ने एक लक्ष श्लोकात्मक **"सङ्ग्रह"** नामक ग्रन्थ लिखा था।
- **खिल पाठ**- अष्टाध्यायी के धातुपाठ, गणपाठ, उणादिपाठ, लिङ्गानुशासन ये खिल पाठ कहलाते हैं।
- **व्याकरणम्**- "व्यक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति शब्दज्ञानजनकं व्याकरणम् तच्च सूत्रम्"।

॥वाक्यपदीयम्॥

वाक्यपदीय, संस्कृत व्याकरण का एक प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसे **त्रिकाण्डी** भी कहते हैं। वाक्यपदीय, व्याकरण श्रृंखला का मुख्य दार्शनिक ग्रन्थ है। इसके रचयिता नीतिशतक के रचयिता महावैयाकरण तथा योगिराज **भर्तृहरि** हैं। इनके गुरु का नाम **वसुरात** था। भर्तृहरि को किसी ने तीसरी, किसी ने चौथी तथा छठी या सातवी सदी में रखा है। वाक्यपदीय में भर्तृहरि ने भाषा (वाच्) की प्रकृति और उसका वाह्य जगत से सम्बन्ध पर अपने विचार व्यक्त किये हैं। यह ग्रंथ तीन भागों में विभक्त है जिन्हें "कांड" कहते हैं। यह समस्त ग्रंथ पद्य में लिखा गया है। **प्रथम "ब्रह्मकांड"** है जिसमें 157 **कारिकाएँ** हैं, **दूसरा "वाक्यकांड है** जिसमें 493 **कारिकाएँ** हैं और तीसरा **"पदकांड"** के नाम से प्रसिद्ध है।

इसका प्रथम काण्ड ब्रह्मकाण्ड है जिसमें शब्द की प्रकृति की व्याख्या की गयी है। इसमें शब्द को ब्रह्म माना गया है और ब्रह्म की प्राप्ति के लिये शब्द को प्रमुख साधन बताया गया है।दूसरे काण्ड में वाक्य के विषय में भर्तृहरि ने विभिन्न मत रखे हैं। तीसरे काण्ड में अन्य दार्शनिक रीतियों के विषयों, जैसे जाति, द्रव्य, काल आदि की चर्चा की गयी है। इसमें भर्तृहरि यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि विविध मत, एक ही वस्तु के अलग अलग आयामों को प्रकाशित करते हैं। इस प्रकार वे सभी दर्शनों को अपने व्याकरण आधारित दर्शन द्वारा एकीकरण करने का प्रयास कर रहे हैं।

प्रथम काण्ड- (ब्रह्मकाण्ड)

मूल में व्याकरण शास्त्र एक प्रकार से आगम शास्त्र है। इसकी अभिव्यक्ति महेश्वर से है। आगम के अनुसार शब्द के चार स्वरूप हैं **"परा", "पश्यंती", "मध्यमा" तथा "वैखरी"**। इनमें "परा" ही ब्रह्म है। इसीलिए वाक्यपदीय की प्रथम कारिका में ही शब्दतत्व को अनादि और अनंत तथा अक्षर ब्रह्म कहा है। इसी परारूप ब्रह्म से संसार के पदार्थों की उत्पत्ति तथा व्यवहार **विवर्तरूप** में माना गया है। प्रथम कांड में, शब्दतत्व के दार्शनिक रूप का विचार है, अतएव इसे **"ब्रह्मकांड"** नाम दिया गया है और साधारण रूप में इसका वाचकत्व सिद्ध किया गया है। वस्तुतः यह **आगमिक कांड** है। आगम की दृष्टि से लिखा गया है।

उस ब्रह्म की प्राप्ति के उपाय तथा स्वरूप को महर्षियों ने "वेद" कहा है। यह एक होता हुआ भी अनेक मालूम होता है। इसीलिए ऋक् यजुष्, साम तथा अथर्वन् नाम से चार वेद कहे जाते हैं। **ऋग्वेद की 21, यजुर्वेद की 100, सामवेद की 1000** तथा **अथर्ववेद की 9 मिलाकर 1130 शाखाएँ वेद** की हुई। ऐसा होने पर भी सभी वेदों तथा उनकी शाखाओं का एकमात्र प्रतिपाद्य विषय **"कर्म"** है। यह स्मरण रखना है कि जो शब्द या मंत्र जिस स्वर में जिस शाखा में पढ़ा गया है वह शब्द उसी तरह उच्चारण किए जाने पर फल देनेवाला होता है। वही शब्द उसी रूप में दूसरी शाखा में पढ़े जाने से इस शब्दोच्चारण का फल होगा अन्यथा नहीं, अथवा अन्य कोई फल देगा।

आगम के विना कर्तव्य एवं अकर्तव्य का निश्चय नहीं हो सकता। ऋषियों में जो अतींद्रिय वस्तु को देखने का ज्ञान है वह भी आगम ही के द्वारा प्राप्त है (वाक्य. 1.37)। तर्क के द्वारा कोई यथार्थ ज्ञान नहीं प्राप्त हो सकता, वह परिवर्तनशील है। ऊँचे स्तर के ऋषियों के लिए भूत और भविष्य सभी प्रत्यक्ष हैं। ज्ञान के स्वप्रकाश होने के कारण उसमें आत्मा का स्वरूप तथा घट आदि ज्ञेय पदार्थ का स्वरूप दोनों भासित होते हैं। उसी प्रकार शब्द में अर्थ का स्वरूप और उसका अपना स्वरूप, दोनों की प्रतीति होती है।

जिस प्रकार जयापुष्प के लाल रूप से संबद्ध ही स्फटिक का ग्रहण होता है उसी प्रकार स्फोट से मिली हुई ध्वनि का ही ग्रहण होता है। किसी का मत है कि जिस प्रकार इंद्रियों का गुण असंवेद्य होकर भी विषयों के ज्ञान का कारण है, उसी प्रकार ध्वनि असंवेद्य होती हुई भी शब्द के ज्ञान का कारण होती है। दूसरा मत है कि "दूरत्व" दोष के कारण स्फोट के स्वरूप का ज्ञान नहीं होता, केवल ध्वनि का ही भान होता है। तीसरा मत है कि स्फोट का भान तो होता है परंतु दूरत्व दोष के कारण अस्फुट रहता है, जैसे दूर होने के कारण किसी वस्तु का "परिमाण" स्पष्ट रूप में भासित नहीं होता। अणुओं में सभी प्रकार की शक्तियाँ हैं, इसीलिए भेद और संसर्ग (वियोग तथा संयोग) रूप में अणुओं से (संसार के सभी) कार्य होते हैं। ये अणु छाया, आतप, तमस् तथा शब्द के रूप में परिणत होते रहते हैं। ये शक्तियाँ अभिव्यक्त होने के समय में बड़े प्रयत्न से प्रेरित की जाती हैं। और जिस प्रकार (जल के परमाणुओं के क्रमशः इकट्ठे होने से) बादल बनते हैं उसी प्रकार शब्द के परमाणु क्रमशः इकट्ठे होकर सभी कार्य करते हैं। इन परमाणुओं का नाम "शब्द" या "शब्दपरमाणु" है। इस प्रकार शब्द के आगमिक स्वरूप का विवेचन तथा शब्द ही से समस्त जगत् की सृष्टि का निरूपण ब्रह्मकांड में है।

द्वितीय काण्ड-

द्वितीय कांड में "पद" वाचक है या "वाक्य" इसका विशद विचार है। भिन्नभिन्न मतों का आलोचन है। इसी कांड में भर्तृहरि ने कहा है शब्द और अर्थ एक ही परमतत्व के दो भेद हैं जो पृथक् नहीं रहते (2.31)। ऋषियों को तत्व का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है किंतु उससे व्यवहार नहीं चल

सकता। इसलिए व्यवहार के समय उन अनिर्वचनीय तत्वों का जिस प्रकार लोग व्यवहार करते हों उसी तरह सभी को करना चाहिए (2.143)। **"प्रतिभा"** को सभी प्रामाणिक मानते हैं और इसी के बल से पक्षियों के भी व्यवहार का ज्ञान लोगों को होता है (2। 149)। बीज बोने के साथ साथ **"लाह"** का रस आदि पदार्थ के मिला देने से उस बीज के फलों के रंग में तथा उसके फलों में भेद हो जाता है। "शास्त्रार्थ" की प्रक्रिया केवल अज्ञ लोगों को समझाने के लिए है, न कि तत्व के प्रतिपादन के लिए। शास्त्रों में प्रक्रियाओं के द्वारा अविद्या का ही विचार है! "अविद्या" के उपमर्दन के पश्चात् आगम के विकल्पों से रहित शास्त्रप्रक्रिया प्रपंचशून्य होने पर "विद्या" के रूप में प्रकट होती है। इसीलिए कहा है कि असत्य के मार्ग के द्वारा ही सत्य की प्राप्ति होती है, जैसे बालकों को पढ़ाते समय उन्हें पहले शास्त्रों का प्रतिपादन केवल प्रतारणमात्र होता है। इत्यादि दार्शनिक रूप से व्याकरण के तत्वों का विचार 493 कारिकाओं में दूसरे कांड में है।

तृतीय काण्ड-

तीसरे कांड में "पदविचार" का प्रक्रम किया गया है। अर्थ द्वारा पदों की परीक्षा होती है। न्यायवैशेषिक के मत में आकाश में सामान्य (जाति) नहीं है किंतु वाक्यपदीय के अनुसार मुख्य या औपाधिक देश भेद के कारण आकाश में भी जाति है । "ज्ञान" स्वप्रकाश है, विषयज्ञान तथा उसका परामर्शज्ञान, ये दोनों भिन्न हैं। इस कांड में 13 खंड हैं जिनमें 450 से अधिक कारिकाओं में दार्शनिक रूप से व्याकरण के पदार्थों का विशद विचार किया गया है। यह कांड खंडित ही है।

वाक्यपदीयम् प्रमुख विवरण-

रचनाकार- भर्तृहरि, काण्ड- 3,

(1) ब्रह्मकाण्ड	(आगम कांड)	156
(2) वाक्यकाण्ड		493
(3) पदकाण्ड/प्रकीर्णकाण्ड।		450

॥अथ ब्रह्मकाण्डम्॥

अनादिनिधनं ब्रह्म शब्दतत्त्वं यदक्षरम् ।
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥१.१॥
एकमेव यदाम्नातं भिन्नं शक्तिव्यपाश्रयात् ।
अपृथक्त्वेऽपि शक्तिभ्यः पृथक्त्वेनेव वर्तते॥१.२॥
अध्याहितकलां यस्य कालशक्तिमुपाश्रिताः ।
जन्मादयो विकाराः षड्भावभेदस्य योनयः॥१.३॥
एकस्य सर्वबीजस्य यस्य चेयमनेकधा ।
भोक्तृभोक्तव्यरूपेण भोगरूपेण च स्थितिः॥१.४॥
प्राप्त्युपायोऽनुकारश्च तस्य वेदो महर्षिभिः ।
एकोऽप्यनेकवर्त्मेव समाम्नातः पृथक्पृथक्॥१.५॥
भेदानां बहुमार्गत्वं कर्मण्येकत्र चाङ्गता ।
शब्दानां यतशक्तित्वं तस्य शाखासु दृश्यते॥१.६॥
स्मृतयो बहुरूपाश्च दृष्टादृष्टप्रयोजनाः ।
तमेवाश्रित्य लिङ्गेभ्यो वेदविद्भिः प्रकल्पिताः॥१.७॥
तस्यार्थवादरूपाणि निश्रित्य स्वविकल्पजाः ।
एकत्विनां द्वैतिनां च प्रवादा बहुधा मताः॥१.८॥
सत्या विसुद्धिस्तत्रोक्ता विद्यैवेकपदागमा ।
युक्ता प्रणवरूपेण सर्ववादाविरोधिना॥१.९॥
विधातुस्तस्य लोकानां अङ्गोपाङ्गनिबन्धनाः ।
विद्याभेदाः प्रतायन्ते ज्ञानसंस्कारहेतवः॥१.१०॥
आसन्नं ब्रह्मणस्तस्य तपसां उत्तमं तपः ।
प्रथमं छन्दसां अङ्गं प्राहुर्व्याकरणं बुधाः॥१.११॥
प्राप्तरूपविभागाया यो वाचः परमो रसः ।
यत्तत्पुण्यतमं ज्योतिस्तस्य मार्गोऽयमाञ्जसः॥१.१२॥
अर्थप्रवृत्तितत्त्वानां शब्दा एव निबन्धनम् ।
तत्त्वाववोधः शब्दानां नास्ति व्याकरणादृते॥१.१३॥
तद्वारं अपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम् ।
पवित्रं सर्वविद्यानां अधिविद्यं प्रकासते॥१.१४॥
यथार्थजातयः सर्वाः सशब्दाकृतिनिबन्धनाः ।
तथैव लोके विद्यानां एसा विद्या परायनम्॥१.१५॥
इदं आद्यं पदस्थानं सिद्धिसोपानपर्वणाम् ।
इयं सा मोक्षमाणानां अजिह्मा राजपद्धतिः॥१.१६॥
अत्रातीतविपर्यासः केवलां अनुपस्यति ।
छन्दस्यस्छन्दसां योनिं आत्मा छन्दोमयीं तनुम्॥१.१७॥
प्रत्यस्थमितभेदाया यद्वाचो रूपं उत्तमम् ।
यदस्मिन्नेव तमसि ज्योतिः शुद्धं विवर्तते॥१.१८॥
वैकृतं समति क्रान्ता मूर्तिव्यापारदर्शनम् ।
व्यतीत्यालोकतमसी प्रकाशं यं उपासते॥१.१९॥
यत्र वाचो निमेत्तानि चिह्नानीवाक्षरस्मृतेः ।
शब्दपूर्वेण योगेन भासन्ते प्रतिबिम्ववत्॥१.२०॥
अथर्वणां अङ्गिरसां सांनां ऋग्यजुषस्य च ।
यस्मिन्नुच्चावचा वर्णाः पृथक्स्थितपरिग्रहाः॥१.२१॥
यदेकं प्रक्रियाभेदैर्बहुधा प्रविभज्यते ।
तद्व्याकरणं आगम्य परं ब्रह्माधिगम्यते॥१.२२॥
नित्याः शब्दार्थसंबन्धास्तत्राम्नाता महर्षिभिः ।
सूत्राणां सानुतन्त्राणां भाष्याणां च प्रणेतृभिः॥१.२३॥
अपोद्धारपदार्थाः ये ये चार्थाः स्थितलक्षणाः ।
अन्वाख्येयाश्च ये शब्दा ये चापि प्रतिपादकाः॥१.२४॥
कार्यकारणभावेन योग्यभावेन च स्थिताः ।
धर्मे ये प्रत्यये चाङ्गं संबन्धाः साध्वसाधुषु॥१.२५॥
ते लिङ्गैश्च स्वशब्दैश्च शास्त्रेऽस्मिन्नुपवर्णिताः ।
स्मृत्यर्थं अनुगम्यन्ते के चिदेव यथागमम्॥१.२६॥
शिष्टेभ्य आगमात्सिद्धाः साधवो धर्मसाधनम् ।
अर्थप्रत्यायनाभेदे विपरीतास्त्वसाधवः॥१.२७॥

नित्यत्वे कृतकत्वे वा तेषां आदिर्न विद्यते ।
प्राणिनां इव सा चेषा व्यवस्थानित्यतोच्यते॥१.२८॥
नानर्थिकां इमां कश्चिद्व्यवस्थां कर्तुं अर्हति ।
तस्मान्निबध्यते शिष्टैः साधुत्वविषया स्मृतिः॥१.२९॥
न चागमादृते धर्मस्तर्केण व्यवतिष्ठते ।
ऋषीणां अपि यज्ज्ञानं तदप्यागमपूर्वकम्॥१.३०॥
धर्मस्य चाव्यवच्छिन्नाः पन्थानो ये व्यवस्थिताः ।
न तांल्लोकप्रसिद्धत्वात्कश्चित्तर्केण बाधते॥१.३१॥
अवस्थादेशकालानां भेदाद्भिन्नासु शक्तिषु ।
भावानां अनुमानेन प्रसिद्धिरतिदुर्लभा॥१.३२॥
निर्ज्ञातशक्तेर्द्रव्यस्य तां तानर्थक्रियां प्रति ।
विशिष्टद्रव्यसंबन्धे सा शक्तिः प्रतिबध्यते॥१.३३॥
यत्नेनानुमितोऽप्यर्थः कुशलैरनुमातृभिः ।
अभियुक्ततरैरन्यैरन्यथैवोपपाद्यते॥१.३४॥
परेषां असमाख्येयं अभ्यासादेव जायते ।
मणिरूप्यादिविज्ञानं तद्विदां नानुमानिकम्॥१.३५॥
प्रत्यक्षं अनुमानं च व्यतिक्रम्य व्यवस्थिताः ।
पितृरक्षःपिशाचानां कर्मजा एव सिद्धयः॥१.३६॥
आविर्भूतप्रकाशानां अनुपप्लुतचेतसाम् ।
अतीतानागतज्ञानं प्रत्यक्षान्न विशिष्यते॥१.३७॥
अतीन्द्रियानसंवेद्यान्पश्यन्त्यार्षेण चक्षुषा ।
ये भावान्वचनं तेषां नानुमानेन बाध्यते॥१.३८॥
यो यस्य स्वं इव ज्ञानं दर्शनं नातिशङ्कते ।
स्थितं प्रत्यक्षपक्षे तं कथं अन्यो निवर्तयेत्॥१.३९॥
चैतन्यं इव यश्चायं अविच्छेदेन वर्तते ।
आगमस्तं उपासीनो हेतुवादैर्न बाध्यते॥१.४०॥
हस्तस्पर्शादिवान्धेन विषमे पथि धावता ।
अनुमानप्रधानेन विनिपातो न दुर्लभः॥१.४१॥
तस्मादकृतकं शास्त्रं स्मृतिं च सनिबन्धनाम् ।
आश्रित्यारभ्यते शिष्टैः साधुत्वविषया स्मृतिः॥१.४२॥
द्वावुपादानशब्देषु शब्दो शब्दविदो विदुः ।
एको निमित्तं शब्दानां अपरोऽर्थे प्रयुज्यते॥१.४३॥
आत्मभेदं तयोः केचिदस्तीत्याहुः पुराणगाः ।
बुद्धिभेदादभिन्नस्य भेदं एके प्रचक्षते॥१.४४॥
अरणिस्थं यथा ज्योतिः प्रकाशान्तरकारणम् ।
तद्वच्छब्दोऽपि बुद्धिस्थः श्रुतीनां कारणं पृथक्॥१.४५॥
वितर्कितः पुरा बुद्ध्या क्वचिदर्थे निवेशितः ।
करणेभ्यो विवृत्तेन ध्वनिना सोऽनुगृह्यते॥१.४६॥
नादस्य क्रमजातत्वान्न पूर्वो न परश्च सः ।
अक्रमः क्रमरूपेण भेदवानिव जायते॥१.४७॥
प्रतिबिम्बं यथान्यत्र स्थितं तोयक्रियावशात् ।
तत्प्रवृत्तिं इवान्वेति स धर्मः स्फोटनादयोः॥१.४८॥
आत्मरूपं यथा ज्ञाने ज्ञेयरूपं च दृश्यते ।
अर्थरूपं तथा शब्दे स्वरूपं च प्रकाशते॥१.४९॥
आण्डभावं इवापन्नो यः क्रतुः शब्दसंज्ञकः ।
वृत्तिस्तस्य क्रियारूपा भागशो लभते क्रमम्॥१.५०॥
यथैकबुद्धिविषया मूर्तिराक्रियते पटे ।
मूर्त्यन्तरस्य त्रितयं एवं शब्देऽपि दृश्यते॥१.५१॥
यथा प्रयोक्तुः प्राग्बुद्धिः शब्देष्वेव प्रवर्तते ।
व्यवसायो ग्रहीतृणां एवं तेष्वेव जायते॥१.५२॥
अर्थोपसर्जनीभूतानभिधेयेषु केषुचित् ।
चरितार्थान्परार्थत्वान्न लोकः प्रतिपद्यते॥१.५३॥
ग्राह्यत्वं ग्राहकत्वं च द्वे शक्ती तेजसो यथा ।
तथैव सर्वशब्दानां एते पृथगवस्थिते॥१.५४॥
विषयत्वं अनापन्नैः शब्दैर्नार्थः प्रकाश्यते ।
न सत्तयैव तेऽर्थानां अगृहीताः प्रकाशकाः॥१.५५॥
अतोऽनिर्ज्ञातरूपत्वात्किं आहेत्यभिधीयते ।
नेन्द्रियाणां प्रकाश्येऽर्थे स्वरूपं गृह्यते तथा॥१.५६॥
भेदेनावगृहीतौ द्वौ शब्दधर्मावपोद्धृतौ ।
भेदकारेषु हेतुत्वं अविरोधेन गच्छतः॥१.५७॥
वृद्ध्यादयो यथा शब्दाः स्वरूपोपनिबन्धनाः ।
आदेच्प्रत्यायितैः शब्दैः संबन्धं यान्ति संज्ञिभिः॥१.५८॥
अग्निशब्दस्तथैवायं अग्निशब्दनिबन्धनः ।
अग्निश्रुत्यैति संबन्धं अग्निशब्दाभिधेयया॥१.५९॥
यो य उच्चार्यते शब्दो नियतं न स कार्यभाक् ।
अन्यप्रत्यायने शक्तिर्न तस्य प्रतिबध्यते॥१.६०॥
उच्चरन्परतन्त्रत्वाद्गुणः कार्यैर्न युज्यते ।
तस्मात्तदर्थैः कार्याणां संबन्धः परिकल्प्यते॥१.६१॥
सामान्यं आश्रितं यद्यदुपमानोपमेययोः ।
तस्य तस्योपमानेषु धर्मोऽन्यो व्यतिरिच्यते॥१.६२॥
गुणः प्रकर्षहेतुर्यः स्वातन्त्र्येणोपदिश्यते ।
तस्याश्रिताद्गुणादेव प्रकृष्टत्वं प्रतीयते॥१.६३॥
तस्याभिधेयभावेन यः शब्दः समवस्थितः ।
तसाप्युच्चारणे रूपं अन्यत्तस्माद्विविच्यते॥१.६४॥
प्राक्संज्ञिनाभिसंबन्धात्संज्ञा रूपपदार्थिका ।
षष्ठ्याश्च प्रथमायाश्च निमित्तत्वाय कल्पते॥१.६५॥
तत्रार्थवत्त्वात्प्रथमा संज्ञाशब्दात्प्रतीयते ।
अस्येते व्यतिरेकश्च तदर्थादेव जायते॥१.६६॥
स्वं रूपं इति कैश्चित्तु व्यक्तिः संज्ञोपदिश्यते ।
जातेः कार्याणि संसृष्टा जातिस्तु प्रतिपद्यते॥१.६७॥
संज्ञिनीं व्यक्तिं इच्छन्ति सूत्रे ग्राह्यां अथापरे ।
जातिप्रत्यायिता व्यक्तिः प्रदेशेषूपतिष्ठते॥१.६८॥
कार्यत्वे नित्यतायां वा के चिदेकत्ववादिनः ।
कार्यत्वे नित्यतायां वा के चिन्नानात्ववादिनः॥१.६९॥
पदभेदेऽपि वर्णानां एकत्वं न निवर्तते ।
वाक्येषु पदं एकं च भिन्नेष्वप्युपलभ्यते॥१.७०॥

न वर्णव्यतिरेकेण पदं अन्यच्च विद्यते ।
वाक्यं वर्णपदाभ्यां च प्रविभागो न कश्चन॥१.७१॥
पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च ।
वाक्यात्पदानां अत्यन्तं प्रविभागो न कश्चन॥१.७२॥
भिन्नदर्शनं आश्रित्य व्यवहारोऽनुगम्यते ।
तत्र यन्मुख्यं एकेषां तत्रान्येषां विपर्ययः॥१.७३॥
स्फोतस्याभिन्नकालस्य ध्वनिकालानुपातिनः ।
ग्रहणोपाधिभेदेन वृत्तिभेदं प्रचक्षते॥१.७४॥
स्वभावभेदान्नित्यत्वे ह्रस्वदीर्घप्लुतादिषु ।
प्राकृतस्य ध्वनेः कालः शब्दस्येत्युपचर्यते॥१.७५॥
शब्दस्योर्ध्वं अभिव्यक्तेर्वृत्तिभेदं तु वैकृतः ।
ध्वनयः समुपोहन्ते स्फोटात्मा तैर्न भिद्यते॥१.७६॥
इन्द्रियस्यैवसंस्कारः शब्दस्यैवोभवस्य वा ।
क्रियते ध्वनिभिर्वादास्त्रयोऽभिव्यक्तिवादिनाम्॥१.७७॥
इन्द्रियस्यैव संस्कारः समाधानाञ्जनादिभिः ।
विषयस्य तु संस्कारः तद्गन्धप्रतिपत्तये॥१.७८॥
चक्षुषः प्राप्यकारित्वे तेजसा तु द्वयोरपि ।
विषयेन्द्रिययोरिष्टा संस्कारः स क्रमो ध्वनेः॥१.७९॥
स्फोटरूपाविभागेन ध्वनेर्ग्रहणं इष्यते ।
कैश्चित्ध्वनिरसंवेद्यः स्वतन्त्रोऽन्यैः प्रकल्पितः॥१.८०॥
यथानुवाकः श्लोको वा सोढत्वं उपगच्छते ।
आवृत्त्या न तु स ग्रन्थः प्रत्यावृत्ति निरूप्यते॥१.८१॥
प्रत्ययैरनुपाख्येयैर्ग्रहणानुगुणैस्तथा ।
ध्वनिप्रकाशिते शब्दे स्वरूपं अवधार्यते॥१.८२॥
नादैराहितबीजायां अन्त्येन ध्वनिना सह ।
आवृत्तपरिपाकायां बुद्धौ शब्दोऽवधार्यते॥१.८३॥
असतश्चान्तराले याञ् छब्दानस्तीति मन्यते ।
प्रतिपत्तुरशक्तिः सा ग्रहणोपाय एव सः॥१.८४॥
भेदानुकारो ज्ञानस्य वाचश्चोपप्लवो ध्रुवः ।
क्रमोपसृष्टरूपा वाग्ज्ञानं ज्ञेयव्यपाश्रयम्॥१.८५॥
यथाद्यसंख्याग्रहणं उपायः प्रतिपत्तये ।
संख्यान्तराणां भेदेऽपि तथा शब्दान्तरश्रुतिः॥१.८६॥
प्रत्येकं व्यञ्जका भिन्न वर्णवाक्यपदेषु ये ।
तेषां अत्यन्तभेदेऽपि संकीर्णा इव शक्तयः॥१.८७॥
यथैव दर्शनैः पूर्वैर्दूरात्संतमसेऽपि वा ।
अन्यथाकृत्य विषयं अन्यथैवाध्यवस्यति॥१.८८॥
व्यज्यमाने तथा वाक्ये वाक्याभिव्यक्तिहेतुभिः ।
भागावग्रहरूपेण पूर्वं बुद्धिः प्रवर्तते॥१.८९॥
यथानुपूर्वीनियमो विकारे क्षीरबीजयोः ।
तथैव प्रतिपत्तॄणां नियतो बुद्धिषु क्रमः॥१.९०॥
भागवत्स्वपि तेष्वेव रूपभेदो ध्वनेः क्रमात् ।
निर्भागेष्वभ्युपायो वा भागभेदप्रकल्पनम्॥१.९१॥
अनेकव्यक्त्यभिव्यङ्ग्या जातिः स्फोट इति स्मृता ।
कैश्चित्व्यक्तय एवास्य ध्वनित्वेन प्रकल्पिताः॥१.९२॥
अविकारस्य शब्दस्य निमित्तैर्विकृतो ध्वनिः ।
उपलब्धौ निमित्तत्वं उपयाति प्रकाशवत्॥१.९३॥
न चानित्येष्वभिव्यक्तिर्नियमेन व्यवस्थिता ।
आश्रयैरपि नित्यानां जातीनां व्यक्तिरिष्यते॥१.९४॥
देशादिभिश्च संबन्धो दृष्टः कायवतां अपि ।
देशभेदविकल्पेऽपि न भेदो ध्वनिशब्दयोः॥१.९५॥
ग्रहणग्राह्ययोः सिद्धा योग्यता नियता यथा ।
व्यङ्ग्यव्यञ्जकभावेऽपि तथैव स्फोटनादयोः॥१.९६॥
सदृशग्रहणानां च गन्धादीनां प्रकाशकम् ।
निमित्तं नियतं लोके प्रतिद्रव्यं अवस्थितम्॥१.९७॥
प्रकाशकानां भेदांश्च प्रकाश्योऽर्थोऽनुवर्तते ।
तैलोदकादिभेदे तत्प्रत्यक्षं प्रतिबिम्बके॥१.९८॥
विरुद्धपरिमाणेषु वज्रादर्शतलादिषु ।
पर्वतादिसरूपाणां भावानां नास्ति संभवः॥१.९९॥
तस्मादभिन्नकालेषु वर्णवाक्यपदादिषु ।
वृत्तिकालः स्वकालश्च नादभेदाद्विभज्यते॥१.१००॥
यः संयोगविभागाभ्यां करणैरुपजन्यते ।
स स्फोटः शब्दजाः शब्दा ध्वनयोऽन्यैरुदाहृताः॥१.१०१॥
अल्पे महति वा शब्दे स्फोटकालो न भिद्यते ।
परस्तु शब्दसंतानः प्रचयापचयात्मकः॥१.१०२॥
दूरात्प्रभेव दीपस्य ध्वनिमात्रं तु लक्ष्यते ।
घण्टादूनां च शब्देषु व्यक्तो भेदः स दृश्यते॥१.१०३॥
द्रव्याभिघातात्प्रचितौ भिन्नौ दीर्घप्लुतावपि ।
कम्पे तूपरते जाता नादा वृत्तेर्विशेषकाः॥१.१०४॥
अनवस्थितकम्पेऽपि करणे ध्वनयोऽपरे ।
स्फोटादेवोपजायन्ते ज्वाला ज्वालान्तरादिव॥१.१०५॥
वायोरणूनां ज्ञानस्य शब्दत्वापत्तिरिष्यते ।
कैश्चिद्दर्शनभेदो हि प्रवादेष्वनवस्थितः॥१.१०६॥
अजस्रवृत्तिर्यः शब्दः सूक्ष्मत्वान्नोपलभ्यते ।
व्यजनाद्वायुरिव स स्वनिमित्तात्प्रतीयते॥१.१०७॥
तस्य प्राणे च या शक्तिर्या च बुद्धौ व्यवस्थिता ।
विवर्तमाना स्थानिषु सैषा भेदं प्रपद्यते॥१.१०८॥
शब्देष्वेवाश्रिता शक्तिर्विश्वस्यास्य निबन्धनी ।
यन्नेत्रः प्रतिभात्मायं भेदरूपः प्रतीयते॥१.१०९॥
शब्दादिभेदः शब्देन व्याख्यातो रूप्यते यतः ।
तस्मादर्थविधाः सर्वाः शब्दमात्रासु निश्रिताः॥१.११०॥
शब्दस्य परिणामोऽयं इत्याम्नायविदो विदुः ।
छन्दोभ्य एव प्रथमं एतद्विश्वं व्यवर्तत॥१.१११॥
इतिकर्तव्यता लोके सर्वा शब्दव्यपाश्रया ।
यां पूर्वाहितसंस्कारो बालोऽपि प्रतिपद्यते॥१.११२॥
आद्यः कारणविन्यासः प्राणस्योर्ध्वं समीरणम् ।
स्थानानां अभिघातश्च न विना शब्दभावनाम्॥१.११३॥

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते ।
अनुविद्धं इव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते॥१.११४॥
वाग्रूपता चेतुत्क्रामेदवबोधस्य शाश्वती ।
न प्रकाशः प्रकाशेत सा हि प्रत्यवमर्शिनी॥१.११५॥
सा सर्वविद्याशिल्पानां कलानां चोपबन्धनी ।
तद्वशादभिनिष्पन्नं सर्वं वस्तु विभज्यते॥१.११६॥
सैषा संसारिणां संज्ञा बहिरन्तश्च वर्तते ।
तन्मात्रां अव्यतिक्रान्तं चैतन्यं सर्वजान्तुषु॥१.११७॥
प्रविभागे यथा कर्ता तया कार्ये प्रवर्तते ।
अविभागे तथा सैव कार्यत्वेनावतिष्ठते॥१.११८॥
प्रविभज्यात्मनात्मानं सृष्ट्वा भावान्पृथग्विधान् ।
तथैव रूढतां एति तया ह्यर्थो विधीयते॥१.११९॥
अत्यन्तं अतथाभूते निमित्ते श्रुत्युपाश्रयात् ।
दृश्यतेऽलातचक्रादौ वस्त्वाकारनिरूपणा॥१.१२०॥
अपि प्रयोक्तुरात्मानं शब्दं अन्तरवस्थितम् ।
प्राहुर्महान्तं ऋषभं येन सायुज्यं इष्यते॥१.१२१॥
तस्माद्यः शब्दसंस्कारः सा सिद्धिः परमात्मनः ।
तस्य प्रवृत्तितत्त्वज्ञस्तद्ब्रह्मामृतं अश्नुते॥१.१२२॥
न जात्वकर्तृकं कश्चिदागमं प्रतिपद्यते ।
बीजं सर्वागमापाये त्रय्येवातो व्यवस्थिता॥१.१२३॥
अस्तं यातेषु वादेषु कर्तृष्वन्येष्वसत्स्वपि ।
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्मं लोको न व्यतिवर्तते॥१.१२४॥
ज्ञाने स्वाभाविके नार्थः शास्त्रैः कश्चन विद्यते ।
धर्मो ज्ञानस्य हेतुश्चेत्तस्याम्नायो निवन्धनम्॥१.१२५॥
वेदशास्त्राविरोधो च तर्कश्चक्शुरपश्यताम् ।
रूपमात्राद्धि वाक्यार्थः केवलान्नावतिष्ठते॥१.१२६॥
सतोऽविवक्षा पारार्थ्यं व्यक्तिरर्थस्य लैङ्गिकी ।
इति न्यायो वहुविधस्तर्केण प्रविभज्यते॥१.१२७॥
शब्दानां एव सा शक्तिस्तर्को यः पुरुषाश्रयः ।
स शब्दानुगतो न्यायोऽनागमेष्वनिबन्धनः॥१.१२८॥
रूपादयो यथा दृष्टाः पत्यर्थं यतशक्तयः ।
शब्दास्तथैव दृश्यन्ते विषापहरणादिषु॥१.१२९॥
यथैषां तत्र सामर्थ्यं धर्मेऽप्येवं प्रतीयताम् ।
साधूनां साधुभिस्तस्माद्वाच्यं अभ्युदयार्थिनाम्॥१.१३०॥
सर्वोऽदृष्टफलानर्थानागमात्प्रतिपद्यते ।
विपरीतं च सर्वत्र शक्यते वक्तुं आगमे॥१.१३१॥
साधुत्वज्ञानविषया सेयं व्याकरणस्मृतिः ।
अविच्छेदेन शिष्टानां इदं स्मृतिनिबन्धनम्॥१.१३२॥
वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्चैतदद्भुतम् ।
अनेकतीर्थभेदायास्त्रय्या वाचः परं पदम्॥१.१३३॥
तद्विभागाविभागाभ्यां क्रियमाणां अवस्थितम् ।
स्वभावज्ञैस्तु भावानां दृश्यन्ते शब्दशक्तयः॥१.१३४॥
अनादिं अव्यवच्छिन्नां श्रुतिं आहुरकर्तृकाम् ।
शिष्टैर्निबध्यमाना तु न व्यवच्छिद्यते स्मृतिः॥१.१३५॥
अविभागाद्विवृत्तानां अभिख्या स्वप्नवच्छ्रुतौ ।
भावतत्त्वं तु विज्ञाय लिङ्गेभ्यो विहिता स्मृतिः॥१.१३६॥
कायवाग्बुद्धिविषया ये मलाः समवस्थिताः ।
चिकित्सालक्षणाध्यात्म- शास्त्रैस्तेषां विशुद्धयः॥१.१३७॥
शब्दः संस्कारहीनो यो गौरिति प्रयुयुक्षिते ।
तं अपभ्रंशं इच्छन्ति विशिष्टार्थनिवेशिनम्॥१.१३८॥
अस्वगोण्यादयः शब्दाः साधवो विषयान्तरे ।
निमित्तभेदात्सर्वत्र साधुत्वं च व्यवस्थितम्॥१.१३९॥
ते साधुष्वनुमानेन प्रत्ययोत्पत्तिहेतवः ।
तादात्म्यं उपगम्येव शब्दार्थस्य प्रकाशकाः॥१.१४०॥
न शिष्टैरनुगम्यन्ते पर्याया इव साधवः ।
ते यतः स्मृतिशास्त्रेण तस्मात्साक्षादवाचकाः॥१.१४१॥
अम्बाम्बेति यथा बालः शिक्षमाणः प्रभाषते।
अव्यक्तं तद्विदां तेन व्यक्तौ भवति निश्चयः॥१.१४२॥
एवं साधौ प्रयोक्तव्ये योऽपभ्रंशः प्रयुज्यते ।
तेन साधुव्यवहितः कश्चिदर्थोऽभिधीयते॥१.१४३॥
पारंपर्यादपभ्रंशा विगुणेष्वभिधातृषु ।
प्रसिद्धिं आगता येषु तेषां साधुरवाचकः॥१.१४४॥
दैवी वाग्व्यतिकीर्णेयं अशक्तैरभिधातृभिः ।
अनित्यदर्शिनां त्वस्मिन्वादे बुद्धिविपर्ययः॥१.१४५॥
उभयेषां अविच्छेदादन्यशब्दविवक्षया ।
योन्यः प्रयुज्यते शब्दो न सोऽर्थस्याभिधायकः ॥१.१४६॥

॥अथ ब्रह्मकाण्डम्॥

शब्द ब्रह्म का स्वरूप-

॥मङ्गलाचरण॥

"अनादिनिधनं ब्रह्म, शब्दतत्त्वं यदक्षरम् ।
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः"।।

जो ब्रह्म नित्य बृंहणशील है तथा जिसका आदि और निधन संभव नहीं है, वास्तव में वह शब्दतत्व ही है, जो क्षरण अथवा न्यूनता से रहित अर्थात् अक्षर रूप है । जिससे उद्भूत होकर इस जगत की व्यवहार प्रक्रिया चलती है ।

एकमेव यदाम्नातं भिन्नं शक्तिव्यपाश्रयात् ।
अपृथक्त्वेऽपि शक्तिभ्यः पृथक्त्वेनेव वर्तते ॥

जो ब्रह्म एक ही है परन्तु अपनी दिक्, साधन, क्रिया, काल आदि शक्तियों के कारण एक होते हुए भी अनेक सा प्रतीत होता है ।

एकस्य सर्वबीजस्य यस्य चेयमनेकधा ।
भोक्तृभोक्तव्यरूपेण भोगरूपेण च स्थितिः ॥

ब्रह्मरूप वह शब्दतत्व एक और सर्वबीज है, परन्तु नये नये शब्दरूपों को जन्म देने के कारण वह भोक्ता, भोक्तव्य और भोग के रूप में इन स्थितियों के द्वारा अनेकरूपता को प्राप्त करता है।

शब्दब्रह्म की शक्तियाँ-

अध्याहितकलां यस्य कालशक्तिमुपाश्रिताः ।
जन्मादयो विकाराः षड्भावभेदस्य योनयः ॥

कालरूप शक्ति उस शब्दब्रह्म की अविच्छेद्य और अन्तर्हित कला है । वह अनाहत और अप्रतिरुद्ध है । उसको आधार बानाकर ही जन्म, वृद्धि, क्षय, मरण आदि छह विकृतियाँ या विविध स्थितियाँ मानी जाती है, जो आगे चलकर छह विविध 'भावभेदों' को जन्म देती है ।
काल की दो शक्तियां- **1. अभ्यनुज्ञा 2. अप्रतिबन्ध** । शब्दब्रह्म की निमित्ततः कर्तृशक्ति **कालशक्ति** है । स्वतन्त्र जन्मादय छह भावविकार हैं कालशक्ति की उपादान शक्ति **जन्मादिशक्ति** है । जन्मादि उपादानशक्ति सदैव कर्तृत्वशक्तिस्वरूप कालशक्ति से मिलकर ही कार्यसम्पादन में समक्ष होती है। दोनों नित्य हैं । एक ही शब्दब्रह्म के जीव अजीव आदि विवर्त हैं ।

शब्द और अर्थ का सम्बन्ध-

नित्याः शब्दार्थसंबन्धास्तत्राम्नाता महर्षिभिः ।
सूत्राणां सानुतन्त्राणां भाष्याणां च प्रणेतृभिः ॥

महर्षियों ने एवं सव्याख्यान सूत्रों अथवा उनके भाष्यों के प्रणेताओं ने, शब्दार्थसम्बन्धों को नित्य ही माना है या ऐसा पाठ किया है । **सूत्राणां**- पाणिनि आदि, **सानुतन्त्राणां**- कात्यायन आदि, **भाष्याणां**- पतञ्जलि आदि।

अपोद्धारपदार्थाः ये ये चार्थाः स्थितलक्षणाः ।
अन्वाख्येयाश्च ये शब्दा ये चापि प्रतिपादकाः ॥

अर्थ दो प्रकार के होते हैं-

1. अपोद्धारपदार्थ (कल्पित) प्रकृति प्रत्यय रूप जिसमें व्याकरण द्वारा प्रकृत-प्रत्यय के विभाग की कल्पना की जाती है ।
2. स्थितलक्षण- (अकल्पित) जिसके पद-वाक्य का स्वरूप निश्चित रहे।

शब्द भी दो प्रकार के हैं-

1. अन्वाख्येय- ये शब्द प्रतिपादक शब्दों के विपरीत हैं इसमें तथाकथित पदार्थ या शब्दार्थ को ध्वनित करने वाली शब्द कोटि होती है ।
2. प्रतिपादक- यह वह शब्दकोटि है, जो किन्हीं रूढार्थों को वहन करके या बिना किये भी अन्यान्य द्रव्यों की संकेतिका होती है ।

सम्बन्ध दो प्रकार के होते हैं-

कार्यकारणभावेन योग्यभावेन च स्थिताः ।
धर्मे ये प्रत्यये चाङ्गं संबन्धाः साध्वसाधुषु ॥

1. कार्यकारणभाव- जिसमें कार्यकारणभाव खोजा जा सके ।
2. योग्यभाव- जिसमें सहज योग्यता अन्तर्हित होती है ।
ये सम्बन्ध भी द्विविध रहते हैं- धर्म के अङ्ग बनकर या प्रत्यय के अङ्ग बनकर । ये सम्बन्ध साधु और असाधु शब्दों में समान रूप से स्थित रहते हैं ।

व्याकरण में (1) द्विविध अर्थ, (2) द्विविध शब्द, (3) द्विविध सम्बन्ध (4) द्विविध फलस्वरूप । इन अष्टविध प्रतिपाद्यों में 'अपोद्धारपदार्थ' तथा 'अन्वाख्येय' शब्दों का ही यहां शास्त्र द्वारा साधुपद तदर्थ स्मरणपूर्वक अनुगमन किया जाता है।

नित्यत्वे कृतकत्वे वा तेषां आदिर्न विद्यते ।
प्राणिनां इव सा चैषा व्यवस्थानित्यतोच्यते ॥

शब्द नित्य हो या कार्य उसका प्रचलन साधु रूप में माना जाए या असाधु रूप में पर चरमसत्य यह है कि साधु-असाधु अथवा नित्य-कार्य शब्दों के प्रचलन और प्रयोग की यह व्यवस्था अनिश्चित ही है।

शब्दों में दो पृथक्पृथक् शक्तियां/धर्म -

ग्राह्यत्वं ग्राहकत्वं च द्वे शक्ती तेजसो यथा ।
तथैव सर्वशब्दानां एते पृथगवस्थिते ॥

जिस प्रकार तेजस की दो शक्तियां 'ग्राह्यत्व' और 'ग्राहकत्व' के रूप में स्थित हैं उसी प्रकार ये ही दोनो शक्तियां सभी शब्दों में भी स्थित है, ये दोनों शक्तियां एक-दूसरे से पृथक हैं ।

॥प्रमाणस्वरूप॥

वाक्यपदीयानुसार **प्रमाण- 5,**
(1) शब्द/आगम (2) अनुमान (3) अदृष्ट
(4) अभ्यास (5) प्रत्यक्ष,
प्रधान **प्रमाण- आगम,**

आगमप्रमाणसिद्धिः-

न चागमादृते धर्मस्तर्केण व्यवतिष्ठते
ऋषीणामपि यज्ज्ञानं तदप्यागमपूर्वकम् ।।

यदि आगम का आधार न हो तो, केवल तर्क के सहारे से धर्म भी नहीं रह सकता । सत्य तो यह है कि ऋषियों का भी ज्ञान और उनकी उपलब्धि आगम के आधार पर ही टिकी होती है ।

धर्मस्य चाव्यवच्छिन्नाः पन्थानो ये व्यवस्थिताः ।
न तांल्लोकप्रसिद्धत्वात्कश्चित्तर्केण बाधते ॥

धर्मव्यवस्था का मुख्य कारक **आगम प्रमाण** है । इसका तर्क के द्वारा बाध नहीं किया जाता सकता है ।

अनुमानप्रमाण की दुर्लभता-

अवस्थादेशकालानां भेदाद्भिन्नासु शक्तिषु
भावानामनुमानेन प्रसिद्धिरतिदुर्लभा ।।

अवस्था देश और काल के भेद से भिन्न शक्तियों के रहते हुए केवल अनुमान के बल पर भावों की पहचान अथवा उनका प्रसिद्धि निर्धारण अत्यन्त दुर्लभ है ।

यत्नेनानुमितोऽप्यर्थः कुशलैरनुमातृभिः ।
अभियुक्ततरैरन्यैरन्यथैवोपपाद्यते ॥

कुशल प्रयोक्ता अथवा अनुमाता अपने प्रयोग चमत्कार द्वारा चाहे अपने अनुमित अर्थ को कितने ही यत्न से प्रयोग करे परन्तु कृतनिश्चय ग्रहीता उस शब्द को अन्यथा ही ग्रहण करता है ।

अभ्यासाऽदृष्टप्रमाणसिद्धिः-

परेषामसमाख्येयमभ्यासादेव जायते।
मणिरूप्यादिविज्ञानं तद्विदां नानुमानिकम्।।

कोई भी वस्तु अभ्यास के बाद ही आपत्तिहीन रूप में प्रयोज्य हो पाती है यहां तक कि मणि, रजत आदि के विशेषज्ञों के लिये भी उनकी पहचान अनुमान पर न टिकी होकर अभ्यास पर ही टिकी रहती है ।

प्रत्यक्षं अनुमानं च व्यतिक्रम्य व्यवस्थिताः ।
पितृरक्षःपिशाचानां कर्मजा एव सिद्धयः ॥

पितर, राक्षस और पिशाचों की कार्यसिद्धि कर्मज (अभ्यासज) ही होती है उन्हें न प्रत्यक्ष से विशेष प्रयोजन होता है न अनुमान से ।

प्रत्यक्षप्रमाणसिद्धि-

आविर्भूतप्रकाशानां अनुपप्लुतचेतसाम् ।
अतीतानागतज्ञानं प्रत्यक्षान्न विशिष्यते ॥

जिन्हें प्रकाश उपलब्ध हो चुका है और जिनके चित्त में किसी प्रकार का संशय अवशिष्ट नहीं रहा है, उन ऋषियों का भूत और भविष्य से सम्बन्धी ज्ञान प्रत्यक्ष से किसी भी प्रकार भिन्न या हीन नहीं होता ।

स्फ़ोट का स्वरूप-

तस्मादकृतकं शास्त्रं स्मृतिं च सनिबन्धनाम् ।
आश्रित्यारभ्यते शिष्टैः साधुत्वविषया स्मृतिः ॥

शिष्ट लोग अकृतक (वेद) शास्त्र और स्मृति का आधार लेकर ही व्याकरण विषयक शब्दों का अनुशासन करते हैं ।

द्वावुपादानशब्देषु शब्दौ शब्दविदो विदुः ।
एको निमित्तं शब्दानां अपरोऽर्थे प्रयुज्यते ॥

उपादान शब्दों में दो प्रकार के शब्दों का अस्तित्व शब्दविद लोग मानते हैं इसमें एक शब्दों का निमित्तक (स्फ़ोट) शब्द माना गया है और दूसरे को अर्थभावना (ध्वनि) से प्रयुक्त किया जाता है ।

अरणिस्थं यथा ज्योतिः प्रकाशान्तरकारणम् ।
तद्वच्छब्दोऽपि बुद्धिस्थः श्रुतीनां कारणं पृथक् ॥

जिस प्रकार अरणि में स्थित अव्यक्त अग्नि ही अन्यत्र प्रकाश का कारण बनती है उसी प्रकार बुद्धिस्थ अनभिव्यक्त शब्द ही बाह्य श्रुतिरूप में सुनाई देने वाले अनेक शब्दरूपों की अभिव्यक्ति का कारण बनता है ।

नादस्य क्रमजातत्वान्न पूर्वो न परश्च सः ।
अक्रमः क्रमरूपेण भेदवानिव जायते ॥

नाद के क्रम से उत्पन्न होने के कारण उसके पूर्वापर की स्थिति को अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता परन्तु अक्रम शब्द ही क्रम रूप में उत्पन्न होने के कारण भेदवान जैसा प्रतीत होता है । बुद्धिस्थ, क्रम रहित **स्फोट (अक्रम)** होता है । स्फोटात्मक शब्द 'कालकृत परिच्छेद' रहित है। अतः नित्य है, अक्रम है।

प्रतिबिम्बं यथान्यत्र स्थितं तोयक्रियावशात् ।
तत्प्रवृत्तिं इवान्वेति स धर्मः स्फोटनादयोः ॥

नाद का स्वभाव तोय क्रिया की भांति अस्थिर है, जबकि स्फ़ोट का स्वभाव तोय (जल) में पड़ने वाले प्रतिबिम्ब की भाँति अपने रूप गुण में अविचाली है ।

आण्डभावं इवापन्नो यः क्रतुः शब्दसंज्ञकः ।
वृत्तिस्तस्य क्रियारूपा भागशो भजते क्रमम् ॥

शब्द संज्ञक जो यज्ञ अण्डभाव को प्राप्त हो चुका है क्रियाविस्तार रूप में उसकी वृत्ति ही खण्डशः क्रम को प्राप्त होती है ।

स्फोट के आठ भेद -

(1) वर्णस्फोट (2) पदस्फोट
(3) वाक्यस्फोट (4) अखण्ड पद स्फोट
(5) वर्णजातिस्फोट (6) पदजातिस्फोट
(7) वाक्यजातिस्फोट (8) अखण्ड वाक्यस्फोट।

स्फ़ोट और ध्वनि का सम्बन्ध-

स्फोटस्याभिन्नकालस्य ध्वनिकालानुपातिनः ।
ग्रहणोपाधिभेदेन वृत्तिभेदं प्रचक्षते ॥

शब्द या वाक्य के उच्चारण में जो काल लगता है वह वर्ण ध्वनि के ह्रस्व दीर्घादि भेद के कारण होता है उसे ध्वनि काल कहा जाता है । और शब्द या वाक्य का ग्रहण स्फ़ोट के रूप में होता है । वह स्फ़ोट एक ही क्षण में विस्फ़ोट जैसे रूप में होता है ।

स्वभावभेदान्नित्यत्वे ह्रस्वदीर्घप्लुतादिषु ।
प्राकृतस्य ध्वनेः कालः शब्दस्येत्युपचर्यते ॥

ह्रस्व दीर्घ प्लुतादि भेद ध्वनियों के हैं अतः उन पर आश्रित शब्द के उच्चारण में जो कम या अधिक समय लगता है उसे ध्वनि काल के रूप में कहा जाता है । यही शब्द काल है इस भेदयुक्त ध्वनि को प्राकृत ध्वनि भी कहा जाता है ।

स्फोटरूपाविभागेन ध्वनेर्ग्रहणं इष्यते ।
कैश्चित्ध्वनिरसंवेद्यः स्वतन्त्रोऽन्यैः प्रकल्पितः ॥

ध्वनि का ग्रहण स्फ़ोट से अविभक्त रूप में रहकर ही होता है, इस पर कुछ विद्वान ध्वनि का अस्तित्व पृथक् से स्वीकार नहीं करते परन्तु कुछ विद्वान ध्वनि की सत्ता स्फ़ोट से पृथक् स्वीकार करते हैं, भले ही ध्वनि का ग्रहण स्फ़ोट से अविभक्त रूप में रहकर ही होता है ।

यः संयोगविभागाभ्यां करणैरुपजन्यते ।
स स्फोटः शब्दजाः शब्दा ध्वनयोऽन्यैरुदाहृताः ॥

सामान्यतः स्फ़ोट को शब्द का वास्तविक स्वरूप माना जाता है क्योंकि संयोग विभागात्मक ध्वनियों के द्वारा उत्पन्न और नाद द्वारा ग्रहीत होने पर शब्द उसी रूप में अपनी प्रतीति देता है कुछ विद्वान स्फ़ोट रूप में ग्रहीत शब्द से उत्पन्न होने वाली प्रचयापचयात्मक वैकृत ध्वनियों से उपलब्ध होने वाली प्रचयापचयात्मक प्रतीति को ही शब्द स्वीकारते हैं।

॥ध्वनि॥

स्फोट को अभिव्यक्त करने वाली ध्वनि का सम्बन्ध कालकृतपरिच्छेद सहित है ।

"स्फोटस्याभिन्नकालस्य ध्वनिकालानुपातिनः।
ग्रहणोपाधिभेदेन वृत्तिभेदं प्रचक्षते"।।

ध्वनि के प्रकार-

वर्णस्य ग्रहणे हेतुः प्राकृतो ध्वनिरिष्यते ।
स्थितिभेदनिमित्तत्वं वैकृतः प्रतिपद्यते ॥

उच्चरित वर्ण मात्र के ग्रहण में हेतु ध्वनि को प्राकृत ध्वनि के नाम से जाना जाता है जबकि इससे भिन्न स्थिति में उसके ग्रहण में हेतुभूत तत्व को वैकृत ध्वनि कहा जाता है यह ध्वनि प्राकृत ध्वनि से भिन्न होती है, अतः प्राकृत और वैकृत के भेद से ध्वनि दो प्रकार की होती है ।

ध्वनि दो प्रकार की है-

(1) **प्राकृत स्वभाविक-(नित्य)** स्फोट को अभिव्यक्त करने वाली- **मध्यमा।**

(2) **वैकृत- (अनित्य अभिव्यक्त)** स्फोट स्वरूप को निरन्तर लम्बे समय तक उपलब्ध करने वाली- **वैखरी।**

प्राकृत ध्वनि के कारण शब्द को ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत आदि कहा जाता है।

भाषा के स्तर-

शब्दः संस्कारहीनो यो गौरिति प्रयुयुक्ष्यते ।
तं अपभ्रंशं इच्छन्ति विशिष्टार्थनिवेशिनम् ॥

अपभ्रंश भी मूलतः शब्द की प्रकृत अवस्था से ही जन्म लेता है अर्थात् सामान्य शब्दों के समान ही अपभ्रंश का मूल भी भाषा की सामान्य प्रकृति से ही आरम्भ होता है अतः साधु शब्दों को ही अपभ्रंश शब्दों की प्रकृति मानना होगा धीरे-धीरे उस अपभ्रंश अवस्था में ही वे अर्थस्वातन्त्र की दृष्टि से स्वतन्त्र हो जाते हैं जैसे गो शब्द से गावी, गोणी आदि शब्द ।

दैवी वाग्व्यतिकीर्णेयं अशक्तैरभिधातृभिः ।
अनित्यदर्शिनां त्वस्मिन्वादे बुद्धिविपर्ययः ॥

व्याकरण की स्मृति के अनुकूल उक्त देवीवाक् अभ्यासहीन और अज्ञानादि से अशक्त वक्ताओं द्वारा अपभ्रंश शब्दों के व्यामिश्रण के कारण संकीर्ण कर दी गई है । किन्तु अनित्यवादी इसे दूसरी दृष्टि से देखते हैं वे प्रकृति से आगत प्राकृत और स्वर संस्कारादि से युक्त उनके लिए संस्कृत है अतः वे अपभ्रंश या असाधु को ही वाक् का मूल शब्द मानते हैं । संस्कृत उनकी दृष्टि में विकार मात्र है ।

वैखर्या मध्यमायाश्च पश्यन्त्याश्चैतदद्भुतम् ।
अनेकतीर्थभेदायास्त्रय्या वाचः परं परम् ॥

वाणी के तीन पद वैखरी, मध्यमा और पश्यन्ती के रूप में माने गये हैं, वे तीनों ही व्याकरण के क्षेत्र में आते हैं ।

वैखरी- वैखरी अन्यों द्वारा अनुभूयमान व्क्तावाक् है, अर्थात् जिसके द्वारा हम बोलते हैं ।

मध्यमा- मध्यमा का सम्बन्ध बुद्धि और उच्चारण की प्रयत्नावस्था से है जिससे वह ध्वनि क्रम को पाती है ।

पश्यन्ती- पश्यन्ती बुद्धिस्थ शब्द की वह स्थिति है जिसमें शब्द अखण्ड रूप में मन या बुद्धि में स्थित रहता है ।

वाक्यपदीयम् के मुख्य सन्दर्भ-

❖ **साधु-असाधु शब्द-**

"शिष्टेभ्य आगमात् सिद्धाः साधवो धर्मसाधनम्"। शिष्टों के व्यवहार से आगत- आगमसिद्ध=**साधु** तथा इसके विपरीत=**असाधु** ।

- व्याकरण शास्त्र का प्रधानतः प्रयोजन **साधुत्व व्यवस्थापन** करना है।
- साधु शब्द प्रयोग 'पुण्यजनक' होता है। साधु शब्द प्रयोग 'धर्म' का प्रयोजक है।

❖ **वाक्तत्व के दो प्रकार –**

1. **प्राप्तरूपविभाग-** इसे अर्थप्रकाशन के कारण "पुण्यज्योति" कहा जाता है।
2. **प्रत्यस्तमितभेद-** इसे परम ज्योति "विभङ्गज्योति" कहते हैं।

ब्रह्म वाच्यवाचकभाव की उपपत्ति के लिये प्राकृत ध्वनि से व्यङ्ग्य है।

❖ **शब्दस्य भेदद्वयम्-**

1. **व्यञ्जक-** आन्तरिक शब्द की अभिव्यक्ति का कारण 'वैखरी' ध्वनि स्वरूप तथा शब्द का निमित्त ।
2. **अपर व्यंजक-** शब्द स्फोट स्वरूप है जो वैखरी के माध्यम से अभिव्यक्त होकर अर्थ का अवबोधन कराने में समर्थ होता है। यह अर्थ का अवबोधक होता है ।

- शब्दब्रह्म की प्राप्ति का साधन उपाय है- **वेद।**
- द्वैत तथा अद्वैत नामक प्रवादों में **'प्रणव'** ओंकारस्वरूप एक पदात्मक विद्या अनेक विकल्पात्मक विषयों के न होने के कारण विशुद्ध है।
- समस्त वादों से रहित "अद्वैत" विद्या ही सत्य मानी जाती है।
- सम्पूर्ण जगत का "उपादान" कारण "प्रणव" है। यही विद्या सत्य है।
- मन्त्र रूप शब्दात्मक ब्रह्म "वेद" है।
- ब्रह्मप्राप्ति का साधन है- **तप।**
- व्याकरण को "उत्तम तप" कहा गया है।
- अर्थप्रवृत्ति का मुख्य कारण तथा पदार्थों के व्यवहार का मूल कारण शब्द ही है।
- भर्तृहरि के मत में वाणी **3 प्रकार।**
- सृष्टिप्रक्रिया में भर्तृहरि ने स्वीकार किया है- **विवर्त,**
- शब्दतत्व ब्रह्म विवर्तित है – अर्थभाव से,
- व्याकरण को मोक्ष का द्वार कहा गया है।
- **तद द्वारमपवर्गस्य,** (तद='व्याकरणम्')।
- ब्रह्मतत्व की प्राप्ति के लिये (14) विद्याओं की सीढ़ियों में प्रथम सोपान स्वरूप है- **व्याकरण।**
- स्फोट और नाद में सम्बन्ध है- **तरङ्गप्रतिबिम्बवत्।**
- ध्वनि और स्फोट में सम्बन्ध है- **कार्यकारणभाव, व्यङ्ग्यव्यञ्जकभाव।**

"अत्रातीतविपर्यासः केवलामनुपश्यति
छन्दस्यश्छन्दसां योनिमात्मा छन्दोमयी तनुम्"।।

- **छन्दः**- वेदार्थग्रहणसमर्थ,
- वाचक शब्द को उपादान शब्द कहते हैं।
- प्रत्येक वाचक शब्द में स्फोट और ध्वनि में दो प्रकार के शब्द रहते हैं।
- ध्वनि स्थूल शब्द है जो कि विनश्वर है।
- स्फोट का ग्रहण 'हृदय' से होता है, ध्वनि का 'श्रवणेन्द्रिय' से।
- कुछ विद्वानों के अनुसार स्फोटध्वनि में बुद्धि प्रकल्पित भेद स्वीकार किया गया है ।
- ज्ञान के सदृश शब्द अर्थ का प्रकाशन करता है, उस समय अर्थ के साथ अपने आदि स्वरूप को भी प्रकाशित 'वर्ण पद' करता है।
- शब्द नामक ज्ञानरूप ब्रह्म अण्डे के सदृश निरवयव बीज रूप को प्राप्त करके वक्ता के हृदय में अवस्थित होता है।
- स्फोट 'नित्य' है उसमें 'कालभेद' नहीं है।
- स्फोटात्मक शब्द को अभिव्यक्त करने वाली व्यञ्जक ध्वनि के पश्चात् 'द्रुत' 'मध्यम' आदि वृत्तिभेद में वैकृत ध्वनियां निमित्त बनती है।
- अर्थवान इकाई के रूप में गृहीत बुद्धिस्थ शब्द ही है- **स्फोट।**
- शब्द ब्रह्म की शक्ति है- **कालशक्ति** यह 'स्वतन्त्रशक्ति' है। तथा "आरोपितनिमेषादिभेदवती" है ।

❖ **ध्वनि से प्रतीति की तीन अवस्थाएं-**

इन्द्रियस्यैव संस्कारः शब्दस्यैवोभयस्य वा।
क्रियते ध्वनिभिर्वादास्त्रयोऽभिव्यक्तिवादिनाम्।।
इन्द्रियस्यैव संस्कारः समाधानाञ्जनादिभिः।
विषयस्य तु संस्कारस्तद्गन्ध प्रतिपत्तये।।

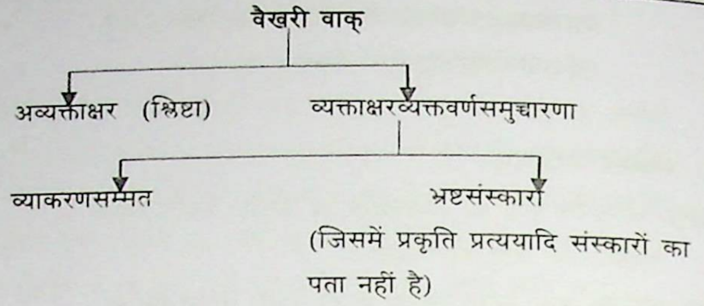
- ध्वनि के भेद से स्फोट अनेक नहीं कहा जा सकता है। वाक्य में वर्णपदात्मकता नहीं होती है।

यथानुपूर्वीनियमो विकारे क्षीरबीजयोः।
तथैव प्रतिपतृणां नियतो बुद्धिषु क्रमः।।

जिस प्रकार दूध तथा बीज का विकार दही तथा वृक्ष है। इसी प्रकार बोद्धाजन क्रमशः वर्ण पदावग्रहपूर्वक वाक्यजन्य अखण्डस्फोट का अवग्रह प्राप्त करते हैं।

- वस्तुतः अखण्ड वाक्यस्फोट ही बोधक है वर्ण, पद, आदि भेद काल्पनिक उपज्यमात्र है।
- वैयाकरण तथा मीमांसक **"स्वतः प्रामाण्य"** स्वीकार करते हैं तर्कारोपित नही।
- शब्द के अनित्यवाद में कुछ तार्किक **'कदम्बगोलकन्याय'** मानते हैं।
- **वैकृत ध्वनि** की प्राकृतध्वनि से उत्पत्ति नहीं होती है किन्तु प्राकृतध्वनि से अभिव्यक्त स्फोट से वैकृतध्वनि का आविर्भाव होता है।
- कालशक्ति के आश्रय से 'षड्भावविकार' उत्पन्न होते हैं।
- शब्द ब्रह्म का अनुकार है- **वेद,**
- विद्या के भेद- **व्याकरणादि,**
- ब्रह्म के निकट है- **व्याकरण,**
- वेदशाखाओं में शब्द दिखाई देता है 'नियताबोधजनक'।

- दृष्टादृष्टप्रयोजन हैं- **स्मृतियां।**
- ध्वनि और स्फोट में सम्बन्ध है- **व्यञ्जक-व्यङ्ग्यभाव।**
- छान्दस का विग्रह है- **छन्दसे हितः।**
- वाक्यपदीयानुसार **पदार्थ- (8),**
  द्विविध शब्द= १.अन्वाख्येय २. प्रतिपादक,
  द्विविध अर्थ=१. अपोद्धारपदार्थ २. स्थितलक्षण,
  द्विविध सम्बन्ध=१. कार्यकारणभाव २. योग्यभाव,
  द्विविध प्रयोजन=१. साधु शब्द २. असाधु शब्द ।
- वाक्यपदीयानुसार **प्रमाण- 5,**
  (1) प्रत्यक्ष (2) अनुमान (3) शब्द (4) अभ्यास (5) अदृष्ट,
- प्रधान प्रमाण- **आगम,**
- **वृत्तियां है-** (1) **द्रुता** (2) **मध्या** (3) **विलम्बिता,**
- भावों की प्रसिद्धि किसके द्वारा अतिदुर्लभ है- **अनुमान द्वारा।**
- भर्तृहरि के मत में वाक् तीन प्रकार की है- **(1) पश्यन्ती (2) मध्यमा (3) वैखरी।**
- ब्रह्म की दो शक्तियां- **(1) विद्या (2) अविद्या,**
- शब्दब्रह्म की दो अवस्थाएं- **(1) एकघनप्रकाशन (2) भेदप्रकाश।**



(जिसमें प्रकृति प्रत्ययादि संस्कारों का पता नहीं है)

- मध्यमा वाक् का उपादानकारण- **बुद्धि।** यह वर्णात्मक क्रम को ग्रहण करती हुई हृदयस्थ रहती है।
- **1. मध्यमा-** मध्यमा में 'चित् ज्योति' 'गौण' होती है और 'सूक्ष्म 'प्राण' 'प्रधान' रहता है। ।
- **2. पश्यन्ती-** पश्यन्ती में 'चित् ज्योति' की 'प्रधानता' और 'सूक्ष्म प्राण' गौण रहता है।
- **3. वैखरी-** वैखरी में 'स्थूल प्राण' 'प्रधान' होता है।
- **पश्यन्ती-** प्राण, **मध्यमा-** बुद्धि, **वैखरी-** करण
- स्फोट का ग्रहण होता है- **प्राकृत** ध्वनि से।
- **एका निमित्तं शब्दानामपरोऽर्थे प्रयुज्यते-** वाक्यपदीय।
- स्फोटः भेदवान् प्रतीत होता है- **नादस्य क्रमजन्मत्वाद्।**
- विद्यैवैकपदागमा- **शब्दरूपा विद्या।**

॥व्याकरण अभ्यास प्रश्न॥

1. वर्णानामतिशयितः सन्निधिः' उच्यते -
(A) संयोगः (B) संहिता
(C) सवर्गम् (D) अनुनासिकः

2. 'वृद्धिसंज्ञाविधायकं' सूत्रं किम् ?
(A) वृद्धिरेचि (B) वृद्धिरादैच्
(C) आदगुणः (D) एङि पररूपम्

3. क्तक्तवतू इत्यनयोः का संज्ञा भवति ?
(A) नदी (B) घि
(C) उपधा (D) निष्ठा

4. एषु पाठकगुणेषु कः गण्यते ?
(A) अक्षरव्यक्तिः (B) गीती
(C) लिखितपाठकः (D) शीघ्री

5. निम्नलिखितेषु अन्तःस्थेषु को ध्वनिः न गण्यते?
(A) ट (B) र्
(C) ल् (D) य्

6. अधोनिर्दिष्टेषु'मनोः स्त्री' इति विग्रहे स्त्रीलिङ्गे अशुद्धः प्रयोगः कः?
(A) मनायी (B) मनावी
(C) मन्वी (D) मनुः

7. 'अध्यापयति वेदम्' इत्यत्र क्रियापदे परस्मैपदविधायको नियमः कः?
(A) अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्
(B) विभाषाऽकर्मकात्
(C) निगरणचलनार्थेभ्यश्च
(D) बुध-युध-नश-जनेङ्-प्रु-द्रु-स्रुभ्यो णेः

8. 'वच्' धातोरशब्दसञ्ज्ञायां ण्यत्प्रत्ययान्तं किं रूपम्?
(A) वाच्यम् (B) वाक्यम्
(C) वच्यम् (D) उच्यम्

9. 'एध' धातोः आशीर्लिङि उत्तमपुरुषैकवचने किं रूपम्?
(A) एधेय (B) एधिषीय
(C) एधिताहे (D) ऐधिषि

10. क्रियामात्रविषयं व्यापारनियतश्च किम्भवति?
(A) हेतु (B) करणम्
(C) अधिकरणम् (D) सम्बन्धः

11. 'लोमन्' शब्दस्य मत्वर्थीयः शुद्धप्रयोगः कः ?
(A) लोमनः (B) लोमिकः
(C) लोमिलः (D) लोमशः

12. 'शास्त्रपूर्वके प्रयोगेऽभ्युदयः...महाभाष्यानुसारं रिक्तस्थानं पूरयत।
(A) कूपखननन्यायेन (B) तत्तुल्यं वेदशब्देन
(C) स्नातानुलिप्तप्रकारेण (D) पांसूदकन्यायेन

13. निम्नलिखितेषु विषमीकरणस्य उदाहरणं किम् अस्ति?
(A) बभूव (B) ससार
(C) गमिष्यति (D) पपाठ

14. चीनी भाषा कीदृशी भवति?
(A) योगात्मिका (B) अयोगात्मिका
(C) प्रश्लिष्टयोगात्मिका (D) श्लिष्टयोगात्मिका

15. 'भूतबलिः' इत्यत्र समासः केन सूत्रेण विधीयते ?
(A) कर्तृकरणे कृता बहुलम्
(B) चतुर्थी तदर्थार्थबलिहितसुखरक्षितैः
(C) पञ्चमी भयेन
(D) सप्तमी शौण्डैः

16. क्रियायां स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कः स्यात् ?
(A) कर्म (B) करणम्
(C) कर्ता (D) अधिकरणम्

17. भाषाविज्ञाने बलाघातस्य भेदाः सन्ति -
(A) चत्वारः (B) सप्त
(C) दश (D) द्वादश

18. अर्थावबोधस्य कति प्रमुखसाधनानि ?
(A) सप्त (B) आठ
(C) एकादश (D) त्रयोदश

19. 'निर्मक्षिकम्' अस्य पदस्य अलौकिकविग्रहः भवति -
(A) निर् + मक्षिका + अम्
(B) मक्षिका + जस् + निर्
(C) मक्षिक + सुँ + निर्
(D) मक्षिका + आम् + निर्

20. पाणिनिमते 'मुनि' शब्दस्य का संज्ञा भवति ?
(A) नदी (B) घि
(C) टि (D) अपृक्त

21. समासशास्त्रे प्रथमानिर्दिष्टं किं भवति ?
(A) उपसर्गः (B) अव्ययम्
(C) उपसर्जनम् (D) प्रातिपदिकम्

22. 'गुणसंज्ञा' विधायकं सूत्रं किम् ?
(A) वृद्धिरेचि (B) अकः सवर्णे दीर्घः
(C) अदेङ्गुणः (D) प्रातिपदिकम्

23.'ग्रामं गच्छन् तृणं स्पृशति' -इत्यत्र द्वितीयाविधायकं सूत्रं किम् ?
(A) अकथितश्च (B) स्पृहेरीप्सितः
(C) कर्तुरीप्सिततमं कर्म (D) तथायुक्तं चानीप्सितम्

24. 'द्वियमुनम्' इत्यत्र कः समासः ?
(A) द्विगुः (B) द्वन्द्वः
(C) अव्ययीभावः (D) तत्पुरुषः

25. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां विचिनुत -
(अ) हलोऽनन्तराः 1. केवलसमासः
(ब) विशेषसंज्ञाविनिर्मुक्तः 2. संयोगः
(स) प्रायेणान्यपदार्थप्रधानः 3. इत्थम्भूतलक्षणे

(द) जटाभिस्तापसः 4. बहुव्रीहिः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	4	2	1
(B)	1	2	3	4
(C)	2	1	4	3
(D)	4	3	1	2

26. "कृत्यल्युटो बहुलम्" इति सूत्रस्योदाहरणं किम् ?
(A) प्रयाणीयम् (B) स्नानीयं चूर्णम्
(C) प्रभव्यम् (D) प्रयाम्यम्

27. "प्राङ्मुखी" इत्यत्र 'ङीप्' केन सूत्रेण विधीयते ?
(A) नखमुखात्संज्ञायाम्
(B) जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्
(C) क्रीतात्करणपूर्वात्
(D) दिक्पूर्वपदान्ङीप्

28. शब्दस्याभिव्यक्तेः ऊर्ध्वं वृत्तिभेदे तु वैकृताः ध्वनयः समुपोहन्ते, तैः कः न भिद्यते ?
(A) जीवात्मा (B) स्फोटात्मा
(C) परमात्मा (D) काव्यात्मा

29. वृत्तिसमवायार्थः अनुबन्धकरणार्थः इष्टबुध्यर्थश्च केषां उपदेशः भवति ?
(A) प्रत्ययानाम् (B) धातूनाम्
(C) सन्धीनाम् (D) वर्णानाम्

30. अनुदात्तेत उपदेशे यो ङित् तदन्ताच्च धातोः लस्य स्थाने किं स्यात् ?
(A) परस्मैपदम् (B) आत्मनेपदम्
(C) प्रातिपदिकम् (D) आर्धधातुकम्

31. अधोऽङ्कितानां युग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(अ) दूरान्तिकार्थैः 1. डारौरसः
(ब) वयसि 2. षष्ठ्यन्यतरस्याम्
(स) लुटः प्रथमस्य 3. लिटि
(द) कृञ्चानुप्रयुज्यते 4. प्रथमे

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	4	1	2
(B)	2	4	1	3
(C)	2	3	4	1
(D)	4	3	2	1

32. 'अल्पाच्तरम्' - इत्यस्य सूत्रस्य उदाहरणम् अस्ति -
(A) शिवकेशवौ (B) ईशकृष्णौ
(C) मातापितरौ (D) हरिहरौ

33. भाषाविज्ञानदृशा अर्धस्वरो भवति -
(A) उ (B) अं
(C) व (D) ए

34. निम्नाङ्कितेषु ध्वनिनियमस्य प्रवर्तको न वर्तते -
(A) ग्रिम (Grimm)
(B) ग्रासमान (Grassman)
(C) वेबर (Weber)
(D) वर्नर (Verner)

35. कारकप्रयोगदृष्ट्या वाक्यमिदं शुद्धं वर्तते -
(A) नृपात् गां याचते
(B) देवदत्ताय अभिक्रुध्यति
(C) देवदत्तम् अभिक्रुध्यति
(D) पुष्पं स्पृहयति

36. अनीप्सितस्य का संज्ञा ?
(A) करणसंज्ञा (B) सम्प्रदानसंज्ञा
(C) कर्मसंज्ञा (D) अपादानसंज्ञा

37. 'अकथितं च' - इत्यस्य सूत्रस्य उदाहरणम् अस्ति -
(A) माणवकं धर्मं ब्रूते
(B) धर्मं जानाति वेदेन
(C) वनं गच्छति रथेन
(D) माणवकाय दीक्षां ददाति

38. अयम् उपपदविभक्तेः प्रयोगः वर्तते -
(A) ग्रामाद् आयाति (B) हरिः सेव्यते
(C) लक्ष्म्या सहितः (D) रामात् पृथक्

39. 'अधिगोपम्' इत्यत्र कः समासः ?
(A) उपपदतत्पुरुषः (B) कर्मधारयः
(C) तत्पुरुषः (D) अव्ययीभावः

40. लघुसिद्धान्तकौमुदीकारमते समासः कतिधा वर्तते ?
(A) पञ्चधा (B) सप्तधा
(C) सप्तधा (D) चतुर्धा

41. 'अक्षशौण्डः ' - अस्य अलौकिकविग्रहः भवति -
(A) अक्ष सु + शौण्ड सु
(B) अक्ष सुप् + शौण्ड सु
(C) अक्षेषु शौण्डः
(D) अक्ष ङि + शौण्ड ङि

42. 'बर्गस्य प्रथमवर्णस्य परिवर्तनं केवलम् असंयुक्तध्वनिषु एव भवति न तु संयुक्तध्वनिषु' - इति अपवादनियमः केन प्रदत्तः ?
(A) ग्रिममहोदयेन
(B) ग्रासमानमहोदयेन
(C) वर्नरमहोदयेन
(D) आचार्येण भोलाशङ्करेण

43. उत्तपते । वितपते । - इत्यनयोः क्रियापदयोः कोऽर्थः ?
(A) विलापयतीत्यर्थः (B) संतापयतीत्यर्थः
(C) 'दीप्यते' – इत्यर्थः (D) उष्णं करोतीत्यर्थः

44. " लोपागमवर्णविकारज्ञो हि सम्यग् वेदान् -परिपालयिष्यतीत्यत्र" लोपागमस्य उदाहरणम् अस्ति -
(A) देवा अदुह्र । (B) उद्ग्राभम् ।
(C) देवा अदुहत । (D) देवै दुह्यते ।

45. महाभाष्यानुसारं सिद्धान्ततः 'व्याकरण' शब्दस्य कोऽर्थः?
(A) सूत्रम् (B) शब्दः
(C) लक्ष्यम् (D) लक्ष्य-लक्षणे

46. भू + शप् > अ + अन्ति' इति स्थिते द्वयोः अकारयोः केन सूत्रेण किं भवति ?
(A) अतो गुणे - इत्यनेन पूर्वरूपत्वम्
(B) अतो गुणे - इत्यनेन पररूपत्वम् ।
(C) अतो गुणे - इत्यनेन गुणादेशत्वम् ।
(D) आद् गुणः - इत्यनेन गुणादेशत्वम् ।

47. धातोः विधीयमानः तव्यत्प्रत्ययः कस्मिन् अर्थे भवति ?
(A) कर्तरि अर्थे (B) भावे अर्थे
(C) भावे कर्मणि च अर्थे (D) कर्मणि अर्थे

48. 'द्वेस्तीयः' (-पा.सू. 5.2.54) इत्यनेन कः प्रत्ययः विधीयते कश्च तस्य अर्थः ?
(A) तीय-प्रत्ययः, पूरणे अर्थे ।
(B) तीय-प्रत्ययः, संख्यायाम् अर्थे ।
(C) स्तीय-प्रत्ययः, पूरणे अर्थे ।
(D) द्वेस्तीय-प्रत्ययः, मत्वर्थे ।

49. गोपस्य स्त्री गोपी' - इत्यत्र स्त्रियां केन सुत्रेण कः प्रत्ययो भवति ?
(A) ऋन्नेभ्यो ङीप् - इति ङीप् ।
(B) पुंयोगादाख्यायाम् - इति ङीष् ।
(C) उगितश्च - इति ङीप् ।
(D) पत्युर्नो यज्ञसंयोगे - इति ङीप् ।

50. ' हिमवतो गङ्गा प्रभवति' - इत्यत्र किं सूत्रं प्रवर्तते ?
(A) पराजेरसोढः (B) धारेरुत्तमर्णः
(C) जनिकर्तुः प्रकृतिः (D) भुवः प्रभवः

51. अपवर्गे कयोस्तृतीया भवति ?
(A) कर्तृकर्मणोः (B) हेतुकरणयोः
(C) कालाध्वनोः (D) संज्ञासर्वनाम्नोः

52. ध्वनिनियमेषु क्रमेण प्रथमः को गण्यते ?
(A) वर्नरनियमः (B) ग्रिमनियमः
(C) कालित्सनियमः (D) ग्रासमाननियमः

53. कर्तुः क्रियया आप्तुमिष्टतमस्य कारकस्य का संज्ञा भवति ?
(A) कर्ता (B) कर्म
(C) करणम् (D) अधिकरणम्

54. ' प्रायेण पूर्वपदार्थप्रधानः ' कः समासः ?
(A) द्विगुः (B) द्वन्द्वः
(C) बहुव्रीहिः (D) अव्ययीभावः

55. 'एकाल् प्रत्ययः' कः भवति ?
(A) संयोगः (B) अपृक्तः
(C) उपधा (D) वृद्धिः

56. 'अपादानादिविशेषैरविवक्षितस्य कारकस्य' का संज्ञा ?
(A) कर्ता (B) कर्म
(C) करणम् (D) अधिकरणम्

57. 'पञ्चगङ्गम्' इत्यत्र समासविधायकं सूत्रं किम् ?
(A) संख्यापूर्वो द्विगुः (B) नदीभिश्च
(C) चार्थे द्वन्द्वः (D) अनेकमन्यपदार्थे

58. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(अ) सवर्णम् — 1. उपसर्जनं पूर्वम्
(ब) नदी — 2. हेतौ
(स) अधिहरि — 3. तुल्यास्यप्रयत्नम्
(द) दण्डेन घटः — 4. यू स्त्र्याख्यौ

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	2	3	4
(B)	2	3	4	1
(C)	3	3	1	2
(D)	4	1	3	2

59. अव्ययीभाव-समासे 'साग्नि' इत्युदाहरणे अग्निः उच्यते –
(A) देवः (B) दाहकः
(C) पाचकः (D) ग्रन्थः

60. 'सुपात्' इत्यत्र कः समासः ?
(A) तत्पुरुषः (B) बहुव्रीहिः
(C) द्वन्द्वः (D) अव्ययीभावः

61. महाभाष्यरीत्या 'चत्वारि श्रृङ्ग' इत्यत्र किं चत्वारि पदेन गृह्यते ?
(A) चत्वारो वेदाः
(B) चत्वारो विद्याभ्यासकालाः
(C) चत्वारः ऋत्विजः
(D) नामाख्यातोपसर्गनिपाताश्च

62. काकुदमित्यत्र काकुशब्देनाभिप्रेतं किम् ?
(A) लक्ष्यार्थः (B) व्यङ्ग्यम्
(C) जिह्वा (D) ध्वनिः

63.'भोजनकाले उपतिष्ठते' इत्यत्र आत्मनेपदविधायकं सूत्रं किम् अस्ति ?
(A) अकर्मकाच्च (C) समवप्रविभ्यः स्थः
(B) उपान्मन्त्रकरणे (D) उदोऽनूर्ध्वकरणे

64. 'सीमा' इत्यत्र 'ङीप्' निषेधकं सूत्रं किम् अस्ति ?
(A) मनः (B) अनो बहुव्रीहेः
(C) टावृचि (D) न यासयोः

65. ' उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिः बलीयसी' इत्यस्य उदाहरणम् अस्ति -
(A) रामं नमामि
(B) नमस्करोति देवान्
(C) गुरुणा सह शिष्यः गच्छति
(D) यागाय याति

66. 'सुमद्रम्' इत्यत्र 'सु' अव्ययस्य अर्थः अस्ति -
(A) समीपम् (B) शोभनम्

(C) समृद्धिः (D) युगपत्

67. तत्पुरुषे समासे कस्य पदार्थस्य प्रधानता भवति -

(A) पूर्वपदार्थस्य (B) उत्तरपदार्थस्य

(C) अन्यपदार्थस्य (D) उभयपदार्थस्य

68. 'राजदन्ताः' अस्य लौकिकं विग्रहवाक्यं भवति -

(A) राज्ञां दन्ताः (B) दन्तानां राजानः

(C) दन्तानां राजानम् (D)दन्त आम् राजन् जस्

69. 'कर्मधारयसंज्ञा' कस्य भवति -

(A) अव्ययीभावस्य

(B) समानाधिकरणस्य तत्पुरुषस्य

(C) असमानाधिकरणस्य तत्पुरुषस्य

(D) समानाधिकरणस्य बहुव्रीहेः

70. भाषाविज्ञानदृशा अर्धस्वरो भवति -

(A) अ (B) य

(C) इ (D) अः

71. आर्यभाषापरिवारस्य भाषा न मन्यते -

(A) प्राकृतम् (B) पालि

(C) संस्कृतम् (D) तमिल

72. अधोनिर्दिष्टानां समीचीनां तालिकां विचिनुत -

(अ) आप्तवाक्यम्	1. आप्तः
(ब) अर्थाबाधः	2. सन्निधिः
(स) पदानाम् अविलम्बेनोच्चारणम्	3. शब्दः
(द) यथार्थवक्ता	4. योग्यता

कूट :

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	2	1
(B)	3	4	1	2
(C)	3	4	2	1
(D)	1	2	3	4

73. ग्रामणी + सु> स्' इत्यत्र अपृक्तसंज्ञा कस्य भवति -

(A) 'सु' इत्यस्य (B) 'स्' इत्यस्य

(C) 'ग्रामणी' इत्यस्य (D) 'ग्रामणी + सु इत्यस्य

74. साकल्यार्थे कः समासः भवति-

(A) तत्पुरुषः (B) द्वन्द्वः

(C) अव्ययीभावः (D) बहुव्रीहिः

75. कारकप्रयोगदृष्ट्या वाक्यमिदं शुद्धम् अस्ति -

(A) भक्तः रोचते भक्तिः (B) देवदत्तं श्लाघते

(C) वैकुण्ठम् अध्यास्ते हरिः (D) वैकुण्ठे अध्यास्ते हरिः

76. 'पुष्पाणि स्पृहयति' - अत्र 'पुष्पाणि' इति पदम् अस्ति

(A) ईप्सिततमम् (B) ईप्सितम्

(C) अनीप्सितम् (D) अनीप्सिततमम्

77. "परिक्रयणे सम्प्रदानमन्यतरस्याम्" - इति सूत्रेण 'अन्यतरस्यां' का संज्ञा भवति -

(A) अपादानसंज्ञा (B) करणसंज्ञा

(C) कर्मसंज्ञा (D) अधिकरणसंज्ञा

78. पच् + शप् > अ + शतृ > अत् = पचत् – इत्यत्र स्त्रियां केन सूत्रेण कः प्रत्ययः भवति ?

(A) उगितश्च - इति ङीप्

(B) उगितश्च - इति ङीष्

(C) अजाद्यतष्टाप् इति टाप्

(D) ऋन्नेभ्यो ङीप् - इति ङीप्

79. पाणिनीयशिक्षानुसारं वर्णानाम् उच्चारणस्थानानि कति सन्ति ?

(A) एकादश (B) दश

(C) अष्टौ (D) द्वादश

80. 'शतम्' वर्गस्य कति शाखाः सन्ति ?

(A) तिस्रः (B) चतस्रः

(C) पञ्च (D) सप्त

81. स्थूला चासी पृषती च स्थूलपृषती - इति विग्रहे कीदृशी स्वरव्यवस्था प्रवर्तते ?

(A) पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वम्

(B) उत्तरपदप्रकृतिस्वरत्वम्

(C) समासान्तानुदात्तत्वम् ।

(D) समासान्तोदात्त्वम्।

82. 'अथ गौरित्यत्र' कः शब्दः ?

(A) सास्ना-लाङ्गूल-ककुद-खुर-विषाण्यर्थरूपं स शब्दः

(B) इङ्गितं चेष्टितं निमिषितं स शब्दः

(C) भिन्नेष्वभिन्नं छिन्नेष्वछिन्नं सामान्यभूतं स शब्दः

(D) येनोच्चारितेन सास्ना-लाङ्गूल-ककुद-खुर-विषाणिनां सम्प्रत्ययो भवति स शब्दः

83. ''भू + लिट्> ल्> तिप्> णल्> अ = भू + अ' इति स्थिते किं कार्यं भवति ?

(A) इको यणचि -इति यणादेशः

(B) लिटि धातोरनभ्यासस्य - इति द्वित्वम्

(C) भुवो वुग्लुङ्लिटोः - इति वुगागमः

(D) सार्वधातुकार्धातुकयोः - इति गुणः

84. 'स्नात्यनेन स्नानीयं चूर्णम् ।' - इत्यत्र 'स्ना ' धातोः विधीयमानः अनीयर्-प्रत्ययः कस्मिन् अर्थे वर्तते ?

(A) कर्तरि (B) कर्मणि

(C) भावे (D) करणे

85. 'चतुरश्छयतावाद्यक्षरलोपश्च' इत्यस्य किमुदाहरणम् ?

(A) चतुर्थः (B) चतुरः

(C) तुरीयः (D) तृतीयः

86. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां विचिनुत -

(अ) अलोऽन्त्यात्पूर्वः 1. अध्ययनात् पराजयते

(ब) माणवकं पन्थानं पृच्छति 2. नीलोत्पलम्

(स) पराजेरसोढः 3. अकथितं च

(द) विशेषणं विशेष्येण वहुलम् 4. उपधा

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	2	4	1
(B)	2	1	3	4
(C)	4	3	1	2
(D)	1	4	2	3

87. ध्वनिनियमेषु द्वितीयः को गण्यते ?

(A) ग्रासमाननियमः (B) वर्नरनियमः

(C) ग्रिमनियमः (D) कालित्जनियमः

88. वषड् योगे का विभक्तिर्भवति -

(A) द्वितीया (B) तृतीया

(C) चतुर्थी (D) पञ्चमी

89. 'कृत्तद्धितसमासाश्च' - इत्यनेन का संज्ञा विधीयते -

(A) नदी-संज्ञा (B) प्रातिपदिक-संज्ञ

(C) गति-संज्ञा (D) सर्वनाम-संज्ञा

90. 'नदीमन्ववसिता सेना' इत्यत्र कस्मिन्नर्थे कर्मप्रवचनीयसंज्ञा भवति ?

(A) प्रथमार्थे (B) पञ्चम्यर्थे

(C) तृतीयार्थे (D) सप्तम्यर्थे

91. 'हरिहरौ' इत्यत्र द्वन्द्वे घिसंज्ञकस्य पूर्वप्रयोगे किं सूत्रम् -

(A) द्वन्द्वे घि (B) अजाद्यदन्तम्

(C) अल्पाच्तरम् (D) निष्ठा

92. व्यधिकरणबहुव्रीहिसमासस्य उदाहरणं किम् ?

(A) प्राप्तोदको ग्रामः (C) कण्ठेकालः

(B) पीताम्वरो हरिः (D) वीरपुरुषको ग्रामः

93. 'चर्मणि द्वीपिनं हन्ति' .....अत्र चर्मशब्दे आदौ, कतमा विभक्तिः प्राप्ता भवति ?

(A) हेतौ तृतीया (B) अपादाने पञ्चमी

(C) कर्मणि द्वितीया (D) सम्प्रदाने चतुर्थी

94. अव्ययीभावसमासे 'सह' स्थाने 'स' इति आदेशः केन सूत्रेण विधीयते ?

(A) अव्ययीभावश्च (B) अनश्च

(C) अव्ययीभावे चाकाले (D) नस्तद्धिते

95. 'व्याकरणशास्त्रानुसार पद-संज्ञकं' भवति -

(A) योग्यताकांक्षासत्तियुक्तम् (B) सुप्तिङन्तम्

(C) तुल्यास्यप्रयत्नम् (D) सर्वनामस्थानम्

96. 'अधिहरि' इत्यस्य अलौकिक-विग्रहः भवति -

(A) अधि + हरि + सु

(B) हरि + अधि + अम्

(C) हरि + ङि + अधि

(D) हरौ + इति + ङि

97. 'विष्णू इमौ' अत्र का संज्ञा प्रवर्तते ?

(A) घि (B) संयोगः

(C) नदी (D) प्रगृह्यम्

98. महाभाष्ये 'कूपखानकवत्' इत्युदाहरणं कस्मिन् प्रसङ्गे उक्तम् ?

(A) शब्दस्य ज्ञाने धर्मः (B) गौरित्यत्र कः शब्दः

(C) किमर्थं वर्णानामुपदेशः (D) सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे

99. 'तुन्नवत्' इति किमुच्यते ?

(A) सक्तुः (B) परिपवनम्

(C) टङ्कारध्वनिः (D) तन्तुशाटिका

100. 'भिक्षुः प्रभुमुपतिष्ठते' इत्यत्र आत्मनेपदविधायकं किम् ?

(A) अकर्मकाच्च

(B) वा लिप्सायामिति वक्तव्यम्

(C) उपान्मन्त्रकरणे

(D) समप्रविभ्यः स्थः

101. 'वीरपत्नी' इति कस्य सूत्रस्य उदाहरणं वर्तते -

(A) पत्युर्नो यज्ञसंयोगे (B) नित्यं सपत्न्यादिषु

(C) अन्तर्वत्पतिवतोर्नुक (D) विभाषा सपूर्वस्य

102. तत्पुरुषसमासे 'देवब्राह्मण' इत्युदाहरणे ब्राह्मणः इति पदेन कः अभिप्रेतः -

(A) देवरूपः (B) देवप्रियः

(C) देवपूजकः (D) देवाधीनः

103. 'अलं कुमार्य्यै' इत्यस्य समस्तं रूपं किम्?

(A) अलङ्कुमारी (B) कुमार्यै अलम्

(C) अलङ्कुमारिः (D) अलङ्कुमारिन्

104. निर्धारणविषये कीदृशी विभक्तिव्यवस्था ?

(A) तृतीया-पञ्चम्यौ B) चतुर्थी-पञ्चम्यौ

(C) पञ्चमी-षष्ठ्यौ (D) षष्ठी-सप्तम्यौ

105. 'चोराद् भयं चोरभयम्' इत्यत्र पञ्चमीविभक्तिः केन सूत्रेण ?

(A) पराजेरसोढः (B) भीत्रार्थानां भयहेतुः

(C) रुच्यर्थानां प्रीयमाणः (D) हेतौ

106. अघोषध्वनिः अस्ति -

(A) ज् (B) ध्

(C) त् (D) अ

107. समीचीनम् उत्तरं चिनुत -

(अ) यणः 1. स्पर्शाः

(ब) शलः 2. प्रातिपदिकम्

(स) कादयो मावसानाः 3. अन्तःस्थाः

(द) अर्थवदधातुर्त्ययः 4. ऊष्माणः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	1	2
(B)	3	4	1	2
(C)	2	3	1	4
(D)	1	3	4	2

108. कारकप्रकरणे ण्यन्ताण्यन्तविचारः अधस्तनेषु कस्मिन् सूत्रे कृतः ?

(A) गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ

(B) अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः

(C) णेरनिटि

(D) णो नः

109. पञ्चमीं विना सार्वविभक्तिकः 'अम्' भावः कस्मिन् समासे विधीयते ?

(A) तत्पुरुषे (B) बहुव्रीहौ

(C) द्वन्द्वे (D) अव्ययीभावे

110.'द्व्यङ्गुलम्' इत्यत्र को लौकिकविग्रहः ?

(A) द्वयोः अङ्गुल्योः समाहारः

(B) द्वे अङ्गुली प्रमाणमस्य

(C) द्वे अङ्गुली यस्य

(D) द्वि च अङ्गुलिश्च

111. अधस्तनयुग्मानां तालिकां सुमेलयतु

(अ) रात्राह्नाहाः पुंसि	1. उच्चैः नीचैः, कृष्णः श्रीः, ज्ञानम्
(ब) अक्ष्णोऽदर्शनात्	2. अह्ना क्रोशेन वा अनुवाकोऽधीतः
(स) नियतोपस्थितिकः प्रातिपदिकार्थः	3. अहोरात्रः
(द) अपवर्गे तृतीया	4. गवाक्षः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	2	1
(B)	3	4	1	2
(C)	2	1	4	3
(D)	1	4	3	2

112. सामान्यतया 'घि' इति संज्ञा कस्य भवति ?

(A) पुंलिङ्ग-शब्दस्य (B) स्त्रीलिङ्ग-शब्दस्य

(C) नपुंसकलिङ्ग-शब्दस्य (D) अलिङ्ग-शब्दस्य

113. अपृक्त एकाल् 'प्रत्ययः' इति सूत्रे अल् इत्यनेन किं गृह्यते ?

(A) वर्णाः (B) धातवः

(C) स्वराः (D) प्रातिपदिकम्

114. भावलक्षणविषये का विभक्तिः ?

(A) सप्तमी (B) षष्ठी

(C) पञ्चमी (D) चतुर्थी

115. 'धर्ममुच्चरते' इत्यत्र क्रियापदे आत्मनेपदविधायकं सूत्रं किम् ?

(A) उदश्चरः सकर्मकात् (B) अकर्मकाच्च

(C) पूर्ववत्सनः (D) समस्तृतीयायुक्तात्

116. 'अनुकरोति' इत्यत्र परस्मैपदविधायकं सूत्रं किम् ?

(A) अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः (B) अनुपराभ्यां कृञः

(C) परेर्मृषः (D) व्याङ्परिभ्यो रमः 117. वाक्यपदीयकारेण स्फोटग्रहणाय कीदृशो ध्वनिर्निर्दिष्टः ?

(A) नित्यः (B) अनित्यः

(C) प्राकृतः (C) प्राकृतः

118. रङ्गवर्णे कति मात्राः निर्दिष्टाः ?

(A) एका मात्रा (B) द्वे मात्रे

(C) तिस्रो मात्राः (D) बह्व्यो मात्राः

119. 'ग्रासमान-नियमः' केन सम्बद्धः अस्ति ?

(A) अर्थतत्वेन (B) ध्वनितत्त्वेन

(C) वाक्यतत्त्वेन (D) साहित्येन

120. का भारोपीया भाषा अस्ति ?

(A) ग्रीक (B) कन्नड

(C) तेलुगू (D) मलयालम

121. तुलनात्मक-भाषाशास्त्रस्य अध्ययनस्य आरम्भकाले कयोः भाषयोः मध्ये ध्वनिसाम्यं प्रत्यक्षीकृतम्?

(A) संस्कृत- हिन्दी-मध्ये

(B) संस्कृत-लैटिन-मध्ये

(C) संस्कृत-फ़ारसी-मध्ये

(D) संस्कृत-फ्रांसीसी-मध्ये

122. अधस्तनयुग्मेभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या-

(अ) कृषः प्रतियत्ने	(i) योजनं योजने वा
(ब) अभाषितपुंस्काच्च	(ii) गङ्गका, गङ्गिका
(स) कालात् सप्तमी च वक्तव्या	(iii) कुम्भकारः
(द) तत्रोपपदं सप्तमीस्थम्	(iv) एधो दकस्योपस्करणम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(iv)	(ii)	(i)	(iii)
(B)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(C)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)
(D)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)

123. गुणवाचकास्त्रीलिङ्के का विभक्तिव्यवस्था?

(A) तृतीया-पञ्चम्यौ

(B) द्वितीया-तृतीया-पञ्चम्यः

(C) षष्ठी-सप्तम्यौ

(D) द्वितीया-चतुर्थ्यौ

124. अधस्तनेषु निष्ठा-संज्ञा कस्य भवति?

(A) तव्यत्-इत्यस्य

(B) तव्य-इत्यस्य

(C) क्तवतु-इत्यस्य

(D) तुमुन्- इत्यस्य

125. एतेषु शब्दप्रादुर्भावस्योदाहरणमस्ति-

(A) अनुविष्णु (B) अनुरूपम

(C) इतिहरि (D) अतिनिद्रम्

126. किं तत्त्वं वियोगात्मक-भाषा-प्रकृति-लक्षणम्?

(A) सङ्ख्या (B) अर्थः

(C) सन्धि (D) प्रकृति-प्रत्यय-पार्थक्यम्

127. का भाषा 'केन्टुम'-वर्गेण असम्बद्धा-
(A) ग्रीकभाषा (B) इताली
(C) लैटिनभाषा (D) संस्कृतभाषा

128. सर्वनामस्थानसंज्ञकं सूत्रं किम्?
(A) सर्वादीनि सर्वनामानि
(B) सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ
(C) सुडनपुंसकस्य
(D) स्वादिष्वसर्वनामस्थाने

129. 'सुप्तिङन्तं पदम् ' इति सूत्रम् अतिरिच्य पदसंज्ञाविधायकं सूत्रं किम्?
(A) पदस्य (B) पदात्
(C) पदान्तस्य (D) स्वादिष्वसर्वनामस्थाने

130. वीप्सार्थे द्योत्ये का विभक्तिर्गम्यते?
(A) तृतीया (B) पञ्चमी
(C) द्वितीया (D) सप्तमी

131. उपपदसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किम्?
(A) कर्मण्यण् (B) उपपदमतिङ्
(C) तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् (D) कुगतिप्रादयः

132. 'शोभनो राजा' इत्यस्य समस्तपदं किम्?
(A) सुराजः (B) सुराजा
(C) सुराजी (D) सुराज्ञी

133. अर्थपरिवर्तनकारणेष्वन्यतमम् -
(A) सादृश्यम् (B) आगमः
(C) लोपः (D) स्वरभक्तिः

134. स्वीकृतं भर्तृहरिमते वाचः-
(A) चातुर्विध्यम् (B) त्रैविध्यम्
(C) द्वैविध्यम् (D) ऐकविध्यम्

135. तृतीये सवने कीदृशः स्वरः प्रयोज्यः ?
(A) गम्भीरः (B) मध्यमः
(C) तारः (D) कम्पः

136. 'वज्रं पतति मस्तके' इति पद्यांशः कुत्रोक्तः?
(A) महाभाष्य (B) अष्टाध्याय्याम्
(C) वाक्यपदीये (D) पाणिनीयशिक्षायाम्

137. प्रसिद्धध्वनिनियमेषु अर्वाचीनतमः कः?
(A) वर्नरनियमः (B) ग्रासमाननियमः
(C) ग्रिमनियमः (D) विण्टरनिट्जनियमः

138. जिह्वाभागविशेषोच्चारणदृष्ट्या मध्यस्वरोऽस्ति-
(A) अकारः (B) इकारः
(C) उकारः (D) एकारः

139. आकृतिमूलकवर्गीकरणेन असम्बद्धम्-
(A) प्रकृतिः (B) प्रत्ययः
(C) उपसर्गः (D) व्यापारः

140. पारिवारिकवर्गीकरणेन असम्बद्धम्-
(A) फलसाम्यम् (B) ध्वनिसाम्यम्
(C) पदसाम्यम् (D) अर्थसाम्यम्

141. संस्कृतभाषायाः 'शतम्' इति पदं गॉथिकभाषायाम् 'हुन्द' भवति; इति कस्य मतम्?
(A) ग्रिममहोदयस्य (B) वर्नरमहोदयस्य
(C) ग्रासमानमहोदयस्य (D) थॉम्पसनमहोदयस्य

142. यागात् स्वर्गो भवति' इत्यत्र भू-धातोः कः अर्थः?
(A) सत्ता (B) यागः
(C) स्वर्गः (D) उत्पत्तिः

143. अधोऽङ्कितानां युग्मानां समीचीना तालिका चेतव्या -
(अ) झयः (i) भृत्यः
(ब) मनोरौवा (ii) शताद् बद्धः
(स) भृत्रोऽसंज्ञायाम् (iii) विद्युत्वान्
(द) अकर्तृयृणे पञ्चमी (iv) मनुः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(i)	(iii)	(ii)	(iv)
(D	(iii)	(iv)	(ii)	(i)

144. 'सर्पिषो जानीते' इत्यत्र क्रियापदे आत्मनेपदविधायकं सूत्रं किम्?
(A) तङानावात्मनेपदम्
(B) कर्तरि कर्मव्यतिहारे
(C) अनुदात्तङित आत्मनेपदम्
(D) अकर्मकाच्च

145. 'उपरमति' इत्यत्र परस्मैपदविधायकं सूत्रं किम्?
(A) व्याङ्परिभ्यो रमः (B) अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः
(C) अनुपराभ्यां कृञः (D) उपाच्च

146. ध्वनिस्फोटयोर्मध्ये कः सम्बन्धः ?
(A) कार्यकारणभावः (B) शक्तिशक्तिमद्भावः
(C) गुणगुणिभावः (D) क्रियाक्रियावद्भावः

147. 'स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति' इत्यनेन महाभाष्ये किमभिप्रेतम् ?
(A) शब्दशुद्धिः (B) चित्तशुद्धिः
(C) कायशुद्धिः (D) व्यवहारशुद्धिः

148. 'महांश्च असौ राजा' इत्यस्य समस्तपदं भवति –
(A) महाराजः (B) महाराजम्
(C) महाराजा (D) महद्राजः

149. 'गवाम् अक्षि इव' इत्यत्र समस्तपदमस्ति -
(A) गवाक्षी (B) गवाक्षा
(C) गवाक्षम् (D) गवाक्षः

150. उपकर्मप्रवचनीययोगे सप्तमी कस्मिन्नर्थे द्योत्येऽस्ति?
(A) हीने (B) अधिके
(C) वीप्सायाम् (D) स्वस्वामिभावे

151. 'अधि'-कर्मप्रवचनीययोगे सप्तमी कस्मिन् अर्थे द्योत्ये अस्ति-
(A) हीने (B) अधिके
(C) वीप्सायाम् (D) स्वस्वामिभावे

152. अधस्तनयुग्मेभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या -
(क) कर्तृकर्मणोः कृतिः (i) युक्तयोगः
(ख) निष्ठा (ii) शतस्य शतं वा प्रतिदीव्यति
(ग) विभाषोपसर्गे (ii) वीरपुरुषको ग्रामः
(घ) अनेकमन्यपदार्थे (iv) जगतः कर्ता

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)
(B)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)
(C)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(D)	(ii)	(i)	(iv)	(iii)

153. शक' इत्यत्र टिसंज्ञा कस्यांशस्य भवति ?
(A) 'क' इत्यस्य
(B) 'श' इत्यस्य
(C) ककारोत्तरवर्तिनः अकारस्य
(D) शकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य

154. 'सखन्' इत्यत्र उपधासंज्ञा कस्य भवति ?
(A) खकारोत्तरवर्तिनः 'अन्' इत्यस्य
(B) सकारस्य
(C) खकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य
(D) सकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य

155. 'दिक्पूर्वपदादसंज्ञायां ञः ' इत्यनेन किं विधीयते ?
(A) टच् – प्रत्ययः (B) ञ्- प्रत्ययः
(C) पुंवद्भावः (D) एकवद्भावः ।

156. 'रूपवती भार्या यस्य' इत्यस्य समस्तपदं भवति -
(A) रूपवतीभार्यः (B) रूपवतीभार्यम्
(C) रूपवद्भार्यः (D) रूपवद्भार्या

157. 'सुमुखा शाला' इत्यत्र स्वाङ्गलक्षणङीष् कथं न ?
(A) अप्राणिस्थत्वात् (B) अमूर्त्वात्
(C) विकारजत्वात् (D) द्रवत्वात्

158. 'शत्रुमधिकुरुते' इत्यत्र क्रियापदे आत्मनेपदविधायकं सूत्रं किम् ?
(A) वेः शब्दकर्मणः (B) अकर्मकाच्च
(C) अधेः प्रहसने (D) उपपराभ्यां

159. 'अध्यापयति वेदम्' इत्यत्र क्रियापदे परस्मैपदविधायकं सूत्रं किम् ?
(A) विभाषाऽकर्मकात्
(B) निगरणचलनार्थेभ्यश्च
(C) परेर्मृषः
(D) बुधयुधनशजनेङ् प्रुद्रुस्रुभ्यो णेः

160. 'एको निमित्तं शब्दानामपरोऽर्थे प्रयुज्यते' इति पंक्तिः कुत्र उपलभ्यते ?
(A) महाभाष्ये (B) वाक्यपदीये
(C) पाणिनिशिक्षायाम् (D) अष्टाध्याय्याम्

161. 'शास्त्रानुपूर्वं तद्विद्यात् यथोक्तं लोकवेदयोः ' इति पंक्तिः कस्मिन् ग्रन्थे उपलभ्यते ?
(A) पाणिनिशिक्षायाम् (B) अष्टाध्याय्याम्
(C) वाक्यपदीये (D) महाभाष्ये

162. संस्कृतभाषाध्वनिसन्दर्भेऽधोलिखितेषु 'अर्धस्वरः' कः ?
(A) क (B) प
(C) म (D) व

163. अर्थविस्तारोदाहरणेष्वन्यतमो नास्ति -
(A) तैलम् (B) मुग्धः
(C) गौः (D) सभ्यः

164. भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधिवाचि' इति पंक्तिः कस्मिन् प्रसङ्गे महाभाष्ये उद्धृता ?
(A) शब्दपरिभाषाप्रसङ्गे
(B) व्याकरणाध्ययनप्रयोजनप्रसङ्गे
(C) शब्दार्थसम्बन्धप्रसङ्गे
(D) व्याकरणलक्षणप्रसङ्गे

165. 'लोटो लङ्वत्' इति सूत्रेण अधोलिखितविकल्पमात्रेषु किमभिप्रेतम् ?
(A) अडागमः (B) आडागमः
(C) ह्यादेशः (D) सलोपः

166. 'इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः' इति सूत्रेण किं विधीयते ?
(A) आम्प्रत्ययः (B) लुक्
(C) कृञाद्यनुप्रयोगः (D) सलोपः

167. अधोऽङ्कितयुग्मभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या -
(क) कृत्यानां कर्तरि वा (i) दण्डिकः
(ख) उगितश्च (ii) मम मया वा सेव्यो हरिः
(ग) ई च खनः (iii) भवती
(घ) अत इनि-ठनौ (iv) खेयम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(B)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(C)	(i)	(iii)	(iv)	(ii)
(D)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)

168. 'दन्तुरः' इत्यत्र कः प्रत्ययः ?
(A) र (B) अच्
(C) इरच् (D) उरच्

169. सिन्धीभाषायाः विकासः कस्याः प्राकृतभाषायाः अभवत् ?
(A) शौरसेनी-प्राकृतात् (B) पैशाची-प्राकृतात्
(C) मागधी-प्राकृतात् (D) अर्धमागधी-प्राकृतात्

170. 'निमित्तात् कर्मयोगे" इत्यत्र 'योग शब्दस्य भट्टोजिदीक्षितमते कोऽर्थः ?

(A) चित्तवृत्तिनिरोधः

(B) संयोगसम्बन्धः केवलम्

(C) संयोग-समवायसम्बन्धौ

(D) स्वरूपसम्बन्धः

171. 'आधि रामे भूः इत्यत्र 'अधि' कर्मप्रवचनीयसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?

(A) अधिरीश्वरे (B) उपोऽधिके च

(C) अधि-परी अनर्थकौ (D) हीने

172. को ध्वनिः अघोषमहाप्राणः अस्ति?

(A) घ् (B) छ्।

(C) जग् (D) ढ्

173. ग्रिमनियमानुसारं संस्कृतस्य 'क्,त्,प्' इति ध्वनयः जर्मनभाषायां केषु ध्वनिषु परिवर्तिताः?

(A) च,छ,ज् (B) ख्,थ्,फ् .

(C) ग्,द्,ब् (D) ऊष्मसु

174. संस्कृतभाषा कीदृशी अस्ति?

(A) श्लिष्टयोगात्मिका (B) प्रश्लिष्टयोगात्मिका

(C) अयोगात्मिका (D) अश्लिष्टयोगात्मिका

175. ग्रीकभाषा कस्य भाषापरिवारस्य भाषा अस्ति -

(A) सैमेटिकपरिवारस्य (B) वान्टूपरिवारस्य

(C) भारोपीयपरिवारस्य (D) काकेशीपरिवारस्य

176. संस्कृतस्य 'शतम्' इत्यस्य कृते 'केन्तुम्' इत्ययं शब्दः कस्यां भाषायां विद्यते?

(A) लैटिनभाषायाम् (B) ग्रीकभाषायाम्

(C) जर्मनभाषायाम् (D) ईरानीभाषायाम्

177. 'अधिवसति वैकुण्ठं हरिः' इत्यत्र कर्मसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?

(A) उपान्वध्याङ्वसः

(B) अधि-शीङ्-स्थाऽऽसां कर्म

(C) अधिरीश्वरे

(D) अधिपरी अनर्थकौ

178. 'इत्थम्भूतलक्षणे' इति सूत्रस्योदाहरणं किम्भवति?

(A) जटाभिस्तापसः

(B) जपमनु प्रावर्षत्

(C) मासं कल्याणी

(D) लक्षणेत्थम्भूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः

179. 'अधिगोपम्' इत्यत्राव्ययीभावसमासः कस्मिन्नर्थे भवति?

(A) समीपार्थे (B) अत्ययार्थे

(C) विभक्त्यर्थे (D) साकल्यार्थे

180. व्यधिकरणबहुव्रीहिसमासे किं ज्ञापकम् -

(A) 'अनेकमन्यपदार्थे, इत्यत्र 'अनेक' ग्रहणम्

(B) 'हलदन्तात् सप्तम्याः सञ्ज्ञायाम्' इत्यत्र 'सञ्ज्ञायाम्' इत्यस्य ग्रहणम्

(C) 'सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ' इत्यत्र 'सप्तमी' त्यस्य ग्रहणम्

(D) 'शेषो बहुव्रीहिः ' इत्यत्र 'शेष' ग्रहणम्

181. वर्णानामतिशयितः सन्निधिः को भवति?

(A) घि'सञ्ज्ञः (B) उपधासञ्ज्ञः

(C) निष्ठासञ्ज्ञः (D) संहितासञ्ज्ञः

182. अधोलिखितेषु कस्य सर्वनामस्थानसञ्ज्ञा भवति?

(A) 'टा' इत्यस्य (B) 'ङे' इत्यस्य

(C) 'शि' इत्यस्य (D)'ङि' इत्यस्यसंस्कृतगङ्गा

183. अधोलिखितप्रयोगेषु 'इणः षीध्वं-लुङ् –लिटां धोऽङ्गात् ' इति भ्वादिगणीयसूत्रस्योदाहरणं किमस्ति?

(A) एधध्वे (B) एधाञ्चकृढ्वे

(C) एधिष्यध्वे (D) एधध्वम्

184. एषु शुद्धो मत्वर्थीयप्रयोगः कः?

(A) विद्युद्वान् (B) विद्युद्यान्

(C) विद्युत्वान् (D) विद्युत्मान्

185. 'वास्तव्यः' इत्यत्र 'वस्' धातोः 'तव्यत्'प्रत्ययो भवति कस्मिन्नर्थे?

(A) कर्तरि (B) कर्मणि

(C) भावे (D) स्वार्थे

186. निम्नलिखितेषु शब्देषु अर्थसंकोचस्य उदाहरणं किमस्ति?

(A) सिंहः (B) वृकः

(C) कुशलः (D) मृगः

187. निम्नलिखितेषु को ध्वनिः महाप्राणो नास्ति?

(A) ध् (B) भ्

(C) ह् (D) ङ्

188. 'सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे' इति भाष्यवार्त्तिके नित्यपर्यायवाची 'सिद्ध' शब्द एवोपात्तो, न त्वसन्दिग्धो 'नित्य' शब्दस्तत्र को हेतुः?

(A) अवधारणार्थे 'सिद्ध' शब्दप्रयोगात्

(B) पूर्वपदलोप-परकस्य 'सिद्ध' शब्दस्य प्रयोगात्

(C) व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तेः 'सिद्ध'शब्दस्य नित्यार्थकत्वात्

(D) नित्यपर्यायिणः 'सिद्ध' शब्दस्य मङ्गलार्थत्वादपि

189. 'वृत्तिसमवायार्थो वर्णानामुपदेशः ' इत्यत्र 'समवाय' शब्दस्य कोऽर्थः ?

(A) नित्यसम्बन्धः

(B) समूहः

(C) वर्णानामानुपूर्व्येण सन्निवेशः

(D) वृत्तिनियामकसम्बन्धः

190. जन्मादयो विकाराः ब्रह्मणः कां शक्तिमुपाश्रिताः भवन्ति?

(A) आवरणशक्तिम् (B) आध्यात्मिकीं शक्तिम्

(C) कालशक्तिम् (D) भिन्नात्मिकां शक्तिम्

191. अत्रातीतविपर्यासः केवलामनुपश्यति ।
छन्दस्यश्छन्दसां योनिमात्मा छन्दोमयीं तनुम् ॥
अस्यां कारिकायाम् 'छन्दस्य' इत्यस्य शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) वेदार्थग्रहणसमर्थः

(B) स्वतन्त्रः

(C) वैदिकछन्दसां निर्माता

(D) वैदिकछन्दसां प्रयोगे निष्णातः

192. स्फोटः भेदवान् कथं प्रतीयते?

(A) भिन्नद्रव्यानाम् अभिव्यक्तिसाधनात्

(B) भिन्नोच्चारणात्

(C) भिन्नार्थेष प्रयोगात्

(D) नादस्य क्रमजन्मत्वात्

193. एषूदाहरणेषु वैषयिकाधारस्योदाहरणं किमस्ति ?

(A) मोक्षे इच्छाऽस्ति (B) कटे आस्ते

(C) स्थाल्यां पचति (D) सर्वस्मिन्नात्मास्ति

194. पाणिनीयशिक्षानुसारम् उदात्तस्वरोच्चारणकाले हस्तः कुत्र निधेयः ?

(A) हृदि (B) कर्णमूले

(C) सर्वास्ये (D) मूर्ध्नि

195. 'व्यूढोरस्कः' इत्यत्र कीदृशः समासः ?

(A) अव्ययीभावः (B) तत्पुरुषः

(C) द्वन्द्वः (D) बहुव्रीहिः

196. 'सार्पिषोऽपि स्याद्' इत्यत्र 'अपि' शब्दस्य् कर्मप्रवचनीयसञ्ज्ञा कस्मिन् अर्थे भवति?

(A) सम्भावनाद्योतकतायाम्

(B) अन्ववसर्गद्योतकतायाम्

(C) समुच्चयद्योतकतायाम्

(D) पदार्थद्योतकतायाम्

197. 'अधिकरणवाचिनश्च' इति सूत्रस्योदाहरणं किं भवति?

(A) राज्ञां मतः

(B) द्विरह्नो भोजनम्

(C) शब्दानामनुशासनमाचार्यस्य

(D) इदम् एषाम् आसितम्

198. 'पठति' इति क्रियापदं कीदृश्याः भाषायाः उदाहरणमस्ति?

(A) अयोगात्मिकायाः (B) प्रश्लिष्टयोगात्मिकायाः

(C) श्लिष्टयोगात्मिकायाः (D)अश्लिष्टयोगात्मिकायाः

199. ग्रीकभाषा कस्य परिवारस्य भाषा अस्ति?

(A) भारोपीय-परिवारस्य (B) सेमेटिक-परिवारस्य

(C) सूडानी-परिवारस्य (D) काकेशी-परिवारस्य

200. निम्नलिखितासु भाषासु का भाषा 'सतम्' वर्गस्य नास्ति?

(A) संस्कृतभाषा (B) ईरानीभाषा

(C) ग्रीकभाषा (D) फारसीभाषा

201. अंग्रेजी-भाषायाः सम्बन्धः कया भाषाशाखया अस्ति?

(A) कैल्टिकशाखया (B) जर्मनिकशाखया

(C) इटेलिकशाखया (D) ग्रीकशाखया

202. संस्कृतभाषायां निम्नलिखितेषु स्वरेषु कस्य स्वरस्य दीर्घो नास्ति?

(A) ऋकारस्य (B) अकारस्य

(C) इकारस्य (D) लृकारस्य

203. अन्त्यादलः पूर्ववर्णस्य का सञ्ज्ञा भवति?

(A) अपृक्तसञ्ज्ञा (B) उपधा-सञ्ज्ञा

(C) टि-सञ्ज्ञा (D) सर्वनामस्थानसञ्ज्ञा

204. निषेध-विकल्पयोः सञ्ज्ञा का?

(A) अपृक्तसञ्ज्ञा (B) विभाषासञ्ज्ञा

(C) उपधासञ्ज्ञा (D) प्रगृह्यसञ्ज्ञा

205. 'सुडनपुंसकस्य' इति सूत्रेण का सञ्ज्ञा क्रियते?

(A) सर्वनामस्थानसञ्ज्ञा (B) निष्ठासञ्ज्ञा

(C) प्रातिपदिकसञ्ज्ञा (D) पदसञ्ज्ञा

206. 'अनुविष्णु' इत्यत्र 'अव्ययं विभक्ति-समीप-समृद्धि इत्यादिसूत्रेण कस्मिन् अर्थेऽव्ययीभावसमासः?

(A) समीपार्थे (B) असम्प्रत्यर्थे

(C) पश्चादर्थे (D) आनुपूर्व्यार्थे

207. 'घि-संज्ञा' केन सूत्रेण भवति ?

(A) यू स्त्र्याख्यौ नदी (B) अचोऽन्त्यादि टि

(C) परः संक्रिकर्षः संहिता (D) शेषो घ्यसखि

208. हेत्वर्थे का विभक्तिः ?

(A) द्वितीया (B) तृतीया

(C) चतुर्थी (D) पञ्चमी

209. 'पाणिपादम्' - अस्मिन् पदे समासविग्रहः भवति-

(A) पाणी च पादौ च (B) पाणिः च पादं च

(C) पाणिना च पादेन च (D) पाणि च पादौ च

210.“ध्रुवमपाये”.... इत्यत्र किं कारकम् ?

(A) करणम् (B) अपादानम्

(C) सम्प्रदानम् (D) कर्म

211. 'कुक्कुटमयूर्यौ'- इत्यस्य पदस्य लौकिकविग्रहः भवति-

(A) कुक्कुटश्च मयूरी च (B) कुक्कुटश्च मयूरश्च

(C) कुक्कुटस्य च मयूर्याश्च (D) कुक्कुटौ च मयूर्यो च

212. अधोनिर्दिष्टानां समीचीनां तालिकां विचिनुत-

(अ) अभिनिविशश्च	1. तुल्यास्यप्रयत्नम्
(ब) अपृक्तम्	2. बहुव्रीहिः
(स) चित्रगुः	3. कर्मसंज्ञा
(द) सवर्णम्	4. एकाल्प्रत्ययः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	2	1	3	4
(B)	1	2	4	3
(C)	3	4	2	1
(D)	4	3	1	2

213. वर्णानामतिशयितः सन्निधिः किं संज्ञकः स्यात् ?

(A) उदात्तः (B) अनुदात्तः

(C) स्वरितः (D) संहिता

214. 'चोराद् बिभेति' इत्यत्र अपादानं केन सूत्रेण विधीयते ?
(A) पराजेरसोढः (B) भीत्रार्थानां भयहेतुः
(C) वारणार्थानामीप्सितः (D) विभाषा गुणेऽस्त्रियाम्

215. 'चर्मणि द्वीपिनं हन्ति' - इत्युदाहरणं कस्य भवति ?
(A) निमित्तात् कर्मयोगे (B) साध्वसाधुप्रयोगे च
(C) षष्ठी चानादरे (D) यतश्च निर्धारणम्

216. भाषापरिवर्तनस्य कति बाह्यकारणानि ?
(A) चत्वारि (B) षट्
(C) अष्टौ (D) दश

217. भारोपीयभाषापरिवारे शतमवर्गस्य कति प्रमुखभेदाः -
(A) चत्वारः (B) सप्त
(C) नव (D) एकादश

218. 'नदी' संज्ञकः शब्दः नास्ति -
(A) नदी (B) वधू
(C) सरित् (D) बहुश्रेयसी

219. ईदूदेदन्तस्य द्विवचनस्य शब्दस्य का संज्ञा भवति-
(A) प्रगृह्यसंज्ञा (B) प्रकृतिभावः
(C) प्लुतसंज्ञा (D) टिसंज्ञा

220. 'गां दोग्धि पयः '- इत्यत्र 'गाम्' पदे कर्मसंज्ञा केन सूत्रेण भवति?
(A) कर्मणि द्वितीया (B) अकथितं च
(C) तथायुक्तं चानीप्सितम् (D) कर्तुरीप्सिततमं कर्म

221. 'कटे आस्ते'-"-इत्यत्र कीदृश आधारो वर्तते?
(A) औपश्लेषिकः (B) वैषयिकः
(C) अभिव्यापकः (D) व्यापकः

222. द्वितीया-चतुर्थ्यौ भवतः-
(A) अधि-शी-धातोः प्रयोगे
(B) 'विना' शब्दस्य योगे
(C) नमः योगे
(D) गत्यर्थकर्मणि

223. 'नीलोत्पलम्' इत्यत्र नपुंसकत्वं केन सूत्रेण भवति?
(A) स नपुंसकम्
(B) परवल्लिङ्गं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः
(C) अव्ययीभावश्च
(D) ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य

224. भूतपूर्वः' इत्यत्र भूतशब्दस्य पूर्वप्रयोगः कस्मात् भवति?
(A) आचार्याणाम् आचारात्
(B) 'उपसर्जनं पूर्वम्' इति सूत्रात्
(C) 'भूतपूर्वे चरट्' इति केवलसमासत्वात्
(D) लोकतः

225. अधस्तनानां समीचीनां तालिकां चिनुत-
(अ) पूर्वपदार्थप्रधानः 1. हरौ इति
(ब) अस्वपदविग्रहः 2. अव्ययीभावः
(स) नदीभिश्च 3. पञ्चगङ्गम्
(द) अलौकिकविग्रहः 4. प्राप्त सु+उदक सु

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	3	4	2
(B)	2	3	1	4
(C)	2	1	3	4
(D)	3	1	4	2

226. केन्टुम-वर्गस्य भाषा अस्ति-
(A) लैटिनभाषा (B) संस्कृतभाषा
(C) फारसीभाषा (D) अवेस्ता

227. संस्कृतभाषायाः घ, ध, भ् वर्णाः जर्मनिक्भाषाया भवन्ति-
(A) ग् द् ब् (B) क् द् ब्
(C) ग् द् फ (D) ट् द् ब्

228. कस्य प्रातिपदिकसंज्ञा भवितुम् अर्हति -
(A)कृष्ण+अम्+श्रित+सु
(B) भू +अ + ति
(C) हरि + ङि
(D) यज्

229. 'अग्निचित् 'इत्यत्र उपधासंज्ञा अस्ति -
(A) 'इत्' समुदायस्य (B) 'चित्' समुदायस्य
(C) 'त' वर्णस्य (D) 'इ' वर्णस्य

230. 'पशुना रुद्रं यजते' - इत्यत्र 'पशुना' पदे या तृतीया, सा वस्तुतः कस्मिन् कारकेऽस्ति -
(A) करणकारके (B) सम्प्रदानकारके
(C) कर्मकारके (D) कर्तृकारके

231. 'पुष्पाणि स्पृहयन्ति' - इत्यत्र 'पुष्पाणि' इत्यस्य कर्मसंज्ञा भवति -
(A) अनीप्सितत्वात् (B) ईप्सिततमत्वात्
(C) स्पृहधातोः प्रयोगात् (D) प्रकर्षाभावात्

232. अव्ययीभावसमासे अव्यय संज्ञायाः फलं किम् ?
(A) अव्ययसंज्ञा (B) प्रातिपदिकसंज्ञा
(C) सुब्लुक (D) सुप्स्यानां प्राप्तिः

233. "सुमद्रम्' - अत्र 'सु' अव्ययः कस्मिन्नर्थे वर्तते ?
(A) 'सुन्दरम्' इत्यस्मिन् अर्थे
(B) 'सुष्टु' इत्यस्मिन् अर्थे
(C) 'समृद्धि' इत्यस्मिन् अर्थे
(D) 'समीपम्' इत्यस्मिन् अर्थे

234. 'स नपुंसकम् 'इत्यनेन सूत्रेण नपुंसकत्वं भवति
(A) अव्ययीभावसमासे (B) बहुव्रीहिसमासे
(C) कर्मधारयसमासे (D) समाहारद्विगुसमासे

235. विशेष-संज्ञा-विनिर्मुक्तः समासः कः -
(A) अव्ययीभावसमासः (B) केवलसमासः

(C) तत्पुरुषसमासः (D) अनित्यसमासः

236. अधोनिर्दिष्टानां समीचीनां तालिकां विचिनुत -

(अ) उपधा 1. सम्प्रदानम्

(ब) रुच्यर्थानां धातूनां प्रयोगे 2. अलोऽन्त्यात् पूर्वः

(स) अक्ष्णा काणः 3. कर्मकारकम्

(द) अधिशीङ्योगे 4. येनाङ्गविकारः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	3	4	2
(B)	3	1	2	4
(C)	2	4	1	3
(D)	2	1	4	3

237. हलोऽनन्तराः.......इति सूत्रेण का संज्ञा भवति -

(A) संहितासंज्ञा (B) उपसर्गः

(C) लघुसंज्ञा (D) संयोगः

238. ' कर्मधारयसमास-विधायक' सूत्रं किम् अस्ति-

(A) सह सुपा (B) अनेकमन्यपदाथे

(C) विशेषणं विशेष्येण बहुलम् (D) अर्धं नपुंसकम्

239. 'वीरपुरुषको ग्रामः ' इत्यत्र कः समासः -

(A) अव्ययीभावः (B) बहुव्रीहिः

(C) तत्पुरुषः (D) द्वन्द्वः

240. 'श्रीः' इत्यत्र कस्मिन्नर्थे प्रथमा -

(A) प्रातिपदिकार्थमात्रे (B) परिमाणमात्रे

(C) लिङ्गमात्रे (D) वचनमात्रे

241. 'अनुक्ते कर्मणि' का विभक्तिः भवति -

(A) द्वितीया (B) तृतीया

(C) प्रथमा (D) चतुर्थी

242. 'आख्यातोपयोगे' इत्यनेन किं विधीयते ?

(A) अपादानसंज्ञा (B) सम्प्रदानसंज्ञा

(C) अधिकरणसंज्ञा (D) कर्मसंज्ञा

243. 'स्वाहा'-शब्दयोगे का विभक्तिः भवति -

(A) पञ्चमी (B) चतुर्थी

(C) सप्तमी (D) तृतीया

244. 'कर्तृकर्मणोः कृति' इति सूत्रेण किं विधीयते -

(A) चतुर्थी (B) पञ्चमी

(C) सप्तमी (D) षष्ठी

245. आधारः कतिविधः -

(A) त्रिविधः (B) चतुर्विधः

(C) पञ्चविधः (D) षड्विधः

246. 'दम्पती' - अस्मिन् पदे समास-विग्रहः भवति -

(A) पिता च भ्राता च (B) पिता च पतिश्च

(C) पिता च पुत्रश्च (D) जाया च पतिश्च

247. 'पुष्पेभ्यः स्पृहयति' इत्यत्र चतुर्थी-विधायक सूत्र किम् अस्ति

(A) अरकथितं च (B) दिवः कर्म च

(C) स्पृहेरीप्सितः (D) आख्यातोपयोगे

248. माङ्गलिक आचार्यो महतो शास्त्रौधस्य मङ्गलार्थमादितः किं प्रयुङ्क्ते ?

(A) काव्यम् (B) नित्यशब्दम्

(C) अनित्यशब्दम् (D) सिद्धशब्दम्

249. 'इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः' इति सूत्रेण किं विधीयते ?

(A) आम् (B) इट्

(C) वृद्धिः (D) गुणः

250. अधोऽङ्कितानां युग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(अ) प्राचां ष्फ 1.क्रियातिपत्तौ

(ब) लिङ्निमित्ते लृङ् 2. तृतीयान्यतरस्याम्

(स) प्रेष्यब्रुवोर्हविषो 3.तद्धितः

(द) तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्याम् 4. देवतासम्प्रदाने

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	2	3	1	4
(B)	3	2	4	1
(C)	3	1	4	2
(D)	4	2	3	1

॥उत्तरमाला॥

1. (B) 2. (B) 3. (D) 4. (A) 5. (A)
6. (C) 7. (D) 8. (A) 9. (B) 10. (B)
11. (D) 12. (B) 13. (C) 14. (B) 15. (B)
16. (C) 17. (A) 18. (B) 19. (D) 20. (B)
21. (C) 22. (C) 23. (D) 24. (C) 25. (C)
26. (B) 27. (D) 28. (B) 29. (D) 30. (B)
31. (B) 32. (A) 33. (C) 34. (C) 35. (C)
36. (C) 37. (A) 38. (D) 39. (D) 40. (A)
41. (B) 42. (B) 43. (C) 44. (A) 45. (D)
46. (B) 47. (C) 48. (A) 49. (B) 50. (D)
51. (C) 52. (B) 53. (B) 54. (D) 55. (B)
56. (B) 57. (B) 58. (C) 59. (D) 60. (B)
61. (D) 62. (C) 63. (A) 64. (A) 65. (B)
66. (C) 67. (B) 68. (B) 69. (B) 70. (B)
71. (D) 72. (C) 73. (B) 74. (C) 75. (C)
76. (A) 77. (B) 78. (A) 79. (C) 80. (D)
81. (D) 82. (D) 83. (C) 84. (D) 85. (C)
86. (C) 87. (A) 88. (C) 89. (B) 90. (C)
91. (A) 92. (C) 93. (A) 94. (C) 95. (B)
96. (C) 97. (D) 98. (A) 99. (B) 100. (B)
101. (B) 102. (C) 103. (C) 104. (D) 105. (B)
106. (C) 107. (B) 108. (A) 109 . (D) 110. (B)

111. (B) 112. (B) 113. (A) 114. (A) 115. (A)
116. (B) 117. (A) 118. (B) 119. (B) 120. (A)
121. (B) 122. (A) 123. (A) 124. (C) 125. (C)
126. (D) 127. (D) 128. (C) 129. (D) 130. (C)
131. (C) 132. (A) 133. (A) 134. (B) 135. (C)
136. (D) 137. (A) 138. (A) 139. (D) 140. (A)
141. (B) 142. (A) 143. (B) 144. (D) 145. (D)
146. (A) 147. (A) 148. (A) 149. (D) 150. (B)
151. (D) 152. (A) 153. (C) 154. (C) 155. (B)
156. (C) 157. (A) 158. (C) 159. (D) 160. (B)
161. (A) 162. (D) 163. (C) 164. (B) 165. (A)
166. (A) 167. (A) 168. (D) 169. (B) 170. (C)
171. (A) 172. (B) 173. (B) 174. (A) 175. (C)
176. (A) 177. (A) 178. (A) 179. (C) 180. (C)
181. (D) 182. (C) 183. (B) 184. (C) 185. (A)
186. (D) 187. (D) 188. (C) 189. (C) 190. (C)
191. (A) 192. (D) 193. (A) 194. (D) 195. (D)
196. (A) 197. (D) 198. (C) 199. (A) 200. (C)
201. (B) 202. (D) 203. (B) 204. (B) 205. (A)
206. (C) 207. (D) 208. (B) 209. (A) 210. (B)
211. (A) 212. (C) 213. (D) 214. (B) 215. (A)
216. (C) 217. (B) 218. (C) 219. (A) 220. (B)
221. (A) 222. (D) 223. (A) 224. (C) 225. (C)
226. (A) 227. (A) 228. (A) 229. (D) 230. (C)
231. (B) 232. (C) 233. (C) 234. (D) 235. (B)
236. (D) 237. (D) 238. (C) 239. (B) 240. (A)
241. (A) 242. (A) 243. (B) 244. (D) 245. (A)
246. (D) 247. (C) 248. (D) 249. (A) 250. (C)

इकाई-7

॥संस्कृतसाहित्य॥

संस्कृतसाहित्य काव्यशास्त्र एवं छन्द परिचय-

(क) प्रमुख कवियों का सामान्य परिचय-

1. भास

भास संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध नाटककार थे, जिनके जीवनकाल के विषय में अधिक जानकारी नहीं है। भास का समय **100 ई.पू. से 200 ई.** के बीच का माना गया है। **'स्वप्नवासवदत्तम्'** उनके द्वारा लिखित सबसे चर्चित नाटक है, जिसमें एक राजा के अपने रानी के प्रति प्रेम और पुनर्मिलन की कहानी है। कालिदास जो गुप्तकालीन समझे जाते हैं, ने भास का नाम अपने नाटक में लिया है, जिससे लगता है कि वह गुप्त काल से पहले रहे होंगे पर इससे भी उनके जीवनकाल का अधिक ठोस प्रमाण नहीं मिलता। आज कई नाटकों में उनका नाम लेखक के रूप में उल्लिखित है, किन्तु **1912 में त्रिवेंद्रम में टी. गणपति शास्त्री** ने नाटकों की लेखन शैली में समानता देखकर उन्हें भास-लिखित बताया। संस्कृत नाटककारों में 'भास' का नाम उल्लेखनीय है। भास कालिदास के पूर्ववर्ती हैं। सबसे पहले **'टी. गणपति शास्त्री'** ने भास के तेरह नाटकों की खोज की थी। अभी तक भास के विषय में जो सामग्री मिलती है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि भास ही लौकिक संस्कृत के प्रथम साहित्यकार थे। भास का आविर्भाव **ई. पू. पाँचवी - चौथी** शती में हुआ था। नाटककार भास के कुल 13 उपलब्ध रचनाएं हैं इनके चार वर्ग हैं।

कृतियाँ-

1. **उदयन कथा मूलक-** प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्तम् ।
2. **रामायण मूलक-** प्रतिमानाटक, अभिषेकनाटक ।
3. **महाभारत मूलक-** ऊरुभंगम, दूतवाक्यम्, पंचरात्र, मध्यमव्यायोग, दूतघटोत्कच, बालचरितम्, कर्णभारम् ।
4. **लोककथा मूलक-** अविमारकम्, चारुदत्तम् ।

उपाधि- कविताकामिनीहास, अग्निमित्र (ज्वलनमित्र), भासो हास।

2. अश्वघोष

अश्वघोष, बौद्ध महाकवि तथा दार्शनिक थे। **बुद्धचरितम्** इनकी प्रसिद्ध रचना है। **कुषाणनरेश कनिष्क** के समकालीन महाकवि अश्वघोष का **समय प्रथम शताब्दी ई.** का अन्त और द्वितीय का आरम्भ है।

जीवन वृत्त- उनका जन्म **साकेत (अयोध्या)** में हुआ था। उनकी माता का नाम **सुवर्णाक्षी** था। चीनी परम्परा के अनुसार महाराज **कनिष्क पाटलिपुत्र** के अधिपति को परास्त कर वहाँ से अश्वघोष को अपनी राजधानी **पुरुषपुर (वर्तमान पेशावर)** ले गए थे। कनिष्क द्वारा बुलाई गई **चतुर्थ बौद्ध संगीति** की अध्यक्षता का गौरव एक परम्परा **महास्थविर पार्श्व** को और दूसरी परम्परा महावादी अश्वघोष को प्रदान करती है। ये **सर्वास्तिवादी बौद्ध** आचार्य थे जिसका संकेत **सर्वास्तिवादी "विभाषा"** की रचना में प्रायोजक होने से भी हमें मिलता है। ये प्रथमतः परमत को परास्त करनेवाले **"महावादी"** दार्शनिक थे। इसके अतिरिक्त साधारण जनता को बौद्धधर्म के प्रति **"काव्योपचार"** से आकृष्ट करनेवाले महाकवि थे।

अश्वघोष की प्रमुख रचनाएँ- इनके नाम से प्रख्यात अनेक ग्रन्थ हैं, परंतु प्रामाणिक रूप से अश्वघोष की साहित्यिक कृतियाँ केवल चार हैं-

कृतियाँ-

महाकाव्य- बुद्धचरितम्, सौन्दरानन्द ।

नाटक- शारिपुत्रप्रकरणम् ।

गंडीस्तोत्रगाथा, सूत्रालङ्कारशास्त्रम् के रचयिता संभवतः ये नहीं हैं।

रीति- वैदर्भी

उपाधि- आर्यभदन्त, बौद्धभिक्षु, राष्ट्रपाल ।

3. महाकवि कालिदास

कालिदास **(100 ई.पू.)** संस्कृत भाषा के महान कवि और नाटककार थे। उन्होंने भारत की पौराणिक कथाओं और दर्शन को आधार बनाकर रचनाएं की और उनकी रचनाओं में भारतीय जीवन और दर्शन के विविध रूप और मूल तत्त्व निरूपित हैं । कालिदास अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण राष्ट्र की समग्र राष्ट्रीय चेतना को स्वर देने वाले कवि माने जाते हैं और कुछ विद्वान उन्हें **राष्ट्रीय कवि** का स्थान तक देते हैं। **अभिज्ञानशाकुंतलम्** कालिदास की सबसे प्रसिद्ध रचना है। यह नाटक कुछ उन भारतीय साहित्यिक कृतियों में से है जिनका सबसे पहले यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद हुआ था। यह पूरे विश्व साहित्य में अग्रगण्य

रचना मानी जाती है। **मेघदूतम्** कालिदास की सर्वश्रेष्ठ रचना है जिसमें कवि की **कल्पनाशक्ति और अभिव्यंजनावादभावाभिव्यञ्जना शक्ति** अपने सर्वोत्कृष्ट स्तर पर है ।

रीति- कालिदास वैदर्भी रीति के कवि हैं और तदनुरूप वे अपनी अलंकार युक्त किन्तु सरल और मधुर भाषा के लिये विशेष रूप से जाने जाते हैं। उन्होंने अपने श्रृंगार रस प्रधान साहित्य में भी आदर्शवादी परंपरा और नैतिक मूल्यों का समुचित ध्यान रखा है। कालिदास के परवर्ती कवि बाणभट्ट ने उनकी सूक्तियों की विशेष रूप से प्रशंसा की है।

समय- कालिदास किस काल में हुए और वे मूलतः किस स्थान के थे इसमें काफ़ी विवाद है। चूँकि, कालिदास ने द्वितीय शुंग शासक **अग्निमित्र** को नायक बनाकर **मालविकाग्निमित्रम्** नाटक लिखा और **अग्निमित्र** ने 170 ईसापूर्व में शासन किया था, अतः कालिदास के समय की एक सीमा निर्धारित हो जाती है कि वे इससे पहले नहीं हो सकते। छठीं सदी ईसवी में **बाणभट्ट** ने अपनी रचना **हर्षचरितम्** में कालिदास का उल्लेख किया है तथा इसी काल के पुलकेशिन द्वितीय के एहोल शिलालेख में कालिदास का जिक्र है अतः वे इनके बाद के नहीं हो सकते। इस प्रकार कालिदास के प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व से छठी शताब्दी ईसवी के मध्य होना तय है। दुर्भाग्यवश इस समय सीमा के अन्दर वे कब हुए इस पर काफ़ी मतभेद हैं। विद्वानों में (i) द्वितीय शताब्दी ईसा पूर्व का मत (ii) प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत (iii) तृतीय शताब्दी ईसवी का मत (iv) चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत (v) पाँचवी शताब्दी ईसवी का मत, तथा (vi) छठीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध का मत प्रचलित थे। इनमें ज्यादातर खण्डित हो चुके हैं या उन्हें मानने वाले कुछ लोग ही हैं किन्तु मुख्य संघर्ष 'प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत और 'चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत' में है।

प्रथम शताब्दी ईसा पूर्व का मत - परम्परा के अनुसार कालिदास उज्ञयिनी के उन राजा विक्रमादित्य के समकालीन हैं जिन्होंने ईसा से 57 वर्ष पूर्व विक्रम संवत् चलाया। **विक्रमोर्वशीयम्** के नायक पुरुरवा के नाम का विक्रम में परिवर्तन से इस तर्क को बल मिलता है कि कालिदास उज्ञयनी के राजा विक्रमादित्य के राजदरबारी कवि थे। इन्हें **विक्रमादित्य के नवरत्नों** में से एक माना जाता है।

चतुर्थ शताब्दी ईसवी का मत - प्रो॰ कीथ और अन्य इतिहासकार कालिदास को गुप्त शासक **चंद्रगुप्त विक्रमादित्य** और उनके **उत्तराधिकारी कुमारगुप्त** से जोड़ते हैं, जिनका शासनकाल चौथी शताब्दी में था। ऐसा माना जाता है कि **चंद्रगुप्त द्वितीय** ने **विक्रमादित्य** की उपाधि ली और उनके शासनकाल को स्वर्णयुग माना जाता है।

जन्म स्थान- कालिदास के जन्मस्थान के बारे में भी विवाद है। मेघदूतम् में उज्ञैन के प्रति उनकी विशेष प्रेम को देखते हुए कुछ लोग उन्हें उज्ञैन का निवासी मानते हैं। साहित्यकारों ने ये भी सिद्ध करने का प्रयास किया है कि कालिदास का जन्म **उत्तराखंड** के रूद्रप्रयाग जिले के **कविल्ठा** गांव में हुआ था। कालिदास ने यहीं अपनी प्रारंभिक शिक्षा ग्रहण की थी और यहीं पर उन्होंने मेघदूतम्, कुमारसंभवम् और रघुवंशम् जैसे महाकाव्यों की रचना की थी।

कालिदास के प्रवास के कुछ साक्ष्य **बिहार के मधुबनी** जिला में भी मिलते हैं। कहा जाता है **विद्योत्तमा** (कालिदास की पत्नी) से शास्त्रार्थ में पराजय के बाद कालिदास यहीं गुरुकुल में रुके। कालिदास को यहीं ज्ञान का वरदान मिला। यहां आज भी कालिदास का डीह है। यहाँ की मिट्टी से बच्चों के प्रथम अक्षर लिखने की परंपरा आज भी यहाँ प्रचलित है। कुछ विद्वानों ने तो उन्हें बंगाल और उड़ीसा का भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। कहते हैं कि कालिदास की श्रीलंका में हत्या कर दी गई थी लेकिन विद्वान इसे भी कपोल-कल्पित मानते हैं। महाकवि कालिदास की मुख्य रूप से (7) प्रसिद्ध **रचनाएं** हैं-

कृतियाँ-

नाटक- अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मालविकाग्निमित्र, ।

महाकाव्य- रघुवंशम्, कुमारसंभवम् । **खण्डकाव्य-** मेघदूतम् ।

त्रोटक- विक्रमोर्वशीयम् । **गीतिकाव्य-** ऋतुसंहार ।

अन्य कृतियाँ - कालीस्तोत्र, गंगाष्टक, ज्योतिर्विदाभरणम् ।

उपाधियां- दीपशिखा, रघुकार, कविकुलगुरु, कविताकामिनीविलास, उपमासम्राट् ।

4. शूद्रक

शूद्रक गुप्तकाल में उत्पन्न हुए थे। का समय **100 ई.पू. से 200 ई.** के बीच का माना गया है। उनका प्रसिद्ध नाटक **'मृच्छकटिकम्'** है, जिसे सामाजिक नाटकों में प्रमुख स्थान प्राप्त है। यह प्रकरण ग्रन्थ है जिसमें दस अङ्क है इसका रचनाकाल **तीसरी चौथी** शताब्दी ई. माना जाता है। इसके दस अंकों में ब्राह्मण **'चारुदत्त'** जो समय-चक्र से निर्धन है तथा उज्ञयिनी की प्रसिद्ध गणिका **'वसंतसेना'** के आदर्श प्रेम की कहानी वर्णित है।

भाषा शैली- मृच्छकटिकम् की शैली सरल तथा वर्णन विस्तृत है। **प्राकृत** भाषा की सभी शैलियों का प्रयोग इसमें एक साथ मिलता है। प्रथम बार संस्कृत में शूद्रक ने ही राज परिवार को छोड़कर समाज के मध्यम वर्ग के लोगों को अपने नाटक के पात्र बनाये। इसके कथानक तथा वातावरण

में स्वाभाविकता है । इस दृष्टि से शूद्रक की नाट्य कला बड़ी प्रशंसनीय है। पाश्चात्य आलोचकों ने इसकी बड़ी सराहना की है तथा **मृच्छकटिकम्** को सार्वभौम आकर्षण का नाटक बताया है, जिसका सफल मंचन विश्व में कहीं भी किया जा सकता है। इनके विषय में प्रसिद्ध उक्ति है **(शूद्रकः अग्निं प्रविष्टः)** शूद्रक राजा अग्नि में प्रविष्ट हुए ।

कृतियाँ- मृच्छकटिकम् ।

5. विशाखदत्त

विशाखदत्त गुप्तकाल की विभूति थे। इनका समय **पाँचवी छठी शताब्दी ई.** है। इनके दो नाटक प्रसिद्ध हैं- **मुद्राराक्षस तथा देवीचन्द्रगुप्तम्**। मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्तमौर्य के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का उल्लेख मिलता है। **देवीचन्द्रगुप्तम्** से गुप्तवंशी शासक रामगुप्त के विषय में सूचनाएँ प्राप्त होती है। यह नाटक अपने मूल रूप में नहीं मिलता। इसके कुछ अंश **'नाट्य दर्पण'** में प्राप्त होते हैं। **विशाखदत्त ऐतिहासिक** प्रवृत्ति के लेखक हैं। इनके नाटक **वीर रस** प्रधान हैं। मुद्राराक्षस में **प्रेमकथा, नायिका, विदूषक** आदि का अभाव है तथा इस दृष्टि से यह संस्कृत साहित्य में अपना अलग स्थान रखता है।

पिता- महाराज पृथु (परन्तु कुछ संस्करण में पिता का नाम **भास्कर दत्त** भी प्राप्त होता है)।

पितामह- सामंत वटेश्वरदत्त

कृतियाँ- मुद्राराक्षस, देवीचन्द्रगुप्तम्, अभिसारवञ्चितक ।

उपाधि- दत्त (वटेश्वरदत्त, भास्करदत्त, विशाखदत्त) ।

6. भारवि

भारवि संस्कृत के महान कवि हैं। वे अर्थ की गौरवता के लिये प्रसिद्ध हैं **("भारवेरर्थगौरवम्")**। **किरातार्जुनीयम्** महाकाव्य उनकी महान रचना है। इसे एक उत्कृष्ट श्रेणी की काव्यरचना माना जाता है। इनका काल **छठी-सातवीं शताब्दी (560 ई. से 615 के बीच)** बताया जाता है। **भारवि** सम्भवतः **दक्षिण भारत** के कहीं जन्मे थे। उनका रचनाकाल पश्चिमी **गंग राजवंश** के राजा दुर्विनीत तथा पल्लव राजवंश के राजा **सिंहविष्णु** के शासनकाल के समय का है। कवि ने बड़े से बड़े अर्थ को थोड़े से शब्दों में प्रकट कर अपनी काव्य-कुशलता का परिचय दिया है। भारवि ने केवल **एक अक्षर "न"** वाला श्लोक लिखकर अपनी काव्यचातुरी का परिचय दिया है।

- **माता**- सुशीला
- **पिता**- श्रीधर (अवंतीसुंदरी के अनुसार नारायण स्वामी)
- **पत्नी**- रसिकवती (रासिका)
- **निवासी**- धारानगरी,
- **वास्तविक**- नाम दामोदर भारवि इनकी उपाधि थी ।

कृतियाँ- किरातार्जुनीयम्,

उपाधि- भारवि (वास्तविक नाम दामोदर)

7. माघ

माघ का समय **675 ई.** के लगभग **7 वीं शताब्दी** का अंतिम चरण है। माघ **मारवाड़** के प्राचीनतम महाकाव्य **'शिशुपालवध'** के रचियता थे। 'माघ' का जन्म **भीन-माल** के एक प्रतिष्ठित धनी **श्रीमाली ब्राह्मण-कुल** में हुआ था। उनकी **पत्नी** का नाम विद्यावती था। वे सर्वश्रेष्ठ संस्कृतमहाकवियों की त्रयी (माघ, भारवि, कालिदास) में अन्यतम हैं। उन्होंने **शिशुपालवध** नामक केवल एक ही महाकाव्य लिखा। इस महाकाव्य में **श्रीकृष्ण** के द्वारा युधिष्ठिर के **राजसूय यज्ञ** में **चेदिनरेश शिशुपाल** के वध का सांगोपांग वर्णन है। **उपमा, अर्थगौरव तथा पदलालित्य** - इन तीन गुणों का सुभग सह-अस्तित्व माघ के कमनीय काव्य में मिलता है, अतः **"माघे सन्ति त्रयो गुणाः"** उनके बारे में सुप्रसिद्ध है। इनके **पिता** का नाम **दत्तक** था और माता का नाम ब्राह्मी था। माघ की प्रशंशासा में कहा गया है-

"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः" ॥

कालिदास उपमा में, भारवि अर्थगौरव में, और दण्डी पदलालित्य में बेजोड़ हैं। लेकिन माघ में ये तीनों गुण हैं। शिशुपालवध मे रैवतक पर्वत की हाथी से और हाथी के बंधे घंटे की तुलना नही बल्कि रैवतक पर्वत के दोनो ओर जो सूर्य और चन्द्रमा है उसकी उपमा स्वर्ण और रजत से निर्मित घंटे से की गई है! अतः माघ को घंटा माघ कहा जाता है।

कृतियाँ- 'शिशुपालवध'।

उपाधि- घंटा माघ,

8. हर्ष

हर्षवर्धन प्राचीन भारत में एक राजा था जिसने उत्तरी भारत में अपना एक सुदृढ़ साम्राज्य स्थापित किया था। इनका समय **सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध** माना जाता है। वह अंतिम हिंदू सम्राट् था जिसने पंजाब छोड़कर शेष समस्त उत्तरी भारत पर राज्य किया। शशांक की मृत्यु के उपरांत वह बंगाल को भी जीतने में समर्थ हुआ। हर्षवर्धन के शासनकाल का इतिहास मगध से प्राप्त दो ताम्रपत्रों, राजतरंगिणी, चीनी यात्री ह्वेनसाँग के विवरण और हर्ष एवं बाणभट्ट रचित संस्कृत काव्य ग्रंथों में प्राप्त है।

- **पिता**- प्रभाकरवर्धन,
- **बडा भाई**- राज्यवर्धन,
- **बहन**- राज्यश्री,

- निवास- स्थाणीश्वर,
- इन्होनें अवन्तिवर्मा के साथ मिलकर 562 ई. में हूणों को परास्त किया।
- ये प्रभाकरवर्धन के तीन पुत्रों में अद्वितीय थे ।

ह्वेनसांग की कृति 'सी यू की' में हर्ष के विषय में विस्तृत वर्णन मिलता है ।

कृतियाँ- प्रियदर्शिका- 4 अंक,
रत्नावली- 4 अंक,
नागानन्द- 5 अंक,

उपाधि- अनङ्ग, राजा, कवीन्द्र, कविता का हर्ष ।

9. बाणभट्ट

बाणभट्ट संस्कृत साहित्य में ही एक ऐसे महाकवि हैं जिनके जीवन चरित के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। **'बाण भट्ट सातवीं शताब्दी पूर्वार्द्ध** के संस्कृत गद्य लेखक और कवि थे। वह राजा **हर्षवर्धन** के आस्थान कवि थे। इनकी बाल्यावस्था में माता की मृत्यु और 14 वर्ष की अवस्था में पिता की मृत्यु हो गई थी । उनके दो प्रमुख ग्रंथ हैं: **हर्षचरितम्** तथा **कादम्बरी। हर्षचरितम्** राजा हर्षवर्धन का जीवन-चरित्र था और कादंबरी दुनिया का पहला **उपन्यास** था। राजा हर्ष ने इनको **(महानयं भुजंग)** कहा था । कादंबरी पूर्ण होने से पहले ही **बाण भट्ट** जी का देहांत हो गया तो उपन्यास पूरा करने का काम उनके पुत्र **भूषण भट्ट** ने अपने हाथ में लिया। दोनों ग्रंथ संस्कृत साहित्य के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माने जाते हैं।

यद्यपि बाणभट्ट की लेखनी से अनेक ग्रन्थ रत्नों का लेखन हुआ है किन्तु बाणभट्ट का महाकवित्व केवल **'हर्षचरित'** और **'कादम्बरी'** पर प्रधानतया आश्रित है। इन दोनों गद्य काव्यों के अतिरिक्त **मुकुटताडिका (नाटक), चण्डीशतकम् और** पार्वती-परिणय (नाटक) भी बाणभट्ट की रचनाओं में परिगणित हैं। इनमें **'पार्वतीपरिणय'** को **ए.बी. कीथ** ने बाणभट्ट की रचना न मानकर उसे **वामनभट्टबाण** (17 वीं शती) नामक किसी **दाक्षिणात्य वत्सगोत्रीय ब्राह्मण** की रचना माना है। गोवर्धनाचार्य का कथन है- **'वाणी बाणो बभूव'।**

- **पिता-** चित्रभानु ,
- **माता-** राजदेवी ,
- **पुत्र-** भूषण भट्ट
- **निवास-** प्रीतिकूट (शोण नदी के दक्षिण तट पर)
- **शैली-** पांचाली ।
- **समय-** चीनी यात्री ह्वेन सॉग (629- 645) के लगभग ।

कृतियाँ- हर्षचरितम् (आख्यायिका), कादंबरी (कथा), चंडीशतकम् (मुक्तककाव्य), मुकुटताडिका (नाटक), पार्वती परिणय (नाटक) ।

उपाधियाँ-

उपाधि	उपाधिदाता	उपाधि	उपाधिदाता
गद्यसम्राट	बलदेव उपाध्याय	महानयं भुजंग	हर्षवर्धन
वश्यवाणी चक्रवर्ती	हर्ष	तुरंगबाण	आलोचक
कविताकामिनीकौतुक	जयदेव	सर्वेश्वर	
कविताकाननकेसरी	चन्द्रदेव		

10. दंडी

दंडी संस्कृत के प्रसिद्ध साहित्यकार थे, जो **छठी शताब्दी के अंत और सातवीं शताब्दी** के प्रारंभ में सक्रिय थे। संस्कृत श्रृंगारिक गद्य के लेखक और काव्यशास्त्र के व्याख्याकार के रूप में उनकी दो महत्त्वपूर्ण रचनाएँ सामान्यतः निश्चित रुप से उनकी मानी जाती हैं। **'दशकुमारचरित',** 1927 में **'द एडवेंचर्स ऑफ़ द टेन प्रिंसेज'** शीर्षक से अनुदित।

जन्म विवाद- दंडी के जीवन के सम्बन्ध में प्रामाणिक सूचनाओं का बहुत अभाव है। कोई उन्हें सातवीं शती के उत्तरार्ध या आठवीं शती के आरम्भ का मानता है तो कोई इनका जन्म 550 और 650 ई. के बीच मानता है। अवंतीसुंदरी की कथा के अनुसार दंडी किरातार्जुनीयम् के रचयिता भारवी के प्रपौत्र थे । इनकी बाल्यावस्था में इनके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया था ।

❖ **दण्डी का सामान्य परिचय-**

- **माता-** गौरी
- भारवि के पुत्र- **मनोरथ**
- मनोरथ के चारों पुत्रों में छोटा पुत्र- **वीरदत्त**
- वीरदत्त के पुत्र- **दंडी ।**
- **भारवि- मनोरथ- वीरदत्त- दंडी ।**
- **निवास-** दक्षिण में विदर्भ महाराष्ट्र ।
- परिष्कृत गद्य शैली में जन्मदाता- **दंडी ।**
- **शैली-** वेदर्भी शैली भाषा गुण- प्रसाद माधुर्य गुण भावों की अभिव्यंजना शक्ति प्रबल है ।
- इनकी दृष्टि यथार्थवादी है । समाज के सभी वर्गों के पात्रों को लिया है ।यह आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी और व्यवहारवादी हैं।

कृतियाँ-दशकुमारचरितम्,काव्यादर्श, अवन्तिसुन्दरीकथा, छन्दोविचिति।

में स्वाभाविकता है । इस दृष्टि से शूद्रक की नाट्य कला बड़ी प्रशंसनीय है। पाश्चात्य आलोचकों ने इसकी बड़ी सराहना की है तथा **मृच्छकटिकम्** को सार्वभौम आकर्षण का नाटक बताया है, जिसका सफल मंचन विश्व में कहीं भी किया जा सकता है। इनके विषय में प्रसिद्ध उक्ति है **(शूद्रकः अग्निं प्रविष्टः)** शूद्रक राजा अग्नि में प्रविष्ट हुए ।

कृतियाँ- मृच्छकटिकम् ।

5. विशाखदत्त

विशाखदत्त गुप्तकाल की विभूति थे। इनका समय **पाँचवी छठी शताब्दी ई.** है। इनके दो नाटक प्रसिद्ध हैं- **मुद्राराक्षस तथा देवीचन्द्रगुप्तम्।** मुद्राराक्षस में चन्द्रगुप्तमौर्य के जीवन से सम्बन्धित घटनाओं का उल्लेख मिलता है। **देवीचन्द्रगुप्तम्** से गुप्तवंशी शासक रामगुप्त के विषय में सूचनाएँ प्राप्त होती है। यह नाटक अपने मूल रूप में नहीं मिलता। इसके कुछ अंश **'नाट्य दर्पण'** में प्राप्त होते हैं। **विशाखदत्त ऐतिहासिक** प्रवृत्ति के लेखक हैं। इनके नाटक **वीर रस** प्रधान हैं। मुद्राराक्षस में **प्रेमकथा, नायिका, विदूषक** आदि का अभाव है तथा इस दृष्टि से यह संस्कृत साहित्य में अपना अलग स्थान रखता है।

पिता- महाराज पृथु (परन्तु कुछ संस्करण में पिता का नाम **भास्कर दत्त** भी प्राप्त होता है)।

पितामह- सामंत वटेश्वरदत्त

कृतियाँ- मुद्राराक्षस, देवीचन्द्रगुप्तम्, अभिसारवञ्चितक ।

उपाधि- दत्त (वटेश्वरदत्त, भास्करदत्त, विशाखदत्त) ।

6. भारवि

भारवि संस्कृत के महान कवि हैं। वे अर्थ की गौरवता के लिये प्रसिद्ध हैं **("भारवेरर्थगौरवम्")**। **किरातार्जुनीयम्** महाकाव्य उनकी महान रचना है। इसे एक उत्कृष्ट श्रेणी की काव्यरचना माना जाता है। इनका काल **छठी-सातवीं शताब्दी (560 ई. से 615 के बीच)** बताया जाता है। **भारवि** सम्भवतः **दक्षिण भारत** के कहीं जन्मे थे। उनका रचनाकाल पश्चिमी **गंग राजवंश** के राजा दुर्विनीत तथा पल्लव राजवंश के राजा **सिंहविष्णु** के शासनकाल के समय का है। कवि ने बड़े से बड़े अर्थ को थोड़े से शब्दों में प्रकट कर अपनी काव्य-कुशलता का परिचय दिया है। भारवि ने केवल **एक अक्षर "न"** वाला श्लोक लिखकर अपनी काव्यचातुरी का परिचय दिया है।

- **माता**- सुशीला
- **पिता**- श्रीधर (अवंतीसुंदरी के अनुसार नारायण स्वामी)
- **पत्नी**- रसिकवती (रासिका)
- **निवासी**- धारानगरी,
- **वास्तविक**- नाम दामोदर भारवि इनकी उपाधि थी ।

कृतियाँ- किरातार्जुनीयम्,

उपाधि- भारवि (वास्तविक नाम दामोदर)

7. माघ

माघ का समय **675 ई.** के लगभग **7 वीं शताब्दी** का अंतिम चरण है। माघ **मारवाड़** के प्राचीनतम महाकाव्य **'शिशुपालवध'** के रचियता थे। 'माघ' का जन्म **भीन-माल** के एक प्रतिष्ठित धनी **श्रीमाली ब्राह्मण-कुल** में हुआ था। उनकी **पत्नी** का नाम विद्यावती था। वे सर्वश्रेष्ठ संस्कृतमहाकवियों की त्रयी **(माघ, भारवि, कालिदास)** में अन्यतम हैं। उन्होंने **शिशुपालवध** नामक केवल एक ही महाकाव्य लिखा। इस महाकाव्य में **श्रीकृष्ण** के द्वारा युधिष्ठिर के **राजसूय यज्ञ** में **चेदिनरेश शिशुपाल** के वध का सांगोपांग वर्णन है। **उपमा, अर्थगौरव तथा पदलालित्य** - इन तीन गुणों का सुभग सह-अस्तित्व माघ के कमनीय काव्य में मिलता है, अतः **"माघे सन्ति त्रयो गुणा:"** उनके बारे में सुप्रसिद्ध है। इनके **पिता** का नाम **दत्तक** था और माता का नाम ब्राह्मी था। माघ की प्रशंशासा में कहा गया है-

"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः" ॥

कालिदास उपमा में, भारवि अर्थगौरव में, और दण्डी पदलालित्य में बेजोड़ हैं। लेकिन माघ में ये तीनों गुण हैं। शिशुपालवध मे रैवतक पर्वत की हाथी से और हाथी के बंधे घंटे की तुलना नही बल्कि रैवतक पर्वत के दोनो ओर जो सूर्य और चन्द्रमा है उसकी उपमा स्वर्ण और रजत से निर्मित घंटे से की गई है! अतः माघ को घंटा माघ कहा जाता है।

कृतियाँ- 'शिशुपालवध'।

उपाधि- घंटा माघ,

8. हर्ष

हर्षवर्धन प्राचीन भारत में एक राजा था जिसने उत्तरी भारत में अपना एक सुदृढ़ साम्राज्य स्थापित किया था। इनका समय **सातवीं शताब्दी का पूर्वार्ध** माना जाता है। वह अंतिम हिंदू सम्राट् था जिसने पंजाब छोड़कर शेष समस्त उत्तरी भारत पर राज्य किया। शशांक की मृत्यु के उपरांत वह बंगाल को भी जीतने में समर्थ हुआ। हर्षवर्धन के शासनकाल का इतिहास मगध से प्राप्त दो ताम्रपत्रों, राजतरंगिणी, चीनी यात्री ह्वेनसाँग के विवरण और हर्ष एवं बाणभट्ट रचित संस्कृत काव्य ग्रंथों में प्राप्त है।

- **पिता**- प्रभाकरवर्धन,
- **बडा भाई**- राज्यवर्धन,
- **बहन**- राज्यश्री,

- निवास- स्थाणीश्वर,
- इन्होनें अवन्तिवर्मा के साथ मिलकर 562 ई. में हूणों को परास्त किया।
- ये प्रभाकरवर्धन के तीन पुत्रों में अद्वितीय थे ।

ह्वेनसांग की कृति 'सी यू की' में हर्ष के विषय में विस्तृत वर्णन मिलता है ।

कृतियाँ- प्रियदर्शिका- 4 अंक,
रत्नावली- 4 अंक,
नागानन्द- 5 अंक,

उपाधि- अनङ्ग, राजा, कवीन्द्र, कविता का हर्ष ।

9. बाणभट्ट

बाणभट्ट संस्कृत साहित्य में ही एक ऐसे महाकवि हैं जिनके जीवन चरित के विषय में पर्याप्त जानकारी मिलती है। **'बाण भट्ट सातवीं शताब्दी पूर्वार्द्ध** के संस्कृत गद्य लेखक और कवि थे। वह राजा **हर्षवर्धन** के आस्थान कवि थे। इनकी बाल्यावस्था में माता की मृत्यु और 14 वर्ष की अवस्था में पिता की मृत्यु हो गई थी । उनके दो प्रमुख ग्रंथ हैं: **हर्षचरितम्** तथा **कादम्बरी। हर्षचरितम्** राजा हर्षवर्धन का जीवन-चरित्र था और कादंबरी दुनिया का पहला **उपन्यास** था। राजा हर्ष ने इनको **(महानयं भुजंग)** कहा था । कादंबरी पूर्ण होने से पहले ही **बाण भट्ट** जी का देहांत हो गया तो उपन्यास पूरा करने का काम उनके पुत्र **भूषण भट्ट** ने अपने हाथ में लिया। दोनों ग्रंथ संस्कृत साहित्य के महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माने जाते है।

यद्यपि बाणभट्ट की लेखनी से अनेक ग्रन्थ रत्नों का लेखन हुआ है किन्तु बाणभट्ट का महाकवित्व केवल **'हर्षचरित'** और **'कादम्बरी'** पर प्रधानतया आश्रित है। इन दोनों गद्य काव्यों के अतिरिक्त **मुकुटताडिका (नाटक), चण्डीशतकम् और पार्वती-परिणय (नाटक)** भी बाणभट्ट की रचनाओं में परिगणित हैं। इनमें **'पार्वतीपरिणय'** को **ए.बी. कीथ** ने बाणभट्ट की रचना न मानकर उसे **वामनभट्टबाण** (17 वीं शती) नामक किसी **दाक्षिणात्य वत्सगोत्रीय ब्राह्मण** की रचना माना है। गोवर्धनाचार्य का कथन है- **'वाणी बाणो बभूव'।**

- **पिता-** चित्रभानु ,
- **माता-** राजदेवी ,
- **पुत्र-** भूषण भट्ट
- **निवास-** प्रीतिकूट (शोण नदी के दक्षिण तट पर)
- **शैली-** पांचाली ।
- **समय-** चीनी यात्री ह्वेन सॉग (629- 645) के लगभग ।

कृतियाँ- हर्षचरितम् (आख्यायिका), कादंबरी (कथा), चंडीशतकम् (मुक्तककाव्य), मुकुटताडिका (नाटक), पार्वती परिणय (नाटक) ।

उपाधियाँ-

उपाधि	उपाधिदाता	उपाधि	उपाधिदाता
गद्यसम्राट	बलदेव उपाध्याय	महानयं भुजंग	हर्षवर्धन
वश्यवाणी चक्रवर्ती	हर्ष	तुरंगबाण	आलोचक
कविताकामिनीकौतुक	जयदेव	सर्वेश्वर	
कविताकाननकेसरी	चन्द्रदेव		

10. दंडी

दंडी संस्कृत के प्रसिद्ध साहित्यकार थे, जो **छठी शताब्दी के अंत और सातवीं शताब्दी** के प्रारंभ में सक्रिय थे। संस्कृत श्रृंगारिक गद्य के लेखक और काव्यशास्त्र के व्याख्याकार के रूप में उनकी दो महत्त्वपूर्ण रचनाएँ सामान्यत: निश्चित रुप से उनकी मानी जाती हैं। **'दशकुमारचरित',** 1927 में **'द एडवेंचर्स ऑफ़ द टेन प्रिंसेज'** शीर्षक से अनुदित।

जन्म विवाद- दंडी के जीवन के सम्बन्ध में प्रामाणिक सूचनाओं का बहुत अभाव है। कोई उन्हें सातवीं शती के उत्तरार्ध या आठवीं शती के आरम्भ का मानता है तो कोई इनका जन्म 550 और 650 ई. के बीच मानता है। अवंतीसुंदरी की कथा के अनुसार दंडी किरातार्जुनीयम् के रचयिता भारवी के प्रपौत्र थे । इनकी बाल्यावस्था में इनके माता-पिता का स्वर्गवास हो गया था ।

❖ **दण्डी का सामान्य परिचय-**

- **माता-** गौरी
- भारवि के पुत्र- **मनोरथ**
- मनोरथ के चारों पुत्रों में छोटा पुत्र- **वीरदत्त**
- वीरदत्त के पुत्र- **दंडी** ।
- **भारवि- मनोरथ- वीरदत्त- दंडी** ।
- **निवास-** दक्षिण में विदर्भ महाराष्ट्र ।
- परिष्कृत गद्य शैली में जन्मदाता- **दंडी** ।
- **शैली-** वैदर्भी शैली भाषा गुण- प्रसाद माधुर्य गुण भावों की अभिव्यंजना शक्ति प्रबल है ।
- इनकी दृष्टि यथार्थवादी है । समाज के सभी वर्गों के पात्रों को लिया है ।यह आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी और व्यवहारवादी हैं।

कृतियाँ-दशकुमारचरितम्,काव्यादर्श, अवन्तिमुन्दरीकथा, छन्दोविचति।

11. भवभूति

भवभूति संस्कृत के महान कवि एवं सर्वश्रेष्ठ नाटककार थे। उनके नाटक कालिदास के नाटकों के समतुल्य माने जाते हैं। भवभूति ने अपने संबंध में **'महावीरचरितम्'** की प्रस्तावना में लिखा है। ये विदर्भ देश के **'पद्मपुर'** नामक स्थान के निवासी **भट्टगोपाल** के प्रपोत्र थे। इनके **पिता** का नाम **नीलकंठ** और **माता** का नाम **जतुकर्णी** था। इन्होंने अपना उल्लेख **'भट्टश्रीकंठ पदलांछनी भवभूतिर्नाम'** से किया है। इनके गुरु का नाम **'ज्ञाननिधि'** था। भवभूति विदर्भ (महाराष्ट्र राज्य) के **ब्राह्मण कन्नौज** (उत्तर प्रदेश राज्य) के राजा यशोवर्मन के दरबार में थे। भवभूति अपने तीन नाटकों के लिए विशेष रुप से प्रसिद्ध थे– **महावीरचरित, मालती माधव, उत्तररामचरित** । भवभूति का **जन्म सातवीं शताब्दी** के उत्तरार्ध माना जाता है ।

❖ **भवभूति का सामान्य परिचय-**

- **निवास-** दक्षिण भारत पद्मपुर,
- **गोत्र-** काश्यप ये कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तीरीय शाखा पाठी ब्राह्मण थे।
- **पिता-** नीलकंठ,
- **माता-** जातुकर्णी या जतुकर्णी
- **पितामह-** भट्टगोपाल
- **प्रिय छंद-** अनुष्टुप, शिखरिणी
- **उपासक-** शिव के,
- भवभूति का मूलनाम- श्रीकण्ठ (कवि के रूप में भवभूति के नाम से विख्यात)
- **रीति-** गौडी, उत्तररामचरितम् में वैदर्भी रीति का प्रयोग किया है।
- ये विविध शास्त्रों के विशेषज्ञ थे अतः इनकों **पदवाक्यप्रमाणज्ञः** कहां जाता है ।
- **पद(व्याकरण), वाक्य(मीमांसा), प्रमाण(न्याय), ज्ञः(ज्ञाता) ।**
- **महावीरचरितम** में इन्होंने अपने को **परिणतप्रज्ञः** कहा है।
- **उत्तररामचरितम्** में इन्होंने अपने को **वश्यवाक्** कहा है।
- भवभूति के नाटकों में **अभिधावृत्ति** मुख्य है भवभूति की कृतियों में **ओजगुण** अधिक है।
- **प्रशस्ति-** 'कवयः कालिदासाद्याः भवभूतिः महाकविः'।

कृतियां-

नाटक- उत्तररामचरितम् (7अंक), महावीर चरितम (7अंक) ।

प्रकरण ग्रंथ- मालतीमाधवम् (10अंक) ।

उपाधि- श्रीकंठ, पदवाक्यप्रमाणज्ञः, परिणतप्रज्ञः, वश्यवाक्, शिखरिणीकवि, अम्बेक/उदम्बर, श्रीकण्ठपदलांछनः ।

12. भट्टनारायण

भट्ट नारायण संस्कृत के महान नाटककार थे। वे अपनी केवल एक कृति **वेणीसंहार** के द्वारा संस्कृत साहित्य में अमर हैं। संस्कृत वाङ्मय में समुपलब्ध नाटकों में इसका विशिष्ट स्थान है। विद्वज्ञन इसे नाट्यशास्त्र के सिद्धांतों के अनुकूल दृष्टिकोण से लिखा गया नाटक मानते हैं इसीलिए इसके उदाहरणों को अपने लक्षणग्रंथों में **वामन, विश्वनाथ** आदि ने विशेष रूप से उद्धृत किया है। कवि ने वेणीसंहार की प्रस्तावना में अपने आप को **मृगराजलक्ष्मा** कहा है । इससे ज्ञात होता है कि इन्हें **कविंद्र या कविमृगेंद्र** कहा जाता था ।

जीवन वृत्त- भट्टनारायण का जीवनवृत्त अनिश्चित है किंतु वामन और आनंदवर्धनाचार्य के ग्रंथों में **वेणीसंहार** के उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि यह उनसे पूर्ववर्ती हैं। इनका समय **सातवीं आठवीं शताब्दी ई.** माना जाता है।

कृति- वेणीसंहार एकमात्र नाटक (6अंक)।

उपाधि- मृगराज, कविमृगेंद्र, कविंद्र ।

13. विल्हण

विल्हण कश्मीर के प्रसिद्ध कवि थे । इनका समय **ग्यारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध** माना जाता है। जिनकी रचना **चौरपंचाशिका** प्रसिद्ध है। उनकी दूसरी प्रसिद्ध रचना **विक्रमांकदेवचरित** है जो इतिहास ग्रन्थ है। विल्हण के **विक्रमांकदेवचरित** में कल्याण के चालुक्य राजा **विक्रमादित्य पंचम्** (1076-1127) के पराक्रमों का वृत्तांत है।

❖ **विल्हण का सामान्य परिचय-**

- **पिता-** जेष्ठकलश
- **पितामह-** राजकलश
- **माता-** नागदेवी
- **जन्म स्थान-** कश्मीर (खोनमुख गांव)

कृतियां - विक्रमाङ्कदेवचरितम् (18 सर्ग), कर्णसुंदरी, चौरपञ्चाशिका, सूक्तिमुक्तावली, सुभाषितावली ।

उपाधि- विद्यापति ।

14. श्रीहर्ष

श्रीहर्ष की गिनती प्रसिद्ध कवियों में होती है। इनका समय **12वीं शताब्दी का उत्तरार्ध** है। वह बनारस एवं कन्नौज के **गहड़वाल शासकों, विजयचन्द्र**

एवं जयचन्द्र की राजसभा को सुशोभित करते थे। उन्होंने कई ग्रन्थों की रचना की, जिनमें **'नैषधचरितम्** महाकाव्य उनकी कीर्ति का स्थायी स्मारक है । **अलंकृत शैली** के सर्वश्रेष्ठ कवि श्रीहर्ष में उच्चकोटि की काव्यात्मक प्रतिभा थी तथा वे अलंकृत शैली के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। श्रीहर्ष महान् कवि होने के साथ-साथ बड़े दार्शनिक भी थे। **'खण्डन-खण्ड-खाद्य'** नामक ग्रन्थ में उन्होंने अद्वैत मत का प्रतिपादन किया। इसमें न्याय के सिद्धान्तों का भी खण्डन किया गया है। व्यूलर के अनुसार हर्ष का निर्विवाद समय 12 वीं शताब्दी उत्तरार्ध है ।

जीवन चरित्र-

पिता- श्रीहीर, **माता-** मामल्ल देवी, **निवास-** कन्नौज

कन्नौज के राजा जयचंद्र उनके आश्रय दाता थे । इन्होनें चिंतामणि जप के फलस्वरुप सिद्धि और विद्वत्ता प्राप्त की । इनके द्वारा रचित ग्रन्थ वृहत्रयी का सर्वोत्कृष्ट रत्न **नैषधीयचरितम्** 22 सर्गात्मक है । श्रीहर्ष के काव्य में भाषा सौंदर्य, भाव सौष्ठव और पदलालित्य है ।

कृतियाँ- 1. स्थैर्यविचारप्रकरण, 2. श्रीविजयप्रशस्ति, 3. हिंदप्रशस्ति, 4. खंडनखंडखाद्य, 5. शिवशक्तिसिद्धि, 7. नैषधीयचरितम्, 8. अर्णव वर्णन, 9. गौडोर्वीशकुलप्रशस्ति,

उपाधि- श्रृंगारमृतशीतगु ।

15. अंबिकादत्तव्यास

अम्बिकादत्त व्यास ब्रजभाषा के कुशल और सरस कवि थे। इनका समय 1858-1900 ई. माना जाता है। ये 'भारतेन्दु युग' के कवि और लेखक थे। ये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन तथा उनसे प्रभावित हिन्दी सेवी साहित्यकार थे। 12 वर्ष की अवस्था में **'काशी कविता वर्धिनी सभा'** ने 'सुकवि' की उपाधि से इन्हें सम्मानित किया था। अम्बिकादत्त व्यास की प्रशंसा भारतेन्दु ने **'कविवचन सुधा'** में भूरि-भूरि की है। ये विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। इन्हें **हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेज़ी, बांग्ला, दर्शन, न्याय, वेदान्त** में महारथ हासिल थी। इन्होंने गद्य और पद्य में 50 से अधिक पुस्तकें लिखी थीं। व्यास जी का आश्चर्यजनक वृत्तांत अपने समय में **'फन्तासी'** उपन्यास था। **शिवराज विजय** इनका महत्वपूर्ण संस्कृत उपन्यास है।

काशी से **'वैष्णव-पत्रिका'** (1884 ई.) का आरम्भ इन्होंने किया था, जो बाद में **'पीयूष-प्रवाह'** नाम से साहित्यिक पत्रिका में रूपांतरित हो गयी। **कवित्त और सवैया शैली** में इनकी ब्रजभाषा की अनेक रचनाएँ लोकप्रिय हुईं। **'बिहारी बिहार'** नामक ग्रन्थ में इन्होंने **'बिहारी सतसई'** के आधार पर कुंडलियों की रचना की थी। **'अवतार मीमांसा'** अम्बिकादत्त का प्रसिद्ध धार्मिक ग्रन्थ है। **'पावन पचासा'** - अम्बिकादत्त की एक काव्यकृति है।

- **निवास-** जयपुर राजस्थान
- **पिता-** दुर्गादत्त

कृतियाँ- इन्होंने हिंदी तथा संस्कृत में छोटी-बड़ी 78 पुस्तकें लिखी ।

उपन्यास-

1. शिवराजविजयम् (3) विराम प्रत्येक विराम में चार निश्वास।

2. गद्यकाव्यमीमांसा 3. अवतारमीमांसाकारिका

4. कथाकुसुम 5. गुप्ताशुद्धिप्रदर्शनम्

6. सहस्रनामरामायणम् 7. मित्रलाभ

8. दुःखद्रुमकुठार

नाटक- 9. सामवतम् ।

उपाधि- 1. घटिकाशतक , 2. सुकवि, 3. शतावधान, 4. अभिनवबाण, 5. भारतरत्न

16. पंडिता क्षमाराव

- **समय-** (1890 – 1954)
- **माता-** उषा देवी,
- **पिता-** शंकर पांडुरंग (संस्कृत के विद्वान और बाल्यावस्था में निधन)
- **भाषा-** प्रसादमयी,
- **पति-** डॉ राघवेंद्रराव,
- **गुरु-** विद्यालंकार पंडित नगण्य
- **उपाधि-** पंडिता
- क्षमाराव ने छोटी-बड़ी 50 पुस्तकें लिखी जिसमें सात एकांकी चार तीन अंक वाले नाटक चार पद्य जीवन चरित्र 35 लघु कथाएं तथा विविध निबंध ग्रंथ हैं ।

कृतियाँ-

- **काव्यात्मक रचनाएं-**
  1. कथा पंचक (पद्यबंध) 2. ग्राम ज्योति 3. कथा मुक्तावली
- **खंडकाव्य-** मीरा लहरी
- **महाकाव्य** - 1. तुकारामचरित 2. रामदासचरितम 3. श्री विज्ञानेश्वर चरित 4. सत्याग्रह गीता 5. उत्तर सत्याग्रह गीता, गांधी चरित्र इत्यादि भी इनकी रचनाएं हैं । **स्वराजविजयम् में** (45) अध्याय में गांधी की संपूर्ण जीवन माया के साथ स्वतंत्रता इतिहास वर्णन है।

17. वी. राघवन (वेंकटराम राघव)

वी. राघवन संस्कृत के विद्वान तथा संगीतज्ञ थे । इनका समय 1908-1979 है।

इन्हें **पद्मभूषण** और संस्कृत के लिए **साहित्य अकादमी पुरस्कार** सहित कई पुरस्कार प्राप्त हुऐ हैं । ये 120 से अधिक पुस्तकों तथा 1200 लेखों के लेखक थे इन्होंने संगीत तथा सौंदर्यशास्त्र पर किताबें लिखी । इन्होंने संस्कृत काव्य के बड़े जाने-माने काव्य भोज के अंग का संपादन और अनुवाद किया । 1996 इन्हें **जवाहरलाल फेलोशिप** से सम्मानित किया गया । रविंद्र नाथ टेगोर का पहला नाटक **वाल्मीकि प्रतिभा** का इन्होंने संस्कृत में अनुवाद किया ।

कृतियाँ-

- **नाटक-** अभिनव सुंदरी, महाश्वेता, रासलीला, विकट नितंम्बाः, लक्ष्मी स्वयंवरम्, अनारकली ।
- **महाकाव्य-** श्री मुत्तुस्वामीदीक्षित चरितम् ।
- **लघुकाव्य-** 1. पैशुन्य 2. महात्मा 3. फाल्गुन 4. कर्मयोगी 5. मध्याह्नः 6. उषा 7. प्रतीक्षा
- **संस्कृत की अन्य कृतियां-**
  संस्कृत रविंद्रम्, वाल्मीकि प्रतिभा, नटीर पूजा,
- **अन्य-** अभिनव गुप्त एवं उनके कार्य, श्रृंगार मंजरी, पलाण्डु मनदाना (प्रहसन), अलंकार शास्त्र विरूपहा का चोला चंपू ।
- **स्तोत्र काव्य-** श्री कामाक्षीमातृका स्तोत्र, श्री मीनाक्षीसुप्रभातम्

18. श्रीधरभास्कर वर्णेकर

श्रीधरभास्कर वर्णेकर का जन्म 31 जुलाई 1918 महाराष्ट्र के नागपुर में हुआ । कांची पीठ के शंकराचार्य ने प्रज्ञा भारती की उपाधि से इनको विभूषित किया इन्होंने **अर्वाचीन संस्कृत साहित्य** नाम से मराठी में शोध प्रबंध लिखा और **संस्कृत भवितव्यम्** पत्रिका का संपादन किया इन्हें **रामकृष्ण डालमिया श्रीवाणी** सम्मान भी मिला ।

- **पुरस्कार**
  साहित्य अकादमी पुरस्कार-1974
  राष्ट्रपति पुरस्कार, सरस्वती पुरस्कार
  कालिदासम्मान ।

कृतियाँ-

- **लघु काव्य-** श्रमगीता 118 पद्य ।
- इनका छत्रपति शिवाजी के चरित्र पर निर्मित महाकाव्य **श्री शिवराज्योदय** (68) सर्गात्मक है ।
- **वात्सल्यरसायनम्** इस काव्य का दूसरा नाम (श्रीकृष्णबाललीला शतकम्) है ।
- **संस्कृतवाङ्मय कोश ।**
- **भारतरत्नशतकम् ।**
- स्वातन्त्र्यवीरशतकम् ।

उपाधि- प्रज्ञा भारती ।

॥काव्यशास्त्र॥

साहित्यशास्त्र के सम्प्रदाय-

(1) रससम्प्रदाय- भरतमुनि। (100 ई.पू. से 300 ई.पू.)

रचना- नाट्यशास्त्र (36 अध्याय)।

रस सिद्धान्त-

रस संप्रदाय के मुख्य आचार्य भरत मुनि हैं । रस के विषय में सर्वप्रथम विवेचन **"नाट्यशास्त्र"** में मिलता है । जिन्होंने नाट्यरस का ही मुख्यतः विश्लेषण किया और उस विवरण को अवान्तर आचार्यों ने काव्यरस के लिए भी प्रामाणिक माना। यह सबसे प्राचीन सम्प्रदाय है। भरतमुनि के रससिद्धान्त के व्याख्याकार के रूप में - **1. भट्टनायक, 2. भट्टलोल्लट, 3. शङ्कुक, 4. अभिनवगुप्त, 5. विश्वनाथ** ये पाँच आचार्य प्रसिद्ध हैं।

रस का प्रमुख सूत्र-

''विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः।'' (ना.शा.)

यह प्रसिद्ध रससूत्र ही रससिद्धान्त का प्राणभूत है ।

रससम्प्रदाय के अन्य प्रमुख प्रवर्तकाचार्य-

"भोजराज, राजशेखर, केशवमिश्र, शारदातनय"।

(2) अलङ्कारसम्प्रदाय- भामह (700ई.)

रचना- काव्यालंकार (भामहालंकार 6 परिच्छेद), 400 श्लोक ।

अलङ्कार सिद्धान्त-

रस सम्प्रदाय के बाद इसका दूसरा स्थान है। अलंकार संप्रदाय के प्रमुख आचार्य भामह हैं। इसके अन्तर्गत **'भामह विवरण'** के निर्माता **'उद्भट'** और उनके बाद - **दण्डी, रुद्रट** आदि तथा पश्चाद्वर्ती - **प्रतिहारेन्दुराज, जयदेव, अप्पयदीक्षित** आदि अनेक आचार्य आते हैं ।'अप्पयदीक्षित' की **'परिमल'** टीका सुप्रसिद्ध है। इस मत में अलंकारों को ही काव्य की आत्मा माना जाता है। इस शास्त्र के इतिहास में यही संप्रदाय प्राचीनतम तथा व्यापक प्रभावपूर्ण अंगीकृत किया जाता है। अलङ्कार सम्प्रदाय के अनुयायी भी रस की सत्ता मानते हैं किन्तु उसे प्रधनता नहीं देते हैं। इनके मत में काव्य का प्राणभूत जीवनाधायक तत्व अलङ्कार ही है। अलङ्कारविहीन काव्य की कल्पना उष्णविहीन अग्नि की कल्पना के सदृश है -

"अङ्गीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलङ्कृती।
असौ न मन्यते कस्मादनुष्णमनलं कृती।।''

(चन्द्रालोक-जयदेव)

अलङ्कारसम्प्रदायवादी, काव्य में अलङ्कारों को प्रधान मानते हैं और इसका अन्तर्भाव रसवदलङ्कारों में करते हैं।

रसवदलङ्कार-

1. रसवत्, 2. प्रेय, 3. ऊर्जस्विन्, 4. समाहित।

ये चार प्रकार के रसवदलङ्कार माने जाते हैं। भामह और दण्डी दोनों ने इन रसवदलङ्कारों के भीतर ही इसका अन्तर्भाव किया है-

''रसवद्दर्शितस्पष्टश्रृंगारादिरसं यथा।'' (भामह, काव्यालङ्कार 3.6)

''मधुरे रसवद्वापि वस्तुन्यपि रसस्थितिः।'' (दण्डी, काव्यादर्श 3.51)

3. रीतिसम्प्रदाय- वामन। (800 ई.)

रचना- काव्यालंकारसूत्रवृत्ति (5 अधिकरण)।

रीति सिद्धान्त-

रीति सम्प्रदाय आचार्य वामन (9वीं शती) द्वारा प्रवर्तित एक काव्य-सम्प्रदाय है जो रीति को काव्य की आत्मा मानता है। यद्यपि संस्कृत काव्यशास्त्र में 'रीति' एक व्यापक अर्थ धारण करने वाला शब्द है। लक्षणग्रंथों में प्रयुक्त 'रीति' शब्द का अर्थ ढंग, शैली, प्रकार, मार्ग तथा प्रणाली है। 'काव्य रीति' से अभिप्राय मोटे तौर पर काव्य रचना की शैली से है। रीतितत्व काव्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। इसका शाब्दिक अर्थ प्रगति, पद्धति, प्रणाली या मार्ग है। परन्तु वर्तमान समय में 'शैली' (स्टाइल) के समानार्थी के रूप में यह अधिक समाहृत है। आचार्य वामन ने रीति सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा की है। उन्होंने **काव्यालंकारसूत्रवृत्ति** में 'रीति' को काव्य की आत्मा घोषित किया है। उनके अनुसार 'पदों की विशिष्ट रचना ही रीति है' (**विशिष्टपदरचना रीतिः**)। विशिष्ट शब्द को स्पष्ट करते हुये वे कहते हैं - **विशेषो गुणात्मा।** वामन ने गुण को विशेष महत्व दिया है। रीति काव्य की आत्मा है और गुण रीति के कारणभूत वैशिष्ट्य की आत्मा है। रीति शब्द और अर्थ के आश्रित रचना चमत्कार का नाम है जो माधुर्य, ओज और प्रसाद गुणों के द्वारा चित्र को द्रवित, दीप्त और परिव्याप्त करती हुयी रस दशा तक पहुँचाती है।

काव्य में रीति का विशेष महत्त्व है। रीति के अन्य परिभाषाकार कहते है कि काव्य में रीति पदों के संगठन से रस को प्रकाशित करने में सहायक होती है। इस प्रकार रीति का काव्य में वही स्थान है जो शरीर में आंगिक संगठन का है। जिस प्रकार अवयवों का उचित सन्निवेश शरीर के सौन्दर्य को बढाता है, शरीर को उपकृत करता है उसी प्रकार वर्णों का यथास्थान प्रयोग शब्द रूपी शरीर और अर्थ रूपी आत्मा के लिए विशेष उपकारक है।

आचार्य वामन ने रीति के तीन भेद तय किये हैं– **वैदर्भी रीति, गौडी रीति, पाञ्चाली रीति।** आचार्य दण्डी केवल दो ही भेद मानते हैं, वे पाञ्चाली का समर्थन नहीं करते। दण्डी, 'रीति' के स्थान पर 'मार्ग' शब्द का प्रयोग करते हैं। परवर्ती आचार्यो ने रीति के तीन से भी अधिक भेद स्थापित किये हैं। लाट देश में प्रयुक्त होने वाली एक 'लाटी' रीति का प्रादुर्भाव हुआ। बाद में **'भोज'** ने **'मालवी'** और **'अवन्तिका'** नामक दो अन्य रीतियों का अविष्कार किया। आचार्य विश्वनाथ रीति को काव्य का उपकारक मानते हैं। 'वक्रोक्तिजीवित' के लेखक कुन्तक ने रीति का खुलकर विरोध किया, आचार्य मम्मट उनके समर्थन में आये और रीति को वृत्तियों से जोड़ने की बात की। **'राजशेखर'** ने रीति को काव्य का **'बाह्य तत्व'** बताया। उनके अनुसार, – **'वाक्यविन्यासक्रमो रीतिः'**। किन्तु यह सब विरोध विद्वानों की आम सहमति नहीं पा सका और वामन के रीति सम्बन्धी विचारों को मान्यता मिली। **'रीतिरात्मा काव्यस्य'** यह इनका प्रमुख सिद्धान्त है।

वामन ने 10 गुणों का वर्णन किया है -

1. ओज,	2. प्रसाद,
3. श्लेष,	4. समता,
5. कान्ति	6. समाधि
7. माधुर्य,	8. सौकुमार्य
9. उदारता	10. अर्थव्यक्ति

काव्यशोभायाः कर्तारो धर्माः गुणाः।
तदतिशयहेतवस्त्वलङ्काराः।। **(वामन)**

वामन ने इन दो सूत्रों को लिखकर गुण तथा अलङ्कारों का भेद प्रदर्शित करते हुए अलङ्कारों की अपेक्षा गुणों के विशेष महत्व को प्रदर्शित किया है। मम्मटादि आचार्यों ने रीति की उपयोगिता स्वीकार की है किन्तु इसे काव्य की आत्मा स्वीकार नहीं किया है। उनके अनुसार रीतियों की स्थिति वैसी है जैसे शरीर में आँख, कान, नाक आदि अवयवों की-

''रीतयोऽवयवसंस्थानविशेषवत्।'' (मम्मट)

4. ध्वनिसम्प्रदाय – आनन्दवर्धन। (850 ई0)

रचना- ध्वन्यालोक (4 उद्योत)।

ध्वनि सिद्धान्त-

ध्वनि सिद्धान्त, भारतीय काव्यशास्त्र का एक सम्प्रदाय है। भारतीय काव्यशास्त्र के विभिन्न सिद्धान्तों में यह सबसे प्रबल एवं महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है। ध्वनि सिद्धान्त का आधार **'अर्थ ध्वनि'** को माना गया है। इस सिद्धान्त की स्थापना का श्रेय **'आनंदवर्धन'** को है किन्तु अन्य सम्प्रदायों की तरह ध्वनि सिद्धान्त का जन्म आनंदवर्धन से पूर्व हो चुका था। स्वयं आनन्दवर्धन ने अपने पूर्ववर्ती विद्वानों का मतोल्लेख करते हुए कहा हैं कि-

"काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्यः समाम्नातपूर्वः"।

अर्थात् काव्य की आत्मा ध्वनि है ऐसा मेरे पूर्ववर्ती विद्वानों का भी मत हैं।आनंदवर्धन के पश्चात 'अभिनवगुप्त' ने 'ध्वन्यालोक' पर 'लोचन टीका' लिखकर ध्वनि सिद्धान्त का प्रबल समर्थन किया। आनन्दवर्धन और अभिनवगुप्त दोनों ने रस और ध्वनि का अटूट संबंध दिखाकर रस मत का ही समर्थन किया था। आन्नदवर्धन ने **'रस ध्वनि'** को सर्वश्रेष्ठ ध्वनि माना हैं जबकि **'अभिनवगुप्त'** रस-ध्वनि को **'ध्वनित'** या **'अभिव्यंजित'** मानते हैं। परवर्ती आचार्य मम्मट ने ध्वनि विरोधी मुकुल भट्ट, महिम भट्ट, कुन्तक आदि की युक्तियों का सतर्क खंडन कर ध्वनि सिद्धान्त को प्रबलित किया। उन्होंने व्यंजना को काव्य के लिए अपरिहार्य माना

इसीलिए उन्हें **'ध्वनि प्रतिष्ठापक परमाचार्य'** कहा जाता है। ध्वनि सिद्धान्त का आधार स्फोटवाद सिद्धान्त है काव्यशास्त्र में ध्वनि का संबंध 'व्यंजना शक्ति'से है। **''काव्यास्यात्मा ध्वनिः।''** आनन्दवर्धन के अनुसार काव्य का आत्मा स्थानीय तत्व है - **प्रतीयमान।**

''प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्तु वाणीषु महाकवीनाम्।
यत्र प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवाङ्गनासु।''
(ध्वन्यालोक 1.4)

- इन सभी सम्प्रदायों में ध्वनि सम्प्रदाय सबसे प्रबल एवं महत्वपूर्ण है। 'ध्वनिप्रतिष्ठापक परमाचर्य' - **मम्मट**
- ध्वनि काव्य की आत्मा है –
  "काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्यः समाम्नातपूर्वः"।
  (ध्वन्यालोक 1-1)
- ध्वनि के तीन प्रकार- **वस्तु, अलंकार, रस।**
  ''एवं वस्त्वलंकार रसभेदेन त्रिधाध्वनिः।''

ध्वनिकार के मतानुसार जहां पर वाच्य अपने स्वरूप को तथा वाचक शब्द अपने अर्थ को गौण बनाकर व्यङ्ग्य अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं उस काव्य विशेष को ध्वनि कहते हैं।

ध्वनिसम्प्रदाय के अन्य प्रमुख प्रवर्तकाचार्य-
रूय्यक, मम्मट, अभिनवगुप्त, जगन्नाथ, इत्यादि।

5. वक्रोक्तिसम्प्रदाय- कुन्तक। (10 वीं शती उत्तरार्द्ध)

रचना- वक्रोक्तिजीवितम् (4 उन्मेष)।

वक्रोक्ति सिद्धान्त-

वक्रोक्ति दो शब्दों 'वक्र' और 'उक्ति' की संधि से निर्मित शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ है- ऐसी उक्ति जो सामान्य से अलग हो। टेढा कथन अर्थात जिसमें लक्षणा शब्द शक्ति हो। भामह ने वक्रोक्ति को एक अलंकार माना था। उनके परवर्ती कुन्तक ने वक्रोक्ति को एक सम्पूर्ण सिद्धान्त के रूप में विकसित कर काव्य के समस्त अंगों को इसमें समाविष्ट कर लिया। इसलिए कुन्तक को वक्रोक्ति संप्रदाय का प्रवर्तक आचार्य माना जाता है।

ऐतिहासिक विकास-

वक्रोक्ति सिद्धान्त की प्रतिष्ठा तथा प्रतिपादन का श्रेय कुन्तक को है परन्तु इसकी परम्परा प्राचीन है। भामह के पूर्ववर्ती कवियों बाण, सुबन्धु आदि में इसके संदर्भ प्राप्त होते हैं।

भामह- भामह ने वक्रोक्ति का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया है। उन्होंने वक्रोक्ति में शब्द और अर्थ, दोनों का अंतर्भाव माना है। उन्होंने वक्रोक्ति तथा अतिशयोक्ति का समान अर्थ में प्रयोग किया है। अतिशयोक्ति का अर्थ है लोकातिक्रांत गोचरता। वक्रोक्ति को इसी कारण भामह मूल अलंकार मानते हैं। इसके बिना वाक्य काव्य न रहकर वार्ता मात्र रह जाता है।

दण्डी- दंडी ने भी वक्रोक्ति को भामह के समान महत्व दिया है। दंडी ने वाङमय के दो भेद बताये हैं- स्वाभावोक्ति तथा वक्रोक्ति। दंडी ने वक्रोक्ति तथा अतिशयोक्ति को समस्त अलंकारों के मूल में स्वीकार किया है। भामह और दंडी में केवल यह अंतर है कि भामह स्भावोक्ति को वक्रोक्ति की परिधि में स्वीकार करते हैं और दंडी उसे भिन्न मानते हुए वक्र कथन से कम महत्वपूर्ण समझते हैं।

आनन्दवर्धन- आनन्दवर्धन ने वक्रोक्ति की स्वतंत्र व्याख्या नहीं की है। उन्होंने इसे विशिष्ट अलंकार मानकर इसके सामान्य तथा व्यापक रूप को स्वीकार किया है। आनन्दवर्धन ने भामह के वक्रोक्ति संबंधी महत्व को स्वीकार करते हुए अतिशयोक्ति तथा वक्रोक्ति को पर्याय माना और सभी अलंकारों को अतिशयोक्ति गर्भित स्वीकार किया है।

अभिनवगुप्त- अभिनवगुप्त ने वक्रोक्ति के सामान्य रूप को स्वीकार किया है। इनके अनुसार शब्द और अर्थ की वक्रता का आशय उनकी लोकोत्तर स्थिति है तथा इस लोकोत्तर का अर्थ अतिशय ही है।

कुन्तक- वक्रोक्ति सिद्धांत के प्रवर्तक कुंतक ने अपने ग्रंथ **वक्रोक्तिजीवितम्** में वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा कहा है। उन्होंने वक्रोक्ति के अंतर्गत सभी काव्य सिद्धांतों का समाहार करते हुए समस्त काव्यांगों- वर्ण चमत्कार, शब्द सौंदर्य, विषयवस्तु की रमणीयता, अप्रस्तुत-विधान, प्रबंध कल्पना आदि को उचित स्थान दिया है। कुंतक के अनुसार वक्रोक्ति केवल वाक्-चातुर्य अथवा उक्ति चमत्कार नहीं है, वह कवि व्यापार अथवा कवि कौशल है। कुंतक, अलंकारशास्त्र के एक मौलिक विचारक विद्वान थे। ये **'अभिधावादी'** आचार्य थे जिनकी दृष्टि में अभिधा शक्ति ही कवि के अभीष्ट अर्थ के द्योतन के लिए सर्वथा समर्थ होती है। इनका काल निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हैं। किंतु विभिन्न अलंकार ग्रंथों के अंत:साक्ष्य के आधार पर समझा जाता है कि ये दसवीं शती ई. के आसपास हुए होंगे।

कुन्तक अभिधा की सर्वातिशायिनी सत्ता स्वीकार करने वाले आचार्य थे। परंतु यह अभिधा संकीर्ण आद्या शब्दवृत्ति नहीं है। अभिधा के व्यापक क्षेत्र के भीतर लक्षणा और व्यंजना का भी अंतर्भाव पूर्ण रूप से हो जाता है। वाचक शब्द द्योतक तथा व्यंजक उभय प्रकार के शब्दों का उपलक्षण है। दोनों में समान धर्म अर्थप्रतीतिकारिता है। इसी प्रकार प्रत्येयत्व (ज्ञेयत्व) धर्म के सादृश्य से द्योत्य और व्यंग्य अर्थ भी उपचारदृष्ठा वाच्य कहे जा सकते हैं।

उनकी एकमात्र रचना 'वक्रोक्तिजीवित' है जो अधूरी ही उपलब्ध हैं। वक्रोक्ति को वे काव्य का **'जीवित'** (जीवन, प्राण) मानते हैं। वक्रोक्तिजीवित में वक्रोक्ति को ही काव्य की आत्मा माना गया है जिसका और आचार्यों ने खंडन किया है। पूरे ग्रंथ में वक्रोक्ति के स्वरूप तथा

प्रकार का बड़ा ही प्रौढ़ तथा पांडित्यपूर्ण विवेचन है। वक्रोक्ति का अर्थ है **वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यभंगीभणितिरुच्यते। (वक्रोक्तिजीवित 1.10)** कविकर्म की कुशलता का नाम है वैदग्ध्य या विदग्धता। भंगी का अर्थ है - विच्छित, चमत्कार या चारुता। भणिति से तात्पर्य है - कथन प्रकार। इस प्रकार वक्रोक्ति का अभिप्राय है कविकर्म की कुशलता से उत्पन्न होनेवाले चमत्कार के ऊपर आश्रित रहनेवाला कथनप्रकार। कुंतक का सर्वाधिक आग्रह कविकौशल या कविव्यापार पर है अर्थात् इनकी दृष्टि में काव्य कवि के प्रतिभाव्यापार का सद्यःप्रसूत फल हैं। काव्य में वक्रोक्ति का मूल्य 'भामह' ने भी स्वीकार किया है-

**''सैषा सर्वत्र वक्रोक्तिरनथार्यो विभाव्यते।
यत्नोऽस्यां कविना कार्यः कोऽलङ्कारोनयाविना।।''**

(भामह काव्यालङ्कार 2.5)

दण्डी -''भिन्नं द्विधा स्वभावोक्तिर्वक्रोक्तिश्चेति वाङ्मयम्''

(काव्यादर्श 2-363)

वामन - ''सादृश्यालक्षणा वक्रोक्तिः।'' (काव्यालङ्कारसूत्र 4-3-8,)

कुन्तक ने वक्रोक्ति सिद्धान्त पर वक्रोक्तिजीवित नामक ग्रन्थ लिखा। कुन्तक ने वामन के **'रीति'** के स्थान पर **'मार्ग'** शब्द का प्रयोग किया है। वामन की **'वैदर्भी'** रीति को कुन्तक 'सुकुमारमार्ग' कहते हैं। **'गौड़ी'** -'विचित्रमार्ग' **'पाञ्चाली'** -'मध्यममार्ग' ।

6. औचित्य सम्प्रदाय- क्षेमेन्द्र। (11वीं शती)

रचना- औचित्यविचारचर्चा।

औचित्य सिद्धान्त-

औचित्य संप्रदाय के प्रतिष्ठाता क्षेमेन्द्र (11वीं शताब्दी का मध्यकाल) ने भरत, आनन्दवर्धन आदि प्राचीन आचार्यों के मत को ग्रहण कर काव्य में औचित्य तत्व को प्रमुख तत्व अंगीकार किया तथा इसे स्वतंत्र संप्रदाय के रूप में प्रतिष्ठित किया। अलंकारशास्त्र इस प्रकार लगभग दो सहस्र वर्षों से काव्यतत्वों की समीक्षा करता आ रहा है।

औचित्य - ''उचितं प्राहुराचार्याः सदृशं किल यस्य यत्।
उचितस्य च यो भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते।।''

अनौचित्य रसभङ्ग का कारण तथा औचित्य इसका परम रहस्य -

**''अनौचित्यहते नान्यद् रसभङ्गस्य कारणम्।
प्रसिद्धौचित्यबन्धस्तु रसस्योपनिषत्परा।।''**

क्षेमेन्द्र के उपलब्ध ग्रन्थों में **''औचित्यविचारचर्चा''** का ही अलङ्कारशास्त्र के साथ विशेषरूप से सम्बन्ध माना जा सकता है। इसी कारण उनकी गणना आलङ्कारिक आचार्यों में की जाती है। उन्होंने औचित्य को रस का भी प्राण कहा है-

**''औचित्यस्य चमत्कारकारिणश्चारुचर्वणे।
रसजीवितभूतस्य विचारं कुरुतेऽधुना।।''**

पाश्चात्य काव्यशास्त्र -

1. अरस्तू

'अरस्तू' (384-322 ई.पू.), एक **'ग्रीक'** दार्शनिक थे। वें दुनिया के बड़े विचारकों में से एक थे। उनके लेखन के घेरे में विचारों के सभी क्षेत्र शामिल है। अरस्तू का मानना था कि पृथ्वी ब्रह्मांड के केंद्र में है और केवल चार तत्वों से बनी है: मिटटी, जल, वायु, और अग्नि। उनके मतानुसार सूरज, चाँद और सितारों जैसे खगोलीय पिंड परिपूर्ण और ईश्वरीय है और सारे पांचवें तत्व से बने है जिसे वें ईश्वर कहते थे। अरस्तू के जीवन पर **'मकदूनिया'** के दरबार का काफी गहरा प्रभाव पड़ा था। 347 ईस्वी पूर्व में प्लेटो के निधन के बाद अरस्तू ही अकादमी के नेतृत्व के अधिकारी थे किन्तु प्लेटो के शिक्षाओं से अलग होने के कारण उन्हें यह अवसर नही दिया गया। **'एत्रानियस'** के मित्र शाषक **'ह्मियाज'** के निमत्रण पर अरस्तु उनके दरबार में चले गये। वो वहा पर तीन वर्ष रहे और इस दौरान उन्होंने राजा की भतीजी **ह्मिलिस** नामक महिला से विवाह कर लिया। अरस्तू की ये दूसरी पत्नी थी उससे पहले उन्होंने **'पिथियस'** नामक महिला से विवाह किया था जिसकी मौत के बाद उन्होंने दूसरा विवाह किया था।

शिक्षा-

पिता की मौत के बाद 17 वर्षीय अरस्तु को उनके अभिभावक ने शिक्षा पूरी करने के लिए बौद्धिक शिक्षा केंद्र **एथेंस** भेज दिया। वह वहां पर बीस वर्षो तक प्लेटो से शिक्षा पाते रहे। पढ़ाई के अंतिम वर्षो में वो स्वयं अकादमी में पढ़ाने लगे। अरस्तु को उस समय का सबसे बुद्धिमान व्यक्ति माना जाता था जिसके प्रशंसा स्वयं उनके गुरु भी करते थे। अरस्तु की गिनती उन महान दार्शनिकों में होती है जो पहले इस तरह के व्यक्ति थे और परम्पराओं पर भरोसा न कर किसी भी घटना की जाँच के बाद ही किसी नतीजे पर पहुंचते थे।

अरस्तू और दर्शन-

अरस्तु को खोज करना बड़ा अच्छा लगता था खासकर ऐसे विषयों पर जो मानव स्वभाव से जुड़े हों जैसे कि "आदमी को जब भी समस्या आती है वो किस तरह से इनका सामना करता है?" और "आदमी का दिमाग किस तरह से काम करता है।" समाज को लोगों से जोड़े रखने के लिए काम करने वाले प्रशासन में क्या ऐसा होना चाहिए जो सर्वदा उचित तरीके से काम करें। ऐसे प्रश्नों के उतर पाने के लिए अरस्तु अपने आस पास के माहौल पर प्रायोगिक रुख रखते हुए बड़े इत्मिनान के साथ काम करते रहते थे। वो अपने शिष्यों को सुबह सुबह विस्तृत रूप से और शाम को आम लोगों को साधारण भाषा में प्रवचन देते थे। **'एलेक्सेंडर'**

की अचानक मृत्यु पर मकदूनिया के विरोध के स्वर उठ खड़े हुए। उन पर नास्तिकता का भी आरोप लगाया गया। वो दंड से बचने के लिये 'चल्सिस' चले गये और वहीं पर एलेक्सेंडर की मौत के एक साल बाद 62 वर्ष की उम्र में उनकी मृत्यु हो गयी।

सिकंदर की शिक्षा-

मकदूनिया के राजा **'फिलिप'** के निमन्त्रण पर वो उनके तेरह वर्षीय पुत्र को पढाने लगे । पिता-पुत्र दोनों ही अरस्तु को बड़ा सम्मान देते थे । लोग यहा तक कहते थे कि अरस्तू को शाही दरबार से काफी धन मिलता है और हजारो गुलाम उनकी सेवा में रहते है हालंकि ये सब बाते निराधार थी । एलेग्जेंडर के राजा बनने के बाद अरस्तु का काम खत्म हो गया और वो वापस एथेंस आ गये । अरस्तू ने **प्लेटोनिक स्कूल** और **प्लेटोवाद** की स्थापना की । अरस्तू अक्सर प्रवचन देते समय टहलते रहते थे इसलिए कुछ समय वाद उनके अनुयायी **पेरीपेटेटिक्स** कहलाने लगे ।

कृतियाँ-

अरस्तू ने कई ग्रथों की रचना की थी , लेकिन इनमे से कुछ ही अब तक सुरक्षित रह पाये हैं । सुरक्षित लेखों की सूची इस प्रकार है-

1. पोलिटिक्स	2.निकोमर्चे एथिक्स
3. यूदेमियन एथिक्स	4. भाषाशास्त्रम् (रहेतोरिक)
5. पोएटिक्स (काव्यशास्त्रम्)	6. मेटाफिजिक्स
7. प्रोब्लेम्स	8. हिस्ट्री ऑफ़ एनिमल्स
9. पार्ह्व ऑफ़ एनिमल्स	10. मूवमेंट ऑफ़ एनिमल्स
11. प्रोग्रेशन ऑफ़ एनिमल्स	12. जनरेशन ऑफ़ एनिमल्स
13. सेंस एंड सेंसिबिलिया	14. ऑन मेमोरी
15. ऑन स्लीप	16. ऑन ड्रीम्स
17. ऑन दिविनेशन इन स्लीप	18. मेतेरोलोजी
19. ऑन यूथ	20. ओल्ड ऐज
21.लाइफ एंड डेथ एंड रेसिपिरेशन	22. फिजिक्स
23. ऑन दी हेअवेंस	24. ऑन जेंराशन एंड करप्शान
25. ऑन दी सोल	26. ऑन दी यूनिवर्स,

27. ऑनलेनथएंडशोर्टनेस ऑफ़ लाइफ

अरस्तू ने काव्य के तीन रूप बताये हैं-

(1) प्रतीयमानरूप (2) संभाव्यरूप (3) आदर्श रूप।

मृत्यु- वापस आकर अरस्तू ने **अपोलो** के मन्दिर के पास एक विद्यापीठ की स्थापना की, जो की **'पर्यटक विद्यापीठ'** के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अरस्तू का बाकी जीवन यहीं पर बीता। अपने महान् शिष्य सिकन्दर की मृत्यु के बाद अरस्तू ने भी विष पीकर आत्महत्या कर ली।

अनुकरण सिद्धांत-

अरस्तु का अनुकरण सिद्धांत एक स्तर पर 'प्लेटो' का अनुकरण सिद्धांत की प्रतिक्रिया है और दूसरे स्तर पर उसका विकास भी। महान दार्शनिक प्लेटो ने कला और काव्य को सत्य से तिहरी दूरी पर कहकर उसका महत्व बहुत कम कर दिया था। उसके शिष्य अरस्तु ने अनुकरण में पुनर्रचना का समावेश किया। उनके अनुसार अनुकरण हूबहू नकल नहीं है बल्कि पुनः प्रस्तुतीकरण है जिसमें पुनर्रचना भी शामिल होती है। अनुकरण के द्वारा कलाकार सार्वभौम को पहचानकर उसे सरल तथा इन्द्रीय रूप से पुनः रूपागत करने का प्रयत्न करता है। कवि प्रतीयमान संभाव्य अथवा आदर्श तीनों में से किसी का भी अनुकरण करने के लिये स्वतंत्र है। वह संवेदना, ज्ञान, कल्पना, आदर्श आदि द्वारा अपूर्ण को पूर्ण बनाता है।

2. लॉन्ज़ाइनस

लोंगिनुस **Longinus** को परम्परागत रूप से **"काव्य में उदात्त तत्व" (On the Sublime)** नामक कृति का रचनाकार माना जाता है। इस कृति में अच्छे लेखन के प्रभावों की चर्चा है। लोंगिनुस का असली नाम ज्ञात नहीं है। वह यूनानी काव्यालोचन का शिक्षक था। उसका काल पहली से लेकर तीसरी सदी तक होने का अनुमान है। ये प्लेटो, अरस्तु के पश्चात् प्रमुख काव्यशास्त्री थे। इन्होंने **"औदात्य-सिद्धान्त"** का प्रतिपादन किया। इन्होंने **"उदात्त"** को काव्य का प्रमुख तत्व माना। इनका यूनानी भाषा का नाम **"लोंगिनुस"** तथा अंग्रेजी में- **"लोंजइनस"** था। इनकी रचना का नाम **"पेरिइप्सुस"** है, जिसका अंग्रेजी में **"ऑन द सब्लाइम"** नाम से अनुवाद किया गया, इसी को हिन्दी में **"उदात्त"** की संज्ञा दी गई। उदात्त के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा- 'अभिव्यक्ति की विशिष्टता और श्रेष्ठता का नाम उदात्त है, उदात्त आत्मा की महानता का प्रतिविम्ब है' ।

लोंजाइनस ने काव्य को श्रेष्ठ बनाने वाले तत्वों पर विचार करते हुए इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। वे उदात्त को काव्य को श्रेष्ठ बनाने वाला तथा कवि को प्रतिष्ठा दिलाने वाला तत्व मानते हैं। यह उदात्त महान विचारों संगठित अलंकार योजना, अभिजात्य पद रचना तथा प्रभाव की गरिमा में निहित है। वे वागाडंबर बालेयता और भावाडंबर को उदात्तता में बाधक तत्व मानते हैं।

उदात्त का स्वरूप-

लोंजाइनस ने उदात्त की परिभाषा और उसका सामान्य परिचय जिस रूप में दिया है उससे प्रतीत होता है कि उनके समय में यह शब्द इतना अधिक प्रचलित हो गया था कि उन्होंने इसका विस्तृत परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं समझी। फिर भी उदात्त के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए उन्होंने इतना कहा- **"Sublimity is a certain distinction and excellence in expression."** 'अर्थात् अभिव्यक्ति की विशिष्टता और श्रेष्ठता का नाम उदात्त है'। इसी को लक्ष्य करके हिन्दी आलोचकों ने यह स्वीकार किया है कि किसी रचना में उदात्त तत्त्व उपयुक्त तथा गरिमापूर्ण शब्द-विधान, आवेग को दीप्त करने वाली अलंकार योजना तथा रचना-विधान द्वारा अभिव्यक्त होता है। लोंजाइनस ने काव्य के उदात्त को वक्तृता से एकदम भिन्न बताया है, क्योंकि काव्य में श्रोताओं पर उदात्त का प्रभाव तन्मयता के रूप में होता है, प्रवर्तन के रूप में नहीं । इस कारण लोंजाइनस की दृष्टि में भव्य कविता वहीं है जो आनन्दातिरेक के कारण हमें इतना निमग्न और तन्मय कर दे कि हम ऐसी उच्च भाव-भूमि पर पहुँच जाए जहाँ वर्ण्य विषय विद्युत-प्रकाश की भाँति आलोकित हो उठता है। इस दृष्टि से लोंजाइनस के **'आनन्दातिरेक'** और **'विश्वनाथ'** के **'विगलित-वेद्यान्तर'** में बहुत कुछ साम्य देखा जा सकता है। उदात्त के स्वरूप के अन्तर्गत लोंजाइनस में मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक दोनों दृष्टियों को सामने रखा। इसी से उन्होंने एक ओर उदात्त के आन्तरिक तत्त्वों का उल्लेख किया है और दूसरी ओर उसके बाह्य पक्ष की भी विवेचना की है।

उदात्त का मूल आधार-

उदात्त का मूल आधार क्या है? क्या वह वक्ता या लेखक की जन्मजात प्रतिभा पर आधारित होता है या उसका प्रस्फुटन शिक्षा-दीक्षा से विचार किया जा सकता है या अभ्यास पर निर्भर है? इन प्रश्नों पर विचार करते हुए लोंजाइनस ने **'मध्य मार्ग'** का अनुकरण किया है। उनके विचार से उदात्त न तो सर्वथा प्रतिभा सापेक्ष है और न पूर्णतः अभ्यास-सापेक्ष। वस्तुतः उदात्त का आधार व्यक्ति का कोई एक पक्ष, एक गुण या एक प्रवृत्ति नहीं है अपितु उसके पीछे सम्पूर्ण व्यक्तित्व की झलक होती है। अतः उदात्त की सृष्टि उदात्त व्यक्तित्व ही हो सकता है। महान प्रतिभाशाली उच्च विद्वान एवं यशस्वी चरित्रवान व्यक्ति ही उदात्त या उद्घोषक हो सकता है । लोंजाइनस के अनुसार - "उदात्त आत्मा की महानता का प्रतिबिम्ब है। सच्चा उदात्त केवल उन्हीं में प्राप्य है जिनकी चेतना उदात्त एवं विकासोन्मुख है। यह सर्वथा स्वाभाविक है कि जिनके मस्तिष्क उदात्त धारणाओं से परिपूर्ण है उन्हीं की वाणी से उदात्त शब्द झंकृत हो सकते हैं"। इस प्रकार उदात्त का सम्बन्ध केवल प्रतिभा, अध्ययन और भाषा के अध्ययन से नहीं, अपितु व्यक्ति के समूचे व्यक्तित्व से है।

निष्कर्ष-

- उदात्त अभिव्यंजना का प्रकर्ष और वैशिष्ट्य है।
- उदात्त का कार्य अनुनयन नहीं अपितु सम्मोहन है।
- उदात्त सर्जनात्मक या रचनात्मक कौशल से भिन्न तत्त्व है।

उसका प्रभाव क्रमिक नहीं, आकस्मिक होता है और उसके अलौकिक आलोक से कथा चमक उठती है।

उदात्त के स्रोत-

यद्यपि उदात्त के मूलाधार साहित्यकार के व्यक्तित्व की महानता में निहित है फिर भी रचना में उदात्त का तत्त्व लाने में लिए लोंजाइनस ने पाँच स्रोतों की चर्चा की है-

- महान धारणाओं की क्षमता या विचारों की भव्यता ।
- प्रेरणा-प्रसूत आवेग या भावावेश की तीव्रता।
- समुचित अलंकार योजना।
- उत्कृष्ट भाषा।
- गरिमामय रचना विधान।

उपर्युक्त पाँचों तत्त्वों में से प्रथम दो जन्मजात अर्थात् कवि-प्रतिभा के अंग हैं और शेष तीन कला सम्बन्धी विशेषताएँ हैं। लोंजाइनस ने कलाकृति में आवेगों की अनिवार्यता पर बल दिया है। इन्होंने आवेगों के दो वर्ग बनाये। **(1) भव्य (2) भिन्न।** लोंजाइनस के अतिशयमूलक अलंकारों को उदात्त का हेतु माना है। इनके अनुसार- **विस्तारणा, शपथोक्ति, प्रश्नालंकार, विपर्यय, व्यतिक्रम, पुनरावृत्ति, प्रत्यक्षीकरण, संचय, सार, रूप-परिवर्तन, पर्यायोक्ति, अतिशयोक्ति** आदि अलङ्कारों में उदात्त विद्यमान रहता है।

3. क्रोचे (1866-1952)

'अभिव्यंजनावाद' के प्रवर्तक **'बेनेदेत्तो क्रोचे' (Benedetto Croce)** मूलतः **'आत्मवादी'** दार्शनिक हैं। उनका उद्देश्य साहित्य में आत्मा की अन्तः सत्ता स्थापित करना था। इनसे पूर्व **'काण्ट'** ने मन तथा बाह्य जगत् के तादात्म्य और समन्वय का प्रतिपादन करते हुए दृश्य जगत् की उपेक्षा की और **'हेगेल'** ने **'काण्ट'** की मान्यता स्वीकार करते हुए दृश्य जगत् को भी महत्त्व प्रदान किया। इसके विपरीत क्रोचे ने केवल 'मानसिक प्रक्रिया' को ही महत्त्व दिया है। उनकी दृष्टि में बाह्य उपकरण गौण साधन मात्र हैं। क्रोचे का **'अभिव्यंजनावाद'** कला के मूल तत्त्व की खोज का प्रयास है। कला का वास्तविक तत्त्व क्या है अथवा उसकी आत्मा क्या है? इस विषय में क्रोचे ने अपना गम्भीर विवेचन प्रस्तुत किया है, जो

सूक्ष्म भी है। इन्होनें दार्शनिक 'हेगेल' से प्रभावित होकर अभिव्यञ्जनावाद सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। क्रोचे के समस्त सौन्दर्य-विवेचन में 'आत्म-तत्त्व' प्रतिष्ठित है। यह आत्म-तत्त्व कलाकार की चेतना है। इस आत्म-तत्त्व को क्रोचे ने आन्तरिक अभिव्यक्ति कहा है, जो इस जगत् में मुख्य रूप से दो प्रकार की प्रतिक्रिया करता है।

सहज-ज्ञान और अभिव्यंजना-

'सहज-ज्ञान' या 'अन्तःप्रज्ञा' और 'अभिव्यंजना' का अभिन्न सम्बन्ध है। जहाँ सहज ज्ञान होगा वहाँ अभिव्यंजना अवश्य होगी। सहज-ज्ञान अभिव्यंजना के बिना या अभिव्यंजना सहज-ज्ञान के बिना सम्भव नहीं है। क्रोचे ने 'अभिव्यंजना' शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया है, जो शाब्दिक अभिव्यंजना के बोध के साथ-साथ रेखा, स्वर, गीत आदि सभी माध्यमों का बोधक है। जिसे चित्र, संगीत, नृत्य आदि को किसी भी रूप में अभिव्यंजना होती है। जो सहज-ज्ञान अभिव्यंजना का रूप धारण नहीं कर सकता वह वास्तव में सच्चा प्रतिभा-ज्ञान नहीं है, वह केवल प्राकृतिक तथ्य और संवेदन बनकर रह जाता है- **"Every true intuition is also expression., That, which does not objectify itself in expression, is not intuition but sensation and more natural fact."**

उदाहरणार्थ, जब कोई चित्रकार किसी वस्तु की झलक मात्र देखता है तो हम यह नहीं कह सकते कि उसे सहज-ज्ञान हुआ है। हम सहज ज्ञान की उपलब्धि तब मानेंगे जब वह उसका प्रत्यक्षीकरण कर लेगा अर्थात् जब वह अपने अन्तर्मन में उसे पूरी तरह अभिव्यक्त कर लेगा। इस प्रकार क्रोचे सहजानुभूति को आन्तरिक अभिव्यंजना या आन्तरिक रूप-रचना मानता है, जो सौन्दर्य-तत्त्व को जन्म देती है। वह उसे आत्मा का अभिव्यंजनात्मक कर्म मानता है। इसी कर्म के द्वारा कलाकार भावनाओं तथा संवेगों के आवेग को नियंत्रण में रखता है और प्रभावों को बिम्बों में अभिव्यक्त कर स्वयं उनसे मुक्त हो जाता है। अतः क्रोचे सहजानुभूति को ही अभिव्यंजना मानता है। यह अभिव्यंजना आन्तरिक होती है, बाह्य नहीं। सौन्दर्य-ज्ञान की व्याख्या करते हुए क्रोचे ने कलात्मक निर्माण की चार श्रेणियां स्थिर की हैं-

(1) अन्तःसंस्कार (Impression) - जब द्रष्टा किसी वस्तु को देखता है तो उसके चित्त पर कुछ संस्कार पड़ते हैं।

(2) अभिव्यंजना (Expression) - इन संस्कारों के जागृत होने पर मन-ही-मन इनकी आन्तरिक अभिव्यक्ति होने लगती है, जो अभिव्यंजना कहलाती है।

(3) आनुषंगिक आनन्द (Pleasure) - द्रष्टा के मन में सौन्दर्य-बोध से एक प्रकार के आनन्द की उत्पत्ति होती है।

(4) अभिव्यक्ति (Translated Beauty) - जब अभिव्यंजना आन्तरिक न रहकर शब्दों आदि के माध्यम से स्थूल रूप में अभिव्यक्त होती है।

किन्तु दूसरी श्रेणी में आने वाली आन्तरिक अभिव्यक्ति ही सच्ची अभिव्यंजना है, क्योंकि क्रोचे इसी को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान करता है। क्रोचे का कवि कोई भाषा नहीं बोलता अपितु मन-ही-मन जो मूर्तिमान होता रहता है, वह उसका आनन्द उठाता है । लेकिन जब तक बाह्य अभिव्यक्ति नहीं होती तब तक संसार में कविता का जन्म नहीं होता। वैसे भी सामान्य भाषा में अभिव्यंजना से प्रयोजन शब्दों द्वारा अभिव्यक्ति से ही है। कला में शब्दों के अतिरिक्त अभिव्यंजना के अन्य माध्यम भी होते हैं, जैसे- रंग, पत्थर आदि। किन्तु अभिव्यंजना सिद्धान्त की मान्यता है कि बाह्य प्रकाशन अथवा सम्प्रेषण के बिना ही अभिव्यंजना की सम्पूर्ण क्रिया सम्पन्न हो जाती है।

सहज-ज्ञान और कला-

कला का सम्बन्ध सहजानुभूति से है। जिस समय सहजानुभूति जागृत होकर अभिव्यंजित होने लगती है तभी कला जन्म लेती है। क्रोचे के अनुसार कला की अभिव्यक्ति के लिए इतनी प्रक्रिया पर्याप्त है। सामान्यतः जब हम कला की चर्चा करते हैं तो हमारा अभिप्राय लिखित कृतियों अथवा रचनाओं से होता है। किन्तु क्रोचे जब कला की चर्चा करता है तो उसका अभिप्राय आन्तरिक अभिव्यक्ति से होता है, जिसका बाह्य अभिव्यक्तिकरण नहीं होता। जब सहजानुभूति स्फुरित होती है तो वह अभिव्यंजना के द्वारा कला में परिणत हो जाती है। यह पूरी प्रक्रिया आन्तरिक है, अर्थात् कला की सृष्टि तथा सिद्धि कलाकार के भीतर होती है, बाहर नहीं, क्योंकि- "The work of art (the aesthetic work) is always internal. And that is called external is no longer a work of art". अतः कला की सृष्टि ही नहीं, उसकी सत्ता भी बाहर नहीं है। क्रोचे के अनुसार कला आन्तरिक होने के साथ-साथ अखण्ड है, क्योंकि अन्तःप्रज्ञा या सहजानुभूति अखण्ड होती है। जब सहजानुभूति अखण्ड होगी तो उसकी अभिव्यंजना भी अखण्ड होगी, तब स्वभावतः कला भी अखण्ड होगी। वस्तुतः क्रोचे का अभिप्राय यह है कि कोई भी काव्य, चित्र या मूर्ति अपने पूर्ण, अखण्ड, अविभक्त रूप में ही कवि के मन में स्फुरित होती है और उस स्फुरण में ही वह अभिव्यंजना या कलात्मक रूप ग्रहण कर लेती है। बाद में कवि उस अन्तःस्थित रूप को कागज पर केवल लेखनीबद्ध करता है। इसलिए जिस कलाकार का प्रत्यक्षण एवं संवेदन जितना व्यापक, सूक्ष्म और समृद्ध होता है उसकी कला उतनी ही उत्कृष्ट, मनोरम तथा प्रभावशाली होती है। अतः क्रोचे के अनुसार-

- सहज-ज्ञान और अभिव्यंजना में अभेद है।
- प्रत्येक सहज-ज्ञान कला है।

- कला-सृष्टि केवल आन्तरिक है।
- कला वस्तु में नहीं अपितु रूप में है।
- कला अखण्ड है।

अभिव्यंजना और सौन्दर्य-

क्रोचे ने सौन्दर्य जैसे विवादास्पद विषय को भी सरल ढंग से समझाते हुए कहा है- सफल अभिव्यक्ति का ही दूसरा नाम सौन्दर्य है अथवा "सफल" विशेषण भी अनावश्यक है, केवल अभिव्यंजना को ही सौन्दर्य के नाम से जानना चाहिए, क्योंकि जो अभिव्यंजना सफल नहीं होती उसे अभिव्यंजना की संज्ञा नहीं दी जा सकती। **"Beauty is successful expression, or rather as expression and nothing more, because expression when it is not successful it is not expression."** क्रोचे की मान्यता है कि कला अन्तर की भावना या सहज-ज्ञान है और कलात्मक वस्तु का अस्तित्व उसके अभिव्यंजित होने में है। किसी कविता या सुन्दर प्राकृतिक दृश्य को हम उस समय सुन्दर मानते हैं जब हमारी भावनाएँ उसमें अभिव्यंजित होती हैं तथा हम उन वस्तुओं में अपनी भावनाओं की अभिव्यंजना करते हैं। कलाकार अपनी कलाकृति द्वारा अपनी भावनाओं को अभिव्यंजित करता है। उसका आनन्द लेने वाला वही हो सकता है जिसमें वह भावना विद्यमान है।

अभिव्यंजनावाद और वक्रोक्तिवाद-

हिन्दी में क्रोचे के सिद्धान्त को लेकर काफी भ्रम फैला है। आचार्य **'रामचन्द्र शुक्ल'** ने अभिव्यंजना को **'भारतीय वक्रोक्तिवाद का विलायती उत्थान'** कहकर उसे **'वाग्वैचित्र्यवाद'** की संज्ञा दी। शुक्ल जी के इस कथन के बाद से आचार्य कुन्तक के वक्रोक्तिवाद के साथ क्रोचे के अभिव्यंजनावाद की तुलना करने की परम्परा चल पड़ी है। किन्तु यह उचित प्रतीत नहीं होता। वस्तुतः क्रोचे के अभिव्यंजनावाद में उक्ति वैचित्र्य नहीं है, इसे वक्रोक्तिवाद कहना भी गलत है। संस्कृत के प्रसिद्ध आचार्य कुन्तक ने वक्रोक्ति को काव्य की आत्मा माना है। वक्रोक्ति से उनका अभिप्राय कथन की वक्रता से है। कुन्तक और क्रोचे के सिद्धान्तों में कुछ साम्य अवश्य है, परंतु वैषम्य कहीं अधिक है, जो संक्षेप में इस प्रकार है-

साम्य-

- क्रोचे और कुन्तक दोनों अभिव्यंजना को काव्य का प्राण-तत्त्व मानते हैं। इस दृष्टि से दोनों कलावादी आचार्य हैं।
- दोनों आचार्यों ने काव्य में कल्पना-तत्त्व को प्रमुखता प्रदान की है।
- दोनों आचार्य अभिव्यंजना अथवा उक्ति को मूलतः अखण्ड, अविभाज्य और अद्वितीय मानते हैं।
- दोनों आचार्य अभिव्यंजना अथवा सौन्दर्याभिव्यंजना में श्रेणियां नहीं मानते। अभिव्यंजना सफल होती है, कम या अधिक सफल नहीं।

वैषम्य-

- क्रोचे और कुन्तक में सबसे बड़ा अन्तर यह है कि मूलतः कुन्तक आलंकारिक आचार्य हैं, जबकि क्रोचे दार्शनिक। दोनों के दृष्टिकोण में मौलिक अन्तर है।
- कुन्तक आनन्द को सौन्दर्य की सिद्धि ही नहीं, अपितु कारण भी मानते हैं, जबकि क्रोचे के अनुसार सौन्दर्य और उसकी प्रतिरूप अभिव्यंजना अपना उद्देश्य आप ही है।
- क्रोचे की अपेक्षा कुन्तक के सिद्धान्त में वस्तु-तत्त्व की स्वीकृति अधिक गहती है।
- क्रोचे के अभिव्यंजनावाद में नीति-अनीति का प्रश्न ही नहीं उठता, जबकि वक्रोक्तिवाद भारतीय दर्शन और विचार-परम्परा के अनुरूप नीतिवादिता नहीं त्याग सका।
- क्रोचे के अनुसार काव्य की सहजानुभूति है, जबकि कुन्तक के अनुसार कवि-व्यापार।
- कुन्तक वक्रता और वार्ता में स्पष्ट भेद मानते हैं, जबकि क्रोचे उक्ति को कला का मूलाधार मानते हैं, किन्तु वक्रता और वार्ता आदि का भेद नहीं मानते।

प्रमुख ग्रन्थ -

"The Essence of Aesthetic" (सौन्दर्यशास्त्रीय विवेचन)

ईकाई-8

(ख) संस्कृतसाहित्य का विशिष्ट अध्ययन-

पद्य :

1. बुद्धचरितम्

परिचय-

बौद्ध दार्शनिक महाकवि अश्वघोष द्वारा रचित बुद्धचरितम् भगवान बुद्ध के जीवन के महत्त्वपूर्ण विषय से सम्बद्ध 28 सर्गों का एक महाकाव्य-ग्रन्थ है। वस्तुतः महाकवि अश्वघोष रचित मात्र 14 सर्ग ही उपलब्ध होते हैं। 19वीं शताब्दी में 'अमृतानन्द' ने इसमें चार सर्ग जोड़ दिए। 'हरप्रसाद शास्त्री' को भी यह ग्रन्थ 14 वें सर्ग पर्यन्त उपलब्ध हुआ है। यद्यपि बुद्धचरित के चीनी व तिब्बती भाषान्तर में 28 सर्ग उपलब्ध हैं। **बुद्धचरितम्** के **प्रथम** सर्ग में भगवान् बुद्ध का जन्म, शेष **पञ्चदश से अष्टविंशति सर्ग पर्यन्त** क्रमशः बुद्ध का काशीगमन=शिष्यों को दीक्षा-दान, महाशिष्यों का संन्यास लेकर जाना, जेतवन की स्वीकृति, संन्यास का झरना, आम्रपाल उपवन में आयु का निर्णय, लिच्छिवियों पर अनुकम्पा, निर्वाण भाग महापरिनिर्वाण, निर्वाण की प्रशंसा तथा धातु-विभाजन का निरूपण किया गया हैं

बुद्धचरितम् के प्रमुख अंश-

॥मङ्गलाचरण॥(वस्तुनिर्देशात्मक)

श्रियं परार्ध्यां विदधद्विधातृजित् तमो निरस्यन्नभिभूतभानुभृत्
नुदन्निदाघं जितचारुचन्द्रमाः स वन्द्यतेऽर्हन्निह यस्य नोपमा ॥

लेखक	-	महाकवि अश्वघोष,
विधा	-	महाकाव्य,
सर्ग	-	28,
मुख्य रस	-	शान्त
नायक	-	भगवान बुद्ध
उपजीव्य	-	ललितविस्तर बौद्धग्रन्थ, इतिहासप्रसिद्ध।
अंगीरस	-	शान्त,
भाग=2	-	1. पूर्वार्द्ध, 2. उत्तरार्द्ध
पूर्वार्द्ध	-	14 सर्ग

पूर्वार्द्ध सर्गों का परिचय-

पूर्वार्द्ध सर्ग	
सर्ग	नाम
प्रथमसर्ग	भगवत्प्रसूतिः
द्वितीयसर्ग	अन्तःपुरविहारः
तृतीयसर्ग	संवेगोत्पत्तिः
चतुर्थसर्ग	स्त्रीविघातनः
पंचमसर्ग	अभिनिष्क्रमणम्
षष्ठसर्ग	छन्दक-निवर्तनः,
सप्तमसर्ग	तपोवन-प्रवेशः
अष्टमसर्ग	अन्तःपुर विलापः
नवमसर्ग	कुमारान्वेषणम्
दशमसर्ग	श्रेण्याभिगमनम्
एकादशसर्ग	कामविगर्हणः
द्वादशसर्ग	अराघ(उ)-दर्शनः,
त्रयोदशसर्ग	कामविजयः
चतुर्दशसर्ग	बुद्धत्वप्राप्तिः

बुद्धचरितम् के मुख्य सन्दर्भ-

- **प्रथमः सर्गः**- छन्द- उपजाति, श्लोक-89,
- शाक्यों में राजा हुए – **शुद्धोदन,**
- शुद्धोदन का जन्म हुआ- 'पार्श्व' भुजाओं से,

बुद्धचरितम् के प्रथम सर्ग की प्रमुख सूक्तियाँ-

- **इक्ष्वाकुवंशार्णवसम्प्रसूतः प्रेमाकरश्चन्द्र इव प्रजानाम्।**
  शाक्येषु साकल्यगुणाधिवासः शुद्धोदनाख्यो नृपतिर्बभूवः।।
- ऊरोर्यथौर्वस्य पृथोश्च हस्ताद् मान्धातुरिन्द्रप्रतिमस्य मूर्ध्नः
  कक्षीवतश्चैव भुजांसदेशाद् तथाविधं तस्य बभूव जन्म॥
- अनाकुलाकुञ्जसमुद्धृतानि निष्पेषवद्व्यायतविक्रमाणि।
  तथैव धीराणि पदानि सप्त सप्तर्षितारा सदृशो जगाम।
- इति नरपतिपुत्राजन्मवृद्धया सजनपदं कतिलाह्वयं पुरं तत्।
  धनदपुरमिवाप्सरोऽवकीर्णं मुदितमभून्नलकूबदप्रसूतौ।।
- मतान् पृथिव्यां बहुभानमेतो राजते शैलेषु यथा सुमेरुः।
- दिव्या मयादित्यपदे श्रुता वाग्वाधय जातास्तनयस्तवोति।

- स्नेहं सुते वेत्सि हि बान्धवानाम्।
- दीप्त्या च धैर्येण च यो रराज बालो रविर्भूमिमिवावतीर्णः।
  तथातिदीप्तोऽपि निरीक्ष्यमाणो जहार चक्षूंषि यथा शशाङ्कः।।
- स हि स्वगात्रप्रभया ज्वलन्त्या दीपप्रभां भास्करत्सुमोष
  महार्हजाम्बूनदचारूवर्णो विद्योतयामास दिशश्च सर्वाः।।
- सर्वस्व लोक नियतो विनाशः।
- कामसंज्ञं विषमाददीत।
- मग्नस्य दुःखे जगतो हिताय ।

2. रघुवंशमहाकाव्यम्

परिचय-

इसका प्रारम्भ सूर्यवंशी राजा दिलीप के वर्णन और अवसान राजा **'अग्निवर्ण'** से होता है। कालिदास के इस काव्य को उनकी अन्तिम कृति के रूप में जाना जाता है। **19 सर्गों** में निबद्ध इस काव्य में कुल **1569 श्लोक** हैं जिसमें **31 सूर्यवंशी राजाओं** का सुन्दर वर्णन है।

॥प्रथम सर्ग॥

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ॥1.1॥
क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् ॥1.2॥
मन्दः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम् ।
प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः ॥1.3॥
अथ वा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः ।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः ॥1.4॥
सोऽहम् आजन्मशुद्धानाम् आफलोदयकर्मणाम् ।
आसमुद्रक्षितीशानाम् आनाकरथवर्त्मनाम् ॥1.5॥
यथाविधिहुताग्नीनां यथाकामार्चितार्थिनाम्।
यथापराधदण्डानां यथाकालप्रभोधिनाम् ॥1.6॥
त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम् ।
यशसे विजिगीषुणां प्रजायै गृहमेन्धिनाम् ॥1.7॥
शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम् ।
वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम् ॥1.8॥
रघूणाम् अन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन् ।
तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः ॥1.9॥
तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा ॥1.10॥
वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम् ।
आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव ॥1.11॥
तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः ।
दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव ॥1.12॥
व्यूढोरस्को वृषस्कन्धः शालप्रांशुर्महाभुजः ।
आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो धर्म इवाश्रितः ॥1.13॥
सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोऽभिभाविना ।
स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना ॥1.14॥
आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः ।
आगमैः सदृशारम्भ आरम्भसदृशोदयः ॥1.15॥
भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनां ।
अधृष्यश्चाभिगम्यश्च याधोरत्नैरिवार्णवः ॥1.16॥
रेखामात्रं अपि क्षुण्णादा मनोर्वर्त्मनः परं ।
न व्यतीयुः प्रजास्तस्य नियन्तुर्नेमिवृत्तयः ॥1.17॥
प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत् ।
सहस्रगुणं उत्स्रष्टुं आदत्ते हि रसं रविः ॥1.18॥
सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनं ।
शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता ॥1.19॥
तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च ।
फलानुमेयाः प्रारम्भाः संस्काराः प्राक्तना इव ॥1.20॥
जुगोपात्मानमत्रस्तो भेजे धर्ममनातुरः ।
अगृध्नुराददे सोऽर्थमसक्तः सुखमन्वभूत् ॥1.21॥
ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः ।
गुणा गुणानुवन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव ॥1.22॥
अनाकृष्टस्य विषयैर्विद्यानां पारदृश्वनः ।
तस्य धर्मरतेरासीद्वृद्धत्वं जरसा विना ॥1.23॥
प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि ।
स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः ॥1.24॥
स्थित्यै दण्डयतो दण्ड्यान्परिणेतुः प्रसूतये ।
अप्यर्थकामौ तस्यास्तां धर्म एव मनीषिणः ॥1.25॥
दुधोह गां स यज्ञाय सस्याय मघवा दिवं ।
संपद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयं ॥1.26॥
न किलानुययुस्तस्य राजानो रक्षितुर्यशः ।
व्यावृत्ता यत्परस्वेभ्यः श्रुतौ तस्करता स्थिता ॥1.27॥
द्वेष्योऽपि संमतः शिष्टस्तस्यार्तस्य यथौषधं ।
त्याज्यो दुष्टः प्रियोऽप्यासीदङ्गुलीवोरगक्षता ॥1.28॥
तं वेधा विदधे नूनं महाभूतसमाधिना ।
तथा हि सर्वे तस्यासन्परार्थैकफला गुणाः ॥1.29॥
स वेलावप्रवलयां परिखीकृतसागरां ।
अनन्याशासनामूर्वीं शशासैकपुरीमिव ॥1.30॥
तस्य दाक्षिण्यरुढेन नाम्ना मगधवंशजा ।
पत्नी सुदक्षिणेत्यासीदध्वरस्येव दक्षिणा ॥1.31॥
कलत्रवन्तं आत्मानं अवरोधे महत्यपि ।
तया मेने मनस्विन्या लक्ष्म्या च वसुधाधिपः ॥1.32॥
तस्यामात्मानुरूपायामात्मजन्मसमुत्सुकः ।

विलम्बितफलैः कालं स निनाय मनोरथैः ॥1.33॥
संतानार्थाय विधये स्वभुजादवतारिता ।
तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे ॥1.34॥
अथाभ्यर्च्य विधातारं प्रयतौ पुत्रकाम्यया ।
तौ दंपती वसिष्ठस्य गुरोर्जग्मतुराश्रमम् ॥1.35॥
स्निग्धगम्भीरनिर्घोषं एकं स्यन्दनं आस्थितौ ।
प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदैरावताविव ॥1.36॥
मा भूदाश्रमपीडेति परिमेयपुरःसरौ ।
अनुभावविशेषात्तु सेनापरिवृताविव ॥1.37॥
सेव्यमानौ सुखस्पर्शैः शालनिर्यासगन्धिभिः ।
पुष्परेणूत्किरैर्वातैराधूतवनराजिभिः ॥1.38॥
मनोऽभिरामाः शृण्वन्तौ रथनेमिस्वनोन्मुखैः ।
षड्जसंवादिनीः केका द्विधा भिन्नाः शिखण्डिभिः ॥1.39॥
परस्पराक्षिसादृश्यं अदूरोज्झितवर्त्मसु ।
मृगद्वन्द्वेषु पश्यन्तौ स्यन्दनाबद्धदृष्टिषु ॥1.40॥
श्रेणीबन्धाद्वितन्वद्भिरस्तम्भां तोरणस्रजं ।
सारसैः कलनिर्ह्लादैः क्वचिदुन्नमिताननौ ॥1.41॥
पवनस्यानुकूलत्वात्प्रार्थनासिद्धिशंसिनः ।
रजोभिस्तुरगोत्कीर्णैरस्पृष्टाऽलकवेष्टनौ ॥1.42॥
सरसीष्वरविन्दानां वीचिविक्षोभशीतलम् ।
आमोदं उपजिघ्रन्तौ स्वनिःश्वासानुकारिम् ॥1.43॥
ग्रामेष्वात्मविसृष्टेषु यूपचिह्नेषु यज्वनाम् ।
अमोघाः प्रतिगृह्णन्तावर्घ्यानुपदं आशिषः ॥1.44॥
हैयंगवीनं आदाय घोषवृद्धानुपस्थितान् ।
नामधेयानि पृच्छन्तौ वन्यानां मार्गशाखिनाम् ॥1.45॥
काप्यभिख्या तयोरासीद्व्रजतोः शुद्धवेषयोः ।
हिमनिर्मुक्तयोर्योगे चित्राचन्द्रमसोरिव ॥1.46॥
तत्तद्भूमिपतिः पत्न्यै दर्शयन्प्रियदर्शनः ।
अपि लङ्घितमध्वानं बुबुधे न बुधोपमः ॥1.47॥
स दुष्प्रापयशाः प्रापदाश्रमं श्रान्तवाहनः ।
सायं संयमिनस्तस्य महर्षेर्महिषीसखः ॥1.48॥
वनान्तरादुपावृत्तैः समित्कुशफलाहरैः ।
पूर्यमाणं अदृश्याग्निप्रत्युद्यातैस्तपस्विभिः ॥1.49॥
आकीर्णं ऋषिपत्नीनां उटजद्वाररोधिभिः ।
अपत्यैरिव नीवारभागधेयोचितैर्मृगैः ॥1.50॥
सेकान्ते मुनिकन्याभिस्तत्क्षणोज्झितवृक्षम् ।
विश्वासाय विहंगानां आलवालाम्बुपायिनाम् ॥1.51॥
आतपात्ययसंक्षिप्तनीवारासु निषादिभिः ।
मृगैर्वर्तितरोमन्थं उटजाङ्गनभूमिषु ॥1.52॥
अभ्युत्थिताग्निपिशुनैरतिथीनाश्रमोन्मुखान् ।
पुनानं पवनोद्धूतैर्धूमैराहुतिगन्धिभिः ॥1.53॥
अथ यन्तारमादिष्य धुर्यान्विश्रमयेति सः ।
तामवारोपयत्पत्नीं रथादवततार च ॥1.54॥
तस्मै सभ्याः सभार्याय गोप्त्रे गुप्ततमेन्द्रियाः ।
अर्हणां अर्हते चक्रुर्मुनयो नयचक्षुषे ॥1.55॥
विधेः सायन्तनस्यान्ते स ददर्श तपोनिधिं ।
अन्वासितं अरुन्धत्या स्वाहयेव हविर्भुजम् ॥1.56॥
तयोर्जगृहतुः पादात्राजा राज्ञी च मागधी ।
तौ गुरुर्गुरुपत्नी च प्रीत्या प्रतिननन्दतुः ॥1.57॥
तं आतिथ्यक्रियाशान्तरथक्षोभपरिश्रमम् ।
पप्रच्छ कुशलं राज्ये राज्याश्रममुनिं मुनिः ॥1.58॥
अथाऽथर्वनिधेस्तस्य विजितारिपुरः पुरः ।
अर्थ्यामर्थपतिर्वाचमाददे वदतां वरः ॥1.59॥
उपपन्नं ननु शिवं सप्तस्वङ्गेषु यस्य मे ।
दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वं आपदां ॥1.60॥
तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात्प्रशमितारिभिः ।
प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्यभिदः शराः ॥1.61॥
हविरावर्जितं होतस्त्वया विधिवदग्निषु ।
वृष्टिर्भवति सस्यानां अवग्रहविशोषिणाम् ॥1.62॥
पुरुषायुषजीविन्यो निरातङ्का निरीतयः ।
यन्मदीयाः प्रजास्तस्य हेतुस्त्वद्ब्रह्मवर्चसम् ॥1.63॥
त्वयैवं चिन्त्यमानस्य गुरुणा ब्रह्मयोनिना ।
सानुबन्धाः कथं न स्युः संपदो मे निरापदः ॥1.64॥
किं तु वध्वां तवैतस्यां अदृष्टसदृशप्रजं ।
न मां अवति सद्वीपा रत्नसूरपि मेदिनी ॥1.65॥
नूनं मत्तः परं वंश्याः पिण्डविच्छेददर्शिनः ।
न प्रकामभुजः श्राद्धे स्वधासंग्रहतत्पराः ॥1.66॥
मत्परं दुर्लभं मत्वा नूनं आवर्जितं मया ।
पयः पूर्वैः स्वनिःश्वासैः कवोष्णं उपभुज्यते ॥1.67॥
सोऽहं इज्याविशुद्धात्मा प्रजालोपनिमीलितः ।
प्रकाशश्चाप्रकाशश्च लोकालोक इवाचलः ॥1.68॥
लोकान्तरसुखं पुण्यं तपोदानसमुद्भवं ।
संततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे ॥1.69॥
तया हीनं विधातर्मां कथं पश्यन्न दूयसे ।
सिक्तं स्वयं इव स्नेहाद्वन्ध्यं आश्रमवृक्षकं ॥1.70॥
असह्यपीडं भगवन्नृणमन्त्यमवेहि मे ।
अरुंतुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः ॥1.71॥
तस्मान्मुच्ये यथा तात संविधातुं तथार्हसि ।
इक्ष्वाकूणां दुरापेऽर्थे त्वदधीना हि सिद्धयः ॥1.72॥
इति विज्ञापितो राज्ञा ध्यानस्तिमितलोचनः ।
क्षणमात्रं ऋषिस्तस्थौ सुप्तमीन इव ह्रदः ॥1.73॥
सोऽपश्यत्प्रणिधानेन संततेः स्तम्भकारणं ।
भावितात्मा भुवो भर्तुरथैनं प्रत्यबोधयत् ॥1.74॥
पुरा शक्रमुपस्थाय तवोर्वीं प्रति यास्यतः ।

आसीत्कल्पतरुच्छायामाश्रिता सुरभिः पथि ॥1.75॥
धर्मलोपभयाद्राज्ञीं ऋतुस्नातां इमां स्मरन् ।
प्रदक्षिणक्रियार्हायां तस्यां त्वं साधु नाचरः ॥1.76॥
अवजानासि मां यस्मादतस्ते न भविष्यति ।
मत्प्रसूतिमनाराध्य प्रजेति त्वां शशाप सा ॥1.77॥
स शापो न त्वया राजन्न च सारथिना श्रुतः ।
नदत्याकाशगङ्गायाः स्रोतस्युद्दामदिग्गजे ॥1.78॥
ईप्सितं तदवज्ञानाद्विद्धि सार्गलमात्मनः ।
प्रतिबध्नाति हि श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः ॥1.79॥
हविषे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः ।
भुजंगपिहितद्वारं पातालमधितिष्ठति ॥1.80॥
सुतां तदीयां सुरभेः कृत्वा प्रतिनिधिं शुचिः ।
आराधय सपत्नीकः प्रीता कामदुघा हि सा ॥1.81॥
इति वादिन एवास्य होतुराहुतिसाधम् ।
अनिन्द्या नन्दिनी नाम धेनुराववृते वनात् ॥1.82॥
ललाटोदयमाभुग्नं पल्लवस्निग्धपाटला ।
बिभ्रती श्वेतरोमाङ्कं संध्येव शशिनं नवम् ॥1.83॥
भुवं कोष्णेन कुण्डोध्नी मेध्येनावभृथादपि ।
प्रस्रवेणाभिवर्षन्ती वत्सालोकप्रवर्तिना ॥1.84॥
रजःकणैः खुरोद्धूतैः स्पृशद्भिर्गात्रमन्तिकात् ।
तीर्थाभिषेकजां शुद्धिं आदधाना महीक्षितः ॥1.85॥
तां पुण्यदर्शनां दृष्ट्वा निमित्तज्ञस्तपोनिधिः ।
याज्यमाशंसितावन्ध्यप्रार्थनं पुनरब्रवीत् ॥1.86॥
अदूरवर्तिनीं सिद्धिं राजन्विगणयात्मनः ।
उपस्थितेयं कल्याणी नाम्नि कीर्तित एव यत् ॥1.87॥
वन्यवृत्तिरिमां शश्वद् आत्मानुगमनेन गां ।
विद्यामभ्यसनेनेव प्रसादयितुमर्हति ॥1.88॥
प्रस्थितायां प्रतिष्ठेथाः स्थितायां स्थितिमाचरेः ।
निषण्णायां निषीदास्यां पीताम्भसि पिबेरपः ॥1.89॥
वधूर्भक्तिमती चैनामर्चितां आ तपोवनात् ।
प्रयता प्रातरन्वेतु पिनेव धुरि पुत्रिणां ॥1.91॥
इत्याप्रसादादस्यास्त्वं परिचर्यापरो भव ।
अविघ्नं अस्तु ते स्थेयाः पीतेव धुरि पुत्रिणाम् ॥1.90॥
तथेति प्रतिजग्राह प्रीतिमान्सपरिग्रहः ।
आदेशं देशकालज्ञः शिष्यः शासितुरानतः ॥1.92॥
अथ प्रदोषे दोषज्ञः संवेशाय विशांपतिम् ।
सूनुः सूनृतवाक्स्रष्टुर्विससर्जोर्जितश्रियम् ॥1.93॥
सत्यां अपि तपःसिद्धौ नियमापेक्षया मुनिः ।
कल्पवित्कल्पयामास वन्यां एवास्य संविधां ॥1.94॥
निर्दिष्टां कुलपतिना स पर्णशालां,
अध्यास्य प्रयतपरिग्रहद्वितीयः ।
तच्छिष्याध्ययननिवेदितावसानां,
संविष्टः कुशशयने निशां निनाय ॥1.95॥

रघुवंश प्रथम सर्ग के प्रमुख अंश-

॥मंगलाचरण॥ (नमस्कारात्मक)

''वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।''

मैं वाणी और अर्थ की सिद्धि के निमित्त वाणी और अर्थ के समान मिले हुए जगत् के माता पिता पार्वती शिव को प्रणाम करता हूं।

छन्द	-	अनुष्टुप,
देवता	-	शिव, पार्वती,
लेखक	-	महाकवि कालिदास,
विधा	-	महाकाव्य
सर्ग	-	19
प्रथम सर्ग	-	95श्लोक,
उपजीव्यकाव्य	-	रामायण,
नायक	-	दिलीप
नायिका	-	सुदक्षिणा
अंगीरस	-	श्रृंगार,
स्थायी भाव	-	रति,
रीति	-	वैदर्भी,
गुण	-	प्रसाद।

रघुवंश के प्रमुख पात्र-

दिलीप	-	राजा,
रघु	-	दिलीप के पुत्र,
अज	-	रघु के पुत्र,
दशरथ	-	अज के पुत्र,
राम	-	दशरथ
वसिष्ठ	-	कुलगुरु,
सुदक्षिणा	-	''मगध'' देश की राजकुमारी
महिवसरवः	-	सुदक्षिणा का सहचर,
कुम्भोदर	-	शिवसेवक
नन्दिनी	-	कामधेनु की पुत्री

रघुवंश प्रथम सर्ग के मुख्य सन्दर्भ-

- रघुवंश पंचमहाकाव्यों तथा लघुत्रयी में एक है।
- रघुवंश के प्रथम सर्ग का अन्तिम श्लोक में छन्द है- **प्रहर्षिणी।**
- रघुवंश में राजाओं का वर्णन है- **31,**

- रघुवंश में रामकथा वर्णित है- **6 सर्गों में।**
- पांच इतियों का वर्णन- **"पुरुषायुषजीविन्यां निरातंका निरीतयः"।**
- रघु ने **'विश्वजित'** नामक यज्ञ किया था।
- नन्दिनी ने (21) दिन तक दिलीप की परीक्षा ली।
- रघुवंश के प्रथम राजा- **"वैवस्वत मनु"।**
- रघुवंश का वर्णन दिलीप से प्रारम्भ होता है।
- 3 श्लोकों में दिलीप का वर्णन।
- 8 श्लोक में- महर्षि आश्रम वर्णन,
- 8 श्लोकों में दिलीप के आश्रम में जाने का वर्णन।

रघुवंश प्रशस्ति-

- कविकुलगुरु कालिदासो विलासः। **(जयदेव-प्रसन्नराघव)**
- क इह रघुकारो न रमते।
- निर्गतासु न वा कस्य, कालिदासस्य सूक्तिषु,
  प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु, मञ्जरीष्विव जायते॥ **(बाणभट्ट-हर्षचरित)**

रघुवंश के सर्गों के विशिष्ट सन्दर्भ-

- **प्रथम सर्ग-** सूर्यवंश के प्रथम राजा मनु का उत्पन्न होना, उनके पुत्र दिलीप का वर्णन।
- **द्वितीय सर्ग-** नन्दिनी सेवा वर्णन। सिंह- कुम्भोदर।
- **तृतीय सर्ग-** रघु का जन्म, दिलीप के सौवें अश्वमेघ यज्ञ का वर्णन, इन्द्र रघु संवाद, दिलीप का तपोगमन।
- **चतुर्थ सर्ग-** रघु चतुर्दिश दिग्विजय, विश्वजित यज्ञ।
- **पंचम सर्ग-** कौत्स के आशीर्वाद से रघु को पुत्र अज की प्राप्ति मतंगमुनि के शाप से गन्धर्वराज प्रियदर्शन के पुत्र प्रियंव का अज द्वारा शापमुक्त करना, गन्धर्वपुत्र का सम्मोहन अस्त्र अज को देना।
- **षष्ठ सर्ग-** इन्दुमती स्वंयवर।
- **सप्तम सर्ग-** इन्दुमती-अज का विवाह।
- **अष्टम सर्ग-** अज विलाप, 'तृणबिन्दु' नामक ऋषि के शाप से हिरणी नाम की अप्सरा इन्दुमती थी, अब वह शापमुक्त हो गई है। अज वनगमन।
- **नवम सर्ग-** श्रवणकुमार की ''मृत्यु तथा शापवर्णन।
- **दशम सर्ग-** ''ऋष्यश्रृंग'' की अध्यक्षता में पुत्रेष्टि यज्ञ, चारों पुत्रों का जन्म।
- **एकादश सर्ग-**ताड़का वध, सुबाहु वध, मारीचि को फ़ेंकना, जनकपुरी प्रस्थान, अहल्या मुक्ति, धनुष यज्ञ, राम-सीता विवाह।
- **द्वादश सर्ग-** कैकयी के वर, राम वन गमन, दशरथ मृत्यु।
- **त्रयोदश सर्ग-** राम का अयोध्या आना।
- **चतुर्दश सर्ग-** राम राज्य अभिषेक, सीता परित्याग, अश्वमेध यज्ञ।
- **पंचदश सर्ग-** शत्रुघ्न द्वारा रावण की बहन 'कुम्भीनसी' के पुत्र 'लवणासुर' का वध सीता का भूगर्भ में जाना, भरत को 'सिन्धु' देश का राज्य, भरत के पुत्र 'तक्ष' को 'तक्ष', 'पुष्कल' को 'पुष्कल' 'लक्ष्मण' के पुत्र 'अंगद' तथा 'चित्रकेतु' को 'कारापल' 'कुश' को-'कुशावती' 'लव' को 'शरावती' का राजा बनाना।
- **षोडश सर्ग-** अगस्त्य ऋषि द्वारा राम को दिये जैत्र आभूषण का नदी में गिरना। कुश का कुमुद की बहन कुमुद्वती से विवाह।
- **सप्तदश सर्ग-** अतिथि अज-पुत्र का जन्म।
- **अष्टादश सर्ग-** अतिथि की पत्नी निषधराज कुमारी से निषध का जन्म।
- **नवदश सर्ग-** 'सुदर्शन' के पुत्र 'अग्निवर्ण' का राज्याभिषेक।

प्रथम सर्ग सूक्तियाँ-

- वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
  जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ ।।1.1।।
- क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः ।
  तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् ।।1.2।।
- मन्दः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम् ।
  प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः ।।1.3।।
- अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्पूर्वसूरिभिः ।
  मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः । । 1.4 । ।
- शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम् ।
  वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम् ।।1.8।।
- तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः ।
  हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा ।।1.10।।
- आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः ।
  आगमैः सदृशारम्भ आरम्भसदृशोदयः ।।1.15।।
- प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत् ।
  सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः ।।1.18।।
- तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च ।
  फलानुमेयाः प्रारम्भाः संस्काराः प्राक्तना इव ।।1.20।।
- ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः ।
  गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव ।।1.22।।
- प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि ।
  स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः ।।1.24।।
- दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदम् – **(दिलीप** 60)
- हविरावर्जितं होतस्त्वया विधिवदग्निषु।
  वृष्णिर्भवति सस्यानामवग्रहविशोषिणाम्।। **(दिलीप** 62)
- पयः पूर्वैः स्वनिःश्वासैः कवोष्णमुपभुज्यते।– **(दिलीप** 67)
- लोकान्तरसुखं पुण्यं तपोदानसमुद्भवं ।

संततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे । । 1.69 । ।

- अरुन्तुदमिवालानमनिर्वाणस्य दन्तिनः। (**दिलीप**-71)
- इक्ष्वाकूणां दुरापेऽर्थे त्वदधीना हि सिद्धयः।। (**दिलीप**-72)
- प्रतिबध्नाति हि श्रेयः पूज्यपूजाव्यतिक्रमः। (**वसिष्ठ** 79)
- श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत् ।
- आराध्यय सपत्नीकः प्रीताकामदुधा हि सा- (**नन्दिनी** 1/89)
- स शापो न त्वया राजन्न च सारथिना श्रुतः ।
  नदत्याकाशगङ्गायाः स्रोतस्युद्दामदिग्गजे ।।1.78।।
- हविषे दीर्घसत्रस्य सा चेदानीं प्रचेतसः ।
  भुजंगपिहितद्वारं पातालमधितिष्ठति ।।1.80।।
- अदूरवर्तिनीं सिद्धिं राजन्विगणयात्मनः ।
  उपस्थितेयं कल्याणी नाम्नि कीर्तित एव यत् ।।1.87।।

प्रथम सर्ग के प्रमुख शब्दार्थ-

- षड्जसंवादिनी केका द्विधा भिन्ना शिखण्डिभिः।।
  केका- मयूरवाणी, **शिखण्डिभिः**- मयूरैः।
  सुरभिः- कामधेनु, **हैयङ्गवीनं** - ह्योगोदोहोद्भवं घृतं,
  यान्तार- सारथि, **स्रष्टुः**- ब्रह्मा।

3. किरातार्जुनीयम्

परिचय-

किरातार्जुनीयम् महाकवि भारवि द्वारा छठी शताब्दी ई. में रचित महाकाव्य है जिसे संस्कृत साहित्य में महाकाव्यों तथा **'वृहत्त्रयी'** में स्थान प्राप्त है। महाभारत में वर्णित किरातवेशी शिव के साथ अर्जुन के युद्ध की लघुकथा को आधार बनाकर कवि ने राजनीति, धर्मनीति, कूटनीति, समाजनीति, युद्धनीति, जनजीवन आदि का मनोरम वर्णन किया है। यह काव्य विभिन्न रसों से ओतप्रोत रचना है किन्तु **वीर रस** प्रधान है। संस्कृत के छः प्रसिद्ध महाकाव्य हैं – इनमें से **बृहत्त्रयी में**- किरातार्जुनीयम् (भारवि), शिशुपालवधम् (माघ) और नैषधीयचरितम् (श्रीहर्ष) आते हैं तथा **लघुत्रयी में**- कुमारसम्भवम्, रघुवंशम् और मेघदूतम् (तीनों कालिदास द्वारा रचित) महाकाव्य आते हैं।

किरातार्जुनीयम् भारवि की एकमात्र उपलब्ध कृति है, जिसने एक सांगोपांग महाकाव्य का मार्ग प्रशस्त किया। माघ-जैसे कवियों ने उसी का अनुगमन करते हुए संस्कृत साहित्य भण्डार को इस विधा से समृद्ध किया और इसे नई ऊँचाई प्रदान की । कालिदास की लघुत्रयी और **अश्वघोष** के **बुद्धचरितम्** में महाकाव्य की जिस धारा का दर्शन होता है, अपने विशिष्ट गुणों के होते हुए भी उसमें वह विशदता और समग्रता नहीं है, जिसका सूत्रपात भारवि ने किया। संस्कृत में किरातार्जुनीयम् की कम से कम 37 टीकाएँ हुई हैं, जिनमें **मल्लिनाथ** की टीका **घंटापथ** सर्वश्रेष्ठ है। सन 1912 में **कार्ल कैप्पलर** ने **हारवर्ड ओरियेंटल सीरीज** के अंतर्गत **किरातार्जुनीयम्** का **जर्मन** भाषा में अनुवाद किया। अंग्रेजी में भी इसके भिन्न-भिन्न भागों के छः से अधिक अनुवाद हो चुके हैं ।

॥प्रथमः सर्गः॥

श्रियः कुरूणामधिपस्य पालनीं,
प्रजासु वृत्तिं यमयुङ्क्त वेदितुम् ।
स वर्णिलिङ्गी विदितः समाययौ,
युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः॥1.1॥

कृतप्रणामस्य महीं महीभुजे,
जितां सपत्नेन निवेदयिष्यतः ।
न विव्यथे तस्य मनो न हि प्रियं,
प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः॥1.2॥

द्विषां विघाताय विधातुमिच्छतो,
रहस्यनुज्ञामधिगम्य भूभृतः ।
स सौष्ठवौदार्यविशेषशालिनीं,
विनिश्चितार्थामिति वाचमाददे॥1.3॥

क्रियासु युक्तैर्नृप चारचक्षुषो,
न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः ।
अतोऽर्हसि क्षन्तुमसाधु साधु वा,
हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः॥1.4॥

स किंसखा साधु न शास्ति योऽधिपं,
हितान्न यः संशृणुते स किंप्रभुः ।
सदानुकूलेषु हि कुर्वते रतिं,
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः॥1.5॥

निसर्गदुर्बोधमबोधविक्लवाः,
क्व भूपतीनां चरितं क्व जन्तवः ।
तवानुभावोऽयमवेदि यन्मया,
निगूढतत्त्वं नयवर्त्म विद्विषाम्॥1.6॥

विशङ्कमानो भवतः पराभवं,
नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः ।
दुरोदरच्छद्मजितां समीहते,
नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः॥1.7॥

तथापि जिह्मः स भवज्जिगीषया,
तनोति शुभ्रं गुणसम्पदा यशः ।
समुन्नयन्भूतिमनार्यसंगमाद्वरं,
विरोधोऽपि समं महात्मभिः॥1.8॥

कृतारिषड्वर्गजयेन मानवीम्,
अगम्यरूपां पदवीं प्रपित्सुना ।
विभज्य नक्तंदिवमस्ततन्द्रिणा,
वितन्यते तेन नयेन पौरुषम्॥1.9॥

सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः,
समानमानान्सुहृदश्च बन्धुभिः ।
स सन्ततं दर्शयते गतस्मयः,
कृताधिपत्यामिव साधु बन्धुताम्॥1.10॥

असक्तमाराधयतो यथायथं,

विभज्य भक्त्या समपक्षपातया ।
गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान्,
न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्॥1.11॥
निरत्ययं साम न दानवर्जितं,
न भूरि दानं विरहय्य सत्क्रियां ।
प्रवर्तते तस्य विशेषशालिनी,
गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया॥1.12॥
वसूनि वाञ्छन्न वशी न मन्युना,
स्वधर्म इत्येव निवृत्तकारणः ।
गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा,
निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवं॥1.13॥
विधाय रक्षान्परितः परेतरान्,
शङ्किताकारमुपैति शङ्कितः ।
क्रियापवर्गेष्वनुजीविसात्कृताः,
कृतज्ञतामस्य वदन्ति सम्पदः॥1.14॥
अनारतं तेन पदेषु लम्भिता,
विभज्य सम्यग्विनियोगसत्क्रियाः ।
फलन्त्युपायाः परिबृंहितायती,
रुपेत्य संघर्षमिवार्थसम्पदः॥1.15॥
अनेकराजन्यरथाश्वसंकुलं,
तदीयमास्थाननिकेतनाजिरं ।
नयत्ययुग्मच्छदगन्धिरार्द्रतां,
भृशं नृपोपायनदन्तिनां मदः॥1.16॥
सुखेन लभ्या दधतः कृषीवलैः,
अकृष्टपच्या इव सस्यसम्पदः ।
वितन्वति क्षेममदेवमातृकाः
चिराय तस्मिन्कुरवश्चकासते ॥1.17॥
उदारकीर्तेरुदयं दयावतः,
प्रशान्तबाधं दिशतोऽभिरक्षया ।
स्वयं प्रदुग्धेऽस्य गुणैरुपस्नुता,
वसूपमानस्य वसूनि मेदिनी ॥1.18॥
महौजसो मानधना धनार्चिता,
धनुर्भृतः संयति लब्धकीर्तयः ।
न संहतास्तस्य न भेदवृत्तयः,
प्रियाणि वाञ्छन्त्यसुभिः समीहितुम्॥1.19॥
महीभुजां सच्चरितैश्चरैः क्रियाः,
स वेद निःशेषमशेषितक्रियः ।
महोदयैस्तस्य हितानुबन्धिभिः,
प्रतीयते धातुरिवेहितं फलैः॥1.20॥
न तेन सज्यं क्वचिदुद्यतं धनुः,
वा कृतं कोपविजिह्ममाननम् ।
गुणानुरागेण शिरोभिरुह्यते,
नराधिपैर्माल्यमिवास्य शासनम्॥1.21॥
स यौवराज्ये नवयौवनोद्धतं,
निधाय दुःशासनमिद्धशासनः ।
मखेष्वखिन्नोऽनुमतः पुरोधसा,
धिनोति हव्येन हिरण्यरेतसम्॥1.22॥
प्रलीनभूपालमपि स्थिरायति,
प्रशासदावारिधि मण्डलं भुवः ।
स चिन्तयत्येव भियस्त्वदेष्यतीः,
अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता॥1.23॥
कथाप्रसङ्गेन जनैरुदाहृताद्,
अनुस्मृताखण्डलसूनुविक्रमः ।
तवाभिधानाद्व्यथते नताननः,
स दुःसहान्मन्त्रपदादिवोरगः॥1.24॥
तदाशु कर्तुं त्वयि जिह्ममुद्यते,
विधीयतां तत्र विधेयमुत्तरम् ।
परप्रणीतानि वचांसि चिन्वतां,
प्रवृत्तिसाराः खलु मादृशां गिरः॥1.25॥
इतीरयित्वा गिरमात्तसत्क्रिये,
गतेऽथ पत्यौ वनसंनिवासिनाम् ।
प्रविश्य कृष्णा सदनं महीभुजा,
तदाचचक्षेऽनुजसन्निधौ वचः॥1.26॥
निशम्य सिद्धिं द्विषतामपाकृतीः,
ततस्ततस्त्या विनियन्तुमक्षमा ।
नृपस्य मन्युव्यवसायदीपिनी,
रुदाजहार द्रुपदात्मजा गिरः॥1.27॥
भवादृशेषु प्रमदाजनोदितं,
भवत्यधिक्षेप इवानुशासनम् ।
तथापि वक्तुं व्यवसाययन्ति,
मां निरस्तनारीसमया दुराधयः॥1.28॥
अखण्डमाखण्डलतुल्यधामभिः,
चिरं धृता भूपतिभिः स्ववंशजैः ।
त्वया स्वहस्तेन मही मदच्युता'
मतङ्गजेन स्रगिवापवर्जिता॥1.29॥
व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं,
भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः ।
प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधान्,
असंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः॥1.30॥
गुणानुरक्तां अनुरक्तसाधनः,
कुलाभिमानी कुलजां नराधिपः ।
परैस्त्वदन्यः क इवापहारयेन्,
मनोरमां आत्मवधूं इव श्रियं॥1.31॥
भवन्तं एतर्हि मनस्विगर्हिते,

विवर्तमानं नरदेव वर्त्मनि ।
कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः,
शमीतरुं शुष्कं इवाग्निरुच्छिखः॥1.32॥
अवन्ध्यकोपस्य निहन्तुरापदां,
भवन्ति वश्याः स्वयं एव देहिनः ।
अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना,
न जातहार्देन न विद्विषादरः॥1.33॥
परिश्रमंल्लोहितचन्दनोचितः,
पदातिरन्तर्गिरि रेणुरूषितः ।
महारथः सत्यधनस्य मानसं,
दुनोति ते कच्चिदयं वृकोदरः॥1.34॥
विजित्य यः प्राज्यं अयच्छदुत्तरान्,
कुरूनकुप्यं वसु वासवोपमः ।
स वल्कवासांसि तवाधुनाहरन्,
करोति मन्युं न कथं धनंजयः॥1.35॥
वनान्तशय्याकठिनीकृताकृती,
कचाचितौ विष्वगिवागजौ गजौ ।
कथं त्वं एतौ धृतिसंयमौ यमौ,
विलोकयन्नुत्सहसे न बाधितुं॥1.36॥
इमां अहं वेद न तावकीं धियं,
विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः ।
विचिन्तयन्त्या भवदापदं परां,
रुजन्ति चेतः प्रसभं ममाधयः॥1.37॥
पुराधिरूढः शयनं महाधनं,
विबोध्यसे यः स्तुतिगीतिमङ्गलैः ।
अदभ्रदर्भां अधिशय्य स स्थलीं,
जहासि निद्रां अशिवैः शिवारुतैः॥1.38॥
पुरोपनीतं नृप रामणीयकं,
द्विजातिशेषेण यदेतदन्धसा ।
तदद्य ते वन्यफलाशिनः परं,
परैति कार्श्यं यशसा समं वपुः॥1.39॥
अनारतं यौ मणिपीठशायिना,
वरञ्जयद्राजशिरःस्रजां रजः ।
निषीदतस्तौ चरणौ वनेषु ते,
मृगद्विजालूनशिखेषु बर्हिषां॥1.40॥
द्विषन्निमित्ता यदियं दशा ततः,
समूलं उन्मूलयतीव मे मनः ।
परैरपर्यासितवीर्यसम्पदां,
पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनां॥1.41॥
विहाय शान्तिं नृप धाम तत्पुनः,
प्रसीद संधेहि वधाय विद्विषां ।
व्रजन्ति शत्रूनवधूय निःस्पृहाः,
शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः॥1.42॥
पुरःसरा धामवतां यशोधनाः,
सुदुःसहं प्राप्य निकारं ईदृशं ।
भवादृशाश्चेदधिकुर्वते रतिम्,
निराश्रया हन्त हता मनस्विता॥1.43॥
अथ क्षमां एव निरस्तविक्रमः,
चिराय पर्येषि सुखस्य साधनं ।
विहाय लक्ष्मीपतिलक्ष्म कार्मुकं,
जटाधरः सञ्जुहुधीह पावकं॥1.44॥
न समयपरिरक्षणं क्षमं ते,
निकृतिपरेषु परेषु भूरिधाम्नः ।
अरिषु हि विजयार्थिनः क्षितीशा,
विदधति सोपधि संधिदूषणानि॥1.45॥
विधिसमयनियोगाद्दीप्तिसंहारजिह्मं,
शिथिलवसुमगाधे मग्नं आपत्पयोधौ ।
रिपुतिमिरं उदस्योदीयमानं दिनादौ,
दिनकृतं इव लक्ष्मीस्त्वां समभ्येतु भूयः॥1.46॥
॥इति भारविकृतौ महाकाव्ये किरातार्जुनीये प्रथमः सर्गः॥

किरातार्जुनीयम् के प्रमुख अंश-

॥मंगलाचरण॥ (वस्तुनिर्देशात्मक)

''श्रियः कुरुणामधिपस्य पालनीं,
प्रजासु वृत्तिं यमयुङ्क्त वेदितुम्।
स वर्णलिङ्गी विदितः समाययौ,
युधिष्ठिरं द्वैतवने वनेचरः।।''

प्रणामक्रिया से निवृत्त तथा शत्रु दुर्योधन द्वारा जीत ली गई पृथ्वी के वृत्तान्त को महाराज के प्रति निवेदित करते हुए उस वनेचर का मन व्यथित नहीं हुआ क्योंकि कल्याण चाहने वाले स्वपक्षीय लोग मिथ्याभूत मधुर वचन बोलने की इच्छा नहीं करते ।

छन्द	-	वंशस्थ, पुष्पिताग्रा, मालिनी
स्तुति	-	'लक्ष्मी'
लेखक	-	भारवि
सर्ग	-	18
श्लोक	-	(1030),
उपजीव्य ग्रन्थ	-	महाभारत का वनपर्व,
नायक	-	अर्जुन,
प्रतिनायक	-	किरातवेशधारी 'शिव',
नायक प्रकृति	-	धीरोदात्त,
नायिका	-	द्रौपदी,
अंगीरस	-	वीर,

गौण/अंगी रस - श्रृंगारादि,

गुण - ओज गुण तथा प्रथम सर्ग में 'वैदर्भी

रीति - पांचाली,

किरातार्जुनीयम् के प्रमुख पात्र-

श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, भीम, नकुल, सहदेव, वनेचर, दुर्योधन, कर्ण, भीष्म, परशुराम, यक्ष, द्रोण, इन्द्र, व्यास, मूक, शूकर।

किरातार्जुनीयम् प्रथम सर्ग के मुख्य सन्दर्भ-

- **मुख्य फल**- 'दिव्यास्त्र लाभ'
- **'अदेवमातृकाः'** शब्द का प्रयोग किया गया है- (श्श्लोक सं.1.17)
- **भारवि का काल**- छठवीं शताब्दी, **भारवि** शैवानुयायी थें।
- **प्रिय छन्द**- वंशस्थ/उपजाति।
- किरातार्जुनीयम् के प्रारम्भ में **'श्री'** शब्द से तथा अन्तिम में **'लक्ष्मी'** शब्द प्रयोग हुआ हैं।
- भारवि के काव्य को कहा जाता है- **लक्ष्मीपदाङ्क।**
- **प्रमाणिका टीका**- **"घण्टापथ"- मल्लिनाथ।**
- सर्वप्रथम तीन सर्ग- **पाषाणत्रय।**
- **घण्टापथ का शाब्दिक अर्थ**- **''राजमार्ग"।**
- अन्य टीकाओं में लोकप्रिय टीका- **"शब्दार्थदीपिका- चित्रभानु"** प्रथम तीन सर्ग के ऊपर, **त्रिसागरिका।**
- **किरातार्जुनीयम्** का 15 वां **सर्ग चित्रकाव्य** के लिये प्रसिद्ध है।
- नकार को लेकर एकाक्षरी श्लोक लिखने वाले कवि भारवि हैं।
- किरातार्जुनीयम् में एकाक्षरी श्लोकों की संख्या-7 हैं।
- किरातार्जुनीयम् के प्रथम सर्ग में 46 श्लोक हैं और प्रारम्भ के 44 श्लोकों में **वंशस्थ** छन्द तथा 45 वें श्लोक में **पुष्पिताग्रा छन्द** हैं। 46 वें अंतिम श्लोक में- **मालिनी** छन्द है।

  "विधिसमयनियोगाद्दीप्तिसंहारजिह्मं
  शिथिलवसुमगाधे मग्नमापत्पयोधौ ।
  रिपुतिमिरं उदस्योदीयमानं दिनादौ
  दिनकृतमिव लक्ष्मीस्त्वां समभ्येतुभूयः"।(46)

- शरद् ऋतु, 'इन्द्रकील' पर्वत वर्णन- **चतुर्थ सर्ग।**
- हिमालय पर्वत वर्णन-**पंचम सर्ग।**
- जलक्रीडा वर्णन- **अष्टमसर्ग,।**
- सन्ध्या,चन्द्रोदय और सुरत वर्णन- **नवमसर्ग।**
- वर्षादि वर्णन, अप्सराओं का चेष्टावर्णन- **दशमसर्ग।**
- मूकदानव वाराह मृत्यु- त्रयोदशसर्ग,
- शिव आगमन और अर्जुन सेना के साथ युद्ध- **चतुर्दशसर्ग,**
- चित्रायुद्ध वर्णन- **पंचदशसर्ग,**
- शिव और अर्जुन का अस्त्रयुद्ध- **षोडशसर्ग,**
- पाशुपत अस्त्र प्राप्ति- **अष्टादशसर्ग,**
- सम्भोग श्रृंगार का सुन्दर वर्णन- सर्ग 8 और 9 में।
- युद्धवर्णन में वीररस का वर्णन- सर्ग 13-17 तक।
- उपमा अलंकार का सुन्दर प्रयोग- सर्ग 13-17 तक।
- राजनीतिपरक महाकाव्य- किरातार्जुनीयम्।
- भारवि संस्कृत साहित्य में **"अलंकृतकाव्यशैली"** तथा **"विचित्रमार्ग"** के जनक हैं।
- अर्जुन तपस्या हेतु इन्द्रकील पर (हिमालय) पर जाते हैं। किरातार्जुनीयम् में दुर्योधन की तुलना की गयी है- **उरग** (सांप) से। धन जीतकर युद्धिष्ठिर को देता था- **अर्जुन।**

किरातार्जुनीयम् में सर्गों के विशिष्ट सन्दर्भ-

महाकवि भारवि द्वारा रचित किरातार्जुनीयम् की कथा का मूलस्रोत महाभारत का वनपर्व रहां है। इन्द्र तथा शिव को प्रसन्न करने के लिए की गई अर्जुन तपस्या को आधार बनाकर कवि ने **18** सर्गों के महाकाव्य का वितान पल्लवित किया है।

प्रथम सर्ग का आरम्भ द्यूतक्रीड़ा में हारे हुए पाण्डवों के द्वैतवनवास में होता है। युधिष्ठिर यहाँ रहकर भी दुर्योधन की ओर से निश्चिन्त नहीं हैं। वे वनेचर को दुर्योधन की प्रजापालन सम्बन्धी नीति को जानने के लिए दूत बनाकर भेजते हैं। ब्रह्मचारी वना हुआ वनेचर लौटकर युधिष्ठिर के पास आता है और दुर्योधन के शासन की पूरी जानकारी देता है एवं इस वात का संकेत करता है कि जुए के बहाने से जीती हुई पृथ्वी को वह नीति से भी जीत लेने की चेष्टा में लगा है। सारी वातें बताकर वनेचर लौट जाता है और द्रौपदी आकर युधिष्ठिर को युद्ध करने के लिए उत्तेजित करती है एवं उसकी कायरता के लिये कटु शब्दों क प्रयोग करती है। **द्वितीय सर्ग में**- भीम भी द्रौपदी सहित मिलकर युधिष्ठिर को युद्ध करने के लिए कहता है लेकिन युधिष्ठिर उसे मना कर देता है और उचित समय के आने की प्रतीक्षा करने के लिए कहता है, जब पाण्डवों के मित्र उनकी सहिष्णुता की प्रशंसा करें एवं दुर्योधन के दुर्व्यवहार से अपमानित राजा उससे अलग हो जाएँ। तब भगवान व्यास आते हैं। **तृतीय और चतुर्थ सर्ग**- युधिष्ठिर-व्यास संवाद, व्यास का अर्जुन को **पाशुपतास्त्र** की प्राप्ति के लिए हिमालय पर जाने का आदेश और अर्जुन का प्रस्थान है। हिमालय पर तपस्यार्थ जाते समय पर्वत, शरद् ऋतु और गोपालों आदि का वर्णन है। **पञ्चम सर्ग**- हिमालय की विशेषता बताकर और अर्जुन को तपस्या में लगाकर गृह्यक चला जाता है। **षष्ठ एवं सप्तम् सर्ग**- हिमालय

पर अर्जुन की तपस्या को भंग करने के लिए इन्द्र अप्सराओं को भेजता है लेकिन वे अर्जुन के व्रत को भंग न कर सकीं। **अष्टम सर्ग-** गन्धर्वों एवं देवाङ्गनाओं का वन विहार एवं उनकी काम-क्रीड़ाओं का सरल एवं विस्तृत वर्णन के साथ उनके गंगा स्नान एवं क्रीडाओं का मनोरम वर्णन है। **नवम सर्ग-** सन्ध्या चन्द्रोदय, प्रभात का वर्णन है। **दशम एवं एकादश सर्ग-** अप्सराओं के अनेक प्रयत्नों के बावजूद अर्जुन की तपस्या को भंग करने में असफल होती हैं और वापस चली जाती है। अन्ततः अर्जुन की कठोर तपस्या को देखकर इन्द्र प्रसन्न होकर उसको शिव की तपस्या करने का उपदेश देता है । **द्वादश सर्ग-** अर्जुन पुनः तपस्या करता है। इधर एक मायावी दैत्य अर्जुन को मारने के लिए सूअर का रूप धारण करता है। इस बात को जानकर भगवान शिव अर्जुन की रक्षा हेतु किरात का मायावी वेश धारण करते हैं। **त्रयोदश एवं चतुर्दश सर्ग-** शूकर/सूअर के प्रवेश का वर्णन है।किरात तथा अर्जुन दोनों सूअर पर एक साथ बाण छोड़ते हैं। अर्जुन का बाण सुअर को मारकर पृथ्वी में घुस जाता है। बाद में बचे हुए बाण के लिए किरात और अर्जुन का वाद-विवाद चलता है।

पञ्चदश, षोडश, सप्तदश सर्ग - किरात और अर्जुन के मध्य हुआ वाद-विवाद युद्ध का रूप धारण कर लेता है। **अष्टादश सर्ग -** अर्जुन की वीरता से प्रसन्न होकर भगवान शिव प्रकट होते हैं और उसे पाशुपतास्त्र प्रदान कर विजयश्री का आशीर्वाद देतें हैं। इस प्रकार काव्य की पूर्ति होती है।

किरातार्जुनीयम् प्रथम सर्ग की प्रमुख सूक्तियां-

- न हि प्रियं प्रवक्तु मिच्छन्ति मृषा हितैषिणः। (2)
- हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः। (4 **वनेचर**)
- वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः। (8 **वनेचर**)
- वसूपमानस्य वसूनि मेदिनि। (18 **वनेचर**)
- अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता। (23 **वनेचर**)
- प्रवृत्तिसाराः खलु मादृशां गिरः। (25 **वनेचर**)
- वज्रन्ति ते मूढधियः पराभवं,
  भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः।
  प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधान्
  असंवृताङ्गान्निशिता इवेषवः।।(30 **द्रौपदी**)
- कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः
  शमीतरुं शुष्कमिवाग्निरुच्छिखः।(32 **द्रौपदी**)
- अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां
  भवन्तिवश्याः स्वयमेव देहिनः।
  अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना,
  न जातहार्देन न च विद्विषादरः।। (33 **द्रौपदी**)
- विचित्ररूपाः खलु चित्तवृत्तयः। (37 **द्रौपदी**)
- पराभवोऽप्युत्सव एव मानिनाम्। (41 **द्रौपदी**)
- शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः। (42 **द्रौपदी**)
- निराश्रया हन्त हता मनस्विता (43)
- भवादृशेषु प्रमदाजनोदितं ।
- कुरुनकुप्यं वसु वासवोपम ।
- सहसा विदधीत न क्रियाम्- **युधिष्ठिर** (2/30),
- वसन्ति प्रेम्णि गुणा न वस्तुनि- (8/37)

प्रथम सर्ग के प्रमुख शब्द-

- **"विजित्य यः प्रयच्छदुत्तरान्...."** (यः- अर्जुन)
- 'महीभुजे' में विभक्ति- चतुर्थी।
- विधाताय में धातु- **'धा'** ।
- कृतप्रणामः में समास- **बहुव्रीहि।**
- वनेचर में प्रत्यय- **'ट'** प्रत्यय हैं ।
- धिनोति हव्येन् हिरण्यरेतसम्। (**हिरण्यरेतसम्-** अग्नि)
- प्रवृत्तिसारा खलु मादृशां गिरः। (**खलु-** निश्चय अर्थ)
- "दनुस्मृताखण्डलसूनुविक्रमः" (**आखण्डल="इन्द्र"**)
  (**आखण्डलसूनु = "अर्जुन"**)
- "तवाभिधानाद्वयथते नताननः" - (**नतानन** - दुर्योधन के लिये प्रयुक्त)
- स दुःसहाम्मन्त्रपदादिवोरगः- (उरग-सर्प) दुर्योधन के लिये प्रयुक्त उपमान)
- न हि प्रियं प्रवक्तुमिच्छन्ति मृषा हितैषिणः- इसमें **'अर्थान्तरन्यास'** अलंकार है।
- हाथी से तुलना की गई है- नकुल, सहदेव की। **"कचाचितौ विष्वगिवागजो गजौ···" । (1.36)**

4. शिशुपालवधम्

परिचय-

महाकवि माघ द्वारा रचित शिशुपालवध की कथा भी भारवि के किरातार्जुनीय की तरह महाभारत के सभापर्व से गृहीत है। इसमें 20 सर्ग और 1650 श्लोक हैं। कृष्ण तथा शिशुपाल के वैर की, तथा युद्ध में कृष्ण के द्वारा शिशुपाल का वध किए जाने की कथा काव्य में वर्णित है कथा में शिशुपाल को हिरण्यकशिपु तथा रावण का इस जन्म का अवतरण माना है और शिशुपाल को कंस से भी बढ़कर नृशंस राजा के रूप में चित्रित किया गया है। शिशुपालवध द्वारिका से युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए कृष्ण शिशुपाल के द्वारा किए गए कृष्ण के अपमान तथा बाद में युद्ध के फलस्वरूप शिशुपाल के मारे जाने की कथा है।

॥प्रथमः सर्गः॥

श्रियः पतिः श्रीमति शासितुं जग-
ज्जगन्निवासो वसुदेवसद्मनि ।
वसन् ददर्शावतरन्तमम्बराद्
हिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिं हरिः॥1॥
गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः
प्रसिद्धमूर्ध्वं ज्वलनं हविर्भुजः ।
पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः
किमेतदित्याकुलमीक्षितं जनैः॥2॥
चयस्त्विषामित्यवधारितं पुरस्ततः
शरीरिति विभाविताकृतिम् ।
विभुर्विभक्तावयवं पुमानिति
क्रमादमुं नारद इत्यबोधि सः॥3॥
नवानधोऽधो वृहतः पयोधरान्
समूढकर्पूरपरागपाण्डुरम् ।
क्षणं क्षणोत्क्षिप्तगजेन्द्रकृत्तिना
स्फुटोपमं भूतिसितेन शंभुना॥4॥
दधानमम्भोरुहकेसरद्युती जटाः
शरच्चन्द्रमरीचिरोचिषम् ।
विपाकपिङ्गास्तुहिनस्थलीरुहो
धराधरेन्द्रं व्रततीततीरिव॥5॥
पिशङ्गमौञ्जीयुजमर्जुनच्छविं
वसानमेणाजिनमञ्जनद्युति ।
सुवर्णसूत्राकलिताधराम्बरां
विडम्बयन्तं शितिवाससस्तनुम्॥6॥
विहङ्गराजाङ्गरुहैरिवातते
र्हिरण्यमयोर्वीरुहवल्लितन्तुभिः ।
कृतोपवीतं हिमशुभ्रमुच्चकै
र्घनं धनान्ते तडितां गणैरिव॥7॥
निसर्गचित्रोज्ज्वलसूक्ष्मपक्ष्मणा
लसद्बिसच्छेदसिताङ्गसङ्गिना ।
चकासतं चारूचमूरुचर्मणा
कुथेन नागेन्द्रमिवेन्द्रवाहनम्॥8॥
अजस्रमास्फालितवल्लकीगुण
क्षतोज्ज्वलांगुष्ठनखांशुभिन्नया ।
पुरः प्रवालैरिव पूरितार्द्धया
विभान्तमच्छस्फटिकाक्षमालया॥9॥
रण्ध्रिराघट्टनया नभस्वतः
पृथग्विभिनाश्रुतिमण्डलैः स्वरैः ।
स्फुटीभवद्ग्रामविशेषमूर्च्छना
मवेक्षमाणं महतीं मूहुर्मूहुः॥10॥
निवर्त्य सो नुव्रजतः कृतानती
र्नतीन्द्रियज्ञाननिधिर्नभःसदः ।
समासदत् सादितदैत्यसम्पदः
पदं महेन्द्रालयचारु चक्रिणः॥11॥
पतन् पतङ्गप्रतिमस्तपोनिधिः
पुरोस्य यावन्न भुवि व्यलीयत ।
गिरेस्तडित्वानिव तावदुच्चकैः
जवेन पीठादुदतिष्ठदच्युतः॥12॥
अथ प्रयत्नोन्नमितानमत्फणैर्धृते
कथंचित्फणिनां गणैरधः ।
न्यधायिषातामभिदेवकीसुतं
सुतेन धातुश्चरणौ भुवस्तले॥13॥
तमर्घ्यमर्घ्यादिकयादिपूरुषः
सपर्यया साधु स पर्य्यपूपुजत् ।
गृहानुपैतुं प्रणयादभीप्सवो
भवन्ति नापुण्यकृतां मनीषिणः॥14॥
न यावदेतावुदपश्यदुत्थितौ
जनस्तुषारासाराञ्जनपर्वताविव ।
स्वहस्तदत्ते मुनिमासने मुनि
श्चिरंतनस्तावदभिन्यवीविशत्॥15॥
महामहानीलशिलारुचः पुरो
निषेदिवान् कंसकृषः स विष्टरे ।
श्रितोदयाद्रेरभिसायकमुच्चकै-
रचूचुरच्चन्द्रमसो भिरामताम्॥16॥
विधाय तस्यापचितिं प्रसेदुषः
प्रकाममप्रीयत यज्वनां प्रियः ।
ग्रहीतुमार्यान् परिचर्यया मूहु
र्महानुभावा हि नितान्तमर्थिनः॥17॥
अशेषतीर्थोपहृताः कमण्डलो
र्निधाय पाणावृषिणाऽभ्युदीरिताः ।
अघौघविध्वंसविधौ पटीयसी
र्नतेन मूर्ध्रा हरिरग्रहीदपः॥18॥
स काञ्चने यत्र मुनेरनुज्ञया
नवाम्बुदश्यामवपुर्न्यविक्षत ।
जिघाय जम्बूजनितश्रियः
श्रियं सुमेरुश्रृङ्गस्य तदा तदासनम्॥19॥
स तप्तकार्तस्वरभास्वराम्वरः
कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः ।
विदिद्युते वाडवजातवेदसः
शिखाभिराश्लिष्ट इवाम्भसां निधिः॥20॥
रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषा
मृषित्विषः संवलिता विरेजिरे ।
चलत्पलाशान्तरगोचरास्तरो

स्तुषारमूर्तेरिव नक्तमंशवः॥21॥
प्रफुल्लतापिच्छनिभैरभीशुभिः
शुभैश्च सप्तच्छदपांसुपाण्डुभिः ।
परस्परेण च्छुरितामलच्छवी
तदेकवर्णाविव तौ बभूवतुः॥22॥
युगान्तकालप्रतिसंहृतात्मनो
जगन्ति यस्यां सविकासमासत ।
तनौ ममुस्तत्र न कैटभद्विष-
स्तपोधनाभ्यागमसंभवा मुदः॥23॥
निधाघधामानमिवाधिदीधितिं
मुदा विकासं मुनिमभ्युपेयुषी ।
विलोचने बिभ्रदधिश्रितश्रिणी
स पुण्डरीकाक्ष इति स्फुटोऽभवत्॥24॥
सितं सितिम्ना सुतरां मुनेर्वपु-
र्विसारिभिः सौधमिवाथ लम्भयन् ।
द्विजावलिव्याजनिशाकरांशुभिः
शुचिस्मितां वाचमवोचदच्युतः॥25॥
हरत्यघं सम्प्रति हेतुरेष्यतः
शुभस्य पूर्वाचरितैः कृतं शुभैः ।
शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्ति
कालत्रितये पि योग्यताम्॥26॥
जगत्यपर्याप्तसहस्रभानुना
न यन्नियन्तुं समभावि भानुना ।
प्रसह्य तेजोभिरसंख्यतां गते
रदस्त्वया नुन्नमनुत्तमं तमः॥27॥
कृतः प्रजाक्षेमकृता प्रजासृजा
सुपात्रनिक्षेपनिराकुलात्मना ।
सदोपयोगेऽपि गुरुस्त्वमक्षयो
निधिः श्रुतीनां धनसंपदामिव॥28॥
विलोकनेनैव तवामुना मुने
कृतः कृतार्थोऽस्मि निबर्हितांहसा ।
तथापि शुश्रूषुरहं गरीयसी-
र्गिरोऽथवा श्रेयसि केन तृप्यते॥29॥
गतस्पृहो प्यागमनप्रयोजनं
वदेति वक्तुं व्यवसीयते यया ।
तनोति नस्तामुदितात्मगौरवो
गुरुस्तवैवागम एष धृष्टताम्॥30॥
इति ब्रुवन्तं तमुवाच स व्रती
न वाच्यमित्थं पुरुषोत्तम त्वया ।
त्वमेव साक्षात्करणीय इत्यतः
किमस्ति कार्य्यं गुरु योगिनामपि॥31॥
उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनै
रभीक्ष्णमक्षुण्णतयातिदुर्गमम् ।
उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विन
स्त्वमग्रभूमिर्निपायसंश्रया॥32॥
उदासितारं निगृहीतमानसै-
र्गृहीतमध्यात्मदृशा कथंचन ।
बहिर्विकारं प्रकृतेः पृथग्विदुः
पुरातनं त्वां पुरूषं पुराविदः॥33॥
निवेशयामासिथ हेलयोद्धृतं
फणाभृतां छादनमेकमोकसः ।
जगत्रयैकस्थपतिस्त्वमुच्चकै
रहीश्वरस्तम्भशिरःसु भूतलम्॥34॥
अनन्यगुर्व्यास्तव केन केवलः
पुराणमूर्तेर्महिमावगम्यते ।
मनुष्यजन्मापि सुरासुरान् गुणै
र्भवान् भवेच्छेदकरैः करोत्यधः॥35॥
लघूकरिष्यन्नतिभारभङ्गुरा-
ममूं किल त्वं त्रिदिवादवातरः ।
उदूडलोकत्रितयेन सांप्रतं
गुरूर्धरित्री क्रियतेतरां त्वया॥36॥
निजौजसोज्ञासयितुं जगद्रुहा
मुपाजिहीथा न महीतलं यदि ।
समाहितैरप्यनिरूपितस्ततः
पदं दृशः स्याः कथमीश मादृशाम्॥37॥
उपप्लुतं पातुमदो मदोद्धते
स्त्वमेव विश्वंभर विश्वमीशिषे ।
ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः
क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः॥38॥
करोति कंसादिमहीभृतां
वधाज्जनो मृगाणामिव यत्तव स्तवम् ।
हरेर्हिरण्याक्षपुरःसरासुर
द्विपद्विषः प्रत्युत सा तिरस्क्रिया॥39॥
प्रवृत एव स्वयमुज्झितश्रमः
क्रमेण पेष्टुं भुवनद्विषामसि ।
तथापि वाचालतया युनक्ति मां
मिथस्त्वदाभाषणलोलुभं मनः॥40॥
तदिन्द्रसंदिष्टमुपेन्द्र यद्वचः
क्षणं मया विश्वजनीनमुच्यते ।
समस्तकार्येषु गतेन धुर्यता
महिदिवषस्तद्भवता निशम्यताम्॥41॥
अभूदभूमिः प्रतिपक्षजन्मनां
भियां तनूजस्तपनद्युतिर्दितेः ।
यमिन्द्रशब्दार्थनिसूदनं हरे

हिरण्यपूर्वं कशिपुं प्रचक्षते॥42॥
समत्सरेणासुर इत्युपेयुषा
चिराय नाम्नः प्रथमाभिधेयताम् ।
भवस्य पूर्वावतारस्तरस्विना
मनःसु येन द्युसदां व्यधीयत॥43॥
दिशामधीशांश्चतुरो यतः सुरा
नपास्य तं रागहृताः सिषेविरे ।
अवापुरारभ्य ततश्चला इति
प्रवादमुच्चैरयशस्करं श्रियः॥44॥
पुराणि दुर्गाणि निशातमायुधं
बलानि शूराणि घनाश्च कञ्चुकाः ।
स्वरूपशोभैकगुणानि नाकिनां
गणैस्तमाशङ्क्य तदादि चक्रिरे॥45॥
स सञ्चरिष्णुर्भुवनान्तराणि यां
यदृच्छयाशिश्रियदाश्रयः श्रियः ।
अकारि तस्यै मुकुटोपलस्खल
त्करैस्त्रिसन्ध्यं त्रिदशैर्दिशे नमः॥46॥
सटच्छटाभिन्नधनेन बिभ्रता
नृसिंह सैंहीमतनुं तनुं त्वया ।
स मुग्धकान्तास्तनसङ्गभङ्गुरै
रुरोविदारं प्रतिचस्करे नखैः॥47॥
विनोदनिच्छन्नथ दर्पजन्मनो
रणेन कण्ड्वास्त्रिदशैः समं पुनः ।
स रावणो नाम निकामभीषणं
बभूव रक्षः क्षतरक्षणं दिवः॥48॥
प्रभुर्बुभूषुर्भवनत्रयस्य यः
शिरो तिरागाद्दशमं चिकर्तिषुः ।
अतर्कयद्विघ्नमिवेष्टसाहसः
प्रसादमिच्छासदृशं पिनाकिनः॥49॥
समुत्क्षिपन् यः पृथिवीभृतां वरं
वरप्रदानस्य चकार शूलिनः ।
त्रसत्तुषाराद्रिसुतासंभ्रम
स्वयंग्रहाश्लेषमुखेन निष्क्रयाम्॥50॥
पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं
मुषाण रत्नानि हरामराङ्गनाः ।
विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा बली
य इत्थमस्वास्थ्यमहर्दिवं दिवः॥51॥
सलीलयातानि न भर्तुरभ्रमो
र्न चित्रमुच्चैःश्रवसः पदक्रमम् ।
अनुद्रुतः संयति येन केवलं
बलस्य शत्रुः प्रशशंस शीघ्रताम्॥52॥
अशक्नुवन् सोढुमधीरलोचनः
सहस्त्ररश्मेरिव यस्य दर्शनम् ।
प्रविश्य हेमाद्रिगुहागृहान्तरं
निनाय बिभ्यद् दिवसानि कौशिकः॥53॥
बृहच्छिलानिष्ठुरकण्ठघट्टनाद्
विकीर्णलोलाग्निकणं सुरद्विषः ।
जगत्प्रभोरप्रसहिष्णु वैष्णवं
न चक्रमस्याक्रमताधिकन्धरम्॥54॥
विभिन्नशङ्खः कलुषीभवन्मुहु
र्मदेन दन्तीव मनुष्यधर्मणः ।
निरस्तगाम्भीर्यमपास्तपुष्पकं
प्रकम्पयामास न मानसं न सः॥55॥
रणेषु तस्य प्रहिताः प्रचेतसा
सरोषहुङ्कारपराङ्मुखीकृताः ।
प्रहर्तुरेवोरगराजरज्जवो
जवेन कण्ठं सभयं प्रपेदिरे॥56॥
परेतभर्तुर्महिषो मुना धनु
र्विधातुमुत्खातविषाणमण्डलः ।
हृतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरा
दुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः॥57॥
स्पृशन् सशङ्कः समये शुचावपि
स्थितः कराग्रैरसमग्रपातिभिः ।
अघर्मघर्मोदकबिन्दुमौक्तिकै
रलंचकारास्य वधूरहस्करः॥58॥
कलासमग्रेण गृहानमुञ्चता
मनस्विनीरुत्कयितुं पटीयसा ।
विलासिनस्तस्य वितन्वता रतिं
न नर्मसाचिव्यमकारि नेन्दुना॥59॥
विदग्धलीलोचितदन्तपत्रिका
विधित्सया नूनमनेन मानिना ।
न जातु वैनायकमेकमुद्धृतं
विषाणमद्यापि पुनः प्ररोहति॥60॥
निशान्तनारीपरिधानधूनन
स्फुटागसाप्यूरुषु लोलचक्षुषः ।
प्रियेण तस्यानपराधबाधिताः
प्रकम्पनेनानुचकम्पिरे सुराः॥61॥
तिरस्कृतस्तस्य जनाभिभाविना
मुहुर्महिम्ना महसां महीयसाम् ।
बभार वाष्पैर्द्विगुणीकृतं तनु
स्तनूनपाद्धूमवितानमाधिजैः॥62॥
परस्य मर्माविधमुज्झतां निजं
द्विजिह्वतादोषमजिह्मगामिभिः ।
तमिद्धमाराधयितुं सकर्णकैः

कुलैर्न भेजे फणिनां भुजङ्गता॥63॥

तदीयमातङ्गघटाविघट्टितैः
कटास्थलप्रोषितदानवारिभिः ।
गृहीतदिक्कैरपुनर्निवर्तिभिः
श्चिराय याथार्थ्यमलम्भि दिग्गजैः॥64॥

अभीक्ष्णमुष्णैरपि तस्य सोष्मणः
सुरेन्द्रवन्दीश्वसितानिलैर्यथा ।
सचन्दनाम्भःकणकोमलैस्तथा
वपुर्जलार्द्रापवनैर्न निर्ववौ॥65॥

तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो
वसन्तलक्ष्म्या शिशिर समेत्य च ।
प्रसूनक्लृप्तं ददतः सदर्त्तवः
पुरेस्य वास्तव्यकुटुम्बितां ययुः॥66॥

अमानवं जातमजं कुले मनोः
प्रभाविनं भाविनमन्तमात्मनः ।
मुमोच जानन्नपि जानकीं न यः
सदाभिनैकधना हि मानिनः॥67॥

स्मरत्यदो दाशरथिर्भवन् भवा
नमुं वनान्ताद्वनितापहारिणम् ।
पयोधिमाविद्धचलज्जलाविलं
विलङ्घ्य लङ्कां निकषा हनिष्यति॥68॥

अथोपपत्तिं छलनापरो परा-
मवाप्य शैलूष इवैष भूमिकाम् ।
तिरोहितात्मा शिशुपालसंज्ञया
प्रतीयते संप्रति सोऽप्यसः परैः॥69॥

स बालः आसीद्वपुषश्चतुर्भुजो
मुखेन पूर्णेन्दुरुनिभस्त्रिलोचनः ।
युवा कराक्रान्तमहीभृदुच्चकै-
रसंशयं संप्रति तेजसा रविः॥70॥

स्वयं विधाता सुरदैत्यरक्षसा
मनुग्रहावग्रहयोर्यदृच्छया ।
दशाननादीनभिराद्धदेवता
वितीर्णवीर्यातिशयान् हसत्यसौ॥71॥

बलावलेपादधुनापि पूर्ववत्
प्रवाध्यते तेन जगज्जिगीषुणा ।
सतीव योषित् प्रकृतिः सुनिश्चला
पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि॥72॥

तदेनमुल्लङ्घितशासनं विधे-
र्विधेहि कीनाशनिकेतनातिथिम् ।
शुभेतराचारविपक्रिमापदो
निपादनीया हि सतामसाधवः॥73॥

हृदयमरिवधोदयादुदूढ-
द्रढिम दधातु पुनः पुरन्दरस्य ।
धनपुलकपुलोमजाकुचाग्र
द्रुतपरिरम्भनिपीडनक्षमत्वम्॥74॥

ओमित्युक्तवतोथ शार्ङ्गिण इति व्याहृत्य वाचं नभ-
स्तस्मिन्नुत्पतितं पुरः सुरमुनाविन्दोः श्रियं बिभ्रति ।
शत्रूणामनिशं विनाशपिशुनः क्रुद्धस्य चैद्यं प्रति
व्योम्नीव भृकुटिच्छलेन वदने केतुश्चकारास्पदम्॥75॥

शिशुपालवधम् के प्रमुख अंश-

॥मगंलाचरण॥ (वस्तुनिर्देशात्मक)

"श्रियः पतिः श्रीमति शासितुं जगत्,
जगन्निवासः वसुदेवसद्मनि।
वसन्ददर्शावतरन्तमम्बरात्।
हिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिं हरिः"।

लक्ष्मी (रुक्मिणी) के पति, समस्त जगत् के निवास (आधार) भगवान विष्णु (श्रीकृष्ण), जिस समय जगत का नियन्त्रण करने के लिए श्रीसम्पन्न वसुदेव के घर निवास कर रहे थे, उसी समय आकाश से नीचे उतरते हुए उन्होंने हिरण्यगर्भ (ब्रह्माण्ड से उत्पन्न होने वाले भगवान ब्रह्मा) के पुत्र नारद मुनि को देखा ।

छन्द	-	वंशस्थ, पुष्पिताग्रा, शार्दूलविक्रीडितम् ।
लेखक	-	महाकवि माघ
पिता	-	दत्तक,
पितामह	-	सुप्रभदेव,
विधा	-	महाकाव्य पंचमहाकाव्यों तथा बृहत्रयी में एक,
उपजीव्य काव्य	-	महाभारत सभापर्व,
सर्ग	-	20,
पद्य	-	(1650),
प्रथम सर्ग	-	75 **श्लोक,**
नायक	-	कृष्ण,
अंगी रस	-	वीर,
अंग रस	-	अन्य सभी,
स्थायी भाव	-	उत्साह,
प्रथम सर्ग नाम	-	कृष्णनारदसम्भाषणम्,
द्वितीय सर्ग	-	मन्त्रवर्णनात्मक,
माघ टीका	-	सर्वङ्कषा (मल्लिनाथ)

प्रमुख वर्णन-

- रैवतकपर्वत वर्णन- **चतुर्थ सर्ग,**
- विहार वर्णन- **पंचम सर्ग,**

- छः ऋतुओं का वर्णन- **षष्ठम् सर्ग,**
- श्रीकृष्ण यादवों का वनविहार वर्णन- **सप्तम् सर्ग,**
- जलविहार- **अष्टम् सर्ग,**
- सूर्यास्त- **नवम् सर्ग,**
- मद्यपान तथा संभोग- **दशम् सर्ग,**
- प्रभा वर्णन- **एकादश सर्ग,**
- **यमुना वर्णन-** द्वादश सर्ग,
- राजसूय यज्ञ वर्णन, तथा ब्राह्मणादक्षिणा वर्णन- **चतुर्दश सर्ग,**
- युद्ध वर्णन- **अष्टादश सर्ग,**
- शिशुपाल वध- **विंश सर्ग ।**

शिशुपालवधम् प्रथम सर्ग के मुख्य सन्दर्भ-

- वसुदेव के घर का विशेषण- **'श्रीमति शासितुं जगत्'** ।
- जगन्निवासः वसुदेवसद्मनि देवता- **लक्ष्मी,**
- **श्री शब्द** से मंगलाचरण किया है तथा प्रत्येक सर्ग के अन्तिम श्लोकों में श्री शब्द का प्रयोग किया है।
- नारद का 7 श्लोकों में वर्णन,
- नारद की वीणा- **महती,**
- नारद का सादृश्य दिखाया गया है- **शिव, हिमालय, बलभद्र, शरद् मेघ, ऐरावत,** से।
- पुराणों के अनुसार वैकुण्ठ के द्वारपाल 'जय' और 'विजय' को शापवश राक्षस होना पड़ा। जिससे तीन जन्मों तक वे विभिन्न रूपों में उत्पन्न हुए-

  प्रथम जन्म - 'हिरण्यकशिपु' तथा **'हिरण्याक्ष'**।

  द्वितीय जन्म- 'रावण' तथा **'कुम्भकर्ण'**।

  तृतीय जन्म - 'शिशुपाल' तथा **'दन्तवक्र'**।
- **हिरण्यकशिपु'** - दिति का पुत्र जिसने देवताओं के मन में भय उत्पन्न किया।
- इसमें रावण की- कुबेरविजय, वरुणविजय, यमविजय, सूर्यविजय, चन्द्रविजय, गणेशविजय, अग्निविजय, वायुवशीकार, नागलोकविजय, दिग्विजय,सकलभुवनविजय, सुराङ्गना विलास, कालविजय,वर्णित है।
- शिशुपालवधम् के द्वितीय सर्ग का नाम है- **मन्त्रावर्णनात्मक।**
- शिशुपालवधम् के प्रथम सर्ग का 75 वाँ अन्तिम श्लोक **'शार्दूलविक्रीडितम्'** छन्द में है।
- शिशुपालवधम् के प्रथम सर्ग का 74 वाँ श्लोक पुष्पिताग्रा छन्द में है ।

शिशुपालवधम् में सर्गों के विशिष्ट सन्दर्भ-

❖ **प्रथम सर्ग-** का आरम्भ देवर्षि नारद के आगमन से होता है। वे पृथ्वी पर कृष्ण से मिलने आते हैं। उनको आता देख कृष्ण उनसे आने का कारण पूछते नारद बताते हैं कि शिशुपाल के अत्याचार से डरे इन्द्र ने उन्हें भेजा है। कृष्ण उसका वध करें और इन्द्र के हृदय को भयरहित बनाकर उसे आमोद-प्रमोद से उल्लसित बनाएँ। नारद चले जाते हैं।

❖ **द्वितीय सर्ग** - कृष्ण, बलराम और उद्धव मन्त्रणागृह में बैठकर विचार-विमर्श करते हैं।

❖ **तृतीय सर्ग/चतुर्थ सर्ग** - पर्वत का अलंकृतवर्णन है। कृष्ण की सेना इन्द्रप्रस्थ के लिए रवाना होती है।

❖ **पञ्चम सर्ग** - सेना के रैवतक पर्वत पर पड़ाव डालने का वर्णन है।

❖ **षष्ठ सर्ग** - कृष्ण की सेवा के लिए छ:वों ऋतुएँ रैवतक पर्वत पर अवतीर्ण होती हैं।

❖ **सप्तम सर्ग** - यदुदम्पतियों का विलासपूर्ण वनविहार वर्णित है।

❖ **अष्टम सर्ग में-** जलक्रीडा।

❖ **नवम् सर्ग** - दूतीकर्म, आहार्य-प्रस्थापन की शोभा आदि का वर्णन है।

❖ **दशम् सर्ग-** सुरा-सुन्दरी के सेवन का विलासपूर्ण वर्णन है।

❖ **एकादश सर्ग** - प्रात:काल का वर्णन है।

❖ **द्वादश सर्ग** -सेनाप्रवाण का वर्णन है।

❖ **त्रयोदश सर्ग** - इन्द्रप्रस्थ की पुरनारियों का वर्णन है।

❖ **चतुर्दश सर्ग** – यज्ञ का वर्णन है और इसी सर्ग में कृष्ण की पूजा की जाती है।

❖ **पंचदश सर्ग** - शिशुपाल कृष्ण की पूजा का विरोध करता है।

❖ **षोडश सर्ग** - शिशुपाल का दूत आकर कृष्ण को सन्देश सुनाता है कि या तो वह शिशुपाल की अधीनता मानें या युद्ध के लिये तैयार हो जाएँ।

❖ **सप्तदश, अष्टावश सर्ग-** सेना की तैयारी

❖ **नवदश एवं विशति सर्ग** -युद्ध का वर्णन हे और अन्त में श्रीकृष्ण अपने सुदर्शन चक्र से उसका सिर काट देते हैं एवं उसका तेज श्रीकृष्ण में विलीन होने के साथ काव्य समाप्त होता है।

प्रथम सर्ग के प्रमुख शब्दार्थ-

हिरण्यगर्भाङ्गभुवं मुनिम्- नारद, **शितिवास/नीलाम्बर/बलभद्र-** बलराम, **अर्जुनच्छवि-** धवलकान्ति(नारद), **विहङ्गराजा-** गरुड़, **चमूरु-** मृगचर्म से युक्त (नारद), **उपेन्द्र-** कृष्ण, **एणाजिन-** मृगचर्म, **अनूरसारथि-** सूर्य, **नभःसदः-** देव, **धाम-** तेज, **चमरी-** मृगी, **अर्जुनच्छवि-** धवलकान्ति/गौरवर्ण(नारद), **व्रततीततीः-** लतासमूह, **धातु-** ब्रह्मा, **नुमचिद्विष-** इन्द्र, **शार्ङ्गिण-** कृष्ण, **धराधरेन्द्र-** हिमालय, **अञ्जनद्युति-** काले वर्ण की (नारद की मृगचर्म), **प्रवाल-** मूँगा, **अजस्रम्-** निरन्तर, **नभस्वतः-** पवन, **आघट्टनया-** आघात से, **अतीन्द्रियज्ञाननिधि-** नारद,

सादित्यदेत्यसम्पदः- कृष्ण, **चक्रिण**- कृष्ण, **धातु**- ब्रह्मा, **धातुसुत**- नारद, **आदिपुरुष**- कृष्ण, **चिरन्तनमुनि**(पुराणमुनि)- कृष्ण, **तुषाराञ्जनपर्वत**- नारद और कृष्ण, **महानीलशिला**- इन्द्रनीलमणि, **यज्वनां प्रिय**- कृष्ण, **नवाम्बुदश्यामतनुः**- कृष्ण, **कार्त्तस्वर**- सुवर्ण, **रथाङ्गपाणि**- कृष्ण, **तुषारमूर्ति**- चन्द्रमा, सप्तच्छद- वृक्ष(प्रत्येक गुच्छ में सात पत्र होने से), **तापिच्छ**- तमालपुष्प, **पुण्डरीक**- श्वेतकमल **"पुण्डरीकं सिताम्भोजं"**, **निदाधधामानम्**- सूर्य, **प्रजासृजा**- ब्रह्मा, **श्रुतीनां निधिः**- नारद, **व्रती**- नारद, **जगत्त्र्यैकस्थपति**- तीनों लोकों के एकमात्र शिल्पी(कृष्ण), **पुराणमूर्ति**- कृष्ण, **त्रिदिवादवातरः**- कृष्ण, **अहिद्विषः**- इन्द्र, **तपनद्युतिः**- सूर्य के समान तेज वाला(हिरण्यकशिपु), **कञ्चुकाः**- कवचः, **त्रिदशैः**- देव, **शूलिन**- शिव, **तुषाराद्रिसुता**- पार्वती, **नुमचिद्विष**- इन्द्र, **बलस्य शत्रु**- इन्द्र, **अभ्रमोः भर्तु**- एरावत हाथी, **उच्चैः श्रवस**- उच्चैश्रवा नामक घोड़ा, **कौशिक**- इन्द्र/उल्लू, **हेमाद्रि**- सुमेरु पर्वत, **अधिकन्धरम्**- कण्ठ, **मनुष्यधर्मण**- कुबेर, **प्रचेतस**- वरुण, **उगराजरज्ञवः**-नागपाश, **परेतभर्तुः**- यमराज, **अहस्करः**- सूर्य, **तनूनपात**- अग्नि, **आधिज**- मानसिक व्यथा, **अघर्मघर्मोदक**- शीतल स्वेद, **प्रसूनक्लृप्तिम्**- पुष्पसम्पत्ति, **शैलूष**- नट, **कीनाशनि**- यमराज, **शार्ङ्गिण**- कृष्ण(शार्ङ्ग धनुष), **द्युसदाम्**-देवता, **कञ्चुकाः**- कवच, **विभिन्नशङ्ख**- शङ्ख नामक निधि, **पटीयसी**- समर्थतर (जल के अर्थ में), **पटीयसा**- अत्यन्त चतुर, **समत्सरेण**- दूसरों के शुभ क द्वेषी, **अस्वास्थ्यम्**- उपद्रव, **अधीरलोचनः**- इन्द्र।

शिशुपालवधम् प्रथम सर्ग की प्रमुख सूक्तियाँ-

- ➢ गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः प्रसिद्धमूर्ध्वं ज्वलनम् हविर्भुजः ।(2)
- ❖ नारद का शिवसादृश्य-
  नवानधोऽधो बृहतः पयोधरान् समूढ-कपूर-पराग-पाण्डुरम्।
  क्षणक्षणोत्क्षिप्त-गजेन्द्र-कृत्तिना स्फुटोपमं भूतिसितेन शम्भुना।।(4)
- ❖ **नारद का बलराम सादृश्य-**
  पिशङ्गमौञ्जीयुजमर्जुनच्छविं वसानमेणाजिनमञ्जनद्युति।
- ➢ सुवर्णसूत्राकलिताधराम्बरां विडम्बयन्तं शितिवाससस्तनुम्।
  (6) **शितिवास**- बलभद्र,
- ➢ पदं महेन्द्रालयचारु चक्रिणः।। (11)
- ❖ **नारद पूजन-**
  गृहानुपेतं प्रणयादभीप्सवो भवन्ति नापुण्यकृतां मनीषिणः।
  (14) (नारद)
- ❖ **श्रीकृष्णस्य पुरो नारदस्य चन्द्रसाम्यं-**
  महामहानीलशिलारुचः पुरो निषेदिवान् कंसकृषः स विष्टरे।
  श्रितोदयाद्रेरभिसायमुच्चकैरचूचुरच्चन्द्रमसोऽभिरामताम्।। (16)
- ➢ गृहीतुमार्यान् परिचर्यया मुहुर्महानुभावा हि नितान्तमर्थिनः।।
  (17)
- ❖ **श्रीकृष्ण समुद्रसादृश्य -**
  स तत्पकार्तस्वरभास्वराम्बरः कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः।
  विदिद्युते वाडवजातवेदसः शिखाभिराश्लिष्ट इवाम्भसां निधिः।।
  (20) **कार्तस्वर** - 'सुवर्ण'
- ❖ **श्रीकृष्णकृतां नारदप्रशंसा-**
  हरत्ययं सम्प्रति हेतुरेष्यतः शुभस्य पूर्वाचरितैः कृतं शुभैः।
  शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्ति कालत्रितयेऽपि योग्यताम्।।(26)
- ❖ **नारदस्य सूर्यादाधिक्यं -**
  जगत्यपर्याप्तसहस्रभानुना न यन्नियन्तुं समभावि भानुना।
  प्रसह्य तेजोभिरसंख्यतां गतैरदस्त्वया नुत्तमनुत्तमं तमः।। (27)
- ➢ श्रेयसि केन तृप्यते- **कृष्ण** 29
- ➢ त्वमेव साक्षात्करणीय इत्यतः किमस्ति कार्यं गुरु योगिनामपि।
  (नारद 31)
- ❖ **योगियों के भी कृष्ण साक्षात्करणीय -**
  उदीर्णरागप्रतिरोधकं जनेरभीक्ष्णमक्षुण्णतयाऽतिदुर्गमम्।
  उपेयुषो मोक्षपथं मनस्विनस्त्वमग्रभूमिर्निरपायसंश्रया।। (32)
- ➢ बहिर्विकार प्रकृतेः पृथग्विदुः पुरातनं त्वां पुरुषं पुराविदः।।
  (नारद 33)
- ❖ **कृष्ण महिमा-**
  मनुष्यजन्माऽपि सुराऽसुरान् गुणैर्भवान्भवच्छेदकरैः करोत्यधः। (नारद>कृष्ण 35)
- ➢ लघूकरिष्यन्नतिभारभङ्गुरामम्ं किल त्वं त्रिदिवादवातरः।
  (नारद>कृष्ण 36)
- ❖ **कृष्ण अवतार महिमा-**
  पदं दृशः स्याः कथमीश! मादृशाम्।। (37 नारद)
- ❖ **रात्रि का अन्धकार सूर्य ही दूर कर सकता है-**
  ऋते रवेः क्षालयितुं क्षमेत कः क्षपातमस्काण्डमलीमसं नभः।
  (नारद 38)
- ➢ **करोति कंसादिमहीभृतां वधाज्जनो मृगाणमिव यत्तव स्तवम्।(नारद 39)**
- ❖ **हिरण्यकश्यप वध-**
  स मुग्धकान्तास्तनसङ्गभङ्गुरैरुरोविदारं प्रतिचस्करे नखैः।।
  (नारद>कृष्ण 47)
- ❖ **रावणस्थ स्वर्गलुण्ठनम्-**
  पुरीमवस्कन्द लुनीहि नन्दनं मुषाण रत्नानि हरामराङ्गनाः।(51)
- ❖ **रावणभयात्पलाप्यान्तर्हितस्येन्द्रस्य उलूकसादृश्यमाह-**
  प्रविश्य हेमाद्रिगुहागृहान्तरं निनाय बिभ्यद्दिवसानि कौशिकः।
  (नारद 53) **कौशिक- उल्लू, इन्द्र, हेमाद्रि- सुमेरु पर्वत ।**
- ❖ **विष्णु के चक्र के द्वारा भी रावण की गर्दन पर कोई प्रभाव नहीं हुआ -**

जगत्प्रभोरप्रसहिष्णु वैष्णवं न चक्रमस्याक्रमताधिकन्धरम् । (54)

- ❖ **रावणस्य कुबेरविजय -**
  विभिन्नशङ्खः कलुषीभवन्मुहुर्मदेन दन्तीव मनुष्यधर्मणः।
  (55)**मनुष्यधर्मी**-कुबेर,
- ➢ (54) **पुष्पकविमान**- कुबेर का।,
  इस श्लोकांश में वैष्णव पद प्रयुक्त हुआ है-विष्णु-उपासक को।
- ❖ **रावणस्य वरुणविजय-**
- ➢ रणेषु तस्य प्रहिताः प्रचेतसा सरोषहुङ्कारपराङ्मुखीकृताः ।
  प्रहर्तुरेवोरगराजरज्जवो जवेन कण्ठं सभयं प्रपेदिरे ॥ 56 ॥
- ❖ **रावणस्य यममहिषविजय-**
  हृतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरा दुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः।।
  (57) **भृशानतं**-यम के लिए प्रयुक्त,
- ❖ **रावणस्य कालविजयम् (षड्ऋतुओं द्वारा रावण की सेवा)-**
  तपेन वर्षाः शरदा हिमागमो वसन्तलक्ष्म्या शिशिरः समेत्य च। (65) **तपेन**- ग्रीष्म ऋतु,
- ➢ सदाभिमानैकधना हि मानिनः।(नारद 67-रावण के लिये प्रयुक्त)
- ❖ **शिशुपाल स्वरूप-**
- ➢ स बाल आसीद् वपुषा चतुर्भुजो मुखेन पूर्णेन्दुनिभिस्त्रिलोचनः। (70) **स**- शिशुपाल,
- ➢ सतीव योषित्प्रकृतिः सुनिश्चला पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि। (72)
- ➢ हिरण्यगर्भाङ्गभूः स्वभाव मुनिः- **(नारद)**
- ➢ "निधि श्रुतीनां धनसम्पदामिव" - वेदों का निधि - **नारद।**
- ➢ ''न चक्रमस्याक्रमताधिकन्धरम्'' कस्य...? - **रावणस्य।**
- ❖ **रावण का तप शौर्य वर्णन-**
- ➢ प्रभुर्बुभूषुर्भुवनत्रयस्य यः शिरोऽतिरागाद् दशमं चिकर्तिषुः। **(49 नारद)**
- ➢ तदेनमुल्लङ्घितशासनं विधेर्विधे हि कीनाशनिकेतनातिथिम्। **(कीनाशनि- यमराज)** (73)

5. नैषधीयचरितम्

परिचय-

महाकवि श्रीहर्ष द्वारा विरचित **नैषधीयचरितम्** एक बहुत बड़ा काव्य है। जिसमें **22 सर्ग** हैं और प्रत्येक सर्ग में सौ से अधिक पद्य है। 18वें और 19वें सर्ग को छोड़कर, जिनमें केवल 56 और 68 पद्य है, बाकी सभी सर्ग बड़े हैं; कई में तो 150 पद्यों के लगभग हैं। महाकाव्य के इस विशाल आलवाल को देखते हुए श्रीहर्ष ने नलचरित से सम्बद्ध जितनी-भी कथा ली है, वह छोटी है। दमयन्ती तथा नल के प्रेम को लेकर उनके विवाह और विवाहोपरान्त क्रीडाओं आदि का वर्णन कर काव्य को समाप्त कर दिया गया है।

॥प्रथमः सर्गः॥

निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां,
तथाद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि ।
नला सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः,
स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः ॥1॥
रसैः कथा यस्य सुधावधीरणी,
नलः स भूजानिरभूद्गुणाद्भुतः ।
सुवर्णदण्डैकसितातपत्रित,
ज्वलत्प्रतापावलिकीर्तिमण्डलः ॥2॥
पवित्रमत्रातनुते जगद्युगे,
स्मृता रसक्षालनयेव यत्कथा ।
कथं न सा मद्गिरमाविलामपि,
स्वसेविनीमेव पवित्रयिष्यति ॥3॥
अधीतिबोधाचरणप्रचारणैः,
दशाश्चतस्रः प्रणयन्नुपाधिभिः ।
चतुर्दशत्वं कृतवान्कृतः स्वयं,
न वेद्मि विद्यासु चतुर्दश स्वयम् ॥4॥
अमुष्य विद्या रसनाग्रनर्तकी,
त्रयीव नीताङ्गगुणेन विस्तरम् ।
अगाहताष्टादशतां जिगीषया,
नवद्वयद्वीपपृथग्जयश्रियाम् ॥5॥
दिगीशवृन्दांशविभूतिरीशिता,
दिशां स कामप्रसरावरोधिनीम् ।
बभार शास्त्राणि दृशं द्वयाधिकां,
निजत्रिनेत्रावतरत्वबोधिकाम् ॥6॥
पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते,
कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे ।
भुवं यदेकाङ्घ्रिकनिष्ठया स्पृशन्,
दधावधर्मोऽपि कृशस्तपस्विताम् ॥7॥
यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः,
स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिम ।
तदेव गत्वा पतितं सुधाम्बुधौ,
दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ ॥8॥
स्फुरद्धनुर्निस्वनतद्घनाशुग,
प्रगल्भवृष्टिव्ययितस्य संगरे ।
निजस्य तेजः शिखिनः परश्शता,
वितेनुरङ्गालमिवायशः परे ॥9॥
अनल्पदग्धारिपुरानलोज्ज्वलैः,
निजप्रतापैर्वलयं ज्वलद्भुवः ।

प्रदक्षिणीकृत्य जयाय सृष्ट्या,
रराज नीराजनया स राजघः ॥10॥
निवारितास्तेन महीतलेऽखिले,
निरीतिभावं गमितेऽतिवृष्टयः ।
न तत्यजुर्नूनमनन्यसंश्रयाः,
प्रतीपभूपालमृगीदृशां दृशः ॥11॥
सितांशुवर्णैर्वयति स्म तद्गुणैः,
महासिवेम्नः सहकृत्वरी बहुम् ।
दिगङ्गनाङ्गाभरणं रणाङ्गणे,
यशः पटं तद्भटचातुरीतुरी ॥12॥
प्रतिपभूपैरिव किं ततो भिया,
विरुद्धधर्मैरपि भेत्तृतोज्झिता ।
अमित्रजिन्मित्रजिदोजसा स यद्,
विचारदृक्चारदृगप्यवर्तत ॥13॥
तदोजसस्तद्यशसः स्थिताविमौ,
वृथेति चित्ते कुरुते यदा यदा ।
तनो ति भानोः परिवेषकैतवात्,
तदा विधिः कुण्डलनां विधोरपि ॥14॥
अयं दरिद्रो भवितेति वैधसीं,
लिपिं ललाटेऽर्थिजनस्य जाग्रतीम् ।
मृषां न चक्रेऽल्पितकल्पपादपः,
प्रणीय दारिद्रदरिद्रतां नलः ॥15॥
विभज्य मेरुर्न यदर्थिसात्कृतो,
न सिन्धुरुत्सर्गजलव्ययैर्मरुः ।
अमानि तत्तेन निजायशोयुगं,
द्विफालबद्धाश्चिकुराः शिरः स्थितम् ॥16॥
अजस्रमभ्यासमुपेयुषा समं,
मुदैव देवः कविना बुधेन च ।
दधौ पटीयान्समयं नयन्नयं,
दिनेश्वरश्रीरुदयं दिने दिने ॥17॥
अधोविधानात्कमलप्रवालयोः,
शिरः सु दानादखिलक्षमाभुजाम् ।
पुरेदमूर्ध्वं भवतीति वेधसा,
पदं किमस्याङ्कितमूर्ध्वरेखया ॥18॥
जगज्जयं तेन च कोशमक्षयं,
प्रणीतवान् शैशवशेषवानयम् ।
सखा रतीशस्य ऋतुर्यथा वनं,
वपुस्तथालिङ्गदथास्य यौवनम् ॥19॥
अधारि पद्मेषु तदङ्घ्रिणा घृणा,
क्व तच्छयच्छायलवोऽपि पल्लवे ।
तदास्यदास्येऽपि गतोऽधिकारितां,
न शारदः पाश्विकशर्वरीश्वरः ॥20॥
किमस्य लोम्नां कपटेन कोटिभिः,
विधिर्न लेखाभिरजीगणद्गुणान् ।
न रोमकूपौघमिषाज्जगत्कृता,
कृताश्च किं दूषणशून्यबिन्दवः ॥21॥
अमुष्य दोर्भ्यामरिदुर्गलुण्ठने,
ध्रुवं गृहीतार्गलदीर्घपीनता ।
उरः श्रिया तत्र च गोपुरस्फुरत्,
कपाटदुर्धर्षतिरः प्रसारिता ॥22॥
स्वकेलिलेशस्मितनिन्दितेन्दुनो,
निजांशदृक्तर्जितपद्मसंपदः ।
अतद्द्वयीजित्वरसुन्दरान्तरे,
न तन्मुखस्य प्रतिमा चराचरे ॥23॥
सरोरुहं तस्य दृशैव निर्जितं,
जिताः स्मितेनैव विधोरपि श्रियः ।
कुतः परं भव्यमहो महीयसी,
तदाननस्योपमितौ दरिद्रता ॥24॥
स्वबालभारस्य तदुत्तमाङ्गजैः,
समं चमर्यैव तुलाभिलाषिणः ।
अनागसे शंसति बालचापलं,
पुनः-पुनः पुच्छविलोलनच्छलात् ॥25॥
महीभृतस्तस्य च मन्मथश्रिया,
निजस्य चित्तस्य च तं प्रतीच्छया ।
द्विधा नृपे तत्र जगत्रयीभुवां,
नतभ्रुवां मन्मथविभ्रमोऽभवत् ॥26॥
निमीलनभ्रंशजुषा दृशा भृशं,
निपीय तं यस्त्रिदशीर्विरर्जितः ।
अमूस्तमभ्यासभरं विवृण्वते,
निमेषनिः स्वैरधुनापि लोचनैः ॥27॥
अदस्तदाकर्णि फलाढ्यजीवितं,
दृशोर्द्वयं नस्तदवीक्षि चाफलम् ।
इति स्म चक्षुः श्रवसां प्रिया नले,
स्तुवन्ति निन्दन्ति हृदातदात्मनः ॥28॥
विलोकयन्तीभिरजस्रभावना,
बलादमुं नेत्रनिमीलनेष्वपि ।
अलम्भि मर्त्याभिरमुष्य दर्शने,
न विघ्नलेशोऽपि निमेषनिर्मितिः ॥29॥
न का निशि स्वप्नगतं ददर्श,
तं जगाद गोत्रस्खलिते च का न तम् ।
तदात्मताध्यातधवा रते च का,
चकार वा न स्वमनोभवोद्भवम् ॥30॥
श्रियास्य योग्याहमिति स्वमीक्षितुं,
करे तमालोक्य सुरूपया धृतः ।

विहाय भैमीमपदर्पया कया,
न दर्पणः श्वासमलीमसः कृतः ॥31॥
यथोह्यमानः खलु भोगभोजिना,
प्रसह्य वैरोचनिजस्य पत्तनम् ।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनो,
नलावरुद्धं वयसैव वेशितः ॥32॥
नृपेऽनुरूपे निजरूपसंपदां,
दिदेश तस्मिन्बहुशः श्रुतिं गते ।
विशिष्य सा भीमनरेन्द्रनन्दना,
मनोभवाज्ञैकवशंवदं मनः ॥33॥
उपासनामेत्य पितुः स्म रज्यते,
दिने दिने सावसरेषु बन्दिनाम् ।
पठत्सु तेषु प्रतिभूपतीनलं,
विनिद्ररोमाजनि शृण्वती नलम् ॥34॥
कथा प्रसङ्गेषु मिथः सखीमुखात्,
तृणेऽपि तन्व्या नलनामनि श्रुते ।
द्रुतं विधूयान्यदभूयतानया,
मुदा तदाकर्णनसज्ञकर्णया ॥35॥
स्मरात्परासोरनिमेषलोचनाद्,
बिभेमि तद्भिन्नमुदाहरेति सा ।
जनेन यूनः स्तुवता तदास्पदे,
निदर्शनं नैषधमभ्यषेचयत् ॥36॥
नलस्य पृष्टा निषधागता गुणान्,
मिषेण दूतद्विजवन्दिचारणाः ।
निपीय तत्कीर्तिकथामथानया,
चिराय तस्थे विमनायमानया ॥37॥
प्रियं प्रियां च त्रिजगज्जयिश्रियौ,
लिखाधिलीलागृहभित्ति कावपि ।
इति स्म सा कारुतरेण लेखितं,
नलस्य च स्वस्य च सख्यमीक्षते ॥38॥
मनोरथेन स्वपतीकृतं नलं,
निशि क्व सा न स्वपती स्म पश्यति ।
अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात्,
करोति सुप्तिर्जनदर्शनातिथिम् ॥39॥
निमीलितादक्षियुगाच्च निद्रया,
हृदोऽपि बाह्येन्द्रियमौनमुद्रितात् ।
अदर्शि संगोप्य कदाप्यवीक्षितो,
रहस्यमस्याः स महन्महीपतिः ॥40॥
अहो अहोभिर्महिमा हिमागमे,
प्यभिप्रपेदे प्रति तां स्मरार्दिताम् ।
तपर्तुपूर्तावपि मेदसां भरा,
विभावरीभिर्बिभरांबभूविरे ॥41॥
स्वकान्तिकीर्तिव्रजमौक्तिकस्रजः,
श्रयन्तमन्तर्घटनागुणश्रियम् ।
कदाचिदस्या युवधैर्यलोपिनं,
नलोऽपि लोकादश्रृणोह्यगुणोत्करम् ॥42॥
तमेव लब्ध्वावसरं ततः स्मरः,
शरीरशोभाजयजातमत्सरः ।
अमोघशक्त्या निजयेन मूर्तया,
तया विनिर्जेतुमियेष नैषधम् ॥43॥
अकारि तेन श्रवणातिथिर्गुणः,
क्षमाभुजा भीमनृपात्मजालयः ।
तदुच्चधैर्यव्ययसंहितेषुणा,
स्मरेण च स्वात्मशरासनाश्रयः ॥44॥
अमुष्य धीरस्य जयाय साहसी,
तदा खलु ज्यां विशिखैः सनाथयन् ।
निमज्जयामास यशांसि संशये,
स्मरस्त्रिलोकीविजयार्जितान्ययि ॥45॥
अनेन भैमीं घटयिष्यतस्तथा,
विधेरवन्ध्येच्छतया व्यलासि तत् ।
अभेदि तत्तादृगनङ्गमार्गणै,
र्यदस्य पौष्पैरपि धैयकञ्चुकम् ॥46॥
किमन्यदद्यापि यदस्त्रतापितः,
पितामहो वारिजमाश्रयत्यहो ।
स्मरं तनुच्छायतया तमात्मनः,
शशाक शङ्के स न लङ्घितुं नलः ॥47॥
उरोभुवा कुम्भयुगेन जृम्भितं,
नवोपहारेण वयः कृतेन किम् ।
त्रपासरिदुर्गमपि प्रतीर्य सा,
नलस्य तन्वी हृदयं विवेश यत् ॥48॥
अपह्नुवानस्य जनाय यन्निजा,
मधीरतामस्य कृतं मनोभुवा ।
अबोधि तज्जागरदुःखसाक्षिणी,
निशा च शय्या च शशाङ्ककोमला ॥49॥
स्मरोपतप्तोऽपि भृशं न स प्रभु,
र्विदर्भराजं तनयामयाचत ।
त्यजन्त्यसूञ्शर्म च मानिनोवरं,
त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम् ॥50॥
मृषाविषादाभिनयादयं क्वचि,
ज्जुगोप निःश्वाससततिं वियोगजाम् ।
विलेपनस्याधिकचन्द्रभागता,
विभावनाच्चापललाप पाण्डुताम् ॥51॥
शशाक निह्नोतुमयेन तत्प्रिया,
मयं बभाषे यदलीकवीक्षिताम् ।

समाज एवालपितासु वैणिके,
मुर्मूर्च्छ यत्पश्चममूर्च्छनासु च ॥52॥
अवाप सापत्रपतां स भूपति,
र्जितेन्द्रियाणां धुरि कीर्तितस्थितिः ।
असंवरे शंबरवैरिविक्रमे,
क्रमेण तत्र स्फुटतामुपेयुषि ॥53॥
अलं नलं रोद्धुममी किलाभवन्
गुणा विवेकप्रमुखा न चापलम् ।
स्मरः स रत्यामनिरुद्धमेव यत्,
सृजत्ययं सर्गनिसर्ग ईदृशः ॥54॥
अनङ्गचिह्नं स विना शशाक नो,
यदासितुं संसदि यत्नवानपि ।
क्षणं तदारामविहारकैतवान्,
निषेवितुं देशमियेष निर्जनम् ॥55॥
अथ श्रिया भर्त्सितमत्स्यकेतनः,
समं वयस्यैः स्वरहस्यवेदिभिः ।
पुरोपकण्ठोपवनं किलेक्षिता
ऽऽदिदेश यानाय निदेशकारिणः ॥56॥
अमी ततस्तस्य विभूषितं सितं,
जवेऽपि मानेऽपि च पौरुषाधिकम् ।
उपाहरन्नश्वमजस्रचञ्चलैः,
खुराञ्चलैः क्षोदितमन्दुरोदरम् ॥57॥
अथान्तरेणावटुगामिनाध्वना,
निशीथिनीनाथमहः सहोदरैः ।
निगालगादेवमणेरिवोत्थितै,
र्विराजितं केसरकेशरश्मिभिः ॥58॥
अजस्रभूमीतटकुट्टनोत्थितै,
रुपास्यमानं चरणेषु रेणुभिः ।
रयप्रकर्षाध्ययनार्थमागतै,
र्जनस्य चेतोभिरिवाणिमाङ्कितैः ॥59॥
चलाचलप्रोथतया महीभृते,
स्ववेगदर्पानिव वक्तुमुत्सुकम् ।
अलं गिरा वेद किलायमाशयं,
स्वयं हयस्येति च मौनमास्थितम् ॥60॥
महारथस्याध्वनि चक्रवर्तिनः,
परानपेक्षोद्वहनाद्यशः सितम् ।
रदावदातांशुमिषादनीदृशां,
हसन्तमन्तर्बलमर्वतां रवेः ॥61॥
सितत्विषश्चञ्चलतामुपेयुषो,
मिषेण पुच्छस्य च केसरस्य च ।
स्फुटं चलच्चामरयुग्मचिह्नितै,
रनिह्नुवानं निजवाजिराजताम् ॥62॥
अपि द्विजिह्वाभ्यवहारपौरुषे,
मुखानुषक्तायतवल्गुवल्गया ।
उपेयिवांसं प्रतिमल्लतां रय,
स्मये जितस्य प्रसभं गरुत्मतः ॥63॥
स सिन्धुजं शीतमहः सहोदरं,
हरन्तमुच्चैः श्रवसः श्रियं हयम् ।
जिताखिलक्ष्माभृदनल्पलोचन,
स्तमारुरोह क्षितिपाकशासनः ॥64॥
निजा मयूखा इव तीक्ष्णदीधितिं,
स्फुटारविन्दाङ्कितपाणिपङ्कजम् ।
तमश्ववारा जवनाश्वयायिनं,
प्रकाशरूपा मनुजेशमन्वयुः ॥65॥
चलन्नलंकृत्य महारयं हयं,
स्ववाहवाहोचितवेषपेशलः ।
प्रमोदनिः स्पन्दतराक्षिपक्ष्मभि,
र्व्यलोकि लोकैर्नगरालयैर्नलः ॥66॥
क्षणादथैष क्षणदापतिप्रभः,
प्रभञ्जनाध्येयजवेन वाजिना ।
सहैव ताभिर्जनदृष्टिवृष्टिभि,
र्बहिः पुरोऽभूत्पुरुहूतपौरुषः ॥67॥
ततः प्रतीच्छ प्रहरेति भाषिणी,
परस्परोल्लासितशल्यपल्लवे ।
मृषामृधं सादिबले कुतूहला,
न्नलस्य नासीरगते वितेनतुः ॥68॥
प्रयातुमस्माकमियं कियत्पदं,
धरा तदम्भोधिरपि स्थलायताम् ।
इतीव वाहैर्निजवेगदर्पितैः,
पयोधिरोधक्षममुद्धतं रजः ॥69॥
हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं,
पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य नः ।
त्रपा हरीणामिति नम्रितानने,
र्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः ॥70॥
चमूचरास्तस्य नृपस्य सादिनो,
जिनोक्तिषु श्राद्धतयेव सैन्धवाः ।
विहारदेशं तमवाप्य मण्डली,
मकारयन् भूरितुरंगमानपि ॥71॥
द्विपद्भिरेवास्य विलङ्घिता दिशो,
यशोभिरेवाब्धिरकारि गोष्पदम् ।
इतीव धारामवधीर्य मण्डली-
क्रियाश्रियाऽमण्डि तुरंगमैः स्थली ॥72॥
अचीकरच्चारु हयेन या भ्रमी,
र्निजातपत्रस्य तलस्थले नलः ।

विहाय भैमीमपदर्पया कया,
न दर्पणः श्वासमलीमसः कृतः ॥31॥
यथोह्यमानः खलु भोगभोजिना,
प्रसह्य वैरोचनिजस्य पत्तनम् ।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनो,
नलावरुद्धं वयसैव वेशितः ॥32॥
नृपेऽनुरूपे निजरूपसंपदां,
दिदेश तस्मिन्बहुशः श्रुतिं गते ।
विशिष्य सा भीमनरेन्द्रनन्दना,
मनोभवाज्ञैकवशंवदं मनः ॥33॥
उपासनामेत्य पितुः स्म रज्यते,
दिने दिने सावसरेषु बन्दिनाम् ।
पठत्सु तेषु प्रतिभूपतीनलं,
विनिद्ररोमाजनि शृण्वती नलम् ॥34॥
कथा प्रसङ्गेषु मिथः सखीमुखात्,
तृणेऽपि तन्व्या नलनामनि श्रुते ।
द्रुतं विधूयान्यदभूयतानया,
मुदा तदाकर्णनसज्ञकर्णया ॥35॥
स्मरात्परासोरनिमेषलोचनाद्,
बिभेमि तद्भिन्नमुदाहरेति सा ।
जनेन यूनः स्तुवता तदास्पदे,
निदर्शनं नैषधमभ्यषेचयत् ॥36॥
नलस्य पृष्टा निषधागता गुणान्,
मिषेण दूतद्विजबन्दिचारणाः ।
निपीय तत्कीर्तिकथामथानया,
चिराय तस्थे विमनायमानया ॥37॥
प्रीयं प्रियां च त्रिजगज्जयिश्रियौ,
लिखाधिलीलागृहभित्ति कावपि ।
इति स्म सा कारुतरेण लेखितं,
नलस्य च स्वस्य च सख्यमीक्षते ॥38॥
मनोरथेन स्वपतीकृतं नलं,
निशि क्व सा न स्वपती स्म पश्यति ।
अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात्,
करोति सुप्तिर्जनदर्शनातिथिम् ॥39॥
निमीलितादक्षियुगाच्च निद्रया,
हृदोऽपि बाह्येन्द्रियमौनमुद्रितात् ।
अदर्शि संगोप्य कदाप्यवीक्षितो,
रहस्यमस्याः स महन्महीपतिः ॥40॥
अहो अहोभिर्महिमा हिमागमे,
प्यभिप्रपेदे प्रति तां स्मरार्दिताम् ।
तपर्तुपूर्तावपि मेदसां भरा,
विभावरीभिर्बिभरांबभूविरे ॥41॥
स्वकान्तिकीर्तिव्रजमौक्तिकस्रजः,
श्रयन्तमन्तर्घटनागुणश्रियम् ।
कदाचिदस्या युवधैर्यलोपिनं,
नलोऽपि लोकादश्रृणोद्गुणोत्करम् ॥42॥
तमेव लब्ध्वावसरं ततः स्मरः,
शरीरशोभाजयजातमत्सरः ।
अमोघशक्त्या निजयेन मूर्तया,
तया विनिर्जेतुमियेष नैषधम् ॥43॥
अकारि तेन श्रवणातिथिर्गुणः,
क्षमाभुजा भीमनृपात्मजालयः ।
तदुद्भधैर्यव्ययसंहितेषुणा,
स्मरेण च स्वात्मशरासनाश्रयः ॥44॥
अमुष्य धीरस्य जयाय साहसी,
तदा खलु ज्यां विशिखैः सनाथयन् ।
निमज्जयामास यशांसि संशये,
स्मरस्त्रिलोकीविजयार्जितान्ययि ॥45॥
अनेन भैमीं घटयिष्यतस्तथा,
विधेरवन्ध्येच्छतया व्यलासि तत् ।
अभेदि तत्तादृगनङ्गमार्गणे,
र्यदस्य पौष्पैरपि धैयकञ्चुकम् ॥46॥
किमन्यदद्यापि यदस्त्रतापितः,
पितामहो वारिजमाश्रयत्यहो ।
स्मरं तनुच्छायतया तमात्मनः,
शशाक शङ्के स न लङ्घितुं नलः ॥47॥
उरोभुवा कुम्भयुगेन जृम्भितं,
नवोपहारेण वयः कृतेन किम् ।
त्रपासरिदुर्गमपि प्रतीर्य सा,
नलस्य तन्वी हृदयं विवेश यत् ॥48॥
अपह्नुवानस्य जनाय यन्निजा,
मधीरतामस्य कृतं मनोभुवा ।
अबोधि तज्जागरदुःखसाक्षिणी,
निशा च शय्या च शशाङ्ककोमला ॥49॥
स्मरोपतप्तोऽपि भृशं न स प्रभु,
र्विदर्भराजं तनयामयाचत ।
त्यजन्त्यसून्शर्म च मानिनोवरं,
त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम् ॥50॥
मृषाविषादाभिनयादयं क्वचि,
ज्जुगोप निःश्वासततिं वियोगजाम् ।
विलेपनस्याधिकचन्द्रभागता,
विभावनाच्चापललाप पाण्डुताम् ॥51॥
शशाक निह्नोतुमयेन तत्प्रिया,
मयं बभाषे यदलीकवीक्षिताम् ।

समाज एवालपितासु वैणिके,
मुमूर्च्छ यत्पञ्चममूर्च्छनासु च ॥52॥
अवाप सापत्रपतां स भूपति,
र्जितेन्द्रियाणां धुरि कीर्तितस्थितिः ।
असंवरे शंबरवैरिविक्रमे,
क्रमेण तत्र स्फुटतामुपेयुषि ॥53॥
अलं नलं रोद्धुममी किलाभवन्
गुणा विवेकप्रमुखा न चापलम् ।
स्मरः स रत्यामनिरुद्धमेव यत्,
सृजत्ययं सर्गनिसर्ग ईदृशः ॥54॥
अनङ्गचिह्नं स विना शशाक नो,
यदासितुं संसदि यत्नवानपि ।
क्षणं तदारामविहारकैतवान्,
निषेवितुं देशमियेष निर्जनम् ॥55॥
अथ श्रिया भर्त्सितमत्स्यकेतनः,
समं वयस्यैः स्वरहस्यवेदिभिः ।
पुरोपकण्ठोपवनं किलेक्षिता
ऽऽदिदेश यानाय निदेशकारिणः ॥56॥
अमी ततस्तस्य विभूषितं सितं,
जवेऽपि मानेऽपि च पौरुषाधिकम् ।
उपाहरन्नश्वमजस्रचञ्चलैः,
खुराञ्चलैः क्षोदितमन्दुरोदरम् ॥57॥
अथान्तरेणावटुगामिनाध्वना,
निशीथिनीनाथमहः सहोदरैः ।
निगालगाद्देवमणेरिवोत्थितै,
र्विराजितं केसरकेशरश्मिभिः ॥58॥
अजस्रभूमीतटकुट्टनोत्थितै,
रुपास्यमानं चरणेषु रेणुभिः ।
रयप्रकर्षाध्ययनार्थमागतै,
र्जनस्य चेतोभिरिवाणिमाङ्कितैः ॥59॥
चलाचलप्रोथतया महीभृते,
स्ववेगदर्पानिव वक्तुमुत्सुकम् ।
अलं गिरा वेद किलायमाशयं,
स्वयं हयस्येति च मौनमास्थितम् ॥60॥
महारथस्याध्वनि चक्रवर्तिनः,
परानपेक्षोद्वहनाद्यशः सितम् ।
रदावदातांशुमिषादनीदृशां,
हसन्तमन्तर्बलमर्वतां रवेः ॥61॥
सितत्विषश्चञ्चलतामुपेयुषो,
मिषेण पुच्छस्य च केसरस्य च ।
स्फुटं चलच्चामरयुग्मचिह्नने,
रनिह्नुवानं निजवाजिराजताम् ॥62॥
अपि द्विजिह्वाभ्यवहारपौरुषे,
मुखानुषक्तायतवल्गुवल्गया ।
उपेयिवांसं प्रतिमल्लतां रय,
स्मये जितस्य प्रसभं गरुत्मतः ॥63॥
स सिन्धुजं शीतमहः सहोदरं,
हरन्तमुच्चैः श्रवसः श्रियं हयम् ।
जिताखिलक्ष्माभृदनल्पलोचन,
स्तमारुरोह क्षितिपाकशासनः ॥64॥
निजा मयूखा इव तीक्ष्णदीधितिं,
स्फुटारविन्दाङ्कितपाणिपङ्कजम् ।
तमश्ववारा जवनाश्वयायिनं,
प्रकाशरूपा मनुजेशमन्वयुः ॥65॥
चलन्नलंकृत्य महारयं हयं,
स्ववाहवाहोचितवेषपेशलः ।
प्रमोदनिः स्पन्दतराक्षिपक्ष्मभि,
र्व्यलोकि लोकैर्नगरालयैर्नलः ॥66॥
क्षणादथैष क्षणदापतिप्रभः,
प्रभञ्जनाध्येयजवेन वाजिना ।
सहैव ताभिर्जनदृष्टिवृष्टिभि,
र्बहिः पुरोऽभूत्पुरुहूतपौरुषः ॥67॥
ततः प्रतीच्छ प्रहरेति भाषिणी,
परस्परोल्लासितशल्यपल्लवे ।
मृषामृघं सादिबले कुतूहला,
न्नलस्य नासीरगते वितेनतुः ॥68॥
प्रयातुमस्माकमियं कियत्पदं,
धरा तदम्भोधिरपि स्थलायताम् ।
इतीव वाहैर्निजवेगदर्पितैः,
पयोधिरोधक्षममुद्धतं रजः ॥69॥
हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं,
पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य नः ।
त्रपा हरीणामिति नम्रिताननै,
र्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः ॥70॥
चमूचरास्तस्य नृपस्य सादिनो,
जिनोक्तिषु श्राद्धतयेव सैन्धवाः ।
विहारदेशं तमवाप्य मण्डली,
मकारयन् भूरितुरंगमानपि ॥71॥
द्विषद्भिरेवास्य विलङ्घिता दिशो,
यशोभिरेवाब्धिरकारि गोष्पदम् ।
इतीव धारामवधीर्य मण्डली-
क्रियाश्रियाऽमण्डि तुरंगमैः स्थली ॥72॥
अचीकरच्चारु हयेन या भ्रमी,
र्निजातपत्रस्य तलस्थले नलः ।

मरुत्किमद्यापि न तासु शिक्षते,
वितत्य वात्यामयचक्रङ्क्रमान् ॥73॥
विवेश गत्वा स विलासकाननं,
ततः क्षणात्क्षोणिपतिर्धृतीच्छया ।
प्रवालरागच्छुरितं सुषुप्सया,
हरिर्धनच्छायमिवार्णसां निधिम् ॥74॥
वनान्तपर्यन्तमुपेत्य सस्पृहं,
क्रमेण तस्मिन्नवतीर्णदृक्पथे ।
न्यवर्ति दृष्टिप्रकरैः पुरौकसा,
मनुव्रजद्बन्धुसमाजबन्धुभिः ॥75॥
ततः प्रसूने च फले च मञ्जुले,
स संमुखस्थाङ्गुलिना जनाधिपः ।
निवेद्यमानं वनपालपाणिना,
व्यालोकयत्काननरामणीयकम् ॥76॥
फलानि पुष्पाणि च पल्लवे करे,
वयोऽतिपातोद्गतवातवेपिते ।
स्थितैः समादाय महर्षिवार्धकाद,
वने तदातिथ्यमशिक्षि शाखिभिः ॥77॥
विनिद्रपत्रालिगतालिकैतवान्,
मृगाङ्कचूडामणिवर्जनार्जितम् ।
दधानमाशासु चरिष्णु दुर्यशः,
स कौतुकी तत्र ददर्श केतकम् ॥78॥
वियोगभाजां हृदि कण्टकैः कटु-
र्निधीयसे कर्णिशरः स्मरेण यत् ।
ततो दुराकर्षतया तदन्तकृद,
विगीयसे मन्मथदेहदाहिना ॥79॥
त्वदग्रसूचीसचिवेन कामिनो-
र्मनोभवः सीव्यति दुर्यशः पटौ ।
स्फुटं स पत्रैः करपत्रमूर्तिभि-
र्वियोगिहृद्दारुणि दारुणायते ॥80॥
धनुर्मधुस्विन्नकरोऽपि भीम,
जापरं परागैस्तव धूलिहस्तयन् ।
प्रसूनधन्वा शरसात्करोति मा,
मिति क्रुधाक्रुश्यत तेन कैतकम् ॥81॥
विदर्भसुभ्रूस्तनतुङ्गताप्तये,
घटानिवापश्यदलं तपस्यतः ।
फलानि धूमस्य धयानधोमुखान्,
स दाडिमे दोहदधूपिनि द्रुमे ॥82॥
वियोगिनीमैक्षत दाडिमीमसौ,
प्रियस्मृतेः स्पष्टमुदीतकण्टकाम् ।
फलस्तनस्थानविदीर्णरागिहृ-
द्विशच्छुकास्यस्मरकिंशुकाशुगाम् ॥83॥
स्मरार्धचन्द्रेषुनिभे क्रशीयसां,
स्फुटं पलाशेऽध्वजुषां पलाशनात् ।
स वृन्तमालोकत खण्डमन्वितं,
वियोगिहृत्खण्डिनि कालखण्डजम् ॥84॥
नवा लता गन्धवहेन चुम्बिता,
करम्बिताङ्गी मकरन्दशीकरैः ।
दृशा नृपेण स्मितशोभिकुड्मला,
दरादराभ्यां दरकम्पिनी पपे ॥85॥
विचिन्वतीः पान्थपतङ्गहिंसनै-
रपुण्यकर्माण्यलिकज्जलच्छलात् ।
व्यलोकयच्चम्पककोरकावलीः,
स शम्बरारेर्बलिदीपिका इव ॥86॥
अमन्यतासौ कुसुमेषुगर्भजं,
परागमन्धंकरणं वियोगिनाम् ।
स्मरेण मुक्तेषु पुरा पुरारये,
तदङ्गभस्मेव शरेषु संगतम् ॥87॥
पिकाद्वने श्रृण्वति भृङ्गहुं कृतै-
र्दशामुदश्चत्करुणं वियोगिनाम् ।
अनास्थया सूनकरप्रसारिणीं,
ददर्श दूनः स्थलपद्मिनीं नलः ॥88॥
रसालसालः समदृश्यतामुना,
स्फुरद्विरेफारवरोषहुंकृतिः ।
समीरलोलैर्मुकुलैर्वियोगिने,
जनाय दित्सन्निव तर्जनाभियम् ॥89॥
दिने दिने त्वं तनुरेधि रेऽधिकं,
पुनः पुनर्मूर्च्छ च मृत्युमृच्छ च ।
इतीव पान्थाञ्शपतः पिकान्द्विजान्,
सखेदमैक्षिष्ट स लोहितेक्षणान् ॥90॥
अलिस्रजा कुड्मलमुच्चशेखरं,
निपीय चाम्पेयमधीरया धिया ।
स धूमकेतुं विषदे वियोगिना,
मुदीतमातङ्कितवानशङ्कत ॥91॥
गलत्परागं भ्रमिभङ्गिभिः पतत्,
प्रसक्तभृङ्गावलि नागकेसरम् ।
स मारनाराचनिघर्षणस्खल-
ज्ज्वलत्कणं शाणमिव व्यलोकयत् ॥92॥
तदङ्गमुद्दिश्य सुगन्धि पातुकाः,
शिलीमुखालीः कुसुमाहुणस्पृशः ।
स्वचापदुर्निर्गतमार्गणभ्रमात्,
स्मरः स्वनन्तीरवलोक्य लज्जितः ॥93॥
मरुल्ललत्पल्लवकण्टकैः क्षतं,
समुच्छलच्चन्दनसारसौरभम् ।

स वारनारीकुचसंचितोपमं,
दर्दश मालूरफलं पचेलिमम् ॥94॥

युवद्वयीचित्तनिमग्नोचित,
प्रसूनशून्येतरगर्भगह्वरम् ।
स्मरेषुधीकृत्य धिया भयान्धसा,
स पाटलायाः स्तवकं प्रकम्पितः ॥95॥

मुनिद्रुमः कोरकितः शितिद्युति-
र्वनेऽमनाऽमन्यत सिंहिकासुतः ।
तमिस्रपक्षत्रुटिकूटभक्षितं,
कलाकलापं किल वैधवं वमन् ॥96॥

पुरा हठाक्षिप्ततुषारपाण्डुर-
च्छदावृतेर्वीरुधि बद्धविभ्रमाः ।
मिलन्निमीलं विदधुर्विलोकिता,
नभस्वतस्तं कुसुमेषु केलयः ॥97॥

गता यदुत्सङ्गतले विशालतां,
द्रुमाः शिरोभिः फलगौरवेण ताम् ।
कथं न धात्रीमति मात्रनामितैः,
स वन्दमानानभिनन्दति स्म तान् ॥98॥

नृपाय तस्मै हिमितं वनानिलैः,
सुधीकृतं पुष्परसैरहर्महः ।
विनिर्मितं केतकरेणुभिः सितं,
वियोगिनेऽदत्त न कौमदीमुदः ॥99॥

वियोगभाजोऽपि नृपस्य पश्यता,
तदेव साक्षादमृतांशुमाननम् ।
पिकेन रोषारुणचक्षुषा मुहुः,
कुहूरुताहूयत चन्द्रवैरिणी ॥100॥

अशोकमर्थान्वितनामताशया,
गतान् शरण्यं गृहशोचिनोऽद्वगान् ।
अमन्यतावन्तमिवेष पल्लवैः,
प्रतीष्टकामज्वलदस्त्रजालकम् ॥101॥

विलास वापीतटवीचिवादनात्,
पिकालिगीतेः शिखिलास्यलाघवात् ।
वनेऽपि तौर्यत्रिकमारराध तं,
क्व भोगमाप्नोति न भाग्यभाग्जनः ॥102॥

तदर्थमध्याप्य जनेन तद्वने,
शुका विमुक्ताः पटवस्तमस्तुवन् ।
स्वरामृतेनोपजगुश्च सारिका-
स्तथैव तत्पौरुषगायनीकृताः ॥103॥

इतीष्टगन्धाढ्यमटन्नसौ वनं,
पिकोपगीतोऽपि शुकस्तुतोऽपि च ।
अविन्दतामोदभरं बहिश्चरं,
विदर्भसुभ्रुविरहेण नान्तरम् ॥104॥

करेण मीनं निजकेतनं दध-
द्रुमालवालाम्बुनिवेशशङ्कया ।
व्यतर्कि सर्वर्तुघने वने मधुं,
स मित्रमत्रानुसरन्निव स्मरः ॥105॥

लताबलालास्यकलागुरुस्तरु,
प्रसूनगन्धोत्करपश्यतोहरः ।
असेवतामुं मधुगन्धवारिणि,
प्रणीतलीलाप्लवनो वनानिलः ॥106॥

अथ स्वमादाय भयेन मन्थ,
नाचिरत्नाधिकमुच्चितं चिरात् ।
निलीय तस्मिन्निव सन्नपांनिधि,
र्वने तडाको ददृशेऽवनीभुजा ॥107॥

पयोनिलीनाभ्रमुकामुकावली-
रदाननन्तोरगपुच्छसुच्छवीन् ।
जलार्धरुद्धस्य तटान्तभूमिदो,
मृणालजालस्य निभाद्बभार यः ॥108॥

तटान्तविश्रान्ततुरंगमच्छटा,
स्फुटानुविम्बोदयचुम्बनेन यः ।
बभौ चलद्वीचिकशान्तशातनैः,
सहस्रमुच्चैः श्रवसामिवाश्रयन् ॥109॥

सिताम्बुजानां निवहस्य यश्छलाद्-
बभावलिश्यामलितोदरश्रियाम् ।
तमः समच्छायकलङ्कसंकुलं,
कुलं सुधांशोर्बहलं वहन्वहु ॥110॥

रथाङ्गभाजा कमलानुषङ्गिणा,
शिलीमुखस्तोमसखेन शार्ङ्गिणा ।
सरोजिनीस्तम्बकदम्बकैतवान्,
मृणालशेषाहिभुवान्वयायि यः ॥111॥

तरङ्गिणीरङ्कजुषः स्ववल्लभा,
स्तरङ्गरेखा बिभरांबभूव यः ।
दरोद्गतैः कोकनदौघकोरकै,
धृतप्रवालाङ्कुरसंचयश्च यः ॥112॥

महीयसः पङ्कजमण्डलस्य य-
श्छलेन गौरस्य च मेचकस्य च ।
नलेन मेने सलिले निलीनयो,
स्त्विषं विमुश्चन्विधुकालकूटयोः ॥113॥

चलीकृता यत्र तरङ्गरिङ्गणै-
रबालशैवाललतापरम्पराः ।
ध्रुवं दधुर्वाडवहव्यवाडव,
स्थितिप्ररोहत्तमभूमधूमताम् ॥114॥

प्रकाममादित्यमवाप्य कण्टकैः,
करम्बितामोदभरं विवृण्वती ।

धृतस्फुटश्रीगृहविग्रहा दिवा,
सरोजिनी यत्प्रभवाप्सरायिता ॥115॥
यदम्बुपूरप्रतिविम्बितायति-
र्मरुत्तरङ्गैस्तरलस्तटद्रुमः ।
निमज्य मैनाकमहीभृतः सत-
स्ततान पक्षान्धुवतः सपक्षताम् ॥116॥
पयोधिलक्ष्मीमुषि केलिपल्वले,
रिरंसुहंसीकलनादसादरम् ।
स तत्र चित्रं विचरन्तमन्तिके,
हिरण्मयं हंसमबोधि नैषधः ॥117॥
प्रियासु बालासु रतिक्षमासु च,
द्विपत्रितं पल्लवितं च बिभ्रतम् ।
स्मरार्जितं रागमहीरुहाङ्कुरं,
मिषेण चञ्च्वोश्चरणद्वयस्य च ॥118॥
महीमहेन्द्रस्तमवेक्ष्य स क्षणं,
शकुन्तमेकान्तमनोविनोनदिम् ।
प्रियावियोगाद्विधुरोऽपि निर्भरं,
कुतूहलाक्रान्तमना मनागभूत् ॥119॥
अवश्यभव्येष्वनवग्रहग्रहा,
यया दिशा धावति वेधसः स्पृहा ।
तृणेन वात्येव तयानुगम्यते,
जनस्य चित्तेन भृशावशात्मना ॥120॥
अथावलम्ब्य क्षणमेकपादिकां,
तदा निदद्रावुपपल्वलं खगः ।
स तिर्यगावर्जितकंधरः शिरः,
पिधाय पक्षेण रति क्लमालसः ॥121॥
सनालमात्माननिर्जितप्रभं,
ह्रिया नतं काञ्चनमम्बुजन्म किम् ।
अबुद्ध तं विद्रुमदण्डमण्डितं,
स पीत मम्भः प्रभुचामरं च किम् ॥122॥
कृतावरोहस्य हयादुपानहौ,
ततः पदे रेजतुरस्य बिभ्रती ।
तयोः प्रवालैर्वनयोस्तथाम्बुजे,
र्नियोद्धुकामे किमु बद्धवर्मणी ॥123॥
विधाय मूर्तिं कपटेन वामनीं,
स्वयं बलिध्वंसिविडम्बिनीमयम् ।
उपेतपार्श्वश्चरणेन मौनिना,
नृपः पतङ्गं समधत्त पाणिना ॥124॥
तदात्तमात्मानमवेत्य संभ्रमात्,
पुनः पुनः प्रायसदुत्प्लवाय सः ।
गतो विरुत्योड्डयने निराशतां,
करौ निरोद्धुर्दशति स्म केवलम् ॥125॥
ससंभ्रमोत्पातिपतत्कुलाऽऽकुलं,
सरः प्रपद्योत्कतयाऽनुकम्प्रताम् ।
तमूर्मिलोलैः पतगग्रहान्नृपं,
न्यवारयद्वारिरुहैः करैरिव ॥126॥
पतत्रिणा तद्रुचिरेण वञ्चितं,
श्रियः प्रयान्त्याः प्रविहाय पल्वलम् ।
चलत्पदाम्भोरुहनूपुरोपमा,
चुकूज कूले कलहंसमण्डली ॥127॥
न वासयोग्या वसुधेयमीदृश-
स्त्वमङ्ग ! यस्याः पतिरुज्झितस्थितिः ।
इति प्रहाय क्षितिमाश्रिता नभः,
खगास्तमाचुकुशुरारवैः खलु ॥128॥
न जातरूपच्छदजातरूपता,
द्विजस्य दृष्टेयमिति स्तुवन्मुहुः ।
अवादि तेनाथ स मानसौकसा,
जनाधिनाथः करपञ्जरस्पृशा ॥129॥
धिगस्तु तृष्णातरलं भवन्मनः,
समीक्ष्य पक्षान्मम हेमजन्मनः ।
तवार्णवस्येव तुषारशीकरै-
र्भवेदमीभिः कमलोदयः कियान् ॥130॥
न केवलं प्राणिवधो वधो मम,
त्वदीक्षणाद्विश्वसितान्तरात्मनः ।
विगर्हितं धर्मधनैर्निबर्हणं,
विशिष्य विश्वासजुषां द्विषामपि ॥131॥
पदे पदे सन्ति भटा रणोद्भटा,
न तेषु हिंसारस एष पूर्यते ।
धिगीदृशं ते नृपते ! कुविक्रमं,
कृपाश्रये यः कृपणे पतत्रिणि ॥132॥
फलेन मूलेन च वारिभूरुहां,
मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः ।
त्वयाद्य तस्मिन्नपि दण्डधारिणा,
कथं न पत्या धरणी हृणीयते ॥133॥
इतीदृशैस्तं विरचय्य वाङ्मयैः,
सचित्रवैलक्ष्यकृपं नृपं खगः ।
दयासमुद्रे स तदाशयेऽतिथी,
चकार कारुण्यरसापगा गिरः ॥134॥
मदेकपुत्रा जननी जरातुरा,
नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दय-
न्नहो विधे ! त्वां करुणा रुणद्धि न ॥135॥
मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दया,
सखाः सखायः स्रवदश्रवो मम ।

निवृत्तिमेष्यन्ति परं दुरुत्तर,
स्त्वयैव मातः ! सुतशोकसागरः ॥136॥

मदर्थसंदेशमृणालमन्थरः,
प्रियः कियद्दूर इति त्वयोदिते ।
विलोकयन्त्या रुदतोऽथ पक्षिणः,
प्रिये ! स कीदृग्भविता तव क्षणः ॥137॥

कथं विधातर्मयि पाणिपङ्कजा-
त्तव प्रियाशैत्यमृदुत्वशिल्पिनः ।
वियोक्ष्यसे वल्लभयेति निर्गता,
लिपिर्ललाटन्तपनिष्ठुराक्षरा ॥138॥

अयि !स्वयूथ्यैरशनिक्षतोपमं,
ममाद्य वृत्तान्तमिमं बतोदिता ।
मुखानि लोलाक्षि ! दिशामसंशयं,
दशापि शून्यानि विलोकयिष्यसि ॥139॥

ममैव शोकेन विदीर्णवक्षसा,
त्वया विचित्राङ्गि ! विपद्यते यदि ।
तदास्मि दैवेन हतोऽपि हा हतः,
स्फुटं यतस्ते शिशवः परासवः ॥140॥

तवापि हा हा विरहात्क्षुधाकुलाः,
कुलायकूलेषु विलुठ्य तेषु ते ।
चिरेण लब्धा वहुभिर्मनोरथै,
र्गताः क्षणेनास्फुटितेक्षणा मम ॥141॥

सुताः ! कमाहूय चिराय चुंकृतै,
र्विधाय कम्प्राणि मुखानि कं प्रति ।
कथासु शिष्यध्वमिति प्रमील्य सः,
स्रुतस्य सेकाद्बुबुधे नृपाश्रुणः ॥142॥

इत्थममुं विलपन्तममुञ्च-
द्दीनदयालुतयावनिपालः ।
रुपमदर्शि धृतोऽसि यदर्थं,
गच्छ यथेच्छमथेत्यभिधाय ॥143॥

आनन्दजाश्रुभिरनुस्त्रियमाणमार्गान्,
प्राक्शोकनिर्गमितनेत्रपयः प्रवाहान् ।
चक्रे स चक्रनिभचङ्क्रमणच्छलेन,
नीराजनां जनयतां निजवान्धवानाम् ॥144॥

श्रीहर्षं कविराजराजिमुकुटालंकारहीरः सुतं,
श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम् ।
तच्चिन्तामणिमन्त्रचिन्तनफले श्रृङ्गारभङ्ग्या महा,
काव्ये चारुणि नैषधीयचरिते सर्गोऽयमादिर्गतः ॥145॥

नैषधीयचरितम् के प्रमुख अंश-

॥मङ्गलाचरण॥ (वस्तुनिर्देशात्मक)

"निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां
तथाद्रियन्ते न बुध स्सुधामपि
नलस्सितच्छत्रितकीर्तिमण्डलः,
स राशिरासीन्महसां महोज्ज्वलः"॥

पृथ्वीपालक, जिस राजा नल की, कथा को भली भाँति आस्वादनकर, तथा उस राजा नल से अथवा उसके जीवनवृत्त से भली भाँति परिचित विद्वज्जन अथवा देवगण, अमृत का भी उतना आदर नहीं करते हैं जितना कि इस राजा नल की कथा का आदर करते हैं। क्योंकि वह राजा नल अपने यश समूह को श्वेतछत्र बनाए हुए सूर्य के सदृश महान तेजस्वी था।

अङ्कार	-	व्यतिरेक
छन्द	-	**वंशस्थ**
लेखक	-	श्रीहर्ष,
सर्ग	-	22,
श्लोक	-	2828\30,
प्रथम सर्ग श्लोक	-	145
काव्यविधा	-	महाकाव्य,
उपजीव्य काव्य	-	महाभारत(वनपर्व-नलोपाख्यान),
नायक	-	राजा नल,
नायिका	-	दमयन्ती,परकीया,विवाहोपरान्तस्वीया,
प्रतिनायक	-	मुख्यरूप से कलि,इन्द्र,यम,अग्नि,वरुण
अंगी रस	-	श्रृंगार,
अंग रस	-	करुणादि,
स्थायीभाव	-	रति,
रीति	-	वैदर्भी,
गुण	-	प्रसाद,
शैली	-	वैदर्भी शैली

नैषधीयचरितम् प्रथम सर्ग के मुख्य सन्दर्भ-

- **ग्रन्थकार-** श्रीहर्ष
- **समय-** 12 वीं शताब्दी उत्तरार्ध,
- **विशेष** - नल-दमयन्ती का प्रणय वर्णन
- **हर्ष के पिता-** श्रीहीर, **माता-** मामल्लदेवी,
- मल्लिनाथ की टीका- **जीवातु,**
- नारायण पण्डित की टीका- **प्रकाश,**
- 'निसृष्टार्थ दूत'- **हंस,**
- काव्यं नवं नैषधम्- चाण्डुपण्डित,
- नल दमयन्ती की कहानी सुधीवरणी ही नहीं कलिनाशिनि भी है।
- यह कथा ''कथासरित्सागर'' में भी मिलती है।

- **विदर्भ नरेश-** दमयन्ति के पिता की भूमिका में है।
- **प्रथम सर्ग** के आरम्भ में 30 श्लोकों में नल के गुणों का वर्णन।
- प्रथम सर्ग में 7 श्लोकों में श्वेत वर्ण के अश्व का वर्णन है।
- **अश्व देवमणि** - भौंरी
- नैषधीयचरितम् के प्रथम सर्ग का (144) वां श्लोक- **वसन्ततिलक** छन्द में, तथा अन्तिम श्लोक- **शार्दूलविक्रीडितम्** में हैं।
- राजा नल ने अपने सिर पर विभक्त दो भागों में अपने केश समूहों को अपने दो अपयशों के रूप में माना।
- नल के दो अपयश सम्बन्धित थे- **1. मेरुपपर्वत, 2. समुद्र**,से।
- निद्रा ने दमयन्ती को राजा नल का दर्शन कराया था।
- कामदेव ने दमयन्ती के द्वारा राजा नल पर विजय प्राप्त करने की इच्छा की।
- नल को घोड़े पर जाते हुए लोगों ने **''निर्निमेषदृष्टि''** से देखा।
- नगर के बाहर पहुंचने पर राजा नल के घुड़सवारों ने 'कृत्रिम युद्ध का प्रदर्शन किया।
- उपवन में प्रवेश करने पर राजा ने भ्रमरों से युक्त **''केतकी''** के पुष्प को देखा। और फिर उसकी निन्दा करते हैं। उसके बाद अनार के वृक्ष को देखकर उसके फल की तुलना दमयन्ती से करते हैं।
- नल ने अनार के वृक्ष को **''वियोगिनी''** के रूप में देखा।
- लता को ''भय तथा अनादर'' की दृष्टि से देखा।
- नल ने पुष्पों के पराग को शिव के शरीर पर लगी भस्म समझा।
- राजा ने 'चम्पकपुष्प' को 'धूमकेतु' समझा।
- **प्रथम सर्ग-** नल के घोड़े का वर्णन।
- **तृतीय सर्ग-** हंस द्वारा नल की विरहावस्था का वर्णन।
- **चतुर्थ सर्ग-** दमयन्ती की विरहावस्था का वर्णन।
- **षष्ठ सर्ग-** नल की जितेन्द्रियता का वर्णन।
- **सप्तम् सर्ग-** दमयन्ती के अंग प्रत्यंगों में नल का दृष्टिपात
- **दशम सर्ग-** दमयन्ती स्वयंवर।

नैषधीयचरितम् में सर्गों के विशिष्ट सन्दर्भ -

प्रथम सर्ग में - नल का वनविहार वर्णित है। **द्वितीय सर्ग में -** हंस के द्वारा दमयन्ती के सौन्दर्य का वर्णन तथा नल के कहने पर कुण्डिनपुरी जाने का उल्लेख है। **तृतीय सर्ग में -** हंस दयमन्ती के पास जाकर उसे नल के प्रति अनुरक्त बना देता है। **चतुर्थ सर्ग में** - दमयन्ती के नलगुणश्रवण-जनित पूर्वरागसूचक वियोग की दशा का ऊहोक्तिमय वर्णन है। **पञ्चम सर्ग -** इन्द्र, अग्नि, वरुण और यम नल को दमयन्ती के पास दूत बनाकर भेजते हैं। **षष्ठ, सप्त, अष्ट, नवम सर्ग में -** नल का वहाँ जाने का वर्णन और दमयन्ती का नखशिख- चित्रण है, वह देवताओं के सन्देश को दयमन्ती से कहता है। दमयन्ती नल को छोड़कर उनका वर्णन नहीं करना चाहती। दुःखी दमयन्ती रोने लग जाती है। तब नल प्रकट होकर अपना असली परिचय देता है। **दशम सर्ग में-** स्वयंवर के पहले दमयन्ती के श्रृङ्गार का वर्णन है। एकादश एवं **द्वादश सर्ग में-** सरस्वती के द्वारा स्वयंवर में उपस्थित राजाओं का वर्णन है।**त्रयोदश सर्ग में** - नल का रूप धारण कर आए हुए चारों देवताओं और नल का श्लिष्ट वर्णन है। **चतुर्दश सर्ग में** - दमयन्ती वास्तविक नल का वरण करती है। **पंचदश सर्ग में-** विवाह के पूर्व वर-वधू के आहार्य- प्रसाधन का वर्णन है। **षोडश सर्ग में** - दोनों के पाणिग्रहण और ज्यौनार का विस्तार से वर्णन है। **सप्तदश सर्ग** - देवता लोग स्वर्ग को जाते समय रास्ते में कलियुग को **अष्टादश सर्ग में-** नल और दमयन्ती के प्रथम समागम का वर्णन है। **नवदश सर्ग में** - प्रातःकाल नल को जगाने के लिए वैतालिकों के गान का वर्णन है। **विंशति, एकविंशति, द्वाविंशति सर्ग में** - राजा-रानी की दैनिक दिनचर्या का वर्णन है, जिसमें देवस्तुति, सूर्योदय और विलासमय चाटूक्तियों के सरस चित्र हैं।

नैषधीयचरितम् प्रथम सर्ग के मुख्य शब्दार्थ-

चक्षुःश्रवसः- नाग, **रतीश/मन्मथ**-कामदेव, **शर्वरीश्वर**-पूर्णिमा का चन्द्र, **मृगीदृश**-शत्रुस्त्री, **नतभ्रुवां**- सुन्दरियां, **भैमी**- दमयन्ती, **पतत्रिणि**- पक्षी **अवनिपाल**- नल।

नैषधीयचरितम् प्रथम सर्ग की प्रमुख सूक्तियाँ-

- ❖ **राजाः नल के शासन में अधर्म भी धार्मिक हो गया था** -
  पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रवेदिरे। (7)
  चार चरण - तप, ज्ञान, यज्ञ, दान। अधर्म की स्थिति - एक चरण थी।
- ➢ यदस्य यात्रासु बलोद्धतं रजः स्फुरत्प्रतापानलधूममञ्जिम्।
  तदेव गत्वा पतितं सुधाम्बुधौ दधाति पङ्कीभवदङ्कतां विधौ। (8)
- ➢ निजप्रतापैर्वलयं ज्वलद् भुवः। (10)
- ❖ **छः प्रकार की (इतियों - विपत्तियों) का वर्णन** -
  प्रतीपभूपालमृगीदृशां दृशः। (11)
- ➢ सितांशुवर्णैर्वयतिस्म तद्गुणैः महासिवेम्नः सहकृत्वरी बहुम् ।
  दिगङ्गनाङ्गाभरणं रणाङ्गणे यशः पटं तद्भटचातुरीतुरी ॥ (12)
  महासिवेम्नः - तलवार = **वेमा**
  भटचातुरी - सैनिक चतुरता = **तुरी**।
- ➢ सखा रतीशस्य ऋतुर्यथा वनं वपुस्तथालिङ्गदथास्य यौवनम् ॥
  (19) **रतीश**- कामदेव।
- ❖ **नल के सौन्दर्य का वर्णन उसके लिए उपमान भी निरर्थक** -
  अधारि पद्मेषु तदङ्घ्रिणा घृणा क्व तच्छयच्छायलवोऽपि पल्लवे।
  अङ्घ्रि- चरण,
- ➢ तदास्यदास्येऽपि गतोऽधिकारितां न शारदः
  पार्श्विकशर्वरीश्वरः।। (20) **शर्वरीश्वरः**-पूर्णिमा का चन्द्र।

➢ स्वकेलिलेशस्मितनिर्जितेन्दुनो निजांशदृक्तर्जितपद्मसम्पदः।
अतद्वयीजित्वरसुन्दरान्तरे न तन्मुखस्य प्रतिमा चराचरे।।(23)

❖ **राजा नल कामदेव के सदृश सुन्दर थे - तीनों लोकों की स्त्रियां उनको चाहती थी।**
महीभृतस्तस्य च मन्मथश्रिया निजस्य चित्तस्य च तं प्रतीच्छया
द्विधा नृपे तत्र जगत्त्रयीभ्रुवां नतभ्रुवां मन्मथविभ्रमोऽभवत्।।
(26) **मन्मथ-** कामदेव,

❖ **दमयन्ती के मन में राजा नल के प्रति स्नेह-**
यथोह्यमानः खलु भोगभोजिना प्रसह्य वेरोचनिजस्य पत्तनम्।
विदर्भजाया मदनस्तथा मनोऽनलावरुद्धं वयसैव वेशितः।।(32)
मदन-कामदेव, **भोगभोजि-** सर्पभक्षी गरुड़,

❖ **दमयन्ती को हेमन्त ऋतु की रात्रियां बड़ी प्रतीत होने लगी थी**
तपर्तुपूर्तावपि मेदसां भरा विभावरीभिर्बिभराबभूविरे।। (41)
तपर्तुपूर्ता-ग्रीष्म ऋतु,

❖ **कामदेव ने तीनों लोकों को जीतने से प्राप्त हुए यश को भी नल से जीतने के लिये सन्देह में डाल दिया –**
निमज्जयामास यशांसि संशये स्मरस्त्रिलोकीविजयार्जितान्यपि।
(45) त्रिलोकविजयी-कामदेव,

❖ दिलीप नल अपने से न्यून कान्ति वाले कामदेव को नहीं लांघ सके -
किमन्यदद्यापि यदस्त्रतापितः पितामहो वारिजमाश्रयत्यहो।
(47) पितामह-ब्रह्मा,

❖ मानी पुरुष सुख का त्याग करते हैं, परन्तु मांगने का कार्य नहीं करते हैं-
त्यजन्त्यसूञ्शर्म च मानिनी वरं
त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्। (50)

❖ दिलीप के द्वारा अपनी पाण्डुता छिपाना-
विलेपनस्याधिकचन्द्रभागताविभावनाच्चापललाप पाण्डुताम्।।
(51)
अश्व वर्णन - राजा नल का अश्व सूर्य के अश्वों से अधिक श्रेयस्कर था।

➢ रदावदातांशुमिषादनीदृशां हसन्तमन्तर्बलमर्वतां रवेः। (61)

❖ **जिस प्रकार सूर्य के साथ किरणें चलती है उसी प्रकार नल के साथ उसके घुड़सवार भी चलते हैं -**

➢ निजा मयूखा इव तीक्ष्णदीधितिं स्फुटारविन्दाङ्कितपाणिपङ्कजम्
तमश्ववारा जवनाश्वयायिनं प्रकाशरूपा मनुजेशमन्वयुः ॥(65)

❖ **नल के घोड़ों का आकाश को लाँघने का विचार -**

➢ हरेर्यदक्रामि पदैककेन खं पदैश्चतुर्भिः क्रमणेऽपि तस्य नः।
त्रया हरीणामिति नम्रितानैर्न्यवर्ति तैरर्धनभः कृतक्रमैः ॥(70)
हरेः-विष्णु, **हरीणाम्-**अश्व,

❖ **राजा नल ने 'विलास' वन में प्रवेश किया था-**
विवेश गत्वा स विलासकाननं ततः क्षणात्क्षोणिपतिर्धृतीच्छया।
प्रवालरागच्छुरितं सुषुप्सया हरिर्धनच्छायमिवार्णसां निधिम्
॥(74)

❖ **पथिकों को कोयलों के द्वारा श्राप -**
दिने दिने त्वं तनुरेधि रेऽधिकं पुनः पुनर्मूर्च्छ च तापमृच्छ च।
इतीव पान्थं शपतःपिकान्द्विजान् सखेदमैक्षिष्ट स लोहितेक्षणान् ॥(90) **पान्थं-** पथिक,

➢ अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात्करोति सुप्तिर्जन दर्शनातिथिम् ।।39॥

❖ **हंस के सुवर्ण पंखों के प्रति लोभी दिलीप नल को धिक्कार वर्णित -**
धिगस्तु तृष्णातरलं भवन्मनः समीक्ष्य पक्षान्मम हेमजन्मनः ।
तवार्णवस्येवतुषारशीकरैर्भवेदमीभिःकमलोदयःक्रियान्॥(130
)
तुषारशीकर- हिम की बूंद,

❖ **राजा द्वारा हंस की प्रशंसा -**
न जातरूपच्छदजातरूपता द्विजस्य दृष्टेयमिति स्तुवन्मुहुः ।
अवादि तेनाथ स मानसौकसा जनाधिनाथः करपञ्जरस्पृशा
॥(129)

❖ **विश्वसनीय की अहिंसा करना निन्दनीय कार्य होता है -**
विगर्हितं धर्मधनैर्निवर्हणं विशिष्य विश्वासजुषां द्विषामपि ॥
(131)॥

➢ फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः ।
त्वयाद्य तस्मिन्नपि दण्डधारिणा कथं न पत्या धरणी हृणीयते
॥(133 हंस)

❖ **हंस के द्वारा भाग्य को उलाहना देना -**

➢ मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ।
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दय न्नहो विधे ! त्वां करुणा रुणद्धि न
॥(135) **वरटा-** पत्नी,

❖ **हंस द्वारा माता को वचन -**

➢ मुहूर्तमात्रं भवनिन्दया दया सखाः सखायः स्रवदश्रवो मम ।
निवृत्तिमेष्यन्ति परं दुरुत्तरस्त्वयैव मातः ! सुतशोकसागरः
॥(136)॥

❖ **पत्नी को लक्षित करके हंस द्वारा उक्ति -**
मदर्थसंदेशमृणालमन्थरः प्रियः कियद्दूर इति त्वयोदिते ।
विलोकयन्त्या रुदतोऽथ पक्षिणः प्रिये ! स कीदृग्भविता तव
क्षणः ॥ (137)

❖ **ब्रह्मा को लक्षित करके हंस द्वारा उक्ति -**
कथं विधातर्मयि पाणिपङ्कजात्तव प्रियाशैत्यमृदुत्वशिल्पिनः ।
वियोक्ष्यसे वल्लभयेति निर्गता लिपिर्ललाटन्तपनिष्ठुराक्षरा ॥
(138)

❖ **हंस पत्नी को लक्षित करके हंस द्वारा उक्ति -**

ममैव शोकेन विदीर्णवक्षसा त्वयाऽपि चित्राङ्गि ! विपद्यते यदि तदास्मि दैवेन हतोऽपि हा हतः स्फुटं यतस्ते शिशवः परासवः ॥ (140)

➢ कथासु शिष्यध्वमिति प्रमील्य सः स्रुतस्य सेकाद्बुबुधे नृपाश्रुणः ॥ (142)

संस्कृत के प्रमुख नाटक-

1. स्वप्नवासवदत्तम्

परिचय-

भास के नाम से जो 13 नाटक प्राप्त हुए हैं, उनमें से **स्वप्नवासवदत्तम्** इतिहास प्रसिद्ध एक उत्कृष्ट नाटक ग्रन्थ है। भास की नाट्यकुशलता का निदर्शन इस ग्रन्थ में होता है। छ. अङ्कों में विभक्त यह नाटक कौशाम्बी के राजा उदयन की कथा पर आधारित है।

कथा सारांश-

❖ **प्रथम अङ्क में-** राजा प्रद्योत के महल से वासवदत्ता को जीत लाने के पश्चात् राजा उदयन कामक्रीड़ा में मग्न हो जाता है जिसके कारण शत्रु 'आरुणि' को आक्रमण करने का अवसर मिल जाता है लेकिन मन्त्री यौगन्धरायण अपनी सूझ-बूझ व राजनीतिक कुशलता से आरुणि को परास्त करने के लिए मगध के राजा 'दर्शक' की सहायता लेता है। वासवदत्ता को धरोहर के रूप में मगध के राजा दर्शक की बहन पद्मावती के पास छोड़ आता है। पद्मावती का वासवदत्ता के साथ राजगृह प्रस्थान का वर्णन भी है।

❖ **द्वितीय अङ्क में-** पद्मावती और वासवदत्ता का सख्य भाव, पद्मावती की उदयन विषयक आसक्ति तथा मगध में उदयन का आगमन, सूप लावण्य के आधार पर दर्शक की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह हो जाता है।

❖ **तृतीय अङ्क में-** विवाह के कारण दुःखित होकर वासवदत्ता का प्रमदवन में जाने का वर्णन है।

❖ **चतुर्थ अङ्क में-** शरद् ऋतु में पद्मावती एवं वासवदत्ता के उद्यान भ्रमण के समय ही उदयन का आगमन, वासवदत्ता का छिपना, विदूषक द्वारा प्रश्न करने पर राजा का दोनों के प्रति प्रेम व्यक्त करना एवं वासवदत्ता की स्मृति में अश्रुपात करना वर्णित है।

❖ **पंचम अङ्क में-** एक दिन देववशात् वासवदत्ता सोए हुए राजा उदयन को पद्मावती समझकर राजा के बगल में लेट जाती है, लेकिन राजा को पहचान करके तुरन्त उठ बैठती है। राजा भी उसी समय स्वप्न में वासवदत्ता को देखता है और उसकी स्मृति ताजी हो जाती है। वासवदत्ता वहाँ से भाग जाती है और उदयन उसका पीछा करता है लेकिन वासवदत्ता अदृश्य हो जाती है।

❖ **षष्ठ अङ्क में-** रानी पदमावती को वासवदत्ता का चित्र देखकर ध्यान आता है कि ऐसे ही रूप रंग वाली एक स्त्री यहाँ रहती है।

॥मङ्गलाचरण॥ (आशीर्वादात्मक)

**"उदयनवेन्दुसवर्णा वासवदत्ताबलौ बलस्य त्वाम्।
पद्मावतीर्णपूर्णौ वसन्तकम्रौ भुजौ पाताम्।।**

तत्काल उदित होने वाले चन्द्रमा के सदृश कान्तिवाली, मदिरापान से आलसी होने वाली, साक्षात् कमल के समान भासमान, वसन्तकाल के सदृश सौन्दर्यपरिपूर्ण बलराम जी की भुजाएँ आपका रक्षण करें।

छन्द	-	आर्या,
स्तुति	-	बलराम की भुजाएं,
लेखक	-	भास,
विधा	-	नाटक,
अङ्क	-	(6)
उपजीव्य	-	गुणाढ्यनिर्मित बृहत्कथा।
नायक	-	उदयन (वत्सदेश का राजा) 'धीरललित'।
नायिका	-	1. वासवदत्ता प्रथमरानी (स्वीया मध्या) 2. पद्मावती दूसरी पत्नी (स्वीया मुग्धा)।
अङ्गीरस	-	वासवदत्ता के साथ - **विप्रलम्भ,** पद्मावती के साथ - **संभोग श्रृंगार।**
अङ्गरस	-	करुण, हास्य वीर आदि,
रीति	-	वैदर्भी,
स्थायीभाव	-	रति,
गुण	-	प्रसाद,
सहाय	-	विदूषकादि।

पात्र परिचय

उदयन - वत्सदेश के राजा।

वासवदत्ता - उज्जयिनी के राजा प्रद्योत की पुत्री (प्रथमरानी।

पद्मावती - मगधराज 'दर्शक' की बहन (उदयन की दूसरी पत्नी)।

यौगन्धरायण - उदयन के मुख्यमन्त्री

रुम्ण्वान् - उदयन के दूसरे मन्त्री (सेनापति भी)

वसन्तक - उदयन के विदूषक (श्रृङ्गारसहायक)॥

ब्रह्मचारी - लावाणक ग्राम के छात्र।

कञ्चुकीय 1- मगध देश के राजप्रसाद में अन्तःपुरके अधिकारी ब्राह्मण।

कञ्चुकीय 2- उज्जयिनी के राजप्रसाद में अन्तःपुर के अधिकारी ब्राह्मण।

संभषक भट - मगधराज के भृत्य।

अवन्तिका – छद्मवेश धारण करने वाली वासवदत्ता।

अङ्गारवती - प्रद्योत की रानी, वासवदत्ता की माता।

तापसी - मगधराज्य के तपोवन में रहनेवाली तपस्विनि।

मधुकरिका,पद्मिनिका- पद्मावती की सहचरियां।

धात्री - पद्मावती की उपमाता।

विजया - वत्सराज की प्रतिहारी।

वसुन्धरा - वासवदत्ता की धात्री।

भास के 13 नाटक-

1. प्रतिमानाटक	2. अभिषेकनाटक
3. बालचरित	4. स्वप्रवासदत्तम्
5. कर्णभार	6. ऊरुभङ्ग
7. प्रतिज्ञायौगन्धरायण	8. दूतघटोत्कच
9. दूतवाक्य	10. मध्यमव्यायोग
11. पञ्चरात्र	12.अविमारक
13. चारुदत्त।	

रामायणमूलक - प्रतिमानाटक, अभिषेक ,

कृष्णकथामूलक - बालचरित ।

महाभारतमूलक- ऊरुभङ्ग, दूतघटोत्कच, दूतवाक्य, कर्णभार, मध्यमव्यायोग, पञ्चरात्र ।

बृहत्कथामूलक- प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्तम्, अविमारक, चारुदत्त।

मुख्य सन्दर्भ-

- 'लावाणकदाहकथा', लावाणकग्राम यह वर्णित है- स्वप्नवासवदत्तम में।
- स्वप्रवासदत्तम का स्वप्न अङ्क - **पञ्चम**।
- भास के समस्त रुपकों में भरतमुनि के 'प्रस्तावना' या 'आमुख' के लिए 'स्थापना' शब्द का प्रयोग किया है।
- चारुदत्त नाटक के आधार पर ही 'शूद्रक' ने 'मृच्छकटिकम' की रचना की है।
- वाक्पतिराज ने 'गऊडवहो' में भास को **'ज्वलमित्र'** कहा है।
- भास के अधिक नाटकों में 'अग्निदाह' का दृश्य मिलता है।

सूक्तियां-

- ➢ कालक्रमेण, जगतः परिवर्तमाना चक्रारपंक्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तिः। (अङ्क-1)
- ➢ दुःखं न्यासस्य लक्षणम्। (अङ्क-1)
- ➢ प्रायेण नरेन्द्र श्रीः सोत्साहैरेव भुज्यते। (अङ्क-6)
- ➢ अनतिक्रमणो हि विधिः। (अङ्क-4)
- ➢ कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले। (अङ्क-6)
- ➢ परस्परगतालोके दृश्यते रूपतुल्यता। (अङ्क-6)
- ➢ स्त्रीस्वभावस्तु कातरः। (अङ्क-4)
- ➢ प्रद्वेषो बहुमानो वा संकल्पादुपजायते। (अङ्क-1)
- ➢ न परुषाश्रमवासिषु प्रयोज्यम्। (अङ्क-1)
- ➢ दुःखं त्यक्तु बद्धमूलोऽनुरागः स्मृत्वा स्मृत्वा याति दुःखं नवत्वम्। (अङ्क-4)
- ➢ स्वप्ने नाटके भर्तृस्नेहात् सा हि दग्धाप्यदग्धा- (ब्रह्मचारी)।
- ➢ अयुक्तं परपुरुषसंकीर्तनम् ।(अङ्क-3)
- ➢ अस्य स्निग्धस्य वर्णस्य विपत्तिर्दारुणा कथम्।(अङ्क-6)
- ➢ अनिर्ज्ञातानि दैवतान्यवधूयन्ते।(अङ्क-1)
- ➢ अहो सदाक्षिण्यस्य जनस्य परिजनोऽपि सदाक्षिण्य एक भवति।(अङ्क-4)
- ➢ आगमप्रधानानानि सुलभपर्यवस्थानानि महापुरुषहृदयानि भवन्ति।(अङ्क-2)
- ➢ गुणानां वा विशालानाम्, सत्काराणां च नित्यशः।
  कर्तारः सुलभा लोके, विज्ञातारस्तु दुर्लभाः।(अङ्क-4)
- ➢ तपोवनानि नामातिथिजनस्य स्वगेहम्।(अङ्क-1)
- ➢ दत्तं वेतनं परिखेदस्य।(अङ्क-4)
- ➢ न परुषाश्रमवासिषु प्रयोज्यम् ।(अङ्क-1)
- ➢ न हि सिद्धवाक्यानुत्क्रम्य गच्छति विधिः सुपरीक्षितानि। (अङ्क-5)
- ➢ सत्कारो हि नाम सत्कारेण प्रतीष्टः प्रीतिमुत्पादयति।(अङ्क-4)
- ➢ सर्वजनमनोभिरामं खुल सौभाग्यं नाम।(अङ्क-2)
- ➢ सर्वजनसाधारणमाश्रमपदं नाम ।(अङ्क-1)
- ➢ सविज्ञानमस्य दर्शनम्।(अङ्क-1)
- ➢ साक्षिमन्न्यासो निर्यातयितव्यः।(अङ्क-6)
- ➢ अतिचिरं कन्दुकेन क्रीडित्वाधिकसंजातरागौ।(अङ्क-2)
- ➢ सुखमर्थोभवेद्दातुं, सुखं प्राणाः सुखं तपः ।(अङ्क-1)

2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्

परिचय- अभिज्ञानशाकुन्तलम् कालिदास की ही नहीं अपितु विश्व साहित्य की अनुपम कृति है।

"काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः तत्र श्लोक-चतुष्टयम् ।।
कालिदास सर्वस्य अभिज्ञानशाकुन्तलम्"।

ये सूक्तियाँ कालिदास के नाटक की महत्ता को प्रतिपादित करती हैं। इस नाटक के सात अङ्कों में पुरुवंशी राजा दुष्यन्त तथा महर्षि कण्व की पालिता पुत्री शकुन्तला की प्रणय, वियोग तथा पुनर्मिलन की कथा वर्णित है। इसकी कथावस्तु **महाभारत के आदिपर्व** में वर्णित **शकुन्तलोपाख्यान** से ली गई है किन्तु कवि ने अपनी **नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा** से इसे सरस और गरिमामय बनाकर प्रस्तुत किया है। इसकी कथावस्तु राजा द्वारा शकुन्तला को दिए गए अभिधान (अँगूठी) के आस-पास चक्कर

काटती है। इसलिए कवि ने इसे शीर्षक अभिज्ञानशाकुन्तलम् से अलंकृत किया है । इसका संक्षेप कथानक निम्नलिखित है ।

कथा सारांश-

प्रथम अङ्क- राजा दुष्यन्त अपने राज्य से शिकार खेलने के लिए वन में जाता है। वन में वह कण्व ऋषि के आश्रम में प्रवेश कर शकुन्तला से मिलता है। राजा अपना परिचय देता है और अपने को धर्माधिकारी बताता है। वह भ्रमर से शकुन्तला की रक्षा करता है और उसके विषय में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेता है कि शकुन्तला विश्वामित्र और मेनका की पुत्री है एवं कण्व द्वारा पालितपोषिता है। दुष्यन्त और शकुन्तला एक-दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं एवं एक-दूसरे के गुणों को पसन्द करते हैं।

द्वितीय अङ्क- राजा दुष्यन्त विदूषक माढव्य से शकुन्तला के विषय में बात करता है और उसके प्रति अपने अनन्य प्रेम को प्रकट करता है। वह विदूषक सहित सेना को वापस राजधानी लौटा देता है।

तृतीय अङ्क- शकुन्तला दुष्यन्त के प्रति आसक्त है और इसी कारण अस्वस्थ भी। वह एक प्रेम-पत्र लिखती है तथा शकुन्तला के अशुभ ग्रहों की शान्ति के लिए सोमतीर्थ यात्रा पर गए कण्व के अभाव में दोनों गन्धर्व विवाह कर लेते हैं।

चतुर्थ अङ्क- राजा दुष्यन्त अपनी राजधानी हस्तिनापुर वापस लौटने से पूर्व शकुन्तला को अभिज्ञान के रूप में अपनी अँगूठी देकर कहता है कि इसमें जितने अक्षर हैं उतने ही दिन से पूर्व में तुम्हें अपने अन्तःपुर में बुला लूगाँ। दुर्वासा ऋषि के आतिथ्य में लापरवाही करने पर वे शकुन्तला को शाप देते हैं कि वह जिसके ख्यालों में खोई हुई है वह इसको भूल जाए। तब शकुन्तला की दोनों सखियों द्वारा क्षमा याचना करने पर दुर्वासा का कहना कि यदि वह कोई स्मरण योग्य चिह्नित वस्तु दिखाएगी तो दुष्यन्त को याद आ जाएगा। महर्षि कण्व तीर्थयात्रा से वापस आते हैं और शकुन्तला को गर्भवती जानकर पतिगृह भेजने की व्यवस्था करते हैं। शकुन्तला वृक्षों, लताओं पशु-पक्षियों मृग-शिशुओं, सखियों और पिता से विदाई लेकर शार्ङ्गरव एवं शारद्वत, गौतमी के साथ हस्तिनापुर जाती है। इस अङ्क में शकुन्तला की विदाई का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया गया है। चतुर्थ अङ्क में शकुन्तला के पिता एव उसकी सखियाँ ही द्रवित नहीं होतीं अपितु आश्रमस्थ प्रकृति, पशु-पक्षी, सभी शकुन्तला पर अत्यधिक अनुराग होने के कारण उसके विरह से उत्पन्न दुःख का अनुभव करते हैं। इसी कारण चतुर्थ अङ्क को सर्वश्रेष्ठ अङ्क माना गया है। चतुर्थ अङ्क में भी विद्वानों ने चार श्लोक सर्वश्रेष्ठ माने हैं। ये चारों ही कण्व ऋषि द्वारा अपनी पालिता पुत्री शकुन्तला की विदाई पर कहे गए है।

1. यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया।
2. पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
3. अस्मान्साधु विचिन्त्य संयमाधनानुच्चैः कुलं चात्मनः ।
4. शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखी वृत्तिं सपत्नी जने।।

इनमें शकुन्तला की विदाई का दृश्य अत्यन्त मार्मिक है। इस प्रकार महाकवि कालिदास कृत यह नाटक एक अनमोल निधि स्वरूप है।

पञ्चम अङ्क- हस्तिनापुर जाते समय शचीतीर्थ में वन्दना करते समय शकुन्तला के हाथ से अँगूठी गिर जाती है जिसको मछली निगल जाती है। शाप के कारण राजा दुष्यन्त राजद्वार पर आई हुई शकुन्तला को नहीं पहचानता है। शार्ङ्गरव व शारद्वत के द्वारा कठोर शब्द प्रयोग करने पर भी राजा को कुछ याद नहीं आता। रोती हुई शकुन्तला को अप्सरा मेनका (उसकी माँ) आकाश की ओर लेकर उड़ जाती है।

षष्ठ अङ्क- शचीतीर्थ में शकुन्तला की गिरी हुई अँगूठी एक मछुआरे(मीनपालक) को मछली के पेट में मिलती है। राजपालक उस मछुआर को पकड़कर राजा दुष्यन्त के समक्ष पेश करते हैं और तब उस अंगूठी को देखकर राजा को सबकुछ याद आ जाता है। राजा पश्चात्ताप करने लगता है। सभी प्रसन्नता के आयोजन समाप्त कर दिए जाते हैं। इन्द्र का सारथि मातलि आकर राजा को सन्देश सुनाता है कि इन्द्र ने राक्षसों के वध के लिए आपको बुलाया है।

सप्तम अङ्क- इन्द्र की सहायता हेतु दुष्यन्त स्वर्ग आता है और असुर विजय के पश्चात वहाँ से वापस आते समय महर्षि मारीच के दर्शनार्थ उनके आश्रम उतरते हैं। वहाँ एक छोटे बालक को देखकर दुष्यन्त के मन में उसके प्रति स्नेह उमड़ता है। दुष्यन्त को पता चलता है कि वह बालक शकुन्तला का पुत्र है। वहाँ शकुन्तला से मिलन हो जाता है तथा महर्षि मारीच समस्त परिस्थितियों को स्पष्ट कर राजा व शकुन्तला को निष्कलंक सिद्ध कर आशीर्वाद देते हैं और इन्द्र के रथ पर दोनों हस्तिनापुर पहुँचते हैं।

नाटक के घटना संयोजन में अपूर्व सौन्दर्य बना रखा है। प्रत्येक घटना स्वाभाविक, सार्थक एवं चातुर्य से पूर्ण है। प्रत्येक वस्तु का वर्णन इतना सूक्ष्म और सजीव है कि वह दृश्य पाठकों के सामने स्वयं उपस्थित हो जाता है। कालिदास की भाषा सरल-सरस, प्रवाहपूर्ण, प्रसादमयी, परिष्कृत और परिमार्जित है। वह मधुर समासरहित, औचित्यपूर्ण, पात्रानुरूप तथा कोमलकान्त पदावली से विभूषित है। कवि ने वैदर्भी रीति को अपनाया है। इनकी शैली में प्रसाद, माधुर्य और ओज तीनों का समन्वय है। अभिज्ञानशाकुन्तलम् का अङ्गीरस श्रृङ्गार है। श्रृङ्गार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों का सुन्दर वर्णन हुआ है। अवसर के अनुरूप अलङ्कारों का प्रयोग किया गया है। कालिदास उपमा के लिए तो प्रसिद्ध हैं ही- **"उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।**

दण्डिनः पदलालित्यम् माघे सन्ति त्रयो गुणाः"।।

प्रमुख विवरण-

॥**मङ्गलाचरण**॥ (आशीर्वादात्मक)

**"या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री।
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः"॥**

भगवान् शिव की प्रथम सृष्टिभूत जलमयी मूर्ति, विधिपूर्वक हुत हवनीय पदार्थों को देवताओं के पास ले जाने वाली अग्निरूपा मूर्ति, यजमान रूपा मूर्ति, काल का विधान करने वाली सूय-चन्द्र रूपिणी दो मूर्तियाँ, आकाशमयी मूर्ति, क्षितिरूपा मूर्ति एवं वायुरूपा मूर्ति इन उपर्युक्त प्रत्यक्ष दृष्ट अष्टमूर्तियों से विशिष्ट अष्टमूर्ति भगवान् शिव (नाटक दर्शनार्थ समुपस्थित) सभ्य सामाजिकों एव नटादिकों का कल्याण करें।

स्तुति - अष्टमूर्ति शिव
लेखक - कालिदास,
विधा - नाटक,
अङ्क - (7),
उपजीव्य - महाभारत (आदिपर्व), शकुन्तलोपाख्यान, पद्मपुराण-स्वर्गखण्ड
प्रधानरस - श्रृङ्गार - (सम्भोग श्रृङ्गार)
रीति - वैदर्भी रीति,
वृत्ति - कैशिकी,
गुण - प्रसाद,
नायक - दुष्यन्त (धीरोदात्त)
नायिका - शकुन्तला (मुग्धा)

॥**पात्र परिचय**॥

दुष्यन्त - राजा
शकुन्तला – दुष्यन्त की प्रेमिका।
माढव्य (विदूषक) -दुष्यन्त का विनोदप्रिय मित्र अभिज्ञानशाकुन्तलम् का विदूषक।
अनुसूया,प्रियंवदा - शकुन्तला की दो सखियां,
मेनका - शकुन्तला की माता।
विश्वामित्र – शकुन्तला के पिता।
महर्षिकण्व - शकुन्तला के पालक धर्मपिता।
शार्ङ्गरव,शारद्वत - कण्व के दो प्रमुख शिष्य।
सोमरात - दुष्यन्त का पुरोहित।
मातलि - इन्द्र का सारथि।
वैश्वानस, हारीत, नारद, गौतम, शार्ङ्गरव, शारद्वत - कण्व के शिष्य।
रैवतक (दौवारिक) - राजा का भृत्य द्वारपाल।
सूत - दुष्यन्त का सारथि।
भद्रसेन - दुष्यन्त का सेनापति।
पिशुन - दुष्यन्त का मन्त्री।
गालव - ऋषि मारीच का शिष्य।
वातायन - रनिवास की देखभाल करने वाला एक वृद्ध ब्राह्मण कञ्चुकी।
नटी - सूत्रधार की पत्नी।
अदिति (दाक्षायणी) - मारीच की पत्नी।
सानुमती - मेनका की सखी एक अप्सरा।
चतुरिका, यवनी - राजा की सेविका।
गौतमी - कण्व के आश्रम की अध्यक्षा, एक वृद्धा तापसी ।
वेत्रवती (प्रतीहारी) - राजा की द्वारपालिका।
तापसी (सुव्रता) - मारीच के आश्रम की एक तपस्विनी।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अंक नाम तथा प्रसंग -

अङ्क	**नाम**	**प्रमुख प्रसङ्ग**
प्रथम अङ्क	आश्रम प्रवेश	भ्रमर वृतान्त, सखियों से राजा का वार्तालाप।
द्वितीय अङ्क	आश्रम निवेश	शकुन्तला सौन्दर्य वर्णन।
तृतीय अङ्क	मिलन	विरह दुःख वर्णन, दोनों के मिलन का वर्ण।
चतुर्थ अङ्क	विदा	शकुन्तला विदाई।
पञ्चम अङ्क	प्रत्याख्यान	राजा दुष्यन्त और शारद्वत तथा शार्ङ्गरव विवाद।
षष्ठ अङ्क	पश्चाताप	राजा के शोक का वर्णन,सानुमत्योपाख्यान
सप्तम अङ्क	पुनर्मिलन	पुत्र सर्वदमन का दर्शन और शकुन्तलासे मिलन

अभिज्ञानशाकुन्तलम् का भरतवाक्य – (रुचिरा छन्द)

**"प्रवर्ततां प्रकृतिहिताय पार्थिवः
सरस्वती श्रुतमहतां महीयताम्
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः
पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः॥"**

प्रमुख सन्दर्भ-

- दुष्यन्त शकुन्तला का विवाह - **गान्धर्व** विवाह।
- शकुन्तला को शाप दिया - **ऋषि दुर्वासा** ने।
- शकुन्तला के शाप को जानने वाली - **प्रियंवदा, अनुसूया।**
- हेमकूट पर्वत में आश्रम - **महर्षि मारीच** का।
- दुष्यन्त शकुन्तला का पुनर्मिलन - **मारीच आश्रम** में।

- शकुन्तला की मुद्रिका प्राप्त होती है - **धीवर** मीनपालक को।
- दुष्यन्त शकुन्तला के पुत्र का नाम – **सर्वदमन\ भरत** ।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् का जर्मन अनुवाद किया है- **जार्ज फास्टर ने** ।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के सर्वप्रथम अंग्रेजी अनुवादक - **विलियम जोन्स**।
- विलियम जोन्स ने "The last things" की भूमिका में 'कालिदास' को भारत का 'शेक्सपियर' कहा।
- महाकवि **"गेटे"** ने अपने नाट्यकाव्य **"फाइस्ट"** में अभिज्ञानशाकुन्तलम् और नायिका की प्रशंसा की।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थ अङ्क का प्रारम्भ होता है - **'विष्कम्भक'** से।
- शकुन्तला वियोग के दिन गुजारती है - **मारीच** के आश्रम में,
- हस्तिनापुर जाते समय शकुन्तला की अँगूठी गिरती है – **शचीतीर्थ** में।
- महर्षि कण्व का आश्रम - **मालिनी** नदी के तट पर था।
- दुष्यन्त की रानियां - **वसुमती,** (हंसपदिका संगीत का अभ्यास करती थी)
- दुर्वासा ऋषि का आगमन - **चतुर्थ अंक** में
- सूत्रधार नटी से **''ग्रीष्म ऋतु''** के प्रसंग में **'उद्गाथा छन्द'** में गीत सुनता है।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् में स्त्रीपात्र की भाषा है- **''शौरसेनी प्राकृत''**।
- अभिज्ञानशाकुन्तलम् के सप्तम अङ्क में सात वायु मार्गों में से **''परिवह''** नामक वायु का वर्णन है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् सूक्तियां -

॥प्रथम अङ्क॥

- बलवदपि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययं चेतः। (2 **सूत्राधर)**
- प्रच्छायसुलभनिद्रा दिवसाः परिणामरमणीयाः (3 **सूत्राधर)**
- भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्रा। (16-**दुष्यन्त)**
- सरसिजमनुविद्धंशैवलेनापि रम्यं
  मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्मलक्ष्मीं तनोति।
  इयमधिकमनोज्ञा वत्कलेनापि तन्वी,
  किमिव मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम्।(20-**दुष्यन्त)**
- सतां हि सन्देहपदेपु वस्तुपु प्रमाणमन्तः करणप्रवृत्तयः। **(22-दुष्यन्त)**
- न प्रभातरलं ज्योतिरुदेति वसुधातलात्। (25-**दुष्यन्त)**
- आशङ्कासे यदग्निं तदिदं स्पर्शक्षमं रत्नम्।। (27-**दुष्यन्त)**
- अहो चेष्टाप्रतिरुपिका कामीजनमनोवृत्तिः। **(दुष्यन्त)**
- गच्छति पुरः शरीरं धावति पश्चाद् संस्तुतं चेतः। **(दुष्यन्त)**
- चीनांशुकमिव केतोः प्रतिवातं नीयमानस्य।। (1\34)

॥द्वितीय अङ्क॥

- कामी स्वतां पश्यति। (2-**दुष्यन्त)**
- शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः
  स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्तास्तदन्यतेजोऽभिभवाद् दहन्ति।।
  -(7**दुष्यन्त)**
- सर्वं खलु कान्तमात्मीयं पश्यति। - **(दुष्यन्त)**
- अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररूहै-
  रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनारवादितरसम्।
  अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
  न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।। (10 **दुष्यन्त)**
- यदुतिष्ठति वर्णेभ्यो नृपाणां क्षयि तत्धनम् ।
  तपः षड्भागमक्षय्यं ददत्यारण्यका हि नः।। (13 **दुष्यन्त)**

॥तृतीय अङ्क॥

- त्वमपि कुसुमवाणन् वज्रसारीकरोषि। (3 **दुष्यन्त)**
- स्मर एव तापहेतुर्निर्वापयिता स एव मे जातः।
  दिवस दूर्वार्धश्यामस्तपात्यये जीवलोकस्य।। (14 **दुष्यन्त)**
- लभेत वा प्रार्थयिता न वा श्रियं
  श्रिया दुरापः कथमीप्सितो भवेत्। (16**दुष्यन्त)**
- विवक्षितं ह्यनुक्तमनुतापं जनयति। - **(दुष्यन्त)**
- अहो विघ्नवत्यः प्रार्थितार्थसिद्धयः। - **(दुष्यन्त)**

॥चतुर्थ अङ्क॥

➢ **श्लोकचतुष्ठ्य-**

- को नामोष्णोदकेन नवमल्लिकां सिञ्चति- **(प्रियम्वदा)**
- यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
  कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनम्।
  वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः
  पीड्यन्ते गृहिणः कथं नु तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः।। (6)
- पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
  नादत्ते प्रियमण्डनापि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
  आद्ये वः कुसुमप्रसूतिसमये यस्या भवत्युत्सवः
  सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम्।। (9)
- अस्मान्साधु विचिन्त्य संयमधनानुच्चै कुलं चात्मन
  स्त्वय्यस्याः कथमप्यबान्धवकृतां स्नेहप्रवृत्तिं च ताम्।
  सामान्यप्रतिपत्तिपूर्वकमियं दारेषु दृश्या त्वया
  भाग्यायत्तमतः परं न खलु तद्वाच्यं वधूबन्धुभिः।। (17)
- शुश्रूषस्व गुरुन् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
  भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
  भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी

यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।। (18)

- न खलु धीमतां कश्चिदविषयो नाम। **(शार्ङ्गरव)**

॥पञ्चम अङ्क॥

- भानुः सकृद्युक्ततुरङ्ग एव रात्रिन्दिवं गन्धवहः प्रयाति।
- शेषः सदैवाहितभूमिभारः षष्ठांशवृत्तेरपि धर्म एषः।। (4 **कञ्चुकी)**
- राज्ञां तु चरितार्थतादुःखान्तरैव। **(दुष्यन्त)** (राजा को अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति भी दुःखप्रद होती है।)
- राज्यं स्वहस्तधृतदण्डमिवातपत्रम् – (6 **दुष्यन्त)**
- भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः- (12. **शार्ङ्गरव)**
- अनिर्वर्णनीयं परकलत्रम् । **(दुष्यन्त)**
- तमस्तपति धर्मांशौ कथमाविर्भविष्यति।। (14 **ऋषि)**
- पावकः खलु वचनोपन्यासः। **(शकुन्तला)**
- अज्ञातहृदयेष्वेवं वैरीभवति सौहृदम्।। (24 **शार्ङ्गरव)**
- उपपन्ना हि दारेषु प्रभृता सर्वतोमुखी।। (26 **शारद्वत)**

॥षष्ठ अङ्क॥

- उत्सवप्रिया हि खलु मनुष्याः। **(सानुमती)**
- हंसो हि क्षीरमादत्ते तन्मिश्रा वर्जयत्यपः। (28 **दुष्यन्त)**

॥सप्तम अङ्क॥

- किं वाऽभविष्यादरुणस्तमसां विभेत्ता
  तं चेत्सहस्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत्।। (4 **दुष्यन्त)**
- शैलानामवरोहतीव शिखरादुन्मज्ञतां मेदिनी। (8 **दुष्यन्त)**
- स्रजमपि शिरस्यन्धः क्षिप्तां धुनोत्यहिशङ्कया। (24 **दुष्यन्त)**
- उदेति पूर्वं कुसुमं ततः फलं धनोदयः प्राक्तदनन्तरं पयः। (30 दुष्यन्त)
- छाया न मूर्छति मलोपहतप्रसादे शुद्धे दर्पणतले सुलभावकाशा - (32 **मारीच)**

3. वेणीसंहार

परिचय-

भट्टनारायण की एकमात्र कृति वेणीसंहारम् है। वीर रस प्रधान यह ग्रन्थ 6 अङ्कों में विभक्त है। इसमें दुशासन द्वारा अपमानित द्रौपदी के द्वारा अपनी वेणी खोल दिए जाने पर भीम यह प्रतिज्ञा करता है कि वह दुशासन की छाती का लहु पियेगा। प्रतिज्ञा के पूर्ण हो जाने पर दुर्योधन के खून से रंगे हाथों से द्रौपदी की श्रेणी बाँधेगा। इसी घटना के आधार पर नाटक का नामकरण वेणीसंहारम् हुआ है। कथावस्तु संक्षिप्त रूप में निम्नलिखित है।

कथा सारांश-

प्रथम अङ्क- भगवान् श्रीकृष्ण पाण्डवों की ओर से सन्धि का प्रस्ताव लेकर एक दूत के रूप में धृतराष्ट्र के राजदरबार में जाते हैं, परन्तु दुर्योधन कृष्ण के सन्धि प्रस्ताव का मजाक उड़ाते हुए तथा अभद्रता का प्रदर्शन करते हुए कृष्ण को बन्दी बनाना चाहता है। कृष्ण के इस अपमान से युधिष्ठिर समेत भीमादि का क्रोध पराकाष्ठा पर पहुँच जाता है।

द्वितीय अङ्क- अभिमन्युवध के अनन्तर दुर्योधन अपनी प्राणप्रिया भानुमती से मिलता है। भानुमती अपशगुन-सूचक स्वप्नदर्शन से व्यथित है। दुर्योधन अपनी विभिन्न कामक्रीड़ाओं की ओर उसका ध्यान आकृष्ट करता है। तभी भावी अमङ्गल की सूचक भयंकर आँधी आती है और दुर्योधन के रथ की ध्वजा टूट जाती है। इसी समय अर्जुन की जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञा से घबराई जयद्रथ की माँ व पत्नी दुर्योधन के पास आकार जयद्रथ की प्राण-रक्षा की प्रार्थना करती हैं तथा दुयोधन उन्हें रक्षा का आश्वासन देता है।

तृतीय अङ्क- रुधिरप्रिय राक्षस व उसकी स्त्री के संवाद से द्रुपद, भूरिश्रवा, सोमदत्त, भगदत्त, प्रभृति आदि अनेक योद्धाओं समेत द्रोणाचार्य के वध की सूचना मिलती है। द्रोणवध से अश्वत्थामा आगबबूला हो जाता है। कर्ण के बाणों से आहत हो अश्वत्थामा, कर्ण-वध को उद्यत हो जाता है। कर्ण भी लड़ाई करने पर उतारू हो जाता है, तब दुर्योधन किसी तरह दोनों को समझा-बुझाकर दूर करता है।

चतुर्थ अङ्क- दुशासन के खून का प्यासा भीम अवसर पाकर उस पर आक्रमण करता है। दुर्योधन भी कर्ण को सेनापति बनाकर स्वयं दुशासन की रक्षा हेतु आता है। उधर कर्ण भीम के प्रबल प्रहार से मूर्छित हो जाता है। मूर्च्छा दूर होने पर कर्ण के सेवक सुन्दरक से उसे दुशासन की मृत्यु का समाचार मिलता है।

पञ्चम अङ्क- धृतराष्ट्र तथा गान्धारी दुर्योधन को सान्त्वना देते हुए सन्धि कर लेने का आग्रह करते हैं लेकिन दुर्योधन का उदात्त अहंकार सन्धि करने के लिये सहमत नहीं होता है। इसी समय युद्ध भूमि में भयंकर कोलाहल होता है और शल्य के मुख से कर्णवध की सूचना प्राप्त होती है। इस पीड़ा से दुयोधन मूर्च्छित हो जाता है। इसी समय दुर्योधन को ढूँढ़ते हुए भीम वहाँ पहुँचता है और दुर्योधन-उरुभंग की प्रतिज्ञा पूरी करना चाहता है। बीच में अश्वत्थामा मृत कर्ण पर आक्षेप करते हुए भीम से युद्ध करने की दुर्योधन से अनुमति माँगता है परन्तु दुर्योधन यह कहते हुए वहाँ से चला जाता है कि अब मेरे मरने के बाद अपनी अभिलाषा पूरी करना ।

षष्ठ अङ्क- धर्मराज युधिष्ठिर सांयकालपर्यन्त दुर्योधन अथवा स्वयमेव आत्महत्या कर लेने की भीम की कठोर प्रतिज्ञा तथा दुर्योधन के कहीं छिप जाने से अत्यन्त चिन्तित है। तब पाञ्चालक आकर युधिष्ठिर व द्रौपदी को सूचना देता है कि सरोवर में छिपे हुए दुर्योधन को भीम ने अपने बाणों से उत्तेजित करके बाहर निकालकर भयंकर गदायुद्ध प्रारम्भ कर दिया है। इसी समय दुर्योधन का मित्र राक्षस वहाँ उपस्थित होता है और युधिष्टिर को बताता है कि गदायुद्ध में भीम मारे गए। इस दुःखद समाचार से युधिष्ठिर से विलाप करते हुए अग्नि में प्रवेश करना चाहता है, तभी दुर्योधन के लहू से युक्त भीम उपस्थित होते हैं। द्रौपदी की प्रतिज्ञा पूर्ण होती है। सभी प्रसन्न हो उठते हैं तथा श्रीकृष्ण के आशीर्वादात्मक वचनों के साथ नाटक का अवसान होता है।

मुख्य विवरण-

॥**मङ्गलाचरण**॥ (नमस्कारात्मक)

"निषिद्धैरप्येभिर्लुलितमकरन्दो मधुकरैः,
करैरिन्दोरन्तश्छुरित इव संभिन्नमुकुलः।
विधत्तां सिद्धिं नो नयनसुभगामस्य सदसः,
प्रकीर्णः पुष्पाणां हरिचरणयोरञ्जलिरयम्"।।1॥

बार-बार हटाये गये भी इन भौंरों द्वारा पिये गये मधु वाली, चन्द्रमा की किरणों द्वारा मध्य में मानो व्याप्त, खिली हुई कलियों वाली, विष्णु के चरणों में बिखेरी गई यह सुमनों की अञ्जलि हमें इस सभा के नेत्रों को अच्छी लगने वाली सफ़लता काम करें ।

"कालिन्द्याः पुलिनेषु केतिकुपितामुत्सृत्य रासे रसं,
गच्छन्तीमनुगच्छतीऽश्रुकलुषां कंसद्विषो राधिकाम्।
तत्पादप्रतिमानिवेशितपदस्योद्भूतरोमोद्गते -
रक्षुण्णोऽनुनयः प्रसन्नदयितादृष्टस्य पुष्णातु वः॥2।।"

"दृष्टः सप्रेम दैव्या किमिदमिति भयात्सभ्रम्माच्चासुरीभिः।3 ।

प्रथम मङ्गलाचरण में - **हरिचरण स्तुति**, (शिखरिणी छन्द)
द्वितीय मङ्गलाचरण में - **कृष्ण स्तुति**,(शार्दूलविक्रीडित छन्द)
तृतीय मङ्गलाचरण में - **शङ्कर स्तुति**, (स्रग्धरा छन्द)

लेखक - भट्टनारायण"कविमृगराज" उपाधि (725 ई.)
उपजीव्य - महाभारतका'सभापर्व','उद्योगपर्व'शान्तिपर्व,
नायक - भीम,
अंक - 6, (209) श्लोक,
रस - वीर,
रीति - गौड़ी,

॥**पात्र परिचय**॥

॥**पुरुष पात्र**॥

सूत्रधार- नटों में मुख्य (नाटक-स्थापक)
पारिपार्श्विक- सूत्रधार का सहचर
युधिष्ठिर- ज्येष्ठ-कुन्तीपुत्र,पाण्डव,
भीम- कुन्तीपुत्र, पाण्डव,
अर्जुन- कुन्तीपुत्र, पाण्डव,
नकुल- मात्रीपुत्र, पाण्डव,
सहदेव- मात्रीपुत्र,पाण्डव,
अश्वसेन- द्रोणाचार्य का रथवाहक,
कृपाचार्य- अश्वत्त्यामा का मामा
जयद्रथ- दुर्योधन का वहनौई,
सुन्दरक- कर्ण का सन्देशवाहक
धृतराष्ट्र- दुर्योधन का पिता
सञ्जय- व्यास का शिष्य
श्रीकृष्ण- भगवान् वासुदेव ।
वृषसेन- महारथी कर्ण का पुत्र
राक्षस- दुर्योधन का मित्र चार्वाक ।
सूत- दुर्योधन का मित्र,
विनयंधर- कौरवों का कंचुकी ।
अश्वत्यामा- द्रोणाचार्य का पुत्र
दुर्योधन- कौरव राजा ।
पांचालक- पाण्डवों का सन्देशवाहक
रुधिरप्रिय- पाण्डव पक्षपाती राक्षस,
कर्ण- राधा (सूत की स्त्री) से परिपालित दुर्योधन का मित्र ।

॥**स्त्री पात्र**॥

द्रौपदी- पाण्डवों की स्त्री (पांचाली) ।
बुद्धिमतिका-द्रौपदी की दासी
चेटी- द्रौपकी की दासी ।
भानुमती-दुर्योधनं की रानी
सुवदना- भानुमती की सखी ।
तरलिका- भानुमती की दासी ।
प्रतिहारी- दुर्योधन की परिचारिका ।
दुःशला - जयद्रथ की स्त्री एवं दुर्योधन की वहन ।
माता- जयद्रथ की माता ।
गान्धारी- दुर्योधन की माता
वसागन्धा- पाण्डव पक्षपातिनी राक्षसी ।

प्रमुख सन्दर्भ-

- दुर्योधन की पत्नी भानुमती को द्वितीय अंक में अशुभ स्वप्न आता है कि एक नकुल ने सौ सर्प मार दिये थे, वह ''सूर्य'' का व्रत रखती है।
- वेणीसंहार का तृतीय अङ्क- **"राक्षस मिथुन वृतान्त"** यह **'प्रवेशक'** का उदाहरण है।

वेणीसंहार सूक्तियां-

- अनुलङ्घनीयः समुदाचारः- **भीम** ।
- अप्रमत्तसश्चारणीयानि रिपुबलानि श्रूयन्ते- **द्रौपदी** ।
- अहो मुग्धत्वमबलानाम्- **राजा** ।
- आशा बलवती राजन्! शल्यो जेष्यति पाण्डवान्- **सञ्जय** ।
- उपक्रियमाणाभावे किमुपकरणेन- **दुर्योधन** ।
- उपेक्षितानां मन्दानां धीरसत्वैरवज्ञया।
  अत्रासितानां क्रोधान्धैर्भवत्येषा विकत्थना- **कर्ण** ।
- को हि नाम भगवता सन्दिष्टं विकल्पयति।
- दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्- **कर्ण** ।
- पुण्यवन्तो हि दुःखभाजो भवन्ति- **दुर्योधन** ।
- भवति तनय! लक्ष्मीः साहसेष्वीदृशेषु।
- हीयमानाः किल रिपोर्नृपाः सन्दधते परान्।

4. मुद्राराक्षसम्

परिचय-

विशाखदत्त द्वारा रचित मुद्राराक्षसम् **"मुद्रया जितः राक्षसः यस्मिन्"।** संस्कृत साहित्य का अद्वितीय नाटक है। यह विशुद्ध कूटनीतिक राजनीति को आधार मानकर लिखा गया है। सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में उपलब्ध नाटकों में यही एकमात्र अपनी तरह का उपलब्ध अद्वितीय नाटक है। विषय की दृष्टि से, शैली की दृष्टि से, चरित्र-चित्रण की दृष्टि से निस्सन्देह यह एक अपूर्व नाटक है । इसमें महान् कूटनीतिज्ञ चाणक्य की प्रतिभा और षड्यन्त्र के द्वारा नन्दवंश के विनाश के उपरान्त राक्षस को वश में करने का वर्णन है। नाटक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें नायिका व विदूषक का अभाव है और नायिका के अभाव में नायिका को आधार मानकर उद्दीप्त होने वाले प्रेम के विषय का भी सर्वथा अभाव है। चन्द्रगुप्त और मलयकेतु की प्रतिहारी शोणोत्तरा और विजया को छोड़कर सम्पूर्ण नाटक में केवल एक स्त्री पात्र है और वह है चन्दनदास की पत्नी जो अपने पुत्र के साथ सप्तम अङ्क में हमारे सामने आती है। अमात्य राक्षस की मुद्रा से यह कथा विशेष मोड़ ले लेती हैं, जो राक्षस की पराजय का कारण बनती है। अतः इसी मुद्रा के कारण इस नाटक का नाम मुद्राराक्षसम् हुआ।

कथा सारांश-

प्रथम अङ्क- चाणक्य को राक्षस के तीन विश्वासपात्र सम्बन्धियों क्षपणक जीवसिद्धि, कायस्थ शकटदास तथा मणिकार श्रेष्ठी चन्दनदास के सम्बन्ध में गुप्तचरों से सूचना मिलती है तथा राक्षस की एक मुद्रा (मुहर) भी पराजय का कारण बनती है।

द्वितीय अङ्क- यह अङ्क राक्षस की कूटनीतिक पराजय का प्रथम निदर्शन है। चाणक्य की जागरूकता के चलते चन्द्रगुप्त की हत्या की राक्षस की योजना नाकाम हो जाती है।

तृतीय अङ्क- इसमें कौमुदी-महोत्सव-निषेध की ललितकथा वर्णित है, जिसमें शारदपूर्णिमा के **कौमुदीमहोत्सव** मनाने की राजाज्ञा का अनुकूल समय पर चाणक्य जानबूझकर निषेध कर देता है, जिसमें चन्द्रगुप्त चाणक्य से कपटविग्रह खड़ा करता है।

चतुर्थ अङ्क- इसमें राक्षस को अपनी विफलता का पता चलता है। राक्षस पर्वतेश्वर के पुत्र मलयकेतु से सम्पर्क स्थापित कर उसे चन्दग्रुप्त के स्थान पर नन्दवंश के सिंहासन पर बैठने की योजना बनाता है।

पञ्चम अङ्क- यह अङ्क नाटक की गर्भसन्धि है, जिसे इस कथावस्तु का क्लाइमेक्स कहा जा सकता है। मुद्रित लेख तथा आभूषण पेटिका के साथ सिद्धार्थक के पकड़े जाने से (जो चाणक्य की कूटनीति थी) मलयकेतु का विश्वास राक्षस पर से हट जाता है और वह राक्षस का विरोधी बन जाता है। राक्षस के विरोध के परिणामस्वरूप मलयकेतु अपने सहयोगियों के साथ, पकड़ लिया जाता है तथा राक्षस को पकड़ने का प्रयास जारी है।

षष्ठ अङ्क- राक्षस चन्दनदास की प्रवृत्ति जानने के लिए यहाँ पर उसे चन्दनदास की भावी मृत्युदण्ड (फाँसी) की सजा की सूचना प्राप्त होती है।

सप्तम अङ्क- चन्दनदास को फाँसी हेतु वधस्थान पर ले जाया जाता है, जहाँ उसकी पत्नी व पुत्र करुण-क्रन्दन कर रहे हैं। अपने मित्र को इस विपत्ति से बचाने हेतु उसका मित्र राक्षस स्वयं उपस्थित होता है तथा चाणक्य की दोस्ती स्वीकार करते हुए चन्द्रगुप्त का आमात्य बनना स्वीकार कर लेता है। इसी घटना के साथ इस नाटक का पर्यवसान होता है। यह अन्तिम घटना चाणक्य की विशाल कूटनीति, गहरीचाल तथा असाधारण बुद्धि की मनोरञ्जक व्याख्या प्रस्तुत करती है। चाणक्य ही एक ऐसा नायक है, जो राजा या राजवंश का न होने के बाद भी भारतीय इतिहास के सर्वप्रथम सर्वप्रसिद्ध सम्राट का निर्माता तथा उसके वंश के

साम्राज्य का संस्थापक है। वीर-रस-प्रधान इस नाटक की कथावस्तु का आधार विष्णुपुराण व श्रीमद्भागवत् है ।

प्रमुख विवरण-

॥मङ्गलाचरण॥ (आशीर्वादात्मक)

"धन्या केयं स्थिता ते शिरसि शशिकला किं नु नामैतदस्या
नामैवास्यास्तदेतत्परिचितमपि ते विस्मृतं कस्य हेतोः।
नारीं पृच्छामि नेन्दुं कथयतु विजया न प्रमाणं यदीन्दु-
र्देव्या निह्नोतुमिच्छोरिति सुरसरितं शाठ्यमव्याद्विभोर्वः"॥

(मैंने कहा) "सिर पर यह शेखर बनकर आ बैठी (नयी) सुहागिन कौन है ?" "चन्द्र कला !" "(चन्द्र ?) क्या यही उसका नाम है ?" "नाम ही तो। अच्छा-भला तो तुम्हें मालूम था; पता नहीं तुम फिर-फिर भूल कैसे जाती हो ?" "मैं तो (स्वामी उस औरत को पूछती हूं, चन्द्र को नहीं (समझे ?) ।" "(ठीक है; अगर मेरे कहे पर) विश्वास न आता हो कि यह चन्द्र ही है, तो विजया (वह तुम्हारी सहेली) कह दे (तव तो मान जाओगी ?)"- इस प्रकार देवी (पार्वती) के सन्देह-कटाक्षों से गंगा की अभिरक्षा में आकुल भगवान् (शिव) का लास्य (वाक्-छल) तुम्हारी भी रक्षा करे ।

स्तुति - शिव,
छन्द - स्रग्धरा
लेखक - विशाखदत्त (300-400 ई.पू.) ।
(दूसरी कृति- **देवीचन्द्रगुप्तम्**)
अङ्क - (7), 169 पद्य
नायक - चाणक्य (धीरप्रशान्त, धीरोद्धत)
प्रतिनायक - मलयकेतु
उपजीव्य - विष्णुपुराण/ श्रीमद्भागवत
अङ्गीरस - वीर (ऐतिहासिक नाटक)

॥पात्र परिचय॥

शार्ङ्गरव - चाणक्य का शिष्य,
मलयकेतु - पर्वतक का पुत्र, राक्षस को अंगूठी देने वाला,
निपुणक,सिद्धार्थक,सुसिद्धार्थक,जीवसिद्धि - चाणक्य के गुप्तचर,
करभक विराधगुप्त,प्रियंवदक - राक्षस के गुप्तचर,
शकटदास - राक्षस के निजी सचिव तथा मित्र,
चन्दनदास - राक्षस के मित्र,
वैरोचक बर्बरक - पर्वतेश्वर के भाई,
भागुरायण - मलयकेतु का कपटी मन्त्री, चाणक्य का गुप्तचर,
जीवसिद्धि(भदन्त) -क्षपणक वेशधारी चाणक्य का गुप्तचर,राक्षस का कपटीमित्र,
राक्षस के परममित्र राजा- (5)
चित्रवर्मा - कुलूल देश का अधिपति।
सिंहनाद - मलय देश।
पुष्कराक्ष - काश्मीर देश।
सुषेण - सिन्धुराज,
मेघनाद - पारसीक देश।

अंक संज्ञा -

अङ्क	संज्ञा
प्रथम अङ्क	**मुद्राप्राप्तिः**
द्वितीय अङ्क	**राक्षसविचारः** (भूपणविक्रय)
तृतीय अङ्क	**कृतककलहः** (कृतककोपवृत्तान्त)
चतुर्थ अङ्क	**राक्षसोद्योगः** (प्रलोभन)
पञ्चम अङ्क	**कूटलेखः**
षष्ठ अङ्क	**कपटपाशः**
सप्तम अङ्क	**निर्वहणम्**

मुख्य सन्दर्भ-

- चन्द्रगुप्त को 'वृषभ' एवं 'मौर्य' कहा गया है।
- नाटक में 'तीन' भाषाओं का प्रयोग किया गया है।
- **मुद्राराक्षसम्- "मुद्रया गृहीतो वशीकृतो राक्षसः यस्मिन् तत् मुद्राराक्षसम्"।**
- विशाखादत्त की अन्य कृतियां- **देवीचन्द्रगुप्तम्, अभिसारिकवञ्चितम्** ।
- आहितुण्डिक छद्मवेषधारी – **विराधगुप्त।**
- तोरणयन्त्रपात – **दारुणवर्मा।**
- मणीकार श्रेष्ठ – **चन्दनदास।**

सूक्तियां-

➢ सद्यः क्रीडारसच्छेदं प्राकृतोऽपि न मर्षयेत्
किं नु लोकाधिकं तेजो बिभ्राणः पृथिवीपतिः।।
➢ न हि खलु सर्वः सर्वं जानाति।
प्रारभ्य विघ्नविह्वताः विरमन्ति मध्याः।। **(विराधगुप्त)।**

॥प्रथम अङ्क॥

➢ अत्यादर शङ्कनीयः।
➢ अनुभूयतां चिरं विचित्रो राजप्रसादः ।
➢ अनुचितः उपचारो हृदयस्य परिभवादपि दुःखमुत्पादयति ।
➢ कायस्थ इति लघ्वी मात्रा।
➢ कीदृशस्तृणानामग्निना सह विरोधः ।
➢ चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः ।
न शालेः स्तम्बकरिता वप्तुर्गुणमपेक्षते ।।

- दिष्ट्या मित्रकार्येण मे विनाशो न पुरुष-दोषेण।
- प्रज्ञा-विक्रम-भक्तयः समुदिता येषां गुणा भूतये।
  ते भृत्या नृपतेः कलत्रमितरे सम्पत्सु चापत्सु च।।
- फलेन संवादितमस्य विकत्थनम् ।
- नहि सर्वः सर्वं जानाति।
- न युक्तं प्राकृतमपि रिपुमवज्ञातुम् ।
- शिरसि भयमतिदूरे तत्प्रतिकारः।
- श्रोत्रियाक्षराणि प्रयत्नलिखितानि अपि नियतमस्फुटानि भवन्ति।

॥द्वितीय अङ्क॥

- प्रकृत्या वा काशप्रभवकुसुमप्रान्तचपला।
  पुरन्ध्रीणां प्रज्ञा पुरुषगुणावज्ञानविमुखी ।।
- पृथिव्यां स्वामिभक्तानां प्रमाणे परमे स्थितः।
- किं शेषस्य भरव्यथा न वपुषि क्ष्मां न क्षिपत्येष यत्।।
  किंवा नास्ति परिश्रमो दिनपतेरास्ते न यन्निश्चलः ।
  किन्त्वङ्गीकृतमुत्सृजन् कृपणवच्छ्लाघ्यो जनो लज्जते।
  निर्व्यूढं प्रतिपन्नवस्तुषु सतामेतद्धि गोत्रव्रतम्।।
- नन्वयुक्तवरः सुहृद्द्रोहः।
- भव्ये रक्षति भवितव्यता ।
- सौहार्दात् कृतकृत्यव नियतं लब्धान्तरा भेत्स्यति ।
- भगवतिं कमलालये भृशमगुणज्ञासि
- अमन्त्रौषधिकुशलो व्यालग्राही प्रमत्तो मत्तमतङ्गजारोही लब्धाधिकरो।
- जितकाशी राजसेवक इत्येते त्रयोऽप्यवश्यं विनाशमनुभवन्ति।
- प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहिता विरमन्ति मध्याः।
- विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः, प्रारब्धमुक्तममगुणा न परित्यजन्ति ।।

॥तृतीय अङ्क॥

- राज्यं हि नाम राजधर्मानुवृत्तिपरस्य नृपतेर्महदप्रीतिस्थानम्।
- परायत्तः प्रीतेः कथमिव रसं वेत्ति पुरुषः।
- दुराराध्या हि राजलक्ष्मीरात्मवद्भिरपि राजभिः
- श्रीलंब्धप्रसरेव वेशवनिता दुःखोपचर्चा भृशम् ।
- सेवां लाघवकारिणीं कृतधियः स्थाने श्ववृत्तिं विदुः।
- निरीहाणामीशस्तृणमिव तिरस्कार विषयः।
- न निष्प्रयोजनमधिकारवन्तः प्रभुभिराहूयन्ते ।
- दैवम् अविद्वांसः प्रमाणयन्ति।
- विद्वांसोऽप्यविकत्थना भवन्ति।

॥चतुर्थ अङ्क॥

- अवीभत्सदर्शनं कृत्वा प्रवेशय।
- त्वद्वाञ्छान्तरितानि सम्प्रति विभो तिष्ठन्ति सांध्यानि नः।
- प्रायो भृत्यास्त्यजन्ति प्रचलितविभवं स्वामिनं सेवमानाः।

॥पञ्चम अङ्क॥

- मुण्डितमुण्डो नक्षत्राणि पृच्छसि।
- तदाज्ञां कुर्वाणो हितमहितमित्येदधुना। विचारातिक्रान्तः ।
  किमिति परतन्त्रो विमृशति।
- अधिकारपदं नाम निर्दोषस्यापि पुरुषस्य महदाशङ्कास्थानम्।
- गतिः सोच्छ्रायाणां पतनमनुकूलं कलयति ।
- स्वार्थे कस्मिन् समीहा पुनरधिकतरे त्वामनार्यं करोति ।
- अयमपरो गण्डस्योपरि स्फोटः।
- वयमिदानीमनार्याः संवृत्ताः।

॥षष्ठ अङ्क॥

- तत्किं निमित्तं कुकविकृतनाटकस्येवान्वयमुखेऽन्यन्निर्वहणम् ।
- देवेनोपहतस्य बुद्धिरथवा सर्वा विपर्यस्यति ।
- अलक्षितनिपाताः पुरुषाणां समविषमदशापरिणतयो भवन्ति।
- अभूमि खल्वेषोऽविनयस्य।
- एतत्तदपावृतमस्मच्छोकदीक्षां द्वारं देवेन।
- कृतार्थोऽयं सोऽर्थस्तव सति वणिकत्वेऽपि वणिजः।
- सोऽयमभ्यर्णः शोकवज्रपातो हृदयस्य।

॥सप्तम अङ्क॥

- स्वपतोऽपि ममेव यस्य तन्त्रे गुरवो जाग्रति कार्यजागरूकाः।
- सम्पन्नास्ते सर्वाशिषः ।
- सर्वथा स्थाने यशस्वी चाणक्यः।
- कार्याणां गतयो विधेरपि न यान्त्याज्ञाकरत्वं चिरात् ।
- किं भूयः प्रियमुप करोमि ।
- किं कर्त्तव्यमतः परम्।

5. उत्तररामचरितम्

परिचय-

कालिदास के पश्चात् संस्कृत साहित्य में भवभूति का ही नाम उत्कृष्ट नाटककार के रूप में लिया जाता है। इनके तीन रूपक प्राप्त हैं-मालतीमाधव, महावीरचरितम् एवं उत्तररामचरितम्। उत्तररामचरितम् भवभूति का अन्तिम और सर्वोत्कृष्ट नाटक है- **"उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते"** उत्तररामचरितम् में रामायण के उत्तरकाण्ड की कथा सात अङ्कों में निबद्ध है जिसमें राम के जीवन के उत्तर भाग की कथा

है। नाटक का प्रारम्भ नान्दीपाठ से होता है। इसकी संक्षिप्त कथा निम्नलिखित है।

कथा सारांश-

प्रथम अङ्क- लंका से लौटकर आने पर राम का राज्याभिषेक होता है। राज्याभिषेक के समय आए हुए जनक मिथिला लौट जाते हैं, और उनके जाने से सीता दु:खी हो जाती हैं। गर्भिणी सीता के उदास मन को बहलाने के लिए राम चित्रशाला में चित्रित अपने जीवन से सम्बद्ध घटनाओं को सीता को दिखाते हैं। इसे देखकर गर्भिणी सीता के मन में एक बार फिर तपोवनों को देखने का दोहद उत्पन्न हो जाता है। चित्र देखते-देखते सीता थक जाती है और वह राम के वक्षस्थल पर सिर रखकर सो जाती हैं। इसी समय दुर्मुख आकर सीता के विषय में जनापवाद की सूचना देता है। राम पर जैसे वज्रपात हो गया हो। सीता के भावी विरह की अनुभूति की तीव्रता को उभारने के लिए चित्रशाला वाले दृश्य की योजना एक गहरी सूझ है। प्रेम और कर्त्तव्यपालन का जटिल संघर्ष दिखाया गया है जिसमें अन्ततः कर्त्तव्यपालन विजयी होता है, पर इतना होने पर राम का दिल टूट जाता है, और वे न चाहते हुए भी कठोर बनकर गर्भ के बोझ वाली सीता को हिंसक पशुओं के लिए वन में उसी तरह छोड़ देते हैं, जैसे कोई बलि दी जा रही हो। इस अङ्क को चित्रवीथी के नाम से जाना जाता है।

द्वितीय अङ्क- दूसरा अङ्क ठीक 12 वर्ष बाद का है। विष्कम्भक से पता चलता है कि सीता के दो पुत्र हो गए हैं और वे वाल्मीकि के पास विद्याध्ययन कर रहे हैं। इसी में यह भी सूचना मिलती है कि शूद्रमुनि शम्बूक का वध करने के लिए राम इस वन में आए हुए हैं। राम, शम्बूक का वध करते है और शम्बूक दिव्य रूप को धारण कर लेता है। शम्बूक के मुंह से दण्डकारण्य का प्रशान्त और गम्भीर प्रकृति का सुन्दर वर्णन कराया गया।

तृतीय अङ्क- राम पञ्चवटी में प्रवेश करते हैं। तमसा तथा मुरला नामक दो नदी-देवताओं के संवाद द्वारा वासन्ती नामक वन-देवता से लव-कुश व सीता-विषयक वार्ता को सुनकर राम मूर्च्छित हो उठते हैं। तब तक देवप्रसाद से गुप्तरूप धारिणी सीता अपने प्रयत्नों से राम को होश में लाती हैं तथा अपने प्रति रामचन्द्र का अनुराग देख प्रसन्नता का अनुभव करती हैं। एक लम्बी विरह-व्यथा के बाद राम अश्वमेध सम्पादन हेतु अयोध्या लौट जाते हैं तथा सीता पुत्रों को मंगलग्रन्थि-सम्पादन हेतु गंगा के पास लौट जाती हैं। सीता के प्रत्यक्षतः न होने से इस अङ्क को छायाङ्क कहा जाता है।

चतुर्थ अङ्क- इसमें वशिष्ठ अरुन्धती, राम की माताएँ तथा जनकजी अतिथिरूप में वाल्मीकि आश्रम में पदार्पण करते हैं। यहाँ पर भवभूति ने जनक, अरुन्धती तथा कौशल्या के बीच सीता-परित्याग से उत्पन्न स्थिति का बहुत ही मर्मभेदी वर्णन किया है। इस अङ्क के अन्त में लव-कुश के द्वारा राम के अश्वमेधीय घोड़े को पकड़ने की घटना वर्णित है ।

पञ्चम अङ्क- राम की अश्वानुगामी सम्पूर्ण सेना की पराजय के पश्चात् सेनापति लक्ष्मणपुत्र चन्द्रकेतु तथा लव के बीच काफी लम्बा सम्वाद चलता है, तदनन्तर भीषण संग्राम चालू हो जाता है।

षष्ठ अङ्क- लव-चन्द्रकेतु संग्राम में श्रीराम पदार्पण करते हैं। युद्ध बन्द होता है। लव तथा चन्द्रकेतु दोनों श्रीराम को प्रणाम करते हैं, तब तक कुश भी उपस्थित होता है। लव तथा कुश में सीता की आकृति की समता पाकर राम प्रसन्न होते हैं तथा लक्ष्मण उपस्थित, वशिष्ठ, वाल्मीकि, जनक, कौशल्यादि को प्रणाम करते हैं।

सप्तम अङ्क- इस अङ्क में गर्भनाटक की योजना है। प्रजा के सामने नाटक खेला जाता है। जिसमें गंगा तथा पृथ्वी देवता सीता को निर्दोष सिद्ध कर रामचन्द्र को समर्पित, करती हैं। जृम्भकास्त्र सिद्धि से लव-कुश का राम का पुत्र होना सिद्ध होता है। भरतवाक्य से नाटक का पर्यवसान होता है।

प्रमुख विवरण-

॥मङ्गलाचरणम्॥ (नमस्कारात्मक)

"इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे।
विन्देम देवतां वाचममृतामात्मनः कलाम"॥

हम अपने पूर्वजन्म कवियों (व्यास, वाल्मीकि, भास, कालिदास आदि) को प्रणाम करते हैं और यह चाहते हैं कि उनके आशीर्वाद से हमें जगत् के पालक विष्णु की कलारूप अमर वाणी देवता का साक्षात्कार हो ।

छन्द	-	अनुष्टुप
स्तुति	-	सरस्वती
लेखक	-	भवभूति
विधा	-	नाटक,
अङ्क	-	(7- 256 श्लोक)
प्रधानरस	-	करुण,
उपजीव्य	-	1 वाल्मीकि रामयण, 2 पद्मपुराण,
नायक	-	राम,
नायिका	-	सीता।

॥पात्र परिचय॥

सौधतकि,दण्डायन - वाल्मीकि के शिष्य,
आत्रेयी - तपस्विनी ब्रह्मचारिणी,

सुमन्त्र - चन्द्रकेतु का सारथि,
शम्बूक - शूद्र तपस्वी,
चन्द्रकेतु - लक्ष्मण का पुत्र,
अरुन्धती - वशिष्ठ की पत्नी,
लोपामुद्रा - अगस्त्य की पत्नी,
अष्टावक्र - कहोड़ के पुत्र,
पुष्कल - भरतपुत्र अश्व का रक्षक,
तमसा,मुरला - नारी रूपधारिणी नदी,
विद्याधरी - विद्याधर की पत्नी,
प्रतिहारी - राम के राजभवन का गुप्तचर,
कञ्चुकी - राम का अन्तःपुरवासी ब्राह्मण सेवक,
सूत्रधार - प्रधान नट,
नट - सूत्रधार का सहायक,
वटुकगण - लव-कुश के आश्रमीसाथी सैनिक,
शान्ता - राम की वहन, "ऋष्यश्रृंग" की पत्नी,
वसिष्ठ - राम के कुलगुरु, अरुन्धति के पति,
वाल्मीकि - कुश-लव के पालक एवं शिक्षक तथा रामायण के रचयिता।
वासन्ती - वनदेवता सीता की प्रियसखी,
ऋष्यश्रृंग - विभाण्डक के पुत्र,

मुख्य सन्दर्भ-

- यह विदूषक रहित नाटक है।
- चित्रवीथी वनाने वाले चित्रकार का नाम – **अर्जुन**
- उत्तररामचरितम का भरतवाक्य **"शार्दूलविक्रीडितम"** छन्द में है।
- दशरथ की पुत्री शान्ता के पति 'ऋष्यश्रृंग' ने 12 वर्ष तक चलने वाला यज्ञ प्रारम्भ किया इसकी सूचना प्रथमाङ्क में मिलती है।
- भवभूति ने उत्तररामचरितम् में **"शौरसेनीप्राकृत"** का प्रयोग किया है।
- महर्षि वसिष्ठ का संदेश लेकर 'अष्टावक्र' आते हैं।
- प्रथम अङ्क में राम के राज्याभिषेक से उत्पन्न प्रतिक्रिया का निरीक्षण करके 'दुर्मुख' आता है।
- पञ्चवटी में राम का शयन - शिलातल कदली वन के मध्य में था।
- राजा दशरथ ने शान्ता को लोमपाद के पास बेटी की तरह दिया था ।

अङ्कों की संज्ञा एवं प्रमुख प्रसङ्ग-

अङ्क	संज्ञा	प्रसङ्ग
प्रथम अङ्क	**चित्रदर्शन**	चित्रवीथी योजना
द्वितीय अङ्क	**पञ्चवटीप्रवेश**	'राम द्वारा शम्बूकवध
तृतीय अङ्क	**छाया**	छायाङ्कयोजना
चतुर्थ अङ्क	**कौशल्याजनकयोग**	अश्वमेधीय घोड़े को पकड़ना,
पञ्चम अङ्क	**कुमारविक्रम**	लव द्वारा जृम्भक अस्त्र का प्रयोग।
षष्ठ अङ्क	**कुमार प्रत्यभिज्ञान**	लव और चन्द्रकेतु का युद्ध।
सप्तम अङ्क	**सम्मेलन**	गर्भनाटक(अंकावतार)

भरतवाक्यम्- (शार्दूलविक्रीडितम्)

**"पाप्मभ्यश्च पुनाति वर्धयति च श्रेयांसि सेयं कथा
मङ्गल्या च मनोहरा च जगतो मातेव गङ्गेव च ।
तामेतां परिभावयन्त्वभिनयैर्विन्यस्तरूपां बुधाः
शब्दब्रह्मविदः कवेः परिणतां प्राज्ञस्य वाणीमिमाम्"** ॥

प्रमुख सूक्तियां -

- अपिग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्। - **(लक्ष्मण)**
- एते हि हृदयमर्मच्छिदः संसारभावाः। - **(राम)**
- इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिर्नयवयोः। - **(राम)**
- दुर्जनोऽसुखमुत्पादयति। - **(सीता)**
- उत्पत्तिपरिपूताया किमस्याः पावनान्तरैः।
  तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः। - **(राम)**
- नैसर्गिकी सुरभिणः कुसुमस्य सिद्धा।
  मूर्ध्नि स्थितिर्न चरणैरवताऽनानि।। - **(राम)**
- सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधनं व्रतम्। **(राम –दुर्मुख)**
- ते हि नो दिवसा गताः। - **(राम)**
- सन्तापकारिणो बन्धुजनविप्रयोगा भवन्ति। - **(सीता)**
- अहमेवैतस्य हृदयं जानामि। - **(सीता)**
- ईदृशो जीवलोकस्य परिणामः संवृतः- **(सीता)**
- प्रत्ययेन निष्कारणपरित्याग शाल्येतोऽपि बहुमतो मम जन्मलाभः। - **(सीता)**
- सतां केनापि कार्येण लोकस्याराधनं व्रतम्। - **(राम-दुर्मुख)**
- सतां सद्भिः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति। - **(वनदेवता-तापसी)**
- वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि – **(वासन्ती-आत्रेयी**
- अनिर्भिन्नो गभीरत्वादन्तर्गूढ़धनव्यथः।
  पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः।। - **(मुरला-तमसा)**

- उचितमेव दाक्षिण्यं स्नेहस्य। संजीवनोपायस्तु। मौलिक एव रामभद्रस्याद्य सन्निहितः। - (तमसा)
- ईदृशानां विपाकोऽपि जायते परमाद्भुतः।
  यत्रोपकरणीभावमायात्येवंविधो जनः।। (मुरला)
- निष्कारणपरित्यागिनोऽप्येतस्य।
  दर्शनेनैवंविधेन कीदृशी मे हृदयावस्था॥ - (सीता)
- करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव वनमेति जानकी। - (तमसा)
- न त्वामवनिपृष्ठवर्तिनीमस्मत्प्रभावाद।
  वनदेवता अपि द्रक्ष्यन्ति किमुतमर्त्याः।। - (तमसा)
- पूजार्हः सर्वस्यार्यपुत्रो विशेषतो मम प्रियसख्याः। - (सीता)
- प्रियाशोको जीवं कुसुममिव धर्मो ग्लपयति – (तमसा)
- एकोरसः करुण एव निमित्तभेदात्।– (तमसा)
- पुरोत्पीडे तटाकस्य परीवाहः प्रतिक्रिया।
  शोकक्षोभे च हृदयं प्रलापैरेव धार्यते॥ - (तमसा-सीता)
- गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः। (अरुन्धती)

6. रत्नावली

परिचय-

पुष्यभूति वंशीय शासक हर्षवर्धन (606-647) महान विजेता एवं साम्राज्य निर्माता होने के साथ-साथ एक उच्च प्रतिभा के धनी नाटककार भी थे। हर्ष को संस्कृत में लिखित तीन नाटकों का रचयिता माना जाता है- 1. रत्नावली, 2. नागानन्द, 3. प्रियदर्शिका।

1. रत्नावली – रत्नावली में चार अंक हैं, यह एक प्रसिद्ध नाटिका है, जिसमें हर्ष ने एक आदर्श कथानक को भव्य रूप से प्रदर्शित किया है। और चरित्र चित्रण भी कुशलतापूर्वक किया है।

प्रमुख विवरण-

॥मङ्गलाचरण॥

**"पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शम्भोः सस्पृहलोचनत्रयपथं यान्त्यातदाराधने।
ह्रीमत्या शिरसीहितः सपुलकस्वेदोद्गमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तरे पातु वः"॥**

महादेव की आराधना में उपस्थित पार्वती ने अपने हाथों में कुछ फूल इस अभिप्राय से रख लिए थे कि उन्हें वह महादेव के मस्तक पर चढ़ाएगी। इसी लिए स्तन-भारावनता पार्वती पैरों के अगले भाग पर खड़ी थी। इसी स्थिति में महादेव ने अपने तीनों सस्पृह नयन उसकी देह पर डाल दिये, जिससे उसने लज्जित तथा पसीना, रोमाञ्च और कम्प से युक्त होकर अपनी सम्हाली हुई कुसुमाञ्जलि को बीच में ही गिराकर बिखेर दिया, वही कुसुमाञ्जलि आप लोगों की रक्षा करे॥

**''औत्सुक्येन कृतत्वरा सहभुवा व्यावर्तमाना ह्रिया,
तैस्तैर्बन्धुवधूजनस्य वचनैर्नीताभिमुख्यं पुनः।
दृष्ट्वाग्रे वरमात्तसाध्वसरसा गौरी नवे संगमे,
संरोहत्पुलका हरेण हसता श्लिष्टा शिवायास्तु वः"॥**

नव सङ्गम में औत्सुक्यवश शीघ्रता परायण, स्वभाविक लज्जा के कारण रुकी हुई, सखी सम्बन्धिनी रमणियों के प्रबोधन वाक्यों से पुनः अभिमुखीभूत, और सामने महादेवरूप वरको देखकर भयभीत तथा रोमाञ्चित पार्वती-जिसे महादेव ने हँस कर गले लगा लिया-आप को कल्याण दे॥

स्तुति	-	शिव, पार्वती,
छन्द	-	शार्दूलविक्रीडितम्,
लेखक	-	हर्ष,
नायक	-	उदयन (धीरललित) कौशाम्बी नरेश,
नायिका	-	रत्नावली (सागरिका) 'मुग्धा',
विदूषक	-	वसन्तक
अमात्य	-	यौगन्धरायण
अंक	-	4
विधा	-	नाटिका

॥पात्र-परिचय॥

राजा	-	उदयनः,कौशाम्बीनाथः। (नायक)
विदूषक(वसन्तक)	-	उदयन का मित्र
यौगन्धरायण	-	उदयन का प्रधानमन्त्री।
विजयवर्मा	-	उदयन का प्रधान सेनापति
बाभ्रव्य	-	कञ्चुकी।
वसुभूति	-	सिंहलेश्वरविक्रमबाहु का प्रधानमन्त्री।
ऐन्द्रजालिक	-	इन्द्रजालदर्शनोपजीवी।
सूत्रधार	-	नाटकाभिनयप्रबन्धक।
रत्नावली (सागरिका)	-	सिंहलेश्वरविक्रमबाहु की पुत्री (नायिका)
वासवदत्ता	-	उदयन की पत्नी।
काञ्चनमाला	-	वासवदत्ता की सहचरी।
सुसङ्गता	-	रत्नावली की सहचरी।
चूतलतिका	-	दासी।
निपुणिका	-	दासी
वसुन्धरा	-	प्रतीहारी।

मुख्य सन्दर्भ-

- वासवदत्ता मकरन्दोद्यान में "अशोकवृक्ष" के नीचे "मदन" (कामदेव) पूजन करती है।
- सुसंगता की माला - **रत्नमाला।**
- प्रद्युम्न - **कामदेव**

अंकों की संज्ञा-

अंक	संज्ञा
प्रथम अंक	मदनमहोत्सव
द्वितीय अंक	कदलीगृह
तृतीय अंक	संकेतक
चतुर्थ अंक	ऐन्द्रजालिक

प्रमुख सूक्तियां -

- अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभावः। (उदयन- अंक 2)
- आत्मा किल दुःखेनालिख्यते। (अंक 2)
- आनीय झटिति घटयति। विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।
  -(सूत्रधार- अंक 2)
- इथमनभ्रा वृष्टिः । (अंक 3)
- ईदृशं रूपं मनुष्यलोके न पुनर्दृश्यते। (विदूषक- अंक 2)
- एषा खलु त्वयाऽपूर्वा श्रीः समासादिता। (अंक 2)
- कष्टोऽयं खलु भृत्यभावः। (अंक 1)
- कस्मात्परिहासशीलतयेमं जनं लधुं करोषि। (अंक 2)
- किमकारणमेव पतंगवृत्तिः क्रियते । (अंक 4)
- किं पुनः साहसिकानां पुरुषाणां न संभाव्यते । (अंक 3)
- किमिदम कारणमेव पतङ्गवृत्तिः क्रियते। (अंक 4)
- घुणाक्षरमपि कदापि संभवत्येव । (अंक 2)
- तत्कस्मादत्राण्यरुदितं करोधि । (अंक 3)
- तपति प्रावृषि नितरामभ्यर्णजलागमी दिवसः।(3-10)
- दर्शितं खलु मेधाविन्याऽऽत्मनो मेघावित्वम्। (अंक2)
- दिष्टया वर्धसे समीहिताभ्याधिकया कार्य सिद्धया।(अंक 3)
- "दुरवगाहा गतिर्दैवस्य"। (अंक 4)
- न कमलाकरं वर्जयित्वा राजहंस्यन्यत्राभिरमते। (अंक2)
- न खलु सखीजने युक्त एवं कोपानुबन्धः। (अंक 2)
- प्रकृष्टस्य प्रेम्णः स्खलितमविसह्यं हि भवति। (अंक3/15)
- मूनश्चलं प्रकृत्यैव । (अंक 3-2)
- रमयतितरां संकेतस्था तथापि हि कामिनी। (अंक3-9)

7. मृच्छकटिकम्

परिचय-

मृच्छकटिकम् एक प्रकरण ग्रन्थ है जो कि शूद्रक की कृति के रूप में प्रसिद्ध है । दस अङ्कों के इस प्रकरण ग्रन्थ में परम्परागत राजा-रानी के प्रेम का वर्णन न करके चारुदत्त नामक ब्राह्मण तथा वसन्तसेना नामक गणिका के सच्चे प्रेम का वर्णन किया गया है। प्रथम भाग चारुदत्त-वसन्तसेना के प्रेम का वर्णन करता है ।दूसरा भाग (राजनैतिक भाग) आर्यक की राज्यप्राप्ति का वर्णन करता है । यह दूसरा भाग कवि की अपनी कल्पना का परिणाम है। दोनों को नाटककार मे कुशलता के साथ संश्लिष्ट किया है। इस महत्त्वपूर्ण कथा में वसन्तसेना द्वारा बालक की मिट्टी की गाड़ी में सोने के आभूषण भर देने की घटना अत्यन्त महत्व है। इसी घटना के आधार पर इस प्रकरण का मृच्छकटिकम् नामकरण हुआ। इसकी संक्षिप्त कथा अग्रलिखित हैं

कथा सारांश-

प्रथम अङ्क- इस अंक का नाम अलङ्कार-न्यास है। इसमें उज्जयिनी की सुप्रसिद्ध गणिका वसन्तसेना को राजा का साला शकार प्राप्त करना चाहता है एवं इसी प्रयोजन में वह अँधेरी रात में विट व चेट के साथ वसन्तसेना का पीछा करता है। वसन्तसेना रात्रि का लाभ उठाते हुए रास्ते में चारुदत्त के घर में छिप जाती है तथा शकार से बचने हेतु अपने गहनों को चारूदत्त के घर पर रख देती है।

द्वितीय अङ्क- इस अंक का नाम द्यूतक-संवाहक है। इस अङ्क में चारुदत्त का सेवक संवाहक आता है। जुआरी और द्यूतकारों का मुखिया (माथुर) उसका पीछा करते हुए आते हैं। वसन्तसेना अपने स्वर्णभूषण देकर संवाहक को मुक्त कराती है। संवाहक विरक्त होकर बौद्ध-भिक्षु बन जाता है। वसन्तसेना का उन्मत्त हाथी बौद्धभिक्षु को पकड़ लेता है, तब वसन्तसेना का सेवक कर्णपूरक उसे हाथी से छुड़ाता है। प्रसन्न होकर चारुदत्त कर्णपूरक को पुरस्कारस्वरूप एक दुशाला देता है।

तृतीय अङ्क- इस अंक का नाम सन्धिच्छेद है। शर्विलक अपनी प्रेमिका तथा वसन्तसेना की दासी मदनिका को दासता से मुक्ति दिलाने हेतु चारुदत्त के घर में सेंध लगाकर वसन्तसेना के गहने चुरा लेता है, जिससे चारुदत्त को बहुत कष्ट होता है। चारुदत्त की पत्नी धृता अपने पति को लोकापवाद से बचाने हेतु उन आभूषणों के बदले अपना बहुमूल्य हार रत्नमाला देती है जिसे विदूषक वसन्तसेना के यहाँ पहुँचा देता है।

चतुर्थ अङ्क- इस अंक का नाम मदनिका-शर्विलक है। शर्विलक चुराए हुए स्वर्णाभूषण लेकर अपनी प्रेमिका मदनिका के पास आता है। मदनिका अपनी मालकिन के गहने पहचान जाती है। और शर्विलक मदनिका के कहने पर वे आभूषण चतुराईपूर्वक यह कहकर वसन्तसेना को दे देता है कि आर्य चारुदत्त ने आपके पास भेजा है। उधर मंत्री (विदूषक) के द्वारा स्वर्णाभूषणों के बदले रत्नमाला भी वसन्तसेना के पास पहुंच जाती है।

पंचम अङ्क- इस अंक का नाम दुर्दिन है। वसन्तसेना विट तथा चेटी के साथ चारुदत्त के प्रति अभिशरण करती है। तेज झंझावात के साथ वर्षा होती है और चारुदत्त उसकी प्रतीक्षा में बैठा होता है। वसन्तसेना

वहां पहुचकर स्वर्णभूषण का सारावृत्तान्त सुनाती है और रात्रि में चारुदत्त के घर ही विश्राम करती है।

षष्ठ अङ्क- इस अंक का नाम प्रवहण विपर्यय है। वसन्तसेना चारुदत्त की पत्नी धूता को रत्नमाला लौटाना चाहती है, इसलिए वसन्तसेना, चारुदत्त से मिलने के लिये पूर्वनिर्धारित पुष्पकरण्डक उद्यान में जाना चाहती है लेकिन भ्रमवश चारुदत्त द्वारा भेजी गई गाड़ी के बदले समीप खड़ी हुई शकार की गाड़ी में बैठ जाती है। इसी समय पालक द्वारा बन्दी बनाया गया आर्यक भागकर आता है। चारुदत्त की गाड़ी को खाली पाकर उसमें बैठ जाता है। मार्ग में चन्दनक आर्यक को अभय दान देकर उसी गाड़ी आगे जाने देता है।

सप्तम अङ्क- इस अंक का नाम आर्यकापहरण है। आर्यक पुष्पकरण्डक उद्यान में पहुँचता है। चारुदत्त उसे देखता है और प्रेमपूर्वक उसे विदा कर देता है।

अष्टम अङ्क- इस अंक का नाम वसन्तसेना मर्दन है। वसन्तसेना उद्यान में पहुँचती है,पर वहाँ शकार को देखकर सहम जाती है। शकार उसके प्रति प्रेम-प्रदर्शन करता है और स्वीकार न करने पर उसका गला घोंटकर मारने का प्रयास करता है। शकार वहाँ से भाग जाता है। इधर संवाहक, जो बौद्ध भिक्षु है, वसन्तसेना को मरी समझकर पास जाता है, उसे होश में लाकर समीप के विहार में ले जाता है।

नवम अङ्क- इस अंक का नाम व्यवहार है। शकार कचहरी जाकर चारुदत्त पर यह अभियोग लगाता है कि उसने वसन्तसेना को मार डाला है। कचहरी में चारुदत्त का मामला पेश होता है। इसी समय विदूषक आता है और उसके पास से वसन्तसेना के गहने बरामद होते हैं। प्रमाण मिलने पर चारुदत्त को फाँसी का दण्ड दे दिया जाता है।

दशम अङ्क- इस अंक का नाम उपसंहार है। चाण्डाल, चारुदत्त को फाँसी देने के लिए श्मशान की ओर ले जाते हैं। इसी बीच बौद्धभिक्षु वसन्तसेना को ले आता है। इधर राज्य में विप्लव होता है। शर्विलक राजा पालक को मारकर आर्यक को राजा बना देता है।चारुदत्त को फाँसी से छुटकारा मिल जाता है, शकार को झूठे अभियोग के लिए फाँसी की आज्ञा होती है, पर चारुदत्त उसे क्षमा दिलवा देता है। चारुदत्त और वसन्तसेना का विवाह हो जाता है और भरत-वाक्य के साथ प्रकरण समाप्त होता है।

प्रमुख विवरण-

॥मङ्गलाचरण॥ (आशीर्वादात्मक)

''पर्यङ्कग्रन्थिबन्धद्विगुणितभुजगाश्लेषसंवीतजानो-
रन्तः प्राणावरोधव्युपरतसकलज्ञानरुद्धेन्द्रियस्य।
आत्मन्यात्मानमेव व्यपगतकरणं पश्यतस्तत्त्वदृष्ट्या
शम्भोर्वः पातु शून्येक्षणघटितलयब्रह्मलग्नः समाधिः।।''

योगासन की पर्यङ्क नामक ग्रन्थि को बांधने के लिये अथवा बांधने से दोहराये गये सर्प के लपेटने से बंधी हुयी जंघाओं वाले, (यौगिक प्रक्रिया के शरीर के) भीतर ही प्राण आदि (पाँच) वायुओं को रोक देने से विषयज्ञानशून्य इन्द्रियों वाले, यथार्थज्ञान द्वारा अपने में परमात्मा का ही व्यापार शून्यरूप से अथवा कारणशून्य रूप से अनुभव करने वाले, (योगिराज भगवान) शङ्कर के निराकार का दर्शन अनुभव करने से होने वाली तल्लीनता के कारण ब्रह्म में लगी हुई समाधि=चित्त की एकाग्रता (अर्थात् समाधिकालीन शङ्कर भगवान) आप सभी सामाजिकों की रक्षा करें ।

स्तुति	-	शिव,
छन्द	-	स्रग्धरा,
लेखक	-	शूद्रक (300 ई.पू.- 400 ई.पू.)
नायक	-	चारुदत्त (धीरप्रशान्त) गरीब ब्राह्मण,
पत्नी	-	धूता,
नायिका	-	वसन्तसेना साधरण स्त्री (गणिका)
प्रतिनायक	-	शकार,
विदूषक	-	मैत्रेयः
विधा	-	प्रकरण,
अंक	-	(10)
कथानक	-	लोकाश्रित,
उपजीव्य	-	भास का चारुदत्त नाटक, वृहत्कथा
भाषा	-	गुणाढ्य (पैशाची भाषा)
अङ्गीरस	-	सम्भोगश्रृंगार,
नामकरण	-	छठवें अंक की घटना के आधर पर।

॥**पात्र परिचयः**॥

सूत्रधार - प्रधान नट,
नटी – पत्नी,
चारुदत्त - दरिद्र द्विजसार्थवाह, (नायक),
वसन्तसेना- गणिका, नायिका ।
मैत्रेय - चारुदत्त का मित्र (विदूषक),
शकार - प्रतिनायक (राजा पालक का श्यालक),
विट, चेट - शकार के दास- स्थावरक चेट,
वर्धमानक - चारुदत्त का दास,
संवाहक - चारुदत्त का भूतपूर्व भृत्यअ,
कर्णपूरक - वसन्तसेना का भृत्य,
शर्विलक- मदनिका का प्रेमी, ब्राह्मण चोर,

चेट, कुम्भीलक चेट - वसन्तसेना के दास,

स्थावरक चेट- बैलगाड़ी चलाने वाला,

विट - वसन्तसेना का परिचारक,

रोहसेन - चारुदत्त का पुत्र,

बन्धूल – वैश्यापुत्र,

आर्यक - राजा पालक का कैदी पश्चात् राजा,

चन्दनक - राजा पालक का बलपति,

वीरक - राजा पालक का सेनापति,

भिक्षु - बौद्ध सन्यासी चारुदत्त का भूतपूर्व भृत्य, आश्रम का संवाहक,

शोधनक - न्यायालय में काम करने वाले नौकर,

माधुर – सभिक द्यूतक्रीडाध्यक्ष

द्युतकर, दर्दुरक – जुआरी,

चूर्णवृद्ध - चारुदत्त का मित्र,

अधिकरणिक-न्यायाधीश,

मदनिका - चारुदत्त की परिचारिका।

खण्डमोटक - वसन्तसेना का हाथी।

चन्दनक - पृथ्वी का दण्डपालक।

भिक्षु (संवाहक) - विहारों का कुलपति ।

अंकों की संज्ञा-

अङ्क	संज्ञा
प्रथम अङ्क	अलङ्कार विन्यास
द्वितीय अङ्क	द्यूतकर संवाहक
तृतीय अङ्क	सन्धिच्छेद
चतुर्थ अङ्क	मदनिका शार्विलक संवाद
पञ्चम अङ्क	दुर्दिन
षष्ठ अङ्क	प्रवहणविपर्यय (यान-परिवर्तन)
सप्तम अङ्क	आर्यक अपहरण
अष्टम अङ्क	वसन्तसेना मर्दन
नवम अङ्क	व्यवहार
दशम अङ्क	संहार (संहारक)

मुख्य सन्दर्भ-

- इसमें 7 भाषाओं का प्रयोग किया गया है – **"शौरसेनी"** आदि।
- **नायिकानायकाख्यानात् संज्ञा प्रकरणादिषु।**
- मृच्छकटिकम् पर (गिरीश कनार्ड) के निर्देशन में **"उत्सव"** नामक फिल्म भी बनी है।
- चारुदत्त उज्जयिनी का एक व्यापारी ब्राह्मण और दरिद्र युवक था।
- वसन्तसेना 'वसन्ताम्री' की तरह थी।

सूक्तियां -

- लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।। **विट- 1\34॥**
- उदयति हि शशाङ्कः कामिनी गण्डपाण्डुः।। **चारुदत्त- 1/57॥**
- शिक्षाबलेन च बलेन च कर्ममार्गम्।। **शर्विलक- 3/9॥**

॥प्रथम अङ्क॥

- शून्यमपुत्रस्य गृहं, चिरशून्यं नास्ति यस्य सन्मित्रम्।
  मूर्खस्य दिशः शून्याः, सर्वं शून्यं दरिद्रस्य॥ **सूत्रधार-1/8॥**
- अल्पक्लेशं मरणं दारिद्र्यमनन्तकं दुःखम् ॥ **चारुदत्त- 1/11॥**

निर्बुद्धिः क्षयमेति अहो निर्धनता सर्वपदामास्पदम् **चारुदत्त-1/14**

- निस्तेजाः परिभूयते ॥ **चारुदत्त- 1/14॥**
- मुमूर्षुर्यो भवति न स खलु जीवति ॥ **शकार-1/30।।**
- न पुष्पमोषमर्हति उद्यानलता ।। **विट-।।**
- गुणः खलु अनुरागस्य कारणम् न पुनर्बलात्कारः॥
  -वसन्तसेना ॥
- रत्नं रत्नेन सङ्गच्छते ।। **विट- ।।**
- मन्ये निर्धनता प्रकाममपरं षष्ठं महापातकम्।। **चारुदत्त-1/37**
- स्वके गेहे कुक्कुरोऽपि तावत् चण्डो भवति।।**विदूषक।।**
- चारित्र्येण विहीन आढ्योपि च दुर्गतो भवति ।।**मैत्रेय 1/43 ।।**
- आलाने गृह्यते हस्ती वाजी वल्गासु गृह्यते।
  हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम्।। **विट-1/50॥**
- यदा तु भाग्यक्षयपीडितां दशां,
  नरः कृतान्तोपहितां प्रपद्यते।
  तदाऽस्य मित्राण्यपि यान्त्यमित्रतां,
  चिरानुरक्तोऽपि विरज्यते जनः।। **चारुदत्त- 1/53।।**
- पुरूषेषु न्यासानिक्षिप्यन्ते न पुनर्गेहेषु ।। **वसन्तसेना- 1।।**
- बहुदोषा हि शर्वरी ।। **चारुदत्त- 1/58।।**
  भाग्यक्रमेण हि धनानि भवन्ति यान्ति च।

नष्टधनाश्रयस्य सौहृदादपि जनाः शिथिली भवन्ति॥ **चारुदत्त-1/13॥**

॥द्वितीय अङ्क॥

- सुमेरुशिखर-पतनसन्निभं द्यूतम्।। **संवाहक- 2/6।।**
- य आत्मबलं ज्ञात्वा भारं तुलितं वहति मनुष्यः ।
  तस्य स्खलनं न जायते न च कान्तारगतो विपद्यते।।
  संवाहक- 2/14॥
- अपेयेषु तडागेषु बहुतरमुदकं भवति ।। **वसन्तसेना ।।**
- सत्कारधनः खलु सज्जनः।। **संवाहक- 2/15।।**

- वासपादपविसंष्ठुलतया पक्षिणः इतस्ततोऽपि अहिण्डन्ते।।

वसन्तसेना- 2।।

॥तृतीय अङ्क॥

- अनतिक्रमणीया भगवती गोकाम्या, ब्राह्मणकाम्या च ॥

-शर्विलक ॥

- शङ्कनीया हि लोकेऽस्मिन् निष्प्रतापा दरिद्रता ।।

-चारुदत्त-3/24॥

॥चतुर्थ अङ्क॥

- स्वैदोषैर्भवति हि शङ्कितो मनुष्यः ।।

-शर्विलक 4/2।।

- साहसे श्रीः प्रतिवसति।।

-शर्विलक 4।।

- रक्तं पुरुषं स्त्रियः परिभवन्ति ।।

-शर्विलक 4/13।।

- वेश्या श्मशानसुमना इव वर्जनीयाः।।

-शर्विलक 4/14।।

- न पर्वताग्रे नलिनी प्ररोहति,
  न गर्दभा वाजिधुरं वहन्ति।
  यवाः प्रकीर्णा न भवन्ति शालयो,
  न वेशजाताः शुचयस्तथाङ्गना।। **शर्विलक** 4/17।।
- स्त्रियो हि नाम खल्वेता निसर्गादेव पण्डिताः।
  पुरुषाणां तु पाण्डित्यं शास्त्रैरेवापदिश्यते ।।

-शर्विलक 4/19।।

- न चन्द्रादातपो भवति।। **मदनिका** 4।।
- निशायां नष्टचन्द्रतपो दुर्लभो मार्गदर्शकः।।

-शर्विलक 4/21 ।।

- गुणेषु यत्नः पुरुषेण कार्यो न किञ्चिदप्राप्यतमं गुणानाम्।
  गुणप्रकार्षादुडुपेन शर्भोरलंघ्यमुल्लंघितमुत्तमाङ्गम्।।

-शर्विलक 4/23॥

॥षष्ठ अङ्क॥

- दैवी च सिद्धिरपि लंघयितुं न शक्या बलवता सह को विरोधः।।

आर्यक- 6/2 ।।

- वरं व्यायच्छतो मृत्युर्नगृहीतस्य बन्धने ।। **आर्यक**- 6/17 ।।

॥सप्तम अङ्क॥

- न कालमपेक्षते स्नेहः ।। **चारुदत्त**- 7।।

॥अष्टम अङ्क॥

- विषमा इन्द्रियचौरा हरन्ति चिरसञ्चितं धर्मम्।। **विट** 8/1।।
- मूर्खैर्भाराक्रान्ता वसुन्धरा।। **विट**-8/6।।
- हंसी हंसं परित्यज्य वायसं समुपस्थिता ।। **विट**-8/16।।
- दुष्करं विषमोषधीकर्तुम् । **विट** ।।
- न लताः पल्लवच्छेदमर्हन्त्युपवनोद्भवाः।। **विट**-8/21 ।।
- विविक्तविस्रम्भरसो हि कामः।। **विट**-8/30।।

॥नवम अङ्क॥

- सूर्योदये उपरागो महापुरुषविनिपातमेव कथयति ।।9।।
- छिद्रेष्वनर्था वहुलीभवन्ति ।। **चारुदत्त**- 9/26।।
- मूलेछिन्ने कुतः पादपस्य पालनम्।। **विदूषक**- 9।।

॥दशम अङ्क॥

- पुरुषभाग्यानामचिन्त्याः खलु व्यापाराः। **चारुदत्त**- 10।।
- सर्वः खलु भवति लोके-लोकः सुखसंस्थितानां चिन्तायुक्तः ।

चाण्डालौ॥

- विनिपतितानां नराणां प्रियकारी दुर्लभो भवति ।।10/15॥
- परोऽपि बन्धुः समसंस्थितस्य मित्रं न कश्चिद्विषमस्थितस्य

चारुदत्त- 10/16 ।।

- गगनतले प्रतिवसन्तौ चन्द्रसूर्यावपि विपत्तिं लभेते ।।

चाण्डाल- 10॥

- सर्वत्रार्जवं शोभते।। **शर्विलक**- 10।।

॥गद्यकाव्य॥

1. दशकुमारचरितम्

आचार्य दण्डी (600 ई. के लगभग) कृत **दशकुमारचरितम्** एक उत्कृष्ट कथा ग्रन्थ है। दशकुमारचरितम् का वर्तमान उपलब्ध स्वरूप तीनभागों में विभाजित है-

1. पूर्वपीठिका 2. दशकुमारचरितम् 3. उत्तर-पीठिका।

अधिकांश विद्वानों का मानना है कि इनमें दशकुमारचरितम् ही आचार्य दण्डी की रचना है जिसमें कुल आठ उच्छ्वास है। दशकुमारचरितम् कथा का प्रारम्भ पुष्पपुरी (पटना) के राजा राजहंस से होता है। वे मानसार से पराजित हो जाने के बाद वन में चले जाते हैं, वहीं राजहंस की पत्नी वसुमती को राजवाहन नामक पुत्र होता है। राजवाहन के साथ ही राजा के मन्त्री-पुत्रों का भी जन्म हुआ। बड़े होने पर कुमार राजवाहन अपने सहयोगी मित्र अमात्यकुमारों के साथ देश- भ्रमण के लिए निकल पड़ा। नियति की वामता के कारण सभी एक-दूसरे से बिछुड़कर अलग-अलग देशों में भटक गए। संकटमय एवं कंटकाकीर्ण पथों से गुजरकर एक दिन सभी राजकुमार राजवाहन के पास लौट आए और सभी ने अपनी-अपनी

राम-कहानी कह डाली। इन्हीं दस राजकुमारों द्वारा कथित घटनाओं या कहानियों का संग्रह दशकुमारचरितम् कथा है।

कथा सारांश-

प्रथम उच्छ्वास में राजवाहन की कथा है तथा उसके साथी उसके पास आते हैं। अपने साथियों को बहुत दिनों बाद पाकर वह उनसे अपने अनुभवों की कथा कहने का आदेश देता है। बाकी **सात उच्छ्वासों में** सात कुमारों की कहानियाँ हैं। इस आपबीती कहानी में सबसे पहले-पहले अपहारवर्मा का है। यह कथा अपेक्षाकृत लम्बी, जटिल और मनोरञ्जक है। अपहारवर्मा गरीबों की सहायता के लिए किस प्रकार धनिकों के घर जो कार्य करता है, प्रेमियों को आपस में मिलाने का कैसा स्वांग रचता है और नीचता, दुष्टता एवं धोखेबाजी के शिकार बने लोगों की किस उपाय सें रक्षा करता है, इन सबका विचित्र वर्णन है। इसमें **काममञ्जरी** नाम की वेश्या द्वारा **मरीचि** नामक तपस्वी को विदग्धतापूर्वक प्रलोभित करने का तथा तापसों के ढोंग का बड़ा ही मार्मिक चित्रण मिलता है। इसके बाद **उपहारवर्मा** की कहानी है। इसमें कथा-नायक के पिता के खोए हुए राज्य की प्राप्ति का वर्णन है। नायक चालाकी से राजा का वध कर देता है। वह रानी का विश्वासपात्र बनकर मन्त्र-सिद्धि से राजा बन जाता है।

अगली कहानी कुमार **अर्थपाल** की है। अर्थपाल काशीराज के द्वारा अपमानित अपने पदच्युत पिता को पुनः मन्त्री बना देता है और राजकुमारी मणिकर्णिका के प्रेम को प्राप्त करता है। इसके बाद प्रमति की कहानी है। इसमें प्रमति श्रावस्ती की राजकुमारी नवमालिका को स्वप्न में देखता है। वह स्त्री का वेश बनाकर अन्तःपुर में प्रवेश करता है और राजकुमारी से मिलता है। अगली कहानी **मित्रगुप्त** की है जो सुह्मदेश की राजकुमारी कन्दुकवती को प्राप्त करता है। इसमें एक ब्रह्म राक्षस की कथा आई है, जो मित्रगुप्त से चार प्रश्न करता है और उत्तर न देने पर उसे मार डालने की धमकी देता है। इन्हीं प्रश्नों के उत्तर में धूमनी, गोमिनी, निम्बवती आदि की कथा आई है। सातवीं कहानी **मन्त्रगुप्त** की है। आरम्भ में मन्त्रगुप्त एक कापालिक सिद्ध की बलिभूता **कलिंग राजपुत्री कनकलेखा** को बचाता है।

अन्तिम कहानी **विश्रुत** की है। जो दण्डी की अपूर्ण कथा है और **उत्तरपीठिका** में इसे पूर्ण कर दिया गया है। इस कथा में विश्रुत में अपने आश्रयदाता विदर्भ के राजकुमार के खोए हुए राज्य को पुनः प्राप्त करता है। वह भगवती दुर्गा की मूर्ति में स्थित होकर अपनी इष्ट सिद्धि को प्राप्त करता है।

दशकुमारचरितम् के मुख्य अंश-

॥मङ्गलाचरण॥

**''ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृति भवनाम्भीरुहो नालदण्डः
क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः।
ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः।''**

भगवान्, वामन का चरणदण्ड तुम्हारा अर्थात् पढने पढाने वालों का कल्याण करें । यहां का भाव यह है कि भगवान् विष्णु ने बौने बनकर बलि नामक दैत्यराज से तीन पैर पृथ्वी भिक्षा में मांगी। उस मांगी हुई पृथ्वी को नापने के लिये भगवान् ने अपना पैर ऊपर को फैलाया है उस समय ऊपर की तरफ फैलाया हुआ यह चरणदण्ड ऐसा मालूम होता है मानों यह ब्रह्माण्डरूपी छत्र का आधार दण्ड है, ब्रह्माजीकी पैदाइश के कमल का नाल है, पृथ्वीरूपी नौका का कूपदण्ड है, आकाश से पृथ्वी की तरफ झरती हुई आकाशगङ्गा रूपी ध्वजा का वांश है, तारागणरूपी पहिये का अक्षदण्ड है, भगवान के त्रैलोक्य विजय का सूचक स्तम्भ है, और विद्वान या देवताओं से द्वेष करने वालों के लिये साक्षात् कालका दण्ड हैं ।

छन्द	-	स्रग्धरा
ग्रन्थ	-	दशकुमारचरितम्
ग्रन्थकार	-	दण्डी
समय	-	600 ई. के लगभग
काव्यविधा	-	कथा
आधारग्रन्थ	-	गुणाढ्य कृत बृहत्कथा,
पिता	-	वीरदत्त,
माता	-	गौरी,
उच्छ्वास	-	(8)
तीन भाग	-	पूर्वपीठिका, चरित, उत्तरपीठिका,
प्रमुख रस	-	शृङ्गार
नायक	-	राजवाहन
नायिका	-	अवंतिसुन्दरी
शैली	-	वैदर्भी शैली,
गुण	-	प्रसाद एवं माधुर्य
रीति	-	वैदर्भी,

॥पात्र परिचय॥

नायक - राजवाहन (मगधनरेश)
नायिका- विलासवती (अवन्तिसुन्दरी),
राजहंस - राजवाहन के पिता,
प्रतिनायक - मानसार (मालवराज) वसुमती पत्नी
अवन्तिसुन्दरी - मानसार की पुत्री
पुण्यवर्मा - विदर्भनरेश,
अनन्तवर्मा - पुण्यवर्मा का पुत्र,
वसुन्धरा – अनन्तवर्मा की पत्नी,
भास्करवर्मा - अनन्तवर्मा का पुत्र
मंजुवादिनी - अनन्तवर्मा की पुत्री (13वर्ष) (ज्वर से शरीर त्याग किया),

वसुरक्षित - अनन्तवर्मा का मन्त्री,

बिहारभद्र - अनन्तवर्मा का सेवक, इसने राजा को पथभ्रष्ट किया था।

चन्द्रपालित - इन्द्रपालित का बेटा ये भी राजा को उपदेश देता है।

वसन्तभानु – 'अश्मक' देशीय राजा (नीतिविद)

इन्द्रपालित - वसन्तभानु का मन्त्री,

चन्द्रपालित - इन्द्रपालित का दुराचारी पुत्र ।

भानुवर्मा- 'वनप्रदेश' का राजा इसको वसन्तभानु ने अनन्तवर्मा से लड़वाया।

अवन्तिवर्मा – 'कुन्तलदेश' का राजा।

वीरसेन – 'मुरलदेश' का राजा।

एकवीर – 'ऋचीक' देश का राजा।

कुमारगुप्त – 'कोंकण' देश का राजा।

नागपाल – 'सासिक्य' देश का राजा।

प्रहारवर्मा – 'मिथिला' का राजा।

चण्डवर्मा प्रचण्डवर्मा - अवन्तिसुन्दरी के भाई।

मित्रवर्मा - अनन्तवर्मा का सौतेला भाई।

मंजुवादिनि - मित्रवर्मा की पुत्री।

आर्यकेतु - मित्रवर्मा का मन्त्री।

दण्डी की रचनाएं-

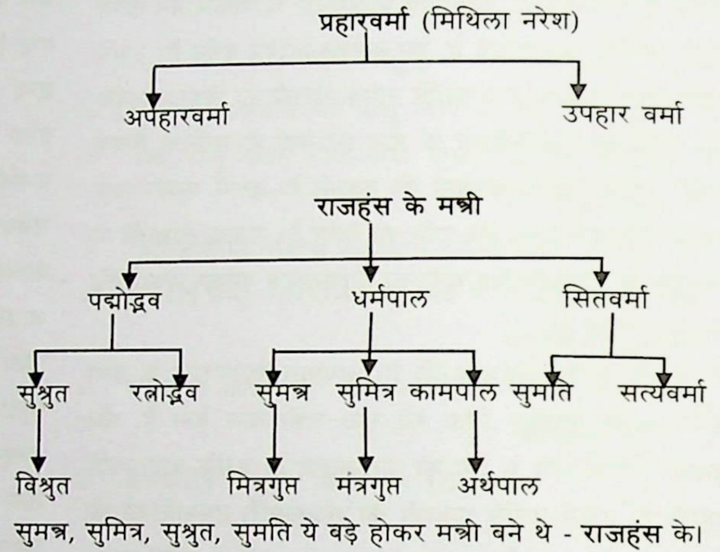
1. दशकुमारचरितम्, 2. काव्यादर्श 3. अवन्तिसुन्दरी कथा,

दशकुमारचरितम् की टीकाएं-

1. भूषण - शिवराम,
2. पदचन्द्रिका- कवीन्द्र,
3. लघुदीपिका - भानुचन्द्र,

दशकुमारचरितम् के अष्टम उल्लास का विशिष्ट विवरण-

- दस राजकुमारों का विभिन्न इतिवृत वर्णित है। द्वितीय खण्ड दशकुमारचरितम् जिसमें 8 उच्छ्वास हैं, वह मूल भाग है।
- **"दण्डिनः पदलालित्यं"**
- दशकुमारचरितम् का अष्टम उच्छ्वास - **विश्रुतचरितम्।**
- विश्रुत की पत्नी – **मञ्जुवादिनी** ।
- तीन भाग - **1. पूर्वपीठिका 2. दशकुमारचरित 3. उत्तरपीठिका।**
- कथा का प्रारम्भ - **पुष्पनगरी** से। (मगध देश की राजधानी)
- 'राजभूप'/'राजहंसभूप' की राजधनी - **पुष्पपुरीनगरी।**
- इसमें चार विधाओं का वर्णन मिलता है – **त्रयी, वार्ता, दण्डनीति, आन्वीक्षिकी।**
- प्रचण्डवर्मा को मारा - **विश्रुत** ने।
- राजवाहन को समाचार सुनाने वाला – **विश्रुत** ।
- **अजिनेन** - काले हिरण की चमड़ी से।
- रानी ने मित्रवर्मा को जहर दिया जिसका नाम था - **वत्सनाभ**
- भास्करवर्मा को पानी पिलाते समय कुएं में गिरा – **नालिजंघा**
- दुर्गुणों का आचार्य काम शास्त्र में पारंगत – **बिहारभद्र।**
- अनन्तवर्मा को जुए की विशेषता तथा व्यसनों का वर्णन करता है -**चन्द्रपलित।**
- मानसार की पुत्री अवन्तिसुन्दरी का परिणय वर्णन- **पञ्चम उच्छ्वास** में।
- **चतस्रो राजविद्या** – 1. त्रयी 2. वार्ता, (अर्थशास्त्र का ज्ञान, राजनीति) 3. आन्विक्षिकी 4. दण्डनीति। ज्ञान, कर्म उपासना का वैदिक ज्ञान त्रयी से प्राप्त होता है ।



सुमन्त्र, सुमित्र, सुश्रुत, सुमति ये बड़े होकर मन्त्री बने थे - **राजहंस** के।

❖ **प्रमुख वर्णन-**

दुर्भिक्षवर्णन, राजशास्त्रवर्णन, कुट्टनिवर्णन, विन्ध्यवासिनि देवीवर्णन,

प्रमुख सूक्तियां-

- ➢ ब्रह्मकल्पा इमे ब्राह्मणाः।
- ➢ पठन्तश्चापठद्भिरतिसन्धीयमाना बहवः।
- ➢ अर्थमूला हि दण्डविशिष्टकर्मारम्भाः।
- ➢ जीवितं हि नाम जन्मवतां चतुःपञ्चाप्यहानि। तत्रापि भोग्यमल्पाल्पंवयः खण्डम्।
- ➢ "देव, मयाऽपि परिभ्रमता कोऽपि कुमारः ....दृष्टः"। - **विश्रुत परिभ्रमण वर्णन।**

2. हर्षचरितम्

परिचय-

महाकवि बाणभट्ट द्वारा लिखित हर्षचरितम् एक आदर्श **आख्यायिका** है। बाण का समय सातवीं शताब्दी ई. के पूर्वार्ध माना जाता है। यह ग्रन्थ

आठ उच्छ्वासों में विभक्त है जिसमें बाण ने अपने आश्रयदाता और अपने समय के महान् सम्राट हर्षवर्धन के जीवन से सम्बद्ध घटनाओं का रोचक वर्णन किया है। **प्रथम तीन उच्छ्वासों** में बाणभट्ट की अपनी आत्मकथा वर्णित है। शेष उच्छ्वासों में कवि ने हर्ष के पूर्वजों का वर्णन करते हुए हर्ष के जन्म से लेकर राज्यश्री के मिलने तक का वर्णन किया है।

कथा सारांश-

प्रथम उच्छ्वास - बाणभट्ट अपने वंश के अवतरण तथा अपनी असंयत यौवन पर्यन्त जीवनी का वर्णन करते हैं।

द्वितीय उच्छ्वास - सम्राट हर्ष से बाण का परिचय और राज-सम्मान का वर्णन है।

तृतीय उच्छ्वास- हर्ष का वास्तविक जीवन-चरित्र सुनाने के लिए यह कथा आगे की ओर बढ़ती है। तदनन्तर हर्ष के अंश, उनकी राजधानी स्थाणीश्वर तथा प्रसंगप्राप्त पुरावृत्ताख्यानगत नृपति पुष्पभूति की प्रशस्ति व उनके मित्र एवं साहसिक कार्यों में उनके साथी भैरवाचार्य का प्रयत्न-साध्य वर्णन मिलता है।

चतुर्थ उच्छ्वास- श्रीहर्ष के वंश के आदिपुरुष पुष्पभूत के वंशज राजाओं का केवल अस्पष्ट संकेत है। तदनन्तर महाराज प्रभाकरवर्धन के शौर्य का वर्णन है। उनकी पत्नी रानी यशोवती थी। उनके दो पुत्र राज्यवर्धन एवं हर्षवर्धन तथा एक पुत्री राज्यश्री हुई। राज्यश्री का पाणिग्रहण संस्कार मौखरि वंशज राजा ग्रहवर्मा से हुआ।

पंचम उच्छ्वास- राज्यवर्धन का हूणों पर आक्रमण व हर्ष के लौटने पर पिता की गम्भीर बीमारी के चलते मृत्यु तथा माता के द्वारा आत्महत्या की बात करने सुनकर अत्यन्त दुःखी होना एवं हर्ष का विलाप वर्णित है।

षष्ठ उच्छ्वास में- राज्यवर्धन का हूण विजय के पश्चात् लौटना, पितृशोक से विह्वल होना, हर्ष पर राज्य भार डालना, मालव नरेश द्वारा ग्रहवर्मा की हत्या, राज्यश्री को बन्दी बनाना, राज्यवर्धन का मालवा नरेश के वधार्थ भणि के साथ सेना सहित प्रस्थान, मालव राजा को हराना, लौटते समय गौड़ राजा (शशांक) द्वारा छलपूर्वक राज्यवर्धन की हत्या तथा गौड़ नरेश पर आक्रमण का निर्णय वर्णित है।

सप्तम उच्छ्वास में- अत्यन्त अव्यवस्था के कारण उत्पन्न विविध समस्याओं व हर्ष के दिग्विजय का विवरण है। असम के राजा के एक राजदूत का भी उल्लेख मिलता है, जो हर्ष के सामने एक अत्यन्त सुन्दर छत्र का उपहार उपस्थित करता है।

अष्टम उच्छ्वास में- हर्ष का विन्ध्य वन में गमन, ग्रहवर्मा के बाल-मित्र बौद्ध मुनि दिवाकर मिश्र के आश्रम में पहुँचना, एक भिक्षुक द्वारा राज्यश्री के सती होने की सूचना पाना राज्यश्री को सती होने से बचाने के लिए हर्ष का दौड़कर जाना, दिवाकर मिश्र का राज्यश्री को सान्त्वनाप्रद उपदेश और हर्ष का राज्यश्री को लेकर वापस आना वर्णित है।

हर्षचरितम् के मुख्य अंश-

॥मङ्गलाचरण॥

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्बमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥

शिरस्थ चन्द्र और चामर से सुशोभित होने वाले ऐसे त्रैलोक्य रूपी नगर के आरम्भ के मूलस्तम्भ वाले ऐसे शम्भू के लिए नमस्कार है ।

ग्रन्थ	-	हर्षचरितम्
ग्रन्थकार	-	बाणभट्ट
समय	-	7वीं शताब्दी
काव्यविधा	-	आख्यायिका
आधारग्रन्थ	-	इतिहास प्रसिद्ध
सर्ग/अङ्क	-	8 उच्छ्वास
प्रमुख रस	-	वीर
नायक	-	हर्षवर्द्धन
राजधानी	-	स्कन्धावार

॥पात्र परिचय॥

प्रभाकरवर्द्धन	-	हर्ष के पिता
यशोवती	-	हर्ष की माता
राज्यवर्धन	-	बड़े भाई
राज्यश्री	-	बहन
परिवर्द्धक	-	अश्वपालक वेला-यशोमती की प्रतीहारी
कुरंगक	-	दूत
सुषेण	-	वैद्यकुमार

हर्षचरितम् के अन्य मुख्य पात्र-

सरस्वती, सावित्री, बाण, दधीच, पुण्यभूति, भैरवाचार्य।

हर्षचरितम् के मुख्य सन्दर्भ-

- च्यवन और शर्यातिपुत्री सुकन्या के पुत्र- **दधीच,**
- शोणनदी के तट पर आश्रम- च्यवन,
- दधीचि की दूती-**मालती**, पत्नी-**सरस्वती,**

- पितृजाया-'अक्षमाला' के द्वारा सरस्वती-दधीच के पुत्र सारस्वत का लालन पालन हुआ।
- अक्षमाला के पुत्र-**वत्स**।
- हर्ष का सेनापति-**सिंहनाद**,
- ह्वेनसांग हर्ष के समय में ही भारत आया था।
- रोग के स्वरूप को ठीक से जानने वाला वैद्यकुमार-**रसायन**,
- हर्ष ने स्वप्न में देखा था- जलते हुए केसरी सिंह को, रात्रि के चतुर्थ प्रहर में। हर्ष **''वेत्रपट्टिका''** के ऊपर बैठे थे।
- कुरंगक के सिर पर नीले रंग के कपड़े की पट्टी थी।
- हर्ष के पिता को रोग था- **दाहज्वर**,
- हर्ष ने देखा था-**यमपट्टिक**,
- हर्ष के पिता थे- **धवलगृह** में।
- पुराने मन्त्री मौनभाव से बैठे थे- **चन्द्रशाला** में।

उच्छ्वासों के विशिष्ट सन्दर्भ-

प्रथम उच्छ्वास- वात्स्यायनवंशवर्णन,

द्वितीय उच्छ्वास- राजदर्शन,

तृतीय उच्छ्वास -राज्यवंशवर्णन (आचार्य-भैरव वर्णन),

चतुर्थ उच्छ्वास- चक्रवर्तिजन्मवर्णन, राज्यश्री विवाह,

पञ्चमम उच्छ्वास- महाराजमरणवर्णन, प्रभाकरवर्धनमरण,

षष्ठ उच्छ्वास- राजप्रतिज्ञावर्णन, गृहवर्मा की हत्या, स्कन्दगुप्त,

सप्तम उच्छ्वास- छत्रलब्धि, विन्ध्याटवी वर्णन,

अष्टमोच्छ्वास- विन्ध्याद्रिनिवेशन।

पञ्चम उच्छ्वास की प्रमुख सूक्तियां-

➢ नियतिर्विधाय पुंसां प्रथमं सुखमुपरि दारुणं दुःखम्।
कृत्वालोकं तरला तडिदिव वज्रं निपातयति।।(1)

➢ पातयति महापुरुषान्सममेव बहूननादरेणैव।
परिवर्तमान एकः कालः शैलानिवानन्तः।। (2)

❖ **हर्ष के मन में विचार-**
''लोके हि लोकेभ्यः कठिनतयाः खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः,

➢ स्मितमितितारकेण चक्षुषा समुद्भिद्यमानस्थलकमलिनीवनामिव चकारश्चकोरेक्षणः क्षणं क्षोणीम्।

➢ मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च।
युगे युगे व्यतीतानि कस्य ते कस्य वा भवान्।। (3)

❖ **भवन की कमलिनियों की रक्षा करने वाले व्यक्ति ने (चक्रवाक्) पक्षी को आश्वासन देते हुए ऊँचे स्वर से (अपरवक्त्र) छन्द का गान किया-**

विहग! कुरु दृढं मनः स्वयं त्यज शुचमास्स्व विवेकवर्तनि।
सह कमलसरोजिनीश्रिया श्रयति सुमेरुशिरो विरोचनः।।

➢ कस्यचिदभूद्भविष्यति वा पुनः काञ्चनतालतरुप्रांशु कायप्रमाणमिदम्? (**काञ्चनतालतरु**- सोने का वृक्ष),

➢ निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते।। (1-16)

➢ अतिदुर्धरो बान्धवस्नेहः सर्वप्रमाथी। - **प्रभाकरवर्द्धन**,

➢ विश्वस्तानां यशसा स्थातुमिच्छामि लोके। - **यशोमती**।

3. कादम्बरी

परिचय-

कादम्बरी संस्कृत साहित्य की एक **कथा** है। इसके रचनाकार **बाणभट्ट** हैं। इसकी कथा सम्भवतः गूणाढ्य द्वारा रचित **(बृहद्कथा)** के राजा सुमानस की कथा से ली गयी है। यह ग्रन्थ बाणभट्ट के जीवनकाल में पूरा नहीं हो सका। उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्र **पुलिन्दभट्ट** अथवा **भूषणभट्ट** ने इस कथा को सम्पूर्ण किया और पिता द्वारा लिखित भाग का नाम **'पूर्वभाग'** एवं स्वयं द्वारा लिखित भाग का नाम **'उत्तरभाग'** रखा। जहाँ हर्षचरितम् **"आख्यायिका"** के लिए आदर्शरूप है वहाँ गद्यकाव्य कादम्बरी **"कथा"** के रूप में । वाण के ही शब्दों में इस कथा ने पूर्ववर्ती दो कथाओं का अतिक्रमण किया है। **अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेय-मतिद्वयी कथा-** कादम्बरी । सम्भवतः ये कथाएँ गुणाढ्य की वृहत्कथा एवं सुबन्धु की वासवदत्ता थीं। ऐसा प्रतीत होता है कि वाण इस कृति को सम्पूर्ण किए बिना ही दिवंगत हुए जैसा कि उनके पुत्र ने कहा हैः

याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्ध,
विच्छेदमाप भुवि यस्तु कथाप्रबन्धः।
दुःखं सतां यदसमाप्तिकृतं विलोक्य,
प्रारण्य एव स मया न कवित्वदर्पात्॥

शुकनासोपदेश-

शुकनासोपदेश कादम्बरी का ही एक अंश है। गीता की तरह शुकनासोपदेश का भी स्वतंत्र महत्व है। यह एक ऐसा उपदेशात्मक ग्रंथ है जिसमें जीवन दर्शन का एक भी पक्ष बाणभट्ट की दृष्टि से ओझल नहीं हो सका । इसमें **राजा तारापीड** का नीतिनिपुण एवं अनुभवी मन्त्री **शुकनास** राजकुमामार **चन्द्रापीड** को राज्याभिषेक के पूर्व वात्सल्य भाव से उपदेश देते हैं और रूप, यौवन, प्रभुता तथा ऐश्वर्य से उद्भूत दोषों से सावधान रहने की शिक्षा देते हैं। यह प्रत्येक युवक के लिए उपादेय उपदेश है। चन्द्रापीड को दिये गये शुकनासोपदेश में कवि की प्रतिभा का चरमोत्कर्ष परिलक्षित होता है। कवि की लेखनी भावोद्रेक में बहती हुई

सी प्रतीत होती है। शुकनासोपदेश में ऐसा प्रतीत होता है मानो सरस्वती साक्षात मूर्तिमती होकर बोल रही हैं। इसमें बाणभट्ट की शब्दचातुरी प्रदर्शित हुई है। शुकनासोपदेश का नायक राजकुमार **चन्द्रापीड** है, जो सत्व, शौर्य और आर्जव भावों से युक्त है। शुकनास एक अनुभवी मन्त्री हैं जो **चन्द्रापीड** को राज्याभिषेक के पूर्व वात्सल्यभाव से उपदेश देते हैं। वे उसे युवावस्था में सुलभ रूप, यौवन, प्रभुता एवं ऐश्वर्य से उद्भूत दोषों के विषय में सावधान कर देना उचित समझते हैं। इसे युवावस्था में प्रवेश कर रहे समस्त युवकों को प्रदत्त 'दीक्षान्त भाषण' कहा जा सकता है। 'शुकनासोपदेश' कादम्बरी का प्रवेशद्वार माना जाता है। इसमें लक्ष्मी की व्याजस्तुति एवं व्याज निन्दा का अत्यन्त मनोरम वर्णन है। **'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'** इस उक्ति को चरितार्थ करने वाला यह साहित्य है। इसके अध्ययन से काव्यात्मक तत्व का तो ज्ञान होता ही है, साथ में तत्कालीन सामाजिक ज्ञान भी प्राप्त होता है।

कादम्बरी के मुख्य अंश-

॥**मङ्गलाचरण**॥ (नमस्कारात्मक)

"**रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे**
अजाय **सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः**"॥

समस्त स्थावर जङ्गम अचित्य पदार्थों के सृष्टिकाल में रजोगुण- युक्त अर्थात् विरश्चिरूप, स्थितिकाल में सत्वगुण से व्यवहार करने वाले, अर्थात् विष्णुरूप, (और) संहार काल में तमोगुण का स्पर्श करने वाले अर्थात् महेश रूप, (अतएव) सृष्टि, स्थिति और संहार के कारण स्वरूप ब्रह्मा विष्णु महेश रूप देवत्रयी अथवा ऋक् यजुः सामरूप वेदत्रयी स्वरूप वाले, सत्वादित्रिगुणविशिष्ट अजन्मा अर्थात् नित्यस्वरूप परब्रह्म को नमस्कार है ।

छन्द	-	वंशस्थ
स्तुति	-	ब्रह्म, विष्णु, शिवरूपी परब्रह्म,
लेखक	-	बाणभट्ट,
पिता	-	चित्रभानु,
माता	-	राजदेवी,
विधा	-	कथा,
खण्ड	-	(1) पूर्वार्द्ध (2) उत्तरार्ध,
प्रधानरस	-	श्रृङ्गार,
उपजीव्य	-	गुणाढ्य की बृहत्कथा
भाषा	-	पैशाची भाषा
नायक	-	चन्द्रापीड धीरोदात्त (शूद्रक),
नायिका	-	कादम्बरी विवाह से पूर्व- (परकीया मुग्धा) विवाहोपरान्त – (स्वकीया मध्या)
सहनायक	-	वैशम्पायन (पुण्डरीक)
सहनायिका	-	महाश्वेता,
वैशिष्ट्य	-	तीन जन्मों की कथा,
रीति	-	पाञ्चाली,
गुण	-	ओज, प्रसाद, माधुर्य।

कादम्बरी के प्रमुख वर्णन -

शूद्रकवर्णन, शुकवर्णन, चाण्डालकन्यावर्णन, विन्ध्याटवीवर्णन, शबरसैन्यवर्णन, शाल्मलीवृक्षवर्णन, जाबाल्याश्रमवर्णन, विदिशा, जाबालिवर्णन, उज्ञयिनीवर्णन, तारापीडवर्णन, इन्द्रायुधवर्णन, अच्छोदसरोवरवर्णन, महाश्वेतावर्णन, कादम्बरी वर्णनः, अगस्त्याश्रम, हारीत, प्रभात, मृगया इत्यादि।

विशिष्ट सन्दर्भ -

- कादम्बरी का आरम्भ राजा शूद्रक के प्रभाव तथा उनकी, राजधानी विदिशा के वैभव वर्णन से होता है।
- शुक का जन्मविन्ध्याटवी के एक विशाल शाल्मली वृक्ष के - नीचे हुआ।
- मालवा की राजधानी -**उज्ञयिनी,**
- तारापीड की पत्नी -**विलासवती,**
- शुकनास की पत्नी -**मनोरमा।**
- चन्द्रापीड के तीन जन्म क्रमशः-
  (1) चन्द्रमा, (2) चन्द्रापीड (3) शूद्रक।
- पुण्डरीक के तीन जन्म क्रमशः-
  (1) पुण्डरीक (2) वैशम्पायन (3) शुक,
- चन्द्रापीड की सेविका पत्रलेखा पूर्व जन्म (ताम्बूलवाहिनी) में– **रोहिणी,**
- चन्द्रापीड़ा का घोड़ा -**इन्द्रायुध** पूर्व जन्म में पुण्डरीक का मित्र -**कपिञ्जल,**
- चाण्डालकन्या पूर्व जन्म में- पुण्डरीक की माता-**लक्ष्मी।**
- दिग्विजय के लिये निकले चन्द्रापीड किन्नर मिथुन का पीछा करते पहुंचे' -**अच्छोद सरोवर।** '
- अच्छोदसरोवर पर तप करती हुई महाश्वेता गन्धर्वराज हंस, गौरी की पुत्री पुण्डरीक के कान पर लगी पारिजात की (कुसुम-मञ्जरी) से (महाश्वेता) आकर्षित होती है।
- महाश्वेता की सहचरी- **तरलिका,**
- गन्धर्वराज चित्ररथ और मदिरा की पुत्री -**कादम्बरी,**
- कादम्बरी का अनुचर -**केयूरक** (वीणावाहक)
- महर्षि श्वेतकेतु और लक्ष्मी का पुत्र -**पुण्डरीक।**

- कादम्बरी की सहचरी- **मदलेखा।**
- इन्द्रायुध अश्व का सजीव वर्णन करने के कारण बाण को **'तुरङ्गबाण'** कहा जाता है।
- शुक द्वारा राजा की प्रशंसा में दाहिना पैर उठाकर गाया गया आर्या छन्द -

''स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्तिहृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्।।''

तारापीड- विलासवती,
चन्द्रापीड- कादम्बरी,
पुण्डरीक- महाश्वेता,

शुकनासोपदेश में लक्ष्मी हेतु प्रयुक्त प्रमुख विशेषण तथा संज्ञापद-

(1) इन्द्रियहरिणहारिणी	(2)खङ्गमण्डलोत्पलवनविभ्रमभ्रमरी
(3) अपरिचिता	(4) अनार्या
(5) अप्रत्ययबहुला	(6) वसुजननी
(7) तरङ्गबुद्बुदचञ्चला	(8) भीमसाहसैकहार्यहृदया
(9) तमोबहुला	(10) अचिरद्युतिकारिणी
(11) तोयराशिसम्भवा	(12) ईश्वरतामादधाना
(13)अमृतसहोदरा(कटुविपाका)	(14) विग्रहवती, अपत्यक्षदर्शन,
(15) पुरुषोत्तमरता	(16) खलजनप्रिया,
(17) चपला	(18) व्याधगीतिः
(19) परामर्शधूमलेखा	(20) निवासजीर्णवल्लभी
(21) तिमिरोद्गतिः, पुरःपताका,	(22) उत्पत्तिनिम्नगा,आपानभूमिः
(23) सङ्गीतशाला, आवासदरी	(24) उत्सारणवेत्रलता,
(25) कपटनाटकस्य प्रस्तावना	(26) राहुजिह्वा
(27) आलेख्यगता, पुस्तमयी	(28) उत्कीर्णा, श्रुता
(29) दुराचारा	(30) अकालप्रावृह

लक्ष्मी गुण -

(1) रागम् (पारिजातवल्लेभ्यः)	(2) चञ्चलताम् (उच्चैः श्रवसः)
(3) एकान्तवक्रताम् (इन्दुशकलात्)	(4) मोहनशक्तिम् (कालकूटात्)
(5) नैष्ठुर्यम् (कौस्तुभमणेः)	(6) मदम् (वारुणीमदिरायाः)
(7) न परिचयं रक्षति	(8) नाभिजनमीक्षते
(9) न रूपमालोकयते	(10) न कुलक्रममनुवर्तते
(11) न शीलं पश्यति	(12) न वैदग्ध्यं गणयति
(13) न श्रुतं आकर्णयति	(14) न त्यागमाद्रियते
(15) नाचारं पालयति	(16) न धर्ममनुरुध्यते
(17) न विशेषज्ञतां विचारयति	(18) न सत्यमनुबुध्यते
(19) न लक्षणं प्रमाणीकरोति	(20) तृष्णां संवर्धयति
(21) आशिवप्रकृतित्वमातनोति	(22) बलोपचयमाहरन्ती।

लक्ष्मी के लिये प्रयुक्त उपमाएं -

(1) गन्धर्वनगरलेखेव,
(2) आरुढमन्दरपरिवर्तावर्तभ्रान्तिजनिततसंस्कारेव।
(3) कमलिनीसञ्चरणव्यतिकरलग्ननलिननालकण्टकेव।
(4) विविधगन्धगजगण्डमधुपानमत्तेव
(5) लतेव, गङ्गेव,
(6) हिडिम्बेव
(7) दुष्टपिशाचीव
(8) रेणुमयीव
(9) वात्येव
(10) पातालगुहेव
(11) प्रावृदिव
(12) अनिमित्तामिव
(13) दीपशिखेव।

॥चम्पूकाव्य॥

1. नलचम्पू (प्रथमचम्पूग्रन्थ)

परिचय-

नलचम्पू एक चम्पूकाव्य है जिसके रचयिता **त्रिविक्रम भट्ट** हैं। संस्कृत साहित्य में **चम्पूकाव्य** का प्रथम निदर्शन इसी ग्रन्थ में हुआ है। इसमें चंपू का वैशिष्ठ्य स्फुटतया उद्भासित हुआ है। दक्षिण भारत के राष्ट्रकूटवंशी राजा कृष्ण (द्वितीय) के पौत्र, राजा जगतुग और लक्ष्मी के पुत्र, **इंद्रराज (तृतीय)** के आश्रय में रहकर त्रिविक्रम ने इस रुचिर चंपू की रचना की थी। इंद्रराज का राज्याभिषेक वि॰सं॰ 972 (915 ई.) में हुआ था और उनके आश्रित होने से कवि का भी वही समय है- **दशम शती** का पूर्वार्ध। इस चंपू के **सात उच्छ्वासों** में **नल तथा दमयंती** की विख्यात प्रणयकथा का बड़ा ही चमत्कारी वर्णन किया गया है। काव्य में सर्वत्र **शुभग संभग श्लेष** का प्रसाद लक्षित होता है।

॥मङ्गलाचरण॥

"जयति गिरिसुतायाः कामसन्तापवाहि-
न्युरसि रसनिषेकश्चान्दनश्चन्द्रमौलिः।
तदनु च विजयन्ते कीर्तिभाजां कवीना
मसकृदमृतबिन्दुस्यन्दिनो वग्विलासाः"।।1॥

गिरि-सुता पार्वतीजी के (नलपक्ष में- भीमपुत्री दमयन्ती के) काम सन्तप्त वक्षःस्थल पर चन्दन रसधार के समान शीतल लगने वाले चन्द्रमौलि भगवान् शिव (नलपक्ष में-चन्द्रवंश के राजाओं में शिरोमणि, नल) सर्वोत्कृष्ट हैं तथा तदनन्तर यशस्वी कविजनों के निरन्तर सुधारस बरसानेवाली वाणी के आनन्दानुभव सर्वोत्कृष्ट हैं ।

"जयति मधुसहायः सर्वसंसारवल्ली।... 2॥

"अगाधान्तः परिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरम्।
वन्दे रसान्तरप्रौढं श्रोतः सारस्वतं वहत् ॥3॥

इसमें तीन श्लोकों में स्तुति की गई है -
प्रथम – शङ्कर, पार्वती,
द्वितीय - कामदेव,
तृतीय - सरस्वती भारती,

लेखक	-	त्रिविक्रमभट्ट
उपजीव्य	-	महाभारत वनपर्व,
उच्छ्वास	-	7,
कृतियां	-	मदालसाचम्पू (प्रणयकथा),

॥पात्र परिचय॥

नल – नायक, निषध देश के राजा वीरसेन के पुत्र,
वीरसेन - निषधराज नल के पिता,
सालङ्कायन - वीरसेन के मन्त्री,
श्रुतशील – नल का मन्त्री,
मौहूर्तिक - वीरसेन के ज्योतिषी,
पर्वतक - नल का सेवक (प्रतीहार, प्रस्तावपाठक, वैतालिक भी),
भीम - कुण्डिनपर के राजा दमयन्ति के पिता,
बाहुक - नल का सेनापति,
पुरोधा - भीम के पुरोहित,
पुष्कराक्ष - दमयन्ती का दूत,
दमयन्ती – भीम की पुत्री (नायिका)
प्रियंगुमंजरी - दमयन्ती की माता- कुण्डिन की राजमहिषी,
रूपवती - नल की माता,
वाक्कोलिका, कलिका, चकोरी - दमयन्ती की चेटियां,
सारसिका - नल की वनपालिका
हंस - दमयन्ती को लुभाने वाला नल दूत,
अवसरपाठक - भीम तथा नल के सेवक,
विधङ्गवागुरिका- दमयन्ती की किन्नरी।

मुख्य सन्दर्भ-

- नलचम्पू (प्रणयकथा) सभङ्गश्लेष का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है।
- **अनूचानः** – साङ्गवेदाध्येता,

नलचम्पू सूक्तियां-

- अगाधान्तः परिस्पन्दं विबुधानन्दमन्दिरम्। (3)
- प्रसन्नाः कान्तिहारिण्यो नानाश्लेषविचक्षणाः।
  भवन्ति कस्यचित्पुण्यैर्मुखे वाचो गृहे स्त्रियः॥
- काचोऽप्युच्चैर्मणीयते। (8)
- करोति कस्य नाह्लादं कथा कान्तेव भारती। (13)
- कान्तेत्युन्नतचेतसोऽपि कुरुते नाम्नेव निम्नं मनः। (61)
- धन्या न्यपतन्येषां कन्दर्पसदृशे दृशः। (59)
- नैको रसः कवेः। (16)
- अक्षमालापवृत्तिज्ञा कुशासनपरिग्रहा ।
  ब्राह्मीव दौर्जनी संसद्वन्दनीया समेखला॥
- सदूषणापि निर्दोषा सखरापि सुकोमला ।
  नमस्तस्मै कृता येन रम्या रामायणी कथा ॥
- वेत्ति विश्वम्भरा भारं गिरीणां गरिमाश्रयम्।। (18)
- महनीयाः माहानुभावाः भवन्ति।
- युवजनोन्मादिनी यौवनश्रीः। (57)
- सर्वसहाः सूरयः। (15)
- सौख्यस्यायतनं भवन्ति रसिकाः कन्दर्पशास्त्रं स्त्रियः।।(55)
- दृश्यते न च यत्र स्त्री नवापीनपयोधरा। (26)

संस्कृत साहित्य के मुख्य लेखकों का कालक्रम -

1. भरतमुनि - 100 ई.पू. से 300 ई.
2. भास - 100 ई.पू. से 200 ई.
3. कालिदास - ई.पू. प्रथम शताब्दी
4. अश्वघोष - प्रथम शताब्दी ई.
5. गुणाढ्य - प्रथम शताब्दी ई.
6. विष्णुशर्मा - 2-6 शताब्दी ई.
7. शूद्रक- 3-4 श.
8. विशाखदत्त - 5-6 श.
9. कुमारदास - छठी श.
10. भारवि - छठी ;560-615द्ध ई.
11. दण्डी - छठी श.
12. भर्तृहरि - छठी श.
13. भट्टि – (500-650) ई.
14. भामह - छठी
15. माघ - सावतीं श. (675 ई.)
16. बाणभट्ट – सा. श. पूर्वार्द्ध

17. सुबन्धु –सा. श. पू.
18. हर्ष – सा.श.पू.
19. भवभूति – सा.श.
20. अमरुक – सा.श.
21. वाक्पतिराज - 750 ई. के आसपास
22. भट्टनारायण – (7-8वीं श.)
23. मुरारि - 8 वीं उत्तरार्ध
24. वामन - 8 वीं श.
25. आनन्दवर्धन - 850 ई.
26. रत्नाकर - 9 वीं श.
27. राजशेखर - 9 वीं श.
28. त्रिविक्रमभट्ट - 10 वीं पू.
29. क्षेमेन्द्र - 11 वीं
30. सोमदेव - 11 वीं
31. बिल्हण - 11 वीं
32. कुन्तक - 11 वीं
33. भोज- 11 वीं पू.
34. मम्मट- 11 वीं उत्तरार्ध (12वीं श. पूर्वार्ध)
35. कल्हण - 12 वीं श.
36. मंखक - 12 वीं श.
37. श्रीहर्ष- 12 वीं श.उ.
38. जयदेव - 12 वीं श.
39. विश्वनाथ - 14 वीं श.
40. बल्लालसेन- 16 वीं श.
41. अप्पयदीक्षित- 16 वीं श.
42. जगन्नाथ - 17 वीं श. (1600-1660)
43. अम्बिकादत्तव्यास- (1858-1900)

संस्कृत ग्रन्थों के अपरनाम -

1. किरातार्जुनीयम् – लक्ष्मीपदाङ्कमहाकाव्यम्
2. शिशुपालवधम् – श्रयङ्कमहाकाव्यम्
3. नैषधीयचरितम् – आनन्दपदाङ्कमहाकाव्यम्
4. नलचम्पू - दमयन्तीकथा
5. अष्टाध्यायी - अष्टक

काव्यशास्त्र के बृहत्रयी -

1. ध्वन्यालोक 2. काव्यप्रकाश 3. रसगङ्गाधर

संस्कृत वाङ्मय की दशत्रयी-

1.बृहत्रयी

किरातार्जुनीयम् - भारवि
शिशुपालवधम् - माघ
नैषधीय चरितम् - श्री हर्ष

2. लघुत्रयी-

कुमारसम्भव - कालिदास
रघुवंश - कालिदास
मेघदूतम् - कालिदास

3. गद्यबृहत्रयी-

वासवदत्ता - सुबन्धु
दसकुमारचरितम् - दण्डी
कादम्बरी - वाणभट्ट

4. उपजीव्यग्रन्थत्रयी-

महाभारत - वेदव्यास
दशकुमारचरितम् - दण्डी
भागवतपुराणम् - वेदव्यास

5. मुनित्रयी-

पाणिनि - अष्टाध्यायी, जम्ववतीजयम्, (पातालविजयम्)
कात्यायन - वार्तिक, स्वर्गारोहणम्
पतञ्जलि - महाभाष्यम्, महानन्दकाव्यम्

6. पुराषार्थत्रयी - धर्म, अर्थ, का।
7. पाषाणत्रयी - किरातार्जुनीयम् 1,2,3 सर्ग।
8. गुणत्रयी - सत्व, रज, तम।
9. प्रस्थानत्रयी - ब्रह्मसूत्र, गीता, उपनिषद
10. वेदत्रयी - ऋग्, यजु, साम।

यज्ञ		यज्ञकर्ता
वाजपेय	-	महाकवि भवभूति के पूर्वज
राजसूय	-	युधष्ठिर
पुत्रेष्टि	-	दशरथ
अश्वमेध	-	राम
गवालम्भ	-	राजा रन्तिदेव
रघु	-	विश्वजित

वीणा	स्वामी	ग्रन्थ
महती	नारद	शिशुपाल
घोषवती	वासवदत्ता	स्वप्नवासवदत्त
कच्छपी	सरस्वती	-

संस्कृत ग्रन्थों के प्रमुख वर्णन -

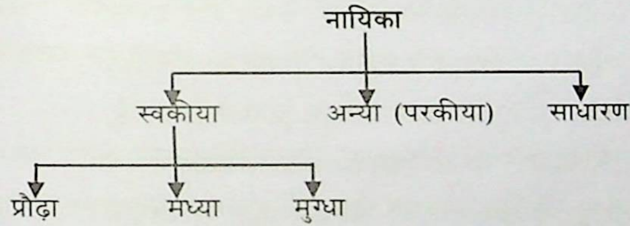
1. अच्छोदसरोवर	-	कादम्बरी
2. पम्पासरोवर	-	कादम्बरी
3. शाल्मलीवृक्ष	-	कादम्बरी
4. रैवतकपर्वत	-	शिशुपाल सर्ग (4)
5. इन्द्रकीलपर्वत	-	किरातार्जुनीयम् (5)
6. शरद्वर्णन	-	किरातार्जुनीयम् सर्ग (4)
7. षड्तुवर्णन	-	(1) शिशुपाल सर्ग-6 (2) ऋतुसंहार

नायकों की कोटियां -

1. **धीरोदात्त** - राम, कृष्ण, अर्जुन, चन्द्रापीड, दुष्यन्त, शिवाजी, नल, युधिष्ठिर,
2. **धीरोद्धत** - भीम परशुराम दुर्योधन
3. **धीरललित** - यक्ष, उदयन(वत्सराज)
4. **धीरप्रशान्त** – चारुदत्त, माधव

नायिकाओं की कोटियाँ -

1. स्वकीया प्रौढा - सीता, द्रौपदी,
2. स्वकीया मध्या - यक्षिणी, वासवदत्ता,
3. स्वकीया मुग्धा- शकुन्तला,कादम्बरी,महाश्वेता,पद्मावती,रत्नावली,



संस्कृतनाटकों में विदूषक -

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	-	माढव्य
2. विक्रमोर्वशीय (त्रोटक)	-	माणवक
3. मालविकाग्निमित्रम्	-	गौतम
4. मृच्छकटिकम्	-	मैत्रेय
5. रत्नावली	-	वसन्तक
6. स्वप्नवासवदत्तम्	-	वसन्तक
7. मालतीमाधवम्	-	विदूषक का अभाव
8. महावीरचरितम्	-	विदूषक का अभाव
9. उत्तररामचरितम्	-	विदूषक का अभाव
10. मुद्राराक्षस	-	विदूषक का अभाव

संस्कृत नाटकों में कञ्चुकी -

1. प्रतिज्ञायौगन्धरायण	-	बादरायण
2. दूतवाक्य	-	बादरायण
3. स्वप्नवासवदत्तम्	-	बादरायण
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	-	वातायन
5. उत्तररामचरितम्	-	गृष्टि
6. रत्नावलि	-	बाभ्रव्य
7. वेणीसंहारम्	-	जयन्धर (युधिष्ठिर) विनयन्धर (दुर्योधन)

मुक्तक काव्य के भेद-

दण्डी	-	4
आनन्दवर्धन	-	6
अग्निपुराण	-	6
विश्वनाथ	-	8
हेमचन्द्र	-	8

ऋषियों के प्रसिद्ध आश्रम नगर एवं स्थान -

1. कण्व	-	मालिनी नदी
2. विश्वामित्र	-	गौतमी नदी
3. वाल्मीकि	-	गङ्गानदी/तमसा
4. भारद्वाज	-	प्रयाग
5. अगस्त्य	-	गोदावरी
6. मारीच आश्रम	-	हेमकूटपर्वत
7. जावालि आश्रम	-	पम्पासरोवर
8. महाश्वेता आश्रम	-	अच्छोदसरोवर
9. यक्ष निवास	-	रामगिरि पर्वत
10. विदिशा	-	वेत्रवती (वेतवा)
11. उज्जयिनी	-	क्षिप्रा नदी
12. च्यवन आश्रम	-	शोणनदी
13. अयोध्या	-	सरयू
14. हरिद्वार (कनखल)	-	गङ्गा
15. शचीतीर्थ (अप्सरातीर्थ)	-	गङ्गा

गीतिकाव्य- मेघदूत, ऋतुसंहार, अमरुकशतक(मुक्तककाव्य), गीतगोविन्दम्, भामिनीविलास,

खण्डकाव्य- वैराग्यशतक, मेघदूत

राजशेखर कृतियां –

बालरामायण	-	महानाटक 10 अंक),
बालभारत	-	(2 अंक)
कपूर्रमञ्जरी	-	सट्टक (4 अंक)
विद्धशालभञ्जिका	-	नाटिका (4 अंक)

प्रमुख कवि एवं उनकी कृतियां-

अनर्घराघव (7 अंक)	-	मुरारि
प्रसन्नराघव (7 अंक)	-	जयदेव
प्रबोधचन्द्रोदय (6 अंक)	-	कृष्ण मिश्र
सेतुबन्ध	-	प्रवरसेन
हयग्रीववध	-	भर्तृमेण्ठ
रघुनाथचरित	-	वामनभट्टबाण
सेतुकाव्य	-	मातृगुप्त
श्रीकण्ठचरितम्	-	मंखक
जातकमाला	-	आर्यशूर
सीताचरितम्	-	डा.रेवाप्रसाद द्विवेदी
त्रिपुरदाह	-	वत्सराज
समुद्रमन्थन	-	वत्सराज
सैगन्धिकाहरणम्	-	विश्वनाथ
सुभद्रापरिणय	-	व्यासरामदेव
छायानाटक	-	व्यासरामदेव
महानाटक	-	हनुमान
हनुमन्नाटक	-	दामोदर मिश्र
आश्चर्यचूड़ामणि	-	शत्तिभद्र
रामाभ्युदय	-	यशोवर्मा

ग्रन्थों के कवि एवम् कृतियां-

श्रृंगारप्रकाश	-	भोजराज
नाटकलक्षणरत्नकोष	-	सागरनन्दी
नाट्यदर्पण	-	रामचन्द्र गुणचन्द्र
भावप्रकाशन	-	शारदातनय
एकावली	-	विद्याधर
चित्रमीमांसक	-	अप्पयदीक्षित
वृत्तवार्तिक	-	अप्पयदीक्षित
काव्यरत्नम्	-	विश्वेश्वर पण्डित

गीतिकाव्य-

भामिनीविलास	-	जगन्नाथ
चैरपञ्चाशिका	-	बिल्हण

चम्पूकाव्य-

रामायणचम्पू	-	भोजराज
भागवतचम्पू	-	अभिनवकालिदास
भारतचम्पू	-	अनन्तभट्ट
यशस्तिलकचम्पू	-	सोमदेवसूरि
जीवन्धरचम्पू	-	हरिश्चन्द्र

लक्षणग्रन्थ-

॥साहित्यदर्पण॥

परिचय-

साहित्यदर्पण संस्कृत भाषा में लिखा गया साहित्य विषयक ग्रन्थ है जिसके रचयिता **पण्डित विश्वनाथ** हैं। विश्वनाथ का समय **14वीं शताब्दी** ठहराया जाता है। मम्मट के काव्यप्रकाश के समान ही साहित्यदर्पण भी साहित्यालोचना का एक प्रमुख ग्रन्थ है। काव्य के श्रव्य एवं दृश्य दोनों प्रभेदों के सम्बन्ध में इस ग्रन्थ में विचारों की विस्तृत अभिव्यक्ति हुई है। इसका विभाजन **10 परिच्छेदों** में है। **प्रथम परिच्छेद** में काव्य प्रयोजन, लक्षण आदि प्रस्तुत करते हुए ग्रंथकार ने मम्मट के काव्य लक्षण **"तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि"** का खंडन किया है और अपने द्वारा प्रस्तुत लक्षण **वाक्यं रसात्मकं काव्यम्** को ही शुद्धतम काव्य लक्षण प्रतिपादित किया है। पूर्वमतखंडन एवं स्वमतस्थापन की यह पुरानी परंपरा है। **द्वितीय परिच्छेद** में वाच्य और पद का लक्षण कहने के बाद शब्द की शक्तियों - अभिधा, लक्षणा, तथा व्यंजना का विवेचन और वर्गीकरण किया गया है। **तृतीय परिच्छेद** में रस-निष्पत्ति का विवेचन है और रसनिरूपण के साथ-साथ इसी परिच्छेद में नायक-नायिका-भेद पर भी विचार किया गया है। **चतुर्थ परिच्छेद** में काव्य के भेद ध्वनिकाव्य और गुणीभूत-व्यंग्यकाव्य आदि का विवेचन है। **पंचम परिच्छेद** में ध्वनि-सिद्धांत के विरोधी सभी मतों का तर्कपूर्ण खंडन और इसका समर्थन है। **छठें परिच्छेद** में नाट्यशास्त्र से संबन्धित विषयों का प्रतिपादन है। यह परिच्छेद सबसे बड़ा है और इसमें लगभग 300 कारिकाएँ हैं, जबकि सम्पूर्ण ग्रंथ की कारिका संख्या 760 है। **सप्तम परिच्छेद** में दोष निरूपण। **अष्टम परिच्छेद** में तीन गुणों का विवेचन। **नवम परिच्छेद** में वैदर्भी, गौड़ी, पांचाली आदि रीतियों पर विचार किया गया है। **दशम परिच्छेद** में अलंकारों का सोदाहरण निरूपण है जिनमें 12 शब्दालंकार, 70 अर्थालंकार और रसवत् आदि कुल 89 अलंकार परिगणित हैं।

साहित्यदर्पण की विशेषताएँ

इसकी अपनी विशेषता है - **छठा परिच्छेद,** जिसमें **नाट्यशास्त्र** से संबद्ध सभी विषयों का क्रमबद्ध रूप से समावेश कर दिया गया है। साहित्य दर्पण का यह सबसे **विस्तृत परिच्छेद** है। काव्यप्रकाश तथा संस्कृत साहित्य के प्रमुख लक्षण ग्रंथों में नाट्य सम्बंधी अंश नहीं मिलते। साथ ही **नायक-नायिका-भेद** आदि के संबंध में भी उनमें विचार नहीं मिलते। साहित्य दर्पण के **तीसरे परिच्छेद** में रस निरुपण के साथ-साथ नायक-नायिका-भेद पर भी विचार किया गया है। यह भी इस ग्रंथ की

अपनी विशेषता है। पूर्ववर्ती आचार्यों के मतों को युक्तिपूर्ण खंडनादि होते हुए भी काव्य प्रकाश की तरह जटिलता इसमें नहीं मिलती।

दृश्य काव्य का विवेचन इसमें **नाट्यशास्त्र** और **धनिक** के **दशरूपक** के आधार पर है। रस, ध्वनि और गुणीभूत व्यंग्य का विवेचन अधिकांशत: **ध्वन्यालोक** और **काव्य प्रकाश** के आधार पर किया गया है तथा अलंकार प्रकरण विशेषत: **राजानक रुय्यक** के **"अलंकार सर्वस्व"** पर आधारित है। संभवत: इसीलिए इन आचार्यों का मतखंडन करते हुए भी ग्रंथकार उन्हें अपना उपजीव्य मानता है तथा उनके प्रति आदर व्यक्त करता है। साहित्य दर्पण में काव्य का लक्षण भी अपने पूर्ववर्ती आचार्यों से स्वतंत्र रूप में किया गया मिलता है। साहित्य दर्पण से पूर्ववर्ती ग्रंथों में कथित काव्य लक्षण क्रमश: विस्तृत होते गए हैं और चंद्रालोक तक आते-आते उनका विस्तार अत्यधिक हो गया है, जो इस क्रम से द्रष्टव्य है-

अग्निपुराण- "संक्षेपात् वाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना, पदावली काव्यम्" ।

दंडी- "शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली" ।

रुद्रट- "ननु शब्दार्थौ कायम्" ।

वामन- "काव्य शब्दोयं गुणलंकार संस्कृतयो: शब्दार्थयोर्वर्तते" ।

आनंदवर्धन- "शब्दार्थशरीरम् तावत् काव्यम्" ।

भोजराज- "निर्दोषं गुणवत् काव्यं अलंकारैरलंकृतम् रसान्वितम्" ।

मम्मट- "तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुन: क्वापि" ।

वाग्भट- "गुणालंकाररीतिरससहितौ दोषरहितौ शब्दार्थौ काव्यम्"

जयदेव- "निर्दोषा लक्षणवती सरीतिर्गुणभूषिता, सालंकाररसानेक-वृत्तिर्वाक्काव्य नामवाक्"।

इस प्रकार क्रमश: विस्तृत होते काव्यलक्षण के रूप को साहित्यदर्पणकार ने **"वाक्यम् रसात्मकम् काव्यम्"** जैसे छोटे रूप में बाँध दिया है। **केशव मिश्र** के **अलंकारशेखर** से व्यक्त होता है कि साहित्यदर्पण का यह काव्य लक्षण आचार्य **शौद्धोदनि** के **"काव्यं रसादिमद् वाक्यम् श्रुतं सुखविशेषकृत्"** का परिमार्जित एवं संक्षिप्त रूप है।

रचयिता - विश्वनाथ

पिता - चन्द्रशेखर

पितामह - नारायणदास,(वैष्णव)

॥प्रथम परिच्छेदः॥

॥मङ्गलाचरण॥

"शरदिन्दुसुन्दररुचिश्चेतसि सा मे गिरां देवी।
अपहृत्य तमः सन्ततमर्थानखिलान्प्रकाशयतु" ॥

शरद् चन्द्र की कान्ति से भी उत्कृष्ट कान्ति वाली वह वाग्देवी सरस्वती हमारे हृदय का अन्धकार दूर करती रहे और समस्त काव्यात्मक अर्थतत्वों को अवभासित करती रहें ।

अलङ्कार - उपमा,

छन्द - आर्या

मङ्गलाचरण में **'सरस्वती'** की आराधना की है।

काव्यप्रयोजन-

''चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि।
काव्यादेव यतस्तेन तत्स्वरूपं निरूप्यते"।।

काव्य एक ऐसी वस्तु है जिससे अल्पबुद्धि वाले मानव को भी बिना किसी कष्ट साधना के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूप पुरुषार्थचतुष्टय की प्राप्ति हुआ करती है । इसलिए काव्य क्या है ? इसका निरूपण किया जा रहा है ।

काव्यफल-

चतुर्वर्गफलप्राप्तिर्हि काव्यतो 'रामादिवत्प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्' इत्यादिः कृत्याकृत्यप्रवृत्तिनिवृत्त्युपदेशद्वारेण सुप्रतीतैव ।

पुरुषार्थ चतुष्टय प्राप्ति काव्य का प्रयोजन है वस्तुत: यह सर्वविदित है क्योंकि यह सभी जानते हैं कि काव्य उपदेश दिया करता है- 'राम के जैसा आचरण करना चाहिए रावण के जैसा नहीं' काव्य का यह उपदेश **'कृत्य'**- धर्मादि में प्रवृत्ति, और **'अकृत्य'**- अधर्मादि से निवृत्ति, इस प्रकार शास्त्रोक्त आचरण द्वारा चतुर्वर्ग की प्राप्ति होती है ।

उक्तं च भामहेन-

'धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च ।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिषेवणम्' ।।

'एकः शब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग्ज्ञातः स्वर्गे लोके कामधुग्भवति'-(वैयाकरण)

काव्य बनाने के फल -

"अर्थप्राप्तिश्चप्रत्यक्षसिद्धा।कामप्राप्तिश्चार्थद्वारैव।मोक्षप्राप्तिश्चैतज्जन्यधर्मफलाननुसंधानात्,मोक्षोपयोगिवाक्ये व्युत्पत्त्याधायकत्वाच्च । चतुर्वर्गप्राप्तिर्हि वेदशास्त्रेभ्यो नीरसतया दुःखादेव परिणतबुद्धीनामेव जायते । परमानन्द-सदोहजनकतया सुखादेव सुकुमारबुद्धीनामपि पुनः काव्यादेव । कटुकौषधोपसमनियस्य रोगस्य शीतशर्करोपशमनीयत्वे कस्य वा रोगिणः शीतशर्कराप्रवृत्तिः साधीयसी न स्यात्" ।

काव्यशास्त्र से अर्थप्राप्ति तो प्रत्यक्ष सिद्ध है, और काम की प्राप्ति अर्थ के द्वारा होती है, और इससे जन्य धर्मफ़लानुसंधान से मोक्षप्राप्ति होती है । वेदशास्त्रों से भी मोक्षप्राप्ति तो होती है परन्तु वह नीरसतया कष्टपूर्वक और प्रौढ़ बुद्धि वाले लोगों को ही हो सकती है परन्तु सुकुमार (अल्पबुद्धि) वालों को मोक्ष की प्राप्ति सुखपूर्वक काव्य से ही हो सकती है । क्योंकि

कड़वी औषधी (वेदशास्त्र) से ठीक होने वाले रोग का उपशमन यदि मीठी औषध (काव्यशास्त्र) से हो तो कौन ऐसा व्यक्ति होगा जो मीठी औषधी का ग्रहण करना नहीं चाहेगा ।

अग्निपुराण में काव्य की उपादेयता -

"नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा"॥

"त्रिवर्गसाधनं नाट्यं" - अग्निपुराण।

विष्णुपुराण में काव्य की उपादेयता -

**"काव्यालापाश्च ये केचिद्गीतकान्यखिलानि च ।
शब्दमूर्तिधरस्यैते विष्णोरंशा महात्मनः" ।।**

॥काव्यलक्षणविचारविमर्श॥

काव्यलक्षणविचारविमर्श में इन्होंने पाँच प्रसिद्ध आचार्यो का खण्डन किया है -

1. **मम्मट** - 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनवालंकृती पुनः क्वापि।
2. **कुन्तक** – 'वक्रोक्तिः काव्यजीवितम्' ।
3. **भोज** - 'अदोषं गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम्....' ।
4. **आनन्दवर्धन** – 'काव्यस्य आत्मा ध्वनिः' ।
5. **वामन**- 'रीतिरात्मा काव्यस्य'।

1. मम्मट मत - 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि' इति। काव्य वह शब्दार्थ युगल है जो दोषरहित हो, गुणसहित हो और यथासंभव किंवा यथास्थान अनलङ्कृत भी हो तो कोई क्षति नहीं ।

विश्वनाथ मत- एतच्चिन्त्यं । तथाहि- यदि दोषरहितस्यैव काव्यत्व अङ्गीकारस्तदा । किन्तु काव्यस्वरूप का उपयुक्त निरूपण इसलिए युक्तियुक्त नहीं है कि यदि दोषरहित ही शब्दार्थयुगल काव्य हुआ करे तब यह निम्नोक्त पद्य तो कभी काव्य की कोटि में आ ही नहीं सकता परन्तु इसे उत्तम काव्य माना जाता है ।

**"न्यक्कारो ह्ययमेव मे यदरयस्तत्राप्यसौ तापसः
सोऽप्यत्रैव निहन्ति राक्षसकुलं जीवत्यहो रावणः।
धिग्धिक्छक्रजितं प्रबोधितवता किं कुम्भकर्णेन वा
स्वर्गग्रामटिकाविलुण्ठनवृथोच्छूनैः किमेभिर्भुजैः"॥**

अस्य श्लोकस्य विधेयाविमर्शदोषदुष्टतया काव्यत्व न स्यात् । प्रत्युत ध्वनित्वेनोत्तमकाव्यताऽस्याङ्गीकृता तस्मादव्याप्तिर्लक्षणदोष । यह सूक्ति इसलिये काव्य नहीं हो सकती क्योंकि इसमें **'विधेयाविमर्श'** नामक दोष है यहां यह दोष इसलिये हैं क्योंकि यहां कवि ने वाक्य रचना के सामान्य सिद्धान्त उद्देश्य- विधेय भाव के पूर्वापश्चाद्भाव के नियम का स्पष्ट उलङ्घन किया है। एक बार तो इस नियम का उलङ्घन **'अयमेव न्यक्कारः'** के स्थान पर **न्यक्कारो ह्ययमेव** करके किया गया है और दूसरी बार किया गया है **एभिर्भुजैः वृथा** के बदले **वृथोच्छूनै किमेभिर्भुजै** इत्यादि रूप से वाक्य -विन्यास करके, जहाँ वृथारूप विधेयांश, जिसे प्रधानता देनी चाहिये, समास में डालकर अप्रधान बना दिया गया है। होना तो चाहिये इस उपर्युक्त सूक्ति को उत्तम काव्य जैसा कि रसभावादि की अभिव्यञ्जना के कारण इसे माना भी गया है । इससे तो यही निष्कर्ष निकला कि दोषरहित शब्दार्थयुगल काव्य है यह काव्य लक्षण अव्याप्ति दोष से दूषित है क्योंकि जिस शब्दार्थयुगल, जैसे कि **न्यक्कारो ह्ययम्** आदि, को काव्य होना चाहिये वह इस लक्षण की कसौटी पर काव्य ही नहीं उतरता ।

ननु कश्चिदेवांशोऽत्र दुष्टो न पुनः सर्वोऽपीति चेत्, तर्हि यत्रांशे दोषः सोऽकाव्यत्वप्रयोजक यत्र ध्वनिः स उत्तमकाव्यत्वप्रयोजक इत्यंशाभ्यामुभयत आकृष्यमाणमिदं काव्यमकाव्य वा किमपि न स्यात् । न च कश्चिदेवांश काव्यस्य दूषयन्तः श्रुतिदुष्टादयो दोषाः किं तर्हि सर्वमेव काव्यम् । तथाहि- काव्यात्म-भूतस्य रसस्यानपकर्षकत्वे तेषां दोषत्वमपि नाङ्गीक्रियते । अन्यथा नित्यदोषानित्यदोषत्वव्यवस्थाऽपि न स्यात् । यदुक्त ध्वनिकृता श्रुतिदुष्टादयो दोषा अनित्या ये च दर्शिताः । ध्वन्यात्मन्येव शृङ्गारे ते हेया इत्युदाहृताः ' इति । किञ्च एवं काव्यं प्रविरलविषयं निर्विषयं वा स्यात् , सर्वथा निर्दोषस्यैकान्तमसंभवात्।

यहाँ यह समाधान भी अकिञ्चित्कर ही रहा कि यह (न्यक्कारो अयम् आदि) सूक्ति जितने अंश में दोषयुक्त है उतने अंश में भले ही काव्य न हो किन्तु अन्यत्र **रसभावादि** की अभिव्यञ्जना के अंश में तो काव्य ही रहेगी क्योंकि समस्त शब्दार्थुगल तो यहाँ दूषित नही ठहरा । **क्यों ?** इसलिये कि एक ओर से तो दोषयुक्त अंश दूसरी ओर से दोषमुक्त अंश से अपनी अपनी ओर खींची गयी यह सूक्ति अकाव्य अर्थात काव्य कुछ भी नहीं हो पायेगी । और साथ ही साथ यहां यह वात भी तो है कि श्रुतिदुष्ट (अथवा विधेयाविमर्श) आदि दोष किसी शब्दार्थयुगल को अंशतः ही नहीं अपितु पूर्णतया दूषित करने वाले हुआ करते हैं और इसलिये **न्यक्कारो ह्ययम्** आदि में विधेयाविमर्श को आंशिक दोष कह देने से कोई उद्देश्य नहीं सिद्द हो जायगा । ऐसा इसलिये क्योंकि वस्तुतः इन दोषों से काव्य के आत्मभूत रस का अपकर्ष हुआ करता है क्योंकि यदि इन दोषों से काव्य के **आत्मभूत रस** का कोई विधात नहीं हो पाता तब इन्हें दोष भी तो नहीं माना गया होता, मानना ही पडेगा क्योंकि विना ऐसा माने **नित्यदोष** और **अनित्यदोष** की विभाग-व्यवस्था कैंसे सिद्ध हो सकेगी जो कि ध्वनि- दार्शनिक आचार्य की इस उक्ति में सिद्ध की जा चुकी है-

**"श्रुतिदुष्टादयो दोषा अनित्या ये च दर्शिताः ।
ध्वन्यात्मन्येव शृङ्गारे ते हेया इत्युदाहृताः''॥** (आनन्दवर्धन)

श्रुतिकटु आदि जो दोष नित्य और अनित्य-दोनों माने गये हैं इसीलिये माने गये हैं क्योंकि **शृंगारादिरस-प्रधान काव्य** में तो ये सर्वथा हेय हैं किन्तु **रौद्रादिरस-प्रधान काव्य** में ये उपादेय भी हैं।

यहाँ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि दोषरहित शब्दार्थयुगल को काव्य मानने में या तो काव्य का क्षेत्र बहुत सङ्कुचित हो जाता है या काव्य का कोई क्षेत्र ही नहीं रहता। क्योंकि ऐसा असम्भव है कि कोई भी सूक्ति ऐसी वन पडे जिसमें दोष का ऐसा अभाव हो जो ऐकान्तिक और आत्यन्तिक दोनों हों।

नन्वीपदर्थे नञः प्रयोग इति चेत्तर्हि 'ईषद्दोषौ शब्दार्थौ काव्यम्' इत्युक्ते निर्दोषयो काव्यत्वं न स्यात्। सति संभवे 'ईषद्दोषौ' इति चेत्, एतदपि काव्यलक्षणे न वाच्यम्, रत्नादिलक्षणे कीटानुवेधादिपरिहारवत्।

अब यदि इस संकट से पीछा छुडाने के लिये अदोषो के नञ् (अ) का अभिप्राय अभाव अर्थ न लेकर **ईषत् स्वल्प** अर्थ लिया जाय क्योंकि नञ् (अ) का अभिप्राय ईषत् भी हुआ करता है तब तो इससे भी भयंकर संकट उपस्थित हो जायगा जिसका रूप यह होगा कि **निर्दोष शब्दार्थयुगल काव्य** नहीं कहा जा सकेगा क्योंकि काव्य तो उसी शब्दार्थयुगल को कहेगें जिसमें कुछ थोडा दोष अवश्य हो। इसमें भी छुटकारा पाने के लिये यदि यह कहा जाय कि काव्य वह शब्दार्थयुगल है जिसमें यदि दोष हो तो बहुत थोडे हों तब तो इसका यही सीधा उत्तर होगा कि काव्य-लक्षण में इस प्रकार की वात कहनी ही नहीं चाहिये क्योंकि दोष का होना या न होना अथवा थोड़ा होना या अधिक होना काव्य के स्वरूप का नियामक अथवा अनियामक नहीं अपितु उसकी उपादेयता के वर्धन या अवर्धन का ही कारण हो सकता है। 'जैसे कि जब हमें किसी रत्न के स्वरुप का विवेचन करना होता है तब यह नहीं कहना होता कि रत्न वह है जिसमें कीटानुवेध का दोष न लगा हो। इसी प्रकार काव्य के स्वरुप का विवेचन करते हुये यह नहीं कहना चाहिये कि काव्य वह शब्दार्थयुगल है जिसमें दोष न हो कीटानुवेध होने या न होने से रत्न की उपादेयता में न्यूनाधिक्य भले ही हो परन्तु रत्न में कोई क्षति होती'। श्रुतिदुष्टादि दोषों के सद्भाव अथवा अभाव में शब्दार्थयुगलरूप काव्य की उपादेयता में घट-बढ़ तो सकती है किन्तु काव्यता को कोई क्षति नहीं होती। तभी तो ऐसा कहा गया है-

"जिस प्रकार कोई रत्न कीटानुवेध के होने पर भी रत्न ही रहा करता है, उसी प्रकार कोई काव्य-रसभावाभिव्यञ्जक शब्दार्थयुगल-श्रुतिदुष्टादि दोष के होने पर भी काव्य ही रहा करता है"।

सगुणौ पदविमर्श-

किञ्च शब्दार्थयोः सगुणत्वविशेषणमनुपपन्नम्। गुणानां रसैकधर्मत्वस्य 'ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः' तेनैव प्रतिपादकत्वात्।

काव्यप्रकाश-कृत उपर्युक्त काव्यलक्षण में शब्दार्थयुगल की उपादेयता में तो **अव्याप्ति दोष** है ही, किन्तु साथ ही साथ यहाँ शब्दार्थयुगल की सगुणता काव्य-स्वरूप की मान्यता भी युक्तिसगत नही क्योंकि शब्दार्थयुगल को सगुण तब कहा जाय जब कि गुण शब्द और अर्थ के धर्म माने जा सकें गुण तो एकमात्र रस के धर्म हैं और उपर्युक्त आचार्य मम्मट ने ही इन्हें रस-धर्म के रूप में प्रतिपादित किया है-

"जैसे शौर्य आदि आत्मा के अपृथक् सिद्ध गुण अथवा धर्म हुआ करते हैं न कि शरीर के वैसे ही माधुर्य आदि रसरूप काव्यात्मतत्व के अपृथक् सिद्ध गुण अवयव धर्म हुआ करते हैं न कि शब्द और अर्थ रूप काव्य-शरीर के"। **(काव्यप्रकाश 8)**

रसाभिव्यञ्जकत्वेनोपचारत उपपद्यत इति चेत्? तथाऽप्ययुक्तम्। तथाहि-तयोः काव्यस्वरूपेणाभिमतयो" शब्दार्थयो रसोऽस्ति, न या? नास्ति चेत्, गुणवत्त्वमपि नास्ति, गुणानां तदन्वयव्यतिरेकानुविधायित्यात्। अस्ति चेत? कथं नोक्तं रसवन्ताविति विशेषणम्। गुणवत्त्वान्यथानुपपत्त्यैतद्लभ्येत इति चेत्? तर्हि सरसावित्येव वक्तुं युक्तम् न सगुणाविदि, नहि प्राणिमन्तो देशा इति केनाऽप्युच्यतेनन्तु 'शब्दार्थो सगुणौ' इत्यनेन गुणाभिव्यञ्जको शब्दार्थौ काव्ये प्रयोज्यावित्यभिप्राय, इति चेत्? न, गुणाभिव्यञ्जकशब्दार्थवस्त्वस्य काव्ये उत्कर्षमात्राधर्यकत्वम्, न तु स्वरूपाधायकत्वम्।

अब यदि इस अड़चन से छुटकारा पाने के लिये यह कहां जाय कि शब्दार्थयुगल का सगुणता का अभिप्राय शब्दार्थयुगल की रसाभिव्यञ्जकता है क्योंकि रसाभिव्यञ्जक शब्द और अर्थ को उपचारक सगुण शब्द और अर्थ कहा ही जा सकता है, तब तो यही कहना पड़ता है कि ऐसी बात यहाँ बहुत ठीक नहीं बैठती। क्यों? इसलिये कि जिस शब्दार्थयुगल को काव्य रूप मान लिया गया उसके सम्बन्ध में यह प्रश्न उठ सकता है कि उसमें रस है या रस नहीं है? यदि इसका उत्तर यह दिया गया कि यदि उसमें रस नहीं है तब तो यही सिद्ध हो गया कि उसमें गुणवत्ता भी नहीं है क्योंकि जहाँ रस रहेगा वहाँ ही गुण रहेंगे और जहाँ रस न होगा वहाँ गुण भी न होंगे! अब यदि यहाँ यह उत्तर सोचा गया कि उसमें रस है इसलिये गुण भी हैं तब तो यह पूछना पडेगा कि शब्दार्थयुगल की सगुणता के बदले शब्दार्थयुगल की रसवत्ता को काव्यस्वरूप का नियामक क्यों न बताया गया? यदि यहाँ यह कहा जाय कि काव्य और अर्थ की सगुणता का अभिप्राय शब्द और अर्थ की सरसता ही निकालना चाहिये क्योंकि रस के विना गुण की स्थिति ही असंभव है तब तो इसका सीधा उत्तर यह दिया जायगा कि शब्दार्थयुगल की सगुणता के बदले शब्दार्थयुगल की सरसता को काव्यस्वरूप का नियामक क्यों न माना जाय? भला यह कौन सी बात है कि यह कहना हो कि ये वे भूभाग है जहाँ प्राणी रहा करते हैं और कहा जाय ये वे भूभाग हैं जहाँ शौर्यादि

(गुण) रहां करते हैं! भला शब्द और अर्थ की सरसमता को मन में रख कर शब्द और अर्थ की सगुणता के प्रतिपाठन की कौन सी कोई बुद्धिमानी हुई ।

यहाँ यह समाधान भी कि सरस शब्दार्थयुगल के बदले सगुण शब्दार्थयुगल का औपचारिक प्रयोग काव्य में गुणाभिव्यञ्जक शब्द और अर्थ के प्रयोग पर जोर देने के उद्देश्य से किया गया, कोई समाधान नहीं क्योंकि गुणाभिञ्जक शब्द और अर्थ काव्य के उत्कर्षवर्धक भले ही हों, स्वरूप- नियामक तो कदापि नहीं हो सकते । तभी तो ऐसा कहा गया है-

उक्तं हि- 'काव्यस्य शब्दार्थौ शरीरम्, रसादिश्चात्मा, गुणाः शौर्यादिवत्, दोषाः काणत्वादिवत्, रीतयोऽवयवसंस्थानविशेषवत्, अलङ्काराः कटककुण्डलादिवत्' इति ।

शब्द और अर्थ काव्य के शरीर हैं, रस-भाव आत्मतत्व है, माधुर्यादिगुण शौर्यादि की भाँति रसरूप आत्मतत्त्व के अपृथक् सिद्ध धर्म है, श्रुतिदुष्टादि दोष काणस्य (काना होने) आदि की भाँति रसरूप आत्मतत्व के सौन्दर्यापकर्षक है, वैदर्भी आदि रीतियाँ शरीर- संस्थान (अङ्गरचना) के समान काव्य-संस्थान हैं और (अनुप्रास-) उपमादि अलंकार कटक, कुण्डल आदि आभूषणों की भाति शब्द और अर्थ के सौन्दर्यवर्धक हैं ।

अनलङ्कृती पुनः क्वापि विमर्श-

एतेन 'अनलङ्कृती पुनः क्वापि' इति यदुक्तम् तदपि परास्तम् । अस्यार्थः सर्वत्र सालङ्कारौ क्वचित्त्वस्फुटालंकारावपि शब्दार्थौ काव्यमिति । तत्र सालङ्कारशब्दार्थयोरपि काव्ये उत्कर्षाधायकत्वात् ।

अनुवाद-उपर्युक्त उद्धरण की विचारधारा के देखते काव्यप्रकाशकृत काव्य-लक्षण में शब्द और अर्थ को **अनलङ्कृती पुनः क्वापि**- सर्वत्र अलङ्कृत किन्तु कदाचित् अनलङ्कृत कहना भी किसी काम का नहीं। **अनलङ्कृती पुनः क्वापि**- का अर्थ क्या है ? यही न कि सर्वत्र तो अलङ्कारसहित शब्दार्थयुगल काव्य है ही किन्तु कहीं ऐसा भी शब्दार्थयुगल काव्य ही समझना चाहिये जहाँ कोई भी अलङ्कार स्फुटतया दिखायी न दे । अब जहाँ तक सर्वत्र अलङ्कृत शब्द और अर्थ को काव्य मानने का आग्रह है उसके सम्बन्ध में तो यही कहां जायेगा कि यह आग्रह ठीक नहीं क्योंकि अलङ्कृत शब्द और अर्थ काव्य के स्वरूपाधायक नहीं-काव्य-रूप नहीं अपितु एकमात्र काव्य के उत्कर्षाधायक हुआ करते हैं, तथा काव्य की उत्कृष्टता के साधन हैं।

2. कुन्तक के मत का खण्डन-

एतेन 'वक्रोक्तिः काव्यजीवितम्' इति वक्रोक्तिजीवितकारोक्तमपि परास्तम् । वक्रोक्तेः अलङ्काररूपवत्वात् । वक्रोक्तिजीवितकार पुनर्वैदग्ध्यभङ्गीभणितिस्वभावा बहुविधा वक्रोक्तिमेव प्राधान्यात् काव्यजीवितमुक्तवान् ।

जब कि यह सिद्ध है कि अलङ्कृत शब्द और अर्थ काव्य नहीं तब **वक्रोकिजीवित (कुन्तक)** का यह कथन कि **वक्रोक्ति** अथवा **भङ्गीभणिति** (विचित्र अभिधान और अभिधेय) काव्य का जीवन है स्वयं असिद्ध हो गया। भला वक्रोक्ति तो एक अलङ्कार है, तो ये वक्रोक्ति काव्य का आत्मतत्त्व कैसे हो सकता है ।

काव्यप्रकाशकार ने **अनलङ्कृती पुनः क्वापि- शब्दार्थौ काव्यम्** के उदाहरण रूप में जो यह सूक्ति उद्धृत की है- 'पता नहीं क्या बात है कि मेरा पति भी वही जिसने मेरे कुमारीपन में ही मेरे हृदय में प्रेम उत्पन्न किया, वसन्त की रातें भी वही जिनका आनन्द अबतक भोग चुकी हूं, खिली वासन्ती लताओं की सुगन्ध से भीनी-भीनी कदम्बवन की उद्दीपक वायु भी वह जिसने मुझे सदा उन्मत्त बनाया है और मैं भी वही जो पहले हो चुकी हूं, किन्तु ज्यों ही रेवातीर के वेतसनिकुंजों की याद आ जाती है त्यों ही चित्त वहाँ राग-रंग के लिये अकस्मात् मचल उठता है ! जिसके लिये यह कहा है कि किसी भी अलङ्कार की यहां स्फुट प्रतीति न होने पर भी यह (शब्दार्थयुगल) काव्य है वह सब वस्तुतः ठीक नहीं। क्यों ? इसलिये कि यहाँ तो **विभावना** और **विशेषोक्ति** अलङ्कार का **संदेह संकर** निसन्दिग्धरूप से दिखायी दे रहा है ।

3. भोज के मत का खण्डन-

सरस्वतीकण्ठाभरण-सम्मत काव्य लक्षण उपर्युक्त विचार-विमर्श की दृष्टि से स्वयं खण्डित हो गया है ।

**'अदोषं गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम् ।
रसान्वितं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति'॥**

इत्यादीनामपि काव्यलक्षणत्वमपास्तम् ।

उपर्युक्त विचार-विमर्श से यह भी सिद्ध हो गया है कि कतिपय काव्य-लक्षण जैसे कि भोजराज (सरस्वतीकण्ठाभरणकार) का यह काव्यलक्षण-काव्य वह (शब्दार्थयुगल) है जो निर्दुष्ट हो, गुणयुक्त हो, अलङ्कारों से अलङ्कृत हो और रससमन्वित हो और कवि वह है जो इस प्रकार के काव्य की रचना किया करता है और कीर्ति किंवा प्रीति पाया करता है । इस प्रकार का यह भोजकार का लक्षण भी किसी काम का नहीं है ।

4. ध्वनिकार-कृत काव्यलक्षण का खण्डन-

यत्तु ध्वनिकारेणोक्तम्-

**'योऽर्थः सहृदयश्लाघ्यः काव्यात्मा यो व्यवस्थितः ।
वाच्यप्रतीयमानाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ" ॥**

अत्र वाच्यामत्वं 'काव्यस्यात्माध्वनिः'- इत्युक्त्वा आनन्दवर्धनः स्ववचनविरोधादेवापास्तम् ।

ध्वनिकार **(आनन्दवर्धनाचार्य)** ने काव्य के आत्मतत्व का दिग्दर्शन तो अवश्य किया-कराया है किन्तु एक स्थान पर ऐसी बात कह दी है, अर्थात् काव्य का वही अर्थ वस्तुतः काव्य का आत्मभूत-सारतम- अर्थ है जिसे सहृदय-हृदय सराहते नहीं थकते और वह अर्थ ऐसा है जिसके दो भेद स्पष्ट है- **वाच्यरुप** अर्थ और **प्रतीयमान** (व्यङ्ग्य) रूप अर्थ आदि, जिससे **वाच्यरुप** अर्थ काव्य का आत्मतत्त्व बना दिखायी दे रहा है और अन्यत्र यह कह रखा है कि काव्य का जो आत्मभूत तत्त्व हैं वह **ध्वनि(व्यङ्ग्य रूप अर्थ)** ही है अब ये दोनों परस्पर विरुद्ध कथन है इसलिये आनन्दवर्धन स्ववचन के विरोध से ही परास्त हो गये है ।

5. वामन के मत का खण्डन

यत्तु वामनेनोक्तम्- रीतिरात्मा काव्यस्य इति, तन्न; रीतेः संघटनाविशेषत्वात् । संघटनायाश्चावयवसंस्थानरूपत्वात्, आत्मनश्च तद्भिन्नत्वात् ।

उपर्युक्त काव्य-स्वरूप के विवेक से यह भी स्पष्ट है कि आचार्य वामन का यह कथन कि **रीति (गुणविशिष्ट पदरचना)** ही काव्य का आत्मतत्त्व-सारतम पदार्थ- हे कदापि युक्तियुक्त नहीं। **रीति क्या है ?** रीति है एक संघटना-विशेष-ऐसी पदरचना जो गुणवती हो। जो भी संघटना हो अथवा जैसी भी संघटना हो उसका यही अभिप्राय है कि वह एक प्रकार का अङ्गविन्यास-विशेष है और जो आत्म-तत्त्व है वह अङ्ग-रचना नहीं शरीरसंस्थान विशेष नहीं अपि तु उससे सर्वथा विलक्षण वस्तु है । अब जब कि रीति काव्य की अङ्ग रचना है तो उसे काव्य का आत्मतत्त्व क्यों कर माना जाया करे ।

स्व-सम्मत काव्यस्वरूप

तत्किं पुनः काव्यमित्युच्यते- वाक्यं रसात्मकं काव्यम्- रसस्वरूपं निरूपयिष्यामः । रस एवात्मा साररूपतया जीवनाधायको यस्य । तेन विना तस्य काव्यत्वानङ्गीकारात् । 'रस्यते इति रसः' इति व्युत्पत्ति-योगादुभावतदाभासादयोऽपि गृह्यन्ते ।

काव्य-स्वरूप के सम्बन्ध में आलङ्कारिकों के इस मति-भ्रम के निवारण के लिये अब यह बताना आवश्यक है कि काव्य क्या है ? काव्य वह वाक्य है जो रसात्मक हो। **रस क्या है ?** इसका निरूपण तो आगे (तृतीय परिच्छेद में) किया ही जायगा । यहां रसात्मक वाक्य का अभिप्राय वता देना उचित है 'रसात्मक वाक्य उस को कहते हैं जिसका आत्मतत्त्व रस हुआ करता है । अथवा जिसे जीवित-जागृत रखने वाला एकमात्र सारतम तत्व रस है'। रस के विना कोई भी वाक्य काव्य नहीं हो सकता-यह ऐसी वात है जो पहले ही बता दी जा चुकी है । यहाँ रस का अभिप्राय केवल श्रृंगारादि रस नहीं अपितु वह है जो आस्वादप्रिय हो इस रस शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर जो भी सहृदयों के आस्वाद के विषय हुआ करते हैं, जैसे कि **भाव, रसाभास** और **भावाभास** आदि वे सभी यहाँ विवक्षित और समुचित हैं।

काव्यस्वरूप-

"वाक्यं रसात्मकं काव्यं"। काव्य वह वाक्य है जो रसात्मक हो ।

रस- **''रस्यते इति रसः"**। जो आस्वादित हो वह रस है। रस से रस, रसाभाव, रसाभास का ग्रहण होता है।

1. रस उदाहरण-

"शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किञ्चिच्छनै-
र्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखं ।
विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं
लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता"॥

(सम्भोग श्रृंगार एवं नवविवाहित दम्पति वर्णन)

2. भाव उदाहरण-

"यस्यालीयत शल्कसीम्नि जलधिः पृष्ठे जगन्मण्डलं,
दंष्ट्रायां धरणी, नखे दितिसुताधीशः, पदे रोदसी ।
क्रोधे क्षत्रगणः, शरे दशमुखः, पाणौ प्रलम्बासुरो,
ध्याने विश्वमसावधार्मिककुलं, कस्मैचिदस्मै नमः"॥

(भग्वद्विषयक रतिभाव तथा विष्णु दशावतार वर्णन)

3. रसाभास उदाहरण-

"मधु द्विरेफः कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वामनुवर्तमानः ।
श्रृङ्गेण च स्पर्शनिमीलिताक्षीं मृगीमकण्डूयत कृष्णसारः"॥

(संभोग श्रृंगार का तिर्यक योनि में रसाभास)

दोषास्तस्यापकर्षकाः। (काव्य के अपकर्षों को दोष कहते हैं)

गुण,अलंकार,रीति-

उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालंकाररीतयः।। काव्य तत्व के उत्कर्ष में गुण,अलंकार और रीति परस्पर सम्बद्ध और सहायक है।

गुणाः- 'शौर्यादिवत्'। (माधुर्य आदि गुण होते हैं) ।

अलंकार- 'अलंकाराः कटककुण्डलादिवत्' । (कटक कुण्डलवत् अनुप्रासादि अलंकार होते हैं।)

रीति- 'रीतयोऽवयवसंस्थानविशेषवत्'। (रीति अवयव विन्यास आदि शरीर संस्थान विशेष वैदर्भी आदि।)

**"वाक्यं रसात्मकं काव्यं दोषास्तस्यापकर्षकाः
उत्कर्षहेतवः प्रोक्ता गुणालंकाररीतयः"।।**

गुण, अलंकार और रीति वे काव्यतत्व हैं जो रसात्मक वाक्य रूप काव्य की उत्कृष्टता के कारण हुआ करते हैं ।

गुण शब्दोऽत्रगुणाभिव्यञ्जक शब्दार्थयोरुपर्च्यते।

यहां गुण के अभिव्यञ्जक शब्द और अर्थ में लक्षणा होती है।

॥द्वितीय परिच्छेद॥

वाक्यस्वरूप-

वाक्य के दो प्रकार-

(1) वाक्य (2) महावाक्य

1. वाक्य- "वाक्यं स्याद्योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः" । वाक्य ऐसे पदों का समूह है जिसमें योग्यता, आकांक्षा और आसत्ति का रहना अनिवार्य है । उदाहरण- शून्यं वासगृहं.... आदि।

योग्यता- 'पदार्थानां परस्पर सम्बन्धे बाधाभावः'। पदार्थों के पारस्परिक सम्बन्ध में किसी बाध अथवा विरोध का अभाव होना योग्यता है । **जैसे-'वह्निना सिञ्चति'** ।

आकाङ्क्षा- 'प्रतीतिपर्यवसानाविरहः'। पदों के अर्थ की प्रतीति में अभिप्रेत प्रतीति की समाप्ति का जो अभाव है वह आकांक्षा है । **जैसे-** 'गोरश्वः पुरुषो हस्ती'।

आसत्तिः- 'आसत्तिर्बुद्ध्यविच्छेदः'। किसी अभिप्राय के उपस्थापक पदार्थों की अविच्छिन्न अथवा अव्यवहित उपस्थिति । **जैसे-** 'गिरिर्भुक्तमग्निमान् देवदत्तेन'।

"आकाङ्क्षायोग्यतयोरात्मार्थत्वेऽपि पदोच्चयधर्मत्वमुपचारात्" ।

ये परम्परा सम्बन्ध से पदसमूह के भी धर्म माने गये हैं ।

2. महावाक्य- 'वाक्योच्चयो महावाक्यम्' । महावाक्य वह है जो वाक्यों का उच्चय अथवा समूह हुआ करता है । जैसे योग्यता आदि से युक्त ही वाक्य हो सकता है, वैसे ही वही वाक्य समूह महावाक्य हो सकता है जो योग्यता आदि से युक्त हो । **उदाहरण** - रामायण, महाभारत, आदि,

पदलक्षणम् -

"वर्णाः पदं प्रयोगार्हानन्वितैकार्थबोधकाः"।

पद वे वर्ण हैं जो प्रयोग योग्य हुआ करते हैं और किसी एक अनन्वित अर्थ के बोधक हुआ करते हैं । **यथा-** घट, पटादि ।

'वर्णाः इति बहुवचनमविवक्षितम'।

- **वर्णाः-** यहां पर बहुवचन विवक्षित नहीं है।
- **अनन्विति-** यहां पर 'अनन्विति' कहने से महावाक्य की निवृत्ति की गई है।
- **प्रयोगार्ह-** प्रयोगार्ह कहने से भू आदि धातु तथा प्रतिपादिक की निवृत्ति।
- **एक-** एक कहने से साकाङ्क्ष अनेक पद, अनेक वाक्यों की व्यावृत्ति।
- **अर्थबोधकाः-** अर्थबोधक से कचटप आदि वर्णों की व्यावृत्ति।

शब्दशक्ति-

अर्थ तीन प्रकार का- (1) वाच्य (2) लक्ष्य (3) व्यङ्ग्य।

स्वरूप- "वाच्योऽर्थोऽभिधया बोध्यो लक्ष्यो लक्षणया मतः
व्यङ्ग्यो व्यञ्जनया ताः स्युस्तिस्रः शब्दस्य शक्तयः"॥

इनमें वाच्यार्थ वह है जो अभिधा शक्ति के द्वारा प्रतिपादित किया जाता है, लक्ष्यार्थ वह है जो लक्षणा शक्ति के द्वारा बोधित हुआ करता है और व्यङ्ग्यार्थ उसे कहते हैं जो व्यञ्जना शक्ति के द्वारा अवगत किया जाता है ।

1. अभिधा- "तत्र संकेतितार्थस्य बोधनादग्रिमाभिधा।
सङ्केतो गृह्यते जातौ गुणद्रव्यक्रियासु च"।।

अभिधा वह शक्ति है जिससे संकेतित (प्रसिद्ध) अर्थ का अवबोध हुआ करता है और इसलिए इसे शब्द की मुख्य शक्ति कहते हैं । संकेतितार्थ की प्रतीति गुण, द्रव्य, क्रिया जाति से होती है ।

- **प्रसिद्धपदसमभिव्यवहारात्** -"इह प्रभिन्नकमलोदरे मधूनि मधुकरः पिबति"।
- **कश्चिदाप्तोपदेशात्** -"अयमश्वशब्दवाच्यः"।

**2. लक्षणा- "मुख्यार्थबाधे तद्युक्तो ययान्योऽर्थः प्रतीयते।
रूढे प्रयोजनाद्वाऽसौ लक्षणा शक्तिरर्पिता"।।**

लक्षणा वह शक्ति है जो मुख्यार्थ के अनुपपन्न हो जाने पर वहां एक ऐसे अर्थ का बोध करवाती है जो मुख्यार्थ से संबद्ध तो रहता है परन्तु मुख्यार्थ से भिन्न स्वभाव वाला होता है और इसके ऐसा होने का कारण रूढि अथवा प्रयोजन विवक्षा होती है ।

- लक्षणा के दो प्रकार हैं- उपादान, लक्षण।
- लक्षणलक्षणा का अन्य नाम- जहत्स्वार्था,
- लक्षणा के भेद- **"तदेवं लक्षणाभेदाश्चत्वारिंशन्मता बुधैः॥**
- रूढ़ि में- (8), प्रयोजन में- (32), = (40)
- प्रयोजन के धर्म+धर्मी 16+16 से 32 भेद ।
- यह फिर से 'पदगत' और 'वाक्यगत' से दो प्रकार की होती है।
- इस प्रकार लक्षणा के सम्पूर्ण (80) भेद होते हैं । उदाहरण-
- 1. पदगत- **'गङ्गायां घोषः'**।

- 2. वाक्यगत-

"अपकृतं बहु तत्र किमुच्यते सुजनता प्रथिता भवता परं ।
विदधदीदृशमेव सदा सखे !सुखितमास्स्व ततः शरदां शतम्॥

॥लक्षणा॥

अष्टौ रूढिमत्यो लक्षणा-

1. शुद्धा रूढ़िमती उपादानलक्षणासारोपा- अश्वः श्वेतो धावति।
2. शुद्धा रूढ़िमती उपादानलक्षणासाध्यवसाना- श्वेतो धावति।
3. शुद्धा रूढ़िमती लक्षणलक्षणा सारोपा – कलिङ्गः पुरुषो युध्यते।
4. शुद्धा रूढ़िमती लक्षणलक्षणा साध्यवसाना- कलिङ्गः साहसिकः।
5. गौणी रूढ़िमती उपादानलक्षणासारोपा-एतानि तैलानि हेमन्ते सुखानि।
6. गौणी रूढ़िमती उपादानलक्षणा साध्यवसाना- तैलानि हेमन्ते सुखानि।
7. गौणी रूढ़िमती लक्षणलक्षणा सारोपा-राजा गौडेन्द्र कण्टकं शोधयति।
8. गौणी रूढ़िमती लक्षणलक्षणा साध्यवसाना- राजा कण्टकं शोधयति।

अष्टौ प्रयोजनवत्यो लक्षणाः-

1. शुद्धाः प्रयोजनवती उपादानलक्षणा सारोपा -एते कुन्ताः प्रविशन्ति।
2. शुद्धाः प्रयोजनवती उपादानलक्षणा साध्यवसाना -कुन्ताः प्रविशन्ति।
3. शुद्धाः प्रयोजनवती लक्षणलक्षणा सारोपा -आयुर्घृतम्।
4. शुद्धाः प्रयोजनवती लक्षणलक्षणा साध्यवसाना -गङ्गायां घोषः।
5. गौणी प्रयोजनवती उपादानलक्षणा सारोपा -एते राजकुमारा गच्छन्ति।
6. गौणी प्रयोजनवती उपादानलक्षणा साध्यवसाना-राजकुमारा गच्छन्ति।
7. गौणी प्रयोजनवती लक्षणलक्षणा सारोपा -गौर्वाहीकः।
8. गौणी प्रयोजनवती लक्षणलक्षणा साध्यवसाना -गौर्जल्पति।

3. व्यञ्जना- "विरतास्वभिधाद्यासु ययाऽर्थो बोध्यतेऽपरः।।
सा वृत्तिर्व्यञ्जना नाम शब्दस्यार्थादिकस्य च" ।

व्यञ्जना शक्ति शब्द और अर्थादि की वह शक्ति है जो अभिधा आदि शक्तियों के शांत हो जाने पर ऐसे अर्थ का बोध कराती है जो सर्वदा एक विलक्षण प्रकार का अर्थ हुआ करता है ।

शाब्दी व्यञ्जना-

अभिधालक्षणामूला शब्दस्य व्यञ्जना द्विधा-

शाब्दी व्यञ्जना के अभिधामूला और लक्षणामूला ये दो भेद होते हैं ।

1. अभिधामूला- अनेकार्थस्य शब्दस्य संयोगाद्यैर्नियन्त्रिते ।
एकत्रार्थेऽन्यधीहेतुर्व्यञ्जना साभिधाश्रया ।।

अभिधामूलक व्यञ्जना शब्द वह शक्ति है जो कि संयोगादिरूप अभिधा नियामकों में से किसी के द्वारा कहीं किसी अनेकार्थक शब्द के किसी एक प्राकरणिक अर्थ में नियन्त्रित कर दिए जाने पर एक ऐसे अर्थ को उपस्थित किया करती है जो वाच्यार्थ से सर्वथा विलक्षण अर्थ हुआ करता है ।

उदाहरण- 'संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता ।
अर्थः प्रकरणं लिङ्गंशब्दस्यान्यस्य संनिधिः ।।
सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः ।
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः

2. लक्षणामूला- लक्षणोपास्यते यस्य कृते तत्तु प्रयोजनं ।
यया प्रत्याय्यते सा स्याद्व्यञ्जना लक्षणाश्रया ।।

आर्थी व्यञ्जना-

1. वाच्य 2. लक्ष्य 3. व्यङ्ग्य

वक्तृबोद्धव्यवाक्यानामन्यसंनिधिवाच्ययोः ।
प्रस्तावदेशकालानां काकोश्चेष्टादिकस्य च ।।
वैशिष्ट्यादन्मथ या बोधयेत्साऽर्थसंभवा ।

1. (वाच्य) वक्तृवाक्यप्रस्तावदेशकालवैशिष्टय -

'कालो मधुः कुपित एष च पुष्पधन्वा
धीरा वहन्ति रतिखेदहराः समीराः ।
केलीवनीयमपि वञ्जुलकुञ्जमञ्जुर्-
दूरे पतिः कथय किं करणीयमद्य ।।'

2. (लक्ष्य) बोद्धव्यवैशिष्ट्य-

निः शेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्मृष्टरागोऽधरो
नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः ।
मिथ्यावादिनि दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे !
वापीं स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम् ।।

'काकुवैशिष्ट्य -

'गुरुपरतन्त्रतया बत दूरतरं देशमुद्यतो गन्तुं ।
अलिकुलकोकिलललिते नैष्यति सखि ! सुरभिसमयेऽसौ ।।

3. (व्यङ्ग्य) अन्यसंन्निधि -

पश्य निश्चल निषपन्दा विसिनीपत्रे रजते बलाका..।

चेष्टावैशिष्ट्य - "संकेतकालमनसं विटं ज्ञात्वा विदग्धया।
हसन्नेत्रार्पिताकूतं लीलापद्मं निमीलितम्"।।

शब्दबुद्धिकर्मणाविरम्य व्यापाराभावः -व्यञ्जना।

॥तृतीय परिच्छेद॥

रस- (9) विभावेनानुभावेन व्यक्त संचारिणं तथा।
रसतामेति रत्यादिः स्थायी भावः सचेतसाम्।।

स्थायी भाव- रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहो भयं तथा
जुगुप्सा विस्मयश्चेत्थमष्टौ प्रोक्ताः शमोऽपि च।।

रस- श्रृंगार हास्य करुण रौद्र वीर भयानकाः।

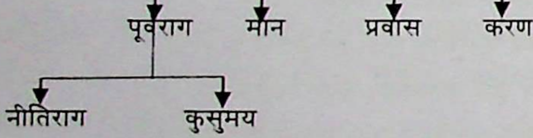
बीभत्सोऽद्भुत इत्यष्टौ रसाः शान्तस्तथा मतः।।

	रस	स्थायीभाव	वर्ण	देवता
1	शृंगार	रति	श्याम	विष्णु
2	हास्य	हास	शुक्ल	प्रमथ
3	करूण	शोक	कपोत	यमराज
4	रौद्र	क्रोध	लाल	रूद्र
5	वीर	उत्साह	सुवर्ण(गौर)	महेन्द्र/इन्द्र
6	भयानक	भय	कृष्ण	काल
7	वीभत्स	जुगुप्सा	नील	महाकाल
8	अद्भुत	विस्मय	पीत	गन्धर्व
9	शांत	शम (निर्वेद)	शुक्ल(कुन्दपुष्पवत, चन्द्रवत)	लक्ष्मीनारायण
10	वात्सल्य	स्नेह		

रसवर्ण स्मरणार्थ- "श्शुकलासुकृनीपी"

शृंगार-

(1) संभोग (2) विप्रलम्भ



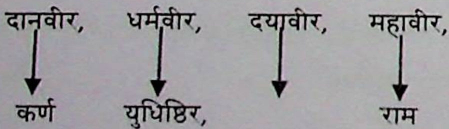
नीतिराग कुसुमय

हास्य- (6)

1. स्मित, 2. हसित, 3. अतिहसित,
4. विहसित, 5. अवहसित, 6. अपहसित

वीर- (4)

दानवीर, धर्मवीर, दयावीर, महावीर,



कर्ण युधिष्ठिर, राम

॥चतुर्थ परिच्छेद॥

काव्यभेद-

काव्यं ध्वनिर्गुणीभूतव्यङ्ग्यं चेति द्विधा मतं ।
वाच्यातिशयिनि व्यङ्ग्ये ध्वनिस्तत्काव्यमुत्तमं॥

काव्य (रसात्मक वाक्य) के दो भेद होते हैं- 1. ध्वनि, 2. गुणीभूतव्यङ्ग्य, इन दोनों काव्यभेदों में ध्वनिसंज्ञक काव्य जिसे सर्वोत्तम काव्यप्रकार कहा गया है, वो वह है जिसमें वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यङ्ग्यार्थ अधिक सुन्दर (अतिशय चमत्कारजनक) हुआ करता है ।

(1) ध्वनि-

भेदौ ध्वनेरपि द्वावुदीरितौ लक्षणाभिधामूलौ ।
अविवक्षितवाच्योऽन्यो विवक्षितान्यपरवाच्यश्च॥

ध्वनि काव्य के भी दो भेद बताये गये हैं- 1. लक्षणामूलक ध्वनिकाव्य, 2. अभिधामूलक ध्वनिकाव्य, इन दोनों भेदों में लक्षणामूलक ध्वनिकाव्य को तो 'अविवक्षितवाच्य ध्वनि' काव्य कहा गया है और अभिधामूलक ध्वनिकाव्य को 'विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि' काव्य कहा जाता है ।

ध्वनि के दो भेद-

1. **अविवक्षितवाच्य** (लक्षणामूला)
2. **विवक्षितान्यपरवाच्य** (अभिधामूला)

(1) **अविवक्षितवाच्य-**

अर्थान्तरे संक्रमिते वाच्येऽत्यन्तं तिरस्कृते ।
अविवक्षितवाच्योऽपि ध्वनिर्द्वैविध्यमृच्छति ॥

अविवक्षितवाच्य के दो भेद-

1. **अर्थान्तरसङ्क्रमितवाच्य** (अजहत्स्वार्था लक्षणा)

उदाहरण-

कदली कदली, करभः करभः, करिराजकरः करिराजकरः ।
भुवत्रितयेऽपि बिभर्ति तुलामिदमूरुयुगं न चमूरुदृशः ।।

कदली-कदली ही है, करभ-करभ ही है और हाथी की सूंड-हाथी की सूंड ही है । इस त्रिभुवन में कोई भी वस्तु ऐसी नहीं है जो इस मृगनयनी सुन्दरी के उरूयुगल की समानता रख सके ।

(अत्र जाड्याद्यतिशयश्च व्यङ्ग्यः) 'यहाँ पर द्वितीय कदली करभादि शब्द 'अर्थान्तर' (दूसरे अर्थ को बतलाना) में परिणमित होकर जाड्यातिशयता को प्रकट करते हैं अत: यह अर्थान्तरसङ्क्रमित का उदाहरण है'।

2. **अत्यन्ततिरस्कृतवाच्य-** (जहत्स्वार्था लक्षणा)

उदाहरण-

'निःश्वासान्ध इवादर्शश्चन्द्रमा न प्रकाशते' । (आदर्श-दर्पण)

चाँद बिल्कुल नहीं चमक रहा है । ऐसा लग रहा है जैसे आकाश में श्वासोच्छ्वास अन्धा (मलिन) एक दर्पण टंगा हो । **(अत्रान्धशब्दो मुखार्थे बाधितेऽप्रकाशरूपमर्थं बोधयति, अत्र अप्रकाशातिशयश्च व्यङ्ग्यः)** यह अत्यन्ततिरस्कृतकाव्य का भेद है क्योंकि यहां जो अन्ध पद प्रयुक्त है वह अपने मुख्यार्थ (अर्थात् दृष्टि विहीन रूप अर्थ) में सर्वथा अनुपपन्न है तथा एक मात्र प्रकाशरहित (मलिन) अर्थ का अवबोध करा रहा है । यहां जो

व्यङ्ग्य रूप से विवक्षित अर्थ है वह अप्रकाशमानता (मलीनता का आधिक्य है।)

(2) विवक्षितान्यपरवाच्य-

विवक्षिताभिधेयोऽपि द्विभेदः प्रथमं मतः ।
असंलक्ष्यक्रमो यत्र व्यङ्ग्यो लक्ष्यक्रमस्तथा ।।

विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि के दो भेद-

1. असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य (रसादि) **2. संलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य**

असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य के उदाहरण रस और भावादि हैं, आदि पद से रसाभास, भावाभास, भावशवलता आदि का बोध होता है ।

1. असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य -

तत्राद्यो रसभावादिरेक एवात्र गण्यते ।
एकोऽपि भेदोऽनन्तत्वात्संख्येयस्तस्य नैव यत्॥

विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि का यह पहला प्रकार अर्थात् असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य ध्वनि तो रसभावादिरूप ध्वनि है और इसे एक प्रकार का ही माना जाता है क्योंकि यदि इसके भेद किये जाएं तो एक-एक भेद में अनन्त भेद संभव होते हैं जिनकी गणना असंभव बन जाती है। **न्याय-** 'शतपत्रक्रमदलन्याय' ।

2. संलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य-

शब्दार्थोभयशक्त्युत्थे व्यङ्ग्योऽनुस्वानसन्निभे ।
ध्वनिर्लक्ष्यक्रमव्यङ्ग्यस्त्रिविधः कथितो बुधैः ।।

संलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य ध्वनि के भेद-

1. शब्दशक्त्युत्थ 2. अर्थशक्त्युत्थ 3. उभयशक्त्युत्थ ।

(1) शब्दशक्तिमूल - वस्त्वलङ्काररूपत्वाच्छब्दशक्त्युद्भवोद्विधा ।

शब्दशक्तिमूल व्यङ्ग्य के दो भेद-

1. वस्तुरूप-

उदाहरण- पथिक ! नात्र स्रस्तरमस्ति मनाक्प्रस्तरस्थले ग्रामे ।
उन्नतपयोधरं प्रेक्ष्य यदि वसति तद्वस ॥

(अत्र सत्थरादिशब्दशक्त्या यद्युपभोग क्षमोऽसि तदास्स्वेति वस्तु व्यज्यते।) यहां शब्दशक्त्युद्भव वस्तुरूप ध्वनि इसलिए है क्योंकि यहां जो स्रस्तर, पयोधर आदि शब्द प्रयुक्त हैं उनकी व्यञ्जकता शक्ति से यह अभिप्राय निकलता है कि अरे बटोहि ! यदि पर्वतीय सुन्दरी का सुखभोग चाहते हो तो यहीं रात बिता लो । इस अभिप्राय में कोई आलंकारिकता नहीं है यह अनलङ्कृत अर्थरूप अभिप्राय है अतः वस्तुमात्र है ।

2. अलङ्काररूप-

उदाहरण - 1. 'दुर्गालङ्घितविग्रहः....इत्यादौ'। यहाँ पर उमावल्लभ (महाराज उमा के पति भानुदेव) उमावल्लभ (पार्वती पति शङ्कर) के समान है, यह **'उपमा'** अलंकार रूप अर्थ अभिव्यङ्ग्य रूप से प्रतीत होता है ।

2. 'अमितः समितः प्राप्तैरुत्कर्षैर्हर्षद ! प्रभो ! ।
अहितः सहितः साधु यशोभिरसतामसि'॥

यहां **'विरोधाभास'** रूप अलङ्कृत अर्थ इसलिए व्यङ्ग्य है क्योंकि अमित और समित तथा अहित और सहित शब्दों के बीच अपि (भी) शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है (क्योंकि अपि शब्द के प्रयोग में विरोधाभास व्यङ्ग्य नहीं अपितु वाच्य रह जाता है।)

(2) अर्थशक्तिमूल ध्वनि-

वस्तु वालङ्कृतिर्वापि द्विधार्थः सम्भवी स्वतः।
कवेः प्रौढोक्तिसिद्धो वा तन्निबद्धस्य वेति षट् ॥
षड्भिस्तैर्व्यज्यमानस्तु वस्त्वलङ्काररूपकः।
अर्थशक्त्युद्भवो व्यङ्ग्यो याति द्वादशभेदतां ॥

अर्थशक्तिमूल ध्वनि के बारह भेद-

1. स्वतः संभवी वस्तु से वस्तु ध्वनि ।
2. स्वतः संभवी वस्तु से अलङ्कार ध्वनि ।
3. स्वतः संभवी अलङ्कार से वस्तु ध्वनि ।
4. स्वतः संभवी अलङ्कार से अलङ्कार ध्वनि ।
5. कविप्रौढोक्तिसिद्ध वस्तु से वस्तु ध्वनि ।
6. कविप्रौढोक्तिसिद्ध वस्तु से अलङ्कार ध्वनि ।
7. कविप्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार से वस्तु ध्वनि ।
8. कविप्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार से अलङ्कार ध्वनि ।
9. कविनिबद्धवक्तृप्रौढोक्तिसिद्ध वस्तु से वस्तु ध्वनि ।
10. कविनिबद्धवक्तृप्रौढोक्तिसिद्ध वस्तु से अलङ्कार ध्वनि ।
11. कविनिबद्धवक्तृप्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार से वस्तु ध्वनि ।
12. कविनिबद्धवक्तृप्रौढोक्तिसिद्ध अलङ्कार से अलङ्कार ध्वनि ।

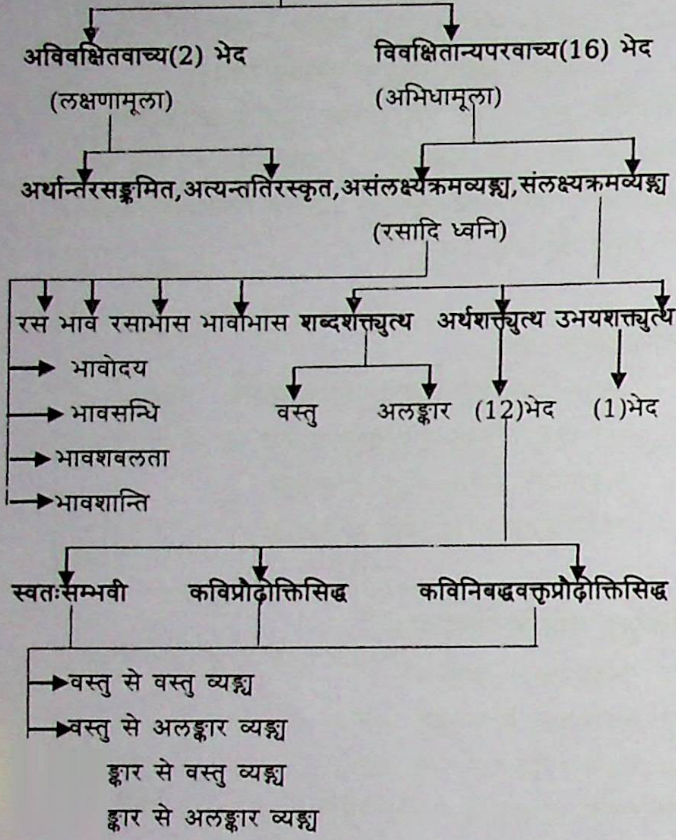
(3) उभयशक्तिमूल ध्वनि-

"एकः शब्दार्थशक्त्युत्थे"। संलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य ध्वनिकाव्य जो कि शब्दार्थशक्त्युद्भव भेद है वह एक प्रकार का ही है।

उदाहरण-

'हिममुक्तचन्द्ररुचिरः सपद्मको मदयन्द्विजाञ्जनितमीनकेतनः ।
अभवत्प्रसादितसुरो महोत्सवःप्रमदाजनस्य स चिराय माधवः'॥

(अत्र माधवो कृष्ण माधवो वसन्तः इवेत्युपमालङ्कारो व्यङ्ग्यः।) यहाँ पर शब्द और अर्थ की सम्मिलित व्यञ्जकता से यह व्यङ्ग्यार्थ निकल रहा है कि माधव (श्री कृष्ण) वस्तुतः माधव (वसन्त) की भांति इन्द्रप्रस्थ में विराजमान रहे यह व्यङ्ग्यार्थ एक उपमालंकार रूप चमत्कारपूर्णार्थ है । **"तदष्टादशधा ध्वनिः"।** इस प्रकार ध्वनि 18 प्रकार की होती है ।



(2) गुणीभूतव्यङ्ग्य-

'अपरं तु गुणीभूतव्यङ्ग्यं वाच्यादनुत्तमे व्यङ्ग्ये' ।

गुणीभूतव्यङ्ग्य काव्य वह काव्य है जिसमें प्रतीति होने वाला व्यङ्ग्यार्थ वाच्यार्थ की अपेक्षा अनुत्तम अथवा गुणीभूत (अप्रधान) लगा करता है।

गुणीभूतव्यङ्ग्य के भेद-

तत्र स्यादितराङ्गकाक्वाक्षिप्तं च वाच्यसिद्ध्यङ्गं ।
संदिग्धप्राधान्यं तुल्यप्राधान्यमस्फुटमगूढं ॥
व्यङ्ग्यमसुन्दरमेवं भेदास्तस्योदिता अष्टौ ॥

1. इतराङ्ग व्यङ्ग्य-

'अयं सरसनोत्कर्षी पीनस्तनविमर्दनः ।
नाभ्यूरुजघनस्पर्शी नीवीविस्रंसनः करः'॥

'अत्र शृंगारः करुणस्याङ्गं'। यहां पर श्रृंगार रस करुण का अङ्ग है ।

2. काक्वाक्षिप्तव्यङ्ग्य-

'मथ्नामि कौरवशतं समरे न कोपा-
दुःशासनस्य रुधिरं न पिबाम्युतरस्तः ।
संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू
सन्धिं करोतु भवतां नृपतिः पणेन' ॥

'अत्र मथनाम्येवेत्यादि व्यङ्ग्यवाच्यस्य निषेधस्य सहभावेनैव स्थितम्'। यहाँ व्यङ्ग्यार्थ किसी पद की काकु अथवा उच्चारण सम्बन्धा ध्वनि विकृति से ही निकल पड़ता है , जिससे वहाँ के वाच्यार्थ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जैसे इस पद्य के वाच्यार्थ अर्थात् **'न मथ्नामि'** (सर्वनाश न करूँ) आदि की प्रतीति और **'न मथ्नामीति न'** (अवश्य सर्वनाश करूँगा) आदि काक्वाक्षिप्त व्यङ्ग्यार्थ की प्रतीति एक समय पर ही हो रही है जिससे वाचार्थ प्रतीति के बाद व्यङ्ग्यार्थ का चमत्कृति जो संलक्ष्यक्रम ध्वनिकाव्य की एक स्वाभाविक विशेषता है दिखाई नहीं पड़ती ।

3. वाच्यसिद्धव्यङ्ग्य-

'द्वीपयन् रोदसीरन्ध्रमेष ज्वलति सर्वतः।
प्रतापस्तव राजेन्द्र ! वैरिवंशदवानलः'॥

'अत्रान्वयस्य वेणुत्वारोपणरूपो व्यङ्ग्यः प्रतापस्य दावानलत्वारोपसिद्ध्यङ्गं'। यहाँ पर राजवीर के राजवंश और वश (वांस) में जो शब्दशक्तिमूलक अभेदारोप अभिव्यक्त हो रहा है वह अंत में वाच्यार्थभूत 'प्रताप' और 'दावानल' के अभेदारोप की ही सिद्धि अङ्ग बन गया है ।

4. संदिग्धप्राधान्यव्यङ्ग्य -

'हरस्तु किंचित्परिवृत्तधैर्यः...**इत्यादौ विलोचनव्यापारचुम्बनाभिलाषये प्राधान्ये संदेहः'** । यहाँ पर संदिग्धप्राधान्यगुणीभूतव्यङ्ग्य इसलिए है क्योंकि 'विलोचन व्यापार' के वाच्य सौन्दर्य के कारण यहाँ 'परिचुम्बनाभिलाष' के व्यङ्ग्य चमत्कार की प्रधानता संदिग्ध हो गई है ।

5. तुल्यप्राधान्य-

'ब्राह्मणातिक्रमत्यागो भवतामेव भूतये ।
जामदग्न्यश्च वो मित्रमन्यथा दुर्मनायते'॥

'अत्र परशुरामो रक्षकुलक्षयं करिष्यतीति व्यङ्ग्यस्य वाच्यस्य च समप्राधान्यम्'। इस तुल्यप्राधान्य गुणीभूतव्यङ्ग्य में व्यङ्ग्यार्थ और वाच्यार्थ का काव्यसौन्दर्य समान रूप से प्रतीत हुआ करता है । जैसे-यहां जो व्यङ्ग्यार्थ निकल रहा है कि (यदि ब्राह्मण का अनादर हुआ तो) परशुराम राक्षसवंश का सर्वनाश कर डालेगा उसके चमत्कार की अपेक्षा यहाँ के वाच्यार्थ अर्थात् 'परशुराम की मित्रता निभाने से राक्षस वंश का कल्याण है' इस अभिप्राय का सौन्दर्य कम काव्यात्मक नहीं ।

6. अस्फुटव्यङ्ग्य-

'सन्धौ सर्वस्वहरणं विग्रहे प्राणनिग्रहः ।
अल्लावदीननृपतौ न सन्धिर्न च विग्रहः'॥

'अत्राल्लावदीनाख्ये नृपतौ दान सामादिमन्तरेण नान्यः प्रशमोपाय इति व्यङ्ग्यं व्युत्पन्नानामपि झटत्युस्फुटम्'। इस पद्य में जो व्यङ्ग्यार्थ है वह

परिणतबुद्धि वाले व्यक्तियों को भी शीघ्र समझ में नही आ सकता इसलिए अस्फुट व्यङ्ग्य है ।

7. अगूढव्यङ्ग्य-

'अनेन लोकगुरुणा सतां धर्मोपदेशिना ।
अहं व्रतवती स्वैरमुक्तेन किमतः परम्'॥

'अत्र प्रतीयमानोऽपि शाक्यमुनेः तिर्यग्योषिति बलात्कारोपभोगः अस्फुटतया वाच्यायमान इत्यगूढं' । यहाँ अगूढ व्यङ्ग्य इसलिए है क्योंकि शाक्य मुनि का किसी नीच स्त्री के साथ बलात्कार करने का जो अभिप्राय यहाँ अभिव्यक्त हो रहा है वह वाच्यार्थ की भाँति सभी के लिए स्पष्ट है।

8. असुन्दरव्यङ्ग्य-

'वाणीरकुञ्जोड्डीन शकुनिकोलाहल श्रृण्वन्त्या ।
गृहकर्मव्यापृताया बद्धा सीदन्त्यङ्गानि' ॥

'अत्र दत्तसंकेत कश्चिल्लतागृह प्रविष्ट इति व्यङ्ग्यात् सीदन्त्यङ्गानि इति वाच्यस्य चमत्कारः सहृदयसंवेद्य इत्यसुन्दरम्'। असुन्दरव्यङ्ग्य वह है जहाँ व्यङ्ग्यार्थ सुन्दर नहीं लगा करता है जैसे- 'सीदन्त्यङ्गानि' अर्थात् व्याकुलता का वाच्यार्थ जितना सुन्दर लग रहा है उतना व्यङ्ग्यार्थ अर्थात् (प्रेम मिलन के पूर्व संकेतानुसार कोई प्रेमी वानीरकुञ्ज में आ पहुंचा है) यह नहीं लग रहा है ।

॥षष्ठ परिच्छेद॥

काव्य-

1. **दृश्य-** रूपक   2. **श्रव्य-** गद्य, पद्य, मिश्र

श्रव्यकाव्य- श्रव्यं श्रोतव्यमात्रं तत्पद्यगद्यमयं द्विधा॥
श्रव्यकाव्य के दो प्रकार- 1. पद्यमय 2. गद्यमय ।

पद्यकाव्य-

छन्दोबद्धपदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकं ।
द्वाभ्यां तु युग्मकं सांदानतिकं त्रिभिरिष्यते ॥
कलापकं चतुर्भिश्च पञ्चभिः कुलकं मतं ।

मुक्तक उदाहरण -

'सान्द्रानन्दमनन्तमव्ययमजं यद्योगिनोऽपि क्षणं
साक्षात्कर्तुमुपासते प्रति मुहुर्ध्यानैकतानाः परं ।
धन्यास्ता मधुरापिरीयुवतयस्तद्ब्रह्म या कौतुका--
दालिङ्गन्ति समलपन्ति शतधाऽकर्षन्ति चुम्बन्ति च ।।'

दूसरे पद्य की अपेक्षा न रहने से यह मुक्तक का उदाहरण है ।

युग्मक उदाहरण -

'किं करोषि करोपान्ते कान्ते गण्डस्थलीमिमां ।
प्रणयप्रवणो कान्तेऽनैकान्ते नोचिताः क्रुधः ।।
इति यावत्कुरङ्गाक्षीं वक्तुमीहामहे वयं ।
तावदाविरभूचूते मधुरो मधुपध्वनिः ।।

दो श्लोकों का परस्पर संबन्ध रहने से यह 'युग्मक' का उदाहरण है ।

महाकाव्य- सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः ।।
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः ।
एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा ।।
श्रृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते ।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसन्धयः ।।
इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयं ।
चत्वारस्तस्य वर्गाः स्युस्तेष्वेकं च फलं भवेत् ।।
आदौ नमस्क्रियाशीर्वा वस्तुनिर्देश एव वा ।
क्वचिन्निन्दा खलादीनां सतां च गुणकीर्तनं ।।
एकवृत्तमयैः पद्यैरवसानेऽन्यवृत्तकैः ।
नातिस्वल्पा नातिदीर्घाः सर्गा अष्टाधिका इह ।।
नानावृत्तमयः कापि सर्गः कश्चन दृश्यते ।
सर्गान्ते भाविसर्गस्य कथायाः सूचनं भवेत् ।।

काव्य- भाषाविभाषानियमात्काव्यं सर्गसमुज्झितं ।
एकार्थप्रवणैः पद्यैः संधिसामग्र्यवर्जितं ।।
जैसे- भिक्षाटनम्, आर्याविलास ।

खण्डकाव्यं- खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च ।
जैसे- मेघदूतादि ।

कोष- कोषः श्लोकसमूहस्तु स्यादन्योन्यानपेक्षकः ।

गद्यकाव्य- वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चतुर्विधं ।।
आद्यं समासरहितं वृत्तभागयुतं परं ।
अन्यद्दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकं ।।

गद्यकाव्य **मुक्तक, वृत्तगन्धि, उत्कलिकाप्राय,** और **चूर्णक** इन चार भेदों से युक्त है ।

कथा- कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितं ।।
क्वचिदत्र भवेदार्या क्वचिद्वक्रापवक्त्रके ।
आदौ पद्यैर्नमस्कारः खलादेर्वृत्तकीर्तनं ।।

जैसे- कादम्बरी

आख्यायिका- आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशानुकीर्तनं ।
अस्यामन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित्क्वचित् ।।
कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति वध्यते ।
आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित् ।।
अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनं ।

जैसे- हर्षचरित

चम्पूकाव्य/मिश्रकाव्य- गद्यपद्यमयं काव्यं चम्पूरित्यभिधीयते ।।

जैसे- देशराज

उपरूपक- 18

(1) नाटिका	(2) त्रोटक
(3) गोष्ठी	(4) सट्टक
(5) नाट्यरासक	(6) प्रस्थान
(7) उल्लाप्य	(8) काव्य
(9) प्रेङ्खण	(10) रासक
(11) संलापक	(12) श्रीगदित
(13) शिल्पक	(14) विलासिका
(15) दुर्मल्लिका	(16) प्रकरणी
(17) हल्लीश	(18) भाणिका

॥काव्यप्रकाश॥

काव्यप्रकाश आचार्य मम्मट द्वारा रचित काव्य की परख कैसे की जाय इस विषय पर उदाहरण सहित लिखा गया एक विस्तृत एवं अत्यंत महत्त्वपूर्ण एवं प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है। आचार्य मम्मट या मम्मटाचार्य ने काव्य प्रकाश को 10 भागों में बांटा है जिसको उन्होंने प्रथम उल्लास, द्वितीय उल्लास आदि नाम दिए हैं।

प्रथम उल्लास- में मंगलाचरण के बाद कविसृष्टि की विशेषताएँ, अनुबंध, काव्य के प्रयोजन, उपदेश की त्रिविध शैली के विषय में बात करते हुए वे मयूरभट्ट, वामन, भामह तथा कुंतक के प्रयोजनों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हैं, कवि तथा पाठक या श्रोता की दृष्टि से काव्य का प्रयोजन के विषय में चर्चा करते हैं तथा भरतमुनि के काव्य प्रयोजन को स्पष्ट करते हैं। प्रयोजन के पश्चात प्रथम अध्याय में उन्होंने विभिन्न आचार्यों के काव्य हेतुओं का विश्लेषण किया है, काव्य के लक्षण बताए हैं। इसका नाम उन्होंने रखा है- **काव्य-प्रयोजन-कारण-स्वरूप निर्णय।**

द्वितीय उल्लास- शब्द क्या है, और उसकी शक्ति क्या है, इस विषय में पूर्ववर्ती आचार्यों के मत का विश्लेषण करते हुए उन्होंने अपनी राय प्रकट की है। उन्होंने शब्द की तीन शक्तियाँ अभिधा, लक्षणा और व्यंजना के विषय में बात की है और व्यंजना को काव्य के लिए सर्वोत्तम गुण सिद्ध किया है। इस उल्लास का शीर्षक है- **शब्दार्थ स्वरूप निर्णय।**

तृतीय उल्लास- अर्थ की विशद व्याख्या की गई है। अर्थ क्या है, अर्थ के कितने भेद हो सकते हैं, पूर्ववर्ती आचार्यों ने इस विषय में क्या कहा है, और स्वयं उनका इस विषय में क्या विचार है इसका वर्णन किया गया है। इस उल्लास का शीर्षक है - **अर्थव्यंजकता निर्णय।**

चतुर्थ उल्लास- काव्य के प्रथम भेद ध्वनि काव्य के विषय में बताते हुए रस, रस की निष्पत्ति, उसके भाव, अनुभावों का विश्लेषण तथा पूर्ववर्ती आचार्यों के साथ उसका समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। रस में व्यंजकता किस प्रकार निर्मित होती है वह श्रोता तक कैसे पहुँचती है तथा ध्वनि से उसका क्या तादात्म्य है यह इस अध्याय में बताया गया है। इस अध्याय में रसवदलंकारों (ऐसे अलंकार जिनसे काव्य में रस की उत्पत्ति होती है) का भी वर्णन है और यह भी बताया गया है कि वे अर्थ व्यंजना में किस प्रकार महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं। इस उल्लास का शीर्षक है-**ध्वनि निर्णय।**

पंचम उल्लास- काव्य के दूसरे भेद गुणीभूत व्यंग्य काव्य के आठ भेद दिए गए हैं। पूर्ववर्ती आचार्यों के साथ उनकी परिभाषा की विवेचना करते हुए काव्य में व्यंजना शक्ति विषयक अनेक आचार्यों की परिभाषा तथा उदाहरण का खंडन-मंडन करते हुए अपने मत का प्रतिपादन किया है। इस उल्लास का शीर्षक है **ध्वनिगुणीभूतव्यंग्यसंकीर्णभेद निर्णय।**

षष्ठ उल्लास- काव्य के तीसरे भेद चित्रकाव्य के दो भेद शब्द चित्र और अर्थ चित्र के विषय में बताते हुए पूर्ववर्ती आचार्यों की परिभाषाओं और उदाहरणों की समालोचना प्रस्तुत की गई है। इस उल्लास का शीर्षक है-**शब्दार्थचित्र-निरूपण।**

सप्तम उल्लास- काव्य के दोषों के विषय में विस्तृत व्याख्या है। श्रुतिकटु आदि 16 दोष गिनाए गए हैं और इनके विषय में विस्तार से चर्चा की गई है। इस उल्लास का शीर्षक है- **दोषदर्शन।**

अष्टम उल्लास- काव्य के गुण उनके तीन भेद तीनो भेदों की व्याख्या, आचार्य वामन द्वारा बताए गए दस अर्थ गुणों का खंडन तथा गुणानुसारिणी रचना के अपवादों की विवेचना की गई है। इस उल्लास का शीर्षक है- **गुणालंकार भेद निर्णय।**

नवम उल्लास- शब्दालंकारों की परिभाषा, उदाहरण, प्रयोग और अपवादों का वर्णन है।

दशम उल्लास- अर्थालंकारों की परिभाषा, उदाहरण, प्रयोग और अपवादों का वर्णन है।

॥प्रथम उल्लास॥

॥मंगलाचरण॥

नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति॥

नियति द्वारा निर्धारित नियमों से रहित केवल आनन्दमात्र स्वभाव वाली कविप्रतिभा को छोड़कर अन्य किसी के अधीन न रहने वाली नवरसों से युक्त होने से मनोहारिणी काव्य सृष्टि की रचना करने वाली कवि की भारती (वाणी सरस्वती) सर्वोत्कर्षशालिनी है ।

काव्यप्रयोजनम्-

आचार्यमम्मटः काव्यप्रकाशे प्रथमोल्लासे सर्वप्रथमं काव्यप्रयोजनं प्रतिपादयति-

"काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे"।।

इस पद्य के द्वारा मम्मट काव्य के छः प्रयोजनों को बताते हैं वह कहते हैं कि काव्य यशजनक, अर्थ का उत्पादक, व्यवहार का बोधक, शिव अर्थात् कल्याण शिवेतर अर्थात् उससे भिन्न अनिष्ट का नाशक होता है, जिसे पढ़ने के साथ ही परम आनन्ददायक और स्त्री के समान उपदेश प्रदान करने वाला होता है ।

1. काव्यं यशसे- काव्यरचनाद्वारा यशप्राप्तिः भवति।
यथा- कालिदासादीनामिव यशः। कालिदास-भारवि-माघादयः कवयः काव्यरचनया यशस्विनः अभवन्।

2. अर्थकृते- काव्यरचनया धनोपार्जनमपि भवति।
यथा- श्रीहर्षादेर्धावकादीनामिव धनम् ।

3. व्यवहारविदे- काव्येन व्यवहारज्ञानं भवति।
यथा- राजादिगतोचिताचारपरिज्ञानम्।

4. शिवेतरक्षतये- अमङ्गलविनाशोऽपि काव्यस्य चतुर्थ प्रयोजनं भवति।
यथा-आदित्यादेर्मयूरादीनामिवानर्थनिवारणम्। मयूरकविः सूर्यशतकम् रचयित्वा कुष्ठरोगात् निवृत्तः अभवत्।

5. सद्यः परनिर्वृतये- काव्यं पठित्वा तत्क्षणमेव परमानन्दप्राप्तिः भवति **सकलप्रयोजनमौलिभूतं समनन्तरमेव रसास्वादनसमुदभूतं वेद्यान्तरमानन्द अनुभूयते।।**

6. कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे- काव्यं कान्तेव सरसतां प्रतिपादयति रामादिवद्वर्तितव्यं न रावणादिवत् इति यथायोगं अस्माभिः सर्वथा यतनीयम्।

तत्र उपदेशशैली त्रिविधा-
प्रभुसम्मितं - शब्दप्रधानं - वेदादिशास्त्रेभ्यः।
सुहृत्सम्मितं - अर्थप्रधानं - पुराणादीतिहासेभ्यश्च।
कान्तासम्मितं - शब्दार्थयोर्गुणभावेन - विलक्षणं काव्यम्।

काव्यहेतुः-

"शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञशिक्षाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे"।।

काव्य की रचना में तीन कारण होते हैं वे इस प्रकार हैं- शक्ति, लोकव्यवहारशास्त्र तथा काव्यादि के ज्ञान द्वारा उत्पन्न निपुणता, काव्य को जानने वाले गुरु की शिक्षा के अनुसार काव्य निर्माण का अभ्यास।

शक्तिः- शक्तिः कवित्वबीजभूतसंस्कारविशेषः, यां विना काव्यं न प्रसरेत् प्रसृतं वोपहसनीयं स्यात्।

निपुणता- छन्दोव्याकरणादिशास्त्राणां कोशकलाचतुर्वर्गादिलक्षणग्रन्थानां इतिहासादिग्रन्थानां च विमर्शनाद् व्युत्पत्तिः भवति तदेव नैपुण्यम्।

अभ्यासः- ये काव्यं कर्तुं विचारयितुं च जानन्ति तदुपदेशेन काव्यं करणीयं पौनः पुन्य अभ्यासः करणीयः। अत्र एते **त्रयः हेतवः समुदिताः न तु व्यस्ताः।** कारिकायामुक्तम्-इति हेतुस्तदुद्भवे। काव्यस्य उद्भवे निर्माणे समुल्लासे च **हेतुः न तु हेतवः।**

काव्यलक्षणम्-

"तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि"।

जो दोषों से रहित, गुण से युक्त और साधारणतया अलङ्कार सहित परन्तु कहीं-कहीं अलङ्कार रहित शब्दार्थ का समष्टि रूप काव्य कहलाता है ।

- **अदोषौ-** रसानुभूत्यां बाधकेभ्यः च्युतसंस्कारादिप्रबलदोषेभ्यः रहितं काव्यम्।
- **शब्दार्थौ-** शब्दार्थयुगलं वा शब्दार्थयोः समष्टिः काव्यम्।
- **सगुणौ-** ओजप्रसादादिगुणयुक्तं शब्दार्थयुगलं काव्यम् ।
- **अनलङ्कृति पुनः क्वापि-** सर्वत्र अलङ्कारसहितं किन्तु यदा कदा अलङ्काररहितमपि काव्यं भवति, यदि रसपरिपाकः समुचितः अस्ति।

तद्यथा- यः कौमारहरः स एव हि वरस्ता एव चैत्रक्षपा चेतः समुत्कण्ठते।।

काव्यभेदः-

आचार्यमम्मटेन काव्यस्य भेदाः त्रिधाप्रतिपादिता ।

(i) उत्तमकाव्यम् (ध्वनिकाव्यम्)

(ii) मध्यमकाव्यम् (गुणीभूतव्यंग्यकाव्यम्)

(iii) अधमकाव्यम् (चित्रकाव्यम्)

1. उत्तमकाव्यम्-

लक्षण-

"इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः"।

वाच्यार्थ की अपेक्षा जहां पर व्यङ्ग्यार्थ अधिक चमत्कारयुक्त होता है वह उत्तम काव्य कहलाता है और विद्वानों (वैयाकरणों) ने उसे ध्वनिकाव्य कहा है ।

उदाहरण-

"निःशेषच्युतचन्दनं स्तनतटं निर्मृष्टरागोऽधरो,
नेत्रे दूरमनञ्जने पुलकिता तन्वी तवेयं तनुः।
मिथ्यावादिनी दूति बान्धवजनस्याज्ञातपीडागमे,
वापी स्नातुमितो गतासि न पुनस्तस्याधमस्यान्तिकम्।।

'अत्र तदन्तिकमेव रन्तुं गतासीति प्राधान्येनाधमपदेन व्यज्यते'। यहाँ उसी के पास गई थी और रमण करने के लिए गई थी यह बात विशेष रूप से **'अधम'** पद से अभिव्यक्त होती है । इसमें वाच्यार्थ की अपेक्षा व्यङ्ग्यार्थ अधिक चमत्कारयुक्त है अतः यह उत्तम काव्य है।

2. मध्यमकाव्यम् (गुणीभूतव्यंग्यकाव्यम्)

लक्षण- "अतादृशि गुणीभूतव्यङ्ग्यं व्यङ्ग्ये तु मध्यमम्"।

जहाँ पर वाच्यार्थ से अधिक चमत्कारी व्यङ्ग्यार्थ न हो वहाँ पर मध्यम काव्य (गुणीभूतकाव्य) होता है ।

उदाहरण- "ग्रामतरुणं तरुण्या नववञ्जुलमञ्जरीसनाथकरम्।
पश्यन्त्या भवति मुहुर्नितरां मलिना मुखच्छाया"॥

'अत्र वञ्जुललतागृहे दत्तसंकेता नागतेति व्यङ्ग्यं गुणीभूतं तदपेक्षया वाच्यस्यैव चमत्कारित्वात्'। यहाँ पर व्यङ्ग्यार्थ की अपेक्षा वाच्यार्थ के अधिक चमत्कारी होने से मध्यम काव्य होता है ।

3. अधमकाव्यम् (चित्रकाव्यम्)-

लक्षण-

"शब्दचित्रं वाच्यचित्रमव्यंग्यं त्ववरं स्मृतम्" ।

व्यङ्ग्यार्थ से रहित शब्दचित्र तथा अर्थचित्र को दो प्रकार का अधम काव्य कहा जाता है ।

(क) शब्दचित्रम्-

उदाहरण- **स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छातेतराम्बुच्छटां,
मुर्छन्मोहमहर्षिहर्षविहितस्नानाह्निकाह्नाय वः।
भिद्यादुद्यदुदारदर्दुरदरी दीर्घादरिद्रद्रुम-
द्रोहोद्रेकमहोर्मिमेदुरमदा मन्दाकिनी मन्दताम्।।**

अत्र कोऽपि व्यंग्यार्थों न विद्यते केवलं शब्दानाम् अनुप्रासजन्य चमत्कार अस्ति, अत इदं चित्रकाव्यमुच्यते।

(ख) अर्थचित्रम्-

**विनिर्गतं मानदमात्ममन्दिराद्, भवत्युपश्रुत्य यदृच्छयापि यम्।
ससम्भ्रमेन्द्रद्रुतपातितार्गला, निमीलिताक्षीव भियाऽमरावती।।**

यहाँ पर व्यङ्ग्यार्थ का अभाव तथा उत्प्रेक्षा अलंकार और वीर रस की प्रतीति होने से अर्थचित्र नामक अधम काव्य होता है ।

॥द्वितीय उल्लास॥

शब्दशक्ति-

तीन प्रकार के भेद-

"स्याद्वाचको लाक्षणिकः शब्दोऽत्रव्यञ्जकस्त्रिधा"।

तीन प्रकार के शब्द- (1) वाचक (2) लक्ष्यक (3) व्यञ्जक

तीन प्रकार के अर्थ - (1) वाच्य (2) लक्ष्य (3) व्यङ्ग्य

तीन प्रकार की शब्दशक्तियां - (1) अभिधा (2) लक्षणा (3) व्यञ्जना

मुकुलभट्ट व्यञ्जना नहीं मानते हैं।

अभिहितान्वयवाद-

तीन प्रकार के वाच्यादि अर्थों के अतिरिक्त **'तात्पर्यार्थ'(विशेषवपुरपदार्थ)** को (अभिहितान्वयवादी) ''कुमारिल भट्ट'' पार्थसारथिमिश्र मीमांसक मानते हैं। **अभिहितान्वयवाद-** आकांक्षा,योग्यता,सन्निधि इन तीनों से समन्वित तात्पर्यार्थ से भी वाक्यार्थ की प्रतीति होती है । यह मत कुमारिलभट्ट मीमांसक का है वे कहते हैं कि वाक्य में पदों के अपने अपने अर्थ का अभिधा से बोधन करा देने के बाद शान्त हो जाने पर पदों के अर्थों के परस्पर सम्बन्ध के लिए तात्पर्यशक्ति आती है जो तात्पर्य अर्थ का बोध कराती है अतः अभिहित पदों के अन्वय बोध में जो व्यापार चलता है उसकी नियमिका तात्पर्या वृत्ति है। (आकांक्षा योग्यता सन्निधि से युक्त तात्पर्यावृति-कुमारिलभट्ट)।

अन्विताभिधानवाद-

इस मत के समर्थक तात्पर्यार्थ विरोधी हैं इनमें मुख्यतः प्रभाकर (गुरु) उल्लेखनीय हैं। इनके विचारों में अन्वित पदों का अभिधान होता है न कि अभिहित पदों का अन्वय । इसे **तौतातिकमत** भी कहते हैं। **(वाच्य एव वाक्यार्थः-गुरूमताः)**। विशिष्ट एव पदार्थः वाक्यार्थः न तु पदार्थानां वैशिष्टयम्। **"वाच्य एव वाक्यार्थ इत्यन्विताभिधानवादिनः"**। वाच्य ही वाक्यार्थ है- (प्रभाकर) शालिकनाथमिश्र।

"सर्वेषां प्रायशोऽर्थानां व्यञ्जकत्वमपीष्यते"-

वाच्यमूला व्यञ्जना -

"मातृगृहोपकरणमद्य खलु नास्तीति साधितं त्वया।
तद्भण किं करणीयमेवमेव न वासरः स्थायी"।।

'मातृ-स्वैरविहारार्थिनीति व्यज्यते'। यहाँ पर नवविवाहिता वधू स्वच्छन्दविचरण के लिए अर्थात् अपने उपपति से मिलने जाना चाहती है यह बात व्यङ्ग्य है ।

लक्ष्यमूला व्यञ्जना-

"साधयन्ती सखि सुभगं क्षणे-क्षणे दूनासि मत्कृते।
सद्भावस्नेहकरणीयसदृशकं तावद् विरचितं त्वया" ।

यहाँ मेरे प्रिय के साथ रमण करके तूने मेरे साथ शत्रुता निभाई यह लक्ष्यार्थ है और उससे कामुकविषयक सापराधत्व का प्रकाशन व्यङ्ग्यार्थ है ।

लक्ष्य - 'त्वया शत्रुत्वमाचरितम्' ।
व्यङ्ग्य-'कामुकविषयं सापराधत्वप्रकाशनम्'।

व्यञ्जनामूला व्यञ्जना-

"पश्य निश्चलनिष्पन्दा बिसिनीपत्रे राजते बलाका।
निर्मलमरकतभाजनपरिस्थिता शङ्खशुक्तिरिव"।।

यहाँ पर बलाका के निश्चल होने से उसकी निडरता यह लक्षणा से सूचित होती है । और उस लक्ष्यार्थ से स्थान का जनरहित होना व्यञ्जना से सूचित होता है । इसलिये यह संकेत स्थान है यह बात पहले किसी व्यङ्ग्यार्थ से फ़िर व्यञ्जना द्वारा कोई नायिका किसी से कह रही है अथवा झूठ बोलते हो तुम यहाँ नहीं आए अन्यथा यह बलाका ऐसे निश्चल निष्पन्द नहीं रह सकती थी यह पहले व्यङ्ग्यार्थ से व्यञ्जना द्वारा सूचित होता है।

शब्द का लक्षण-

"साक्षात्संकेतितं योऽर्थमभिधत्ते स वाचकः"।

जो शब्द साक्षात् संकेतित अर्थ को अभिधा शक्ति के द्वारा कहता है वह वाचक शब्द कहलाता है ।

संकेतग्रह- (4)

"संकेतितश्चतुर्भेदो जात्यादिर्जातिरेव वा"।

(1) जाति (2) गुण (3) क्रिया (4) यदृच्छा।

यदि शब्दों का संकेतित अर्थ भावित रूप के अर्थ में न माना जाय अगर व्यक्ति में संकेतग्रह मानेंगे तो दो प्रकार के दोष उपस्थित होते हैं-

(1) आनन्त्य (2) व्यभिचार ।

उपाधि द्विविधः - (1) वस्तुधर्मः (2) वक्तृयदृच्छा।

वस्तुधर्मः द्विविधः-(1) सिद्धः (2) साध्यश्च (पूर्वापरीभूतावयवः क्रियारूपः)

सिद्धः द्विविधः- (1) जाति (पदार्थस्य प्राणपद) (2) गुण (विशेषाधानहेतु) मीमांसक केवल जाति में ही संकेतग्रह मानते हैं।

- **मीमांसा-** मीमांसक केवल जाति में ही (जातिरेव) संकेतग्रह मानते हैं।
- **मम्मट-** मम्मट जात्यादि (जाति, गुण, क्रिया, यदृच्छा) में संकेतग्रह को मानते हैं।
- **व्याकरण-** वैयाकरण उपाधि में संकेतग्रह मानते हैं, **'चतुष्टयी शब्दानां प्रवृत्तिः'**- (महाभाष्यकारः)।
- **बौद्ध-** 'अपोह' - तदभिन्नभिन्नत्व।
- **नैयायिक-** 'तद्वान' - जातिविशिष्ट व्यक्ति ।

अभिधा शब्दशक्ति-

"स मुख्योऽर्थस्तत्र मुख्यो व्यापारोऽस्याभिधोच्यते"।

वह साक्षात् संकेतित अर्थ मुख्य अर्थ कहलाता है और उसका बोधन कराने में इस शब्द का जो व्यापार होता है वह अभिधा कहलाता है ।
सः- साक्षात् संकेतित अर्थ, **अस्य**- शब्दस्य।

लक्षणा शब्दशक्ति-

"मुख्यार्थबाधे तद्योगे रूढितोऽथ प्रयोजनात्!
अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत् सा लक्षणारोपिता क्रिया"॥

मुख्यार्थ का बाध होने पर उस मुख्यार्थ के साथ लक्ष्यार्थ या अन्य अर्थ का सम्बन्ध होने पर 'रूढि' से अथवा 'प्रयोजन' विशेष से जिस शब्द शक्ति के द्वारा अन्य अर्थ लक्षित होता है वह आरोपित व्यापार लक्षणा कहलाता है ।

लक्षणायाः हेतुत्रयम्-

(1) मुख्यार्थबाधः- मुख्यार्थबाध के दो रूप हैं-

1. **अन्वयानुपपत्ति** - गङ्गायां घोषः।
2. **तात्पर्यानुपपत्ति** – काकेभ्यो दधि रक्षताम् ।

वैयाकरण केवल तात्पर्यानुपपत्ति मानते हैं, परन्तु साहित्यिक दोनों को मानते हैं ।

(2) तद्योग- मुख्यार्थयोगः इत्युक्ते सर्वथाभिन्नयोगः न भवेत् मुख्यार्थसम्बद्धार्थप्रतीति स्यात्।

(3) रूढि/प्रयोजन- 'रूढि' से अथवा 'प्रयोजन' विशेष से जिस शब्द शक्ति के द्वारा अन्य अर्थ लक्षित होता है

उदाहरण-

- **रूढिलक्षणा-** कर्मणि कुशलः, (कुशान् लाति आदत्ते इति कुशलः।) यतोहि कुशलः इत्यस्य दक्ष इत्यर्थे रूढत्वात्।

- **प्रयोजनवती लक्षणा-** गङ्गायां घोषः। गङ्गायां **शैत्यपावनत्वादिगुणानां** घोषे विद्यमानप्रयोजनत्वात् अत्र प्रयोजनवती लक्षणा विद्यते।
- अभिधापुच्छा होती है -**लक्षणा**

लक्षणाद्विधा- **"स्वसिद्धये पराक्षेपः परार्थं स्वसमर्पणम्**
उपादानं लक्षणं चेत्युक्ता शुद्धैव सा द्विधा" ।।

अपने अन्वय की सिद्धि के लिए अन्य अर्थ का आक्षेप करना **'उपादानलक्षणा'** तथा दूसरे के अन्वयसिद्धि के लिए अपने मुख्य अर्थ का परित्याग करना **'लक्षणलक्षणा'** कहलाती है । इस प्रकार वह शुद्धा लक्षणा ही दो प्रकार की होती है गौणी के ये भेद नहीं होते हैं ।

(क) शुद्धा लक्षणा - उपचारेणामिश्रितत्वात्।

(ख) गौणी लक्षणा - उपचारेणमिश्रितत्वात्।

(क) शुद्धा लक्षणा -

(1) उपादान लक्षणा (2) लक्षण लक्षणा।

1. उपादान लक्षणा - 'कुन्ताः प्रविशन्ति'। **(अजहत्स्वार्था)**

'गौरनुबनन्ध्यः' में मुकुटलभट्ट 'उपादान' लक्षणा मानते हैं। यहां पर अविनाभाव के कारण जाति से व्यक्ति का अनुमान आक्षेप किया जाता है, मम्मट्ट के अनुसार 'गौरनुबनन्ध्यः' यह लक्षणाका उदाहरण नहीं है। क्योंकि यहां पर लक्षणा के दोनों प्रयोजक 'रूढि' तथा 'प्रयोजन' रूप दो मुख्य हेतुओं में से कोई भी नहीं है। **' पीनो देवदत्तो दिवा न भुङ्क्ते'** यहां पर **'श्रुतार्थापत्ति'** अथवा **'अर्थापत्ति'** से सिद्ध होने पर लक्षणा नहीं है।

2. लक्षण लक्षणा- 'गङ्गायां घोषः'। **(जहत्स्वार्था)**

यह दोनों प्रकार से उपचार से मिश्रित न होने के कारण शुद्धा लक्षणा है। शुद्धा तथा गौणी लक्षणा का भेदक धर्म है -उपचार।

"उपचारो हि नाम अत्यनतं विशकलितयोः पदार्थयोः सादृश्यातिशयमहिम्ना भेदप्रतीतिस्थगनमात्रम् ।"

(ख) गौणी लक्षणा -

गौणी लक्षणा के सर्वप्रथम सारोपा एवं साध्यवसाना दो भेद होते हैं,तदनन्तर उन दोनों के शुद्धा तथा गौणी इस प्रकार दो-दो भेद होते हैं।

सारोपा- **"सारोपान्या तु यत्रोक्तौ विषयीविषयस्तथा"** ।

जहाँ आरोप्यमाण (उपमान) तथा आरोप विषय (उपमेय) दोनों शब्दतः कथित हों वह गौणी सारोपा लक्षणा होती है ।

3. गौणी सारोपा- गौर्वाहीकः, **(सादृश्य संबन्ध)** ।

4. शुद्धा सारोपा- आयुर्घृतम्, **(कार्यकारणभाव संबन्ध)** ।

साध्यवसाना-

"विषय्यन्तःकृतेऽऽन्यस्मिन् सा स्यात् साध्यवसानिका।

जहाँ पर विषयी (उपमान) के द्वारा दूसरे आरोप विषय (उपमेय) का अपने भीतर अन्तर्भाव कर लिया जाता है वह साध्यवसाना लक्षणा है।

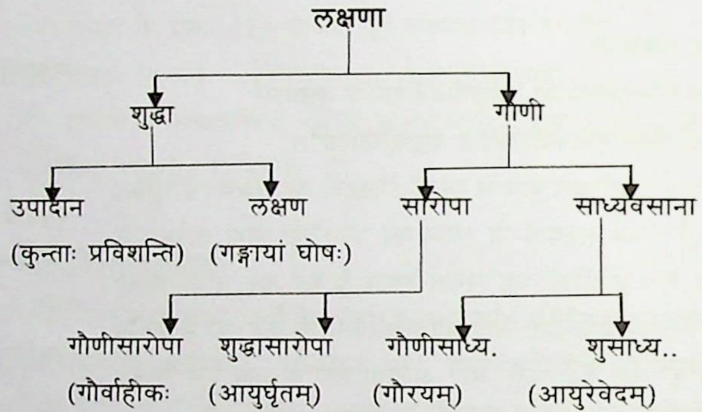
5. गौणी साध्यवसानिका- गौरयम्, **(सादृश्य संबन्ध)** ।

6. शुद्धा साध्यवसानिका- आयुरेवेदम्, **(कार्यकारणभाव संबन्ध)** ।

लक्षणा षड्विधा-

"भेदाविमौ च सादृश्यात् सम्बन्धान्तरस्तथा।
गौणौ शुद्धौ च विज्ञेयौ लक्षणा तेन षड्विधा"।।

ये सारोपा तथा साध्यवसाना रूप लक्षणा के दोनों भेद सादृश्य तथा सादृश्येतर संवन्ध से गौणी और शुद्धा के भेद से पुनः दो-दो प्रकार के होते हैं, इस प्रकार शुद्धा लक्षणा के दो भेद एवं गौणी लक्षणा के चार भेद मिलकर लक्षणा के सम्पूर्ण छः भेद हो जाते हैं।



लक्षणामूला व्यञ्जना-

"व्यङ्ग्येन रहिता रूढौ सहिता तु प्रयोजने" ।

यह लक्षणा रूढ़िगत भेदों में व्यङ्ग्य से रहित तथा प्रयोजनमूलक भेदों में व्यङ्ग्य के सहित होती है । प्रयोजन व्यञ्जना व्यापार से ही जाना जा सकता है।

'तच्चगूढमगूढं च'। (तत्-व्यङ्ग्यम्)

वह व्यङ्ग्य प्रयोजन कहीं गूढ़ (दुर्गेय) और कहीं अगूढ़ होता है ।

उदाहरण-

गूढ़ - मुखं विकसितस्मितं वशितवक्रिम प्रेक्षितं
समुच्छलितविभ्रमा गतिरपास्तसंस्था मतिः।
उरो मुकुलितस्तनं जघनमंसबन्धोद्धुरं
बतेन्दुवदनातनौ तरुणिमोद्गमो मोदते ।

अगूढ़- श्रीपरिच्चयाज्जडा अपि भवन्त्यभिज्ञा विदग्ध चरितानाम्।

उपदिशति कामिनीनां यौवनमद एव ललितानि

इसमें 'उपदिशति' अगूढ़ व्यङ्ग्य है।

लक्षणा के व्यङ्ग्य की दृष्टि से (3) प्रकार-

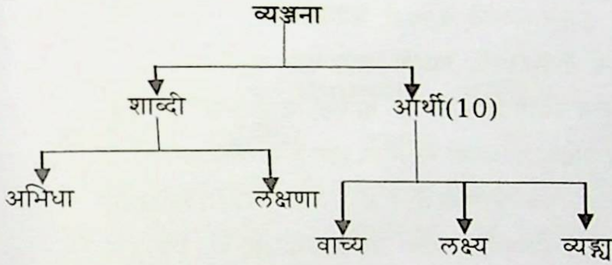
(1) अव्यङ्ग्य (2) गूढव्यङ्ग्य (3) अगूढ़व्यङ्ग्य ।

'तदभूर्लाक्षणिकः'- तद्भू = लक्षणा का आश्रय/ लाक्षणिक शब्द।

व्यञ्जनाव्यापार -

"यस्य प्रतीतिमाधातुं लक्षणा समुपास्यते।
फले शब्दैकगम्येऽत्र व्यञ्जनानापरा किया"।।

जिस प्रयोजन विशेष की प्रतीति कराने के लिए लाक्षणिक शब्द का आश्रय लिया जाता है केवल शब्दगम्य उस प्रयोजन के विषय में व्यञ्जना शक्ति के अतिरिक्त शब्द का और कोई व्यापार नहीं हो सकता ।



व्यञ्जना शब्दशक्ति -

"अनेकार्थस्य शब्दस्य वाचकत्वे नियन्त्रिते।
संयोगाद्यैरवाच्यार्थधीकृद् व्यापृतिरञ्जनम्"।।

संयोगादि के द्वारा अनेकार्थक शब्दों के वाचकत्व के एक अर्थ में नियन्त्रित हो जाने पर उससे भिन्न अवाच्य अर्थ की प्रतीति कराने वाला शब्द का व्यापार व्यञ्जना अर्थात् अभिधामूला व्यञ्जना कहलाता है ।

अभिधामूला व्यञ्जना -

उदाहरण- "संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्यं विरोधिता।
अर्थः प्रकरणं लिङ्गं शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः।
सामर्थ्यमौचिती देशः, कालो व्यक्तिः, स्वरादयः।
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः" ।।

(1) **संयोग**-संशखचक्रो हरिः (अच्युत)

(2) **विप्रयोग**- अशंखचक्रो हरिः (अच्युत)

(3) **साहचर्य**- रामलक्ष्मणो दाशरथौ (दशरथ पुत्र)

(4) **विरोधिता** - रामार्जुनगतिस्तयोः (परशुराम,कार्तवीर्यअर्जुन)

(5) **अर्थ** - स्थाणुं भज भवच्छिद (हर/शिव)

(6) **प्रकरण**- सर्वं जानाति देवः (युष्मद अर्थ)

(7) **लिङ्ग**- कुपितो मकरध्वजः (कामदेव)

(8) **अन्य शब्द सन्निधि**- देवस्य पुरारातेः (शम्भु)

(9) **सामर्थ्य**- मधुना मत्तः कोकिलः (वसन्त)

(10) **औचित्य** - पातु वो दयितामुखम् (आनुकूल्य)

(11) **देश**- भात्यत्र परमेश्वरः (राजा में)

(12) **काल**- चित्रभानुर्विभाति (दिन में सूर्य रात्रि में अग्नि अर्थ में)

(13) **व्यक्ति** - मित्रो भाति (रवि)
मित्रं भाति (सुहृत)

(15) **स्वर** - इन्द्रशत्रु

आदिग्रहणात् -

उदा- एतावन्मात्रस्तनिका एतावन्मात्रभ्यामक्षिपात्रभ्याम्।
एतावन्मात्रवस्था एतावन्मात्रैर्दिवसैः।।

उदाहरण-

"भद्रात्मनो दुरधिरोहतनोर्विशालवंशोन्नतेः कृतशिलीमुखसंग्रहस्य।
यस्यानुपप्लुतगतेः परवारणस्य दानाम्बुसेकसुभगः सततं करोऽभूत्" ।।

॥तृतीय उल्लास॥

आर्थी व्यञ्जना-

"वक्तृबोद्धव्यकाकूनां वाक्यवाच्यान्यसन्निधेः।
प्रस्तावदेशकालादेवैशिष्ट्यात् प्रतिभाजुषाम्।।
योऽर्थस्यान्यार्थधीर्हेतुर्व्यापारो व्यक्तिरेव सा।।"

(1) वक्ता	(2) बोद्धव्य
(3) काकु	(4) वाक्य
(5) वाच्य	(6) अन्यसन्निधि
(7) प्रस्ताव	(8) देश
(9) काल	(10) चेष्टा।

बोद्धव्यः- प्रतिपाद्यः। **काकुः**- ध्वनेर्विकारः। **प्रस्तावः**- प्रकरणम्।

1. **वक्ता** - "अति पृथुलं जलकुम्भं गृहीत्वा समागतास्मि सखि त्वरितम्।
श्रमस्वेदसलिल निःश्वास निःसहा विश्राम्यामि क्षणम्" ।

2. **बोद्धव्य** -औन्निद्यं दौर्बल्यं चिन्तालसत्वं सनिःश्वसितम्...।।

3. **काकु** -तथाभूतां दृष्ट्वा नृपसदसि पाञ्चालतनयां
वने व्याधैः सार्धं सुचिरमुषितं वल्कलधरैः।
विराटस्यावासे स्थितमनुरचरितारम्भनिभृतं
गुरु खेदं खिन्ने मयि भजति नाद्यापि कुरुषु।।

4. **वाक्यवैशिष्ट्य** -तदा मम गण्डस्थलनिमग्नां दृष्टिं नानैषीरन्यत्र।

5. **वाच्य वैशिष्ट्य**- उद्देशोऽयं सरसकदली श्रेणिशोभातिशायी।

6. अन्यसन्निधि -नुदत्यनार्द्रमनाः श्वश्रूर्मा गृहभरे सकले।

7. प्रस्ताव- श्रूयते समागमिष्यति तव प्रयोऽद्य प्रहरमात्रेण।

8. देश -अन्यत्र यूय कुसुमावचायं कुरुध्वमत्रस्मि करोमि सख्यः।

9. काल -गुरुजनपरवश प्रिय किं भणामि तव मन्दभागिनी अहम्।

10. चेष्टा -द्वारोपान्तनिरन्तरे ममि तया सौन्दर्यसारश्रिया।

॥चतुर्थ उल्लासः॥

काव्य के भेद-

(क) अविवक्षितवाच्य (ख) विवक्षितान्यपरवाच्य

(क) अविवक्षितवाच्य- (लक्षणामूला)

"अविवक्षितवाच्यो यस्तत्र वाच्यं भवेद्ध्वनौ।
अर्थान्तरे संक्रमितमत्यन्तं वा तिरस्कृतम्"॥

अविवक्षितवाच्य लक्षणामूल जो ध्वनिभेद है उस ध्वनिभेद में वाच्य या तो अर्थान्तर में सङ्क्रमित हो जाता है या अत्यन्ततिरस्कृत हो जाता है इस प्रकार यह अविवक्षितवाच्य ध्वनि दो प्रकार की होती है ।

अविवक्षितवाच्य के दो भेद-**1. अर्थान्तरसङ्क्रमित 2. अत्यन्ततिरस्कृत**

1. अर्थान्तरसङ्क्रमित-

'वाच्यं क्वचिदनुप्रयुज्यमानत्वाद् अर्थान्तरे परिणमितं'।

जहाँ वाच्यार्थ का सीधा वाच्यतावच्छेदकरूप से अन्वय नहीं बनता वहाँ शब्द अपने सामान्य अर्थ को छोड़कर स्वसम्बद्ध किसी विशिष्ट अर्थ को बोधित करता है तो वहाँ अर्थान्तरसङ्क्रमितवाच्य ध्वनि होती है ।

उदाहरण- **त्वामस्मि वच्मि विदुषां समवायोऽत्र तिष्ठति।**
आत्मीयां मतिमास्थाय स्थितिमत्र विधेहि तत्।।

'यहाँ पर वचन आदि सामान्यार्थ उपदेशादि विशिष्टार्थ रूप में परिणत हो जाता है' ।

2. अत्यन्ततिरस्कृत-

'क्वचिदनुपद्यमानतया अत्यन्तं तिरस्कृतम्'।

कहीं पर वाच्यार्थ अनुपपद्यमान होने से अत्यन्ततिरस्कृत हो जाता है ।

उदाहरण-

उपकृतं बहु तत्र किमुच्यते सुजनता प्रथिता भवता परम्।
विदधदीदृशमेव सदा सखे सुखितमास्स्व ततः शरदां शतम्।

यह कोई अपकार करने वाले व्यक्ति के प्रति विपरीत लक्षणा से यह कह रहा है ।

(ख) विवक्षितान्यपरवाच्य- (अभिधामूला)

"विवक्षितं चान्यपरं वाच्यं यत्रापरस्तु सः।
कोऽप्यसंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्यो लक्ष्यव्यङ्ग्यक्रमः परः"।।

जहाँ वाच्यार्थ विवक्षित होने पर भी अन्यपर (अर्थात् व्यङ्ग्यनिष्ठ) होता है वह विवक्षितान्यपरवाच्य नामक दूसरा भेद होता है ।

विवक्षितान्यपरवाच्य के दो भेद-

1. असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य 2. संलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य

1. असंलक्ष्यक्रमव्यङ्ग्य- (रसादि ध्वनि)

"रसभावतदाभासभावशान्त्यादिरक्रमः।
भिन्नो रसाद्यलंकारादलंकार्यतया स्थितः" ॥

1. रस	2. भाव
3. रसाभास	4. भावाभास
5. भावोदय	6. भावसन्धि
7. भावशबलता	8. भावशान्ति

(1) रसस्वरूप-

"कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च,
रत्यादेः स्थायिनो लोके तानि चेन्नाट्यकाव्ययोः।
विभावा अनुभावास्तत् कथ्यन्ते व्यभिचारिणः,
व्यक्तः स तैर्विभावाद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः"॥

लोक में रति आदिरूप स्थायीभाव के जो कारण, कार्य और सहकारी कारण होते हैं यदि वे नाटक या काव्य में प्रयुक्त होते हैं तो क्रमशः विभाव, अनुभाव और व्यभिचारीभाव कहलाते हैं । और उन विभाव (आलम्बन या उद्दीपन) आदि से व्यक्त वह रति आदि रूप स्थायी भाव रस कहलाता है ।

आचार्यभरत द्वारा नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित रससूत्र-

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद् रसनिष्पत्तिः"॥

विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है ।

रस सिद्धान्त सम्बन्धी चार मत-

1. **भट्टलोल्लट-** उत्पत्तिवाद (मीमांसा) ।
2. **शंकुक-** अनुमितिवाद (न्याय) ।
3. **भट्टनायक-** भुक्तिवाद (साख्य) ।
4. **अभिनवगुप्त-** अभिव्यक्तिवाद शैव ।

1. भट्टलोल्लट- (उत्पत्तिवाद) मीमांसक।

भरत-सूत्र के व्याख्याकारों में भट्टलोल्लट **'उत्पत्तिवाद'** को मानने वाले हैं। उनके मत में विभाव, अनुभाव आदि के संयोग से अनुकार्य राम आदि में रस की उत्पत्ति होती है । उनमें भी विभाव सीता आदि मुख्यरूप से रस के उत्पादक होते हैं । अनुभाव उस उत्पन्न हुए रस को बोधित करनेवाले होते हैं और व्यभिचारिभाव उस उत्पन्न रस के परिपोषक होते हैं। अतः स्थायिभाव के साथ **विभावों का 'उत्पाद्य-उत्पादकभाव', अनुभावों का 'गम्य-गमकभाव' और व्यभिचारिभावों का 'पोष्य-पोषक'**

भाव सम्बन्ध होता है । इसलिए भरत-सूत्र में जो **'संयोग'** शब्द आया है भट्टलोल्लट के मत में उसके भी तीन अर्थ हैं 'विभावों' के साथ संयोग अर्थात् 'उत्पाद्य-उत्पादकभाव' सम्बन्ध 'अनुभावों' के साथ 'गम्य-गमकभाव' सम्बन्ध तथा 'व्यभिचारिभावों' के साथ 'पोष्य-पोषकभाव' रूप सम्बन्ध 'संयोग' शब्द का अर्थ होता है । इसी बातको आगे कहते हैं-

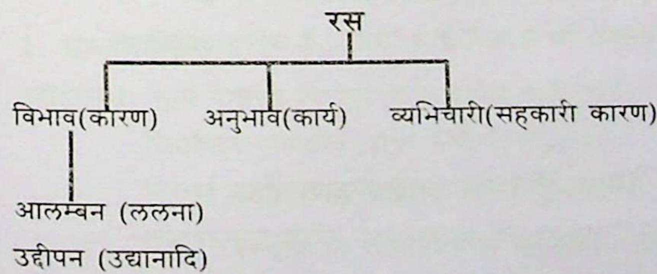
1. विभाव- "विभावैःललनोद्यानादिभिरालम्बनोद्दीपनकारणैः रत्यादिको भाव जनितः"॥ विभाव अर्थात् रस के आलम्बन तथा उद्दीपन कारणभूत ललना (आलम्बन विभाव) और उद्यानादि (उद्दीपन विभावों) से रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न हुआ । विभाव दो प्रकार के होते है-

1 आलम्बन (नायक या नायिका)

2 उद्दीपन (उपवन, वेशभूषा इत्यादि)।

2. अनुभाव- "अनुभावैः- कटाक्षभुजाक्षेपप्रभृतिभिः कार्यैः प्रतीतियोग्यः कृतः"। विभावोत्पन्न वह स्थायीभाव कार्यभूत कटाक्ष, भुजाक्षेप आदि अनुभावों से प्रतीति के योग्य किया गया ।

3. व्यभिचारी या संचारीभाव- "व्यभिचारिभिः- निर्वेदादिभिः सहकारिभिः उपचितो मुख्याः। वृत्या रामादावनुकार्ये तद्रूपतानुसन्धानान्नर्त्तके अपि प्रतीयमानो इति भट्टलोल्लट प्रभृतयः"। और वह सहकारी रूप निर्वेद आदि व्यभिचारी भावों से पुष्ट किया गया मुख्य रूप से अनुकार्य रूप राम आदि में और उसके स्वरूप का अनुकरण करने से नट में प्रतीयमान अर्थात् आरोप्यमाण रत्यादि स्थायीभाव ही रस कहलाता है यह भट्टलोल्लट आदि का मत है । वाक, अंग, तथा सत्वादि द्वारा विविध प्रकार के रसानुकूल संचरण करने वाले भावों को व्यभिचार या 'संचारी' भाव कहते हैं। ये (33) प्रकार के होते तथा रसास्वादन कराने वाले होते हैं।



उद्दीपन (उद्यानादि)

- **अनुकार्य**- रामादि, **अनुकर्ता**- नटादि ।
- **'भट्टलोल्लट'** ने **'निष्पत्ति'** का अर्थ**'उत्पत्ति'** माना है, **'संयोग'** का अर्थ **'उत्पाद्य-उत्पादक'** माना है । (अर्थात् रस की उत्पत्ति होती है।)
- इन्होंने **'निष्पत्ति'** के तीन अर्थ किये हैं – **उत्पत्ति, प्रतीति, पुष्टि ।**
- इनके अनुसार मुख्य रूप से रस रामादि में तथा गौणरूप से नटादि में रहता है ।
- सामाजिक में रस की उत्पत्ति नहीं होती है।

2. शंकुक- (अनुमितिवाद) नैयायिक,

(अर्थात् रस अनुमान का विषय है)

न्याय-सिद्धान्त के अनुयायी भरत-सूत्र के दूसरे टीकाकार शंकुक ने इस सूत्र की दूसरे प्रकार की व्याख्या उपस्थित की है । उसमें उन्होंने सामाजिक के साथ रस का सम्बन्ध दिखलाने का प्रयत्न किया है । इस व्याख्याके अनुसार नट कृत्रिम रूप से अनुभाव आदि का प्रकाशन करता है । परन्तु सौन्दर्य के बल से उनमें वास्तविकता-सी प्रतीत होती है । उन कृत्रिम अनुभाव आदिको देखकर सामाजिक, नट में वस्तुतः विद्यमान न होनेपर भी, उसमें रसका अनुमान कर लेता है और अपनी वासना के वशीभूत होकर उस अनुमीयमान रस का आस्वादन करता है । शंकुक की इस व्याख्या को काव्यप्रकाशकार ने निम्नलिखित प्रकार से उपस्थित किया है-

(1) राम एवायम् अयमेव राम इति- **सम्यक् प्रतीतिः।**

(2) न रामोऽयमित्यौत्तरकालिके बाधे रामोऽयमिति-**मिथ्याप्रतीतिः।**

(3) रामः स्याद्वा न वाऽयमिति- **संशयात्मक प्रतीतिः।**

(4) रामः सदृशोऽयमिति- **सादृश्यात्मक प्रतीतिः।**

"सम्यङ्मिथ्यासंशयसादृश्यप्रतीतिभ्यो विलक्षणया (चित्रतुरगादिन्यायेन) रामोऽयमिति प्रतिपत्या ग्राह्ये नटे" -

"सेयं ममांगेषु सुधारसच्छटा सुपूरकर्पूरशलाकिका दृशोः।
मनोरथश्रीर्मनसः शरीरिणी प्राणेश्वरी लोचनगोचरतां गता" ।।

1. 'यह राम ही है' अथवा 'यह ही राम है' इस प्रकार की सम्यक् प्रतीति ,
2. 'यह राम नहीं है इस प्रकार उत्तरकालमें बाधित होनेवाली 'यह राम' है इस प्रकार की मिथ्याप्रतीति,
3. 'यह राम है या नहीं इस प्रकार की संशयरुप प्रतीति,
4. 'यह राम के समान हैं' इस प्रकार की सादृश्य-प्रतीति,

इन 1. सम्यक्प्रतीति, 2. मिथ्याप्रतीति, 3. संशयप्रतीति तथा 4, सादृश्यप्रतीतियों से भिन्न प्रकार की **'चित्र-तुरग-न्याय'** से होने वाली पांचवें प्रकार की प्रतीति से ग्राह्य नट में- 'मेरे अङ्गों में सुधारस के समान आनन्ददायिनी, आँखों के लिए कर्पूर की शलाका के समान शीतलतादायक और मन के लिए शरीर-धारिणी मनोरथ श्री के समान यह प्राणेश्वरी मुझे अब दिखलायी दे रही है' ।

"दैवादमहृद्य तया चपलादयतनेत्रया वियुक्तश्च।
अविरलविलोलजलदः कालः समुपागतश्चायम्"॥

'दैवात् मैं चञ्चल, बड़ी-बड़ी आँखों वाली उस प्रियतमा से आज ही अलग हुआ और आज ही निरन्तर उमड़ते हुए मेघों से युक्त यह सन्तापकारी वर्षा का काल आ गया' ।

इत्यादि काव्यों के अनुशील से तथा शिक्षा के अभ्यास से सिद्ध किये हुए अपने अनुभाव इत्यादि कार्य से नट के ही द्वारा प्रकाशित किये जाने वाले, कृत्रिम होने पर भी कृत्रिम न समझे जाने वाले, विभाव

आदि शब्दों से व्यवहृत होने वाले, कारण, कार्य और सहकारियों के साथ 'संयोग' अर्थात् 'गम्य-गमकभावरूपसम्बन्ध' से, अनुमीयमान होनेपर भी, वस्तुके सौन्दर्य के कारण तथा आस्वाद का विषय होने से अन्य अनुमीयमान अर्थों से विलक्षण स्थायीरूप से सम्भाव्यमान रति आदि भाव वहाँ अर्थात् नट में वास्तव रूप में रहते हुए भी सामाजिक के संस्कारों से आस्वाद किया जाता हुआ 'रस' कहलाता है । यह श्रीशंकुक का मत है । इस मत में भरत-सूत्रके शब्दका अर्थ और शब्दका अर्थ है।

- सामाजिक के संस्कार द्वारा रस का आस्वादन।
- नट में रस की अनुमिति से प्रतीति।

'निष्पत्ति'- 'अनुमिति', **'संयोग'**- 'गम्य-गमकभावसम्बन्ध'

3. भट्टनायक- (भुक्तिवाद) सांख्य ।

इनके अनुसार रस को जानने में 'भोज्य-भोजक' सम्बन्ध है।

"विभावादिसाधारणीकरणात्मना भावकत्वव्यापारेण भाव्यमानः स्थायी, सत्वोद्रेकप्रकाशानन्दमयसंविद्विश्रान्तिसतत्त्वेन भोगेन भुज्यते इति भट्टनायकः"।

भरतमुनि के सूत्रके तीसरे व्याख्याकार भट्टनायकने सामाजिक को होनेवाली साक्षात्कारात्मक रसानुभूतिके उपपादन के लिए एक नये ही मार्गका अवलम्बन किया है। उसे साहित्यशास्त्र में **'भुक्तिवाद'** नाम से कहा जाता है । उसका आशय यह है कि रस की **'निष्पत्ति'** न अनुकार्य राम आदि में होती है और न अनुकर्ता नट आदि में । अनुकार्य और अनुकर्ता दोनों तटस्थ हैं, उदासीन हैं । उनको रसानुभूति नहीं होती है । वास्तविक रसानुभूति सामाजिक को होती है । उसका उपपादन अन्य किसी व्याख्याकार ने नहीं किया है । भट्टलोल्लट ने मुख्यरूप से 'तटस्थ' राम आदि में और गौणरूप से 'तटस्थ' नट में रस की 'उत्पत्ति' मानी है । पर इसमें सामाजिक का स्थान कहीं नहीं आया है । अतएव **'ताटस्थ्येनरसोत्पत्ति'** माननेवाले भट्टलोल्लट का सिद्धान्त ठीक नहीं है । श्रीशंकुक ने 'तटस्थ' नटमें रस की 'अनुमिति' प्रतीति मानी है और उसके द्वारा संस्कारवश सामाजिक की रस-चर्वणा का उपपादन करने का यत्न किया है । परन्तु 'अनुमिति' तो केवल परोक्ष-ज्ञानरूप होती है । साक्षात्कारात्मक रसानुभूति की समस्या उसके द्वारा हल नहीं हो सकती है । इसलिए यह सिद्धान्त भी ठीक नहीं है । **'न ताटस्थ्येन रस उत्पद्यते, न प्रतीयते'** ताटस्थ्य से अर्थात् अनुकार्यगत या अनुकर्तृगतरूप से न रस की उत्पत्ति होती है, और न प्रतीति या अनुमिति होती है । यहाँ **'न उत्पद्यते'** से भट्टलोल्लट के 'उत्पत्तिवाद' का और **'न प्रतीयते'** मे शंकुक के अनुमितिवाद' का निराकरण किया गया है ।

- रस अनुभूतिस्वरूप है ।
- **निष्पत्ति**- भुक्ति, **संयोग**- भोज्यभोजकभाव सम्बन्ध।

4. अभिनवगुप्त- (अभिव्यक्तिवाद)

(इनके अनुसार रस अभिव्यक्ति का विषय है)

"लोके प्रमदादिभिः स्थाय्यनुमानेऽभ्यासपाटववतां काव्ये नाट्ये च.....। पानक-रस-न्यायेन चर्व्यमाणः, पुर इव परिस्फुरन, हृदयमिव प्रविशन्, सर्वाङ्गीणमिवालिङ्गन,अन्यत्सर्वमिवतिरोदधद्...।ब्रह्मास्वादमिवानुभावयन्, अलौकिकचमत्कारकारी शृंगारादिको रसः"।

इसलिए भरत-नाट्यशास्त्र के चतुर्थ किन्तु सर्वप्रमुख व्याख्याकार अभिनवगुप्त ने **'अभिव्यक्तिवाद'** की स्थापना की है । जिस प्रकार भट्टलोल्लट ने उत्तरमीमांसा के, श्रीशंकुक ने न्याय के और भट्टनायक ने सांख्य के आधार पर अपने-अपने मतों की स्थापना की है, उसी प्रकार अभिनवगुप्त ने अपने पूर्ववर्ती अलङ्कारशास्त्र के प्रमुख ध्वनिवादी आचार्य 'आनन्दवर्धन' के आधार पर अपने 'अभिव्यक्तिवाद' का प्रतिपादन किया है इसलिए उनका मत आलङ्कारिक मत कहा गया है । उन्होंने स्पष्टरूप से सामाजिकगत रसानुभूति के उपपादन के लिए दूसरे मार्ग का अवलम्बन किया है । उसमें पहली बात तो उन्होंने यह स्पष्ट कर दी है कि सामाजिक गत स्थायिभाव ही रसानुभूति का निमित्त होता है । मूल मनःसंवेग अर्थात् वासना या संस्काररूप में रति आदि स्थायिभाव सामाजिक की आत्मा में स्थित रहता है । वह साधारणीकृत रूप से उपस्थित विभावादि-सामग्री से अभिव्यक्त या उद्बुद्ध हो जाता है और तन्मयीभावके कारण वेद्यान्तर के सम्पर्क से शून्य ब्रह्मास्वाद के सदृश परमानन्दरूप में अनुभूत होता है । इस मत में भट्टनायक के समान शब्द में **'भावकत्व'** तथा **'भोजकत्व'** रूप दो व्यापारों की कल्पना नहीं की गयी है, परन्तु **'भावकत्व'** व्यापार के स्थान पर **'साधारणीकरण'** व्यापार, अभिधा तथा लक्षणा के साथ शब्द की 'व्यञ्जना' नामक तृतीय वृत्ति अवश्य मानी गई है ।

- **रसस्थिति**- आत्मगत अर्थात् सामाजिक गत
- **निष्पत्ति**- अभव्यक्ति, **संयोग**- व्यङ्ग्यव्यञ्जकभाव सम्वन्ध।

"चर्वणनिष्पत्त्या तस्य निष्पत्तिरूपचरितेति कार्योऽप्युच्यताम्" ।

आस्वाद की उत्पत्ति होने से उपचार से भी रस की उत्पत्ति कही जा सकती है। इसलिये रस को उपचार से 'कार्य' भी कहा जा सकता है। लोकोत्तर अनुभूति का विषय होने से रस को उपचार से 'ज्ञेय' भी कहा जाता है। वस्तुतः रस न कार्य है न 'ज्ञेय' है अपितु अलौकिक है।

विभावादि के अनुक्त होने पर आक्षेप द्वारा बोध-

1. **विभाव-** (अनुभाव व्यभिचारिभाव का आक्षेप)

   वियदलिमलिनाम्बुगर्भमेघं मधुकरकोकिलकूजितैर्दिशांश्रीः।
   धरणिरभिनवाङ्कुराङ्कटङ्का प्रणतिपरे दयिते प्रसीद मुग्धे॥

2. **अनुभाव -**

   परिमृदितमृणालीम्लानमङ्गं प्रवृत्तिः
   कथमपि परिवारप्रार्थनाभिः क्रियासु।
   कलयति च हिमांशोर्निष्कलङ्कस्यलक्ष्मी-
   मभिनवकरिदन्तच्छेदकान्तः कपोलः॥

3. **व्यभिचारीभाव-**

दूरादुत्सुकमागते विगलितं संभाषिणि स्फारितं
संश्लिष्यत्यरुणं गृहीतवसने किंचाञ्चितभ्रूलतम्।
मानिन्याश्चरणानतिव्यतिकरे बाष्पाम्बुपूर्णेक्षणं
चक्षुर्जातमहो प्रपञ्चचतुरं जातागसि प्रेयसि॥

रस के आठ प्रकार -

**"श्रृङ्गारहास्यकरुणरौद्रवीर भयानकाः।
बीभत्सोद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः।।**

सं.	रस	स्थायीभाव	वर्णः
1	श्रृंगार	रति	श्याम
2	हास्य	हास	श्वेत
3	करुण	शोक	कपोत
4	रौद्र	क्रोध	लाल
5	वीर	उत्साह	सुवर्ण
6	भयानक	भय	कृष्ण
7	बीभत्स	जुगुप्सा	नील
8	अद्भुत्	विस्मय	पीत
9	शान्त	शम निर्वेद	श्वेत।

(1) श्रृंगार-

- श्रृंगार के दो भेद- (1) सम्भोग (2) विप्रलम्भ
- विप्रलम्भ के पांच प्रकार- (1) अभिलाष (2) ईर्ष्या (3) विरह (4) प्रवास (5) शाप । (विश्वनाथ अभिलाष को नहीं मानते हैं।)
- भरतमुनि 8 रस मानते है, लेकिन विश्वनाथ और मम्मट शान्त रस मिलाकर 9 रस स्वीकार करते हैं।

1. सम्भोगश्रृंगार-

उदाहरण-1. शून्यं वासगृहं विलोक्य शयनादुत्थाय किंचिच्छनै-
र्निद्राव्याजमुपागतस्य सुचिरं निर्वर्ण्य पत्युर्मुखम्।
विस्रब्धं परिचुम्ब्य जातपुलकामालोक्य गण्डस्थलीं
लज्जानम्रमुखी प्रियेण हसता बाला चिरं चुम्बिता॥

उदाहरण-2 त्वं मुग्धाक्षि विनैव कञ्चुलिकया धत्से मनोहारिणीं
लक्ष्मीमित्यभिधायिनि प्रियतमे तद्वीटिकासंस्पृशि।
शय्योपान्तनिविष्टसस्मितसखीनेत्रोत्सवानन्दितो
निर्यातः शनकैरलीकवचनोपन्यासमालीजनः॥

(2) विप्रलम्भश्रृंगार-

विप्रलम्भ के पांच प्रकार -

1. अभिलाष -प्रेमार्द्राः प्रणयस्पृशः परिचयादुद्गाढरागोदया।
स्तास्ता मुग्धदृशो निसर्गमधुराचेष्टा भवेयुर्मयि।
यास्वन्तःकरणस्य वाह्यकरणव्यापाररोधी क्षणा-
दाशंसापरिकल्पितास्वपि भवत्यानन्दसान्द्रो लयः॥

2. विरह -अन्यत्र व्रजतीति का खलु कथा नाप्यस्य तादृक् सुहृद,
यो मां नेच्छति नागतश्च हह हा कोऽयं विधेः प्रक्रमः।
इत्यल्पेतरकल्पनाकवलितस्वान्ता निशान्तान्तरे
बाला वृत्तविवर्तनव्यतिकरा नाप्नोति निद्रां निशि॥

3. ईर्ष्या -सा पत्युः प्रथमापराधसमये सख्योपदेशं विना।
नो जानाति सविभ्रमाङ्गवलनावक्रोक्तिसंसूचनम्।
स्वच्छैरच्छकपोलमूलगलितैः पर्यस्तनेत्रोत्पला
बाला केवलमेव रोदिति लुठल्लोलालकैरश्रुभिः

4. प्रवास -प्रस्थानं वलयैः कृतं प्रियसखैरस्रैरजस्रं गतं,
धृत्या न क्षणमासितं व्यवसितं चित्तेन गन्तुं पुरः।
यातुं निश्चितचेतसि प्रियतमे सर्वे समं प्रस्थिता
गन्तव्ये सति जीवित प्रियसुहृत्सार्थः किमु त्यज्यते॥

5. शाप- त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया-
मात्मानं ते चरणपतितं यावदिच्छामि कर्तुम्।
अस्रैस्तावन्मुहुरुपचितैर्दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमं नौ कृतान्तः॥

(2) हास्य - आकुञ्च्य पाणिमाशुचिं मम मूर्ध्नि वेश्या
मन्त्राम्भसां प्रतिपदं पृषतैः पवित्रे।
तारस्वनं प्रथितथूत्कमदात्प्रहारं
हाहा हतोऽहमिति रोदिति विष्णुशर्मा॥

(3) करुण -हा मातस्त्वरिताऽसि कुत्र किमिदं हा देवताः क्वाऽशिषः,
प्राणान् पतितोऽशनिर्हुतवहस्तेऽङ्गेपु दग्धे दृशौ।
इत्थं घर्घरमध्यरुद्धकरुणाः पौराङ्गनानां गिर-
श्चित्रस्थानपि रोदयन्ति शतधा कुर्वन्ति भित्तीरपि॥

(4) रौद्र -कृतमनुमतं दृष्टं वा यैरिदं गुरुपातकं
मनुजपशुभिर्निर्मर्यादैर्भवद्भिरुदायुधैः।
नरकरिपुणा सार्धं तेषां सभीमकिरीटिना-
मयमहमसृङ्मेदोमांसैः करोमि दिशां बलिम्॥

(5) वीर - क्षुद्राः संत्रासमेते विजहत हरयः क्षुण्णशक्रेभकुम्भा
युष्मद्देहेषु लज्जां दधति परममी सायका निष्पतन्तः।
सौमित्रे तिष्ठ पात्रं त्वमसि न हि रुषां नन्वहं मेघनादः
किंचिद्भ्रूभङ्गलीलानियमितजलधिं राममन्वेषयामि॥

(6) भयानक -ग्रीवाभङ्गाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद्भूयसा पूर्वकायम्।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति॥

(7) वीभत्स - उत्कृत्योत्कृत्य कृत्तिं प्रथममथ पृथूत्सेधभूयांसि मांसा।
न्यंसस्फिक्पृष्ठपिण्ड्याद्यवयवसुलभान्युग्रपूतीनि जग्ध्वा।
आर्त्तः पर्यस्तनेत्रः प्रकटितदशनः प्रेतरङ्कः करङ्का-
दङ्कस्थादस्थिसंस्थं स्थपुटगतमपि क्रव्यमव्यग्रमत्ति॥

(8) अद्भुत - चित्रं महानेष बतावतारः क्व कान्तिरेषाभिनवैव भङ्गिः।
लोकोत्तरं धैर्यमहो प्रभावः काप्याकृतिर्नूतन एष सर्गः॥

स्थायीभाव-

**"रतिर्हासश्च शोकश्च क्रोधोत्साहौ भयं तथा।
जुगुप्सा विस्मयश्चेति स्थायिभावाः प्रकीर्तिताः"॥**

ाव-

निर्वेदग्लानिशङ्काख्यास्तथासूयामदश्रमाः।
आलस्यं चैव दैन्यं च चिन्ता मोहः स्मृतिर्धृतिः॥
व्रीडा चपलता हर्ष आवेगो जडता तथा।
गर्वो विषाद औत्सुक्यं निद्रापस्मार एव च ॥
सुप्तं प्रबोधोऽमर्षश्चाप्यवहित्थमथोग्रता।
मतिव्याधिस्तथोन्मादस्तथा मरणमेव च ॥
त्रासश्चैव वितर्कश्च विज्ञेया व्यभिचारिणः।
त्रयस्त्रिंशदमी भावाः समाख्यातास्तु नामतः॥

नवम रस शान्त-

"निर्वेदस्थायिभावोऽस्ति शान्तोऽपि नवमो रसः"।

उदाहरण- अहौ वा हारे वा कुसुमशयने वा दृषदि वा
मणौ वा लोष्ठे वा बलवति रिपौ वा सुहृदि वा।
तृणे वा स्त्रैणे वा मम समदृशो यान्ति दिवसाः
क्वचित्पुण्यारण्ये शिव शिव शिवेति प्रलपतः॥

(2) भाव -

"रतिर्देवादिविषया व्यभिचारी तथाञ्जितः।
भावः प्रोक्तः आदिशब्दान्मुनिगुरुनृपपुत्रादिविषया"।

देवादिविषयक रति-

उद.- कण्ठकोणविनिविष्टमीश ते कालकूटमपि मे महामृतम्-
अप्युपात्तममृतं भवद्वपुर्भेदवृत्ति यदि मे न रोचते॥- देव।

हरत्यघं संप्रति हेतुरेष्यतः शुभस्य पूर्वाचरितैः कृतं शुभैः।
शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्ति कालत्रितयेऽपि योग्यताम्॥- मुनि।

अञ्जितव्यभिचारी-

जाने कोप पराङ्मुखी प्रियतमा स्वप्नेऽद्य दृष्टा मया।
मा मां संस्पृश पाणिनेति रुदती गन्तुं प्रवृत्ता पुरः।
नो यावत्परिरभ्य चाटुशतकैराश्वासयामि प्रियां
भ्रातस्तावदहं शठेन विधिना निद्रादरिद्रीकृतः॥

(3) रसाभास -

स्तुमः कं वामाक्षिक्षणमपि विना यं न रमसे !,
विलेभे कः प्राणान् रणमखमुखे यं मृगयसे।
सुलग्ने को जातः शशिमुखि यमालिङ्गसि बलात्
तपःश्रीः कस्यैषा मदननगरि ध्यायसि तु यम्॥

(4) भावाभास -

राकासुधाकरमुखी तरलायताक्षी
सा स्मेरयौवनतरङ्गितविभ्रमाङ्गी।
तत् किं करोमि विदधे कथमत्र मैत्रीं
तत्स्वीकृतिव्यतिकरे क इवाभ्युपायः॥

(5) भावशान्ति -

तस्याः सान्द्रविलेपनस्तनतटप्रश्लेषमुद्राङ्कितं
किं वक्षश्चरणानतिव्यतिकरव्याजेन गोपाय्यते।
इत्युक्ते क्व तदित्युदीर्य सहसा तत् संप्रमार्ष्टुं मया
साश्लिष्टा रसभेन तत्सुखवशात्तन्व्या च तद्विस्मृतम्॥

(6) भावोदय -

एकस्मिन् शयने विपक्षरमणीनामग्रहे मुग्धया।
सद्यो मानपरिग्रहग्लपितया चाटूनि कुर्वन्नपि।
आवेगादवधीरितः प्रियतमस्तूर्ष्णीं स्थितस्तत्क्षणं
माभूत्सुप्त इवेत्यमन्दवलितग्रीवं पुनर्वीक्षितः॥

(7) भावसन्धि -

उत्सिक्तस्य तपः पराक्रमनिधेरभ्यागमादेकतः।
सत्संगप्रियता च वीररभसोत्फालश्च मां कर्षतः।
वैदेहीपरिरम्भ एष च मुहुश्चैतन्यमामीलयन्
आनन्दी हरिचन्दनेन्दुशिशिरस्निग्धो रुणद्ध्यन्यतः॥

(8) भावशबलता -

क्वकार्यं शशलक्ष्मणः क्व च कुलं भूयोऽपि दृश्येत सा दोषाणां
प्रशमाय नःश्रुतमहो कोपेऽपि कान्तं मुखम्।
किं वक्ष्यन्त्यपकल्मषाः कृतधियः स्वप्नेऽपि सा दुर्लभा
चेतः स्वास्थ्यमुपैहि कः खलु युवा धन्योऽधरं धास्यति॥

॥पञ्चम उल्लास॥

गुणीभूतव्यङ्ग्य -

"अगूढमपरस्याङ्गं वाच्यसिद्ध्यङ्गमस्फुटम्।
सन्दिग्धतुल्यप्राधान्ये काक्वाक्षिप्तासुन्दरम्"।।

गुणीभूतव्यङ्ग्य के आठ प्रकार होते हैं-

(1) अगूढ़व्यङ्ग्य -

1. अर्थान्तर सङ्क्रमित-

यस्यासुहृत्कृततिरस्कृतिरेत्यतप्त-
सूचीव्यधव्यतिकरेण युनक्ति कर्णौ।
काञ्चीगुणग्रथनभाजनमेष सोऽस्मि
जीवन्न संप्रति भवामि किमावहामि॥

2. अत्यन्ततिरस्कृत-

उन्निद्रकोकणदरेणुपिशङ्गिताङ्गा
गायान्ति मञ्जु मधुपा गृहदीर्घिकासु।
एतच्चकास्ति च रवेर्नवबन्धुजीव
पुष्पच्छदाभमुदयाचलचुम्बि बिम्बम्॥

(2) अपराङ्ग व्यङ्ग्य-

यह वस्तु अलङ्कार से 8 प्रकार का होता है।

क. अयं स रशनोत्कर्षी पीनस्तनविमर्दनः।
नाभ्यूरुजघनरुपर्शी नीवीविस्रंसनः करः॥

ख. कैलासालयभाललोचनरुचा निर्वर्तितालक्तक-
व्यक्तिः पादनखद्युतिर्गिरिभुवः सा वः सदा त्रायताम्।
स्पर्धाबन्धसमृद्धयेव सुदृढं रूढा यया नेत्रयोः
कान्तिः कोकनदानुकारसरसा सद्यः समुत्सार्यते

ग. अत्युच्चाः परितः स्फुरन्ति गिरयः स्फारास्तथाम्भोधय-
स्तानेतानपि बिभ्रती किमपि न क्लान्तासि तुभ्यं नमः।
आश्चर्येण मुहुर्मुहुः स्तुतिमिति प्रस्तौमि यावद्भुव-
स्तावद्बिभ्रदिमां स्मृतस्तव भुजो वाचस्ततो मुद्रिताः॥

घ. बन्दीकृत्य नृप द्विषां मृगदृशस्ताः पश्यतां प्रेयसां
श्लिष्यन्ति प्रणमन्ति लान्ति परितश्चुम्बन्ति तेसैनिकाः।
अस्माकं सुकृतैर्दृशोर्निपतितोऽस्यौचित्यवारांनिधे
विध्वस्ता विपदोऽखिलास्तदिति तैः प्रत्यर्थिभिः स्तूयसे॥

(3) वाच्यसिद्ध्यङ्ग्य -

भ्रमिमरतिमलसहृदयतां प्रलयं मूर्छां तमः शरीरसादम्।
मरणं च जलदभुजगजं प्रसह्य कुरुते विषं वियोगिनीनाम्॥

गच्छाम्यच्युत दर्शनेन भवतः किं तृप्तिरुत्पद्यते
किं त्वेवं विजनस्थयोर्हतजनः संभावयत्यन्यथा॥

(4) अस्फुटव्यङ्ग्य -

अदृष्टेदर्शनोत्कण्ठा दृष्टे विच्छेदभीरुता।
नादृष्टेन न दृष्टेन भवता लभ्यते सुखम् ।

(5) सन्दिग्धप्राधान्यव्यङ्ग्य -

हरस्तु किंचित्परिवृत्तधैर्यश्चन्द्रोदयारम्भ इवाम्बुराशिः।
उमामुखे बिम्बफलाधरोष्ठे व्यापारयामास विलोचनानि॥

(6) तुल्यप्राधान्यव्यङ्ग्य -

ब्राह्मणातिक्रमत्यागो भवतामेव भूतये।
जामदग्न्यस्तथा मित्रम् अन्यथा दुर्मनायते

(7) काक्वाक्षिप्तव्यङ्ग्य -

मथ्नामि कौरवशतं समरे न कोपात
दुःशासनस्य रुधिरं न पिबाम्युरस्तः।।
संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू
संधिं करोतु भवतां नृपतिः पणेन॥

(8) असुन्दर व्यङ्ग्य –

वानीरकुञ्जोड्डीन शकुनिकोलाहलं श्रृण्वन्त्याः।।
गृहकर्मव्यापृताया वध्वाः सीदन्त्यङ्गानि॥

रसादि के गुणीभूतव्यङ्ग्य होने पर चार प्रकार के **रसवद अलङ्कार** होते हैं-

(1) रसवत् (2) प्रेय
(3) ऊर्जस्विन् (4) समाहित।

गुणीभूतव्यङ्ग्य के अवान्तर भेद - (42)

॥सप्तम उल्लास॥

प्रथम उल्लास में काव्यका लक्षण किया गया था। उसके बाद छठे उल्लास तक काव्यके भेदोपभेद आदि का वर्णन कर काव्यलक्षण की ही व्याख्या

करने का प्रयत्न किया गया था। काव्यलक्षण में **'अदोषो' 'सगुणौ'** और **'अनलङ्कृती पुनः क्वापि'** ये पद भी हैं। इनमें से **'अदोषों'** पदकी व्याख्या के लिए पहिले दोषों के स्वरूप का स्पष्टीकरण होना चाहिये। इसलिए ग्रन्थकार दोषों का निरूपण करनेके लिए इस सप्तम उल्लास को प्रारम्भ कर रहे हैं। इसमें भी सामान्य लक्षण के बाद ही विशेष लक्षण करना उचित होगा, इसलिए दोष का सामान्य लक्षण करते हैं-

काव्यदोष-

"मुख्यार्थ हतिर्दोषो रसश्च मुख्यस्तदाश्रयाद् वाच्यः।
उभयोपयोगिनिः स्युः शब्दाद्यास्तेन तेष्वपि सः"।।

मुख्यार्थ का अपकर्ष जिससे होता है उसको दोष कहते हैं । मुख्यार्थ पद का अभिप्राय यहाँ वाच्यार्थ नहीं है, रस है, और रस मुख्य अर्थ है । इसलिए मुख्यतः रस के अपकर्षजनक कारण को दोष कहते हैं । परन्तु रस का आश्रय होने से वाच्य अर्थ भी मुख्य अर्थ कहलाता है। इसलिए रस के साथ चमत्कारी वाच्य का अपकर्षकारक भी दोष कहलाता है। उसको अर्थदोष कहते हैं । शब्दादि रस तथा वाच्यार्थ इन दोनों के बोधन में उपकारक होते हैं इसलिए उनमें भी वह दोष रहता है और वह पददोष कहलाता है ॥

'हतिरपकर्षः'। शब्दाद्या इत्याद्याग्रहणाद् वर्णरचने।

कारिका में आये हुए 'हति' शब्द का अर्थ विनाश नहीं अपितु अपकर्ष है **'शब्दाद्याः'** यहाँ आद्य पद के ग्रहण से वर्ण और रचना का ग्रहण होता है।

दोष -(6) प्रकार-

1. **पददोषाः** - च्युतसंस्कृत्यादयः -(16)
2. **वाक्यदोषाः** - श्रुतिकट्वादयः -(9)
3. **पदाशगतदोषा** - पदांशगतिनिहितार्थादयः -(7)
4. **वाक्यगतदोषा** - प्रतिकूलवर्णादयः -(21)
5. **अर्थदोषाः** - अपुष्टादयः -(23)
6. **रसदोषाः** - रसस्य स्वशब्दवाच्यता इत्यादयः -(13)

पद दोष -(16)

दुष्टं पदं श्रुतिकटु च्युतसंस्कृत्यप्रयुक्तमसमर्थम्
निहतार्थमनुचितार्थं निरर्थकमवाचकं त्रिधाऽश्लीलम्।।
सन्दिग्धमप्रतीतं ग्राम्यं नेयार्थमथ भवेत् क्लिष्टम्
अविमृष्टविधेयांश विरुद्धमतिकृत् समासगतमेव।।

रसदोषनिरूपण-

व्यभिचारिरसस्थायिभावानां शब्दवाच्यता।
कष्टकल्पनया व्यक्तिरनुभावविभावयोः।।
प्रतिकूलविभावादिग्रहो दीप्तिः पुनः पुनः
अकाण्डे पथनच्छेदो अङ्गस्याप्यतिविस्तृतिः।।
अङ्गिनोऽननुसन्धानं प्रकृतीनां विपर्ययः।
अनङ्गस्याभिधानं च रसे दोषाः स्युरीदृशाः।।

ईदृशा=नायिकापादप्रहारादिना नायककोपादिवर्णनम्।

1. व्यभिचारिभावों की स्वशब्दवाच्यता-

उदाहरण- सव्रीडा दयितानने सकरुणा मातङ्गचर्माम्बरे।।

2. रस (श्रृंगारादि) की स्वशब्दवाच्यता-

उदाहरण- तामनङ्गजयमङ्गलश्रियं किञ्चिदुच्यभुजमूललोकिताम्।
नेत्रयोः कृतवतोऽस्य गोचरे कोऽप्यजायत रसो निरन्तरः।।

स्वशब्द/रसादि वाच्यता - दो प्रकार-

(1) रसादि शब्द से श्रृंगारादि नाम ।
(2) विभावादि प्रतिपादन द्वारा अभिधान।

3. स्थायीभाव की स्वशब्दवाच्यता-

उदाहरण- सम्प्रहारे प्रहरणैः परस्परम्।
ठणत्कारैः श्रुतिगतैरुत्साहरतस्य कोऽप्यभूत्।।

4. अनुभाव की कष्टकल्पना से अभिव्यक्ति-

उदाहरण- कपूर्रधूलिधवलद्युति .....।

5. विभाव की कष्टकल्पना से अभिव्यक्ति-

उदाहरण- परिहरति रतिं मति लुनीते स्खलति भृशं परिवर्तते च भूयः।

6. रस के प्रतिकूल विभावादि का ग्रहण-

उदाहरण- (1) प्रसादे वर्तस्व प्रकटय मुदं संत्यन रुषं।
(2) निभृतरमणे लोचनपथे पतिते गुरुजनमध्ये।

7. रस की बार-बार दीप्ति-

उदाहरण- कुमारसम्भव के रतिविलाप प्रसङ्ग में।

8. रस का अनवसर में विस्तार (रसविस्तार)

उदाहरण- वेणीसंहार- द्वितीय अंक में।

9. अनवसर में रसविच्छेद करना- (रसभङ्ग)-

उदाहरण- महावीरचरितम्- द्वितीय अंक में।

10. अप्रधान (अङ्ग रस) का अत्यधिक विस्तार करना-

उदाहरण- कश्मीर के (भर्तृमेण्ठकवि-विरचित नाटक - हयग्रीववध)।

11. (अङ्गी) प्रधान रस का विस्मरण - विस्मरण

उदाहरण- रत्नावली चतुर्थ अङ्क।

12. प्रकृति (पात्रों) का विपर्यय करना-

13. अनङ्ग (प्रकृत रस के अनुपकारक का वर्णन)-

उदाहरण- कपूर्रमञ्जरी (नाटिका)

॥अष्टम उल्लासः॥

मम्मट ने गुणों को शोभाजनक नहीं अपितु उत्कर्षहेतु ही माना है । वामन के मतसे गुणोंकी अपरिहार्यताका ग्रहण और आनन्दवर्धनके मतसे गुणोंकी रसधर्मता तथा अलङ्कारों की शब्दार्थधर्मता का ग्रहण कर इन दोनों के सम्मिश्रण के द्वारा गुण तथा अलङ्कार के भेदका प्रतिपादन किया है । गुण तथा अलङ्कार के भेद का प्रतिपादन करते हुए ग्रन्थकार इस अष्टम उल्लास का प्रारम्भ इस प्रकार करते हैं-

काव्यगुण-

"ये रसस्याङ्गिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः
उत्कर्षहेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः।।

आत्माके शौर्यादि धर्मों के समान काव्य के आत्मभूत प्रधान रसके जो अपरिहार्य और उत्कर्षाधायक धर्म हैं वे 'गुण' कहलाते हैं । जैसे शौर्य आदि धर्म आत्मा के ही होते हैं, शरीर आकार के नहीं, इसी प्रकार माधुर्य आदि गुण रसके ही धर्म होते हैं, वर्णों के नहीं, कहीं-कहीं शौर्य आदि आत्मगुणों के योग्य शरीर की लम्बाई-चौड़ाई को देखकर इसका आकार ही शूरवीर है इस प्रकार का व्यवहार होने से, और दूसरी जगह अशूर काया में भी केवल लम्बी-चौड़ी आकृति को देखकर 'शूर' है यह, तथा कहीं शूर में भी केवल शरीर के छोटे होनेके कारण भ्रान्त लोग जैसे व्यवहार करने लगते हैं, इसी प्रकार 1. मधुर आदि गुणों के व्यञ्जक सुकुमार आदि वर्णों में मधुर आदि व्यवहार के होने से, 2. अमधुर आदि रसके अङ्गभूत वर्णोंकी सुकुमारता आदि मात्रसे माधुर्य आदिका तथा 3. मधुर आदि रसोंके अङ्गभूत उन वर्णों के असुकुमार होनेसे रसकी मर्यादाको न समझने वाले उनके अमाधुर्य आदि का व्यवहार करते हैं इसलिए गुण वस्तुत: रस के धर्म हैं वे माधुर्य आदि योग्य वर्णों से अभिव्यक्त होते हैं केवल वर्णों के आश्रित रहने वाले नहीं है ।

गुणभेद -

माधुर्यौजः प्रसादाख्यास्त्रयस्ते न पुनर्दश।

(1) माधुर्य (2) ओज (3) प्रसाद।

शब्द- वामन 10 गुण मानते हैं।

(1) माधुर्य -

"आह्लादकत्वं माधुर्यं शृङ्गारे द्रुतिकारणम्।
करुणे विप्रलम्भे तच्छान्ते चातिशयान्वितम्"।

माधुर्यगुण सामान्यतः **"सम्भोगशृङ्गार"** में रहता है परन्तु करुण, विप्रलम्भ शृङ्गार तथा शान्त रस में वह उत्तरोत्तर अधिक चमत्कारजनक अतिशयान्वित होता है।

(2) ओज -

"दीप्त्यात्मविस्तृतेर्हेतुरोजो वीररसस्थिति।
वीभत्सरौद्ररसयोर्त्तस्याधिक्यं क्रमेण च"।

ओज सामान्यतः **"वीररस"** में रहता है। परन्तु बीभत्स और रौद्र रसों में क्रमशः इसका आधिक्य रहता है।

(3) प्रसाद -

"शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहसैव यः।
व्याप्नोत्यन्यत् प्रसादोऽसौ सर्वत्र विहितस्थितिः"।।

यह सब रसों में रहता है। भट्टोद्भट्ट गुण तथा अलङ्कार में भेद नहीं मानते हैं।

तीन गुण तथा उनके व्यञ्जक-

"वर्णाः समासो रचना तेषां व्यञ्जकतामिताः"।

गुणों के व्यञ्जक- वर्ण, समास, रचना।

1. माधुर्य व्यञ्जक-

मूर्ध्नि वर्गान्त्यगाः स्पर्शा अटवर्गा रणौ लघू।
अवृत्तिर्मध्यवृत्तिर्वा माधुर्ये घटना तथा।।

उदाहरण -

अनङ्गरङ्गप्रतिमं तदङ्गं भङ्गीभिरङ्गीकृतमानताङ्ग्याः।
कुर्वन्ति यूनां सहसा यथैताः स्वान्तानि शान्तापरचिन्तनानि।

2. ओज व्यञ्जक -

योग आद्य तृतीयाभ्यामन्त्ययो रेण तुल्ययोः।
टादिः शषौ वृत्तिदैर्घ्यं गुम्फ उद्धत ओजसि।।

उदाहरण -

मूर्ध्नामुद्वृत्तकृत्ताविरलगलद्रक्तयसंसक्तधारा
धौतेशाङ्घ्रिप्रसादोपनतजयजगज्ञातमिथ्यामहिम्नाम्।
कैलासोल्लासनेच्छाव्यतिकरपिशुनोत्सर्पिदर्पोद्धुराणां
दोष्णां चैषां किमेतत्फलमिह नगरीरक्षणे यत्प्रयासः।

3. प्रसाद व्यञ्जक -

श्रुतिमात्रेण शब्दात्तु येनार्थप्रत्ययो भवेत्
साधारणः समग्राणां स प्रासादो गुणो मतः।।

उदाहरण -

परिम्लानं पीनस्तनजघनसङ्गादुभयतः।
तनोर्मध्यस्यान्तः परिमिलनमप्राप्य हरितम्।।
इदं व्यस्तन्यासं श्लथभुजलताक्षेपवलनैः।
कृशाङ्ग्याः सन्तापं वदति बिसिनीपत्रशयमम्।।

पांच प्रकार की प्रौढि -

"पदार्थे वाक्यरचनं वाक्यार्थे च पदाभिधा
प्रौढि व्याससमासौ च साभिप्रायत्वमस्य च"।

(1) पद के प्रतिपाद्य अर्थ में वाक्य की रचना करना।

(2) वाक्य के प्रतिपाद्य पद का कथन करना।

(3) विस्तार करना।

(4) संक्षेप करना।

(5) अर्थ का साभिप्रायत्व।

॥नवम उल्लास॥

अलङ्कार का स्वरूप-

'अलङ्करोति इति अलङ्कारः' यह अलंकार शब्द की व्युत्पत्ति है इसके अनुसार शरीर को विभूषित करनेवाले अर्थ या तत्त्वका नाम 'अलङ्कार' है। जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि आभूषण शरीर को विभूषित करते हैं, इसलिए अलङ्कार कहलाते हैं उसी प्रकार काव्यमें अनुप्रास, उपमा आदि काव्य के शरीरभूत शब्द और अर्थ को अलङ्कृत करते हैं इसलिए अलङ्कार कहलाते हैं। अलङ्कार अलङ्कार्य का केवल उत्कर्षाधायक तत्त्व होता है, स्वरूपाधायक या जीवनाधायक तत्त्व नहीं। जो स्त्री या पुरुष अलङ्कारविहीन हैं, वह भी मनुष्य हैं। पर जो अलङ्कारयुक्त हैं, वह अधिक उत्कृष्ट समझे जाते हैं। इसी प्रकार काव्य में अलङ्कारों की स्थिति अपरिहार्य नहीं है। वे यदि हैं, तो काव्यके उत्कर्षाधायक होंगे, यदि नहीं हैं, तो भी काव्य की कोई हानि नहीं है। इसलिए अलङ्कारों को काव्यका अस्थिर धर्म माना गया है। यही गुण तथा अलङ्कारों का भेदक तत्त्व है। गुण काव्य के स्थिर धर्म हैं, काव्य में गुणों की स्थिति अपरिहार्य है। परन्तु अलङ्कार स्थिर या अपरिहार्य धर्म नहीं हैं, केवल उत्कर्षाधायक हैं। उनके बिना भी काव्य में काम चल सकता है। इसलिए काव्यके लक्षणमें मम्मटने **'अनलङ्कृती पुनः क्वापि'** लिखकर अलङ्कार रहित को भी काव्य माना है। इसी दृष्टि से उन्होंने अष्टम उल्लास में अलङ्कारोंका लक्षण करते हुए लिखा है-

अलङ्कारका लक्षण-

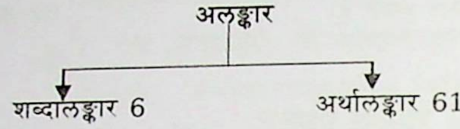
"उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्गद्वारेण जातुचित्
हारादिवदलङ्कारास्तेनुप्रासोपमादयः"।।

अर्थात् अलङ्कार 'जातुचित्' कभी-कभी ही उस रस को अलङ्कृत करते हैं, सदा नहीं। इसलिए ये काव्य के अस्थिर धर्म हैं। 'साहित्यदर्पण में भी अलङ्कार का लक्षण इसी आशय से निम्नलिखित प्रकार किया गया है- **शब्दार्थयोरस्थिराः ये धर्माश्शोभातिशायिनः।**
रसादीनुपकुर्वन्तोऽलङ्कारास्तेऽङ्गदादिवत्।।(सा.द.10.1)

किन्तु अलङ्कारोंको काव्य के अस्थिर धर्म मानने का सिद्धान्त सर्वमान्य नहीं है। यह केवल ध्वनिवादी सम्प्रदाय का दृष्टिकोण है अलङ्कारसम्प्रदाय अलङ्कारों को काव्य का अपरिहार्य स्थिर तत्त्व मानता है उसके मत में अलङ्काररहित काव्य की कल्पना, उष्णतारहित अग्नि की कल्पना के समान ही उपहास योग्य है। इसी भाव को व्यक्त करते हुए जयदेव ने अपने चन्द्रालोक में लिखा है-

अङ्गीकरोति यः काव्यं शब्दार्थावनलङ्कृती।
असौ न मन्यते कस्मात् अनुष्णमनलं कृती॥

जो आदमी (मम्मट) अलङ्कारविहीन शब्द और अर्थ को काव्य मानता है, वह उष्णताविहीन अग्निको क्यों नहीं मानता है?



॥शब्दालङ्कार॥

(1) अनुप्रास	(2) यमक
(3) वक्रोक्ति	(4) श्लेष
(5) चित्र	(6) पुनरुक्तवदाभास।

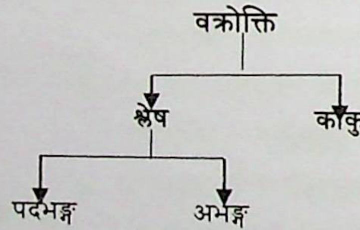
अलङ्कारों में धर्म- शब्दपरिवृत्ति असहत्व धर्म।

(1) वक्रोक्ति -

लक्षण- **"यदुक्तमन्यथावाक्यमन्यथाऽन्येन योज्यते।**
श्लेषेण काक्वा वा ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा"।

जो वक्ता द्वारा अन्य प्रकार से अन्य अर्थ में कहा हुआ वाक्य दूसरे अर्थात् श्रोता के द्वारा श्लेष अथवा काकु के कारण वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ में लगा लिया जाता है वह वक्रोक्ति नामक अलंकार होता है, और वह श्लेष और काकु के भेद से दो प्रकार का होता है।

दो प्रकार- (1) श्लेष (2) काकु



पदभङ्ग- **नारीणामनुकूलमाचरसिचेज्जानासिकश्चेतनो,**
वामानां प्रियमादधाति हितकृन्नैवाबलानां भवान्।
युक्तं किं हतकर्तनं ननु बलाबावप्रसिद्धात्मनः,
सामर्थ्यं भवतः पुरन्दरमतच्छेदं विधातुं कुतः॥

यहाँ पर नारीणां, वामानां और अबलानाम् इत्यादि पद श्लिश्टार्थ हैं अतः वक्ता द्वारा प्रयुक्त उपरोक्त पदों के अर्थ को श्रोता **'न अरीणां'** तथा **'न बलं येषां ते अबलाः'** इस प्रकार श्रोता द्वारा वक्ता के अभिप्राय को भिन्नार्थ में ग्रहण करता है।

अभङ्ग- **अहो केनेदृशी बुद्धिर्दारुणा तव निर्मिता**
त्रिगुणा श्रूयते बुद्धिर्न तु दारुमयी क्वचित्।।

यहाँ पर श्रोता द्वारा वक्ता द्वारा कठोर अर्थ में प्रयुक्त दारुणा पद का वक्ता के अभिप्राय से भिन्न काष्ठेन वह अर्थ लगा लिया गया और इस पद का भङ्ग भी नहीं हुआ अतः 'अभङ्गश्लेष' है ।

काकु -

गुरुजनपरतन्त्रतया दूरतरं देशमुद्यतो गन्तुम्।
अलिकुलकोकिलललितेनैष्यति सखिसुरभिसमयेऽसौ॥

(2) अनुप्रास -

लक्षण- "वर्णसाम्यमनुप्रासः छेकवृत्तिगतो द्विधा"।

वर्णों की समानता अर्थात् आवृत्ति का नाम ही अनुप्रास है ।

वृत्तिः- 'नियतवर्णगतो रसविषयो व्यापारः वृत्तिः'।

अनुप्रास(वर्णानुप्रास)

छेकानुप्रास — वृत्त्यनुप्रास

छेकानुप्रास - 'सोऽनेकस्य सुकृत्पूर्वः'। छेको विदग्धाः ।

अनेक व्यञ्जनों का सकृत अर्थात् एक बार सादृश्य होना छेकानुप्रास कहलाता है । छेक विदग्ध (चतुर) को कहते हैं ।

उदाहरण- "ततोऽरुणपरिस्पन्दमन्दीकृतवपुः शशी
दध्रे कामपरिक्षामकामिनीगण्डपाण्डुताम्"।।

वृत्यनुप्रास - 'एकस्याप्यसकृत्परः'। एक वर्ण का अथवा अनेक व्यञ्जनों का एक बार या बहुत बार का सादृश्य अर्थात् आवृत्ति होना वृत्यनुप्रास कहलाता है । इसमें गुण, वृत्ति और रीति आदि का समन्वय होता है।

वृत्ति/मार्ग/रीति/सङ्घटना-

"माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णैरुपनागरिकोच्यते।
ओजः प्रकाशकैस्तैस्तु परुषा कोमला परैः"॥

गुण -	माधुर्य	ओज	प्रसाद
उद्भट्ट-वृत्ति -	उपनागरिका	परुषा	कोमला(ग्राम्या)
वामन-रीति -	वैदर्भी	गौड़ी	पाञ्चाली
कुन्तक,दण्डी-मार्ग -	सुकुमारमार्ग	विचित्रमार्ग	मध्यममार्ग

आनन्दवर्धनाचार्य-(सङ्घटना)।

उदाहरण-

अपसारय घनसारं कुरु हारं दूर एव किं कमलैः।
अलमलमालि मृणालैरिति वदति दिवानिशं बाला ।।

अन्वय (उद्देश्य-विधेयभाव) मात्र से - **लाटानुप्रास।**

लाटानुप्रास - (शब्दगत अनुप्रास)

"शाब्दस्तु लाटानुप्रासो भेदे तात्पर्यमात्रतः"।

आवृत्त पद में 'तात्पर्य' मात्र से भेद होने पर शब्दानुप्रास लाटानुप्रास कहलाता है ।

पाँच भेद -

उदाहरण- यस्य च सविधे दयिता दवहनस्तुहिनदीधितिस्तस्य।
यस्य च सविधे दयिता दवदहनस्तुहिनदीधितिस्तस्य।।

लाटानुप्रास समास-(एकपद-लाटानुप्रास)-

**पदानां सः पदस्यापि वृत्तावन्यत्र तत्र वा।
नाम्नः स वृत्त्यवृत्त्योश्च तदेवं पञ्चधा मतः।।**

सितकरकररुचिरविभा विभाकराकार धरणिधर कीर्तिः।
पौरुषकमला कमला सापि तवैवास्ति नान्यस्य ।।

उदाहरण- वदनं वरवर्णिन्यास्तस्याः सत्यं सुधाकरः
सुधाकरः क्व नु पुनः कलङ्कविकलो भवेत्।।

(3) यमक -

लक्षण- **"अर्थे सत्यर्थभिन्नानां वर्णानां सा पुनः श्रुतिः।
यमकं पादतद्भागवृत्ति तद्यात्यनेकताम्"॥**

अर्थ होने पर भिन्नार्थक वर्णों की उसी क्रम से पुनः पुनरावृत्ति यमक नामक शब्दालंकार कहलाता है । यमक के प्रमुख (8) प्रकार हैं तथा सम्पूर्ण (40) भेद हैं ।

(1) सन्दंशयमक	(2) युग्मयमक
(3) महायमक	(4)पदभागावृत्ति,सन्दष्टकयमक,
(5) आद्यन्तिक यमक	(6)आद्यन्तिककान्तादिकसमुच्चय
(7) पादगताद्यन्तिकान्तादिकसमुच्चय	(8) अनियतस्थानावृत्ति।

(4) श्लेष -

**"वाच्यभेदेन भिन्नायद् युगपद्भाषणस्पृशः।
श्लिष्यन्ति शब्दाः श्लेषोसावक्षरादिभिरष्टधा"।।**

अर्थ का भेद होने से भिन्न-भिन्न अर्थों के बोधक समानाकार भिन्न-भिन्न शब्द समानाकार होने से एकसाथ उच्चारण के कारण जब परस्पर मिलकर एक हो जाते हैं, तब वह श्लेष रूप शब्दालंकार होता है और वह अक्षर आदि के भेद से आठ प्रकार का होता है ।

श्लेष शब्दालंकार के 8 भेद -

(1) वर्ण	(2) पद
(3) लिङ्ग	(4) भाषा
(5) प्रकृति	(6) प्रत्यय
(7) विभक्ति	(8) वचन।

उदाहरण-

1. वर्णश्लेष-

अलङ्कारः शङ्काकरनकपालं परिजनो। (शिव का वर्णन)

2. पदश्लेष -

पृथुकार्त्तस्वरपात्रं भूषितनिःशेषपरिजनं देव!। (याचक-राजा वर्णन)

3. लिङ्ग/वचन-

भक्तिप्रह्वविलोकनप्रणयिनी नीलोत्पलस्पर्धिनी।(भक्ति वर्णन)

4. भाषाश्लेष -

महदेसुर सन्धम्मे तमवसमासङ्गभागमाहरणे। (गौरी स्तुति)

5. प्रकृतिश्लेष-

अयं सर्वाणि शास्त्राणि हृदि ज्ञेषु च वक्ष्यति।(राजा-पुत्र वर्णन)

6. प्रत्ययश्लेष-

रजनिरमणमौलेः पादपद्मावलोक-। (शिव उपासना)

7. विभक्तिश्लेष-

सर्वस्वं हर सर्वस्य त्वं भवच्छेदतत्परः। (शिव भक्त डाकू का अपने पुत्र को उपदेश)

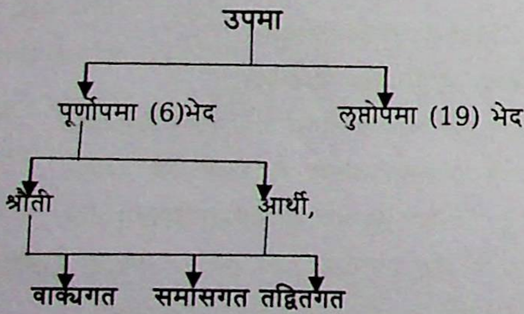
8. वचनश्लेष-

॥अर्थालङ्कार॥

(1) उपमा-

लक्षण- "साधर्म्युपमा भेदे पूर्णा लुप्ता च साऽग्रिमा
श्रौत्यार्थी च भवेद्वाक्ये समासे तद्धिते तथा"।

'उपमान' तथा 'उपमेय' का भेद होने पर उनके साधर्म्य का वर्णन उपमा कहलाता है। वह उपमा 'पूर्णोपमा' तथा 'लुप्तोपमा' इन दो प्रकार की होती है। उनमें से प्रथम पूर्णोपमा 'श्रौती' तथा 'आर्थी' दो प्रकार की होती है, तथा फ़िर उन दोनों में से प्रत्येक 'वाक्यगत, समासगत तथा तद्धितगत' तीन प्रकार की कुल छह प्रकार की उपमा होती है। उपमान, उपमेय, साधारण धर्म, उपमावाचक इवादि शब्द इन चारों के ग्रहण होने पर पूर्णोपमा एक या दो का लोप होने पर लुप्तोपमा होती है।



दोनों में प्रत्येक वाक्यगत, समासगत, तद्धितगत तीन प्रकार से (छः) भेद होते हैं। पूर्णोपमा और लुप्तोपमा को मिलाकर उपमा के सम्पूर्ण (25) भेद होते हैं।

उदाहरण -

वाक्यगा श्रौती पूर्णोऽपमा-

स्वप्नेऽपि समरेषु त्वां विजयश्रीर्न मुञ्चति
प्रभावप्रभवं कान्तं स्वाधीनपतिका यथा।।

वाक्यगा आर्थी पूर्णोपमा-

चकितहरिणलोललोचनायाः क्रुधितरुणारुणतारहारिकान्ति।
सरसिजमिदमाननं च तस्याः सममिति चेतसि समदं विधत्ते।।

समासगान श्रौती पूर्णोपमा-

अत्यायतैर्नियमकारिभिरुद्धतानां दिव्यैः प्रभाभिरनपायमयैरुपायैः।
शौभिर्भुजैरिव चतुर्भिरदः सदा यो लक्ष्मी विलासभवनैर्भुवनं बभार।

समासगा आर्थी पूर्णोपमा-

अवितथमनोरथपथनेषु प्रगुणगरिमगीतश्रीः।
सुरतरुसदृशः स भवानभिलषणीयः क्षितीश्वर न कस्य।।

तद्धितगत श्रौती तथा आर्थी पूर्णोपमा-

गाम्भीर्यगरिमा तस्य सत्यं गङ्गाभुजङ्गवत्।
दुरालोकः स समरे निदाधाम्वररत्नवत्।।

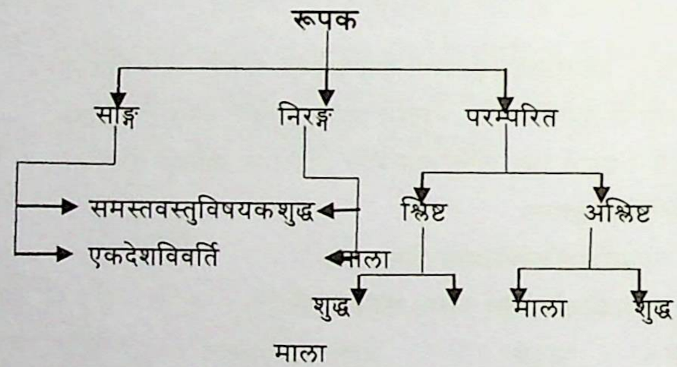
(2) रूपक-

लक्षण- "तद्रूपकमभेदो य उपमानोपमेययोः"।।

उपमान और उपमेय का जो अभेद वर्णन है वह रूपक अलङ्कार कहलाता है।

उदाहरण- ज्योत्स्नाभस्मच्छुरणधवला बिभ्रती तारकास्थी-
न्यन्तर्द्धानव्यसनरसिका रात्रिकापालिकीयम्।।
द्वीपाद् द्वीपं भ्रमति दधती चन्द्रमुद्राकपाले।
न्यस्तं सिद्धाञ्जनपरिमलं लाञ्छनस्यच्छलेन।।

'यहाँ पर रात्रि के ऊपर कपालिकी का आरोप किया गय है'।



(3) उत्प्रेक्षा-

लक्षण- "सम्भवनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्"॥

प्रकृत (अर्थात् वर्ण्य उपमेय) की सम (अर्थात् उपमान) के साथ सम्भावना (अर्थात् उत्कैटकोटिक सन्देह) उत्प्रेक्षा कहलाती है।

उदाहरण-

(1) उन्मेषं यो मम न सहते जातिवैरी निशाया
मिन्दोरिन्दीवरदलदृशा तस्य सौन्दर्य दर्पः।
नीतः शान्तिं प्रसभमनया वक्रकान्त्येति हर्षा।
लग्ना मन्ये ललिततनु ते पादयोः पद्मलक्ष्मीः॥

(2) लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफ़लतां गता॥

(4) समासोक्ति -

लक्षण- "परोक्तिर्भेदकैः श्लिष्टैः समासोक्तिः"।

श्लेषयुक्त भेदक अर्थात् विशेषणों के द्वारा पर अर्थात् अप्रकृत के व्यवहार का कथन **'समासेन संक्षेपेण उक्तिः'** (दो अर्थों का संक्षेप से कथन होने के कारण) समासोक्ति अलङ्कार कहलाता है ।

उदाहरण- लब्ध्वा तव बाहुस्पर्श यस्याः स कोऽप्युल्लासः।
जयलक्ष्मीस्तव विरहे न खलूज्ज्वला दुर्बला ननु सा।।

(5) अपह्नुति -

लक्षण- **"प्रकृतं यन्निषिध्यान्यत्साध्यते सा त्वपह्नुतिः"।।**

प्रकृत अर्थात् उपमेय का निषेध करके जो अन्य अर्थात् उपमान की सिद्धि की जाती है वह अपह्नुति अलंकार कहलाता है । अपह्नुति के दो भेद होते हैं – 1. **शाब्दी अपह्नुति, 2. आर्थी आह्नुति ।**

उदाहरण-

शाब्दी अपह्नुति- अवाप्तः प्रागल्भ्यं परिणतरुचः शैलतनये!
कलङ्को नैवायं विलसति शशाङ्कस्य वपुषि।
अमुष्येयं मन्ये विगलदमृतस्यन्दशिशिरे
रतिश्रान्ता शेते रजनिरमणी गाढमुरसि॥

आर्थी आहुति- वत सखि! कियदेतत् पश्य वर स्मरस्य।
प्रियविरहकृशेऽस्मिन् रागिलोके तथा हि
उपवनसहकारोद्भासिभृङ्गच्छलेन
प्रतिविशिखमनेनोट्टङ्कितं कालकूटम् ॥

(6) निदर्शना-

लक्षण- "अभवन् वस्तुसम्बन्ध उपमापरिकल्पकः"।।

जहाँ वस्तु का असम्भव या अनुपद्यमान सम्बन्ध (प्रकृत की अपकृत के साथ) उपमा का परिकल्पक उपमा में पर्यवसित होता है वह निदर्शना नामक अलङ्कार होता है ।निदर्शना के दो भेद हैं -1. **वाक्यार्थनिदर्शना,** 2. पदार्थनिदर्शना ।

उदाहरण-

1. वाक्यार्थनिदर्शना- क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।

2. पदार्थनिर्दशना-

उदयति विततोर्ध्वरश्मिरज्जावहिमरुचौ हिमधाम्नि याति चास्तम्।
वहति गिरिरयं विलम्बि घण्टाद्वय परिवारितवारणेन्द्रलीलाम्।।

(7) अर्थान्तरन्यास-

लक्षण- **"सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते।
यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा"।।**

सामान्य अथवा विशेष का उससे भिन्न अर्थात् सामान्य का विशेष के द्वारा अथवा विशेष का सामान्य के द्वारा जो समर्थन किया जाता है वह अर्थान्तरन्यास अलङ्कार कहलाता है । अर्थान्तरन्यास अलङ्कार के दो प्रकार हैं- **(1) साधर्म्य (2) वैधर्म्य ।** साधर्म्य और वैधर्म्य के विशेष और सामान्य होने से इसके चार भेद होते हैं ।

उदाहरण-

साधर्म्य विशेष-

निजदोषावृत्तमनसामतिसुन्दरमेव भाति विपरीतम्।
पश्यति पित्तोपहतः शशिशुभ्रां शङ्खमपि पीतम्।।

साधर्म्य सामान्य- सुसितवसनालङ्कारायां कदाचन कौमुदी...।

वैधर्म्य विशेष- गुणानामेव दौरात्म्याद् धुरि धुर्यो नियुज्यते।
असञ्जातकिणस्कन्धः सुखं स्वपिति गौर्गलिः।।

वैधर्म्य सामान्य-

अहो हि मे वह्वपराद्धमायुषा यदप्रियं वाच्यमिदं मयेदृशम्....।

(8) दृष्टान्त -

लक्षण- **"दृष्टान्तः पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिम्बनम्"।।**

इन (उपमान, उपमेय उनके विशेषण और साधारणधर्म आदि) सबका 'बिम्ब-प्रतिबिम्बभाव' होने पर 'दृष्टान्त अलङ्कार' होता है ।

उदाहरण-

त्वयि दृष्ट एव तस्या निर्वाति मनो मनोभवज्वलितम्।
आलोके हि हिमांशोर्विकसति कुसुमं कुमुद्वत्याः।।

यहाँ पर नायक तथा चन्द्रमा का, नायिका तथा कुमुदिनि का, मन तथा कुसुम का मनोभव-सन्तप्तव तथा सूर्यसन्तप्तत्व का निर्वाण तथा विकास का बिम्बप्रतिबिम्ब भाव होने से 'दृष्टान्त अलङ्कार' है।

(9) विभावना-

लक्षण- **"क्रियायाः प्रतिषिधेऽपि फलव्यक्तिर्विभावना"।।**

हेतुरूप क्रिया अर्थात् कारण का निषेध अथवा अभाव होने पर भी फ़ल की उत्पत्ति 'विभावना' अलङ्कार कहलाता है ।

उदाहरण- कुसुमितलताभिरहताऽप्यधत्त रुजमलिकुलैरदष्टापि
परिवर्त्तते स्म नलिनीलहरी भिरलोलिताप्यघूर्णत सा।।

(नायिका वर्णन)

(10) विशेषोक्ति-

लक्षण- **"विशेषोक्तिरखण्डेषु कारणेषु फलावचः"।**

कारणों के एकत्र होने पर भी कार्य का कथन न करना विशेषोक्ति अलङ्कार कहलाता है । वह तीन प्रकार की होती है- 1. अनुक्तनिमित्ता, 2. उक्तनिमित्ता, 3.अचिन्त्यनिमित्ता ।

उदाहरण-

1. अनुक्तनिमित्ता-

निद्रानिवृत्तावुदिते द्युरत्ने सखीजने द्वारपदं पराप्ते।
श्लथीकृताश्लेषरसे भुजङ्गे चचाल नाऽलिङ्गनतोऽङ्गना सा।।

2. उक्तनिमित्ता-

कपूर्र इव दग्धोऽपि शक्तिमान् यो जने जने।।
नमोऽस्त्ववार्यवीर्याय तस्मै मकरकेतवे।। (कामदेव स्तुति)

3. अचिन्त्यनिमित्ता-

स एकस्त्रीणि जयति जगन्ति कुसुमायुधः।।
हरताऽपि तनुं तस्य शम्भुना न बलं हृतम्।।

(11) स्वभावोक्ति -

लक्षण- "स्वभावोक्तिस्तु डिम्भादेः स्वक्रियारूपवर्णनम्"॥

बालक आदि की अपनी स्वभाविक क्रिया अथवा रूप अर्थात् वर्ण एवं अवयवसंस्थान का वर्णन 'स्वभावोक्ति' अलङ्कार कहलाता है ।

उदाहरण- पश्चादंघ्री प्रसार्य त्रिकनतिविततं द्राघयित्वाङ्गमुच्चै-
रासज्याभुग्नकण्ठो मुखमुरसि सटां धूलिधूम्रां विधय।
घासग्रासाभिलाषादनवरतचलत्प्रोथतुण्डस्तुरङ्गो
मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः क्ष्मां खुरेण ।

(12) विरोधाभास-

लक्षण- "विरोधः सोऽविरोधेऽपि विरुद्धत्वेन यद्वचः"॥

वास्तव में विरोध न होने पर भी विरोध की प्रतीति कराने वाले विरुद्धरूप से जो वर्णन करना यह विरोध या विरोधाभास अलङ्कार कहलाता है । विरोधाभास अलङ्कार के दश भेद होते हैं -

**10 भेद- 'जातिश्चतुर्भिजात्याद्यैर्विरुद्धा स्याद् गुणस्त्रिभिः
क्रिया द्वाभ्यामपि द्रव्यं द्रव्येणैवेति ते दश' ।।**

जाति का जाति आदि चार (जाति,गुण,क्रिया तथा द्रव्य) के साथ विरोध हो सकता है, गुण का (गुण, क्रिया तथा द्रव्य) तीन के साथ, क्रिया का (क्रिया तथा द्रव्य) दो के साथ और द्रव्य का द्रव्य के साथ विरोध हो सकता है । इस प्रकार ये दस प्रकार के विरोध या विरोधाभास अलङ्कार होते हैं ।

उदाहरण-

जाति का जाति के साथ विरोध-

अभिनवनलिनीकिसलयमृणालवलयादि दवदहनराशिः।
सुभग! कुरङ्ग दृशोऽस्या विधिवशतस्त्व द्वियोगपविपाते॥

(13) सङ्कर-

लक्षण- "अविश्रान्तिजुषामात्मन्यङ्गाङ्गित्वं तु सङ्करः"।

अपने स्वरूप मात्र में जिनकी विश्रान्ति न हो अर्थात् जो परस्पर निरपेक्ष स्वतत्र रूप से अलङ्कार न बनते हों उनका अङ्गाङ्गिभाव होने पर सङ्कर अलङ्कार होता है ।

उदाहरण- आत्ते सीमन्तरत्ने मरकतिनि हृते हेमताटङ्कपत्रे
लुप्तायां मेखलायां झटिति मणितुलाकोटि युग्मे गृहीते।।

(14) संसृष्टि -

लक्षण- "सेष्टा संसृष्टिरतेषां भेदेन यदिह स्थितिः"।

इन 'एतेषां' पद में बहुवचन अविवक्षित है । इसलिए दो या अधिक अलङ्कारों की यहाँ काव्य या वाक्य में भेद से परस्पर निरपेक्ष रूप से जो स्थिति है वह संसृष्टि नामक अलङ्कार कहलाता है । संसृष्टि अलङ्कार के तीन भेद होते हैं ।

उदाहरण-

1. **शब्दालङ्कार-** वदनसौरभलोभपरिभ्रमदभ्रमरसम्भ्रमसम्भृतशोभया
चलितया विदधे कलमेखलाकलकलोऽलकलोलदृशाऽन्यया ।
2. **अर्थालङ्कारसंसृष्टि-** लिम्पतीव तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः।
असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गता।।
3. **शब्दार्थालङ्कार-** स नास्त्यत्र ग्रामे य एनां महमहायमानलावण्याम्।
तरुणानां हृदयलुण्ठाकीं परिष्वक्कमानां निवारयति।।

विभिन्न आचार्यों के अनुसार अलंकार के भेद -

मम्मट- 67,	विश्वनाथ/रुय्यक- 78,
कुन्तक- 20,	भरत- 4,
भोजराज -24,	अग्निपुराण-23,
चन्द्रालोक-100,	अप्पयदीक्षित -124,
भामह-38,	दण्डी-37

॥ध्वन्यालोक॥

परिचय-

ध्वन्यालोक आचार्य **आनन्दवर्धन** कृत काव्यशास्त्र का ग्रन्थ है। आचार्य आनन्दवर्धन काव्यशास्त्र में **'ध्वनि सम्प्रदाय'** के प्रवर्तक के रूप में प्रसिद्ध हैं। ध्वन्यालोक **उद्योतों** में विभक्त है। इसमें कुल **चार उद्योत** हैं।इस के मंगलाचरण में **भगवान विष्णु** की स्तुती की गयी है । **प्रथम उद्योत में** ध्वनि सिद्धान्त के विरोधी सिद्धांतों का खण्डन करके ध्वनि-सिद्धांत की स्थापना की गयी है। **द्वितीय उद्योत में** लक्षणामूला (अविवक्षितवाच्य) और अभिधामूला (विवक्षितवाच्य) के भेदों और उपभेदों पर विचार किया गया है। इसके अतिरिक्त गुणों पर भी प्रकाश डाला गया है। **तृतीय उद्योत में** पदों, वाक्यों, पदांशों, रचना आदि द्वारा ध्वनि को प्रकाशित करता है और रस के विरोधी और विरोधरहित उपादानों को भी। **चतुर्थ उद्योत में** ध्वनि और गुणीभूत व्यंग्य के प्रयोग से काव्य में चमत्कार की उत्पत्ति को प्रकाशित किया गया है।

ध्वन्यालोक के **तीन भाग हैं- कारिका भाग, वृत्ति और उदाहरण** । कुछ विद्वानों के अनुसार **कारिका भाग** के निर्माता **आचार्य सहृदय** हैं और **वृत्तिभाग** के **आचार्य आनन्दवर्धन** । ऐसे विद्वान अपने उक्तमत के समर्थन में ध्वन्यालोक के अन्तिम श्लोक को आधार मानते हैं-

'सत्काव्यतत्त्वनयवर्त्मचिरप्रसुप्तकल्पं मनस्सु परिपक्वधियां यदासीत्। तद्व्याकरोत् सहृदयलाभ हेतोरानन्दवर्धन इति प्रथिताभिधानः'॥

लेकिन **कुंतक, महिमभट्ट, क्षेमेन्द्र** आदि आचार्यों के अनुसार कारिका भाग और वृत्ति भाग दोनों के प्रणेता आचार्य आनन्दवर्धन ही हैं। आचार्य आनन्दवर्धन भी स्वयं लिखते हैं-

इति काव्यार्थविवेको योऽयं चेतश्चमत्कृतिविधायी।
सूरिभिरनुसृतसारैरस्मदुपज्ञो न विस्मार्यः॥

यहाँ उन्होंने अपने को ध्वनि सिद्धान्त का प्रवर्तक बताया है। इसके पहले वाले श्लोक में प्रयुक्त **'सहृदय'** शब्द किसी व्यक्तिविशेष का नाम नहीं, बल्कि सहृदय लोगों का वाचक है और कारिका तथा वृत्ति, दोनों भागों के रचयिता **आचार्य आनन्दवर्धन** को ही मानना चाहिए। इस अनुपम ग्रंथ पर दो टीकाएँ लिखी गयीं-**'चन्द्रिका'** और **'लोचन'**। हालाँकि केवल **'लोचन'** टीका ही आज उपलब्ध है। जिसके लिखने वाले **आचार्य अभिनवगुप्तपाद** हैं। **'चन्द्रिका'** टीका का उल्लेख इन्होंने ही किया है और उसका खण्डन भी किया है। इसी उल्लेख से पता चलता है कि **'चंद्रिका'** टीका के टीकाकार भी **आचार्य अभिनवगुप्तपाद** के पूर्वज थे।

॥प्रथम उद्योत॥

रचयिता - आनन्दवर्धनः -

भाग - (3), कारिका, वृत्ति, उदाहरण,

लोचन टीका – अभिनवगुप्त,

आनन्दवर्धन की रचनाएं (5) -

(1) ध्वन्यालोक	(2) तन्त्रालोक
(2) अर्जुनचरित	(4) देवीशतक
(5) विषमवाण लीला।	

❖ ध्वन्यालोकलोचन के टीकाकार - **अभिनवगुप्त ।**

॥मङ्गलाचरण॥ (आशीर्वादात्मक)

"स्वेच्छाकेसरिणः स्वच्छस्वच्छायायासितेन्दवः
त्रायन्ता वो मधुरिपोः प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः"।।

अपनी इच्छामात्र से सिंह का रूप धारण करने वाले, अपनी स्वच्छ कान्ति से चन्द्रमा की भी कान्ति को तिरस्कृत करने वाले तथा शरणागत जीवों के कष्ट को विनष्ट करने वाले, मधु नामक दैत्य के शत्रु भगवान् विष्णु (नृसिंह) के नख आपलोगों की रक्षा करें ।

स्तुति - विष्णु स्तुति।

मङ्गलाचरण में तीन प्रकार की ध्वनि-

वस्तु - नख, **अलङ्कार** - व्यतिरेक, **रस** - वीर ।

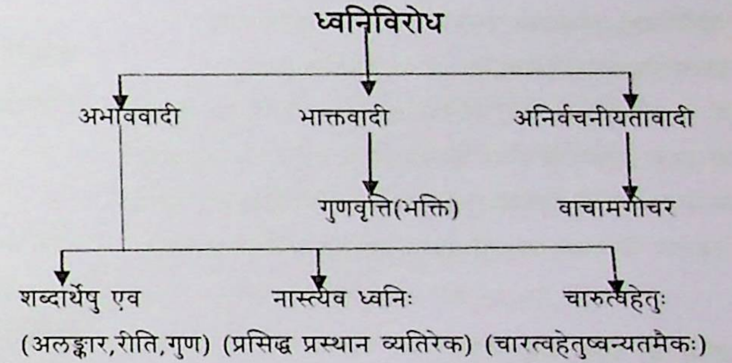
ध्वनिलक्षण (वीर रस)-

"काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधैर्यः समाम्नातपूर्व-
स्तस्याभावं जगदुरपरे भाक्तमाहुस्तमन्ये ।
केचिद्वाचाम् स्थितमविषये तत्त्वमूचुस्तदीयम्
तेन ब्रूमः सहृदयमनःप्रीतये तत्स्वरूपम्" ॥

काव्य की आत्मा ध्वनि है, इस तरह से विद्वानों ने जिसका पहले समाम्नान(निरूपण) किया है, उस ध्वनितत्व का एक प्रकार के लोगों ने अभाव बतलाया है। दूसरे प्रकार के विचारकों ने उसे भाक्त कहा है । कुछ लोगों ने ध्वनि के तत्व को वाणी का अविषय (अवर्णनीय) बताया है। इस प्रकार के विप्रतिपत्तियों के कारण उन सबों को दूर करने के लिए तथा सहृदयों के मन के प्रसन्नता के लिए हम उस (ध्वनितत्त्व) के स्वरूप का निरूपण कर रहे हैं ।

ध्वनिविरोधी तीन सिद्धान्त-

1. अभाववादी
2. भाक्तवादी
3. अनिर्वचनीयतावादी।



ध्वनिविरोधी छः आचार्यः -

(1) महिम भट्ट	(2) भट्टनायक
(3) कुन्तक	(4) प्रतिहारेन्दुराजशेखर
(5) क्षेमेन्द्रः	(6) धनञ्जय

आनन्दवर्धन ने भक्ति को केवल उपचार कहा है – **'उपचारमात्रं तु भक्तिः'।**

"अपारे काव्यसंसारे कविरेकः प्रजापतिः"।

काव्य की आत्मा जिसे ध्वनि कहा गया है, उसको दूसरे प्रकार के ध्वनिविरोधियों ने कहा है (गुणवृत्ति)

काव्यलक्षण-

"सहृदयहृदयाह्लादिशब्दार्थमयत्वमेव काव्यलक्षणम्"।-(अभिनवगुप्त)

सहृदय के हृदय को आह्लादित करने वाला शब्दार्थ ही काव्य है ।

ध्वनि भूमिका-

ध्वनि का लक्षण बतलाने के लिए प्रारम्भ करके ग्रन्थकार पहले उसकी भूमिका बनाने के लिए कहते हैं-

"योऽर्थः सहृदयश्लाघ्यः काव्यात्मेति व्यवस्थितः ।

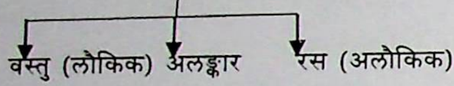
वाच्यप्रतीयमानाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ" ॥

सहृदय पुरुष जिसकी प्रशंसा करते हैं, जिसकी काव्य की आत्मा रूप से काव्य में स्थिति होती है, उसके दो भेद होते हैं वाच्यार्थ और प्रतीयमानार्थ ।

ध्वनि के प्रकार/भेद -

शरीर में आत्मा के समान सुन्दर गुण तथा अलङ्कार से युक्त उसी रसादि के अनुकूल रचना के कारण मनोज्ञ काव्य के सारभूत से स्थित सहृदय पुरुषों के द्वारा प्रशंसनीय जो अर्थ होता है, उसके दो भेद होते हैं-

(1) वाच्य-अलङ्कारादि (2) प्रतीयमान-ध्वनि



वस्तु (लौकिक) अलङ्कार रस (अलौकिक)

ध्वनि तीन प्रकार की है -**वस्तु, अलंकार, रस।**

प्रतीयमान-

"प्रतीयमानं पुनरन्यदेव वस्त्वस्ति वाणीषु महाकवीनाम्
यत्तत्प्रसिद्धावयवातिरिक्तं विभाति लावण्यमिवाङ्गनासु"।।

सुन्दरियों के प्रसिद्ध मुख, नेत्र, नासिकादि अङ्गों से भिन्न रूप से प्रतीत होने वाले उनके लावण्य के समान जो प्रतीयमान अर्थ है, वह महाकवियों की वाणी में वाच्यार्थ से भिन्न वस्तु के रूप में भासित होता है । आचार्य कुन्तक लावण्य के स्थान पर (सौभाग्य) पद को अभिहित करते हैं।

वस्तु ध्वनि के पांच भेद -

(1) कदाचित् वाक्ये विधिरूपे प्रतिषेधरूपः यथा -

"भ्रम धार्मिक विस्रब्धः स शुनकोऽद्य मारितस्तेन ।
गोदावरीनदीकूललतागहनवासिना दृप्तसिंहेन" ॥

(2) क्वचिद्वाच्ये प्रतिषेधरूपे विधिरूपः यथा -

"श्वश्रूरत्र शेते अत्राहं दिवसकं प्रलोकस्य ।
मा पथिक रात्र्यन्धः शय्यायामावयोः शयिष्ठाः" ॥

(3) क्वचिद्वाच्ये विधिरूपे अनुभय रूपो यथा -

"वज्र ममैवैकस्या भवन्तु निःश्वासरोदितव्यानि ।
मा तवापि तया विना दाक्षिण्यहतस्य जनिषत" ॥

(4) क्वचिद्वाच्ये प्रतिषेधरूपेऽनुभयरूपो यथा-

"प्रार्थयेतावत्प्रसीद निवर्तस्व मुखशशिज्योत्स्नाविलुप्ततमोनिवहे ।
अभिसारिकाणां विघ्नं करोष्यन्यासामपि हताशे" ॥

(5) क्वचिद्वाच्याद्विभिन्नविषयत्वेन व्यवस्थापितो यथा-

"कस्य वा न भवति रोषो दृष्ट्वा प्रियायाः सव्रणमधरम् ।
सभ्रमरपद्माघ्राणशीले वारितवामे सहस्वेदानीम्" ॥

प्रतीयमान रस ही काव्य की आत्मा है-

"काव्यस्यात्मा स एवार्थस्तथा चादिकवेः पुरा।
क्रौञ्चद्वन्द्ववियोगोत्थः शोकः श्लोकत्वमागतः"।।

काव्य की आत्मा वह प्रतीयमान (अर्थ) रस ही है । इसलिए प्राचीनकाल में क्रौञ्च पक्षी के जोड़े के वियोग से उत्पन्न का वसिष्ठ ऋषि का शोक ही श्लोक के रूप में परिणत हो गया ।

प्रतीयमान के सद्भाव साधक प्रमाणान्तर का उपस्थापन-

"शब्दार्थ शासनज्ञानमात्रेणैव न वेद्यते।
वेद्यते स तु काव्यार्थतत्वज्ञैरेव केवलम्" ।।

अर्थात् शब्द तथा अर्थों के नियमों के ज्ञानमात्र से उसका (प्रतीयमान अर्थ का) ज्ञान नहीं होता है, अपितु उसको काव्यों के अर्थतत्त्व को जानने वाले तत्त्वज्ञ पुरुष ही जान पाते हैं ।

कवियों द्वारा वाच्य एवं वाचक के उपपादन का औचित्य प्रतिपादन-

आलोकार्थी यथा दीपशिखायां यत्नवाञ्जनः।
तदुपायतया तद्वदर्थे वाच्ये तदादृतः॥

जिस तरह प्रकाश चाहने वाला व्यक्ति भी सबसे पहले दीपक को जलाता है, क्योंकि दीपक को जलाना प्रकाश की प्राप्ति का साधन है । दीपशिखा के बिना तो प्रकाश को प्राप्त करना सम्भव नहीं है, उसी तरह जिस व्यक्ति का व्यंग्यार्थ के प्रति आदर है वह व्यक्ति पहले वाच्यार्थ को प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करता है ।

"यथापदार्थद्वारेण वाक्यार्थः सम्प्रतीयते
वाच्यार्थपूर्विका तद्वत्प्रतिपत्तस्य वस्तुनः" ।।

जिस तरह पदार्थ के द्वारा ही वाच्यार्थ का ज्ञान होता है, उसी प्रकार वाच्यार्थ ज्ञानपूर्वक ही उस प्रतीयमान अर्थ रूपी वस्तु का ज्ञान होता है।

॥ध्वनि॥

ध्वनिकाव्य का लक्षण-

"यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनीकृतस्वार्थौ ।
व्यङ्क्तः काव्यविशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः" ॥

जहाँ पर अर्थ अपने आपको अथवा शब्द अपने मुख्यार्थ को गौण बनाकर उस प्रतीयमान अर्थ को अभिव्यक्त करते हैं, उस उत्तम काव्यविशेष को विद्वानों ने ध्वनिकाव्य कहा है ।

काव्य विशेष पद व्युत्पत्ति-

1. **काव्यं च तद्विशेषश्चासौ** = काव्यविशेषः (कर्मधारय समास) ।
2. **काव्यस्य विशेषः** = काव्यविशेषः (षष्ठी तत्पुरुष समास) ।

ध्वन्यालोक में ध्वनि शब्द का अर्थ प्रयोग पांच अर्थों में किया गया है-

(1) वाचक शब्द (2) वाच्य अर्थ

(3) व्यञ्जना व्यापार (4) व्यङ्ग्य अर्थ

(5) उत्तम काव्य।

ध्वनि व्युत्पत्तिः -

(1) ध्वनतीति ध्वनिः (व्यञ्जके शब्दे)

(2) ध्वन्यते इति ध्वनिः (व्यञ्जकेऽर्थे)

(3) ध्वननं ध्वनिः (व्यञ्जनाव्यापारे)

(4) ध्वन्यते य इति ध्वनिः (रसादिव्यङ्ग्यार्थे)

(5) ध्वन्यतेऽस्मिन्निति ध्वनिः (उत्तमकाव्यविशेषे)

यह तीन भागों में विभक्त है- **कारिका, वृत्ति, उदाहरण।**

आनन्दवर्धन के अनुसार काव्य भेद - (3)

ध्वनि के दो प्रकार -

(1) अविवक्षितवाच्य (लक्षणामूला)

(2) विवक्षितान्यपरवाच्य (अभिधामूला)।

1. अविवक्षितवाच्य लक्षणा-

इसे अविवक्षित वाच्यध्वनि इसलिए कहते हैं क्योंकि इसमें वक्ता को वाच्यार्थ विवक्षित नहीं होता है । इस ध्वनि के मूल में लक्षणा रहती है, अतएव इसे लक्षणामूला ध्वनि कहते हैं ।

उदहरण- **"सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।
शूरश्च कृतविद्यश्च यश्च जानाति सेवितुम्"।।**

सुवर्ण पुष्प वाली पृथिवी रूपी लता का चयन तीन प्रकार के लोग करते हैं, शूरवीर, विद्वान तथा जो सेवा करना जानता है ।

2. विवक्षितान्यपरवाच्य (अर्थान्तरसङ्क्रमित)-

**"शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं किमभिधानमसावकरोत्तपः ।
तरुणि येन तवाधरपाटलं दशति बिम्बफलं शुकशावकः" ॥**

हे सुन्दरि ! इस शुकशावक ने किस पर्वत पर कितने दिनों तक, किस प्रकार की तपस्या की है जिसके फ़लस्वरूप यह तुम्हारे अधर के समान लाल बिम्बफ़ल को काटने का सौभाग्य प्राप्त किया है ।

भक्तिवाद के प्रथम विकल्प का खण्डन-

ध्वनि विरोधियों में से जिन भक्तिवादियों ने यह कहा है कि भक्ति को ही ध्वनि कहा जा सकता है भक्ति से भिन्न ध्वनि नहीं है । इस कथन का खण्डन करते हुए ध्वनिकार कहते हैं ।

"भक्त्याविभाति नैकत्वं रूपभेदादयं ध्वनिः"।

ध्वनि को भक्ति नहीं कहा जा सकता है ध्वनि और भक्ति का स्वरूप अलग-अलग है ।

'उपचारमात्रं तु भक्तिः'। भक्ति केवल उपचार मात्र है ।

भक्तिवाद के द्वितीय विकल्प का खण्डन-

"अतिव्याप्तेरथाव्याप्तेर्न चासौ लक्ष्यते तया" ।।

अर्थात् ध्वनि का लक्षण भक्ति इसलिए नहीं हो सकती है कि उसको ध्वनि का लक्षण मानने पर **'अतिव्याप्ति'** तथा **'अव्याप्ति'** नामक दोष होंगे ।

- **प्रतिभा लक्षण** – 'अपूर्ववस्तुनिर्माणक्षमा प्रज्ञा'।- (अभिनवगुप्त-लोचन)।
- **स्वशब्द/रसादि वाच्यता के दो प्रकार-**
  (1) रसादि शब्द से शृंगारादि नाम ।
  (2) विभावादि प्रतिपादन द्वारा अभिधान।

॥वक्रोक्तिजीवितम्॥

परिचय-

वक्रोक्ति दो शब्दों 'वक्र' और 'उक्ति' की संधि से निर्मित शब्द है। इसका शाब्दिक अर्थ है- ऐसी उक्ति जो सामान्य से अलग हो। टेढा कथन अर्थात जिसमें लक्षणा शब्द शक्ति हो। भामह ने वक्रोक्ति को एक अलंकार माना था। उनके परवर्ती कुन्तक ने वक्रोक्ति को एक सम्पूर्ण सिद्धान्त के रूप में विकसित कर काव्य के समस्त अंगों को इसमें समाविष्ट कर लिया। इसलिए कुन्तक को वक्रोक्ति संप्रदाय का प्रवर्तक आचार्य माना जाता है।

- **लेखक** - आचार्य कुन्तक (समय 10 वीं शताब्दी)
- **भाग** - (चार उन्मेष)
- कुन्तक- प्रत्यभिज्ञानुयायी थे।

॥मङ्गलाचरण॥

**जगत्त्रितयवैचित्र्यचित्रकर्मविधायिनम् ।
शिवं शक्तिपरिस्पन्दमात्रोपकरणं नुमः ॥1.1॥**

इस मङ्गलाचरण में **'शिवस्तुति'** है। शक्ति के परिस्पन्द मात्र उपकरण (उपादान कारण) वाले, तीनों लोकों के वैचित्र्यरूप चित्रकर्म के निर्माता शिव को हम नमस्कार करते हैं ।

**यथातत्त्वं विवेच्यन्ते भावास्त्रैलोक्यवर्तिनः ।
यदि तन्नाद्भुतं नाम दैवरक्ता हि किंशुकाः ॥1.2॥**

त्रैलोक्य में वर्तमान पदार्थों का उनके स्वरूप का विना परित्याग किये यथार्थ वर्णन किया जाता है और यदि वह अद्भुत नही होता तो कोई बात नही क्योंकि वह तो स्वभावतः सुन्दर होता ही है। देवरक्त किंशुक को किसी अन्य वर्ण की क्या आवश्यकता ? जो स्वयं रक्त है, सुन्दर है उसे बाह्य उपादान की कोई आवश्यकता नहीं होती । अतः वस्तु

का स्वभाव-वर्णन ग्राह्य है, उपादेय है। स्वभाव स्वयं ही अलङ्कार्य होता है। उसमे चमत्कृति या वैचित्र्य भी आवश्यक नही।

स्वमनीषिकयैवाथ तत्त्वं तेषां यथारुचि।
स्थाप्यते प्रौढिमात्रं तत्परमार्थो न तादृशः ॥1.3॥

'कि यदि अपनी रुचि के अनुसार स्वतन्त्र रूप से उन पदार्थों के स्वरूप को (कविगण) अपनी बुद्धि-विलास मात्र से प्रस्तुत करते हैं, प्रतिभामण्डित करते है, अतिशयोक्तिमय ढंग से प्रस्तुत करते है, तो वह वर्णन प्रौढ़िमात्र होगा क्योंकि वस्तुतः वह वस्तु उस प्रकार की नही होती। वस्तु में कविकल्पना का प्राचुर्य उसकी यथार्थता को समाप्त कर देता है। अतः रचना का स्वाच्छन्द्य भी बहुत ग्राह्य नहीं होता।

॥ सरस्वती मङ्गलाचरण॥ (सरस्वती स्तुति)

"वन्दे कवीन्द्रवक्रेन्दुलास्यमन्दिरनर्तकीम्।
देवीं सूक्तिपरिस्पन्दसुन्दराभिनयोज्ज्वलाम्"॥

महाकवियों के मुखचन्द्रस्वरूप लास्यभवन में नर्तन करने वाली, सुभाषित विलासरूप सुन्दर अभिनय से प्रकाशमान वाग्देवता को मैं (आचार्य कुन्तक) प्रणाम करता हूँ।

(1) काव्यप्रयोजन-

"धर्मादिसाधनोपायः सुकुमारक्रमोदितः।
काव्यबन्धोऽभिजातानां हृदयाह्लादकारकः" ॥

सुकुमार परम्परा से कहा गया काव्यबन्ध धर्म आदि (अर्थ, काम एवं मोक्ष) की सिद्धि का साधन, तथा अभिजात लोगों के हृदयों में आनन्द की सृष्टि करता है।

(2) काव्य प्रयोजन-

"व्यवहारपरिस्पन्दसौन्दर्यं व्यवहारिभिः।
सत्काव्याधिगमादेव नूतनौचित्यमाप्यते"।

व्यवहार करने में प्रवृत्त लोग सत्काव्य के अधिगम (अवबोध) से नूतन औचित्य समन्वित (लोकादि) व्यवहार प्रयोग सौन्दर्य की प्राप्ति करते हैं।

(3) काव्य प्रयोजन-

"चतुर्वर्गफलास्वादमप्यतिक्रम्य तद्विदां।
काव्यामृतरसेनान्तश्चमत्कारो वितन्यते" ॥

काव्यविदों के चित्त में काव्यरूपी अमृत रस के द्वारा, चतुर्वर्ग (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) से जायमान आनन्द को भी अतिक्रान्त कर (उससे भी अधिक) चमत्कार फ़ैलाया जाता है।

(4) काव्य प्रयोजन-

"कटुकौषधवच्छास्त्रमविद्याव्याधिनाशनम्।
आह्लाद्यमृतवत्काव्यमविवेकगदापहम्" ॥

'कड़वी दवा के समान शास्त्र अविद्या (अज्ञान) रूप व्याधि का नाश करता है जबकि काव्य आनन्दप्रद अमृत की भाँति अज्ञान, रोग का विनाशक होता है। (अज्ञान-विनाश मे दोनो ही समर्थ है किन्तु जैसे औषधि रोग का नाश तो करती है, किन्तु कड़वी होती है, कठिनाई से गले उतरती है, शास्त्र भी कठोर होने से कठिनाई से गले उतरता है किन्तु सुकुमार काव्य सरस होने से आसानी से ग्राह्य होता है और सरलतापूर्वक अज्ञान का विनाश करने मे सक्षम होता है। अतः शास्त्रापेक्षया काव्य अधिक महनीय है।) यह श्लोक वामन के 'काव्यालंकार सूत्रवृत्ति' की सूत्र 1/1/1
की टीका मे गोपेन्द्रभूपाल ने भी उदाहृत किया है)' ॥

1. काव्यलक्षण-

"अलङ्कृतिरलङ्कार्यमपोद्धृत्य विवेच्यते
तदुपायतया तत्त्वं सालङ्कारस्य काव्यता"॥

उस (काव्य) का उपाय (साधन) होने के कारण पृथक्-पृथक् कर अलंकार और अलंकार्य का विवेचन किया जाता है। वस्तुतः अलंकार से युक्त (अलंकार्य शब्द अर्थ) की ही काव्यता होती है।

2. काव्यलक्षण-

"शब्दार्थौ सहितौ वक्रकविव्यापारशालिनि।
बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लादकारिणि"॥

काव्यविद में आह्लाद पैदा करने वाले, तथा वक्रकविव्यापार से सुशोभित रचना में व्यवस्थित सहित (सम्मिलित) 'शब्दार्थ' काव्य (कहे जाते हैं)।

शब्द और अर्थ का स्वरूप-

"वाच्योऽर्थो वाचकः शब्दः प्रसिद्धमिति यद्यपि।
तथापि काव्यमार्गेऽस्मिन् परमार्थोऽयमेतयोः।
शब्दो विवक्षितार्थैकवाचकोऽन्येषु सत्स्वपि
अर्थः सहृदयाह्लादकारि स्वस्पन्दसुन्दर"॥

यद्यपि यह प्रसिद्ध है कि अर्थ वाच्य एवं शब्द वाचक कहा जाता है। तथापि इस वर्ण्यमान काव्यमार्ग में इन दोनों का वास्तविक अर्थ है- 'अन्य शब्दों के रहते भी विवक्षित अर्थ का एकमात्र वाचक शब्द ही वाचक (वास्तविक) शब्द कहा जाता है। और सहृदय व हृदय को आह्लादित करने वाला तथा अपनी स्वाभाविकता से सुन्दर अर्थ ही वास्तविक अर्थ कहलाता है'।

वक्रोक्ति-

"उभावेतावलङ्कार्यो तयोः पुनलङ्कृतिः।
वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यभङ्गीभणितिरुच्यते"।।

ये दोनों शब्द और अर्थ अलङ्कार्य हैं और वैदग्ध्यपूर्ण विच्छित्तिमय अभिधान स्वरूप वक्रोक्ति ही उन दोनों का अलंकरण है ।

कुन्तक वक्रता के छः भेद मानते हैं।

वर्णविन्यासवक्रत्वं पदपूर्वार्द्धवक्रता

वक्रताया: परोऽप्यस्ति प्रकार: प्रत्ययाश्रय:।

(1) वर्णविन्यासवक्रता (2) पदपूर्वार्द्धवक्रता

(3) प्रत्ययाश्रितवक्रता (4) वाक्यवक्रता

(5) प्रकरणवक्रता (6) प्रवन्धवक्रता

(1) वर्णविन्यासवक्रता -

अकारादि वर्णो का विशेष प्रकार से निबन्धन वर्णविन्यास कहा जाता है।

उदाहरण- "प्रथम मरुणच्छायस्तावत्ततः कनकप्रभ....."।(चन्द्रोदय वर्णन)

(2) पदपूर्वाद्धवक्रता -

पद तिङन्त अथवा सुवन्त पद का जो पूर्वार्द्ध, प्रातिपदिक या धातुरूप (प्रकृति) उसकी वक्रता, वक्रभाव अर्थात् विन्यासवैचित्र्य ही पदपूर्वाद्धवक्रता है । यह सुवन्त, तिङन्त द्वारा अनेक प्रकार की होती है। **पदपूर्वाद्धवक्रता के भेद-** रूढ़ि, पर्याय, उपचार, विशेषण, संवृति, वृत्ति, लिङ्ग, किया, प्रभृति।

उदाहरण-

(1) रूढ़ि- "रामोऽस्मि सर्वं सहे" ।

(2) पर्याय- "वामं कज्जलवद्.........." ।

(3) उपचार- "हस्तापचेयं यशः....." ।

(3) प्रत्ययाश्रितवक्रता -

प्रत्यय अर्थात् सुप् और तिङ् जिसके आश्रय हैं, वह उस प्रकार से कहा गया ही प्रत्ययाश्रितवक्रता है।

उदाहरण- "मैथिली तत्स्य द्वारा" ।

प्रत्ययाश्रितवक्रता के भेद -

1. कालवैचित्र्यवक्रता 2. कारकवैचित्र्यवक्रता

3. संख्यावैचित्र्यवक्रता 4. पुरुषवक्रता

5. उपग्रहवक्रता 6. प्रत्ययविहितप्रत्यय

(4) वाक्यवक्रता -

"वाक्यस्य वक्रभावोऽन्यो भिद्यते यः सहस्रधा

यत्रलङ्कारवर्गोऽसौ सर्वोऽप्यन्तर्भविष्यति" ।

वाक्य का वक्रभाव (पदवक्रता से) अन्य ही है जो हजारों प्रकार के भेद को प्राप्त होता है । जिसमें प्रसिद्ध यह समस्त (उपमादि) अलङ्कार समूह अन्तर्भूत हो जाएगा ।

उदाहरण- "उपस्थितां पूर्वमपास्य लक्ष्मी.....।

(5) प्रकरणवक्रता -

उदाहरण- (1) रामायणे मारीचमायामयमाणिक्य....।

(2) प्रयुज्य सामाचरितं विलोभनं भयं विभेदाय धियः प्रदर्शितम्।

(6) प्रबन्ध -

''वाच्यवाचकसौभाग्यलावण्यपरिपोषकः"।।

उदाहरण- "रामादिवत् वर्तितव्यं न रावणादिवत्" ।

कुन्तक द्वारा साहित्यलक्षण-

''साहित्यमनयोः शोभा शालितां प्रति काप्यसौ।

अन्यूनानतिरिक्तत्व मनोहारिण्यवस्थितिः"।।

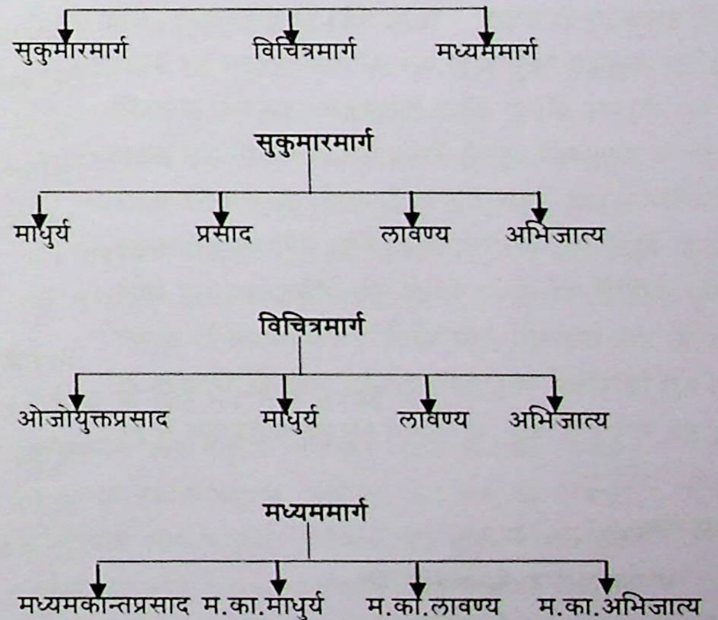
शोभाशालिता के लिए इन दोनों (शब्द और अर्थ) की कमी या अधिकताविहीन मनोहारिणी कुछ अपूर्व ही अवस्थिति 'साहित्य' कही जाती है ।

कुन्तक द्वारा अलङ्कार प्रशंसा-

"लोकोत्तरचमत्कारकारिवैचित्र्यसिद्धये।

काव्यस्यायमलङ्कार: कोऽप्यपूर्वो विधीयते"।।

(ग) काव्य के मार्ग और उसके गुण



॥नाट्यशास्त्र॥

इस ग्रन्थ में प्रत्यभिज्ञा दर्शन की छाप है। प्रत्यभिज्ञा दर्शन में स्वीकृत 36 मूल तत्वों के प्रतीक स्वरूप नाट्यशास्त्र में 36 अध्याय हैं। पहले अध्याय में नाट्योत्पत्ति, दूसरे में मण्डपविधान देने के पश्चात् अगले तीन

अध्यायों में नाट्यारम्भ से पूर्व की प्रक्रिया का विधान वर्णित है। छठे और सातवें अध्याय में रसों और भावों का व्याख्यान है, जो भारतीय काव्यशास्त्र में व्याप्त रससिद्धान्त की आधारशिला है। आठवें और नवें अध्याय में उपांग एवं अंगों द्वारा प्रकल्पित अभिनय के स्वरूप की व्याख्या कर अगले चार अध्यायों में गति और करणों का उपन्यास किया है। अगले चार अध्यायों में छन्द और अलंकारों का स्वरूप तथा स्वरविधान बतालाया है। नाट्य के भेद तथा कलेवर का सांगोपांग विवरण 18वें और 19वें अध्याय में देकर 20वें में वृत्ति विवेचन किया है। तत्पश्चात् 29वें अध्याय में विविध प्रकार के अभिनयों की विशेषताएँ दी गई हैं। 29 से 34 अध्याय तक गीत वाद्य का विवरण देकर 35वें अध्याय में भूमिविकल्प की व्याख्या की है। अंतिम अध्याय उपसंहारात्मक है।

यह ग्रंथ मुख्यत: दो पाठान्तरों में उपलब्ध है 1. **औत्तरीय पाठ और 2. दाक्षिणात्य।** पाण्डुलिपियों में एक और 37वाँ अध्याय भी क्वचित् उपलब्ध होता है जिसका समावेश निर्णयसागरी संस्करण में संपादक ने किया है। इसके अतिरिक्त मूल मात्र ग्रंथ का प्रकाशन चौखंबा संस्कृत सीरीज, वाराणसी से भी हुआ है जिसका पाठ निर्णयसागरी पाठ से भिन्न है। अभिनव भारती टीका सहित नाट्यशास्त्र का संस्करण गायकवाड सीरीज़ के अंतर्गत बड़ौदा से प्रकाशित है। वस्तुतः यह ग्रन्थ नाट्यसंविधान तथा रससिद्धान्त की मौलिक संहिता है। इसकी मान्यता इतनी अधिक है कि इसके वाक्य 'भरतसूत्र' कहे जाते हैं। सदियों से इसे आर्ष सम्मान प्राप्त है। इस ग्रंथ में मूलतः 12,000 पद्य तथा कुछ गद्यांश भी था, इसी कारण इसे **'द्वादशसाहस्री संहिता'** कहा जाता है। परन्तु कालक्रमानुसार इसका संक्षिप्त संस्करण प्रचलित हो चला जिसका आयाम छह हजार पद्यों का रहा और यह संक्षिप्त संहिता **'षटसाहस्री'** कहलाई। भरतमुनि उभय संहिता के प्रणेता माने जाते हैं और प्राचीन टीकाकारों द्वारा उनका 'द्वादश साहस्रीकार' तथा 'षड्वाहस्रीकार' की उपाधि से परामर्श यत्र तत्र किया गया है। जिस तरह आज उपलब्ध चाणक्य नीति का आधार वृद्ध चाणक्य और स्मृतियों का आधार क्रमशः वृद्ध वसिष्ठ, वृद्ध मनु आदि माना जाता है, उसी तरह वृद्ध भरत का भी उल्लेख मिलता है। इसका यह तात्पर्य नहीं कि वसिष्ठ, मनु, चाणक्य, भरत आदि दो दो व्यक्ति हो गए, परन्तु इस सन्दर्भ में 'वृद्ध' का तात्पर्य परिपूर्ण संहिताकार से है।

अध्याय का नाम-

1. नाट्य	2. नाट्यमण्डप
3. रङ्गपूजा	4. ताण्डव
5. पूर्वरङ्ग	6. रस
7. भाव	8. उपाङ्ग
9. अङ्ग	10. चारीविधान
11. मण्डलविधान	12. गतिप्रचार
13. करयुक्तिधर्मीव्यञ्जक	14. छन्दोविधान
15. छन्दोविचितिः	16. काव्यलक्षण
17. काकुस्वरव्यञ्जन	18. दशरूपनिरूपण
19. सन्धिनिरूपण	20. वृत्तिविकल्पन
21. आहार्याभिनय	22. सामान्याभिनय
23. नेपथ्य	24. पुंस्त्र्युपचार
25. चित्राभिनय	26. विकृतिविकल्प
27. सिद्धिव्यञ्जक	28. जातिविकल्प
29. ततातोद्यविधान	30. सुषिरातोद्यलक्षण
31. ताल	32. गुणदोषविचार
33. प्रकृति	34. भूमिकाविकल्प
35. नाट्यशाप	36. गुह्यतत्त्वकथन

नाट्यशास्त्र= धातु - नट अवस्पंदने, प्रत्यय- ण्यत्

॥प्रथम अध्याय॥

॥मङ्गलाचरण॥ (नमस्कारात्मक)

"प्रणम्य शिरसा देवौ पितामहमहेश्वरौ।
नाट्यशास्त्रं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम्-"।।

पितामह (ब्रह्मा) एवं महेश्वर को सिर झुकाकर प्रणाम करके मैं उस नाट्यशास्त्र का वर्णन करूँगा जिसे ब्रह्मा ने बतलाया था ।

स्तुति- ब्रह्म, शिव ।

मुनियों के द्वारा किये गए 5 प्रश्न -

1. कथमुत्पन्नः
2. कस्य कृते
3. कत्यङ्गः
4. किं प्रमाणम्
5. अस्यकीदृशः प्रयोजनम्।

रङ्गमञ्च में देवपूजन होता है - **यज्ञ तुल्य।**

"भावाश्चैव कथं प्रोक्ता: किं वा ते भावयन्त्यपि।
संग्रहं कारिकाश्चैव निरुक्तं चैव तत्त्वतः"।।

भावाश्चैव से चार प्रश्न -

1. कथं प्रोक्ता
2. किं वा ते भावयन्ति, (शब्दतः अभिहित)
3. किं भवन्तीति भावाः
4. भावयन्तीति भावाः। (अर्थाक्षिप्त)

ब्रह्मा ने अभिनय स्वीकार किया है -**यजुर्वेद** से।

"दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्
विश्रामजननं लोके नाट्यमेतद्भविष्यति"।।

॥द्वितीयोऽध्यायः॥

कवि	-	ब्रह्मा,
प्रयोजयिता	-	महेन्द्र,

नाट्याचार्य	-	भरत,
अभिनेता	-	कोहल,
सुकुमारोपस्करण	-	अप्सराएं,
वाद्यविद्	-	स्वाति,
गीतकार	-	नारद,
मण्डप रचयिता	-	विश्वकर्मा,
प्रयोगकाल	-	इन्द्रोत्सव सदृश,
सामाजिक	-	प्रशान्त रागद्वेषादिक मुनिगण।
नाट्यमण्डप का रक्षक	-	चन्द्र।

नाट्यशास्त्र का अंग्रेजी अनुवाद **"डॉ- मनमोहन"** घोष के द्वारा - 'रायल एशियाटिक सोसाइटी' बंगाल से प्रकाशित है ।

देवता तथा मनुष्यों की सृष्टि प्रकार-

"दिव्यानां मानसी सृष्टिर्गृहेषूपवनेषु च।
यथा भावाभिनिर्वर्त्याः सर्वे भावास्तु मानुषा।।
नराणां यत्नतः कार्या लक्षणाभिहिता क्रिया"।।

देवताओं के घरों और उपवनों की सजावट -**मानसिक,**
मनुष्यों के गृहादि की वस्तुएं -**भौतिक।**

नाट्यगृह-

**"इह प्रेक्षागृहं दृष्ट्वा धीमता विश्वकर्मणा
त्रिविधः सन्निवेशश्च शास्त्रतः परिकल्पितः
विकृष्टश्चतुरस्रश्च त्र्यस्रश्चैव तु मण्डपः"।।**

वास्तुशास्त्र के अनुसार नाट्यगृह की रचना- 3 प्रकार से-

1. आयताकार (विकृष्ट)
2. वर्गाकार (चतुरस्र)
3. त्रिभुजाकार (त्र्यस्र)

इनके माप के भी तीन प्रकार हैं- (1) ज्येष्ठ (2) मध्यम् (3) अवर।

**"तेषां त्रीणि प्रमाणानि ज्येष्ठं मध्यं तथाऽवरम्
प्रमाणमेषां निर्दिष्टं हस्तदण्डसमाश्रयम्"।।**

ज्येष्ठ मण्डप -108 हाथ
मध्यम मण्डप -64 हाथ
कनिष्ठ मण्डप -32 हाथ

नाट्यमण्डप- नाट्यगृह, नाट्यवेश्म, प्रेक्षागृह से पर्याय हैं यह शब्द पूरे भवन के लिए प्रयुक्त हुआ है।

नेपथ्यगृह- रङ्गपीठ के पिछले हिस्से में होता है, इसमें अभिनेता अपनी सजावट करते हैं, यह चारों तरफ से घिरा रहता है।

रङ्गपीठ- स्टेज, रङ्गमञ्च । रङ्गपीठ (8) हाथ के नाप का होना चाहिए।

मत्तवारणी- रङ्गपीठ के दोनों ओर बरामदे के आकार के बने भाग,

मण्डप- जिसमें प्रेक्षक बेठते हैं।

**"देवानां तु भवेज्ज्येष्ठं नृपाणां मध्यमं भवेत्
शेषाणां प्रकृतीनां तु कनीयः संविधीयते"।।**

देवताओं का प्रेक्षागृह -**ज्येष्ठ संज्ञक**
राजाओं का प्रेक्षागृह -**मध्यम संज्ञक**
प्रजाजन का प्रेक्षागृह -**कनीय संज्ञक**
सभी प्रेक्षागृहों में मध्यम संज्ञक प्रेक्षागृह श्रेष्ठ कहा गया है।

- **नाट्यमण्डप 2 भेद-**
  1. आकार 2. माप
- आकार की दृष्टि से नाट्यगृह तीन प्रकार। -
  (1) विकृष्ट (आयताकार)
  (2) चतुरस्र (वर्गाकृति)
  (3) त्र्यस्र (त्रिकोण),
- माप की दृष्टि से नाट्यगृह- **तीन प्रकार।**
  (1) ज्येष्ठ (2) मध्य (3) कनीय।
- नाट्य मण्डप (9) भेद। इन मण्डपों की माप भी दो तरह से बताई है-
  (1) हस्तात्मक (2) दण्डात्मक।
- इस प्रकार नाट्य मण्डप के कुल भेद- (18) होते हैं, इनमें छः भेद- **विकृष्ट,** छः **चतुरस्र** तथा छः **त्र्यस्र** नाट्य मण्डपों के हैं।

विकृष्ट के (6) भेद तथा उनकी नाप-

(1) हस्तप्रमाण ज्येष्ठ विकृष्ट आयताकार -108 हाथ लम्बाई।
(2) हस्तप्रमाण मध्यम विकृष्ट आयताकार -64 हाथ लम्बाई।
(3) हस्तप्रमाण अवर विकृष्ट आयताकार -32 हाथ लम्बाई।
(4) दण्डप्रमाण ज्येष्ठ विकृष्ट आयताकार -432 हाथ लम्बाई।
(5) दण्डप्रमाण मध्यम विकृष्ट आयताकार -256 हाथ लम्बाई।
(6) दण्डप्रमाण अवर विकृष्ट आयताकार -108 हाथ लम्बाई।

चतुरस्र के (6) भेद तथा उनकी नाप-

हस्तप्रमाण ज्येष्ठ चतुरस्र वर्गाकार -108 हाथ की लम्बाई।
हस्तप्रमाण मध्यम चतुरस्र वर्गाकार -64 हाथ की लम्बाई।
हस्तप्रमाण अवर चतुरस्र वर्गाकार -32 हाथ की लम्बाई।
दण्डप्रमाण ज्येष्ठ चतुरस्र वर्गाकार -432 हाथ की लम्बाई।
दण्डप्रमाण मध्यम चतुरस्र वर्गाकार -256 हाथ की लम्बाई।
दण्डप्रमाण अवर चतुरस्र वर्गाकार -128 हाथ की लम्बाई।

त्र्यस्र के (6) भेद तथा उनकी नाप-

हस्तप्रमाण ज्येष्ठ त्र्यस्र- त्रिभुजाकार 108 हाथ की भुजाओं का
हस्तप्रमाण मध्यम त्र्यस्र त्रिभुजाकार -64 हाथ की भुजाओं का
हस्तप्रमाण अवर त्र्यस्र त्रिभुजाकार -32 हाथ की भुजाओं का

दण्डप्रमाण ज्येष्ठ त्र्यस्र त्रिभुजाकार -432 हाथ की भुजाओं का

दण्डप्रमाण मध्यम त्र्यस्र- त्रिभुजाकार 256 हाथ की भुजाओं का

दण्डप्रमाण अवर त्र्यस्र त्रिभुजाकार -128 हाथ की भुजाओं का

मापों का क्रम/मापक क्रम-(8)

"अणू रजश्च वालश्च लिक्षा यूका यवस्तथा।
अङ्गुलं च तथा हस्तो दण्डश्चैव प्रकीर्तितः ॥
अणवोऽष्टौ रजः प्रोक्तं तान्यष्टौ बाल उच्यते।
बालास्त्वष्टौ भवेल्लिक्षा यूका लिक्षाष्टकं भवेत्॥
यूकास्त्वष्टौ यवो ज्ञेयो यवास्त्वष्टौ तथाङ्गुलम्।
अङ्गुलानि तथा हस्तश्चतुर्विंशतिरुच्यते॥
चतुर्हस्तो भवेद्दण्डो निर्दिष्टस्तु प्रमाणतः।
अनेनैव प्रमाणेन वक्ष्याम्येषां विनिर्णयम्"॥

8 अणु =1 रज, 8 रज =1 बाल

8 बाल =1 लीख, 8 लीख =1 जूँ

8 जूँ =1 जौ, 8 जौ =1 अंगुलि

24 अंगुलियां =1 हाथ, 4 हाथ =1 दण्ड

- मृत्युलोक के लोगों के लिए नाट्यमण्डप -
  लम्बाई =64 हाथ, **चौड़ाई**= 32 हाथ
- प्रयोक्ताओं द्वारा प्रेक्षागृहों के निर्माण के तीन प्रकार कहे गए हैं -
  (1) विकृष्ट (ज्येष्ठ माप वाला)
  (2) चतुरस्र (मध्यम माप वाला)
  (3) त्र्यस्र(कनीय माप वाला)

नाट्यमण्डप के लिये उपयुक्त भूमि-

"समा स्थिरा तु कठिना कृष्णा गौरी च या भवेत्
भूमिस्तत्रैव कर्त्तव्यः कर्तृभिर्नाट्यमण्डपः"।।

मिट्टी- काली या पीली।

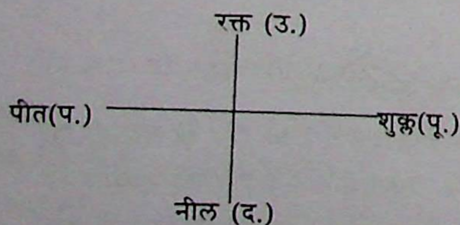
नक्षत्र- **त्रीण्युत्तराणि सौम्यं च विशाखापि च रेवती**
हस्ततिष्यानुराधाश्च प्रशस्ता नाट्यकर्मणि।।

उत्तराषाढ़ा, उत्तरा फाल्गुनी, उत्तरा भाद्रपद, मृगशिरा, विशाखा, रेवती, हस्त,पुष्य और अनुराधा।

बलि-

पूर्व- शुक्ल अन्न, **पश्चिम-** पीले अन्न,

उत्तर- लाल अन्न, **दक्षिण-** नीला अन्न।



मण्डप स्तम्भ -

(1) **ब्राह्मण स्तम्भ** - श्वेतवर्ण विधि, चन्दन की लकड़ी,

(2) **क्षत्रिय स्तम्भ** -रक्तवर्ण, खदिर की लकड़ी,

(3) **वैश्य स्तम्भ** -पीतवर्ण, धाय की लकड़ी, वायव्य कोण,

(4) **शूद्र स्तम्भ** -नीलवर्ण, कोई भी लकड़ी, ईशान कोण।

॥षष्ठ अध्याय॥

नाट्य के विवेच्य विषय-

"रसा भावा ह्यभिनया धर्मीवृत्तिप्रवृत्तयः
सिद्धिः स्वरास्तथातोद्यं गानं रङ्गश्चसंग्रहः"।।

(13 भेद)

रस- श्रृंगारादि 8 रस + शान्त नवम

भाव- रत्यादि 8 स्थायी भाव

अभिनय- 4 प्रकार, आङ्गिक, वाचिक, सात्विक, आहार्य

धर्मी- 2 प्रकार (1) लोकधर्मी (2) नाट्यधर्मी।

वृत्ति- ''विलासविन्यासक्रमो वृत्तिः"।(4) सात्वती, भारती, आरभटी, कैशिकी।

प्रवृत्ति- "पृथिव्यां नानादेशः वेशभाषाचारवार्तापधख्याति प्रवृत्ति:"।

सिद्धि - 2 प्रकार (1) दैविकी, (2) मानवी

स्वर- 7 स्वर षड्जादि।

आतोद्य- ''तत्, अवनद्ध, घन एवं सुषिर"।

गान- पांच प्रकार के गीतों का प्रवेश गान। निष्कामगान, प्रसाद, गान, अदोष, गान, अन्तरगान।

रङ्ग- आयताकार, वर्गाकार तथा त्रिभुजाकार, तीन प्रकार के प्रेक्षागृह को रङ्ग कहते है, नाट्य में बनाए जाने वाले वाद्य।

सङ्ग्रह - "विस्तरेणोपदिष्टानामर्थानां सूत्रभाष्ययोः ।
निबन्धो यो समासेन सङ्ग्रहं तं विदुर्बुधाः" ॥

शास्त्र के तीन अङ्ग-

(1) सङ्ग्रह (उद्देश्य) (2) कारिका (लक्षण) (3) निरुक्त (परीक्षा)

कारिका -

"अल्पाभिधानेनार्थो यः समासेनोच्यते बुधैः ।
सूत्रतः सा तु विज्ञेया कारिकार्थप्रदर्शिनी" ॥

निरुक्त लक्षण -

"नानानामाश्रयोत्पन्नं निघण्टुनिगमान्वितम् ।
धात्वर्थहेतुसंयुक्तं नानासिद्धान्तसाधितम् ॥
स्थापितोऽर्थो भवेद्यत्र समासेनार्थसूचकः ।
धात्वर्थवचनेनेह निरुक्तं तत्प्रचक्षते" ॥

मुख्य क्रिया के सम्पादक कारकों से समन्वित भाषा के उत्सर्गापवाद रूप नियमों से साधित अर्थ की संक्षेप में सूचना देने वाला तत्त्व ही निरुक्त कहलाता है।

(1) रस-

श्रृङ्गारहास्यकरुण रौद्रवीर भयानकाः
बीभत्साद्भुतसंज्ञौ चेत्यष्टौ नाट्य रसा स्मृताः।।

नवम शान्त-पर्यन्ते कर्त्तव्यो नित्यं ह्यद्भुतः।

निवृत्तिधर्मात्मकरस शान्त है। जिसका फल मोक्ष है, जहां रसचर्वणा विशुद्ध रूप से अपनी आत्मा का ही बोध है। ब्रह्मा (महापुरुष) ने आठ रसों का प्रतिपादन किया है। ब्रह्मा के विशेषण- **'द्रुहिण'** , महात्मा। नाट्य का साध्य - **त्रिवर्ग-** धर्म, अर्थ, काम।

(2) भाव-

(1) स्थायी (2) संचारी (3) सात्विक

स्थायी भावलक्षण-

यथा नराणां नृपतिः शिष्याणां च तथा गुरुः
एवं हि सर्वभावानां स्थायीभावः महानिह।।

स्थायी भाव- 8,

श्रृङ्गार हि मन्मथोद्भेदस्तदागमनहेतुकः
पुरुष प्रमदाभूमिः श्रृङ्गार इति गीयते।।

श्रृंगार- कामोद्रेक

व्यभिचारी भाव-

वि + अभि + चर् + णिनि =**व्यभिचारी ।**

"विशेषेण आभिमुखेन स्थायिनं प्रति चरतीति व्यभिचारी"। (साहित्यकौमुदी)

व्यभिचारी भाव- (33)

निर्वेदग्लानिशङ्काख्यास्तथासूया मदः श्रमः ।
आलस्यं चैव दैन्यं च चिन्तामोहः स्मृतिर्धृतिः ॥
व्रीडा चपलता हर्ष आवेगो जडता तथा ।
गर्वो विषाद औत्सुक्यं निद्रापस्मार एव च ॥
सुप्तं विवोधोऽमर्षश्चाप्यवहित्थमथोग्रता ।
मतिर्व्याधिस्तथोन्मादस्तथा मरणमेव च ॥
त्रासश्चैव वितर्कश्च विज्ञेया व्यभिचारिणः ।
त्रयस्त्रिंशदमी भावाः समाख्यातास्तु नामतः ॥

मरण -

"मरणं सुप्रसिद्धत्वादनर्थत्वाच्च नोच्यते"।

मरण के दो प्रकार -(1) व्याधि से उत्पन्न (2) अभिघातजन्य।

सात्विक भाव- (8)

"स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमाञ्चः स्वरभेदोऽथ वेपथुः ।
वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्विकाः स्मृताः" ॥

सात्विक भाव-

(1) स्तम्भ- हर्षभयशोकविस्मयविषादरोषादिसम्भवः स्तम्भ।

(2) स्वेद- क्रोधभयहर्षलज्जादुःखश्रमरोगातपघातेभ्यः।
व्यायामक्लमधर्मैः स्वेदः सम्पीडनाच्चैव॥

(3) रोमाञ्च- स्पर्शभयशीतहर्षात्क्रोधाद्रोगाच्च रोमाञ्चम्।

(4) स्वरभेद- स्वरभेदो भयहर्षक्रोधजरारौक्ष्यरोगमदजनितः।

(5) वेपथुः- रागद्वेषश्रमादिभ्यः कम्पो गात्रस्य वेपथः।
शीतभयहर्षरोषस्पर्शजरारोगजः कम्पः।

(6) वैवर्ण्य- शीतक्रोधभयश्रमरोगक्लमातपजं च वैवर्ण्यम्।

(7) अश्रु- आनन्दामर्षाभ्यां धूमाञ्जनजृम्भणाद् भयाच्छोकात्
अनिमेषप्रेक्षणतः शीताद्रोगात् भवेदश्रुः।।

(8) प्रलय- श्रममूर्च्छामदनिद्राभिघातमोहादिभिः प्रलयः।

(3) अभिनय -

अभि + णीञ् प्रापणे + अच्,

आङ्गिको वाचिकश्चैव ह्याहार्यः सात्विकस्तथा ।
चत्वारोऽभिनया ह्येते विज्ञेया नाट्यसंश्रयाः ॥

आङ्गिक के अंग - (6), आङ्गिक के उपाङ्ग- (6)

अभिनय के 4 प्रकार- **आङ्गिक, वाचिक, आहार्य, सात्विक।**

(4) धर्मी -

2 प्रकार – **'लोकधर्मी नाट्यधर्मी धर्मीति द्विविधः स्मृतः'।**

(5) वृत्ति -

वृत्+क्तिन् (जिसके द्वारा जीवन के व्यवहार का प्रवर्तन किया जाए)

'तस्माद् व्यापारः पुमर्थसाधको वृत्तिः'। (भरत)

"वृत्तिर्नाम वाङ्मनः कायजा चेष्टा पुमर्थोपयोगिनीति सामान्यलक्षणम्"।

चार वृत्ति -

ऋग्वेदाद् भारतीवृत्तिर्यजुर्वेदात्तु सात्त्वती।
कैशिकी सामवेदाच्च शेषा चाथर्वणात्तदा।।

(1) भारती (ऋग्वेद)
(2) सात्वती (यजुर्वेद)
(3) कैशिकी (सामवेद)
(4) आरभटी। (अथर्ववेद)

नाट्यशास्त्र में इन वृत्तियों को **"रसभावाभिनयगाः"** कहा गया है।

वृत्ति	सम्बन्ध	व्यापार	रस	
भारती	वाचिक अभिनय	वचोव्यापार	करुण, अद्भुत	स्त्रियां वर्जित
सात्वती	सात्विक अभिनय	मनोव्यापार	वीर, रौद्र, अद्भुत	सत्व प्रधान
कैशिकी	आहार्य अभिनय	शरीरव्यापार	शृंगार, हास्य	स्त्री प्रधान
आरभटी	आङ्गिक अभिनय	शरीरव्यापार	भयानक, वीभत्स, रौद्र,	उत्साहशील माया,इन्द्रजाल, युद्ध,

(6) प्रवृत्ति -

प्रवृत्ति चार प्रकार-

1. आवन्ती, 2. दक्षिणात्या 3. पाञ्चाली 4. अर्धमागधी

(7) सिद्धि-

दैविकी मानुषी चैव सिद्धिः स्याद् द्विविधैव तु।

सिद्धि के दो प्रकार- 1. दैविकी, 2. मानुषी

(8) स्वर -

स्वर दो प्रकार-

1. मुखोच्चारित 2. वीणा आदि वाद्य

इनकी संख्या सात हैं-**षड्ज, ऋषभ, गान्धार,मध्यम,पञ्चम, धैवत,** निषाद।

हास्य, श्रृंगार रस- षड्ज, मध्यम, पञ्चम।

करुण- गान्धार निषाद।

भयानक, वीभत्स- धैवत

(9) आतोद्य -

तत तन्त्रगतं ज्ञेयमवनद्धं तु पौष्करम्।
घनस्तु तालो विज्ञेयः सुषिरो वंश एव च।।

(1) तत (तन्त्र) (2) अवनद्ध (पौष्कर) (3) घन (ताल) (4) सुषिर (वंश)

(10) गान-

गान के 5 प्रकार-

1. प्रवेश 2. आक्षेप 3. निष्क्राम 4. प्रासादिक 5. आन्तर

(11) रङ्ग-

'चतुरस्रो विकृष्टश्च रङ्गस्त्र्यश्च कीर्तितः' ॥

1. विकृष्ट (आयताकार)
2. चतुरस्र (वर्गाकृति)
3. त्र्यस्र (त्रिकोण),

(12) संग्रहः-

'एवमेषोऽल्पसूत्रार्थो निर्दिष्टो नाट्यसङ्ग्रहः' ।

संग्रह के दो प्रकार -

1. उद्देश्य 2. विभाग

रस निष्पत्ति- तत्र रसानेव तावदादावभिव्याख्यास्यामः ।
न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते ।
तत्र विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः ।
यथा बीजाद्भवेद्वृक्षो वृक्षात्पुष्पं फलं यथा ।
तथा मूलं रसाः सर्वे तेभ्यो भावा व्यवस्थिताः ॥

आठ रसों की उत्पत्ति के हेतु चार ही रस हैं-

श्रृङ्गार → हास्य
रौद्र → करुण
वीर → अद्भुत
वीभत्स → भयानक

श्रृङ्गार - (1) संयोग (2) विप्रलम्भ

करुण- (1) रति निरपेक्ष (2) रति सापेक्ष

हास्य- (1) स्मित (2) हसित (3) विहसित (4) उपहसित (5) अपहसित (6) अतिहसित।

"स्मितहसिते ज्येष्ठानां मध्यानां विहसितोपहसिते च।
अधमानापमहसितं चापि विज्ञेयम्" ।।

ज्येष्ठ- स्मित, हसित,

मध्यम- विहसित, उपहसित,

अधम- अपहासित, अतिहसित,

रस-

1. श्रृङ्गार- "तत्र श्रृङ्गारो नाम रतिस्थायिभावप्रभवः । उज्ज्वलवेषात्मकः यत्किञ्चिल्लोके शुचि मेध्यमुज्ज्वलं दर्शनीयं वा तच्छृङ्गारेणोपमीयते" ।

(1) संयोग (2) विप्रलम्भ

2. हास्य -"अथ हास्यो नाम हासस्थायिभावात्मकः" ।

1. स्मित 2. हसित 3. विहसित 4. उपहसित 5. अपहसित 6. अतिहसित

3. करुण- "अथ करुणो नाम शोकस्थायिभावप्रभवः" ।

4. रौद्र- "अथ रौद्रो नाम क्रोधस्थायिभावात्मकोरक्षोदानवोद्धत-मनुष्यप्रकृतिः सङ्ग्रामहेतुकः" ।

5. वीर - "अथ वीरो नामोत्तमप्रकृतिरुत्साहात्मकः" ।

6. भयानक- "अथ भयानको नाम भयस्थायिभावात्मकः"।

7. बीभत्स- "अथ बीभत्सो नाम जुगुप्सास्थायिभावात्मकः"।

8. अद्भुत् - "अथाद्भुतो नाम विस्मयस्थायिभावात्मकः"।

टीकाएँ-

- **'भरततिलक'** - 'श्रीपादशिष्यकृत'
- अभिनवभारती - अभिनवगुत,

॥दशरूपकम्॥

परिचय-

दशरूपकम् नाट्य के दशरूपों के लक्षण और उनकी विशेषताओं का प्रतिपादन करनेवाला ग्रंथ है। अनुष्टुप श्लोकों द्वारा रचित दसवीं शती का यह ग्रंथ धनंजय की कृति है। रचनाकार ने भरत मुनि के नाट्यशास्त्र से बहुत से विचार लिये हैं। दशरूपकम् में कुल चार प्रकाश हैं । धनंजय कृत दशरूपक और उस पर **'धनिककृत' 'अवलोक'** नाट्यालोचन पर सर्वमान्य ग्रंथ है। कारण, दशरूपक में दिए हुए लक्षणों का उद्धरण प्रायः सभी प्राचीन व्याख्याकारों द्वारा दिए हुए सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। अवलोक के अतिरिक्त दशरूपक पर एक और प्राचीन टीका 'बाहुरूप मिश्र' द्वारा प्रणीत उपलब्ध है जो अद्यापि अमुद्रित ही है।

आज "दशरूपक" नामक ग्रंथ अनेक संस्करणों में उपलब्ध है, सर्वप्रथम इसका संस्करण कलकत्ता से **"बिब्लोथिका इंडिका"** ग्रंथमाला के अंतर्गत 'फ़िट्ज़ एडवर्ड हॉल' द्वारा संपादित ई. सन् 1865 में प्रकाशित हुआ जिसका केल प्रतिरूपमात्र 'जीवानंद विद्यासागर' द्वारा संपादित संस्करण है जो कलकत्ता से सन् 1878 ई. में प्रकाशित हुआ था। अवलोक सहित दशरूपक का एक और संस्करण 'निर्णयसागर', बंबई से प्रकाशित है जिसका पाठ अतिशुद्ध माना जाता है। गुजराती मुद्रणालय, बंबई से सन् 1914 ई. में सुदर्शनाचार्य द्वारा प्रणीत नवीन टीका, **"प्रभा"** के साथ **"सावलोक दशरूप"** का प्रकाशन हुआ। सबसे अर्वाचीन प्रकाशन चौखंभा संस्करण है जिसमें मूल ग्रंथ के साथ उसका हिंदी अनुवाद भी दिया गया है। इससे कुछ पूर्व सन् 1942 ई. में गोंडल (काठियावाड़) से दशरूपक के प्रथम प्रकाश मान का अवलोक और अंग्रेज़ी अनुवाद सहित प्रकाशन हुआ है। इन भारतीय संस्करणों के अतिरिक्त एक वैदेशिक संस्करण डॉक्टर 'जॉर्ज हाल' संपादित 'कोलंबिया विश्वविद्यालय' से सन् 1912 ई. में प्रकाशित हुआ है जिसमें 'रोमन' लिपि में केवल दशरूपक तथा उसका अंग्रेजी भावानुवाद और सूक्ष्म टिप्पणियाँ दी गई हैं। संभवतः आज उपलब्ध संस्करणों से कोई भिन्न "दशरूपक" का उपवृंहित पाठ प्राचीन व्याख्याकारों के काल में प्रचलित था; कारण, रुचिपति, जगद्धर जैसे विद्वानों द्वारा स्वनिर्मित टीकाओं में दशरूपक से उद्धृत जिन अंशों का उल्लेख किया गया है वे उपलब्ध दशरूपक के किसी भी संस्करण में नहीं पाए जाते।

धनंजयकृत "दशरूपक" की प्रतिपादन शैली सुगम एवं पुष्टार्थ है। यह ग्रंथ संक्षिप्त होते हुए भी विषय का सांगोपांग विवेचन करता है। इसमें चार प्रकाश हैं जिनमें क्रमशः वस्तु नेता (नायक/नायिका) एवं रसों का सविस्तार विवरण है। अंतिम प्रकाश में रसास्वादन की प्रक्रिया को स्फुट करते हुए धनंजय ने रसप्रतीति को व्यंजना से गम्य नहीं माना है, प्रत्युत उसे वाच्यवृत्ति का ही विषय माना है (दशरूपकम् खण्ड 4-27)। काव्य नाट्य के साथ रसादि का संबंध भावक-भाव्य का है। दशरूपकार ने अभिनेता में भी काव्यार्थ भावना से जनित रसास्वाद की संभाव्यता स्वीकृत की है। मौलिक रूप से दशरूपक की यह सैद्धांतिक विशेषता है। नाट्य तत्त्वों की परिभाषा में भी दशरूपक के लक्ष्यलक्षण भरत के अभिप्राय से अनेकत्र भिन्न है जिससे प्रतीत होता है कि धनंजय की उपजीव्य सामग्री भरत से इतर कहीं और होगी।

॥प्रथम प्रकाश॥

लेखक - **धनञ्जय** (68) कारिकाएं, पिता- **विष्णु** ।

॥मङ्गलाचरण॥ (नमस्कारात्मक)

"नमस्तस्मै गणेशाय यत्कण्ठः पुष्करायते।
मदाभोगधनध्वानो नीलकण्ठस्य ताण्डवे।।"

नीले कण्ठ वाले शिव के ताण्डव नृत्य करने पर मदजल की परिपूर्णता से गम्भीर तथा धीर ध्वनि वाला गणेश का कण्ठ मृदङ्ग के समान आचरण करता है, उन भगवान गणेश को नमस्कार है ।

स्तुति - **गणेश,** छन्द - **अनुष्टुप,**

"दशरूपकानुकारेण यस्य माद्यन्ति भावकाः।
नमः सर्वविदे तस्मै विष्णवे भरताय च"।।

जिन भगवान् विष्णु के मत्स्यकूर्मादि दशावतारों के श्रवणादि से भावुक भक्त प्रसन्न होते हैं, उन सर्वज्ञ भगवान् विष्णु को नमस्कार हो, तथा जिन महर्षि भरत के द्वारा निर्धृत दश (नाटकादि) रूपक-भेदों के अवलोकन और पर्यालोचन से सहृदय सामाजिक प्रसन्न होते हैं, उन मुनि भरत को भी नमस्कार हो।

स्तुति - **विष्णु, भरत**

दशरूपक पर **'अवलोक'** नामक वृत्ति (टीका, व्याख्या) के रचयिता धनञ्जय के ही छोटे भाई धनिक हैं।

ग्रन्थ प्रयोजन -

"कस्यचिदेव कदाचिद्दयया विषयं सरस्वती विदुषः।
घटयति कमपि तमन्यो व्रजति जनो येन वैदग्धीम्।।

किसी भी ग्रन्थ के प्रति पाठक या श्रोता को आकृष्ट करना आवश्यक है। इसीलिए उसको प्रवृत्त करने के लिए बताया जाता है कि प्रकरणादिरूप किसी विषय या ग्रन्थ को हर कोई कवि सर्वांगपूर्ण नहीं बना पाता। यह तो देवी सरस्वती की ही कृपा है कि वह किसी-किसी

विद्वान् के किसी विषय को कभी-कभी इस ढङ्ग से घटित कर देती है, कि उस विषय के पर्यालोचन से दूसरा मनुष्य ज्ञानी तथा विदग्ध हो जाता है । **"उद्धृत्योद्धृत्य सारं यमखिलनिगमान्नाट्यवेदंविरञ्चि-**

श्चक्रे यस्य प्रयोगं मुनिरपि भरतस्ताण्डवं नीलकण्ठः।

शर्वाणी लास्यमस्य प्रतिपदमपरं लक्ष्म कः कर्तुमीष्टे

नाट्यानां किन्तु किञ्चित्प्रगुणरचनया लक्षणं संक्षिपामि"।।

समस्त वेदों के जिस सार को लेकर भगवान् ब्रह्मा ने नाट्य नामक (पञ्चम) वेद की रचना की, जिस वेद से सम्बद्ध अभिनय प्रयोग को हाथ तथा पाँव के समायोग एवं अङ्गविक्षेप के द्वारा भरत मुनि ने (व्यवहारिक रूप में) पल्लवित किया, जिसमें भगवान् शिव ने 'ताण्डव' (उद्धत) नृत्य का तथा भगवती पार्वती ने 'लास्य' (कोमल) नृत्य का समावेश किया, उस

नाट्यवेद के सम्पूर्ण लक्षण को कौन कर सकता है ? यद्यपि देवताओं और महापुरुषों के द्वारा निबद्ध इस नाट्यशास्त्र की सिद्धान्तसरणि का विवेचन अस्मादृश लौकिक प्राणियों के लिए असम्भव है, फिर भी उन काव्यों के लक्षणों को लेकर कुछ कुछ संक्षेप करता हूँ ।

विषयैक्यप्रसक्तं पौनरुक्त्यं परिहरति -

नाट्यशास्त्र का ही संक्षेप रूप दशरूपक-

"व्याकीर्णे मन्दबुद्धीनां जायते मतिविभ्रमः।

तस्यार्थस्तत्पदैस्तेन संक्षिप्य क्रियतेऽञ्जसा"।।

नाट्यशास्त्र (रसशास्त्र) बड़ा विस्तृत तथा गहन है, अतः मन्दबुद्धि वालों को बुद्धिभ्रम हो जाता है, वे वास्तविक ज्ञान को प्राप्त नहीं कर पाते इसलिये इस ग्रन्थ में उसी (भरतमुनिप्रणीत) नाट्यवेद के अर्थ को लेकर उन्हीं पदों के द्वारा सीधे ढंग से संक्षिप्त कर दिया है। अतः यह ग्रन्थ कोई स्वतन्त्र अभिनव ग्रन्थ न होकर उसी का छोटा रूप है। इसलिए इसकी रचना में कोई पिष्टपेषण नहीं है ।

दशरूपकज्ञानफलम्-

"आनन्दनिस्यन्दिषु रूपकेषु व्युत्पत्तिमात्रं फलमल्पबुद्धिः।

योऽपीतिहासादिवदाह साधुस्तस्मै नमः स्वादुपराङ्मुखाय"।।

रूपक (अलौकिक) आनन्द से प्रवण रहते हैं। इनका लक्ष्य (फल) सहृदय को अलौकिक आनन्दरूप रस का आस्वाद कराना है। कोई अल्पबुद्धि विद्वान् इन रूपकों का फल केवल इतना ही मानता है कि इनसे व्युत्पत्ति होती है, ठीक वैसे ही जैसे इतिहास, पुराण आदि के पठन से लौकिक ज्ञान प्राप्त होता है। इस तरह के मत वाला विद्वान् रस के आस्वाद

से पराङ्मुख है, उसमें सहृदयता या रसिकता का सर्वथा अभाव है ऐसे विद्वान् को हमारा नमस्कार है। यहां पर **'स्वाद'** शब्द से **'पराङ्मुख'** व्यक्तियों को नमस्कार किया गया है।

नाट्य-

''अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्, रूपं दृश्यतयोच्यते"।

अवस्था के अनुकरण को ही नाट्य कहते हैं,वह दो प्रकार का होता है।

"काव्योपनिबद्धधीरोदात्ताद्यवस्थानुकारश्चतुर्विधाभिनयेनतादात्म्यापत्ति र्नाट्यम्" ।। जहाँ काव्य में निबद्ध या वर्णित धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित, धीरप्रशान्त प्रकृति के नायकों (तथा तत्प्रकृतिगत नायिकाओं तथा अन्य पात्रों) का आङ्गिक, वाचिक, आहार्य तथा सात्विक इन चार ढंग से अभिनयों के द्वारा अवस्थानुकरण किया जाता है, वह नाट्य है । **नाट्य-** रसाश्रित,

रूपक के 10 भेद-

''नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः।

व्यायोगसमवकारौ वीथ्यङ्केहामृगा इति"।।

नृत्त, नृत्य-

"अन्यद्भावाश्रयं नृत्यम् नृत्तं ताललयाश्रम्।

आद्यं पदार्थाभिनयो मार्गो देशी तथा परम्।।

भावों के आश्रित 'नृत्य' होता है तथा 'नृत्त' ताल तथा लय के आश्रित होता है । इनमें से प्रथम 'नृत्य' 'पदार्थाभिनय' रूप है अतः यह 'मार्ग' भी कहलाता है । तथा दूसरा अर्थात् 'नृत्त' को 'देशी' कहते हैं

पदार्थाभिनयात्म प्रथम- **नृत्य** = मार्ग,

द्वितीय- **नृत्त** = देशी। (शरीर संचालन)

नृत्य = 2 प्रकार, (1) मधुर नृत्य (2) उद्धृत नृत्य।

नृत्त = 2 प्रकार, (1) मधुर नृत्त (2) उद्धत नृत्त। इन भेदों का **'लास्य'** एवं **'ताण्डव'** रूप से नाटकादि में उपयोग होता है।

रूपकों को एक दूसरे से भिन्न करने वाले तत्व-

"वस्तुनेतारसस्तेषांभेदकः वस्तु च द्विधा"।

(1) वस्तु (2) नेता (3) रस

वस्तु के दो प्रकार-

''तत्राधिकारिकं मुख्यमङ्गं प्रासङ्गिकं विदुः"।

इनमें से मुख्य वस्तु आधिकारिक कथावस्तु कहलाती है तथा अङ्गरूप वस्तु प्रासङ्गिक कथावस्तु कहलाती है ।

(1) मुख्य कथावस्तु = "आधिकारिक"

"अधिकारः फलस्वाम्यमधिकारी च तत्प्रभुः

तन्निवृत्यमभिव्यापी वृत्तं स्यादाधिकारिकम्"।

फ़ल का स्वामित्व प्राप्त करना अधिकार कहलाता है तथा उस फ़ल का स्वामी अधिकारी कहलाता है, उस फ़ल भोक्ता के द्वारा फ़ल प्राति तक निर्वाहित वृत्त (या कथा) आधिकारिक कथावस्तु कहलाती है ।

(2) प्रासङ्गिक वृत्त-

''प्रासङ्गिकं परार्थस्य स्वार्थो यस्य प्रसङ्गतः।
सानुबन्धं पताकाख्यं प्रकरी च प्रदेशभाक्" ।।

जो कथा दूसरे प्रयोजन के लिए होती है किन्तु प्रसङ्ग से जिसका स्वयं का फ़ल भी सिद्ध हो जाता है वह प्रासङ्गिक वृत्त कहलाता है । जो प्रासङ्गिक कथा अनुवन्ध सहित होती है तथा रूपक में दूर तक चलती रहती है वह पताका कहलाती है । तथा जो कथा केवल एक ही देश तक सीमित रहती है वह प्रकरी कहलाती है ।

प्रासङ्गिक वृत्त के भेद- 1. पताका 2. प्रकरी

(1) पताका = (वहुत दूर तक चलने वाली -**सुग्रीवादि वृतान्त**),
पताका का नायक -**मिश्र**, ।

(2) प्रकरी = (थोड़े दूर तक चलने वाली - शबरी वृतान्त)।

पताकास्थानक लक्षण-

"प्रस्तुतागन्तुभावस्य वस्तुनोऽन्योक्तिसूचकम्।
पताका स्थानकं तुल्य संविधानविशेषणम्"॥

जहाँ प्रस्तुत भावी वस्तु की समान वृत्त या समान विशेषण के द्वारा अन्योक्तिमय सूचना हो, उसे पताकास्थानक कहते हैं ।

दो प्रकार-
(1) तुल्य इतिवृत्त (अन्योक्ति)
(2) तुल्य विशेषण (समासोक्ति)

इतिवृत्त के तीन प्रकार-

(1) आधिकारिक और प्रासङ्गिक- 'प्रख्यात प्रकार' - इतिहास से प्राप्त (राम, कृष्ण,) **दिव्य**।
(2) पताका- 'उत्पाद्य' - कवि द्वारा कल्पित (मालतीमाधव) **अदिव्य**।
(3) प्रकरी-'मिश्र' प्रख्यात उत्पाद्य के मिश्रण से निर्मित (अभिज्ञानशाकुन्तलम्) **मर्त्य** ।

इतिवृत्तफ़ल-

"कार्य त्रिवर्गस्तच्छुद्धमेकानेकानुबन्धि च"।

फ़ल (कार्य) धर्म अर्थ, काम रूप त्रिवर्ग है यह फ़ल कभी इनमें से एक ही हो सकता है कभी दो और कभी तीनों वर्गों में होता है ।

त्रिवर्ग रूप फल का साधन -

बीज- ''स्वल्पोद्दिष्टस्तु तद्धेतुर्बीजं विस्तार्यनेकधा"।
अल्पमात्रं समुद्दिष्ट बहुधा यद्विसर्पति।

रूपक के आरम्भ में अल्परूप में संकेतित वह तत्व जो रूपक के फ़ल का कारण है तथा इतिवृत्त में अनेक रूप में पल्लवित होता है वह बीज कहलाता है ।

बिन्दु- "अवान्तरार्थविच्छेदे बिन्दुरच्छेदकारणम्"।

अवान्तर कथा की समाप्ति पर्यन्त तक प्रधान कथा के साथ सम्वन्ध रखने वाला ।

अर्थप्रकृतियाँ-

''बीजबिन्दुपताकाख्यप्रकरीकार्यलक्षणाः"। (भौतिक)
(1) बीज (2) बिन्दु (3) पताका (4) प्रकरी (5) कार्य।
ये पाँचों काव्य के प्रयोजन की सिद्धि में कारण होती हैं।
अर्थप्रकृतयः= प्रयोजनसिद्धिहेतवः।

सन्धि- "अर्थप्रकृतयः पञ्च पञ्चावस्थासमन्विताः।
यथासंख्येन जायन्ते मुखाद्याः पञ्चसन्धयः"।।

सन्धिलक्षणम्- "अन्तरैकार्थसम्बन्धः सन्धिरेकान्वये सति"।।

अर्थ प्रकृतियों और कार्य की पाँचों अवस्थाओं के क्रमशः परस्पर मिलने से पाँच संधियों की रचना होती है। अर्थप्रकृति नाटकीय इतिवृत्त का 'भौतिक' विभाजन है। अवस्था पञ्चक नायक की मानसिक दशा की दृष्टि से वस्तु का 'मनोवैज्ञानिक' विभाजन है।

कार्य की पांच अवस्थाएं-

'अवस्थाः पञ्च कार्यस्य प्रारब्धस्य फलार्थिभिः।
आरम्भयत्नप्राप्त्याशानियताप्तिफलागमाः"।।

फ़ल की इच्छा वाले नायकादि के द्वारा प्रारब्ध कार्य की पाँच अवस्थाएँ होती हैं-

(1) आरम्भ (2) यत्न (3) प्राप्त्याशा
(4) नियताप्ति (5) फलागम

(1) आरम्भ - 'औत्सुक्यमात्रमारम्भः फललाभाय भूयसे'।
फल प्राप्ति के लिये हृदये में उत्सुकता ही आरम्भ है।

(2) प्रयत्न - प्रयत्नस्तु तदप्राप्तौ व्यापारोऽतित्वरान्वितः।
उस फ़ल की प्राप्ति न होने पर, उसे पाने के लिए बडी तेजी के साथ जो उपाय योजनायुक्त व्यापार या चेष्टा होती है वह प्रयत्न है।

(3) प्राप्त्याशा - उपायापायशङ्काभ्यां प्राप्त्याशा प्राप्तिसंभवः।
जहाँ उपाय अथवा विघ्न की आशंका के कारण फ़लप्राप्ति के विषय में कोई ऐकान्तिक निश्चय नहीं हो पाता।

(4) नियताप्ति - अपायाभावतः प्राप्तिर्नियताप्तिः सुनिश्चिता।
जब विघ्न के अभाव के कारण फ़ल की प्राप्ति निश्चित हो जाती है तो नियताप्ति नामक अवस्था होती है ।
(विघ्नों के अभाव से इष्टफल की प्राप्ति उदाहरण - **रत्नावली**)

(5) फलागम - समग्रफलसंपत्तिः फलयोगो यथोदितः।
समस्त फ़ल की प्राप्ति हो जाने पर फ़लागम कहलाता है ।

उपाय- फलप्राप्ति, अपाय- फलनाश (विघ्न)

चातुर्वर्णोपगमनं वर्णसंहार इष्यते ॥

सन्धि- "मुखप्रतिमुखे गर्भः सावमर्शोपसंहृतिः।"

(1) बीज + आरम्भ =मुख

(2) बिन्दु + यत्न =प्रतिमुख

(3) पताका + प्राप्त्याश =गर्भ

(4) प्रकरी + नियताप्ति =विमर्श/अवमर्श

(5) कार्य + फलागम =निर्वहण/उपसंहृति

1. मुखसन्धि -

"मुखं बीजसमुत्पत्तिर्नानार्थरससम्भवाः।

अङ्गानि द्वादशैतस्य बीजारम्भसमन्वयात्"।।

इसमें विभिन्न प्रयोजनों और रसों को उत्पन्न करने की बीजोत्पत्ति पाई जाती है ।

12 अंग -

उपक्षेपः परिकरः परिन्यासो विलोभनम् ।

युक्तिः प्राप्तिः समाधानं विधानं परिभावना ।

उद्भेदभेदकरणान्यन्वर्थान्यथ लक्षणम् ॥

लक्षण-

बीजन्यास उपक्षेपः तद्बाहुल्यं परिक्रिया ।

तन्निष्पत्तिः परिन्यासो गुणाख्यानं विलोभनम् ॥

सम्प्रधारणमर्थानां युक्तिः प्राप्तिः सुखागमः ।

बीजागमः समाधानं विधानं सुखदुःखकृत् ॥

परिभावोद्भुतावेश उद्भेदो गूढभेदनम् ।

करणं प्रकृतारम्भो भेदः प्रोत्साहना मता ॥

2. प्रतिमुख सन्धि-

"लक्ष्यालक्ष्यतयोभेदस्तस्य प्रतिमुखं भवेत्।

बिन्दुप्रयत्नानुगमादङ्गान्यस्य त्रयोदश"।।

उस बीज का दृश्य तथा अदृश्य रूप में प्रकाशन और इस लक्ष्यालक्ष्य रूप में उद्भिन्न होना प्रतिमुख संधि का विषय है ।

प्रतिमुख सन्धि -13 अंग-

विलासः परिसर्पश्च विधूतं शमनर्मणी ।

नर्मद्युतिः प्रगमनं निरोधः पर्युपासनम् ॥

वज्रं पुष्पमुपन्यासो वर्ण संहार इत्यपि ।

लक्षण-

रत्यर्थेहा विलासः स्याद् दृष्टनष्टानुसर्पणम् ।

परिसर्प विधूतं स्यादरतिस्तच्छमः शमः ॥

परिहासवत्तो नर्म धृतिस्तज्ञा द्युतिर्मता ।

उत्तरा वाक् प्रगयणं हितरोधो निरोधनम् ॥

पर्युपास्तिरनुनयः पुष्पं वाक्यं विशेषवत् ।

उपन्यासस्तु सोपायं वज्रं प्रत्यक्षनिष्ठुरम् ।

3. गर्भसन्धि-

"गर्भस्तु दृष्टनष्टस्य बीजस्यान्वेषणं मुहुः।

द्वादशाङ्गः पताका स्यान्न वा स्यात्प्राप्तिसंभवः"।।

प्रथम दिखाई दिये और पश्चात् नष्ट हुए बीज का बारंबार अन्वेषण करना। इसमें 'पताका' अर्थप्रकृति हो या न हो परन्तु 'प्रात्याशा' निश्चित रहती है।

गर्भसन्धि-12 अंग-

अभूताहरणं मार्गो रूपोदाहरणे क्रमः ।

सङ्ग्रहश्चानुमानं च तोटकाधिवले तथा ॥

उद्वेगसम्भ्रमाक्षेपा लक्षणं च प्रणीयते ।

लक्षण -

अभूताहरणं छद्म मार्गस्तत्त्वार्थकीर्तनम् ॥

रूपं वितर्कवद् वाक्यं सोत्कर्षं स्यादुदाहृतिः ।

क्रमः सञ्चिन्त्यमानाप्तिः भावज्ञानमथापरे ॥

सङ्ग्रहः सामदानोक्तिः अभ्यूहो लिङ्गतोऽनुमा ।

अधिवलमभिसन्धिः संरब्धं तोटकं वचः ॥

उद्वेगोऽरिछता भीतिः शङ्कात्रासौ च सम्भ्रमः ।

गर्भबीजसमुद्भेदादाक्षेपः परिकीर्तितः ॥

4. अवमर्श सन्धि-

"क्रोधेनावमृशेद्यत्र व्यसनाद्वा विलोभनात्।

गर्भनिर्भिन्नबीजार्थः सोऽवमर्श इति स्मृतः"।।

इसमें क्रोध, व्यसन या विलोभन से फलप्राप्ति के विषय में विचार किया जाता है। तथा गर्भसन्धि के द्वारा बीज प्रकट किया जाता है।

अवमर्श सन्धि-13 अंग-

तत्रापवादसम्फेटौ विद्रवद्रवशक्तयः ।

द्युतिः प्रसङ्गश्छलनं व्यवसायो विरोधनम् ।

प्ररोचना विचलनमादानं च त्रयोदश ॥

लक्षण -

दोषप्रख्यापवादः स्यात् सम्फेटो रोषभाषणम् ।

विद्रवो वधबन्धादिः द्रवो गुरुतिरस्कृतिः ॥

विरोधशमनं शक्तिस्तर्जनोद्वेजने द्युतिः ।

गुरुकीर्तनं प्रसङ्गश्छलनं चावमाननम् ॥

व्यवसायः स्वशक्त्युक्तिः संरब्धानां विरोधनम् ।

सिद्धामन्त्रणतो भाविदर्शिका स्यात् प्ररोचना ।

विकत्थना विचलनम् आदानं कार्यसङ्ग्रहः ॥

(5) निर्वहण सन्धि-

"बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम्।

एकार्थ्यमुपनीयन्ते यत्र निर्वहणं हि तत्"।

रूपक की कथावस्तु के बीज से युक्त मुख आदि अर्थ जो अब तक इधर-उधर बिखरे पडे हैं, जब एक अर्थ के लिए एक साथ समेटे जाते हैं, या एकत्रित किये जाते हैं, तो वह निर्वहण संधि होती है ।

निर्वहण सन्धि -14 अंग-

सन्धिर्विबोधो ग्रथनं निर्णयः परिभाषणम् ।
प्रसादानन्दसमयाः कृतिभाषोपगूहनाः ।
पूर्वभावोपसंहारौ प्रशस्तिश्च चतुर्दश ॥

लक्षण-

सन्धिर्बीजोपगमनं विबोधः कार्यमार्गणम् ।
ग्रथनं तदुपक्षेपोऽनुभूताख्या तु निर्णयः ॥
परिभाषा मिथो जल्पः प्रसादः पर्युपासनम् ।
आनन्दो वाञ्छितावाप्तिः समयो दुःखनिर्गमः ॥
कृतिर्लब्धार्थशमनं मानाद्याप्तिश्च भाषणम् ।
कार्यदृष्ट्यद्भुतप्राप्तो पूर्वभावोपगूहने ।
वराप्तिः काव्यसंहारः प्रशस्तिः शुभशंसनम् ॥

सन्धियों के सम्पूर्ण (64) भेद होते हैं।

अर्थोपक्षेपक- (इतिवृत्त के सूचक)-

"अर्थोपक्षेपकैः सूच्यं पञ्चभिः प्रतिपादयेत्।
विष्कम्भचूलिकाङ्कास्याङ्कावतारप्रवेशकैः"।।

(1) विष्कम्भक (2) चूलिका (3) अङ्कास्य (4) अङ्कावतार (5) प्रवेशक।

(1) विष्कम्भक- **"वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः।**
संक्षेपार्थस्तु विष्कम्भो मध्यपात्रप्रयोजितः"।।

विष्कम्भक नाटक (रूपक) में घटित घटनाओं या भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं (कथांशों) का वह सूचक है, जिसमें मध्यपात्रों के द्वारा संक्षेप में इन कथांशों की सूचना दी जाय ।

स द्विविधः- "एकानेककृतः शुद्धः सङ्कीर्णो नीच मध्यमैः"।।

विष्कम्भक के 2 प्रकार-

(1) एक या अनेक पात्र, शुद्ध (मध्यम पात्र) ब्राह्माणादि (संस्कृत भाषा)
(2) सङ्कीर्ण अधम पात्र (नीच पात्र) (शौरसेनी प्राकृत भाषा)

(2) प्रवेशक- "तद्वदेवानुदात्तोक्त्या नीचपात्रप्रयोजितः।
प्रवेशोङ्कद्वयस्यान्तः शेषार्थस्योपसूचकः"।।

प्रवेशक भी विष्कम्भक की तरह अतीत और भावी कथांशों का सूचक है । इसमें उक्ति प्रयुक्ति उदात्त नहीं होती, इसमें प्राकृत का प्रयोग आवश्यक है। इसकी भाषा सदा प्राकृत होती है, तथा यह प्राकृत भी **मागधी, शकारी** आदि अशिष्ट प्राकृत होती है ।

(3) चूलिका - "अन्तर्जवनिकासंस्थैश्चूलिकार्थस्य सूचना"।

जहाँ कथावस्तु की सूचना यवनिका के उस ओर अन्दर बैठे पात्रों के द्वारा दी जाय, उसे चूलिका कहते हैं ।

(4) अङ्कास्य- "अङ्कान्तपात्रैरङ्कास्यं छिन्नाङ्कस्यार्थसूचनात्"।

अङ्क समाप्ति के अवसर पर छूटे हुए अर्थ की सूचना देना ।

(5) अङ्कावतार -"अङ्कावतारस्त्वङ्कान्ते पातोऽङ्कस्याविभागतः"।।

अविच्छिन्न रूप से पूर्व अङ्क के क्रम में दूसरे अङ्क की वस्तु का अवतरण।

सन्धियों के प्रयोजन के छः प्रकार -

"इष्टस्यार्थस्य रचना गोप्यगुप्तिः प्रकाशनम्
रागः प्रयोगस्याश्चर्यं वृत्तान्तस्यानुपक्षयः"।।

नाट्य धर्म (अर्थात् नाट्य की प्रकृति अथवा अभिनय की नाट्य शास्त्रोक्त मर्यादा) की दृष्टि से कथावस्तु के तीन प्रकार-

"सर्वेषां नियतस्यैव श्राव्यमश्राव्यमेव च।।

(1) सर्वश्राव्य (2) नियतश्राव्य (3) अश्राव्य।

"सर्वश्राव्यं-प्रकाशं स्यादश्राव्यं-स्वगतं मतम्" ।।

सर्वश्राव्य – प्रकाश, **अश्राव्य** – स्वगत ।

नियतश्राव्य - 2 प्रकार, (1) जनान्तिक (2) अपवारित।

जनान्तिक- "त्रिपताकाकरेणान्यानपवार्यान्तरा कथाम्।
अन्योन्यामन्त्रणं यत्स्याञ्जनान्ते तज्जनान्तिकम्"।

जहाँ (मञ्च पर) दूसरे पात्रों के विद्यमान होते हुए भी दो पात्र आपस में इस तरह मन्त्रणा करें कि उसे दूसरों को न सुनाना अभीष्ट हो, तथा दूसरे पात्रों की ओर 'त्रिपताकाकर' के द्वारा हाथ से संकेत कर (दर्शकों को) इस बात की सूचना दी जाय कि उनका वारण किया जा रहा है, वहाँ जनान्तिक नामक नियतश्राव्य (कथनोपकथन) होता है।

अपवारित -"रहस्यं कथ्यतेऽन्यस्य परावृत्यापवारितम्।।

जहाँ मुह को दूसरी ओर कर कोई पात्र दूसरे व्यक्ति की गुप्त बात कहता है, उसे अपवारित कहते हैं ।

आकाशभाषित-

"किं ब्रवीष्येवमित्यादि विना पात्रं ब्रवीतियत्।
श्रुत्वेवानुक्तमप्येकस्तत् स्यादाकाशभाषितम्"।।

जहाँ कोई पात्र 'क्या कहते हो' इस तरह कहता हुआ दूसरे पात्र के बिना ही बातचीत करे, तथा उसके कथन के कहे बिना भी सुनकर कथनोपकथन करे, वह आकाशभाषित होता है ।

॥तृतीय प्रकाश॥

नाटक- **"प्रकृतित्वादथान्येषां भूयो रसपरिग्रहात्**
सम्पूर्णलक्षणत्वाच्च पूर्वं नाटकमुच्यते।।

यहां सर्व प्रथम हम नाटक (रूपकभेद) का विवेचन कर रहे हैं । इसके 'तीन' कारण हैं- पहले तो नाटक ही अन्य रूपक भेदों की प्रकृति अथवा मूल है, उसीमें वस्तु, नेता या रस के परिवर्तन करने से प्रकरणादि रूपकों की सृष्टि हो जाती है । दूसरे, नाटक में रस का परिपाक पूर्ण रूप से तथा अनेक रूप से पाया जाता है- उसमें शृङ्गार या वीर कोई भी रस अङ्गी रस हो सकता है, तथा अन्य सभी रस अङ्ग रूप में सन्निविष्ट किये जा सकते हैं । तीसरे, वस्तु व नेता के उक्त लक्षण, एवं आगे वर्णित सभी लक्षण नाटक में पाये जाते हैं।

पूर्वरङ्ग- **"पूर्वरङ्ग विधायादौ सूत्रधारे विनिर्गते।**
प्रविश्य तद्वदपरः काव्यमास्थापयेन्नटः"।।

सूत्रधार द्वारा पूर्वरङ्ग का कार्य करने के पश्चात् रङ्गमञ्च से चले जाने पर तत्सदृश (उसी वेशभूषा वाला) दूसरा नट जो इतिवृत्त की स्थापना करे उसे स्थापक भी कहते हैं।

भारती-वृत्ति- **"भारती संस्कृतप्रायो वाग्व्यापारो नटाश्रयः।**
भेदैः प्ररोचनायुक्तैर्वीथीप्रहसनामुखैः।।

नट के द्वारा प्रयुक्त संस्कृत भाषा वाला वाग्व्यापार भारती वृत्ति कहलाता है । इसके प्ररोचना, वीथी, प्रहसन तथा आमुख ये चार भेद पाये जाते हैं । भारती वृत्ति का प्रयोग ऋतु का आश्रय लेकर होता है।

(क) प्ररोचना-

"उन्मुखीकरणं तत्र प्रशंसातः प्ररोचना"।

काव्यार्थादि की प्रशंसा के द्वारा सामाजिकों को उसकी ओर उन्मुख करना, उनके मन को आकृष्ट करना प्ररोचना कहलाता है ।

(ख) वीथी-

वीथि के अङ्ग- (13)

"उद्घात्यकावलगिते प्रपञ्चत्रिगते छलम्
वाक्केल्यधिबले गण्डमवस्यन्दितनालिके।।
असत्प्रलापव्याहारमृदवानि त्रयोदश"।।

(1) उद्घात्यक	(2) अवगलित	(3) प्रपञ्च
(4) त्रिगत	(5) छल	(6) वाक्केलि
(7) अधिबल	(8) गण्ड	(9) अवस्यन्दित
(10) नालिका	(11) असत्प्रलाप	(12) व्याहार
(13) मृदव।		

वीथी के अङ्ग आमुख के भी अङ्ग कहलाते हैं।

(1) उद्घात्य- **"गूढार्थपदपर्यायमाला प्रश्नोत्तरस्य वा**
यत्रन्योन्यं समालापो द्वेधोद्घात्यं तदुच्यते"।।

दो प्रकार- (1) गूढार्थ, पर्याय पद (2) प्रश्नोत्तर माला

(2) अवगलित- **"यत्रैकत्र समावेशात् कार्यमन्यत्प्रसाध्यते।**
प्रस्तुतेऽन्यत्र वाऽन्यत्स्यात्तच्चावगलितं द्विधा"।

दो प्रकार - 1. एक किया के द्वारा एक कार्य के समावेश से अन्य कार्य सम्पादित हो जाए।
2. एक कार्य के प्रस्तुत होने पर दूसरा कार्य सिद्ध हो जाता है।

(3) प्रपञ्च – "असद्भूतंमिथः स्तोत्रं प्रपञ्चो हास्यकृन्मतः" ।
(हास्य जन्य मिथ्या स्तुति)

(4) त्रिगतम् - **श्रुतिसाम्यादनेकार्थयोजनं त्रिगतं त्विह।**
नटादित्रितयालापः पूर्वरङ्गे तदिष्यते।।

त्रिगत - सूत्रधार, नटी, पारिपार्श्विक इनका वार्तालाप शब्दों की समानता से अनेक अर्थो की कल्पना करना।

(5) छलनम्- **"प्रियाभैरप्रियैर्वाक्यैर्विलोभ्य छलनाच्छलम्"।**

(6) वाक्केली- **"विनिवृत्त्यास्य वाक्केली द्विस्त्रिः प्रत्युक्तितोऽपि वा"** ।
(बात को कहते-कहते रूक जाना या उसे बदलना दो तीन पात्रों की उक्ति)

(7) अधिबलम्- "अन्योन्यवाक्याधिक्योक्तिः स्पर्धयाऽधिबलं भवेत्" ।
(स्पर्धा की भावना से अपने आधिक्य के वचन)

(8) गण्ड- "गण्डः प्रस्तुतसम्बन्धिभिन्नार्थं सहसोदितम्" ।
(प्रस्तुत विषय से सम्बद्ध, किन्तु प्रकृत से भिन्नार्थ का बोधक)

(9) अवस्यन्दित-"रसोक्तस्थान्यथा व्याख्या यत्रावस्यन्दितं हि तत्"
(भावावेश में कहे वचन का दूसरे प्रकार से अर्थ समझना)

(10) नालिका- "सोपहासा निगूढार्था नालिकैव प्रहेलिका" ।
(हास्ययुक्त निगूढ अर्थ वाली)

(11) असत्प्रलाप-"असम्बद्धकथाप्रायोऽसत्प्रलापो यथोत्तरः" ।
(एक के बाद दूसरी असम्वद्ध वात)

(12) व्याहार- **"अन्यार्थमेष व्याहारो हास्यलोभकरं वचः"** ।
(अन्य प्रयोजन युक्त हास्य लोभ को उत्पन्न करने वाले वचन)

(13) मृदव-"दोषा गुणा गुणा दोषा यत्र स्युर्मृदवं हि तत्" ।
(दोष को गुण गुण को दोष के रूप में प्रदर्शन)

(ग) प्रहसन-

(घ) प्रस्तावना/आमुख-

''सूत्रधारो नटीं ब्रूते मार्षं वा विदूषकम्
स्वकार्यं प्रस्तुताक्षेपि चित्रोक्त्या यत्तदामुखम्"।।

जहाँ सूत्रधार नटी, मार्ष (पारिपार्श्विक) या विदूषक के साथ बात करते हुए विचित्र उक्ति के द्वारा प्रस्तुत का आक्षेप कर (वस्तु का संक्षेप करते हुए) अपने कार्य का वर्णन करे ।

इसके अंग - "तत्र स्युः कथोद्घातः प्रवृत्तकम्।
प्रयोगातिशयश्चाथ..........॥

प्रस्तावना के पांच भेद

(1) कथोद्घात (2) प्रवृत्तक (3) प्रयोगातिशय (4) अवगलित (5) उद्घातक।

(1) कथोद्घातः -"स्वेतिवृत्तसमं वाक्यमर्थं वा तत्र सूत्रिणः
गृहीत्वा प्रविशेत्पात्रं कथोद्घातो द्विधैव सः"।।

अपनी कथावस्तु के ही सदृश सूत्रधार के मुख से निकले हुए वाक्य या वाक्यार्थ को लेकर पात्र का प्रवेश।

इसके दो प्रकार हैं- **(1) वाक्यमूलक (2) वाक्यार्थमूलक**

(2) प्रवृत्तक - ''कालसाम्यसमाक्षिप्तप्रवेशः स्यात्प्रवृत्तकम्"।।

जहाँ ऋतु के वर्णन की समानता के आधार पर श्लेष से किसी पात्र के प्रवेश की सूचना दी जाय ।

(3) प्रयोगातिशय-

"एषोऽयमित्युपक्षेपात् सूत्रधारप्रयोगतः।
पात्रप्रवेशो यत्रैष प्रयोगातिशयो मतः"।।

'यह वह आ रहा है' इस प्रकार के वचन को प्रयोग कर जहाँ सूत्रधार किसी पात्र का प्रवेश करता है, वह प्रयोगातिशय नामक आमुख है ।

10 रूपकों के प्रकार-

1. नाटक-

अंक - 5 से 10,
इतिवृत्त - इतिहास एवं पुराणप्रसिद्ध
नायक - धीरोदात्त राजा या क्षत्रिय नायक,
सन्धि - पांचों संधियां,
रस - श्रृंगार/वीर
उदाहरण - अभिज्ञानशाकुन्तलम्।

नाटक के पात्रों को (3) श्रेणियों में विभक्त किया गया है।

(1) उत्तम (2) मध्यम (3) अधम।

नाटिका-

तत्र वस्तु प्रकरणान्नाटकान्नायको नृपः
प्रख्यातो धीरललितः श्रृङ्गारोऽङ्गी सलक्षणः।

(2) प्रकरण-

अथ प्रकरणे वृत्तमुत्पाद्यं लोकसंश्रयम्
अमात्यविप्रवणिजामेकं कुर्याच्च नायकम्।
धीरप्रशान्तं सापायं धर्मकामार्थतत्परम्।
शेषं नाटकवत्सन्धि प्रवेशकरसादिकम्।।

अंक - 10,
इतिवृत्त - कविकल्पित,
सन्धि - पांचों सन्धि,
नायक - मन्त्री, ब्राह्मण, वणिज,
नायिका - कुलस्त्री (विवाहिता), वेश्या, दोनों,
कोटि - धीरप्रशान्त,
प्रधान रस - श्रृङ्गार,
उदाहरण - मृच्छकटिकम, मालतीमाधव, शारिपुत्रप्रकरण, पुष्पभूषित

(3) भाण -

भाणस्तु धूर्तचरितं स्वानुभूतं परेण वा ।
यत्रोपवर्णयेदेको निपुणः पण्डितो विटः ॥
सम्बोधनोक्तिप्रत्युक्ती कुर्यादाकाशभाषितैः ।
सूचयेद् वीरश्रृङ्गारौ शौर्यसौभाग्यसंस्तवैः ॥
भूयसा भारती वृत्तिरेकाङ्कं वस्तु कल्पितम् ।
मुखनिर्वहणे साङ्गे लास्याङ्गानि दशापि च ॥

अंक - 1,
इतिवृत्त - कविकल्पित,
संधि - मुख, निर्वहण,
वृत्ति - भारती,
रस - वीर,श्रृङ्गार
नायक - धूर्तचरित, पण्डित, विट।
उदाहरण - लीलामधुरम्, श्रृंगारशेखर, मर्कटमदलिका, धूर्तसमागम
लास्याङ्ग - 10,

गेयं स्थितपदं पाठ्यमासीनं पुष्पगण्डिका ।
प्रच्छेदकस्त्रिगूढं च सैन्धवाख्यं द्विगूढकम् ॥
उत्तमोत्तमकं चैव उक्तप्रत्युक्तमेव च ।
लास्ये दशविधं ह्येतदङ्गनिर्देशकल्पनम् ॥

(4) प्रहसन-

तद्वत् प्रहसनं त्रेधा शुद्धवैकृतसङ्करैः ।
पाखण्डिविप्रप्रभृतिचेटचेटीविटाकुलम् ।
चेष्टितं वेषभाषाभिः शुद्धं हास्यवचोन्वितम् ॥

अंक - 1
इतिवृत्त - कविकल्पित

सन्धि - मुख, निर्वहण,
रस - हास्य,
नायक - निन्दनीय पुरुष,
उदाहरण - कन्दर्पकेलि,धूर्तचरितम्।
प्रहसन के 3 प्रकार - (1) शुद्ध, (2) वैकृत (3) सङ्कर।

(5) डिम-

डिमे वस्तु प्रमिद्धं स्याद् वृत्तयः कैशिकीं विना ।
नेतारो देवगन्धर्वयक्षरक्षोमहोरगाः ।
भूतप्रेतपिशाचाद्याः षोडशात्यन्तमुद्धताः ॥
रसैरहास्यश्रृङ्गारैः षड्भिर्दीप्तैः समन्वितः ।
मायेन्द्रजालसङ्ग्रामक्रोधोद्भ्रान्तादिचेष्टितैः ॥
चन्द्रसूर्योपरागैश्च न्याय्ये रौद्ररसेऽङ्गिनि ।
चतुरङ्कश्चतुःसन्धिर्निर्विमर्शो डिमः स्मृतः ॥ ।

अङ्क - 4,
इतिवृत्त - इतिहास प्रसिद्ध,
सन्धि - अविमर्श के अतिरिक्त चारों,
वृत्ति - सात्वती, आरभटी, भारती,
रस - हास्य, श्रृंगार आदि छः रस,
नायक - उद्धत,
उदाहरण - त्रिपुरदाह (16 नायक),

(6) व्यायोग-

ख्यातेतिवृत्तो व्यायोगः ख्यातोद्धतनराश्रयः ।
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां दीप्ताः स्युर्डिमवद् रसाः ॥
अस्त्रीनिमित्तसङ्ग्रामो जामदग्न्यजये यथा ।
एकाहाचरितैकाङ्को व्यायोगो बहुभिर्नरैः ॥

अंक - 1
इतिवृत्त - इतिहास प्रसिद्ध,
सन्धि - मुख, प्रतिमुख, उपसंहृति, निर्वहण,
नायक - उद्धत,
रस - हास्य, श्रृंगार
उदाहरण - जामदग्न्यजय, सौगन्धिकाहरणम् ,

7) समवकार-

कार्यं समवकारेऽपि आमुखं नाटकादिवत् ।
ख्यातं देवासुरं वस्तु निर्विमर्शास्तु सन्धयः ॥
वृत्तयो मन्दकैशिक्यो नेतारो देवदानवाः ।
द्वादशोदात्तविख्याताः फलं तेषां पृथक् पृथक् ॥
बहुवीररसाः सर्वे यद्वदम्भोधिमन्थने ।
अङ्कैस्त्रिभिस्त्रिकपटस्त्रिश्रृङ्गारस्त्रिविद्रवः ॥
द्विसन्धिरङ्कः प्रथमः कार्यो द्वादशनालिकः ।
चतुर्द्विनालिकावन्त्यौ नालिका घटिकाद्वयम् ॥
वस्तुस्वभावदेवारिकृताः स्युः कपटास्त्रयः ।
नगरोपरोधयुद्धे वाताग्न्यादिकविद्रवाः ॥
धर्मार्थकामैः श्रृङ्गारो नात्र विन्दुप्रवेशकौ ।
वीथ्यङ्गानि यथालाभं कुर्यात् प्रहसने यथा ॥

अङ्क - 3,
इतिवृत्त - देव, असुर, सम्वद्ध,
सन्धि - विमर्श छोड़कर चारों,
पात्र - देव,
वृत्ति - सभी (कैशिकी स्वल्प),
नायक - 12 देवता, असुर,
रस - वीर,
उदाहरण - समुद्रमंथन

(8) वीथी-

वीथी तु कैशिकीवृत्तौ सन्ध्यङ्गाङ्कैस्तु भाणवत् ।
रसः सूच्यस्तु श्रृङ्गारः स्पृशेदपि रसान्तरम् ॥
युक्ता प्रस्तावनाख्यातैरङ्गैरुद्धात्यकादिभिः ।
एवं वीथी विधातव्या ह्येकपात्रप्रयोजिता ॥

अङ्क - 1,
इतिवृत्त - कविकल्पित,
सन्धि - 2, मुख, निर्वहण,
वृत्ति - कैशिकी,
रस - श्रृंगार,
नायक - साधारण,
उदाहरण - मालविकाग्निमित्र।

(9) अङ्क -

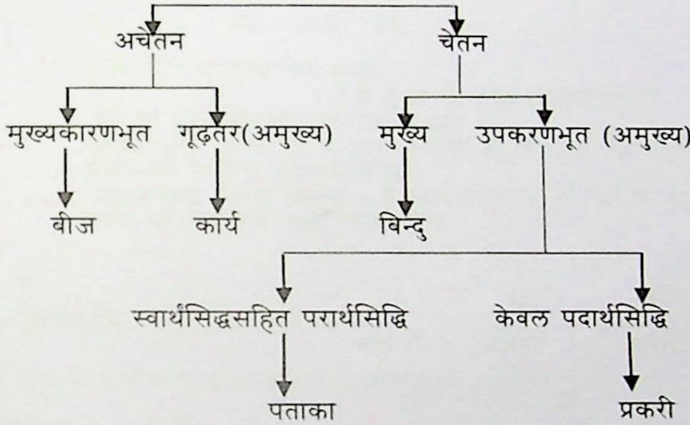
उत्सृष्टिकाङ्के प्रख्यातं वृत्तं बुद्ध्या प्रपञ्चयेत् ।
रसस्तु करुणः स्थायी नेतारः प्राकृता नराः ॥
भाणवत् सन्धिवृत्त्यङ्गैर्युक्तः स्त्रीपरिदेवितैः ।
वाचा युद्धं विधातव्यं तथा जयपराजयौ ॥

अंक - 1,
इतिवृत्त - इतिहास प्रसिद्ध,
रस - करुण,
नायक - पात्र-प्राकृत (सामान्य) जन,
सन्धि - मुख, निर्वहण,
वृत्ति - भारती,
उदाहरण - उन्मत्तराघवम्, शर्मिष्ठा-ययाति ।

(10) ईहामृग-

मिश्रमीहामृगे वृत्तं चतुरङ्कं त्रिसन्धिमत् ।
नरदिव्यावनियमान् नायकप्रतिनायकौ ॥
ख्यातौ धीरोद्धतावन्त्यो विपर्यासादयुक्तकृत् ।
दिव्यस्त्रियमनिच्छन्तीमपहारादिनेच्छतः ॥
शृङ्गाराभासमप्यस्य किञ्चित् किञ्चित् प्रदर्शयेत् ।
संरम्भं परमानीय युद्धं व्याजान् निवारयेत् ।
वधप्राप्तस्य कुर्वीत वधं नैव महात्मनः ॥

अंक	-	4,
इतिवृत्त	-	मिश्रित,
संधि	-	3 मुख, प्रतिमुख, निर्वहण,
नायक	-	मानव, या देव धीरोद्धत,
उदाहरण	-	कुसुमशेखरविजयम्,



॥छन्द॥

छन्द परिचय-

छन्द शब्द मूल रूप से छन्दस् अथवा छन्दः है । इसके शाब्दिक अर्थ दो है – 'आच्छादित कर देने वाला और 'आनन्द देने वाला । लय और ताल से युक्त ध्वनि मनुष्य के हृदय पर प्रभाव डाल कर उसे एक विषय में स्थिर कर देती है और मनुष्य उससे प्राप्त आनन्द में डूब जाता है । यही कारण है कि लय और ताल वाली रचना छन्द कहलाती है इसका दूसरा नाम वृत्त है । वृत्त का अर्थ है प्रभावशाली रचना । वृत्त भी छन्द को इसलिए कहते हैं, क्योंकि अर्थ जाने बिना भी सुनने वाला इसकी स्वर-लहरी से प्रभावित हो जाता है । यही कारण है कि सभी वेद छन्द-रचना में ही संसार में प्रकट हुए थे ।

सम और विषमपाद-

पहला और तीसरा चरण विषमपाद कहलाते हैं और दूसरा तथा चौथा चरण समपाद कहलाता है । सम छन्दों में सभी चरणों की मात्राएँ या वर्ण बराबर और एक क्रम में होती हैं और विषम छन्दों में विषम चरणों की मात्राओं या वर्णों की संख्या और क्रम भिन्न तथा सम चरणों की भिन्न होती हैं ।

यति-

हम किसी पद्य को गाते हुए जिस स्थान पर रुकते हैं, उसे यति या विराम कहते हैं । प्रायः प्रत्येक छन्द के पाद के अन्त में तो यति होती ही है, बीच बीच में भी उसका स्थान निश्चित होता है । प्रत्येक छन्द की यति भिन्न भिन्न मात्राओं या वर्णों के बाद प्रायः होती है

छन्दों के भेद-

छन्द मुख्यतः दो प्रकार के हैं:

1. मात्रिक 2. वर्णिक

1. मात्रिक छन्द-

मात्रिक छन्दों में मात्राओं की गिनती की जाती है । संस्कृत में अधिकतर वर्णिक छन्दों का ही ज्ञान कराया जाता है।

(1) आर्या-

'यस्या प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थके पञ्चदश सार्या॥

आर्या छन्द संस्कृत पद्य का एक 'मात्रिक' छन्द है। जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण में बारह बारह मात्रायें, द्वितीय चरण में अठारह मात्रायें और चतुर्थ चरण में पन्द्रह मात्रायें हों, वह आर्या छन्द कहलाता है।

उदाहरण-

नियतिकृतनियमरहितां ह्लादैकमयीमनन्यपरतन्त्राम्।
नवरसरुचिरां निर्मितिमादधती भारती कवेर्जयति॥

प्रस्तुत उदाहरण में प्रथम और तृतीय चरण में 12 बारह मात्रायें, द्वितीय चरण में 18 अठारह मात्रायें और चतुर्थ चरण में 15 मात्रायें होने से आर्या छन्द है।

2. वर्णिक छन्द-

वर्णिक छन्दों में वर्णों की संख्या निश्चित होती है और इनमें लघु और दीर्घ का क्रम भी निश्चित होता है, जब कि मात्रिक छन्दों में इस क्रम का होना अनिवार्य नहीं है । मात्रा ह्रस्व स्वर जैसे 'अ' की एक मात्रा

और दीर्घस्वर की दो मात्राएँ मानी जाती है । यदि ह्रस्व स्वर के बाद संयुक्त वर्ण, अनुस्वार अथवा विसर्ग हो तब ह्रस्व स्वर की दो मात्राएँ मानी जाती है । पाद का अन्तिम ह्रस्व स्वर आवश्यकता पडने पर गुरु मान लिया जाता है । ह्रस्व मात्रा का चिह्न 'I' यह है और दीर्घ का 'ऽ' है। **जैसे- 'सत्याग्रह'** शब्द में कितनी मात्राएँ हैं, इसे हम इस प्रकार **समझेंगे: सत्याग्रह = 6** इस प्रकार हमें पता चल गया कि इस शब्द में छह मात्राएँ हैं । स्वरहीन व्यंजनों की पृथक् मात्रा नहीं गिनी जाती। वर्ण या अक्षर: ह्रस्व मात्रा वाला वर्ण लघु और दीर्घ मात्रा वाला वर्ण गुरु कहलाता है । यहाँ भी 'सत्याग्रह' वाला नियम समझ लेना चाहिए । चरण अथवा पाद: 'पाद' का अर्थ है चतुर्थांश, और 'चरण' उसका पर्यायवाची शब्द है । प्रत्येक छन्द के प्रायः चार चरण या पाद होते हैं।

वर्णिक छन्द-

वर्णिक छन्दों में वर्ण गणों के हिसाब से रखे जाते हैं । तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं । इन गणों के नाम हैं: यगण, मगण, तगण, रगण, जगण, भगण, नगण और सगण । अकेले लघु को 'ल और गुरु को 'ग' कहते हैं । किस गण में लघु-गुरु का क्या क्रम है, यह जानने के लिए सूत्र है-

सूत्र- **"यमाताराजभानसलगा:"।**

यगण - यमाता = ।ऽऽ आदि लघु

मगण - मातारा = ऽऽऽ सर्वगुरु

तगण - ताराज = ऽऽ। अन्तलघु

रगण - राजभा = ऽ।ऽ मध्यलघु

जगण - जभान = ।ऽ। मध्यगुरु

भगण - भानस = ऽ॥ आदिगुरु

नगण - नसल = ॥। सर्वलघु

सगण - सलगाः = ॥ऽ अन्तगुरु

मात्राओं में जो अकेली मात्रा है, उस के आधार पर इन्हें आदिलघु या आदिगुरु कहा गया है । जिसमें सब गुरु है, वह 'मगण' सर्वगुरु कहलाया और सभी लघु होने से 'नगण' सर्वलघु कहलाया ।

"मस्त्रिगुरुः त्रिलघुश्च नकारो,भादिगुरुः पुनरादिर्लघुर्यः ।

जो गुरुमध्यगतो रलमध्यः,सोऽन्तगुरुः कथितोऽन्तलघुतः" ॥

महत्वपूर्ण वर्णिक छन्दों का परिचय-

(1) अनुष्टुप-

इस छन्द को श्लोक भी कहते हैं । इसके अनेक भेद हैं, परंतु जिस का अधिकतर व्यवहार हो रहा है, उसका लक्षण इस प्रकार से है-

लक्षण-

"श्लोके षष्ठं गुरुर्ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम् ।

द्विचतुः पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः" ॥

यह छन्द 'अर्धसमवृत्त' है । इस के प्रत्येक चरण में आठ वर्ण होते हैं। पहले चार वर्ण किसी भी मात्रा के हो सकते हैं । छठा वर्ण गुरु और पाँचवाँ लघु होता है । सम चरणों में सातवाँ वर्ण ह्रस्व और विषम चरणों में गुरु होता है,

उदाहरण-

ऽ ऽ । ऽ । ऽ ऽ ऽ

लोकानुग्रहकर्तारः, प्रवर्धन्ते नरेश्वराः ।

लोकानां संक्षयाच्चैव, क्षयं यान्ति न संशयः ॥ (पंचतंत्र)

गीता, रामायण, महाभारत आदि में इसी छन्द का बाहुल्य है ।

(2) इन्द्रवज्रा-

इन्द्रवज्रा छन्द के प्रत्येक चरण में 11-11 वर्ण होते हैं । इस का लक्षण इस प्रकार से है-

लक्षण-

"स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः" ।

इसका अर्थ है कि इन्द्रवज्रा के प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु के क्रम से वर्ण रखे जाते हैं । इसका स्वरुप इस प्रकार से है-

ऽऽ।	ऽऽ।	।ऽ।	ऽऽ
तगण	**तगण**	**जगण**	**दो गुरु**

उदाहरण- ऽऽ। ऽऽ ।।ऽ। ऽऽ

अर्थो हि कन्या परकीय एव

तामद्य सम्प्रेष्य परिग्रहीतुः ।

जातोऽस्मि सद्यो विशदन्तरात्मा

चिरस्य संक्षेपमिवार्पयित्वा ॥

यहाँ प्रत्येक पंक्ति में प्रथम पंक्ति वाले ही वर्णों का क्रम है । अतः यहाँ इन्द्रवज्रा छन्द है ।

(3) उपेन्द्रवज्रा-

इस छन्द के भी प्रत्येक चरण में 11-11 वर्ण होते हैं । लक्षण इस प्रकार से हैं-

लक्षण- **"उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ"।**

इस का अर्थ यह है कि उपेन्द्रवज्रा के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण और दो गुरु वर्णों के क्रम से वर्ण होते हैं । इस का स्वरुप इस प्रकार से है-

| । S । | S S । | । S । | S S |
| जगण | तगण | जगण | दो गुरु |

उदाहरण-

। S । S S । । S । S S

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देव-देव॥

विशेष-अंतिम 'व' लघु होते हुए भी गुरु माना गया है ।

(4) वसन्ततिलका-

यह चौदह वर्णों का छन्द है । तगण, भगण, जगण, जगण और दो गुरुओं के क्रम से इसका प्रत्येक चरण बनता है ।

लक्षण- "उक्ता वसन्ततिलका तभजाः जगौ गः" ।

उदाहरण-

S S । S । । । S । । S । S S

हे हेमकार परदुःख-विचार-मूढ
किं मां मुहुः क्षिपसि वार-शतानि वह्नौ ।
सन्दीप्यते मयि तु सुप्रगुणातिरेको-
लाभः परं तव मुखे खलु भस्मपातः॥

(5) उपजाति-

जिस छन्द में कोई चरण इन्द्रवज्रा का हो और कोई उपेन्द्रवज्रा का, उसे उपजाति छन्द कहते हैं ।

लक्षण-"अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः ।
इत्थं किलान्यास्वपि मिश्रितासु वदन्ति जातिष्विदमेव नाम"॥

अर्थात् इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा अथवा अन्य प्रकार के छन्द जब मिलकर एक रुप ग्रहण कर लेते हैं, तो उसे उपजाति कहते हैं ।

उदाहरण-

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ।
पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥ (कुमारसंभवम्)

(6) वंशस्थ-

इस छन्द के प्रत्येक चरण में क्रमशः जगण, तगण, जगण और रगण के क्रम से 12 वर्ण होते हैं :

लक्षण- "जतौ तु वंशस्थ मुदीरितं जरौ"।

उदाहरण-

। S । S S । । S । S । S

न तस्य कार्यं करणं च विद्यते
न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते ।
पराऽस्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते
स्वाभाविकी ज्ञान-बल-क्रिया च॥ (श्वेताश्वतर)

(7) द्रुतविलम्बितम्-

इस छन्द के प्रत्येक चरण में 12-12 वर्ण होते हैं, जिस का लक्षण और स्वरुप निम्नलिखित है-

लक्षण- "द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ"।

अर्थात् द्रुतविलम्बित छन्द के प्रत्येक चरण में नगण, भगण, भगण और रगण के क्रम से 12 वर्ण होते हैं ।

। । । S । । S । । S । S

विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा
सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः ।
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रुतौ
प्रकृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम्॥ (नीतिशतकम्)

(8) शालिनी-

शालिनी एक संस्कृत छन्द है। इसमें 11 वर्ण होते है । **(मा ता ता गा गा)** शालिनी छंद मगण (SSS), दो तगण (SSI, SSI), दो गुरु (SS) के योग से बनता है इस प्रकार इसके प्रत्येक चरण में ग्यारह वर्ण होते हैं। चौथे और ग्यारहवें वर्ण पर यति होती है।

लक्षण- S S S S S । S S । S S

"मात्तौ गौ चेच्छालिनी वेदलोकैः" ।

(9) मालिनी-

मालिनी 15 वर्णों का छन्द है, जिसका लक्षण इस प्रकार से है:

लक्षण- "ननमययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः" ।

इसका अर्थ है कि मालिनी छन्द में प्रत्येक चरण में नगण, नगण, मगण और दो यगणों के क्रम से 15 वर्ण होते हैं और इसमें यति आठवें और सातवें वर्णों के बाद होती है-

उदाहरण-

। । । । । । S S S । S S । S S

वयमिह परितुष्टाः वल्कलैस्त्वं दुकूलैः
सम इह परितोषो निर्विशेषो विशेषः ।
स तु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला
मनसि तु परितुष्टे कोऽर्थवान् को दरिद्रः॥ (वैराग्यशतक)

(10) शिखरिणी-

शिखरिणी छन्द के प्रत्येक पाद में 17 वर्ण होते हैं और पहले 6 तथा फिर 11 वर्णों के बाद यति होती है। जिसमें यगण, मगण, नगण, सगण, भगण और लघु तथा गुरु के क्रम से प्रत्येक चरण में वर्ण रखे जाते हैं और 6 तथा 11 वर्णों के बाद यति होती है, उसे शिखरिणी छन्द कहते हैं; इस का लक्षण इस प्रकार से है-

लक्षण- "रसैः रुद्रैश्छिन्ना यमनसभला गः शिखरिणी"।

ıS SS S S ı ı ı ı ıS S ı ı ı S

उदाहरण-

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः।
यदा किञ्चित्किञ्चिद् बुधजनसकाशादधिगतं
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः॥ (नीतिशतक)

(11) मन्दाक्रान्ता-

मन्दाक्रान्ता छन्द में प्रत्येक चरण में मगण, भगण, नगण, तगण, तगण और दो गुरु वर्णों पर यति होती है। यही बात इस लक्षण में कही गई है:

लक्षण- "मन्दाक्रान्ताऽम्बुधिरसनगैर्मो भनौ तौ ग-युग्मम्"।

क्योंकि अम्बुधि (सागर) 4 हैं, रस 6 हैं, और नग (पर्वत) 7 हैं, अतः इस क्रम से यति होगी और मगण, भगण, नगण, तगण, तगण और दो गुरु वर्ण होंगे।

उदाहरण-

SS SS ı ı ı ııS S ı S S ıS S

यद्वा तद्वा विषमपतितः साधु वा गर्हितं वा
कालापेक्षी हृदयनिहितं बुद्धिमान् कर्म कुर्यात्।
किं गाण्डीवस्फुरदुरुघनस्फालनक्रूरपाणिः
नासील्लीलानटनविलखन् मेखली सव्यसाची॥

(12) हरिणी-

लक्षण - नसमरसलागः षड्वेदैर्हयैर्हरिणीमता।

जिस छन्द में नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, लघु तथा गुरू होते हों और चतुर्थ षष्ठ सप्तम् वर्ण में यति होती है, और कुल सत्रह मात्राएं होती हैं उसे हरिणी छन्द कहते हैं।

उदाहरण- ı ı ı ı ıS S S S S ı S ı ı S ı S

कृमिकुलचितं लालाक्लिन्नं विगन्धिजुगुप्सितम्
निरुपमरसप्रीत्या खादन्नरास्थिनिरामिषम्।
सुरपतिमपि श्वा पार्श्वस्थं विलोक्य न शंकते
न हि गणयति क्षुद्रो जन्तुः परिग्रहफल्गुताम्॥

(13) शार्दूलविक्रीडितम्-

शार्दूलविक्रीडित छन्द के प्रत्येक चरण में 19 वर्ण निम्नलिखित क्रम से होते हैं। **सूर्य (12)** और **अश्व (7)** पर जिसमें यति होती है और जहाँ वर्ण मगण, सगण, जगण, सगण, तगण, तगण और एक गुरु के क्रम से रखे जाते हैं, वह शार्दूलविक्रीडित छन्द होता है-

लक्षण-

"सूर्याश्वैर्यदि मः सजौ सततगाः शार्दूलविक्रीडितम्"।

SSS ı ı S ıS ı ı ıS S Sı S S ı S

उदाहरण-

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भितवाष्पवृत्तिकलुषश्चिन्ताजडं दर्शनं।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमपि स्नेहादरण्यौकसः
पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनयाविश्लेषदुःखैर्नवैः॥

रे रे चातक ! सावधान-मनसा मित्र क्षणं श्रूयताम्
अम्भोदा बहवो वसन्ति गगने सर्वे तु नैतादृशाः।
केचिद् वृष्टिभिरार्द्रयन्ति वसुधां गर्जन्ति केचिद् वृथा
यं यं पश्यसि तस्य तस्य पुरतो मा ब्रूहि दीनं वचः॥ (नीति.)

इस प्रकार यहाँ 3 मात्रिक और 12 वर्णिक महत्त्वपूर्ण छन्दों का परिचय दिया गया है।

(14) स्रग्धरा-

1. यह प्रकृति जाति का वर्णिक सम छंद होता है।
2. इसके प्रत्येक चरण में 21 वर्ण होते है, जो क्रमशः मगण, रगण, भगण, नगण, व तीन यगण के रूप में लिखे जाते हैं।
3. इसमें यति क्रमशः 7, 7, 7 वर्णों पर होती है।

लक्षण- म्रभ्नैर्यानां त्रयेण-त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

उदाहरण-

S S S Sı SS ııı ı ııS S ıSS ı SS

"या सृष्टिः स्रष्टुराद्या वहति विधिहुतं या हविर्या च होत्री,
ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्याप्य विश्वम्।
यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः,
प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः"॥

॥साहित्य के अभ्यास प्रश्न॥

1. काव्यलक्षणविचारे "स्ववचनविरोधाद् अपास्तम्" इति कथनेन कस्य मतं विश्वनाथेन निराकृतम्?
   (A) आनन्दवर्धनस्य (B) वामनस्य
   (C) मम्मटस्य (D) व्यक्तिविवेककारस्य
2. साहित्यदर्पणमते नीलवर्णः महाकालदेवतः रसः कः भवति?
   (A) रौद्रः (B) वीरः
   (C) भयानकः (D) बीभत्सः
3. जतुकर्णीपुत्रः भवति-
   (A) भवभूतिः (B) कालिदासः
   (C) माघः (D) श्रीहर्षः
4. शाकुन्तले दुष्यन्तपुत्रस्य प्रथमं नाम किम् आसीत्?
   (A) भरतः (B) सर्वदमनः
   (C) गौतमः (D) वातायनः
5. साहित्यदर्पणानुसारेण एषु कस्य रूपकमध्ये गणनं न भवति-
   (A) समवकारस्य (B) नाटिकायाः
   (C) प्रकरणस्य (D) प्रहसनस्य
6. "दोषा गुणा-गुणा दोषा यत्र स्युर्मृदवं हि तत्" - दशरूपके कस्मिन् प्रसङ्गे इयमुक्तिः ?
   (A) वीथ्यङ्गप्रसङ्गे (B) नृत्यलक्षणप्रसङ्गे
   (C) सन्धिभेदप्रसङ्गे (D) प्रहसनलक्षणप्रसङ्गे
7. "न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।" इत्यादि-श्लोकः भवति -
   (A) काव्यप्रशंसा (B) गुणप्रशंसा
   (C) नाट्यप्रशंसा (D) अलङ्कारप्रशंसा
8. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-

(क) लोके हि लोहेभ्यः कठिनतराः- खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः	(i) रत्नावली
(ख) वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः	(ii) हर्षचरितम्
(ग) श्रीहर्षो निपुणः कविः- परिषदप्येषा गुणग्राहिणी	(iii) मुद्राराक्षसम्
(घ) गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः- सीदन्ति दुःखिताः	(iv) किरातार्जुनीयम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(B)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)
(C)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(D)	(iv)	(i)	(iii)	(ii)

9. किं रामायणाश्रितं भवति-
   (A) नैषधीयचरितम् (B) किरातार्जुनीयम्
   (C) शिशुपालवधम् (D) रघुवंशम्
10. एषु किं पर्व महाभारते नास्ति -
   (A) द्रोणपर्व (B) भीष्मपर्व
   (C) युधिष्ठिरपर्व (D) शल्यपर्व
11. महाभारताश्रितं न भवति-
   (A) वेणीसंहारम् (B) दूतवाक्यम्
   (C) मध्यमव्यायोगः (D) अभिषेकनाटकम्
12. 'ज्ञानविज्ञानयोगः' श्रीमद्भगवद्गीतायाः कतमोऽध्यायः-
   (A) द्वितीयोऽध्यायः (B) तृतीयोऽध्यायः
   (C) पञ्चमोऽध्यायः (D) सप्तमोऽध्यायः
13. एषु कस्य महापुराणेषु अन्तर्भावो नास्ति-
   (A) मत्स्यपुराणस्य (B) ब्रह्मपुराणस्य
   (C) अग्निपुराणस्य (D) साम्बपुराणस्य
14. 'फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः' – नैषधीयचरिते इयमुक्तिर्भवति-
   (A) नलस्य (B) दमयन्त्याः
   (C) हंसपत्न्याः (D) हंसस्य
15. अधस्तनयुग्मानां समीचीनतालिकां चिनुत-

(अ) उत्तररामचरितम्	(i) भासः
(ब) बुद्धचरितम्	(ii) भवभूतिः
(स) वेणीसंहारम्	(iii) भट्टनारायणः
(द) स्वप्नवासवदत्तम्	(iv) अश्वघोषः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(B)	(ii)	(ii)	(iii)	(iv)
(C)	(iv)	(iii)	(ii)	(i)
(D)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)

16. सर्वदमनस्य अपरं नाम किम् आसीत् ?
   (A) रोहितः (B) नागार्जुनः
   (C) भरतः (D) गौतमः
17. शिशुपालवधमहाकाव्यस्य प्रथमसर्गस्य नाम किम्?
   (A) कृष्णनारदसम्भाषणम्
   (B) नारदावतरणम्
   (C) नारदगुणकीर्तनम्
   (D)कृष्णगुणकीर्तनम्
18. किं नाम अभिधापुच्छभूता भवति?
   (A) व्यञ्जना (B) लक्षणा
   (C) तात्पर्यम् (D) अर्थापत्तिः
19. "निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु। प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥" कस्मिन् ग्रन्थे उपलभ्यतेऽयं श्लोकः ?
   (A) हर्षचरिते (B) अभिज्ञानशाकुन्तले
   (C) रघुवंशे (D) कादम्बर्याम्
20. "अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात् कस्य भयं न जायते।"

इत्यादि-श्लोकः कस्मिन् ग्रन्थेऽस्ति?

(A) रत्नावल्याम् (B) शिशुपालवधे

(C) कुमारसम्भवे (D) कादम्बर्याम्

21. 'मृच्छकटिकम्' इति कस्य रूपकस्य उदाहरणं भवति?

(A) समवकारस्य (B) नाटकस्य

(C) प्रकरणस्य (D) भाणस्य

22. दशकुमारचरितस्य कस्मिन् चरिते सुरतमञ्जर्याः उपाख्यानमस्ति?

(A) अपहारवर्मचरिते (B) उपहारवर्मचरिते

(C) राजवाहनचरिते (D) पुष्पोद्भवचरिते

23. कृतककोपवृत्तान्तः कस्मिन् दृश्यकाव्ये वर्तते ?

(A) मुद्राराक्षसे (B) मृच्छकटिके

(C) उत्तररामचरिते (D) वेणीसंहारे

24. "किञ्चित् पृष्टमपृष्टं वा कथितं यत् प्रकल्प्यते।
तादृगन्यव्यपोहाय...तु सा स्मृता॥" रिक्तस्थानं पूरयत -

(A) उपमा (B) व्याजस्तुतिः

(C) अपह्नुतिः (D) परिसंख्या

25. दशरूपकमते नाटकस्य अङ्कसंख्या भवति-

(A) 5-1 (B) 5-8

(C) 5-10 (D) 7-10

26. रिक्तं स्थानं पूरयत-
"नाट्याख्यं.......... वेदं सेतिहासं करोम्यहम्।"

(A) उत्तमम् (B) अपूर्वम्

(C) द्वितीयम् (D) पञ्चमम्

27. 'सामान्यस्य द्विरेकस्य यत्र वाक्यद्वये स्थितिः।'
काव्यप्रकाशकारमते कोऽयम् अलङ्कारः?

(A) निदर्शना (B) प्रतिवस्तूपमा

(C) दृष्टान्तः (D) विशेषोक्तिः

28. 'स तप्तकार्त्तस्वरभास्वराम्बर.......इति शिशुपालवधस्य श्लोकांशे 'कार्त्तस्वर'-पदस्य कोऽर्थः?

(A) रजतम् (B) ताम्रम्

(C) सुवर्णम् (D) स्फटिकम्

29. कस्य काव्यं 'विद्वदौषधं' कथ्यते?

(A) माघस्य (B) श्रीहर्षस्य

(C) कालिदासस्य (D) अश्वघोषस्य

30. रत्नावल्यां उदयनस्य कञ्चुकी कः?

(A) बाभ्रव्यः (B) यौगन्धरायणः

(C) वसन्तकः (D) चित्रमबाहुः

31. कुरङ्गकेन हर्षचरिते किं कर्म कृतम् ?

(A) चिकित्साकर्म (B) पूजाकर्म

(C) वार्ताप्रदानम् (D) भाग्यगणनम्

32. "सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।" इत्यादि- श्लोकः कस्य उदाहरणरूपेण ध्वन्यालोके उल्लिखितः?

(A) आक्षेपालङ्कारस्य

(B) विशेषोक्त्यलङ्कारस्य

(C) अविवक्षितवाच्यस्य (D)विवक्षितान्यपरवाच्यस्य

33. "नृतं".......... शून्यं स्थानं पूरयत।

(A) भावाश्रयम् (B) केवलं लयाश्रयम्

(C) केवलं तालाश्रयम् (D) तालयाश्रयम्

34. प्राप्त्याशा भवति-

(A) फललाभाय औत्सुक्यमात्रम् ।

(B) उपायापायशङ्काभ्यां प्राप्तिसम्भवः

(A) अप्राप्तौ अतित्वरान्वितः व्यापारः

(D) अपायाभावतः प्राप्तिः

35. "निः शेषच्युतचन्दनं...."इत्यादि-श्लोके 'अत्र तदन्तिकमेव रन्तुं गतासि' इति व्यङ्ग्यं मम्मटेन कथं निर्धारितम्?

(A) प्राधान्येन 'अधम' पदेन।

(B) प्राधान्येन 'मिथ्यावादिनी' पदेन।

(C) 'निःशेष' शब्देन।

(D) 'निर्मृष्टरागोऽधरः' इति पदेन।

36. "हतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरादुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः।" कस्य वर्णना इयम्?

(A) कुबेरस्य (B) यमवाहनमहिषस्य

(C) इन्द्रस्य (D) वरुणस्य

37. "मदेकपुत्रा जननी जरातुरा.........."कस्येयमुक्तिः?

(A) दमयन्त्याः (B) हंसस्य

(C) भीमस्य (D) नलस्य

38. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-

(अ)चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः। (i) मृच्छकटिकम्

(ब) आसीत् स दोलाचलचित्तवृत्तिः । (ii) कर्णभारम्

(स) हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम्। (iii) रघुवंशम्

(द) हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति। (iv) मुद्राराक्षसम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)
(B)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(C)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(D)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)

39. "न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः।" केन छन्दसा विनिर्मितोऽयं श्लोकः ?

(A) मन्दाक्रान्ता (B) हरिणी

(C) शिखरिणी (D) स्रग्धरा

40. "वैदेहिबन्धोर्दयं विदद्रे" इत्यत्र कस्तावत् वैदेहिबन्धुः-

(A) रामः (B) लक्ष्मणः

(C) रावणः (D) भरतः

41. लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति ॥
उत्तररामचरिते कस्येयमुक्तिः ?
(A) अष्टावक्रस्य (B) लक्ष्मणस्य
(C) शम्बूकस्य (D) रामस्य

42. साहित्यदर्पणे साकल्येन लक्षणायाः कति भेदाः स्वीकृताः ?
(A) षोडश (B) चतुर्विंशतिः
(C) अशीतिः (D) अष्टचत्वारिंशत्

43. " श्रवणाद्दर्शनाद्वापि मिथः संरूढरागयोः दशाविशेषो योऽप्राप्तौ...स उच्यते॥ रिक्तस्थानं साहित्यदर्पणतः पूरयत।
(A) पूर्वरागः (B) मानः
(C) प्रवासः (D) करुणविप्रलम्भः

44. "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" इत्यत्र रसमध्ये कस्य ग्रहणं कृतम्
(A) केवलं रसस्य
(B) केवलं भावस्य
(C) केवलं रसाभासस्य
(D) रस-भाव-तदाभासादीनाम्

45. साहित्यदर्पणानुसारं फलावाप्तौ अतित्वरान्वितः व्यापारः भवति -
(A) आरम्भः (B) नियताप्तिः
(C) प्राप्त्याशा (D) प्रयत्नः

46. सतीमपि ज्ञातिकुलैकसंश्रयां जनोऽन्यथा भर्तृमतीं विशङ्कते" - कस्येयमुक्तिः ?
(A) दुष्यन्तस्य (B) शारद्वतस्य
(C) शाङ्गरवस्य (D) कण्वस्य

47. विप्रलम्भश्रृङ्गारः अङ्गीरसः भवति अस्मिन् काव्ये -
(A) रघुवंशे (B) मेघदूते
(C) शिशुपालवधे (D) नैषधीयचरिते

48. "कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजखण्डम्" इत्यादि-पद्यं केन सम्बद्धम्?
(A) माघेन (B) कालिदासेन
(C) श्रीहर्षेण (D) भासेन

49. "व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः" - इत्याद्युक्तिः किरातार्जुनीये भवति -
(A) अर्जुनस्य (B) युधिष्टिरस्थ
(C) द्रौपद्याः (D) वनेचरस्य

50. ' श्रीकण्ठपदलाञ्छनः पदवाक्यप्रमाणज्ञः' इति केन सम्बद्धम् ?
(A) भासेन (B) भवभूतिना
(C) श्रीहर्षेण (D) अश्वघोषेण

51. 'अमृतेनेव संसिक्ताः चन्दनेनेव चर्चिताः' - इत्युक्ति कं लक्षयति
(A) भासम् (B) बाणभट्टम्
(C) शूद्रकम् (D) कालिदासम्

52. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(क) हर्षः (i) मुद्राराक्षसम्
(ख) भवभूतिः (ii) कर्णभारम्
(ग) विशाखदत्तः (iii) उत्तररामचरितम्
(घ) भासः (iv) रत्नावली

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(B)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(D)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)

53. "अहिणवमहुलोलुवो तुमं तह परिचुम्बि अ" इत्यादिसङ्गीतं भवति-
(A) हंसपदिकायाः (B) शकुन्तलायाः
(C) अनसूयायाः (D) प्रियंवदायाः

54. मम्मटमते कति काव्यगुणाः ?
(A) दश (B) पञ्च
(C) त्रयः (D) अष्टौ

55. ध्वन्यालोकतः रिक्तं स्थानं पूरयत -"यत्नतः------तौ शब्दार्थौ महाकवेः"
(A) अवगन्तव्यौ (B) प्रत्यभिज्ञेयौ
(C) परिहर्त्वयौ (D) संस्मरणीयौ

56. दशरूपकानुसारं फलस्याप्राप्तावुपाययोजनादिरूप चेष्टाविशेषः भवति-
(A) आरम्भः (B) प्रयत्नः
(C) प्राप्त्याशा (D) नियताप्तिः

57. शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात् । इति हेतुस्तदुद्भवे ॥ काव्यप्रकाशतः रिक्तस्थानं पूरयत -
(A) काव्यज्ञशिक्षयाभ्यासः
(B) लोकतत्वानुशीलनम्
(C) रसभावयोश्चिन्तनम्
(D) भावाभासस्य चिन्तनम्

58. काव्यप्रकाशे उपमानोपमेययोः विपर्यासे कोऽलङ्कारः ?
(A) अनन्वयः (B) विभावना
(C) विशेषोक्तिः (D) उपमेयोपमा

59. कालक्रमानुसारेण तालिकां चिनुत -
(a) अप्पयदीक्षितः (b) भरतः
(c) आनन्दवर्धनः (d) दण्डी
(A) (a) (b) (c) (d)
(B) (b) (c) (a) (d)
(C) (c) (a) (b) (d)
(D) (b) (d) (c) (a)

60. अभिज्ञानशाकुन्तले षष्ठाङ्कगतः धीवरवृत्तान्तः कस्य उदाहरणं भवति ?

(A) प्रवेशकस्य (B) विष्कम्भकस्य
(C) अङ्कावतारस्य (D) प्रस्तावनायाः

61. "तीव्राघातप्रतिहतरुः स्कन्धलग्नैकदन्तः'- केन छन्द्रसा विनिर्मितोऽयं श्लोकपादः ?
(A) हरिणी (B) शिखरिणी
(C) मन्दाक्रान्ता (D) मालिनी

62. शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्तिकालत्रितयेऽपि योग्यताम्" - शिशुपालवधे कस्य प्रशंसेयम् ?
(A) नारदस्य (B) श्रीकृष्णस्य
(C) वसुदेवस्य (D) बलरामस्य

63. "ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः ।
गुणा गुणानुबन्धित्वात् तस्य सप्रसवा इव ॥"
कस्य गुणाः श्लोकेऽस्मिन् उल्लिखिताः ?
(A) रघोः (B) रामस्य
(C) अजस्य (D) दिलीपस्य

64. 'कादम्बरी' इति शब्दस्य कोऽर्थः ?
(A) भीरुस्त्री (B) अप्सरा
(C) मदिरा (D) परिचारिका

65. 'पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः'"- उत्तररामचरिते उक्तिरियं भवति :
(A) सीतायाः (B) मुरलायाः
(C) तमसायाः (D) वासन्त्याः

66. रत्नावल्याः मङ्गलाचरणस्य प्रथमे श्लोके कस्य स्तुतिः प्राप्यते ?
(A) विष्णोः (B) ब्रह्मणः
(C) शिवस्य (D) गणेशस्य

67. पुण्यवर्मा कस्य देशस्य राजा आसीत् दशकुमारचरिते ?
(A) विदर्भस्य (B) वाराणस्याः
(C) गौडस्य (D) मगधस्य

68. "नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम" मुद्राराक्षसे कस्येयमुक्तिः ?
(A) चन्द्रगुप्तस्य (B) चाणक्यस्य
(C) राक्षसस्य (D) चन्दनदासस्य

69. समीचीनां तालिकां चिनुत -
(क) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (i) उत्तररामचरितम्
(ख) तीर्थोदकञ्च वह्निश्च- नान्यतः शुद्धिमर्हतः (ii) श्रीहर्षो निपुणः कविः
(ग) रत्नावली (iii) हर्षचरितम्
(घ) परिवर्तमानः एकः कालः- शैलानिवानन्तः (iv) श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)
(B)	(iii)	(i)	(ii)	(iv)
(C)	(iv)	(ii)	(i)	(iii)
(D)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)

70. विश्वनाथमतानुसारं वीररसः कतिविधः?
(A) द्विविधः (B) त्रिविधः
(C) पञ्चविधः (D) चतुर्विधः .

71. बृहत्त्रय्यां न गण्यते-
(A) नैषधीयचरितम् (B) रघुवंशम्
(C) किरातार्जुनीयम् (D) शिशुपालवधम्

72. गद्यकाव्यं नास्ति-
(A) कादम्बरी (B) दशकुमारचितम्
(C) बुद्धचरितम् (D) हर्षचरितम्

73. केन कविना बौद्धधर्मस्य प्रचारार्थं काव्यानि लिखितानि?
(A) कालिदासेन (B) माघेन
(C) अश्वघोषेण (D) भवभूतिना

74. नैषधीयचरिते कति सर्गाः सन्ति?
(A) एकोनविंशतिः (B) द्वाविंशतिः.
(C) अष्टाविंशतिः (D) चतुर्विंशतिः

75. किरातार्जुनीयमहाकाव्यस्य कथावस्तु कुतः गृहीतम् -
(A) महाभारतस्य आदिपर्वतः
(B) महाभारतस्य भीष्मपर्वतः
(C) महाभारतस्य वनपर्वतः
(D) रामायणमहाकाव्यात्

76. कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः मामल्लदेवी च कस्य पितरौ?
(A) भासस्य (B) श्रीहर्षस्य
(C) दण्डिनः (D) भारवेः

77. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(क) श्रीहर्षः (i) हर्षचरितम्
(ख) दण्डी (ii) मुद्राराक्षसम्
(ग) बाणभट्टः (iii) नैषधीयचरितम्
(घ) विशाखदत्तः (iv) दशकुमारचरितम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(iii)	(iv)	(ii)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(D)	(iv)	(iii)	(ii)	(i)

78. दशकुमारचरितस्य नायकः कः ?
(A) राजहंसः (B) उपहारवम्मा
(C) राजवाहनः (D) अपहारवर्मा

79. कालक्रमानुसारं तालिकां चिनुत-
(i) अप्पयदीक्षितः (ii) भरतः
(iii) विश्वनाथकविराजः (iv) वामनः
(A) (ii) (iv) (iii) (i)

(B) (ii) (iv) (i) (iii)

(C) (ii) (i) (iii) (iv)

(D) (i) (ii) (iv) (iii)

80. 'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहताः विरमन्ति मध्याः।' – मुद्राराक्षसे कस्येयमुक्तिः?

(A) विराधगुप्तस्य (B) चाणक्यस्य

(C) राक्षसस्य (D) चन्द्रगुप्तस्य

81. 'सिद्धेर्भ्रान्तिर्नास्ति सत्यं तथापि
स्वेच्छाचारी भीत एवास्मि भर्तुः।
इत्युक्तिः रत्नावल्यां केन सम्बद्धा?

(A) उदयनेन (B) वसन्तकेन

(C) बाभ्रव्येण (D) यौगन्धरायणेन

82. दशरूपकानुसारं-
'बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम् ।
ऐकार्थ्यमुपनीयन्ते' इत्यादिलक्षणं भवति -

(A) मुखसन्धेः (B) गर्भसन्धेः

(C) निर्वहणसन्धेः (D) प्रतिमुखसन्धेः

83. 'प्रशंसात उन्मुखीकरणं दशरूपके कस्य लक्षणं भवति ?

(A) भारत्याः (B) वीथ्याः

(C) प्रोचनायाः (D) प्रहसनस्य

84. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां मेलनतालिकां चिनुत-

(क) अनङ्ग गोऽयमनङ्गत्वमद्य-निन्दिष्यति ध्रुवम् — (i) उत्तररामचरितम्-

(ख) उदेति पूर्व कुसुमं ततः फलम् — (ii) कादम्बरी

(ग) प्रभवति शुचिर्विम्बग्रहे-मणिर्न मृदादयः — (iii) रत्नावली

(घ) न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता-चलति वसुधा — (iv) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(D)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)

85. 'अखण्डेषु कारणेषु फलावचः' कस्य अलङ्कारस्य लक्षणम् ?

(A) विशेषोक्तेः (B) विभावनायाः

(C) समासोक्तेः (D) वक्रोक्तेः

86. 'शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं,
किमभिधानमसावकरोत्तपः।'
इत्यादि-श्लोकः ध्वन्यालोके उदाहरणरूपेण उल्लिखितः।

(A) अविवक्षितवाच्य-प्रसङ्गे

(B) अप्रस्तुतप्रशंसालङ्कारप्रसङ्गे

(C) विवक्षितान्यपरवाच्य-प्रसङ्गे

(D) दीपकालङ्कारप्रसङ्गे

87. रघुवंशस्य चतुर्दशसर्गस्य नाम किम् ?

(A) सीतापवादः (B) सीतापरित्यागः

(C) श्रीराममनस्तापः (D) सीतावनवासः

88. 'अतिदुर्धरो बान्धवस्नेहः सर्वप्रमाथी ' हर्षचरिते इयमुक्तिर्भवति।

(A) प्रभाकरवर्धनस्य (B) हर्षवर्धनस्य

(C) भण्डिनः (D) यशोमत्याः

89. मृच्छकटिकस्य द्वितीयाङ्कस्य नाम किम् ?

(A) अलङ्कारविन्यासः (B) द्यूतकर- संवाहकः

(C) दुर्दिन (D)व्यवहारः

90. कृतककोपवृत्तान्तः मुद्राराक्षसे कस्मिन्नङ्केऽस्ति ?

(A) प्रथमे (B) द्वितीये

(C) तृतीये (D) चतुर्थे

91. कालानुसारेण तालिकां चिनुत-

(अ) भारविः (ब) भासः

(स) कालिदासः (द) विश्वनाथः

(A)	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(B)	(ब)	(अ)	(स)	(द)
(C)	(स)	(अ)	(ब)	(द)
(D)	(ब)	(स)	(अ)	(द)

92. विश्वनाथमते हास्यं कतिविधं भवति ?

(A) चतुर्विधम् (B) पञ्चविधम्

(C) षड्विधम् (D) द्विविधम्सिद्धान्तकौमुदी

93. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-

(क) भासः — (i) मालतीमाधवम्

(ख) कालिदासः — (ii) मृच्छकटिकम्

(ग) भवभूतिः — (iii) मालविकाग्निमित्रम्

(घ) शूद्रकः — (iv) पञ्चरात्रम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)
(B)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(C)	(iii)	(iv)	(ii)	(i)
(D)	(i)	(ii)	(iii)	(iv)

94. शिशुपालवधमहाकाव्यस्य प्रथमसर्गस्य नाम भवति-

(A) श्रीकृष्णगुणकीर्तनम् (B) नारदगुणकीर्तनम्

(C) कृष्णनारदसम्भाषणम् (D) नारदावतरणम्

95. सानुमत्याः उपाख्यानम् अभिज्ञानशाकुन्तले कस्मिन्, अङ्के अस्ति?

(A) सप्तमे (B) षष्ठे

(C) पञ्चमे (D) चतुर्थे

96. ग्रामतरुणं तरुण्या नववञ्जुलमञ्जरीसनाथकरम् ।
पश्यन्त्या भवति मुहुरनितरा मलिना मुखच्छाया॥"

काव्यप्रकाशे प्रथमोल्लासे श्लोकोऽयं कस्य काव्यभेदस्य उदाहरणरूपेण उल्लिखितः?

(A) ध्वनिकाव्यस्य (B) गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्यस्य
(C) शब्दचित्रकाव्यस्य (D) वाच्यचित्रकाव्यस्य

97. दशरूपकानुसारेण - (साहित्यदर्पणानुसारेण)
'अल्पमात्रं समुद्दिष्टं बहुधा यद्विसर्पति।
फलावसानं यच्चैव......!' तत् किम् अभिधीयते?

(A) बीजम् (B) बिन्दुः
(C) पताका (D) प्रकरी

98. दशरूपकमतानुसारं दृष्टनष्टस्य बीजस्य अन्वेषणं भवति-

(A) मुखसन्धिः (B) गर्भसन्धिः
(C) प्रतिमुखसन्धिः (D) निर्वहणसन्धिः

99. आसु कस्याः वक्रतामध्ये गणनं नास्ति?

(A) वर्णविन्यासवक्रतायाः (B) समासवक्रतायाः
(C) पदपूर्वार्द्धक्रतायाः (D) प्रकरणवक्रतायाः

100. "दुःखार्त्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्।
लोके नाट्यमेतद्भविष्यति॥"नाट्यशास्त्रतः रिक्तस्थानं पूरयत-

(A)मोक्षप्रदायकम् (B) ज्ञानप्रदायकम्
(C)आह्लादजनकम् (D) विश्रामजननम्

101. "गतं तिरश्चीनमनूरुसारथेः प्रसिद्धमूर्ध्वज्वलनं हविर्भुजः।"
शिशुपालवधे अस्मिन् पद्यांशे ' अनूरुसारथिः ' भवति-

(A) अग्निः (B) सूर्यः
(C) चन्द्रः (D) विद्युत्

102. "रत्नं रत्नेन सङ्गच्छते" कस्य ग्रन्थस्य इयमुक्तिः ।

(A) उत्तररामचरित्रम् (B) मृच्छकटिकम्
(C) मुद्राराक्षसम् (D) वेणीसंहारम्

103. मुद्राराक्षसे कौमुदीमहोत्सवः केन निषिद्धः?

(A) राक्षसेन (B) चन्द्रगुप्तेन
(C) चाणक्येन (D) मलयकेतुना

104. "स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीषु
संदृश्यते किमुत याः प्रतिबोधवत्यः॥" अभिज्ञानशाकुन्तले इयमुक्तिः कस्य?

(A) शार्ङ्गरवस्य (B) शारद्वतस्य
(C) दुष्यन्तस्य (D) सोमरातस्य

105. हर्षचरिते पञ्चमे उच्छ्वासे - 'विश्वस्तानां यशसा स्थातुमिच्छामि लोके न वपुषा' - इत्युक्तिर्भवति-

(A) हर्षवर्धनस्य (B) प्रभाकरवर्धनस्य
(C) यशोमत्याः (D) कुरङ्गकस्य

106. 'सूरिभिः कथितः' इति विद्वदुपज्ञेयमुक्तिः।"
अत्र विषये के तावत् आनन्दवर्धनमते प्रथमे विद्वांसः ?

(A) मीमांसकाः (B) तार्किकाः
(C) कवयः (D) वैयाकरणाः

107. 'क्रियायाः प्रतिषेधेऽपि फलव्यक्तिः........।
काव्यप्रकाशानुसारेण कस्यालङ्कारस्य लक्षणमिदम् -

(A) उपमालङ्कारस्य (B) निदर्शनालङ्कारस्य
(C) विभावनालङ्कारस्य (D) उत्प्रेक्षालङ्कारस्य

108. "मां च शशाप कालविफलान्यस्त्राणि ते सन्त्विति" अत्र कः शशाप?

(A) कर्णः (B) जमदग्निः
(C) शल्यः (D) शक्रः

109. उत्तररामचरितनाटकस्य कः अङ्कः 'छाया' इति अभिधीयते ?

(A) प्रथमाङ्कः (B) द्वितीयाङ्कः
(C) तृतीयाङ्कः (D) चतुर्थाङ्कः

110. 'उन्मत्तराघवं' कस्य रूपकस्य उदाहरणं भवति ?

(A) अङ्कस्य (B) वीथेः
(C) डिमस्य (D) समवकारस्य

111. ब्रह्मा कस्माद् वेदात् अभिनयं स्वीकृतवान् -

(A) यजुर्वेदात् (B) ऋग्वेदात्
(C) सामवेदात् (D) अथर्ववेदात्

112. "वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि'" इत्यत्र किं छन्दः ?

(A) अनुष्टुप् (B) वसन्ततिलका
(C) शिखरिणी (D) पुष्पिता

113. कः प्रेक्षागृहाणां प्रमाणं लक्षणञ्च निर्दिशति ?

(A) आदित्यः (B) रुद्रः
(C) विश्वकर्मा (D) यमः

114. 'रत्नावली' कस्य उपरूपकप्रभेदस्य उदाहरणं भवति ?

(A) त्रोटकस्य (B) नाटिकायाः
(C) भाणस्य (D) सट्टकस्य

115. 'कुन्तकानुसारं' कविव्यापारवक्रत्वप्रकाराः कति ?

(A) अष्टौ (B) सप्त
(C) षट् (D) पञ्च

116. अधोनिर्दिष्टानां समीचीनां तालिकां विचिनुत -

(अ) पराभवोऽप्युत्सव एव-मानिनाम् — 1. रघुवंशः
(ब) अथवा श्रेयसि केन तृप्यते — 2. कादम्बरी
(स) सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादते-हि रसं रविः — 3. शिशुपालवधम्
(द) न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता-चलति वसुधा — 4. किरातार्जुनीयम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	1	2	4
(B)	4	3	1	2
(C)	2	4	3	1
(D)	1	2	4	3

117. वाच्यवाचकचारुत्वहेतूनां विविधात्मनां रसादिपरता यत्र सः विषयः कस्य ?

(A) रीतेः (B) रसवदलङ्कारस्य

(C) गुणीभूतव्यंग्यस्य (D) ध्वनेः

118. मम्मटानुसारम् अप्रस्तुतप्रशंसालङ्कारः कतिविधः ?

(A) द्विविधः (B) पञ्चविधः

(C) चतुर्विधः (D) दशविधः

119. शान्तरसस्य स्थायिभावः कः ?

(A) उत्साहः (B) शमः

(C) हास (D) शोकः

120. "चतुर्दशत्वं कृतवान् कुतः स्वयं, न वेद्मि विद्यासु चतुर्दशस्वयम्" - कः सः ?

(A) दुष्यन्तः (B) अर्जुनः

(C) नलः (D) कृष्णः

121. 'मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः' – इत्यत्र कः अलङ्कारः ?

(A) निदर्शना (B) उपमा

(C) उत्प्रेक्षा (D) दृष्टान्तः

122. नारदमुनेः स्वागतार्थं को जवेन पीठादुदतिष्ठत् ?

(A) बलदेवः (B) शिशुपालः

(C) हिरण्यकशिपुः (D)अच्युतः (कृष्णः)

123. 'त्यजन्त्यसूञ्शर्म च मानिनो वरं त्यजन्ति न त्वेकमयाचितव्रतम्'...इयमुक्तिः कस्माद् ग्रन्थात् उद्धृताः?

(A) शिशुपालवधात्

(B) किराताजुनीयात्

(C) नैषधीयचरितात्

(D) रघुवंशात्कृतगङ्गा

124. "चतुर्वर्गफलप्राप्तिः सुखादल्पधियामपि" कस्य इयम् उक्तिः ?

(A) मम्मटस्य (B) विश्वनाथस्य,

(C) वामनस्य (D) दण्डिनः

125. संस्कृतनाटकेषु 'विदूषकस्य' को वर्गः ?

(A) ब्राह्मणवर्गः (B) क्षत्रियवर्गः

(C) वैश्यवर्गः (D) शूद्रवर्गः

126. 'लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्' श्लोकपादोऽयं कस्मिन् शास्त्रग्रन्थे वर्तते ?

(A) धर्मशास्त्रे (B) अर्थशास्त्रे

(C) नाट्यशास्त्रे (D) शिल्पशास्त्र

127. "मुख्यार्थबाधे तद्युक्तो...ययान्योऽर्थः प्रतीयते" सा शक्तिः का?

(A) अभिधा (B) लक्षणा

(C) व्यञ्जना (D) तात्पर्या

128. रसनिष्पत्तिविषये अनुमितिवादं कः प्रस्तौति ?

(A) भट्टलोल्लटः (B) अभिनवगुप्तः

(C) भट्टनायकः (D) श्रीशङ्कुकः

129. ' नैषधीयचरिते' कति सर्गाः सन्ति ?

(A) अष्टादश (B) एकोनविंशतिः

(C) विंशतिः (D) द्वाविंशतिः

130. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(अ) किरातार्जुनीयम्	1. भासः
(ब) दशकुमारचरितम्	2. दण्डी
(स) स्वप्नवासवदत्तम्	3. भारविः
(द) बुद्धचरितम्	4. अश्वघोषः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	2	1
(B)	2	1	3	4
(C)	3	2	1	4
(D)	1	4	3	2

131. पुण्यवर्मा कस्य देशस्य नृपः आसीत् ?

(A) वत्सदेशस्य (B) उज्जयिन्याः

(C) वाराणस्याः (D) विदर्भदेशस्य

132. शकुन्तलायाः 'अङ्गुलीयकं' कुत्र प्रभ्रष्टम् ?

(A) गङ्गातीर्थसलिले (B) मालिनीनदीतीरे

(C) शचीतीर्थसलिले (D) कण्वाश्रमे

133. 'मैत्रेय' नामक विदूषकः कस्मिन् ग्रन्थे वर्तते ?

(A) मुद्राराक्षसे (B) वेणीसंहारे

(C) मृच्छकटिके (D) प्रतिमानाटके

134. हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः" - कस्य इयम् उक्तिः ?

(A) युधिष्ठिरस्य (B) द्रौपद्याः

(C) वनेचरस्य (D) अर्जुनस्य

135. कस्मिन् काव्ये वीररसः अङ्गीरसः भवति -

(A) नैषधीयचरिते (B) शिशुपालवधे

(C) मेघदूते (D) रघुवंशे

136. "करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी" - इदं वर्णनं कस्मिन् काव्येऽस्ति ?

(A) उत्तररामचरिते (B) अभिज्ञानशाकुन्तले

(C) मुद्राराक्षसे (D) रत्नावल्याम्

137. विश्वनाथानुसारं 'शाब्दीव्यञ्जना' कतिविधा ?

(A) चतुर्धा (B) द्विधा

(C) त्रिधा (D) पञ्चधा

138. "वत्से ! सुशिष्यपरिदत्ता विद्येवाशोचनीया संवृत्ता" कस्येयमुक्तिः ?

(A) दुष्यन्तस्य (B) गौतम्याः

(C) कण्वस्य (D) शकुन्तलायाः

139. 'रसो मुख्यतया अनुकार्ये रामादावेव भवति' इति कस्य मतम्

(A) भट्टलोल्लटस्य (B) शङ्कुकस्य

(C) भट्टनायकस्य (D) अभिनवगुप्तस्य

140. अल्पमात्रं समुद्दिष्टं बहुधा यद्विसर्पति' - इति कस्य लक्षणम्?
(A) मुखस्य (B) निर्वहणस्य
(C) बीजस्य (D) पताकायाः

141. "आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि ।" कोऽत्रालङ्कारः ?
(A) उपमा (B) दृष्टान्तः
(C) निदर्शना (D) अर्थान्तरन्यासः

142. फलार्थिभिः प्रारब्धस्य कार्यावस्थाः कति सन्ति ?
(A) षट् (B) पञ्च
(C) सप्त (D) दश

143. "न हि खलु सर्वः सर्वं जानाति" इति कुत्र वर्तते ?
(A) वेणीसंहारे (B) रत्नावल्याम्
(C) मध्यमव्यायोगे (D) मुद्राराक्षसे

144. वासवदत्तया कुसुमायुधस्य पूजा कुत्र सम्पादिता ?
(A) बकुल-पादप-तले (B) रक्ताशोक-पादप-तले
(C) सहकार-वृक्ष-तले (D) दाडिम-वृक्ष-तले

145. वचो भारवेः -
(A) कदलीफल-सम्मितम्
(B) द्राक्षाफल-सम्मितम्
(C) दाडिमफल-सम्मितम्
(D) नारिकेलफल-सम्मितम्

146. 'कारणान्यथ कार्याणि सहकारीणि यानि च' कस्य विषये आयाति ?
(A) रसस्वरूप-विषये (B) वस्तुस्वरूप-विषये
(C) ध्वनि-विषये (D) अलङ्कारविषये

147. अश्वघोषः ' कस्य धर्मस्य प्रचारार्थं काव्यानि अलिखत् ?
(A) जैनधर्मस्य (B) बौद्धधर्मस्य
(C) सिखधर्मस्य (D) ख्रिष्टधर्मस्य

148. "तवाभिधानाद् व्यथरते नताननः स दुःसहान्मन्त्रपदादिवोरगः - इत्यत्र नताननः कः ?
(A) सुयोधनः (B) धर्मराजः
(C) वनेचरः (D) भीमसेनः

149. रुग्णः प्रभाकरवर्धनः उपचारहेतोः कुत्र गतः ?
(A) उद्याने (B) वने
(C) धवलगृहे (D) स्नानगृहे

150. रत्नावलीनाटिकायाः 'प्रथमाङ्कस्य' नाम किम् ?
(A) सङ्केतः (B) मदन-महोत्सवः
(C) कदलीगृहः (D) ऐन्द्रजालिकः

151. अधोऽङ्कितानां युग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(अ) प्रसिद्धमूर्ध्वज्वलनं हविर्भुजः 1. किरातार्जुनीयम्
(ब) अनङ्गोऽयमनङ्गत्वमद्य निन्दिष्यति ध्रुवम् 2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्
(स) अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता 3. शिशुपालवधम्
(द) किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् 4. रत्नावली

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	2	3	4	1
(B)	4	2	1	3
(C)	3	4	1	2
(D)	1	3	2	4

152. सम्राड्हर्षवर्धनस्य पितुः नाम किमासीत् -
(A) प्रभाकरवर्द्धनः (B) राज्यवर्द्धनः
(C) अवन्तिवर्मा (D) ग्रहवर्मा

153. विश्वनाथेन कस्य काव्यलक्षणस्य खण्डनं प्रधानत्वेन कृतम् ?
(A) वामनस्य (B) आनन्दवर्धनस्य
(C) मम्मटस्य (D) कुन्तकस्य

154. 'वाग्वैदग्ध्यप्रधानेऽपि रस एवात्र जीवितम्' इत्युक्तिः दर्पणकारेण कुतः उद्धृता ?
(A) काव्यप्रकाशात् (B) रामायणात्
(C) अग्निपुराणात् (D) नाट्यशास्त्रात्

155. विश्वनाथेन लक्षणायाः उल्लेखः कस्मिन् परिच्छेदे कृतः ?
(A) प्रथमपरिच्छेदे (B) तृतीयपरिच्छेदे
(C) द्वितीयपरिच्छेदे (D) चतुर्थपरिच्छेदे

156. मामल्लदेवी कस्य माता वर्तते ?
(A) अश्वघोषस्य (B) भासस्य
(C) श्रीहर्षस्य (D) वाण्भटस्य

157. रघुवंशमहाकाव्ये सर्वप्रथमं कस्य राज्ञः वर्णनं कृतम् ?
(A) रामस्य (B) रघोः
(C) अजस्य (D) दिलीपस्य

158. मेघदूतकाव्यानुसारं यक्षस्य पत्नी कुत्र वसति स्म ?
(A) रामगिर्याश्रमेषु (B) वाराणस्याम्
(C) अलकापुर्याम् (D) प्रयागे

159. दण्डिना रचितं काव्यमस्ति-
(A) नैषधीयचरितम् (B) बुद्धचरितम्
(C) उत्तररामचरितम् (D) दशकुमारचरितम्

160. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(अ) श्रीहर्षः 1. उत्तररामचरितम्
(ब) वाणभट्टः 2. बुद्धचरितम्
(स) भवभूतिः 3. नैषधीयचरितम्
(द) अश्वघोषः 4. हर्षचरितम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	2	3	4	1
(B)	3	4	1	2

(C)	1	2	3	4
(D)	4	1	2	3

161. उत्तररामचरितस्य प्रथमाङ्कः उच्यते -
(A) कुमारप्रत्यभिज्ञानम् (B) पञ्चवटीप्रवेशः
(C) चित्रदर्शनम् (D) छाया

162. कालिदासेन रचिता कृतिः न वर्तते -
(A) स्वप्नवासवदत्तम् (B) रघुवंशमहाकाव्यम्
(C) मेघदूतम् (D) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

163. मदनमहोत्सवस्य वर्णनं कस्मिन् ग्रन्थे प्रथमाङ्के उपलभ्यते ?
(A) उत्तररामचरिते (B) रत्नावल्याम्
(C) अभिज्ञानशाकुन्तले (D) मृच्छकटिके

164. गुरूपदेशस्य महत्त्वमस्मिन्नुपवर्णितं विस्तरेण -
(A) हर्षचरिते (B) दशकुमारचरिते
(C) नैषधीयचरिते (D) कादम्बर्याम्

165. शृङ्गाररसप्रधानं नाटकम् इदम् अस्ति -
(A) उत्तररामचरितम् (B) वेणीसंहारम्
(C) अभिज्ञानशाकुन्तलम् (D) प्रतिमानाटकम्

166. गौरयम् इत्यत्र का लक्षणा-
(A) शुद्धासारोपा (B) गौणीसारोपा
(C) शुद्धासाध्यवसाना (D) गौणीसाध्यवसाना

167. 'यथा नराणां नृपतिः शिष्याणां च यथा गुरुः
एवं हि सर्वभावानां'.......... महानिह पूरयत -
(A) विभावः (B) सात्त्विकभावः
(C) अनुभावः (D) स्थायिभावः

168. काव्यस्वरूपमिदम् -
(A) तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि ।
(B) इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः ।
(C) अतादृशि गुणीभूतव्यङ्ग्यं व्यङ्ग्ये तु मध्यमम् ।
(D) तात्पर्यार्थोऽपि केषुचित् ।

169. ध्वन्यालोके प्रतीयमानस्य तृतीयः प्रभेदः कः -
(A) अलङ्कारादिः (B) गुणादिः
(C) रसादिः (D) वृत्त्यादिः

170. अलक्षितद्विजं धीरमुत्तमानां ....भवेत् ।
(A) हसितम् (B) विहसितम्
(C) उपहसितम् (D) स्मितम्

171. "काव्यज्ञशिक्षयाभ्यासम् इति हेतुस्तदुद्भवे " इयमुक्तिः कस्माद् ग्रन्थादुद्धृता अस्ति ?
(A) साहित्यदर्पणात् (B) काव्यप्रकाशात्
(C) ध्वन्यालोकात् (D) नाट्यशास्त्रात्

172. आयुर्घृतम् इत्यत्र लक्षणा अस्ति-
(A) शुद्धासारोपा (B) गौणीसारोपा
(C) शुद्धासाध्यवसाना (D) गौणीसाध्यवसाना

173. 'अद्भुत-रसस्य' स्थायिभावः कः अस्ति ?
(A) रतिः (B) शोकः
(C) हासः (D) विस्मयः

174. सोपहास - निगूढार्था नालिकैव......
(A) नाटिका (B) प्रहेलिका
(C) प्रकरणिका (D) भाणिका

175. 'मुखं विकसित-स्मितं वशितवक्रिमप्रेक्षितं' कस्य उदाहरणम् इदम् ?
(A) अगूढ-व्यङ्ग्यस्य (B) गूढ-व्यङ्ग्यस्य
(C) व्यञ्जनायाः (D) अभिधायाः

176. नाट्यशास्त्रानुसारं नाट्यमण्डपस्य रक्षणे कः नियुक्तः अस्ति ?
(A) चन्द्रः (B) सूर्यः
(C) अग्निः (D) वरुणः

177. नाट्यशास्त्रे प्रेक्षागृहस्य वर्णनं कस्मिन्नध्यायेऽस्ति ?
(A) तृतीयेऽध्याये (B) पञ्चमेऽध्याये
(C) द्वितीयेऽध्याये (D) चतुर्थेऽध्याये

178. "तवाभिधानाद् व्यथते नताननः स दुःसहान्मन्त्रपदादिवोरगः" इत्यत्र कः अलङ्कारः ?
(A) दीपकः (B) दृष्टान्तः
(C) रूपकः (D) श्लेषः

179. 'हैयङ्गवीनम्' इति शब्दस्य को अर्थः -
(A) क्षीरम् (B) घृतम्
(C) जलम् (D) अग्निः

180. अधोनिर्दिष्टानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(अ) प्रावृषेण्यं पयोवाहं विद्युदेरावताविव — 1. दशकुमारचरितम्
(ब) वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः — 2. उत्तररामचरितम्
(स) तस्य वसुमतीनाम सुमती लीलावती-कुलशेखरमणीरमणी बभूव — 3. रघुवंशम्
(द) जनकानां रघूणां च सम्बन्धः कस्य न प्रियः ? — 4. किरातार्जुनीयम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	4	1	2
(B)	1	2	3	4
(C)	2	1	4	3
(D)	2	3	1	4

181. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चि
(अ) हर्षः — 1. मुद्राराक्षसम्
(ब) भवभूतिः — 2. स्वप्नवासवदत्तम्
(स) विशाखदत्तः — 3. उत्तररामचरितम्

(द) भासः 4. रत्नावली

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	3	2	4	1
(B)	4	3	1	2
(C)	2	1	3	4
(D)	1	4	2	3

182. मम्मटस्य व्यङ्ग्यमूला-व्यञ्जनायाः उदाहरणं वर्तते -
(A) निःशेषच्युतचन्दनम्
(B) पश्य निश्चलनिष्पन्दा
(C) ग्रामतरुणं तरुण्या
(D) मातः गृहोपकरणं नास्ति

183. 'रसः ' इति कः पदार्थः
(A) आस्वाद्यमानः (B) श्रवणपेयः
(C) भोज्यमानः (D) दृश्यमानः

184. नाट्यशास्त्रानुसारं कति स्थायिभावाः सन्ति -
(A) नव (B) अष्टौ
(C) दश (D) सप्त

185. संग्रहकारिका-निरुक्तानां वर्णनं नाट्यशास्त्रस्य कस्मिन् अध्याये वर्तते ?
(A) द्वितीये (B) तृतीये
(C) चतुर्थे (D) षष्ठे

186. 'प्रकृतं प्रतिषिध्यान्यस्थापनं' चेत् तदा कोऽलङ्कारः -
(A) उपमा (B) भ्रान्तिमान्
(C) श्लेषः (D) अपह्नुतिः

187. अधस्तनेषु एकाङ्किरूपकम् अस्ति -
(A) प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् (B) चारुदत्तम्
(C) कर्णभारम् (D) अविमारकम्

188. 'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्' इति सूक्तिः कुत्र अस्ति -
(A) रामायणे (B) महाभारते
(C) रघुवंशे (D) वेणीसंहारे

189. 'शाल्मलीवृक्षवर्णनं' कस्मिन् काव्ये दृश्यते ?
(A) नलचम्पो (B) कादम्बर्याम्
(C) हर्षचरिते (D) वासवदत्तायाम्

190. संस्कृतवाङ्मये करुणरसस्य वर्णने कः विशिष्यते -
(A) कालिदासः (B) बाणभट्टः
(C) अश्वघोषः (D) भवभूतिः

191. बृहत्त्रय्याम् अस्य ग्रन्थस्य गणना न भवति -
(A) किरातार्जुनीयस्य (B) शिशुपालवधस्य
(C) कुमारसम्भवस्य (D) नैषधीयचरितस्य

192. 'अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात् कस्य भयं न जायते' इति केन कविनोक्तम् -
(A) कालिदासेन (B) भारविणा
(C) श्रीहर्षेण (D) बाणभट्टेन

193. "अधारि पद्मेषु तदङ्घ्रिणा घृणा क्व तच्छयच्छायल वोऽपि पल्लवे ." अस्मिन् पद्यांशे कस्य सौन्दर्यं वर्णितम् -
(A) दमयन्त्याः (B) नलस्य
(C) रामस्य (D) सीतायाः

194. एकदा प्रत्युषसि हर्षः स्वप्ने अग्निना दह्यमानं कम् अपश्यत् ?
(A) गजम् (B) अश्वम्
(C) केसरिणम् (D) सर्पम्

195. 'शोकस्थायितया भिन्नो विप्रलम्भादयं रसः ' कः सः रसः ?
(A) शृङ्गारः (B) वीरः
(C) हास्यः (D) करुणः

196. रङ्गमञ्चस्य देवपूजनं केन तुल्यं भवति ?
(A) यज्ञेन तुल्यम् (B) तपसा तुल्यम्
(C) दानेन तुल्यम् (D) धर्मेण तुल्यम्

197. 'माधुर्यौजः प्रसादाख्यास्त्रयस्ते न पुनर्दश' - के ते ?
(A) काव्यदोषाः (B) काव्यभेदाः
(C) काव्यगुणाः (D) काव्यलक्षणम्

198. 'आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि ' - अभिज्ञानशाकुन्तले कस्य वचनमिदम् ?
(A) वैखानसस्य (B) दुष्यन्तस्य
(C) कण्वस्य (D) अनसूयायाः

199. 'गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा, निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्' अत्र राजनीतौ कोऽयमंशः परामर्शितः?
(A) दण्डनीतिः (B) युद्धनीतिः
(C) समाजनीतिः (D) धार्मिकनीतिः

200. 'इक्ष्वाकूणां दुरापेऽर्थे त्वदधीना हि सिद्धयः' – इति कः कं प्रति आह ?
(A) वसिष्ठः दिलीपं प्रति
(B) दिर्लीपः वसिष्ठं प्रति
(C) वसिष्ठः सुदक्षिणां प्रति
(D) सुदक्षिणा दिलीपं प्रति

201. 'कथाप्रसङ्गेषु मिथः सखीमुखात्तृणेऽपि तन्व्या नलनामानि श्रुते' अत्र 'नल' इत्यस्य पदस्य कोऽर्थः ?
(A) नलः (B) कामः
(C) तृणम् (D) स्तुतिपाठकः

202. शान्तमिदमाश्रमपदं स्फुरति च बाहुः कुतः फलमिहास्य। अथवा भवितव्यानां द्वाराणि भवन्ति सर्वत्र॥ अत्र कोऽलङ्कारः ?
(A) उपमा (B) अर्थान्तरन्यासः
(C) रूपकम् (D) विभावना

203. 'मग्नस्य दुःखे जगतो हिताय' इति कस्य वर्णनम् ?
(A) पाटलिपुत्रस्य (B) शुद्धोदनपुत्रस्य
(C) उद्यानस्य (D) देवदत्तस्य

204. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(अ) चलापाङ्गां दृष्टिं स्पृशसि बहुशो वेपथुमतीम् — 1. किरातार्जुनीयम्

(ब) गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया — 2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(स) क्षणमिह मम कण्ठे बाहुपाशं विधेहि — 3. शिशुपालवधम्

(द) पुरातनं त्वां पुरुषं पुराविदः — 4. रत्नावली

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	1	2	3	4
(B)	2	1	4	3
(C)	3	2	1	4
(D)	4	3	2	1

205. किरातार्जुनीये प्रतिसर्गस्यान्तिमं पदमस्ति -

(A) श्रीः (B) लक्ष्मीः
(C) शिवः (D) कश्चित्

206. रिक्तस्थानं पूरयत -

अविरुद्धा विरुद्धा वा यं तिरोधातुमक्षमाः ।
आस्वादाङ्कुरकन्दोऽसौ भावः....... इति सम्मतः ॥

(A) सात्त्विकः (B) सञ्चारी
(C) स्थायी (D) अनुभावः

207. 'स्वीया' नायिकायाः कति भेदाः ?

(A) एकादश (B) त्रयोदश
(C) चतुर्दश (D) अष्टादश

208. अधस्तनयुग्मानां समीचीनतालिकां चिनुत-

(अ) मुद्राराक्षसम् — 1. भासः
(ब) वेणीसंहारम्। — 2. विशाखदत्तः
(स) रत्नावली — 3. श्रीहर्षः
(द) स्वप्नवासवदत्तम् — 4. भट्टनारायणः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	2	1	3
(B)	2	4	3	1
(C)	1	2	3	4
(D)	3	1	2	4

209. किरातार्जुनीये 'किरातः' कः ?

(A) युधिष्ठिरः (B) वनेचरः
(C) अर्जुनः (D) शिवः

210. "गच्छति पुरः शरीरं धावति पश्चादसंस्तुतं चेतः" कस्य उक्तिरियम् ?

(A) कण्वस्य (B) गौतम्याः
(C) दुष्यन्तस्य (D) शाङ्ग्गरवस्य

211. त्रयमेतत् बृहत्त्रय्यां गण्यते -

(A) किरातार्जुनीयम्, शिशुपालवधम्, नैषधीयचरितम्
(B) किरातार्जुनीयम्, रघुवंशम्, नैषधीयचरितम्
(C) नैषधीयचरितम्, कुमारसम्भवम्, किरातार्जुनीयम्
(D) शिशुपालवधम्, नैषधीयचरितम्, रघुवंशम्

212. 'ज्ञातसारोऽपि खल्वेकः सन्दिग्धे कार्यवस्तुनि' इत्युक्तिः कुत्रास्ति ?

(A) नैषधीयचरिते (B) रघुवंशे
(C) माघकाव्ये (D) भट्टिकाव्ये

213. 'वैशम्पायन- वृत्तान्तः ' कुत्रोपवर्णितः ?

(A) दशकुमारचरिते (B) मृच्छकटिके
(C) कादम्बर्याम् (D) हर्षचरिते

214. "एको रसः करुण एव निमित्तभेदाद् भिन्नः" - इयमुक्तिः कुत्रोपलभ्यते ?

(A) अभिज्ञानशाकुन्तले (B) वेणीसंहारे
(C) मुद्राराक्षसे (D) उत्तररामचरिते

215. मेघदूते यक्षः कुत्र वसतिं चक्रे ?

(A) रामगिरौ (B) हिमालये
(C) अलकायाम् (D) मानसरोवरे

216. हर्षचरिते 'रसायनः' कः ?

(A) व्याधिः (B) औषधिः
(C) वैद्यकुमारकः (D) राजसूनुः

217. रावणभयात् हेमाद्रिगुहागृहान्तरं कः दिवसानि निनाय ?

(A) कृष्णः (B) कौशिकः
(C) नारदः (D) वसुदेवः

218. रत्नावल्यां प्रधानरसः कः ?

(A) वीरसः (B) रौद्ररसः
(C) शान्तरसः (D) शृङ्गाररसः

219. 'सतां हि सन्देहपदेषु वस्तुषु प्रमाणमन्तःकरणप्रवृत्तयः।। इत्यत्र कोऽलङ्कारः ?

(A) उपमा (B) उत्प्रेक्षा
(C) सन्देहः (D) अर्थान्तरन्यासः

220. अन्यदेवसहृदयलोचनामृतं तत्त्वान्तरे तद्वदेव सोऽर्थः' ध्वन्यालोककारमते 'सोऽर्थ' इत्यस्य कः आशयः ?

(A) अभिधेयार्थः (B) प्रतीयमानार्थः
(C) लक्ष्यार्थः (D) सर्वार्थः

221. अङ्गिनः रसस्य अचलस्थितयो धर्माः के ?

(A) गुणाः (B) रीतयः
(C) अलङ्काराः (D) रसः

222. मण्डपसन्निवेशेषु नाट्यशास्त्रे न गण्यते ?

(A) चतुरस्रः (B) त्र्यस्रः
(C) वर्तुलः (D) विकृष्टः

223. 'कथं न मन्युर्ज्वलयत्युदीरितः शमीतरुं

शुष्कमिवाग्निरुच्छिखः।' इत्युक्त्या कः प्रेरितः ?

(A) अर्जुनः (B) युधिष्ठिरः

(C) वनेचरः (D) सुयोधनः

224. 'फलेन मूलेन च वारिभूरुहां, मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः कं प्रति कस्य इयम् उक्तिः?

(A) हंसं प्रति नलस्य (B) नलं प्रति हंसस्य

(C) दमयन्तीं प्रति नलस्य (D) नलं प्रि दमयन्त्याः

225. लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः । मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव ॥- इयम् उक्तिः कामुद्दिश्य कथिता ?

(A) शकुन्तलाम् (B) द्रौपदीम्

(C) महाश्वेताम् (D) सागरिकाम्

226. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(अ) विचित्ररूपा खलु चित्तवृत्तयः 1. उत्तररामचरितम्

(ब) पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः 2. हर्षचरितम्

(स) तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः 3. किरातार्जुनीयम्

(द) लोके हि लोहेभ्यः कठिनतरा खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः 4. शिशुपालवधम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	2	3	1
(B)	1	3	4	2
(C)	2	1	3	4
(D)	3	4	1	2

227. अवान्तरार्थविच्छेदे किमच्छेदकारणम् ?

(A) बीजम् (B) बिन्दुः

(C) पताका (D) प्रकरी

228. 'अभवन्वस्तुसम्बन्ध उपमापरिकल्पकः' - कस्यालङ्कारस्य लक्षणमिदम् ?

(A) उपमा (B) अपह्नुतिः

(C) निदर्शना (D) उत्प्रेक्षा

229. "वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः संक्षेपार्थः मध्यपात्रप्रयोजितः' - कः ?

(A) अङ्कास्यम् (B) अङ्कावतारः

(C) प्रवेशकः (D) विष्कम्भकः

230. कस्य काव्यं नारिकेलफलसम्मितम् -

(A) भारवेः (B) कालिदासस्य

(C) माघस्य (D) बाणस्य

231. सतीव योषित् प्रकृतिः सुनिश्चला पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि॥" कुत्र अस्ति अयं पद्यांशः ?

(A) नैषधीयचरिते (B) रघुवंशे

(C) शिशुपालवधे (D) मेघदूते

232. साहित्यदर्पणे दशमपरिच्छेदे कस्योल्लेखः वर्तते ?

(A) गुणानाम् (B) दोषाणाम्

(C) रीतिनाम् (D)अलङ्काराणाम्

233. साहित्यदर्पणे साकल्येन लक्षणायाः कति भेदाः ?

(A) षोडश (B) चतुर्विंशतिः

(C) अशीतिः (D) द्वादश

234. 'उत्साहः' कस्य रसस्य स्थायिभावः ?

(A) रौद्रस्य (B) करुणस्य

(C) वीरस्य (D) बीभत्सस्य

235. विश्वनाथमते काव्यशरीरे रसस्य का स्थितिर्वर्तते ?

(A) अलङ्कारवत् (B) आत्मवत्

(C) गुणवत् (D) रीतिवत्

236. 'मनोरथा नाम तटप्रपाताः' इयम् उक्तिः उपलभ्यते -

(A) रत्नावल्याम् (B) वेणीसंहारे

(C) अभिज्ञानशाकुन्तले (D) मृच्छकटिके

237. 'लक्ष्मीचाञ्चल्यम्' अस्मिन्नुपवर्णितमस्ति -

(A) नैषधीयचरिते (B) रघुवंशे

(C) दशकुमारचरिते (D) कादम्बर्याम्

238. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां विचिनुत-

(अ) रत्नावली 1. अश्वघोषः

(ब) वेणीसंहारम् 2. हर्षः

(स) बालचरितम् 3. भट्टनारायणः

(द) बुद्धचरितम् 4. भासः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	2	1
(B)	3	2	4	1
(C)	2	3	4	1
(D)	2	4	1	3

239. दशकुमारचरिते अयं प्रतिनायको भवति ?

(A) राजहंसः (B) मानसारः

(C) राजवाहनः (D) पुष्पोद्भवः

240. रत्नावल्यां द्वितीयाङ्कस्य नाम -

(A) मदनमहोत्सवः (B) कदलीगृहम्

(C) सङ्केतः (D) इन्द्रजालिकम्

241. "निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि।" इति कस्य कथा अत्र उल्लिखिता ?

(A) दुष्यन्तस्य (B) नलस्य

(C) रघोः (D) रामचन्द्रस्य

242. वेणीसंहारे दुर्योधनस्य कञ्चुकी कः ?

(A) विनयन्धरः (B) जयन्धरः

(C) रुधिरप्रियः (D) सुन्दरकः

243. कति अर्थप्रकृतयः ?

(A) षट् (B) पञ्च

(C) सप्त (D) दश

244. दृष्टनष्टस्य बीजस्य अन्वेषणं भवति -

(A) प्रतिमुखसन्धिः (B) मुखसन्धिः

(C) निर्वहणसन्धिः (D) गर्भसन्धिः

245. 'इति हेतुस्तदुद्भवे ' काव्यनिर्माणविषये कस्य मतमेतत् ?

(A) जगन्नाथस्य (B) हेमचन्द्रस्य

(C) मम्मटस्य (D) वाग्भटस्य

246. अग्निमित्र इति कस्य उपाधिः अस्ति ?

(A) कालिदासस्य (B) भवभूतेः

(C) भासस्य (D) अश्वघोषस्य

247. 'ध्वन्यालोकः ' इत्यस्मिन् ग्रन्थे कति उद्योताः सन्ति ?

(A) चत्वारः (B) पञ्च

(C) षट् (D) सप्त

248. नाट्यशास्त्रस्य 'अभिनवभारती' व्याख्यायाः कर्ता कः ?

(A) आनन्दवर्धनः (B) अभिनवगुप्तः

(C) धनञ्जयः (D) भरतः

249. कालक्रमानुसारेण कस्तावत् अर्वाचीनः ?

(A) भरतः (B) जगन्नाथः

(C) विश्वनाथः (D) भामहः

250. काव्यप्रकाशस्य मङ्गलश्लोके कस्याः प्रशंसा कृता ?

(A) सरस्वत्याः (B) पार्वत्याः

(C) कविभारत्याः (D) दुर्गायाः

॥उत्तरमाला॥

1. (A) 2. (D) 3. (A) 4. (B) 5. (B)
6. (A) 7. (C) 8. (B) 9. (D) 10. (C)
11. (D) 12. (D) 13. (D) 14. (D) 15. (A)
16. (C) 17. (B) 18. (B) 19. (D) 20. (D)
21. (C) 22. (C) 23. (A) 24. (D) 25. (C)
26. (D) 27. (B) 28. (C) 29. (B) 30. (A)
31. (A) 32. (C) 33. (D) 34. (B) 35. (A)
36. (B) 37. (B) 38. (D) 39. (C) 40. (A)
41. (D) 42. (C) 43. (A) 44. (D) 45. (D)
46. (C) 47. (B) 48. (A) 49. (C) 50. (B)
51. (B) 52. (B) 53. (A) 54. (C) 55. (B)
56. (B) 57. (A) 58. (D) 59. (D) 60. (A)
61. (C) 62. (A) 63. (D) 64. (C) 65. (B)
66. (C) 67. (A) 68. (B) 69. (A) 70. (D)
71. (B) 72. (C) 73. (C) 74. (B) 75. (C)
76. (B) 77. (B) 78. (C) 79. (A) 80. (A)
81. (D) 82. (C) 83. (C) 84. (B) 85. (A)
86. (C) 87. (B) 88. (A) 89. (B) 90. (C)
91. (D) 92. (C) 93. (A) 94. (C) 95. (B)
96. (B) 97. (A) 98. (B) 99. (B) 100. (D)
101. (B) 102. (B) 103. (C) 104. (C) 105. (C)
106. (D) 107. (C) 108. (A) 109. (C) 110. (A)
111. (A) 112. (A) 113. (C) 114. (B) 115. (C)
116. (B) 117. (D) 118. (B) 119. (B) 120. (C)
121. (B) 122. (D) 123. (C) 124. (B) 125. (A)
126. (C) 127. (B) 128. (D) 129. (D) 130. (C)
131. (D) 132. (C) 133. (C) 134. (C) 135. (B)
136. (A) 137. (B) 138. (C) 139. (C) 140. (C)
141. (D) 142. (B) 143. (D) 144. (B) 145. (D)
146. (A) 147. (B) 148. (A) 149. (C) 150. (B)
151. (C) 152. (A) 153. (C) 154. (C) 155. (C)
156. (C) 157. (D) 158. (C) 159. (D) 160. (B)
161. (C) 162. (A) 163. (B) 164. (D) 165. (C)
166. (D) 167. (D) 168. (A) 169. (C) 170. (D)
171. (B) 172. (A) 173. (D) 174. (B) 175. (B)
176. (A) 177. (C) 178. (C) 179. (B) 180. (A)
181. (B) 182. (A) 183. (A) 184. (B) 185. (A)
186. (D) 187. (C) 188. (C) 189. (B) 190. (D)
191. (C) 192. (D) 193. (B) 194. (C) 195. (D)
196. (A) 197. (C) 198. (A) 199. (A) 200. (B)
201. (C) 202. (B) 203. (B) 204. (B) 205. (B)
206. (C) 207. (C) 208. (B) 209. (D) 210. (C)
211. (A) 212. (C) 213. (C) 214. (D) 215. (A)
216. (C) 217. (B) 218. (D) 219. (D) 220. (B)
221. (A) 222. (C) 223. (B) 224. (B) 225. (D)
226. (D) 227. (B) 228. (C) 229. (D) 230. (A)
231. (C) 232. (D) 233. (C) 234. (C) 235. (B)
236. (C) 237. (D) 238. (C) 239. (B) 240. (B)
241. (B) 242. (A) 243. (B) 244. (D) 245. (C)
246. (C) 247. (A) 248. (B) 249. (B) 250. (C)

शुष्कमिवाग्निरुच्छिखः।' इत्युक्त्या कः प्रेरितः ?

(A) अर्जुनः (B) युधिष्ठिरः

(C) वनेचरः (D) सुयोधनः

224. 'फलेन मूलेन च वारिभूरुहां, मुनेरिवेत्थं मम यस्य वृत्तयः कं प्रति कस्य इयम् उक्तिः?

(A) हंसं प्रति नलस्य (B) नलं प्रति हंसस्य

(C) दमयन्तीं प्रति नलस्य (D) नलं प्रि दमयन्त्याः

225. लीलावधूतपद्मा कथयन्ती पक्षपातमधिकं नः । मानसमुपैति केयं चित्रगता राजहंसीव ॥- इयम् उक्तिः कामुद्दिश्य कथिता ?

(A) शकुन्तलाम् (B) द्रौपदीम्

(C) महाश्वेताम् (D) सागरिकाम्

226. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(अ) विचित्ररूपा खलु चित्तवृत्तयः 1. उत्तररामचरितम्

(ब) पतत्यधो धाम विसारि सर्वतः 2. हर्षचरितम्

(स) तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः 3. किरातार्जुनीयम्

(द) लोके हि लोहेभ्यः कठिनतरा खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः 4. शिशुपालवधम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	2	3	1
(B)	1	3	4	2
(C)	2	1	3	4
(D)	3	4	1	2

227. अवान्तरार्थविच्छेदे किमच्छेदकारणम् ?

(A) बीजम् (B) बिन्दुः

(C) पताका (D) प्रकरी

228. 'अभवन्वस्तुसम्बन्ध उपमापरिकल्पकः' - कस्यालङ्कारस्य लक्षणमिदम् ?

(A) उपमा (B) अपह्नुतिः

(C) निदर्शना (D) उत्प्रेक्षा

229. "वृत्तवर्तिष्यमाणानां कथांशानां निदर्शकः संक्षेपार्थः मध्यपात्रप्रयोजितः' - कः ?

(A) अङ्कास्यम् (B) अङ्कावतारः

(C) प्रवेशकः (D) विष्कम्भकः

230. कस्य काव्यं नारिकेलफलसम्मितम् -

(A) भारवेः (B) कालिदासस्य

(C) माघस्य (D) बाणस्य

231. सतीव योषित् प्रकृतिः सुनिश्चला पुमांसमभ्येति भवान्तरेष्वपि॥" कुत्र अस्ति अयं पद्यांशः ?

(A) नैषधीयचरिते (B) रघुवंशे

(C) शिशुपालवधे (D) मेघदूते

232. साहित्यदर्पणे दशमपरिच्छेदे कस्योल्लेखः वर्तते ?

(A) गुणानाम् (B) दोषाणाम्

(C) रीतिनाम् (D)अलङ्काराणाम्

233. साहित्यदर्पणे साकल्येन लक्षणायाः कति भेदाः ?

(A) षोडश (B) चतुर्विंशतिः

(C) अशीतिः (D) द्वादश

234. 'उत्साहः' कस्य रसस्य स्थायिभावः ?

(A) रौद्रस्य (B) करुणस्य

(C) वीरस्य (D) बीभत्सस्य

235. विश्वनाथमते काव्यशरीरे रसस्य का स्थितिर्वर्तते ?

(A) अलङ्कारवत् (B) आत्मवत्

(C) गुणवत् (D) रीतिवत्

236. 'मनोरथा नाम तटप्रपाताः' इयम् उक्तिः उपलभ्यते -

(A) रत्नावल्याम् (B) वेणीसंहारे

(C) अभिज्ञानशाकुन्तले (D) मृच्छकटिके

237. 'लक्ष्मीचाञ्चल्यम्' अस्मिन्नुपवर्णितमस्ति -

(A) नैषधीयचरिते (B) रघुवंशे

(C) दशकुमारचरिते (D) कादम्बर्याम्

238. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां विचिनुत-

(अ) रत्नावली 1. अश्वघोषः

(ब) वेणीसंहारम् 2. हर्षः

(स) बालचरितम् 3. भट्टनारायणः

(द) बुद्धचरितम् 4. भासः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	4	3	2	1
(B)	3	2	4	1
(C)	2	3	4	1
(D)	2	4	1	3

239. दशकुमारचरिते अयं प्रतिनायको भवति ?

(A) राजहंसः (B) मानसारः

(C) राजवाहनः (D) पुष्पोद्भवः

240. रत्नावल्यां द्वितीयाङ्कस्य नाम -

(A) मदनमहोत्सवः (B) कदलीगृहम्

(C) सङ्केतः (D) इन्द्रजालिकम्

241. "निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथां तथाद्रियन्ते न बुधाः सुधामपि।" इति कस्य कथा अत्र उल्लिखिता ?

(A) दुष्यन्तस्य (B) नलस्य

(C) रघोः (D) रामचन्द्रस्य

242. वेणीसंहारे दुर्योधनस्य कञ्चुकी कः ?

(A) विनयन्धरः (B) जयन्धरः

(C) रुधिरप्रियः (D) सुन्दरकः

243. कति अर्थप्रकृतयः ?

(A) षट् (B) पञ्च

(C) सप्त (D) दश

244. दृष्टनष्टस्य बीजस्य अन्वेषणं भवति -

(A) प्रतिमुखसन्धिः (B) मुखसन्धिः

(C) निर्वहणसन्धिः (D) गर्भसन्धिः

245. 'इति हेतुस्तदुद्भवे ' काव्यनिर्माणविषये कस्य मतमेतत् ?

(A) जगन्नाथस्य (B) हेमचन्द्रस्य

(C) मम्मटस्य (D) वाग्भटस्य

246. अग्निमित्र इति कस्य उपाधिः अस्ति ?

(A) कालिदासस्य (B) भवभूतेः

(C) भासस्य (D) अश्वघोषस्य

247. 'ध्वन्यालोकः ' इत्यस्मिन् ग्रन्थे कति उद्योताः सन्ति ?

(A) चत्वारः (B) पञ्च

(C) षट् (D) सप्त

248. नाट्यशास्त्रस्य 'अभिनवभारती' व्याख्यायाः कर्ता कः ?

(A) आनन्दवर्धनः (B) अभिनवगुप्तः

(C) धनञ्जयः (D) भरतः

249. कालक्रमानुसारेण कस्तावत् अर्वाचीनः ?

(A) भरतः (B) जगन्नाथः

(C) विश्वनाथः (D) भामहः

250. काव्यप्रकाशस्य मङ्गलश्लोके कस्याः प्रशंसा कृता ?

(A) सरस्वत्याः (B) पार्वत्याः

(C) कविभारत्याः (D) दुर्गायाः

॥उत्तरमाला॥

1. (A) 2. (D) 3. (A) 4. (B) 5. (B)
6. (A) 7. (C) 8. (B) 9. (D) 10. (C)
11. (D) 12. (D) 13. (D) 14. (D) 15. (A)
16. (C) 17. (B) 18. (B) 19. (D) 20. (D)
21. (C) 22. (C) 23. (A) 24. (D) 25. (C)
26. (D) 27. (B) 28. (C) 29. (B) 30. (A)
31. (A) 32. (C) 33. (D) 34. (B) 35. (A)
36. (B) 37. (B) 38. (D) 39. (C) 40. (A)
41. (D) 42. (C) 43. (A) 44. (D) 45. (D)
46. (C) 47. (B) 48. (A) 49. (C) 50. (B)
51. (B) 52. (B) 53. (A) 54. (C) 55. (B)
56. (B) 57. (A) 58. (D) 59. (D) 60. (A)
61. (C) 62. (A) 63. (D) 64. (C) 65. (B)
66. (C) 67. (A) 68. (B) 69. (A) 70. (D)
71. (B) 72. (C) 73. (C) 74. (B) 75. (C)
76. (B) 77. (B) 78. (C) 79. (A) 80. (A)
81. (D) 82. (C) 83. (C) 84. (B) 85. (A)
86. (C) 87. (B) 88. (A) 89. (B) 90. (C)
91. (D) 92. (C) 93. (A) 94. (C) 95. (B)
96. (B) 97. (A) 98. (B) 99. (B) 100. (D)
101. (B) 102. (B) 103. (C) 104. (C) 105. (C)
106. (D) 107. (C) 108. (A) 109. (C) 110. (A)
111. (A) 112. (A) 113. (C) 114. (B) 115. (C)
116. (B) 117. (D) 118. (B) 119. (B) 120. (C)
121. (B) 122. (D) 123. (C) 124. (B) 125. (A)
126. (C) 127. (B) 128. (D) 129. (D) 130. (C)
131. (D) 132. (C) 133. (C) 134. (C) 135. (B)
136. (A) 137. (B) 138. (C) 139. (C) 140. (C)
141. (D) 142. (B) 143. (D) 144. (B) 145. (D)
146. (A) 147. (B) 148. (A) 149. (C) 150. (B)
151. (C) 152. (A) 153. (C) 154. (C) 155. (C)
156. (C) 157. (D) 158. (C) 159. (D) 160. (B)
161. (C) 162. (A) 163. (B) 164. (D) 165. (C
166. (D) 167. (D) 168. (A) 169. (C) 170. (D
171. (B) 172. (A) 173. (D) 174. (B) 175. (B)
176. (A) 177. (C) 178. (C) 179. (B) 180. (A)
181. (B) 182. (A) 183. (A) 184. (B) 185. (A)
186. (D) 187. (C) 188. (C) 189. (B) 190. (D)
191. (C) 192. (D) 193. (B) 194. (C) 195. (D)
196. (A) 197. (C) 198. (A) 199. (A) 200. (B)
201. (C) 202. (B) 203. (B) 204. (B) 205. (B)
206. (C) 207. (C) 208. (B) 209. (D) 210. (C)
211. (A) 212. (C) 213. (C) 214. (D) 215. (A)
216. (C) 217. (B) 218. (D) 219. (D) 220. (B)
221. (A) 222. (C) 223. (B) 224. (B) 225. (D)
226. (D) 227. (B) 228. (C) 229. (D) 230. (A)
231. (C) 232. (D) 233. (C) 234. (C) 235. (B)
236. (C) 237. (D) 238. (C) 239. (B) 240. (B)
241. (B) 242. (A) 243. (B) 244. (D) 245. (C)
246. (C) 247. (A) 248. (B) 249. (B) 250. (C)

इकाई-9

पुराणेतिहास, धर्मशास्त्र, एवं अभिलेखशास्त्र-

(क) सामान्य परिचय-

॥रामायण॥

रामायण की रचना वाल्मीकि ऋषि ने की है सम्पूर्ण कथा 7 काण्ड, 500 सर्ग में विभक्त है। **बाल-अध्योध्या-अरण्य-किष्किंधा-सुन्दर-युद्ध व उत्तर काण्ड।** 24000 श्लोक होने से इसको **'चतुर्विशंति साहस्त्री'** भी कहते हैं। रामायण के प्रत्येक हजार श्लोक का प्रथम अक्षर गायत्री मन्त्र के 24 अक्षरों के क्रम से शुरू होता है। तमसा नदी के तट पर क्रौञ्च वध के अवसर पर वाल्मीकि के मुख से निकला श्लोक-

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत् क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

सामान्य परिचय-

दशरथ की पत्नियाँ कैकेयी, कौशल्या, सुमित्रा थी । राम कौशल्या पुत्र, भरत कैकेयी पुत्र तथा लक्ष्मण व शत्रुघ्न सुमित्रा के पुत्र थे। राम की पत्नी सीता, लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला, भरत की पत्नी मांडवी, शत्रुघ्न की पत्नी श्रुतकीर्ति थी। सुग्रीव की पत्नी रोमा, बाली की पत्नी तारा थी। जटायु का भाई सम्पाती था। रावण विश्रवा का पुत्र था तथा माता उसकी कैकशी थी। कुम्भकर्ण भी विश्रवा का पुत्र था। मेघनाद रावण का मन्दोदरी से उत्पन्न पुत्र था । मेघनाद की पत्नी सुलोचना थी। 'सुषेण' लक्ष्मण को ठीक करने वाला रावण का वैद्य था। रामायण में अधिकांश **'अनुष्टुप'** छन्द व **'करुण'** रस का प्रयोग मिलता है। कुछ विद्वान मूल रामायण में (5) काण्ड ही मानते हैं उनके अनुसार बालकाण्ड व उत्तरकाण्ड बाद में जोड़े गए हैं।

रामायण के 7 काण्डों का संक्षिप्त विवरण-

1. बालकाण्ड-

क्रौञ्च की घटना से नारद व ब्रह्मा के निर्देश से रामायण रचना के साथ राम के बाल्यावस्थाओं का वर्णन, विश्वामित्र के साथ उनके आश्रम जाना वहां अहिल्योद्धार करना। राम सीता विवाह वर्णन।

2. अयोध्याकाण्ड-

मन्थरा के परामर्श से कैकई द्वारा दशरथ से दो वर मांगना, पुत्र वियोग में दशरथ का प्राणत्यागना, भरत का ननिहाल से लौटना व वन से राम की चरणपादुका लाना वर्णित है।

3. अरण्यकाण्ड-

दण्डकारण्य में विराध राक्षस का वध, शूर्पणखा नाककान भेद, खर, दूषणवध, सीताहरण वर्णित है।

4. किष्किन्धा काण्ड-

सीता की खोज में शवरी के परामर्श से श्रीराम पंपासरोवर की तरफ जाते हैं जहां हनुमान सुग्रीव से उनकी मित्रता करा देते हैं। बालिवध, सुग्रीवराज्याभिषेक, कपि सेना द्वारा सीता का खोज करना वर्णन है।

5. सुन्दरकाण्ड-

सीताहरण के दौरान गिद्धराज **'सम्पाती'** से प्राप्त जानकारी के आधार पर हनुमान जी लंका के लिए प्रस्थान करते हैं। मार्ग में 'सुरसा' की परीक्षा से उत्तीर्ण हो 'सिंहीका' राक्षसी का वध कर लंकापुरी में प्रवेश करते हैं। विभीषण से मुलाकात, अशोकवाटिका में सीता दर्शन, वाटिका विध्वंस, रावणपुत्र 'अक्षयकुमार' के वध के कारण मेघनाद के द्वारा ब्रह्मास्त्र से हनुमान को बांध रावण सम्मुख पेश करना, लंका दहन, सीता से चूड़ामणि लेकर वापिस राम के पास लौटना और सार वृत्तान्त बताना आदि वर्णित है।

6. युद्धकाण्ड-

यह सबसे बड़ा काण्ड है जिसमें रावणवध तक की घटनाएं, विभीषण का राज्याभिषेक, सीता की अग्निपरीक्षा लेकर पुष्पकविमान से वानरसेना सहित अयोध्या लौटना व राम के राज्याभिषेक का वर्णन है।

7. उत्तरकाण्ड-

अगस्त द्वारा रामदरबार में रामादि के आग्रह से रावण, हनुमान आदि के जन्म व देवताओं द्वारा दिए वरदानों व शापों का वर्णन किया। 'दुर्मुख' नामक गुप्तचर द्वारा नगर में उठे सीता विषयक लोकापवाद से दुःखी होकर राम गर्भवती सीता को वनवीथिका में निर्वासित कर देते हैं, जहां वाल्मीकि के आश्रम में उसके दो पुत्रों लव और कुश का जन्म होता है । कालानुसार राम 'अश्वमेध' यज्ञ करते हैं। वाल्मीकि के द्वारा परिचय कराने पर लव और कुश का राज्याभिषेक कर राम परलोकगमन कर जाते हैं ।

रामायण की विषयवस्तु-

प्रधानरस – करुण, **काण्ड** - सात

(1) बालकाण्ड – (77 सर्ग)

(2) अयोध्याकाण्ड - (119 सर्ग)
(3) अरण्यकाण्ड – (75 सर्ग)
(4) किष्किन्धाकाण्ड - (67 सर्ग)
(5) सुन्दरकाण्ड - (68 सर्ग)
(6) युद्धकाण्ड - 128 सर्ग)
(7) उत्तरकाण्ड -111 सर्ग)

रामायण काल-

रामायण का रचना काल 300 से 600 वर्ष ई. पू. माना जाता है। रामायण की पूर्वपीठिका में नारद ने ऋषि वाल्मीकि को राम कथा सुनाई है।

रामायणकालीन समाज-

करुणार्द्रचित्त महर्षि वाल्मीकि के मानस सागर से निसृत रामायण रूपी ज्ञान गंगा मे मानवीय सभ्यता के सभी पक्षों का उदात्त चित्रण इसमें समाविष्ट है इस ज्ञान विज्ञान कि सरिता मे अवगाहन कर कोई भी सभ्यता अपनी, आत्मिक बौद्धिक एवं मानसिक मलिनता को दूर कर सकता है। किसी सभा समुदाय या समाज मे उठने बैठने तथा रहने योग्य मनुष्य को सभ्य कहा जाता है उसी के भाव को सभ्यता कहते है। सभ्यता हमारा बाह्य रहन सहन, खान पान, आचरण भौतिक विकास पारिवारिक सामाजिक संस्कार आदि का परिचायक होता है । संस्कृति हमारी आंतरिक सोच ज्ञान विज्ञान आदि प्रेरक तत्व को बताती है। वैसे आंतरिक ही बाह्य आचरण का कारण होता है । रामायण मानव सभ्यता के विकास मे परम सहयोगी है तथा सदा सर्वदा रहेगी। रामायण के बारे मे कहा गया है कि –

''यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
तावत् रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति" ।।

काव्य का प्रयोजन होता है – **'रामादिवत् प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत्'।** हमे श्रेष्ठ पुरुषों राम आदि के समान आचरण करना चाहिये रावण आदि के समान नहीं ।

रामायण कालीन सामाजिक दर्शन -

प्रत्येक व्यक्ति अपने ज्ञान एवं विचार के अनुरूप हि आचरण करता है . और जैसे करता है वैसा हि वन जाता है. जीवन का यही सूत्र है । महर्षि वाल्मीकि ने रामचरित्र के माध्यम से मानव जीवन या मानव सभ्यता के विकास मे अपेक्षित सभी गुणों की आवश्यकताओं की चर्चा की है, जिसकी विश्व के प्रत्येक सभ्यता को सदा आवश्यकता रहेगी। रामायण मे वर्णित रामराज्य की सभी प्रजा वेदज्ञ थी ज्ञान सम्पन्न शूरवीर संसार के कल्याण मे संलग्न तथा समस्त मानवीय गुणों जैसे दया, सत्यपरता, पवित्रता, उदारता आदि से युक्त थे **"सर्वे वेदविदः शूराःसर्वे लोकहिते रताः सर्वे ज्ञानोपसम्पन्नाःसमुदिता' गुणैः" (बालकाण्ड,बाल्मिकीय रामायण 18/25)** समाज में सभी वर्ण (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तथा शूद्र) एक दूसरे के सहयोग करते हुये रहते थे जाति भेद य वर्ण भेद कि दूषित भावना नही थी तथा सभी को समान अधिकार तथा न्याय प्राप्त होता था। **"ब्रह्मक्षत्रमहिंसन्तस्ते कोशं संपूरयन् सुतीक्ष्णदण्डाः संप्रेक्ष्य पुरुषस्या बलाबलम्"।**

रामायण एक ऐसे सभ्य समाज के निर्माण को संदेश देता है जिस समाज मे धार्मिक न्याय प्रिय राजाओं के सुशासन मे संपूर्ण समाज धन धान्य से युक्त हो। सभी गौ आदि पशुओं से समृद्ध, अश्वादि आशुगामी वाहनो से युक्त तथा कोई भी निर्धन नहीं हो।

आधुनिक सभ्यता मे हम लोग अंध विकास मे आगे दौड़ रहे है जहां सम्पूर्ण विश्व विकास के नाम पर विनाश की तरफ बढ़ रहा है । औद्योगिक विकास यान वाहनों के प्रदूषण से प्रकृति को नष्ट करने में तुले हुये है। रामायण के अनुसार धन धान्य-समृद्धि का मूल गौमाता है । वेद मे भी कहा गया है है कि **"धेनुः सदनं रयीणाम्"** गाय सर्वविध धन समृद्धि की खान है।

प्राकृतिक एवं शुद्ध गौ वंश की रक्षा कर हम मानव सभ्यता को स्वस्थ एवं दीर्घायु कर सकते है। तथा अश्व युक्त वाहनों और तत्कालीन बिना ईंधन से उड़ने वाले हवाई जहाजों(पुष्पक विमान) की खोज कर उनके प्रयोग से विश्व पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त कर सकते है।

रामायण कालीन सभ्यता का वर्णन करते हुये वाल्मीकि मुनि जी कहते है –कि अयोध्या नगरी में कोई नर नारी कामी, कंदर्प , निष्ठुर, मूर्ख (अविद्वान) और नास्तिक नहीं था। सभी नर नारी धार्मिक , जितेन्द्रिय महर्षियों के समान सच्चरित्र एवं शालिन थे। सभी लोग नित्य अग्निहोत्र करते थे। कोई क्षुद्र-वृत्ति वाला या चोर नहीं था । सभी अंहिसा, यम, नियमों का पालन करते और दानी थे। कोई भी व्यक्ति पागल तनावग्रस्त या व्यथित चित्त वाला नहीं था । सभी पुत्र पौत्र सहित आनंद पूर्वक दीर्घायु जीवन व्यतीत करते थे।

इस प्रकार तत्कालीन सभ्यता का चित्रण हमे उस तरह का एक समृद्ध , ज्ञानवान , शीलवान तथा धार्मिक मानव सभ्यता की महत्ता को बताता है । आज उस का अनुसरण कर अपनी विकृत सामाजिक व्यवस्था को दूर कर एक सभ्य समाज का निर्माण किया जा सकता है ।

रामायण में पञ्चसन्धि-

(1) बालकाण्ड - मुखसन्धि
(2) अरण्यकाण्ड - प्रतिमुखसन्धि
(3) किष्किन्धाकाण्ड - गर्भसन्धि
(4) सुन्दरकाण्ड- विमर्शसन्धि
(5) युद्धकाण्ड- निर्वहणसन्धि

अन्य रामायण ग्रन्थ-

(1) अध्यात्मरामायण (2) अद्भुतरामायण

(3) अगस्त्यरामायण (4) आनन्दरामायण
(5) मयन्दरामायण (6) भुसुण्डिरामायण।

परवर्ती ग्रन्थों के लिये प्रेरणास्रोत-

रामायण एक महाकाव्य ग्रन्थ है जिसे आदिकाव्य के नाम से भी जाना जाता है, रामायण परवर्ती ग्रन्थों के लिए अनेक विषयों के रूप में प्रेरणास्रोत काव्य रहा है, रामायण को आधार बनाकर कई नाटक, काव्य, चम्पूकाव्य एवं चित्रकाव्य लिखे गये हैं, जिनमें कालिदास द्वारा रचित रघुवंशमहाकाव्य सर्वप्रसिद्ध है तथा नाटकों में भवभूति कृत उत्तररामचरित एवं दिङ्नाग कृत कुन्दमाला ये दोनों नाटक करुण रस प्रधान हैं इनमें रामायण के मुख्य सन्दर्भों का बहुत ही सुन्दर ढंग से प्रदर्शन किया गया है । रामायण पर आधारित मुख्य ग्रन्थ निम्न हैं-

रामायण पर आधारित नाटक-

1. अनर्घराघव - मुरारी
2. प्रसन्नराघव - जयदेव
3. बालरामायण - राजशेखर
4. कुन्दमाला - दिङ्नाग
5. हनुमाननाटक - दामोदर मिश्र
6. महावीरचरित - भवभूति
7. उत्तररामचरित - भवभूति
8 अभिषेक - भास
9. प्रतिमानाटक - भास

रामायण पर आधारित काव्य-

1. भट्टिकाव्यम् - भट्टि
2. रामायणमञ्जरी - क्षेमेन्द्र
3. सेतुबन्ध - प्रवरसेन
4. जानकीहरण - कुमारदास
5. रघुवंश - कालिदास

रामायण पर आधारित चम्पूकाव्य-

1. रामायणचम्पू - भोज
2. रामकथा - अनन्तभट्ट
3. उत्तरचम्पू - वेंकटाध्वरि
4. चम्पूरामायण - लक्ष्मणभट्ट

रामायण पर आधारित चित्रकाव्य-

1.यावदराघवीयम्, 2. विलोमवाक्य, 3. रामलीलामृतम् ।

साहित्यिक महत्व-

रामायण का साहित्यिक महत्व संसार के अन्य महान लेखकों के महाकाव्य जैसे कि **'महाभारत'** (वेदव्यास-संस्कृत), **'ईलियड'** (दाँते-लेटिन), **'ओडेसी'** (होमर-ग्रीक), **'पृथ्वीराज रासो'** (चन्द्रबर्दायी-हिन्दी) तथा **'पैराडाईज़ लोस्ट'** (मिल्टन-अंग्रेजी) रामायण से कई सदियों पश्चात लिखे गये थे। रामायण का अनुवाद विश्व की सभी भाषाओं में हो चुका है। इस कारण से कई अनुवादित संस्करणों में महर्षि वाल्मीकि के महाकाव्य से विषमतायें भी पाई जाती हैं। रामायण की रचना ने कई कवियों को मौलिक महाकाव्य लिखने के लिये भी प्रेरित किया है जिन में से हिन्दी भाषा में लिखा गया गोस्वामी तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' सब से अधिक लोकप्रिय है। रामचरितमानस वास्तव में हिन्दी के अपभ्रंश **'अवधी'** संस्करण में रचा गया है। इस में एक उल्लेखनीय तथ्य यह भी है कि विश्व साहित्य में रामायण ही एक मात्र महाकाव्य है जिस की नायिका सीता अति सुन्दर राजकुमारी वर्णित है परन्तु उस के सौन्दर्य का वर्णन करते समय कवि उस में केवल मातृ छवि ही देखता है तथा निज माता की तरह ही सीता को सम्बोधन करता है।

रामायण में प्रमुख आख्यान-

1. **बालकाण्ड-** रामायण में सर्वप्रथम क्रौञ्चवध का वर्णन है। बालकाण्ड से सम्बन्धित प्रमुख संवाद या प्रमुख आख्यान निम्न प्रकार से हैं-

1. ऋष्यश्रृंगाख्यान 2. गंगावतरणाख्यान
3. मरुतानामाख्यान 4. अहिल्योद्धाराख्यान
5. शुनःशेपाख्यान 6. कार्तिकेयाख्यान
7. मैत्रवरुणाख्यान 8. अष्टावक्राख्यान
9. मेनकाविश्वामित्राख्यान 10. राजासगरअश्वमेधआख्यान
11. समुन्द्र मंथन 12. त्रिशंक्वाख्यान।

2. **अयोध्याकाण्ड-** वनवास, दशरथ मृत्यु।
3. **अरण्यकाण्ड-** शूर्पनखा वर्णन, खरदूषण, सीताहरण, जटायु वध,शबरी वृत्तान्त (इसमें **'प्रकरी'** अर्थप्रकृति वर्णित है।)
4. **किष्किन्धाकाण्ड-** सुग्रीव मैत्री, बालि वध, (ऋष्यमूक पर्वत निवास)।
5. **सुन्दरकाण्ड-** हनुमान वर्णन, लंका गमन।
6. **युद्धकाण्ड-** रावण मरण, अयोध्या आगमन।
7. **उत्तरकाण्ड-** सुकेशादि की उत्पत्ति, नृग आख्यान, ययाति आख्यान, रामद्वारा- शम्बूकवध, उर्वशी आख्यान बुध और ईला से पुरुरवा की उत्पत्ति।

अन्य आख्यान/उपाख्यान-

पुरुरवाख्यान, कार्तिकेयोत्पत्याख्यान।

रामायण की टीकाएं-

1. रामायणतत्वदीपिका - महेश्वरतीर्थ/ईश्वरतीर्थ
2. रामायणदीपिका - वैद्यनाथदीक्षित
3. सर्वार्थसार - वेङ्कटाकृष्णध्वरी/वेङ्कटेश
4. रामायणतिलक - नागोजिभट्ट
5. तिलक - रामवर्मा
6. रामायणभूषणम् - गोविन्दराज

रामायण के प्रमुख सन्दर्भ-

- रावण का मन्त्रि कौन था- **माल्यवान,**
- दशरथ के पिता - **अज,**
- भरत की पत्नी - **माण्डवी,**
- माण्डवी के पिता - **क्षीरध्वज,**
- जनक का मूल नाम – **क्षीरध्वज,**
- लक्ष्मण की पत्नी - **उर्मिला,**
- अंगद के पिता थे - **बाली,**
- अंगद की माता- **तारा,**
- जामवन्त था- **सुग्रीव का महामन्त्री,**
- राम के ज्येष्ठ पुत्र - **कुश,**
- लक्ष्मण अवतार थे- **शेषावतार,**
- जटायु किस पर्वत पर रहता था- **प्रस्रवण,**
- मयदानव की पुत्री- मंदोदरी,
- "श्लोकत्वमागत यस्य शोकः" से कालिदास ने जिसका संकेत किया है- वाल्मीकि,
- सुन्दरकाण्ड में चन्द्रोदय का वर्णन है- **शोभनम्** ।
- सीता को दिव्यवस्त्रभूषण दिये- **अनुसूया** ने ।
- सुग्रीव की पत्नी - **रुमा।**
- रामायण की कथा महाभारत में भी प्राप्त होती हे
- **"यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले"** - रामायण के लिये प्रयुक्त।
- मधुरा नामक नगर में गया - **शत्रुघ्न।**
- रावण से सीता की मुक्ति का स्वप्न देखा - **त्रिजटा** ने।
- अहिल्या पुत्री थी- **'वृद्धाश्वस्य'** की।

रमायण की प्रमुख सूक्तियां-

- "धर्मसारमिदं जगत्" – **रामायण**
- 'रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति- द्विजातिरेव संस्कृतभाषणे'- **(हनुमान)**
- अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यं कुर्यापापमहं यदि।
  इक्ष्वाकूणामहं लोके भवेयं कुलपांसनः।। **(भरत)**
- सुलभा पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।
  अप्रियस्थ तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः।। **(मारीच)**
- "प्रतिपत्पाठशीलस्य विद्येव तनुतां गता" - **(सुन्दरकाण्ड)**

॥महाभारत॥

महाभारत 'वेदव्यास' की रचना है। इसके विकास के तीन क्रम हैं-

1. जय **2. भारत** **3. महाभारत।**

"जय नामेतिहासोऽयम्।" जय इसमें 8800 श्लोक थे। भारत इसमें 24000 श्लोक थे। महाभारत में 100000 श्लोक हैं । इसे **'शतसाहस्रीसंहिता'** भी कहते हैं। । इसमें (18) पर्व हैं।

प्रमुख कथा-

'व्यास' 'पराशर' एवं 'सत्यवती' के 'कनीन' पुत्र थे। व्यास के अपर नाम कृष्ण द्वैपायन, कृष्णमुनि, बादरायण हैं। धृतराष्ट्र, पाण्डु एवं दासी पुत्र विदुर नियोग विधि से वेदव्यास एवं अम्बिका , अम्बालिका एवं दासी की सन्तान हैं। महाभारत में **'शान्तिपर्व'** 14000 श्लोक सबसे बड़ा तथा **'महाप्रस्थानिकपर्व'** 115 श्लोक सबसे छोटा है। **'जय'** में कोरवों पर पाण्डवों की विजय की कथा है। **'भारत'** वैशम्पायन ने जनमेजय के नागयज्ञ के अवसर पर भारत का प्रवचन किया था। नैमिषारण्य में **'शौनक'** ऋषि से अनुष्ठित यज्ञ (द्वादश वार्षिक सत्र) के अवसर पर **'सौति'** नामक ऋषि ने महाभारत का प्रवचन किया था। शौनकादि ऋषि श्रोता थे। सावित्री की कथा वन पर्व में, इन्द्र द्वारा कवच कुण्डल लेना भी वन पर्व में, कीचक वध विराट पर्व में, कृष्ण का शान्ति दूत बनना उद्योग पर्व में, 'गीता उपदेश' भीष्म पर्व में, अश्वथामा की मणि निकालना सौप्तिक पर्व में, गान्धारी द्वारा कृष्ण वंश नष्ट होने का शाप स्त्री पर्व में 'पराशर गीता' – 'हंसगीता' वर्णन शान्तिपर्व में, 'भीष्म उपदेश' शान्ति पर्व में, भीष्म का स्वर्गारोहण, 'विष्णुसहस्रनाम', 'शिवसहस्रनाम' अनुशासन पर्व में, युधिष्ठिर द्वारा अश्वमेध यज्ञ, अनुगीता आश्वमेधिक पर्व में, यादव विनाश श्रीकृष्ण का परमधाम गमन मौसल पर्व में, पाण्डवों की हिमालय यात्रा महाप्रस्थानिक पर्व में मिलता है। 'स्वर्गारोहणपर्व' को 'भारतसावित्री' भी कहते है। अश्वत्थामा ने नारायणास्त्र का प्रयोग 'द्रोणपर्व' में किया। अम्बोपाख्यान उद्योग पर्व में है। महाभारत के अवशिष्ट भाग को खिलपर्व (हरिवंश पर्व) कहा जाता है। इसे वैशम्पायन ने 'जनमेजय' को सुनाया था । इसमें भगवान श्री कृष्ण के वंश (वृष्णि-अन्धक) की कथा है। इसमें 'शान्तरस' प्रमुख है।

ब्रह्मा → वशिष्ठ → शक्ति → पराशर → व्यास → शुकदेव।

महाभारत की विषयवस्तु-

॥मंगलाचरण॥

"नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं चैव ततो- जयमुदीरयेत"।।

रचयिता - वेदव्यास,
रचना काल - (600-500 ई.पू.)
रीति - पाञ्चाली
प्रमुख छन्द - अनुष्टुप ।

"धर्मे ह्यर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्"।।

महाभारत के खण्डों को पर्व कहते हैं ये (18) हैं-

1. आदि	2. सभा	3. वन
4. विराट	5. उद्योग	6. भीष्म
7. द्रोण	8. कर्ण	9. शल्य
10. सौप्तिक	11. स्त्री	12. शान्ति
13. अनुशासन	14. अश्वमेध	15. आश्रमवासी
16. मौसल	17. महाप्रस्थानिक	18. स्वर्गारोहण।

स्मरणार्थ-

"आ सभा व विराटश्च उद्योग भी द्रोण कर्ण शलः।
सौप्ति स्त्री शान्ति शासन मेध आश्रय मौसल प्रस्थान रोहणम्"।

महाभारत का काल-

महाभारत का रचना काल 600 से 500 वर्ष ई. पू. माना जाता है । पाणिनि द्वारा रचित अष्टाध्यायी (600-400 ईसा पूर्व) में महाभारत और भारत दोनों का उल्लेख हैं तथा इसके साथ साथ श्रीकृष्ण एवं अर्जुन का भी संदर्भ आता है अतएव यह निश्चित है कि महाभारत और भारत पाणिनि के काल के बहुत पहले से ही अस्तित्व में रहे थे।

महाभारतकालीन समाज-

सामाजिक जीवन- आमतौर पर महाभारत का काल उत्तर वैदिक के अंत से लेकर बुद्ध काल के काल को माना जाता है। महाभारत काल में सभी समाज का आधार पारिवारिक जीवन था।

संयुक्त परिवार- इस काल में कुल या परिवार के सभी सदस्य एक साथ रहते थे। कुल का प्रमुख कुलपति कहलाता था। कुलपति या तो पिता होता था या सबसे बड़ा भाई होता था। महाभारत काल से यह संदर्भ मिलता है कि प्रायः परिवार में प्रेम होता था। आयु में छोटे सदस्य परिवार के सभी बड़े परिवारजनों का सम्मान करते थे और कुलपति सभी के कल्याण की चिंता करते हुए उनके साथ अच्छा व्यवहार करते थे। उस काल में निसंतान दंपति लड़का या लड़की को गोद ले सकते थे जो आगे चल कर उसके उत्तराधिकारी बनते थे।

आश्रम- महाभारत काल में प्रत्येक व्यक्ति का जीवन एक खास व्यवस्था पे आधारित होता था उस काल में आश्रम विकसित जरूर हुए थे। लेकिन इसमें कोई जटिलता नहीं थी इनका प्रभाव उस समय जनता के जीवन पर बहुत था इसके कारण ही लोगों का नैतिक उत्थान हुआ। आश्रम व्यवस्थाओं को मुख्य चार भाग में बांटा गया था। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास ।

जाती प्रथा-

जाती प्रथा ने प्राचीन भारतीय समाज को स्थायित्व प्रदान किया। उसने देशी और विदेशी दोनों तत्वों का समावेश प्राचीन भारतीय समाज में आसानी से कर दिया क्योंकि उनके लिए यहाँ के जाति आधिक्रम में स्थान था। यह उल्लेखनीय है की अनेक प्राचीन समाजों में जो नग्न शोषण उन दिनों चल रहा था जैसे कि गुलामी की प्रथा वह भारत का नहीं था परन्तु जब भारत में विदेशियों का आगमन हुआ तो इस प्रथा का चलन भारत में भी तेजी से होने लगा। भारत में जातियों की संख्या बहुत अधिक थी। और जाति को मानने वाले लोगों के बीच संघर्ष भी बहुत था। इस समस्या का धर्म में कहीं कोई खास उपाय नहीं बताये गए थे। इसलिए वर्णव्यवस्था का विधान किया गया। सामाजिक कर्तव्यों के सुव्यवस्थित तरीके से निर्वाह के लिए वर्ण व्यवस्था को अलग-अलग भागों में बांटा गया।

वर्ण व्यवस्था-

भारतीय परम्परा में वर्ण विभाजन की जो व्यवस्था की गयी उसके अनुसार वर्ण को चार भाग में बांटा गया। भारत में जातियों की संख्या बहुत अधिक थी। अतः वर्ण की तुलना जाति से करना सही नहीं है। लोगों द्वारा जन्म से ही अपने वर्ण को मानने के कारण ही समाज में जाति और वर्ण एक दूसरे का पर्याय बनता गया। भारतीय धर्म शास्त्र जीवन की एकरूपता के पक्ष में नहीं थे इसीलिए धर्मशास्त्रों में वर्ण शब्द का प्रयोग किया गया और ये चार वर्ण है - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र।

स्त्रियों की स्थिति-

जैसा की पहले से ज्ञात है की महाभारत का काल उत्तर वैदिक काल से गौतम बुद्ध के काल को माना जाता है। इस काल में स्त्रियों को कोई विशेष अधिकार नहीं थे। स्त्रियों को पैतृक सम्पत्ति में स्वामित्व का अधिकार नहीं था। वे अपने पैतृक सम्पत्ति की स्वामी नहीं बन सकती थीं । वैसे बहुत सी बातों में उन्हें स्वतन्त्रता थी। स्त्री स्वयंवर में अपना वर स्वयं चुन सकती थी। विधवाओं को पुनर्विवाह करने का अधिकार था। उस समय की स्त्री साधारणतः अपने देवर से विवाह करती थी। कुछ बातों में स्त्री का स्तर, बाद में शूद्र के समान हो गया । परिवार में पुत्रियों की अपेक्षा पुत्रों का अधिक मान सम्मान होने लगा।

विवाह प्रणालियां-

महाभारत काल में भारत में शादी की अनेक प्रणालियां प्रचलित थी। जिनमें कुछ अति प्रमुख थे जिनके बारे में धर्मग्रन्थ में लिखा गया है। धर्मग्रन्थों

में विशेषतः ब्रह्म विवाह, प्रजापति विवाह, प्रेम विवाह, असुर विवाह, देव विवाह, गंधर्व विवाह, राक्षस विवाह, पिशाच विवाह ये सभी ऐसे है जिनके उल्लेख धर्मग्रन्थों में मिलते हैं।

शिक्षा-

महाभारत काल में शिक्षा विकसित हो गई थी। उपनयन संस्कार द्वारा जब बच्चे ब्रह्मचर्य आश्रम में भेजे जाते थे । बच्चे गुरु के आश्रम में रहकर ही सारी विद्या प्राप्त करते थे । गुरुकुल में रहते हुए उन्हें गुरु की सेवा करनी होती थी। हवन के लिए लकड़ियाँ तोड़ कर लाना, चूल्हा जलाना, भिक्षा माँगना आदि कार्य विद्यार्थी को करने होते थे। उस समय विद्यार्थी विना किसी कोष शुल्क के पढ़ते थे। क्योंकि उस काल में विद्या को शिक्षा की दन्त के श्रेणी में रखा जाता था। सामान्यतः उस समय भाषा ,व्याकरण, सामान्य गणित के साथ-साथ नैतिक शिक्षा भी दी जाती थी। राज परिवार के सदस्यों को सामान्य शिक्षा के अतिरिक्त अस्त्र-शस्त्र चलाने की भी शिक्षा गुरु ही दिया करते थे ।

परवर्ती ग्रन्थों के लिये प्रेरणास्रोत-

महाभारत एक बहुत विशालकाय ग्रन्थ है जिसको आधार बनाकर कवियों ने विभिन्न विषयों को लेकर नाटक, महाकाव्य एवं चम्पूकाव्य इत्यादि के रूप में प्रस्तुत किया है जिनमें से कुछ यहां वर्णित हैं-

महाभारत पर आधारित महाकाव्य -

1. शिशुपालवधम् - माघ
2. नैषधीयचरितम् - श्रीहर्ष
3. किरातार्जुनीयम् - भारवि

महाभारत पर आधारित नाटक-

1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् - कालिदास
2. वेणीसंहार - भट्टनारायण
3. बालभारत - राजशेखर
4. दूतघटोत्कच - भास
5. दूतवाक्य - भास
6. कर्णभार - भास
7. मध्यमव्यायोग - भास
8. पञ्चरात्र - भास
9. ऊरूभङ्ग - भास

महाभारत पर आधारित चम्पूकाव्य-

1. नलचम्पू - त्रिविक्रमभट्ट
2. भारतचम्पू - अनन्तभट्ट
3. पाञ्चालीस्वयम्वरचम्पू - नारायणभट्ट
4. द्रौपदीपरिणयचम्पू - चन्द्रकवि।

साहित्यिक महत्व-

यह काव्यग्रंथ भारत का अनुपम धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक और दार्शनिक ग्रंथ है। विश्व का सबसे लंबा यह साहित्यिक ग्रंथ और महाकाव्य, हिन्दू धर्म के मुख्यतम ग्रंथों में से एक है। इस ग्रन्थ को हिन्दू धर्म में पंचम वेद माना जाता है। यद्यपि इसे साहित्य की सबसे अनुपम कृतियों में से एक माना जाता है, किन्तु आज भी यह ग्रंथ प्रत्येक भारतीय के लिये एक अनुकरणीय स्रोत है। यह कृति प्राचीन भारत के इतिहास की एक गाथा है।

काव्य के रचयिता वेदव्यास जी ने अपने इस अनुपम काव्य में वेदों, वेदांगों और उपनिषदों के गुह्यतम रहस्यों का निरुपण किया हैं। इसके अतिरिक्त इस काव्य में न्याय, शिक्षा, चिकित्सा, ज्योतिष, युद्धनीति, योगशास्त्र, अर्थशास्त्र, वास्तुशास्त्र, शिल्पशास्त्र, कामशास्त्र, खगोलविद्या तथा धर्मशास्त्र का भी विस्तार से वर्णन किया गया है।

महाभारत में प्रमुख आख्यान-

1. **आदिपर्व-** शकुन्तलोपाख्यान, ययात्सुपाख्यान, कचदेवयानी उपाख्यान, कद्रूविनतोपाख्यान।
2. **सभापर्व-** शिशुपालोपाख्यान,
3. **वन-** नलोपाख्यान, रामोपाख्यान, शिव्युपाख्यान,मत्स्योपाख्यान सावित्र्युपाख्यान, किरातार्जुनीयम्, नलचम्पू।
4. **उद्योग-** अम्बोपाख्यान।
5. **शल्यपर्व-** ऊरूभङ्ग
- **खिलपर्व-** हरिवंशपुराण।

महाभारत के विशेष सन्दर्भ-

- शान्तिपर्व में बल के अङ्ग है- (6) तथा दुर्गसंख्या - (6)
- श्रीकृष्ण ने दूत बनकर कार्य किया था- **उद्योगपर्व** में।
- माद्री माता थी- नकुल, सहदेव की।
- **'सैवल'** नाम हे- 'शकुनि' का।
- महाभारत युद्ध में पाण्डवों की सेना का प्रमाण था- **'सप्त अक्षौहिणी'**।
- **'वैरोचनि'** नाम है - बलि का।
- द्रोणाचार्य का वध किया था- **धृष्टद्युम्न** ने
- अश्वत्थामा के द्वारा द्रौपदी के पुत्रों का वध वर्णित है – **सौप्तिकपर्व**
- महाभारत कथा कही गयी है - **सौति ऋषि** द्वारा।
- परीक्षित के पितामह- **अर्जुन।**
- कीचक वध वर्णित है- **विराटपर्व** में।

- पाण्डव वनवास के लिये गये थे- **'काम्यक वन'** को।
- **"यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्"** - आदिपर्व।
- भीष्म के प्राण त्याग का वर्णन है- **"अनुशासन पर्व"** में।
- **"अहिंसा परमो धर्मः"**- महाभारत शान्तिपर्व।
- महर्षि वेदव्यास ने 3 वर्षों में महाभारत का निर्माण किया।
- कर्ण के सारथि - **शल्य**।
- अज्ञातकाल में भीम का नाम था - **वल्लभ**
- अज्ञातकाल में द्रौपदी का नाम था - **सौरन्ध्री**

महाभारत की टीकाएं-

विषमश्लोकी	-	विमलवोध
ज्ञानदीपिका	-	देवबोध
निगूढार्थ पदबोधिनी	-	नारायण
लक्षाभरषटीका	-	वादिराज
भारत-भावदीप	-	नीलकण्ठ

॥पुराण॥

पुराण का परिचय-

पुराण, हिन्दुओं के धर्म-सम्बन्धी आख्यान ग्रन्थ हैं, जिनमें संसार - ऋषियों - राजाओं के वृत्तान्त आदि हैं। ये वैदिक काल के बहुत समय बाद के ग्रन्थ हैं, जो स्मृति विभाग में आते हैं। भारतीय जीवन-धारा में जिन ग्रन्थों का महत्त्वपूर्ण स्थान है उनमें पुराण प्राचीन भक्ति-ग्रंथों के रूप में बहुत महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। अठारह पुराणों में अलग-अलग देवी-देवताओं को केन्द्र मानकर पाप और पुण्य, धर्म और अधर्म, कर्म और अकर्म की गाथाएँ कही गयी हैं। कुछ पुराणों में सृष्टि के आरम्भ से अन्त तक का विवरण दिया गया है।

पुराण शब्द का अर्थ-

'पुराण' का शाब्दिक अर्थ है, **'प्राचीन' या 'पुराना'**। पुराणों की रचना मुख्यतः संस्कृत में हुई है, किन्तु कुछ पुराण क्षेत्रीय भाषाओं में भी रचे गए हैं। हिन्दू और जैन दोनों ही धर्मों के वाङ्मय में पुराण मिलते हैं। पुराणों में वर्णित विषयों की कोई सीमा नहीं है। इसमें **ब्रह्माण्डविद्या, देवी-देवताओं**, राजाओं, नायकों, ऋषि-मुनियों की वंशावली, लोककथाएँ, तीर्थयात्रा, मन्दिर, चिकित्सा, खगोल शास्त्र, व्याकरण, खनिज विज्ञान, हास्य, प्रेमकथाओं के साथ-साथ धर्मशास्त्र और दर्शन का भी वर्णन है। विभिन्न पुराणों की विषय-वस्तु में बहुत अधिक असमानता है। इतना ही नहीं, एक ही पुराण के कई-कई पाण्डुलिपियाँ प्राप्त हुई हैं जो परस्पर भिन्न-भिन्न हैं। हिन्दू पुराणों के रचनाकार अज्ञात हैं और ऐसा लगता है कि कई रचनाकारों ने कई शताब्दियों में इनकी रचना की है। इसके विपरीत जैन पुराण हैं। जैन पुराणों का रचनाकाल और रचनाकारों के नाम बताये जा सकते हैं।

कर्मकाण्ड (वेद) से ज्ञान (उपनिषद) की ओर आते हुए भारतीय मानस में पुराणों के माध्यम से भक्ति की अविरल धारा प्रवाहित हुई है। विकास की इसी प्रक्रिया में 'बहुदेववाद' और निर्गुण ब्रह्म की स्वरूपात्मक व्याख्या से धीरे-धीरे मानस अवतारवाद या सगुण भक्ति की ओर प्रेरित हुआ। पुराणों में वैदिक काल से चले आते हुए सृष्टि आदि संबंधी विचारों, प्राचीन राजाओं और ऋषियों के परंपरागत वृत्तांतों तथा कहानियों आदि के संग्रह के साथ साथ कल्पित कथाओं की विचित्रता और रोचक वर्णनों द्वारा सांप्रदायिक या साधारण उपदेश भी मिलते हैं।
पुराणों में विष्णु, वायु, मत्स्य और भागवत में ऐतिहासिक वृत्त राजाओं की वंशावली आदि के रूप में बहुत-कुछ मिलते हैं। ये वंशावलियाँ यद्यपि बहुत संक्षिप्त हैं और इनमें परस्पर कहीं-कहीं विरोध भी हैं, पर ये वडे काम की हैं। पुराणों की ओर ऐतिहासिकों ने इधर विशेष रूप से ध्यान दिया है ।

पुराण की परिभाषा एवं लक्षण-

'पुराण' का शाब्दिक अर्थ है - 'प्राचीन आख्यान' या 'पुरानी कथा'। **'पुरा'** शब्द का अर्थ है - अनागत एवं अतीत। **'अण'** शब्द का अर्थ होता है - कहना या वतलाना। रघुवंश में पुराण शब्द का अर्थ है **"पुराण पत्रापग मागन्नतरम्"** एवं वैदिक वाङ्मय में **"प्राचीनः वृत्तान्तः"** दिया गया है। सांस्कृतिक अर्थ से हिन्दू संस्कृति के वे विशिष्ट धर्मग्रंथ जिनमें सृष्टि से लेकर प्रलय तक का इतिहास-वर्णन शब्दों से किया गया हो, पुराण कहे जाते है। पुराण शब्द का उल्लेख वैदिक युग के वेद सहित आदितम साहित्य में भी पाया जाता है अतः ये सबसे पुरातन (पुराण) माने जा सकते हैं। अथर्ववेद के अनुसार **"ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह 11.7.2"** अर्थात् पुराणों का आविर्भाव ऋक्, साम, यजुस् और छन्द के साथ ही हुआ था। 'शतपथ ब्राह्मण' (14.3.3.13) में तो पुराणवाग्ङमय को वेद ही कहा गया है। 'छान्दोग्य उपनिषद्' **(इतिहास पुराणं पंचम वेदानांवेदम् 7.1.2)** ने भी पुराण को वेद कहा है। 'बृहदारण्यकोपनिषद्' तथा महाभारत में कहा गया है कि **"इतिहास पुराणाभ्यां वेदार्थमुपवृंहयेत्"** अर्थात् वेद का अर्थविस्तार पुराण के द्वारा करना चाहिये। इनसे यह स्पष्ट है कि वैदिक काल में पुराण तथा इतिहास को समान स्तर पर रखा गया है। अमरकोष आदि प्राचीन कोशों में पुराण के पांच लक्षण माने गये हैं : सर्ग (सृष्टि), प्रतिसर्ग (प्रलय, पुनर्जन्म), वंश (देवता व ऋषि सूचियां), मन्वन्तर (चौदह मनु के काल), और वंशानुचरित (सूर्य चंद्रादि वंशीय चरित)।

**"सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्"** ॥

(1) **सर्ग** – पंचमहाभूत, इंद्रियगण, बुद्धि आदि तत्त्वों की उत्पत्ति का वर्णन,

(2) प्रतिसर्ग – ब्रह्मादिस्थावरांत संपूर्ण सृष्टि के लय का वर्णन,

(3) वंश – सूर्यचंद्रादि वंशों का वर्णन,

(4) मन्वन्तर – मनु, मनुपुत्र, देव, सप्तर्षि, इंद्र और भगवान् के अवतारों का वर्णन,

(5) वंशानुचरित – प्रति वंश के प्रसिद्ध पुरुषों का वर्णन।

माना जाता है कि सृष्टि के रचनाकर्त्ता ब्रह्माजी ने सर्वप्रथम जिस प्राचीनतम धर्मग्रंथ की रचना की, उसे पुराण के नाम से जाना जाता है। पुराणों में देवी-देवताओं के अनेक स्वरूपों को लेकर एक विस्तृत विवरण मिलता है। पुराणों में सत्य की प्रतिष्ठा के अतिरिक्त दुष्कर्म का विस्तृत चित्रण भी पुराणकारों ने किया है। पुराणकारों ने देवताओं की दुष्प्रवृत्तियों का व्यापक विवरण दिया है लेकिन मूल उद्देश्य सद्भावना का विकास और सत्य की प्रतिष्ठा ही है। केवल 5 पुराणों - **मत्स्य, वायु, विष्णु, ब्रह्माण्ड एवं भागवत** में ही राजाओं की वंशावली पायी जाती है।

पुराण के विभिन्न लक्षण-

- "पुरा नवं भवतीति पुराणं" । **(ब्रह्माण्ड पुराण)**
- "यस्मात् पुरा ह्यनक्तीदं पुराणं तेन तत् स्मृतम्।
  निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापैः प्रमुच्यते" ।। **(वायुपुराण)**
- "पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन तत् स्मृतम्" । **(पद्मपुराण)**

अष्टादश पुराण-

पुराणों की संख्या प्राचीन काल से अठारह मानी गयी है। पुराणों में एक विचित्रता यह है कि प्रायः प्रत्येक पुराण में अठारहों पुराणों के नाम और उनकी श्लोक-संख्या का उल्लेख है। देवीभागवत में नाम के आरंभिक अक्षर के निर्देशानुसार 18 पुराणों की गणना इस प्रकार की गयी हैं-

"मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम्।
अनापलिंगकूस्कानि पुराणानि पृथक्पृथक्"॥

मद्वयम्- 1. मत्स्य पुराण, 2. मार्कण्डेय पुराण।

भद्वयम्- 3. भागवत पुराण, 4. भविष्य पुराण।

ब्रत्रयम्- 5. ब्रह्म पुराण 6. ब्रह्मवैवर्त पुराण 7. ब्रह्माण्ड पुराण।

वचतुष्टयम्- 8. विष्णु पुराण 9. वायु पुराण 10. वाराह पुराण 11. वामन पुराण।

अ- 12. अग्नि पुराण	**ना-** 13-नारद पुराण
प- 14-पद्म पुराण	**लिं-** 15-लिङ्ग पुराण
ग- 16-गरुड पुराण	**कू-** 17-कूर्म पुराण
स्- 18-स्कन्द पुराण	

1. मत्स्य (291 अध्याय)	2. मार्कण्डेय
3. भविष्य (5 पर्व)	4. भागवत (12 स्कन्ध)
5. ब्रह्माण्ड (4 पाद)	6. ब्रह्मवैवर्त (4 खण्ड)
7. ब्रह्म (245 अध्याय)	8. वामन (15 अध्याय)
9. वराह (218 अध्याय)	10. विष्णु (6 खण्ड)
11. वायु (शिव)(4खण्ड)	12.अग्नि (383 अध्याय)
13. नारद (2 भाग)	14. पद्म (6 खण्ड)
15. लिङ्ग (2 भाग)	16. गरुड़ (2 खण्ड)
17. कूर्म	18. स्कन्द (6 संहिता,7 खण्ड)

पुराण के नाम और उनका महत्त्व-

(1) ब्रह्मपुराण-

इसे "आदिपुराण" भी कहा जाता है। प्राचीन माने गए सभी पुराणों में इसका उल्लेख है। इसमें श्लोकों की संख्या अलग- 2 प्रमाणों से भिन्न-भिन्न है। 10,000...12,000 और 13,787 ये विभिन्न संख्याएँ मिलती है। इसका प्रवचन नैमिषारण्य में 'लोमहर्षण' ऋषि ने किया था। इसमें सृष्टि, मनु की उत्पत्ति, उनके वंश का वर्णन, देवों और प्राणियों की उत्पत्ति का वर्णन है। इस पुराण में विभिन्न तीर्थों का विस्तार से वर्णन है। इसमें कुल 245 अध्याय हैं। इसका एक परिशिष्ट सौर उपपुराण भी है, जिसमें उडीसा के 'कोणार्क' मन्दिर का वर्णन है।

(2) पद्मपुराण-

इसमें कुल 641 अध्याय और 48,000 श्लोक हैं। मत्स्यपुराण के अनुसार इसमें 55,000 और ब्रह्मपुराण के अनुसार इसमें 59,000 श्लोक थे। इसमें कुल खण्ड हे-

(क) सृष्टिखण्डः- 5 पर्व,

(ख) भूमिखण्ड,

(ग) स्वर्गखण्ड,

(घ) पातालखण्ड

(ङ) उत्तरखण्ड।

इसका प्रवचन नैमिषारण्य में सूत उग्रश्रवा ने किया था। ये लोमहर्षण के पुत्र थे। इस पुराण में अनेक विषयों के साथ विष्णुभक्ति के अनेक पक्षों पर प्रकाश डाला गया है। इसका विकास 5 वीं शताब्दी माना जाता है।

(3) विष्णुपुराण-

पुराण के पाँचों लक्षण इसमें घटते हैं। इसमें विष्णु को परम देवता के रूप में निरूपित किया गया है। इसमें कुल छः खण्ड हैं, 126 अध्याय, श्लोक 23,000 या 24,000 या 6,000 हैं। इस पुराण के प्रवक्ता 'पाराशर' ऋषि और श्रोता 'मैत्रेय' हैं।

(4) वायुपुराण-

इसमें विशेषकर शिव का वर्णन किया गया है, अतः इस कारण इसे "शिवपुराण" भी कहा जाता है। एक शिवपुराण पृथक् भी है। इसमें 112

अध्याय, 11,000 श्लोक हैं। इस पुराण का प्रचलन मगध-क्षेत्र में बहुत था। इसमें गया-माहात्म्य है। इसमें कुल चार भाग है-

(क) प्रक्रियापादः- (अध्याय-1-6),

(ख) उपोद्घातः- (अध्याय-7-64),

(ग) अनुषङ्गपादः- (अध्याय-65-99),

(घ) उपसंहारपादः- (अध्याय-100-112)।

इसमें सृष्टिक्रम, भूगोल, खगोल, युगों, ऋषियों तथा तीर्थों का वर्णन एवं राजवंशों, ऋषिवंशों, वेद की शाखाओं, संगीतशास्त्र और शिवभक्ति का विस्तृत निरूपण है। इसमें भी पुराण के पञ्चलक्षण मिलते हैं।

(5) भागवतपुराण-

यह सर्वाधिक प्रचलित पुराण है। इस पुराण का सप्ताह-वाचन-पारायण भी होता है। इसे सभी दर्शनों का सार **"निगमकल्पतरोर्गलितम्"** और विद्वानों का परीक्षास्थल **"विद्यावतां भागवते परीक्षा"** माना जाता है। इसमें श्रीकृष्ण की भक्ति के बारे में बताया गया है। इसमें कुल 12 स्कन्ध, 335 अध्याय और 18,000 श्लोक हैं। कुछ विद्वान् इसे **"देवीभागवतपुराण"** भी कहते हैं, क्योंकि इसमें देवी (शक्ति) का विस्तृत वर्णन हैं। इसका रचनाकाल 6 वीं शताब्दी माना जाता है।

(6) नारद (बृहन्नारदीय) पुराण-

इसे महापुराण भी कहा जाता है। इसमें पुराण के 5 लक्षण घटित नहीं होते हैं। इसमें वैष्णवों के उत्सवों और व्रतों का वर्णन है। इसमें 2 खण्ड हैः-

(क) पूर्व खण्ड - (125 अध्याय)। **(ख) उत्तर-खण्ड-** (82 अध्याय)। इसमें 18,000 श्लोक हैं। इसके विषय मोक्ष, धर्म, नक्षत्र, एवं कल्प का निरूपण, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, गृहविचार, मन्त्रसिद्धि,, वर्णाश्रम-धर्म, श्राद्ध, प्रायश्चित्त आदि का वर्णन है।

(7) मार्कण्डेयपुराण-

इसे प्राचीनतम पुराण माना जाता है। इसमें इन्द्र, अग्नि, सूर्य आदि वैदिक देवताओं का वर्णन किया गया है। इसके प्रवक्ता 'मार्कण्डेय' ऋषि और श्रोता 'क्रौष्टुकि' शिष्य हैं। इसमें 138 अध्याय और 7,000 श्लोक हैं। इसमें गृहस्थ-धर्म, श्राद्ध, दिनचर्या, नित्यकर्म, व्रत, उत्सव, अनुसूया की पतिव्रता-कथा, योग, दुर्गा-माहात्म्य आदि विषयों का वर्णन है।

(8) अग्निपुराण-

इसके प्रवक्ता **'अग्नि'** और श्रोता **'वसिष्ठ'** हैं। इसी कारण इसे अग्निपुराण कहा जाता है। इसे भारतीय संस्कृति और विद्याओं का महाकोश माना जाता है। इसमें इस समय 383 अध्याय, 11,500 श्लोक हैं। इसमें विष्णु के अवतारों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त शिवलिंग, दुर्गा, गणेश, सूर्य, प्राणप्रतिष्ठा आदि के अतिरिक्त भूगोल, गणित, फलित-ज्योतिष, विवाह, मृत्यु, शकुनविद्या, वास्तुविद्या, दिनचर्या, नीतिशास्त्र, युद्धविद्या, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, छन्द, काव्य, व्याकरण, कोशनिर्माण आदि नाना विषयों का वर्णन है।

(9) भविष्यपुराण-

इसमें भविष्य की घटनाओं का वर्णन है। इसमें दो खण्ड हैः–

(क) पूर्वार्ध- (अध्याय-41), **(ख) उत्तरार्ध-** (अध्याय़-171) ।

इसमें कुल 15,000 श्लोक हैं । इसमें कुल 5 पर्व हैः-**(क) ब्राह्मपर्व, (ख) विष्णुपर्व, (ग) शिवपर्व, (घ) सूर्यपर्व (ङ) प्रतिसर्गपर्व**। इसमें मुख्यतः ब्राह्मण-धर्म, आचार, वर्णाश्रम-धर्म आदि विषयों का वर्णन है। इसका रचनाकाल 500 ई. से 1200 ई. माना जाता है।

(10) ब्रह्मवैवर्तपुराण-

यह 'वैष्णव' पुराण है। इसमें श्रीकृष्ण के चरित्र का वर्णन किया गया है। इसमें कुल 18,000 श्लोक है और चार खण्ड हैः-

(क) ब्रह्म, (ख) प्रकृति,

(ग) गणेश (घ) श्रीकृष्ण-जन्म।

(11) लिङ्गपुराण-

इसमें शिव की उपासना का वर्णन है। इसमें शिव के 28 अवतारों की कथाएँ दी गई हैं। इसमें 11,000 श्लोक और 163 अध्याय हैं। इसे पूर्व और उत्तर नाम से दो भागों में विभाजित किया गया है। इसका रचनाकाल आठवीं-नवीं शताब्दी माना जाता है। यह पुराण भी पुराण के लक्षणों पर खरा नहीं उतरता है।

(12) वराहपुराण-

इसमें विष्णु के वराह-अवतार का वर्णन है। पाताललोक से पृथिवी का उद्धार करके वराह ने इस पुराण का प्रवचन किया था। इसमें 24,000 श्लोक थे। सम्प्रति केवल 11,000 ही प्राप्त होते हैं और 217 अध्याय हैं।

(13) स्कन्दपुराण-

यह पुराण शिव के पुत्र स्कन्द (कार्तिकेय, सुब्रह्मण्य) के नाम पर है। यह सबसे बडा पुराण है। इसमें कुल 81,000 श्लोक हैं। इसमें दो खण्ड हैं। इसमें छः संहिताएँ हैं- **सनत्कुमार, सूत, शंकर, वैष्णव, ब्रह्म तथा सौर**। सूतसंहिता पर 'माधवाचार्य' ने **"तात्पर्य-दीपिका"** नामक विस्तृत टीका लिखी है। इस संहिता के अन्त में दो गीताएँ भी हैं-

1. ब्रह्मगीता- (अध्याय-12), **2. सूतगीता-** (अध्याय-8)।

इस पुराण में सात खण्ड हैं-

(क) माहेश्वर, (ख) वैष्णव,

(ग) ब्रह्म, (घ) काशी,

(ङ) अवन्ती, (रेवा), (च) नागर (ताप्ती)

(छ) प्रभास-खण्ड।

काशीखण्ड में **"गंगासहस्रनाम"** स्तोत्र भी है। इसका रचनाकाल 7 वीं शताब्दी है। इसमें भी पुराण के 5 लक्षण का निर्देश नहीं मिलता है।

(14) वामनपुराण-

इसमें विष्णु के वामन-अवतार का वर्णन है। इसमें 95 अध्याय और 10,000 श्लोक हैं । इसका रचनाकाल 9 वीं से 10 वीं शताब्दी माना जाता है। इसमें शिव महात्म्य, शैव तीर्थ, उमा-शिव विवाह, गणेश उत्पत्ति, कार्तिकेय चरित इत्यादि वर्णन हैं

(15) कूर्मपुराण-

इसमें विष्णु के कूर्म-अवतार का वर्णन किया गया है। इसमें चार संहिताएँ है-

(क) ब्राह्मी, (ख) भागवती,

(ग) सौरी (घ) वैष्णवी ।

सम्प्रति केवल ब्राह्मी-संहिता ही मिलती है। इसमें 6,000 श्लोक हैं। इसके दो भाग हैं, जिसमें 51 और 44 अध्याय हैं। इसमें पुराण के पाँचों लक्षण मिलते हैं। इस पुराण में **'ईश्वरगीता'** और **'व्यासगीता'** भी है। इसका रचनाकाल छठी शताब्दी माना गया है।

(16) मत्स्यपुराण-

इसमें पुराण के पाँचों लक्षण घटित होते हैं। इसमें 291 अध्याय और 14,000 श्लोक हैं। प्राचीन संस्करणों में 19,000 श्लोक मिलते हैं। इसमें 'जलप्रलय' का वर्णन हैं। इसमें कलियुग के राजाओं की सूची दी गई है। इसका रचनाकाल तीसरी शताब्दी माना जाता है।

(17) गरुडपुराण-

यह वैष्णवपुराण है। इसके प्रवक्ता 'विष्णु' और श्रोता 'गरुड' हैं, इसे गरुड ने कश्यप को सुनाया था। इसमें विष्णुपूजा का वर्णन है। इसके दो खण्ड हैं, जिसमें पूर्वखण्ड में 229 और उत्तरखण्ड में 35 अध्याय और 18,000 श्लोक हैं। इसका पूर्वखण्ड 'विश्वकोशात्मक' माना जाता है।

(18) ब्रह्माण्डपुराण-

इसमें 109 अध्याय तथा 12,000 श्लोक है। इसमें चार पाद है-

(क) प्रक्रिया, (ख) अनुषङ्ग,

(ग) उपोद्घात् (घ) उपसंहार,

इसकी रचना 400 ई.- 600 ई. मानी जाती है।

॥उपपुराण॥

उपपुराण-

1. सनत्कुमार	2. नारसिंह	3. स्कान्द
4. शिवधर्म	5. आश्चर्य	6. नारदीय
7. कापिल	8. कल्कि	9. औशनस
10. ब्रह्माण्ड	11. वारुण	12. कालिका
13. माहेश्वर	14. साम्ब	15. सौर
16. पाराशर	17. मारीच	18. भार्गव

प्रमुख पुराणों का परिचय-

पुराणों में सबसे पुराना 'विष्णुपुराण' ही प्रतीत होता है। उसमें सांप्रदायिक खींचतान और रागद्वेष नहीं है। पुराण के पाँचो लक्षण भी उसपर ठीक-ठीक घटते हैं। उसमें सृष्टि की उत्पत्ति और लय, मन्वंतरों, भरतादि खंडों और सूर्यादि लोकों, वेदों की शाखाओं तथा वेदव्यास द्वारा उनके विभाग, सूर्य वंश, चंद्र वंश आदि का वर्णन है। कलि के राजाओं में मगध के मौर्य राजाओं तथा गुप्तवंश के राजाओं तक का उल्लेख है। श्रीकृष्ण की लीलाओं का भी वर्णन है पर बिल्कुल उस रूप में नहीं जिस रूप में भागवत में है।

वायुपुराण के चार पाद है, जिनमें सृष्टि की उत्पत्ति, कल्पों ओर मन्वन्तरों, वैदिक ऋषियों की गाथाओं, दक्ष प्रजापति की कन्याओं से भिन्न भिन्न जीवोत्पति, सूर्यवंशी और चंद्रवंशी राजाओं की वंशावली तथा कलि के राजाओं का प्रायः विष्णुपुराण के अनुसार वर्णन है। मत्स्यपुराण में मन्वंतरों और राजवंशावलियों के अतिरिक्त वर्णाश्रम धर्म का बडे विस्तार के साथ वर्णन है और मत्स्यावतार की पूरी कथा है। इसमें मय आदि असुरों के संहार, मातृलोक, पितृलोक, मूर्ति और मंदिर बनाने की विधि का वर्णन विशेष ढंग का है।

श्रीमद्भागवत का प्रचार सबसे अधिक है क्योंकि उसमें भक्ति के माहात्म्य और श्रीकृष्ण की लीलाओं का विस्तृत वर्णन है। नौ स्कंधों के भीतर तो जीवब्रह्म की एकता, भक्ति का महत्व, सृष्टिलीला, कपिलदेव का जन्म और अपनी माता के प्रति वैष्णव भावानुसार सांख्यशास्त्र का उपदेश, मन्वंतर और ऋषिवंशावली, अवतार जिसमें ऋषभदेव का भी प्रसंग है, ध्रुव, वेणु, पृथु, प्रह्लाद इत्यादि की कथा, समुद्रमंथन आदि अनेक विषय हैं। पर सबसे बड़ा दशम स्कंध है जिसमें कृष्ण की लीला का विस्तार से वर्णन है। इसी स्कंध के आधार पर शृंगार और भक्तिरस से पूर्ण कृष्णचरित् संबंधी संस्कृत और भाषा के अनेक ग्रंथ बने हैं। एकादश स्कंध में यादवों के नाश और बारहवें में कलियुग के राजाओं के राजत्व का वर्णन है। भागवत की लेखनशैली अन्य पुराणों से भिन्न है। इसकी भाषा पांडित्यपूर्ण और साहित्य संबंधी चमत्कारों से भरी हुई है, इससे इसकी रचना कुछ पीछे की मानी जाती है। अग्निपुराण एक विलक्षण पुराण है जिसमें राजवंशावलियों तथा संक्षिप्त कथाओं के अतिरिक्त धर्मशास्त्र, राजनीति, राजधर्म, प्रजाधर्म, आयुर्वेद, व्याकरण, रस, अलंकार,

शस्त्र-विद्या आदि अनेक विषय हैं। इसमें 'तंत्रदीक्षा' का भी विस्तृत प्रकरण है। कलि के राजाओं की वंशावली विक्रम तक आई है, अवतार प्रसंग भी है। इसी प्रकार और पुराणों में भी कथाएँ हैं। विष्णुपुराण के अतिरिक्त और पुराण जो आजकल मिलते हैं उनके विषय में संदेह होता है कि वे असल पुराणों के न मिलने पर पीछे से न बनाए गए हों। कई एक पुराण तो मत-मतांतरों और संप्रदायों के राग-द्वेष से भरे हैं। कोई किसी देवता की प्रधानता स्थापित करता है, कोई किसी देवता की प्रधानता स्थापित करता है, कोई किसी की। ब्रह्मवैवर्त पुराण का जो परिचय मत्स्यपुराण में दिया गया है उसके अनुसार उसमें रथंतर कल्प और वराह अवतार की कथा होनी चाहिए पर जो ब्रह्मवैवर्त आजकल मिलता है उसमें यह कथा नहीं है। कृष्ण के वृंदावन के रास से जिन भक्तों की तृप्ति नहीं हुई थी उनके लिये गोलोक में सदा होनेवाले रास का उसमें वर्णन है। आजकल का यह ब्रह्मवैवर्त मुसलमानों के आने के कई सौ वर्ष पीछे का है क्योंकि इसमें 'जुलाहा' जाति की उत्पत्ति का भी उल्लेख है -- **म्लेच्छात् कुविंदकन्यायां जोला जातिर्बभूव ह।** (10, 121)। ब्रह्मपुराण में तीर्थों और उनके माहात्म्य का वर्णन बहुत अधिक हैं, अनन्त वासुदेव और पुरुषोत्तम (जगन्नाथ) माहात्म्य तथा और बहुत से ऐसे तीर्थों के माहात्म्य लिखे गए हैं जो प्राचीन नहीं कहे जा सकते। 'पुरुषोत्तमप्रासाद' से अवश्य जगन्नाथ जी के विशाल मंदिर की ओर ही इशारा है जिसे गांगेय वंश के राजा चोड़गंग (सन् 1077 ई0) ने बनवाया था। मत्स्यपुराण में दिए हुए लक्षण आजकल के पद्मपुराण में भी पूरे नहीं मिलते हैं। वैष्णव सांप्रदायिकों के द्वेष की इसमें बहुत सी बातें हैं। जैसे, पाखण्डिलक्षण, मायावादनिंदा, तामसशास्त्र, पुराणवर्णन इत्यादि। वैशेषिक, न्याय, सांख्य और चार्वाक 'तामस शास्त्र' कहे गए हैं और यह भी बताया गया है। इसी प्रकार मत्स्य, कूर्म, लिंग, शिव, स्कंद और अग्नि तामस पुराण कहे गए हैं। सारंश यह कि अधिकांश पुराणों का वर्तमान रूप हजार वर्ष के भीतर का है। सबके सब पुराण सांप्रदायिक है, इसमें भी कोई संदेह नहीं है। कई पुराण (जैसे, विष्णु.) बहुत कुछ अपने प्राचीन रूप में मिलते हैं पर उनमें भी सांप्रदायिकों ने बहुत सी बातें बढ़ा दी हैं।

पुराणों का काल एवं रचयिता-

यद्यपि आजकल जो पुराण मिलते हैं उनमें से अधिकतर पीछे से बने हुए या प्रक्षिप्त विषयों से भरे हुए हैं तथापि पुराण बहुत प्राचीन काल से प्रचलित थे। बृहदारण्यक उपनिषद् और शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि गीली लकड़ी से जैसे धुआँ अलग अलग निकलता है वैसे ही महान भूत के निःश्वास से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वांगिरस, इतिहास, पुराणविद्या, उपनिषद, श्लोक, सूत्र, व्याख्यान और अनुव्याख्यान हुए। छान्दोग्य उपनिषद् में भी लिखा है कि इतिहास पुराण वेदों में पाँचवाँ वेद है। अत्यंत प्राचीन काल में वेदों के साथ पुराण भी प्रचलित थे जो यज्ञ आदि के अवसरों पर कहे जाते थे। कई बातें जो पुराण के लक्षणों में हैं, वेदों में भी हैं। जैसे, पहले असत् था और कुछ नहीं था यह सर्ग या सृष्टितत्व है; देवासुर संग्राम, उर्वशी पुरूरवा संवाद इतिहास है। महाभारत के आदि पर्व में (1/233) भी अनेक राजाओं के नाम और कुछ विषय गिनाकर कहा गया है कि इनके वृत्तांत विद्वान सत्कवियों द्वारा पुराण में कहे गए हैं। इससे कहा जा सकता है कि महाभारत के रचनाकाल में भी पुराण थे। मनुस्मृति में भी लिखा है कि पितृकार्यों में वेद, धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराण आदि सुनाने चाहिए।

अब प्रश्न यह होता है कि पुराण हैं किसके बनाए। शिवपुराण के अंतर्गत रेवा माहात्म्य में लिखा है कि अठारहों पुराणों के वक्ता 'सत्यवतीसुत' 'व्यास' हैं। यही बात जन साधारण में प्रचलित है। पर मत्स्यपुराण में स्पष्ट लिखा है कि पहले पुराण एक ही था, उसी से 18 पुराण हुए (53.4)। ब्रह्मांड पुराण में लिखा है कि वेदव्यास ने एक 'पुराणसंहिता' का संकलन किया था। इसके आगे की बात का पता विष्णु पुराण से लगता है। उसमें लिखा है कि व्यास का एक **' लोमहर्षण'** नाम का शिष्य था जो सूति जाति का था। व्यास जी ने अपनी पुराण संहिता उसी के हाथ में दी। लोमहर्षण के छह शिष्य थे **सुमति, अग्निवर्चा, मित्रयु, शांशपायन, अकृतव्रण और सावर्णी**। इनमें से अकृतव्रण, सावर्णी और शांशपायन ने लोमहर्षण से पढ़ी हुई पुराणसंहिता के आधार पर और एक एक संहिता बनाई। वेदव्यास ने जिस प्रकार मंत्रों का संग्रहकर उन का संहिताओं में विभाग किया उसी प्रकार पुराण के नाम से चले आते हुए वृत्तों का संग्रह कर पुराणसंहिता का संकलन किया। उसी एक संहिता को लेकर सुत के शिष्यों के तीन और संहिताएँ बनाई। इन्हीं संहिताओं के आधार पर अठारह पुराण बने होंगे।

पौराणिक सृष्टि विज्ञान-

पौराणिक सृष्टि विज्ञान तथा सांख्य सृष्टि सिद्धान्त दोनों एक दूसरे से सम्बंधित जरूर है, मगर आश्रित नहीं है। विभिन्न पुराणों में "नवविधि(नवधा)" सृष्टि का वर्णन प्राप्त होता है-

(क) पद्म पुराण

इसके 'सृष्टिखंड' में तृतीय अध्याय तथा 76 से 81 अध्याय तक सृष्टि रचना की नवधा प्रक्रिया वर्णित है।

जो इस प्रकार है-

1. प्राकृत सर्ग- यह 3 है।
2. वैकृत सर्ग- यह 5 है।
3. प्राकृत-वैकृत सर्ग- यह एक है।

इस प्रकार 3+5+1 कुल 9 सर्ग हुए जिन पे पूरी सृष्टि प्रक्रिया आधारित है ।

1. ब्रह्मोत्पत्ति
2. पंचतन्मात्राओं की उत्पत्ति
3. इन्द्रियादि इसको "वैकारिकी" भी कहा जाता है।
4. प्रकृति,बुद्धि यह मुख्य सृष्टि कही जाती है।

5. तिर्यग-योनि

6. देवता

7. मनुषी

8. श्रुति(वेद मन्त्र) इसको अनुग्रह कहा जाता है।

9. सनक-सनंदन,सनातन,सनत्कुमार इसको उभयात्मक/कौमार कहा जाता है।

(ख) विष्णुपुराण

इसमें भी अग्नि तथा पद्म पुराण की प्रक्रिया को माना गया है। इसमें द्वितीय सर्ग को "भूत सर्ग" कहा गया है। इसमें निम्नानुसार सृष्टि प्रक्रिया वर्णित है-

1. संक्षिप्त सृष्टि वर्णन (द्वितीय अध्याय)
2. शक्ति, ब्रह्मा की आयु व काल विभाग (तृतीय अध्याय)
3. वाराह अवतार (चतुर्थ अध्याय)
4. सृष्टि विस्तार और अविद्या की सृष्टि (पंचम अध्याय)

(ग) श्रीमद् भागवत महापुराण

'भागवत' के **"तृतीय स्कंध"** के दशम अध्याय में सृष्टि प्रक्रिया वर्णित है। इसमें प्राकृत-वैकृत सर्ग को नहीं माना गया है परंतु "नवधा सृष्टि प्रक्रिया" का सिद्धान्त स्वीकार किया गया है ।

जो इस प्रकार है-

1. प्राकृत सर्ग-

महत्तत्व, अहंकार, भूतानि(तन्मात्राणि), इन्द्रियादि, देव, तम

2. वैकृत सर्ग

वृक्ष, तिर्यक, मनुष्य

इस प्रकार 6+3=9

(घ) मनुस्मृति

मनुस्मृति के प्रथम अध्याय में लोक व प्राण सृष्टि का वर्णन है। विषयप्रतिपादन के लिये सृष्टि प्रक्रिया को सुविधानुसार चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है ।

1.आदिसृष्टि

दक्ष से पूर्व- पूर्ववर्तिनी (मानसी)

दक्ष के अनन्तर- मैथुनी

2. लोक/भूत सृष्टि

सूर्य,चंद्र,पृथ्वी,वायु व आकाश इन पश्चमण्डलों की सृष्टि।

3. प्राणि सृष्टि

असुर,सुर, पित्तर, मनुष्यादियों की सृष्टि

4. आध्यात्म/अनुग्रह सृष्टि

श्रुति,उपनिषद तथा शास्त्रों की सृष्टि।

पौराणिक आख्यान-

पुराणोक्त आख्यान पुराण वाङ्मय का विस्तार एवं उसके अन्तर्गत आये हुए विषयों के प्रकार,संक्षित परिचय के लिए भी एक प्रदीर्घ विषय होता है । परंपरानुसार पुराणों का जो क्रम माना जाता है तद्नुसार यहाँ संकेत दिया गया है। यहाँ अध्याय संख्या का निर्देश किया गया है।

1. ब्रह्मपुराण- कुल अध्याय 245

(1) पार्वती उपाख्यान (अध्याय 30-50)

(2) श्रीकृष्ण चरित्र(अध्याय 180-212)

2. पद्मपुराण- कुल अध्याय -641

(1) समुद्र मंथन, (2) वृत्रासुरसंग्राम, (3)वामनावतार, (4) मार्कण्डेय एवं कार्तिकेय की उत्पत्ति, (5) रामचरित्र, (6) तारकासुरवध, (7) स्कन्द विवाह, (8) विष्णु चरित्र (सृष्टिखण्ड पंचमपर्व), (9) सोमशर्मा की कथा, (10) सकुला की कथा, (11) च्यवन का आख्यान (भूमिखण्ड), (12) शकुन्तलोपाख्यान, (13) उर्वशी- पुरुरवा उपाख्यान, (स्वर्गखण्ड), (14) रामायण कथा, (15) श्रृंगी ऋषि की कथा, (16) उत्तर रामचरित्र की कथा, (17) भागवत महिमाख्यान (पातालखण्ड), (18) रामकथा, (19) कृष्णकथा,

॥श्रीमद्भगवद्गीता॥

श्रीमद्भगवद् गीता उद्धृत् है - महाभारत के **'भीष्मपर्व'** से।

श्रीमद्भगवद् गीता में कुल अध्याय - 18,

गीता के सम्पूर्ण अध्यायों के नाम -

प्रथम अध्याय - अर्जुन विषाद योग,

द्वितीय अध्याय - सांख्य योग

तृतीय अध्याय - कर्म योग

चतुर्थ अध्याय - ज्ञानकर्म सन्न्यास योग

पंचम अध्याय - कर्म सन्न्यास योग

षष्ठम अध्याय - आत्मसंयम योग

सप्तम अध्याय - ज्ञानविज्ञान योग

अष्टम अध्याय - अक्षरब्रह्म योग

नवम अध्याय - राजविद्याराजगुह्य योग

दशम अध्याय - विभूति योग

एकादश अध्याय - विश्वरुप दर्शन योग

द्वादश अध्याय - भक्तियोग

त्रयोदश अध्याय – क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभाग योग

चतुर्दश अध्याय – गुणत्रयविभाग योग

पंचदश अध्याय - पुरुषोत्तमयोग

षोडश अध्याय - दैवासुरसम्पदविभाग योग

सप्तदश अध्याय - श्रद्धात्रयविभाग योग

अष्टादश अध्याय - मोक्षसन्न्यास योग

स्मरणार्थ-

**"असंख्यकर्मज्ञकर्मसैन्य, आत्मज्ञानाक्षरं राजम्।
विभूविश्वभक्तिक्षेत्रं गुणपुरुषदेव श्रद्धामक्षम्"।।**

गीता के विशिष्ट सन्दर्भ-

- गीता महाभारत के किस पर्व से गृहीत है - **भीष्म पर्व,**
- भवगदगीता के 18वें अध्याय की संज्ञा- **एकाध्यायी गीता,**
- संस्कृत वाङ्मय में कुल गीताग्रन्थ- **36,**
- गीता का प्रथम श्लोक- **धर्मक्षेत्रे.....,**
- गीता का अन्तिम श्लोक- **यत्र योगेश्वरः कृष्णो...,**
- किस अध्याय में अधिक श्लोक - **18 वे में 78 श्लोक,**
- किस अध्याय में सबसे कम श्लोक- **15, 12 वें में 20 श्लोक,**
- गीता में कुल श्लोक - **700 है,**
- गीता पर माधवाचार्य का भाष्य- **गीता भाष्य,**
- गीतानुसार युद्ध में प्रथम शंखनाद कर्ता- **भीष्म,**
- कृष्ण का शंख – **पांचजन्य,**
- युधिष्ठिर का शंख- **अनन्त विजय,**
- भीम का शंख – **पौण्ड्,**
- अर्जुन का शंख- **देवदत्त,**
- नकुल का शंख – **सुघोष,**
- सहदेव का शंख- **मणिपुष्पक,**
- पाण्डव सेना का व्यूह रचयिता- **धृष्टधुम्न,**
- 'चातुर्वर्ण्यमया सृष्टं'- **चौथा अध्याय,**
- सर्वदेवमयी गीता कहाँ से गृहीत है- **स्कन्द ग्रन्थ,**
- गीता सुगीता कर्त्तव्या- **महाभारत,**
- सर्वशास्त्रमयी गीता – **महाभारत,**
- कौरव सेना का परिमाण- **13 अक्षौहिणी,**
- पाण्डव सेना का परिमाण- **7 अक्षोहिणी,**
- आनन्द गीता – **अरविन्द,**

गीता टीकाएं-

1. नीलकण्ठी (चतुर्धरी)	-	नीलकण्ठ
2. श्रीधरी	-	श्रीधराचार्य
3. गूढार्थदीपिका	-	मधुसूदन सरस्वती
4. भाष्योत्कर्षदीपिका	-	धनपति

"तद् इदं गीताशास्त्रं समस्तवेदार्थसारसंग्रहभूतं दुर्विज्ञेयम्" । (शंकर)
**"सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः
पार्थो वत्स सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्"।।**

प्रमुख स्मृतियों का परिचय-

1. पराशर स्मृति-

समय- (1-5 शताब्दी, काणे के अनुसार)
महाभारत के अनुसार पराशर वशिष्ठ ऋषि के पौत्र थे।
पराशर स्मृति में मनु के उद्धरण प्राप्त होते हैं। मनु के अतिरिक्त इसमें **उशनस, प्रजापति, शङ्ख** आदि धर्मशास्त्रकारों का उल्लेख हैं। **मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृति, चन्द्रिका, हेमाद्रि** आदि अनेक ग्रन्थों में पराशर के उद्धरण प्राप्त होते हैं।
अध्याय- (12),**काण्ड-** (3) 1. आचार, 2. व्यवहार 3. प्रायश्चित।
माधवाचार्य- पराशरमाधवी टीका।

2. नारद स्मृति-

समय- (300 ई. काणे के अनुसार)
प्रकरण- 18, **श्लोक-** 1028,
नारद स्मृति के भाष्यकार- **असहाय** (इनका भाष्य उपलब्ध नहीं है।)

3. कात्यायन स्मृति-

समय- (4-6 शताब्दी काणे के अनुसार) **प्रतिहारसूत्रम्** (अन्य ग्रन्थ)
जीवानन्द संग्रह में प्रकाशित कात्यायन स्मृति ग्रन्थ के अनुसार इसमें-
प्रपाठक- 3, **खण्ड-** 29, **श्लोक-** 500
इस ग्रन्थ को कात्यायन का **'कर्मप्रदीप'** कहते हैं। कात्यायन ने **'स्त्रीधन'** को मुख्य विषय माना है।

(4) विष्णु स्मृति-

समय- (ई.पू. 300.100 काणे) (कृष्ण यजुर्वेद कठ शाखा चरक संहिता से सम्बन्धित) अध्याय - 100,
विष्णुस्मृति के टीकाकार- **नन्दपण्डित- वैजयन्ती टीका।**

(5) बृहस्पति स्मृति-

समय- (200- 400 ई.) - **बृहस्पति**
बृहस्पति स्मृति ग्रन्थ की रचना **'व्यवहार'** प्रधान है।
'डॉ. जाली' द्वारा सम्पादित वृहस्पति स्मृति में श्लोक है। - 711,

(6) हारीत स्मृति-

समय- (400-700 ई.)
इसमें 'आचार' पक्ष पर अधिक बल दिया गया है। इसके दो भाग हैं-
(1) लघु हारीत स्मृति (7 अध्याय)
(2) वृद्ध हारीत स्मृति (8 अध्याय)।

(7) गौतम स्मृति-

रचयिता- गौतम, अध्याय - 21

(8) वशिष्ठ स्मृति-

रचयिता- वशिष्ठ, अध्याय- 7, पद्य - 1139

(9) दक्ष स्मृति-

अध्याय- 7, श्लोक- 208

॥अर्थशास्त्र॥

अर्थशास्त्र का सामान्य परिचय-

अर्थशास्त्र, कौटिल्य या चाणक्य (चौथी शती ईसापूर्व) द्वारा रचित संस्कृत का एक ग्रन्थ है। इसमें राज्यव्यवस्था, कृषि, न्याय एवं राजनीति आदि के विभिन्न पहलुओं पर विचार किया गया है। अपने तरह का (राज्य-प्रवन्धन विषयक) यह प्राचीनतम ग्रन्थ है। इसकी शैली उपदेशात्मक और सलाहात्मक (instructional) है।

यह प्राचीन भारतीय राजनीति का प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसके रचनाकार का व्यक्तिनाम विष्णुगुप्त, गोत्रनाम कौटिल्य (कुटिल से व्युत्पत्र) और स्थानीय नाम चाणक्य (पिता चणक होने से) था। अर्थशास्त्र (15.431) में लेखक का स्पष्ट कथन है:

"येन शास्त्रं च शस्त्रं च नन्दराजगता च भूः।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदंकृतम्" ॥

इस ग्रंथ की रचना उन आचार्य ने की जिन्होंने अन्याय तथा कुशासन से क्रुद्ध होकर नन्दों के हाथ में गए हुए शस्त्र, शास्त्र एवं पृथ्वी का शीघ्रता से उद्धार किया था। चाणक्य सम्राट् चंद्रगुप्त मौर्य (321-298 ई.पू.) के महामंत्री थे। उन्होंने चंद्रगुप्त के प्रशासकीय उपयोग के लिए इस ग्रंथ की रचना की थी। यह मुख्यत: सूत्रशैली में लिखा हुआ है और संस्कृत के सूत्रसाहित्य के काल और परंपरा में रखा जा सकता है। यह शास्त्र अनावश्यक विस्तार से रहित, समझने और ग्रहण करने में सरल एवं कौटिल्य द्वारा उन शब्दों में रचा गया है जिनका अर्थ सुनिश्चित हो चुका है।

अर्थशास्त्र में समसामयिक राजनीति, अर्थनीति, विधि, समाजनीति, तथा धर्मादि पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इस विषय के जितने ग्रंथ अभी तक उपलब्ध हैं उनमें से वास्तविक जीवन का चित्रण करने के कारण यह सबसे अधिक मूल्यवान् है। इस शास्त्र के प्रकाश में न केवल धर्म, अर्थ और काम का प्रणयन और पालन होता है अपितु अधर्म, अनर्थ तथा अवांछनीय का शमन भी होता है (अर्थशास्त्र, 15.431)। इस ग्रंथ की महत्ता को देखते हुए कई विद्वानों ने इसके पाठ, भाषांतर, व्याख्या और विवेचन पर बड़े परिश्रम के साथ बहुमूल्य कार्य किया है। **'शामशास्त्री'** और **'गणपति शास्त्री'** इस पर बहुत कार्य किया है। इनके अतिरिक्त यूरोपीय विद्वानों में **'हर्मान जाकोबी'** (ऑन दि अथॉरिटी ऑफ़ कौटिलीय, इं.ए., 1918), **'ए. हिलेब्रांट', डॉ. जॉली, प्रो. ए.बी. कीथ** आदि के नाम आदर के साथ लिए जा सकते हैं।

इसके मुख्य विभाग हैं -

(1) विनयाधिकरण, (2) अध्यक्षप्रचार,
(3) धर्मस्थीयाधिकरण, (4) कंटकशोधन,
(5) योगवृत्ताधिकरण, (6) मण्डलयोन्यधिकरण,
(7) षाड्गुण्य, (8) व्यसनाधिकरण,
(9) अभियास्यत्कर्माधिकरणा, (10) संग्रामाधिकरण,
(11) संघवृत्ताधिकरण, (12) आबलीयसाधिकरण,
(13) दुर्गलम्भोपायाधिकरण, (14) औपनिषदिकाधिकरण
(15) तंत्रयुक्त्यधिकरण।

अधिकरणों के अनेक उपविभाग (15 अधिकरण, 150 अध्याय, 180 उपविभाग तथा 6,000 श्लोक) हैं। कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' के पूर्व और भी कई अर्थशास्त्रों की रचना की गयी थी, यद्यपि उनकी पांडुलिपियाँ उपलब्ध नहीं हैं। भारत में प्राचीन काल से ही अर्थ, काम और धर्म के संयोग और सम्मिलन के लिए प्रयास किये जाते रहे हैं और उसके लिये शास्त्रों, स्मृतियों और पुराणों में विशद् चर्चाएँ की गयी हैं। कौटिल्य ने भी 'अर्थशास्त्र' में अर्थ, काम और धर्म की प्राप्ति के उपायों की व्याख्या की है। वात्स्यायन के 'कामसूत्र' में भी अर्थ, धर्म और काम के संबंध में सूत्रों की रचना की गयी है।

अपने पूर्व अर्थशास्त्रों की रचना की बात स्वयं कौटिल्य ने भी स्वीकार किया है। अपने 'अर्थशास्त्र' में कई सन्दर्भों में उसने **आचार्य बृहस्पति, भारद्वाज, शुक्राचार्य, पराशर, पिशुन, विशालाक्ष** आदि आचार्यों का उल्लेख किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि कौटिल्य के पूर्व शास्त्र दंडनीति कहे जाते थे और वे अर्थशास्त्र के समरूप होते थे। परन्तु जैसा कि अनेक विद्वानों ने स्वीकार किया है कि दंडनीति और अर्थशास्त्र दोनों समरूप नहीं हैं। **'यू. एन. घोषाल'** के कथनानुसार अर्थशास्त्र ज्यादा व्यापक शास्त्र है, जबकि दंडनीति मात्र उसकी शाखा है।

कौटिल्य के पाश्चात् लिखे गये शास्त्र 'नीतिशास्त्र' के नाम से विख्यात हुए, जैसे 'कामंदक नीतिसार'। वैसे कई विद्वानों ने अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र की अपेक्षा ज्यादा व्यापक माना है। परन्तु, अधिकांश विद्वानों की राय में नीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र दोनों समरूप हैं तथा दोनों के विषय क्षेत्र भी एक ही हैं। स्वयं कामंदक ने नीतिशास्त्र और अर्थशास्त्र को समरूप माना है। उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' के पूर्व और उसके बाद भी 'अर्थशास्त्र' जैसे शास्त्रों की रचना की गयी।

॥लिपि॥

परिचय- 'लिपि' या लेखन प्रणाली का अर्थ होता है किसी भी भाषा की लिखावट या लिखने का ढंग। ध्वनियों को लिखने के लिए जिन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, वही लिपि कहलाती है। लिपि और भाषा दो अलग अलग चीज़ें होती हैं। भाषा वो चीज़ होती है जो बोली जाती है, लिखने को तो उसे किसी भी लिपि में लिख सकते हैं। किसी एक भाषा को उसकी सामान्य लिपि से दूसरी लिपि में लिखना, इस तरह कि वास्तविक अनुवाद न हुआ हो, इसे लिप्यन्तरण कहते हैं।

लिपि का इतिहास-

भाषा का सम्बन्ध ध्वनियों से है। ध्वन्यात्मक भाषा वक्ता के मुख से निकल कर श्रोता के कान तक पहुँचकर अपना प्रभाव प्रकट करती है। यह वाचिक भाषा है। वक्ता के मुख से निकलने के कुछ क्षणों बाद इसका स्वरूप नष्ट हो जाता है। मानव की प्रवृत्ति है। मुख कि वह अपने कार्यों और विचारों को स्थायित्व प्रदान करना चाहता है। इसके लिए वह ऐसे साधनों का उपयोग करता है, जिससे उसके विचार आगे की पीढ़ी तक पहुँच सकें। इन्हीं गूढ़ विचारों ने लिपि को जन्म दिया इसका प्रारम्भिक रूप क्या था, यह आज बताना संभव नहीं है, परन्तु अनुमान है कि अपने भावों को स्थायित्व प्रदान करने के लिए सर्वप्रथम 'चित्रात्मक' लिपि का प्रयोग हुआ, तत्पश्चात् 'भावलिपि, और अन्ततः 'ध्वनिलिपि'।

भाषा और लिपि की अपूर्णता - यह अनुभव-सिद्ध है कि मानव के संवेदनात्मक भावों को भाषा पूर्णतया अभिव्यक्त नहीं कर पाती है हर्ष, शोक, मिठास, कड़वापन आदि भाव भाषा से पूर्णतया व्यक्त नहीं हो पाते हैं । लिपि भाषा का ही स्थूल रूप है। लिपि भी मनोभावों को व्यक्त करने में असमर्थ है। भाषा और लिपि में मुख्य अन्तर यह है कि-(1) भाषा सूक्ष्म है, लिपि स्थूल है । (2) भाषा की ध्वनियों में अस्थायित्व है, लिपि में अपेक्षाकृत अधिक स्थायित्व है । (3) भाषा में सुर, तान आदि के द्वारा बहुत कुछ मनोभावों को व्यक्त किया जा सकता है, लिपि में नहीं ।

लिपि की उत्पत्ति- लिपि की उत्पत्ति कब और कैसे हुई, यह इतना ही विवादग्रस्त है, जितना भाषा की उत्पत्ति। भाषा और लिपि की उत्पत्ति के विषय में अन्ततः अनुमान का ही आश्रय लेना पड़ता है। भाषा सूक्ष्म है, अत: उसकी उत्पत्ति बताना अधिक कठिन है। लिपि की उत्पत्ति भी बताना प्रायः उतना ही कठिन है, क्योंकि प्रारम्भ में जिन वस्तुओं पर ये लिपियाँ लिखी गई, वे काल-कवलित हो गई हैं पाषाण, स्तम्भ, ताम्र आदि पर जो कुछ चीजें लिखी गईं, वे 6 हज़ार वर्ष तक का इतिहास बताती हैं। इनमें भी एकरूपता नहीं है। कहीं कुछ लकीरें, कहीं पशु आदि की आकृति, कहीं भावमुद्रा और कहीं लिपि है।

लिपि-विकास के तीन चरण-

अपनी-अपनी मान्यता के अनुसार विश्व के विभिन्न देशवासियों ने अपनी भाषा का जन्मदाता कोई देवता माना है। भारतीयों ने ब्राह्मी लिपि का जन्मदाता ब्रह्मा को माना है। इसी प्रकार 'मिस्री' लोगों ने **'थाथ'** (Thoth) को, 'बेबिलोनियावालों' ने **'नेबो'** (Nebo) को, प्राचीन 'यहूदियों' ने **'मूसा'** (Moses) को और 'यूनानियों' ने **'हमेंस'** (Hermes) को अपनी-अपनी लिपि का जन्मदाता माना है। आज तक उपलब्ध सामग्री के आधार पर कहा जा सकता है कि प्राचीनतम उपलब्ध सामग्री 4000 ई0 पू0 तक की है। इस प्रकार प्राचीनतम लिपि-चिह्न 6 हजार वर्ष पूर्व तक के मिलते हैं।

लिपि-विकास के मुख्यतया तीन चरण हैं-

(1) चित्रलिपि, (2) भावलिपि, (3) ध्वनिलिपि।

इनके अतिरिक्त तीन भेद और माने जाते हैं। ये गौण भेद हैं। इनका उल्लेखमात्र पर्याप्त है। जैसे-

(1) सूत्र लिपि- सूतों में गाँठ आदि देकर भाव व्यक्त करना। रस्सियों में गाँठ देना, रस्सी की लम्बाई - चौड़ाई, रस्सी का विभिन्न रंगों से रंगना आदि। इसका उल्लेख **'हेरोडोटस'** ने किया है। इसका उदाहरण 'पेरू' में प्राप्त 'क्वीपू' सूत्रलिपि है।

(2) प्रतीकात्मक लिपि- विभिन्न रंगों की वस्तुओं से कुछ विशेष संवाद भेजना। लाल रंग से-युद्ध, सफेद से-युद्ध-विराम आदि। प्राचीन समय में कुछ आदिम जातियों में ऐसे संकेत प्रचलित थे।

(3) भाव-ध्वनि-मूलक लिपि- यह कुछ अंश में भावात्मक और कुछ अंश में ध्वन्यात्मक थी। 'मिस्री, हित्ती, मेसोपोटामियन' आदि लिपियाँ इसमें आती हैं। सिन्धु-घाटी-लिपि को भी कुछ विद्वानों ने इसी श्रेणी में रखा है।

1. चित्रलिपि (Pictography)- यह लिपि का प्राचीनतम रूप था। जिस वस्तु का वर्णन करना होता था, उसका चित्र बना देते थे आदमी स्त्री, आँख आदि के लिए उस जैसा छोटा चित्र बना देते थे इससे संबद्ध व्यक्ति भाव समझ जाता था। ऐसे प्राचीन चित्र फ्रांस, स्पेन, यूनान, इटली, मिस्र आदि से मिले हैं। ये पत्थर, हड्डी, हाथी-दाँत, सींग, छाल, मिट्टी के पात्रों आदि पर होते थे।

समीक्षा- इसके लाभ ये थे- (1) वस्तु का तुरन्त बोध, (2) सर्वजन-सुबोधता, (3) शिक्षण की अनावश्यकता। इसके दोष अधिक हैं-(1) संकेत अनन्त बनाने पड़ते थे। प्रत्येक वस्तु के लिए पृथक् संकेत होता था (2) व्यक्तिवाचक संज्ञाओं का बोध नहीं हो सकता था। (3) अमूर्त भाव एवं विचार प्रकट नहीं हो सकते थे (4) चित्र बनाना श्रमसाध्य कार्य था। शीघ्रता में चित्र नहीं बन सकता था। (5) अधिक समय की अपेक्षा होती थी। (6) ध्वनिलिपि की अपेक्षा स्थान अधिक लेता था (7) स्थान, समय आदि का बोध स्पष्ट रूप से नहीं हो सकता था।

2. भावलिपि (Ideography)- यह लिपि विकास का द्वितीय चरण था। चित्रलिपि अधिक श्रम-साध्य थी, अतः लघुतर उपाय सोचने की प्रक्रिया भी जारी रही। फलस्वरूप भावलिपि का प्रादुर्भाव हुआ। चित्रलिपि और भावलिपि में अन्तर यह है कि चित्रलिपि में केवल वस्तु का चित्र बनाया जाता था भावलिपि में चित्रों को सरल बनाया और साथ ही उनसे संबद्ध अर्थ भी लिए गए। जैसे सूर्य के लिए एक गोला बनाना, गया इससे गर्मी, धूप, प्रकाश, दिन आदि का अर्थ बताना रोने के लिए आँख का चित्र बनाकर इससे आँसू टपकती बूँदें दिखाना। इस प्रकार की लिपि के उदाहरण उत्तरी अमेरिका, चीन, अफ्रीका आदि में मिलते हैं। चीनी लिपि में आज भी अनेक ऐसे शब्द है, जो भाव-लिपि मूलक हैं।

समीक्षा- यह चित्र-लिपि का विकसित रूप है। चित्र बनाने की क्लिष्टता कुछ कम हुई। एक चित्र से अनेक अर्थ प्रकट होने लगे। यह चित्राभास लिपि हुई। इसमें भी पूर्ववत् दोष विद्यमान रहे। सूक्ष्म भावों को व्यक्त नहीं किया जा सकता था। किस चित्र से क्या भाव लिए जाएँगे, इसमें समरूपता नहीं थी।

3. ध्वनिलिपि (Phonetic Script)- यह लिपि-विकास का तृतीय चरण था। यह मानव की लिपि-सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि थी। इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए कुछ संकेत निर्धारित किए गए। इनसे मुखोच्चरित प्रत्येक ध्वनि को लिपि- बद्ध किया जा सकता था। देश-काल के भेद से ये ध्वनिलिपियाँ अलग-अलग स्थानों पर अलग अलग विकसित हुईं। इस प्रकार की लिपियाँ हैं- **देवनागरी, रोमन, अरबी** आदि। कुछ विद्वानों ने ध्वनिलिपि के दो भेद किए हैं- **(1) अक्षरात्मक** (Syllabic), **(2) वर्णात्मक** (Alphabetic)। अक्षरात्मक में चिह्न किसी अक्षरं (Syllable) को व्यक्त करता है, वर्ण को नहीं। वर्णात्मक में चिह्न वर्ण को व्यक्त करता है। इसमें 'देवनागरी' को 'अक्षरात्मक' में और 'रोमन' को 'वर्णात्मक' में रखा गया है। साथ ही रोमन लिपि की उत्कृष्टता सिद्ध की गई है। देवनागरी पूर्णतया वर्णात्मक लिपि है। प्रत्येक वर्ण के लिए स्वतन्त्र क् आदि चिह्न हैं। केवल लेखन की सुविधा के लिए वर्णमाला में व्यंजनों को हलन्त (क्, ख्, ग्) न लिखकर अकारान्त (क, ख, ग आदि) लिखा जाता है। रोमन में यान्त्रिक सुविधा अवश्य है, क को KA लिखा जाएगा, अ को अलग दिखाया जा सकता है, परन्तु सांकेतिक निर्देशों के बिना अ-आ, इ-ई आदि स्वरों का भेद नहीं दिखाया जा सकता है। अन्तर्राष्ट्रीयता के लिए उसकी उपयोगिता अवश्य है, परन्तु देवनागरी या भारतीय लिपियों से उसे अधिक वैज्ञानिक या उत्कृष्ट कहना केवल प्रलाप है, रोमन में वैज्ञानिकता का नाम भी नहीं है।

भारत में लिपिज्ञान एवं लेखनकला-

भारत में प्राचीन समय से लेखनकला प्रचलित थी। ऋग्वेद में लिख धातु के कई रूपों का प्रयोग है। अथर्ववेद में चार स्थानों पर लिखने की कला का उल्लेख है । इसमें सुलेख, ऋण-सम्बन्धी लेख और आकृतिमूलक लेख का उल्लेख है।

(क) अजैषं त्वा संलिखितम् । (अथर्ववेद 7-50-5) (सुलेख)
(ख) यद्यद् द्युत्तं लिखितमर्पणेन। (अथर्व0 12-3-22) (लेन-देन का लेख)
(ग) अप शीर्षण्यं लिखात् । (अथर्व0 14-2-68) (ऊपर की रेखाएँ)
(घ) क एषां कर्करी लिखत् । (अथर्व0 20-132-8) (चित्रात्मक लेख)

ब्राह्मण ग्रन्थों में लिख् धातु के ये प्रयोग मिलते हैं- 'लिखति-लिखते, लिलेख,अलीलिखत्, लेखीः, लिखित, लिख्य'। इनसे यह स्पष्ट नहीं है कि लेखनकला का क्या स्वरूप था? लिपि क्या थी? लिख् धातु से इतना स्पष्ट है कि लिखने का काम होता था और किसी नोकीली धातु से अक्षर लिखे या खोदे जाते थे।

ऋग्वेद में 'अष्टकर्णी' हजार गायों के दान देने का उल्लेख है। इसमें अष्टकर्णी से यह स्पष्ट है कि गायों के कान पर 8 अंक लिखा होता था यजुर्वेद, तैत्तिरीय संहिता और अथर्ववेद में 1 से 100 तक की गिनती, पहाड़ा, एक से दश शंख तक की संख्याओं के नाम एक, शत, सहस्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्बुद, न्युर्बद, समुद्र, मध्य, अन्त, परार्ध (दश शंख) मिलते हैं। इन संख्याओं का ज्ञान लेखन-कला के बिना संभव नहीं है। वेदों आदि में काल के सूक्ष्म भेदों का उल्लेख है। यह भी बिना लिखे समझना संभव नहीं है।

अथर्ववेद में अक्षर शब्द का छोटी इकाई के रूप में उल्लेख है। इससे ही विभिन्न छन्दों की मात्राएँ और वर्ण गिने जाते थे। **'अक्षरेण मिमते सप्त वाणीः'** । (अथर्व0 6-10-2) **सहस्राक्षर...** (अथर्व0 6-10-21) से ज्ञात होता है कि 1 हजार वर्णों वाले मन्त्रादि होते थे। अथर्ववेद (16-21-1) में 7 छन्दों का उल्लेख है। यजुर्वेद में 11, 14 और 22 छन्दों तक का उल्लेख है। साथ ही उनके पादों आदि का भी उल्लेख है। तैत्तिरीय,मैत्रायणी,

काठक आदि संहिताओं में छन्दों के पाद और अक्षरों की गणना भी दी गई है।

ग्रन्थों का साक्ष्य-

(1) बौद्ध-ग्रन्थ **'ब्रह्मजाल-सुत्त'** (6ठी सदी ई. पू.) में **'अक्खरिका'** (अक्षरिका) का उल्लेख है। इसमें बच्चों को पीठ पर लिखे अक्षरों को पहचानना होता था।

(2) **'सुत्तान्त'** (सूत्रान्त, 6ठी सदी ई. पू.) में भिक्षुओं को अक्खरिका खेल न खेलने का आदेश है।

(3) **'विनयपिटक'** 39, (400 ई. पू. से पूर्व) में लेखन-कला प्रशंसा की गई है।

(4) **'महावग्ग'** और 'जातकों' में लेखन-कला के अध्यापन और लेखन-सामग्री का उल्लेख है।

(5) **ललितविस्तर** में उल्लेख है कि गुरु विश्वामित्र ने गौतम बुद्ध को तख्ती पर स्वर्ण-कलम से लिखना सिखाया।

(6) जातकों में नियमों को सुवर्णपत्रों पर खुदवाने, सरकारी लेख एवं ऋणपत्रों को लिखवाने का उल्लेख है।

(7) **रामायण** (600 ई. पू.), **महाभारत** (500 ई. पू.), **अर्थशास्त्र** (4 थी सदी ई. पू.) में अनेक स्थलों पर लेखन- कला का उल्लेख है। लेख, लेखक, लेखन आदि शब्दों का प्रयोग है।

आचार्य पाणिनि (5वीं सदी ई. पू.) ने स्पष्ट रूप से लिपि, लिपिकर,ग्रन्थ, यवनानी (यूनानी लिपि), स्वरित चिह्न आदि का उल्लेख किया है। पशुओं के कानों पर पहचान के लिए 5, 8 आदि अंक लिखने का उल्लेख पाणिनि ने किया है। लिपि को लिवि भी कहते थे। कौटिल्य अर्थशास्त्र (1-5) में लिपि का उल्लेख है। कौटिल्य ने (अर्थ. 1-12) सांकेतिक लिपि (Short Hand Writing) के लिए 'संज्ञालिपि' नाम दिया है। बौद्ध और जैन ग्रन्थों में अनेक लिपियों का उल्लेख मिलता है। **बौद्ध ग्रन्थ 'ललितविस्तर'** में (64) लिपियों के नाम हैं। जैन ग्रन्थ **'पन्नवणा-सूत्र'** तथा **'समवायांग सूत्र'** में (18) लिपियों के नाम हैं। इनमें विशेष महत्त्वपूर्ण लिपियाँ हैं-

(1) बंभी, ब्राहम (ब्राह्मी),

(2) खरोट्ठी (खरोष्ठी),

(3) जवणाणिया (यवनानी),

(4) अंकलिछि (अंकलिपि),

(5) गणितलिवि (गणितलिपि),

(6) माहेसरी (माहेश्वरी),

(7) हूण-लिपि,

(8) चीनलिपि,

(6) दरदलिपि,

(10) द्राविड़ी लिपि।

विदेशी लेखों का साक्ष्य- (1) 'सिकन्दर' के सेनापति **'निआर्कस'** (326 ई0पू0) ने भारत का वृत्तान्त लिखा था **'एरिअन'** ने अपनी पुस्तक **'इंडिका'** में इसका सारांश दिया है। इससे भारत में कागज आदि के उपयोग का ज्ञान होता है। (2) **'मेगस्थनीज'** (305 ई. पू.) ने अपने ग्रन्थ इण्डिका में भारत में सड़कों पर मील के पत्थर गड़े होने का उल्लेख किया है। जन्मकुण्डली का भी उल्लेख किया है । (3) चीनी यात्री **'ह्वेनत्सांग'** ने भारत में लिपिज्ञान की प्राचीनता का उल्लेख किया है (4) चीनी विश्वकोष **'फा युआन चु लिन्'** (668 ई.) में 'ब्राह्मी' का उल्लेख है। इसका आविष्कारक ब्रह्मा को माना है।

॥ब्राह्मी लिपि॥

यह पूर्णतया भारतीय लिपि है। इसके प्राचीनतम लेख 350 ई. पू. से लेकर ई. तक मिलते हैं। सबसे प्राचीन लेख **'एरण'** से प्राप्त सिक्का है, जो 350 ई. पू. का है। इसके पश्चात् अशोक के शिलालेख और स्तम्भ-लेख आदि हैं । इनका समय 250 ई. पू. है। ये कालसी, दिल्ली, जौगड़, गिरनार, शिद्दापुर से प्राप्त हुए हैं तत्पश्चात् ईसा पूर्व ब्राह्मी लिपि में ये अभिलेख मिले हैं- घसुन्दी (250 ई. पू.), दशरथ (200 ई. पू.), भरहुत (150 ई. पू.), मथुरा (150 ई. पू. से 100 ई. पू.), हाथीगुम्फा (160 ई. पू.), नानघाट (150 ई. पू.)। ईसा के पश्चात् 350 ई. तक ब्राह्मी लिपि में विशाष उल्लेखनीय अभिलेख ये हैं- मधुरा, कुषाण, रुद्रदामन्, सातकर्णि, नासिक, पुलुमाया, जगय्यपेट्ट। **'प्रो. ब्यूलर'** ने विशेष अध्ययन के बाद प्रस्तुत किया है कि ब्राह्मी लिपि में (41) अक्षर हैं-9 स्वर और 32 व्यंजन।

स्वर- अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ (9)।

व्यंजन- क, ख, ग, घ। च, छ, ज, झ, ञ। ट, ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न, । प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व । श, ष, स, ह (32) । इससे ज्ञात होता है कि ब्राह्मी में खरोष्ठी से 4 ध्वनियाँ अधिक हैं-आ, ई, ऊ, ऐ । दोनों में ङ अक्षर नहीं है।

ब्राह्मी का नामकरण-

नाम के लिए तीन व्युत्पत्तियां बताई गई हैं- 1. ब्रह्म या ब्रह्मा से उत्पन्न हुई है।

2. ब्रह्म (वेद या ज्ञान) की रक्षा के लिए इसे बनाया गया।

3. ब्राह्मणों ने इसे बनाया या प्रयुक्त किया।

उपर्युक्त तीनों मतों में प्रथम मत अधिक उचित प्रतीत होता है। ब्रह्म से सम्बद्ध ज्ञान आदि को ब्राह्म या ब्राह्मी कहा जाता था । यजुर्वेद (अ. 31 मन्त्र 20, 21) में ब्रह्म से सम्बद्ध अर्थ में ब्राह्म और ब्राह्मी का प्रयोग मिलता है- **1. रुचाय ब्राह्मये। (यजु. 31-20), रुचं ब्राह्मम्....। (यजु. 31-21)**। चीनी विश्वकोष **फा युआन चुलिन्** में ब्राह्मी लिपि का निर्माता ब्रह्म या ब्रह्मा नामक आचार्य माना गया है। अमरकोषकार **अमरसिंह** ने संस्कृत को ब्राह्मी एवं भारती अर्थात् भारतीय भाषा कहा है- **2.ब्राह्मी तु भारती भाषा गीर्वाग्वाणी सरस्वती। (अमरकोष काण्ड-1 शब्दादिवर्ग)** । इस भाषा का प्रयोग वेद-ज्ञान की रक्षा के लिए किया गया। भारतीय विद्वानों और ब्राह्मणों ने इसका प्रयोग किया। अतः पूर्वोक्त तीनों व्युत्पत्तियाँ कुछ हद तक ठीक बैठती हैं।

ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति-

ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति के विषय में बहुत विवाद है। पाश्चात्त्य विद्वानों ने इसकी उत्पत्ति 'फोनीशी लिपि' 'सामी लिपि' या 'चीनी लिपि' से मानी है। भारतीय विद्वानों ने इसकी भारतीय उत्पत्ति मानी है। विचार करने से ज्ञात होता है कि पाश्चात्त्य विद्वानों के मत अत्यन्त अपुष्ट आधारों पर हैं। कुछ केवल मनोरंजक कल्पना-मात्र रह गए हैं। ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति के विषय मे अनेक सिद्धान्त प्रस्तुत किये गए हैं। इन सिद्धांतों को दो मुख्य धाराओं में विभक्त किया जा सकता हैं।

1. विदेशी उत्पत्ति का सिद्धान्त ।
2. बृहद् भारत की स्वदेशी उत्पत्ति का सिद्धान्त ।

विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त को मनाने वाले पुनः दो भागों में एवं तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है -

पाश्चात्य स्रोत-

कई पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि कि भारतवासियों ने अक्षर लिखना विदेशियों से सीखा तथा ब्राह्मीलिपि भी उसी प्रकार प्राचीन फिनीशियन लिपि से व्युत्पन्न हुई है जिस प्रकार अरबी, यूनानी, रोमन आदि लिपियाँ। पर कई देशी विद्वानों ने सप्रमाण यह सिद्ध किया है कि ब्राह्मी लिपि का विकास भारत में स्वतंत्र रीति से हुआ। ब्राह्मी की विदेशी उत्पत्ति के सिद्धान्त के समर्थक में दो मत हैं-

(1) यूनानी लिपि से (जेम्स प्रिंसेस)

(2) सेमेटिक लिपि से (बेबर, ब्यूलर)

(क) यूनानी मूल से ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति - इस सिद्धान्त के पोषक **'अल्फ्रेड म्यूलर'** हैं। इस मत के समर्थक हैं- **विल्सन, प्रिंसेप, अल्फ्रेड म्यूलर, सेनार्ट** आदि। इनका मत है कि 'सिकन्दर' के आक्रमण के समय से यूनानियों से सम्पर्क हुआ और उनसे यह लिपि सीखी । इस विषय में उल्लेखनीय है कि सिकन्दर का आक्रमण 327 ई. पू. में हुआ था। इससे पूर्व भारत में लेखन-कला का प्रचार था। 'ब्यूलर' और 'डिरिंजर' का भी यही मत है। सिकन्दर से पूर्व भारत में भारतीय लिपि प्रचलित थी, अतः उसके बाद लिपि का प्रारम्भ मानना असंगत है।

यूनानी लिपि दो स्रोत-

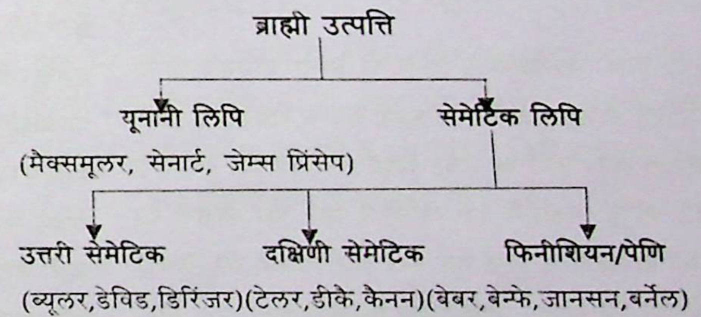
- ब्राह्मी लिपि 'यूनानी फ़ाईकीशियनों' के माध्यम से भारत आई
- सम्राट "सिकन्दर" के द्वारा भारत आई ।

(ख) ब्राह्मी लिपि की सेमेटिक उत्पत्ति का सिद्धान्त- 'विलियम जोन्स' इस सिद्धांत के मुख्य प्रस्तुत कर्ता हैं । ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति सेमिटिक (सामी) भाषाओं से हुई है। इस मत के समर्थक **ब्यूलर, विलियम जोन्स, वेबर, टेलर** आदि हैं। **डॉ. डेविड डिरिंजर** ने भी **'द अल्फाबेट'** पुस्तक में ब्यूलर का समर्थन किया है। डिरिंजर ने अपने समर्थन में 4 तर्क दिए हैं-

1. सामी और ब्राह्मी लिपियों में साम्य है।
2. 'सिन्धुघाटी' लिपि 'चित्रात्मक' लिपि है। उससे वर्णात्मक लिपि नहीं निकल सकती है।
3. ब्राह्मी लिपि पहले दाएँ से बाएँ लिखी जाती थी।
4. भारत में पाँचवीं शती ई. पू. से पहले के लेख नहीं मिलते हैं।

इसे भी तीन भागों में विभक्त किया है-

1. **फिनीशीयान मूल**
2. **दक्षिण सेमेटिक मूल**
3. **उत्तर सेमेटिक मूल**



'डा. ब्यूलर' के मत में फिनीशियन लिपि के बाईस अक्षरों से ब्राह्मी लिपि के बाईस अक्षरों की उत्पत्ति हुई ।

'ब्यूलर' ब्राह्मी लिपि को पिटक शीर्ष लिपि मानते हैं ।

'लैडगम' ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति हड़प्पा लिपि से मानते हैं ।

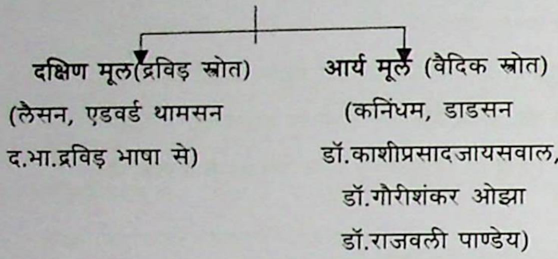
भारतीय स्रोत-

ब्राह्मी लिपि के उद्भव के स्वदेशी सिद्धान्त को भी दो भागों में विभक्त किया जाता है-

1. दक्षिण मूल 2. आर्य मूल।

अभी तक माना जाता था कि ब्राह्मी लिपि का विकास चौथी से तीसरी सदी ईसा पूर्व में मौर्यों ने किया था, पर भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण के ताजा उत्खनन से पता चला है कि तमिलनाडु और श्रीलंका में यह छठी सदी ईसा पूर्व से ही विद्यमान थी। ब्राह्मी लिपि का प्रयोग- **इंडो-यूरोपियाई, चीनी-तिब्बती, मंगोलियाई, द्रविड़ीय आस्ट्रो-ऐशियाई** आदि देशों मे होता है।

ब्राह्मी उत्पत्ति



ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति **'लैडगम'** **'हड़प्पा'** लिपि से मानते हैं।
"डॉ- ब्यूलर" ब्राह्मी लिपि को **"पिटक शीर्षक"** लिपि कहते हैं।

चीनी लिपि से ब्राह्मी की उत्पत्ति -

'फ्रेंच' विद्वान् **'कुपेरी'** ने चीनी से ब्राह्मी की उत्पत्ति मानी है। चीनी और ब्राह्मी पूर्णतया भिन्न हैं। 'चीनी' 'चित्रलिपि' है और 'ब्राह्मी' 'ध्वनि-लिपि' है। दोनों के वर्णों और ध्वनियों में कोई साम्य नहीं है। यह मत अब केवल मनोरंजन के लिए उद्धृत किया जाता है।

समीक्षा- (1) सामी और ब्राह्मी में लिपि का साम्य नाममात्र को है। जो समता है, वह भी क्लिष्ट-कल्पना है। सामी दाएँ से बाएँ लिखी जाती है, ब्राह्मी बाएँ से दाएँ। सामी के संकेत अपूर्ण और अपर्याप्त हैं। सामी में केवल 22 वर्ण हैं, ब्राह्मी में 41। सामी में स्वर और व्यंजनों का कोई क्रम नहीं है। आदि से अन्त तक स्वर और व्यंजनों की खिचड़ी है। ब्राह्मी में स्वर और व्यंजन पृथक्-पृथक् हैं। स्वरों में भी मूल स्वर, बाद में संयुक्त स्वर। व्यंजन भी स्थान और प्रयत्न के अनुसार क्रमबद्ध हैं।

(2) प्रारम्भ में दिखाया जा चुका है कि चित्रात्मक और भावात्मक लिपि से ही ध्वनि-लिपि का विकास है। इसी प्रकार मोहनजोदड़ो की लिपि से ब्राह्मी का विकास भारतीय रूप में पूर्ण संभव है।

(3) आज तक ब्राह्मी के तीन अभिलेखों में ही कुछ अंश दाएँ से बाएँ लिखे मिलते हैं। इसका कारण ज्ञात होता है कि इन पर खरोष्ठी का कुछ प्रभाव था। अशोक आदि के सारे अभिलेख बाएँ से दाएँ ही लिखे हुए हैं। इनकी संख्या बहुत बड़ी है।

(4) सिन्धुघाटी के अभिलेख 500 ई0 पू0 से पहले के हैं। अन्य अभिलेख भावी खुदाइयों आदि पर निर्भर हैं।

ब्राह्मी लिपि की भारतीयता के कारण-

(1) विश्व की किसी भाषा में स्वरों और व्यंजनों का इस प्रकार का क्रम नहीं है।

(2) इसमें केवल भारतीय ध्वनियों का समावेश है।

(3) संयुक्त वर्णों को स्पष्ट रूप में सूचित करना ब्राह्मी की विशेषता है।

(4) स्वर की मात्राओं को व्यंजन के साथ जोड़ने की विशेषता केवल ब्राह्मी में है।

(5) स्वर और व्यंजन के इतने पूर्ण संकेत अन्य किसी भाषा में नहीं हैं।

(6) कोई भारतीय परम्परा इस लिपि को बाहरी नहीं मानती।

(7) अंक-प्रणाली और दशमलव की पद्धति भारतीयों की वैज्ञानिकता के प्रतीक हैं। जो ऋषि अंक-प्रणाली का आविष्कार कर सकते हैं, वे वर्ण-लिपि का भी आविष्कार कर सकते हैं।

(8) ब्राह्मी में वर्णों की जो गोल-रचना या वृत्तात्मकता है, वह अन्य किसी लिपि में नहीं है।

ब्राह्मी से भारतीय लिपियों का विकास

ईसा पूर्व 350 से लेकर 350 ई0 तक प्रयुक्त लिपि का नाम ब्राह्मी रहा। इसके पश्चात् ब्राह्मी लिपि के लिखने के दो प्रकार मिलते हैं, जिनके आधार पर ब्राह्मी की दो श्रेणियाँ मानी जाती हैं--**(1) उत्तरी, (2) दक्षिणी।** उत्तरी शैली का प्रचार विन्ध्य पर्वत के उत्तर में रहा और दक्षिणी का प्रचार उसके दक्षिण में। इस प्रकार उत्तरी भारत की लिपियों का विकास ब्राह्मी की उत्तरी शैली से हुआ और दक्षिणी भारत की लिपियों का विकास दक्षिणी शैली से हुआ।

(क) ब्राह्मी की उत्तरी शैली से विकसित लिपियाँ- उत्तरी शैली से पाँच लिपियों का विकास हुआ। इनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है-

1. गुप्त लिपि- गुप्तवंशी राजाओं के अभिलेख इसी लिपि में हैं। अतः इसे गुप्त-लिपि कहा जाता है। इसका प्रचार चौथी और पाँचवीं शती ई0 में रहा। इस लिपि के मुख्य अभिलेख हैं- प्रयाग-प्रशस्ति (375 ई0), बिलसद (414 ई0), इन्दौर (465 ई0)।

2. कुटिल लिपि- यह लिपि गुप्त-लिपि से विकसित हुई है। इसमें स्वरों की मात्राओं को आकृति कुटिल अर्थात् टेढ़ी है। अत: इसे कुटिल लिपि कहा गया है। इससे हो 'नागरी' और 'शारदा' लिपियों का विकास हुआ है।

3. प्राचीन नागरी लिपि- यह मूलतः उत्तरी लिपि है, परन्तु इसके प्राचीन अभिलेख 8वीं शती ई. से प्रारम्भ होकर 16वीं शती ई. के अन्तिम भाग तक दक्षिण में मिलते हैं। 'नागरी लिपि' को हो 'देवनागरी लिपि' भी कहते हैं। प्राचीन नागरी की पूर्वी शाखा से बंगला लिपि का विकास हुआ। पश्चिम शाखा से राजस्थानी, गुजराती, महाराष्ट्री और महाजनी आदि लिपियाँ विकसित हुईं। दक्षिण में इसको **'नन्दीनागरी'** कहते हैं।

4. शारदा लिपि- इस लिपि का प्रचार पश्चिमोत्तर भारत के कश्मीर और पंजाब में हुआ। 8वीं शताब्दी ई. तक वहाँ कुटिल लिपि थी। उसी से शारदा लिपि निकली। शारदा का सबसे प्राचीन लेख 10वीं शती ई. का माना जाता है। वर्तमान समय की कश्मीरी, टाँकरी, गुरुमुखी, डोगरी आदि लिपियाँ इसी से निकली हैं।

5. बंगला लिपि- इसकी उत्पत्ति प्राचीन नागरी से 10वीं शती ई. के लगभग हुई। इससे नेपाली, वर्तमान बंगला, मैथिली और उड़िया लिपियाँ निकली हैं।

(ख) ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से विकसित लिपियाँ- ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से 6 लिपियाँ विकसित हुई हैं। इनका संक्षिप्त परिचय निम्नलिखित है-

1. पश्चिमी लिपि- इसके लेख पाँचवीं शती ई. से नवीं शती ई. तक मिलते हैं। यह लिपि गुजरात, काठियावाड़, नासिक, खानदेश, हैदराबाद, कोंकण, मैसूर आदि के लेखों में मिलती है। पाँचवीं शती ई. के लगभग इसका प्रवेश राजपूताना और मध्य-भारत में भी पाया जाता है। पश्चिमी प्रदेशों में मिलने के कारण इसको पश्चिमी लिपि कहते हैं ।

2. मध्यप्रदेशी लिपि- यह लिपि मध्यप्रदेश, हैदाराबाद के उत्तरी भाग और बुन्देलखण्ड में 5वीं से 8वीं शती ई. तक मिलती है। इस लिपि के अक्षरों के सिर चौखूटे या सन्दूक की आकृति के होते हैं। इनका भीतरी भाग कभी खाली और कभी भरा हुआ है। अक्षरों की आकृति समकोणों वाली है।

3. तेलुगु-कन्नड़ लिपि- ब्राह्मी की दक्षिणी शैली से इस लिपि का विकास हुआ है। इससे ही वर्तमान तेलुगु और कन्नड़ लिपियाँ निकली हैं। यह लिपि 5वीं शती ई0 से 14वीं शती ई0 तक बम्बई (वर्तमान महाराष्ट्र प्रांत के दक्षिणी भाग में, आंध्र प्रांत के दक्षिणी भाग में, मद्रास के उत्तर-पूर्वी भाग में तथा मैसूर के कुछ भागों में प्रचलित थी। पाँचवीं से 14वीं शती ई0 तक इसके कई रूप-भेद हुए।

4. ग्रन्थ लिपि- यह लिपि 'मद्रास' में प्रचलित रही। 7वीं शती ई. से 15वीं शती ई. तक इसके कई रूपांतर हुए। इससे वर्तमान ग्रन्थ लिपि निकली है। इससे ही मलयालम और तेलुगु लिपियाँ विकसित हुई हैं। इस क्षेत्र में तमिल लिपि का प्रचार रहा था, परन्तु वह अपूर्ण थी अतएव संस्कृत के ग्रन्थों को लिखने के लिए इस लिपि का प्रयोग होता था इसलिए इसका नाम 'ग्रन्थ' पड़ा।

5. कलिंग लिपि- 'कलिंग' के आस-पास 7वीं से 11वीं शती ई. तक इसका प्रचार रहा। इसके प्राचीन लेख 'मध्यप्रदेशी' लिपि में हैं और बाद के लेख नागरी, तेलगु, कन्नड़ और ग्रन्थ लिपि में मिलते हैं।

6. तमिल लिपि- यह भी 'दक्षिणी ब्राह्मी' से निकली है। इससे वर्तमान तमिल लिपि का विकास हुआ है। 7वीं सदी ई0 से आज तक तमिल ग्रन्थ इसी लिपि में मिलते हैं। इसके अधिकांश अक्षर ग्रन्थ लिपि से मिलते-जुलते हैं। तमिल का ही घसीट रूप 'वट्टलुत्तु' लिपि है। इसके अक्षर प्रायः गोलाई लिए हुए होते हैं। यह 7वीं से 14वीं शती तक मद्रास के पश्चिमी और दक्षिणी भाग में प्रचलित रही।

॥खरोष्ठी लिपि॥

यह भारतीय लिपि है। इसका प्रचलन 'पश्चिमोत्तर' भारत में था इसमें सबसे प्राचीन अभिलेख सम्राट् **'अशोक'** के मिलते हैं। इससे प्राचीन कोई अभिलेख खरोष्ठी में नहीं मिलता है। अशोक के खरोष्ठी अभिलेख **शाहबाजगढ़ी** (जिला यूसुफजई, पंजाब) और **मानसेरा** (जिला हजारा, पंजाब) में प्राप्त हुए हैं **'प्रो0 ब्यूलर'** (G. Buhler) के मतानुसार खरोष्ठी के अभिलेख 350 ई. पू. से 200 ई0 तक के मिलते हैं। अशोक के शिलालेखों के अतिरिक्त भारत-यूनानी सिक्के, 'शक' और 'कुषाणों' के अभिलेख भी खरोष्ठी लिपि में हैं।

खरोष्ठी का नामकरण- इसके नामकरण के विषय में पर्याप्त विवाद है। इस विषय में अनेक आनुमानिक मत प्रस्तुत किए गए हैं। इनमें कोई भी मत पुष्ट प्रमाणों पर आश्रित नहीं है। अत: इन मतों को आनुमानिक मानते हुए विचार किया जाता है । इनमें उल्लेखनीय मत ये हैं-

1. खरोष्ठ नामक व्यक्ति या आचार्य ने इसका आविष्कार किया। इसका समर्थन चीनी विश्वकोष **'फा युआन चु लिन'** द्वारा होता है। खरोष्ठ (गधे के तुल्य ओठ) नाम संभवत: वैदिक शुन:शेप नाम के तुल्य उपहास-मूलक नाम था।

2. गधे की खाल पर लिखी जाने से ईरानी में इसको खरपोश्त कहते थे उसका अपभ्रंश खरोष्ठ है। इससे खरोष्ठी बनी।

3. **'डॉ. राजबली पाण्डेय'** के मतानुसार इस लिपि के अक्षर खर (गधा) के ओष्ठ के समान बेढंगे होते थे, अत: खरोष्ठी नाम पड़ा।

4. **'डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी'** के अनुसार 'हिब्रू' में लेख-वाचक खरोशेथ (Kharosheth) शब्द है। उससे खरोष्ठी बना।

खरोष्ठी की उत्पत्ति- इस विषय में मुख्यतया दो मत हैं-

(1) यह आम्मेइक (Armaic) लिपि से निकली है ।

(2) यह भारतीय लिपि है। इस विषय में प्रसिद्ध लिपिवेत्ता **'प्रो0 ब्यूलर'** का मत अधिक प्रामाणिक माना जाता है। उन्होंने प्रथम मत के समर्थन के लिए चार तर्क दिए हैं-

1. खरोष्ठी लिपि 'आर्मेइक' लिपि के तुल्य दाएँ से बाएँ लिखी जाती है।

2. खरोष्ठी के 11 अक्षर बनावट की दृष्टि से आर्मेइक लिपि के अक्षरों से बहुत मिलते हैं। दोनों की इन नियमों में भी साम्य है। ये 11 अक्षर हैं--क, ज, द, न, ब, य, र, प, च. स, ह।

3. आरमेइक लिपि खरोष्ठी से प्राचीन है।

4. 'तक्षशिला' में 'आर्मेइक' लिपि के शिलालेख भी मिले हैं। यह खरोष्ठी का 'श्री राजनली पाण्डेय' का मत (यह भारतीय लिपि है) केवल तर्कों पर आनित अत: ग्राह्य नहीं हुआ है। इसकी उत्पत्ति किसी भारतीय भाषा से नहीं हुई है।

खरोष्ठी की विशेषताएँ तथा न्यूनताएँ-

1. यह दाएँ से बाएँ लिखी जाती है। बाद में संभवत: ब्राह्मी के प्रभाव से बाएँ से दाएँ भी लिखी जाने लगी।

2. इसमें 37 वर्ण हैं-5 स्वर और 32 व्यंजन। स्वर -व्यंजन-क, ख, ग, घ। च, छ, ज, झ, ज । ट ठ, ड, ढ, ण। त, थ, द, ध, न । प, फ, ब, भ, म। य, र, ल, व। श, व, स, ह। इसमें दीर्घ स्वर -आ, ई, ऊ, ऐ, औ और ङ व्यंजन नहीं हैं।

3. आर्मेइक लिपि में केवल 22 अक्षर थे। उनको 37 बनाना खरोष्ठ मुनि या आचार्य का काम है।

4. खरोष्ठी में ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं का अन्तर नहीं है । इसमें संयुक्त अक्षरों को लिखने की भी स्पष्ट सुविधा नहीं है। अत: यह भारत में 200 ई. के बाद नहीं चल सकी ।

॥देवनागरी लिपि॥

वर्तमान 'देवनागरी' लिपि प्राचीन 'नागरी लिपि' के पश्चिमी रूप से विकसित हुई है। नागरी लिपि को नागरी और देवनागरी दोनों नामों से सम्बोधित किया जाता है। नागरी लिपि का समुचित विकास 10वीं शताब्दी ई. से माना जाता है। प्राचीन अभिलेखों की लिखावट के अध्ययन से ज्ञात होता है कि **'भीमदेव'** प्रथम (1026 ई.) और **'भीमदेव द्वितीय'** (1200 ई.) तथा **'उदयवर्मन्'** (1200 ई.) के अभिलेखों में प्रयुक्त लिपि वर्तमान हिन्दी के बहुत समीप आ गई है। इनमें स्वरों और व्यंजनों की बनावट, वर्णों के ऊपर शिरोरेखा तथा मात्राओं के चिह्न बहुत कुछ वर्तमान हिन्दी के तुल्य हो गए हैं। इस प्रकार वर्तमान देवनागरी लिपि का प्रारम्भ 1000 से 1200 ई. तक मानना उचित है। बाद में आवश्यक संशोधन परिवर्तन होते रहे हैं। 18वीं शती ई. की नागरी लिपि प्राय: वर्तमान नागरी के तुल्य पूर्ण विकसित हो गई थी। केवल कुछ मात्राओं में अन्तर पाया जाता है।

देवनागरी नामकरण- नागरी या देवनागरी नाम के विषय में पर्याप्त मतभेद है। इस विषय में आज तक कोई अन्तिम निर्णय नहीं हुआ है। इस विषय में ये सुझाव दिये गए हैं-.

1. यह लिपि नगरों में प्रचलित थी, अत: नागरी नाम पड़ा।
2. गुजरात के नागर ब्राह्मणा द्वारा प्रयुक्त होने से इसका नाम नागरी पड़ा।
3. 'श्री शाम शास्त्री' का कथन है कि देवमूर्तियों के सांकेतिक त्रिकोण या चक्र आदि चिह्नों को 'देवनगर' कहते थे। उसके मध्य में लिखे जाने के कारण इन अक्षरों को देवनागरी कहा गया।
4. देवनगर स्थान से उत्पन्न होने के कारण देवनागरी नाम पड़ा। पुष्ट प्रमाणों के अभाव में कोई भी मत प्रामाणिक नहीं है।

ब्राह्मी लिपि के प्रमुख सन्दर्भ-

- रचनाकाल - 4000 ई.पू. (ध्वनि लिपि) ब्राह्मी लिपि भारत की प्राचीनतम लिपियों में से एक है। इसके प्रयोग के प्राचीन

उदाहरण अशोक के अभिलेखों के रूप में उपलब्ध हैं। यह बाएँ से दाएँ लिखी जाती है ।

- भारत में प्राचीन काल की प्रमुख लिपियां-
  (1) ब्राह्मी (2) खरोष्ठी (3) सिन्धुघाटी।
- चीनी विश्वकोषकार **"फा-वान-शू-लिन"** तीन लिपियों का उल्लेख करते हैं जिनमें ब्राह्मी लिपि प्रमुख है-
  (1) ब्राह्मी (2) कइअलू (3) तनसकी।
- 'अलवरूनी' के अनुसार ब्रह्मा के द्वारा आविष्कृत लिपि- **ब्राह्मी** (इसके लिपि चिह्न है।)
- ब्राह्मी लिपि- बांए से दांए की ओर लिखी जाती है।
- विद्वानों के अनुसार विदेशी लिपि- **खरोष्ठी।**
- सैन्धव लिपि का ज्ञान- **हड़प्पा, मोहनजोदड़ो** उत्खनन पश्चात्।
- ब्राह्मी लिपि (मौर्य काल) तथा (श्रीलंका) में (600 ई.पू. में भी प्रचलित थी यह **'सैन्धवलिपि'** (सरस्वती) लिपि से भी प्राचीन है।
- ब्राह्मी लिपि में चिह्न= (64) चिह्नों के माध्यम से स्वरों के साथ व्यञ्जनों का सम्बन्ध स्थापित किया गया है।
- ब्राह्मी लिपि के स्वरों में ह्रस्व दीर्घ प्रयोग दिखाई देते हैं। इसमें अनुस्वार, अनुनासिक, विसर्ग का प्रयोग होता था।
- जैनपरम्परा के अनुसार भगवान ऋषभनाथ की पुत्री-**बम्पी** उसी को आधार बनाकर ऋषभनाथ ने ब्राह्मी (आदिनाथ) लिपि को प्रतिपादित किया।
- ब्राह्मी लिपि के उद्वाचन में सर्वप्रथम सफलता हासिल की- **जेम्स प्रिंसेप** ने (1837 में)।
- ब्राह्मी लिपि के उद्वाचन में प्रथम प्रयास किया था-**विल फोर्ट,**
- ब्राह्मी लिपि का अर्थ उद्घाटन किया था- **जेम्स प्रिंसेप।**
-
- **'एडवर्ड थामस'** के अनुसार ब्राह्मी लिपि के आविष्कारक भारतीय हैं
- मौर्यकाल में राजकीय आदेश खोदे गये थे- **तांबे पर।** लेखन के लिए सर्वाधिक प्रयुक्त धातु थी- **दानपत्र।**
- **ब्राह्मी लिपि में अक्षर- (41), स्वर – (9), व्यञ्जन- (32)**

अभिलेख का सामान्य परिचय-

किसी विशेष महत्व अथवा प्रयोजन के लेख को अभिलेख कहा जाता है। यह सामान्य व्यावहारिक लेखों से भिन्न होता है। प्रस्तर, धातु अथवा किसी अन्य कठोर और स्थायी पदार्थ पर विज्ञप्ति, प्रचार, स्मृति आदि के लिए उत्कीर्ण लेखों की गणना प्रायः अभिलेख के अंतर्गत होती है। कागज, कपड़े, पत्ते आदि कोमल पदार्थों पर मसि (स्याही) अथवा अन्य किसी रंग से अंकित लेख हस्तलेख के अंतर्गत आते हैं। कड़े पत्तों (ताडपत्रादि) पर लौहशलाका से खचित लेख अभिलेख तथा हस्तलेख के बीच में रखे जा सकते हैं। मिट्टी की तख्तियों तथा बर्तनों और दीवारों पर लिखित लेख अभिलेख की सीमा में आते हैं। सामान्यतः किसी अभिलेख की मुख्य पहचान उसका महत्व और उसके माध्यम का स्थायित्व है।

अभिलेख के प्रकार-

(1) व्यापारिक तथा व्यावहारिक,
(2) आभिचारिक (जादू टोना से संबद्ध),
(3) धार्मिक और कर्मकांडीय,
(4) उपदेशात्मक अथवा नैतिक,
(5) समर्पण तथा चढ़ावा संबंधी,
(6) दान संबंधी,
(7) प्रशासकीय,
(8) प्रशस्तिपरक,
(9) स्मारक तथा
(10) साहित्यिक।

इकाई-10

(ख) विशिष्ट अध्ययन-

॥अर्थशास्त्र॥

'कौटिल्य अर्थशास्त्र' से पूर्व अनेक आचार्यों ने अर्थशास्त्र की रचनाएं कीं, जिनका उद्देश्य पृथ्वी-विजय तथा उसके पालन के उपायों का प्रतिपादन करना था। उन आचार्यों तथा उनके सम्प्रदायों के कुछ नामों का निर्देशन 'कौटिल्य अर्थशास्त्र' में किया गया है, यद्यपि उनकी कृतियां आज उपलब्ध भी नहीं होतीं। ये नाम निम्नलिखित है-

(1) **मानव** - मनु के अनुयायी

(2) **बार्हस्पत्य** - बृहस्पति के अनुयायी

(3) **औशनस** - उशना अथवा शुक्राचार्य के मतानुयायी

(4) **भारद्वाज** (द्रोणाचार्य)

(5) **विशालाक्ष**

(6) **पराशर**

(7) **पिशुन** (नारद)

(8) **कौणपदन्त** (भीष्म)

(9) **वातव्याधि** (उद्धव)

(10) **बाहुदन्ती-पुत्र** (इन्द्र)

सर्वलोकहितकारी राष्ट्र का जो स्वरूप कौटिल्य को अभिप्रेत है, वह 'अर्थशास्त्र' के निम्नलिखित वचन से स्पष्ट है-

"प्रजा सुखे सुखं राज्ञः प्रजानां च हिते हितम्।
नात्मप्रियं प्रियं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं प्रियम्"॥ (1/19)

अर्थात्-प्रजा के सुख में राजा का सुख है, प्रजा के हित में उसका हित है। राजा का अपना प्रिय (स्वार्थ) कुछ नहीं है, प्रजा का प्रिय ही उसका प्रिय है।

अन्य अर्थशास्त्र-

400 ई. सन् के लगभग **'कामन्दक'** ने कौटिल्य के अर्थशास्त्र के आधार पर कामन्दकीय नीतिसार नामक 20 सर्गों में विभक्त काव्यरूप एक अर्थशास्त्र लिखा था। यह नैतिकता और विदेश-नीति के सिद्धान्तों पर भी विचार करता है। **'सोमदेवसूरि'** का 'नीतिवाक्यामृत', **'हेमचन्द्र'** का 'लघु अर्थनीति', **'भोज'** का 'युक्तिकल्पतरु', **'शुक्र'** का 'शुक्रनीति' आदि कुछ दूसरे सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्र हैं, जिनको नीतिशास्त्र के व्यावहारिक पक्ष की व्याख्या करने वाले ग्रन्थों के अन्तर्गत भी गिना जा सकता है। **'चाणक्यनीतिदर्पण'**, नीतिश्लोकों का अव्यवस्थित संग्रह है।

अर्थशास्त्र का प्रमुख विवरण-

अधिकरण- 15, **विषय/प्रकरण-** 180

अध्याय- 150, **श्लोक-** 6000

॥अधिकरण॥

(1) विनयाधिकारिक	(2) अध्यक्षप्रचारम्
(3) धर्मस्थीय	(4) कण्टकशोधनम्
(5) योगवृत्त	(6) मण्डलयोनि
(7) षाड्गुण्यं (सन्धिकर्म)	(8) व्यसनाधिकारिक
(9) अभियास्यत्कर्म	(10) साङ्ग्रमिक
(11) सङ्घवृत्त	(12) आबलीयसम्
(13) दुर्गलम्भोपाय	(14) औपनिषद
(15) तन्त्रयुक्ति।	

स्मरणार्थ-

"विनयाध्यक्षधर्मकण्टक, योगमण्डल षाड्गुण्यव्यसन।
अभिसां संघबलीदुर्ग, औपतन्त्राधिकरण पंचदश"।।

शौनककृत चरणव्यूह के अनुसार अर्थशास्त्र अथर्ववेद का उपवेद है। चाणक्य का समय- चतुर्थ-शताब्दी ई.पू.।

॥विनयाधिकारिकम्॥

(1) विद्यासमुद्देशः

(2) वृद्धसंयोग

(3) इन्द्रियजयः

(4) अमात्योत्पत्तिः/राजर्षिवृत्तम्

(5)मन्त्रीपुरोहितोत्पत्तिः

(6)उपधाभिःशौचाशौचज्ञानमयमात्यानाम्

(7) गूढ़पुरुपोत्पत्तिः

(8)गूढपुरुषप्रणिधि

(9)स्वविषयेकृत्याकृत्यपक्षरक्षणम्

(10) परविषये कृत्याकृत्यपक्षोपग्रह

(11) मन्त्राधिकारः

(12) दूतप्राणिधिः

(13) राजपुत्ररक्षणम्

(14) अवरुद्धवृत्तम्

(15) अवरुद्धे च कृतिः

(16) राजप्रणिधिः

(17) निशान्तप्रणिधिः

(18) आत्मरक्षितकम्।

॥विद्या समुपद्देशः॥

विद्या- 'वेद्यते अनया इति विद्या' । आन्वीक्षकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति विद्याः। कौटिल्य ने आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीति इन चार विद्याओं की चर्चा की है । जिसके द्वारा जाना जाए उसे विद्या कहते हैं ।विभिन्न आचार्यों ने स्वमतानुसार अलग-अलग विद्याओं को स्वीकार किया है।

मानवाः- त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति मानवाः। त्रयी विशेषो हि आन्वीक्षकीति । मनु सम्प्रदाय के आचार्यों ने त्रयी वार्ता और दण्डनीति इन तीन विद्याओं को स्वीकार किया है । इनके अनुसार आन्वीक्षिकी विद्या का समावेश त्रयी के अन्तर्गत हो जाता है ।

बार्हस्पत्याः- वार्ता-दण्डनीतिश्च द्वे विद्ये स्वीकुर्वरन्ति । यतो हि संवरणमात्रं त्रयी लोकयात्राविद इति। आचार्य बृहस्पति के अनुयायी वार्ता और दण्डनीति इन दो विद्याओं को मानते हैं । इनके मत में त्रयी तो केवल लोगों की आजीविका का साधन मात्र है ।

औशनसाः- शुक्राचार्यानुयायिनस्तु एकामेव दण्डनीतिविद्यां स्वीकुर्वन्ति। तस्यां हि सर्वविद्यारम्भाः प्रतिबद्धाः इति। शुक्राचार्य के अनुयायी केवल दण्डनीति विद्या को ही मानते हैं और उन्होनें दण्डनीति को ही सभी विद्याओं का स्थान एवं कारण स्वीकार किया है ।

कौटिल्यमते तु- आन्वीक्षकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति चतस्रः विद्याः भवन्त्येव। ताभि धर्मार्थौ यद् विद्यात् तद् विद्यानां विद्यात्वम्। आचार्य कौटिल्य उक्त चारों विद्याओं को मानते हैं, और उनकी यथार्थता धर्म तथा अधर्म के ज्ञान में बताते हैं ।

आन्विक्षिक्याम्- सांख्यं योगो लोकायतं चेत्यान्वीक्षिकी।
सांख्य योग, लोकायत (नास्तिक दर्शन) ये आन्वीक्षकी के अन्तर्गत आते हैं ।
त्रय्याम् - धर्माधर्मौ त्रय्याम् ।
त्रयी में - धर्म-अधर्म आते है ।
वार्तायाम्- अर्थानर्थौ वार्तायाम्।
वार्ता में- अर्थ-अनर्थ आते हैं।
दण्डनीत्याम्- नयापनयौ दण्डनीत्याम्।
नयापनय सुशासन और दुःशासन का ज्ञान प्रतिपादित है ।

बलाबले चैतासां हेतुभिः अन्वीक्षमाणान्वीक्षकी लोकस्योपकरोति। व्यसनेऽभ्युदये च बुद्धिमवस्थापयति प्रज्ञावाक्यक्रियावैशारद्यं च करोति। अत एव उक्तम्-
त्रयी आदि विद्याओं की प्रधानता -अप्रधानता (बलाबल) को भिन्न-भिन्न युक्तियों से निर्धारित करती हुई आन्वीक्षिकी विद्या लोक का उपकार करती है । सुख दुःख से बुद्धि को स्थिर रखती है और सोचने, विचारने, बोलने तथा कार्य करने में सक्षम बनाती है । इसलिये कहा है-

प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्।
आश्रयः सर्वधर्माणां शश्वदान्वीक्षकी मता।।

यह आन्वीक्षकी विद्या सर्वदा ही सब विद्याओं का प्रदीप सभी कार्यों का साधन और सभी धर्मों का आश्रय मानी जाती है ।

त्रयी विद्या

'सामर्ग्यजुर्वेदाः त्रयस्त्रयी'। अथर्ववेदेतिहासवेदौ च वेदाः। शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दोविचितिज्योतिषमिति चाङ्गानि। एष त्रयीधर्मः चतुर्णां वर्णानामाश्रमाणां स्वधर्मस्थापनादौपकारिकः। साम, ऋक् तथा यजु इन तीनों वेदों का समन्वित नाम ही त्रयी है, अथर्ववेद और इतिहास भी वेद कहे जाते हैं। शिक्षा आदि छः वेदाङ्ग है । त्रयी में निरूपित यह धर्म चारों वर्णों और आश्रमों को अपने-अपने धर्म में स्थिर रखने के कारण लोक का बहुत ही उपकारक है ।

चार वर्णों के धर्म-

ब्राह्मणस्य धर्मः-अध्ययनम् अध्यापनं यजनं याजनं दानं प्रतिग्रहः चेति।
क्षत्रियस्य धर्मः- अध्ययनं यजनं दानं शस्त्राजीवो भूतरक्षणं च।
वैश्यस्य धर्मः-अध्ययनं यजनं दानं कृषिपशुपाल्ये वाणिज्या च।
शूद्रस्य धर्मः-द्विजातिशुश्रूषा वार्ता कारुकुशीलवकर्म च।

चार आश्रमों के धर्म-

ब्रह्मचारिणः धर्मः- स्वाध्यायोऽग्निकार्याभिषेकौ भैक्षत्रतत्वमाचार्ये प्राणान्तिकी वृत्तिस्तदभावे गुरुपुत्रे सब्रह्मचारिणी वा।
गृहस्थस्य धर्मः-स्वकर्माजीवस्तुल्यैः असमानर्षिभिर्वैवाह्यमृतुगामित्वं देवपित्रतिथिभृत्येषु त्यागः शेषभोजनं च।
वानप्रस्थस्य धर्मः- ब्रह्मचर्य भूमौ शय्या जटाऽजिनधारणम् अग्निहोत्राभिषेको देवतापित्रतिथिपूजा वन्यश्चाहारः।
परिव्राजकस्य धर्मः- संयतेन्द्रियत्वमनारम्भो निष्किञ्चनत्वं सङ्गत्यागो भैक्षमनेकत्रारण्यवासो बाह्याभ्यन्तरं च शौचम् ।

तस्मात्स्वधर्म भूतानां राजा न व्यभिचारयेत्।
स्वधर्मं संदधानो हि प्रेत्य चेह च नन्दति।।

त्रय्याऽतिक्रमे लोकः संकरादुच्छिद्येत । त्रयी विद्या का पालन न करने से वर्ण तथा कर्म में सङ्करता आ जाती है । जिससे लोक का नाश हो जाता है।

वार्ता

विद्या कृषिपशुपाल्ये वाणिज्या च वार्ता। धान्यपशु हिरण्यकुप्यविष्टिप्रदानादौपकारिकी। तया स्वपक्षं परपक्षं च वशीकरोति कोशदण्डाभ्याम् । कृषि, पशुपालन और व्यापार ये वार्ता के विषय हैं यह विद्या धान्य, पशु, हिरण्य, ताम्र आदि खनिज पदार्थ और नौकर चाकर आदि को देने वाली परम उपकारिणी है, इसी विद्या से उपार्जित कोष

और विद्या के बल पर राजा स्वपक्ष तथा परपक्ष को वश में कर लेता है ।

दण्डनीति

आन्वीक्षकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो दण्डः । तस्य नीतिर्दण्डनीतिः-अलब्धलाभार्था; लब्धपरिरक्षणी; रक्षितविवर्धनी; वृद्धेषु तीर्थेषु प्रतिपादनी चा तस्यामायत्ता लोकयात्रा। तीक्ष्णदण्डो हि भूतानामुद्वेजनीयः। मृदुदण्डः परिभूयते। यथार्हदण्डः पूज्यः। सुविज्ञातप्रणीतो हि दण्डः प्रजा धर्मार्थकामैर्योजयति।

आन्वीक्षकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति इन सभी विद्याओं की सुख-समृद्धि 'दण्ड' पर निर्भर है । दण्ड शासन को प्रतिपादित करने वाली नीति ही दण्डनीति है । वही अप्राप्त वस्तुओं को प्राप्त कराती है, रक्षित वस्तुओं की वृद्धि करती है और वही सम्वर्धित वस्तुओं को समुचित कार्यों में लगाने का निर्देश करती है । उसी पर इस संसार की लोकयात्रा निर्भर है ।

पुरातन आचार्यों का मत है कि दण्ड के बिना प्राणियों को वश में नहीं कर सकते । किन्तु आचार्य चाणक्य इस युक्ति से सहमत नहीं है उनका कहना है कि कठोर दण्ड देने वाले राजा से लोग उद्विग्न हो उठते हैं किन्तु दण्ड में ढिलाई देने पर लोग राजा की अवहेलना करते हैं इसलिए राजा को समुचित दण्ड देने वाला होना चाहिए ।

यथोक्तम्-

चतुर्वर्णाश्रमो लोको राज्ञा दण्डेन पालितः।
स्वधर्मकर्माभिरतो वर्तते स्वेषु वेशमसु ॥

राजा की दण्ड व्यवस्था से रक्षित चारों वर्णाश्रम, सारा लोक अपने-अपने कर्त्तव्यों में प्रवृत्त होकर निरन्तर अपनी-अपनी मर्यादा में बने रहते हैं।

(1) आन्विक्षिकी (2) त्रयी (3) वार्ता (4) दण्डनीति।

1. आन्विक्षिकी- "सांख्य योगो लोकायतं चेत्यान्वीक्षिकी"।
(दर्शन-सांख्य योग।)

2. त्रयी- "सामर्ग्यजुर्वेदास्त्रयस्त्रयी"। अथर्ववेदेतिहासवेदो च वेदाः।

3. वार्ता- "कृषिपशुपाल्ये वाणिज्या च वार्ता"।

4. दण्डनीति- "आन्वीक्षकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो दण्डः"।

अलब्धलाभायः लब्धपरिरक्षिणो रक्षितविवर्धिनी वृद्धस्य तीर्थेषु प्रतिपादनी च।

स्थापना- विनय दो भेद (शिक्षा)-

(1) कृतक कृत्रिम (2) नैमित्तिक स्वाभावि।

॥वृद्धसंयोग॥

तस्माद्दण्डमूलास्तिस्रो विद्याः। विनयमूलो दण्डः प्राणभृतां योगक्षेमावहः। कृतकः स्वाभाविकश्च विनयः क्रिया हि द्रव्यं विनयति नाद्रव्यम् । इन तीनों विद्याओं का मुख्य आधार दण्डनीति ही है, शास्त्रविहित उचित रीति से प्रयुक्त दण्ड प्रजा के योगक्षेम का साधक होता है । विनय दो प्रकार का होता है- **1. कृतक** (कृत्रिम,नैमित्तिक) **2. स्वाभाविक** । शिक्षा सुपात्र को ही योग्य बना सकती है अपात्र को नहीं ।

॥इन्द्रियजय॥

विद्याविनयहेतुःइन्द्रियजयः। काम-क्रोध-लोभ-मान-मद-हर्षत्यागात्कार्यः। शास्त्रार्थानुष्ठानं इन्द्रियजयः वा। कृत्स्नं हि शास्त्रमिदमिन्द्रियजयः। तद्विरुद्धवृत्तिः अवश्येन्द्रियः चातुरन्तोऽपि राजा सद्यो विनश्यति। यथा-

विद्या और विनय का हेतु इन्द्रियजय है, अतः काम-क्रोध-लोभ-मान-मद-हर्ष के त्याग से इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करनी चाहिए । अथवा शास्त्रों में प्रतिपादित अनुष्ठान को इन्द्रियजय कहते हैं । सारे शास्त्रों का मूलकारण इन्द्रियजय है । शास्त्रविहित कर्तव्यों के विपरीत आचरण करने वाला अवशेन्द्रिय राजा पृथ्वी का अधिपति होता हुआ भी शीघ्र नष्ट हो जाता है । **जैसे-**

काम से विनष्ट राजा- दाण्डक्य, कराल, ।
कोप से विनष्ट राजा- जन्मेजय, तालगंज ।
लोभ से विनष्ट राजा- पुरुरवा, अजविन्दु ।
अभिमान से विनष्ट राजा- रावण, दुर्योधन ।
मद से विनष्ट राजा- डम्भोद्भव, हैहयराज अर्जुन ।
हर्ष से विनष्ट राजा- वातापि, वृष्णि ।

एते चान्ये च बहवः शत्रुषड्वर्गमाश्रिताः।
सबन्धुराष्ट्रा राजानो विनेशुरजितेन्द्रियाः।।
शत्रुषड्वर्गमुत्सृज्य जामदग्न्यो जितेन्द्रियः।
अम्बरीषश्च नाभागो बुभुजाते चिरं महीम् ॥
अतः अरिषड्वर्गत्यागेन अवश्यमेव इन्द्रियजयं कुर्यात्।

॥अमात्योत्पत्ति/राजर्षिवृत्तम्॥

तस्मात् अरिषड्वर्गत्यागेन इन्द्रियजयं कुर्वीत । धर्मार्थाविरोधेन कामं सेवेत। अर्थ एव प्रधान इति कौटिल्यः अर्थमूलो हि धर्मकामाविति।

इसलिए काम क्रोधादि छः शत्रुओं का सर्वथा परित्याग करके इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करें । काम का भी वह सेवन करे किन्तु उससे धर्म और अर्थ को किसी प्रकार क्षति न पहुँचे । आचार्य कौटिल्य का अभिमत है कि धर्म अर्थ और काम इन तीनों में अर्थ प्रधान है धर्म और काम अर्थ पर निर्भर है ।

सहायसाध्यं राजत्वं चक्रमेकं न वर्तते।।
कुर्वीत सचिवांस्तस्मात्तेषां च श्रृणुयान्मतम्।।

एक पहिए की गाडी की भाँति राजकार्य भी बिना सहायता के नहीं चलाया जा सकता इसलिए राजा को चाहिए कि वह सुयोग्य अमात्यों की नियुक्ति कर उनके परामर्शों को हृदयङ्गम करें ।

अमात्यनियुक्ति-

विद्या बुद्धि, साहस, गुण, दोष, देश, काल और पात्र का विचार करके ही अमात्यों की नियुक्ति करें।

अमात्य नियुक्ति में अन्य आचर्यों के मत-

1. भारद्वाज- सहाध्यायिनोऽमात्यान्कुर्वीत।
   (ते ह्यस्य विश्वास्या भवन्ति)।
2. विशालाक्ष- योह्यस्य गुह्यधर्माणस्तानमात्यान्कुर्वीत।
   (समानशील व्यसनत्वात्)।
3. पराशर- य एनमापत्सु प्राणबाधयुक्तास्वनुगृह्णीयुस्तानमात्यान् कुर्वीत।
   (दृष्टानुरागत्वात्)।
4. नारद (पिशुन)- संख्यातार्थेषु कर्मसु नियुक्ता ये यथादिष्टमर्थ सविशेषं वा कुर्यस्तानमात्यान्कुर्वीत। **(दृष्टगुणत्वाद्)।**
5. भीष्म (कौणदन्त)- पितृपैतामहानमात्यान्कुर्वीत।
   (दृष्टापदानत्वात्)।
6. उद्धव (वातव्याधि)- नीतिविदो नवानमात्यान्कुर्वीत।
7. इन्द्र (बाहुदन्तीपुत्र)- अभिजनप्रज्ञाशौचशौर्यानुरागयुक्तानमात्यान कुर्वीत। **(गुणप्रधान्यात्)।**
8. कौटिल्य-सर्वमुपपन्नमिति कौटिल्यः कार्यसामर्थ्याद् हि पुरुषसामर्थ्यं कल्प्यते सामर्थ्यश्च।
   "विभाज्यामात्यविभवं देशकालौ च कर्म च।
   अमात्या सर्व एवैते कार्याः स्युर्न तु मन्त्रिणः"।।

॥मन्त्रीपुरोहितयोः नियुक्ति॥

राजव्यवहार के तीन प्रकार- **"प्रत्यक्षपरोक्षानुमेया हि राजवृत्तिः"।**

प्रत्यक्ष, परोक्ष और अनुमेय राजा के व्यवहार के ये तीन विधियां है।

विषय- गुणपरीक्षणप्रकारः, **राजवृत्तौ प्रमाणत्रयम्, मन्त्रिस्थापनावश्यकता, पुरोहितयोग्यता आवश्यकता च, निर्गलितार्थप्रतिपादनम्।**

उत्तम मन्त्री के गुण- (24)

मध्यम मन्त्री के गुण - (12),

अधम मन्त्री के गुण - (6),

॥उपधाभिः शौचाशौचज्ञानममात्यानम्॥

अमात्यपरीक्षाविधि- चार प्रकार से

(1) **धर्मोपधा-** (पुरोहित द्वारा) (प्रत्याख्याने शुचिः)

(2) **अर्थोपधा-** (सेनापति द्वारा अमात्यों में धन से फूट करने वाले/कर वसूलने वाले/सन्निधाता कोषाध्यक्ष)

(3) **कामोपधा-** (सन्यासिनी वेशधारी गुप्तचरी, बाह्य विहार, आन्तरिक विहार)

(4) **भयोपधा-** (राजा के समीपवर्ती कपटवेशधारी छात्र गुप्तचर)
गुप्तचर के दो विभाग- **(1) स्थायी (2) भ्रमणशील।**

॥गूढ़पुरुषोत्पत्ति॥

गुप्तचरों की नियुक्ति- **नौ प्रकार**

1. स्थायी गुप्तचर- (5), 2 .क्रमणशील गुप्तचर- (4)

स्थायी गुप्तचर -

(1) **कापटिक** (मर्म दुश्चेष्टिम्) छात्र वेश।

(2) **उदास्थित** (प्रवज्या) सन्यासी वेश।

(3) **गृहपतिक** (कर्षक) किसान वेश।

(4) **वैदेहकव्यञ्जन** (व्यापार) व्यापारी वेश।

(5) **तापस** (मुण्डित)

ये स्थायी गुप्तचर हैं और **"पञ्च संस्था"** कहे जाते हैं।

क्रमणशील गुप्तचर-

(1) **सत्री** (राजा के सम्बन्धी)

(2) **तीक्ष्ण** (शूर)

(3) **रसद** (आलसी)

(4) **भिक्षुकी** (परिव्राजिक स्त्री जो अमात्यों के कुल में प्रवेश करे)

ये **"संचार"** कहलाते हैं।

॥परविषये कृत्याकृत्यपक्षोपगृह॥

चार प्रकार के कृत्य-

(1) **क्रुद्धवर्ग- संश्रुत्यार्थन्विप्रलब्धः।**
(धन देने की घोषणा करके जिसे नहीं दिया।)

(2) **भीतवर्ग- स्वयमुपहतो विप्रकृतः।**
(किसी की हिंसा करने वाला।)

(3) **मानीवर्ग- परिक्षणोऽव्यक्तस्वः।**
(जिसकी सम्पत्तियां क्षीण हो गई हों।)

(4) **लुब्धवर्ग- आत्मसंभावितः।**
(अपने को महान मानने वाला।)

॥मंत्राधिकारः॥

मन्त्र के पांच अंग-

(1) **कर्मणारम्भोपाय** (दुर्गनिर्माण)

(2) **पुरुषद्रव्यसंपद्** (उत्तम कारीगर सम्पत्ति)

(3) **देशकालविभाग**

(4) **विनिपात प्रतीकार** (विघ्नों का निराकरण)

(5) **कार्य सिद्धि**

कौटिल्य मन्त्रिपरिषद में अमात्यों की नियुक्ति- (4),

(1) मंत्री (2) पुरोहित (3) सेनापति (4) युवराज।

तस्माद् गुह्यमेको मन्त्रयेतेति- (भारद्वाजः)।

नैकस्य मन्त्रसिद्धिरस्तीति- (विशालाक्षः)।

मंत्री परिषद्-

मनु के अनुसार- 12,

बृहस्पति- 16,

शुक्राचार्य- 20,

कौटिल्य- 4, कार्य करने वाले पुरुषों के सामर्थ्य के अनुरूप।

राज्य के सात अंगो का संक्षिप्त वर्णन-

1. **राजा-** राजा को चार प्रकार की शिक्षा (अन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता व दण्डनीति) में दक्ष होना चाहिए।
2. **अमात्य-** मन्त्री स्वदेशोत्पन्न, नीतिनिपुण व स्वामीभक्त हो तथा राजा को प्राय उनके साथ सहभोज अपेक्षित हो।
3. **जनपद ।**
4. **दुर्ग-** दुर्ग व्यूह रचनाकार हो उसमें जल, खाद्य सामग्री व स्फ़ोटक सामग्री का उचित प्रबन्ध हो। युद्ध के समय, आन्तरिक अशान्ति के समय या शत्रु से राज्य की सुरक्षा करने में दुर्ग का विशेष महत्व होता है। राजकोष व सेना दुर्ग में ही होते हैं। दुर्ग चतुर्विध होते हैं- **औदकदुर्ग (श्रेष्ठ) पार्वत दुर्ग, धान्वनदुर्ग, वन दुर्ग।**
5. **कोष।**
6. **दण्ड-** दण्ड से बलवान के बल का दुरूपयोग नहीं होता। तीन प्रकार (स्पर्शनम्, ताडनम्, भत्त्सनन्) तथा तीन ही प्रकार के वाक् पारुष्यम् होते हैं - (निष्ठुरम्, अश्लीलम्, तीव्रम्) ।
7. **सेना-** सेना सात प्रकार की होती है - (मौलसेना, भृत्यसेना, श्रेणीसेना, मित्रसेना, अमित्रसेना, आटविकसेना व औत्साहिकसेना)। विदेश नीति से संबधित छः गुण (सन्धि, विग्रह, यान, आसन, संश्रया, द्वैधीभाव) होते हैं।

॥दूतप्रणिधिः॥

दूत को सर्वशास्त्रज्ञाता, परिस्थितिज्ञ, राज्यसमर्पित, रोगरहित, वाक्पटु, युद्धवृत्तों का ज्ञाता होना चाहिए । दूत के तीन भेद होते हैं:-

दूत के तीन प्रकार-

(1) **निसृष्टार्थ** (अमात्यसम्पदोपेतौ)

(2) **परिमितार्थ** (पादगुणहीनः)

(3) **शासनहर** (अर्धगुणहीनः)।

1. **निसृष्टार्थ-** इस प्रकार के दूत को मन्त्री के समान अधिकार मिलते हैं ।
2. **परिमितार्थ-** इन्हें अन्य राजाओं के पास सन्देश लेकर भेजा जाता है।
3. **शासनहार-** यह राज्य संबन्धी पत्र ग्रहण करता है तथा शासकीय कार्यों में सहायता करता है इसलिए इसे शासनहर कहा जाता है।

॥राजपुत्रसंरक्षणम्॥

राजपुत्रों की श्रेणियां- (3)

(1) बुद्धिमान (2) आहार्यबुद्धि (3) दुर्बुद्धि।

विषय- कार्यानुष्ठानप्रकार, रात्रिभागे अनुष्ठयानि कार्याणि, कार्यदर्शनक्रमः।

॥राजप्रणिधि॥

मध्याह्न से पूर्व चार भाग, मध्याह्न से पश्चात चार भाग **त्रिपौरुषेयी, एकपौरुषेयी, चतुरंगता, दिनान्त** ये इस प्रकार से दिन के आठ भाग होते हैं ।

॥निशान्त प्रणिधि॥

विषय- राजभवन का निर्माण, अग्निभयनिवारणोपायः, विषप्रतीकारोपायः, कक्ष्यविभागः, देवीदर्शनप्रकारः, बाह्यप्रतिसंसर्गनिषेधः।

॥आत्मरक्षितम्॥

विषय- विषयुक्तवस्तुलक्षणानि, विषप्रदस्य चिह्नानि। भिषगादिकार्यवर्णनम्, राज्ञो गमनागमनव्यवस्था।

॥मनुस्मृति॥

परिचय-

मनुस्मृति हिन्दू धर्म का एक प्राचीन धर्मशास्त्र (स्मृति) है। इसे मानव-धर्म-शास्त्र, मनुसंहिता आदि नामों से भी जाना जाता है। यह उपदेश के रूप में है जो मनु द्वारा ऋषियों को दिया गया। इसके बाद के धर्मग्रन्थकारों ने मनुस्मृति को एक सन्दर्भ के रूप में स्वीकारते हुए इसका अनुसरण किया है। धर्मशास्त्रीय ग्रंथकारों के अतिरिक्त शंकराचार्य, शबरस्वामी जैसे दार्शनिक भी प्रमाणरूपेण इस ग्रन्थ को उद्धृत करते हैं। परम्परानुसार यह स्मृति `स्वायंभुवमनु' द्वारा रचित है, `वैवस्वतमनु' द्वारा नहीं। मनुस्मृति से यह भी पता चलता है कि स्वायंभुव मनु के मूलशास्त्र का आश्रय कर 'भृगु' ने उस स्मृति का उबृंपहण किया था, जो प्रचलित मनुस्मृति के नाम से प्रसिद्ध है। इस **'भार्गवीया मनुस्मृति'** की तरह **'नारदीया मनुस्मृति'** भी प्रचलित है। मनुस्मृति वह धर्मशास्त्र है जिसकी मान्यता जगविख्यात है। न केवल भारत में अपितु विदेश में भी इसके प्रमाणों के आधार पर निर्णय होते रहे हैं और आज भी होते हैं। अतः धर्मशास्त्र के रूप में मनुस्मृति को विश्व की अमूल्य निधि माना जाता है। भारत में वेदों के उपरान्त सर्वाधिक मान्यता और प्रचलन 'मनुस्मृति का ही है। इसमें चारों वर्णों, चारों आश्रमों, सोलह संस्कारों तथा सृष्टि उत्पत्ति के अतिरिक्त राज्य की व्यवस्था, राजा के कर्तव्य, भांति-भांति के विवादों, सेना का प्रबन्ध आदि उन सभी विषयों पर परामर्श दिया गया है जो कि

मानव मात्र के जीवन में घटित होना सम्भव है। यह सब धर्म-व्यवस्था वेद पर आधारित है। मनु महाराज के जीवन और उनके रचनाकाल के विषय में इतिहास-पुराण स्पष्ट नहीं हैं। तथापि सभी एक स्वर से स्वीकार करते हैं कि मनु आदिपुरुष थे और उनका यह शास्त्र आदिशास्त्र है।

'मनुस्मृति' भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग है। इसकी गणना विश्व के ऐसे ग्रन्थों में की जाती है, जिनसे मानव ने वैयक्तिक आचरण और समाज रचना के लिए प्रेरणा प्राप्त की है। इसमें प्रश्न केवल धार्मिक आस्था या विश्वास का नहीं है। मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति, किसी भी प्रकार आपसी सहयोग तथा सुरुचिपूर्ण ढंग से हो सके, यह अपेक्षा और आकांक्षा प्रत्येक सामाजिक व्यक्ति में होती है। विदेशों में इस विषय पर पर्याप्त खोज हुई है, तुलनात्मक अध्ययन हुआ है और समालोचनाएँ भी हुई हैं। हिन्दु समाज में तो इसका स्थान वेदत्रयी के उपरान्त हैं। मनुस्मृति के बहुत से संस्करण उपलब्ध हैं। कालान्तर में बहुत से प्रक्षेप भी स्वाभाविक हैं। साधारण व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह बाद में सम्मिलित हुए अंशों की पहचान कर सके। कोई अधिकारी विद्वान ही तुलनात्मक अध्ययन के उपरान्त ऐसा कर सकता है।

भारत से बाहर प्रभाव-

'एन्टॉनी रीड' कहते हैं कि **बर्मा, थाइलैण्ड, कम्बोडिया, जावा-बाली** आदि में धर्मशास्त्रों और प्रमुखतः मनुस्मृति, का बड़ा आदर था। इन देशों में इन ग्रन्थों को प्राकृतिक नियम देने वाला ग्रन्थ माना जाता था और राजाओं से अपेक्षा की जाती थी कि वे इनके अनुसार आचरण करेंगे। इन ग्रन्थों का प्रतिलिपिकरण किया गया, अनुवाद किया गया और स्थानीय कानूनों में इनको सम्मिलित कर लिया गया। **'बाइबल इन इण्डिया'** नामक ग्रन्थ में **लुई जैकोलिऑट (Louis Jacolliot)** लिखते हैं । मनुस्मृति ही वह आधारशिला है जिसके ऊपर मिस्र, परसिया, ग्रेसियन और रोमन कानूनी संहिताओं का निर्माण हुआ। आज भी यूरोप में मनु के प्रभाव का अनुभव किया जा सकता है।

मनुस्मृति के प्रणेता एवं काल-

मनुस्मृति के काल एवं प्रणेता के विषय में नवीन अनुसंधानकारी विद्वानों ने पर्याप्त विचार किया है। किसी का मत है कि "मानव" चरण (वैदिक शाखा) में प्रोक्त होने के कारण इस स्मृति का नाम मनुस्मृति पड़ा। कोई कहते हैं कि मनुस्मृति से पहले कोई 'मानव धर्मसूत्र' था (जैसे, मानव गृह्यसूत्र आदि हैं) जिसका आश्रय लेकर किसी ने एक मूल मनुस्मृति बनाई थी जो बाद में उपबृंहित होकर वर्तमान रूप में प्रचलित हो गई। मनुस्मृति के अनेक मत या वाक्य जो निरुक्त, महाभारत आदि प्राचीन ग्रंथों में नहीं मिलते हैं, उनके हेतु पर विचार करने पर भी कई उत्तर प्रतिभासित होते हैं। इस प्रकार के अनेक तथ्यों का **'बूहलर' (Buhler, G.)** (सैक्रेड बुक्स ऑव ईस्ट सीरीज, संख्या 25), **'पाण्डुरंग वामन काणे'** (हिस्ट्री ऑव धर्मशास्त्र में मनुप्रकरण) आदि विद्वानों ने पर्याप्त विवेचन किया है। यह अनुमान बहुत कुछ तर्कसंगत प्रतीत होता है कि मनु के नाम से धर्मशास्त्रीय विषय परक वाक्य समाज में प्रचलित थे, जिनका निर्देश महाभारत आदि में है तथा जिन वचनों का आश्रय लेकर वर्तमान मनुसंहिता बनाई गई, साथ ही प्रसिद्धि के लिये भृगु नामक प्राचीन ऋषि उसके साथ जोड़ दिया गया। मनु से पहले भी धर्मशास्त्रकार थे, यह मनु के "एते" आदि शब्दों से ही ज्ञात हुआ है। कौटिल्य ने **"मानवाः" (मनुमतानुयायियों)** का उल्लेख किया है। विद्वानों के अनुसार मनु परम्परा की प्राचीनता होने पर भी वर्तमान मनुस्मृति ईसापूर्व चतुर्थ शताब्दी से प्राचीन नहीं हो सकती (यह बात दूसरी है कि इसमें प्राचीनतर काल के अनेक वचन संगृहीत हुए हैं), यह बात यवन, शक, कंबोज, चीन आदि जातियों के निर्देश से ज्ञात होती है। यह भी निश्चित हे कि स्मृति का वर्तमान रूप द्वितीय शती ईसा पूर्व तक दृढ़ हो गया था और इस काल के बाद इसमें कोई संस्कार नहीं किया गया।

मनुस्मृति की संरचना एवं विषयवस्तु-

मनुस्मृति भारतीय 'आचार-संहिता' का विश्वकोश हे, मनुस्मृति में **'बारह अध्याय'** तथा 'दो हजार पाँच सौ' श्लोक हैं, जिनमें सृष्टि की उत्पत्ति, संस्कार, नित्य और नैमित्तिक कर्म, आश्रमधर्म, वर्णधर्म, राजधर्म व प्रायश्चित आदि विषयों का उल्लेख है।

मनुस्मृति के अध्यायों में वर्णित विषय-

प्रथम अध्याय- जगत् की उत्पत्ति,
द्वितीय अध्याय- संस्कारविधि, व्रतचर्या, उपचार,
तृतीय अध्याय-स्नान, दाराधिगमन, विवाहलक्षण, महायज्ञ, श्राद्धकल्प,
चतुर्थ अध्याय- वृत्तिलक्षण, स्नातक व्रत,
पंचम अध्याय- भक्ष्याभक्ष्य, शौच, अशुद्धि, स्त्रीधर्म,
षष्ठ अध्याय- गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थ, मोक्ष, संन्यास,
सप्तम अध्याय- राजधर्म,
अष्टम अध्याय- कार्यविनिर्णय, साक्षिप्रश्नविधान,
नवम अध्याय- स्त्रीपुंसधर्म, विभाग धर्म, धूत, कंटकशोधन, वैश्यशूद्रोपचार,
दशम अध्याय- संकीर्णजाति, आपद्धर्म,
एकादश अध्याय- प्रायश्चित्त,
द्वादश अध्याय- संसारगति, कर्म, कर्मगुणदोष, देशजाति, कुलधर्म, निश्रेयस।

॥प्रथम अध्याय॥

प्रजापति दश महर्षि-

''मरीचिमत्र्यङ्गिरसौ पुलस्त्यं पुलहं क्रतुम्।
प्रचेतसं वसिष्ठं च भृगुं नारदमेव च।।''

ये दस प्रजापति के नाम से निर्दिष्ट हैं।

1. मरीचि,	2. अत्रि,
3. अंगिरा,	4. पुलस्त्य,
5. पुलह,	6. क्रतु,
7. प्रचेता,	8. वसिष्ठ,
9. भृगु,	10. नारद,

दश गण- "यक्षरक्षःपिशाचांश्च गन्धर्वाप्सरसोऽसुरान्।
नागांन्सर्पान्सुपर्णाश्च पितॄणां च पृथग्गणान्।।''

1. यक्ष,	2. राक्षस,
3. पिशाच,	4. गन्धर्व,
5. अप्सरा,	6. असुर,
7. हाथी,	8. सर्प,
9. सुपर्ण,	10. पितृगण।

मनु के अनुसार 4 प्रकार के शरीर है-

1. जरायुज, 2. अण्डज , 3. स्वेदज 4. उद्भिज।

1. जरायुज-

"पशवश्च मृगाश्चेव व्यालाश्चोभयतोदतः।
रक्षांसि च पिशाचाश्च मनुष्याश्च जरायुजाः"।।

2. अण्डज-

"अण्डजाः पक्षिणः सर्पाः नक्रा मत्स्याश्च कच्छपाः।
यानि चैवं प्रकाराणि स्थलजान्यौदकानि च"।।

3. स्वेदज -

"स्वेदजं दंशमशकं यूकामक्षिकमत्कुणम्।
उष्मणश्चोपजायन्ते यच्चान्यत्किश्चदीदृशम्।।

4. उद्भिज -

''उद्भिजाः स्थावराः सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः।
ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्प फलोपगाः।।
"तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना
अन्तः संज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः।।"

वनस्पति वृक्ष -

"अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तृभयताः स्मृताः"।।

मनुओं के नाम/मनुवंशी-

''स्वरोचिषश्चोत्तमश्च तामसो रैवतस्तथा।
चाक्षुषश्च महातेजो विवस्वत्सुत एव च।।''

1. स्वायंभु	2. स्वारोचिष
3. उत्तम	4. तामस
5. रैवत	6. चाक्षुप
7. वैवस्वत	

कालपरिमाणज्ञान -''निमेषा दश चाष्टौ च काष्ठा त्रिंशत्तु ताः कला
त्रिंशत्कला मुहूर्तः स्यादहोरात्रं तु तावतः।।''

- अठारह पलक - 1 काष्ठा
- 30 काष्ठा - 1 कला
- 30 कला – मुहूर्त
- 30 मुहूर्त - एक दिनरात,
- **मनुष्यों का एक मास** - पित्रों का दिनरात,
- **कृष्णपक्ष** - दिन, **शुक्लपक्ष**- रात्रि,
- **मनुष्यों का एक वर्ष** - देवताओं का रात्रिदिन,
- **उत्तरायण** - देवताओं का दिन,
- **दक्षिणायन** - देवताओं की रात्रि,

युग	मान	सन्ध्यांश	सन्ध्या
सतयुग (तप) -	4000	400	400
त्रेता (ज्ञान) -	3000	300	300
द्वापर (यज्ञ) -	2000	200	200
कलियुग (दान) -	1000	100	100

ब्राह्मण के कर्म- (6)

"अध्यापनं अध्ययनं यजनं याजनं तथा
दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्"।।

1. अध्ययन करना, 2. अध्यापन करना, 3. यज्ञ करना, 4. यज्ञ करवाना, 5. दान लेना, 6. दान देना ।

क्षत्रिय के कर्म- (5)

"प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः"।!

1. प्रजा की रक्षा करना, 2. दान देना, 3. यज्ञ करना, 4. पढ़ना, 5. इन्द्रियों के विषय में न फंसना ।

वैश्य के कर्म- (7)

"पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च"।।

1.पशुपालन 2. दान देना, 3. यज्ञ करना, 4. पढ़ना 5. व्यापार करना, 6., ब्याज लेना (कुसीदं=ब्याज) 7. खेती करना ।

शूद्र के कर्म- (1)

"एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनुसूयया"।।

॥द्वितीय अध्याय॥

धर्मलक्षण-

धर्म के मुख्य स्रोत श्रुति और स्मृति है, अतएव श्रुति और स्मृति द्वारा कहा गया धर्म ही अनुष्ठेय है। **"धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः''** **श्रुति** - वेद (स्वतः प्रमाण), **स्मृति** - परतः प्रमाण। ''चोदनैव प्रमाणम्''- वास्तव में एकमात्र वेद ही धर्म का ज्ञान कराने में पूर्ण समर्थ है। वेद के वाक्यों में जिसके करने की आज्ञा दी है, वही धर्म है। । धर्म अनुभव प्रधान होता है, यह प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, अर्थापत्ति का विषय नहीं है, यह केवल शब्दप्रमाण अर्थात् वेद के प्रमाण से ही जाना जा सकता है। मनुस्मृति में धर्म का लक्षण किया गया है-

"वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षात्धर्मस्य लक्षणम्"।।

ब्रह्मावर्त-

''सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देशनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्त प्रचक्षते।।''

'सरस्वती' और 'दृषद्वती' देव नदियों के मध्य का जो देवताओं का रचा हुआ देश है उसको ब्रह्मावर्त कहते हैं।

सदाचार-

''तस्मिन् देशे य आचारः पारंपर्यक्रमागतः।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते।''

ब्रह्मर्षियों के निवास योग्य देश-

''कुरूक्षेत्रं च मत्स्याश्च पाञ्चालाः शूरसेनकाः
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्तादनन्तरः।।''

1, कुरूक्षेत्र(हरियाणा), 2. मत्स्य(राजस्थान),
3. पांचाल (पंजाब), 4. शूरसेन (मथुरा)।

मध्यदेश-

"हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः"।।

हिमवान् विन्ध्याचल के मध्य, कुरुक्षेत्र के पूर्व और प्रयाग के पश्चिम का देश 'मध्यदेश' कहा गया है।

आर्यावर्त-

"आ समुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तर गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधः"।।

पूर्व समुद्र से लेकर पश्चिम समुद्र तक और विन्ध्याचल तथा हिमाचल पर्वतों के बीच के देश को आर्यावर्त कहते हैं।

म्लेच्छदेश-

"कृष्णसारस्तु चरति मृगो यत्र स्वभावतः।
स ज्ञेयो यज्ञियो देशो म्लेच्छदेशस्त्वतः परः" ।।

जहां पर कालामृग स्वभाव से विचरता है वह देश यज्ञ के योग्य जानना चाहिए, अन्य म्लेच्छ देश है।

नामकरण -

"नामधेयं दशम्यां तु द्वादश्यां वाऽस्य कारयेत्।
पुण्ये तिथौ मुहूर्ते वा नक्षत्रो वा गुणान्विते"।।
"मङ्गल्यं ब्राह्मणस्य स्यात्क्षत्रियस्य बलान्वितम्
वैश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्"।।
"शर्मवद्ब्राह्मणस्य स्याद्राज्ञो रक्षासमन्वितम्।
वैश्यस्य पुष्टिसंयुक्तं शूद्रस्य तु प्रेष्यसंयुतम्"।।

निष्क्रमण-

"चतुर्थे मासि कर्त्तव्यं शिशोर्निष्क्रमणं गृहात्"।

अन्नप्राशन-

"षष्ठेऽन्नप्राशनं मासि यद्वेष्टं मङ्गलं कुले"।।

चूड़ाकर्म-

"चूडाकर्म द्विजातीनां सर्वेषामेव धर्मतः
प्रथमेऽब्दे तृतीये वा कर्तव्यं श्रुतिचोदनात्।।

उपनयन-

"गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनयनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः"।।

ब्राह्मण- (8), क्षत्रिय - (11), वैश्य- (12)

"ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे।।

ब्राह्मण- (5), क्षत्रिय- (6), वैश्य- (8)

"आषोडशाद् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते
आद्वाविंशत्क्षात्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः"।।

ब्राह्मण- (16), क्षत्रिय- (22), वैश्य- (24)

मनु द्वारा वर्णित 16 संस्कार निम्न प्रकार से हैं-

जन्म से पूर्व के तीन संस्कार-

1 गर्भाधानम् 2 पुंसवनम् 3 सीमन्तोन्नयनम् ।

बाल्यावस्था के संस्कार-

4 जातकर्म 5 नामकरणम् 6 निष्क्रमणम्
7 अन्नप्राशनम् 8 चूडाकर्म 9 कर्णवेध ।

शैक्षणिक संस्कार-

10 विद्यारम्भ 11 उपनयन 12 वेदारम्भ
13 केशान्त 14 समावर्तन।

15 विवाह संस्कार तथा 16 अन्त्येष्टि संस्कार जो मृत्यु के बाद कराया जाता है।

मनु ने चार आश्रमों का उल्लेख इस प्रकार किया है-

1. ब्रह्मचर्याश्रम- (25 वर्ष तक)
2. गृहस्थाश्रम- (26 से 50 वर्ष)
3. वानप्रस्थाश्रम- (50से 75वर्ष तक)
4. संन्यासाश्रम- (75 से देहत्याग तक)।

भिक्षा पद्धति-

"भवत्पूर्वं चरेद् भैक्षमुपनीतो द्विजोत्तमः।
भवन्मध्यं तु राजन्यो वैश्यस्तु भवदुत्तरम्"।।

ब्राह्मण - भवती भिक्षां देहि।
क्षत्रिय - भिक्षां भवती देहि।
वैश्य - भिक्षां देहि भवती।

ब्रह्मादितीर्थ-

**"अङ्गुष्ठमूलस्य तले ब्राह्मं तीर्थं प्रचक्षते।
कायमङ्गुलिमूलेऽग्रे दैवं पित्रं तयोरधः"।।**

ब्राह्म तीर्थ - अंगूठे की जड़ के नीचे।
प्रजापति - कनिष्ठिका अंगुली के मूल में
दैव - अंगुलियों के अग्रभाग में।
पित्र - अंगूठे और तर्जनी के मध्य में।

केशान्त - "केशान्तः षोडशे वर्षे ब्राह्मणस्य विधीयते।
राजन्यबन्धोर्द्वाविंशे वैश्यस्य द्व्यधिके ततः।

ब्राह्मण- (16), क्षत्रिय- (22), वैश्य- (24)

अध्यापन योग्य शिष्य-

"आचार्यपुत्रः शुश्रूषुर्ज्ञानदो धार्मिकः शुचिः।
आप्तः शक्तोऽर्थदः साधुः स्वोऽध्याया दश धर्मतः"।।

धर्म मान्यता के स्थान, मान्यस्थान-

"वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी
एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम्"।।

धन- बन्धु- आयु- कर्म- विद्या = (पाँच)

आचार्य - **"उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते"।।**

जो अपने शिष्य का उपनयन करके उसे 'साङ्गवेद' पढ़ाता है वह 'आचार्य' कहलाता है ।

उपाध्याय - "एकदेशं तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः
योऽध्यापयति वृत्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते"।।

जो ब्राह्मण वेद या उसके अङ्गों को जीविका के लिए पढ़ाता है, वह 'उपाध्याय' कहलाता है ॥

गुरू- "निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि
सम्भावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते"।।

जो गर्भाधान आदि संस्कार विधि से करता है और अन्न से पोषण करता है, वह गुरु कहलाता है।

उपनयन संस्कारे राजदण्ड -

"केशान्तिको ब्राह्मणस्य दण्डः कार्यः प्रमाणतः।
ललाटसंमितो राज्ञः स्यात्तु नासान्तिको विशः"।

ब्राह्मण - केशतक, **क्षत्रिय** - मस्तक तक, **वैश्य** - नासिका तक,

संस्कार -

मनु	-	(16),	गौतम	-	(40),
व्यास	-	(16),	अंगिरा	-	(25)
वैश्वानस	-	(18),			

"अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्
दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थम् ऋग्यजुः सामलक्षणम्"।।

सृष्ट्युत्पत्ति-

''मनः सृष्टिं विकुरुते चोद्यमानं सिसृक्षया
आकाशं जायते तस्मात्तस्य शब्दं गुणं विदुः।।''

वस्त्र धारण-

ब्रह्मचारी - काला मृग,
क्षत्रिय - बकरा सन,
वैश्य - रेशम और उन के वस्त्र धारण करें।

मेखला-

मौञ्जी त्रिवृत्समा श्लक्ष्णा कार्या विप्रस्य मेखला।
क्षत्रियस्य तु मौर्वीज्या वैश्यस्य शणतान्तवी ॥
मुञ्जालाभे तु कर्तव्याः कुशाश्मन्तकबल्वजैः।
त्रिवृता ग्रन्थिनैकेन त्रिभिः पञ्चभिरेव वा॥

ब्राह्मण - मूंज की, तीन लड़ की चिकनी।
क्षत्रिय - मौर्वी (जिससे धनुष की प्रत्यञ्चा बनती है।)
वैश्य - शणतान्तवी (सन के सूत की)

यज्ञोपवीत-

कार्पासमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्।
शणसूत्रमयं राज्ञो वैश्यस्याविज सौत्रिकम्॥

ब्राह्मण - कपास के सूत का,
क्षत्रिय - सन के सूत का,
वैश्य- भेड़ की सन के सूत का।
दण्ड - बेल या नक, बढ़ या खेर, पीलू या गूलर।

दण्ड धारणविधि-

"ब्राह्मणो वैल्वपालाशो क्षत्रियौ वाटखादिरौ
पैलवौदुम्वरो वैश्यो दण्डानर्हन्ति धर्मतः"।।

भोजनविधि-

"आयुष्यं प्राङ्मुखे भुङ्क्ते यशसं दक्षिणमुखः।
श्रियं प्रत्यम्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते ह्रदन्मुखः"।।

आचमन जल परिमाण-

ब्राह्मण - ह्रदय तक,
क्षत्रिय - कण्ठ तक,
वैश्य - मुख तक,
शूद्र - होंठ तक।

॥सप्तम अध्याय॥

राजा-

"इन्द्रानिलयमार्काणामग्निश्च वरुणस्य च।
चन्द्रवित्तशयोश्चैव मात्रा निर्हृत्य शाश्वतीः"।।

1. इन्द्र, 2. वायु,
3. यम, 4. सूर्य,
5. अग्नि, 6. वरुण,
7. चन्द्रमा 8. कुबेर

इन दिग्पालों के नित्य अंश से ईश्वर ने राजा को बनाया है।

काम से उत्पन्न (10) दोष-

"मृगयाऽक्षो दिवा स्वप्नः परिवादः स्त्रियो मदः।
तौर्यत्रिकं वृथाट्या च कामजो दशको गणः" ।

मृगया, जुआ, दिन में सोना, पराया दोष कहना, स्त्रियों में आसक्ति, मद्यपान, (तौर्यत्रिकं = बजाना, नाचना, गाना,) वृथा घूमना।

क्रोध से उत्पन्न 8 दोष-

"पैशुन्यं साहसं द्रोहः ईर्ष्यासूयार्थदूषणम्।
वाग्दण्डजं च पारुष्यं क्रोधजोऽपि गणोष्टकः" ।।

चुगली, दुःसाहस, द्रोह, ईर्ष्या, (असूया - गुणों में दोषारोपण करना), दूसरे की वस्तु हरना, कठोर वचन बोलना, अनुचित दंड देना।
इन दोनों गणों का मूल कारण **"लोभ"** है।

षड्दुर्ग -

1. धनुर्दुर्ग, 2. महीदुर्ग,
3. जलदुर्ग, 4. वृक्षदुर्ग (वार्क्षदुर्ग),
5. नृदुर्ग, 6.गिरिदुर्ग

इनमें से सबसे श्रेष्ठ **'पर्वतदुर्ग'** है।

षड्गुण-

"सन्धिं च विग्रहं चैव यानमासनमेव च।
द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांश्चिन्तयेत्सदा।।

राजा को धार्मिक पण्डित और ब्राह्मण से **सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैध, आश्रय,** इन विषयों की सलाह लेनी चाहिए।

राजा के अङ्ग-

मनु ने भी राज्य के सात अंग माने है-

1. राजा, 2. अमात्य,
3. पुर, 4. कोष,
5. दण्ड, 6. मित्र,
7. बल ।

मन्त्री-

वंशपरंपरागत शास्त्रविद शूर शास्त्रविद्या में निपुण, कुलीन परीक्षित (7-8) प्रकार के मन्त्री राजा नियत करे।

दण्डोत्पत्ति –

राजा के हित के लिए प्राणियों की रक्षा के लिए धर्मरूप दण्ड उत्पन्न किया।

"ब्रह्मतोजोमयं दण्डमसृजत्पूर्वमीश्वरः"।।

दण्ड -

दण्ड तीन प्रकार का होता है –

1. श्यामवर्ण 2. लोहिताक्ष 3. पापहा,

चारों आश्रमों के धर्म का प्रतिभू =दण्ड।

"स राजा पुरुषो दण्डः स नेता शासिता च सः
चतुर्णा माश्रमाणां च धर्मस्य प्रतिभूः स्मृतः" ।।

व्यूह - (6)

1. दण्डव्यूह 2. शकटव्यूह
3. वराहव्यूह 4. मकरव्यूह
5. सूचीव्यूह 6. गरुड़व्यूह।

राजा की प्रशंसा तथा प्रभाव -

"सोऽग्निर्भवति वायुश्च सोऽर्कः सोमः स धर्मराट्।
स कुबेरः स वरुणः स महेन्द्रः प्रभावतः"।।

विवादरहित नष्ट राजा-

वेन, नहुष, सुदास, पैजवन, सुमुख, निमि। काम से उत्पन्न व्यसनों की आसक्ति से राजा धर्म,अर्थ, से रहित हो जाता है, क्रोध से उत्पन्न होने वाले व्यसनों में से अपने शरीर से वियुक्त होता है।

अतिदुःख व्यसन-

1. मद्य पीना 2. जुआ खेलना
3. स्त्रियों में आसक्ति 4. शिकार खेलना।

दूत- **"दूतं चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्रविशारदम्।**
इंगिताकारचेष्टज्ञं शुचिं दक्षं कुलोद्गतम्"।।

दूत के गुण होते हैं- **(8)**

राजदूत- "अनुरक्तः शुचिर्दक्षः स्मृतिमान्देशकालवित्
वपुष्मान्वीतभीर्वाग्मी दूतो राज्ञः प्रशस्यते"।।

राजा के गुप्तचर- (5)

1. कापटिक 2. उदासीन
3. गृहपति 4. वैदेहक
5. तापस।

दशवर्षोऽपि ब्राह्मणः क्षत्रियादिभिः पितृदेव वन्द्यः-

"ब्राह्मणं दशवर्षं तु शतवर्षं तु भूमिपम्
पित्रापुत्रौ विज्ञानीयाद् ब्राह्मणस्तु तयोः पिता"।।

माता-पिता- "य आवृणोत्यवितथं ब्रह्मणा श्रवणावुभौ
स माता स पिता ज्ञेयस्तं न द्रुह्येत्कदाचन"।।

त्रिवर्ग - धर्म, अर्थ, काम।

शत्रुगुण - "प्राज्ञं कुलीनं शूरं च दक्षं दातारमेव च।
कृतज्ञं धृतिमन्तं च कष्टमाहुररि बुधाः"।।

उदासीन राजा के गुण-

"आर्यता पुरुषज्ञानं शौर्यंकरुणवेदिता
स्थौललक्ष्यं च सततमुदासीनगुणोदयः"।।

आर्यता - (साधुत्व)

वेदों की सर्वज्ञानमयता-

"यः कश्चितत्कस्यचिद्धर्मो मनुना परिकीर्तितः
स सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः।। (2.7)

सर्वज्ञानमय- वेद

प्रमुख अंश-

- **अक्षय निधि -** वेदपाठी ब्राह्मणों को धन्य, दान देना अक्षय निधि कहा गया है।
- **सामदण्ड प्रशंसा -** पण्डित लोग चारों उपायों में साम तथा दण्ड की प्रशंसा करते हैं।
- **प्रकृति प्रकार -** राजमण्डल की सारी (12) प्रकृतियां है। ये प्रत्येक फिर से 36 भेद की होती हैं।
- सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव, संशय इनके दो-दो प्रकार हैं।
- धर्म के उपादान-प्रमाण – (5), शील – (13)
- **पाकयज्ञ- (4),**
  1. वैश्वदेव 2. बलिकर्म 3. नित्यश्राद्ध 4. अतिथिपूजन।
- राजा के कर्म – (8)
- **मनु ने धर्म के साक्षात् 4 लक्षण बताएं है-**
  1 वेद 2 स्मृति 3 सदाचार 4 आत्माभिरुचि।
- **विवाह-**
  मनु के अनुसार 8 प्रकार के विवाह होते हैं-
  1. ब्राह्मविवाह, 2. दैवविवाह,
  3. आर्षविवाह, 4. प्राजापत्यविवाह,
  5. आसुरविवाह, 6. गान्धर्वविवाह,
  7. राक्षसविवाह 8. पैशाचविवाह
  इसमें प्रथम 4 उत्तम व अगले 4 निम्नकोटि के माने जाते हैं।
- **राजा के लिए कुशलप्रशासन हेतु मनु ने 4 उपाय बतलाए-**
  1. साम, 2. दाम,
  3. दण्ड, 4. भेद ।

प्रमुख सूक्तियां-

- श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। (द्वितीय अध्याय)
- सर्वतेजमयो हि सः (7) राजा। (सः- राजा)
  "आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते" ।
- "वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्
  आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च" ।। **(2.6)**
- "तं राजा प्रणयन् सम्यक् त्रिवर्गेणाभिवर्तते" ।
  (त्रिवर्ग - धर्म, अर्थ, काम।)

- धर्मो रक्षति रक्षतः- (अ.8)
- वेदमेव सदाऽभ्यस्येत् तपस्तप्यन् द्विजोत्तमः ।
- वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते ।। (मनु.2.166)
- योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
- स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ।। (मनु.2.168)
- सर्वेषां तु स नामानि, कर्मणि च पृथक् पृथक् ।
- वेदशब्देभ्य एवादौ, पृथक् संस्थाश्च निर्ममे ।। (मनु.1.21)

मनुस्मृति की टीकाएं-

(1) मेधातिथि	-	भाष्य,
(2) कुल्लूक भट्ट	-	मन्वर्थमुक्तावली टीका,
(3) सर्वज्ञनारायण	-	मन्वर्थ विवृत्ति टीका,
(4) राघवानन्द	-	मन्वर्थ चंद्रिका टीका,
(5) नंदन कृत	-	नंदिनी टीका,
(6) गोविन्दराज	-	मन्वाशयानसारिणी टीका।

॥याज्ञवल्क्य स्मृति॥

परिचय-

याज्ञवल्क्य स्मृति धर्मशास्त्र परम्परा का एक हिन्दू धर्मशास्त्र का ग्रंथ (स्मृति) है। याज्ञवल्क्य स्मृति को अपने तरह की सबसे अच्छी एवं व्यवस्थित रचना माना जाता है। इसकी विषय-निरूपण-पद्धति अत्यंत सुग्रन्थित है। इसपर विरचित 'मिताक्षरा' टीका हिंदू धर्मशास्त्र के विषय में भारतीय न्यायालयों में प्रमाण मानी जाती रही है। इसके श्लोक अनुष्टुप छंद में हैं - इसी छंद में गीता, वाल्मीकि रामायण और मनुस्मृति लिखी गई है। इसी विषय (यानि धर्मशास्त्र) पर मनुस्मृति को आधुनिक भारत में अधिक मान्यता मिली है। इसमें आचरण, व्यवहार और प्रायश्चित के तीन अलग अलग भाग हैं। याज्ञवल्क्य स्मृति में ही सर्वप्रथम महिलाओं के सम्पत्ति के अधिकार का प्रयोग किया गया इस स्मृति में 1003 श्लोक हैं। इसपर **'विश्वरूपकृत' 'बालक्रीड़ा'** (800-825), **'अपरार्क'** कृत **'याज्ञवल्कीय धर्मशास्त्र निबंध'** (12वीं शती) और **'विज्ञानेश्वरकृत' 'मिताक्षरा'** (1070-1100) टीकाएँ प्रसिद्ध हैं। **'काणे'** का मत है कि इसकी रचना लगभग विक्रम पूर्व पहली शती से लेकर तीसरी शती के बीच में हुई। स्मृति के अंत:साक्ष्य इसमें प्रमाण है। इस स्मृति का संबंध शुक्र यजुर्वेद की परंपरा से ही था। जिस तरह मानव धर्मशास्त्र की रचना प्राचीन धर्मसूत्र युग की सामग्री से हुई, ऐसे ही याज्ञवल्क्य स्मृति में भी प्राचीन सामग्री का उपयोग करते हुए नयी सामग्री को भी स्थान दिया गया। कौटिल्य अर्थशास्त्र की सामग्री से भी याज्ञवल्क्य के अर्थशास्त्र का विशेष साम्य पाया जाता है।

याज्ञवल्क्य स्मृति में तीन कांड (अध्याय) हैं-

(1) आचारकाण्ड - इसमें (तेरह) प्रकरण हैं।

उपोद्घात-प्रकरणम्, ब्रह्मचारिप्रकरणम्, विवाह-प्रकरणम्, वर्णजातिविवेक-प्रकरम्, गृहस्थ-प्रकरणम्, स्नातवह-प्रकरणम्, भक्ष्याभक्ष्य-प्रकरणम्, द्रव्यशुद्धप्रकरणम्, दान-प्रकरणम्, श्राद्ध-प्रकरणम्, गणपति कल्पप्रकरणम्, ग्रहशान्ति-प्रकरणम्, राजधर्म-प्रकरणम्।

(2) व्यवहारकाण्ड - इसमें (पचीस) प्रकरण हैं।

व्यवहाराध्यायेसाधाराव्यवहारमातृका,ऋणादानो-पनिधि-साक्षी-लेख्य-दिव्य -दायविभाग-सीमाविवाद-स्वामिपालविवाद-अस्वामिविक्रय-दत्ताप्रदानिक क्रीतानुशया अभ्युपेत्याशुश्रूषा-संविदव्यतिक्रम-वेतनादानद्यूत समाह्वय-वाक पारुष्य-दण्डपारुष्य-साहसविक्रीयासम्प्रदानसम्भूयसमुत्थान-स्तेय-स्त्रीसंग्रह ण-प्रकरणानि॥

(3) प्रायश्चितकाण्ड - इसमें (छः) प्रकरण हैं।

शौचप्रकरणम्, आपद्धर्मप्रकरणम्, वानप्रस्थप्रकरणम्, यति-धर्मप्रकरणम्, प्रायश्चित्त-प्रकरणम्, प्रकीर्ण-प्रयश्चित्तानि।

याज्ञवल्क्यस्मृति का प्रमुख विवरण-

रचयिता	-	याज्ञवल्क्य
गुरु	-	वैशम्पायन
पिता	-	वाजसन (देवरात)

यह तीन भागों में विभक्त है-

1. **आचाराध्याय-** (13) प्रकरण=चौदह विद्याएं,धर्मोपादान, आचार के 10 सिद्धान्त आदि
2. **व्यवहाराध्याय-** (25) प्रकरण
3. **प्रायश्चित्ताध्याय-** (6) प्रकरण आपद्धर्म =यतिधर्म, प्रायश्चित्तादि।

व्यवहाराध्याय याज्ञवल्क्यस्मृति का है (हृदय)।

वि+अव+हार = **व्यवहार। वि** = नाना, **अव** = सन्देहार्थ,

हार = हटाना।

व्यवहार वह है जो अनेक सन्देहों को दूर करता है-

"विनानार्थेऽव सन्देहे हरणं हार उच्यते
नानासन्देहहरणाद् व्यवहार इति स्मृतः"।।

सर्वप्रथम मनु ने (18) व्यवहारपदों को गिनाया है।

याज्ञवल्क्य ने (20) व्यवहारपदों की गणना की है।

कौटिल्य ने (16) व्यवहारपदों की गणना की है।

नारद ने (18) व्यवहारपदों की गणना की है।

बृहस्पति ने (19) व्यवहारपदों की गणना की है।

व्यवहारपदों में की कल्पना से व्यवहार वर्णित होता है। (चतुरंश)

(1) भाषापाद (2) उत्तरपाद (3) क्रियापाद (4) साध्यसिद्धिपाद।

विश्वरूप के अनुसार याज्ञवल्क्यस्मृति में =1003 श्लोक,

विज्ञानेश्वर के मत में =1009 श्लोक,

विज्ञानेश्वर ने मिताक्षरा में धर्म का 6 प्रकार से विभाजन किया हैं-

(1) वर्णधर्म (2) आश्रमधर्म

(3) वर्णाश्रमधर्म (4) गुणधर्म

(5) निमित्तधर्म (6) साधारणधर्म।

कौटिल्य आदि ने 'व्यवहारपद' के स्थान पर 'विवादपद' का प्रयोग किया है। मनु ने 'पद' का अर्थ विषय न करके 'स्थान' किया है।

॥व्यवहाराध्याय॥

प्रकरण- 25

(1)साधारणव्यवहारमातृकप्रकरणम्
(2)असाधारणव्यवहारमातृकप्रकरणम्
(3) ऋणादानप्रकरणम्
(4) उपनिधिप्रकरणम्
(5) साक्षिप्रकरणम्
(6) लेख्यप्रकरणम्
(7) दिव्यप्रकरणम्
(8) दायविभागप्रकरणम्
(9) सीमाविवादप्रकरणम्
(10) स्वामिपालविवादप्रकरणम्
(11) स्वामिविक्रयप्रकरणम्
(12) दत्ताप्रदानिकप्रकरणम्
(13) क्रीतानुशयप्रकरणम्
(14) अभ्युपेत्याशुश्रूषाप्रकरणम्
(15) संविद्व्यतिक्रमप्रकरणम्
(16) वेतनादानप्रकरणम्
(17) द्यूतसमाह्वयप्रकरणम्
(18) वाक्पारुष्यप्रकरणम्
(19) दण्डपारुष्यप्रकरणम्
(20) साहसप्रकरणम्
(21) विक्रीयासंप्रदानप्रकरणम्
(22) संभूयसमुत्थानप्रकरणम्
(23) स्तेयप्रकरणम्
(24) स्त्रीसंग्रहणप्रकरणम्
(25) प्रकीर्णप्रकरणम्।

॥साधारणव्यवहारमातृकप्रकरणम्॥

व्यवहारान्नृपः पश्येद्विद्वद्भिर्ब्राह्मणैः सह।
धर्मशास्त्रानुसारेण क्रोधलोभविवर्जितः।।

विद्वान ब्राह्मणों के साथ क्रोध और लोभ को छोड़कर धर्मशास्त्र के अनुसार व्यवहारों को राजा देखें ।

व्यवहार- "अन्यविरोधेन स्वात्मसंबन्धितया कथनं व्यवहारः"।।

सभासद- श्रुताध्ययनसम्पन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः,
राज्ञा 'सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः।

वेद और मीमांसा आदि पढ़े हो, धर्म जाने, सच वोले और जो शत्रु और मित्र को बराबर माने राजा को ऐसे सभासदों की नियुक्ति करनी चाहिए।

व्यवहारविषय- स्मृत्याचारव्यपेतेन मार्गेणाऽऽधर्षितः परैः,
आवेदयति चेद्राज्ञे व्यवहारपदं हि तत्।।

धर्मशास्त्र और सदाचार के विरुद्ध रीति से दूसरे में पीड़ित होकर यदि राजा को निवेदन करें तो वही व्यवहारपद कहलाता है ।

व्यवहार दो प्रकार- (1) शङ्काभियोग (2) तत्वाभियोग

तत्वाभियोग दो प्रकार-(1) प्रतिपेधात्मक (2) विध्यात्मक

व्यवहार के चार पाद- 'चतुष्पाद्व्यवहारोऽयं विवादेषूपदर्शितः'।।

(1) भाषापाद (2) उत्तरपाद (3) क्रियापाद (4) साध्यसिद्धिपाद।

अपश्यता कार्यवशाद्व्यवहारान्नृपेण तु
सभ्यैः सह नियोक्तव्यो ब्राह्मणः सर्वधर्मात्।।

किसी कार्यवश होकर राजा अपने आप व्यवहार न देख सके तो सभासदों के सहित सव धर्म जानने वाले ब्राह्मण को सभासदों के साथ नियुक्त करें ।

शोधितपत्ररूढ़ि पूर्वपक्षे किं कर्तव्य-

श्रुतार्थस्योत्तर लेख्यं पूर्वावेदकसंनिधौ।
ततोऽर्थी लेखयेत्सद्यः प्रतिज्ञातार्थ साधनम्।।

प्रत्यर्थी ने जो बात सुनी हो उसका उत्तर वह अर्थी के सामने लिखावे तब अपने निवेदन के सिद्धि करने वाली जो बातें हो उन्हे अर्थी झटपट लिखावे ।

आसेधलक्षणम्- वक्तव्यर्थे ह्यातिष्ठन्तमुत्क्रामन्तं च तद्वचः
आसेधयेद्विवादार्थी यावदाह्वानदर्शनम्।।

आसेधश्चतुर्विधः-

(1) स्थानसेधः (2) कालकृतः (3) प्रवासात् (4) कर्मणः।

हीनः पञ्चविधः- (नारद)

(1) अन्यवादी (2) क्रियाद्वेषी (3) नोपस्थाता (4) आहूत (5) प्रपलायी।

॥असाधारणव्यवहारमातृकाप्रकरणम्॥

प्रत्यभियोगः:-अभियोगमनिस्तीर्य नैनं प्रत्यभियोजयेत्।

कुर्यात्प्रत्यभियोगं च कलहे साहसेषु च।

मिथ्याभियोगीद्विगुणमभियोगाद्धनं वहेत्। मिथ्या अभियोग लगाने वाला उस धन का दुगुना धन दण्डस्वरूप वहन करे।

ग्रहीतवेतनम्- **द्विगुणमाहवेत्।**

दुष्टलक्षणम् - **देशाद्देशान्तरं याति सृक्किणी परिलेढि च।**
ललाटं स्विद्यते चास्य मुखं वैवर्ण्यमेति च।।
परिशुष्यत्स्खलद्वाक्यो विरुद्धं बहु भाषते
वाक्चक्षुः पूजयति नो तथौष्ठौ निर्भुजत्यपि।।
स्वभावाद्विकृतिं गच्छेन्मनोवाक्कायकर्मभिः
अभियोगेऽथ साक्ष्ये वा दुष्टः स परिकीर्तितः।।

जो इधर-उधर घूमे, जो व्यर्थ में अधिक बोले, जिसके ललाट में पसीना होता हो मुंह का रंग बदल गया हो, बात करने में मुंह सूखता जाए, जो अपनी बातों के विरुद्ध बात करता हो, सामने न देखे, बराबर बात न कहे, होंठ चाटा करे, मन वाणी और कर्म से अपने आप जो और का और हो गया हो ये सब अभिप्रयोग और साक्ष्य दुष्ट व्यक्ति के हैं। अभियोग और साक्ष्य में दोष के रूप में गिने जाते हैं- **कर्मविकृति, वाग्विकृति, मनोविकृति।**

स्मृतियों के विरोध होने पर निर्णय प्रकारः-

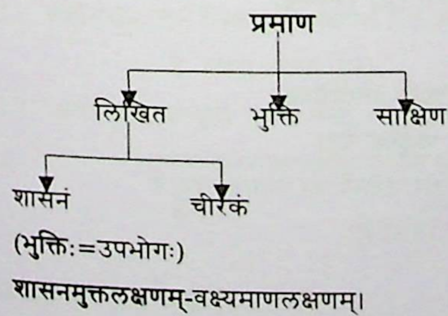
स्मृत्योर्विरोधे न्यायस्तु बलवान् व्यवहारतः।
अर्थशास्त्रस्तु बलवद्धर्मशास्त्रमिति स्थितिः।।

स्मृतियों के विरोध में न्याय बलवान होता हैं तथा अर्थशास्त्र से बलवान धर्मशास्त्र में होता है ।

मानुष प्रमाणभेदाः- "प्रमीयते परिच्छिद्यतेऽनेनेति **प्रमाणं**"।

प्रमाण के तीन प्रकार-

प्रमाणं लिखितं भुक्तिः साक्षिणश्चेति कीर्तितम्।
एषामन्यतमाभावे दिव्यान्यतममुच्यते।।



(भुक्तिः=उपभोगः)

शासनमुक्तलक्षणम्-वक्ष्यमाणलक्षणम्।

प्रमाणबलाबलविचारः- सर्वेष्वर्थविवादेषु बलवत्युत्तरा क्रिया।
(सभी प्रकार के धन के विवाद में उत्तर किया प्रबल होती है।)

अपवाद- आधौप्रतिग्रहेक्रीते पूर्वा तु बलवत्तरा।

पूर्व की तीन पीढ़ी-(प्रपितामह, पितामह, पिता) आधि-बंधन, बंधन, दान, क्रय, में पूर्व कार्य प्रबल होता है।

भोगप्रमाण- आगमोऽभ्यधिको भोगाद्विना पूर्वक्रमागतात्।
इस बिना पूर्व की तीन पीढ़ी के क्रम के भोग से आगम बलवान् (लेख) होता है।

स्वीकारः त्रिविधः – (1) मानस (2) वाचिक (3) कायिक

असिद्धव्यवहारः- मत्तोन्मत्तार्तवयसंनिबालभीतादियोजितः,
असंबद्धकृतश्चैव व्यवहारो न सिद्ध्यति।।

निधिप्राप्तौ निर्णयप्रकार-

राजा लब्ध्वा निधिं दद्याद्विजेभ्योऽर्धं द्विजः पुनः
विद्वानशेषमादधात्स सर्वस्य प्रभुर्यतः।।

राजा निधि प्राप्त करे तो आधा धन ब्राह्मण को दें, यदि ब्राह्मण धन प्राप्त करे और वो विद्वान हो तो वह सम्पूर्ण धन को खुद रख ले क्योंकि वह सबका प्रभु है ।

इतरेण निधौ लब्धे राजा षष्ठांशमाहरेत्।
अनिवेदितविज्ञातो दाप्यस्तं दण्डमेव च।।

यदि कोई अन्य निधि प्राप्त करता है तो राजा उसे षष्ठांश देकर शेष खुद रख ले, और जो निधि प्राप्त कर राजा को न बताए तो राजा सम्पूर्ण निधि लेकर इच्छानुसार दण्ड दे ।

अधि- चल सम्पत्ति के विषय में 'न्यास-धरोहर' या 'अचल' सम्पत्ति के विषय में 'आधि' के प्रकार- 4, **(1) जंगम (2) स्थावर (3) गोप्य (4) भोग्य,**

आधि के अन्य प्रकार-2, **(1) चरित्रबन्धक (2) सत्यंकार।**

॥ऋणादानप्रकरणम्॥

ऋणदान सप्त प्रकार का होता है ।

अधर्मणविषये (ऋणदाता) - (5) **उत्तमर्णविषये** (ऋणी)- (2)

चक्रवृद्धिकार्यकादिवृद्धिप्रकाराः-(ब्याज)

उत्तमऋणदानविधि-

अशीतिभागो वृद्धिः स्यान्मासि मासि सबन्धके
वर्णक्रमाच्छतं द्वित्रिचतुष्पञ्चकमन्यथा।।

बन्धक रखे जाने पर प्रत्येक मास में (80) वां भाग ब्याज होता है। बन्धक न होने पर वर्णक्रम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र क्रम से, 2,3,4,5 प्रतिशत वृद्धि होती है।

गृहीतविशेषेण प्रकारान्तरवृद्धिः-

'कान्तारगास्तु दशकं सामुद्रा विंशकं शतम्।'

जो सूद पर धन लेकर जंगल में जाए उनसे- (10) प्रतिशत।

जो समुद्र में जाए उससे- (20) प्रतिशत॥

द्रव्यविशेषेण वृद्धिविशेष- "सन्ततिस्तु पशुस्त्रीणां"। पशु और स्त्री का ब्याज उनकी सन्तान है।

प्रयुक्तस्य द्रव्यस्य चिरकालावस्थितवृद्धि- "रसस्याष्टगुणा परा" । (तेल आदि पर) आठ गुना ब्याज ।

वस्त्रधान्यादीनां वृद्धिः- "वस्त्रधान्यहिरण्यानां चतुस्त्रिद्विगुणा परा"।

वस्त्र = 4 गुना ब्याज

धान्य = 3 गुना ब्याज

स्वर्ण = 2 गुना ब्याज

ऋण से वृद्धि = ब्याज या सूद के चार प्रकार कहे गये हैं।

(1) **कारिता** - ऋणदाता द्वारा निश्चित की जाती है।

(2) **कालिका** - प्रतिमास दी जाने वाली वृद्धि।

(3) **कायिका**- प्रतिदिन दी जाने वाली।

(4) **चक्रवृद्धि** - जो ब्याज पर भी लगती है।

॥उपनिधिप्रकरणम्॥

प्रतिभूलग्नक का अर्थ है/- औपनिधिक वा जामिन। प्रतिभू में तीन व्यक्ति आते हैं-

(1) ऋणदाता (2) ऋणी (3) जामिन(विश्वास दिलाने वाला।)

उपनिधिद्रव्यलक्षणम्-

वासनस्थमनाख्याय हस्तेऽन्यस्य यदर्प्यते
द्रव्यं तदौपनिधिकं प्रतिदेयं तथैव तत्।।

उपनिधिदानेऽपवादः-

न दाप्योऽपहृतं तं तु राजदैविकतस्करैः।।

यदि उपनिधि राजा दैव तथा तस्करों से चुरा लिया जाय तो लौटाना नहीं होता।

॥साक्षिप्रकरणम्॥

साक्षी च साक्षाद्दर्शनाच्छ्रवणाच्च भवति। स द्विविधः- **कृतोऽकृतश्चेति**

कृत- पञ्चविध, **अकृत-** षड्विध। साक्षित्वेन निरुपितः कृतः। अनिरुपितोऽकृतः।

11 प्रकार के साक्षी।

तेऽपि साक्षिणः कीदृशाः कियन्तश्च-

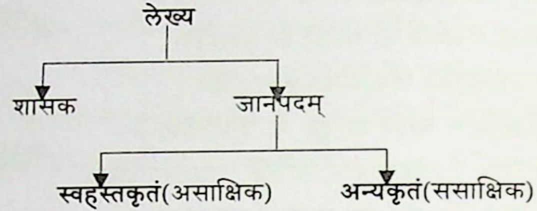
सभी जाति तथा वर्ण के लिये। कम से कम (3) साक्षी।

साक्षी के सम्पूर्ण (8) गुण-

तपस्विनो दानशीलाः कुलीनाः सत्यवादिनः
धर्मप्रधाना ऋजवः पुत्रवन्तो धनान्विताः।
त्र्यवराः साक्षिणो ज्ञेयाः श्रौतस्मार्त क्रियापराः
यथाजाति यथावर्णं सर्वे सर्वेषु वा स्मृताः।।

॥लेख्यप्रकरणम्॥

लेख्य द्विविधं- (1) शासनं, (2) जानपदं चेति। शासनं निरुपित।। जानपदमभिधीयते। तच्च द्विविधं-स्वहस्तकृतमन्यकृतं चेति। स्वहस्तकृतमसाक्षिकं, अन्यकृतं ससाक्षिकम्।



॥दिव्यप्रकरणम्॥

दिव्यमातृका- 'तुलाग्न्यापो विषं कोशो दिव्यानीह विशुद्धये'।

तुला, अग्नि, जल, विष और कोश विशुद्धि के लिये ये पांच दिव्य प्रयोग किये जाते हैं।

इस प्रकरण में - साधारणविधि, पूर्वाह्नादिकला, घटदिव्यप्रयोग, अग्निदिव्यविधिः, कर्तुस्याभिमन्त्रणम्, उदकदिव्यविधिः, विषदिव्यविधिः, कोषदिव्यविधिः, तण्डुलदिव्यविधिः, तप्तमाषविधिः, धर्माधर्माख्य विधिः, इत्यादि वर्णित हैं।

॥दायविभागप्रकरणम्॥

दायो द्विविधः - (1) **अप्रतिबन्धः** (2) **सप्रतिबन्धः।**

(1) **अप्रतिबन्धोदायः**– "तत्र पुत्राणां पौत्राणां च पुत्रत्वेन पौत्रत्वेन च पितृधनं पितामह धनं च सर्वं भवतीत्यप्रतिबन्धो दायः"।

(2) **सप्रतिबन्धो दायः**- "पितृव्य भ्रात्रादीनां तु पुत्राभावे स्वाम्यभावे च स्वं भवतीति सप्रतिबन्धो दायः"।।

पितुरिच्छा **विभागो** द्विधा दर्शितः- **(1) समो (2) विषमश्च।**

समविभाग-

यदि कुर्यात्समानंशान् पत्न्यः कार्या समांशिकाः।
न दत्तं स्त्रीधनं यासां भर्त्रा वा श्वशुरेण वा।।

यदि पिता पुत्रों में समान हिस्सा करे तो उन पत्नियों को समान भाग दे जिनके श्वशुर या पति द्वारा स्त्री-धन नहीं मिला है।

विभागलक्षणम्- "विभागो नाम द्रव्यसमुदायविषयाणामनेकस्वाम्यानां तदेकदेशेषु व्यवस्थापनम्"।

विभाग- विभागं चेत्पिता कुर्यादिच्छदाविभजेत्सुतान्
ज्येष्ठं वा श्रेष्ठभागेन सर्वे वा स्युः समांशिनः।।

असंस्कृतभ्रातृसंस्कार करण विषये-

असंस्कृतासु संस्कार्या भ्रातृभिः पूर्वसंस्कृतैः।।

पिता की मृत्यु के वाद संस्कृत भाई असंस्कृत भाइयों का संस्कार करावे।

भगिनीनां संस्कार विभागश्च-

भगिन्यश्च निजादंशाद्दत्त्वांशं तु तुरीयकम्।।

भाई अपने अंश का चौथाई भाग देकर बहन का विवाह कराए।

याज्ञवलक्य ने 12 प्रकार के पुत्रों का उल्लेख किया है-

1. **औरस- "औरसो धर्मवीजः"**। (सगा पुत्र)
2. **पुत्रिका- "तत्समः पुत्रिकासुतः"**। (मातृहीन कन्या को ही अपना पुत्र मानना दूसरे पुत्र को गोद लेकर उसे अपना पुत्र मानना)
3. **क्षेत्रज- "क्षेत्रजः क्षेत्रजातस्तु सगोत्रेणेतरेण वा। "**(पत्नि के द्वारा स्वयं गोत्र के या देवर आदि से उत्पन्न किया हुआ पुत्र)
4. **गूढ़ज- "गृहे प्रच्छन्न उत्पन्ने गूढजस्तु सुतः स्मृतः"**। (घर में उत्पन्न निम्न से जिसके पिता को छिपाया गया हो)
5. **कानीन-** "कानीनः कन्यकाजातो मातामहसुतो मतः"।(कुमारी कन्या पिता घर जिस पुत्र को जन्म दे)
6. **पौनर्भव- "अक्षतायां क्षतायां वा जातः पौनर्भवः सुतः"**।(कोई विधवा या परित्यक्ता अपनी स्वेच्छा से अन्यपुरुष से उत्पन्न पुत्र,पूर्व में पुरुष से संसर्ग विवाहित पुत्र)।
7. **दत्तक – "दद्यान्माता पिता वा यं स पुत्रो दत्तको भवेत्"**। (अपने ही प्रियजनों को समर्पित पुत्र)
8. **क्रीत- "क्रीतश्च ताभ्यां विक्रीतः"**। (खरीदा हुआ पुत्र)
9. **कृत्रिम- "कृत्रिमः स्यात्स्वयंकृतः"**। (जो पुत्र माता पिता से विहीन होकर अपने आपको किसी को सौंपता है तो वह उस पुरुष के लिए स्वयंदत पुत्र होगा)
10. **स्वयंदत्त – "दत्तात्मा तु स्वयंदत्तो"**। (कोई पुत्रार्थी लोभवश किसी अन्य कारण से पुत्र बनाता है)
11. **सहोढज- "गर्भे भिन्नः सहोढजः"**।। (जो गर्भवती से विवाह करता है उससे उत्पन्न पुत्र)
12. **अपविद्ध- 'उत्सृष्टो गृह्यते यस्तु सोऽपविद्धो भवेत्सुतः'**।। (माता पिता द्वारा त्यक्त होने पर जो पुत्र स्वीकार किया जाता है।)

स्त्रीधन के (6) प्रकार-

"पितृमातृपतिभ्रातृदत्तमध्यग्न्युपागतम्

आधिवेदनिकाद्यं च स्त्रीधनं परिकीर्तितम्"।।

(1) पिता (2) माता (3) पति (4) भाई द्वारा दिया धन (5) विवाह के समय अग्नि के समीप प्राप्त (6) दूसरा विवाह करते समय।

1. **आधिवेदनिक** - पति द्वारा अन्य स्त्री से विवाह के समय प्राप्त।
2. **अध्यग्नि** - अग्नि के समक्ष दिया गया धन।
3. **अन्वाधेयक**- माता-पिता के बन्धुओं से प्राप्त विवाहोपरान्त या पतिकुल के बन्धुजनों से प्राप्त ।
4. **अधिआवहनिक**- पति के घर जाते समय पिता से प्राप्त।
5. **प्रीतिदत्त**- श्वसुर या सास द्वारा।
6. **सौदायिक** - बर्तन, पशु, आभूषण दास के रूप में (भाई द्वारा प्रदत्त)

॥सीमाविवादप्रकरणम्॥

सीमायाश्चातुर्विध्यम्-

(1) जनपदसीमा (2) ग्रामसीमा (3) क्षेत्रसीमा (4) गृहसीमा

सेतोर्द्वैविध्यं - (1) खेयो (2) बन्ध्य।

'तोयप्रवर्तनात्खेयो बन्ध्यः स्यात्तन्निवर्तनात्'।

॥स्वामिपालविवादप्रकारणम्॥

माषप्रमाण- **माषानष्टौ तु महिषी सस्यघातस्य कारिणी**

दण्डनीया तदर्धं तु गौस्तदर्धमजाविकम्।।

भैंस से खेत चरने पर - (8) माष दण्ड

गाय के चरने पर –(4) माष दण्ड

बकरा, भेड़ चरने पर –(2) माष दण्ड

पशु के चरकर खेत में ही बैठने पर इससे दुगुना दण्ड होता है।

॥अस्वामिविक्रयप्रकरणम्॥

स्वं लभेतान्यविक्रीतं क्रेतुर्दोषोऽप्रकाशिते

हीनाद्रहो हीनमूल्ये वेलाहीने च तस्करः।।

अपनी वस्तु यदि किसी दूसरे द्वारा बेची हुई दिखे तो उसे खरीदने वाले का दोष होता है।

॥दत्ताप्रदानिकप्रकरणम्॥

चतुर्विधः दानमार्गः- (1) देय (2) अदेय (3)दत्त (4) अदत्त।

॥क्रीतानुशयप्रकरणम्॥

- अग्नि पर तपाने से सोना कम नहीं होता।
- सौ पल रजत में अग्नि पर तपाने से –(2) पल कम हो जाता है।
- पीतल सीसा अग्नि पर तपाने से –(8) पल कम हो जाता है।
- ताम्र को अग्नि पर तपाने से (5) पल कम हो जाता है।
- लोहा अग्नि पर तपाने से - (10) पल कम हो जाता है।
- ऊन और कपास के मोटे सूत में (कम्बलादि के निर्माण में)- 100 पल में (10) पल वृद्धि।
- मध्यम श्रेणी सूत में- 100 पल में (5) पल वृद्धि ।

- पतले सूत से बने वस्त्र में (सूक्ष्म)- 100 पल में (3) पल वृद्धि।

॥अभ्युपेत्याशुश्रूषाप्रकरणम्॥

शुश्रूकश्च पञ्चविधः - (1) शिष्यः (2) अन्तेवासी (3) मृतकः (4) अधिकर्म (5) कृद्दास।

चतुर्विधः कर्मकरः - (1) शिष्य (2) अन्तेवासी (3) मृतक (4) अधिकर्म।

कर्मापि द्विविधं- (1) शुभ (2) अशुभ।

भृतकत्रैविध्यम्-

उत्तम - आयुधीयः, मध्यम् - कृषीवलः, अधम् - भारवाही।

दास के प्रकार- (15) **"दासाः पञ्चदशः स्मृताः"**।

॥वाक्पारूष्यप्रकरणम्॥

लक्षण- देशजातिकुलादिनामाकोशं न्यङ्गसंयुतम्
यद्वचः प्रतिकूलार्थं वाक्पारुष्यं तदुच्यते।। (नारद)

तस्य त्रैविध्यं- (1) निष्ठुर (2) अश्लील (3) तीव्रत्व

॥दण्डपारुष्यप्रकरणम्॥

दण्डपारुष्यस्य त्रैविध्यं- (1) हीन (2) मध्य (3) उत्तमक, विधि- 5 प्रकार

चार प्रकार के दण्ड-

1. वाग्दण्ड, 2. धिग्दण्ड, 3. अर्थदण्ड 4. वधदण्ड।

॥साहसप्रकरण॥

लक्षणम्- **"सामान्यद्रव्यप्रसभहरणात्साहसं स्मृतम्"**।

साहसं त्रैविध्यं- (1) प्रथम (2) मध्यम (3) उत्तम।

॥विक्रीयासंप्रदानप्रकरणम्॥

तस्य द्वैविध्यं- (1) चर (2) अचर

''लोकेऽस्मिन्द्विविधं पण्यं जङ्गमं स्थावरं तथा।''

॥स्त्री संग्रहणप्रकरणम्॥

स्त्रीसंग्रहस्य त्रैविध्यं- (1) प्रथम (2) मध्यम (3) उत्तम

प्रमुख टीकाएं-

टीकाकार	टीका
विश्वरूप (750-1000 ई.) -	बालक्रीडा
विज्ञानेश्वर (1070-1115 ई.)-	मिताक्षरा-(गंगा)
अपरादित्य (12 ई. पूर्वार्ध) -	अपरार्क
शूलपाणि (1375-1460 ई.) -	दीपकलिका
मित्रमिश्र (1800 ई.) -	वीरमित्रोदय
अपरार्क	-याज्ञवल्कीयधर्मशास्त्रनिबन्ध

लिपि तथा अभिलेख-

गुप्तकालीन तथा अशोककालीन ब्राह्मी लिपि-

ब्राह्मी लिपि के 3 प्रकार-

(1) अशोककालीन (2) गुप्तकालीन (3) कुषाणकालीन,

ब्राह्मी की दो शैलियां (1) दक्षिण (2) उत्तर भारतीय,

अशोककालीन ब्राह्मी लिपि-

ब्राह्मी लिपि भारत की प्राचीनतम लिपियों में से एक है। इसके प्रयोग के प्राचीन उदाहरण अशोक के अभिलेखों के रूप में उपलब्ध हैं। यह बाएँ से दाएँ लिखी जाती है। कई विद्वानों का मत है कि यह लिपि प्राचीन (सिन्धु लिपि) से निकली, अतः यह पूर्ववर्ती रूप में भारत में पहले से प्रयोग में थी। सिन्धु लिपि के प्रचलन से हट जाने के बाद प्राकृत भाषा लिखने के लिये ब्राह्मी लिपि प्रचलन मे आई। ब्राह्मी लिपि में संस्कृत मे ज्यादा कुछ ऐसा नहीं लिखा गया जो समय की मार झेल सके। प्राकृत/पाली भाषा मे लिखे गये मौर्य सम्राट 'अशोक' के बौद्ध उपदेश आज भी सुरक्षित है। इसी लिए यह सत्य है कि इस का विकास मौर्यों ने किया। यह लिपि उसी प्रकार बाँई ओर से दाहिनी ओर को लिखी जाती थी जैसे, उनसे निकली हुई आजकल की लिपियाँ। 'ललितविस्तर' में लिपियों के जो नाम गिनाए गए हैं, उनमें 'ब्राह्मीलिपि' का नाम भी मिला है। इस लिपि का सबसे पुराना रूप 'अशोक के शिलालेखों' में ही मिला है। बौद्धों के प्राचीन ग्रंथ **'ललितविस्तर'** में जो उन 64 लिपियों के नाम गिनाए गए हैं जो बुद्ध को सिखाई गई, उनमें 'नागरी लिपि' नाम नहीं है, 'ब्राह्मी लिपि' का नाम हैं। **'ललितविस्तर'** का चीनी भाषा में अनुवाद ई. स. 308 में हुआ था। जैनों के **'पन्नवणा सूत्र'** और **'समवायांग सूत्र'** में 18 लिपियों के नाम दिए हैं जिनमें पहला नाम बंभी (ब्राह्मी) है। उन्हीं के भगवतीसूत्र का आरंभ **'नमो बंभीए लिबिए'** (ब्राह्मी लिपि को नमस्कार) से होता है।

सबसे प्राचीन लिपि भारतवर्ष में 'अशोक' की पाई जाती है जो सिंध नदी के पार के प्रदेशों (गांधार आदि) को छोड़ भारतवर्ष में सर्वत्र बहुधा एक ही रूप की मिलती है। जिस लिपि में अशोक के लेख हैं वह प्राचीन आर्यों या ब्राह्मणों की निकाली हुई ब्राह्मी लिपि है। जैनों के **'प्रज्ञापनसूत्र'** में लिखा है कि **"यदर्धमागधीभाषायाः आधारः ब्राह्मी लिपि वर्तते" 'अर्धमागधी'** भाषा जिस लिपि में प्रकाशित की जाती है वह ब्राह्मी लिपि है'। अर्धमागधी भाषा 'मथुरा' और 'पाटलिपुत्र' के बीच के प्रदेश की भाषा है जिससे हिंदी निकली है। अतः ब्राह्मी लिपि मध्य आर्यावर्त की लिपि है जिससे क्रमशः उस लिपि का विकास हुआ जो पीछे 'नागरी' कहलाई। मगध के राजा आदित्यसेन के समय (ईसा की सातवीं शताब्दी) के कुटिल मागधी अक्षरों में नागरी का वर्तमान रूप स्पष्ट दिखाई पड़ता है। ईसा की 9वीं और 10वीं शताब्दी से तो नागरी अपने पूर्ण रूप में लगती है। किस प्रकार

अशोक के समय के अक्षरों से नागरी अक्षर क्रमशः रूपांतरित होते होते बने हैं यह पंडित **'गौरीशंकर हीराचंद ओझा'** ने **'प्राचीन लिपिमाला'** पुस्तक में और एक नक्शे के द्वारा स्पष्ट दिखा दिया है।

सम्राट अशोक के ब्राह्मी लिपि में अंकित प्रमुख अभिलेख-

- रुम्मिनदेई – स्तम्भलेख
- गिरनार – शिलालेख
- बराबर – गुह्यलेख
- मानसेहरा – शिलालेख
- शाहवाजगढी – शिलालेख
- दिल्ली – स्तम्भलेख
- गुर्जर - लघु-शिलालेख
- मस्की- शिलालेख
- कान्धार - द्विभाषी शिलालेख

गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि-

गुप्तकालीन ब्राह्मी लिपि का काल तीसरी शताब्दी ई. है । गुप्त लिपि, जिसे गुप्त ब्राह्मी लिपि भी कहते हैं, भारत में गुप्त साम्राज्य के काल में संस्कृत लिखने के लिए प्रयोग की जाती थी। गुप्त लिपि ब्राह्मी लिपि से बनी थी, और इसने आगे चलकर देवनागरी, गुरुमुखी, तिब्बतन और बंगाली-असमिया लिपियों को जन्म दिया।

॥अभिलेख॥

अभिलेख साक्ष्य- प्राचीन शिलालेखों आदि से भारत में प्राचीन समय से लेखनकला का ज्ञान होता है। ईरानी सम्राट् द्वारा प्रथम (581-485 ई. पू.) के बहिस्तून अभिलेख में उत्कीर्ण लेखन को दिपि(लिपि) कहा है । मोहनजोदड़ो और हड़प्पा के अभिलेखों का समय 4 हजार ई. पू. के लगभग माना जाता है। अशोक के शिलालेखों से पूर्व के 2 छोटे अभिलेख मिले हैं-(क) अजमेर जिले के बड़ली गाँव से, (ख) नेपाल की तराई में पिपरावास्थान से। बड़ली वाला अभिलेख एक स्तम्भ के टुकड़े पर है । इसमें प्रथम पंक्ति में- **'वीराय भगवते'** द्वितीय पंक्ति में-**'चतुरासिति वस'** अर्थात् **'वीरस्य भगवतः चतुरशीतिवर्षे'** (भगवान् वीर या महावीर के निर्वाण के 84वें वर्ष में)। इससे इसका समय (527 ई. पू. 443 ई. पू.) होगा। 'पिपरावा' वाले लेख का समय श्री **'गौ.ही.ओझा'** ने प्राचीन लिपिमाला (पृष्ठ 2-3) में 487 ई. पू. के कुछ बाद का माना है। इससे स्पष्ट होता है कि ई. पू. 6ठी या 7वीं सदी में भारत में लेखनकला एवं लिपि का विस्तृत प्रचार था। स्थायी लेख के लिए शिला, स्तम्भ, सुवर्ण-रजत-ताम्र आदि के पत्र, पकी मिट्टी के सिक्के आदि प्रयुक्त होते थे। प्रारम्भ में ग्रन्थों आदि के लेखन के लिए पर्ण (ताड़पत्र आदि) का प्रयोग होता था। बाद में भूर्ज (भोजपत्र), लकड़ी, वस्त्र, चमड़ा आदि का प्रयोग हुआ। कागज़ का प्रयोग बहुत बाद में हुआ। पाश्चात्य विद्वानों ने श्रुति (श्रवण-परंपरा, वेद) शब्द को लेकर बहुत वितण्डा खड़ा किया है और निर्णय दिया है कि भारत में केवल मौखिक परंपरा श्रवण-श्रावण (श्रुति) की थी। वे लेखनकला से अनभिज्ञ थे यह बात सर्वथा असंगत है। आज भी वेद आदि के लिए श्रवण-परंपरा को ही महत्त्व दिया जाता है। इसका अभिप्राय यह नहीं है आज भी लिपि, लेखन, कागज आदि नहीं हैं। यह केवल प्राथमिकता की बात थी। गुरु-शिष्य-परंपरा से श्रवण-पठन अधिक प्रामाणिक होता था।

अशोक के अभिलेख-

मौर्य राजवंश के सम्राट अशोक द्वारा प्रवर्तित कुल (33) अभिलेख प्राप्त हुए हैं जिन्हें अशोक ने स्तंभों, शिलाओं (चट्टानों) और गुफाओं की दीवारों में अपने 269 ईसापूर्व से 231 ईसापूर्व चलने वाले शासनकाल में खुदवाए। ये आधुनिक बंगलादेश, भारत, अफ़ग़ानिस्तान, पाकिस्तान और नेपाल में जगह-जगह पर मिलते हैं और बौद्ध धर्म के अस्तित्व के सबसे प्राचीन प्रमाणों में से हैं ।

इन शिलालेखों के अनुसार अशोक के बौद्ध धर्म फैलाने के प्रयास भूमध्य सागर के क्षेत्र तक सक्रिय थे और सम्राट मिस्र और यूनान तक की राजनैतिक परिस्थितियों से भलीभाँति परिचित थे। इनमें बौद्ध धर्म की बारीकियों पर ज़ोर कम और मनुष्यों को आदर्श जीवन जीने की सीखें अधिक मिलती हैं। पूर्वी क्षेत्रों में यह आदेश प्राचीन मागधी में ब्राह्मी लिपि के प्रयोग से लिखे गए थे। पश्चिमी क्षेत्रों के शिलालेखों में खरोष्ठी लिपि का प्रयोग किया गया। एक शिलालेख में यूनानी भाषा प्रयोग की गई है, जबकि एक अन्य में यूनानी और अरामाई भाषा में द्विभाषीय आदेश दर्ज है। इन शिलालेखों में सम्राट अपने आप को **"प्रियदर्शी"** (प्राकृत में "पियदस्सी") और **'देवानाम्प्रिय'** (यानि देवों को प्रिय, प्राकृत में "देवानम्पिय") की उपाधि से बुलाते हैं।

'शाहबाजगढ़ी' एवं 'मानसेहरा' (पाकिस्तान) के अभिलेख 'खरोष्ठी लिपि' में उत्कीर्ण हैं। तक्षशिला एवं लघमान (काबुल) के समीप अफगानिस्तान अभिलेख आरमाइक एवं ग्रीक में उत्कीर्ण हैं। इसके अतिरिक्त अशोक के समस्त शिलालेख, लघुशिला स्तम्भ लेख एवं लघु लेख ब्राह्मी लिपि में उत्कीर्ण हैं। अशोक का इतिहास भी हमें इन अभिलेखों से प्राप्त होता है। अभी तक अशोक के 40 अभिलेख प्राप्त हो चुके हैं। सर्वप्रथम 1837 ई. पू. में **'जेम्स प्रिंसेप'** नामक विद्वान ने अशोक के अभिलेख को पढ़ने में सफलता हासिल की थी।

अशोक के प्रमुख शिलालेख-

'देवानां प्रिय' प्रियदर्शी राजा=अशोक (मौर्य सम्राट) । अशोक के शिलालेख **खरोष्ठी** लिपि में भी मिलते हैं।

अशोक के दीर्घ शिलालेख-

अशोक के (14) **दीर्घ शिलालेख** (या वृहद शिलालेख) विभिन्न लेखों का समूह है जो आठ भिन्न-भिन्न स्थानों से प्राप्त किए गये हैं-

(1) **धौली**- यह उड़ीसा के पुरी जिला में है।

(2) **शाहबाज गढ़ी**- यह पाकिस्तान (पेशावर) में है।

(3) **मानसेहरा**- यह पाकिस्तान के हजारा जिले में स्थित है।

(4) **कालसी**- यह वर्तमान उत्तराखण्ड (देहरादून) में है।

(5) **जौगढ़**- यह उड़ीसा के जौगढ़ में स्थित है।

(6) **सोपारा**- यह महाराष्ट्र के पालघर जिले में है।

(7) **एरागुडि**- यह आन्ध्र प्रदेश के कुर्नूल जिले में स्थित है।

(8) **गिरनार**- यह काठियावाड़ में जूनागढ़ के पास है।

प्रथम शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- हिंसा विरोध, अहिंसा पालन।

द्वितीय शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- राज्य का विस्तार और जन कल्याण

तृतीय शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 257 ई.पू.

मूलविषय- धर्म का प्रचार, अहिंसा, दान, समाजसेवा, मितव्ययिता ।

चतुर्थ शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 257 ई.पू.

मूलविषय- धर्मोपदेश, अहिंसा, जनकल्याण ।

पंचम शिलालेख

स्थान- मानसेहरा (पंजाब),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- खरोष्ठी,

काल- 257 ई.पू.

मूलविषय- धर्मोपदेश, अहिंसा, जनकल्याण ।

''कल्याणं दुष्करं''- अशोक

षष्ठ शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- राज्य के प्रति कर्त्तव्य ।

सप्तम शिलालेख -

स्थान- शाहबाजगढ़ी, सहवाजगढ़ी (पाकिस्तान),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- खरोष्ठी

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- सामाजिक और धार्मिक समरसता ।

अष्टम शिलालेख -

स्थान- शाहबाजगढ़ी, सहवाजगढ़ी (पाकिस्तान),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- खरोष्ठी

काल- 260 ई.पू.

मूलविषय- धर्मनिष्ठ सामाजिकता ।

नवम शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- धर्ममङ्गल और धर्मदान ।

दशम शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- धर्माचरण ।

एकादश शिलालेख -

स्थान- शाहवाजगढ़ी, सहवाजगढ़ी (पाकिस्तान)

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- खरोष्ठी

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- धर्मदान और उसकी व्याख्या ।

द्वादश शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- धार्मिक समरसता ।

त्रयोदश शिलालेख -

स्थान- शाहवाजगढ़ी, सहवाजगढ़ी (पाकिस्तान),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- खरोष्ठी

काल- 262 ई.पू.

मूलविषय- धार्मिक समरसता, कलिंग के युद्ध का परिणाम ।

षष्ठ शिलालेख -

स्थान- गिरनार

जिला- जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- प्राकृत (पालि)

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 270-232 ई.पू.

मूलविषय- धर्मलिपि लेखन प्रयोजन ।

अशोक के लघु शिलालेख-

अशोक के लघु शिलालेख, चौदह दीर्घ शिलालेखों के मुख्य वर्ग में सम्मिलित नहीं है जिसे लघु शिलालेख कहा जाता है। ये निम्नांकित स्थानों से प्राप्त हुए हैं-

(1) **रूपनाथ** - ईसा पूर्व 232 का यह मध्य प्रदेश के 'कटनी' जिले में है।

(2) **गुर्जरा** - यह मध्य प्रदेश के 'दतिया' जिले में है। इसमें अशोक का नाम अशोक लिखा गया है ।

(3) **भाबरू**- यह राजस्थान के 'जयपुर' जिले के विराटनगर में है। किसने अशोक ने बौद्ध धर्म का वर्णन किया है।

(4) **मास्की**- यह 'रायचूर' जिले में स्थित है। इसमें भी अशोक ने अपना नाम अशोक लिखा है।

(5) **सहसराम**- यह बिहार के 'शाहाबाद' जिले में है।

अशोक का गुर्जरा लघुशिलालेख-

स्थान- गुर्जरा (दतिया) म.प्र.

भाषा- प्राकृत,

लिपि- ब्राह्मी,

विषय- धर्मोपदेश ।

अशोक द्वारा सिंहासनोराहण के आठवें वर्ष **कलिंग** विजय किया गया।

लंका का प्राचीन नाम- **ताम्रवर्णी।**

अशोक के प्रमुख स्तम्भलेख-

अशोक के स्तम्भ लेखों की संख्या सात है जो छः भिन्न स्थानों में पाषाण स्तम्भों पर उत्कीर्ण पाये गये हैं। इन स्थानों के नाम हैं-

(1) **दिल्ली/ टोपरा**- यह स्तम्भ लेख प्रारम्भ में हरियाणा के अंबाला जिले में पाया गया था। यह मध्ययुगीन सुल्तान फिरोजशाह तुगलक द्वारा दिल्ली लाया गया। इस पर अशोक के सातों अभिलेख उत्कीर्ण हैं।

(2) **दिल्ली /मेरठ**- यह स्तम्भ लेख भी पहले मेरठ में था जो बाद में फिरोजशाह द्वारा दिल्ली लाया गया।

(3) **लौरिया अरेराज तथा लौरिया नन्दनगढ़**- यह स्तम्भ लेख बिहार राज्य के चम्पारन जिले में है। नन्दनगढ़ स्तम्भ पर मोर का चित्र बना हैं।

लघु स्तम्भ-लेख-

अशोक की राजकीय घोषणाएँ जिन स्तम्भों पर उत्कीर्ण हैं उन्हें लघु स्तम्भ लेख कहा जाता है, जो निम्न स्थानों पर स्थित हैं-

1. **सांची**- मध्य प्रदेश के 'रायसेन' जिले में है।

2. **सारनाथ-** उत्तर प्रदेश के 'वाराणसी' जिले में है।
3. **रूम्मिनदेई-** नेपाल के 'तराई' में है।
4. **कौशाम्बी-** 'इलाहाबाद' के निकट है।
5. **निग्लीवा-** नेपाल के 'तराई' में है।
6. **ब्रह्मगिरि-** यह 'मैसूर' के चिबल दुर्ग में स्थित है।
7. **सिद्धपुर-** यह ब्रह्मगिरि से एक मील उ. पू. में स्थित है।
8. **जतिंग रामेश्वर-** जो ब्रह्मगिरि से तीन मील उ. पू. में स्थित है।
9. **एरागुडि-** यह आन्ध्र प्रदेश के 'कूर्नुल' जिले में स्थित है।
10. **गोविमठ-** यह 'मैसूर' के कोपवाय नामक स्थान के निकट है।
11. **पालकिगुण्क-** यह गोविमठ की चार मील की दूरी पर है।
12. **राजूल मंडागिरि-** यह आन्ध्र प्रदेश के 'कूर्नुल' जिले में स्थित है।
13. **अहरौरा-** यह उत्तर प्रदेश के 'मिर्जापुर' जिले में स्थित है।
14. **सारो-मारो-** यह मध्य प्रदेश के 'शहडोल' जिले में स्थित है।
15. **नेतुर-** यह 'मैसूर' जिले में स्थित है।

प्रथम स्तम्भलेख-

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- धर्म की शिक्षा और महिमा

द्वितीय स्तम्भलेख-

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- धर्मतत्वविवेचना ।
'चक्षुर्दानमपि मया बहुविधं दत्तम्' ।

तृतीय स्तम्भलेख-

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- सम्यक् दृष्टि और आत्मावलोकन ।
'कल्याणमेव पश्यति, इदं मया कल्याणं कृतम्' ।

चतुर्थ स्तम्भलेख-

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- उच्चाधिकारी और कर्मचारियों के अधिकार और कर्त्तव्य ।
'विदिता धात्री चेष्टते मे प्रजां सुखं पालयितुम्' ।

पंचम स्तम्भलेख-

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- अहिंसा और जीवरक्षा ।
'इयं धर्मलिपिः यत्र सन्ति शिलास्तम्भाः तत्र कर्त्तव्या, येन एषा चिरंस्थतिका स्यात्'।

षष्ठ स्तम्भलेख -

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 244 ई.पू.
विषय- लोकहित ।

सप्तम स्तम्भलेख -

स्थान- दिल्ली,
भाषा- प्राकृत,
लिपि- ब्राह्मी,
काल- 243 ई.पू.
विषय- धर्मवृद्धि, धर्माचरण और लोककल्याण ।

अशोक कान्धार द्विभाषी शिलालेख-

स्थान- कान्धार (अफगानिस्तान)
भाषा- ग्रीक, अरमाइक,
लिपि- ग्रीक,
काल- 260 ई.पू.
विषय- अहिंसा

अशोक का मस्की शिलालेख-

स्थान- मस्की (रायचूर) कर्नाटक,
भाषा- प्राकृत (इसमें अशोक के नाम का उल्लेख मिलता है)
लिपि- ब्राह्मी,
काल- ई.पू.

विषय- धर्मोपदेश ।

अशोक का रुम्मिनदेई स्तम्भलेख-

स्थान- रुम्मिनदेई मन्दिर (पहरिया) नेपाल,

भाषा- प्राकृत,

लिपि- ब्राह्मी।

काल- 250 ई.पू.

विषय- बौद्ध धर्मोन्मुखता, लुम्बिनी कर मुक्ति ।

- अशोक ने राज्यारोहण के 20 वर्ष बाद यहां जाकर पूजा-पाठ किया क्योंकि यहां महात्मा बुद्ध का जन्म हुआ था।

मौर्योत्तरकालीन अभिलेख-

कनिष्क के शासन वर्ष 3 का सारनाथ बौद्ध प्रतिभा लेख-

स्थान- सारनाथ (वनारस)

भाषा- संस्कृत बहुल **प्राकृत,**

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 81 ई.

विषय- लोकहित सुख के लिए यष्टि और छत्र की स्थापना ।

- कुषाण वंश का प्रतापी शासक – **कनिष्क।**
- कनिष्क ने बौद्ध धर्म का प्रचार किया था।
- इसके बारे में 'राजतरंगिणी' में वर्णन मिलता है।

रूद्रदामन का गिरनार शिलालेख-

स्थान- गिरनार, जूनागढ़ (गुजरात),

भाषा- संस्कृत,

लिपि- ब्राह्मी।

काल- 150 ई.

विषय- सुदर्शन तडाग का इतिवृत्त और पुनर्निर्माण तथा रुद्रदामन की राजनीतिक उपलब्धियाँ ।

- रूद्रदामन के दादा- **चष्टन,**
- रूद्रदामन के पिता- **क्षत्रप जायदामन,**
- **महाक्षत्रप-** रूद्रदामन, क्षत्रप एक उपाधि का नाम था ।
- सुदर्शन झील वर्णन- **सिद्धं इदं तडागं सुदर्शनं गिरिनगराद्।**
- सुदर्शन झील निर्माता – **पुष्यगुप्त,** पुनर्निर्माता- **चक्रपालित।**
- गिरनार के तड़ाग से सम्बन्धित है- **कनिष्कः कुषाण।**

कलिंगराज खारवेल का हाथी गुम्फा अभिलेख-

स्थान- हाथीगुम्फा (पहाड़ी) उदयगिरि (उड़ीसा)- भुवनेश्वर- पुरी जिला,

लिपि- ब्राह्मी

भाषा- संस्कृत प्रभावित प्राकृत

काल- 35 ई. पू.

विषय- कलिङ्गनरेश खारवेल का जीवनवृत्त, चेदिराज वंशवृद्धि, महाराज महामेधवाहन वर्णन।

- खारवेल **'चेदि'** कुल का शासक था, तथा यह जैनधर्मावलम्बी था ।
- नमो अरहंतानं। नमो सव-विधानं ऐरण महाराजेन महावेद्यवाहनेन चेति
- राजव सवधनेन.....।

गुप्तकालीन एवं गुप्तोत्तरकालीन अभिलेख-

समुद्रगुप्त का इलाहाबाद स्तम्भलेख-

रचनाकार- हरिषेण,

स्थान- इलाहाबाद (प्रयाग) उ.प्र.,

भाषा- संस्कृत,

लिपि- ब्राह्मी,

काल- 250 ई.

विषय- समुद्रगुप्त का जीवनवृत्त और उपलब्धियाँ ।

- यः कुल्यैः स्वैः...तमः ...।
- **भारतदिग्विजय।** समुद्रगुप्त का जीवन चरित।
- समुद्रगुप्त पद प्रकाश डालने वाली प्रामाणिक सामग्री- **प्रयाग-प्रशस्ति।**
- **प्रयाग स्तम्भ लेख** रानी का अभिलेख कहलाता है ।

यशोधर्मन का मंदसौर स्तम्भ लेख-

रचनाकार- वत्सभट्टी,

स्थान- मंदसौर (म.प्र.)

भाषा- संस्कृत

लिपि- ब्राह्मी

काल- 529 (472) ई.

विषय- सूर्य मन्दिर का जीर्णोद्धार, पट्टवाय श्रेणी ।

हर्ष का बांसखेड़ा ताम्रपट अभिलेख-

स्थान- बांसखेड़ा, शाहजहांपुर (उ.प्र.)

भाषा- संस्कृत

लिपि- उत्तरी ब्राह्मी

काल- 628 ई.

विषय- हर्षवंशवृत्त, मौखरी राजाओं की वंशावली,

उपाधि- पृथ्वी, वल्लभ, सत्याश्रय।

पुलकेशिन् द्वितीय का ऐहोल शिलालेख-

स्थान- बीजापुर, बादामी (कर्नाटक),

भाषा- संस्कृत,

लिपि- दक्षिण ब्राह्मी,

काल- 634 ई.

विषय-" पुलकेशिन द्वितीय की राजप्रशस्ति", "रविकीर्ति" "कविताश्रितकालिदासभारविकीर्ति" विष्णु स्तुति, चालुक्य शासकों का वर्णन, कदंब वंश उल्लेख,

- **'जयति भगवाञ्जिनेन्द्रो वीतजरामरणजन्मनो यस्य ज्ञान समुद्रान्तर्गतमखिलञ्जगन्तर्रपमिव' ।।**
- ह्वेनसांग के अनुसार महाराष्ट्र का राजा चालुक्य नरेश- **पुलकेशी द्वितीय।** इसने पल्लव राजा महेन्द्रवर्मन की सेना को परास्त किया मल्लवों की पराजय के बाद चोल, पाण्डय केरल के राजाओं ने पुलकेशिन की अधीनता स्वीकार की।
- **भूश्च येन हृदमेधयाजिना।** - इसने अश्वमेध याग किया।
- इसने नल, मौर्य, कदम्ब राजाओं को हराया था।
- पुलकेशिन द्वितीय के दरबारी कवि- **रविकीर्ति।**
- **रविकीर्ति** ने जैन मन्दिर बनवाया था।
- भारवि और कालिदास को अपनी कविता में उल्लिखित किया- **रविकीर्ति** ने।
- पुलकेशिन द्वितीय को ह्वेनसांग ने कहा है- **बुलेकिशे।**

॥अभ्यास प्रश्न॥

॥पुराण,महाभारत,रामायण,स्मृति,लिपि,अभिलेख,अर्थशास्त्र॥

1. पुराणस्य सामान्यलक्षणानि कति -
   (A) 14 (B) 05
   (C) 11 (D) 18

2. 'प्रतिसर्गः' लक्षणमस्ति –
   (A) धर्ममार्ग का (B) काव्य का
   (C) पुराण का (D)नीतिकाव्य का

3. "सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च" इति कस्य लक्षणम्-
   (A) नाटकस्य (B) महाकाव्यस्य
   (C) गद्यकाव्यस्य (D) पुराणस्य

4. पुराणस्य स्वरूपमस्ति -
   (A) उपदेशप्रधानम्
   (B) इतिहासप्रधानम्
   (C) विनोदप्रधानम्
   (D) युद्धप्रधानम्

5. पुराणशब्दस्य अर्थः -
   (A) पौराणिकः (B) प्राचीनः
   (C) प्राचीनः यः नवीनः अस्ति (D) निरर्थकं वस्तु

6. उपदेशप्रधानं भवति -
   (A) वेदः (B) पुराणम्
   (C) कर्मकाण्डम् (D) सांख्यदर्शनम्

7. पुराणलक्षणेषु न समुपलभ्यते -
   (A) सर्गः (B) वंशानुचरितम्
   (C) विधिः (D) प्रतिसर्गः

8. 'सर्गश्च प्रतिसर्गश्च......पुराणं पञ्चलक्षणम्' अत्र 'प्रतिसर्गः' शब्दस्य किं अर्थः ?
   (A) उत्पत्तिः (B) स्थितिः
   (C) प्रलयः (D) देवभूमिः

9. पुराणपञ्चलक्षणे नास्ति -
   (A) वंशः (B) उत्सर्गः
   (C) सर्गः (D) प्रतिसर्गः

10. 'पुरा नवं भवति' इति पुराणशब्दनिर्वचनं कः कृतवान् ?
    (A) गार्ग्यः (B) मधुसूदनसरस्वती
    (C) व्यासः (D) यास्कः

11. पुराणानां विषये असत्यमस्ति -
    (A) पुराणेषु चतुर्विधसृष्टिविद्याया एव वर्णनमस्ति
    (B) पुराणं पञ्चलक्षणमस्ति
    (C) पुराणेषु सृष्टिविद्यायाः वैशद्येन वर्णनमस्ति
    (D) भागवतपुराणे पुराणस्य दशलक्षणानि वर्णितानि

12. पुराणलक्षणस्य घटकम् अस्ति –
    (A) वंशानुचरितम् (B) आयुः
    (C) उन्नतिः (D) तात्पर्यम्

13. उपपुराणे अन्तर्भवति -
    (A) श्रीमद्भागवतपुराण (B) कल्किपुराण
    (C) लिङ्गपुराण (D) स्कन्दपुराण

14. खिलभागत्वेनाभिधीयते -
    (A) नारदपुराणम् (B) ब्रह्मपुराणम्
    (C) कूर्मपुराणम् (D) हरिवंशपुराणम्

15. उपपुराणम् अस्ति -
    (A) भागवत (B) मत्स्य
    (C) अग्नि (D) औशनस्

16. 'पञ्चविंशतिसहस्राणि" कहा जाता है-
    (A) मायवीयम् (B) नारदीयम्
    (C) मार्कण्डेयम् (D) एकयोजन

17. 'मद्वयं भद्वयं चैव ब्रत्रयं वचतुष्टयम्' इति .
    (A) देवीभागवतपुराणे (B) ब्रह्माण्डपुराणे
    (C) मत्स्यपुराणे (D) लिङ्गपुराणे

18. कस्मिन् पुराणे 'काशीखण्डः 'समुपलभ्यते?
    (A) लिङ्गपुराणे (B) शिवपुराणे
    (C) ब्रह्माण्डपुराणे (D) स्कन्दपुराणे

19. अधस्तनवर्गयोः युग्मपर्यायेषु समीचीनं विचिनुत-
    (क) पुराणं पुरातनवृत्तान्तकथन-रूपमाख्यानम् — 1. यास्कः
    (ख) पुरा नवं भवति — 2. राजशेखरः
    (ग) पुराणमित्येव न साधु सर्वम् — 3. कालिदासः
    (घ) वेदाख्यानोपनिबन्धप्रायं पुराणम्--ईश्वरकृष्णः — 4. सायणः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	2	3	4	1
(B)	4	1	3	2
(C)	2	4	3	1
(D)	3	4	2	1

20. रामायणे कति श्लोकाः -
    (A) लक्षश्लोकाः (B) चतुर्विंशतिसहस्रश्लोकाः
    (C) षड्विंशतिसहस्रश्लोकाः (D) चत्वारिंशत्सहस्रश्लोकाः

21. संस्कृतसाहित्ये किं काव्यम् आदिकाव्यं कथ्यते-
    (A) श्रीमद्भागवतम् (B) श्रीमद्रामायणम्
    (C) श्रीमद्भगवद्गीता (D) श्रीमन्महाभारतम्

22. 'वाल्मीकि-रामायणं' कीदृशं ग्रन्थमस्ति?
    (A) चम्पूकाव्यम् (B) महाकाव्यम्

(C) खण्डकाव्यम् (D) गीतिकाव्यम्

23. वाल्मीकिरामायणे कति काण्डाः सन्ति-
(A) पञ्च (B) सप्त
(C) नव (D) दश

24. रामायणे अङ्गीरसः कः?
(A) वीरः (B) रौद्रः
(C) शान्तः (D) करुणः

25. 'शोकः श्लोकत्वमागतः' – इदं वाक्यं कस्य कृते उक्तं -
(A) सीता (B) भवभूति
(C) वाल्मीकि (D) व्यास

26. 'पुरा नवं भवतीति पुराणं' कस्मिन् पुराणे उक्तमस्ति-
(A) मत्स्यपुराणे (B) वामनपुराणे
(C) ब्रह्माण्डपुराणे (D) अग्निपुराणे

27. अधस्तनेषु सत्यासत्यपर्यायेषु समीचीनं विचिनुत-
(a) भवभूतिना महाभारतं लिखितम्
(b) रामायणे रामस्य कथा वर्तते
(c) दशरथः अजस्य पुत्र आसीत्
(d) दशरथस्य माता अरुन्धती आसीत्
(A) असत्यम्, सत्यम्, सत्यम्, असत्यम्
(B) सत्यम्, सत्यम्, असत्यम्, असत्यम्
(C) असत्यम्, सत्यम्, असत्यम्, सत्यम्
(D) असत्यम्, असत्यम्, सत्यम्, सत्यम्

28. सुन्दरकाण्डे सर्गाणां संख्या-
(A) 68 (B) 80
(C) 71 (D) 65

29. रामायणं केन रचितम्?
(A) व्यासः (B) वाल्मीकिः
(C) मनुः (D) तुलसीदासः

30. रामायणे कस्मिन् काण्डे 'अहल्याशाप विमोचन'- वृत्तान्तोऽस्ति-
(A) अयोध्याकाण्डे (B) अरण्यकाण्डे
(C) बालकाण्डे (D) सुन्दरकाण्डे

31. रामायणे श्रीरामस्य ऋष्यमूकपर्वतनिवासो वर्णितः-
(A) किष्किन्धाकाण्डे (B) बालकाण्डे
(C) सुन्दरकाण्डे (D) युद्धकाण्डे

32. जटायुरावणयुद्धं रामायणस्य कस्मिन् काण्डे-
(A) अरण्यकाण्डे (B) सुन्दरकाण्डे
(C) किष्किन्धाकाण्डे (D) बालकाण्डे

33. वालिवधरामायणे कस्मिन् काण्डे?
(A) सुन्दरकाण्डे (B) किष्किन्धाकाण्डे
(C) अरण्यकाण्डे (D) बालकाण्डे

34. 'रामायणे' शबरीवृत्तान्तः कस्मिन् काण्डे अस्ति-
(A) अयोध्याकाण्डे (B) अरण्यकाण्डे
(C) किष्किन्धाकाण्डे (D) सुन्दरकाण्डे

35. गङ्गावतरणोपाख्यानं रामायणे कस्मिन् काण्डे स्थितम् -
(A) अयोध्याकाण्डे (B) अरण्यकाण्डे
(C) सुन्दरकाण्डे (D) बालकाण्डे

36. ऋष्यशृङ्गमुनेः चरितं रामायणस्य कस्मिन् काण्डे वर्णितम्-
(A) अयोध्याकाण्डे (B) अरण्यकाण्डे
(C) सुन्दरकाण्डे (D) बालकाण्डे

37. महभारतस्य रचयिता –
(A) मनु (B) कौत्स
(C) नारद (D) व्यास

38. 'महाभारतं' वर्तते -
(A) पुराण (B) इतिहास
(C) आख्यान (D) काव्य

39. 'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् ' एतया उक्त्या सम्बद्धः ग्रन्थः-
(A) विष्णुपुराणस्य (B) महाभारतस्य
(C) रामायणस्य (D) ऋग्वेदस्य

40. पञ्चमो वेदः कः?
(A) आयुर्वेद (B) धनुर्वेद
(C) महाभारत (D) सर्पवेद

41. 'जयकाव्यम्' इति नाम्ना किं ज्ञायते?
(A) रामायणस्य
(B) महाभारतस्य
(C) रघुवंशस्य
(D) किरातार्जुनीयस्य

42, 'महाभारतस्य' कः क्रमः-
(A) जयः, भारतम्, महाभारतम्
(B) भारतम्, जयः, महाभारतम्
(C) महाभारतम्, जयः, भारतम्
(D) जयः, विजयः, महाभारतम्

43. महाभारतस्य आलोचनात्मकसंस्करणं कुतः प्रकाशितम् -
(A) पूनातः (B)बडौदातः
(C) मुम्बईतः (D) मद्रासतः

44. महाभारतस्य आलोचनात्मकसंस्करणस्य सम्पादकः अस्ति-
(A) एस0 आर0 भट्टः
(B) जी0 एच0 भट्टः
(C) एस0 के0 सुकथंकरः
(D) वी0 एस० सुक्थणकरः

45. 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ' इत्युक्तम्?
(A) अर्थशास्त्रे (B) रामायणे
(C) याज्ञवल्क्यस्मृतौ (D) महाभारते

46. द्यूतक्रीडावर्णनं कस्मिन् पर्वणि विद्यते-
(A) सभापर्वणि (B) कर्णपर्वणि

(C) आदिपर्वणि (D) स्त्रीपर्वणि

47. महाभारते कति श्लोकाः सन्ति?

(A) अयुतश्लोकाः

(B) पञ्चविंशतिसहस्त्रश्लोकाः

(C) लक्षश्लोकाः

(D) द्विलक्षश्लोकाः

48. 'शतसाहस्त्रीसंहिता' इति कस्य अपरं नाम?

(A) श्रीमद्रामायणम् (B) महाभारतम्

(C) विष्णुपुराणम् (D) श्रीमद्भागवतम्

49. "धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित् ॥ "
कस्य परिचयः उक्तः?

(A) रामायणस्य

(B) महाभारतस्य

(C) मनुस्मृतेः

(D) सर्वदर्शनसंग्रहस्य

50. महाभारते कति पर्वाणि सन्ति-

(A) अष्टादश (B) त्रयोदश

(C) द्वादश (D) चतुर्दश

51. सर्वप्राचीन सर्वप्राचीन स्मृतिः का ?

(A) पराशरस्मृति (B) व्यासस्मृति

(C) मनुस्मृत (D) याज्ञवल्क्यस्मृति

52. मनुस्मृतेः रचयिता वर्तते -

(A) यम (B) मार्कण्डेय

(C) पराशर (D) मनु

53. स्मृतिशब्देन किं बोध्यते -

(A) वेद (B) धर्मशास्त्र

(C) पुराण (D) साहित्य

54. मनुस्मृतौ कति अध्यायाः सन्ति

(A) 10 (B) 12

(C) 8 (D) 6

55. मनुस्मृतिः मुख्यतया सम्बन्धितमस्ति ?

(A) समाजव्यवस्था (B) कानून

(D) राज्यकार्यपद्धति (C) अर्थव्यवस्था

56. मनुस्मृतेः टीकाः सन्ति?

(A) चतस्त्रः (B) तिस्त्रः

(C) नव (D) एकादश

57. मनुस्मृतेः टीकाकारः अस्ति -

(A) कुल्लूक (B) काशीनाथ

(C) कमलाकर (D) जीमूतवाहन

58. का आसीत् स्वायम्भुवस्य मनोः धर्मपत्नी ?

(A) शताङ्कुरा (B) शतप्रज्ञा

(C) शतरूपा (D) शतङ्कारा

59. आश्रमाः कति भवन्ति -

(A) त्रयः (B) चत्वारः

(C) पञ्च (D) षट्

60. 'पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन तत् स्मृतम्' इति उक्तमस्ति-

(A) मत्स्यपुराणे (B) वामनपुराणे

(C) पद्मपुराणे (D) अग्निपुराणे

61. विद्याध्ययनकालस्यान्ते ब्रह्मचर्याश्रमे एष सम्पन्नो भवति-

(A) उपनयनम् (B) विवाहः

(C) कर्णवेधः (D) समावर्तनम्

62. एकं ब्राह्मं अहः-

(A) दैविकयुगसहस्त्रम् (B) मनुष्ययुगचतुष्कम्

(C) दैविकयुगशतम् (D) मनुष्ययुगशतम्'

63. आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मारत एव च"-इतीदं कस्यां स्मृतौ विद्यते?

(A) मनुस्मृतौ (B) हारीतस्मृतौ

(C) याज्ञवल्क्यस्मृतौ (D) भारद्वाजस्मृतौ

64. याज्ञवल्क्यस्मृतेः आचाराध्यायः कति प्रकरणेषु विभक्तः अस्ति ?

(A) द्वाद्वश (B) त्रयोदश

(C) पञ्चदश (D) एकादश

65. याज्ञवल्क्यस्मृतौ कति अध्यायाः सन्ति?

(A) एक (B) दो

(C) तीन (D) चार

66. पाठकस्य गुणाः वर्णिताः सन्ति -

(A) मनुस्मृतौ (B) याज्ञवल्क्यशिक्षायां

(C) अर्थशास्त्रे (D) निरुक्ते

67. चतुर्षु उपायेष्वन्यतमः -

(A) दण्डः (B) यागम्

(C) योगः (D) कर्म

68. आश्रमव्यवस्थायां कः आश्रमः श्रेष्ठोऽस्ति ?

(A) ब्रह्मचर्याश्रमः (B) गृहस्थाश्रमः

(C) वानप्रस्थाश्रमः (D) संन्यासाश्रमः

69. भारतीयसंस्कृत्यां वेदाध्ययनं कस्मिन्नाश्रमे उक्तम् ?

(A) ब्रह्मचर्याश्रमः (B) गृहस्थाश्रमः

(C) वानप्रस्थाश्रमः (D) संन्यासाश्रमः

70. कति संस्काराः सन्ति ?

(A) पञ्च (B) दश

(C) द्वादश (D) षोडश

71. षोडशसंस्कारे न परिगणितः-

(A) उपनयनसंस्कारः (B) मार्जनसंस्कारः

(C) विवाहसंस्कार (D) अन्त्येष्टिसंस्कारः

72. पञ्चमहायज्ञेषु परिगणितोऽस्ति-

(A) अश्वमेधयज्ञः (B) राजसूययज्ञः
(C) देवयज्ञः (D) ज्ञानयज्ञः

73. धर्म, अर्थ, काम च चत्वारः पुरुषार्थाः -
(A) संन्यास (B) मोक्ष
(C) भेद (D) मोह

74. पुरा भारते आश्रमव्यवस्थासु किं विभक्तमासीत् ?
(A) वनम् (B) मानवजीवनम्
(C) धनम् (D) पशूनां जीवनम्

75. ब्रह्मचर्याश्रमस्य मुख्योद्देश्यम् आसीत् ?
(A) विद्यार्जनम् (B) धनार्जनम्
(C) यशार्जनम्। (D) बलार्जनम्

76. धर्मार्थकाममोक्षाः कथ्यन्ते-
(A) गुणाः (B) पुरुषार्थाः
(C) ग्रामाः (D) नृपाः

77. भारतीयसंस्कृत्यौ वर्णव्यवस्थायाः कः आधारोऽस्ति?
(A) जाति (B) पराक्रम
(C) कर्म-गुण (D) रूप

78. शिशोः जन्मात् पूर्वं कति संस्काराः भवन्ति?
(A) 3 (B) 4
(C) 5 (D) 6

79. अहिंसा परमो धर्मः इति कस्मिन् पर्वणि उक्तमस्ति-
(A) आदिपर्व (B) उद्योगपर्व
(C) शान्तिपर्व (D) भीष्मपर्व

80. "तेषां त्रयाणां शुश्रूषा परमं तप उच्यते" अत्र 'त्रयाणां' इति पदेन कस्य ग्रहणं अस्ति -
(A) गार्हपत्याहवनीयदक्षिणाग्नीनाम्
(B) देवपित्रतिथीनाम्
(C) मातृपित्राचार्याणाम्
(D) ब्रह्मचारिवानप्रस्थिसंन्यासिनाम्

81. "सीमन्तोन्नयनम्" अत्र "सीमन्त" पदस्य अर्थोऽस्ति-
(A) केशाः (B) धनम्
(C) बलम् (D) वस्त्रम्

82. 'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्' कस्मिन् पर्वणि उल्लिखितमस्ति-
(A) शान्तिपर्व (B) उद्योगपर्व
(C) आदिपर्व (D) भीष्मपर्व

83. कामसमुत्थानि व्यसनानि कति -
(A) दश (B) अष्ट
(C) पञ्च (D) एकादश

84. याज्ञवल्क्यस्मृत्यनुसारं रिक्ते स्थाने कः शब्दः उपयुक्तः दर्शने प्रत्यये दाने... विधीयते?
(A) व्यवहारः (B) प्रातिभाव्यम्
(C) ऋणादानम् (D) वाक्पारुष्यम्

85. कौटिल्यस्य अपरनाम किम् ?
(A) चन्द्रगुप्तः (B) समुद्रगुप्तः
(C) चाणक्य (D) वाल्मीकिः

86. अर्थशास्त्रस्य प्रथमाधिकरणं वर्तते –
(A) विनयाधिकारिकम् (B) योगवृत्तम्
(C) धर्मवृत्तम् (D) षाड्गुण्यम्

87. अर्थशास्त्रस्य द्वितीयाधिकरणं वर्तते ?
(A) विनयाधिकारिकम् (B) धर्मस्थीयम्
(C) अध्यक्षप्रचारः (D) कण्टकशोधनम्

88. अर्थशास्त्रस्य तृतीयाधिकरणं वर्तते -
(A) विनयाधिकारिकम् (B) अध्यक्षप्रचारः
(C) योगवृत्तम् (D) धर्मस्थीयम्

89. अर्थशास्त्रे विद्यासमुद्देशः कुत्र वर्तते ?
(A) विनयाधिकारिके (B) योगवृत्ते
(C) षाड्गुण्ये (D) धर्मस्थीये

90. कौटिल्यार्थशास्त्रानुसारेण आन्वीक्षकी विद्या अस्ति-
(A) सांख्यं योगो लोकायतं च (B) धर्माधर्मौ
(C) अर्थानर्थौ (D) सुशासनम्

91. कौटिल्यार्थशास्त्रानुसारेण कीदृशो दण्डः सर्वाधिकः प्रजामुद्वेजयति ?
(A) यथार्हदण्डः (B) मृदुदण्डः
(C) पाषाणदण्डः (D) तीक्ष्णदण्डः

92. सुदर्शनतडागस्य पुनर्निर्माता अस्ति-
(A) पुष्यमित्र (B) पुष्यगुप्त
(C) चन्द्रपालित (D) चन्द्रमणि

93. दण्डनीतेः अपरं नाम किम् ?
(A) आयुर्वेदः
(B) तर्कशास्त्रम्
(C) जैमिनीयमीमांसाशास्त्रम्
(D) कौटिलीय-अर्थशास्त्रम्

94. अमात्यानां शौचाशौचज्ञानार्थं कौटिल्येन उपधासु या न निर्दिष्टा?
(A) कामोपधा (B) अर्थोपधा
(C) मोक्षोपधा (D) धर्मोपधा

95. मन्त्रिपरिषदं द्वादशामात्यान्कुर्वीत् इति कस्य मान्यता?
(A) बार्हस्पत्यानाम् (B) कौटिल्यस्य
(C) औशनसाम् (D) मानवानाम्

96. कौटिल्यानुसारं विद्याः सन्ति?
(A) द्विविधा (B) त्रिविधा
(C) चतुर्विधा (D) पञ्चविधा

97. "कृषिपाशुपाल्ये वाणिज्या च ......।
(A) वार्ता (B) आन्वीक्षकी

(C) त्रयी (D) दण्डनीतिः

98. अर्थशास्त्रे आन्वीक्षकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो भवति-

(A) साम (B) दाम

(C) भेद (D) दण्ड

99. कौटिल्यानुसारं त्रयी के संवरणमात्रं मन्यन्ते ?

(A) मानसाः (B) मानवाः

(C) बार्हस्पत्याः (D) औशनसाः

100. कौटिल्यानुसारं मानवाः कां विद्यां पृथक् न मन्यन्ते?

(A) आन्वीक्षकीम् (B) त्रयीम्

(C) वार्ताम् (D) दण्डनीतिम्

101. कौटिल्येन विधेः चत्वारः चरणाः स्वीकृताः-

(A) धर्मः, व्यवहारः, चरित्रं, राजशासनश्च

(B) धर्मः, व्यवहारः, चरित्रं, वणिङ्मण्डलश्च

(C) धर्मः, व्यवहारः, संयमः, राजशासनश्च

(D) धर्मः, कोशः, व्यवहारः, राजशासनश्च

102. कौटिलीयार्थशास्त्रे 'अर्थ' शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) धनम् (B) धान्यम्

(C) हिरण्यम् (D) मनुष्यवती भूमिः

103. अर्थशास्त्रानुसारेण वार्ता शब्दस्यार्थः कः -

(A) इतिवृत्तं

(B) संवादः

(C) कृषिः, पशुपालनं, वाणिज्यम्

(D) आन्वीक्षकी

104. कौटिल्यार्थशास्त्रोल्लेखानुसारं एषु कः कोपात् विननाश इति उल्लिखितः?

(A) अजविन्दुः (B) रावणः

(C) करालः (D) जनमेजयः

105. कौटिलीयार्थशास्त्रे सर्वविद्यानां प्रदीपः सर्वकर्मणाम् उपायः सर्वधर्माणां च आश्रयः का विद्या प्रोक्ता?

(A) आन्वीक्षकी (B) त्रयी

(C) वार्ता (D) दण्डनीतिः

106. कौटिलीयार्थशास्त्रे एतत् वैश्यस्य स्वधर्मो न भवति-

(A) याजनम् (B) दानम्

(C) अध्ययनम् (D) यजनम्

107. प्रयागे 'समुद्रगुप्तस्य' स्तम्भ - अभिलेखरचयिता कः ?

(A) तिलकभट्टः (B) हरिषेणः

(C) ध्रुवभूतिः (D) रविकीर्तिः

108. समुद्रगुप्तस्य 'प्रयागप्रशस्तेः' कः रचयिता ?

(A) वासुलः (B) वत्सभट्टिः

(C) हरिषेण (D) वीरसेनः

109. समुद्रगुप्तस्य भारतदिग्विजयः कस्मिन् शिलालेखे अस्ति ?

(A) मन्दसोरशिलालेखे

(B) एलाहाबादशिलालेखे

(C) गिरनारशिलालेखे

(D) एहोलशिलालेखे

110. एषु कस्य देशस्य नाम हरिषेणस्य एलाहाबाद-शिलालेखे नास्ति?

(A) समतटः (B) डवाकः

(C) कामरूपः (D) चीनः

111. हरिषेणविरचिते इलाहाबादशिलालेखे 'कविराज' इत्युपाधिः भवति

(A) चन्द्रगुप्तस्य (B) अशोकस्य

(C) समुद्रगुप्तस्य (D) स्कन्दगुप्तस्यस्त्रात

112. ब्राह्मीलिपेः उद्वाचने प्रथमा सफलतां कः प्राप्तवान् ?

(A) मैक्समूलरः (B) विलियम-जोन्सः

(C)जेम्स प्रिंसेपः (D) व्हिटने

113. अशोकस्य शिलालेखानां भाषा का अस्ति ?

(A) प्राकृतम् (B) संस्कृतम्

(C) अपभ्रंशः (D) अवेस्ता

114. कुत्र अशोकस्य नाम प्रदत्तम् ?

(A) मास्कि-शिलालेखे

(B) प्रयाग-स्तम्भ-लेखे

(C) गिरनार-शिलालेखे

(D) गन्धार-द्विभाषी-शिलालेखे

115. गिरनारस्य तडागेन सम्बद्धो नासीत् ।

(A) चन्द्रगुप्तः मौर्यः (B) अशोकः मौर्यः

(C) कनिष्कः कुषाणः (D) रुद्रदामा शकः

116. अत्र वर्तते कालिदासस्य नामोल्लेखः ।

(A) तन्तुवाय-श्रेण्याः मन्दसौर-शिलालेखे

(B) प्रभावतीगुप्तायाः पूना-ताम्रपट्ट-लेखे

(C) पुलिकेशिद्वितीयस्य एहोले-शिलालेखे

(D) मिहिरभोजस्य ग्वालियार-शिलालेखे

117. ऐहोलशिलालेखः कस्य वर्तते ?

(A) द्वितीय चन्द्रगुप्तस्य

(B) द्वितीय धरसेनस्य

(C) द्वितीय जीवितगुप्तस्य

(D) द्वितीय पुलकेशिनः

118. 'सुदर्शनतडाकस्य' कः निर्माता ?

(A) चक्रपालितः (B) सुविशाखः

(C) तुषास्कः (D) पुष्यगुप्तः

119. 'द्विभाषाशिलालेखः' केन सम्बद्धः ?

(A) कान्धार (B) मास्कि

(C) गुर्जर (D) रुम्मनदेई

120. अशोकस्य शाहबाजगढीलेखः कस्यां लिप्यां प्राप्यते -

(A) ब्राह्मी (B) खरोष्ठी

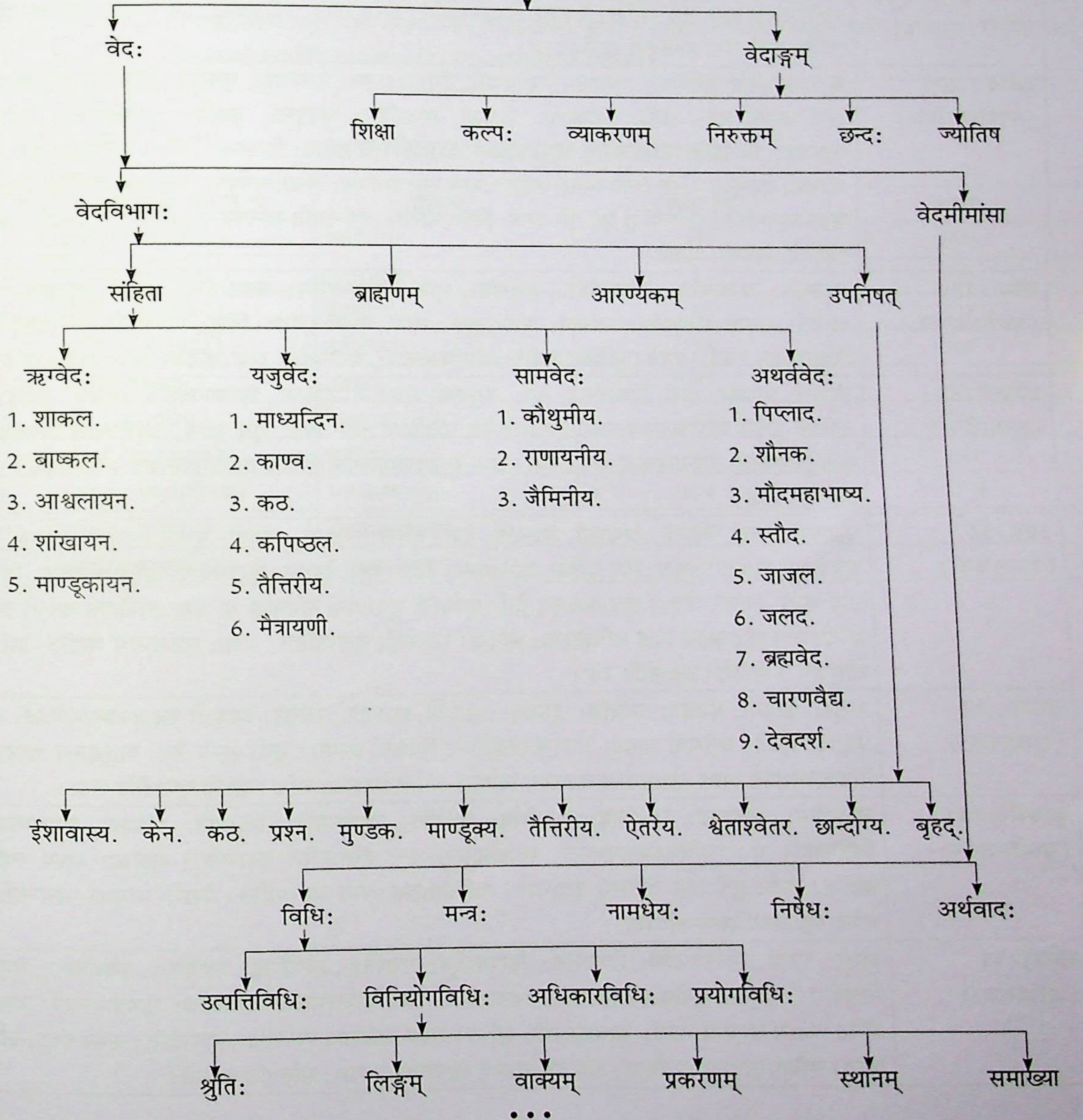
(C) शारदा (D) पुष्करी

॥उत्तरमाला॥

1. (B) 2. (C) 3. (D) 4. (A) 5. (C)
6. (B) 7. (C) 8. (C) 9. (B) 10. (D)
11. (A) 12. (A) 13. (B) 14. (D) 15. (D)
16. (B) 17. (A) 18. (D) 19. (B) 20. (B)
21. (B) 22. (B) 23. (B) 24. (D) 25. (C)
26. (C) 27. (A) 28. (A) 29. (B) 30. (C)
31. (A) 32. (A) 33. (B) 34. (B) 35. (D)
36. (D) 37. (D) 38. (B) 39. (B) 40. (C)
41. (B) 42. (A) 43. (A) 44. (D) 45. (D)
46. (A) 47. (C) 48. (B) 49. (B) 50. (A)
51. (C) 52. (D) 53. (B) 54. (B) 55. (A)
56. (C) 57. (A) 58. (C) 59. (B) 60. (C)
61. (B) 62. (A) 63. (A) 64. (B) 65. (C)
66. (A) 67. (A) 68. (B) 69. (A) 70. (D)
71. (B) 72. (C) 73. (B) 74. (B) 75. (A)
76. (B) 77. (C) 78. (A) 79. (C) 80. (C)
81. (A) 82. (C) 83. (A) 84. (B) 85. (C)
86. (A) 87. (C) 88. (D) 89. (A) 90. (A)
91. (D) 92. (C) 93. (D) 94. (C) 95. (D)
96. (C) 97. (A) 98. (D) 99. (C) 100. (A)
101. (D) 102. (D) 103. (C) 104. (D) 105. (A)
106. (A) 107. (B) 108. (C) 109 . (B) 110. (D)
111. (C) 112. (C) 113. (A) 114. (A) 115. (C)
116. (C) 117. (D) 118. (A) 119. (A) 120. (B)

परिशिष्ट

1. वैदिक-वाङ्मयम्



वेदः
वेदाङ्गम्
शिक्षा
कल्पः
व्याकरणम्
निरुक्तम्
छन्दः
ज्योतिष
वेदविभागः
वेदमीमांसा
संहिता
ब्राह्मणम्
आरण्यकम्
उपनिषत्
ऋग्वेदः
1. शाकल.
2. बाष्कल.
3. आश्वलायन.
4. शांखायन.
5. माण्डूकायन.
यजुर्वेदः
1. माध्यन्दिन.
2. काण्व.
3. कठ.
4. कपिष्ठल.
5. तैत्तिरीय.
6. मैत्रायणी.
सामवेदः
1. कौथुमीय.
2. राणायनीय.
3. जैमिनीय.
अथर्ववेदः
1. पिप्लाद.
2. शौनक.
3. मौदमहाभाष्य.
4. स्तौद.
5. जाजल.
6. जलद.
7. ब्रह्मवेद.
8. चारणवैद्य.
9. देवदर्श.
ईशावास्य.
केन.
कठ.
प्रश्न.
मुण्डक.
माण्डूक्य.
तैत्तिरीय.
ऐतरेय.
श्वेताश्वेतर.
छान्दोग्य.
बृहद्.
विधिः
मन्त्रः
नामधेयः
निषेधः
अर्थवादः
उत्पत्तिविधिः
विनियोगविधिः
अधिकारविधिः
प्रयोगविधिः
श्रुतिः
लिङ्गम्
वाक्यम्
प्रकरणम्
स्थानम्
समाख्या
• • •

2. ऋग्वैदिकदेवताः

देवताः/सूक्तानि (निवासस्थानम्)	निर्वचनम्/विशेषणम्/उपाधिः/स्वरूपम्/वाहनम्/अस्त्रम्/उपलब्धिश्च
इन्द्रः/250 (अन्तरिक्षस्थानीयः)	शक्रः, परन्दरः, शचीपतिः, आखण्डलः, धनञ्जयः, वज्रहस्तः, वज्रबाहुः, हरिण्यबाहुः, सप्तरश्मिः, हरिकेशः, हरिश्मश्रुः, पुरुहूतः, वज्री., सुशिप्रः, चित्रभानुः, वृत्रहा, मरुत्सखा, मरुत्वान्, सोमपा, सोमी, वृषा, अच्युतच्युत्, अपांनेता। अस्य पिता द्यौः माताऽदितिश्च। पित्रा त्वष्ट्या निर्मितं स्वर्णमयं लौहमयं वा वज्रं धारयति। अस्य रथः स्वर्णिमः अश्वाश्च बभ्रुः सन्ति। वृत्रवधः प्रमुखकार्यम्। इरां दृणाति, इरां ददाति, इरां दधाति, इरां धारयते, इन्दवे द्रवति, इन्दौ रमते इच्छत्रूणां दारयिता वा।
अग्नि : 200 (पृथ्वीस्थानीयः)	ऋत्विक्, होता, पुरोहितः, रत्नधातमः, कविक्रतुः, चित्रश्रवस्तमः, हव्यवाहः, धूमकेतुः, गृहपतिः, दमूनम्, अंगिरस्, अपां नपात्, दूतः, कविः, सहस्राक्षः, त्रिमूर्द्धा, सप्तरश्मिः, घृतपृष्ठः, घृतलोमः, घृतप्रतीकः, शोचिषकेशः, मंद्रजिह्वः, विशपतिः, ऊर्जानपात्, असुरश्च। अग्निः भास्वरज्वालामयः हिरण्यरूपः द्यौः—पृथिव्योः पुत्रः अस्तिः। अरणयः दशयुवतयः वा अस्य मातरः सन्ति। अस्य रथः स्वर्णिमः अश्वाः घृतपृष्ठाः मनोजवाश्च सन्ति। स्वर्गः अस्य जन्मस्थानमस्ति। पृथिव्यां तु गृहे गृहे अग्नेः निवासमस्ति। अंगं नयति सन्नममानः, अक्नोपनो भवति, अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते, अग्रणीः भवति।
सोमः/150 (पृथ्वीस्थानीयः)	वनस्पतिः, वाचस्पतिः, औषधिपतिः, इन्द्रपीतः, शुचिः, विश्वचर्षणिः, उत्तमं हविः, रक्षोहा, वृत्रहन्ता, महिष्ठः, अमर्त्यः, अमृतः, सहस्रधारः, पवमानः, शुद्धः, शुक्रः, सोमः, मधुमान्, दिवः शिशुः, मौञ्जवत्। स्वर्गशिशोः सोमस्य निवासस्थानं स्वर्गः। श्येनेन पृथिव्यामानीतः ओषधिस्वरूपः, वनस्पतीनां राजा, इन्द्रस्य प्रियतमः पेयश्चास्ति।
अश्विनौ/50 (द्युस्थानीयः)	अश्विनौ, नासत्या, दस्रा, दिवोनपात्, नराः, मधुयुवा, मघवाना, तुविष्मा, हिरण्यवर्त्मनि, अधिग्रू, सुदानू। युवानौ अश्विनौ वतीव शोभनस्वरूपात्मकौ स्ववैद्यरूपेण प्रतिष्ठितौ। द्यौः पिता, सूर्या पत्नी, मधुः चास्य प्रियतमः पेयः। अश्ववृषभमकर-वाहनात्मकश्च अस्य रथः। उषा-सूर्योदयकालयोर्मध्येऽस्य आविर्भावकालः। अस्य मार्ग-रथादयः सर्वं मधुमयश्च।
उषस्/20 (द्युस्थानीयः)	ऋतावरी, रेवती, गोमती, अश्ववती, भास्वती, नेत्री, युवतिः, पुराणी, मघोनी, सूनरी, अर्जुनी, सुभगा, सुजाता, सुप्रतीका, ऋतपा, अमृता, दिवःदुहिता, अन्तिवामा, अह्नी, भद्रा, अरुषा, हिरण्यवर्णा, सुदृशीक्संदृक्, विश्वावारा, गवां माता, अमृत्य केतुः। प्रातःकालस्य देवी सूर्यपत्नी सूर्यभगनी सूर्यमाता वा उषा नवयौवना नर्तकी इव वेदेषु दरीदृश्यते। द्यौः अस्य पिता रात्रिश्चास्याः भगिनी। रक्तवर्णाः बलशालिनः अश्वाः स्वर्णिमरथं वहन्ति। इयं कदापि सोमपानं न करोति। उच्छतीति उषा।
वरुणः/12 (द्युस्थानीयः)	असुरः, क्षत्रियः, धृतव्रतः, उरुशंसः, दूतदक्षः, मायावी, ऋतगोपा, स्वराट्। आकाशे सहस्रस्तम्भमण्डितः वरुणस्य प्रासादः श्रूयते। स्वीयया मायया जगद्संचालनमस्य विशिष्टं कार्यम्। सूर्यः अस्य नेत्रः वायुश्चास्य श्वासप्रश्वासौ। नैतिकाध्यक्षस्य अस्य पाशभृतस्य वरुणस्य नियमाः अतीव क्लिष्टाः सन्ति। वरुणो वृणोतीति सतः।
बृहस्पतिः/11 (पृथ्वीस्थानीयः)	सप्तरश्मिः, सप्तमुखः, सप्तजिह्वः, मन्द्रजिह्वः, गणपतिः, ब्रह्मणस्पतिः, सदस्पतिः, पथिकृत्, इन्द्रसम्बद्धान्यानि विशेषणानि च। स्वर्णिमस्वरूपात्मकः स्वर्णिमपरशु-धनुः हस्तश्चास्ति बृहस्पतिः। रक्ताश्वाः अस्य स्वर्णिमरथं वहन्ति। शक्तेः पुत्रोऽयम् अंगिरस् इत्युच्यते। अग्निना सह अस्य साम्यमस्ति। बैखरी-मध्यमा-पश्यन्तीति वाणी त्रयेण सह अस्य सम्बन्धविशेषः।
सवितृ/11 (द्युस्थानीयः)	असुरः, सुपर्णः, हिरण्यपाणिः, हिरण्याक्षः, हिरण्यस्तूपः, स्वर्णनेत्रः, स्वर्णजिह्वः, स्वर्णपादः, स्वर्णहस्तः, सुमृळीकः, विचर्षणिः, दमूना, सुनीथश्च। हिरण्य-स्वरूपात्मकः स्वर्णिमरथात्मकश्च सवितदेवः गायत्रीमन्त्रस्य उपास्यदेवः अस्ति। अस्य सम्बन्धः प्रातः-सायंकालयोः अस्ति। अस्य आदेशाद् एव रात्रिः आगच्छति। अस्य दंष्ट्राः लौहमयाः सन्ति। सविता सर्वस्य प्रसविता। अंधकारमध्याद् आगच्छन् प्रकाशः सवितेति कथ्यते।

देवता:/सूक्तानि (निवासस्थानम्)	निर्वचनम्/विशेषणम्/उपाधि:/स्वरूपम्/वाहनम्/अस्त्रम्/उपलब्धिश्च
विष्णु:/05 (द्युस्थानीय:)	विक्रम:, त्रिविक्रम:, उरुक्रम:, उरुगाय:, गिरिक्षित:, गिरिष्ठा, कुचर:, भीम:, वृष्णश्च। सूर्यवत् प्रकाशशील: व्यापनशील:, विशालशरीरात्मक: युवा चास्ति विष्णु:। अखिल-जगदिदमस्य त्रिषु पदेषु एव समाहितमस्ति। कामनानां वर्षणशीलोऽयं विष्णु: इत्युच्यते। विष्णातेर्विशतेर्वा स्याद् वेवेष्टेर्व्याप्तिकर्मण:।।
रुद्र:/03 (अन्तरिक्षस्थानीय:)	शर्व:, भव:, शिव:, सुशिप्र:, पशुपति:, बभ्रु:, त्र्यम्बक: कृत्तिवास:, नीललोहित:, असुर:, वंकु:, मृडयाकु:, मीळ्वान्, जलाषभेषज:, मरुत्पिता, मरुत्वान्, तव्यान्, रक्तवर्णी च। स्वर्गस्य रक्तवराभ: रुद्रस्तु सर्वोत्कृष्ट देवदैद्य:। पिनाक: अस्य धनु:, सृक् अस्य वज्र:, विद्युच्चास्य कृपाण:। महामृत्युञ्जयमन्त्रस्य उपास्यदेवोऽयम्। रौतीति सतो रोरुयमाणो द्रवतीति वा रोदयतेर्वा। यद् अरुदत्तदुस्य रुद्रत्वम्।

• • •

3. ऋग्वैदिक (शाकल) मन्त्रविभागा:

क्र. सं.	मण्डलम् तन्नाम च	ऋषय:	सूक्तानि	मन्त्रा:
1.	प्रथमं (शतार्चिनाम्)	शतार्चिन:	191	2006
2.	द्वितीयं (गार्त्समदम्)	गार्त्समदा:	43	429
3.	तृतीयं (वैश्वामित्रम्)	वैश्वामित्रा:	62	617
4.	चतुर्थं (वामदेव्यम्)	वामदेव्या:	58	589
5.	पंचमं (आत्रेयम्)	आत्रेया:	87	727
6.	षष्ठं (भारद्वाजम्)	भारद्वाजा:	75	765
7.	सप्तमं (वाशिष्ठम्)	वाशिष्ठा:	104	841
8.	अष्टमं (अनुक्तगोत्रम्)	मत्स्य-काण्वा:	92 + 1	1716
9.	नवमं (पवमानम्)	विविधा: ऋषय:	114	1108
10	दशमं (अनुक्तगोत्रम्)	विविधा: ऋषय:	191	1754

• • •

4. वैदिक-वाङ्मय-परिचय-सारणी

वेदः/संहिता	ब्राह्मणम्	आरणयकं	उपनिषद्	शिक्षा	श्रौतसूत्रम्	गृह्यसूत्रम्	धर्मसूत्रम्	शुल्बसूत्रम्	विशिष्ट-विवरणम्
1. ऋग्वेदः शाकल. आश्वलायन. बाष्कल. शांखायन, माण्डूकायन.	ऐतरेयः शांखायन. कौषीतकि.	ऐतरेय. कौषीतकि. बाष्कल.	ऐतरेय. कौषीतकि. बाष्कल.	पाणिनीय ऋक्प्राति. पार्षद.	आश्वल. कौषीतकि. शांखायन.	आश्वल. कौषीतकि. शांखायन. शांखायन.	वशिष्ठ.	X X X नास्ति.	**ऋत्विक्** (होता), **मण्डलानिः** (10), **सूक्तानि** (1028), **अष्टकानि** (8), **अध्यायाः** (64), **वर्गाः** (2006), **मन्त्राः** (10580.25), **रचनाकालः** 1200 ई.पू., **मुख्याचार्यः** (पैलः), **मुख्यदेवता** (इन्द्रः)। **शाखाः**-एकविंशतिधावाहवृच्यम्।
2. यजुर्वेदः माध्यन्दिन (वाजसनेयि) काण्व., कठ, कपिष्ठल., तैत्तिरीय., मैत्रायणी.	शतपथ. तैत्तिरीय. मैत्रायणी. कठ. कपिष्ठल.	बृहद्. तैत्तिरीय. मैत्रायणी.	ईश. बृहद्. तैत्तिरीय. मैत्रायणी. श्वेताश्वेतर कठ.	वाजसनेयि. तैत्तिरीय. याज्ञवल्क्य. माण्डव्य. वाशिष्ठी. भारद्वाज. अवसाननि.	कात्यायन. बौधायन. आपस्तम्ब. भारद्वाज सत्याषाढ. वैखानस. कठ., मैत्री.	कात्यायन. बौधायन. आपस्तम्ब. भारद्वाज. सत्याषाढ. वैखानस. कठ., वाधूल.	वशिष्ठ. बौधायन. आपस्तम्ब. वैखानस. हिरण्यकेशी. हारीत. विष्णु. शंख.	कात्यायन. बौधायन. आपस्तम्ब. मैत्रायणी. मानव. वाराह. वाधूल.	**ऋत्विक्** (अध्वर्युः), **वाजसनेयि-अध्यायाः** (40), **वाजसनेय्यनुवाकाः** (303), **वाजसनेयि-मन्त्राः/कणिकाः** (1975), **काण्व-अध्यायाः** (40), **काण्व-अनुवाकाः** (328), **काण्व-मन्त्राः/ कण्डिकाः** (2086), **मुख्याचार्यः** (वैशम्पायनः), **मुख्यदेवता** (वायुः)।
3. सामवेदः कौथुमीय. राणायनीय. जैमिनीय.	प्रौढ, वंश, षड्विंश, सामविधान देवताध्याय जैमिनीय.	तवलकार./ जैमिनीयोप. छान्दोग्य.	छान्दोग्य. केन.	नारदीय. ऋक्तन्त्र. पुष्पसूत्र- प्रातिशाख्य	लाट्यायन. द्राह्यायाण. मशकसूत्र. जैमिनीय. खादिर.	जैमिनीय. खादिर. गोभिल. गौतम.	गौतम.	X X X नास्ति.	**ऋत्विक्** (उद्गाता), **मन्त्राः** (1875), **पूर्वार्चिके** (650), **उत्तरार्चिके** (1225), **ऋग्वेदीयाः** (1504) मन्त्राः सन्ति। **सामगानम्**-प्रस्तावः, उद्गथः, प्रतिहारः, उपद्रवः, निधनश्च। **सामविकार**–वकारः, विश्लेषणः, विकर्षणः, अभ्यासः, विरामः, स्तोमश्च। **शाखा**-सहस्र-वर्त्मा सामवेदः।
4. अथर्ववेदः पिप्पलाद. शैनक मौदमहाभाष्य. स्तौद. जाजल. जलद. ब्रह्मवेद. चारणवैद्य. देवदर्श.	गोपथ.	X X X नास्ति.	प्रश्न. मुण्ड. माण्डूक्य.	माण्डूकी. अथर्ववेद- प्रातिशा. शौनकीया- प्रातिशा./ कैत्सव्या.	वैतान.	कौशिक.	X X X नास्ति.	X X X नास्ति.	**ऋत्विक्** (ब्रह्मा), **काण्डानि** (20), **सूक्तानि** (731), **मन्त्राः** (6000), **मन्त्रविभागौ—** शान्तिपौष्टिकाः आभिचारिकाश्च। **मुख्याचार्यः** (सुमन्तुः), **मुख्यदेवता**- (सोमः)। **उपाधिः** - ब्रह्मवेदः, अंगिरोवेदः, छन्दोवेदः, भैषज्यवेदः, अथर्वांगिरसवेदः।

• • •

5. निर्दिष्ट-दर्शनग्रन्थानां-परिचय-सामान्यम्

दर्शनशास्त्राणि	पदार्थाः	प्रमाणानि	सृष्टि-प्रक्रिया	कैवल्यम्/मोक्षः	विशिष्ट-विवरणम्
चार्वाकदर्शनम्/ सर्वदर्शनसंग्रहः (माधवाचार्यः)	पृथिवी, जलं, तेजः, वायुः चत्वारः पदार्थाः। नास्ति पदार्थत्वेनाकाशस्य सत्ता।	प्रत्यक्षम् एकमेव प्रमाणम्।	जडभूतविकारेषु चैतन्यं यत्तु दृश्यते। ताम्बूलपूगचूर्णानां योगाद्राग इवोत्थितम्।। अर्थात् किण्वादिभ्यः मदशक्तिवत् चैतन्यमुपजायते।	मोक्षस्य परिकल्पना एव नास्ति। शारीरविनाशः एवं मोक्षः।	नास्तिकशिरोमणिः दर्शनमिदं बार्हस्पत्यं। बृहस्पतिः अस्य प्रवर्तकः। लोकायतं चास्य नामान्तरमीश्वरस्य आत्मतत्त्वस्या वा पृथक् सत्ता नास्ति।
जैनदर्शनम्। सर्वदर्शनसंग्रहः (माधवाचार्यः)	जीवः, अजीवः, आस्रवः, संवरः, निर्जरः, बन्धः, मोक्षः।	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्।	कर्मात्मकैः आत्मपुद्गलसंयोगैः सृष्टिः बन्धश्च। पृथ्वी-जल-तेजवायु-स्थावर-जंगमभेदैः षड्पुद्गलानि।	ज्ञानप्रभावात्कर्माणाम् दग्धबीजभावात् मोक्षः।	नास्तिकदर्शनमिदम्। ऋषभदेवोऽस्य प्रवर्तकः। वेदेश्वरयोः स्थानं नास्ति। जिना एवं परमात्मस्वरूपाः। स्याद्वादः अस्य प्रमुखः सिद्धान्तः।
बौद्धदर्शनम्/ सर्वदर्शनसंग्रहः (माधवाचार्यः)	आलयविज्ञानम्, प्रवृत्तिविज्ञानम् च।	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्।	पृथिवी - जल - तेज - वायूनां पारस्परिकपरमाणु - क्रियाभिः समुदायोत्पत्तिः।	विज्ञानप्रभावात् अविद्यारागादिनिरोधात् जन्म-मरणयोः स्रोतस्य सर्वथा अभावः एव मोक्षः। नित्यविज्ञानेवात्मा। अत्रेश्वरस्योल्लेखः नास्ति।	नास्तिकदर्शनमिदम्। शाक्यमुनिः गौतमबुद्धः अस्य प्रवर्तकः। सौत्रान्तिकवैभाषिक-योगाचार-माध्यमिकाः सम्प्रदायाः। असत्कार्य-वादार्यसत्ये प्रमुख-सिद्धान्तौ।
सांख्यदर्शनम्/ सांख्यकारिका (श्रीमदीश्वरकृष्णः)	पुरुषः, प्रकृतिः, महत्, अहङ्कारः, एकादशेन्द्रियाणि, पंचतन्मात्राणि, पंचभूतानि।	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्, शब्दः।	अत्र प्रकृति-पुरुष-संयोगात् सृष्टिः- प्रकृतेर्महांस्ततोऽहङ्कारः तस्माद्गणश्च षोडशकः। तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि।।	सम्यग्ज्ञानाधिगमाद् धर्मादीनामकारणप्राप्तौ। तिष्ठति संस्कारवशात् चक्रभ्रमिवद् धृतशरीरः।।	ईश्वरस्योल्लेखः नास्ति। चेतनतत्त्वरूपेण पुरुष एव प्रतिष्ठितः, यत् प्रतिशरीरभिन्नमनेकः नित्यः निर्गुणः द्रष्टा साक्षी चास्ति। महर्षिकपिलः अस्य प्रवर्तकः।
योगदर्शनम्/ योगसूत्रम् (महर्षिपतंजलिः)	ईश्वरः, पुरुषः, प्रकृतिः, महत्, अहङ्कारः, एकादशेन्द्रियाणि पंचतन्मात्राणि, पंचमहाभूतानि।	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्, शब्दः।	ईश्वरेच्छया प्रकृति-पुरुष-संयोगात् सृष्टिः- प्रकृतेमहांस्ततोऽहङ्कारः तस्माद्गणश्च षोडशकः। तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि।।	विवेकज्ञानेन समाधिलाभेन वा कर्मक्षयपूर्वकं चित्तवृत्तिनिरोधात् मोक्षप्राप्तिः। तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम्।	क्लेश-कर्म-विपाका-शयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः। पुरुष एव प्रतिशरीरे चैतन्यशक्तिः। सत्कार्यवादः, परिणामवादश्च सिद्धान्तौ। पतंजलिरस्य प्रवर्तकः।
वैशेषिकदर्शनम्/ तर्कसंग्रहः (अन्नंभट्टः)	द्रव्यं, गुणः, कर्म, सामान्यं, विशेषः, समवायः, अभावः	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्।	अत्र ईश्वरेच्छया क्रियाशीलस्य। परमाणुतत्त्वस्य परस्परसंयोगात् सृष्टिः। संयोगनाशो विनाशः।	सत्कर्मानुष्ठानैः ज्ञानाज्ञानविरहितस्य जडीभूतस्य आत्म-तत्त्वस्य अवस्था विशेष एव मोक्षः।	ज्ञानाधिकरणमात्मा तद्विविधिः जीवात्मा परमात्मा च, ईश्वरः सृष्टिकर्त्ता नित्यः सर्वज्ञः

दर्शनशास्त्राणि	पदार्थाः	प्रमाणानि	सृष्टि-प्रक्रिया	कैवल्यम्/मोक्षः	विशिष्ट-विवरणम्
					कर्मफलप्रदातास्ति, विशेषस्वीकरणाद्वैशेषिकः। कणादोऽस्य प्रवर्तकः।
न्यायदर्शनम्/ न्यायसूत्रम् (गौतमः)	प्रमाण-प्रमेय-संशय-प्रयोजनदृष्टान्त-सिद्धांतावयवतर्कनिर्णयादयः षोडशपदार्थाः।	प्रत्यक्षम्, अनुमानम्, उपमानं, शब्दः।	ईश्वरेच्छयाऽत्र क्रियाशीलस्य। परमाणुतत्त्वस्य परस्परसंयोगात् सृष्टिः। संयोगनाशो विनाशः।	प्रमाणप्रमेयेत्यादितत्त्वज्ञानान्निः-श्रेयसाधिगमः। सत्कर्मानुष्ठानैः ज्ञानाज्ञानविरहितस्य जडीभूतस्य आत्मतत्त्वस्य अवस्था विशेष एव मोक्षः।	गौतमः अस्य आद्यप्रवर्तकः। ज्ञानाधिकरणमात्मा, तद्विविधः जीवात्मा सृष्टिः। परमात्मा च। ईश्वरः सृष्टिकर्ता नित्यः सर्वज्ञः कर्मफलप्रदाता चास्ति।
मीमांसादर्शनम्/ द्वादशलक्षणी (जैमिनिः)	ब्रह्म, अज्ञानमविद्या माया अदृष्टं च।	प्रत्यक्षं, अनुमानं, उपमानं, अभावः, अर्थापत्तिः, शब्दः	अदृष्टवशात् शुभाशुभकर्मानुसारेण जन्म-मृत्यु - बन्ध-मोक्षादयः सम्भवन्ति।	बन्ध-मोक्षादिकं सर्वमदृष्टवशाद् एव संभवति। तस्य निर्देशकः नियोजकश्च वेद एव।	जैमिनिः अस्य प्रवर्तकः। चोदनालक्षणोऽर्थो धर्मः। वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः।
वेदान्तदर्शनम्/ वेदान्तसारः (योगीन्द्रसदानन्दः)	ब्रह्म, अज्ञानमविद्याऽध्यासः माया वा।	प्रत्यक्षम्, अनुमानं, उपमानं, अभावः, अर्थापत्तिः, शब्दः	जगदिदं ब्रह्मणः विवर्त एव, अज्ञानोपहितचैतन्य एव विविधरूपेणावभासते, यथा असर्पभूतायां रज्जौ सर्पप्रतीतिः। सृष्टिस्तु ईश्वरविलासमात्रम्।	आत्मज्ञानेन **अहं ब्रह्मास्मि** इत्यनुभूतिरेव मोक्षः अथवा जीवात्म-परमात्मयोः भेदाभावरूपः **अयमात्मा ब्रह्म इति** प्रतीतिरेव मोक्षः।	कृष्णद्वैपायन-बादरायणः अस्य प्रवर्तकः। अध्यासः विवर्तवादः अनिर्वचनीय-ख्यातिर्वा सिद्धान्तः। जीव-ईश्वरब्रह्मभेदेन त्रिविधं चैतन्यमल्पज्ञसर्वज्ञतुरीयश्च।

• • •

6. भारतीय दर्शन की शाखाओं की सूची

क्रम सं०	सिद्धान्त का नाम	प्रतिष्ठापक का नाम	प्रधान ग्रन्थ का नाम	समय
1.	चार्वाक	चार्वाक/बृहस्पति	बृहस्पतिसूत्र या तत्त्वोपप्लवसिंह	अज्ञात
2.	श्वेताम्बर जैन	उमास्वाती	तत्त्वार्थाधिगमसूत्र	अज्ञात
3.	दिगम्बर जैन	अज्ञात	अज्ञात	अज्ञात
4.	वैभाषिक	कात्यायनीपुत्र	ज्ञानप्रस्थानशास्त्र	200 वि.श.
5.	सौत्रान्तिक	कुमारलात	कल्पनामण्डितिका	200 ई.
6.	योगाचार या विज्ञानवाद	मैत्रेयनाथ	अभिसमयाङ्कारिका	अज्ञात
7.	शून्यवाद या माध्यमिक	नागार्जुन	माध्यमिककारिका	400 ई.
8.	वैशेषिक	कणाद	वैशेषिकसूत्र	400 ई. पू.
9.	प्राचीनन्याय	गौतम	न्यायसूत्र	300 ई. पू.
10.	नव्यन्याय	गङ्गेशोपाध्याय	तत्त्वचिन्तामणि	1325 ई.

क्रम सं०	सिद्धान्त का नाम	प्रतिष्ठापक का नाम	प्रधान ग्रन्थ का नाम	समय
11.	साङ्ख्य	कपिल	साङ्ख्यसूत्र	700 ई. पू.
12.	योग	पतञ्जलि	योगसूत्र	200 ई. पू.
13.	भाट्टमीमांसा	कुमारिलभट्ट	श्लोकवार्तिक, तन्त्रवार्तिक आदि	620-700 ई.
14.	प्राभाकरमीमांसा	प्रभाकरमिश्र	लघ्वी, बृहती	650-720 ई.
15.	मुरारिमीमांसा	मुरारिमिश्र	त्रिपादीनीतिनय	1150-1220 ई.
16.	रसेश्वर (आयुर्वेद)	चरक	चरकसंहिता	200 ई. पू.
17.	व्याकरण	भर्तृहरि	वाक्यपदीयम्	500 ई.
18.	अद्वैत	शङ्कर	शारीरकभाष्य	788-820 ई.
19.	भेदाभेद	भास्कर	भास्करभाष्य	1000 ई.
20.	विशिष्टाद्वैत	रामानुज	श्रीभाष्य	1017-1117 ई.
21.	द्वैत	मध्व	पूर्णप्रज्ञभाष्य	1238-1317 ई.
22.	द्वैताद्वैत	निम्बार्क	वेदान्तपारिजात	1100 ई.
23.	शैवविशिष्टाद्वैत	श्रीकण्ठ	शैवभाष्य	1270 ई.
24.	वीरशैवविशिष्टाद्वैत	श्रीपति	श्रीकरभाष्य	1400 ई.
25.	नकुलीशपाशुपत	नकुलीश	पाशुपतसूत्र	अज्ञात
26.	प्रत्यभिज्ञा	सिद्धसोमानन्द	शिवदृष्टि	900-950 वि.
27.	शुद्धाद्वैत	वल्लभाचार्य	अणुभाष्य	1479-1532 ई.
28.	अविभागाद्वैत	विज्ञानभिक्षु	विज्ञानामृतभाष्य	1600 ई.
29.	अचिन्त्यभेदाभेद	वलदेवविद्याभूषण	गोविन्दभाष्य	1725 ई.
30.	स्वरूपाद्वैत	श्रीपञ्चाननतर्करत्न भट्टाचार्य	शक्तिभाष्य	1867-1940 ई.
31.	परमार्थदर्शन	रामावतारशर्मा	परमार्थदर्शन	1877-1929 ई.

• • •

7. साङ्ख्यसाहित्य

अनुपलब्ध

1. साङ्ख्यसूत्र — कपिल
2. षष्टितन्त्र — पञ्चशिख (जयमङ्गला टीका के आधार पर)
3. राजवार्तिक — अज्ञात

उपलब्ध

1. साङ्ख्यकारिका — **ईश्वरकृष्ण**

i. साङ्ख्यकारिकाभाष्य या गौडपाद भाष्य — गौडपाद

ii. माठरवृत्ति (साङ्ख्यकारिका की टीका) — माठराचार्य

iii. जयमङ्गला (साङ्ख्यकारिका की टीका) — शङ्कराचार्य

iv. साङ्ख्यतत्त्वकौमुदी (साङ्ख्यकारिका की टीका) — वाचस्पतिमिश्र

- ❖ तत्त्वकौमुदीव्याख्या — भारती यति
- ❖ तत्त्वार्णव या तत्त्वामृतप्रकाशिनी — राघवानन्दसरस्वती
- ❖ तत्त्वचन्द्र — नारायणतीर्थ
- ❖ कौमुदीप्रभा — स्वप्नेश्वर
- ❖ साङ्ख्यतत्त्वविलास या साङ्ख्यवृत्तिप्रकाश या साङ्ख्यार्थसाङ्ख्यायिका — रघुनाथ तर्कवागीश भट्टाचार्य
- ❖ साङ्ख्यतत्त्वविभाकर — वंशीधरमिश्र
- ❖ सारबोधिनी — शिवनारायणमिश्र
- ❖ किरणावली — श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामिनारायण

v. युक्तिदीपिका (साङ्ख्यकारिका की टीका) — अज्ञात

vi. सुवर्णसप्तति — अज्ञात

vii. साङ्ख्यचन्द्रिका — नारायणतीर्थ

viii. साङ्ख्यकौमुदी — रामकृष्ण भट्टाचार्य

ix. स्वामिनारायणभाष्य (साङ्ख्यकारिकाभाष्य) — श्रीकृष्णवल्लभाचार्य स्वामिनारायण

2. साङ्ख्यसूत्र

i. अनिरुद्धवृत्ति — अनिरुद्ध

ii. साङ्ख्यवृत्तिसार — महादेव वेदान्ती
iii. साङ्ख्यप्रवचनभाष्य — विज्ञानभिक्षु
iv. लघुसाङ्ख्यवृत्ति — नागेशभट्ट
v. साङ्ख्यतरङ्ग — विश्वेश्वरदत्तमिश्र या देवतीर्थस्वामी

3. तत्त्वसमास सूत्र

i. सर्वोपकारिणी — अज्ञात
ii. साङ्ख्यसूत्रविवरण — अज्ञात
iii. साङ्ख्यक्रमपीपिका या साङ्ख्यालङ्कार या साङ्ख्यसूत्रप्रवेशिका — अज्ञात
iv. साङ्ख्यतत्त्वयाथार्थ्यदीपन — भावागणेश
v. अन्वयात्मकव्याख्या — क्षेमेन्द्र दीक्षित
vi. तत्त्व समास सूत्र वृत्ति — अज्ञात

4. साङ्ख्यसार — **विज्ञानभिक्षु**

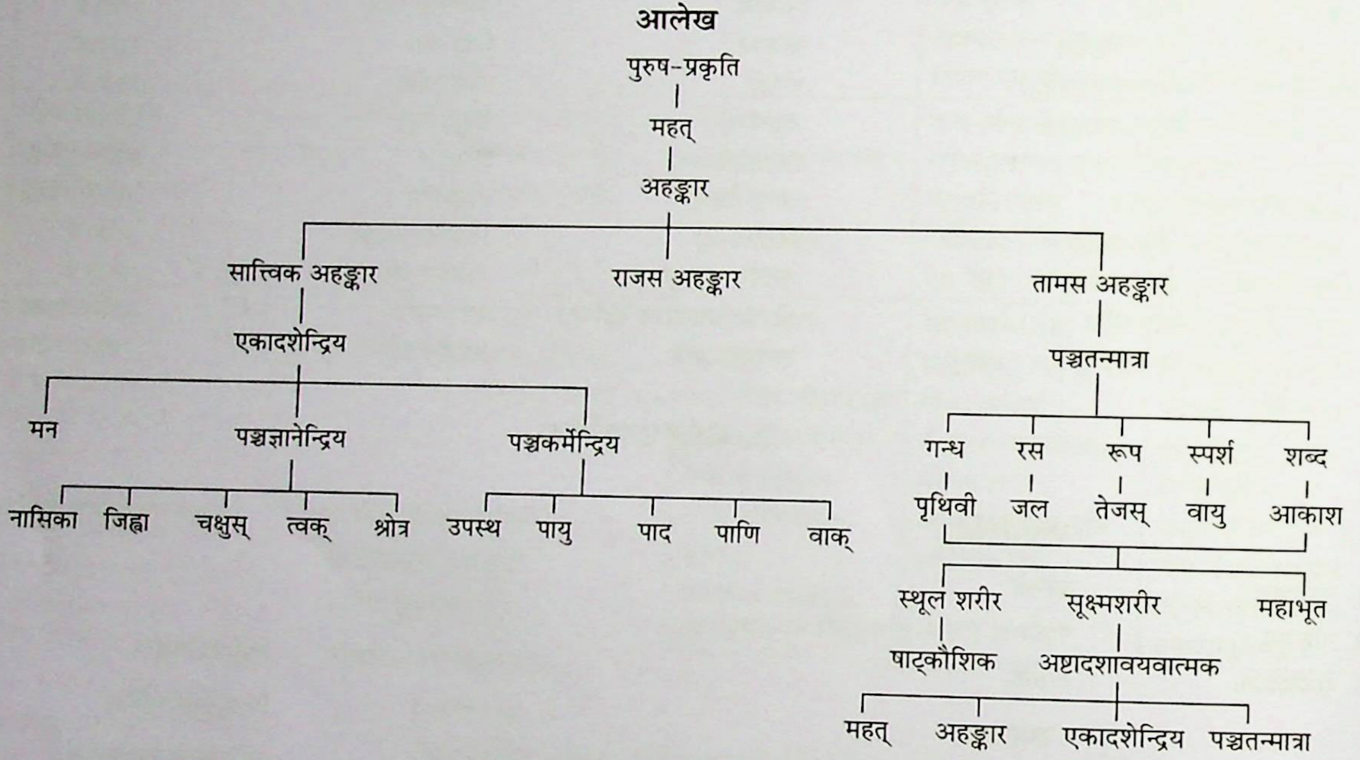
5. साङ्ख्यतत्त्वप्रदीप — **कविराज यति**

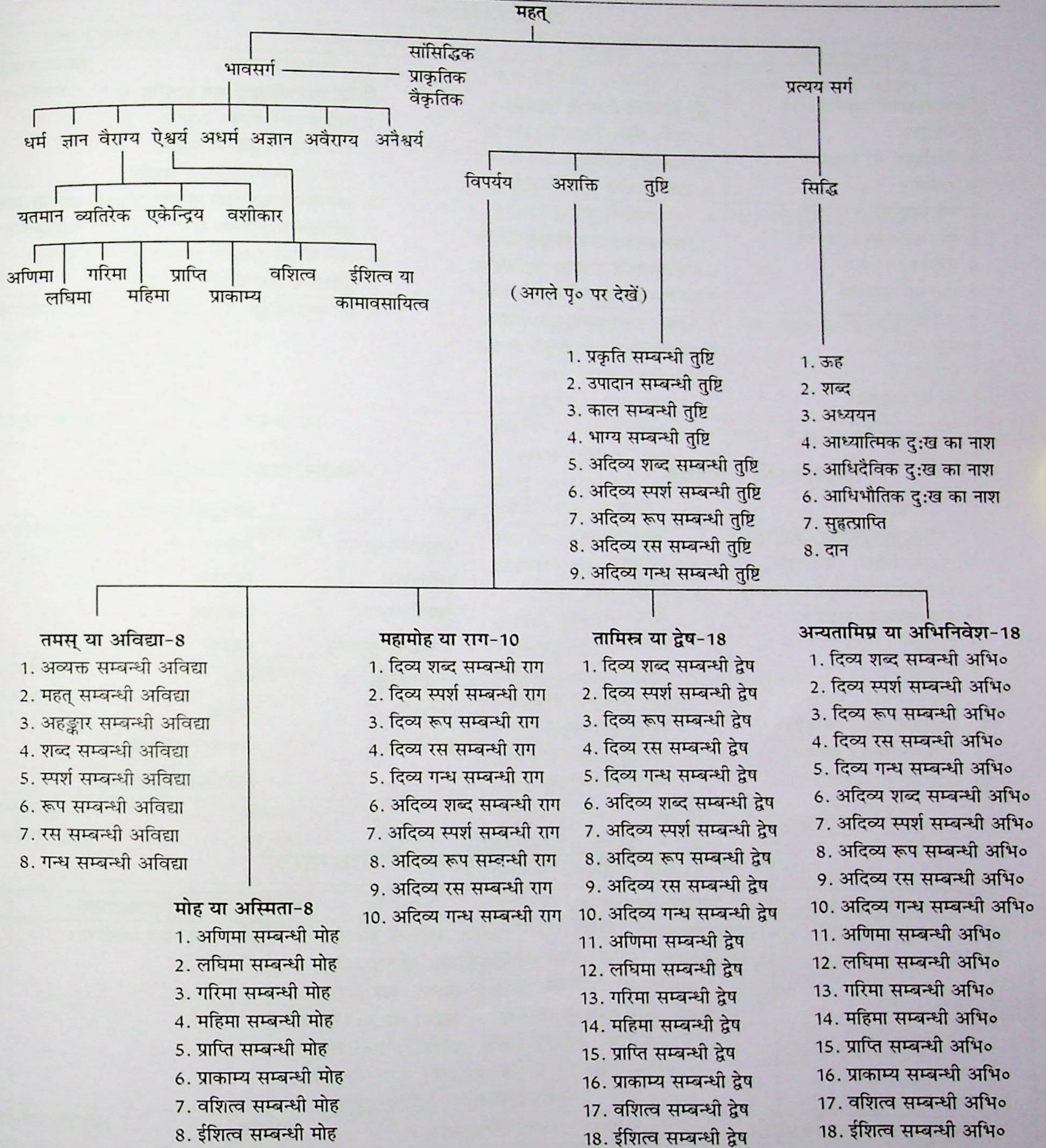
6. साङ्ख्यार्थतत्त्व — **प्रदीपिका भट्टकेशव**

7. तत्त्वमीमांसा — **कृष्णमिश्र**

8. साङ्ख्यपरिभाषा — **कृष्णमिश्र**

आलेख




महत्
भावसर्ग
सांसिद्धिक
प्राकृतिक
वैकृतिक
प्रत्यय सर्ग
धर्म
ज्ञान
वैराग्य
ऐश्वर्य
अधर्म
अज्ञान
अवैराग्य
अनैश्वर्य
यतमान
व्यतिरेक
एकेन्द्रिय
वशीकार
अणिमा
लघिमा
गरिमा
महिमा
प्राप्ति
प्राकाम्य
वशित्व
ईशित्व या
कामावसायित्व
विपर्यय
अशक्ति
तुष्टि
सिद्धि
(अगले पृ० पर देखें)
1. प्रकृति सम्बन्धी तुष्टि
2. उपादान सम्बन्धी तुष्टि
3. काल सम्बन्धी तुष्टि
4. भाग्य सम्बन्धी तुष्टि
5. अदिव्य शब्द सम्बन्धी तुष्टि
6. अदिव्य स्पर्श सम्बन्धी तुष्टि
7. अदिव्य रूप सम्बन्धी तुष्टि
8. अदिव्य रस सम्बन्धी तुष्टि
9. अदिव्य गन्ध सम्बन्धी तुष्टि
1. ऊह
2. शब्द
3. अध्ययन
4. आध्यात्मिक दु:ख का नाश
5. आधिदैविक दु:ख का नाश
6. आधिभौतिक दु:ख का नाश
7. सुहृत्प्राप्ति
8. दान
तमस् या अविद्या-8
1. अव्यक्त सम्बन्धी अविद्या
2. महत् सम्बन्धी अविद्या
3. अहङ्कार सम्बन्धी अविद्या
4. शब्द सम्बन्धी अविद्या
5. स्पर्श सम्बन्धी अविद्या
6. रूप सम्बन्धी अविद्या
7. रस सम्बन्धी अविद्या
8. गन्ध सम्बन्धी अविद्या
मोह या अस्मिता-8
1. अणिमा सम्बन्धी मोह
2. लघिमा सम्बन्धी मोह
3. गरिमा सम्बन्धी मोह
4. महिमा सम्बन्धी मोह
5. प्राप्ति सम्बन्धी मोह
6. प्राकाम्य सम्बन्धी मोह
7. वशित्व सम्बन्धी मोह
8. ईशित्व सम्बन्धी मोह
महामोह या राग-10
1. दिव्य शब्द सम्बन्धी राग
2. दिव्य स्पर्श सम्बन्धी राग
3. दिव्य रूप सम्बन्धी राग
4. दिव्य रस सम्बन्धी राग
5. दिव्य गन्ध सम्बन्धी राग
6. अदिव्य शब्द सम्बन्धी राग
7. अदिव्य स्पर्श सम्बन्धी राग
8. अदिव्य रूप सम्बन्धी राग
9. अदिव्य रस सम्बन्धी राग
10. अदिव्य गन्ध सम्बन्धी राग
तामिस्र या द्वेष-18
1. दिव्य शब्द सम्बन्धी द्वेष
2. दिव्य स्पर्श सम्बन्धी द्वेष
3. दिव्य रूप सम्बन्धी द्वेष
4. दिव्य रस सम्बन्धी द्वेष
5. दिव्य गन्ध सम्बन्धी द्वेष
6. अदिव्य शब्द सम्बन्धी द्वेष
7. अदिव्य स्पर्श सम्बन्धी द्वेष
8. अदिव्य रूप सम्बन्धी द्वेष
9. अदिव्य रस सम्बन्धी द्वेष
10. अदिव्य गन्ध सम्बन्धी द्वेष
11. अणिमा सम्बन्धी द्वेष
12. लघिमा सम्बन्धी द्वेष
13. गरिमा सम्बन्धी द्वेष
14. महिमा सम्बन्धी द्वेष
15. प्राप्ति सम्बन्धी द्वेष
16. प्राकाम्य सम्बन्धी द्वेष
17. वशित्व सम्बन्धी द्वेष
18. ईशित्व सम्बन्धी द्वेष
अन्यतामिस्र या अभिनिवेश-18
1. दिव्य शब्द सम्बन्धी अभि०
2. दिव्य स्पर्श सम्बन्धी अभि०
3. दिव्य रूप सम्बन्धी अभि०
4. दिव्य रस सम्बन्धी अभि०
5. दिव्य गन्ध सम्बन्धी अभि०
6. अदिव्य शब्द सम्बन्धी अभि०
7. अदिव्य स्पर्श सम्बन्धी अभि०
8. अदिव्य रूप सम्बन्धी अभि०
9. अदिव्य रस सम्बन्धी अभि०
10. अदिव्य गन्ध सम्बन्धी अभि०
11. अणिमा सम्बन्धी अभि०
12. लघिमा सम्बन्धी अभि०
13. गरिमा सम्बन्धी अभि०
14. महिमा सम्बन्धी अभि०
15. प्राप्ति सम्बन्धी अभि०
16. प्राकाम्य सम्बन्धी अभि०
17. वशित्व सम्बन्धी अभि०
18. ईशित्व सम्बन्धी अभि०

अशक्ति

इन्द्रिय सम्बन्धी अशक्ति =11

1. बहरापन
2. स्पर्शग्रहण का असामर्थ्य
3. अन्धापन
4. रस ग्रहण का असामर्थ्य
5. गन्ध ग्रहण का असामर्थ्य
6. गूंगापन
7. हस्त का असामर्थ्य
8. पाद का असामर्थ्य
9. नपुंसकत्व
10. गुदा दोष
11. मन का असामर्थ्य

तुष्टि विपयर्य सम्बन्धी अशक्ति-9

1. प्रकृति सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
2. उपादान सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
3. काल सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
4. भाग्य सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
5. अदिव्य शब्द सम्बन्धी तुष्टि अशक्ति
6. अदिव्य स्पर्श सम्बन्धी तुष्टि अशक्ति
7. अदिव्य रूप सम्बन्धी तुष्टि अशक्ति
8. अदिव्य रस सम्बन्धी तुष्टि अशक्ति
9. अदिव्य गन्ध सम्बन्धी तुष्टि अशक्ति

सिद्धि सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति-8

1. ऊह सम्बन्धी तुष्टिरूप अशक्ति
2. शब्द सम्बन्धी तुष्टिरूप अशक्ति
3. अध्ययन सम्बन्धी तुष्टिरूप अशक्ति
4. आध्यात्मिक दु:खनाश सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
5. आधिदैविक दु:खनाश सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
6. आधिभौतिक दु:खनाश सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
7. सुहृत्प्राप्ति सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति
8. दान सम्बन्धी तुष्टि रूप अशक्ति

संस्कृतनाटकों में विदूषक

नाटक	विदूषक
1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (कालिदास)	माढव्य/माधव्य
2. विक्रमोर्वशीयम् (कालिदास)	माणवक
3. मालविकाग्निमित्रम् (कालिदास)	गौतम
4. मृच्छकटिकम् (शूद्रक)	मैत्रेय
5. रत्नावली (श्रीहर्ष)	वसन्तक
6. स्वप्नवासवदत्तम् (भास)	वसन्तक
7. मालतीमाधवम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
8. महावीरचरितम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
9. उत्तररामचरितम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
10. मुद्राराक्षसम् (विशाखदत्त)	विदूषक का अभाव

संस्कृत नाटकों में कञ्चुकी

नाटक	कञ्चुकी का नाम
1. प्रतिज्ञायौगन्धरायण	बादरायण
2. दूतवाक्यम्	बादरायण
3. स्वप्नवासवदत्तम्	बादरायण
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	वातायन
5. उत्तरामचरितम्	गृष्टि
6. रत्नावली	बाभ्रव्य
7. वेणीसंहारम्	जयन्धर (युधिष्टिर का)
	विनयन्धर (दुर्योधन का)

• • •

8. महाकाव्यादीनां ग्रन्थानां संक्षिप्त-परिचय-सारणी

ग्रन्थ: (ग्रन्थकार:)	उपजीव्य: सर्गाकरसा:	पात्राणि	विशिष्टविवरणम्
रघुवंशम् (कालिदास:)	रामायणम् शृङ्गार:/19	दिलीप:, सुदक्षिणा, वशिष्ठ:, नन्दिनी, रघु:, कौत्स:, कुबेर:, नारद:, इन्दुमती, अज:, दशरथ:, श्रवण:, रावण:, श्रीराम: (नायक:), सीता (नायिका), भरत:, लक्ष्मण:, शत्रुघ्न:, लव:, कुश:, विश्वामित्र:, वाल्मीकि:, अतिथि:, कुमुद्वती, अग्निवर्णश्च।	लघुत्रय्याम् अस्य गणनास्ति।

ग्रन्थः (ग्रन्थकारः)	उपजीव्यः सर्गाकरसाः	पात्राणि	विशिष्टविवरणम्
कुमारसम्भवम् (कालिदासः)	**श्रीमद्भागवत** शृङ्गारः/17	शिवः (नायकः), पार्वती (नायिका), मेना, हिमालयः, नारदः, तारकासुरः, ब्रह्मा, सप्तर्षिगणः, कामदेवः, इन्द्रः, रतिः, कुमारकार्तिकेयश्च।	लघुत्रय्याम् अस्य गणनास्ति।
मेघदूतम् (कालिदासः)	**रामायणम्** शृङ्गारः/02	यक्षः (हेममाली), यक्षिणी (विशालाक्षी), मेघः (जलधरः)। कथानक-दृष्ट्या ब्रह्मवैवर्तपुराणस्य उपजीव्यत्वं सिद्धम्।	लघुत्रय्याम् अस्य गणनास्ति।
किरातार्जुनीयम् (भारविः)	**महाभारतम्** वीरः/18	नायकः अर्जुनः, नायिका द्रौपदी, कृष्णः, इन्द्रः, शिवः (किरातः), पंचपाण्डवाः, वनेचरः, दुर्योधनः, मूकः (शूकरः), यक्षः, व्यासश्च।	अस्य गणनाऽस्ति बृहत्त्रय्याम्।
शिशुपालवधम् (माघः)	**महाभारतम्** वीरः/20	श्रीकृष्णः (नायकः), रुक्मिणी (नायिका), युधिष्ठिरः, अर्जुनः, नकुलः, सहदेवः, भीमः, भीष्मः, दुर्योधनः, शिशुपालश्च।	अस्य गणनाऽस्ति बृहत्त्रय्याम्।
नैषधीयचरितम् (श्रीहर्षः)	**महाभारतम्** वीरः/22	नलः (नायकः), दमयन्ती (नायिका), हंसः (पक्षी), भीमः, नारदः, इन्द्रः, वरुणः, यमः, अग्निः, सरस्वती, कलिसेना, वैतालिकश्च।	अस्य गणनाऽस्ति बृहत्त्रय्याम्।
बुद्धचरितम् (अश्वघोषः)	**इतिहासः** शान्तः/14	सिद्धार्थः (नायकः), यशोधरा (नायिका), शुद्धोदनः, मायादेवी, श्रमणः, छन्दकः, विम्बिसारः, अराडमुनिः, नन्दबाला, कामदेवश्च।	कदाचिदष्टाविंशति सर्गाः आसन्।
हर्षचरितम् (बाणभट्टः)	**इतिहासः** वीरः/08	हर्षवर्द्धनः (नायकः), राज्यवर्द्धनः, प्रभाकरवर्द्धनः, राज्यश्रीः, शशांकः, बाणभट्टः, भैरवाचार्यः, कृष्णश्च।	विन्ध्योत्तरभारतस्य वर्णनम् अत्र विद्यते।
कादम्बरी (बाणभट्टः)	**बृहत्कथा** शृङ्गारः/02	चन्द्रापीडः (नायकः), कादम्बरी (नायिका), किन्नरः, वैशम्पायनः, चाण्डालकन्या (लक्ष्मी), जाबालिः, हारीतः, तारापीडः, विलासवती, शुकनासः, महाश्वेता, शुकः, शूद्रकः, हंसः, पुण्डरीकः, कपिंजलः, पत्रलेखा, मदलेखा, इन्द्रायुधः, चन्द्रमा च।	चन्द्रमा- चन्द्रापीड- शूद्रकाः। पुण्डरीक- वैशम्पायन-शुकाः।
दशकुमारचरितम्। (दण्डी)	**बृहत्कथा** शृङ्गारः/03	राज्यवाहनः (नायकः), अवन्तिसुन्दरी (नायिका), राजहंसः, मानसारः, पुष्पोद्भवः, पद्मोद्भवः, अर्थपालः, वैश्रवणसिन्धुदत्तौ,	अष्टोच्छ्वासेषु दश- राजकुमाराणां वृत्तम् वर्णितमस्ति।

ग्रन्थः (ग्रन्थकारः)	उपजीव्यः सर्गाकरसाः	पात्राणि	विशिष्टविवरणम्
		कामपालः, अपहारवर्मा, उपहारवर्मा, चंडवर्मा, प्रमतिः, सुमतिः, विश्रुतः, सुमन्त्रः, सोमदत्तः, मित्रगुप्तमन्त्रगुप्तौ, कांतिमती।	
अभिज्ञानशाकुन्तलं (कालिदासः)	**महाभारतम्** शृङ्गारः/07	दुष्यन्तः (नायकः), शकुन्तला (नायिका), कण्वः, अनसूया, प्रियंवदा, शार्ङ्गरवः, शारद्वतः, माढव्यः (विदूषकः), भरतः, मारीचः, दुर्वासा, गौतमी, मेनका, वसुमती, हंसपदिका, मातलिश्च।	प्रायः सर्वासु भाषासु संजातः नाटकस्यास्य अनुवादः।
उत्तररामचरितम् (भवभूतिः)	**रामायणम्** करुणः/07	नायकः श्रीरामः, नायिका सीता, भरतः, लक्ष्मणः, शत्रुघ्नः, चन्द्रकेतुः, लवकुशौ, गंगा, वशिष्ठः, अरुन्धती, वाल्मीकिः, जनकः, अष्टावक्रः, सुमन्त्रः, दुर्मुखः, पृथ्वी, सौधातकिः, दांडायनः, विद्याधर :, वासंती, आत्रेयी, तमसा, मुरला, कौशल्या, कंचुकी।	विदूषकस्य अभावः गर्भनाटकयोजना चास्ति।
स्वप्नवासवदत्तम् (भासः)	**ऐतिहासिकम् कविकल्पितं** शृङ्गारः/06	नायकः उदयनः, नायिका वासवदत्तापद्मावती च, यौगन्धरायणः, महासेनः प्रद्योतः, तापसी, वसन्तकः, रुमण्यवान्, ब्रह्मचारी, परिव्राजकः अंगारवती, वसुंधरा, विजया, अवन्तिका, धात्री च।	अत्र नान्दीयोजना नास्ति।
मृच्छकटिकम् (शूद्रकः)	**ऐतिहासिकम् कविकल्पितं** शृङ्गारः/16	नायकः चारुदत्तः, नायिका वसन्तसेना धूता च, मैत्रेयः (विदूषकः), शकारः, चेटः, शर्विलकः, आर्यकः, भिक्षुः, मदनिका, रोहसेनः, रेभिलः, विटः, कर्णपूरकः, श्रेष्ठी, चन्दनकः, वृद्धा, अधिकारिणकः।	प्रतिनिधिभूतमिदम् प्रकरणम्।
वेणीसंहारम् (भट्टनारायणः)	**महाभारतम्** वीरः/06	नायकः भीमः युधिष्ठिरो वा, नायिका द्रौपदी, अर्जुनः, कृष्णः, दुर्योधनः, अश्वत्थामा, कर्णः, द्रोणः, भानुमती, जयद्रथः, दुश्शला, गान्धारी, धृतराष्ट्रः, सुन्दरकः, चार्वाकः।	अत्र वेणीसंहारणम् द्रौपद्याः प्रयोजनम्।

ग्रन्थः (ग्रन्थकारः)	उपजीव्यः सर्गाकरसाः	पात्राणि	विशिष्टविवरणम्
मुद्राराक्षसम् (विशाखदत्तः)	**विष्णुपुराणं** वीरः/07	नायकः चाणक्यः चंद्रगुप्तो वा, राक्षसः, मलयकेतुः, क्षपणकः, चंदनदासः, शार्ङ्गरवः विराधगुप्तः, निपुणकः, शकटदासः, भागुरायणः, सिद्धार्थकः, समिद्धार्थकः, करभकः	नायिकाविदूषकयोः अभावः वर्तते।
रत्नावली (हर्षवर्द्धनः)	**कविकल्पितं** शृङ्गारः/04	नायकः उदयनः, नायिका रत्नावली सागरिका वा, बसन्तकः (विदूषकः), वाभ्रव्यः, यौगन्धरायणः, वसुभूतिः, वासवदत्ता, विजयवर्मा, वसुन्धरा, सुसंगता, चूतलतिका।	उदयनः धीरललितः, सागरिका मुग्धा च।
विक्रमोर्वशीयम् (कालिदासः)	**ऋग्वेदः** शृंगारः/05	पुरुरवा (नायकः), उर्वशी (नायिका), इन्द्रः, केशी, भरतमुनिः, कुबेरः, औशीनरी, नारदः, वनवासिनी, कुमारः (उर्वशीपुत्रः)।	गर्भांकस्य योजना अस्ति।
मालविकाग्निमित्रं (कालिदासः)	**इतिहासः** शृङ्गारः/05	अग्निमित्रः (नायकः), मालविका (नायिका), गणदासः, इरावती, वसुमित्रः, माधवसेनः।	कथावस्तुदृष्ट्या इयं नाटिकाऽस्ति।
प्रियदर्शिका (हर्षवर्धनः)	**कविकल्पितं** शृंगारः/04	वत्सः (नायकः), आरण्यका (नायिका), दृढवर्मा, प्रियदर्शिका, वासवदत्ता।	नायकः धीरललितः नायिका मुग्धा चास्ति

• • •

9. रूपकोपरूपकादिनिरूपणम्

रूपकविधा	रसः	कथावस्तुः	नायकः	अङ्कः	उदाहरणम्	विशिष्ट-विवरणम्
01. नाटकम्	शृङ्गारः वीरः	इतिहासप्रसिद्धः	धीरोदात्तः (1)	05-10	अभिज्ञानशाकुन्तलं	सर्वोत्तमगुणगणान्वितः।
02. प्रकरणम्		लौकिकम् / कल्पितश्च	धीरप्रशान्तः (1)	10	मृच्छकटिकम्	मन्त्री-वैश्य-ब्राह्मण-नायकाः।
03. ईहामृगः	शृङ्गारः	ऐतिहासिकः/ कल्पितश्च	विविधाः	04/01	कुसुमशेखरविजय	दिव्यनायिकाहेतुकः कलहः।
04. डिमः	रौद्रः	ऐतिहासिकः	विविधाः (16)	04	त्रिपुरदाहः	मायेन्द्रजालादियुताः।
05. समवकारः	वीरः	इतिहासपुराणादि-प्रसिद्धः	देवता मानवौ 12	03	समुद्रमन्थनम्	गायत्री-उष्णिकादि- छन्दात्मकाः
06. भाणः	शृङ्गारः वीरः	कविकल्पितम्	विटः (1)	01	लीलामधुकरम्	धूर्तचरित्रयुतः।
07. व्यायोगः	वीरकरुणरौद्राः	इतिहासप्रसिद्धः	धीरोदात्तः (1)	01	सौगन्धिकाहरणम्	हास्यशृङ्गारशान्तातिरिक्ताः रसाः
08, अङ्क	करुणः	इतिहासप्रसिद्धः	साधारणः (1)	01	शर्मिष्ठाययातिः	स्त्रीविलापाधिक्यम्
09. वीथी	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	साधारणः (1)	01	मालविका	त्रयोदशाङ्गानि भवन्ति।
10. प्रहसनम्	हास्यः	कविकल्पितम्	निन्दनीयपुरुषः	01	धूर्तचरितम्	भाणवद् इदं प्रहसनम्।

रूपकविधा	रसः	कथावस्तुः	नायकः	अङ्कः	उदाहरणम्	विशिष्ट-विवरणम्
11. नाटिका	शृङ्गारः	ऐतिहासिकः/ कल्पितश्च	धीरललितः (1)	04	रत्नावली	नवानुरागा कन्याऽत्र नायिका।
12. त्रोटकम्	शृङ्गारः	ऐतिहासिकः / कल्पितश्च	धीरोदात्तः (1)	05-09	विक्रमोर्वशीयम्	त्रोटकं नाम प्रत्यङ्कं सविदूषकम्
13. गोष्ठी	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	निन्दनीयपुरुषाः 9	01	रैवतमदनिका	गोष्ठी हीना गर्भविमार्शाभ्याम्।
14. सट्टकम्	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	धीरललितः (1)	04	कर्पूरमंजरी	अङ्का जवनिकाख्याः स्युः।
15. नाट्यरासकं	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	धीरोदात्तः (1)	01	विलासवती	नायिका वासकसज्जिका।
16. प्रस्थानकं	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	दासः (1)	02	शृङ्गारतिलकम्	लय-तालादि- विलास-बहुलः।
17. उल्लाप्यम्	शृङ्गारः	इतिहासपुराणादि-प्रसिद्धः	धीरोदात्तः (1)	01	देवीमहादेवम्	शिल्पकांगैर्युतं शृङ्गारहास्यकरुणैः।
18. काव्यम्	हास्यः	ऐतिहासिकः / कल्पितश्च	धीरोदात्तः (1)	01	यादवोदयः	वर्णमात्राछगणिकायुतम्-एकाङ्कम्।
19. प्रेंखणम्	शृङ्गारः/वीरः	इतिहासपुराणादि-प्रसिद्ध	निन्दनीयपुरुषः 1	01	बालिवधः	असूत्रधारमविष्कम्भ-प्रवेशकम्।
20. रासकम्	शृङ्गारः	इतिहासपुराणादि-प्रसिद्धः	मूर्खनायकः (1)	01	मेनकाहितम्	शिलष्टानान्दीयुतं ख्यातनायिकम्।
21. संलापकम्	शृङ्गारकरुणेतरः	कविकल्पितम्	पाषण्डनायकः	03-04	मायाकापालिकम्	भारती कैशिकीवृत्तिः न भवति।
22. श्रीगदितम्	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	धीरोदात्तः (1)	01	क्रीडारसातलम्	प्रसिद्धनायिकं गर्भविमर्शवर्जितं
23. शिल्पकम्	अशांताहास्याः	कविकल्पितम्	ब्राह्मणनायकः (1)	04	कनकवतीमाधवः	अशांतहास्याश्च रसाः।
24. विलासिका	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	हीननायकः (1)	01	....	पीठमर्दविदूषकविटैः भूषिता।
25. दुर्मल्लिका	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	हीननायकः (1)	04	बिन्दुमती	नागरनरा न्यूननायकभूषिता।
26. प्रकरणी	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	सार्थवाहादिः (1)	04	....	समानवंशजा नेतुर्यत्र नायिका।
27. हल्लीशः	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	वागुदात्तः (1)	01	केलिरैवतिकम्	हल्लीशे सप्ताष्टौ दश वा स्त्रियः।
28. भाणिका	शृङ्गारः	कविकल्पितम्	मन्दनायकः (1)	01	कामदत्ता	कोप-पीडया सोपालम्भवचः।

• • •

संस्कृतवाङ्मयम्

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख लेखकों का अनुमानित कालक्रम

लेखक	प्रमुख ग्रन्थ	अनुमानित काल
1. आचार्य लगध	वेदाङ्गज्योतिष	1400 ई.पू. से ८00 ई.पू.
2. यास्क	निरुक्त	८00 ई. पू.
3. आचार्य पिङ्गल	छन्दःसूत्रम्	८00 ई.पू. से 700 ई.पू.
4. कपिल	सांख्यसूत्र	700 ई.पू.
5. जैमिनि	मीमांसासूत्र	600 ई.पू.
6. कणाद	वैशेषिकसूत्र	500 ई.पू.
7. चरक	चरकसंहिता	500 ई.पू.—200 ई.पू.
8. सुश्रुत	सुश्रुतसंहिता	500 ई.पू.
9. वाल्मीकि	वाल्मीकीयरामायणम्	500 ई.पू.
10. पाणिनि	अष्टाध्यायी	500 ई.पू.
11. महर्षि व्यास (कृष्णद्वैपायन)	महाभारत एवं 18 पुराण	400 ई.पू.
12. कौटिल्य (चाणक्य)	अर्थशास्त्र	400 ई.पू.
13. बादरायण	ब्रह्मसूत्र	300 ई.पू.
14. कात्यायन (वररुचि)	अष्टाध्यायी पर वार्तिक	300 ई.पू.
15. पतञ्जलि	महाभाष्य, योगसूत्र	185 ई.पू.
16. भरतमुनि	नाट्यशास्त्रम्	100 ई.पू. से 300 ई.
17. भास	स्वप्नवासवदत्तम् आदि 13 नाटक	100 ई. पू. से 200 ई. के मध्य
18. मनु	मनुस्मृति	200 ई.पू. से 200 ई. के बीच
19. कालिदास	रघुवंशम्, अभिज्ञानशाकुन्तलम् आदि	ई.पू. प्रथम शताब्दी
20. अश्वघोष	बुद्धचरितम्, सौन्दरानन्द	प्रथम शताब्दी ई.
21. गुणाढ्य	बृहत्कथा	प्रथम शताब्दी ई.
22. शालिवाहन (हाल)	गाहा सतसई (गाथासप्तशती)	प्रथम या द्वितीय शताब्दी ई.
23. वात्स्यायन	न्यायसूत्रभाष्य	द्वितीय शताब्दी ई.
24. शर्ववर्मा	कातन्त्रव्याकरण	द्वितीय शताब्दी ई.
25. शबरस्वामी	शाबरभाष्य	द्वितीय शताब्दी ई.
26. विष्णुशर्मा	पञ्चतन्त्र	दूसरी शताब्दी से छठी शताब्दी के बीच
27. अमरसिंह	नामलिङ्गानुशासनम् (अमरकोष)	तीसरी शताब्दी का पूर्वार्द्ध
28. वात्स्यायन	कामसूत्रम्	तीसरी शताब्दी ई.

लेखक	प्रमुख ग्रन्थ	अनुमानित काल
29. आर्यशूर	जातकमाला	तीसरी-चौथी शताब्दी ई.
30. शूद्रक	मृच्छकटिकम्	तीसरी-चौथी शताब्दी ई.
31. ईश्वरकृष्ण	सांख्यकारिका	चौथी शताब्दी ई.
32. विशाखदत्त	मुद्राराक्षसम्	पाँचवीं-छठी शताब्दी
33. कुमारदास	जानकीहरणम्	छठी शताब्दी ई.
34. भारवि	किरातार्जुनीयम्	छठी शताब्दी ई. (560 ई.-615 ई. के बीच)
35. दण्डी	दशकुमारचरितम्	छठी शताब्दी ई.
36. भर्तृहरि	वाक्यपदीयम्	छठी शताब्दी ई.
37. भट्टि	रावणवध/भट्टिकाव्य	500 ई. से 650 ई. के बीच
38. भामह	काव्यालङ्कार	छठी शताब्दी
39. माघ	शिशुपालवधम्	सातवीं शताब्दी ई. (675 ई.)
40. आदि शङ्कराचार्य	शाङ्करभाष्य, सौन्दर्यलहरी	सातवीं शताब्दी ई.
41. बाणभट्ट	कादम्बरी, हर्षचरितम्	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
42. मयूरभट्ट	सूर्यशतकम्	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
43. सुबन्धु	वासवदत्ता	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
44. हर्ष	प्रियदर्शिका, रत्नावली, नागानन्द	सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
45. भवभूति	महावीरचरितम्, उत्तररामचरितम्	सातवीं शताब्दी के आसपास
46. अमरुकवि (अमरुक)	अमरुकशतकम्	सातवीं शताब्दी
47. वाक्पतिराज	गौडवहो	750 ई. के आसपास
48. भट्टनारायण	वेणीसंहारम्	सातवीं-आठवीं शताब्दी
49. दामोदरभट्ट	कुट्टनीमतम्	आठवीं शताब्दी ई.
50. मुरारि	अनर्घराघवम्	आठवीं शताब्दी का उत्तरार्ध
51. वामन	काव्यालङ्कारसूत्र	आठवीं शताब्दी
52. आनन्दवर्धन	ध्वन्यालोक	850 ई.
53. वाचस्पतिमिश्र	भामतीटीका, तत्त्वकौमुदी (सांख्य)	नवीं शताब्दी
54. दामोदरमिश्र	हनुमन्नाटक	नवीं शताब्दी ई.
55. रत्नाकर	हरविजयम्	नवीं शताब्दी
56. राजशेखर	काव्यमीमांसा	नवीं शताब्दी का उत्तरार्ध
57. जयन्तभट्ट	न्यायमञ्जरी	दसवीं शताब्दी ई.
58. धनपाल	तिलकमञ्जरी	दसवीं शताब्दी
59. त्रिविक्रमभट्ट	नलचम्पू, मदालसाचम्पू	दसवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध
60. कुन्तक	वक्रोक्तिजीवितम्	ग्यारहवीं शताब्दी
61. महिमभट्ट	व्यक्तिविवेक	ग्यारहवीं शताब्दी
62. क्षेमेन्द्र	औचित्यविचारचर्चा, रामायणमञ्जरी	ग्यारहवीं शताब्दी
63. कृष्णमित्र	प्रबोधचन्द्रोदय	ग्यारहवीं शताब्दी
64. सोमदेव	कथासरित्सागर	ग्यारहवीं शताब्दी
65. रामानुज	श्रीभाष्य	ग्यारहवीं शताब्दी
66. बिल्हण	विक्रमाङ्कदेवचरितम्	ग्यारहवीं शताब्दी का उत्तरार्ध
67. भोज	रामायणचम्पू	ग्यारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध

लेखक	प्रमुख ग्रन्थ	अनुमानित काल
68. केशवमिश्र	तर्कभाषा	बारहवीं शताब्दी ई.
69. भास्कराचार्य	लीलावती, बीजगणित	बारहवीं शताब्दी ई.
70. मम्मट	काव्यप्रकाश	बारहवीं शताब्दी
71. कल्हण	राजतरङ्गिणी	बारहवीं शताब्दी
72. मंखक	श्रीकण्ठचरितम्	बारहवीं शताब्दी
73. श्रीहर्ष	नैषधीयचरितम्	बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
74. गोवर्धनाचार्य	आर्यासप्तशती	बारहवीं शताब्दी
75. जयदेव	गीतगोविन्दम्	बारहवीं शताब्दी
76. विज्ञानभिक्षु	सांख्यप्रवचनभाष्यम्	तेरहवीं शताब्दी
77. गङ्गेशोपाध्याय	तत्त्वचिन्तामणि	तेरहवीं शताब्दी
78. मध्वाचार्य	पूर्णप्रज्ञभाष्यम्	तेरहवीं शताब्दी
79. शार्ङ्गधर	शार्ङ्गधरसंहिता	तेरहवीं शताब्दी
80. गङ्गादास	छन्दोमञ्जरी	तेरहवीं शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी के मध्य
81. विद्यापति	पुरुषपरीक्षा	चौदहवीं शताब्दी ई.
82. नारायणपण्डित	हितोपदेश:	चौदहवीं शताब्दी
83. विश्वनाथ	साहित्यदर्पण	चौदहवीं शताब्दी
84. अनन्तभट्ट	भारतचम्पू	पन्द्रहवीं शताब्दी
85. वल्लभाचार्य	अणुभाष्यम्	1479 ई.–1544 ई.
86. बल्लालसेन	भोजप्रबन्धम्	सोलहवीं शताब्दी
87. तिरुमलाम्बा	वरदम्बिकापरिणयचम्पू	सोलहवीं शताब्दी
88. भट्टोजिदीक्षित	सिद्धान्तकौमुदी	सोलहवीं शताब्दी
89. अन्नंभट्ट	तर्कसंग्रह:	सत्रहवीं शताब्दी
90. कौण्डभट्ट	वैयाकरणभूषणसार:	सत्रहवीं शताब्दी
91. नागेशभट्ट	वैयाकरणसिद्धान्तलघुमञ्जूषा	सत्रहवीं शताब्दी
92. सदानन्द	वेदान्तसार	सत्रहवीं शताब्दी
93. पण्डितराज जगन्नाथ	रसगङ्गाधर, गङ्गालहरी	सत्रहवीं शताब्दी (1600-1660 ई.)
94. अम्बिकादत्तव्यास	शिवराजविजयम्	1858-1900 ई.
95. पण्डिता क्षमाराव	कथामुक्तावली	1890-1954 ई.
96. पुष्पादीक्षिता	अग्निशिखा	इक्कीसवीं शताब्दी
97. रेवाप्रसाद द्विवेदी	सीताचरितम्	इक्कीसवीं शताब्दी
98. अभिराज राजेन्द्र मिश्र	जानकीजीवनम्	इक्कीसवीं शताब्दी
99. राधावल्लभ त्रिपाठी	लहरीदशकम्, गीतवीवरम्	इक्कीसवीं शताब्दी
100. ललितकुमार त्रिपाठी	गङ्गालहरी (सम्पादनम्)	इक्कीसवीं शताब्दी

• • •

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार

काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ

ग्रन्थ	ग्रन्थकार	अनुमानित समय
1. नाट्यशास्त्र	आचार्य भरत	ई.पू. द्वितीय शताब्दी
2. काव्यालङ्कार	भामह	500 ई.
3. काव्यादर्श	दण्डी	सातवीं शताब्दी
4. काव्यालङ्कारसारसंग्रह	उद्भट	अष्टमशताब्दी का उत्तरार्द्ध
5. काव्यालङ्कार सूत्र	वामन	800-850 ई. लगभग
6. काव्यालङ्कार	रुद्रट	नवम शताब्दी का पूर्वार्द्ध
7. ध्वन्यालोक	आनन्दवर्धन	नवम शताब्दी का उत्तरार्द्ध
8. काव्यमीमांसा	राजशेखर	दशम शताब्दी
9. अभिधावृत्तमात्रिका	मुकुलभट्ट	दशम शताब्दी का पूर्वार्द्ध
10. काव्यकौतुक	भट्टतौत	दशम शताब्दी का मध्य
11. दशरूपक	धनञ्जय और धनिक	दशम शताब्दी का उत्तरार्द्ध
12.(i) अभिनवभारती ('नाट्यशास्त्र' की टीका)	अभिनवगुप्त	एकादश शताब्दी
(ii) ध्वन्यालोकलोचन ('ध्वन्यालोक' की टीका)	अभिनवगुप्त	
(iii) श्काव्यकौतुकविवरण ('काव्यकौतुक' की टीका)	अभिनवगुप्त	
लगभग		
13. वक्रोक्तिजीवितम्	कुन्तक	एकादश शताब्दी का पूर्वार्द्ध
14. व्यक्तिविवेक	महिमभट्ट	एकादश शताब्दी का मध्य
15. (i) सरस्वतीकण्ठाभरण	भोजराज	एकादशशताब्दी 1050 ई. लगभग
(ii) शृङ्गारप्रकाश	भोजराज	
16. (i) औचित्यविचारचर्चा	क्षेमेन्द्र	एकादशशताब्दी का उत्तरार्द्ध
(ii) कविकण्ठाभरण	क्षेमेन्द्र	
17. नाटकलक्षणरत्नकोष	सागरनन्दी	एकादश शताब्दी
18. काव्यप्रकाश	मम्मट	1050 ई. (एकादश शताब्दी का उत्तरार्द्ध)
19. अलङ्कारसर्वस्व	रुय्यक	द्वादशशताब्दी
20. वाग्भटालङ्कार	वाग्भट्ट	बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
21. काव्यानुशासन	हेमचन्द्र	बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
22. नाट्यदर्पण	रामचन्द्र गुणचन्द्र	बारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध
23. भावप्रकाशन	शारदातनय	तेरहवीं शताब्दी
24. चन्द्रालोक	पीयूषवर्ष जयदेव	तेरहवीं शताब्दी का मध्यभाग
25. साहित्यदर्पण	विश्वनाथ कविराज	14वीं शताब्दी
26. एकावली	विद्याधर	1285 ई. से 1325 ई. के मध्य
27. (i) कुवलयानन्द	अप्पयदीक्षित	षोडशशताब्दी
(ii) चित्रमीमांसा	अप्पयदीक्षित	
(iii) वृत्तवार्तिक	अप्पयदीक्षित	
28. रसगङ्गाधर	पण्डितराज जगन्नाथ	17वीं शताब्दी का मध्यभाग

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख महाकाव्य

महाकाव्य	सर्ग	लेखक
1. कुमारसम्भवम्	17 (अन्यमत 8)	कालिदास
2. रघुवंशम्	19	कालिदास
3. बुद्धचरितम्	28	अश्वघोष
4. सौन्दरनन्द	18	अश्वघोष
5. किरातार्जुनीयम्	18	भारवि
6. शिशुपालवधम्	20	माघ
7. नैषधीयचरितम्	22	श्रीहर्ष
8. भट्टिकाव्य (रावणवधम्)	22	भट्टि
9. जानकीहरणम्	20 से 25 सर्ग (प्राप्त 10-15 सर्ग)	कुमारदास

महाकाव्य	सर्ग	लेखक
10. हरविजयम्	50 सर्ग	रत्नाकर (सबसे बड़ा महाकाव्य)
11. धर्मशर्माभ्युदय	21 सर्ग	हरिश्चन्द्र
12. राघवपाण्डवीयम्	13 सर्ग	कविराज (माधवभट्ट)

कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ रचना

1. जाम्बवतीविजयम् (पातालविजयम्)	पाणिनि
2. स्वर्गारोहणम्	कात्यायन (वररुचि)
3. महानन्दकाव्य	पतञ्जलि
4. प्रयागप्रशस्ति	हरिषेण
5. सेतुबन्ध	प्रवरसेन
6. हयग्रीववध	भर्तृमेण्ठ
7. गउडवहो	वाक्पति
8. रामचरित	अभिनन्द
9. नवसाहसाङ्कचरित	पद्मगुप्त
10. पारिजातहरणम्	कविकर्णपूर
11. नरनारायणानन्द	वस्तुपाल
12. रघुनाथचरित	वामनभट्टबाण
13, सेतुकाव्य	मातृगुप्त
14, कादम्बरीसार	अभिनन्द (काश्मीरी कवि)
15. रामायणमञ्जरी	क्षेमेन्द्र (कश्मीरी)
16. भारतमञ्जरी	क्षेमेन्द्र (काश्मीरी कवि)
17. विक्रमाङ्कदेवचरित	बिल्हण (काश्मीरी)
18. श्रीकण्ठचरितम्	मंखक (काश्मीरी)
19. राजतरङ्गिणी	कल्हण (काश्मीरी)
20. जातकमाला	आर्यशूर (बौद्ध कवि)
21. गुरुगोविन्दसिंह महाकाव्यम्	डॉ. सत्यव्रतशास्त्री
22. सीताचरितम्	डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी
23. जानकीजीवनम्	डॉ. अभिराज राजेन्द्र मिश्र

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख नाट्यग्रन्थ

ग्रन्थ	अङ्क	लेखक
1. प्रतिज्ञायौगन्धरायण	4	भास
2. स्वप्नवासवदत्तम्	6	भास
3. ऊरुभङ्गम्	एकाङ्की	भास
4. दूतवाक्यम्	एकाङ्की	भास
5. पञ्चरात्रम्	3	भास
6. बालचरितम्	5	भास
7. दूतघटोत्कचम्	एकाङ्की	भास
8. कर्णभारम्	एकाङ्की	भास
9. मध्यमव्यायोग:	एकाङ्की	भास
10. प्रतिमानाटकम्	7	भास
11. अभिषेकनाटकम्	6	भास
12. अविमारकम्	6	भास
13. चारुदत्तम्	4	भास
14. मृच्छकटिकम् (प्रकरण)	10	शूद्रक (शिमुक)
15. मालविकाग्निमित्रम्	5	कालिदास
16. विक्रमोर्वशीयम् (त्रोटक)	5	कालिदास
17. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	7	कालिदास
18. मुद्राराक्षसम्	7	विशाखदत्त
19. प्रियदर्शिका (नाटिका)	4	हर्ष (हर्षवर्धन)
20. रत्नावली (नाटिका)	4	हर्ष (हर्षवर्धन)
21. नागानन्द	5	हर्ष (हर्षवर्धन)
22. वेणीसंहारम्	6	भट्टनारायण
23. मालतीमाधवम् (प्रकरण)	10	भवभूति
24. महावीरचरितम्	7	भवभूति
25. उत्तररामचरितम्	7	भवभूति
26. शारिपुत्रप्रकरणम् (प्रकरण)	9	अश्वघोष
27. अनर्घराघवम्	7	मुरारि
28. बालरामायणम् (महानाटक)	10	राजशेखर
29. बालभारत (प्रचण्डपाण्डव)	2	राजशेखर
30. विद्धशालभञ्जिका (नाटिका)	4	राजशेखर
31. कर्पूरमञ्जरी (सट्टक)	4	राजशेखर
32. कुन्दमाला	6	कृष्णमिश्र
34. प्रसन्नराघवम्	7	जयदेव

कुछ अन्य नाट्यग्रन्थ

नाट्यग्रन्थ	लेखक
1. आश्चर्यचूडामणि	शक्तिभद्र
2. रामाभ्युदय	यशोवर्मा
3. महानाटक	हनुमान्
4. हनुमन्नाटक	दामोदर मिश्र
5. रुक्मिणीहरणम्	वत्सराज
6. त्रिपुरदाह	वत्सराज
7. समुद्रमन्थन	वत्सराज
8. सौगन्धिकाहरणम्	विश्वनाथ
9. सामवतम्	अम्बिकादत्तव्यास
10. दूताङ्गद (छायानाटक)	सुभट
11. सुभद्रापरिणय (छायानाटक)	व्यासरामदेव
12. पार्वतीपरिणय	बाणभट्ट

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख गद्यकाव्य

गद्यरचना	लेखक
1. दशकुमारचरितम्	दण्डी
2. अवन्तिसुन्दरी कथा	दण्डी
3. वासवदत्ता (कथा)	सुबन्धु
4. कादम्बरी (कथा)	बाणभट्ट
5. हर्षचरितम् (आख्यायिका)	बाणभट्ट
6. मुकुटताडितक	बाणभट्ट
7. मन्दारमञ्जरी	विश्वेश्वर पाण्डेय
8. शिवराजविजयम् (ऐतिहासिक उपन्यास)	अम्बिकादत्तव्यास
9. प्रबन्धमञ्जरी	हृषीकेश भट्टाचार्य
10. कथापञ्चकम्	पण्डिता क्षमाराव
11. ग्रामज्योतिः	पण्डिता क्षमाराव
12. कथामुक्तावलिः	पण्डिता क्षमाराव
13. कौमुदीकथाकल्लोलिनी	डॉ. रामशरणत्रिपाठी
14. तिलकमञ्जरी	धनपाल
18. गद्यचिन्तामणि	वादीभसिंह
16. वेमभूपालचरितम्	वामनभट्ट बाण
17. द्वासुपर्णा	डॉ. रामजी उपाध्याय
18. गद्यरामायणम्	वरददेशिक
19. गाँधीचरितम्	चारुदेवशास्त्री
20. रामचरितम्	देवविजयगणी

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख गीतिकाव्य

गीतिकाव्यम्	लेखक
1. ऋतुसंहारम्	कालिदास
2. मेघदूतम्	कालिदास
3. नीतिशतकम्	भर्तृहरि
4. शृङ्गारशतकम्	भर्तृहरि
5. वैराग्यशतकम्	भर्तृहरि
6. अमरुशतकम्	अमरुक
7. गीतगोविन्दम्	जयदेव
8. गङ्गालहरी/पीयूषलहरी	पण्डितराज जगन्नाथ
9. अमृतलहरी	पण्डितराज जगन्नाथ
10. सुधालहरी	पण्डितराज जगन्नाथ
11. लक्ष्मीलहरी	पण्डितराज जगन्नाथ
12. करुणालहरी	पण्डितराज जगन्नाथ
13. आसफविलास	पण्डितराज जगन्नाथ
14. जगदाभरणम्	पण्डितराज जगन्नाथ
15. प्राणाभरणम्	पण्डितराज जगन्नाथ
16. यमुनावर्णनम्	पण्डितराज जगन्नाथ
17. भामिनीविलास (गीतिकाव्य)	पण्डितराज जगन्नाथ
18. गाथासप्तशती	हाल
19. चौरपञ्चाशिका	विल्हण
20. आर्यासप्तशती	गोवर्धनाचार्य
21. चाणक्यशतकम्	चाणक्य
22. घटकर्परकाव्यम्	घटकर्पर
23. नीतिसार	घटकर्पर
24. चण्डीशतकम्	बाणभट्ट
25. सूर्यशतकम्	मयूरभट्ट
26. भल्लटशतकम्	भल्लट
27. वक्रोक्तिपञ्चाशिका	रत्नाकर
28. देवीशतकम्	आनन्दवर्धन
29. कुट्टिनीमतम्	दामोदरगुप्त
30. बल्लालशतकम्	बल्लाल
31. चारुचर्या	क्षेमेन्द्र
32. सेव्यसेवकोपदेश	क्षेमेन्द्र
33. समयमातृका	क्षेमेन्द्र
34. कथाविलास	क्षेमेन्द्र
35. दर्पदलन	क्षेमेन्द्र
36. पवनदूत	धोयी
37. नेमिदूतम्	विक्रमकवि
38. शुकसन्देश	लक्ष्मीदास
39. भृङ्गसन्देश	वासुदेव
40. हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
41. चन्द्रदूतम्	विमलकीर्ति

संस्कृतवाङ्मय के प्रमुख स्तोत्रकाव्यम्

1. शिवताण्डवस्तोत्रम्	रावण
2. सौन्दर्यलहरी	शङ्कराचार्य
3. चर्पटपञ्जरिकास्तोत्रम्	शङ्कराचार्य
4. श्रीकृष्णाष्टकम्	शङ्कराचार्य
5. आनन्दलहरी	शङ्कराचार्य
6. शिवमहिम्नस्तोत्रम्	पुष्पदन्त
7. आलबन्दारस्तोत्रम्	यामुनाचार्य (आलबन्दार)
8. गङ्गास्तव	जयदेव
9. कृष्णकर्णामृतम्	बिल्वमङ्गल (कृष्णलीलाशुक)
10. वरदराजस्तव	अप्पयदीक्षित
11. नारायणीयम्	नारायणभट्ट
12. आनन्दमन्दाकिनी	मधुसूदन सरस्वती
13. गन्धर्वप्रार्थनाष्टकम्	रूपगोस्वामी

सुभाषितग्रन्थाः

सुभाषितग्रन्थाः	ग्रन्थकार
1. कवीन्द्रवचनसमुच्चयः	विद्याकरपण्डितः

सुभाषितग्रन्थाः	ग्रन्थकार
2. सदुक्तिकर्णामृतम् (सूक्तिकर्णामृतम्)	श्रीधरदास
3. सूक्तिमुक्तावली (सुभाषितमुक्तावली)	सिद्धचन्द्रमणि
4. सूक्तिरत्नाकरः	सिद्धचन्द्रमणि
5. सुभाषित सुधानिधि	सायण
6. शार्ङ्गधरपद्धति	शार्ङ्गधर
7. सुभाषितरत्नभाण्डागार	शिवदत्त एवं नारायणराम आचार्य
8. सूक्तिमुक्तावली	डॉ. नरेन्द्रदेव शास्त्री
9. संस्कृतसूक्तिरत्नाकर	डॉ. रामजी उपाध्याय

ऐतिहासिक काव्य

ऐतिहासिक काव्य	लेखक
1. बुद्धचरितम्	अश्वघोष
2. हर्षचरितम्	बाणभट्ट
3. गउडवहो (गौडवधः)	वाक्पतिराज
4. नवसाहसाङ्कचरितम्	पद्मगुप्त (परिमल)
5. विक्रमाङ्कदेवचरितम्	बिल्हण
6. राजतरङ्गिणी	महाकवि कल्हण
7. सोमपालविजयम्	जल्हण
8. प्रबन्धकोष	राजशेखर
9. वेमभूपालचरितम्	वामनभट्ट बाण

कथासाहित्यम्

कथाग्रन्थः	लेखकः
1. पञ्चतन्त्रम्	विष्णुशर्मा
2. हितोपदेश	नारायणपण्डित
3. बृहत्कथा	गुणाढ्य
4. बृहत्कथाश्लोकसंग्रह	बुधस्यामी
5. बृहत्कथामञ्जरी	क्षेमेन्द्र
6. कथासरित्सागर	सोमदेव
7. वेतालपञ्चविंशतिका	शिवदास एवं जम्मलदत
8. सिंहासनद्वात्रिंशिका द्वात्रिंशत्पुत्तलिका विक्रमचरित विक्रमार्कचरित	लेखक का नाम अज्ञात
9. शुकसप्ततिः	अज्ञात
10. पुरुषपरीक्षा	विद्यापति
11. भोजप्रबन्ध	बल्लाल सेन
12. जातकमाला	आर्यशूर
13. प्रबन्धकोष	राजशेखर
14. उदयसुन्दरीकथा	सोड्ढल

चम्पूकाव्य

चम्पूकाव्य	लेखक
1. नलचम्पू (दमयन्तीकथा)	त्रिविक्रमभट्ट
2. मदालसाचम्पू	त्रिविक्रमभट्ट
3. जीवन्धरचम्पू	हरिश्चन्द्र
4. यशस्तिलकचम्पू	सोमदेवसूरि
5. रामायणचम्पू	राजाभोज (भोजराज)
6. भागवतचम्पू	अभिनवकालिदास
7. भारतचम्पू	अनन्तभट्ट
8. वरदाम्बिकापरिणयचम्पू	रानी तिरुमलाम्बा
9. भरतेश्वराभ्युदयचम्पू	पं. आशाधरसूरि
10. रुक्मिणीपरिणयचम्पू	अमलाचार्य (अम्मल)
11. आनन्दवृन्दावनचम्पू	कवि कर्णपूर

संस्कृत ग्रन्थों का विभाजन

ग्रन्थ-ग्रन्थकार	विभाजन
1. काव्यप्रकाश (मम्मट)	दश उल्लास, 142 कारिकार्य, 604 उदाहरण।
2. साहित्य दर्पण (विश्वनाथ)	दश परिच्छेद
3. रसगङ्गाधर (जगन्नाथ)	चार आनन
4. दशरूपक (धनञ्जय)	चार प्रकाश
5. काव्यादर्श (दण्डी)	तीन परिच्छेद, 660 पद्य
6. शिवराजविजयम् (अम्बिकादत्तव्यास)	तीन विराम, 12 निःश्वास
7. महाकाव्य	सर्गों में विभक्त (8 से अधिक सर्ग)
8. नाटक	आङ्कों में विभक्त (5 अङ्क या इससे अधिक)
9. मेघदूतम् (कालिदास)	दो खण्डों में पूर्वमेघ, उत्तरमेघ
10. कादम्बरी कथा (बाणभट्ट)	दो भागों में पूर्वभाग, उत्तरभाग

ग्रन्थ-ग्रन्थकार	विभाजन
11. आख्यायिका	उच्छ्वासों में (हर्षचरितम् में 8 उच्छ्वास)
12. वक्रोक्तिजीवितम् (कुन्तक)	चार उन्मेष
13. वाल्मीकीयरामायणम् (वाल्मीकिः)	7 काण्ड, 600 सर्ग, 24,000 श्लोक
14. महाभारतम् (वेदव्यासः)	18 पर्व, 1 लाख श्लोक
15. श्रीमद्भागवतपुराण (वेदव्यासः)	12 स्कन्ध, 18000 श्लोक
16. गीता (वेदव्यासः)	18 अध्याय, 700 श्लोक
17. व्यक्तिविवेक (महिमभट्ट)	तीन विमर्श
18. सरस्वतीकण्ठाभरण (भोजराज)	पाँच परिच्छेद
19. शृङ्गारप्रकाश (भोजराज)	36 प्रकाश
20. कविकण्ठाभरण (क्षेमेन्द्र)	पाँच अध्याय 55 कारिकायें।
21. अभिधावृत्तिमात्रिका (मुकुलभट्ट)	15 कारिकायें
22. ध्वन्यालोक (आनन्दवर्धन)	4 उद्योत
23. काव्यालङ्कारसारसंग्रह (उद्भट)	6 वर्गों में
24. काव्यालङ्कार (रुद्रट)	16 अध्याय, 714 आर्यायें
25. काव्यालङ्कारसूत्र (वामन)	5 अधिकरण
26. काव्यालङ्कार (भामह)	6 परिच्छेद
27. काव्यमीमांसा (राजशेखर)	18 अध्याय
28. चन्द्रालोक (जयदेव)	10 मयूख
29. राजतरङ्गिणी (कल्हण)	8 तरङ्ग
30. ऋतुसंहार (कालिदास)	6 सर्ग, 144 श्लोक
31. नाट्यशास्त्र (भरत)	36 अध्याय
32. कथासरित्सागर (सोमदेव)	18 लम्भक, 124 तरङ्ग, 22000 पद्य।
33. हितोपदेश (नारायणपण्डित)	चार परिच्छेद, 43 कहानियाँ
34. पञ्चतन्त्र (विष्णुशर्मा)	पाँच तन्त्र, पाँच मुख्य कथायें, 1003 श्लोक, 75 उपकथायें।
35. कर्पूरमञ्जरी (राजशेखर)	4 जवनिका

संस्कृत ग्रन्थों में प्रमुख वर्णन

वर्णन	ग्रन्थ
1. अच्छोदसरोवर	कादम्बरी
2. पम्पासरोवर	कादम्बरी
3. शाल्मलीवृक्ष	कादम्बरी
4. रैवतकपर्वत	शिशुपालवधम्-सर्ग 4
5. इन्द्रकीलपर्वत	किरातार्जुनीयम् सर्ग-5
6. शरद्वर्णन	किरातार्जुनीयम् सर्ग 4
7. षड्ऋतु वर्णन	(i) शिशुपालवधम् सर्ग-6 (ii) ऋतुसंहारम्

संस्कृतग्रन्थों के अपरनाम

मुख्यग्रन्थ	अपरनाम
1. किरातार्जुनीयम्	लक्ष्मीपदाङ्कमहाकाव्यम्
2. शिशुपालवधम्	श्र्यङ्कमहाकाव्यम् ('श्री' पदाङ्कमहाकाव्य)
3. नैषधीयचरितम्	आनन्दपदाङ्कमहाकाव्यम्
4. नलचम्पू	दमयन्तीकथा
5. अष्टाध्यायी	अष्टक

संस्कृतवाङ्मय की दशत्रयी

1. बृहत्त्रयी

ग्रन्थ	कवि
1. किरातार्जुनीयम्	भारवि
2. शिशुपालवधम्	माघ
3. नैषधीयचरितम्	श्रीहर्ष

2. लघुत्रयी

ग्रन्थ	कवि
1. रघुवंशम्	कालिदासः
2. कुमारसम्भवम्	कालिदासः
3. मेघदूतम्	कालिदासः

3. गद्यबृहत्त्रयी

ग्रन्थ	कवि
1. वासवदत्ता	सुबन्धु
2. कादम्बरी	बाणभट्ट
3. दशकुमारचरितम्	दण्डी

4. उपजीव्यग्रन्थत्रयी

ग्रन्थ	कवि
1. रामायणम्	वाल्मीकिः
2 महाभारतम्	वेदव्यासः
3. भागवतपुराणम्	वेदव्यासः

5. पुरुषार्थत्रयी
1. धर्म
2. अर्थ
3. काम

6. पाषाणत्रयी
1. किरातार्जुनीयम् का प्रथम सर्ग
2. किरातार्जुनीयम् का द्वितीय सर्ग
3 किरातार्जुनीयम् का तृतीय सर्ग

7. गुणत्रयी
1. सत्त्वगुण:
2. रजोगुण:
3. तमोगुण:

9. प्रस्थानत्रयी
1. ब्रह्मसूत्र
2. उपनिषद्
3. गीता

10. वेदत्रयी
1. ऋग्वेद
2. यजुर्वेद
3. सामवेद

8. मुनित्रयी

मुनि:	**व्याकरणरग्रन्थ**	**साहित्यकग्रन्थ**
1. पाणिनि:	अष्टाध्यायी	जाम्बवतीजयम्/पातालविजयम्
2. कात्यायन:	वार्तिकम्	स्वर्गारोहणम्
3. पतञ्जलि:	महाभाष्यम्	महानन्दकाव्यम्

यज्ञ	**यज्ञकर्ता**
वाजपेय	महाकवि (भवभूति के पूर्वज)
राजसूय	युधिष्ठिर
पुत्रेष्टि	दशरथ
अश्वमेघ	राम
गवालम्भ	राजा रन्तिदेव

वीणा	**स्वामी**	**ग्रन्थ**
महती	नारद	शिशुपालवधम्
कच्छपी	सरस्वती	—
घोषवती	वासवदत्ता	स्वप्नवासवदत्तम्

• • •

काव्यशास्त्रम्

काव्यशास्त्रीय छः सम्प्रदाय

सम्प्रदाय	प्रवर्त्तक और प्रमुख आचार्य
1. रससम्प्रदाय	भरत (प्रवर्त्तक) भोजराज, भट्टनायक, विश्वनाथ, राजशेखर, केशवमिश्र, शारदातनय
2. अलङ्कारसम्प्रदाय	भामह (प्रवर्त्तक), दण्डी, उद्भट, प्रतिहारेन्दुराज रुद्रट, जयदेव, अप्पयदीक्षित।
3. रीतिसम्प्रदाय	वामन (प्रवर्त्तक)
4. ध्वनिसम्प्रदाय	आनन्दवर्धन (प्रवर्त्तक), रुय्यक, मम्मट, अभिनवगुप्त, जगन्नाथ
5. वक्रोक्तिसम्प्रदाय	कुन्तक (प्रवर्त्तक)
6. औचित्यसम्प्रदाय	क्षेमेन्द्र (प्रवर्त्तक)
चमत्कार सम्प्रदाय	कुछ आधुनिक काव्यशास्त्री

काव्यलक्षण-तालिका ग्रन्थ

ग्रन्थ	ग्रन्थकार	काव्यलक्षण
1. काव्यप्रकाश	आचार्य मम्मट	तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुन: क्वापि—(का.प्र. प्रथमोल्लास)
2. साहित्यदर्पण	आचार्य विश्वनाथ	वाक्यं रसात्मकं काव्यम्
3. रसगङ्गाधर	पण्डितराज जगन्नाथ	रमणीयार्थप्रतिपादक: शब्द: काव्यम्
4. काव्यालङ्कार	भामह	शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्
5. वक्रोक्तिजीवितम्	कुन्तक	वक्रोक्ति: काव्यजीवितम्
6. काव्यालङ्कार सूत्र	वामन	रीतिरात्मा काव्यस्य
7. ध्वन्यालोक	आनन्दवर्धन	काव्यस्यात्मा ध्वनि:
8. काव्यादर्श	दण्डी	शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली
9. औचित्यविचारचर्चा	क्षेमेन्द्र	औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम्
10. अग्निपुराण	व्यास	संक्षेपाद्वाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली/काव्यं स्फुरदलङ्कारं गुणवद् दोषवर्जितम्।।
11. शृङ्गारप्रकाश	भोज	अदोषं गुणवद्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम् रसान्वितं कवि: कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति।।

काव्यशास्त्र में अलङ्कारों की संख्या

ग्रन्थ-ग्रन्थकार	अलङ्कारों की संख्या
1. नाट्यशास्त्र-भरत	उपमा, रूपक, दीपक और यमक कल चार अलङ्कार
2. अग्निपुराण	09 शब्दालङ्कार + 08 अर्थालङ्कार + 06 उभयालङ्कार = 23 अलङ्कार
3. विष्णुधर्मोत्तर पुराण	18 अलङ्कार
4. काव्यालङ्कार-मामह	38 अलङ्कार
5. काव्यादर्श-दण्डी	37 अलङ्कार
6. काव्यालङ्कारसारसंग्रह-उद्भट	41 अलङ्कार
7. काव्यालङ्कार-रुद्रट	68 अलङ्कार

ग्रन्थ-ग्रन्थकार	अलङ्कारों की संख्या
8. सरस्वतीकण्ठाभरण-भोजराज	24 शब्दालङ्कार + 24 अर्थालङ्कार + 24 उभवालङ्कार=72 अलङ्कार
9. काव्यप्रकाश-मम्मट	06 शब्दालङ्कार + 61 अर्थालङ्कार=67 अलङ्कार
10. अलङ्कारसर्वस्व-रुय्यक	78 अलङ्कार
11. साहित्यदर्पण-विश्वनाथ	78 अलङ्कार
12. चन्द्रालोक-जयदेव	100 अलङ्कार
13. कुवलयानन्द-अप्पयदीक्षित	120 अलङ्कार

साहित्यशास्त्र में रसों की संख्या

रस	स्थायीभाव	वर्ण	देवता
1. शृङ्गार	रति	श्याम	विष्णु
2. वीररस	उत्साह	सुवर्णवत्	महेन्द्र
3. वीभत्सरस	जुगुप्सा	नील	महाकाल
4. रौद्ररस	क्रोध	रक्त	रुद्र
5. हास्यरस	हास	शुक्ल	प्रमथ
6. अद्भुतरस	विस्मय	पीत	गन्धर्व
7. भयानक रस	भय	कृष्ण	महाकाल
8. करुणरस	शोक	कपोत	यम
9. शान्तरस	निर्वेद/शम	कुन्दपुष्पवत्	श्रीनारायण

- आचार्य भरत और धनञ्जय के अनुसार नाटक में आठ रस माने गये हैं—**"अष्टौ नाट्ये रसाः स्मृताः"। (नाट्यशास्त्र)**
- अभिनव गुप्त एवं आचार्य मम्मट आदि ने 'शान्तरस' को नवम रस के रूप में स्वीकार किया है। **"शान्तोऽपि नवमो रसः"**
- रुद्रट ने '**प्रेयान्**' नामक दसवें रस की उद्भावना की है।
- **रूपगोस्वामी** ने '**भक्तिरस**' को प्रधानरस माना है।
- **विश्वनाथ** नवरस के अतिरिक्त '**वात्सल्य**' नामक रस को भी स्वीकार करते हैं।
- **भवभूति** ने '**करुणरस**' को ही एकमात्र मूलरस मानते हैं—'एको रसः करुण एव'।

आचार्य भरत प्रतिपादित रससूत्र

- आचार्य भरत द्वारा 'नाट्यशास्त्र' में प्रतिपादित रससूत्र–**"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः"** अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारिभाव के संयोग से 'रस' की निष्पत्ति होती है।

आचार्य भरत प्रतिपादित 'रससूत्र' के व्याख्याकार

व्याख्याकार लोशना	समय 9-1	मत (उतनुभुकभि)	दर्शन (मीन्यासांशै)
1. **भट्टलोल्लट**	नवमशताब्दी	उत्पत्तिवाद (उत्पाद्य-उत्पादक)	मीमांसा
2. **शङ्कुक**	नवमशताब्दी	अनुमितिवाद (अनुमाप्य-अनुमापक)	न्याय
3. **भट्टनायक**	11वीं शताब्दी	भुक्तिवाद (भोज्य-भोजक)	सांख्य
4. **अभिनवगुप्त**	11वीं शताब्दी	अभिव्यक्तिवाद (व्यङ्ग्य-व्यञ्जक)	शैव/वेदान्त

शंखों के नाम

देव	शंख
1. श्रीकृष्ण	पाञ्चजन्य
2. युधिष्ठिर	अनन्तविजय
3. भीम	पौण्ड्र
4. अर्जुन	देवदत्त
5. नकुल	सुघोष
6. सहदेव	मणिपुष्पक

नायकों की कोटियाँ

- **धीरोदात्त** - राम, कृष्ण, अर्जुन, चन्द्रापीड, दुष्यन्त, शिवाजी।
- **धीरोद्धत** - भीम, परशुराम, दुर्योधन आदि।
- **धीरललित** - यक्ष, उदयन आदि।
- **धीरप्रशान्त** - चारुदत्त आदि।

नायिकाओं की कोटियाँ

- **स्वकीया प्रौढा** - सीता, द्रौपदी
- **स्वकीया मध्या** - यक्षिणी
- **स्वकीया मुग्धा** - शकुन्तला, कादम्बरी, महाश्वेता

•••

संस्कृतनाटकम्

संस्कृत-रूपकों के दशभेद

रूपक	अङ्क-संख्या	उदाहरणम्
1. नाटक	5 से 10 अङ्क	अभिज्ञानशाकुन्तलम्, स्वप्नवासवदत्तम्, उत्तररामचरितम्
2. प्रकरण	10 अङ्क	मृच्छकटिकम्, मालतीमाधवम्, शारिपुत्रप्रकरण, पुष्पभूषित
3. भाण	1 अङ्क	लीलामधुकरम्, शृङ्गारशेखर, मर्कटमदलिका, धूर्तसमागम्
4. व्यायोग	1 अङ्क	सौगन्धिकाहरणम्, जामदग्न्यजय
5. समवकार	3 अङ्क	समुद्रमन्थनम् (12 नायक), नवग्रहचरितम्
6. डिम	4 अङ्क	त्रिपुरदाह (16 नायक)
7. ईहामग	4 अङ्क/1 अङ्क	कुसुमशेखरविजयम्
8. अङ्क (उत्सृष्टिकाङ्क)	1 अङ्क	शर्मिष्ठा-ययातिः
9. वीथी	1 अङ्क	मालविका
10. प्रहसन	1 अङ्क	कन्दर्पकेलिः/धूर्तचरितम्
❖ नाटिका	4 अङ्क	रत्नावली, प्रियदर्शिका
❖ सट्टक	4 अङ्क	कर्पूरमञ्जरी

संस्कृतनाटकों में विदूषक

नाटक	विदूषक
1. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (कालिदास)	माढव्य/माधव्य
2. विक्रमोर्वशीयम् (कालिदास)	माणवक
3. मालविकाग्निमित्रम् (कालिदास)	गौतम
4. मृच्छकटिकम् (शूद्रक)	मैत्रेय
5. रत्नावली (श्रीहर्ष)	वसन्तक
6. स्वप्नवासवदत्तम् (भास)	वसन्तक
7. मालतीमाधवम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
8. महावीरचरितम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
9. उत्तररामचरितम् (भवभूति)	विदूषक का अभाव
10. मुद्राराक्षसम् (विशाखदत्त)	विदूषक का अभाव

संस्कृत नाटकों में कञ्चुकी

नाटक	कञ्चुकी का नाम
1. प्रतिज्ञायोगन्धरायण	बादरायण
2. दूतवाक्यम्	बादरायण
3. स्वप्नवासवदत्तम्	बादरायण
4. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	वातायन
5. उत्तररामचरितम्	गृष्टि
6. रत्नावली	बाभ्रव्य
7. वेणीसंहारम्	जयन्धर (युधिष्ठिर का) विनयन्धर (दुर्योधन का)

नाटकीय पञ्चीकरण

पञ्च अर्थप्रकृतियाँ	पञ्च कार्यावस्थायें	पञ्च सन्धियाँ	पञ्च अर्थोपक्षेपक	पञ्चनाटककार
1. बीज	1. आरम्भ	1. मुखसन्धि	1. विष्कम्भक	1. भास
2. बिन्दु	2. यत्न	2. प्रतिमुखसन्धि	2. चूलिका	2. कालिदास
3. पताका	3. प्राप्त्याशा	3. गर्भसन्धि	3. अङ्कास्य	3. शूद्रक
4. प्रकरी	4. नियताप्ति	4. अवमर्श/विमर्शसन्धि	4. अङ्कावतार	4. विशाखदत्त
5. कार्य	5. फलागम	5. उपसंहति/निर्वहणसन्धि	5. प्रवेशक	5. भवभूति

प्रमुख नाटकों के अङ्कों के नाम

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के अङ्कों के नाम

अङ्क	अङ्कों के नाम	श्लोकसंख्या
प्रथम	आश्रम प्रवेश	34
द्वितीय	आश्रमनिवेश	18
तृतीय	मिलन	24
चतुर्थ	विदा	22
पञ्चम	प्रत्याख्यान	31
षष्ठ	पश्चात्ताप	32
सप्तम	पुनर्मिलन	35
	योग	**196**

उत्तररामचरितम् के अङ्कों के नाम

अङ्क	अङ्क का नाम	श्लोकसंख्या
प्रथम	चित्रदर्शन	51
द्वितीय	पञ्चवटीप्रवेश	30
तृतीय	छाया	48
चतुर्थ	कौशल्याजनकयोग	29
पञ्चम	कुमारविक्रम	35
षष्ठ	कुमारप्रत्यभिज्ञान	42
सप्तम	सम्मेलन	21
	योग =	**256**

मृच्छकटिकम् के अङ्कों के नाम

अङ्क	अङ्क का नाम	श्लोक संख्या
प्रथम	अलङ्कारन्यास	58
द्वितीय	द्यूतकरसंवाहक	20
तृतीय	सन्धिच्छेद	30
चतुर्थ	मदनिकाशर्विलक	33
पञ्चम	दुर्दिन	52
षष्ठ	प्रवहणविपर्यय	27
सप्तम	आर्यकापहरण	09
अष्टम	वसन्तसेनामोटन	47
नवम	व्यवहार (न्यायालय)	43
दशम	संहार (उपसंहार)	61
	योग =	**380**

रत्नावली के अङ्कों के नाम

अङ्क	अङ्क का नाम	श्लोकसंख्या
प्रथम अङ्क	मदनमहोत्सव	26
द्वितीय अङ्क	कदलीगृहम्	21
तृतीय अङ्क	सङ्केतक	19
चतुर्थ अङ्क	ऐन्द्रजालिक	20
	योग	**86**

छन्दों में वर्णों की संख्या

छन्दों	वर्णों की संख्या
अनुष्टुप्	08×4=32
इन्द्रवज्रा	11×4=44
उपेन्द्रवज्रा	11×4=44
उपजाति	11×4=44
रथोद्धता	11×4=44
शालिनी	11×4=44
स्वागता	11×4=44
वंशस्थ	12×4=48
दुतविलम्बित	12×4=48
तोटक (त्रोटक)	12×4=48
भुजङ्गप्रयात	12×4=48
प्रहर्षिणी, अतिरुचिरा	13×4=52
वसन्ततिलका	14×4=56
मालिनी	15×4=60
पञ्चचामर	16×4=64
शिखरिणी, हरिणी, पृथ्वी, मन्दाक्रान्ता	17×4=68
शार्दूलविक्रीडित	19×4=76
स्रग्धरा	21×4=84

•••

संस्कृतकविः

संस्कृत कवियों के माता-पिता

कवि	पिता माता	अन्य
1 बाणभट्ट	चित्रभानु—राजदेवी	पितामह-अर्थपति
2. भवभूति	नीलकण्ठ—जतुकर्णी (जातुकर्णी)	(पितामह—भट्टगोपाल)
3. भारवि	श्रीधर (नारायणस्वामी)-सुशीला	
4. माघ	दत्तक (सर्वाश्रय)-ब्राह्मी	(पितामह—सुप्रभदेव)
5. श्रीहर्ष	श्रीहीर—मामल्लदेवी	
6. विशाखदत्त	पृथु (भास्करदत्त)	(पितामह—वटेश्वरदत्त)
7. हर्षवर्धन	प्रभाकरवर्धन—यशोवती	(बड़े भाई—राज्यवर्धन, बहन - राज्यश्री)
8. राजशेखर	दर्दुक (दुहिक)—शीलवती	अकालजलद (पितामह)
9. अम्बिकादत्तव्यास	दुर्गादत्त	पितामह—श्रीराजाराम
10. जयदेव (गीतगोविन्दकार)	भोजदेव—रामादेवी (राधादेवी)	
11. पण्डितराजजगन्नाथ	पेरुभट्ट—लक्ष्मीदेवी	
12. कल्हण	चम्पक	
13. त्रिविक्रमभट्ट	देवादित्य (नेमादित्य)	पितामह—श्रीधर
14. पाणिनि	पणिन् दाक्षी	पितामह—याज्ञवल्क्य
15. कात्यायन (वररुचि)	—	
16. मम्मट	जैयट	भाई—कैय्यट (उव्वट)
17. विश्वनाथ	चन्द्रशेखर	
18. भर्तृहरि	गन्धर्वसेन	
19. अश्वघोष	सुवर्णाक्षी (माता)	
20. पतञ्जलि	गोणिका (माता)	
21. कालिदास	शारदानन्द (श्वसुर, विद्योत्तमा के पिता)	
22. मुरारि	श्रीवर्धमानभट्ट/तन्तुमती	
23. भट्टोजिदीक्षित	लक्ष्मीधर	
24. वरदराज	दुर्गातनय	
25. रत्नाकर	अमृतभानु	
26. जयदेव (प्रसन्नराघवकार)	महादेव-सुमित्रा	
27. विश्वेश्वर पाण्डेय	लक्ष्मीधर पाण्डेय	
28. पण्डिता क्षमाराव	श्री शङ्करपाण्डुरङ्ग	

कवि	पिता माता	अन्य
29. दण्डी (भारवि के प्रपौत्र)	वीरदत्त-गौरी	प्रपितामह—भारवि
30. वेदव्यास	सत्यवती	

कवियों की उपाधियाँ/उपनाम

क्र.सं.	कवि	उपाधि / उपनाम / कविविषयक कथन
1.	वाल्मीकि	आदिकवि
2.	कृष्णद्वैपायन कालिदास	व्यास या वेदव्यास
3.	कालिदास	(i) दीपशिखा (ii) रघुकार (iii) कविकुलगुरु (iv) कविताकामिनी (v) उपमासम्राट
4.	अम्बिकादत्तव्यास	(i) घटिकाशतक (ii) सुकवि (iii) शतावधान (iv) अभिनवबाण (v) भारतरत्न
5.	बाणभट्ट	(i) पञ्चबाणस्तु बाण: (ii) बाणस्तु पञ्चानन: (iii) कविताकानन (iv) वश्यवाणीचक्रवर्ती (v) गद्यसम्राट् (vi) वाणी वाणो बभूव (vii) कविताकामिनीकौतुक (viii) तुरङ्गबाण (ix) गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति (x) बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम् (xi) बाण:कवीनामिह चक्रवर्ती (xii) महानयं मजङ्ग:
6.	जयदेव (प्रसन्नराघव एवं 'चन्द्रालोक' के लेखक)	(i) पीयूषवर्ष (ii) कवीन्द्र (ii) वाणी का विलास (iv) असमरसनिष्यन्दमधुर
7.	मल्लिनाथ	(i) कोलाचल (ii) महामहोपाध्याय
8.	त्रिविक्रमभट्ट	यमुनात्रिविक्रम
9.	विश्वनाथ	(i) सन्धिविग्राहक, (ii) अष्टादशभाषा वारविलासिनी (iii) कविराज
10.	जगन्नाथ	पण्डितराज
11.	भारवि	(i) आतपत्र (ii) दामोदर (उपनाम)
12.	माघ	घण्टामाघ
13.	भवभूति	(i) श्रीकण्ठ (भट्टश्रीकण्ठ) (ii) पदवाक्यप्रमाणज्ञ (iii) श्रीकण्ठपदलाञ्छन: (iv) उम्बेक/उदम्बर (v) वश्यवाक् (vi) शिखरिणीकवि (vii) परिणतप्रज्ञ
14.	भट्टनारायण	(i) भट्ट (ii) मृगराज (iii) कवि मृगेन्द्र/कवीन्द्र
15.	मम्मट	(i) वाग्देवतावतार (ii) राजानक (iii) ध्वनिप्रस्थापनपरमाचार्य
16.	आनन्दवर्धन	(i) राजानक (ii) ध्वनिप्रतिष्ठापकाचार्य
17.	कुन्तक	'राजानक' (यह उपाधि काश्मीरी विद्वानों को सम्मानार्थ मिलती थी।)
18.	महिमभट्ट	'राजानक'
19.	रुय्यक	'राजानक'
20.	क्षेमेन्द्र	जनकवि
21.	भास	(i) कविताकामिनी हास (ii) भासो हास: (iii) अग्निमित्र
22.	अश्वघोष	(i) आर्यभदन्त (ii) बौद्धभिक्षु
23.	मुरारि	(i) बालवाल्मीकि (ii) महाकवि
24.	बिल्हण	विद्यापति रचना (विक्रमाङ्देवचरित-18/कर्णसुन्दरी-चौरपाद्याशिका)(कश्मीरी)
25.	हेमचन्द्र	कलिकालसर्वज्ञ
26.	अभिनवगुप्त	लोचनकार
27.	कणाद	उलूक
28.	कात्यायन	वररुचि
29.	गौतम	अक्षपाद
30.	दयानन्द सरस्वती	स्वामी
31.	भट्टि	महाकवि
32.	मातृचेट	बौद्धकवि
33.	यामुनाचार्य	आलवन्दार

क्र.सं.	कवि	उपाधि / उपनाम / कविविषयक कथन
34.	राजशेखर	यायावर
35.	वाचस्पतिमिश्र	(i) सर्वतन्त्रस्वतन्त्र (ii) तात्पर्याचार्य
36.	वात्स्यायन	मल्लनाग
37.	विद्यापति	मैथिलकोकिल
38.	विद्यारण्यमुनि	माधवाचार्य
39.	क्षमाराव	पण्डिता
40.	पतञ्जलि	शेषनाग, फणिभृत, नागनाथ, भगवान्
41.	प्रभाकर मिश्र	गुरु
42.	माधवभट्ट	(i) कविराज (ii) सूरि (iii) पण्डित
43.	हर्षवर्धन	(i) राजा (ii) कवीन्द्र (i) गीर्हर्ष (iv) कविता का हर्ष
44.	जयदेव (गीतगोविन्दकार)	कविराजराज

कवियों का निवासस्थान (जन्मस्थान)

कवि	निवासस्थान (जन्मस्थान)
1. कालिदास	उज्जयिनी (काश्मीर/बंगाल)
2. बाणभट्ट	'प्रीतिकूट' (शोणनदी के पश्चिमी तट पर आधुनिक-'शाहाबाद')
3. भारवि	अचलपुर (दाक्षिणात्य/धारानगरी)
4. अम्बिकादत्त व्यास	जयपुर राजस्थान, ग्राम-रावतजी का धुला (अध्ययन काशी में)
5. कल्हण	काश्मीर
6. पाणिनि	शालातुर ग्राम (अटक)
7. पतञ्जलि	गोनर्द (गोण्डा)
8. दण्डी	दक्षिण में विदर्भ (महाराष्ट्र)
9. भवभूति	पद्मपुर (दक्षिणभारत)
10. अश्वघोष	साकेत (अयोध्या)
11. माघ	श्री भिन्नमाल 'भीनमाल' राजस्थान (आबूपर्वत नथा लूनानदी के बीच स्थित)
12. श्रीहर्ष	कन्नौज
13. भट्टि	बल्लभी
14. कुमारदास	श्रीलङ्का
15. शूद्रक	दाक्षिणात्य
16. हर्ष	स्थाणीश्वर (थानेश्वर)
17. भट्टनारायण	कान्यकुब्ज (कन्नौज)
18. राजशेखर	महाराष्ट्र (विदर्भ)
19. जयदेव (प्रसन्नराघवकार)	विदर्भप्रान्त-कुण्डिननगर
20. सुबन्धु	काश्मीर
21. पण्डितराज जगन्नाथ	आन्ध्रप्रदेश (तैलंग)
22. कात्यायन	दाक्षिणात्य
23. आनन्दवर्धन	काश्मीर
24. मम्मट	काश्मीर
25. अभिनवगुप्त	काश्मीर
26. भर्तृहरि	मालवा
27. क्षेमेन्द्र	काश्मीर
28. महिमभट्ट	काश्मीर
29. वाचस्पतिमिश्र	मिथिला (बिहार)
30. विश्वनाथ कविराज	उत्कल (उड़ीसा)
31. त्रिविक्रमभट्ट	मान्यखेट ग्राम (हैदराबाद)
32. रत्नाकर	काश्मीर
33. विश्वेश्वर पाण्डेय	अल्मोड़ा जिला, ग्राम-पटिया
34. अमरुक	काश्मीर
35. गीतगोविन्दकार जयदेव	बंगाल के केन्दुबिल्व नामक ग्राम।
36. सोमदेव (कथासरित्सागर)	काश्मीर

संस्कृत के प्रमुख कवियों, नायकों, तथा ऋषियों का गोत्र एवं वंश

कवि/राजा	गोत्र/वंश जाति
1. बाणभट्ट	वत्स/वात्स्यायन
2. भवभूति	काश्यप
3. भारवि	कुशिक
4. कालिदास	ब्राह्मण जाति
5. अम्बिकादत्त व्यास	पराशरगोत्रीय यजुर्वेदी ब्राह्मण त्रिप्रवर 'भीडा' वंश
6. विश्वेश्वर पाण्डेय	भारद्वाजगोत्र
7. मुरारि	मौद्गल्यगोत्र
8. भट्टनारायण	सारस्वत ब्राह्मण
9. राजशेखर	यायावर क्षत्रियवंश
10. पण्डितराजजगन्नाथ	तैलङ्गब्राह्मण
11. विश्वामित्र	कौशिक

कवि/राजा	गोत्र/वंश जाति
12. दुष्यन्त	पुरुवंशी (चन्द्रवंशी)
13. राम	सूर्यवंश/इक्ष्वाकुवंश/रघुवंश
14. दुर्योधन	कुरुवंशी/चन्द्रवंशी
15. शिवाजी	मराठा वंश
16. कुतुबुद्दीन	गुलामवंश
17. औरङ्गजेब	मुगलवंश
18. सिंहविष्णु	पल्लववंश
19. नरसिंहवर्मन्	पल्लववंश
20. विष्णुवर्धन	चालुक्यवंश
21. दुर्विनीत	गङ्गवंश
22. यशोवर्मा	चन्देलवंश

कवियों का सम्प्रदाय

कवि	सम्प्रदाय
1. कालिदास	शैव
2. भवभूति	शैव
3. भारवि	शैव
4. माघ	वैष्णव
5. भर्तृहरि	शैव, ब्रह्म के उपासक
6. बाणभट्ट शैव	शैव
7. अम्बिकादत्तव्यास	वैष्णव (शैव)
8. कल्हण	शैव
9. अभिनवगुप्त	शैव
10. भट्टनारायण	वैष्णव (साथ में शिवभक्त भी)
11. रूपगोस्वामी	वैष्णव
12. विश्वनाथकविराज	वैष्णव
13. राजशेखर	शैव
14. जयदेव (गीतगोविन्दकार)	वैष्णव

संस्कृत कवियों का राज्याश्रय

राजकवि	राजा
1. कालिदास	विक्रमादित्य
2. बाणभट्ट	सम्राट हर्षवर्धन
3. भारवि	पुलकेशिन द्वितीय के अनुज विष्णुवर्धन
4. भवभूति	यशोवर्मा
5. दण्डी	नरसिंह वर्मन प्रथम, पल्लवनरेश सिंह विष्णु
6. 'परिमलकालिदास' या पद्मगुप्त	राजा मुञ्ज और सिन्धुराज (नवसाहसाङ्क)
7. रविकीर्ति	पुलकेशिन द्वितीय
8. उद्भट	काश्मीरनरेश जयादित्य
9. वामन	काश्मीर नरेश जयादित्य के मन्त्री
10. आनन्दवर्धन	काश्मीर नरेश अवन्तिवर्मा
11. राजशेखर	कन्नौज के शासक महेन्द्रपाल और महीपाल
12. धनञ्जय	मालव के परमारवंशी राजा मुञ्ज (वाक्पतिराज)
13. क्षेमेन्द्र	कश्मीर नरेश अनन्तराज
14. नारायण पण्डित	धवलचन्द्र (बंगाल के कोई राजा)
15. श्रीहर्ष (नैषधकार)	कन्नौज नरेश जयचन्द्र
16. अश्वघोष	कनिष्क
17. वाक्पतिराज	यशोवर्मा
18. भट्टि	वल्लभी के राजा श्रीधरसेन
19. रत्नाकर	राजा चिप्पट जयापीड
20. कविराज (माधवभट्ट)	जयन्तपुरी के कदम्बराजा कामदेव
21. कृष्णमिश्र	चन्देलराजा कीर्तिवर्मा
22. जयदेव (गीतगोविन्दकार)	बंगाल के राजा लक्ष्मणसेन
23. पण्डितराजजगन्नाथ	शाहजहाँ
24. विष्णुशर्मा (पञ्चतन्त्र)	महिलारोप्य के राजा अमरसिंह
25. नारायण पण्डित (हितोपदेश)	बंगाल के राजा धवलचन्द्र
26. सोमदेव (कथा सरित्सागर)	काश्मीरी राजा अनन्त
27. हरिषेण	समुद्रगुप्त

कवियों के प्रिय रस

कवि	प्रिय रस
1. कालिदास	शृङ्गार रस
2. भवभूति	करुण रस
3. भारवि	वीररस, शृङ्गाररस
4. माघ	वीररस
5. बाणभट्ट	शृङ्गाररस
6. श्रीहर्ष	शृङ्गाररस
7. भास	शृङ्गार और वीररस
8. अमरुक	शृङ्गाररस
9. जयदेव	शृङ्गाररस

• • •

कवियों के प्रिय छन्द

कवि	प्रिय छन्द	अतिप्रिय छन्दों की संख्या
1. वाल्मीकि	अनुष्टुप् (श्लोक)	—
2. व्यास	अनुष्टुप्	—
3. कालिदास	आर्या, अनुष्टुप्, उपजाति, मन्दाक्रान्ता	06
4. अश्वघोष	अनुष्टुप्, उपजाति	—
5. भारवि	वंशस्थ, उपजाति	12
6. माघ	वंशस्थ, अनुष्टुप्	16
7. श्रीहर्ष	उपजाति छन्द	19
8. भट्टि	अनुष्टुप्, उपजाति	—
9. भास	अनुष्टुप्, वसन्ततिलका	कुल 24 छन्दों का प्रयोग
10. विशाखदत्त	शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी, स्रग्धरा	—
11. हर्षवर्धन	शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, अनुष्टुप्, आर्या	—
12. भट्टनारायण	अनुष्टुप्, वसन्ततिलका, शार्दूलविक्रीडित	—
13. भवभूति	अनुष्टुप्, शिखरिणी	—
14. राजशेखर	शार्दूलविक्रीडितम्	—
15. कृष्णमिश्र	वसन्ततिलका शार्दूलविक्रीडितम्	—
16. जयदेव	शार्दूलविक्रीडितम्	—
17. अमरुक	वसन्ततिलका	—
18. भर्तृहरि	शार्दूलविक्रीडितम्	—

कवियों के प्रिय अलङ्कार

1. कालिदास	उपमा
2. भारवि	चित्रालङ्कार, अर्थालङ्कार
3. माघ	उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास, चित्रालङ्कार
4. श्रीहर्ष	उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, श्लेष, अनुप्रास, यमक
5. अश्वघोष	उपमा, यपक, अनुप्रास
6. भवभूति	उपमा, उत्प्रेक्षा, काव्यलिङ्ग, रूपक
7. रत्नाकर	उत्प्रेक्षा अलङ्कार
8. विशाखदत्त	उपमा, रूपक, श्लेष
9. हर्षवर्धन	उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक
10. भट्टनारायण	उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा
11. सुबन्धु	श्लेष, विरोधाभास, परिसंख्या, उत्प्रेक्षा।
12. बाणभट्ट	विरोधाभास, श्लेष, परिसंख्या, उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक
13. अम्बिकादत्तव्यास	विरोधाभास

कवियों की प्रिय शैली रीति एवं गुण

कवि	रीति एवं गुण
1. भारवि	रीतिवादी या अलङ्कृत काव्यशैली के जन्मदाता
2. माघ	प्रसाद, माधुर्य एवं ओजगुणों का समन्वय
3. श्रीहर्ष	वैदर्भी एवं गौडीरीति, प्रसाद एवं ओजगुण
4. कालिदास	वैदर्भी, प्रसादगुण
5. बाणभट्ट	पाञ्चाली, ओज, माधुर्य, प्रसाद
6. दण्डी	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण।
7. अम्बिकादत्तव्यास	वैदर्भी और गौडी रीति का समन्वय।
8. सुबन्धु	गौडीरीति, ओजगुण (श्लेष अलंकार का प्रयोग)
9. भवभूति	गौडी एवं वैदर्भी रीति (i) मालतीमाधवम् और महावीरचरितम् में गौडी रीति, ओजगुण (ii) उत्तररामचरितम् में गौडी एवं वैदर्भी रीति, प्रसाद गुण
10. शूद्रक	वैदर्भीरीति एवं प्रसादगुण (कहीं कहीं 'गौडी रीति' भी)
11. अश्वघोष	वैदर्भीरीति, प्रसादगुण
12. भास	वैदर्भी रीति, प्रसाद, माधुर्य
13. मुरारि	गौडीरीति—ओजगुण
14. भट्टि	व्याकरणमूलक काव्यशैली की एक नवीन विधा के जन्मदाता।
15. कुमारदास	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण।
16. रत्नाकर	रीतिवादी कवि
17. विशाखदत्त	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण
18. हर्षवर्धन	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्य गुण

कवि	रीति एवं गुण
19. भट्टनारायण	गौडीरीति एवं ओजगुण
20. राजशेखर	गौडीरीति (यत्र तत्र पाञ्चाली भी)
21. दिङ्नाग	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण (धीरनाग, वीरनाग)
22. पण्डिता क्षमाराव	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण।
23. भर्तृहरि	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण
24. अमरुक	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण
25. विष्णुशर्मा (पञ्चतन्त्र)	वैदर्भीरीति, प्रसाद और माधुर्यगुण

संस्कृतकवियों की प्रसिद्धि का कारण

कवि	कविप्रसिद्धि
1. कालिदास	(i) उपमा (ii) वैदर्भीरीति
2. भारवि	(i) अर्थगौरव, (ii) अलङ्कृतकाव्यशैली के जनक पदलालित्य
3. दण्डी	पदलालित्य
4. माघ	उपमा, अर्थगौरव, पदलालित्य तीनों के लिए
5. भवभूति	करुणरस के प्रयोक्ता
6. अम्बिकादत्तव्यास	ऐतिहासिक उपन्यास के प्रणेता
7. बाणभट्ट	(i) अलङ्कार एवं समास बहुल रचना (ii) कादम्बरी में तीन जन्मों की कथा (iii) पाञ्चाली रीति
8. त्रिविक्रमभट्ट	(i) श्लेष अलङ्कार के प्रचुर प्रयोक्ता (ii) चम्पूकाव्य के आद्यप्रयोग
9. सुबन्ध	श्लेष प्रधानशैली के प्रयोक्ता।

संस्कृत-कवयित्री

कवयित्री	ग्रन्थ	कालक्रम
1. विज्जिका	स्फुटपद्य	850 ई०
2. गङ्गादेवी	मथुराविजयम्	14वीं शताब्दी
3. अवन्ति सुन्दरी (राजशेखर की पत्नी)	देशीशब्दकोष	10वीं शताब्दी
4. तिरुमलाम्वा (राजा अच्युतराय की रानी)	वरदम्बिकापरिणयचप्पू	16वीं शताब्दी
5. रामभद्राम्बा	रघुनाथाभ्युदय	17वीं शताब्दी
6. पण्डिता क्षमाराव	कथामुक्तावली	1890-1954
7. पुष्पा दीक्षिता	अष्टाध्यायी सहजबोध (व्याकरणाग्रन्थ)	इक्कीसवी शताब्दी
8. मधुरवाणी	रामकथा	1590 ई०
9. सुभ्रद्रा	स्फुटपद्य	—
10. विकटनितम्बा	स्फुटपद्य	—
11. शीला भट्टारिका	स्फुटपद्य	—
12. देवकुमारिका	स्फुटपद्य	—

अन्य स्त्री लेखिकायें

राजम्मा, सुन्दरावली, ज्ञानसुन्दरी आदि।

संस्कृत ग्रन्थों का मङ्गलाचरण

रचना	मङ्गलाचरण/(छन्द)	देवता	प्रकार
1. रघुवंशम्	वागर्थाविव सम्पृक्तौ····। (अनुष्टुप्)	शिव-पार्वती	नमस्कारात्मक
2. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	या सृष्टिः स्रष्टुराद्या····। (स्रग्धरा)	अष्टमूर्तिशिव	आशीर्वादात्मक
3. किरातार्जुनीयम्	श्रियः कुरुणामधिपस्य पालनीम् (वंशस्थ)	लक्ष्मी	वस्तुनिर्देशात्मक
4. शिशुपालवधम्	श्रियः पतिः श्रीमति शासितुं जगत्····। (वंशस्थ)	लक्ष्मी	वस्तुनिर्देशात्मक
5. नैषधीयचरितम्	निपीय यस्य (वंशस्थ)	—	वस्तुनिर्देशात्मक
6. मेघदूतम्	कश्चित् कान्ता विरह गुरुणा····(मन्दाक्रान्ता)	—	वस्तुनिर्देशात्मक
7. उत्तररामचरितम्	इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमो वाकं प्रशास्महे (अनुष्टुप्)	पूर्ववर्ती वाल्मीकि आदिकवि वाल्मीकि	नमस्कारात्मक
8. शिवराजविजयम्	विष्णोर्माया भगवती···· (भा.)	विष्णु	नमस्कारात्मक, तथा वस्तुनिर्देशात्मक

रचना	मङ्गलाचरण/(छन्द)	देवता	प्रकार
9. कादम्बरी कथा	रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये....। (वंशस्थ)	ब्रह्म, विष्णु, शिवरूपी परब्रह्म की	नमस्कारात्मक
10. नीतिशतकम्	दिक्कालाद्यनवच्छिन्ना....। (अनुष्टुप्)	परब्रह्म की	नमस्कारात्मक

संस्कृतग्रन्थों की श्लोकसंख्या

रचना	कुल श्लोक संख्या
1. मेघदूतम्	पूर्वमेघ 67 उत्तरमेघ 54 = 121 इसमें 6 श्लोक प्रक्षिप्त। कुल = 63 +52 = 115 श्लोक (मल्लिनाथ के अनुसार)
2. उत्तररामचरितम्	लगभग 256 (तृतीय अङ्क में -48)
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	लगभग 196 (चतुर्थ अङ्क में-22)
4. किरातार्जुनीयम्	लगभग 1030 (कुछ विद्वानों के अनुसार-1040) (प्रथमसर्ग में-46)
5. नीतिशतकम्	लगभग 111 (11 पद्धतियाँ)
6. शृङ्गारशतकम्	लगभग 103
7. वैराग्यशतकम्	लगभग-111
8. रघुवंशम्	लगभग 1569
9. वाल्मीकीयरामायणम् (चतुर्विंशतिसाहस्रीसंहिता)	लगभग 24000, (7 काण्ड, 500 सर्ग)
10. महाभारतम् (शतसाहस्रीसंहिता)	लगभग — एक लाख श्लोक, 18 पर्व
11. शिशुपालवधम्	लगभग 1650 (प्रथम सर्ग में -75)
12. नैषधीयचरितम्	लगभग 2830 (प्रथम सर्ग में-145)
13. मृच्छकटिकम्	लगभग-380 (दश अङ्क)
14. गीता	लगभग-700, 18 अध्याय
15. भट्टिकाव्यम् (रावणवध)-भट्टि	लगभग-1624 श्लोक, 22 सर्ग
16. हरविजयम् (रत्नाकर)	4321 श्लोक, 50 सर्ग
17. राघवपाण्डवीय-कविराज	668 श्लोक, 13 सर्ग
18. भास के तेरह नाटक	1092 श्लोक
19. मालविकाग्निमित्रम्	96 श्लोक, 5 अङ्क
20. अनर्घराघवम्	567 श्लोक, 7 अङ्क
21. बालरामायणम्	741 पद्य, 10 अङ्क
22. ऋतुसंहारम्	144 श्लोक, 6 सर्ग

संस्कृतग्रन्थों के उपजीव्यग्रन्थ

रचना	उपजीव्यग्रन्थ
1. रघुवंशम् (कालिदास)	वाल्मीकीयरामायण एवं पद्मपुराण
2. मेघदूतम् (कालिदास)	ब्रह्मवैवर्तपुराण से कथानक तथा वाल्मीकीय रामायण से दूत की कल्पना
3. किरातार्जुनीयम् (भारवि)	महाभारत का वनपर्व
4. शिशुपालवधम् (माघ)	(i) महाभारत का सभापर्व (सर्ग 33 से 45 तक) (ii) श्रीमद्भागवतपुराण (10वाँ स्कन्ध, 74वाँ अध्याय)
5. नैषधीयचरितम् (श्रीहर्ष)	महाभारत के वनपर्व का नलोपाख्यान
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम् (कालिदास)	(i) महाभारत आदिपर्व का शकुन्तलोपाख्यान (अध्याय 67 से 74 तक) (ii) पद्मपुराण
7. उत्तररामचरितम् (भवभूति)	वाल्मीकीयरामायण का उत्तरकाण्ड (सर्ग 42 से 97 तक)
8. वेणीसंहारम् (भट्टनारायण)	महाभारत का सभापर्व
9. मृच्छकटिकम् (शूद्रक)	भासकृत 'चारुदत्तम्' नाटक
10. कादम्बरी (बाणभट्ट)	गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' (सुमनस वृत्तान्त)

रचना	उपजीव्यग्रन्थ
11. शिवराजविजयम् (अम्बिकादत्त व्यास)	इतिहासप्रसिद्ध कथानक
12. बुद्धचरितम् (अश्वघोष)	'ललितविस्तर' बौद्धग्रन्थ, इतिहासप्रसिद्ध
13. कुमारसम्भवम् (कालिदास)	श्रीमद्भागवतमहापुराण
14. सौन्दरानन्द (अश्वघोष)	इतिहासप्रसिद्ध बुद्धचरितम्
15. स्वप्नवासवदत्तम् (भास)	इतिहासप्रसिद्ध उदयनविषयक लोककथायें
16. प्रतिमानाटकम् (भास)	वाल्मीकीयरामायण (अयोध्याकाण्ड से रावणवध तक)
17. अभिषेकनाटकम् (भास)	वाल्मीकीयरामायणम्
18. पञ्चरात्रम् (भास)	महाभारतम्
19. मध्यमव्यायोग (भास)	महाभारतम्
20. कर्णभारम् (भास)	महाभारतम्
21. दूतघटोत्कचम (भास)	महाभारतम्
22. वालचरितम् (भास)	महाभारतम्
23. उरुभङ्ग (भास)	महाभारतम्
24. प्रतिज्ञायौगन्धरायण (भास)	उदयनकथाश्रित
25. मालविकाग्निमित्रम् (कालिदास)	इतिहासप्रसिद्ध
26. विक्रमोर्वशीयम् (कालिदास)	ऋग्वेद एवं महाभारतम्
27. रत्नावली (हर्ष)	उदयनकथाश्रित/कविकल्पित इतिहासप्रसिद्ध
28. महावीरचरितम् (भवभूति)	वाल्मीकीयरामायण
29. प्रसन्नराघवम् (जयदेव)	वाल्मीकीयरामायण
30. नलचम्पू (त्रिविक्रमभट्ट)	महाभारत
31. मुद्राराक्षस (विशाखदत्त)	इतिहासप्रसिद्ध, विष्णुपुराण
32. प्रियदर्शिका (हर्ष)	कविकल्पनाप्रसूत
33. मालतीमाधवम् (भवभूति)	कविकल्पनाप्रसूत
34. अनर्घराघवम् (मुरारि)	वाल्मीकीयरामायणम्
35. प्रबोधचन्द्रोदय (कृष्णमिश्र)	कविकल्पनाप्रसूत
36. हर्षचरितम् (बाण)	इतिहास प्रसिद्ध
37. ऋतुसंहारम् (कालिदास)	कविकल्पित
38. भट्टिकाव्य/रावणवध (भट्टि)	वाल्मीकीयरामायण
39. जानकीहरणम् (कुमारदास)	वाल्मीकीयरामायण
40. हरविजयम् (रत्नाकर)	शिशुपालवध का प्रभाव
41. शारिपुत्रप्रकरणम् (अश्वघोष)	इतिहासप्रसिद्ध

संस्कृतग्रन्थों में नायक-नायिका

रचना	नायक	नायिका
1. स्वप्नवासवदत्तम्	नायक उदयन (धीरललित)	वासवदत्ता/पद्मावती
2. मृच्छकटिकम्	चारुदत्त (धीरप्रशान्त)	वसन्तसेना/धूता
3. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	दुष्यन्त (धीरोदात्त)	शकुन्तला
4. कुमारसम्भवम्	शिव	पार्वती
5. उत्तररामचरितम्	राम (धीरोदात्त)	सीता
6. किरातार्जुनीयम्	अर्जुन (नायक, धीरोदात्त) किरात (शिव, सहनायक) दुर्योधन (प्रतिनायक)	द्रौपदी
7. मेघदूतम्	यक्ष (हेममाली)	यक्षिणी (विशालाक्षी)
8. शिशुपालवधम्	श्रीकृष्ण (धीरोदात्त)	सत्यभामा/रुक्मिणी
9. नैषधीयचरितम्	नल (धीरोदात्त)	दमयन्ती

रचना	नायक	नायिका
10. रत्नावली (नाटिका)	उदयन (धीरललित)	रत्नावली (सागरिका)
11. कादम्बरी कथा	चन्द्रापीड (नायक, धीरोदात्त)	कादम्बरी
	वैशम्पायन (सहनायक)	महाश्वेता (सहनायिका)
12. दशकुमारचरितम्	राजहंस (दस राजकुमार)	विलासवती
	राजवाहन	अवन्तिसुन्दरी
13. वेणीसंहारम्	भीम (धीरोद्धत)	द्रौपदी
14. मालविकाग्निमित्रम्	अग्निमित्र (धीरोदात्त, कुछ विद्वानों के मत में धीरललित)	मालविका
15. विक्रमोर्वशीयम् (त्रोटक)	पुरूरवा (विक्रम)	उर्वशी
16. मुद्राराक्षसम्	चाणक्य और चन्द्रगुप्त	नायिका का आभाव
17. प्रियदर्शिका	राजा उदयन (धीरललित)	आरण्यिक (प्रियदर्शिका)
18. नागानन्द	जीमूतवाहन	मलयती
19. मालतीमाधवम् (प्रकरण)	(i) माधव (ii) मकरन्द	(i) मालती (ii) मदयन्तिका
20. महावीरचरितम्	राम (धीरोदात्त)	सीता
21. बुद्धचरितम्	भगवान् बुद्ध	—
22. हर्षचरितम्	हर्षवर्धन	—
23. रघुवंशम्	श्रीराम (रघु)	सीता
24. कर्पूरमञ्जरी	चन्द्रपाल	कर्पूरमञ्जरी
25. प्रसन्नराघवम्	श्रीराम	सीता
26. प्रबोधचन्द्रोदय	प्रबोधचन्द्र	
27. ऊरुभङ्गम्	दुर्योधन/भीम	—

संस्कृत-ग्रन्थों में अङ्गी रस

रचना	प्रधान/मुख्य/अङ्गीरस	रचना	प्रधान/मुख्य/अङ्गीरस
1. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	शृङ्गार	17. मुद्राराक्षसम्	वीररस
2. मेघदूतम्	विप्रलम्भशृङ्गार	18. प्रियदर्शिका	शृङ्गाररस
3. उत्तररामचरितम्	करुणरस	19. रत्नावली	शृङ्गाररस
4. किरातार्जुनीयम्	वीररस	20. नागानन्द	शान्तरस/वीररस
5. नैषधीयचरितम्	शृङ्गार	21. वेणीसंहारम्	वीररस
6. शिशुपालवधम्	वीररस	22. कुन्दमाला	करुणरस
7. रघुवंशम्	वीररस	23. प्रबोधचन्द्रोदय	करुणरम/वीररस
8. बुद्धचरितम्	शान्तरस	24. शृङ्गारशतकम्	शृङ्गाररस
9. मृच्छकटिकम्	शृङ्गाररस	25. गीतगोविन्दम्	शृङ्गाररस
10. कुमारसम्भवम्	शृङ्गाररस	26. रावणवध (भट्टिकाव्यम्)	वीरस
11. शिवराजविजयम्	वीररस	27. जानकीहरणम्	शृङ्गाररस
12. स्वप्नवासवदत्तम्	शृङ्गाररस	28. कर्पूरमञ्जरी	शृङ्गाररस
13. मालतीमाधवम् (प्रकरण)	शृङ्गाररस	29. शारिपुत्रप्रकरणम्	शान्तरस
14. महावीरचरितम् (नाटक)	वीररस	30. अनर्घराघवम्	शृङ्गाररस
15. मालविकाग्निमित्रम्	शृङ्गाररस	31. रामायणम्	करुणरस
16. विक्रमोर्वशीयम्	शृङ्गाररस	32. महाभारतम्	शान्तरस

संस्कृत-ग्रन्थों में प्रयुक्त छन्द

ग्रन्थ	ग्रन्थों में प्रयुक्त प्रमुख छन्द
1. किरातार्जुनीयम् (प्रथम सर्ग)	वंशस्थ, 45वें में पुष्पिताग्रा, अन्तिम 46वें में मालिनी (कुल प्रयुक्त छन्द-22)
2. शिशुपालवधम्	वंशस्थ, अनुष्टुप्, उपजाति (कुल प्रयुक्त छन्द -25)
3. नैषधीयचरितम्	उपजाति (कुल प्रयुक्त छन्द-19)
4. मेघदूतम्	मन्दाक्रान्ता (सम्पूर्ण ग्रन्थ में)
5. रघुवंशम्	उपजाति, अनुष्टुप्
6. अभिज्ञानशाकुन्तलम्	आर्या, वसन्ततिलका, अनुष्टुप् (कुल प्रयुक्त छन्द-24)
7. मृच्छकटिकम्	अनुष्टुप् (कुलप्रयुक्त छन्द-21)
8. उत्तररामचरितम्	अनुष्टुप् शिखरिणी (कुल प्रयुक्त छन्द 19)
9. बुद्धचरितम्	अनुष्टुप्, उपजाति
10. भट्टिकाव्यम् (रावणवधम्)	अनुष्टुप्, उपजाति, आर्या, और पुष्पिताग्रा आदि अनेकछन्द
11. मुद्राराक्षसम्	शार्दूलविक्रीडित, स्रग्धरा, शिखरिणी
12. वेणीसंहारम्	अनुष्टुप् (62), वसन्ततिलका (38) शार्दूलविक्रीडित (34) (कुलप्रयुक्त छन्द-18)
13. बालरामायणम्	शार्दूलविक्रीडित और स्रग्धरा।
14. प्रसन्नराघवम्	वसन्ततिलका, अनुष्टुप्, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी।
15. अमरुकशतकम्	शार्दूलविक्रीडितम्
16. कुमारसम्भवम्	अनुष्टुप्
17. सौन्दरानन्द	अनुष्टुप्
18. जानकीहरणम्	अनुष्टुप
19. हरविजय	शार्दूलविक्रीडित, मन्दाक्रान्ता

संस्कृतसाहित्य के प्रमुख दम्पती, प्रेमी-प्रेमिका एवं उनकी सन्तानें

पति/प्रेमी	पत्नी/प्रेमिका	पुत्र/पत्री
1. अगस्त्य	लोपामुद्रा	
2. वशिष्ठ	अरुन्धती	
3. विश्वामित्र	मेनका	शकुन्तला
4. मारीच	अदिति (दाक्षायणी)	इन्द्र
5. ययाति	शार्मिष्ठा, देवयानी	पुरु
6. अत्रि	अनसूया	दुर्वासा
7. इन्द्र	इन्द्राणी/शची/पौलोमी	जयन्त
8. ऋष्यशृङ्ग	शान्ता	
9. दुष्यन्त	शकुन्तला, हंसपदिका, वसुमती	भरत (सर्वदमन)
10. कालिदास	विद्योत्तमा	—
11. भर्तृहरि	पिङ्गला	—
12. भारवि	रसकवती/रसिका	मनोरथ
13. पण्डितराजजगन्नाथ	(i) लवङ्गी (यवनी प्रेमिका) (ii) भामिनी (पत्नी)	
14. राम	सीता	कुश-लव
15. लक्ष्मण	उर्मिला	चन्द्रकेतु
16. भरत	माण्डवी	पुष्कल
17. शत्रुघ्न	श्रुतिकीर्ति	
18. नल	दमयन्ती	
19. पुरूरवा	उर्वशी	

पति/प्रेमी	पत्नी/प्रेमिका	पुत्र/पत्री
20. चारुदत्त	धूता/वसन्तसेना	रोहसेन
21. नन्द	सुन्दरी	
22. अविमारक	कुरङ्गी	
23. भीम	हिडिम्बा	घटोत्कच
24. पञ्चपाण्डव	द्रौपदी	
25. अर्जुन	सुभद्रा	अभिमन्यु
26. धृतराष्ट्र	गान्धारी	दुर्योधन
27. पाण्डु	कुन्ती/माद्री	पञ्चपाण्डव
28. कृष्ण	रुक्मिणी/सत्यभामा	प्रद्युम्न
29. शर्विलक	मदनिका	
30. अग्निमित्र	मालविका	
31. उदयन	रत्नावली (सागरिका)	
32. उदयन	वासवदत्ता	
33. माधव	मालती	
34. मकरन्द	मदयन्तिका	
35. तारापीड	विलासवती	चन्द्रापीड
36. चन्द्रापीड	कादम्बरी	
37. पुण्डरीक	महाश्वेता	
38. हंस	गौरी	महाश्वेता
39. चित्ररथ	मदिरा	कादम्बरी
40. श्वेतकेतु	लक्ष्मी	पुण्डरीक
41. हेममाली (यक्ष)	विशालाक्षी (यक्षिणी)	
42. कवि जयदेव (गोतगोविन्दकार)	पद्मावती	
43. राजा दिलीप	सुदक्षिणा	रघु
44. अज	इन्दुमती	दशरथ
45. कामदेव	रति	
46. शिव	पार्वती	गणेश, कार्तिकेय
47. विष्णु	लक्ष्मी	
48. अभिमन्यु	उत्तरा	परीक्षित
49. हिमालय	मैना	पार्वती
50. शुकनास	मनोरमा	वैशम्पायन
51. राजशेखर	अवन्तिसुन्दरी	
52. दुर्योधन	भानुमती	
53. गौतम	अहल्या	शतानन्द
52. याज्ञवल्क्य	मैत्रेयी	

संस्कृतवाङ्मय में गुरु-शिष्य-परम्परा

शिष्य	गुरु	शिष्य	गुरु
1. जनक	याज्ञवल्क्य, शतानन्द (पुरोहित)	5. भट्टोजिदीक्षित	शेषकृष्ण
2. भर्तृहरि	गोरखनाथ/वसुरात (बौद्धमत में)	6. तुलसीदास	नरहर्यानन्द
3. भवभूति	ज्ञाननिधि	7. राम	वशिष्ठ, विश्वामित्र, अगस्त्य
4. वरदराज	भट्टोजिदीक्षित	8. श्रीकृष्ण	सान्दीपनी
		9. चन्द्रगुप्त	चाणक्य

शिष्य	गुरु
10. देवताओं के	बृहस्पति
11. असुरों के	शुक्राचार्य
12. लव, कुश, सैधाताकि, दाण्डायन	वाल्मीकि
13. दुष्यन्त	सोमरात (पुरोहित)
14. पाणिनि	वर्ष (उपवर्ष)
15. मंखक	रुय्यक
16. दाराशिकोह	पण्डितराज जगन्नाथ (संस्कृतशिक्षक)
17. बाणभट्ट	भुर्व
18. शिवाजी	समर्थगुरुरामदास, कोण्डदेव
20. अम्बिकादत्तव्यास	विश्वक्सेन
21. अर्जुन (पञ्चपाण्डव)	द्रोणाचार्य
22. शङ्कराचार्य	आचार्य गौडपाद
23. महेन्द्रपाल	राजशेखर
24. अभिनवगुप्त	भट्टतौत
25. प्रतिहारेन्दुराज	मुकुलभट्ट
26. एकलव्य	द्रोणाचार्य
27. शार्ङ्गरव, शारद्वत	कण्व
28. गालव	मारीच
29. कर्ण	परशुराम
30. भीष्मपितामह	परशुराम
31. दुर्योधनादि (कौरवों के)	द्रोणाचार्य
32. चन्द्रापीड	शुकनाश (उपदेष्टा)
33. जैमिनि	पराशर
34. पराशर	व्यास
35. मण्डनमिश्र	कुमारिलभट्ट
36. उम्बेक (भवभूति)	कुमारिलभट्ट
37. प्रभाकरमिश्र	कुमारिलभट्ट
38. शालिकनाथ	प्रभाकरमिश्र
39. आसुरि	कपिलमुनि
40. पञ्चशिख	आसुरि
41. हस्तामलक	शङ्कराचार्य
42. योगीन्द्र सदानन्द	अद्वयानन्द
43. अरस्तू	प्लेटो
44. प्लेटो	सुकरात
45. सिकन्दर	अरस्तू
46. नागेशभट्ट	हरिदीक्षित
47. कनिष्क	अश्वघोष

संस्कृतवाङ्मय में वर्णित राजा और राजधानी

राजा	राजधानी
1. शूद्रक	विदिशा ('वेत्रवती' नदी के किनारे)
2. तारापीड	उज्जयिनी
3. दुष्यन्त	हस्तिनापुर
4. राम	अयोध्या (सरयूनदी के किनारे)
5. रावण	लङ्का ('समुद्र' तट पर)
6. नल	निषधदेश
7. कृष्ण	द्वारिका (समुद्र के किनारे)
8. शिवाजी	सतारा/रायगढ़
9. दुर्योधन (सुयोधन)	हस्तिनापुर
10. युधिष्ठिर	इन्द्रप्रस्थ/हस्तिनापुर
11. पुरु	हस्तिनापुर
12. प्रद्योत	उज्जयिनी
13. कुबेर	अलकापुरी
14. उदयन	कौशाम्बी/उज्जयिनी
15. भर्तृहरि	धारानगरी
16. विक्रमादित्य	उज्जयिनी
17. दुर्विनीत	कोंकण
18. राजाभोज	धारानगरी
19. हर्षवर्धन	थाणेश्वर
20. जयचन्द्र	कन्नौज
21. पृथ्वीराज	दिल्ली
22. महमूदगजनवी	गजनी
23. मुहम्मद गोरी	गोरदेश
24. औरङ्गजेब	दिल्ली
25. रन्तिदेव	दशपुर

संस्कृत में वर्णित कुछ प्रसिद्ध आश्रम एवं नगर

आश्रम/नगर	नदी/पर्वत
1. कण्व आश्रम	मालिनी नदी
2. विश्वामित्र आश्रम	गौतमी नदी
3. वाल्मीकि आश्रम	गङ्गा नदी/तमसा नदी
4. भारद्वाज आश्रम	प्रयोग का सङ्गमतट
5. अगस्त्य आश्रम	गोदावरी/दण्डकवन
6. मारीच आश्रम	हेमकूटपर्वत
7. यक्ष का निवास	रामगिरिपर्वत (चित्रकूट)
8. जाबालि आश्रम	पम्पासरोवर
9. महाश्वेता आश्रम	अच्छोदसरोवर
10. विदिशा	वेत्रवती (बेतवा)
11. उज्जयिनी	क्षिप्रा नदी
12. शचीतीर्थ (अप्सरातीर्थ)	गङ्गा नदी
13. अयोध्या	सरयू नदी
14. हरिद्वार (कनखल)	गङ्गा नदी

संस्कृत संख्या

1. एक:, एकम् , एका
2. द्वौ, द्वे, द्वे
3. त्रय:, त्रीणि, तिस्र:
4. चत्वार:, चत्वारि ,चतस्र:
5. पञ्च
6. षट्
7. सप्त
8. अष्ट/अष्टौ
9. नव
10. दश
11. एकादश
12. द्वादश
13. त्रयोदश
14. चतुर्दश
15. पञ्चदश
16. षोडश
17. सप्तदश
18. अष्टादश
19. नवदश/एकोनविंशति:/ऊनविंशति:/ एकान्नविंशति:
20. विंशति:
21. एकविंशति:
22. द्वाविंशति:
23. त्रयोविंशति:
24. चतुर्विंशति:
25. पञ्चविंशति:
26. षड्विंशति:
27. सप्तविंशति:
28. अष्टाविंशति:
29. नवविंशति: एकोनत्रिंशत् / ऊनत्रिंशत्/ एकान्नत्रिंशत्
30. त्रिंशत्
31. एकत्रिंशत्
32. द्वात्रिंशत्
33. त्रयस्त्रिंत्
34. चतुस्त्रिंशत्
35. पञ्चस्त्रिंशत्
36. षट्त्रिंशत्
37. सप्तत्रिंशत्
38. अष्टात्रिंशत्
39. नवत्रिंशत्/एकोनचत्वारिंशत्/ऊनचत्वारिंशत्/एकान्नचत्वारिंशत्
40. चत्वारिंशत्
41. एकचत्वारिंशत्
42. द्विचत्वारिंशत्, द्वाचत्वारिंशत्
43. त्रिचत्वारिंशत्, त्रयश्चत्वारिंशत्
44. चतुश्चत्वारिंशत्
45. पञ्चचत्वारिंशत्
46. षट्चत्वारिंशत्
47. सप्तचत्वारिंशत्
48. अष्टचत्वारिंशत्, अष्टाचत्वारिंशत्
49. नवचत्वारिंशत्/ एकोनपञ्चाशत्/ ऊनपञ्चाशत्/एकान्नपञ्चाशत्
50. पञ्चाशत्
51. एकपञ्चाशत्
52. द्विपञ्चाशत्, द्वापञ्चाशत्
53. त्रिपञ्चाशत्, त्रय: पञ्चाशत्
54. चतु:पञ्चाशत्
55. पञ्चपञ्चाशत्
56. षट्पञ्चाशत्
57. सप्तपञ्चाशत्

58. अष्टपञ्चाशत्, अष्टापञ्चाशत्
59. नवपञ्चाशत् / एकोनषष्टि:/ऊनषष्टि:/एकान्नषष्टि:
60. षष्टि:
61. एकषष्टि:
62. द्विषष्टि:, द्वाषष्टि:
63. त्रिषष्टि: , त्रय:षष्टि:
64. चतु:षष्टि:
65. पञ्चषष्टि:
66. षट्षष्टि:
67. सप्तषष्टि:
68. अष्टषष्टि:/ अष्टाषष्टि:
69. नवषष्टि:/ एकोनसप्तति:/ऊनसप्तति:/एकान्नसप्तति:
70. सप्तति:
71. एकसप्तति:
72. द्विसप्तति:, द्वासप्तति:
73. त्रिसप्तति:, त्रय:सप्तति:
74. चतु:सप्तति:
75. पञ्चसप्तति:
76. षट्सप्तति:
77. सप्तसप्तति:
78. अष्टसप्तति:, अष्टासप्तति:
79. नवसप्तति:, एकोनाशीति:/ऊनाशीति:/एकान्नाशीति:
80. अशीति:
81. एकाशीति:
82. द्व्यशीति:
83. त्र्यशीति:
84. चतुरशीति:
85. पञ्चाशीति:
86. षडशीति:
87. सप्ताशीति:
88. अष्टाशीति:
89. नवाशीति:, एकोननवति:/ऊननवति:/एकान्ननवति:
90. नवति:
91. एकनवति:
92. द्विनवति:, द्वानवति:
93. त्रिनवति:, त्रयोनवति:
94. चतुर्नवति:
95. पञ्चनवति:
96. षण्णवति:
97. सप्तनवति:
98. अष्टनवति:, अष्टानवति:
99. नवनवति:, एकोनशतम्
100. शतम्

एक हजार	=	सहस्रम्
दस हजार	=	अयुतम्
एक लाख	=	लक्षम्
दस लाख	=	नियुतम्, प्रयुतम्।
एक करोड़	=	कोटि:
दस करोड़	=	दशकोटि:
एक अरब	=	अर्बुदम्
दस अरब	=	दशार्बुदम्
एक अरब	=	खर्वम्
दस अरब	=	दशखर्वम्
एक नील	=	नीलम्
दस नील	=	दशनीलम्
एक पद्म	=	पद्मम्
दशपद्म	=	दशपद्मम्
एक शंख	=	शंखम्
दस शंख	=	दशशंखम्
महाशंख	=	महाशंखम्
101	=	एकाधिकं शतम्
102	=	द्वयधिकं शतम्
103	=	त्र्यधिकं शतम्
104	=	चतुरधिकं शतम्
105	=	पञ्चाधिकं शतम्
आदि।		
200	=	द्विशती/शतद्वयम्
300	=	त्रिशती/शतत्रयम्
400	=	चतु:शती
500	=	पञ्चशती
600	=	षट्शती
700	=	सप्तशती आदि।

• • •

संस्कृतपत्रिकाणाम् अनुक्रमणिका

1. **अजस्रा** (त्रैमासिक पत्रिका), अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्, अलीगंज, लखनऊ (उत्तरप्रदेश)।
2. **अभिव्यक्तिः** भारत संस्कृत परिषद्, संकटमोचन आश्रम, रामकृष्णपुरम्, सेक्टर-6, नवेहली-22
3. **अभिसंस्कृतम्** (मासिकम्), 3/129, विष्णुपुरी, कानपुर, उत्तरप्रदेश।
4. **अमृतभाषा**, कालिदासपुरम्, शान्तिनगरम् पत्रालयः-हरिपुर, मोतीगञ्ज, बालेश्वर, ओड़िसा।
5. **अमृतवाणी**, अग्रवालविद्यापीठम्, हल्दीपदा, बालेश्वर, ओड़िसा- 756027
6. **अर्वाचीनसंस्कृतम्** (त्रैमासिकम्), देववाणी परिषद्, आर-6, वाणी विहार, नवदेहली-110059
7. **आन्वीक्षिकी**, उत्तराखण्ड संस्कृत अकादमी, हरिद्वार।
8. **आरण्यकम्**, अखिल भारतीय संस्कृत परिषद्, अलीगंज, लखनऊ (उत्तरप्रदेश)।
9. **आर्ष-ज्योतिः** (मासिकपत्रिका), श्रीमद्दयानन्द वेद विद्यालय, 119 गौतमनगर, नवदेहली-89
10. **कामधेनुः** (पाक्षिकपत्रम्) भारतविद्यापीठ, पत्रालय-इरैलियर त्रिचुरम्, केरलः-680501
11. **गाण्डीवम्** (साप्तहिकम्), इन्दरनिवास, ए० जी० मार्गः, मुम्बई, महाराष्ट्रम्-400004
12. **गीर्वाणसुधा** (मासिकी), इन्दरनिवास, ए०जी० मार्गः, मुम्बई, महाराष्ट्रम्-400004
13. **गुञ्जारवः** कालेश्वरमन्दिर, घमेरगली, अहमदनगर, महाराष्ट्रम्।
14. **गुरुकुल** शोधभारती, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखण्ड।
15. **गैर्वाणी** (मासिकी), संस्कृतभवन, प्रचारिणी सभा, चित्तूर, आन्ध्रप्रदेश-510700
16. **गोरखपुरचर्चा**, बक्शीपुर, गोरखपुर, उत्तरप्रदेश-273001
17. **चन्दामामा** (मासिकी), डाल्टन एजेन्सी, वाडापलानी, चेन्नई तमिलनाडु-600026
18. **त्रिस्कन्धज्योतिषः** 65, ब्रह्मानन्दनगर, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-210005
19. **दिव्यज्योतिः** (मासिकपत्रिका) आनन्दलाज, जाखू, शिमला, हिमाचलप्रदेश।
20. **दिशाभारती** (पाक्षिकी), 43, उत्तरांचल एन्क्लेवम्, कमालपुर, बुराड़ी, देहली-110084
21. **दूर्वा** (पाक्षिकपत्रम्), कालिदास संस्कृत आकदमी, उज्जैन, मध्यप्रदेश-461002
22. **नवप्रभातम्** (दैनिकम्), शारदानगर, कानपुर, उत्तरप्रदेश-271005
23. **नैसर्गिकी**, राष्ट्रिय नैसर्गिक शिक्षानुसन्धान संस्थानम्, 38 मानसनगरम्, वाराणसी, उत्तरप्रदेश-271005
24. **परिशीलनम्**, उत्तरप्रदेश संस्कृत संस्थानम् 'संस्कृतभवनम्' नया हैदराबादम्, लखनऊ, उत्तरप्रदेश-226007
25. **पारिजातम्** (मासिकम्), 105/94, प्रेमनगर, कर्णपुर (कानपुर), उत्तरप्रदेश।
26. **पावमानी**, गुरुकुल-प्रभात-आश्रमः, टीकरी, भोलाझालाम्, मेरठम्, उत्तरप्रदेशः।
27. **पूर्णत्रयी** (अर्धवार्षिकी), राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, त्रिपुनीथरा, केरलः-682301
28. **प्रभातम्** (त्रैमासिकम्), समन्वयकमुटीरम्, ई-1052, राजाजीपुर, लखनऊ, उत्तरप्रदेश-226017
29. **प्रियवाक्**, संस्कृतभवनम्, लोकनाथमार्ग, पुरी, ओड़िसा।
30. **ब्रजगन्धा** (त्रैमासिक पत्रिका), रामाश्रय, कृष्णपुरी, मथुरा, उत्तरप्रदेश-28001

31. **भारतमुद्रा** (मासिकी), पूर्णाकर, त्रिचूर, केरलः-680550
32. **भारती** (मासिकम्), भारतीय-भवन, बी-14 विजयनगर, जयपुर, राजस्थान।
33. **भारतोदयः** (मासिकपत्रिका), गुरुकुलमहाविद्यालय, ज्वालापुर, हरिद्वार, उत्तरप्रदेशः-249405
34. **भास्वती** (षाण्मासिकपत्रिका), संस्कृतविभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उत्तरप्रदेशः।
35. **युगगतिः** (साप्ताहिक पत्रिका), बक्शीपुर, गोरखपुर, उत्तरप्रदेश-273001
36. **रसिकप्रिया,** 84 राधापेठ, हाई रोड, मेलपुर, चेन्नई-600004
37. **रावणेश्वरकाननम्,** चिताभूमि चन्द्रदत्त दारा रोड, पी०टी० विलासी, बैजनाथ, देवधर, बिहार-814117
38. **लोकसंस्कृतम्** (पाक्षिकम्), संस्कृतकार्यालय श्री अरविन्द आश्रम, पाण्डिचेरी, तमिलनाडु-605002
39. **वाक्** (पाक्षिकं समाचारपत्रम्) 11, नालीपानीमार्ग, चघवसति, उत्तरप्रदेश, देहरादूनम्-240001
40. **वाङ्मयम्** (अर्धवार्षिक), चौधरी महादेव प्रसाद महाविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तरप्रदेश।
41. संस्कृत **वाङ्मयी** लखनऊ विश्वविद्यालयः, वाराणसी, उत्तरप्रदेश।
42. विश्वभाषा (त्रैमासिकपत्रिका), विश्वसंस्कृतप्रतिष्ठान, रामन-गरदुर्गम्, वाराणसी, उत्तरप्रदेशः।
43. वेदविद्या राष्ट्रियवेदविद्या प्रतिष्ठान्, उज्जैन (मध्य-प्रदेश)।
44. **विश्वसंस्कृतम्** (त्रैमासिकपत्रिका), विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थानम्, साधु आश्रम, होशियारपुरम्, पंजाबः-151021
45. **वैदिक वाक्ज्योति** गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार, उत्तरप्रदेशः।
46. **शारदा** 2, झेलमपत्रकारनगर, पुणे, महाराष्ट्र।
47. **शोधप्रभा** (वार्षिकी) श्रीलालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठम्, कटवारिया सरायम्, नवदेहली-110016
48. **श्रीपण्डितम्** (त्रैमासिकम्), मधुसूदनशास्त्रिभवन, भदौनी, वाराणसी, उत्तरप्रदेशः।
49. **संगमनी** (त्रैमासिकम्) संस्कृतसाहित्यपरिषद्, दारागंज, प्रयाग, उत्तरप्रदेशः।
50. **सम्भाषण-सन्देशः** 'अक्षरम्' ८ तमः क्रोसः फेज-2 गिरि- नगरम्, बेंगलुरु, कर्नाटकम्-460085
51. **सन्देशः** (द्वैमासिकपत्रिका), 2/132, बलागंजम्, कानपुरम्, उत्तरप्रदेशः।
52. **संविद्** (पाक्षिकम्), भारतीयविद्याभवन, के०एस० मुन्शीमार्ग, मुम्बई, महाराष्ट्रम्।
53. **संस्कृतप्रचारम्** (मासिकम्) 105, प्राध्यापकनिवासः, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, समरहिल, हिमाचलप्रदेशः।
54. **संस्कृतप्रतिभा** (वार्षिका), साहित्य आकदमी, रवीन्द्रमार्गः, नवदेहली-110001
55. **संस्कृतमञ्जरी,** दिल्ली संस्कृत अकादमी, दिल्ली सर्वकार, प्लाट सं० 5, झण्डेवाला, करोलबाग, नवदेहली-110005
56. **संस्कृतमन्दाकिनी,** लोकभाषा प्रचार समिति, पुरी, ओड़िसा।
57. **संस्कृतविमर्शः,** राष्ट्रिय संस्कृत संस्थान, 56-57 इन्स्टीट्यू-शनल एरिया, पंखा रोड, जनकपुरी, नवदेहली-110058
58. **संस्कृतसञ्जीवनम्,** मनोरमाभवन, मार्ग सं० 6 सी, राजेन्द्र नगर, पटना, बिहार-800016
59. **संस्कृतम् सम्मेलनम्** (त्रैमासिकपत्रिका), श्रीरामनिरंजन-मुरारका संस्कृत महाविद्यालय चौक, पटना नगर, बिहारः।
60. **संस्कृतसाकेतम्** (पाक्षिकम्), साकेतकार्यालय, अखिलभारतीय विद्वत्समितिः, अयोध्या, उत्तरप्रदेशः।
61. **स्वरमंगला** (त्रैमासिक पत्रिका), राजस्थान संस्कृत अकादमी, वीरेश्वर भवन, गणगौर बाजार, जयपुर, राजस्थानम्।
62. **संस्कृतसौरभम्,** विद्याभारतीय, प्रेमकुंजम्, विन्ध्यवासिनी-पथ, कदमकुआँ, पटना, बिहार।
63. **संस्कृतामृतम्** (सप्ताहिकम्), हयातगंजम्, टाण्डा अम्बेडकर- नगर, उत्तरप्रदेश।
64. **सर्वगन्धा** (मासिकापत्रिका), माईजी मन्दिर, अशरफाबादम्, लक्ष्मणपुर, लखनऊ, उत्तरप्रदेश-226003
65. **सत्यानन्दम्** (मासिकी), एड्बहीमपुर, राजमार्ग, यादवपुर, चित्तूर, आन्ध्रप्रदेश-510700
66. **सागरिका** (पाक्षिकपत्रम्), सागरिका समिति, गौरीनगर, सागर, मध्यप्रदेश।
67. **सारस्वतम्,** बाहरी बेगमपुर, पटना बिहार-800009
68. **सुधर्मा** (दैनिकम्), 561, रामचन्द्र-अग्रहार, श्रीकानत पावर प्रेस, मैसूर, कर्नाटक-570004

69. **सुरभारती,** सुरभारती सेवा संस्थान, 167/12, पंजाबी कालोनी, मैनपुरी, उत्तरप्रदेश।
70. **हरिप्रभा,** हरियाणा संस्कृत अकादमी, पंचकुला (हरियाणा)।
71. **महस्विनी पत्रिका**— राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठम्, तिरुपति
72. **धीमहि पत्रिका**— चिन्मय अन्ताराष्ट्रिय शोधसंस्थानम्

आधुनिक ग्रन्थ एवं ग्रन्थकार

1. विश्वेश्वर पाण्डेय— मन्दारमञ्जरी
2. गोकुलनाथ— शिवशतक
3. अगस्त्य— बालभारत
4. चण्डकवि— पृथ्वीराजविजयम्
5. कृष्णमिश्र— प्रबोधचन्द्रोदय
6. कल्हण— सोमपालविजयम्
7. सत्यव्रत शास्त्री— गुरुगोविंदसिंह महाकाव्यम्
8. प्रो. रेवाप्रसाद द्विवेदी— सीताचरितम्, स्वातंत्र्यसम्भवम् - काव्यालंकारकारिका (लक्षणग्रन्थ), अलंब्रह्म, साहित्य-शारीरिकम्।
9. अभिराजराजेन्द्र मिश्र— जानकीजीवनम्, प्रज्ञा-मयूख, सन्धानसिन्धु, रक्षुगंधा, मृद्विका अरण्यानी।
10. चारुदेवशास्त्री— गाँधीचरितम्
11. देवविजयमणी— रामचरितम्
12. रूपगोस्वामी— हंसदूतम्
13. विमलकीर्ति— चन्द्रदूतम्
14. रानी तिरुमलाम्बा— वरदाम्बिकापरिणयचम्पू
15. पुष्पा दीक्षिता— अग्निशिखा
16. राधावल्लभत्रिपाठी— गीतधीवरम्, लहरीदशकम्, संस्कृत साहित्य अभिनव इतिहास, दमयन्ती, सन्धानम्, बिब्लिओग्राफी ऑफ अलंकार शास्त्र, सुशीला।
17. भट्ट मथुरानाथ शास्त्री— गाथारत्नसमुच्च, भारतवैभवम्, साहित्य वैभवम्
18. जानकीवल्लभ शास्त्री— काकली
19. रामशरणत्रिपाठी— कौमुदी-कथा-कल्लोलिनी
20. कालिका प्रसाद शुक्ल— श्री राधाचरितमहाकाव्यम्
21. कविकर्णपूर— आनन्दवृन्दावनचम्पू, पारिजातहरणम्
22. हृषीकेश भट्टाचार्य— प्रबन्धमञ्जरी
23. वरददेशिक— गद्यरामायण
24. ऊर्मिलाचार्य— रूक्मिणीपरिणयचम्पू
25. पं० आशाधरसूरि— भरतेश्वराभ्युदयचम्पू
26. मथुरादत्त पाण्डेय— नारदमोहिनीयम्, पल्लवपंचकम्
27. विद्यापति— पुरुषपरीक्षा
28. वनमाली विस्वाल— नीरवस्वन:, मलिनवसनम्
29. राजेन्द्र मिश्र— रूपरुद्रीयम्
30. मथुराप्रसाद दीक्षित— भारतविजयम्
31. बच्चूलाल अवस्थी— 'ज्ञान' प्रतानिनी
32. सदानन्द डबराल (1887)— नरनारायणीयम् (महा०), रासविलास।
33. शिव प्रसाद भारद्वाज (1922)— लौहपुरुषावदानम् (गद्य का०)।
34. डॉ० हरिनारायण दीक्षित— भारत माता ब्रूते, भीष्मचरितम्, (20 सर्ग) श्रीग्वल्लभदेवचरितम् (28 सर्ग) मनुजाश्शृणुत गिरं मे।

    भीष्मचरितम्— यह 20 सर्ग का महाकाव्य है। इस कृति में 1991 उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान से विशेष पुस्कार तथा 1992 में दिल्ली अकादमी द्वारा साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ।
35. होसगेरे नागप्प शास्त्री— सत्यशोधनम्
36. श्रीकृष्ण सेमवाल— वाग्वैभवम्
37. राधेश्याम गंगवार— आह्वानम्, चन्द्रगुप्तचरितम्
38. निरंजन मिश्र— वन्देभारतम्, गंगापुत्रावदानम् (23 सर्ग), ग्रन्थिबन्धनम् (16 सर्ग)
39. रामविनय सिंह— शाश्वती, शेवधि:
40. अरविन्द भवानी— भारती
41. वी. राघवन (वेंकटराम राघव)

कृतियाँ

- **नाटक**- अभिनव सुंदरी, महाश्वेता, रासलीला, विकट नितम्बा, लक्ष्मी स्वयंवरम्, अनाकरली।
- **महाकाव्य**- श्री मुतुस्वामीदीक्षित चरितम्।
- **लघुकाव्य**- 1. पैशुन्य 2. महात्मा 3. फाल्गुन 4. कर्मयोगी 5. मध्याह्न 6. उषा 7. प्रतीक्षा
- **संस्कृत की अन्य कृतियां**- संस्कृत रविंद्रम्, वाल्मीकि प्रतिभा, नटीर पूजा
- **अन्य**- अभिनव गुप्त एवं उनके कार्य, शृंगार मंजरी, पलाण्डु मनदाना (प्रहसन), अलंकार शास्त्र विरूपहा का चोला चंपू।
- **स्तोत्र काव्य**- श्री कामाक्षीमातृका स्तोत्र, श्री मीनाक्षीसुप्रभातम्

42. अम्बिकादत्त व्यास

कृतियाँ- इन्होंने हिंदी तथा संस्कृत में छोटी-बड़ी 78 पुस्तकें लिखी।

उपन्यास

1. शिवराजविजय (3) विराम प्रत्येक विराम में चार निश्वास।
2. गद्यकाव्यमीमांसा
3. अवतारमीमांसाकारिका
4. कथाकुसुम
5. गुप्ताशुद्धिप्रदर्शनम्
6. सहस्रनामरामायणम्
7. मित्रलाभ
8. दुःखद्रुमकुठार

नाटक- सामवतम्।

उपाधि

1. घटिकाशतक 2. सुकवि 3. शतावधान
4. अभिनवबाण 5. भारतरत्न

43. पंडिता क्षमाराव

कृतियाँ

- **काव्यात्मक रचनाएं**- 1. कथा पंचक (पद्यबंध) 2. ग्राम ज्योति 3. कथा मुक्तावली
- **खंडकाव्य**- मीरा लहरी
- **महाकाव्य**- 1. तुकारामचरित 2. रामदासचरितम 3. श्री विज्ञानेश्वर सहित 4. सत्याग्रह गीता 5. उत्तर सत्याग्रह गीता, गांधी चरित्र इत्यादि भी इनकी रचनाएं हैं। स्वराजविजयम् में (45) अध्याय में गांधी की संपूर्ण जीवन माया के साथ स्वतंत्रता इतिहास वर्णन है।
- **लघु काव्य**- श्रमगीता 118 पद्य।
- इनका छत्रपति शिवाजी के चरित्र पर निर्मित महाकाव्य **श्री शिवराज्योदय** (68) सर्गात्मक है।
- **वात्सल्यरसायनम्** इस काव्य का दूसरा नाम (श्रीकृष्णबाललीला शतकम्) है।
- संस्कृतवाङ्मय कोश।
- भारतरत्नशतकम्।

44. वैदिक स्वरमीमांसा— युधिष्ठिरमीमांसक

संस्कृत शिक्षण संस्थान

1. इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवांस स्टडी-शिमला, हिमाचल प्रदेश (1969-65)
2. लाल भाई दलपत भाई प्राच्य विद्या शोध संस्थान— अममदाबाद (गुजरात)
3. पण्डित वैजनाथ शर्मा प्राच्य विद्या शोध संस्थान— हाथरस (उत्तर प्रदेश) 2005
4. विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान— स्थापना- 1930 (स्वामी विश्वेश्वरानन्द एवं स्वामी नित्यानन्द) होशियारपुर (पंजाब)
5. रॉयल एशियाटिक सोसायटी— 1784 (विलियम जोन्स) कोलकाता।
6. सिन्धिया प्राच्य विद्या शोध मन्दिर— उज्जयिनी
7. सरस्वती महल पुस्तकालयः— तञ्जावूरू
8. गैक्वाड ओरियण्टल सिरिजः— बड़ौदा
9. आनन्दाश्रम मुद्रणालयः— पुणे
10. अद्वैतशिक्षणसंस्थान = लखनऊ (उ०प्र०)
11. Advaita Vedanta Institute of Technology (Jaipur).
12. Dvaita Vedanta Studies and Research Foundation (बैंगलोर) कर्नाटक।
13. वैष्णव विद्यापीठ - Shree Vaishnava Institute of Architecture, Indore (M.P.)
14. India Council of Philosophical Research (ICPR) (New Delhi)
15. Research Center of Philosophy, Amalner, Maharahtra Indian Institute of Philosophy
16. All India Institute of Ayurveda (AIIA) (New Delhi)
17. National Ayurveda Research Institute for Panchakarma, Cherutharuthi (Kerala).
18. जैनविद्या शोधसंस्थन- कोल्हापुर, महाराष्ट्र।
19. Institute of Scientific Research on Vedas. (तैलंगाना, हैदराबाद)।
20. VEDIC Science Research Institute - (पोण्डिचेरी)
21. अड्यार लाइब्रेरी एंड रिसर्च सेन्टर, चेन्नई।
22. भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पुणे।

23. ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट और पाण्डुलिपियाँ।
24. लाइब्रेरी - तिरुवनंतपुरम - (केरल)
25. पोण्डिचेरी का फ्रांसीसी संस्थान।
26. द ऑक्सफोड सेन्टर फॉर हिन्दू स्टीज (इंग्लैण्ड)
27. अमेरिकन इस्न्टीट्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज।
28. बोदिलियन पुस्तकालय— आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय
29. श्री शङ्कराचार्य संस्कृत सर्वकला शाला— केरल (कोच्चि) 1993
30. गर्वमेन्ट ओरिएण्टल मैन्युस्क्रिप्ट लाइब्रेरी— चेन्नई
31. ओरिएण्टल रिसर्च इंस्टिट्यूट— मैसूर
32. भारत कला भवन एवं गायकवाड केन्द्रीय ग्रंथालय— B.H.U. (काशी)
33. सरस्वती भवन पुस्तकालय— स.सं.वि.वि.
34. मनुस्मृति विज्ञान विभाग— हम्पी
35. प्राच्य विद्या शोध संस्थान बड़ौदा— गुजरात
36. ए क्लासीफाइड इण्डेक्स to the संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट इन पैलेस आफ तंजौर— A.C. बर्नेल (लंदन)
37. ए डिस्क्रिप्टिव कैटलॉग आफ दि संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट— P.P.S. शास्त्री
38. लिट्स ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट इन प्राइवेट लाइब्रेरी इन इण्डिया— मुस्ताख ओपर्ट (मद्रास)
39. नोटिसेज ऑफ संस्कृत मैन्यूस्क्रिप्ट— राजेन्द्र लाल मिश्र (कलकत्ता)
40. महावीर दिगंबर जैन पाण्डुलिपि संरक्षण केन्द्र— जयपुर (राजस्थान)
41. केन्द्रिय बौद्ध अध्ययन संस्थान— लेह
42. महाभारत संमोधन प्रतिष्ठान— बैंगलोर
43. D.K. जैन ओरियंटल रिसर्च इंस्टिट्यूट— अरहरा (बिहार)
44. B.L. इंस्टिट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी— दिल्ली
45. सेन्टर फॉर इडवांस स्टडीज इन संस्कृत— पुणे
46. इंस्टीट्यूट ऑफ एशियन स्टडीज— चेन्नई
47. श्री शारदा एजूकेशन सोसाइटी— चेन्नई
48. D.C.P. रामास्वामी अय्यर फाउण्डेशन— चेन्नई
49. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र (IGNCA)— दिल्ली
50. नागार्जुन बौद्ध फाउण्डेशन— गोरखपुर

संस्कृत के प्रमुख ग्रन्थों का संस्करण

1. रामायण— बड़ौदा ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट से सात भागों में प्रकाशित- G.H Bhatt (1960-75)
2. महाभारत— भण्डारकर ओरियन्टर रिसर्च इन्स्टीट्यूट पूणे महाराष्ट्र से सात भागों में प्रकाशित- V.S. Sukthankar (1919-1966)
3. न्यायमञ्जरी (जयन्तभट्ट)— ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट मैसूर (कर्नाटक) के०एस० वरदाचार्य (1969)
4. नाट्यशास्त्र— काव्यमाला सीरिज, निर्णयसागर प्रेस प्रथम संस्करण प्रकाशित (1894) बम्बई
   - अंग्रेजी अनुवाद- मनमोहन घोष (रायल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता-1950)
   - बड़ौदा से अभिनवगुप्त की टीका के साथ चार भाग में प्रकाशित।
5. भामह कृत काव्यालङ्कार— बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना से प्रकाशित।
6. उद्भट कृत अलंकारसार संग्रह— निर्णयसागर प्रेस से 1915 ई. में प्रकाशित।
7. वामन कृत काव्यालंकार सूत्र— निर्णयसागर प्रेस से वृति सहित प्रकाशित।
   - गोपेन्द्र भूपाल कृत कामधेनु टीका एवं हिन्दी व्याख्या सहित चौखम्बा से प्रकाशित।
8. रुद्रट कृत काव्यालङ्कार— नमिसाधु की टीका के साथ निर्णयसागर प्रेस से प्रकाशित (पुनर्मुद्रण-MLBD 1983)
9. ध्वन्यालोक— काव्यमाला में अभिनवगुप्त की लोचन टीका के साथ प्रकाशित-1911।
   - डॉ. कृष्णमूर्ति कृत अंग्रेजी अनुवाद।
10. काव्यमीमांसा— गायकवाड ओरियंटल सीरिज, बड़ौदा से प्रथम प्रकाशन, 1916
11. व्यक्तिविवेक— सुनील कुण्डे के सम्पादन में 1923 में कलकत्ता से प्रथम प्रकाशन।
   - के. कृष्णमूर्ति द्वारा अंग्रजी अनुवाद।
12. सरस्वती कण्ठाभरण— काव्यामाला में प्रकाशित।
   - तृतीय परिच्छेद तक रामसिंह की टीका।
   - चतुर्थ परिच्छेद पर जगद्धर की टीका। (चौखम्बा ओरियंटालिया से पुनर्मुद्रण)

13. भोजकृत शृंगारप्रकाश-एक अध्ययन— प्रभुदयालु अग्निहोत्री (भोपाल)
14. काव्यप्रकाश— निर्णयसागर प्रेस से प्रकाशित।
15. अलंकार सर्वस्व— द्विवेदी जी के व्याख्या के साथ चौखम्बा से प्रकाशित।
    - प्रथम संस्करण काव्यमाला में 1893 में प्रकाशित।
16. नाटक लक्षण रत्नकोश— डिलन के सम्पादन में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय 1937 में प्रथम प्रकाशन।
17. गुणचन्द्र कृत नाट्यदर्पण— गायकवाड ओरियंटल सीरिज, बड़ौदा 1929 में प्रकाशित।
18. मनुस्मृति- प्रथम मुद्रण कलकत्ता में 1813 ई.
19. याज्ञवल्क्यस्मृति- निर्णयसागर प्रेस, मुम्बई
20. अर्थशास्त्र- रामशास्त्री द्वारा 1909 ई. में इंडियन एंटिस्वेरी में अंग्रेजी अनुवाद के साथ प्रथम प्रकाशन।
21. कामन्दकीय नीतिसार- बिब्लियोग्राफिया इंडिका से 1849 ई.।
22. त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरिज 1912 ई. में प्रकाशन।
23. शुक्रनीति सार- चौखम्बा से हिन्दी व्याख्या संस्करण सहित प्रकाशित।
24. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास- प्रियव्रत शर्मा (चौखम्बा ओरियण्टालिया, वाराणसी)

व्याकरण शास्त्र संस्करण

1. भारतीय भाषाशास्त्रीय चिन्तन पीठिका— डॉ. विद्यानिवास मिश्र (बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना)
2. कृत्प्रत्यय विमर्श— डॉ. वीणा शर्मा (1996)
3. पाणिनी- ए सर्वे ऑफ रिसर्च— गोर्ज करडोना MLBD दिल्ली, 1980
4. पाणिनी कालीन भारतवर्ष— वासुदेव शरण अग्रवाल- वाराणसी, 1969
5. पतंजलिकालीन भारत— प्रभुदयालु अग्निहोत्री- बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्-पटना
6. इण्डिया in the टाइम ऑफ पतंजलि— B.N. पुरी-भारतीय विद्याभवन बाम्बे 1968 (2nd edn.)

संस्कत के प्रमुख कोषों का सम्पादन

1. मीमांसाकोषस्य सम्पादकः— केवलानन्दसरस्वती
2. पौराणिक कोषस्य सम्पादकः— राणाप्रसादशर्मा
3. रामायणस्य समीक्षात्मक संस्करण्— गैक्वाड प्राच्य विद्या शोध मन्दिरतः।
4. काव्यमाला सिरिज्— निर्णयसागरमुद्रणालयेन प्रकाशिता।
5. धर्मशास्त्र का इतिहास (History of Dharma Shastra) — पी.वी. काणे
6. काश्मीरशैवदर्शनबृहद्कोषस्य सम्पादकः— बलजिन्नाथ पण्डितः
7. वैययन्तीकोषः केन विरचितः- यादवप्रकाशेन।
8. भारतीय प्राचीन लिपिमाला (The Palaeography of India)— गौरीशङ्कर ओझा
9. नाट्यशास्त्रस्य आंग्लानुवादः— मनमोहनघोषः
10. Methodology in Indological Research- Sriman Narayan Murthy
11. न्यू कैटलोगोरस् कैटलोगोरम् (NCC)— वी. राघवन्।
12. The Mahabharata Revisited इत्यस्य सम्पादकः- आर.एन. दाण्डेकरः

• • •

प्रमुख भाष्यकार एवं ग्रन्थ

भाष्यकार	ग्रन्थ
सायणाचार्य	वेदार्थ प्रकाश
स्कन्दस्वामी	ऋगर्थदीपिका
महीधर	वेददीप (माध्यन्दिन सं.)
माधव	विवरण भाष्य (सामवेद)
गुणविष्णु	छान्दोग्यभाष्य (कौधुम शा.)
	अन्य-ब्राह्मण भाष्य, पारस्कर गु.सू. भाष्य
हलायुध	ब्राह्मणसर्वस्व (काण्व संहिता) मीमांसा-सर्वस्व, वैष्णवसर्वस्व, शैवसर्वस्व, पण्डित-सर्वस्व
भट्टभास्कर	ज्ञानयज्ञ (तैत्तिरीय संहिता)

- कात्यायन श्रौतसूत्र के भाष्यकार- **कर्काचार्य**
- आश्वलायन श्रौतसूत्र के भाष्यकार- **नारायण**
- आपस्तम्ब के भाष्यकार- **धूर्तस्वामी**
- कात्यायन के सर्वानुक्रमणिका की व्याख्या- **वेदार्थदीपिका**
- श्री मातवलेकर ने चारों वेदों पर (सुबोध) भाष्य लिखा।
- **'अति मूर्ख, नहि नहि अतिप्रपन्नं रहस्यम्'** यह वेदों के विषय में कहा है- **पं. मधुसूदन ओझा** ने
- आर्यसमाज- **दयानन्द सरस्वती**
- ब्रह्मसमाज- **राजा राममोहन राय**

वेदों पर विदेशी विद्वानों की व्याख्याएं एवं ग्रन्थ

मैक्समूलर— Vedic Hymns, History of the Ancient Sanskrit Literature.

ओल्डेनबर्ग, थॉमस— Vedic Hymns

पीटर्सन— Hymns from the Rigveda

ब्लूमफील्ड— द अथर्ववेदा एण्ड गोपथ ब्राह्मण

पीटर पीटर्सन— ऋग्वेद के स्तोत्र

रॉय और बाटलिंग— संस्कृत और जर्मन महाकोश

ग्रासमान— ऋग्वेदिक कोष

हिले ब्रान्ट— वैदिक डिक्शनरी

ह्विटनी— संस्कृत ग्रामर

मैकडॉनल/कीथ— (Vedic Index) वैदिक कोषों को दो भागों में विभक्त किया।

मैकडॉनल— 'वैदिक ग्रामर', 'वैदिक ग्रामर फॉर स्टूडेन्ट्स' संस्कृत ग्रामर फॉर स्टूडेन्ट्स, A Vedic reader for students

मैकडानल— (वैदिक मैथोलॉजी/वैदिक देवशास्त्र)

ब्लूमफील्ड— (Vedic Concrodonance) वैदिक मंत्र महासूची (वैदिक वाक्यकोश)

कीथ— 'रिलेशन एण्ड फिलॉस्फी ऑफ दि वेदाज़ एण्ड उपनिषद

मैक्समूलर— 'हिस्ट्री ऑफ दि एनसियेण्ट संस्कृत लिटरेचर'

मैक्समूलर— 'व्हट केन इट टीच अस'

वेबर— 'हिस्ट्री ऑफ द इण्डियन लिट्रेचर'।

विनटरनित्स— A History of Indian Literature

रूहाल्फ रॉथ— (Vedic Literature and History)

भारतीय विद्वान

कात्यायन	ऋक्सर्वानुक्रमणिका
दयानन्द	ऋग्वेदभाष्यभूमिका

मधुसूदन ओझा	वैदिक विज्ञान
गिरधरशर्मा चतुर्वेदी	भारतीय संस्कृति
आदिवेद	नीतिमंजरी
गोविन्द स्वामी	बौद्धायनीय धर्म विवरण (ऐतरेय ब्रा.)
वेद रहस्य	अरविन्द
यज्ञतत्वप्रकाश	चित्रस्वामी
शतपथब्राह्मण	याज्ञवल्क्य
डॉ. आनन्द कुमार शास्त्री	A New Approach to the Vedas
बालगंगाधर तिलक	Arctic home in the Vedas, Orion
डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल	Vision in Long Darkness Thousand syllabled speech, Vedic Lectures
गुरूदत्त विद्यार्थी	The Terminology of the Vedas, Hymns to the Mystic Fire.
योगी अरविन्द घोष	The Secret of the Vedas
डॉ. सत्यप्रकाश	Founders of Sciences in the Ancient India
डॉ. आनन्द कुमार स्वामी	A New Approach of the Vedas
डॉ. विष्णुकुमार शर्मा	वैदिक सृष्टि उत्पत्ति रहस्य (Big Bang Theory) महाविस्फोट
डॉ. पी.एल. भार्गव	Rigvedic Geography of India, India in the Vedic Age
N.N. Law	Age of the Rigveda
आर.सी. मजूमदार	Vedic Age
डॉ. रामगोपाल	Indian of the Vedic Kalpsutras
भारतीय कृष्णतीर्थ जगद्गुरू	Vedic Mathmatic
डॉ. दहिकर	Vedic Bibliography
डॉ. मङ्गलदेवशास्त्री	ऐतरेयारण्यक-पर्यालोचनम्
लुई रेनु	आधुनिक वैदिक व्याकरण
सत्यव्रत शास्त्री	(सामवेदीयविद्वान) निरुक्तलोचनम्, ऐतरेयालोचनम्।

• • •

विविधसमासानामावली

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
भूतपूर्वः	पूर्वं भूतः	पूर्व अम् भूत सु	केवलः
वागर्थाविव	वागर्थौ इव	वागर्थ औ इव	केवलः
अधिहरि	हरौ इति	हरि ङि अधि	अव्ययीभावः
उपकृष्णम्	कृष्णस्य समीपम्	कृष्ण ङस् उप	अव्ययीभावः
अधिगोपम्	गोपि अधि	गोपा ङि अधि	अव्ययीभावः
सुमद्रम्	मद्राणां समृद्धिः	मद्र आम् सु	अव्ययीभावः
दुर्यवनम्	यवनानां व्यृद्धिः	यवन् आम् दुर्	अव्ययीभावः
निर्मक्षिकम्	मक्षिकाणामभावः	मक्षिका आम् निर्	अव्ययीभावः
अतिहिमम्	हिमस्यात्ययः	हिम ङस् अति	अव्ययीभावः
अतिनिद्रम्	निद्रा सम्प्रति न युज्यते	निद्रा सु अति	अव्ययीभावः
अनुविष्णु	विष्णोः पश्चाद्	विष्णु ङसि अनु	अव्ययीभावः
अनुरूपम्	रूपस्य योग्यम्	रूप ङस् अनु	अव्ययीभावः
प्रत्यर्थम्	अर्थम् अर्थं प्रति	अर्थ अम् प्रति	अव्ययीभावः
प्रतिवृक्षम्	वृक्षं वृक्षं प्रति	वृक्ष अम् प्रति	अव्ययीभावः
यथाशक्ति	शक्तिमनतिक्रम्य	शक्ति अम् यथा	अव्ययीभावः
सहरि	हरेः सादृश्यम्	हरि टा सह	अव्ययीभावः
अनुज्येष्ठम्	ज्येष्ठस्यानुपूर्व्येण	ज्येष्ठ ङस् अनु	अव्ययीभावः
साग्नि	अग्निग्रन्थपर्यन्तम् (अधीते)	अग्नि टा सह	अव्ययीभावः
सरामायणम्	रामायणपर्यन्तम्	रामायण टा सह	अव्ययीभावः
पञ्चगङ्गम्	पञ्चानां गङ्गानां समाहारः	पञ्चन् आम् गङ्गा आम्	अव्ययीभावः
द्वियमुनम्	द्वयोः यमुनयोः समाहारः	द्वि ओस् यमुना ओस्	अव्ययीभावः
उपशरदम्	शरदः समीपम्	शरद् ङस् उप	अव्ययीभावः
प्रतिविपाशम्	विपाशाम् अभिमुखम्	विपाशा अम् प्रति	अव्ययीभावः
उपजरसम्	जरायाः समीपम्	जरा ङस् उप	अव्ययीभावः
उपराजम्	राज्ञः समीपम्	राजन् ङस् उप	अव्ययीभावः
अध्यात्मम्	आत्मनि इति	आत्मन् ङि अधि	अव्ययीभावः
सचक्रम्	चक्रेण युगपत्	चक्र टा सह	अव्ययीभावः
ससखि	सख्या सह	सखि टा सह	अव्ययीभावः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
उपसमिधम्	समिधः समीपे	समिध् ङस् उप	अव्ययीभावः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
उपसमित्	समिधः समीपे	समित् ङस् उप	अव्ययीभावः
सक्षत्रम्	क्षत्राणां सम्पत्तिः	क्षत्र टा सह	अव्ययीभावः
सतृणम्	तृणमप्यपरित्यज्य	तृण टा सह	अव्ययीभावः
उपचर्मम्	चर्मणः समीपे	चर्मन् ङस् उप	अव्ययीभावः
कृष्णश्रितः	कृष्णं श्रितः	कृष्ण अम् श्रित सु	द्वितीयातत्पु.
दुःखातीतः	दुःखमतीतः	दुःख अम् अतीत सु	द्वितीयातत्पु.
नरकपतितः	नरकं पतितः	नरक अम् पतित सु	द्वितीयातत्पु.
स्वर्गगतः	स्वर्गं गतः	स्वर्ग अम् गत सु	द्वितीयातत्पु.
कूपात्यस्तः	कूपम् अत्यस्तः	कूप अम् अत्यस्त सु	द्वितीयातत्पु.
आशातीतः	आशाम् अतीतः	आशा अम् अतीत सु	द्वितीयातत्पु.
ग्रामगतः	ग्रामं गतः	ग्राम अम् गत सु	द्वितीयातत्पु.
सुखप्राप्तः	सुखं प्राप्तः	सुख अम् प्राप्त सु	द्वितीयातत्पु.
सङ्कटापन्नः	सङ्कटम् आपन्नः	सङ्कट अम् आपन्न सु	द्वितीयातत्पु.
शङ्कुलाखण्डः	शङ्कुलया खण्डः	शङ्कुला टा खण्ड" सु	तृतीयातत्पु.
धान्यार्थः	धान्येन अर्थः	धान्य टा अर्थ सु	तृतीयातत्पु.
मासपूर्वः	मासेन पूर्वः	मास टा पूर्व सु	तृतीयातत्पु.
पितृसदृशः	पित्रा सदृशः	पितृ टा सदृश सु	तृतीयातत्पु.
हरित्रातः	हरिणा त्रातः	हरि टा त्रात सु	तृतीयातत्पु.
नखभिन्नः	नखैर्भिन्नः	नख भिस् भिन्न सु	तृतीयातत्पु.
नखनिर्भिन्नः	नखैर्निर्भिन्नः	नख भिस् निर् भिन्न सु	तृतीयातत्पु.
यूपदारु	यूपाय दारुः	यूप ङे दारु सु	चतुर्थीतत्पु.
कुण्डलहिरण्यम्	कुण्डलाय हिरण्यम्	कुण्डल ङे हिरण्य सु	चतुर्थीतत्पु.
द्विजार्थः	द्विजाय अर्थः	द्विज ङे अर्थ सु	चतुर्थीतत्पु.
भूतबलिः	भूतेभ्यो बलिः	भूत भ्यस् बलि सु	चतुर्थीतत्पु.
गोहितम्	गोभ्यो हितम्	गो भ्यस् हित सु	चतुर्थीतत्पु.
गोरक्षितम्	गोभ्यो रक्षितम्	गो भ्यस् रक्षित सु	चतुर्थीतत्पु.
गोसुखम्	गोभ्यः सुखम्	गो भ्यस् सुख सु	चतुर्थीतत्पु.
रक्षापुरुषः	रक्षायै पुरुषः	रक्षा ङे पुरुष सु	चतुर्थीतत्पु.
दानपात्रम्	दानाय पात्रम्	दान ङे पात्र सु	चतुर्थीतत्पु.
चौरभयम्	चौराद् भयम्	चौर ङसि भय सु	पञ्चमीतत्पु.
बन्धनमुक्तः	बन्धनात् मुक्तः	बन्धन ङसि मुक्त सु	पञ्चमीतत्पु.
आकाशपतितः	आकाशात् पतितः	आकाश ङसि पतित सु	पञ्चमीतत्पु.
अन्तिकादागतः	अन्तिकाद् आगतः	अन्तिक ङसि आगत सु	पञ्चमीतत्पु.
अभ्यासादागतः	अभ्यासाद् आगतः	अभ्यास ङसि आगत सु	पञ्चमीतत्पु.
दूरादागतः	दूराद् आगतः	दूर ङसि आगत सु	पञ्चमीतत्पु.

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
जलजातम्	जलात् जातम्	जल ङसि जात सु	पञ्चमीतत्पु.
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
स्वर्गपतितः	स्वर्गात् पतितः	स्वर्ग ङसि पतित सु	पञ्चमीतत्पु.
रोगमुक्तः	रोगात् मुक्तः	रोग ङसि मुक्त सु	पञ्चमीतत्पु.
स्तोकान्मुक्तः	स्तोकात् मुक्तः	स्तोक ङसि मुक्त सु	पञ्चमीतत्पु.
राजपुरुषः	राज्ञः पुरुषः	राजन् ङस् पुरुष सु	षष्ठीतत्पु.
राजपुत्रः	राज्ञः पुत्रः	राजन् ङस् पुत्र सु	षष्ठीतत्पु.
राजमाता	राज्ञः माता	राजन् ङस् माता सु	षष्ठीतत्पु.
राजदूतः	राज्ञः दूतः	राजन् ङस् दूत सु	षष्ठीतत्पु.
पूर्वकायः	पूर्वं कायस्य	पूर्व सु काय ङस्	षष्ठीतत्पु.
अर्धर्चः	अर्धम् ऋचः	अर्ध सु ऋच् ङस्	षष्ठीतत्पु.
अर्धपिप्पली	अर्धं पिप्पल्याः	अर्ध सु पिप्पली ङस्	षष्ठीतत्पु.
राजदन्तः	दन्तानां राजा	दन्त आम् राजन् सु	षष्ठीतत्पु.
विद्यार्थी	विद्यायाः अर्थी	विद्या ङस् अर्थी सु	षष्ठीतत्पु.
धनार्थी	धनस्य अर्थी	धन ङस् अर्थी सु	षष्ठीतत्पु.
विद्यालयः	विद्यायाः आलयः	विद्या ङस् आलय सु	षष्ठीतत्पु.
देवालयः	देवस्य आलयः	देव ङस् आलय सु	षष्ठीतत्पु.
भवदाज्ञाः	भवतः आज्ञा	भवत् ङस् आज्ञा सु	षष्ठीतत्पु.
वृक्षच्छाया	वृक्षस्य छाया	वृक्ष ङस् छाया सु	षष्ठीतत्पु.
देवपूजकः	देवानां पूजकः	देव आम् पूजक सु	षष्ठीतत्पु.
हिमालयः	हिमस्य आलयः	हिम ङस् आलय सु	षष्ठीतत्पु.
औषधालयः	औषधीनाम् आलयः	औषधि आम् आलय सु	षष्ठीतत्पु.
रामेश्वरः	रामस्य ईश्वरः	राम ङस् ईश्वर सु	षष्ठीतत्पु.
देवगुरुः	देवानां गुरुः	देव आम् गुरु सु	षष्ठीतत्पु.
देवराजः	देवानां राजा	देव आम् राजन् सु	षष्ठीतत्पु.
राजहंसः	हंसानां राजा	हंस आम् राजन् सु	षष्ठीतत्पु.
राजवैद्यः	वैद्यानां राजा	वैद्य आम् राजन् सु	षष्ठीतत्पु.
सीतापतिः	सीतायाः पतिः	सीता ङस् पति सु	षष्ठीतत्पु.
शास्त्रनिपुणः	शास्त्रेषु निपुणः	शास्त्र सुप् निपुण सु	सप्तमीतत्पु.
अक्षशौण्डः	अक्षेषु शौण्डः	अक्ष सुप् शौण्ड सु	सप्तमीतत्पु.
अक्षधूर्तः	अक्षेषु धूर्तः	अक्ष सुप् धूर्त सु	सप्तमीतत्पु.
चक्रबन्धः	चक्रे बन्धः	चक्र ङि बन्ध सु	सप्तमीतत्पु.
नरोत्तमः	नरेषु उत्तमः	नर सुप् उत्तम सु	सप्तमीतत्पु.
पौर्वशालः	पूर्वस्यां शालायां भवः	पूर्वा ङि शाला ङि	कर्मधारयः
पूर्वशाला	पूर्वा शाला	पूर्वा सु शाला सु	कर्मधारयः
परमराजः	परमश्च असौ राजा	परम सु राजन् सु	कर्मधारयः
महाराजः	महान् च असौ राजा	महत् सु राजन् सु	कर्मधारयः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
संख्यातरात्रः	संख्याताः रात्रयः	संख्याता जस् रात्रि जस्	कर्मधारयः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
सर्वरात्रः	सर्वाः रात्रयः	सर्वा जस् रात्रि जस्	कर्मधारयः
नीलोत्पलम्	नीलं च तत् उत्पलम्	नील सु उत्पल सु	कर्मधारयः
कृष्णसर्पः	कृष्णः च असौ सर्पः	कृष्ण सु सर्प सु	कर्मधारयः
घनश्यामः	घन इव श्यामः	घन सु श्याम् सु	कर्मधारयः
शाकपार्थिवः	शाक प्रियः पार्थिवः	शाक प्रिय सु पार्थिव सु	कर्मधारयः
देवब्राह्मणः	देवपूजक : ब्राह्मणः	देवपूजक सु ब्राह्मण सु	कर्मधारयः
नरसिंहः	नर इव सिंहः	नर सु सिंह सु	कर्मधारयः
विद्याधनम्	विद्या एव धनम्	विद्या सु धन सु	कर्मधारयः
मुखचन्द्रः	मुखम् एव चन्द्रः	मुख सु चन्द्र सु	कर्मधारयः
पुरुषव्याघ्रः	पुरुषो व्याघ्रः इव	पुरुष सु व्याघ्र सु	कर्मधारयः
चन्द्रमुखम्	चन्द्र इव मुखम्	चन्द्र सु मुख सु	कर्मधारयः
नीलघटः	नीलश्च असौ घटः	नील सु घट सु	कर्मधारयः
श्रेष्ठपुरुषाः	श्रेष्ठाः पुरुषाः	श्रेष्ठ जस् पुरुष जस्	कर्मधारयः
नीलाकाशम्	नीलम् च तद् आकाशम्	नील सु आकाश सु	कर्मधारयः
महादेवः	महान् च असौ देवः	महत् सु देव सु	कर्मधारयः
प्रियसखः	प्रियश्च असौ सखाः	प्रिय सु सखि सु	कर्मधारयः
महापुरुषः	महान् चासौ पुरुषः	महत् सु पुरुष सु	कर्मधारयः
पञ्चगवम्	पञ्चानां गवां समाहारः	पञ्चन् आम् गोआम्	समाहारद्विगुः
त्रिलोकी	त्रयाणां लोकानां समाहारः	त्रि आम् लोक आम्	समाहारद्विगुः
पञ्चपात्रम्	पञ्चानां पात्राणां समाहारः	पञ्चन् आम् पात्र आम्	समाहारद्विगुः
त्रिभुवनम्	त्रयाणां भुवनानां समाहारः	त्रि आम् भवन आम्	समाहारद्विगुः
त्रिनेत्रम्	त्रयाणां नेत्राणां समाहारः	त्रि आम् नेत्र आम्	समाहारद्विगुः
त्रिरात्रम्	तिसृणाां रात्रीणां ससाहारः	त्रि आम् रात्रि आम्	समाहारद्विगुः
द्व्यङ्गुलम्	द्वयोः अङ्गुल्योः समाहारः	द्वि ओस् अङ्गुली ओस्	समाहारद्विगुः
षाण्मातुरः	षण्णां मातृणामपत्यं पुमान्	ष्ष आम् मातृ आम्	तद्धितार्थद्विगुः
द्वैमातुरः	द्वयोः मात्रोः अपत्यं पुमान्	द्वि ओस् मातृ ओस्	तद्धितार्थद्विगुः
सप्तर्षयः	सप्त च ते ऋषयः	सप्तन् जस् ऋषि जस्	कर्मधारयः
अनुदरम्	अल्पमुदरम्	न उदर सु	नञ्
असुराः	सुरविरोधिनः	न सुर जस्	नञ्
प्राचार्यः	प्रगतः आचार्यः	प्रगत सु आचार्य सु	नञ्
अब्राह्मणः	न ब्राह्मणः	न ब्राह्मण सु	नञ्
अनश्वः	न अश्वः	न अश्व सु	नञ्
असन्देहः	न सन्देहः	न सन्देहः सु	नञ्
कुपुरुषः	कुत्सितः पुरुषः	कुत्सित सु पुरुष सु	प्रादिः
अवकोकिलः	अवकृष्टः कोकिलया	अव कोकिला टा	प्रादिः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
निष्कौशाम्बिः	निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः	निस् कौशाम्बी ङस्	प्रादिः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
सुपुरुषः	शोभनः पुरुषः	शोभन सु पुरुष सु	प्रादिः
अतिमालः	अतिक्रान्तो मालाम्	अति माला अम्	प्रादिः
निरङ्गुलम्	निर्गतम् अङ्गुलिभ्यः	निर् अङ्गुलि भ्यस्	प्रादिः
कुम्भकारः	कुम्भं करोतीति	कुम्भ ङस् कार सु	उपपद.
पुत्रकामः	पुत्रं कामयते	पुत्र अम् काम् सु	उपपद.
तन्तुवायः	तन्तुं वयतीति	तन्तु अम् वाय् सु	उपपद.
प्राप्तोदकः	प्राप्तम् उदकं यम् सः	प्राप्त सु उदक सु	बहुव्रीहिः
पीताम्बरः	पीतम् अम्बरम् यस्य सः	पीत सु अम्बर सु	बहुव्रीहिः
कण्ठेकालः	कण्ठे कालः यस्य सः	कण्ठ ङि काल सु	बहुव्रीहिः
प्रपर्णः	प्रपतितानि पर्णानि यस्मात्	प्रपतित जस् पर्ण जस्	बहुव्रीहिः
अपुत्रः	अविद्यमानो पुत्रः यस्य सः	अविद्यमान सु पुत्र सु	बहुव्रीहिः
चित्रगुः	चित्रा गावो यस्य सः	चित्रा जस् गो जस्	बहुव्रीहिः
पञ्चगवधनः	पञ्चगावो धनं यस्य सः	पञ्चगो जस् धन सु	बहुव्रीहिः
रूपवद्भार्यः	रूपवती भार्या यस्य सः	रूपवती सु भार्या सु	बहुव्रीहिः
स्त्रीप्रमाणः	स्त्री प्रमाणी यस्य सः	स्त्री सु प्रमाणी सु	बहुव्रीहिः
दीर्घसक्थः	दीर्घे सक्थिनी यस्य सः	दीर्घ औ सक्थि औ	बहुव्रीहिः
व्याघ्रपात्	व्याघ्रस्येव पादौ यस्य	व्याघ्र ङस् पाद औ	बहुव्रीहिः
हस्तिपादः	हस्तिन इव पादौ यस्य	हस्तिन् ङस् पाद औ	बहुव्रीहिः
कुसूलपादः	कुसूलस्य इव पादौ यस्य	कुसूल ङस् पाद औ	बहुव्रीहिः
द्विपात्	द्वौ पादौ यस्य सः	द्वि औ पाद औ	बहुव्रीहिः
सुपात्	शोभनौ पादौ यस्य सः	शोभन औ पाद औ	बहुव्रीहिः
जलजाक्षी	जलजे इव अक्षिणी यस्याः	जलज औ अक्षि औ	बहुव्रीहिः
द्विमूर्ध्नः	द्वौ मूर्धानौ यस्य	द्वि और मूर्धन् औ	बहुव्रीहिः
त्रिमूर्धः	त्रयः मूर्धानो यस्य	त्रि जस् मूर्धन् जस्	बहुव्रीहिः
अन्तर्लोमः	अन्तर्लोमानि यस्य	अन्तर्लोम जस्	बहुव्रीहिः
बहिर्लोमः	बहिर्लोमानि यस्य	बहिः लोम जस्	बहुव्रीहिः
उत्काकुत्	उद्गतं काकुदं यस्य	उद्गत सु काकुद सु	बहुव्रीहिः
विकाकुत्	विगतं काकुदं यस्य	विगत सु काकुद सु	बहुव्रीहिः
पूर्णकाकुत्	पूर्णं काकुदं यस्य	पूर्ण सु काकुद सु	बहुव्रीहिः
प्राप्तधनः	प्राप्तं धनं येन सः	प्राप्त सु धन सु	बहुव्रीहिः
लब्धकीर्तिः	लब्धा कीर्तिः येन	लब्धा सु कीर्ति सु	बहुव्रीहिः
दत्तराज्यः	दत्तं राज्यं यस्मै सः	दत्त सु कीर्ति सु	बहुव्रीहिः
यशोधनः	यशः एव धनं यस्य सः	यशस् सु राज्य सु	बहुव्रीहिः
सुहृद्	शोभनं हृदयं यस्य सः	शोभन सु हृदय सु	बहुव्रीहिः
दुहृद्	दुष्टं हृदयं यस्य सः	दुष्ट सु हृदय सु	बहुव्रीहिः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
प्रियसर्पिष्कः	प्रिय सर्पिः यस्य	प्रिय सु सर्पिष् सु	बहुव्रीहिः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
युक्तयोगः	युक्तो योगो यस्य सः	युक्त सु योग सु	बहुव्रीहिः
महायशाः	महत् यशो यस्य सः	महत् सु यशस् सु	बहुव्रीहिः
महायशस्कः	महद् यशो यस्य सः	महत् सु यशस् सु	बहुव्रीहिः
पीयूषपाणिः	पीयूषं पाणौ यस्य सः	पीयूष सु पाणि ङि	बहुव्रीहिः
चन्द्रशेखरः	चन्द्रः शेखरे यस्य सः	चन्द्र सु शेखर ङि	बहुव्रीहिः
गदाहस्तः	गदा हस्ते यस्य सः	गदा सु हस्त ङि	बहुव्रीहिः
चक्रपाणिः	चक्रं पाणौ यस्य सः	चक्रसु पाणि ङि	बहुव्रीहिः
विज्ञपितृकः	विज्ञः पिता यस्य सः	विज्ञ सु पितृ सु	बहुव्रीहिः
समृद्धमहीकः	समृद्धा महीः यस्य सः	समृद्धा सु मही सु	बहुव्रीहिः
दृढप्रतिज्ञाः	दृढा प्रतिज्ञा यस्य सः	दृढ सु प्रतिज्ञा सु	बहुव्रीहिः
वक्रदन्तः	वक्रः दन्तः यस्य सः	वक्र सु दन्त सु	बहुव्रीहिः
कृष्णकेशः	कृष्णाः केशाः यस्य सः	कृष्ण जस् के श जस्	बहुव्रीहिः
निर्भयः	निर्गतम् भयम् यस्मात् सः	निर्गत सु भय सु	बहुव्रीहिः
महात्मा	महान् आत्मा यस्य सः	महत् सु आत्मन् सु	बहुव्रीहिः
दशाननः	दश आननानि यस्य सः	दशन् जस् आनन जस्	बहुव्रीहिः
पञ्चाननः	पञ्च आननानि यस्य सः	पञ्चन् जस् आनन जस्	बहुव्रीहिः
हतशत्रुः	हताः शत्रवः येन सः	हत जस् शत्रु जस्	बहुव्रीहिः
सानुजः	अनुजेन सह यः	अनुज टा सह	बहुव्रीहिः
धनुष्पाणिः	धनुः पाणौ यस्य सः	धनुष् सु पाणि ङि	बहुव्रीहिः
केशाकेशि	केशेषु केशेषु गृहीत्वा प्रवृत्तम् इदं युद्धम्	केश सुप् केश सुप्	बहुव्रीहिः
दण्डादण्डि	दण्डैः दण्डैः प्रहृत्य प्रवृतमिदं युद्धम्	दण्ड भिस् दण्ड भिस्	बहुव्रीहिः
मुष्टामुष्टिः	मुष्टिभिः मुष्टिभिः प्रहृत्य प्रवृत्तमिंद युद्धम्	मुष्टि भिस् मुष्टि भिस्	बहुव्रीहिः
निर्जनः	निर्गताः जनाः यस्मात् स्थानात्	निर्गत जस् जन जस्	बहुव्रीहिः
कल्याणधर्मा	कल्याणो धर्मो यस्य सः	कल्याण सु धर्म सु	बहुव्रीहिः
रक्ताक्षः	रक्ते अक्षिणी यस्य सः	रक्त औ अक्षि औ	बहुव्रीहिः
पद्मनाभः	पद्म नाभौ यस्य सः	पद्म सु नाभि ङि	बहुव्रीहिः
उपदशाः	दशानां समीपे ये सन्ति	दश आम् उप	बहुव्रीहिः
करधनः	करे स्थितं धनं यस्य सः	कर ङि धन सु	बहुव्रीहिः
चन्द्रमुखी	चन्द्र इव मुखं यस्याः सा	चन्द्र सु मुख सु	बहुव्रीहिः
सूर्यप्रभः	सूर्यस्य प्रभा इव प्रभा यस्य	सूर्य सु प्रभा सु	बहुव्रीहिः
पुण्डरीकाक्षः	पुण्डरीक इव अक्षिणी यस्य	पुण्डरीक सु अक्षि औ	बहुव्रीहिः
अधनः	अविद्यमानं धनं यस्य	न धन सु	बहुव्रीहिः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
अर्थधर्मौ	अर्थश्च धर्मश्च	अर्थ सु धर्म सु	इतरेतरद्वन्द्वः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
हरिहरौ	हरिश्च हरश्च	हरि सु हर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
ईशकृष्णौ	ईशश्च कृष्णश्च	ईश सु कृष्ण सु	इतरेतरद्वन्द्वः
प्रावृट्शरदौ	प्रावृट् च शरच्च	प्रावृष् सु शरत् सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रामलक्ष्मणौ	रामश्च लक्ष्मणश्च	राम सु लक्ष्मण सु	इतरेतरद्वन्द्वः
बालवृद्धौ	बालश्च वृद्धश्च	बाल सु वृद्ध सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रामकृष्णमोहनाः	रामश्च कृष्णश्च मोहनश्च	राम सु कृष्ण सु मोहन सु	इतरेतरद्वन्द्वः
ब्रह्मविष्णुमहेशाः	ब्रह्मा च विष्णुश्च	ब्रह्मन् सु विष्णु सु	
	महेशश्च	महेश सु	इतरेतरद्वन्द्वः
शिवरामौ	शिवश्च रामश्च	शिव सु राम सु	इतरेतरद्वन्द्वः
गङ्गायमुने	गङ्गा च यमुना च	गङ्गा सु यमुना सु	इतरेतरद्वन्द्वः
हर्षोल्लासौ	हर्षश्च उल्लासश्च	हर्ष सु उल्लास सु	इतरेतरद्वन्द्वः
नरनार्यः	नराश्च नार्यश्च	नर जस् नारी जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
स्वामिसेवकाः	स्वामिनश्च सेवकाश्च	स्वामिन् जस् सेवक जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
रवीन्द्रगान्धिनौ	रवीन्द्रश्च गान्धी च	रवीन्द्र सु गान्धिन् सु	इतरेतरद्वन्द्वः
शिक्षादीक्षे	शिक्षा च दीक्षा च	शिक्षा सु दीक्षा सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पुष्पफलानि	पुष्पाणि च फलानि च	पुष्प जस् फल जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
पूर्वापरौ	पूर्वश्च अपरश्च	पूर्व सु अपर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
बन्धमोक्षौ	बन्धश्च मोक्षश्च	बन्ध सु मोक्ष सु	इतरेतरद्वन्द्वः
नामरूपे	नाम च रूपं च	नाम सु रूप सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पार्वतीपरमेश्वरौ	पार्वती च परमेश्वरश्च	पार्वती सु परमेश्वर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धर्मार्थकाममोक्षाः	धर्मश्च अर्थश्च	धर्म सु अर्थ सु काम सु	
	कामश्च मोक्षश्च	मोक्ष सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धनजनयौवनानि	धनं च जनश्च यौवनञ्च	धन सु जन सु यौवन सु	इतरेतरद्वन्द्वः
कन्दमूलफलानि	कन्दं च मूलं च फलं च	कन्द सु जन सु फल सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पुत्रकन्ये	पुत्रश्च कन्या च	पुत्र सु कन्या सु	इतरेतरद्वन्द्वः
इन्द्राग्नी	इन्द्रश्च अग्निश्च	इन्द्र सु अग्नि सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रमावाण्यौ	रमा च वाणी च	रमा सु वाणी सु	इतरेतरद्वन्द्वः
अहोरात्रः	अहश्च रात्रिश्च	अहन् सु रात्रि सु	इतरेतरद्वन्द्वः
द्वादश	द्वौ च दश च	द्वि औ दशन् जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
अष्टाविंशतिः	अष्ट च विंशतिश्च	द्वि औ दशन् जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
कुक्कुटमयूर्यौ	कुक्कुटश्च मयूरी च	कुक्कुट सु मयूरी सु	इतरेतरद्वन्द्वः
मयूरीकुक्कुटौ	मयूरी च कुक्कुटश्च	मयूरी सु कुक्कुट सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धवखदिरौ	धवश्च खदिरश्च	धव सु खदिर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पाणिपादम्	पाणी च पादौ च	पाणि औ पाद औ	समाहारद्वन्द्वः
मार्दङ्गिक वैणविकौ	मार्दङ्गिकश्च वैणविकश्च	मार्दङ्गिक सु वैणविक सु	इतरेतरद्वन्द्वः

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
रथिकाश्वारोहम्	रथिकाश्च अश्वारोहाश्च	रथिक जस् अश्वरोहीन् जस्	समाहारद्वन्द्वः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
वाक्त्वचम्	वाक् च त्वक् च	वाच् सु त्वच् सु	समाहारद्वन्द्वः
त्वक्स्रजम्	त्वक् च स्रक् च	त्वच् सु स्रज् सु	समाहारद्वन्द्वः
शमीदृषदम्	शमी च दृषद् च	शमी सु दृषद् सु	समाहारद्वन्द्वः
वाक्त्विषम्	वाक् च त्विट च	वाच् सु त्विष् सु	समाहारद्वन्द्वः
छत्रोपानहम्	छत्रश्च उपानच्च	छत्र सु उपानह् सु	समाहारद्वन्द्वः
हस्तपादम्	हस्तौ च पादौ च	हस्त औ पाद औ	समाहारद्वन्द्वः
भेरीपटहम्	भेरी च पटहम् च	भेरी सु पटह सु	समाहारद्वन्द्वः
रथाश्वम्	रथाश्च अश्वाश्च	रथ जस् अश्व जस्	समाहारद्वन्द्वः
अहिनकुलम्	अहिश्च नकुलश्च	अहि सु नकुल सु	समाहारद्वन्द्वः
शस्त्रास्त्रम्	शस्त्रञ्च अस्त्रञ्च	शस्त्र सु अस्त्र सु	समाहारद्वन्द्वः
अहनिर्शम्	अहश्च निशा च	अहन् सु निशा सु	समाहारद्वन्द्वः
यूकालिक्षम्	यूकाश्च लिक्षाश्च	यूका जस् लिक्षा जस्	समाहारद्वन्द्वः
पितरौ	माता च पिता च	मातृ सु पितृ सु	एकशेषः
बालकाः	बालकश्च बालकश्च बालकश्च	बालक सु बालक सु बालक सु	एकशेषः
रामौ	रामश्च रामश्च	राम सु राम सु	एकशेषः
रामाः	रामश्च रामश्च रामश्च	राम सु राम सु राम सु	एकशेषद्वन्द्वः

• • •

समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिकविग्रहः	समासः
अर्थधर्मौ	अर्थश्च धर्मश्च	अर्थ सु धर्म सु	इतरेतरद्वन्द्वः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
हरिहरौ	हरिश्च हरश्च	हरि सु हर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
ईशकृष्णौ	ईशश्च कृष्णश्च	ईश सु कृष्ण सु	इतरेतरद्वन्द्वः
प्रावृट्शरदौ	प्रावृट् च शरच्च	प्रावृष् सु शरत् सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रामलक्ष्मणौ	रामश्च लक्ष्मणश्च	राम सु लक्ष्मण सु	इतरेतरद्वन्द्वः
बालवृद्धौ	बालश्च वृद्धश्च	बाल सु वृद्ध सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रामकृष्णमोहनाः	रामश्च कृष्णश्च मोहनश्च	राम सु कृष्ण सु मोहन सु	इतरेतरद्वन्द्वः
ब्रह्मविष्णुमहेशाः	ब्रह्मा च विष्णुश्च	ब्रह्मन् सु विष्णु सु	
	महेशश्च	महेश सु	इतरेतरद्वन्द्वः
शिवरामौ	शिवश्च रामश्च	शिव सु राम सु	इतरेतरद्वन्द्वः
गङ्गायमुने	गङ्गा च यमुना च	गङ्गा सु यमुना सु	इतरेतरद्वन्द्वः
हर्षोल्लासौ	हर्षश्च उल्लासश्च	हर्ष सु उल्लास सु	इतरेतरद्वन्द्वः
नरनार्यः	नराश्च नार्यश्च	नर जस् नारी जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
स्वामिसेवकाः	स्वामिनश्च सेवकाश्च	स्वामिन् जस् सेवक जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
रवीन्द्रगान्धिनौ	रवीन्द्रश्च गान्धी च	रवीन्द्र सु गान्धिन् सु	इतरेतरद्वन्द्वः
शिक्षादीक्षे	शिक्षा च दीक्षा च	शिक्षा सु दीक्षा सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पुष्पफलानि	पुष्पाणि च फलानि च	पुष्प जस् फल जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
पूर्वापरौ	पूर्वश्च अपरश्च	पूर्व सु अपर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
बन्धमोक्षौ	बन्धश्च मोक्षश्च	बन्ध सु मोक्ष सु	इतरेतरद्वन्द्वः
नामरूपे	नाम च रूपं च	नाम सु रूप सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पार्वतीपरमेश्वरौ	पार्वती च परमेश्वरश्च	पार्वती सु परमेश्वर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धर्मार्थकाममोक्षाः	धर्मश्च अर्थश्च	धर्म सु अर्थ सु काम सु	
	कामश्च मोक्षश्च	मोक्ष सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धनजनयौवनानि	धनं च जनश्च यौवनञ्च	धन सु जन सु यौवन सु	इतरेतरद्वन्द्वः
कन्दमूलफलानि	कन्दं च मूलं च फलं च	कन्द सु जन सु फल सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पुत्रकन्ये	पुत्रश्च कन्या च	पुत्र सु कन्या सु	इतरेतरद्वन्द्वः
इन्द्राग्नी	इन्द्रश्च अग्निश्च	इन्द्र सु अग्नि सु	इतरेतरद्वन्द्वः
रमावाण्यौ	रमा च वाणी च	रमा सु वाणी सु	इतरेतरद्वन्द्वः
अहोरात्रः	अहश्च रात्रिश्च	अहन् सु रात्रि सु	इतरेतरद्वन्द्वः
द्वादश	द्वौ च दश च	द्वि औ दशन् जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
अष्टाविंशतिः	अष्ट च विंशतिश्च	द्वि औ दशन् जस्	इतरेतरद्वन्द्वः
कुक्कुटमयूर्यौ	कुक्कुटश्च मयूरी च	कुक्कुट सु मयूरी सु	इतरेतरद्वन्द्वः
मयूरीकुक्कुटौ	मयूरी च कुक्कुटश्च	मयूरी सु कुक्कुट सु	इतरेतरद्वन्द्वः
धवखदिरौ	धवश्च खदिरश्च	धव सु खदिर सु	इतरेतरद्वन्द्वः
पाणिपादम्	पाणी च पादौ च	पाणि औ पाद औ	समाहारद्वन्द्वः
मार्दङ्गिक वैणविकौ	मार्दङ्गिकश्च वैणविकश्च	मार्दङ्गिक सु वैणविक सु	इतरेतरद्वन्द्वः

समस्तपदम्	**लौकिकविग्रहः**	**अलौकिकविग्रहः**	**समासः**
रथिकाश्वारोहम्	रथिकाश्च अश्वारोहाश्च	रथिक जस् अश्वरोहीन् जस्	समाहारद्वन्द्वः
समस्तपदम्	लौकिकविग्रहः	अलौकिक विग्रहः	समासः
वाक्त्वचम्	वाक् च त्वक् च	वाच् सु त्वच् सु	समाहारद्वन्द्वः
त्वक्स्रजम्	त्वक् च स्रक् च	त्वच् सु स्रज् सु	समाहारद्वन्द्वः
शमीदृषदम्	शमी च दृषद् च	शमी सु दृषद् सु	समाहारद्वन्द्वः
वाक्त्विषम्	वाक् च त्विट च	वाच् सु त्विष् सु	समाहारद्वन्द्वः
छत्रोपानहम्	छत्रश्च उपानच्च	छत्र सु उपानह सु	समाहारद्वन्द्वः
हस्तपादम्	हस्तौ च पादौ च	हस्त औ पाद औ	समाहारद्वन्द्वः
भेरीपटहम्	भेरी च पटहम् च	भेरी सु पटह सु	समाहारद्वन्द्वः
रथाश्वम्	रथाश्च अश्वाश्च	रथ जस् अश्व जस्	समाहारद्वन्द्वः
अहिनकुलम्	अहिश्च नकुलश्च	अहि सु नकुल सु	समाहारद्वन्द्वः
शस्त्रास्त्रम्	शस्त्रञ्च अस्त्रञ्च	शस्त्र सु अस्त्र सु	समाहारद्वन्द्वः
अहनिर्शम्	अहश्च निशा च	अहन् सु निशा सु	समाहारद्वन्द्वः
यूकालिक्षम्	यूकाश्च लिक्षाश्च	यूका जस् लिक्षा जस्	समाहारद्वन्द्वः
पितरौ	माता च पिता च	मातृ सु पितृ सु	एकशेषः
बालकाः	बालकश्च बालकश्च बालकश्च	बालक सु बालक सु बालक सु	एकशेषः
रामौ	रामश्च रामश्च	राम सु राम सु	एकशेषः
रामाः	रामश्च रामश्च रामश्च	राम सु राम सु राम सु	एकशेषद्वन्द्वः

• • •

वैदिक साहित्य का सामान्य परिचय

(अ) संहिता भाग

1. वेदों की संहिताएँ कितनी हैं?
   उत्तर : चार - ऋक्-यजुः-साम-अथर्व संहिता।
2. त्रयी में कौन-कौन सी संहिताएँ आती हैं?
   उत्तर : ऋक्-यजुः-साम।
3. त्रयी की संहिताएँ किन घटकों की प्रतीक हैं?
   उत्तर : ऋक्-शरीर, यजुः-मनस्, साम-बुद्धि।
4. अथर्ववेद त्रयी में सम्मिलित क्यों नहीं है?
   उत्तर : अथर्ववेद अग्निवेद है तथा त्रयी में सम्मिलित वेद 'सोमवेद' हैं।
5. अथर्ववेद किसका प्रतीक है?
   उत्तर : आत्मा का।

ऋग्-अनुशीलन

6. ऋक् संहिता को किन दो क्रमों से विभक्त किया गया है?
   उत्तर : मण्डल एवं अष्टक क्रम से।
7. मण्डलक्रमानुसार ऋग्वेद में कितने मण्डल हैं?
   उत्तर : दस।
8. प्रत्येक मण्डल को किन में विभक्त किया है?
   उत्तर : सूक्तों में।
9. ऋक् संहिता को कितने अष्टकों में बाँटा गया है?
   उत्तर : आठ।
10. अष्टक को किन में बाँटा गया है?
    उत्तर : अध्यायों में।
11. प्रत्येक अष्टक में कितने अध्याय हैं?
    उत्तर : आठ।
12. अष्टक क्रम से ऋक् संहिता में कितने अध्याय हैं?
    उत्तर : 8×8 = चौंसठ अध्याय।
13. ऋक् संहिता में कुल कितने सूक्त हैं?
    उत्तर : 1028 सूक्त।
14. ऋग्वेद का ऋत्विक् क्या कहलाता है?
    उत्तर : होता।
15. सृष्टि रचना से पूर्व की स्थिति का किस सूक्त में वर्णन है?
    उत्तर : नासदीय सूक्त में।
16. सृष्टि रचना एवं ब्राह्मणादि वर्गों का विवरण किस सूक्त में मिलता है?
    उत्तर : पुरुषसूक्त में।
17. भारतीय दृष्टिकोणानुसार (पारम्परिक) वेद की रचना कब हुई?
    उत्तर : भारतीय दृष्टिकोण वेद को अपौरुषेय तथा इस सृष्टि से भी पर्व का मानना है।
18. ज्योतिष के आधार पर वेदकाल निश्चयन का यत्न किस भारतीय विद्वान् ने किया?
    उत्तर : बाल गंगाधर तिलक ने।
19. भद्रसूक्त (कल्याणसूक्त) किस कारण प्रसिद्ध है?
    उत्तर : स्वस्तिवाचन हेतु।
20. वेदों में वसन्त-सम्पात किस नक्षत्र से माना गया है?
    उत्तर : मृगशिरा से।
21. वर्तमान में वसन्त-सम्पात किस नक्षत्र से होता है?
    उत्तर : उत्तरभाद्रपद।
22. खिल भाग से क्या तात्पर्य है?
    उत्तर : परिशिष्ट।
23. वर्तमान में ऋग्वेद की कितनी शाखाएँ उपलब्ध हैं?
    उत्तर : दो।
24. ऋग्वेद की कुल शाखा कितनी मानी गई है?
    उत्तर : 21 शाखाएँ।

25. दाह-संस्कार के विषय में किन ऋग्वेदीय सूक्तों में निर्देश हैं।
उत्तर : 10 मण्डल के 16 व 18 वें सूक्त में।

26. ऋषियों ने किस रस का अधिक गुणगान किया है?
उत्तर : सोमरस का।

27. सोम क्या है?
उत्तर : सोम व अग्नि, ये दो तत्त्व हैं जिनकी पारस्परिक क्रियाओं से सृष्टि विद्यमान है।

28. वेद में सर्वाधिक किस देवता की स्तुति की गई?
उत्तर : इन्द्र की।

29. ऋषि किसे कहा जाता है?
उत्तर : वेदतत्त्व के साक्षात्कर्ता को।

30. कुल कितने देवता माने गये हैं?
उत्तर : 33 करोड़

31. स्वस्तिवाचन हेतु कौन-सा ऋग्वेदीय सूक्त प्रसिद्ध है?
उत्तर : भद्रसूक्त (कल्याणसूक्त)।

32. ऋग्वेद की प्रथम ऋचा कौन-सी है?
उत्तर : 'अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्।'

33. यज्ञ में सोम की क्या महत्ता है?
उत्तर : अग्नि में सोम की आहुति ही यज्ञ है। अतएव सोम आधारभूत तत्त्वों में से है।

34. पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर ने वेद का रचनाकाल क्या माना?
उत्तर : ई.पू. 1200 वर्ष।

35. उसके अनुसार आर्य कहाँ के मूल निवासी थे?
उत्तर : मध्य-एशिया के।

36. वेद के प्रसिद्ध संवाद सूक्त कौन-कौन से हैं?
उत्तर : यम-यमी संवाद, पुरुरवा-उर्वशी संवाद, सरमा-पणि संवाद।

37. आचार्य सायण का वेदों के कर्तृत्व के बारे में क्या मत है?
उत्तर : वेद अपौरुषेय हैं।

38. सभी वेदों की कुल मिलाकर कितनी शाखाएँ हैं?
उत्तर : 1131 शाखाएँ।

39. वर्तमान में कितनी शाखाएँ उपलब्ध हैं?
उत्तर : 12 शाखाएँ।

40. ऋग्वेद की कौन-सी शाखाएँ उपलब्ध हैं?
उत्तर : बाष्कल एवं शाकल।

41. पाश्चात्य विद्वान् ऋग्वेद के किन मण्डलों को अर्वाचीन मानते हैं?
उत्तर : प्रथम व दशम मण्डल को।

42. वेदोच्चारण से सम्बद्ध अष्टविकृतियाँ कौन-कौन सी हैं?
उत्तर : 1. जटा, 2. माला, 3. शिखा, 4. रेखा, 5. ध्वज, 6. दण्ड, 7. रथ, 8. घन।

43. अष्टविकृतियों का क्या महत्त्व है?
उत्तर : इससे वैदिक-उच्चारण एवं क्रम सुरक्षित रहता है।

44. ऋग्वेद के प्रथम व अन्तिम मण्डल को अर्वाचीन मानने के पीछे भाषाशास्त्रीय तर्क क्या है?
उत्तर : इन मण्डलों में रेफ के स्थान पर लकार मिलता है जो 2 से 1 मण्डला में नहीं है।

45. प्रसिद्ध कथन 'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति' कहाँ में उद्धृत है?
उत्तर : ऋग्वेद (1/164/46) से।

46. वेद का विभाजन किस युग में होता है?
उत्तर : द्वापर के अन्तिम समय में।

47. वेद के विभाजनकर्ता को किस नाम से पुकारा जाता है?
उत्तर : वेदव्यास के नाम से।

48. वर्तमान में वैवस्वत मन्वन्तर के इस 28वें कलियुग के लिए वेदव्यास कौन बने?
उत्तर : महर्षि पराशरपुत्र कृष्णद्वैपायन।

49. प्रसिद्ध ऋषिकाएँ -
उत्तर : शची, वाचक्नवी गार्गी, ब्रह्मवादिनी घोषा, ममता, विश्ववारा, अपाला, सूर्या, वाक्।

50. ऋग्वेद के किस सूक्त में जुए का वर्णन है?
उत्तर : कितव सूक्त (10 मण्डल 35 सूक्त) में।

51. 'अक्षैर्मादिव्य:' किस सूक्त में उपदिष्ट है?
उत्तर : कितव सूक्त में।

52. 'केवलाघो भवति केवलादी' कहाँ पर कहा गया है?
उत्तर : ऋग्वेद के भिक्षु (दानस्तुति) सूक्त में।

53. ऋग्वेद के कौन-से मण्डलों को परिवार मण्डल कहते हैं?
उत्तर : द्वितीय से सप्तम तक के मण्डलों को।

54. वर्तमान में दृश्यमान ध्रुव तारे को वैज्ञानिक किस नाम से जानते हैं?
उत्तर : अल्फा।

55. ऋग्वेदीय अष्टम मण्डल के द्रष्टा कौन हैं?
उत्तर : कण्व व उशनस् ऋषि।

यजुर्वेद-अनुशीलन

56. कौन-सा वेद गद्यात्मक है?
उत्तर : यजुर्वेद।

57. यजुर्वेद में प्रयुक्त कौन-सा शब्द संसार में त्याग का प्रतीक है?
उत्तर : स्वाहा।

58. यजुर्वेद के दो भेद कौन-से हैं?
उत्तर : शुक्लयजुर्वेद एवं कृष्णयजुर्वेद।

59. शुक्ल व कृष्ण का भेद किस आधार पर है?
उत्तर : कृष्ण में मन्त्र व ब्राह्मण दोनों ही हैं, किन्तु शुक्ल में शुद्धरूप से मन्त्र हैं।

60. यजुर्वेद की कुल कितनी शाखाएँ हैं?
उत्तर : 101 शाखाएँ।

61. शुक्ल यजुर्वेद की कितनी शाखाएँ हैं?
उत्तर : 15 शाखाएँ।

62. कृष्ण यजुर्वेद की कितनी शाखाएँ हैं?
उत्तर : 86 शाखाएँ।

63. शुक्ल यजुर्वेद की उपलब्ध शाखाएँ कौन-सी हैं?
उत्तर : वाजसनेयी एवं काण्व शाखा।

64. वाजसनेयी शाखा का अपरनाम क्या है?
उत्तर : माध्यन्दिनी शाखा।

65. कृष्ण यजुर्वेद की कौन-कौन सी शाखाएँ उपलब्ध हैं?
उत्तर : तैत्तिरीय, मैत्रायणी, काठक, कठ-कपिष्ठल।

66. यजुर्वेद का ऋत्विक् क्या कहलाता है?
उत्तर : अध्वर्यु।

67. सर्वाधिक प्रसिद्ध माध्यन्दिनी शाखानुसार शु.यजु. में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 40 अध्याय।

68. शुक्ल यजु. में कितने अनुवाक हैं?
उत्तर : 303 अनुवाक।

69. वैदिक राष्ट्रगीत "आब्रह्मन् ब्राह्मणो....." किस वेद में है?
उत्तर : यजुर्वेद में।

70. मनस्तत्त्व का विवेचन करने वाला प्रसिद्ध यजुर्वेदीय सूक्त?
उत्तर : शिवसङ्कल्प सूक्त।

71. कर्मकाण्ड मुख्यत: किस वेद पर आधारित है?
उत्तर : यजुर्वेद पर।

72. माध्यन्दिनी शाखा के प्रथम-द्वितीय अध्यायों का वर्णन क्या है?
उत्तर : सोमयज्ञ तथा पितृयज्ञ।

73. माध्यन्दिनी शाखा के प्रथम 35 अध्यायों का प्रमुख प्रतिपाद्य क्या है?
उत्तर : श्रौतकर्मकाण्ड।

74. अग्निहोत्र का किस अध्याय में वर्णन है?
उत्तर : तृतीय-अध्याय में।

75. चौथे से आठवें अध्याय तक किसका विवेचन है?
उत्तर : सोमयागों (विशेषत: अग्निष्टोमयाग) का।

76. नवम-दशम अध्याय का विषय क्या है?
उत्तर : राजसूय एवं वाजपेय याग।

77. अग्निचयन का वर्णन किन अध्यायों में है?
उत्तर : 11 से 18 वें अध्याय तक।

78. प्रसिद्ध रुद्रसूक्त कौन-सा अध्याय है?
उत्तर : 16वाँ अध्याय।

79. वसोधारा सम्बद्ध मन्त्र किस अध्याय में है?
उत्तर : 18वें अध्याय में।

80. प्रसिद्ध 'अश्वमेध यज्ञ' का वर्णन कहाँ पर है?
उत्तर : 22 से 25वें अध्याय में।

81. खिल मन्त्रों का संग्रह किन अध्यायों में है?
उत्तर : 26 से 29वें अध्यायों में प्रश्न सङ्ख्या 72-81 तक समस्त प्रश्न माध्यन्दिनीशाखानुसार हैं।

82. 'पुरुषमेध याग' का वर्णन किस अध्याय में है?
उत्तर : 30वें अध्याय में।

83. 31वाँ अध्याय किस नाम से प्रसिद्ध है?
उत्तर : पुरुष-सूक्त।

84. 32-33 अध्यायों में क्या सङ्कलित है?
उत्तर : सर्वमेधमंत्र तथा हिरण्यगर्भसूक्त।

85. किस अध्याय में पितृमेध वर्णित है?
उत्तर : 35वें अध्याय में।

86. शिव सङ्कल्पोपनिषद् किस अध्याय में है?
उत्तर : 34वें अध्याय में।

87. 36 से 39 अध्यायों में क्या सङ्कलित है?
उत्तर : प्रवर्ग्य विषयक मन्त्र।

88. 40वाँ अध्याय किस नाम से जाना जाता है?
उत्तर : ईशावास्योपनिषद्।

89. शवदाह के मन्त्र यजुर्वेद के किस अध्याय में है?
उत्तर : 35वें अध्याय में।

90. कृष्णयजुर्वेदीय काठक संहिता कितने स्थानकों में विभेदित है?
उत्तर : पाँच।

91. काठकसंहिता में कौन-कौन से कथानक हैं?
उत्तर : इठिमिका, मध्यमिका, ओरिमिका, याज्यानुवाक्या, अश्वमेधाद्यनुवचन।

92. किस वेद को अध्वर्युवेद कहा जाता है?
उत्तर : यजुर्वेद को।

सामवेदानुशीलन

93. सङ्गीत का सम्बन्ध किस वेद से माना जाता है?
उत्तर : सामवेद से।

94. सामवेद को 'सहस्त्रवर्मा सामवेद:' क्यों कहते हैं?
उत्तर : 1000 शाखाएँ होने से।

95. सामवेद को किसमें बाँटा गया है?
उत्तर : आर्चिकों में।

96. सामवेद में कितने आर्चिक हैं?
उत्तर : दो। पूर्वार्चिक एवं उत्तरार्चिक

97. सामवेद का ऋत्विक् क्या कहलाता है?
उत्तर : उद्गाथा।

98. सामवेद में कितने मन्त्र ऋग्वेद से उद्धृत हैं?
उत्तर : 1800 मन्त्र।

99. सामवेद के अपने मन्त्र कितने हैं?
उत्तर : 75 मन्त्र (पचहत्तर)।

100. कौथुमशाखानुसार पूर्वार्चिक में कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : 650 मन्त्र।

101. उत्तरार्चिक में कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : 1225 मन्त्र।

102. कौथुमशाखानुसार सामवेद में कुल मन्त्र कितने हैं?
उत्तर : 1875 मन्त्र।

103. सामवेद में कितने छन्द प्रस्तुत हुए हैं?
उत्तर : दो गाथा व प्रगाथा।

104. साम की कितनी शाखाएँ उपलब्ध हैं?
उत्तर : तीन— 1. राणायनीय, 2. कौथुमीय, 3. जैमिनीय।

105. सामवेद में कितने प्रमुख स्वरों को सङ्गीत का आधार माना है?
उत्तर : सात स्वरों को।

106. सामवेदीय ऋचाओं पर कौन-कौन से गान होते हैं?
उत्तर : प्रकृतिमान, हगान, उहागान।

107. प्रकृतिगान में कौन से गान होते हैं?
उत्तर : 1. ग्रामगेयगान, 2. आरण्यक गान।

108. ग्रामगेयगान में कितने पर्व हैं?
उत्तर : तीन — 1. आग्नेय, 2. ऐन्द्र, 3. पवमान।

109. आरण्यक गान में कितने पर्व हैं?
उत्तर : पाँच— 1. अर्क, 2. द्वन्द्व, 3. व्रत, 4. शुक्रिय, 5. महानाम्नी।

110. 'सामवेदादिदं गीतं सञ्जग्राह पितामह:' सङ्गीत का आविर्भाव मानने वाले सङ्गीताचार्य?
उत्तर : शार्ङ्गदेव।

111. शार्ङ्गदेव ने कौन-सा सङ्गीत सम्बन्धित ग्रन्थ रचा?
उत्तर : सङ्गीत-रत्नाकर:।

112. सामवेद में प्रयुक्त प्रगाथा छन्द किन दो छन्दों का मिश्रण है?
उत्तर : गायत्री व जगती का।

113. सामवेद में ऋग्वेद के किन मण्डलों के मन्त्र संग्रहीत हैं?
उत्तर : अष्टम व नवम मण्डल से।

114. सामवेद की जैमिनीय शाखा का अध्ययन कहाँ होता है?
उत्तर : केरल में।

115. भारत में किस सामवेदीय शाखा की अधिक प्रसिद्धि है?
उत्तर : कौथुमी शाखा की।

116. इस शाखा की उच्चारण की कौन-सी दो पद्धतियाँ हैं?
उत्तर : 1. नागरपद्धति, 2. मद्रपद्धति।

अथर्ववेद-अनुशीलन

117. अथर्ववेद किन संज्ञाओं से अभिहित है?
उत्तर : अथर्वाङ्गिरोवेद, ब्रह्मवेद, भिषग्वेद, क्षत्रवेद।

118. अथर्ववेद की कितनी शाखाएँ मानी गई हैं?
उत्तर : नौ शाखाएँ।

119. अथर्ववेद की शाखाओं के नाम क्या हैं?
उत्तर : 1. पैप्पलाद, 2. तौद, 3. मौद, 4. शौनक, 5. जाजल, 6. जलद, 7. ब्रह्मवद, 8. देवदर्श, 9. चारणवैद्य।

120. वर्तमान में कौन-कौन-सी शाखाएँ प्राप्त हैं?
उत्तर : 1. पैप्पलाद शाखा, 2. शौनक शाखा।

121. इनमें से कौन-सी शाखा अपूर्णरूप से प्राप्त हैं?
उत्तर : पैप्पलाद शाखा।

122. अथर्ववेद को किसमें बाँटा गया है?
उत्तर : काण्डों में।

123. कुल कितने काण्ड हैं?
उत्तर : 20 काण्ड।

124. अथर्ववेद के 20वें काण्ड के अधिकांश सूक्त किससे सम्बन्धित हैं?
उत्तर : इन्द्र से।

125. अथर्ववेद के प्रतिपाद्य विषय क्या है?
उत्तर : ब्रह्मविषयकदार्शनिक सिद्धान्त-राजनीति-प्रायश्चित्त-भैषज्यकर्मशान्तिक व पौष्टिककर्म-सामनस्यकर्म-आयुष्यकर्म-अभिचारकर्म।

126. कृषिकर्म का विवेचन किस वेद में है?
उत्तर : अथर्ववेद में।

127. अथर्ववेद के तृतीय काण्ड का 17वाँ सूक्त किस नाम से प्रसिद्ध है?
उत्तर : कृषि-सूक्त।

128. अथर्ववेद में कुल कितने सूक्त हैं?
उत्तर : 730 सूक्त

129. कुल कितने प्रपाठक हैं?
उत्तर : 36 प्रपाठक।

130. कुल कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : 5987 मन्त्र।

131. कौन-सा अथर्ववेदीय काण्ड विवाह से सम्बन्धित है?
उत्तर : 14वाँ काण्ड।

132. किस काण्ड में दु:स्वप्ननाशार्थ प्रार्थना है?
उत्तर : 16वें काण्ड में।

133. अध्यात्मविषयक काण्ड कौन-से हैं?
उत्तर : 13, 15, 19वाँ काण्ड।

134. किस काण्ड में चार-चार मन्त्रों के सूक्त हैं?
उत्तर : प्रथम काण्ड में।

135. पाँच-पाँच मंत्रों के सूक्त किस काण्ड में हैं?
उत्तर : द्वितीय काण्ड में।

136. तृतीय काण्ड में प्रत्येक सूक्त में कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : छ: मन्त्र।

137. चतुर्थ काण्ड में सूक्तों में कितने-कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : सात-सात या आठ-आठ मन्त्र।

138. किस काण्ड में आठ या उससे अधिक मन्त्र हैं?
उत्तर : पाँचवें काण्ड में।

139. छठे काण्ड में कितने सूक्त हैं?
उत्तर : 118 सूक्त।

140. छठे काण्ड के सूक्तों में कितने-कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : प्राय: तीन-तीन मन्त्र।

141. सातवें काण्ड के सूक्तों में कितने-कितने मन्त्र हैं?
उत्तर : एक या दो मन्त्र।

142. सातवें काण्ड में कितने सूक्त हैं?
उत्तर : 118 सूक्त।

143. अथर्ववेद में संसार की उत्पत्ति किससे बतायी है?
उत्तर : जल से। (अथर्ववेद 4/2/6/8)

144. भैषज्य सूक्तों में किन-किन चिकित्सा प्रणालियों का वर्णन है?
उत्तर : जल-चिकित्सा, सूर्यकिरण-चिकित्सा, मानसिक-चिकित्सा।

145. अथर्ववेद को मुख्य प्रतिपाद्य अभिचार कर्म क्यों नहीं माना जा सकता?
उत्तर : क्योंकि आभिचारिक मन्त्रों की सङ्ख्या न्यूनमात्रिक है।

146. आयुर्वेद का मूल किसमें देखा जाता है?
उत्तर : अथर्ववेद में।

147. अथर्ववेद का ऋत्विक् क्या कहलाता है?
उत्तर : ब्रह्मा।

148. भैषज्य-सूक्तों दन्तपीड़ा का कारण किसे माना जाता है?
उत्तर : कृमि को।

149. ब्रह्म का यज्ञ में क्या कार्य होता है?
उत्तर : सम्पूर्ण व्यवस्थाओं के निरीक्षण।

150. 'मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्' यह मन्त्र कहाँ से उद्धृत है?
उत्तर : अथर्ववेद (3/30/3) से।

151. अथर्ववेद के विशिष्टसूक्त?
उत्तर : गृहमहिमा सूक्त-दीर्घापुष्प सूक्त-संज्ञानसूक्त-पृथ्वीसूक्त।

152. अथर्ववेद का प्रथममन्त्र कौन-सा है?
उत्तर : शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शं योरभि स्रवन्तु न:।

(ब) वेदाङ्ग भाग

1. वेदाङ्ग कितने हैं?
उत्तर : छः।
2. वेदाङ्गों के नाम लिखिए।
उत्तर : शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त-छन्द-ज्यौतिष।
3. वेदाङ्गों का क्या महत्त्व है?
उत्तर : वेदज्ञान को प्राप्त्यर्थ वेदाङ्ग-अध्ययन भूमिका का कार्य करता है।
4. शिक्षा वेदाङ्ग का क्या उद्देश्य है?
उत्तर : वैदिक ऋचाओं का उच्चारण-शिक्षण।
5. सायणाचार्य ने शिक्षा का व्युत्पत्तिजन्य अर्थ क्या बताया?
उत्तर : 'स्वरवर्णाद्युच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते-उपदिश्यते सा शिक्षा' अर्थात् स्वर-वर्ण आदि का उच्चारणशिक्षण ही शिक्षा है।
6. शिक्षा की क्या उपमा दी गई है?
उत्तर : वेद के नाक को (शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य)।
7. ऋग्वेद से सम्बन्धित शिक्षाग्रन्थ कौन-कौन से हैं?
उत्तर : शौनकीय शिक्षा, वासिष्ठ शिक्षा तथा पाणिनीय शिक्षा।
8. किस वैयाकरण की शिक्षा को सभी वेदों से सम्बद्ध भी कुछ विद्वान् मानते हैं?
उत्तर : पाणिनि की शिक्षा को।
9. शुक्लयजुर्वेद का कौन-सा शिक्षा ग्रन्थ अधिक प्रसिद्ध है?
उत्तर : याज्ञवल्क्य शिक्षा।
10. कृष्णयजुर्वेद के कौन से शिक्षा ग्रन्थ उपलब्ध हैं?
उत्तर : भरद्वाज शिक्षा तथा व्यास शिक्षा।
11. भरद्वाज शिक्षा कृष्णयजुर्वेद की किस शिक्षा से सम्बद्ध है?
उत्तर : तैत्तिरीयशाखा।
12. भरद्वाज शिक्षा का दूसरा नाम क्या है?
उत्तर : संहिताशिक्षा।
13. सामवेद के शिक्षाग्रन्थ कौन-से हैं?
उत्तर : नारदीय शिक्षा, गीतशिक्षा, लोमशशिक्षा।
14. तीनों ग्रन्थों का विभाजन किस प्रकार हुआ है?
उत्तर : दो प्रपाठकों तथा सोलह कण्डिकाओं में।
15. सामसंहिता के यथार्थ उच्चारण हेतु किन ग्रन्थों की रचना की गई?
उत्तर : ऋक्तन्त्र, सामतन्त्र, अक्षरतन्त्र, पुष्पसूत्र।
16. ऋक्तन्त्र में किसका अध्ययन होता है?
उत्तर : ऋचाओं का (उल्लेखनीय है कि सामवेद में अधिकांशतः ऋचाओं का सङ्कलन है।)
17. ऋक्तन्त्र कितने प्रपाठकों एवं खण्डों में विभक्त है?
उत्तर : पाँच प्रपाठकों तथा तीस खण्डों में।
18. प्रकृतिगान के स्वरों का अध्ययन किसमें होता है?
उत्तर : सामतन्त्र में।
19. सामतन्त्र कितने प्रपाठकों में विभक्त है?
उत्तर : 13 प्रपाठकों में।
20. स्तोमों का निरूपण किसमें हुआ है?
उत्तर : अक्षरतन्त्र में।
21. अक्षरतन्त्र कितने प्रपाठकों में विभाजित है?
उत्तर : दो प्रपाठकों में।
22. अक्षर तन्त्र को किसका अङ्ग माना जाता है?
उत्तर : सामतन्त्र का।
23. ऊह-ऊह्यगान का विवेचन किसमें है?
उत्तर : पुष्पसूत्र में।
24. पुष्पसूत्र कितने प्रपाठकों एवं खण्डों में विभाजित है?
उत्तर : 10 प्रपाठकों तथा 100 खण्डों में।
25. अथर्ववेद का कौन-सा शिक्षाग्रन्थ उपलब्ध है?
उत्तर : माण्डूकी शिक्षा।
26. आचार्य पं. बलदेव उपाध्याय ने कितने शिक्षाग्रन्थों का उल्लेख किया है?
उत्तर : बीस शिक्षा ग्रन्थों का।

2. कल्प

27. कल्प की क्या उपमा दी गई है?
उत्तर : वेद के हाथ की। (हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।)
28. कल्पशास्त्र का प्रयोजन क्या है?
उत्तर : याज्ञिक विधानों का प्रतिपादन।
29. कल्पशास्त्र किस साहित्य में आता है?
उत्तर : सूत्र-साहित्य में।
30. कल्पसूत्रों के कितने भेद हैं?
उत्तर : चार।
31. कल्पसूत्र कौन-कौन से हैं?
उत्तर : श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र, धर्मसूत्र, शुल्बसूत्र।
32. कुछ विद्वान् किस सूत्र को कल्पसूत्र साहित्य में नहीं गिनते हैं?
उत्तर : शुल्बसूत्र।

33. श्रौतसूत्रों का प्रतिपाद्य क्या है?
उत्तर : चौदह वैदिक यज्ञों का कर्तव्यविधान।

34. ऋग्वेद के श्रौतसूत्र कौन से हैं?
उत्तर : आश्वलायन एवं शाङ्खाय।

35. आश्वलायन श्रौतसूत्र में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 12 अध्याय।

36. शाङ्खाय श्रौतसूत्र में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 18 अध्याय।

37. शुक्लयजुर्वेद का कौन-सा श्रौतसूत्र उपलब्ध है?
उत्तर : कात्यायन श्रौतसूत्र।

38. कृष्णयजुर्वेद के कौन-कौन से श्रौतसूत्र उपलब्ध हैं?
उत्तर : बौधायन, आपस्तम्ब, सत्याषाढ़, मानव, वैखानस, भारद्वाज, वाराह (सात)।

39. सामवेद के कितने श्रौतसूत्र मिलते हैं?
उत्तर : 1. द्राह्मायण 2. लाट्यायन।

40. अथर्ववेद का श्रौतसूत्र कौन-सा है?
उत्तर : वैतान-सूत्र।

41. वैतान सूत्र का किस आथर्वण शाखा से सम्बन्ध है?
उत्तर : शौनक शाखा से।

42. वैतान सूत्र में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : आठ अध्याय।

43. ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र आश्वलायन व शांखायन क्रमशः कितने अध्यायों में विभक्त हैं?
उत्तर : 4 व 6 अध्यायों में।

44. शुक्लयजुर्वेदीय गृह्यसूत्र कौन-कौन से हैं?
उत्तर : 1. पारस्कर गृह्यसूत्र, 2. बैजवाप गृह्यसूत्र।

45. पारस्कर गृह्यसूत्र कितने काण्डों में विभक्त है?
उत्तर : तीन।

46. कृष्णयजुर्वेद के गृह्यसूत्र कौन-कौन से हैं?
उत्तर : बौधायन, आपस्तम्ब, सत्यापाढ़, मानव, काठक (पाँच)।

47. सामवेदीय गृह्यसूत्र कौन-कौन से हैं?
उत्तर : खादिर एवं गोभिल।

48. कौशिक गृह्यसूत्र का सम्बन्ध किस वेद से है?
उत्तर : अथर्ववेद से।

49. यह किस अपरनाम से प्रसिद्ध है?
उत्तर : संहिता-विधि।

50. कौशिक गृह्यसूत्र कितने अध्यायों एवं कण्डिकाओं में विभक्त है?
उत्तर : 14 अध्याय 141 कण्डिकाओं में।

51. 22 अध्याय युक्त आश्वलायन गृह्यसूत्र किस वेद से सम्बद्ध है?
उत्तर : ऋग्वेद से।

52. कात्यायन (कातीय) धर्मसूत्र किस वेद से सम्बन्धित है?
उत्तर : शुक्लयजुर्वेद से।

53. कृष्णयजुर्वेद से सम्बन्धित धर्मसूत्र?
उत्तर : बौधायन, आपस्तम्ब, मानव।

54. सामवेदीय धर्मसूत्र?
उत्तर : गौतम धर्मसूत्र।

55. गौतम धर्मसूत्रों में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 28 अध्याय।

56. शुल्ब सूत्रों का क्या प्रयोजन है?
उत्तर : यज्ञवेदी आदि के निर्माण की ज्यामितीय प्रक्रिया तथा तत्सम्बद्ध विवेचन।

3. व्याकरण

57. पाणिनीय शिक्षा में वेद का मुख किसे बताया है?
उत्तर : व्याकरण को।

58. पाणिनि ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : अष्टाध्यायी।

59. पाणिनि का जन्मस्थल वर्तमान में किस नाम से प्रसिद्ध है?
उत्तर : लाहौर।

60. 'एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति' किसने कहा है?
उत्तर : महाभाष्यकार पतञ्जलि ने।

61. पतञ्जलि को किसका अवतार माना जाता है?
उत्तर : शेषनाग का।

62. व्याकरण का व्युत्पत्तिजन्य अर्थ क्या है?
उत्तर : व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अननति व्याकरणम्।

63. कुल कितने व्याकरणों (वेदाङ्ग में परिगणित) का अस्तित्व माना जाता है?
उत्तर : नव—ऐन्द्र, चान्द्र, काशकृत्स्न, कौमार, शाकटायन, सारस्वत, आपिशल, शाकल, पाणिनीय।

64. वेदाङ्ग के रूप में कौन-सा व्याकरण सर्वाधिक सङ्ग्राह्य है?
उत्तर : पाणिनि-व्याकरण।

65. मुनित्रय में किन-किन का समावेश होता है?
उत्तर : पाणिनि-कात्यायन-पतञ्जलि।

66. कौन व्याकरण-सूत्रकार के रूप में जाने जाते हैं?
उत्तर : पाणिनि।

67. महाभाष्यकार के रूप में वैयाकरण कुल में कौन प्रसिद्ध हैं?
उत्तर : पतञ्जलि।

68. वार्तिककार के रूप में किसकी प्रसिद्धि है?
उत्तर : कात्यायन की।

69. भट्टोजी दीक्षित ने किस ग्रन्थ की रचना की?
उत्तर : सिद्धान्तकौमुदी (यह सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना है भट्टोजी की)।

70. भट्टोजीकृत प्रौढ़मनोरमा का खण्डन किसने किया?
उत्तर : पण्डितराज जगन्नाथ ने।

71. पण्डितराज ने एतदर्थ कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : मनोरमाकुचमर्दनम्।

72. सारकौमुदी व मध्य कौमुदी के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : वरदाचार्य।

73. वरदाचार्य लिखित कौन-सा व्याकरण-ग्रन्थ सर्वत्र प्रसिद्ध है?
उत्तर : लघुसिद्धान्त कौमुदी।

74. पाणिनि की अष्टाध्यायी में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : आठ अध्याय।

75. पाणिनि ने स्वयं अष्टाध्यायी का क्या नाम रखा है?
उत्तर : शब्दानुशासन।

76. अष्टाध्यायी में कुल कितने सूत्र हैं?
उत्तर : 4000 सूत्र लगभग (3978 आर्यसमाजी मत से)।

77. पाणिनि के कितने सूत्र अप्राप्य हैं?
उत्तर : 5 सूत्र / 4 सूत्र।

78. धातुओं को कितने गणों में विभक्त किया गया है?
उत्तर : दस गणों में।

79. सबसे अधिक धातुएँ किस गण में हैं?
उत्तर : भ्वादिगण में (1035 धातुएँ)।

८0. किस गण में सबसे कम धातुएँ हैं?
उत्तर : तनादिगण में।

८1. कुल कितनी धातुएँ हैं?
उत्तर : 1970—उन्नीस सौ सत्तर।

८2. माहेश्वर सूत्रों की सङ्ख्या कितनी है?
उत्तर : 14

८3. माहेश्वर-सूत्रों की उत्पत्ति कैसे हुई?
उत्तर : शिवजी के डमरू से।

८4. मूलस्वर कितने हैं?
उत्तर : पाँच — अ, इ, उ, ऋ, ल।

८5. व्याकरण का दार्शनिक ग्रन्थ वाक्यपदीय किसने लिखा?
उत्तर : भर्तृहरि ने।

८6. वाक्यपदीय कितने काण्डों में विभाजित है?
उत्तर : तीन काण्डों में।

८7. कैयट ने महाभाष्य पर कौन-सी व्याख्या लिखी?
उत्तर : 'प्रदीप' नामक।

८८. जयादित्य एवं वामन नामक वैयाकरणों द्वारा सूत्रानुक्रम से अष्टाध्यायी पर कौन-सा वृत्तिग्रन्थ लिखा गया?
उत्तर : काशिका।

८9. काशिका के प्रथम पाँच अध्याय किसने लिखे?
उत्तर : जयादित्य ने।

90. काशिका के अन्तिम अध्यायत्रय के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : वामन।

91. 'न्यास' नाम से प्रख्यात काशिका के व्याख्यान ग्रन्थ का मूल अभिधान क्या है?
उत्तर : काशिकाविवरणपञ्जिका।

92. उक्त ग्रन्थ के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : जिनेन्द्रबुद्धि।

93. काशिका पर 'पदमञ्जरी' व्याख्या किसने लिखी?
उत्तर : हरदत्त ने।

94. वैयाकरणभूषण एवं वैयाकरणभूषणसार के प्रणेता कौन है?
उत्तर : कोण्डभट्ट।

95. परिभाषेन्दुशेखर के स्रष्टा कौन है?
उत्तर : नागेश भट्ट।

96. उक्त ग्रन्थ का विषय क्या है?
उत्तर : पाणिनीय व्याकरण की परिभाषाओं की विवेचना।

97. नागेशभट्ट की भट्टोजी दीक्षित कृत प्रौढ़मनोरमा पर लिखे व्याख्या ग्रन्थ का क्या नाम है?
उत्तर : शब्देन्दुशेखर।

98. महाभाष्यप्रत्याख्यानसंग्रह के लेखक कौन हैं?
उत्तर : नागेश भट्ट।

99. वैयाकरणसिद्धान्तमञ्जूषा, लघुमञ्जूषा, परमलघुमञ्जूषा के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : नागेश भट्ट।

100. व्याकरण की प्रक्रिया परम्परा के पर्यायभूत आचार्य भट्टोजिदीक्षित का सूत्रानुक्रमणी पाणिनीयव्याकरण का व्याख्यान ग्रन्थ कौन-सा है?
उत्तर : शब्दकौस्तुभ।

101. व्याकरण के दार्शनिक सन्दर्भों पर विमर्शात्मक ग्रन्थ; जो भट्टोजी दीक्षित ने लिखा है?
उत्तर : व्याकरणमतोन्मज्जन।

102. कातन्त्र व्याकरण के आचार्य कौन हैं?
उत्तर : शिव वर्मा।

103. इस व्याकरण में कितने अध्याय एवं सूत्र हैं?
उत्तर : 4 अध्याय 1400 सूत्र।

104. चन्द्रगोमी द्वारा उपस्थापित चान्द्र व्याकरण में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 6 अध्याय।

105. क्षपणक (सिद्धसेन दिवाकर)का व्याकरण?
उत्तर : शब्दानुशासन।

106. जैनेन्द्रव्याकरण के आचार्य?
उत्तर : देवनन्दी।

107. 'विश्रान्तविद्याधर' व्याकरण के प्रवर्तक?
उत्तर : वामन।

108. 'सरस्वतीकण्ठाभरणम्' व्याकरण में कितने अध्याय एवं सूत्र हैं?
उत्तर : 8 अध्याय, 6421 सूत्र।

109. 'सरस्वतीकण्ठाभरणम्' के प्रचोदक कौन हैं?
उत्तर : भोजदेव।

110. जैनशाकटायन व्याकरणग्रन्थ के रचनाकार?
उत्तर : पाल्यकीर्ति।

111. पाल्यकीर्ति का अपर नाम क्या है?
उत्तर : शाकटायन।

112. जैनशाकटायन में कितने अध्याय एवं सूत्र हैं?
उत्तर : 8 अध्याय, 3200 सूत्र।

113. शिवस्वामी द्वारा प्रवृत्त व्याकरण?
उत्तर : शिवशब्दानुशासन।

114. सिद्धान्तकौमुदी की तत्त्वबोधिनी व्याख्या किसने लिखी?
उत्तर : ज्ञानेन्द्र सरस्वती।

115. कौमुदी की बालमनोरमा का सर्जनकर्ता आचार्य कौन हैं?
उत्तर : बासुदेव वाजपेयी।

116. वैयाकरण त्रयोदशी को अनध्याय क्यों रखते हैं?
उत्तर : इस तिथि को पाणिनि के देह का अवसान हुआ, ऐसी किंवदन्ती है।

117. पाणिनि के अष्टक या अष्टाध्यायी के प्रत्येक अध्याय में कितने उपविभाग बनाये गये?
उत्तर : चार (चार पाद)।

118. अष्टाध्यायी के प्रथमाध्याय का विषय क्या है?
उत्तर : शास्त्रोपयोगी संज्ञा-परिभाषाओं का सङ्कलन।

119. किस अध्याय में समास एवं कारक की विवेचना है?
उत्तर : द्वितीयाध्याय में।

120. तृतीयाध्याय की वस्तु क्या है?
उत्तर : कृत्य एवं कृत् प्रत्यय।

121. तद्धितों का विमर्श किस अध्याय में है?
उत्तर : चतुर्थ-पञ्चम अध्यायों में।

122. षष्ठाध्याय में किनका विमर्श है?
उत्तर : तिङन्त, सन्धि, स्वरनियम।

123. अङ्गाधिकार नाम से किस अध्याय की प्रसिद्धि है?
उत्तर : सप्तमाध्याय की।

124. अङ्गाधिकार का विषय है?
उत्तर : सुबन्त एवं तिङन्त।

125. अष्टम/अन्तिम अध्याय में विवेच्य हैं?
उत्तर : द्वित्वविधान, वैदिकी स्वर प्रक्रिया, सन्धि षत्वण त्वविधान।

126. पाणिनि ने कौन-सा महाकाव्य लिखा?
उत्तर : जाम्बवती-विजय।

127. कात्यायनकृत महाकाव्य है?
उत्तर : स्वर्गारोहण।

128. कात्यायन का अपर नाम?
उत्तर : वररुचि।

129. कात्यायन की अन्य रचनाएँ?
उत्तर : 1. कात्यायनस्मृति, 2. उभयसारिकाभाण (रूपक), 3. भ्राजश्लोक।

130. पाणिनीय व्याकरण की प्रक्रिया परम्परा का आद्यग्रन्थ है?
उत्तर : रूपावतार।

131. रूपावतार के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : धर्मकीर्ति।

132. प्रक्रियाकौमुदी किनकी कृति है?
उत्तर : रामभद्राचार्य की।

133. सिद्धान्तकौमुदी में कितने प्रकरण हैं?
उत्तर : 14 प्रकरण।

134. सिद्धान्तकौमुदी का प्रथमप्रकरण कौन-सा है?
उत्तर : संज्ञाप्रकरण।

135. सिद्धान्तकौमुदी का अन्तिम प्रकरण कौन-सा है?
उत्तर : स्वरप्रकरण।

136. समासप्रकरण का क्रम क्या है?
उत्तर : अष्टम।

137. सन्धिप्रकरण का क्रम क्या है?
उत्तर : तृतीय।

138. अव्यय कौन-से प्रकरण में है?
उत्तर : पञ्चम।

139. परिभाषा प्रकरण का क्रम कौन-सा है?
उत्तर : द्वितीय।

140. सप्तमप्रकरण में क्या वर्णित है?
उत्तर : कारक।

141. वैदिकप्रकरण किस क्रम में है?
उत्तर : त्रयोदश।

142. सुबन्त किस प्रकरण में है?
उत्तर : चतुर्थ।

143. नवमप्रकरण में क्या वर्णित है?
उत्तर : तद्धित।

144. तिङन्तप्रकरण का क्रम है?
उत्तर : दशम।

145. कृदन्त किस प्रकरण में है?
उत्तर : द्वादश प्रकरण में।

146. त्रयोदश प्रकरण है?
उत्तर : वैदिकप्रकरण।

147. ण्यन्तादिप्रक्रिया किस प्रकरण में है?
उत्तर : एकादश प्रकरण में।

148. षष्ठप्रकरण का विषय है?
उत्तर : स्त्रीप्रत्यय।

149. 'मनोरमामण्डन' व्याकरणग्रन्थ के लेखक कौन हैं?
उत्तर : भानुजी दीक्षित।

150. व्याकरण वाङ्मय का बृहत्तम ग्रन्थ किसे कह सकते हैं?
उत्तर : 'व्याकरणसिद्धान्तसुधानिधि' को।

151. उक्त ग्रन्थ के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : विश्वेश्वर पाण्डेय।

152. अष्टाध्यायी का परिमाण कितने श्लोकों का है?
उत्तर : एक सहस्र।

153. अष्टाध्यायी (शब्दानुशासन) में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : आठ अध्याय।

154. अष्टाध्यायी में कुल पाद कितने हैं?
उत्तर : 32 पाद (8×4 = 32)

155. प्रत्येक अध्याय में कितने पाद हैं?
उत्तर : चार।

156. महाभाष्यकार ने पाणिनीयव्याकरण के कितने सूत्रों की व्याख्या की है?
उत्तर : सत्रह सौ दस।

157. महाभाष्य में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : आठ।

158. महाभाष्य में अध्यायों को किसमें बाँटा है?
उत्तर : आह्निकों में।

159. आह्निक से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : एक अहः (दिवस) पर्यन्त पठने योग्य/करने योग्य।

160. महाभाष्य कुल कितने आह्निक हैं?
उत्तर : 85 आह्निक।

161. महाभाष्य में कितने प्रत्याहार सूत्रों का व्याख्यान हुआ है?
उत्तर : आठ का।

162. प्रत्याहार सूत्रों का अपर नाम?
उत्तर : माहेश्वर सूत्र।

163. माहेश्वर सूत्र कुल कितने हैं?
उत्तर : 14

164. माहेश्वर सूत्रों में किस व्यञ्जन का दो बार प्रयोग हुआ है?
उत्तर : हकार का।

165. किस माहेश्वर सूत्र में अकार उच्चारणार्थमात्र न होकर इत्संज्ञक है?
उत्तर : 'लण्' (छठे सूत्र में)।

166. मूलस्वरों का किन सूत्रों में निबन्धन है?
उत्तर : प्रथम-द्वितीय माहेश्वर सूत्रों में।

167. छठे सूत्र में अकार को इत्संज्ञक मानने का प्रयोजन क्या है?
उत्तर : 'र' प्रत्याहार बनाना।

168. 'र' प्रत्याहार में आते हैं—
उत्तर : रकार एवं लकार।

169. सभी वर्गों के पञ्चमाक्षर किस प्रत्याहार सूत्र में हैं?
उत्तर : सप्तम।

170. माहेश्वर सूत्रों से कुल कितने प्रत्याहार बनते हैं?
उत्तर : 42

171. सभी स्वरों एवं व्यञ्जनों का बोधक प्रत्याहार है?
उत्तर : अल् प्रत्याहार।

172. अच् प्रत्याहार से किनका अभिज्ञान होता है?
उत्तर : समस्त स्वरों का।

173. समस्त व्यञ्जनों का किस प्रत्याहार में ग्रहण होता है?
उत्तर : हल् प्रत्याहार में।

174. पञ्चाङ्ग व्याकरण क्या है?
उत्तर : सूत्रपाठ, गणपाठ, धातुपाठ, उणादिपाठ एवं लिङ्गानुशासन—ये व्याकरण के पाँच अङ्ग हैं।

175. पाणिनि के गुरु कौन थे?
उत्तर : आचार्य उपवर्ष।

176. सूत्र कितने प्रकार के होते हैं?
उत्तर : छः— 1. संज्ञा सूत्र, 2. परिभाषा सूत्र, 3. विधि, 4. नियम, 5. अतिदेश, 6. अधिकार।

177. वेट, सेट, अनिट् धातुओं से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : जिन धातुओं में इडागम हो, वे सेट कहलाती हैं।
जिन धातुओं में इडागम न हो, वे अनिट् कहलाती हैं।
जिन धातुओं में इडागम विकल्प से हो, वे वेट् कहलाती हैं।

178. वेट, सेट, अनिट् का शाब्दिक अर्थ?
उत्तर : वा + इट्, स + इट्, न + इट्।

179. पण्डितप्रवर भट्टोजिदीक्षित के पदशास्त्रीय ग्रन्थ हैं?
उत्तर : 1. सिद्धान्तकौमुदी, 2. प्रौढ़मनोरमा (स्वकृत सिद्धान्तकौमुदी की व्याख्या), 3. शब्दकौस्तुभ, 4. वैयाकरणभूष- णकारिका।

180. भट्टोजिदीक्षित के धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ हैं?
उत्तर : 1. विस्थलीसंतु, 2. तिथिनिर्णय, 3. प्रवर निर्णय. 4. चतुर्विंशतिमत व्याख्या।

181. सूत्र का लक्षण क्या है?
उत्तर : अल्पाक्षरमसन्दिग्धं सारवद्विश्वतोमुखम्।
अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदु:।।

182. वार्तिक का क्या अर्थ है?
उत्तर : जो त्रुटिपूर्ण कथन पर (उक्त, अनुक्त, दुरुक्त) पर विचार करता है, उसे वार्तिक कहते हैं—
उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिन्ता यत्र प्रवर्तते।
तं ग्रन्थं वार्तिकं प्राहुर्वार्तिकज्ञा विचक्षणा:।।

183. भाष्य का लक्षण क्या है?
उत्तर : सूत्रार्थो वर्ण्यते यत्र वर्णै: सूत्रानुसारिभि:।
स्वपदानि च वर्ण्यन्ते भाष्यं भाष्यविदो विदु:।।

184. व्याख्यान के कितने अङ्ग होते हैं?
उत्तर : छः— 1. पदच्छेद, 2. पदार्थोक्ति, 3. विग्रह, 4. वाक्ययोजना, 5. आक्षेप, 6. समाधान।
पदच्छेद: पदार्थोक्तिर्विग्रहो वाक्ययोजना।
आक्षेपश्च समाधानं व्याख्यानं सद्विधं मतम्।।

185. अधिकार से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : नूतन प्रकरण के प्रारम्भ का संसूचक सूत्र, जिसका अग्रिमसूत्रों से सम्बन्ध होता है, अधिकार सूत्र कहलाता है।

186. परिभाषा सूत्र किसे कहते हैं?
उत्तर : नियमों को कहने वाले किंवा स्वयं कोई कार्य न करके विधि या निषेध सूत्रों की सहायता करने वाले परिभाषा सूत्र होते हैं।

187. प्रातिपदिक किसे कहते हैं?
उत्तर : धातु एवं प्रत्यय के अतिरिक्त समस्त सार्थक शब्द प्रातिपदिक कहलाते हैं। समास व तद्धित भी प्रातिपदिक होते हैं।

188. विद्वान् कीदृग् वचो ब्रूते? को रोगी? कश्च नास्तिक:?
उत्तर : कीदृक्चन्द्रं न पश्यन्ति त्रिसूत्रं तत्पाणिनेर्वद।।

— अर्थवत्, अधातु:, अप्रत्यय:, प्रातिपदिकम् (अर्थवदधातुरत्प्रत्य: प्रातिपदिकम्)।

189. संहिता संज्ञा किनकी होती है?
उत्तर : वर्णों की अत्यन्त समीपता संहिता कही जाती है।

190. 'संहिता' शब्द में प्रकृति-प्रत्यय है?
उत्तर : सम् + धा + क्त।

191. सवर्ण संज्ञा किनकी होती है?
उत्तर : जिन वर्णों के ताल आदि मुख के उच्चारण-स्थल एवं आभ्यन्तर प्रत्यन समान हो वे परस्पर सवर्ण होते हैं।

'तुल्यास्यप्रत्यनं सवर्णम्'।

192. पाणिनि ने 'पद' किसे माना है?
उत्तर : सुबन्त या तिङन्त प्रत्ययों से युक्त शब्द पदसंज्ञित होते हैं— 'सुप्तिङन्तं पदम्'।

193. संयोगसंज्ञा किनकी होती है?
उत्तर : स्वररहित व्यञ्जनों के मेल को संयोग कहते हैं।

194. विकरण किसे कहते हैं?
उत्तर : धातु में लकार के तिङन्त प्रत्ययों के योग से पहले प्रयुक्त होने वाले शप् प्रभृति उपप्रत्ययों को विकरण कहा जाता है।

195. निष्ठा किनकी संज्ञा है?
उत्तर : क्त एवं क्तवतु प्रत्ययों को निष्ठा कहते हैं। (क्तक्तवतू निष्ठा)।

196. नदी संज्ञा किनकी है?
उत्तर : नित्य स्त्रीलिङ्ग में रहने वाले ईकार-ऊकारान्त शब्दों की।

197. घि संज्ञा किनकी होती है?
उत्तर : सखि शब्द के अतिरिक्त सभी इकार-ऊकारान्त शब्दों की।

198. किस वर्ण को उपधा कहते हैं?
उत्तर : किसी शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्ववर्ती प्रथम वर्ण की उपधा संज्ञा होती है। यथा— 'राजन्' में जकारोत्तरवर्ती 'अ'।

199. प्रगृह्यसंज्ञा का विधायक सूत्र है?
उत्तर : ईदूदेइ द्विवचनं प्रगृह्यम् (द्विवचनान्त ईकार-ऊकारान्त प्रगृह्य)।

200. 'विभाषा' से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : निषेध-विकल्प अर्थात् कार्य के होने या न होने की सम्भावनात्मक स्थिति विभाषा कहलाती है।

201. सर्वनामस्थान से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : पुंल्लिङ्ग या स्त्रीलिङ्ग से परे होने पर 'सु, औ, जस्, अम् औट्' ये पाँच प्रत्यय सर्वनामस्थान कहलाते हैं।

'सुडनपुंसकस्य'

202. सत् किन्हें कहते हैं?
उत्तर : शतृ एवं शानच् प्रत्ययों को। (तौ सत्)

203. संख्या किनको कहते हैं?
उत्तर : बहु, गण, बतु प्रत्ययान्त तथा डति प्रत्ययान्त शब्दों को।

(बहुगणवतुडति संख्या)

204. विसर्जनीय किसे कहते हैं?
उत्तर : विसर्ग को।

205. लुक्, लुप् एवं श्लु क्या है?
उत्तर : ये अदर्शन/लोप की कारक संज्ञाएँ हैं।

206. भाषितपुंस्क किसे कहते हैं?
उत्तर : जिस शब्द का पुंल्लिङ्ग एवं नपुंसकलिङ्ग, दोनों में प्रयोग हो एवं समान अर्थ हो, उसे भाषितपुंस्क कहते हैं।

207. सम्प्रसारण किसे कहते हैं?
उत्तर : यण् के स्थान पर इक् का विधान सम्प्रसारण कहलाता है।

208. तरप् एवं तमप् की क्या संज्ञा है?
उत्तर : तरप्तमपौ घ:। 'घ' संज्ञा होती है।

209. कृत्य प्रत्यय कौन-कौन से हैं? तव्य, तव्यत्, अनीयर्, यत्, क्यप्, ण्यत्, य, केलिमर् 'प्र' आदि उपसर्गों की गति संज्ञा कब होती है?
उत्तर : क्रिया के योग में उपसर्गों की गति संज्ञा होती है।

210. सम्बुद्धि किसे कहते हैं?
उत्तर : सम्बोधन में प्रथमा का एकवचन सम्बुद्धिसंज्ञक होता है।

211. उपसर्ग किन्हें कहा जाता है?
उत्तर : क्रिया के योग में 'प्र' आदि को उपसर्ग कहते हैं

212. अन्वादेश किसे कहते हैं?
उत्तर : किसी कार्य में जिसका ग्रहण हो चुका हो, उसका पुन: किसी अन्य कार्य में उपयोग करना अन्वादेश है।

213. द्वित्व के द्वितीय रूप को क्या कहते हैं?
उत्तर : आमेडित।

214. अभ्यास किसे कहते हैं?
उत्तर : द्वित्व के प्रथम रूप को।

215. आबन्त किन्हें कहते हैं?
उत्तर : टाप्, डाप्, चाप्—ये तीन स्त्रीप्रत्यय 'आप्' कहलाते हैं और इनसे अन्त होने वाले पर आबन्त कहलाते हैं।

216. जो कार्य बिना किसी नियम या सूत्र से होता है, उसे क्या कहते हैं?
उत्तर : निपातन।

217. उपसर्जन से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : समास में प्रथमा विभक्ति निर्दिष्ट पद की उपसर्जन संज्ञा है।

218. 'प' एवं 'फ' के पूर्व अर्द्धविसर्ग तुल्य ध्वनि को क्या कहते हैं?
उत्तर : उपध्मानीय।

219. अपृक्त किसे कहते हैं?
उत्तर : एक वर्ण वाले प्रत्यय को।

220. घुसंज्ञा किन धातुओं की है?
उत्तर : 1. डुदाञ्, 2. दाण, 3. दो, 4. देङ्, 5. दुधाञ्, 6. धेट् —इन छ: धातुओं की घुसंज्ञा है।

221. 'घु' संज्ञा का विधायकसूत्र है?
उत्तर : दाधाघ्वदाप्।

222. प्रातिपदिक का विधायक सूत्रद्वय है—
उत्तर : 1. अर्थवदधातुरप्रत्यय:, 2. कृत्तद्धितसमासाश्च।

223. प्रातिपदिकार्थ की भट्टोजिदीक्षित ने क्या व्याख्या की?
उत्तर : नियतोपस्थितिक: प्रातिपदिकार्थ:।

224. व्यादि ने प्रातिपदिकार्थ किसमें माना है?
उत्तर : व्यक्ति में।

225. वाजप्यायन ने किसमें प्रातिपदिकार्थ माना है?
उत्तर : जाति में।

226. पतञ्जलि के अनुसार प्रातिपदिकार्थ है —
उत्तर : स्वार्थ, द्रव्य, लिङ्ग, संख्या, कारक।

227. कैयट ने प्रातिपदिकार्थ माने हैं —
उत्तर : चार— 1. स्वार्थ, 2. द्रव्य, 3. लिङ्ग, 4. संख्या।

228. अकथित कर्म से क्या अभिप्राय गृहीत होता है?
उत्तर : दुहादि द्विकर्मक धातुओं के मुख्यकर्म के साथ क्रिया द्वारा संबध्यमान कारक अकथित कम होता है।

229. विभक्तियों के दो प्रकार कौन-से हैं —
उत्तर : 1. कारक विभक्तियाँ, 2. उपपद विभक्तियाँ।

230. कारक विभक्ति किसे कहते हैं?
उत्तर : क्रिया के साथ संज्ञा या सर्वनाम का प्रत्यक्ष सम्बन्ध करने वाली कारक विभक्ति होती है।

231. अव्यय शब्दों के योग से कैसी विभक्ति होती है?
उत्तर : उपपदविभक्ति।

232. कारक विभक्ति एवं उपपद विभक्ति में बलवती कौन-सी हैं?
उत्तर : कारक विभक्ति (उपपदविभक्ते: कारकविभक्ति-वलीयसी)।

233. कारक कितने हैं?
उत्तर : छ: —1. कर्ता, 2. कर्म, 3. करण, 4. सम्प्रदान, 5. अपादान, 6. अधिकरण।

234. धातुओं के दो भेद?
उत्तर : 1. परस्मैपदी, 2. आत्मनेपदी।

235. लकार कितने होते हैं?
उत्तर : दश।

236. किस लकार में केवल ध्वान्दस प्रयोग है?
उत्तर : लेट् लकार का।

237. लिङ्लकार के दो भेद हैं —
उत्तर : 1. आशीर्लिङ्, 2. विधिलिङ्।

238. भूतकाल कितने लकारों का विषय है —
उत्तर : तीन लङ्-लिट्-लुङ्-लकार।

239. भविष्यकाल कितने लकारों का विषय है —
उत्तर : दो। लुट्-लट् लकार।

240. धातुओं के कुल कितने गण हैं?
उत्तर : दश—1. भ्वादि, 2. अदादि, 3. जुहोत्यादि, 4. दिवादि, 5. स्वादि, 6. तुदादि, 7. रुधादि, 8. तनादि, 9. क्र्यादि, 10. चुरादि।

241. धातुपाठ में कुल कितनी धातुएँ गणित हैं—
उत्तर : 1940।

242. सर्वाधिक किस गण में कितनी धातुएँ हैं—
उत्तर : भ्वादिगण में। 1035 धातुएँ।

243. सबसे कम धातुएँ किस गण में गणित हैं?
उत्तर : तनादिगण में। 10 धातुएँ।

4. निरुक्त

244. निरुक्त का अर्थ क्या है?
उत्तर : व्युत्पत्ति करने वाला।

245. दुर्गाचार्य ने निरुक्त पर कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : दुर्गवृत्ति।

246. दुर्गवृत्ति में निरुक्तों की सङ्ख्या कितनी बताई है?
उत्तर : 14

247. आचार्य यास्क ने कितने निरुक्तकारों का उल्लेख किया है?
उत्तर : 12

248. वेदाङ्ग का प्रतिनिधि निरुक्त कौन-सा है?
उत्तर : यास्काचार्य प्रणीत निरुक्त।

249. यास्क के निरुक्त में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 14 अध्याय (12 अध्याय - 2 परिशिष्ट अध्याय)।

250. सम्प्रति निरुक्त साहित्य किस नाम से अभिहित होता है?
उत्तर : भाषा-विज्ञान।

251. निरुक्त किसका भाष्य है?
उत्तर : निघण्टु का।

252. निघण्टु क्या है?
उत्तर : वैदिक शब्दों का कोषग्रन्थ।

253. निरुक्त क्या है?
उत्तर : निघण्टु में प्रदत्त वैदिक शब्दों का निर्वचन।

254. यास्कप्रणीत निरुक्त के आधारभूत निघण्टु में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : पाँच।

255. निघण्टु के प्रथम तीन अध्याय क्या कहलाते हैं?
उत्तर : नैघण्टुक-काण्ड।

256. चतुर्थ अध्याय को क्या कहते हैं?
उत्तर : नैगम या एकपदिक काण्ड।

257. दैवतकाण्ड के नाम से निघण्टु का कौन-सा अध्याय जाना जाता है?
उत्तर : पञ्चम (अन्तिम) अध्याय।

258. सायणाचार्य का निघण्टु-निरुक्त के बारे में क्या मत है?
उत्तर : दोनों एक ही हैं। दोनों मिलकर ही निरुक्त वेदाङ्ग हैं।

259. चौदह निरुक्तकार कौन-कौन हुए?
उत्तर : 1. औपमन्यव, 2. औदुम्बरायण, 3. वार्ष्यायणि, 4. गार्ग्य, 5. आग्रायण, 6. शाकपूणि, 7. और्णनाम, 8. तैटिक, 9. गालव, 10. स्थौलाष्ठीवि, 11. कौष्टुकि, 12. कास्थक्य, 13. यास्क, 14. शाकपूणि पुत्र कौत्सव्य।

5. छन्द

260. वेदपुरुष का पैर किसे माना गया है?
उत्तर : छन्द को।

261. छन्दोवेदाङ्ग का आधार ग्रन्थ कौन-सा है?
उत्तर : छन्दःसूत्रम्।

262. छन्दः सूत्र के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : आचार्य पिङ्गल।

263. यह कितने अध्यायों में विभक्त है?
उत्तर : आठ अध्यायों में।

264. छन्दः सूत्र में कहाँ तक वैदिक छन्दों का विवेचन है?
उत्तर : प्रथम से चतुर्थ अध्याय के सप्तम सूत्र तक।

265. छन्दः सूत्र में कितने सूत्र हैं?
उत्तर : 321 सूत्र।

266. वैदिक छन्दों के प्रतिपादक सूत्र कितने हैं?
उत्तर : 119 सूत्र।

267. पिङ्गलाचार्य द्वारा किन छान्दसिकों का उल्लेख किया गया है?
उत्तर : क्रौष्टुकि, यास्क, ताण्डिक, सैतव, काश्यप, शाकल्य, माण्डव्य, रात (8)।

268. इनमें से कौन-कौन मूलरूप से छन्दः प्रवक्ता हैं?
उत्तर : यास्क, काश्यप, ताण्डी, माण्डव्य (शेष नामान्तर कर्ता ही हैं)।

269. वैदिक छन्दों के विधान के अनुसार छन्द के मुख्य भेद कितने हैं?
उत्तर : तीन — गद्य-पद्य-गीतिछन्द।

270. पं. मधुसूदन ओझा ने वैदिक छन्दों के विवेचनार्थ कौन-सा ग्रन्थ लिखा है?
उत्तर : छन्दः समीक्षा।

271. समस्त वैदिक छन्दों की सङ्ख्या कितनी है?
उत्तर : 26

272. प्रसिद्ध 'गायत्री छन्द' में कितने अक्षर होते हैं?
उत्तर : 24 अक्षर।

273. कुल वैदिक छन्द?
उत्तर : गायत्री, उष्णिक् (28 अक्षर), अनुष्टुप् (32), बृहती (36), पङ्क्ति (40), त्रिष्टुप् (44), जगती (48)।

274. छन्द का व्युत्पत्तिजन्य अर्थ क्या है?
उत्तर : 'छाद्यतेऽनेनेति च्छन्दः' (आवरण)।

275. नियत वर्णव्यवस्था वाले कैसे छन्द कहलाते हैं?
उत्तर : वृत्त।

276. नियत मात्रा व्यवस्था वाले कैसे छन्द कहलाते हैं?
उत्तर : जाति।

277. ऋग्वेद में कितने छन्दों का प्रयोग हुआ है?
उत्तर : 13 छन्दों का (किन्तु शौनक ने 14 छन्दों की बात कही है जो कि अनुसन्धान द्वारा प्रमाणित नहीं हो सकी)।

278. ऋग्वेद में किन-किन छन्दों का प्रयोग हुआ है?
उत्तर : गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पङ्क्ति, त्रिष्टुप्, जगती, अति जगती, शक्वरी, अतिशक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति।

279. यजुर्वेद में कितने छन्द प्रयुक्त हुए हैं?
उत्तर : आठ — अतिधृति, कृति, प्रकृति, आकृति, विकृति, सङ्कृति, अभिकृति, उत्कृति।

280. अथर्ववेद में कितने छन्द प्रयुक्त हुए हैं?
उत्तर : पाँच — उक्ता, अत्युक्ता, मध्या, प्रतिष्ठा, सुप्रतिष्ठा।

6. ज्यौतिष

281. वेदपुरुष का नेत्र किसे माना गया है?
उत्तर : ज्यौतिष को।

282. वर्तमान में किस वेद का वेदाङ्ग ज्यौतिष अनुपलब्ध है?
उत्तर : सामवेद का।

283. ऋग्वेदीय वेदाङ्ग 'आर्च-ज्यौतिष' में कितने पद्य हैं?
उत्तर : 36 पद्य।

284. याजुष ज्यौतिष में कितने पद्य हैं?
उत्तर : 39 (कहीं-कहीं 49) पद्य।

285. आथवर्ण ज्यौतिष में कितने पद्य हैं?
उत्तर : 162 पद्य।

286. ज्यौतिष का प्रयोजन क्या है?
उत्तर : यज्ञों में समय-शुद्धि (मुहूर्त-विचार)।

287. पञ्चाङ्ग के पाँच अङ्ग कौन-कौन से हैं?
उत्तर : तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण।

288. ज्यौतिष वेदाङ्ग के कितने भाग हैं?
उत्तर : 1. संहिता 2. जातक 3. गणित।

289. ग्रह कितने हैं?
उत्तर : नौ — सूर्य-चन्द्र-मङ्गल-बुध-गुरु-शुक्र-शनि-राहु-केतु।

290. किन ग्रहों को छाया ग्रह कहते हैं?
उत्तर : राहु व केतु को।

291. सबसे मन्द गति कौन-सा ग्रह करता है?
उत्तर : शनैश्चर (शनैश्शनैः चरति —इति शनैश्चरः)।

292. नक्षत्र कितने हैं?
उत्तर : 28

293. प्रथित ज्यौतिषिक विद्वान्?
उत्तर : आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त, भास्कराचार्य।

294. आत्मा का कारक ग्रह कौन है?
उत्तर : सूर्य।

295. चन्द्रमा किसका स्वामी माना जाता है?
उत्तर : मन का।

296. न्याय-दर्शन-अध्यात्म से किस ग्रह का सम्बन्ध है?
उत्तर : शनि का।

297. आर्यभट्ट ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : आर्यभट्टीयम्।

(स) ब्राह्मण-आरण्यक-उपनिषद् भाग

ब्राह्मण

1. ब्राह्मणग्रन्थों में क्या निरूपित हुआ है?
उत्तर : यज्ञानुष्ठान की पद्धति के साथ फल प्राप्ति और विधि का निरूपण।

2. वेदों के कौन-से दो भाग हैं?
उत्तर : संहिता एवं ब्राह्मण ('वेदो हि मन्त्रब्राह्मणभेदेन द्विविधः।')।

3. संहिता किसे कहते हैं?
उत्तर : वेद के मन्त्रभाग को संहिता कहते हैं।

4. आरण्यक व ब्राह्मण में क्या भेद है?
उत्तर : आरण्यक संहितापरक विवेचन है तथा ब्राह्मण संहितापरक भाष्य।

5. ब्राह्मणग्रन्थों की सङ्ख्या कितनी है?
उत्तर : 13

6. ऋग्वेद के ब्राह्मणग्रन्थ कौन-से हैं?
उत्तर : ऐतरेय व शाङ्खायन (2)।

7. शतपथ ब्राह्मण किस वेद से सम्बद्ध है?
उत्तर : शुक्ल यजुर्वेद से।

8. ऐतरेय ब्राह्मण कितने अध्यायों, पञ्चिकाओं एवं कण्डिकाओं में विभक्त है?
उत्तर : 40 अध्यायों, 8 पञ्चिकाओं, 285 कण्डिकाओं में।

9. ऐतरेय मुख्य रूप से क्या विवेचित करता है?
उत्तर : सोमयाग का हौत्रकर्म।

10. शाङ्खायन ब्राह्मण का अपरनाम क्या है?
उत्तर : कौषितकि ब्राह्मण।

11. यह कितने अध्यायों एवं कण्डिकाओं में विभाजित है?
उत्तर : 30 अध्याय, 226 कण्डिकाओं में।

12. शतपथ ब्राह्मण में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 100 अध्याय (माध्यन्दिनी शाखीय), 438 ब्राह्मण, 7, 624 कण्डिकाएँ।

13. काण्वशाखीय शतपथ में कितने काण्ड, अध्याय, ब्राह्मण एवं कण्डिकाएँ हैं?
उत्तर : 104 अध्याय, 17 काण्ड, 435 ब्राह्मण, 6, 806 कण्डिकाएँ।

14. शतपथ का शाब्दिक अर्थ क्या है?
उत्तर : 'शतं पन्थानो यस्य तच्छतपथम्।' अर्थात् जिसके सौ पथ (अध्याय) हैं।

15. माध्यन्दिनीय-शतपथ में कितने प्रपाठक हैं?
उत्तर : 68 प्रपाठक।

16. काण्वशाखीय शतपथ में कितने प्रपाठक हैं?
उत्तर : इसमें प्रपाठक नहीं हैं।

17. कृष्णयजुर्वेद से सम्बन्धित ब्राह्मण कौन-सा है?
उत्तर : तैत्तिरीय ब्राह्मण।

18. कृष्ण यजुर्वेद के किस अन्य ब्राह्मण का गवेषकों ने उल्लेख किया है?
उत्तर : काठक ब्राह्मण का।

19. सामवेद के कितने ब्राह्मण हैं?
उत्तर : नौ — 1. प्रौढ़ (ताण्ड्य/महाब्राह्मण), 2. षड्विंश, 3. सामविधान, 4. आर्षेय, 5. देवताध्याय, 6. छान्दोग्योपनिषद् ब्राह्मण, 7. संहितोपनिषद् ब्राह्मण, 8. वंश ब्राह्मण, 9. जैमिनीय ब्राह्मण।

20. गोपथ ब्राह्मण किस वेद का है?
उत्तर : अथर्ववेद का।

21. गोपथ कितने भागों में विभेदित है?
उत्तर : दो — पूर्वगोपथ तथा उत्तरगोपथ।

आरण्यक

22. ऋग्वेद से सम्बद्ध आरण्यक कौन-सा है?
उत्तर : ऐतरेय और शाङ्खायन।

23. शाङ्खायन आरण्यक में कितने अध्याय हैं?
उत्तर : 30 अध्याय।

24. बृहदारण्यक उपनिषद् किस वेद से सम्बन्धित है?
उत्तर : शुक्लयजुर्वेद से।

25. बृहदारण्यक उपनिषद् के प्रवक्ता कौन हैं?
उत्तर : याज्ञवल्क्य।

26. कृष्णयजुर्वेद का आरण्यक कौन-सा है?
उत्तर : तैत्तिरीय-आरण्यक।

27. तवलकार (जैमिनीयोपनिषद् ब्राह्मण) किस वेद से सम्बद्ध है?
उत्तर : सामवेद से।

28. किस वेद से सम्बद्ध आरण्यक प्राप्त नहीं होता?
उत्तर : अथर्ववेद से।

29. आरण्यकों का मुख्य विषय क्या है?
उत्तर : आध्यात्मिक चिन्तन।

उपनिषद्

30. उपनिषदों की सङ्ख्या कितनी मानी गई है?
उत्तर : 108

31. प्रसिद्ध उपनिषद् कौन-कौन से हैं?
उत्तर : ईश-केन-कठ-प्रश्न-मुण्ड-माण्डूक्य-तित्तिरि।
ऐतरेयञ्च छान्दोग्यं बृहदारण्यकं तथा।।

32. 'पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्' यह किस उपनिषद् में है?
उत्तर : बृहदारण्यकोपनिषद् में।

33. ईशावास्योपनिषद् किस संहिता का अन्तिम अध्याय है?
उत्तर : यजुर्वेद संहिता का।

34. शुक्लयजुर्वेदीय उपनिषद् कितने हैं?
उत्तर : 19

35. 'सत्यमेव जयते' किस उपनिषद् में है?
उत्तर : मुण्डकोपनिषद् में।

36. कृष्णयजुर्वेद के कितने उपनिषद् हैं?
उत्तर : 32

37. उपनिषदों पर शाङ्करभाष्य किसने लिखा?
उत्तर : आचार्य शङ्कर ने।

38. अथर्ववेद से सम्बद्ध उपनिषद् कितने हैं?
उत्तर : 31

39. 'असतो मा सद्गमय' किसमें है?
उत्तर : बृहदारण्यकोपनिषद् में।

40. सामवेदीय महावाक्य 'तत्त्वमसि' का निरूपण किसमें है?
उत्तर : छान्दोग्योपनिषद् में।

• • •

दर्शन साहित्य का सामान्य परिचय

1. दर्शन के कौन-से दो भेद हैं?
   उत्तर : अ. आस्तिकदर्शन, ब. नास्तिकदर्शन।
2. षड् आस्तिकदर्शन कौन-से हैं?
   उत्तर : सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदान्त।
3. साङ्ख्यदर्शन का प्रवर्तक किसे माना जाता है?
   उत्तर : महर्षि कपिल को।
4. साङ्ख्यदर्शन का मूलभूत ग्रन्थ कौन-सा है?
   उत्तर : कपिलविरचित तत्त्वसमास।
5. तत्त्वसमास का विवेचन किस कृति में विशद रूप से किया गया?
   उत्तर : सांख्यप्रवचन में।
6. सांख्य ने कितने मूलतत्त्व स्वीकार किये हैं?
   उत्तर : दो—प्रकृति एवं पुरुष।
7. साङ्ख्य का शाब्दिक तात्पर्य क्या है?
   उत्तर : सम्यक् ख्यापनं (प्रसिद्ध) यस्मिन् तत् अर्थात् जिसमें प्रकृतिपुरुषविवेक / सम्यक् ज्ञान है।
8. साङ्ख्य ने किन पच्चीस तत्त्वों का प्रतिपादन किया?
   उत्तर : 1. प्रकृति, 2. महत्, 3. अहङ्कार, 4. शब्दतन्मात्र, 5. स्पर्शतन्मात्र, 6. रूपतन्मात्र, 7. रसतन्मात्र, 8. गन्धतन्मात्र, 9. श्रोत्र, 10. त्वक्, 11. चक्षु, 12. जिह्वा, 13. नासिका, 14. वाक्, 15. पाणि, 16. पाद, 17. पायु, 18. उपस्थ, 19. मन, 20. पृथ्वी, 21. जल, 22. तेज, 23. वायु, 24. आकाश, 25. पुरुष।
9. साङ्ख्य के प्रमुख आचार्य कौन हुए?
   उत्तर : पञ्चशिख, आसुरि, विन्ध्यवास, ईश्वरकृष्ण, विज्ञानभिक्षु, वार्षगण्य, वाचस्पतिमिश्र।
10. साङ्ख्यदर्शन का पुरुष कैसा है?
    उत्तर : नित्य और एक होते हुए भी देह भेद से अनेक।
11. साङ्ख्य ने कितने गुण माने हैं?
    उत्तर : तीन—सत्त्व, रज, तम।
12. प्रकृति और गुणों में क्या सम्बन्ध है?
    उत्तर : सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः—गुणों की साम्यावस्था ही प्रकृति है।
13. योगदर्शन के प्रवर्तक कौन हैं?
    उत्तर : पतञ्जलि।
14. महर्षि पतञ्जलि ने योग की क्या परिभाषा दी?
    उत्तर : चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है। (योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः)।
15. अष्टाङ्गयोग कौन-कौन से हैं?
    उत्तर : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि।
16. पञ्चयम कौन-कौन से हैं?
    उत्तर : अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह।
17. पञ्चनियम कौन-कौन से हैं?
    उत्तर : शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान।
18. योगदर्शन में मुक्ति के क्या भेद गृहीत हैं?
    उत्तर : जीवन्मुक्ति, विदेहमुक्ति।
19. मुक्ति क्या है? (योगदर्शनानुमत)
    उत्तर : पुरुषार्थ से शून्य गुणों का अपने कारण में लीन हो जाना अर्थात् चितिशक्ति का स्वीय स्वरूप में प्रतिष्ठित होना ही मुक्ति है।
20. न्यायदर्शन के प्रवर्तक कौन माने जाते हैं?
    उत्तर : आचार्य गौतम।
21. न्यायदर्शन के प्रारम्भिक ग्रन्थ कौन-से हैं?
    उत्तर : गौतमन्यायसूत्र एवं वात्स्यायनभाष्य।

22. न्यायदर्शन को किन-किन नामों से जानते हैं?
उत्तर : प्रमाण शास्त्र, आन्वीक्षिकी, हेतुविद्या, तर्कशास्त्र, ऊह।

23. प्रमाण क्या है?
उत्तर : यथार्थ अनुभूति प्रभा है तथा प्रभा के करण को प्रमाण कहते हैं।

24. प्रमाण कितने हैं?
उत्तर : चार—प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द।

25. नव्यन्याय के प्रमुख व्याख्याता कौन माने जाते हैं?
उत्तर : तत्त्वचिन्तामणि के प्रणेता गङ्गेश।

26. वाचस्पति मिश्र ने कौन-सी टीका न्याय पर लिखी?
उत्तर : न्यायवार्तिक टीका।

27. न्यायवार्तिक के लेखक कौन हैं?
उत्तर : उद्योतकर।

28. न्यायदर्शन में कितने तत्त्व माने जाते हैं?
उत्तर : 16 तत्त्व।

29. प्रथम तत्त्व या साध्यतत्त्व कौन-सा है?
उत्तर : प्रमेय।

30. शेष 15 तत्त्व क्या हैं?
उत्तर : प्रमेय सिद्धि के साधन।

31. नैयायिकों के अनुसार मोक्ष क्या है?
उत्तर : दु:खों की आत्यन्तिकों निवृत्ति ही मोक्ष है।

32. नैयायिकों ने आत्मा के बारे में क्या माना है?
उत्तर : आत्मा प्रतिशरीर भिन्न-भिन्न है।

33. वैशेषिक दर्शन के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : महर्षि कणाद।

34. कणाद का वास्तविक नाम क्या था?
उत्तर : उलक।

35. वैशेषिक को किन अन्य नामों से जानते हैं?
उत्तर : कणाददर्शन, औलूक्यदर्शन।

36. 'वैशेषिक' यह नाम क्यों पड़ा?।
उत्तर : क्योंकि इस दर्शन में 'विशेष' नामधेय स्वतन्त्र तत्त्व की कल्पना है।

37. वैशेषिकदर्शन ने कितने पदार्थ स्वीकृत किये?
उत्तर : सात—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव।

38. वैशेषिकदर्शन पर तर्कसङ्ग्रह किसने लिखा?
उत्तर : अन्नम्भट्ट ने।

39. परमाणुवाद का विवेचन किस दर्शन में हुआ है?
उत्तर : वैशेषिक में।

40. वैशेषिक दार्शनिकों एवं पाश्चात्य विद्वानों के परमाणुवाद में क्या अन्तर है?
उत्तर : पाश्चात्यमतानुसार परमाणु स्वयं सङ्गठित एवं विभाजित होते हैं, किन्तु वैशेषिकानुसार ईश्वर उनका नियन्ता है।

41. मीमांसा के कितने भेद हैं?
उत्तर : पूर्व मीमांसा एवं उत्तर मीमांसा।

42. पूर्वमीमांसा के प्रमुख आचार्य कौन हैं?
उत्तर : जैमिनि।

43. जैमिनीयमीमांसा सूत्र में कितने अध्याय एवं सूत्र हैं?
उत्तर : 12 अध्याय व 2,644 सूत्र।

44. जैमिनि के अनुसार पूर्वमीमांसा के आचार्य कौन हुए?
उत्तर : शबरस्वामी, कुमारिलभट्ट, प्रभाकर।

45. मीमांसा (पूर्वमीमांसा) में प्रधान स्थान किसका है?
उत्तर : कर्म का।

46. कर्म कितने प्रकार का है?
उत्तर : तीन—1. नित्यनैमित्तिक, 2. निषिद्ध, 3. काम्यकर्म।

47. उत्तरमीमांसा (वेदान्त) दर्शन के प्रमुख आचार्य कौन हैं?
उत्तर : महर्षि बादरायण व्यास।

48. व्यास ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : ब्रह्मसूत्र।

49. ब्रह्मसूत्र को किन नामों से जाना जाता है?
उत्तर : वेदान्तसूत्र, शारीरिकसूत्र, बादरायणसूत्र, उत्तरमीमांसा सूत्र।

50. ब्रह्मसूत्र पर आचार्य शङ्कर ने कौन-सा भाष्य लिखा?
उत्तर : शाङ्करभाष्य

51. शङ्कर ने सत्य की क्या परिभाषा बतायी?
उत्तर : 'यद्रूपेण यन्निश्चितं तद्रूपं न व्यभिचरति तत् सत्यम्।'

52. शङ्कर का प्रसिद्ध वाक्य क्या है?
उत्तर : 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या।'

53. शङ्कर ने किस वाद का प्रतिपादन किया?
उत्तर : अद्वैतवाद का।

54. प्रस्थानत्रयी से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : उपनिषद्, भगवद्गीता तथा ब्रह्मसूत्र ही प्रस्थानत्रयी है।

55. किस आचार्य ने द्वैतवाद की प्रतिष्ठा की?
उत्तर : मध्वाचार्य ने।

56. वेदान्तदर्शन किस पर आधारित है?
उत्तर : उपनिषदों पर।

57. उपनिषदों के शाङ्करभाष्यकार कौन हैं?
उत्तर : आद्य शङ्कराचार्य।

58. नास्तिक दर्शन कौन-कौन से हैं?
उत्तर : चार्वाक, जैन एवं बौद्ध।

59. किस दर्शन ने 'मरणमेवापवर्ग:' कहा है?
उत्तर : चार्वाकदर्शन ने।

60. चार्वाकों ने वेद के कर्तृत्व के बारे में क्या बताया?
उत्तर : त्रयो वेदस्य कर्तारो धूर्तभण्डनिशाचरा:।
जमरीतुकरीत्यादिपण्डितानां वच: स्मृतम्।।

61. चार्वाकों ने किस एकमात्र प्रमाण को स्वीकारा है?
उत्तर : प्रत्यक्ष।

62. चार्वाक दर्शन को किन अन्य नामों से जानते हैं?
उत्तर : लोकायत, ब्राईस्पत्यदर्शन।

63. चार्वाकों के अनुसार पुरुषार्थ कितने हैं?
उत्तर : काम एवं क: पुरुषार्थ:।

64. चार्वाकों ने पृथ्वी आदि पाँच तत्त्वों में से किसको नकार दिया?
उत्तर : आकाश को।

65. चार्वाकों के दर्शन का प्रतिनिधि श्लोक?
उत्तर : यावज्जीवेत् सुखं जीवेद् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुत:।।

66. जैन दर्शन किस श्रेणी में आता है?
उत्तर : नास्तिक श्रेणी में।

67. जैन शब्द का क्या तात्पर्य है?
उत्तर : जिन का अर्थ है जीतने वाला अर्थात् विकारों का जेता। उसके द्वारा उपदिष्ट सम्प्रदाय ही जैन सम्प्रदाय है।

68. प्रथम जैन तीर्थङ्कर?
उत्तर : ऋषभदेव।

69. अन्तिम तीर्थङ्कर कौन हुए?
उत्तर : महावीर।

70. जैन दर्शन का अनेकान्तवाद क्या है?
उत्तर : वस्तुओं के अनन्तरूप एवं अनन्तधर्म हैं।

71. जैनमत किन दो सम्प्रदायों में विभक्त है?
उत्तर : श्वेताम्बर, दिगम्बर।

72. स्याद्वाद की अभिव्यक्ति करने वाले सप्त वचनों को क्या कहा है?
उत्तर : सप्तभङ्गी न्याय।

73. मोक्ष के साधन क्या हैं?
उत्तर : त्रिरत्न अर्थात् सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन एवं सम्यक् चरित्र।

74. मोक्ष क्या है?
उत्तर : दु:ख व दु:ख के कारणों से मुक्ति ही मोक्ष है।

75. बौद्ध दर्शन के प्रथम आचार्य कौन हुए?
उत्तर : महात्मा बुद्ध।

76. बौद्धदर्शन का प्रसिद्ध नाम?
उत्तर : शून्यवाद।

77. बौद्ध के दो उपसम्प्रदाय?
उत्तर : हीनयान एवं महायान।

78. हीनयान के दो दार्शनिक सम्प्रदाय?
उत्तर : वैभाषिक (बाह्यार्थ प्रत्यक्षवाद) एवं सौत्रान्तिक (बाह्यार्थानुमेयवाद)।

79. विज्ञानवाद और शून्यवाद को किन नामों से जानते हैं?
उत्तर : क्रमश: योगाचार एवं माध्यमिक नाम से।

80. ये दोनों किस उपसम्प्रदाय में आते हैं?
उत्तर : महायान सप्प्रदाय में।

81. शून्यवादी माध्यमिक सम्प्रदाय के मूल प्रवर्तक कौन हैं?
उत्तर : आचार्य अश्वघोष।

82. माध्यमिक सम्प्रदाय को सम्प्रदाय का रूप किसने दिया?
उत्तर : आचार्य नागार्जुन ने।

83. बौद्धदर्शन के आधार 'चार आर्य सत्य' कौन से हैं?
उत्तर : दु:ख, दु:ख-समुदाय, दु:खनिरोध, दु:खनिरोधगामिनी प्रतिपत्।

84. बौद्धों ने मोक्ष के लिए किस शब्द का प्रयोग किया?
उत्तर : निर्वाण शब्द का।

85. बौद्धदर्शन किस पिटक में है?
उत्तर : अभिधम्मपिटक में।

86. अभिधम्मपिटक किस भाषा में है?
उत्तर : पालि भाषा में।

87. बुद्ध का आत्मा की नित्यता के बारे में क्या मानना है?
उत्तर : आत्मा अनित्य हैं।

88. किस मीमांसक ने बौद्धाचार्य का शिष्यत्व स्वीकार कर उसे परास्त किया?
उत्तर : कुमारिलभट्ट ने।

89. वर्तमान में भारतीय दर्शन का प्रतिनिधि दर्शन कौन-सा है?
उत्तर : गीता दर्शन।

90. गीता दर्शन के आचार्य कौन हैं?
उत्तर : श्रीकृष्ण।

विज्ञान-विभाग

1. हय-आयुर्वेद (तुरङ्गम-आयुर्वेद) के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : शालिहोत्र।

2. शालिहोत्र के अन्य ग्रन्थ कौन-कौन से हैं?
उत्तर : शालिहोत्र संहिता, अश्वप्रश्न, अश्वलक्षणशास्त्र।

3. हय-आयुर्वेद में कितने खण्ड एवं श्लोक हैं?
उत्तर : आठ खण्ड व 12,000 श्लोक।

4. गजायुर्वेद के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : ऋषि पालक्य।

5. खगोलग्रन्थ 'गर्गसंहिता' के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : महर्षि गर्ग।

6. ज्योतिष वेदाङ्ग के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : महर्षि लगध।

7. बृहज्जातक, पञ्चसिद्धान्तिका, योगयात्रा इत्यादि उत्कृष्ट ग्रन्थों की रचना किसने की?
उत्तर : वराहमिहिर ने।

8. 'आर्यसिद्धान्त' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : आर्यभट्ट (प्रथम)।

9. वनस्पतिशास्त्रीय ग्रन्थ 'वृक्षायुर्वेद' किसने लिखा?
उत्तर : महर्षि पराशर ने।

10. ब्रह्मगुप्त रचित 'खण्डखाद्यक' में किसका निरूपण है?
उत्तर : खण्डखाद्यक में गणितीय समस्याओं व सिद्धान्तों का निरूपण है।

11. ब्रह्मगुप्त ने 'ध्यानग्रहापदेश' में किसके सूत्र बताये हैं?
उत्तर : कलनगणित (कैल्युकस) के सूत्र।

12. केरल के गोविन्दस्वामी ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : गोविन्दकृति ग्रन्थ।

13. उक्त ग्रन्थ में किसकी चर्चा है?
उत्तर : अङ्कगणित, मापनविद्या व खगोलविद्या की।

14. गणितसारसङ्ग्रह के लेखक कौन हैं?
उत्तर : भास्कराचार्य (भास्कद्वितीय)।

15. सिद्धान्तशिरोमणि के लेखक कौन हैं?
उत्तर : भास्कराचार्य (भास्कर द्वितीय)।

16. भास्कराचार्य के अन्य ग्रन्थ?
उत्तर : बीजगणित, वासनाभाष्य।

17. वासनाभाष्य में क्या विवेचित है?
उत्तर : खगोलीय-पिण्डों की गति।

18. गणितज्ञ एवं ब्रह्मलीन शङ्कराचार्य भारती कृष्णतीर्थजी ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : वैदिक मेथेमेटिक्स।

19. वैदिक मेथेमेटिक्स में कितने श्लोक हैं?
उत्तर : 16 श्लोक।

20. ज्यामिति का 29वाँ प्रमेय किस नाम से हमारे देश में पढ़ाया जाता है?
उत्तर : पाइथोगोरेस प्रमेय के नाम से।

21. इस प्रमेय का किस सूत्रग्रन्थ में उल्लेख है?
उत्तर : शुल्बसूत्र में।

22. शुल्बसूत्र के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : बोधायन।

23. बोधायन पाइथोगोरेस से कितने वर्ष पूर्व हुए?
उत्तर : लगभग 1 हजार वर्ष पूर्व।

24. सम्प्रति 29 वें प्रमेय के प्रणेता के बारे में विद्वज्जनों का क्या अभिमत है?
उत्तर : प्रमेय के प्रणेता बोधायन हैं, पाइथोगोरेस नहीं।

25. रसायनज्ञ नागार्जुन ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : रस-रत्नाकर।

26. नाव एवं जहाजों पर प्रकाश डालने वाले 'मुक्तिकल्पतरु' के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : भोज।

27. चिकित्सा ग्रन्थ 'अष्टाङ्गहृदयसंहिता' व 'अष्टाङ्गसङ्ग्रह' के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : वाग्भट्ट।

28. माधवाचार्य (माधवाकार) ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : रघुवंशया (माधवनिदान)।

29. चिकित्साग्रन्थ 'भाव-प्रकाश' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : भावमिश्र।

30. निरुक्त में 'हृदय' का क्या निर्वचन है, जो वैज्ञानिकों को चकित कर देता है?
उत्तर : हरतेर्ददातेरयते हृदयम्।
31. सृष्टि का कारण परमाणु को बताने वाले प्रथम वैज्ञानिक?
उत्तर : महर्षि कणाद।
32. वर्गमूल-घनमूल प्राप्ति की पद्धति का यूरोपियों को कब ज्ञान हुआ?
उत्तर : 1613 ईस्वी में।
33. आर्यभट्ट का नियम क्या है?
उत्तर : "भागहरेद्वर्गानित्यं द्विगुणेन वर्गमूलेन।
वर्गाद्ववर्गे शुद्ध लब्धं स्थानान्तरे मूलम्।"
34. आर्यभट्ट कब हुए?
उत्तर : 499 ईसवी में।
35. बीजगणित को और किन नामों से जाना जाता है?
उत्तर : कुट्टकगणित, अव्यक्तगणित।
36. आर्यभट्ट ने पाई π के मान के बारे में क्या बताया?
उत्तर : π— चतुरधिकं शतम्-अष्टगुणं द्विषष्टिस्तथा सहस्त्राणाम्।
अयुतद्वयविष्कम्भस्यासन्नो वृन्नो वृत्तपरिग्रहः।।
37. आर्यभट्ट द्वारा कितना मान निर्धारित किया गया है?
उत्तर : $\pi = 3.1416$
38. आधुनिक मान क्या है?
उत्तर : $\pi = 3.1416926$
39. लोहे को चित्रायस में परिवर्तनार्थ किस पद्धति का प्रयोग होता था?
उत्तर : अन्धमूषा पद्धति (वकयन्त्र)।
40. महर्षि पराशर का काल क्या माना जाता है?
उत्तर : ईसा पूर्व 100 वर्ष।
41. उनके द्वारा वृक्षों का क्या वर्गीकरण किया गया?
उत्तर : शमीगणीयाः,पुपोलिकागणीयाः,स्वस्तिकगणीयाः, कूर्चगणीयाः।
42. आधुनिक वर्गीकरण कब हुआ?
उत्तर : ईसवीय संवत् 1700 में।
43. महाभारत में वृक्षों के जलग्रहणसम्बन्धित कौन-सा श्लोक प्रसिद्ध है?
उत्तर : तथा पवनसंयुक्तः पादैः पिबति पादपः।
44. भारतीय मनीषियों ने समय का सूक्ष्म अंश किसे माना है?
उत्तर : त्रुटि को।
45. त्रुटि और सैकेण्ड में कितना अन्तर है?।
उत्तर : त्रुटि 1 सैकण्ड का 33750वाँ अंश है।
46. भारतीय वैज्ञानिकों का सूक्ष्म मापक परिमाण कौन-सा है?
उत्तर : त्र्यसंरणु।
47. त्र्यसंरणु व इञ्च में कितना अन्तर है?
उत्तर : त्र्यसंरणु इञ्च का 346525वाँ इञ्च है।
48. किसने सर्वप्रथम बताया कि प्रकाश और उष्णता एक ही तत्त्व के भिन्न-भिन्न रूप हैं?
उत्तर : महर्षि कणाद ने।
49. उष्मा व प्रकाश की किरणों में भी अतिसूक्ष्म परमाणुओं के होने की बात किसने कही?
उत्तर : महर्षि वाचस्पति ने।
50. उदयन ऋषि ने विश्व की समस्त उष्णता का मूल भण्डार किसे बताया?
उत्तर : सूर्य को।
51. भास्कराचार्य ने किस ग्रन्थ में पृथ्वी के गोल होने की मान्यता रखी?
उत्तर : सिद्धान्तशिरोमणि के भाग गोलाध्याय में।
52. शबर स्वामी ने ध्वनि का मूल किसे माना है?
उत्तर : वायु को।
53. उद्योतकर आदि ऋषियों ने ध्वनि का मूल किसे माना है?
उत्तर : आकाश को।
54. वैमानिक शास्त्र के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : महर्षि भरद्वाज।
55. वैमानिकशास्त्र के सूत्रों का विवरण किस वृत्ति में है?
उत्तर : बोधानन्द वृत्तिका।
56. वैमानिक शास्त्रानुसार 'मरुत्सवा' विमान की निर्मिति किसने की?
उत्तर : तारपाँडे दम्पति ने।
57. उनका विमान किस ऊर्जा से उड़ा?
उत्तर : सौर-शक्ति से।
58. यह घटना किस सन् में हुई?
उत्तर : 1865 में।
59. तारपाँडे दम्पति निर्मित विमान कितने फुट ऊँचा उड़ा?
उत्तर : 2,000 फुट।
60. महर्षि भरद्वाज के अन्य ग्रन्थ कौन-से हैं?
उत्तर : अंशुबोधिनी (अंशुतन्त्र, यन्त्र सर्वस्व, आकाश शास्त्र)।

61. भरद्वाज ने यन्त्रसर्वस्व के वैमानिक प्रकरण में कितने प्राचीन ग्रन्थों का उल्लेख किया है?
उत्तर : 25 ग्रन्थ।
62. सिद्धान्त शिरोमणि किसकी रचना है?
उत्तर : भास्कराचार्य (1114 ईसवी में)।
63. भास्कराचार्य (भास्कर द्वितीय) के अन्य ग्रन्थ?
उत्तर : बीजगणित, वासनाभाष्य।
64. आर्यभट्ट द्वितीय के ग्रन्थ?
उत्तर : महासिद्धान्त, महाभास्करीय।
65. विज्ञानग्रन्थ 'अंशुबोधिनी' में कितने सूत्र हैं?
उत्तर : 1000 सूत्र।
66. अंशुबोधिनी में कुल कितने अध्याय हैं?
उत्तर : बारह अध्याय।
67. वर्तमान में कितने अध्याय तथा सूत्र उपलब्ध हैं?।
उत्तर : एक अध्याय तथा 50 सूत्र।
68. वैज्ञानिक डॉ. जी.बी. मातापुरकर (डॉ. बालकृष्ण मातापुरकर) ने मानव क्लोन बनाने के वैश्विक वैज्ञानिकों की होड़ के बारे में क्या कहा है?
उत्तर : मानव क्लोन महाभारतकाल में ही बन चुका है।
69. उन्होंने 101 कौरवों की उत्पत्ति किससे बतायी?
उत्तर : मानव क्लोन से।
70. महाभारत में तत्सम्बन्धित वर्णन कहाँ मिलता है?
उत्तर : महाभारत आदिपर्व 115वें अध्याय में।
71. डॉ. मातापुरकर को अमेरिका से कौन-सा सर्वाधिक (पेटेण्ट) मिला हुआ है?
उत्तर : अङ्गप्रत्यारोपण का।
72. महर्षि पराशर ने कृषि विषय में कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : कृषि पराशर।
73. आचार्य सायण ने सूर्य किरणों की गति क्या मानी है?
उत्तर : 2202 योजन आधा निमेष।
74. तद्विषयक सायण की उक्ति लिखिए—
उत्तर : "तथा च स्मर्यते योजनानां सहस्र द्वे द्वे च योजने।
एकेन निमिषाधेन क्रममाण नमोऽसतु ते।।"
75. सायण के योजन को मील में व्यक्त करने पर यह गति कितनी होती है?
उत्तर : 186413.22 मील।
76. साम्प्रतिक वैज्ञानिकों द्वारा प्रकाश की स्वीकृत गति क्या है?
उत्तर : 186300 मील
77. वेदविज्ञान के अनुसार सूर्य किस वर्ण का है?
उत्तर : कृष्ण वर्ण का।
78. तद्विषयक मन्त्र कौन-सा है?
उत्तर : आ कृष्णेन रजसा।
79. किस ग्रन्थ में सङ्गीतचिकित्सा निरूपित है?
उत्तर : सङ्गीतचिकित्सारत्नाकर।
80. इस ग्रन्थ में कितने रोगों का वर्णन है?
उत्तर : 34800 रोगों का।
81. विमानशास्त्रीय शक्तिसूत्र ग्रन्थ किसने लिखा?
उत्तर : महर्षि अगस्त्य ने।
82. सर्वग नारद ने विमानशास्त्र के किस ग्रन्थ का प्रणयन किया?
उत्तर : धूमप्रकरणम्।
83. आर्यभट्ट की कृति आर्यभट्टीय कितने पादों में विभक्त है?
उत्तर : चार— 1. दशगीतिकापाद, 2. गणितपाद, 3. कालक्रियापाद, 4. गोलपाद।
84. आर्यभट्ट द्वितीय के 'महासिद्धान्त' में किसका विवेचन है?
उत्तर : ज्यौतिष व गणित का।
85. ब्रह्मगुप्त कहाँ के निवासी थे?
उत्तर : भीनमाल (श्रीमाल) के।
86. उन्होंने कौन-से दो ग्रन्थ लिखे?
उत्तर : ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त एवं खण्डखाद्यक।
87. गणिताचार्य श्रीधराचार्य की कृति कौन-सी है?
उत्तर : त्रिशती (त्रिशतिका) अथवा गणितसार (नामान्तर)।
88. त्रिशती को आधार बनाकर भास्कराचार्य द्वितीय ने कौन-सा विश्व-प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : लीलावती।
89. महाराष्ट्र में जन्मे श्रीपति (श्रीपतिभट्ट) ने कौन-सी कृतियाँ रचीं?
उत्तर : बीजगणितम्, गणिततिलकम्।
90. गणिततिलकम् में कितने पद्य हैं?
उत्तर : 125 पद्य।
91. सर्वाधिक प्रसिद्ध भास्कराचार्य द्वितीय ने कितने ग्रन्थ लिखे?
उत्तर : 1. लीलावती, 2. मुहूर्त्तपटलम्, 3. विवाहपटलम्, 4. सिद्धान्तशिरोमणि, 5. करणकुतूहलम्, 6. बीजगणितम्।

92. आधुनिकयुगीन बापूदेवशास्त्री की कर्मभूमि कौन-सी थी?
उत्तर : काशी।

93. बोपदेवशास्त्री ने कौन-सी रचनाएँ कीं?
उत्तर : रेखागणितम्, अङ्कगणितम्, मापनवादस्तत्त्व-विवेकपरीक्षा इत्यादि।

94. अङ्कगणितविषयक ग्रन्थ 'पाटीसार' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : मुनीश्वर (विश्वरूप)।

95. म. म. पं. सुधाकर द्विवेदी का जन्म कब हुआ?
उत्तर : ईसवीय संवत्सर 1860 में।

96. उन्होंने सूर्यसिद्धान्त पर कौन-सी टीका लिखी?
उत्तर : सुधावर्षिणी।

97. प्रसिद्ध 'गणकतरङ्गिणी' के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : पं. सुधाकर द्विवेदी।

98. वृक्षायुर्वेद में पादपों का जन्म कतिविध माना गया है?
उत्तर : त्रिविध— बीजात्, काण्डात्, कन्दात्।

99. वृक्षायुर्वेद में पादपों की कितनी जातियाँ (भेद) मानी हैं?
उत्तर : चार— 1. वनस्पति, 2. द्रुम, 3. लता, 4. गुल्म।

100. वनस्पति किसे कहते हैं?
उत्तर : जो पादप बिना पुष्प फलीभूत होते हैं।

101. पुष्पसहितफलने वाले पादपों को क्या कहते हैं?
उत्तर : द्रुम।

102. वैशेषिकों ने पादपों के कितने भेद माने हैं?
उत्तर : 1. तृण, 2. औषधि, 3. लता, 4. अवतान, 5. वृक्ष, 6. वनस्पति।

103. अमरसिंह (अमरकोष) के अनुसार पादपों के स्वीकृत भेद हैं?
उत्तर : 1. वृक्ष, 2. खूप, 3. लता, 4. औषधि, 5. तृण, 6. द्रुम।

• • •

साहित्य का सामान्य परिचय

1. पञ्चास्तिकाय का लेखक कौन है?
   उत्तर : कुन्कुन्दाचार्य।
2. 'न धर्मवृद्धेषु वय: समीक्ष्यते' किसका वचन है?
   उत्तर : कालिदास का।
3. अर्थापत्ति को कौन-सा आस्तिक दर्शन नहीं स्वीकारता?
   उत्तर : न्यायदर्शन।
4. सङ्गीतरत्नाकर की रचना किसने की?
   उत्तर : सारङ्गदेव ने।
5. पण्डित दामोदर ने सङ्गीतविषयक कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
   उत्तर : सङ्गीतदर्पण।
6. पञ्चदशी के लेखक कौन हैं?
   उत्तर : विद्यारण्य।
7. 'गोर्नदीय' किसका नाम है?
   उत्तर : महाभाष्यकार पतञ्जलि का।
8. आचार्यचरक किसके आस्थानवैद्य थे?
   उत्तर : चन्द्रगुप्त के।
9. चम्पू भारत के लेखक कौन हैं?
   उत्तर : अनन्तभट्ट।
10. यशस्तिलकचम्पू किसने लिखा?
    उत्तर : सोमदेव ने।
11. वेङ्कटाध्वरि द्वारा लिखित चम्पूग्रन्थ?
    उत्तर : विश्वगुणादर्शचम्पू।
12. नीलकण्ठविजयचम्पू काव्य के रचयिता कौन हैं?
    उत्तर : नीलकण्ठदीक्षित।
13. साहित्य में नायक के चार भेद कौन-कौन से बताये हैं?
    उत्तर : 1. धीरोदात्त 2. धीरोद्धत 3. धीरललित 4. धीरशान्त।
14. कल्प कितने हैं?
    उत्तर : सात। पार्थिव, कामं, अनन्त, नृसिंह, प्रिया, श्वेतवराह, अमर।
15. राजशेखर ने कौन-सा काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ लिखा?
    उत्तर : काव्यमीमांसा।
16. काव्यप्रकाश के लेखक कौन हैं?
    उत्तर : मम्मट।
17. साहित्य दर्पण के प्रणेता कौन हैं?
    उत्तर : पं. विश्वनाथ।
18. भरतमुनि का ग्रन्थ कौन-सा है?
    उत्तर : नाट्यशास्त्र।
19. ध्वन्यालोक किसने लिखा?
    उत्तर : आनन्दवर्धनाचार्य ने।
20. महाकवि दण्डी का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ?
    उत्तर : काव्यादर्श।
21. पण्डितराज जगन्नाथ का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ कौन-सा है?
    उत्तर : रसगङ्गाधर।
22. व्यक्तिविवेक किसकी रचना है?
    उत्तर : महिमभट्ट की।
23. संस्कृतमहाकाव्यों में सबसे विशाल कौन-सा है?
    उत्तर : हरविजयमहाकाव्य।
24. साहित्यदर्पण में कितने परिच्छेद हैं?
    उत्तर : 10 परिच्छेद हैं।
25. रसगंगाधर में अध्यायों का क्या नाम है?
    उत्तर : आनन।
26. ध्वन्यालोक में अध्यायों को क्या कहा गया है?
    उत्तर : उद्योत।

27. किस प्रसिद्ध तथा करुण रसप्रधान नाटक में विदूषक नहीं है?
उत्तर : उत्तररामचरित।

28. शाकुन्तल में कितने पात्र हैं?
उत्तर : 12 पात्र।

29. मुद्राराक्षस का नायक कौन हैं?
उत्तर : चन्द्रगुप्त।

30. साहित्य में कितने सम्प्रदाय हैं?
उत्तर : छः।

31. औचित्यसम्प्रदाय का प्रवर्तक कौन है?
उत्तर : क्षेमेन्द्र।

32. भामह किस सम्प्रदाय का प्रवर्तक है?
उत्तर : वक्रोक्ति सम्प्रदाय का।

33. मेघदूत में कौन-सा छन्द प्रयुक्त हुआ है?
उत्तर : मन्दाक्रान्ता।

34. काव्यप्रकाश में कितने अर्थालङ्कार प्रतिपादित किये गये हैं?
उत्तर : 61

35. ध्वनिसम्प्रदाय के प्रवर्तक कौन हैं?
उत्तर : आनन्दवर्धनाचार्य।

36. वामन ने कौन-सा सम्प्रदाय चलाया?
उत्तर : रीतिसम्प्रदाय।

37. स्थायीभाव कितने हैं?
उत्तर : 9

38. ऐतिहासिक महाकाव्य 'हम्मीर महाकाव्य' के लेखक हैं?
उत्तर : जयचन्द्र।

39. ईश्वर विलास महाकाव्य के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : श्रीकृष्णभट्ट।

40. श्रीकृष्णरामभट्ट ने कौन-सा ऐतिहासिक महाकाव्य लिखा?
उत्तर : कच्छवंशमहाकाव्य।

41. जयवंशमहाकाव्य किसने लिखा?
उत्तर : सीताराम भट्ट पर्वणीकर ने।

42. मानववंशमहाकाव्य किसकी रचना है?
उत्तर : सूर्यनारायणशास्त्री की।

43. पं. चन्द्रशेखरशास्त्री ने कौन-सा ऐतिहासिक काव्य लिखा?
उत्तर : सुर्जनचरित महाकाव्य।

44. संन्यास के अनन्तर पं. शास्त्री किस नाम से प्रसिद्ध हुए?
उत्तर : प. पू. निरञ्जनदेव तीर्थ महाराज (शङ्कराचार्य, पुरी)।

45. चौरपञ्चाशिका के लेखक कौन हैं?
उत्तर : विल्हण।

46. श्रीकण्ठचरित किसने लिखा?
उत्तर : मङ्ख ने।

47. रावणवध के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : भट्टि।

48. महाकाव्य नवसाहसाङ्कचरित के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : पद्मगुप्त परिमल।

49. नवसाहसाङ्कचरितचम्पू किसने लिखा?
उत्तर : श्रीहर्ष ने।

50. अनर्घराघवम् किसने लिखा?
उत्तर : मुरारि ने।

51. कविराज (माधवभट्ट) रचित ग्रन्थ जिसमें दोहरी कथा चलती है?
उत्तर : राघवपाण्डवीयम्।

52. राघवनैषधीय किसने लिखा?
उत्तर : हरिदत्तसूरि ने।

53. यादवराघवीय के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : वैङ्कटाध्वरि।

54. पार्वतीरुक्मिणीय किसकी कृति है?
उत्तर : विद्यामाधव की।

55. भर्तृमेण्ठ (हस्तिपक) का प्रसिद्ध काव्य?
उत्तर : हयग्रीववध।

56. नैषधीयचरित किसने लिखा?
उत्तर : श्रीहर्ष ने।

57. जानकीहरण किसकी रचना है?
उत्तर : कुमारदास की।

58. कथासरित्सागर किसने लिखा?
उत्तर : सोमदेव ने।

59. गुणाढ्य की रचना कौन-सी है?
उत्तर : बृहत्कथा।

60. प्रसिद्ध 'खण्डनखण्डखाद्यम्' के लेखक?
उत्तर : श्रीहर्ष।

61. कुवलयानन्द किसकी कृति है?
उत्तर : अप्पय दीक्षित।

62. माधवमाधव की रचना किसने की?
उत्तर : भवभूति ने।

63. वेणीसंहार किसकी रचना है?
उत्तर : भट्टनारायण की।

64. नारायणभट्ट की विश्वविख्यात कृति?
उत्तर : हितोपदेश।

65. मुद्राराक्षस के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : विशाखदत्त।

66. किस कवि के एक पद्य को भी शतक के समान माना है?
उत्तर : अमरुक कवि के।

67. अमरुक कवि ने क्या लिखा?
उत्तर : अमरुकशतकम्।

68. कुट्टनीमत काव्य किसकी रचना है?
उत्तर : दामोदर की।

69. पद्यकादम्बरी किसने लिखी?
उत्तर : क्षेमेन्द्र ने।

70. क्षेमेन्द्र की अन्य रचनाएँ कौन-कौन-सी हैं?
उत्तर : चतुर्युगसङ्ग्रह, दशावतारचरित, रामायणमञ्जरी, भारतमञ्जरी।

71. आर्यासप्तशती किसकी रचना है?
उत्तर : गोवर्द्धन की।

72. शान्तिशतक किसने लिखा?
उत्तर : शिल्हण ने।

73. मुग्धोपदेश किसकी रचना है?
उत्तर : जल्हण की।

74. वक्रोक्तिपञ्चाशिका किसकी कृति है?
उत्तर : रत्नाकर की।

75. भामिनीविलास किसकी रचना है?
उत्तर : पण्डितराज जगन्नाथ की।

76. चण्डीशतक किसने लिखा?
उत्तर : बाणभट्ट ने।

77. सूर्यशतक किसकी रचना है?
उत्तर : मयूरभट्ट की।

78. जीवन्धरचम्पू किसकी कृति है?
उत्तर : हरिश्चन्द्र की।

79. गद्यकाव्य अवन्तिसुन्दरीकथा किसने लिखी?
उत्तर : दण्डी ने।

80. दण्डी का दूसरा प्रसिद्ध गद्यकाव्य?
उत्तर : दशकुमारचरित।

81. वासवदत्ता के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : सुबन्धु।

82. आदर्श रमणी किसकी रचना है?
उत्तर : भट मथुरानाथ शास्त्री की।

83. आदर्शदम्पति के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : पं. वृद्धिचन्द्रशास्त्री।

84. पं. मोहनलाल पाण्डेय (जयपुर) ने कौन-सा गद्यकाव्य ऐतिहासक पृष्ठभूमि पर लिखा?
उत्तर : पद्मिनी।

85. भारतपारिजात (गान्धिचरित) के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : स्वामी भगवदाचार्य।

86. स्वामी भगवदाचार्य के अन्य काव्य?
उत्तर : पारिजातोपहार:, पारिजातसौरभम्।

87. बोधिसत्त्वचरित और रामकीर्तिमहाकाव्य के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : डॉ. सत्यव्रतशास्त्री।

88. दयानन्दमहाकाव्य के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : अखिलानन्द।

89. मेधाव्रताचार्य का स्वामी दयानन्द पर लिखा गया काव्य?
उत्तर : दयानन्ददिग्विजयम्।

90. शिवराज्योदय व विवेकानन्द विजय की रचना किसने की?
उत्तर : डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर ने।

91. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखाओं में गीयमान एकात्मकतास्तोत्र तथा एकतामन्त्र किसने लिखे?
उत्तर : डॉ. श्रीधर भास्कर वर्णेकर ने।

92. डॉ. वर्णेकर ने कौन-सी गीता लिखी?
उत्तर : संघ-गीता।

93. भृत्याभरणमहाकाव्य के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : जोधपुर के महाकवि पं. श्रीराम दवे।

94. पं. श्रीराम दवे ने लोकतान्त्रिक निर्वाचन पद्धति को दृष्टिगोचर करते हुए कौन-सा महाकाव्य लिखा?
उत्तर : राजलक्ष्मीस्वयंवर।

95. पं. दवे ने साकेतसङ्गरमहाकाव्य किस विषय पर लिखा?
उत्तर : रामजन्मभूमि हेतु चले सङ्घर्षों व आन्दोलनों पर।

96. लेलिनामृत महाकाव्य के लेखक कौन हैं?
उत्तर : पं. पद्मशास्त्री।

97. सीताचरित किसने लिखा?
उत्तर : डॉ. रेवाप्रसाद द्विवेदी 'सनातन' ने।

98. जनविजय के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : डॉ. परमानन्द शर्मा।

99. हरनामामृत काव्य के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : पं. विद्याधरशास्त्री।

100. आचार्य मधुकर शास्त्री प्रणीत महाकाव्य?
उत्तर : महावीरसौरभम्।

101. तर्जनी महाकाव्य के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : पं. दुर्गादत्त शास्त्री।

102. भीष्मचरित किसने लिखा?
उत्तर : डॉ. हरिनारायण दीक्षित ने।

103. महारथी किसने लिखा?
उत्तर : गुलाबचन्द्र चूलेट पाटलेन्दु ने।

104. गद्यकाव्य (उपन्यास) शिवराज विजय के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : पं. अम्बिकादत्त व्यास।

105. कुमुदिनीचन्द्र के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : मेधाव्रताचार्य।

106. चन्द्रमहीपति किसकी रचना है?
उत्तर : श्री निवासाचार्य की।

107. ए.आर. रत्नपारखी का गद्यग्रन्थ?
उत्तर : कुसुमलक्ष्मी।

108. भाषाविद् देवर्षि कलानाथशास्त्री ने कौन-सा उपन्यास लिखा?
उत्तर : जीवनस्य पाथेयम्।

109. द्वा सुपर्णा किसकी रचना है?
उत्तर : डॉ. रामजी उपाध्याय की।

110. यात्राविलास किस राजस्थानीय पण्डित की कृति है?
उत्तर : पं. नवल किशोर शर्मा काङ्कर की।

111. भर्तृहरि के तीन शतक कौन-कौन से हैं?
उत्तर : नीतिशतक, शृङ्गारशतक, वैराग्यशतक।

112. गीतिकाव्य गीतगोविन्दम् की रचना किसने की?
उत्तर : महाकवि जयदेव ने।

113. पण्डितराज जगन्नाथ का गीतिकाव्य कौन-सा है?
उत्तर : भामिनी-विलास।

114. महाकवि कालिदास की गीति रचना जो अति प्रसिद्ध है?
उत्तर : मेघदूत।

115. दूतकाव्यों की परम्परा किससे आरम्भ हुई?
उत्तर : मेघदूत से।

116. जैन मेघदूत किसने लिखा?
उत्तर : मेरुतुङ्गाचार्य ने।

117. पवनदूत किसने लिखा?
उत्तर : धोयी कवि ने।

118. सौन्दर्यलहरी किसकी कृति है?
उत्तर : आद्य शङ्कराचार्य की।

119. भगवान शिव के स्तोत्रों में कौन-सा स्तोत्र प्रसिद्ध है?
उत्तर : शिवमहिम्नः स्तोत्रम्।

120. शिवमहिम्नः स्तोत्रम् किसने लिखा?
उत्तर : पुष्पदन्त ने।

121. गद्यकाव्य वेमभूपालचरित किसने लिखा?
उत्तर : वामनभट्ट बाण ने।

122. शुकसप्तति में कितनी कथाएँ हैं?
उत्तर : 70 कथाएँ।

123. कथासरित्सागर में कितने श्लोक हैं?
उत्तर : 24,000 श्लोक।

124. पं. विष्णु शर्मा लिखित पञ्चतन्त्र में कौन-कौन से तन्त्र हैं?
उत्तर : मित्रलाभ, मित्रभेद, सन्धि विग्रह, लब्ध-प्रणाश, अपरीक्षितकारक।

125. प्रख्यात आधुनिक संस्कृत कवि डॉ. हर्षदेव माधव की प्रमुख काव्यकृतियाँ?
उत्तर : 1. पुरा यत्र स्तोत्रः, 2. मनसो नैमिषारण्ये, 3. ऋषे क्षुब्धे चेतसि, 4. सुधासिन्धोर्मध्ये, 5. कण्णक्याक्षिप्तं माणिक्यनूपुरम्।

126. 'आषाढस्य प्रथमे दिवसे' कथासंग्रह किस प्रख्यात साहित्यकार की रचना है?
उत्तर : डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री की।

127. किस पुराण में काव्यशास्त्र प्राप्त होता है?
उत्तर : अग्निपुराण में।

128. अग्निपुराण के किन अध्यायों में काव्यशास्त्रीय निरूपण है?
उत्तर : अध्याय 337 से 347 (दस अध्यायों) में।

129. अग्निपुराण के अध्याय 339 का आद्य श्लोक क्या है?
उत्तर : 'अक्षरं परमं ब्रह्म, सनातनमलं विभुम्।
वेदान्तेषु वदन्त्येकं चौतन्यज्योतिरीश्वरम्।।'

130. काव्यशास्त्र के इतिहासकार डे. व. काणे ने 'अलम्' के स्थान पर क्या पढ़ा?
उत्तर : अजम्।

131. 'अजम्' के स्थान पर 'अलम्' पाठ की ओर ध्यानाकर्षण किसने किया?
उत्तर : महामहोपाध्याय आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी 'सनातन' ने।

132. आचार्य द्विवेदी काव्यशास्त्र का आगम ग्रन्थ किसे कहते हैं?
उत्तर : अग्निपुराण को।

133. आचार्य द्विवेदी ने काव्यशास्त्र का क्या आगम बताया?
उत्तर : अहङ्कारागम।

134. आचार्य द्विवेदी ने अलम् (अलङ्कार) को काव्य में किस रूप में देखा?
उत्तर : काव्य-आत्मा के रूप में।

135. उन्होंने 'अहं ब्रह्म' की तरह काव्यशास्त्रीय महावाक्य किसे बताया?
उत्तर : अलं ब्रह्म को।

136. आचार्य द्विवेदी का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ कौन-सा है?
उत्तर : अभिनव काव्यालंकार कारिका।

137. अभिनव काव्यालंकार कारिका में काव्यात्मा किसे बताया गया?
उत्तर : अलंकार को।

138. अलंकार से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : 'पर्याप्ति' अलंकार है।

139. अभिनव काव्यालंकार कारिका कब प्रकाश में आई?
उत्तर : 1979 में।

140. आचार्य द्विवेदी ने अपने 'संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास' में किस कालावधि को समेटा है?
उत्तर : बी.सी. 300 से ईस्वी 2005 तक की अवधि को।

141. उक्त ग्रन्थ में काव्यशास्त्र के इतिहास को कितने कल्पों में बाँटा है?
उत्तर : चार।

142. आचार्य द्विवेदी द्वारा कल्पित काव्यशास्त्रीय इतिहास के कल्प कौन-से हैं?
उत्तर : 1. पूर्णताकल्प, 2. गुणकल्प, 3. अलन्त्वकल्प, 4. साहित्यकल्प।

143. उन्होंने काव्यशास्त्र के चार धाम कौन-से माने हैं?
उत्तर : 1. काञ्ची, 2. शारदा (काश्मीर), 3. महाकालेश्वर (धारानगरी), 4. विश्वेश्वर (काशी)।

144. काञ्चीधाम के प्रमुख आचार्य कौन हैं?
उत्तर : आचार्य भरत एवं आचार्य दण्डी।

145. शारदाधाम के आचार्य हैं—
उत्तर : भामह, वामन, उद्भट, आनन्दवर्धन, अभिनवगुप्त, क्षेमेन्द्र, कुन्तक, महिमभट्ट, मम्मट।

146. धारा के महाकालेश्वरधाम के आचार्य हैं?
उत्तर : धनिक, धनञ्जय, भोजराज।

147. काशी के विश्वेश्वरधाम के आचार्य हैं?
उत्तर : अप्पय दीक्षित, मधुसूदन सरस्वती, पण्डितराज जगन्नाथ, करपात्री स्वामी, रेवाप्रसाद द्विवेदी।

148. आचार्य द्विवेदी ने काव्यशास्त्र के इतिहास को कितनी सहस्राब्दियों में बाँटा?
उत्तर : चार।

149. 'संस्कृत काव्यशास्त्र का समीक्षात्मक इतिहास' किसने लिखा?
उत्तर : आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने।

150. 'भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी।

151. निहाररंजन रे की मत-पुष्टि करते हुए प्रो. त्रिपाठी विश्व का प्रथम कलाचिन्तक किसे मानते हैं?
उत्तर : ऐतरेय महीदास को।

152. आचार्य त्रिपाठी ने महीदास का सिद्धान्त क्या बताया?
उत्तर : अनुकीर्तन।

153. महीदास किस ऋग्वैदिक ग्रंथ के प्रणेता माने जाते हैं?
उत्तर : ऐतरेय ब्राह्मण के।

154. ऐतरेय ब्राह्मण का रचनाकाल क्या माना जाता है?
उत्तर : ई. पूर्व.1000 वर्ष अथवा उससे भी पूर्वतन।

155. महीदास ने समस्त शिल्पों को किन दो विभागों में समेटा है?
उत्तर : 1. देवशिल्प, 2. मानुष शिल्प।

156. महीदास किस शिल्प को मूल शिल्प मानते हैं?
उत्तर : देवशिल्प को।

157. महीदास किस शिल्प को अनुकृति (नकल) मानते हैं?
उत्तर : मानुष शिल्प को।

158. महीदास किसको देवशिल्प कहते हैं?
उत्तर : सृष्टि के विविध पदार्थ देवशिल्प हैं।

159. महीदास मानुष शिल्प किसे कहते हैं?
उत्तर : सृष्टि में विद्यमान पदार्थों की अनुकृति को।

160. महीदास की पूर्व-पीठिका पर आचार्य राधावल्लभ त्रिपाठी किसे कविता कहते हैं?
उत्तर : लोकानुकीर्तन को। ('लोकानुकीर्त्तनं काव्यम्')

161. आचार्य त्रिपाठी ने कितने लोक माने हैं?
उत्तर : तीन—1. आधिभौतिक, 2. आधिदैविक, 3. आध्यात्मिक।

162. त्रिपाठीजी के अनुसार अनुकीर्तन क्या है?
उत्तर : शब्दों से (लोक की) पुनः सर्जना। 'शब्दैः पुनराविष्करणम्'।

163. किस पश्चिमी चिन्तक ने काव्यादि को अनुकृति की भी अनुकृति माना?
उत्तर : प्लेटो ने।

164. प्लेटो की काव्य के बारे में क्या धारणा थी?
उत्तर : काव्य नकल की नकल होने से सत्य से दो गुना दूर होने से हेय है।

165. अरस्तू ने प्लेटो की क्या मत-समीक्षा दी?
उत्तर : काव्य अनुकृति की अनुकृति मात्र न होकर पुनःसर्जन है।

166. आचार्य त्रिपाठी ने काव्यात्मा किसे माना?
उत्तर : अलंकार को।

167. आचार्य त्रिपाठी ने किस रूप में अलंकार को माना?
उत्तर : भूषण-वारण-पर्याप्ति के रूप में—'अलं भूषण ावारणपर्याप्तिषु'।

168. भूषण के रूप में अलंकार किस लोक से जुड़ता है?
उत्तर : आधिभौतिक जगत् से।

169. वारण के रूप में अलंकार का किस लोक का आधान करता है?
उत्तर : आधिदैविक लोक से।

170. आध्यात्मिक लोक से किस अर्थ में अलंकार सम्बद्ध होता है?
उत्तर : पर्याप्ति के रूप में।

171. केवल 'पर्याप्ति' के रूप में अलंकार को काव्यात्मा किसने बताया?
उत्तर : आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी ने।

172. आचार्य द्विवेदी ने पर्याप्ति स्वरूप अलंकार में किसका अन्तर्भाव सिद्ध किया?
उत्तर : ध्वनि का।

173. ध्वनि के अलंकार में अन्तर्भाव के प्रसंग पर आचार्य द्विवेदी ने क्या दृष्टान्त दिया?
उत्तर : अग्नि में सोम की आहुति का।

174. किस आधुनिक आचार्य ने शाश्वतापाद की स्थापना दी है?
उत्तर : आचार्य अभिराज राजेन्द्र मिश्र ने।

175. आचार्य मिश्र का काव्यशास्त्रीय ग्रंथ कौन-सा है?
उत्तर : अभिराजयशोभूषणम्।

176. अभिराजयशोभूषण का काव्य-लक्षण क्या है?
उत्तर : 'लोकोत्तराख्यानं काव्यम्'।

177. काव्यसत्यालोक किसकी कृति है?
उत्तर : आचार्य ब्रह्मानंद शर्मा की।

178. काव्यसत्यालोक कब प्रकाश में आया?
उत्तर : 1980 में।

179. काव्यसत्यालोक में काव्यात्मा किसे माना गया?
उत्तर : 'सत्यानुभूति' को।

180. 'वस्त्वालंकारदर्शनम्' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : ब्रह्मानन्द शर्मा।

181. 'साहित्यसंदर्भ' के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : आचार्य शिवजी उपाध्याय।

182. भरतमुनि का ग्रन्थ है—
उत्तर : नाट्यशास्त्र।

183. आचार्य दण्डी का काव्यशास्त्रीय ग्रंथ कौन-सा है?
उत्तर : काव्यादर्श।

184. काव्यादर्श का वास्तविक नाम क्या है?
उत्तर : काव्यलक्षण।

185. किस आचार्य ने 'काव्यं ग्राह्यमलंकारात्' कहा?
उत्तर : आचार्य वामन ने।

186. वामन का काव्यशास्त्रीय ग्रंथ कौन-सा है?
उत्तर : काव्यालंकार।

187. वामन की दृष्टि में अलंकार क्या है?
उत्तर : काव्य का समग्र सौन्दर्य अलंकार है। ('सौन्दर्यमलङ्कारः')

188. वामन ने काव्य की आत्मा किसे कहा?
उत्तर : रीति को। ('रीतिरात्मा काव्यस्य'।)

189. रीति क्या है?
उत्तर : विशिष्ट शब्द संघटन ('विशिष्टा पदरचना रीतिः')।

190. पदसंघटना का 'विशेष' क्या है?
उत्तर : गुण ही विशिष्ट है। (विशेषो गुणात्मा)

191. वास्तव में वामन के शास्त्र में काव्यात्मा कौन है?
उत्तर : गुण काव्यात्मा है।

192. आचार्य वामन को रीतिवादी की अपेक्षा क्या संज्ञा देना अधिक उपयुक्त है?
उत्तर : गुणवादी।

193. राजशेखर की काव्यशास्त्रीय कृति है?
उत्तर : काव्य-मीमांसा।

194. भोजराज ने अपने 'सरस्वतीकण्ठाभरण' में कितने अलङ्कार वर्णित किये हैं?
उत्तर : 72 अलंकार।

195. 'शृंगारप्रकाश' किसकी रचना है?
उत्तर : भोजराज की।

196. 'व्यक्तिविवेक' के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : महिमभट्ट।

197. महिमभट्ट ने ध्वनि का अन्तर्भाव कहाँ दिखाया?
उत्तर : ध्वनि में।

198. 'शब्दव्यापारविचार' किसकी कृति है?
उत्तर : मम्मट भट्ट की।

199. मम्मट ने शब्द के कितने व्यापार/प्रक्रियाएँ/शक्तियाँ मानीं है?
उत्तर : तीन—1. अभिधा, 2. लक्षणा, 3. व्यंजना।

200. भट्ट मुकुल शब्द की कितनी शक्तियाँ मानते हैं?
उत्तर : एकमात्र अभिधा को।

201. 'प्रतापरुद्रयशोभूषणम्' के लेखक कौन हैं?
उत्तर : श्रीविद्यानाथ।

202. साहित्यसार किनकी कृति है?
उत्तर : अच्युत राय की।

203. 'अभिधावृत्तमातृका' किसका ग्रंथ है?
उत्तर : मुकुल का।

204. नाट्यशास्त्र की प्रख्यात टीका कौन-सी है?
उत्तर : अभिनव-भारती।

205. अभिनव-भारती के रचनाकार कौन हैं?
उत्तर : अभिनवगुप्त।

206. अभिनवगुप्त ने ध्वन्यालोक पर कौन-सी टीका लिखी?
उत्तर : ध्वन्यालोकलोचन।

207. ध्वन्यालोक का वास्तविक नाम क्या है?
उत्तर : काव्यालोक।

208. काव्यालोक (ध्वन्यालोक) को किसमें बाँटा गया?
उत्तर : उद्योतों में।

209. ध्वन्यालोक में कितने उद्योत हैं?
उत्तर : चार।

210. ध्वन्यालोक के प्रथम उद्योत का प्रतिपाद्य क्या है?
उत्तर : ध्वनि की काव्यात्मा के रूप में प्रतिष्ठा।

211. किस उद्योत में काव्य-स्वरूपों की विचारणा है?
उत्तर : चतुर्थ उद्योत में।

212. ध्वन्यालोक का आधार-सिद्धान्त क्या है?
उत्तर : ध्वनि सिद्धान्त।

213. ध्वनिसिद्धान्त को मूल प्रेरणा किस शास्त्र से मिली?
उत्तर : व्याकरणशास्त्र से।

214. ध्वनिसिद्धान्त व्याकरण के किस सिद्धान्त से प्रेरित है?
उत्तर : स्फोट सिद्धान्त से।

215. ध्वनि की आश्रयीभूत शब्द-शक्ति कौन-सी है?
उत्तर : व्यंजना।

216. व्यंजना को किस शास्त्र में मान्यता मिली?
उत्तर : काव्यशास्त्र में।

217. ध्वन्यालोक का मंगल श्लोक क्या है?
उत्तर : 'स्वेच्छाकेसरिणः स्वच्छस्वच्छायासितेन्दवः।
त्रायन्तां वो मधुरिपोः प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः।।'

218. अभिनव ने इस मंगल श्लोक में कतिविध ध्वनियाँ मानीं?
उत्तर : त्रिविध— 1. वस्तुध्वनि, 2. अलङ्कार ध्वनि, 3. रस ध्वनि।

219. आनन्दवर्धन ने किन विद्वानों द्वारा ध्वनि को 'समाम्नातपूर्व' कहा?
उत्तर : वैयाकरण विद्वानों द्वारा।

220. ध्वनि विरोधियों के मोटे तौर पर कितने पक्ष हैं?
उत्तर : तीन— 1. ध्वन्यभाववादी, 2. पक्षविपर्ययमूलक, 3. अलक्षणीयतावादी।

221. आनन्दवर्धन ने अर्थ के कौन-से दो भेद माने?
उत्तर : 1. वाच्यार्थ, 2. प्रतीयमानार्थ।

222. प्रतीयमान अर्थ किसके अवलम्ब से प्रकाशित होता है?
उत्तर : वाच्यार्थ के।

223. आनन्दवर्धन ने प्रतीयमान अर्थ को किसके समान बताया?
उत्तर : सुन्दरियों के अंग-अंग में व्याप्त, किन्तु उनसे पृथग्भूत रहने वाले लावण्य (सौन्दर्य) के समान।

224. प्रतीयमान अर्थ कतिविध होता है?
उत्तर : त्रिविध—1. वस्तुमात्र प्रतीयमान अर्थ, 2. अलङ्कार रूप प्रतीयमान अर्थ, 3. रसादि रूप प्रतीयमान अर्थ।

225. प्रतीयमान को आनन्दवर्धन ने क्या संज्ञा दी?
उत्तर : ध्वनिसंज्ञा।

226. ध्वनि के दो मुख्य भेद कौन से हैं?
उत्तर : 1. अविवक्षित वाच्य ध्वनि, 2. विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि।

227. अविवक्षितवाच्य ध्वनि किस शब्दशक्ति पर आश्रित होती है?
उत्तर : लक्षणा पर।

228. अविवक्षितवाच्य ध्वनि का अपर नाम है?
उत्तर : लक्षणामूल ध्वनि।

229. अविवक्षितवाच्य/लक्षणामूल ध्वनि के कितने भेद हैं?
उत्तर : दो—1. अर्थान्तर संक्रमितवाच्य ध्वनि, 2. अत्यन्ततिरष्कृतवाच्य ध्वनि।

230. 'अर्थान्तरसंक्रमितवाच्य' ध्वनि किस लक्षणा भेद पर आश्रित है?
उत्तर : उपादान-लक्षणा पर।

231. अत्यन्ततिरस्कृतवाच्य ध्वनि किस लक्षणा पर अवलम्बित है?
उत्तर : लक्षणलक्षणा पर।

232. विवक्षितान्यपर वाच्य ध्वनि किस शब्दव्यापार पर आधारित है?
उत्तर : अभिधा पर।

233. अभिधामूल ध्वनि किसे कहते हैं?
उत्तर : विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि को।

234. अभिधामूल ध्वनि के दो भेद कौन-से हैं?
उत्तर : 1. असंलक्ष्यक्रम ध्वनि, 2. संलक्ष्यक्रमध्वनि।

235. असंलक्ष्यक्रमध्वनि किसे कहते हैं?
उत्तर : रस, रसाभास, भावाभास, भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता, भावशान्ति को।

236. संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि के कितने भेद हैं?
उत्तर : दो— 1. शब्दशक्त्युत्थ, 2. अर्थशक्त्युत्थ।

237. आनन्दवर्धन ने ध्वन्यालोक तृतीय उद्योत में किन काव्यस्वरूपों का उल्लेख किया?
उत्तर : मुक्तक, सन्दानितक, विशेषक, पर्यायबन्ध, परिकथा, खण्डकथा, सकलकथा, सर्गबन्ध, अभिनेयार्थ, आख्यायिका, कथा।

238. ध्वनिप्रस्थान के परमाचार्य कौन कहे जाते हैं?
उत्तर : मम्मट।

239. मम्मट का काव्यलक्षण लिखो—
उत्तर : 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि।'

240. इस काव्यलक्षण में विशेष्यपद कौन-सा है?
उत्तर : 'शब्दार्थौ'।

241. इस काव्य-लक्षण में विशेषण हैं—
उत्तर : 1. अदोषौ, 2. सगुणौ, 3. पुनः क्वापि अनलंकृती।

242. काव्यप्रकाश के प्रथम उल्लास में क्या वर्णित है?
उत्तर : काव्यप्रयोजन, काव्यकारण, काव्यस्वरूप आदि भूमिका भाग।

243. द्वितीय उल्लास में किसका वर्णन है?
उत्तर : काव्यलक्षण के विशेष्य (शब्द व अर्थ) का।

244. अर्थव्यंजकता का विमर्श किस उल्लास में है?
उत्तर : तीसरे उल्लास में।

245. मम्मट किस उल्लास में ध्वनि-विचारणा प्रस्तुत करते हैं?
उत्तर : चतुर्थ।

246. रस का विवेचन किस उल्लास में हुआ?
उत्तर : चौथे उल्लास में।

247. काव्य-दोषों का विवेचन किस उल्लास में है?
उत्तर : सप्तम उल्लास में।

248. चित्रकाव्य कहाँ निरूपित है?
उत्तर : षष्ठ उल्लास में।

249. काव्यप्रकाश का सबसे छोटा उल्लास कौन-सा है?
उत्तर : षष्ठ। (1. कारिका, 2. उदाहरण, 3. उद्धृत श्लोक)

250. गुण अलंकार विभाग का विमर्श किस उल्लास में है?
उत्तर : अष्टम में।

251. शब्दालंकारों की विवेचन किस उल्लास में है?
उत्तर : नवम में।

252. दशम उल्लास में किनका वर्णन है?
उत्तर : अर्थालङ्कारों का।

253. मम्मट ने काव्य के कितने प्रयोजन गिनाये?
उत्तर : छह। 'काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।।'

254. मम्मट ने कतिविध उपदेश (कथन-शैलियाँ) माने हैं?
उत्तर : 1. प्रभुसम्मित उपदेश (शब्दप्रधान शैली), 2. सुहृत् सम्मित उपदेश (अर्थ प्रधान शैली), कान्ता सम्मित उपदेश (रस प्रधान शैली)।

255. काव्य किस उपदेश को अपनाता है?
उत्तर : कान्तासम्मित उपदेश को।

256. मम्मट के कौन से प्रयोजन कविनिष्ठ हैं?
उत्तर : 1. यश, 2. अर्थ, 3. शिव-इतर (अशिव) का क्षय।

257. सहृदय-निष्ठ प्रयोजन कौन से हैं?
उत्तर : 1. व्यवहारज्ञान, 2. आनन्दानुभूति, 3. कान्ता-सम्मितया उपदेश।

258. मम्मट ने काव्य-विभेद का आधार किसे बनाया?
उत्तर : व्यंग्यार्थ को।

259. मम्मट ने काव्य के कितने भेद किये?
उत्तर : तीन— 1. उत्तम, 2. मध्यम, 3. अधम।

260. वाच्य की अपेक्षा व्यंग्य का प्राधान्य होने पर काव्य किस कोटि का होता है?
उत्तर : उत्तम। ('इदमुत्तममतिशयिनि व्यंग्येवाच्याद् ध्वनिर्बुधैः'।)

261. व्यंग्य वाच्य से अधिक चमत्कारी न हो अथवा दोनों समान चमत्कारी होने पर काव्य किस कोटि में आता है?
उत्तर : मध्यम। ('अतादृशि गुणीभूतव्यंग्यं व्यंग्ये तु मध्यमम्'।)

262. व्यंग्य से सर्वथा अस्पृष्ट शब्दचित्र या अर्थचित्र को मम्मट कैसा काव्य कहते हैं?
उत्तर : अधम काव्य। ('शब्दचित्रं वाच्यचित्रमव्यंग्यं त्ववरं स्मृतम्'।)

263. शब्द कितने प्रकार के होते हैं?
उत्तर : तीन— 1. वाचक शब्द, 2. लाक्षणिक शब्द, 3. व्यंजक शब्द।

264. मम्मट ने अर्थ कितने माने हैं?
उत्तर : तीन— 1. वाच्य अर्थ, 2. लक्ष्य अर्थ, 3. व्यंग्य अर्थ।

265. मम्मट ने किस चतुर्थ अर्थ को विचारणार्थ रखा?
उत्तर : तात्पर्यार्थ।

266. तात्पर्यार्थ के प्रतिपादक कौन हैं?
उत्तर : कुमारिल भट्ट।

267. तात्पर्यार्थ के सन्दर्भ में कुमारिल भट्ट का कौन-सा मत है?
उत्तर : अभिहितान्वयवाद।

268. अन्विताभिधानवाद के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : प्रभाकर मिश्र।

269. वाचक शब्द (मम्मटानुसार) कौन-सा है?
उत्तर : साक्षात् संकेतित अर्थ को प्रकट करने वाला शब्द। ('साक्षात्संकेतितं योऽर्थमभिधत्ते स वाचकः'।)

270. साक्षात् संकेतित अर्थ की अपर संज्ञा क्या है?
उत्तर : मुख्यार्थ।

271. मम्मट लक्षणा को कैसी क्रिया मानते हैं?
उत्तर : आरोपिता।

272. लक्षणा को आरोपिता क्रिया क्यों कहा गया?
उत्तर : लक्षणा द्वारा सन्धीयमान अर्थ आक्षिप्त/अन्यार्थ होता है।

273. किस अर्थ के बाधित होने के पश्चात् लक्ष्यार्थ प्रकटित होता है?
उत्तर : साक्षात् संकेतित (मुख्य) अर्थ के।

274. लक्ष्यार्थ की दो मुख्य शर्तें क्या हैं?
उत्तर : 1. साक्षात् संकेतित (मुख्य) अर्थ बाधित हो, तथा 2. प्रकटित होने वाला अर्थ बाधित होने वाले अर्थ से सम्बद्ध ही हों।

275. लक्ष्यार्थ किस अर्थ से अनिवार्यतः सम्बद्ध होता है?
उत्तर : मुख्यार्थ से।

276. मुख्य अर्थ—लक्ष्य अर्थ का सम्बन्ध कितने प्रकार का माना जाता है?
उत्तर : छह— 1. संयोग, 2. सामीप्य, 3. समवाय, 4. वैपरीत्य, 5. क्रियायोग, 6. सादृश्य।

277. मुख्य अर्थ से लक्ष्यार्थ का 'सादृश्य' सम्बन्ध होने पर कौन-सी लक्षणा होती है?
उत्तर : शुद्धा लक्षणा।

278. मम्मट ने शुद्धा व गौणी लक्षणाओं का भेदक किसे बताया है?
उत्तर : उपचार को।

279. उपचार क्या है?
उत्तर : अतिशय सादृश्य से भेद की प्रतीति का स्थगित होना। ('उपचारो हि नाम अत्यन्तं विशकलितयोः पदार्थयोः सादृश्यातिशयमहिम्ना भेदप्रतीतिस्थगनम्।')

280. उपचारमिश्रित लक्षणा की क्या संज्ञा है?
उत्तर : 'गौणी लक्षणा।'

281. शुद्धालक्षणा की 'शुद्धा' संज्ञा क्यों है?
उत्तर : वह उपचार से मिश्रित नहीं होती है।

282. मुख्यार्थ बाध होने पर प्रकटित 'अन्यार्थ' क्या कहलाता है?
उत्तर : लक्ष्यार्थ।

283. लक्ष्यार्थ किसके बल से लक्षित होता है?
उत्तर : रूढि अथवा प्रयोजन के बल से।

284. रूढि के बल से अन्यार्थ प्रकाशिका 'लक्षणा' क्या कहलाती है?
उत्तर : 'रूढि' लक्षणा।

285. प्रयोजन के बल से लक्ष्यार्थ/अन्यार्थ प्रकाशिका 'लक्षणा' की क्या संज्ञा होती है?
उत्तर : 'प्रयोजनवंती' लक्षणा।

286. लक्ष्यार्थ व व्यंग्यार्थ का एक आधारभूत अन्तर?
उत्तर : लक्ष्यार्थ अनिवार्यतः मुख्यार्थ से सम्बद्ध होता है, किन्तु व्यंग्यार्थ सम्बद्ध/असम्बद्ध हो सकता है।

287. मम्मट आदि ने मुख्यार्थ का सामान्यतः क्या अर्थ लिया?
उत्तर : अन्वय की अनुपपत्ति।

288. वैयाकरण नागेश भट्ट ने मुख्यार्थबाध से क्या तात्पर्य लिया?
उत्तर : तात्पर्यानुपपत्ति।

289. नागेश की यह स्थापना उसके किस महान् ग्रंथ में है?
उत्तर : परमलघुमञ्जूषा।

290. शुद्धा लक्षणा के दो भेद कौन से हैं?
उत्तर : 1. उपादानलक्षणा, 2. लक्षणलक्षणा।

291. वेदान्तादि शास्त्रों में 'उपादान' लक्षणा का अपर नाम क्या है?
उत्तर : अजहत्स्वार्था (लक्षणा)।

292. अजहत्स्वार्था (लक्षणा) से क्या अभिप्राय है?
उत्तर : जिसने स्व/निज अर्थ का त्याग नहीं किया हो, वह अजहत्स्वार्था लक्षणा' है।

293. लक्षणलक्षणा का दूसरा नाम क्या है?
उत्तर : जहत्स्वार्था।

294. किस लक्षणा में शब्द अपने मुख्य अर्थ को पूर्णतः छोड़ता है?
उत्तर : जहत्स्वार्था (लक्षण) लक्षणा में।

295. जहत्स्वार्था (लक्षण) लक्षणा से कौन-सा ध्वनिभेद होता है?
उत्तर : अत्यन्त तिरस्कृत ध्वनिभेद।

296. अजहत्स्वार्था (उपादान) लक्षणा से शब्द किस प्रकार अन्यार्थ को साधता है?
उत्तर : अपने अर्थ को त्याग के बिना अर्थात् उसको अर्थान्तर में संक्रमित करके।

297. अजहत्स्वार्था (उपादान) लक्षणा से कौन-सा ध्वनि-भेद निर्मित होता है?
उत्तर : अर्थान्तर संक्रमित वाच्य ध्वनि।

298. मम्मट ने लक्षणा को कतिविध माना?
उत्तर : षड्विध।

299. मम्मट ने रस किसे माना?
उत्तर : विभावादि द्वारा व्यज्यमान स्थायीभाव को।

300. स्थायी भाव कितने हैं?
उत्तर : नौ—1. रति, 2. हास, 3. शोक, 4. क्रोध, 5. उत्साह, 6. भय, 7. जुगुप्सा (घृणा), 8. विस्मय, 9. निर्वेद (शम)।

301. रस कितने हैं?
उत्तर : नौ—1. शृंगार, 2. हास्य, 3. करुण, 4. रौद्र, 5. वीर, 6. भयानक, 7. वीभत्स, 8. अद्भुत, 9. शान्त।

302. धनंजय ने रसानुभूति की अवधि में चित्त की कितनी दशाएँ मानीं हैं?
उत्तर : चार—1. चित्त-विकास, 2. चित्त-विस्तार, 3. चित्त-विक्षोभ, 4. चित्त-विक्षेप।

303. किस रस की अनुभूति-अवधि में चित्त का विकास होता है?
उत्तर : शृंगार।

304. वीर रस की अनुभूति-अवधि में चित्त किस दशा में होता है?
उत्तर : विस्तार (चित्र-विस्तार) दशा में।

305. वीभत्स रस की अनुभूति-अवधि में चित्त किस दशा में होता है?
उत्तर : विक्षोभ दशा में।

306. चित्त-विक्षेप किस रस के अनुभव-काल में होता है?
उत्तर : रौद्र रस के अनुभव काल में।

307. दशरूपककार धनंजय ने कितने रस स्वीकारे हैं?
उत्तर : चार—1. शृंगार, 2. वीर, 3. वीभत्स, 4. रौद्र।

308. दशरूपककार ने हास्य, अद्‌भुत, भयानक, करुण रस का अन्तर्भाव किस-किस में बताया है?
उत्तर : क्रमशः शृंगार, वीर, वीभत्स एवं रौद्ररस में।

309. किस कवि ने एकमात्र 'करुण' को रस माना?
उत्तर : भवभूति ने।

310. 'एको रस: करुण एव' किस नाटक में कहा गया है?
उत्तर : 'उत्तररामचरित' में।

311. भवभूति की कृतियों में अंगीरस कौन-सा है?
उत्तर : करुण।

312. रसानुभूति के कारणों के दो मुख्य भेद कौन-कौन से हैं?
उत्तर : 1. बाह्य, 2. आभ्यन्तर कारण।

313. रसानुभूति के 'बाह्य' कारण क्या कहलाते हैं?
उत्तर : विभाव।

314. अनुभाव तथा व्यभिचारी भाव के कैसे कारण होते हैं?
उत्तर : आभ्यन्तर।

315. रसानुभूति के 'बाह्य' कारण 'विभाव' के कितने भेद होते हैं?
उत्तर : दो—1. आलम्बन-विभाव, 2. उद्दीपन-विभाव।

316. रससूत्र के प्रणेता कौन हैं?
उत्तर : भरतमुनि।

317. रसोत्पत्ति का सूत्र क्या है?
उत्तर : 'विभावानुभावव्यभिचारि संयोगाद् रसनिष्पत्तिः'।

318. रस-सूत्र का कौन-सा शब्द विवादास्पद है?
उत्तर : 'निष्पत्ति' शब्द।

319. किस विद्वान् ने 'निष्पत्ति' का अर्थ 'उत्पत्ति' से लिया?
उत्तर : लोल्लट भट्ट ने।

320. निष्पत्ति को किसने 'अनुमिति' बताया?
उत्तर : शंकुकाचार्य ने।

321. निष्पत्ति को 'भुक्ति' किसने माना?
उत्तर : नायक ने।

322. अभिनव ने निष्पत्ति से क्या तात्पर्य लिया?
उत्तर : अभिव्यक्ति।

323. किस रससिद्धान्त में 'चित्रतुरगन्याय' प्रयुक्त हुआ?
उत्तर : अनुमितिवाद में।

324. भुक्तिवाद के सिद्धान्तकार कौन हैं?
उत्तर : नायक भट्ट।

325. नायक ने शब्द के कितने व्यापार माने?
उत्तर : चार—1. अभिधा, 2. लक्षणा, 3. भावकत्व, 4. भोजकत्व।

326. देव, गुरु, मुनि, राजा, पुत्र-मित्रादि विषयक 'रति (प्रेम)' क्या कहलाती है?
उत्तर : भाव।

327. स्त्री विषयक रति की क्या संज्ञा है?
उत्तर : शृंगार (रस)।

328. रसभास किसे कहते हैं?
उत्तर : रसों की अनुचिततया वर्णन रसभास है।

329. भावाभास क्या है?
उत्तर : भाव का अनुचित वर्णन 'भावाभास' है।

330. भावोदय क्या है?
उत्तर : किसी भाव का उद्रेक 'भावोदय' है।

331. भावसन्धि एवं भावशबलता में क्या अन्तर है?
उत्तर : दो भाव का संगम 'भावसन्धि' तथा दो से अधिक भावों का संगम 'भावशबलता' है।

332. काव्यप्रकाशकार ने गुणीभूतव्यंग्य काव्य के कितने भेद किये?
उत्तर : आठ।

333. मम्मट ने दोष की क्या परिभाषा दी है?
उत्तर : मुख्यार्थ की क्षति दोष है। ('मुख्यार्थहतिर्दोषः')

334. काव्य में मुख्यार्थ कौन है?
उत्तर : रस। ('रसश्च मुख्यः'।)

335. वाच्यार्थ को मुख्यार्थ क्यों कहा जाता है?
उत्तर : मुख्यार्थ 'रस' का आश्रय होने से।

336. 'मुख्यार्थहतिर्दोषः' इस कारिकांश में 'हतिः' से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : अपकर्ष ('हतिरपकर्षः')।

337. पद (शब्द), पदांश (शब्दांश) एवं वाक्य—इन तीनों में रहने वाले दोष कितने हैं?
उत्तर : सोलह (16) दोष।
338. केवल वाक्य में रहने वाले कितने दोष हैं?
उत्तर : इक्कीस दोष।
339. अर्थदोष कितने हैं?
उत्तर : 23 दोष।
340. रस दोष कितने हैं?
उत्तर : 13 दोष।
341. मम्मट ने रस का अंगी धर्म किन्हें बताया?
उत्तर : गुणों को। ('ये रसस्यांगिनो धर्माः शौर्यादय इवात्मनः'।)
342. गुणों की रस में कैसी स्थिति मानी जाती है?
उत्तर : अपरिहार्य। ('अचलस्थितयो गुणाः'।)
343. आनन्दवर्धन ने काव्य के अंगभूत शब्द व अर्थ के धर्म किन्हें कहा है?
उत्तर : अलंकारों को।
344. गुणों को रसादिध्वनि का धर्म किसने बताया?
उत्तर : आनन्दवर्धन ने।
345. मम्मट ने गुण कितने माने?
उत्तर : तीन— 1. माधुर्य, 2. ओज, 3. प्रसाद।
346. चित्त को द्रवित करने वाला एवं सम्भोग शृंगार में रहने वाला आह्लादस्वरूप गुण है?
उत्तर : माधुर्य। ('आह्लादजनकत्वं माधुर्यशृंगारद्रुति-कारणम्'।)
347. माधुर्य का अतिशय प्रभाव किन रसों में है?
उत्तर : करुण, वियोग, शृंगार एवं शान्त रस में।
348. वीर रस का प्राणभूत कौन-सा गुण माना जाता है?
उत्तर : ओज। ('ओजो वीररसस्थितिः'।)
349. ओज का समधिक चमत्कार किन रसों में है?
उत्तर : क्रमशः वीभत्स एवं रौद्र रस में।
350. किस गुण की 'सर्वरससंस्थिति' मानी जाती है?
उत्तर : प्रसाद गुण की।
351. गुण मुख्यरूप से किसके धर्म हैं?
उत्तर : रस के।
352. और गौण रूप से?
उत्तर : शब्दार्थ के।
353. मम्मट ने शब्दालंकार कितने माने हैं?
उत्तर : 5 अलंकार।
354. मम्मट ने उभयालंकार कितने माने हैं?
उत्तर : एक।
355. मम्मट ने अर्थालंकार कितने स्वीकारे हैं?
उत्तर : 67 अलंकार।
356. छह शब्दालंकार (उभयसहित) कौन-से हैं?
उत्तर : 1. अनुप्रास, 2. यमक, 3. वक्रोक्ति, 4. श्लेष, 5. चित्र, 6. पुनरुक्तवदाभासः।
357. मम्मट ने किन चित्रालंकारों का वर्णन किया है?
उत्तर : 1. खड्गबन्ध, 2. मुरजबन्ध, 3. पद्मबन्ध, 4. सर्वतोभद्र इन चारों का।
358. किन अलंकारों के बारे में मम्मट ने 'न तु काव्यरूपतां दधतीति' कहा है?
उत्तर : चित्र अलंकारों के बारे में।

विशिष्ट कवि एवं काव्य विभाग

1. काव्य से क्या तात्पर्य है?
उत्तर : कवेः कर्म काव्यम्।
2. काव्य के दो भेद कौन-से हैं?
उत्तर : 1. दृश्यकाव्य, 2. श्रव्यकाव्य।
3. दृश्यकाव्य में किनकी गणना होती है?
उत्तर : 1. रूपक, 2. उपरूपक को।
4. रूपक के कितने भेद हैं?
उत्तर : 10।
5. रूपक के भेद कौन-कौन से हैं?
उत्तर : 1. नाटक, 2. प्रकरण, 3. भाण, 4. प्रहसन, 5. डिम, 6. वीथी, 7. अङ्क, 8. ईहामृग, 9. व्यायोग, 10. समवकार।
6. उपरूपक कौन-कौन से हैं?
उत्तर : नाटिका, त्रोटक, भाणिका, रासक, शिल्पक इत्यादि।
7. श्रव्यकाव्य के कौन-कौन से भेद हैं?
उत्तर : 1. पद्यकाव्य, 2. गद्यकाव्य।
8. पद्यकाव्य में कौन-से काव्य आते हैं?
उत्तर : खण्डकाव्य, महाकाव्य, मुक्तककाव्य।
9. गद्यकाव्य में कौन-कौन से काव्य आते हैं?
उत्तर : कथा, आख्यायिका, चम्पू।

10. किस काव्य में गद्य व पद्य का मिश्रण होता है?
उत्तर : चम्पूकाव्य में।

11. लौकिक साहित्य में आदिकाव्य किसे माना गया है?
उत्तर : रामायण को।

12. रामायण के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : महर्षि वाल्मीकि।

13. क्रौञ्चवध के कारुणिक दृश्य में वाल्मीकि के हृदय में कौन-सा श्लोक उत्पन्न हुआ?
उत्तर : "मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।"

14. उपरोक्त श्लोक में कौन-सा छन्द है?
उत्तर : अनुष्टुप्।

15. उपजीव्य काव्य किसे कहा जाता है?
उत्तर : जिस काव्य के आधार पर दूसरे कवि अपना काव्य निर्मित करते हैं, वह काव्य उपजीव्य काव्य कहलाता है।

16. उपजीव्य काव्यों में प्रमुख स्थान किनका है?
उत्तर : रामायण और महाभारत का।

17. आचार्य पाणिनि ने कौन-सा काव्य लिखा?
उत्तर : जाम्बवती-विजय (पातालविजय) काव्य।

18. महाकवि क्षेमेन्द्र ने पाणिनि के किन छन्दों की प्रशंसा की है?
उत्तर : उपजाति छन्दों की।

19. आचार्य वररुचि ने कौन-सा काव्य लिखा है?
उत्तर : कण्ठाभरणम्।

कालिदासीयं-काव्यम्

20. कालिदास ने कौन-कौन से महाकाव्य लिखे हैं?
उत्तर : 1. रघुवंश, 2. कुमारसम्भव।

21. कालिदास प्रणीत गीतिकाव्य में किस नगरी का वर्णन है?
उत्तर : अलकानगरी।

22. मेघदूत के प्रणयन से संस्कृत जगत् में किस काव्यपरम्परा का जन्म हुआ?
उत्तर : दूतकाव्य परम्परा का। उद्धवदूत, हँसदूत, पिकदूत, पादांकदूत, गोपीदूत, तुलसीदूत, कोकिलदूत, पवनदूत, वातदूत, यकदूत, पत्रदूत। (दूतपरम्परा के कुछ उदाहरण)

23. मेघदूत की कथा का आधारग्रन्थ कौन-सा है?
उत्तर : ब्रह्मवैवर्तपुराण (इसमें 'योगिनी' नामधेय की आषाढ़ कृष्ण एकादशी की माहात्म्य कथा) से।

24. मेघदूत में किस छन्द का प्रयोग हुआ है?
उत्तर : मन्दाक्रान्ता।

25. मेघदूत के कितने भाग हैं?
उत्तर : दो— पूर्वमेव एवं उत्तरमेघ।

26. कालिदास का कौन-सा नाटक पढ़कर महाकवि गेटे नाच उठा?
उत्तर : अभिज्ञान-शाकुन्तलम्।

27. शाकुन्तल में कितने अङ्क हैं?
उत्तर : सात अङ्क।

28. शाकुन्तल में कितने छन्दों का प्रयोग हुआ है?
उत्तर : 24 छन्दों का।

29. शाकुन्तल में कौन-सा वैदिक छन्द प्रयुक्त हुआ है?
उत्तर : त्रिष्टुप्।

30. कालिदास के बारे में प्रसिद्ध उक्ति?
उत्तर : 'उपमा कालिदासस्य'।

31. कालिदासीय महाकाव्य कुमारसम्भव में कितने सर्ग हैं?
उत्तर : 17 सर्ग।

32. कुमारसम्भव के कौन-से सर्ग प्रक्षिप्त माने जाते हैं?
उत्तर : प्रारम्भिक आठ को छोड़ अवशिष्ट नौ सर्ग प्रक्षिप्त माने जाते हैं।

33. कालिदास की प्रथम रचना कौन-सी है?
उत्तर : ऋतु-संहार।

34. ऋतु-संहार में कितने सर्ग हैं?
उत्तर : छः।

35. ऋतु-संहार में कितने पद्य हैं?
उत्तर : 144 पद्य।

36. वागर्थाविवसम्पृक्तौ वागर्थऽप्रतिपत्तये। जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।। यह श्लोक किस काव्य का मङ्गलपद्य है?
उत्तर : रघुवंश महाकाव्य का।

37. रघुवंश में कितने सर्ग हैं?
उत्तर : 19 सर्ग।

38. कालिदास ने कुल कितने नाटक लिखे?
उत्तर : तीन—शाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्नि-मित्रम्।

39. कालिदास ने कितने महाकाव्य लिखे?
उत्तर : दो— कुमारसम्भव एवं रघुवंश।

40. रघुवंशमहाकाव्य में रघुकुल की कितनी पीढ़ियों का वर्णन है?
उत्तर : 29 पीढ़ियों का।

अश्वघोष-काव्यम्

41. अश्वघोष को किसके समकालीन माना जाता है?
उत्तर : कनिष्क के।

42. अश्वघोष का समय क्या माना जाता है?
उत्तर : प्रथम शताब्दी।

43. अश्वघोष कहाँ के निवासी थे?
उत्तर : साकेत (अयोध्या) के।

44. अश्वघोष ने कौन-कौन में महाकाव्य लिखे हैं?
उत्तर : 1. बुद्धचरित, 2. सौन्दरानन्द महाकाव्य।

45. अश्वघोष ने कौन-सा रूपक लिखा?
उत्तर : शारिपुत्रप्रकरण।

46. विद्वानों ने अश्वघोपरचित किस दार्शनिक ग्रन्थ का उल्लेख किया है?
उत्तर : महायान-श्रद्धोत्पादनशास्त्र का।

47. जन्मना वर्ण व्यवस्था की खण्डनपरक अश्वघोष की रचना?
उत्तर : वज्रसूचि-उपनिषद्।

48. अश्वघोष किस शैली के हैं?
उत्तर : वैदर्भी के।

49. अश्वघोष की माता का नाम क्या था?
उत्तर : सुवर्णाक्षी।

भासकाव्यपक्षः

50. स्वप्नवासवदत्तम् किसने लिखा?
उत्तर : भास ने।

51. इसमें कौन-सा रस अङ्गी है?
उत्तर : शृङ्गार।

52. इसमें कितने अङ्क हैं?
उत्तर : छः अङ्क।

53. भासनाटक चक्र का सम्पादन किसने किया?
उत्तर : म.म. त. गणपति शास्त्री ने।

54. भास की रचनाएँ –
उत्तर : प्रतिमानाटक, अभिषेक नाटक, पञ्चरात्र, मध्यम व्यायोग, दूतघटोत्कच, कर्णभार, दूतवाक्य, ऊरुभङ्ग, बालचरित, चारुदत्त, अविमारक, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, स्वप्नवासवदत्ता।

भर्तृमेण्ठ-काव्यम्

55. भर्तृमेण्ठ किन नामों से पुकारे जाते हैं?
उत्तर : मेण्ठ, भर्तृमेण्ठ, हस्तिपक, मेण्ठराज।

56. मेण्ठ शब्द का अर्थ क्या है?
उत्तर : हाथीवान।

57. कवि मेण्ठ ने कौन-सा काव्य लिखा?
उत्तर : हयग्रीववध।

58. मम्मट ने हयग्रीववध का प्रमुख दोष क्या बताया है?
उत्तर : मुख्यपात्र के स्थान पर अन्य का वर्णन अधिक करना।

59. विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा, मदसि वाक्पटुता युधिविक्रमः।
मनो यदेषां सुखदुःखसम्भवे प्रयाति नो हर्षविषादवश्यताम्।।
इसके कवि कौन हैं?
उत्तर : कविराज मेण्ठ।

शूद्रक-काव्यम्

60. शूद्रक की प्रसिद्ध रचना?
उत्तर : मृच्छकटिकम्।

61. मृच्छकटिकम् रूपक का कौन-सा भेद है?
उत्तर : प्रकरण।

62. इस प्रकरण में नायिका कौन है?
उत्तर : गणिका वसन्तसेना।

63. मृच्छकटिकम् का अर्थ क्या है?
उत्तर : मृदः शकटिका यस्मिन् तद् मृच्छकटिकम्।

64. इसमें कितने अङ्क हैं?
उत्तर : 10 अङ्क।

65. अङ्कों के नाम क्या हैं?
उत्तर : 1. अलङ्कार न्यास, 2. द्यूतकरसंवाहक, 3. सन्धिच्छेद, 4. मदनिका शर्विलक, 5. दुर्दिन, 6. प्रवहणविपर्यय, 7. आर्यकापहरण, 8. वसन्तसेना मोटन, 9. व्यवहार, 10. संहार।

66. मृच्छकटिकम् का आधारग्रन्थ किसे माना जाता है?
उत्तर : चारुदत्तम् (भासरचित रूपक) को।

भारवि-काव्यम्

67. भारवि का विशेषण क्या है?
उत्तर : आतपत्र।

68. भारवि का समय क्या है?
उत्तर : 600 ईसवीय के आस-पास।

69. भारवि ने कौन-सा काव्य लिखा?
उत्तर : किरातार्जुनीयम्।

70. किरात का आरम्भ किससे होता है?
उत्तर : श्री शब्द से।

71. लक्ष्यन्तकाव्य कौन-सा है?
उत्तर : किरात इसके प्रत्येक सर्गान्त में लक्ष्मी शब्द है।

72. किरात का प्रधान रस कौन-सा है?
उत्तर : वीर रस।

73. किरात में कितने सर्ग हैं?
उत्तर : 18 सर्ग।

74. चित्रकाव्य पाण्डित्य प्रदर्शनार्थ कौन-सा सर्ग लिखा गया?
उत्तर : 15वाँ सग।

75. भारवि ने 'न' कार का उपयोग कर कौन-सा श्लोक लिखा?
उत्तर : न नोननुन्नो नुन्नोनो नाना नानानना ननु।
नुन्नोऽनुन्नो न नुन्नेनो नानेना नुन्ननुन्ननुत्।।

76. आचार्य मल्लिनाथ ने भारवि के काव्य पर क्या टिप्पणी की है?
उत्तर : 'नारिकेलफलसन्निभं वचो भारवेः।'

77. भारवि के काव्य का वैशिष्ट्य क्या है?
उत्तर : मनोरम गाम्भीर्य (भारवेरर्थगौरवम्)।

भट्टि-काव्यम्

78. कविवर भट्टि कहाँ के थे?
उत्तर : गुजरात स्थित वल्लभी के।

79. भट्टि का काव्य किस नाम से प्रसिद्ध है?
उत्तर : भट्टिकाव्य के नाम से।

80. भट्टिकाव्य में कितने सर्ग एवं श्लोक हैं?
उत्तर : 20 सर्ग एवं 3624 श्लोक।

81. भट्टिकाव्य का उद्देश्य क्या है?
उत्तर : मनोरञ्जन के साथ-साथ सम्पूर्ण व्याकरण का ज्ञान।

82. भट्टिकाव्य का वास्तविक नाम क्या है?
उत्तर : रावणवध।

83. भट्टिकाव्य कितने काण्डों में विभक्त है?
उत्तर : चार— प्रकीर्ण-अधिकार-प्रसन्न-तिङन्तकाण्ड।

84. समीक्षक किस काव्य को शास्त्रकाव्य कहते हैं?
उत्तर : भट्टिकाव्य को।

मयूरभट्टीय-काव्यम्

85. मयूरभट्ट ने कौन-सा शतक लिखा?
उत्तर : सूर्यशतक।

86. हर्षचरित में मयूर को क्या बताया गया है?
उत्तर : जाङ्गलिक/विषवैद्य।

87. सूर्यशतक पर किस-किस ने टीकाएँ लिखीं हैं?
उत्तर : मधुसूदन (भावबोधिनी) तथा जगन्नाथ एवं जयमङ्गल ने।

88. मयूर-बाण में क्या सम्बन्ध बताया जाता है?
उत्तर : श्वसुर-जामाता का।

89. मयूर किसके आस्थान पण्डित थे?
उत्तर : श्रीहर्ष के।

90. मयूर ने अन्य ग्रन्थ कौन-से लिखे हैं?
उत्तर : मयूराष्टकम्।

कविताकामिन्या हर्षो हर्षः

91. महाकवि एवं राजा हर्षवर्धन किन के पुत्र थे?
उत्तर : प्रभाकरवर्धन एवं यशोमती के।

92. हर्ष के आस्थान में कौन-कौन विद्वान् थे?
उत्तर : बाणभट्ट, मयूरभट्ट, मातङ्गदिवाकर।

93. हर्ष ने कौन-कौन से काव्य लिखे?
उत्तर : तीन नाटक— रत्नावली, प्रियदर्शिका, नागानन्द।

बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्

94. बाण ने किन ग्रन्थों की रचना की?
उत्तर : कादम्बरी, हर्षचरित, पार्वतीपरिणय, चण्डीशतक व मुकुटताडितक।

95. बाणभट्ट की कीर्ति किस ग्रन्थ से है?
उत्तर : कादम्बरी से।

96. कादम्बरी का उत्तरार्द्ध किसने लिखा?
उत्तर : बाण के पुत्र पुलिन्द/पुलिन/भूषण भट्ट ने।

97. हर्षचरित कितने उच्छ्वासों में विभक्त है?
उत्तर : आठ उच्छ्वास।

98. कवि व राजा हर्ष ने बाण को देखकर क्या टिप्पणी की?
उत्तर : महानयं भुजङ्गः (लम्पट)।

99. यहाँ भुजङ्ग का संश्लिष्ट अर्थ क्या है?
उत्तर : भुजाभ्यां परकीयां गच्छति स भुजङ्गः। जो व्यभिचार करता है, वह भुजङ्ग है।

100. बाणभट्ट ने अपनी आत्मकथा किसमें लिखी?
उत्तर : हर्षचरित में।

101. प्रसिद्ध शुकनासोपदेश किसमें है?
उत्तर : कादम्बरी में।

102. बाणभट्ट किसके आश्रित थे?
उत्तर : हर्षवर्धन (हर्ष) के।

कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी

103. दशकुमारचरित किसने लिखा?
उत्तर : महाकवि दण्डी ने।

104. दण्डी के लेखक का वैशिष्ट्य क्या है?
उत्तर : पद-लालित्य।

105. दशकुमारों का चरित्र बताने वाला दशकुमारचरित कितनी पीठिकाओं में विभक्त है?
उत्तर : दो— पूर्व व उत्तर पीठिका।

106. दण्डी की कथा रचना मानी जाती है?
उत्तर : अवन्तिसुन्दरीकथा।

107. दण्डी ने कौन-सा काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : काव्यादर्श।

काव्येषु माघकाव्यम्

108. महाकवि माघ की एकमात्र रचना?
उत्तर : शिशुपालवध।

109. इसका अङ्गी रस कौन-सा है?
उत्तर : वीर।

110. इसमें कितने सर्ग एवं पद्य हैं?
उत्तर : 20 सर्ग, 1650 पद्य।

111. दकार से निर्मित माघ का श्लोक?
उत्तर : दाददो दुद्दुद्दी दादादो दूददीददोः।
दुदादं ददे दुद्दे दादाऽददददोऽददः।। (19/144)

112. माघ ने सौन्दर्य की क्या परिभाषा दी?
उत्तर : 'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदेव रूपं रमणीयतायाः।'

113. 'माघे सन्ति त्रयो गुणाः' के अनुसार माघकाव्य की गुणत्रयी?
उत्तर : उपमा, अर्थगौरव, पदलालित्य।

114. माघ का जन्म किस प्रान्त में हुआ?
उत्तर : गुजरात में (वर्तमान में माघ का नगर राजस्थान में है)।

कुमारदासीयं-काव्यम्

115. कुमारदास के विषय में राजशेखर ने क्या लिखा?
उत्तर : जानकीहरणं कर्तुं रघुवंशे स्थिते सति।
कविः कुमारदासश्च रावणश्च यदि क्षमौ।।

116. कुमारदास ने कौन-सा काव्य लिखा?
उत्तर : जानकीहरण।

117. कुमारदास को किस कवि के समकालीन मानते हैं?
उत्तर : कालिदास के।

118. कुमारदास कहाँ का शासक माना जाता है?
उत्तर : सिंहलद्वीप का।

उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते

119. कवि भवभूति ने किस रस को प्रधान बताया?
उत्तर : करुण को।

120. क्षेमेन्द्र ने भवभूति के किस वृत्त की प्रशंसा की?
उत्तर : शिखरिणी वृत्त की।

121. भवभूति का वास्तविक नाम क्या था?
उत्तर : श्रीकण्ठ।

122. भवभूति की प्रसिद्ध रचना कौन-सी है?
उत्तर : उत्तररामचरित।

123. उत्तररामचरित में कितने अङ्क हैं?
उत्तर : सात अङ्क।

124. उत्तररामचरित जैसे परमरम्य काव्य में कौन-सा दोष प्रमुख है?
उत्तर : मञ्च पर प्रत्यक्ष वध दिखाना।

125. भवभूति के माता, पिता तथा पितामह के नाम क्या थे?
उत्तर : जतुकर्णी, नीलकण्ठ, भट्टगोपाल।

126. भवभूति की रचना मालतीमाधव रूपक का कौन-सा भेद है?
उत्तर : प्रकरण।

127. भवभूति का अन्य नाटक?
उत्तर : महावीरचरित।

128. महावीरचरित में कथावस्तु क्या है?
उत्तर : राम का पूर्वार्द्धचरित।

अमरुक-विज्जिका-भल्लट-त्रिविक्रमकाव्यानि

129. अमरुकशतक के रचयिता कौन हैं?
उत्तर : अमरु कवि।

130. अमरुकशतक में किसके पद्य हैं?
उत्तर : शृङ्गार के।

131. अमरु कवि का क्या समय माना जाता है?
उत्तर : नवम शताब्दी।

132. कवयित्री विज्जिका किस प्रदेश में जन्मी?
उत्तर : कणांट प्रदेश में।

133. काश्मीर के कवि भल्लट की रचना कौन-सी है?
उत्तर : भल्लट-शतक।

134. नलचम्पू की ग्चना किसने की?
उत्तर : त्रिविक्रम भट्ट ने।

135. त्रिविक्रम का गोत्र क्या है?
उत्तर : शाण्डिल्य।

136. त्रिविक्रम की अन्य रचना कौन-सी है?
उत्तर : मदालसाचम्पू।

'उदिते नैषधे क्व माघः क्व च भारविः'

137. नैषधीयचरित किसने लिखा?
उत्तर : श्रीहर्ष ने।

138. दन्तकथानुसार श्रीहर्ष के मामा कौन थे?
उत्तर : मम्मटाचार्य।

139. श्रीहर्ष किसके आश्रित रहे?
उत्तर : कान्यकुब्जनरेश जयचन्द्र के।

140. अद्वैतवेदान्त के मण्डनार्थ श्रीहर्ष ने कौन-सा ग्रन्थ लिखा?
उत्तर : खण्डनखण्डखाद्यम्।

141. श्रीहर्ष ने कौन-सा चम्पूकाव्य लिखा?
उत्तर : नवसाहसाङ्कचरितचम्पू।

142. श्रीहर्ष की अन्य रचनाएँ?
उत्तर : स्थैर्यविचारणप्रकरण, विजयप्रशस्ति, गौडोर्वीशकुलप्रशस्ति, अर्णववर्णन, छिन्दप्रशस्ति, शिवशक्तिसिद्धि।

क्षेमेन्द्र-काव्यम् तथा वेङ्कटाध्वरिकाव्यम्

143. संस्कृत जगत् में हास्यकथा का अधीश्वर कवि कौन माना जाता है?
उत्तर : क्षेमेन्द्र।

144. क्षेमेन्द्र की रामायण व महाभारत पर लिखी गई रचनाएँ?
उत्तर : रामायणमञ्जरी, भारतमञ्जरी।

145. पैशाचीभाषा से बृहत्कथा का संस्कृतपद्यानुवाद किसने किया?
उत्तर : क्षेमेन्द्र ने।

146. क्षेमेन्द्र की दूसरी कथात्मक कृति कौन-सी है?
उत्तर : 'बोधिसत्त्वावदानकल्पलता'।

147. वेङ्कटाध्वरि ने कौन-सा काव्य लिखा?
उत्तर : लक्ष्मीसहस्र।

148. वेङ्कटाध्वरि रचित चम्पूग्रन्थ कौन-कौन से हैं?
उत्तर : विश्वगुणादर्श, हस्तिगिरिचम्पू।

कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. वेद की विज्ञानधारा के प्रमुख विद्वान्?
उत्तर : पं. मधुसूदन ओझा।

2. पं. ओझा ने किन दो ग्रन्थों पर विज्ञानभाष्य लिखा?
उत्तर : शतपथब्राह्मण व गीता पर।

3. पं. ओझा के ग्रन्थों के हिन्दी अनुवाद करने वाले उनके प्रमुख शिष्य?
उत्तर : पं. मोतीलाल शास्त्री।

4. पं. मोतीलाल शास्त्री के बाद ओझाजी के ग्रन्थों को प्रकाशित करवाने का दायित्व किसने सम्भाला?
उत्तर : श्री कर्पूरचन्द कुलिश ने।

5. ओझाजी व शास्त्रीजी का चिन्तन राजस्थान पत्रिका में किस स्तम्भ में प्रकाशित हुआ?
उत्तर : विज्ञानवार्ता स्तम्भ में।

6. ओझाजी के 288 ग्रन्थों में से कितने उपलब्ध है?
उत्तर : 100 ग्रन्थ।

7. ओझाजी ने 'दशवाद-रहस्य' में किस पक्ष को प्रस्तुत किया?
उत्तर : वेद के पूर्वपक्ष को।

8. वेद की विज्ञानधारा के अध्येता के रूप में राजस्थान के प्रसिद्ध विद्वान्?
उत्तर : डॉ. दयानन्द भार्गव 'विपुल'।

9. महर्षि कुल वैभव, इन्द्रविजय तथा ब्रह्मसिद्धान्त इत्यादि ग्रन्थों का प्रणयन किसने किया?
उत्तर : पं. मधुसूदन ओझा ने।

10. पं. मोतीलाल शास्त्री ने किस अध्ययन संस्था की प्रतिष्ठा की?

उत्तर : मानवाश्रम की।

11. संस्कृतकाव्य जगत् में गजल, कव्वाली इत्यादि नवीन विधाओं के अवतारक तथा जयपुर वैभव के लेखक?

उत्तर : भट्ट मथुरानाथ शास्त्री।

12. श्री सीताराम पर्वणीकर ने कौन-कौन से काव्य लिखें?

उत्तर : जयवंशमहाकाव्य, लघुरघुकाव्य इत्यादि।

13. डॉ. हरिराम आचार्य को किस कृति पर माघ पुरस्कार मिला है?

उत्तर : मधुच्छन्दा: नामक कृति पर।

14. किस विद्वान् ने 'राजस्थानीयमभिनवसंस्कृतसाहित्यम्' लिखा?

उत्तर : डॉ. गंगाधर भट्ट ने।

15. किस विद्वान् को सम्पादकाचार्य नाम से जाना जाता है?

उत्तर : पं. दुर्गाप्रसाद शर्मा को।

16. जोधपुर के पण्डित श्रीराम दवे ने कौन-कौन से काव्य लिखे?

उत्तर : भृत्याभरणम्, राजलक्ष्मीस्वयंवरम्, साकेतसङ्गरम् (महाकाव्य), परिवारयुद्धम्, सौन्दर्यलीलामृतम्, वियोगशतकम्, ललितालहरी, भारती-विलास, विनोदकौस्तुभम्, केलिभूकैतवयम्, कारुण्यकादम्बिनी (खण्डकाव्य)।

17. किस जोधपुरीय विद्वान् ने संविधान को संस्कृत में अनूदित किया?

उत्तर : म.प. विश्वेश्वरनाथ रेऊ ने।

18. राज्य मंत्रिमण्डल की वरिष्ठ सदस्या रही किस राजनेत्री को संस्कृत सेवा हेतु मानद शोधोपाधि मिली?

उत्तर : डॉ. श्रीमती कमला, भूतपूर्व संस्कृत शिक्षा मंत्री, राजस्थान-सरकार।

19. भ्रष्टोपनिषद् की रचना किसने की?

उत्तर : डॉ. शिवसागर त्रिपाठी ने।

20. शिवराजविजय के प्रणेता कौन थे?

उत्तर : अम्बिकादत्त व्यास।

21. पत्रदूत खण्डकाव्य का प्रणयन किसने किया?

उत्तर : पं. मोहनलाल शर्मा पाण्डेय ने।

22. वर्तमान में स्वरमङ्गला पत्रिका के सम्पादक कौन हैं?

उत्तर : प्रो. सुरेन्द्र कुमार शर्मा।

23. प्रतापचरित की रचना किसने की?

उत्तर : पं. महावीर प्रसाद जोशी ने।

24. प्रकाण्ड संस्कृत विद्वान् और महाभारत का अंग्रेजी में अनुवाद करने वाले पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की कौन-सी हिन्दी कहानी प्रसिद्ध हुई?

उत्तर : 'उसने कहा था'।

25. भारती के सहसम्पादक और विश्वकथाशतकम् के रचयिता संस्कृत कवि कौन हैं?

उत्तर : पं. पद्मशास्त्री।

26. सन् 2001 का माघ पुरस्कार किसे प्राप्त हुआ?

उत्तर : पं. सम्पूर्णदत्त मिश्र को।

27. गिरिधर सप्तशती के प्रणेता कौन हैं?

उत्तर : पं. गिरिधर शर्मा 'नवरत्न'।

28. भारती मासिक पत्र में नारीस्तम्भ की लेखिका और प्रथित विदुषी कौन है?

उत्तर : डॉ. राजेश्वरी भट्ट।

•••

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जून- 2015

1. श्वेताश्वतरोपनिषद् केन वेदेन सम्बद्धा?
(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

2. 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत' इति कुत्र उपदिष्टम्?
(A) ईशावास्योपनिषदि (B) कठोपनिषदि
(C) आपस्तम्बधर्मसूत्रे (D) माण्डूक्योपनिषदि

3. 'मण्डलक्रमः ' केन वेदेन सम्बद्धः?
(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) यजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

4. अथर्ववेदीयं ब्राह्मणं किम्?
(A) शतपथब्राह्मणम् (B) गोपथब्राह्मणम्
(C) तैत्तिरीयब्राह्मणम् (D) ऐतरेयब्राह्मणम्

5. "स्वसारं त्वा कृणवै मा पुनर्गा, अप ते गरवां सुभगे भजाम।" इति मन्त्रांशः कुतः उद्धृतः?
(A) पुरुरवा-उर्वशी-संवादात्
(B) यम-यमी-संवादात्
(C) सरमा-पणि-संवादात्
(D) विश्वामित्र-नदी-संवादात्

6. अन्तरिक्षस्थानीया देवता का?
(A) रुद्रः (B) सोमः
(C) अग्निः (D) बृहस्पतिः

7. 'प्रधानञ्च षड्ङ्गेषु' किम्?
(A) कल्पः (B) छन्दः
(C) शिक्षा (D) व्याकरणम्

8. 'सर्वलघुः' इति को गणः?
(A) जगणः (B) मगणः
(C) नगणः (D) सगणः

9. 'व' वर्णः अस्ति-
(A) ओष्ठ्यः (B) ऊष्मः
(C) अन्तःस्थः (D) दन्त्यः

10. 'शुल्बसूत्राणि' केन वेदाङ्गेन सम्बद्धानि?
(A) व्याकरणेन (B) कल्पेन
(C) छन्दसा (D) निरुक्तेन

11. 'सत्त्वप्रधानम्' इति मन्यते-
(A) उपसर्गः (B) नाम
(C) आख्यातम् (D) निपातः

12. 'पदपाठ' इत्यस्य परमं प्रयोजनम् अस्ति-
(A) पदनिर्माणम् (B) शब्दनिर्माणम्
(C) वेदपाठरक्षणम् (D) मन्त्रगानम्

13. प्रायश्चित्तकर्माणि भवन्ति-
(A) हननादीनि (B) सन्ध्यावन्दनादीनि
(C) ज्योतिष्टोमादीनि (D) चान्द्रायणादीनि

14. अधोलिखितेषु अनिर्वचनीयं भवति-
(A) जीवस्वरूपम् (B) अज्ञानम्
(C) जगत्स्वरूपम् (D) ईश्वरस्वरूपम्

15. वेदान्तसारे अज्ञानस्य शक्तिः-
(A) द्विविधा (B) त्रिविधा
(D) पञ्चविधा (C) चतुर्विधा

16. वेदान्तसारे लिङ्गशरीराणि-
(A) षोडशावयवानि (B) पञ्चदशावयवानि
(C) सप्तदशावयवानि (D) एकादशावयवानि

17. साङ्ख्यमतानुसारं सत्त्वगुणः-
(A) सुखात्मकः (B) दुःखात्मकः
(C) अभावात्मकः (D) मोहात्मकः

18, साङ्ख्यमते पङ्गुवद् वर्तते-
(A) प्रधानम् (B) पुरुषः
(C) गुणत्रयम् (D) अन्तःकरणम्

19. त्रैगुण्यविपर्ययात् किं सिद्धम्?
(A) प्रधानम् (B) पुरुषैकत्वम्
(C) पुरुषबहुत्वम् (D) अज्ञानम्

20. साङ्ख्यकारिकायां सर्गस्य कारणम्-
(A) पुरुषः (B) ईश्वरः
(C) प्रधानम् (D) पुरुषप्रकृतिसंयोगः

21. न्यायवैशेषिकमतानुसारं पदार्थाः-
(B) षोडश (A) षट्
(C) नव (D) सप्त

22. तर्कसङ्ग्रहानुसारं पृथिव्यां रूपम्-
(A) षड्विधम् (B) सप्तविधम्
(C) अष्टविधम् (D) नवविधम्

23. तर्कसङ्ग्रहानुसारं 'न्यूनदेशवृत्ति' इति लक्षणम्-
(A) अभावस्य (B) परसामान्यस्य
(C) अपरसामान्यस्य (D) विशेषस्य

24. तर्कसङ्ग्रहानुसारं अनुमानं नाम-
(A) लिङ्गज्ञानम् (B) व्याप्तिः
(C) उदाहरणम् (D) लिङ्गपरामर्शः

25. सर्वनामस्थानसंज्ञकं सूत्रं किम्?
(A) सर्वादीनि सर्वनामानि
(B) सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ

(C) सुडनपुंसकस्य

(D) स्वादिष्वसर्वनामस्थाने

26. 'सुप्तिङन्तं पदम्' इति सूत्रम् अतिरिच्य पदसंज्ञाविधायकं सूत्रं किम्?

(A) पदस्य (B) पदात्

(C) पदान्तस्य (D) स्वादिष्वसर्वनामस्थाने

27. वीप्सार्थे दयोत्ये का विभक्तिर्गम्यते?

(A) तृतीया (B) पञ्चमी

(C) द्वितीया (D) सप्तमी

28. उपपदसंज्ञाविधायकं सूत्रं किम्?

(A) कर्मण्यण् (B) उपपदमतिङ्

(C) तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् (D) कुगतिप्रादयः

29. 'शोभनो राजा' इत्यस्य समस्तपरदं किम्?

(A) सुराजः (B) सुराजा

(C) सुराजी (D) सुराज्ञी

30. अधस्तनयुग्मेभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या-

(अ) कृजः प्रतियत्ने (i) योजनं योजने वा

(ब) अभाषितपुंस्काच्च (ii) कुम्भकारः

(स) कालात् सप्तमी च वक्तव्या (iii) गङ्गका, गङ्गिका

(द) तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् (iv) एधो दकस्योपस्करणम्

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(iv)	(ii)	(i)	(iii)
(B)	(i)	(ii)	(i)	(iv)
(C)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)
(D)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)

31. गुणवाचकास्त्रीलिङ्गे का विभक्तिव्यवस्था?

(A) तृतीया-पञ्चम्यौ

(B) द्वितीया-तृतीया-पञ्चम्यः

(C) षष्ठी-सप्तम्यौ

(D) द्वितीया-चतुर्थ्यौ

32. अधस्तनेषु निष्ठा-संज्ञा कस्य भवति?

(A) तव्यत्-इत्यस्य (B) तव्य-इत्यस्य

(C) क्तवतु-इत्यस्य (D) अनीयर्-इत्यस्य

33. संज्ञार्थप्रयुक्ते 'मामकी' इति पदे "ङीप्" इत्यस्य-

(A) नित्यविधिः (C) वैकल्पिक-प्रवृत्तिः

(B) निषेधः (D) अशुद्ध-प्रयोगः

34. किं तत्त्वं वियोगात्मक-भाषा-प्रकृति-लक्षणम्?

(A) सङ्ख्या (B) अर्थः

(C) सन्धिः (D) प्रकृति-प्रत्यय-पार्थक्यम्

35. का भाषा 'केन्टुम'-वर्गेण असम्बद्धा-

(A) ग्रीकभाषा (B) इताली

(C) लैटिनभाषा (D) संस्कृतभाषा

36. तुलनात्मक-भाषाशास्त्रस्य अध्ययनस्य आरम्भकाले कयोः-भाषयोः मध्ये ध्वनिसाम्यं प्रत्यक्षीकृतम्?

(A) संस्कृत-हिन्दी-मध्ये

(B) संस्कृत-लैटिन-मध्ये

(C) संस्कृत-फ़ारसी-मध्ये

(D) संस्कृत-फ्रांसीसी-मध्ये

37. निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु । प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते॥ कस्मिन् ग्रन्थे-उपलभ्यतेऽयं श्लोकः?

(A) हर्षचरिते (B) अभिज्ञानशाकुन्तले

(C) रघुवंशे (D) कादम्बर्याम्

38. अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसजनात् कस्य भयं न जायते। इत्यादि-श्लोकः कस्मिन् ग्रन्थेऽस्ति?

(A) रत्नावल्याम् (B) शिशुपालवधे

(C) कुमारसम्भवे (D) कादम्बर्याम्

39. 'मृच्छकटिकम्' इति कस्य रूपकस्य उदाहरणं भवति ?

(A) समवकारस्य (B) नाटकस्य

(C) प्रकरणस्य (D) भाणस्य

40. दशकुमारचरितस्य कस्मिन् चरिते सुरतमञ्जर्याः उपाख्यानमस्ति?

(A) अपहारवर्मचरिते (B) उपहारवर्मचरिते

(C) राजवाहनचरिते (D) पुष्पोद्भवचरिते

41. कृतककोपवृत्तान्तः कस्मिन् दृश्यकाव्ये वर्तत ?

(A) मुद्राराक्षसे (B) मृच्छकटिके

(C) उत्तररामचरिते (D) वेणीसंहारे

42. अधस्तनयुग्मानां समीचीनतालिकां चिनुत-

(अ) उत्तररामचरितम् (i) भासः

(ब) बुद्धचरितम् (ii) भवभूतिः

(स) वेणीसंहारम (iii) भट्टनारायणः

(द) स्वप्नवासवदत्तम् (iv) अश्वघोषः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(B	(ii)	(I)	(iv)	(iii)
(C)	(iv)	(ii)	(iii)	(i)
(D)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)

43. दुष्यन्तपुत्रस्य प्रथमं नाम किम् आसीत्?

(A) भरतः (B) दौष्यन्तिः

(C) सर्वदमनः (D) गौतमः

44. शिशुपालवधमहाकाव्यस्य प्रथमसर्गस्य नाम किम्?

(A) कृष्णनारदसम्भाषणम्

(B) नारदावतरणम्

(C) नारदगुणकीर्तनम् ।

(D) कृष्णगुणकीर्तनम्

45. किं नाम अभिधापुच्छभूता भवति?

(A) व्यञ्जना (B) लक्षणा

(C) तात्पर्यम् (D) अर्थापत्तिः

46. विश्वनाथमते सङ्केतः गृह्यते..

(A) जातौ गुणे द्रव्ये क्रियायाञ्च

(B) केवलं जातिगुणयोः

(C) केवलं द्रव्ये

(D) केवलं क्रियायाम्

47. विश्वनाथमते हास्यं कतिविधं भवति?

(A) चतुर्विधम् (B) त्रिविधम्

(C) द्विविधम् (D) षड्विधम्

48. शृङ्गाररसो भवति-

(A) प्रमथदैवतः (B) विष्णुदैवतः

(C) गन्धर्वदैवतः (D) नारायणदैवतः

49. काव्यलक्षणखण्डनविचारे कस्य मतं 'स्ववचनविरोधाद्-अपास्तम्' इति विश्वनाथेन कथितम्?

(A) आनन्दवर्धनस्य (B) वामनस्य

(D) व्यक्तिविवेककारस्य (C) मम्मटस्य

50. श्यामास्वङ्गं चकितहरिणीप्रेक्षणे दृष्टिपात.. इति पद्यांशः कस्मिन् ग्रन्थे उपलभ्यते?

(A) रघुवंशे (B) नैषधीयचरिते

(C) मेघदूते (D) बुद्धचरिते

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जून- 2015

1.'यस्यामापः परिचराः समानी- रहोरात्रे अप्रमादं क्षरन्ति। मन्त्रांशोऽयं केन सूक्तेन सम्बद्धः?

(A) अग्निसूकतेन (B) नासदीयसूकतेन

(C) पृथिवीसूक्तेन (D) हिरण्यगर्भसूकतेन

2. पुरुषसूक्तेन सम्बद्धा उक्तिः अस्ति-

(A) 'राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्'

(B) 'यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात्

(C) 'सः भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्

(D) 'न मृत्युरासीदमृतं न त्हि

3. कः अग्निसूक्तस्य ऋषिः?

(A) मधुच्छन्दाः (B) प्रजापतिः

(C) हिरण्यगर्भः (D) विश्वामित्रः

4. ब्राह्मणग्रन्थानां प्रतिपाद्यविषयस्य कति प्रकाराः?

(A) द्वादश (B) षोडश

(C) चत्वारः (D) दश

"आरण्यकश्च वेदेभ्यः औषधिभ्योऽमृतं यथा" इति उक्तम्-

(A) सायणेन (B) कृष्णद्वैपायनेन

(C) यास्केन (D) मनुना

6. 'त्रयः स्वराः' इत्यन्तर्गते न गण्यते-

(A) उदात्तः (B) आगमः

(C) स्वरितः (D) अनुदात्तः

7. प्रायः वेदेषु एव लभ्यते-

(A) लट्लकारः (B) लृट्लकारः

(C) लिट्लकारः (D) लेट्लकारः

8. अस्ति बाह्यप्रयत्नः-

(A) नादः (B) ईषत्स्पृष्टम्

(C) स्पृष्टम् (D) विवृतम्

9. "तदिदं विद्यास्थानं व्याकरणस्य कार्त्स्न्यम्" इत्यनेन लक्षितम्-

(A) कल्पः (B) छन्दस्

(C) निरुक्तम् (D) ज्योतिष्।

10. द्वात्रिंशत् अक्षराणि भवन्ति-

(A) बृहतीच्छन्दसि (B) पङ्क्तिच्छन्दसि

(C) जगतीच्छन्दसि (D) अनुष्टुप्

11. पादपूरणार्थकः निपातः अस्ति-

(A) इत् (B) च

(C) ननु (D) इव

12. 'व्यञ्जनसन्निपातः' इति कथ्यते-

(A) प्रगृह्यः (B) अघोषः

(C) संयोगः (D) यमः

13. यक्षरूपधारिणः परब्रह्मणः आख्यायिका उपलभ्यते-

(A) ईशावास्योपनिषदि

(B) केनोपनिषदि

(C) कठोपनिषदि

(D) तैत्तिरीयोपनिपदि

14. "मन एव त्वच्छ्रेयो मनसो वै त्वं....." इति उक्तम्-

(A) मनसा (B) वाचा

(C) नचिकेतसा (D) प्रजापतिना

15. 'यद् दूरङ्गता भवति' इति निरुक्त्या किम् उपलक्ष्यते?

(A) गौः (B) समुद्रः

(C) नदी (D) मेघः

16. 'अथ शीक्षां व्याख्यास्यामः' इत्युक्तिः कुतः उद्धृता-

(A) कठोपनिषदः (B)तैत्तिरीयोपनिषदः

(C) पाणिनीयशिक्षातः (D) याज्ञवल्क्यशिक्षातः

17. अधोलिखितेषु नित्यकर्म भवति-

(A) ज्योतिष्टोमादि (B) सन्ध्यावन्दनादि

(C) चान्द्रायणादि (D) जातेष्ट्यादि

18. अजहल्लक्षणाया उदाहरणं भवति-

(A) शोणो धावति (B) तत्त्वमसि

(C) गङ्गायां घोषः (D) सोऽयं देवदत्तः

19. अधोलिखितेषु साक्षात्कारोपयोगि भवति-
(A) उपक्रमः (B) अपूर्वता
(C) निदिध्यासनम् (D) फलम्

20. अधस्तनेषु साधनचतुष्टये अन्तर्भवति
(A) शमदमादिषट्कसम्पत्तिः (B) चन्दनम्
(C) उपक्रमः (D) उपसंहारः

21. वेदः कः?
(A) अपौरुषेयं वाक्यम्
(B) अङ्ग-प्रधान-सम्बन्ध-बोधकं वाक्यम्
(C) कर्मबोधकं वाक्यम्
(D) समभिव्याहारः वाक्यम्

22 . प्रयोगविधेः सहकारिप्रमाणानि-
(A) पञ्च (B) षट्
(C) सप्त (D) चत्वारि

23. तत्र चान्यत्र च प्राप्तौ' इति कस्य लक्षणं भवति?
(A) अपूर्वविधेः (B) नियमविधेः
(C) अधिकारविधेः (D) परिसङ्ख्यायाः

24. 'विरोधे गुणवादः स्यात्' इति लक्षणम्-
(A) नामधेयस्य (B) गुणविधेः
(C) अर्थवादस्य (D) मन्त्रस्य

25. समीचीनतालिकां चिनुत-

(अ) घटः पटः न	(i) प्रागभावः
(ब) इह घटो भविष्यति	(ii) अन्योन्याभावः
(स) भूतले घटः न	(iii) प्रध्वंसाभावः
(द) घटो ध्वस्तः	(iv) अत्यन्ताभावः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(i)	(iv)	(iii)	(ii)
(B)	(iv)	(ii)	(i)	(iii)
(C)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(i)	(iv)	(iii)

26. अभावस्य प्रत्यक्षं भवति-
(A) संयोगसम्बन्धेन
(B) समवायसम्बन्धेन
(C) संयुक्त-समवाय-सन्निकर्षेण
(D) विशेषण-विशेष्य-भावसन्निकर्षेण

27. 'आप्तवाक्यं शब्दः' इति लक्षणम्-
(A) पदस्य (B) वाक्यस्य
(C) शब्दप्रमाणस्य (D) महावाक्यस्य

28. 'एकस्मिन् धर्मिणि नानाधर्मावगाहि ज्ञानम् ' इति लक्षण भवति-
(A) अज्ञानस्य (B) समूहालम्बनज्ञानस्य
(C) संशयस्य (D) शाब्दज्ञानस्य

29. 'प्रतिविषयाध्यवसायः' इत्यस्य सम्बन्धः केन?
(A) अनुमानेन (B) आप्तवचनेन
(C) प्रत्यक्षेण (D) उपमानेन

30. 'प्रदीपवच्चार्थतो वृत्तिः ' कस्य?
(A) प्रकृतेः (B) गुणत्रयस्य
(C) जलस्य (D) तेजसः

31. 'ततोऽहङ्कारः' इति अहङ्कारस्य उत्पत्तिः कुतः भवति ?
(A) प्रकृतेः (B) महतः
(C) षोडशगणात् (D) पञ्चभूतेभ्यः

32. साङ्ख्यदर्शनानुसारं अध्यवसायात्मकं तत्वं किम् ?
(A) बुद्धिः (B) चक्षुः
(C) त्वक् (D) कर्णः

33. 'स वाग्वज्रोयजमानं हिनस्ति' इत्यनेन महाभाष्ये किमभिप्रेतम्?
(A) शब्दशुद्धिः (B) चित्तशुद्धिः
(C) कायशुद्धिः (D) व्यवहारशुद्धिः

34. 'यागात् स्वर्गो भवति' इत्यत्र भू-धातोः कः अर्थः ?
(A) सत्ता (B) यागः
(C) स्वर्गः (D) उत्पत्तिः

35. अधोऽङ्कितानां युग्मानां समीचीना तालिका चेतव्या-

(अ) झयः	(i) भृत्यः
(ब) मनोरौवा	(ii) शताद् बद्धः
(स) भृजोऽसंज्ञायाम्	(iii) विद्युत्वान्
(द) अकर्तृयणे पञ्चमी	(iv) मनुः

	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(A)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(i)	(iii)	(ii)	(iv)
(D)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)

36. 'सर्पिषो जानीते' इत्यत्र क्रियापदे आत्मनेपदविधायकं सूत्रं- किम्?
(A) तङानावाऽऽत्मनेपदम्
(B) कर्तरि कर्मव्यतिहारे
(C) अनुदात्तङित आत्मनेपदम्
(D) अकर्मकाच्च

37. 'उपरमति' इत्यत्र परस्मैपदविधायकं सूत्रं किम् ?
(A) व्याङ्परिभ्यो रमः (B) अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः
(C) अनुपराभ्यां कृः (D) उपाच्च

38. ध्वनिस्फोटयोर्मध्ये कः सम्बन्धः?
(A) कार्यकारणभावः (B) शक्तिशक्तिमद्भावः
(C) गुणगुणिभावः (D) क्रियाक्रियावद्भावः

39. स्वीकृतं भर्तृहरिमते वाचः-
(A) चातुर्विध्यम् (B) त्रैविध्यम्
(C) द्वैविध्यम् (D) ऐकविध्यम्

40. तृतीये सवने कीदृशः स्वरः प्रयोज्यः ?
(A) गम्भीरः (B) मध्यमः
(C) तारः (D) कम्पः

41. 'वज्रं पतति मस्तके' इति पद्यांशः कुत्रोक्तः ?
(A) महाभाष्ये (B) अष्टाध्याय्याम्
(C) वाक्यपदीये (D) पाणिनीयशिक्षायाम्

42. प्रसिद्धध्वनिनियमेषु अर्वाचीनतमः कः?
(A) वर्नरनियमः (B) ग्रासमाननियमः
(C) ग्रिमनियमः (D) विण्टरनिट्जनियमः

43. जिह्वाभागविशेषोच्चारणदृष्ट्या मध्यस्वरोऽस्ति-
(A) अकारः (B) इकारः
(C) उकारः (D) एकारः

44. आकृतिमूलकवर्गीकरणेन असम्बद्धम्-
(A) प्रकृतिः (B) प्रत्ययः
(C) उपसर्गः (D) व्यापारः

45. पारिवारिकवर्गीकरणेन असम्बद्धम्-
(A) फलसाम्यम् (B) ध्वनिसाम्यम्
(C) पदसाम्यम् (D) अर्थसाम्यम्

46. संस्कृतभाषायाः 'शतम्' इति परदं गॉथिकभाषायाम् 'हुन्-भवति । इति कस्य मतम्?
(A) ग्रिममहोदयस्य
(B) वर्नरमहोदयस्य
(C) ग्रासमानमहोदयस्य
(D) थॉम्पसनमहोदयस्य

47. अर्थपरिवर्तनकारणेष्वन्यतमम्-
(A) सादृश्यम् (B) आगमः
(C) लोपः (D) स्वरभक्तिः

48. "हृतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरादुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः।" कस्य वर्णना इयम्?
(A) कुबेरस्य (B) यमवाहनमहिषस्य
(C) इन्द्रस्य (D) वरुणस्य

49. मदेकपुत्रा जननी जरातुरा.. कस्येयमुक्तिः?
(A) दमयन्त्याः (B) हंसस्य
(C) भीमस्य (D) नलस्य

50. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-
(अ) चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः। (i) मृच्छकटिकम्
(ब) आसीत् स दोलाचलचित्तवृत्तिः। (ii) कर्णभारम्
(स) हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम्। (iii) रघुवंशम्
(द) हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति। (iv) मुद्राराक्षसम्

	(अ)	(ब)	(स)	(स)
(A)	(iii)	(i)	(iv)	(ii)
(B)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(C)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(D)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)

51. "न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति विधिः ।" केन छन्दसा विनिर्मितोऽयं श्लोकः ?
(A) मन्दाक्रान्ता (B) हरिणी
(C) शिखरिणी (D) स्रधरा

52. "वैदेहिबन्धोर्हृदयं विद्रे" इत्यत्र कस्तावत् वैदेहिबन्धुः-
(A) रामः (B) लक्ष्मणः
(C) रावणः (D) भरतः

53. रत्नावल्यां उदयनस्य कञ्चुकी कः?
(A) वाभ्रव्यः (B) यौगन्धरायणः
(C) वसन्तकः (D) विक्रमबाहुः

54. कुरङ्गकेन हर्षचरिते किं कर्म कृतम् ?
(A) चिकित्साकर्म (B) पूजाकर्म
(C) वार्ताप्रदानम् (D) भाग्यगणनम्

55. "सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः।" इत्यादि श्लोकः कस्य उदाहरणरूपेण ध्वन्यालोके उल्लिखितः ?
(A) आक्षेपालङ्कारस्य
(B) विशेषोक्त्यलङ्कारस्य
(C) अविवक्षितवाच्यस्य
(D) विवक्षितान्यपरवाच्यस्य

56. "नृतं ." शून्यं स्थानं पूरयत।
(A) भावाश्रयम् (B) केवलं लयाश्रयम्
(C) केवलं तालाश्रयम् (D) ताललयाश्रयम्

57. प्रात्याशा भवति
(A) फललाभाय औत्सुक्यमात्रम्।
(B) उपायापायशङ्काभ्यां प्राप्तिसम्भवः
(A) अप्राप्तौ अतित्वरान्वितः व्यापारः
(D) अपायाभावतः प्राप्तिः

58. "निः शेषच्युतचन्दनं.."इत्यादि-श्लोके 'अत्र तदन्तिकमेव रन्तुं गतासि' इति व्यङ्ग्यं मम्मटेन कथं निर्धारितम्?
(A) प्राधान्येन 'अधम' पदेन।
(B) प्राधान्येन 'मिथ्यावादिनी' पदेन।
(C) 'निःशेष' शब्देन।
(D) 'निर्मृष्टरागोऽधरः' इति पदेन।

59. "किञ्चित् पृष्टमपृष्टं वा कथितं यत् प्रकल्प्यते। तादृगन्यव्यपोहाय... ---तु सा स्मृता।" रिक्तस्थानं पूरयत।
(A) उपमा (B) व्याजस्तुतिः
(C) अपहुतिः (D) परिसंख्या

60. दशरूपकमते नाटकस्य अङ्कसंख्या भवति-
(A) 5-7 (B)5-8
(C) 5-10 (D) 7-10

61. रिक्तं स्थानं पूरयत- "नाट्याख्यं.. .. वेद सेतिहासं करोम्यहम्।"
(A) उत्तमम् (B) अपूर्वम्
(C) द्वितीयम् (D) पञ्चमम्

62. "सामान्यस्य द्विरेकस्य यत्र वाक्यद्वये स्थितिः ।"
काव्यप्रकाशकारमते कोऽयम् अलङ्कारः?
(A) निदर्शना (B) प्रतिवस्तूपमा
(C) दृष्टान्तेः (D) विशेषोक्तिः

63. 'सा तप्तकात्तस्वरभास्वराम्बर.. इति शिशुपालवधस्य श्लोकांशे 'कार्त्तस्वर' -पदस्य कोऽर्थः?
(A) रजतम् (B) ताम्रम्
(C) सुवर्णम् (D) स्फटिकम्

64. कस्य काव्यं 'विद्वदौषधं' कथ्यते?
(A) माघस्य (B) श्रीहर्षस्य
(C) कालिदासस्य (D) अश्वघोषस्य

65. "सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च|" इत्याद्युक्तिः केन सम्बद्धा?
(A) वेदलक्षणेन (B) ज्योतिषलक्षणेन
(C) महाकाव्यलक्षणेन (D) पुराणलक्षणेन

66. एषु कस्य देशस्य नाम हरिषेणस्य एलाहाबाद- शिलालेखे- नास्ति?
(A) समतटः (B) डवाकः
(C) कामरूपः (D) चीनः

67. अर्थशास्त्रकारमते विद्या कतिविधा?
(A) द्विविधा (B) त्रिविधा
(C) चतुर्विधा (D) पञ्चविधा

68. अर्थशास्त्रतः रिक्तं स्थानं पूरयत- "कृषिपशुपाल्ये वणिज्या च...
(A) वार्ता (B) आन्वीक्षिकी
(C) त्रयी (D) दण्डनीतिः

69. यस्य कथा रामायणाश्रिता नास्ति-
(A) रघुवंशस्य (B) भट्टिकाव्यस्य
(C) जानकीहरणस्य (D) किरातार्जुनीयस्य

70. 'जय' इति कस्य महाकाव्यस्य नामान्तरम्?
(A) रामायणस्य (B) महाभारतस्य
(C) रघुवंशस्य (D) शिशुपालवधस्य

71. मनुसंहितायां कस्य दुर्गस्य समाश्रयणं बहुधा प्रशंसितम्?
(A) धन्वदुर्गस्य (B) अब्दुर्गस्य
(C) महीदुर्गस्य (D) गिरिदुर्गस्य

72. मनुसंहितायां कति क्रोधजानि व्यसनानि?
(A) अष्टौ (B) नव
(C) दश (D) सप्त

73. "श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः।"- इति मनुसंहितायां कस्मिन्नध्याये उपलभ्यते?
(A) प्रथमाध्याये (B) द्वितीयाध्याये
(C) तृतीयाध्याये (D) सप्तमाध्याये

74. अभियोगे साक्ष्ये च दोषत्वेन न गण्यते-
(A) धनविकृतिः (B) कर्मविकृतिः
(C) मनोविकृतिः (D) वाग्विकृतिः

75. साक्षिगुणान्यतमो नास्ति-
(A) तपस्विता (B) सत्यवादिता
(C) कूटसाक्षिता (D) धनान्विता

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र दिसम्बर-2015

1. 'रोदसी' - पदस्य कोऽर्थः ?
(A) अन्तरिक्षम् (B) अहोरात्रे
(C) द्यावापृथिवी (D) रुद्रः

2. अधस्ताद्दत्तेषु कः वंशमण्डलेन सम्बद्धः नास्ति ?
(A) अत्रिः (B) गोतमः
(C) वामदेवः (D) विश्वामित्रः

3. पातञ्जलमहाभाष्यानुसारम् अथर्ववेदस्य शाखाः सन्ति
(A) 5 (B) 100
(C) 21 (D) 9

4. 'योऽसावादित्ये पुरुषः सोऽसावहम्'- इति वाक्यं कुत्र वर्तते ?
(A) ऋग्वेदे (B) अथर्ववेदे
(C) यजुर्वेदम् (D) सामवेदे

5. सायणाचार्यः सर्वप्रथमं कं वेदं व्याख्यातवान् ?
(A) यजुर्वेदम् (B) ऋग्वेदम्
(C) सामवेदम् (D) अथर्ववेदम्

6. द्युस्थानदेवता विद्यते
(A) इन्द्रः (B) सूर्यः
(C) विष्णुः (D) वायुः

7. 'त्रिष्टुप्'-छन्दसि कियन्तो वर्णाः भवन्ति ?
(A) 28 (B) 36
(C) 44 (D) 48

8. आश्वलायनगृह्यसूत्रं केन वेदेन सम्बद्धं विद्यते ?
(A) अथर्ववेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदेन

9. वाधूलश्रौतसूत्रं कस्य वेदस्य वर्तते ?
(A) सामवेदस्य (B) कृष्णयजुर्वेदस्य
(C) ऋग्वेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

10. श्रोत्रस्थानीयं वेदाङ्गं निरूपितमस्ति-
(A) निरुक्तम् (B) शिक्षा
(C) कल्पः (D) छन्दः

11. कठोपनिषदि नचिकेतसः पिता के यागमनुष्ठितवान् ?

(A) अश्वमेधयागम् (B) सर्वमेधयागम्
(C) सर्वजिद्यागम् (D) पितृमेधयागम्

12. माध्यन्दिनीयसंहितायां 'शतरुद्रीय-होममन्त्राः' कस्मिन् अध्याये समुक्ताः ?
(A) अष्टादशे (B) सप्तदशे
(C) पञ्चदशे (D) षोडशे

13. 'शतपथब्राह्मणस्य' आङ्ग्लानुवादः कृतो वर्तते -
(A) जी. थीबोमहोदयेन
(B) जे. एग्लिंगमहोदयेन
(C) एम. विलियम्समहोदयेन
(D) डब्लू, कैलेण्डमहोदयेन

14. विलुप्ता 'मौद' शाखा कस्य वेदस्य वर्तते ?
(A) सामवेदस्य (B) ऋग्वेदस्य
(C) अथर्ववेदस्य (D) शुक्लयजुर्वेदस्य

15. निर्वचनसिद्धान्त-प्रतिपादक वेदाङ्ग विद्यते
(A) कल्पशास्त्रम् (B) छन्दःशास्त्रम्
(C) शिक्षा (D) निरुक्तम्

16. सांख्यदर्शनानुसारं पुरुषस्वरूपेण सम्बद्धा उक्तिः अस्ति
(A) रूपैः सप्तभिरेव तु बध्नात्यात्मानमात्मना
(B) पुरुषस्य दर्शनार्थं, कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य
(C) तद्विपरीतस्तथा च पुमान्
(D) संसरति बध्यते मुच्यते च

17. अहङ्कारस्य उत्पत्तिः कुतः भवति ?
(A) महतः (B) प्रकृतेः
(C) पञ्चभूतेभ्यः (D) इन्द्रियेभ्यः

18. सांख्यदर्शनानुसारं प्रमाणानां संख्या अस्ति
(A) द्वौ (B) त्रयः
(C) चत्वारः (D) षड

19. सांख्यमते 'सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था' भवति
(A) पुरुषस्य (B) सृष्टेः
(C) प्रकृतेः (D) बुद्धेः

20. अनुबन्धचतुष्टये न गण्यते ।
(A) सम्बन्धः (B) विषयः
(C) चैतन्यम् (D) अधिकारी

21. वेदान्तसारानुसारम् 'अग्नेः' किम् उत्पद्यते ?
(A) आपः (B) पृथिवी
(C) वायुः (D) आकाशः

22. 'गुरूपदिष्टवेदान्तवाक्येषु विश्वासः' किं कथ्यते ?
(A) मुमुक्षुत्वम् (B) उपरतिः
(C) श्रद्धा (D) शमः

23. 'अज्ञानादिसकलजडसमूहः ' इति उच्यते
(A) वस्तु (B) अवस्तु
(C) अध्यारोपः (D) समष्टिः

24. न्यायदर्शनानुसारं किं प्रमाणरूपेण न स्वीक्रियते ?
(A) अनुमानम् (B) अर्थापत्तिः
(C) उपमानम् (D) शब्दः

25. 'सुखाद्युपलब्धिसाधनमिन्द्रियं किम् ?
(A) रसना (B) घ्राणम्
(C) मनः (D) चक्षुः

26. 'शक' इत्यत्र टिसंज्ञा कस्यांशस्य भवति ?
(A) 'क' इत्यस्य
(B) 'श' इत्यस्य
(C) ककारोत्तरवर्तिनः अकारस्य
(D) शकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य

27. 'सखन्' इत्यत्र उपधासंज्ञा कस्य भवति ?
(A) खकारोत्तरवर्तिनः 'अन्' इत्यस्य
(B) सकारस्य
(C) खकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य
(D) सकारोत्तरवर्तिनः अकारस्य

28. 'दिक्पूर्वपदादसंज्ञायां अः' इत्यनेन किं विधीयते ?
(A) टच् – प्रत्ययः (B) ञ्- प्रत्ययः
(C) पुंवद्भावः (D) एकवद्भावः

29. 'रूपवती भार्या यस्य' इत्यस्य समस्तपदं भवति
(A) रूपवतीभार्यः (B) रूपवतीभार्यम्
(C) रूपवद्भार्यः (D) रूपवद्भार्या

30. 'महांश्च असौ राजा' इत्यस्य समस्तपदं भवति
(A) महाराजः (B) महाराजम्
(C) महाराजा (D) महद्राजः

31. 'गवाम् अक्षि इव' इत्यत्र समस्तपदमस्ति
(A) गवाक्षी (B) गवाक्षा
(C) गवाक्षम् (D) गवाक्षः

32. उपकर्मप्रवचनीययोगे सप्तमी कस्मिन्नर्थे द्योत्येऽस्ति?
(A) हीने (B) अधिके
(C) वीप्सायाम् (D) स्वस्वामिभावे

33. 'अधि'-कर्मप्रवचनीययोगे सप्तमी कस्मन् अर्थे द्योत्ये अस्ति-
(A) हीने (B) अधिके
(C) वीप्सायाम् (D) स्वस्वामिभावे

34. अधस्तनयुग्मेभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या
(क) कर्तृकर्मणोः कृतिः (i) युक्तयोगः
(ख) निष्ठा (ii) शतस्य शरतं वा प्रतिदीव्यति
(ग) विभाषोपसर्गे (iii) वीरपुरुषको ग्रामः
(घ) अनेकमन्यपदार्थे (iv) जगतः कर्ता कृष्णः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)

(B) (i) (ii) (iii) (iv)
(C) (ii) (iv) (iii) (i)
(D) (ii) (i) (iv) (iii)

35. भाषाविज्ञानदृष्ट्या अर्धस्वरः कः ?
(A) य (B) श
(C) च (D) ढ

36. भाषाविज्ञानदृष्ट्या संघर्षी ध्वनिः कः ?
(A) ल (B) र
(C) श (D) ट

37. धा - धातोः 'दधाति' इति रूपं केन भाषावैज्ञानिक- नियमेन प्रतिपाद्यते ?
(A) ग्रासमैन-नियमेन (B) ग्रिम-नियमेन
(C) वर्नर-नियमेन (D) तालव्य-नियमेन

38. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -
(क) हर्षः (i) मुद्राराक्षसम्
(ख) भवभूतिः (ii) कर्णभारम्
(ग) विशाखदत्तः (iii) उत्तररामचरितम्
(घ) भासः (iv) रत्नावली

(क) (ख) (ग) (घ)
(A) (iii) (ii) (iv) (i)
(B) (iv) (iii) (i) (ii)
(C) (ii) (i) (iii) (iv)
(D) (i) (iv) (ii) (iii)

39. "हिणवमहुलोलुबो तुमं तह परिचुम्बि अ" इत्यादिसङ्गीतं भवति-
(A) हंसपदिकायाः (B) शकुन्तलायाः
(C) अनसूयायाः (D) प्रियंवदायाः

40."सतीमपि ज्ञातिकुलैकसंश्रयां जनोऽन्यथा भर्तृमतीं विशङ्कते" - कस्येयमुक्तिः ?
(A) दुष्यन्तस्य (B) शारद्वतस्य
(C) शाकरवस्य (D) कण्वस्य

41. विप्रलम्भश्रृङ्गारः अङ्गीरसः भवति अस्मिन् काव्ये
(A) रघुवंशे (B) मेघदूते
(C) शिशपालवधे (D) नैषधीयचरिते

42. "कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजखण्डम्" इत्यादि-पद्यं केन सम्बद्धम्?
(A) माघेन (B) कालिदासेन
(C) श्रीहर्षेण (D) भासेन

43. "व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः" इत्याद्युक्तिः किरातार्जुनीये भवति
(A) अर्जुनस्य (B) युधिष्ठिरस्य
(C) द्रौपद्याः (D) वनेचरस्य

44. 'श्रीकण्ठपदलाञ्छनः पदवाक्यप्रमाणज्ञः ' इति केन सम्बद्धम् ?
(A) भासेन (B) भवभूतिना
(C) श्रीहर्षेण (D) अश्वघोषेण

45. 'अमृतेनेव संसिक्ताः चन्दनेनेव चर्चिताः' - इत्युक्ति कं लक्षयति
(A) भासम् (B) बाणभट्टम्
(C) शूद्रकम् (D) कालिदासम्

46. लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति॥ उत्तररामचरिते कस्येयमुक्तिः ?
(A) अष्टावक्रस्य (B) लक्ष्मणस्य
(C) शम्बूकस्य (D) रामस्य

47."वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" ग्रहणं कृतम् इत्यत्र रसमध्ये कस्य
(A) केवलं रसस्य (B) केवलं भावस्य
(C) केवलं रसाभासस्य (D) रस-भाव-तदाभासादीनाम्

48. साहित्यदर्पणे साकल्येन लक्षणायाः कति भेदाः स्वीकृताः ?
(A) षोडश (B) चतुर्विंशतिः
(C) अशीतिः (D) अष्टचत्वारिंशत्

49."श्रवणाद्दर्शनाद्वापि मिथः संरूढरागयोः दशाविशेषो योऽप्राप्तौ ..स उच्यते ॥ रिक्तस्थानं साहित्यदर्पणतः पूरयत।
(A) पूर्वरागः (B) मानः
(C) प्रवासः (D) करुणविप्रलम्भः

50. साहित्यदर्पणानुसारं फलावाप्तौ अतित्वरान्वितः व्यापारः भवति
(A) आरम्भः (B) नियताप्तिः
(C) प्राप्त्याशा (D) प्रयत्नः

नेट तृतीय प्रश्नपत्र दिसम्बर-2015

1. दानस्तुतिसूक्तानि संहितायां सन्ति
(A) काण्वसंहितायाम् (B) तैत्तिरीयसंहितायाम्
(C) ऋग्वेदसंहितायाम् (D) माध्यन्दिनसंहितायाम

2. ऋग्वेदीयषष्ठमण्डलस्य ऋषिः वर्तते -
(A) भरद्वाजः (B) वामदेवः
(C) वसिष्टः (D) विश्वामित्रः

3. 'बृहदारण्यकम्' कस्य वेदस्य वर्तते ?
(A) सामवेदस्य (B) यजुर्वेदस्य
(C) ऋग्वेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

4. 'आग्नीध्र' - नामा ऋत्विक् कस्य गणस्य वर्तते ?
(A) ब्रह्मगणस्य (B) अध्वर्युगणस्य
(C) होतृगणस्य (D) उद्गातृगणस्य

5. 'सुमन्तु' - ऋषये व्यासः कं वेदं प्रोक्तवान् ?

(A) यजुर्वेदम् (B) ऋग्वेदम्
(C) अथर्ववेदम् (D) सामवेदम्

6. दर्शपौर्णमासेष्टियागे प्रयाजानां संख्या विद्यते
(A) एकादश (B) पञ्च
(C) त्रयः (D) नव

7. याज्ञवल्क्यशिक्षानुसारं कति विवृत्तयः ?
(A) चतस्रः (B) तिस्रः
(C) पञ्च (D) षट्

8. ऋक्संहितायाः समुपलब्धेषु भाष्येषु प्रथमो भाष्यकारः वर्तते –
(A) आनन्दतीर्थः (B) सायणः
(C) स्कन्दस्वामी (D) वेङ्कटमाधवः

9. वैदिकस्वरप्रक्रियायाः वृत्तिकारः कः ?
(A) भट्टोजिदीक्षितः (B) पाणिनिः
(C) पतञ्जलिः (D) कात्यायनः

10. 'ब्राह्मणसर्वस्व' - नामकं वेदभाष्यं केन विरचितम् ?
(A) हरिस्वामिना (B) हलायुधेन
(C) गुणविष्णुना (D) उवटेन

11. 'वाक्सूक्तम्' ऋग्वेदस्य कस्मिन् मण्डले विद्यते ?
(A) दशमे (B) पञ्चमे
(C) अष्टमे (D) सप्तमे

12. ऋग्वेदसंहिताया आंग्लपद्यानुवादकः वैदेशिकः विद्वान् वर्तते -
(A) एच. विल्सनः (B) ए.ए. मैक्डानलः
(C) आर.टी.एच. ग्रीफिथः (D) विलियम-कैलेण्डः

13. सामविकाराः परिगणिताः सन्ति
(A) सप्त (B) चत्वारः
(C) त्रयः (D) षट्

14. 'पदक्रमसदन' - नामकं भाष्यं कस्य प्रातिशाख्यस्य विद्यते ?
(A) वाजसनेयप्रातिशाख्यस्य
(B) ऋक्प्रातिशाख्यस्य
(C) अथर्वप्रातिशाख्यस्य
(D) तैत्तिरीयप्रातिशाख्यस्य

15. पाणिनीयशिक्षायां कति श्लोकाः सन्ति ?
(A) चतुःषष्ठीः (B) त्रिषष्ठीः
(C) षष्ठीः (D) सप्ततिः

16. 'मघवा' देवः कः ?
(A) इन्द्रः (B) विष्णुः
(C) वरुणः (D) हिरण्यगर्भः

17. 'यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात्' अस्य मन्त्रस्य द्रष्टा ऋषिः कः ?
(A) विश्वामित्रः (B) मधुच्छन्दा
(C) गृत्समदः (D) इन्द्रः

18. ऋग्वेदस्य शाकलसंहितायां कति सन्ध्यक्षराणि स्वीकृतानि ?
(A) एकम् (B) द्वे
(C) चत्वारि (D) त्रीणि

19. 'इष्टप्राप्त्यनिष्टपरिहारयोरलौकिकमुपायं यो ग्रन्थो वेदयति स वेदः' - इति लक्षणं कस्य ?
(A) महीधरस्य (B) लौगाक्षिभास्करस्य
(C) सायणस्य (D) पारस्करस्य

20. 'वाधूलशुल्वसूत्रम्' केन वेदेन सम्बद्धमस्ति ?
(A) अथर्ववेदेन (B) सामवेदेन
(C) ऋग्वेदेन (D) यजुर्वेदेन

21. 'विलोहितः' इति कस्याः देवतायाः विशेषणम् अस्ति ?
(A) विष्णोः (B) वायोः
(C) रुद्रस्य (D) इन्द्रस्य

22. 'छन्दःसूत्रम्' इति वेदाङ्गग्रन्थस्य प्रणेता विद्यते
(A) हलायुधः (B) पिङ्गलः
(C) लगधः (D) भरतः

23. यास्कीयनिरुक्तग्रन्थे काण्डानि विद्यन्ते
(A) पञ्च (B) त्रीणि
(C) सप्त (D) नव

24. 'भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधिवाचि' इति पंक्तिः कस्मिन् प्रसङ्गे महाभाष्ये उद्धृता ?
(A) शब्दपरिभाषाप्रसङ्गे
(B) व्याकरणाध्ययनप्रयोजनप्रसङ्गे
(C) शब्दार्थसम्बन्धप्रसङ्गे
(D) व्याकरणलक्षणप्रसङ्गे

25. 'लोटो लङ्वत्' इति सूत्रेण अधोलिखितविकल्पमात्रेषु किमभिप्रेतम् ?
(A) अडागमः (B) आडागमः
(C) ह्यादेशः (D) सलोपः

26. 'इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः' इति सूत्रेण किं विधीयते ?
(A) आम्प्रत्ययः (B) लुक्
(C) कृञाद्यनुप्रयोगः (D) सलोपः

27. अधोऽङ्कितयुग्मभ्यः समीचीना तालिका चेतव्या
(क) कृत्यानां कर्तरि वा (i) दण्डिकः
(ख) उगितश्च (ii) मम मया वा सेव्यो हरिः
(ग) ई च खनः (iii) भवती
(घ) अत इनि-ठनौ (iv) खेयम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(ii)	(iii)	(iv)	(i)
(B)	(ii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(i)	(iii)	(iv)	(ii)
(D)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)

28. दन्तुरः' इत्यत्र कः प्रत्ययः ?

(A) र (B) अच्
(C) इरच् (D) उरच्

29.'सुमुखा शाला' इत्यत्र स्वाङ्गलक्षणङीष् कथं न ?
(A) अप्राणिस्थत्वात् (B) अमूर्तत्वात्
(C) विकारजत्वात् (D) द्रवत्वात्

30. 'शत्रुमधिकुरुते' इत्यत्र क्रियापदे आत्मनेपदविधायकं सूत्रं किम्?
(A) वे: शब्दकर्मणः (B) अकर्मकाच्च
(C) अधेः प्रहसने (D) उपपराभ्याम्

31.अध्यापयति वेदम्' इत्यत्र क्रियापदे परस्मैपदविधायक सूत्रं किम्
(A) विभाषाऽकर्मकात्
(B) निगरणचलनार्थेभ्यश्च
(C) परेम्मृषः
(D) बुधयुधनशजनेङ् प्रदुसुश्यो णेः

32. 'एको निमित्तं शब्दानामपरोऽर्थे प्रयुज्यते' इति पंक्तिः कुत्र उपलभ्यते ?
(A) महाभाष्ये (B) वाक्यपदीये
(C) पाणिनिशिक्षायाम् (D) अष्टाध्याय्याम्

33. 'शास्त्रानुपूर्व तद्विद्यात् यथोक्तं लोकवेदयोः'इति पंक्तिः कस्मिन् ग्रन्थे उपलभ्यते ?
(A) पाणिनिशिक्षायाम् (B) अष्टाध्याय्याम्
(C) वाक्यपदीये (D) महाभाष्ये

34. संस्कृतभाषाध्वनिसन्दर्भेऽधोलिखितेषु 'अर्धस्वरः' कः ?
(A) क (B) ष
(C) म (D) व

35. अर्थविस्तारोदाहरणेष्वन्यतमो नास्ति
(A) तैलम् (B) मुग्धः
(C) गौः (D) सभ्यः

36. अर्थसङ्कोचोदाहरणेष्वन्यतमो नास्ति
(A) जलदः (B) वत्सः
(C) मनुष्यः (D) नासिकाविवरः

37. ध्वनिवैज्ञानिकैः करणत्वेन किं स्वीक्रियते ?
(A) मृदुतालुः (B) सभ्यः
(C) ऊर्वोष्ठः (D) पंकजम्

38. "सा च त्रिविधा- विधात्री, अभिधात्री विनियोक्त्री च' इत्यत्र 'सा' का ?
(A) वैदिकी समाख्या (B) श्रुतिः
(C) लौकिकी समाख्या (D) शब्दशक्तिः

39. अर्थसंग्रहानुसारं 'शाब्दीभावना' इत्यनेन कः अभिप्रायः ?
(A) अपौरुषेयवाक्यम्
(B) समभिव्यवहारः
(C) पुरुषप्रवृत्यनुकूलो भावयितुव्यापारविशेषः
(D) प्रयोजनेच्छाजनितक्रियाविषयव्यापारः

40. अर्थसंग्रहानुसारं विधिश्चतुर्विधः - उत्पत्तिविधिः, विनियोगाविधिः अधिकारविधिः--
(A) नियमविधिः (B)प्रयोगविधिः
(C) यज्ञविधिः (D) परिसङ्ख्याविधिः

41 योगदर्शनानुसारं कः 'योगाङ्गैः'सह सम्बद्धः न अस्ति ?
(A) विकल्पः (B) नियमः
(C) प्रत्याहारः (D) प्राणायामः

42. 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' इत्यत्र 'अथ' शब्दः कस्मिन् अर्थे अस्ति
(A) हेत्वर्थे (B) अधिकारार्थं
(C) अन्वयार्थं (D) आनन्तर्यारथे

43. 'व्याप्यस्य पक्षधर्मत्वधीः' इति किम् ?
(A) परामर्शः (B) अनुमितिः
(C) पक्षता (D) प्रतिज्ञा

44. जैनदर्शनानुसारं 'सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरित्राणि--
(A) जीवः (B) मोक्षमार्गः
(C) मनःपर्यायः (D) मोक्षः

45.'सर्वं शून्यम्' इति केन बौद्धसम्प्रदायेन स्वीकृतम् ?
(A) माध्यमिकेन (B) सौत्रान्तिकेन
(C) योगाचारेण (D) वैभाषिकेन

46. तर्कसंग्रहानुसारं 'संस्कारमात्रजनकं ज्ञानम्' अस्ति
(A) अनुभवः (B) यथार्थः
(C) स्मृतिः (D) प्रमाणम्

47. तर्कसंग्रहानुसारं शब्दसाक्षात्कारे कः सन्निकर्षः ?
(A) समवायः (B) संयोगः
(C) समवेतसमवायः (D) विशेषण-विशेष्यभाव

48." श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्' इति वार्ता केन सम्बद्धा ?
(A) माघेन (B) भारविणा
(C) श्रीहर्षेण (D) भासेन

49."नन्दोन्मूलनदृष्टवीर्यमहिमा बुद्धिस्तु मा गान्मम"मुद्राराक्षसे कस्येयमुक्तिः ?
(A) चन्द्रगुप्तस्य (B) चाणक्यस्य
(C) राक्षसस्य (D) चन्दनदासस्य

50. समीचीनां तालिकां चिनुत -

(क) अभिज्ञानशाकुन्तलम्	(i) उत्तरामचरितम्
(ख) तीर्थोदकश्च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः	(ii) श्रीहर्षो निपुणः कविः
(ग) रत्नावली	(iii) हर्षचरितम्
(घ) परिवर्तमानः एकः कालः शैलानिवानन्तः	(iv) श्रद्धा वित्तं विधिश्चेति त्रितयं तत् समागतम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(i)	(ii)	(iii)

(B) (ii) (iii) (iv) (i)
(C) (iv) (ii) (iii) (i)
(D) (i) (ii) (iii) (iv)

51. अभिज्ञानशाकुन्तले षष्ठाङ्कगतः धीवरवृत्तान्तः कस्य उदाहरणं भवति ?
(A) प्रवेशकस्य (B) विष्कम्भकस्य
(C) अङ्कावतारस्य (D) प्रस्तावनायाः

52. "तीव्राघातप्रतिहततरुः स्कन्धलग्नैकदन्तः" - केन छन्दसा विनिर्मितोऽयं श्लोकपादः ?
(A) हरिणी (B) शिखरिणी
(C) मन्दाक्रान्ता (D) मालिनी

53. "शरीरभाजां भवदीयदर्शनं व्यनक्तिकालत्रितयेऽपि योग्यताम्" – शिशुपालवधे कस्य प्रशंसेयम् ?
(A) नारदस्य (B) श्रीकृष्णस्य
(C) वसुदेवस्य (D) बलरामस्य

54. "ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः ।
गुणा गुणानुबन्धित्वात् तस्य सप्रसवा इव ।॥ "कस्य गुणाः- श्लोकेऽस्मिन् उल्लिखिताः ?
(A) रघोः (B) रामस्य
(C) अजस्य (D) दिलीपस्य

55. "पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः ' " – उत्तररामचरिते उक्तिरियं भवति
(A) सीतायाः (B) मुरलायाः
(C) तमसायाः (D) वासन्त्याः

56. रत्नावल्याः मङ्गलाचरणस्य प्रथमे श्लोके कस्य स्तुतिः प्राप्यते ?
(A) विष्णोः (B) ब्रह्मणः
(C) शिवस्य (D) गणेशस्य

57. पुण्यवर्मा कस्य देशस्य राजा आसीत् दशकुमारचरिते ?
(A) विदर्भस्य (B) वाराणस्याः
(C) गौडस्य (D) मगधस्य

58. मम्मटमते कति काव्यगुणाः ?
(A) दश (B) पञ्च
(C) त्रयः (D) अष्टौ

59. ध्वन्यालोकतः रिक्तं स्थानं पूरयत - "यत्नतः- तौ शब्दार्थौ महाकवेः।"
(A) अवगन्तव्यौ (B) प्रत्यभिज्ञेयौ
(C) परिहर्तव्यो (D) संस्मरणीयो

60. दशरूपकानुसारं फलस्याप्राप्तावुपाययोजनादिरूप- चेष्टाविशेषः भवति
(A) आरम्भः (B) प्रयत्नः
(C) प्राप्त्याशा (D) नियताप्तिः

61. शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात् । इति हेतुस्तदुद्भवे ॥ काव्यप्रकाशतः रिक्तस्थानं पूरयत।
(A) काव्यज्ञशिक्षयाभ्यासः
(B) लोकत्त्वानुशीलनम्
(C) रसभावयोश्चिन्तनम्
(D) भावाभासस्य चिन्तनम्

62. काव्यप्रकाशे उपमानोपमेययोः विपर्यासे कोऽलङ्कारः ?
(A) अनन्वयः (B) विभावना
(C) विशेषोक्तिः (D) उपमेयोपमा

63. कालक्रमानुसारेण तालिकां चिनुत :
(A) अप्पयदीक्षितः (B) भरतः
(C) आनन्दवर्धनः (D) दण्डी
(A) (a) (b) (c) (d)
(B) (b) (c) (a) (d)
(C) (c) (a) (b) (d)
(D) (b) (d) (c) (a)

64. "दोषा गुणा-गुणा दोषा यत्र स्युर्मृदवं हि तत् दशरूपके कस्मिन् प्रसङ्गे इयमुक्तिः ?
(A) वीथ्यङ्गप्रसङ्गे (B) नृत्यलक्षणप्रसङ्गे
(C) सन्धिभेदप्रसङ्गे (D) प्रहसनलक्षणप्रसङ्गे

65. "न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।" इत्यादि-श्लोकः भवति
(A) काव्यप्रशंसा (B) गुणप्रशंसा
(C) नाट्यप्रशंसा (D) अलङ्कारप्रशंसा

66. "तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना। अन्तः संज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः ॥" इति मनुवचनं केन सम्बद्धम् ?
(A) अण्डजेन प्राणिना
(B) उद्भिदा
(C) स्वेदजेन प्राणिना
(D) जरायुजेन प्राणिना

67. मनुसंहितातः रिक्तं स्थानं पूरयत "नृपतौ कोषराष्ट्रे च – सन्धिविपर्ययौ।"
(A) अमात्ये (B) दूते
(C) सेनापतो (D) मन्त्रिणि

68. कस्मिन् पुराणे 'काशी-खण्डः' समुपलभ्यते ?
(A) लिङ्गपुराणे (B) शिवपुराणे
(C) ब्रह्माण्डपुराणे (D) स्कन्दपुराणे

69. याज्ञवल्क्यस्मृत्यनुसारं रिक्तस्थानं पूरयत-
"स्मृत्योर्विरोधे न्यायस्तु बलवान् व्यवहारतः।
अर्थशास्त्रात्तु बलबद् --इति स्थितिः॥'
(A) धर्मशास्त्रम् (B) राजादेशः
(C) नृपस्येच्छा (D) नीतिशास्त्रम्

70. याज्ञवल्क्यस्मृत्यनुसारेण सबन्धके ऋणे मासि मासि वृद्धिः

भवति-

(A) पञ्चाशद्भागः (B) अशीतिभागः

(C) त्रिंशद्भागः (D) विंशोभागः

71. श्रीमद्भगवद्गीतायाः विश्वरूपदर्शनयोगः अस्ति

(A) दशमेऽध्याये (B) एकादशेऽध्याये

(C) प्रथमाध्याये (D) त्रयोदशाध्याये

72.'शतसाहस्त्रीसंहिता' इति कस्य अपरं नाम ?

(A) रामायणस्य (B) भविष्यपुराणस्य

(C) स्कन्दपुराणस्य (D) महाभारतस्य

73. रामायणस्य श्लोकसंख्या भवति

(A) 31000- 40000

(B) 22000- 25000

(C) 11000- 15000

(D) 5000- 10000

74. हरिषेणविरचिते इलाहाबादशिलालेखे 'कविराज' इत्युपाधिः भवति ।

(A) चन्द्रगुप्तस्य (B) अशोकस्य

(C) समुद्रगुप्तस्य (D) स्कन्दगुप्तस्य

75. अर्थशास्त्रे आन्वीक्षिकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो भवति ।

(A) साम (B) दानम्

(C) भेदः (D) दण्डः

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जुलाई-2016

1. वाजसनेग्रिमाध्यन्दिनसंहिता सम्बन्धिता अस्ति-

(A) कृष्णयजुर्वेदेन (B) शुक्लयजुर्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

2. वेदा अपौरुषेयाः सन्तीति मतमस्ति-

(A) महर्षिदयानन्दस्य

(B) ए. वेबरस्य

(C) मैक्समूलरस्य

(D) विन्टरनिट्जस्य

3. वैतानश्रौतसूत्रं केन वेदेन सह सम्बद्धमस्ति?

(A) सामवेदेन (B) ऋग्वेदेन

(C) अथर्ववेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

4. 'स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये ॥' अस्य मन्त्रस्य का देवता अस्ति?

(A) रुद्रः (B) अग्निः

(C) सोमः (D) सविता

5. मुण्डकोपनिषत् केन वेदेन सह सम्बद्धा अस्ति ?

(A) यजुर्वेदेन (B) अथर्ववेदेन

(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदेन

6. 'षड्विंशब्राह्मणम्' इति ग्रन्थः बेन वेदेन सह सम्बद्धोऽस्ति?

(A) यजुर्वेदेन (B) यजुर्वेदेन

(C) अथर्ववेदेन (D) सामवेदेन

7. 'तलवकार-आरण्यकम्' केन वेदेन सह सम्बद्धमस्ति ?

(A) ऋग्वेदेन (B) ऋग्वेदेन

(C) अथर्ववेदेन (D) सामवेदेन

8.'विश्वामित्र-नदी' सूक्तस्य कः ऋषिरस्ति?

(A) वसिष्ठः (B) विश्वामित्रः

(C) मधुच्छन्दाः (D) दीर्घतमाः

9. 'पुरूरवा-उर्वशी' सूक्ते कति मन्त्राः सन्ति?

(A) 17 (B) 18

(C) 19 (D) 20

10. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत :

(क) यम-यमी-संवादसूक्तम् (i) यजुर्वेदः

(ख) कठोपनिषद् (ii) सामवेदः

(ग) लाट्यायनश्रौतसूत्रम् (ii) ऋग्वेदः

(घ) माण्डूक्योपनिषद् (iv) अथर्ववेदः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(B)	(iv)	(i)	(iii)	(ii)
(C)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(D)	(iii)	(i)	(ii)	(iv)

11. अधस्तनेषु को ग्रन्थः कल्पवेदाङ्गान्तर्गतोऽस्ति?

(A) पारस्करगृह्यसूत्रम्

(B) काशकृत्स्नव्याकरणम्

(C) ऋग्वेदप्रातिशासख्यम्

(D) पाणिनीयशिक्षा

12. अधोऽङ्कितेषु वेदाङ्गमस्ति-

(A) ईशोपनिषद् (B) ऐतरेयारण्यकम्

(C) मानवशुल्वसूत्रम् (D) शतपथब्राह्मणम्

13. 'अधिवसति वैकुण्ठं हरिः ' इत्यत्र कर्मसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?

(A) उपान्वध्याङ्वसः

(B) अधि-शीङ्-स्थाऽऽसां कर्म

(C) अधिरीश्वरे

(D) अधिपरी अनर्थकौ

14. 'इत्थम्भूतलक्षणे' इति सूत्रस्योदाहरणं किम्भवति?

(A) जटाभिस्तापसः

(B) जपमनु प्रावर्षत्

(C) मासं कल्याणी

(D) लक्षणेत्थम्भूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः

15. 'अधिगोपम्' इत्यत्राव्ययीभावसमासः कस्मिन्नर्थे भवति?
(A) समीपार्थे (B) अत्ययार्थे
(C) विभक्त्यर्थे (D) साकल्यार्थे

16. व्यधिकरणबहुव्रीहिसमासे किं ज्ञापकम् ?
(A) 'अनेकमन्यपदार्थे, इत्यत्र 'अनेक' ग्रहणम्
(B) 'हलदन्तात् सप्तम्याः सञ्ज्ञायाम्' इत्यत्र 'संज्ञायाम्'-इत्यस्य ग्रहणम्
(C) 'सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ' इत्यत्र 'सप्तमी त्यस्य ग्रहणम्
(D) 'शेषो बहुव्रीहिः ' इत्यत्र 'शेष' ग्रहणम्

17. वर्णानामतिशयितः सन्निधिः को भवति?
(A) 'घिसञ्ज्ञः (B) उपधासञ्ज्ञः
(C) निष्ठासञ्ज्ञः (D) संहितासञ्ज्ञः

18. अधोलिखितेषु कस्य सर्वनामस्थानसञ्ज्ञा भवति?
(A) टा' इत्यस्य (B) 'ङे' इत्यस्य
(C) 'शि' इत्यस्य (D) 'ङि' इत्यस्य

19. 'निमित्तात् कर्मयोगे' इत्यत्र 'ग्ोग' शब्दस्य भट्टोजिदीक्षितमते कोऽर्थः ?
(A) चित्तवृत्तिनिरोधः
(B) संयोगसम्बन्धः केवलम्
(C) संयोग-समवायसम्बन्धौ
(D) स्वरूपसम्बन्धः

20.आधि रामे भूः इत्यात्र 'अधि' शब्दस्य कर्मप्रवचनीयसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?
(A) अधिरीश्वरे (B) उपोऽधिके च
(C) अधि-परी अनर्थकौ (D) हीने

21. को ध्वनिः अघोषमहाप्राणः अस्ति?
(A) घ् (B) छ्
(C) ज् (D) द्

22. ग्रिमनियमानुसारं संस्कृतस्य 'क्,त्,प्' इति ध्वनयः जर्मनभाषायां केषु ध्वनिषु परिवर्तिताः?
(A) च,छ,ज् (B) ख,थ,फ्
(C) ग,द.ब् (D) ऊष्मसु

23. संस्कृतभाषा कीदृशी अस्ति?
(A) श्लिष्टयोगात्मिका (B) प्रश्लिष्टयोगात्मिका
(C) अयोगात्मिका (D) अश्लिष्टयोगात्मिका

24. ग्रीकभाषा कस्य भाषापरिवारस्य भाषा अस्ति-
(A) सैमेटिकपरिवारस्य (B) बान्टूपरिवारस्य
(C) भारोपीयपरिवारस्य (D) काकेशीपरिवारस्य

25. संस्कृतस्य 'शतम् ' इत्यस्य कृते 'केन्तुम् ' इत्ययं शब्दः कस्यां भाषायां विद्यते?
(A) लैटिनभाषायाम् (B) ग्रीकभाषायाम्
(C) जर्मनभाषायाम् (D) ईरानीभाषायाम्

26. सिन्धीभाषायाः विकासः कस्याः प्राकृतभाषायाः अभवत्?
(A) शौरसेनी-प्राकृतात् (B) पैशाची-प्राकृतात्
(C) मागधी -प्राकृतात् (D) अर्धमागधी-प्राकृतात्

27. सत्कार्यवादस्य सिद्धिः कस्माद् हेतोः न भवति ?
(A) असदकरणात्
(B) सर्वस्मात् सर्वसम्भवात्
(C) शक्तस्य शक्यकरणात्
(D) कारणभावात्

28. प्रधानपुरुषयोः को धर्मः समानः?
(A) त्रिगुणत्वम् (B) अहेतुत्वम्
(C) सामान्यत्वम् (D) अचेतनत्वम्

29. अव्यक्तं कस्माद् हेतोः कारणं भवति?
(A) नित्यत्वात् (B) परिमाणवत्त्वात्
(C) चैतन्यात् (D) निष्क्रियत्वात्

30. प्रकृतिपुरुषयोः सम्बन्धः कीदृशो भवति?
(A) जलाग्निवत् (B) कार्यकारणवत्
(C) मातृपुत्रवत् (D) पङ्ग्वन्धवद्

31. अध्यारोपः किं भवति?
(A) मिथ्याज्ञानम् (B) अस्पष्टं ज्ञानम्
(C) यथार्थज्ञानम् (D) वस्तुनि अवस्त्वारोपः

32. आवरणम् कस्य शक्तिरस्ति?
(A) रजोगुणस्य (B) अज्ञानस्य
(C) जीवस्य (D) चैतन्यस्य

33. वेदान्तसारानुसारं लिङ्गशरीरे कस्य गणना न भवति?
(A) बुद्धेः (B) मनसः
(C) प्राणस्य (D) आकाशस्य

34. गौतमसूत्रोक्तषोडशपदार्थेषु कस्य पदार्थस्य निम्नाङ्कितेषु ग्रहणं नास्ति?
(A) 'संशय' पदार्थस्य (B) 'विशेष' पदार्थस्य
(C) 'अवयव' पदार्थस्व (D) 'निर्णय' पदार्थस्य

35. 'मृत्पिण्डः घटस्य कीदृशं कारणमुच्यते?
(A) निमित्तकारणम्
(B) समवायिकारणम्
(C) असमवायिकारणम्
(D) समवाय्यसमवायिकारणम्

36. यदा चक्षुरादिना घटगतरूपादिकं गृह्यते तदाऽनयोरिन्द्रि-यार्थसन्निकर्षः कः?
(A) संयोगः (B) समवायः
(C) संयुक्तसमवायः (D) समवेतसमवायः

37. 'जीवच्छरीरं सात्मकं प्राणादिमत्त्वात्' कीदृशो हेतुः ?
(A) केवलान्वयी (B) केवलव्यतिरेकी
(C) अन्वय-व्यतिरेकी (D) असद्धेतुः

38. 'साध्याभावसाधकं हेत्वन्तरं यस्य विद्यते सः
'हेत्वाभासोऽत्रम्भट्टेन केन नाम्ना प्रोक्तः?
(A) 'सत्प्रतिपक्ष' नाम्ना (B) 'असिद्ध' नाम्ना
(C) 'सव्यभिचार' नाम्ना (D) 'विरुद्ध' नाम्ना

39. तर्कसंग्रहे तर्कलक्षणं किमुक्तम् ?
(A) मिथ्याज्ञानम्
(B) व्याप्यारोपेण व्यापकारोपः
(C) सन्निकृष्टसंयोगहेतुः
(D) एकस्मिन् धर्मिणि विरुद्ध-नानाधर्मवैशिष्ट्यावगाहि ज्ञानम्

40. अभावप्रत्यक्षे अन्नम्भट्टानुसारं कः सन्निकर्षोऽङ्गीकृतः?
(A) विशेषण-विशेष्यभावः (B) समवायः
(C) संयुक्तसमवेत-समवायः (D)संयोगः

41. गन्धवत्त्वं कस्य लक्षणम् ?
(A) अपः (B) पृथिव्याः
(C) वायोः (D) अग्नेः

42. कविराजराजिमुकुटालङ्कारहीरः मामल्लदेवी च कस्य पितरौ?
(A) भासस्य (B) श्रीहर्षस्य
(C) दण्डिनः (D) भारवेः

43. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत
(क) श्रीहर्षः (i) हर्षचरितम्
(ख) दण्डी (ii) मुद्राराक्षसम्
(ग) वाणभट्टः (ii) नैषधीयचरितम्
(घ) विशाखदत्तः (iv) दशकुमारचितम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(D)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)

44. दशकुमारचरितस्य नायकः कः ?
(A) राजहंसः (B) उपहारवर्मा
(C) राजवाहनः (D) अपहारवर्मा

45. विश्वनाथमतानुसारं वीररसः कतिविधः?
(A) द्विविधः (B) त्रिविधः
(C) पञ्चविधः (D) चतुर्विधः

46. बृहत्त्रय्यां न गण्यते-
(A) नैषधीयचरितम् (B) रघुवंशम्
(C) किरातार्जुनीयम् (D) शिशुपालवधम्

47. गद्यकाव्यं नास्ति-
(A) कादम्बरी (B) दशकुमारचरितम्
(C) बुद्धचरितम् (D) हर्षचरितम्

48. केन कविना बौद्धधर्मस्य प्रचारार्थं काव्यानि लिखितानि?
(A) कालिदासेन (B) माधेन
(D) भवभूतिना (C) अश्वघोषेण

49. नैषधीयचरिते कति सर्गाः सन्ति?
(A) एकोनविंशतिः (B) द्वाविंशतिः
(C) अष्टाविंशतिः (D) चतुर्विंशतिः

50. किरातार्जुनीयमहाकाव्यस्य कथावस्तु कुतः गृहीतम्?
(A) महाभारतस्य आदिपर्वतः
(B) महाभारतस्य भीष्मपर्वतः
(C) महाभारतस्य वनपर्वतः
(D) रामायणमहाकाव्यात्

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जुलाई-2016

1. ऋग्वेदीय-नासदीयसूक्तस्य (10.129) ऋषिरस्ति -
(A) प्रजापतिः परमेष्ठी (B) सुकीर्तिः काक्षीवतः
(C) यज्ञः प्राजापत्यः (D) कुल्मलबर्हिषः

2. अथर्ववेदस्य पृथिवीसूक्ते (12.1) कति मन्त्राः सन्ति?
(A) 23 (B) 33
(C) 53 (D) 63

3. सृष्ट्युत्पत्तिविषयकं सूक्तमस्ति ऋग्वेदे-
(A) पुरुषसूक्तम् (B) अग्निसूक्तम्
(C) इन्द्रसूक्तम् (D) वाक्सूक्तम्

4. 'शुनःशेपम्' इत्याख्यानं कस्मिन् ग्रन्थे प्राप्यते?
(A) कौधीतकिब्राह्मणग्रन्थे
(B) ऐतरेयब्राह्मणग्रन्थे
(C) सामविधानब्राह्मणग्रन्थे
(D) ऐतरेयारण्यकग्रन्थे

5. महर्षिणा दयानन्देन कस्य वेदस्य भाष्यं कृतमस्ति ?
(A) पैप्पलादसंहितायाः
(B) शौनकसंहितायाः
(C) काण्वसंहितायाः
(D)वाजसनेयिमाध्यन्दिनसंहितायाः

6. 'शतायुषः पुत्रपौत्रान् वृणीष्व बहून् पशून् हस्ति- हिरण्यमश्वान्'
इति कथनमस्ति-
(A) वाजश्रवसः (B) नचिकेतसः
(C) यमराजस्य (D) याज्ञवल्क्यस्य

7. अधोऽङ्कितेषु एकमसत्यमस्ति -
(A) विद्यां च अविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह' इति ईशोपनिषदि कति।
(B) ईशोपनिषद् तैत्तिरीयशासखायाः वर्तते।
(C) याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी-संवादो बृहदारण्यकोपनिषदि वर्तते।
(D) नचिकेतसः वर्णनं कठोपनिषदि वर्तते।

8. (क) 'शिक्षावल्ली' कठोपनिषदि वर्तते।

(ख) शिक्षावल्यां गुरुसम्बन्धितो व्यवहारो निरूपितः। अनयोः कथनयोर्विषये उचितं युग्मं चिनुत।

(A) (क) असत्यम् (ख) सत्यम्

(B) (क) सत्यम् (ख) असत्यम्

(C) उभे सत्ये स्तः।

(D) उभे असत्ये स्तः।

8. 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' इत्युद्धरणं कुत्र वर्तते?

(A) केनोपनिषदि (B) कठोपनिषदि

(C) तैत्तिरीयोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

10. अधोलिखितानां केन सह कस्य सम्बन्धः ? इति समीचीनां तालिकां चिनुत।

(क) मा गृधः कस्यस्विद्धनम् (i) केनोपनिषद्

(ख) उमाया उपदेशः (ii) बृहदारण्यकोपनिषद्

(ग) अथ शीक्षां व्याख्यास्यामः (iii) ईशोपनिषद्

(घ) आत्मा वाऽरे द्रष्टव्यो मन्तव्यः- श्रोतव्यो निदिध्यासितव्यः। (iv) तैत्तरीयोपनिषद्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(B)	(iv)	(i)	(iii)	(ii)
(C)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(D)	(iii)	(i)	(iv)	(ii)

11. षड्वेदाङ्गेषु किं न गण्यते?

(A) निरुक्तम् (B) छन्दस्

(C) मीमांसा (D) कल्पः

12. यास्कमते पदानां प्रकाराः कति भवन्ति?

(A) चत्वारः (B) पञ्च

(C) द्वौ (D) षड्

13. षड्भावविकारेषु कतमो नास्ति?

(A) जायते (B) नश्यति

(C) वर्धते (D) स्मरति

14. याज्ञवल्क्यशिक्षा केन वेदेन सम्बद्धा अस्ति -

(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

15. 'नैगमकाण्डम्' कस्मिन् ग्रन्थे वर्तते?

(A) आपस्तम्बगृह्यसूत्रे (B) निरुक्ते

(C) गौतमधर्मसूत्रे (D) बौधायनधर्मसूत्रे

16. 'सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धो' इति भाष्यवात्ति वेत नित्यपर्यायवाची 'सिद्ध' शब्द एवोपात्तो, न त्वसन्दिग्धो 'नित्य' शब्दस्तत्र को हेतुः?

(A) अवधारणार्थे 'सिद्ध' शब्दप्रयोगात्

(B) पूर्वपदलोप-परकस्य 'सिद्ध' शब्दस्य प्रयोगात्

(C) व्याख्यानतो विशेषप्रतिपत्तेः 'सिद्ध'शब्दस्य नित्यार्थकत्वात्

(D) नित्यपर्यायिणः 'सिद्ध' शब्दस्य मङ्गलार्थत्वादपि

17. 'वृत्तिसमवायार्थौ वर्णानामुपदेशः' इत्यत्र 'समवाय शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) नित्यसम्बन्धः

(B) समूहः

(C) वर्णानामानुपूर्व्येण सन्निवेशः

(D) वृत्तिनिबामकसम्बन्धः

18. अधोलिखितप्रयोगेषु 'इणः षीध्वं-लुङ् –लिटां धोऽङ्गात्' इति भ्वादिगणीयसूत्रस्योदाहरणं किमस्ति?

(A) एधध्वे (B) एधाञ्चकृढ्वे

(C) एधिष्यध्वे (D) एधध्वम्

19. एषु शुद्धो मत्वर्थीयप्रयोगः कः ?

(A) विद्युद्वान् (B) विद्युद्यान्

(C) विद्युत्वान् (D) विद्युत्मान्

20. 'वास्तव्यः ' इत्यत्र 'वस्' धातोः 'तव्यत्' प्रत्ययो भवति कस्मिन्नर्थे?

(A) कर्तरि (B) कर्मणि

(C) भावे (D) स्वार्थे

21. निम्नलिखितेषु शब्देषु अर्थसंकोचस्य उदाहरणं किमस्ति?

(A) सिंहः (B) वृकः

(C) कुशलः (D) मृगः

22. निम्नलिखितेषु को ध्वनिः महाप्राणो नास्ति?

(A) ध् (B) भ्

(C) ह् (D) ड्

23. ऐश्वर्यम् कस्य लक्षणं भवति?

(A) रजोगुणस्य (B) सत्त्वगुणस्य

(C) तमोगुणस्य (D) पुरुषस्य

24. वेदान्तसारानुसारं तितिक्षायाः किं लक्षणम् अस्ति?

(A) विहितानां कर्मणां विधिना परित्यागः

(B) मोक्षेच्छा

(C) शीतोष्णादिद्रन्द्रसहिष्णुता

(D) जन्ममरणबन्धनात् मुक्तिः

25. 'अथातो धर्मजिज्ञासा' इति जैमिनीयसूत्रे वेदाध्ययनस्य दृष्टार्थत्वं को ब्रूते?

(A) 'अथ' शब्दः (B) 'अतः' शब्दः

(C) 'धर्म' शब्दः (D) 'जिज्ञासा' शब्दः

26. 'आदित्यो यूपः' इत्यत्र किंविधोऽर्थवादः?

(A) भूतार्थवादः (B) अनुवादः

(C) निषेधशेषः (D) गुणवादः

27. 'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्' इति उक्तिः कस्य विषये?

(A) योगवासिष्ठस्य (B) श्रीमद्भागवतस्य

(C) महाभारतस्य (D) मृच्छकटिकस्य

28. श्रीमद्भगवद्गीता महाभारतस्य कस्मिन् पर्वणि वर्तते?
(A) कर्ण-पर्वणि (B) भीष्म-पर्वणि
(C) अनुशासन-पर्वणि (D) शान्ति-पर्वणि

29. वाल्मीकिरामायणानुसारं दशरथस्य पुत्रेष्टियज्ञेपुरोहित आसीत् -
(A) वसिष्ठः (B) ऋष्यश्रृङ्गः
(C) भारद्वाजः (D) विश्वामित्र

30. वाल्मीकिरामायणानुसारं शम्बूकः केन हतः ?
(A) दशरथेन (B) रामेण
(C) परशुरामेण (D) भरतेन

31. महापुराणेषु न गण्यते-
(A) एकाग्रपुराणम् (B) ब्रह्मपुराणम्
(C) लिङ्गपुराणम् (D) पद्मपुराणम्

32. कौटिल्यानुसारं मानवाः कां विद्यां पृथक् न मन्यन्ते ?
(A) आन्वीक्षिकीम् (B) त्रयीम्
(C) वार्ताम् (D) दण्डनीतिम्

33. कौटिल्यानुसारं त्रयीं के संवरणमात्रं मन्यन्ते ?
(A) मानसाः (B) मानवा
(C) बार्हस्पत्याः (D) औशनसाः

34. मनुसंहितानुसारं एषु किं ब्राह्मणस्य कर्म न भवति ?
(A) अध्यापनम् (B) प्रजारक्षणम्
(C) यजनम् (D) याजनम्

35. मनुसंहितानुसारं सचिवानां संख्या भवेत् -
(A) 3-4 (B) 5-6
(C) 7-8 (D) 9-10

36. याज्ञवल्क्यस्मृत्यनुसारं रिक्ते स्थाने कः शब्दः उपयुक्तः- 'दर्शने प्रत्यये दाने विधीयते।
(A) व्यवहार: (B) प्रातिभाव्यम्
(C) ऋणादानम् (D) वाक्यारुष्यम्

37. रघुवंशस्य चतुर्दशसर्गस्य नाम किम्?
(A) सीतापवादः (B) सीतापरित्यागः
(C) श्रीराममनस्तापः (D) सीतावनवासः

38. 'अतिदुर्धरो बान्धवस्नेहः सर्वप्रमारथी ' हर्षचरिते इयमुक्तिर्भवति।
(A) प्रभाकरवर्धनस्य (B) हर्षवर्धनस्य
(C) भण्डिनः (D) यशोमत्याः

39. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां मेलनतालिकां चिनुत-

(क) अनङ्ग गोऽयमनङ्गत्वमद्य-निन्दिष्यति ध्रुवम्	(i) उत्तरामचरितम्
(ख) उदेति पूर्व कुसुमं ततः फलम्	(ii) कादम्बरी
(ग) प्रभवति शुचिर्बिम्बग्राहे-मणिर्न मृदादयः	(iii) रत्नावली
(घ) न हि क्षुद्रनिर्घातपाताभिहता चलति बसुधा	(iv) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(ii)	(iv)	(i)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(i)	(iii)	(iv)
(D)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)

40. 'अखण्डेषु कारणेषु फलावचःकस्य अलङ्कारस्य लक्षणम् ?
(A) विशेषोक्तेः (B) विभावनायाः
(C) समासोक्तेः (D) वक्रोक्तेः

41. 'शिखरिणि क्व नु नाम कियच्चिरं, किमभिधानमसावकरोत्तपः।' इत्यादि-श्लोकः ध्वन्यालोके उदाहरणरूपेण उल्लिखितः।
(A) अविवक्षितवाच्य-प्रसङ्गे
(B) अप्रस्तुतप्रशंसालङ्कारप्रसङ्गे
(C) विवक्षितान्यपरवाच्य-प्रसङ्गे
(D) दीपकालङ्कारप्रसङ्गे

42. कालक्रमानुसारं तालिकां चिनुत।
(i) अप्पयदीक्षितः (ii) भरत:
(iii) विश्वनाथकविराजः (iv) वामनः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(B)	(iv)	(i)	(iii)	(ii)
(C)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)
(D)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)

43. 'प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहताः विरमन्ति मध्याः।' – मुद्राराक्षसे कस्येयमुक्तिः?
(A) विराधगुप्तस्य (B) चाणक्यस्य
(C) राक्षसस्य (D) चन्द्रगुप्तस्य

44. 'सिद्धेभ्रान्तिर्नास्ति सत्यं तथापि स्वेच्छाचारी भीत एवास्मि भर्तुः। इत्युक्तिः रत्नावल्यां केन सम्बद्धा?
(A) उदयनेन (B) वसन्तकेन
(C) बाभ्रव्येण (D) यौगन्धरायणेन

45. दशरूपकानुसारं- बीजवन्तो मुखाद्यर्था विप्रकीर्णा यथायथम् ऐकार्थ्यमुपनीयन्ते' इत्यादिलक्षणं भवति
(A) मुखसन्धेः (B) गर्भसन्धेः
(C) निर्वहणसन्धेः (D) प्रतिमुखसन्धेः

46. 'प्रशंसात उन्मुखीकरणं दशरूपके कस्य लक्षणं भवति ?
(A) भारत्याः (B) वीथ्याः
(C) प्रोचनायाः (D) प्रहसनस्य

47. तर्कसङ्ग्रहदीपिकानुसारं 'परमाणुष्वेव पाको, न द्व्यणुकादावपी' इति केषाम्मते?
(A) नैयायिकानाम् (B) वैशेषिकानाम्
(C) साङ्ख्यानाम् (D) वेदान्तिनाम्

48. तर्कसङ्ग्रहानुसारम् आत्ममात्रविशेष-गुणेषु कस्य परिगणनं

नास्ति?

(A) बुद्धेः (B) इच्छायाः

(C) स्थिति-स्थापकसंस्कारस्य (D) धर्मस्य

49. तर्कभाषानुसारं प्रमायाः करणं किम्भवति?

(A) प्रमाता (B) प्रमेयम्

(C) तर्कः (D) इन्द्रियसंयोगादिः

50. 'व्याप्यस्य पक्षवृत्तित्वधीः' किमुच्यते?

(A) पक्षता (B) सपक्षः

(C) परामर्शः (D) व्याप्तिः

51. 'मही मित्रस्य वरुणस्य माया चन्द्रेव भानु विदधे पुरुत्रा' इति मन्त्रांशो वर्तते।

(A) उषस्सूक्ते (B) कालसूक्ते

(C) वरुणसूक्ते (D) पर्जन्यसूक्ते

52. ऋग्वेदीय-पर्जन्यसूक्तस्य कः ऋषिरस्ति ?

(A) विश्वामित्रः (B) गौतमः

(C) अत्रिः (D) कण्वः

53. यजुर्वेदीय-शिवसंकल्पमन्त्राणां का देवता?

(A) मनस् (B) शिवः

(C) संकल्पः (D) विष्णुः

54. ऋग्वेदप्रातिशासख्यानुसारं रक्त-संज्ञका के सन्ति?

(A) कण्ठ्यवर्णाः (B) अयोगवाहाः

(C) निरनुनासिकवर्णाः (D) अनुनासिकवर्णाः

55. 'तिस्र एव देवताः' इति कथनमस्ति-

(A) निरुक्ते दैवतकाण्डे

(B) ऋक्प्रातिशाख्ये

(C) निरुक्ते द्वितीयेऽध्याये

(D) अथर्ववेदे राष्ट्राभिवर्धनसूक्ते

56. जन्मादयो विकाराः ब्रह्मणः कां शक्तिमुपाश्रिताः भवन्ति?

(A) आवरणशक्तिम् (B) आध्यात्मिकीं शक्तिम्

(C) कालशक्तिम् (D) भिन्नात्मिकां शक्तिम्

57. अत्रातीतविपर्यासः केवलामनुपश्यति।
छन्दस्यश्छन्दसां योनिमात्मा छन्दोमयीं तनुम् ॥
अस्यां कारिकायाम् 'छन्दस्य' इत्यस्य शब्दस्य कोऽर्थः?

(A) वेदार्थग्रहणसमर्थः

(B) स्वतन्त्रः

(C) वैदिकछन्दसां निर्माता

(D) वैदिकछन्दसां प्रयोगे निष्णातः

58. स्फोटः भेदवान् कथं प्रतीयते?

(A) भिन्नद्रव्यानाम् अभिव्यक्तिसाधनात्

(B) भिन्नोच्चारणात्

(C) भिन्नार्थेषु प्रयोगात्

(D) नादस्य क्रमजन्मत्वात्

59. एषूदाहरणेषु वैषयिकाधारस्योदाहरणं किमस्ति?

(A) मोक्षे इच्छाऽस्ति (B) कटे आस्ते

(C) स्थाल्यां पचति (D) सर्वस्मिन्नात्मास्ति

60. पाणिनीयशिक्षानुसारम् उदात्तस्वरोच्चारणकाले हस्तः कुत्र निधेयः?

(A) हृदि (B) कर्णमूले

(C) सर्वास्ये (D) मूर्धिनि

61. व्यासभाष्यानुसारेण का उक्तिः सत्या?

(A) चित्तं हि प्रख्याप्रवृत्तिस्थितिशीलत्वात् त्रिगुणम्।

(B) चित्तवृत्तीनां निरोधः असाध्यः।

(C) सर्ववृत्तिनिरोधे सम्प्रज्ञातः समाधिः।

(D) चित्तवृत्तिबोधे पुरुषस्य अनादिः सम्बन्धः न हेतुः ।

62. ब्रह्मसूत्रस्य रचयिता कोऽस्ति?

(A) शङ्कराचार्यः (B) बादरायणः

(C) कपिलः (D) सदानन्दः

63. शब्दप्रमाणस्य फलं किम्भवति?

(A) पदज्ञानम् (B) वाक्यार्थज्ञानम्

(C) शक्तिज्ञानम् (D) पदजन्यपदार्थस्मरणम्

64. न्यायसिद्धान्तमुक्तावल्यां साध्यशून्यो यत्र पक्षस्त्वसौ के उदाहृतः?

(A) विरुद्धः (B) बाधः

(C) अनैकान्तिकः (D) सत्प्रतिपक्षः

65. बौद्धदर्शने भावनाचतुष्टये किं नोपदिष्टम् ?

(A) सर्व क्षणिकं क्षणिकम्

(B) स्वलक्षणम् स्वलक्षणम्

(C) सामान्यम् सामान्यम्

(D) शून्यं शून्यम्

66. 'शयिता सविधे ऽप्यनीश्वरा सफली कर्तुमहो मनोरथान्।-
पण्डितराजजगन्नाथेन कस्य काव्यस्य उदाहरणरूपे उद्धृतोऽयं श्लोकः?

(A) अधमस्य (B) उत्तमोत्तमस्य

(C) उत्तमस्य (D)

67. 'उपकारकत्वादलङ्कारः सप्तममङ्गम् इति यायावरीयः।' उक्तिरियं कुत्रास्ति?

(A) नाट्यशास्त्रे (B) काव्यप्रकाशे

(C) काव्यमीमांसायाम् (D) वक्रोक्तिजीविते

68. वक्रोक्तिजीवितानुसारं कविव्यापारवक्रत्वप्रकाराः कति सम्भवन्ति?

(A) त्रयः (B) चत्वारः

(C) पञ्च (D) षट्

69. काव्यप्रकाशानुसारं शृङ्गारे द्रुतिकारणम् आह्लादकत्वं कस्य?

(A) माधुर्यस्य (B) ओजसः

(C) प्रसादस्य (D) समतायाः

70. पण्डितराजजगन्नाथमते काव्यस्य कति भेदाः स्वीकृताः?
(A) त्रयः (B) द्वौ
(C) चत्वारः (D) पञ्च

71. ब्राह्मीलिपेः उद्वाचने प्रथमां सफलतां कः प्राप्तवान्?
(A) मैक्समूलरः (B) विलियम-जोन्सः
(C) जेम्स प्रिंसेपः (D) व्हिटने

72. अशोकस्य शिलालेखानां भाषा का अस्ति?
(A) प्राकृतम् (B) संस्कृतम्
(C) अपभ्रंशः (D) अवेस्ता

73. कुत्र अशोकस्य नाम प्रदत्तम् ?
(A) मास्कि-शिलालेखे
(B) प्रयाग-स्तम्भ-लेखे
(C) गिरनार-शिलालेखे
(D) गन्धार-द्विभाषी-शिलालेखे

74. गिरनारस्य तडागेन सम्बद्धो नासीत् ।
(A) चन्द्रगुप्तः मौर्यः (B) अशोकः मौर्यः
(C) कनिष्कः कुषाणः (D) रुद्रदामा शकः

75. अत्र वर्तते कालिदासस्य नामोल्लेखः।
(A) तन्तुवाय-श्रेण्याः मन्दसौर-शिलालेखे
(B) प्रभावतीगुप्तायाः पूना-ताम्रपट्ट-लेखे
(C) पुलिकेशिद्वितीयस्य एहोले-शिलालेखे
(D) मिहिरभोजस्य ग्वालियार-शिलालेखे

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जनवरी-2017

1. अधस्तनेषु उचितसम्बन्धयुतं विकल्पं चिनुत -
(A) द्यावाचिदस्मै पृथिवी नमेते... – अग्निदेवता
(B) यस्य ब्रह्मवर्धनं यस्य सोमः – सोमसूक्तम्
(C) राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्.... – रुद्रदेवता
(D) ता वां वास्तून्युश्मसि गमध्यै यत्र-
गावो भूरिश्रृङ्गा अयासः..... - विष्णुसूक्तम्

2. अधस्तनयुग्मानां समुचितां तालिकां चिनुत-
(क) पुराणी देवि युवतिः पुरन्धिरनु-व्रतं चरसि विश्ववारे — (i) इन्द्रसूक्तम्
(ख) से नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनों भव- — (ii) विष्णुसूक्तम्
(ग) यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहदयः-पर्वतान्प्रकुपिताँ अरम्णात्... — (iii) उषस्सूक्तम्
(घ) तदस्य प्रियमभिपाथो अश्यां-नरो यत्र देवयवो मरदन्ति..... — (iv) अग्निसूक्तम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(B)	(iii)	(iv)	(ii)	(i)
(C)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)

3. "नाहं बेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुरङ्गिरसश्च घोराः" इति मन्त्रांशो वर्तते-
(A) विश्वामित्र-नदीसूक्ते (B) सरमा-पणिसूक्ते
(C) यम-यमीसूक्ते (D) पुरुरवा-उर्वशीसूकते

4. "को दम्पती समनसा वि यूयोदध यदग्निः श्वशुरेषु दीदयत्" इति मन्त्रांशो वर्तते-
(A) सरमा - पणिसूक्ते
(B) विश्वामित्र – नदीसूक्ते
(C) पुरुरवा – उर्वशीसूक्ते
(D) यम - यमी

5. अधस्तनेषु सामवेदस्य ब्राह्मणमस्ति-
(A) शांखायनब्राह्मणम्
(B) कौषीतकिब्राह्मणम्
(C) षड्विंशब्राह्मणम्
(D) तैत्तिरीयब्राह्मणम्

6. "अन्धन्तमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते / ततो भूय इव ते तमो ये उ विद्यायां रताः" सन्दर्भोऽयं बर्तते-
(A) कठोपनिषदि (B) ईशोपनिषदि
(C) श्वेताश्वतरोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

7. "सृष्ट्युत्पत्तिकाल एव वेदानामुत्पत्तिकालः" इति कः स्वीकरोति?
(A) मेक्डानलः (B) मैक्षमूलरः
(C) एम0 विन्टरनिट्जः (D) महर्षिदयानन्दः

8. अधस्तनयुग्मानां समुचितां तालिकां चिनुत-
(क) कात्यायनशुल्वसूत्रम् — (i) व्याकरणम्
(ख) त्रिमुनि — (ii) कृष्णयजुर्वेदः
(ग) ऋक्तन्त्रप्रातिशाख्यम् — (iii) शुक्लयजुर्वेदः
(घ) आपस्तम्बगृह्यसूत्रम् — (iv) सामवेदः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)
(B	(iii)	(i)	(iv)	(ii)
(C)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)

9. वेदानां विकृतिपाठः कतिविधः?
(A) त्रिविधः (B) पञ्चविधः
(C) अष्टविधः (D) नवविधः

10. द्विविधो विभाजनक्रमो वर्तते-
(A) अथर्ववेदस्य (B) ऋग्वेदस्य
(C) ईशोपनिषदः (D) कठोपनिषदः

11. शुक्लयजुर्वेदस्य कति शाखाः समुपलभ्यन्ते?

(A) 4 (B) 3
(C) 5 (D) 2

12. अधस्तनयुग्मानां समुचितां तालिकां चिनुत-

(क) पिङ्गलः (i) ज्योतिषम्
(ख) शुल्बसूत्राणि (ii) निरुक्तम्
(ग) लगधः (ii) छन्दःशास्त्रम्
(घ) तदिदं विद्यास्थानं- व्याकरणस्य कात्स्र्यं स्वार्थसाधकं च । (iv) कल्पः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(iv)	(ii)	(iii)
(B)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)
(C)	(iii)	(ii)	(i)	(iv)
(D)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)

13. महत् किमस्ति?
(A) प्रकृतिः (B) विकृतिः
(C) प्रकृतिविकृती (D) न प्रकृतिः न विकृतिः

14. 'तल्लिङ्गलिङ्गिपूर्वकम्' लक्षणमिदं कस्य विद्यते ?
(A) शब्दप्रमाणस्य (B) अनुमानप्रमाणस्य
(C) प्रत्यक्षप्रमाणस्य (D) उपमानप्रमाणस्य

15. व्यक्तं कीदृग् न भवति?
(A) हेतुमत् (B) अव्यापि
(C) अनाश्रितम् (D) सावयवम्

16. "तदैक्यप्रमेयस्य तत्प्रतिपादकोपनिषत्प्रमाणस्य च बोध्यबोधकभावः" वेदान्तसारानुसारं लक्षणमिदं कस्यास्ति?
(A) अधिकारिणः (B) विषयस्य
(C) सम्बन्धस्य (D) प्रयोजनस्य

17. 'समष्टिव्याष्ट्रयभिप्रायेणैकमनेकमिति' उक्तिरियं वेदान्तसारे कस्य सन्दर्भेऽस्ति?
(A) विद्यायाः (B) अज्ञानस्
(C) अध्यारोपस्य (D) समाधेः

18. अज्ञानोपहितं चैतन्यं कीदृशं कारणं भवति?
(A) निमित्तकारणम्
(B) उपादानकारणम्
(C) निमित्तकारणम् उपादानकारणं च
(D) कीदृशमपि कारणं न

19. वेदान्तसारानुसारं सूक्ष्मशरीराणि कति अवयवानि भवन्ति?
(A) षोडशायवानि (B) पञ्चदशावयवानि
(C) सप्तदशावयवानि (D) त्रयोदशावयवानि

20. तर्कसङ्ग्रहानुसारं रूपं कतिविधम्?
(A) पञ्चविधम् (B) सप्तविधम्
(C) षड्विधम् (D) नवविधम्

21. 'गौरश्वः पुरुषो हस्ती' इत्यादिपदसमुदायः प्रमाणं कथं न भवति?
(A) योग्यताविरहात् (B) आकाङ्क्षाविरहात्
(C) सान्निध्याभावात् (D) पदसमूहाभावात्

22. असाधारणधर्मः कस्य लक्षणम्?
(A) लक्षणस्य (B) उद्देशस्य
(C) परीक्षायाः (D) आत्मनः

23. तर्कभाषायां प्रकरणसम' हेत्वाभासस्य काऽपरा सञ्ज्ञा?
(A) बाधितविषयः (B) सत्प्रतिपक्षः
(C) सव्यभिचारः (D) अनुपसंहारी

24. तर्कभाषानुसारं समवायिकारणं किम्भवति?
(A) गुणः (B) द्रव्यम्
(C) कर्म (D) सामान्यम्

25. 'पठति' इति क्रियापदं कीदृश्याः भाषायाः उदाहरणमस्तिं
(A) अयोगात्मिकायाः (B) प्रश्लिष्टयोगात्मिकायाः
(C) श्लिष्टयोगात्मिकायाः (D) अश्लिष्टयोगात्मिकायाः

26. ग्रीकभाषा कस्य परिवारस्य भाषा अस्ति?
(A) भारोपीय-परिवारस्य (B) सेमेटिक-परिवारस्य
(C) सूडानी-परिवारस्य (D) काकेशी-परिवारस्य

27. निम्नलिखितासु भाषासु का भाषा 'सतम्' वर्गस्य नास्ति
(A) संस्कृतभाषा (C) ग्रीकभाषा
(B) ईरानीभाषा (D) फारसीभाषा

28. अंग्रेजी-भाषायाः सम्बन्धः कया भाषाशाखया अस्ति
(A) कैल्टिकशाखयाः (B) जर्मनिकशाखयाः
(C) इटैलिकशाखयाः (D) ग्रीकशाखयाः

29. संस्कृतभाषायां निम्नलिखितेषु स्वरेषु कस्य स्वरस्व दीर्घो नास्ति?
(A) ऋकारस्य (B) अकारस्य
(C) इकारस्य (D) लृकारस्य

30. अन्त्यादलः पूर्ववर्णस्य का सञ्ज्ञा भवति?
(A) अपृक्तसञ्ज्ञा (B) उपधा-सञ्ज्ञा
(C) टि-सञ्ज्ञा (D) सर्वनामस्थानसञ्ज्ञा

31. निषेध-विकल्पयोः सञ्ज्ञा का?
(A) अपृक्तसञ्ज्ञा (B) विभाषासञ्ज्ञा
(C) उपधासञ्ज्ञा (D) प्रगृह्यसञ्ज्ञा

32. 'सुडनपुंसकस्य' इति सूत्रेण का सञ्ज्ञा क्रियते?
(A) सर्वनामस्थानसंज्ञा (B) निष्ठासञ्ज्ञा
(C) प्रातिपदिकसंज्ञा (D) पदसञ्ज्ञा

33. 'अनुविष्णु' इत्यत्र 'अव्ययं विभक्ति-समीप-समृद्धि इत्यादिसूत्रेण कस्मिन् अर्थेऽव्ययीभावसमासः ?
(A) समीपार्थे (B) असम्प्रत्यर्थे
(C) पश्चादर्थे (D) आनुपूर्व्यर्थे

34. 'व्यूढोरस्कः' इत्यत्र कीदृशः समासः?
(A) अव्ययीभावः (B) तत्पुरुषः
(C) द्वन्द्वः (D) बहुब्रीहिः

35. 'सार्पिषोऽपि स्वाद्' इत्यत्र 'आणि' शब्दस्या कर्मप्रवचनीयसञ्ज्ञा कस्मिन् अर्थे भवति?
(A) सम्भावनाद्योतकतायाम्
(B) अन्ववसर्गद्योतकतायाम्
(C) समुच्चयद्योतकतायाम्
(D) पदार्थद्योतकतायाम्

36. अधिकरणवाचिनश्च' इति सूत्रस्योदाहरणं किं भवति ?
(A) राज्ञां मतः
(B) द्विरह्नो भोजनम्
(C) शब्दानामनुशासनमाचार्यस्य वा
(D) इदम् एषाम् आसितम्

37. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-
(क) भासः (i) मालतीमाधवम्
(ख) कालिदासः (ii) मृच्छकटिकम्
(ग) भवभूतिः (iii) मालविकाग्निमित्रम्
(घ) शूद्रकः (iv) पञ्चरात्रम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(iv)	(iii)	(i)	(ii)
(B)	(iii)	(iv)	(ii)	(i)
(C)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)

38. शिशुपालवधमहाकाव्यस्य प्रथमसर्गस्य नाम भवति-
(A) श्रीकृष्णगुणकीर्तनम् (B) नारदगुणकीर्तनम्
(C) कृष्णनारदसम्भाषणम् (D) नारदावतरणम्

39. सानुमत्याः उपाख्यानम् अभिज्ञानशाकुन्तले कस्मिन् अङ्के अस्ति?
(A) सप्तमे (B) षष्ठे
(C) पञ्चमे (D) चतुर्थे

40. आसु कस्याः उल्लेखो मेघदूते नास्ति-
(A) रेवायाः (B) शिप्रायाः
(C) तुङ्गभद्रायाः (D) गन्धवत्याः

41. मृच्छकटिकम् इति कस्य रूपकस्य उदाहरणं भवति ?
(A) नाटकस्य (B) प्रकरणस्य
(C) व्यायोगस्य (D) समवकारस्य

42. कृतककोपवृत्तान्तः मुद्राराक्षसे कस्मिन्नङ्केऽस्ति?
(A) प्रथमे (B) द्वितीये
(C) तृतीये (D) चतुर्थे

43. कालानुसारेण तालिकां चिनुत-
(अ) भारविः
(ब) भासः
(स) कालिदासः
(द) साहित्यदर्पणकारः विश्वनाथः

(A)	(अ)	(ब)	(स)	(द)
(B)	(ब)	(अ)	(स)	(द)
(C)	(स)	(अ)	(ब)	(द)
(D)	(ब)	(स)	(अ)	(द)

44. विश्वनाथमते हास्यं कतिविधं भवति?
(A) चतुर्विधम् (B) पञ्चविधम्
(C) षड्विधम् (D) द्विविधम्

45. काव्यलक्षणविचारे"स्ववचनविरोधाद् अपास्तम्" इति कथनेन कस्य मतं विश्वनाथेन निराकृतम् ।
(A) आनन्दवर्धनस्य (B) वामनस्य
(C) मम्मटस्य (D) व्यक्तिविवेककारस्य

46. साहित्यदर्पणमते नीलवर्णः महाकालदैवतः रसः कः भवति?
(A) रौद्रः (B) वीरः
(C) भयानकः (D) बीभत्सः

47. जतुकर्णीपुत्रः भवति-
(A) भवभूतिः (B) कालिदासः
(C) माधः (D) श्रीहर्षः

48. शाकुन्तले दुष्यन्तपुत्रस्य प्रथमं नाम किम् आसीत् ?
(A) भरतः (B) सर्वदमनः
(C) गौतमः (D) वातायनः

49. साहित्यदर्पणानुसारेण एषु कस्य रूपकमध्ये गणनं न भवति –
(A) समेवकारस्य (B) नाटिकायाः
(C) प्रकरणस्य (D) प्रहसनस्य

50. एषु गतिसञ्ज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?
(A) ऊर्यादिच्विडाचश्च
(B) कुगतिप्रादयः
(C) तत्रोपपदं सप्तमीस्थम्
(D) एकविभक्ति चापूर्वनिपाते

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जनवरी-2017

1. निरुक्तानुसारेण 'अति' इत्यस्व उपसर्गस्य कोऽर्थः ?
(A) निषेधः (B) एकीभावः
(C) पूजा (D) अनादरः

2. निरुक्तानुसारेण "चित्"इत्यस्य निपातस्य अर्थो नास्ति-
(A) प्रतिषेधः (B) उपमा
(C) पूजा (D) अवकुत्सितः

3. निरुक्ते अधोलिखितेषु उपधाविकारस्य उदाहरणमस्ति-
(A) प्रत्तम् (B) स्तः

(C) गत्वा (D) राजा

4. ब्राह्मणग्रन्थानां विषयो नास्ति-

(A) छन्दोविवेचनम् (B) पुराकल्पः

(C) विधिः (D) निर्वचनम्

5. शिक्षावेदाङ्गे गणना नास्ति-

(A) तैत्तिरीयप्रातिशाख्यस्य (B) ऋक्तन्त्रस्य

(C) पारस्करगृह्यसूत्रस्य (D) नारदशिक्षायाः

6. ऐतरेयब्राह्मणस्य शुनःशेपाख्याने शुनःशेपस्य पितुर्नाम अस्ति-

(A) वाजश्रवाः (B) अजीगर्तः

(C) कण्वः (D) सौयवसी

7. 'वाङ्मनस्' इत्याख्यानं वर्तते -

(A) कौषीतकिब्राह्मणे (B) ऐतरेयब्राह्मणे

(C) षड्विंशब्राह्मणे (D) शतपथब्राह्मणे

8. "यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्" कठोपनिषदि इदं कथनम् अस्ति-

(A) कण्वस्य (B) यमस्य

(C) नचिकेतसः (D) इन्द्रस्य

9. "तस्यै तपो दमः कर्मेति प्रतिष्ठा वेदाः सर्वाङ्गानि सत्यमायतनम्" इत्युद्धरणं वर्तते-

(A) तैत्तिरीयोपनिषदि (B) कठोपनिषदि

(C) केनोपनिषदि (D) वृहदारण्यकोपनिषदि

10. अधस्तनेषु स्वरितस्वरस्य भेदोऽस्ति -

(A) क्षैप्रः (B) सन्नतरः

(C) निघातः (D) सन्नतमः

11. ऋग्वेदीयशाकलसंहितायां उदात्तस्वरः केन प्रकारेण प्रदर्श्यते?

(A) अः (B) $अ^1$

(C) $अ^3$ (D) अ [अचिह्नितम्]

12. ऋग्वेदप्रातिशाख्यानुसारेण रक्तसंज्ञका वर्णा भवन्ति-

(A) अनुनासिकवर्णाः (B) सोष्मवर्णाः

(C) अघोषवर्णाः (D) समानाक्षरवर्णाः

13. ऋग्वेदप्रातिशाख्यानुसारेण अधस्तनयुग्मानां समुचितां तालिकां चिनुत-

(अ) ऊ (i) अघोषः

(ब) क (ii) सन्ध्यक्षरम्

(स) घ (iii) समानाक्षरम्

(द) ए (iv) सोष्म

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(iv)	(iii)	(ii)
(B)	(ii)	(iv)	(iii)	(i)
(C)	(iii)	(i)	(iv)	(ii)
(D)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)

4. सर्वादौ बेदस्य अग्रेजीभाषायाम् अनुवादः केन कृतः?

(A) वेबरेण (B) विल्सनेन

(C) ब्रूमफिल्डेन (D) ओल्डनवर्गेण

15. माध्यन्दिनसंहितायाः हिन्दीभाषायाम् अनुवादः सर्वादौ केन कृतः?

(A) अरविन्देन

(B) महर्षिदयानन्देन

(C) श्रीपाददामोदरसातवलेकरेण

(D) स्वामी-विवेकानन्देन

16. अधोनिर्दिष्टेषु' मनोः स्त्री' इति विग्रहे स्त्रीलिङ्गे अशुद्धः प्रयोगः कः?

(A) मनायी B) मनावी

(C) मन्वी (D) मनुः

17. 'अध्यापयति बवेदम्' इत्यत्र क्रियापदे परस्मैपदविधायको नियमः कः?

(A) अणावकर्मकाच्चित्तवतकर्तृकात्

(B) विभाषाऽकर्मकात्

(C) निगरणचलनार्थेभ्यश्च

(D) वुध-युध-नश-जनेङ्-प्रु-द्रु-स्रुभ्यो णेः

18. 'वच्' धातोरशब्दसञ्ज्ञायां ण्यत्प्रत्ययान्तं किं रूपम्?

(A) वाच्यम् (B) वाक्यम्

(C) वच्यम् (D) उच्यम्

19. 'एध' धातोः आशीर्लिडि उत्तमपुरुषैकवचने किं रूपम्?

(A) एधेय (B) एधिषीय

(C) एधिताहे (D) ऐधिषि

20. क्रियामात्रविषयं व्यापारनियतश्च किम्भवति ?

(A) हेतुः (B) करणम्

(C) अधिकरणम् (D) सम्बन्धः

21. 'लोमन्' शब्दस्य मत्वर्थीयः शुद्धप्रयोगः कः ?

(A) लोमनः (B) लोमिकः

(C) लोमिलः (D) लोमशः

22. 'शास्त्रपूर्वके प्रयोगेऽभ्युदयः महाभाष्यानुसारं रिक्तस्थानं पूरयत।

(A) कूपखननन्यायेन (B) तत्तुल्यं वेदशब्देन

(C) स्नातानुलिपाप्रकारेण (D) पांसूदकन्यायेन

23. एषु पाठकगुणेषु कः गण्यते?

(A) अक्षरव्यक्तिः (B) गीती

(C) लिखितपाठकः (D) शीघ्री

24. निम्नलिखितेषु अन्तःस्थेषु को ध्वनिः न गण्यते?

(A) ट् (B) र्

(C) ल् (D) य्

25. निम्मलिखितेषु विषमीकरणस्य उदाहरणं किम् अस्ति?

(A) बभूव (B) ससार

(C) गमिष्यति (D) पपाठ

26. चीनी भाषा कीदृशी भवति?
(A) योगात्मिका (B) अयोगात्मिका
(C) प्रश्लिष्टयोगात्मिका (D) श्लिष्टयोगात्मिका

27. अर्थसङ्ग्रहे 'वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः ' इति धर्मलक्षणे 'वेदप्रतिपाद्यः' इति पदं किमर्थं गृहीतम् ?
(A) द्यूतक्रीडादावतिव्याप्तिवारणाय
(B) स्वर्गादिप्रयोजनेऽतिव्याप्तिवारणाय
(C) श्येनयागादावतिव्याप्तिवारणाय
(D) भोजनादावतिव्याप्तिवारणाय

28. शाब्दीभावनायाः साध्यं किम्भवति?
(A) लिङ्गादिज्ञानम् (B) अर्थवादज्ञाप्यप्राशस्त्यम्
(C) स्वर्गादिफलम् (D) आर्थीभावना

29. तर्कसङ्ग्रहदीपिकादिशा एषु गोर्लक्षणेषु कस्मिन् अतिव्याप्तिदोषः सङ्घटते?
(A) शृङ्गित्वम् (B) एकशफत्वम्
(C) कपिलत्वम् (D) सास्नादिमत्त्वम्

30. 'तन्तुसंयोगः पटस्य' कीदृशं कारणम्?
(A) असमवायिकारणम्
(C) समवाय्यसमवायिकारणम्
(B) समवायिकारणम्
(D) निमित्तकारणम्

31. न्यायसिद्धान्तदृशा व्याप्तिः का?
(A) साध्यवदन्यस्मिन्नसम्बन्धः
(B) व्याप्यस्य पक्षवृत्तित्वधीः
(C) सिषाधयिषाविरहसहकृतसिद्ध्यभावः
(D) साध्यवत्त्वेन पक्षस्य पचनम्

32. योगसूत्रभाष्ये निर्बीजः समाधिः क उक्तः?
(A) सम्प्रज्ञातसमाधिः
(B) असम्प्रज्ञातसमाधिः
(C) सवितर्कसमाधिः
(D) सविचारसमाधिः

33. 'तस्मिन् परमगुरौ सर्वकर्मार्पणम्' इति व्यासभाष्येण किं-लक्षितम्?
(A) सन्तोषः (B) तपः
(C) स्वाध्यायः (D) ईश्वरप्रणिधानम्

34. वाक्यपदीयानुसारं ' स्फोटनादयोः'सम्बन्धः कीदृशो भवति?
(A) तरङ्गप्रतिबिम्बवत् (B) कार्यकारणवत्
(C) जन्यजनकवत् (D) धूमाग्निवत्

35. वाक्यपदीयानुसारं स्फोटः कीदृशो भवति ?
(A) सक्रमः (B) भेदवान्
(C) अक्रमः (D) वर्णानुपूर्वी

36. 'आनन्दमयोऽभ्यासात्' इत्यस्मिन् सूत्रे 'मयट्' प्रत्ययः कस्मिन्नर्थे वर्तते?
(A) विकारार्थे (B) जनकार्थे
(C) कारणार्थे (D) प्राचुर्यार्थे

37. 'शास्त्रयोनित्वात्' इत्यस्मिन् सूत्रे 'योनिः' इत्यस्य शब्दस्य कोऽर्थः?
(A) जन्म (B) कारणम्
(C) कार्यम् (D) व्याख्या

38. हेमचन्द्रसूरिः कस्य दर्शनस्य आचार्योऽस्ति?
(A) बौद्धदर्शनस्य (B) जैनदर्शनस्य
(C) चार्वाकदर्शनस्य (D) सांख्यदर्शनस्य

39. सांख्यकारिकानुसारं किं तत्त्वं प्रधानपुरुषयोः अन्तरं विशिनष्टि?
(A) मनः (B) बुद्धिः
(C) अहङ्कारः (D) ज्ञः

40. सांख्यकारिकानुसारं करणं कतिविधम्
(A) षोडश (B) चतुर्दश
(C) सप्तदश (D) त्रयोदश

41. 'तज्ज्ञानं पञ्चविधं मतिश्रुतावधिमनः पर्यायकेवलभेदेन' उक्तिरियं केन दर्शनेन सम्बद्धा अस्ति?
(A) आर्हतदर्शनेन (B) बौद्धदर्शनेन
(C) रामानुजदर्शनेन (D) न्यायदर्शनेन

42. वेदान्तसारानुसारं निर्विकल्पकस्य समाधेः कति विघ्नाः भवन्ति?
(A) त्रयः (B) पञ्च
(C) चत्वारः (D) षट्

43. रुद्रदाम्नः शिलालेखः कुत्र विद्यते?
(A) प्रयागे (B) जूनागढे
(C) तक्षशिलायाम् (D) पाटलिपुत्रे

44. इलाहाबादशिलालेखे अस्य नाम नास्ति-
(A) रुद्रदेवः (B) शशाङ्कः
(C) चन्द्रवर्मा (D) नागदत्तः

45. खरोष्ठ्यां लिप्यां कस्य अभिलेखाः उपलभ्यन्ते ?
(A) अशोकस्य (B) समुद्रगुप्तस्य
(C) कनिष्कस्य (D) खारवेलस्य

46. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-
(क) लोके हि लोहेभ्यः कठिनतराः खलु स्नेहमया बन्धनपाशाः — (i) रत्नावली
(ख) वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः — (ii) हर्षचरितम्
(ग) श्रीहर्षो निपुणः कविः- परिषदप्येषा गुणग्राहिणी — (ii) मुद्राराक्षसम्
(घ) गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः — (iv) किरातार्जुनीयम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(i)	(iv)	(i)	(ii)

(B) (ii) (iv) (i) (iii)

(C) (ii) (iii) (i) (iv)

(D) (ii) (iv) (i) (iii)

47. एषु किं रामायणाश्रितं भवति-

(A) नैषधीयचरितम् (B) किराता्जुनीयम्

(C) शिशुपालवधम् (D) रघुरवंशम्

48. एषु किं पर्व महाभारते नास्ति-

(A) द्रोणपर्व (B) भीष्मपर्व

(D) शल्यपर्व (C) युधिष्ठिरपर्व

49. महाभारताश्रितं न भवति-

(A) वेणीसंहारम् (B) दूतवाक्यम्

(C) मध्यमव्यायोगः (D) अभिषेकनाटकम्

50. 'ज्ञानविज्ञानयोगः ' श्रीमद्भगवद्गीतायाः कतमोऽध्यायः-

(A) द्वितीयोऽध्यायः (B) तृतीयोऽध्यायः

(C) पञ्चमोऽध्यायः (D) सप्तमोऽध्यायः

51. एषु कस्य महापुराणेषु अन्तर्भावो नास्ति-

(A) मत्स्यपुराणस्य (B) ब्रह्मपुराणस्य

(C) अग्निपुराणस्य (D) साम्बपुराणस्य

52. 'फलेन मूलेन च वारिभूरुहां मुनेरिवेत्थं मम यस्या वृत्तयः' – नैषधीयचरिते इयमुक्तिभंवति-

(A) नलस्य (B) दमयन्त्याः

(C) हंसपत्न्याः (D) हंसस्य

53. 'परिषु सोऽहं बहुलीभवन्तमपां तरङ्गेष्विव तैलबिन्दुम्। सोढुं न तत्पूर्वमवर्णमीशे आलानिकं स्थाणुमिव द्विपेन्द्रः॥' रघुवंशे कस्येयमुक्तिः?

(A) लक्ष्मणस्य (B) रामस्य

(C) भरतस्य (D) शत्रुघ्नस्य

54. "गतं तिरश्चीनमनूरूसारथेः प्रसिद्धमूर्ध्वज्वलनं हविर्भुजः।" शिशुपालवधे अस्मिन् पद्यांशे 'अनूरूसारथिः' भवति-

(A) अग्निः (B) सूर्यः

(C) चन्द्रः (D) विद्युत्

55. "ईदृशानां विपाकोऽपि जायते परमाद्भुतः " - उत्तररामचरिते इयमुक्तिर्भवति-

(A) सीतायाः (B) मुरलायाः

(C) तमसायाः (D) लक्ष्मणस्य

56. मुद्राराक्षसे कौमुदीमहोत्सवः केन निषिद्धः ?

(A) राक्षसेन (B) चन्द्रगुप्तेन

(C) चाणक्येन (D) मलयकेतुना

57."स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीषु संदृश्यते किमुत याः प्रतिबोधवत्यः॥" अभिज्ञानशाकुन्तले इयमुक्तिः कस्य?

(A) शाङ्गरवस्य (B) शारद्वतस्य

(C) दुष्यन्तस्य (D) सोमरातस्य

58. हर्षचरिते पञ्चमे उच्छ्वासे - 'विश्वस्तानां यशसा स्थातुमिच्छामि लोके न बपुषा' - इत्युक्तिर्भवति-

(A) हर्षवर्धनस्य (B) प्रभाकरवर्धनस्य

(C) यशोमत्याः (D) कुरङ्गकस्य

59. "सूरिभिः कथितः' इति बिद्वदुपज्ञेयमुक्तिः।" – अत्र विषये के तावत् आनन्दवर्धनमते प्रथमे विद्वांसः ?

(A) मीमांसकाः (B) तार्किकाः

(C) कवयः (D) वैयाकरणाः

60. "क्रियायाः प्रतिषेधेऽपि फलव्यक्ति.. काव्यप्रकाशानुसारेण कस्यालङ्कारस्य लक्षणमिदम्-

(A) उपमालङ्कारस्य (B) निदर्शनालङ्कारस्य

(C) विभावनालङ्कारस्य (D) उत्प्रेक्षालङ्कारस्य

61. 'ग्रामतरुणं तरुण्या नववञ्जुलमञ्जरीसनाथकरम्। पश्यन्त्या भवति मुहुर्नितरां मलिना मुखच्छाया॥" काव्यप्रकाशे प्रथमोल्लासे श्लोकोऽयं कस्य काव्य- भेदस्य उदाहरणरूपेण उल्लिखितः?

(A) ध्वनिकाव्यस्य

(B) गुणीभूतव्यङ्ग्यकाव्यस्य

(C) शब्दचित्रकाव्यस्य

(D) वाच्यचित्रकाव्यस्य

62. दशरूपकानुसारेण - (साहित्यदर्पणानुसारेण) 'अल्पमात्रं समुद्दिष्टं बहुधा यद्विसर्पति। फलावसानं यच्चैव .' तत् किम् अभिधीयते?

(A) बीजम् (B) विन्दुः

(C) पताका (D) प्रकरी

63. दशरूपकमतानुसारं दृष्टनष्टस्य बीजस्य अन्वेषणं भवति-

(A) मुखसन्धिः (B) गर्भसन्धिः

(C) प्रतिमुखसन्धिः (D) निर्वहणसन्धिः

64. आसु कस्याः बक्रतामध्ये गणनं नास्ति?

(A) वर्णविन्यासवक्रतायाः (B)समासवक्रतायाः

(C) पदपूर्वार्द्धवक्रतायाः (D) प्रकरणवक्रतायाः

65. राजशेखरेण काव्यमीमांसायां दोषाधिकरण-विषये कस्य ग्रन्थकारस्य नाम उल्लिखितम्?

(A) सुवर्णनाभस्य (B) शेषस्य

(C) धिषणस्य (D) भरतस्य

66. "दुःखार्तानां श्रमार्तानां शोकार्तानां तपस्विनाम्। लोके नाट्यमेतद्भविष्यति॥" नाट्यशास्त्रतः रिक्तस्थानं पूरयत-

(A) मोक्षप्रदायकम् (B)ज्ञानप्रदायकम्

(C) आह्लादजननम् (D) विश्रामजननम्

67. "मित्रात्रिपुत्रनेत्राय त्रवीशात्रवशत्रवे। गोत्रारिगोत्रजत्राय गोत्रात्रे ते नमो नमः ॥" रसगङ्गाधरे प्रथमे आनने श्लोकोऽयम् उदाहरणं भवति-

(A) उत्तमकाव्यस्य (B) अधमकाव्यस्य
(C) उत्तमोत्तमकाव्यस्य (D) मध्यमकाव्यस्य

68. "यत्र व्यङ्ग्यमप्रधानमेव सच्चमत्कारकारणम्" जगन्नाथमते तत् भवति-
(A) मध्यमकाव्यम (B) उत्तमोत्तमकाव्यम्
(C) उत्तमकाव्यम् (D) अधमकाव्यम्

69. कौटिल्यार्थशास्त्रोल्लेखानुसारं एषु कः कोपात् विननाश इति उल्लिखितः?
(A) अजबिन्दुः (B) रावणः
(C) करालः (D) जनमेजयः

70. कौटिलीयार्थशास्त्रे सर्वविद्यानां प्रदीपः, सर्वकर्मणाम् उपायः सर्वधर्माणां च आश्रयः का विद्या प्रोक्ता?
(A) आन्वीक्षिकी (B) त्रयी
(C) वार्ता (D) दण्डनीतिः

71. कौटिलीयार्थशास्त्रे एतत् वैश्यस्य स्वधर्मो न भवति-
(A) याजनम् (B) दानम्
(C) अध्ययनम् (D) यजनम्

72. याज्ञवल्क्यमते गृहीतवेतनः कर्म त्यजन्-
(A) चतुर्गुणमावहेत् (B) त्रिगुणमावहेत्
(C) पञ्चगुणमावहेत् (D) द्विगुणमावहेत्

73. स्मृत्योर्विरोधे न्यायस्तु बलवान् व्यवहारतः। अर्थशास्त्रात्तु बलवद् -याज्ञवल्क्यसंहितातः रिक्तं स्थानं पूरयत।
(A) राजादेशः (B) धर्मशास्त्रम्
(C) नृपस्येच्छा (D) नीतिशास्त्रम्

74. मनुसंहितानुसारं एषु कस्य क्रोधजव्यसने गणनं न भवति इति स्थितिः ।
(A) दिवास्वप्नस्य (B) वाक्पारुष्यस्य
(C) साहसस्य (D) दण्डपारुष्यस्य

75. मनुसंहितातः रिक्तं स्थानं पूरयत- वेदः स्मृतिः . एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्। स्वस्य च प्रियमात्मनः।
(A) उपकारः (B) अपकारः
(C) सदाचारः (D) परम्परा

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र नवम्बर-2017

1. ऋग्वेदे प्रथमसूक्तस्य द्रष्टा कः?
(A) कण्वः (B) विश्वामित्रः
(C) मधुच्छन्दाः (D) गृत्समदः

2. सायणाचार्येण कस्य वेदस्य व्याख्यानं सर्वान्ते कृतम्?
(A) ऋग्वेदस्य (B) यजुर्वेदस्य
(C) सामवेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

3. 'स्वधा अवस्तात् प्रयतिः परस्तात्'-इति कुत्र वर्णितम्?
(A) इन्द्रसूक्ते (B) पितृसूक्ते
(C) हिरण्यगर्भसूक्ते (D) नासदीयसूक्ते

4. ऋग्वेदे 'रुशद्वत्सा' इति कस्याः विशेषणम्?
(A) सरस्वत्याः (B) उषसः
(C) नद्याः (D) रात्र्याः

5. सपत्नक्षयणो मणिः कस्मिन् सूक्ते उपदिश्यते?
(A) पृथिवीसूक्ते (B) इन्द्रसूक्ते
(C) राष्ट्राभिवर्द्धनसूक्ते (D) सोमसूक्ते

6. 'यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवम्'- इत्यत्र उवटमतेन 'दैवम् पदस्य कोऽर्थः?
(A) देवो विज्ञानात्मा सोऽनेन गृहात इति दैवम्
(B) देवो ज्ञानकर्ता सोऽनेन ज्ञानी इति दैवम्
(C) देवो यज्ञे एव दीप्यते तद् द्रव्यम् दैवम्
(D) देवो गृहे गृहे निर्मलीकरोति तन्नलं दैवम्

7. निम्नाङ्कितेषु प्रकृतिपाठः कः?
(A) मालापाठः (B) रेखापाठः
(C) पदपाठः (D) दण्डपाठः

8. निचृद्गायत्रीच्छन्दसि कियन्तो वर्णा भवन्ति पिङ्गलदिशा?
(A) 22 (B) 23
(C) 24 (D) 25

9. 'रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्य'- इति कुत्र वर्णितम्?
(A) सूर्यसूक्ते (B) यमयमीसूक्ते
(C) रात्रिसूक्ते (D) कालसूक्ते

10. कठारण्यकं केन वेदेन सम्बद्धं वर्तते?
(A) ऋग्वेदेन (B) शुक्लयजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

11. 'इदं विद्यास्थानं व्याकरणस्य कार्त्स्न्य स्वार्थसाधकञ्च'- इत्युक्तिः कुत्र प्राप्यते ?
(A) पाणिनीयशिक्षायाम् (B) निरुक्ते
(C) ऋकप्रातिशाख्ये (D) सिद्धान्तकौमुद्याम्

12. 'ओरायन'- ग्रन्थस्य लेखकः कः?
(A) शङ्करपाण्डुरङ्गपण्डितः
(B) बालगङ्गाधरतिलकः
(C) शङ्करबालकृष्णदीक्षितः
(D) विन्टरनित्सः

13. 'दमूना' इति कस्य देवस्य विशेषणम् ?
(A) इन्द्रस्य (B) अग्नेः
(C) वरुणस्य (D) रुद्रस्य

14. 'य एक इद्धव्यः चर्षणीनामिन्द्रम् - मन्त्रेऽस्मिन् कस्यार्षम्?
(A) भरद्वाजस्य (B) वामदेवस्य
(C) अत्रेः (D) कण्वस्य

15. धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तं च वर्जयित्वार्थवच्छब्दस्वरूपं किम्भवति?

(A) पदसंज्ञम् (B) प्रातिपदिकसंज्ञा
(C) संहितासंज्ञम् (D) घिसंज्ञम्

16. 'द्रोणो व्रीहिः' इत्यत्र 'द्रोण' शब्दोत्तरप्रथमा विभक्तिः कस्मिन्नर्थे भवति?
(A) प्रातिपदिकार्थमात्रे
(B) लिङ्गमात्राधिक्ये
(C) परिमाणमात्राधिक्ये
(D) वचनमात्रे

17. 'गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता स णौ' इति सूत्रस्य प्रत्यवसानार्थे किमुदाहरणम् ?
(A) आशयच्चामृतं देवान्
(B) वेदमध्यापयद्विधिम्।
(C) आसयत् सलिले पृथ्वीम्
(D) वेदार्थं स्वानवेदयत्

18. 'नमस्कुर्मो नृसिंहाय' इत्यत्र अप्रयुज्यमानस्य तुमुनः कर्मणि चतुर्थीविधायकम् अनुशासनं किमस्ति?
(A) तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या
(B) तुमर्थाच्च भाववचनात्
(C) क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः
(D) नमः-स्वस्ति-स्वाहा-स्वधाऽलं-वषड्योगाच्च

19. अष्टौ च दश चेति विग्रहे 'अष्टादश' इति प्रयोगे आकारान्तादेशः केन विधीयते?
(A) 'आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः' इत्यनेन
(B) 'अष्टनः कपाले हविषि' इत्यनेन
(C) 'विभाषा चत्वारिंशत्प्रभृतौ सर्वेषाम्' इत्यनेन
(D) 'द्र्यष्टनः सङ्ख्यायामबहुव्रीह्यशीत्योः इत्यनेन

20. 'परार्थाभिधानं वृत्तिः ' इति वृत्तिलक्षणं कस्मिन् प्रयोगे न प्रवर्तते?
(A) विद्यते (B) कुम्भकारः
(C) औपगवः (D) पीताम्बरः

21. 'हरि-शब्दस्य प्रकाशः' 'इतिहरि' इत्यत्र 'अव्ययं विभक्ति'-इत्यादिना कस्मिन्नर्थेऽव्ययीभावः?
(A) विभक्त्यर्थे (B) शब्दप्रादुर्भावे
(C) यौगपद्ये (D) अर्थाभावे

22. 'यतश्च निर्धारणम् इति सूत्रेण जातिविशिष्टसमुदायादेकस्य निर्धारणे विहितायाः षष्ठ्याः किमुदाहरणम्?
(A) गवां कृष्णा बहुक्षीरा
(B) गच्छतां धावन् शीघ्रः
(C) नृणां द्विजः श्रेष्ठः
(D) छात्राणां मैत्रः पटुः

23. चीनीभाषा निम्नलिखितेषु कस्मिन् वर्गे वर्तते?
(A) श्लिष्टयोगात्मके (B) अश्लिष्टयोगात्मके
(C) प्रश्लिष्टयोगात्मके (D) अयोगात्मके

24. ग्रीकभाषा कस्य परिवारस्य भाषा वर्तते?
(A) सामीपरिवारस्य
(B) हामीपरिवारस्य
(C) भारोपीयपरिवारस्य
(D) वान्तूपरिवारस्य

25. निम्नलिखितासु का भाषा 'केन्तुम्' वर्गस्य नास्ति?
(A) ग्रीकभाषा (B) केल्टिकभाषा
(C) जर्मनभाषा (D) रूसीभाषा

26. 'अश्वः' इत्यस्य शब्दस्य 'अवेस्ता' भाषायां किं रूपं विद्यते?
(A) अश्वः (B) अश्वो
(C) अश्पः (D) अस्पो

27. सञ्ज्ञासञ्ज्ञिसम्बन्धप्रतीतिः किमुच्यते न्यायनये?
(A) अनुमितिः (B) उपमितिः
(C) प्रत्यक्षम् (D) शब्दः

28. तुरी-वेमादिकं न्यायनये पटस्य कीदृशं कारणं मन्यते?
(A) निमित्तकारणम्
(B) समवायिकारणम्
(C) समवाय्यसमवायिकारणम्
(D) असमवायिकारणम्

29. तर्कसङ्ग्रहदिशा अन्वय-व्यतिरेकदृष्टान्तरहितो हेत्वाभासः कः?
(A) अनुपसंहारी (B) साधारणः
(C) असाधारणः (D) विरुद्धः

30. 'वह्निरनुष्णो द्रव्यत्वात्' इत्युदाहरणं कस्य हेत्वाभासस्य?
(A) आश्रयासिद्धहेत्वाभासस्य
(B) व्याप्यत्वासिद्धहेत्वाभासस्य
(C) स्वरूपासिद्धहेत्वाभासस्य
(D) बाधितहेत्वाभासस्य

31. वेदान्तसारानुसारं 'नित्यनैमित्तिकप्रायश्चित्तोपासनानां त्ववान्तरफलम्' किम्?
(A) स्वर्गलोकप्राप्तिः (B) पितृलोकसत्यलोकप्राप्तिः
(C) शरीरशुद्धिः (D) पापकर्मफलविनाशः

32. वेदान्तसारस्य 'विद्वन्मनोरञ्जनी' इति नाम्याः टीकायाः रचयिता कोऽस्ति?
(A) सदानन्दः (B) नृसिंह सरस्वती
(C) रामतीर्थः (D) कृष्णतीर्थः

33. विज्ञानमयकोशः किं भवति?
(A) निर्गुणं ब्रह्म (B) सगुणं ब्रह्म
(C) ज्ञानेन्द्रियसहिता बुद्धिः (D) ज्ञानेन्द्रियसहितं मनः

34. 'अखण्डवस्त्वनवलम्बनेन चित्तवृत्तेर्नंदरा' स्थितिरियं समाधेः कीदृशो विघ्नः?
(A) विक्षेपः (B) कषायः

(C) लयः (D) रसास्वादः

35. सांख्यकारिकानुसारं सृष्टेरुत्पत्तिः कस्माद् भवति?

(A) असतः (B) सतः

(C) नासतः न सतः (D) पुरुषात्

36. पुरुषस्य सत्ता कस्मात् सिद्ध्यति?

(A) कारणभावात् (B) कार्यभावात्

(C) भोक्तृभावात् (D) उत्पत्तिभावात्

37. सांख्यदर्शनानुसारं करणं कतिविरधं वर्ते ?

(A) चतुर्दशविधम् (B) षोडशविधम्

(C) एकादशविधम् (D) त्रयोदशविधम्

38. 'स्वालक्षण्यं वृत्तिस्त्रयस्य सैषा भवत्यसामान्या इत्यस्यां पङ्क्तौ 'त्रय' इत्यनेन पदेन किमभिरधीयते?

(A) बुद्धिः अहङ्कारः मनश्च

(B) मनः ज्ञानेन्द्रियाणि कर्मेन्द्रियाणि च

(C) पञ्चतन्मात्राणि पञ्चमहाभूतानि पञ्चप्राणाश्च

(D) पुरुषः अव्यक्तम् व्यक्तम् च

39. समीचीनां तालिकां चिनुत-

(a) मेघदूतम् (i) भट्टनारायणः

(b) रत्नावली (ii) अश्वघोषः

(c) वेणीसंहारः (iii) कालिदासः

(d) बुद्धचरितम् (iv) हर्षः

	(a)	(b)	(c)	(d)
(A)	(iv)	(iii)	(ii)	(i)
(B)	(iii)	(i)	(ii)	(iv)
(C)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(D)	(iii)	(iv)	(ii)	(i)

40. बुद्धचरिते सिद्धार्थस्य हृदि संवेगोत्पत्तौ प्रथमं कारणं किं वर्णितम्?

(A) रुग्णस्य दर्शनम् (B) वृद्धस्य दर्शनम्

(C) मृतस्य दर्शनम् (D) उद्यानस्य दर्शनम्

41. दशकुमारचरिते सुरतमज्याः उपाख्यानमस्ति-

(A) राजवाहनचरिते

(B) अपहारवर्मचरिते

(C) पुष्पोद्भवचरिते

(D) उपहारवर्मचरिते

42. शिशुपालवधस्य सर्गसंख्या भवति-

(A) ऊनविंशतिः (B) विंशतिः

(C) एकविंशतिः (D) द्वाविंशतिः

43. एषु किं खण्डकाव्यं भवति?

(A) मेघदूतम् (B) शिशुपालवधम्

(C) कादम्बरी (D) किरातार्जुनीयम्

44. अभिज्ञानशाकुन्तले धीवरवृत्तान्तः कस्य उदाहरणम् ?

(A) प्रवेशकस्य (B) विष्कम्भकस्य

(C) अङ्कावतारस्य (D) अङ्कमुखस्य

45. मृच्छकटिके चारुदत्तस्य पुत्रः अस्ति-

(A) चन्दनकः (B) रोहितः

(C) रोहसेनः (D) आर्यकः

46. 'नारिकेलफलसम्मितं बचः" इति कस्य कवेः विषये प्रोक्तम्?

(A) माघस्य (B) भारवेः

(C) कालिदासस्य (D) श्रीहर्षस्य

47. साहित्यदर्पणानुसारेण एतेषु कस्य रूपकमध्ये गणना नास्ति?

(A) प्रकरणस्य (B) त्रोटकस्य

(C) व्यायोगस्य (D) भाणस्य

48. साहित्यदर्पणे "कुन्देन्दुसुन्दरच्छायः" इति कस्य रसस्य वर्णः वर्णितः?

(A) वीरस्य (B) हास्यस्य

(C) श्रृगांरस्य (D) शान्तस्य

49. साहित्यदर्पणे साकल्येन कतिप्रकारा लक्षणा प्रोक्ता?

(A) अशीतिः (B) षोडश

(C) द्वात्रिंशत् (D) अष्ट

50. साहित्यदर्पणानुसारेण रिक्तं स्थानं पूरयत- स्याद् योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।"

(A) लक्षणा (B) अभिधा

(C) व्यञ्जना (D) वाक्यम्

नेट तृतीय प्रश्नपत्र नवम्बर-2017

1. 'मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति' इति कस्य ऋग्वेदीयसूक्तस्य अंशः?

(A) अग्निसूक्तस्य (B) वाक्सूक्तस्य

(C) इन्द्रसूक्तस्य (D) नासदीयसूक्तस्य

2. 'हिरण्यगर्भसूक्तम्' ऋग्वेदस्य कस्मिन् मण्डले आयाति?

(A) प्रथमे (B) अष्टमे

(C) नवमे (D) दशमे

3. ऋग्वेदस्य भाष्यकारः कः?

(A) महीधरः (B) स्कन्दस्वामी

(C) हलायुधः (D) भट्टभास्करः

4. 'व्रात्यकाण्डम्' कस्मिन् वेदे प्राप्यते?

(A) अथर्ववेदे (B) सामवेदे

(C) ऋग्वेदे (D) यजुर्वेदे

5. शुनःशेपस्य आख्यानं कुत्र प्राप्यते ?

(A) ऐतरेयब्राह्मणे (B) तैत्तिरीयब्राह्मणे

(C) शतपथब्राह्मणे (D) ताण्ड्यब्राह्मणे

6. वेदस्य नासिकास्थानीयमङ्गं किमस्ति ?
(A) शिक्षा (B) ज्योतिषम्
(C) निरुक्तम् (D) व्याकरणम्

7. 'यज्ञस्य देवमृत्विजम् ' इत्यत्र देवम् इति पदं कीदृशमस्ति ?
(A) आद्युदात्तम् (B) मध्योदात्तम्
(C) अन्तोदात्तम् (D) सर्वानुदात्तम्

8. स्वरितपरे अनुदात्ताः किमुच्यन्ते ?
(A) उदात्ताः (B) स्वरिताः
(C) प्रचयाः (D) अनुदात्ताः

9. 'भवाति' इति कस्मिन् लकारे रूपमस्ति ?
(A) लेट् (B) लोट्
(C) लङ् (D) लुङ्

10. सामवेदस्य ब्राह्मणमस्ति ?
(A) गोपथब्राह्मणम्
(B) शांखायनब्राह्मणम्
(C) संहितोपनिषद्ब्राह्मणम्
(D) शतपथ

11. बृहदारण्यकम् केन वेदेन सम्बद्धमस्ति ?
(A) ऋग्वेदेन (B) यजुर्वेदेन
(C) सामवेदेन (D) अथर्ववेदेन

12. 'अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाड्यः' इत्युक्तिः कुत्र विद्यते ?
(A) मुण्डकोपनिषदि (B) कठोपनिषदि
(C) बृहदारण्यकोपनिषदि (D) छन्दोग्योपनिषदि

13. अतिमुक्तिः कुत्र वर्णिता ?
(A) ईशावास्योपनिषदि
(B) ऐतरेयोपनिषदि
(C) बृहदारण्यकोपनिषदि
(D) प्रश्नोपनिषदि

14. 'आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत्' - इत्युक्तिः कुत्र प्राप्यते ?
(A) ईशावास्योपनिषदि
(B) तैत्तिरीयोपनिषदि
(C) ऐतरेयोपनिषदि
(D) मुण्डकोपनिषदि

15. 'अन्नं बहु कुर्वीत'-अयमुपदेशः कुत्र प्राप्यते ?
(A) ईशावास्योपनिषदि
(B) तैत्तिरीयोपनिषदि
(C) छान्दोग्योपनिषदि
(D) प्रश्नोपनिषदि

16. 'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः'- इत्यत्र 'न' कीदृशः ?
(A) उपमार्थीयः (B) प्रतिषेधार्थीयः
(C) विचिकित्सार्थीयः (D) समुच्चयार्थः

17. 'पुरुषः इति पदस्य निर्वचने किं नास्ति ?
(A) पुरिषादः (B) परुषः
(C) पुरिशयः (D) पूरयतेः

18. 'धर्मसूत्रम्'- केन वेदाङ्गेन सह सम्बद्धमस्ति ?
(A) शिक्षावेदाङ्गेन (B) कल्पवेदाङ्गेन
(C) व्याकरणवेदाङ्गेन (D) निरुक्तवेदाङ्गेन

19. निरुक्तदिशा पदजातानि कति सन्ति ?
(A) त्रीणि (B) चत्वारि
(C) पंच (D) षट्

20. अथर्ववेदस्य किं गृह्यसूत्रम् अस्ति ?
(A) खादिरगृह्यसूत्रम्
(B) कात्यायनगृह्यसूत्रम्
(C) कौशिकगृह्यसूम्
(D) वैखानसगृह्यसूत्रम्

21. ऋग्वेदप्रातिशाख्यस्य प्रवक्ता कः अस्ति ?
(A) शौनकः (B) उवटः
(C) कात्यायनः (D) अनन्तभट्टः

22. 'स्वारान्तरे व्यञ्जनानि' कस्वाङ्गं भवान्ति ऋक्प्रातिशाख्यमते?
(A) पूर्वस्य (B) उत्तरस्य
(C) अपूर्वस्य (D) मध्यस्य

23. ऋक्प्रातिशाख्यदिशा व्यञ्जनानामाद्याः किं भवन्ति ?
(A) अन्तःस्थाः (B) ऊष्माणः
(C) सन्ध्यक्षराणि (D) स्पर्शा

24. ऋक्प्रातिशाख्यमतेन वक्ष्यमाणेषु सोष्मवर्णः कः ?
(A) ह (B) श
(C) ष (D) झ

25. 'आष्टिषेणः' इत्यत्र कियान् स्वरभक्तिकालः ?
(A) एकमात्राकालः (B) अर्धमात्राकालः
(C) पादमात्राकालः (D) द्विमात्राकालः

26. पाणिनीयशिक्षानुसारं स्वरितस्वरोच्चारणकाले हस्तप्रदर्शनविधिः कुत्र विधातव्यः ?
(A) कर्णमूले (B) हृदि
(C) मूर्ध्नि (D) सर्वास्ये

27. कथं ज्ञायते महाभाष्यदृष्ट्या 'सिद्धः शब्दो ऽर्थः सम्बन्धश्चे' ति?
(A) अर्थक्रियार्थिभ्यः (B) लोकतः
(C) शास्त्रतः (D) कोशतः

28. 'पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च ।
वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन ॥'
अनया कारिकया भर्तृहरिः किं बोधितवान्?
(A) वर्णानां सत्यत्वम् (B) पदानां सत्यत्वम्
(C) वाक्यस्य सत्यत्वम् (D) सर्वेषां सत्यत्वम्

29. 'एध्' धातोः लुङि उत्तमपुरुषैकवचने कः प्रयोगः?
(A) ऐधिपि (B) एधिषीय

(C) ऐधिष्ये (D) ऐधे

3 0. 'भवती' त्यर्थे 'यत्' प्रत्ययान्तः कः प्रयोगः?

(A) भव्यम् (B) भव्यः

(C) भाव्यम् (D) भाव्य

31. एषु 'मतुप्' प्रत्ययान्तोऽशुद्धः प्रयोगोऽन्वेष्टव्यः ?

(A) यववान् (B) ज्ञानवान्

(C) विद्यावान् (D) लक्ष्मीवान्

32. स्त्रियां सीमन्' शब्दस्य प्रथमायां कः प्रयोगो भवति?

(A) सीमन् (B) सीम्नी

(C) सीमा (D) सीमना

33. 'वृद्धो जनो दुःखशतानि भुङ्क्ते' इत्यत्रात्मनेषद- विधायकं सूत्रं किम्?

(A) भावकर्मणोः

(B) अकर्मकाच्च

(C) कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि

(D) भुजोऽनवने

34. 'अख्यातोपयोगे' इत्यत्र प्रयुक्तस्योपयोगशब्दस्य कोऽर्थः?

(A) वक्ता

(B) नियमपूर्वकविद्यास्वीकारः

(C) नियतकालं भृत्या स्वीकरणम्

(D) अन्यकर्तृकोऽभिलापः

35. 'अरबी' भाषा कस्य भाषापरिवारस्य भाषा अस्ति?

(A) सामीपरिवारस्य (B) हामीपरिवारस्य

(C) काकेशीपरिवारस्य (D) हित्तीपरिवारस्य

36. कलिङ्गराजखारवेलस्य उल्लेखः कस्मिन्नभिलेखे वर्तते?

(A) एहोल-शिलालेखे (B) हाथीगुम्फालेखे

(C) गिरनारलेखे (D) जूनागढलेखे

37. निम्नलिखितेषु कस्यैकोऽभिलेखो यूनानीलिप्यां वर्तते?

(A) समुद्रगुप्तस्य (B) पुलकेशि

(C) अशोकस्य (D) रुद्रदाम्नः

38. अधोलिखितानां 'केन सह कस्य सम्बन्ध' इति समीचीनां तालिकां चिनुत ।

(क) नैयायिकाः (i) प्रामाण्यं स्वतोऽप्रामाण्यं परतः

(ख) पूर्वमीमांसकाः (ii) प्रामाण्याप्रामाण्ये परतः

(ग) जैनाः (iii) अप्रामाण्यं स्वतः प्रामाण्यं परतः

(घ) बौद्धाः (iv) प्रामाण्याप्रामाण्ये स्वतः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(ii)	(i)	(iv)	(iii)
(B)	(iii)	(iv)	(i)	(ii)
(C)	(ii)	(iii)	(i)	(iv)
(D)	(ii)	(iv)	(i)	(iii)

39. तर्कसंग्रहदीपिकायामीश्वरस्य लक्षणं किमुक्तम्?

(A) ज्ञानाधिकरणत्वम्

(B) नित्यज्ञानाधिकरणत्वम्

(C) प्रत्यक्षग्राह्यत्वम्

(D) सुखादिमत्त्वम्

40. न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीरीत्याऽनुमितौ व्याप्तिज्ञनं किम्भवति?

(A) व्यापारः (B) परामर्शः

(C) पक्षः (D) करणम्

41. 'वेदप्रतिपाद्यः प्रयोजनवदर्थो धर्मः' इति धर्मलक्षणे लौगाक्षिभास्करेण 'अर्थ' पदोपादानं किमर्थम्?

(A) स्वर्गादिप्रयोजनेऽतिव्याप्तिवारणाय

(B) भोजनादावतिव्याप्तिवारणाय

(C) श्येनयागादावतिव्याप्तिवारणाय

(D) हस्तप्रक्षालनादावतिव्याप्तिवारणाय

42. बौद्धानां कति प्रस्थानानि प्रसिद्धानि सन्ति ?

(A) चत्वारि (B) त्रीणि

(C) पञ्च (D) षड्

43. बौद्धदर्शनानुसारं चित्तस्कन्धः कतिरविधः?

(A) चतुर्विधः (B) पञ्चविधः

(C) षड्विधः (D) सप्तविधः

44. 'ईक्षतेर्नाशब्दम्' इत्वस्मिन् सूत्रे निम्नलिखितेषु शाङ्करभाष्यानुसारं किं मतं निरस्यते ?

(A) ब्रह्म जगतः कारणमस्ति

(B) प्रधानं जगतः कारणमस्ति

(C) ब्रह्म सर्वज्ञमस्ति सर्वकारणात्

(D) ईक्षणशक्तिर्ब्रह्मणि नास्ति

45. 'तद् ब्रह्म सर्वज्ञं सर्वशक्तिजगदुत्पत्तिस्थितिलयकारणम्' इत्यवबोधः शाङ्करभाष्यानुसारं कस्माद् भवति ?

(A) प्रत्यक्षदर्शनात् (B) वेदान्तशास्त्रात्

(C) जगद्वैचित्र्यात् (D) कारणकार्यभावात्

46. 'दृग्दर्शनशक्त्योरेकात्मता' इति लक्षणं योगसूत्रे कस्य विद्यते?

(A) अविद्यायाः (B) अभिनिवेशस्य

(C) अस्मितायाः (D) रागस्य

47. वेदान्तसारानुसारं अनुबन्धे किं न गण्यते ?

(A) अधिकारी (B) विषयः

(C) साधनानि (D) सम्बन्धः

48. वेदान्तदर्शनानुसारं व्यष्ट्युपहितं चैतन्यं किमुच्यते?

(A) ईश्वरः (B) प्राज्ञः

(C) आत्मा (D) ब्रह्म

49. 'पुद्गलः' इति शब्दः कस्य दर्शनस्य वर्तते?

(A) बौद्धदर्शनस्य

(B) जैनदर्शनस्य

(C) सांख्यदर्शनस्य

(D) वेदान्तदर्शनस्य

50. जिनदत्तसूरिमते जिनः को भवितुमर्हति ?

(A) वेदवेदाङ्गविद् (B) अष्टादशदोषेभ्यो
(C) तत्त्वज्ञानी (D) जैनदर्शने दीक्षितः

51. एषु किं रामायणाश्रितं न भवति ?

(A) पञ्चरात्रम् (B) उत्तररामचरितम्
(C) महानाटकम् (D) रघुवंशम्

52. एषु किं पर्व महाभारते नास्ति ?

(A) सभापर्व (B) भीमपर्व
(C) वनपर्व (D) शल्यपर्व

53. एषु किं महापुराणम् अस्ति ?

(A) कूर्मपुराण (B) साम्बपुराण
(C) एकाम्रपुराण (D) आदित्यपुराण

54. काव्यमीमांसायां प्रथमेऽध्याये रीतिनिर्णयविषये अस्य नाम अस्ति?

(A) सुवर्णनाभः (B) चित्राङ्गदः
(C) प्रचेतायनः (D) भरतः

55. 'त्वयि दृष्ट एव तस्या निर्वाति मनो मनोभवज्वलितम्। आलोके हि हिमांशोर्विकसति कुसुमं कुमुद्वत्याः॥ अत्र मनसः प्रतिबिम्बनं केन सह वर्तते ' ?

(A) हिमांशुना सह (B) कुसुमेन सह
(C) कुमुद्वत्या सह (D) मनोभवेन सह

56. राघवविरहज्वालासन्तापितसह्यशैलशिखरेषु ।
शिशिरे सुखं शयानाः कपयः कुप्यन्ति पवनतनयाय ॥
रसगंगाधरे प्रथमे आनने श्लोकोऽयमुदाहरणं भवति?

(A) उत्तमोत्तमकाव्यस्य (B) उत्तमकाव्यस्य
(C) मध्यमकाव्यस्य (D) अधमकाव्यस्य

57. 'सुवर्णपुष्पां पृथिवीं चिन्वन्ति पुरुषास्त्रयः' इत्यादिश्लोकः ध्वन्यालोके प्रथमे उद्योते कस्य उदाहरणं भवति ?

(A) अविवक्षितवाच्यस्य
(C) आक्षेपालङ्कारस्य
(B) विवक्षितान्यपरवाच्यस्य
(D) विशेषोक्त्यलङ्कारस्य

58. दशरूपकमते मुखसन्धेः अङ्गानि भवन्ति ?

(A) एकादश (B) द्वादश
(C) त्रयोदश (D) चतुर्दश

59. धनञ्जयमते भूयसे फललाभाय औत्सुक्यमात्रं भवति ?

(A) आरम्भः (B) यत्नः
(C) प्राप्त्याशा (D) फलागमः

60. कालक्रमानुसारं तालिकां चिनुत ?

(a) जगन्नाथः (b) भरतः
(c) विश्वनाथ-कविराजः (d) मम्मटः

(A) b d c a
(B) b d a c
(C) b a c d
(D) a b c d

61. धर्मादिसाधनोपायः सुकुमारक्रमोदितः ।
काव्यबन्धोऽभिजातानां हृदयाह्लादकारकः ॥ अत्र कुन्तकेन किं प्रतिपादितम् ?

(A) काव्यलक्षणम् (B) काव्यहेतुः
(C) काव्यप्रयोजनम् (D) काव्यवैविध्यम्

62. अधस्तनयुग्मानां समीचीनमेलनतालिकां चिनुत-

(क) चीयते बालिशस्यापि सत्क्षेत्रपतिता कृषिः	1 मृच्छकटिकम्
(ख) आसीत् स दोलाचलचित्तवृत्तिः	2 कर्णभारम्
(ग) हृदये गृह्यते नारी यदीदं नास्ति गम्यताम्	3 रघुवंशम्
(घ) हुतं च दत्तं च तथैव तिष्ठति	4 मुद्राराक्षसम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(4)	(1)	(2)	(3)
(B)	(4)	(2)	(1)	(3)
(C)	(3)	(4)	(1)	(2)
(D)	(4)	(3)	(1)	(2)

63. 'हृतेऽपि भारे महतस्त्रपाभरादुवाह दुःखेन भृशानतं शिरः' – शिशुपालवधे महाकाव्ये इयं वर्णना केन सम्बद्धा ?

(A) यमवाहनमहिषेण (B) वरुणेन
(C) कुबेरेण (D) इन्द्रेण

64. अभिज्ञानशाकुन्तले दुष्यन्तस्य पुरोहितः भवति ?

(A) वातायनः (B) सोमरातः
(C) गालवः (D) मारीचः

65. मुद्राराक्षसे चन्द्रगुप्तस्य अन्तःपुरचरः कञ्चुकी भवति ?

(A) सिद्धार्थकः (B) चन्दनदासः
(C) वैहीनरिः (D) भागुरायणः

66. दशकुमारचरिते अष्टमे उच्छ्वासे विदर्भदेशस्य भोजवंशभूषणस्य कस्य राज्ञः वर्णनमस्ति ?

(A) पुण्यवर्मणः (B) मानसारस्य
(C) राजहंसस्य (D) प्रहारवर्मणः

67. 'तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः ' रघुवंशेऽयं पद्यांशः केन सम्बद्धः ?

(A) श्रीरामेण (B) रघुणा
(C) अजेन (D) दिलीपेन

68. 'मदेकपुत्रा जननी जरातुरा' नैषधचरिते इयमुक्तिर्भवति ?

(A) दमयन्त्याः (B) हंसस्य
(C) भीमस्य

69. 'हर्षचरितम्' कतिषु उच्छ्वासेषु रचितमस्ति ?

(A) त्रिषु (B) पञ्चसु

(C) सप्तसु (D) अष्टसु

70. उत्तररामचरिते 'मैत्रावरुणिः' पदं कस्य कृते प्रयुक्तम्?

(A) विश्वामित्रस्य कृते (B) वसिष्ठस्य कृते

(C) अष्टावक्रस्य कृते (D) ऋष्यश्रृङ्गस्य कृते

71. 'अलब्धलाभार्था लब्धपरिरक्षणी' इत्यादि-विशेषणानि कौटिलीयार्थशास्त्रे कां लक्षयन्ति ?

(A) भेदनीतिम् (B) दण्डनीतिम्

(C) वार्ताम् (D) आन्वीक्षिकीम्

72. 'संख्यातार्थेषु कर्मसु नियुक्ता ये यथादिष्टमर्थं सविशेषं वा कुर्युः तानमात्यान् कुर्वीत'- कौटिलीयार्थशास्त्रे उल्लिखितमेतत् मरतं भवति ?

(A) भारद्वाजस्य (B) विशालाक्षस्य

(C) बाहुदन्तीपुत्रस्य (D) पिशुनस्य

73. याज्ञवल्क्यमते पैतामहे द्रव्ये अनेकपितृकपुत्राणां भागविभागः कथं भवति ?

(A) पितृतः (B) कामतः

(C) समभावतः (D) ज्येष्ठकनिष्ठभावतः

74. मनुमते वैश्यस्य मेखला कीदृशी कार्या ?

(A) मुञ्जमयी (B) मूर्वामयी

(C) शणतान्तवी (D) कुशमयी

75. मनुमते एतेषां कस्य मात्रा नृपस्य निर्माणे न गृहीता ?

(A) इन्द्रस्य (B) चन्द्रस्य

(C) अश्विनोः (D) अनिलस्य

नेट प्रश्नपत्र जुलाई-2018

1. शांखायन-शाखायाः सम्बन्धः वर्तते-

(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन

(C) सामवेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

2. 'द्राह्यायण श्रौतसूत्रमू' कस्य वेदस्य विद्यते?

(A) अथर्ववेदस्य (B) कृष्णयजुर्वेदस्य

(C) ऋग्वेदस्य (D) सामवेदस्य

3. 'एतद्वचो जरितर्मापिमृष्ठा आयत्तेघोषानुत्तरा युगानि'- इति मन्त्रांशो वर्तते-

(A) पुरूरवा-उर्वशीसूक्ते (B) सरमा-पणिसूक्ते

(C) विश्वामित्र-नदीसूक्ते (D) यम-यमीसूक्ते

4. अधस्तनेषु उचितसम्बन्धयुतं विकल्पं चिनुत-

(A) "यो रध्रस्य चोदिता यः कृशस्य" - इन्द्रदेवता

(B) "राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्"- विष्णुसूक्तम्

(C) "विश्वं प्रतीची सप्रथः उदस्थात्" - सावित्रीसूक्त

(D) "अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्"- रुद्रदेवता

5. यो वाघते ददाति सूनरं वसु'- अत्र 'वाघते' पदस्य कोऽर्थः-

(A) यज्ञकत्रे (B) राज्ञे

(C) बाधकाय (D) सूर्याय

6. नामाख्याताभ्यां वियुक्ता अपि उपसर्गाः वाचकाः भवन्तीति कः मन्यते-

(A) वार्ष्यायणिः (B) शाकटायनः

(C) गार्ग्यः (D) कौत्सः

7. वेदेष्वेव प्रयुज्यते प्रत्ययः-

(A) अध्यै (B) तुमुन

(C) क्त्वा (D) क्त

8. "यस्मान्न ऋते विजयन्ते" - इत्यत्र 'यस्मात्' पदेन कः गृह्यते -

(A) विष्णुः (B) रुद्रः

(C) इन्द्रः (D) वरुणः

9. ऋग्वेदस्य कस्मिन् मण्डले ' विश्वामित्रनदीसंवादसूक्तम्' विद्यते-

(A) द्वितीये (B) दशमे

(C) तृतीये (D) अष्टमे

10. परिशिष्टभागमतिरिच्य निरुक्ते कति अध्यायाः सन्ति-

(A) सप्त (B) द्वादश

(C) पञ्च (D) चतुर्दश

11. 'प्रचोद्यात्' इति कस्मिन् लकारे रूपमस्ति-

(A) लिङ् (B) लोट्

(C) लट् (D) लेट्

12. 'स जातो अत्यरिच्यत'- इत्यत्र ' सः ' पदेन कः गृह्यते-

(A) इन्द्रः (B) पुरुषः

(C) प्रजापतिः (D) विष्णुः

13. " इत्याख्यस्य ग्रन्थस्य प्रणेता वैदेशिको विद्वान कः-

(A) एच.टी. कोलब्रुक् (B) एफ. मैक्समूलरः

(C) ए. मैक्डानलः (D) एच. विल्सनः

14. सामवेदीयाः षड्ज-मध्यम-पञ्चमस्वरा त्रैस्वर्यस्वरे अन्तर्भवन्ति-

(A) अनुदत्ते (B) स्वरिते

(C) प्रचये (D) उदत्ते

15. ' बृहती '-छन्दसि अक्षराणां संख्या विद्यते-

(A) 48 (B) 28

(C) 36 (D) 32

16. दर्शपौर्णमासेष्टियागे अनुयाजानां संख्या विद्यते-

(A) पञ्च (B) त्रयः

(C) एकादश (D) अष्ट

17. 'वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वयाः '- इत्यत्र 'नु' विद्यते-

(A) उपमार्थीयः (B) हेत्वपदेशार्थीयः

(C) अनुप्रश्नार्थीयः (D) अवकुत्सार्थीयः

18. 'नियतवाचो युक्तयो नियतानुपूर्व्या भवन्ति'- इति कथन वर्तते-

(A) शाकटायनस्य (B) औदुम्बरायणस्य

(C) गार्ग्यस्य (D) कौत्सस्य

19. ऋक्संहितायाः समुपलब्धभाष्येषु प्रथमो भाष्यकारः विद्यते-

(A) सायणः (B) आनन्दतीर्थः

(C) स्कन्दस्वामी (D) वेङ्कटमाधव

20. ऋक्प्रातिशाख्यस्य पटलसंख्या कियती-

(A) 16 (B) 14

(C) 12 (D) 18

21. अथर्ववेदेन सम्बद्धा शिक्षा का वर्तते-

(A) लोमशी शिक्षा (B) माण्डूकी शिक्षा

(C) गौतमी शिक्षा (D) केशवी शिक्षा

22. 'शिवसंकल्पसूक्तम्' माध्यन्दिनसंहितायां कस्मिन् अध्याये समुपलभ्यते-

(A) षोडशे (B) चतुस्त्रिंशे

(C) एकत्रिंशे (D) चत्वारिंशे

23. भर्तृहरिदिशा को ब्रह्मामृतमश्नुते ?

(A) शब्दप्रवृत्तितत्त्वज्ञः

(B) पञ्चविंशतितत्त्वज्ञः

(C) प्रमाणादिषोडशपदार्थनिष्णातः

(D) याज्ञिकः

24. परेषामसमाख्येयं मणिरूप्यादिविज्ञानं भर्तृहरिदिशा कस्माज्ञायते?

(A) शाब्दात् (B) अनुमानाद

(C) अभ्यासाद (D) उपमानात्

25. "एध्" धातोः लुङ्लकारे प्रथमपुरुषबहुवचने कः प्रयोगः ?

(A) ऐधन्त (B) ऐधिष्ट

(C) ऐधिषत (D) ऐधत

26. 'लोटो लङ्वत्' इति सूत्रप्रवृत्तिः कस्मिन् प्रयोगे जाता?

(A) अभवः (B) भवाम

(C) भवेताम् (D) अभविष्यत्

27. 'महद् यशो यस्य सः' इति विग्रहे बहुव्रीहिसमासे कः प्रयोगः ?

(A) महायशः (B) महायशसः

(C) महायशाः (D) महायशष्कः

28. 'कुगतिप्रादयः' इति समासविधायकसूत्रस्य किमुदाहरणं नास्ति?

(A) पटपटाकृत्य (B) कुम्भकारः

(C) सुपुरुषः (D) हस्तेकृत्य

29. ' प्रगृह्यम्' इत्यत्र कः कृत्यप्रत्ययः ?

(A) ण्यत् (B) यत्

(C) क्यप् (D) तथव्यत्

30 'विद्वांसः सन्ति अस्मिन्' इति विग्रहे को मत्वर्थीयः प्रयोगः ?

(A) विद्वद्वान् (B) विदुष्मान्

(C) विद्वत्वान् (D) विद्वत्मान्

31. या स्वयमेवाध्यापिका सा किमुच्यते?

(A) उपाध्यायानी (B) उपाध्याया

(C) आचार्यानी (D) आचार्याणी

32. 'वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः ' इत्यात्मनेपद्विधायकसूत्रस्य सर्गार्थक-क्रम्' धातोरुदाहरणं चिनुत।

(A) अध्ययनाय क्रमते (B) ऋचि क्रमते बुद्धिः

(C) क्रमन्तेऽस्मिन् (D)शास्त्राणि आक्रमते सूर्यः

33. "बोधयति पदम्" इत्यत्र परस्मैपदविधायकं किमस्ति-पाणिनिसूत्रम?

(A) विभाषाकर्मकात्

(B) निगरणचलनार्थेभ्यश्च

(C) बुध-युध-नश-जनेङ्-प्र-द्रु-स्रुभ्यो णेः

(D) अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात्

34. अधोलिखितानां केन सह कस्य सम्बन्धः? इति समीचीनां तालिकां चिनुत।

(क) अपवर्गे तृतीया (1) ओदनं भुञ्जानो विषं भुङ्क्ते।

(ख) तथायुक्तं चाऽनीप्सितम् (2) प्रद्युम्नः कृष्णात् प्रति ।

(ग) धारेरुत्तमर्णः (3) क्रोशेन अनुवाकोऽधीतः ।

(घ) प्रतिनिधि-प्रतिदाने च यस्मात् (4) भक्ताय धारयति मोक्षंहरिः।

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(3),	(1),	(4),	(2)
(B)	(3),	(2),	(4),	(1)
(C)	(2),	(3),	(1),	(4)
(D)	(4),	(2),	(3),	(1)

35. "पराजेरसोढः" इत्यनेन सूत्रेण कतमं कारक भवति?

(A) अधिकरणम् (B) सम्प्रदानम्

(C) अपादानम् (D) करणम्

36. "प्रातिपदिकम्" इति संज्ञा केन सूत्रेण विधीयते?

(A) प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा।

(B) प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिषु च।

(C) ङ्याप्प्रातिपदिकात्।

(D) अर्थवदधातुरत्ययः प्रातिपदिकम् ।

37. निम्नाङ्कितेषु 'प्रगृह्यम्' इति संज्ञाविधायकं सूत्रं किमस्ति?

(A) ओत् (B) तरप्तमपौ घः

(C) तृतीयासमासे (D) आद्यन्तवदेकस्मिन्

38. 'ब्राह्मणेनावश्यं शब्दा ज्ञेयाः' कथनमिदं पतञ्जलिना कस्य व्याकरणप्रयोजनस्य विषये कृतम्?

(A) रक्षाविषये (B) ऊहविषये

(C) आगमविषये (D) लघुविषये

39. पतञ्जलिमतानुसारं शब्दः कः?

(A) अर्थरूपम्

(B) यद् इङ्गितं चेष्टितम्

(C) यद् भिन्नेष्वभिन्नं, छिन्नेष्वच्छिन्नम्

(D) प्रतीतपदार्थको लोके ध्वनिः

40. पाणिनीयशिक्षानुसारं स्वराणां संख्या का?

(A) विंशतिः (B) एकविंशतिः

(C) पञ्चविंशतिः (D) अष्टादश

41. 'समीकरणम्' कस्य दिशा वर्तते?

(A) ध्वनिपरिवर्तनस्य (B) रूपपरिवर्तनस्य

(C) अर्थपरिवर्तनस्य (D) वाक्यपरिवर्तनस्य

42. हिब्रू-भाषा कस्य भाषापरिवारस्य भाषाऽस्ति?

(A) चीनीपरिवारस्य (B) भारोपीयपरिवारस्य

(C) सूडानीपरिवारस्य (D) सामी-हामीपरिवारस्य

43. संस्कृतभाषायाः यूरोपीयभाषाभिः सम्बन्धः सर्वप्रथमं केनोद्घाटितः?

(A) मैक्समूलरमहोदयेन (B) विन्टरनित्ज़ महोदयेन

(C) सर विलियमजोन्स-महोदयेन (D) वेबरमहोदयेन

44. बान्तूपरिवारः कस्य खण्डस्य भाषापरिवारोस्ति?

(A) यूरेशियाखण्डस्य (B) अफ्रीकाखण्डस्य

(C) प्रशान्तमहासागरीयखण्डस्य (D) अमेरिकाखण्डस्य

45. अर्थसङ्ग्रहे प्रत्ययस्य लिंङ्शेन कीदृशी भावना प्रोक्ता?

(A) शाब्दी (B) आर्थी

(C) शाब्दी आर्थी च (D) स्वर्गभावना

46. अर्थसङ्ग्रहानुसारं ' शब्दसामर्थ्यम्' इत्यनेन कतमं प्रमाणं लक्षितम्?

(A) श्रुतिः (B) प्रकरणम्

(C) लिङ्गम् (D) वाक्यम्

47. तर्कसङ्ग्रहदीपिकानुसारं स्पर्शानुमेयः कः पदार्थः ?

(A) आकाशम् (B) मनः

(C) आत्मा (D) वायुः

48. तर्कसङ्ग्रहानुसारम् आत्मनो विशेषगुणः कः?

(A) वेगसंस्कारः (B)स्थितिस्थापकः

(C) प्रयत्नः (D) शब्दः

49. तर्कभाषानुसारम् आत्मा कीदृशः?

(A) सर्वस्मिन् एकोऽणुश्च

(B) विभुरनित्यश्च

(C) देहेन्द्रियाद्यनतिरिक्तः

(D) प्रतिशरीरं भिन्नो विभुर्नित्यश्च

50. साध्यशून्यो यत्र पक्षः सः कीदृशो हेत्वाभासः?

(A) बाधः (B) आश्रयासिद्धः

(C) असाधारणोऽनैकान्तिकः (D) विरुद्धः

51. तर्कभाषारीत्या समवायस्य प्रत्यक्षग्राह्यत्वे इन्द्रियार्थसन्निकर्षः कः?

(A) संयोग (B) संयुक्तसमवायः

(C) विशेषण-विशेष्यभावः (D) संयुक्तसमवेतसमवायः

52. वेदान्तसारानुसारं "सगुणब्रह्मविषयमानसव्यापाररूपाणि' कर्माणि निम्नलिखितेषु कानि भवन्ति?

(A) काम्यकर्माणि (B) नित्यकर्माणि

(C) उपासनाकर्माणि (D) साध्यकर्माणि

53. 'जीवब्रह्मैक्यं शुद्धचैतन्यं प्रमेयम्' इत्ययम् अनुबन्धः कतमः ?

(A) अधिकारी (B) विषयः

(C) सम्बन्धः (D) प्रयोजनम्

54. समष्ट्यज्ञानोपहितं चैतन्यं किं भवति?

(A) जीवः (B) ईश्वरः

(C) ब्रह्म (D) श्राद्धः

55. 'अतत्त्वतोऽन्यथाप्रथा' किमुच्यते?

(A) विकारः (B) विवर्तः

(C) शब्दः (D) अनुपहितचैतन्यम्

56. ' ब्रह्मसूत्रम्' इत्यस्य ग्रन्थस्य रचयिता कोऽस्ति?

(A) बादरायणः (B) पाराशरः

(C) शङ्कराचार्यः (D) जैमिनिः

57. 'शारीरकम्' इति नाम्ना किं भाष्यं प्रसिद्धमस्ति?

(A) सांख्यकारिकाभाष्यम् (B) मीमांसाभाष्यम्

(C) ब्रह्मसूत्रभाष्यम् (D) उपनिषद्भाष्यम्

58. ' दृष्टवदानुश्रविकः ' इत्यस्मिन् सांख्यकारिकाप्रयोगे

'आनुश्रविकः' इत्यस्य पदस्य कोऽर्थः ?

(A) श्रुतिः (B) स्मृतिः

(C) वेदाङ्गम् (D) पुराणम्

59. अव्यक्तं कीदृशं भवति?

(A) सक्रियम् (B) निष्क्रियम्

(C) आश्रितम् (D) सावयवम्

60. व्यक्तस्य च प्रधानस्य च कः समानधर्मः?

(A) त्रिगुणत्वम् (B) सक्रियत्वम्

(C) हेतुमत्वम् (D) लिङ्गत्वम्

61. सांख्यदर्शनानुसारं "त्रैगुण्यविपर्ययात् " किं सिध्यति?

(A) अव्यक्तस्य नित्यत्वम्

(B) पुरुषबहुत्वम्

(C) व्यक्तस्य त्रिगुणात्मकत्वम्

(D) अव्यक्तस्य कारणत्वम्

62. अधस्तनानां केन सह कस्य सम्बन्धः? समीचीनां तालिकां चिनुत-

(क) मिथ्याज्ञानमतद्रूपप्रतिष्ठम् (1) स्वाध्यायात्

(ख) इष्टदेवतासम्प्रयोगः (2) यमाः

(ग) अनुभूतविषयासम्प्रमोषः (3) विपर्ययः

(घ) सार्वभौमा महाव्रतम् (4) स्मृतिः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(3)	(1)	(4)	(2)
(B)	(1)	(3)	(2)	(4)
(C)	(2)	(1)	(3)	(4)
(D)	(4)	(2)	(1)	(3)

63. "यथा मधुकरराजं मक्षिका उत्पतन्तमनूत्पतन्ति,निविशमानमनुनिविशन्ते तथेन्द्रियाणि चित्तनिरोधे निरुद्धानीत्येषः"।एषा व्याख्या कस्य योगाङ्गस्य , व्यासभाष्यानुसारेण?

(A) प्रत्याहारस्य (B) धारणायाः

(C) ध्यानस्य (D) ब्रहमचर्यस्य

64. योगदर्शनस्य व्यासभाष्यानुसारेण चित्तभूमीनां समुचितः क्रमोऽस्ति-

(A) क्षिप्तम्,विक्षिप्तम्, मूढम्, एकाग्रम्,निरुद्धम् ।

(B) क्षिप्तम्,मूढम्,विक्षिप्तम्,एकाग्रम्,निरुद्धम्।

(C) विक्षिप्तम्,मूढम्, एकाग्रम्,क्षिप्तम्, निरुद्धम् ।

(D) निरुद्धम्,मूढम्,विक्षिप्तम्,क्षिप्तम्,एकाग्रम्।

65. जैनदर्शनानुसारेण निम्नाङ्कितस्य सप्तभङ्गिन्यायस्य समुचितः क्रमः कोऽस्ति?

(A) स्यादस्ति च नास्ति च, स्याद्वक्तव्यः , स्यान्नास्ति, स्यादस्ति चावक्तव्यः , स्यान्नास्ति चावक्तव्यः , स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यः ।

(B) स्यादस्ति, स्यान्नास्ति, स्यादस्ति च नास्ति च, स्यादवक्तव्यः, स्यादस्ति चावक्तव्यः, स्यान्नास्ति चावक्तव्यः , स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यः ।

(C) स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यः, स्यान्नास्ति चावक्तव्यः, स्यादस्ति चावक्तव्यः , स्यादवक्तव्यः , स्यादस्ति च नास्ति च, स्यान्नास्ति स्यादस्ति।

(D) स्यादस्ति, स्याद्वक्तव्यः , स्यादिस्त चावक्तव्यः , स्यान्नास्ति, स्यादस्ति च नास्ति च, स्यान्नास्ति चावक्तव्यः, स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यः ।

66. अधोलिखितानां केन सह कस्य सम्बन्धः ? समीचीनां तालिकां चिनुत।

(क) माध्यमिकाः (1) वाह्यार्थानुमेयत्वम्

(ख) योगाचाराः (2) सर्वशून्यत्वमू

(ग) सौत्रान्तिकाः (3) वाहार्थप्रत्यक्षत्वम्

(घ) वैभाषिकाः (4) वाह्यार्थशून्यत्वम्

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(3)	(1)	(2)	(4)
(B)	(4)	(1)	(3)	(2)
(C)	(2)	(4)	(1)	(3)
(D)	(1)	(3)	(4)	(2)

67. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-

(क) हर्षचरितम् (1) शूद्रकः

(ख) मुद्राराक्षसम् (2) दण्डी

(ग) दशकुमारचरितम् (3) विशाखदत्तः

(घ) मृच्छकटिकम् (4) बाणभट्टः

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(4)	(3)	(2)	(1)
(B)	(3)	(2)	(1)	(4)
(C)	(2)	(4)	(3)	(1)
(D)	(1)	(2)	(4)	(3)

68. अभिज्ञानशाकुन्तले शकुन्तलायाः प्रतिकूलदैवशमनार्थ कण्वः कुत्र गतः ? ह

(A) काशीतीर्थम् (B) प्रयागतीर्थम्

(C) काश्चीतीर्थम् (D) सोमतीर्थम्

69. "उपपन्ना हि दारेषु प्रभुता सर्वतोमुखी"- अभिज्ञानशाकुन्तले इयमुक्तिर्भवति-

(A) मारीचस्य (B) शारद्वतस्य

(C) कण्वस्य (D) शार्ङ्गरवस्य

70. मेघदूते अस्याः नद्याः उल्लेखो नास्ति-

(A) तुङ्गभद्रा (B) रेवा

(C) गन्धवती (D) गम्भीरा

71. "सुलभेष्वर्थलाभेषु परसंवेदने जनः।
क इदं दुष्करं कुर्यादिदानीं शिविना विना।"
एषा उक्तिः कं लक्षयति?

(A) चाणक्यम् (B) राक्षसम्

(C) चन्दनदासम् (D) भागुरायणम्

72. मृच्छकटिके विदूषकस्य नाम भवति-

(A) आर्यकः (B) मैत्रेयः

(C) शर्विलकः (D) संस्थानकः

73. "निपीय यस्य क्षितिरक्षिणः कथास्तथाद्रियन्ते न बुधाः
सुधामपि॥"- इति कस्य कथा अत्र उल्लिखिता?

(A) दुष्यन्तस्य (B) रघोः

(C) रामचन्द्रस्य (D) नलस्य

74. किरातार्जुनीयस्य प्रधानो रसोऽस्ति-

(A) श्रृंगारः (B) वीरः

(C) शान्तः (D) अद्भुतः

75. वेणीसंहारे दुर्योधनस्य कञ्चुकी भवति-

(A) विनयन्धरः (B) जयन्धरः

(C) रुधिरप्रियः (D) सुन्दरकः

76. "अर्पणं स्वस्य वाक्यार्थे परस्यान्वयसिद्धये।
उपलक्षणहेतुत्वादेषा....................॥"
साहित्यदर्पणानुसारतः रिक्तस्थानं पूरयत।

(A) लक्षण-लक्षणा (B) उपादानलक्षणा

(C) सारोपा लक्षणा (D) साध्यवसाना लक्षणा

77. अधस्तनयुग्सानां समीचीनतालिकां चिनुत-

(क) आशङ्कसे यदग्निं तदिदं स्पर्शक्षमं रत्नम्। (1) रत्नावली

(ख) अल्पक्लेशं मरणं दारिद्रयमनन्तकं दुःखम्। (2) मुद्राराक्षसम्

(ग) गजेन्द्राश्च नरेन्द्राश्च प्रायः सीदन्ति दुःखिताः। (3) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(घ) आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखी भूतः। (4) मृच्छकटिकम

	(क)	(ख)	(ग)	(घ)
(A)	(2)	(3)	(1)	(1)
(B)	(3)	(4)	(2)	(1)
(C)	(4)	(2)	(2)	(3)
(D)	(1)	(2)	(3)	(4)

78. "लोके हि लोहेभ्यः कठिनतराः खलु स्नेहमयाः बन्धनपाशाः "- इति हर्षचरिते कस्य मनसि समजायत?

(A) राज्यवर्धनस्य (B) प्रभाकरवर्धनस्य

(C) कुरङ्गलकस्य (D) हर्षवर्धनस्य

79. "श्रीहीरः सुषुवे जितेन्द्रियचयं मामल्लदेवी च यम्"- इति वार्ता केन सम्बद्धा?

(A) माघेन (B) भारविणा

(C) श्रीहर्षण (D) कालिदासेन

80. "स बाल आसीद् बपुषा चतुर्भुजो मुखेन पूर्णेन्दुनिभस्त्रिलोचनः।" - इति शिशुपालवधस्य पद्यांशः केन सम्बद्धः ?

(A) शिशुपालेन (B) श्रीकृष्णेन

(C) नारदेन (D) रावणेन

81. "वैदेहिबन्धोर्हृदयं विदद्रे"-रघुवंशस्य अस्मिन् पद्यांशे वैदेहिबन्धुः भवति-

(A) लक्ष्मणः (B) भरतः

(C) रामः (D) रघुः

82. काव्यमीमांसोक्तकथानुसारं पुरा पुत्रीयन्ती सरस्वती कुत्र तपस्यामास?

(A) विन्ध्यगिरौ (B) तुषारगिरौ

(C) सह्यगिरौ (D) मेरुगिरौ

83. जगन्नाथमते काव्यं कतिविधं भवति-

(A) द्विविधम् (B) त्रिविधम्

(C) चतुर्विधम् (D) पञ्चविधम्

84. "त्रयः समुदिताः, न तु व्यस्ताः" -इति काव्यप्रकाशे प्रथमे उल्लासे किम् अधिकृत्य उल्लिखितम्?

(A) काव्यलक्षणम् (B) काव्यभेदम्

(C) काव्यहेतुम् (D) काव्यफलम्

85. काव्यप्रकाशे उपमानोपमेययोः अभेदे अयमलङ्कारः भवति-

(A) रूपकम् (B) उपमा

(C) उत्प्रेक्षा (D) श्लेषः

86. आसु का नाट्यवृत्तिर्न भवति-

(A) अभिधा (B) आरभटी

(C) सात्त्वती (D) भारती

87. "भम धम्मिअ........." इत्यादिश्लोकः ध्वन्यालोके प्रथमे उद्योते अस्य उदाहरणं भवति-

(A) वाच्ये प्रतिषेधे विधिरूपस्य

(B) वाच्ये विधिरूपे प्रतिषेधरूपस्य

(C) वाच्ये विधिरूपेनुभयरूपस्य

(D) वाच्ये प्रतिषेधेऽनुभयरूपस्य

88. 'दशरूपकतः रिक्तस्थानं पूरयत-''

आनन्दनिस्यन्दिषुरूपकेषु व्युत्पत्तिमात्रं फ़लमल्पबुद्धिः ।

योऽपीतिहासादिवदाह साधुस्तस्मै नमः............ ॥''

(A) काव्यपराङ्मुखाय (B) नाट्यपराङ्मुखाय

(C) शास्त्रपराङ्मुखाय (D) स्वादुपराङ्मुखाय

89. "कटुकौषधवच्छास्त्रमविद्याव्याधिनाशनम्"। - इत्युक्तिः एषु कस्मिन् अलङ्कारग्रन्थेऽस्ति-

(A) साहित्यदर्पणे (B) वक्रोक्तिजीविते

(C) रसगङ्गाधरे (D) काव्यप्रकाशे

90. एषु किं काण्डं रामायणे नास्ति?

(A) किष्किन्धाकाण्डमू (B) सीताकाण्डम्

(C) बालकाण्डम् (D) युद्धकाण्डम्

91. अस्य महापुराणेषु गणनं नास्ति-

(A) पद्मपुराणस्य (B) ब्रह्मपुराणस्य

(C) विष्णुपुराणस्य (D) आदित्यपुराणस्य

92. एषु किम् उपपुराणं न भवति?

(A) कूर्मपुराणम् (B) साम्बपुराणम्

(C) नृसिंहपुराणम् (D) एकाम्रपुराणम्

93. एषु किं पर्व महाभारते नास्ति-

(A) मौसलपर्व (B) कुन्तीपर्व

(C) शान्तिपर्व (D) उद्योगपर्व

94. कौटिलीयार्थशास्त्रे सर्वविद्यानां प्रदीपः सर्वकर्मणाम् उपायः, सर्वधर्माणामाश्रयः भवति-

(A) आन्वीक्षिकी (B) त्रयी

(C) वार्ता (D) दण्डनीतिः

95. मनुसंहितानुसारं राजः सचिवानां संख्या भवति-

(A) 10-12 (B) 7-8

(C) 3-4 (D) 5-6

96. "तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना।

अन्तःसंज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः॥"

इति मनुवचनं केन सम्बद्धम्?

(A) उदिभिदेन (B) अण्डजेन

(C) जरायुजेन (D) स्वेदजेन

97. श्रीमद्भगवद्गीतायां कर्मयोगः कतमो$ध्यायः?

(A) द्वितीयोध्यायः (B) तृतीयोध्यायः

(C) चतुर्थोध्यायः (D) पञ्चमोध्यायः

98. एपिग्रेफिया इंडिका इति पत्रिकायाः प्रकाशनं केन प्रारब्धम्।

(A) जेम्स प्रिंसेपमहोदयेन

(B) सर विलियमजोंसमहोदयेन

(C) जे. बर्जेसमहोदयेन

(D) कीलहार्नमहोदयेन

99. 'धम्मलिपि' नाम कस्य लेखेषु प्राप्यते?

(A) अशोकस्य (B) समुद्रगुप्तस्य

(C) खारवेलस्य (D) कनिष्कस्य

100. भारतवर्षे दानलेखानाम् उत्कीर्णनं बाहुल्येन कस्मिन् धातौ कृतम्?

(A) लौहधातौ (B) ताम्रधातौ

(C) रजतधातौ (D) स्वर्णधातौ

नेट प्रश्नपत्र दिसम्बर- 2018

1 माण्डूकायनी शाखा कस्य वेदस्य विद्यते ।

(A) यजुर्वेदस्य (B) अथर्ववेदस्य

(C) ऋग्वेदस्य (D) सामवेदस्य

2. सांख्यरीत्या मोक्षप्राप्तिः कस्मादङ्गीक्रियते ।

(A) ज्ञानात् (B) धर्मातू

(C) ऐश्वर्यात् (D) वैराग्यात्

3. "खलु कृत्वा" निरुक्तानुसारं 'खलु' पदं विद्यते ।

(A) प्रतिषेधार्थे (B) पदपूरणार्थे

(C) समुच्चयार्थे (D) निश्चयार्थे

4. तर्कसङ्ग्रहदीपिकानुसारं 'तज्जन्यत्वे सति तज्जन्यजनकः' कः-

(A) हेतुः (B) परामर्शः

(C) व्यापारः (D) उपनयः

5. "व्रीहीनवहन्तीति कस्य विधेरुदाहरणम् अर्थसङ्ग्रहदिशा ।

(A) नियमविधेः (B) आर्थीपरिसङ्ख्याविधेः

(C) श्रौतीपरिसङ्ख्याविधेः (D) अपूर्वविधेः

6. ' मानवश्रौतसूत्रम्' केन वेदेन सह सम्बद्धम् विद्यते-

(A) ऋग्वेदेन (B) अथर्ववेदेन

(C) सामवेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदिन

7. पुरुषस्यास्तित्वं साङख्यरीत्या कस्माद् हेतोः-

(A) त्रैगुण्यात् (B) अधिष्ठानात्

(C) भेदानां परिमाणात् (D) विषयत्वात्

8. शब्दनित्यत्वे वार्त्तिककृतः किं प्रमाणम्-

(A) सर्वे सर्वपदादेशाः दाक्षीपुत्रस्य पाणिनेः

(B) तदशिष्यं सज्ज्ञाप्रमाणत्वात्

(C) पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्

(D) सिद्धन्तु नित्यशब्दत्वात्

9. "अखण्डेषु कारणेषु फलावच:" इत्यनेन कस्यालङ्कारस्य लक्षणं प्रोक्तमाचार्यमम्मटेन ।

(A) सङ्करस्य (B) समासेक्तेः

(C) विभावनायाः (D) विशेषेक्तेः

10. 'अग्निष्टोमाख्य:' सोमयागः कदा अनुष्ठीयते ।

(A) शरदि (B) वसन्ते

(C) ग्रीष्मे (D) प्रावृषि

11. 'सच्चिदानन्दाद्वयं ब्रह्म' इत्यादिना वेदान्तसारे किं लक्षितम् ।

(A) अवस्तु (B) वस्तु

(C) अज्ञानम् (D) अधिकारी

12. पाणिनीयशिक्षानुसारेण विसर्गस्य रूपपरिवर्तनं गतिः कतिविधं भवति ।

(A) सप्तविधम् (B) नवविधम्

(C) अष्टविधम् (D) त्रिविधम्

13. फललक्षणा निम्नलिखितासु लक्षणासु कस्याः पर्याया विद्यते ।

(A) गौणीलक्षणायाः (B) रूढिवतीलक्षणायाः

(C) प्रयोजनवतीलक्षणायाः _ (D) शुद्धालक्षणायाः

14. ''कथाप्रसङ्गेषु मिथः सखीमुखात्तृणेऽपि तन्व्या नलनामनि श्रुते'' अत्र नलपदस्यार्थोऽस्ति-

(A) शत्रु (B) नृपः

(C) अग्निः (D) तृणम्

15. साहित्यदर्पणानुसारं रसस्य किं विशेषणं न साधु ।

(A) लोकानुभूतिः (B) ब्रह्मस्वादसहोदरः

(C) अभिन्न (D) स्वप्रकाशः

16. "तस्मादकृतकं शास्त्रं स्मृतिं च सनिबन्धनाम् ।
आश्रित्यारभ्यते शिष्टैः शब्दानामनुशासनम्" ॥
वाक्यपदीयस्यास्यां कारिकायाम् 'अकृतकं शास्त्रम्' इति किम् ?

(A) ब्रह्मसूत्रम् (B) व्याकरणशास्त्रम्

(C) मीमांसाशास्त्रम् (D) अपौरुषेयं शास्त्रम्

17. 'तादात्म्यसम्बन्धावच्छिन्नप्रतियोगिताकः' तर्कसङ्ग्रहे कः प्रोक्तः ।

(A) प्रागभावः (B) प्रध्वंसाभावः

(C) अन्योन्याभावः (D) अत्यन्ताभावः

18 "'सहस्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः" उक्तिरियं कुत्र प्राप्यते-

(A) किरातार्जुनीये (B) रघुवंशे

(C) मेघदूते (D) मालविकाग्निमित्रे

19. कतिविधास्तुष्टयः साङख्ये परिगणिताः?

(A) अष्टौ (B) सप्त

(C) नव (D) तिस्रः

20. 'शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यः' इति लक्षणलक्षिता चित्तवृत्तिः का योगदर्शनानुसारेण ?

(A) विपर्ययः (B) निद्रा

(C) प्रमाणम् (D) विकल्पः

21. 'ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोनुधावति' उक्तिरियं कुत्र प्राप्यते ?

(A) हर्षचरिते (B) मालविकाग्निमित्रे

(C) उत्तररामचरिते (D) नैषधीयचरिते

22. 'राजन्तमध्वराणां गोपामृतस्य दीदिविम्' अत्र 'दीदिविम्' पदस्य कोर्थः ?

(A) इन्द्रम् (B) प्रकाशमानम्

(C) धुलोकम् (D) पुनर्जायमानम्

23. कस्माद् हेतोः प्रधानस्यानुपलब्धिः सांख्यरीत्या?

(A) समानाभिहारात् (B) सौक्ष्म्यात्

(C) अतिदूरात् (D) मनोऽनवस्थानात्

24. तर्कभाषारीत्या अभावात्मककार्यस्य कारणं कीदृशम्भवति?

(A) निमित्तकारणमू (B) असमवायिकारणम्

(C) समवाय्यसमवायिकारणम् (D) समवायिकारणम्

25. साहित्यदर्पणानुसारं रसास्वादने को हेतुः?

(A) काव्यपाठः (B) पात्राणि

(C) सहृदयता (D) सत्त्वोद्रेकः

26. जहदजहल्लक्षणाया वेदान्ते किमपरं नाम प्रयुक्तम्?

(A) भागलक्षणा (B) सारोपालक्षणा

(C) जहल्लक्षणा (D) अजहल्लक्षणा

27. अधोऽङ्कितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?
समुचितां तालिकां चिनुत-

(a) अयोगात्मकभाषा	(1) संस्कृत भाषा
(b) शिलष्टयोगात्मकभाषा	(2) तुर्की
(c) प्रश्लिष्टयोगात्मकभाषा	(3) तिब्बती भाषा
(d) अश्लिष्टयोगात्मकभाषा	(4) चेरोफी

(A) (a)-(4), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(1)

(B) (a)-(2), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(3)

(C) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)

(D) (a)-(3), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(2)

28. अजहत्स्वार्था लक्षणा का भवति?

(A) लक्षणलक्षणा (B) फललक्षणा

(C) उपादानलक्षणा (D) साध्यवसानिका

29. 'तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया विद्यया आत्मानम् अन्विष्यात्' इत्युक्तिः कस्याम् उपनिषदि प्राप्यते?

(A) केनोपनिषदि (B) श्वेताश्वतरोपनिषदि
(C) प्रश्नोपनिषदि (D) मुण्डकोपनिषदि

30. साङ्ख्यदर्शनेन्तःकरणं किमात्मकम्?
(A) मनोबुद्धी एव (B) बुद्धिरेव
(C) बुद्ध्यहङ्कारमनांसि (D) बुद्ध्यहङ्कारावेव

31. 'रीतिरात्मा काव्यस्य' मतमिदं कस्य विद्यते?
(A) वामनस्य (B) रुद्रटस्य
(C) भामहस्य (D) रुय्यकस्य

32. ग्रिमनियमानुसारेण प्रथमवर्णपरिवर्तने तवर्गीयध्वनीनां कः परिवर्तनक्रमोस्ति?
(A) त-थ, द-त, ध-द (B) त-ध, द-त, ध-द
(C) त-द, द-थ, ध-द (D) त-थ, ध-त, द-थ

33. अधस्तनेषु किं मेलनं समुचितम्?
(A) आ मुक्तेः - आङ्मर्यादाभिविध्योः
(B) दम्पती - स्त्रियां संज्ञायाम्
(C) घृतगन्धि - वोपसर्जनात्
(D) मुहूर्तसुखम् - यस्य चायामः

34. 'मौद' शाखा केन वेदेन सह सम्बद्धा वर्तते?
(A) सामवेदेन (B) ऋग्वेदेन
(C) अथर्ववेदेन (D) कृष्णयजुर्वेदेन

35. "स्वच्छजलवत् सहसैव.....सर्वत्र विहितस्थितिः" इत्यादिना काव्यप्रकाशकृता को गुणो मतः?
(A) माधुर्यगुणः (B) समाधिगुणः
(C) ओजोगुणः (D) प्रसादगुणः

36. अधोङ्कितेषु समासप्रकरणानुसारं केन सह कस्य् सम्बन्धः ? समुचितां तालिकां चिनुत-
(a) हंसौ (1) जातेश्च
(b) ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्राः (2) पुमान् स्त्रिया
(c) शूद्रभार्यः (3) न निर्धारणे
(d) नृणां द्विजः श्रेष्ठः (4) वर्णानामानुपूर्व्येण
(A) (a)-(2), (b)-(4), (c)-(1), (d)-(3)
(B) (a)-(3), (b)-(4), (c)-(2), (d)-(1)
(C) (a)-(1), (b)-(4), (c)-(2), (d)-(3)
(D) (a)-(4), (b)-(1), (c)-(3), (d)-(2)

7. 'सारङ्गी' इत्यत्र स्त्रियां ङीष्-प्रत्यय-विधायकं किमस्ति सूत्रम् ?
(A) अन्यतो ङीष्
(B) वर्णादनुदात्तात् तोपधात्तो नः
(C) जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्
(D) षिद्गौरादिभ्यश्च

38. 'तेजो यत्ते रूपं कल्याणतमं तत्ते पश्यामि'- इत्युद्धरणं वर्तते-
(A) कठोपनिषदि (B) ईशोपनिषदि
(C) बृहदारण्यकोपनिषदि (D) तैत्तिरीयोपनिषदि

39. "सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च" अस्य मन्त्रस्य द्रष्टा ऋषिः कः ?
(A) दीर्घतमा (B) मधुच्छन्दा
(C) वसिष्ठः (D) कुत्स अङ्गिरसः

40. वेदे 'सूनरी' कस्याः विशेषणम् ?
(A) उषसः (B) सरस्वत्याः
(C) अपालायाः (D) घोषायाः

41. 'नित्यज्ञानाधिकरणत्वम्' इति तर्कसङ्ग्रहदीपिकायां कस्य लक्षणं प्रोक्तम् ?
(A) मनसः (B) ईश्वरस्य
(C) परमाणोः (D) जीवात्मनः

42. निरुक्ते कति पदजातानि उपदिष्टानि ?
(A) त्रीणि (B) षट्
(C) चत्वारि (D) पञ्च

43. 'गौतमधर्मसूत्रम्' केन वेदेन सह सम्बद्धं विद्यते ?
(A) अथर्ववेदेन (B) कृष्णयजुर्वेदिन
(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदेन

44. महाभाष्ये व्याकरणस्य आनुषङ्गिकप्रयोजनेषु "विभक्तिं कुर्वन्ति" इत्यस्य क्रमोस्ति -
(A) सप्तमः (B) षष्ठः
(C) दशमः (D) पञ्चमः

45. मशककल्पसूत्रम्' कस्य वेदस्य वर्तते ?
(A) अथर्ववेदस्य (B) ऋग्वेदस्य
(C) सामवेदस्य (D) कृष्णयजुर्वेदस्य

46. भरतमुनिना रसस्य संख्या कियती स्वीकृता ?
(A) षट् (B) दश
(C) अष्टौ (D) नव

47. 'उभयप्राप्तौ कर्मणि' इति कारकसूत्रस्योदाहरणं किम् ?
(A) आश्चर्यो गवां दोहोगोपेन
(B) अधिकरणवाचिनश्च
(C) कृत्यानां कर्तरि वा
(D) कर्तृकर्मणोः कृति

48. 'वागर्थाविव' इत्यत्र कतमः समासः ?
(A) केवलसमासः (B) अव्ययीभावसमासः
(C) द्विगुसमासः (D) कर्मधारयसमासः

49. 'लोकेऽधिको हरिः' इत्यत्र सप्तमीविभक्तौ को नियमः ?

(A) यस्मादधिकं यस्य चेश्वरवचनं तत्र सप्तमी

(B) अधिरीश्वरे

(C) 'तदस्मिन्नधिकमिति दशान्ताड्ङः' इति सूत्रनिर्देशात्

(D) सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये

50. एध् धातोः लङ्लकारे उत्तमपुरुषबहुवचनस्य किं रूपं भवति ?

(A) एधामहि (B) ऐधेमहि

(C) एधामहे (D) ऐधामहि

51. "सत्या विशुद्धिस्तत्रोक्ता विद्यैवैकपदागमा"
वाक्यपदीयस्य अस्यां कारिकायां 'विद्दैवैकपदागमा' इत्यनेन पदेन किं स्वरूपा विद्या लक्ष्यते?

(A) अर्थरूपा (B) शब्दरूपा

(C) प्रणवरूपा (D) वर्णरूपा

52. अज्ञानस्य समष्ठ्योपहितं चैतन्यं वेदान्ते किमुच्यते?

(A) प्राज्ञः (B) वैश्वानरः

(C) ईश्वर (D) विराट्

53. 'केवलाघो भवति केवलादी' अस्य मन्त्रस्य द्रष्टा कः ?

(A) कण्वः (B) गविष्ठिरः

(C) भिक्षुरङ्गिरसः (D) ब्रह्मा

54. साङ्ख्यदर्शने कैवल्यं कस्य मन्यते?

(A) अहङ्कारस्य (B) महतः

(C) पुरुषस्य (D) प्रधानस्य

55. 'रि च' इत्यनेन सूत्रेण किं कार्य भवति ?

(A) उपधायाः दीर्घः रेफस्य च लोपः

(B) पूर्वस्वरस्य दीर्घः रादौ प्रत्यये परे

(C) रेफस्य लोपः रादौ प्रत्यये परे

(D) तासस्त्योः सस्य लोपः रादौ प्रत्यये परे

56. अधस्तनेषु उचितसम्बन्धयुतं विकल्पं चिनुत -

(A) वि मृळीकाय ते मनो रथीरश्वं न संदितम् - **इन्द्रसूक्तम्**

(B) ऋतस्य बुध्न उपसमिषण्यन् वृषा मही रोदसी आ विवेश- **वरुणसूक्तम्**

(C) यो रध्रस्य चोदिता यः कृशस्य यो ब्रह्मणो नाधमानस्य कीरेः - **अग्निसूक्तम्**

(D) यस्य व्रते पृथिवी नन्नमीति यस्य व्रते शफवज्जर्भुरीति- **पर्जन्यसूक्तम्**

57. काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति सिद्धान्तः प्रधानतया केन प्रतिपादितः ?

(A) अभिनवगुप्तेन (B) भरतमुनिना

(C) मम्मटेन (D) आनन्दवर्धनेन

58. "अदूरवर्तिनीं सिद्धिं राजन्विगणयात्मनः" रघुवंशे इयमुक्तिकस्य?

(A) कौत्सस्य (B) सिंहस्य

(C) वसिष्ठस्य (D) अरुन्धत्याः

59. कस्याम् उपनिषदि ' भृगुवल्ली ' उपदिष्टा?

(A) तैत्तिरीयोपनिषदि (B) केनोपनिषदि

(C) ऐतरेयोपनिषदि (D) बृहदारण्यकोपनिषदि

60. अधस्तनेषु किं मेलनं सत्यमस्ति -

(A) त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति - सक्तुमिव

(B) म्लेच्छो ह वा एष यदपशब्दः - दुष्टः शब्दः

(C) प्रायश्चित्तीया मा भूमेत्यध्येयं व्याकरणम् - सारस्वतीम्

(D) न चान्तरेण व्याकरणं कृतस्तद्धिता वा शक्या विज्ञातुम्- सुदेवोऽसि

61. अधोङ्कितेषु समुचित विकल्पं चिनुत -

(A) वैभाषिकाः - तत्र बोधात्मको जीवः । अबोधात्मस्त्वजीवः

(B) योगाचाराः - हीनयानमू

(C) माध्यमिकाः - महायानम्

(D) सौत्रान्तिकाः - तज्ज्ञानं पञ्चविधं मतिश्रुतावधिमनः पर्यायकेवलभेदेन

62. 'आग्निवेश्य-गृह्यसूक्तम्' कस्य वेदस्य वर्तते?

(A) कृष्णयजुर्वेदस्य (B) सामवेदस्य

(C) ऋग्वेदस्य (D) अआथर्ववेदस्य

63. अर्थशास्त्रस्य चतुर्थमधिकरणं वर्तते -

(A) धर्मस्थीयम् (B) षाड्गुण्यम्

(C) योगवृत्तम् (D) कण्टकशोधनम्

64. 'शोणो धावति' इत्युदाहरणे वेदान्तरीत्या का लक्षणा?

(A) जहल्लक्षणा (B) साध्यवसानालक्षणा

(C) अजहल्लक्षणा (D) भागलक्षणा

65. 'नीतिमञ्जरीप्रतिपाद्यविषयाः केन सम्बद्धाः ?

(A) अथर्ववेदेन (B) ऋग्वेदेन

(C) कृष्णयजुर्वेदेन (D) सामवेदेन

66. 'तं राजा प्रणयन् सम्यक् त्रिवर्गेणाभिवर्धते' अत्र त्रिवर्गस्याभिप्रायः कः ?

(A) ब्राह्मणः क्षत्रियः वैश्यश्च

(B) भूः भुवः स्वश्च

(C) साम दानं भेदश्च

(D) धर्मः अर्थः कामश्च

67. अर्थसङ्ग्रहरीत्या शाब्दीभावनाया लक्षणं किम् ?

(A) भवितुर्भवनानुकूलो भावकव्यापारविशेषः

(B) भवितुर्भवनानुकूलो भावयितुर्व्यपारविशेषः

(C) प्रयोजनेच्छाजनितक्रियाविषयव्यापारः

(D) पुरुषप्रवृत्त्यनुकूलो भावयितुर्व्यापारविशेषः

68. रुद्रदाम्नः गिरनारलेखः कस्यां भाषायां विद्यते ?

(A) संस्कृतभाषायाम् (B) पालिभाषायाम्

(C) अपभ्रंशभाषायाम् (D) प्राकृतभाषायाम्

69. 'वाग्ग्मी' इत्यत्र को मत्वर्थीयप्रत्ययः ?

(A) ग्मिनि (B) विनि

(C) मिनि (D) इनि

70. "कथाप्रसङ्गेन जनैरुदाहृतादनुस्मृताखण्डलसूनुविक्रमः

तवाभिधानाद् व्यथते नताननःसुदुःसहान्मन्त्रपदादिवोरग :"॥

अत्र कोऽलंकार :?

(A) लुप्तोपमा (B) मालोपमा

(C) श्लिष्टोपमा (D) उत्प्रेक्षा

71.'तस्मादृचः साम यजूंषि दीक्षा' - पंक्तिरियं कुत्र प्राप्यते?

(A) ऋग्वेदे (B)ईशोपनिषदि

(C) शुक्लयजुर्वेदे (D) मुण्डकोपनिषदि

72. मनुस्मृतौ ' सर्वतेजोमयो हि सः ' अस्मिन् श्लोकांशे ' सः ' पदेन कः प्रोक्तः ?

(A) सूर्यः (B) नृपः

(C) प्राज्ञः (D) गुरुः

73. ऋग्वेदप्रातिशाख्ये कियन्ति समानाक्षराणि उक्तानि?

(A) दश (B) पञ्चविंशतिः

(C) चत्वारि (D) अष्टौ

74. 'महदरण्यम्' इत्यर्थे स्त्रीप्रत्यये किं भवति?

(A) अरण्या (B) अरण्यानी

(C) महारण्या (D) महारण्यानी

75. तर्कसङ्ग्रहरीत्या मनः कीदृक् ?

(A) एकमनित्यं परमाणुरूपञ्च

(B) अनन्तं परमाणुरूपं नित्यञ्च

(C) एकं विभु नित्यञ्च

(D) अनन्तं विभु नित्यञ्च

76. शिशुपालवधस्य सर्गसंख्या काऽस्ति?

(A) विंशतिः (B) एकविंशतिः

(C) सप्तविंशतिः (D) पञ्चविंशतिः

77. 'मा नो वधाय हत्नवे जिहीळानस्य रीरधः।' अत्र स्तूयमानो देवः कः ?

(A) रुद्रः (B) मित्रः

(C) वरुणः (D) अग्निः

78. काव्यमीमांसानुसारं काव्यकविः कतिधा भवति?

(A) चतुर्धा (B) त्रिधा

(C) पञ्चधा (D) अष्टधा

79. जातिवाच्ये सति 'हस्त' शब्दस्य मत्वर्थीयः कः प्रयोगः ?

(A) हस्तवान् (B) हस्ती

(C) हस्तालुः (D) हस्तिकः

80. "बुध-युध-नश-जनेङ्-प्र-दु-स्रुभ्यो णेः" इति नियमेन शुद्धः प्रयोगः कः ?

(A) बोधयति पद्मम् (B) योधयते काष्ठानि

(C) बोधयते पद्मम् (D) वेदमध्यापयते

81. भाषाविज्ञानानुसारेण भारोपीयपरिवारस्य भाषा नास्ति?

(A) मय (B) तोखारी

(C) इटालिक (D) आर्मीनी

82. हर्षचरितं कति उच्छ्वासेषु विभक्तम् ?

(A) सप्तसु (B) अष्टसु

(C) चतुर्षु (D) दशसु

83. "शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः।

स्पर्शानुकूला इव सूर्यकान्तास्तदन्यतेजोऽभिभवाद्वमन्ति"॥

अत्र 'तत्' पदेन किं द्योतते?

(A) शमः (B) तपः

(C) धनम् (D) तेजः

84. तर्कसङ्ग्रहरीत्या आद्यास्यन्दनासमवायिकारणं किम्भवति?

(A) द्रव्यत्व (B) द्रवत्वम्

(C) गुरुत्वम् (D) स्नेहः

85. 'मेदश्छेदकृशोदरं लघु भवत्युत्थानयोग्यं वपुः' इत्येवं कस्य वैशिट्यं प्रतिपादितम्?

(A) मृगयायाः (B) पर्यटनस्य

(C) तपश्चर्यायाः (D) पादपसिञ्चनस्

86. पण्डितराजजगन्नाथानुसारं निम्नलिखितेषु को न रसदोषः?

(A) स्थायि-व्यभिचारिणां शब्दवाच्यत्वम्

(B) रसस्य व्यङ्ग्यत्वम्

(C) विच्छिन्नरसस्य पुनर्दीपनम्

(D) समबल-प्रबलप्रतिकूलरसाङ्गानां निबन्धनम्

87. साध्यशून्यः पक्षो मुक्तावल्यां क उदाहृतः?

(A) बाधः (B) व्याप्यत्वासिद्धः

(C) सत्प्रतिपक्षः (D) अनैकान्तिक

88. याज्ञवल्क्यस्मृत्यनुसारं किं स्त्रीधनं नास्ति?

(A) अध्यग्नि (B) आधिवेदनिकम्

(C) अन्वाधेयकम् (D) सामान्यार्थः

89. "अग्निष्टोमाख्ये" सोमयागे कति शस्त्राणि भवन्ति?

(A) द्वादश (B) पञ्चदश

(C) एकादश (D) अप्

90. 'प्रतिहर्ता' ऋत्विक् कस्य गणस्य विद्यते-

(A) ब्रह्मगणस्य (B) उद्गातृगणस्य

(C) होतृगणस्य (D) अध्वर्युगणस्य

91. 'जन्माद्यस्य यतः' इत्यस्मिन् सूत्रे 'यतः:' पदेन किमभिधीयते ?

(A) प्रकृतेः (B) जगतः

(C) ब्रह्मणः (D) सृष्टे

92. अधोऽङ्कितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?

समुचितां तालिकां चिनुत-

(a) अचोन्त्यादि (1) प्रगृह्यामॢ

(b) इ इन्द्रः (2) उपधा

(c) कृत्तद्धितसमासाश्च (3) टि

(d) अन्त्यादलः पूर्वो वर्णः (4) प्रातिपदिकम्

(A) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)

(B) (a)-(4), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(1)

(C) (a)-(2), (b)-(1), (c)-(3), (d)-(4)

(D) (a)-(3), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(2)

93. 'सन्निहितसाधनादधिकस्यानुपादित्सा' इत्यनेन योगाङ्गियमेषु कः?

(A) सन्तोषः (B) ईश्वरप्राणिधानम्

(C) शौचम् (D) तपः

94. 'वेः शब्दकर्मणः' इति सूत्रस्योदाहरणम्भवति-

(A) चित्तं विकरोति कामः (B) स्वरान् विकुरुते

(C) शत्रुमधिकुरुते (D) छात्राः विकुर्वते

95. 'दण्डिक ' इत्यस्मिन् पदे कः तद्धितप्रत्ययः ?

(A) इक् (B) ठन्

(C) ठञ् (D) ठक्

96. 'मनसा हरि व्रजति' इत्यत्र 'गत्यर्थकर्मणि' इत्यादिसूत्रेण कर्मणि चतुर्थी कथन्न भवति?

(A) व्रजधातोः गत्यर्थाभावात्

(B) गत्यर्थकर्मणोभावात्

(C) अध्ववाचिकर्मत्वात्

(D) चेष्टायाः प्रतीत्यभावात्

97. "त्रयो धर्मस्कन्धा, यज्ञो अध्ययनं दानम् इति" इत्युक्तिः कस्याम् उपनिषदि लभ्यते?

(A) तैत्तिरीयोपनिषदि (B) छान्दोग्योपनिषदि

(C) बृहदारण्यकोपनिषदि (D) ऐतरेयोपनिषदि

98. अथर्ववेदीयकृषिसूक्तस्य द्रष्टा ऋषिः कः?

(A) मधुच्छन्दाः (B) भिक्षुः

(C) विश्वामित्रः (D) बुधः

99. अधोऽङ्कितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) जीवाजीवास्रवबन्धसम्वरनिर्जरमोक्षास्तत्त्वानि- सौत्रान्तिकाः

(B) भावनाभिर्भावितानि पञ्चभिः पञ्चधाक्रमात्, महाव्रतानि- व्यासभाष्यम

(C) तत्र जीवा द्विविधाः संसारिणो मुक्ताश्च - आर्हताः

(D) स्यान्नास्ति चावक्तव्यः - वैभाषिकाः

100. योगदर्शने सर्वा चित्तभूमयः काः?

(A) निद्रा, तन्द्रा, प्रमादः, मोदः, दुःखम्

(B) क्षिप्तम्, मूढम्, विक्षिप्तम्, एकाग्रम्, निरुद्धम्

(C) क्षिप्तम्, प्रक्षिप्तम्, मूढम् , विमूढम्, सम्मूढम्

(D) स्मृति, विस्मृतिः, निरुद्धम्, एकाग्रम्, मोहः

नेट प्रश्नपत्र जून-2019

1. अधोलिखितेषु केन्द्रवर्गे नास्ति ।

(A) जर्मनभाषा (B) रूसीभाषा

(C) फ्रेंचभाषा (D) ग्रीकभाषा

2. ऋग्वेदसंहितायाः पदपाठकारो निम्नलिखितेषु कोऽस्ति?

(A) गार्ग्यः (B) शाकल्यः

(C) शौनकः (D) यास्कः

3. "एध-वृद्धौ" इत्यस्माद् धातोः "ऐधिष्ट" इति रूपं निष्पद्यते-

(A) विधिलिङ्लकारे (B) लुङ्लकारे

(C) आशीर्लिङ्लकारे (D) लङ्लकारे

4. दर ऑन दि सब्लाइम (On The Sublime)ग्रन्थस्य प्रणेता वर्तते-

(A) अरस्तु (B) क्रोचे

(C) प्लेटो (D) लानजाइनस

5. सवितर्का समापत्तिः उच्यते-

(A) शब्दार्थज्ञानविकल्पैः सङ्कीर्णा

(B) स्वरूपशून्येवार्थमात्रनिर्भासा

(C) श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया

(D) उक्तेपु त्रिषु न कापि

6. "प्रदीपः सर्वविद्यानामुपायः सर्वकर्मणाम्" पंक्तिरियं कस्याः विद्यायाःसन्दर्भेऽस्ति ।

(A) त्रय्याः (B) आन्वीक्षिक्याः

(C) वार्तायाः (D) दण्डनीतेः

7. "रुदति प्राव्राजीत्" अत्र रुदति पदे सप्तमी विभक्तिः अस्ति ।

(A) निर्धारण (B) सामीप्ये अधिकरणे

(C) अनादराधिक्ये भावलक्षणे (D) कर्मप्रवचनीयस्य योगे

8. अधस्तनानां केन अभिलेखेन सह कस्य सम्बन्धः? समीचीनां तालिकां चिनुत ।

तालिका-1	तालिका-2
(a) रुद्रदागः	(1) हाथीगुम्फा
(b) खारवेलस्य	(2) मन्दसौरः
(c) यशोधर्मणः	(3) ऐहोलः
(d) पुलकेशिनः	(4) गिरनारः

(A) (a)-(4), (b)-(1), (c)-(2), (d)-(3)
(B) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)
(C) (a)-(4), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(1)
(D) (a)-(3), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(2)

9. पाणिनीयशिक्षायाम् अधमपाठकेषु को न परिगणितः?
(A) गीती (B) लिखितपाठकः
(C) पदानि विच्छिद्य पाठकः (D) शीघ्री

10. दुर्गेण कस्मिन् ग्रन्थे टीका लिखिता?
(A) वृहद्देवतायाम् (B) बौधायनगृह्यसूत्र
(C) कात्यायनशुल्बसूत्रे (D) निरुक्ते

11. पञ्चमहायज्ञेषु किं न गण्यते?
(A) देवयज्ञः (B) पितृयज्ञः
(C) ब्रह्मयज्ञः (D) विष्णुयज्ञः

12. "स्वेच्छाकेसरिणः स्वच्छस्वच्छायायासितेन्दवः।
त्रायन्तां वो मधुरिपोः प्रपन्नार्तिच्छिदो नखाः"॥
इत्यस्मिन् मंगलाचरणे ग्रन्थकारेण इष्टदेवस्य कस्य रसाभिव्यञ्जकस्वरूपस्य स्मरणं कृतम् ।
(A) शृंगाररसाभिव्यञ्जकस्य (B) वीररसाभिव्यञ्जकस्य
(C) शान्तरसाभिव्यञ्जकस्य (D) करुणरसाभिव्यञ्जकस्य

13. यशोधर्मणः मन्दसौर-स्तम्भलेखस्य लिपिरस्ति ।
(A) देवनागरी (B) ब्राह्मी
(C) खरोष्ठी (D) शारदा

14. कर्मकाण्डस्य प्रधानता कस्मिन् दर्शने प्रतिपाद्यते?
(A) न्यायदर्शने (B) चार्वाकदर्शने
(C) मीमांसादर्शने (D) योगदर्शने

15. "कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः" अत्र "जिजीविषेत्' पदस्य कोऽर्थः?
(A) जीवितुमिच्छेतु (B) जेतुमिच्छेत्
(C) ज्ञातुमिच्छेतु (D) प्राप्मिच्छेतू

16. महाभारतोपजीविकाव्यं नास्ति-
(A) बृहत्कथामंजरी (B) शिशुपालवधम्
(C) मध्यमव्यायोगः (D) भारतमंजरी

17. उदभिदा यजेत पशुकामः' इत्यत्र 'उदभिद्' शब्दो यागस्य नामधेयो भवति-
(A) मत्त्वर्थलक्षणाभयात् (B) वाक्यभेदभयात्
(C) तत्प्रख्यशास्त्रात् (D) तद्व्यपदेशातद

18. चार्वाकदर्शनस्य कृते किम् अपरनाम प्रचलितमस्ति?
(A) ब्रह्मदर्शनम् (B) परलोकदर्शनम्
(C) ऐहलौकिकदर्शनम् (D) लोकायतदर्शनम्

19. अधस्तनेषु पुराणस्य पञ्चलक्षणेषु नास्ति ।
(A) वंशः (B) मन्वन्तराणि
(C) संसर्गः (D) प्रतिसर्गः

20. अधस्तनीयानां युग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत ।

तालिका-1	तालिका-2
(a) पाणिनिः	(1) वृत्तिः
(b) कात्यायनः	(2) सूत्रम्
(c) पतञ्जलिः	(3) वार्तिकम्
(d) जयादित्यः	(4) इष्टिः

(A) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)
(B) (a)-(1), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(4)
(C) (a)-(3), (b)-(2), (c)-(4), (d)-(1)
(D) (a)-(2), (b)-(3), (c)-(4), (d)-(1)

21."मालामतिक्रान्तः- 'अतिमालः' इत्यत्र समासविधायकं वर्तते ।
(A) कुगतिप्रादयः
(B) अत्यादयः कुष्टाद्यर्थे द्वितीयया
(C) अत्यादयः क्रान्त्यादयर्थे द्विवीयया
(D) एकविभक्ति चापूर्वनिपाते

22. निम्नलिखितभाष्यकारेषु कोऽर्वाचीनतमः?
(A) स्वामिदयानन्दः (B) रावणः
(C) उव्वटः (D) महीधरः

23. माध्यन्दिनशाखायाः अपरनाम किं प्रचलितमस्ति?
(A) कैथुमशाखा (B) बौधायनीशाखा
(C) वाजसनेयिशाखा (D) मैत्रायणीशाखा

24. प्र + एजते = 'प्रेजते' इत्यत्र एकारो भवति ।
(A) 'आदूगुणः' सूत्रेण गुणत्वात्
(B) 'वृद्धिरिचि' सूत्रेण वृद्धित्वात्
(C) 'एङि पररूपम्' सूत्रेण पररूपत्वात्
(D) 'एङः पदान्तादति' सूत्रेण पूर्वरूपत्वात्

25. चक्षुषा घटरूपत्वग्रहणे कः सन्निकर्षः।
(A) समवायः
(B) संयुक्तसमवायः

(C) संयुक्तसमवेतसमवायः

(D) विशेषणविशेष्यभावः

26. याज्ञवल्क्यस्मृतौ व्यवहाराध्यायः कतमोऽस्ति ।

(A) प्रथमः (B) द्वितीयः

(C) तृतीयः (D) चतुर्थः

27. "कुरुचरः' इत्यत्र "चरेष्टः" सूत्रेण 'ट' प्रत्ययो विधीयते--

(A) अधिकरणे उपपदे (B) कर्मण्युपपदे

(C) सुबन्ते उपपदे (D) उपसर्गे उपपदे

28. शब्दे व्याकरणे स्वीकारे महाभाष्ये का शङ्का नोत्थापिता ।

(A) ल्युडर्थस्य अनुपपन्नतायाः

(B) "तत्र भव" इत्यस्य अनुपपन्नतायाः

(C) प्रोक्तादीनां तद्धितार्थानाम् अनुपपन्नतायाः

(D) षष्ठ्यर्थस्य अनुपपन्नतायाः

29. ऋग्वेदे वरुणसूक्तस्य (1.2) ऋषिः कः?

(A) शुनःशेपः (B) मधुच्छन्दाः

(C) हिरण्यस्तूपः (D) गौतमः

30. अधस्तनेषु "ध्वन्यते इति ध्वनिः" इत्यनेन कोऽभिप्रायः?

(A) व्यञ्जशब्दार्थौ (B) व्यञ्जनाशक्तिः

(C) व्यङ्ग्यार्थः (D) व्यङ्ग्यकाव्यम्

31. निम्नलिखितेषु ऋग्वेदस्य प्राचीनतमो भाष्यकारः कोऽस्ति?

(A) वेङ्कटमाधवः (B) सायणः

(C) उव्वटः (D) स्कन्दस्वामी

32. "दीर्घाज्जसि च' इत्यनेन भवति ।

(A) पूर्वसवर्णदीर्घः (B)पूर्वसवर्णदीर्घस्य निषेधः

(C) वृद्धिः एकादेशः (D) गुणादेशस्याभावः

33 पुराणसन्दर्भे सप्तद्वीपेषु गणना नास्ति ।

(A) कुशद्वीपः (B) प्लक्षद्वीपः

(C) शाकद्वीपः (D) आम्रद्वीपः

34. ऋक्प्रातिशाख्यानुसारं समानाक्षराणां का संख्या?

(A) षड् (B) अष्टौ

(C) पञ्च (D) सप्त

35. 'सर्पिषो नाथनम्' इह षष्टी विभक्तिर्भवति ।

(A) कर्मणः शेषत्वेन विवक्षायाम्

(B) करणस्य शेषत्वेन विवक्षायाम्

(C) सम्बन्धस्य सम्बन्धत्वेन विवक्षायाम्

(D) अधिकरणस्य शेषत्वेन विवक्षायाम्

36. अलङ्कारसम्प्रदायस्य प्रवर्तकाचार्यः कः?

(A) वामनः (B) भरतः

(C) भामहः (D) रुद्रटः

37. कौटिलीय- अर्थशास्त्रं कति अधिकरणेषु विभक्तमस्ति ?

(A) अष्टादशाधिकरणेषु

(B) द्वादशाधिकरणेषु

(C) दशाधिकरणेषु

(D) पञ्चदशाधिकरणेषु

38. "कौटिल्यमते कृषिपाशुपाल्ये वाणिज्या" इति विषयाः सन्ति ।

(A) त्रय्याः (B) दण्डनीतेः

(C) वार्तायाः (D) आन्वीक्षक्याः

39. काव्यप्रकाशस्य कस्मिनुल्लासे व्यञ्जनायाः स्थापना अभवत् ।

(A) सप्तमोल्लासे (B) अष्टमोल्लासे

(C) पञ्चमोल्लासे (D) प्रथमोल्लासे

40. बौद्धदर्शने पञ्चविधस्कन्धेषु परिगणितो नास्ति-

(A) विज्ञानम् (B) वेदना

(C) संज्ञा (D) विशेषणम्

41. तर्कसंग्रहानुसारं पदार्थाः कति सन्ति?

(A) सप्त (B) षोडश

(C) नव (D) दश

42. अनुमितिज्ञाने व्यापार उच्यते ।

(A) करणम् (B) परामर्शः

(C) व्याप्तिः (D) हेतुः

43. अधोलिखितेषु अर्थविस्तारस्योदाहरणं नास्ति-

(A) गवेषणा (B) तैलम्

(C) प्रवीणः (D) श्राद्धः

44. कस्य वचः नारिकेलफलसम्मित कल्पितम्?

(A) विशाखदत्तस्य (B) भारवेः

(C) दण्डिनः (D) बाणभट्टस्य

45. निम्नलिखितेषु कतमं ब्राह्मणं सामवेदीयं नास्ति?

(A) ताण्ड्यब्राह्मणम् (B) शतपथब्राह्मणम्

(C) षड्-विंशब्राह्मणम् (D) छान्दोग्यब्राह्मणम्

46. 'सत्यं वृहदृतमुग्रं दीक्षातपो ब्रह्मयज्ञः पृथिवीं धारयन्ति' मन्त्रांशोऽयं कस्मिन् वेदे विद्यते?

(A) ऋग्वेदे (B) यजुर्वेदि

(C) सामवेदे (D) अथर्ववेदे

47. अधोऽङ्कितेषु योगदर्शनानुसारेण समुचितः क्रमोऽस्ति-

(A) अस्तेय-अपरिग्रह-सत्य-ब्रह्मचर्य-अहिंसाः

(B) अपरिग्रह-ब्रह्मचर्य-सत्य-अस्तेय-अहिंसाः

(C) अहिंसा-सत्य-अस्तेय-ब्रह्मचर्य-अपरिग्रहाः

(D) सत्य-अहिंसा-अस्तेय-ब्रह्मचर्य-अपरिग्रहाः

48. निम्नलिखितेषु दर्शनेषु किं दर्शन परमात्मनः सृष्टिकर्तृत्वं न

मन्यते?

(A) आर्हतदर्शनम् (B) न्यायदर्शनम्

(C) वेदान्तदर्शनम् (D) योगदर्शनम्

49. कुन्तकानुसारम् अधस्तनेषु सुकुमारमार्गस्य प्रथमो गुणः वर्तते-

(A) माधुर्यम् (B) सौन्दर्यम्

(C) स्वाभाविकम् (D) लावण्यम्

50. भावनायां लिङ्गादिज्ञानं करणं भवति-

(A) भावनोत्पादकत्वेन

(B) शब्दभावनानिवर्तकत्वेन

(C) आर्थीभावनोत्पादकत्वेन

(D) शब्दभावनाभाव्यनिर्वर्तकत्वेन

51. अधस्तनानां महाभारतीयपर्वणां समुचितः क्रमोऽस्ति-

(A) शान्तपर्व, स्त्रीपर्व, अनुशासनपर्व, आश्वमेधिकपर्व

(B) स्त्रीपर्व, शान्तिपर्व, अनुशासनपर्व, आश्वमेधिकपर्व

(C) अनुशासनपर्व, स्त्रीपर्व, आश्वमेघिकपर्व, शान्तिपर्व

(D) आश्वमेधिकपर्व, अनुशासनपर्व, स्त्रीपर्व, शान्तिपर्व

52. मनुस्मृतिः कति अध्यायेषु विभक्ताऽस्ति-

(A) दशाध्यायेषु (B) एकादशाध्यायेषु

(C) त्रयोदशाध्यायेषु (D) द्वादशाध्यायेषु

53. कौषीतकिब्राह्मणं केन वेदेन सम्बद्धमस्ति?

(A) शुक्लयजुर्वेदेन (B) कृष्णयजुर्वेदेन

(C) ऋग्वेदेन (D) सामवेदिनहि

54. आर्हतदर्शने चतुर्विधवन्धेषु परिगणितो नास्ति-

(A) प्रकृतिबन्धः (B) विषयबन्धः

(C) स्थितिबन्धः (D) प्रदेशबन्धः

55. आकृतिमूलकवर्गीकरणे हिन्दीभाषा मन्यते-

(A) प्रश्लिष्ट-बहिर्मुखी

(B) प्लिष्टवहिर्मुखी वियोगात्मिका

(C) श्लिष्टवहिर्मुखी संयोगात्मिका

(D) श्लिष्टान्तरमुखी वियोगात्मिका

56. अधोलिखितेषु उपन्यासकारं चिनुत ।

(A) बाणभट्टः (B) बिल्हणः

(C) दण्डी (D) अम्बिकादत्तव्यासः

57. "न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः" इति केनोक्तम्?

(A) विशाखदत्ते (B) दण्डिना

(C) भासेन (D) भारविणा

58. ग्रिमनियमानुसारेण तवर्गीयध्वनीनां परिवर्तनक्रमोस्ति-

(A) द>ध, ध>थ, थ>त

(B) त>थ, द>ध, ध>त

(C) थ>ध, त>द, ध>द

(D) त>थ, ध>द, द>त

59. शारिपुत्रप्रकरणमस्ति-

(A) माघप्रणीतम् (B) श्रीहर्षप्रणीतम्

(C) अश्वघोषप्रणीतम् (D) बिल्हणप्रणीतम्

60 विश्वनाथकविराजेन प्रतिपादितं काव्यस्वरूपं किम?

(A) रीतिरात्मा काव्यस्य

(B) वाक्य रसात्मकं काव्यम्

(C) रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दो काव्यम्

(D) कान्यस्यात्मा ध्वनिः

61. वेदान्तसारमतेन कर्मेन्द्रियाणामुत्पत्तिः भवति-

(A) आकाशादीनां रजोंऽशेभ्यः समस्तेभ्यः

(B) आकाशादीनां रजोंऽशेभ्यो व्यस्तेभ्यः

(C) आकाशादीनां सत्त्वांऽशेभ्यो व्यस्तेभ्यः

(D) आकाशादीनां सत्त्वांशेभ्यो समस्तेभ्यः

62. मनुमते अनारोग्यमनायुष्यमस्वर्ग्य चाउस्ति?

(A) अविद्या (B) अतिभोजनम्

(C) उच्छिष्टभोजनम् (D) अवशिष्टभोजनम्

63. "षड् भावविकारा भवन्ति" मतमिदं कस्य विद्यते?

(A) वार्ष्यायणे (B) शाकपूणेः

(C) शाकटायनस्य (D) यास्कस्य

64. निम्नलिखितेषु केन ज्योतिशशास्त्रमाधृत्य ऋग्वेदस्य कालो निर्धारितः?

(A) बालगंगाधरतिलकमहोदयेन

(B) मैक्डानलमहोदयेन

(C) वेबरमहोदयेन

(D) विल्सनमहोदयेन

65. तर्कभाषानुसारम् इन्द्रियार्थसन्निकर्षः कस्य कारणम्?

(A) अनुमानस्य् (B) प्रत्यक्षस्य

(C) उपमानस्य (D) इन्द्रियस्य

66. दर्शयज्ञः कस्यां तिथौ क्रियते?

(A) पौर्णमास्याम् (B) अमावस्याम्

(C) अष्टम्याम् (D) चतुर्दश्याम्

67. त्रिविक्रमभट्टप्रणीतं चम्पूकाव्यमस्ति-

(A) नलचम्पू (B) राजचम्पू

(C) रामायणचम्पू (D) जीवन्धरचम्पू

68. "श्लोकवार्तिकम्" कस्य दर्शनस्य ग्रन्थोऽस्ति?

(A) मीमांसादर्शनस्य (B) वेदान्तदर्शनस्य

(C) न्यायदर्शनस्य (D) सांख्यदर्शनस्य

69. अधस्तनयुग्मानां समीचीनमेलनतालिकां चिनुत-

तालिका-1	तालिका-2
(a) भारविः	(1) बुद्धचरितम्
(b) कालिदासः	(2) रघुवंशम्
(c) अश्वघोषः	(3) किरातार्जुनीयम्
(d) शूद्रकः	(4) मृच्छकटिकम्

(A) (a)-(3), (b)-(2), (c)-(1), (d)-(4)
(B) (a)-(2), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(3)
(C) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)
(D) (a)-(4), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(1)

70. सत्कार्यवादस्य समर्थने हेतुर्नास्ति-
(A) असदकरणम्
(B) सर्वसम्भवाभावः
(C) शक्तस्य शक्यकरणम्
(D) सर्वसम्भव-भावः

71. 'भवाति' रूपमिदं कस्य लकारस्य विद्यते?
(A) लोट्लकारस्य
(B) विधिलिङ्गलकारस्य
(C) लेट्लकारस्य
(D) लुट्लकारस्य

72. मुद्राराक्षसस्य तृतीयाङ्कस्य नाम अस्ति-
(A) मुद्राप्रापतिः
(B) भूषणविक्रयः
(C) प्रलोभनम्
(D) कृतककलहः

73. अरस्तूविरचितं पुस्तकमस्ति-
(A) दि रिपब्लिक [The Republic]
(B) आन द सब्लाइम [On The Sublime]
(C) पॉएटिक्स [Poetics]
(D) टेल आफ़ टू सिटीज़ [Tale of two cities]

74. पाणिनीयशिक्षानुसारं कस्य प्राणिनः ध्वनिः एकमात्रिकवर्णतुल्यः भवति ।
(A) नकुलस्य
(B) शिखिनः
(C) वायसस्य
(D) चाषस्य

75. मनुस्मृत्यनुसारं कति पाकयज्ञाः ।
(A) चत्वारः
(B) षट्
(C) पञ्च
(D) दश

76. अधोलिखितेषु वैदिकभाषादृशा साधुप्रयोगो मन्यते-
(A) देवेभिः
(B) विश्वा
(C) एमसि
(D)उक्ताःसर्वेऽपिसाधवः

77. सारनाथ-बौद्धप्रतिमालेखस्य भाषाऽस्ति-
(A) संस्कृतम्
(B) प्राकृतम्
(C) पालिः
(D) अपभ्रंशः

78. "काण्वशतपथब्राह्मणम्" केन वेदेन सम्बद्धम् अस्ति?
(A) ऋग्वेदेन
(B) अयर्ववेदेन
(C) यजुर्वेदिन
(D) सामवेदेन

79. "यस्य हलः" इत्यत्र 'यस्य' इत्यनेन ग्रहणं भवति-
(A) केवल यकारस्य
(B) अकारसहितं यकारस्य
(C) यत् प्रातिपदिकेन निष्पन्नस्य षष्ठ्यन्तस्य
(D) उक्तेषु न कस्यापि

80. अधोलिखितेषु भर्तृहरिमतेन ध्वनेः भेदद्वयं चिनुत ।
(A) पश्यन्ती, वैखरी
(B) प्राकृतः, वैखरी
(C) प्राकृतः, वैकृतः
(D) वैखरी, वैकृतः

81. अशोकस्य शाहबाजगढी- अभिलेखः कुत्र प्राप्यते-
(A) जूनागढ़-गुजरातप्रान्ते
(B) पेशावर-पाकिस्तानदेशे
(C) गुर्जरा-मध्यप्रदेशे
(D) भावू-राजस्थानप्रदेशे

82. अधोलिखितेषु का वैदिकभाषायाः विशेषता नास्ति-
(A) सानुनासिकस्वराणां प्रयोगः
(B) "लेट' लकारस्य प्रयोगः
(C) तुमुन्नर्थे तवैप्रत्ययस्य प्रयोगः
(D) क्त्वार्थे तवेङ्प्रत्ययस्य प्रयोगः

83. अधोलिखितेषु वेदान्तमते असमीचीनं कथन चिनुत-
(A) काम्यकर्माणि स्वर्गादिसाधनानि
(B) निषिद्धानि कर्माणि अनिष्टसाधनानि
(C) नित्यानि कर्माणि अनिष्ठसाधनानि
(D) नैमित्तिकानि प्रायश्चित्तादीनि कर्माणि पापक्षयादिसाधनानि

84. वानीरकुञ्जोड्डीनशकुनि कोलाहलं शृण्वन्त्याः।
गृहकर्मव्यापृताया वध्वाः सीदन्त्यङ्गानि॥
काव्यप्रकाशानुसारम् उपर्युक्तमुदाहरणं कस्य?
(A) काक्वाक्षिप्तगुणीभुतव्यंग्यस्य
(B) असुन्दरगुणीभूतव्यंग्यस्य
(C) अस्फुटगुणीभूतव्यंग्यस्य
(D) सन्दिग्धप्राधान्यगुणीभूतव्यंग्यस्य

85. 'यो जात एव प्रथमो मनस्वान् देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत्' मन्त्रांशोऽयं कस्य सूक्तस्य विद्यते?
(A) सूर्यसूक्तस्य
(B) वरुणसूक्तस्य
(C) अग्निसूक्तस्य
(D) इन्द्रसूक्तस्य

86. "यं ब्राह्मणमियं देवी वाग्वश्येवानुवर्तते" इति केन उद्घोषितम् ।
(A) भवभूतिना
(B) भासेन
(C) माघेन
(D) भट्टनारायणेन

87. जीवाजीवाख्ये द्वे तत्वे कस्मिन् दर्शने मन्येते?

(A) बौद्धदर्शने (B) सांख्यदर्शने
(C) वेदान्तदर्शने (D) जैनदर्शने

88. 'अल्पक्लेशं मरणं दारिद्रामनन्तकं दुःखमिति' केनोक्तम्?
(A) बाणभट्टेन (B) माघेन
(C) शूद्रकेण (D) भारविणा

89. अशोकस्य शाहबाजगढीलेखः कस्यां लिप्यां प्राप्यते-
(A) ब्राह्मी (B) खरोष्टी
(C) शारदा (D) पुष्करी

90. निम्नलिखितेषु को हेत्वाभासो नास्ति?
(A) असिद्धः (B) विरुद्धः
(C) अनैकान्तिकः (D) असत्प्रतिपक्षः

91. बाष्कलशाखा कस्य वेदस्य विद्यते?
(A) ऋग्वेदस्य (B) सामवेदस्य
(C) यजुर्वेदस्य (D) अथर्ववेदस्य

92. "नमो अरिहंतानं। नमो सवसिधानं। ऐरेण महाराजेन ..."। इति वाक्य कस्मिन्नभिलेखे प्राप्यते?
(A) इलाहावाद-लेखे (B) ऐहोल-शिलालेखे
(C) गिरनार-लेखे (D) हाथीगुम्फा-लेखे

93. अधोलिखितेषु खकारस्य बाह्यप्रयत्नविषयकम् उपयुक्ततमं विकल्पं चिनुत ।
(A) विवारः, श्वासः अघोषः, अल्पप्राणः
(B). संवारः, नादः, घोषः, अल्पप्राणः
(C) विवारः, श्वासः अघोषः, महाप्राणः
(D) संवारः, नादः, घोषः, महाप्राणः

94. "न हि रसादृते कश्चिदर्थः प्रवर्तते" इति केनोक्तम्?
(A) भामहेन् (B) भरतेन
(C) विश्वनाथेन (D) मम्मटेन

95. अभिनिहितस्वरितो भेदोऽस्ति-
(A) आश्रितस्वरितस्य (B) जात्यस्वरितस्य
(C) तैरोविरामस्वरितस्य (D) स्वतन्त्रस्वरितस्य

96. अधस्तनयुग्मानां वाल्मीकिरामायणस्योपजीविग्रन्थेषु केन सह कस्य सम्बन्धः? समुचितां तालिकां चिनुत ।

तालिका-1	तालिका-2
(a) रामायणमञ्जरी	(1) विलोमकाव्यम्
(b) यादवराघवीयम्	(2) चित्रकाव्यम्
(c) अनर्घराघवम्	(3) महाकाव्यम्
(d) रामलीलामृतम्	(4) नाटकम्

(A) (a)-(3), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(2),
(B) (a)-(3), (b)-(4), (c)-(1), (d)-(2),
(C) (a)-(2), (b)-(4), (c)-(3), (d)-(1),
(D) (a)-(4), (b)-(2), (c)-(1), (d)-(3),

97. "विभागं चेत्पिता कुर्यादिच्छया विभजेत्सुतान्"। इति कस्य ग्रन्थस्य वचनमस्ति-
(A) मनुस्मृत्याः (B) याज्ञवल्क्यस्मृत्याः
(C) पाराशरस्मृत्याः (D) नारदस्मृत्याः

98. वेदान्तदर्शनानुसारं जगतः प्रपञ्चः किं कथ्यते?
(A) ईश्वरस्व स्वरूपम् (B) अनन्तसत्ता
(C) अनादितत्त्वम् (D) विवर्तः

99. अधस्तनेषु वाल्मीकि रामायणस्य काण्डानां समुचितक्रमोऽस्ति-
(A) बाल-अयोध्या-सुन्दर-अरण्य-किष्किन्धा-युद्ध-उत्तराणि
(B) बाल-अयोध्या-किष्किन्धा-अरण्य-सुन्दर-युद्ध-उत्तराणि
(C) अयोध्या-बाल- किष्किन्धा-अरण्य-सुन्दर-युद्ध-उत्तराणि
(D) बाल-अयोध्या-अरण्य-किष्किन्धा-सुन्दर- युद्ध -उत्तराणि

100. 'क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।' इत्यत्र - "अल्पविषया मतिः" इति कस्य कृते प्रयुक्तम्?
(A) विशाखदत्तस्य (B) भासस्य
(C) कालिदासस्य (D) वाणभट्टा

नेट प्रश्नपत्र दिसम्बर-2019

1. कथनद्वयम् अधोलिखितम् - तत्र एकम् अभिकथनम् (A) अपरश्च तस्य कारणम् (R) इति ।
अभिकथनम् (A) : एकनवतिवर्षीयस्य प्रणवस्य प्रपौत्रः ओङ्कारः। ओङ्कारस्य युवापत्यसञ्ज्ञा भवति ।
कारणम् (R)- 'जीवति तु वंश्ये युवा' इति विधानात् ।
उपर्युक्तम् अभिकथन कारणमाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत
(A) (A) तथा (R) उभयं सत्यमस्ति । (A) इत्यस्य (R) उचित कारणमस्ति ।
(B) (A) तथा (R) उभावपि असमीचीनौ
(C) (A) तथा (R) उभावपि समीचीनौ, परं (A) इत्यस्य (R) इति समुचितं कारणं नास्ति।
(D) (A) इति असमीचीनं परं (R) इति समीचीनम्

2. कल्पसाहित्ये गण्येते-
(a) गौतमधर्मसूत्रम्
(b) वाजसनेयिप्रातिशाख्यम्
(c) मानवशुल्वसूत्रम्
(d) निघण्टुः
अधोलिखितेषु समुचितमुत्तरं चिनुत-
(A) (a) एवं (b) (B) (c) एवं (d)

(C) (a) एवं (c) (D) (b) एवं (d)

3. निम्नाङ्कितेषु समुचितः सम्बन्धो वर्तते-

(a) हर्षस्य वांसखेडा - ताम्र अभिलेखः

(b) पुलकेशिन द्वितीयस्य - मन्दसौर-अभिलेखः

(c) यशोधर्मणः - इलाहाबाद - अभिलेखः

(d) रुद्रदाम्नः - गिरनार - अभिलेखः

अधस्तनेषु समीचीनं विकल्पं चिनुत-

(A) (a) एवं (b) (C) (b) एवं (c)

(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (d)

4. रथाङ्गपाणेः पटलेन रोचिषामृषित्विषःसंवलिताविरेजिरे।
चलत्पलाशान्तरगोचरास्तरोस्तुषारमूर्तेरिव नक्तमंशवः।।

- अस्मिन् श्लोके 'तुषारमूर्ति' इति शब्दः कस्य वाचकः ?

(A) सूर्यस्य (B) चन्द्रस्य

(C) श्रीकृष्णस्य (D) रथस्य

5. सायणभाष्यग्वेदसंहितां सम्पाद्य तस्याः प्रकाशनकार्यं प्रथमं केन वैदेशिकेन कृतमस्ति ?

(A) मोक्षमूलरेण (B) वेबरेण

(C) जेकोबी महोदयेन (D) विण्टरनित्समहोदयेन

6. वेदान्तसारानुसारं 'तत्त्वमसि' इत्यत्र अखण्डार्थबोधक-सम्बन्धः कतिविधः ?

(A) चतुर्विधः (B) त्रिविधः

(C) द्विविधः (D) पञ्चविधः

7. अधस्तनेषु चित्तभूमिषु न गण्येते-

(a) चलम् (b) मूढम्

(c) विक्षिप्तम् (d) अचलम्

समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (a) एवं (e) (B) (a) एवं (d)

(C) (c) एवं (d) (D) (b) एवं (c)

8. ऋग्वेदसंहिताया वैशिष्ट्यमस्ति-

(A) यज्ञवर्णनम् (B) देवस्तुतिः

(C) स्मार्तकार्यम् (D) वास्तुनिर्देशः

9. रामायणस्य बालकाण्डस्य स्गानुसारम् उपाख्यानानां समुचितः क्रमोऽस्ति

(A) शुनःशेपाख्यानम्, ऋष्यश्रृङ्गाख्यानम्, क्रौञ्चवधाख्यानम्, अहिल्योद्धाराख्यानम्

(B) क्रौञ्चवधाख्यानम्, ऋष्यश्रृङ्गाख्यानम्, अहिल्योद्धाराख्यानम्, शुनःशेपाख्यानम्

(C) क्रौञ्चवधाख्यानम्, शुनःशेपाख्यानम्, अहिल्योद्धाराख्यानम् ऋष्यश्रृङ्गाख्यानम्

(D) ऋध्यश्रृङ्गाख्यानम्, शुनःशेपाख्यानम्, अहिल्योद्धाराख्यानम्, क्रौञ्चवधाख्यानम्

10. यथा हिरण्यं शुचिधातुमध्ये मेरुर्गिरीणां सरसां समुद्रः।
तारा सचन्द्रस्तपतां च सूर्यः पुत्रस्तथा ते द्विपदेषु वर्यः।।

श्लोकेऽस्मिन् कस्य पुत्रस्य वर्णनमस्ति-

(A) दशरथस्य (B) दुष्यन्तस्य

(8) दुर्योधनस्य (D) शुद्धोदनस्य

11. पुरुरवा उर्वशीसंवादसूक्ते कियन्तो मन्त्राः सन्ति ?

(A) एकादश (B) पञ्चदश

(C) सप्तदश (D) अष्टादश

12. अधोऽङ्कितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(a) माध्यमिकाः (i) बाह्यार्थशून्यम्

(b) योगाचाराः (ii) वाह्यार्थप्रत्यक्षम्

(c) सौत्रान्तिकाः (iii) सर्वं शून्यम्

(d) वैभाषिकाः (iv) बाह्यार्थानुमेयम्

समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (a)-(ii), (b)-(i), (c)-(iv), (d)-(i)

(B) (a)-(i), (b)-(ii), (c)-(iii), (d)-(iv)

(C) (a)-(iv), (b)-(iii), (c)-(ii), (d)-(i)

(D) (a)-(iii), (b)-(ii), (c)-(iv), (d)-(i)

13. 'अग्निना रयिमश्नवत्पोषमेव दिवे दिवे' इत्यस्मिन्मन्त्रांशे (रयिः) पदस्य अर्थम् निर्दिशतु -

(a) रात्रिः (b) रत्नम्

(c) धनम् (d) वसु

अत्र उचितमुक्तरं चिनुत-

(A) (a) एवं (b) (B) (c) एवं (d)

(C) (b) एवं (c) (D) (a) एवं (d)

14. अधोऽङ्कितानां केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(a) प्रत्यक्षमेव प्रमाणम् (i) जैनाः

(b) सप्तभङ्गिनयः (ii) साङ्ख्यदर्शनम्

(c) हेत्वाभासाः (iii) चार्वाकाः

(d) सत्कार्यवादः (iv) नैयायिकाः

अत्र समुचितां विकल्पं चिनुत -

(A) (a)-(iv). (b)-(i). (c)-(iii). (d)-(ii)

(B) (a)-(iii), (b)-(i). (c)-(iv), (d)-(ii)

(C) (a) (ii), (b) (iv), (c) (iii),(d) (i)

(D) (a)-(i), (b)-(iii), (c)-(ii), (d)-(iv)

15.'यत्समवायिकारणप्रत्यासन्नमवधृतसामर्थ्यं तदसमवायिकारणम्/ यथा-तन्तुसंयोगः पटस्यासमवायिकारणम्। तन्तुसंयोगस्य गुणस्य पटसमवायिकारणे षु तन्तुषु गुणिषु समवेतत्वेन समबायथिकारणे प्रत्यासन्नत्वात्। अनन्यवासिद्धनियतपूर्वभावित्वेन पटं प्रति कारणत्वाच्च। इति सिद्धान्तानुसारेण 'तन्तुसंयोगः पटस्य कीदृशं कारणम् भवति ?

(A) असमवायिकारणम् (B) समवायिकारणम्

(C) संयोगकारणम् (D) निमित्तकारणम्

16. मनुस्मृतिकारेण 'नारा' इति शब्देन किं गृहीतम् ?

(A) आपः (B) मनुष्यः
(C) पशुः (D) पक्षी

17. चत्वारो वेदाः जगति प्रसिद्धाः सान्ति। एते ऋग्वेदः, यजुर्वेदः, सामवेदः, अथर्ववेदश्च। एतेषां मन्त्राणामर्थख्यापनाय बहवः आचार्याः प्रयत्नं कृतवन्तः। तत्रग्वेदस्य प्रथमो भाष्यकारः स्कन्दस्वामी आसीत्। विस्तारपूर्वकं यज्ञपद्धतेः प्रथमं भाष्यं आचार्यसायणेन कृतम्। स एव कृष्णवजुर्वेदस्य भाष्यं प्रथमतया विरचितवान्। आनन्दतीर्थः , दवानन्दश्च बेदभाष्यं रचितवन्तौ।

उपर्युक्तेपु ऋग्वेदस्य प्रथमभाष्यकारः क आसीत् ?

(A) सायणः (B) स्कन्दस्वामी
(C) आनन्दतीर्थः (D) दयानन्दः

18. अधस्तनेषु वेदान्तानुसारं षट्कसम्पत्तिषु गण्येते

(a) श्रवणम् (b) मननम्
(c) श्रद्धा (d) समाधानम्

समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (a) एवं (d) (B) (b) एवं (c)
(C) (c) एवं (d) (D) (c) एवं (a)

19.महाकविकालिदासस्य प्रसिद्धौ कस्यालङ्कारस्योदाहरणरूपेण उपयोगः क्रियते -

(A) उपमालङ्कारस्य
(B) उत्प्रेक्षालङ्कारस्य
(C) समासोक्त्यलङ्कारस्य
(D) अतिशयोक्त्यलङ्कारस्य

20. गगनारविन्दं सुरभि, अरविन्दत्वात्, सरोजारविन्दवत्' इत्यत्र तर्कभाषानुसारं कतमो हेत्वाभासः ?

(A) स्वरूपासिद्धः (B) विरुद्धः
(C) आश्रयासिद्धः (D) व्याप्यत्वासिद्धः

21. अलोऽन्त्यात् पूर्वर्णस्य का सञ्ज्ञा भवति ?

(A) निष्ठा (B) उपधा
(C) गति (D) संहिता

22. अत्र द्वौ कथनांशौ स्तः -

(a) : पशुपादप्रकृतिः प्रभागपादः
(b) : पशुः चतुष्पाद्युक्ता भवन्ति। तेषामियं प्रकृतिर्भवति। अतः छन्दस्सु चत्वारः पादा भवन्ति। पद्यो चत्वारः पादाः छन्दनिरूपणे गण्यन्ते।

एतेषु-उचितमुत्तरं लिखत् -

(A) (a) तथा (b) उभये सत्यकथने, (b) (a) अंशस्य उचितमुदाहरणम् ।
(B) (a) कथनं सत्यम् (b) कथनं तथा न निर्दिशति (a) स्वरूपम्।
(C) (a) कथनमसत्यम् (b) कथनं सत्यमस्ति
(D) (a) सत्यमस्ति (b) परिभाषां न प्रस्तौति

23. छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुनिरुक्तं श्रोत्रमुच्यते।।
अत्र श्लोके केषां वर्णनं प्राप्यते-

(A) आरण्यकानाम् (B) उपनिषदाम्
(C) वेदाङ्गानाम् (D) वेदानाम्

24. साङ्ख्यदर्शनानुसारं पञ्चविंशतित्वेषु गणना नास्ति-

(A) रसस्य (B) पुद्गलस्य
(C) श्रोत्रस्य (D) जलस्य

25. 'पैलः' इति पदं विद्यते

(a) गणविशेषस्यादिमः शब्दः (b) पैले भवा
(c) पीलाया गोत्रापत्यम् (d) पैलस्य इयम्

अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a) एवं (b) (B) (c) एवं (d)
(C) (a) एवं (c) (D) (b) एवं (d)

26. नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
दैवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्।।
उपर्युक्तश्लोकेन सम्बन्धोऽस्ति

(A) वाल्मीकिरामायणस्य
(B) महाभारतस्य
(C) जयपुराणस्य
(D) भारतविजयस्य

27. अनुकरणसिद्धान्तस्य समर्थकः मुख्यतया अस्ति

(A) अरस्तू (B) लॉञ्जाइनस
(C) क्रोचे (D) प्लेटो

28. 'गो + अग्रम् इत्यत्र न सम्भवति

(A) प्रकृतिभावः (B) पूर्वरूपम्
(C) अवङादेशः (D)संहिताया अभावः

29. 'मृगाक्षी' - शब्दे विद्यमानः 'मृग' इति शब्दः उदाहरणं विद्यते

(A) अर्थादेशस्य
(B) अर्थविस्तारस्य
(C) अर्थसङ्कोचस्य
(D) अर्थागमस्य

30. न तेन सज्यं क्वचिदुद्यतं धनुः,
कृतं न वा तेन विजिह्ममानम्।
गुणानुरागेण शिरोभिरुह्यते
नराधिपैर्माल्यमिवास्य शासनम्।।
अस्मिन् श्लोके प्रशंसा वर्तते

(A) युधिष्ठिरस्य (B) वनेचरस्य
(C) दुर्योधनस्य (D) अर्जुनस्य

31. दर्श नु विश्वदर्शतं दर्श रथमधि क्षमि।
एता जुषत मे गिरः।।

उपर्युक्तमन्त्रे 'गिरः' पदस्य अर्थ स्तः -

(a) पर्वतः (b) गिरिः

(c) वाणी (d) स्तुतिः

अत्र समीचीनमुक्तरं चिनुत -

(A) (b) एवं (c) (B) (a) एवं (b)

(C) (c) एवं (d) (D) (b) एवं (d)

32. सर्वप्राचीनरचनायाः प्राथम्येन कालक्रमानुसारमुचितमुक्तरं चिनुत-

(a) बुद्धचरितम् (b) नैषधीयचरितम्

(c) स्वप्नवासवदत्तम् (d) मुद्राराक्षसम्

एशु क्रमं चिनुत

(A) (a) (d) (b) (c)

(B) (d) (c) (a) (b)

(C) (c) (b) (a) (d)

(D) (c) (a) (d) (b)

33. यजुर्वेदसंहितायां प्राधान्येन निरूपणं प्राप्यते

(A) संवादस्य (B) यज्ञानाम्

(C) गानानाम् (D) दार्शनिकविचाराणाम्

34. अधोलिखितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(a) भट्टोजिदीक्षितः (i) काशिका

(b) नरेन्द्राचार्यः (ii) शब्दकौस्तुभः

(c) वामनः (iii) लघुमञ्जूषा

(d) नागेशः (iv) सारस्वतव्याकरणम्

समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a)-(iv), (b)-(i), (c)-(), (d)-(ii)

(B) (a)-(i), (b)-(iv), (c)-(iii). (d)-(ii)

(C) (a)-(iii), (b)-(ii), (c)-(i), (d)-(iv)

(D) (a)-(ii), (b)-(iv), (c)-(i), (d)-(iii)

35. याज्ञवल्क्यस्मृतेरनुसारं लिखितं भुक्तिः साक्षिणश्चेति ' किम्

(A) प्रमाणम् (B) प्रकरणम्

(C) अनुमानम् (D) साधनम्

36. मनुस्मृतेः टीकाकाराणां केन सह कस्य सम्बन्धः -

(a) गोविन्दराजः (i) मनुभाष्यम्

(b) कुल्लूकभट्टः (ii) मन्वाशयानुसारिणी-मनुटीका

(c) सर्वज्ञनारायणः (iii) मन्वर्थमुक्तावली

(d) मेधातिथिः (iv) मन्वर्थविवृत्ति

अधस्तनेषु समीचीनं विकल्पं चिनुत

(A) (a)-(iii), (b)-(i), (c)-(ii), (d)-(iv)

(B) (a)-(ii), (b)-(iii), (c)-(iv), (d)-(i)

(C) (a)-(iv), (b)-(ii), (c)-(i), (d)-(iii)

(D) (a)-(i), (b)-(iv), (c)-(iii), (d)-(ii)

37. 'प्रत्यर्थम्' इत्यत्र अव्ययीभाव समासो विद्यते

(A) योग्यतार्थे (B) वीप्सार्थे

(C) पदार्थानतिवृत्यर्थे (D) सादृश्यार्थे

38. 'काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्' इत्युक्ति अस्ति

(A) दण्डिनः (B) वामनस्य

(C) अभिनवगुप्तस्य (D) भोजस्य

39. याज्ञवल्क्यस्मृतेः व्यवहाराध्याये प्रकरणानां समुचितं क्रमोऽस्ति -

(A) ऋणादान - उपनिधि - साक्षि - लेख्य - दिव्य - सीमाविवाद - दायविभागप्रकरणम्

(B) दिव्य - लेख्य - साक्षि - उपनिधि - ऋणादान – सीमाविवाद - दायविभागप्रकरणम्

(C) ऋणादान - उपनिचि - साक्षि - लेख्य - दिव्य – दायविभाग - सीमाविवादप्रकरणम्

(D) साक्षि - लेख्य - दिव्य - उपनिधि - ऋणादान – सीमाविवाद - दायविभागप्रकरणम्

40. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(a) हर्षः (i) मुद्राराक्षसम्

(b) भवभूतिः (ii) कर्णभारम्

(c) विशाखदतः (iii) उत्तररामचरितम्

(d) भासः (iv) रत्नावली

एषु समीचीनमुत्तरं चिनुत -

(A) (a)-(iii), (b)-(ii), (c)-(iv), (d)-(i)

(B) (a)-(iv), (b)-(iii), (c)-(i), (d)-(ii)

(C) (a)-(ii), (b)-(i), (c)-(ii), (d)-(iv)

(D) (a)-(i), (b)-(iv), (c)-(ii), (d)-(iii)

41. याज्ञवल्क्यमते उत्तरा क्रिया कुत्र बलवतीभवति ?

(A) सर्वेष्वर्थविवादेपु

(B) आधी प्रतिग्रहे

(C) सर्वेषु भूमिविवादेपु

(D) दायविभागविवादेशु

42. 'सोऽर्थस्तद्व्यक्तिसामर्थ्ययोगी' - अत्र 'सः' पदस्य क आशयः

(A) शब्दः (B) व्यंग्यः

(C) लक्ष्यः (D) वाच्यः

43. पाणिनीयशिक्षानुसारं ऌकारस्य भेदाः सम्भवन्ति -

(A) ह्रस्वदीर्घो (B) दीर्घप्लुतो

(C) ह्रस्वप्लुतो (D) ह्रस्वदीर्घप्लुताः

44. ध्वन्यालोके प्रतीयमानस्य तृतीयः प्रभेदः कः ?

(A) अलङ्कारादिः (B) गुणादिः

(C) रसादिः (D) वृत्यादिः

45. मनुस्मृत्यनुसातं समुचित्रमल्ति -

(A) आचार्यो ब्रहाणो मूर्तिः

(B) आचार्यो गुर्तिः प्रजापते।

(C) आचार्यों मूर्तिरात्मनः

(D) आचार्यः पृथिव्या मूर्तिः

46. 'अनैकान्तो विरुद्धश्चाप्यसिद्धः प्रतिपक्षितः।
कालात्ययापदिष्टश्च हेत्वाभासस्तु पञ्चधा।।
इत कस्य दार्शनिकस्य कथनमस्ति ?

(A) विश्वनाथपञ्चाननस्य

(B) अन्नभट्टस्य

(C) सदानन्दस्य

(D) केशवमिश्रस्य

47. बौद्धदर्शनानुसारं चतुर्णाम् आर्यसत्यानाम् उचितः क्रमोऽस्ति।

(A) दुःखम्, समुदायः, निरोधः, मार्गः

(B) मार्गः, निरोधः, निरोध्धः, समुदायः

(C) समुदायः, दुःखम्, मार्ग, सिरोच।

(D) निरोधः, मार्गः, दुखम्, समुदाय

48. ब्राह्मचर्य भूमौ शय्या जटाऽजिनधारणमग्निहोत्राभिषेकौ देवतापित्रकौ देवतापित्रतिथिपूथा वन्यश्याहारः इति कौटिलीयमते कस्य धर्मोऽस्ति ?

(A) ब्रह्मचारिणः (B) गृहस्यस्य

(C) वानप्रस्थ (D) परिव्राजकस्य

49. भोजप्रवन्धानुसारं शिलालेख-लिपिवाचमं कथ्यते -

(A) लिपिपरीक्षा (B) शिलाप्रीक्षा

(C) जतुपरीक्षा (D) पाण्डुपरीक्षा

50. ऋवेदस्य वरुणसूक्ते कियन्तो मन्त्राः सन्ति ?

(A) दश (B) द्वादश

(C) एकविंशतिः (D) द्वाविशतिः

51. कथनद्वयमधोलिखितम्-एकम् अभिकथनम् (A) अपरश्च कारणम् (R)
अभिकथनम् (A):साङ्ख्यकारिकायां पुरषस्य सत्ता स्वीक्रियते।
कारणम् (R): सङ्घातपरार्थत्वात्।
अत्र समुचितमुत्तरं चिनुत -

(A) (A) असत्यम् (R) सत्यम्

(B) (A) तथा (R) उभे सत्ये स्तः

(C) (A) तथा (R) उभे असत्ये स्तः

(D) (A) सत्यम् (R) असत्यम्

52. महाभारताश्रितं भासविरचितं नाटकमस्ति -

(a) दूतवाक्यम्

(b) प्रतिमानराटकम्

(c) मध्यमव्यायोगम्

(d) बालभारतम्

अयस्तनेषु समीचीनं विकल्पं चिनुत -

(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (d)

(C) (a) एवं (c) (D) (b) एवं (c)

53. अधोलिखितेषु केन सह करग सम्न-भः ?

(a) आख्यातम् (i) अदः

(b) नाम (ii) भवति

(c) निपातः (iii) परि

(d) उपसर्गः (iv) नु

समुचितां तालिकां चिनुत -

(A) (a)- (iii), (b)-(ii), (c)-(i). (d)-iv)

(B) (a)- (i), (b)-(iii), (c)-(ii), (d)-(iv)

(C) (a)- (iv). (b)- (iii). (c)-(i). (d)-(ii)

(D) (a)- (ii), (b)-(i), (c)-(iv), (d)-(iii)

54. तैतिरीयब्राह्मणस्य प्रथमे काण्डे के द्वे वर्णिते -

(a) उपहोमः (b) अग्निहोत्रम

(c) अग्न्याधानम् (d) गवामयनम्

अधोलिखितेषु समुषितमुतरं थिमुत -

(A) (b) एवं (c) (B) (a) एवं (d)

(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (b)

55. अधोलिखितेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(a) द्यूतक्रीडा (i) भीष्मपर्व

(b) गीता-उपदेशः (ii) महाप्रस्थानिकपर्व

(c) अभिमन्यु-वधः (iii) सभापर्व

(d) पाण्डवानां हिमालययात्रा (iv) द्रोणपर्व

समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a)-(i), (b)-(iv), (c)-(iii), (d)-(ii)

(B) (a)-(iii), (b) (i), (c) (iv), (d)-(ii)

(C) (a)-(iv), (b)-(ii), (c)-(ii), (d) (1)

(D) (a)-(ii). (b). G). (c) (iv). (d)-ii)

56. रामायणाश्रितं रचनाद्वयं किमस्ति ?

(A) मालविकानिमित्म, रत्मावली

(B) प्रतिमनाटकम्, वेणीसंहारम्

(C) उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम्

(D) मालविकान्निमित्रम्, स्वनवासवदतम्

57. क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष 'ईश्वरः' इति कथनमस्ति -

(A) साख्यदर्शने (B) योगदर्शने

(C) मीमांसादर्शने (D) वैशेषिकदर्शने

58. आर्हतदर्शनानुसारं सप्तभङ्गी नयः कुत्र न स्वीकृतोऽस्ति ?
स्यादस्ति च नास्ति च

(A) स्यादस्ति च नास्ति च

(B) स्यादस्ति च नास्ति चावक्तव्यः

(C) स्यादस्ति च वक्तव्यः

(D) स्यान्नास्ति चावक्तव्यः

59. हरी + एतौ इत्यत्र भवतः-

(a) यण् सन्धिः (b) पररूपम्
(c) प्रगृह्यसञ्ज्ञा (d) प्रकृतिभावः
अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -
(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (c)
(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (d)

60. नाट्यशास्त्रे विश्वकर्मणा प्रेक्षागृहस्य त्रैविध्ये वर्णितम् -
(a) विकृष्टम् (b) त्र्यस्रम्
(c) चतुरस्रम् (d) अष्टास्रम्
उपर्युक्तेषु समीचीनमुत्रं चिनुत
(A) (a) एवं (b) (B) (a) एवं (d)
(C) (b) एवं (d) (D) (e) एवं (d)

61.पाणिनीयशिक्षानुसारं शम्भुमते मताः वर्णाः सन्ति -
(a) 61 (b) 62
(c) 63 (d) 64
अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं चिमुत -
(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (c)
(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (d)

62. निरुक्तकारेण केन क्रमेण पदजातानि वर्षितानि ?
(i) आख्यातम् (ii) उपसर्गाः
(iii) निपाताः (iv) नाम
अत्र कः क्रमः ? स्पष्टयत
(A) (iv), (i), (ii). (iii)
(B) (iii), (ii), (i), (iv)
(C) (ii), (i), (iii), (iv)
(D) (iii), (ii). (iv), (i)

63. अधोऽङ्कितेषु योगसूत्रानुसारं योगाङ्गेषु गण्येते -
(a) स्वाध्यायः (b) निरुद्धम्
(c) प्रत्यक्षम् (d) समाधिः
समुचितं विकल्पं चिनुत -
(A) (a) एवं (d) (B) (a) एवं (b)
(C) (a) एवं (c) (D) (b) एवं (d)

64. "काव्यप्रकाशे विशेषवपुरपदार्थोऽपि वाक्यार्थः"
अत्र के उच्यते
(A) तात्पर्यार्थः (B) लक्ष्यार्थः
(C) व्यंग्यार्थः (D) अनन्वितार्थः

65. अधस्तनेषु केन सह करय साबन्धः ?
(a) शिक्षा (i) पादव्यवस्था
(b) कल्पः (ii) शाब्दानुशासनम्
(c) व्याकरणम् (iii) यज्ञविधागविमर्श
(d) छन्दः (iv) वर्णस्वरमात्रादिविमर्शः
समुचितां तालिकां चितुत
(A) (a)-(1), (b)-(iii), (c)-(ii), (d)-(iv)
(B) (a)-(iv), (b)-(iii), (c)-(ii), (d)-i)
(C) (a)-(i), (b)- (iii), (c)-(iv), (d)-(ii)
(D) (a)-(i). (b)- (iv) (c)- (iii). (d)-(ii)

66. 'इन्द्रियार्थयोस्तु यः सन्निकर्षः साक्षात्कारिप्रमाहेतुः ? स कतिविधः ?
(A) सप्तविधः (B) चतुर्विधः
(C) षडविधः (D) पञ्चविधः

67. दीप्त्या च धैर्येण च यो रराज बालो रविर्भूमिमिवावतीर्णः ।
तथातिदीप्तोऽपि निरीक्ष्यमाणो जहार चक्षुंषि यथा शशाङ्कः ।
श्लोकेस्मिन् किं छन्दः कश्चात्र अलङ्कारः ?
(A) मालिनीवृतम्, परिकरालङ्कारः
(B) आर्यावृत्तम्, उत्प्रेक्षालङ्कारः
(C) उपजातिवृत्तम्, उपमालङ्कारः
(D) वंशस्थवृत्तम्, रूपकालङ्कारः

68. 'यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेताम्' अस्मिन् मन्त्रांशे 'शुष्मात्' पदस्य अर्थो निर्भार्यताम् -
(a) बलात् (b) पूजनात्
(c) पराक्रमात् (d) शस्त्रात्
अत्रोचितमुत्तरं थिनुत -
(A) (a) एवं (b) (B) (c) एवं (d)
(C) (a) एवं (d) (D) (a) एवं (c)

69. भर्तृहरेः कृती इमे :-
(a) दीपिका (b) प्रदीप
(c) द्योतनम् (d) वाक्यपदीयम्
अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं थिनुत
(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (c)
(C) (a) एवं (d) (D) (b) एवं (d)

70. भाषाणां 'सतम्' वर्गे स्वीक्रियते
(A) लैटिन (B) ग्रीक्
(C) संस्कृतम् (D) फ्रेंच

71.अशोकस्य गिरनार-अभिलेखानां सन्दर्भे समुचितं कथनमस्ति -
(a) अभिलेखानां भाषा संस्कृतमस्ति।
(b) अभिलेखानां भाषा प्राकृतम् (पालिः) अस्ति।
(c) अभिलेखानां लिपिः देवनागरी अस्ति।
(d) अभिलेखानां लिपिः ब्राह्मी अस्ति।
अधस्तनेषु समीचीनं विकल्पं चिनुत
(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (c)
(C) (c) एवं (d) (D) (b) एवं (d)

72. शुक्लयजुर्वेदसंहितायाः कतमोऽध्याय ईशोपनिषद्
(A) विंशतितमः (B) षोडशतमः
(C) चत्वारिंशत्तमः (D) एकोनविंशतितमः

73. वैदिकयसाहित्ये अधोलिखितानां सुनिश्चितक्रमो लेख्यः

(i) ब्राह्मणम् (ii) उपनिषद्

(iii) शुक्लयजुर्वेदः (iv) सूत्रसाहित्यम्

अधोलिखितेषु उचितक्रमं चिनुत ।

(A) (ii), (i), (iv), (iii)

(B) (iii), (i), (ii), (iv)

(C) (i), (ii), (iii), (iv)

(D) (iv), (i), (ii), (iii)

74. ऐतरेयब्राह्मणग्रन्थानुसारेण शुनःशेपस्य पितुर्नाम किमासीत्

(A) कुक्षीवान् (B) ऐतरेयः

(C) अजीगर्तः (D) महीदासः

75. याज्ञवल्क्यस्मृतौ व्यवहाराध्यायस्य विषयोऽस्ति -

(a) ऋणादानप्रकरणम्

(b) दानप्रकरणम्

(c) गृहस्थधर्मप्रकरणम्

(d) साक्षिप्रकरणम्

अधस्तनेषु समुचितमुत्तरं चिनुत

(A) (a) एवं (b) (B) (a) एवं (d)

(C) (b) एवं (d) (D) (c) एवं (b)

75. जैनमतानुसारं सप्ततत्त्वानां समुचितः क्रमोऽस्ति

(A) आस्रवः, संवरः, बन्धः, निर्जरा, जीवः, अजीवः, मोक्षः

(B) बन्धः, आस्रवः, संवरः, निर्जरा, जीवः, अजीवः, मोक्षः

(C) जीवः, अजीवः, आस्रवः, बन्धः, संवरः, निर्जरा, मोक्षः

(D) बन्धः, जीवः, अजीवः, आस्रवः, संवरः, निर्जरा, मोक्षः

76. कौटिलीयमते प्रव्रज्याप्रत्यवसितः प्रज्ञाशौचयुक्तः गूढपुरुषोऽस्ति

(A) कापटिकः (B) गृहपतिकः

(C) वैदेहकः (D) उदास्थितः

77. याज्ञवल्क्यस्मृतौ व्यवहाराध्यायस्य विषयोऽस्ति-

(a) ऋणादानप्रकरणम् (b) दानप्रकरणम्

(c) गृहस्थधर्मप्रकरणम् (d) साक्षिप्रकरणम्

अधस्तनेषु समुचितमुत्तरं चिनुत-

(A) (a) एवं (b) (B) (a) एवं (d)

(C) (b) एवं (d) (D) (c) एवं (b)

78. वैशेषिकदर्शनानुसारं सप्तपदार्थेषु न गण्येते

(a) पुरुषः (b) विशेषः

(c) गुणः (d) अहङ्कारः

समुचितं विकल्पमत्र चिनुत

(A) (a) एवं (c) (B) (b) एवं (c)

(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (d)

_ 'प्रवीणः' इति पदम् कयोः उदाहरणं वर्तते-

(a) अर्थसङ्कोचस्य (b) अर्थपरिवर्तनस्य

(c) अर्थविस्तारस्य (d) अर्थहानेः

अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (c)

(C) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (c)

80. अमृतसहोदरापि कटुकविपाका' शुकनासोपदेशे वर्णनमिदं वर्तते -

(A) कादम्बर्याः (B) सरस्वत्याः

(C) लक्ष्म्याः (D) महाश्वेतायाः

81. महाभाराताश्रितं भासविरचितं ग्रन्थद्वयं किमस्ति ?

(a) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

(b) ऊरुभङ्गम्

(c) स्वप्नवासवदत्तम्

(d) दूतघटोत्कचम्

अधस्तनेषु समीचीनं विकल्पं चिनुत -

(A) (a) एवं (d) (B) (b) एवं (c)

(C) (c) एवं (d) (D) (b) एवं (d)

82. अधोलिखितानां ग्रन्थानां रचनाकालदृष्ट्या समुचितं क्रमं चिनुत

(A) काशिका, वाक्यपदीयम्, सारस्वत व्याकरणम्,प्रदीपः

(B) वाक्यपदीयम्, काशिका, सारस्वत व्याकरणम्,प्रदीपः

(C)वाक्यपदीयम्, काशिका, प्रदीपः, सारस्वत व्याकरणम् ,

(D)वाक्यपदीयम्, प्रदीपः, काशिका, सारस्वत व्याकरणम्

83. भवभूतिकृतं रचनाद्वयं किमस्ति ?

(A) महावीरचरितम्, प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्

(B) उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम्

(C) अभिज्ञानशाकुन्तलम्, मुद्राराक्षसम्

(D) मृच्छकटिकम्, महावीरचरितम्

84. सूत्रोदाहरणयोः युग्मं यथोचितं मेलयतु -

(a) तुमुण्वुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् (i) पठितुं प्रवीणः

(b) समानकर्तृकेषु तुमुन् (ii) बेला भोक्तुम्

(c) पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु (ii) ज्ञातुम् इच्छामि

(d) कालसमयवेलासु तुमुन् (iv)कृष्णं दर्शको याति

अधोलिखितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a)-(i), (b)-(iii), (c)-(iv), (d)-(ii)

(B) (a)-(iv), (b)-(iii), (c)-(i). (d)-(ii)

(C) (a)-(ii), (b)-(iii), (c)-(iv), (d)-(i)

(D) (a)-(iv), (b)-(i), (c)-(ii), (d)-(iii)

85. इह पुष्यमित्रं याजयामः ' इत्ययं वाक्यांशः कस्य आचार्यस्य कालनिर्धारणाय विद्वद्भिः उपयुज्यते ?

(A) पतञ्जलेः (B) कात्यायनस्य

(C) पाणिनेः (D) भर्तृहरेः

86. यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि।

तवेत्तत्सत्यमङ्गिरः। अत्र 'अङ्ग' इति कस्मिन्नर्थे प्रयुक्तोऽयं शब्दः ? सायणदिशा निर्दिश्यताम् -

(A) अभिमुखीकरणार्थे (B) शरीरार्थे

(C) अवयवार्थे (D) विषयार्थे

87. नाट्यशास्त्रानुसारं रसानां वर्णाः सन्ति

(a) श्रृङ्गारः श्यामः हास्यः कपोतः

(b) हास्यः सितः श्रृङ्गारः श्यामः

(c) हास्यः सितः श्रृङ्गारः कपोतः

(d) करुणः कपोतः श्रृङ्गारः श्यामः

समीचीनमुत्तरं चिनुत

(A) (a) एवं (b) (B) (b) एवं (d)

(c) (c) एवं (d) (D) (a) एवं (d)

88. आधिदैविकदुःखेषु गण्येते-

(a) झञ्झावातः (b) अश्वाघातः

(c) पश्चाघातः (d) भूकम्पः

अत्र समुचितं विकल्पं चिन्त

(A) (a) एवं (c) (B) (a) एवं (d)

(C) (c) एवं (d) (D) (b) एवं (c)

89. 'ननु तन्तुसम्बन्ध इव तुर्यादिसम्बन्धोऽपि पटस्य विद्यते, तत्कथं तन्तुष्वेव पटः समवेतो जायते, न तुर्यादिषु ? सत्यम्, द्विविधः सम्बन्धः संयोगः समवायश्चेति । तत्रायुतसिद्धयोः सम्बन्धः समवायः, अन्ययोस्तु संयोग एवं।

अत्र उचितमुत्तरं चिनुत -

(A) तन्तुः पटस्य समवायिकारणम्, अयुत सिद्धत्वात्।

(B) न तन्तुः पटस्य समवायिकारणम्, अयुतसिद्धत्वात्।

(C) तन्तुः पटस्य असमवायिकारणम्, अयुतसिद्धत्वात् ।

(D) तुर्यादि पटस्य समवायिकारणम्, अयुतसिद्धत्वात्।

90. संस्कृत-आलोचना-परम्परायां वाल्मीकिरामायणं कीदृशं काव्यं मन्यते ?

(A) अरसिद्धकाव्यम्

(B) सिद्धरसकाव्यम्

(C) असिद्धरसकाव्यम्

(D) सिद्धासिद्धरसकाव्यम्

91. 'आत्मा बुद्धया' समेत्यर्थान् मनो युङ्क्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम्।।

उपर्युक्तेन श्लोकेन उपदिश्यते

(A) वर्णोत्पत्तिप्रक्रिया

(B) वर्णानां स्थानम्

(C) वर्णनां प्रयत्नः

(D) वर्णानां उच्चारणकालः

92. सिद्धान्तकौमुदीमाश्रित्य प्रकरणानां समीचीनं क्रमं चिनुत

(A) कारकम्, परस्मैपदप्रक्रिया, कृदन्तः, तद्धितम्

(B) कारकम्,तद्धितम्, परस्मैपदप्रक्रिया, कृदन्तः

(C) परस्मैपदप्रक्रिया, कृदन्तः, तद्धितम्, कारकम्

(D) परस्मैपदप्रक्रिया,कारकम्,तद्धितम्,कृदन्तः

93. राम' शब्दस्य पञ्चम्येकवचनस्य विषये समुचितं कथनं नास्ति

(A) रामात्' इति रूपम्भवति

(B) 'रामाद्' इति रूपम्भवति

(C) अवसाने खरः स्थाने चरो भवति

(D) अवसाने झलां चरो वा स्युः

94. स्थूलोऽहं, कृशोऽहं इत्यत्र शाङ्करभाष्यानुसारं भवति

(A) विकारः (B) अपवादः

(C) अध्यासः (D) परिणामः

95. (A) स किं सखा साधु न शास्ति यो नृपम्'। - इयं पंकतिः भारवेः किरातार्जुनीयादुद्धतोऽस्ति।

(R) वनेचरः युधिष्ठिरं प्रति दुर्योधनस्य सत्यं वृत्तान्तमवबोधयितुं वदति।

अधोलिखितेषु उचितं कारणं लिखत

(A) (A) कथनं मित्रस्य साधुशीलतां प्रमाणीकरोती।
(R) कथनं वनेचरस्य स्वामिनः वञ्चनां निषेधयति।

(B) (A) कथने नृपस्य स्वरूपं वर्णितमस्ति।
(R) कथने दुर्योधनं प्रति वनेचरस्य सहृदयता ज्ञायते।

(C) (A) कथने 'सः' पदेन वनेचरः 'नृपम्' पदेन सुयोधनं कथितमस्ति।
(R) कथनेन सुयोधनं प्रति सेवाभावोऽस्ति।

(D) (A) कथने 'सखा' वनेचर अस्ति।
(R) वनेचरः युधिश्ठिरं सत्यं वृत्तान्तं न कथयति।

96. कथनद्रयमधोलिखितम् - एकम (A) इति अभिकथनम् अपर्च (R) इति कारणम्।

अभिकथनम् (A) : वाल्मीकेः रामः सीता-वियोगे कारुण्य-आनृशंस्य-शोके-मदनरूप-चतुर्मुखी-सन्तापेन सन्तप्तो भवति।

कारणम् (R) : सर्वेऽपि पुरुषा भार्या-वियोगे सन्तप्ताः भवन्ति।

उपर्युक्तानुसारं समीचीनं विकल्पं चिमुत -

(A)- (A) तथा (R) उभौ अपि सत्यम्। (R) इति समुचित समुचितं कारणमस्ति (A) इत्यस्य।

(B)- (A) तथा (R) उभौ अपि सत्यं किन्तु (R) इति उचित कारणं नास्ति (A) इत्यस्य।

(C)- (A) इति सत्यम् (R) इति असत्यम्

(D)- (A) तथा (R) उभौ अपि असत्यम्।

97. अधस्तनयुग्मानां समीचीनतालिकां चिनुत

(a) श्रीहर्षः (i) हर्षचरितम्

(b) दण्डी (ii) मुद्राराक्षसम्

(c) वाणभट्टः (iii) नैषधीयचरितम्

(d) विशाखदत्तः (iv) दशकुमारचरितम्

समुचितां तालिकां चिनुत -

(A) (a)-(ii), (b)-(iii), (c)-(iv), (d)-(i)

(B) (a)-(ii), (b)-(iv). (c)-(i), (d)-(ii)

(C) (a)-(iv), (b)-(i), (c)-(ii), (d)-(iii)

(D) (a).(i). (b)-(ii), (c)-(iii). (d)-(iv)

98. पदे न वर्णा विद्यन्ते वर्णेष्ववयवा न च।
वाक्यात् पदानामत्यन्तं प्रविवेको न कश्चन।।'

अस्याः कारिकायाः सम्बन्धः केन सिद्धान्तेन सह भवितुमर्हति ?

(A) ध्वनिवादः (B) स्फोटवादः

(C) व्यञ्जनावादः (D) लक्षणावादः

99. महाभारतस्य 'खिल' पर्व कथ्यते

(A) मत्स्यपुराणम् (B) स्कन्दपुराणम्

(C) हरिवंशपुराणम् (D) पद्मपुराणम्

ɔ. पूर्ववर्तिन आचार्यस्य प्राथम्येन कालक्रमानुसारमुचितमुत्तरं निर्दिशत-

क्षेमेन्द्र (b) अभिनवगुप्तः

भरतः (d) रुय्यकः

क्रमं चिनुत

(d) (c) (b) (a)

(B) (c) (b) (a) (d)

(C) (a) (d) (b) (c)

(D) (b) (d) (c) (a)

नेट प्रश्नपत्र जून 2020

1. कथनद्वयमधोलिखितम्। एकम् (A) इति अभिकथनम् अपरश्च (R) इति कारणम् ।

अभिकथनम् (A) – मन्त्रिभिस्त्रिभिश्चतुर्भिर्वा सह मन्त्रयेत ।

कारणम् (R) - एकेनार्थकृच्छ्रेषु निश्चयं नाधिगच्छेत् । द्वाभ्यां मन्त्रयमाणो द्वाभ्यां संहताभ्यामवगृह्यते, विगृहीताभ्यां विनाश्यते । ततः नरेषु कृच्छ्रेणार्धनिश्चयो गम्यते ।

उपर्युक्तअभिकथन - कारणमाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत -

. (A) तथा (R) उभावपि असत्यम्

. (A) तथा (R) उभावपि सत्यं (R) इति उचितं कारणमस्ति (A) इत्यस्य

(A) तथा (R) उभावपि सत्यं किन्तु (R) इति उचितं कारणं नास्ति (A) इत्यस्य

(A) सत्यम्, (R) असत्यम्

A) 1 (B) 2

C) 3 (D) 4

2. अधोलिखितेषु ग्रन्थेषु अम्बिकादत्तव्यासस्य रचना वर्तते -

(A) प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् (B) प्रतिमानाटकम्

(C) शिवराजविजयम् (D) मृच्छकटिकम्

3. कि पुराणं महाभारतस्य परिशिष्टम् ?

(A) वायुपुराणम् (B) पद्मपुराणम्

(C) मत्स्यपुराणम् (D) हरिवंशपुराणम्

4. वाक्यपदीये भर्तृहरिणा कतमौ शब्दार्थयोः सम्बन्धौ स्वीकृतौ ?

(A) संयोगः (B) कार्यकारणभावः

(C) समवायः (D) योग्यता

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (D)

5. मनुमतेरनधीयानो विप्रो कीदृशो भवति?

(A) काष्ठमयो हस्ती (B) शक्तिमयो सिंहः

(C) चर्ममयो मृगः (D) गतिमयोऽश्वः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (A) (D) (D) एवम् (B)

6. चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य इत्यत्र द्वे-शीर्षे इत्यनेन महाभाष्ये पतञ्जलिना किं गृहीतम् ?

(A) नित्यशब्दः (B) शिरःस्थानम्

(C) कार्यशब्दः (D) कण्ठस्थानम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुतः

(A) (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (B)

(C) (A) एवम् (D) (D) (B) एवम् (D)

7. वैशेषिकदर्शनानुसारमधोऽङ्कितेषु समुचितमुत्तरं चिनुत-

(A) प्रत्यक्षानुमानोपमानानि त्रीणि प्रमाणानि

(B) प्रत्यक्षानुमाने द्वे प्रमाणे

(C) प्रत्यक्षानुमानागमैतिह्यानि चत्वारि प्रमाणानि

(D) प्रत्यक्षानुमानशब्दाः त्रीणि प्रमाणानि

8. अधोऽङ्कितेषु कयोरद्वयोः समुचितः सम्बन्धोऽस्ति ?

(A) षोडशपदार्थाः सन्ति (B) सप्तपदार्थाः सन्ति

(C) न्यायदर्शनम् (D) जैमिनिः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (D) (B) (C) एवम् (D)

(C) (A) एवम् (C) (D) (B) एवम् (C)

9. के वर्णाः स्वयं प्रकाशन्ते ?

(A) मूलस्वराः (B) अन्तस्थाः

(C) संयुक्तस्वराः (D) ऊष्मवर्णाः

अत्र समीचिनं विकल्पं चिनुत-

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (D)

(C) (A) एवम् (C) (D) (C) एवम् (D)

10. अधोङ्कितेषु वाल्मीकिरामायणं कयोः काव्ययोः उपजीव्यम् ?

(A) नैषधीयचरितम् (B) सेतुबन्धः

(C) भट्टिकाव्यम् (D) किरातार्जुनीयम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D) (D) (D) एवम् (A)

11. अभिकथनम् (A) - तिब्बतीभाषा योगात्मिका भाषा।

कारणम् (R) - प्रकृतिप्रत्यययोः संयोगात्

उपर्युक्त अभिकथनं (A) तथा कारणं (R) चाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) अभिकथनम् (A) कारणम् (R) उभयं असत्यम्

(B) अभिकथनम् (A) कारणम् (R) उभयं सत्यम्

(C) अभिकथनम् (A) सत्यम् तथा कारणम् (R) असत्यम्

(D) अभिकथनम् (A) असत्यम् तथा कारणम् (R) सत्यम्

12. कस्य मतानुसारं फिनिशिअन - लिपेः 22 अक्षरेभ्यः ब्राह्मीलिपेः 22 अक्षरणामुत्पत्तिरभवत् -

(A) बूलरमहोदयस्य

(B) आइजकटेलरमहोदयस्य

(C) लेनोर्मंट – महोदयस्य

(D) बर्नेल - महोदयस्य

13 "कविक्रतुः" अधोलिखितेषु कस्य विशेषणं विद्यते?

(A) इन्द्रस्य (B) बृहस्पतेः

(C) अग्नेः (D) शुक्रस्य

14. वैशेषिकदर्शनानुसारं निम्नाङ्कितानां समुचितः क्रमोऽस्ति ?

(A) अभावः (B) विशेषः

(C) कर्म (D) सामान्यम्

(E) समवायः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A). (D), (B). (C). (A), (E)

(B) (C), (D), (B). (E), (A)

(C) (A). (C). (D), (B), (E)

(D) (A). (B), (C). (D), (E)

15. मनुमते वेदप्रदानादाचार्यं परिचक्षते -

(A) गुरुम् (B) उपाध्यायम्

(C) पितरम् (D) गुरुतरम्

16. काव्यप्रकाशानुसारं काव्यप्रयोजनं किमभीप्सितं भवति?

(A) शक्तिः (B) यशः

(C) व्यवहारः (D) निपुणता

अत्रः समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D) (A) एवम् (D)

17. अधुना - प्राप्तेषु सामवेदस्य ब्राह्मणेषु द्वौ ब्राह्मणौ कौ स्तः?

(A) चरक-ब्राह्मणम् (B) गालव-ब्राह्मणम्

(C) संहितोपनिषद्ब – ब्राह्मणम् (D) वंशब्राह्मणम्

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A). (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (C)

18. इन्द्र सूक्ते (2. 12.4) चतुर्थे मन्त्रे प्राप्तस्य 'दास वर्णम्' इत्यस्य सायण - भाष्यानुसारम् अधोलिखितेषु अर्थोऽस्ति ?

(A) कृष्णवर्णम् (B) दुष्टवर्णम्

(C) शूद्रादिकम् (D) अन्त्यवर्णम्

19. सर्वप्राचीनरचनायाः प्राथम्येन कालक्रमानुसारमुचितमुत्तरं चिनुत-

(A) हर्षचरितम् (B) नैषधीयचरितम्

(C) रघुवंशम् (D) नलचम्पूः

अत्र समुचितं क्रमं चिनुत -

(A) (A), (C), (B), (D)

(B) (C), (A), (D), (B)

(C) (B), (A), (D), (C)

(D) (D), (B), (C), (A)

20. कौटिलीय - अर्थशास्त्रस्य विनयाधिकरणे प्रकरणानां समुचितः क्रमोऽस्ति -

(A) इन्द्रियजयः (B) वृद्धसंयोगः

(C) मन्त्रिपुरोहितोत्पत्तिः (D) अमात्योत्पत्तिः

(E) विद्यासमुद्देशः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A), (C), (D), (E), (B)

(B) (B), (A), (C), (D), (E)

(C) (C), (D), (B), (A), (E)

(D) (E), (B), (A), (D), (C)

21. बालगंगाधर - तिलकेन मृगशिरा - काले ऋग्वेदस्य अधिकांश - मन्त्राणां रचना स्वीकृतास्ति । अधोलिखितेषु मृगशिरा-कालः वर्तते ?

(A) 6000-4000 वि.पू. (B) 4000-2500 वि.पू.

(C) 2500-1400 वि.पू. (D) 1400-500 वि. पू.

22. अधुना तैत्तिरीय - नाम्ना प्रसिद्धौ कौ ग्रन्थौ स्तः?

(A) ब्राह्मणम् (B) व्याकरणम्

(C) उपनिषत् (D) छन्दः

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (C)

23. आकृतिमूलकवर्गीकरणमाश्रित्य अधस्तनासु का भाषा योगात्मकभाषासु नास्ति?

(A) अरबी (B) संस्कृतम्

(C) चीनी (D) तुर्की

24. अधोऽङ्कितानां केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(A) पुरुषः (1) विकृतिः

(B) वाक् (2) प्रकृतिर्विकृतिः

(C) शब्दः (3) प्रकृतिः

(D) मूलप्रकृतिः (4) न प्रकृतिर्न विकृतिः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A) (A) - (4), (B) - (3), (C) - (1), (D) - (2)

(B) (A) - (4), (B) - (2), (C) - (1), (D) - (3)

(C) (A) - (4), (B) - (1), (C) - (2), (D) - (3)

(D) (A) - (3), (B) - (1), (C) - (4), (D) - (2)

25. 1846 तमे खीस्ताब्दे अधोलिखितेषु कतमेन पाश्चात्य-विदुषा वैदिक साहित्यम् इतिहासश्च' (Vedic literature and History) इति ग्रन्थः रचितः ?

(A). मैक्समूलर – इत्यनेन

(B) रूडाल्फ़-रॉथ - इत्यनेन

(C) विलियम - जोन्स – इत्यनेन

(D) मोनियर - विलियम – इत्यनेन

26. कथनद्वयम् अधोलिखितम् - तत्र एकम् अभिकथनम् (A) अपरश्च तस्य कारणम् (R) इति ।

अभिकथनम् (A) - उत्पत्तिपरिपूताया किमस्याः पावनान्तरैः ।

कारणम् (R) - तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हतः ।।

उपर्युक्तअभिकथन - कारणमाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) तथा (R) उभावपि असत्यं ।

(B) (A) तथा (R) उभयं सत्यमस्ति यतः (A) इत्यस्य (R) समुचितं कारणमस्ति ।

(C) (A) तथा (R) उभावपि सत्यं, परं (A) इत्यस्य (R) समुचितं कारणं नास्ति ।

(D) (A) इति सत्यम् परं (R) इति असत्यम्

27. बर्नेल - महोदयानुसारं ब्राह्मीलिपेरक्षराणामुत्पत्तिः सञ्जाता -

(A). हिमिअरेटिक – अक्षरेभ्यः (B) अरमइक - अक्षरेभ्यः

(C) सिलोन – अक्षरेभ्यः (D) मिसर - अक्षरेभ्यः

28. अधस्तनेषु पतञ्जलिप्रतिपादितेषु व्याकरण-प्रयोजनेषु नास्ति-

(A). रक्षार्थं (B) ऊहः

(C) आगमः (D) सन्देहार्थ

29. योगदर्शनानुसारेण अधोऽङ्कितेषु कस्य ग्रहणं क्रियायोगेऽस्ति ?

(A). शौचस्य (B) प्राणायामस्य

(C) ध्यानस्य (D) स्वाध्यायस्य

30. वेदभाष्यकारेषु कौ याज्ञिकौ भाष्यकारौ स्तः ?

(A) स्वामी दयानन्दः सरस्वती (B) सायणः

(C) उवटः (D) आत्मानन्दः

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A). (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (C)

31. न्यायसिद्धान्तमुक्तावलीदिशा व्याप्तेर्लक्षणमस्ति -

(A) साध्यवदन्यस्मिन्नसम्वन्ध उदाहृतः

(B) व्याप्यस्य पक्षवृत्तित्वधीः

(C) हेतुमन्निष्ठविरहाप्रतियोगिना साध्येन हेतोरैकाधिकरण्यम्

(D) सिषाधयिषाविरहविशिष्टसिद्धाभावः

(A) (A) एवम् (C) (B) (B) एवम् (D)

(C) (A) एवम् (D) (D) (C) एवम् (D)

32. अधोलिखितानां कालक्रमानुसारं समुचितं क्रमं चिनुत -

(A) उव्वट – भाष्यम् (B) दयानन्द - भाष्यम्।

(C) स्कन्दस्वामी – भाष्यम् (D) सायण-भाष्यम्।

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A). (A), (D), (C), (B)

(B) (D), (B), (C), (A)

(C) (C), (A), (D), (B)

(D) (B), (C), (A), (D)

33. ऐधेताम्' इति प्रयोगे कानि धातु-लकार-पुरुष-वचनानि?

(A). 'एध्' धातुः, लङ्लकारः, प्रथमपुरुषः, द्विवचनम्

(B) 'एध्' धातुः, लोट्लकारः, प्रथमपुरुषः, एकवचनम्

(C) 'एध्' धातुः, लोट्लकारः, प्रथमपुरुषः द्विवचनम्

(D) 'एध्' धातुः, लोट्लकारः, मध्यमपुरुषः द्विवचनम्

34. सुडनपुंसकस्य इति पाणिनिसूत्रेण का सञ्ज्ञा विधीयते?

(A). संहिता सञ्ज्ञा (B) उपधा सञ्ज्ञा

(C) विभाषा सञ्ज्ञा (D) सर्वनामस्थान सञ्ज्ञा

35. अधोऽङ्कितेषु कयोर्द्वयोः समुचितः सम्बन्धोऽस्ति ?

(A) सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्राणि मोक्षमार्गः

(B) धम्मपदम्

(C) त्रिरत्नानि

(D) योगदर्शनम्

अधोऽङ्कितेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (B) एवम् (D)　(B) (A) एवम् (C)

(C) (A) एवम् (B)　(D) (A) एवम् (D)

36. महाभारतस्य टीकाकाराणां कया टीकया सह सम्बन्धः ?

(A) विमलबोधः　(1) ज्ञानदीपिका

(B) देवबोधः　(2) लक्षाभरषटीका

(C) नारायणः　(3) विषमश्लोकी

(D) वादिराजः　(4) निगूढार्थ - पदबोधिनी

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) - (3), (B) - (1), (C) - (4), (D) - (2)

(B) (A) - (1), (B) - (3), (C) - (2), (D) - (4)

(C) (A) - (2), (B) - (1), (C) - (3), (D) - (4)

(D) (A) - (4), (B) - (2), (C) - (1), (D) - (3)

37. आलोकविशाला मे सहसा तिमिरप्रवेशविच्छिन्ना ।

उन्मीलितापि दृष्टिर्निमीलितेवान्धकारेण ।।

श्लोकेऽस्मिन् कः छन्दः कश्चालङ्कारः ?

(A) रूपकम्　(B) आर्या

(C) वसन्ततिलका　(D) उत्प्रेक्षा

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B)　(B) (B) एवम् (C)

(C) (B) एवम् (D)　(D) (C) एवम् (D)

38. पाश्चात्त्यविचारकस्य अरस्तूमहोदयस्य काव्यशास्त्रीयौ ग्रन्थौ स्तः ?

(A) पेरिइप्सुस (On the sublime)

(B) भाषणशास्त्रम् (Rhetoric)

(C) सौन्दर्यशास्त्रम् (Aesthetica)

(D) काव्यशास्त्रम् (Poetics)

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B)　(B) (B) एवम् (C)

(C) (B) एवम् (D)　(D) (C) एवम् (D)

39. दोषावस्तः इति पदस्य सायणानुसारम् अधोलिखितेषु कतम अर्थः विद्यते?

(A) गुणदोषौ　(B) उदयास्तौ

(C) रात्रावहनी　(D) सूर्याचन्द्रमसौ

40. बृहच्छब्देन्दुशेखरः इति ग्रन्थस्य कर्ता?

(A) कैय्यटः　(B) नागेशभट्टः

(C) चिन्तामणिः　(D) वामनः

41. सांख्यकारिकानुसारं 'प्रत्ययसर्गः इत्यस्य कोऽर्थः

(A) प्रत्ययो बुद्धिः, तस्य सर्गः कार्यम्

(B) प्रत्ययो मनः, तस्य सर्गः कार्यम्

(C) प्रत्ययः संसारः, तस्य सर्गः उत्पत्तिः

(D) प्रत्ययोऽहङ्कारः , तस्य सर्गः कार्यम्।

42. अश्वघोषकृतं रचनाद्वयं किमसिति:-

(A) हर्षचरितम्, बुद्धचरितम्

(B) बुद्धचरितम्, सौन्दरनन्दम्

(C) विक्रमाङ्कदेवचरितम्, दशकुमारचरितम्

(D) उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम्

43. अधोतिखितानां कालक्रमानुसारं रामुचितं क्रमं चिनुत -

(A) गोपथब्राह्मणम्　(B) अथर्ववेदः

(C) ऐतरेय - ब्राह्मणम्　(D) ऋग्वेदः

अत्र समुचितं विकल्प चिनुत -

(A) (A). (8), (C. (D)

(B) (E), (C). (D). (A)

(C) (C (A) (B) (D)

(D) (D). (B), (C). (A)

44. कालक्रमानुसारम् अधोलिखितवैयाकरणानां समुचितं क्रमं चिनुत-

(A) वरदराजः, भट्टोजिदीक्षितः, पतञ्जलिः, भर्तृहरिः,

(B) भट्टोजिदीक्षितः, वरदराजः, पतञ्जलिः, भर्तृहरिः,

(C) पतञ्जलिः, भट्टोजिदीक्षितः, भर्तृहरिः, वरदराजः,

(D) पतञ्जलिः, भर्तृहरिः, भट्टोजिदीक्षित, वरदराजः,

45. तर्कभाषानुसारं अयुतसिद्धयोः कः सम्बन्धः?

(A) संयोगः　(B) समवायः

(C) विषय-विषयिभावः　(D) आधाराधेयभावः

46. शांखायनारण्यकः अधोनिर्दिष्टेषु केन सह सम्बद्धोऽस्ति ?

(A) सामवेदेन सह　(B) यजुर्वेदेन सह

(C) अथर्ववेदेन सह　(D) ऋग्वेदेन सह

47. महाभारतस्य वनपर्वणि के उपाख्याने स्तः ?

(A) शकुन्तलोपाख्यानम्　(B) मत्स्योपाख्मानम्

(C) शिशुपालोपाख्यानम्　(D) रामोपाख्यानम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (A) एवम् (B)　(B) (C) एवम् (D)

(C) (B) एवम् (D)　(D) (D) एवम् (A)

अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत-

(a) दण्डी　(1) सौन्दरनन्दम्

(b) बिल्हणः　(2) हर्षचरितम्

(c) अश्वघोषः　(3) दशकुमारचरितम्

(d) बाणभट्टः　(4) विक्रमाङ्कदेवचरितम्

एषु समीचीनमुत्तरं चिनुत :

(A) (a)-(2), (b)-(1), (c)-(4), (d)-(3)

(B) (a)-(3), (b)-(4), (c)-(1), (d)-(2)

(C) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)

(D) (a)-(4), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(1)

49. प्रथमां सूचीं द्वितीयया सह मेलयतु -

प्रथमा सूची	द्वितीया सूची
(a) वाव्रज्यते	(1) नामधातुक्रियापदम्
(b) अजिज्ञपत्	(2) यङ्लुगन्तक्रियापदम्
(c) स्वति	(3) यङन्तक्रियापदम्
(d) बोभवीति	(4) सन्नन्तक्रियापदम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (a)-(3), (b)-(4), (c)-(1), (d)-(2)

(B) (a)-(2), (b)-(3), (c)-(4), (d)-(1)

(C) (a)-(1), (b)-(2), (c)-(3), (d)-(4)

(D) (a)-(4), (b)-(3), (c)-(2), (d)-(1)

50. अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन्नपूर्वसूरिभिः ।
मणौ वज्रसंमुकीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः ।।

पद्येऽस्मिन् मे' इति पदं केन सम्बद्धम् ?

(A) माघेन (B) भारविणा

(C) कालिदासेन (C) श्रीहर्षेण

51. अधस्तनयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(A) शमप्रधानेषु तपोधनेषु गूढं हि दाहात्मकमस्ति तेजः।	(1) नलचम्पूः
(B) आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः।	(2) नैषधीयचरितम्
(C) अक्षमालापवृत्तिज्ञा कुशासन-परिग्रहा ब्राह्मीव दौर्जनी संसद्वन्दनीया समेखला।	(3) रत्नावली
(D) अदृष्टमप्यर्थमदृष्टवैभवात्करोति सुप्तिर्जन दर्शनातिथिम्।	(4) अभिज्ञानशाकुन्तलम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) - (2), (B) - (1), (C) - (3), (D) - (4)

(B) (A) - (1), (B) - (2), (C) - (4), (D) - (3)

(C) (A) - (3), (B) - (2), (C) - (4), (D) - (1)

(D) (A) - (4), (B) - (3), (C) - (1), (D) - (2)

52 "कर्षको वृत्तिक्षीणः प्रज्ञाशौचयुक्तः" इति कौटिलीयमते कस्य वैशिष्ट्यमस्ति?

(A) वैदेहकस्य (B) तापसंस्य

(C) गृहपतिकस्य (D) ब्रह्मचारिणः

53. अधोऽङ्कितेषु ब्राह्मीलिपेरुद्भवसिद्धान्तेषु कतमो विदेशी- सिद्धान्तो नास्ति?

(A) फोनिशियन – उद्भवसिद्धान्तः

(B) द्रविड - उद्भवसिद्धान्तः

(C) दक्षिणी-सामीलिपि- उद्भवसिद्धान्तः

(D) उत्तरी-सामीलिपि- उनद्भवसिद्धान्तः

54. अधोलिखितेषु कतमेन पाश्चात्यविदुषा ' ए वैदिक कॉन्कार्डेन्स्" (A Vedic Concordance) इति नामको ग्रन्थो रचितः?

(A) रुडाल्फ - रॉथ – इत्यनेन

(B) कीथ- इत्यनेन

(C) विल्सन – इत्यनेन

(D) ब्लूम - फील्ड –इत्यनेन

55. दशरूपकानुसारं फलार्थिभिः प्रारब्धस्य कार्यस्य कति अवस्थाः भवन्ति?

(A) पञ्च (B) षट्

(C) सप्त (D) अष्ट

56. को अद्धा वेद क इह ए वोचत् कुत आजाता कुत इयें विसृष्टिः।" अस्य मन्त्रांशस्य को ऋषिः का च देवता?

(A) परमेष्ठी नाम प्रजापतिरषिः (B) नारायणः ऋषिः

(C) विसृष्टिः देवता (D) परमात्मा देवता

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (C)

57. द्वित्राः' इत्यत्र कः समासः?

(A) अव्ययीभावः (B) तत्पुरुषः

(C) बहुव्रीहिः (D) द्वन्द्वः

58. अर्थसङ्ग्रहदिशा विधिः कतिविधः?

(A) षड्विधः (B) पञ्चविधः

(C) चतुर्विधः (D) त्रिविधः

59. कथनद्वयमधोलिखितम् एकम् (अ) इति अभिकथनम् अपरश्च (ब) इति कारणम् ।

अभिकथनम् (अ) - पारोवर्मवित्सु तु खलु वेदितृषु भुयोविद्यः प्रशस्यो भवति ।

कारणम् (व) - यथा तेन गहनरूपेण वारम्वारं स्वाध्यायेन बहुपरिश्रमेण वेदाभ्यासः कृतोऽस्ति ।

उपर्युक्ताभिकथन - कारणमाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (अ) तथा (व) उभावपि सत्यं किन्तु (ब) इति उचितं कारणं नास्ति (अ) इत्यस्य

(B) (अ) तथा (ब) उभावपि सत्यं। (ब) इति उचितकारणमस्ति (अ) इत्यस्य ।

(C) (अ) सत्यं , परन्तु (ब) इति असत्यम्

(D) (अ) तथा (ब) उभावपि असत्यम्

60. "अहिंसा सत्यं शौचमनसूयाऽऽनृशंस्यं क्षमा च" इति कौटिलीयमते केषां धर्मः?

(A) सर्वेषामाश्रमाणाम् (B) सर्वेषां वर्णानाम्

(C) सर्वेषां प्राणिनाम् (D) सर्वेषां सम्प्रदायानाम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D) (D) (D) एवम् (A)

61. अधोनिर्दिष्टयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(A) गोपथ ब्राह्मणम्	(1) कृष्णयजुर्वेदः
(B) बृहदारण्यकम्	(2) सामवेदः
(C) आर्षेय-ब्राह्मणम्	(3) अथर्ववेदः
(D) तैत्तिरीय - ब्राह्मणम्	(4) शुक्लयजुर्वेदः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A) (A) - (3), (B) - (4), (C) - (2), (D) - (1)

(B) (A) - (4), (B) - (1), (C) - (3), (D) - (2)

(C) (A) - (2), (B) - (3), (C) - (4), (D) - (1)

(D) (A) - (1), (B) - (2), (C) - (3), (D) - (4)

62. ब्रह्मसूत्रशाङ्करभाष्यानुसारं ब्रह्मणोऽस्तित्वप्रसिद्धिः कस्माद् ज्ञायते?

(A) बृहतेर्धातोरनुगमात् (B) पञ्चप्रयाजेभ्यः

(C) प्रकृतियागाद् (D) सर्वस्यात्मत्वाद्

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B) (B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D) (D) (A) एवम् (D)

63. अधोनिर्दिष्टयुग्मानां समीचीनां तालिकां चिनुत -

(A) अग्नि सूक्तः	(1) आङ्गिरस - बृहस्पतिः
(B) रुद्रसूक्तः	(2) मधुच्छन्दा – ऋषिः
(C) पर्जन्यसूक्तः	(3) गृत्समद – ऋषिः
(D) ज्ञानसूक्तः	(4) भौमोऽत्रि - ऋषिः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (A) - (2), (B) - (3), (C) - (4), (D) - (1)

(B) (A) - (1), (B) - (2), (C) - (3), (D) - (4)

(C) (A) - (2), (B) - (1), (C) - (4), (D) - (3)

(D) (A) - (3), (B) - (4), (C) - (1), (D) - (2)

64. 'नैषधीयचरिते' कति सर्गाः सन्ति?

(A) एकोनविंशतिः (B) विंशतिः

(C) एकविंशतिः (D) द्वाविंशतिः

65. तर्कसङ्ग्रहानुसारं वाक्यार्ज्ञाने 'अग्निना सिञ्चेद्' इति वाक्यं कथं न प्रमाणम् ?

(A) योग्यताविरहात्

(B) सान्निध्याभावात्

(C) आकाङ्क्षाविरहात्

(D) पदानामविलम्बेनोच्चारणाभावात्

66. 'ब्राह्मीलिपेराविष्कारका भारतीया आसन्' इति को मन्यते?

(A) जार्जब्यूलर – महोदयः

(B) बर्नेल – महोदयः

(C) वेबर – महोदयः

(D) एडवर्डथामस - महोदयः

67. उपाध्यायाद् अधीते' इत्यत्र अपादानसञ्ज्ञाविधायकः पाणिनेर्नियमः कः?

(A) जनिकर्तुः प्रकृतिः (B) भुवः प्रभवः

(C) पराजेरसोढः (D) आख्यातोपयोगे

68. 'हिरण्यगर्भः समवर्त्ताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम' ॥ अस्मिन् मन्त्रे को ऋषिः कश्छन्दः ?

(A) हिरण्यगर्भऋषिः (B) जगती छन्दः

(C) प्रजापतिऋषिः (D) त्रिष्टुप् छन्दः

अधस्तनेषु समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D) (D) (B) एवम् (C)

69. वेदानामपौरुषेयत्वमधोऽङ्कितेषु कुत्र वर्णितम् ?

(A) बौद्धदर्शने (B) मीमांसादर्शने

(C) योगदर्शने (D) सांख्यदर्शने

70. अधोऽङ्कितेषु केन अभिलेखेन सह कस्य सम्बन्धः ?

(A) हर्षः	(1) सारनाथ - बौद्धप्रतिमालेखः
(B) पुलकेशिनद्वितीयः	(2) इलाहाबाद - स्तम्भलेखाः
(C) समुद्रगुप्तः	(3) बांसखेडा - ताम्रपट्टाभिलेखः
(D) कनिष्कः	(4) ऐहोलशिलालेखः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) - (1), (B) - (3), (C) - (2), (D) - (4)

(B) (A) - (2), (B) - (3), (C) - (1), (D) - (4)

(C) (A) - (4), (B) - (1), (C) - (3), (D) - (2)

(D) (A) - (3), (B) - (4), (C) - (2), (D) - (1)

71. अधस्तनेषु केन सह कस्य सम्बन्धः ?

(A) वाक्यपदीयम्	(1) हरदत्तः

(B) पदमञ्जरी (2) भर्तृहरिः

(C) अष्टाध्याय्याः मिताक्षरावृत्तिः (3) नागेशभट्टः

(D) स्फोटवादः नाम ग्रन्थः (4) अन्नम्भट्टः

अधस्तनेषु समीचीनां तालिकां चिनुत -

(A) (A) - (1), (B) - (3), (C) - (2), (D) - (4)

(B) (A) - (2), (B) - (1), (C) - (4), (D) - (3)

(C) (A) - (3), (B) - (2), (C) - (1), (D) - (4)

(D) (A) - (4), (B) - (2), (C) - (3), (D) - (1)

72. अधोऽङ्कितानां योगदर्शनव्यासभाष्यानुसारं समुचितं क्रमं चिनुत -

(A) क्षिप्तम् (B) विक्षिप्तम्

(C) निरुद्धम् (D) एकाग्रम्

(E) मूढम्

अधोङ्कितेषु समुचितं क्रमं चिनुत -

(A)- (A), (E), (D), (B), (C)

(B)- (A), (E), (B), (D), (C)

(C)- (E), (A), (D), (B), (C)

(D)- (B), (D), (A), (C), (E)

73. पूर्ववर्तिनः आचार्यस्य प्राथम्येन कालक्रमानुसारमुचितमुत्तरं निर्दिशतः -

(A) विश्वनाथः (B) दण्डी

(C) धनञ्जयः (D) कुन्तकः

अत्र समुचितं क्रमं चिनुत -

(A)- (A), (B), (C), (D)

(B)- (B), (C), (D), (A)

(C)- (C), (B), (A), (D)

(D)- (B), (A), (C), (D)

74. अधोऽङ्कितानां केन सह कस्य सम्बन्धः?

(A) एतान्याकाशादीनां सात्विकांशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक् क्रमेणेत्पद्यन्ते (1) मनबुद्धिचित्ताहंकाराः

(B) एते पुनराकाशादिगत-सात्विकांशेभ्यो मिलितेभ्य उत्पद्यन्ते (2) विज्ञानमयकोशः

(C) एतानि पुनराकाशादीनां रजोंऽशेभ्यो व्यस्तेभ्यः पृथक् पृथक् क्रमेणोत्पद्यन्ते (3) ज्ञानेन्द्रियाणि

(D) वुद्धिर्ज्ञानेन्द्रियैः सहिता भवति (4) कर्मेन्द्रियाणि

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) - (3), (B) - (1), (C) - (4), (D) - (2)

(B) (A) - (4), (B) - (3), (C) - (2), (D) - (1)

(C) (A) - (1), (B) - (2), (C) - (3), (D) - (4)

(D) (A) - (3), (B) - (2), (C) - (1), (D) - (4)

75. रससम्प्रदायस्य आचार्यौ स्तः ?

(A) भरतमुनिः (B) वामनः

(C) क्षेमेन्दरः (D) अभिनवगुप्तः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B) (B) (A) एवम् (C)

(C) (A) एवम् (D) (D) (B) एवम् (D)

76. कालक्रमानुसारमधोलिखित ग्रन्थानां समुचितं क्रमं चिनुत -

(A) शब्दकौस्तुभम् (B) काशिकावृत्तिः

(C) महाभाष्यम् (D) वैयाकरणभूषणसारः

(E) शब्देन्दुशेखरः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A)- (C), (A), (B), (E), (D)

(B)- (D), (B), (A), (E), (C)

(C)- (B), (A), (C), (D), (E)

(D)- (C), (B), (A), (D), (E)

77. अधस्तनेषु मात्रिकापश्रुतेरुदाहरणे स्तः -

(A) पित्सति-पतति-पातयति

(B) गेएन-गिंग-गेगांगेन

(C) गतः -गमनम् - जगाम

(D) कल्ल् - कतिल - मकतूल

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A) (A) एवम् (B)

(B) (A) एवम् (C)

(C) (B) एवम् (D)

(D) (C) एवम् (D)

78. रणेषु तस्य प्रहिताः प्रचेतसा सरोषहंकारपराङ्मुखीकृताः।
प्रहतुरिवोरगराजरज्जवो जवेन कण्ठं सभयाः प्रपेदिरे ।।
शिशुपालवधस्य श्लोकेऽस्मिन् कस्य दिक्पालस्य वर्णनं कृतम् ?

(A) रावणस्य (B) वरुणस्य

(C) यमस्य (D) इन्द्रस्य

79. योगसूत्रानुसारेण लिखत अधोऽङ्कितेषु कयो द्वयोः समुचितः सम्बन्धोऽस्ति ?

(A) अनुमानप्रमाणम् (B) यमाः

(C) चित्तभूमिः (D) चित्तवृत्तिः

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (C) (B) (A) एवम् (D)

(C) (C) एवम् (D)　　(D) (B) एवम् (D)

80. महाभारताश्रितं रचनाद्वयं किमस्ति?

(A) उत्तररामचरितम्, महावीरचरितम्

(B) प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्, रत्नावली

(C) अभिज्ञानशाकुन्तलम्, वेणीसंहारम्

(D) बुद्धचरितम्, स्वप्नवासवदत्तम्

81. महाभारतीय पर्वणां समुचितः क्रमोऽस्ति -

(A) अनुशासनपर्व　　(B) अश्वमेधपर्व

(C) शान्तिपर्व　　(D) मौसलपर्व

(E) आश्रमवासीपर्व

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत-

(A) (A), (D), (B), (C), (E)

(B) (B), (C), (A), (D), (E)

(C) (C), (A), (B), (E), (D)

(D) (D), (B), (C), (A), (E)

82. अत्र कथनद्वयम् -

तत्र एकम् अभिकथनम् (A), अपरश्च तस्य कारणम् (R) इति ।

अभिकथनम् (A)-न्यायदर्शनरीत्या आत्मत्वसामान्यवान् आत्मा इति ।

कारणम् (R) - बुद्धि - सुख - दुःखः - इच्छा - द्वेष – प्रयत्नगुणलिङ्गकत्वात् ।

उपर्युक्त अभिकथनं कारणश्चाश्रित्य समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) तथा (R) उभयं सत्यमस्ति (A) इत्यस्य (R) इति उचितं कारणम्

(B) (A) तथा (R) उभावपि असमीचीनो

(C) (A) तथा (R) उभावपि समीचीनो, परं (A) इत्यस्य (R) इति समुचितं कारणम् नास्ति

(D) (A) इति असमीचीनं, परं (R) इति समीचीनम्

83. सम्पूर्णम् - इन्द्र - सूक्तम् अधोलिखितेषु कतमेन छन्दसा ग्रथितमस्ति ?

(A) जगती – छन्दसा　　(B) अनुष्टुप् - छन्दसा

(C) त्रिष्टुप् – छन्दसा　　(D) गायत्री - छन्दसा

84. भाषावैज्ञानिकैः भाषाः कतिधा वर्गीकृताः?

(A) चतुर्धा　　(B) त्रिधा

(C) द्विधा　　(D) पञ्चधा

85. सदूषणापि निर्दोषा सखरापि सुकोमला।
नमस्तस्मै कृता येन रम्या रामायणी कथा ।।
कस्माद् ग्रन्थादुद्धृतोऽयं श्लोकः?

(A) रामायणात्　　(B) उत्तररामचरितात्

(C) रघुवंशात्　　(D) नलचम्पोः

86. अधोऽङ्कितेषु कोऽर्थापत्तिप्रमाणं स्वीकरोति?

(A) चार्वाकदर्शनम्　　(B) जैनदर्शनम्

(C) योगदर्शनम्　　(D) मीमांसादर्शनम्

87. हर्षस्य कृती इमे स्तः -

(A) रत्नावली　　(B) नैषधीयचरितम्

(C) कर्पूरमञ्जरी　　(D) प्रियदर्शिका

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (D)　　(B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D)　　(D) (B) एवम् (D)

88. याज्ञवल्क्यस्मृतौ व्यवहाराध्यायस्य प्रकरणे स्तः ?

(A) राजधर्मप्रकरणम्　　(B) विवाहप्रकरणम्

(C) लेख्यप्रकरणम्　　(D) दिव्यप्रकरणम्

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत -

(A) (A) एवम् (B)　　(B) (B) एवम् (C)

(C) (C) एवम् (D)　　(D) (D) एवम् (A)

89. 'तनु विस्तारे' धातोः विधिलिङि प्रथमपुरुषैकवचने रूपद्वयं भवति-

(A) तन्यात्　　(B) तनुयात्

(C) तनिषीष्ट　　(D) तन्वीत

अत्र समुचितं विकल्पं चिनुत :

(A) (A) एवम् (B)　　(B) (A) एवम् (C)

(C) (A) एवम् (D)　　(D) (B) एवम् (D)

90. मनुमते कः द्विजः सान्वयः शूद्रत्वं प्राप्नोति अधोलिखितेषु?

(A) वेदं परित्यज्य अन्यत्र श्रमं कुर्वन्

(B) प्रातरुत्थाय स्नानमकुर्वन्

(C) ब्राह्मणग्रन्थान् वेदं स्वीकुर्वन्

(D) एकेश्वरवादं निन्दयन्

परिच्छेदः-

उपर उपलो मेघो भवति। उपरमन्तेऽस्मिन्नभ्राणि । उपरता आप इति वा । तेषामेषा भवति - 'देवानां माने प्रथमा अतिष्ठन्कृन्तत्रादेषामुपरा उदायन् । त्रयस्तपन्ति पृथिवीमनूपाः द्वा बृबूकं वहतः पुरीषम् ।। - देवानां निर्माणे प्रथमा अतिष्ठन् माध्यमिका देवगणाः । प्रथम इति मुख्यनाम प्रथमो भवति । कृन्तत्रमन्तरिक्षं विकर्तनं मेघानां विकर्त्तनेन मेघानामुदकं जायते। त्रयस्तपन्ति पृथिवीमनूपाः। पर्जन्योः वायुरादित्यः शीतोष्णवर्षैरोषधीः पाचयन्त्यनूपा अनुवपन्ति लोकान्स्वनेन स्वेन कर्म्मणा अयमपीतरोऽनूप एतस्मादेवानूप्यत उदकेनापि वान्वाविति स्याद्यथा प्रागिति तस्यानूप इति स्याद्यथा प्राचीनमिति। द्वा बृबूकं वहतः पुरीषम् । वाय्वादित्या उदकं बृबूकमित्युदकनाम ।

91. उपरिलिखित-परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु वृबूकम्' इति पदस्यार्थं चिनुत -

(A) मेघः (B) उदकम्

(C) वायुः (D) आदित्यः

92. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु त्रयस्तन्ति' इत्यस्य वाक्यस्य अभिप्रायः कः?

(A) त्रयोतापाः पृथिवीं तपन्ति

(B) मनुष्याणां पापानि पृथिवीं तपन्ति

(C) पर्जन्यो-वायुरदित्याः पृथिवीं तपन्ति

(D) सूर्यरश्मयः वडवानश्च पृथिवीं तपन्ति

93. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु 'कृन्तत्रम्' इति पदस्य अर्थं चिनुत -

(A) अन्तरिक्षम् (B) विकर्तनम्

(C) उदकम् (D) मेघः

94. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु 'उपर' इति पदस्य अर्थं चिनुत -

(A) नभः (B) मेघः

(C) जलम् (D) अश्वः

95. उपरिलिखित-परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु अनूपाः ' इति पदं केषां विशेषणमस्ति ?

(A) रवि-पृथिवी-जलानाम्

(B) अपस्तेजसादित्यानाम्

(C) पृथिवी-जल-वायूनाम्

(D) वायुरादित्यपर्जन्यानाम्

परिच्छेदः-

इयं संवर्धनवारिधारा तृष्णा विषवल्लीनाम्, व्याधगीतिरिन्द्रियमृगाणाम्, परामर्शधूमलेखा सच्चरितचित्राणाम्, तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम् पुरःपताका सर्वाविनयानाम्, उत्पत्तिनिम्नगा क्रोधवेग्राहाणाम्, आपानभूमिर्विषयमधूनाम्, सङ्गीतशाला भ्रूविकारनाट्यानाम्, आवासदरी दोषाशीविषाणाम्, उत्सारणकेत्रलता सत्पुरुषव्यवहाराणाम् प्रस्तावना कपटनाटकस्य, कदलिका कामकारिणः, वध्यशाला साधुभावस्य, राहुजिह्वा धर्मेन्दुमण्डलस्य, लतेव विटपकानध्यारोहति। गङ्गेव वसुजननयपि तरङ्गबुद्बुद्चञ्चला, पातालगुहेव तमोबहुला, हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्य हृदया, प्रावृडिवाचिरद्युतिकारिणी, दुष्टपिशाचीव दर्शितानेकपुरुषोच्छ्राया स्वल्पसत्त्वमुन्मत्तीकरोति ।

96. उपरिलिखित-परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु - " तिमिरोद्गतिः शास्त्रदृष्टीनाम्" इति गद्यांशानुसारं तिमिरोद्गतिः कुत्र भवति?

(A) कर्णे (B) हस्ते

(C) शिरसि (D) नेत्रे

97. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु 'हिडिम्बेव भीमसाहसैकहार्यहृदया' इत्यंशे कोऽलङ्कारः?

(A) विरोधाभासः (B) विभावना

(C) श्लिष्टोपमा (D) विशेषोक्तिः

98. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु -"पुरः पताका सर्वाविनयायाम्" - इति गद्यांशे पुरःपताका उच्यते -

(A) सरस्वती (B) चण्डी

(C) लक्ष्मीः (D) कालिका

99. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु "वल्लिनां संवर्धने कस्यापेक्षा भवति?" इति प्रश्नस्य समीचीनमुत्तरं चिनुत -

(A) अग्नेः (B) वायोः

(C) जलस्य (D) काष्ठस्य

100. उपरिलिखित - परिच्छेदमनुसृत्य अधोलिखितेषु - "कदलिका कामकरिणः- " इत्यत्र करिणः तुलना केन सह कृता?

(A) शुकनासेन (B) जलेन

(C) क्रोधेन (D) कामेन

॥उत्तरमाला॥

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जून- 2015

1. (C) 2. (B) 3. (B) 4. (B) 5. (C)
6. (A) 7. (D) 8. (C) 9. (C) 10. (B)
11. (B) 12. (C) 13. (D) 14. (B) 15. (A)
16. (C) 17. (A) 18. (B) 19. (C) 20. (D)
21. (D) 22. (B) 23. (C) 24. (D) 25. (C)
26. (D) 27. (C) 28. (C) 29. (B) 30. (A)
31. (A) 32. (C) 33. (C) 34. (D) 35. (D)
36. (B) 37. (A) 38. (D) 39. (C) 40. (C)
41. (A) 42. (A) 43. (C) 44. (A) 45. (B)
46. (A) 47. (D) 48. (B) 49. (A) 50. (C)

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जून- 2015

1. (C) 2. (C) 3. (A) 4. (D) 5. (B)
6. (B) 7. (D) 8. (A) 9. (C) 10. (D)
11. (A) 12. (C) 13. (B) 14. (D) 15. (A)
16. (B) 17. (B) 18. (A) 19. (C) 20. (A)
21. (A) 22. (B) 23. (D) 24. (C) 25. (D)
26. (D) 27. (C) 28. (C) 29. (C) 30. (B)
31. (B) 32. (A) 33. (A) 34. (D) 35. (B)
36. (D) 37. (D) 38. (A) 39. (B) 40. (C)
41. (D) 42. (A) 43. (A) 44. (D) 45. (A)

46. (B) 47. (A) 48. (B) 49. (B) 50. (D)
51. (C) 52. (A) 53. (A) 54. (C) 55. (C)
56. (D) 57. (C) 58. (A) 59. (D) 60. (C)
61. (D) 62. (B) 63. (C) 64. (B) 65. (D)
66. (D) 67. (C) 68. (A) 69. (D) 70. (B)
71. (D) 72. (A) 73. (B) 74. (A) 75. (C)

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र दिसम्बर-2015

1. (C) 2. (B) 3. (D) 4. (C) 5. (A)
6. (C) 7. (C) 8. (C) 9. (B) 10. (A)
11. (B) 12. (D) 13. (B) 14. (C) 15. (D)
16. (C) 17. (A) 18. (B) 19. (C) 20. (C)
21. (A) 22. (C) 23. (B) 24. (B) 25. (C)
26. (C) 27. (C) 28. (B) 29. (C) 30. (A)
31. (D) 32. (B) 33. (D) 34. (A) 35. (A)
36. (C) 37. (A) 38. (B) 39. (A) 40. (C)
41. (B) 42. (A) 43. (C) 44. (B) 45. (D)
46. (D) 47. (D) 48. (C) 49. (A) 50. (D)

नेट तृतीय प्रश्नपत्र दिसम्बर-2015

1. (C) 2. (A) 3. (B) 4. (A) 5. (C)
6. (B) 7. (A) 8. (C) 9. (A) 10. (B)
11. (A) 12. (C) 13. (D) 14. (D) 15. (C)
16. (A) 17. (C) 18. (C) 19. (C) 20. (D)
21. (C) 22. (B) 23. (B) 24. (B) 25. (D)
26. (A) 27. (A) 28. (D) 29. (A) 30. (C)
31. (D) 32. (B) 33. (A) 34. (D) 35. (C)
36. (B) 37. (A) 38. (B) 39. (C) 40. (B)
41. (A) 42. (D) 43. (A) 44. (B) 45. (A)
46. (C) 47. (A) 48. (C) 49. (B) 50. (A)
51. (A) 52. (C) 53. (A) 54. (D) 55. (B)
56. (C) 57. (A) 58. (C) 59. (B) 60. (B)
61. (A) 62. (D) 63. (D) 64. (A) 65. (C)
66. (B) 67. (B) 68. (D) 69. (A) 70. (B)
71. (B) 72. (D) 73. (B) 74. (C) 75. (D)

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जुलाई-2016

1. (B) 2. (A) 3. (C) 4. (B) 5. (B)
6. (D) 7. (D) 8. (B) 9. (B) 10. (D)
11. (A) 12. (C) 13. (A) 14. (A) 15. (C)
16. (C) 17. (D) 18. (C) 19. (C) 20. (A)
21. (B) 22. (B) 23. (A) 24. (C) 25. (A)
26. (B) 27. (B) 28. (B) 29. (B) 30. (D)
31. (D) 32. (B) 33. (D) 34. (D) 35. (B)
36. (C) 37. (B) 38. (A) 39. (B) 40. (A)
41. (B) 42. (B) 43. (B) 44. (C) 45. (D)
46. (B) 47. (C) 48. (C) 49. (B) 50. (C)

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जुलाई-2016

1. (A) 2. (D) 3. (A) 4. (B) 5. (D)
6. (C) 7. (B) 8. (A) 9. (B) 10. (D)
11. (C) 12. (A) 13. (D) 14. (B) 15. (B)
16. (D) 17. (C) 18. (B) 19. (C) 20. (A)
21. (D) 22. (D) 23. (B) 24. (C) 25. (B)
26. (D) 27. (C) 28. (B) 29. (B) 30. (B)
31. (A) 32. (A) 33. (C) 34. (B) 35. (C)
36. (B) 37. (B) 38. (A) 39. (B) 40. (A)
41. (C) 42. (A) 43. (A) 44. (D) 45. (C)
46. (C) 47. (B) 48. (C) 49. (D) 50. (C)
51. (A) 52. (C) 53. (A) 54. (D) 55. (A)
56. (C) 57. (A) 58. (D) 59. (A) 60. (D)
61. (A) 62. (B) 63. (B) 64. (B) 65. (C)
66. (B) 67. (C) 68. (D) 69. (A) 70. (C)
71. (C) 72. (A) 73. (A) 74. (C) 75. (C)

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र जनवरी-2017

1. (D) 2. (A) 3. (B) 4. (C) 5. (C)
6. (B) 7. (D) 8. (B) 9. (C) 10. (B)
11. (D) 12. (D) 13. (C) 14. (B) 15. (C)
16. (C) 17. (B) 18. (C) 19. (C) 20. (B)
21. (B) 22. (A) 23. (B) 24. (B) 25. (C)
26. (A) 27. (C) 28. (B) 29. (D) 30. (B)
31. (B) 32. (A) 33. (C) 34. (D) 35. (D)
36. (D) 37. (A) 38. (C) 39. (B) 40. (C)
41. (B) 42. (C) 43. (D) 44. (C) 45. (A)
46. (D) 47. (A) 48. (B) 49. (B) 50. (A)

नेट तृतीय प्रश्नपत्र जनवरी-2017

1. (C) 2. (A) 3. (D) 4. (A) 5. (C)
6. (B) 7. (D) 8. (B) 9. (C) 10. (A)
11. (D) 12. (A) 13. (C) 14. (B) 15. (B)

16. (C) 17. (D) 18. (A) 19. (B) 20. (B)
21. (D) 22. (B) 23. (A) 24. (A) 25. (A)
26. (B) 27. (D) 28. (D) 29. (A) 30. (A)
31. (A) 32. (B) 33. (D) 34. (A) 35. (C)
36. (D) 37. (B) 38. (B) 39. (B) 40. (D)
41. (A) 42. (C) 43. (B) 44. (B) 45. (A)
46. (B) 47. (D) 48. (C) 49. (D) 50. (D)
51. (D) 52. (D) 53. (B) 54. (B) 55. (B)
56. (C) 57. (C) 58. (C) 59. (D) 60. (C)
61. (B) 62. (A) 63. (B) 64. (B) 65. (C)
66. (D) 67. (B) 68. (C) 69. (D) 70. (A)
71. (A) 72. (D) 73. (B) 74. (A) 75. (C)

नेट द्वितीय प्रश्नपत्र नवम्बर-2017

1. (C) 2. (D) 3. (D) 4. (B) 5. (C)
6. (A) 7. (C) 8. (B) 9. (B) 10. (D)
11. (B) 12. (B) 13. (B) 14. (A) 15. (B)
16. (C) 17. (A) 18. (C) 19. (D) 20. (A)
21. (B) 22. (C) 23. (D) 24. (C) 25. (D)
26. (D) 27. (B) 28. (A) 29. (A) 30. (D)
31. (B) 32. (C) 33. (C) 34. (C) 35. (B)
36. (C) 37. (D) 38. (A) 39. (C) 40. (B)
41. (A) 42. (B) 43. (A) 44. (A) 45. (C)
46. (B) 47. (B) 48. (D) 49. (A) 50. (D)

नेट तृतीय प्रश्नपत्र नवम्बर-2017

1. (B) 2. (D) 3. (B) 4. (A) 5. (A)
6. (A) 7. (C) 8. (C) 9. (A) 10. (C)
11. (B) 12. (A) 13. (C) 14. (C) 15. (B)
16. (A) 17. (B) 18. (B) 19. (B) 20. (C)
21. (A) 22. (B) 23. (D) 24. (D) 25. (C)
26. (A) 27. (B) 28. (C) 29. (A) 30. (B)
31. (A) 32. (C) 33. (D) 34. (B) 35. (A)
36. (B) 37. (C) 38. (A) 39. (B) 40. (B)
41. (C) 42. (A) 43. (B) 44. (B) 45. (B)
46. (C) 47. (C) 48. (B) 49. (B) 50. (B)
51. (A) 52. (B) 53. (A) 54. (A) 55. (B)
56. (B) 57. (A) 58. (B) 59. (A) 60. (A)
61. (C) 62. (D) 63. (A) 64. (B) 65. (C)
66. (A) 67. (D) 68. (B) 69. (D) 70. (B)
71. (B) 72. (D) 73. (A) 74. (C) 75. (C)

नेट प्रश्नपत्र जुलाई-2018

1. (B) 2. (D) 3. (C) 4. (A) 5. (A)
6. (C) 7. (A) 8. (C) 9. (C) 10. (B)
11. (D) 12. (B) 13. (C) 14. (B) 15. (C)
16. (B) 17. (A) 18. (D) 19. (C) 20. (D)
21. (B) 22. (B) 23. (A) 24. (C) 25. (C)
26. (B) 27. (C) 28. (B) 29. (C) 30. (B)
31. (B) 32. (A) 33. (C) 34. (A) 35. (C)
36. (D) 37. (A) 38. (D) 39. (D) 40. (B)
41. (A) 42. (D) 43. (C) 44. (B) 45. (A)
46. (C) 47. (D) 48. (C) 49. (D) 50. (A)
51. (B) 52. (C) 53. (B) 54. (B) 55. (B)
56. (A) 57. (C) 58. (A) 59. (B) 60. (A)
61. (B) 62. (A) 63. (A) 64. (B) 65. (B)
66. (C) 67. (A) 68. (D) 69. (B) 70. (A)
71. (C) 72. (B) 73. (D) 74. (B) 75. (A)
76. (A) 77. (B) 78. (D) 79. (C) 80. (A)
81. (C) 82. (B) 83. (C) 84. (C) 85. (A)
86. (A) 87. (B) 88. (D) 89. (B) 90. (B)
91. (D) 92. (A) 93. (B) 94. (A) 95. (B)
96. (A) 97. (B) 98. (C) 99. (A) 100. (B)

नेट प्रश्नपत्र दिसम्बर-2018

1. (C) 2. (A) 3. (A) 4. (C) 5. (A)
6. (D) 7. (B) 8. (D) 9. (D) 10. (B)
11. (B) 12. (C) 13. (C) 14. (D) 15. (A)
16. (D) 17. (C) 18. (B) 19. (C) 20. (D)
21. (C) 22. (B) 23. (B) 24. (A) 25. (D)
26. (A) 27. (D) 28. (C) 29. (C) 30. (C)
31. (A) 32. (A) 33. (A) 34. (C) 35. (D)
36. (A) 37. (A) 38. (B) 39. (D) 40. (A)
41. (B) 42. (C) 43. (D) 44. (B) 45. (C)
46. (C) 47. (A) 48. (A) 49. (A) 50. (D)
51. (C) 52. (C) 53. (C) 54. (C) 55. (D)
56. (D) 57. (D) 58. (C) 59. (A) 60. (C)
61. (C) 62. (A) 63. (D) 64. (C) 65. (B)
66. (D) 67. (D) 68. (A) 69. (A) 70. (C)
71. (D) 72. (B) 73. (D) 74. (B) 75. (B)
76. (A) 77. (C) 78. (D) 79. (B) 80. (A)
81. (A) 82. (B) 83. (D) 84. (B) 85. (A)

86. (B) 87. (A) 88. (D) 89. (A) 90. (B)
91. (C) 92. (D) 93. (A) 94. (B) 95. (B)
96. (D) 97. (B) 98. (C) 99. (C) 100. (B)

नेट प्रश्नपत्र जून-2019

1. (B) 2. (B) 3. (B) 4. (D) 5. (A)
6. (B) 7. (C) 8. (A) 9. (C) 10. (D)
11. (D) 12. (B) 13. (C) 14. (C) 15. (A)
16. (A) 17. (A) 18. (D) 19. (C) 20. (D)
21. (C) 22. (D) 23. (C) 24. (C) 25. (C)
26. (B) 27. (A) 28. (D) 29. (A) 30. (C)
31. (D) 32. (B) 33. (D) 34. (B) 35. (A)
36. (C) 37. (D) 38. (C) 39. (C) 40. (D)
41. (A) 42. (B) 43. (D) 44. (B) 45. (B)
46. (D) 47. (C) 48. (A) 49. (A) 50. (D)
51. (B) 52. (D) 53. (C) 54. (B) 55. (B)
56. (D) 57. (D) 58. (D) 59. (C) 60. (B)
61. (B) 62. (B) 63. (A) 64. (A) 65. (B)
66. (B) 67. (A) 68. (A) 69. (A) 70. (D)
71. (C) 72. (D) 73. (C) 74. (D) 75. (A)
76. (D) 77. (B) 78. (C) 79. (B) 80. (C)
81. (B) 82. (A) 83. (C) 84. (B) 85. (D)
86. (A) 87. (D) 88. (C) 89. (B) 90. (D)
91. (A) 92. (D) 93. (C) 94. (B) 95. (C)
96. (A) 97. (B) 98. (D) 99. (D) 100. (C)

नेट प्रश्नपत्र दिसम्बर 2019

1. (A) 2. (C) 3. (D) 4. (B) 5. (A)
6. (B) 7. (B) 8. (B) 9. (B) 10. (D)
11. (D) 12. (D) 13. (B) 14. (B) 15. (A)
16. (A) 17. (B) 18. (C) 19. (A) 20. (C)
21. (B) 22. (B) 23. (C) 24. (B) 25. (A)
26. (B) 27. (A) 28. (D) 29. (C) 30. (C)
31. (C) 32. (D) 33. (B) 34. (D) 35. (A)
36. (B) 37. (B) 38. (B) 39. (C) 40. (B)
41. (A) 42. (B) 43. (C) 44. (C) 45. (A)
46. (A) 47. (A) 48. (C) 49. (C) 50. (C)
51. (B) 52. (C) 53. (D) 54. (C) 55. (B)
56. (C) 57. (B) 58. (C) 59. (C) 60. (A)
61. (C) 62. (A) 63. (D) 64. (A) 65. (B)
66. (C) 67. (C) 68. (D) 69. (C) 70. (C)
71. (D) 72. (C) 73. (B) 74. (C) 75. (C)
76. (D) 77. (B) 78. (D) 79. (B) 80. (C)
81. (D) 82. (C) 83. (B) 84. (B) 85. (A)
86. (A) 87. (B) 88. (B) 89. (A) 90. (B)
91. (A) 92. (B) 93. (D) 94. (C) 95. (A)
96. (B) 97. (B) 98. (B) 99. (C) 100. (B)

नेट प्रश्नपत्र जून 2020

1. (B) 2. (C) 3. (D) 4. (D) 5. (C)
6. (A) 7. (B) 8. (C) 9. (C) 10. (B)
11. (A) 12. (A) 13. (C) 14. (B) 15. (D)
16. (B) 17. (C) 18. (C) 19. (B) 20. (D)
21. (B) 22. (A) 23. (C) 24. (C) 25. (B)
26. (B) 27. (B) 28. (D) 29. (D) 30. (D)
31. (A) 32. (C) 33. (A) 34. (D) 35. (B)
36. (A) 37. (C) 38. (C) 39. (C) 40. (B)
41. (A) 42. (B) 43. (D) 44. (D) 45. (B)
46. (A) 47. (C) 48. (B) 49. (A) 50. (C)
51. (D) 52. (C) 53. (B) 54. (D) 55. (A)
56. (B) 57. (C) 58. (C) 59. (B) 60. (A)
61. (A) 62. (D) 63. (A) 64. (D) 65. (A)
66. (D) 67. (D) 68. (C) 69. (B) 70. (D)
71. (B) 72. (B) 73. (B) 74. (A) 75. (C)
76. (D) 77. (B) 78. (B) 79. (B) 80. (C)
81. (C) 82. (A) 83. (C) 84. (C) 85. (D)
86. (D) 87. (A) 88. (C) 89. (D) 90. (A)
91. (B) 92. (C) 93. (A) 94. (B) 95. (D)
96. (D) 97. (C) 98. (C) 99. (C) 100. (D)



लेखक–संजय दत्त भट्ट,
पिता–स्व. श्री सुरेश चन्द्र,
माता–श्रीमती सीता देवी,
पता–ग्राम–भरौली, पो.–कानाकोट, जिला–चम्पावत (उत्तराखण्ड)

शैक्षिक उपलब्धि–शास्त्री (उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय-हरिद्वार, वर्ष-2015), बी.एड. (राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान-शृंगेरी परिसर-वर्ष-2017), एम.ए. (JNU-दिल्ली, वर्ष-2019), पीएच.डी.-अध्ययनरत (दिल्ली विश्वविद्यालय-दिल्ली),

5th Year Diploma in Tabla, Prayag Sangeet Samiti, Allahabad (2014), C.TET एवं UGC-NET/JRF

सम्पर्क ईमेल : bhattsanjay1995@gmail.com



लेखक– दीपक कुमार,
पिता–श्री तेजराम शर्मा,
माता–श्रीमती किरना देवी,
पता–ग्राम–बहली, पो.–कटवाहची, जिला–मण्डी (हिमाचल प्रदेश)

शैक्षिक उपलब्धि–शास्त्री- काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (BHU), वाराणसी, वर्ष-2018), एम.ए.- जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (JNU), नई दिल्ली, वर्ष-2020), पीएच.डी.-अध्ययनरत (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय-वाराणसी),

4th Year Diploma in Vocal, Prayag Sangeet Samiti, Allahabad (2021), (H.P.TET, UGC-NET/JRF

सम्पर्क ईमेल : sharmadeepak32sgd@gmail.com

पुस्तक की विशेषताएँ

- यू.जी.सी.-नेट/जे.आर.एफ. संस्कृत के नवीन पाठ्यक्रम पर आधारित।
- उदाहरण, चार्ट, टेबल आदि माध्यमों से विषयों का प्रतिपादन तथा सरल, सहज एवं रुचिपूर्ण भाषा में विषयों का प्रस्तुतीकरण।
- अध्यायों व विषयों की आगामी परीक्षाओं में संभावित प्रश्नों की दृष्टि से विशद व्याख्या।
- पाठकों की बोधगम्यता एवं पुस्तक की गुणवत्ता हेतु नूतन पाठ्यक्रमानुसार प्रत्येक बिन्दु की सरल व्याख्या।
- विभिन्न राज्यों द्वारा आयोजित असिस्टेंट प्रोफेसर, एवं कमीशन, धर्मगुरु, PGT, TGT, DSSSB इत्यादि सभी परीक्षाओं हेतु अत्यन्त उपयोगी।
- विभिन्न विश्वविद्यालयों (JNU, BHU, DU) इत्यादि द्वारा आयोजित M.A, M.Phil, Ph.D. एवं शिक्षाशास्त्री (B.Ed.) के लिये भी उपयोगी।
- 1250 से अधिक विषयानुसार वस्तुनिष्ठात्मक अभ्यास प्रश्न एवं 2015 से 2020 तक के पुरातन प्रश्नपत्रों का संकलन।



चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी-221001
chaukhambasurbharatiprakashan@gmail.com
www.chaukhamba.co.in


@chaukhambabooks

@chaukhambabooks



Second Edition 2022
ISBN : 978-93-89665-59-8



₹ 750/-